

॥ श्रीः ॥

राजस्थान इतिहास ।

अर्थात्

कर्नल जेम्स टाड प्रणीत अंग्रेजीग्रन्थ
राजपूतजातिका इतिहास ।

जिसका

अनेक ग्रन्थोंके निर्माणकर्ता तथा टीकाकार, हिन्दीहितैषी,
जगविख्यात, मुरादाबादनिवासी स्वर्गीय पं० बलदेव-
प्रसादमिश्रने सरल हिन्दी भाषामें अनुवादकिया ।

जिसे

विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादमिश्रने शुद्धकिया
और

लोकोपकारार्थ

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम-यन्त्रालयमें
मुद्रितकर प्रसिद्धकिया ।

आषाढ, संवत् १९६४, शके १८२९.

सर्कारीनियमानुसार पुनर्मुद्रणादिसर्वाधिकार "श्रीवेङ्कटेश्वर" यन्त्रालया-
धीनाने स्वाधीन रक्खा है.



ANNALS AND ANTIQUITIES
OF
RAJASTHAN
OR THE
CENTRAL AND WESTERN RAJPOOT STATES
OF
INDIA

VOL. II.

BY

Lieutenant Colonel James Tod.

TRANSLATED BY

PANDIT BALDAO PRASAD MISHRA

OF

MORADABAD.

Printed By

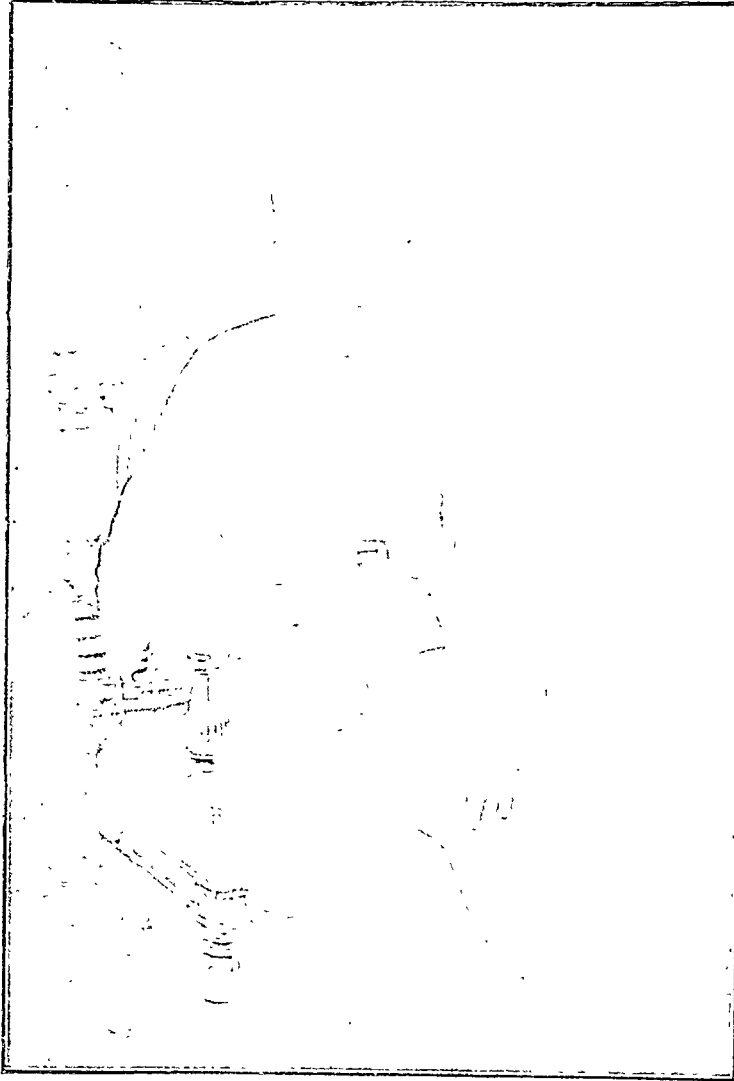
KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

SHRI VENKATESHWAR STEAM PRESS

BOMBAY.

1907.

All rights reserved.



श्री १०८ श्रीमहाराणा फतहसिंहजी बहादुर.

जी. सी. एस. आई.

951-12. 112/40
TS-66A(11) 1-2

समर्पणम् ।

MOST RESPECTFULLY DEDICATED

TO THE

II. II. MAHARANA SAHAB BAHADUR.

FATEH SINGHIJI

G. C. S. I.

GOODIPUR.

BY

KHEMRAJ SHRIKRISHNDAS
SHRI VENKATESHWAR STEAM PRESS.
BOMBAY.

स्वस्ति श्रीयुत सर्वगुणसम्पन्न महाराजाधिराज हिन्दूपति
रविकुलकमलदिवाकर श्री १०८ श्रीमहाराणा
फतहसिंहजी बहादुर. जी. सी. एस. आइ.
की सेवामें.

प्रभो !

श्रीमान् मेवाडके शासनकर्ता हैं और यह अपूर्व ग्रंथ श्रीमान्के पूर्वजों-
की कीर्तिका भंडार है श्रीमान् हमारे इष्टदेव श्रीरामचंद्र भगवानके
वंशधर हैं हमारा धर्म है कि अलभ्यपदार्थ अपने महाराजको अर्पण कि-
याजाय, इसकारण इस अमूल्यरत्नका अधिकारी श्रीमान्को ही समझकर
आदर और सन्मानके सहित इसको श्रीमान्के करकमलोंमें समर्पण
करताहूं यदि असाधारण प्रजावात्सल्यसे यह अंगीकृत होगा तो मैं अपने-
को कृतकृत्य और इसपरिश्रमको सफल समझूंगा.

श्रीमान्का अनुग्रहभाजन—

खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम प्रेस—बंबई.



१. उदयसिंह	१५४१	८. अमरसिंह दूसरे	१७००	१५. भीमसिंह	१७७८
२. प्रतापसिंह	१५७२	९. संग्रामसिंह	१७१६	१६. जवानसिंह	१८२८
३. अमरसिंह	१५६७	१०. जगतसिंह दूसरे	१७३४	१७. सरदारसिंह	१८३८
४. करणसिंह	१६२१	११. प्रतापसिंह दूसरे	१७५२	१८. सरूपसिंह	१८४८
५. जगतसिंह	१६२५	१२. राजसिंह दूसरे	१७५५	१९. शम्भूसिंह	१८६१
६. राजसिंह	१६६१	१३. अरिसिंह	१७६२	२०. सज्जनसिंह	१८७४
७. जयसिंह	१६८१	१४. हमीरसिंह	१७७२	२१. महाराजा सर फतहसिंह	
				जी. सी. एस. आई. १८८४	

भूमिका ।

5/11/11

टाडमहोदयकृत राजस्थानकी

भूमिका ।

भारतवर्षका इतिहास सर्वांग पूर्ण न पानेसे यूरोपमें बहुत कुछ निराशा हुई है, सबसे प्रथम जिस समय सर विलियम जौन्स साहब संस्कृत साहित्यकी महाखानकी खोजमें लगे थे उस समय बहुत सी आशाएँ की गई थीं कि इस साधनके द्वारा संसारके इतिहासकी बहुत कुछ प्राप्ति होगी, परन्तु वह आशाएँ आज तक भी पूर्ण न हुई, किन्तु उत्साहके स्थानमें उदासीनता और विरसता होगई, इस बातको लोग स्वयं सिद्ध मानते हैं कि भारतवर्षका जातीय इतिहास नहीं है, और इस बातकी पुष्टिमें हम एक फरासीसी ओरियण्टलिष्टके कथनको यहाँ दिखाते हैं कि जिसने बड़ी बुद्धिमान्नीसे प्रश्न किया है कि हिन्दुओंके पुरातन इतिहासके निमित्त अब्बुलफ़ज़लने कहाँसे सामग्री प्राप्त की थी। यथार्थमें मिष्टर विलसनने काश्मीरके राजतरंगिणी नामक इतिहासका अनुवाद करके इस विचारको बहुत कुछ कम कर दिया है, और जिससे यह बात स्पष्ट होती है कि ऐसा न था कि इतिहास लिखनेकी नियम बद्ध परिपाटी भारतवर्षमें न हो, और इस बातके सिद्ध करनेके लिये सन्तोषदायक प्रमाण मिलते हैं कि वर्त्तमान समयकी अपेक्षा किसी समय इतिहासकी पुस्तकें विशेष मिलती थीं यदि विशेष यत्न किया जाय तो और भी ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हो सकती है, यद्यपि कोलब्रुक, विलकिन्स, विलसन तथा हमारे देशके दूसरे विद्वानोंके परिश्रमने फ्रांस और जर्मनके बहुतसे विद्वानोंके उत्साहसे स्पर्द्धावाले हैं और यूरोपवालोंपर भारतवर्षीय विद्याभंडारके कुछ गुप्त विषयोंको प्रगट कर रहे हैं, तो भी कोई दृढताके साथ नहीं कहसकता कि भारतवर्षीय ऐतिहासिक ज्ञानके द्वारे तक पहुँचनेके अतिरिक्त हम कुछ और विशेष करसके हैं, और इसी निमित्त इस विज्ञानके परिमाण वा गुणके विषयमें हम सिद्ध सम्मति देनेके निमित्त नहीं हैं इस भारतवर्षके भिन्न २ भागोंमें बड़े २ पुस्तकालय, यवनोंके नष्ट करनेसे बच गये हैं, वे अब तक विद्यमान हैं, जिस प्रकार कि जैसलमेर और पट्टनके ग्रन्थ भंडार क्रूरदृष्टिवाले अलाउद्दीन खिलजीके अनुसन्धानसे भी

बच रहे जिसने इन दोनों राज्योंको विजय कर लिया था, और जो इन पुस्तकालयोंके साथ वैसा ही कठोरपनका वर्ताव करता, जैसा कि उमरने सिकन्दरियाके * पुस्तकालयके साथ किया था, और भी दूसरे छोटे छोटे पुस्तकालय मध्यदेश और पश्चिम भारतमें अभी तक ऐसे विद्यमान हैं कि, जिनमें अब भी सहस्रों ग्रंथ हैं, उनमें कितनी एक तो वहाँके महाराणाओंकी निजकी सम्पत्ति हैं, और कितने एक ग्रंथ जैनियोंके हैं । ×

जो हम महमूद गजनवीकी चढाईसे लेकर भारतवर्षके राज्यपरिवर्तन और घटनाओंका विचार करें तथा उनके अनुयाइयोंमेंसे बहुतेकोंके धर्मसम्बन्धी पक्ष पातपूर्ण कट्टरपनकी ओर ध्यान लगावें, तो हमें इस देशकी जातीय ऐतिहासिक ग्रंथोंकी न्यूनताका कारण विदित होजायगा, हम लोग इस व्यर्थ विचारको अपने हृदयमें स्थान न देंगे कि, हिन्दूलोग उस बातसे जिसको दूसरे देशवाले आदि समयसे उन्नति देते चलेआते हैं परिचित न थे, क्या यह कभी होसक्ता है कि सद्विद्याओंके पूर्ण रूपसे प्रचारक, कला, शिल्प, कविता संगीत शास्त्रादिके शिक्षक प्रत्येक जातिके लिये उत्तमोत्तम नियम बनानेवाले सम्य हिन्दूजन

* सन् ६४० में इस पुस्तकालयमें लिखीहुई लाखों पुस्तकें खलीफाकी आज्ञासे नष्ट करदीगई। यह पुस्तकें सिकन्दरियाके हम्माममें भेजीगई, इनसे छः महीने तक हम्मामका जल गरम होता रहा ।

× जैनियोंकी हस्तलिखित पुस्तकोंकी कई एक प्रति जो मेरे पास थीं वे पांचसे आठ शताब्दी पीछेकी लिखी थीं, वे मुझे जैसलमेरसे मिलीं थीं, वे मैंने रायल एशियाटिक सोसायटीको देदीं, यह पट्टन और जैसलमेरके ग्रंथ बहुत पुराने समयके हैं, इनके अक्षर उनके स्वामियोंके पढ़नेमें भी नहीं आते, अथवा केवल उनके प्रधान अध्यक्ष वा शिष्य ही उन्हें पढ़सक्ते हैं, इनमें तंत्रविद्याकी एक पुस्तक ऐसी पवित्र समझीजातीहै, कि जैसलमेरके चिन्तामणिमंदिरमें सदा संकलमें लटकी रहतीहै, और या तो बंधन पलटेजानेके समय वा नये प्रधान आचार्यके नियुक्तकरने समय उतारी जातीहै, कहतेहैं कि यह ग्रंथ सोमादित्यसूरिका बनाया हुआ है, जो पिछलेसम एक जतिपुरुष था, जो यवनोंके सिन्धुनद पार करनेसे पूर्वका पुरुष था, जिसके घर्मका अधिक सिन्धुनदके पार दूर तक फैला था, उसका करामाती कपडा अभी तक मौजूद है, नये आचार्यके गद्दीपर बैठनेके समय वह काममें लायाजाताहै, वे अक्षर गोलशिरवाले पालीलिपिके विदित होतेहैं, यदि हम लोग पंडितवर मांस ई वर्नफ साहबको उनके साथी डाक्टर लेसनके सहित उस मंदिरमें भेजसकते तो उस दुर्बोध ग्रंथका कुछ तात्पर्य अवश्य समझमें आसक्ता, और उनकी आंखोंको किसी प्रकारकी हानि न पहुंचती जैसी कि एक जैन पुरुषने अन्तिम बार उसके आशय समझनेकी पापिष्ठ चेष्टा कर हानि उठाई थी.

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥



राजस्थानका इतिहास ।

(राजपूतजातिका वृत्तान्त ।)

प्रथम अध्याय १

पुराणमें कहा हुआ सूर्य और चंद्रवंशीय
राजाओंका वृत्तान्त.

दोहा-वायुसूनु खलदलदलन, बंदों बारंवार ।

राजपूत गुण कहत कछु, द्रवहु समीरकुमार ॥ १ ॥

टाडमहोदय ग्रंथजो, आंगल भाषामाहिं ॥

लिख्यो जु चेष्टाकर बहुत, जाहिपढे भ्रम जाहिं ॥ २ ॥

सो भाषाकर कहत हों, अपनी मति अनुसार ॥

भ्रम प्रमाद जहँ होय कछु, बुधजन लेहि सुधार ॥ ३ ॥

परमपूज्य गुणनिधि महा, ज्ञानी परमसुजान ॥

श्रीज्वालापरसाद यह, शोध्यो ग्रंथ महान ॥ ४ ॥

सेठ शिरोमणि विज्ञवर, अवनि अखण्डप्रताप ॥

खेमराज छाप्यो सुदित, ग्रंथ बम्बई छाप ॥ ५ ॥

वि.
होक
दिया



वैज्ञ सच्चिदानंद सर्वान्तर्यामी परमात्माको बारंवार प्रणाम करके
राजस्थानका इतिहास आरंभ किया जाता है, कि जिस समय कुरु-
क्षेत्रकी महासमरभूमिमें वीरपूज्य आर्य नृपतिगण अनन्त निद्रामें
शयन करगयेथे, उनके साथ २ इस देशका इतिहास तथा बहु-

तसा विद्यार्थंडार श्री लुप्त होन्या था, जिन भारतवीर क्षत्रियोंके आगे एकादिन समस्त भूमंडल क्षितिज होना था, भविष्यमें उन्हींके वंशमें होनेवाले लोग राजपुत्र कहलायें, इस राजपुत्रशब्दका ही अपभ्रंश राजपूत है, भाग्य वर्षके जिस विशाल देशमें राजपूत जातिका निवास है उसका शुद्धनाम राजस्थान है, प्रचलित भाषामें इस स्थानको राजदाड़ा वा राजस्थान कहते हैं इस नाम अंगरेजोंने राजपूत राजको समझानेके निमित्त राजपूत ना शब्द उत्पन्न किया है। सो केवल रायथान शब्दका अपभ्रंश है ।

मुसलमान विजेताशहाबुद्दीन गौरीने जिस समय भारतवर्षको आधीनता रूपी जंजीरमें बांधा था उस समय राजस्थानकी सीमा कहाँसे कहाँतक पहुँच गई थी, इस बातका अनुमान एक प्रकार किया जा सकता है, उस समय राजस्थानकी सीमाने गंगा यमुनाको लांघकर हिमालयके चरणतलको छुम्बित किया था, परन्तु एक बातका अनुमान करना इस समय कठिन है कि, उस भारतविजेताके आनेसे पहले इस राजस्थानकी सीमा कहाँतक फैली हुई थी. प्राचीन मालवा और गुजरात राज्यकी धारानगरी और अणाहिलवाड़ाको नष्ट करके जब मुसलमानोंने इन नगरोंकी ध्वंसाशेषपर अहमदाबाद और मांडूनगर बसाये, उस समय राजस्थानकी सीमाका कितना विस्तार था सो आगे चलकर विदित होगा, उस समय पूर्वमें बुन्देलखण्ड, दक्षिणमें विन्ध्याचल पर्वत, पश्चिममें सिन्धु नदीके विस्तारवाली खादिरभूमि और उत्तरमें शतलजके दक्षिण मरुभूमितक फैला हुआ था, वह भूमिभाग ३५०००० मील मुरब्बा था इस चारसीमावाले पृथिवीके बड़े भागमें जो राजपूत नामवाली वीरजाति वास करती थी वह किस वंशमें उत्पन्न हुई है, इसका विचार आगे चलकर करते हैं ।

सूर्य और चंद्रवंश संसारमें यह दो अतिप्राचीन और प्रसिद्ध राजवंश हैं, सूर्य और चंद्रवंशसे पहलेभी भारतवर्ष वा संसारके किसी भागमें कोई राजप्रतिष्ठित हुआ था इसका वृत्तान्त जगतके किसी इतिहासमें नहीं पायाजाता, चीन असीरिया और मिसरमें जिन तीन राजवंशोंका वृत्तान्त पाया जाता है, वह भारत वर्षमें सूर्य चन्द्र वंशकी प्रतिष्ठाके बहुतकाल पीछे अपने देशमें प्रतिष्ठित हुए थे, सो यह दो वंश ही संसारके सब प्राचीन वंशोंसे पुरातन हैं, भगवान सूर्यके पुत्र मनुने सूर्यवंशकी और चंद्रमाके पुत्र बुधने चंद्रवंशकी प्रतिष्ठा की है, इन दोनों महापुरुषोंने एक ही समयमें अपने २ विशाल वृक्षवंशको इस पवित्रभूमि भारत क्षेत्रमें रोपित किया परन्तु विचार पूर्वक देखनेसे विदित होता है कि, बुधदेव

अपनी ऐतिहासिक घटनाओंके अपने राजा महाराजाओंके आचार व्यवहार तथा उनके राजशासनके कार्योंको लिखनेकी रीतिमें कुछ भी न जानते हों, जहां बुद्धिमानीके ऐसे चिह्न पायेजातेहैं । वहां हम कठिनाईसे यह विश्वास कर सकतेहैं कि योग्य पुरुषोंकी घटनाओंके, लिखनेकी परिपाटीका ' जिसको समान कालके ऐतिहासिक लोग लिखनेके योग्य बतातेहैं, अभाव रहाहो । हस्तिनापुर, अनहिलवाडा, इन्द्रप्रस्थ, जैसेनगर चित्तौर और दिल्लीके विजयस्तम्भ गिरनार आवू सोमनाथ जैसेमंदिर, एलिफैण्टा ' और इलौराके गुफामंदिर यह सब इसी विषयके प्रमाणरूप होनेसे हम यह कभी नहीं विचारसक्ते कि इसकारीगरीके समयमें कोई इतिहासका लिखनेवाला नहीं था, इतनेपर भी महाभारतके समयसे आरंभकर सिकन्दरकी चढ़ाई तक तथा इस महान युद्धसे महमूद गजनवीके समयतकका हिन्दू ऐतिहासिक तत्त्व कुछ भी विदित नहीं हुआ । दिल्लीके पिछले हिन्दू महाराजका वीरतामय इतिहास, जो उनके कवि चंदने लिखाहै, उसके देखनेसे हमको यह विदित होताहै, कि ऐसे ऐतिहासिक ग्रन्थ महमूद और शहाबुद्दीनके समय [सन् १००० से ११९३ ई०] के पहले विद्यमान रहे हों और इन यवनेश्वरोंके अत्याचारसे उनका लोप होगयाहो ।

अत्यन्त दुःखदायी कठोर यवनोंकी आठ सौ वर्ष पर्यन्त अधीनतामें रहनेसे तथा संस्कृतभाषाके मर्म न जाननेवाले असभ्य कट्टर और अत्यन्त क्रुद्ध शत्रुओंसे कई २ बार प्रत्येक राजधानी लूटने और बर्बाद होनेसे यह आशा कभी नहीं कीजासकी कि देशके साहित्यको दूसरी उपयोगी वस्तुओंके साथ २ बड़ी भारी हानि न पहुँचीहो, राजस्थानके इतिहासकी अपूर्णताकी समालोचना पर आगे लिखे वचनोंसे कई बार यथार्थ उत्तर दियागया है कि जब हमारे राजा महाराजा उनकी राजधानी छूटजानेपर एक दुर्गसे दूसरे दुर्गमें खदेड़े जाते थें, और यही नहीं विशेषकर उनको पहाड़ोंकी कन्दराओंमें रहना पडता था, जहां यह शंका रहतीथी कि कहीं सामनेकी परोसी थाली भी न छोडनी पड़े तब क्या उस समय ऐतिहासिक घटनाओंके लेख बद्ध करनेका विचार कियाजाता ?

जो पुरुष हिन्दू जातिसे वैसे ग्रन्थोंकी आकांक्षा करतेहैं, जैसे रोम और यूनानकी इतिहास सम्बन्धी पुस्तकें हैं, वे भारत निवासियोंके उन गुणोंकी उपेक्षा करनेमें बड़ी झूल करते हैं जो गुण उनको दूसरे देशवासियोंसे पृथक् करतेहैं तथा जो उनके सब विद्या विषयक ग्रन्थोंको पश्चिमीय विद्वानोंके ग्रन्थोंसे

अत्यन्त ही विवक्षित बनाते हैं उनके काव्य, उनके दर्शन शास्त्र, उनके शिल्प-शास्त्रों से उनकी स्वतन्त्र रचना के गुण प्रगट होते हैं, उनके इतिहास में भी इसी बात के गुण हमें अपनी आज्ञा की जा सकती है कारण कि उनकी रचना भी ऊपर कही हुई विषयों के समान उनके धर्म से घना सम्बन्ध रखती है, साथ में यह बात भी याद रखनी चाहिये कि जिस समय तक इंग्लैण्ड और फ्रांस की साहित्य की शैली यूरोप के पुरातन साहित्यग्रन्थों के पठनपाठन से ठीक नहीं की गई थी, तब तक इन देशों का इतिहास ही नहीं बरन यूरोप की सम्पूर्ण श्रेष्ठ जातियों के इतिहास अर्थात् तक उसी प्रकार अनबड व्यवस्था रहित प्राचीन राज-पूतों के इतिहास की समान शुष्क थे ।

अद्यपि नियमबद्ध वास्तविक इतिहास के लेखों का अभाव है तथापि दूसरे कई एक देशीय ग्रन्थ ऐसे हैं कि यदि वे किसी चतुर दृढ साहसी इतिहास शोधक के हाथ में पड़ें तो भारतवर्ष के इतिहास के लिये थोड़ी सामग्री न होंगे, इन ग्रन्थों में सबसे प्रथम पुराण और राजाओं के वंशवर्णन हैं, जो धर्म सम्बन्धी कथाओं-रूपकों और असम्भव [चमत्कारी] वृत्तान्त के साथ मिल जाने से प्रायः गोलमाल-से होगये हैं, तो भी उनमें सत्य बातें ऐसी बहुतायत से हैं कि जो इतिहास के जानने वालों को पथदर्शक का काम देनी हैं। हमें साहब ने सेक्सन सात* राज्यों के इतिहासों और इतिहास लिखने वालों के संवन्ध में जो वाक्य कहे हैं वे राजपूतों के सात राज्यों (मेवाड़, मारवाड़, अम्बेर, बीकानेर, जयपुर, कोटा और बूंदी) के विषय में यथार्थ रूप से घटसकते हैं आशय यह कि उनमें घटनाओं का तो अत्यन्त अभाव है पर नामों की बहुतायत है वे परस्पर इस प्रकार से गुथे हुए हैं कि परम चतुर लेखक भी उनको पाठकों के लिये रुचिकर वा शिक्षाप्रद बनाने में अवश्य हताश हो जायगा । ईसाई साधू (जैसे राजपूतों में ब्राह्मण) जो सांसारिक कार्यों से पृथक रहते थे लौकिक कार्यों को पारलौकिक कार्यों से न्यून समझते थे उनको एक प्रकार की शीघ्र विश्वासकता, आश्चर्य भरी घटनाओं से प्रेम और प्रपंच करने का स्वभाव पड गया था ।

भारतवर्षीय युद्ध सम्बन्धी काव्य इतिहास का दूसरा साधन जानना चाहिये भाटलोग मनुष्य जातिके आदि इतिहास रचनेवाले हैं जब तक इन लोगों का

* जब रोमन लोग इंग्लैण्ड को छोड़कर चले गये तो उनके प्रीछे एंग्लोसेक्सन जाति ने डच देश को जीतकर वहां सात राज्य कायम किये जो सन् ४५७ से ८२७ तक रहे ।

ध्यान कल्पित कथाओंकी ओर न लगा था वा जबतक इतिहास ऐसी श्रेणीके महात्माओंसे उन्नतिको प्राप्त न हुआ था कि जिन्होंने इसे एक साहित्यका पृथक् विभाग बना लिया, तब तक भाटगण निःसन्देह सत्यघटनाओंको लिखने और अपने पूर्वजोंकी ख्यातिको अजर अमर करनेमें लगे हुए थे, जावके समकालीन व्यासजीके समयसे कवियोंमें कैलिऑपीकी पूजा मेवाडके वर्तमान विख्यात लेखक वेनीदासजीके समय तक होती चली आई, कविगण पश्चिम भारतके मुख्य इतिहास लेखक हैं, यद्यपि यह नहीं कह सकते कि उनके सिवाय कोई दूसरा नहीं है और उस प्रसंगमें उनकी कमी भी नहीं है, कसर है तो यह कि वह अपनी एक प्रकारकी मुख्य बोली बोलते हैं, जिसकी समझने योग्य साधुभाषामें अनुवादकी आवश्यकता है, तिसपर भी उनकी लेखनीसे बाग्वाहुल्यता और अस्पष्टताकी पूर्ति बहुतायतसे होती है राजपूत राजाओंकी कठोरताका प्रभाव कवियोंके काव्योंपर नहीं पड़ता, उनकी वाणीरूपधारा वे रोक टोक चली जाती है। हम व्यासजीको ५००० वर्षसे ऊपर हुए मानते हैं जावके समयके नहीं सम्पादक छन्द मात्राका नियम उनको अवश्य रोकता है यह बात इतिहास लेखककी स्वतंत्रताके रोकनेके लिये कम नहीं है, इसके प्रतिकूल राजा और काव्यकर्ताके मध्यमें एक प्रकारका स्वार्थ रहता है, जो प्रशंसा करनेसे विशेष धनका भागी होता है, इस बातसे इतिहासकी सत्यतामें कुछ दोष आजाता है, यह सुख्यातिका व्यौहार जैसा कि भाटोंके कहनेकी शैली है, राजस्थानके कवियों और इतिहास लेखकोंके मध्यमें बराबर उस समय तक होतारहेगा जबतक पूर्ण शिक्षित और स्वतंत्र लोगोंकी एक ऐसी श्रेणी समाजमें प्रगट न हों कि जो साहित्यविषयक व्यवसायके निमित्त सर्वसाधारणपुरुषोंमें सम्मानित होनेके सिवाय और किसी प्रकारका पारितोषिक न चाहै।

इतनेपर भी इतिहासलेखक कभी २ ऐसी सत्यवातें कहनेका साहस करदिखाते हैं, जो उनके स्वामियोंको बहुत बुरी लगती हैं जब उनका हृदय बहुत दुःखी होता है, वा अनीति देखकर सात्त्विकताके कारण कविजनोंका क्रोध बढ जाता है, तब वे इस बातकी परवाह नहीं करते, कि इस बातका परिणाम क्या होगा जो पुरुष उनको क्रोध दिलाता है, उसकी बुराई होती है, बहुतसे हठी लोगों-

१ ईसाइयोंमें जाव एक प्रसिद्ध ईश्वरभक्त ईसासे बहुत पहले हुआ है।

२ यूनानदेशमें वीररसात्मक काव्यकी अधिष्ठात्री देवीका नाम केलोपिआ था, जैसे हमारे यज्ञ विद्याकी अधिष्ठात्री देवी सरस्वती है।

को उनके निन्दा और उपहासक काव्योंकी फटकारनेके लिये उपहासका पात्र बनादियाहै, यदि वे नायक उनको क्रुद्ध न करते तो उनके नामपर अपयशका धब्बा न लगता, राजपूत गण कवियोंकी विषमयी वाणीको शत्रुओंके शस्त्रसे भी अधिक तीक्ष्ण समझतेहैं ।

राजपूतोंके दरबारोंमें सर्वसाधारणके व्यवहार सम्बन्धी बातोंमें कोई भी भेद की बात गुप्त नहीं रहती थी, उनमें सरदारोंसे लेकर नगरके द्वारपाल तक स्वार्थ लेतेहैं, उन घटनाओंको लेखवद्ध करनेवाला बड़ा लाभ उठाताहै, जब कि देशकी व्यवस्था रहित दशाके समय बड़े गम्भीर विषयोंका गुप्त रखना आवश्यक प्रतीत हुआ, और उदयपुरके राणासे किसीने कहा कि इन विषयोंको गुप्त रक्खाजाय, तो उन्होंने यह उत्तर दिया कि यह चौमुखी [चार मुखवाली शंकर-की मूर्ति] का राज्य है, भगवान एकलिंगजी इसके स्वामी हैं, मैं उनका प्रतिनिधि हूँ मेरा विश्वास उन्हींमें है, मैं अपनी पुत्ररूप प्रजासे कोई बात नहीं छिपाना चाहता सब प्रकारकी सर्वसाधारण ऐक्यता होनेपर भी इस प्रकारके गुप्त रहस्योंका प्रगटहोना देशके वैरियोंसे सामना करनेमें न्यूनताहोनेका एक बड़ा कारण समझाजाता है, परन्तु शासनमें इससे एक प्रकारका पिता पुत्र सम्बन्ध हो जाताहै, प्रजाजनोंके हृदयमें यदि पूर्ण राजभक्ति और देशभक्तिका भाव प्रगट न हो तो भी वह भाव कुछ न कुछ हृदयमें अंकित होही जाताहै ।

इन कवियोंके लिखे इतिहासोंमें एक बड़ी भारी न्यूनता यह है कि प्रायः उनमें उनके योधाओंकी वीरता और युद्धक्षेत्रके वृत्तान्त होतेहैं वीरजातिके चित्त रंजनके निमित्त काव्यकर्ता उनमें राजव्यवस्थाके व्यवहार कलाकौशल शांतिमय जीवनचरित्रके विषयमें कुछ भी नहीं लिखते, उनके प्रिय विषय प्रेम और युद्ध ही हैं भारतके प्रसिद्ध अन्तिम चंदकविने अपने ग्रंथकी भूमिकामें लिखाहै कि मैं राजस्थानके नियम व्याकरणका उपयोग विदेशी देशी राजदूतोंके व्यवहारसम्बन्धी बातें इस ग्रंथमें लिखूंगा इस प्रकारसे उस कविने कहकर अपने संकल्पको उस ग्रंथमें बहुतसे स्थलोंमें उपाख्यानोंके मिश्रसे उक्त विषयोंकी व्याख्या देकर पूर्ण कियाहै ।

इसके सिवाय भट्टकवि राज्यव्यवस्थाकी प्रत्येक कार्यवाहीके गुप्त रहस्योंसे परिचित होनेपर भी आपसके झगड़े बखेड़े और दरबारकी छोटी २ निन्दित बातोंमें अधिक लिप्त रहनेके कारण राजकार्य विषयक यथार्थ सम्मति प्रगटकरनेके उपयुक्त पात्र नहीं रहते ।

यह सब अवगुण रहनेपर भी इन देशी भट्टकवियोंके काव्योंसे बहुत सी कामकी उपयोगी बातें प्रगट होती हैं, यथार्थ घटनायें धर्मसम्बन्धी विचार व्यवहार प्रणाली जिनमें अनेकों उपयोगी बातें लिखी होनेके कारण ऐसी हैं कि उनके ऐतिहासिक प्रमाण होनेमें बहुत ही कम सन्देह है, चन्दकविने पृथ्वीराजरायसेमें बहुत सी ऐतिहासिक और भूगोलसम्बन्धी बातोंका वर्णन अपने महाराजाकी लडाईके वृत्तान्तमें दिया है, कि जिन युद्धोंको उसने स्वयम् अपने नेत्रोंसे देखा था, कारण यह कि वह महाराज पृथ्वीराजका मित्र राजदूत न था, एलची था और अन्तमें बहुत ही शोकसे पूर्ण कार्य उसने यह किया कि अपने महाराजाकी अप्रतिष्ठा न होनेके निमित्त उनकी मृत्युमें भी सहायक हुआ मेवाडके बड़े महाराणा अमरसिंहने जो शूर वीर साहित्यके सहायक तथा नीतिके जाननेवाले थे, चन्दकविके निर्माण किये हुए कवितावद्ध इतिहासोंको संग्रह किया था ।

दूसरे प्रकारके ऐतिहासिक लेख मन्दिरोंके दान भेंट तथा उनके गिरने टूटने और पुनरुद्धारके विषयमें पाये जाते हैं, ब्राह्मण लोग जो कुछ लिखरखते हैं, उनमें प्रसंग वश इतिहास और वंशावलियोंका वर्णन भी मिलता है, धर्मस्थानोंके माहात्म्य तथा धर्मक्रिया शास्त्रोंके विधान तथा स्थानसम्बन्धी रीतियोंके साथ धर्मसे सम्बन्ध न रखनेवाली घटनायें मिली हुई हैं, जैनियोंके शास्त्रार्थोंसे भी बहुतसी इतिहास सम्बन्धी बातें प्राप्त होती हैं, जो विशेष कर गुजरात और नैहरवालोंके सम्बन्धमें चालुक्यवंशके समयकी हैं, यदि ध्यानसे जैनधर्मकी पुस्तकोंको बांचा जाय कि जिनमें उन सब विद्यासम्बन्धी बातोंका वर्णन है जिनको प्राचीन समयके जैन जानते थे, तो हिन्दूजातिके इतिहासकी बहुत सी त्रुटि पूर्ण होसकती है, परस्पर विद्वेषी भारतके मतावलम्बी जैनोंका पक्षपात अवश्य ही इतिहासकी शुद्धताका द्वेशी था, जिसबातके आधारपर ब्राह्मणोंने अन्य जातियोंपर अपनी प्राधानता स्थापन की वह देशवासियोंका अज्ञान ही था और यह बात जानी जाती है, कि भारतखण्डमें तथा इसी भाँति मिस्रमें भी पुराने समयमें धर्माचार्य और राजाओंके मध्यमें एक प्रकारका एका था और वह इस लिये कि वे मिलकर देशके सर्व साधारण जनोंको अज्ञानरूपी अन्धकारमें आच्छादित कर अपने आधीन बनाये रखें ।

इस प्रकारके ऐतिहासिक और भौगोलिक वृत्तान्तसम्बन्धी पुस्तकें जिनका उपस्थित होना मुझे विदित है, राजाओंके छन्दोबद्धचरित्र, ऐसे पुराण संबंधी

लेख, जनश्रुतिके दोहे × तथा सत्यतासे भरे प्रमाण शिलालेख सिक्के ताम्रपत्र अधिकारकी सनदें जिनमें राजसम्बन्धी बहुत सी मुख्य बातें लिखी रहती हैं इतिहास लिखनेवालेके लिये यह कुछ कम सामग्री नहीं है इसके सिवाय उस समयके दूसरे वृत्तान्तोंसे भी सहायता मिल सकती है जो पुरातन समयके मूर्ति आराधक और पश्चात्के मुसलमान लेखकोंकी पुस्तकोंसे पुष्टिको प्राप्त किये जा सकते हैं, मेरा जवसे इस सम्प्रेष्य देशके साथ राजकीय सम्बन्ध हुआ, तभीसे इसके पुरातन ऐतिहासिक लेखोंकी खोजमें लगा, और वह इस निमित्त कि जिसका वृत्तान्त यूरोपके लोगोंको अबतक कुछ भी विदित नहीं है उस जातिके विषयमें कुछ ज्ञान प्राप्त हो, और जिसमें दोनों ओरके पक्षवालोंको लाभ पहुँचे इस प्रकार मुझको इंगलिस्तानके साथ राजकीय सम्बन्ध बढ़ाना उचित जान-पड़ा । यदि इस विषयको उन्हें मैं स्पष्टतासे बताने लगूँ तो पाठकोंको यह बात निरस प्रतीत होगी, कि मैंने राजपूतोंके छिन्न भिन्न इतिहासको, किस प्रकार इकट्ठा करके उनके आगे धरा है पुराणमें दीहुई पवित्र वंशावलीसे मैंने अपना कार्य आरंभ किया है, महाभारत चन्दकविकी कृति, जैसलमेर मारवाड मेवाडके बड़े बड़े ऐतिहासिक काव्य * खीची कोटा, डूँदी, तथा हाडावंशीय राजाओंके इतिहासोंको अवलोकन किया, जो उनके प्रतिष्ठित भाटोंके लिखे हुए हैं ।

इस समयके हिन्दूराजाओंमें सबसे अधिक विद्योन्नतिकी इच्छा करनेवाले आमेर वा जयपुरके राजा जयसिंहने अपनी जातिका इतिहास निर्माण करनेके लिये बहुत सी सामग्री इकट्ठी की थी, उसमेंका कुछ भाग मेरे भी हाथ लगा, मुझे इस बातका विश्वास होता है कि वहाँपर और भी

× इनमें कई एकमें उन बादशाहोंके नाम लिखे हैं जिन्होंने महमूद गजनवी और शहानुद्दीनके मध्यमें भारतपर चढ़ाई की फरिस्ता इतिहासमें इनके नाम नहीं दिये इनके द्वारा हमें अजमेरकी चढ़ाई और बयानाराजधानीकी विजयका पता लगा ।

* मारवाडके इतिहाससम्बन्धी काव्योंमें सूर्यप्रकाश, विजयविलास तथा आख्यायिकाओंके सिवाय दूसरे राजोंके चरित्रोंका भी कुछ अंश था, मेवाडके इतिहासविषयक खुमानरायसा एक नया ग्रंथ है, जो पुरानी सामग्रियोंसे निर्मित है, जिस समय महमूदने चित्तौरपर चढ़ाई की थी उस समयसे इसमें वर्णन दिया है, जो इस्लामधर्मावलम्बी सिन्ध निवासी किसी कासिमका पुत्र था, इसके सिवाय दूसरे जयविलास राजप्रकाश तथा जगतविलास काव्य हैं वे अपने नामसे प्रसिद्ध उन उन राजाओंके समयमें निर्मित हुए हैं, परन्तु इनमें पुराने ऐतिहासिक वृत्तान्त बहुत संक्षेपसे हैं, इसके सिवाय जयपुरके राजवंशका इतिहास दफ्तरोंसे मिला, और मानचरित्रमें राजा मानका इतिहास है ।

बहुत सी सामग्री विद्यमान थी, जो उनके क्रमानुयायी विषयवासनामें तत्पर स्वर्गवासी महाराजने एक वेश्याको अपना राज्य विभागकरनेके समय राज्य पुस्तकालयके बटवारेमें कदाचित देदी हो, राजस्थानभरमें यह पुस्तकालय सबसे उत्तम संग्रहका था, तैमूरवंशके कितने एक बादशाहोंकी समान जयसिंह भी अपना रोजनामचा लिखते थे, जिसका नाम उन्होंने कल्पद्रुम × रखा था, इसमें वे प्रत्येक घटना लिखतेथे, ऐसे समयके ऐसे पुरुषका लिखाहुआ ग्रन्थ मिलना इतिहासके लिये बहुमूल्य सामग्री है । महाराजा दतियासे मैंने उनके उस पुरुषाकी दिनचर्याकी पुस्तक प्राप्त की थी, जिन्होंने औरङ्गजेवकी फौजके बड़े बड़े सहायकारी राजाओंके बीचमें बड़ी प्रतिष्ठाका काम किया था, और स्काटने जिसमेंसे अपने दक्षिणी इतिहासमें बहुत सा लेख उद्धृत किया था । एक जैनीपंडितकी सहायतासे दश वर्ष तक मैं प्रत्येक ग्रन्थका सार निकालनेमें लगारहा; राजपूत इतिहासकी जिनमें कोई भी बात या घटना मिलसकती थी, उनके व्यवहार वा चालचलनका जिसमें कुछ भी पता लग सकता था, मेरा जैनी सहायक इस प्रकारके सब ग्रन्थोंका सार निकाल निकालकर संस्कृतसे निकलीहुई इन जातियोंकी सीधी बोलीमें अनुवाद करता जाता था । बहुत दिनोंतक साथ रहनेसे जिसे मैं सुगमतापूर्वक समझसकता था प्रतिदिन घंटोंतक परिश्रम करके तथा बहुत कुछ भी व्यय करके केवल उनके इतिहास ही प्राप्तकरनेका यत्न नहीं किया, किन्तु उनके धर्म सम्बन्धी साधारण विचार, उनके स्वाभाविक व्यवहारके ज्ञाता उनके सरदार और कवियोंके संग रहकर उनकी आख्यायिका और रूप भरी कविताओंको ध्यानसे सुनकर उसका सार निकाला, ज्यों ज्यों मैं विशेष शोध करता जाता था त्यों त्यों मुझे इस विषयमें अधिक ज्ञान प्राप्त होता जाता था; परन्तु जब मैं बहुधा रोगग्रस्त रहनेलगा; तब इस सुखदायक और परिश्रमी कार्यके छोड़ने तथा जन्मभूमि लौट जानेके निमित्त बाध्य हुआ, जब कि मैं हिन्दू जनोंकी पूजनीया भिनर्वा देवीकी ड्योढीमें जानेकी आज्ञा प्राप्त करचुका था, ठीक उन्हीं दिनोंमें

× जयसिंहकल्पद्रुमग्रंथ वैकटेश्वरप्रसमें छपाहै, यह रत्नाकरपंडितका बनाया है, इसमें वर्षभरके प्रतोंका वर्णन है दिनचर्याका ग्रंथ कोई दूसरा होगा ।

१ भिनर्वाशेामन लोगोंकी पुरातन कलाकौशलकी अधिष्ठात्री देवी है, जैसे हमारे यहां सरस्वती, ड्योढीका अर्थ पुस्तकालय है ।

मुझे देश-जाना पडा तथापि वहांसे थोड़ी सी प्राचीन पुस्तकें मैंने अपने साथ लीं, जिनकी जाँचका काम अब मैंने दूसरों पर छोडा, जो मैं संस्कृत और भाषा लिखे ग्रन्थोंका बडा संग्रह इंग्लेण्डको लाया था, वह मैंने रायल ऐशियाटिक सोसाइटीको देदिया, जहां कि वह पुस्तकालयमें धरा हुआ है, अभीतक भी उसमेंसे बहुत सी जांच नहीं हुई, सम्भव है कि जांच करने पर उसमें बहुत सी इतिहास सम्बन्धी नई बातें निकलें मुझे केवल इतने ही यशका पात्र बनना है, कि मैंने यूरोपदेशके निवासियोंको उनसे परिचित कर दिया मुझे आशा है कि इससे दूसरे लोगोंको भी इसी प्रकारके यत्न करनेका उत्साह बढ़ेगा ।

अवतक जो यूरोप निवासियोंको इन लोगोंका थोडा सा ठीक २ वृत्तान्त ज्ञात हुआहै उस ज्ञानसे यूरोप निवासियोंको अन्यराज्योंकी अपेक्षा इस विभागके महत्त्वका कुछ मिथ्या भ्रम होगया है, यदि यह मानाजाय कि कविजनोंने उसके वर्णनमें अतिशयोक्ति की है तो भी इसमें कुछ संदेह नहीं कि राजपूत राज्योंका वैभव इस देशके पुरातन इतिहासके समयमें निश्चय ही बढ़ाचढ़ा होगा, प्राचीन समयमें उत्तरीभारत बहुत ही धनी था, इस का सिंधु नदीके दोनों किनारेवाला भाग दाराकी सबसे अधिक ऐश्वर्य शालिनी सूवेदारी थी, इसकी विचित्र वटनायें इतिहासके लिये बहुत सी सामग्री प्रस्तुत करती हैं. राजस्थानमें ऐसा कोई छोटा राज्य भी नहीं है, जिसमें धर्मापिलोकी समान रणभूमि न हो और न कोई ऐसा नगर है कि जहांपर लियोनिडास जैसा वीरपुरुष जन्माहो, परन्तु उन वटनाओंको समयके परदेने जिन्हें इतिहास लिखनेवालेकी विचित्र लेखनी अत्यन्त बड़ाईका पात्र बनाती लुप्त कर दिया, डेलफ्ससे सोमनाथकी तुलना कीजाती. भारतकी लूटका माल

१ ईरानका बादशाह दारा ईसासे ५२१ वर्ष पहले गद्दीपर बैठा या वह ईसासे ५०० वर्ष पूर्व भारतमें आया और सिंधुका देश अपने आधीन किया वह ईसासे ४८५ वर्ष पहले मरा ।

२ यह उत्तर और पश्चिम यूनानके बीचकी एक तंग घाटी है ।

३ ईसासे ४८० वर्ष पहले ईरानके बादशाहने यूनानपर चढ़ाईकी उस समय वहांके छोटे २ राजाओंने मिलकर वीर राजा लियोनिडासको धर्मापिलोकी घाटीमें ८००० सेनाके सहित ईरानियोंसे लड़ने भेजाथा, अन्तमें सेनाकी विश्वासघातकतासे ईरानियोंसे उसकी सब सेना मारीगई ।

४ यूनानदेशके एल्फीनगरका प्रसिद्ध सूर्यमंदिर है ।

लीवियन महाराजकी समृद्धिकी समान ठहरता, और यदि पाण्डवोंकी सेनाका समूह जर्कसीजकी सेनासे मिलजाता तो उसकी सेनासमुदाय उसके सामने कुछ भी नहीं जँचती, परन्तु हिन्दुओंके यहां या तो हेरोडाटस और जेनोफनकी समान इतिहास लिखनेवाले हुए ही नहीं और हुए हों तो अभाग्यवश उनके ग्रंथ लुप्त हो गये ।

यदि इतिहासके प्रभावसे लोगोंके चित्तमें सहानुभूति प्रगट हो तो इन देशोंका इतिहास लोगोंके मनको खँचनेके लिये अत्यन्त ही मनोहर होता, कई पीढ़ियोंतक स्वाधीनता रक्षाके लिये एक वीरजातिका लड़ाई झगड़े करते रहना अपने पिता पितामहकी धर्मरक्षाके निमित्त अपनी प्रियवस्तुकी भी हानि सहना, और प्राणपणसे भी शूरतापूर्वक अपने सत्त्व और जातीयस्वतंत्रताको बचानेके निमित्त किसी प्रकारके भी लालचमें न आना, यह सब मिलकर एक ऐसा चित्र खँचते हैं कि जिसका विचार करनेसे हमारे रोंएं खड़े होजाते हैं, जिन स्थानोंमें यह घटनायें हुई थीं यदि मैं उस उत्साहयुक्त आनंदका एक अंश भी अपने पाठकोंके हृदयमें प्राप्त कर सकूँ तो उस अपनी उदासीनतापर विजय प्राप्त करनेमें उत्साहरहित न हूँगा, जिसके निमित्त हमारे देशवासी भारतसम्बन्धी अधिक ज्ञान प्राप्त करनेका कुछ भी उद्योग नहीं करतेहैं इस बातकी मुझे शंका नहीं है कि जो नाम हिन्दुओंके निमित्त प्यारे सार्थक तथा हितकारी हैं हमारे यूरोपनिवासी उन नामोंको सुनकर कर्णकटु और निरर्थक समझकर उकतावेंगे, कारण कि यह बात सदा याद रखने योग्य है कि पूर्व देशके सभी नाम किसी न किसी शारीरिक वा मानसिक गुणके बोधक होतेहैं, पुराने नगरोंके खंडहरोंमें बैठकर मैंने उनके टूटे फूटे विषयकी कहावतोंको ध्यान देकर सुनाहै अथवा उनकी वीरताकी चरचा उनके सन्तानोंके मुखसे उन स्मारक चिह्नोंके समीप स्थित होकर जो उनके स्मरणके निमित्त बनाये

१ यह बादशाह अपनी समृद्धिके लिये प्रसिद्ध था, लीविया एशिया माइनरका एक प्रसिद्ध भाग है, यह सम्राट ईसवी ५४६ और ५६० के मध्यमें राज्य करताथा ।

२ यह ईरानके बादशाहका पहला बेटा था; यह ईसासे ४६५ वर्ष पहले हुआ इसने जल स्थल सम्बन्धी २६४१४६० सेना लेकर ईरानियोंको जीता था ।

३ यह यूनानका विख्यात इतिहास लिखनेवाला हुआ है, ईसासे ४८४ वर्ष पहले इसका जन्म हुआथा, इसका लिखा इतिहास बड़ा प्रामाणिक है ।

४ यह विज्ञान इतिहासलेखक शुक्रातका मित्र और शिष्य था, इसका जन्म ईसासे ४४४ वर्ष पहले, ईरानकी राजधानी ऐथेन्समें हुआ था ।

गये हैं श्रवण की है जिस समय मरहटे इस देश को नष्ट कर रहे थे उनके साथ रहकर मैंने बहुतसे स्थानों में निवास और भ्रमण किया है, जहाँपर कोई परस्पर की लड़ाई वा युद्ध हुआ है, अथवा विदेश के वैरियों ने आकर आक्रमण किया है, इस प्रयोजन से कि युद्ध में मृतक हुए प्राणियों के गँवारपन के स्मारक चिह्नों परसे उनके नाम तथा स्मारक का कुछ अंश पाठ करूं, उनके इतिहास और चालचलन की अनेक बातें उनकी कहानियाँ और लेख बताते हैं, किसी मंदिर वा किसी विजय-स्तम्भ के बनने अथवा उसके जीर्णोद्धार विषयक कविता भी वीते हुए समय के विषय में हमारे ज्ञान की कुछ वृद्धि करने को समर्थ हो सकती है, इस समय जो मध्य और पश्चिम ओर के भारत का शासन करते हैं, उन राजकुलों की प्राचीनता के विषय में हमें केवल दो खान्दान ऐसे मिले हैं, कि जिनकी उत्पत्ति इतिहास सम्बन्धी सम्भावना की सीमा के वहिर्भूत है, और शेरराज्यों की वर्तमान स्थापना, तथा यवनों की युद्धसम्बन्धी उन्नतिके संग संग होने से उनके इतिहासों की पुष्टि उनके विजेता यवनों के इतिहासों से होती है, जैसलमेर मरुस्थल और मेवाड़ के कितने एक छोटे छोटे राज्यों के सिवाय, वर्तमान समय के सभी राजवंश यथार्थ में यवनों की चढाई के पश्चात् वर्तमान स्थानों पर स्थित हैं । परमार और सोलंकी की समान दूसरे बड़े बड़े राजा जो धार और अनहलवाड़ा में राज्य करते थे कई सौ वर्ष बीते कि वे लुप्त होगये ।

मेरा सिद्धान्त यही रहा है कि भारतीय और पुराने यूरोपीय वीरजाति एक ही वंशवृक्ष की पृथक् पृथक् शाखायें हैं, और इसी भाव के प्रमाणित करने का मैंने उद्योग किया है, जैसा कि पहले समय में यूरोप में रिवाज था, और जिसके वचे खुचे चिह्न अवतक हमारी जातिके शासन की रीति में पाये जाते हैं, मैंने भारत में उस प्रकार की जागीरदारी की रीति होने के प्रमाण में बहुत कुछ लिखा है, इस बात को मैं मानता हूँ कि इस प्रकार के अनुमान की सत्यता में सन्देह हो सकता है, तथा लोग इसका उपहास भी कर सकते हैं, पर मैंने अपने ज्ञान जो कुछ प्रमाण देकर लिखा है इसमें किसी प्रकार की हठधर्मी वा पक्षपात नहीं किया है, अब लोगों में ऐसी बुद्धि आ गई है कि इस प्रकार के ग्रंथकार के लेखों से कोई विचलित नहीं हो सकता, जो केवल अनुमान के भरोसे अपनी बात को प्रमाणित रखना चाहते हैं तो भी ऐसा समझ में आता है कि समय के संग संग बहुतसे असत्य विचार प्रगट होने से हम उलटे भ्रम में पड़ जाते हैं, और पूर्व पश्चिम देशवासियों की उत्पत्ति एक ही वंश से होने में शंका करने लगते हैं, इतने पर भी मैं अपने प्रमाणों को निष्प-

क्षतापूर्वक सर्वसाधारणके सामने धरताहूँ, दोनों जातियोंकी जो समानता मैंने प्रमाणित कीहै, यद्यपि उसमें विवाद होसकताहै तो भी विचारके साथ पढ़नेसे पाठकोंका श्रम निष्फल न होगा, किन्तु उनकी इच्छा इस विषयमें विशेष शोधकी होगी मुझे आशा है कि बुद्धिमान मेरी इस खोजकी सराहना करेंगे; जो मैंने इस विषयकी भूलीहुई कथाओं तथा अपूर्णलेखोंकी टिमटिमाती हुई ज्योतिके सहारेसे बड़े अँधेरेवाले पुराने सोतमें प्रवेश करके उस बातको प्रकाशमें लानेके निमित्त यत्न कियाहै ।

मुझे विदित है कि इस ग्रंथकी बहुत सी ऐसी बातेंहैं, जो सर्व साधारणको क्षमा करनी होगी; और उन त्रुटियोंके क्षमा करनेके लिये मुझे केवल यही कहकर संतोष दिलाना होगा कि मेरा स्वास्थ्य विगडगया था । और उसके अन्यायसे संग्रहवाले ग्रन्थको अपूर्ण स्थितिमें प्रगटकरना मेरे लिये कठिन ही नहीं किन्तु दुःसाध्य होगया था, यहां यह कहना भी अनुचित न होगा कि मैंने इस विषयको इतिहासकी कठिनाई भरी लेख शैलीसे गठित करना नहीं चाहा था, जिससे कि राजनीतिके जाननेवाले और जिज्ञासु विद्यार्थियोंकी लाभदायक बहुत सी बातें इसमें छूटजातीं, मैं इस ग्रन्थको ऐतिहासिक सामग्रीके एक बृहत संग्रहकी समान आगेके लिये इतिहास लिखनेवालोंकी सहायतार्थ उपस्थित करता हूँ; इस विषयमें मुझे इस बातकी चिन्ता नहीं कि इस पुस्तकको मैंने बढादिया, पर चिन्ता यही है कि इसमें सर्व साधारणको लाभदायक बातें कहीं छूट न जायँ ।

अब मैं बहुत न बढाकर इस भूमिकाको अपने मित्र तथा सम्बन्धी मेजर वागके निमित्त धन्यवाद दिये बिना समाप्त नहीं करसकता कि जिन्होंने बड़ी बुद्धिमानीके साथ कारीगरीके उन चित्रोंको तैयार करके कि जिनका सम्बन्ध इस पुस्तकसे है जगतको कृतज्ञताका परिचय दियाहै ।

राजस्थानके हिन्दी अनुवादकी

भूमिका ।

आज हम अपने देशवासियोंके सम्मुख एक ऐसी वस्तु लेकर उपस्थित होते हैं जिसका घनिष्ठ सम्बन्ध हमारे देशकी उन्नति और अवनतिसे है, भारतवर्ष संसारमें आदर्शरूप है, इसका सौभाग्य और दुर्भाग्य अलौकिक ही है, यहांका धर्मभाव अलौकिक है; जब कि पाश्चात्य शिक्षाका प्रभाव हमारी सब ही वस्तुओंपर हुआ. और इस समयके विद्वान् उसी शैलीको अपनी उन्नतिका भार मानते हैं इस विषयमें यदि विशेष विचार कियाजाय तो यथावत् इतिहास शिक्षाकी बहुत आवश्यकता है, सम्पूर्ण बुद्धिमानोंका इस विषयमें एक मत है कि इतिहासकी शिक्षापर ही देशकी उन्नति और अवनति निर्भर है, यदि समयानुसार अच्छे और सच्चे इतिहास देशवासियोंको पढ़ने और सुननेको मिलें तो उनका प्रभाव देशपर अच्छा और सच्चा होताहै; पक्षपातसे भरे और व्यंग भाषामें लिखे इतिहास अपना यथार्थ प्रभाव दिखानेके बदले जनसमाजमें एक प्रकारका उलटा असर करते हैं; किसी भाषाका भंडार यथावत् पूर्ण उस समय ही समझा जाता है जब कि उस भाषाके बोलनेवाले मनुष्य समाजके लिये जितनी आवश्यक सामग्री हैं सब ही उसमें विद्यमान हों, हमारे इस इतने लम्बे चौड़े देशकी सार्वजनिक भाषा हिन्दी ही है दूरदेशमें जाकर चाहें जो कुछ शब्दभेद वा अक्षर भेद उसमें उपस्थित होजायँ परन्तु न्यूनाधिक सब ही प्रान्तिक भाषायें अंग प्रत्यंग रूपमें हिन्दी भाषाके भेद हैं । इस समय यदि दृष्टि पसारकर देखाजाय तो इस देशके लिये हितकारी हिन्दीभाषामें कोई ऐसा इतिहास नहीं है जो इस देशके निवासियोंको शिक्षाका देनेवाला हो ।

प्रचलित इतिहास विशेषकर अंग्रेजलेखकोंद्वारा लिखित और प्रकाशित हैं, आवश्यकतानुसार उन्हींके अनुवाद भाषामें हुएहैं, कुछ भाग मुसलमानोंद्वारा प्रकाशित भी विद्यमान हैं, जिनमें कोई २ तो फारसीमें लिखित बहुत पुराने इतिहासवेत्ताओंके परिश्रमका फल है, हिन्दीभाषामें तो इतिहास और इतिहास

लिखनेवाले दोनोंहीकी संख्या इनीगिनी है, अनेक कारण तथा समयानुसार आवश्यकताके ध्यानसे यह सब ही इतिहास किसी न किसी अंशमें अपूर्ण और उपयोगी हैं ।

अंग्रेजोंके लिखेहुए अनेक इतिहासोंके देखनेका अवसर प्राप्त हुआहै, उनमें जहाँ तहाँ भेद पायाजाताहै, एक लेखक पौरसकी कथा एक रीतिपर लिखताहै तो दूसरा दूसरी रीतिपर लिखताहै, एक सिकन्दरके पंजावसे आगे न बढ़नेका कारण उसकी सेनाका आज्ञा भंग करना बताताहै तो दूसरा वरसातके आजानेको ही प्रधान कारण मानता है इसी भाँति अनेक स्थलोंमें विदेशियोंद्वारा लिखित इतिहास संभ्रमसे पूर्ण और अग्राह्यहैं विदेशी लेखक हमारे देशके आचार व्यवहार धर्म कर्म रहन सहन किसीसे भी पूर्ण रूपसे परिचित नहीं हैं, इस बातको अनेक विद्वान् अंग्रेजोंने भी स्वीकार कियाहै, ऐसी अवस्थामें उन विदेशी लेखकोंकी आलोचना हमारे पुरातन धर्माचारपर कैसे ग्राह्य होसकती है प्रचलित इतिहासोंमें अधिकांश बात अनुमानसे लिखी गई हैं, किसी विषयका छायाभात्र ज्ञान हुआ कि उसपर एक बड़ी आलोचना युक्त पुस्तक बना डाली एक ऐसा स्थान जिसमें कभी प्रवेश करने-तकका अवसर नहीं मिला जिसके विषयका इतना ज्ञान भी नहीं कि किस जाति-का किस धर्मका कैसा आदमी इसका मालिक था, किस समय कैसे उसके अधिकारमें वह घर आया; और कबतक किस स्वभाववाले कितने स्वजनोंने उसमें निवास किया है, उस मकानके सहस्रों वर्षके पड़े खण्डहर (कि जिसमें केवल एक दो । दीवारके सिवाय मट्टी ही मट्टी पड़ी है,) के पास खड़े होकर आप कैसे कह सकते हैं कि इसमें इस ओर रसोईका मकान था; इस ओर बैठनेका कमरा था दुतल्ले पर घरके स्वामीकी स्त्री बैठती थी, बाहर उसके पशु बाँधे जाते थे इत्यादि यदि दैवदश उसमें कहीं कोयले पड़े मिल गये तो वस अनुसंधान करनेवालोंको मस्तक लडानेकी एक अच्छी समस्या मिलगई, एक कहैगा कि निश्चय है कि यह कोयलेवाला भाग इस मकानके रसोई बनानेका स्थान है, दूसरा कहता है नहीं यह मकान जलकर नष्ट हुआ है कोयलोंकी अधिकाई इसको स्पष्ट कर रही है यदि तीसरे तत्त्ववेत्ताने अपना मस्तक लडाया तो वह सिद्ध करताहै कि यह पूर्व समयकी लोहेके शोधनेकी भट्टी थी जब हम विचारके साथ पूछें कि इनमें किसकी बात सत्य है तो आप किसके वचनको ग्राह्य कह सकते हैं परोक्षकी बात है कोई हस समयका मनुष्य जीवित नहीं किसी पुस्तकमें उसका विवरण नहीं

अनुमान भी तीन पृथक् २ स्वरूपमें हैं ऐसे अवसरपर विचारशील यही सिद्धान्त करेंगे कि उस खण्डहरके आस पासके ग्रामोंमें जो जनश्रुति उसके सम्बन्धमें चली आती है उनको ध्यान पूर्वक सुनें उस देशका रहन सहन जो प्राचीन कालमें था उसको मनन करें फिर अनुमानसे निर्धारित फलोंको विचारें ऐसी अवस्थामें यदि उनको पूर्वकालका ज्ञान यथार्थ न होगा तो भी यथार्थके इतने निकट पहुँच जाँयेंगे कि वह सिद्धान्त सर्व ग्राह्य होगा ।

यदि इसी प्रथापर हमारे देशके इतिहास तत्त्व प्रगट करनेवाले विद्वान् अपने २ अनुमानके संग इस देशकी पिछली रीति नीति शासन प्रणाली रहन सहनका ध्यान करते हुए अपने यहांके इतिहासोंको लिखते तो आज हमको यह आपत्ति न करनी पडती, सब कुछ विद्यमान रहते भी भारतवर्ष इतिहास हीन नहीं कहा जासक्ता ।

यह कहना ही पडता है कि प्रचलित इतिहासोंके प्रकाशक गण पक्षपात और गौणयुक्तिको इतिहास लिखते समय हृदयसे पृथक् नहीं करसके हैं, धर्म एक ऐसी वस्तु है जो मनुष्यकी बोलचाल खानपान पहनाव सबमें स्वयं मिश्रित रहता है, किसी धर्म वा किसी जातिका लेखक अपनी लेखनीसे विपक्षियोंकी प्रशंसा नहीं करते तो कठोर आलोचना भी नहीं करते, वे अपने सद्गुणका यही परिचय देसकते हैं, परन्तु जिन विद्वानोंने भारतके हित अनहित पर कुछ ध्यान न देकर केवल एक दूसरेके आधारपर वा छायामात्रपर स्वतन्त्र लेख लिख डाले हैं, वह लेख कैसे इस दशका विवरण देनेवाले इतिहास कहे जासकते हैं, तिसपर भी अनेक इतिहास तो मिशनरी गणोंके निर्मित हैं ये तो विशेषकर इसी अभिप्रायसे निर्माण किये गये हैं कि हिन्दूजातिके अशोध वालक उन्हींसे ज्ञान प्राप्त करके अपने पितृव्योंको मांसाहारी, ब्राह्मणोंके हाथका खिलोना, तथा मूर्ख जानते रहें, और अपने घरको न पहचाननेवाले वत्सकी भाँति जहांतहां भटकते फिरें ।

पाठ्य पुस्तकोंमें जो इतिहास हैं वह बहुधा इसी प्रकारके हैं और उनका प्रभाव जो हिन्दू सन्तानपर पडरहा है वह प्रत्यक्ष है, अंग्रेजीसे अपरिचित भारत वासियोंका यह एक मात्र विश्वास होगया है कि अंग्रेजी विद्या स्त्रीधर्मपर आरुढ़ रखनेकी जादू सा असर रखती है, अधिकांश इसी भयसे अपनी संतानको अंग्रेजीशिक्षा नहीं देते, परन्तु इस संभ्रमका कारण और ही है अंग्रेजी वर्णमालाके ३२ अक्षर कुछ जादू नहीं करते, अंग्रेजीमें निर्मित पुस्तकोंका आशय ही देशके नौजावनोंको धर्मच्युत करता है और वह भटकते फिरते हैं विज्ञ पादरियोंके द्वारा

प्रकाशित प्रथम पुस्तकसे आरम्भ कर अन्तिम पुस्तक तक स्त्रीष्ट धर्मके उपदेशोंसे तथा हिन्दूधर्मकी हीनतासे पूर्ण होगी तो वह किस प्रकारसे आर्यकुलके बालकको उसके धर्म कर्म और देश हितका ज्ञानोपदेश करसकती है ।

प्रायः इसी प्रकारकी दशा मैक्समूलर आदि संस्कृतके महा विद्वान् अंग्रेज लेखकोंके अंग्रेजी अनुवादमें पाई जाती है; कोई आर्य कुलमणि पूर्वजोंको गोभक्षक सिद्ध करता है, कोई वर्णाश्रम धर्मको आधुनिक प्रमाणित करता है कोई विधवा विवाह सिद्ध करता है इस बातका न्याय हम विचारवान् पाठकोंपर ही छोड़ते हैं कि वेदप्रतिपादित हिन्दूधर्मके सिद्धान्त अनादि वा सादि हैं अथवा जैसा मेगस्थनीज मयु सन् २७८ का लिखना सत्य है जो कि वेक्ट्रिया [तुर्कस्तान] के महाराजा सल्कसका दूत था और दश वर्षके लगभग मगधदेशके महाराज चन्द्रगुप्तकी सभामें रहा था, वह लिखता है कि उच्च-वर्णमें ब्राह्मण और क्षत्रिय थे जो गोरे रंगके होते थे इत्यादि खेदसे यही कहना पड़ता है कि हमारे देशकी सच्ची अवस्थासे अनभिज्ञ तथा अन्यमतावलम्बी होनेके कारणसे ऐसे २ अविश्रान्त परिश्रम करनेवाले, संसारमें विद्या बुद्धिके सूर्य अकृत्रिम साहसके गुणोंसे अलंकृत, घोर अंग्रेजी विद्वान् भारतकी इस आवश्यक वस्तुकी उचित संयोजना न करसके ।

प्राचीन तथा नवीन मुसलमान लेखकोंके इतिहासोंको देखाजाय तो उनकी आलोचना भी ऊपरकी आलोचना पंक्तिको फिर उद्धृत करनेसे होजाती है, वरन इनमें एक और भी विशेषता पाईजाती है मुसलमानोंने अपने धर्म कर्म और रीति नीतिको हिन्दुओंमें प्रचार करनेके निमित्त स्त्रिष्टधर्मावलम्बी पादरी गणोंकी सी युक्ति नहीं की, वरन अन्याय और बलसे उनमें परिवर्तन किया, इस कारण उनके लेख तो पक्षपातकी प्रतिमूर्ति ही हैं, फारसीका सर्वश्रेष्ठ इतिहास फारिस्ता ऐसे बादशाहकी आज्ञासे निर्माण किया गया था जो अपनी हठधर्मीके लिये प्रसिद्ध था, जिसके अत्याचार हिन्दुओंके श्रष्ट देवालयोंके स्वरूपमें अभी-तक विद्यमान हैं, ऐसे धर्मद्रोही बादशाहकी आज्ञासे बनाहुआ इतिहास हिन्दुओंके धर्म और नीति रीतिका सच्चा इतिहास कैसे कहा जासकता है, दूसरी एक प्रथा मुसलमान लेखकोंमें व्यर्थ प्रशंसाकी पाईजाती है, ठकुरसुहाती कहनेमें वह किसी बातका ध्यान नहीं करते, यह दोष सत्यको छिपानेमें बड़ी सहायता देता है और ऐसे ही कारणोंवश इन इतिहासोंको भी ग्राह्यमानना हृदयकी शक्तिसे बाहर

होगयाहै, जिन लोगोंने हिन्दूधर्मके मिटानेके लिये वर्षों हिन्दूजातिका रक्त बहायाहै हिन्दुओंका सच्चा इतिहास वे लोग कब लिखसक्ते हैं ।

अब इने गिने भाषाभंडारके इतिहासोंको देखें तो इनमें अधिकांश तो अंग्रेजों द्वारा लिखित अंग्रेजी इतिहासोंके अनुवाद हैं और वे देशी विद्वानोंद्वारा लिखित हैं, परन्तु शोकका विषयहै कि अपने रत्नभंडारकी कुंजी संस्कृत विद्याकी अनभिज्ञता तथा इसकी दूसरी भाषा पाली प्राकृत आदिका न जानना तथा पुरानी संस्कृत पुस्तकोंका हठी और उत्साहरहित मन्त्रियोंके हाथमें रहना आदि अनेक कारणोंने हमारे देशी लेखकोंको भी अपनी स्वतंत्र पुस्तकोंको अंग्रेजोंकी लिखित पुस्तकोंके आधारपर लिखनेको बाध्य कियाहै, और यह आवश्यक वस्तु एक प्रकारसे आनाविष्कृत ही रहगईहै ।

सात आठ सौ वर्षके लगभग मुसलमान राजाओंकी प्रजा बनी रहकर हिन्दूलेखकोंकी रीति नीतिने भी यवनोंकी समान प्रशंसाकी शैली स्वीकार की है, हिन्दीभाषाके सुयोग्य लेखक देशहितकारी राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द भी अपने अमूल्य इतिहास तिमिरनाशकको इस कलंङ्गसे मुक्त नहीं करसकेहैं, अनेक लार्ड और गवर्नरोंके कार्यकी यथावश्यक आलोचना करनेमें वे हिचक गयेहैं, जिन मर्मतत्त्वोंको वे सत्यप्रिय अपनी जातिके गौरवस्तम्भ सुविज्ञ अनेक अंग्रेज × स्वयं लिख गयेहैं, उन्हीं बातोंके लिखनेमें राजा साहबने अपने स्वार्थकी हानि जानीहै, ऐसे देशहितैषियोंने भी इस बातका ध्यान नहीं किया, कि ब्रिटिशगवर्नमेंट कैसी सत्यप्रिय न्यायपरायण और उदार है, जिसने प्रत्येक व्यक्तिको अपने विचार स्वतंत्रतापूर्वक प्रकाश करनेका अधिकार देरक्खाहै, इस समय भी ठकुरसुहाती लेखोंकी भरमार हो तो फिर निस्तारका समय कौन सा होगा

× सत्यप्रिय वर्कमिल आदि अपने लेखोंमें किस प्रकार अत्याचारी गवर्नरोंकी आलोचना करतेहैं वर्क लिखित ।

“Impeachment of Warren Hastings.

“Sir Henry Mein has pointed out with admiral truth the consequences in India of the fact that English classical literature towards the end of the last century was “saturated with party politics.”

“This” he says “would have been a less serious fact if, at this epoch, one chief topic of the great writers and rehotoricians, of—

प्रकाशित पुस्तक एक ऐसी वस्तु है जो चिरकाल तक जैनसमाजपर अपना प्रभाव डालती है, और जब पुस्तकपर टिप्पणी नहीं रहती तो उसके सस्वन्धकी अनेक बातें कुछ की कुछ समझी जाया करती हैं, यदि मिथ्या तथा अपूर्ण सस्वादयुक्त ग्रंथ बहुत समयके पीछे जब उसके लेखक आदिका परिचय कुछ न रहा हो मिले तो कौन कहेगा कि इस पुस्तकमें अमुक बात पक्षपातसे लिखी गई थी यह निर्मूल है यह घटना छोड़दीर्घ है, इस कारण या तो उन ऐतिहासिक ग्रंथोंपर टिप्पणी कीजाय या कोई सत्य इतिहास लिखाजाय ।

भारतवर्षके उन इतिहास वेत्ताओंमें जिनकी चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं तीन चौथाईकी सम्मति यही है कि इस देशके पुराने विद्वानोंमें इतिहास लिखनेकी प्रथा ही न थी, बडे २ समारोहोंमें इन्होंने अपने मुखसे यही आक्षेप किया है कि भारतवर्षकी ऐतिहासिक विद्या बड़ी अल्प है, उनको अपने लिखे वाक्योंके प्रमाणमें यही प्रगट करते देखा और सुना गया है कि यदि ऐसा नहीं है तो कोई प्राचीन इतिहास इस देशमें क्यों नहीं पाया जाता, इस प्रमाणको ग्राह्य मान लेना ही वास्तवमें ऐतिहासिक तत्त्व प्रगट करनेवालोंके हतोत्साह की पहली सीढ़ी है ।

प्राचीन समयका गृन्थलावद्ध तथा क्रमानुसार इतिहास विद्यमान न होनेका कारण यहांके निवासियोंकी इस विषयसे अनभिज्ञता वा आलस्य नहीं है, परन्तु

Burke and Sheridan, of Fox and Francis, had not been India itself. I have no doubt that the view of Indian Government taken at the end of the century by Englishmen whose works and speeches are held to be models of English style has had deep effect on the mind of the educated Indian of this day. We are only now beginning to see how excessively inaccurate were there statements of fact and how one-sided were their judgements.'

सरहेनरी मेनने प्रशंसनीय सत्यतासे प्रगट किया है कि अंग्रेजी साहित्यमंडार पिछली शताब्दीके अन्तिम समयमें भारतीय घटनाओंके सम्बन्धमें पक्षपातभरी युक्तियोंसे परिपूर्ण है, यदि वर्क शेरीडन तथा फॉक्स और फ्रांसिस सरीखे प्रसिद्ध लेखक और कविगण इस साखेका प्रधान विषय हिन्दुस्तानको न बनाते इतना हानिकारक न था, मैं निसन्देह कहता हूं कि शताब्दीके अन्तिम समयमें गवर्नमेण्टके कार्योंकी आलोचना जो अंग्रेजोंके ऐसे अनुकरण योग्य भाषाके ग्रन्थ और व्याख्यानोंमें की गई है, पढ़े लिखे हिन्दुओंके चित्तपर आज कैसा प्रभाव दिखा रही है, अब यह हमने विचारना आरंभ किया है कि वह घटनाओंका कितना घोर मिथ्या विवरण था और उनकी निरधारणा कैसी एक पक्षकी थी ।

दुर्भाग्य वश इस देशपर उत्तर पश्चिमके मार्गसे जो चढाई होती रही वही विशेष कारण है, चढाई करनेवालोंके तीन प्रधान कर्त्तव्य होते थे; पहला यथा सम्भव देशको लूट लेना, अनेक यवन बादशाहोंने चढाई करते समय अपनी सेनाके सिपाहियोंको यही लोभ दिया कि किसी भांति खैवरकी घाटी पार करलो, फिर तो ऐसे देशमें पहुँचजायगे जहां सुवर्ण उत्पन्न होताहै, दूसरा काम उन चढाई करनेवालोंका धर्म भ्रष्ट करनेका होता था, उनको यही लालसा रहतीथी कि जब देशको विजय करलिया तो क्यों नहीं वहांके निवासी विजेताके धर्मको स्वीकार करते, इस लालसाके पूर्ण करनेके लिये उनको बडे २ अत्याचार करने पडते थे, और देशकी विजयके लिये जितना रक्तपात होता था, उससे कहीं बढकर इस कार्यमें करना पडाथा, सौभाग्यकी बात है कि भारतीय समाजके धर्ममें दृढ होनेके कारण वे इस कार्यमें नाममात्रकी ही सफलता प्राप्त करसकेथे ।

तीसरा महानिन्दनीय कार्य इस देशकी उन्नतिपर ईर्ष्या और डाह करना था, उन्होंने अनेक शिल्प और कलाकौशल इस देशसे सीखकर कृतघ्नतासे यही गुरुदक्षिणा दी कि इस देशके शिल्पादिपर भी अत्याचार करना आरंभ किया, बडे २ विशाल मंदिर जो संसारमें शिल्पकार्यके लिये अद्वितीय थे, उनको नष्ट किया । बडी २ वैज्ञानिक प्रदर्शिनी और यंत्रादि भस्म कियेगये, लाखसे भी विशेष पुस्तकोंके भंडारको ऐसा बहाया कि अनेकों संसारसे लोप होगई ।

प्राचीन आर्यपुरुषोंने उन्नतिके शिखरपर पहुँचकर अपने अनुभवसे जैसा इस धर्मको चिर स्थाई जाना वैसा ही अपनी पुस्तकोंको भी अटल रखनेका उद्योग किया, उन्होंने मुद्रालयोंकी सहायतासे एक पुस्तककी अनेक प्रति नहीं की, वरन अपने ग्रंथोंको चिरकालतक संसारमें स्थित रखनेके लिये ताम्रपत्र और शिलाओंपर खोदकर संग्रह कियाथा, आश्चर्य नहीं कि ऐसे पुस्तकालय शत्रुओंकी चढाईके समय पहाडोंकी अगम्य गुफाओंमें तथा पुराने स्थानोंके गोपनीय भागों [तहखानों] में दाव दियेगये हों, कहींकहीं देवमंदिरोंमें तथा नवीन पद्धतिके म्यूजियम आदिमें अनेक ऐसे शिलालेख और ताम्रपत्र आदि पायेजातेहैं। और बौद्धोंके समयका तो विशेष वृत्तान्त उस समयकी टूटीफूटी धर्मशाला विजयस्तम्भ और मंदिर आदिसे ही मिलता है, और दूसरे उनके अनेक ग्रंथ जैनसम्प्रदायवालोंमें पुराने भी मिलजाते हैं ।

इसभांति अनेक आपत्तियोंका झेलनेवाला भारतवर्ष, अपने सर्वस्वको खोदे-नेवाला आर्यावर्त्त अपना पुराना इतिहास कहांसे प्रगट करसक्ताहै, जब इसके धर्मग्रंथ वेदमें [तमितिहासश्च पुराणश्च] इस प्रकार इतिहास शब्द विद्यमान है तब इसके यहां इतिहास होनेमें सन्देह नहींहै इसका जो कुछ शेष है वह इस वातके सिद्ध करनेको बहुत है कि यह देश इतिहास ऐसी आवश्यक वस्तुसे अनभिज्ञ नहीं था, इसका पूर्वकालीन अद्वितीय महाभारतग्रंथ आजतक इतिहासके नामसे विख्यात है। जहां इतिहास शब्द है, वहां उसका वाचक नहीं यह कब संभव होसक्ताहै, ऊपर लिखी दुर्घटनाओंको ध्यानमें लाकर यहांके निवासियोंको आलसीपनका लांछन लगना यथेष्ट जान नहीं पडता, वरन यह कहना उचित होगा कि फिर भी यहांके निवासी बड़े दूरदर्शी और साहसी निकले जो इतना कुछ बचा रक्खाहै ।

यह कहना अत्युक्त न होगा कि यूरोपीय समस्त इतिहासोंके मध्यभागमें ईसू ख्रीष्ट केन्द्रके समान विराजमान है प्रत्येक यूरोपीय देशनिवासी लगभग ईसासे उतने ही दिन पहलेकी शृंखलावद्ध कथा कहसक्ते हैं—कि, जितने दिन ईसाको इधर बीत गयेहैं इस गणितसे ४००० अथवा ५००० से अधिक-का इतिहास संसारमें लोप सा होगयाहै परन्तु भारतवर्षके इतिहासकी वह दशा नहींहै, इस देशका इतिहास इससे कहीं पुराने समयका मिलसक्ताहै, पाँच हजार वर्ष तो महाराज युधिष्ठिरको ही हुए हैं युधिष्ठिरका संवत् उनके राजसूय यज्ञसे चलाहै इसके ३०४४ वर्ष बीतनेपर विक्रमका संवत् चलाहै जिसको १९६२ में ५००६ वर्ष होतेहैं जिसके पीछे राज्य करनेवालोंकी एक तालिका भी हम यहां उद्धृत करते हैं ।

अब यह सिद्ध होगया कि युधिष्ठिर कुरुवंशमें एक प्रकार पिछले चक्रवर्ती राजा हुएहैं इनसे पहले अनेक नृपति होचुकेहैं फिर केवल ५००० या चार सहस्र वर्षकी ही ऐतिहासिक घटनाकी अटकल लगाना भ्रम ही नहीं महाभ्रम है ।

जिस विस्तृत ग्रन्थकी यह भूमिका लिखीजातीहै यद्यपि यह ग्रन्थभी अंग्रेजीका ही अनुवाद है परन्तु इस ग्रन्थके निर्माताने पच्चीस तिस वर्षतक इस देशके आचार विचारकी खोज कर इस ग्रन्थको लिखाहै । वह भूमिकामें लिखतेहैं कि भारतवर्षीय इतिहासके अनेक प्रधान स्रोत हैं, वेद, स्मृति, महाभारत, अष्टादश-पुराण, राज्यवंशावली, स्थानिक जनश्रुति, जगा और भाटोंके द्वारा कथित चरित्र-विशेष घटनासम्बन्धी कवितायें, टूटेफूटे इतिहास तथा शिलालेख आदि इन्हींमें

यथावश्यक परिश्रम करनेसे अनेक ऐतिहासिक तत्त्व ही नहीं निकलते वरन क्रमानुसार इतिहास प्रत्यक्ष होने लगताहै ।

टाड साहबने जिस श्रद्धा और भक्तिसे आर्यवंशकी क्षत्रियजातिका इतिहास लिखाहै ऐसी भक्ति सत्यपरायणता, और सच्चरित्रताका उल्लेख और किसी अंग्रेज लेखकसे वन नहीं पडाहै, टाड राजस्थानका अधिकांश सत्यपालनेमें है और इसीहेतु यह ग्रन्थ देशमें सर्वमान्य और ग्राह्य होरहाहै, इस ग्रन्थमें मेवाड-वीरोंका चरित्र पढ़नेसे उनके आचार विचारपर ध्यान देनेसे उनकी धर्मपरायणता समझनेसे तथा स्त्रियोंकी पतिभक्ति विचारनेसे पढ़ते २ मन ऐसा तदाकार होता है मानों यह सब वृत्तान्त आखोंके आगे होरहाहै मन कभी वीर कभी करुणा कभी वात्सल्य रसमें मग्न होजाताहै इस बातको पाठक पढ़कर ही समझ लेंगे कि इसमें वाप्पाराबलसे आरम्भकर महाराणा भीमसिंहके चरित्रतक मानों मोतियोंकी लड़ी गूँथी गईहै, ।

परन्तु इसमें भी सत्यवीर भक्त टाड अपने इस बृहत् ग्रन्थकी भूमिकामें स्पष्ट लिखतेहैं कि “ मेरा सिद्धान्त यही रहाहै कि भारतीय और पुराने यूरोपीय वीरजाति एक ही वंशवृक्षकी पृथक् २ शाखाएँ हैं और इसी भावको प्रमाणित करनेका मैंने उद्योग कियाहै ।

I have been so hardy as to affirm and endeavour to prove the common origin of the martial tribes of Rajsthan and those of ancient Europe.

जिसको औरोंने अनुमानसे माना उसीको सिद्ध करनेका उद्योग करना पक्षपात है फिर एक स्थानमें भूमिकामें ब्राह्मणोंकी स्वार्थपरायण वृत्ति बड़ी निकृष्ट भावनासे दिखाई है ।

The party spirit of the rival sects of India was doubtless, adverse to the purity of history ; and the very ground upon which the Brahmins built their ascendancy was the ignorance of the people. There appears to have been in India, as well as in Egypt in early times, coalition between the hierarchy and the State, with the view of keeping the mass of the nation in darkness and subjugation.

अर्थात् निश्चय ही भारतमें प्रतिद्वंद्वीजातियोंका पक्षपात इतिहासकी सत्यताके विपरीत है और देशवासियोंकी अज्ञानता ही ब्राह्मणोंका सर्वोच्च वनवैठनेका प्रधान कारण है अनुमान होताहै कि भारतवर्ष तथा पुराने मिश्रदेशमें वंश-प्रथाके पोषक (ब्राह्मण) तथा राजाओंमें इस कारण मेल था कि वह जाति

प्रजाको अन्धकार और आधीनतामें बनाये रखें, मानो ब्राह्मणोंने ऐसा किया, सम्पूर्ण हिन्दूजाति जिन ब्राह्मणोंकी प्रधानताको अपना पैतृक धर्म मानती है, जिनको देवता कहकर पुकारती है। उनपर यह अप्रमाणित लांछन सहसा टाड-साहबके अन्य मतावलम्बी होनेका प्रत्यक्ष फल है, यदि टाड साहब हिन्दू होते तो कभी आर्यकुलको उन्नतिपर पहुँचानेवाले कार्यपरायण तथा ब्रह्मवादी बनानेवाले भारतमार्तण्ड ऋषिगणोंपर यह दोषारोपण न करते, और यहां तो राजाओंपर भी लांछन लगाया है कि प्रजाको वशीभूत रखनेके प्रयोजनसे ही प्रजाको अज्ञानी रक्खा जाता था, यह लेख उक्त महोदयका उन्हींके कथनके विपरीत है वह पहले ही कह आये हैं कि—

The absence of all mystery or reserve with regard to public affairs in the Rajput principalities in which every individual takes an interest, from the nobles to the porter at the city-gates is of great advantage in the chronicler of events.

राजपूत राजागण प्रजासम्बन्धी कार्योंमें कोई भेद वा गोपनीयता अपनी प्रजासे नहीं रखते थे। इन विषयोंमें प्रत्येक मनुष्य प्रधानसे लेकर नगरका द्वारपाल तक स्वार्थ लेता था यह बात इतिहास लिखनेवालोंके बड़ी उपयोगी होती है, इस कथनके समर्थनमें मेवाडके राणाका उत्तर भी टाड साहबने लिखा है कि किसी समयमें आवश्यकतावश किसी व्यक्तिने राणाको समझाया कि अमुकभेद गोपनीय रखे जावें परन्तु राणाजीने उत्तर दिया कि यह एकलिंग शिवजीका राज्य है और मैं केवल उनका प्रतिनिधि हूँ मैं अपनी बालक (प्रजा) से कोई भेद नहीं रखता विचारिये तो जहां इस देशके राणागणोंकी यह सम्मति है वहां कैसे अनुमान किया जा सकता है कि उन्होंने प्रजाको अन्धा बनाये रखनेके लिये अनेक विषय प्रजासे छिपाये जैसा ऊपर कह आये हैं यह सर्वथा मान्य है कि टाड महोदयने अधिकांशमें पक्षपात रहित ही उल्लेख किया है। परन्तु जिन बातोंमें उन्होंने अपनी उक्तिसे काम लिया है उस बातमें अवश्य गोलमाल हुआ है। इसमें सन्देह नहीं कि पुराण फ्लासफी एक बड़ा गहन विषय है, उसमेंसे विषयोंका चुनना साधारण बात नहीं है, इसके लिये पुराण विद्यामें निपुण पंडितकी सहायताकी आवश्यकता थी, परन्तु टाड साहबको अन्यधर्मावलम्बी पंडितकी सहायता प्राप्त हुई जिससे प्रथम सृष्टिखण्डमें बहुत सी बातोंमें गड़बड़ होगई है और जिसको हमने परिशिष्टमें दिखाया है शकुन्तलाका पति

भरत;विचित्रवीर्यकी कन्याओंको व्यासजीका पढ़ाना वा स्वयं उनसे विवाह करना, अश्वमेध यज्ञको शीतकालकी संक्रांतिका त्योहार मानना, मेरुकी पुत्रीका नाम मेरा लिखना; आर्यावर्तकी पुण्यभूमिके आगे कुककी भूमि लिखना, अन्य देशोंके देवता तथा भारतके देवी देवता तथा ऋषि मुनियोंकी एकता सिद्ध करनेके लिये बहुतसे शब्दोंका स्वयं निर्माण करना, व्यासजीको शान्तनुका पुत्र मानना इत्यादि बहुत सी बातें ऐसी लिखी गई हैं जिनका वर्णन पुराणोंमें अन्य रीतिसे लिखा गया है और टाड साहबने उसको अन्य प्रकारसे लिखा है हमको इस बातके माननेमें कोई सन्देह नहीं है कि टाडसाहबने इसमें दूरदेशीसे काम नहीं लिया उन्होंने बड़ी मिहनत उठाकर यह काम किया है और ऐसा लिखा है कि इसके अनुशीलनसे बुद्धिमान बहुत सी कामकी बातें जान सकते हैं।

यदि हम इस पुराणविषयक ऐतिहासिक तत्त्वकी अनुवाद करते समय टिप्पणी देकर शुद्ध करतेजाते तो पाठकोंको इसमें नीरसता प्रतीत होती इस कारण पुराणादि ऐतिहासिक वृत्तांत जो टाड महोदयने लिखा है प्रथम छः अध्यायोंमें उसका सार लिखकर उसका पूरा वर्णन नोट टिप्पणी देकर परिशिष्टमें लिख दिया है कि जिससे पाठकोंको ऐतिहासिक मर्म भली भाँति स्पष्ट होजायगा ।

भारतवर्षके बहुत थोड़े ऐसे महात्मा हैं जिनको इतिहाससम्बन्धी कथाओंसे प्रेम हो कितनी ही बार कथा पुराण सुनते हैं पर इस बुद्धिसे कभी नहीं सुनते कि हमारे पुरुषाओंकी कुलपरम्परा कैसी थी और आजतक कितने महात्मा उस वंशको अलंकृत कर चुके इक्ष्वाकुसे महाराज रामचन्द्रजी तक ५८ ही राजाओंकी वंशसूची प्राप्त हुई है पर उन नामोंमें भी बड़ा भेद है फिर यह कैसे संभव होसکتा है कि आदि सृष्टिसे भगवान् रामचंद्रतक ५८ ही राजा हुए हों मेरी समझमें जो वंशवृक्ष पुराणोंमें दिये गये हैं यह मुख्य मुख्य राजाओंकी नामावली है सब लिखना तो असम्भव है कारण कि वाल्मीकिजीकी वंशावलीमें ३७ ही राजाओंका नाम पाया जाता है इससे स्पष्ट है कि वंशावलियोंमें मुख्य नाम लिखे गये हैं तब उन ५८ नामोंसे प्रत्येक राजाके राजत्व कालका औसत बीस वर्ष लगाकर सृष्टिके पाँच हजार वर्षका मानलेना हिंदूशास्त्रके अनुसार सिद्ध नहीं होसکتा जब कि हमारे यहां इस वैवस्वत मन्वन्तरके राज्यमें २८ वाँ कलियुग वर्तमान है और इससमय उसके ५००८ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं ।

वंशावलीमें जो कितने एक भिन्न २ समयके पुरुषोंकी समकालीनता लिखी गई है उनमें पुराणविद्याके अनुसार उन उन पुरुषोंकी तप और योगके द्वारा

दीर्घायु मानी गई है और राजा परीक्षितकी कई पीढ़ी बाद तक भी कितने एक पुरुषोंने ८० अस्सी २ वर्षतक राज्य किया है, टाड साहबने २० वर्ष औसतके माने हैं जो हमने आगे एक वंशावली उतारी है उसमें युधिष्ठिरसे यशपाल तक १२४ राजाओंने ४१५७ वर्षतक राज्य किया है जिसका औसत निकालनेसे ३३॥ वर्ष प्रत्येकके राजसम्बन्धमें आते हैं और उस सूची देखनेसे यह भी ज्ञात होसकता है कि टाड साहबने जो वंशवृक्ष नंबर दो में परीक्षितसे वंश चलाया है इसके उसके नामोंमें कितना भेद है इस वंशावली देखनेसे विदित होता है कि दिल्लीमें महाराज युधिष्ठिरसे यशपाल पर्यन्त १२४ राजा हुए हैं जिनका समय ४१५७ वर्ष ९ महीने और चौदह दिन है टाड साहबकी दी हुई राजावलीकी वंशावली और इसमें बड़ा भेद है टाड साहबने युधिष्ठिरसे राजपालतक ६६ राजा लिखे हैं इसमें ६९ हैं पर नामोंमें बड़ा भेद है इस लिये हम लिखते हैं—

राजा	वर्ष	मास	दिन	राजा	वर्ष	मास	दिन
१ युधिष्ठिर	३८	८	२५	१९ मेधावी	५२	१०	१०
२ परीक्षित	६०	०	०	२० सोनचीर	५०	८	२१
३ जन्मेजय	८४	७	२३	२१ भीमदेव	४७	९	२०
४ अश्वमेध	८२	८	२१	२२ नृहरिदेव	४५	११	२३
५ द्वितीय राम	८८	२	८	२३ पूर्णमल	४४	८	७
६ छत्रमल	८१	११	२०	२४ कर्दवी	४४	१०	८
७ चित्ररथ	७५	३	१८	२५ अलमिक	५०	११	८
८ दुष्टशैल्य	७५	१०	१४	२६ उदयपाल	३८	९	०
९ उग्रसेन	७८	७	२१	२७ दुवनमल	४०	१०	२६
१० शूरसेन	७८	७	२१	२८ दमातः	३२	०	०
११ भुवनेश्वर	६९	५	५	२९ भीमपाल	५८	५	८
१२ रणजीत	६५	१०	४	३० क्षेमक	४८	११	२१
१३ ऋक्षक	६४	७	४	यह सब मिलकर तीस पीढ़ी हुई वर्ष १७७० महीने ११ दिन १० हुए राजा क्षेमकके प्रधान विश्रवाने क्षेमकको मारकर १४ पीढ़ी राज्य किया जिसके वर्ष ५०० मास ३ दिन १७ होते हैं ।			
१४ सुखदेव	६२	०	२४				
१५ नरहरिदेव	५१	१०	२				
१६ शुचिरथ	४२	११	२				
१७ शूरसेनदूसरा	५८	१०	८				
१८ पर्वतसेन	५५	८	१०				

राजा	वर्ष	मास	दिन	राजा	वर्ष	मास	दिन
१ विश्रवा	१०	३	२९	१० माणिकचंद	३७	७	२१
२ पुरसेनी	४२	१	२१	११ कामसेनी	४२	५	१०
३ वीरसेनी	५२	१०	८	१२ शत्रुमर्दन	८	११	१३
४ अनंगशायी	४७	८	२३	१३ जीवनलोक	२८	९	१७
५ हरिजित	३५	९	१७	१४ हरिराज	२६	१०	२९
६ परमसेनी	४४	२	२३	१५ वीरसेन(२)	३५	२	२०
७ सुखपाताल	३०	२	२१	१६ आदित्यकेतु	२३	११	१३
८ कद्रुत	४२	९	२४	आदित्यकेतुको प्रयागके राजा			
९ सज्ज	३२	२	१४	धन्धरने मारकर ९ पीढी, ३७४ वर्ष			
१० अमरचूड	२७	३	१६	११ महीने २६ दिन राज्य किया			
११ अमीपाल	२२	११	२५	इसका व्योरा-			
१२ दशरथ	२५	४	१२	१ धंधर	४२	७	२४
१३ वीरसाल	३१	८	११	२ महर्षि	४१	२	२९
१४ वीरसालसेन	४७	०	१४	३ सनरञ्जी	५०	१०	१९
इस वीरसालसेनको वीर महाप्रधाने मारकर १६ पीढी ४४५ वर्ष ५ मास ३ दिन राज्य किया इसका व्योरा-				४ महायुद्ध	३०	३	८
१ वीरमहा	३५	१०	८	५ दुरनाथ	२८	५	२५
२ अजितसिंह	२७	७	१९	६ जीवनराज	४५	२	५
३ सर्वदत्त	२८	३	१०	७ रुद्रसेन	४७	४	२८
४ भुवनपति	१५	४	१०	८ आरीलक	५२	१०	८
५ वीरसेन	२१	२	१३	९ राजपाल	३६	०	०
६ महीपाल	४०	८	७	राजपालको उसके सामन्त महान			
७ शत्रुशाल	२६	४	३	पालने मारकर १ पीढी राज्य किया			
८ संघराज	१७	२	१०	१ महानपाल	१४	०	०
९ तेजपाल	२८	११	१०	इसपर विक्रमादित्यने उज्जैनसे			
				चढाई करके इसे मारडाला और उसका			
				राज्य १ पीढी रहा ।			

राजा	वर्ष	मास	दिन	राजा	वर्ष	मास	दिन
१ विक्रमादित्य ९३ *	०	०		खचन्दने विक्रमपालको मारकर १०			
विक्रमादित्यको शालिवाहनके				पीढी राज्य किया वर्ष १९१ महीना १			
उमराव समुद्रपालयोगी पैठनकने				१६ दिन			
मारकर १६ पीढी ३७२ वर्ष ४ मास				१ मल्लखचन्द ५४ २ १०			
२७ दिन राज्य किया जिसका व्यौरा—				२ विक्रमचन्द १२ ७ १२			
१ समुद्रपाल ५४ २ २०				३ अमीनचन्द १० ० ५			
२ चन्द्रपाल ३६ ५ ४				(मानकचन्द)			
३ सहायपाल ११ ४ ११				४ रामचन्द १३ ११ ८			
४ देवपाल २७ १ २८				५ हरीचन्द १४ ९ २४			
५ नरसिंहपाल १८ ० २०				६ कल्याणचन्द १० ५ ४			
६ सामपाल २७ १ १७				७ भीमचन्द १६ २ ९			
७ रघुपाल २२ ३ २५				८ लोवचन्द २६ ३ २२			
८ गोविन्दपाल २७ १ १७				९ गोविन्दचन्द ३१ ७ १२			
९ अमृतपाल ३६ १० १३				१० रानीपद्मावती १ ० ०			
१० बलीपाल १२ ५ २७				पद्मावती गोविन्दचन्दकी रानी थी			
११ महीपाल १३ ८ ४				जब यह मर गई तब कार्यकर्ताओंने राज			
१२ हरीपाल १४ ८ ४				वंशमें किसीको न पाकर एक हरिप्रेम			
१३ सीसपाल[भीमपाल] ११ १० १३				वैरागीको गद्दीपर बैठाया और सुत्सद्दी			
१४ मदनपाल १७ १० १९				राज्य करने लगे यह राज्य पीढी ४			
१५ कर्मपाल १६ २ २				वर्ष ५० दिन २१ तक रहा ।			
१६ विक्रमपाल २४ १३ १३				१ हरिप्रेम ७ ५ १६			
राजा विक्रमपालने पश्चिमके राजा				२ गोविन्दप्रेम २० २ ८			
मल्लखचन्द वोहरेपर चढाईकी और मल्ल-				३ गोपालप्रेम १५ ७ २८			
* परीक्षितसे विक्रमादित्यतक ३०६६ वर्ष				४ महाबाहु ६ ८ २९			
होतेहैं यदि ३० वर्षकी अवस्थामें संवत्				यह महाबाहु राज छोडकर वनमें			
चलाना मानलिया जाय तो संवत् १९६४ तक				तप करने चलागया यह समाचार			
५०६० वर्ष होतेहैं और युधिष्ठिरके ३८ वर्ष				पाकर बंगालके राजा आधिसेनने दिल्ली-			
मिलानेसे ५०९८ वर्ष होते हैं विक्रमका राज्य				में राज्याधिकार किया पीढी १२ वर्ष			
९३ वर्ष लिखाहै इसमें कुछ भूल है ।				१५१ महीना ११ दिन २ इसका व्यौरा			

राजा	वर्ष	मास	दिन	राजा	वर्ष	मास	दिन
१ आधिसेन	१८	५	२१	जीवनसिंहने अपनी सेना कुछ			
२ विलावसेन	१२	४	२	कालके लिये उत्तरकी ओर भेजी थी			
३ केशवसेन	१५	७	१२	विराटके राजा पृथ्वीराज चौहानने यह			
४ माघसेन	१२	४	२	समाचार पाकर उसपर चढ़ाई की और			
५ मयूरसेन	१०	११	२७	जीवनसिंहको मारकर वहां इन्द्रप्रस्थ-			
६ भीमसेन	५	१०	९	का राज्य किया			
७ कल्याणसेन	४	८	२१	पीढी पांच वर्ष ८६ मही० दिन २०			
८ हरीसेन	१२	०	२५	इसका व्यौरा—			
९ क्षेमसेन	८	११	१५	पृथ्वीराज	१२	२	१९
१० नारायणसेन	२	२	२९	अभयपाल	१४	५	१७
११ लक्ष्मीसेन	२६	१०	०	दुर्जनपाल	११	४	१४
१२ दामोदरसेन	११	५	१९	उदयपाल	११	७	३
				यशपाल	३६	४	२७
दामोदरसेनने अपने उमरावको वडा				इसके ऊपर शहाबुद्दीन गोरीने			
कष्ट दिया इसलिये दीपसिंह उमरावने				चढ़ाई की और इस राजाको पकड़कर			
सेना मिलाके इसको मारकर राज्य				संवत् १२४९ में प्रयागके किलेमें कैद			
किया पीढी ६ वर्ष १०७ महीना ६				किया और दिल्लीका राज्य अपने			
दिन २२ इसका व्यौरा ।				अधिकारमें किया इस राज्यकी पीढी			
१ दीपसिंह	१७	१	२६	५३ वर्ष ७४५ महीना १ दिन १७			
२ राजसिंह	१४	५	०	राज्य रहा इस राज्यका व्यौरा बहुत			
३ रणसिंह	९	८	११	पुस्तकोंमें लिखा है इस कारण लिख-			
४ नरसिंह	४५	७	१५	नेकी आवश्यकता नहीं है इतिहासवेत्ता			
५ हरिसिंह	१३	२	२९	सब जानते हैं ।			
६ जीवनसिंह	८	०	१४				

इस प्रकार यदि पुराण और पुरातन ग्रंथोंकी विशेषरूपसे खोज कीजाय तो पुरानी वंशावलियोंका बहुत कुछ पता लगसकताहै, और ऐसा होनेसे एक बहुत बड़ा आक्षेपका विषय दूर होसकताहै, भारतवासी यदि प्राचीन इतिहासकी ओर झुकें तो बहुत कुछ पता लगसकताहै, पर वे इस बातमें दत्तचित्त नहीं होते हां यदि परमात्माकी कृपा हुई तो अब कुछ ऐसा समय आता-जाताहै कि केवल अंग्रेजी पुस्तकोंका ही अवलम्बन न करके शिक्षित पुरुष अपने ग्रंथोंकी ओर झुकेहैं, पर ऐसे बहुत थोड़े हैं ज्यों ज्यों संस्कृतविद्याका प्रचार होताजायगा त्यों त्यों पुरानी बातोंकी खोज लगती जायगी बड़े हर्षकी बातहै कि बहुत दिनोंके पीछे भारतवासियोंकी नींद अब खुलने लगी है, उन्हें पता लगने लगा है कि हमारी कितनी हानि होगईहै, कितना माल असवाव जाता रहाहै किस उपायसे शेष सामग्री बच सक्तीहै, किस उपायसे गया धन लौट सक्ताहै, वे इस विषयकी मीमांसा करने लगेहैं यदि इस प्रकारकी मीमांसा और उद्योग होतारहा तो मुझे आशाहै कि वे इसमें एक दिन सफलमनोरथ होंगे, पर जहांतक मेरा विचार है वह यही है कि भारतवासी अपने पूर्वजोंकी रीति नीति आचार विचारको देखें कि किन आचार विचारोंसे इस देशकी उन्नति हुई थी; और किन कारणोंसे देश अधोगतिको पहुंचाहै, तो अवश्य सहुपायोंका अवलम्बन करनेसे हम अपने देशका शिर ऊंचा करसक्तेहैं, इस राजस्थानके इतिहासमें इस बातका निर्णय दर्पणकी समान दिखाई देता है राजपूतगणोंको अपने देशका कैसा प्रेम था वे जननी और जन्मभूमिको स्वर्गसे भी विशेष मानकर उसका आदर करते हैं अपने देश अपने धर्म अपनी मानमर्यादाकी रक्षामें उन्होंने कितनी ही बार प्राणोंको विसर्जनकर देश और धर्मकी रक्षा कीहै, रजवाड़ेकी स्त्रियां पतिव्रत धर्मका आदर्श होगई हैं उनमें प्रातःस्मरणीया महारानी पद्मावती सबकी शिरमौर गिनी जासक्तीहैं, आज भी चित्तौर वीर क्षत्रियोंकी लीलाभूमिका स्तम्भ है शरणागतवत्सलता, ऐक्यता, कृतज्ञता, मानमर्यादाकी प्राप्तिके लिये उद्योग, निर्भयता, साहस, न्यायपरायणता, बन्धुत्व, आस्तिकता, भाषा वेष भोजन और भाव जैसा पूर्वजोंमें था वह सब बातें इस राजस्थानमें भलीभांतिसे

दिखाई देतीहैं, जिस समय इसको पढ़नेके लिये पाठकगण बैठेंगे मुझे विश्वासहै कि उनके हृदयमें अपूर्वभावोंका उदय होगा और मन लगनेसे ऐसा विदित होगा मानो यह सब चरित्र आंखोंके सामने उपस्थित होरहाहै, वा हम कोई सत्यघटनाओंका उपन्यास पढ़रहेहैं ।

जहां जहां इस ग्रंथमें धर्मसम्बन्धी चर्चा आई हैं सुनीतेके लिये हमने धर्म सम्बन्धी श्लोक भी वहां उतार दिये हैं जिससे धर्मभावमें दृढता हो तथा जो बात ग्रंथकर्ताकी भ्रममूलक प्रतीत हुई है वहांपर 'अनुवादक' इस संकेतसे बीच बीचमें टिप्पणी भी करदी है ।

मेरी समझमें क्या सब बुद्धिमान् इस बातको स्वीकार करेंगे कि राजपूत जातिके आचार विचार सम्बन्धमें क्रमानुसार वर्णन करनेवाला इससे उत्तम और कोई ग्रंथ नहीं है । इसमें यह प्रत्यक्ष दिखादियाहै कि किन उपायोंके अवलम्बन करनेसे देश उन्नतिको प्राप्त होसक्ताहै और किन विषय वासनाओंके तथा सत्या नाशी फूटके अवलम्बन करनेसे देश हीनदशाको प्राप्त होसक्ता है, साहससे मनुष्य क्या नहीं करसक्ता, महाराणा प्रतापसिंह इसके एक उदाहरण हैं, ऐसे वीर साहसी अब कहाँ हैं, पाठकमहाशयो ! इन सूर्यवंशी राजाओंके चरित्र पढ़ते समय आप मुग्ध होजायेंगे आपके मनमें एक बार पुरानेभाव समाकर आपके ध्यानको जननी जन्मभूमिकी ओर आकर्षित करेंगे, यह बड़ा अपूर्व ग्रंथ है, इसमें मनुष्यके सुधारकी सहस्रों बातें हैं, इसके अनुकरणसे मनुष्य शिक्षित और सन्मानित हो सक्ता है, हमने जिस भाव और देशहितैषितासे इस ग्रंथका अनुवाद कियाहै वह पढ़नेसे विदित होजायगा और मेरा यह ग्रंथ हिन्दीभंडारके लिये एक उपयोगी पदार्थ होगा ।

हिन्दीभंडारके निमित्त कोई उपयोगी ऐसा ग्रंथ जिसमें पूर्वजोंके आचार विचार धर्म कर्म देशके सुधार तथा ज्ञातिगुधारकी ऐतिहासिक बातें विद्यमान हों—लिखनेका मेरा बहुत दिनोंसे विचार था संवत् १९५५ में मित्र गोष्ठीसे यह बात निश्चय हुई कि टाड राजस्थानका हिन्दी अनुवाद करके इस अभावको पूर्ण कियाजाय, यह बात मुझे बहुत पसन्द आई यद्यपि यह कार्य महान था तथापि इसके पूर्ण करनेका साहस करके मैंने टाड साहबका अंग्रेजी ग्रंथ

तथा इसके अनुवाद जो बँगला मरहठी गुजराती आदि भाषाओंमें थे एकत्रित किये तथा इसके सम्बन्धकी और भी बहुत सी ऐतिहासिक सामग्री एकत्रित कीगई, तो यह कार्य एक बड़ा उपयोगी विदित हुआ यह ग्रंथ एक बृहत् आकारका होगा इसके प्रकाश करनेमें बहुत व्यय होगा इस कारण मैंने अपने परम सुहृद् हितैषी शास्त्रोद्धारक जगद्विख्यात वेंकटेश्वर, स्टीम् यंत्रालयाध्यक्ष सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजीको इसकी सूचना दी जिन्होंने तत्काल मुझे इस के निर्माण करनेका उत्साह दिलाया और कहा कि आप इसे तैयार कीजिये हम सहर्ष इसको प्रकाश करेंगे, सेठजीके उत्साह दिलानेसे मैं इस कार्यमें प्रवृत्त हुआ, और संवत् १९५८ में मैंने इस बृहत् ग्रंथके प्रथमभागका अनुवाद करके सेठजी महोदयके पास भेजदिया, और दूसरे भागके अनुवादमें प्रवृत्त हुआ, परन्तु पहला भाग कुछ कालतक तो सेठजीके यहां धरा रहा जब इसके छपनेका समय आया तब एक महात्माने न जाने किस कारण इसमें यह पचड़ा लगा दिया कि इसके नामोंमें बहुत अन्तर है, इस कारण इसका छपना रुक गया और सेठजीके द्वारा यह ग्रंथ रजवाड़ेमें किन्हीं महोदयके पास भेजागया और वहां बहुत समयतक यह ग्रंथ पड़ा रहा जिसके कारण मेरा उत्साह भंग हो गया और आगेके अनुवादमें शिथिलता होनेलगी, अन्तमें बहुत सी लिखापढी करनेसे यह ग्रंथ वापिस आया, जब मैंने उसे खोलकर देखा तो उसका प्रत्येक पत्र अत्यन्त जीर्ण शीर्ण होगया था और कुछ पत्रे खो भी गयेथे पर प्रत्येक पत्रेपर सही होनेके हस्ताक्षर विद्यमान थे उसमें यद्यपि भूगोल और टाड साहबकी भूमिका सर्वथा कटफट गई थी, पर उसके साथ थोड़ी सी उपयोगी सामग्री भी प्राप्त हुई, जिसको मैंने धन्यवादपूर्वक स्वीकार किया और पुस्तकके पत्रे बहुत जीर्ण हो जानेसे इसके दुबारा लिखानेकी आवश्यकता पड़ी, परन्तु इस झंझटमें कई वर्ष लगगये, पर विना इस ग्रंथके दुबारा लिखाये यह कम्पोजके योग्य नहीं होसक्ता था इस कारण इसको दुबारा लिखानेके लिये दियागया, और पहले जो कहीं कुछ इसमें कसर रही थी इस दुबारा लिखनेमें टिप्पणी और शोधनमें वह दूर करदीगई ।

जहांतक मुझसे होसकाहै मैंने इसका अनुवाद बहुत सरल सबके समझने योग्य सरस हिन्दीभाषामें कियाहै, यदि पाठक महोदयोंको यह रुचिकर होगा

तो मैं अपने परिश्रमका सफल जानूंगा, पर मुझे आशा है कि महानुभाव इसको अवलोकन कर अवश्य प्रसन्न होंगे ।

अंग्रेजीमें इस ग्रंथमें पहले खण्डमें हिन्दूजातिका पुरातन इतिहास, पश्चात् राजपूतजातिके आचार विचार ५ अध्यायोंमें और फिर राजपूत जातिका इतिहास कनकसेनसे महाराणा भीमसिंह तक १८ अध्यायोंमें वर्णन किया है पीछे टाड साहबने २४ अध्याय तक मेवाडके पर्वोत्सव और शासन प्रणालीका वर्णन किया है पश्चात् अपना मेवाड जानेका वृत्तान्त ६ अध्यायोंमें लिखकर इस ग्रंथको पूर्ण किया है, सब तीस अध्यायमें पूर्ण किया है परन्तु विशेष सरसता और रोचकताके हेतु मैंने हिन्दी अनुवादमें इस क्रमका थोड़ा परिवर्तन किया है अर्थात् पहले खण्डके छः अध्यायोंमें पुरातन हिन्दूजातिका इतिहास साररूपसे लिखकर पश्चात् सत्तरह अध्यायोंमें महाराजा कनकसेनसे महाराणा भीमसिंह तक इतिहास लिखकर महाराणा जवानसिंहजीसे श्रीयुत महाराणा साहब बहादुर फतहसिंहजी तकका इतिहास जो इस समय वर्तमान है चार अध्यायोंमें ग्रंथ कर्तासे विशेष वर्णन किया है इसके पीछे राजपूत जातिके पर्वोत्सव आचार विचार आत्मशासन प्रणाली और टाड साहबके मेवाड जानेका वृत्तान्त लिखा गया है इतने परिवर्तनका कारण यह है कि राजपूतजातिका इतिहास अत्यन्त ही चित्ताकर्षक है इसमें मन लगनेसे फिर पर्वोत्सव और आत्मशासन प्रणाली आदिको पाठक विशेष रुचिसे पढ़ेंगे, इस कारण यह विषय पीछे लिखे गये हैं और सबसे पश्चात् छः अध्यायोंमें इस हिन्दूजातिके पुरातन इतिहासका परिशिष्टभाग लगाया गया है जिसके अवलोकनसे पाठकोंको इतिहास सस्वन्धी बहुत सी बातें विदित होजायगी ।

यथासंभव मैंने इस ग्रंथमें ग्रंथकर्ताका कोई विषय जानबूझकर नहीं छोड़ा है परन्तु यदि इसमें कोई त्रुटि रह गई हो तो सूचना करनेपर आगामी बार वह त्रुटि अवश्य दूर होजायगी ।

यदि रघुकुलकमलदिवाकर प्रातःस्मरणीय भगवान् रामचन्द्रने कृपाकी तो मेरे इस ग्रंथका हिन्दीसमाजमें आदर होगा और मैं जानता हूँ कि इस समय इतिहास सस्वन्धी ग्रंथका हिन्दीमें जैसा अभाव है उस अभावको यह राजस्थानका इतिहास थोड़ा बहुत अवश्य दूर करेगा, और इसके अनुशीलनसे

भारतसम्बन्धी इतिहासकी खोजमें विद्वानोंकी रुचि बढ़ेगी और आश्चर्य नहीं कि वे लोग भारतके सत्य इतिहासको खोजकर और इतिहास सम्बन्धी ग्रन्थोंको प्रकाश करके भारतके इस कलंकको दूर करनेमें समर्थ हों कि पहले भारत-वासियोंको इतिहास लिखने नहीं आते थे, वा ऐतिहासिक ग्रंथोंमें उनकी रुचि नहीं थी ।

यद्यपि इस समय हिन्दीके प्रेमी बढ़ते जातेहैं और उनसे बहुत कुछ आशा कीजाती है परन्तु नागरीप्रचारणी सभा आरा और नागरीप्रचारणी सभा काशीसे कि जिनके कई एक सभ्योंसे मेरा प्रेम है इस विषयमें बहुत कुछ आशा कीजा-तीहै कि यदि इन महानुभावोंका वास्तवमें नागरीसे ऐसा ही प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धिको प्राप्त होतारहा तो एक दिन हमारी नागरी सर्वगुणआगरी होकर फिर प्रकाशमान होकर अपने गुणोंसे सर्वसाधारणको सन्तुष्टकर सत्यधर्मका जय-जयकार करादेगी ।

मेरी परम अभिलाषा * है कि यह ग्रंथ शीघ्रही प्रकाशित हो पर न जाने क्यों इसके प्रकाश होनेका समय अभीतक नहीं आता तथापि मैं अपने कर्तव्यमें लगा हुआ हूं दूसरा भाग भी शीघ्रही पूर्ण होकर दोनों भाग पाठकोंके सन्मुख उपस्थित होंगे ।

जो एक दो जगह मूलग्रन्थसे कहीं विशेष लिखागयाहै वह अमूलक न जानना वह भी पृथ्वीराज रायसे आदि दूसरे ऐतिहासिक ग्रन्थोंसे उद्धृत कर इसमें सन्निविष्ट किया गयाहै ।

इस प्रकार यह ग्रन्थ सब विषयोंसे अलंकृत कर सब प्रकारके सत्त्वसहित परमोदार सर्वगुणसम्पन्न जगद्विख्यात सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्ण-

* आपकी परम अभिलाषा इस ग्रंथके शीघ्र प्रकाशित होनेकी थी पर भगवान्को यह बात स्वीकार नहीं थी, ग्रन्थ दुवारा बम्बई पहुँचने न पाया था कि संवत् १९६२ श्रावण शुक्ल सप्तमीको विशूचिकारोगसे अकस्मात् इनकी मृत्यु होगई दूसरा भाग पूर्ण होनेमें थोड़ा ही शेष था जो पीछेसे पूरा कियागया ।

दासजी महोदयको समर्पण करदियाहै कि जिन्होंने संस्कृत और हिंदी ग्रंथोंको प्रकाशकर देशका बहुत उपकार कियाहै ।

अब मैं अन्तमें अपनी मित्र मंडलीको धन्यवाद देकर इस भूमिकाको पूर्णकर जगदीश्वरसे प्रार्थना करता हूं कि वह सबपर कृपादृष्टि कर देशका मंगल करें जगत्में शांति विराजे । ॐ तत्सत् ।

सज्जनोंका कृपाभिलाषी—

संवत् १९६२. { बलदेवप्रसाद मिश्र,
दिनद्वारपुरा—मुरादाबाद.

राजपूतानेका

भूगोल ।

राजस्थानका भूगोल सम्बन्धी इतिहास जो मेरे दिये हुए नक्शेमें है उसके अनुसार पश्चिममें सिन्धुनदीका कछार, पूर्वमें बुंदेलखण्ड, उत्तरमें सतलजनदीके दक्षिण ओरका जंगल देशनामक मरुस्थल, और दक्षिणमें विन्ध्याचल पर्वत है, इनने प्रदेशमें अनुमानसे आठ अक्षांश और नौ रेखांश आतेहैं अर्थात् २२ से ३० उत्तर अक्षांश और ६९ से ७८ पूर्व देशान्तर तक फैला हुआ है, जिसका क्षेत्रफल ३५०००० वर्गमील है ।

इस पुस्तकका मुख्य प्रयोजन तो उक्तदेशके भूगोलसे है, जिसमें इतिहास सम्बन्धी और देशअवस्था सम्बन्धी वृत्तान्त प्रसंगवश पीछेसे दियेगये हैं, यथार्थमें प्रथम हमारी यह इच्छा थी कि इस ग्रंथको भूगोलसम्बन्धी भी बनायाजाय, परन्तु कई कारणोंसे मेरे लिये यह बात असंभव होगई, यहां तक कि जितनी सामग्री मुझे प्राप्त थी उसके अनुसार वैसा सही नक्शा * भी न बनसका, इसमें पाठकोंको तो इस लिये चिन्ता न होगी, कि भूगोलसम्बन्धी वृत्तान्त उपयोगी होनेपर भी सर्वसाधारणकी दृष्टिमें नीरस और शुष्क जँचता है, पर मुझे इस बातका दुःख है कि मैं वैसा नक्शा जैसा कि मैं चाहता था, तैयार न करसका ।

मैं चाहता था कि इस नक्शेके साथ पुराणादि प्रतिपादित तथा प्रामाणिक ज्योतिषशास्त्रके प्राचीन भूगोलका भी परस्पर मिलान करूं, परन्तु यह बात मैंने आगेके लिये छोड़ दी, यदि दुबारा फिर इस ग्रंथके प्रकाश होनेका समय आवेगा तो शीघ्रतामें जो बात रहगई है, आगामी बार वह त्रुटि दूर कर दी जायगी ।

१ भूमध्यरेखासे उत्तर वा दक्षिणके अन्तरको अक्षांश और नियत किये याम्योत्तरवृत्तके पूर्व वा पश्चिमके अन्तरको रेखांश वा देशान्तर कहते हैं उत्तर वा दक्षिण होकर गुजरनेवाले वृत्तको याम्योत्तर वृत्त कहते हैं ।

* यह नक्शा मिस्टर बाकर प्रसिद्ध कारीगरने निर्माण किया था यह महात्मा ईस्ट इण्डियों कंपनीकी सेवामें था जिससे मुझे आशा है कि आगेको मेरे संग्रहकी पूर्तिमें यह उपयोगी होगा, विलायतके छपे राजस्थानमें वह नक्शा था भारतवर्षके किसी राजस्थानमें नहीं है ।

जब कि ग्रंथकर्ता मरहटोंके साथका युद्ध समाप्त होनेपर सन् १८०६ में सैंधियाके दरवारमें जानेवाले दूतके साथ भेजा गया था, तबसे इस परिश्रमशोधका आरंभ समझना चाहिये, उसी समय मैंने यह सामग्री संग्रह की थी, इस सैंधिया सरदारकी सेना उन दिनों मेवाड़में उपस्थित थी, और यूरोप निवासी उन दिनों इस देशसे इतने अपरिचित थे कि उदयपुर और चित्तौर यह विख्यात दो राजधानियों अच्छे नकशोंमें भी उलटे स्थानोंपर लिखी गई थीं, उदयपुरके पूर्व और ईशानकोणके मध्यमें चित्तौर होना चाहिये था, पर उसके बदले अग्नि-कोणमें लिखा गया था, जो ऊपर लिखी हुई मेरी बातका पूरा प्रमाण देता है। और दूसरी बातोंके लिये तो उसमें कुछ लिखा ही न था, १८०६ ईसवीके बने नक्शोंमें राजस्थानके पश्चिमी और मध्यवर्ती राज्य दिये ही नहीं गये; बहुत थोड़े समय पहले यह बात उनकी समझमें आई थी कि राजस्थानकी सब नदियाँ दक्षिणको बहती हुई नर्मदामें जा मिलती हैं, भारतवर्षकी भूगोल विद्याके तत्त्वज्ञ प्रसिद्ध रेनल साहबने इस भ्रमको पहले शुद्ध किया था।

टाड साहब कहते हैं मैंने इस अपूर्ण बातको पूर्ण किया, पहली पहल १८१५ ई० में नक्शा तैयार करके पिंडारोंकी लड़ाईके थोड़े ही दिन पहले मार्किंस आफ हैस्टिंगकी भेंट किया, और उक्त सेनापतिको लाभदायक होनेके कारण मेरा दश वर्षका परिश्रम सफल होगया, यहां मैं यह कहना भी अपना कर्तव्य समझता हूँ कि उसके पश्चात् जितने नक्शे बने उन सबमें भारतके मध्य और पश्चिमके देश उसीके अनुसार लिखे गये हैं। *

उदयपुर जानेके लिये ऊपर लिखे दूतदलका मार्ग आगरेसे जयपुरके दक्षिण सीमामें होकर था, जिसका कुछ भाग डाक्टर डब्ल्यु हंटरने नापा था, और

* सन् १८१७ ई० में पिंडारोंकी लड़ाईके समय मेरे नकशेकी प्रतियाँ सब सेनाके विभागोंमें भेजी गई, उसकी हाथकी लिखी नकलें यूरोपमें गई, और फिर उसीके अनुसार दूसरे नक्शे तैयार होने लगे और वहांके लोगोंको यह ज्ञात होगया कि इसका निर्माण करनेवाला ही उसकी सामग्री इकट्ठी करनेवाला है और मार्किंस आफ हैस्टिंगका वह वाक्य पूरा हुआ जो उन्होंने इसके लिये कहा था कि ऐसी वस्तुका किसी मनुष्यकी निजसम्पत्तिरहना असंभव है, मुझे भय है कि दूसरे लोग इसके मालिक न बन बैठें, उसका कर्ता अपने परिश्रमसे पूरा लाभ उठावें इस इच्छासे उसने यह बात प्रगटकी कि गवर्नमेंटसे उसका प्रतिफल प्राप्त होनेका अभियोग आगेके निमित्त मुलतवी न रक्खा जाय; इसका यह प्रयोजन न समझना कि इस आलोचनासे ग्रन्थकारको आश्चर्य हुआ होगा, नहीं जब कि वह अपनेमें प्रथम संशोधकीका दावा करता है तो भी विद्या उन्नतिकी बाधा चाहनेवालोंमें वह अंतिम है। कारण कि स्पर्दाका दरवाजा सहलोंके लिये खुला हुआ है।

मैंने भी उनके खगोलनिरीक्षासे नियत किये चिह्नोंको अपनी नापमें आधाररूप माना, इन्हीं हण्टर साहबका बनाया हुआ मार्गका एक उपयोगी नक्शा संधियाके दरवारमें भेजे हुए रेजिडेण्ट ग्रीममर्सर महाशयके पास मौजूद था, १७९१ ई०में जिसके अनुसार राजदूत कर्नेल पामरने मार्ग तै किया था, उसके ठीक होनेका निश्चय कर मैंने अपनी पिछली पैमाइश उसीके सहारे आरंभ की, उसमें मध्य भारतके आगरा नगर झांसी दतिया सारंगपुर भोपाल उज्जैन आदि सब सीमांत स्थान दिये गये थे, और वहांसे लौटते हुए कोटा बूंदी रामपुरा टोंक तथा बयानेसे लेकर आगरे तक दर्ज थे, खगोल निरीक्षण द्वारा यह सब स्थान कुछ न्यूनाधिक शुद्धिके साथ अपने स्थानोंमें स्थापित किये गये थे ।

हण्टर साहबके नक्शेने रामपुरा तक मुझको पथदर्शकका काम दिया, यहांसे फिर उदयपुर तक नई पैमाइश आरम्भ की, जब सन् १८०६ जूनमासमें हम वहां पहुंचे तो विदित हुआ कि उस समय जो उदयपुरका स्थान बहुत ही अपूर्ण यंत्रों द्वारा नियत किया गया था, उसके रेखांशमें केवल एक कलाका परिवर्तन जान पड़ा, और उसके अक्षांशमें अनुमानसे पांच कलाका अन्तर जाना गया ।

पीछे हमारे साथकी सेना उदयपुरसे चित्तौरके समीप होती हुई मालवेके बीचमें होकर विंध्याचलसे निकलती हुई सब बड़ी बड़ी नदियोंका उलंघनकर खिमालसाके मध्य बुन्देलखण्डकी सीमापर पहुंची, वहां हमने कुछ समय तक विश्राम किया, पहले राजदूतके मार्गको इस सात सौ भीलकी यात्रामें मुझे दो बार उलंघन करना पड़ा और मुझे अपने नियत किये स्थानोंको हण्टर साहबके नियत किये स्थानोंसे मिलता देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई ।

१८०७ ई०में जब उस सेनाका पड़ाव राहतगढ़पर पड़ा तब मैंने यह विचारा कि मैं इस समयको जिसे मरहटे व्यर्थ खोरहे हैं हाथसे न जाने दूँ इससे मैंने थोड़ी सी सेना अपने साथ लेकर वित्वाके किनारे २ चंदेरीतकके अज्ञात स्थलोंमें होकर जानेका विचार किया, और उसी रेखामें कोटेकी ओर पश्चिमको बढ़कर एक बार उन सब नदियोंके मार्गका पूरा पता लगानेकी इच्छा हुई, जो दक्षिण की ओरसे बहती है, तथा चम्बलके साथ काली सिन्धुपार्वती और वनासके संगमस्थानके पता लगानेकी उत्कंठा हुई, इस कामकी पूर्ति मैंने ऐसे समयमें की जो वर्तमान समयसे बहुत ही भिन्न था, कहीं लुटेरोंका सामना कहीं कोई विघ्न कभी २ आधी रातको डेरे उखाड़कर कूच करना पड़ता था, जो मार्गमें मुख्य मुख्य स्थान आये वह यह थे वेत्वाके किनारे कोटडा, पूर्वी उच्च सम-भूमिपर खनियादाता सिन्धुनदीपर बडौदनगर, शाहाबाद, पार्वतीनदीपर वारा-

काली, सिन्धुनदीपर, पलायता, बडौदा, शिवपुर, चम्बलके मार्गपर पाली, रण-
यम्भोर करौली, मथुरा और आगरा थे ।

जब मैं यह कार्य कर मरहटोंके लश्करमें लौटा तो फिर भी मैंने अवकाश
पाकर पश्चिमकी ओर भरतपुर कंटूर सैन्नी होतेहुए जयपुर टोंक, इन्द्र, इन्द्रगढ़
गूगल, छपरा, राधोगढ़, आरीन, कुर्वाई, और भौरासाके मार्गसे सागरतककी
यात्रा की, इस एक सहस्र मीलकी यात्रा करके जब मैं लौटा तो मैंने मरहटोंकी
सेना लगभग उसी स्थानमें पाई जहां मैं उसे छोड़गयाथा ।

इस प्रकार सैंधियाके साथ १८१२ ई० तक बराबर घूमता और पैमाइश
करता रहा जब यह दरवार एक जगह जमगया तब मैंने उन देशोंकी पैमाइशका
प्रबन्ध किया कि जहां मैं स्वयं नहीं जासका था ।

सन् १८१०-११ में मैंने नापनेवालोंके दो समूह एक सतलजके दक्षिणी
मरुस्थलकी ओर दूसरा सिन्धुनदीकी ओर रवाना किया, पहला दल बड़े योग्य
पुरुष मदारीलालकी आधीनतामें रवाना हुआ जो पुरुष इस भूगोल विद्या
सम्बन्धी ज्ञानमें बहुत ही चतुर होगया था, इस भूगोलसम्बन्धी राजस्थानके
विस्तीर्ण प्रदेशमें ऐसा कोई भी स्थान नहीं था जहां यह साहसी पुरुष न
पहुंचा हो, इस उत्साही उद्योगी चित्ताकर्षी पुरुषने अपनी जानपर खेलकर
मेरे कामको इस भांतिसे पूरा किया कि यदि कोई दूसरा पुरुष होता तो
अवश्य मरजाता । *

दूसरा दल शेख अबुल बरकतकी आधीनतामें पश्चिमकी ओरको गया,
जिसने उदयपुरके मार्गसे गुजरात सौराष्ट्र कच्छ लखपत हैदराबाद सिन्धकी
राजधानीमें होकर सिन्धुनदी उतरकर नगर ठेटककी पैमाइश की, फिर
उसके दहिने किनारेसे सेवानतक बढ़कर वहांसे सिन्धुनदीको फिर उल्टेघन कर
उसके बायें किनारे होतेहुए खैरपुरतककी पैमाइश की, जो सिन्धके तीन सूबे-
दारोंमेंसे एकके रहनेका स्थान है, और भक्खरके टोपूमें पहुंचनेके पीछे उमर-

* अन्तमें स्वास्थ्य बिगडनेसे यह पुरुष एकाएक मरगया पर जहांतक मुझे अनुमानसे
विदित होताहै कि वह विष देनेसे मरा ।

१ यह शेख मेरे पास नमूनेके तौरपर सिलीसियसजातिके पत्थरके टुकड़े तथा बहुत पुराने
सेवानकिलेकी ईंटका टुकड़ा और वहांके खण्डोंका कुछ जलाहुआ अन्न लाया जिसके लिये
कहाजाताहै कि वह विक्रमादित्यके भ्राता भर्तृहरिके समयका घराहुआ है, अनुमान होताहै कि
सिकन्दरके हमलेके समय यह अन्न जमीनमें गाढागयाहो पीछे आगसे जलगयाहो ।

सुराके रेतीले मार्गसे लौटकर जैसलमेर मारवाड और जैपुर होतेहुए नरवरके मुकामपर मुझसे आ भिला, यह भी बड़ी जानजोखमका कार्य था परन्तु शेख बडा साहसी और उद्योगी पुरुष था, तथा पढालिखा था तथा उसकी दिन-चर्याकी पुस्तकमें बहुतसे भूगोलसम्बन्धी वृत्तान्त तथा उन देशोंके समाचार भी थे जिन देशोंमें होकर उसको जानापडाथा ।

मैं मरहटोंकी सेनामें सन् १८१२ से १८१७ तक रहा इस अवसरमें दूरदूर देशोंके अच्छे २ जानकार लोग पारितोषिककी इच्छासे सत्य वृत्तान्त कहनेके लिये मेरे पास आते थे १८१७ तक सिन्धुके कछार घाट उमरसुराके मरुस्थल वा राजस्थानके किसी भी पुरुषको मैं चाहें जब अपने पास बुलासक्ताथा, वहाँके प्यादे जैसा उन लम्बे स्थानोंका ठीक ठीक वर्णन करते हैं उसपर यूरोप निवासी तो कोई विरले ही विश्वास करेंगे ।

यदि किसी एक देशके नापेहुए कोशका सही अन्दाजा लगजाय तो उसकी रेखा सरलता और शुद्धताके साथ सम धरातलपर खिंची जासकतीहै, मैंने यह बात पक्की तौरसे जानीहै कि हिन्दू राजोंमें भी सडकोंकी पैमाइश होती थी, इस काममें जैसा यंत्र लायाजाता था उसका वर्णन आवूमाहात्म्यमें मिलताहै, देशियोंके अनुमान कियेहुए अन्तर भी किसी न किसी निश्चित नियमसे ही निकालेगयेहैं, उनको निरा अनुमान मानना ठीक नहीं है ।

मेरा सन्तोष मदारीलालके दलकी पैमाइशके सिवाय अन्य दलपर नहीं होता था, परन्तु सदा एक दलके ज्ञानको उसी स्थानको गमन करनेवाले दूसरे समूहकी सहायताका आधार बनाता था, और इस प्रकारसे फिर एक दूसरे दलकी जानकारी और कामकी बातोंसे जिनको वह मेरे पास कहते, प्रत्येक स्थानकी पूरी जाँच परताल करनेसे मैं परम संतुष्ट होताथा ।

इस प्रकार इस बृहत देशके मार्गोंकी रेखाओंसे मैंने कई जिल्ले भरडालीं, और जिन स्थानोंकी स्थिति निश्चय होचुकी थी उनका सही नक्शा बनालिया और उसमें अपनी समस्त जानकारी लिख दी, विशेषकर मैं पश्चिमी राज्योंका वर्णन करताहूँ, कारण कि मध्यदेश वा उस देशकी पैमाइश प्रत्येक ओरसे जो या तो पछाहमें ऊंची अर्वलीसे वा दक्षिणमें विन्ध्यपर्वतसे निकलनेवाली चम्बल और उसकी सहयोगिनी दूसरी नदियोंसे सीचाजाताहै, मैंने स्वयं ऐसी ठीक शुद्धताके साथ की है कि जबतक बड़ी पैमाइश त्रिकोणमितिके अनुसार दक्षिण-

से आगे बढ़कर सारे भारतवर्षमें न हो तबतक यही प्रत्येक राजनैतिक और सैनिक पुरुषके लिये उपयोगी रहैगी ।

इन देशोंमें उत्तर सतलज तक, और पश्चिममें सिन्धुनदीतक जो विस्तृत समान भूमि है और जहांपर भूगोलसम्बन्धी विषयोंका एक साथ समावेश करना उन स्थानोंकी अपेक्षा बहुत सरल है; जहां बीचमें पर्वती भूमि आ गई है, इन भिन्न भिन्न रेखाओंको मैंने ऊपर लिखे नक्शोंमें अंकित करके उसको त्रिकोणमितिसे जांचनेकी इच्छा की ।

मैंने कर्मचारियोंको फिरसे इस कामके लिये भेजा जिससे वह भली प्रकार परिचित होगयेथे, उन्होंने वहां कार्य आरम्भ कर दिया, और मेरे अनुभवने भी इस विषयमें उन्हें बहुत चतुर कर दिया था, जहां जिसकी स्थिति नियत की गई थी उनमेंसे प्रत्येकको उन्होंने केंद्र मानकर २० मीलके अंतर तक प्रत्येक नगरके जानेवाले मार्गको अंकित कर लिया चुने हुए स्थान बहुधा समत्रिबाहु और त्रिकोण बनाते थे, यद्यपि उनकी जानकारीको क्रमपूर्वक लगाना बड़ा कठिन काम था, तो भी वह ऐसी रीति थी कि जिसके द्वारा देखनेवाला आपही अपनी अशुद्धता जान लेता था, कारण कि ये रेखाएँ प्रत्येक दशामें एक दूसरेको काटती और परस्परको शुद्ध करती थीं, इस प्रकारके साधनोंसे मैंने उस अज्ञात देशमें कार्य साधा कि जिसका कुछ फल पाठकोंपर स्वयं प्रगट है, पर मैं क्या करूं मेरा स्वास्थ्य मेरी इच्छाके विरुद्ध बहुत सा भाग मुझसे हटात् छुड़ाता है, जो विषय कि इस यात्रामें १० दश जिलदोंमें मैंने लिखा था वह बहुत थोड़ेसे अंशमें दिया गया ।

पहले ढाँचेका नक्शा १८१५ ईसवीमें मैंने गवर्नर जनरलकी भेंट किया था जो युद्धके समय बड़ा लाभदायक हुआ था, फिर युद्धके समय मालवेके विभागका एक दूसरा नक्शा बनाकर पिण्डारोंके युद्धके समय भेंट किया, जो बड़ा लाभदायक हुआ, इसमें भी मुख्य मुख्य विषय विंध्यपर्वतके साधारण स्थान उसमेंसे प्रत्येक नदीके निकलनेके स्थान पर्वत श्रेणीकी घाटियां जिनकी ऐसे युद्धके समय जानकारी प्राप्त करना बहुत आवश्यक थी सब अंकित था इसमें सीमाविभागमें कई देशोंकी सीमा भी बतलाई थी यह पेशवाके राज्यको नष्ट करनेमें बड़ा उपयोगी हुआ इस नक्शेके निर्माण करनेमें मैंने डाक्टर हंटरके और अपने नियत किये चिह्नोंसे अनेक स्थानमें काम लिया था, मुझे इस बातसे बड़ी प्रसन्नता है कि यद्यपि उन स्थानोंमें कई बार पैमाइश हुई तो भी मेरी निश्चित की हुई रेखायें खास तौरसे उन

नक्शोंमें स्थित रखी हुई हैं, यह उन नक्शोंकी बात है जो मुझसे पीछे बने हैं, और जो नई रेखा उनमें बढाई गई हैं, और भूगोलके ज्ञाता साहसी पुरुषोंने कई नये स्थान :नियत किये हैं इस कारण मैं भी इस सुधारक अंशको बडी प्रसन्नतासे अपने नक्शेमें स्थान देता हूँ ।*

१८१७ से सन् १८२२ तक मैंने कई पैमाइशी रेखा निर्माण कीं और यहाँ मैं अपने सम्बन्धी (कप्तान पी. टी. वाघ) दशवीं रजमट लाइट केवलरी वंगालके लिये कृतज्ञता प्रकाश किये बिना नहीं रहसक्ता कि जिसकी सहायतासे मेरे भूगोल सम्बन्धी इस परिश्रममें सुधार हुआ, इस महोदयने एक वृत्ताकार पैमाइश की थी जिसमें मेवाडके लगभग सीमाके स्थान राजधानीसे आरंभ कर चित्तौर मण्डलगढ जहाजपुर राजमहल, और लौटते हुए भिनाय वदनौर, देवगढसे लेकर जहांसे वह चले थे वहांतक आगये, इस पैमाइशके आधारपर मैंने सीमाके मध्यस्थान भी नियत किये, जिसके निमित्त मेवाड अपनी स्थिति पहाडियोंके कारण उपयोगी समझ रहा है ।

सन् १८२० ईसवीमें मैं अर्बलीको लाँघकर एक यात्रामें लगा जिसमें कुम्भलमेर पाली होकर मारवाडकी राजधानी जोधपुर वहांसे भेरते होकर लूनीनदीके मार्गका पता लगाता हुआ उसके मूल स्थान तक अजमेर पहुँचा, और चौहान तथा मुगल राजाओंके इस प्रसिद्ध स्थानसे आगे बढकर भिनाय बनेडाके मार्गसे मध्यभागमें होता हुआ उदयपुर लौटआया ।

मेरे निश्चित किये जोधपुरके स्थानमें जो पश्चिम और उत्तरके भूगोल सम्बन्धी स्थलोंके नियत करनेमें मुख्य स्थानके समान काममें लायागयाहै, इसमें अक्षांशमें केवल ३ कलाका और रेखांशमें इससे कुछ ही अधिक अन्तर पडा, जिसके द्वारा मैंने बीकानेरका स्थान नियत किया था वह मिस्टर एल्फिन्स्टन्के अंकित किये हुए चिह्नसे सर्वथा आनमिला, जो बात उसने काबुलमें एलचीके समान जाते हुए अपनी यात्राके वृत्तान्तमें लिखीहै ।

उदयपुर जोधपुर अजमेर आदिके स्थान जो मैंने निरीक्षणद्वारा नियत कियेथे, और हण्टर साहबके नियत किये अंकोंके सिवाय मैंने मिस्टर जे. बी.

* इस नक्शेमें मालवा देशतक ही लिखा गया है । जिसका भूगोल कप्तान डैजरफील्डने बडे परिश्रमसे शोधकर सुधारा और बढाया, यद्यपि इस सब देशके भरनेको मेरी सामग्री ही बहुत थी, परन्तु मैंने इसमें उन मुख्य स्थानोंको ही दर्ज किया जो इस राजस्थानसे मिलते हैं

फ्रेजर खुरासानकी यात्रा नामक ग्रंथके निर्माताके दिये हुए थोड़ेसे स्थानोंसे भी काम लिया कि जिसने दिल्लीसे नागपुर और जोधपुर होकर उदयपुरकी यात्रा की थी ।

और गुजरात× सौराष्ट्र प्रायद्वीप [दक्षिण] कच्छदेशका स्थूल रूप जो विशेष कर सम्बन्ध दिखानेके लिये ही दर्ज किया गयाहै वह सर्वथा प्रसिद्ध भूगोल विद्याके जाननेवाले मृत जनरल रेनाल्डकी पुस्तकसे लिखागया है; जनरल रेनाल्ड और मैंने इस एक ही भूखण्डके बड़े भागका शोध किया, और उन देशोंके शोधको उत्तमताके विषयमें मेरी साक्षी उचितहै, जिसमें वह स्वयं कभी नहीं गये, अब यह सिद्ध होगया कि उद्योग और ऊपर वर्णनकी हुई सामग्रीसे क्या क्या नहीं होसकता । अब मैं शीघ्रतासे इन देशोंकी आकृतिका वर्णन करके इस निबन्धको समाप्त करूंगा इसके सूक्ष्म स्थानीय वृत्तान्त ऐतिहासिक विभागमें यथा स्थान लिखे जायेंगे ।

यदि राजस्थानकी आकृतिकी ओर पाठकोंका ध्यान दिलाऊँ और उन्हें अलग खड़े हुए आवू पहाडके सबसे ऊँचे गुरु शिखरपर बैठाऊँ तो भिन्न-प्रकारकी आकृति दीखैगी और इस विस्तीर्ण भागपर जिसके पश्चिममें सिन्दूनदका नीला जल, पूर्वमें बतसे डकीहुई बेतवा (बेत्रवती) तक विस्तार है दृष्टिपात कराऊँ तो भारतवर्षमें सबसे ऊँचे स्थानपरसे जहाँसे अर्बलीश्रेणी १९०० फुट नीचीहै उसकी दृष्टि मेदपाट * [मेवाडका संस्कृत नाम] के मैदानोंमें पड़पड़ेगी, जिसके बीचमें मुख्य नदियाँ अर्बली पहाडसे निकलकर वेडस और बनासमें जा मिलतीहैं और पठार वा मध्यहिन्दुस्तानकी उच्च सम पृथ्वी उनको चम्बलके साथ नहीं मिलनेदेती ।

× सन् १८२२-२३ ईसवीके मध्य मेरी यात्रा उदयपुरसे सिन्धुनदीके मुहानोंके मध्यवर्ती देशमें हुई इसमें ऐतिहासिक और पुरावृत्तसम्बन्धी खोज विशेष कीगई वह मेरी अन्तिम यात्रा सब यात्राओंसे विशेष लाभकारी हुई ।

१ गुरु दत्तात्रेयकी यहां पादुका हैं वह तीर्थस्थान है ।

* मेदपाट [मध्य-बीच] [पाट-चौड़ाई] टाड साहबका यह अर्थ ठीक नहीं यह देश मध्यपाट नहीं मेदपाट है जिसका अर्थ मेद वा मेवलोगोंका राज्य है ।

२ पट × मञ्च × अर पहाड यद्यपि अरशब्दका अर्थ किसी ग्रंथमें पहाड नहीं पर यह आरंभिक धातु जानपडतीहै जैसे अर बुद्ध-बुद्धका पहाड अर्बली-बलका पहाड इब्रानी भाषामें अरका अर्थ पहाड है यथा अरराट यूनानी भाषामें यही शब्द ओरोस है । टाड.साहबकी यह

विख्यात चित्तौरके समीप इस उच्च समान भूमिपर चढ़कर ठीक पूर्वी रेखासे दृष्टिको कुछ हटानेके पीछे रतनगढ तथा सींगोली होकर कोटाका जानेवाले सीधे मार्गपर दृष्टि डाली जाय तो देखनेवालेको उस उच्च भूमिके क्रमसे तीन मैदान दीख पड़ेंगे, जो कि मानो रूसी तातारके मैदानोंके छोटे दृश्य हैं और वहांसे यदि चम्बलके आरपार दृष्टि डालीजाय तो शाहाबादके किलेसे रक्षित हाडौतीकी उस पूर्वी सीमातक देखनेसे और वहांसे एक साथ इस उच्च समभूमिसे नीचे आकर छोटी सिन्धुनदीकी तलैटीतक दृष्टिपसारने और फिर पूर्वकी ओर दृष्टि बढ़ातेहुए चले तो वह दृष्टि बुंदेलखण्डकी पश्चिमी सीमामें मंचकी आकृतिवाले पहाडपर जाकर रुक जायगी ।

मैं इस बातको अधिक स्पष्टकरनेके लिये आवूसे लेकर वेतवापरके कोटडा-तकके ऊपर वर्णन कियेहुए देशकी उंचाई निचाईका एक चित्र देताहूं । यह चित्र वातमापक यंत्र द्वारा आवूसे चम्बलतक और चम्बलसे वेतवातक की दुई मेरी पैमाइश और साधारण निरीक्षाओंका फल स्वरूप है इसका नतीजा यह है कि कोटडाके स्थानपर वेतवा सागरकी सतहसे एक सहस्र फुट ऊंची, और उदयपुर तथा उसके पर्वतोंकी बीचकी भूमिसे एक सहस्र फुट नीची है, जिस उदयपुरकी उंचाई समुद्रकी सतहसे दो सहस्र फुट है, और वह रेखा जिसकी मामूली दिशा गरम कटिवन्धसे कुछ ही दूरपर है, वह अनुमान छः भौगोलिक अंश है, तो भी यह छोटा सा देश अपने रहनेवालों और भूमिसम्बन्धी गुप्त प्रगट [खनिज तथा वनस्पति] पदार्थोंसे और अनेक प्रकारके भेदोंसे भरा पड़ा है ।

जिसका रुख अबतक पूर्वकी ओरको है, अपने उस उच्च स्थानसे अब हम उस रेखाके दक्षिण और उत्तर दृष्टि डालें जो रेखा मध्यदेश

—उक्ति भी ठीक नहीं है, अरवलीशब्द तो भापा बोलचालमें आगयाहै, वास्तवमें यह आडावली नामवाला है अर्थात् रोकनेवाला वा बीचमें आया हुआ पर्वत, अर शब्दका देशमें कहीं भी पर्वत अर्थ नहीं है, टाड साहबकी यह निरी कल्पना है । अनुवादक.

१ इन दृश्योंसे मेरा भली भाँति परिचय है और मुझे विश्वासहै कि जय वेतवासे कोटातक वैसी पैमाइश की जायगी, तो परिणाममें बहुत ही स्वल्प अशुद्धता होगी, सो भी इतनी ही कि कोटा थोड़ा सा अधिक ऊंचा, और वेतावाके बहावकी भूमि कुछ अधिक नीची नियत कीहुई विदित होगी ।

२ मध्यभारतनामक प्रयोग मैंने मध्य और पश्चिम संवन्धी भारतके नकशेका नाम रखनेमें किया है, जो सन् १८१५ ई० में मार्किंस—आफ हैस्टिंगकी भेंट किया था और तभीसे यह नाम पड़गया.

अर्थात् राजस्थानकी मध्यभूमिको लगभग दो समान भागोंमें बांटती है; मेरे कहे मध्यदेशसे वह देश समझना चाहिये जो चम्बल और उसकी सहायकारी नदियोंके मार्गसे यमुनासंगम तक सब प्रकार उत्तम रीतिसे सीमावद्ध किया गया है; और इसी प्रकार अर्बलीके ऊंचे परेके पश्चिमवाले देशके पश्चिमी राजस्थान नाम देना बहुत ही उचित है ।

इधर दक्षिणकी ओरको दृष्टि पसारकर देखाजाय तो विन्ध्याचलकी दूरतक फैलीहुई श्रेणीपर जाकर दृष्टि रुकजायगी जो हिन्द और दक्षिणकी स्पष्ट सीमा है । यद्यपि आबूके गुरु शिखरपर चढ़कर देखनेसे विन्ध्याचल एक छोटी सी ऊंची श्रेणीवाला जानपड़ेगा, और उसका कारण यह है कि उसके अवलोकनके लिये हमारा यह स्थान उपयोगी नहीं है, हां यदि दक्षिणकी ओरसे देखा जाय तो स्पष्ट दिखाई देगा, और इस उत्तरभरमें कितने ही एक ऐसे ऊंचे विषम स्थान हैं, जो उत्तरके वैसे ही कठिन स्थलोंसे सैकड़ों फुट ऊंचे हैं ।

अर्बलीकोही विन्ध्याचलसे मिलाहुआ कहा जासकता है चंपानेरकी तरफ उसके मिलनेका स्थान है और अर्बलीका विन्ध्याचलसे निकलकर फैलना कहना अनुचित भी नहीं है, यद्यपि उत्तरकी अपेक्षा यहां उसकी उँचाई बहुत न्यून है, परन्तु दक्षिणभरमें लूनावाडा, इंगरपुर और ईडरसे आरंभकर अम्बा भवानी और उदयपुरतक अपना विराटरूप धारण किये हैं * ।

यदि आबूसे मालवेकी उच्चभूमिपर दृष्टि डालें तो विन्ध्याचलकी सबसे ऊँची चोटियोंसे निकलकर उसकी काली मिट्टीके मैदान उत्तरकी ओरको बहनेवाले अनेक स्रोतोंसे कटेहुए दिखाई देतेहैं, इनमें कई एक तो घुमाव खाते हुए घाटियोंमें जाकर टीलोंपर गिरते हैं, और दूसरी छोटी धारायें मध्यस्थानकी उच्च सम भूमिमें बलपूर्वक अपना मार्ग बनाती हुई चम्बलमें गिरती हैं ।

यदि इसी प्रकार हम इस रेखाके उत्तर ओर दृष्टि डालें और कुछ कालतक अर्बलीके उच्चभागपर दृष्टि दौड़ावें और उसके एक भागको आबूपरके

१ यद्यपि अर्बलीका आकार मंच सा बना नहीं रहता, तो भी उसकी शाखा उत्तरमें देहलीतक चली जाती है ।

* बड़ौदेसे मालवातक यात्रा करनेवाले घरातलकी उँचाई निचाईके ज्ञानवाले इस बातको कि अर्बली और विन्ध्याचलका सम्बन्ध है अवश्य स्वीकार करेंगे ।

२ बलवानोंकी रक्षाका स्थान यह नाम सार्थक है कारण कि इसने अपने पूर्व और पश्चिममें शासन करनेवाले प्राचीन सूर्य कुलोद्भव राजवंशको शरण दी थी ।

स्थानके रेखामें स्थित राजधानी उदयपुरसे लेकर औगणा, पानडवा, और मेरुपुर होते हुए सिरोहीके पासवाले पश्चिम ओरके उतारतक देखें कि यह अनुमानसे साठ मील तक सीधी रेखामें चलागया; और जिस स्थानमें उदयपुरकी ओरके चढावसे लेकर मारवाडके उतार तक पहाडीपर पहाडियें और पर्वतों पर पर्वतोंके सिलसिले उठे हुए दृष्टि लेआते हैं, और इस सारे प्रदेशमें सिरोहीकी सीमातक प्राचीन जातिके लोग निवास करते हैं जो अपनी जंगली अवस्थाकी स्वतन्त्रतामें प्रसन्न रहते हैं, न वह किसीको करदेते न वे किसीके आधीन हैं * इनके मुखिया रावत उपाधिवाले एक ही वंशके होते हैं, औगणोंके रावतके आधीन पांच सहस्र धनुषधारी एकात्रित होसकतेहैं, और दूसरे भी इसी प्रकार कितने एक योधा एकात्रित करसकतेहैं। और चराईका सुभीता देखकर बचावके स्थानोंके निकट यह छोटी २ जंगली वास्तियोंमें छिन्न भिन्न हुए रहते हैं ।

यदि कुम्भलैमेरके किलेके ऊपरसे उस पर्वतश्रेणीपर दृष्टि डालें जो अजमेर तक उत्तरकी ओरको चली गईहै तो उसका मञ्चाकार रूप थोड़ी ही दूरपर लुप्त होजायगा उसकी अनेक शाखा शेखावाटीके ठिकानों और अलवरमें

* महाराणा उदयपुरके यह लोग आधीन हैं और कर भी देतेहैं सम्पादक ।

१ रावतके सिवाय और भी उनकी उपाधियें हैं अनुवादक ।

२ मेरी इच्छा इनके स्थानोंमें जानेकी थी और इनके स्वामियोंसे बातचीत होनेपर उन्होंने मुझसे कहा कि हम आपको सत्कार पूर्वक उन स्थानोंमें लेचलेंगे, और मुझे भी इस बातका पूरा विश्वास था कि सभ्यजातिकी अपेक्षा जंगली लोग अपने वचनका विशेष ध्यानरखतेहैं, कई वर्ष पहले मेरे एक आदमी मदारीको इस देशमें होकर जाना पडा था. इन लम्बीवादियोंके घाटमें दहाडका एक स्वामी मरगया था सब मनुष्य बाहर गयेथे, उसकी विधवा स्त्री अकेली झोंपडीमें थी, मदारीने उससे अपना वृत्तांत कहा और मार्गमें जानेके लिये रक्षाके प्रवन्धकी इच्छा की तब उसकी स्त्रीने मृत पतिके तरकससे एक तीर निकालकर उसको दिया और कहा इसको हाथमें लिये चले जाओ कोई भय न होगा इस तीरने वही काम दिया जो सर्कारी कर्मचारी यूरोपनिवासीको मुहर छापवाला लम्बा चौड़ा परवाना देता ।

३ मेरुशब्दका अर्थ संस्कृतमें पहाड है, इससे कुमल वा कुम्भमेरका अर्थ कुंभाकी पहाडी वा पहाड है, ऐसे ही अजमेर अजयकी पहाडी अर्थात् जीतनेमें न आनेवाली पहाडीका है । “ यह अनुमान टाड साहबका कल्पित है अजमीदका बसाया होनेसे यह अजमेर बिगडकर, होगया है अनुवादक ।

ऊँचे २ करारेवाले टीले बनकर चलीगई हैं; जहांसे यह उंचाई कम होते दिखी तक समाप्त होजातीहै ।

कुम्भलग्जमेरसे अजमेरतकका सम्पूर्ण देश मेरवाडा कहाताहै, और उसःस्थान-में मेरजातिकी पहाडी जाति निवास करतीहै जिसका आचार व्यवहार और इतिहास हम आगे चलकर लिखेंगे इसकी चौडाईका औसत ६ से लेकर १५ मीलतक है और उसकी उपत्यका तथा टीकारियोंपर लगभग १५० से अधिक गांव और खेडे पृथक् पृथक् वसेहुए हैं जहां जल और चारा बहुतायतसे होताहै और उनकी आवश्यकताके अनुसार खेती वारी भी होजातीहै, यह बात सच है कि ऊँचे स्थानोंपर अत्यन्त ही श्रमसे खेती होतीहै, जैसे स्वीजरलैण्डमें राइन नदीपर अंगूरकी खेती होतीहै ।

गाडीचलनेके मार्गका इस पर्वतश्रेणीके आरपार कोई भी चिह्न दिखाई नहीं देता, इस कारण इसका आडा अर्थात् रोकनेवाला नाम बहुत ही सार्थक है कारण कि इस समयकी युद्धसामग्रीके सबसे प्रवान अंग तोपखानेको भी पश्चिम ओरके असाध्य उतारनेसे बचनेके निमित्त इस श्रेणीके उत्तरभागसे मोड़ कर लेजाना पड़ेगा ।

यदि इस पर्वतश्रेणीपर दृष्टि डालें तो दोनों ओरकी घाटियोंकी रक्षा करते हुए इसके ऊपर कई किले दिखाई देते हैं और बहुतसे सोते निकलकर पर्वतश्रेणीमें अपना टेढा बांका मार्ग ढूँढते हुए नीचेकी ओरको बहते हैं । पूर्वकी बतास नदीमें बडेच, कोटेसरी, खारी, डाइ, यह सब नदियें मिलतीहैं, जो गोडवाडके उपजाऊ प्रान्तको उर्वरा करदेती हैं, और खारी जलसे भरी लूनी नदीसे मिल कर यथार्थमें मरुभूमिकी सीमा कायम करतीहैं, सकडी और वांडी इनमें मुख्य नदी हैं, और अन्य नदियें बारहों महीने नहीं बहती केवल वर्षामें ही बहती हैं, जिनके बहावका नाम रेला होताहै, इस रेलेमें बहुत सा पहाडी खाद और मिट्टी होतीहै, जिससे नीचेकी पथरीली भूमि उपजके योग्य होजातीहै ।

* सेमरके रहनेवाले मेरे एक राजपूतमित्रने इसका ठीक ठीक वृत्तान्त मुझसे कहा था: यह उतारपर ही रहता था, । थोडे दिनों पहले सिरोहीके पहाडी लुटेरे मेरे स्थानपर आक्रमण करके मेरी गायोंको लेगये और सब माल लेकर बहुत ही समीपके विकट मार्गसे चले यद्यपि पर्वतके पीछे ऐसे स्थानोंमें कूदते फांदते चले जातेहैं, पर वहां पहुंचकर वे गायें रुकगई उन मीनोंने उस कटिनाईको इस प्रकार भेंटदिया कि एक गौको बधकर पहाडसे नीचेको लुडकादिया तब यह देख दूसरी गायें उसके पीछे २ उतरगई ।

कुंभलमेरकी इस ऊंचाईसे इस पर्वतशिलाके क्रमरहित समूहका दृश्य चाहै कैसी ही विराट दृष्टिगोचर हो परन्तु यथार्थमें मारवाडके मैदानोंसे ही उसका पूर्ण महत्त्व अधिक स्पष्ट दिखाई देताहै, जहां उसकी अनेकों चोटियों अनेक रूपमें एक दूसरे पर उठीहुई दृष्टि आतीहैं, वा सघन वनसे ढके टेढ़े बेड़े उतारवाले अंदेरिये ऊंचे नीचे एकान्त स्थानोंको क्रूरदृष्टिसे मानो देखरहेहैं ।

मनमें तो विचार उपास्थित होताहै कि अर्बलीको हिंदुस्थानके ऐप्पिनाइन [इटलीदेशका पर्वत] अर्थात् प्रायद्वीपके मलवार तटके घाटोंसे सम्बन्ध रखनेवाला कहूं, मेरी इस कल्पनाको नर्मदा और तापीका मार्ग उसके मध्य संकीर्ण भागमें होनेसे मिथ्या नहीं करता, जो उनकी भीतरी दशा और बनावटका मिलान करनेसे और भी दृढ़ होसकती है ।

अर्बलीकी प्राकृतिक बनावट ही उसका सामान्य रूप है ग्रेनाइट पत्थर बड़े भारी ठोस तथा गहरे नीलवर्ण स्लेटके पत्थरपर पड़ा हुआ अनेक प्रकारके कोने बनाताहै, पूर्वकी ओरको इसकी साधारण ढाल है, यह स्लेट पत्थर अपने ऊपर स्थित ग्रेनाइट पाषाणकी सतह वा मूलसे कुछ ही ऊंचा पायाजाताहै, कई प्रकारके क्वार्टज और प्रत्येक रंगतके सिस्टस् स्लेट पत्थर भी भीतरी घाटियोंमें बहुतायतसे पायेजातेहैं जिनके देखनेसे घरों और मंदिरोंकी छतका विचित्र सादृश्य दिखाई देताहै, जिस समय उनके ऊपर सूर्यकी किरणें पडतीहैं तब अपूर्व नोमा होतीहै मध्यमध्यमें नीच और सांदनाइट जातिके चट्टानभी दिखाई देतेहैं तथा अजमेरके पश्चिम और अनेक दिशाओंमें विस्तृत श्रेणियोंकी शृंगावली गुलाबी रंगके कांचकी समान क्वार्टज जातिके पाषाणके विराट् समूहोंसे दृष्टिको चकाचौंध कर डालती हैं ।

अर्बली तथा उससे सम्बन्ध रखनेवाली पहाडियोंमें खनिज पदार्थोंकी कमी नहीं है, और यही धातुएं इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि इन्हींके बलसे मेवाडके राणाओंने अपनेसे अधिक बलशाली बादशाहोंसे दीर्घकाल पर्यन्त मुकाबला किया और ऐसे बड़े स्थान बनवाये जिनके कारण पश्चिमी शासक आजतक अपना गौरव समझते हैं, इन खानोंकी पैदावार राणाके निज आयमें वृद्धि करती हैं, आन दान खान इन तीन शब्दोंसे मिली एक कहावत है कि राजस्थानके राजाओंका मुख्य स्वत्त्व अर्थात् प्रजाकी उत्कट राजभक्ति व्यापारसम्बन्धके कर, तथा खानोंके स्वत्त्व संयुक्त रूपसे प्रगट हैं, किसी समय रांगली खानें मेवाडमें बहुत उपजाऊ थीं, और कहते हैं उनमें

चादी बहुतायतसे निकलती थी, परन्तु खान खोदनेवाली जातिके नष्ट होने तथा राजनैतिक कारणोंसे धनकी प्राप्तिके ऐसे द्वार बन्द होगये, यहां तांवा बहुत ही उत्तम निकलता है उसीके पैसे बनाये जाते हैं, सलम्बूर सरदार भी अपनी जागीर की खानोंसे तांवा निकलवाकर राजाज्ञासे पैसे बन्दवाता है, पश्चिमी सीमापर सुरमा तामडा नीलमाणि, लहसनियां विलौर और छोटे मूल्यके पत्थर भी मेवाडमें पाये जाते हैं, यद्यपि मैंने इनका बहुमूल्य नमूना नहीं देखा तथापि राणाने मुझसे यह बात कही थी कि हमारे यहां बहुमूल्य, और प्रायः प्रत्येक प्रकारके खनिज पदार्थ पाये जाते हैं ।

अब हम पठार वा मध्य भारतकी उच्च समभूमिकी ओर दृष्टि डालते हैं कि जिसकी आकृति इस मनोहर देशकी अपेक्षा कम उपयोगवाली नहीं है । यह दक्षिणकी ओर विन्ध्याचलसे और पश्चिमकी ओर अर्बलीसे पृथक् है, इस प्रकार इसकी रचना निश्चित प्रकारकी है, उसमें पिछली रचनाके वाटप जातिके पत्थर हैं, नक्षेत्रोंमें इस उच्च समभूमिकी परिधि भलीभाँतिसे दिखाई है: इसका धरातल यद्यपि अत्यन्त ही विषमरूपसे दिखाई देता है, तथापि यह मंचाकृति रूपसे श्रेणियोंमें बराबर परिवर्तित होता चला गया है ।

अब हम मण्डलगढसे आगे दक्षिणकी ओर पग बढ़ाते हैं, और उच्च समभूमिसे पृथक् अलग खड़े हुए चट्टानोंपर स्थित चित्तौडको पार्श्वभागमें छोड़कर आगे जावद, दातौली रामपुरा (इसके निकट चम्बल पहले पठारमें प्रवेश करती है) भानपुरा और मुकुन्दराकी घाटी [पहाडके बीचमें यह प्रसिद्ध है] होकर गागरौन [जिस स्थानसे काली सिन्धु अपने सामने आये हुए मंचाकार पर्वतमेंसे निकलकर इकलेरा जहां नेवजनदी पर्वतश्रेणीको तोड़ती जाती है] और मृगवास तक [जहां पार्वती नदी कम उंचाईका मौका पाकर मालवासे हाड़ौतीमें गमन करती है] वहांसे राघवगढशाहाबाद, गाजीगढ और गसवानी होतेहुए जादूवाटीतक चलें तो जहां पूर्वमें चम्बलपर उच्च समभूमि समाप्त होती है, और मंडलगढसे आगे इसी प्रारंभमें अपना पग बढ़ावें तो कुछ दूरपर ही उसका मंचाकार रूप लुप्त होजाता है, और कहीं २ पूर्वरूपमें दिखाई देनेवाली बड़ी बड़ी कतारें जैसे कि बूंदीके किलेमें डवलाना इन्द्रगढ लाखेडी होतीहुई रणथंभोर और करौलीतक जाकर धौलपुर वाडीके समीप समाप्त होजाती है ।

इस भूमिकी उंचाई और टेढ़ाई इसन्तो पश्चिमसे पूर्वकी ओर अर्थात् इन मैदानोंसे लेकर चम्बलके सतह तक पारकरनेमें भलीप्रकारसे दिखाई देती है,

कोटा और पालीके घाटके मध्यवाली थोड़ी सी समानभूमिको छोड़कर जहां यह बड़ी नदी चट्टानोंकी रुकावटोंमें होकर बड़े जोरसे बहती हुई दीखतीहै।

रणथम्भोरके समीप यह उच्च समभूमि ऊंची २ कतारोंके रूपमें परिवर्तित होजातीहै, जिसकी चोटियें धूपमें चमकतीहैं, आकृतिमें यह विषम और शिखर रहित है; यद्यपि यह पर्वतके सिल सिलेसे पृथक् है तथापि पहाडकी बनावट इसमें विद्यमान है, यहांकी पृथक् सात श्रेणी सात पडासे कम नहीं है, इनमें होकर बुनास नदी जाते जाते चम्बलमें जामिलती है, रणथम्भोरके आगे करौलीसे आरंभकर उस नदी तकका समस्त मार्ग एक असम मंचाकारकी भूमि है, जिसके शिखरके तटपर ऊत गिरि मण्डरायल और रणका विख्यात किला है, इसके पूर्वा पार्श्वमें एक दूसरा ढालू मैदान है, कहतेहैं कि सिन्धुके सोतेके समीप लाटौती स्थानसे यह आरंभ होताहै और चंदेरीखनियादाना नरवर तथा ग्वालियर होता हुआ देवगढ़के समीप गोहदके मैदानमें समाप्त होजाता है इसका उतार वुंदेलखण्ड और वेतयाकी वादीमें चलागया है।

यद्यपि मध्य भारतके धरातलमें यह देश प्रसिद्ध है तो भी इसकी चोटी विन्ध्या-चलके शिखरकी सामान्य ऊँचाईसे कुछ ही अधिक ऊंची और उदयपुरकी वादी तथा अर्बलीके मूलकी समानतापर है इसीसे इन दोनों श्रेणियोंका ढालू उतार ऊपर कही हुई उच्च और समभूमिकी जडौतक विस्तृत और विषम है जिसका स्पष्ट प्रमाण नदियोंके साधारण मार्ग हैं, जैसा यहां जलके बहावका वेग कठोर चट्टानोंको तोड़कर प्रबलतासे अपने मार्गको बनाता है, ऐसे पृथ्वीमें बहुत थोड़े विभाग होंगे यहां चार नदी बड़े प्रबल वेगसे बहतीहैं, जिनमेंसे चम्बल राइन [जो यूरोपकी रोन नदीकी बराबर है जो ६५० मील लम्बी है] इन नदियोंने पर्वती जलकी सतहसे आरम्भ कर चोटी पर्यन्त जो तीन सौ फीटसे छः सौ फीट तककी सीधी ऊँचाईपर है काट डालाहै, जिससे वहांकी चट्टान मनुष्यके हाथकी टांकी दी हुईके समान प्रतीत होतीहै, इसके सिवाय पुरातत्त्वके ज्ञाता प्रकृति तत्त्वके प्रेमी जनको जिसे प्रकृतिकी ऐसी विषम दशा देखनेकी इच्छा हो रामपुरासे कोटा तक ऐसे विशेष मनोरम स्थान बहुत थोड़े मिलेंगे।

इस विषम भूमिका धरातल बहुत ही भिन्न प्रकारका है कोटेके समीप आगेको निकले हुए चट्टानपर कई एक स्थानोंमें तो वनस्पतिका चिह्न मात्र तक भी नहीं दीखता, तिसपर जहां वह तिरछा कोन निर्माण करता नदीके किनारोंतक पहुंचताहै, वह भारतवर्षकी सबसे अधिक उर्वरा और उपजाऊ भूमिमेंसे एक है। और

वहां ब्रिटिशभारतके प्रत्येक स्थानसे भी उत्तम जहां कृषि होती है, जैसा हिंगला-जके समीप नागराजका झरना है, वैसे उसके करारे द्वार पार्श्वभागोंमें अत्यन्त विचित्र दरे और गहरे गहरे खाले हैं इनसे छोटी २ नदियें निकलती हैं, और यहांकी कारीगरीका बहुत सा नमूना अबतक यहांके प्राचीन मंदिर और मकानोंमें विद्यमान है, जो वहांके दर्शन करनेवालोंके नेत्रोंको सफल करता है ।

जैसा कि पहले कहाजा चुका है यह मध्यस्थ उंचाई पिछली रचनाकी है जिसको ट्रेप कहते हैं जहां चम्बलने इसको नग्न कर दिया है, वहां इसका रंग दूधकी समान श्वेत है यह बड़ा कठोर है और मिला दानेदार है, यद्यपि उसपर टांकी कठिनतासे चलसकती है, तो भी वाडौलीके पत्थरकी खुदाईका काम शिल्पकारके लिये उपयोगी होसकता है, पश्चिमकी ओर भी उसका रंग सर्वथा श्वेत है, केटे-के निकट श्वेत और वैजनी मिला हुआ, तथा शाहाबादके समीप लाल और भूरा है, जब जलवायुका प्रभाव इसके पूर्वी ढलावपर पड़ता है, तो यह खरदरा धरातल कंकरीला होनेका भ्रम दिलाता है ।

खनिज धातुओंके निमित्त यह वनावट उपयोगी नहीं है, यहां केवल सीसा और लोहा ही प्राप्त होता है, तथापि यह अनशोधी दशामें बहुतायतसे मिलते हैं, जिसमें लोहा अधिक मिलता है, कहाजाता है ग्वालियर प्रान्तमें बहुमूल्य खानें काले सुरमेकी हैं, जहांके नमूने भी मैंने मँगाये थे, परन्तु अब यह खानें बंद हैं, देशीलोग खनिज पदार्थोंके निकालनेसे डरते हैं यद्यपि उनके यहाँ रांगा सीसा तांबा बहुतायतसे पायेजाते हैं, तो भी वे अपने रसोईके वर्तन बनानेकी सामग्रीके लिये भी यूरोपवालोंके मुखकी ओर देखते हैं ।

छोटी पहाडियोंका वर्णन छोड़कर अब मैं अपने पाठकोंका ध्यान रजवाडेके धरातलकी आकृतिके इस निरीक्षणसे निकलनेवाले केवल एक उपयोगी फलकी ओर दिलाऊंगा ।

दो ढंलाव मध्य भारतमें स्पष्टरूपसे दिखाई देनेवाले हैं जिनमेंका मुख्य ढंलाव बड़े प्राकाररूप अर्धलीसे (जो रेतीके बहावको उन मध्यमें स्थित मैदानोंमें जानेसे रोकता है जो चम्बल तथा उसकी शाखाओंसे कटे हुए हैं) वेतवा तक चला गया है, यह पूर्वसे पश्चिमको है, और दूसरा मध्य देशके दक्षिणी पृष्ठ पोषक विन्ध्यपर्वतसे यमुना तक है यह दक्षिणसे उत्तरको है ।

हम यह भी कहसकते हैं कि यमुनाके बहावका वह मार्ग उस बहुत बड़ी बाढ़ीके मध्यमें स्थित दरेकी सूचना देता है जिसका उत्तरकी ओरका

उत्तर हिमालय और दक्षिणका विन्ध्याचलके मूलसे है, यद्यपि मेरे पास साधनकी कमी नहीं है तोभी मेरी यह इच्छा नहीं है कि मैं विस्तीर्ण और अनेक रूप धारण करनेवाले नर्मदाके मार्गोंका वर्णन करूं कारण कि जिस कालमें हम ग्रीष्मप्रधान विन्ध्यपर्वतके शिखरपर नर्मदाके कछारमें उतरनेके निमित्त चढते हैं तभी हमसे राजस्थान और राजपूतोंका सम्बन्ध छूटजाता है और हमारा मिलाप इस देशकी मुख्य प्राचीन जातियोंसे होजाता है जो इस भूमिके पहले स्वामी हैं इनका वर्णन मैंने दूसरोंके निमित्त छोड़दिया है और अपने वर्णनको मैं मध्यभारतकी नदियोंमें प्रधान नदी चम्बलसे आरंभ करके उसीमें समाप्त करूंगा ।

पहाड़ियोंके समुदायके बीचमें विन्ध्याचलके एक अति ऊँचे स्थानपर चम्बलके सोते हैं, उस स्थानपर इनका नाम जान पावा है, और उसी स्थानसे चम्बल चम्बेला और गम्भीर यह तीन सोते निकलतेहैं और दक्षिणी पार्श्वभागसे दूसरी नदियां निकलती हैं, जो नर्मदामें जाकर गिरती हैं और क्षिप्रानदी पीपलोदासे छोटी सिन्धु * देवाससे और दूसरी छोटी छोटी नदियां उज्जैनके पास होकर सबकी सब चम्बलमें पृथक् पृथक् स्थानोंपर उसके उच्च समभूमिमें प्रवेश करनेसे पहले मिलजाती हैं ।

वागडीसे काजी सिंधु और सोडादिया राघोगढसे उसकी छोटी शाखा, मोर-मूकडी और मागडदासे नेवज वा जाम्नीरी, और आमलखेडाकी घाटीसे पार्वती निकलती है, जिसकी दौलतपुरसे विशेष पूर्वी शाखा निर्गत होकर फरहर स्थान पर उसके साथ जा मिलती है, विन्ध्याचलके ऊँचे शिखरपर इन सबके निर्गत स्थान हैं, जहांसे यह उच्च समभूमिमें अपना मार्ग निकालकर ऊँचे स्थानोंपरसे गिरती हुई अन्तमें नुनेरा और पालीके घाटोंपर चम्बलमें मिल जाती हैं यह सब दाहिनी ओरसे मिलती हैं ।

वनास नदी बाईं ओरसे इसके जलको बढारहीहै जो अर्बलीसे निकलकर वारहों मास बहनेवाली छोटी छोटी नदियों और उदयपुरकी झीलोंसे निकलने-

* यह चौथी सिंधु है, पहली सिन्धु, छोटी सिन्धु, काली सिन्धु और चौथी लाटौतीके समीप सिरोजके ऊपरवाली पश्चिमी उच्च समभूमिपर बहनेवाली सिन्धु । सिन् शब्द सीथियन नदीवाचक हैं यह अब प्रचलित नहीं है ।

१ कालीसिन्धुका गागरौनकी चट्टानोंके समीप और पार्वतीनदीका प्रपात छपराके समीप बहुत ही मनोहर और देखने योग्य है । यह वहाँसे पांच मील है छपरामें दो बार ठहरनेपर भी मैं वहाँ न जा सका ।

वाली वेडचनदीका जल लेकर इसमें आन मिलती है, मेवाड उदयपुरकी दक्षिणी सीमा और करौलीकी ऊंची भूमिको सींचनेके पीछे यह बनास नदी रामेश्वरके पवित्र संगमपर चम्बलसे मिलनेके निमित्त दक्षिणको मुड़ती है इस चम्बलमें कई छोटी २ नदियाँ मिलती हैं जिनका उल्लेख उपयोगी नहीं है, और सह्याँ चक्कर खानेके पीछे यह इटावा और कालपीके मध्य पवित्र त्रिवेणी * स्थानके संगमपर यमुनासे मिलजाती है ।

छोटे २ घुमावोंको छोड़कर चम्बलकी लम्बाई पांच सौ मीलसे अधिक होगी; इसके किनारोंपर भारतवर्षके प्रत्येक जातिके लोग निवास करते हैं सैधिया सिसोदिया, चन्दावत जादू गोड हाडा सीकरवाल [गूरजाट] तवर, चौहान, भदौरिया, कछवाहा, सेंगर बुंदेला, यह निर्धनीसे लेकर बड़े धनियोंतक चम्बल और कुमारीके मध्य अपने समूहों सहित बसे हुए हैं, इस प्रकार अर्बलीके पूर्व ओर वाले तथा मध्यभागवाले राजस्थानकी आकृतिका वर्णन कर अब मैं मरुभूमिकी रेतीली पहाडियोंपर पाठकोंको लेजाकर अर्बलीके पश्चिम विभागपर सामान्यरूपसे सिन्धुके कछार तकका दृश्य दिखाऊंगा ।

मरुस्थल देखनेके कौतुकियोंको आवूपर ही खड़ा रहना चाहिये, जिससे मरुस्थलके टीबोंकी कठिन यात्रा न करनीपड़े मरुस्थलकी मनोहर वस्तु खारे जलवाली लूनी नदी है, जो अर्बलीसे निकलकर अपनी शाखाओं सहित जोधपुर राजके सर्वोत्तम भागको उपजाऊ बनाती है, और हिन्दू जिसको मरुस्थली कहते हैं, बालूके उस बड़े मैदानकी सीमाको सदा अपना स्थान बदलनेके लिये स्पष्टतासे अंकित करती है, मरुस्थलका ही अपभ्रंश मारवाड है । पुष्कर और अजमेरकी पवित्र झीलों तथा पर्वतसरसे निकलनेवाली लूनी नदीकी लम्बाई उसकी अधिक दूरवर्ती शाखासे लेकर उसके पश्चिमके विस्तारयुक्त खारे दलदलवाले मुहानेतक ३०० मीलसे कुछ अधिक है ।

सिकन्दरके इतिहासलेखकोंने अपनी पुस्तकोंमें एरिनस शब्द लिखा है वह हमको रण, वा रिणका अपभ्रंश विदित होता है, उसका प्रयोग अवतक बड़े दलदलके लिये कियाजाता है जो लूनी नदी तथा घाटके दक्षिणी मरुस्थलसे

* जमुना चम्बल और सिन्धु । १ यह दो जाति राजपूत नहीं है ।

१ यह रण कदाचित् अरण्य वा मरुस्थलका अपभ्रंश हो वर्तमान रीतिकी अपेक्षा यूनानियोंके लिखनेकी रीति अधिक सही है ।

बहकर आनेवाली वैसे ही खारी जलसे पूर्ण नदियोंके बहावकी मिट्टी आदिसे बना है ।

यह रण १५० मील लम्बा है, और भुजसे बलियारी तक उसकी अधिकसे अधिक चौड़ाई ७० मीलके लगभग है, यात्री उसी मार्गसे इसको पार करते हैं कारण कि इस खारे दलदलके मध्यमें उनके ठहरनेके लिये एक पृथक् मनोहर भूमि है, गरमीके दिनोंमें उसकी धोखादेने वाली सतह पर जिसमें घोर भयानक रेती भरीहुई है, खारी नूनकी एक बड़ी उज्ज्वल पपड़ीके सिवाय और कुछ दिखाई नहीं देता, वर्षामें वहां मैला और खारी दलदल होजाता है, बहुत स्थलमें इसकी गहराई ऊँटकी छाती तक होती है, यहां एक खारी कावा मनोहर स्थान है, यहां ऊँटके लिये चारा और यात्रियोंको विश्राम मिलता है ।

इस खारी दलदलके सूखे किनारोंपर मरीचिका भ्रमका दृश्य विलक्षण रूपसे दिखाई देता है जो थके यात्रियोंके सिवाय सबका मनरंजन करता है, कारण कि वहां पंक्तिबद्ध बुजों, शान्तिमय वस्तियों और सघन कुञ्जोंमें स्वर्गकी समान विश्राम स्थानोंको अवलोकनकर उसकी ओर मृग व्यर्थ धावमान होता है और ज्यों ज्यों यह आगे बढ़ताहै त्यों त्यों वह दृश्य पीछे हटता जाताहै यहां तक कि सूर्य अपने तेजसे इन मेघसे ढके बुजोंको लुप्त करके उसकी दौडको भी निष्फल करदेताहै ।

मरुस्थलमें प्रायः ऐसे दृश्य बहुत दिखाई देतेहैं, और जहां विशेषकर लवणकी पपड़ियां होती हैं वहां यह दृश्य अधिकाईसे दीखते हैं, परन्तु भिन्न २ हेतुओंसे यह भिन्न २ प्रकारके होतेहैं, कभी २ यह प्रबलता पूर्वक आकार बढाकर प्रतिबिम्ब डालनेवाली वस्तु एक लम्बी सी दीखता है पहले यह घनी और अपारदर्शक लम्बी होतीहै, फिर ज्यों ज्यों गरमी बढ़ती है, त्यों त्यों पतली होतीजाती है, और जब बहुत ही गरमी पडती है, तब यह अत्यन्त सूक्ष्म होकर पतली पडजाती है और वाफ होकर उडजाती है, यह दृष्टि सम्बन्धी धोखा वा कौतूहल सी कोट अर्थात् शीतकालका किला कंहाता है, राजपूत लोग इसको भलीभाँतिसे जानते हैं, और विशेषकर यह शीतकालमें ही दीखताहै और यह भी संभव है, कि

१ यहांपर गोरखर घूमते हैं वे जैसे अरबोंके पूर्वज उनके समयमें थे वैसेही अब भी हैं उनका स्थान जंगल वा खारी स्थानोंमें होता है यह भीडभाडसे घबराताहै और हांकनेवालेकी चिल्लाहट पर कुछ ध्यान नहीं देता । जावकी पुस्तक ३४ । ६ । ७ ।

इसी बातसे “शाटोआं एस्पानी” कल्पित मनोरंजक दृश्यकी उत्पत्ति हुई हो, जो पश्चिममें विख्यात है । *

इस रेतीले प्रदेशका आरंभ दक्षिणमें लूनीनदीके उत्तरी किनारेसे और पूर्वमें शेखावाटीकी सीमासे होताहै, यह रेतीले मैदान ज्यों ज्यों पश्चिमकी ओर बढ़ेगे त्यों त्यों परिमाणमें विशेष बढ़ते जायेंगे वीकानेर जोधपुर जैसलमेर यह रेतके ही मैदानमें हैं, इस देशका सम्पूर्ण यह विभाग रेतीले मैदानके अवलम्बवाला है, जितने कुँए जोधपुरसे अजमेरतक खुदायेगये सबमें ही एक प्रकारका रेत कंकर और खडिया मट्टी निकली ।

जैसलमेरके चारों ओर भी मरुस्थल है, और जिसमें गेहूं जौ तथा चावल उपजते हैं, राजधानीके समीपके इस विभागको मरुमध्यकी उर्वराभूमि कहाजाय तो अनुचित न होगा, यहांका दुर्ग पहाड़ी श्रेणीपर कई सौ फुटकी उँचाई पर निर्मित है, जिसका पता उसकी दक्षिणी सीमाके परे पुराने चौहटोंके खँडहरोंतक बतायाजाताहै, जो उसी पर निर्मित है, और जिसके विषयमें यह कहावत है कि हापड (जो जालौरके चौहान राजा कान्दडदेवके भाई सालमसिंहका पुत्र था, और संवत् १३६८ में विद्यमान था) जातके राजाकी राजधानी था अब जिसका कोई दूसरा चिह्न नहीं मिलता, और यह भी सम्भव है कि कदाचित् यह टीवा उस पहाड़ीसे मिलाहो जो जालौरके उर्वराप्रान्तमें होकर गईहै, और कदाचित् यह आवूके मूलसे प्रगट होनेवाली एक शाखा हो ।

यद्यपि यह सब देश मरुस्थल कहते हैं (जो रेतीले मैदानोंका एक प्रभावोत्पादक और लाक्षणिक नाम है,) तथापि यह नाम उसी भागके लिये प्रयुक्त है जिसपर राठौरजातिका अधिकार है ।

* मैंने इसको हिंदारके टूटे फूटे किलेकी चोटीपरसे देखा है, जहांसे दूरतक दृष्टि पहुंचती है, जिसके रोकनेके लिये छोटे जंगलोंके सिवाय कोई आड नहीं है, पृथ्वीके सम्पूर्ण वृत्तभरमें महलों झुरजों और हवाई स्वर्गीय स्तम्भोंकी एक ऐसी कतार बारी बारीसे अपनी ध्वनिक स्थितिको समाप्त करती थी जिसका ध्यानमें आना बड़ी कठिन बात है, घाट और उमरसुमराके मैदानोंमें जहां गढरिये भेड़ें चरायाकरते हैं और जहां खारदार वृक्ष उगते हैं वहां पडतोंकी स्थिति एक सूत्रमें होनेसे जल मरीचिका विशेषकर प्रगट होतीहै यह वही आंति है जिसको एक ईश्वरभक्त भविष्यद्वक्ताने कहा है, कि रेगिस्तानका मृगतृष्णारूपी जल सच्चा पानी होजायगा । मरुस्थल निवासी इसको चित्राम कहते हैं यह चित्रका अर्थ रखताहै और इसके लिये यह नाम देना उचित ही है (शाटोआ एस्पानी मनके कल्पित महत्त्वके विचार मनमोदक)

लूनीनदीके वालोतरा स्थानसे आरंभकर सब घाट उमरसुमरा और जैसलमेरके पश्चिम ओरके विभाग दाऊद पोत्रा तथा बीकानेरकी दक्षिणसीमाओंके बीचके इस चौड़े खण्डमें विलकुल उजाड़ है, पर सतलज नदीसे आरंभकर रणतक पंचाससे सौ मील तककी चौड़ाई और पांच सौ मीलकी लम्बाईवाले देशमें पृथ्वीके अनेक भाग उपजाऊ पायेजातेहैं, जहाँ सिंधुके कछारमें आकर गडरिये अपनी भेड़ें चरातेहैं यहांके जलझरनोंके नाम तीरपार रार और दर है यह सब जलके वाचक हैं, जिनके समीप मरुस्थलके रहनेवाले सोडा, राजडा मांगलिया और सहराई लोग एकत्रित होते हैं । *

इस स्थानमें मैं सजीखारके क्षेत्रों लवणकी झीलों अथवा मरुस्थलोंके दूसरे पैदावारों अर्थात् वनस्पति और खनिज पदार्थोंका कथन नहीं करूंगा यद्यपि कान सम्बन्धी वर्णन शीघ्रतासे किया जासकताहै कारण कि जैसलमेरके समीप पीले पाषाणकी केवल एक ही पहाड़ी है, जिसका पत्थर आगरेकी उस प्रसिद्ध इमारत शाहजहां बेगमके 'ताज' नामक रोजेमें बहुतायतसे लगाया गयाहै ऐसी वनावट अरबदेशमें मकानोंकी बहुधा होती है ।

अब यहां न तो सिंधुनदीके कछारका वर्णन कियाजायगा और न मरुस्थलके रेतीले टीवोंकी अन्तिम सीमावाले उस नदीके पूर्वीभागका वर्णन करूंगा, किन्तु यहाँ अब इतना ही कहना बहुत होगा कि वह छुद्र नदी जो भक्खरके टापूसे सात मील दूर उत्तरमें दाराके समीप सिंधुसे पृथक् होकर लखपतके धीरे सागरमें गिरती है और उस कछारके इस पूर्वी भागकी चौड़ाई प्रगट करती है जो मरु देशकी पश्चिमी सीमा बनाताहै, यदि कोई मुसाफिर इस खीची सिंधुकी समानभूमिसे आगे पूर्वकी ओरको पग धरै तो वह मरुस्थलकी सीमाको उसके उन ऊंचेरेतीले टीवोंके सहित स्पष्ट रूपसे देखलेगा, कि जिनके नीचे साकडा

* सहराई सहरा अर्थात् मरुस्थलसे बनाहै इस कारण सहराजन वा सहरासन सहरा मरुस्थल और जदन मारना इन दोनों शब्दोंका संक्षिप्त अपभ्रंश है राहजनी—अर्थात् राहमें मारना । राह-वर—मार्गपर पिंडारोंने इसीको धिगाडकर लावर कियाहै, लावरके अर्थ उनके यहां लूटमारके हैं ।

१ घागरनदीकी धाराका नाम साकडा है ।

नदी बहती है जो सामयिक वर्षाकी बाढ़ोंके सिवाय प्रायः सूखी रहती है यह बालूके टीले भी बड़े बड़े ऊँचे ऊँचे हैं और भीठी नदी अर्थात् मीठा महाराण (सिन्धुनद) के बाढ़की सीमा कहे जा सकते हैं मीठा महाराण नदीका एक सीथियन तातारी नाम है जिसमें पंचनदसे आरंभ कर सागरतककी सिन्धुनदी ही तकका बोध होता है ।

इति ।

१ महाराण सीथियन नहीं किन्तु मरुभाषाका शब्द है और यह महार्णव शब्दका अपभ्रंश बोध होता है जिसके अर्थ महासागरके हैं । महाराणा—मीठेजलका समुद्र ऐसा अर्थ हुआ, अनुवादक.





अनुवादक—पं० बलदेवप्रसाद मिश्र—मुरादाबाद ।

विज्ञप्ति ।



प्रियभ्रातः !

यह तुम्हारा अनुवादित राजस्थानका इतिहास प्रथमभाग छपकर तैयार होगयाहै, यह तुम्हारे परिश्रमकी एक अमूल्य सामग्री है, इसके कितने ही अंश तुमने मुझे अनुवाद करते समय सुनाये थे, इसके शीघ्र छपनेकी तुम्हें बड़ी ही लालता थी, पर वह तुम्हारी अभिलाषा उस समय पूर्ण न हुई, इस ग्रन्थके सम्पादन करनेके लिये आपने बहुत कुछ सामग्री सम्पादन की थी, जो तुम्हारे असमय परलोक सिधारनेके कारण स्वार्थीजनों द्वारा छिन्नभिन्न होगई, तुम्हारे इस कार्यके सम्पादनमें अनेक विघ्नोंका सामना हुआ जिनके ऊपर आपका बड़ा प्रेम था, वे भी सहायतासे मुख मोड़ गये, जिनके लिये आप सब कुछ करते तथा निरन्तर जिनके कार्य करते थे वे भी निष्प्रयोजन इसमें एक पंक्ति लिखने तकको भी सम्मत न हुए। इधर तुम्हारे वियोगने हृदयपर जैसा आघात किया वह अकथनीय है, एक वर्ष तक तो यह तुम्हारा ग्रन्थ उठाता और धरता रहा, कुछ करते न बना, इधर “श्रीवेंकटेश्वर” यन्त्रालयाध्यक्ष सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजीके अनुरोधसे [जिन्होंने तुम्हारी कीर्ति अचल रखनेके लिये इस ग्रन्थको प्रकाशित किया तथा और भी कुछ करनेका विचार है] मैंने मनको सँभाला, और इस तुम्हारे ग्रन्थको सम्पूर्ण अवलोकन कर शुद्ध किया, मैं जानता हूँ कि तुम्हारे सामने यह ग्रन्थ प्रकाशित होता तो तुम बड़े ही प्रसन्न होते कारण कि तुम्हारा परिश्रम इसमें सबसे अधिक हुआ है, अब यह प्रथम भाग तैयार होगया है वेद शास्त्र और आर्ष वचनोंके विश्वासपर एक पुस्तक आपके पास भेजता हूँ तुम स्वयं पढ़ना और जो तुम्हारी नई मित्र मण्डली हो उसको सुनाना और जो पुस्तक और चाहियें तो और भी मँगाना, तुम्हारी तारा चन्दा तुम्हें बहुत याद करती हैं उनका भी स्मरण करना मुझे खेद है कि तुम अपनी अन्नपूर्णाको न देखसके न उसका तुम्हें देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ आपके

बिना मैं अपनी दशा क्या कहूँ, 'हृदय न विदरेख पङ्क जिमि, बिछुरत प्रीतम नीर' वा 'मिलहि न जगत सहोदर भ्राता' आप तो पहले ही लिखगये कि, "चित्तौरके संग बांह द्विज बलदेवकी गहिलीजिये" पर हमारा तो आपके सिधारनेसे सब कुछ गया, तुम्हारे निकट रहनेके कारण मैं तुम्हारे गुणोंको जानसका, आपके निमित्त तुम्हारे विदेशी हितैषियोंने आंसू बहाए पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी, बाबू बाल-मुकुन्द गुप्त-भारतमित्र, "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार,, राघवेन्द्र, ज्ञानसागर, मोहिनी आदिने तुम्हारे गुण बखाने पर मैं तो कुछ भी न जानसका मेरी वही दशा रही 'घर आये भगवान्, जाने हम न अहीरकर' अच्छा तुम भगवान् रामचन्द्रके समीप सुख पाओ मैं यह ग्रन्थ आपके पास भेजता हूँ स्वीकार करना ।

मुरादाबाद.
चैत्रशुद्धपूर्णिमा
संवत् १९६४.

}

तुम्हारा मिथ्या स्नेही-वज्रहृदय,
ज्वालाप्रसाद.



राजस्थानकां सूचीपत्र ।

अध्याय, खण्ड,	विषय,	पृष्ठ.
१	१ पुराणमें कहाहुआ सूर्य और चन्द्रवंशी राजाओंका वृत्तान्त	१
२	१ सूर्य और चन्द्रवंशीराजाओंकी वंशावली और एक समयमें उनके होनेनहो- नेका विचार	८
३	१ प्राचीनराजाओंके द्वारा भिन्न २ नगर और राज्योंका स्थापित होना ...	१५
४	१ श्रीरामचन्द्रजी व राजा युधिष्ठिरके परवर्ती सूर्य और चन्द्रवंशी राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त व दूसरे राजवंशोंकी समालोचना	२२
५	१ शाकद्वीप और स्कन्धनाभ जातिके साथ राजपूतजातिकी समानताका विचार	२६
६	१ राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंका विचार	४३
१	२ राजस्थानविभाग, शिल्लिल्लोंका वर्णन कनकसेनका वर्णन, वल्लभीपुर, शिला- दित्य, म्लेच्छोंकी वल्लभीपुरपर चढाई वल्लभीपुरका ध्वंस होना	८३
२	२ गोहिलके जन्मका वृत्तान्त; ईडरराज्यकी प्राप्ति गहिलोत शब्दकी उत्पत्ति वाप्पाका जन्म	९३
३	२ वाप्पारावल और समरसिंहके मध्यवर्ती राजाओंका वृत्तान्त वाप्पाकी सन्तति, अरववालोंकी भारतपर चढाई चित्तौडकी रक्षाकरनेवालोंका वर्णन	११२
४	२ कविवर चन्दलिखित विवरण, अनंगपाल समरसिंह तातारियोंका भारतको जीतना समरसिंहका वंश राहुप और उनके उत्तराधिकारी	१२९
५	२ राणा लक्ष्मणसिंह, चित्तौडपर अलाउद्दीनकी चढाई, भीमसिंहको उद्धार कर- नेकेलिये चित्तौडके सरदारोंका खड्गपकडना राणाजी और उनके पुत्रोंका आत्मत्याग; राणा अजयसिंह हमीर, हमीरकी चित्तौड प्राप्ति मेवाडकी प्रसिद्धि क्षेत्रसिंह लक्ष्म मेवाडकी श्रीवृद्धि.... ..	१५६
६	२ राजपूतोंके नारीविषयक शिष्टाचार, बडेपुत्रके राज्याधिकारकी नीतिमें फेरफार चण्डके छोटेभ्राता मुकुलजीको राज्यप्राप्ति, मेवाडमें राठौरोंका अन्याय, चण्डका उनको निकालना, मुकुलजीका राज्यशासन और उनकी हत्या ...	१९०
७	२ कुंभका सिंहासनारोहण, मालवपति महम्मदको विजयकर चित्तौडमें लाना, राणा कुंभका गौरव, पुत्रके द्वारा उनकी हत्या, रायमलको राज्यकी प्राप्ति, दिल्लीके बादशाहका मेवाडको घेरना, रायमलकी विजय और मृत्यु ...	२१४
८	२ राणा संग्रामसिंहका राज्यपर बैठना, मुसलमानोंके राज्यका वृत्तान्त राणा सांगाकी विजय, भारतपर भिन्न २ राज्योंकी चढाई, बाबरका आक्रमण, राणा सांगाकी बाबरपर चढाई सांगाकी मृत्यु, उनके चरित्र, राणा रतनजीका सिंहा-	

अध्याय. खण्ड.

विषय.

पृष्ठ.

- सनपर बैठना, उनकी मृत्यु, राणा विक्रमाजितका वृत्तान्त, चित्तौड़के ऊपर मालवेके शाहकी चढ़ाई चित्तौड़ पर; हुमायूँका चित्तौड़की रक्षाको आना, विक्रमाजितको पुनः राज्यकी प्राप्ति, और सरदारोंके द्वारा राज्यसे भ्रष्ट होना, वनवीरका राज्यपाना ... २४४
- ९ २ वनवीरका राज्यशासन, उदयसिंहके मारनेको वनवीरका उद्योगकरना, उदयसिंहकी प्राणरक्षा, उदयसिंहका गुप्तनिवास, दुनाका वर्णन, वनवीरका राज्य भ्रष्ट होना उदयसिंहका राज्य पाना, नागपुरके भौसलेकी उत्पत्ति उदयसिंहका राज्यपाना, हुमायूँकी मृत्यु, अकबरको राज्य प्राप्ति अकबरकी चित्तौड़ पर चढ़ाई जयमलपत्ता, वीर नारी, जुहारप्रत, हिन्दूमुसलमानोंका घोर युद्ध, उदयसिंहको पराजय, उनका उदयपुर बसाना उदयसिंहकी मृत्यु ... २७५
- १० २ राणा प्रतापसिंहका सिंहासनपर बैठना, राजपूतोंका अकबरसे मेल, राणा प्रतापकी हीनावस्था, मालदेवका अकबरके आधीन होना, प्रतापसिंहका राजपूतोंसे सम्बन्ध त्यागदेना अकबरके राजा मानसिंह सलीमकी मेवाड़पर चढ़ाई हलदीवाड़का समर प्रतापका सलीमसे युद्ध, प्रतापसिंहका घायल होना कालासरदारका प्रतापसिंहको बचाना प्रतापके भ्राता शक्तसिंहका भाईसे साक्षात् सुगल सेनापति फरीदका प्रतापके हाथसे माराजाना भीलोंका प्रतापके परिवारकी रक्षा करना धीकानेरके राजकुमार खुशरोजका वृत्तान्त प्रतापसिंहका मेनाटत्याग, भेन्नीकी त्यागिभक्ति, प्रतापका प्रत्यागमन, कमलनेर और उदयपुरका पुनरुद्धार विजयगौरव और मृत्यु ... ३१२
- ११ २ अमरसिंहका सिंहासनपर बैठना, अकबरकी मृत्यु, कलभ्योर सरदारका जाचरण, दादशाहीसेनाकी पराजय, सागरजीकी राज्यप्राप्ति अमरसिंहको उनका राज सौंपना, चन्दावत और शक्तावतोंमें विद्रोह उनकी उत्पत्ति परवेजका राणासे युद्ध, उसकी ओर महावतखांकी पराजय, खुशरूकी मेवाड़पर चढ़ाई हंगलैण्डसे दूतका आना अमरसिंहका परलोक वास ... ३५९
- १२ २ कर्णके द्वारा उदयपुरका हटहोना भीमको सरदारपदकी प्राप्ति राजद्रोहियोंपर जहाँगीरकी चढ़ाई तुर्रमका भागना जगतसिंहका सिंहासनपर बैठना, चित्तौड़का पुनः संस्कार, राणा राजसिंह, औरंगजेबके अत्याचार, रूपनगरकी राजकुमारीके साथ औरंगजेबका विवाह विचार औरंगजेबका अपमान राणासे सुगल सम्राटकी संधि राणाका चरित्र समुन्दसरोवर दुर्भिक्ष और महामारी ४००
- १३ २ राणा जयसिंह, सरोवर निर्माण, यवनोंसे संधिभंग राणाकी मृत्यु अमरसिंहको राज्य, औरंगजेबकी मृत्यु, राज्यमें झगड़े बहादुरशाहका अभिषेक, सिक्खोंकी स्वाधीनता फर्रुखसियर, भारतमें ब्रिटिशदलकी प्रभुता राणाकी बादशाहसे संधि जाटोंकी स्वाधीनता अमरसिंहका स्वर्गवास ४७०

अध्याय, खण्ड.

विषय.

पृष्ठ.

- १४ २ राणा संग्रामसिंह मुगलबादशाहोंकी अवनति हैदराबादराज्यकी प्रतिष्ठा, मुहम्म-
दशाहका दिल्ली पाना संग्रामसिंहका परलोक गमन, राणा जगतसिंहको
राज्य-महाराष्ट्रियोंकी प्रबलता, नादिरशाहकी भारतपर चढ़ाई, बाजीरावका
मेवाड पर चढ़ना राजमहलकी लड़ाई राणाका परलोक गमन ... ४९८
- १५ २ दूसरे राणा प्रतापसिंह, राणा अमरसिंह हुलकरकी मेवाडपर चढ़ाई सरदारोंका
विद्रोह, कोटेका जालिमसिंह, नकलीराणा की संधियासे सन्धि, असलीराणा
की पराजय, संधियाकी मेवाडपर चढ़ाई राणाका अमरचन्दको मंत्री बनाना,
राणाजीका गुप्तरीतिसे वध, राणा हमीरका सिंहासनपर बैठना, मेवाडका
क्षय होना ५३५
- १६ २ महाराणा भीम, निकली हुई भूमिपर फिर अधिकार, चन्दावत सरदारका
विद्रोह, सोमाजीमंत्रीका वध, जालिमसिंहकी मेवाड अधिकारकी अभिलाषा,
हुलकरकी चढ़ाई, नाथद्वारा कृष्णाकुमारीके विवाहसम्बन्धमें राजपूतोंका
झगड़ा कृष्णाकुमारीका आत्मत्याग संधियाकी समामें वृटिशदूतका आगमन,
अंग्रेजोंसे राणाकी संधि ५६४
- १७ २ राजपूतोंके साथ अंग्रेजोंकी मित्रता, मेवाडमें शांति अंग्रेजी दूतका नियत होना
राणाका चरित्र, राणाका देशकी भलाईके निमित्त उपाय करना, भीलवाडेमें
व्यापार सरदारोंका मिलना, विदनौर भदेश्वर अमावस्य मेवाडकी जिम्मेदारी,
गांवखातेके नियम फरमानकी टिप्पणी पट्टेलोंका कर्तव्य भूमिकर ... ६३३
- १८ २ महाराणा जवानसिंह, अंग्रेजोंसे उनकी नवीन संधि अपरिमित व्यय, राजपर
ऋणवृद्धि, राणाकी मृत्यु राणा सरदारसिंहका राज्यअभिषेक नवसंधि बंधन
राणा सरदारसिंहका परलोकवास ... ६७९
- १९ २ महाराणा स्वरूपसिंहका अभिषेक, सरदारोंसे उनका विवाद, वृटिशगवर्नमेण्टको-
करदेनेमें असामर्थ्य सरदार और महाराणामें फिर संधि स्वरूपसिंहका
परलोक वास ... ६९९
- २० २ महाराणा शंभुसिंह शासनसमितिकी स्थापना, मेवाडमें शान्ति, वृटिशगवर्न-
मेण्टके द्वारा महाराजको पोष्य पुत्र लेनेका अधिकार राणाशंभुसिंहका राज्य
शासन और परलोक वास ... ६९७
- २१ २ महाराणा सजनसिंह, मेवाडकी शासन व्यवस्था, विक्टोरियाके राजसूययज्ञमें
महाराणाका गमन, मेवाडका संक्षिप्त विवरण, महाराणा सजन सिंहका
परलोक वास महाराणा फतहसिंहका राज्यशासन और उपसंहार ... ६९४
- २२ २ मेवाडकी धर्म प्रतिष्ठा पर्वोत्सव, आचार व्यवहार पुराणोंके फल भगवान् एक-
लिंगजीका मंदिर श्रीकृष्णकी पूजाकी रीति ... ७१०

अध्याय, खण्ड.	विषय.	पृष्ठ.
२३	२ वसन्त पंचमीसे झूलनयात्रातक एक वर्षके उत्सव	७२१
२४	२ समाजनीतिमें ज्ञानकी आवश्यकता राजस्थानकी अनेकजातियोंके आचारविचार, राजपूतोंकी स्त्रियोंपर भक्ति और सन्मान, रनवासकी रीति, पुगालकी मधुमालिनी देवीका वर्णन, अन्यजातियोंकी स्त्रियोंके साथ भारतकी स्त्रियोंकी तुलना	७४८
२५	२ सतीदाह शिशुकन्या हत्या जुहार रीति, राजपूतोंका शिकार खेलना, व्यायाम क्रीडा, गाना, वजाना, महाराज शिवधनसिंह राजपूतोंकी शिक्षा; वेष ...	७९७
२६	२ कर्नल टाडके मारवाड जानेका वृत्तान्त, देवपुर, जालिमसिंह पुलानी रामसिंह महता माणिकचंद नरसिंहगढ़के राजा, नाथद्वारेका ऊंचा मार्ग नाथद्वारेके पुजारीसे साक्षात्, असुरग्राममें गमन, सुमाइचाग्रामका देखना कैलवाडामें गमन महाराज दौलतसिंह कमलमीरके दुर्गका विवरण मारवाडमें गमन...	८२८
२७	२ माहीर वा मीराजाति, इनका इतिहास और व्यवहार गोकुलगढ़के डाकू गोडारा और रूपनगरके सामन्त मेवाड और मारवाडके स्थानोंकी भिन्नता प्राचीन विवादका कारण, आओनला, वाबुल नादौल और चौहान जाति-की भ्रष्टता नादौलमें जैनियोंके स्मरण चिह्न कविजन, पुण्यगिरि पोकर्ण और निमाजका जीवन चरित्र, जोधपुर राजसभामें सन्मानकी व्यवस्था ...	८५६
२८	२ राजधानी जोधपुर राजा मानसिंहका स्वभाव और मिलनसारी मारवाडके प्रधान पुरोहित देवनाथ; राजाके विरुद्ध पडर्यंत्र, राजाकी उन्मत्तता, मन्दौरमें गमन, राठौरोंके स्मारक जयतोरण पर्वतके ऊपरकी प्रतिमाएँ राजमहलमें उत्सव अंग्रेज दूतके साथ राजाकी मुलाकात जोधपुर परित्याग ...	८९१
२९	२ नन्दला, विशालपुर, एक प्राचीन नगरका ध्वंसावशेष विचक्रुल्ला, खोदितलिपि, भूखन्दा वदनसिंह, मेरता, कृषकजाति, राजा अजितका वृत्तान्त, रामसिंहके साथ भक्तसिंहका युद्ध भक्तसिंहका राज्याधिकार जयपुराधीशद्वारा उनकी मृत्यु; विजयसिंहका अभिषेक विजयसिंहका जयपुर और बीकानेरसे माँगनेपर सहायता न पाना	९
३०	२ माधोजीसेंधिया राठौर और कछवाहोंका मिलन तङ्गाका समर सेंधियाकी पराजय, राठौरोंका अजमेरपर अधिकार, राठौर और कछवाहोंका मनोविकार, पातनका युद्ध, जयपुरीसेनाकी कृतम्रतासे राठौरोंका पराजय, महाराष्ट्रियोंका मारवाडपर आक्रमण, महाराष्ट्रियोंकी सेनाका विनाश वृटिशदूतकी मध्यस्थता हिसार गोविन्दगढ़ पुष्करसरोवरदिका वर्णन सर्पगिरिकी चोटीसे भजनालय-धार अजमेर और बलखैरका दृश्य	९५३
३१	२ अजमेर नगर अजमेरदुर्ग विशाल सरोवर अनासागर चौहानराजगणके स्मृति-चिह्न जुनाईका दुर्गप्रासाद देवला वानेरा, राजामीम भीलवाडा, आर्यपुर दरबार	

(अन्त्यवृत्ति पृति)

“श्रीवेङ्कटेश्वर” (स्टीम) यन्त्रालय-मुंबई.



मनुजीसे एक पीढी पीछे हुए हैं कारण कि उन्होंने मनुसे एक पीढी पीछे उत्पन्न होकर उनकी कन्या इलाका पाणिग्रहण किया था, पुराणादि ग्रंथोंमें जो अन्यान्य राजाओंका वृत्तान्त पायाजाताहै वे सब इन्हीं दो वंशोंकी शाखा प्रशाखाओंमें उत्पन्न हुए हैं ।

किन्तु समय सूर्य और चंद्रवंशके आदि पुरुष सबसे पहले भारतवर्षमें आये थे, इनका पता लगाना बड़ा कठिनहै, प्रसिद्ध पुराणोंमें जो कुछ वृत्तान्त पाया जाताहै उनसे विदिन होताहै कि सूर्य कुलकी प्रतिष्ठा करनेवाले मनु सातवें मन्वन्तरके समय प्रगट हुएथे, इस कालान्तक मन्वन्तरके वृत्तान्तको लेकरही संसारके प्रायः समस्त आदिष्टिके ग्रंथ रचे गयेहैं कारण कि, इस सम्बन्धमें प्रायः सबकी एकजात देख पड़ती है ।

इस ऐतिहासिक वृत्तान्त जाननेमें श्रीमद्भागवत, स्कन्दपुराण, अग्निपुराण, भविष्यपुराण यह प्रधानहैं, यद्यपि उनमें स्थान स्थानमें अनैक्यता दिखाई देतीहै, परन्तु विचार करनेसे यह भली भांति जानलिया जाताहै कि सब पुराणोंने एकही अभिन्न असाधारण कार्यके निमित्त प्रगट होकर भूमिकी अवस्थाके अनुसार भिन्न २ मूर्ति धारण की हैं विचारसे देखाजाय तो उद्देश्यमें भेद नहीं है ।

संसारके चाहें जिस किसी सृष्टिकी उत्पत्तिके बनानेवाले ग्रंथको पढो उन सबमें प्रायः एकही भाव दिखाई देगा, वही कल्प वही जलप्रलय वही भूमिकी उत्पत्ति और वही प्रजाका वर्द्धन मिलताहै, अग्निपुराणकी वह एक ही छाया सृष्टि उत्पत्तिके वर्णनमें सबके साथ एकाकार दिखाई देतीहै, वहां लिखाहै कि ब्रह्माजीके एकादिनमें चौदह मनु राज करतेहैं प्रत्येक मन्वन्तरमें ७१ इकहत्तर चौकड़ी युग अर्थात् सतयुग त्रेता द्वापर और कलि बीत जातेहैं यह मनु बड़े धर्मात्माहैं इन मनुओंके

१—स्वायंभुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष, वैवस्वत, सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि, देवसावर्णि, और इन्द्रसावर्णि यह चौदह मनुहैं, जितने कालमें एक मनु प्रजापालन करताहै, उतने कालको मन्वन्तर कहतेहैं यथा “मन्वन्तरं मनोः कालो यावत्पालयते प्रजाः ॥ एको मनुः स कालस्तु मन्वन्तरमिति श्रुतः ॥” कालिकापुराण अ० २३

२—“कृतं त्रेता द्वापरश्च कलिश्चेति चतुर्थकम् । दिव्यमेकं युगं श्रेयं तस्य या चैकसप्ततिः । मन्वन्तरं न्तु तज्ज्ञेयम्” इति पद्मपुराण स्वर्गखण्ड ३९ अध्याय.

द्वाराही सृष्टिकी रचना होतीहै, यह चौदह मनु अपने २ समयमें* अपना २ सृष्टि रचनासम्बन्धी कार्य करतेहैं जिस समयका हम वर्णन करतेहैं उस सूर्य कुलकी प्रतिष्ठा करनेवाले मनु सातवें वैवस्वतके समय अवतीर्ण हुएथे ।

कहतेहैं कि, उस सातवें मन्वन्तरके समयमें भगवान वैवस्वत* मनु एकदिन कृतमाला नदीके किनारे बैठे तर्पण कर रहे थे, कि इतनेमें ही एक छोटीसी

* आद्यो, मनुर्ब्रह्मपुत्रः शतरूपा पतिव्रता । धर्मिष्ठानां वरिष्ठश्च गरिष्ठो मनुषु प्रभुः ॥ १ ॥
स्वायम्भुवः शम्भुशिष्यो विष्णुव्रतपरायणः । जीवन्मुक्तो महाज्ञानी भवतः प्रपितामहः ॥ २ ॥
संप्राप कृष्णदास्यञ्च गोलोकं च जगाम सः । दृष्ट्वा मुक्तं स्वपुत्रं च प्रहृष्टश्च प्रजापतिः ॥ ३ ॥
तुष्टाव शंकरं तुष्टः ससृजे मनुमन्यकम् । स च स्वयम्भुपुत्रश्च पुरः स्वायम्भुवो मनुः ॥ ४ ॥
स्वारोचिषो मनुश्चैव द्वितीयो वह्निनन्दनः । राजा वदान्यो धर्मिष्ठः स्वायम्भुवसमो महान् ॥ ५ ॥
प्रियव्रतसुतावन्यौ द्वौ मनु धर्मिणां वरौ । तौ तृतीयचतुर्थौ च वैष्णवौ तामसोत्तमौ ॥ ६ ॥
तौ च शंकरशिष्यौ च कृष्णभक्तिपरायणौ । धर्मिष्ठानां वरिष्ठश्च रैवतः पंचमो मनुः ॥ ७ ॥
षष्ठश्च चाक्षुषो ज्येष्ठो विष्णुभक्तिपरायणः । श्राद्धदेवः सूर्यसुतो वैष्णवः सप्तमो मनुः ॥ ८ ॥
सावर्णिः सूर्यतनयो वैष्णवो मनुरष्टमः । नवमो दक्षसावर्णिर्विष्णुव्रतपरायणः ॥ ९ ॥
दशमो ब्रह्मसावर्णिर्ब्रह्मज्ञानविशारदः । ततश्च धर्मसावर्णिर्मनुरेकादशः स्मृतः ॥ १० ॥
धर्मिष्ठश्चवरिष्ठश्च वैष्णवानां सदा व्रती । ज्ञानी च रुद्रसावर्णिर्मनुश्च द्वादशः स्मृतः ॥ ११ ॥
धर्मात्मा देव सावर्णिर्मनुरेव त्रयोदशः । चतुर्दशो महाज्ञानी चेन्द्रसावर्णिरिव च ॥ १२ ॥

ब्रह्मवैवर्त्तप्रकृतिलखण्ड ५१ अ०

यह चौदहों ७१ चौकड़ी युगकी दीर्घायुवाले होतेहैं ।

* इनका दूसरा नाम श्राद्धदेव है यह सूर्यके औरससे विश्वकर्माकी पुत्री संज्ञाके गर्भमें उत्पन्न हुएहैं, मनुके सहोदर यम और यमुना वहन है ।।

“अथ तस्मै ददौ कन्यां संज्ञां नाम विवस्वते । प्रसाद्य प्रणतो भूत्वा विश्वकर्मा प्रजापतिः ॥ १ ॥
त्रीण्यपत्यान्यसौ तस्याञ्जनयामास गोपतिः । द्वौ पुत्रौ स महाभागौ कन्याश्च यमुनां नदीम् ॥ २ ॥
मनुर्वैवस्वतो ज्येष्ठं श्राद्धदेवः प्रजापतिः । तेषां यमो यमी चैव यमलौ संबभूवतुः ॥ ३ ॥”

मार्कण्डेयपुराण ॥

१ मलय गिरिकी उत्पन्नहुई नदियोंमें कृतमाला भी एकहै.

“कृतमाला ताम्रपर्णी पुण्यजात्युत्पलावती । मलयाद्रिसमुद्भूता नद्यः शीतजलाः स्मृताः ॥ १ ॥”

मार्कण्डेयपुराण ॥

“मनुर्वैवस्वतस्तेपे तपो वै मुक्तिमुक्तये । एकदा कृतमालायां कुर्वतो जलतर्पणम् ॥ १ ॥
तस्याञ्जल्युदके मत्स्यः स्वल्प एकोऽभ्यपद्यत । क्षेप्तुकामं जले प्राह न मां क्षिप नरोत्तम ॥ २ ॥
ग्राहादिभ्यो भयं मेघ तज्ज्ञात्वा कलशोऽक्षिपत् । स तु वृद्धः पुनर्मत्स्यः प्राह त्वं देहि मे वृहत् ॥ ३ ॥
स्थानमेतद्वचः श्रुत्वा राजायोदधश्च अक्षिपत् । तत्र वृद्धोऽब्रवीद्भूषं पृथु देहि पदं मनो ॥ ४ ॥
सरोवरे पुनः क्षितौ वव्रुधे तद्यमाणवान् । ऊचे देहि वृहत्स्थानं प्राक्षिपच्चक्षुषौ ततः ॥ ५ ॥
लक्षयोजनाविस्तोर्णः क्षणमात्रेण सोभवत् । मत्स्यं तमद्भुतं दृष्ट्वा विस्मितः प्रब्रवीन्मनुः ॥ ६ ॥
को भवाननु वै विष्णुर्नारायण नमोस्तु ते । मायया मोहयसि मां किमर्थं त्वं जनार्दन ॥ ७ ॥”

मच्छली नदीके जलके साथ उनकी अंजलीमें आकर गिरी मनुजीने उसको नदीके जलमें फेंकदेना चाहा परन्तु मच्छलीने उनको निवारण करके कहा हे नरोत्तम! मुझे जलमें मत त्यागन करो मुझे जलके नाके आदि जलजन्तुओंसे बड़ी शंका होती है इस कारण मुझे किसी और स्थानमें राक्षित कीजिये मनुजीने यह सुनकर उस मच्छलीको एक कलशमें रक्खा परन्तु वह मच्छली पूर्वसे बड़ी होगई, और कहनेलगी मुझको इससे किसी बड़े स्थानमें रखिये तब मनुजीने उसको सरोवरमें रक्खा, सरोवरमें पहुँचतेही देखते २ क्षणमात्रमें उस मच्छलीकी देह इतनी बढगई कि सरोवरमें न समा सकी, तब मनुजीने उसको समुद्रमें पहुँचाया वहां वह मत्स्य क्षण भरमें लाख योजनका होगया, तब मनुजीने अत्यन्त विस्मित होकर भक्तिपूर्ण वचनसे कहा हे भगवन्! आपको नमस्कार है और किस कारणसे मुझे भ्रमा रहे हो, तब मत्स्यने उत्तर दिया कि, आजसे सातवें दिन समुद्र उफनकर सारे संसारको डुवादेगा, उस समय तुम प्रत्येक जीव, जन्तु, और वृक्ष लता, गुल्मादिका एक एक बीज लेकर सप्तर्षियोंके साथ नावपर चढजाना, पीछे मेरे प्रगट होनेपर उस नावको मेरे सींगमें बांधदेना तब तुम्हारी रक्षा होगी ।

भविष्यपुराण देखनेसे जानाजाता है मनुजी सुमेरु पर्वतपर राज्य करते थे उनका एक वंशधर ककुत्स्थनामक अयोध्यामें आनकर राज्य करने लगा, और क्रमसे उनकी बहुतसी सन्तति पर्वतके देशोंसे आकर संसारके सब देशोंमें फैलगई ।

इस पवित्र सुमेरु* पर्वतके विषयमें भिन्न २ देशोंके धर्मग्रंथोंमें बड़ी विचित्र बातें देख पड़ती हैं भिन्न २ धर्मावलम्बी और भिन्न २ सम्प्रदायोंके उपासकोंने

* “दक्षिणेन तु नीलस्य निषधस्योत्तरेण तु । प्रागायतो महाभाग माल्यवान्नाम पर्वतः ॥ पश्चिमे तु तथैवास्ते पर्वतो गन्धमादनः । पूर्वे समुद्रकूलात्तु भद्राश्वं नाम वर्षकम् ॥ माल्यवानवाधितस्तस्य केतुमालश्च पश्चिमे । गन्धमादनसीमान्तं नवसाहस्रयोजनम् ॥ परितस्तु तयोर्मध्ये मेरुः कनकपर्वतः ।”

यह पर्वतराज सुमेरु दक्षिणमें नीलपर्वतसे उत्तरमें निषध पर्वतसे पूर्वमें माल्यवान पर्वतसे पश्चिममें गन्धमादन पर्वतसे व्याप्त है, पूर्वमें समुद्रके किनारेसे भद्राश्व वर्ष है, माल्यवान नाम पर्वततक उसकी अवधि है पश्चिममें केतुमाल वह गन्धमादनकी सीमातक नौ सहस्र योजन है, इन्हीं दोनोंके बीचमें सुवर्णका पर्वत सुमेरु नामसे विख्यात है ।

सुमेरु पर्वतके विषयमें जो विवरण प्रकाशित हुए हैं उनकी यथार्थ भूमिका निरूपण करना कठिन बात है कारण कि उस समयसे इस समय पर्यन्त कितने सहस्रवर्ष व्यतीत होगये इतने दीर्घकालमें इस भूमण्डलमें जितना विप्लव और परिवर्तन होगया है उससे यह बात सहजमें विदित होसकती है कि पुराणोंमें जिनपर्वत और प्रदेशोंका वर्णन आया है उनमें बहुतसे अब समुद्रके गर्भमें—

अपनी२ शक्तिके अनुसार भिन्न२ प्रकारसे वर्णन कर अपने २ उपास्य देवताका निवासस्थान कहाहै ब्राह्मणोंने इस पवित्र पर्वतको वाघेश* आदीश्वर महादेव जीका जैनियोंने जैनाधिप आदिनाथका तथा ग्रीक लोगोंने वेकशका निवासस्थान बतायाहै, उनके मतमें इस स्थानमें ही मनुने मनुष्य जातिको कृषि शिल्प और दूसरी सभ्यविद्याओंकी शिक्षा दी थी ।

—लय होंगेये, और अनेकों समुद्र विशाल मरुभूमिके गर्भमें समागये, इसीसे पुराणोक्त नामावलीका इस समयकी नामावलीके साथ भेद पड़ताहै, जो कुछभी हो विचारसे यही स्थिर होताहै कि सुमेरु पर्वत भारत वर्षके उत्तर और उत्तरकुरुके दक्षिणमें स्थितहै यथा—

“स तु मेरुः परिवृतो भुवनैर्भूतभावनैः । यस्येमे चतुरो देवा नानापार्श्वेषु संस्थिताः ॥
भद्राक्षो भारतश्चैव केतुमालश्च पश्चिमे । उत्तराश्चैव कुरवः कृतपुण्यप्रतिश्रयाः॥” [मत्स्यपु०]

“तत्र देवगणास्त्वेवं गन्धर्वोरगराक्षसाः । शैलराजे प्रमोदन्ते सर्वतोप्सरसस्तथा॥” मत्स्यपु० अ० ५॥

अर्थात् भूतभावन भुवनोंसे यह सुमेरु पर्वत व्याप्त होरहाहै जिसके अनेक भागोंमें यह चार प्रदेश वर्तमानहैं, पूर्वमें भद्राक्ष, दक्षिणमें भारतवर्ष, पश्चिममें केतुमाल और उत्तरमें उत्तर कुरुदेश-है, वहां देवता, गन्धर्व, उरग, राक्षस, अप्सरा नित्य विहार करतेहैं, नृसिंह पुराणके मतसे यह पृथिवीके मध्यमें स्थितहै यथाहि—

“मध्ये पृथिव्यां विस्तीर्णो भास्वान्मेरुर्हिरण्यः ।”

भागीरथी गंगा इसी सुमेरु पर्वतके शिखरसे प्रवाहित हुईहै यथाहि—

“तस्य शैलस्य शिखरात् क्षीरधारा महामते । पुण्या पुण्यतमैर्जुष्टा गंगा भागीरथी शुभा ॥
हिमालयं विनिर्भेद्य भारतं वर्षमेत्य च । लवणाग्न्याधिसमभ्येति दक्षिणस्यां दिशि द्विज॥”
ज्योतिष शास्त्रके मतसे—

“अनेकरत्ननिचयो जाम्बूनदमयो गिरिः । भूगोलमध्यगो मेरुश्चमयत्र विनिर्गतः ॥३४॥
उपरिष्ठात्स्थितास्तस्य सेन्द्रादेवा महर्षयः । अधस्तादसुरास्तद्विषन्तोऽन्योन्यमाश्रिताः ॥३५॥
ततः समन्तात्पारिधिः क्रमेणायं महार्णवः । मेखलेव स्थितो धाव्या देवासुरविभागकृतम् ॥३६॥
समन्तान्मेरुमध्यात्तु तुल्यभागेषु तोयधेः । द्वीपेषु दिक्षु पूर्वर्दिनगर्थो देवनिर्मिताः ॥३७॥
भूवृत्तपादे पूर्वस्यां यमकोट्येति विश्रुता । भद्राश्ववर्षे नगरी स्वर्णप्रकारतोरणा ॥३८॥”

इत्यादि सूर्यसिद्धान्त अ० १२

* वाघेश अथवा व्याघ्रेश, हिन्दुओंके व्याघ्रेश और ग्रीक लोगोंके वेकश इन दोनों देवताओंकी प्रायः एकही प्रकारकी उपासना विधि देखनेमें आतीहै, दोनों ही देवता व्याघ्रचर्मपर विराजमान होते, और व्याघ्रचर्मको धारण करतेहैं, आदर्शरूप वाणलिंग दोनों सम्प्रदायोंमें पूजित होताहै, मेवारमें इस समय भी व्याघ्रेशके अनेक मंदिर देखनेमें आतेहैं—

१ इसपर महादेवजीकाही निवास नहीं ब्रह्मा और विष्णुकाभी निवासहै यथाहि—

“शृङ्गन्तु पश्चिमं यच्च ब्रह्मा तत्र स्थितः स्वयम् । पूर्वशृङ्गे स्वयं विष्णुर्मध्ये चैव शिवःस्थितः॥”

इस सम्पूर्ण विषयका विचार करनेसे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि संसारके ऐतिहासिक ग्रंथोंमें यह सम्पूर्ण भिन्न नाम एकही स्थानके हैं, और एकही मनुके निवास-स्थान हैं, उस समय हिन्दू और ग्रीक जातिमें कोई भेद न था सब मिलकर एक, साथ ही जीवन यात्रा निर्वाह करते थे, कारण कि आदिनाथ आदीश्वर असिरीश, वाघेश वेकश, मनु मीनेश और X नू यह एकही मानव पिताके भिन्न नाम हैं।

जिसदेशके विशाल वृक्षस्थलको धोती हुई आमुअक्षस वा जिहुन तथा अन्यान्य नदियें अपनी तरंगोंको विस्तारित करती हुई प्रवाहित हुई हैं, इन ही नदियोंसे मेखलामृत हुए सुमेरु पर्वतके पवित्र शिखरको सूर्य और चन्द्रवंशीलोग अपना कुलगुरु और आदि स्थान कहते हैं। यह बात जगतके इतिहाससे स्पष्ट है।

संसारकी समस्त प्राचीन जातियें उनका आदि वासस्थान इस उच्च भूमिको ही बताती हैं और किसी देशका निरूपण नहीं करतीं।

इस देवताओंसे सेवित उच्चभूमिको त्याग कर वैवस्वत मनु सिंधु गंगाके प्रवाहसे पवित्र हुई इस आर्यावर्त भूमिमें आयेथे और अपने विशाल वंशका बीज आरोपण किया और वह वृक्ष क्रमसे अनेक शाखा प्रशाखाओंमें शोभायमान हुआ और वे सब शाखा शनैः शनैः सम्पूर्ण भारतवर्षमें फैल गई* ॥ ॥

X यहूदी और मुसलमान इस शब्दको नू कहते हैं, तो क्या यह नू मनु शब्दका ही अपभ्रंश है ?
१ प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता सरवालटररेलेने अपने जगतके इतिहासमें स्पष्ट लिखा है कि पानीके तो-फानके पीछे भारत वर्षमें ही सबसे पहले वृक्ष लतादिकी उत्पत्ति और मनुष्योंकी वसती हुई थी, अपने मतके समर्थन करनेके निमित्त जो प्रमाण उक्तमहोदयने अपने ग्रंथमें दिये हैं, यदि उन सबको लिखा जाय तो एक बहुत बड़ा ग्रंथ तैयार हो, इसकारण आवश्यकता समझकर उन प्रमाणोंका एक ही अंश यहां लिखते हैं, जो विशेष उपयोगी है, वह कहते हैं मूसाने जिस अरारट् पर्वतका नाम लिया है उससे किसी एकही पर्वतका नाम ग्रहण नहीं होसकता कारण कि अर्मेनी भाषामें अरारट् शब्दका अर्थ पर्वतमाला है इसकारण यह अर्मेनीमें न होकर काकेशस (को-हकाफ) की शैलमालाके किसी एक भागमें अवस्थित होगा वह भाग अर्मेनीकी अपेक्षा अधिक गर्म और उसके पूर्वकी ओर है इसप्रकार सरवालटररेलेके कथनसे प्रमाणित होता है कि इन्होंने मनु-जीकी वासभूमिको भारतवर्ष और शाकद्वीपके मध्यमें बताया है।

See Raleigh's History of the world.

* ऊपरके विचार टाडसाहब तथा विदेशी पुरुषोंके हैं शास्त्रके गहरेविचारसे यह बात भली भांति स्पष्ट होजाती है कि आदिस्थिका स्थान भारतवर्षकी उत्तरीय पर्वतमाला और भारतवर्ष देश है, इस भारतवर्षमेंही ब्रह्मावर्त्त आर्यावर्त्त देश है "ब्रह्मणो ब्राह्मणा आवर्तन्ते उद्भवन्त्यत्रेति ब्रह्मावर्त्तः, आर्या आवर्तन्ते अत्रेत्यार्यावर्त्तः, ब्रह्मर्षीणां देशो मूलनिवासस्थानं ब्रह्मर्षिदेशः" जहां प्रजापति और ब्राह्मणोंने आदिसे निवास किया हो वह ब्रह्मावर्त्त, जहां आर्योंने सदासे निवास किया हो वह आर्यावर्त्त, सरस्वती और दृषद्वतीके बीचका देश ब्रह्मावर्त्त कहाता है, इसदेशमें जो आचार सदासे चलाआता है वह चारों—

दूसरा अध्याय २.

सूर्य और चंद्रवंशी राजाओंकी वंशावली और एकसमयमें
उनके होने या न होनेका विचार ।

दुन्द्रपुरी अमरावतीकी समान अयोध्यापुरीमें दीर्घकालसे जिन माननीय
आर्य नरपतियोंने राज्य किया था भुवन विदित श्रीरामचन्द्रजी जिनके
कुलतिलक माने गयेहैं, उन पूर्णब्रह्म श्रीरामचंद्रजीका चरित्र सबसे पहले कविगुरु
वाल्मीकिजीके द्वारा गाथाबद्ध हुआ, वाल्मीकिजीकी अनुपम कविताके प्रभावसे
आजभी उन अमरपूज्य राजाओंके वृत्तान्त संसारभरकी आंखोंमें विराज रहेहैं,

—वर्णोंका तथा संकरजातिका सदाचार कहाताहै, इसदेशके ब्राह्मणोंसे सब पृथिवीके मनुष्य अपने २
आचार व्यवहारोंको सीखें मनु० २ श्लोक १७।१८।२०

“सर्वस्वतीहृदयतोर्देवनद्योर्दन्तरम् । तं देवानिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते ॥ १७ ॥

तस्मिन्देशे य आचारः पारंपर्यक्रमगतः । वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते ॥ १८ ॥

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः । त्वंस्वं चरित्रं शिक्षेत्पृथिव्यां सर्वमानवः ॥ २० ॥

इन वचनोंसे स्पष्टहै कि सबसे प्रथमके यही देशहैं, यही आर्यगण तथा ब्रह्मापिगणोंकी उत्पत्ति हुईहै,
ब्रह्माभिदेशके समीपही ब्रह्मावर्तहै, ब्रह्माजीका आदि निवासस्थान यहीहै पुराणोंके मतसे ब्रह्माजी विष्णु
भगवानकी. नाभिसे प्रगट हुएहैं वही कमल पृथिवीरूपसे परिणत हुआ उसकीही कर्णिका मेर
हुई, उसपर ब्रह्माजीने देवसृष्टि रची पश्चात् दस पवित्र यज्ञियदेशमें आकर मनु और ब्रह्मापियों-
की सृष्टि की, यही स्थान ब्रह्मावर्त कहाया, मनुजी सुमेरु पर्वतपरभी गमनागमन करते थे, यद्यपि
मनु चौदहहैं पर यहां जिनका वर्णन है वह वैवस्वत मनु सूर्यके पुत्र हैं, इन्होंनेही अयोध्या बसाई है,
सम्बत् १९६३ तक इन मनुकी सृष्टिको १९७२९४९००६ वर्ष होतेहैं, २८ चौकड़ी युग इनके
समयको बीतेहैं ४३ चौकड़ी युग आगेको अभी इनका समय चलेगा, प्रत्येक चतुर्युगीमें पहलेकी
समान परिवर्तन होताहै, आर्यावर्तके सिवाय सृष्टिके आरंभका हिसाब और किसीदेशमें नहीं पाया
जाता, इससे आदि सृष्टि यहीं हुई इसमें सन्देह नहीं ५००० वर्षसे अधिक कलियुगको बीतचुके
हैं, सूर्यचन्द्रवंश तो सृष्टिके आरंभसे हैं, इससे इनका आरम्भ सृष्टिके वर्णोंके समान पुरानाहै, आर्यावर्त
देशका वर्णन इस प्रकारहै कि—

“आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् । तयोरेवान्तरं गिर्योरायावर्तं विदुर्वुधाः ॥” मनु० २।२२

पूर्व समुद्रसे पश्चिम समुद्रतक विन्ध्याचल और हिमालयके मध्यका पवित्र देश आर्यावर्त
कहाता है, इसप्रकार यह देश सनातन है और प्रथम यहींसे सृष्टिका आरंभ है ।

अनुवादक.

और आजतकभी उनकी नामावली प्रत्येक आर्यसन्तानकी जपमाला बनी हुई है, वाल्मीकिरामायणकी* रचनाके बहुतकाल पीछे कविकुलंतिलक महर्षि कृष्णद्वैपायनने सूर्यवंशी राजाओंका धारावाहिक संक्षिप्त चरित्र अपने महाकाव्यमें संयुक्त किया, उन्होंने वाल्मीकिरामायणकी छायाका अवलम्बन करके ही सूर्यवंशका वर्णन किया है, परन्तु इन दोनों वंशावलियोंमें बहुतही भेद पाया जाता है वहभी सामान्य नहीं दोनोंमें २१ पीढ़ियोंका भेद पाया जाता है।

वैवस्वतमनु सूर्यवंशके आदि पुरुष हुए हैं, उनसे लेकर भगवान् रामचंद्रजी-तक मत्र ३६ राजा वाल्मीकिजीके द्वारा और ५७ नरपति व्यासजीके द्वारा वर्णित हुए हैं, इन दोनों वंश सूचियोंमें इतना अन्तर क्यों दिखाई देता है, इसका जानना बड़ा कठिन है, जो पुराण इस समय प्राचीन आर्यगौरवके एकमात्र आधार हैं, जो अंधकारमें प्रवेश करनेको मार्ग दिखानेके निमित्त एकमात्र दीपकके समान हैं, जब उन पुराणोंमें इतना अंतर दिखाई दे तब भारतके प्राचीन वृत्तान्तके ज्ञानका उपाय क्या है, परन्तु साथही यहां यह प्रश्नभी उठता है कि जो अपने असीम विद्याबलके कारण तीन कालका वृत्तान्त ज्ञान-वाले थे क्या वे भ्रममें पड़े, अथवा अपने आगे होनेवाले वंशधरोंको भ्रममें डालनेके अभिप्रायसे उन्होंने यह लेख लिखा ? नहीं ऐसा कभी नहीं होसکتा वे महापुरुष थे वे परमात्माको जानेहुये थे उनके पवित्र हृदयमें किसीप्रकारभी ऐसी पापभरी वृत्ति नहीं समासक्ती, न उनमें असाधारण भ्रमकी बातें रहसक्ती हैं, उन्होंने जो कुछभी लिखा है वह सबकुछही शुद्ध और भ्रमरहित है, इस भेदका कारण हमको यह जानपड़ता है कि उनके लिखे ग्रन्थ इससमय यथार्थ रूपसे नहीं पायजाते, इससमय जो ग्रन्थ प्रचलित हैं लिपिकारोंकी भूलसे उनमें बहुतसे अंश छूटगये हैं, और उनमें बहुतसा उलट फेर होगया है, इससमय इस झगड़े निवटानेकी हमको कोई बड़ी आवश्यकता नहीं है, इससमय विदेहवंशकी शाखाको इसवंशके साथ तुलना करके देखना चाहिये, कदाचित् ऐसा करनेसे थोड़ा बहुत इस भेदका पता लगजाय, एक वृक्षसे उत्पन्न हुई इन दो कुलशाखाओंकी समान करनेकी चेष्टा करके फिर सूर्य और चंद्रवंशी राजाओंकी समालोचना कीजायगी।

* रामचंद्रके राज्यपर अभिषिक्त होनेपर त्रेताके अवसानमें वाल्मीकिरामायण लिखी गई है यथा—
“प्रातराज्यस्य रामस्य वाल्मीकिर्मगवानृषिः । चकार चरितं कृत्स्नं विचित्रपदमर्थवत् ।” बालकांड.

विदेहवंशभी सूर्यवंशकी एक शाखाही है, इसशाखाके गोत्रपति निमि वैवस्वत, तमनुके ज्येष्ठपुत्र इक्ष्वाकुके पुत्र थे, कहते हैं महाराज इक्ष्वाकुके सौपुत्र उत्पन्न हुए थे, सबसे बड़े विकुक्षि पितृराज्यपर अभिषिक्त हुए, निमि और दंडकने× मध्यप्रदेशका राज्य पाया, शेषपुत्रोंने अपनी २ इच्छाके अनुसार एक २ प्रदेशमें अपना २ राज्य स्थापित किया,

महाराज निमिही विदेह वंशके प्रथम राजा और इसवंशकी प्रतिष्ठा करने-वाले हुए, निमिके पुत्र मिथि हुए, इनहींके द्वारा मिथिलापुरी बसाई गई, वाल्मीकिरामायणमें लिखाहै निमिसे लेकर जनक और कुशध्वजतक सब ३ राजा मिथिलाके सिंहासनपर आरूढ हुए, साध्वी जानकीजी इन जनकजीकी कन्या थीं जिनका नाम सीरध्वज था, जानकीजीका पाणिग्रहण श्रीरामचन्द्रजीने कियाथा, इससे महाराज सीरध्वज और महाराज जनकका एकही समयमें होना निश्चित होता है और वाल्मीकिजीकी तालिकाके अनुसार इन दोनों शाखाओंको मिलायाजाय तो दोनोंमें ग्यारह पुरुषोंका अन्तर दिखाई देता है गोत्रपति निमि इक्ष्वाकुके सबसे छोटे पुत्र थे इससे जनक और कुशध्वज उनसे २४ पीढी पीछे हुए, इस ओर महाराज दशरथ जनक और कुशध्वजके समकालीन होनेपर भी इक्ष्वाकुसे ३४ पीढी पीछे हुए इसप्रकारसे विदेहकुलकी अपेक्षा रघुकुलमें दशपीढी अधिक पाई जाती हैं ।

और जो व्यासजीकी दी हुई वंशावलीसे दोनोंकी तुलना कीजाय तो रघुकुलमें ३२ पीढियोंकी अधिकता दीखपड़ती है इस दशमें दशरथ और सीरध्वज जनकका एक समयमें होना कैसे संभव होसकता है ।*

× इन्हीं राजाके देशका जब वन होगया तब दण्डकारण्य नामसे विख्यात हुआ.

* ऊपर जो विदेहवंशकी वंशावलीका वर्णन हुआ इससे यह नहीं समझना चाहिये कि इतनेही महाराज विदेहवंश और सूर्यवंशमें हुएहैं कारण कि मनुसे रामचंद्रतक लाखोंवर्ष बीतगये हैं, यह मुख्यमुख्य राजाओंकी वंशावली लिखीगई है, ऐसाही भागवतमें लिखाहै कि विस्तारसे तो कोई वंशावली सहस्रोंवर्षोंमेंभी नहीं कहसक्ता हम संक्षेपसे कहते हैं, जब कि व्यासजीकी संक्षिप्त तालिका वाल्मीकिजीकी तालिकासे बहुत विस्तृतहै, तब विदितहोताहै कि वाल्मीकिजीने व्यासजीसेभी अधिक संक्षेप किया है, इसलिये दशरथजी और सीरध्वजकी समसामयिकतामें शंका नहीं है, और यहभी संभव है कि पूरी तालिका लुप्त होगई हो, पर समसामयिकतामें संदेह नहीं है, रघुवंशमें कालिदासकविराजने दिलीपसे रामचंद्रतक पांचही पीढी लिखी हैं, पर उन्हींमेंभी मुख्योंको लिखा है इस शैलीके अनुसार विदेहवंशकी तालिकामें मुख्य २ नरपति लिखे हैं ।

अब कुछदेरके लिये सूर्यवंशको छोड़कर चन्द्रवंशकी आलोचना करनी चाहिये पीछे दोनोंवंशोंके समसामयिक नरपतियोंकी जीवनीकी आलोचना करेंगे, चन्द्र-वंश और सूर्यवंश दोनों वंशोंका बीज एकही कालमें बोया गया था परन्तु दोनोंकी पुष्टि ठीक एकही साथ नहीं हुई, चंद्रवंश धीरे धीरे पुष्ट हुआ, और काल क्रमसे धीरे धीरे उसने बहुत बल प्राप्त किया इसी बलके प्रभावसे एक समय एशियाका आधा खण्ड उनकी सहायताके लिये तयार होगया था, परन्तु सूर्यवंशकी यह शैली नहीं रही, उदय होतेही उसका प्रभाव एक साथही बहुत कड़ा होगया था, देखते २ अम्ल होकर वह सम्पूर्ण भारतवर्षको दग्ध करने लगा, यहांतक कि एक समय भारत महासागरका प्रचण्ड लंकाद्वीपभी इसवंशकी दिग्दाही किरणोंसे भस्म होगया था परन्तु सूर्यवंशकी अपेक्षा चंद्रवंशका बहुत विस्तार है ।

चन्द्रमाके पुत्र भगवान् बुधने चन्द्रवंशकी प्रतिष्ठा कीहै बुधने वैवस्वतमनुकी कन्या इलाका पाणिग्रहण करके उसमें राजर्षि पुरूरवाको प्रगट किया, इनमहाराज पुरूरवाकी चौथी पीढ़ीमें महाराज ययाति प्रगट हुए, इनकी दो स्त्री थीं एक तो शुक्राचार्यकी कन्या देवयानी, और दूसरी दानवेन्द्र वृषपर्वाकी कन्या शर्मिष्ठा महाराज ययातिने देवयानीमें यदु और तुर्वसु नामक दो पुत्र और शर्मिष्ठामें द्रुह्य अनु और पुरु तीन पुत्र उत्पन्न किये, इन पांच पुत्रोंमेंसे यह अनु और पुरु इनसे चन्द्र वंशकी विशेष पुष्टि और विस्तार हुआ, यदुकुलमें विश्वविजयी कार्तवीर्यार्जुन हैहय तालजंघ और भगवान् श्रीकृष्णने जन्म ग्रहण किया अनुके कुलमें अंगराज और रोमपाद और महावीर कर्णके पालक पिता अधिरथि सूत आदि राजाओंने जन्म ग्रहण किया, और सबसे छोटे पुत्र पुरुके वंशमें पाण्डव धृतराष्ट्र और द्रौपदीका जन्म हुआ ।

इसी पुरुवंशमें मगधदेशके अधिराज महाराज जरासंधका जन्म हुआ, कंसराजाके वध करनेके कारण यह श्रीकृष्णजीके बड़े शत्रु थे, और जरासंधके आतंकसे श्रीकृष्णकोभी सावधान रहना पड़ता था, युधिष्ठिरके मध्यमभ्राता भीमसेनने जरासंधका वध किया, अब इसके आगे हम यह विचार चलाते हैं कि इनमें परस्पर कौन किसके समयमें प्रगट हुआ है ।

चंद्रवंशके सम्पूर्ण राजा बुधकेही वंशधरहैं बुध चंद्रमाके पुत्र हैं इन्होंने वैवस्वतमनुकी कन्या इलाके संग अपना विवाह किया, ऊपर जिन चंद्रवंशी राजाओंके नाम लिखेगये हैं, उनमें रोमपाद, कार्तवीर्यार्जुन, हैहय, और तालजंघको छोड़कर शेष सबही एक दूसरेके समसामयिक हैं, पाण्डव और धृतराष्ट्रके पुत्र

कर्ण श्रोक्वण और द्रौपदी तथा जरासन्ध यह सब एकही समयमें हुए हैं, और इनकी समसामयिकता सभी पुराणोंके ज्ञाता जानते होंगे, परन्तु आश्चर्यकी बात यह है कि इनमें कई एकोंमें प्रायः आठ दश पीढ़ियोंका भेद पायाजाता है बुधकी गणना करनेसे युधिष्ठिर और दुर्योधन ४८ कर्ण ३८ श्रीकृष्ण ४७ द्रौपदी और जरासन्ध ४८।४८ पीढ़ीके पीछे प्रगट हुए हैं ।×

अब हम पुराणादि पुरातन ग्रंथोंमें सूर्य और चंद्रवंशी राजाओंका जो सम-सामयिकत्व दिखाया गया है उसकी आलोचनामें प्रवृत्त होते हैं, जिस समयमें यह सब भूपालगण जन्में हैं वह समय अब नहीं है, इसकारण उनके सम्बन्धकी बातोंका निर्णय अनुमानकी सहायताके बिना असम्भव है ।

१ इस ओर हरिवंशके देखनेसे जानाजाता है कि सूर्यवंशोत्पन्न ककुत्स्थकी गो नाम्नी कन्याके संग चन्द्रवंशी नहुषके पहलेपुत्र ययातिका विवाह हुआ, तो नहुष और ककुत्स्थका एकही समयमें होना निश्चय है, और पहले यह सिद्ध कर चुके हैं कि बुध और इक्ष्वाकु समसामयिक थे, कारण कि इक्ष्वाकुकी भगिनी इलाका पाणिग्रहण बुधने किया था, परन्तु बुधकी चार पीढ़ीके पीछे नहुष और इक्ष्वाकुकी तीन पीढ़ीके पीछे ककुत्स्थहुए हैं, इस विचारसे यहां एकही पीढ़ीका अन्तर पायाजाता है । (१)

२ सूर्य वंशोत्पन्न युवनाश्वकी कन्या कावेरीके संग चन्द्रवंशी जहुका विवाह हुआ, युवनाश्व इक्ष्वाकुकी नौमी पीढ़ीमें और जहु बुधके तीसरे पौत्र अमावसुकी छठी अथवा बुधकी आठवीं पीढ़ीमें प्रगट हुआ, सो इस स्थलमें भी दोनोंवंशोंमें केवल एकही पीढ़ीका अन्तर विदित होता है ।

३ सूर्यवंशमें उत्पन्नहुए युवनाश्वका चन्द्रवंशोत्पन्न मतिनारकी कन्या गौरीसे विवाह हुआ, यह युवनाश्व पुराणप्रसिद्ध मान्धाताके पिता और धुन्धमारके पुत्र थे, गणना करनेसे धुन्धमार इक्ष्वाकुकी आठवीं पीढ़ीमें और मतिनार बुधकी अठारहवीं पीढ़ीमें हुए हैं इनमें एकवारही दशपीढ़ियोंका अन्तर पड़ता है, व्यासजीकी लिखीहुई सूर्यवंशकी सूचीमें मान्धातासे पहले युवनाश्व नामक दो

× इससेही स्पष्ट है कि यह वंशावली मुख्य २ नरपतियोंकी है, तथा यह पहलेके पुरुष दीर्घायुपंथे इलाकी कथा सतयुगकी है, श्रीकृष्ण द्वापरके अन्तमें हुए तब बुधसे श्रीकृष्णतक ४७ पीढ़ी होना कैसे संभव होसकता है ।

१ एकपीढ़ीका अन्तरही क्या समस्त वंशावली प्राप्तहोनेसे फिर कुछ भेद न रहता ।

पुरुषोंका नाम पायाजाताहै, एक मान्धाताके पिताका जो इक्ष्वाकुकी अठारहवीं पीढीमें हुए थे दूसरे वह जो इक्ष्वाकुकी नवीं पीढीमें हुए थे.

४ सूर्यवंशी मान्धाताका चन्द्रवंशी शशविन्दुकी कन्या चैत्ररथीके साथ विवाह हुआ था, मान्धाता युवनाश्वके पुत्र थे इससे युवनाश्व और शशविन्दुका एकही समयमें होना निश्चयहै परन्तु खोजकरनेसे दोनोंमें चार पीढियोंका अन्तर पायाजाता है, शशविन्दु महाराज ययातिके पहलेपुत्र, यदुके दूसरेपुत्र क्रोष्टुके वंशमें उत्पन्न हुए थे, क्रोष्टु बुधकी सातवीं पीढीमें, और शशविन्दु क्रोष्टुकी छठी पीढीमें हुआ, इसकारणसे बुधकी बारहवीं पीढीमें इनका होना निश्चय हुआ और ऊपर यह सिद्ध कियागया है कि मान्धाताके पुत्र युवनाश्वने महाराज इक्ष्वाकुकी नौमी पीढीमें जन्म लिया था. इस ओर दोनों वंशोंमें तीन चार पीढियोंका भेद पायाजाता है यदि व्यासजीकी सूचीका यहांभी अवलम्बन कियाजाय तो इस सूर्यवंशकी शारवामें

६ सूर्यवंशमें उत्पन्नहुए महाराज दशरथ और चंद्रवंशी रोमपादमें बड़ा प्रेम था, इसकारण यह दोनों समकालीन थे वाल्मीकिजीनें लिखा है कि महाराज दशरथने पुत्रेष्टि यज्ञकी सिद्धिके निमित्त रोमपादके यहांसे ऋष्यशृंग ऋषिको बुलाया था, इससे रोमपाद और दशरथजी एकही समयके थे, परन्तु दोनोंमें अनेक पीढ़ियोंका भेद पायाजाता है, महाराज दशरथजी रामायणके अनुसार इक्ष्वाकुकी चौतीसवीं पीढ़ीमें जन्में हैं, और रोमपाद बुधकी तेईसवीं पीढ़ीमें जन्में, इसप्रकारकी गणनासे दो एक नहीं एकसाथही ग्यारह पीढ़ियोंका अनन्तर पायाजाता है यदि व्यासजीकी सूचीका अनुसरण कियाजाय तो और भी गड़बड़ पड़ती है कारण कि व्यासजीके मतसे महाराज दशरथजी इक्ष्वाकुकी ५१ वीं पीढ़ीमें जन्में इसगणनासे रोमपादसे ३२ पीढ़ी पीछे हुए इस अवस्थामें तो वाल्मीकिजीकी सूचीसे थोड़ा बहुत प्रयोजन निकल सकता है ।

यदि महर्षि व्यासजीकी वंशावलीका अवलम्बन करके सूर्यवंशीय राजाओंकी संख्या निरूपण कीजाय तो बड़ाही असमंजस होगा और समयका निर्णय नहीं हो सकेगा, अवश्यही यह बात माननी पड़ेगी कि श्रीरामचन्द्रजीके बहुत पीछे युधिष्ठिर कृष्ण और दुर्योधनादि हुए थे रावण और रामचन्द्रजीके बहुत समय पीछे कुरुक्षेत्रका युद्ध हुआ था, इस सम्बन्धमें केवल एकही प्रमाण लिखदेनेसे इसवातकी यथार्थता विदित होजायगी, श्रीमद्भागवतमें लिखाहै कि बृहद्रथ नामक एक सूर्यवंशी राजा कुरुक्षेत्रके महासमरके समय महाराज दुर्योधनकी

-तो इस हिसाबसे वशिष्ठ रामचन्द्रजी और आदिराजा इक्ष्वाकु यह सब एकही समयमें मानेजाने चाहियें, सो ऐसा नहीं होसकता, ऋषि महर्षि दीर्घजीवी होते हैं, तथा अनेक राजाभी योगबलसे दीर्घजीवी होगे हैं महाराज दशरथजीकी साठसहस्र वर्षकी अवस्थामें रामचन्द्रजी हुए हैं महाराज रामचन्द्रजीने ग्यारहसहस्र वर्षतक राज किया परशुरामजी महादीर्घजीवी हैं इनके समयमें कितनेही राजा होगये कार्तवीर्यार्जुन रामचन्द्रजी तथा द्वापरके अन्तमें भीष्मपितामहसे इनका संग्राम हुआ था, आगे इनकी गणना सप्तर्षियोंमें होगी फिर इनका अवलम्बन करके समसामयिकता नहीं होसकती, हां! इन निश्चामित्र परशुरामजीके समयमें अनेक नरपति हुए सूर्यवंशके अनरण्य राजासे रावणका संग्राम हुआ उसकी कई पीढ़ी पीछे रामचन्द्रजी हुए हैं, इससे इनकी समसामयिकता नहीं होसकती और दीर्घायुके कारण इनकी पीढ़ियोंमें अन्तर पड़नेसे यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक नृपतिके समय अमुक न था ।

१ रोमपाद और दशरथजी एकहीसमयमें थे इसमें सन्देह नहीं पीढ़ियोंका अन्तर वंशावलीकी अपूर्णता है, और यहभी अनुमान है कि रोमपादके वंशमेंभी कई राजा इतने दीर्घायुवाले हुए कि उनके सामने सूर्यवंशकी कितनी पीढ़ी बीत गई ।

ओरसे संग्राम करनेको आयाथा, अर्जुनके पुत्र अभिमन्युके हाथसे उसकी मृत्यु हुई, यह बृहद्बल श्रीरामचंद्रजीके ज्येष्ठपुत्र कुशके वंशमें उत्पन्न हुआथा, और गणना करनेसे विदित होताहै कि यह श्रीरामचंद्रजीकी तीसवीं पीढीमें जन्माहै, अब यह स्पष्ट होगया कि युधिष्ठिर श्रीकृष्ण और दुर्योधनादिके बहुतसमय पहले लंकाविजयी श्रीरामचंद्रजीने अवतार लियाथा, परन्तु व्यासजीकी वंशावलीके अनुसार गणना करनेसे रामचंद्रजी इनसे पूर्व प्रगट हुए विदित नहीं होते, किन्तु पश्चात् होना पायाजाता है वहभी एक दो पीढीका नहीं युधिष्ठिरसे सात आठ पीढी पीछे होना प्रमाणित होता है यह बड़ेही आश्चर्यका विषय है ऐसी जटिल वंशावलीसे ऐतिहासिक वृत्तान्तका पता लगाना बड़ी कठिन बात है ।×

इस कठिन स्थलमें यही कहा जासकताहै कि यदि वाल्मीकिजीकी लिखी वंशावलीपर निर्भर किया जाय तो दोनों ओरकी सरलता और श्रीरामचंद्रजीके पृव्वत्त्वकी अनेक अंशोंमें रक्षा होतीहै ॥ .

तीसरा अध्याय ३.

प्राचीन आर्य राजाओंके द्वारा भिन्न २ नगर और
राज्योंका स्थापित होना ।

अयोध्या नगरीही सूर्यवंशी राजाओंकी प्रथम और प्रधान कीर्ति है
भगवान् वैवस्वतमनुनें इसकी प्रतिष्ठा कीहै इस प्रसिद्ध नगरीके समयका निरूपण

× बृहद्बलका प्रमाण भागवतके ९ स्कन्ध अध्याय १३ में लिखा है ।

“ततः प्रसेनजित्स्मात्तक्षको भविता पुनः । ततो बृहद्बलो यस्तु पित्रा ते समरे हतः ॥”

संपूर्ण इतिहास पुराणोंसे यह बात सिद्धहै कि त्रेताके अन्तमें रामचन्द्र और द्वापरयुगके अन्तमें श्रीकृष्ण और युधिष्ठिरादि जन्में हैं, तब रामचंद्रके पहले होनेमें संदेह नहींहै, रही वंशावलीकी बात इसमें यही अनुमान होताहै कि वंशावलीमें कहीं मुख्य राजा लिखेगये हैं कहीं मुख्य और गौण, इससे उनमें भेद होनेसे वह भेद नहीं तथा जो योगबलसे दीर्घजीवी हुए हैं उनके दीर्घजीवनपर-भी विचार करना चाहिये और यहभी बात है कि परिश्रमके साथ यदि अष्टादश पुराणोंमें खोज कियाजाय तो सम्भव है वंशावली पूर्ण मिलजाय और यह शंका दूर हो हम राजस्थानके अनुवादमें प्रवृत्त हैं इसकारण इस गहन विषयको यहां नहीं उठाते हैं ॥ अनुवादक ।

करना कठिन है कि यह कब बसाई गई कविकुलगुरु वाल्मीकिजीकी रामायण पढ़नेसे विदित होता है कि एकसमय यह नगरी मर्त्यलोकमें अमरावतीके समान थी वह ग्रंथ पाठ करनेसे ज्ञात होता है कि रामन्द्रजीके समय भारतवर्षमें अयोध्याके समान दूसरी नगरी भारतवर्षमें न थी, परन्तु क्या अयोध्यापुरीनें एकही कालमें ऐसी सुन्दरता और ऐसी समृद्धि प्राप्त की थी, नहीं ऐसा कभी नहीं होसکتा, अवश्यही धीरेधीरे सौन्दर्यमयी और समृद्धिशालिनी होतेहोते विस्तारभावको प्राप्त होकर एकादिन उसनेभारत वर्षके सम्पूर्ण नगरोंसे ऊँचा आसन प्राप्त किया था×।

अयोध्या नगरीकी प्रतिष्ठाके समयही महाराज इक्ष्वाकुके पौत्र मिथिनें*मिथिलापुरीकी स्थापना कीथी, मिथिके वंशधर जनकनामसे पुकारे जाते थे, क्रमशः यह जनकशब्द इस वंशमें सबके साथ उपाधिरूपसे संयुक्त होगया, और सबही कुलके नरपति जनक कहलाने लगे ।

इस बातका वर्णन कहींभी दिखलाई नहीं देता कि अयोध्या और मिथिलाके पहले भारतभूमिमें और कोई नगरी स्थापित हुईथी वा नहीं इन दोनों नगरियोंके बस जानेके पीछे बोटस चम्पापुर आदि कई एक छोटी छोटी नगरी मनुके वंशधरोंनें बसाई थीं ।

भगवान् बुधका लगाया हुआ चन्द्रवंशका वृक्ष बड़े विस्तारवाला है इस वृक्षकी भिन्न २ शाखाओंसे जो बड़े पराक्रमी राजा उत्पन्न हुएथे उन सब-

× “कोशलौ नाम सुदितः स्फीतो जनपदो महान्। निविष्टः सरयूतीरे प्रभूतधनधान्यवान्॥
अयोध्या नाम नगरी तत्रासील्लोकतिश्रुता । मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम् ॥
आयता दश च द्वे या योजनानि महापुरी । श्रीमती त्रीणि विस्तीर्णा सुविभक्तमहापथा ॥
राजमार्गेण महता सुविभक्तेन शोभिता । मुक्तपुष्पावकीर्णेन जलसिक्तेन नित्यशः ॥
तां तु राजा दशरथो महाराष्ट्रविवर्द्धनः । पुरीमावासयामास दिवि देवपतिर्यथा ॥
कपाटतोरणवतीं सुविभक्तान्तरापणाम् । सर्वयन्त्रायुधवतीमुपितां सर्वशालिभिः ॥
सूतमागधसम्बाधां श्रीमतीमतुलप्रभाम् । उच्चाटालध्वजवतीं शतश्रीशतसङ्कुलाम् ॥
वधूनाटकसंघैश्च संयुक्तां सर्वतः पुरीम् । उद्यानाम्रवणोपेतां महतीं शालमेखलाम् ॥
दुर्गगम्भीरपरिखां दुर्गामन्यैर्दुरासदाम् । वाजिवारणसम्पूर्णां गोभिरुष्टैः खरैस्तथा ॥
सामन्तराजसंघैश्च बलिकर्मभिरावृताम् । नानादेशनिवासैश्च वणिग्निरुपशोभिताम् ॥ ५ सर्ग
मनुः प्रजापतिः पूर्वमिक्ष्वाकुश्च मनोः सुतः । तमिक्ष्वाकुनयोध्यायां राजानं विद्धि पूर्वकम् ॥” सर्ग
* “निमेः पुत्रस्तु तत्रैव मिथिर्नाम महान्स्मृतः । प्रथमं मुजयलैर्येन तैरहुतश्च पार्श्वतः ॥
निर्मितं स्वीयनाम्ना च मिथिलापुरमुत्तमम् ॥” भविष्यपुराण,
यहदेश इससमय तरहुत त्रिहुत वा तिरहुत नामसे विख्यात है और मिथिलादेशभी कहाताहै/
दरभंगेके समीप जनकपुर इससमय नेपालके राज्यमेंहै ॥

नेही प्रायः भारतवर्षके भिन्न २ भागोंमें पृथक् पृथक् नगरस्थापन किये, उनमेंसे बहुतसे नगर इस समय कालरूपी समुद्रमें समागये, जो दो एक इस समय अपने अस्तित्वको दिखा रहे हैं वहभी प्रायः विध्वस्त और खडहर हो रहे हैं तोभी उस ध्वंस राजसे उनका प्राचीनगौरव अबभी कुछ कुछ झलकतासा दिखाई देताहै बहुतोंका मतहै कि प्रसिद्ध प्रयागराजही चन्द्रवंशी राजाओंकी प्रथम कीर्तिहै, परन्तु विशेष विचार करनेसे एकनगरीकी प्रतिष्ठाका वर्णन औरभी पाया जाताहै इस नगरीका नाम माहिष्मती है जो इस समय नर्मदाके तटपर स्थित है हेहयकुलोत्पन्न महावीर कर्तवीर्यार्जुनके द्वारा माहिष्मती पुरी प्रतिष्ठित हुईथी, इससमयभी यह पुरी अपने प्राचीनस्थानपर * महेश्वरनामसे प्रसिद्ध है।

भगवान श्रीकृष्णजीकी प्रधानराजधानी कुशस्थली द्वारका थी, उसकी प्रतिष्ठा प्रयाग गूरपुर वा मथुरासे बहुत पहले हुई थी, भागवतमें लिखाहै कि महाराज इक्ष्वाकुके सबसे छोटे भ्राता आनर्तने इसनगरीको बसाया था. परन्तु यदुवंशी नृप-तियोंने कब वहां प्रतिष्ठा पाई इसका वृत्तान्त उक्त ग्रन्थमें नहीं मिलता.

जैमलमेरके प्राचीनभट्ट ग्रन्थमें लिखाहै कि सबसे पहले प्रयाग फिर मथुरा और सबसे पीछे द्वारकाकी प्रतिष्ठा हुई परन्तु हम नहीं कहसक्ते कि प्रयागसे पीछे *मथुरापुरी बसी इसवातका विश्वास कहांतक किया जाय इन तीनों नगरोंकी

* वहांके रहनेवाले इस पुरीको सहस्रबाहुकी वस्ती कहतेहैं नर्मदाके किनारे अहल्यावाईके बनावे घाटोंकी इससमयभी बड़ी शोभाहै।

१. टाड साहबने आनर्तको कुशस्थलीका स्थापन करनेवाला और इक्ष्वाकुका भ्राता लिखकर धोन्ना ग्वायाहै, भागवतमें ऐसा नहीं लिखा, यह आनर्त वास्तवमें इक्ष्वाकुके भतीजे थे इनके पि-ताका नाम शर्याति था, शर्यातिके उत्तानवाह, आनर्त और भूरिसेन यह तीनपुत्र थे, आनर्तका रैवतनामक एक पुत्र था, इस रैवतनेही कुशस्थलीको बसाया था, देखो भागवतस्कन्ध

९। अध्याय ३

उत्तानवाहिरानतां भूरिपेण इति त्रयः । शर्यातिरभवत्पुत्रा आनर्ताद्रैवतोऽभवत् ॥ २७ ॥

सोन्तः समुद्रे नगरं विनिर्माय कुशस्थलीम् । आस्थितोऽमुक्त विषयानानर्तादीनरिंदम ॥ २८ ॥

कुशस्थलीका दूसरा नाम आनर्तदेश है। भागवतमें लिखाहै कि जरासंधके युद्धके समय कृष्णने वहां द्वारकापुरी फिर बसाई और तबसेही यदुवंशियोंकी वहां प्रतिष्ठा हुई भागवत दशम स्कंध अ० ५० 'अन्तःसमुद्रे नगरं कृष्णान्नुतमचीकरत् ।' ५० 'तत्र योगप्रभावेण नीत्वा सर्वजनं हरिः ॥ ५८ ॥'

* भागवतमें लिखाहै कि लक्ष्मणके छोटे भ्राता शत्रुघ्ने मथुराकी प्रतिष्ठा की है इन्होंने लवणा-सुरको मारकर मधुवनमें मथुरापुरी बसाई. यथा—

“शत्रुघ्नश्च मधोः पुत्रं लवणं नाम राक्षसम् । हत्वा मधुवने चक्रे मथुरां नाम वै पुरीम् ॥ १४ ॥”

भागवतस्कन्ध ९ अ० ११ श्लो० १४

अवस्था और प्रकृति हिन्दूमात्र जानतेहैं, इसकारण हमने इन नगरोंका कुछ विशेष वर्णन नहीं लिखा, इन तीनों नगरोंमें प्रयागही विशेष प्रसिद्धहै, एक समय पुरुवंशके प्रधान प्रधान राजा यहीं हुए थे, विख्यात यात्री मेगास्थनीस अपनी भारतयात्राके समय इसनगरकी सुन्दरता देखकर एकसाथ मोहित होगया था.

एलिकजेण्डर सिकन्दरके समयके इतिहासवेत्ता कहतेहैं कि जब यह भुवन विजयी वीर सिकन्दर भारतके विजय करनेको आयाथा, उससमय मथुराके निकटके भूभाग शूरसेनदेश और वहांके रहनेवाले शौरसेनी कहे जातेथे, भगवान श्रीकृष्णजीसे बहुत पहले दो शूरसेन औरभी यदुकुलमें उत्पन्न होगयेथे, एक उनके पितामह और दूसरे उनसे आठपीढी पहले हुएथे, हम निश्चय नहीं कहसक्ते कि इन दोनोंमें किसने शूरपुरको वसाया, उक्त (सिकन्दरके समयके) ग्रीक [यूनानी] इतिहास लेखकोंने लिखाहै कि जब वह दिग्विजयी सिकन्दर भारतमें आया था, उस समय शौरसेनी देशमें मथुरा और छिश्दुरानामक दो नगरी थीं इस बातका समझना कठिनहै कि छिश्दुरा शब्द शूरपुरके स्थानमें लिखाहै या कोई अन्य नगर है वड़े दुःखकी बातहै कि ग्रीक लोगोंने पौराणिक नामोंको बहुतही विगाड़कर लिखाहै ।

चन्द्रवंशीय विख्यात राजा महाराजा हस्तीने हस्तिनापुर वसाया था । एक समय जो हस्तिनापुर पौरव राजाओंके तीक्ष्णतेज प्रभावसे मध्याह्नकालीन मार्त्तण्डके समान जान पड़ता था, जिसकी प्रकाशयुक्त गौरव गरिमा एकसमय सारे संसारमें प्रचारको प्राप्त हुईथी; आज वही हस्तिनापुर भारतवर्षके नक्शेसे दूर होगयाहै । आज अजीत कालके कठोर भयंकर हस्तप्रहारसे उसका सम्पूर्णतासे नाश होगयाहै; कालके इस प्रचण्ड प्रहारसे जो वह, नाशको प्राप्त होकर यदि अपने प्राचीन गौरवके चिह्नको मलीनभावसेभी दिखलाता रहता तौभी हतभाग्य भारतवासियोंके हृदयमें कुछेक शान्ति रहती, परन्तु दुर्भाग्यवशसे यहभी न रहा श्रीगंगाजी महारानी जगत् सुखदानीकी तीव्रतरंगोंके प्रचण्डप्रभावसे महाराज हस्तीकी वह प्रधानकीर्ति लोप होगई । और होतीजाती है । शिवलोकके गगनभेदी शिखरको तोड़ती फोड़ती पहाड़ोंको चीरती फाड़ती दहाड़ती हुई श्रीगंगाजी जिस भारतवर्षके पुण्यस्थानमें उतरीहैं उस पवित्र हरिद्वारसे २० कोश दक्षिणमें आजतक हस्तिनापुर अपने दीन, हीन, मलीन, शरीरको दिखा रहाहै परन्तु गंगाजीके प्रभावसे बराबर इस नगरका नाश होता चला जाताहै । इसके बचनेकी आशा नहींहै ।

इस बातको प्रत्येक हिन्दूधर्मावलम्बी जानताहै कि महाभारतके समरसे बहुत पहिले हस्तिनापुरकी प्रतिष्ठा हुई थी। इस भयंकर युद्धके होजानेपर अनुमानसे कोई आठसौवर्ष पीछे प्रसिद्ध मेसिडोनीयन वीर एलेकजन्डर भारतपर चढ़ाई करके आया था। उसके साथ कईएक ग्रीक पंडितभी आयेथे, कि जिन्होंने भारतवर्षके अनेक नगरोंका वृत्तान्त अपने ग्रन्थोंमें लिखाहै परन्तु वडे आश्चर्यकी बातहै कि उन्होंने हस्तिनापुरका कुछभी वृत्तान्त अपने ग्रन्थोंमें नहीं लिखा।

महाराज हस्तीके पश्चात् चन्द्रवंशमें; अजमीढ, द्विमीढ, और पुरुमीढकी यह तीन विशालशाखा उत्पन्न हुई इन तीन शाखाओंमें अजमीढकी शाखाही, अधिक प्रतिष्ठाको प्राप्त हुईथी। बाकी दो शाखाओंका वृत्तान्त पुराणादिमें कुछ पाया नहीं जाता।

महाराज अजमीढसे चार पुरुष नीचे बाह्याश्वनामक एक राजा उत्पन्न हुआ। कहने हैं कि इस राजाने सिन्धुनदके निकटवाले किसी देशमें अपने राज्यको स्थापन किया था, बाह्याश्वके पांच पुत्र उत्पन्न हुए थे उनके द्वाराही विशाल पंचनद (पंजाब) देशमें प्रसिद्ध पांचालिक राज्य स्थापित हुआ था * इन पांच भ्राताओंमें एक भ्राताका नाम काम्पिल्य था, इसने अपने नामसे कांपिल्य नामक एक पुरी वसाई।

चन्द्रवंशमें प्रसिद्ध कुशनामक राजाके देवताओंके समान तेजस्वी कुशिक, कुशनाभ, कुशाम्ब और मूर्तिमान यह चार पुत्र उत्पन्न हुए। इन चारों भ्राताओंमें कुशनाभ और कुशाम्बही विशेष प्रतिष्ठावान थे। कहतेहैं कि कुशनाभने गंगाजीके किनारे महोदयनामक एक नगरी वसाई थी। कुछ कालके बीतजानेपर महोदय नामके बदले इसका कान्यकुब्ज, नाम हुआ। यह कान्यकुब्ज नगर बहुतदिन-तक बड़ी प्रतिष्ठाके साथ विराजमान होता रहा। पश्चात् भारतविजयी शहाबुद्दीनके समयमें कान्यकुब्जके अयोग्य राजा जयचन्दके प्रायश्चित्तके साथही उक्त नगरके प्राचीन गौरवकाभी अंत होगया कान्यकुब्जका एक और पौराणिक नाम गाधिपुरहै। अब यह कन्नौज कहलाता है।

पुराणादि ग्रन्थोंमें कौशाम्बी नामक जो एक प्राचीन नगरीका वृत्तान्त पाया जाताहै। उस नगरीको कुशाम्बनेही वसाया था। एकसमय यह कौशम्बी नगरी भारतमें विशेष गौरव, और प्रतिष्ठाको प्राप्त हुईथी। परन्तु आज उस गौरव और प्रतिष्ठाके स्थानपर केवल नामही नाम ब्राकीहै। तथापि कोई २ अनुमानके

* मुद्गल, जवीनर, बृहदिषु, सञ्जय, काम्पिल्य, यह इन पांच भ्राताओंके नामथे। इसके विषयमें प्रथम वंशपत्रिका देखो।

ऊपर निर्भर करके वतलातेहैं किं कन्नौजसे चलकर कुछ दक्षिणमें गंगाजीके किनारे देखभाल करनेसे कौशाम्बी नगरीके टूटे फूटे चिह्न दिखाई देतेहैं ।

कहतेहैं कि महाराज कुशके दो और पुत्रोंने धर्मारण्य और वसुमती नामक दो पुरी बसाई थीं, परन्तु यह दोनों पुरी कहाँहैं, इस बातका कोई अच्छा प्रमाण नहीं पाया जाता । *

कौरवनाथ महाराज कुलके सुधन्वा, और पराक्षितनामक जो दो महायुद्धर पुत्र उत्पन्न हुए थे; उनमें सुधन्वाके गोत्रमें महावीर जरासन्ध और पराक्षितके गोत्रमें शान्तनु और वाह्लीक उत्पन्न हुए पाण्डव और धार्तराष्ट्रगण शान्तनुके वंशधर कहलाए । जरासन्धभी इन्हीं कुमार लोगोंके समयमें हुआ जरासन्धकी राजधानीका नाम राजगृह था ।

धृतराष्ट्रके पुत्र प्राचीन हस्तिनापुरमें रहा करते थे । परन्तु पाण्डवलोगोंने उनसे अलग रहकर इन्द्रप्रस्थनामक नगर बसाया था । बहुत दिनों यही नाम चलता रहा, फिर ईसवी आठवीं शताब्दीके मध्यभागमें इस नगरका नाम दिल्ली होगया ।

वाह्लीकके पुत्रोंने पालिपोत्र और आरोड* नामक दो राज्य स्थापित किये । पालिपोत्र गंगाके किनारे और आरोड सिन्धुनदके किनारेपर स्थापित हुआ । चन्द्रवंशके यह समस्त राजा महाराज ययातिके प्रथम और छोटे पुत्र, यदु, व पुरु, के वंशमें उत्पन्न हुएथे, महाराज ययातिके शेषपुत्रोंका वृत्तान्त कुछभी नहीं जाना गया । परन्तु प्रयोजन समझ यहांपर उनका कुछ वृत्तान्त लिखा जाताहै ।

राजा ययातिके उक्त तीनों पुत्रोंमें अनुही विशेष प्रतिष्ठावान हुआ । इसके वंशमें अंग, वंग, कलिंग, कैकय, और मद्रक आदि महात्मा उत्पन्न हुए इन सबने

* श्रीगंगाजीके किनारे कारानामक स्थानमें एक शिलालिपि निकली जिसमें यह लिखा था, कि “यशपाल” नामक एक राजा कौशाम्बीका नरेश था विलायती इतिहास लेखक विलफोर्ड साहब अपने पौराणिक भूगोलमें एकजगह लिखतेहैं कि कौशाम्बी नगरा—इलाहाबादके निकटहै । महाराज कुशका तीसरापुत्र अमूर्तरजस धर्मारण्य और चौथा पुत्र वसु, वसुमतीका बसानेवालाहै । यथा:—

“अमूर्तरजसो नाम धर्मारण्यो महीपतिः । चक्रे पुरवरं राजा वसुर्नाम गिरिव्रजम् ॥ ७ ॥

एषा वसुमती नाम वसोन्तस्य महात्मनः ।” वाल्मीकिरामायण ३२ सर्ग ।

* आरोड वा आलोर सिन्धुदेशकी प्राचीन राजधानीहै । यह पुरी, सिन्धुनदकी एक शाखाके किनारेपर बसीहुई है । जब अलेकजन्डर भारतवर्षमें आयाथा तब यह आरोडपुरी विशेष प्रसिद्ध थी । कहतेहैं कि वाह्लीकवंशीय शल्य इसका स्थापन करता हुआ । अब्बुलफजलनेंभी अपने ग्रन्थमें इसका वृत्तान्त लिखा है । परन्तु उक्त महाशयने आरोडको, वर्त्तमान ‘ठट्टा’ लिखकर धोखा पाया है ।

अपने २ नामके अनुसार एक २ नगर वसाया था। इन नगरोंमेंसे दो एक नगरोंका नाम अवतक इतिहासमें यथावत् वर्तमान है। परन्तु यह नहीं कहा जासکتा कि वह स्थान निश्चयही पुराण लिखित स्थान है या नहीं ?

राजा ययातिके दूसरेपुत्र तुर्वसुकी कीर्तिका कोई वृत्तान्तभी नहीं पाया जाता है ज्ञात होता है कि वह भारत भूमिको छोड़कर और किसी देशमें चले गये थे। उनके तीसरे भ्राता द्रुह्युके कुलमें गान्धार और प्रचेतानामक जो दो राजा हुए उन्होंनेभी एक २ राज्य स्थापन किया पौराणिक गान्धार (वर्तमान कंधार) को गान्धारने वसाया। परन्तु प्रचेताकी कीर्तिका कोई विशेष वृत्तान्त नहीं जाना जाता। कहते हैं कि वह किसी स्लेच्छदेशके राजा हुए थे।

कालिञ्जर, केरल, पाण्ड, और चौलनामक यह चार पुत्र महाराज दुष्यन्तके उत्पन्न हुए थे। इन चारोंने अपने २ नामसे एक २ राज्य वसाया।

कालिञ्जर, वुन्देलखण्डमें स्थापित है। अतिप्राचीन कालसे इसकी प्रसिद्धि है। केरल, देश मालावार देशसेही मिला हुआ है इस देशकोही कोचीन कहते हैं।

मालावारके उपकिनारे पर पाण्डुमण्डलनामक एकदेशका वृत्तान्त पाया जाता है, कदाचित् इसको पाण्डुनेही वसाया हो। अंग्रेज भूगोलवेत्ता इसको “ रेजीया पाण्डीयना,, कहते हैं। हम जानते हैं कि वर्तमान तन जौरही उक्त पाण्डुमण्डलकी राजधानी है।

चौल, सौराष्ट्र देशमें प्रसिद्ध द्वारकाके निकट वसा हुआ है आजतक उसका यही नाम है।

भगवान् मनु और बुधसे लेकर भगवान् श्रीरामचन्द्रजी और श्रीकृष्णजीतक सूर्यवंशीय और चन्द्रवंशीय राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त लिखा गया। इन महापुरुषोंका जीवनचरित्र और पवित्र कीर्ति विचार करते २ जो कुछ थोड़ासा ऐतिहासिक तत्त्व प्राप्त हुआ वही यथा स्थानमें मिलाया गया। विशाल समुद्रके समान पुराण शास्त्रोंका मथन करते २ जिसदिन शास्त्ररूपी समुद्रसे रत्नोंके ढेर निकलेंगे; संसारमें उसदिन एक नये युगका आगमन होगा। उसदिनसे यह दीनभारत आरतपनको छोड़ मलिनतासे मुखमोड़ सत्यसे सम्बन्ध जोड़ नये जीवनको पाय; महावलवान होजायगा वह दिन अब बहुतदूर नहीं है कालरूपी रात्रिके कराल और विशाल राज्यको लांघता हुआ वह दिन धीरे २ भारतकी ओरको चला आता है वह देखिये ! आज भारतके भविष्य भाग्य गगनमें प्राची दिशाके द्वारपर उस दिनकी महीन २ किरणें अति मन्द २ भावसे उदय होरही हैं।

आजकल पुराण शास्त्रोंका प्रचार होनेसे प्राचीन ऋषि, मुनि, और महीपाल गणोंके अनेक कार्यकलाप-क्रमानुसार प्रकाशमान हो रहे हैं। यदि कोई सज्जन चेष्टा करेंगे तो अवश्य पुराण रूपी समुद्रको मन्थन करके अत्युत्तम रत्नराशि प्रकाशित होगी । *

चतुर्थ अध्याय ४.

श्रीरामचन्द्रजी व राजा युधिष्ठिरके परवर्त्ती सूर्य और चन्द्रवंशीय राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त व अन्यान्य राजवंशोंकी समालोचना ।

महाराज इक्ष्वाकुसे लेकर श्रीरामचन्द्रजीतक और बुधसे लेकर श्रीकृष्ण व युधिष्ठिरतक सूर्य और चन्द्रवंशकी संक्षिप्त समालोचना करके इस समय हम निचले राजाओंका विचार करते हैं ।

जयपुर और वीकानेरके राजपूत राजालोग अपनेको श्रीरामचन्द्रजीके वंशमें उत्पन्न हुआ बताते हैं । इधर वर्त्तमान जैसलमेर और कच्छ देशके राजपूतगण भगवान् श्रीकृष्णजीका वंशधर कहकर अपनी महान् कुलगरिमाका प्रचार करते हैं । महाराज युधिष्ठिर, जरासन्ध अथवा और किसी चन्द्रवंशीय राजासे भारतवर्षका और कोई हिन्दू राजपूत वंश उत्पन्न हुआ है या नहीं क्रमसे इस विषयका विचारभी किया जायगा ।

भगवान् श्रीरामचन्द्र और श्रीकृष्णजीके परवर्त्ती कालमें सूर्य और चन्द्र-वंशके मध्यमें जो राजालोग उत्पन्न हुए थे उनकी पवित्र नामावली दूसरी वंश-पत्रिकामें प्रगट हुई है। इस पत्रिकामें क्रमानुसार तीन राजकुल सन्निवेशित हुए हैं ।

- १ । सूर्यवंश और श्रीरामचन्द्रजीके वंशधरगण ।
- २ । इन्दुवंश और महाराज परीक्षितके वंशधरगण ।
- ३ । इन्दुवंश और महाराज जरासन्धके वंशधरगण ।

* यह बात हमको दुखके साथ कहनी पड़ती है कि पुराणरूपी कथा सागरमें गोता लगाकर ऐतिहासिक रत्नोंके बाहर निकालनेका कोई उद्योग नहीं करता ।

श्रीरामचन्द्रजीके लव और कुश नामक दो यमल पुत्र उत्पन्न हुयेथे । उनमें ज्येष्ठ लवसे* मिवाडके राजालोग अपनी उत्पत्तिका प्रमाण देतेहैं । छोटे पुत्र कुशसे माडवार और आमेरके राजालोग उत्पन्न हुयेथे । कुशके वंशधर होनेके कारण उनका कुशावह (कछवाले) नाम हुआ है । इसप्रकारसे मारवाडके राजालोगभी उक्त कुशसे अपनी वंशोत्पत्तिका प्रमाण देकर अपनेको सूर्यवंशीय बताते हैं । परन्तु इस बातको बहुतसे हिन्दूलोग नहीं मानते । वह कहते हैं कि मारवाडके राजालोग राजर्षि विश्वामित्रके पूर्वपुरुष कुशसे उत्पन्न हुए ।

जिज्ञासु रविकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजीने भाटशोककी कठोर अग्निमें अपने जीवनको होम दिया; उसदिनसे जो राजालोग क्रमानुसार अयोध्याके सिंहासनपर बैठे, उनका वृत्तान्त भलीभांति श्रीमद्भागवतमेंही प्रकट हुआहै । उक्त महापुराणमें लिखाहै कि श्रीरामचन्द्रजीके पश्चात् अट्टावन राजा अयोध्याके सिंहासनपर बैठे, उनके पिछले वंशधरका नाम सुमित्र हुआ । इस बातका किसी पुराणमें कोई वृत्तान्त नहीं पाया जाता कि महाराज सुमित्रके पीछे सूर्यवंशमें और कोई राजा हुआ वा नहीं । परन्तु आमेरके प्रसिद्ध नरनाथ पंडितवर जयसिंहने जो सूर्यवंशकी एक वंशावली संग्रह कीथी उसमें लिखाहै कि महाराज सुमित्रके पश्चात् सूर्यकुलमें अनेक राजा हुयेथे । वह राजालोग मेवाड़के राजाओंके पूर्वपुरुष थे ।

अभिमन्युक पुत्र महाराज परीक्षित राजा युधिष्ठिरके उत्तराधिकारी हुए राजा-परीक्षितसे लेकर सब समेत ६६ राजा पाण्डवोंकी लीलाभूमि 'इन्द्रप्रस्थ' के सिंहासन पर विराजमान हुए थे । इस वंशके शेष उत्तराधिकारीका नाम राजपाल था । राजतरंगिणी और राजावलीके अतिरिक्त दूसरे किसी ग्रन्थमें इन राजाओंका स्पष्ट वृत्तान्त नहीं पाया जाता है । कहतेहैं कि महाराज राजपालने कमायूँके राज्यपर चढ़ाई की और वहींके राजा सुखवंतने उसको मार डाला । विजयी सुखवंत इस जय पानेसे महाहर्षित होकर अपने देशके वैरी राजपालकी इन्द्रप्रस्थ नगरीपर अधिकार करनेके लिये उसकी ओर चढ़ धाया । जातेही राजधानीको अपने

* टाइसाहबका लवको श्रीरामचन्द्रजीका ज्येष्ठ पुत्र कहना ठीक नहींहै पुराणोंके मतानुसार कुशही बड़ाहै । यथा:—

“ व्यस्तयोः प्रथमं जातः स कुशैर्मत्रसंस्कृतैः । निर्मार्जनीयो नाम्ना हि । भविता कुश इत्यसौ ॥
यश्चावरज एवासील्लवणेन समाहितः । निर्मार्जनीयो वृद्धामिनाम्ना स भविता लवः ॥”

वा० रामायण.

अधिकारमें करलिया । परन्तु अधिक दिनोंतक वहां नहीं रहने पाया । क्योंकि शीघ्रही महाराज विक्रमादित्यके प्रचंड प्रतापने उसको इन्द्रप्रस्थसे निकाल बाहर किया ।

चक्रवर्ती महाराज विक्रमादित्यने । कुमार्युक्त राजा सुखवन्तके आससे इन्द्रप्रस्थको वचाया, परन्तु उसकी पूर्वशोभाके वचानेका कोई यत्न किया । यदि यत्न करते तो उसके सफल मनोरथ होनेमें कोई सन्देह नहीं था, क्योंकि उस समयमें महाराज विक्रमादित्यही भारतके सार्वभौम राजाथे । सम्पूर्ण भारतवर्षकी सुन्दरता और भारतीय आर्यकुलकी गौरवता उस काल उनकी अमरावती तुल्य नगरीमें इकट्ठी हुई थी ।

यदि महाराज विक्रमादित्य चाहते तो पाण्डवोंकी लीलाभूमि इन्द्रप्रस्थको उसके प्राचीन गौरवकी ऊंची श्रेणीपर पहुंचासक्ते थे । पर ऐसा न करके उन्होंने केवल सुखवन्तके हाथसे इसका उद्धारही किया । और इन्द्रप्रस्थको छोड़कर अपनी नगरी उज्जयिनी नगरीको लौट आये । जिस दिनसे वह उसको छोड़कर चले आये तबसे लेकर आठ, दश, शताब्दीतक इन्द्रप्रस्थका सिंहासन खाली रहा । जो इन्द्रप्रस्थ अपने सौन्दर्य और गौरवसे एकदिन सूरनगरी अमरावतीके समान हुईथी, इसदीर्घ कालकी अराजकतासे वह क्रमानुसार भयंकर इमशानके समान होगई । ऐसे समयमें अनंगपाल नामक राजाने उसको संजीवनी सामर्थ्यकी सहायतासे फिर जीवन दान दिया । भट्टग्रन्थमें अनंगपालको पाण्डुवंशीय क्षत्रिय कहाहै । पूर्वपुरुषोंकी कीर्तिको उक्त महाराजने रक्षित तो किया परन्तु इन्द्रप्रस्थके बदले उसका दिल्ली नाम रक्खा ।

प्रसिद्ध राजावली ग्रन्थमें लिखाहै “भारतवर्षके उत्तरीयभाग कुमार्युक्त गिरिव-जसे सुखवन्त नामक एक राजाने आकर चौदहवर्षतक इन्द्रप्रस्थका राज्य किया । फिर महाराज विक्रमादित्यने उसको मारकर इन्द्रप्रस्थका उद्धार किया । भारत समरको हुए इससमयतक २९१५ वर्ष बीत चुकेथे ” इसी ग्रन्थमें और एकजगह ग्रन्थकारने लिखाहै “मैंने बहुतसे पौराणिक ग्रन्थोंको पाठकरके देखा, परन्तु किसी ग्रन्थके बीचभी युधिष्ठिर और पृथ्वीराजके मध्यसमयमें एकशतसे अधिक क्षत्रिय राजाओंका नाम नहीं दिखाई देता इन एकशत राजाओंने ४१०० वर्षतक राज्य किया था । इनके राज्यका अन्त होनेके पीछे इन्द्रप्रस्थपुरी सूर्यवंशके अधिकारमें आगईथी ” ।

जिसदिन महाराज युधिष्ठिर, आभेमन्युके पुत्र परीक्षितके हाथमें राज्यभार समर्पणकरके महाप्रस्थानकी यात्राकर गये; उसही दिनसे महाराज पृथ्वीराजके

अभिषेकतक इन्द्रप्रस्थके सिंहासनपर सब एकशत (१००) राजा बैठे थे । इन समस्त राजाओंका नाम उसी पुस्तककी दूसरी वंशपोत्रिकामें लिखा गया है ।

विशाल चन्द्रवंशकी ओर एकबड़ी शाखाका वृत्तान्त प्रयोजन समझ कर हमने यहां पर लिखा है । इस शाखाकुलमें महाराज जरासन्ध विख्यात हुआ । इसकी राजधानी राजगृहनामक नगरमें थी । श्रीमद्भागवतमें लिखा है कि जरासन्धका पुत्र सहदेव और पौत्र मार्जारिके महाभारत समर समयमें वर्तमान थे । अतएव यह महाराज परीक्षित समकालीनके हुए । महाराज जरासन्धके पश्चात् उसके वंशके २३ राजा मगधके सिंहासनपर बैठे थे । इस वंशके २३ वें राजाका नाम रिपुञ्जय था । इस रिपुञ्जयको इसके मंत्रीने संहार किया । क्रूर मंत्री शनकने राजहत्याके पापसे अपना मुहँ काला तो किया । परन्तु इस राज्यको स्वयं न भोगा । अपने पुत्र प्रद्योतको उस अधर्मप्राप्त सिंहासनपर आरूढ करके वह संनारमें बिदा होगया ।

राजघाती शनकके पुत्रसे लेकर उसके पांच वंशधरोंने मगधकी गद्दीका अभिषेक प्राप्त किया था । तदोपरान्त पिछले महाराज नन्दिवर्द्धनके साथ शनकके राजकुलका नाश होगया । इन पांच राजाओंने १३८ वर्षतक राज्य किया था ।

उसही कालमें शिशुनागनामक एक विजयी राजा ग्रचण्ड वलके साथ भारत भूमिमें आया । और जरासन्धके सिंहासनको अपने अधिकारमें किया । कहते हैं कि वह तक्षक स्थान * नागदेशसे आया था । इस शिशुनागसे लेकर उसके वंशके पिछले राजा महानन्दतक सब १० राजा मगधके सिंहासनपर बैठे थे । ऐसा वर्णन है कि महाराज महानन्दने शुद्धजात क्षत्रियराजाओंके साथ घोर युद्ध करके, उनमेंसे बहुतोंको मारडाला ऊपर कहेहुए १० राजाओंने ३६० वर्षतक राज्य किया । इनके पश्चात् कितनेएक शूद्रराजा मगधके राजसिंहासनपर बैठे थे ।

शिशुनागका वंश लोप होतेहोते मौर्यवंशने मगधके वंशपर अधिकार कर लिया । भुवनविख्यात महाराज चन्द्रगुप्त इस वंशके प्रथम राजा हुए । इस महाराज चन्द्रगुप्तकी कीर्ति और यश एकसमय ईंग्लेण्ड, जर्मनी और फ्रान्सतक फैल गया था । इस वृत्तान्तको सभी विद्वान्लोग जानते हैं । इस मौर्यवंशमें सब १० राजा हुए थे । इन दशराजाओंने १३७ वर्षतक राज्य किया था ।

* ग्रीक इतिहास लेखकोंने तक्षक स्थानका नाम तकारिस्थान कहा है इसका वर्तमान नाम तुर्किस्तान है ।

मौर्यवंशके पिछले राजा महाराज बृहद्रथको राज्यसे अलग करके अष्टमित्र-नामक एक राजाने बलात्कार मगधके सिंहासनपर अपना अधिकार किया । इस अष्टमित्रसे पांचवें वंशकी मगधमें प्रतिष्ठा हुई । कहतेहैं कि, अष्टमित्र शृंगी-देशसे आया था । इसके वंशमें आठ राजा अवतीर्ण हुए । महाराज अष्टमित्र भी इन्हीं आठ राजाओंके बीचमें हुआ । यह आठों राजा ११२ वर्षतक मगधके सिंहासनपर रहेये । इस वंशके पिछले राजाका नाम देवभूत हुआ । महाराज देवभूतके राजत्वकालमें भूमित्रनामक एक वीर कण्वदेशसे चढाई करनेके लिये मगध देशमें आया । और शीघ्रही देवभूतको संहार करके वहांके सिंहासनपर अपना अधिकार किया । महाराज देवभूतके साथ २ ही शृंगीदेशके अष्टमित्रका वंश लोप हुआ ।

वीर भूमित्रने अपने विक्रमकी सहायतासे जिस सिंहासनपर अपना अधिकार किया; उस सिंहासनपर क्रमानुसार उसके २३ वंशधरगण राज्यकरगये । परन्तु इनमेंसे अधिक राजाही शूद्रकुलमें उत्पन्न हुएये । भूमित्रसे चौथे पुरुषमें कृष्ण नामक एक राजा शूद्राणीके गर्भसे उत्पन्न हुआ । और इस राजासेही इस वंशमें शूद्र पनका संचार हुआ । इस वंशके पिछले राजाका नाम शालाम्बुधी था । इस शालाम्बुधीको पाकर मगधमें राजवंशका लोप होगया । एक समय जिस मगध देशका शासन दण्डवीर जरासन्धके प्रचण्ड प्रतापसे प्रकाशित हुआ था, वही वंश उस महाराजके वंश लोप होनेके साथ २ ही क्रमानुसार छः वंशोंके द्वारा चलायमान होकर अन्तमें केवल शून्य नामसे शेष रह गया । साथही मगधका सिंहासन सूना हुआ । फिर उसपर कोई न बैठा । अनुपम वीर जरासन्धका लीलाक्षेत्र—महानन्द और चन्द्रगुप्तकी साधनभूमि—भारतके शोभनीय अंग; अजीत कालके कठोर करप्रहारसे आज छिन्नभिन्न होकर पृथ्वीमें लोपहोना चाहते हैं ।

पंचम अध्याय ५.

जो जातियें भारतवर्ष पर चढाई करके आईंथीं उनका संक्षिप्त वृत्तान्त ।
शाकद्वीपीय और स्कन्धनाभीय जातिके साथ राजपूत
जातिकी समानताका विचार ।

भगवान् मनु और बुधसे लेकर महाराज विक्रमादित्यसे पिछले: भारतवर्षीय हिन्दू राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त तो लिख आए; अब हम उस पवित्र हिन्दूवंशको

कुछ देर तक छोड़ कर कितनी एक अनार्य जातियोंकी समालोचनों करेंगे। शाक-
द्वीप * स्कन्ध नाम* वा और किसी अनार्य देशसे चढाईयाँ करके समय समय
पर भारतवर्षमें आईथीं, उनके आचार व्यवहारका विचार करनाही हमारे इस
अध्यायका अभिप्रायहै, वह समस्त आचार राजपूज जातिके किस किस
आचार व्यवहारसे मिलतेहैं वह सब बातें लिखी जायँगी।

जिन जातियोंको हम अनार्य कहतेहैं वे अश्व, तक्षक, वा जित् वंशसे उत्पन्न हुईहैं,
इन सब जातियोंकी पौराणिक उत्पत्ति वंशविवरण आचार व्यवहार आदि आयोंके
साथ मिलानकर देखनेसे इतनी सहजता पाई जातीहै कि उनका मिलान कर
देखनेसे यह बात सहसा ध्यानमें आजातीहै, कि यह सब जातियाँ एकही वंशसे
प्रगट हुईहैं।

इन बातका निरूपण करना कठिनहै कि यह अनार्य जातियें किस समय भारत-
वर्षमें आईं इहां यह बात सहजमें विदित होसकतीहै कि यह किन देशोंसे आईथीं।

जिन तातार और मुगल जातियोंका वृत्तान्त भारतके इतिहासमें लिखाहै और
जिन मुगल सम्राटोंके हाथमें एक समय सारे भारतवर्षकी बागडोर थी, वहभी उन
अनार्य जातियोंमें उत्पन्न हुएहैं, प्रसिद्ध इतिहास वेत्ता अबुलगाजीने मुगल और
तातारवालोंकी उत्पत्तिके विषयमें जो कुछ लिखाहै आगे वही बात लिखी जातीहै।

अबुलगाजीने कहाहै जिस महापुरुषने तातारियोंके वंशकी प्रतिष्ठा की उसका
नाम मुगल था, उसके अगुज नाम एक पुत्र हुआ, इसने तातार और मुगल
जातिका प्रतिष्ठा की।

इन अगुजके महावंली छः * पुत्र हुए उनमें पहलेका नाम कायन और दूसरेका
आय था, जिस ग्रंथमें अगुजके वंशका वृत्तान्त लिखा गयाहै तातारियोंके उस

* शाकद्वीप (Seythia) ग्रीक इतिहासवालोंने इसको शाकताइ और शिलियानामसे पुका-
राहै, पुराणका मतहै कि इसका विस्तार जम्बूद्वीपसे दुंगुनाहै ॥ यथा—“कथ्यमानं निबोधध्वं शाकद्वीपं
द्विजोत्तमाः ॥ जम्बूद्वीपस्य विस्ताराद्वीगुणस्तस्य विस्तरः ॥” मत्स्य पुराण ॥ इतिहास वेत्ता प्रोवाने लिखा
है कि कास्मियन ह्रदका पूर्व स्थित देश शिलिया नामसे प्रसिद्ध है जहां बंधुतसे पर्वत और नदियें
हैं। सब नदियोंमें अक्सूः (Oxus) नदी प्रधानहै। इस ओर पुराणवर्णित शाकद्वीपमेंभी इक्षु
नामक एक नदीका नाम देखाजाताहै, यथा;—“इक्षुश्च पंचमी ज्ञेया तथैव च पुनः कसू ॥ मत्स्य-
पुराण ॥” तो क्या यह इक्षु शब्दही प्रोवाके द्वारा अक्षनामसे पुकारा गयाहै ?

× स्कन्धनाम । (Scandinavia) वर्तमान नारवे और स्वीडनका प्राचीन नामहै।

* अगुजके इन छः पुत्रोंसे तातारियोंके छः राजकुल उत्पन्न हुएहैं इसी प्रकार आर्यजातिके
पहले दो राजवंशथे फिर उनमें अग्निसे उत्पन्न चार कुल और मिलजानेसे छः होगये अन्तमें
बढतेर यही कुल छत्तीस प्रकारके होगये।

ग्रंथमें कायन और आयको सूर्य और चंद्रकी समान कहा है पाठकगण विचार करें कि यह आय शब्द पुराणोक्त आयु शब्दका अपभ्रंश तो नहीं है ।

तातारवाले आयको अपना गोत्रपति मानकर अपनी उत्पत्ति चंद्रवंशसे बताते हैं यह पहलेही कह दिया है कि तातारियोंने आयुको चंद्रमाके समान कहा है, तब वे अपनेको चन्द्रवंशसे उत्पन्न हुआ बतावें तो इसमें कोई विचित्रता नहीं है, यही कारण है जो तातारी जाति पुरुषभावसे चन्द्रमाकी पूजा करती है.

तातारी आयुके जुलदुस नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआथा इस जुलदुसके पुत्रका नाम हय* था, इसी हयसे चीनका प्रथम राजकुल उत्पन्न हुआ है.

आयकी नौमी पीढीमें ईलखाँ नाम एक पुरुष उत्पन्न हुआ इस ईलखाँके कैयान और नागस नामक दो बलवान् पुत्र उत्पन्न हुए क्रमशः इन्हींका वंश वृद्धिको प्राप्त हो समस्त तातार भूमिमें फैल गया.

जिस महावीर चंगेजखाँकी वीर्याग्निसे एक समय आधा संसार तप रहाथा वह चंगेजखाँ अपनेको इसी वंशसे उत्पन्न हुआ बताता था.

× पुराणोंमें जो जितनांग और तक्षक जातिका वृत्तान्त पाया जाता है, वह हम जानते हैं कि उसकी उत्पत्ति उस नागसकेही वंशमें हुई थी. प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डीगायनने तक्षकोंको तक्षुक मुगलनामसे लिखा है.

पुराणोक्त चन्द्रवंशकी उत्पत्ति वृत्तान्तके संगसंग तातारियों और मुगलोंकी वंशोत्पत्तिकी समानता दिखा चुके मिलान करनेसे दोनोंमें स्थान स्थान पर सदृशता दिखाई दी पर वह समानता किस प्रकारकी है सो आगे लिखेंगे पहले उनके गोत्रपति और प्राचीन देवताओंके विषयमें लिखते हैं.

१ महाभारतमें कहे चंद्रवंशके विवरणमें चार जनोंका नाम आयु पाया जाता है यह पुरुषाके पुत्र थे उनमें पहला आयु नहुपका पिता था यथाहि—

षट् सुता जज्ञिरेथैलादायुर्धोमानमावसुः । दृढायुश्च वनायुश्च । शतायुश्चोर्वशीसुताः

आयुषो नहुपः पुत्रो धीमान् सत्यपराक्रमः महाभा० आदिपर्व ।

* महाभारतमें कहे चन्द्रवंशके विवरणमें हय (हैहय) नामक एक राजाका उल्लेख पाया जाता है यह यदुके पांचवें पुत्र सत्यजित्का तीसरा पुत्र था, आर्यकुलकी वंशावलीमें इस हैहयसे हिन्दू कुलोत्पत्तिका और कोई वर्णन नहीं पाया जाता. विदित होता है कि इस राजासेही चीनीलोग अपनी चंद्रवंशोत्पत्तिका प्रमाण देते हैं ।

× पुराणोंमें जो नागतक्षकादिका विवरण पाया जाता है इन नाग तक्षक जातिके द्वारा सैकड़ों राज्य नष्टहुए अनेक राज्य बदल गये शाकद्वीप इनका पहला वासस्थान है यह बड़े मायावीये अनुमान है कि यह जाति ईसासे ५०० वर्ष पहले भारतमें आई थी.

प्रथम पौराणिक-भगवान् वैवस्वत मनुकी कन्या इला एकदिन वनमें विचरण कर रही थी कि ऐसे समय चंद्रपुत्र बुधसे उसका साक्षात् हुआ बुधने उसको अपनी पत्नी बनाया और उससे चंद्रवंशकी उत्पत्ति हुई ।

दूसरे चीनवालोंके प्रथम महाराज यू (आयु) का जन्म वृत्तान्त, एकदिन कोई स्त्री घूमती हुई फो (बुध) नामक ग्रहके सामने पड़ गई फोने बलपूर्वक उसमें सहवास किया, उसको तत्काल गर्भ रहा और यथासमय उसके एकपुत्र जन्मा जिसका नाम यू रखा, इसी यूने चीन देशके प्रथम राजवंशकी प्रतिष्ठा की इस यूने चीन देशको नौ भागोंमें बांटकर ईसासे २२०७ वर्ष पहले राज्य करना आरंभ किया ।

इससे स्पष्ट होगया कि तातारी आय, चीनी यू और पौराणिक आयु उक्त तीनों जातियोंके चन्द्रवंशी स्थापन कर्ताओंके पृथक् २ नाममात्र हैं । पौराणिक चन्द्रपुत्र बुधकी छायाके द्वारा चीनवालोंका फो, यूरुपियन जातिवालोंका वो दिन तथा तुइतेतिसभी कल्पित हुए हैं ।

अब यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि बुधदेवने जिस धर्मका प्रचार किया था वह धर्म उस समयकी अनेक जातियोंका मुख्य धर्म होगया, वह जातियें बहुत दिनोंतक उस धर्मका एक भावसे प्रचार करती रहीं क्रमशः जब सूर्योपासकोंका प्रचण्डप्रताप बढ़ा तब उनकी तेजोमयी उपासना पद्धतिके सन्मुख बुधका धर्म स्थित न रह सका धीरे धीरे बदलने लगा बदलते २ वर्त्तमान शान्तिमय जैन धर्ममें परिणत होगया ।

महात्मा डियाडोराने एक शक जातिकी उत्पत्तिके विषयमें जैसा वृत्तान्त लिखा है, उससे हमारा लिखा हिन्दू चीन और तातारियोंका उत्पत्ति वृत्तान्त

१ (शक म्लेच्छजाति विशेष—इन्होंने सूर्यवंशके बाहु राजाको राज्यसे निकाल दिया था, तब बाहुके पुत्र महाराज सगरने इनको भली भांतिसे दण्ड दिया, कुलपुरोहित वशिष्ठजीके कहनेसे महात्मा सगरने इन लोगोंको मारा तो नहीं परन्तु शकोंका आघाशिर, यवन और कम्बोजोंका सवशिर मुंडवा दिया, कम्बोजोंको मुक्तकेश और पहव जातिको सदा डाढ़ी मूछ रखानेकी प्रतिज्ञा कराकर इन विशेष २ दण्डचिह्नोंको देकर देशसे बाहर निकाल दिया । यथाहि—

“ततः शकान् सयवनान् कम्बोजान् पारदांस्तथा । पहवांश्चापि निःशेषान् कर्तुं व्यवसितो नृपः ॥ १ ॥

ते हन्यमाना वीरेण सगरेण महौजसा । वशिष्ठं शरणं जग्मुः सूर्यवंशपुरोहितम् ॥ २ ॥

वशिष्ठः शरणापन्नान् समरे स्थाप्य तानृपिः । सगरं वारयामास तेभ्यो दत्त्वाभयं तदा ॥ ३ ॥

सगरस्तान् प्रतिज्ञां तु निश्चम्य सुमहाबलः । धर्मं जघान तेषाञ्च वेशानन्यांश्चकार ह ॥ ४ ॥

अर्द्ध शिरः शकानान्तु मुण्डयामास भूपतिः । यवनानां शिरः सर्वं काम्बोजानामपि द्विज ॥ ५ ॥

पारदान्मुक्तकेशास्तु पहवान् श्मश्रुधारिणः । निःस्वाध्यायवषट्कारान्सर्वानिव चकार ह ॥ ६ ॥”

पञ्चपुराण स्वर्गखण्ड १५ अध्याय ।

बहुत कुछ मिलताहै इस स्थानपर आवश्यकता देखकर हम डियाडोराकी लिखी बातको प्रकाशित करतेहैं डियाडोराने लिखाहै ।

अरक्सस नदीकी विशाल तीरभूमिही शक जातिकी आदि निवास भूमिथी, आधेमनुष्य और आदेसर्पके आकारवाली स्त्रीके गर्भसे वे जन्मेथे यह अपूर्व रूपवती स्त्री पृथिवीकी कन्या थी जुपिटरने उसके साथ विवाह करके उसके गर्भसे शीथेश नामक एक पुत्र उत्पन्न किया, शीथेशके वंशधर उसीके नामसे प्रसिद्ध हुए उनके पलस और नापस नामक दो बड़े वीर पुत्र जन्में, यह दोनों ऐसे पराक्रमी हुए कि एक समय इन्होंने आफ्रीकासे लेकर नीलनद और पूर्व सागरके मध्यके विशालदेशतकको अपने अधिकारमें करलिया ।

महावीर शीथेशके लगाये हुए विशाल वंशवृक्षसे बहुतसे राजकुल उत्पन्न हुए उनमें शाकन, मन्साजिती और अरिआ सपियन प्रधानहैं एक समय इन वीरवंशवालोंने अपने पराक्रमसे असीरिया और मिडिया राज्य जीतकर वहांके निवासियोंको अरक्ससनदके किनारे पर वसादिया था ।

आधे मनुष्य और आधे सर्पके आकारवाली* स्त्रीसे उत्पन्न हुआ इनका वंश बहुत वृद्धिको प्राप्त हुआ प्रधान शकपति शीथेशके लगाये विशाल वंश-

* वैवस्वतमनुकी कन्या इला विष्णुभगवानके वरसे पुंस्त्व धर्मको प्राप्त होकर प्रद्युम्न नामसे विख्यात हुई कुछ दिनके उपरान्त जब वह शिवजीके रक्षित वनमें जाकर जब फिर अपनी पूर्व अवस्थाको प्राप्त हुई तब बुधने उसके साथ पाणिग्रहणकर उससे पुत्रवा नामक पुत्र उत्पन्न किया, इलाके कुलपुरोहित वशिष्ठजीने शंकरका आराधन कर उनसे वर ले इलाको एक महीने पुरुष और एक महीने स्त्री रहनेका वरदान दिया। इलाका दूसरा अर्थ पृथिवीहै प्रतीत होताहै कि इस स्थलमें वही शब्द व्यवहार किया गयाहै सधन कल्पना जालको भेद कर सत्यराज्यमें प्रवेश करनेपर अनेक अंशोंमें प्रतीत होगा कि शाकद्वीप निवासियोंने पौराणिक चंद्रवंशके स्थापन करनेवाले बुधसे अपने वंशकी उत्पत्ति मिलानेके निमित्त इस प्रकारके कौशलका अवलम्बन किया है । इला पृथिवीसे आरंभ न करके उससे उत्पन्न हुई एक कन्यासे अपने वंशकी उत्पत्ति निरूपण करतेहैं, किन्तु यह कन्या अर्द्धसुजंगिनी कैसे हुई इसके उत्तरमें इतनाही कहना बहुत होगा कि शाकद्वीप निवासी लोग पहले बुध धर्मावलम्बी थे, सुजंग बुधकी प्रतिकृतिमात्रहै धर्मोपदेष्टा बुधकी प्रतिकृति अपनी कुलजननीके अर्धांगमें आरोपण करके पौराणिक इला और बुधसे अपनेवंशकी उत्पत्ति सप्रमाणकी है ।

Seythians worshipped Mercury (Boodha) Woden or Odin and believed themselves his progeny. Pinkerton on the Goths Vol. II.

जो जाति आरक्ससके किनारे बसी वह पराजित जाति आरमनियान् अर्थात् सूयोंपासक नामसे विख्यात हुई ।

वृक्षकी शाखासे उत्पन्न हुए बहुतसे राजकुल राजस्थानके छत्तीस राजकुलमें प्रतिष्ठित होगयेहैं परन्तु यह वृत्तान्त आगे चलकर लिखेंगे कि यह लोग किस समय दूसरे देश शाकद्वीपसे आकर भारतके राजस्थानमें बसे अब हम इस बातकी आलोचना करतेहैं कि आर्यवीर राजपूतोंके धर्मसमाज, व्यवहार सम्बन्धी रीति नीतिके साथ शाकद्वीपके रहनेवालोंकी रीति नीति कहांतक मिलतीहै, विचार कर देखनेसे विदित होताहै कि इनका मेल यहांतक मिलता है कि इनको पृथक् मानना कठिन विदित होताहै ।

बेषपहनावा—प्रसिद्ध इतिहास लेखक × टसिटस कहताहै कि पहले जर्मनके लोग लम्बे और ढीले कपडे पहना करतेथे सबेरे विस्तर परसे उठतेही हाथ मुहँ धो डालतेथे डाढ़ी मूंछोंके बाल कभी नहीं मुँडातेथे और शिरके बालोंकी एक वेणी बनाकर गुच्छेके समान मस्तकके ऊपर गांठसी बांध लेतेथे.

इस समय जर्मनवाले लोग शीतप्रधान देशमें रहतेहैं, इस कारण यह कभी नहीं माना जा सकता कि ऐसी रीति नीति और पहरावा उस देशके लिये उपयोगी हो, अवश्यही यह आचार व्यवहार उन्होंने एशियाके ग्रीष्मप्रधान पूर्वदेशसे सीखा होगा ।

देववंश—दुईष्ट (मंगल) और आर्या (पृथिवी) प्राचीन जर्मनवालोंके प्रधान देवताथे जर्मनवालोंके मतके अनुसार भगवान् मनुमके द्वारा अर्याके गर्भसे दुईर्त्तका* उत्पत्ति हुईहै ।

× इसके अतिरिक्त इनके नित्यनैमित्तिक और रक्षायोंका जो वृत्तान्त पाया जाताहै उससे विदित होताहै कि कदाचित् यह लोग शाकद्वीपके जित् कान्ति किम्ब्री, और शैवी एकही वंशकेहैं, यद्यपि टसिटसने यह स्पष्ट नहीं लिखा कि जर्मनीकी आदि निवासभूमि भारतवर्षमें थी परन्तु वह यह कहनाहै कि जिस जर्मनीमें रहनेसे शरीरके अंग प्रत्येक विकल होजातेहैं, उस जर्मनीमें एशियाके एक गर्मदेशको छोड़ आकर निवास करना क्या बुद्धिमानीका कामहै, इससे निश्चयक यह कहा जासकताहै कि एशियाका कोई देश उनका आदिम स्थान था, और टसिटसको उरुका वृत्तान्त विदित था.

१ ईस्वी सन्की पांचवीं शताब्दीमें शालीन्द्रपुर (शालपुर) में जित जातिका एक राजा राज्य करता था, उसके राजत्वके सम्बन्धमें एक शिलालेख पायागयाहै उसमें एकस्थानपर इस राजाको दुईष्टके वंशका कहाहै तब यह दुईष्ट कोत है ।

* ज्योतिष शास्त्रके अनुसार मंगल ग्रह पृथिवीसे उत्पन्नहै और पुराणोंमेंभी इसे भूमिपुत्र लिखा है “उपेन्द्रबीजाद् भूम्यान्तु मंगलः समजायत” ब्रह्मवैवर्त॥ यद्यपि दूसरे पुराणोंमें मंगलकी उत्पत्ति दूसरे रूपमें वर्णितहै परन्तु सबमें पृथिवीसेही उत्पत्ति मानीगईहै “मंगलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रदः । धरात्मजो कुजो भौमो भूमिजो भूमिनन्दनः१” हिन्दूशास्त्रके अनुसार भगवती पृथिवी विशेष पूजनीयाहै स्वयं विष्णुजीने अनेक प्रकारसे उसकी पूजा कीहै। “वसुन्धरायै स्वाहा॥” “इत्यनेनैव मंत्रेण पूजिता विष्णुना पुरा॥ आदौ च पृथिवी देवी वराहेण च पूजिता॥ ततः सर्वैर्मुनीन्द्रैश्च मनुभिर्मर्मानवादिभिः॥” ब्र०

जर्मनवालोंने उक्त टुइष्ट (मंगल) और बोधेन बुंधको एकही कहकर लिखा है जिससे स्थान स्थानपर उनको बहुत उलझनमें पड़ना पड़ता है ।

पूजाविधि—स्कन्धनाम देशमें जित नामक एक महापराक्रमी जाति निवास करतीथी, इस जातिके वंशकी बहुतसी शाखायेंथीं उन शाखाओंमें शैव और शैवी लोगोंकी विशेष प्रतिष्ठाथी कहतेहैं उक्त शैवलोग भगवती पृथिवीकी पूजा करतेथे और उसको प्रसन्न करनेके निमित्त अपने पवित्र कुंजोंमें नरबलि चढ़ाते थे; शैव लोगोंके धर्मग्रंथोंमें यहभी लिखाहै कि उनकी पूजनीया भगवती वसुमतीका रथ एक गौके द्वारा खेंचा जाताथा।

शैवी लोगभी मूर्ति पूजक थे, परन्तु वे आर्याकी पूजा न करके ईशी (ईशानी वा गौरी) नामवाली देवीकी पूजा करतेथे उक्त ईशीको प्राचीन मिसरवालेभी अपने देवताओंमेंसे एक आराध्य देवता समझतेथे परन्तु यह मिश्रवालेके बल ईशी-हीकी पूजा न करके एक साथमें युगलमूर्ति अशिरीश और ईशी (हरगौरी) की पूजा करतेथे, उदयपुरमें विशाल सरोवरके किनारे आजतक जिस प्रकारसे भगवती ईशानीकी पूजा होतीहै वैसीही मिश्र-देशमें होतीथी प्रसिद्ध इतिहास लेखक हेरो-डोटसने जो कुछ इस विषयमें लिखाहै उसकी साक्षीही ऋतुहै ।

वीरव्यवहार—यदुकुलमें एक बाह्याश्वनामक महातेजस्वी क्षत्रिय उत्पन्न हुआ था उसके वंशधर सिन्धुनद पार करके भारतके पश्चिमी देशोंमें फैल गये, उन क्षत्रिय कुमारोंके युद्धसम्बन्धी आचार व्यवहारका जैसा वर्णन पाया जाता है वैसाही वर्णन जित् शैवी और स्कन्धनाभीय लोगोंका पायाजाताहै, कहतेहैं कि जित् शैवी और स्कन्धनाभीयलोग भगवान् हरिकुलेश* टुइष्ट वा बोधनके प्रशंसा सूचक गीत गातेथे, उनकी ध्वजा वा प्रतिमा लेकर संग्राममें जातेथे और युद्धके समय शूल या मुद्गरको काममें लातेथे ।

१ गौभी पृथिवीका नामहै, मूर्तिभी पृथिवीकी गौहै पुराणदि ग्रंथोंमें लिखाहै कि अधर्मी राजा या असुरोंसे पीडित होकर पृथिवी गोरूप धारण करतीथी, पुराणोंमें इसका प्रसंग बहुतहै । “ततो ननाश त्वरिता गौर्भूत्वा तु वसुन्धरा । अपि च (भात्ये) ततो गोरूपमास्थाय भूः पलायितुमुत्सहत् ।”

* ग्रीकवालोंके हरिकुलेशके साथ भारतीय हरिकुलेश (बलदेवजी) की अनेक बातोंकी तुलना करनेसे दोनोंमें बहुत न्यून अन्तर पाया जाता है टाडसाहबने दोनोंको एकही अनुमान कियाहै परन्तु यह अनुमान कहांतक युक्ति संगतहै सो सहजमें समझमें आजायगा उन्होंने जो प्रमाण उनकी समतामें दियेहैं यहांपर उनके लिखनेसे नीरसता प्रतीत होगी आगे परिशिष्टमें इन बातोंका विचार कियाजायगा “ बलदेवं द्विवाहुं च शंखकुन्देन्दुसन्निभम् । वामे हलायुधधरं दक्षिणे मुसलं करे । हालालोलं नीलवर्णं हेलवन्तं स्मरेत् परम् ।” ऐसाही वर्णन लगभग ग्रीकवालोंके देवताका है।

आयोंकी त्रिमूर्तिकी समान स्कन्धनाभवालेभी त्रिमूर्तिकी उपासना करते थे, खर, बोधेन और फ्रेया यह तीन नाम उनकी त्रिमूर्तिकेहैं, यह मूर्ति त्रिगुणात्मिका थीं स्कन्धनामवालोंकी उपास्य देवताकी उक्त त्रिमूर्ति प्रतिमाको शैवीलोग अपने मंदिरोंमें प्रतिष्ठित रखतेथे ।

जिस समय वसन्तऋतुके आगमन होनेपर सम्पूर्ण पृथिवी एक नवीन जीवन धारण करतीहै उस समय स्कन्धनाभ निवासी फ्रेयाका महोत्सव आरंभ करते थे और उक्त देवताके सन्मुख जंगली वराहकी बली चढाते थे ।

शिवकी अर्द्धांगिनी वासन्ती देवी राजपूतोंकी पूजनीय देवताहैं वसन्तऋतुका आगमन होतेही राजपूतगण सेनाआदिको साथ लेकर आखेटको जाते और वराहका आखेटकर उसका मांस भक्षण करतेहैं उसदिन वह राजा अपने जीवनका माया मोह त्यागकर शिकारमें लगते हैं, कारण कि उन राजाओंके मतसे उसदिनकी जय पराजयके साथ सम्बत्सरका मुख दुःख निर्भरहै, अपने जीवनका मोह करके जो राजपूत उसदिन पराजित होजाताहै उसको भगवती महामायाकी क्रोध दृष्टिसे वर्षदिनतक कष्ट मिलते रहतेहैं ।

राजपूतोंके देवता सेनापति कुमारहैं, पुराणोंमें उनको *सप्तमुख वर्णन कियाहै पण्डित शाकसेनोंके रणदेवता छःमुखवाले हैं शाकसेन कात्ति शैवी जित और कम्ब्रीगण सबही उक्त षडानन (छःमुखवाले) समरदेवकी पूजा करते थे ।

नमरविलासी राजपूतोंके रणधर्म और शिव पूजा पद्धतिके साथ हिन्दुओंकी दूसरी सम्प्रदायाकी बातें बहुतही कम मिलतीहैं, कारण कि, हिन्दूजाति अधिकांशमें शान्तिप्रिय और अहिंसक होतीहै, कन्द, मूल, फल, स्वच्छ सुन्दर जल उनका प्रधान भोजन और पेय पदार्थहै. ध्यान धारणा देवताकी उपासना अथवा

१ त्रिगुणात्मिका उत्पत्ति पालन और संहार करनेवाली तीन मूर्ति । खर-संहारकर्त्ता। बोधन-पालन कर्त्ता, फ्रेया—आद्याशक्ति प्रकृतिरूपिणी देवी हिन्दूशास्त्रमेंभी यही कार्यकर्त्ता त्रिदेव कहातेहैं ।

* टाडसाहवने न जाने किस आधारसे षडाननको सप्तानन कहाहै कुमारको छः कत्तिका एक साथ दूध पिलानेकी परम इच्छा करने लगीथीं इससे कुमारने उनकी प्रीति देख पड्मुख धारण किये थे यथाहि—

“तं कुमारं ततो जातं दृष्ट्वा सेन्द्रा मरुद्गणाः । तदा क्षीरप्रदानार्थं कृत्तिकाः सन्न्ययोजयन् ॥
अन्योन्याः पिवतस्तासां तनयस्य मुखानि पट् । समभूवन् महाबाहो षष्ठमुखतेन विश्रुतः ॥”

(वाल्मीकीय रामायण)

किसी प्रकारके दूसरे शान्तिमय कार्यमेंही वह अपना जीवन बिता देते हैं यदि उनकी उपासना विधिसे युद्धप्रिय राजपूतोंकी उपासना विधिका मिलान किया जाय तो दोनोंही पृथक् पृथक् ज्ञात होंगी आर्यवीर्य राजपूत लड़ाई दंगे तथा रक्तधारा वहानेसेही अत्यन्त सन्तुष्ट रहतेहैं । अपने २ इष्ट देवताको संतुष्ट करनेके लिये वह जोकुछ भोजन करने या पीनेके पदार्थ समर्पण करतेहैं वहभी रुधिर या मांसके पदार्थ होतेहैं, या केवल रुधिर होताहै, अथवा सुरा होतीहै, नरकपाल उनको खर्पर होताहै । इन पदार्थोंको अपने इष्ट देवताका संतुष्ट करनेवाला जानकर राजपूत लोग अच्छा समझतेहैं । बालकपनहीसे उनके मनमें ऐसा विश्वास होजाताहै कि महादेवजी अपने उपासकलोगोंके शत्रुओंका रुधिर इस खर्परमें भरकर पिया करते हैं । उन समर देवताकी मूर्ति और वेष अत्यन्त वीभत्स होताहै सर्वांगमें राख लगीहुई, सर्प लिपटेहुए, दोनों आंखें भंग व धतूरेका सेवन करनेसे लाल २ होकर चलायमान, रहतीहैं उनकी बाईका जांवपर देवी पार्वतीजी बैठीहुई हाथमें रुधिरसे भराहुआ नरकपाल इसप्रकार भयंकर मूर्तिशाले महादेवजी राजपूत वीरोंके रणदेवहैं । भारतवर्षके जिस प्रदीप्त रेतीले मैदानमें आर्यवीर राजपूत लोग वास करतेहैं । क्या वहांपर इस वीभत्स्य वेषधारी देवमूर्तिकी कल्पना होसकतीहै ? हम नहीं जानते, परन्तु विचार करनेसे इसमूर्तिको हठात् रणवीर स्कन्दनाभीय लोगोंके वीराचारेकी प्रतिमूर्ति कहा जासक्ताहै । मीराचारी राजपूतगण झृंग, बराह, हंस, और वनकुङ्कुटको सिकार करके खाजातेहैं । सूर्य, खड्ग, और घोड़ेकी पूजा करतेहैं । ब्राह्मणोंके धर्म पूर्ण उपाख्यानोकी अपेक्षा उनको भट्टकविगणोंके रण संगीत प्यारे जान पड़तेहैं । भट्टग्रन्थोंमें उनकी अटल, अचल भक्ति होतीहै । जिस दिन उस भक्तिका लोप होगा, उसही दिन राजपूतोंका नामभी पृथ्वीसे लोप होजायगा । आज जिस स्कन्दनाभदेशके वीरपुरुष लोगोंके साथ वीर राजपूतोंके साथ मिलानका विचार किया जाताहै, अब उनकी वह अवस्था कहांहै ? जिसके साथ बराबरीका विचार करनेसे एक भारतीय आर्यलोगोंके अतिरिक्त और समस्त वीर जातियें गौरवमें नीचे उतरी जातीहैं, आज वीरजननी स्कन्दनाभ भूमिकी वह अवस्था कहां गई है ? आज वह अवस्था निटुर कालके कठोर कार्य व आचरण करनेसे अपने वर्तमान पुत्रोंको छोड़कर चलीगई है ! हत भागिनी भारतभूमिकी समान, आज स्कन्दनाभ भूमिका भी केवल नामही नाम रह गयाहै ।

भट्टकवि-राजस्थानके राजपूत राजाओंके चरित्रोंके वंशके वृत्तान्तको जो लोग गाथाबद्ध करके, राजपूतोंके सामने उन चरित्रोंका वर्णन करतेहैं, वह

भट्टकवि *कहलतेहैं। महात्मा टसिट्सके अनुपम इतिहासग्रन्थमें इसका भली भाँतिसे प्रमाण मिलताहै कि इसप्रकारके गाथाकर्त्ता प्राचीन जर्मनवालोंमेंभी थे। टसिट्स् कहताहै “ नमर यात्राके समयमें जब वह वीर रसामोदी कवि लोग, अमृत वर्षानेवाली वीणातंत्रीकी मन मोहन ध्वनिमें अपने मृदु, गम्भीर कंठस्वरको मिलाकर समर संगीतको गाया करतेथे तब वास्तवमें वीररसका आगमन होनेके कारण प्रत्येक वीर अपने जीवनकी माया मोहको छोड़कर मतवाला होजाताथा।”

युद्ध रथ—भारतवर्षके हिन्दूलोग और शाकद्वीपके रहनेवाले संग्रामके समय वह नवही लंग युद्धरथका व्यवहार करतेथे। यही कारणहै जो रथ, इन वीर लोगोंकी चतुरंगिणी सेनाका एक अंगहै। महाराज दशरथजीके समयसे लेकर उस समय-तक कि जब मुसलमानोंने भारतको विजयकिया, जितने युद्ध हिन्दीवीरोंने किये नवही रथका व्यवहार होतारहा। परन्तु जिस दिनसे मुसलमानोंने भारतवर्षके स्वाधीनतारूपी रत्नको छीनलिया, जिसदिनसे हतभाग्य भारत सन्तान उस अनमोल रत्नको खोकर दासपनकी जंजीरमें बँधे, उसही दिनसे; उसही समयसे,— उनकी चतुरंगिणी सेनाका एक अंग भंग होगया। तबसेही उन्होंने युद्धरथका व्यवहार छोड़दिया। कुरुक्षेत्रके महासमरमें भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द-कंदन अपने प्रियमित्र अर्जुनका रथ चलायाथा। वैसेही जब जरक्षेशने ग्रीकमें गैलमंडित मैदानमें अपनी विजयी सेनाको चलायाथा, और दारायुने जिस समय विशाल अरवल्ली क्षेत्रपर अपनी विजय पताका फहराईथी, तब युद्धरथही दोनोंका प्रधान बल गिनागयाथा। ×

परन्तु पहिले कहीवातके बहुत दिन पीछेतक भी भारतके दक्षिण पश्चिम प्रान्तस्थित विशाल स्थानमें युद्धरथका व्यवहार होताथा। जिन जातिवालोंने रथ-

* ब्रह्मवैवर्त पुराणमें लिखाहै कि शूद्रके औरससे वैश्याके गर्भमें भट्ट जाति उत्पन्न हुई। यथा;— “वैश्यायां शूद्रवीर्येण पुमानेको बभूव ह । स भट्टो वावदूकश्च सर्वेषां स्तुतिपाठकः ॥” १० अध्याय। इसी पुराणमें और एक जगह लिखाहै कि क्षत्रीके औरस और ब्राह्मण कन्याके गर्भसे भट्टजाति हुईहै ॥ “क्षत्रियाद्विप्रकन्यायां भट्टोजातानुवाचकः ॥” इन दोनों भट्टजातियोंमेंसे यहांपर पिछली भट्ट जातिहीका वर्णनहै।

१ चतुरंगिणी सेनामें हाथी घोड़े रथ और पैदल होतेहैं यथा “हस्त्यश्चरथगदान्तं सेनाङ्गं स्या-चतुष्टयम्”

× फारास राज्यके दारायुके साथ महावीर सिकन्दरसे जो संग्राम हुआथा। कहतेहैं कि दारायु उसमें दोसौ युद्धरथ सजाकर लायाथा।

का व्यवहार किया था, उनमें कात्ति, कोमानि, और कोमारी गणही प्रसिद्ध हैं यह जातियें आजतक सौराष्ट्र देशमें वास करके अपने पूर्वपुरुष शक लोगोंके आचार व्यवहारका बराबर विचार करती हैं। आजभी इनके पहले पाषाणस्तम्भोंमें स्पष्ट-२ लिखा है कि उक्त जातियोंके पितृ पुरुषगण रथपर चढ़े हुए युद्धकरते २ शत्रुओंके हाथसे मारे गये थे। स्त्रियोंके प्रति व्यवहार—आर्यवीर राजपूतगण अपनी गृहलक्ष्मियोंके साथ जैसा श्रेष्ठ व्यवहार करते हैं, प्रचीना जर्मनवाले तथा स्कंध-नाभवाले और जित् लोगभी अपनी नारियोंके साथ ठीक वैसाही व्यवहार किया करते थे, इस बातमें इन जातियोंमें जैसा मेल दिखाई देता है वैसा मेल और किसी विषयमें दिखाई नहीं देता ।

टसीटसने लिखा है कि जर्मनवाले विपत्तिके समय स्त्रीकी सम्मतिको पवित्र देववाणीकी समान जानते थे, चन्द्रकविने अपने अमृतमय काव्यग्रंथमें राजपूतोंके सम्बन्धमें ऐसाही लिखा है, कदाचित् इसी लिये राजपूत अपनी कुलकामिनियोंके नामके पीछे देवीशब्द उपनाम की भांति लगा दिया करते हैं, स्त्री राजपूत और जर्मनवालोंके जीवनकी जीवनरूपिणी और हृदयकी अर्द्धभागिनी हैं, जबतक उनके शरीरमें प्राण रहते हैं, तबतक यह दुखदायी ध्यानभी कि जो रमणी शत्रुओंके द्वारा पकड़ी जायगी, उसका वे धर्म बिगाड देंगे उनके हृदयको खंडखंड कर डालता है वीरराजपूत और जर्मन जिनके पवित्र हृदयमें सदा उनकी मूर्ति विराजती है जो हृदय दिनरात उनके मंगलको मनाया करता है समय पडनेपर अपने हाथोंसे उन अपनी सुकुमारसन्तानका शिर काटनेमें भी शोच विचार नहीं करते, परन्तु ऐसा प्रयोजन क्या सदा पड़ा करता है नहीं, ऐसा काम वे उस समय करते हैं जब आशाका अन्त होजाता है, जब वे एकदम निरुपाय और निरालम्ब होजाते हैं, जब वे यह देखते हैं कि प्रचण्डदेश वैरीके भीषण आक्रमणसे अब स्वाधीनतारूप लक्ष्मीकी रक्षा नहीं की जा सकती, और जब वे यह जानलेते हैं कि हृदयकी अर्द्धभागिनी रमणियोंका स्वर्गीय सतीत्वरत्न पापी शत्रुके द्वारा हराजाया चाहता है ऐसे संकट और निराशाके समय वे तेजस्वी राजपूतगण अपने हाथोंसे उनका शिर काटने अथवा जीतेजी उनको आगमें जलानेके लिये भयंकर-जुहारवतका* उद्घापन करते हैं इस हृदयविदारक दृश्यका पूरा वृत्तान्त आगे मेवाड वृत्तान्तके साथ लिखा जायगा ।

* जुहार नाम अन्तिममेंटका है, राजपूत स्त्रियां रणभूमिमें भी प्राण देती थीं ।

द्यूत जुआ—क्या राजपूत क्या जर्मन क्या सीथीय सभी प्राचीन जातियोंमें द्यूतप्रियताका विवरण पाया जाता है इस अनर्थकारी खेलसे महाअनिष्ट होते देख और सुनकरभी न जाने यहलोग क्यों इसखेलमें मन लगातेथे यह आश्चर्य है।

जर्मनलोग अपना सबकुछ यहांतक कि अपनी स्वाधीनताकीभी बाजी लगाकर इसअनिष्टकारी खेलको खेलते थे यदि हारजाते तो जीतनेवाला उनको दास भावने बेचदिया करता था। इस सर्वनाशकारी द्यूतविलासितासे मोहित हो एक समय पाण्डवलोग अपनी समस्त सम्पत्तिको हारकर अन्तमें अपने हृदयको अर्द्ध-भागिनी द्रौपदीको दांवपर लगावैठे। पाण्डवोंकी उसभयंकर द्यूताशक्तिसे भारत वर्षका जो महाअनिष्ट हुआ है, उसका प्रकाशित चित्र आजतक कुरुक्षेत्रके भयंकर मैदानमें स्पष्टभावसे विराजमान है। उस चिह्नका—आर्यजातिके नष्टकारी प्रकटमान निदर्शनका—और भारत माताके हृदयमें उस गंभीर अस्त्ररेखाके अंकि-नहोनेका भयानक वृत्तान्त जानकरभी आर्यवीर राजपूतगण उस अनिष्टकारी खेलको बड़े चावसे खेलाकरते हैं। कैसा आश्चर्यहै कि यह भयंकर पापाचार उनके पवित्र धर्मग्रंथोंकी निधानपंक्तियोंमें स्थान पाएहुए हैं * उसविधानका अनु-मरण करनेके लिये राजपूतलोग प्रतिवर्ष आजतक “दिवाली”× उत्सवपर भगवती लक्ष्मीजीको प्रसन्नकरनेके लिये उस अनर्थकारी खेलको खेलाकरते हैं।

शाकुनिक और सामुद्रिक गणना, पक्षियोंके उड़ने, शब्दकरने, पंख फटफटाने व और अंगोंके फडकनेसे आर्यलोग अपने शुभाशुभका विचार किया करतेहैं विहंग किम औरसे किस भावसे उड़ गया, किससमयपर किसप्रकारसे शब्द किया या अपने पंखोंको फैलाया, इन बातोंको जित और जर्मन लोग भली भांतिसे देखकर अपने शुभाशुभका विचार किया करतेहैं। इसके सिवाय दैवज्ञ और सामुद्रिक जाननेवालेके विचार पर इन समस्त प्राचीन जातियोंका अटल विश्वास है।

मदिरापानमें विकट आसक्ति:—जर्मन और स्कन्दनाभीय आसिलोगोंके वीरोंका जितकुलसे उत्पन्न होनेका प्रमाण उनकी सुराप्रियताका विचार करने-सेही प्राप्त होजाता है। हिन्दूवीर राजपूतलोगभी इसविषयमें किसीप्रकारसे

* हिन्दूशास्त्र द्यूतक्रीडाका निषेध करता है। “द्यूतमेतत्पुराकल्पे स्पष्टं वैरकरं महत् ॥

तस्माद्द्यूतं न सेवेत हास्यार्थमपि बुद्धिमान् ॥ मनु०

× इसउत्सवमें सनातनधर्मावलम्बियोंके घर २ रोशनी हुआकरती है। बम्बईके बराबर दिवाली कहींपर नहीं होती। जुआ खेलनेका विधान धर्मशास्त्रमें नहीं किन्तु निषेध है आधार इतना मिलता है कि इस दिन कोई कृत्य इतनामात्र करले जिससे अपनी जय पराजय विदित होजाय।

कमती नहीं हैं । स्कन्दनाभीय और जर्मनलोगोंके समान यह लोगभी, अनेकप्रकारसे वारुणी देवीकी पूजाकिया करते हैं । समराविलास देवपूजा, अतिथिसत्कार यहांतककी सवही बातोंमें राजपूतलोग मदिराका व्यवहार करनेका विशेष, अडस्वर क्रिया करतेहैं।स्थानपर अतिथिके आतेही राजपूतलोग सबसे पहले सुरापूर्ण “मनौआप्याला,, हाथमें लेकर अभ्यागतका मधुर स्वरसे सन्मान कियाकरते हैं । एक समय जो भयंकर शत्रु—जिसका कलेजा काटनेके लिये राजपूतका खड्ग सदा तैयार रहता था; यदि वह शत्रुभी पहुनई स्वीकार करके राजपूतके दिये “मनौआप्यालेसे सुरापान करे तो वीर हृदय राजपूतगण समस्त शत्रुताको भूलकर बन्धुभावके द्वारा उसको भेटते हैं ।” उस सुरापूर्णपानपात्रका गुणकीर्त्तन करते करते राजपूत और स्कन्दनाभीय कविलोंगोंकी वीणासे बराबर अमृतकी धार निकलती रहती है । इस सुराको वहलोग अमृतमयी जानकर पृथिवीके समस्त सारद्रव्योंमें अच्छा मानते हैं । राजपूत और जित, वीर लोंगोंका दृढ विश्वास है कि यदि हम देशकी रक्षा करते हुए संग्राममें मारेजायेंगे, तो अनन्तसुखके स्थान स्वर्गलोकमें अप्सरायें मदिरासे भरा प्याला लेकर हमारा भान करेंगी । इसीविश्वासको हृदयमें धारणकरके वह अतिउत्साहके साथ रणभूमिमें गमन करते हैं यदि रणभूमिमें घाव लगनेसे गिरभी गये तोभी प्रफुल्लसुखसे कहा करते हैं—“मैं मनुष्यजन्मसे छुटकारा पाकर स्वर्गके नित्य सुखदायी स्थानमें देवताओंके साथ सुरामृतको पान करूँगा ।”

स्कन्दनाभीय वीरलोंगोंके उपास्यदेवताका नाम खरहै, उनके मतसे नरखोपडी ही उक्त रणदेवताका पानपात्रहै । हमजानतेहैं कि वीर स्कन्दनाभीयलोंगोंकी यह देवकल्पना, राजपूतलोंगोंके संग्रामदेवता महादेवजीसे संगृहीत हुईहै । इसविषयका वर्णन इन लोंगोंके काव्यग्रंथोंमें इसप्रकारसे पायाजाता है कि संग्रामके समयमें उक्त रणदेव भयंकर मूर्ति धारण करके नरकपाल हाथमें ले समरभूमिमें दौडतेहुए लड़ाईके बीचमें गिरे शत्रुओंका रुधिर बराबर पान किया करतेहैं ।

युद्धक्षेत्र जिनकी लीलाभूमिमें है । जो मदिराको पीनेकी वस्तुओंमें सारसे भी सार समझते हैं । भूतभावन भगवान् महादेवजीही उन रणप्रिय राजपूतोंके प्रधान उपास्य देवता हैं । उन परमपूज्य भूतनाथके प्रसादको पानेकेलिये राजपूत गण पूजाके समय बहुतसी सुरा और रुधिर चढाया करते हैं । पूजाविधिके समाप्त होजाने पर जब महादेवजीके वह उपास्यलोग डगमगी चाल और विकट शब्द करके नृत्य किया करते हैं, तब वास्तवमें वीभत्स रसमूर्तिमान् होकर वहांपर आजाताहै ।

अन्त्येष्टिक्रिया-हिन्दूवीर राजपूत लोग जैसा शवदेहका संस्कार किया करते हैं, स्कन्दनाभवाले और शाकद्वीपवालोंके आचरण किये हुए उस विषयके सम्बन्धमें प्रायः वैसाही वृत्तान्त पाया जाता है। इस अन्तिम संस्कारके साधन करनेके समय भिन्न-र जानिवालोंके बीचमें जैसा मेल देखा जाता है उससे स्पष्ट २ ज्ञात होता है कि उक्त रीति भांति मनुष्य जातिके किसी आदिम वंशसे उत्पन्न हुई है, स्कन्दनाभीय उक्तविधिका जिसकालमें जिसप्रकारसे पालनकरते थे उस समय वह उसही रूपसे उनके पौगाणिक ग्रन्थोंमें वर्णित हुई है, अर्थात् जिस समय वह मृतक देहको जलाते थे वह काल “अग्नियुग” और जिस कालमें उसको पृथ्वीमें गाड़ देते थे वह काल “मेरुयुग” कहलाता था।

स्कन्दनाभवालोंके प्राचीन ग्रन्थोंमें लिखा है कि वह पहले शव देहको जलाते नहीं थे पृथिवीमें गाड़ देते अथवा पर्वतकी कन्दरामें डाल देते थे। बोधेनकी शिक्षासे विशेष अवस्थाको प्राप्त हो वह लोग उस समयसे मृतक देहको जलादिया करते थे। कहते हैं कि मृतकके अग्निसंस्कारके साथ उसकी विधवा स्त्री भी जल जाती थी हरोडोटस कहता है कि यह सब पृथा शाकद्वीपसे वहां पर आई हैं।

सती होनेके सम्बन्धमें स्कन्दनाभके शैवी लोगोंमें और एक नई रीति फैली हुई थी। यदि मृतक पुरुषके बहुतसी स्त्रियें होती थीं तो सबसे पहली विवाहिता- स्त्रीहि उस मृतकके साथ जल सकती थी। कहते हैं कि “बोधेनके साथ जितने महापुरुष गण स्कन्दनाभमें गये थे, उनमेंसे एकका नाम बलदार था। उक्त बल-दारकी मृत्यु, होनेपर “नन्ना” नामक उसकी बड़ी स्त्री ही उसके साथ एक चिता पर भस्म हुई थी”। परन्तु क्रम क्रमसे स्कन्दनाभवाले इस रीतिपर अश्रद्धा करते लगे। मृतक देहको आगमें जलाकर उसकी प्रेतात्माको महा पीडा देना है ऐसा विचार उनके मनमें युक्ति सिद्ध माना गया तब वह लोग धीरे २ इस पृथाको छोड़ने लगे।

हरोडोटस कहता है कि शाकद्वीपके निवासी जब मरते थे तब उनके साथ उनके प्यारे घोड़े जलाये जाया करते थे, और स्कन्दनाभके जितमरते थे उनके साथ घोड़े भी पृथ्वीमें गाड़े जाते थे। इस प्रकारके, संस्कारका मूल कारण उन-का यही विश्वास था कि बिना घोड़ेके परलोकमें पैदल ही भगवान् बोधेनके समीप नहीं पहुँच सकते हैं। स्कन्दनाभीय और शाकद्वीपवालोंके इस व्यवहारके साथ राजपूतलोगोंके अन्त्येष्टि विधानकी समालोचना का जायतो दोनोंमें बहु-

तसी एकता जान पड़ती है । आर्यवीर राजपूतलोग अपने अस्त्र शस्त्रसे सजधज कर उस शेष यात्राके लिये जाया करते हैं । उनका प्यारा घोड़ा भी उनके साथ २ जाता है । यद्यपि वह घोड़ा जीवित ही भस्म नहीं किया जाता, तथापि उत्सर्ग करके पुरोहितको दे दिया जाता है ।

चिताकी जिस आगमें इसप्रकारका रूपलावण्य और वीरविक्रम भस्म हो जाता है । वह चिता जहाँ पर जलती है वह स्थान अतिपवित्र माना जाता है । इस पवित्र स्थानके विषयमें सब जातियोंके बीचमें अनेक प्रकारके उपाख्यान कहेजाते हैं कहते हैं कि उन पवित्र चितावेदियोंके भीतर भीमरूपवाली डाकनी शाकनी सदा रहती हैं । और जो कोई भाग्यहीन इच्छानुसार वहाँ पर चला जाता है, फिर उसका छुटकारा नहीं होता, वह भयंकर डायन वैसेही संहार करके उसके हृदयका रुधिर पिया करती हैं । राजपूत लोग वार्षिक पिण्डदान करनेके समय ही उन डायनोंके रहनेके पवित्र स्थानोंमें प्रवेश करते हैं । और किसी समय वहाँ पर नहीं जाते ।

बहुधा सब देशोंके रहनेवाले मनुष्योंके मुखसे सुना जाना है कि भयानक श्मशान भूमिमें प्रत्येक रात्रिको एक प्रकारका प्रकाश दिखाई दिया करता है । इस प्रकारके विषयमें स्कन्दनाभवालोंके पौराणिक ग्रन्थोंमें लिखा है कि वोधेन अपने आप ही घूमती हुई, उल्काओंकी अग्निसे अपने वीर उपासक गणोंके समाधिस्थानको तस्कर भयसे रक्षा करते हैं ।

स्कन्दनाभवाले । और जाक्षरतीस्के किनारे रहनेवाले जितलोग सजातीय मृतक पुरुषकी भस्म पर ऊंची वेदिका बनाया करते थे । आर्यवीर राजपूत लोगोंका भी ऐसा ही वृत्तान्त पाया जाता है ।

जो वीरराजपूतलोग संग्राममें प्राण छोड गये हैं, उनकी पवित्र चिता वेदिकाके ऊपर उनकी पत्थरकी मूर्ति ही स्थापित रहती है । राजवाड़ेके अनेक स्थानोंमें ऐसी मूर्तियाँ पाई जाती हैं । यह मूर्तियाँ पत्थरसे मिलीही खोदी जाती हैं । सबमें पूरे अंग होते हैं, सजा हुआ घोड़ा भी अपने स्वामीके पास होता है, बाईओर साथ भस्म हुई सती विराजमान रहती है । फिर उस युगल मूर्तिके दोनों ओर चन्द्रमा और सूर्यकी भांति दो मूर्तियाँ खुदी हुई रहती हैं ।

अस्त्रपूजा—अस्त्र शस्त्रको भी वीराचारी राजपूतलोग, घोड़ेहीके समान आदरणीय वस्तु समझते हैं । उनके वीरधर्ममें दोनों वस्तुओंकीही आवश्यकता है । यही कारण है

जो वे समय २ पर भक्तिके साथ इन वस्तुओंको प्रणाम किया करतेहैं। अपनी तलवार हाथमें लेकर शपथ करते हैं शाकद्वीपके जितलोगोंमें भी यह पृथा ठीक इसही भांतिसेहै। जिस समय जितलोगोंकी बलाग्रिसे सम्पूर्ण यूरुप संताप पा रहा था। उस काल यह पृथा विशेषकर उन्नतिपर पहुँच गई थी। कहते हैं कि प्रचण्ड जित वीरोंने आटिला और एथेन्स नगरमें महाधूम धामके साथ अपने अस्त्रशस्त्रादिकोंकी पूजा की थी। महात्मा गिवनने अपने वनाये इतिहासमें इस विषयका अतिमनोहर चित्र खींचाहै; परन्तु यह इतिहास लेखक यदि राजपूतोंकी खड्गपूजाको देखता तो नहीं कहा जा सक्ता कि उसका चित्र गुणमें कितना मनोहर व हृदय ग्राही हुआ होता।

अश्वमेध-चराचर जगत्में ऐसी बहुत ही कम वस्तुयें देखनेमें आतीहैं जो कभी न कभी मनुष्य जातिकी पूजनीय न हुई हो; सूर्य, चन्द्रमा, ग्रहमंडल, खड्ग, नद, नदी, पापाण, सर्प, सरीसृपादि और गौ इत्यादिक पशुगण भी एक समय मनुष्य जातिक द्वारा पूज गयेहैं। परन्तु गवादि पशुगणमें अश्वके समान और कोई जन्तु भली-भांतिसे पूजित नहीं हुआ यह अश्व केवल विभिन्न पूजाका पदार्थ ही नहीं माना जाता था वरन इसके साथ और भी एक महान् पदार्थकी पूजा हो जाती थी इस पदार्थका नाम सूर्यहै।

ऊपाकी नुयमामय गोदको त्यागकर रात्रिके अन्धकारको दूर करके जिसदिन नैजपुंज भगवान् मरीचिमाली अज्ञानान्ध मनुष्यके आंखोंके सामने प्रकाशित हुए उस दिन उनका वह प्रकाशमानतेज उनकी वह विराट्मूर्ति निहार कर मनुष्य विस्मय आनन्द और भक्तिके रसमें मग्न हो गया। उन्ही दिनसे सूर्यभगवान्को अपना देवदेव और जगतका ज्ञानरूप समझ कर पूजा करने लगा। तदोपरान्त जिस दिन उस मनुष्यके ज्ञाननेत्र खुल गये—उसही दिनसे वह समझने लगा कि सूर्यसे ही दिन, रात, शीत, ग्रीष्म, वर्षा और शरदादि ऋतुयें उत्पन्न होतीहैं, जीव-जन्तु, वृक्ष लता आदि उत्पन्न होते और पुष्टिपातेहैं उसही दिन उसका विस्मय दूर होगया उसके हृदयमें आनन्द और भक्तिरस उमड पड़ा और सहसा ऊँचे स्वरसे बोल उठा “जो महापुरुष जगतके सविता (हर्ताहैं) जो हमारी बुद्धिवृत्ति प्रेरणा करतेहैं हम उनके वरणीय तेजका ध्यान करतेहैं ” फिर तो कान्तार (तातार) के मैदानों लेबियाके जलते हुए रेगिस्तानों पारसके घने पर्वतों, गंगाके किनारों और अरनी नौकोंके विशाल महावन आदि सभी स्थानोंमें सूर्यदेवकी समानरूपसे पूजा होने लगी।

जिसदेशके लोगोंका जैसा आचार व्यवहार जैसी रुचि और जिस प्रकारकी रीति नीति थी, उसदेशके पुरुष उसीरीतिके अनुसार सूर्यदेवकी स्तुति और पूजा करने लगे, एशियाके बलपूजक और ब्रिटेन तथा गालके बलीनसदेवके उपासना करनेवाले अपने उपास्यदेवके संतापके निमित्त नरबलि उत्सर्ग पूर्वक भयंकर नरमेघ यज्ञका अनुष्ठान किया करते थे, उसमें यह बंधुजनोंकी बलिभी कर देते थे, इस ओर मिथोरा पूजक वेविलोनके लोग वैल,* और गंगा तथा जाक्षरतीसके किनारेके सूर्योपासक आर्य तथा जित अश्वका उत्सर्ग कर अपने उपास्यदेवकी प्रीति लाभकरतेथे, इसस्थान पर यह भी अवश्य जान लेना चाहिये कि एशियाके बल, ब्रिटेन और कालके बलीनस्, वेविलोनोंके मिथोरा यह समस्त भगवान् सूर्यके ही भिन्न नाम हैं ।

जित अश्व स्कन्दनाभीय और राजपूत गण यह सब भिन्न २ देशीय और भिन्न २ जातीय होनेपर भी इस महोत्सवको एक ही समय किया करते थे, शास्त्रके अनुसार यह समस्त जातियाके उत्सवका समय प्रसिद्ध 'शीतसंक्रान्ति, है ।

हिंदू वीरराजपूत लोग जिस महाआडम्बर और उत्तम विधिके अनुसार उक्त अश्वमेध यज्ञको किया करते थे । उसका वृत्तान्त भगवान् वाल्मीकि और भगवान् व्यासजीके अमृतभय महाकाव्यमें भलीभांतिसे पाया जाता है । जिसदिन क्षत्रिय वीर पृथ्वीराजके नाश होनेके साथ २ भारतका नाश हुआहै । उसही दिनसे यह जातीय महायज्ञ, भारतीय आर्य राजाओंके विस्मयकर वीराचारका प्रकाशमान उदाहरण भारतवर्षसे एक साथही लोप होगया है । अब इस बातको आशा करनेका कोईभी साहस नहीं होता कि कभी आगेको फिर यह वीरपृथा, विषाद रूप अन्धकार छाये निर्जीव भारतवर्षमें प्रचारित होगी ! ×

* अतिप्राचीन समयमें भारतमें भी नरमेध गोमेध यज्ञ होताथा पर कलिमें इन यज्ञोंका निषेध है कारण कि लोग इनका प्रयोजन नहीं जानते । यथाहि—

“दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं नरमेधाश्वमेधकौ । महाप्रस्थानगमनं गोमेधं च तथा मखम् ॥

इमान्धर्मान्कलियुगे वर्ज्यान्वाहुर्मनीषिणः ।”

बृहन्नारदीय पुराण.

बलनाथके मंदिरमें नर (पशु) मेध होता था आजतक राजस्थानके अनेक देशोंमें बलनाथके मंदिर दिखाई देतेहैं ।

× आमेरके विख्यात राजा महाराज सवाईजयसिंहने पिछलीवार इस महाअश्वमेध यज्ञको किया था । परन्तु टाड्साहव अनुमान करतेहैं, कि उस यज्ञमें दिग्विजयके लिये घोड़ा नहीं छोड़ा गया । यदि छोड़ा जाता तो राठौरलोग अवश्य घोड़ेको पकड़ते । क्योंकि उससमयमें राठौरलोगही विशेष पराक्रमी होगयेथे ।

षष्ठ अध्याय ६.

राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंका
संक्षिप्त वृत्तान्त ।

हिन्दूवीर राजपूतोंके आचार व्यवहार समाजनीति, राजनीति और धर्मके साथ संसारकी ओर दूसरी प्राचीन जातियोंका मिलान करके अब हम राजस्थान के ३६ राजकुलोंकी संक्षिप्त समालोचना करतेहैं । जहांतक समालोचनासे जाना गया वहांतक सम्पूर्ण विषयही एक आदि वृक्ष-वंशसे संगृहीत हुए हैं ।

पहिलेही वर्णन होचुका है कि भारतवर्षक प्राचीन हिन्दूनृपतिलोग दो महान् वंशमें उत्पन्न हुएहैं । समयके अनुसार बृहत्फलरूप और एकवडा कुल अर्थात् अग्निकुल इन दोनों कुलोंके साथ मिल गया । इस अग्निकुलके राजालोग एक समय प्रचण्डप्रतापके साथ भारतवर्षमें राज्य करतेथे । यहांतक कि सूर्य और चन्द्रकुलकी पूर्व गौरवप्रभा अत्यन्त मल्लिन होजाने परभी उक्त अग्निकुलके राजा-ओंने अपने महान् तेजसे भारतवर्षको प्रकाशमान कियाथा इन तीन विशाल राज वंशोंके साथ धीरेधीरे औरभी ३३ छोटे राजकुल संयुक्त हुए । उक्त नृपकुलोंके मध्यमें कुछएक राजालोग कदाचित् विशाल सूर्य और चन्द्रवंशवृक्षकी शाखासे उत्पन्न होकर समयानुसार एक पृथक् वंशवालेही होगये हों। परन्तु विचार करनेसे यही मानलिया जाताहै कि इन कुलोंकी प्रतिष्ठा करनेवाले अधिकांश मुसलमान जातिकी उन्नतिके बहुत पहिले भारतवर्षमें आयेथे और यहीं उन्होंने प्रतिष्ठा पाई । स्वर्णग्रसू भारतभूमिकी उपजाऊ शक्ति और रमणीयता देखकर वह राजा अपने देशकी माया ममताको छोड इस विदेशकोही स्वदेशसे अधिक समझने लगे कालके क्रमसे इन आनेवाले सरदारोंने अपने २ नामके अनुसार एक २ पृथक् कुल स्थापन करके इस संसारमें अपने नामको अमर किया । उन छत्तीस राजकुलोंका विचार क्रमसे अब किया जाता है ।

ग्रहलोट, वा गिल्लोट । भगवान् श्रीरामचन्द्रजीसे यह लोग अपनी उत्पत्ति बताते हैं । राजस्थानके भट्टलोग भी इनके मतको समर्थन करतेहैं । पहिलेही कहाहै कि सुमित्रके पश्चात् और किसी सूर्यवंशीयराजाका नाम किसीपुराणमें

नहीं देखा जाता । परन्तु यह ग्रहलोट कुलवाले उक्त सुमित्रसे ही अपनी उत्पत्ति बताते हैं ।

कैसी अवस्थामें पडकर किसप्रकारसे इनके पितृ पुरुषगण पवित्र कौशल राजको छोड़ आये । और उस राज्यको छोड़ उन्होंने किस २ स्थानमें अपने विशालवंशकी शाखा उपशाखाओंको जमायाथा । संक्षेपसे, अब इसही विषयकी समालोचना कीजातीहै । इसके अतिरिक्त इस कुलमें जो २ महात्मा राजा उत्पन्न हुए थे उनका विस्तारित वृत्तान्त मेवाडके इतिहासमें लिखा जायगा ।

इसका अनुमान करना बहुत ही कठिनहै कि ग्रहलोटोंका आदिगोत्र पाति ठीक किस समयमें अयोध्या नगरीको छोड़कर आयाथा । तथापि विचारके अनुसार जहांतक जाना गयाहै उससे एकप्रकारका अनुमान होताहै । कि श्रीरामचन्द्रजीसे कई पीढी पीछे अनुमान सम्वत् २०० (सन् १०४)में कनकसेन नामक एक सूर्यवंशीय राजाने पितृराज्यको छोड़कर सौराष्ट्रमें आय अपने पितृ-पुरुषोंके विशाल वंशवृक्षको जमाया । राज्यधनको गवांकर पाण्डवलोगोंने जिस वैराटगढ़में अपनेको छिपाकर अज्ञात वासकर समयवितायाथा, श्रीरामचन्द्रजीके वंशधर महाराज कनकसेनने सौराष्ट्र देशमें आय उसही विराटगढ़में अपने नये राजपाटको स्थापित किया । तदोपरान्त कईवर्ष पीछे विजयसेननामक उसके एक वंशधरने इसदेशमें विजयपुर* नामक एक नगर बसाया था ।

महाराज कनकसेनके वीरकुलमें उत्पन्न हुए राजलोगोंने बहुत दिनतक बल्लभीपुरका राज्य किया । क्रमानुसार वह राजा—“वालकराय” नामसे परिचित हुए । इसका अनुमान करना कठिनहै कि सूर्यकुलतिलक भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके वंशधर किसकारण और किससूत्रसे “वालकराय” नामसे विख्यात हुए । लगभग हजारवर्ष यह उपाधि उक्त वंशवालोंके अधिकारमें रही थी ।

कालरूप जलधारके अनिवार प्रभावानुसार सौराष्ट्रमें सूर्यवंशीय “वालकराय” की लीलाक्रमसे शेष होती चली । यहांतक कि सन् ५०० ई०के प्रभातकालको उनका पिछला राजा शिलादित्य म्लेच्छोंके द्वारा घिरकर मारा गया । शिलादित्यके मरतेही सूर्यवंशका वृक्ष वहांसे उखडकर उसदेशके निकटही ईडरनामक स्थानमें वोया गयाथा । ग्रहादित्यनामक एक राजाने जो कि इसही सूर्यवंशमें उत्पन्न हुआ था । कुछदिनतक ईडर स्थानमें राज्य किया । इस ग्रहादित्यसेही महाराज कनकसेनके वंशधरगण “ग्रहलोट” अथवा “गिह्लोट” कहलाये ।

* यह सदाही “ विजयपुर ” वैराटगढ़के नामसे परिचितहै ।

कुछ वर्षोंके बीतजानेपर ग्रहलोटगण ईडरको छोड़कर अहाड * नामक स्थानमें चल गये। इसके अनुसार ग्रहलोटनामके बदले इन्होंने आह्वर्यनाम धारण किया। इसही नामसे थोड़े दिनोंतक विख्यात होते रहे। परन्तु शीघ्रही इस नई आख्याक बदले “शिशोदीय” नाम पड़गया, कालक क्रमसे यही नाम बलवान होगया। सम्पदविपदमें—भाग्यचक्रके बराबर घूमते रहनेमेंभी फिर यह नाम नहीं बदला। एकदिन जिन राजाओंने अपने प्रचण्डप्रतापसे सौभाग्यकी ऊँची गर्दीपर और भारतीय राजाओंके ऊपरीस्थानमें चढ़कर जिस शिशोदिया नामकी गौरव गरिमाका प्रकाशमान उदाहरण दिखाया था उनके वर्तमान वंशधर गणभी उम शिशोदियानामसेही आजतक विख्यात हो रहे हैं।

यद्यपि शिशोदिया नाम सब नामोंसे बलवान है तथापि राजस्थानके भट्ट कविगणोंने इसको ग्रहलोटवंशकी एक शाखा कहकर वर्णन किया है।

यह ग्रहलोट कुल चौबीस शाखाओंमें विभक्त है। इन चौबीस शाखाओंमें आह्वर्य और शिशोदियाही अधिक प्रसिद्ध हैं।

यदु—यद्यपि महाराज ययातिने बड़ेपुत्र यदुको भारतवर्षका सार्वभौम अधिपत्य नंदकर कनिष्ठपुत्र पुरुकोही दिया था। तथापि कालक्रमके अनुसार यदुवंशही विशेष उन्नतिपर पहुँचगया था।

भगवान् श्रीकृष्णजीके अन्तर्द्धान होनेपर जब पाण्डवगण महाप्रस्थानको चले तब उनके साथ यदुकुलतिलक श्रीकृष्णजीके वंशवालेभी चले थे, परन्तु आगे न बढ़ सके और पंचनद क्षेत्रके दुआवे × गिरिदेशमें पहुँचकर कुछ समय बिताया, जब वहाँ सब बातोंमें असुभीता हुआ तो उस शैलमंडित भूभागको छोड़कर सिन्धुनदके दूरीपार जावालिस्थान नामक देशमें गये, और तहाँहीं अपने राजपाटके स्थापन करनेकी अभिलाषा करके प्रसिद्ध गजनी नगरीकी प्रतिष्ठा की। उस जावालिस्थानमें यादव लोगोंका राज्य दृढ़ताईसे स्थापित होगया था एक—समय वह था कि जब बहुराज्य समरखण्ड (आधुनिकसमरकन्द) तक अप्रतिहत प्रभावसे विस्तारित होगया था परन्तु विधिलेखके अवश्य होनहार विधानके अनुसार यादवलोग बहुत

* यह अहाडा ग्राम उदयपुरसे १ मीलपूर्वकी ओर रेलवे स्टेशनके पास है आजकल राणावंशका दम्भस्थान यही है और यह ग्रामतीर्थभी माना जाता है।

× यादवलोग जिस गिरिजमें जा वसे थे वह सिन्धुनदके दोआवेमें हैं आजतक वहाँके रहनेवाले उसको “जदुकाडुंग,, कहते हैं।

दिनोंतक राज्य नहीं करसके । भट्टग्रन्थमें पाया जाताहै कि यह लोग वहांसे चले आये और फिर भारतवर्षमें आश्रय लिया ।

यह विषय स्थिर करना असम्भवहै कि किस दैवदुर्विपाकसे श्रीकृष्णजीके वंश-धरगण फिर भारतवर्षमें आये । तथापि इस विषयमें ऐतिहासिकज्ञ लोगोंने जो मत प्रकाश कियेहैं उन सबका सार ग्रहण करनेसे यही अनुमान किया जा सक्ताहै कि सिकन्दरसे परवर्ति राजाओंने उनको कहांसे निकाल दिया होगा । भट्ट ग्रंथोंके पढ़नेसे इतना अवश्य ज्ञात होजाताहै कि श्रीकृष्णजीके वंशधरगण किसी दैवदुर्वटनाके वशसेही पुनर्বার भारतवर्षमें आये थे ।

पुनर्बार भारतभूमिमें आनेपर यादवलोग पंजावमें बसे और वहांपर शालिवाहन पुरनामक एक नगर बसाया । इस नये नगरमें यह लोग बहुत दिनतक न रह सके शत्रुके द्वारा ताड़ित होकर शीघ्रही राजस्थानके मरुस्थलमें आये इस मरुस्थलमें पहले लहंग, जोहिया और महिल आदि जातियें वास करती थीं । यादव लोगोंने उनको निकालकर उसदेशको अपने अधिकारमें करलिया । यहाँतककि क्रमानुसार वहांपर राजा होकर राज्य करने लगे । समयानुसार फिर कई एक नगर स्थापन किये । उन समस्त नगरोंमें तेनोत, दरवाल और जैसलमेर* ही विशेष प्रसिद्ध हुए ।

कुसमयके प्रचंडप्रभावसे जावालिस्थानसे दूर किये जाकर जब यादवलोग दुबारा भारतवर्षमें आयेथे तब उनमें बहुतसे छोटे २ गोत्र विख्यातथे । उन गोत्रोंमें भट्टिलोग विशेष पराक्रमी हुए । समयानुसार इस ही गोत्रकी अधिक प्रतिष्ठा हुई थी ।

यदुकुलकी एक और प्रसिद्ध शाखाका नाम जारिजाहै । यह शाखा, उक्त कुलख्यान ग्रन्थमें भट्टिके कुछ नीचेही स्थान पायेहुएहै । इन दोनों शाखाओंके सम्बन्धमें लगभग एकसाही वृत्तान्त पाया जाताहै । यह दोनोंही श्रीकृष्णजीसेही उत्पन्न हुईथी यदुकुलध्वंस होनेके पश्चात् ठीक एकसमयमेंही इन दोनों शाखाओंके अगुएँ बचेबचाये यादवोंको साथले भारतके पश्चिमप्रदेशकी ओर चलेगयेथे, परन्तु जारिजा शाखा भट्टिके समान अपने राजत्वको अधिक दूर विस्तार नहीं करसकी सिन्धुनदके पश्चिमकिनारेपर शिवस्थाननामक एक जनपद था बहुतसे लोगोंका अनुमानहै

* सम्बत् १२१२ (सन् ११५६ ई०) में जैसलमेर नगरी बसी थी इस नगरीकी प्रतिष्ठा करनेके पहिले वह किसी प्राचीन जातिके हाथसे लोहदुवीपट्टन नामक नगरको अधिकारमें करके कुछकाल तक वहां रहेथे ।

१ इस समय यह जबूलिस्तान कहाताहै ।

कि जारिजा लोगोंने उस शिवस्थानमेंही अपने राज्यको जमाया था। सिकन्दरके समयके इतिहासग्रन्थोंमें यह बात सिद्ध होचुकीहै, कि वहांपर जारिजा लोगोंने अखंड प्रतापके साथ राज्य किया था। कहतेहैं कि मसीडोनीयाके वीरोंने जिस समय चढ़ाई करके भारतवर्षमें युद्धका डंका बजायाथा; तब उक्त जारिजा कुलमें उत्पन्न हुआ शाम्बनामक एक राजा उनके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये सामने आया। महाराजा शाम्बके निशानके नीचे जो शामन्त इकट्ठे हुए थे उनमेंसे अधिक लोग हरिकुलके थे। यद्यपि उस समय उनकी अवस्था बहुतही कम होगईथी। तथापि अपने बसाते उन्होंने अपने पूर्वपुरुषोंके प्राचीन गौरव देनेमें किसी प्रकारकी कसर न की। उनकी चेष्टाका फल बहुतही अच्छा हुआ।

महाराजा शाम्ब श्यामनगरमें राज्य करतेथे। परन्तु ग्रीकवालें इसको श्यामनगरके बदलें मीनगढ बतातेहैं।

अनर्थकारी महाभयंकर उपद्रवसे यद्यपि भगवान् श्रीकृष्णजीका विशाल वंश लोप होगया था, परन्तु उसकालरूपी उपद्रवसे जितने यादवगण बचगये थे, उनकी संख्याभी कुछ कम नहीं थी। उनमेंसे प्रत्येक यादवका वंश कालके क्रमसे असंख्य शाखा उपशाखाओंमें विभक्त होकर आज भारतके अनेकस्थानोंमें फैल गयाहै। यदुकुलकी आठ शाखाओंमें केवल भट्टि और जारिजा शाखा ही विशेष प्रतिष्ठावान् हैं।

तुआर-बहुतसे मनुष्य तुआरकोभी यदुकुलकी शाखा समझते हैं परन्तु महाकाविचन्द्रने इसको महाराज पाण्डुका एक शाखाकुल कहा है यह अनुमान करना कठिनहै कि इन दोनोंमें कौनसा मत विशेष युक्तिसिद्ध है। क्योंकि इस कुलके नामकरण सम्बन्धमें हमको किसीप्रकारका कोई हेतुवाद दिखाई नहीं देता है। यदि इन बातोंको छोड़कर केवल प्रतिष्ठा और विख्यातताकेही विषयमें भलीभांतिसे विचार करके देखाजाय तोभी इसको राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें एक ऊंचा आसन दिया जासकता है।

वह प्रतिष्ठा और ख्याति जिन दो महापुरुषोंके द्वारा उपार्जित हुई थी, उनके नामकी आजतक प्रत्येक हिन्दू सन्तान माला जपताहै। आजतक भी हतभाग्य हिन्दूसन्तान गण उन पवित्र नामोंका जप करते २ अपनी वर्तमान दुखस्थाको भूल जाते हैं, और अतीतके गहरे पदोंको भेद कर अज्ञानवश उनके उस स्वर्गीय सुखमय राजत्वकालमें विचरण किया करते हैं। वह काल भारतवर्षके लिये स्वर्णयुग था। जगन्मान्य पंडितोंके द्वारा अलंकृत हो उससमय

यह भारतवर्ष समस्त जगतके शीर्षस्थान पर अधिकार कर बैठा था । अब अधिक क्या कहें केवल इतनाही कहना बहुत है कि तुआर कुलमें उत्पन्न हुए उन दोनों महापुरुषोंके चरित्र गुणोंसे इस भारतवर्षमें दो नये और प्रतिष्ठित युग विराजमान हो रहे थे । उन दोनों महापुरुषोंमें प्रथम हिन्दूराज्यचक्रवर्ती उज्जयनीनाथ महाराज विक्रमादित्य, और दूसरे, हिन्दूराजकुलतिलक दिल्लीश्वर महाराज अनंगपाल थे । कुरुक्षेत्रके, रुधिरसे पूर्ण महासरोवरमें आर्यगौरव रविके डूबजानेपर यह भारत बहुत समयतक विषादरूपी अन्धकारमें डूबा रहा था। परन्तु उस गाढ़ अन्धकार राशिको दूर करता हुआ उस अस्तहुए आर्यगौरवरूपी सूर्यका आदर्शरूप होकर कौन महापुरुष, अमरावतीके समान अवन्तीके सिंहासनपर उदय हुआ था, किसकी कीर्त्तिसे और किस गौरवरविसे समस्त भारतवर्ष प्रकाशमान होगया था ? वह किसकी सभाथी कि जिसके पंडितलोग भारतमाताके कण्ठमें अमोल रत्नहारकी माला होकर पहिरे गयेथे;—कौन नहीं कहैगा,—कौन नहीं स्वीकार करेगा—कि उस महापुरुषका नाम महाराजाधिराज महाराज विक्रमादित्यहै ? आज महाराज विक्रमादित्यका वंश कालके अनन्त समुद्रमें लीन हो गया है । आज उस वंशका कोई चिह्नभी नहीं पाया जाता, जिसदिन उस वीर विक्रमने इस पुण्यधाम भारतवर्षमें अवतीर्ण होकर एक स्वर्णयुगका प्रचार कर दिया था, उस दिनको गये आज सैंकड़ों हजारों वर्ष बीत गये हैं; भारतभूमिके हृदयपर कितनेही उपद्रवोंका पानी फिरगयाहै, कितनेही विदेशीय और विजातीय राजालोग भारतसन्तानके भाग्यचक्रको नियमित करके फिर न जाने कहाँको चले गये । उनकी नामावली, उनकी कीर्त्तिभी अधिकतासे उनके साथही सिंधार गई; परन्तु वह कितने हिन्दूसन्तान हैं कि जो महाराज विक्रमादित्यके वीर व पवित्र नामको भूल गयेहैं । क्या कोई इस पवित्रनामको भूल संकेगा? हमको तो विश्वास नहीं होता । इस संसारसे जिसदिन संस्कृतशास्त्रका नाम उठ जायगा—जिसदिन उक्त महाराजका प्रतिष्ठित सम्बत् भारतमें कालचक्रका एक २ चक्र बतलानेमें असमर्थ होगा उसदिनभी कदाचित् भारतवासी इस नामको हृदयमें धारण करे रहेंगे । उस दिनकी कल्पना करते हुएभी हृदय कम्पायमान होताहै । शिरसे पांवतक सब अंग थरा उठते हैं ।

पीछे महाराज अनंगपालका कुछ थोडासा वृत्तान्त लिखाहै इसकारण यहां पर कुछ अधिक नहीं लिखा जायगा । केवल इतनाही लिखना बहुतहै कि इस ही महापुरुषने अपने सजीवन मंत्रके बलसे नष्ट होते हुए और अधमरे इन्द्रप्रस्थ-

नगरको जीवदान दिया । महाराज विक्रमादित्यसे आठशताब्दी पीछे यह महाराज सम्वत् ८४८ (सन् ७९२ ई०) में इन्द्रप्रस्थके सिंहासनपर विराजमान हुए । उक्त महाराजने सिंहासनपर बैठतेही इन्द्रप्रस्थके नष्टहुए गौरवको अधिका-इमे उद्गार किया ।

महागज अनंगपालके पश्चात् क्रमानुसार बीस राजाओंने उस वंशमें जन्मलेकर इन्द्रप्रस्थका राज्य कियाथा इस वंशके पिछले राजाका नामभी, अनंगपाल था । यह दूसरा अनंगपाल अपुत्रक रहा । यह किसी दूसरेको उत्तराधिकारी न पाकर अपने धेवते चौहान पृथ्वीराजको सम्वत् १२२० (सन् ११६४ ई०) में राज्यभार सौंपकर निश्चिन्त हुआ । और बुढापेके समय शान्तिमयी मुनिवृत्तिको धारण किया । तदोपरान्त जिसदिन वह पिछला अनंगपाल इस संसारसे विदा होगया, उसही दिन और उसके साथ प्रसिद्ध तुआर कुलका अंत हुआ*

राठौर-इसकुलकी उत्पत्तिके विषयमें, अनेकप्रकारके वृत्त सुने जाते हैं । यह लोग श्रीरामचन्द्रजीके बड़े पुत्र कुशसे अपनी उत्पत्ति कहते हैं । यदि इनकेही मनको युक्तिसिद्ध मानकर ग्रहण कर लिया जाय तो अवश्यही कहना पड़ेगा कि राठौरगणभी पवित्र सूर्यकुलसे उत्पन्न हुएहैं; परन्तु राजस्थानके भट्ट गणोंने इस सन्मानसे वंचित रखकर, इनकी उत्पत्तिके वृत्तान्तको और ही प्रकारसे वर्णन करनेकी चेष्टा कीहै यह लोग कहतेहैं कि “ राठौर लोगोंका यह प्रमाणित करना कि रविकुल तिलक भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके जेष्ठपुत्रसे हमारी उत्पत्ति हुई है, सम्पूर्णतः भ्रमहै । यह लोग, महर्षि कश्यपके वंशमें उत्पन्न हुए किसी राजाके वीर्यसे किसी दैत्यकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुए हैं । ” यदि इस मतको मानें तो राठौर लोगोंको एकसाथही पवित्र आर्यकुलोचित सन्मानसे अन्यायके द्वारा वंचित करना होता है परन्तु हमें यह मत समीचीन और न्याययुक्त नहीं ज्ञात होता ।

राठौरोंको सूर्यवंशमें उत्पन्न हुआ न मानिये; तथापि उनको पवित्र आर्य कुलोचित सन्मानसे वंचित नहीं रक्खा जा सक्ता । चन्द्रवंशके विशालवंशमें उनको न्यायानुसार स्थान दिया जा सकताहै । राजर्षि विश्वामित्रसे दो पुरुष पहिले जो कुशनामक महापुरुष उत्पन्न हुआ था उसके कुलमें राठौर लोग स्थान पासते हैं ।

* तुआर कुलमें जो विशालराज्यथे आज उनमेंसे केवल साधारण नगर उनके गौरवके पिछले स्मृतिचिह्नके भांति बसेहुएहैं । एक तुआरगढ (चम्बलकेदक्षिण किनारेपर बसाहुआहै । दूसरा,— पट्टन तुआरवती, इससमय यह नगरी जयपुरराज्यके अधिकारमें है ।)

भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है कि राजर्षि विश्वामित्रका आदिस्थान गाधिपुर (कनौज) ही राठौरोंकी आदिम आवास भूमि है । पांचवीं ईस्वी (शताब्दी) के आरम्भमें यह लोग वहांपर विराजमान थे । इस समयसे पहिलेका इनके विषयमें कोई विशेष विवरण नहीं देखा जाता है । जो कुछ मिलता है सो वह बहुतही बढ़ाकर लिखा गया है । अतएव इस विस्तारमेंसे सत्यवातका निकाल लेना एक प्रकारसे असम्भवहै यद्यपि राठौरलोग कौशल राजाओंके साथ समानता साधन करके अपनेको सूर्यवंशीय बतलाते हैं परन्तु इसके सम्बन्धमें कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता ।

यदि ईसवीं पांचवीं शताब्दीको राठौरलोगोंके ऐतिहासिक जीवनका प्रथम युग कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा । क्योंकि उसी समयसे वह ऐतिहासिक सत्यमें आयेथे । उसी समयसे इनका जीवन चरित्र स्पष्ट और विशद देखा जाता है । उसी समयसे इनका विशेष उदय दिखाई दे रहा है । भट्ट ग्रन्थोंमें लिखा है । कि मुसलमान वीर शाहबुद्दीनके समयमें राठौरगण भारतका सार्व-भौम्य अधिकार प्राप्त करनेके लिये दिल्लीके तुआर और अनहलवाडाके बालक-राय लोगोंके साथ वैर कर रहे थे ।

राज्य, धन, गौरव, सबही अनित्य और सबही चलायमान हैं; परन्तु उसउस अनित्य और चपल राज्य व गौरवको प्राप्त करनेके लिये राठौरोंने महा अनर्थ किया कि जिससे उनका सत्यानाश होगया । सम्पूर्ण भारतवासियोंके गलेमें इसलामोंकी गुलामीकी जँजीर पड़ गई । यदि राठौरलोग उस अनर्थ कारिणी गौरवलिप्साके वशमें पड़ते तो कभी मुसलमान लोगोंका भारतवर्षमें आना संभव न था । ?

राठौरोंकी सत्यानाशकारीराजतृष्णासे ही भारतका नाश होगया, आर्य वीर पृथ्वीराज शत्रुके हाथमें घिरगये । समरकेशरी समरसिंहने समरके स्थानमें प्राण दान दिया और उधर स्वदेशद्रोही पापीजयचन्दने गंगाजीके जलमें डूबकर अपनी विश्वासघातकता, नीचता, और कापुरुषताका उचित फल पाया ।

राठौर राजके पुरुष जयचन्दके शिवनामक एक पुत्र था इस शिवने अपने पितृराजसे भागकर मारवाडके मरुदेशमें आश्रय लिया इस देशमें पुरीहार लोगोंका मुन्दर नामक एक प्राचीन नगर था । शिवने इस ऊजड़ और श्रीहीननगरका संस्कार करके उसमें अपने राठौर राज्यको स्थापित किया । क्रमानुसार राजस्थानके मरुप्रान्तमें—प्राचीन पुरीहारकुलके ऊजड़ खड़हरपर विशाल

माड़वार राज्य स्थापित किया। देखतेही देखते इस राज्यने विराट मूर्ति धारणकी। और राठौर वीर शिवकी सन्तान सन्तति विपुलबल संग्रह करके महा-पराक्रमवान होगई। एक समय राठौर वीरोंके एक लक्ष भ्राताओंने अपने हृदय रुधिरको देकर मुगल शहनशाहोंकी सहायताकी थी, परन्तु आज उनकी वह वीर कीर्ति,—वह तेजस्विता मानो स्वप्नकीसी बात होगईहै। आज उस शिवजीके वर्तमान वंशधरोंको देखनेसे उनमें प्राचीन गौरवका कुछ भी निदर्शन नहीं पाया जाता। *

कछवाहे (कुशावह) — भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके पुत्र कुशसे कछवाह कुल उत्पन्न हुआहै। कहते हैं कि जिस कौशलराज्यसे दो शाखा कुल उत्पन्न हुए थे। इतनेमेंसे एक शाखा कुलने पंचनद देशमें आकर प्रसिद्ध लाहौर नगरको स्थापन किया। दूसरेने बहुत आगे न बढ़कर सोननदके किनारे रोतासको वसाया।

इस कुलके जो लोग पंजावमें आए थे उन्होंने भी थोड़े समयतक लाहौरमें रहकर फिर नरवरनामक एक नगर वसायाथा। कहतेहैं कि नरवर प्रसिद्ध राजा नलकी लीलाभूमि है। राजा नलके वंशधरगण बहुत दिनतक प्रचण्ड प्रतापके साथ राज्य करते रहे, वरन तातारवाले और मुगल लोगोंके शासन कालमें वे अपने पितृपुरुषोंके उस प्राचीन राज्यासनपर जमे रहे थे। बहुतदिनतक राज्यभोगनेके पीछे महाराज नलके वंशवालोंका दुर्द्धर्ष राज महाराष्ट्रियोंने खोदिया।

महाराज कुशके वंशधरगण बहुत दिनतक नरवरमें एकसाथ रहे। फिर ईस्वी दशमी शताब्दीके मध्यभागमें इनकी दो शाखा हुई। एक शाखा कुल तो वहींपर राज्य करने लगा। दूसरा कुल स्वदेशको छोड़कर अनार्य और असभ्य मीन-लोगोंकी निवासभूमिमें गया, कि जहांपर इस कुलने बड़ीभारी चेष्टा करके मीनलोगोंको निकाला और उस देशमें आमेरनामक एक नगर वसाया।

उस अनार्य मीन देशके मध्यभागमें महाराज कुशके वंशवालोंका वसाया हुआ आमेरनगर राजस्थानके सब नगरोंमें क्रमानुसार विशेष प्रसिद्ध होगया। तैमूर-

* राठौरगण—धांडुल—भेदल, चांकित, दुहुरिया, रवोक्श, रामदेव, मलवत, गागदेव, जयसिंह, श्राविया, जोवसिया, जोरा, सुन्दु, कटैचा आदि चौबीस शाखाओंमें विभक्त हुए हैं गौतमजी इस कुलके गोत्राचार्य हैं माध्यन्दिनी शाखा, शुक्राचार्य गुरु, मरुपाट अग्नि, पंखिनी देवी है, गौतम गोत्र होनेसे महात्मा टाडसाहबने इनको बौद्धधर्मावलम्बी अनुमान किया है।

कुल—मणि सम्राट् अकबरके शासनकालमें अनेक राजपूतकुल क्रम २ से हीन होगये थे । परन्तु उस समयमें आमेरके कछवाहे वीर अपने गौरव और महत्त्वसे शिरमौर हो रहे थे ।

अग्निकुल—सूर्य और चंद्रमासे जिस प्रकार मूर्य और चन्द्रवंश उत्पन्न हुए हैं, वैसेही अग्निकुलको अग्निसे उत्पन्न हुआ बतलाते हैं हिन्दुकुलाचार्य लोगोंके मतसे उक्त वंशतरु चार शाखाओंमें विभक्त है । प्रथम परमार, द्वितीय—परिहार, तृतीय—चौलुक, वा शोलंकी और चतुर्थ चौहान हैं ।

कहते हैं कि जिस समय धर्मवीर पार्श्वनाथ * ने उदय होकर हिन्दू समाजमें घोर विप्लव मचादिया था, ठीक उसही समयमें अग्निकुल उत्पन्न हुआ था । उसही भयंकर धर्मके संघर्षकालमें वीर पराक्रमकारी जैन लोगोंकी चढाईसे अपने धर्मकी रक्षा करनेके लिये ब्राह्मणोंने इस अग्निकुलको उत्पन्न कियाथा ×

राजस्थानमें आबूवा आर्बुधनामक एक पर्वत है; इस पर्वतके ऊंचे शिखर परही यह भयंकर धर्म विप्लव हुआ । कहते हैं कि शैल शिखरके उस ऊंचे भाग परही ब्राह्मणोंने अग्निकुंडको प्रज्वलित करके उक्त वीरकुलको उत्पन्न किया था; । यह पवित्र, अग्निकुंड जिस स्थानमें जलाया गयाथा आज भी यह स्थान दिखाई देता है । बहुतसे लोगोंका अनुमान है कि दैवी शक्ति संपन्न ब्राह्मणोंने नास्तिकोंके आक्रमणसे सनातन हिन्दूधर्मकी रक्षा करनेकेलिये उन अग्निवीरोंको अपने धर्ममें दीक्षित कर लिया था । और उनकी ही सहायतासे उस भयानक धर्म—संग्रामको करने लगे थे ।

* यद्वाहवके मतानुसार चार बुध जाने जातेहैं । वाहव कहते हैं कि यह चारों बुध एकेधर बादीये । और उक्त धर्मको एशियासे लाकर भारत वर्षमें प्रचार किया था । उनके समस्त धर्मशास्त्र एक प्रकारकी संकुशीर्षाकार वर्णमात्रामें लिखे हुए हैं । राउट्र, जैसलमेर और विशाल राजस्थानके जिस २ स्थानमें पहिले बुद्ध और जैनजोग वास करते थे । यद्वाहव उन सब देशोंमें जाकर उनके धर्मकी अनेक शिलालिपी और साम्राज्यचित्र लायेये । उन चारों बुद्धोंका नाम नीचे लिखते हैं ।

प्रथम बुद्ध (चंद्रवंशकी प्रतिष्ठा करने वाला) अनुमान ईसवीसे पहिले २५५० वर्षमें उत्पन्न हुआ ।

द्वितीय—जेमिनाथ (जैनियोंके मतसे बाईसवां) ,, ईसासे ११२० वर्ष पहिले हुआ ।

तृतीय—पार्श्वनाथ (,, तेइसवां) ,, ईसासे ६५० वर्ष पहिले हुआ ।

चतुर्थ—महावीर (,, चौबीसवां),, इससे ५३३ वर्ष पहिले उत्पन्न हुआ ।

× ब्राह्मणजोग इन नास्तिकोंको बैत्य, दानव और राक्षसादि घृणित नामोंसे पुकारतेहैं ।

ब्राह्मणोंके अद्भुत तपोबलके द्वारा अग्निके मध्यसे जो वीरकुल उत्पन्न हुआ था। वह अनेक दिनतक अपने प्रचण्ड प्रताप और धर्मानुरागको अटल रख सका था। परन्तु मुसलमानोंकी चढ़ाईके समयमें अग्निकुलके अधिकांश लोग ब्राह्मण धर्मको छोड़कर जैन या बौद्ध धर्मावलम्बी होगये।

पँवार—प्रसिद्ध अग्निकुलमें पँवार ही सबसे पहले प्रतिष्ठाको प्राप्त हुए थे। तोलंकी और चौहानकुलके समान यह लोग यद्यपि विशेष संपत्तिवान और पगक्रमी नहीं हुए, तथापि इन तीनोंकुलोंका इतिहास देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होगा कि उक्त चौहान और चौलुक्य लोगोंकी अपेक्षा पँवार लोगोंने ही सबसे पहिले राज्योपाधि धारण की थी। यहाँतक कि अग्निकुलकी शाखासे उत्पन्न हुए पगिहारलोग पँवार लोगोंके अधीनमें बहुत दिनतक सामन्त राजाकी सम्मान रहे थे।

कहते हैं कि वीर श्रेष्ठ कार्तवीर्य्याजुनकी प्राचीन माहिष्मती नगरीमें (प्रमार) पँवार लोग सबसे पहले प्रतिष्ठाको प्राप्त हुए थे। इस प्रसिद्ध माहिष्मती पुरीमें कुछ कालतक राज करके इन्होंने विन्ध्यके शिखरपर धारा और मांडु नामक दो नगरी स्थापन की थीं। बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि प्रसिद्ध उज्जयिनी नगरीको भी इन्होंनेही बसाया था। *

पँवार कुलका राज्य नर्मदा नदीको लांघ कर वहाँसे दक्षिणको बहुत दूरतक फैल गया था। भट्टग्रन्थोंमें पाया जाता है कि संवत् ७७० (सन् ७१४) के प्रारम्भकालमें रामनामक एक प्रतिष्ठावान् राजा इस कुलमें उत्पन्न हुआ था। इसने तेलंग देशमें एक स्वतंत्र राज्यको प्रतिष्ठित किया। कविवरचन्द्रभट्टने लिखा है कि रामपँवार भारत वर्षका चक्रवर्ती राजा था। उसके अधीनमें बहुतसे राजपूत राजा सामन्तकी भांति रहते थे × रामपँवारके स्वर्गवामी होते ही एक २

* पँवारलोगोंके अधिकारमें जो नगर थे। उनमेंसे कई एक विशेष प्रसिद्ध हैं यथा—महेश्वर, (माहिष्मती) धारा, मांडु, उज्जयिनी, चन्द्रभागा, चित्तौर, आवू, चन्द्रावती, महू, मैदान, पँवारवती। अमरकोट, विखार, लोहदुर्वा, और पाटन इन नगरोंमेंसे किसीको इन लोगोंने जीता था, किसीको बसाया था।

× प्रसिद्ध वर्दाई ग्रन्थमें लिखा है कि त्रैलोक्यके राजचक्रवर्ती महाराज रामपँवारने सिंहासनपर बैठकर राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंको भूमि वृत्ति दी थी। तुआरोंको दिल्ली, तौरोंको पाटन, चौहानोंको आमेर, कामध्वजोंको कन्नौज, परिहारोंको मरुदेश, यदुवंशियोंको सूरत, जावालोंको दक्षिणदिशा, पारणोंको कच्छ, कीहरोंको काठियावाड और रायपुहारोंको सिन्धुदेश देकर उनको अपना सामन्त किया।

सामन्तने एक २ राज्य स्थापन किया । गहिलोत कुलके उदय होनेके समय पँवार लोगोंका पूर्व गौरव बहुतायतसे लोप होगया था । परन्तु पँवार कुलमें एक भोजनामक महावली पराक्रमी राजा उत्पन्न हुआ । इसही महाराजक यशसे और कीर्तिकलापके द्वारा इसका कुल अवतक प्रकाशमान हो रहा है । हिन्दू राज चक्रवर्ती महाराज विक्रमादित्यके समान इस महाराजकी सभामें भी नव-रत्न थे । महाराज भोजके समयमें संस्कृतविद्याकी बहुत ही उन्नति हुई थी । इसी कारण पँवारकुलमें उत्पन्न हुए महाराज भोजका नाम कोई भी हिन्दू सन्तान नहीं भूल सका है—इस पृथिवी पर जबतक अमृतके समान संस्कृत भाषाका प्रचार रहे गा । तबतक कोई भी इस पवित्र नामको न भूल सकेगा—तबतक किसीप्रकारसे महाराजभोजका पवित्रनाम आर्यराजाओंकी पवित्र नामावलीसे नहीं निकाला जायगा ।

पँवार कुलमें भोज * नामक तीन राजा पाये जातेहैं । वह तीनों विशेष विद्यानुरागी और विशेष पराक्रम शाली थे । यह नहीं कहा जा सकता है कि यहाँपर कौनसे भोजका नाम लिखा है ।

जिस चन्द्रवंशकी महान कीर्ति और प्रतिष्ठाका वर्णन भारतवर्षके इतिहासमें सुवर्णकेः अक्षरोंसे लिख रक्खा है; उस महाराजको ग्रीक ऐतिहासिक लोग सिकन्दरका प्रचंड प्रतिद्वन्द्वी कहते हैं, चन्द्रगुप्तका जन्म पँवार कुलकी मौर्य नामक शाखामें हुआ था । पँवारकुलके विषयमें जो प्राचीन शिलालिपि निकलीं हैं उनके देखनेसे पाया जाता है कि उक्त शाखा कुलका प्रधान पुरुष तक्षक-कुलमें उत्पन्न हुआ था ।

हिन्दूराज चक्रवर्ती महाराज विक्रमादित्यके सिंहासनको हलादेने वाला प्रचण्ड बाहुबलशाली महावीर शालिवाहन भी तक्षक वंशसे उत्पन्न हुआ । उज्जयिनीनाथ विक्रमादित्यके सिंहासनको कम्पित कर विजयी शालिवाहनने उज्जयिनीके सिंहासनको अधिकारमें किया और महाराज विक्रमादित्यके सम्बत्को वन्दकरके दक्षिणमें अपने सम्बत्को चलाया ।

* किसी एक शिला लिपिमें लिखा है कि संवत् ११०० (सन् १०४४ ई०,) में तीसरा भोज-राजसिंहासन पर बैठा था । भोजप्रबन्ध नामक ग्रन्थमेंही यही सम्बत् पड़ा हुआ है । अतएव इस शिला लिपिका भली भाँतिसे विश्वास किया जा सकता है, कहते हैं कि ग्रन्थमें यहभी वर्णन है कि पहला भोज सम्बत् ६३१ में और दूसरा ७२१ सम्बत्में हुआ था ।

जो पँवार अपने प्रताप और विपुल गौरवके प्रभावसे एक समय राजपूत राजाओंके शिरमौर हुए थे। अभाग्यसे आज उनपर पहिले प्रताप और गौरवका साधारण चिह्न भी नहीं है। भारत वर्षके स्थान २ में जो उनकी कीर्ति विराजमान थी। कालके कठोर करप्रहारसे आज वह सब चूर २ हो गई। आज उनका चूराही इस कुलके पूर्व गौरवका प्रतिविम्ब हो रहा है। संसारमें इस कालके माहात्म्यको कौन समझ सकता है? काल ही सृष्टि कर्ता और कालही संहार कारी है। काल ही सुख दुःखका नियामक है। महाधनवान होकर गर्व व अहंकारके वश होनेसे आज जो मनुष्य सम्पूर्ण संसारको तिनकेकी नाईं तुच्छ विचारता है। अपने नौकर चाकर इष्ट मित्रोंसे पशुसमान व्यवहार करताहै;—आश्चर्य नहीं कि कल या दो दिन पीछे सर्व नियन्ता कालके विधानानुसार उसका छिन्नमास्तिष्क श्मशानमें लौटता हो,—असम्भव नहीं जो गीदड़, कुत्ते आदि धिनोने जानवर उस मस्तिष्कपर लातें मार रहे हों। जिसकालके अखण्ड माहात्म्यसे प्रतिदिन यह अवश्य होनहार बातें होती रहती हैं। उसही कालकी अपार महिमासे आज पँवारकुलके गौरवका साधारण चिह्नभी 'दिखाई नहीं देताहै। चन्द्रगुप्तादि भुवनविदित महाराजोंकी प्रदीप्तकीर्तिसे जो यहकुल दमक रहाथा, मुगलराज वीर हुमायूँ, वीर तैमूरके सिंहासनसे अलग किया जाकर एकसमय जिस वंशके साधारण वंशजके आश्रयमें रहा था, आज भारतका मरुभूमिके* धात नगरका वर्तमान राजाही उस पँवारवंशके पूर्व गौरव और प्रतापका साधारण नमूना है।

पँवार कुलमें पैंतीस शाखाहैं। इनमें विहील शाखाही विशेष प्रसिद्धहै। इस शाखाकुलमें जो राजा उत्पन्न हुए थे उन्होंने बहुत दिनोंतक अरावलीकी पट्टि प्रमओर बसी हुई प्राचीन चन्द्रावती नगरके सिंहासनपर राज्यकिया था।

चाहुमान वा चौहान—इससे पहले इस कुलके गौरवादिका वर्णन बहुतायतसे होचुकाहै—अतएव यहाँ अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं समझी जाती हां जो बातें पहले नहीं लिखी गई हैं, वह आगे लिखी जायँगी। पवित्र अग्नि-कुलसे उत्पन्न हुई शाखाओंमें चौहान शाखाही विशेष बलवान हुई। कहते हैं कि

* यह पँवारकुलकी शाखा सोदा गोत्रमें उत्पन्न हुई इसी शाखामें इसराजाका जन्म हुआथा, सिकन्दरके समयके इतिहासलेखक इस सोदाको सगदि कहतेहैं। इस सोदानामक गोत्रमें अमर व समर नामक दो प्रतिष्ठित राजा उत्पन्न हुए थे। इन दोनोंके नामसे अमरकोट और अमर समर नामक दो नगर बसेहैं।

एकसमय चौहान लोग ऐसे बलवान होगये थे, कि उनकी प्रचण्ड वीरताके सामने भारत वर्षके और राजाओंका गौरव प्रभावहीन होगया । यद्यपि राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें बहुतसे मनुष्य बलवान् प्रचण्डपराक्रमी और प्रतिष्ठित थे, यद्यपि “लाख तरवार राठौरान” अर्थात् लक्षराठौरोंकी वीरता भारत विदित है, तथापि विशेष विचार करनेसे ज्ञात होगा कि वीर केसरी चौहानोंने न्यायानुसार राजपूतोंके शीर्षस्थानमें आसन पाया है ।

इस प्रसिद्ध राजकुलकी उत्पन्न हुई शाखाओंमेंभी अपने मूल वंशवृक्षका यथार्थ गौरव बचाकर चौहान नामको सार्थक किया था । इसकुलकी शाखाओंमें हार, खीची, देवरे और शनिगुरु आदिही विशेष प्रसिद्धहैं, इन शाखाओंकी वीरता, प्रतिष्ठा और गौरवका वृत्तान्त आजतक भट्टकविजनोंके मधुर काव्योंमें सुनहरी अक्षरोंसे लिखा हुआ है । आजतक इस वंशके मनुष्य उस भट्टगाथाको पढ़ते २ अपनी वर्तमान अवस्थाको भूलजातेहैं, और मुहूर्तभरके लिये पूर्वजोंकी प्रचण्ड वीरताको नेत्रोंके सम्मुख देखने लगते हैं ।

चौहानकुलकी प्रतिष्ठा करनेवाले वीरवर चौहानका अत्यन्त मनोहर जन्मवृत्तान्त यहांपर बचेहुए तीन कुलोंकी उत्पत्तिके साथ लिखा जाता है ।

पहलेही कहा जा चुका है कि प्रसिद्ध सुमेरु और कैलासके समान अर्बुद (आबू) भी पवित्र पर्वत है । अग्निकुलमें उत्पन्नहुए वीरलोग इस पर्वतको देवदेव अचलेशका-स्थान कहतेहैं । कन्द, मूल, फलका भोजन करनेवाले, ईश्वरपरायण और विशुद्धात्मा तपस्वियोंके तपकरनेका स्थान है । जोगशील ब्राह्मण लोग, पारवण्डी दैत्योंके आक्रमणसे अपने पवित्र सनातनधर्मकी रक्षाकरनेके लिये इस अति ऊंचे पर्वतके शिखरपर रहा करते थे । परन्तु वहांपरभी उन दुष्टकर्मकारी दानवोंके पड्डनेसे उनके तपमें विघ्न हुआ करता था ।

एकसमय जब कि अत्यन्त धर्मानुरागी ब्राह्मणगण नैऋत कोणमें अपने होम कुंडको खोदकर देवताओंको आहुति दे रहे थे । उसकाल दलके दल असुरोंने आकर ऐसी प्रचण्ड आँधी उठाई कि सम्पूर्ण आकाश धूरिसे छायागया । उससमयमें दुराचारी दैत्यगणोंने रुधिर, मांस, हड्डी, और भी अनेकप्रकारके दुर्गन्धयुक्त अपवित्र पदार्थोंकी वर्षा की इन दुष्टोंके उपद्रवसे उन ब्राह्मणोंका योग भंग हुआ; और वह असुर अपनी मनःकामना पूर्ण करने लगे । ब्राह्मणोंको अभीष्टवर न मिला ।

सनातनधर्मविरोधी, पापाचारी, दैत्योंके बराबर अत्याचार करते रहनेपरभी, दृढ़प्रतिज्ञ ब्राह्मणोंकी चेष्टा और धीरता किंचित् भी बिचलित न हुई । उन्होंने पुन-

वीर अग्निकुण्डको जलाया और उसकुण्डके चारोंओर बैठकर मंत्रोंको पढ़तेहुए देव-देव महादेवजीको प्रसन्न किया ।

उस पवित्र अग्निकुण्डसे * एक मूर्ति निकली परन्तु उसके सर्वांगमें किसी प्रकारका कोई लक्षण दिखाई नहीं दिया यह देखकर । ब्राह्मणोंने उसको प्रतिहारी बनाकर द्वारपर खड़ा किया । फिर दूसरी मूर्ति निकली । परन्तु चुलुकके समान आकार देखकर ब्राह्मणोंने उसका नाम 'चौलुक्य' रक्खा । फिर उस अग्निकुण्डसे क्रमानुसार तीसरी मूर्ति प्रकाशित हुई ब्राह्मणोंने उसका नाम (प्रमार) पँवार रक्खा । इसमें वीरताके चिह्न पाये जातेथे दीर चिह्नधारी और युद्धमें सामर्थ्य रखनेवाला होनेके कारण ऋषिगणोंने उस वीरको असुर लोगोंके विरुद्ध समरमें पठाया । यद्यपि पँवार वीरजनोंके साथ मिलकर दैत्योंसे संग्राम करने लगे; तथापि उनको विजय लक्ष्मी प्राप्त न हुई ।

तदनंतर वशिष्ठजी फिर आसनमारकर बैठे और वरावर मंत्र पढ़कर देवताओंको आह्वान करने लगे । अबके जैसेही महर्षिने आहुति दी, वैसेही उस पवित्र अग्निकुण्डसे एक वीरमूर्ति प्रकट हुई; इस मूर्तिका आकार बड़ा, ललाट ऊँचा, और चौड़ा, बाल अंजनके समान काले, नेत्र बड़े और घूमते हुए, छाती चौड़ी और मुड़ाई हुई, उस भयानक मूर्तिके सर्वांग वर्मसे ढके हुएथे । कमरमें बाणोंसे भराहुआ तरकश, हाथमें विशाल धनुष और प्रचण्ड तल वारंथी । चारों हाथोंमें अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रथे । अत्यन्त बलवान् देखकर ब्राह्मणोंने उस मूर्तिका नाम चौहान रक्खा ।

वह महाबली और पराक्रमी चौहान वीर बहुत शीघ्र असुरोंसे लड़नेके लिये भेजा गया । तपोवन वशिष्ठजी, उस चौहानवीरको समरमें भेजनेके समय भगवती आशापूर्णाकी प्रार्थना करने लगे । कुछही समयमें त्रिशूल धारिणी शक्ति-देवी सिंहपीठपर सवार होकर उन सबके सामने प्रगट हुई । और चौहान वीरको आशीर्वाद देकर अत्यन्त उत्साहसे दैत्यसे संग्रामको भेजा । आशापूर्ण कालिका इसप्रकार भक्तोंको समझा बुझाके अन्तर्द्धान होगई । ब्राह्मणोंने उस चौहान वीरका अनहिल नाम रक्खा, और आनंद सहित जय २ शब्द करने लगे । अनन्तर वीरवर अनहिल महाउत्साहसे अपनी सेनाको साथले असुरोंसे युद्ध करने

* जहांपर ये अग्निकुण्ड जलाया गयाथा । वहांपर स्वयं टाडसाहब गयेथे साहब कहते हैं कि इस स्थानमें आदिनाथकी एक पाषाणमूर्ति वेदीके ऊपर रखी हुईहै ।

लगा । दोनों दलोंमें भयानक संग्राम हुआ ! दुष्ट दैत्यलोग, अनहिलके प्रचण्ड विक्रमको सहन न करसके और घोर पराजित हुए । बहुतसे तो लड़ाईमें मारे गये, और जो जीते रहे वह भागते हुए पातालमें घुसे । इस प्रकार दुराचारी दानवोंके पराजित होनेसे ब्राह्मणलोग निरुपद्रव हुए । इसही चौहानवीरके पवित्र कुलमें वीरवर पृथ्वीराजने जन्मलियाथा ।

चौहान कुलकी सूचीमें देखा जाता है कि वीरवर अनहिलसे लेकर महाराज पृथ्वीराजतक इस चौहानकुलमें सब उन्नतीस राजा हुए ।

परन्तु इसवातका विचार करनेका कोई उपाय नहीं पायाजाता कि वह सूची शुद्ध या नहीं । विशेष विचार करके देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होजायगा कि कदाचित् वह सूची शुद्ध न हो । कारण कि भट्टकवियोंके ग्रन्थोंमें यह वर्णन है कि महाराज पृथिवीराजसे पहल अग्रिकुंड बनायागया था और इधर इतिहासमें देखाजाताहै कि महाराज पृथ्वीराज विक्रमादित्यके १२१५ वर्ष पीछे हुएथे, मला फिर इस दीर्घकालके बीचमें केवल उतनीसही राजाओंका आस्तित्व किस प्रकार युक्तिसिद्ध मानकर ग्रहण किया जा सकता है ।

इस चौहानकुलमें अजयपालनामक एक प्रतिष्ठावान राजा उत्पन्न हुआथा । अजयमेरु (अजमेर) के प्रसिद्ध दुर्गको उसनेही बनाया था जिन नगरोंमें पहिले चौहानगण प्रतिष्ठित हुए थे अजमेरभी उननगरोंमेंसे एक नगर गिनाजाता है ।

बहुतसे पुरुषोंका अनुमान है कि उक्त अजमेरनगरकी प्रतिष्ठाके आरम्भमें प्रसिद्ध शम्भरहृदके* किनारे शम्भरनामक एक और नगरभी चौहानोंने स्थापित किया था । शम्भरके नामानुसार इसनगरके राजालोगभी शम्भरीराव कहलाए । चौहान लोगोंका गारव और प्रताप दीर्घकालतक इसनगरमें अचलभावसे विराजमान था । फिर जिसदिन हिन्दूराज चक्रवर्ती महाराज पृथ्वीराज चौहान दिल्लीमें अपने नानाके सिंहासनपर बैठे । उसदिन चौहानकुलमें एकवार फिर प्रचण्डतेज आगया; परन्तु वह तेज निर्वाण होतेव टिमटिमाते हुए दीपकके प्रकाशके समान कुछसमयतक स्थाई रहा; अतएव उसके साथ २ ही चौहानकुलका गौरव व उनके बसाएहुए समस्त नगर क्रमानुसार श्रीहीन होनेलगे ।

* राजपूतलोगोंकी प्रधान आराध्या देवी भगवती शाकम्भरीमाताकी एक पाषाणमूर्ति शम्भरहृद सांभरके बीचमें स्थापित होरही है इस शाकम्भरीसेही हृदका नाम सम्भर हुआ । सांभर सम्भर इस समय सांभरझील कहातीहै ।

यह पवित्र अग्रिकुल केवल चौहानवीरगणोंकी अपूर्व वीरता और गौरवगरिमा-सेही अमर होगया है इसकुलमें जितने धुरन्धर राजा उत्पन्न हुए, उनमें माणिक रायभी एक था। दुर्धर्ष मुसलमान लोगोंके प्रचण्ड आक्रमण प्रभावसे कम्पायमान होते हुए-पंजाबको माणिकरायनेही सबसे पहिले रोका था।

माणिकराय और पृथ्वीराजके सिवाय औरभी अनेक महावली व पराक्रमी चौहानराजाओंका वृत्तान्त पायाजाता है भिन्नजातिका इतिहास पाठ करनेसे यह भलीभांति ज्ञान होताहै। कि एक समयमें वह राजालोग अत्यन्त बलवान थे मुसलमान तवारीखवाले भी मानते हैं कि जब दुर्धर्ष मुसलमान वीर महमूद प्रचंडसे-नाको साथ लेकर मूरतको जा रहा था तब अजमेरनगरमें ही एक प्रतापी राजाने* उसको भलीभांतिसे पराजित और अपमानित किया उस चौहानवीरके प्रचंड अस्त्र-बल प्रभावसे महमूदको विजयकी आशा छोड़कर युद्ध-क्षेत्रसे लौटना पड़ा था।

हिजरीकी प्रथम शताब्दीके शेषकालमें खलीफावलीदके विख्यात सेनापतिका-सिमने माणिकरायको घेर लियाथा। इतिहासमें लिखाहै कि उस संग्राममें भली भांतिसे मुसलमानोंका बल मथा गया था। यह लोग इसी समयसे कईबार भारतमें आये और बहुतसे धन-रत्न लूटकर लेगये। जिससमय महाराज विशालदेव अजमेरके सिंहासन पर विराजमान थे। उससमय मुसलमानलोग और एकबार भारत वर्षमें आए। इसही चढ़ाईको उनका तीसरा आक्रमण कहना चाहिये। देशवर्षी और सनातन धर्म विद्वेषी मुसलमान लोगोंके अपवित्र ग्राससे अपने राज्य और धर्मकी रक्षा करनेके लिये चौहानवीर विशालदेव विशाल अनीकिनी-को सजाय उनके सामने हुआ। शीघ्रही घोर संग्राम होने लगा। उस भयंकर संग्राममें पराजित होकर मुसलमानगण युद्धसे भागे। उस भयंकर समरके समय, प्रतापवान धीरधारी बहुतसे भूपालगण सामन्त बनकर महाराज विशालदेवकी सहायता करने आये थे। जो राजा सहायता करनेके लिये आएथे उनमेंसे पँवारकुलमें उत्पन्नहुआ वीर उदयादित्यही विशेष प्रसिद्ध हैं। प्रायः सबही भट्टग्रन्थोंमें लिखाहै कि सन् १०९६ ई०में वीर उदयादित्यकी मृत्यु हुईथी। इस नियत समयका अवलम्बन करनेसे निश्चयही प्रतिपन्न होगा कि यह महास-मर महमूदके चौथे पुरुष विख्यात इमदादवादशाहके संग हुआथा। महाराज

* उस चौहान वीरका नाम धर्माधिराजहै। यह विशालदेवका पिता था।

विशालदेव जो इस युद्धमें जय प्राप्त करसकाथा, उसकी यथार्थता दिल्लीके प्राचीन विजयस्तंभके ऊपर लगीहुई शिलालिपिके पाठ करनेसे भली भांति ज्ञात हो जायगी ।

यद्यपि विशालदेवके प्रचण्ड विक्रमके सामने मुसलमान वीर इमदाद पराजित हुए, तथापि मुसलमान लोगोंका उत्साह पराजय न हुआ, वह झुंडकेझुंड बारम्बार हिन्दुस्थानमें आकर भारत वासियोंपर अत्याचार करनेलगे । उनके बराबर चढ़ते रहनेसे भारतीय राजाओंके राज्यमें बोर अशान्ति फैल गई । क्रमसे उनका गौरव और विक्रम लोप होता चला । अन्तमें चौहानकुलके पिछले राजा महाराज पृथ्वीराजके कारावास और मरणके साथ २ भारतमें चौहानोंके विक्रम और बलका लोप होगया ।

सब समेत चौहानकुल चौबीस शाखाओंमें विभक्तहैं । इन चौबीस शाखाओंमें हारापदी जनपदके बूंदी और कोटाके राजवंश विशेष प्रसिद्ध हैं । इन्होंने अपने पूर्व पुरुषोंके प्राचीन गौरवकी भली भांतिसे रक्षा की थी । इन दोनों राजकुलोंके बीचमें छः वीरोंने पितृद्रोही निष्ठुर औरंगजेबके हाथसे वृद्ध शाहजहांको बचानेके लिये प्रसन्नतासे अपने हृदयका रुधिर दान किया था ।*

चौहान कुलके अनेक सामन्त राजाओंने अपनी वासभूमिकी रक्षाकरनेके लिये पितृपुरुषोंके पवित्र सनातनधर्मको त्याग कियाथा× कहतेहैं कि पृथ्वीराजके भतीजे ईश्वरदासनेही सबसे पहिले घृणित उदाहरण दिखाया ।

चौलुक्य वा सोलंकी—पहिलेही‡ कहाहै कि सोलंकी कुलभी उसही समयमें उत्पन्न हुआथा। जब कि पँवार और चौहान कुल उत्पन्न हुएथे । परन्तु ऐतिहासिक वृत्तान्तके योग्य सामग्री न मिलनेके कारणसे सोलंकी लोगोंका प्राचीन विवरण विदित नहीं होता । भट्टकविजनोंके काव्यग्रन्थोंमें पायाजाताहै कि जिस समय राठौर वीरोंने कन्नौजको अपने अधिकारमें किया उस समय सोलंकी कुल विशेष प्रतिष्ठित होगयाथा । इससे पहिले वर्णन हो-

* इनके अतिरिक्त गागरोन और खुगढके खीचियों, सिरौहीके देवरों शालावाडके शनिगुरुओं, सुआरसांचोरके चौहानों और पावागढके पवैचोका नामभी मिटने योग्य नहींहैं । इनमें कितनेएक वंश अब भी पाये जातेहैं ।

× चौहान कुलकी जिन जातियोंने मुसल्मानी धर्मग्रहण करलियाथा उनमें कायखानी सखानी लवानी कुरुरवानी और वेदवानी विशेष प्रसिद्धहैं ।

‡ सोलंकी गोत्र विवरण इसप्रकारहै कि माध्यन्दिनी शाखा भरद्वाज गोत्र गढलोह कोटनिवास सरस्वती नदी, सामवेद, कपिलेश्वरदेव कर्दुमानरिकेश्वर तिनपुर चारजिनार किनोज देवी महापालपुत्र ।

हुकाहैं कि जिससमय भट्टीलोग मरु भूमिमें आनकर बसेथे । तब लंगहो और तुगरों आदि कितनेएक यवन लोगोंने उनसे विरुद्ध शत्रुताकी थी । कहतेहैं कि उक्त लंगह और तुगरगण पवित्र सोलंकी कुलमें उत्पन्न हुए, व काल क्रमने मुसलमान होगयेंथे। पहिले यह लोग मालावारके उपकूलमें बसतेहुए कल्याण नगरमें वास करते थे । इस कल्याण नगरमें इन लोगोंके पूर्व गौरवके चिह्न अधिकाईसे पाएजातेहैं इस नगरसे सोलंकी कुलकी एकशाखा निकल कर समयके हेरफेरसे अनहलवाड़ा पटनमें प्रतिष्ठित हुईथी ।

प्राचीन सौर कुलमें भोजनामक एक राजा उत्पन्न हुआ । उसके पश्चात् फिर और किसी सौरराजाको सिंहासन प्राप्त नहीं हुआ । क्योंकि संवत् ९८७ सन् ९३१ ईसवीमें राजाकी मृत्यु होनेपर, उसके धेवते मूलराजने इस सिंहासनको अपने अधिकारमें किया ।—मूलराजने * नानाके सिंहासनपर क्रमानुसार अठारह वर्षतक राज्यकिया । पश्चात् मूलराजकी मृत्यु होनेपर इसका पुत्र सिंहासनपर बैठा । इसके ही समयमें दुर्द्धर्ष मुसलमान वीर मुहम्मदगज़नवीने विजयी सेनाके साथ अनहलवाड़ा पटनमें पहुँच कर नगरका सत्यानाश किया, । इस सर्वसंहारकारी संग्राममें मुहम्मदगज़नवीने इतना धन रत्न लूटा कि जिसको श्रवणकरके विश्वास नहीं होता है। परन्तु यदि इस बातका विचार कियाजाय कि उस समय अनहलवाड़ा पटनका वाणिज्य कहांतक उन्नतिपर था लक्ष्मीने कहांतक इस नगरमें अपना दृढ़ निवास किया था तब अवश्यही विश्वास करना पड़ताहै कि महमूदगज़नवीने इन रत्नोंकी अवश्य बड़ी भारी लूट की । उस समयमें यह अनहलवाड़ा समस्त भारत वर्षके बीच वाणिज्य व्योपारमें प्रसिद्ध था । यद्यपि महमूदगज़नवी और उसके उत्तराधिकारियोंको बारंबार भयंकर आक्रमणसे अनहलवाड़ा पटनका समस्त रुधिर सूख गयाथा । तथापि क्रमानुसार उसने अपने बलको संग्रह करलिया जिस राजाके समयमें इस देशकी विशेष ख्याति हुईथी. उस महाराजका नाम सिद्धरावजयसिंहहै × कर्नाटक और हिमा चलके बीचमें बसेहुए २२ नगर एकसमय सिद्धरायके छत्रकी छायामें थे । परन्तु इस विस्तारित राज्यको सिद्धरायके वंशधर बहुत दिनतक नहीं भोगसके ।

१ मालखांसे उत्पन्न होनेके कारण यह मालखानी कहातेथे इसमालखानेही सबसे पहले मुसलमानी धर्मग्रहण कियाथा ।

* मूलराजके पिताका नाम जयसिंह था, जयसिंहका विवाह भोजराजकी बेटीसे हुआथा ।

× सिद्धराज जयसिंहने सम्वत् ११५० से १२०१ तक राज्य किया प्रसिद्ध निडवियन भूगोल वेत्ता (एल एडिंसी) इसकी राजसभामें गयाथा। एल, एडिंसिभी कहताहै कि जयसिंहबौद्धधर्मावलम्बी थे ।

कहते हैं कि महाराज सिद्धरायके उत्तर अधिकारियोंने किसी कारणसे पृथ्वीराज चौहानको कुपित करदियाथा । इसी कारणसे महाराज पृथ्वीराजने इन लोगोंको राज्यसे अलग किया ।

सिद्धरायका उत्तराधिकारी जब सिंहासनसे अलग हुआ, तब उस सिंहासन पर कुमारपालनामक एक राजा बैठा । उसके सिंहासनपर बैठनेसे अनहलवाड़ा पट्टनकी उस उत्तराधिकारिणी विधिसे जो कि सदासे चली आई थी । उलट फेर हुआ क्योंकि कुमारपालने चौहानकुलमें उत्पन्न होनेपर भी सोलंकी सिंहासनपर अपना अधिकार कियाथा । महाराज सिद्धराय और कुमारपाल यह दोनोंही बौद्धधर्मके विशेष उपासक थे । दोनोंकेही राजत्वकालमें स्थापित (थवईकार्य) की विशेष उन्नति हुईथी क्योंकि उस कालमें जो कईएक विजय स्तम्भ बनाए गये हैं । उनकी निर्माण कौशलको देखकर अत्यानन्द प्राप्त होताहै । यहांतक कि थवईकार्यकी ऐसी उन्नति किसी हिन्दू राजाके समयमें नहीं हुई ।

मुसलमान शहाबुद्दीनके प्रतिनिधियोंने घोर अत्याचार करके कुमारपालका शेष राजत्व अत्यन्त नष्ट कर डालाथा । इन लोगोंके प्रचंड पीड़नप्रभावसे उसके राज्यकी समस्त शान्ति एकवारही नष्ट होगई । इस अशान्ति और उपद्रवके रोकनेमें असमर्थ होकर उसने कठोर दुःख और मानसिक पीड़ासे अपने शरीरको छोड़ दिया । महाराज कुमारपालके परलोकवासी होनेके पश्चात् मूलदेव उसके सिंहासन पर बैठा । मूलदेवकी मृत्युके साथ संवत् १२८४ (सन् १२२८ ई०) के मध्य अनहलवाड़ापट्टनके सोलंकी कुलका अवसान हुआ ।

अनहलवाड़ेका सिंहासन सोलंकी कुलसे निकल जानेपरभी जनशून्य नहीं हुआ विशालदेवनामक और एकवीरने शीघ्रतासे उसपर अधिकार किया । सिद्धरायके बघेला नामक एक शाखाकुलमें विशालदेवका जन्म हुआथा महाराज विशालदेवके सिंहासनपर बैठते ही राज्यकी शोभा और प्रतिष्ठा अत्यन्त बढ़गई सनातनधर्म-विद्वेषी मुसलमानोंने भयंकर अत्याचार करके नगरके जिन स्थानोंको तोड़ा फोड़ा था । उनमेंसे एक सोमनाथके मन्दिरका नाश किया । सोमनाथका वह पवित्र मन्दिर व और भी टूटे फूटे महल दुमहले विशालदेवके सुशासन गुणसे फिर संस्कारित होकर शोभाको प्राप्त हुए इस प्रकारसे बालकरायके कुलका लीला क्षेत्र अनहलवाड़ापट्टन धीरे २ प्राचीन गौरवको फिर प्राप्तकर रहाथा कि इतनेहीमें यमराजके दूतकी समान अलाउद्दीनने भयंकर विक्रमके साथ उस देशमें प्रवेश

किया । उसके भयंकर आक्रमणको सहन न करके महाराजा गिहलकर्ण समर क्षेत्रमें गिरगये । इनके साथही अनहलवाड़ा पट्टनकाभी नाश होगया ।

उस हिन्दू विद्वेपी तातार राजके निष्ठुर प्रतिनिधि लोगोंने भयंकर दुष्टता और दुराकांक्षा करके गुर्जर और सौराष्ट्र (सूरत) से धनशाली नगर व उपजाऊँ शस्य-क्षेत्र इमशानके समान कर दिये । चारोंओर महल दुमहलोंके खँड़हरोंका दिखा-इदना, चारोंओर प्रकृतिका भयंकर वेश हृदयको विषादसे व्याकुल करनेलगा । इस समय ऐसा ज्ञात होताथा कि नगरके सब स्थानोंमें मानों मुसलमान लोगोंका घोर अत्याचार मूर्तिधारण करके प्रगट होरहाहै । उन्होंने प्रचण्ड डाह और दुष्ट स्वभावके कारण आदिनाथका पवित्र मन्दिर चूरा २ करके उसकी टूटी फूटी साम-ग्रीसे वहाँपर एक मुसलमान फकीरका समाधि मन्दिर बनाया इस प्रकारसे जो कुछ सुन्दर और जो कुछ पवित्र था । वह सबही दुर्दान्त मुसलमानोंके विषम विद्वे-पस नष्ट भ्रष्ट होगया ।

सनातनधर्म विद्वेपी निष्ठुर मुसलमानोंके अत्याचारसे विशाल सौराष्ट्र देश जिसदिन इस प्रकारसे इमशान भूमि होगयाथा, उसहीदिन सोलंकी राजकुलकी राजलक्ष्मी इस देशको छोड़ गई । इसवंशके मनुष्य अपने पितृपुरुषोंके राज्य-को खोकर आश्रय प्राप्त करनेके अर्थ भारत वर्षमें चारों ओरको दौड़े तबसे लेकर सौ वर्षतक सोलंकी कुलका राज्यसिंहासन शून्य रहा । इस दीर्घकालके मध्यमें कोईभी हिन्दू राजा उस सिंहासनपर न बैठा ।

उस दीर्घकालव्यापिनी अराजकताके पश्चात् सौराष्ट्र देशके भग्नसिंहासन-पर तक्षक वंशीय एक वीरपुरुष बैठा और शीघ्रही कुछ २ उस देशकी पूर्वशोभाको फिर जीवित किया यद्यपि सिंहरण तक्षकने सौराष्ट्रके पूर्वगौरवका उद्धार किया । परन्तु सोलंकी कुलके लोपहुए गौरवको वह फिर उद्धार न करसका । इसका कारण यह है कि उस महाराजने अपने पूर्व पुरुषोंके धर्मको जलांजलि देकर इस्लामधर्मका अवलम्बन किया । मुसलमान धर्मको धारण करनेके पश्चात् वह सिंहरण तक्षक मुजफ्फरनामको ग्रहण करके गुर्जरा राज्यको शासन करनेलगा ।

अत्याचारी मुसलमानोंके भयंकर उपद्रवसे सोलंकी वंशवृक्षके मूलसहित उखड़नेसे पहले इससे १६ शाखाकुल उत्पन्न हुए थे । इन शाखाकुलोंमें वघेले विशेष प्रसिद्ध हैं । यहलोग * जिस देशमें रहा करतेथे वह देश अवतक वघेले

* कदाचित् महाराज सिद्धरायके पुत्र भाग्यरायसेही इस शाखा कुलका नाम भागिला वा वघेला हुआहै ।

खण्डके नामसे पुकारा जाताहै । महाराज सिद्धरायके वंशधरगण बहुत दिनोंतक इस वघेलखंडके सिंहासनपर अधिकार करे रहेथे ।

प्रतीहार वा पुरीहार—यद्यपि पुरीहार कुल अग्रिकुलके नीचे आसनपर स्थितहै तथापि इसके विषयमें अनेक गौरवसूचक वृत्तान्त पाए जातेहैं । यह लोग किसीभी समयमें स्वाधीन राज्यको नहीं भोग सके भट्टकविजनोंके काव्यग्रन्थोंमें पाया जाताहै कि पुरीहार कुलके राजालोग सदा दिल्लीके (तुआर) अथवा अजमेरके चौहान राजाओंके अधीनमें सामन्त राजा बनकर रहा करतेथे उस आधीन जीवनके बीचमें स्वाधीनता पानेके लिये पुरीहारगण जो चेष्टा किया करतेथे उससेही उनका जीवनचरित्र सुवर्णके अक्षरोंमें लिखनेके योग्य होगयाहै । केवल एकही वीरके विस्मयकर वीराचरणसे पुरीहारकुल विख्यात होगयाहै । यह प्रसिद्ध और प्रचण्ड-वीर नाहरराव, पृथ्वीराजके अधीनमें सामन्तराजा रूपसे विराजमानथा । अधीन राज्यमें रहकरभी उसने एक समय स्वतन्त्रता और स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिये कठोर उद्यम कियाथा, इसीसे उसका नाम अन्यान्य राजपूत वीरोंकी पवित्र सूचीसे लिखा गयाहै । यद्यपि उसका वह पवित्र उद्यम फलवान नहीं हुआ तथापि इसके द्वारा नाहरराव अपनी वीरताका प्रकाशमान दृष्टान्त छोड़ गयाहै ।

पुरीहार कुलकी प्राचीन राजधानीका नाम मण्डवार है । साधुभाषा संस्कृतमें इसको मन्दाद्रि कहतेहैं । राठौर लोगोंका उदय होनेसे बहुत पहिले पुरीहारलोग मारवाड़में प्रतिष्ठित होगएथे । यह मंडवार आज कल जोधपुरसे तीनकोश उत्तरमें बसाहुआहै यद्यपि इस समय मन्दाद्रिका नाश होगयाहै तथापि प्राचीन स्तम्भ और अटा अटारियोंका गठन देखनेसे इसके पूर्व गौरवका भली भांतिसे निदर्शन पाया जाताहै । कान्यकुब्जको छोड़तेही राठौर लोगोंने पुरीहारोंके मन्दावर नगरमें आश्रय ग्रहण किया इन राठौरोंने कृतज्ञताके पवित्र मस्तकपर लात मारकर अपनेको आश्रय देनेवाले पुरीहारोंका विश्वासघातकतोस-ध्वंस कराया जिस राठौरने इस हीन आचरणको किया उसका नाम चण्ड था वास्तवमें इस चण्डने पाशव धर्मानुसार उपकारी और मित्रपुरुषके उपकारका प्रतिफल देकर मण्डवारके दुर्ग शिखरपर अपनी कुकीर्तिको प्रचार करनेवाली राठौर नामांकित पताका स्थापित की, इस घटनासे पहिले मेवाड़के राजाओंके प्रचण्ड प्रताप बलसे पुरीहार कुलका गौरव बहुतायतसे जाता रहाथा । पहिले पुरीहारके राजालोग, राणा, नामसे पुकारे जातेथे परन्तु गहिलोत राज

राहुपने मन्दाद्रिपर आक्रमण करके उनको पराजित किया और अपनी जयका निदर्शन दिखानेके लिये पुरीहार राजाओंकी राणा उपाधि छीन ली *

आजकल भारतमें चारोंओर पुरीहार कुल फैल गयाहै। परन्तु दुखकी बातहै कि इसकुलके बीचमें किसी राजाकोही स्वाधीन जीवन सम्भोग करते हुए नहीं देखा जाता कोहारी, सिन्द, और चम्बल नदीके संगम स्थानमें पुरीहारलोगोंका एक प्राचीन उपनिवेश अवतक दिखाई देता है। इस उपनिवेशमें २४ ग्राम और अगणित छोटी २ पल्लियेंहैं। पुरीहार कुलका यह प्राचीन स्थान पहले संधियाके अधिकारमें था, परन्तु अब ब्रिटिशसिंहने अर्थात् अंगरेज सरकारने आवश्यकता समझ कर उसको अपने विराट् राज्यमें मिला लिया है।

पुरीहारकुलकी वारह शाखाओंमें इन्दो और सिन्धिलही विशेष प्रसिद्धहैं अवतक लूनीनदीके × किनारे इन दोनों शाखाकुलोंका साधारण चिह्न पाया जाता है।

नोट १—एक समय भारतके इतिहासमें यह जाति विशेष प्रतिष्ठित होगईथी। भारतवासियोंन इस जातिकी कीर्ति और गौरव कथाकोहर्षसहित गायाथा। परन्तु अभाग्यकी बातहै कि आज भारतवर्षके किसी स्थानमेंभी इस जातिकी कीर्ति, और गौरव व प्रतिष्ठाका चिह्न कहींपर भली भांतिसे नहीं दिखाई देता। यदि भट्टलो-गोंके काव्यग्रन्थोंमें सौरकुलका समस्त वृत्तान्त न लिखा होता, तो ज्ञात होताहै कि अवतक भारतके इतिहाससे इसका लोपहोगया होता। सौर कुलके उत्पत्ति वृत्तान्तको हम कुछभी नहीं जानतहैं क्योंकि चन्द्र और सूर्य इन दोनोंही कुलोंमें इस कुलका नाम नहीं पायाजाता। †

यदि वीर भारतभूमिको इनकी आवासभूमि नहीं मानाजायगा तोभी यह अवश्य मानना पड़ेगा कि प्राचीनकालसे इनका वंशवृक्ष भारतवर्षमें बोयागयाथा कारण कि भट्टग्रन्थमें लिखाहै, कि मेवाड़वालोंके पूर्व पुरुषागण जिस समय बलभी पुरका राज्य कररहथे तब सौरलोगोंने इनके साथ विवाहका सम्बन्ध स्थापन किया।

सौरगणोंका सूर्योपासक होना इनके नामसेही प्रमाणित होरहाहै इन्हींके नामसे सौराष्ट्रका ‡ नाम करण हुआहै इनके स्थापन कियेहुए अनेक नगरोंमें देव-

* जिस पुरीहार राजाको पराजित करके राहुपने राणाकी उपाधि पाईथी उसका नाम मोकल था × मारवाड़के दक्षिण पश्चिम भागमें यह नदी बहतीहै।

† इसी कारण महात्मा टाडसाहबने सौर कुलको 'शाकोत्पन्न' कहकर अनुमान कियाहै।

‡ सौराष्ट्र-सूरत।

बन्दरही विशेष प्रसिद्ध हैं, सौराष्ट्रकी सीमापर एक छोटा टापू था वहभी देवबन्दर कहाजाताथा, सौमनाथजीके प्रसिद्ध मन्दिरके अतिरिक्त सौरकुलवालोंने औरभी छोटेछोटे कईदेवालय स्थापित कियेथे ।

कहतेहैं कि देवबन्दरके स्वामी डाकुओंकी समान दूसरेदेशके व्यापारियोंके जहाजोंसे धनादि लूटलेतेथे, इसीकारण समुद्रने रुष्ट होकर उनका नगर ग्रासकरलिया देवबन्दर इतनी नीची भूमिमें बसाहुआथा कि इस प्रकारकी किम्बदन्ती एकदम असत्य नहीं गिनी जा सकती यदि उस समयके भारतवाणिज्यका विचार कियाजाय तो एक और सत्यताका पता लगताहै, उसकाल अरबदेशके साथ भारतका वाणिज्य होताथा, अरबी सौदागर जहाज और धन लेकर सौराष्ट्रमें आतेथे क्योंकि यही राज्य उस समय भारतवर्षका प्रधान वाणिज्य स्थल मानाजाताथा, कदाचित् देवबन्दरके अधिपतिने उनपर कोई अत्याचार किया, जिससे उन्होंने दलकेदल आकर उस देशको विध्वस्त करडाला हो, आगे चलकर मेवाड़के वृत्तान्तके संग एकप्रकार यह बात प्रमाणित होजायगी कि इसी प्रकारकी किसी दुर्घटनाके कारण देवबन्दर विध्वंस होगयाथा, उन राज्यके ऐतिहासिक ग्रन्थोंके देखनेसे विदित होताहै कि जब सौरकुलवालें देवबन्दरसे हटायेगये तब मेवाड़के राजाओंके यहां उन्होंने आश्रय पाया ।

पीछे सम्बत् ८०२ सन् ७४६में सौरकुलके राजाबाणने अनहिलवाड़ा पाटन-स्थापित किया, इससे पहले वल्लभी सौराष्ट्रदेशकी राजधानीथी, परन्तु अनहिलवाड़ा पाटन स्थापन होनेपर, वल्लभीका गौरव घटगया, जब महाराज बाणकी नई राजधानीने उसका गौरव पाया ।

१८४ एकसौ चौरासी वर्षतक अनहलवाड़ा पट्टन महाराज बाणके वंशधरोंके अधिकारमें रहा, यहां इन्होंने आठ पीढीतक राज्यकिया. फिर इस वंशका पिछला राजा भोज भानजके द्वारा सिंहासनसे उतारदियागया. जिससे सौरकुलका राज्य एक बारही अनहलवाड़ेसे लोप होगया.*

* इससे पहले सोलंकी कुलके वृत्तान्तमें लिखा जा चुकाहै कि सन् ९३१ ईसवीमें भोजराजकी मृत्यु होनेपर उनका धेयता मूलराज उनके सिंहासनपर बैठा परन्तु यहाँ उसके विपरीत बात दिखाई देतीहै हमारी समझमें यह बात नहीं आई कि टाडसाहबने ऐसी गड़बड़ क्यों की इसओर एल्फिन्स्टन साहबके भारतवर्षीय इतिहासमें लिखाहै कि सौरकुलका पिछला राजा ९३१ई०में मृत्युको प्राप्तहुआ उसके कोई पुत्र नहींथा उसके पीछे उसके जामाताने उसके सिंहासनको पाया [Elphinston's History Of India, R. 2.] अब इस बातका पता लगाना कठिनहै कि इन मतोंमें कौन ग्रहण करनेके योग्यहै यद्यपि यह मत भिन्न २ प्रकारकेहैं पर विशेष विचार करनेपर इनमें एकप्रकारकी

१ तक्षक अतिप्राचीन कालमें जो वीरगण चढाई करके दूरदेश शाकद्वीपसे भान्तवर्षमें आयें उनमेंसे तक्षकही प्रधानहैं इसकुलके विशाल वंशवृक्षसे मित्र २ शाखायें निकलकर चागोंआर फैलगई थीं जो जितवंश अनेक गोत्रोंमें विभक्तया जिनके अमरव्य गोत्रोंमें अनेक महावीरोंने उत्पन्न होकर एकसमय अपने वीरवर्षमें नार भूमंडलको कँपा दियाथा वहभी इस तक्षक वंशसे पहले प्रतिष्ठाको नहीं प्राप्त हुआथा ।

अबुलगाजीने उक्त तक्षकको तुर्कका × पुत्र तनक कहाहै चीनके इतिहासवालोंने तुर्क और ट्रावोंने तकारि वर्णन कियाहै इन तकारियोंने ग्रीकवालोंके प्रसिद्ध बग्नियार राज्यको ध्वंसकरके एशियामंडलके एक देशको अपने नामानुसार तकारिस्थान (तुर्किस्तान) नामसे पुकाराथा ।

इसमें पहले वर्णन होचुकाहै कि टेस्ट तक्षक और तकारी जातिके इतिहासके सम्बन्धमें बहुतसे शिलालेख राजस्थानके कईस्थानोंमें पायेगयेथे उन शिलालेखोंमें इन तक्षकोंके आचार विचारके सम्बन्धमें जिसप्रकारसे लिखाहै पुराणोंमें लिखी तक्षक जातिके साथ उसका बहुत कुछ मेल पायाजाताहै, भगवान कृष्णद्वैपायन व्यासके लेखसे इगवातका पूरा प्रमाण मिलताहै, कि इन तक्षकोंके द्वारा भारतीय राजाओंकी बहुतही हानि हुईथी, बहुतरे राजा इनकीक्रूरताके कारण अकालमेंही समाधि पाये बिना हांगये व्यासजीके काव्य ग्रन्थमें जो ऐतिहासिक रत्न छिपे हुएहैं यदि वे प्रकाशित कियेजायें तो एक नवीन युग उत्पन्नहो, पौरव भूपाल महाराज पराशरजी जब क्रूर चरित्रवाले तक्षकके दंशनसे अनन्त धामको पधारे तब उनके पुत्र जन्मजयन्त पिताके मारनेवाले दुष्टोंके क्रूरचरणसे दुखी हो उसका फल देनेके लिये जिलू महामर्षिसत्रका अनुष्ठान कियाथा उसवानको प्रत्येक आर्यसन्तान जन्मतेहै, परन्तु इस रूपकके परदेमें जो ऐतिहासिक सत्य छिपाहुआहै उसको कितने

एकताही दिनाई देतीहै इन तीनों मतोंके पढनेसे विदित होताहै कि ९३१में सौरकुलकी समाप्ति होनेपर चौलुक्योंके राजाने जो सौरकुलकी किसी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआथा, पाटनका अधिकार पाया, पर यही पता नहीं लगता कि उस स्त्रीके स्वामी अथवा पुत्र किसने राज्यका अधिकार पाया विशेष विचारसे यह सिद्धान्त निकलताहै कि नानाकी मृत्युहोनेपर उसके धेवते मूलराजने उसका मिहान प्राप्त कियाथा परन्तु उसके नाबालेग होनेकेकारण उसके पिता जयसिंहने राजकाज संभालाथा ।

× अबुलगाजी कहाहै कि नावको छोडकर पृथिवीपर उतरकर नूहने अपने तीनों पुत्रोंको पृथिवी बांट दी उसके पहले दो पुत्र और २ राज्योंपर अभिषिक्तहुए छोटे जाफरने ' कत्तपसामाख ' नामक एकदेशको पाया कासियनहूद और भारतवर्षका मध्यस्थित प्रदेश उक्त कत्तपसामाख नामसे प्रसि-

लोग समझतेहैं, उस सत्यका प्रगट करना कोई बड़ी बात नहींहै एकक्षण विचार करनेसे वह आपही प्रगट हो जायगा । *

जिससमय महावीर सिकन्दरने भारतपर चढ़ाई कीथी उससमय पारोपमिशान × पर्वतके निकट एक तक्षकोंकी जाति रहतीथी, कहतेहैं कि जिस तक्षकशीलने पूरुका पक्ष छोड़कर सिकन्दरका साथ दियाथा, वह इसी तक्षक वंशका एक राजाथा, भट्टोंके इतिहासमें लिखाहै कि जावालिरस्थान (जबूलिस्तान) से हटाय जाकर भारतवर्षमें प्रवेश करनेके समय उन्होंने तक्षकोंकी प्राचीन निवासभूमि जो सिन्धुनदीके किनारेथी छीनलीथी, तक्षकोंकी शालिवाहन नाम एक नगरी थी भट्टियोंने यह नगरभी उनसे लेलिया युधिष्ठिरके ३००८ सम्बत्में यह घटना हुई, अब यह स्पष्ट होगया कि शालिवाहनने हिन्दूराज्यचक्रवर्ती महाराज [तुआर] विक्रमको पराजित कियाथा । वा उसीने इस शालिवाहन पुरकी प्रतिष्ठा की ।

बहुतलोग अनुमान करतेहैं कि ईस्वी छः या सात शताब्दीके पहले तक्षकोंने शिशुनागनामक अधिपतिके साथ भारतवर्षमें प्रवेश कियाथा, यह अनुमान सत्य मानाजासकताहै कारण कि दूसरे इतिहासोंसे विदित होताहै कि ठीक इसी समय

द्वथा, कहतेहैं कि जाफरने वहां २५० वर्षतक राज्यकियाथा उसके आठपुत्र हुएये उन आठपुत्रोंमें पहला तुर्क और सातवाँ कामरि विशेष प्रसिद्ध हुआ तुर्कके चारपुत्र हुए बड़ेका नाम तनक था तनकसे चारपीढी पीछे मुगल नाम एकपुत्र उत्पन्न हुआ इस मुगलका नाम प्रसिद्ध अग्रज हुआ ।

* ऐसे वर्णनमें लोगोंको असत्यकी शंका होसकतीहै पर यदि काल्पनिक सर्पकी बात छोड़कर ऐतिहासिक सत्यता स्वीकार की जाय तो अवश्य नानना होगा कि तक्षकने छिपकर अन्यायसे महाराज परीक्षितको हत्या की और जन्मेजयने उन तक्षकोंपर आक्रमण कर उनको अग्निमें भस्म करना आरंभ किया, नीचे लिखी घटनासे यह निराशनुमानही नहीं पाया जायगा किन्तु सत्यघटना घटेगी सन् १८११ में टाडसाहब चम्बल नदीके किनारे गृजर गढ़में भूमिकी नाप करने गयेये, उससमय वहां एक प्रबलजाति निवास करतीथी उन्होंने गुन कि गूजरोका सूर्यमल नाम एक राजाथा उसने एकरातमें वहांके निवासियोंको सिक्कोंसे बांधा और एक करके अग्निमें जलाकर मारडाला इस भयंकर हत्याकाण्डको बहुत दिन नहीं बीतेहैं जब इतिहासमें ऐसे भयानक नरमेधका विवरण पाया जाताहै तब पौराणिक जन्मेजयका नागपत्र कैसे अमूलक और असत्य कहा जा सकताहै ।

हमारी समझमें परीक्षितको दंडन करनेवाला तक्षक तक्षकजातिका पुरुष नहीं है, वह मनुष्य तथा सर्परूप धारी एक नागोंकी जातिका अधिपतिहै, कारण यह कि उसने ब्राह्मणके शापसे महाराज परीक्षितको काटाथा तक्षक जातिके मनुष्य इनसर्पोंसे भिन्नहैं ॥ अनुवादक ।

× हिन्दूकुशके दक्षिण जो वर्षतमालाहै उसीका नाम पारोपमिशानहै काबुलनदी इसी पर्वतके नीचेसे बहतीहै ।

में मिश्र और सीरिया राज्योंमें प्रवेश करके इन्होंने वहां बड़ी वीरता दिखाकर बड़ी गड़बड़ मचा डाली थी ।

पुराने तक्षककुलके सम्बन्धमें यहां विशेष बातें लिखनेकी आवश्यकता नहीं है इससे अब हम इसकुलके वर्तमान वंशधरोंके विषयमें लिखते हैं, भट्टोंके काव्यग्रंथोंमें लिखा है कि गिलहोटोंका अधिकार होनेसे प्रथम तक्षक कुलका एक राजा चित्तौरके आसनपर आरूढ़ था, फिर वहांके सिंहासनपर गिलहोटोंका अधिकार होनेसे जिससमय मुसलमानोंने आक्रमण किया उससमय अनेक आर्यराजाओंने अपने देज और स्वजातिके प्रेमसे उत्साहित होकर चित्तौरवालोंकी सहायता की थी, उनसहायक राजाओंके नामके संग असीरगढ़के राजा * तक्षकराजका नामभी पाया जाता है, असीरगढ़में तक्षकोंने बहुत दिनोंतक राज्य किया था चन्दकदिन कहा है कि इसवंशका एक मनुष्य दिल्लीनरेश पृथिवीराजकी सेनाका प्रधान अधिपति बनाया गया था × ।

यह प्रथम वर्णन हो चुका है कि तक्षकवंशके शिहरण नामक राजाने अपना पुराना धर्म छोड़कर मुसलमानी धर्म स्वीकार किया था इस शिहरणके पीछे चौदह राजा गुर्जरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए । फिर जिस दिन वहांके पिछले राजा सुजयकरने अपना शरीर त्याग उसदिनसे तक्षक वंशके विशाल वृक्षकी मूल सदाके लिये उखड़ गई ।

जिसमहावली तक्षक जातिने अयूर्व पराक्रम और गौरव पाकर राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें आसन पाया था, भारतमें आज उसका कहीं कुछ चिह्नभी नहीं देख पड़ता ।

जित—राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंकी प्राचीन सूचीमें जितोंका नामभी पाया जाता है परंतु इसकुलके लोग कहींभी राजपूत नहीं लिखे गये, न किसी राजपूत कुलने इनके साथ विवाहादि सम्बन्ध किया ।

जितोंके पुराने इतिहासके सम्बन्धमें पहले बहुतकुछ लिख चुके हैं इससे यहां उन बातोंकी फिरसे लिखनेकी आवश्यकता नहीं है, महाराज साइरसके राजसमयसे लेकर इस्वी चौदहवीं शताब्दीतक इनका सामाजिक और राजनैतिक व्यवहार यमान रहा, पर इसके पीछे इन्होंने अपना प्राचीन धर्म त्यागकर मुसलमानी धर्मग्रहण किया, हरोडोटस कहता है कि इससे पहले जितलोग एक ईश्वरवादी थे,

* यह स्थान खानदेशमें है और इस समय वृट्टिशराज्यके अधीन है ।

× चन्द कविने इस तक्षकवंशी मनुष्यको पृथिवीराजका झंडावरदार कहा है इसका नाम चित्तु-तक्षक था ।

आत्माके अमरहोनेका उनको विश्वासंथा, और डिगायनने चीनी इतिहास वेत्ताओंके लेखोंका सार लेकर लिखाहै कि बहुत प्राचीन कालमें उनका बौद्ध धर्म था ।

जितोंके सम्बन्धमें जितनी जनश्रुति सुनी जातीहै उनका सार ग्रहण करनेसे विदित होताहै कि सिन्धुदेशके पार पश्चिम दिशाका कोई देश इनका आदि निवासस्थान था, टाडसाहबने ईस्वी पांचवीं शताब्दीकी एक शिलालिपिका पता लगायाहै उसमें लिखाहै कि इस वंशके किसी राजाने यदुकुलकी एक रमणीके साथ विवाह * कियाथा कदाचित् इसीसे जितलोग अपनेको यदुवंशी कहते हों ।

इसवातका पता नहीं लगता कि पांचवीं शताब्दीके कितने पहले यहलोग राजस्थानमें आये परन्तु ध्यान देकर उनकी जीवनी पढ़नेसे स्पष्ट विदित होताहै कि सन् ४४० ईस्वीमें वे नवीन गौरवसे युक्त हुएथे और उससमय उनके प्रचण्डप राक्रमने एशिया और यूरोप खण्डको एकवारही दग्ध करदियाथा ।

सिन्धुतीरके शालिवाहन पुरसे निकलकर यादवोंने शतद्रु (सतलज) पारकरके

* कोटके दक्षिण कुछदूरपर कुनसूया नामकी एक छोटीसी नगरी है यहांके किसी मंदिरमें टाडसाहबने सन् १८२०में एक शिलालेख पायाथा, शालपुरके महाराज शालीन्द्रजितके गुणोंके कथनके उपरान्त एक स्थानपर उस शिलामें लिखाथा कि शालीन्द्रके कुलमें देवलङ्गनामक एक और वीर जन्माथा उसके बेटेका नाम शम्बूक था शम्बूकसे दिगल जन्मा, दिगलने यदुवंशकी दो रमणियोंसे विवाह किया, उन दोनोंमें एकके गर्भसे वीरनरेन्द्र नाम एकपुत्र जन्मा कदाचित् इसीकारण जितगण अपनेको तक्षक वंशोत्पन्न कहतेहों क्योंकि एक और शिलामें लिखाहै कि मेरे शत्रुको नमस्कार, उसका गौरव मैं किसप्रकार कथन करूं जो विख्यात जित काथिद भगवती पार्वतीके स्तनोंसे निकलनेवाले अमृतको पान करताहै जिसके पूर्वपुरुष वीर तुरक्ष (तक्षक) देवदेव महादेवके गलेमें हारकी भांति विराजमान रहतेहैं इससे यहवात मलीभांति सिद्ध होजातीहै कि जितलोग अपनी उत्पत्ति यदुकुलसे बतलानेपरभी तक्षक कुलोत्पन्नहैं ।

तुरक्षका अपभ्रंश होकरही क्या इससमय तुरुक्ष शब्द होगयाहै । अनुवादक.

× सन् ४४९ई०में हज्जिष्ट और हर्पनामक जित भाइयोंने अपने विजयी सैन्यदलको जटलैण्डसे श्वेतद्वीपमें लाकर प्रसिद्धकेण्ट राज्यस्थापन किया, इधर जिसप्रकार इन दोनों भाइयोंने बड़ी वीरताके साथ अपना राज्य स्थापन किया उसीप्रकार दूसरे जातिभाई अपनी तेजस्विताका परिचय देतेहुए दूसरे स्थानोंमें अपनी विजयपताका उड़ाने लगे एक ओर जिसप्रकार एलादिक वीरतारूपी नाटक समाप्त हुआ वैसेही पृथिवीके दूसरी ओर अफ्रीका और स्पेनकी विशाल छातीपर थियोडारिक और जिनसे टिक जा गिरे ।

१ इसका दूसरा नाम शालपुरथा बारहवीं शताब्दीमें इसको विशेष गौरव प्राप्तथा, उस समय यह पंजाबके प्रधान नगरोंमें गिना जाताथा, सोलंकीकुलके महाराज कुमारपालके राजसम्बन्धमें

मरुभूमिनिवासी देहिया और जोहिया नामक राजपूतोंके नगरमें आश्रय लिया, वहां उन्होंने दिरावलकी स्थापना की वहां कुछदिन निवास करनेके पीछे मुसलमानोंसे पीड़ित होकर उनको इसलामधर्म स्वीकार करना पड़ा, मुसलमान होनेपर वे लोग जावड़ (जाट) कहलाने लगे यदुवंशियोंके प्राचीन भट्टग्रन्थोंमें इन जाटोंके सम्बन्धमें चौबीस शाखाओंका वर्णन पाया जाताहै, इसप्रकार यह जित जाति पंजावमें स्थित होकर बहुत दिनतक अपने अटल प्रतापसे विराजमान रही, महमूदगजनवीकी चढाईका वृत्तान्त पढ़नेसे इस वृत्तान्तकी सत्यता भली भाँतिसे प्रमाणित होतीहै कि जब महमूद सौराष्ट्र (सूरत) का युद्धकर अपने देशको लौटा जाताथा उस समय जितोंने उसे इतना दुखी और तिरस्कृत किया कि ४१६ हिजरी सन् १०२६ में उसने बड़ी सेना लेकर फिर पंजावपर आक्रमण किया, फारसी भाषाके तारीख फरिश्तेमें इस युद्धके विषय में जो कुछ लिखाहै उसका अनुवाद हम यहां प्रकाश करतेहैं ।

“ जौद × पर्वत मालाके चरणोंको धोतीहुई जो नदी बहतीहै उसके किनारेपर बसेहुए मुलतानके चारोंओर जो स्थानहै उनमें जितलोग रहतेथे, महमूदने मुलतानमें आकर देखा कि जितलोगोंकी वासभूमि बड़े २ नद और नदियोंसे घिरीहुई है इससे जलयुद्धके सिवाय और किसीप्रकारके युद्धका सुवीतान जानकर उसने १५०० नावें † वनवाई महमूद इसवातको भी जागताथा कि जितलोग जलयुद्ध करनेमें चतुर होतेहैं इसकारण उसने अपनी नावको निरापद रखनेके निमित्त एक एक नावके शिरेपर लोहेकी छः छः शलाकायें लगवाई एक एक नावपर बीस २ धनुर्धर सिपाही नियत किये और गोली बारून्दी भी बहुत सामग्री एकत्रित की, यह प्रबन्ध करके वह मुलतान में आकर युद्धकी प्रतीक्षा करने लगा. इसओर जितोंने अपने बाल बच्चोंको सिन्धु नागर*में भेजकर चारसहस्र [किसीके मतसे आठसहस्र] नौका सज्जित

एक दिलाखे पाया गयाहै उसमें लिखाहै कि महाराज कुमारपाल शालपुरतक अपनी विजयी सेना लेगयेथे ।

× यदुकुलध्वंस होनेपर बचेहुए यादव अपने कुटुम्बियोंके संग भारतवर्षको त्याग कुछ दिनोंतक सिन्धुके दुआवेंमें जा रहेथे, इससे उसदेशका नाम यदुकाहुङ्गभी है ।

† १३००वर्ष पहले इसीस्थानके निकट सिकन्दरने वह बड़ी नाव तयार कराईथी जो वेवलोनको गईथी ।

* इतिहासवेत्ता डोफरिश्तेके आधारपर लिखताहै कि सिन्धुसागर एक द्वीप है पर वास्तवमें वह द्वीप नहींहै टाडसाहबका कथनहै कि डोसाहबने फरिश्तेके अनुवादमें बहुत जगह भूलें कीहैं ।

करके गजनियोंका सामना किया, शीघ्रही दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ, परन्तु मुसलमानोंकी नौकाओंके आगे जो लोहेकी शलाकायें लगीहुईथीं उनसे टक्कर खाकर जितोंकी बहुतसी नावें फटकर जलमें डूबगईं जो फटनेसे बचीं वह गोलोंकी वृष्टिसे छिन्न भिन्न हो नष्ट होगईं । इसप्रकार इसयुद्धमें बहुत थोड़े लोगोंने अपने प्राणोंकी रक्षा पाई वचेहुए जितोंको मारेजानेवाले जितोंसेभी अधिक कष्ट उठाना पड़ा वे सब वन्दी बनालियेगये ।

इसबातपर किसीप्रकारभी विश्वास नहीं किया जा सकता कि इसयुद्धमें जितवंश सर्वथा निर्मूल होगयाथा, अवश्यही कुछलोग शेष रहगयेथे जिन्होंने महमूदके हाथसे छुटकारा पानेके निमित्त दूसरे स्थानमें जाकर आश्रय लिया, परन्तु उन्होंने पंजाबको एकसाथही नहीं छोड़दिया कारण कि अपना देश छोड़कर जिस पंजाबदेशमें वे रहनेको आयेथे सहस्र २ विपद् पड़नेपरभी वह उनसे न छोड़ागया × यद्यपि महमूदके दारुण कोपसे वे उजड़गये परन्तु कई व्यक्ति जो युद्धमें बचगयेथे समय पाकर वे बड़े बलवान् हुए और प्रतिष्ठाके सबसे ऊंचे शिखर पर आरूढ़ हुए,

हून-शाकदीपके जिनवीर लोगोंने राजस्थानकी छत्तीस जातियोंमें आसन पायाहै हून जातिभी उसमेंसे एकहै यह ठीक किस समय भारतवर्षमें आये सो भली भांतिसे निरूपण करना कठिनहै यह विदित होताहै कि उस दीपकी कात्तिबल और मक्काहन आदि जातियां [जो अबभी प्रायः सौराष्ट्र दीपमें रहतीहैं] जिस समय आईथीं उसी समय यहभी भारतमें आये ।

एक शिलालिपिमें लेखहै कि विहार देशके किसी राजाने दिग्विजयके समय और और देशोंको जीतकर हूनलोगोंके दर्पको चूर्ण कियाथा, इसबातसे पहले हून जातिका वर्णन पहले कहीं दिखाई नहीं देता, * इसके पीछे भेवाड़के

× जिन जितवीरोंके प्रचण्ड पराक्रमसे एकसमय सब संसार कांप गयाथा, आज उनके वंशधर गण लेती करके अपना जीवन व्यतीत करतेहैं उनके देग्वनेस अब यह ज्ञात नहीं होता कि यह प्रचण्डवीर जितोंके वंशधरहैं, पंजाब देशमें अबभी यह लोग जित और जाट कहेजातेहैं भारतवर्षके अन्य स्थानोंमेंभी यह ज्यादा जाट कहातेहैं इनमें बहुतसे मुसलमान होगयेहैं हिन्दूजाट अबभी पराक्रमीहैं ।

१ बहुतोंका अनुमानहै कि महात्मा गुरुगोविन्दसिंहने जित लोगोंको लेकरही शिखर संप्रदाय प्रतिष्ठित कियाथा ।

* पौराणिक ग्रन्थोंसे विदित होताहै कि भारतवासी बहुतकाल पहले हूनसे परिचित थे जिस समय वशिष्ठ और विश्वामित्रका महासमर हुआथा उनमें जिन वीरोंने वशिष्ठजीकी सहायता कीथी उनमें हूनोका नामभी पाया जाताहै यथा—

प्राचीन भट्टग्रन्थोंसे विदित होता है कि जिस समय मुसलमानोंने सबसे पहले चित्तोर पर चढ़ाई कीथी, उससमय उसकी रक्षाके लिये जिनराजाओंने खड़गधारण कियाथा, उनमें हूनोंके राजा उङ्गटसीभी थे इतिहासवेत्ता डिगायनसाहब कहतेहैं कि 'उङ्गट, हूनों अथवा मुगलोंकी एक बड़ी समितिका नामहै परन्तु अबुलगाजी इस शब्दका दूसराही अर्थ करताहै वह कहताहै जो तातारों चीन देशकी बड़ी दीवान्की रक्षा करतेथे वे उङ्गट नामसे पुकारे जातेथे इन उङ्गट लोगोंका एक स्वाधीन राजाथा, जो इनसे बहुत पुरस्कार और सन्मान पाताथा प्रसिद्ध डैन विल नाहब कहतेहैं कि हून भारतवर्षके उत्तरीय भागमें निवास करतेथे यदि-उनका यह मत ठीक मानलियाजाय तो अवश्यही कहना पड़ेगा कि हूनोंने भारतवर्षमें क्रमशः प्रवेश करके सौराष्ट्र और मेवाड़में प्रतिष्ठा प्राप्त कीथी ।

अदिप्राचीन समयमें चम्बल नदीके किनारे वरौली नाम एक नगरी थी कहतेहैं कि सबसे पहले हून लोगोंने इस नगरीमेंही अपना पड़ाव डालाथा. यहां यह जानि थोड़े समयमें ही निशेष प्रतिष्ठाको प्राप्तहुई और इसी स्थानमें अपने गौरव और सम्पत्तिका चिह्न रखनेके निमित्त कईएक अटा अटारियें बनवाई इससमय उम स्थानपर भिन्नसरोर बसाहुआहै कहतेहैं वहां हूनोंने एक विशाल और स्मरणीक सेनगडचोरीनामक आनन्दभवन बनवायाथा ।

गुजरातके इतिहासमें इनलोगोंके लिये जो कुछ लिखाहै उससे निश्चय होताहै कि हून लोग बारहवीं शताब्दीमें विशेष प्रतिष्ठित हुयेथे, इससमय यद्यपि वह इस प्रतिष्ठा और गौरवसे हीन होरहेहैं तोभी विशेष जाच करनेसे ज्ञात होजायगा कि उनके पूर्व गौरवके दो चार चिह्न अबतक सौराष्ट्र देशके स्थान स्थानमें दिखाई देतेहैं, एक समय जिस भयंकर पराक्रमी हूनजातिको प्रचण्ड पदाघातमें सम्पूर्ण एसिया और यूरुपखण्ड कम्पायमान हुआथा, सैकड़ों नगर कस्बे और ग्राम जिनकी भयंकर वीर्याग्निमें भस्म होगयेथे आज यूरुप और एशियाके भिन्न २ स्थानोंमें उनका बहुत थोडा चिह्न दिखाई देताहै,

कात्तियों (काठियों)के सम्बन्धमें पहले बहुतकुछ कहा जा चुकाहै इस समय इनके आचार विचार और रीति नीतिके विषयमें संक्षेपसे औरभी कुछ कहाजा-

“चिवुकांश्च पुलिन्दांश्च चीनान् हूजान् सकेरलान्।ससर्ज फेनतः सा गौम्लेंच्छान् बहुविधानपि॥”

महाभा० आदि०

रघुवंशके चौथे सर्गमेंभी लेखहै कि रघुने दिग्विजयके समय हूनोंको परास्त किया था । यथा—

“ तत्र हूनावरोधानां मर्तृषु व्यक्तविक्रमम् । कपोलपाटलादेशि बभूव रघुचेष्टितम् ॥

ताहै, राजस्थान और सौराष्ट्र देशके सभी भट्टग्रन्थोंके मतानुसार यह जाति राजस्थानके ३६ राजकुलोंमें प्रतिष्ठा प्राप्त करसकतीहै, सूरतमें एक समय इनकी बड़ी प्रतिष्ठा हुईथी, इसबातका यथार्थ प्रमाण वहांके भट्टीय काव्यग्रन्थोंमें पाया जाताहै इनकेही गौरव और प्रतिष्ठाके प्रभावसे सौराष्ट्रके बदले काठियावाड़ नाम प्रचलित होगयाहै ।

जो जानियें शाकद्वीपसे आकर एक समय सौराष्ट्रदेशमें प्रभुताको प्राप्त हुईथीं उनमेंसे बहुत लोगोंने अपने पूर्वपुरुषोंकी रीति नीतिको छोड़दिया परन्तु यह काठी जाति अभीतक अपनी पुरानी चालपर चली जातीहै, इनके आचार व्यवहार इनका धर्म कर्म सबही अवतक एक भावसेहै ।

महावीर सिकन्दर जिस समय चढ़ाई करके भारतवर्षपर आयाथा उससमय काठी जानि सिन्धुनदकी पांचों शाखाओंके संगमस्थानमें निवास करतीथी, कहतेहैं कि इन लोगोंने सिकन्दरको इतना सतायाथा, कि उसने इनके अत्याचारका बदला लेनेके निमित्त एकवार स्वयं युद्धयात्रा कीथी, उस युद्धमें बड़ी कठिनाईसे सिकन्दरकी जान बचीथी, इसमें उसका बडाही भाग्य समझना चाहिये कि समस्त पूर्वके और पश्चिमके अधिकांश देश जीतकर सिन्धुनदके किनारे आकर वहांके निवासी कत्तियों * (काठियों) के हाथसे उसको अपने प्राण विसर्जन नहीं करने पड़े ।

अतिदूर पंजाबदेशका दक्षिण पूर्वी भाग छोड़कर इसवी—शताब्दीके आरंभमें काठीलोग सौराष्ट्रदेशमें आकर बसेथे जैसलमेरके पुराने भट्टग्रन्थोंमें देखा जाता है कि काठीजातिके लोगोंने यादवोंसे बड़ा युद्ध किया था ।

राजपूतकुलतिलक महाराज पृथ्वीराज जिस घोर संग्राममें अपनी स्वाधीनता खो बैठे उसमें जो वीर इनकी तथा इनके प्रतिद्वन्दी जयचन्दकी सेनामें सम्मिलित थे उनमें विशेषकर काठी लोगही थे यद्यपि उस समय यह लोग अनाहिल वाला पाटनके महाराजके आधीन सामन्त राजाकी समान राज्य करतेथे तो भी विशेष खोज करनेसे जाना जाताहै कि वे लोग अपनी इच्छासेही पृथ्वीराज और जयचन्दकी सहायता करनेको संग्राममें गये थे ।

अवतक काठीलोग सूर्यभगवानकी पूजा कियाकरतेहैं शान्तिसे अपने जीवनका व्यतीत करना अच्छा नहीं समझते यद्यपि चोरी बहुत बुरी है तोभी यह

* क्या कत्तीका बिगड़कर, खत्री शब्द तो नहीं बनगया ।

उत्सेही पसन्द करते हैं, जिससमय अच्छे घोड़ेपर सवार हो हाथमें त्रिशूल लिये काठीवीर पथिकोंसे पथकर ग्रहण करने लगते हैं उससमय उनके आनंदकी सीमा नहीं रहती ।

बल्ल-क्या नवीन और क्या प्राचीन सभी भट्टग्रन्थोंमें छत्तीसराजकुलके आसन पर बल्लजाति विराजमान है भट्टलोगोंने इनको 'ठट्टमुलतानके राव, इसनामसे पुजाराह, इससे निश्चय होता है कि यह लोग सिन्धुनदके किनारे रहते थे बल्ल-गण अपनेको सूर्यवंशी कहते हैं और अपनी जातिका परिचय दृढ करनेके निमित्त यह कहाकरते हैं कि रामचंद्रजीके पुत्र लवके वंशमें बल्ला अथवा वप्पा नामक एक वीरने जन्म लिया था, वही हमारा गोत्रपाति हुआ । बल्लगण सौराष्ट्र देशमें जायकर प्राचीन धंक नगरमें स्थित हुएथे । प्राचीनकालमें इस धंक-नगरका नाम मंगीपाटन था । कुछदिनोंके पीछेही इनलोगोंने उक्तनगरके चारोंओरके देशोंको जीत लिया । यही कारण है जो उस देशका नाम बल्ल क्षेत्र हुआ ।

बल्ललोगोंके एक और दलका विवरण पायाजाता है, वे लोग अपनी उत्पत्ति चंद्रवंशसे बतातेहैं । वह कहतेहैं कि सिन्धुनदके किनारे बसे हुए आरोर-नगरमें बाल्हिकराजालोग रहतेथे । वेही हमारे पूर्वपुरुषहैं, अतएव इससमय वह सीमांसा करनी बड़ी कठिनहै कि बल्लवंशकी उत्पत्ति किससे हुई ? सन्देहसवीकी तरहवीं सदीमें बल्ललोग विशेष बढ़गयेथे । इससमय वह कभी २ मेंवाड़में छापा मार जातेथे । कहतेहैं, कि इसकारणसे गहिलोत वीर हमीरने इन लोगोंको पराजित करके इनके राजाको बध कियाथा ।

झालामकवाहन । झालाकुलको राजपूत कहते हैं, परन्तु चंद्र सूर्य और अग्निकुलमें इनका कोई वृत्तान्त नहीं पाया जाता । ऐसा ज्ञात होता है कि यह लोग भारतके उत्तरदेशसे सूरतदेशमें चले आयेथे ।

केवल एक कार्यके होजानेसे झालाकुल भारतवर्षमें विशेष प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित होगयाथा । वह कार्य असाधारण हुआ, वह कार्य विस्मयकर वीरता और अमानुषिक आत्मत्यागका मानो दूसरा नाम था । जिस दिन वीरश्रेष्ठ प्रताप-सिंह दिल्लीश्वर अकबर की भयंकर सेनासे घिरगये उस दिन एक झालावंशीय वीर पुरुषने अपने जीवनकी आहुति देकर उनके प्राणको बचायाथा । इस अपूर्व प्राणोत्सर्ग और वीराचरण करनेके लियेही झाल वंशवाले उस दिनसेही राजपू-तांमें विशेष सन्मानको प्राप्तहुए । किसी इतिहासमेंही झालाकुलका प्राचीन वृत्तान्त नहीं पाया जाता और इस विषयकाभी कोई वृत्तान्त नहीं ज्ञात होता

कि ठीक कौनसे समयमें यह लोग सूरत देशमें आयेथे, तथापि केवल इतना जानाजाता है कि, जब सबसे पहले मुसलमानोंने चित्तौरको घेरा था तब भारतवर्षकी और और वीरोंकी समान झाला लोगोंने भी अपनी २ सेनाके साथ चित्तौर नाथकी सहायता करनेकेलिये संग्राम भूमिमें गमन कियाथा । *

जैत्व, जित्व, जेटवा, वा, कोमारी:—अति प्राचीन कालमें इन लोगोंकी प्रतिष्ठासूरत देशमें हुई थी, समस्त कुल सूचियोंमें कामारियोंको राजपूत लिखाहै। परन्तु किसी राजपूतके साथ इनके सम्बन्धका होना किसी जगह भी नहीं पाया-जाताहै ।

कामारी लोगोंके प्राचीन जीवन सम्बन्धमें कुछ थोड़ासा वृत्तान्त अवतक प्रगट हुआहै परन्तु यह वृत्तान्तभी कपोल कल्पित बातोंसे ढकाहुआ है, भट्ट ग्रंथोंमें देखा जाताहै, कि कामारी लोग गुमरीनामक नगरमें वास करतेथे । अपनेको महावीर हनुमानजीसे उत्पन्न हुआ कहते हैं, और मतको दृढ करनेके लिये अपने राजा लोगोंको “पुच्छरिया” अर्थात् दीर्घ पुच्छ कहकर गर्वसहित अपना वर्णन करते हैं । भट्टग्रंथोंमें देखा जाताहै, कि गुमरीनामक नगरमें इनलोगोंके एकसौ तीस राजाओंने राज किया था, सन् ईसवीकी आठवीं शताब्दीमें यह लोग यहांतक बढ़ गये कि इन्होंने उनमहाराज . अनंगपालकी कन्यासे विवाह कियाथा कि जिन्होंने पुनर्वा दिल्लीकी प्रतिष्ठा की थी . परन्तु जैत्वलोग उस गौरवको बहुत दिनोंतक नहीं भोगसके । भट्टग्रंथोंमें लिखाहै कि बारहवीं शताब्दीमें शिहकामारी इनके एक राजाको शत्रुओंने गुमरी राजधानीसे निकाल दियाथा उसदिन जैत्व × लोगोंने जो नीचादेखा तो फिर पीछे ऊपरको मुँह नहीं उठा सके । ‡

गोहिल:—यहलोग एक एक समय बड़े प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित हुएथे, परन्तु कालकी कठोर विधिके अनुसार वह प्रतिष्ठा और वह प्रसिद्धि आज किधरको

* इस जातिके नामपर सौराष्ट्र देशमें एक विशाल विभागका नाम झालावाड़ कहाजाताहै । वंकनीर हुलवद और द्रङ्गद आदि कई एक सम्पत्ति शाली नगरोंसे झालावाड़ शोभायमानहै ।

× इन जैत्व लोगोंसे सौराष्ट्रके एक जनपदका नाम जैतवार हुआहै ।

उसके पश्चिम किनारेपर इनका वर्तमान वासस्थानभी दिखाई देताहै । जिसको आजकल पोरबन्दर कहतेहैं ।

‡ जैत्व राजालोग “राणा” उपाधिको धारण करतेहैं ।

लोप होगई । आज उन लोगोंके वर्तमान वंश धरगण उस पहले गौरवकी यादको भूल कर वनजव्योपारमें लगे हुए किसी प्रकार सुख दुःखसे अपने दिन काट रहे हैं ।

सबसे पहले यह गोहिललोग लूनी नदीके किनारे वसे हुए जूनाक्षीरनामक देशमें स्थित हुए थे ।

परन्तु इसका निरूपण करना जरा कठिन है, कि यहलोग किस समय और कहाँसे यहां आनकर वसेथे कहतेहैं कि खिरवानामक एक भीलराजाका संहार करके गोहिल लोगोंके पूर्वपुरुषोंने इसदेशको अपने अधिकारमें कियाथा ।

उक्त क्षीरगढके सिंहासनपर गोहिल लोगोंने बीस पीढीतक राज कियाथा तदोपरान्त बारहवीं शताब्दीके शेषभागमें दुर्द्धर्षराठौर वीरोंने वढकर इन लोगोंको उसदेशसे निकाल दिया इसके पश्चात् गोहिल लोगोंने सूरतदेशके अन्तर्गत परमगढ़नामक स्थानमें कुछ कालतक राज किया । परन्तु इनकी मन्द भाग्यतासे यह नगर थोड़ेही दिनोंमें विध्वंस होगया तब इनलोगोंके दो दल होगये, और दोनोंने पृथक् २ स्थानोंमें आसरा लिया एक दल वगवानाम जनपदमें जाकर वहांके राजाकी रक्षामें रहा । दूसरेने शिहोरमें जाकर उसके निकट भावनगर और गोगोकी स्थापना किया । यह भावनगर मिही उपसागरके किनारेपर स्थापित है गोहिल लोग आजकल यहींपर रहतेहैं । गोहिल लोगोंके नामानुसार सौराष्ट्र उपद्वीपका पूर्वभाग गोहिलवाड कहलाताहै । सारव्य व सारीयास्थ । इनकी ख्याति वा प्रतिष्ठाका कोई वृत्तान्तभी भारतवर्षमें नहीं पाया जाता आजके लोगों की गप्पों और कहावतोंसेही इनकी पूर्वप्रसिद्धि और पूर्व प्रतिष्ठा ज्ञात होतीहै । भट्टकविकुलके कुलाख्यान ग्रन्थोंमें सारव्यगण “ सत्रियसार ” के नामसे पुकारे गयेहैं, परन्तु शोककी बातहै कि इनकी सारताका कोई उदाहरणभी किसी ग्रंथमें नहीं पाया जाता ।

सिलार वा सुलार—सारव्य लोगोंकी समान इन सिलार लोगोंका केवल नामहीं आज कालके विशाल समाधिक्षेत्रमें शेष रह गयाहै । आज यह नामही उनके पहले जीवनकी गुप्त और पिछली परछाईहै और यही उनके जीवनका पिछला चिह्नहै ।

विलायतके टोलिमी (Ptolemy) और दूसरे प्राचीन इतिहासकार सौराष्ट्र प्रदेशको लारिक नामसे पुकारतेथे । बहुतोंका अनुमान है कि उक्त लारिक शब्द इस सुलारसे उत्पन्नहुआहै एक समय इस सुलार जातिकी सौराष्ट्र प्रदेशमें बड़ी प्रति-

छाथी कहतेहैं कि महाराज सिन्धरायजयसिंहने इनको अपने राज्यसे एकसाथही निकाल दियाथा परन्तु आज वह गौरव केवल नाममात्रको शेष रहगयाहै । आज बौद्धधर्मावलम्बी कितनेएक वाणिक लोगोंके सिवाय और किसीकोभी इस नामसे पता बतातेहुए नहीं देखा जाता ।

देवी या दावी—एक समय यह जाति सौराष्ट्रमें प्रसिद्धथी । परन्तु आजकल कोई विशेष वृत्तान्त इनलोगोंका नहीं देखाजाना । केवल कहावतही इनकी प्राचीन विख्यातिका पता बतातीहै । इनकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कोई विशेष संतुष्टकर प्रमाण नहीं पाया जाता किसी २ भट्टने देवी लोगोंको यदुकुलकी शाखा कह कर वर्णन कियाहै । परन्तु इसवातका कोई ठीक प्रमाण नहीं मिलता ।

गर या गोर—यद्यपि यह जाति एक समयमें राजस्थानके बीच सम्मान और प्रसिद्धिको प्राप्त हुईथी परन्तु विशेष प्रतिष्ठा और प्रभुता इनको कभी प्राप्त नहीं हुई । बहुतसे आदमी यह कहतेहैं कि वंगदेशके लोगोंने इसही कुलसे-उत्पन्न होकर अपने नामानुसार लक्ष्मणावती नगरीका नाम रक्खाया ।

प्राचीन भट्टलोगोंके काव्यग्रन्थोंमें इन लोगोंको “अजमेरकेगर” कहकर वर्णन कियाहै । इससे ज्ञात होताहै कि यह लोग चौहानोंसे पहलं उसदेशमें प्रतिष्ठित हुएथे । बहुतसे भट्टग्रन्थोंमें यहभीहै कि गर लोगोंने संग्रामके समय अनेकवार आर्यवीर महाराज पृथ्वीराजकी सहायता कीथी । परन्तु दुःखसे कहना पड़ताहै कि इनके प्राचीन गौरवका कोई उदाहरण आजकल दिखाई-नहीं देता ।

दर वा दोदा—यद्यपि समस्त वंशपत्रिकाओंमें इनका नाम लिखाहुआ देखा जाताहै, परन्तु चरित्रका कोई विवरण भट्टग्रन्थोंमें नहीं देखा जाता एक समय चौहान वीरमहाराज पृथ्वीराजने इनपर विजय प्राप्त करके अपने भाग्यको धन्य मानाथा आज अनन्त कालसागरकी तलीमें इसजातिका इतिहास डूब गयाहै ।

घरोवाल या घरवाल—इस कुलमें वैसीही वीरताथी, जैसी राजपूतोंमेंहै । ऐसा जानपड़ताहै कि इसही कारण इनको राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें आसन प्राप्त हुआहै । परन्तु अबतक किसी राजपूतने उनलोगोंके साथ अपनी व्याह-शादी नहीं की । सबसे पहले यह घरोवाललोग काशीजीमें रहतेथे । इन-लोगोंका एक शाखाकुल बुन्देलनामसे पुकारा जाताहै । अनेक लोगोंकां

यह अनुमान है कि बुन्देल शब्दसेही बुन्देलखण्ड नाम रक्खा गया है। समयके अनुसार यह बुन्देला नामही धरवालनामके बदले प्रसिद्ध होगया कालिंजर मोहिनी महेवा इसके प्रसिद्ध नगर हैं।

ईसवीकी बारहवीं शताब्दीमें मानवीरनामक एक वीरपुरुष इस बुन्देलाकुलमें उत्पन्न हुआ इस मानसेही इन लोगोंके गौरवका आरम्भ हुआ। मान वीरसे पीछे तेरहवीं पीढ़ीमें मधुकरशाहनामक एक महापराक्रमी राजा उत्पन्न हुआ। इसने प्रसिद्ध उरछा राज्यको स्थापित किया। बादशाही राज्यसे लेकर बुन्देला लोगोंकी वीरता विशेषतासे देखी जाती है। मुगल बादशाहकी अनुकूलताकेलिये इन लोगोंने एक समय जिस असीमवीरता और प्रभुभक्तिको प्रकाशित कियाथा उसका वृत्तान्त अकबरशमैजहाँ व औरंगजेबके जीवनचरित्रमें चमकीले अक्षरोंसे लिखा हुआ है।

वीरगृजर-भट्टगण इन लोगोंको सूर्यवंशीय कहते हैं। गहिलांतोंकीनाई यह लोगभी अपनी उत्पत्ति श्रीरामचन्द्रजीके पुत्र लवसे बताते हैं। एकसमय वीरगृजन्म धुन्दर देश * में अत्यन्त प्रतिष्ठा पाईथी, मछेरीका प्रसिद्ध पहाड़ी दुर्ग गजोर × बहुत कालतक इनकी राजधानी रहीथी, राजगढ़ और अलवाभी इनके अधिकारमेंथे परन्तु कुशावहोंने इनको उन स्थानोंसे निकालकर वहाँ अपना आधिपत्य जमाया।

नैंगर-इनका कोई विशेष वृत्तान्त नहीं पाया जाता और यहभी नहीं जाना जाता कि इन्होंने कभी गौरव वा प्रतिष्ठा प्राप्त कीथी वा नहीं यमुनाके किनारे पर जा जगमोहनपुर बसा हुआ है, वही इनके गौरव कीर्तिकी साक्षा देरहा है।

नीकरवाल-सैंगरोंकी भांति इसकुलनेभी कभी राजस्थानके राजकुलमें प्रतिष्ठा वा प्रभिद्धि नहीं पाई, चम्बल नदीके किनारे यदुवतीके समीप इनलोगोंने नीकरवाल नाम एक नगर स्थापित किया था वह इस समय ग्वालियर राज्यके आधीन है।

वाईस या वेस-इसकुलनेभी राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें स्थान प्राप्त किया परन्तु चन्दवरदाई और कुमारपालचरितमें इनका वर्णन नहीं पाया जाता, इस-

* जयपुर और म(के) छारी, प्राचीन धुरन्वर राज्यके अन्तर्गत थे।

× वर्तमान राजगढ़से आठकोश पश्चिमकीओर राजोरके किलेका टूटा फूटा चिह्न अबभी दिखाई देता है, उसमें भगवान नीलकंठका एक पुराना मंदिर है यह मन्दिर अनेक प्रकारकी शिला-लिपियोंसे भरा हुआ है।

से यह बात सहजमेंही जान ली जाती है कि इस कुलने कभीभी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं की इस समय यह कुल असंख्य शाखाओंमें विभक्त होगया है ।

देहिया—यह राजकुल प्राचीन है इसके लोग सिंधु और सतलजके संगमके समीप रहते थे, जैसलमेरके भट्टग्रन्थोंमें इनका कुछ वर्णन मिलता है, इनके नाम और राजस्थानके विषयपर विशेष ध्यान देनेसे विदित होगा कि सिकन्दरके कहे हुए दाही यही हैं ।

जोहिया, यह लोग देहिया लोगोंके साथ बहुतायतसे रहा करते हैं और यही कारण है जो देहियाके साथ इनका नाम लिखा जाता है । कुछ काल-तक एक साथ रहनेके पीछे यह लोग गाराके पारहुए और भारतवर्षकी मार वाड भूमिमें बड़ी प्रतिष्ठाको प्राप्त किया प्राचीन भट्टग्रन्थोंमें इन लोगोंको “ जंगलदंशपति ” को नामसे पुकारा है ।

मोहिलः—इस बातका समझना बड़ा कठिन काम है, कि कौनसे गुणके हानेसे यह लोग राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें गिने गए भट्टलोगोंके काव्यग्रन्थोंमें जो इनके सम्बंधका कुछ पुराना वृत्तान्त पाया जाता है उससे ज्ञात होता है कि आजकल जहां बीकानेरका राज स्थापित है, यह लोग वहीं पर राज करते थे, फिर राठौरलोगोंने उसदेशमें आकर इनको निकाल दिया था ।

निकुम्प—समस्त भट्टग्रन्थोंमें देखा जाता है, कि एक समयमें निकुम्प जाति प्रसिद्ध थी । परन्तु इसका वर्णन कुछभी नहीं पाया जाता कि कौनसे गुणसे यह जाति प्रसिद्ध हुई ।

* गहिलौतगणोंके द्वारा मंडल गढके लिये जानेमें पाहिले यह मंडलगढ निकुम्पकुलके अधिकारमें था ।

राजपाली—इनका कोई विवरण अवतक प्रगट नहीं हुआ, समस्त भट्टग्रन्थोंमेंही यह लोग राजपालि, राजपालिक या शुद्धपालनामसे पुकारे गए हैं कोई २ कहते हैं कि राजपाल शक जातिसे उत्पन्न हुए हैं ।

दाहिर—केवल कुमारपालचरित्रकी वर्णनाके अनुसार इन लोगोंको राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें आसन दिया जा सकता है । वास्तवमें इनका

* गहिलौत कुलकी सूचीमें लिखने वालोंके भ्रमसे “ देविल ” शब्दको “ दिल्ली ” लिखा गया है, परन्तु विचार कर देखनेसे निश्चय ज्ञात होता है कि जिस वर्णनमें उपरोक्त देविल शब्द लिखा गया है, उस समय दिल्ली शब्द उत्पन्न ही नहीं हुआ था । चित्तौरके भट्टलोगोंके काव्यग्रन्थोंके देखनेसे देविल राजवंशका थोड़ा वर्णन पाया जाता है—परन्तु यह अल्प वर्णनही भलीभांतिसे विश्वास करनेके योग्य है यह हम मुक्तकंठसे कह सकते हैं ।

ठीक और प्रमाणिक इतिहास अबतक नहीं लिखा गया, मुसलमान लोगोंने जब सबसे पहिले चित्तौरको घेरा, उस समय जो राजालोग चित्तौरनाथकी सहायता करनेके लिये संग्राम भूमिमें गयेथे, उनके बीचमें देवलके राजा दाहिरका नामभी देखा जाताहै। सिंधुदेश इनके अधिकारमें था, अब्बुलफजलने जिस देवलपति राजाकी शोचनीय मृत्युका वृत्तान्त लिखा है, वह इसी दाहिर कुलमें उत्पन्न हुआथा।

दाहिमा—एक समय इस राजकुलने बड़ी प्रतिष्ठा और सामर्थ्य पाईथी। इस जानिके वीर चरित्र राजाओंके प्रकाशमान गौरवसे समस्त राजपूत कुल गौरवमान हुएथे, परन्तु अत्युन्नत कालसागरके प्रचंड प्रवाहमें गिरकर न जाने वह सामर्थ्य, वह प्रतिष्ठा वह गौरव गरिमा कहांको विलागई? सो नहीं कहसकते, वियाना नामक प्रसिद्ध पहाड़ी किला इनके अधिकारमें था, और चौहान वीर पृथ्वीराजके अधीनमें यह लोग सामन्त राजा होकर रहतेथे। उस सामन्तभावके समयमें इन लोगोंने एक समय जिस प्रचंड वीरताका प्रकाशित कियाथा, उसका प्रत्यक्ष वर्णन महाकवि चंदभट्टके महाकाव्यमें स्पष्ट लिखा हुआहै। दिल्लीश्वर पृथ्वीराजके समयमें इस वीरवंशके तीन वीर भ्राता महाराजके अधीनमें तीन ऊँचे पदोंपर नियुक्तथे। इन तीनों भाइयोंका नाम कैमास पुण्डीर और चांयन्दराय था, बड़ा भाई कैमास महाराज पृथ्वीराजका एक प्रधान मंत्रीथा, वह जब तक इस पदपर आरूढ रहा तबतक चौहान राजका जीवन चरित्र दमकीले प्रकाशमें चमक रहाथा, दूसरा पुण्डीर भारत के सन्मुख भाग लाहौरकी रक्षा करनेके लिये विराजमान था, तीसरा चांयन्दराय पृथ्वीराजका प्रधान सेनापति हुआ। जगमग नदीके किनारे घोर कठोर संग्राममें जिसदिन भारत वर्षका गौरव रवि अस्ताचलझूटावलझी हुआ, उसदिन दाहिम वीर चांयन्दरायने जिस अद्भुत वीरताको प्रकाश किया था, उसके प्रकाशित वर्णन महाकाव्य वर्दीई ग्रंथमें भलीभांतिसे लिखाहै, वरन शहाबुद्दीनके समयमें जो मुसलमान इतिहासकार थें, उन्होंने दाहिम वीरकी उस विस्मयकर वीरताको स्वीकार करके अपने इतिहास ग्रंथोंमें लिखाहै कि “मजकूर खांडेराओकी *खोफनाक तलवारसे शहाबुद्दीनने बड़ी मुशक्कि-

* मुसलमानोंने चांयन्दरायके खांडेराओ लिखाहै।

लसे अपनी जान बचाई थी । उस दुर्दिनमें भारत वर्षके उस सर्वग्रासी प्रलय कालमें हतभाग्य भारत संतान की घोर अवनतिके साथ, पृथ्वीराजके मुख्य सहायक, यवनगर्वखर्वकारी महावीर चमुण्डरायके वीर दाहिमा कुलका जड मूलसे विनाश होगया । ×

× पृथ्वीराज रिश्तेमें चोयन्द रायके भगिनीपतिथे, महाराज पृथ्वीराजका पुत्र रणजीतसिंह, इस दाहिमवीरकी भगिनीके गर्भमें उत्पन्न हुआया दाहिम कुमारीके साथ पृथ्वीराजका विवाह वृत्तान्त महाकवि चंद्रभट्टने अत्यन्त सुन्दरताईसे वर्णन कियाहै । चोयन्दरायको किसीने चान्दराय लिखाहै ।

प्रथम खण्ड समाप्त.



“श्रीवेङ्कटेश्वर” स्टीम-यन्त्रालय-बंबई.

❀ दूसरा खण्ड । ❀

मेवाड ।

प्रथम अध्याय १.

विषय.

राजस्थान विभाग, प्रमाणके लिये अनेक भट्टग्रंथ और
शिलालेखोंका वर्णन, कनकसेन, सौराष्ट्र देशमें कन-
कसेनका प्रवेश, वहां उपनिवेशका स्थापन करना
बलभीपुर, शिलादित्य, स्लेच्छोंकी बलभीपुर
पर चढाई बलभीपुरका ध्वंस होना ।



यवीर राजपूत जातिकी बंशावली और उत्पत्तिके सम्बंधमें यथा-
शक्ति अनुसंधान करके इससमय राजस्थान देशका इतिहास
लिखनेकी चेष्टा की जाती है ।

विशाल राजवाडा आठभागोंमें बटा हुआ है जिस क्रमसे
टाडगाहवन यहविवरण लिखा है उसीका यथार्थ अनुवाद करके यहां समस्त वर्णन
लिखा जायगा ।

पहला मेवाड वा उदयपुर ।

दूसरा मारवाड वा जोधपुर ।

तीसरा बीकानेर व किशनगढ़ ।

चौथा कोटा । } हारावती ।
पांचवां बूंदी । }

छठा आमेर वा जयपुर ।

सातवां जैसलमेर ।

आठवां भारतवर्षकी मरुभूमि ।

आठ भागोंमें बटेहुये इस विशाल राजस्थानमें मेवाड और जैसलमेर यह दोनों राजही विशेष प्राचीनता और गौरवमें प्रसिद्ध हैं जिस दिन भारत भूमिमें अपनी स्वाधीनताका खोया उसदिनसे आजतक लगभग आठसौ वर्ष बीतगये इस दीर्घकालसे व्यापी हुई पराधीनताके बीचमें कितनेही राजनैतिक हेरफेर हांगये । कितनेही विदेशीय और विजातीय भूपालोंने भयंकर गर्व करके भारत मंतानके भाग्य चक्रको जलायाहै । और भारतके हृदयके रुधिरको चूसाहै । उनके कठोर शासन दंडके प्रहारसे भारतवर्षके कितनेही राज एक साथ चूर चूर होकर खाक धूलमें मिलगये । बहुतसे राज्य ऐसे होगये कि आज जिनका निशानतक भी कहीं दिखाई नहीं देता, इस दीर्घ समयके बीचमें भारतवर्षके दूसरे जनपदोंकी समान मेवाडराजभी अनेक घोर कटांग शत्रुओंके प्रहारसे कितनेही बार चलायमान होगयाहै, कितनेही हिन्दू विद्वंसी आक्रमण कारियोंने इस पर चढ़ाई करके धन रत्न मालखजानेको लूटाहै मेवाडके नगर और गांवोंको तहस नहस करदियाहै । परन्तु इस राज्यका जैसा विस्तार तबथा, वैसाही अवहै, इसमें किसी भांति की कमती बढ़ती नहीं हुई एक समय मेवाड अपने महान गौरवके बलसे सम्पूर्ण राजस्थानका शिरमौर होगयाथा, यद्यपि आज समयके हेर फेरसे उंचा आसन खोकर नीचेमें आगिराहै, परन्तु इसका विस्तार, इसके मनुष्य अवतक जैसे के तैसेही हैं, जिस समय मेवाड इस प्रकार अपने गौरवसे दीप्तिमान होरहाथा, उससे बहुतसमय पहिले जिग्मिन् घांगपगक्रमकारी महमूदगजनवी सिन्धु नदीके “नीलेजल” * के पार हां चढ़ाई करके भाग्न वर्षमें आयाथा उस समयमें मेवाड राज्यका जितना विस्तारथा आज इस आठसौ वर्षके पीछे मेवाडकी इस वर्तमान शोचनीय दशामें भी मेवाडका उतनाही विस्तार देखा जाताहै । जिन प्राचीन ग्रंथोंमें मेवाड राजका ऐतिहासिक वृत्तान्त थोडा बहुत लिखाहुआ है, उन सबमें “जयविलास” “राजरत्नाकर” और “राजविलास” विशेष प्रसिद्ध और विश्वासके योग्यहै इनके सिवाय खुमानगयसा मामदेव परिशिष्ट तथा अनेक जैन और भट्टग्रंथोंमें मेवाडका कुछ २ वृत्तान्त देखा जाताहै, इन ग्रंथोंमें अनेक-

* डाड साहय कहतेहैं कि, जलका रंग नीलाहोनेसे मिसरका बडानद “नीलनद” कहलाताहै, सिन्धु शब्दके साथ तातारके और दो एक चीन शब्दोंके मिलान दिखा कर वे कहतेहैं कि, तातारियोंमें सिन और चैन शब्दहैं, यह दोनों शब्द नदीके अर्थबोधकहैं, और इसी कारणसे सिन्धु नदीके उत्तर किनारे पर रहनेवाले इसको आवेसिन अर्थात् श्रेष्ठनद कहतेये । तो क्या इस कारणसे ही अरब वाले अफ्रिकाके नीलनद तीर वर्ती उस विशालदेशको आवेसिनियाके नामसे पुकारतेहैं ।

मत भिन्न २ पाये जाते हैं, परन्तु भलीभांतिसे विचार करलेनेपर उन पृथक् २ पुस्तकोंमें एक अभिन्न ऐतिहासिक सत्य प्रगट होसकताहै, हम ऐसे सत्यकी सहायता-सेही मेवाडका इतिहास तैयार करनेको तत्पर हुए हैं ।

पहल कहआये हैं कि राजस्थानके भट्टकविगण महाराज कनकसेनकोही मेवाडका बसानेवाला कहते हैं । उनका मतहै कि कनकसेन भारतवर्षके किसी उत्तर देश (संभवहै कि लोहकोट) में वास करते थे समयके फेरसे उसदेशको छोड़ नस्वत् २०० (सन् १४४ ईस्वी) में सौराष्ट्रके राज्यमें आये । भट्टलोगोंका यह मत जयपुराधीश महाराज जयसिंहने मानलिया है । पंडितवरजयसिंहने अपने बनावे इतिहासमें इसमतकी पोषकता करके सूर्यवंशके साथ राजवंशकी सम्मानता मिद्ध कीहै *

महात्मा टाडसाहबको मेवाडका इतिहास बनानेमें जिनग्रंथोंसे सहायता मिलीथी उनके नाम अभी लिखचुके हैं । अब नीचे हस्तविषयको अधिकतासे लिखते हैं, जिससे ज्ञातहोगा कि टाडसाहबको इसग्रंथके बनानेमें कितना परिश्रम पडाहै ।

उदयपुरकी राजसभामें गमन करनेसे अनेक वर्ष पहिले भट्टलोगोंके पाससे टाडसाहबको मेवाडके राजाओंकी वंशपत्रिकाके कई खर्चें मिले व औरभी कईएक वंशपत्रिका मिलीं राणाकी सम्मतिसे उनके पुस्तकालयके पुराने खर्चें पढ़े तथा प्रयोजन समझकर विशेष २ ग्रंथोंकी नकल कीथी । उनमेंसे कई एक ग्रंथोंकी सूची दी जातीहै ।

(१) खुमानरायसा—यद्यपि यह ग्रंथ कुछेक आधुनिकहै, तथापि सबसे अधिक प्रसिद्ध और न्यायनीयहै, श्रीरामचंद्रजीसे लेकर इसके बनानेतक सूर्यवंशी राजाओंका क्रमानुसार वर्णन इसमें लिखा हुआहै ।

(२) राज विलास ।—मानकुवेस्वरके द्वारा यह सम्पूर्ण ग्रंथ ब्रजभाषामें लिखा गयाहै ।

(३) राज रत्नाकर ।—सदाशिवभट्टरचित । उक्त दोनों काव्य राणाराजसिंहके समयमें बनाए गये ।

(४) जय विलास ।—राजसिंहके पुत्र राणा जयसिंहके समयमें यह ग्रंथ बना मेवाडके राजाओंकी बहादुरी और संग्रामके पूर्व समयकी बातोंको ग्रहण करके इस ग्रंथकी अवतरणिका लिखी गईहै ।

(५) मामदेव परिशिष्ट कमलमीरके देवमन्दिरमें जो शिलालेख रक्खे हुएहैं यह समस्त उन्हींसे संग्रह किया हुआ ग्रंथहै ।

(६) शत्रुक्षयमहात्म्य ।—(जैनग्रंथहै) ।

ऊपरके ग्रंथ हस्त लिखित हैं इनके सिवाय कितने एक अप्रसिद्ध भट्टग्रंथों वंशपत्रिकाओं शिलालिपियों ताम्रपत्रों जैनग्रंथों, आईनअकबरी, शाहनामा जहांगीरनामा, तारीख फरिस्ता आदि अनेक फारसी और अरबीके ग्रंथोंसे मेवाडका ऐतिहासिक वृत्तान्त संग्रह कियाहै ।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि महाराज कनकसेन लोहकोट × राज्यको छोड़कर सौराष्ट्रदेशमें आवसे थे, परन्तु वे किसमार्गसे होकर दक्षिणको गयेथे सो निरूपण करना असम्भव है, कारण कि भट्टग्रंथोंमें इसका कोई वर्णन नहीं पाया जाता । कहतेहैं कि जब वह सौराष्ट्रमें पहुँचे तब वह देश पृथ्वी वंशके किसी राजाके अधिकारमें था । राजा कनकसेन उसपृथ्वी राजाको हराकर उसके सिंहासनपर आप बैठा, और शीघ्रही अपने राजको दृढ करनेमें मन लगाया, तदुपरान्त सन् १४४ ई० में उसने वीरनगरनामक एक नगर बनाया ।

कनकसेनसे नीचे चौथीपीढ़ीमें विजयसेन * नामक एक राजा उत्पन्न हुआथा, कहतेहैं कि इस विजयसेनने ही विजयपुरको स्थापित किया था । बहुत लोगोंका यह अनुमानहै कि सौराष्ट्रके उत्तर अंशमें विजयपुर बसा हुआथा; समयानुसार वह नगर ऊँजड होगया उसके खँडहरपर वर्तमान धोलकानगरी स्थापित हुई है. भट्टग्रंथोंमें देखाजाताहै, कि महाराज विजयसेनने वलभीपुर और विदर्भ † नामक औरभी दो नगरी बसाईथीं । उक्त नगरोंके बीचमें वलभीही विशेष प्रसिद्धहै, परन्तु दुःखकी बातहै, कि वलभीपुर कहां प्रतिष्ठितहै, इस बातका निरूपण करना कठिनहै, तथापि अनुसन्धान करनेवाले, पूरा तत्त्वको जाननेवाले परिव्राजकोंके सूक्ष्म खोजके बलसे यह निश्चय होगया है कि वर्तमान भाव नगरके पाँच कोश उत्तर पश्चिममें वलभीनामक जो एक नगरी दिखाई देतीहै, वही प्राचीन वलभीपुरका बचाहुआ भागहै ।—“शत्रुंजय—माहात्म्य” नामक एक जैनधर्म ग्रंथमें उक्त राज्यकी सत्यता सम्पूर्ण भावसे प्रमाणित होगई है ।

बहुतसे लोग यह कहा करतेहैं, कि उक्त वलभीपुरसेही मेवाडका राजवंश उत्पन्न हुआहै, यह बात सत्यहै या नहीं; इसका निश्चय करनेमें इससे पहिले अनेक लोगोंके अनेक मत देखे गयेथे, परन्तु कुछही काल बीता कि रानाके राज्यसे पूर्व की ओर एक भग्न शिवालयके खँडहरमेंसे एक शिलालेख निकला । इस लेखमें मेवाड राजकुलका पूर्व वर्णन संक्षेप रीतिसे लिखाहुआहै, अपने ज्ञानके अनुसार सम्पूर्ण बातोंका वर्णन करके लिपिकर्ताने अपने प्रगट किये हुए वृत्तान्तकी सत्यताको प्रमाणित करनेके लिये एक स्थानमें लिखाहै, “यह बात सत्यहै या नहीं; इस

× यह लोह कोटही कदाचित् इससमय लाहौर नामसे प्रसिद्धहै ।

* आमेरके राजा गयासिंहने विजयसिंहको नौशेरवां लिखाहै ।

† आज कल इसका नाम शिहोर है, दूसरी विदर्भनगरी जहाँ दमयन्तीने जन्म लियाथा वह इस समय बड़े नागपुरके नामसे पुकारी जातीहै ।

की प्रकाशित साक्षी वल्लभीकी दीवारें हैं” इसके अतिरिक्त राणा राज्यसिंहके समय-की बातोंका अवलम्बन करके जो एक ग्रंथ बनाया गया है उसकी अवतरणिकामें ही लिखा है कि “पश्चिममें सौराष्ट्रनामक एक देश प्रसिद्ध है। म्लेच्छोंने उसपर चढ़ाई करके वालकनाथोंको जीत लिया था, जिससमय वल्लभीपुरका यह नाश हुआ था उससमय वालकनाथराजकी बेटीके सिवाय और सब मारे गए थे” और एक कुलारव्यान ग्रंथमें देखा जाता है, कि वल्लभीपुरके विध्वंस होनेपर तहांके रहनेवाले मद्रदेशमें (मारवाड़में) भागे और वहां बल्ली संदेरी और नादालनामक तीन नगर बसाये यह तीन नगर अवतक एकही भावसे प्रसिद्ध हो रहे हैं, छठी ईस्वी शताब्दीके आरंभमें जिसदिन म्लेच्छोंने वल्लभीपुरको विध्वंस किया था, उस दिन वहां पर जैन धर्मका प्रचार था और आज उन्नासवीं शताब्दीके पिछले भागमें भी वह प्राचीन जैनधर्म वहांपर उसी प्रकारसे चलता हुआ दिखाई देता है इन तीन नगरोंके सिवाय बहुतसे खरोंमें और एक नगरका नाम भी पाया जाता है; उसका नाम गायिनी* है। कहें कि वल्लभीपुराधीश महाराजा शिलादित्यका परिवार सौराष्ट्रसे भाग कर इस गायिनी नगरमें पिछली बार जा रहा था। भट्टलोगोंके और एक काव्य-ग्रंथकी सूचनामें लिखा है कि “म्लेच्छ लोगोंने महाराज शिलादित्यके गायिनी नगरको जीता उस नगरकी रक्षा करनेमें महाराजके सहकारी प्रधान २ वीर-गण मरमर भूमिमें गिर गये; वंश निर्मूल होगया, केवल उनका नाम-मात्र शेष रहगया।”

* गायनि वा गजनि। यह वर्तमान काम्बेका प्राचीन नाम है, वर्तमान नगरके तीन मील दक्षिणमें इसका खंडहर अवतक दिखाई देता है, भट्ट ग्रंथोंमें इस प्रकारसे और भी प्राचीन वालुक नगरोंका नाम पाया जाता है, इन नगरोंका वर्णन पाठ करनेसे ज्ञात होता है कि एक समय वालक रायगण भारतके दक्षिण देशमें राज करते थे, भट्ट लोगोंके काव्यग्रंथोंमें लिखा है कि वर्तमान देवगढ़ प्राचीन कालमें विलविलपुर पट्टनके नामसे पुकारा जाता था, इस विलविलपुर पट्टनमें मेवाड़ पतिके पूर्व पुरुषगण राज करते थे। टाडसाहबने बहुत परिश्रम और भ्रमण कर इस नगरके यथार्थ तत्त्वको निरूपण किया है, इससे ज्ञात होता है कि विलविलपुर पट्टन सौराष्ट्रमें ही है।

इस बातका निरूपण करना कठिन है कि कौनसी म्लेच्छ जातिने वल्लभी-पुरको विध्वंस किया था । अवश्य यह लोग पौराणिक शाकद्वीपमें जमे हुए होंगे । परन्तु कोई इतिहास वेत्ता निश्चय नहीं कर सका कि यह लोग कौन जातिके थे । प्राचीन इतिहासोंके देखनेसे ज्ञात होता है ईसवीकी दूसरी शताब्दीमें सिन्धु-नदके किनारेपर बसे हुए श्यामनगरमें थोड़ेसे पारदलोग रहते थे, ज्ञात होता है कि उन्होंनेही वल्लभीपुरपर चढ़ाई की थी, कहते हैं कि प्राचीन यादवलोगोंने इस श्यामनगरमें बहुत दिनोंतक राज किया था । पंडित ऐरियनने श्यामनगरको मीनगढ * और अरवके भूगोलवालोंने मनकर नामसे लिखा है ।

सिन्धुनदके किनारेजिस विशाल देशमें पारदगण निवास करतेथे वह अवतक अनेक विदेशी आक्रमण करनेवालोंके निमित्त द्वारकी भांति खुलक रहा था । उस खुले हुए द्वारमें प्रवेश करके अनेक जातियोंने पवित्र भारत भूमिमें आकर भारतको

१ इस अभियानके और इस म्लेच्छ जातिके सम्बन्धमें अनेक मत हैं । टाडसाहबने इस जातिको पारद और वेदेन इन्दुवक्रिय अनुमान किया है परन्तु ऐतिहासिक एल्फिनस्टोन पारसीक बताता है । एल्फिनस्टोनने जो प्रमाण दिये हैं वह माननेके लायक हैं । इस लिये इस आक्रमणको पारसियों काही कहा जा सकता है । विशेषतः जैन परिव्राजक और पारसीक तबारीखोंमें देखा जाता है कि सन् ६०० ई०के आरंभ कालमें, बादशाह नौशेरवाने सिन्धु देशपर आक्रमण किया था । यद्यपि तबारीखमें वल्लभीके ध्वंस होनेका कुछ लेख नहीं मिलता तौमी वर्णन शैलीसे इतना प्रतीत हो सकता है कि जब पारसीक लोगोंने सिन्धु देशपर आक्रमण किया था तबही उनकी आखोंमें धन सम्पत्ति शालिनी वल्लभी नगरी खटक गई होगी । दूसरी बात यह है कि वल्लभी विग्रह और नौशेरवाँके द्वारा सिन्धु देशपर आक्रमण एकही समयमें हुआ था (सन् ५८४ ई०) ।

X मीनगढके सम्बन्धमें विलायती पंडितोंके लेखसे बहुतसी बातें जानी जाती है डेनविलसे लेकर सर हेनरी पोटीक्षरतक सबने इसके ठीक स्थानका पता लगानेकी चेष्टा की थी, और कोई २ महाशय उसमें कृतार्थभी हुए खलीफा मनसूर (अक्बासी) के सेनापति उमरने सिन्धुदेशको जीतकर उसका नाम मंसूरगढ रक्खा फिर बहुत दिनोंतक इसका यही नाम रहा डेनविलने इसको २६° लक्षिमाके निकट और उलगावेगने इसको कुछ उत्तर २६°४ में कहा है, जो कुछभी हो टाड-साहबने बड़े अनुसन्धान तथा ऐरियन टालमी, अलबिरूनी, ऐड्रिसी डेनविल आदि पुरातन तत्त्व वेत्ता पंडितोंके भिन्न २ मतोंका मिलान करके अन्तमें यह स्थिर किया है कि सिन्धु नदके किनारे सिवानपर २६°११ मीनगढ स्थित है ।

Viede

Elphinstone's History of India Book IV P. P. 232 233 Sir John Malcolm's Persia, Vol I. P. 141 Dé Guignes, Vol II P. 469 Sir Henry Pottinger's Travels, etc., P. 386.

नष्ट करा दिया, जित हून कामारि काठी मकवाहन वल्ल और अन्वारियां आदि प्रचण्ड विक्रम कारियोंने आकर एक समय सूरतदेशमें बड़ी प्रतिष्ठा पाई थी, यह सबलोगभी भारतवर्षके उस खुले द्वारसेही आयेथे, उस समय इन जातियोंके लिये मानो यह सुवर्ण युगथा, उस समय यह मध्य एशियाकी उच्च भूमिको छोड़ कर एक साथही यूरूप और भारतकी ओर चल पड़ेथे, प्रसिद्ध-यात्री परिब्राजक कासमस चीन नरेश * जस्टीनियनके राज्य शासन समयमें भारतवर्षमें विद्यमान था, वह वल्लभीराजका कल्याणनगर देखने गयाथा, उसने अपनी भ्रमण पुस्तकमें लिखाहै कि ठीक वल्लभीपुरके नष्ट होनेके समय कुछ हून सिन्धुनदके किनारेके देशमें अपनी बस्ती स्थापन करके निवास करने लगेथे, उस समय जो उनका राजा वा सरदार था उसका नाम गोल-नथा ।

इस ओर एरियनकी लिखावटसे दूसरीही बात विदित होतीहै ईस्वी दूसरी शताब्दीमें एरियन साहब वरना [भडौच] नगरमें थे, वह कहतेहैं कि सिन्धु और नर्मदाके बीचके विशालदेशमें उस समय पारदोंका विस्तृत राज्य स्थापित था. मीनगढ उनकी राजधानी थी, अब यहां यह पता नहीं लगता कि कास-ससने पारदोंकोही हून नामसे लिखा है अथवा हूनोंने पारदोंको निकालकर वहां अपना आधिपत्य जमायाथा, परन्तु यह तो अवश्यही मानना पड़ेगा कि इन्हीं दोनों जातियोंमेंसे किसीने वल्लभीपुरको विध्वंस कियाथा ।

भूर्य वंशी महाराज कनकसेनसे आठवीं पीढीमें शिलादित्य नाम एक राजा उत्पन्न हुआ, इसीके राज्य समयमें म्लेच्छोंने वल्लभीपुरपर आक्रमण करके उसको तहस नहस करा दिया महाराज शिलादित्यके समन्धमें एक विचित्र किम्बदन्ती सुननेमें आतीहै उस कथाके जिस अंशसे उनके जन्म और उनकी बाल्यावस्थाका जो विवरण प्रगट होताहै प्रयोजन समझकर हम उसको यहाँ लिखते हैं, वह यह कि गुर्जरराज्यमें कैयर नाम नगर है उस नगरमें देवादित्य नाम एक वेदवेदांगका जाननेवाला ब्राह्मण रहताथा ।

उसके सुभगा नामक एक बेटीथी । देवादित्यने अपनी कन्याका विवाह कर दिया, परन्तु अभागिनी विवाहकी रातमेंही विधवा होगई । सुभागाके गुरुने

* इतिहासोंसे इस बातका पता लगताहै कि प्राचीन समयमें भारत और चीनके राजोंमें पर-स्पर पत्रव्यवहार था, विशेषकर चीनी सामंतीम और तामवंशीराजोंके समयमें भारतके राजोंने अपने दूत भेजेथे ।

उसको बीजमंत्रकी शिक्षा दीथी । एक दिन सुभगाने असावधानीसे उस मंत्रका उच्चारण करलिया, तब भगवान् दिवाकरने प्रगट होकर उसको आलिंगन किया और तत्कालही अन्तर्धान होगये, थोड़े दिनोंमेंही सुभगाको गर्भके लक्षण जानपड़े, तब देवादित्य मनहीमनमें अत्यन्त व्याकुल हुआ परन्तु जब योग-बलसे इसके मूल कारणको जाना, तब उसका खेद और समस्त व्याकुलता जाती रही । परन्तु सुभगाकी अपने घरमें न रखकर एक दासीके साथ बड़भीपुरमें भेजदिया । इस नगरीमें आय सुभगाके एक पुत्र और साथही एक कन्या उत्पन्न हुई । बड़ा होनेपर सुभगाका पुत्र विद्यालयमें भेजा गया, उसके इष्ट मित्रगण गूढ़ जन्म वृत्तान्तको जानकर उसे गैवी (गुप्त) नामसे पुकार कर उसमें अनेक अत्याचार किया करतेथे, इन अत्याचारोंसे "गैवी" का हृदय अत्यन्त दुःखित होने लगा, शयन, स्वप्न, या भोजनके समयभी वह किसी प्रकारसे सुखी नहीं होताथा, मनमें महाचिन्ता रहती, मांति २ का संदेह होता, सहपाठी लड़के पिताका नाम पूछते तब निरुत्तर होजाता यह क्या कुछ कम दुःखकी बात है ? जो पिता जगतमें लाया, उसी पिताको नहीं जान सका कि कौन है ? एक बार उसको देखातक नहीं, कभी भी पिता कहकर पुकारा नहीं ? यह पीड़ा उस बालकको हृदयमें अत्यन्त कसकने लगी । अल्प कालमेंही बालकका कोमल हृदय चिन्तारूपी विषके कारण जर्जर होने लगा "गैवी" सहपाठी लड़के पिताका नाम पूछ कर उसे बहुतही जलाया करते, मनके दुःखको मनमेंही छिपाकर वह रोता हुआ घरको चलाआता, और अपनी मातासे सब वृत्तान्त कहकर पिताका नाम पूछा करता, परन्तु सुभगा कोई उत्तर न देती, पुत्रको गोदीमें लेकर अनेक प्रकारसे समझाया बुझाया करती, इस प्रकारसे कुछ काल व्यतीत होगया, क्रमसे बालकको ज्ञान होगया ज्ञानोदयके साथही उसका हृदय अत्यन्तही दुःखित हुआ ।

एक समय "गैवी" सहपाठियोंके अत्याचारसे अत्यन्त दुःखपाय कोचमें भरे सिंहकी समान अपनी माताके निकट जा पहुँचा, और कड़ी आवाजसे कहा कि यदि मेरे पिताका नाम न बतावेगी तो इसी समय तेरा प्राणसंहार कर डालूंगा "गैवी" के इस डरावने वाक्यके पूर्ण होनेसे पहिलेही सूर्य भगवान् उसके सामने प्रगट हुए और सब वृत्तान्त कहा, फिर एक पत्थरका टुकड़ा "गैवी" के हाथमें देकर बोले इस पत्थरके टुकड़ेको हाथमें लेकर तुम जिसको छूओगे वही तत्काल गिर जायगा "गैवी" ने उस पत्थरके टुकड़ेसे अपने सहपाठी

लड़कोंको पराजित किया, शीघ्रही वह समचार वल्लभीके राजा पर गया, वह राजा "गैवीको" बुलाकर अनेक प्रकारसे डरवाने लगा. तब "गैवी" ने भगवान सूर्यके दिये हुए पत्थरके टुकड़ेसे राजाको स्पर्श करके उसको पराजित किया और सिंहासनपर अपना अधिकार जमाया ।

उस कालसे गैवी शिलादित्यके नामसे पुकारा जानेलगा *

वल्लभी पुरके राजा महाराज शिलादित्यके सम्बन्धमें इस प्रकारकी औरभी अद्भुत व मनोहर कहावतें सुनी जातीहैं, कहतेहैं कि वल्लभीपुरमें उसकाल "सूर्यकुण्डथा" जहां कोई संग्राम आपड़ता वैसेही शिलादित्य उस कुण्डके समीप जायकर भगवान भास्करकी प्रार्थना करतेथे, उनके प्रार्थना करतेही सूर्यके रथको खंचनेवाला सप्ताश्व नामक एक बड़ा घोड़ा कुण्डसे निकलता था, उस प्रचंड घोड़ेको अपने रथमें जोतकर शिलादित्य शत्रुओंको जीत लेताथा, परन्तु अपने किसी पापात्मा मंत्रोंकी विश्वासघातकतासे राजा शिलादित्य संग्रामके समय इस पवित्र देवानुकूलतासे वंचित रहा, महाराज शिलादित्यका पापात्मा मंत्री इस गूढ़ विषयको जानता था, उसने शत्रुओंको यह भेद बताया, और सलाह दी कि उस पवित्र कुण्डमें गौरक्त डालदो, तदनुसार वह पवित्र कुण्ड इस प्रकारसे अपवित्र होगया, तब महाराज शिलादित्यके सौभाग्य मार्गमें कांटा लग गया उसके नाशका आरंभ हुआ, म्लेच्छगण प्रचंड विक्रमके साथ उसके नगरको घेरकर गगनभेदी शब्दसे वारम्बार सिंहनाद करने लगे ।

उसकाल महाराज शीघ्रतासे कुण्डके समीप गये और कातर स्वरसे वारम्बार इष्ट देवताको पुकारने लगे, परन्तु पुकारना वृथा हुआ, अति करुणा और विनयके साथ वारम्बार पुकारनेसेभी वह सात मुखवाला देवअश्व दिखाई न दिया ! निराशा-घोर निराशाकी विषम अंकुशकी चोटसे शिलादित्यका हृदय अत्यन्तही दुःखी हुआ उनको चारोंओर अंधकार दिखाई देने लगा तथापि ।

* भारत वर्षके इतिहासमें एक दूसरे शिलादित्यका नामभी पाया जाताहै, परन्तु वह वैश्यथा और ईस्वी सातवीं शताब्दीके मध्य भागमें कन्नोजके सिंहासनपर विराजमान था । प्रसिद्ध चीन निवासी हियनसंग इस महाराज शिलादित्यकेही शासन कालमें इसकी कन्नोजमें गयाथा ।

• Vide Trevels of Houen Sheang

p. 215

अंतिम साहसपर भगोसा रखकर अपनी सेनाके साथ भयंकर शत्रुओंका सामना किया, परन्तु उनके प्रचंड विक्रमको न सहकर सेनासहित समरशायी हुए उसदिन महाराजकी शोचनीयमृत्युके साथ २ वल्लभीपुरसे उनका वंश वृक्षभी जड़से उखड़गया ॥ *

* शक और पारसियोंके मध्यमेंभी ऐसे सूर्यकुंडका वर्णन देखा जाताहै, इस समय इस उपरोक्त सूर्यकुंडका वृत्तान्तकल्पनाके महाजालमें ढका हुआहै, उस जालको अलग करनेसे यथार्थ बात शत होजायगी, तब जाना जायगा कि शत्रुओंने महाराजके दुर्गगढ़ खाईके जलमें विष मिला दिया था विषेले जलके पीनेसे सेनाका नाश होतेहुए देख दुर्गद्वारा खोल महाराज शत्रुओंके सामने हुए । इस कूट उपायके करनेसे बहुतसे राजाओंकी जीत हुई है, अलाउद्दीननेभी ऐसेही दुष्ट उपायका अवलम्बन कर अजयसिंहका दुर्जय दुर्ग सहजमें जीत लियाथा परन्तु कौनसे आक्रमणकारीके आक्रमणसे वल्लभीपुर विध्वंस हुआथा, सो नहीं जाना जाता, इसके विषयमें अनेक मतहैं । कर्नेल साहब तो इनको पारथ अथवा हन कहतेहैं ।

परन्तु वाडेने उनको इन्दुवक्रय और एलफिनटने पारसी बतायाहै अब इन मतोंमें किसको उत्तम समझकर ग्रहण करना चाहिये, सो निश्चय करना कुछ सहज नहींहै इन सबकी मतकी समालोचना करनेपर एलफिनटनको सबसे ऊपर आसन दिया जा सकताहै । अपने मतको प्रमाणिक करनेमें एलफिनटनने बहुतसे प्रमाण दियेहैं, इस कारण इसी मतको संभव समझकर ग्रहण किया जा सकताहै, एलफिनटनका मतहै,—जिस म्लेच्छ जातिने वल्लभीपुरको विध्वंस कियाथा कर्नेलटाडने उनकी पारद और वाडेने इन्दुवक्रय कहाहै, परन्तु विचारपूर्वक देखनेसे उनको पारद नहीं कहा जासकता यदि यहां उनको पारसियोंके समान कहाजाय तो कुछ अनुचित न होगा नौशैरवाने ५३१से लेकर सन ५७९ ई० तक राज कियाथा । सर जानमालकमने बहुतसे पारसीके ग्रंथोंका मत लेकर प्रतिपादन कियाहै कि उक्त पारसिक वीर (नौशैरवां) उत्तरमें फरगना और पूर्वमें भारतकी छाती तक अपनी विजयिनी सेनाको लेआया था । बहुतसे चीनी ग्रंथोंमें नौशैरवांकी पहली चढ़ाईका वृत्तान्त लिखाहै । इस ओर सरहेनरीपीर्डिजरने अति सूक्ष्म और संभव प्रमाण दिखाकर कहाहै कि नौशैरवाने शिकारने नदीके किनारेसे आकर सिन्धुदेशपर आक्रमण कियाथा । अतएव जब कि वल्लभीपुर सिंधु देशके बहुतही निकटहै, तब हम सहजसेही विश्वास कर सकतेहैं कि नौशैरवाने यहाँसे चढ़ाई करके वल्लभीपुरका नाश किया होगा ।

दूसरा अध्याय २.

विषय

गांहिलकं जन्मका वृत्तान्त,—ईडुर राज्यकी प्राप्ति:—“हिह्लोट”

शब्दकी उत्पत्ति; वप्पाका जन्म:—

गिह्लोट लोगोंकी पुरानी पूजाविधि:—वप्पाका वर्णन अगुणा

पानोर;—वप्पारावलका शिवसंज्ञ ग्रहण करना;—चित्तौरके

राज्यकी प्राप्ति;—वप्पाका आश्चर्यकारी वर्णन—दूसरी

और ग्यारहवीं शताब्दीके बीचवाले

मेवाड इतिहासके चार प्रधान

समयका निरूपण ।

विश्राम घातक म्लेच्छ लोगोंकी भयंकर विक्रमानलमें महाराज शिलादित्य

पतंगकी समान भस्म होगए, उनका वल्लभीपुरभी विध्वंस होकर शोचनीय
श्मशान भूमिकी समान बनगया, इष्टमित्र, बंधु, बांधव सबही शस्त्र धारण करके
संग्राम भूमिमें शयन करगये ।

महाराज शिलादित्यके बहुतसीं रानियां थीं उनमें रानी पुष्पवतीके सिवाय
और सबही राजाके साथ सती होगईं । विन्ध्य पर्वतकी तल्लैटीमें चन्द्रावतीनामक
एक नगरहै । इस नगरमें उस समय प्रमार वंशके राजा राज्य करतेथे, रानी
पुष्पवतीका उसी प्रमार कुलमें जन्म हुआथा । इस अनर्थकारी घोरसंग्रामके
होनेसे पहिले रानीको गर्भके लक्षण दिखाई दियेथे रानीने पुत्रकी कामनासे अ-
नेक देवी देवताओंकी—विशेष करके, जगदम्बा देवी भवानीकी जो उसके राज्यमें
वर्तमानथी बहुतसी पूजाकी । इस समय कामना सिद्धिके सम्पूर्ण लक्षण देख
कर षोडशोपचारसे भवानीजीकी पूजा करनेके लिये रानी अपने पिताके घर
चली आईथी । पूजाविधि समाप्त करके पतिगृहमें लौट आनेके समय मार्गमें
महाघोर संकटका समाचार सुना पुष्पवतीके मस्तकपर मानो वज्र टूटपड़ा;—सब

आशा भरोसा जातारहा; शोकके वेगके न सह सकनेके कारण रानी वहींपर मूर्च्छित होगई । अभागिनी पुष्पवतीने आशाकीथी कि राजमाता होजाऊंगी, परन्तु वह आशा सफल होकरभी पूरी न हुई ।

क्या यह साधारण दुखकी बात है ! साथकी सखियोंने भली भाँतिसे यत्न-किया, सावधान होकर रानी वारंवार विलाप करती हुई, अपने भागको धिक्कार देने लगी । आशाके फलवती होनेका रानीको कुछ दुःख न था, दुःख तो केवल यही था; कि जिनके सहारेसे जीवितथी, निरुप कालने उसी प्राणधार वीर शिलादित्यको अपने गालमें रखलिया, रानीपर यही गाज काम करगई, यदि गर्भवती न होती तो तत्कालही सती होकर स्वामीके पास पहुँच जाती । परन्तु क्या करे ? विचारी निरुपाय रही इसकारण संतान होनेके समयतक जीवन धारण करनेकेलिये मलियानामक शैलमालाकी एक गुफामें जा रही । वहां समयको पायकर एक पुत्र उत्पन्न हुआ ।

उस मलिया शैलमालाके निकटही वीरनगरनामक एक साधारण वस्तीमें कमलावतीनामक ब्राह्मणी रहती थी, रानी पुष्पवतीने उस ब्राह्मण कुमारीके हाथमें अपने बालक कुमारको समर्पण कर स्वामीका अनुगमन करनेकेलिये चिताकी दहकती हुई आगमें प्रसन्नतासे प्रवेशकिया और पतिके साथ अनन्त धाममें पहुँचगई । जिस दिन सती होनेको थी, उस दिन सबेरे ही कमलावतीके चरण धारणकर विनयपूर्वक कहा “हे देवि ! अपने हृदयके धन प्राणप्यारे कुमारको तुम्हारे हाथमें सौंपतीहूँ, अब तुमही इसकी माता हो, देखो, इसको अपना पुत्र समझकर ही लालन पालन कीजियो, तथा एक प्रार्थना यह भी है, कि कुमारको ब्राह्मणोचिताशिक्षा देकर समयानुसार एक राजपूत कन्याके साथ विवाह भी कर दीजियो । ”

प्राणपतिके पास जानेके समयमें पतिपरायण रानी पुष्पवतीने जो प्रार्थना की थी ब्राह्मण कुमारी कमला उन बातोंको भूल न गई । वह विनय वचन उसके कानोंमें देवाज्ञाकी समान गुंजारने लगे । उनके प्रतिपालन करनेमें कोई न्यूनता न हुई । एक समय कमलाने भी गर्भकी कठोर पीड़ाका अनुभव कियाथा. इस कारण यह भली भाँतिसे जानती थी कि पुत्र कैसी प्यारी चीज होती है । इस समय अपने पुत्रकी नाई समझकर उस अनाथ बालक राजकुमारका पालन करनेलगी । गुहामें जन्म हुआ था इस कारण कमलाने राजकुमारका गोह नाम रखवा यद्यपि गोहको कमला पुत्रके समान पालती

थी, परन्तु गोहम उसको एक क्षण भरके लिये भी सुख नहीं मिलता था, कारण कि राज कुमार अत्यन्त ढीठ और दुष्ट होगया । आयुकी वृद्धिके साथ उसकी दुष्टताभी दिन २ बढ़ने लगी वह कमलावती की आज्ञाको लंघन करके हमजोली राजपूतकुमारोंके संग दिन रात खेलता फिरता, और विद्याके सीखनेमें एक पलभरको भी मन नहीं लगाता था, कभी २ पक्षियोंके वच्चे पकड़कर निर्दोषपनसे उनको मार डालता, कभी २ गंभीर वनमें प्रवेश करके शिकार खेलता, इस प्रकार एक २ वर्ष करके कुमारने ग्यारहवें वर्षमें पाँच रक्त्वा उस काल उसकी दुष्टता पूर्णमात्राको पहुँच गई पालन करनेवाली ब्राह्मणी किसी प्रकारसे उसको न रोकसकी यहांपर भट्ट कविगणने कहा है ।—भला यह कैसे रोक सकती सूर्य भगवानका प्रचंड तेज क्या ढका जा सकता है ?

मैवाडेके दक्षिण पार्श्वकी घनी शैलमालाके भीतर ईडरनामक एक भील-राज्य है, मंडलीकनामक एक भीलराजा उस कालमें सिंहासनपर विराजमान था, गोहइन ईडरवाले भीललोगोंके साथ दिन रात वन २ में घूमा करता था भील लोगोंकी ऊधमी आदतके साथ गोहका स्वभाव भली भाँतिसे मिलगया था इसी कारणसे वह शान्तस्वभाव ब्राह्मणोंके संगको छोड़कर उनके साथ दिन रात रहना पसंद करता था । भील लोगभी उसपर विशेष प्रीति करते थे । क्रमानुसार उन वन पुत्रोंका अनुराग इतना बढ़गया कि एक समय उन्होंने शैल काननयुक्त संपूर्ण ईडर भूमिको गोहके हाथमें सौंपदिया अब्बुलफजल और भट्टकविगण इस वर्णनको इस भाँतिसे लिखते हैं । कहते हैं कि एक समय राजपूतवालक गोहके साथ भीलोंके लड़के खेल रहेथे, उसी समयमें उन भील वालकोंका खेल २ हीमें यह विचार हुआ कि अपनेमें से किसी को गजाकरें; जितने वालक वहाँ पर थे सबने इस कार्यकेलिये राजकुमारको भलीभाँतिसे योग्य और उचित समझा । तदनुसार एक भील वालकने तत्काल अपनी उँगली काटकर उसके रुधिरसे नये राजाके माथेपर राजतिलक खेंच दिया । उसदिन—उस गंभीर सघन वनके भीतर खेलही खेलमें भील कुमारगणने जो राज तिलक गोहके माथेपर खेंच दिया, फिर उस राजतिलकको कोई भी न मिटा सका वृद्ध भीलराज माण्डलिकने यह वृत्तान्त सुनकर बड़ी प्रसन्नतासे गोहको राज भार सौंपदिया और स्वयं वृद्धताके कारण राज काजसे छुट्टी ली परन्तु इस बातका उपसंहार अत्यन्त बुरा और घिनौनाहै इससे गोहके स्वभावमें कृतघ्नता और विश्वास घातका घोर कलंक लगा हुआ है । कहतेहैं कि भीलोंके जिस राजाने

अपने पुत्रोंको न देकर अपनी इच्छा और प्रसन्नतासे अपना सिंहासन उसको दिया, कुमारने उसही भीलराजका प्राण संहार किया । इस बातका निश्चय करना कठिन जान पड़ताहै कि किस कारणसे राजकुमारने ऐसा कठोर काम किया था अव्युत्सफजल और भट्टगणभी इसमें कोई कारण नहीं बताते गोहका नाम उसके वंशधरोंका गोत्र होगया । गोहके वंशधर उसही दिनसे 'गहिलोत' वा "गिह्लोट" नामसे पुकारे जाने लगे ।

इन प्राचीन राजालोगोंके जीवनचरित्रके बारेमें थोडा ही सा वृत्तान्त पाया जाता है उस थोड़ेहीसे वृत्तान्तमें यह प्रतीति होता है कि गोहसे नीचे आठवीं पीढीतक उस गिरिकानन पूर्ण इंदुर देशमें गहिलोंतोंका राज रहा । आठ पीढी तक बराबर स्वाधीनता प्रिय भील लोगोंने राजपूतोंके चरणोंमें अपने स्वाधीनता रत्नको बचकर सुख दुःखसे विजातीय पराधीनताको सहन कियाथा; परन्तु वे सदासे स्वाधीनताके चाहनेवाले थे; स्वाधीन जीवन सदासे उनको प्यारा था । उनके पितृ पुरुषगण उस स्वाधीन जीवनको भोग करके यथार्थ स्वर्गसुखको भोगकर गये हैं । आज किस पापका उदय होनेसे वे उस सुखसे हटाये जाकर पराधीनताकी जंजीरको पहन रहे हैं ? अधिक क्या कहें आगेको भीलगण न सह सके । गोहसे नीचे आठवीं पीढीमें नागादित्यनामक एक राजा उत्पन्न हुआ । एक समय वह राजा शिकारके लिये वनमें जाकर हरिनके पीछे पड़ा, उसीसमयमें भीललोगोंने प्रचंड विक्रमके साथ राजाको घेर लिया और वहींपर संहार करके अपने इंदुर राज्यपर अधिकार किया ।

जिस दिन अभागे नागादत्तने भीलोंके हाथसे प्राण खोये उसही दिन उसके परिवारमें हाहाकार पड़गया ।—विपदकी विकट मूर्ति सबको ही डर दिखाने लगी ! चारोंओर भीलही भील हैं;—कहाँ भागकर जाँय ? क्रोधसे उन्मत्त हुए उन भील लोगोंकी क्रोधाग्निसे कौन राज परिवारकी रक्षा करे ? कदाचित् ग्रहादित्यका वंश इस समय निर्मूल हुआ ? इस भांतिसे राजपूत अत्यन्तही व्याकुल हुए, चिन्ता बारम्बार उनका सताने लगी । उस समय नागादित्यके वप्या नामक एक तीन वर्षका पुत्र था, उस पुत्रके मारे राजपरिवारको और भी अधिक चिन्ता हुई परन्तु भगवान् उस अनाथ राजकुमारके सहाय थे; नारायणजीकी अपार करुणाके बलसे शीघ्रही बालककी रक्षा होगयी । वीर नगरकी रहनेवाली कमलावतीने जिस प्रकार गोहके जीवनको वचाया था; उसही कमलाके वंशवालोंने, संकटके समय महाराज शिलादित्यके

राजवंशकी रक्षा करनेके लिये फिर अपनी छातीको अड़ादिया । उन्होंने विचार कर लिया कि चाहे इस छातीपर हजारों वज्र गिरें, तथापि बालककी रक्षा अवश्य ही करेंगे । वह लोग उस समय गहिलोत राजकुमारके कुलपुरोहित थे, आज पुरोहित नामको सार्थक करनेके लिये अपने प्राणोंको संकटमें डाल राजकुमार वप्पाकी रक्षाकरनेके लिये तैयार होगये । नागादित्यके बालक राजकुमारको लेकर नृत्यपरायण ब्राह्मणोंने भांडेर * नामक किलेमें गमन किया । वहां पर एक भीलने जो कि यदुवंशी था उन ब्राह्मणोंको आश्रय दिया । परन्तु तहाँ बालकको सब प्रकारसे निरापद न समझकर पराशरनामक स्थानमें लेगये । वह वन बड़े २ और घने २ वृक्षोंसे परिपूर्ण था । उस दीर्घवृक्षश्रेणीकी निविड़ शाखा पत्रोंको भेद कर ऊंचा मस्तक किये, त्रिकूट पर्वत खड़ा हुआ है ।— त्रिकूटगिरिकी तलैटीमें नागेन्द्र × नामक एक साधारण नगर बसा हुआ है । उसमें शिवोपासक शान्ति युक्त ब्रह्मण गण परम सुखसे वास करते थे । वप्पाको उन शान्त शील ब्राह्मणोंके हाथमें सौंपा गया । इस निविड़ महावनकी गंभीर शान्तिमय शीतल छायामें ऊंचे पर्वतकी विशाल प्रान्तभूमिमें भगवद्भक्त शान्तचित्त ब्राह्मणगणोंके द्वारा रक्षित होकर राजकुमार वप्पा १ स्वच्छन्दतासे इच्छानुसार भ्रमण करने लगा ।

उस पराशरनामक महावनके गंभीर स्थानमें जहाँ कि विराट त्रिकूट पर्वतकी घोर कंदरायें हैं, जहाँ भेघोंसे युक्त होकर बड़े पर्वतशिखर शोभायमान हो रहे हैं, जहाँसे प्रत्येक नदियां निकली हैं वहां पर अनेक प्राचीन देव मंदिर दिखाई देते हैं । प्रकृतिकी मधुर सुसकान शान्तरसमें मिलकर वहाँ पर एक ऐसे अद्भुतभावको उदय करदेती हैं । कि इस मनुष्य शून्य वनमें प्रवेश करते ही हृदयमें महान् भक्ति, भय और आनन्दका विकाश होता है । इस पवित्र वनके रहनेवाले अति प्राचीन कालमें केवल महादेवजीकीही पूजा करते थे । यहां तक कि “वनकुमार” असंभ्य भीलगण भी उनकी भुजंग भूषित मूर्तिको और उनके वाहन वृषभको अति पवित्र समझकर भक्तिके साथ पूजा करते थे ।

* जारोलीके १५ मील दक्षिण पश्चिममें स्थित है ।

× चलित भाषामें इसको नागदा कहते हैं । उदयपुरसे दश मील उत्तरमें स्थित है । अबतक तीर्थस्थान कहाता है । महात्मा टाडसाहबको यहाँसे गहिलोत कुलके इतिहासकी बहुतसी शिलालिपि मिली थीं ।

१ प्यारका नाम वप्पा था, यथार्थमें इस राजकुमारका नाम शैलाधीश कहते हैं ।

इन शान्त और गंभीर वनस्थालियोंमें भूतभावन भगवान् महादेवजीकी पूजा-विधि बहुत समयसे चली आती है। यद्यपि आज वर्तमान मेवाड़राज्यकी शोचनीय अवस्थामें उनकी पूजाका आडम्बर बहुत कम होगया है, तथापि शिवराज्यादि विशेष उत्सवोंमें उदयपुरकी शिवपूजा देखने योग्य होती है; यहाँतक कि भिन्न धर्मावलम्बी जैन और वैष्णवलोगभी उन उत्सवोंमें बड़े हर्ष और चावसे मिलते हैं। आजतक मेवाड़के राजालोग अपनेको “ एक लिङ्गका दीवान ” कह कर गौरवके साथ परिचित करते हैं। गंगा यमुनाकी तीरवाली वास्तियोंमें यदि अनेक देवी देवताओंकी उपासनाका प्रचार न होता, तो कदाचित् शिवपूजा अबतक पूर्ण प्रतापसे होती रहती। गहिलोत कुलकं सर्वश्रेष्ठ प्रधान उपास्य-देवता भगवान् एकलिंग आजतक अखंड प्रतापसे अपनी पूजाको भोग करते हैं। उदयपुरमें प्रवेश करनेके एक छोटे गिरिमार्गके ऊपर भगवान् एकलिंगजीका पवित्र मंदिर बना हुआ है। मंदिर बहुत बड़ा और दर्शन करने योग्य है। जो संगमरमरका बना हुआ है। भीतर खुदाईका कामभी अत्युत्तम बना है। देखतेही ज्ञात होता है कि इस मंदिरके बनवानेमें बहुतसा धनव्यय हुआ होगा। निसन्देह यह मन्दिर दर्शनीय है। परन्तु हिन्दूविद्वेषी म्लेच्छगण इस मार्गसेही चढ़ाई करते थे, इस कारण उन्होंने इसके बहुतसे स्थान तोड़ फोड़ डाले हैं। सन्मुखही ढका हुआ आँगन है, उसके ऊपर वेदिका बनी है, वेदिकाके ऊपर भगवान् एकलिंगके ठीक सामने धातुकी बनी हुई एक वृषभकी मूर्ति विराजमान है। भीतरसे यह मूर्ति खुल्ल है इसका शरीर सुन्दर और चिकना बना हुआ है। परन्तु अर्थपिशाच तातारवालोंने धन रत्नकी खोज करते हुए कठिन मुद्गर मारकर इस वृषभमें दो एक जगह छेद कर दिये हैं।

जिस तरह कि दूसरे कुलोंके प्रतिष्ठा करनेवाले महात्माओंके विषयमें अनेक अपूर्ण वर्णन देखे जाते हैं; वैसेही कुमार वप्पाके सम्बंधमें अनेक अद्भुत बातें सुनी जाती हैं। जिन ब्राह्मणोंके हाथमें उसके लालन पालनका भार था, कुमार वप्पा उनकी गायोंको चराया करता। राजपूत बालक आनन्द चित्तसे गायोंको चराता ! सूर्यवंशी महाराज शिलादित्यका वंशधर आज गोपकार्यको कर रहा है; कोई भी उसके भाग्यका विचार नहीं करता। वप्पाके उस शान्तिमय बालक पनकी बातोंके विषयमें भट्टलोगोंने अनेक प्रकारकी सुन्दर और हृदयग्राही वार्ता लिखी हैं। शारदीय झूलनोत्सव राजपूतोंमें एक विख्यात आनन्द वासर है। उस उत्सवके आतेही लड़की लड़के आनन्दमें मत-

वाले होकर झूलनलीलाके मेलेमें मिल जाते हैं। कहते हैं कि उसकाल नगेन्द्र नगरमें कोई सोलंकीवंशीय राजा राज करताथा। ऊपर कहेहुए झूलनोत्सवके आनेपर उस राजाकीलड़की अपनी सहेलियोंके साथ व नगरकी और २ लड़कियोंकोभी नंगमें ले विहार करनेके लिये कुंजवनमें गई। परन्तु वहां झूला डालनेकी रस्ती न थी, इसकारण सब इधर उधर देखनेलगीं। इतनेहीमें राजकुमार वप्पा वहां आपहुँचा वप्पाको देखतेही राजकुमारियोंने उससे रस्सी मांगी। परन्तु कुमार चंचलस्वभाव और हँसमुखथा इस कारण हँसकर कहा कि जो तुम पहिले मुझसे विवाह करलो तो मैं अभी रस्सी लादूंगा। कौतुकके ऊपर कौतुक हुआ;—तमाशा देखनेकी लालसासे राजपूत लड़कियोंने इस बातको मानलिया, फिर क्याथा विवाह होगया। सोलंकी राजकुमारीके डुपट्टेसे वप्पाके डुपट्टेकी गाँठ बांधीगई व और सम्पूर्ण लड़कियें परस्पर एक दूसरी का हाथ पकड़ेहुए उनके सहित एकसाथ पांति बांधकर एक बड़े आमवृक्षके चारों ओर प्रदक्षिणा करनेलगीं। वप्पा कुमारने इस बातका विचार नहीं कियाथा कि आज—इस शारदीय शुभ झूलनोत्सवके दिन इस विशाल आमवृक्षकी छायाके नीचे जो नकली विवाह हुआहै, यह अल्पकालमेंही यथार्थ विवाह होजायगा। इस होनहारसे कुमारके भाग्यका चमकना आरम्भ हुआ। परन्तु नागेंद्रनगरका रहना कठिन पड़गया, शीघ्रही नगरको छोडा? यद्यपि उम्मी दिनसे कुमारका भाग्याकाश चमका, परन्तु वह सारी राजपूत कुमारियों उनके गलेका हार होगई। उन लड़कियोंके वंशवाले आजतक उस लीलाविवाह का वृत्तान्त कहकर अपनेको वप्पाकुलसे उत्पन्न हुआ कहते हैं।

खल तमाशा पूरा हुआ—राजपूतोंकी लड़कियें अपने घर लौटकर उसदिनके वृत्तान्तको भूल गई। राजकुमारियोंने यह न सोचा कि विधाताने भाग्यकी ओटमें बैठकर कुमार वप्पाके साथ हमारे भाग्यका गूढबन्धन बाँध दियाहै। इस भांति कुछदिन बीतनेपर क्रमानुसार सोलंकी राजकुमारी विवाहके योग्य हुई। पित्ताने वर खोजकर विवाहकी सम्पूर्ण तइयारी की। इतनेहीमें वरपक्षके एक ज्योतिषी ब्राह्मणने आय राजकुमारीके हाथको देखकर कहा, “इसका विवाह तो पहलेही होचुकाहै।” इस अद्भुत बातको सुनकर राजभवनमें चारों ओर कुलाहल पड़गया। सब विमूढ और ज्ञानरहित होगये। इस नाटकके अभिनय करनेमें किसने चातुरी दिखाई, इसके जाननेमें सबकी उत्कंठा बढी चारों ओर गुप्तदूत भेजे गये। कुमार वप्पानेभी सब समाचार सुना और

शोचा कि साधारण वार्ताकं प्रकाशित होनेसेभी विपत्तिमें पड़ूंगा । इस कारण अपने सखा गोपलोगोंको विशेष सावधान करदिया । गोपलोग वप्पाकी जैसी भक्ति करंतथे, और वप्पा कुमारकी जैसी प्रभुता उनपरथी, इसको देख सुनकर इसवृत्तान्तके प्रकाशित होने की कुछभी सम्भावना नहीं थी। तथापि कुमारने एक कठोर प्रतिज्ञासे उनको बाँधलिया । उसप्रतिज्ञाका विवरण नीचे लिखा जाता है। एक छोटामा गढा खोदकर अपने हाथमें एक पत्थरका टुकड़ा उठाय वप्पाने धीर गंभीर स्वरसे कहा “शपथ करो, सुख, दुःख, सम्पद, विपदमें मेरे साथी रहोगे, प्राण जानेपरभी मेरी कोई बात किसीसे न कहोगे, दूसरोंकी सब मुझसे कहोगे । कहो—शपथ करो । यदि ऐसा न कर सकोगे तो तुम्हारे पितृ पुरुषोंके सत्कर्म संपूह इस पत्थरकी समान धोबीके गढेमें गिरेंगे X” कुमारने यह कहकर उस पत्थरके टुकड़ेको गढेमें डालदिया । समस्त गोपने तत्कालही एकमत होकर वह शपथकी, उन्होंने कभी अपनी शपथको मिथ्या नहीं किया । परन्तु जिस गूढ़ बातके डोरेपर कमसे कम छैः सौ राजपूत वालाओंके भाग्यकी गांठ लगीथी वह कबतक छिपा रहेगा ? इसकारण थोड़ेही दिन पीछे इसबातका समस्त भेद सोलंकीराजको मालूम होगया, उनको निश्चय होगया कि यह सारी करतूत कुमार वप्पाकी है ।

इसओर कुमारके साथियोंने इस वार्ताको सुनकर सारा वृत्तान्त उससे कह सुनाया, कुमारने सुनकर समझा कि इससे मुझपर विपत्ति आसकतीहै ऐसा विचार कर पर्वतमालाके एक गुप्त स्थानमें जा रहे । यह गुप्तस्थान अत्यन्त विजंन था । कुमारके वंशधरगण अनेक बार वहां आनकर छिपेथे । भागनेके समय वालीय और देवनामक भीलोंके दो लडके उसके साथ गये, वालीय उन्नीका रहनेवाला और देव अगुनपानोर नामक भीलोंकी वस्तीका रहनेवाला था, इन दोनों भील-कुमारोंने दुःख सुख, सम्पद विपद या घोर संकट समयमेंभी क्षणभरके लिये भी कुमारको अकेला नहीं छोड़ा उनका जीवन वप्पाकुमारके साथ जुड़ा हुआ रहा । जब भाग्य लक्ष्मीकी प्रसन्नतासे कुमारवप्पाने चित्तौरके सिंहासनपर अधिकार किया, उससमय वालीय और देवने अपने रुधिरको लेकर कुमारके माथेपर राजतिलक कियाथा ।

वालीय और देव यद्यपि असभ्य भील कुलमें उत्पन्न हुएथे, परन्तु उनका हृदय जिस पवित्र भावसे परिपूर्णथा;—वह भाव कितने सभ्य मनुष्योंके ज्ञान प्रकाशित

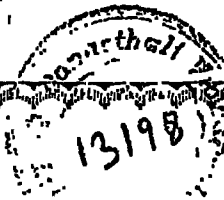
X राजपूत धोबीके गढेको बहुतही अपवित्र समझकर, घृणा करतेहैं । टाडसाहब कहते हैं कि यह गढे नदियोंकेही किनारे खोदे जातेहैं ।

हृदयमें भरा हुआ है।—वे दोनों भील जिस पवित्र चरित्रको संसारमें प्रचार कर गये हैं, उसकी समान चरित्र और कितने पुरुषोंने दिखाया है, जो कुछ उन्होंने प्रतिज्ञा की थी वह पूरी की। इस प्रतिज्ञाके कारण उन्होंने घरका रहना, इष्ट मित्रोंका संग शरीरका सुख सबही छोड़कर कुमार वप्पाके साथ कष्ट कर वनवास स्वीकार किया।

अनेकवार अनेक विपत्तियोंमें पड़े, कितने दिनतक बराबर रातोंको जागे तथापि एक दिनका लियेभी अपनी प्रतिज्ञासे टलजानेका विचार नहीं किया, कभी कुमारका अपने साथसे अलग करनेका विचार नहीं किया। वास्तवमें यही कुमार वप्पाके जीवनसरवा, और उसके सुखमें साथी थे, यदि कुमारको ऐसे मित्र न मिलते तो न जाने उसके भाग्यका पलटा किस ओरको होता, कदाचित् अज्ञात रागमें रहकर चित्तौरके राजसिंहासनको प्राप्त न करसक्ता, कदाचित् आज उनका नाम वीरकुलके नमूनेमें न गिनाजाता। महात्मा भील जातिके दो मित्रोंने जो उपकार कुमारका किया था कुमारने उस उपकारको कभीभी चित्तमें नहीं भुलाया, उनके साथ रहनेसे अपनेको सन्मानित और सुखी ममज्ञा और अनेक प्रकारसे उनके प्रति कृतज्ञता दिखाना भला विचारा, आजभी उस पवित्र कृतज्ञताका चिह्न मेवाड़में अटल भावसे विराजमान हो रहा है, जिसदिन वीरकेशरी महाराज वप्पाने उन दो भीलमित्रोंके साथ अयार आनन्दको भोग किया था आज वह दिन अनन्त कालसागरकी सबसे पिछली तलीमें लीन होगया है, जिस चित्तौरके सुवर्णमय सिंहासनपर विराजमान होकर महाराजने पवित्र हृदयसे उन दोनों मित्रोंका दियाहुआ राजतिलक ग्रहण किया था, वह चित्तौर आज खँडहर बना हुआ है। चूर २ होकर धूरमें लोट रहा है; एकदिन जो भूमि जगन्मान्य राजकुलकी लीलाभूमि थी आज वनके हिंसक जीव वहाँपर विहार करते हैं।

यद्यपि कालचक्रका इतना परिवर्तन होगया है,—तथापि उन्हीं वप्पा राजजीके वंशवरगण अवतक उस वालीय और देवके वंशवालोंका दियाहुआ राजतिलक आनन्दसे ग्रहण करके अपनेको सन्मानित समझते हैं * ।

* अभिषेकके समय देवका वंशवाला राजाका हाथ पकड़ कर राज्य सिंहासनपर बैठाता है, और वालीयके वंशका भील चावलका चूर्ण और दहीका पात्र हाथमें लेकर खड़ा रहता है। इस अभिषेकके समयमें जब समय अच्छाया तो मेवाड़की एक वर्षकी आमदनी खर्च होजाती थी। इसमें खर्च बढ़ाया, परन्तु आज कल आढम्वर बहुत कम होता है। राणा जगतसिंहके अभिषेक समयके पश्चात् इस प्रथामें कुछ हीनता देखी गई है।



सम्पूर्ण भारत वर्षमें केवल अगुण पानोरके रहनेवालेही एक प्रकारकी स्वाभाविक स्वतन्त्रताको भोगतेहैं। यह स्वतन्त्रता और किसीराजाके अधीनमें नहीं है; और किसी राजाके साथ यह अपना संबंध नहीं रखते। इनका स्वामी। “राणा” उपाधिको धारण करके कानन विराजित कमसे कम सहस्रों ग्रामोंके ऊपर अपना अधिकार रखताहै, आवश्यकता पडनेपर कमसे कम पांच हजार धनुषधारी भीलोंकी सेनाको साथ लेकर संग्राम भूमिमें उपस्थित होसकताहै। सोलंकी राजकुमारियोंके गर्भ और भूमि या भीलके औरससे इन लोगोंके पूर्व पुरुष उत्पन्न हुएथे। इसही स्वत्वसे वह अपनेको राजपूत बतातेहैं। अगुणाके इस भील कुलमेंही महात्मा देवने जन्म लिया था प्रयोजन समझकर हम मूलवार्तासे दूर चले आये हैं; अब फिर कुमार वप्पाकी ओर चलते हैं।

विचार करनेसे कुमार वप्पाका इस प्रकारसे भागना और भागनेका कारण स्वाभाविक और ठीक ज्ञात होताहै। परन्तु भट्टलोगोंके काव्यग्रथोंमें यह वर्णन औरही प्रकारसे पाया जाता है। उन्होंने कुछेक ऊंची पदवीका अनुसरण करके वर्णन कियाहै कि सम्पूर्णतः देवताके उपदेशसेही उन्होंने नगेन्द्रनगरको छोड़ाथा। यह बात सत्यहै कि जगतके अति प्राचीन महा पुरुषोंका वृत्तान्त अनेक प्रकार के कल्पना जालमें जड़ाहुआ होताहै, परन्तु वीरवर महाराज वप्पा सैकड़ों आर्य राजाओंके पितृपुरुष वास्तवमें देवताकी समान पूजे जातेथे। अलौकिक वीरताका आधार समझकर शत्रुकुल उनके नामसे थर थर कांपताथा। जिनकी देह परमाणुमें विलीन होनेपरभी अवतक जो “चिरंजीव” कहकर पुकारे जातेहैं, उस अनुपम वीर राजपूतकुलतिलक महाराज वप्पाका जीवन चरित्र और अभ्युदय-वृत्तान्त क्या कल्पनाके घोर जालमें छिपा रह सकताहै?। दुःखका विषयहै कि भट्टलोगोंने वप्पाकी उन्नतिका वृत्तान्त जिन अलंकारोंसे सजाया है, उसमें मेवाड़ वालोंका इतना दृढ़ अनुरागहै कि यदि उनको निकालाजाय तो मेवाड़ वासियोंके मतसे देवापमानरूप गंभीर पापको अपने शिरपर लेना पड़ेगा! भट्टकाविर्गण कहेते हैं कि कुमार वप्पा गोप वेशसे उस नगेन्द्र नगरके विस्तारित जंगलमें अपने प्राते पालन करनेवाले ब्राह्मणोंकी गायें चराताथा। सूर्यवंशी महाराज शिलादित्यका वंशधर गोपालरूप तुच्छकार्य करकेभी सुखसे समय बिताने लगा परन्तु उसके शान्तिमय सुखमें विघ्नहुआ। कुमार जितनी गायें चराते थे, उनमें एक गाय बहुतही दुधारी थी। आश्चर्यकी बातहै कि संध्या समय जब वह आश्रममें आती तौ उसके थनोंमेंसे दूध नहीं निकलता था। ब्राह्मणोंके मनमें विषम सन्देह हुआ। उन्होंने

समझा कि कुमारही एकान्तमें इस गायका दूध पीजाता है। धीरे-धीरे यह सन्देह उनके मनमें जमने लगा वे ब्राह्मणलोग बड़ी सावधानीके साथ कुमारके प्रत्येक कार्यकी परीक्षा करने लगे। कुमारने सब समझा, परन्तु क्या करें? जबतक इस सन्देहके दूर करनेका यथार्थ उपाय दृष्टि नहीं आता तबतक मनके दुःखको मनमेंही रखकर धीरभावसे कार्य करने लगे। कुमारने गायपर विशेष दृष्टि रखनेकी प्रतिज्ञा की। दूसरे-दिन जब गायें चरनेके लिये जंगलको चलीं तौ कुमार उसही गायके पीछे भ्रमण करने लगे। वह जिस ओरको गई, वे भी उसही ओरको गये। गइया एक निर्जन कन्द-रामें घुसी कुमार वप्पाभी उसके पीछे २ वहीं पर पहुँचे। अकस्मात् एक अद्भुत दृश्य देखा। कि गइया एक बेलपत्तोंके ढेरकी चोटीपर दूधकी धार छोड़ रही है। कुमार विस्मित हुए। उन्होंने उस लताके ढेरके निकट जाकर देखा कि उसमें एक शिवलिंग स्थापित है और उस शिवलिंगकी चोटीही पर गायके थनमेंसे दूधकी धार निकलकर गिर रही है।

कुमारने समझा कि इसी कारणसे गायका दूध थनमेंसे निकल जाता है, उन्होंने शिवलिंगके निकट और एक विचित्र दृश्य देखा, कि उसके सम्मुखवाले एक वृक्षके भीतर ध्यान किये हुए एक योगी विराजमान हैं, कुमार जैसेही उस निर्जन वनमें गए वैसेही उस योगीका ध्यान टूट गया। परन्तु करुणानिधान तपस्वीने ध्यानमें विघ्न करनेवाले कुमारसे कुछ न कहा।

यह गिरिकंदरा अतिनिर्जन है, शांतिने इसके भीतर अपना घर बना लिया है पूर्वकालके योगी और तपस्वियोंके अतिरिक्त और किसीने उस पवित्र स्थानको कभी नहीं देखा, कुमार बड़े पुण्यवान् थे, नहीं तो बिना चेष्टा और यत्नके वह पवित्र स्थान * कैसे देख सक्ते। उस तपस्वीका नाम हारीत था। योगीवर हारीतभी उस गायकी दुग्ध धारको प्राप्त करते थे।

हारीतका ध्यान भंग होनेपर कुमारने उनके चरणपर गिरकर साष्टांग प्रणाम किया, योगीने आशीर्वाद देकर नाम धाम पूछा। राजकुमार जहांतक अपने वृत्तान्तको जानते थे, अकपट भावसे कह गये, उपरान्त मुनिवरका आशीर्वाद पाय उसदिन अपनी गायोंको लेकर आश्रममें चले गये। दूसरे दिनसे प्रतिदिन कुमार योगीके पास आने जाने लगे, प्रति दिनभक्तिके साथ उनके दोनों चरणोंको

* ठीक इसी स्थानमें एकलिंगजीका पवित्र मंदिर बना है। टाडसाहबके समयमें जो पुजारी उस मंदिरमें था, वह महर्षि हारीतसे ६६वीं पीढ़ी पीछे हुआ उसने टाडसाहबको एक लिखा हुआ शिवपुराणभी दिया था।

धोकर पीनेके लिये दूध उपहारमें देते और पूजाके योग्य फूल बीनकर ला देतेथे । ऐसी कपटहीन भक्ति देख तपोनिधि हारीत परम प्रसन्न हो कुमारको अनेक प्रकारकी नीति सिखाने लगे । इस प्रकारसे कुछ काल बीतगया, क्रमानुसार योगीजी यहांतक संतुष्ट हुए कि कुमारका शैव मंत्रकी शिक्षा दे गलेमें यज्ञोपवीत पहरा दिया और महा गारवके चिह्नस्वरूप “ एकलिंगका दीवाना ” उपाधि दानकी, वप्पा कुमारकी अकपट भक्ति और गाढ़ शिवपूजा देखकर भगवती भवानीभी अत्यन्त प्रसन्न हुईथीं । वे कुमारको आशीर्वाद देनेके लिये स्वयं सिंहासनपर सवारहो सन्मुख प्रगट हुईं । तथा अपन हाथसे उनको विश्वकर्माके बनाये शूल धनुष बाण तरकश असि चर्म और एक बहुत बड़ा खड्ग इत्यादि उत्तमोत्तम दिव्यास्त्र दिये ।

इस प्रकारसे आदिदेव भगवान् महादेवजीके पवित्र मंत्रसे दीक्षित और भगवती भवानीजीके द्वारा दिव्यास्त्रसे सज्जित हो कुमार वप्पा शत्रुओंके लिये अजित होगये । तब उनके गुरु मरुपिं हारीतने शिव लोकमें जानेका विचार किया और कुमारसे यह विचार कह सुनाय और कहा जिस दिन हम शिवलोकको जायँ उसदिन तुम शीघ्रही यहां पर आना । परन्तु कुमारको उसदिन बड़ी गाढी नींद आई, और वे ठीक समयपर वहां न पहुँचकर देरमें पहुँचे पश्चात् उस नियत समयके बीत जानेपर उन्होंने शीघ्रही वहां पहुँचकर देखा कि योगी श्रेष्ठ हारीत अप्सराओंसे खेंचे जाते हुए रथपर सवार होकर आकाश मंडलमें कुछ दूरतक पहुँचगयेहैं महर्षिने अपने प्यारे शिष्यको पिछला अनुराग दिखानेके लिये रथकी चालको रोका और आशीर्वाद देनेके लिये वप्पा कुमारको समीप उठनेके लिये कहा देखतेही देखते कुमारकी देह एकसाथ वीस * हाथ बढगई परन्तु तोभी गुरुके निकट न पहुँच सके । तब मुनिने मुख फैलानेके लिये कहा तत्काल वप्पाने आज्ञाका पालन किया हारीतने उनके मुँहमें थूक दिया परन्तु अपनी समझके दोषसे कुमार एक अमूल्य वरको प्राप्त न करसके उसकी घृणा और अवज्ञा करके मुख बंद करलेनेपर वह निष्ठीवन चरणोंपर गिरा, यदि कुमार घृणाके साथ गुरुजीके दिये हुए स्नेहोपहारका अपमान न करते तो निश्चयही अमर होजाते, परन्तु यह उनके भाग्यमें न था, इस कारण अक्षय वरभी न मिलसका, यद्यपि वह

* ऐसे अनेक वृत्तान्त वप्पारावलके विषयमें सुने जातेहैं, कहतेहैं कि उनके पहरेका वल-कुछ कम पाँचसौ हाथ लंबाथा, भगवती भवानीजीने जो तलवार इन्हें दीथी उसका वजन ३२ सेर था ।

अमर न होसके तथापि उनका देह सर्व प्रकारके अस्त्र शस्त्रोंसे अभेद्य होगया । यहभी उनके लिये साधारण सौभाग्यकी बात नहीं थी इस ओर महर्षि हारीत धीरे-२ आकाश मण्डलको उठगये और वह विमान दिखाई नहीं दिया ।

“जिस दिन कुमारपर भगवत्की यह कृपा हुई, उसी दिनसे उनके भाग्याकाशमें चमक आगई, उसी दिनसे उन्होंने मूल मंत्रकी साधनाके कठोर कार्य क्षेत्रमें आनेकी प्रतिज्ञा की, कुमारने अपनी मातासे सुनाथा कि मैं चित्तौरके सूर्यवंशी राजाका भानजाहूँ, जो कि उस समय वहाँ राज करतेथे इस निकट सम्बन्धका वृत्तान्त जानकर यह कुमार अपना प्रयोजन सिद्ध करनेमें दूने उत्साहित होगये । चरवाहोंके आलस जावनस अत्यन्त घृणा उत्पन्न होगई।” कुमार कितने एक साथियोंको लेकर गंभीर वनवासको छोड़कर वस्तीमें आगये । पहली बार वस्तीके दर्शन हुए । इससे पहिले उन्होंने नहीं देखा था, कि नगरकी वस्तीका स्थान कैसा होताहै । इस समय वस्तीवालोंका श्रेष्ठ उद्यम देखकर और भी उत्साहित होगये । भाग्य बलवान होनेसे चन्द्रभागी सन्मुख होजाताहै उस निविड़ वनवास भूमिसे निकलनेके समय मार्गमें नाहरा मगरनामक गिरिकूट * की तलेटीसे वनमें प्रसिद्ध गोरखनाथ सिद्धके दर्शन हुए । गोरखनाथजीने एक दुधारी तलवार कुमारको दी तलवारमें यह गुणथा कि यदि मंत्र पढ़कर चलाई जाती तो पहाड के भी दो टुकटे हो जातेथे । कुमार वप्पाके सौभाग्यका मार्ग इससे पहिले निर्मल हो चुकाथा, उस समय जो कुछ विघ्न शेषथे वह भी इस सिद्धदत्त तलवारकी सहायतासे दूर होगए अब तो आठों सिद्धि करतलगत होगई । ×

मौर्य वंशवालेभी प्रमार कुलकी शाखा हैं, जो इससे पहिले मालवके सिंहासन पर विराजमानथे, और भारतके चक्रवर्ती राजाथे, जिस समय कुमार वप्पाने चित्तौरमें आगमन किया उस समय इस नगरमें मौर्य वंशका मान नामक राजा राज करता था, महाराज मानने अपने आये हुए भानजेकी भली भांतिसे आदर कर ग्रहण किया व अपने अधीनका सामन्त वनाय भरण पोषणके लिये थोडी भूमि दे दी । मौर्य महाराज मानसिंहके राजके समयका जो

* उदयपुरके पूर्वमें जो पहाडी मार्गहै, उससे ७ मील दूर नाहरा मगरा अर्थात् व्याघ्रमेरुहै ।

× राजपूत लोगोंसे ऐसा सुनाहै कि राणा अबतक उसी दुधारी तलवारकी पूजा भक्तिके साथ प्रतिवर्ष किया करतेहैं । टाडसाहबको राणा कुलके प्रधान भट्टलोगोंने यह वृत्तान्त सुनायाथा । उन्होंने इस वृत्तान्तको कहनेके समय खड्ग शुद्धिका जो मंत्र उच्चारण कियाथा उसका मर्म यहहै:-
“ गुरु गोरक्षनाथ, देवदेव, एकलिंग, तक्षक, महर्षि, हारीत और भगवती भंवानीकी आज्ञासे आघात कर । ”

शिलालेख निकला है, उसके पढ़नेसे जाना जाता है कि उसकालमें राजस्थानके बीच सामन्तप्रथा अधिकाईसे चल रही थी । राजपूत सामन्त गण बहुतसी भूमि कीर्तिको भोग करके मान राजाकी सहायताके लिये संग्राम भूमिमें आये शत्रुसे भिड़ जातेथे इससे पहिले महाराज मानको समस्त सामन्त गण बहुत मानते थे, तथा महाराज भी उनसे विशेष प्रसन्न रहतेथे, परन्तु जिस दिन कुमार वप्पा महाराज मानकी प्रीतिमयी आखोंमें पड़ा उसी दिनसे सामन्त लोगोंसे अनुराग करना छोड़ दिया, समस्त लोग समझगये कि यह वप्पाही इस अनर्थकी जड़ है, अतएव कुमारसे महा डाह करने लगे और कुछ बुरा करनेका यत्न सोचते रहे ।

उसी समयमें एक विदेशीय शत्रुने आकर चित्तौरपुरीको घेरलिया तब महाराजने सामन्तोंको शत्रुओंसे लड़नेकी आज्ञा दी । परन्तु उन्होंने अपनी भूमिवृत्तिके पट्टे अत्यन्त दर्पके साथ दूर फेंकदिये, और कहा कि “महाराज अपने प्यारे सेनापतिको युद्धमें भेजें ” कुमारने यह बातें सुनीं परन्तु वह इससे कुछभी भीत वा शंकित नहीं हुए; वरन दूने उत्साहसे उत्साहित होकर अकेलेही उस देश वैरी शत्रुके साथ संग्राम करनेको चले गये । विद्वेष करनेवाले सामन्तोंने अपनी २ भूमिका-वृत्तिको त्याग करतो दिया, परन्तु लोकलाजके मारे वहभी कुमारके साथ गये । कुमारके प्रचंड विक्रमको न सहन करके शत्रुगण हारगये । वप्पा कुमार शत्रुओंको जीतकर विजयी वेशसे चित्तौरमें न आये वरन अपने पितृपुरुषोंकी राजधानी गजनी नगरमें चलेगये । उसकाल गजनी नगरमें एक म्लेच्छराजाका राजथा, इस राजाका नाम सलीम कहते थे । वप्पाने उसको सिंहासनपरसे उतारा और उस गद्दीके ऊपर एक सूर्यवंशी सामन्तको स्थापित किया और अपनी सेनाको साथले चित्तौर आये, व उसही समयमें अपने शत्रु सलीमकी बेटीसे विवाह किया ।

डाहसे सताये हुए सर्दारगण राजमानसे अत्यन्त असन्तुष्ट हो उसे छोड़कर चित्तौरसे चलेगये । राजाको अत्यन्त दुःख हुआ । राजाने सामन्तोंके बुलानेको बारम्बार दूत भेजे, परन्तु किसीसे कुछ न हुआ । रोषमें अन्वेषण सामन्तगण किसी भांतिसे सावधान न हुए । वरन उन्होंने गुरुकी आज्ञाकोभी लंघन किया । जो दूत उनके पास गयाथा उन्होंने कहा कि “हमने महाराणाका ‘नमक’ खाया है, इस कारण एक वर्षतक बदला न लेंगे ।” वे सामन्तलोग अपने हृदयकी डाहका बदला लेनेके लिये एक योग्य सरदारकी तलाश करने लगे । जिस वप्पा

कुमारसेनके हृदयमें यह मनोविकार उत्पन्न हुआ था; पश्चात् उसकीही अनुपम शूरता और गुणावलीसे मोहित हो उनलोगोंने सन्मानके सहित उसकोही अपना सरदार बनाया। राजका लालच कैसा भयंकर है! इसकी मोहिनी मायासे मोहित होकर मनुष्यों का हिताहितका ज्ञान नहीं रहता। धर्म ज्ञान जाता रहता है और कृतज्ञताके मस्नकपन लात मारकर उपकारी मित्रका सत्यानाश करनेमेंभी संकोच नहीं होता! दुराकांक्षी कुमार वप्पाने यही किया ! जो मौर्यवंशीय राजा, कुमारका मामा था। जिनका अनुग्रहही कुमारके लिये सौभाग्यका प्रधानद्वार हुआ; जो राजा कुमारके लिये अपने सामन्तोंका विरागभाजन हुआ; कुमार वप्पाने उस मामाके समस्त उपकारोंका भूलकर —छातीके आगे पत्थर रखकर उसकोही सिंहासनसे उतार दिया और उन विद्वेषयुक्त सामन्तोंकी सहायतासे चित्तौरका सिंहासन प्राप्त किया। भट्टकविगणोंने यहांपर वर्णन किया है कि:—“वप्पाने मौर्य राजाके सम-ग्रं चित्तौरका छीन लिया, और उसदेशके “मौर” अर्थात् मुकुट स्वरूप होगये। चित्तौरक सिंहासनपर बैठतेही सर्व साधारणकी सम्मतिसे “हिन्दू सूर्य” “गजगुरु” और “चक्रवै” सार्वभौम यह तीन पदवी धारण कीं।

महाराज वप्पाकी बहुतसी संतान थीं। उनमेंसे कुछ संतान तो अपने पितृपुरु-षोंके प्राचीन राज सौराष्ट्र काठियावाड क्षेत्रमें चली गई, और समयके अनुसार नहा पनाक्रमशाली हुई, आईन “अकवरी”में देखा जाता है कि उनके मध्यमें पचास हजार वीर तो अकबरके समयमें अत्यन्तही प्रभावशाली होगयेथे। वप्पाके दूसरे कुमारोंमेंसे पांच पुत्र मारवाड़ देशमें जा बसे वहां उनका गोहिल नाम हुआ, परन्तु थोड़ेही दिनोंमें निकाले जाकर वह लोग इस समय बलभीपुरके ऊजड़ मैदानमें अतिदीन भावसे समयको व्यतीत कर रहे हैं, आज वे लोग अपने पवित्र कुलगौरवका भूल कर अरबवालोंके साथ बनिज व्योपार करते हैं।

महाराजाधिराज वप्पाके अंतिम जीवनका वर्णन सबसे अधिक अद्भुत है। उस अद्भुत वृत्तान्तका गुप्त रखनेकेलिये उनके जातिवालोंकी बहुतही अभिलाषा रहती है। जिस समय महाराज वप्पाकी आयु पचास वर्षके लगभग हुई उस समय वे अपनी मातृभूमि संतान सन्तति और इष्ट मित्रोंको छोड़कर खुरासान राज्यमें चले गये और उन देशोंको जीतकर वहांकी बहुतसी म्लेच्छस्त्रियोंसे विवाह किया उनके गर्भसेभी महाराजके बहुतसे पुत्र और कन्या हुई। *

* यह बात असत्य है, प्राचीन पुस्तक एकलिंग माहात्म्यसे ज्ञात होता है कि वप्पारावलजीने सम्वत् ८१० अर्थात् ७५४ में संन्यास लिया। मेवाड़का इतिहास पृष्ठ ६ देखो।

पूरी एकसौ वर्षकी आयु पाकर वीरकेशरी महाराज वप्पाने परम धामका पयान किया । देलवाडा नोरेशके पास एक प्राचीन ग्रंथ है, उसमें देखा जाता है कि महाराज वप्पाने इस्फनहानकन्धार, काश्मीर ईराक, ईरान, तूरान, और काफरिस्तान आदि पश्चिम देशके राजाओंको पराजित करके उनकी वेटियोंसे विवाह किया, तथा अन्तमें तपस्वी लोगोंके समान रहकर मेरु पर्वतकी तलेटीमें अपने जीवनको व्यतीत किया था, कहते हैं कि महाराजने जीवत शरीरमेंही समाधि ली । उन सब स्त्रियोंके गर्भमें महाराज वप्पाके १३० पुत्र उत्पन्न हुए, जो इतिहासमें नौशेरा पठान कहलाये । उनके एक २ पुत्रने एक २ वंशकी प्रतिष्ठा कीथी, हिन्दू स्त्रियोंसे ९८ पुत्र जन्मेथे वे सबही “अग्नि उपासी, सूर्यवंशी नामसे प्रसिद्ध हुए ।”

भट्टग्रंथोंमें औरभी एक विचित्र वृत्तान्त पाया जाता है, कहते हैं कि महाराजके परम धाम सिधारनेपर मुसलमान तो यह कहते थे कि हम देहको समाधि देंगे, और हिन्दू कहते थे कि हम दाह करेंगे । इस कारण दोनों पक्षमें घोर विवाद हो रहा था, दोनों अपनी-अपनी ओरको खेंचते थे, बाद विवादमें कोई नहीं हारा, अतएव इस दुरुह प्रश्नकी भीमांसा न हुई, इस प्रकार झगड़ा करते २ उन्होंने महाराजके शरीरपर ढंकाहुआ कपड़ा उधाड़कर देखा, कि उस नाशवान पंच तत्त्वमय देहके बदले वहांपर फूलेहुए कई एक कमल जिनका रंग श्वेत था विराजमान हो रहे हैं । वहांसे उन कमलफूलोंको उखाड़कर मान सरोवरमें जमादिया गया । फारस देशके नौशेरावां बादशाहके सम्बन्धमेंभी ठीक ऐसाही वृत्तान्त सुना जाता है ।

भेवाड़के राजवंशके आदि प्रतिष्ठापक वीरवर वप्पा रावलका संक्षिप्त जीवनचरित्र यहाँपर लिखा गया है इस समय हम ठीक २ यह लिखेंगे कि वह कौनसे समयमें हुए । पहलेही लिखा जा चुका है कि महाराज शिलादित्यके राजत्व काल सम्वत् २०५ में वल्लभीपुर पतन हुआ और उनकी नौवीं पीढ़ीमें वप्पा रावलका जन्म हुआ परन्तु आश्चर्यकी बात है, कि राणाके महलोंमें जो भट्टग्रंथ रक्खे हुए हैं, उन सबमें देखा जाता है कि संवत् १९१ सन् १३५ ई० में वप्पा रावलने जन्म लिया था । इस ओर एक शिलालिपिमें * खुदा हुआ

* चित्तौरके प्रसिद्ध मानसरोवरके किनारे एक विजय स्तम्भसे यह शिलालिपि निकली थी इसमें एक जगह लिखा है कि एक समय महाराज माननगरमें घूम रहेथे इसी समय एक अतिबूढ़ा आदमी उनके सामनेसे धीरे-धीरे चला गया, बूढ़ेको देखकर मानसिंहके हृदयमें एक गंभीर भावका उदय हुआ । उन्होंने विचारा मनुष्यका जीवन क्षण भंगुर है, कमलकी पंखड़ी पर लगे जलकी बूँदकी नाहि चंचल है, राज और धन सबही क्षणभंगुर हैं । इस प्रकारसे अनेक सोच विचार कर

है, कि सम्बत् ७७० सन् ७१४ में चित्तौरके मध्य मौरमान राजाका अधिकार था। राणाके राजभवनमें भट्टग्रंथ रक्खे हैं, वे स्पष्टाक्षरसे प्रकाशित करते हैं, कि वप्पारावल महाराजके भानजे थे। पन्द्रहवर्षकी उमरमें वप्पारावलके मामाने भानजेका अपने सामन्तोंमें नियत किया था। महाराज वप्पाने सरदार लोगोंकी सहायतासे महाराज मानका गद्दीसे उतार चित्तौरपर अधिकार किया। अब इन अमेलमतोंमेंने किसका ठीक समझकर ग्रहण किया जावे? इसके ग्रहण करनेमें यथार्थ समझ कैसे हाथ आवेगा? यदि महाराज वप्पाको मौर राजाका भानजा और उसका समकालीन निर्णय किया जावे तोभी ठीक नहीं फिर क्या नहिलोत कुलतिलक वीरकेशरी महाराज वप्पाका वृत्तान्त अलीक और कल्पनाही समझा जायगा? सौराष्ट्रमें सोमनाथ* के मंदिरमें एक शिलालिपि मिली है उसमें यह सन्देह दूर होजाता है, उस शिलाखण्डमें वलभीनामक एक स्वतंत्र सम्वत्क विषयमें कुछ लिखा है, यह सम्वत् विक्रम सम्वत्के ३७५ वर्ष पीछे प्रचलित हुआ है।

ऊपर कहचुंकि है कि २०५ सम्वत्में वलभीपुरविध्वंस हुआथा, अब निश्चय होगया कि सम्वत् २०५ यही वलभी सम्वत् था, और यह सम्वत् विक्रमीय सम्वत्के ३७५ वर्ष पीछे आरंभ हुआ तब ३७५ में २०५ जोडनेसे ५८० विक्रम सम्वत् [अथवा सन् ५२४ ई०] में वलभीपुर म्लेच्छोंने विध्वंस किया।

इधर मौर राजाओंके शासन सम्वन्धी शिलालेखन विदित होता है कि वप्पा का जन्म ७७० सम्वत्में हुआ अब यदि ७७० में ५८० घटादिये जाय तो १९० बचते हैं, इसमें केवल एकही वर्ष जांड देनेसे भट्टकवियोंका बताया समय ठीक हो जाता है, भट्टोंने लिखा है कि सम्वत् १९१ में वप्पाका जन्म हुआथा अब यह स्पष्ट है कि हमारे निरूपित किये समयमें केवल एक वर्षका अन्तर रहजाता है, ऐसी अवस्थामें यही मानना होगा कि एक वर्षकी न्यूनाधिकता कोई वस्तु नहीं है।

अपना नाम अक्षय रत्ननेके लिये इस विशाल सरोवरकी प्रतिष्ठा की, इस सरोवरसे महाराज मानकी विशाल कांति चली जाती है।

* इसवातका निश्चय करनेके लिये टाडसाहबने बहुत उद्योग किया, अन्तमें इसविषयमें उन्होंने सफलता प्राप्त की, शिलालिपि ताम्रपत्र प्राचीन मुद्रा, खोदित स्तम्भादि मेवाड़के सम्वन्धमें जो उपकरण जहां जहां मिलसके, वहां २ जाकर परिश्रमके साथ उन्होंने उनको देखा, और उनका द्वारा सत्य वृत्तान्त जानना चाहा इस प्रकार खोज करते २ छः वर्ष बीतगये, पर फल कुछ न हुआ, इसी सन्देह और चिन्तामें आखिर वे उदयपुरसे सौराष्ट्रदेशको चले गये उन्होंने सोचा कि गिहोट कुलके

सिंहासनपर बैठनेके समय महाराज वप्पाकी आयु १५ वर्षकी थी परन्तु यह अभी दिखाया जा चुकाहै कि उसका जन्म सम्वत् मौर्य शिला लेखसे एक वर्ष कमहै अर्थात् सम्वत् ७६९ में उसका जन्म हुआथा, इस प्रकार सम्वत् ७६९×१५०७८४ अथवा [७२८ ई०] में उसने चित्तौरका सिंहासन प्राप्त किया, और इसी सम्वत्से *गिहौटोंका आधिपत्य प्रारंभ हुआ, इस समयसे लेकर ११०० वर्षतक ५९ राजा मेवाडके सिंहासन पर बैठे ।

गिहौटकुलतिलक वीर श्रेष्ठ वप्पा रावलकी उत्पत्तिका ठीक समय निरूपण किया गया, और उसकी प्राचीनता प्रमाणित होगई, यह थोड़े हर्षकी बात नहीं है कि वह अपने समयके पृथिवीके अन्यान्य वीरोंसे पहले प्रगट हुआथा। उस समय कालोर्विञ्जका वीरवंश पश्चिमी देशमें प्रचण्ड बल प्राप्त करके धीरे २ अपना विराट् मस्तक उठा रहाथा, और खलीफा बलीदकी विजयिनी सेनायें इब्री नदीके किनारे अपने हरेरंगकी पताका उडाकर बड़ी वीरतासे समस्त यूरूप देशको कम्पायमान कर रहीथीं ।

मेवाड राज्यमें आयुतपुरनामक एक प्राचीन समृद्धशाली नगरथा, वह नगर इस समय बहुत टूटी फूटी तथा बुरी अवस्थामें है, असभ्य भील और जंगली जन्तु अब वहां निवास करतेहैं, बहुत लोग अब इस नगरका नामभी नहीं जानते, इस आयतपुरके खंडहरोंमें एक शिलालिपि पाई गईहै उसमें महाराज शक्तिकुमारतक मेवाडके चौदह राजाओंका धारावाहिक वंश विवरण लिखाहै उक्त शिलालिपिमें वीरकेशरी महाराज वप्पाकाभी वर्णन शैल नामसे किया गयाहै । भट्टग्रंथ और राज-परिवारकी पत्रिकाके साथ उक्ति शिलालिपिकी सब बातोंमें ही प्रायः एकताहै । केवल उसमें एकही नाम अधिक लिखाहै ।

बूम साहव कहतेहैं कि “यद्यपि कविकुल अपनी कल्पनाके बलसे यथार्थ इतिहासकोभी क्लिष्ट करदेतेहैं । यद्यपि वे अपनी इच्छाके बशसे सत्य वार्ताकोभी अद्भुत अलंकारोंसे सजा देतेहैं । परन्तु जब कि वही प्राचीन जगतके अकेले

उक्त प्राचीन स्थानमेंभी चलकर एक बार अनुसन्धान करना चाहिये, भाग्यसे वहां जानेपर उनका मनोरथ और परिश्रम सफल हुआ, बहुत अनुसन्धानके पीछे सोमनाथजीके प्रसिद्ध मंदिरमें उन्होंने वह शिलालिपि पाई जिसका वृत्तान्त ऊपर लिखाहै । उस शिलालेखमें एक शिवसिंह सम्वत्का औरभी लेख पाया जाताहै यह सम्वत् विक्रमके ११६९सम्वत्में चलाया ।

* गिहौट कुलके १५राजा इस प्रकारसे लिखेहैं—ग्रहादित्य, भोज, महेन्द्र, नागादित्य, शैल (वप्पा) अपराजित, महेन्द्र, खलभोज, खुमान, भर्तृपाद, सिंजी, श्रीललित, नरवाहन, शालिवाहन शक्तिकुमार ।

इतिहासकारहैं, तब उनके गहरे रंगे हुए वृत्तान्तके भीतर यथार्थ वृत्तान्तभी सदाही सलभावने विराजमान रहताहै ।” उनका यह ज्ञानगर्भ वाक्य इस स्थानपर भली भांति संचितार्थ होताहै । कारण कि निर्जन और विध्वंस हुए आईतपुरके खंडरके साथ जिनके नामकी सूची धीरे २ मनुष्योंकी आंखसे लोप हुई जातीथी भवाङ्क भट्टकुलके मोहनकारी सधन ढकनेमें वह समस्त नाम गुप्त भावसे ज्योंके त्यों विराजमान हैं, वीरवर वप्पाके समयमेंही मुसलमान लोग सिन्धुनदके पार हो नये पहिले भारत भूमिमें आयेथे । हिज्री सम्वत् ९५ में खलीफा वलीदका मुलाय्नि मुहम्मद विनकासिम सिन्धुदेशको जीतकर भागीरथी गंगाजीके किनारे-तक चला आया था । यह वृत्तान्त अरबवालोंकी तवारीखोंमें लिखाहुआ है । यद्यपि एलमेकिनके ग्रंथमें मुसलमानोंके द्वारा सिन्धराजपर चढाई करनेका वृत्तान्त पाया जाताहै, तथापि उस समय जो अवस्था भारत वर्षकी थी, उसका विचारकरनेसे भली भांति विदित हो जायगा, कि उसकाल भारत वर्षके अनेक देश विदेशीय शत्रुकुलके आक्रमणसे तित्तर वित्तर हो गयेथे, अजमेरके राजा माणक-रायका राज्य ईस्वी आठवीं शताब्दीके मध्यमें शत्रुओंके द्वारा उजाड़ा गयाथा, कहतेहैं कि वह शत्रुगण नावपर सवार होकर आये और अंजननामक स्थानमें उतरये । यद्यपि उस आक्रमण कारीको कोई कासम समझनेमें सन्देह करे तो सिन्धुराज दाहिरका वृत्तान्त पाठ करनेसे वह सन्देह दूर हो जायगा * अब्दुलफ-जल कहताहै कि हिज्री ९५में (सन् ७१ ई०) में कासिमने दाहिर राजाको मारा और राज्यको विध्वंस कियाथा राजाका बेटा चित्तौरसे भागकर मौर्यराजाके पास चलागया ।

वप्पासे लेकर शक्तिकुमारके बीचतक (दो शताब्दियोंमें) चित्तौरके सिंहासन पर इस राजा बैठे इनमें चार बड़े वीर और प्रतापी निकले इन दोसौ वर्षोंके बीचमें जो चार धुरन्वर राजा उत्पन्न हुए उनको लेकर मानो चार प्रधान युगकी अवतार पना हुई है पहले कनकसेन सन् १४४ ई०में दूसरे शिलादित्य सन् ५२५ में-इन्हीके समय वलभीपुर विध्वंस हुआथा तीसरे वप्पा सन् ७२८ में चौथे शक्तिकुमार सन् ९६८ में ।

* इस अवसरमें मुहम्मदविनकासिम चित्तौरकी ओर बढ़ा था वहां पहुंचनेपर वप्पाने उसे पराजित किया ।

१-१ गोहिल २ भोज ३ शील ४ खलभोज ५ मर्त ६ आधिसिंहजी ७ सुभायकजी ८ सुमानजी ९ अल्लटजी १० नरवाहनजी ।

तीसरा अध्याय ३.

वप्पा और समर सिंहके मध्यवर्ती राजाओंका वृत्तान्तः—वप्पाकी सन्तान सन्ततिः—अस्ववालोंका भारतवर्ष पर चढ़ाई करना;—चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये जिन हिन्दू राजाओंने खड्ग धारण किया था उनका संक्षेप वृत्तान्त । इससे पहिले वर्णन हो चुकाहै, कि गिह्लोट कुलतिलक महाराज वप्पा सम्वत् ७८४ सन् ७२९में चित्तौरके सिंहासनपर बैठेथे । वह जिस दिन चित्तौरके राज्यको छोड़कर ईरानको चलेगये, उस दिनसे लेकर महाराज समरसिंहके राजतक भट्टग्रंथोंके वृत्तान्तसे सामर्थ्यके अनुसार ऐतिहासिक वृत्तान्त संग्रह किया जाताहै, उस समयमें सारे मेवाड़ही क्या बरन सारी भारतभूमिमें एक नवीन युगका अवतार हुआथा । जिस दिन प्रचंड मुसलमान वीरोंके गगन-विहारी भैरवसिंहनादसे आर्यलक्ष्मी चंचल हुई, भारतवर्षका राजमुकुट भारत-वर्षीय आर्यराजाओंके मस्तकसे उतारा जाकर यवनोंके शिरपर स्थापित हुआ, इस बातको कौन स्वीकार नहीं करेगा, कि उस दुर्दिनके मध्य सम्पूर्ण भारत वर्षमें एक नवीन युगका संचार हुआ । वीरवर वप्पारावलका ईरानमें जाना और समरसिंहका सिंहासनपर बैठना इस अन्तरमें चार शताब्दी बीत गई, इन चारसौ वर्षके बीच मेवाड़के सिंहासनपर सब अठारह राजा बैठे थे । उनके राज्यका ठीक वर्णन भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंमें यद्यपि नहीं पाया जाता तथापि जो कुछ पाया जाता है, उससे यथार्थ ज्ञान होताहै, कि वह राजा महाराज वप्पाके योग्य वंशधरथे । उनकी अनुपम कित्तिकथा आजभी राजस्थानके अनेक गिरि गात्रोंमें अक्षय भावसे विराजमान हो रही है ।

आयतपुरकी शिलालिपिकी सहायतासे इससे पहिले प्रतिपादित होगयाहै कि महाराज वप्पा और समरसिंहके बीचमें शक्तिकुमारनामक एक राजा सम्वत् १०२४ (सन् ९६८ ईस्वीमें) मेवाड़का अधिकारीथा इस ओर एक पुराने विश्वसनीय जैनखरेंसे यह मालूम होताहै कि महाराज शक्तिकुमारसे चार पीढी पहिले सम्वत् ९२२ सन् (८६६ ई०)में और एक प्रतिष्ठावान राजा चित्तौरके सिंहासन पर विराजमान था, जिसका नाम अल्लटजी या खुमानरासा नामक एक पुराने काव्यग्रंथमें देखा जाताहै कि वप्पा और समरसिंहके मध्यवर्ती कालमें मेवाड़ राज्यपर एक बार मुसलमान लोगोंने चढ़ाई कीथी । खुमान राणाके राज्यमें यह

चढ़ाई हुई थी। महाराज खुमानने सन् ८१२ ई० से लेकर सन् ८३६ ई० तक राज किया था।

भारतका इतिहास इस समय घोर अंधकारसे ढका हुआ था। अतएव उस अंधकारमय अतीतकालके गर्भमें प्रवेश करके भारतके ऐतिहासिक वृत्तान्तका उद्धार करना कठिन कार्य है। तथापि भट्टकवि, आईनअकबरी और फरिस्ता आदि जो ग्रंथ इस अंधकारमें साधारण उजालेकी समान विराजमान हो रहे हैं, हम उनकी ही सहायतासे अपनी सामर्थ्यके अनुसार मेवाड़के इतिहासका उद्धार करेंगे अतएव इस समय पहिले महाराज वप्पाकी सन्तान सन्ततिका वर्णन करते हैं।

पहिले ही कहा जा चुका है कि गिहोटीकुलमें सर्व समेत चौबीस शाखाएँ हैं। इन चौबीस शाखाओंमेंसे कुछ शाखायें महाराज वप्पासे उत्पन्न हुईं। चित्तौर जीतलेनके कुछ दिन पीछे ही महाराज वप्पा सूरतदेशमें गये सूरतदेशके नितक जो बंदगुहीपहें उस कालमें वहां पर इस्फगुल * नामक राजा राज करता था इस राजाके एक बेटी थी महाराज वप्पाने उसके साथ विवाह किया और उसको लेकर चित्तौरमें आये। उस समय देवबन्दरमें वाणमाता नामक एक मूर्ति थी। नवीन दुलहनके साथ महाराज वप्पाजी उस वाणमाताकी पवित्र प्रतिमाको भी साथ ही राजधानीमें ले आये। उन्होंने उस पवित्र मूर्तिको जिस मन्दिरमें स्थापन किया था, आज तक भी वह मूर्ति वहांपर वैसे ही विराजमान हो रही है। भगवती वाणमाता आज भी मेवाड़के इष्टदेव भगवान एकलिंगके साथ समान पूजाको प्राप्त करती हैं, देवबन्दरके राजा इस्फगुलकी बेटीके गर्भसे महाराज वप्पाके अपराजितनामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके पहिले महाराजने द्वारकाके निकट वसे हुए कालीवावनगरके परमारराजाकी बेटीसे भी विवाह किया था, उसके गर्भसे असिलनामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो सबसे बड़ा था। परन्तु पिताके राज्यको छोड़ कर मामाके यहां रहता था इस कारण चित्तौरका राजमुकुट इसको प्राप्त नहीं हुआ, छोटा सौतेला भाई अपराजितही राजसिंहासनपर बैठा × अशील यद्यपि पिताके राज्यको प्राप्त नहीं कर सका,

* ऐसा वर्णन है कि चौलराज्यमें इस्फगुलका अधिकार था। बहुतसे लोग इसको वाणराजाका पिता कहते हैं।

× जिस प्राचीन लेखसे यह वृत्तान्त लिखा गया है उसमें एक जगह लिखा है कि असिलने अपने नामके अनुसार एक किलेका नाम असीलगढ़ रखा था असीलके पुत्रका नाम विजयपाल था, विजयपाल देवीवंशीय लोगोंके हाथसे कम्बे राज्यके अधिकार पानेकी चेष्टा करनेके समयमें मारा गया।

परन्तु उसने सौराष्ट्रदेशमें एक राज्य स्थापन करके वहां एक शाखाकुलकी प्रतिष्ठा की, तदनुसार उसके वंशवाले “असिल गहिलोत” नामसे पुकारे गये, समयके अनुसार वह ऐसे प्रतापी होगये कि मुगलकुलतिलक बादशाह अकबरके समयमें पचास हजार सेनाको संग्राममें सजा लायेथे । अपराजितके राज्यसमयका हमें कोई वृत्तान्त ऐसा नहीं मिला कि जिसका वर्णन कियाजाता । अपराजितके दो पुत्र हुए खलभोज और नन्दकुमार ।^१ उत्तराधिकारकी प्राचीन विधिके अनुसार बड़ा खलभोजही सिंहासनपर बैठाथा, नागदाकी उपत्यका भूमिमें टाडसाहबने एक शिलालिपि निकाली उस शिलालिपिसे जो वृत्तान्त प्रगट होताहै उसके द्वारा स्पष्ट जाना जाताहै कि महाराज अपराजित एक वीर्यवान राजा था । छोटे नन्दकुमारने दोदावंशके राजा भीमसेनका संहार करके दक्षिणमें बसे हुए देवगढ़नामक राज्यको हस्तगत कियाथा ।

महाराज खलभोज × के परलोक चलेजानेपर प्रसिद्ध महाराज खुमान चित्तौरके सिंहासनपर बैठे । मेवाड़के इतिहासमें महाराज खुमान अत्यन्त प्रसिद्ध है, जिनकी कीर्तिभी अधिकतासे फैलीहुई है । महाराज खुमानके सिंहासनपर बैठतेही मुसलमानोंने राज्यपर चढ़ाई की । स्वतंत्रकी लीला-भूमि पवित्र चित्तौरपुरी बलशाली यवनोंसे घिर गई । यह अवस्था देखकर उस कालके क्षत्रीराजा अपनी २ सेनाको साथ ले चित्तौरकी रक्षा करनेको मैदानमें आगये । उनकी सहायतासे महाराज खुमानने कठोर शत्रुओंके प्रचंड विक्रमको जैसी अद्भुत वीरतासे रोकदिया था, उसका वर्णन भली भांतिसे खुमानरासेमें लिखा हुआहै । कविकी जीवन्त कवित्व शक्तिके प्रभावसे उस समयके वृत्तान्तकी मूर्ति अत्यन्तही तेजस्विनी होगई है । इस ग्रंथके पाठ करनेसे ऐसा ज्ञात होता है कि मानो सामनेही संग्राम होरहाहै । कहतेहैं कि प्रचंड शत्रुदलने चित्तौरपुरीको घेरकर गहिलोट राजा खुमानसे कर मांगा इस बातको सुनकर महाराजको महाक्रोध आया, उनके रोम २ से मानो चिनगारियें निकलने लगीं उन्होंने दर्प और निरादरके साथ म्लेच्छोंकी इस धिनौनी बातको सुनी अनसुनी करके प्रचंड निर्घोषसे रणसिंगा बजवा दिया । तत्कालही वीरगण तइयार होकर घोर उत्साहके साथ शत्रुओंसे लड़नेके लिये संग्राममें आये । वीरवर वप्पा रावलकी “हममंडित लोहित विजय वैजयन्ती” को गर्वसहित उठायकर क्षत्रि-

× खलभोजका दूसरा नाम कर्णथा । इस नेही महर्षि हारीतके आश्रममें भगवान् एकलिंगके पवित्र मंदिरकी प्रतिष्ठा कीथी ।

याँकी सेना म्लेच्छोंके साथ घोर संग्राम करने लगी। मुसलमानोंने बुरे मुहूर्तमें चित्तौरपुरीको घेरा था, बुरेदिन उन्होंने गर्वके मदसे मतवाले होकर महाराज खुमानसे कर मांगा था। आज उन्होंने अपने इस अपमान करनेका फल भली भाँतिसे पा लिया। क्षत्रियोंने ऐसी बहादुरी दिखाई कि बहुतसे मुसलमान खेत रहे। जो बचे वह अपने प्राणोंको लेकर इधर उधर भाग गये। परन्तु तोभी उनका पीछा न छूटा विजयी खुमानने पीछा करके उनके सेनापति महमूदको पकड़ लिया और उसे चित्तौरमें ले आये परन्तु यह महमूद कौनसा मुसलमान वीर था? इस समयसे दो शताब्दी पीछे जो प्रचंड मुसलमान वीर गजनीके पहाड़ी-देशमें भारतवर्षपर चढ़ आया था, उसके नामके साथ इसके नामका मेल होता है, तथापि क्या एक नाम एकही आदमीका हो सकता है? इस प्रश्नका उत्तर देनेके लिये भारतवर्षके साथ अरबदेशके उस समयका समय निर्णय किया जाता है। किन्तु बुरे क्षणमें भारतवर्षके लाल जवाहर विदेशियोंकी खटकती आँखोंसे देखे गये, इस धन रत्नके लोभसे यह लोग यमदूतोंका भेष बनाकर भारतवर्षमें आये और वाग्मूर्ति धारण कर भारतके मालखजानेको लूटने लगे। भारतसंतानगणको इन्होंने बड़ी २ कठोर पीड़ा दी है—भारतके नगर ग्रामोंका सत्यानाश कर डाला है। जिस समयमें खलीफा उमर बुगदादके सिंहासनपर विराजमान था, उस समयमेंही मुसलमानलोग सबसे पहिले भारतवर्षमें आये। उस समय वाणिज्यके लिये भारतके दो स्थान विख्यात थे, गुर्जर और सिन्धुराज्य। इन दोनोंमें सम्पत्ति-शाली राज्योंके सौदागरी मालको अधिकारमें करनेके लिये खलीफा उमरने टाइग्रसनदके किनारेपर वसोरा शहर बनाया। भारतके वनज व्योपारकी पूरी उन्नति देखकर उसकी दुरभिलाषा धीरे २ बढ़तीही गई, सौदागरीमालके बढे-लेसे वह दुरभिलाषा पूरी न हुई इस सुवर्णकी उत्पन्न करनेवाली भूमिमें बड़े मोलके रत्न और वनज व्योपारकी सामग्री किस प्रकारसे उत्पन्न होती है उसको देखनेके लिये अब्बुलआयसनामक सेनापतिके साथ एक बड़ीभारी सेना भारतवर्षकी ओरका भेजी गई। अब्बुलआयस अपनी सेनाको लेकर सिन्धुराज्यमें आया। परन्तु तबतक कभी भारतवासियोंका वीर विक्रम शान्त नहीं हुआथा। म्लेच्छोंके दुष्टपन करनेसे अल्पकालमेंही अरोरनामक स्थानमें आर्योंके विक्रमकी आग प्रचण्ड तेजसे सुलग उठी। आयस उस आगमें तिनकेकी समान जलगया उसकी आशा और प्यास एकही साथ बुझ गई परन्तु आयसके मारे जानेसे कहीं खलीफाकी दुराशा मिट सकतीथी। उमरके मरनेपर खलीफा उस मानगद्दीपर बैठा। और गद्दीपर

बैठतेही भारतवर्षकी भीतरी परीक्षा करनेके लिये दूत भेजा, और आपभी चढ़ाई करनेके लिये बड़ी भारी सेनाको सजाने लगा, परन्तु उस मानका अरमानभी दिलका दिलहीमें रहगया। कुछ समयके बीतनेपर जब खलीफा अलीबुगदाद सिंहासनपर बैठा तब उसके सेनापतियोंने सिन्धुदेशको जीता था, परन्तु वह सेनापतिभी बहुत दिनतक इस देशपर अपना अधिकार नहीं करसके। खलीफाके मरनेपर उसपर ऐसी आपत्तियें आपड़ीं कि विवश होकर भारतवर्षको छोड़नापड़ा तदुपरान्त खलीफा अब्बुलमलिक और खुरासानके बादशाह इजीदके समयमेंभी इस प्रकारसे भारतवर्षके जीतनेकी तइयारियें हुईथीं, परन्तु वह अपनी सब तइयारियोंसे वंचित रहा। इस प्रकारसे कुछ काल बीतगया, तब अवश्य होनहार लेखके अनुसार भारतकी कठोर भवितव्यताका समय धीरे २ भारतकी ओरको पांव बढ़ाने लगा। इन बातोंके पीछे खलीफा वलीद पिताके सिंहासनपर बैठा, राज्यको पातेही विशाल सेनादलको सजाकर वह भारतवर्षपर चढ़ धाया। उस प्रचण्ड चढ़ाईको कोईभी नहीं रोक सका क्रमसे सिन्धुराज्य और निकटके कई स्थान खलीफाने ले लिये। कहतेहैं कि गंगाके पश्चिमी किनारोंपर बसे हुए देशोंके राजालोगभी, विजयी वलीदके प्रचण्ड विक्रमसे हार कर अपना छुटकारा करानेके लिये कर देने लगे। मुसलमान वीरोंकी इस समय शव वरात होरहीथी। कारण कि उस समय उनके विक्रमकी आग जिस तेजीसे जलरहीथी उसको बुझानेके लिये बहुतसे राजा तइयार हुए, और पतंगकी समान जलगये, उस वीरता और उत्साहके वृत्तान्तका पाठ करनेसे हृदय धडक जाताहै। अधिक क्या कहें उस काल एक साथही पूर्व और पश्चिम मंडलके दो विशाल राज्य मुसलमानोंके प्रचण्ड विक्रमसे विध्वंस होगयेथे। इस ओर सिन्धुनदके सैकतमें बसेत हुए देवलाधिपति दाहिरराज्यकी अवनतिके साथही भारतवर्षके सत्यानाश होनेकी सूचना हुई, उधर वीरवर रडरिकसम्राटने अपने विस्तारित अन्दलुसका राज्य और गयराजकुल अंत किया।

यह दोदों भयानक घटना मुसलमानोंके विक्रमका अक्षय और दृढ नमूना दिखाकर संसारके इतिहासमें रुधिरके अक्षरोंसे सदाके लिये लिखी हुई रहेंगी।

खलीफा वलीदके सेनापति मुहम्मद बिनकासिमने ९९ हिजरी (सन् ७१८ ईस्वी) के प्रारंभमेंही भारतभूमिमें आकर सिन्धुके राजा दाहिरके राज्यपर चढ़ाई की। म्लेच्छ वीरोंके कराल ग्राससे देशकी रक्षा करनेके लिये दाहिरराजमें घोर संग्राम किया। परन्तु वह किसीप्रकारसे देशकी रक्षा न कर सका। उस मुसल-

मान सेनापतिके पंजमें फँसकर उस राजाको अपना राज्य धन, वीर गौरव वरन प्राणोंतककी आहुति देनीपड़ी थी। विजयी विनकासिमने जय और लूटकी सामग्रीके साथ क्षत्रियराज्यकी दो लावण्यमयी कन्याओंकोभी खलीफाके पास भेंटकी भांति भेजा परन्तु इन दोनों वीर वालाओंसेही विनकासिमका नाश हुआ। आईन अकबरी और फरिश्ता इतिहासमें यह लिखाहै, कि जब वह दोनों क्षत्रियकुमारी दमिश्कनगरमें पहुँचीं तो खलीफाने उनके रूप लावण्यकी बड़ी प्रशंसा सुनी उसका हृदय जो कि विजयकी प्राप्तिसे फूल रहाथा वृद्धा फूलगया। उन दोनों सुन्दरियोंको अनुपम लावण्य राशिको भोग करनेके लिये उनके हृदयमें पापकी प्यास उत्पन्न हुई। विहार भवनमें आकर खलीफाने बड़ी राजकुमारीको अपने सामने लानेका हुक्म दिया, शीघ्रही आज्ञाका पालन हुआ क्षत्रियकुलकी कमलिनी कामसे उन्मत्त हुए हाथीकी समान निर्दई यवनके सामने लाई गई !

नहायरहित-निराश्रय-आनाथा राजपूतवाला म्लेच्छकी विलास भोग होनेके लिये कठोर स्थानमें भेजी गई ! कौन रक्षा करे ? सिन्धुराज दाहिरके पवित्र कुलको अनन्त कलंकसे कौन बचावे ? सत्यानाश हुआही चाहताहै-राजपूतोंका सम्मान अभिमान आज सब जायाही चाहताहै!-बड़ी राजकुमारीने अपने सतीत्व (धर्म) रत्नकी रक्षा करनेका और कोई उपाय न देखकर चतुराईसे काम लिया। खलीफाके सामने आते ही वह रोने लगी और कहा, “कि साहन्शाह सलाम!आप मुझको न छुएँ यह जिस्म आपके दस्त सुवारकसे छुआ जानेके काविल नहीं है, नालायक कासिमने जबरदस्ती करके पहिलेही हम दोनोंकी इज्जत ले लीहै” इस अद्भुत बातको सुनकर खलीफा आगबबूला होगया, उसके रुओसे चिनगारियां निकलने लगीं, उसने शीघ्रतासे कासिमके लिये कठोरदंडकी आज्ञा दी“कासिमको जीताहुआही दुर्गंधवाली कच्ची खालमें भरवा कर यहांपर ले आओ” बहुत जल्दी बादशाहकी आज्ञाका पालन हुआ। हतभाग्य कासिमने खलीफाके क्रोधाग्निमें पडकर अपनी प्रतिष्ठा और जान दोनोंको खोदिया, पवित्र हृदयवाली राजपूतसतीने चतुराईसे अपनी पवित्रताको बचाया चक्रवर्ती यवनराजा इसभेदको नहीं जानसका।

इतिहासग्रंथोंमें इसका कोई वर्णन नहीं पाया जाताहै कि उपरोक्त घटनाके पीछे मुसलमानोंने भारतमें आकर हिंदू राज्यको अपने अधिकारमें किया। केवल इतनाही पाया जाता है, कि बलींदके पीछे मनसूरके राज्य समयमें उसका

सेनापति इजीद जब बागी होगया तो सम्राट्की क्रोधाग्निसे अपनी रक्षा करनेके लिये उसका बेटा सिन्धुदेशको भाग गया यह बहुतही साधारण बात है। अतएव इसको ढुंढ भाल करनेसे कोई लाभ नहीं। जिस समय अलमनसूर स्वयं खलीफा नहीं किन्तु खलीफा अब्बासका एलची था उस समय सिन्धु-राज्य और भारतके अन्यान्य पश्चिमीराज्य उसके अधिकारमें थे * उसके ही समयमें वीर वर वप्पारावल अपने देशको छोड़कर ईरानको गयेथे।

गहिलोटराजा और मुसलमान बादशाहोंकी एक संक्षिप्त सूची.
यहां लिखी जातीहै जो कि एकही समयमें हुएथे।

*गिह्लोट.	राजका समय.		मुसलमान राजा.	राज्यका समय.	
	सम्बत्	सन ई.	बुगदादके खली०	हिजरी.	सन ई.
वप्पाका जन्म	७६९	७१३	वलीद (११ वां.)	८६ से ९६ तक	७०५ से ७१५
चित्तौर अधिकार	७८४	७२८	दूसराउमर (१३ वां.)	९९० से १०२	७१८ से ७२१
मेवाड शासन	"	"			
चित्तौरत्याग	८२०	७६४	हसन (१५ वां.)	१०४ से १२५	७२३ से ७४२
अपराजित	"	"	मनसूर (२१ वां.)	१३६ से १५८	७५४ से ७७५
खलभोज	"	"			
खुमान	८६८ से ८९२ तक	८१२ से ८३६ तक	हारुनरशिद (२४ वां.)	१७० से १९३	७८६ से ८०९
भर्तृभाट	"	"	मामून (२६ वां.)	१९८ से २१८	८१३ से ८३३
उल्लुट	"	"			
नरवाहन	"	"			
शालिवाहन	"	"	गज़नीके नृपति.		
शक्तिकुमार	१०२४	९६८	अलतर्गी.	३५०	९५७
अम्बाप्रसाद	"	"			
नरवर्म	"	"	सुबुक्तर्गी.	३६७	९७७
यशोवर्म	"	"	महमूद.	३८७ से ४१८	९९७ से १०२७

भुवन विदित नरपति शिरमौर शार्लिमानके समकालीन खलीफा हारुन-रशीदने अपने पुत्रोंमें राज बांटनेके समय दूसरे पुत्र अलमामूनको, खुरासान, जबूलिस्तान, काबुल सिंधु और भारतवर्ष देदिया था, पुनः खलीफाके मरनेके कुछदिन पीछे मामूनने अपने बड़ेभाईको गद्दीसे उतारा, और सन् ८१३ ई०में आप खलीफा बनबैठा, मामूनने ८३३ ई० तक राज भोगा इसके शासनमें महागज खुमान चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान थे उदयपुरके राजभवनमें जो भट्टग्रंथ रक्खे हैं उनमें देखाजाता है कि खुरासानाधिपति महमूदने जबूलिस्तानसे आकर चित्तौरपर चढ़ाईकी, इसचढ़ाईका जो समय निरूपित हुआहै उसके बीच खलीफा लोगोंके इतिहासग्रंथमें खुरासानके किसी महामूदका नाम नहीं पाया जाता इससे ज्ञात होताहै कि लिखनेवालोंने धोखेसे मामूनके बदले महमूद नाम लिखा दियाहै ।

इस घटनाके पीछे फिर २० बीस वर्षतक भयंकर पराक्रमी मुसलमानोंने फिर भारतवर्षमें प्रवेश नहीं किया, इस समय उनका प्रभाव धीरे धीरे तेज हीन होनेलगा, भारतवर्षके जिन देशोंपर उन्होंने अधिकार कियाथा उनमेंसे सिन्धुदेशको छोड़कर और सब देश उनके हाथसे निकलगये उस समय हारूरसीदका पोता मुताविकेल बुगदादकी गद्दीपर बैठा उस समय ईसवी सन् ८५० था, बुताविकेलके मरनेपर उसके बड़े बूढ़ोंकी पुरानी वादशाहत खोखली जड़वाले शालके वृक्षके समान बारंबार कम्पायमान होनेलगी, इस राज्यके अधःपतनके समाचारको पढ़कर जी उमड़ आताहै जिस बुगदादके खलीफाने अपनी वीरतासे किसी समय यूरुप और एशियामें हलचल मचा दीथी वह बुगदाद साधारण सौदागरी वस्तुओंकी समान खुले आम नीलाम करदीगई जिसने अधिक दाम दिये उसीने खरीदी।

जिस दिन बुगदादकी यह शोचनीय दशा हुई उसी दिनसे खलीफाओंका भारतवर्षसे रहा सहा सम्बन्धभी टूट गया, तबसे भारतभूमिने मुसलमानोंके आक्रमणसे कुछ दिनको छुट्टी पाई । परन्तु दुर्भाग्यसे यह छुट्टी बहुतही थोड़े दिनोंको हुई कारण कि भारतके भावी नाशका बीज बोनेके लिये शीघ्रही खुरासानका शासन करनेवाला *सुवुक्तगीं अपने दल बल सहित आचढा, ३६५ हिजरी सन् ९७५

* टाडसाहबने कहाहै सुवुक्तगींके बापका नाम अलिप्तगीं था, परन्तु डिगायनडिहारविल्ड और त्रिगप्रभृति इतिहास वेत्ताओंके मतका अवलम्बन कर एल्फिन्स्टन साहब लिखतेहैं कि यथार्थमें वह अलिप्तगींका मोल लिया हुआ गुलाम था तुर्किस्तानके किसी सौदागरसे उसने इसे मोल लियाथा, फिर उसके अच्छे गुण देखकर उसे बड़े ओहदेपर पहुंचाया, और पीछे अपनी कन्यासे उसका विवाह करदिया अबुलफिदाने कहाहै कि अलिप्तगींने सुवुक्तगींके साथ अपनी लड़कीकी शादी करके

ई. में उसने सिंधुनद पार करके भारतमें प्रवेश किया, उस समय उसके प्रचण्ड विक्रमके सामने सैकड़ों हिन्दू पतंगकी भांति जलकर भस्म होगये सैकड़ों पुरुषोंसे सनातनधर्म छुड़ाकर मुसलमान होनेको विवश किया गया, इसी शताब्दिके अन्तमें सुबुक्तगीने एकवार फिर भारतपर चढ़ाई की इस वारभी उसके सैनिकोंने कुरान और तलवार हाथमें लियेहुए आकर भारतवासियोंको घोर दुःख पहुँचाया तथा अपनी घोर नीचता और कठोरताका परिचय दिया ।

उस वार जो खराबी भारतवर्षकी हुईथी, उसका विचार करनेसे आजतक हृदयमें शोककी तरंगें उठने लगतीहैं । सुबुक्तगीकी इस पिछली चढ़ाईमें उसका बेटा भारतका प्रचंड राहु, दुरन्त महमूदभी अपने बापके साथ हिन्दुस्थानमें आयाथा, महमूदकी उस समय उमर बहुतही थोड़ीथी परन्तु उस सुकमार अवस्थामें ही पिताके अनर्थकारी मंत्रका जप करना सीख लियाथा । भारतकी रत्नशालिताको निहार कर भारतके सत्यानाश करनेकी कल्पना उस कालसेही उसके हृदयमें उत्पन्न होगईथी । पिताकी गद्दी मिलतेही महमूदने अपने विचारको कार्यमें लानेका विचार किया । महमूदकी उस पैशाचिकी कल्पनाके सिद्ध होनेमें भारतवर्षका जो नाश हुआ आजतक उसके शोचनीय चिह्न भारतवर्षके स्थान २ में विराजमान होरहेहैं । आजतक सोमनाथ चित्तौर और गिरनारके देवमंदिर उसके उन पशुकी समान अत्याचारोंकी कलंक कहानीकी संसारभरमें साक्षी देरहेहैं । निर्दई महमूद बारह बार यमदूतके रूपसे भारतवर्षपर चढ़कर आया । धन सम्पत्तिको लूटा, नगर ग्राम और मंदिरोंको फोड़ फाड़ कर धूरमें मिलादिया यहांतक कि भारतको श्मशानही करदिया । तले ऊपर बारह बार चढ़ाई करनेसे भारतके हृदयमें जो गंभीर घाव होगया वह अबतक किसी वैद्यकी चिकित्सासे आरोग्य नहीं हुआ । जिस दिन उस हिन्दूविद्वेषी मुसलमानने सर्वसंहारी मंत्रको जपकर जगतमें विशाचकी समान निर्दईपन स्वार्थपन और कठोरताका, निम्नता दिखायाथा, आज वह दिन अनन्तकालके गर्भमें न जाने किधरको बिलागया ! आज महमूद किसओरको पड़ाहै, इस बातको कोई जानतातक नहीं । जिस गजनीनगरके सजानेके लिये वह भारतवर्षकी इन्द्रपुरी समान नगरियोंके गहने लूटकर लेगयाथा उसकी अत्यन्त प्यारी गजनीनगरी उन अलंकारोंसे सजकर एक

स्वयम् ही उसको उत्तराधिकारी बनाया परन्तु फारिस्ता कुछ औरही कहताहै, कि अलिप्तगीके इस-हाक नामका एक पुत्रथा, जो पिताके परलोकवासी होनेपर गद्दीपर बैठा । परन्तु थोड़ेही दिन पीछे उसके मरजानेपर सुबुक्तगीने गद्दीपर बैठकर अलिप्तगीकी बेटीके साथ शादीकी ।

Elphinstone's History of India P. 320.

समय यवनराजकी शिरमौर मानी गई थी आज उसही गजनीकी घोर दुर्दशा हो रही है मानो उस खंडहरमेंसे प्रकृति ऊँचे और गंभीर स्वरसे यह वचन कह रही है कि मनुष्यका जीवन कितने दिनके लिये है ? अर्धवर्ष गर्व कितने दिनके लिये है ।

हिजरीकी पहिली शताब्दीसे लेकर चौथी शताब्दीके शेषतक खलीफा लोगोंके साथ भारतवर्षके राजाओंका जो अल्पवर्ण पाया गया, उसकी संक्षेप समालोचना की गई । आवश्यकता समझकर हम अल्प वर्णनसे बहुत दूर चले आये, इस समय फिर अपने मौलिक वृत्तान्तपर आते हैं । पहिले कहा जा चुका है कि यौर्यवंशी चित्तौरनाथ महाराज मानसिंहके राज्यसमयमें म्लेच्छोंने उनके राज्यपर चढ़ाई की थी, और उसही समयसे वीरश्रेष्ठ महाराजाधिराज दय्यानावलीकी उन्नतिका आरंभ हुआ था । ऐसा ज्ञात होता है कि इजीद इन्हीं म्लेच्छोंका अगुआ था । अथवा महम्मद बिनकासिमने सिन्धुदेशसे आकर मानसिंहपर चढ़ाई की थी । इस बातका निर्णयकरना बहुत कठिन जान पड़ता है, कि कौनसे मुसलमान वीरने चित्तौरपर चढ़ाई की थी, क्योंकि मुसलमानोंकी तवारीखोंमें इस बातका कोईभी जिकर नहीं पाया जाता । जिन लड़ाइयोंमें खलीफाके लोगोंने अथवा उनके सिपहसालार लोगोंने हिन्दुओंपर जो विजय प्राप्त की थी मुसलमानोंकी तवारीखोंमें केवल उन्हींका वर्णन लिखा है, परन्तु खलीफाके सेनापति और विद्रोही लोग जो बहुधा भारतवर्षपर चढ़ आया करते थे उनकाभी कोई वर्णन इन तवारीखवालोंने नहीं किया । अपनी जानियालोंकी अप्रतिष्ठा या निरादर छिपानेके लिये कदाचित् उन्होंने इनके हालातोंको न लिखा हो । उन संग्रामोंका वृत्तान्त केवल एक भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंमें ही पाया जाता है * यद्यपि वह सब बहुतही मिले जुले लिखे गये

* भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंमें लिखा है कि रोशनअली नामक एक फकीरने गढ़विटली (अजमेरका प्राचीन नाम है) में आकर वहाँके राजाके नवनीतपात्रमें हाथ डाल दिया । राजाकी आज्ञासे उसकी उँगली कटवाई गई, वह कटी हुई उँगली आकाशमें उड़तीर मक़ेमें पहुँची, जब खलीफाके निकट लाई गई तब उसने फौरन उस उँगलीको पहिचाना, तथा हिन्दूराजाके इस अत्याचारका पलटा लेनेके लिये फौजको सजानेका हुक्म दिया । इस फौजने घोड़ोंपर सवार हो सौदागरोंका भेप बनाया और अजमेरको जा घेरा । इस वर्णनकी कल्पनाको छोड़नेसे ज्ञात होजायगा कि जिस समय मुसलमानवर्णका प्रथम प्रचारक रोशनअली हिंदुस्थानमें आया, तो अजमेरके महाराजने उसका कुछ निरादर किया होगा । खलीफाने अपमानका बदला लेनेके लिये राजासे लड़ाई करनेकी तइयारियाँ कीं । मुसलमानोंकी उस चढ़ाईके समय अजमेरमें अजयपाल नामक एक राजपूतराजा राज्य करता था । जहाजपर चढ़े हुए यवनलोगोंको आता सुनतेही महाराज अजयपाल, कच्छके उपकूलमें बसे हुए अंजरनामक नगरमें सेनासहित चले गये । वहाँपर दोनोंदलोंमें घोर संग्राम हुआ । राजा मुसलमानोंको नहीं रोक सका और उसही जगह मारा गया । उस संग्रामस्थानमें एक वेदी बनाई गई उस

हैं, तथापि अनुसन्धान करनेपर उनमेंसे बहुतसा ऐतिहासिक वृत्तान्त इकट्ठा होसकता है। खलीफालोगोंके समयमें तो हिन्दुस्थानपर मानो साढसाती ही आगईथी। कितनेही अभागे राजा गद्दीसे उतारे गए, कितनेही जानसे मारडाले गये उस काल चारों ओरसे मार २ की ध्वनि आतीथी, चारों ओरसे प्रजा इसप्रकार हाय २ करतीथी कि जिसको सुनकर कलेजा थराने लगताथा। जिस कठोर मुसलमान वीरने भारतवर्षमें यह द्वन्द्व मचादियाथा। हिन्दु इतिहास ग्रंथाम उसका वर्णन अनेकानेक प्रकारसे पाया जाता है। उस हिन्दूविद्वेषी यवनको कहीं दैत्य कहीं राक्षस और कहीं पर जादूगरके नामसे पुकाराहै। कभी वह सिन्धुराज्यसे आया, कहीं जहाजपर चढ़कर समुद्रके मार्गसे आया; मूल बात यह है कि;—भारतकी शान्तको गारत करनेवाला वह प्रचंड बैरी कौन था, उसके विषयमें अनेक प्रकारके भिन्न भिन्न मत सुने जाते हैं।

गिह्लोट चाहान सौर और जादवलोगोंके इतिहास ग्रंथोंमें पाया जाताह कि सम्वत् ७५० से ७८० तक सन् ईस्वी ६९४ से ७२४ तक उपरोक्त नृपति कुलके राज्यमें महाकुलाहल मचाथा। परंतु यह नहीं जाना जाता कि, वह कुलाहल किसने मचायाथा। कहते हैं कि हिजरी ७५ सम्वत् ७५० में एक यदुवंशीय भट्ट राजाने अपनी राजधानी शालपुरसे निकाले जाकर शतद्रु नदीके पूर्व पारकी मरुभूमिमें आनकर आश्रयग्रहण किया। जिस शत्रुने उस राजाको इस शोचनीय दशापर पहुँचायाथा; भट्टग्रंथोंमें उसका नाम फरीद लिखाहै; और फिर इधर देखा जाताहै कि अजमेरके चौहानराजा माणिकरायनेभी ठीक इसीही समय शत्रुओंसे घिर जानेपर अपने देशकी रक्षा करनेकेलिये समरभूमिमें प्राण दियेथे। ×

पंजाबदेशका सिन्धुसागरनामक दुआवा उस समय खींचीवंशके पहिले राजाके अधिकारमें था। और हारस कुलके पूर्व पुरुषगण गोलकुंडेमें रहतेथे। यह दोनों अपने राज्यसे एकही समयमें निकालेगये। जिस शत्रुन इनको राज्यसे दूर कियाथा,

वेदाके ऊपर महाराज अजयपालकी एक पाषाणमूर्ति स्थापित हुई, उस मूर्तिमें महाराज घोड़ेपर सवार हुए हाथमें भाला तानेहुएहैं, संग्रामकी जगह “अजयपालका मेला” नाम करके वार्षिक मेला हुआ करताहै जिसमें हजारों आदमी इकठे होतेहैं।

× ऐसा वर्णनहै कि मुसलमानोंकी उस चढ़ाईके समय माणिकरायका पुत्र लोट जिसकी आयु बहुत थोड़ीथी किलेकी दीवारके ऊपर खेलरहाथा कि शत्रुपक्षके किसी आदमीने तीर चलाकर उसको गिरादिया। उस समय राजकुमारके पाँवसे एक प्रकारका गहना चांदीका पडाहुआथा, तबसे चौहानलोग उस गहनेको नहीं पहिनते। राजपूत बच्चोंकी अकालमृत्यु होनेपर वे “पुत्रक” नामवाले देवताओंमें गिने जातेहैं। तबसे लोटभी उन्हींमें गिना गया राजपूतोंकी स्त्रियों आजतक लोटकी पूजा किया करतीहैं।

भट्टलोगोंने उसका दानवके नामसे पुकाराहै उसका नाम “गैर-आराम” अर्थात् विश्राम होता था । कहतेहैं कि गंगोत्रीके निकटके “गङ्गालिवन्द गजारण्यराय” नामक किसी पहाड़ी देशसे वह असुर भारतवर्षमें आयाथा तथा पट्टन नगरकी प्रतिष्ठा करनेवालेका पूर्व पुरुषभी ठीक उसही भयंकर समयमें सूरतके अनुकूलमें बसेहुए द्वीपवन्दरसे दूर कियागयाथा । आश्चर्य है ! एक समयमेंही भारतके भिन्न २ देश किम्बिदेशीकी आखोंमें खटकने लगेथे। किसने भारतमें यह महाउपद्रव मचाकर भारतसन्तानोंको शान्तिसुखसे अलग कियाथा ? हिन्दू इतिहासकारोंकी लिपिसे इस बातकी भीमांसा नहीं होसकती ? मुसलमानी तवारीखोंसे ज्ञात होताहै कि ईजिद ठीक इस समयमेंही खलीफाका प्रतिनिधि बनकर खुरासान राज्यमें रहता था, तथा खलीफा बलीदकी विजयिनी सेना गंगाजीके किनारेतक बढ़ आईथी, इसके सिवाय इस समयमें और किसी मुसलमान बादशाहकी चढ़ाईका वर्णन किसी ग्रंथमें नहीं पायाजाता । इससे यह ज्ञात होता है, कि ईजिदकासिम अथवा बलीद इनमेंसे, किसीके प्रतिनिधि या सिपहसालारने भारतवर्षमें चढ़कर इस उपद्रवको मचायाथा, परन्तु मुसलमानोंकी कुल तवारीखोंमेंही ईजिद और कासिमकीही विशेष २ चढ़ाइयोंका वृत्तान्त पाया जाताहै अतएव निस्संदेह यही अवगत होताहै कि ईजिदने या कासिमने भारतवर्षके राजाओंको सतायाथा, मौर्यवंशीय चित्तौरनाथ मानराजाकी सहायता करनेकोलिये जिनराजाओंने तलवार पकड़ीथी उनके नामोंको पढ़नेसे हमारा लिखना सत्यही जानपड़ेगा । महाराज मानने मौर्यकुलमें जन्म लियाथा, उनका विशेष वृत्तान्त पहिले ही लिखा जा चुकाहै । मौर्यकुलके मूलवंशसे उत्पन्नहुए प्रमार राजालोगही उस समय भारतवर्षके चक्रवर्ती राजाथे । भट्टग्रंथोंमें लिखाहै कि वह राजालोग कभी २ उज्जयिनी में अपनी राज्य पीठको स्थापित कियाकरतेथे । *

* मौर्यराजाकी राज्यसभामें जो सामन्त वर्तमान रहतेथे उनका वृत्तान्त पाठ करनेसे जाना जाताहै, कि महाकवि चन्द्रभट्टने जो उन सामंतोंका वर्णन कियाहै जो कि रामप्रमारके अधीनमेंथे । वह समस्त सत्यहै । कारण कि प्रमारगणही उस कालमें भारतके चक्रवर्ती राजाथे । सिलीयुक्सके समयवाले ग्रीकइतिहास लेखकोंके ग्रंथ पढ़नेसे इस वाक्यकी सत्यता भली भांतिसे विदित होजायगी । कहतेहैं कि ग्रीकके महाराज सिलीयुक्सने मौर्यवंशीय महाराज चंद्रगुप्तके साथ अपनी बेटीकी शादी करके उनके साथ गाढी मित्रता करलीथी । ग्रीकके इतिहासग्रंथोंमें यह बात साफ २ लिखी हुईहै कि महाराज चंद्रगुप्तके आधीनमें बहुतसे ग्रीक सिपाही नौकरी करतेथे ।

उस भयंकर उपद्रवके समयमें अपनी स्वाधीनताकी लीला भूमि चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये जो राजालोग युद्धमें मानराजाकी सहायता करने गयेथे, उनके नाम नीचे प्रगट कियेजातेहैं ।

अजमेर, सूरत, और गुर्जरके नृपतिगण हूनराज अंगुटसी उत्तर देशाधिपति बूसा, जारिजास राजकुमार शिव, जंगलदेशका स्वामी जोहिया और अश्वरिया, शिवपत, कुल्लर, मालून, ओहिल और हूल इत्यादि साधारण २ राजा अत्यन्त उत्साहसे अपनी सेनाको लेकर वैरियोंसे लड़नेके लिये संग्रामभूमिमें गयेथे, इनके सिवाय और राजाओंके नामभी पाये जातेहैं परन्तु इससमय उनके वंश सम्पूर्णतः लोप होगयेहैं, इन समस्त राजाओंमें “देविलदेशका स्वामी दाहिरही प्रसिद्धहै ।” यद्यपि लेखकोंकी कमसमझीसे इस देविलके बदले तुवर राजधानी दिल्ली लिखी गईहै । तथापि सेनापति कासिमके युद्धवृत्तान्तसे उक्त दाहिर-राज्यकाही विशेष पता लगता है । जब सिन्धुराज दाहिरको कासिमने मार-डाला तब उसके पुत्रने चित्तौरनगरका आश्रय लेकर पितृघाती यवनसे संग्राम कियाथा ।

स्लेच्छोंकी उस प्रचण्ड चढाईसे चित्तौरपुरीकी रक्षाकरनेके लिये वीरवालक राजकुमार वप्पानेही सबसे अधिक वीरता प्रगट कीथी । केवल इस कुमारकेही प्रबल विक्रमसे शत्रुगण हारकर सूरत और सिन्धुराज्यमें भागगयेथे विजयी वप्पाराव शत्रुओंको दवाते २ अपने पितृराज्य गजनी नगरमें पहुँचे । पहिलेही कहा जा चुकाहै कि सलीमनामक एक स्लेच्छ बादशाह उस समय गजनीकी गद्दीपर बैठा हुआ था । महाराज वप्पाने उसको सिंहासनपरसे उतारकर अपने भानजेको वहाँका राज्य दिया, और उस मुसलमान बादशाहकी बेटीको व्याह कर चित्तौर चलेआये ।

अब हम महाराज खुमानके राज्यसमयके यवन उपद्रवकी संमालोचना करतेहैं । यह वृत्तान्त सन् ८१२से ८३६ ई० तककाहै । इस भयंकर चढाईका नायक यद्यपि खुरासानका बादशाह “महमूद” कहागयाहै । तथापि अब यह देखना उचितहै कि महमूद कौन था । उस भयंकर यवनाक्रमणसे चित्तौरपुरीकी रक्षाकरनेके लिये जो हिन्दूनरनाथ आयेथे उनकी नामोंकी सूची-पाठ करनेसे ज्ञात होताहै “खुरासानपति महमूद” सुबुक्तगीनके पराक्रमी पुत्र महमूदसे दो शताब्दी पहिले हुआथा, इस ओर देखा जाताहै कि ठीक उसी समयमें ही “खलीफा हान” उल रसीदने अपने बेटोंको राज्य बांट दियाथा । तथा

उस विभागके अनुसार उसके दूसरेबेटे मामूको खुरासान, सिन्धुदेश और समस्त भारतीय यवनराज्य दियागया । उक्त मामूं जब कि खुमानके समयमें था, तब विज्ञाप विचारकर देखनेसे निश्चय ज्ञात होजायगा कि उसके बदल नकल करनेवालोंने महमूद नाम लिखाहै । इतिहासमें उससमयका लिखाहुआ बहुतही थोडा वर्णन पाया जाताहै । जो कुछ पायाभी जाताहै, वह नीरसहै क्योंकि उमें थोड़े हिन्दूराजाओंके नामकी सूची पाई जाती है ।

परन्तु नीरस और अप्रीतिकर होनेपरभी प्रयोजन समझकर हम उसका विचार करतेहैं । “गजनीसे गिह्लोट, असीरके टाक नादोलके चौहान, राहिर गढ़के चालुक्य”

“सेतवन्दरके जीरकेडा, मंडोरके खैरावी, मांगरोलके मछवाना, जेतगढसे जोंडिया ।”

“तारागढसे रेवड़, नरवड़से मछवाहे, शंचोरसे कालम जूनागढके यादवं”
“अजमेरसे गौड, लोदरगढसे चन्दाना, कसौदीसे डोडर, दिल्लीसे तुवर, पाटनसे चावडा”

“मालेरसे शोनगढे, शिरोहीसे देवरा, गागरोनसे खीची, पाटरीसे झाला जैनगढसे दुसाना”

(१) सेतवन्दर मल्लवारके किनारेहै, परन्तु इसके स्वामी जोरकेराका कोई वर्णन नहीं पाया जाता ।

(२) मंडोरसे अग्नेहुए खैरावीके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन पाया जाताहै, उससे केवल यही समझा जाताहै कि यह प्रमारकुलकी एक शाखाहै ।

(३) जूनागढ (गिरनार) से जो जादवराजा आयेथे उनके वंशवालोंने बहुत दिनतक उक्त-देशका राज्य कियाथा ।

(४) डोड और उसकी राजधानी कंसूदीके सम्बन्धमें जो कुछ प्रगट हुआहै, उससे केवल यहही निरूपित होसकताहै कि उक्त नगर गंगाजीके किनारे कन्नोजसे कुछ दक्षिणमें बसा हुआहै ।

(५) यह साधारण दुःखकी बात नहींहै, कि किसी भट्टग्रंथमेंभी दिल्लीके तुवरराजाका नाम नहीं पाया जाता, परन्तु विचार कर देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होगा, कि उस लडाईके होनेसे १००वर्ष पहिले अनंगपालने पुनर्वा दिल्लीकी प्रतिष्ठा कीथी ।

(६) मंगलोरसे जो शोनगढोंके राजा आयेथे वे चौहानोंके शाखाकुलमें उत्पन्न हुएथे । परन्तु उनके वंशधरोंने कितने समयतक इस दुर्गपर अधिकार कियाथा सो नहीं कहसकते ।

“कन्नौजसे राठौर, छोटियालासे वल, पीरनगढ़से गोहिल, जैसलमेरसे भाटी, लाहोरसे बूस”

“रोनीर्जासे संकला, खैरलीगढ़से शिहट, मंडलगढ़से निकुम्प, राजांडसे वडगूजर, कुरनगढ़से चंदेल”

७ लाहोरसे जो बूस आयेथे उनके कुलका यथार्थ वृत्तान्त किसी ग्रंथमें नहीं पाया जाता। फरिस्तेमें बहुधा देखा जाता है कि जिस समय सबसे पहिले मुसल्मानोंने भारतवर्षपर चढ़ाई की, उस समय लाहोरमें किसी हिन्दूराजाका राज्यथा, परन्तु उसके नाम या कुलका वृत्तान्त कहीं नहीं लिखा। खलीफा अलमनसूरके समयमें (सन् ७६१ ई०) पेशावर और कारमानके रहवासी अफगान इतने बढ गयेथे कि उन्होंने सिन्धुनदके पारही लाहोरके हिन्दूराजासे बहुतसे राज्य छीन लियेथे। तबतक इन अफगानोंने इसलाम धर्म ग्रहण नहीं किया, लाहोरके राजाके साथ जत्र उनकी लड़ाई हुई तब खलीफाके सेनापतिगण उनकी सहायता करनेके लिये जावालिस्तानमें आयेथे। लाहोरका हिन्दूराजा उनसे इतना संतापित होगयाथा कि पांच माससे कुछ अधिक समयमेंही उसको २७ बार लडना पड़ा, पिछले युद्धमें अफगानोंने हारकर राजासे सन्धि करली। सुलहनामोंमें यह शर्त ठहरी कि सिन्धुनदके पश्चिम प्रान्तवाले समस्त देश उनको दिये जायें; और जिससे विदेशी शत्रुगण अचानक भारतवर्षपर न चढ़आवें, उसके लिये कोई गिरदामन मार्गमें एक बड़ा किला बनाकर उनको वहां रक्षककी समान रहना पड़ेगा, तदनुसार उक्त गिरमार्गके शिखरपरपर विख्यात खैबरदुर्ग बनाया गया। लाहोरके राजाके साथ अफगानोंने बहुत दिनतक इस सन्धिको स्थापित रखवाथा। यहांतक कि अलिप्तगीके शासन समय सन् ९७६ ई० तक यह लोग परस्पर मित्र रहे। अलबिरोनीनामक एक इतिहासकपंडितके वृत्तान्तसे जाना जाता है, कि ईसवी दशवीं शताब्दीमें एक हिन्दूराजवंश काबुल और लाहोरमें राज्य करताथा। सामन्त नामक एक ब्राह्मण उस समय इन दोनों राज्योंका राज करताथा इसके उत्तराधिकारियोंमें कई एक राजपूतोंका नाम पाया जाता है। उन नामोंसे एक जयपालकाभी नाम है। जयपालके पुत्र अनंगपालके चलये हुए रुपयोंपर उक्त सामन्तकाभी नाम पाया जाता है। (Journ. R. A. S. V. E. IX) परन्तु महाराज खुमानके राज्यत्वकालके सौसे अधिक वर्ष पीछे (सन् ९७६ ई०) जयपाल हुआथा। इससे ज्ञात होता है कि महाराज सामंतकाही राजकुल उक्त बूस नामसे पुकारा गया होगा।

(८) सांकल और उसके राज्य रुनीजाका वृत्तान्त विदित है। यह प्रमारकुलकी शाखा है रुनीजा मारवाड़के अन्तर्गत वर्तमान है।

(९) खैरलीगढ़से जो शिहोट आये वह सिन्धुनदके किनारे राज्य करतेथे, प्राचीन भट्टग्रंथोंमें विशेषतासे इनका वृत्तान्त पाया जाता है। भट्टलोगोंके साथ शिहोटकुलके विवाहका वृत्तान्तभी मिला। टाडसाहबने इनको यदुकुलकी शाखा कहा है।

(१०) कुरनगढ़से जो चंदेल आयेथे, उनके निवासस्थानका नाम आधुनिक बुंदेलखण्ड है।

“सीकरीसे सिकरवार, ओमरगढ़से जेतवा पल्लीसे वारेगोत खुनतरगढ़से जारिजा जीरगांसे खेरवरे ”

“ और काश्मीरसे पुरीहर × परिहार आयेथे । ”

जब खुरासानके बादशाहने चित्तौर नगरपर चढ़ाई की, तब चित्तौरनाथ खुमानकी सहायता करनेके लिये यही समस्त हिन्दूराजा अत्यन्त उत्साहके साथ देशके प्रेममें आयकर अपनी २ सेनाको साथ ले चित्तौरनगरमें आयेथे । देशवैरी कठोर म्लेंच्छोंके करालग्राससे चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये उन्होंने जो प्रचंड वीरता अनुमरण कौशल और अद्भुत प्राण न्योछावरका प्रकाशमान उदाहरण दिखायाथा, वह आजतक भारतीय इतिहासमें चमकदार अक्षरोंसे लिखा हुआहै । महाराजखुमान चौबीस वार शत्रुओंके विरुद्ध अस्त्र धारण करके संग्रामभूमिमें गयेथे । उन लड़ाइयोंमें जो अद्भुत वीरता उन्होंने प्रकाशित की उससे उनका पवित्र नाम रोमसम्राट् सीज़रके समान उनके वंजवालोंके लिये गौरवकी सामग्री हुआथा । उनके स्वदेशी राजपूतगण उनके अपूर्व गुण ग्रामसे ऐसे मोहित हुएथे, कि अवतक प्रातःस्मरणके लिये और दूसरे राजाओंकी पवित्र नाममालाके साथ खुमानके नामकी मालाभी जपा करतेहैं ।

यदि उदयपुरमें कोई ठोकर खाकर गिरताहै; या गिरनेको होताहै तो वैसेही पान्तमें खड़ाहुआ दूसरा मनुष्य ऊंचे स्वरसे यह कहकर आशीर्वाद करताहै, किखुमान तुम्हारी रक्षा करें, ब्राह्मण लोगोंकी सलाहसे महाराजा खुमानने अपने छोटे पुत्र जगराजके हाथ राज्यका भार सौंप दियाथा, परन्तु थोड़ेही कालमें उनका भाव बदल गया फिर स्वयं राज्य ग्रहण करनेका संकल्प किया और जिन ब्राह्मणोंने महाराजको राजदेनेकी सलाह दीथी उनको मारकर पुत्रके हाथसे राज्य ले लिया वह ब्राह्मणोंसे ऐसे अप्रसन्नहुए कि उनके नामपर सौसौ धिक्कार देतेथे, इसी कारण समस्त ब्राह्मणोंको राज्यसे निकाल दिया । खुमानको इस पापका फल हाथोंहाथ मिला ।

× उस भयंकर उपद्रवके समयमें जिन हिन्दूराजाओंने महाराज खुमानकी सहायता करनेके लिये शत्रुके साथ संग्राम कियाथा, उनकी सूची लिखी गई । गजनीसे गहिलोतराजा आयेथे, इनका वर्णन पहिलेही विस्तारसे लिखा जा चुकाहै और यही कारणहै जो असीरगढ़के राजा तक्षकके सम्बन्धमें हम यहांपर कुछ न कहेंगे । तिसअधीरगढ़में तक्षकराजाका राज्य था, आज वह हमारी सरकारके राज्यमें मिला हुआहै । नादौड़से चौहान आयेथे; वह अजमेरके राजाके एक शाखाकुलमें उत्पन्न हुएथे, इनका गोत्र शालोरके शोनगढ़हैं, और शिरोहीके देवरागढ़में इनका जन्म हुआथा ।

निर्दोष ब्राह्मणोंके रुधिरसे अपने हाथ कलंकित करके जिस सिंहासनपर अधिकार कियाथा उसको अधिक दिनतक न भोगसका । शीघ्रही मंगलनामक पुत्रने उसे मारडाला, और अपने आप गद्दीपर बैठा । यद्यपि साधारण सिंहासनकी प्राप्तिके लिये मंगलने अपने हाथसे पिताको मारा, परन्तु उस सिंहासनको अधिक-दिन अधिकारमें न रखसका, मेवाड़के सरदारोंने मिलकर उसे गद्दीसे उतार दिया। मंगल राज्यसे निकालाजाकर उत्तरमरुके मैदानमें जा बसा, और वंश-केलोदड़वानामक स्थानपर अधिकार करके उर्गा स्थानपर अपने वंशवृक्षका बो दिया । उस लोदड़वा पट्टनमें उसके वंशवाले माँगलीय गहिलोत" नामसे पुकारे जातेहैं ।

पितृघाती मंगलके निकालेजानेपर भर्तृभाट चित्तौरके सिंहासनपर बैठा इसंके और इसके पीछे जो राजा हुए, उन सबके समयमें चित्तौरके अधिकारकी सीमा बहुतही बढ़ गई । महानदीके किनारे और आबू पर्वतकी तलेटीके विशाल मैदानमें जो असंख्य मनुष्य रहा करतेथे वे सबही चित्तौरके राजाओंके प्रचंड प्रतापसे पराजित होकर उनके आधीन होगयेथे, इस बड़े वनमें जो किले बनेथे उनमें धरनगढ़ और अजरगढ़ अबतक वर्तमान हैं । महाराज भर्तृभाटने मालव और गुर्जरराज्यके १३ स्वतंत्र राज्योंमें अपने १३ पुत्रोंको * स्थापित कियाथा । तबसे उनके यह समस्त पुत्र " गाटेरा गहिलोत" नामसे पुकारे जाने लगे । महाराज खुमानसे पीछे पंद्रह पीढी तक जो राजा चित्तौरके सिंहासन पर बैठे, उनके समयमें ऐसी बातें बहुतही थोड़ी हुई कि जिनका कुछ वर्णन कियाजाय, उपरोक्त पन्द्रह पुरुषोंके जीवन चरित्रमें कोई विचित्र वार्ता नहीं हुई । अतएव उस वृत्तान्तको विस्तारसे यहां नहीं लिखा उस समयमें चित्तौरके गहिलोत और अजमेरके चौहानोंमें कभी मित्रता और कभी प्रचंड वैर भाव होजाताथा । कभी वह परस्पर रुधिर बहानेको तइयार होजाते और कभी एकताके दृढ बन्धनमें जकड़ कर देशवैरी यवनोंके आक्रमणसे मातृभूमिकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें जा अडते । चित्तौरनाथ वीरसिंहने कोवारिव नामक समर खेतमें चौहानराज दुर्लभ का संहार किया । परन्तु राजपूत जातिका माहात्म्य अपूर्वहै, दुर्लभके पुत्र महाराज वीसलदेवने पिताके शोकको भूलकर स्वदेशप्रेमके स्वगीर्य मंत्रसे प्रचंड विद्वेषभावको दूर करके पितृघाती वीरसिंहके उत्तराधिकारी रावलतेजसिंहके साथ

* इन्होंने त्रयोदश (१३) राज स्थापन कियेथे । उनमेंसे केवल (११) का नाम पाया जाताहै यथा कूलानगर, चम्पानेर, चौरेता, भोजपुर, छुनार, नीमखोर, सोदार, जोधगढ़, मन्दपुर, आहतपुर और गंगाभाव ।

अभिन्न मित्रता करली। और हिन्दू विद्वेषी मुसलमानोंके प्रचंड प्रतापको रोकने-के लिये संग्रामभूमिमें विराजमान हुए। महात्मा राजपूतोंके चरित्रका यह अपूर्वगुण केवल भट्टग्रंथोंमेंही नहीं लिखाहै, अनेक शिलालेखोंमेंभी उसका प्रदीप्त विवरण पाया जाताहै। उन शिलालेख और ग्रंथोंमें उनके आचरणका वृत्तान्त जिस प्रकारसे मिलताहै, उससे बोधहोताहै कि वे स्वभावसेही वर्ण ज्ञान हीन और तेजस्वी थे, प्रचंड मूर्तिधारण करके यौवनके समय परंदारादि हरण करके बुढापेमें ऐसे ऐसे पापोंका दूर करनेके लिये मंदिरादि बनातेथे। हथियार, घोड़ा और शिकार उनके हृदयकी प्यारी सामग्री थी, उन्हीं बातोंमें वह अपने अधिकांश समयको विताते और जब शत्रुकुलके आक्रोशसे छुटकारा पाकर मेवाड राज्यमें शान्ति-सुख भोगा करतेथे तब वे अपने सहकारी सामन्तोंके साथ अकारणही लड़ाई झगडा करके उस शान्तिको भंग करदेतेथे।

चौथा अध्याय ४.

महाकवि चंदालिखित ऐतिहासिक विवरणः-अनंगपालः-समर सिंहः-तातारवासियोंका भारतको जीतनाः-समरसिंहकी वंशावली;राहप तथा राहपके उत्तराधिकारी गण।

स्मृत १२०६ में समरसिंहने जन्म लिया। यद्यपि समरसिंहके जीवन चरित्रका चित्तौगके राजभट्टकविगणोंने भली भांतिसे अनुशीलन कियाहै। तथापि हम केवल महाकवि चन्द्रभट्टके प्रगट किये हुए वर्णन X से महाराजके पवित्र जीवन चरित्रका विचार करेंगे। इस जीवन चरित्रका विचार करनेसे पहिले हम एक अत्यन्त प्रयोजनीय ऐतिहासिक वृत्तान्तकी समालोचना करतेहैं। प्रसिद्ध दिल्लीनगरीसे वीरचरित्र तुवर राजवंशका राज्य जब लोप होगया उस समय भारतके राजनैतिक चित्रने किस मूर्तिको धारण किया और हिन्दुस्थानका कौन

X कविवर चन्द्रभट्ट प्रणीत वरदाईरासा एक उत्तम ग्रंथ है। असाधारण कविताईकी मायामयी वर्णनाके परदेमें उन्होंने ऐतिहासिक रत्न टांकेहैं, उसका पाठ करनेसे हृदय अपूर्व भक्ति प्रीति और कृतज्ञताके रससे परिपूर्ण होजाताहै, इस ग्रंथमें ६९ सर्ग हैं।

राजस्थानके प्रायः समस्त वंशोंका वृत्तान्त इसमें लिखा हुआहै।

देश किस हिंदूराजाके अधिकारमें था । उसका विचार करना आवश्यकीय ज्ञात होता है । अतएव महात्मा चन्द्रभट्टके प्रसिद्धग्रंथसे उसका यथार्थ अनुवाद किया जाता है, लोहे शरीर चौलुक्य राज भोलाभीम पाटननगरमें स्थित हैं । आव-पर्वतपर प्रमारवंशीय जित, रणक्षेत्रमें ध्रुवनक्षत्रकी समान अचल अटल हैं, मेवाड़में समरसिंह हैं, जो अत्यन्त पराक्रमीसेभी कर ग्रहण करते हैं, और दिल्ली-श्वरके शत्रु कठोर यवनोंके मार्गको रोकनेवाले लोहेकी शलाकाकी समान विराजमान हैं, मरुभूमिके प्रतापस्वरूप अपने बलसे बलवाना निडर तेजवानमुकुन्द राज नाहुर इन सबके मध्यमें विराजमान हैं. दिल्ली नगरीमें सबके स्वामी महाराजाधिराज अनंगपाल स्थित हैं, इनकी आज्ञाको शिरपर धारण करके, मंदोड, नागोर, सिंधु, जलाबत और इनके निकट बसे हुए दूसरे देश जैसे, पेशावर, लाहोर, कांगड़ा, और इनके पर्वतीराजालोग तथा काशी प्रयाग और देवगिरिके राजालोग अतिविनीतभावसे आज्ञापालन करनेके लिये तैयार रहते हैं । सीमरके अधीशगण इनके प्रचंड पराक्रमके भयसे सदा विपत्तिकी शंका करते रहते हैं । दिल्लीके पिछले तुवर सम्राट्के राजत्वकालमें वह संमस्त हिन्दूराजालोग भारतके अन्यान्य भूभागमें अपना राज करते थे महाराजा अनंगपाल उन दिनोंमें इन सब राजाओंके शिरमौर थे ।

जिस दिन भट्टगण जावालिस्तानसे भागकर भागतवर्षमें आये, तबसे थोड़ेही समयमें उन्होंने पंजाबके शालिवाहन पुर, तान्नोट, और मारवाड़के लादड़वाको अपने अधिकारमें कर लिया; फिर देरयालनगरीको स्थापन करके प्रसिद्ध जैसलमेरनगरीकी प्रतिष्ठा करनेका यत्न करने लगे, जिस समयमें चौहान वीर महाराज पृथ्वीराज दिल्लीके सिंहासनपर बैठे उस समय भाटी लोग जैसलमेरकी प्रतिष्ठा करनेमें लगे हुए थे । जैसलमेर उस समयमें अधिक प्रसिद्ध नहीं हुई थी, इस नगरीक प्रतिष्ठित होनेसे बहुत दिन पहिलेही वे उस अप्रशस्त भूभागमें स्थित होकर खलीफाके उन सेनापतियोंसे जो कि आरारेमें रहते थे घोर संग्राम करने लगे, इस भांति दोनों ओरसे घोर संग्राम हुआ करता, बहुधा उन संग्रामोंमें भाटी लोगोंकी जीत होती थी, और वह सिन्धुनदीके किनारेवाले तक्षकराजकी राजधानी तक अपने पूर्वपुरुषोंके राज्यको पुनरुद्धार किया करते थे ।

जिन दिनोंमें मुसलमानलोगोंके कठोर विक्रमके प्रभावसे एक महाउपद्रव मचा हुआ था, उस समयमें भाटीलोग उस छोटे राज्यमें स्थित रहकर बहुतही कम उन्नतिपर पहुँचे । वस चौहानराज महाराज पृथ्वीराजके समयमेंही

उनकी उन्नतिका आरंभ हुआ था। इस समयसे उनका वीरविक्रम क्रमानुसार बढ़ताही गया। भारतीय इतिहासमें वर्णनहै कि पृथ्वीराजके अधीनमें अरवलेश-नामक एक प्रसिद्ध सेनापति था जिसको भाटीराजका सहोदर कहतेहैं।

पहिलेही लिखा जा चुका है कि उसकाल महाराज अनंगपाल भारतके चक्रवर्ती राजा थे, महाराज अनंगपाल दिल्लीके प्रथम तुवर राज्य विहलनदेवसे १९ बीड़ी पीछे हुए। महाराज विक्रमादित्यके द्वारा भारतवर्षकी प्रधान राजपीठ जब उज्जयिनीनगरीमें स्थापित होगई तब महाराज युधिष्ठिरकी लीलाभूमि नैऋतों वर्षतक शोचनीय श्मशानकी भांति पड़ीरही उस बहुत समयकी अराजकताके पीछे जिस महापुरुषने संजीवन मंत्रसे उसको पुनर्वार जीवित किया उसका नाम विहलनदेव था। उक्त महाराजने असाधारण यत्न और परिश्रम करके दिल्लीको पूर्वशोभासे फिर शोभित करदिया। तथा अनंगपाल नामको धारण करके दिल्लीके सिंहासनपर विराजमान हुआ। उसके उत्तराधिकारियोंके राजत्वकालमें अजमेरके चौहानगण दिल्लीके अधीनमें सामन्तोंकी भांति रहतेथे, परन्तु चौहानराज्यके विहलनदेवके अत्यन्त विक्रमशाली होनेसे आधीनताकी यह जंजीर नाममात्रको बाकी रहगई। समयकी अपूर्वमहिमासे वह अधीनता चौहानोंके लिये कुछभी कष्टदाई न हुई। कारण कि उस समयसेही चौहानोंका भाग्यरूपी आकाश सौभाग्य लक्ष्मीकी प्रसन्नतासे क्रमानुसार निर्मल होतागया तथा इस बातका भी सूत्रपात होगया कि शेषमें भारतका राज यहीलोग करेंगे।

जिस समय दिल्लीके सिंहासनके ऊपर महाराजा शेष अनंगपालके साथ कन्नोजके राठौरोंका घोर संग्राम हुआ उस समय सोमेश्वरनामक एक चौहान-राजा अजमेरके सिंहासनपर विराजमान था। सोमेश्वरने उस संग्रामके समय महाराज अनंगपालकी विशेष सहायता की जिससे यह उनपर बहुत प्रसन्न हुए और अपनी बेटीका उसके साथ विवाह करदिया। इसही लडकीके गर्भसे पृथ्वीराजका जन्म हुआ। इसके पहिले महाराज अनंगपालने अपनी एक कन्याका विवाह कन्नोजके राजा विजयपालसे करदियाथा, कूरचरित्र स्वदेशद्रोही जयचंद इसही संभोगका विषमय फल हुआ। जयचन्द और पृथ्वीराज दोनोंही दिल्लीश्वर अनंगपालके धेवतेथे, वीरश्रेष्ठ पृथ्वीराजसे जयचन्द बढ़ाथा। दोनोंही अपने नानाको अत्यन्त प्यारे थे। कुभाग्यसे नानाके उस स्नेहको खो-दिया, महाराज अनंगपाल पुत्रहीन होनेके कारण पृथ्वीराजका अत्यन्त आदर

करतेथे, इस कारण बुढापेमें उनकेही हाथमें अपने विशाल राज्यका भार सौंप-
कर इस लोकसे चले गये ।

जयचंदका आशा भरोसा गया, वह जन्मसे यह चाहताथा कि नानाका
सिंहासन मुझे मिले, न्यायसे इस राज्यके मिलनेका जयचंदको अधिकार भी था
क्योंकि वह बड़ी पुत्रीसे जन्मा था परन्तु भाग्यके आगे कोई क्या करसकता था,
पृथ्वीराजकी अवस्था ८ वर्षकी थी तथापि जयचंदको दिल्लीका सिंहासन न
मिला, उसको पृथ्वीराजनेही पाया, यह अन्यायका पक्षपात जयचंदसे सहा नहीं
गया, उसके हृदयमें डाहकी दारुण आग जलने लगी, उस विषम हृदय
ज्वालाके बुझानेमें उसने आपही अपने पावमें लुहाडी मारली और सम्पूर्ण
भारतको गारत करडाला, महाराज पृथ्वीराज दिल्लीके सिंहासनपर बैठे, परन्तु
जयचंदने उनके सार्व भौमत्वको अंगीकार नहीं किया, वरन वह दुराचारी इस
वातकी तैयारी करने लगा कि मैंही भारतका सार्वभौम सम्राट होजाऊं, मन्दो-
रका परिहार राज्य और अनहलवाडा पट्टनके राजा चौहानकुलके पुस्तैनी
शत्रु थे, इस भीतरी झगड़ेके समय उन्होंने जयचंदका पक्ष अवलम्बन करके
पृथ्वीराजके विरुद्ध उसको अत्यन्तही उभारा, यद्यपि महाराज पृथ्वीराज इस
वातको जानगयेथे, तथापि पहिले उपरोक्त दोनों राजाओंसे कुछ न बोले,
परन्तु फिर पूरीहार राजने महाराजका ऐसा अपमान किया कि उन्होंने
उसके विरुद्ध तलवार पकड महाराज पृथ्वीराजके सिंहासनपर बैठनेपर मंदो-
राजने अपनी वेटी उनको देनी चाही उदार हृदय महाराजने उसवातको स्वीकार
करलिया, विवाहकी तैयारी होनेलगी, दुष्टमति मंदारराज्यने धोका देकर अपनी
वेटीसे उनका विवाह नहीं किया, इससे पृथ्वीराज घोर अपमानित हुए
और इस वातका बदला लेनेके लिये युद्धका विचार किया, इस युद्धमेंही
चौहानवीर पृथ्वीराजके भावी गौरवकी सूचना हुई, तथा धीरे २ विक्रमका
प्रकाशभी होनेलगा, उनकी उन्नति जयचंदके हृदयमें तीरसी खटकने लगी, इस
उन्नतिको रोकनेके लिये पृथ्वीराजके रणकुशल सिपाहियोंको अपनी सेनामें
भरती करने लगा, इस करतवसेही जयचंदके सत्यानाशका सूत्रपात हुआ,
उसका होनहार भाग्याकाश घोर काले बादलोंसे ढकगया, उसने अपनी दुरभि-
लाषाके सिद्ध करनेको जो कूट उपाय अवलम्बन किया उसीसे सारे भारतवर्ष-
का सत्यानाश होगया । क्योंकि हिन्दूवैरी दुरंत मुहम्मद गोरीने इस विवादके
संयोगको अच्छा अवसर समझकर भारतभूमिमें आय भारतकी स्वाधीनताको
हरण करके इसके पवित्र हृदयमें इस्लामकी विजय पताकाको गाडदिया ।

चित्तौरके राजा समरसिंहने दिल्लीश्वर पृथ्वीराजकी वहन पृथाका पाणिग्रहण कियाथा, इस मंगलमें संबन्धको बढ़ानेके लिये वह दोनों मित्रता की जिस कठोर जंजीरसे जकड़े गयेथे सहस्रों आपत्तियोंके आजानेसेभी वह बंधन ढीला नहीं पड़ा इन दोनोंने कभी क्षणभरके लिये भी अमित्रभावका वर्त्ताव नहीं किया। जिस दिन यह दोनों स्वदेशप्रेमी परममंत्रका जप करके कंगरके किनारे परमधामको सिधारे उत्तीही दिन संसारमें उनका विछोहा हुआ, परन्तु यह कौन कहसकताहै कि अनन्त दुःखधाममें उनका मिलाप नहीं हुआ होगा। हाय ! किस कुघड़ीमें भारतके मध्य फूटका बीज बोया गयाथा, किस कुघड़ीमें अभागी भारतसंतानने सजाती भाइयोंके हृदयरुधिरका वहाना सीखा था, उसी कुदिनसे भारतके उजाड़ होनेका आरंभ होनेलगा, विश्रामस्थान भारतवर्ष असीम दुःखका कारागार और अनन्त यंत्रणामें अंधनरककूपकी भांति होगयाहै। कुरुक्षेत्रकी भयंकर श्मशानभूमि आर्यगणोंकी गृहफूटका रुधिरमय नमूना दिखा रहीहै। सब बातोंको जानबूझकरभी भारत संतान, किस लिये परस्पर लडा भिड़ा करतेहैं इस मर्मको भगवानही जानै भारतभूमिने किसी समयभी फूटसे निस्तार नहीं पाया। इसके माया मोहमें पड़कर न जान अवतक कितने भारत संतान अकालमें इस लोकसे चले गयेहैं। मतवालेसे होकर अपनाही सत्यानाश कर बैठेहैं, इनकी गिनती कोईभी नहीं करसकता, इसका शोकदायक आदर्श आजतक स्वर्णप्रसू भारतवर्षमें चमक रहाहै, किन्तु भारत-संतानके गृहविवादमेंभी एक विचित्रता पाई जातीहै। यह घराऊ झगडे कभी सदाके लिये अथवा कभी बराबर प्रचंडभावसे नहीं चलते रहें। वह झगडेकी आग कभी प्रचंडतेजसे बल उठतीथी। कभी बुझजातीथी, कभी तेज कभी हीन-तेज होजातीथी। जब यह आग बहुतही तेज होजाती थी तो भट्टकुलाचार्य-गण परस्पर विवादकरनेवाले राजाओंके बीचमें पड़कर उनके कुलकी प्रशंसा करते हुए दोनोंको शान्त करदेतेथे, और उनकी विवादामें शान्तरूपी जल छिड़क कर उस शत्रुभावको मित्रतामें बदलकर अत्यन्त दृढ़ प्रीतिबंधनसे दोनोंको बांध देतेथे। बहुधा इस प्रकारकी शान्ति परस्परके विवाहबंधनसे हुआ-करती थी, परन्तु दुःखकी बातहै कि वह मित्रभाव दो पीढीसे अधिक नहीं ठहरता था। फिर वही प्रचंड बैर ! परस्परमें घोरविद्वेष !! फिर परस्पर पिशाचीमूर्ति धारण करके एक दूसरेका खून पीनेके लिये तैयार होजाते ! भारतके राजाओंकी सदासे यही राजनीत रही। अभागिनी भारतमाताकी भाल लिरवनको जरा देखिये तो ! इसही दुराचारके वश हो उन्होंने अपने अपने पांवमें कुहाडी मारी, अपने सौभाग्यके मार्गमें अपने हाथसे कांटे बोये, उनकी इस दुर्नीतिसे भारतभूमि विजातीय

शत्रुओंके आसमें पड़ गई । आज नन्दनवन इमशान बन गया !! आज इसही कारणसे—परशुराम, कार्तवीर्यार्जुन, अर्जुन, भीम, भीष्म, द्रोण, कर्ण इत्यादि, प्रातः स्मरणीय भारत वीरगणोंकी माता घोर कठोर जंजीरोंसे जकड़ी पड़ी है ।

महाराज पृथ्वीराजके प्रचंडछद्म पाटन और कालोजके दोनों राजा महाराज समरसिंहसेभी शत्रुता करते थे। इस कारण महाराज समरसिंहकोभी खड्गधारण करना पड़ा। इसके अतिरिक्त अपने प्यारे मित्र पृथ्वीराजकी उन्होंने कई बार सहायता की थी। नागौरकोटके किस्ती स्थानसे दवेहुए ७००००००० सातकिरोड रुपये निकले। कहते हैं कि यह खजाना प्राचीन कालसे वहां गड़ा हुआ था, महाराज पृथ्वीराजने जब उस रुपयेको लिया तो कालोजके राजा और पाटनके राजाके मनमें अत्यन्त शंका उत्पन्न हुई। एक तो महाराज पृथ्वीराजकी सेनाही बहुत बड़ी है, दूसरे उनको यह बड़ी भारी सम्पत्ति मिली अतएव उनके ऊपर जय पानेकी आशा किस प्रकारसे की जाय इस शंकाके फेरमें पड़कर उक्त दोनों राजाओंने पृथ्वीराजके प्रचंडबलको रोकनेके कारण बादशाह शहाबुद्दीनसे सहायता चाही। जिस दिन उनके मनमें यह सत्यानाशी कल्पना उत्पन्न हुई उसीही दिन भारतके होनहार आकाशमें घोर बादल छागये। अचानक महाराज पृथ्वीराजका सिंहासन वारम्बार कंपायमान होने लगा। इससे पहिलेही शहाबुद्दीनकी मनहूस आखें हिन्दुस्थानके ऊपर लग चुकी थीं, और वह अपनी अभिलाषाके पूर्ण होनेका अवसर खोज रहा था, कि उस समय वह अवसर आपहीसे आगया, फिर भला वह निश्चिन्त रह सकता है ? राजा जयचन्दके साथ मिलकर शीघ्रही बड़ी भारी सेनाको सजाय महाराज पृथ्वीराजकी ओरको चला ।

महाराज पृथ्वीराज इस बातको जानगये कि जयचंद मेरे राज्यका नाश किया चाहता है। उसकी अभिलाषाका नाश और उसके पापका भलीभांतिसे फल देनेके लिये महाराजनेभी तइयारी की, व इसकी सूचना देनेके लिये महाराज समरसिंहपरभी दूत पठाया। चण्डपुंडीरनामक एक सामन्तराजा उस समय लाहोरका राज्य करता था, महाराज पृथ्वीराजने उसकोही दूत बनाय समरसिंहके पास भेजा। महाराज पृथ्वीराजके यहां जो सामन्त रहते थे, उनमें चण्डपुंडीर सामन्त महाविक्रमशाली था। उसके प्रचंड पराक्रम, अद्भुत स्वदेशहितैषिता, कठोर उद्यम तथा श्रमशीलताका वृत्तान्त महाकविचन्दने अवेगमयी वाणीसे वर्णन किया है। जिस दिनसे वह महाप्रतिष्ठित वीर दौत्यकार्यमें नियुक्त हुआ, उसही दिनसे जीवनके पीछले दिनतक वह चण्डपुंडीर भारतके इतिहासमें जो महान चरित्र रख-

गया है। उसको पढ़नेसे स्पष्टही जाना जाता है, कि उसने अपने जीवनको अपने देशपंरही बलिहारी कर दिया था, तथा देशपरही प्राणोंको नेवछावर करके वह वीर अनन्त सुखधाममें चला गया, जिससमय शहाबुद्दीन विशाल अनीकनीको साथमें लेकर भारतवर्षके ऊपर धाया उसकाल उस राजपूत वीर चण्डपुण्डरीनेही उसकी प्रचंडचालको रोकनेके लिये रावी नदीके किनारे अपना भयंकर शूल गाड़ दिया था। यद्यपि वह अपनी मनोकामना पूर्ण नहीं कर सका तथापि जो वीरता उस समय दिखाई थी, उसके द्वाराही उसका पवित्र नाम सदाके लिये इतिहासमें अटल रहेगा।

दूत श्रेष्ठ चण्डपुण्डरी दिल्लीश्वरसे बहुतसी भेंट पायकर महाधूमके साथ चित्तारमें आया। महाराज समरसिंहने आदरपूर्वक उसको ग्रहण किया, तथा वाष्पकननेके लिये उत्तम स्थान दिया। कुछ कालतक विश्राम करनेके पीछे उसने महाराजका दर्शन करना चाहा। शीघ्रही मनोकामना पूर्ण हुई। समरसिंहने तत्काल उसदूतको अपने सामने बुलाया। महाराज समरसिंह उससमय अपने विश्रामग्रहमें व्याघ्रचर्मके आसनपर बैठे थे, लाल वस्त्र धारण किये सब अंगोंमें विभूति लगाये मस्तकपर जटा बढाये गलेमें कमलगट्टोंका हार पहिरे विराजमान थे। दूतके आतेही सादर कुशल पूछी और बैठनेके लिये सामनेही आसन दिया। महाराजकी वह शान्ति गंभीर मूर्ति तपस्वियोंके योग्य भेष और अत्यन्त उदारव्यवहार देखकर दूतके हृदयमें अपूर्व भक्ति उत्पन्न हुई। उसने महाराजको श्रीगोन्द्र नामसे पुकारकर भक्ति गद्गद स्वरसे कहा “आप यथार्थमेंही भगवान् महादेवजीके प्रतिनिधि हैं। यह समस्त वृत्तान्त और इसके पश्चात् जो कुछ वार्ता परस्पर हुई उसका यथार्थ वर्णन चन्द्रवर्दाईने अत्यन्त तेजस्वी भाषामें अपने ग्रंथके बीच वर्णन किया है।

दो एक दिनके बीचमेंही महाराज समरसिंह अपने प्यारे मित्र व वान्धव पृथ्वीराजका नेवता मानकर सेनासहित दिल्लीको चले। दिल्लीश्वरने आगे बढ़कर उनकी अगवानी की और मानके साथ ग्रहण किया परस्पर कुशल प्रश्न करके फिर कर्त्तव्य कार्यका विचार होने लगा। शीघ्रतासे दो कर्त्तव्य निश्चय किये गये, प्रथमः-पत्तनराजके गर्वका दूरकरना, दूसरेः-मुसलमानोंके आक्रमणमें विघ्न करना, समरसिंह पत्तनराजके साथ वैवाहिक सम्बन्धसे बँधे हुए थे; अतएव उससे युद्धकरनेका विचार करके मुसलमानोंकी चढाईको रोकनेके लिये दिल्लीमें रहे। इधर महाराज पृथ्वीराज सेनासहित पटनकी ओर बढे शीघ्रही रणोन्मत्त

राजपूत वीरगणभी गगनभेदी भयंकर शोरसे उसका उत्तर देकर महोत्साहके साथ उनके सामने हुए, दोनों सेनाओंमें घोर संग्राम होने लगा । परन्तु उस संग्राममें किसीकी जय पराजयके कोई लक्षण न ज्ञातहुए । इस प्रकारसे तलाऊपर कई संग्राम हुए, परन्तु विजय लक्ष्मी किसीकी अंकशायिनी न हुई । इस ओर महाराज पृथ्वीराज पट्टनराजका गर्वस्वर्ककरके जयके आनन्दसे पूर्णहो मित्रसे आमिले । इसकाल दोनों वीरोंका प्रचंड विक्रम एक होकर भयंकर तेजसे बदल उठा । इस भयंकर विक्रमाग्निमें असंख्य मुसलमान तिनकेकी समान जल गये ।—मुसलमान वीर शहाबुद्दीन बड़ी कठिनाईसे अपने प्राण लेकर भागा । उसके सेनापतिको विजयी राजपूतोंने कैद कर लिया ।

महाराज पृथ्वीराजकी जीतहुई । और समस्त बाधा दूरहोगई । नगरकोटकी जमीनमें जो गड़ाहुआ खजाना उनको मिलाथा, उसका आधाअंश महाराज पृथ्वीराजने समरसिंहको दे दिया । परन्तु समरसिंहने स्वयम् उसको ग्रहण न करके अपनी सेनामें बांट दिया । महाराज पृथ्वीराजने उनकी सेनामें औरभी बहुतसा द्रव्य बांटा । फिर महाराज समरसिंह विदा लेकर अपनी राजधानीमें चले गये ।

इस प्रकारसे कई वर्ष बीत गये । साधारण २ लड़ाइयोंमें जीतकर पृथ्वीराज और समरसिंह कुछ कालतक सुख भोगते रहे, इधर एक २ दिन बितातीहुई भारतकी होनहार कालरात्रि करालवेपसे आनपहुँची । पट्टनके ऊपर जय प्राप्तकरके महाराज पृथ्वीराजने विचारा था कि इसी गौरवके साथ हमारे दिन व्यतीतहोंगे; अतएव निश्चिन्तहो संयुक्ता * महारानीके साथ परमानन्दसे दिन यामिनीको व्यतीत करनेलगे। परन्तु विधिलेखके काठेन अनुशासनसे उनके सुखका दिन धीरे २ बीतने लगा । क्रमानुसार समय आ गया । महाराज पृथ्वीराजको आलसी असावधान जानकर शहाबुद्दीन भयंकर सेनाको साथ ले फिर भारतवर्षपर चढ़ाया । फिर उसके मतवाले वीरोंकी सिंहनादसे भारतभूमि कांपने लगी । महाराज पृथ्वी-

* संयुक्ता कन्नौजके राजा जयचन्दकी घेटीथी । जयचन्दने अपनी कन्याके स्वयंवरमें भारत-वर्षके समस्त राजाओंको निवता भेजकर बुलायाथा । परन्तु जयचन्दके साथ वैरभाव होनेके कारण महाराज पृथ्वीराज और समरसिंह उस सभामें न गये । जयचन्दने इन दोनों राजाओंकी हेममयी-मूर्ति बनवाकर पृथ्वीराजकी मूर्तिको द्वारपालकी जगह स्थापन किया, स्वयंवरमें जितने राजा आयेथे संयुक्ताने उनमेंसे किसीके गलेमें माला न डालकर पृथ्वीराजकी सुवर्णकी मूर्तिके गलेमें माला डालदी । पृथ्वीराजमी उससमय राजभवनसे थोड़ीही दूरपर छिपेहुएथे । इस वृत्तान्तको जानतेही वह तेजसहित सभामें पहुँचे, और राजकुमारी संयुक्ता को लेकर अपने नगरमें चले गए, सभामें बैठेहुए किसी राजकुमारसे उनकी प्रचंडगाति नहीं रोकीगई ।

राजका सिंहासनभी मानों उसके साथही साथ डोलनेलगा । और उनकी नींदटूटी, उससंकटसे छुटकारा पानेके लिये उचित उपायखोजनेलगे और अपने प्यारे मित्र समरसिंहसे सहायताचाही । अबतक जिस मनमोहनीके अनुपम प्रेमसे मोहित होकर महाराज संपूर्णतः आलसभावसे ही समयको व्यतीत करतेथे । आज वही मनमोहनी सावधान होकर खड़ी होगई और यथार्थ वीरनारीकी समान प्राणपतिसे संग्रामभूमिमें जानेके लिये कहा । महात्माचन्दने यहांपर जैसा वर्णन किया है । उसकाही अनुवाद ठीक नीचे किया जाताहै ।

जिसदिन पिछलीवार शहाबुद्दीन पृथ्वीराजके ऊपर सेनासहित चढ़ा; उसही दिन रात्रिके समय महाराजने एक भयंकर स्वप्न देखाथा । तिससे उनका हृदय व्याकुल होगया और मनमें अत्यन्त चिन्ता उत्पन्न हुई । प्रभात होतेही प्राण-प्यारी संयुक्तासे वह अपने स्वप्नका वृत्तान्त इस प्रकारसे कहनेलगे:-

“ कल रात्रिके समय जब कि निद्राकी कोमलगोदीमें विश्राम कर रहाथा, उस समय देखा कि रम्भाकी समान एक परमरूपलावण्यवती स्त्रीने आकर कठोर भावसे मेरा हाथ पकडलिया । तत्पश्चात् ही उसने तुमको आक्रमण किया; तुम अपनी रक्षाके लिये अनेक प्रकारके यत्न करनेलगीं । इतनेहीमें-अहो ! भयानक:-भीम दर्शन राक्षसकी समान एक बड़ा मदमत्त हाथी शूंड हिला-ताहुआ मेरी ओरको आया । भयसे नींद टूटगई । भीत और चकित नेत्रोंसे चारों-ओरको देखा । तो उस रंभाकोभी न देखा और न उस हस्तीको देखपाया; हृदय काँपगया; सर्वाङ्ग कंटकित होगये; दबेहुए कंठके द्वारा मीठी वाणीसे “ हर, हर ” कहकर उठबैठा, देखो अबतक हृदय कांपरहाहै:-अबतक भी रोएं खडेहैं:-भगवान्ही जाने भाग्यमें क्या बढ़ाहै । ”

स्वप्नको सुनते हुए महारानी संयुक्ताके प्रभात कमलतुल्य वदनमंडलपर एक अपूर्व जोति प्रकाशित होगई; और मृदु गंभीर कंठसे कहा; “ हे चौहान कुलके गौरव सूर्य ! इस जगंतमें आपकी समान इतनी सम्पत्ति और इतने सुख व ऐश्वर्य कौन भोग रहाहै ? तथापि आपकी तृष्णाकी शांति कहाँहै ? आप साधारण स्वप्न देखकर होनहारकी शंकासे किसकारण व्याकुल होरहेहैं ? हे प्राणनाथ ! मृत्यु तो सबहीके लिये है; इस दुर्निवार मृत्युके हाथसे देवतागणभी छुटकारा नहीं पासकते ! पुराने छोडकर नए कपडे पहरनेको किसकी इच्छा नहीं होती ? परन्तु हे नाथ ! विचारकर देखिये जो श्रेष्ठ कार्यमें अपने प्राणोंको

न्यौछावर करदेताहै; जो गोरैवके साथ मृत्युको आलिंगन करताहै; वह मरकरभी सदैव जीवित रहताहै । मैं अल्पबुद्धिवाली स्त्रीहूं आपको क्या समझाऊं ? आप स्वार्थको मनमें स्थान न दीजिये । और ऐसा उपायभी कीजिये कि जिसमें मृत्युलोकके बीच आपका नाम अमर होजाय । अपनी उस कराल करवालको लेकर शत्रुओंका संहार कीजिये मेरे लिये शोच न कीजिये । अभीसे ऐसे कार्यके करनेमें यत्न करतीहूं कि जो आपकी अर्द्धाङ्गिनीके योग्य होगा । ”

महाराज पृथ्वीराजने सभामें आकर भट्टकविको बुलाय समस्त वृत्तान्त कह सुनाया । भट्टने उसका भावार्थ कहा । और राजकुल गुरुने एक जयकवच लिख दिया । दिल्लीश्वरने उस मंत्रपूर्ण कवचको अपनी पगडीके भीतर रक्खा । इस ओर नवग्रहको प्रसन्न करनेके लिये सहस्र कलशोंमें भराहुआ उत्तम और शुद्ध दूध चन्द्रदेवताको पानार्थ दिया गया ।

दश दिगपालोंके लिये दश मैसे उत्सर्ग किये गये, दीनदरिद्र मनुष्योंको चांदी सोना दिया गया, परन्तु रुधिर या दुग्धको उत्सर्ग करके अथवा दान ध्यान करके क्या कोई कभी होनहारकी गतिको रोक सकताहै ?

“यदि रोकसकता तो नल और पाण्डवोंको वह कठोरविपत्ति कभी न भोगनी पड़ती । ”

विषम संकटमें घिरकर महाराज पृथ्वीराजने अपने प्यारे मित्र समरसिंहसे सहायता चाही । महाराज समरसिंह क्या बन्धुकी विपत्तिका वृत्तान्त सुनकर चुपचाप रह सकतेहैं? वह बिलम्ब न करके शीघ्रही सेनासहित दिल्लीकी ओर चले । इस ओर महाराज पृथ्वीराज अपने सेनापति और सामन्तोंको बुलाकर युद्ध करनेका विचार करनेलगे । इस भयंकर युद्धके समय भारतवर्षके समस्त राजाओंको एक अभिन्न मित्रकी डोरमें बांधना चाहियेथा, देशवैरी यवनके आक्रमणसे अपने देशका उद्धार करना उचित था । स्वदेशानुरागसे उत्साहित होकर पृथ्वीराजकी सहायताको खड्ग पकड़ना चाहियेथा । परन्तु कार्य इसके विरुद्ध हुआ । उनमेंसे बहुतसे राजा तो मौन धारण करके बैठरहै ! विशेष करके कन्नौज पाटन और धारानगरीके राजा तुच्छ जनोंकी समान डाहके वश हो भीतरही भीतर यह चाहते थे कि पृथ्वीराजका नाश होजाय । तथा इसका यत्नभी करते थे । राजपूतकुलकलंक हतभाग्य राजाओंने पाप मोहके वश होकर जो कापुरुषोचित

कार्य किया उसका विषय फल उन सबको शीघ्रही भोगना पड़ा। शीघ्रही यवनोंकी दासत्व जंजीरमें वे सबके सब बँधगये।

दिल्ली यात्राकी समस्त तइयारी होगई। राज्य कार्यका भार अपने छोटेपुत्र कर्णसिंहके हाथमें समर्पण करके महाराज समरसिंह अपने इष्टमित्र और सेना सामन्तको साथ ले दिल्लीकी ओर चले × चित्तौर छोड़नेके समय अचानक उनका हृदय कांपने लगा। मानो किसीने अचानक उनके कानमें आकर कहा “ देखो! जी भरकर एकवार चित्तौरको देखलो, अब तुमको यह नगर देखनेको नहीं मिलेगा” समरसिंह चकित होगये। परन्तु तत्काल अपने उत्साह को सँभाला और अपने इष्टदेवताका स्मरण करके चलदिये। चंदवरदाईके महासमगनामक पिछले सर्गमें महाराजसमरसिंहकी इस शेष दिल्ली यात्राका वृत्तान्त उत्तमतासे लिखा है; वही नीचे लिखा जाता है :-

इसके उपरान्त महाराज पृथ्वीराजने समरसिंहके आनेका वृत्तान्त सुना, और दरबारमें जाय समस्त सरदारोंको बुलाय उत्साहका डंका बजाया। सबके एकत्र होनेपर धूम धामसे सवारी निकली, महाराज पृथ्वीराज इस समय बहुतायतसे महलोंमेंही रहा करतेथे। आज मित्रका सत्कार करनेके लिये बाहर आये हैं, बहुत दिनके पीछे अपने महाराजका दर्शन पाकर सारी प्रजा आनन्दमें मग्न होगई। घर घर रोगिनी होने लगी आनन्दके बाजे बजने लगे। उस समय दिल्लीकी शोभा अपूर्वथी। महाराज पृथ्वीराज समरसिंहको साथ लेआये, और उसदिन बड़ा दर्बार किया। महाराज पृथ्वीराज और समरसिंहको बराबर बैठाहुआ देखकर समस्त प्रजा अत्यन्त प्रसन्न हुई। इस प्रकारके बाजे बजे कि कानपड़ी आवाज नहीं सुनी जातीथी।

इस भांति आनन्द होरहा था कि राजदरबारके चौककी विचली शिला फटगई, और उसमेंसे सदाशिवका वीरभद्रनामक गण बाहर निकला। कविवरचन्द्रने यहां इस प्रकारसे लिखा है:-

रंग राग वागन थदयं ॥ घन घोर सोर प्रगदयं ॥
सुनि अलख वीर सज्जगयं । सिर पलट ऊंघिम पगयं ॥
लम्बी असीं गज सज्जगयं । पञ्चास चौडिय गज्जयं ॥
दश गज सुदल परमानयं । तिही गुफा खुली अमानयं ॥
रुद्राक्ष मुद्रा धारयं । मुख शंभु शंभु उचारयं ॥

× छोटे पुत्र कर्णसिंहपर यह आयौक्तिक अनुराग देखकर बड़ापुत्र कुम्भकर्ण पितासे अत्यन्त अप्रसन्न हो, कितने एक साथियोंको साथ ले पिताके “ राज्यको छोड़ दक्षिणा वर्त्तमें चला गया। वहांपर विदौर नामक एक हवशी बादशाहके आश्रयमें उसने एक नये राज्यकी प्रतिष्ठा की।

कर खड्ग खप्पर राखयं । मुख शंभु शंभु भाखयं ॥
 पृथिराज कीन्ह प्रणामयं । बोल्यो न वीर सतामयं ॥
 तहां देव रावल समरसी । छंडचो न आसन रघुवँसी ॥
 पूछंत चन्द सुवत्तियं । कहो होनहार सुकंत्तियं ॥
 यह होनहार सहोयहे । दिल्ली न थिरता सोयहे ॥
 पुनि म्लेच्छ दलवल जोरहै । अर शहर दिल्लीय तोरहै ॥
 पृथिराज युद्ध न जीतहै । रण समय रावल बीतहै ॥
 चामुण्ड राय गुरु रामही । कट परही भारत कामही ॥
 पृथिराज बंधही पावही । खट मास विपति विहावही ॥
 नृप शाह चंद्ररु तीनयं । रहे एक ठौर सुलीनयं ॥
 गोरी सुदिल्ली आनयं । पुनि वरत हिंदुसथानयं ॥
 तिहि दुर्ग देवल भाजयं । अति आनरत्थ स साजयं ॥
 वरते स वरसां दोयसे । तो पीछ चकता आवसे ॥
 हिंदवान दंड भरावही । नृप घर घर हि विय व्यावही ॥
 दख नाद सुंदल आवही । तिहि तखत दिल्ली न पावही ॥
 ता पीछे टोपी आवही । बहु इलम कलम चलावही ॥
 नारी सुराजा वज्जसी । हिन्दू तुरक सब भज्जसी ॥
 इहि तखत दिल्लीय आवही । नृपघेरघराहि सुख पावही ॥
 वह धर्मराज जमावही । प्रतिपाल न्याय कहावही ॥
 जब न्याय बन्धन छूटसी । तव आव पेटा फूटसी ॥
 मिलि बलक काबुल थट्टियं । तीजी समूहत भट्टियं ॥
 विद्धंस दिल्ली याटहं । राहि वरस खट पर नाटयं ॥
 सीसोद दिल्ली आवही । शिर राण छत्र धरावही ॥
 पेंतीस वरस प्रमानही । भोगवे हिंदू संथानही ॥
 अजमेर पीर सजगही । पुनि तखत दिल्ली मंगही ॥
 तुंवरस दिल्लीय घेरही । पुनि आण दिल्लीय फेरही ॥
 राठोड़ दिल्ली आवही । फिर धर्मनीति चलावही ॥

भावार्थ:—इससमय जो यह शिला फट गईथी, यह अस्सीहाथ लम्बी, पच्चीस हाथ चौड़ी और दश हाथ मोटी थी, इस शिलाके नीचे एक गुफाथी । उस गुफासे रुद्राक्षकी माला धारण किये, हाथमें खड्ग और नरकपाल लिये “शम्भु

शम्भु' उच्चारण करता हुआ वीरभद्र बाहर निकला । पृथ्वीराजने उस भयंकर मूर्तिवाले पुरुषको आगे बढ़कर प्रणाम किया । परन्तु वह पुरुष कुछभी न बोला, तब सदाशिवके भक्त महाराज समरसिंहरावलने उसको आगे बढ़कर प्रणाम किया, उस समय चन्द्रने वीरभद्रसे कहा कि अब आगे क्या रहेगा सो महाराजको बताइये, तब वीरभद्र सबके सन्मुख इस प्रकारसे कहने लगा, "मैंने दक्षप्रजापतिका यज्ञ विध्वंस करके, अपने पिता महादेवजीके क्रोधको शांत किया, फिर उनकी आज्ञा लेकर यहां निश्चिन्तहो विश्राम लेनेके लिये आया । इस समय मैं गाढ़ी नींदमें सो रहा था, परन्तु आज इस तुम्हारी विलक्षण गड़बड़ी और कुलाहलसे मेरी नींद टूटी तथा मैं बड़ा दुःखी हुआ । महादेवजीने मुझे वर दिया था कि जो कोई तेरी निद्रा भंग करेगा, उसका नाश होजायगा । इसी कारणसे अब तुम्हारा नाश होगा । अब आगे स्लेच्छलोग प्रवल होकर दिल्लीको जीत लेंगे, पृथ्वीराजकी पराजय होगी । इस समय रावल समरसिंह बहुत काम आवेंगे, चांगुंडराय और रामगुरु युद्धमें कट जायेंगे, पृथ्वीराज पराजित होकर छः मास तक बंदी रहेगा और दुःख पावेगा । शहाबुद्दीन गंगी प्रवल होकर हिन्दुस्थानमें अत्यन्त उपद्रव मचावेगा, हिन्दूराजाओंके किले व मंदिर छिन्न भिन्न करेगा, इस प्रकार एक वर्ष तक बड़ा भारी अनर्थ रहेगा । अनन्तर मुगलोंकी चढ़ाई हिन्दुस्थान पर होगी, और यहभी अत्यन्त उपद्रव करेंगे । वे राजालोगोंके घरोंमें घुसकर उनकी बेटियोंके साथ व्याह करेंगे । फिर दक्षिणसे कुछ सेना उनको पराजित करनेके लिये आवेगी । इस सेनासे उसका कुछ प्रबंध न होगा । फिर टोपीवाले आवेंगे उनके राजकी मालिक रानी होगी-जो कि सब हिन्दू मुसलमानोंको अपने वशमें करलेगी । वह दिल्लीके तख्तपर अपनी स्थापना करके राज्याभिषिक्त होगी, उसके राजमें सबको मुख मिलेगा । वह धर्मानुसार राज्य करके न्यायपूर्वक प्रजाका प्रतिपाल करेगी परन्तु आगे जैसेही उसकी न्यायरीतिका बन्धन छूटेगा वैसेही टोपीवालोंको निकालकर काबुल और बलखवाले तथा एक भट्टीराजा एकत्र होकर दिल्लीपर अपना अधिकार जमावेंगे, इनकी अमलदारी छः वर्ष तक दिल्लीमें रहेगी । फिर उदयपुरके शिशोदिया वंशवाले राजाहोंगे । वह ३५-वर्ष तक राजकरेंगे । फिर अजमेरका पीर उठेगा । तत्पश्चात् तुवर और तुवरके पीछे कठोर वंशका राजा होकर वह धर्मनीतिको स्थापन करेगा ।"

वीरभद्रकी भविष्य बाणी सुनकर पृथ्वीराजको अत्यन्त शोक हुआ । तब वीरभद्र कहने लगा । हे राजन् ! किसी बातका शोक न करना चाहिये ! यह

वसुधा सदा किसीके पास नहीं रही । बहुधा इसके अधिकारमें उलट फेर हुआही करताहै ! राजावेन, विश्वंभर, सुरराज, हिरण्याक्षादि, बहुतसे राजा होगए परन्तु पृथ्वी किसीकी न हुई । महान् याज्ञिक बलीराजा होगया, परन्तु वामनजीने उसको पातालमें भेजा । वैसेही मान्वाता, व जलन्धर राजा हुए, उनकी कैसी दशा हुई ? साक्षात् भगवान्के अवतार पृथुराजा हुए । परशुरामजीने अवतार लेकर २१ बार क्षत्रियोंका संहार करके ब्राह्मणोंको पृथ्वीका राजदिया, शिवभक्त महाबली और पराक्रमी लंकापति गव्गण होगया । दुर्योधन कैसा बली योद्धा था, परन्तु अर्जुनके साथ लड़कर अपनी अठारह अक्षौहिणी सेनासमेत मारागया; किसी कविने कहा है—

दातासों दिलीप मानधातासों महीप भयो, जाके गुण द्वीपद्वीप अजहूँलों छायेहैं।
बलि ऐसो बलवान् को भयो जहान बीच, रावण समान को प्रतापी जगजाये हैं॥
बानकी कलानमें सुजान द्रोण पारथसे, जाके गुण दीनदयाल भारतमें गायेहैं ।
कैसे कैसे शूर रचे चातुरी विरंचिजूने फेर चकचूर कर धूरमें मिलायेहैं ॥१॥
सारांश यह है, कि रणक्षेत्रमें जो वीर लड़तेहैं, उनको कभी यश मिलताहै, कभी मौत मिलतीहै । धन, दौलत, इष्ट, मित्र सब मिथ्या हैं, कि केवल कीर्ति ही सदा अमर रहतीहै । इसप्रकार कहकर वीरभद्र अन्तर्द्धान होगया । शिला जो टूट गईथी वह सावितहोकर जहांकी तहां लग गई । वहांकी जमीन साफ होगई ।

कुछ देर विश्राम लेकर समरासिंहने प्यारे मित्रसे संग्रामकी वार्ता छेड़ी । और यह पूछा कि शत्रुओंका मार्ग रोकनेके लिये अवतक तुमने कौनसा उपाय किया ? पृथ्वीराजने कहा कि अवतक मैंने कुछ उपाय नहीं किया न कुछ शोचा विचारा । “ चित्तौरनाथ यह सुनकर विस्मित हुए और दिलीश्वरका मीठे वचनोंसे तिरस्कार किया । तथा ऐसा परामर्श करने लगे, कि जिससे कोई उचित उपाय निकल आवे । महाकविचन्दने इस उत्तमतासे यह वृत्तान्त लिखाहै कि प्रत्येक मनुष्यका हृदय राजपूतवीरोंके महान् चरित्रकी ओर खिंच जाताहै ।

भली भांतिसे युद्धके सामान होगये महाराज समरासिंहकी आज्ञासे राजपूतोंकी भारी सेना दिल्लीके तोरणद्वारको लांघकर शत्रुदलकी ओर इस प्रकारसे झपटी कि जैसे प्रचंड पहाड़ी नद आगे बढ़ताहै, हाथियारोंकी, झनकार मतवाले हाथी और घोड़ोंका विकट शब्द और रणोन्मत्त राजपूतवीरोंका श्रवण भैरव चिल्लाना

तथा पृथ्वीका बारम्बार कम्पायमान होना, महाभय उत्पन्न करताथा । किस मार्गसे कौन दिशामें और किस प्रकारसे श्रेणीबद्ध होकर राजपूत वीरोंको बढना चाहिये, मार्गमें कहां कहां विश्राम करना उचितहै ? इन सब बातोंमें समरसिंहका परामर्श लियागया । महाराज समरसिंहकी सलाहके बिना महाराज पृथ्वीराज कोईभी कार्य नहीं करते थे । महाकवि चन्दभट्टने समरसिंहको राजपूत सेनाका इयुलितीस कहकर वर्णन कियाहै । वह साहसी धीरस्वभाव और समरचतुरथे । वे धर्मनिष्ठ, सत्यप्रिय और शुद्ध चरित्रथे । शृंगाल विहंगादिकी चाल और दूसरे लक्षणोंको देखकर कोई शाकुनिक या दैवज्ञ उनकी समान सुन्दर रूपसे भावी फलाफलको नहीं बता सकताथा । समरसिंहके इन अनुपम गुणोंके कारण गंहिलोत और चौहान समस्त सैनिक और सामन्त अधिकारी उनमें अत्यन्त श्रद्धा भक्ति करतेथे । सांझको जब संग्राम होजाता तब राजपूतवीर और सामन्तगण उनके डेरे में आया करतेथे । वे उनसे स्नेह पूर्वक सादर संभाषण करके अनेक प्रकारकी नीतिशिक्षा देकर उपदेश करतेथे । इस मनोहर शिक्षा और वक्तृताको श्रवण करते २ समस्त डेरेवालोंमें परमानन्द छाजाताथा । महाकवि चन्दभट्टने मुक्तकंठसे स्वीकार कियाहै कि मेरे महाकाव्यमें राजशासनकी जितनी नीतिहै उनका अधिक अंश महाराज समरसिंहके उपदेशसे लिखाहै । और धर्मनीति राजनीति समाजनीति, मंत्रीनिर्वाचन और राजदूतोंके आचरण विशेष करके राजा और राजपूतोंका जो कुछ कर्तव्य था । तथा जो सुन्दर उपाख्यान व रूपकालंकार मैंने अपने काव्यमें लिखेहैं । उन सबके वक्ता-चित्तौराधिप सुपंडित महाराज समरसिंह हैं ।

पुण्यभूमि ब्रह्मावर्तके मैदानमें बहनेवाली पवित्र जलमयी दृषद्वती (आजकल इसको कगगर कहतेहैं) के किनारेपर क्षत्री और मुसलमानोंका घोर संग्राम हुआ, यह संग्राम तीनदिन तक बराबर होता रहा । प्रथम दो दिनतक तो किसी ओर की जय पराजयके कुछ लक्षण दिखाई न दिये । क्रमसे तीसरा दिन कालनिशा होकर भारतके प्राची द्वारपर दिखाई दिया । राजपूतगण दृषद्वतीके पवित्र जलमें स्नान कर प्रातःकृत्यादि समाप्त करनेलगे । भगवान् मरीचिमाली मानो एकवार अनन्तकालके लिये भारत सन्तानका गौरव देखनेको धीरे २ उदयाचलपर विराजमान हुए । इस ओर महाराज पृथ्वीराज अपनी प्यारी नारी संयुक्ताके निकट खडे होकर बिदा ले रहे हैं ।

संयुक्ता अर्पने हाथसे प्राणनाथको सजाने लगी—वस्त्र पहिराकर प्राण-पतिकी कमरमें खड्ग बांधदिया । इतनेहीमें आकाशमंडलको विदीर्ण करते-हुए रणके मारू वाजे बजनेलगे । उन गम्भीर बाजोंकी ध्वनि आकाशमें लीनभी नहीं होने पायीथी कि राजपूत गणभी सिंहनाद करने लगे ।

महाराज पृथ्वीराज विस्मित हुए । उन्होंने यह नहीं समझा था कि विश्वास-घातक यवन इतने सवेरेही लड़ाईका ढोल बजादेंगे । अतएव उन्होंने तत्कालही रणभूमिमें प्रस्थान किया । उस पिछले रणरंगमें भारतके उस शेष गौरवके दिन—भारतके अनुपम वीर महाराज समरसिंह * और उनका पुत्र कल्याण महापराक्रमके द्वारा शत्रुसेनाका संहार करके स्वदेशप्रेम तथा अद्भुत वीरताका प्रकाशमान उदाहरण दिखाकर अपनी तेरह हजार १३००० राजपूतसेना और प्रसिद्धि सामन्तोंके साथ सदाके लिये समरभूमिमें शयन करगये । उसदिन दृषद्वतीके उस रुधिर मिले जलमें भारतवर्षका गौरवरूपी सूर्य सदाके लिये डूबगया, भारतकी सम्पूर्ण आशा लोप हो गई, वीरशेखर समरसिंहकी पतिव्रता महारानी पृथाने जब यह भयंकर समाचार सुना, कि प्राणनाथ वीरशिरोमणि समरसिंह आतताई यवनोंके कपटचरित्रसे मारे गये; प्यारे भ्राता पृथ्वीराज जंजीरोंसे बांधे गये—भारतका आशा भरोसा और भारतके वीरगण उस समर क्षेत्रमें जो कि कगगर नदीके किनारे बनाया गयाथा सदाके लिये शयन कर गये—तब उसने क्षणभरकी विलम्ब न की । पुरजन परिजन बन्धु बान्धव किसीका समझाना न सुना, शीघ्रही चिताग्रिमें तन त्याग करके पतिलोकको चलीगई । दृषद्वतीकी सैकतभूमि आज भयंकर श्मशान बनगई है ।

जिसके पवित्र किनारेपर बैठकर आर्यगौरव महर्षिगण मुधामय सामं गानसे देवता लोगोंको आनंदित करतेथे, जिनके श्रवण मोहन वेदगानसे मोहित होकर

* उदयपुरके कविराज श्यामलदासजीने पृथ्वीराजरायसोके विरुद्ध एक छोटीसी पुस्तक छपाई थी उसमें लिखाहै कि चित्तौड़के रावल समरसिंह पृथ्वीराजके समयमें नहीं हुए, किन्तु प्रायः सौ वर्ष पीछे हुयेहैं, यदि यह लेख सत्य मानाजाय तो न तो वे पृथ्वीराजके बहनोई माने जासकतेहैं, और न उनका पृथ्वीराजके युद्धमें उपस्थित होना माना जासकताहै, परन्तु मथुराके पं० मोहन-विष्णु पण्डाजी (जो मेवाड़ राज्यके कौन्सिलके सेक्रेटरी रह चुकेहैं) ने उनकी इस पुस्तकके प्रतिवादमें एक पुस्तक छपाईहै उसमें उन्होंने लिखाहै कि “ राज समन्दपर एक बड़े शिलालेखमें जो माघसुदी पूर्णिमा सम्वत् १७२२का खुदा हुआहै निम्न लिखित श्लोकहैं ।

“ततः समरसिंहाख्यः पृथ्वीराजस्य भूपतेः । पृथाख्याया भगिन्यास्तु पतिरित्यातिहादतः ॥ २४ ॥”

पवित्र जलवाली देव तरंगिणी नृत्य करती हुई बहतीथी, आज उसकी वह पुण्य-मयी सैकतभूमि भयंकर श्मशान बन गई है। उस भूमिके ऊपर अगणित शृगाल व कुत्ते और गृह विकट उच्चस्वरसे शब्द कर रहे हैं। आज उसकी स्वच्छ छाती नररुधिरसे गीली हो रही है, उस बीभत्स श्मशान दृश्यमें भुजा बढ़ाकर पिशा-चकी मनान यवनसेना, गिरेहुए आर्यवीरोंके अंगरागको हरण करने लगी। हाँ अब कौन उस पिशाचोंकी प्रचराड गतिको रोकैगा ? कौन स्वदेशप्रेमभक्तिके पवित्र मंत्रसे प्रेरित हो हाथमें खड्ग लेकर यवनोंको दूर करेगा ? कोई नहीं ! संसारने विकट शब्दसे कहा—कोई नहीं ! भारतकी राजलक्ष्मी यवनोंकी जंजीरसे जकड़ी जाकर हाय हाय करती हुई बोली—कोई नहीं ! भारतभूमि आज अनाथिनी पतिपुत्र हीन होकर शत्रुओंकी कैदमें पड़ गई है !

उन्ने भयंकर श्मशानभूमिकी भयंकरताको बढ़ाता और रणभूमिमें पड़ेहुए राजपुत्रवीरोंके कोटे हुए शिरोंको ठुंकराताहुआ विजयी शहाबुद्दीन दिल्लीकी ओर चला। उस काल दिल्लीके पिछले आर्यवीर चौहानकुलप्रदीपके कुलदी-पक वीर युवक रणसिंहने अत्यन्त पराक्रम दिखाकर संग्रामभूमिमें अपने प्राणों-को न्योछावर करा दिया। इसकी शोचनीय मृत्युसे दिल्ली अनाथ होगई। उस रक्षकहीन श्मशानकी समान नगरमें प्रवेश करके यवनलोगोंने पाण्डवप्रवर महाराज युधिष्ठिरके पवित्र सिंहासनको अपने अधिकारमें किया। इस ओर क्षत्रियकुलकलंक कायर जयचंदकोभी उसकी विश्वासघातकता और स्वदेशद्वेष-

गंगीशाहबुदीनेन गजनीशेन संगरम् । कुर्वतोऽखर्वगर्वस्य महासामंतशोभिनः ॥ २५ ॥

दिल्लीश्वरस्य चौहाननाथस्यास्य सहायकृत । स द्वादशासहस्रैःस्वैर्वीराणां सहितो रणे ॥ २६ ॥

अर्थ—समरसिंहने भूपति पृथ्वीराजकी बहिन पृथाके पति होनेके कारण बड़े प्रेमसे १२००० वीरोंके साथ चौहाननाथ (पृथ्वीराज) दिल्ली अधिपतिको जो बड़े २ सामन्तोंसे मुशोभित थे गज-नीके द्वादशाह शहाबुद्दीन गोरीके साथ युद्धमें प्रवृत्त होनेपर सहायता की।

नीखारायसामें लिखा है कि समरसिंह पृथ्वीराजके समयमें हुये। उन्होंने अन्तिम चौहान राजे-श्वर पृथ्वीराजकी बहिन विवाही थी और शहाबुद्दीन गोरीके युद्धमें अपने सालेको सहायता दी थी बद्धा गोरपतिं दैवात् स्वर्गातः सूर्याविवभित् ॥ २७ ॥

नीखारासपुस्तकेस्य युद्धस्योक्तेस्तु विस्तरः

यह श्लोक समरसिंहजीके संबन्धमें एक हस्तलिखित पुस्तकमें था जो पं० मोहनलाल पण्डाजीने हाड़ाति और टोंकके एजन्टके अनुरोधसे सर जान मियरको झालावाडके भाटसे १५) रुपयेमें खरीदकरदी थी।

(इतिहास मेवाड १७/१८पृष्ठ)

ताका फल भली भांति मिल गया । जब मुसलमानों ने उसके कन्नौज राज्य पर अपना अधिकार किया तो वह दुष्ट नाव पर चढ़ा हुआ गंगाजीके मार्गसे भागा जाता था, कि वह नाव डूब गई और प्राणोंके साथ ही दुष्ट जयचंदकी आशा भी लोप हुई । फूटका यही फल है कि दोनों वरवाद हों—उस दिनसे हिन्दू विद्वेषी निष्ठुर मुसलमानों ने भारतका जो सत्यानाश आरंभ किया उसका शोचनीय वृत्तान्त भारत सन्तानके रुधिरसे लिखा रहकर आज तक दमकके साथ विराजमान हो रहा है ।

कैदमें जानेके पीछे महाराज पृथ्वीराजका क्या हुआ? इसके सम्बंधमें दो मत हैं । टाडसाहब लिखते हैं कि “शत्रु ने पकड़कर पृथ्वीराजको मार डाला, उनकी प्रिय-भार्या संयुक्ता उनके साथ सती होगई ।” राजा शिवप्रसाद बनारसी भी इसी बातको मानते हैं । दूसरा मत यह है कि केवल पृथ्वीराजको कैद ही कर लिया, मारा नहीं, गलेमें सौमनका तोक और बेड़ी हथकड़ी डालकर गजनीके जेलखानेमें रक्खा । वहींपर एक साथ शहाबुद्दीन, कविचंद और महाराज पृथ्वीराजकी मृत्यु हुई । इस प्रकारका लेख पाया जाता है । कि जिस समय युद्ध हो रहा था, उस समय चंद वरदाईका देवीके मंदिरमें जाना ऊपर लिख आये हैं । चंदने वहां बैठकर “रासा ग्रंथ सम्पूर्ण किया । फिर मंदिरसे बाहर आकर देखा तो समस्त दिल्लीको उजाड़ पाया तथा यह भी सुना कि यवनगण राजाको कैद करके गजनी ले गये, चंदने विचार किया कि राजाको किसी उपायसे अवश्य ही छुटाना चाहिये—वहांपर जाकर कविवर चंदने अतिचतुराईसे पृथ्वीराज महाराजसे मिलनेकी आज्ञा बादशाहसे लेली—जाकर देखा कि दुष्टोंने राजाकी आंखें फोड़कर अंधा कर दिया है । गलेमें सौ मनकी जंजीरें पड़ी हुई हैं । यह देखकर चंदको अत्यन्त दुःख हुआ अपने मिलनेके लिये कविवर चंदका आना सुनकर जो सुख महाराज पृथ्वीराजको हुआ वह लिखनेमें नहीं आता । जंजीरोंके बोझ और अन्धे होजानेसे महाराज अत्यन्त दीन हो रहथे । परन्तु चंदके निकट जाते ही वह अत्यन्त सावधान हुए व सर्वदुःख और विपत्तियोंको भूलकर अतिप्रेमके साथ मित्रसे मिले । फिर दोनोंमें अपने सुखदुःखकी वार्ता चली, शहाबुद्दीनके जासूसने यह समस्त समाचार बादशाहसे कहा । जब शहाबुद्दीनने सुना कि चंदके देखनेसे राजा जंजीरोंको कुछ न मान उठकर मिला तब हुक्म दिया कि और भी ज्यादा वजनकी बेड़ी राजाके डाली जाय । परन्तु चंदने जाकर बादशाहसे विनती करी कि “दृष्टिजानेसे राजा सब

प्रकार कर्तव्यहीन होगया, अब उसको अधिक पीडा देना आपसे वीरलोगोंको उचित नहीं है।” इस प्रकारकी उत्तम व मधुर वाणी सुनकर बादशाहने डेढसौ मनकी बेडी डालनेकी आज्ञा न दी। तत्पश्चात् चंदने बादशाहसे कहा “मैं इस कारणसे यहाँ आया हूँ कि राजाको इस दुःखके वक्तमें तसल्ली दूँ, लेकिन आँखोंके जानेसे राजा सम्पूर्णतः दीन हीन हो रहा है उसपर यह भारी वजनकी बेड़ियोंने उसको और भी दुख दे रक्खा है। राजाको कैदसे रिहाई देकर उससे बड़े २ चमत्कार सीखिये, वह अत्यन्त गुणवान है शब्दवेधी होनेसे उसका शरसन्धान अत्यन्त तीव्र है यद्यपि वह अंधा होगया है तथापि सौ सौ मन वजनके सात तवे तला ऊपर रखे हुए अवश्यही वेध कर देगा। यह अद्भुत कार्य देखनेके लायक है।” शहाबुद्दीनने जब इस कर्तव्यको देखनेका निश्चय किया तब चंदने कहा कि “इस समय पृथ्वीराज असमर्थ हो रहा है उनके हाथ पांवोंकी जंजीर निकालकर पुष्ट भोजन दिया कीजिये तब वह अवश्यही इस प्रकारके कौतुक दिखावेंगे।” यह सुनकर शहाबुद्दीनने ऐसाही करनेकी आज्ञा दी और इसप्रकार भोजन पानेसे महाराज शीघ्रही पूर्ववत् सामर्थ्यवान होगये। फिर चमत्कार देखनेकी तारीख मुकर्रर की। तारीख आनेपर महाराज पृथ्वीराजको तीर कमान देकर सब तैयारियां की गई। राजाने धनुष हाथमें लेकर जैसेही कमान चढ़ाई कि तत्काल टूट गई। दूसरा धनुष दिया गया, वह भी टूट गया, इस प्रकार सात आठ धनुषोंके टूट जानेपर शहाबुद्दीनने स्वयं महाराज पृथ्वीराजका धनुष मँगवा दिया। यह धनुष ताताख्वां यहांपर लाया था भंडारमें रक्खा हुआ था। यद्यपि यह वैधकार्य देखनेका उत्सव किया गया तथापि इस समय महाराजको वही पूर्वोक्त १०० मन की जंजीर हाथ पांवमें पहिरा दी थी। इस चमत्कारको देखनेके लिये दरबारमें अत्यन्त भीड़ हुई। स्वयं शहाबुद्दीन सजेहुए एक ऊँचे मंचपर सिंहासन बिछाकर बैठा, दूसरी ओर सात तवे रखे गये तवेपर कंकड़ी मारकर आवाज की जाय, तब शहाबुद्दीन, ‘शाबास’ कहकर महाराज पृथ्वीराजको उत्साह दे, और तत्काल महाराज पृथ्वीराज तीर छोड़कर उन तवोंको वेधें; कविचंदने इस प्रकारसे शहाबुद्दीनसे निश्चय कर रक्खा था। हाथ पांवमें जंजीरें डालकर महाराज पृथ्वीराजको चौकमें खड़ा किया था, उनकी दाँई ओर कविश्रेष्ठ चंद खड़े थे, आसपास शहाबुद्दीनके पहिरेदार हथियार लगाए हुए खड़े थे, निशाना लगानेसे पहिले कविचंदने महाराज पृथ्वीराजको अपनी भाषाकी कवितामें इस प्रकार सूचित किया।

दोहा—चार वंश चौवीसगज, अंगुल अष्ट प्रमाने ॥

एतेपर मुलतानहै, मत चूके चहुँआन ॥

औरभी:-

इही वाण:चहुँआन, राम रावण उत्थप्यो ।

इही वाण चहुँआन, कर्णशिर अर्जुन कट्यो ॥

इही वाण चहुँआन, शंभु त्रिपुरासुर सँध्यो ।

इही वाण चहुँआन, भ्रमर लछमन कर वेध्यो ॥

सो वाण आजं तां कर चढ्यां, चढे बिरद सांचो चवे ।

चहुँआन राज संभर धनी, मत चूके मोटे तवे ॥

प्रगटरूपसे चंदकी कवितासे कुछ दुराग्रह नहीं पाया जाता परंतु महाराज पृथ्वीराज इसके गूढार्थको समझे । निश्चय होनेके अनुसार तवेपर कंकड़ मार आवाज करनेपर बादशाहने अत्यन्त उत्कंठासे मंचसे बाहर शिर निकाल कर-तब देखनेके लिये चंदकी पूर्वसूचनाके अनुसार “ शाबास ” ! कहकर उत्साह दिया । इतनेमें महाराज पृथ्वीराजने मुंहफिराकर धनुषसे वाण चलाही तो दिया, वह वाण शहाबुद्दीनका मस्तक वेधकर पार निकल गया । बादशाह अचेत होकर मंचसे नीचे गिरा और तत्काल मर गया ।

बादशाहकी मृत्यु होतेही बड़ा अनर्थ हुआ सारे दरबारमें हाहाकार मच गया । शहाबुद्दीनके सिपाही पृथ्वीराजके ऊपर धाये । चन्द्र और पृथ्वीराजने पहिलेहीं यह विचार कर लिया था कि म्लेच्छके हाथसे मरनेपर सद्गति नहीं मिलेगी । इसकारण चंदने महाराज पृथ्वीराजका मस्तक खड्गसे उड़ाया और साथही महाराजके खड्गसे कविचंदका मस्तक पृथ्वीपर गिरा । इसप्रकार भारतके यह दोनों महावीर एकसाथ समाप्त होगये ।

इस प्रकारसे इस नाटकका पिछला अंक समाप्त हुआ । टाडसाहब और दूसरे इतिहासोंमें जो भेदहै वह ऊपर दिखलाया गया । इसभेदके दो कारण हैं । टाडसाहबका इतिहास ज्यादातर मुसलमानी तवारीखोंसे सहारा लेकर बना है । ऐसा मालूम होता है कि मुसलमानलोगोंने अपना अपमान समझकर इस उपरोक्त ऐतिहासिक वृत्तान्तको छिपाया है । टाडसाहबके ग्रन्थको ध्रुव सत्य माननेवाले लोगभी उपरोक्त वृत्तान्तको सम्पूर्णतः नहीं समझते हैं । ऐतिहासिकलोगोंके आगे इस समय यह प्रमाण आता है कि भट्टलोगोंके ग्रन्थोंमें यह वार्ता लिखी है तथा जयपुरमें इस वृत्तान्तके चित्रभी खेंचे जाते

हैं। जो चित्र आगेके पृष्ठमें दिया जाता है, यह एक फोटोग्राफसे उतारा गया है तथा यह फोटोग्राफ जिस तसवीरसे लिया गया है, उसको जयपुरके एक चित्र कारन एकसौ वर्ष पहिले खेंचा था। हमने दोनों मतकी बातें सामने उतार धरी हैं अब इसमें सत्यासत्यका निर्णय करना पाठक गणोंपर निर्भर है।

यवनगणोंने भारतके शोभायुक्त नगर ग्राम व मंदिर चूर्ण करदिये। भारतके असीम धन रत्नको लूट लिया;—भारतसन्तानके हृदयका रुधिर चूस लिया! मानो तमस्त भारत एक बड़ा भारी श्मशान बन गया!—मानों एक सर्वसंहार कारिणी विकट पिशाची भयंकर मूर्ति धारण करके भारतके घरघरमें घूमने लगी! जिन पवित्र वस्तुओंका भोगादि देवताओंको लगाया जाता था नीच पुरुष जिन्हें-छूनेभी नहीं पातेथे; पापी म्लेच्छोंने उन वस्तुओंको तोड़ ताड़कर पाषोंसे ठुकराया! जो सुन्दर वस्तुएं भारतके शिल्पमें कारीगरीका नमूना थीं कठोर हृदयवालोंने उन सबको ध्वंस करदिया! मानों भारतका प्रलयकाल आ पहुंचा! परन्तु इस भयंकर प्रलयकालके कठोर अत्याचारोंको सहकरभी आर्यवीर राजपूतोंका जातीय जीवन वीरभावसे स्थिर रहा, तथा यथाकालमें यवनलोगोंको इस अत्याचारका बदलाभी भली भांतिसे दिया गया। वह महान तेज किसी भांतिसे नष्ट नहीं हुआ।—यद्यपि यह आज अत्यन्त तेजहीन होगया है, परन्तु कौन कह सकता है कि वह कलको दूने तेजसे प्रकाशित न होगा! प्रणीच्य जगतकी वीरता और स्वाधीनताके विहारस्थान रूम और ग्रीस पतित हुऐथे परन्तु उनका जातीय जीवन नष्ट नहीं हुआ था। इसी कारणसे वह दोनों फिर उन्नतिको पहुँचे हैं! फिर क्या भारत—वीरता सत्यता, स्वाधीनताकी आदि जननी—भारतभूमि फिर न उठ सकेगी नहीं नहीं यह अलीकस्वप्न! और उन्माद प्रलाप है!!

जिनके हाथमें धनुष बाण हैं, गलेमें जंजीर पड़ी है; जो बीचमें खड़े हैं, यह महाराज पृथ्वीराज चौहान हैं। शहाबुद्दीन गोरीने इनको अन्धा करदिया है। महाराज पृथ्वीराजके सामने भाला हाथमें लिये कविवर चंद विराजमान है! पृथ्वीराजके सामने बाँई ओर लोहेके सात तवे टँगे हैं। उनको बाण मारकर बंधनका निश्चय किया गया था। पृथ्वीराजके सामनेही ऊँचे स्थानपर शहाबुद्दीन गोरी दरवारियों सहित बैठा है, महाराज पृथ्वीराजका बाण बादशाहके मस्तकमें लगा जिसके लगनेसे वह तसवीरमें नीचे तरबतसे गिर रहा है। फिर नीचेकी ओरसे परस्पर एक दूसरेकी गर्दनमें खड़्ग मार रहे हैं वे पृथ्वीराज

चहुआन और चंद भट्टहै राजपूतलोग स्वभावसेही तेजस्वी होतेहैं । उनका हृदय धीरता, गंभीरता, इत्यादि गुणोंसे शोभायमान होताहै । इन्हीं कारणोंसे वे कठोर अत्याचार सहन करके भी शत्रुसे वदला लेनेके लिये अवसर देखते रहते हैं कभी तो राजपूत वीरोंने प्रचंड उद्यम व कठोर वीरता से शत्रुकुलका संहार किया है, कभी निरुपाय और आश्रय हीन होकर वीर-भावसे कठोर अत्याचारको अपने ऊपर सहन किया है । इनके विक्रमसे मुसलमानोंकी शतशः राजधानियों धूरिमें मिलगई हैं । कितनेही मुसलमानोंका वंश एकसाथ लोप होगया है । परंतु इन सब बातोंका कोई भी फल नहीं हुआ । उन उजड़े हुए स्थानोंमें नये राज्य बस गये । यह समस्त वंश अत्यन्तही अत्याचारी हुऐ, सबने हिन्दुओंसे वैरभाव किया जिस पाशवी स्वभावसे उनके पूर्वस्वजातीय चलायमान होते थे । उसही स्वभावसे उनका हृदय कठोर होने लगा । उस पाशवी प्रवृत्तिके कुटिल नेत्रोंके आगे पाप पुण्य धर्माधर्म और न्यायान्यायका विचार कुछभी नहीं है ! उन्होंने अपनी स्वभावकी दुर्नीतिसे नरहत्याको पवित्र मानाहै—परसम्पत्ति हरण और परदारा हरण उनकी समझमें न्यायका कार्य है । इस भयंकर दुर्नीतिके पीछे चलकर यवनलोगोंने भारतकी पवित्र छातीपर जोजो भयंकर उत्पात कियेथे, उन उत्पातोंके सर्व संहारक प्रभावसे कितनेही हिन्दूराज्य और राजवंश समयके अनन्त सागरमें न जाने किधरको डूबगये हैं ! आज तो उनका नामही नाम सुनाजाता है ।

पृथ्वीपर ऐसी कौनसी जातिहै, जो वीरता धीरता महानता सहन शीलतामें राजपूतकुलकी समान होसकती है ? और कौनसी जातिहै जिसने सैकड़ों वर्ष-तक दासभावसे रहकर तथा अनेक अत्याचारोंको सहनकरके अपने पितृपुरुषोंकी तेजस्विता सभ्यता अथवा आचार व्यवहारकी वरावर रक्षा कीहै, यद्यपि राजपूतवीरोंका स्वभाव प्रचंड और निडरहै तथापि वे प्रयोजनानुसार सहन-शीलताको ग्रहण करके अत्याचारको सहते हुऐ वैरलेनेके कारण अवसरही तलाश किया करते हैं । जिन लोगोंके धर्मग्रंथ नरहत्या और संसारको संहारकरनेका विधान बताते हैं इस प्रकारके पाषाण हृदयवाले असभ्य शत्रुओंके द्वारा जिस प्रकारके कठोर अत्याचार होसकते हैं और रक्तमांससे बनेहुऐ मनुष्यका हृदय जहांतक उन अत्याचारोंको सहनकर सकता है, संसारके इतिहासको खोलकर देखो, तत्काल दिखाई देगा कि इस विशाल संसारमें केवल

एक राजस्थानही उसका नमूना है ! निर्दयी निठुर, यवन लोगोंके पैशा-
चिक अत्याचारसे राजस्थानके कितने ही जनपद कितनेही नगर और
कितनेही गांव सम्पूर्णतः श्मशान बनगये हैं । बहुतसे राजपूतकुलोंका
नामनिशानतक मिटगया है । परन्तु केवल राजपूतोंके जातीय जीवनकी रक्षा
होनेसे अमितप्रभाव सैकड़ों उपद्रवोंको सहन करकेभी स्थितिस्थापक पदार्थ
की समान फिरभी तत्काल चैतन्य होगया है ! समस्त विघ्न विपत्ति और
अत्याचारोंने ज्ञानशिलाकी नाई उनके साहसरूपी अस्त्रको सहस्रगुण तीक्ष्ण-
कर दिया है । रोमनलोगोंके एकही आघातसे प्राचीन ब्रिटनगण घोर
अवनतिको पहुंच गये थे ! उस दारुण अवनतिसे निकलकर उन्नति प्राप्त करनेमें
और रोमनलोगोंके कराल कौरसे अपने प्राचीनधर्म और रीतिनीतिका उद्धार
करनेके लिये उन्होंने कितने परिश्रम कियेथे ? परन्तु सबहीं निरर्थक—कोईचेष्टा फल-
वती नहीं हुई । रोमन लोगोंकी अधीनतारूपी जंजीरसे वे छूटनाही चाहतेथे कि
इतनेहीमें शाकसेन लोगोंने उन्हें अपने दासपनकी वेडियाँ पहिरादीं ! परन्तु इससे
भी छुटकारा नहीं मिला फिर दीनामार लोगोंने आकर इनके बंधे बंधाये हुए शरीर-
को और भी जकडकर बांधा ! इसके उपरान्त इन जेत और विक्रीत दिलोंके संयोगसे
जां कईएक संकरजातियें उत्पन्न हुई, उन सबको दुर्द्धर्ष नार्मन लोगोंने उजाड दिया,
केवल एकही युद्धमें उनके भाग्यकी मीमांसा होगई । वे जन्मभूमिसे निकाले गये,
अथवा नया राज्य जीतकर उसमें जा बसे, उनकी रीति नीति उनका धर्म जीतने-
वालोंके धर्ममें लोप होगया । परन्तु आर्यवीर राजपूतलोगोंके साथ उनका मिलान
करके देखिये कि वे किसी भांतिसे इनकी समानता नहीं पासकते । अपने कितनेही
राज्योंसे राजपूतलोग अलग होगये, तथापि कभी तिलभरभी उन्होंने अपने बड़े
बूढ़ोंके सनातन धर्म और आचार विचारको नहीं छोडा । इनके कितनेही राज्य
एकसाथ राजपूतानेकी अधिकार सीमाके नकशेमेंसे सदाके लिये निकल गयेहैं !

जानिंदैर स्वदेश द्रोहिताका विषमय फलस्वरूप गर्वित राठौरोंका अहंकार-
युक्त कन्नौजका, तथा गौरवान्वित चालुक्य राज्यके अनहल बाडेका आज
केवल नामही नाम शेष रह गयाहै, अकेले मेवाडहीने पवित्र धर्मके अटलदुर्गमें
सैकड़ों उपद्रवोंको सहन करकेभी रक्षाके बदले कभी अपने प्राचीन गौरवको
नहीं खोयाहै उसही महान पुण्यके बलसे आजतक मेवाड दृढतासे विराजमान
है, जिस दिनसे आर्यवीर समरकेशरी महाराज समरसिंहने स्वदेशानुरागके स्वर्गीय
मंत्रको सिद्ध करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राण दिये, उस दिनसे मेवाडभू-

मिके उस गौरव धर्म और उस स्वाधीनताकी रक्षाके लिये उनके वंशधरगण आनन्दसे अपने हृदयकी रुधिरधाराको निकालते चले आये हैं ।

महाराज समरसिंहकी मृत्युके पीछे उनकी विधवारानी कर्मदेवीने थोड़े दिन-तक राजकार्य किया, जबतक राजकुमार कर्ण * समर्थ नहीं हुए तबतक राजका भार रानीकेही हाथमें रहा, रानी कर्मदेवीका जन्म पत्तनके राजकुलमें हुआ था, अपने पिताके महान वीरकुलसेभी महान कुलमें वे सम्पर्ण की गई थीं, वीरनारी वीरदुहिता वीरवधू वीरवती कर्मदेवीने अपने पिता और पतिके गौरवकी रक्षा करनेमें किंचित्भी आलस्य नहीं किया, पुत्रकी वाल्यावस्थामें जब राज्यका भार महारानीके हाथमें था उस समयमें जो अद्भुत वीरता उन्होंने दिखलाई थी, इसी कारण से उनका नाम वीरनारी राजपूतवालाओंका शिरमौर बना हुआ है, महारानीके उस अपूर्वविक्रमके प्रभासे वीरवर कुतुबुद्दीन घायल हो हारमान अत्यन्त कठिनतासे अपने प्राण लेकर भागाथा, मेवाडपर चढ़ाई करनेके अभिप्रायसे यवन प्रतिनिधि सेना सहित चला आताहै, यह समाचार शीघ्रही महारानी कर्मदेवीने सुना, घृणा रोष और वैरस्मरण करके उनके रोमरोमसे अग्निकी चिनगारियाँ निकलने लगीं, महारानीने भलीभाँतिसे उनके दुराचारका फल देनेके लिये अपने सिपाही और सामन्तोंको बुलाय संग्राम करनेकी आज्ञा दी, और स्वयंभी संग्राम करनेको तयार हुई महारानीने आपने सुकुमारशरीरपर लोहेका बख्तर पहरा, जिन हाथोंमें मणि मुक्तासे जड़े कंकन शोभायमान होतेये आज उनमें लोहेके हथियार लियेगये, वाल खोले भयंकररूप धारणकिये घण्टेपर चढ़कर महारानी कर्मदेवी रणचंडीके वेपसे यवनदलका संहार करनेको संग्रामभूमिमें आई, नौ क्षत्रियराजा और रावत, उपाधिधारी ग्यारह सामन्त उनकी सहायता करनेकेलिये साथ आये, महारानी कर्मदेवीने अम्बरके निकट कुतुबुद्दीनकी सेनाको देखा, वैसेही वह अपनी सेनाको सजाय युद्ध करनेकेलिये खड़ी होगई, क्रमानुसार दोनों दलोंमें घोर संग्राम होनेलगा, महारानाकी सेनासे संग्राम करके कुतुबुद्दीन घायलहुआ, उसकी सेना तित्तर बित्तर होकर चारों ओरको भागगई, बड़ी कठिनाईसे नवाबका प्राण बचा । कुमार कर्ण समर्थ हुए, सन्वत् १२४९ (सन् ११९३ ई०) में वहाँ पिताके सिंहासनपर बैठे, परन्तु विधाताकी कठोर लिपिसे उनके वंशवाले मेवाडमें

* समरसिंहके कई पुत्र उत्पन्न हुएये, बड़ा पुत्र कल्याण तो पिताके साथही संग्राममें मारागया, दूसरा कुंमकर्ण पिताके राज्यको छोड़ दक्षिणपर्वतमें विदौरके निकट जा बसा, तीसरेने भास्तके, उत्तरमें जाकर गोरक्षकुलकी प्रतिष्ठा की सबसे छोटा पुत्र कर्ण घर रहा ।

प्रतिष्ठा नहीं पासके * वहुधा समस्त भट्टग्रंथोंमेंही देखा जाताहै कि कुमार कर्ण-सिंहके माहुप और राहुप दो पुत्र उत्पन्न हुएथे, परन्तु विशेष विचार करनेसे यह बात ठीक प्रमाणित नहीं जानपडती, महाराज समरसिंहके सूर्यमल्लनामक एक भ्राताथे, इनके भरतनाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, समरसिंहके पुत्र कर्णसिंहका विवाह चौहानवंशकी एक राजकुमारीके साथ हुआथा, इस राजकुमारीके गर्भसे माहुपका जन्म हुआ, जब कर्णसिंह मेवाडके राजसिंहासनपर बैठे तब सरदार लोगोंने कपटजाल फैलाकर भरतको मेवाडसे निकालदिया, भरत सिन्धुदेशकी ओर चलागया, सिन्धुदेशके अरोर नगरमें उस समय एक मुसलमानका राज्यथा, भरतको उस मुसलमानने अरोर नगर देदिया, पुगल भट्टराजकी बेटीसे भरतका विवाह हुआथा, इस शुभ विवाहका फल राहुप हुआ । महाराज कर्णसिंह भरत को पुत्रनेभी अधिक प्यार करतेथे, जिसदिन भरत कर्णसिंहको राजके समय छोड गया उस दिनसे कर्णसिंहका हृदय अत्यन्त दुःखित रहनेलगा, फिर इसके ऊपर एक मानसिक पीडा औरभी आपड़ी, कर्णसिंहका पुत्र माहुप अत्यन्त निकम्मा था, दिनरात मामाके यहां पडा रहताथा, एकतो भरतके वियोग और शोकसे उनका हृदय अत्यन्त पीडित रहताथा, तिसपर पुत्रकी यह दशा ? सम्राट महाराज कर्णका हृदय दिन २ दुर्बल होनेलगा, अन्तमें इस लोकसे विदा होकर सब दुःखोंसे छूटगये ।

महाराज कर्णसिंहने अपनी इकलौती बेटीका विवाह कालौरके सौनगढे रणवाल सरदारके साथ कियाथा, इस राजकुमारीके गर्भसे रणधवल नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, सौनगढेके सरदारकी अभिलापाथी कि अपने पुत्र रणधवलको चित्तौरके सिंहासनपर स्थापन करूं; प्रतिदिन इस अभिलाषाको पूर्ण करनेकेलिये शुभ अवसरकी वाट जोह रहाथा, कि इतनेहीमें वह अवसर आप-हुंचा, महाराज कर्ण परलोक सिधारे, उनका सिंहासन खूना हुआ, यह समस्त समाचार विदित होनेपरभी माहुप सिंहासनपर अधिकार करनेकेलिये न आया, इसी अवसरमें क्रूरकर्म कर्ण कालौरसरदारने चित्तौरके प्रधान प्रधान सरदारोंको मारकर अपने पुत्रको उस सिंहासनपर स्थापित किया, गिलहौरकुलकेशरी वीरवर वप्पाका सिंहासन क्या साधारण सदाके अधिकारमें रहैगा. यदि यही होगा तो मेवाडसे एकसाथही गिलहौरका नाम लोप होजायगा यह गंभीरचिन्ता

* महाराज कर्णके श्रीवाननाम एक पुत्रने वणिकवृत्ति अवलम्बन कीथी इसके वंशवाले श्रीवानियां नामसे प्रसिद्धहैं ।

राजपरिवारके एक प्राचीन भट्टके मनमें उदय हुई, उसने इस होनहार अनर्थको रोकनेके लिये वृद्ध भरतके निकट गमन किया, और उनको सब समाचार सुनाकर कहा कि आप शीघ्रही मेवाडके राज्यमें चलिये, भरतने शीघ्रही सिन्धुदेशीय सेनाके साथ अपने पुत्रको चित्तौरकी ओर भेजा, इस ओर शोनगडेके सरदार इस बातको जानकर राहुपके अभिप्रायको व्यर्थ करनेके लिये सेनासहित आगे बढ़ा, मार्गमें पल्लीनामक स्थानमें दोनों दलोंके मध्य मुठभेरे हुई युद्ध होनेलगा, विजयलक्ष्मी राहुपकी अंकशायिनी हुई, इस शुभसमाचारके पातेही चित्तौरके सरदार और सामन्तगण बडे आनन्दके साथ विजयी राहुपकी जयपताकाके निकट एकत्रित हुए, और उनको उद्धार करनेवाला जानकर चित्तौरके सिंहासनपर अभिषिक्त किया, राज्य पदपर प्रतिष्ठित होतेही राहुपने अपने पिता माताको लानेकेलिये सिन्धुदेशमें दूत भेजा अनन्तर सम्वत् १२५७ (सन् १२०१ ई०) में महाराज राहुप चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान हुए, राज्याधिकार प्राप्त होनेके कुछ दिन पीछे उन्होंने यवन सेनापति शमशुद्दीनके साथ घोर संग्राम किया, यह संग्राम नगरकोटके मैदानमें हुआथा, संग्राममें राहुपकी जीत हुई, राहुपके राज्यकालमें मेवाडमें दो महान फेरफार हुए, अबतक तो मेवाडका राजकुल केवल गिल्हौट नामसे पुकारा जाता था परन्तु महाराज राहुपके समयमें गिल्हौटके बदले शिशोदीय नाम * प्रसिद्ध हुआ, दूसरी बात यह कि इस समयतक गिल्हौटके राजाओंकी रावल उपाधि होतीथी, परन्तु अब यह राणा, नामसे पुकारे जानेलगे, इन नये नामोंके प्राप्तहोनेका वृत्तान्त नीचे लिखा जाताहै ।

मुन्दराधिपति परिहार राजमुकुल राणा राहुप महाराजका एक प्रचण्ड शत्रुथा- उसके घोर वैराचारसे अत्यन्त पीडित हो महाराज राहुपने सेनासहित उसके राज्यपर चढ़ाई की, और भलीभांतिसे पराजित कर उसकी राजधानीमें उसे कैद करलिया, राणा मुकुलने अपने छुटकारेके बदले अपनी राज्यउपाधि और गदवाड नामक समस्तदेश विजयी राहुपको दे दिया, अनन्तर महाराज

* शिशोदा नामके एक नगरसे शिशोदीय नामकी उत्पत्ति हुई है । यह शिशोदानगर मेवाडके पश्चिमकी ओर पर्वतमालामें बसा हुआहै, कहतेहैं कि मेवाडके किसी निकाले हुए राजाने बहुत देरतक पीछा करके यहांपर एक शशक (खरगोश) वध कियाथा उसीके स्मारकरूप इस स्थानमें शशदा (शिशोदा) नाम एक नगर बसाया ।

राहुपने अपने नगरमें लौटकर विजयके चिह्नरूप राणा उपाधिको धारण किया। तबसे गिल्हौट कुलके राजा राणा कहेजाने लगे, महाराज राहुप अठतीस वर्षतक राज्य करके परलोक सिधारे, मेवाडराज्यके नष्टहुए गौरवका उद्धार करके घोर संकटके समय उन्होंने इसप्रकार चतुराईसे राज्यकाजका संचालन किया कि जिससे उनके राज्योचित गुण भलीभांतिसे विदित होतेहैं।

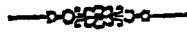
महागणा राहुपसे नौ पीढी पीछे राणा लक्ष्मणसिंह हुए,* यह नौ पीढी आधी शताब्दीके मध्यमें व्यतीत होगई, इनमेंसे छः महापुरुषोंने तो संग्रामभूमिमें अपने प्राण गमाये, यवन लोगोंके अपवित्र आससे पवित्र गया तीर्थको उद्धार करनेके लिये उसही पवित्र तीर्थमें उन राजोंने अपने शरीरको बलिहार करदियाथा, इन छः राजपूत वीरोंमें जिस महापुरुषने अपने हृदयका रुधिर बहाकर सनातन धर्मकी रक्षा कीथी उसका नाम पृथिवीमल्ल था, स्वधर्मप्रेमी और स्वधर्मानुरागी इन कई एक राजपूत वीरोंके प्रबल धर्मानुराग और प्राण निछावरका महान उदाहरण देखकर यवनगण भीत और स्तंभित हुएथे, इसी कारणसे उन्होंने महाराज पृथिवीमल्लकी देह छूटजानेके पीछे बहुत दिनोंतक सनातन धर्मपर हाथ नहीं डाला। यही कारणहै जो अलाउद्दीनके समयतक सनातन धर्मावलम्बियोंने बहुत दिनतक निर्विघ्नतासे अपने धर्मका अनुष्ठान किया, परन्तु इस शान्तिमय समयके बीचमेंभी एकवार चित्तौरनगर शिशोदीय कुलके हाथसे निकल गयाथा, भट्टग्रंथोंमें देखा जाताहै कि राहुप और राणा लक्ष्मणसिंहके मध्यवर्ती समयमें सिंह × नामक एक शिशोदीय राजाने अपने पितृपुरुषोंकी निवासभूमि चित्तौरनगरीका पुनः उद्धारकरके प्रजाको अपनी राणाउपाधि स्वीकार करानेके लिये विवश कियाथा, इससे स्पष्ट विदित होताहै कि उपरोक्त राजाके समयसे पहले चित्तौर किसी दूसरी जातिके अधिकारमें था, महाराज राहुप और लक्ष्मणसिंहके मध्यवर्ती कालमें जो नौ राजा हुएथे उनके मध्यमें केवल दो बातें प्रसिद्धिके योग्य हुईथीं, इनके अतिरिक्त और जो वृत्तान्त पाया जाताहै उसके पढनेसे प्रमाणित होताहै कि उनका राज्य अनेक प्रकारके उपद्रव और झगडे झंझटसे व्याकुल था, किसी विशेष विवरणके न मिलनेसे इस समय हम मेवाड इति-

* मेवाडके रहनेवाले चलितभाषामें इनको राणा लक्खमसी कहतेहैं।

× भनसिंहके दूसरे पुत्र चन्द्रको चम्बल नदीके किनारे एक भूमिवृत्ति मिलीथी, इसके वंशवाले चन्द्रावत नामसे प्रसिद्ध हैं यह वंश मेवाडके पराक्रमी सामन्तोंमें गिना जाताहै इनकी उस भूमि वृत्तिका नाम रामपुर (भनपुर) है इसकी वार्षिक आय नौ लाख रुपया है।

हासके दूसरे प्रसिद्ध वंशकी समालोचना करते हैं यद्यपि यहांका वृत्तान्त सम्पूर्णतः ऐतिहासिक है, परन्तु आदिसे अन्ततक इस प्रकारकी औपन्यासिक सुन्दरतासे शोभायमान है कि जिसके देखनेसे यही प्रतीत होता है कि मानो हम एक उपन्यास पढ़ रहे हैं ।

पंचम अध्याय ५.



राणा लक्ष्मणसिंहः—चित्तौरपर अलाउद्दीनकी चढ़ाई; अलाउद्दीन की दगावाजी । भीमसिंहको उद्धार करनेके लिये चित्तौरके सर्दाराका खझ-पकड़ना; राणाजी तथा उनके पुत्रोंका अपूर्व आत्मोत्सर्ग; तातारवालोंका चित्तौरको उजाड़ना; राणा अजयसिंह;—हमीर;—हमीरको चित्तौरकी प्राप्ति;—मेवाड़की प्रसिद्धि;—श्री वृद्धिका वर्णन;—क्षेत्रसिंह;—लाक्ष्म ।

राणा लक्ष्मणसिंह सम्वत् १३३१ (सन् १२७५ ई०) में चित्तौरके सिंहासनपर बैठे । यहांपर यह कहना उचित होगा कि इनके समयमें चित्तौरके लिये एक नये युगका अवतार हुआ । कारण कि जो चित्तौर पहले वीर-विक्रम और स्वार्थीनताका दुग्म दुर्गथा, भारतकी अन्यान्य नगरियों यद्यपि यंत्रोंके कठोर अत्याचारसे ऊजड़ होगई थीं, तथापि इतने दिनतक जो चित्तौर सही सलामत था, वेरहम, दुराचारी कठार अलाउद्दीनके गुस्सेकी आगमें आज वही चित्तौर सम्पूर्णतः भस्म होगया । इस हिन्दूवैरी बादशाहने दोवार चित्तौर पर अपनी चढ़ाईका वार कियाथा । यद्यपि इसही पहली चढ़ाईमें मेवाड़के प्रधान २ वीरोंने चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये अपने २ प्राण देदियेथे; तो भी अलाउद्दीन चित्तौरको हाथ नहीं लगासकाथा; अतएव उसके सर्वसंहारक ग्राससे यह नगर निकल आया । उसके पश्चात् दूसरी चढ़ाई हुई—मुसलमानोंकी इस दूसरी चढ़ाईसे चित्तौरनगर ध्वंस और ऊजड़ होगया । चित्तौरकी सारी सुन्दरता नष्ट होगई ।

राणा लक्ष्मणसिंह छोटी उमरमेंही युवराज हुएथे । जबतक यह समर्थ न हुए तबतक इनके चचा भीमसिंहही राजकार्य करतेथे । राणा भीमसिंहने लोक-ललामभूता विख्यात रानी पद्मिनीसे विवाह कियाथा । महाराणी पद्मिनी चौहानकुलमें उत्पन्न हुईथीं । उनके पिताका नाम हमीरशंख था । हमीरशंख सिंह-

लमें रहतेथे । रानी पद्मिनीकी जगद्विख्यात सुन्दरताही शिशोदीय-
लोगोंके लिये महा अमंगलदायक हुई । उनकी लावण्यता व सुन्दरताका
यहाँतक बखान था कि सारे भारतवर्षमें एक रानी पद्मिनीही सर्वाङ्ग-
सुन्दर सनझी जाती थी । इस पवित्र नामका गौरव राजपूतोंके वंशमें बराबर
बढ़तागया । आजतक बहुतसे राजपूत अपनी कन्या और बहनोंका नाम पद्मिनी
रक्खा करतेहैं । देवांगनाकी समान रानी पद्मिनीकी सुन्दरता, गुण गौरव, महिमा
और मृत्युका वृत्तान्त व महारानीकी सम्पूर्ण बातें राजवाडोंमें भलीभाँतिसे प्रसिद्धहैं।
भट्टलोगोंने अपने ग्रन्थोंमें वर्णन कियाहै कि पद्मिनीको प्राप्तकरनेके लियेही
अलाउद्दीन चित्तौरपर चढ़ाथा; नहीं तो वह डाह या यशकी प्राप्तिके लिये नहीं
आयाथा । कहतेहैं कि उसने चित्तौरको घेरकर सर्वत्र यह ढँडोरा फेरदियाथा कि
पद्मिनीका पातेही मैं अपने देशको लौटजाऊंगा । परन्तु और २ ग्रन्थोंको देख
कर विचार करनेसे जानाजाताहै कि बहुत कालतक चित्तौरके घेरे रहनेसे जब
कोई फल न हुआ, तब अलाउद्दीनने यह ढँडोरा फेरया । बादशाहकी ओरका
यह समाचार पातेही राजपूत क्रोधमें भरकर उन्मत्त हांगयेथे । क्या जीवनकी
जीवनरूप गृहलक्ष्मी यवनकी अंकशायिनी होगी ? क्या देवकन्याको पापिष्ठ
दनुज भाग करेंगे इस घृणित अपमानकारी प्रस्तावका कौन हृदयवान अनुमोदन
करसकनाहै ? क्या राजपूतगण वीर नहींहैं ? क्या उनकी देह निर्जीव मांसपिण्ड
है ? क्या उनकी नाड़ियोंमें पवित्र आर्य शोणित प्रवाहित नहीं होताहै ? फिर
क्या वह इस घृणित प्रस्तावको मानलेंगे ?—कभी नहीं । दुराचारी अलाउद्दीनकी
यह दुर्गमिलापा सफल नहीं हुई, तथापि वह रानी पद्मिनीका ध्यान अपने हृदयसे
दूर नहीं करसका । फिर उसने यह प्रस्ताव किया कि रानी पद्मिनीकी मोहिनी
परछाईको दर्पणमें निरखतेहीमें चित्तौरसे कूच करजाऊंगा । महाराणा भीम-
सिंहने इस बातको मानलिया ।

अलाउद्दीन इसबातको भलीभाँतिसे विश्वास करताथा कि राजपूतलोग
मिथ्यावादी या विश्वासघातक नहीं होते । इस विश्वासके बलसे वह कईएक
शरीररक्षकही अपन साथ लेकर चित्तौरनगरमें गया और स्वच्छ दर्पणमें रानी
पद्मिनीकी मोहिनी परछाई निरखतेही अपने डेरको लौटा । जिस दुराचारी शत्रुसे
चित्तौरका अत्यन्त हानि पहुँची, जिसने पवित्र राजपूतकुलमें घोरकलंक लगा-
नाचाहाथा आज वही अतिथि बनायागया । अतिथि हानेके कारणसेही आज वह
निडर होकर चित्तौरमें आया । वीरहृदय तेजस्वी राजपूत महाराजने उसके समस्त

अपराधोंको क्षमा करके इष्टमित्रकी समान आदरसत्कार किया । जबतक शत्रुभी अतिथि सत्कारकी रक्षा करेगा, तबतक वहभी मित्रसे अधिक प्यारा है । इसी-कारणसे महाराणा भीमसिंहने अलाउद्दीनकी विशेष पहुनई की, और उसको पहुंचानेके लिये सिंहपौरीतक चलेगये । उससमय अलाउद्दीनभी महाराणा भीमसिंहसे अपना अपराध क्षमा कराने लगा । इस प्रकारसे अनेक वार्तालाप करते २ महाराणा, बादशाहके साथ जा रहे हैं कि इतनेहीमें एक गुप्त स्थानसे कितनेएक अखधारी यवन सिपाहियोंने आकर असावधान राजपूतलोगोंको एकसाथही बन्दी कर डाला, और शीघ्रतासे उन सबको अपने डेरोंमें लेगये । हा ! दुराचारी विश्वासघाती यवनोंने क्या राजपूतोंके पवित्र और गाढ़ विश्वासका यही बदला दिया ! महाराज भीमसिंह जो कि सीधेसाधे आदमीथे, कपटीबादशाहके धोखेमें आगये । फिर उस दुराचारीने यह प्रचार कर दिया कि:—“पद्मिनीको पातेही भीमसिंहको छोड़ दिया जायगा—नहीं तो नहीं !”

महाराजके बन्दीहोनेका यह शोचनीय समाचार शीघ्रही चित्तौरनगरमें फैल गया । चित्तौरनिवासी इस विषम समाचारको पाकर निराशासे विमूढ़ और भग्न-हृदय होगये । महाराज भीमसिंहकी सुक्तिके लिये क्या वह महाराणी पद्मिनीका त्याग करेंगे ? या अनन्त साहससे सहारा पाकर खड्गकी सहायतासे राजप्रतिनिधिका उद्धार करेंगे ? यदि उनका समस्त कराकराया विफल होजाय ? यदि वह प्राणोंका दाव लगाकरभी भीमसिंहका उद्धार न करसके ? तो फिर क्या होगा ? फिर क्या पद्मिनीकोही त्याग करना ठीक है ? राणाके सरदारगण इस प्रकारके अनेक विचार करनेलगे । परन्तु कोई बात पक्की न हुई । इस ओर महाराणी पद्मिनीनेभी यह समाचार सुना । महाराणीजीका स्वयं इसविषयमें क्या विचार है, इसबातको जानलेनेके लिये सबलोगोंको उत्कंठा हुई । शीघ्रही सबने सुना कि महाराणाका उद्धार करनेके लिये महाराणीजी बादशाहके पास चलीजायंगी । इस समाचारके सुनतेही समस्त नगरवासी अत्यन्त विस्मित हुए । क्या पतिव्रता महाराणीजीने इस घृणित व्यवहारको स्वीकार कर लिया है ? क्या वे सब यथार्थ ही पापी यवनके हाथमें स्वर्गीय सतीत्व धनको समर्पण कर देंगी ? सिद्धान्त यह है कि उससमय महाराणीजीने अपने गूढअभिप्रायको सर्वसाधारणपर प्रकाशित नहीं किया । उनके पितृराज्यके दो कुटुम्बी चित्तौरमें रहतेथे । उनमेंसे एक महाराणीजीके चचाथे जिनका नाम गोराथा; और दूसरे उनके बादल नामक भ्राताथे । यह दोनों महाशय वीर होनेके साथ २ ही मंत्रणा कुशलभीथे । महा

राणीजीने इनको बुलाया और गुप्तपरामर्श करने लगी । इस गुप्तपरामर्शका यही प्रधान उद्देश्य था कि महाराणीजी किस प्रकारसे अपने पातिव्रतधर्मको बचाकर महाराणाका उद्धारकरें । मुखकी बात है कि उद्देश्य सिद्ध हुआ । उन दोनों चतुर राजपूत वीरोंने जो विचार किया, उससे सती साध्वी पद्मिनीजीके पातिव्रतधर्ममें तिलमात्रकाभी अन्तर न हुआ, और महाराज भीमसिंह अलाउद्दीनके फंदेसे निकल आये ।

इसके उपरान्त शीघ्रही अलाउद्दीनके पास दूत भेजा गया । उस दूतने बादशाहके पास जाय शिरझुकाकर निवेदन किया कि "महाराज ! चित्तौरको आक्रमण करनेसे छोड़कर जिससमय आप अपनी फौजको उठा लेंगे महाराणी पद्मिनी उसही दिन हजूरके पास आजावेंगी ।" दूतने यह भी कहा "हजूर ! आप खुद बादशाहके, और महाराणीजीभी राजपूतोंके आली खान्दानसे हैं, इस लिये दोनों तरफकी महमानदारी और खातिरदारीमें किसीतरहका दरेग न हो । वह अपने कुलशामनके साथ हजूरकी कदम बोसीहासिल करेंगी । राजपूतोंकी जो औरतें उनकी सहेली हैं, जो बिना उनके देखे लहमाभरभी नहीं जीसकती हैं, वह सब उनको उम्रभरके लिये रुखसत करनेको इस डेरेतक उनके साथ आवेंगी । इनके सिवाय जो राजपूतोंकी मस्तूरात उनके साथ देहलीमें जायंगी, वह भी सब हमराह होंगी । वह सब खान्दानी औरतें हैं, उन्होंने कभी घरके बाहरतक कदम नहीं रक्खा; आज हजूरके हुक्मकी तामील करनेके लिये वह भी अपने पुश्तेनी रेवाजको छोड़कर यहाँपर आवेंगी ।

हजूर ! अब सिर्फ इतनीही गुजारीश है कि वे जिसतरहसे जहांपनाहके खुश करनेको अपने खानदानका तौरतरीका छोड़कर यहाँपर आती हैं वैसेही हजूरकोभी उनकी इज्जतआवरूहका खयाल रखना चाहिये । कहीं ऐसा न हो कि कोई विलावजहकी दिलगी करनेको उनकी पालकीके पास जापहुँचै । अगर ऐसा हुआ तो उनके कायदेमें खलल आजायगा ।" अलाउद्दीन इस बातपर राजी-होगया । मोहमयी आशाके छलावेके फेरमें पडकर उसने एकबारभी न सोचा कि पतिव्रता हिन्दूललनागण अपने हाथसे अपने हृदयकोभी छेदसकती हैं, हँसती २ अग्निकी शिखामें अपने प्राणोंका होम करसकती हैं, तथापि प्राणोंसे तथा पुत्रसेभी अधिक प्यारे सतीत्व धनको नहीं छोडसकती ।

इस साक्षात्के लिये जो दिवस निश्चय किया गया था वह आनपहुँचा । बातकीबातमें ७०० पालकी चित्तौरके द्वारसे बाहर निकलकर बादशाहके डेरोंकी

ओरको आनेलगीं । प्रत्येक पालकीमें कपटवेप धारणकिये और गुप्त हाथियार लगायेहुए छः छः सैनिक कहार लगे हुएथे । यह सब सिपाहीथे । प्रत्येक डोलेके भीतर चित्तौरका एक एक साहसी वीर गूढभावसे विराजमानथा । धीरे २ वह ७०० डोले बादशाही डेरोंके सामने आपहुँचे । उनसब डेरोंके चारों ओर कनातें लगी हुईथीं । प्रत्येक डोला तम्बूके भीतर पहुँचगया । महाराणी पद्मिनी को देखनेके लिये महाराज भीमसिंहको केवल आधे घंटेका समय दियागयाथा । तदनुसार महाराज जैसेही उन डोलोंके निकट आये, वैसेही चित्तौरके फौजी सिपाहियोंने उनको एक पालकीमें गुप्तभावसे सावधान करके विराजमान कराया, और तत्कालही उस पालकीको लेकर डेरोंसे बाहर होगये । साथमें कुछ और पालकियोंभी चलीं । जो सैनिक वहां रहे वे सब अलाउद्दीनके आगमनकी बात देखते हुए धीर और गंभीर भावसे पालकीके भीतरही अपनी मूर्तिको धारण किये बैठे रहे । आधा घंटा बीतगया; तथापि भीमसिंहको लौटता हुआ न देखकर अलाउद्दीनके मनमें अत्यन्त डाह हुआ । डाहसे संदेह और सन्देहसे क्रोध आगया; बादशाहकी इच्छा नहीं थी कि भीमसिंहको छोड़ा जावे । इससमय विलम्ब होता हुआ देखकर उसे महाक्रोध आया, और न सहसका, वह मूर्ख उन पालकियोंके निकट चलाआया । आनेके साथही पालकियोंमें राजपूतवीरोंने छलांग-मारकर बादशाहपर धावाकिया । परन्तु अलाउद्दीन भलीभांतिसे रक्षितथा अतएव वहीं पर दोनों सेनाओंका घोर संग्राम होनेलगा । इस ओर महाराणा भीमसिंहको पकडनेके लिये यवनसेनाका एक दल चित्तौरकी ओरको चला; परन्तु युद्ध करतेहुए उन राजपूत वीरोंने उस यवन दलके सामने अडकर उसको आगे न जानेदिया । इन राजपूत वीरगणोंमेंसे जबतक एक मनुष्यभी जीवित रहा, तबतक महाराणाके पकडनेको मुसलमानलोग आगे न बढ़ने पाये । महाराणा भीमसिंहके लिये एक शीघ्रगामी घोडा तइयार था, उस घोडेपर चढकर वह निर्विघ्नतासे चित्तौरमें पहुँचगये । इस ओर यवनसेनाने दुर्गके निकट आकर सिंहद्वारपर चढाई की । चित्तौरके प्रधान २ वीरगण उस चढाईको रोकनेके लिये यवनसेनाके साथ भयंकर संग्राम करनेलगे । उस भयानक संग्राममें वीरवर गोरा और उनके भतीजे युवक वीर बादलनेही सबसे अधिक वीरता दिखलाई थी ! उनकी वीरता और उनके तेजको देखकर राजपूतसेनाभी अत्यन्त उत्साहके साथ घोर कठोर रणरंग करने लगी ।

वारह वर्षकी उमरके राजपूत बालक बादलका अद्भुत रणकौशल देखकर यवनसेना विस्मित और चकित होगई । उसकी तलबार और भालेने अनेक यवनोंको यमलोकमें पहुँचाया । उसके अपूर्व रणरंगसे कितनेही रणविशारद हिन्दू और मुसलमानोंके गर्व खर्व होगये । पद्मिनीके सन्मान और शिशोदीय कुलके गौरवकी रक्षा करनाही बादलका मूलमंत्रथा । उसके ही वीरमंत्रसे उत्साहित होकर राजपूत वीरगण प्रचण्ड वेगसे शत्रुके सामने डटगये । उस महासमरमें वीरवर गोराने अद्भुत वीरता दिखाकर अनन्त कालके लिये शस्त्रशय्या पर शयन किया । वहनसे राजपूतोंने उसका साथ दिया । उस भयानक संग्रामसे केवल बादल और कितनेएक राजपूत बचकर चित्तौरमें आये। कुछ दिनके लिये अलाउद्दीनकी दुरभिलाषा रुकगई । राजपूतोंके कठोर उद्यम व वीरताको निहार तथा अपनी सेनाका संहार देखकर बादशाहने कुछ दिनके लिये युद्ध करनेका विचार छोड़ दिया ।

इस घोर संग्राममें वीरवर गोराने अपने प्राणोंको निवछावर करदिया । उनका भतीजा बालक बादल रुधिरसे भीजाहुआ घायल होकर अपनी चाचीके पास आया। उसको अकेला आताहुआ देखकर राजपूतबालाके हृदयमें अत्यन्त शोक उपस्थित हुआ । परन्तु इसही बातका उसको धीरजथा, कि प्राणनाथने स्वदेशकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राण दियेहैं । वीर बालक बादलको चुपचाप सन्मुख खड़ाहुआ देखकर, गोराकी शोकार्ता विधवा भार्याने धीरे २ कहा;—“बादल ! अब और क्या कहोगे; मैं सब जान चुकीहूँ; अब जो पूछतीहूँ सो बताओ कि प्राणेश्वरने युद्धमें किसप्रकारकी वीरता प्रकाशित करके देहका त्याग किया । कहाँ बेटा ? मुझे इस बातके श्रवण करनेसे शान्ति मिलेगी।” यह सुनकर बादलके बड़े २ नेत्र डबडबा आये, उसके धावोंसे रुधिर बहने लगा । उसने कहा ।—“मइया! अपने तातकी वीरताका क्या वर्णन करूँ ! आज केवल उनकेही वीरविक्रमसे शिशोदीय कुलके गौरवकी रक्षा हुईहै; शत्रुकी अगणित सेनाको उन्होंने सरलतासे तिनकेकी समान काट डाला । मैंने तो केवल उनके पीछे घूम २ कर शत्रुके दो टुकड़े हुए शरीरोंको घाव पहुँचायेहैं । उनके कराल ग्राससे जो दो ४ मुसलमान बचगयेथे, मैंने तो केवल उनकाही संहार कर पायाहै । इसप्रकार अलौकिक वीरता प्रकाशित करके वे लाल शय्यापर—शत्रुकुलके मृतक शरीरोंका बिछौना बिछाकर अनन्त निद्रामें सो रहेहैं ! उनके तकियेकी जगह एक यवन राजकुमारका द्विखण्डित देह लगाहुआहै ।” राजपूतबालाने फिर पूछा;—“बेटा बादल ! यह

फिर बताओ कि मेरे प्राणप्यारेने संग्रामभूमिमें किसप्रकारकी वीरताकी । ” वादलने फिर उत्तर दिया; “हे मातः!अब अधिक क्या कहूँ? उनकी असीम वीरताका कहांतक वर्णन करूँ? उनकी वह अद्भुतवीरता देखकर शत्रुसेनानेभी भीत और चकित होकर अनेक प्रकारसे उनकी प्रशंसा कीथी । आज उनमेंसे एकभी नहीं बचा । ” वीरवर गोराकी विधवा भार्याने हँसकर वादलसे विदा ली और “विलम्ब करनेसे प्राण प्यारे मेरा तिरस्कार करेंगे । ” यह कहकर जलतेहुए अग्निकुण्डमें कूदकर अपने प्राणोंका होम करदिया ।

बहुधा मेवाडके रहनेवाले “चित्तौरके उजाड़नेका पाप छुएँ” यह कहकर शपथ कियाकरते हैं । उन लोगोंके कहनेसे जाना जाताहै कि साढ़ेतीन वार चित्तौर ऊजड़ हुवाथा । उनमेंसे एकवारको वह आधा बतलाते हैं । यद्यपि इस महासंग्राममें चित्तौर ऊजड़ नहीं हुआ या शत्रुने इस पर अधिकार नहीं किया; परंतु इस संग्राममें चित्तौरके जिन साहसी वीरोंने प्राणत्याग कियाथा, उनसे शिशोदीय कुलकी भारी हानि हुईथी । इस कारण इस ऊजड़ होनेको आधा नहीं कहा जा सकता । प्रसिद्ध खोमानरासा ग्रन्थमें इस वर्णनको अत्यन्त तेजस्विनी भाषामें वर्णन किया है । इस भयंकर हानिकी पूर्ति होते न होतेही चित्तौरपर फिर यवनोंने चढ़ाई की । अबको वार निस्तार होना सम्भव नहीं, इस वार दुर्द्धर्ष अलाउद्दीन बहुतसी सेनाको साथ लेकर आया है । इस आक्रमणसे कौन चित्तौरपुरीकी रक्षा करेगा ? स्वदेश प्रेमके महामंत्रको पढ़कर, यवनसेनाकी गति रोकनेके लिये कौनसा वीर संग्रामभूमिमें विराजमान होगा ? चित्तौरके महाविक्रमशाली प्रचण्ड वीरगण, जो कि वीरशिरोभूषण समझे जातेथे, पिछले युद्धमें देशकी रक्षाके लिये प्राण देचुके; इस समय चित्तौर निराधार है ! इस भयानक अवस्थामें वादशाह अलाउद्दीनने फिर चढ़ाई की । भट्टकविगण कहाकरतेहैं कि सम्वत् १३४६ (सन् १२९० ई०) में यह महासंग्राम हुआ था । परन्तु फारिस्ताग्रन्थमें कुछ औरही समय लिखाहै । अस्तु ! यवनसम्राट् अलाउद्दीनने दक्षिण छोरेके गिरिकूटपर अधिकार करके अपनी छावनी डाली, चारोंओर खाई खुदवा दी । चित्तौरके रहनेवाले आजतक दूरसे उस खाईको दिखलाया करतेहैं और मेवाडकी बीती हुई विपदका विषय विचार कर लंबे श्वास लेतेहैं । इस संग्रामके पीछे जिन्होंने आक्रमण किया उन्होंने वहाँ इतनी परिखा बनादीहै कि जिनसे यह निश्चय करना कठिन हो जाताहै कि अलाउद्दीनकी परिखा कौनसी है । निष्ठुरहृदय यवनराजने शिशोदीय कुलपर महासंकट पड़नेके समय चित्तौरको घेर लिया

परन्तु क्या चिन्ता है, चित्तौरपुरी अब भी वीरशून्य नहीं है ! क्या बिना विवाद और बिना विघ्नके यवनलोग स्वाधीनताकी लीलाभूमि चित्तौरपर अधिकार कर लेंगे ? नहीं, ऐसा कभी नहीं, हो सकता । जबतक वीर्यवान राजपूतोंकी नाडियोंमें रुधिरकी एक बूंद भी रहेगी—जबतक उनकी देहमें प्राण रहेगा तबतक वह कभीभी स्त्रीका अंचल पकड़कर वरके एक कोनेमें न बैठेंगे । तबतक वह किसी प्रकारसे भी अत्याचारी देवदेवोंके विघ्न रण क्षेत्रमें खड़्ग धारण करनेसे विमुख न होंगे । जैसेही अबकी बार अलाउद्दीनने चित्तौरपुरीको घेरा वैसेही चित्तौरके समस्त वीरगण प्रचंड क्रोधमें आकर बदला लेनेके लिये मतवालेसे होंगये और यवनोंके दुराचरणका फल भली भाँतिसे देनेके लिये खड़्ग लेकर उनके सामने आयें ।

तुलानाग्रामग्रन्थके बनानेवालेने इस भयानक संग्रामका वृत्तान्त अपनी नाहिनी लेखशक्तिसं रंग विरंगा वर्णन किया है । उन रंगोंमेंसे एक रंग सवने उत्तम चढ़ा है । दिनके समय धार संग्राम करके एक दिन आधीरातके समय महाराणा लक्ष्मणसिंह अपने विश्राम भवनके भीतर बैठे हुए घोर चिन्ता कर रहे हैं । रात्रिका दूसरा पहर व्यतीत होना चाहता है; समग्र संसार निद्रादेवीकी गोदीमें शयन कर रहा है; कहीं चुँचकारका शब्द भी नहीं होता । केवल निशाकी तमीरण हहर २ कर बारम्बार प्रचंड वेगसे विश्रामभवनकी किवाड़ोंको टकराती है; तथा सियारोंके घोर शब्दसे हुहुआनाभी रात्रिके मौन धारणमें विघ्न डाल रहा है । इस गंभीर रात्रिके समय महाराणा विश्राम भवनमें एकान्त मनमें यानों चित्तौरके हानहार भाग्यपटकी सूँड लिखनका पाठ कर रहे हैं । चित्तौरके मुख्य २ सदाँर लोग, प्रचंड यवनाक्रमणमें चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये प्रतिदिन संग्रामभूमिमें शयन करते जाते हैं;—मानां शिशुादिया कुलकी राजलक्ष्मी मलीन और शोकाकुल होकर चित्तौरको त्याग करनेकी तइयारियें कर रही हैं;—अब चारों ओर संकट है, चारों ओर विपत्ति है;—चारों ओर भयका सामना है ! अब कौन चित्तौरपुरीकी रक्षा करेगा । इस घोर संकटके समय कौन शिशुादीयकुलके गौरवका उद्धार करेगा ? इस महारसंकटके सर्व संहारकारी आससे किस प्रकार महाराणाके वारह पुत्रोंमेंसे केवल एक जन भी जीता जागता रहकर पितृगणोंको पिण्डदान करनेके लिये उद्धार पा सकेगा ? राणाजी इस प्रकारसे अनेक विचार कर रहे थे कि इतनेहीमें उस घोर रात्रिकी गंभीर शान्तिको भंग करके कोई गंभीर कंठसे कह उठा कि;—“मैं भूखी हूँ ” महाराणाकी प्रचण्ड चिन्ता तित्तर वित्तर होगई । वे चकित होगये;—जिध-

रसे वह शब्द हुआ था उस ओरको देखा; वैसेही एक अपूर्व दृश्य दिखलाई दिया । दीपकके उस क्षीण प्रकाशमें महाराणाको दिखाई दिया कि पत्थरके खंभोंके बीचमें चित्तौर की अधिष्ठात्री देवी भयंकर रूपसे प्रगट हुई हैं । भगवती को देखतेही महाराणाका हृदय घोर अभिमान और विपादसे पूर्ण हो गया !

उन्होंने शोकपूर्ण स्वरसे चिल्लाकर कहा—“ अवतक तुम्हारी क्षुधा शान्ति नहीं हुई! पिछले दिनोंमें हमारे राजवंशके आठ हजार वीरपुरुषोंने संग्रामभूमिमें प्राण नेवछावर करके तुम्हारे भयंकर स्वप्नको पूर्ण किया, क्या इसेभी तुम्हारी दारुण रुधिर-पिपासा दूर न हुई ? ” “ मैं राजवलि चाहतीहूँ, जो राजमुकुटधारी वारह राजकुमार चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये संग्राम भूमिमें प्राण न देंगे तो मे-वाड़का राज्य शिशोदीयकुलके हाथसे निकल जायगा । ” देवीजी इतना कहकर अन्तर्हित होगई ।

महाराणा विषमसंकटमें पड़े । उस रात्रिको घड़ीभरके लियेभी नींद न आई । प्रभात होतेही सेनापतियोंको बुलाकर सबके सामने रात्रिके अद्भुत वृत्तान्तको प्रगट करके कहा;—परन्तु किसी सर्दारको विश्वास न आया, सबने यही समझा कि महाराणाको भ्रम हो गया । परन्तु राजाने सबकी बातोंको अग्राह्य करके कहा कि “ यद्यपि आपलोग अविश्वास करतेहैं परन्तु आज रात्रिको निशीथकालके समय इस घरमें रहकर देखो कि देवीजी फिरभी आतीहैं या नहीं । ” सर्दारोंने इस बातको मानलिया और उस नियमित समयपर राणाके गृहमें एकत्र हो उस अद्भुत दृश्यको देखा । देवीजी फिर प्रगट हुई और पुनर्वार अपनी प्रतिज्ञा कही “ यद्यपि प्रतिदिन सहस्र २ म्लेच्छ संग्रामभूमिमें शयन करतेहैं, परन्तु मुझे इससे क्या ? प्रतिदिन एक २ राजकुमारको राज्यासन पर अभिषेक करो; किरण छत्र और चामरसे सजायकर उसको यथा योग्य राज्य सन्मानसे सन्मानित करो, तीन दिनतक उसकी आज्ञाका पालन होवै; तीन दिन बीत जाने पर चौथेदिन वह संग्रामभूमिमें आयकर भाग्यकी आज्ञाका अनुसरण करो। जो इस प्रकारसे वारह राजकुमार संग्रामभूमिमें प्राण दें तो मैं चित्तौरमें रह सकतीहूँ । ” देवीजी यह कहकर अन्तर्धान हुई और चित्तौरके सर्दारलोग अत्यन्त विस्मित हुए । वीरहृदय राजपूत लोगोंको देवीजीका इस प्रकारसे दर्शन होना कुछ असम्भव नहीं है । देवताके इस अपूर्व अभिनयमें राजपूतोंका दृढ़ विश्वास है । यह विश्वास किसीप्रकारसे नष्ट होनेवाला नहीं । विशेष करके चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवी चतुर्भुजाने दुर्ग छोड़नेका जो हेतुवाद दिखाया था, वह स्वदेशप्रेमी, तेजस्वी, राजपूतोंके वीरचरित्र

और संस्कारके अनुसार भली भांतिसे उचित माना जा सकता है। यद्यपि देवीजीकी आज्ञा कठोरथी परन्तु राजपूतगण उसको पालन करनेके लिये उत्कण्ठित हुए। वे लोग इस बातको किसी प्रकारसे सहन नहीं करसकते कि उनके जीवन रहते हुए दुराचारी यवनलोग चित्तौरपुरीमें प्रवेश करके उनका सर्वस्व लूटें; उनकी प्राणाधार स्त्रियोंके सतीत्व धनको छीनलें। इस कारणसे समस्त राजपूतगण भगवान् एकलिंगकी शपथ करके देवी चतुर्भुजाकी आज्ञाका पालन करनेके लिये संग्रामभूमिमें आये और प्रतिज्ञा की कि जवतक हमारी देहमें प्राण रहेगा, तवतक चित्तौरके भीतर किसी प्रकारसे मुसलमानोंको न घुसने देंगे। अब राणाजीके बारह पुत्रोंमें यह तर्क वितर्क होने लगा कि सबसे पहिले कौनसा कुमार देवीजीकी आज्ञाका पालन करे। सबसे बड़े अरिंसिंह सबसे बड़े हानेका हेतु दिखाकर देवीजीकी आज्ञाके अनुसार राज्यासनपर विराजमान हुए। फिर तीन दिनतक यथायोग्य राजसन्मान प्राप्त करके चौथे दिवस यवनसंग्राममें भयानक विक्रम दिखाय इस नाशवान संसारसे सदाके लिये विदा लेकर अनन्तधाममें चलेगये। तदनन्तर उनसे छोटे अजयसिंह बड़े भ्राताके पीछे जानेको तइयार हुए! परन्तु महाराणा समस्त पुत्रोंकी अपेक्षा इसमें अधिक स्नेह करते थे, अतएव किसी प्रकारसे भी अजयसिंह संग्रामभूमिमें न जाने पाये। अजयसिंहने बहुतरा चाहा, परन्तु पिताने एक न मानी। विवश होकर अपने छोटे भ्राताओंको देवाज्ञा पालन करनेके लिये संग्रामभूमिमें जानेकी अनुमति दी। इस प्रकारसे ग्यारह राजकुमारोंने संग्राममें जाय स्वदेशप्रेमका उदाहरण दिखाय हर्षसहित अपने २ प्राणको जन्मभूमिके ऊपर बलिहारी करदिया। इस समय केवल अजयसिंह राणाके पुत्रोंमेंसे शेष हैं। अजय प्राणोंसे भी अधिक प्यारा है, प्राण जाँय तो जावें, परन्तु प्राण रहते इस पुत्रको रणमें न जाने देंगे। हाय! अजयसिंहके संग्रामभूमिमें जातेही शिशोदीयकुल निर्मूल हो जायगा। वीरवर बाप्पारावलके पवित्र पितृगणको कोई अंजलिभर पानी देनेके लिये भी जीवित न रहैगा! फिर क्या होगा?—यवनलोगोंके भयंकर आक्रमणसे कौन चित्तौरपुरीको उद्धार करेगा?—ऐसा कौन है जो गिहोट कुलको अनन्त नाशसे बचा लेगा? तदुपरान्त महाराणाजीने स्वयं संग्रामभूमिमें जाकर प्राण निवछावर करनेके अभिप्रायसे सर्दारोंको निकट बुलाकर कहा “अबकी बार हमारा काल पूर्ण होगया; इस बारमें चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राणोंको बलिहार करूंगा।”

इसके उपरान्त महाराणाजी अपने हृदयके रुधिरका दान करके देवीजीका खाली खप्पड़ पूर्ण करनेके निमित्त तइयार होनेलगे । इस भयंकर संग्रामके होनेसे पहले एक भयंकर कार्यका करलेना अत्यन्त आवश्यक समझा गया ।

इस भयंकर कार्यको “ जुहार ” या “ जुहारव्रत ” कहतेहैं । राजपूतकुल-वालाओंको प्रज्वलित अग्निकुण्डमें डालकर विजयी शत्रुओंके हाथसे उनके सतीत्व और स्वाधीनताकी रक्षा करनेके लिये यह भयंकर “ जुहारव्रत ”

किया था । जब शत्रुके प्रचण्ड आक्रमणसे राजपूतगण अपने देशकी रक्षा या स्वाधीनताके बचानेका कोई उपाय नहीं देखते, जब उनका समस्त आशा भरोसा लोप होजाताहै; उस भयंकर समयमें—आशाके उस अन्तसमयमें राजपूत

गण इस भयंकर व्रतका उद्यापन करनेके लिये तइयार होतेहैं । चित्तौरपर आज वही भयंकर समय आ पहुँचा है;—आज चित्तौर की रक्षाका कोई उपाय बाकी नहीं है; अतएव इस भयंकर जुहारव्रतका उद्यापन करना आवश्यकीय कार्य है ।

राजपुरीके रनवासके बीचोंबीच पृथ्वीके नीचे एक बड़ी सुरंग थी, दिनके समयभी उसमें धीरे अंधकार छाया रहता था । इस भयंकर सुरंगमें सालकी लकड़ियोंके ढेर डालकर चिता जालाई गई । देखतेही देखते वाल

खोलेहुई अगणित राजपूतवाला हृदय विदारक शोक संगीतसे चित्तौरपुरीको गुंजारती हुई उस भयंकर सुरंगकी ओरको बढ़ने लगीं । रूप लावण्यवती जिन क्षत्रियाणियोंको देखकर दुराचारी मुसलमानोंके हृदयोंमें पाशवी वृत्तिका उदय होना संभव था वे सब ललना उस समय प्राण देनेको तइयार हुईं। उन सबके पीछे

सुरमन मोहिनी महाराणी पद्मिनीजीभी चलने लगीं । चित्तौरकी वीर अंडली चुप चाप है; अपने हृदयको वज्रकी समान कड़ा करके वह भयंकर कार्यको खड़े २ देख रहीहै । स्नेहकी आधारमाता, हृदयको प्रसन्न करनेवाली माता

व आनन्दमयी वहिन भानजी और कन्यागण सदाके लिये विदा लेकर उनके सामने—उनकी आँखोंके सामने प्रबल अग्निमें गिरकर प्राण छोड़नेको जा-रहीहैं, तथापि उनके नेत्रोंसे आँसूकी एक बूंद नहीं गिरती आज वह नेत्र सूख-

गये, आज उन नेत्रोंमें ललाई आगई आज मानो उनसे संसारको दग्ध करने-वाली आगकी लपट निकल रहीहै ! एक समय जो हृदय प्रेमका स्रोतथा, आज वही मरुमय श्मशान होगया ! आज इसही कारणसे उन्होंने इस भयंकर कार्यका अनुष्ठान किया । धीरे २ समस्त स्त्रियें उस सुरंगके द्वारपर आन पहुँचीं ।

सामनेही सीढियाँ बनी हुई हैं; धीरे धीरे एक एक करके वे सब नीचे उतरिं ।

तत्काल ऊपरसे भयंकर शब्दके साथ सुरंगका बड़ा और भयानक लोह-कपाट बंद हुआ। एक पलभरके बीचमें अगणित हतभागनियोंका करुणा-शोकनाद लीन होगया!—और कुछभी न सुनागया!—हाय! आज समस्तकी समाप्ति होगई!—रूप, यौवन, लावण्य, गौरवादि सबकोही सर्वसंहारकारी अग्निने भस्म करदिया। *

इस भयंकर और कठोर “जुहरव्रतका उद्यापन करके महाराणा स्वयंही लडाईमें जानेकी तइयारी करने लगे, परन्तु प्यारे पुत्र अजयसिंहने उनके जानेमें बाधा दी। अजयसिंहकी इच्छा किसीभांतिसेभी महाराणाको रणमें भेजनेकी नहीं थी। पिता पुत्रमें बहुतसा तर्क वितर्क हुआ, परन्तु अन्तमें राणाही जीते। विवशहो अजयसिंहको पिताकी आज्ञाका पालन करना पड़ा और वह चित्तौरको छोड़ गये। तथा कितनेएक सिपाहियोंको साथ ले शत्रुके डेरोंके बीचमें होकर बेखटके कैलवाडादेशमें जा पहुँचे। अब राणाजीको किसी बातकी चिन्ता न रही;—

* “हमलए चित्तौर” नामक नाटकमें स्त्रियोंके चित्तामें जलनेका वर्णन अत्यन्त मनोहरतासे किया है। राजपूत ललना गण चित्तामें भस्म होनेके समय कहतीहैं। [ठुमरी पीछे] अगन अब राखो लाज हमारी ॥ टेक ॥ हम सब वाला निपट बिहाला पतिविन परम दुखारी। बेग चिताधकि भस्म करो प्रभु हम सब सखा तिहारी ॥ टेक ॥ सुन रे यवन अधम चण्डालो हृदय दियो तुम जारी। माखी नुर प्रति फल पाओगे भोगोगे दुख भारी ॥ टेक ॥ दूसरा गति ॥ केहि सुखलागि राखत प्रान, पिता पुत्र पति रनमें जैहैं, अबहै कहाँ कल्यान ॥ टेक ॥ दुग्ध भयो हिये तनहूमें सोई; शोक करे सोई पान ॥ टेक ॥ दूरहो भूपन वसन, रतन सब पतिविन आज पयान ॥ टेक ॥ खोलकेश परवेश अगन कर अय सुख नाहीं आन। केहि सुख लंगि राखतप्रान ॥ टेक ॥ अगन सहाय हांऊ याही छिन पतिनसों करहु मिलान। असहाया अबला दुख वृद्धी कृपा करो भगवान ॥ २ ॥ (गीत तीसरा) जग देख खोलकर नयना। हम पतिव्रतधर्म तजैना। रवि शशि गगन सकल मुर देख्यो, देख्यो यवन अपैना। तृणसम प्राण अनलमें दहती सती धर्मते टरैना।

“जय सज्जना स्त्रियें चित्तामें भस्म होगई तब अलाउद्दीन बादशाह राजपूतोंको मार कर शहरमें आया लेकिन घर २ में चिताके धुंएके सिवाय कुछ न पाया, तब अफसोसके साथ हाथ मल २ कर कहने लगा !”—“गजल—

“आयेथे गुलके वास्ते बस खार लेचले। हिजराँका पक्षिनीके यह आजार लेचले ॥ १ ॥
दिलकी जो थी हविस वो न निकली हजार हैफ़। गो जेवरो जबाहर वेशुमार लेचले ॥ २ ॥
इस हेच जिंदगीके लिये हाय क्या किया। जल्मी बनाके लाखोंको नाचार लेचले ॥ ३ ॥
बस चार गज कफनके सिवा गंजेदहरसे। हमराह अपनेकुछभी नजरदार लेचले ॥ ४ ॥
बस्ले पदमकी दिलमें निहायत थी आरजू। बदले खुशीके हसरते दीदार लेचले ॥ ५ ॥
हसरत पुकारतीहै यह कुस्तोपै: फ़ौजके। चित्तौरकी बहार यह सरदार लेचले ॥ ६ ॥
किस जिन्दगीपै शहर यह बीराना करदिया। अफ़सोस बाज क़त्लका अवार लेचले ॥ ७ ॥

पितृगणोंको पिंडदेनेके लिये पुत्रतो वर्तमान हैही, वाप्पा रावलका वंशलोप नहीं होनेपाया । फिर अब क्या चिन्ताहै ?

इस समय राणा निश्चिन्त और निश्शंक होकर रणभूमिमें प्राण त्यागनेके लिये उत्साहित हुए, तथा प्रचंड रणभेरी बजाकर अपने सदाँरोंको पास बुलाया । आज समस्त सरदारगण मतवाले हो रहेहैं, अपने देहकी चिन्ता जातीरही है;—जीवनकी ममता छोडदीहै । किलेका फाटक खोलकर अपने स्वामीके साथ प्रचंड विक्रम करतेहुए शत्रुकी विशाल सेनामें कूदपडे । उन रणोन्मत्त भयंकर राजपूतोंकी तलवारसे अनेक अभागे मुसलमान तिनकोंकी समान काट डालेगये । परन्तु इनका मारनाभी कुछ काम न आया ! उफनेहुए समुद्रकी समान विशाल यवनसेनाके बीचमें यह थोंडेसे वीर इस प्रकारसे शीघ्र विलाय गये कि जैसे पानीके बबूले पानीमें विला जातेहैं । आज चित्तौरपुरी जीवनशून्य हुई ! आज इस अपूर्व नगरीने श्मशानका वेष धारण किया । इधर उधर अगणित मृतकदेह पडे हुए हैं; समस्त स्थान मनुष्यके सधिरसे भीगे हुए हैं ! किसीके हाथ पांव कट गयेहैं;—किसीका शिर दो टुकडे होगयाहै; कोई किसी यवनके मुँहपर अपने विकट दांतोंको लगायेहुए बीभत्स भावसे गिरा पडाहै । मानो अबतक भयंकर प्रतिहिंसा लेनेके लिये उन्मत्त भावसे शत्रुके चवाजानेको तइयार है । हृदयको पानी करदेनेवाले इस महाश्मशानके भयंकर रूपको सौगुणा बढाकर यवनोंकी सेना पिशाचोंकी समान इधर उधर घूमने लगी ! पिशाचबुद्धि बादशाह अलाउद्दीनने उस जीवशून्य श्मशानरूपी चित्तौरपर अधिकार किया ! चित्तौरको अधिकार करतेही वह अपनी जीवन्तोषिणी महाराणी पद्मिनीकी खोजमें उन्मत्तकी समान इधर उधर घूमने लगा ! हा मूर्ख ! अबतक तेरा भ्रम न गया ! रे दुराचारी ! तैने अबतक पद्मिनीकी आशाको न छोडा ? पद्मिनी कहाँ है ? तुझ राक्षसके चित्तको मोहित करनेवाली आनस सरसीकी प्रफुलित सरोजिनी सती सीमन्तिनी पद्मिनी अब कहाँ है ? नृशंस पापी और नारकीके पैशाचिक पीडनसे वह सती शिरोमणि सुरसुन्दरी आज विश्व ब्रह्मांडको रुलाकर, चित्तौरपुरीको श्मशान बनाकर इस पापी संसारको त्यागकर गई ! सुरंगके बीच बनीहुई जिस प्रचण्ड चितामें उस देवकुमारीका सजीव पवित्र देह भस्म हुआ है, गहरके भीतरसे अबतक उसका धुआँ इस प्रकारसे निकल रहाहै कि जैसे ज्वालामुखी पहाडसे धातु निकलती रहतीहै । वह पवित्र धुआँ स्वर्गीय सामग्रीसे परिपूर्ण है,— वह शतशः अनुपम सुन्दरताई सतीत्व और गुणगरिमाके परमाणुओंको लेकर सूर्यलोकको उडा जाताहै ।

उस धूमराशीके स्पर्श करनेसे वह विकट सुरंग उस शोचनीय दिनसे पवि गिनी जाने लगी। उसदिनसे कोई किसी प्रकारसेभी उस सुरंगमें प्रवेश नहं करसकता। उसके साथका दीपक उस भयंकर अजगरके श्वास लेनेके पवनसे तत्काल बुझ जानाहै। *

इस प्रकारसे अमरावती तुल्य चित्तौरपुरी सन् १३०३ ई० में अलाउद्दीनके भयंकर दंडप्रहारसे आधी ऊजड़ होगई। चित्तौरनगरपर अपना अधिकारकर शालौरके शौनगडे वंशीय मालदेवनामक एक सरदारके हाथमें अलाउद्दीनने उसका शासनभार अर्पण किया। बादशाह अलाउद्दीन एक तेजस्वी और पराक्रमी बादशाह था, मतलबके सिद्धहोजानेमें कपटता एक अमोघ उपायहै; इस बातमें बादशाह अव्वल दरजेका होशियार था; यही कारण है जो बहुधा उसकी जय हुआ करतीथी। इस विषयमें वह हिन्दूवैरी औरंगजेबकी समान गिना जाताथा। अलाउद्दीनने तरलपर बैठतेही “सिकन्दरसानी” (अर्थात् दूसरा सिकन्दर) की उपाधि धारण की, और जिसको उसने अपने चलाये हुए सिकेपरभी खुदवा दियाथा, उसकी यह उपाधि कभी निरर्थक न हुई, उसके कठोर हाथके भयंकर प्रहारसे राजस्थानके सैकड़ों नगर ग्राम ऊजड़ होगये। गर्वित अनहलवाडा प्राचीन धारा और अवन्ती तथा सुन्दर और देवगढादि जिन गौरववाले नगरोंमें एक समय शोलंकी परमार पुरीहार व तक्षकादि प्रसिद्ध राजाओंके पवित्र सिंहासन विराजमान हुयेथे, उन सबकोही अलाउद्दीनने उजाड़दिया जिस अग्निकुलके उत्पन्न हुए राजाओंके भृकुटी विलाससे एक समय समस्त भारतवर्षका भाग्य चलायमान होता था, आज इस प्रचण्ड मुगलमान वीरके अत्याचारसे उनका नाम निशानतक मिटगया। जिस जयसलमेर, गाग्रौन और बून्दीको भट्टलोग, खीची और हारवंशके राजाओंकी लीलाभूमि कहाकरते थे, आज अलाउद्दीनके अत्याचारसे उनकी दशा अत्यन्त हीन होगई है। परन्तु कालके अवश्य होनहार प्रभावसे यह समस्त राज्य उस नीची अवस्थासे फिर निकल आये हैं। जिस समय आलाउद्दीनके प्रचण्ड अत्याचारसे राजस्थानके देश ऊजड़ होरहेथे, उस कालमें मारवाडके राठौर और अम्बरके कुशावह लोग भारतके इतिहासमें नाममात्रको दिखाई दियेथे।

* कर्नेल टाडने इस सुरंगके भीतर जाना चाहाथा, परन्तु अनेक प्रकारके विपधर सर्प, और प्राणनाशक दूषित वायुके भयसे अपनी इच्छाको पूर्ण न करसके, यदि उसके भीतर जाते तो उनके ऊपर महाकष्ट आ पड़ता।

उसकाल यह राठौर लोग, पुरीहार राजालोगोंके अधीनमें सामन्त राज बन कर रहतेथे । उस अधीन जीवनमेंही धीरेरे वह लोग अपना सिर उठा रहेथे । परन्तु कुशावह जाति उस समयतक घोर कुदशामें पड़ी हुई थी । इस दुखस्थामें पड़ा हुआ देखकर असम्य मीनगण उनको वारम्बार सताते और चढ़ाई करतेथे । मीन लोगोंकी इस चढ़ाई और इस दुःख देनेको कुशावह जातिवालोंसे न रोकागया । इधर विजयोत्सवमें मत्त होकर कई दिनतक अलाउद्दीन चित्तौरमें रहा । इस समयमें बादशाहने चित्तौरके शोभायमान अटा अटारी देवमन्दिर और अत्यन्त विचित्र वनेहुए स्तम्भ महल दुमहले व चैत्यादि सबकोही तुड़वा दियाथा । परन्तु केवल महाराणी पद्मिनीका महलही उसके सर्व संहारक हाथके भयंकर प्रहारसे बच गयाथा । ज्ञात होताहै कि पद्मिनीपर अनुरागी होनेके कारण अलाउद्दीनने उसको नहीं तुड़वाया ।

इस भयंकर संग्रामके पीछे शिशोदीय कुलको पिण्ड देनेके लिये केवल अजयसिंह जीवित रहे । पहलेही कह आये हैं कि कुमार अजयसिंह कैवलवाड़ा नामक देशको चलेगये । मेवाड़में पश्चिमकी ओर आगवली पर्वतमालाकी तलैटीमें शेरोनल नामक एक सम्पत्ति युक्त देश है । उसकीही चोटीपर कैवलवाड़ा बसाहुआ है । उस पहाड़ी देशमें निकाले हुए की समान रहकर राणा अजय सिंह हृदय को थामकर अपने पितृराज्यके उद्धार करनेका उचित अवसर देखने लगे । जो चित्तौर उनके पूर्व पुरुषोंकी लीलाभूमि है, उसही चित्तौरमें आज एक सरदार राज्य करताहै । आज वही चित्तौर पराया होगया है । इस प्रकार अनेक भांतिकी चिन्ताओंसे ग्रस्त होकरभी राणा अजयसिंह किंचित भी हताश या निरुत्साह न हुए । वरन दूने साहस और आग्रहके साथ अपना कार्य सिद्ध करनेके लिये उचित तयारियें करनेलगे । जिस समय राना लक्ष्मणसिंह संग्राममें जातेथे उस समय उन्होंने अजयसिंहसे कहाथा कि तुम्हारे पीछे तुम्हारे बड़े भ्राता अरिसिंहका पुत्र सिंहासनपर बैठेगा । इस बातको अजयसिंहने भलीभांतिसे याद रक्खा । सोते, जागते, और कष्टोंमें पड़कर भी अरिसिंहके पुत्रकी याद राना अजयसिंह किया करतेथे; परन्तु बड़े भाईके उस पुत्रका कहींभी पता न लगता; और अजयसिंहके पुत्र किसी कार्यके नहीं थे; इधर बुढ़ापाभी आयाही चाहता था, ऐसी अवस्थामें वह समझते थे कि पिताका उपदेशही फलवान होगा । जिस पुत्रके लिये महाराणाने कहा था, उसका नाम हमीर था । इस हमीरनेही शिशोदिया कुलके नष्टगौरवको

उद्धार किया था । मेवाडके भट्टीय काव्यग्रन्थोंमें हमीरके जन्म और बालकपनका वर्णन अत्यन्त विस्तारसे किया है ।

राणाके प्रथमपुत्र अरिसिंह कितने एक युवा सर्दारोंके साथ अन्दवानामक वनमें शिकार खेलनेको गये । वहाँ एक बराहको देखकर उन्होंने बाण चलाया । परन्तु निशाना चूक जानसे सूकर भागकर जुवारके एक खेतमें घुस गया । अरिसिंहभी उस पछियाते हुए खेतमें चले गये । उस खेतमें एक टाँड़ बना था उसपर एक स्त्रीको इन्होंने देखा, अरिसिंहको देखकर वह स्त्री टाँड़से नीचे उतर गई और नम्रवचनसे बोली । “अब आपके परिश्रम करनेकी आवश्यकता नहीं है: मैं अभी इस बराहको लाये देती हूँ ।” इस खेतमें जो जुवारके पेड़ थे वे ज़ात या आठ २ हाथके बड़े होंगे । राजपूतवालाने उनमेंसे एक वृक्षको उखाड़ा और उसकी नोंकको अत्यन्त तेज कर लिया, फिर वह अपने टाँड़पर चढ़ी और उसलकड़ीके भालेको धनुषपर चढाकर ऐसे वेगसे मारा कि लगतेही शूकर तत्काल मर गया । तब वह उसको राजकुमारके निकट लाकर अपने कार्यको चली गई । वीरवान राजपूतवालाओंकी अपूर्व वीरता और प्रचण्ड भुजबलका वृत्तान्त राजकुमारको भली भाँतिसे विदित था, परन्तु ऐसा अद्भुत कार्य उन्होंने कभी नहीं देखा । राजकुमार अरिसिंह और उनके साथी अत्यन्त विस्मित हुए और उस वीरवालाके विक्रमका वर्णन करते २ सबही एक नदीके किनारे पहुँचे । वहाँपर भोजनकी तइयारियाँ होने लगीं । क्रमानुसार भोजनके पदार्थ तइयार करके सजाये गये ।

भोजन करनेके समयभी सबही उस बालाके असीम बाहुबलकी प्रशंसा करते जाते थे, उसही समय उस ज्वारके खेतकी ओरसे एक मिट्टीका ढेला आकर राजकुमारके घोंडेके लगा, वैसेही वह तुरंग तत्काल गिर पड़ा । सबने चकित होकर उस खेतकी ओरको देखा कि वही स्त्री टाँड़पर चढ़ी हुई ढेले फेंककर पक्षियोंको खेतसे उड़ा रही है । सब लोग समझ गये कि कृषक कन्याके चलाये हुए ढेलेसेही घोंडेका पाँव टूट गया । वह स्त्रीभी तत्काल इस वृत्तान्तको जानकर अपना अपराध क्षमा करानेके लिये राजकुमारके पास आई । उसकी निडरता, सम्यता, और शीलको देखकर राजकुमार अपने साथियों सहित आश्चर्य करने लगे । साधारण कृषककन्यामें क्या इस प्रकारके अपूर्व गुण हो सकते हैं ? क्षमा करना तो एक ओर रहा, उन्होंने इस कार्यको दोषही न समझा । इस समय राजकुमारके हृदयमें उस युवतीका ध्यान बंध गया ।

अपने साथियोंके साथ शिकार खेल कर कुमार अरिसिंह राज भवनको जा रहे-
थे कि मार्गमें फिर वह युवती मिली । उस काल वह क्षेत्रपालवाला अपने सिर-
पर दूधका एक वर्तन धरे हुए दोनों हाथोंसे भैंसके दो बच्चोंको हांक रहीथी । अरि-
सिंहके साथ जो उनके मित्रथे उनमेंसे एकने कौतुकसे दूधका वर्तन पृथ्वीमें
गिरानेके अभिप्रायसे उस कन्याकी ओरको अपना घोड़ा चलाया । कृषकवाला
इस अभिप्रायको समझगई और उस मुसाहवको निकट आताहुआ देखकर चाला-
कीसे भैंसके एकबच्चेको सवारके घोड़ेके अगले पाँवमें इस प्रकारसे लिपटा दिया
कि वह कौतुकामोदी रसिकवर राजाका सखा घोड़ेके साथही पृथ्वीपर गिरपड़ा ।
खोज करनेसे राजकुमारको ज्ञात हुआ कि चंदानीकुल * के मध्यमें एक दीन
राजपूतके घर इस बलवान कन्याने जन्म लियाहै । राजपूतकी बेटीहै तो क्या
उसके साथ राजकुमारका व्याह नहीं होसकताहै ? दूसरे दिन अति सबेरे उन्होंने
अपने मित्रोंके साथ, वहां जाकर उस कन्याके पितासे मिलना चाहा । कुमारका
एक सखा उस बूढ़े राजपूतके घरमें गया और उससे राजकुमारका आशय कहा ।
बूढ़ा तत्काल उसके साथ राजकुमारके स्थानपर चला आया । राजकुमारने उसका
अत्यन्त आदर करके सामनेही बैठनेको आसन दिया । बूढ़ उस आसनपर न
बैठकर राजकुमारकेही आसनके एक कोनेमें बैठ गया । उसका यह प्रगल्भ
व्यवहार देखकर राजकुमारके मित्रगण हँसने लगे; परन्तु जब उन्होंने देखा कि
राजकुमारने इस व्यवहारसे किंचितभी अप्रसन्न न होकर अत्यन्त आदरके साथ
अपना विवाह करना चाहा, तब वे समस्तही विस्मित हुए । फिर जराही विलम्ब-
के पीछे जब उस बूढ़ेने राजकुमारकी बातको अस्वीकार किया, तब तो समस्त
इष्ट मित्र मंडलीके विस्मयकी सीमा न रही । आशाको पूर्ण होता हुआ न देख-
कर कुमार अरिसिंह कुछ अनमने हुए । परन्तु भाल लिखी लिपिको कौन भेट-
सकताहै ? उस बूढ़े राजपूतने घर आकर यह समस्त वृत्तान्त अपनी स्त्रीसे कहा,
स्त्री विशेष बुद्धिमतीथी उसने स्वामीका यह घोर अनुचित कार्य सुनकर उसे
बहुत फटकारा और राजकुमारके साथ मिलकर उनसे क्षमा माँगनेके लिये
कहा । भार्याके ताडन करनेसे राजपूत चैतन्य हुआ और शीघ्रही राजकुमार-
के निकट आय अपनी कन्याके देनेको कहा । अल्प कालमेंही कुमार अरिसिंह-
का विवाह उस बलवती कन्याके साथ होगया । इसही शुभ संयोगका फल
वीरवर हमीर हुआ । जब चित्तौरमें उपरोक्त महासंग्रामकी तयारियें हो रहीं

* यह चौहान कुलकी एक शाखाहै ।

थीं, उस काल हमीरकी आयु केवल बारह वर्षकी थी। उस समय उसको कोईभी नहीं जानता था, उस काल वह कृपीजीवनका सुख अनुभव करके मामाके यहां सुखपूर्वक रहतेथे। किन्तु इस शान्तिको वह अधिक दिनतक भोग नहीं करसके। सन्मुखही कठोर कार्यक्षेत्रहै; भयंकर तलवारको हाथमें लेकर वह चित्तौरके नष्ट गौरवको उद्धार करनेका विचार करनेलगे।

दिल्लीकी यवन सेनाके पग धरने से तबतकभी मेवाडकी भूमि प्रत्येक पलमें कम्पायमान हो रहीथी। उस कालतकभी विजयोन्मत्त तातार सेनाका भयंकर छुलाहल चित्तौरके परकोटेपर सुनाई देताथा। आज स्वर्गपर दानवोंकी सेनाने अधिकार कियाहै। आज निष्ठुर हृदयवालोंने आर्यलक्ष्मीको जकड़कर बाँध-लियाहै, और उसको निष्ठुर रूपसे पद दलित करतेहैं। इस विपत्तिसे कौन चित्तौरपुत्रीका उद्धार करेगा? ऐसा कौनहै जो स्वदेशप्रेमिकताके महामंत्रसे उत्साहित होकर पीडित निगृहीत और पददलित आर्यलक्ष्मीका उद्धार करेगा? केवल महाराणा अजयसिंहका नामही इस विषयमें लिया जासकताहै। परन्तु वह अकेले क्या क्या करेंगे? उनके पास न किसी प्रकारका बलहै, न कुछ धन मत्पत्ति है! एक ओर तो मुसलमानोंके ग्राससे चित्तौरका निकालना अत्यन्त आवश्यकहै और दूसरी ओर उन पहाडी भील सरदारोंके अत्याचारोंका रोकनाभी कर्तव्य कार्यहै। इस समय पहिले किस कार्यको करना चाहिये। महाराणा इसका कुछभी विचार न करसके। उन भील सरदारोंमें मुंजावलैचा नामक एक महावीर था। अजयसिंहसे इसकी घोर शत्रुता थी एक समय इस भीलने रानाके स्थान शेरमल्लपर चढाई करके उनके साथ भयंकर द्वन्द्वयुद्ध कियाथा। उस द्वन्द्वयुद्धमें राणाजीने उस भीलके मस्तकपर भाला माराथा। राणाके दो पुत्रथे बड़ा आर्जामसिंह, और छोटा मुजन सिंह। एककी उमर पन्द्रह और दूसरेकी सोलह वर्षकी थी। इस तरुण अवस्थामें ही राजपूतोंके वीरचरित्रका उदाहरण दिखाई देजाताहै, परन्तु अजयसिंहके विपत्त समयमें इन दोनों पुत्रोंने बहुतही थोडा कार्य किया, उस विपत्तिकालमें चित्तौरके उस शोचनीय विपत्तिकालमें अजयसिंहने बहुत खोजनेके पीछे हमीरको उसके मामा के यहाँसे बुलवाया। बारह वर्षके राजपूत कुमार शान्तिमय जीवनको छोडकर स्वदेशका उद्धार करनेके लिये समरकी रंगभूमिमें आये। सबसे पहले तो महाराणा अजयसिंहने कुमार हमीरसिंहको अपने प्रचण्ड वैरी भील सरदार मुंजाके ऊपर चढाई करनेको भेजा। कुमार अस्त्र शस्त्रसे सजकर असभ्य शत्रुका संहार करनेके

लिये आगे बढ़े । विदा लेनेके समय कुमारने अपने चचाके चरणोंको छूकर कहा कि “मुंजका सिर काटकर देशमें आऊंगा, नहीं तो नहीं ।” इसके उपरान्त थोड़ेही दिनोंके पीछे सवने देखा कि मुंजके कटे हुए सिरको भालेकी नोंकपर लटकाये कुमार अपने घांटेपर चढ़े कैलवाराके पर्वतमार्गसे आरहेहैं। कुमार हमीरने धीर और नम्रभावसे अपने जयकी भेंटको चचाके चरणोंमें रखकर शान्तभावसे कहा “तात अपने शत्रुका मस्तक पहिचान लीजिये ! अजयसिंह अत्यन्त आनन्दित हुए । तत्कालही राणा लक्ष्मणसिंहकी भविष्यद्वाणी उनको याद आई । वह समझ गये कि विधाताने कुमार हमीरके भाग्यमेंही राज्यकी प्राप्ति लिखीहै । उन्होंने परम प्रसन्न हृदयसे विजयी भतीजेका मुंह चूमलिया, और उस विजित शत्रुके कटेहुए मस्तकसे रुधिर लेकर कुमारके ललाटपर राजतिलक खेंच दिया । उसही मुहूर्तमें अजयसिंहके दोनों पुत्रोंके गूढभाग्यकी लिखन हमीरके कपाल फलकपर रक्तके अक्षरोंसे साफ २ दिखलाई दी । वे समझ गयेकि हमको राज्य नहीं मिलेगा । पराये आसरेसे रहकर जीवन व्यतीत करना पड़ेगा । इस भयंकर चिंताके डसनेसे दुर्बलहो बड़े अजीमसिंहने कैलवाड़में शरीरत्याग करदिया और सुजनसिंह इस लिये दूसरे राज्यमें भेजा गया कि कदाचित् यह किसी प्रकारका झगड़ा झंझट न उठे । इस बातसे अत्यन्त दुःखित होकर सुजनसिंहने दक्षिण देशमें जाकर अपने वंश वृक्षको बोया । आगे इसही वंशमें एक महावीरने जन्म लियाथा, उस वीरके प्रचण्ड प्रतापसे एक समय समस्त भारतवर्ष कम्पायमान होगया था । उस महावीरका—महाराष्ट्र कुलतिलक यवन-दर्पहारी महाराज शिवाजी नाम था* ।

सम्वत् १३५७ (सन् १३०१ई०) में वीरश्रेष्ठ हमीरका मेवाड़राज्यपर अभिषेक हुआ । परन्तु उनके राज्य, धन और सहायता सावल सवपरही शत्रुका अधिकार था । जिस दिन राणा जयसिंहने अपने भतीजेके माथेपर राजतिलक खेंचा । उस दिनसेही क्रमानुसार चौंसठवर्षके बीचमें राणा हमीरसिंहने मेवाड़के नष्ट हुए गौरवका भली भाँतिसे उद्धार करलिया । राजस्थानमें “ टीका दौड़ ” नामक एक रीति अवतक प्रचलितहै । राजपूत नृपतिगण पितृराज्यपर अभिषिक्त होतेही सैन्य सामन्तको साथ लेकर निकटके या दूरके किसी शत्रुराज्यपर चढ़ाई

* मेवाड़के भट्टग्रन्थोंमें शिवाजीके वंशका वर्णन विस्तारसे पाया जाता है, प्रयोजन समझकर अतिसंक्षेपसे यहां लिखा गयाहै । अजयसिंह, सुजनसिंह, दिलीपजी, शिवजी, तैरवजी, देवराज, उग्रसेन, माहुलजी, खैलजी, जनकजी, सत्यजी, शम्भुजी, शिवाजी (महाराष्ट्र साम्राज्यके स्थापक) और रामराज; इनके पीछे पेशवालोंने महाराष्ट्रके सिंहासनपर अपना अधिकार कियाथा ।

करतेहैं, यदि देशमें चारों ओर शान्ति विराजमान रहतीहै, यदि किसीके साथ शत्रुता अथवा विद्वेषभाव नहीं रहताहै, तो नवीन राजा उस शान्तिको भंग नहीं करता, उस समय वह लीलाके अभिनयसेही अपने पूर्व पुरुषोंके प्राचीन वीराचारकी रीतिको पूरी किया करतेहैं † महाराज हमीरने जिसदिन राज्यका भार ग्रहण किया उसही दिन इस वीरभावके करनेको तैयार हुए । तथा अपने चचाके बेगी बलैचाके राज्यपर आक्रमण करके उसके सेलिओ नामक गिरिदुर्गपर अपना अधिकार किया । इस सिद्ध टीकादौड़की रीतिपर जो प्रचण्ड वीरता महाराज हमीरसिंहने प्रकाशितकी थी, उससे ज्ञात होगयाथा कि यही महावीर चित्तौरगं नष्टगौरवका उद्धार करेगा ।

भट्टग्रन्थमें लिखाहै कि “ जिसदिन अजमल (अजयसिंह) ने अपरमार्ग (गल्लोक) की यात्रा कीथी, उसदिनका खुलाहुआ हमीर राणाका खड्ग फिर उनके हाथने न छूटा । ” वास्तविक बात यहहै कि हमीरसिंहका सम्पूर्णजीवन, प्रचंड देशवैरीके, विरुद्ध खड्गधारण करनेमेंही बीत गयाथा । हम ऊपर लिख-
चुंकह कि अलाउद्दीन चित्तौरका राज मालवदेवको सौंप गयाथा सो मालवदेव दिल्लीकी सेनाके साथ चित्तौरमें रहताथा ।

हमारे राणाकी सहायताके लिये जो लोग उस समय थे यदि उनको सुटीभरभी कहा जाय तो ठीक होगा । फिर वह किसप्रकारसे थोड़ीसी सेनाको साथ ले दिल्लीकी विशाल अनीकिनीके सामने आवें ? ऐसी अवस्थामें उन्होंने जिस मार्गका आश्रय लिया, उसके द्वारा उनका कार्य भलोभाँतिसे सिद्ध हुआ । वह शत्रुओंके लिये केवल परकोटायुक्त नगरोंको छोड़कर शेष देश २ और गाँव २ को ऊजड़ करने लगे ! अनन्तर इसप्रकारका डंडोरा फिर दियागया कि “ जो लोग महाराना, हमीरसिंहको अपना स्वामी मानें वह अपने २ वासस्थानको छोड़कर परिवारके सहित पूर्व और पश्चिम प्रान्तमें स्थित हुए गिरिमार्गके भीतर आन वसे, नहीं तो देशके शत्रुओंमें गिने-जायंगे और उनकी अत्यन्त कष्ट मिलेगा । ” इस डोंडीके फिरतेही लोग अपने घरोंको छोड़कर झुंडके झुंड आरावली पर्वतकी शैलमालाके भीतर जाय अपने

† जब जयपुरके राजाओंने दिल्लीके बादशाहके चरणोंमें अपने कुलकी प्रतिष्ठा और स्वाधीनताको बेचडाला तब मेवाड़के राजालोग उनसे भीतरा घृणा करने लगे, और इसही कारणसे उन्होंने जयपुरवालोंके मालपुर देशको जो कि मेवाड़वालोंकी सरहदसे लगा हुआ था—टीकादौड़का अभिनयका स्थान कररक्लाथा ।

लिये नये नये घर बनाने लगे । महाराणा हमीरने देशवैरी मुसलमानोंके ऊपर यथासंभव अत्याचार करनेमें कोई कसर नहीं रखी । जब प्रजामंडली मेवाड़ के जनस्थानोंको छोड़ गई तब राज्यके मार्ग घाट अत्यन्त दुर्गम होगये । शत्रुगण जब उस ओरसे आते जाते तब महाराणा हमीर अपने दलके साथ उनके ऊपर टूटपड़ते और उनका संहार करके फिर अपने उन स्थानोंको चले आते कि जो एकान्तमें बने हुए थे । महाराणा हमीरसिंह इस प्रकारकी नीतिका सहारा लेकर धीरे २ शत्रुओंका संहार करने लगे । शत्रुओंने बहुतेरी चेष्टा की परन्तु वह किसीभांतिसे भी दुर्गम बनके घाटोंमें उनको न खोज सके । इस प्रकारसे शत्रुओंकी बहुतसी सेना मारी गई । राणा हमीरके इस प्रकार आचरण करनेसे मेवाड़की तलैटियें शमशान बन गई । जिन मैदानोंमें हरे हरे नाजकी लहरें लहराया करतीथीं, आज वह मैदान जंगली घासकूड़ोंसे छा-गयेहैं । पेंठ, वाणिजागार, हाट बजार सब सूने होगये; सबही टूटफूटकर खंड-हर हुए ! इस प्रकारसे समयानुसर नीतिका अवलम्बन करके वीरवर हमीरने अत्यन्त बुद्धिमानीका कार्य किया था इसप्रकारकी नीति गिह्लोट कुलके लिये पूर्णतासे लाभदायक हुई । सन् ईसवीकी दशवीं शताब्दीके मध्यभागमें जिससमय महमूद गज़नवीके भयसे समस्त भारतभूमि कम्पायमान होरही थी । उससमयसे लेकर अठारहवीं शताब्दीमें दिल्लीश्वर महम्मदके समयतक, मेवाड़के राजालोग अत्याचारी यवनोंके महा अत्याचारसे गिह्लोट कुलकी प्रतिष्ठाको बचानेके लिये कभी २ इसही प्रकारकी नीतिका अवलम्बन करतेथे । मेवाड़के इतिहासमें इसका वर्णन विस्तारसे किया गयाहै ।

महाराणा हमीर कैलवाड़ेमेंही रहने लगे । जो कैलवाड़ा * देश अबतक सूना पहाड़ीदेश कहलाता था, आज महाराणा हमीरकी अद्भुतचतुरतासे वह मनुष्योंसे भराहुआ स्थान बनगया । उनकी प्रजा मेवाड़की तलैटीको छोड़कर उसदेशमें आनवसी, कि जहाँपर कोईभी बसना नहीं चाहताथा । ऐसे संकटके समयमें ऐसे दुर्गम स्थानमें बस्ती बसाकर महाराज हमीरने बड़ी चतुरता कीथी । यह देश असंख्य पहाड़ियोंके बीचमें स्थापित है । इन पहाड़ियोंके बीचमें दो चार गुप्त मार्गभी बने हुएहैं, कभीही ऐसा होताहै कि उन कूट मार्गोंको लांघकर कोई

* यहाँपर महाराणा हमीरने एक तड़ाग बनवाया, जिसका नाम हमीरका तलाव रक्खा गया, इसहीके किनारे मेवाड़की अधिष्ठात्री देवीका एक मंदिरभी प्रतिष्ठित कियागया । इन कीर्तियोंका दर्शन करनेसे स्पष्ट ज्ञात होताहै कि महाराणा हमीर एकान्तमें बास करतेथे।

विदेशीय यात्री वहापर निरापद पहुँचसके। कैलवाडा, पहाड़के शिखरपर वसाहुआ है। उस शैलशिखरपरही, उपरोक्त वार्ताके बहुतदिन पीछे कमलमेरका प्रसिद्ध किला बनाहै। देखनेमें कैलवाडा अतिमनोहर है, इसके चारों ओर सघनवन विराजमानहै; बीच २ में असंख्य सोतेवाली नदियें कल २ करतीहुई वही जातीहैं, और प्रकृतिके गंभीर भावको दूना बढ़ातीहैं। जगह २ बड़े २ खेत और चारणक्षेत्र सुंदर भावसे शोभायमान हैं। यहांपर भाँति २ केस्वादिष्ट कन्द मूल फलभी पाये जातेहैं। इन देशका विस्तार २५ कोशमें है। यह देश पृथ्वीसे आठसौ और समुद्रकी समतल भूमिसे दोहजार हाथ ऊँचा है। इस ऊँचे पर्वतके चारों ओर अगणित गुप्त-मार्ग विराजमान हैं। उन कूटमार्गोंसे उतरकर वहांके निवासी, गुर्जर मारवाड अथवा पश्चिम प्रान्तमें स्थित हुए सुहृद्भाव पूर्ण भीलोंके राज्यमें आते जाते और आवश्यकतानुसार उनसे सहायं बलभी पाया करतेथे। अगुनापानोरके उन भीलोंसे गिह्लोटकं राजालोगोंको समय २ पर कितना उपकार प्राप्त हुआहै, उसकी संख्या नहीं की जा सकती। राणाओंकी रक्षा करनेके लिये भीललोगोंने प्रसन्नमुखसे अपने प्राण दियेहैं—अनाहार रहकर—रातोंभर जागकर तथा अत्यन्त कष्टोंको सहकरभी उन्होंने गिह्लोटकुलके लिये पान भोजनकी सामग्री पहुँचाई है। हाथमें धनुष बाण धारण करके उनकी सहायता करनेमें लगे रहते इसप्रकार यह भील राजपरिवारकी सर्व विपत्तियोंसे रक्षा करते थे। इसही कारणसे मेवाड़के राजालोग उनके साथ कृतज्ञताके बन्धनसे बँधे हुएहैं, यह बन्धन किसीप्रकारसेभी शिथिल नहीं होसकता। इस महोपकारका यथार्थ बदला होही नहीं सकता; यह महोपकार पवित्र और स्वर्गीयहै। इसके अतिरिक्त मेवाड़के पूर्वप्रान्तमें स्थित विशाल पर्वतमालाके बीचवाले सघन वन और निर्जन कन्दराओंके भीतर आश्रय ग्रहण करके मेवाड़के निवासी, अत्याचारी मुसलमानलोगोंके सतानेसे बचगयेथे; परन्तु निठुर अलाउद्दीनने घूम २ कर उन सबका सत्यानाश करडाला।

जिस समय मेवाड़की यह दशा हो रहीथी, जिस समयमें इस देशके किले और उत्तम २ नगर शत्रुओंके अधिकारमें थे, यहाँके खेत और शान्तिमय स्थान जब राणा हमीरकी कठोरनीतिके अनुसार भयानक श्मशान बनगयेथे, उसही समय चित्तौरके राजा मालदेवके यहाँसे एक सगाई आई। इस संग्रामके

समयमें मालदेवने किस अभिप्रायसे प्रचंड शत्रु हमीरके साथ अपनी बेटीका विवाह करना चाहाहै, इस बातको कोई समझ न सका । मंत्रियोंको इस विषयमें अनेक संदेह होनेलगे । परन्तु महाराणा हमीरसिंहने किसीकी बात न मानी और विवाह करना अंगीकार किया । राणाने एक बारभी इस बातका विचार नहीं किया कि इस भयंकर संग्रामके समयमें मालदेवने किस अभिप्रायसे विवाहके सम्बन्धकी सूचना करनेके लिये नारियल भेजाहै । क्या राणा हमीरको अपमानित करनेके लिये या विपत्तिमें डालनेके लिये यह चाल चली गई है ? राणाके इष्टमित्र अनेक प्रकारका शोच विचार करनेलगे । परन्तु राणाको कुछभी चिन्ता नहीं थी, इष्टमित्रोंने बहुतेरा चाहा कि यह सम्बन्ध न हो, जब उन्होंने बहुत कहा, तब राणाने धीर और गंभीर भावसे उत्तर दिया कि “तुम क्यों होनहारकी चिन्तासे इतने व्याकुल होतेहो ? मालदेवका जो कुछ अभिप्राय हो सो हो, नारियलके ग्रहण करनेमें कौनसी हानि है ? यदि उसने कोई चाल चलीहै तो इसका भी मुझे कोई डर नहीं है । इस विवाहके होनेसे मुझे इतना अवसर तो प्राप्तहोगा कि जहां हमारे पितृगण रहतेथे वहाँके दर्शन तो हो जायंगे । करोड़ों हजारों विपत्तिभी चाहें एक साथ आनकर घेर लें, उन सबको सहनेके लिये राजपूतोंको छाती खोलकर तइयार रहना चाहिये । साहससे कमर बाँधकर और मूलमंत्र हृदयमें धारण करके राजपूतकार्य करनेको चलेंगे तो विजय लक्ष्मी अवश्यही प्राप्त होगी । मानलिया कि एक दिन संग्राममें बावभी खाये, अपना स्थान भी छूटगया परन्तु भलीभांतिसे स्मरण रखो कि दूसरेही दिन विजय मुकुटको धारण करके सिंहासनपर विराजमान होंगे । राजकुमारकी यह प्रतिज्ञा देखकर फिर किसीने कुछ न कहा ।

विवाहकी तइयारियाँ होगई । महाराणा हमीर ५०० घुड़सवारोंको साथमें लेकर पितृराज्यकी ओर चले । विवाहका तो वहानाहै, परन्तु हृदयमें चित्तौरके उद्धार करनेका मूलमंत्र जपा जाताहै । मनही मनमें प्रतीक्षा कीहै कि यातो मंत्रका साधन करेंगे, नहीं तो चित्तौरकी अँगनईमें प्राणोंको छाँड़कर अपने पितृपुरुषोंसे मिलेंगे ।

बरात धीरे २ चित्तौरके निकट पहुँच, गई, दूरसे शहरका ऊँचा फाटक दिखाई देने लगा । चौहानके पाँच पुत्रोंने अगवानी करके उनको सादर ग्रहण

किया, परन्तु नगरके सिंहद्वार पर तोरण * या विवाह सूचक किसी प्रकारका चिह्न न देखकर हमीरके मनमें महाशंका हुई। उन्होंने विचारा कि इष्टमित्रोंका कहना ठीकही होता दीखताहै।

तिसपरमी उन्होंने अपने हृदयसे धीरभावको न जाने दिया। मालदेवके पुत्रोंसे कुमारने इसका कारण पूछा; उत्तरमें जो कुछ सुना उससे संदेह भली भाँतिसे ना न गया परन्तु हृदय-शान्त होगया। क्रमानुसार बरात चित्तौरके बीचमें पहुँच-गई। वीर पूज्य पितृपुरुषोंकी असीम वीरता और गौरवकी विशाल स्तम्भश्रेणी आज पहली पहलही कुमारने देखी। एक साथही हृदयमें सैकड़ों दुःख सुखकी चिन्ता उदय होगई। इस प्रकार चिन्ता करते २ अपने बड़े बूढ़ोंकी विशाल अट्टाअट्टारियोंके भीतर पहुँचे। वहाँपर मालदेव, तथा उसके पुत्र वनवीरने सब सरदारोंके साथ हाथ जोड़कर कुमारका आदर किया। कुमार विवाहमंडपमें आये। परन्तु वहाँभी विवाहकी कोई धूम धाम न पाई गई; मालदेवने शीघ्रही अपनी पुत्रीको लाकर हमीरके हाथमें समर्पण किया। परंतु विवाहकी कोई रीति भाँति न हुई। केवल गैठजोडा हुआ और वर कन्याका हाथ एक दूसरेके हाथपर रक्खागया। कुल पुरोहितने धीर और नम्र वचनसे कहा कि धैर्य धारण कीजिये, कल समस्त कामना पूर्ण होंगी। कुमार इन बातोंके मर्मको न समझे। उनके हृदयमें अनेक प्रकारके सन्देह और खटके उदय होने लगे। तदनन्तर वर दुलहिन एकान्त गृहमें लाए गये। परन्तु कुमार उस समय चिन्ताग्रस्त थे। उनको इस प्रकारसे म्रिय-माण और अत्यन्त शोकाकुल देखकर नववधू चरणोंमें गिरकर आरतवाणीसे कहने-लगी “प्राणपति हृदय नाथ! इस दासीके अपराधको ग्रहण न कीजिये! आपकी विकलताके कारणको मैं जानती हूँ। पिताने जिसकारण इस दासीको गुप्तरीतिसे

* राजपूतोंमें तोरण विवाहका प्रसिद्ध चिह्न माना जाताहै, एक समवाहु त्रिशुजके आकारमें काठके तीन बराबर डंडों पर यह बना होताहै। इसके ऊपर एक प्रकारकी गाँठ लगी रहतीहै। यह चिह्न कन्याके घरके बाहरके द्वारपर रक्खा रहताहै। कन्याकी सहेलियें उस तोरणकी रक्षा करनेके लिये उस फाटकका छत पर खड़ी रहती हैं। वर जिससमय घोड़ेपर सवार होकर आताहै, तो मालेको उठाये हुए तोरणको तोड़ना चाहताहै, तब वे औरतें समयानुसार गीत गातीं हुई अवीर गुलाल फेंककर उस वरके साथ नकली लड़ाई लड़तीहैं। जब वह तोरण टूट जाताहै, तब वीरनारियें युद्धमें हारकर वहाँसे भाग जातीहैं। यूरुपके उत्तर देशोंमेंभी इसी प्रकारका आचार हुआ करताहै इससे सिद्ध होताहै कि संसारके प्राचीन मनुष्य विक्रमकी सहायतासे ही स्त्रीरत्नको प्राप्त करतेथे। भारतीय आर्यलोगोंके बीचमेंभी यह प्रथा बहुत दिनोंसे चली आतीथी। जगजननी जानकीजी और महा-राणी द्रौपदीजीके स्वयंवरका वृत्तान्त पाठ करनेसे इसका प्रमाण मिल जायगा।

आपको समर्पण किया है, उस कारणको मैं जानती हूँ, यदि आज्ञा हो तो श्रीचरणोंमें निवेदन करूँ।” हमीरने उस बालिकाके मुख मंडलकी ओर देखा कि वह मुख सुकुमार है; सरलताका आधार है, उस पर विमल प्रकाशकी आभा विराजमान है। उन्होंने आदर स्नेह और प्रेमपूर्ण हृदयमें अपनी भार्याको पृथ्वीपरसे उठाया और अभय देकर उस गूढ़ वृत्तान्तके प्रकाश करनेको कहा। राजपूतवालाने कहना आरम्भ किया। “प्राणपति ! आप विस्मित न हों, मैं विधवा हूँ, परन्तु इस दासीसे आप घृणा न करें। अतिवालकपनमें भट्टवंशीय किसी राजकुमारके साथ मेरा विवाह हुआ था, उस समय मैं इतनी छोटी थी कि विवाहकी बातभी याद नहीं है; यहभी स्मरण नहीं है कि स्वामी किसप्रकारके थे। परन्तु जो कुछ मातासे सुना है, वही आपसे निवेदन करूँगी। विवाहके थोड़ेही दिन पीछे संग्राममें स्वामी मारे गये; तबसेही मैं अभागिनी विधवा और अनाथा हुई। आज आपको प्राप्त होकर मेरे मनका दुःख दूर होगया; परन्तु नहीं कहसकती कि अब मेरे भाग्यमें क्या बदल है ? ” बालासे और न बोला गया वह सरला बालिका अपने प्राणप्यारके हृदयमें अपना मुँह छिपाकर रोने लगी। उसकी सरलता, सत्यप्रियता और गाढे प्रेमको देखकर कुमारने उसके आँसू पोंछ दिये, और भली भाँतिसे समझाया बुझाया। स्वयंभी सन्देहके कारणसे छटे। उससमयके राजपूतलोग विधवा विवाहको अतिघृणित और अपमानकारी समझते थे। आज मालदेवने चाल करके राणा हमीरका अपमान किया, तेजस्वी कुमारने केवल भार्याका मुख देखकर इस अपमानको सहन किया *। उस पतिव्रता राजपूतवालाने इस अपमानका बदला लेनेके लिये स्वयं प्राणपतिको उत्साह दिलाया, तथा इसके विषयमें

* विवाहके होजानेपर हमीरने जिस कारण इसमें मौनता स्वीकारकी इसके कई कारण हैं उन्होंने सोचा कि इस बातका विवाद उठानेसे अब प्रतिष्ठामें बाधा पड़ेगी, और दूसरे उपहासका कारण होगा फिर इस बालिकाका ऐसे समयमें विवाह हुआ है कि इसको अपने पतिकी सुधभी नहीं है और सबसे विशेष उन्होंने यह बात समझ रखी थी, कि इस सम्बन्धसे हम चित्तौरका पुनः उद्धार कर सकेंगे, यही विचारकर उन्होंने इसमें आनाकानी न की, यद्यपि राजपूतोंकी छोटी जातियोंमें लोग विधवा स्वीकारकी पृथा बताते हैं, परन्तु सबका लक्ष्य इस हमीरमहोदयके समयसेही कहा जाता है, विधवासे सम्बन्ध करनेवाले नातरायत राजपूत कहलते हैं, विधवाके संग विवाह नहीं किन्तु नाता होता है, जिन राजपूतोंमें नाता नहीं होता वे नातरायत राजपूतोंको कुछ नीचा समझते हैं, पर कुछ कालमें उनका अभेद हो जाता है [नातरायतकी तीजी पीढ़ी गढ चढे] अर्थात् तीन पीढ़ियोंमें नातरायत राजपूतकी धेवती वा परधेवती गढपतियों [राजाओं] में प्राप्त हो जाती है इस कहावतके अनुसार उनमें भेद नहीं रहता पर यह प्रथा शास्त्रसम्मत नहीं है।

परामर्शभी की कि किस प्रकारसे मनोरथ सिद्ध होकर चित्तौरका उद्धार हो सकता है। स्त्रीके परामर्शके अनुसार हमीरने अपने श्वसुर मालदेवसे दहेजमें जलधरनामक एक सरदारको मांग लिया, मेहतावंशीय जलधर चित्तौरका अतिचतुर कर्मचारी था। मालदेव जामाताके कहनेको टाल नहीं सका, इसके उपरान्त एक परखवाडेके पीछे कुमारहमीर जलधरको साथ लेकर स्त्री सहित अपने कैलवाडा नगरमें पहुँचगये, और चित्तौरके उद्धारका अवसर देखते हुए सावधानीके साथ समय बिताने लगे।

कुछकाल बीतनेपर हमीरसिंहके, मालदेवकी पुत्रीके गर्भसे एक पुत्र हुआ। इस आनन्दोत्सवके समयमें मालदेवने राणा हमीरको वह समस्त पहाडीदेश दे दिये। जो कि अपने अधिकारमें थे। कुमारक्षेत्रसिंहने जब बारहवें मासमें पाँव रखवा तब एक गणक आया और उसने विचार करके कहा कि “इस लडकेपर चित्तौरके पुत्रदेवता क्षेत्रपालकी कुदृष्टि पड़ी है, अब इसका खंडन नहीं किया जायगा तो राजकुमारका अमंगल होना सम्भव है।” हमीरकी महारानीको यह सुअवसरभी सुअवसर होगया। रानीने विचार किया कि इस सुअवसरपर चित्तौरमें जाकर प्राणप्यारेका मनोरथ सिद्ध करनेमें सहायता करूंगी। इसही कारणसे शीघ्रता पूर्वक ग्रहशान्तिका उपाय मालदेवको पत्रमें लिख भेजा। मालदेवने इस पत्रको पातेही अपनी कन्या और धेवतेको बुलानेके लिये कई एक हथियारबंद सिपाहियोंको भेजा। महारानी उनके साथमें पिताके घरपर आई। आतेही देखा कि पिता मादेरियाके मीरलोगोंको दमन करनेके अभिप्रायसे राज्यके प्रधान २ सरदारोंको साथ लेकर गयेहैं। इस अवसरकोही हमीरके सौभाग्यका द्वार समझा गया। उस समयक्षेत्रसिंहकी माताने उन सरदारोंको जलधरकी सहायतासे शीघ्रतासे अपने वशमें कर लिया, कि जो मालदेवके साथ न जाकर चित्तौरमें रह गयेथे। इस ओर कुमार हमीरभी दल बल सहित चित्तौरके निकट आन पहुँचे; उन्होंने वागोरनामक स्थानमें समाचार पाया कि सबकाम ठीक है। अब तो बिना बिलम्बकिये चित्तौरमें प्रवेश किया, परन्तु उनकी गतिको प्रचण्डतासे रोकागया। यदि उस विघ्नको न रोकसकते तो कदाचित् वहीं पर उनके जीवनकी आशा जाती रहती। उनका अभिप्राय आकाशके फूलकी समान होजाता। परन्तु केवल असाधारण उत्साहके बलसेही उन्होंने खड्ग हाथमें लेकर समस्त विघ्नोंका नाश किया, और अपने प्राचीन स्थानपर अधिकार किया। जैसेही

चित्तौरपर कुमार हमीरने अधिकार किया वैसेही नगरके बालक वृद्ध और युवा पुरुषोंने शपथ करके उनकी आधीनताको स्वीकार किया ।

शोनगडा मालदेव शत्रुओंको जीतकर शीघ्रही चित्तौरमें आया, परन्तु यहांकी अवस्था देखकर उसका आनन्द, निरानन्द होगया । मालदेवको चित्तौरमें आता हुआ देखकर सर्दारोंने एक पटाका छोड़कर उसका सन्मान किया । इस प्रकारकी उपहासकारी सलामी देखकर मालदेवके मनमें विषम सन्देह पैदा हुआ । नरगमें प्रवेश करतेही समस्त समाचार जाने, आशाका अन्त होगया । हमीरसिंहने जिस प्रकारसे चित्तौरके सरदारोंको अपने वशमें कियाथा उससे मालदेवको सिंहासन पानेकी तिलमर भी आशा न रही । अतएव वह निरुपाय होकर अलाउद्दीनके उत्तराधिकारी महम्मद खिलजी * के पास अपना दुःख सुनानेके लिये दिल्लीकी ओर चला आज राणा लक्ष्मणसिंहकी भविष्यद्वाणी पूर्ण हुई । आज अरिसिंहके पुत्र वीर हमीर उस भविष्यद्वाणीको पूर्ण करके चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान हुए । चित्तौरनिवासियोंके आनन्दकी सीमा न रही । दुराचारी ग्रवनोंके कराल ग्राससे मेवाड़भूमिको छुटाहुआ देखकर नगरके समस्त नर नारी महो-

* तवारीखफारिस्तामें इस युद्धका वृत्तान्त नहीं पाया जाता । अतएव इस बातका जानना कठिनहै कि यह महम्मद कौन था । हिन्दोस्थानके इतिहासमें लिखाहै कि अलाउद्दीन खिलजीके बाद खिलजीके वंशका केवल एकही बादशाह दिल्लीके तख्तपर बैठा था । इसका नाम मुबारक था । यह अलाउद्दीनका तीसरा बेटा था । मुबारकके मरनेपर दिल्लीमें खिलजीके वंशका अंत होगया । यहां प्रश्न होताहै कि फिर यह महम्मदखिलजी कौन था । एलफिन्स्टन साहबने लिखाहै कि अलाउद्दीनकी वफातसे पहिले (सन् १३१२ ई०) में राणा हमीरने चित्तौरपर अधिकार कियाथा । सन् १३१६ ई० की १६ दिसम्बरको अलाउद्दीन परलोकवासी हुआ । यदि इस मतको लेकर विचार किया जाताहै, तो स्पष्ट ज्ञात होताहै कि अलाउद्दीनके मरनेसे चारवर्ष पहिले राणा हमीरने चित्तौरको ले लियाथा; परन्तु यह नहीं लिखा कि हमीरके हाथसे चित्तौरको लेनेके लिये फिरभी अलाउद्दीनने कोई चेष्टा कीथी या नहीं ? केवल इतनाही लिखाहै कि वह इस खबरके मालूम करने व औरभी आपत्तियोंके हाल सुननेसे अलाउद्दीनकी वीमारी बढ़ी, और वह जल्दीसे दुनियांको छोड़गया । अतएव ऐसा जानपड़ताहै कि अलाउद्दीनके बेटे मुबारककोही यहाँपर मुहम्मद लिखाहै । जिस समय मुबारक गुजरात और दक्खनपर चढ़ाथा, तब उसने चित्तौरके लेनेकीभी कोशिश कीथी, ऐसा अनुमान होताहै । यह जानपड़ताहै कि तवारीखफारिस्तामें इस वृत्तान्तको न पाकर एलफिन्स्टन साहबने भी अपनी तवारीखोंमें न लिखाहोगा ।

Elephinstone's History of India P.P. 39400.

त्सव करने लगे । शिशोदिया जातिके राजकुमारने आज शिशोदीय कुलकी उस स्वाधीनता व मान गौरवका फिर उद्धार किया है, आज फिर वीरकेशरी बाप्पा रावलकी सुवर्ण-प्रतिमा-स्वचित प्रचंड विजय-वैजयन्ती-चित्तौरके दुर्गपर फहराने लगी । उसको निहारकर निर्वासित नगरनिवासी अत्यन्त हर्षित हो कमल-मीरके बनका रहना छोड़कर चित्तौरनगरमें आने लगे । आज सबके हृदय आनन्दसे परिपूर्ण हैं । इस प्रकार हमीरको उद्धारकरता मानकर मेवाडके दलके दल लोग आकर उनके झंडेके नीचे इकट्ठे हुए । उनके मनोरथकी रक्षा करनेके लिये सबही मालदेवके विरुद्ध संग्राम करनेको तैयार हुए । राणा हमीरने इस सुयोगको हाथसे नहीं जाने दिया । प्रजाकेही बलसे राजा राज्यकी रक्षा करसकताह । वहा प्रजा आज हमीरके लिये अपना प्राणतक देनेको तैयारहै । बुद्धिमानलोग कभी ऐसे अवसरको हाथसे नहीं जाने देते । इसी समयमें यह समाचार आया कि मालदेवकी सम्मतिके अनुसार महम्मदखिलजी अपनी फौजको साथ लेकर चित्तौरपर चढा आताहै । हमीरपर विलम्बकरना नहीं सहागया । वेभी अपनी सेना और सामन्तोंको लेकर बादशाहकी गति रोकनेके लिये उसही ओरको चले । महम्मद बुरी घडीमें चित्तौरपर चढाई करके आयाथा, जीतना तो दूसरी बातहै, उसको वीरहमीरके हाथमें अपनी स्वाधीनतातक गँवानी पड़ीथी । अपनी दुर्बुद्धिसे विषम भ्रममें पतित होकर वह उन दुर्गम मार्गोंसे जो कि मेवाडके पूर्वप्रान्तमें थे, अपनी सेनाको लाया, ऐसा करनेसे उसकी बड़ी हानि हुई । वह देश इतना जटिल है कि उसमेंसे बाहिर न निकल पाकर बादशाहकी बहुतसी सेना एकसाथ नाकाम होगई । बहुतसे आदमी मरगये । इस प्रकार बहुतसे कष्ट और संकटोंका सामना करके बादशाहने शिंगौलीनामक स्थानमें छावनी डाली । महाराणाकी सेनाने वहींपर उनका सामना किया । दोनों दलोंमें घोर संग्राम होनेलगा । महाराणा हमीरसिंह प्रचंड केशरीकी समान अकेलेही यवनसेनाको दलित करने लगे । उस स्थानमें महाराणा हमीरने मालदेवके पुत्र हरीसिंहके साथ घोर युद्ध किया । परन्तु उस इन्द्रयुद्धके प्रथम आक्रमणमेंही अभाग्य हरीसिंह मारागया ।

अभाग्य मालदेवकी चिकनी चुपड़ी बातोंमें आकर बादशाह खिलजीने चित्तौरपर हमला कियाथा । जिस आशयसे वह संग्राम करने आयाथा वह आशय पूरा न हुआ, हमीरके प्रचण्ड बाहुबलसे हारकर बादशाहको राणाकी कैदमें आना पडा । हमीरकी जीत हुई । बादशाहको कैद करके चित्तौरके जेलखानेमें

डाल दिया गया । वहांपर तीन महीनेतक अत्यन्त कष्ट उठाकर बादशाहने अजमेर, रणथंभौर, नागौर, शुआ शिवपुर और पचासलाख रुपये व १०० हाथी अपने बदलेमें देकर छुटकारा पाया । खिलजीको विदा करनेके समय तेजस्वी हमीरने कहा, “ यह न समझना कि दिल्लीका बादशाह समझकर डरसे आपको छोड़ा गया है । आपकी सुआफिक सैकडों दुश्मनोंका हमला रोकनेके लिये मेरी शमशीर हमेशा तइयार रहैगी । आप नाहक भगूर होकर चित्तौरको अपनी कर्दामी दौलत समझकर फौज लेकर आये, इसही लिये आपका यह हाल किया गया । इसमें कोई शक नहीं कि आप बडेही जलील हुए, अगर कुछ दम रखतेहो फिर मेरे राजपर चढकर आना; हमीर हमेशा आपकी खातिर दारी करनेके लिये चित्तौरके दरवाजेपर खड़ा मिलेगा । ”

जब मालदेवका समस्त परिश्रम विफल हुआ । तब उसके बडेपुत्र वनवीरने राणाकी आधीनताको स्वीकार किया, हमीरने उसका आंदर करके नीमच, जीरण, रतनपुर और कैवारादि कितने एक देश इस लिये उसको देदिये कि जिससे सुसरालवाले मर्यादाके साथ अपनी जीविकाको चलाये जाय । उस भूमिवृत्तिके दानपत्रपर हस्ताक्षर करनेके समय महाराणा हमीरने अपने सालेसे कहा कि “विश्वासी होकर हमारी सेवा करतेरहो और अपना पालन क्रिये जाओ । एक समय तो तुम तुर्कोंके दासथे; परन्तु आज स्वधर्मवाले हिन्दूके दास हुए, यह ठीक है कि तुम अपने पिताका राज्य जानेसे दुःखी हुए होगे, परन्तु जरा विचार कर एकवार देख तो लो कि यह राज्यहै किसका ? मैंने किसके राज्यपर अधिकार कियाहै? यह तो हमाराही राज्यहै; वस अब तो यह समझना चाहिये कि हमारी चीज हमें मिलगई । जिस मेवाडके पहाडोंपर हमारे बडे बूढोंका रुधिर लगा हुआहै, आज सौभाग्य लक्ष्मीकी कृपासे उसही देशको पायाहै, और वही सौभाग्य लक्ष्मी हमको सब विपत्तियोंसे बचावैगी ।

तुम यह न समझना कि इस राज्य और इस धनको रमणीकी पूजा करनेमें स्वाहा कर दूंगा । ” वहनोईके उपदेशवाक्य वनवीरके हृदयमें गडगये उसने उनको सार्थक करनेके लिये मेवाडराज्यके बढ़ानेका संकल्प किया और थोडेही समयमें भिन्सरोर शहरके राज्यपर चढाई करके उसको जीता और मेवाडमें मिला दिया । इस प्रकार वीरवर हमीरके अनन्त प्रभावसे मेवाडके गौरवका उद्धार होगया । यह देखकर राजस्थानके समस्त राजा परमानंदमें पूर्ण हो अपनी

इच्छानुसार विधि विधानसे महाराणा हमीरकी पूजा करने व आवश्यकतानुसार अपनी सेनाको भी भेजकर उनकी सहायता करनेलगे ।

उस कालमें सारे भारत वर्षके बीच महाराणा हमीरही एक प्रबल पराक्रमी राजा थे, भारतके प्राचीन राजवंश उससमय बहुधा मुसलमानोंके सतानेसे ऊजड़ होगयेथे। माडवार और जयपुरके वर्तमान राजाओंके पूर्व पुरुषगण और बूंदी, ग्वालियर, चन्देरी, सरैसीन, सीकरी, कालपी और आबू आदिके राजालोग अति विनीत-भावसे चित्तौरके चक्रवर्ती नरेश महाराज हमीरकी पूजा करके उनकी आज्ञा-को देववाक्य समझकर पालन करते और अपनी २ सेना लेकर उनकी सहायता करनेको शत्रुसे संग्राम करते थे ।

जिस दिनमें भारतकी स्वाधीनताका हार तातारियोंके गलेमें डाला गया; उसही दिनसे मेवाड़ राज्यका पूर्वप्रताप बहुतायतसे मंद होगया था। यद्यपि वह प्रताप विशेष अधिक और प्रचंड था, परन्तु उसके चलेजानेसे मेवाड़की कोई विशेष हानि नहीं हुई। कारण कि एक ओरसे जिसप्रकार वह कम हुआ, दूसरी ओरसे वैसेही राज्यकी प्रभुता अखण्ड भावसे स्थापित होगई । यदि विचार कर देखा जाय तो ज्ञात होगा कि मेवाड़का यह दृढ़ीकरण वीर हमीरकेही राज्यमें सबसे पहिले हुआ। वावरके समयतक मेवाड़ इसी प्रकारसे दृढ़ रहा। उन दिनोंमें बड़े २ प्रतिष्ठित राजा मेवाड़के सिंहासनपर बैठेथे। यद्यपि वह निष्कं-टक राज नहीं करसके, यद्यपि, मालव, गुर्जर, और दिल्लीके मुसलमान बाद-शाह वारंवार उनसे वैर किये जातेथे, तथापि चित्तौरकी वह दृढ़ प्रभुता किसी प्रकारसे खंडित न हुई। चित्तौरके राजालोग क्रम २ से शत्रुओंकी चढाईको व्यर्थ करने लगे। विशेष करके जब दिल्लीके सिंहासनके विषयमें खिलजी, लोदी और सूरवंशके बादशाह आपसमें झगड़ा करने लगे, तब मेवाड़की दशा अत्युत्तम होगई थी। कारण कि उस आपसके झगड़ेके समय सुभीता पाकर मेवाड़के राजाओंने अपनी उस दृढ़ प्रभुताको दूना दृढ़ करलिया-था। उस काल वे राजालोग देशवैरियोंके आक्रमणकोही रोककर चुपचाप नहीं रहतेथे, वरन अपनी २ विजयिनी सेनाको लेकर दिग्विजयके लियेभी यात्रा करते थे, एक ओरसे नगरकोटके पहाड़पर और दूसरी ओर दिल्लीके सिंहद्वारपर अपने विजयकी छापको लगा देतेथे। इस समय मेवाड़राज्यने केवल शान्तिही नहीं भोगी थी वरन सौभाग्य, लक्ष्मीके प्रसादसे यहाँके रहनेवाले अत्यन्त धनवाले होगयेथे। कारण कि इस समय मेवाड़राज्यमें जो

कईएक विशाल मंदिर और स्तम्भ बनाए गयेथे उनके व्ययका अनुमान करनेसे हमारी उक्ति भली भांतिसे प्रमाणित होगी । उस समय इस प्रकारके एक जयस्तम्भके बनवानेमें एक राजाको अपने समयकी सारी आमदनी लगा-देनी पड़ती थी । यदि उस समयके मेवाडकी दश वर्षकी आमदनीभी एक स्तम्भको लगा दी जाय तोभी उसका तइयार होना कठिन हो । पहिलेही कह आयेहैं कि महाराणी पद्मिनीके महलके अतिरिक्त और समस्तही सुन्दर २ स्थान अलाउद्दीनने तोड़ दियेथे, परन्तु एक औरभी जैन धर्ममंदिर उसके करालग्राससे बच गयाथा । जैन सम्प्रदायके प्रतिष्ठित सज्जनोंने इस मंदिरको बनवायाथा । ऐसा ज्ञात होताहै कि जैनधर्मावलम्बियोंकी एकेश्वरवादिताको जानकर अलाउद्दीनने उनके पवित्र धर्ममंदिरको विध्वंस न किया होगा । इन स्थानोंका दर्शन करनेसे साफ मालूम होगा कि शिशोदियाकुलके राजालोग शिल्पशास्त्रके अत्यन्त अनु-रागी थे । भूमिकरके सिवाय हिन्दूराजाओंको उस कालमें और कोई विशेष आमदनी नहीं थी, परन्तु केवल भूमिकरकी आमदनीसे किसप्रकार इतने २ खर्च करके वह अपनी विशाल सेनाका निर्वाह करते थे इस बातका विचार करनेसे हृदय विस्मित होताहै । अतएव निश्चय यही जान पड़ता है कि शिशोदीय राजा-लोग दीर्घकाल तक राज्य भोग करके अपने राज्यको धीरता, चतुरता और सुशृं-खलतासे पालन करते थे ।

यदि ऐसा न करते तो इस प्रकारकी महान् कीर्तियें किसी प्रकारसे प्रतिष्ठित नहीं होतीं । उस उच्च और संपत्तियुक्त अवस्थामें मेवाडकी प्रजाने भी अपने कीर्तिस्तम्भोंको राजकी समान स्थापित कियाथा । परन्तु कालके कंठोर और प्रचण्ड प्रहारसे वह समस्त कीर्तिस्तम्भ आज टूट फूट कर विध्वंस हो गये । राज स्थानके त्यागे हुए विजयदुर्गम देशोंमें आजतक उनके खंडहर दिखाई-देते हैं गौरव और सम्पत्तिके ऊंचे आसनपर विराजमान होकर महाराणा हमीरने वृद्ध अवस्थामें परलोक यात्रा की । महाराणा हमीर अतिधीर, तेजस्वी, साहसी और चतुर थे. उनके अपूर्व गुणोंका वर्णन आजतक मेवाडवाले किया-करतेहैं । वे लोग आजतक गिहोटी कुलके दूसरे पवित्र और माननीय राजाओंके साथ वीर, धीर हमीरके नामका जप किया करतेहैं ।

महाराणा हमीरके परलोकवासी होनेपर उनका बड़ापुत्र क्षेत्रसिंह (खेतसिंह) पिताजीके दिये हुए विशाल राज्यभारको पाकर सम्वत् १४२१ (सन् १३६५ई०) में चित्तौरके सिंहासनपर बैठा । वालक क्षेत्रसिंह अपनी चतुरता

और बुद्धिमानीके प्रभावसे बहुत शीघ्र पिताका योग्य पुत्र हुआ। अल्पकालमेंही पिताकी प्रचण्ड जिगीषा, वीरता और तेजस्विताका अनुकरण करके उसने अजमेर और जहाजपुरको जीता और मंडलगढ़ दूसरी तथा समस्त चंपनको अपने विशाल राज्यमें मिला लिया। वकरोलनामक स्थानमें दिल्लीश्वर हुमायूँ *के साथ उसकी एक लड़ाई हुई। दिल्लीकी विशाल फौजको उसने भली-भाँतिसे जीतलिया। परन्तु कुभाग्यतासे उनका वह विजय गौरव, वह वीरता तेजस्विता अतिसाधारण बातपर इति होगई। उसके अनमोल जीवनकी पवित्र गाँठ, इन लोचके मध्य अकालमें टूट गई। मेवाड़के भीतर जो वनोदानामक स्थान बसाहुआहै, उसके हारावंशीय सामन्तराजकी बेटीसे क्षेत्रसिंहकी सगाई हुई थी, परन्तु अभाग्यतासे उस सुविवाहके होनेसे पहिलेही, उस हारासरदारने क्षेत्रसिंहको गुप्तभावेन मारडाला। कौनसी पाशवी वृत्तिका पोषण करनेके लिये इस दुर्गचारीने अपने राजाको मारडाला इसका भेद कुछभी ज्ञात नहीं हुआ।

जब क्षेत्रसिंहकी इस प्रकारसे अकाल मृत्यु हुई तब राणालाक्ष (लाखा) (सम्वत् १४३९) (सन् १३८३ ई०) में चित्तौरके सिंहासनपर बैठे। सिंहासनपर बैठतेही राणा लाक्षने मेरवाडानामक पहाड़ी देशको जीता, और वहाँके प्रसिद्ध दुर्ग विराट्गढ़को ऊजड़करके उसके ही खंडहर पर विदनौरके प्रसिद्ध दुर्ग स्थापन किया। राणा लाक्षने एक सबसे बड़ाकार्य औरभी किया कि जिसके करनेसे वह भलीभाँतिसे प्रसिद्ध हुए और इसीसे उनका राज्य बढ़ा। राणा क्षेत्रसिंहने भीलोंके जिस चम्पनदेशको जीत लिया था, उसके भीतर बसे हुए जावडानामक स्थानमें चाँदी और टीनकी एक खानि निकली। कहतेहैं कि इसखानिमें बहुताय-

* यह हुमायूँ कौनथा। सिन्दोस्थानके इतिहासमें सन् १३६५ ई० से लेकर सन् १३८३ ई० तक किसी हुमायूँका नाम नहीं पायाजाता। फिर यहाँपर टाडसाहबने किसको हुमायूँ कहाहै? मुगलखान्दानके हुमायूँको सब इतिहासलेखक जानते हैं यह बादशाह ईसवीकी सोलहवीं शताब्दीमें हुआहै। अतएव साफ मालूम होताहै कि यहाँपर उसका वर्णन नहींहै। एलफिन्ष्टनसाहबने निजरचित भारतके इतिहासमें लिखाहै कि दिल्लीश्वर नसीरुद्दीन तुगलकका हुमायूँनामक एक बेटा था। सन् १३९४ ई०में वह अपने बापके पीछे गद्दीपर बैठा। समयका कुछ अन्तर जरूर पड़ताहै और सब बातोंमें यह टाडसाहबके कहेहुए हुमायूँसे मिलताहै, इसने बुढ़ापेमें दिल्लीका तख्त पाया, और डेढ़ महीनेके बाद परलोकको सिधारा। ऐसा ज्ञात होताहै कि टाडसाहबने इसही हुमायूँका नाम यहाँपर लिखाहै। यद्यपि सन् १३९४ ई०से पहिले इसको सिंहासन नहीं मिला। परन्तु यह बात किसीप्रकारसे असम्भव नहींहै कि यह सन् १३६५ ई०में जीता जागता था।

तसे सप्तधातु*पाई जातीहैं, परन्तु इस समय यह वार्ता ठीक नहीं जानपडती । सोनेका तो कोई पताही नहीं पायाजाता हां चांदी, टीन, ताँबा, सीसा और रसांजन यह वस्तु बहुतायतसे निकलतीहैं । परन्तु चाँदी और टीन जिस एकही खनिज पदार्थसे निकलती थीं, और जिनको उसपदार्थसे पृथक् २ करलिया जाताथा, आज बहुतसी टीनको पृथक् करनेपरभी थोड़ीही चाँदी निकलतीहै ×

लाक्षराणाके शासनकालमें मेवाडकी अत्यन्त श्री वृद्धि हुईथी । और महाराणाका गौरवभी अत्यन्त बढ़ाथा । अम्बरके अन्तर्गत नगराचलनामक स्थानमें शंकलावंशके कितने एक राजपूत वास करतेथे, राणा लाक्षने उनकोभी पराजित किया । केवल अपनी जातिके विरुद्धही उन्होंने खड्ग नहीं धारण कियाथा, वरन दिल्लीके बादशाह लोदीसेभी उन्होंने संग्राम किया था, और विदनौरनामक स्थानमें बादशाहकी भलीभाँतिसे खबर लीथी । राणा लाक्ष जिस प्रकारके वीरथे, वैसेही वीरोचित पवित्र कार्यमें उन्होंने अपने प्राणोंको नेवछावर करदियाथा, उपरोक्त संग्राम होनेसे कुछही दिन पीछे पुण्यभूमि गयाजीपर म्लेच्छोंने चढ़ाई कीथी । पापी म्लेच्छोंके द्वारा गयातीर्थके धिरजानेपर, सनातनधर्मकी विपत्तिके समयपर क्या सनातनधर्मावलम्बी वीर भूपाल गण चुपचाप रहसकते हैं ? सम्पूर्ण भारतवर्षमें एक घोर संघर्षण हुआ । क्षत्री-वीरगण, यवनोंके कलुषमय कवलसे पुण्यभूमिका उद्धार करनेके लिये अपनी । २ सेनाको लेकर चले । शिशोदीय वीर राणा लाक्षभी इस धर्मयुद्धमें अपनी सेनाको लेकर गयेथे । महाराणाने उस धर्मयुद्धमें अनुपम वीरता प्रकाशित करके वहींपर अपने प्राणोंको न्योछावर करदिया । स्वधर्मानुराग और स्वदेश प्रेमिकताहीके कारणसे उनका नाम माननीय मेवाडके प्रसिद्ध और प्रातःस्मरणीय राजाओंकी पवित्र नाममालाओंमें ऊँचेस्थानको प्राप्त हुआ-

* स्वर्ण रौप्यञ्च ताम्रञ्च रंगं पारद एव च ।

सीसं लौहञ्च सप्तैते धातवो गिरिसम्भवाः ॥

भावप्रकाश । कहतेहैं कि सप्तधातुओंके साथ सातग्रहोंकामी विशेष सम्बन्ध है ।

× बहुतदिनोंसे यह अन्मोल खानें छूटी हुई पड़ीहैं । अब वहाँपर दुर्गम बन होगया है । वहाँ जानेकी किसीकी हिम्मत नहीं होती । वहाँके रहनेवालोंने उन खानियोंकी अधिष्ठात्री देवियोंके जो मंदिर बनायेथे वहभी इस समय टूटेफूटे पड़ेहैं । कोई एक फूल चढ़ाकरभी अब उनकी पूजा नहीं करता । वहाँके मीलगण इन पुराने देवताओंको छोडकर नए २ देवताओंकी पूजा करते हैं । वहाँपर इससमय भगवती लक्ष्मीजीकी पूजा छूटगई और शीतलादेवीजीकी पूजा हुआ करती है ।

है। महाराणा लाक्ष जिसप्रकारसे स्वदेशानुरागी थे, वैसेही शिल्पकेभी प्रेमी थे। अपने देशकी शोभाको बढ़ानेके लिये वे जिनशिल्पकार्योंको करगयेहैं, आजतक वह कार्य ज्योंके त्यों वर्तमान रहकर उनकी गंभीर शिल्पप्रियताकी साक्षी देरहे-हैं। राज्यके स्थान २में बड़ी २ पुष्करणियों और नकली सरोवर उन्होंने बनाये। जिनखानियोंका हम पहिले वर्णन करआएहैं उनसे जो कुछभी आम-दनी होती वह समस्त देशोन्नतिके कार्यमें लगादीजाती थी। विशेषकरके दुष्टअलाउद्दीनने जिन सुन्दर स्थानोंको और देवमंदिरोंको तुड़वादिया था, महाराणा लाक्षने उस विपुलसम्पत्तिकी सहायतासे उन सब स्थानोंको फिरसे बनवादिया। महाराणी पद्मिनीका महल जिसप्रकारसे बनाया, ठीक उसहीप्रकारका एकदूसरा मनोहर महल बनाया गया। इस महलका कुछ अंश आजतक दिखाई देताहै। इनसबके सिवाय राणाजी बहुत धन लगाकर ब्रह्माजीकाभी एक बड़ा मंदिर बनवाया। यह अद्वितीय मंदिर एकेश्वरदेव भगवान ब्रह्माजीके नामपर उत्सर्ग किया गया। इसही कारणसे इसमें किसी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा नहीं हुई। ज्ञातहोताहै कि इसहीसे हिन्दूविद्वेषी आक्रमण कारियोंकी प्रचण्ड विद्वेषानलसे इसने निस्तार पाया है। नहीं तो अभीतक इसका भी खंडहरही दिखाई देता।

गणा लाक्षके बहुतसी सन्तान हुईथी। अवसर आनेपर इस समस्त सन्तानने राजस्थानके भिन्न २ देशोंमें अपने २ नामका एक २ गोत्र स्थापित किया। उनमें लूनावत और दुलावतवाले प्रसिद्ध हैं। आजभी अगुणा पानोरके पास और आरावलीके दूसरे देशोंके रहनेवाले स्वाधीन ज़िमीदारलोग उस दुलावत और लूनावतके नामसे अपना परिचय बताते हैं * महाराणा लाक्षके बड़ेपुत्रका नाम चण्ड था। सबसे बड़ा होनेपरभी चंड पिताके सिंहासनपर नहीं बैठा। किस प्रकारके कारणसे सदाकी रीतिमें अन्तर आगया, और उससे मेवाड़ राज्यमें कैसे २ अनर्थ हुएथे उनकी यथायोग्य समालोचना आगेके छठे अध्यायमें जायगी।

* चप्पनके निकटवाले कानूरके सायंगदेवल सरदार और सिन्धुनदके तीरवाले शोडवारके सामन्तगण राणा ताक्षहीके वंशमें उत्पन्न हुए हैं।

—D C 23 3 * 23 3 O—

आजकल बहुतसे महाशय यह कहतेहैं कि जो लोग स्त्रीजातिके विशेष अनुरागीहैं वह सबसे अधिक सभ्यहैं । यदि इससिद्धान्तका अनुमोदन कियाजाय, यदि स्त्रीजातिके प्रति अनुराग और शिष्ट व्यवहारके परिमाणके अनुसार जातीय सभ्यताकी बराबरीकी तुलना करनीहो, तो अवश्यही राजपूतलोगोंको सभ्यताका अग्रनायक स्वीकार करना चाहिये । राजपूतलोग अपने हृदयमें आराध्य देवताकी भांति स्त्रीकी पूजा किया करतेहैं; यदि इस देवताका किंचित्भी अपमान होजाय यदि उसके सन्मान या शिष्टाचारमें जराभी अन्तर पड़ जाय तो तेजस्वी राजपूतोंके हृदयमें आगसी बलउठतीहै, और जबतक अमानकारीके हृदयके रुधिरसे अपनी आग नहीं बुझालेते, तबतक किसी प्रकारसे उनकी शान्ति नहीं होती । आगा पीछा न सोचकर साधारण उपहासकी रीतिसे इस रीतिमें विघ्न डालनेवाले एक बन्धुकोभी राजपूतोंने भयंकर शत्रु गिनाथा । जो राठौर और कुशावहलोग बहुत दिनसे एक अभिन्न सौहार्दकी डोरीमें गुँधेहुँएथे, इस शिष्टाचारके विरोधी विद्वेषात्मक वाक्यसे वे परस्पर एक दूसरेके शत्रु होगये । इस शत्रुतासे दोनोंओरकी बड़ीभारी हानि हुई । जिससमय वे दोनों मित्रभावसे रहतेथे तब उन दोनोंका बल एक साथ मिलकर अत्यन्त दुर्घर्ष होगयाथा । यहांतक कि प्रचण्ड महाराष्ट्री भी उनके सामनेसे तृणकी समान उठगयेथे । परन्तु जब उस अनर्थ विवादसे दोनों अलग २ होगये तब उन महाराष्ट्रियोंने सुयोग पाकर उन दोनोंको पराजित करके उनकी घोर हानी की । अतएव समझना चाहिये कि तेजस्वी राजपूतोंके लिये रमणी विषयक शिष्टाचार साधारण बात नहींहै । स्त्रियोंके विषयमें अतिसाधारण परिहास करनेसे भेवाडके स्वामी महाराणा लाक्ष्मण जा अग्नि अपने बड़ेपुत्र चंडके हृदयमें जलादीयी, वह सहजसेही नहीं बुझी । उसके

बुझानेमें राज्यकी एक पुरानी रीतिको उल्टा करना पडा और उसके उल्टा करनेसे मेवाडमें जो अनिष्ट हुआ, वैसा अनिष्ट मुसलमान या महाराष्ट्रियोंके आक्रमणसे भी होना सम्भव नहींथा ।

सुरजदुःखसे अपने दीर्घजीवनको व्यतीत करके राणा लाक्ष बूढ़ेहोनेको आये । इससमयमें अनर्थकारिणी विषयचिन्ताको छोडकर परमार्थचिन्तामें मन लगाय अन्तमें अपने समयको शान्तिसे व्यतीत करना चाहतेथे । उनके बेटे पोते यथायोग्य वृत्ति और भूसम्पत्तिको पायकर परमानन्दसे समयको व्यतीत कर रहेहैं । अब उनको किस बातकी चिन्ताहै ? अब केवल बड़ेपुत्र चण्डको यौवराज्यपर अभिषेक कर देनेसेही वे निश्चिन्त होकर भगवानका भजन करेंगे । परन्तु विधाताने बांझहोकर फिर उनको संसाररूपी नदीकी धारके भँवरजालमें डाला । राणाकी परमार्थचिन्तामें विघ्न हुआ, शान्तिके मार्गमें कांटा पडा । वह इस दिपत्यन्त संसारचिन्ताके सांतेसे किसीभांति न निकलसके ।

एक दिन राणा लाक्ष मंत्री, पारिषद और प्रतिष्ठित सामन्तोंके साथ अपनी राजसभामें बैठे थे कि इतनेहीमें मारवाडके राजा रणमल्लका पठाया हुआ एक दूत वहां " नारियल " लेकर आया । राणाने उस दूतका यथायोग्य सम्मान करके मारवाडके भूपालकी कुशल पूछकर उसके आनेका कारण पूछा । दूतने कहा—" महाराणाके बड़े पुत्र युवराज चण्डके साथ अपनी कन्याका व्याह ठहराकर महाराज रणमल्लने यह नारियल भेजाहै । " चंड उस समय राजसभामें नहीं था; इस कारणसे राणाने दूतको कुछदेरतक ठहरनेके लिये कहा और धीरे २ बोले कि " इसीसमय चंड सभामें आकर इस विवाहमें अपनी सम्मति देगा । " अनन्तर अपनी डाढ़ीको चढ़ाते हुए हँसकर बोले कि " मैं जानताहूँ कि मेरी समान सफेद डाढ़ी मूँछवालेके लिये आपलोग इस प्रकार खेलकी सामग्रीको नहीं भेजते । " राणालाक्षके मधुर और कौतुक । युक्त वचन सुनकर समस्त सभासद परम पुलकित हुए, और रसीले वचनकी विशेष प्रशंसा करके बारम्बार उसबातको कहने लगे ।

इतनेहीमें कुमार चण्डने सभामें आकर इस समाचारको सुना । पिताने कौतुकके वश होकरभी जिस सम्बन्धको जरादेरके लिये अपना समझाहै, फिर पुत्र उससम्बन्धको किस प्रकारसे अपना करसकता है ? चण्डके हृदयमें यह कूट चिन्ता खलवलाने लगी । बारम्बार इस प्रकारसे विचार करके चंडने निश्चय किया कि यह सम्बन्ध मैं किसी भाँतिसे नहीं करूँगा । चण्डके इस सिद्धान्तको शीघ्रही राणाने

सुना । पुत्रके इस सिंद्धान्तको अनुचित कहकर राणाने वारंवार उसको बहुतेरा समझाया, परन्तु चण्डके एकभी ध्यानमें न आया । वे चंडके दृढसंकल्पको किसी प्रकारसे भी नहीं टाल सके । राणाको उभय संकट हुआ ! एकओर चंडकी कठोर प्रतिज्ञा और संकल्प, दूसरीओर मारवाडके राजा रणमल्लका घोर अपमान । क्रमसे यह अपमान अनिवार होने लगा । कारण कि राणाके हजारों उपदेश, स्नेहवचन, अनुरोध, आदेश अन्तमें भयदिखानाभी निष्फल होगया । दृढप्रतिज्ञा चंडने किसी प्रकारसे उस विवाहमें अपनी सम्मति न दी । तब तो राणा पुत्रसे अत्यन्त अप्रसन्न हुए, और रणमल्लको अपमानसे वचानेक लिये स्वयं उस विवाहको करना स्वीकार किया । कहां तो बुढ़ापेमें संसारकार्यको छोडकर अन्तसमयको शान्तिसे विताना सोचा था, परन्तु सो न होकर फिर संसारके चक्रमें घूमना पडा । जिस पुत्रको प्राणोंसेभी अधिक समझते थे, जिसको यौवराज्यपर अभिषेक करके संसारसे छुटकारा लेनेकी तइयारी कीथी; उस पुत्रका ऐसा आचरण ? पुत्रहोकर पिताके सुखदुःखका कुछभी ध्यान न किया-पिताके मुखकी ओरभी न देखा?-फिर वह पुत्र किसकाम आवेगा ? राणा इन बातोंको सोचकर अत्यन्त रुष्ट हुए । क्रोधके मारे अत्यन्त तिरस्कार किया तेजस्वी चंड चुपचाप है-मौनभावसे पिताके समस्त तिरस्कारको सहता । दारुण अपमानके मारे उसका हृदय खलबलाने लगा । परन्तु वह स्थिरभावसे खडा रहकर उस भयंकर तिरस्कारको सहन करता रहा । कुछभी उत्तर न दिया । फिर राणाने गंभीरकंठसे कहा “अच्छा मैंही उस स्त्रीका पाणिग्रहण करता हूं; परन्तु तुम निश्चय जानियो कि उसस्त्रीके गर्भसे यदि कोई पुत्र हुआ तो तुम्हारे उत्तराधिकारका अधिकार जाता रहैगा-शपथ करों ।” इस कठोर वचनको सुनकर तेजस्वी चंडके शिरका एक केशभी तो कम्पायमान नहीं हुआ । वह अचल अटल और स्थिरभावसे खडे रहकर धीरभावसे बोला । “हां पिता ! मैं भगवान एकलिंगकी शपथ करके कहताहूं कि पुत्र होनेपर मैं अपने उत्तराधिकारको स्वयं ही छोड़दूंगा ।

होनहारकी गूढ़ लिखनको कौन मेटसकताहै? बारहवर्षकी कन्यासे पचास वर्षके महाराणाका विवाह हुआ । इस विचित्र संयोगसे होनेवाले पुत्रका नाम मुकुलजी हुआ, जब मुकुलजी पांचवर्षका हुआ तो राणाने सुना कि यवनलोगोंने पुण्यतीर्थ गयाजीपर चढ़ाई की है और उन दुराचारियोंके ग्राससे इस पवित्रक्षेत्रका उद्धार करनेके लिये भारतवर्षके समस्त राजालोग उसही ओरको चलेहैं । तब महाराणा लाक्ष्मणभी उस कठोर व्रतका अवलम्बन करके अपने अन्तकालको पवित्र करनेका

संकल्प किया। भारतवर्षके सनातनधर्मावलम्बी राजाओंका ऐसा विश्वास था “कि राज्यकरनेसे राजाको अनन्त पापका भागी होना पड़ता है।” अन्तकालके समय राज्य धन और विषयवासनाको छोड़कर कठोर मुनिवृत्तिका अवलम्बन करके व्रतानुष्ठान, परमार्थचिन्ता, तीर्थगमन और दानादि पुण्यकार्यका अनुष्ठान न करनेसे किसीप्रकार इसपापसे निस्तार नहीं होता। इसही विश्वासको हृदयमें धारण करके इस कठोर संग्राममें प्राण देनेको तैयार हुए। परन्तु इसलिये धर्मावलम्बी तानाशाहोंके जिसदिन हिन्दुओंके सनातनधर्मको कलंकित करनेके लिये तैयार हुए, और जिसदिन वे उस कुअभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये खड्गसे काम लेनेको तैयार हुए; उसही दिन हिन्दूराजाओंने उस शान्तिमय जीवनको त्यागकर कठोर वीर धर्मके धारण करनेका लक्षण दिखाया। उसही दिन उन्होंने शत्रु और कर्गार नदीके विशाल किनारे रक्तसे रंगदिये और गया तीर्थका उद्धारकरना उनका प्रधान साधन हुआ। उनका दृढ़ विश्वास था कि यदि वे लोग पापिष्ठ यवनोंके कलुषित ग्राससे पुण्यतीर्थ गयाधामको उद्धार करलेंगे तो पुनर्जन्म न होगा। तथा अज्जरागण दिव्यविमानमें बैठालकर उस साधन भूमिसे स्वर्गलोकमें ले जायगी। विश्वासही कार्यका प्रधान प्रणोदक और अग्रनायक होता है। इसही विश्वासके वशवर्ती आर्य नृपतिगण बुढापेमें दुर्द्धर्ष म्लेच्छोंके साथ घोर संग्राम करनेके लिये तैयार हुए। उनकी तपस्या यही है। आज महाराणा लाक्ष उसही कठोर तपस्याको करनेके लिये भयंकर संग्राम करनेको अवतीर्ण हुए। इस दुस्साध्य व्रतको अवलम्बन करनेसे पहिले उन्होंने विचार किया कि अपने राज्यकी व्यवस्थाभी करदें। राज्यसे विदा गृहण करने पर किसी प्रकारका झंझट न हो इस बातका प्रबन्ध करनाही उन्होंने परम कर्तव्य समझा। उसकाल महाराणाने चण्डसे इस बातका कोई परामर्श न किया कि उत्तराधिकारी कौन होगा? अथवा यह राज्य किसको दिया जायगा। केवल इतनाही कहा कि—“मैं जिस कठोर व्रतको करनेके लिये जाता हूँ, इसमें ऐसी आशा नहीं है कि फिर उद्यापन करके भी देशमें लौट आऊँ। यदि मैं न लौट सकूँ तो फिर मुकुलकी उपजीविकाका क्या उपाय होगा? फिर मुकुलके लिये कौनसी सम्पत्ति निर्धारित होगी?” तेजस्वी चण्डने स्थिरभावसे खड़े होकर धीर और गंभीर भावसे उत्तर दिया कि “चितौरका राजसिंहासना” कदाचित इस सरल और उदार उत्तरको सुनकर राणाके मनमें कुछ सन्देह हो इस लिये बुद्धिमान चण्डने पिताकी गया यात्रासे पहिलेही मुकुलके अभिषेक कार्यको करनेका विचार किया। चण्डकी दृढप्रतिज्ञा

और अद्भुत आत्मत्याग देखकरभी राणाके मनमें सन्देह हुआ इससे युद्धमें जानसे प्रथमही उन्होंने मुकुलजीको राजपर अभिषेक करदेना चाहा, शीघ्रही अभिषेककी सामग्री एकत्र हुई। पाँचवर्षके बालक मुकुलको राजसिंहासनपर विराजमान करके चंडने सबसे पहिले उसको राजोपयोगी सन्मान और आदर दिखाया, व उसके निकट अनुगत और विश्वासी रहनेकी प्रतिज्ञा की। इस महान स्वार्थ त्यागके बदले संश्रयमें उनको सबसे ऊँचा आसन दिया गया और यह भी विधि होगई कि उस दिनसे जिस किसी सामन्तको भूमिवृत्तिका दान किया जायगा, उसके दानपत्रपर राणाके हस्ताक्षरोंसे ऊपर चंडके खड्गका चिह्न बना रहैगा। चित्तौरके राजाओंने उस दिनसे जिसको जो कुछ भूमिवृत्ति दान की उस दानपत्रके ऊपर सालुम्बा * पतिके खड्गका चिह्न बना हुआ दिखाई देताहै।

कुमार चंद्रका हृदय जिस महत्त्व, वीरता सहनशीलता और उदारता आदि सुन्दर गुणोंसे भूषित था, यदि मुहूर्तभरतक उनके आत्मत्यागका विचार किया जायगा तो भली भाँतिसे यह बात प्रमाणित होगी; कि पिताके पीछे अपने लघुभ्राता मुकुलका और सम्पूर्ण मेवाडराज्यकी भलाई व श्रीवृद्धिके लिये अति-चतुरताके साथ समस्त राज्यभारको भली भाँतिसे देखने लगे। परन्तु मुकुलकी माता उनके प्रबन्धसे अत्यन्त अप्रसन्नथी। यह चाहतीथी कि मुकुलके समर्थ होनेतक मैं स्वयं राजकार्यका प्रबन्ध करूँगी। परन्तु उसकी यह आशा पूर्ण न हुई; इस कारणसे मनमें महादुःख हुआ। कुटिल हिंसा और विद्वेषके चलायमान करनेसे उसने पवित्र कृतज्ञताको हृदयमें स्थान न दिया ! उस समय उनका हृदय पशुकी समान होगया था। नहीं तो जिस चंडके स्वार्थ त्यागके बिना वह कभी भी “मेवाडकी राजमाता” न होसकती थीं; हृदयपर पत्थर रखकर यथार्थ राक्षसी और पिशाचनीकी मूर्ति बनाय उसही चंडके अपूर्व गौरवको भूल गई। तथा उसहीका बुरा चीतनेके विचारमें लगीं ! वीरवर चंडके प्रत्येक कार्यको यह राजमाता डाह और घृणाके साथ देखने लगीं। फिर पीछे किसी प्रकारका छिद्र न देखपानेसे केवल अमूलक संदेह और विनोने स्वभावके वशमें पडकर चंडके सीधे साथे कार्योंमें भी दोष लगाकर कहा। “राजकार्यको चलानेके वहानेसे चण्ड स्वयंही राणा बने जातेहैं, यद्यपि वह अपनेको राणा नहीं कहते हैं, परन्तु इस उपाधिको केवल नाममात्र रखना चाहतेहैं। धीरे २ यह

* चंडके वंशवाले चण्डावत (चन्दावत) नामसे पुकारे जाते हैं। उनके स्वामी और सरदारके रहनेका स्थान सालुम्बा है। मेवाडके सर्दारोंकी सभामें सालुम्बापति सर्व श्रेष्ठ गिने जातेहैं।

समस्त बातें चण्डने सुनीं । वे भलीभांतिसे अपने हृदयको पवित्र और सरल-भावको जानतेथे, उनको दृढविश्वास था कि छोटे भाईके संगलके लिये और राज्यकी संपत्ति वृद्धिके लिये हमने राजसन्मानको न्योछावर कर दियाहै ! हा क्या इनबातोंका यही बदलाहै ? यह चण्ड यहभी जानतेथे कि पुत्रके स्वार्थके लिये माताका हृदय बारंवार व्याकुल और संदेहयुक्त रहताहै । परन्तु कैसाही हो; कहीं हितकारी मनुष्यकी सरलता, उदारता और स्वार्थत्याग, यह बातें क्या झुटिल रूपमें गिनी जायँगी । संसारमें तबतो किसीकोभी सरल-व्यवहार नहीं करना चाहिये ।

चंडके उदार हृदयपर घोर घाव पहुँचा । वह समझगये कि करनेका समय नहींहै शत्रुकी भयंकर छूरीको हृदयमें गृहण किया जा सकताहै, परन्तु इस प्रकारका अन्याय और कलंक पलभरको नहीं सहा जा सकता । इस अन्याय और दुर्लभिता तथा संदेहके लिये उन्होंने माताको मधुर तिरस्कार करके कहा “ आपकी समझमें फेरहै, यदि मुझको चित्तौरके राजसिंहासनपर बैठनेका अभिलाष होता, तो आज कौन आपको राजमाता कहकर पुकारता । अच्छा, इससे मेरी कोई हानि नहीं न कुछ दुःखही है; केवल यह पंछतावां रहा कि चित्तौरके राज्यको छोड़कर जाता हूं । चित्तौरके भाग्यमें तो गाढी स्याहीसे भयंकर होनहारका होना लिखाहै, उसहीका विचार करनेसे मुझे दुःख होताहै । अच्छा, मैं जाताहूं; राज्यका समस्त प्रबन्ध आपही लीजिये; अब केवल आपहीके ऊपर राज्यका सुख, दुःख सम्पत्ति, विपत्ति, इत्यादि समस्त विषय निर्भर करते हैं, देखियो ! शिशोदिया कुलका गौरव कहीं नाश नहीं होजाय । ” चंड चित्तौरको छोड़कर मान्दूराज्यकी ओर चला गया । वहांके राजाने भलीभांतिसे आदरमान करके अपने यहां रक्खा, और हल्लरनामक राजस्थान शीघ्रही उनको भूमिवृत्तिमें देदिया ।

पृथ्वीके किस स्थानपर यथार्थ कृतज्ञताहै ?—यह कृतज्ञताका पार्थिव और स्वर्गीय धनहै । हिंसा, द्वेष, स्वार्थपरता, और विश्वासघातकताके नरक कूपमें कहीं यह स्वर्गीय रत्न रह सकताहै ?—जिसके हृदयमें यह दिव्यरत्न विराजमानहै, वह मनुष्य होनेपर भी देवता है; वह अत्यन्त साधारण होनेपर भी सम्पूर्ण संसारका पूजनीय है । कुमार चंडने एकसाथ स्वार्थको छोड़कर अपने राजमुकुटको छोटे सौकेले भइयाके मस्तकपर अपने हाथसे उढाया; जो उनका दास होनेके योग्यभी नहीं था, विवश होकर उसहीकी सेवा करनी पडी;—इस उदारता और

महानताके कितने चित्र मनुष्योंके इतिहासमें दिखाई देते हैं ? इस अद्भुत स्वार्थ-त्याग करनेके बदलेमें उनको क्या मिला ? हिंसा द्वेष, स्वार्थपरता और धातक-ताके भंडार इस संसारमें उसके साथ कौनसी भलाई की ? वे अपने पितृराज्यको छोड़कर चले गये, दुष्ट राजमाताने एकवार भी उनके ठहरनेके लिये न कहा, एकवार भी उनके लेआनेकी चेष्टा न की। वरन उलटी प्रसन्न हुई; विशेष करके पिता भ्राता और मैकेके दूसरे कुटुम्बियोंके आनन्दकी सीमा न रही। मन्दौरनगर-को छोड़कर वे लोग क्रम २ से चित्तौरमें आने लगे। सबसे पहिले मुकुलके मामा जो-धने(इन्होंने ही जोधपुर वसाया) मारवाडकी मरुभूमिको छोड़कर मेवाडकी शीतल छायामें आनकर विश्राम लिया। कुछदिन पीछे जोधके पिता रणमल्ल और अगणित सेवकादिभी आगये। ज्वारकी रोटी खाते २ मारवाडमें जिनके गले सूखगये थे आज वह लोग हरे भरे मेवाडकी गेहूँकी वनी रोटियों खाकर परम प्रसन्नतासे बालक मुकुलका जय २ कार करने लगे।

ऐसे कितने आदमी हैं, जो क्रूरनीति मनुष्योंके हृदयका भाव समझ सकते हों ? मारवाडके गरम रेतीले मैदानमें बैठकर जा लोग उस स्थानको स्वर्गके सुखका भंडार समझकर गर्व करते थे, आज वही महानुभाव वीरगण उस “स्वर्गा-देवगरीयसी” जननी जन्म भूमिको छोड़कर मेवाडकी भूमिमें किस कारणसे आये हैं ? कौन जाने कि उनके हृदयमें कौनसा विचार उदय हुआ है ? अपने बालक धेवतेको गोदमें लेकर वे वाप्पा रावलके सिंहासनपर विराजमान हुए। राणाके छत्र चामर और किरण उनके चारों ओर शोभा पाते थे; उनके हृदयमें सुखकी कितनी ही लहरें उठा करती थीं, सनही मनमें अनेक प्रकारके स्वप्न देखा करते थे। जिस समय बालक मुकुल खेलनेके लिये राजसभासे चलाजाया करता था; तब वह अकेले ही सिंहासनपर बैठे रहते थे। वे सज्जस्त राजचिह्न उससमयभी उनके मस्तकपर शोभायमान रहते थे। कोई इन बातोंको देखकर भी न देखता था। कोई भी साहस करके उनसे इस विषयकी पूछ पाछ न करता था। परन्तु केवल एकजन इस अभिप्रायको समझा। राठौरराज्यका यह व्यवहार देखकर वह मनमें अत्यन्तही दुःखित हुआ। शिशोदिया कुलकी यह एक बूढ़ीधात्री थी* राजकुमारकी रक्षाका भार इसके ही हाथमें था। क्या वीरवर वाप्पा रावलके

* टाडसाहब कहते हैं कि हिन्दूराजपरिवारमें उसधात्रीका विशेष आदर था। उसकी सन्तानको एक २ राजपूत राजाके साथ “धाईभाई” का सम्बन्ध रखना पड़ता है। इन लोगोंको सदाके लिये भूमिवृत्ति दी जाती है। हिन्दूराजालोग इनको बड़े २ कार्योंमें नियुक्त करते हैं।

सिंहासनपर राठौरलोग अधिकार करेंगे । क्या दुर्जनकी विश्वास वातकतासे शिशोदियाकुल सदाके लिये पातालमें चला जायगा ? धात्रीके मनमें इस प्रकारकी गूढ़ चिन्ता होने लगी ।

दारुण, दुःख वृणा और अभिमानसे जर्जरित होकर मुकुलकी माताके पास जाकर कहा । “ क्या तुम कुछ देखती नहीं हो । क्या कुछ समझमें नहीं आता ? क्या तुम्हारे पिताका कुटुम्ब तुम्हारे वस्त्रको चित्तौरके सिंहासनसे अलग रखेगा ? ” संगलकी अभिलाषा करनेवाली धाईके मुखसे यह बात सुनकर राजमाताको अत्यन्त सन्देह हुआ; अवतक इसप्रकारकी चिन्ताका उनको स्वप्नमेंभी ध्यान नहीं था । अब वह समझी कि हमारी दशा संकटमें पहुँच गई है अब विपत्तिसे उद्धार पानेकी फिकर पड़ी । परन्तु अब कौनसा उपाय है ? उन्होंने मतिभ्रममें आकर आपही अपने पांवमें कुहाडी मारी । यदि कुमारचंड चित्तौरमें होते तो किमीप्रकार यह विपत्ति न पड़ती, परन्तु उन्होंने पिशाचिनी बनकर अपने आपही अपना सत्यानाश किया । विपत्तिसे छूटनेका कोई उपाय न देखकर महाराणी अपने पिताके पास गई और तीव्र अभिमान करके उनसे उपरोक्त बातोंका कारण पूछा, उत्तरमें जो कुछ सुना उससे उनका हृदय व्याकुल होगया, शिर चकराने लगा, उनके हृदयमें दृढविश्वास होगया कि पिता रणमल्ल, प्राणप्यारे मुकुलका जीवन नाश करके स्वयं राज्य लेना चाहता है । इस विपत्तिकालमें राजमाताने सुना कि चंडके दूसरे भाई रघुदेवको रणमल्लने गुप्तभावसे मार डाला । इस कुसमाचारके सुनतेही राजमाता अत्यन्त व्याकुल हुई । रघुदेवको कैलवाड़ा और कवेरीगाँवनामक दो भूमिवृत्तियें मिली थीं । रघुदेव कैलवाड़ेमेंही रहते थे । एक समय रणमल्लने उनके पास एक सन्मानसूचक पहरावा भेजा पहिरावा प्राप्त करतेही राजपूतलोग पहर लिया करते हैं । यह उनमें एक विशेष शिष्टाचार समझा जाता है । रघुदेव जैसेही उस पहिरावको धारण कर रहे थे कि वैसेही उस दुराचारीके गुप्तचरने उनको छूरीसे मार डाला ! इस गुप्तघातकको रणमल्लनेही भेजा था । रघुदेव अत्यन्त श्रीमान, धर्मपरायण और साहसवान युवा पुरुष था । उनके अनुपप पुणोंसे व सुन्दर होनेसे राजपूतलोग उनसे इतना स्नेह करते थे कि उनकी मृत्युसे सब मेवाडके रहनेवालोंको अत्यन्त शोक हुआ । मृत्युके पीछे वह देवसन्मानको प्राप्त होकर मेवाडके “ पितृदेवताओं ” में गिने गये । तबसे मेवाडका प्रत्येक मनुष्य अपने घरमें उनकी मूर्ति स्थापन करके भक्तिके साथ पूजा करने लगा । प्रतिदिनकी पूजाके सिवाय रघुदेवकी पूजा प्रतिवर्षमें दो बार तो महाधूमधामके

साथ हुआ करती है । इससमयमें राणांस लेकर राज्यका भिखारीतक इस धूम-धाममें मिलजाता है * ।

अब तो राजमाताकी शंका और चिन्ताकी सीमा न रही । वह समझगई कि जब इस दुराचारीने रघुदेवको मार डाला तो अब सुकुलके संहार करनेका भी शीघ्रही विचार करेगा । वे इसविपत्तिसं वचनका उपाय खोजने लगीं । जिस ओर देखतीं; उस ओर संकटही संकट दिखाई देता है । चारों ओर शत्रुही शत्रु हैं, रणमल्लके आदमी चारों ओर लगे हुए हैं । चित्तौरमें जितने बड़े २ पद हैं, उन सबपर रणमल्लके आदमी डटे हुए हैं । उनके सिवाय चित्तौरके सबसे बड़े आसन पर जयसलमेरका एक भट्टी राजपूत विराजनान है ।

रणमल्लने सबकोही अपने वशमें कर लिया है; वह सबकोही पुतलीकी तरह नचाता है । किर इससमय ऐसा कौन है जो रानीकी ओर खड़ा होकर शिशोदिया कुलकी लाजके जहाजको न डूबने दे । वाप्यारावलके लगाये हुए वंशवृक्ष कौन इस आंवीसे बचावैगा ?—कोई नहीं । केवल एक आदमी;—वही देवताकी सभान उदारहृदय वीरवर चंड । क्रमसे रानीका आशा भरोसा लोप होने लगा । वह चारों ओर अन्धकार देखने लगीं । इस संकटमें पडकरही उन्होंने चंडको याद किया था । चंडकी कही हुई होनहार वाणी उनके कानोंमें गुंजार रही थी । ज्यों ज्यों समय बीतता था, त्यों त्यों रानीका हृदय सूना होता जाता था, राणी हाथमलकर पछताई और जब दुःख न सहागया तो चंडके पास अपना सारा वृत्तान्त कहला भेजा । यद्यपि चंड उससमय दूर था, परन्तु चित्तौरके समस्त समाचार उनको प्रतिदिन मालूम होजाते थे । वह पहिलेसेही जानगये थे कि पीछे पछताकर सुकुलकी माता मेरीही सहायता चाहैगी । दुराचारी राठौर लोगोंके आससे चित्तौरका उद्धार करनेके लिये वह पहिलेसेही तइयार होगये थे । इससमय विमाताका पत्र पाकर

* दशहरेके दिन मेवाडमें एक उत्सव हुआ करता है । उस उत्सवके दिन और प्रतिमासके दशवें दिन मेवाडके प्रत्येक घरमें रघुजीकी वेदी साफ कीजाती है । उनकी मूर्तिको स्नान कराकर उस वेदीपर रखते हैं । राजपूतोंकी स्त्रियें उसवेदीकी पूजा करके उनसे अपने पुत्रोंके मंगलकी कामना करती हैं, और राजपूतलोग पुत्र कामना करते हैं । रघुदेवजीके देवत्व प्राप्त होनेसे पहिले वाप्यारावलका कुलेशनामक एक संतान मेवाडमें पुत्रकदेवताकी भांति पूजा जाता था, परन्तु अब कोई उनकी पूजा नहीं करता । अब तो क्षेत्रपालदेव और रघुदेवजीही मेवाडवासियोंके प्रधान उपास्य देवता हैं । रघुदेवकी पूजाविधिके साथ ग्रीसके ओडोनिस देवताकी पूजाविधि बहुतायतसे मिलती है ।

शीघ्रही चित्तौरकी ओर चले । जब पहले चित्तौरको छोड़कर कुमार चण्ड मांदूनगरमें गये तब दोसौ (२००) अहेरिये भील (शवर) अपने स्त्री पुत्र और परिवारको चित्तौरमें छोड़कर उनके साथ चलेगये थे । इससमय चंडकी अनुमति लेकर वेभी अपने भाई बन्धु और स्त्री पुत्रोंसे मिलनेके लिये चित्तौरके भीतर गये थे । दुर्गप्रवेश करतेही वह द्वारपालोंकी सेवा करने लगे । वहाँपर सेवा करनेमें दिन बिताते हुए विश्वासी भीलगण अवसरकी वाट देखते रहकर बड़ी सावधानीसे कार्य करने लगे । इसओर कुमार चंडने सौतेली मातासे कहलाभेजा कि “चारोंओरके गाँव गोदमें भोजन बाँटनेके वहाने प्रतिदिन बहुतसे विश्वासी दास दासियोंको भेजा करो, और अवसर पाकर उनकेही साथ मुकुलको लेकर तुमभी चली आया करो, । क्रमानुसार फिर उन गाँवोंमेंभी आया-करो जो चित्तौरसे बहुत दूरपर हों । परन्तु यादरहै कि दिवालीके दिन * गोमुण्डानगरमें पहुँचजानेको न भूलियो । यदि भूलजाओगी तो फिर कोई उपाय न चलेगा । ”

इस उचित उपदेशको पाकर मुकुलकी माताका हृदय सावधान हुआ । चंडकी आज्ञाके पालन करनेमें उन्होंने एक घड़ीकाभी विलम्ब न किया । वरन वे दूने उत्साह और दूनी सावधानीके साथ कार्य करने लगीं । धीरे २ दिवालीका त्यौहार आगया । अपने आदमियोंको साथ लेकर मुकुल चित्तौरसे गोमुण्डानगरमें आगया । राजमाता सारेदिन नगरवासियोंको उत्तम २ भोजन कराकर रात्रिके होनेकी वाट देखने लगी । धीरे २ संध्याका सूक्ष्म अंधकार सम्पूर्ण संसारमें विस्तार पागया; तथापि चंडका आगमन नहीं हुआ । फिर संध्याका कुछेक गंभीर तिमिर कृष्णचतुर्दशीकी रात्रिके गाढे तममें लीन होगया, तथापि कुमार चंडके दर्शन न हुए । पुरोहित, धात्री, और उनके संगी साथी निराश होने लगे । अन्तमें यह सब राजकुमारको लेकर चित्तौरी नामक कोट-भीतके निकट पहुँचेही हैं कि इतनेहीमें पीछे घोड़ोंकी टापोंका शब्द सुनाजाने लगा । शब्दको सुनकर सबके हृदयमें नवीन आशाका संचार हुआ । बातकी बातमें चालीस सवार अतिशीघ्रतासे घोड़ोंको चलातेहुए उनके आगेसे चलेगये । इन सवारोंमें सबसे आगे कुमार चंड थे, भेष बदला हुआ था । छोटे भ्राता मुकुलके आगे पड़तेही चंडने संकेतसे उनको वहीं सन्मान

* चित्तौरसे मालवेको जानेके लिये जो एक सुन्दर मार्ग है, गोमुण्डा उसही मार्गके ऊपरभागमें चित्तौरसे ७ भील दूरपर बसाहुआ है ।

दिखाया, कि जो सन्मान राजालोगोंका किया जाता है, और अपने चुनेहुए आदमियोंको लेकर चित्तौरके सिंहद्वारपर शीघ्रतासे जा पहुँचे। जो रहगये वोभी उनके पीछे २ जाने लगे। अबतक किसीने चंडकी गतिको नहीं रोका। इससमय “रामपोल” * नामक द्वारपर पहुँचतेही द्वारपालोंने इनके सामने आकर पूछा कि आप लोग कौनहैं ? कुमार चंडने उत्तरादिया। “कि हम सब राजपूत सरदार हैं; चित्तौरके ओरे धोरेके गाँवमें रहते हैं राजकुमारके साथ गोमुण्डा गये थे हम लोग, अब दुर्गमें उनको पहुचानेके लिये साथ आये हैं।” यह सरल उत्तर सुनकर फिर किसीको कोई संदेह न हुआ, और यह बिना किसी रुकावटके किलेके भीतर चले परन्तु जब वाकी लोगभी जो पीछेथे आगये तो द्वारपालोंका संदेह बढगया सोचनेलगे इनवातोंका प्रयोजन क्याहै; वह समझगये कि शीघ्रही हमारा सत्यानाश होजायगा। यह विचारकर समस्त द्वारपाल तलवार लेकर कुमार चंडके सामने हुए; कुमारभी तत्काल नंगी तलवार हाथमें ले क्रोधित हुए सिंहकी समान उनकी ओर झपटे, दोनों दलोंमें धोर संग्राम हुआ। इस ओर चंडकी मेघगंभीर सिंहनादको सुनकर उनके सेवक शवरगणभी अपनी मूर्तिको धारण करके द्वारपालोंका संहार करने लगे। यहाँ पर चतुर चंडने भट्टीसरदारको जो किलेदार था शीघ्रतासे पकडकर कैद करलिया। दारुण क्रोधके वश होकर उसने चंडके सामने आना चाहा; परन्तु उनके सवारोंकी गतिको न रोक सकनेके कारण आगे न बढसका और दूरसेही चंडको ताककर अपनी तीखी तलवार ऊपर फेंकी। वह तलवार चंडके लगी, घावमेंसे रुधिर निकलने लगा। परन्तु तेजस्वी चंडने तत्काल धावाकरके उसे नीचे गिरा दिया। इधर कुमारकी सेनाने द्वारपालोंको भी टुकडे कर डाला। तथा प्रत्येक राठौरको उसके जौकर चाकरोंके साथ ही गुप्त स्थानोंसे पकड कर लाये और कठोरभावसे संहार करने लगे।

चतुर्दशीकी उस गंभीर रात्रिमें केवल दो चार ही राठौरचंडके विक्रमसे निस्तार पागयेहोंगे। परन्तु इनमेंसे अभागे रणमल्लकी मृत्युका वृत्तान्त पढकर शोकके स्थानपर हँसी आती है। इस दुराचारीने उस दिन अपनी कन्याकी किसी दासीपर, जो अत्यन्त सुन्दर थी मोहित होकर बलात्कार कर अपनी कामवृत्तिको चरितार्थ किया था। वह इस बातको नहीं जानताथा कि बाहर क्या हो रहाहै, न उसको यह विदितथा कि शत्रुगण मेरे समस्त इष्टमित्र और वन्धु

* तोरणके पार होकर “रामपोल” फाटकमें पहुँचते हैं।

वान्धवोंका संहार करके अब यहाँको चले आतेहैं। मदिरा अफीमके खाने पीने और सबसे अधिक प्रेमके आसवसे मतवाला हो यह बूढ़ा अपनी प्यारी कामिनीके गलेमें बाँधे डाले अचेतनकी समान पड़ा हुआ था। कामकी नीच वृत्तिके वशहोकर दुष्ट रणमल्लने सतीस्त्रीके अन्मोल रत्नको छीन लिया, अभागिनीके निर्मल चरित्रमें कलंक लगा दिया। आज स्त्रीकी शापान्निमें यह अभागा भस्म हो जायगा। आज इस लोकको छोड़कर उसे नरककी अनन्त ज्वालामें गिरकर छटपटाना पड़ेगा, राजपूत ललनाके स्वर्गसे भी उत्तम सतीत्व धनको जिस पारवण्डीने हरण किया है, क्या राजपूतवाला अपमानित और पददलित होकर उसको क्षमा कर सकती है?—कभी नहीं। रणमल्लसे पापाचारका बदला लेनेके लिये वह अवसर ढूँढ रही थी; आज वह अवसर आपसे आप आगया। इस समय राजपूतवालाने धीरे-विस्तरसे उठकर उस दुष्ट मारवाडीकी * पगडी खोली, और पगडीके द्वारा उसको चारपाईसे भलीभांति कसकर बाँध दिया। बाँधनेसे भी रणमल्लकी नींद न टूटी। इस प्रकारसे अभागे रणमल्लको भाग्यको सौंपकर राजपूतललना घर छोड़कर चली गई। थोड़ीही देरमें चंडके यमदूत समान सिपाही उसके घरमें पहुँचे। तब भी वह पारवण्डी न जागा ! परन्तु जैसेही उन सिपाहियोंने गगन विदारी सिंह नाद किया, वैसेही उस पापीका सारा मतवालापन उतरगया। आँखें खुलनेपर जानगया कि बड़ा कुसमय आन पहुँचा। देखा कि रणोन्मत्त शत्रुओंसे घर भर रहा है। सबही तलवार उठाए हुए प्रचंड वेगसे सामनेको चले आतेहैं। क्रोध और घातक स्वभावके मोरे उसके सब अंग जलने लगे, अभागेने शीघ्रतासे उठनेकी चेष्टा की, परन्तु उस मनमोहिनीकी कठोर प्रेम जंजीरने उसको बारंवार रोका। बहुतसा बलकरनेपर मृदु खड़ा न हो सका बलकरनेसे भी उस कठोर प्रेम बन्धनसे निस्तार न पाया, फिर अभागा चारपाईके साथ ही खड़ा होगया। वह चारपाई उसकी पीठपर लगी हुई ऐसी शोभायमान होती थी मानो कछुएकी पीठ लग रही है। पासही पीतलका बना हुआ एक पानपात्र गिलास रक्खा था, और कोई अस्त्र न पाकर विवस होकर पानपात्रकेही आघातसे रणमल्लने कई एक सिपाहियोंको घायल किया। परन्तु शत्रुकी अगणित सेनामें वह कबतक जीवित रहता शीघ्रही उसके बन्दूककी एक गोली × लगी कि जिससे वह मर गया। रणमल्लका जोधरावनामक पुत्र

* मारवाडीकी पगडी लगभग ६० हाथकी लम्बी होती है।

× बहुतसे लोगोंकी यह सम्मति है कि पहले बन्दूक, और तोपकी समान किसी अस्त्रको भारतवासी नहीं जानते थे, और पुराणादि ग्रन्थोंमें जो आग्नेयास्त्र आदिका वर्णन है, वह कवि कल्पनाके-

उस समय नगरके दक्षिण भागमें था । पिता और इष्ट मित्रोंकी यह गति सुन शत्रुके हाथसे छुटकारा पानेके लिये वह एक तेज घोड़ेपर सवार होकर वहांसे भागा । उस दिन उसदिवाली उत्सवके उपलक्षमें—उस कृष्णचतुर्दशीकी धोररात्रिके समय कपटी दुर्गाचारी, राठौरोंने अपनी विश्वासघातकता और पराई स्त्रीके धर्म विगाड़नेका फल भली भाँतिसे पालिया । और वे सब शिशोदिया-वीरोंकी क्रोधाग्निमें भस्म होगये ।

इतनेपर भी कुमारचंडका क्रोध कुछ भी शान्त नहीं हुआ । जोधरावके भागजानेपर वह उसको पकड़नेके लिये उसके पीछे मन्दोरनगरकी ओर चले । जोधरावचंडके प्रचंड बलको किसीप्रकारसे सहन न करसका और मन्दोरनगरको छोड़कर हरवाशंकलनामक एक पराक्रमी राजपूतके यहाँ आश्रय लिया । इस ओर वीरचंडने सावधानीसे मन्दोर नगरपर अधिकार किया, और जवतक कन्होजी और मुंजाजीनामक इनके दोनों पुत्र नई सेनाका लेकर उनके साथ न मिलगये, तवतक वह नगरसे बाहर न हुए । जिस दिन राठौरोंको उनकी विश्वासघातकता और कपटाचारिताका भलीभाँतिसे फल दिया गया, उस दिनसे लेकर बारहवर्षतक मन्दोरनगर शिशोदियाकुलके अधिकारमें रहा था । बारहवर्ष बीतनेपर राठौरोंने फिर उसको अधिकार किया । जोधपुरके वसनेवाले जोधराजको यहाँपर ही छोड़कर इस मेवाड़का इतिहास लिखते; परन्तु ऐसा करनेसे एक पूरा वृत्तान्त छूटा जाता है, इसकारण इसको न छोड़सके इस समय शिशोदीय और राठौरकुलमें जो भयंकर वैर बँध गया उस वैरकी

—सिवाय कुछ भी नहीं है । हम निश्चय कहते हैं कि ऐसा समझना उनकी बड़ी भारी भूल है, उन लोगोंसे भारतवर्षके इतिहासका जराभी नहीं देखा । दुःखकी बात है कि ऐसे आदमी पराये कानसे सुनकर पराई बातोंपर अन्धा विश्वास करके अनेक प्रकारके असर और भ्रान्तमंतिका उद्धार किया-करते हैं, जिसकी जो इच्छा हो सो कहो परन्तु हम निश्चय जानते हैं और निःसंकोच कह सकतेहैं कि भारतवर्षवाले अतिप्राचीन समयसे ही तोप बन्दूककी समान आग्नेयास्त्रको जानते थे, और इनके चलानेमें भी होशियार थे । नीचे युक्तीतिके कुछ श्लोक लिखे जाते हैं, उनको पढ़कर देखिये कि बन्दूक और तोपको बृहन्नालीक नामसे पुकारा है । यथा:—

“ नालीकं द्विविधं ज्ञेयं बृहत्क्षुद्रविभेदतः । तिर्यगूर्ध्वं छिद्रमूलं नालं पंचवितस्तिकम् ॥
मूलाग्रयोर्लक्ष्यभेदि तिलविन्दुयुतं सदा । सुकाष्ठोपाङ्गबुधञ्च मध्यांगुलिबिलान्तरम् ॥
स्वान्तेसिचूर्णसन्धातृशलाकासंयुतं सदा । लघुनालीकमप्येतत् प्रधाय पातिसाधिभिः ॥
यथायथा तु त्वक्सारं यथा स्थूलविलान्तरम् । यथा दीर्घं बृहद्गोलं दूरभेदि तथातथा ॥
बृहन्नालीकसंशन्तकाष्टबुध—विवर्जितम् । प्रवाहं शकटाद्यैस्तु सुयुतं विजयप्रदम् ”

भीतरी बातें परस्पर इस प्रकार मिलीहुई हैं कि एक बातके छोड़ देनेसे दोनोंका भीतरीपन और दोनोंकी रमणीयता जाती रहै गी। अतएव इसही कारणसे यहाँपर कुछ उपरोक्त बातोंका वर्णन किया जाता है। शिशो-दिया लोगोंने किसप्रकारसे गोद्वारदेशको पायाथा, तथा राठौर वीर जोधने किस प्रकारसे फिर मन्दौरनगरपर अपना अधिकार किया था, इसकाही वर्णन आगे किया जाता है। इसका वर्णन होजानेके पीछे मुकुलजीके राज्यका इतिहास लिखा जायगा।

“ विपत्तिकी उपयोगिता ” सुफल दिया करती है। विपत्ति ही सम्पत्तिकी माताहै जो मनुष्य विपत्तिके समय धीरधारण करके कार्यकरताहै, उसको शीघ्र-ही सम्पत्ति मिल जाती है, फिर उसपर कभी भी विपत्ति नहीं आती। महावीर जोधरावका राज्य जातारहा, इष्ट मित्र सबही मारे गये। परन्तु यह विपत्ति ही उनके लिये सम्पत्तिकी देनेवाली होगई। यदि जोधराव कायरपुरुषकी समान झूठ बनकर व्याकुल हो जाते तो नहीं कहा जासकता कि राठौरकुलके भाग्यमें क्या होता?—और उनके विशाल कीर्तिक्षेत्र जोधपुरकी प्रतिष्ठा कौन करता? उनपर सब प्रकार विपत्ति पड रही थी परन्तु वे एक पलके लिये भी निराश नहीं हुए। केवल अनन्त साहस कठोर उद्यम और परिश्रम करनेसे ही वह महान सम्पत्ति-शाली हुए थे।

पहिले ही कहा जा चुका है कि विपत्तियोंसे घिरकर जोधरावने हरवाश-कलनामक एक पराक्रमी राजपूतका सहारा लिया। राजस्थानमें एक प्रकारकी धर्मसम्प्रदायक है। इस सम्प्रदायके लोग सदा कुमार रहते हैं विवाह नहीं करते। यद्यपि यह लोग क्षत्री होते हैं, तथापि उस क्षात्रेयोचित वीर धर्मके साथ तापस धर्मके अपूर्व मेलसे इनका जीवन पवित्र और स्वर्गीय स्वभावसे परिपूर्ण रहता है। अतिथिसेवा और परोपकार करना ही इनके धर्मका मूल-मंत्र है। यदि आधीरात्रिके समयमें भी कोई पाहुना आजाय तो यह भली-भाँतिसे आदर सत्कार करके तत्काल उसके खाने पीनेका प्रबन्ध करदेंगे। पाहुनेका आदर सत्कार करनेसे चाहें अपनेको अनाहार रहना पड़े, तो भी वीर तापसगण दुःखित नहीं होते। यदि कोई प्रचण्ड शत्रुभी इनकी शरणागत हो जाय तो यह समस्त वैर और विद्वेषको भूलकर आदर आनन्दके साथ उसको ग्रहण करते हैं, और उसको वचानेके लिये अपने प्राणोंको भी संकटमें डाल

लेते हैं। यह हरवा शंकल राजपूत भी इस ही प्रकारका क्षत्रिय संन्यासी था। इस सम्प्रदायकी शाखाएं आजतक राजवाड़ोंके बहुतसे स्थानोंमें दिखाई देती हैं। पहाड़ोंके ऊंचे २ शिखरोंपर, हिंसक जन्तुओंसे वसेहुए सघन वनोंमें, श्मशानमें अथवा शान्तिमय जलोहर तपोवनोंमें इन महात्माओंके पवित्र आश्रम दिखाई देते हैं। इनकी पहुनई “ सदाव्रत ” नामसे प्रसिद्ध है। यह सदाव्रत केवल इस संप्रदायके मनुष्योंकी अनुकूलतासे ही नहीं चलता, वरन राजा, प्रजा, सदा सार्वामन्त व और २ संप्रदायवाले भी प्रसन्नतासे उसकी सहायता किया करते हैं। मेवाडकी इसशोचनीय अवस्थामें भी यहाँके रहनेवाले अपने राणाके सहित सदाव्रतकी सहायता करनेमें किंचित्भी कसर नहीं करते। बहुतसे लोग यह कहते हैं कि मनुष्य अपनी अर्द्धसभ्य अवस्थासे ही अतिथि सत्कार करता आयोहै। यदि कुटिल कपटता और स्वार्थपरताहीको सभ्यताका फल कहा जाय। यदि एकभ्राताको भोजनादि न देकर अपने उदरके भरनेसे ही सभ्यता प्रकाशित होती हो, तो ऐसी सभ्यताको लेकरके हम क्या करेंगे? यह संसार सदाही असभ्यताकी गोदमें पडा सोता रहै, तथापि इसप्रकारकी सभ्यताको हम पलभरके लिये भी ग्रहण नहीं करसकते। जो हरवाशंकलकी समान श्रेष्ठ और विश्व प्रेमिक महात्मागणभी अर्द्धसभ्य गिनेजायँ, तो फिर इस संसारमें सभ्य कौन है? उत्तम वस्त्र भूषण पहरनेसे जो सभ्यता होतीहै; अनाथ, दीन, दरिद्र, और भिखारीको भगा देनेसे जो सभ्यता होती है; उस सभ्यताका नाम पशुसभ्यताहै। हरवाशंकलकी समान परमकारुणिक महात्मागण स्वार्थको छोड लोभसे नाता तोड संसारका महान् उपकार साधन करते हुए जिस विमल स्वर्गसुखको भोग करतेहैं, क्या आज कलके, स्वार्थी, कपटाचारी सभ्य महोदयगणोंने एक पलभरके लियेभी उस अमृतके स्वादको चाखाहै?

आधीरात्रिका समय है। सदाव्रतका कार्य शेष करके संन्यासी हरवाशंकल शयन करनेको विश्राम भवनमें जा चुका है। इस ही समयमें १२० अनुचरोंको साथ लिये जोधराव उस आश्रममें पहुँचा। हरवाने उठकर भलीभाँतिसे सबका आदर सत्कार किया। सब आसनपर बैठे। अब हरवाशंकलको इस बातका विचार हुआ कि उनके खाने पीनेका क्या प्रबंध किया जाय? गृहमें जो कुछ सामग्री थी वह सब चुक गई। पास कोई गाँव या नगर भी नहीं है कि शीघ्रही वहाँसे सब सामान आजाय। इस प्रकार सोचते विचारते थोडे ही समयमें कोई बात निश्चय

करली। उस समय वहाँ पर * सुजदनामक एक प्रकारका काठ रक्खा था, जो कि जलानेके काममें आती थी। परन्तु अकाल या अन्न कष्टके आपड़नेपर मारवाड़के रहनेवाले दीन दुखिया लोग इसको ही खाकर अपने प्राण रखते थे। अन्नके न होनेसे हरबाशंकलंको इस अवसरपर यह लकड़ी ही व्यवहारमें लानी पड़ी। इस लकड़ीके टुकड़ोंको पीसकर मैदा, चीनी और मसालेके साथ मिलाया गया। फिर एक साथ पकाकर इनका ही उत्तम भोजन तैयार हुआ। हरबा संन्यासीने जोधराव व उनके नौकर चाकरोंके आगे यह भोजन परोस कर विनीतभावसे कहा । “भिक्षा करके जो कुछ प्राप्त किया था उसका अधिकांश चुक गया। इस समय जो कुछ बाकी था उससेही एक प्रकारका भोजन बनाकर आपलोगोंको निवेदन करता हूँ। रात्रि अधिक होजानेसे और कुछ न कर सका, अनुग्रह करके आज इससे ही प्रसन्न हूजिये। कल प्रभात होते ही खाने पीनेका उत्तम प्रबन्ध होजायगा।” संन्यासीकी नम्रता और शीलता देखकर सबहीं परमप्रसन्न हुए, और उसके अतिथि सत्कारकी वारंवार प्रशंसा करके भोजन करने लगे। थोड़े ही समयमें निद्राकी कोमल गोदमें शान्ति प्राप्त करके यह समस्त यात्री ऐसे सोये कि चित्तौरकी सब बातोंको भूल गये।

“सुज” की लकड़ीके मेलसे उनकी डाढी मूँछें रँग गई थीं। प्रभातकालके समय जाग कर सबही अत्यन्त विस्मित हुए और एक दूसरेका मुँह देखने लगे। किसीने इस बातको न जाना कि डाढी मूँछें कैसे रँगी गईं। परन्तु चतुर संन्यासीने इसके गूढ़ कारणको छिपाकर उनको उत्साह देनेके लिये कहा “बुढापेके केशोंने जिस प्रकार नवीन जीवनकी उपासे नवीन राग धारण किया है, वैसेही मैं निश्चय कहता हूँ कि आपके भाग्यको नवीन जीवन प्राप्त होगा और आपलोग फिर मंदोरनगरपर अधिकार करेंगे।

* सालोमनन जिस काठसे अपने उपास्य देवता जिहोवाके मंदिरको बनाया था उसका नाम “अलमुज” था, टाडसाहब कहते हैं कि यहां पर अलउपसर्ग विशेषणकी भांतिसे व्यवहार किया गया है, इधर गुजरातके प्राचीन इतिहासमें देखा जाता है कि वहाँके आदिनाथका मंदिर भी सुजहीकी लकड़ीका बना हुआ था। तब क्या यह दोनों एकही लकड़ीके बने थे ? कदाचित् बने हों। कारण कि जगतके इतिहासमें लिखा है कि फिनिसिया और मिसरदेशके सौदागर खरदिनेके लिये भारतके किनारे आते जाते थे। कदाचित् वे ही लोग इस अलमुजलकड़ीको सूरतसे ले गये हों। बहुतसे लोगोंका मत है कि यह लकड़ी किसी प्रकारसे नष्ट नहीं होती। यहाँतक कि आगसे भी नहीं जलती। इसका रंग तौबेकी समान होता है।

जब हरवाशंकलने ऐसे उत्साहित वचन कहे तो उन सबने इसकोभी अपने दलमें मिला लिया । तथा उसको संगमें लेकर सीवोनामक स्थानके सर्दारके पास गये इस सर्दारके असतबलमें १०० घोड़े चुने हुए थे । स्वयं भिवोंका सर्दार और पवनजीनामक एक दूसरा राजपूत सरदार भी अपने “ अंगारंकृष्ण ”* घोड़े पर चढकर जोधरावके दलमें मिल गये । इस प्रकारसे और भी दो चार राजपूत सर्दारोंकी सहायता पाकर पितृराज्यके उद्धार करनेका संकल्प किया और मन्दोरनगरकी ओर चले । चंडके दोनों पुत्रोंको इसका कुछभी समाचार ज्ञात नहीं था । वह निश्चिन्त होकर राज्य करते थे, कि इतनेमें ही जोधरावने सेनाग्रहित वहाँ पहुँचकर उनपै हमला किया । यद्यपि यह चढाई गुप्तभावसे की गई थी, परन्तु शिशोदिया वीरगण उत्साहित होकर शत्रुसे घोर युद्ध करने लगे । कंटोजीने एक बार भी इस बातका विचार न किया कि जोधरावका बल कैसा है ? या कौन २ वीर उसकी सहायता करनेके लिये आये हैं ? वरन वह उसकी सेनाको अतितुच्छ समझकर संग्राम करनेके लिये सामने आया । इस अदूर दर्शिता और मूर्खताका फल उसने हाथों हाथ भोगा । जोधरावके बलको सहन न कर सकनेके कारण कंटोजी अपनी बहुतसी सेनाके साथ लडाईमें सारा गया । इधर छोटा भाई मुंजजी अपनी रक्षाका कोई उपाय न देख शीघ्रगामी घोड़ेपर चढकर भागा । परन्तु जोधरावके कराल ग्राससे छुटकारा न पाया, गोद्वार राज्यकी सीमापर पहुँचते ही विजयी जोधरावने उसको जा पकडा और वहींपर मरवा डाला । इस प्रकारसे जोधरावने शिशोदियाकुलसे अपने पिछले वैरका बदला लिया । परन्तु भली-भाँति विचार करनेपर ज्ञात हो जायगा कि दोनों ओरकी प्रतिहिंसा बराबर न हुई । कारण कि मंदोरके एक राजपूत सरदारके बदलेमें चित्तौरके दो राजकुमारोंका प्राण संहार किया गया । पितृराज्यका पुनरुद्धार और बहुतसी हत्या करनेपर भी जोधरावके जीकी शंका न मिटी । उसको दिनरात यही ज्ञात होता था कि कुमार चंड भयंकर मूर्ति धारण किये हुए मेरे पीछे २ आरहा है । इस प्रकार चिन्ता करके एक बार अच्छी रीतिसे अपनी अवस्थाको विचारा तो जान लिया कि चंडकी और मेरी अवस्थामें पृथ्वी आकाशका अन्तर है । मैं पराई सेना और पराये बलके भरोसे ही इस कठोर कार्यके करनेको सामर्थ्य हुआँ । मानलिया कि मित्रोंने एक बार या दो बार मेरी सहायता की, परन्तु जब

* कोयलेकीसमानकाल । Coal black Steed.

मेवाडकी विशाल अनीकिनी मेरे ऊपर चढ़ धावेगी, तब किसकी सहायतासे अपनी रक्षा करूंगा, तिसपर हमारे पिता रणमल्लका ही इस विषयमें अधिक अपराध है, और वही इस झगड़ेके कारण हुएथे, अतएव इस अवस्थामें जहाँ-तक हो झगड़ेका मिटा देना ही आवश्यकीय कार्य है। इस प्रकार सात पाँच विचारकर जोधरावने चंडके पास सन्धि का पत्र भेजा और सन्धि प्राप्त करनेके लिये उनको मुण्डकाटि * अर्थात् रुधिरके वदलेमें दंडकी भाँति समस्त (गोद्वार) देश देनेके लिये सम्मति दी।

चंडका दूसरा पुत्र मुंज जहाँपर गिरा था वह स्थान मारवाड और मेवाड राज्यकी सीमा माना गया। इस प्रकारसे संधि करके दोनों कुल पुराने वैर भावको भूल गये। और परस्पर एक दूसरेको हृदयमें धारण करके कुछदिनके लिये गाढ़े मित्र हुए। इस संधिसे मेवाडके राजाको गोद्वारदेश हाथ आया, इसको तीनसौ वर्षतक मेवाडके राजाओंने अपने अधिकारमें रखवा सदाके चले आये हुए उत्तराधिकारमें अन्तर पड़नेके कारण ही (गोद्वार) देश मेवाडवालोंके हाथ आया था, और तीनसौ वर्ष पीछे इस ही कारणसे निकल भी गया था।

सुकुलका सौभाग्य सूर्य; वीरवर उदार चरित कुमार चंडहीकी असीम सहायतासे उदय हुआ, परन्तु वह बहुत देरतक प्रकाशमान नहीं हुआ। मध्याह्नके ऊँचे आकाशमें पहुँचते न पहुँचते अकस्मात् राहुने ग्रस लिया। यद्यपि अल्प वयसमें ही राजा सुकुल राजाओंके योग्य गुणोंसे शोभायमान होकर शिशोदियाकुलके राज्य करनेको समर्थ हो गयेथे, परन्तु विधाताने उनको वह गौरव बहुत दिनतक न भोगने दिया। सन् १३९८ ई०में जब वह चित्तौरके सिंहासनपर बैठे, उससमय संपूर्ण भारतवर्षमें एक नवीन युगका आरंभ होगयाथा:—भारतकी ऐतिहासिक धारा—एक नई ओरको प्रवाहित हो रहीथी। वीरकेशरी तैमूर अपनी विजयी सेनाको साथ लेकर इस समय भारतवर्षपर चढ़ आया था। उसकी घोर कठोर चढ़ाईसे दिल्लीका सिंहासन चूर होगया, परन्तु मेवाडको उसके आक्रमणसे कोई हानि नहीं पहुँची। भट्टग्रन्थोंमें केवल इतनाही लिखाहै कि दिल्लीके बादशाह फीरोजशाहने एक

* श्रेष्ठ कुलवाले राजपूतको मारडालनेसे मारनेवालोंको जो दंड दिया जाताहै, राजस्थानकी साधारण भाषामें उसका नाम “मुण्डकाटी है”। इस प्रकारकी रीति प्राचीन जर्मनवालों और शाकसेन लोगोंमें भी चलती थी।

वार इस समय मेवाडपर चढ़नेकी तइयारी कीथी । परन्तु विचारनेसे ज्ञात हो जायगा कि भट्टलोगोंने जिसको फीरोजशाह कहाहै; वास्तवमें वह फीरोजशाहका पोता था । अतएव यहांपर भट्टलोगोंने धोखा खायहै* भारतका इतिहास पढ़नेसे हमारे इस लेखका प्रमाण मिलैगा । तैमूरके भयंकर हमलेको वरदास्त न करसकनेके सबवसे फीरोजशाहका यह पोता दिल्लीको छोडकर गुजरातकी तरफ भाग गया । इस कारणसे यह बात संभव होसकती है कि मेवाडके भीतर होकर जानेके समय उसने मेवाडपर चढ़ाई करनेका विचार किया हो । जो कुछ भी हुआ हो । चाहे जिसने मेवाडकी शान्तिमें विघ्न डाला हो, पर राणा मुकुल पहलेसेही उसके अभिप्रायको जान गयेथे, और शत्रुकी फौजको रोकने के लिये आरावलीके दूसरे प्रान्तमें वसे हुए रामपुरनामक स्थानमें उसका सामना किया । उस रामपुरके संग्राममें राणा मुकुलने ऐसी अद्भुत वीरता दिखाई थी कि उसको देखकर बादशाहकी फौज तित्तर वित्तर होकर भागगई । भागनेपर भी विचारोंको छुटकारा न मिला । राणाने उनका पीछा करके बहुतसी सेनाको मार डाला, और सांभरनामक देश और उसकी लवणझीलको अपने अधिकारमें कर लिया । यहांपर यह करना बहुत ही ठीक होगा कि तैमूरकी चढ़ाईसे भारतवर्षमें घोर खलवली मंचगई थी, उसने मुकुलके सौभाग्य और प्रतिष्ठाके मार्गको बहुतायतसे कंटकहीन करदिया था । इसी सुअवसरमें राणा मुकुलने अपने राज्यको और अपनी सेनाको दृढ़ करके मेवाडके दूसरे भागोंमें भी अपना राज्य जमा लिया था । बहुतसे शोभायमान अटा अटारी और देवमंदिर भी इन्होंने बनाये । इनमें लाक्षभवननाम राणाका महल × और चतुर्भुजा देवीका मन्दिरही विशेष प्रसिद्ध है ।

राणा मुकुलके तीन पुत्र हुए और परम रूपैवती एक कन्या उत्पन्न हुई । कन्याका नाम लालवाई था । गागरौनके खीचीवंशवाले सर्दारके साथ लालवाईका विवाह हुआ । इस सर्दारने विवाह करनेके समय राणाको शपथ दिलाकर यह प्रतिज्ञा करा ली थी कि “ मैं आपसे और कुछ नहीं चाहता, केवल

* इसका नाम महम्मद तुगलक था । यह तुगलक फीरोजशाहके बडेबेटे नसीरुद्दीनका छोटा लडका था ।

× लाक्षराणानेही इस महलका बनवाना आरंभ किया था, जब यह थोड़ाही बना था कि वह परलोकको चले गये इस समय वह महल बिल्कुल टूटफूट गया है । खंडहर पड़ा है, तोभी उसमें अबतक मेवाडके गौरव चिह्न पाये जाते हैं ।

इतनी प्रतिज्ञा कीजिये कि जिस समय शत्रुगण मेरे राज्यको धेरें उस समय आप मेरी सहायता करें।” राणाने इस बातको मान लिया। विवाह होजानेसे कई वर्ष पीछे मालवेके शासन कर्ता हुसंगने गगरौनपर चढ़ाई की; खीचि सर्दारका वेटा धीरज, राणाके पास सहायता लेनेके लिये आया। परन्तु उस काल राणा मदेरियाके पहाडियोंका विद्रोह दवानेको सेना सहित चले गये थे। धीरज वहीं पर जाकर राणासे मिला, तथा आवश्यकतानुसार सेना साथ लेकर अपने देशको लौटा। राणा मुकुलजीके लिये यह मदेरियाही जीवन नाटककी अन्तिम रंगभूमि हो गई; इस काल रंगभूमिमें दो आततायी विश्वास-घातकोंके द्वारा उनकी संसारलीला समाप्त हुई। इन दोनों पाखण्डियोंका नाम चाचा और भैर था। यह दोनों राणाके चचा थे। इन दोनों दुराचारियोंने बिना किसी दोषके, शीलवान् तथा नीतिवान् राणा मुकुलका संहार किया।

राणा मुकुलके दादा राणा क्षेत्रसिंहके औरससे किसी नीचकुलकी सुन्दरी दासीके गर्भमें इन दोनों पाखण्डियोंका जन्म हुआ था। बहुतसे ऐसा कहतेहैं कि वह दासी बढईकी लडकी थी। मेवाडमें ऐसे पुत्रोंको “पाँचवाँ पुत्र नामसे पुकारा-जाताहै। राजाके औरससे जन्म ग्रहण करने परभी वे लोग किसी प्रकारका राजसन्मान नहीं पा सकते। यद्यपि राजालोग अनुग्रह करके कभी २ उनको अपने कार्यमें लगा दिया करते हैं, तथापि वे ऐसे अभागे हैं कि मेवाडके दूसरे दरजेके सर्दारोंकी समान भी नहीं गिने जाते। चाचा और भैरकी प्रतिष्ठा भी इससे अधिक नहीं बढ़ी थी। मेवाडके शुद्ध सर्दारलोग इनसे आन्तरिक घृणा करते थे; तथापि राणा मुकुलजी अनुग्रह करके सातसौ सवारोंका अफसर बनाकर इनको अपने साथ मदेरियामें लेगये थे। दासीपुत्रोंके ऊपर इस प्रकारका अनुग्रह देखकर सर्दारोंको अत्यन्त डाह हुआ, उन्होंने समझा कि चाचा और भैरको उनकी योग्यतासे अधिक पद दियागया है। यह सिद्धान्त करके वे सब इनको अपमानित करनेका अवसर देखने लगे। होनहारकी प्रवलतासे उनकी मनोकामनाके सिद्ध होनेकी घड़ी भी आई। परन्तु इस अभिप्रायके सिद्ध करनेमें राणा मुकुलका प्राण जाता रहा। जिन दिनों मदेरियामें लड़ाई बहुत होरही थी, उस समय एक दिन राणा अपने सर्दार सामन्तोंको लिये हुए एक प्रमोद कुंजमें बैठे थे; इस ही समय वनमें उन्होंने एक नया वृक्ष देखा कि जिसका नाम उनको ज्ञात नहीं था। जितने सभासद बैठे थे सबसे उस वृक्षका

नाम पूछा गया । चौहान सामन्त उनके निकट ही बैठे थे वे जानकर भी अजान हो गये और धीरे-से राणाजीसे कहा; “महाराज ! मैं नहीं बतला सकता, आप इन दोनों भाइयोंमेंसे एकको पूछिये, वह अवश्य इसका पूरा २ विवरण जानते होंगे ।” सीधे साधे राणाने चौहान सदाँरके कुटिल और गूढ़ वाक्यका अर्थ न समझकर सरलतापूर्वक पूछा, “काका ! इस वृक्षका नाम क्या है ?” राणाके इस कपटहीन प्रश्नको सुनकर चाचा और मैरके हृदयमें तीर सा लग गया ! उन्होंने समझा कि बड़ईकी कन्यासे हमारा जन्म हुआ है, इस ही कारणसे राणाने अपमान करनेके लिये हमसे यह प्रश्न किया उनका यह विचार धीरे २ पका हो गया । वह क्रोधके मारे मतवालेसे होगये । एक दिन संध्याके समय संध्याकृत्यको समाप्त करके राणा भगवानके नामकी माला जपरहे थे कि इतनेमें ही उन हत्यारोंने तलवारसे उनकी बाह काट डाली और मार गिराया ! यह दोनों पिशाच, सरल-मति मुकुलका संहार करके अपने २ घोड़ोंपर चढ़कर चित्तौरकी ओरको दौड़े, उनकी अभिलाषा थी कि इस समय चित्तौरपर अधिकार करेंगे । परन्तु इस समय चित्तौरके निकट पहुँचते ही उन्होंने देखा कि दुर्गका द्वार बन्द है ।

यद्यपि पहिले कहे हुए श्लेष प्रश्नके अतिरिक्त राणा मुकुलकी शोचनीय मृत्युका कारण और कोई नहीं पाया जाता तथापि ध्यान धरकर देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होजायगा कि राणाके विरुद्ध एक चक्रान्त पहिलेसे ही बनाया जा रहा था । राणा मुकुलके बड़े पुत्र कुंभने किसी प्रकार इस चक्रान्तका समाचार पा लिया था, और यही कारण था कि दुराचारी चाचा और मैरके प्रवेश करनेसे पहले ही उसने चित्तौरके फाटकको बन्दकर लिया था । जब हत्यारोंकी आशा पूरी न हुई तब वह उस किलेमें चले गये कि जो मदेरियाके निकट बसा हुआ था । इधर बालक कुंभने इस संकटसे रक्षा पानेके लिये दूसरा कोई उपाय न देखकर मारवाडवालोंकी मित्रता और दयाशीलतापर निर्भर किया ।

राजपूतोंकी महिमा कोई भी वर्णन नहीं कर सकता । जिन शिशोदियोंके द्वारा राठौरोंका राजा मारा गया, राठौरोंका राज्य छीना गया, आज शिशोदियोंके राजा कुंभने विपत्तिमें पड़कर राठौर राजपुत्रसे सहायता माँगी । उदार बुद्धि-वाले राजपूतकुमारने पिछले वैरको सम्पूर्णतः हृदयसे भुला दिया, और तत्काल प्रतिज्ञा की कि जबतक उन दोनों राजघातियोंको भली भाँतिसे दंड नहीं देलिया-जायगा, और जबतक बालक कुंभको चित्तौरके सिंहासनपर न बैठा लेंगे; तब-तक शिरपैसे पगडी नहीं उतारेंगे; सेजपर शयन न करेंगे । यथार्थ बात यह है कि

राजपूतोंके जीवनचरित्रमें इस प्रकारकी उदारता और सत्य प्रतिज्ञाके बहुतसे उदाहरण देखे जाते हैं । यह लोग स्वभावसे ही तेजस्वी और ऊधमी होतेहैं । इनका हृदय केवल एक ही चोटके लगनेसे खलबला जाता है । जबतक कि वे उस चोटके मारनेवालेपर चोट नहीं पहुँचा लेते, तबतक हृदय किसी प्रकारसे शान्त नहीं होता । वे जरासे झगड़ेसे ही तेज हो जातेहैं और बदला लेनेके लिये कठोर प्रतिज्ञा कर बैठते हैं । विना प्रतिज्ञाके पूर्ण किये शान्ति नहीं मिलती । परन्तु जिस समय वह प्रतिज्ञा पूर्ण होजाती है, तब वैर निकालनेकी प्यास बुझ जातीहै और पिछले समस्त वैरभावको भूलकर परस्पर मित्र बन जातेहैं। उस समय भट्टलोग दोनों पक्षवालोंका परस्पर विवाह कराकर वर कन्याका हाथ एक साथ बाँधनेके समय दोनों कुलकी कीर्तिका बखान किया करतेहैं । भट्टलोगोंके मुखसे उस गौरवके कीर्तनको सुन २ कर राजपूतोंके हृदयमें अपूर्व आनन्द हुआ करताहै ।

बहुत दिनोंसे राजपूतलोग इस नीतिके अनुसार व्यवहार करते आये हैं । और जबतक उनकी विक्रमरूपी आगकी एक चिनगारी भी शेष रहेगी तबतक इस नीतिका व्यभिचार न होगा ।

राणा मुकुलके बालक पुत्र कुंभने घोर संकटमें पडकर मारवाडके राजासे सहायता माँगीथी । राठौरराजाने दुराचारियोंका दमन करनेके लिये अपने पुत्रको सेनापति बनाकर सेनाके साथ भेजा । वे उस काल राज्यकी सीमापर थे । इस कारणसे राजकुमारने थोड़ेही समयमें उनको घेर लिया । मेवाड़ और मारवाड़के महावीरोंका प्रचंड आक्रमण न रोक सकनेके कारण चाचा और मेरे उस किलेको छोडकर पाईनामक स्थानमें भागगये । पाई आरावली पर्वतमालाके बीचमें बसीहुई है । इसके निकट ही राताकोटनामक पर्वतका एक ऊँचा शिखरथा । दुष्टोंने यहींपर एक दुर्गस्थापन करके सावधानीसे रहनेका विचार किया । उदयपुरके चारोंओर जो विशाल गिरिव्रज गोलाकारसे विराजमानहै, उसके शिखरपर इस राताकोटका टूटा फूटा भाग आजतक भी दिखाई देताहै ।

उस राताकोटमें पहुँचकर इन दोनों दुराचारियोंने अपनेको बेखटक समझा और निशंक होकर वहाँ रहनेलगे, और समझलिया कि यहांपर शीघ्रही कोई हमको नहीं घेर सकेगा । परन्तु उन दुष्टोंने एक बारभी इस बातका विचार न

किया कि राठौरराजा और शिशोदिया नृपाल, इन दोनोंका प्रचंड क्रोध भयंकर दावानलकी समान जलकर इस दुर्गम स्थानमेंही हमको भस्मकर देगा। अब तो यह लोग निश्चिन्त होकर पापके ऊपर पाप करने लगे। अन्तको उन पापोंसे ही दोनोंका सत्यानाश हांगया, सुजान नामक एक चौहानकी अनूढा कन्याको पकडकर यह दोनों बलात्कार उस दुर्गमें ले आये थे। सुजान क्रोधित होकर इस अपमानका बदला लेनेके लिये मजदूरोंके साथ गुप्त भावसे मिलकर राताकोट किलेपर गया, और वहाँ जानेके समस्त मातोंको भलीभांतिसे देख आयाथा। इस प्रकार प्रचंड क्रोधको शान्त करनेके लिये सब भांतिसे तैयार होकर सुजान अपने राजाके पास आयाथा, कि इतनेमें उसने दूरसेही लुंभ और राठौर राजाकी सेनाको देखा। तब तो उसकी आशा लहराने लगी। दोनों हाथोंसे मुँहको ढककर वह रोने लगा, और अपने वंशकी कलंक कहानी महाराजोंसे स्पष्ट कह डाली। उसपाशवी अत्याचारके श्रवण करनेमें जितने आदमी वहाँ थे सबके हृदयमें दारुण दुःख हुआ तथा क्रोध चढ़ आया। इस राताकोट दुर्गसे थोड़ी ही दूरपर दैलवाडानामक एक स्थान है, सेनाने दिनका समय वहींपर व्यतीत किया। रात्रिके होते ही वीरगण राताकोट किलेकी ओरको चले। अतिसावधानीसे किलेके नीचे पहुँचकर उसके ऊपर चढ़नेका विचार करने लगे। शीघ्रही पर्वतपर बड़ी २ कीलें ठोकी-जाने लगीं। घनी २ लता गुल्म और वनैले वृक्षोंकी शाखाओंको पकड़ २ कर उन कीलोंका सहारा लेते हुए वीरगण धीरता और सावधानीसे उस पहाड़ी किलेपर चढ़ने लगे। रात्रि घोर अँधियारी है। जो अगणित तारे उस अन्धकारको हटानेके लिये प्राणपणसे परिश्रम कर रहे थे, उन सबका प्रभा हीन और टिमटिमाता हुआ प्रकाश, उन घनेवन-वृक्षोंके पत्तोंको भेदकर कभी २ सेनाके वीरोंको दिखाई देजाताथा। उस गंभीर अंधकारके चौड़े परदेको उठाय राठौर और शिशोदिया वीरगण उत्साह और क्रोधके साथ परस्पर एक दूसरेका अंगरखा पकड़ २ कर धीरे २ ऊपरको चढ़े। शत्रुसे बदला लेनेके लिये सुजान चौहान अत्यन्त मतवाला व उतावला होगया था। इस कारण वह मार्ग दिखाता हुआ सबसे पहिले आगे २ चलता था। सुजान जब कि पर्वतके ऊँचे स्थानपर चढ़गया था तब किरणकी दो तीव्र रेखाओंने उसकी दृष्टिको अपनी ओर खँचा। उसने चकित हो ध्यानसे देखा तो ज्ञात हो गया कि एक बाघिनीके प्रकाशमान नेत्रोंसे यह किरणें सी निकल रहीं थीं। सुजान

धवड़ाया और अपने निकट खड़े हुए एक राजकुमारको इशारेसे वह वाधिनी दिखाकर पीछे हटने लगा ।

राजकुमारने उसके भयका कारण देखकर तत्काल उस वाधिनीको तलवारसे मार डाला । राजपूतलोग ऐसी बातोंका होना शकुन समझते हैं । इस शकुनके होनेसे सबके हृदयमें दूना-उत्साह होगया । धीरे २ समस्त वीरगण राताकोटके शिखरपर पहुँच गये । कोई वीर तो दुर्गकी भीतपर चढ़गया था और कोई चढ़ रहाथा कि इतनेमें ही सबसे आगे चढ़ेहुए भाटका पाँव फिसलनेसे वह भीतके नीचे गिरा । गिरते ही उनका ढोल * घोर शब्दसे बज उठा । इस शब्दसे चाचाकी बेटी जो कि सो रही थी, जाग उठी । कन्याको फिर सुलानेके लिये चाचाने कहा “क्यों क्या डर है ? किसका भय है ? केवल ईश्वरका भयकरके मुखसे सोओ । भादोंमासका मेघ गर्ज रहा है, साथमें वर्षा भी हो रही है, इसी कारणसे ऐसा शब्द होताहै । नहीं तो यह और कुछ भी नहीं है । हमारे शत्रु इस समय कैलवाड़में हैं उनकी कोई चिन्ता नहीं । ” चाचा इस प्रकार कह रहा था कि किलेमें महाकुलाहल होने लगा । राठौर और शिशोदिया वीरगण किलेमें आकर सहाभ्यंकर सिंहनाद करनेलगे । इस सिंहनादको सुनकर चाचाका हृदय कंपायमान होनेलगा । वह विस्तरसे शीघ्रतापूर्वक उठा और शस्त्र लेकर बाहर जाया ही चाहता था कि इतनेमें चंदानो सरदारने प्रचंड मूर्ति धारण करके उसको घेर लिया और वहीं पर दो टुकड़े करडाले । भाईको गिरता हुआ देखकर दुष्ट मैर भागना चाहता था, परन्तु राठौर राजकुमारने उसको भी पकड़ कर जमीनपर गिरा दिया । इस प्रकार इन दोनों पापियोंको इनके पापका प्राण-दंड दिया गया । राठौर और शिशोदिया वीरगण उस किलेके धनरत्न लूटकर जय गान करते हुए अपने २ देशमें आये ।

* राजपूत सेनाके साथ जयकीर्तन करनेके लिये भट्टलोग भी संग्राममें जाया करते हैं । वह कवि लोग अपने साथमें एक२ नगाडाभी ले जाते हैं । युद्धमें जय होते ही उसको बजाकर समरके गीत गाये जाते हैं ।

सातवाँ अध्याय ७.

कुम्भका सिंहासन पर बैठना । मालवपति महम्मदको जीतकर और कैद करके राणा कुम्भका चित्तौरमें लाना; राणा कुम्भके गौरवकी वढती;—पुत्रके द्वारा राणा कुम्भकी गुप्त हत्या;—पिताके सारनेवालेको निकालकर रायमल्लका चित्तौरके सिंहासनपर बैठना;—दिल्लीके बादशाहका मेवाड़को घेरना रायमल्लकी विजय;—घरेलू झगड़े;—रायमल्लकी मृत्यु ।

सम्वत् १४७५ (सन् १४१९ ई०) में राणा कुंभ (कुंभाजी) चित्तौरके सिंहासनपर बैठे । इनके राज्यमें मेवाड़ उन्नतिके शिखरपर पहुँच गया था । हजारों विघ्नोंके रहते भी भली भाँतिसे अपनी प्रजाका लालन पालन करते थे । परन्तु यदि मारवाड़के राजाकी * सहायता न मिलती तो इस उन्नति होनेमें सन्देह था । कारण कि जैसी उमरमें उनपर बड़े २ संकट पड़े थे, यदि उस समय राठौरके राजा उनको अपना समझकर सहायता न करते तो न जाने आज मेवाड़के इतिहासका क्या आकार होता । राठौरराजने अत्यन्त परिश्रम, यत्न और चेष्टाकरके कुंभकी सहायता करनेमें मन लगाया था । इसके बहुतसे कारण देखे जाते हैं । उनमेंसे एक विशेष कारण यह भी मानलेना होगा कि राणा कुम्भने उनसे सहायता माँगी थी । यदि इस प्रार्थनाको वह पूर्ण न करते तो उनके कलंककी सीमा न रहती । दूसरी बात यह है कि राणा कुम्भ राठौरराजके भानजेथे । सिद्धान्त यह है कि कुछ तो कतव्य ज्ञानसे और कुछेक

* रणचर भट्टने अपने बनाये “ राजरत्न ” काव्यग्रन्थमें वर्णन किया है कि मारवाड़के मन्दोर राव, राणा मुकुलके प्रधान मंत्री थे, और इन्होंने नावा और दिहाना नामक दो स्थान जीतकर मेवाड़में मिला दियेथे ।

स्नेह ममताके वश होकर उन्होंने कुंभके लिये इतना परिश्रम और इतना कष्ट उठाना स्वीकार किया था ।

मेवाड़का राज्य जिस प्रकार चतुर और तेजस्वी राजाओंके द्वारा बहुत दिनों-तक शोभायमान होतारहा, ऐसा सौभाग्य और किसी राज्यको प्राप्त नहीं हुआ । राणा कुंभके समयमें मेवाड़का गौरव दुपहरके सूर्यकी समान प्रचंड हो रहा था । हिन्दू विद्वेपी मुसलमानोंके घोर अत्याचारसे जिस भारतके नगर और ग्राम ध्वंस होकर खंडहर बनगये थे, आज उन यवनोंका पताभी नहीं पाया जाता था । मुसलमानोंके जिस प्रचण्ड वीरने भारतकी स्वाधीनताको छीन लिया था, आज सौ वर्ष बीतगये कि उसका शरीर परमाणु बनगया । यह कहना ठीक होगा कि इन सौ वर्षोंके बीचमें मेवाड़के बीच नया युग वर्तमान हुआ । जिस भयंकर संग्रामके होनेसे ब्रह्माकी कठोर लिपि फलवती हुई । उसमें वीरवर समरसिंहके साथ जो राजपूत वीरगण संग्राम भूमिमें सोगयेथे, आज उनकी भस्मछारसे अगणित शिंशोदिया वीर उत्पन्न होनेलगे । इस समय मेवाड़में किसी बातकी कमी नहीं है । बल, वीर्य, गौरव, प्रतिष्ठा आज सबही शोभाओंसे मेवाड़ शोभायमान है । तथापि मेवाड़के जाननेवाले महाराणा कुम्भ निश्चिन्तभावसे न रहकर अपने होनहार दर्शनके अद्भुत बलसे भारतकी होनहार भाग्य लिपिको एकान्त चित्तसे पढ़ने लगे । उन्होंने देखा कि काकेशस पर्वतमालाके ऊंचे २ शिखरोंसे और उनके नीचे बहती हुई काकेशस नदीके बड़े किनारेसे घनघोर घटा घुटकर घटाटोप बाँधे हुए धीरे २ भारतवर्षकी ओरको फैलती जाती है । उस घोर घटाके भयंकर गुप्त गर्भमें जो प्रचंड विजली धीरे २ उत्पन्न होरही थी, वह अल्पकालमें ही पूर्ण रीतिसे जलकर मेरे पोते साँगा-पर गिरैगी। इस होनहारको राणा पहलेही जान गयेथे, अतएव उस वज्राग्निके विश्वदा-ही तेजको रोकनेके लिये इससमय उचित उपाय करने लगे जिन उपायोंकी सहायतासे उन्होंने बड़े-रकठिन कार्योंको साधन किया था, जिन उपायोंकी सहायतासे उन्होंने हमीरकी तेजस्विता, कार्य-कुशलता, राणा लाक्षकी सुन्दर शिल्पप्रियता वरन इन दोनोंसे भी अधिक गुणवान होनेका परिचय दिया था;—यहाँतक कि एक समय राणा कुंभने समरसिंहकी संग्राम भूमि कग्गरनदीके किनारेपर भी “ मेवाड़का लाल झंडा ” फहरा दिया था । आज उन्हीं गुणोंके द्वारा वे शत्रुसे बचनेका उपाय सोचने लगे । यहाँपर हिन्दूराजाओंकी प्रजा हित-कारिणी राजनीतिके साथ हम, उस कालके मुसलमानोंकी अत्याचार

करनेवाली राजनीतिकी समालोचना करेंगे । जिस दिन यवनवीर शहाबुद्दीनने भारतके स्वाधीनता रत्नको छीन लिया, जिस दिन समरकेशरी समरसिंहने उस रत्नके पुनरुद्धार करनेमें दृष्टतीनदीके किनारे अपने प्राणोंका वलिदान करदिया; उस दुर्दिनको महाराणा कुम्भके समयतक २२६ वर्ष बीतगये हैं । इन दोसौ वर्षके बीचमें दो विशाल राजवंशोंमें २४ यवन राजा हुए; इनमें यवनोंकी एक वेगम भी होगई, तथा विद्रोह और पदच्युति आदि कुटिल चक्रमें पिसकर, धीरे २ यह समस्त बादशाह कालके गालमें चलेगये । यदि मेवाड़के साथ मिलान किया जायगा तो इन दोनोंमें बहुतसा भेद दिखाई देगा । क्योंकि उपरोक्त समयके बीचमें केवल ११ राणा मेवाड़के सिंहासनपर बैठे । इनमेंसे बहुतसे तो ऐसे थे कि जिन्होंने मातृभूमिकी या किसी पुराणतीर्थकी रक्षा करनेके लिये संग्राममें अपने प्राण दिये थे । इस समय स्पष्ट ही ज्ञात होता है कि जो लोग प्रजा हितकारी नीतिके अनुसार राज्य पालन करते हैं, वे बहुतदिनोंतक राजसिंहासनपर विराजमान रहते हैं ।

जिस समय खिलजी वंशके पिछले बादशाहका जमाना था उस समय विजयपुर, गोलकुण्डा, मालवा, गुजरात, जौनपुर और कालपी आदि देशोंके राजा लोग, दिल्लीश्वरको अयोग्य जानकर अपनीर अधीनतारूपी शंकलको काटकर अलग २ स्वतन्त्र राज्यकी प्रतिष्ठा करने लगे । जब राणाकुम्भको राजचित्तौरका राजसिंहासन मिला, उस ही समय मालवे और गुजरातके दोनों नवाब सेना बढ़ाकर अपने राज्यको बढ़ाने लगे, वे मेवाड़राज्यकी उन्नतिका वृत्तान्त जानकर डाह करने लगे । फिर दोनों एक साथ मिलगये और सम्वत् १४९६ (सन् १४४० ई०)में बड़ी भारी प्रचंडसेना साथ लेकर मेवाड़राज्यकी ओर धाये ।

राणा कुम्भने शीघ्रही इस समाचारको जान लिया । उनको अत्यन्त क्रोध हुआ । दोनों नवाबोंको भलीभांतिसे दंड देनेका विचार महाराणाने किया, वह एक लाख घोड़े व पैदल, और १४०० हाथी साथमें लेकर उन दोनों यवनोंके सामने आये । दोनों सेना आमने सामने खड़ी होगई । घोर संग्राम हुआ । राणाकी फौजके सामने मुसलमानोंकी फौज ठहर न सकी, राणा कुम्भ मालवेवाले महम्मद खिलजीको बाँधकर चित्तौरमें लेआये ।

अबुलफजलनेभी अपने बनाएहुए इतिहासमें राणा कुम्भकी इस जय वृत्तान्तका वर्णन कियाहै । मुसलमान होनेपर भी इसने हिन्दूराजाके माहात्म्य और उदारताके

वश हो वारम्बार उनकी तारीफ की है। उसने कहा है;—“कि उदार चरित्रवाले राणा कुम्भने बिना किसी तरहका जुर्माना कियेही अपने शत्रु महम्मदको छोड़ दिया, वरन उसको अनेकप्रकारकी भेंट देकर आदरमानके साथ उसके राज्यमें पहुँचा दिया ” इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिन्दूजातिका चरित्र ऐसाही उदार होता है। विनीत शत्रुको कृपा करके छोड़ देनाही हिन्दू वीरोंका सनातनधर्म है। वे सदाही इस धर्मके अनुसार कार्य कियाकरते हैं। महम्मदखिलजीके छूटनेका वर्णन भट्टग्रन्थोंमें औरप्रकारसे लिखा है। उन्होंने लिखाहै कि राणा कुम्भने छः मासतक महम्मदको कैद रखकर छोड़ दिया। कहते हैं कि जय प्राप्त करनेके चिह्नकी भाँति और २ वस्तुओंके साथ राणाने उसके ताजको अपने पास रहने दिया था। वीरवर वावरने सांगाके बेटेसे इस ताजको नजरमें पाकर अपनी जिंदगीके हालमें इस बातको भी दर्ज किया है, अतएव राजा कुम्भकी प्रतिष्ठाके लिये यह कुछ साधारण बात नहीं है। परन्तु इन सबकी अपेक्षा एक दूसरा स्मृतिचिह्न बहुत दिनसे उस विजय बानीका गान कर रहाहै। महाराणा कुम्भका बनायाहुआ एक विशाल विजयस्तम्भ इस विजयका चिह्न माना गया। “उफनेहुए महासागरकी समान विशाल सेनाको साथ लेकर पृथ्वीको कंपायमान करते हुए गुजरात और मालवेके दो बादशाहोंने मध्य पाट * पर चढाई की ” इसके पश्चात् जो कुछ हुआथा वह समस्त इस विजय स्तम्भपर लिखा हुआहै। इस लडाईसे ग्यारह वर्ष पीछे राणाने इसका बनवाना आरम्भ किया। और दश वर्षके बीचमें बनकर पूरा होगया। जो विशाल विजयस्तम्भ तइयार होकर आज मेरु-पर्वतकी ओर घृणाकी दृष्टिसे देखताहै उसका दश वर्षके बीचमें तइयार होजाना कुम्भराणाकी कार्य तत्परताको सूचित करताहै। परमेश्वरसे हमारी यही प्रार्थना है कि यह विजयस्तम्भ अचलभावसे विराजमान रहकर मेवाडके राजाओंका गौरव मान कियाकरै। राजाकुम्भकी उदारता और महानताके वश होकर मालवेका बादशाह उनका मित्र होगयाथा। भट्टग्रन्थमें लिखाहै कि एकवार दिल्ली-श्वरकी सेनाके साथ झुंझजूनामक स्थानमें राणाका युद्ध हुआ, महम्मदखिलजी इस लडाईमें अपनी फौजको राजा कुम्भकी सहायताके लिये आयाथा। राणाकी विजय हुई। उस समय दिल्लीके बादशाहकी सामर्थ्य यहांतक जाती रहीथी कि

* मेवाडका पुराना नाम मध्यपाट है।

मुल्ला लोग दिनरात मसजिदोंमें फतवा पढ़ा करते थे कि बादशाह दिल्लीकी इज्जत बरकरार रहे । अकेले मालवेके शासन कर्त्तानेही दिल्लीके पिछले मुलतान गोरीको पराजित किया था ।

विदेशीय लोगोंके आक्रमणसे मेवाडभूमिकी रक्षा करनेके लिये जो ८४ दुर्ग वहाँपर बने हैं, उनमेंसे ३२ महाराणा कुंभनेही बनाये थे । इन वत्तीस किलोंमेंसे उनका बनायाहुआ कुंभमेरु कमलमीर दुर्गही विशेष प्रसिद्ध है । यह किला जैसे स्थानमें बनाया गया है, और इसके चारोंओर जैसी ऊंची दीवारें बनी हुई हैं, इस कारणसे उसको चित्तौरके किलके सिवाय मेवाडके और दुर्गोंमेंसे श्रेष्ठ कहा जासकता है । कुंभमेरुकी यह दीवारें जहाँपर बनी हुई हैं वहाँपर एक प्राचीन किला बना हुआ था, यह किला बहुत दिनोंसे पहाड़ी भीलोंके अधिकारमें था; महाराणा चन्द्रगुप्तके वंशमें संप्रीतनामक एक जैन राजा सन् ईसवीकी दूसरी शताब्दीमें हुआ था, बहुतसे आदमी कहते हैं कि इसनेही उस किलेको बनाया था । इस प्राचीन दुर्गके स्थान २ में जो जैनियोंके मंदिर दिखाई देते हैं, उनकी अत्युत्तम बनावटको देखकर इस कहावतके ऊपर विश्वास करनेको जी चाहता है । इस कुंभमेरु किलेके एक प्रधान द्वारका नाम “हनुमान द्वार” है वहाँपर वीरांग्रगण्य महावीरजीकी एक बड़ी मूर्ति विराजमान होकर उस द्वारकी रक्षा कर रही है । जिस समय कुंभराणाने नगरकोटको जीता था उस समय इस नगरके सुन्दर किवाड़ोंके साथ हनुमानजीकी यह मूर्तिभी वह अपने नगरमें ले आये थे । आवू पहाड़के एक शिखरपर परमारोंका एक बड़ा किला बना हुआ था, महाराणा कुंभने उसमें एक बड़ा महल बनवाया था । बहुधा वह इसही महलमें रहा करते थे । इस विशाल दुर्गका अखागार और रक्षकशाला आजतक महाराणा कुम्भके नामसे प्रसिद्ध है । मेवाडनिवासियोंके बहुतसे कार्योंसे इस बातका प्रमाण प्राया जाता है कि महाराणा कुंभ प्रजाको अत्यन्तही प्यारे थे । आवूपर्वतके कूटपर बसे हुए उस किलेके भीतर कुछेक मंदिर दिखाई देते हैं । उनमेंसे एकके भीतर कुंभकी और उनके पिताकी मूर्ति विद्यमान है । अबतक मेवाडके रहनेवाले देवता जानके उन मूर्तियोंकी पूजा करते हैं । जिस दिन महाराणा कुम्भने उस पहाड़ी किलेके भीतर विश्राम किया था, उसदिनको आज कई सौ वर्ष बीत गये, उनके वंशवालोंने अपने अनन्त विक्रमको प्रकाशित किया था, आज वहभी अनन्त समुद्रके किसी गंभीर स्थानमें लोप हो गये हैं, तथापि इन समस्त कीर्तियोंका विचार करनेसे मनमें आपसे आप मेवाड-

के पूर्वगौरवका वृत्तान्त याद आ जाता है। मेवाडके पश्चिम प्रान्तको और आवू पहाडके बीचमें बने हुए मार्गोंको परकोटे आदिसे दृढ़ करके महाराणा कुंभने भानशिरोहीके निकट वसन्तीनामक एक किला बनाया। इसके अतिरिक्त आरावलीके रहनेवाले मैरलोंकी चढ़ाईसे देवगढ़ और शेरोनल्लकी रक्षा करनेके लिये भी उन्होंने एक किला बनवाया था, इस किलेका नाम माचीन है। तथा जारोल और पानोरके दुर्द्धर्षभूमि या भीलोंको वशमें रखनेके लिये महाराणाने आहौरकी तथा दूसरे औरभी प्राचीन किलोंकी मरम्मत कराई और मारवाडराज्यकी सीमाको नियत किया।

इनके सिवाय राणाकुम्भकी और कीर्तियोंभी बहुतायतसे थीं कि जिनका धर्मसे सम्बन्ध था। इनमें छः अधिक प्रसिद्ध हैं।—एक—कुंभश्याम। कुंभश्याम आवू पहाडके ऊपरकी भूमिपर बना हुआ था, यदि किसी और स्थानपर बना होता तो अपनी सुन्दरतासे जगतमें प्रसिद्ध होजाता। परन्तु, यह स्थान अनेक सुन्दर पदार्थोंसे घिरा हुआ है, इस कारणसे कुंभश्यामकी सुन्दरता हटात अनुमान नहीं की जासकती। दूसरी अटारी बहुत बड़ी है। इसको बनानेमें दश करोडसे कुछ अधिक रुपये खर्च हुएथे। राणाने खास अपने कोषसे इसके बनानेको आठ लाख रुपये दिये थे। यह विशाल अटारी मेवाडके पश्चिम भागमें बने हुए माद्रिनामक पहाडी मार्गके बीचमें बनी हुई है। राणाकुंभने श्रीऋषभदेव * जीके नामपर इस अटारीको उत्सर्ग कियाथा। मुसलमान लोगोंका सर्व संहारक हाथ इस कारणसे इस अटारीको नहीं तोड़सका कि यह पर्वतके दुर्गममार्गके किनारे बनीहुई है। परन्तु दुःखकी बातहै कि इस समय यह सम्पूर्णतः त्यागदी-गईहै। ऋषभदेवजीका जो पवित्र मंदिर एक समय मेवाडका पवित्र स्थान समझा जाताथा, जहाँपर प्रतिदिन अगणित नरनारी आते जाते थे; आज वहाँ पर मनुष्यका नामतक नहीं, केवल जंगलही जंगलहै। आज वनेले हिंसक जीवोंने उस अटारीके कमरोंमें अपने रहनेके स्थान बनाकर उस दुर्गम देशको औरभी अधिक दुर्गम करदियाहै। राणाकुंभ जैसे वीर

* राणाका एक मन्त्री जैनधर्मावलम्बी था, यह राठौर कुलमें उत्पन्न हुआ था। इस मन्त्रीनेही सन् १४३८ई०में यह मंदिर बनवाया। इसके बनानेमें सब प्रजानेभी चंदा दियाथा। मंदिरके ३ खंड हैं। बहुतसे खंभोंके ऊपर बना हुआहै। प्रत्येक स्तम्भ ४० फुटसे अधिक ऊंचा होगा। इसकी कारीगरी देखने योग्य है; स्थान पर अनेक भांतिके चित्र खिंच रहेहैं जैनियोंके प्रसिद्ध सन्यासियोंकी मूर्तियों इस मंदिरके निचले भागमें बनीहुई हैं।

शिल्पप्रिय और प्रतिष्ठावान थे वैसेही कविभी थे । राजस्थानके दूसरे कवियोंकी अपेक्षा राणाकी कविता विशेष प्रसिद्ध है । कारण कि राणाने दूसरे कवियोंकी नाई अपने विक्रमके वर्णनमें या अपनी प्राणप्यारियोंकी सुन्दरताके कहनेमें अपनी बुद्धि और कवित्वशक्तिको खर्च नहीं किया । उन्होंने आध्यात्मिक रसका स्वाद चखनेवाले कविलोगोंकी विशुद्ध रुचिके पीछे जाकर अमृतमय “ गीतगोविन्द ” की एक सुन्दर परिशिष्ट बनाई है ।

मारवाडके श्रेष्ठ सामन्त भैरतानिवासी राठौर सवाईकी मीरावाई नामक कन्यासे महाराणा कुम्भका विवाह हुआ था। *मीरावाईजी जिस प्रकारसे अत्यन्त सुन्दरी थीं वैसेही धर्ममेंभी आस्था रखती थीं । इनके गुणोंकी वरावरी उसकाल कोईभी राजकुमारी नहीं करसकती थी । मीरावाईजी कविता रचनामें परम प्रवीण थीं । भगवान् कृष्णचन्द्रजीकी स्तुतिके उन्होंने अनेक पद बनाये थे । वैष्णवलोग इनकी कविताका बहुतही आदर करते थे । अवतक बहुतसे राजकुलोंमें मीरावाईजीके पवित्र भजन सुने जाते हैं । *अवतक वैष्णवलोग उनके सुन्दर भजनोंको गाते २ प्रेमानन्दमें मगन हो जाते हैं, राणाकुम्भाजीभी कवि थे, परन्तु मीरावाईजीने उनसेही कुछ सीखाया इस बातका निरूपण करना कठिन है, स्वधर्मपरायण पंडिता मीरावाईजीका जीवनचरित्र उपन्यासकी यथार्थ सुन्दरतासे परिपूर्ण है । यमुनाजीके किनारेसे लेकर द्वारकापुरीतक भगवान् श्रीकृष्णजीके जितने मंदिर थे, उन सबको मीरावाईजी देख आई थीं । पुरपोंकी समान व्यवहार करनेसे उनके कलंककी बहुतसी कहानी सुनी जाती है, परन्तु वे सब मिथ्या हैं और उनके चरित्रके अयोग्य हैं ।

वीर होनेके साथ राणाकुम्भ प्रेमिकभी थे । जंगार और वीररसके अपूर्व मिश्रणसे उनका हृदय अपूर्व सुन्दर होगया था । मालावारजनपदके स्वामीकी बेटीके साथ एक राठौर राजकुमारका विवाह निश्चय किया गया । परन्तु उस विवाहके

× या देवीप्रसादजी मुन्सिफ जोधपुर अपने बनायेहुए “मीरावाईके जीवनचरित्र” में लिखते हैं कि “ करनलटाडने सुनी सुनाई और अटकल पच्चू बातोंपर भरोसा करके मीरावाईको राणा कुंभाजीकी राणी लिखकर गलतीकी है * * * मीरावाई जोधपुरके राठौरखानदानसे थीं और उदयपुरके शिशोदिया खानदानमें महाराणा सांगाजीके कुमारभोजके साथ व्याही गई थीं । (सफा २।३।) इनका विवाह सम्वत् १५७३ में हुआ था । “मीरावाईजी राजदूदाजीके मेड़तिया राठौररतनसिंहकी बेटी थीं । ”

* मीरावाईनाटक जो बम्बईके प्रसिद्ध श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेसमें छपा है, देखने योग्य है ।

होनेसे पहलेही राणाकुंभने उस राजकुमारीको हरण करलिया। इससे पहिले राठौर और शिशोदिया राजाओंमें जो मित्रता होगई थी, महाराणा कुम्भके व्यवहारसे वह टूट गई। फिर दोनों कुलोंमें प्राचीन कालका वैरभाव बँध गया। प्रेमविमूढ राठौर राजकुमारने अपने प्राणप्यारीका उद्धार करनेके लिये अत्यन्त चेष्टा की, परन्तु दुर्भाग्यवश उसके सारे परिश्रम निष्फल होगये। तोभी वह राजकुमार उस लावण्यवतीकी आशाको नहीं छोड सका। रातदिन मन्दोरकी अटारीके मूने कमरेमें बैठकर वह उस सुन्दरीकी सुन्दरताईका ध्यान करता था वर्षाके होनेपर जब आकाश साफ होजाता था तब कुम्भके ऊंचे प्रासाद-शिखरसे मंदोरका किला साफ २ दिखाई देता था। उस समय राठौर राजकुमार प्राणप्यारीके वासस्थानका दर्शन किया करते थे। अनेक चिन्ता अनेक विचार उनके हृदयमें उदय हुआ करते;—कभी सुख कभी दुःख;—कभी आशा और कभी निराशा उनके हृदय पर अपना अधिकार किया करती थीं। कभी २ विरह व्यथा सहते २ बहुतही अधीर होजाते थे। तथापि उस मोहकरी आशाको नहीं छोड सकते थे। या उस एकान्त स्थानकोभी नहीं छोड सकते थे। रातदिन वह कुंभमेरुके महलको ही देखते रहते थे। कुम्भमेरुके दीपकका उज्ज्वलप्रकाश तारेके प्रकाशकी समान दूरसे उनको दिखाई दिया करताथा; वह ध्यान लगाकर उसेही देखा करते। बहुतोंका यह अनुमान था कि कुम्भमेरुकी अटारीमें जो दीपक रातको जलाया जाताथा वह झालावारकुमारीके प्रेमका निदर्शन था। उसने राठौर राजकुमारकोही अपना प्राण समर्पण करदियाथा। महानकुलमें पहुँचनेपर भी राजकुमारी बालकपनकी प्रीतिको नहीं भूल सकी। पिताने, धनके लालचसे अपनी कन्याको उसके प्रणयपात्रके शत्रुको विवाह दिया। बेटीके सुख दुःखका कुछभी विचार न किया। राजपूतवाला दिनरात अपने भाग्यको धिक्कार दिया करती थी। इस प्रकारसे कई वर्ष बीत गये। विरहमें जलते हुए राजकुमारने अत्यन्त चेष्टा की परन्तु प्राणप्यारीका दर्शन किसी प्रकारसे न पाया। एक दिन यह राजकुमार उस वनमें होकर जो कि कुम्भमेरुके पश्चिमओर था, किलेपर चढ़ गया। भट्टकविगणोंने यहाँ कहाहै कि “ वह राजकुमार झालवनसे तो निकल आयाथा, परन्तु झालनीके समीप किसी प्रकारसे नहीं आसका। ”

भलीभाँतिसे प्रजा पालन और अखंड प्रतापसे ५० वर्षतक राज्यभोग करके राणाने बुढ़ापेके चिह्न पाये। उनकी जातिके तथा देशके शत्रु राणाके भयंकर विक्रम मंत्रसे मोहित हुए सर्पकी समान चुप चाप पड़ेहैं। राणा कुंभजीने बहुतसे

किले और मंदिरादि द्वार अपने राज्यको दृढ़ व शोभायमान करके जन्मभूमिकी अनन्त प्रतिष्ठाके साथ अपनी कीर्ति और प्रतिष्ठाकी नीम गाड़दी। ऐसे समय मेवाड़के ऐसे गौरवके समयमें राणाके बलवान वृक्षकी जड़में एक पाखण्डी नर राक्षसने कठोर कुहाड़ा मारा। जो वर्ष मेवाड़देशके अतुल आनन्द और उत्सवका वर्ष गिना जाता था आज पिशाचकी करतूतसे शोक सागरकी समान होगया। उन वर्षोंमेंसे एक वर्षके कुदिनमें जो भयंकर कुकार्य हुआ उसके द्वारा भारतके इतिहासका एक पूरा अध्याय कलंककी स्याहीसे कलुषित हो गया। परमगुणाधार राणाकुंभ दीर्घकालसे शान्तिको भोग करते हुए बुढ़ापेके मार्गमें घूम रहे थे; उनका पवित्र प्राण एक पिशाच घातककी छूरीके आघातसे अकालमें ही इस लोकसे पयान करगया। यह घातक पिशाच और कोई नहीं था, राणाके पुत्रनेही इस भयंकर कार्यको किया था।

इस प्रकारसे संवत् १५२५ (सन् १४८९) का वर्ष इस भयंकर कुकार्यके हो-जानेसे कलंकित होगया। जिस नरराक्षस पिशाचने अपने हाथसे अपने जन्मदाता पिताका संहार किया; उसका पापी नाम सनातनधर्मावलंबियोंके पवित्र इतिहासमें लिखनेके लायक नहीं है। उस नामका सुँहसे कहनाभी पाप है। इस पाखण्डी पितृघातीका नाम “उदा” (या उदयसिंह) था। राजस्थानके भट्टकाविगण इसके धिनौने नामके बदले “हत्यारा” और “नरहन्ता” के नामसे इस अभागेको पुकारा करते हैं; जिस राज्यके लालचसे ऐसा बुरा कार्य किया, उस राज्यको वह बहुतही थोड़े समयतक भोग सकाथा। और इस थोड़े समयमें भी एक पलको भी सुख नहीं पाया। परग २ पर जातिवालोंके विद्वेष रूपी विषको पान करते हुए उसको अपना समय व्यतीत करना भारी पड़गया था। सगे, भले, इष्ट, मित्र, बन्धु, वान्धव, सवनेही उसको त्याग कर-दिया था। इस घृणित अवस्थाको पहुँचकर जब इस दुराचारीने अपनेको बचानेका उपाय न पाया, तब एक नीच पुरुषके साथ मित्रता की। कपट मित्रतासे अपने जालमें फँसनेके लिये पापी उदाने देवड़ानामक सामन्त राजाको आवू-पहाड़पर स्वाधीन राजाकी भाँति स्थापित करदिया। तथा जोधपुरके * राजाको सांभर अजमेर और इनके निकटके कईएक परगने दे दिये। परन्तु तोभी इस दुष्टका खटका न गया। उदाने जिस प्रकार राज्य धनके बदलेमें इस मित्रताको

* इस भयंकर घटनासे १० वर्ष पहले सम्वत् १५१५ में जोधरावने जोधपुर बसाया।

मोल लिया था, उसका वह आशय पूरा न हुआ। मनमें अभिलाषा थी कि वह मित्र मेरे खोटे कामोंके करनेमें भी सहायता करेंगे, परन्तु मुँह खोलकर मित्र-सेभी अपने भेदको प्रकाशित न कर सका। यदि कहता तोभी उसके कहनेके अनुसार कार्य होनेमें सन्देहही था तब तो मनहीमनमें अत्यन्त दुःख पाने लगा; और अपनी कामनाको सिद्ध करनेके लिये राज्यमें भ्राँति २ के अत्याचार करने आरंभ किये। इसके अत्याचार और बुरे २ व्यवहारोंसे धीरे २ राज्यका नाश होने लगा। महाराणा कुम्भने वर्षोंतक परिश्रम करके जिस मेवाडराज्यको उन्नतिके शिखरपर पहुँचा दिया था, उड़ाने पाँच वर्षके बीचमेंही उस राज्यकी हीन दशा कर दी। इस प्रकारके अत्याचार करने पर भी दुष्टको शान्ति न मिली। जिनको बहुतसा धन देकर मित्र बनाया था, वहभी पापीको छोड़ गये और वाततक न सुनी। तब अभाग्य अपने स्वार्थकी रक्षाका दूसरा उपाय न देखकर दिल्लीके मुसलमान राजाके पास चला गया। और अपनी कन्या देनेका वचन देकर उनसे सहायता माँगी, “परन्तु भगवाने उसके इस दुगुने दुराचारको दूर करके दुरपनेय कलंकसे, वाप्यारावल्के पवित्र वंशकी रक्षा की, और भलीभाँतिसे पापका फल दिया” जब कि यह पापी ऊदा बादशाहसे विदा लेकर “दीवानखाने” से बाहरको आता था, उसही समयमें शिरपर विजली गिरी, और तत्काल यह पापी पृथ्वी-पर गिरकर यमराजके हाँको चला गया। कठोर पापका कठोर प्रायश्चित्त हुआ; इस पापजीवन नाटकका परदा सदाके लिये पड गया। इस कठोर कार्यमें भट्टवंशके एक आदमीने भी ऊदाकी सहायता की थी, यही कारण है जो भट्टलोगोंने अपनी जातिकी दुष्टता छिपानेके लिये इस वृत्तान्तको साधारण रीतिसे वर्णन किया है।

राजस्थानके जो ब्राह्मण, यति, चारण और भाटगण दान लिया करते हैं वे मंगता कहलते हैं। इन लोगोंमें परस्पर अत्यन्त विद्वेष होता है, एक दूसरेके ऊपर प्रभुता करने और हुकम चलानेकी बहुतही अच्छा समझते हैं। परन्तु वीर-वर हमीरके समयसे इन लोगोंमेंसे चारण बहुतही बढ गये थे। एक ज्योतिषी ब्राह्मणने ज्योतिषके अनुसार प्रश्न लगाकर बतलाया था कि एक चारणके हाथसेही राणा कुंभ मारे जाँयगे। इससे पहलेभी राणा कुंभ किसी कारणसे चारणोंके ऊपर अत्यन्त अप्रसन्न हुए थे, इससमय ज्योतिषीकी बात सुनकर और भी क्रोध आया, और चारणलोगोंकी समस्त धन सम्पत्ति छीन-

कर उनको अपने राज्यसे निकाल दिया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि चारणोंको ऐसा कठोर दंड देकर राणाने अदूरदर्शिताका कार्य किया था । कारण कि आज तक कोई ऐसी हिम्मत नहीं रखता जो ब्राह्मणोंको एक साथ ऐसा दंड दे । परन्तु चारणलोगोंको देशनिकालका यह कठोर दंड बहुत दिनोंतक नहीं भोगना पड़ा । युवराज रायमलकी कार्य तत्परतासे इनको इस दंडसे छुटकारा मिला । युवराजरायमल एकवार किसी अवैध प्रश्नको पूछने लगे थे * इसलिये राणा कुम्भने इनको भी देशसे निकाल दिया था; तब वह ईदरदेशमें चले गये, वहां एक चारणने विशेषतासे इनकी सहायता की । उसही चारणने कौशल करके उनको प्रसन्न कर राणाका अनुग्रह और अपनी भूसम्पत्तिको पुनर्वाप्त प्राप्त किया था । परन्तु जिस कुटिल ज्योतिषीने यह प्रश्न लगाया था यदि, उसका शिर काटलिया जाता तो उसका होनहार वचन निश्चय निष्फल होता; परन्तु कुभाग्यसे वह होनहार बात बहुत शीघ्र पूरी हुई X

* एक समय राणा कुम्भने यवनराजके ऊपर झुन्डुन्नामक स्थानमें जय पाई, उसके दूसरे दिनसे उन्होंने यह नियम किया कि किसी आसनको ग्रहण करनेसे पहले एक मन्त्रको पढ़कर अपने खड्गको तीनवार मस्तकपर घुमाते थे, रायमलने एकवार ऐसा करनेका कारण पूछा, इसही कारणसे राणाने क्रोधित होकर उनको राज्यसे बाहर निकाल दिया था ।

X सन् १८२० ई० में वर्षाकालके समय एकवार टाडसाहब उदयपुरमें गये थे । राणाको उस समय एक कठोर रोग होगया था । वर्षाके समय प्रतिवर्ष वह रोग राणाजीको होता था । राणाके रोगका समाचार पाय उनको देखनेके लिये टाडसाहब महलोंमें गये । रोगका यथार्थ कारण और रोगकी तात्कालिक अवस्थाको जानकर वह अत्यन्तही विस्मित हुए । राजदरबारमें कुटिल ब्राह्मण, दैवज्ञ और चिकित्सकके कार्यपर नियत था, और राणाकी बड़ी बहनकी सम्पत्तिकाभी प्रबन्ध कारक यही था । इस कपटी ब्राह्मणने राणाकी जन्मपत्रिकामें लिखा था कि सन् १८२० में राणाको एक कठोर रोग होगा । आरोग्य होना अत्यन्त कठिन है । आश्चर्यकी बात है कि उसही ब्राह्मणसे महाराणाकी चिकित्सा कराई जाती थी । इसही कारणसे वह कपटी ब्राह्मण अपनी भविष्यद्वाणीको सफल करनेके लिये, रोगके दूर करनेवाली औषधियें न देकर सप्तधातु मिश्रित दवा देता था और यह मिश्रित विषैली सामग्रीसे तइयार हुआ था । टाडसाहबने इस औषधिकी परीक्षा करके राणाजीसे निवेदन किया कि “ महाराज ! आप इस कपटीकी कपटताईमें यह रोग भोग रहे हैं, औषधिके बदलेमें आपको जहर खिलाया जाता है, आप सहजसे समझ गये होंगे कि इससे आपके शरीरका कहाँ तक बिगाड़ होगा, अतएव निवेदन है कि इस जहरको छोड़िये और अमृतको पीकर जीवनको प्राप्त कीजिये । ” टाडसाहबकी बातोंने राणापर पूरा असर किया, उनके ज्ञाननेत्र खुल गये कि कपटी ब्राह्मणने अपनी होनहार वाणीको सफल करनेके लिये ऐसी औषधि दी है ।

अपने विक्रम और अपनी सामर्थ्यके प्रभावसे राणा रायमल सन्वत् १५३० (सन् १४७४ ई०) में राणा कुंभके सिंहासनपर बैठे । सिंहासनपर बैठनेके पहिले उन्होंने पितृघाती ऊदाके विरुद्ध खड्ग धारण किया था । पाखण्डी इस युद्धमें हारकर दिल्लीके बादशाहके पास गया और वहां उनसे अपनी कन्याके देनेकी प्रतिज्ञा की । परन्तु विधाताने उसकी प्रतिज्ञाको पूर्ण नहीं होने दिया । ऊदाके सिंहेशमल और सूरजमलनामक दो पुत्र थे, अभाग्यकी शोचनीय मृत्युके पीछे बादशाह उन्हीं दो लड़कोंको साथ लेकर मेवाड़पर चढ़ आया । आज कलका नाथद्वारा उन दिनोंमें शिয়ারहनामसे प्रसिद्ध था । बादशाह यहीं अपने डेरे लगाकर युद्धकी वाट देखने लगा । मेवाड़के सर्दार और सामन्तभी राणा रायमलकी तरफ हुए, कारण कि वह रायमलकोही न्यायानुसार चित्तौरका राणा समझते थे । राणाकी पताकाके नीचे इस समय सरदारों और सामन्तोंके झुंडके झुंड इकट्ठे होने लगे । आवूका राजा तथा गिरनारका नरेश यह दोनों भी सहायता करनेके लिये आये । ग्यारह हजार पैदल और अठ्ठावन हजार सवारोंकी सेना लेकर राणा रायमलने घासानामक स्थानमें शत्रुओंका सामना किया । शीघ्रही भयंकर संग्राम हुआ । पितृघाती ऊदाके दोनों पुत्र प्रचंड विक्रमको प्रकाशित करके राणारायमलकी सेनाको मथने लगे । नदीके किनारे मनुष्योंके रुधिरसे भीगी गये परन्तु राणा रायमलके भयंकर विक्रमको यह लोग किसी प्रकारसे न सह सके । अन्तमें पराजित होकर राणाके आधीन होगये । राणाने समस्त अपराध क्षमा करके उनको आदरपूर्वक ग्रहण किया । बादशाह इस समरमें ऐसा घोर पराजित हुआ था, कि फिर जिन्दगीभर उसने मेवाड़की सरहदपरभी पाँव नहीं रक्खा ।

राणा रायमलके दो कन्या और तीन धुरन्धर पुत्र उत्पन्न हुए थे । गिरनारके राजा यदुवंशीय शूरजी और शिरोहीके देवरा राज्य जयमलका इन दोनों कन्याओंसे विवाह हुआ था । जयमलके साथ कन्याका विवाह करनेके समय रायमलने विवाहके दहेजमें आवूपहाड भी उनको दे दिया था । राणाने भलीभाँतिसे अपने बड़े बूढ़ोंके गौरवकी रक्षा की थी मालवेके स्वामी गयाखुद्दीनके साथ राणाका प्रचंड वैर होगया था, इसहीके कारण बहुतसे युद्ध हुए, सब युद्धोंमें राणा रायमलकी जय हुई । राणाके भतीजे सिंहेशमल और सूरजमलके प्रचंड विक्रमसेही बारम्बार विजय

फिर राणाने डंकननामक एक होशियार डाक्टरसे अपना इलाज कराया, उसके इलाजसे शीघ्रही अच्छे होगये, और वह पाखण्डी ब्राह्मण नौकरीसे निकाला गया ।

होती थी । अंतमें गयासुद्दीनने विजयकी कोई सम्भावना न देखकर अपने समस्त सत्त्व छोडकर राणासे सन्धि करनेकी प्रार्थना की। उदार हृदय रायमल्लने सन्धि-करना स्वीकार कर लिया । तबसे भेवाड़के राज्यको निष्कण्टक होकर राणाजी पालन करने लगे । क्योंकि उस समय भारतवर्षमें कोई ऐसा राजा या बादशाह नहीं था कि जो रायमल्लके प्रचंड प्रतापके आगे घडीभरकोभी रह सकता । इस समयमें पीछे लोदीका खानदान दिल्लीके तख्तपर बैठा । भेवाड़के उत्तरी परगनोंकी बाबत कईवार राणाजीने लोदी वंशवालोंसे संग्राम किया था ।

पहलेही कह आयेहैं कि राणा रायमल्लके नांवा, पृथ्वीराज और जयमल्ल यह तीनों पुत्र महा पराक्रमी उत्पन्न हुए । सांगा और पृथ्वीराज विशेष प्रसिद्ध हुए । सांगाने वीरवर बाबरसे संग्राम किया था, और पृथ्वीराज उस समय भारतवर्षमें एक अनुपम सहावीर गिना जाता था । छोटा जयमल्लभी वीरतामें इनकी बराबरही था । यदि यह तीनों भाई मिलकर जननी जन्मभूमिका हित करते तो न जाने आज भारतका भाग्यचक्र किस ओरको फिरा होता । परन्तु भारत-भूमिके कुभाग्यमें तो यज्ञोंकी आधीनता लिखी हुई थी, वह लेख कैसे मिटता; इसही कारणसे इन तीनों भाइयोंमें फूट पैदा हुई, और यह परस्पर एक दूसरेके खूनके प्यासे होगये । इनके झगड़े झूझटसे राणा रायमल्लजी बहुत दुःखी हुए, उनके मुखमें बाधा पड़ गई । उनको चारों ओरसे विपत्तिका वेरा दिखाई देने लगा । और फिर महाक्रोधित हुए । राणाने तीनों पुत्रोंको अपराधी समझा और अपने राज्यमें शान्ति रहनेके लिये तीनोंको देशनिकाला देनेका विचार किया । बड़ा पुत्र (सांगाजी) तो उस भयंकर झगड़ेसे अपनी रक्षा करनेके लिये स्वयंही देशको छोडकर चला गया, पृथ्वीराजको राणाजीने निकाला और छोटा जयमल्ल एक अन्याय कार्यके करनेसे इस लोकको छोड गया । राजपूतोंके घरेलू झगड़ोंका विचार करनेसे ज्ञात होताहै कि यह लोग बड़े कठोर होतेहैं, इस चरित्रका अनुशीलन करनेसे स्पष्ट, ज्ञात होजायगा कि जब देशवैरी इनकी तलवार खानेको नहीं होता तो यह लोग मूर्खतासे लड झगड कर एक दूसरेका नाश करतेहैं सांगा और पृथिवीराज सगे भाईथे उनकी माता झाला वंशकी थी जयमल्ल उनका सौतेला भाई था, देहलीके चौहान राजा पृथिवीराजका नामभी पाठकोंको स्मरण होगा, इस चौहान पृथिवीराजसे इस शिशोदिया पृथिवीराजकी अनेक बातें मिलतीथीं, इस पवित्र नामके अपूर्व माहात्म्यका विचार करनेसे बड़ा आनन्द होताहै, इन दोनोंमें ऐसी समानता थी कि यदि हम उनको एक दूसरे की आकृति कहें तो अनुचित न होगा, शिशोदिया वीर पृथ्वीराजकी वीरतापर

मेवाडके लोग इतने मुग्धहैं कि मेवाडकी इस वर्तमान गिरीहई अवस्थामें भी उसकी वीरताका स्मरण करके वे अपना सब कष्ट भूल जाते, और चिन्तासे शांति पाते हैं कभी २ अहेरसे लौटनेके पीछे जब शिशोदीयलोग एक संग भोजन करने बैठते हैं, या ग्रीष्म कालमें संध्या समय ठंडी हवा सेवन करनेके निमित्त गलीचा बिछाकर किसी उच्चस्थानमें एकत्र बैठते शर्वत पीते तथा पान चबाते हुए भाटोंके मुखसे वीरवर पृथिवीराजकी वीरताका वर्णन सुनतेहैं, तब उनके आनन्दका ठिकाना नहीं रहता, सांगा और पृथिवीराजमें बहुत अन्तर था, यद्यपि दोनों समान वीर और साहसी थे, परन्तु सांगा विचारकर लडाईमें हाथ डालते, और पृथ्वीराज प्रतिक्षण युद्धके लिये तत्पर रहतेथे, क्षणभरभी अपनी तलवार म्यानमें रखना उनको पसन्द न था, तलवारके बलसे अपनी भविष्य उन्नतिके विषयमें वे कहा करते “ कि ईश्वरने मेवाड राज्यका शासन करनेके निमित्त मुझे उत्पन्न कियाहै ” सांगा उनके बड़े भाईथे, पिताके प्रथम पुत्र होनेके कारण राज्यका अधिकार पानेयोग्य वही थ, परन्तु पृथ्वीराजके वे इस सत्त्वकाभी भोग न करसके, अन्तमें इस बातपर राणा रायमल्लके इन दोनों पुत्रोंमें झगडा होने लगा, कि चित्तौरका अधिकारी कौन होगा, प्रत्येक अपना २ प्रयोजन सिद्धकरनेके निमित्त उद्योग करने लगा ।

एक दिन दोनों भाई अपने चचा सूरजयमलके पास बैठे उत्तराधिकारके विषयमें बहुतसे तर्क कर रहेथे कि, इस बीचमें सांगाजीने धीरे २ कहा । “ न्यायके अनुसार तो मेवाडके दशहजार नगरोंका मैंही उत्तराधिकारी हूँ । परन्तु तुम लोग मेरे विरोधी होतेहो; अब इस झगड़ेका निबटारा सहजसे नहीं होगा; हाँ यदि तुम लोग नाहरासुगरा * की चारणी देवीकी बातके ऊपर विश्वास करते हो तो अभी इस झगड़ेका निबटारा हो सकता है । जो सरजी हो तो उनके पास चलो । इस बातको सबने मान लिया, और चारणी देवीके भवनको गये । उस निर्जन पहाड़की कन्दरामें पहुँचकर पृथ्वीराज और जयमल एक चौकीपर बैठ गये, सामने बिछेहुए एक व्याघ्रचर्मपर सांगाजीबैठे । और उनके चचा सूरजमलभी उस व्याघ्रके चर्मसनपर अपना एक घुटना टेकके बैठ गये । जैसेही पृथ्वीराजने उस देवीकी सेविका उस संन्यासिनीसे अपनी अभिलाषा कही, वैसेही उसने उंगली उठाकर व्याघ्रचर्मकी ओर इशारा किया । इससे समझगया कि सांगाजीही राजा होंगे, और सूरजमलभी राजके कुछेक

अंशको भोग करेंगे । इस बातको जानकर पृथ्वीराज तलवार निकालकर साँगाजीका शिर काटनेको चला । सूरजमलने तत्काल बीचमें पड़कर पृथ्वीराजके आघातको निष्फल किया ।

इस तरफ चारणी देवीकी सेविका अपनी रक्षा करनेके लिये भागी । तब पृथ्वीराजने सूरजमलको ललकारा । उस मन्दिरके भीतर दोनोंका घोर युद्ध होने लगा । सहजसे यह युद्ध शांत नहीं हुआ । दोनोंही अगणित घावोंके लगनेसे निबल होगये, घावोंसे रुधिर निकलने लगा । साँगाजीके एक बाणका घाव लगा और पांच घाव तलवारके लगे वे तो तत्काल वहांसे भागे; बाणके लगनेसे उनका एक नेत्र जाता रहा । उस विषम द्वंद्वस्थानसे भागकर वे चतुर्भुजा देवीके मंदिरकी ओर चले और शिवान्ति नगरके बीच २ में जाते २ वीदानामक एक राजपूतका सहारा लिया । इस राजपूतका जन्म उदावत वंशमें हुआथा । वीदा विदेशको जानेके लिये कुल तइयारी करके घोड़ेपर चढ़नाही चाहता था कि इतनेमें ही रुधिरसे व्याप्त घायल हुए साँगाजीने आकर उससे सहायता मांगी । उदार राजपूतने तुरन्त ही उनको घोड़ेसे उतारा, इसी अवसर में जयमल घोड़ा दौड़ाता हुआ वहां पहुँच गया और साँगापर वार किया । शरणागतकी रक्षा करनेके लिये वीदा जयमलके सामने हुआ, और वहींपर अपने प्राण दे दिये । इस अवसरमें साँगाजी वहांसे चलदिये ।

जब घाव भरगये तो तेजस्वी पृथ्वीराज अपने प्रचंडशत्रु कुमार साँगाजीकी तलाश करनेको चला । साँगाजीको यह समाचार ज्ञात हो गया और वे अपना प्राण बचानेको गुप्त स्थानोंमें घूमने लगे । इस अज्ञात वासके समय उनको अत्यन्त कष्ट हुआ । जो विशाल भेवाड़राज्यके युवराज हैं, आज वे अपने प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये अनाथकी समान दीनभावसे वन २ में भ्रमण करने लगे । विवश होनेसे जब कोई उपाय न सूझा; तो बकरी चरानेवाले गरड़ियोंके पास गये, और बकरियाँ चराने लगे । बकरियाँ चरानी नहीं आती थीं इस लिये कभी वे गरड़िये अप्रसन्न होकर निकाल देते थे, जब बहुतसी विनय करते तो फिर घरमें रख लेते थे, गरड़ियोंने इनको बकरियाँ चरानेमें, चतुर न देखकर रोटी बनानेमें नियुक्त किया, यह रोटी बनानेमें भी अनजान थे । इस कारण गरड़िये लोग सदा यह कहकर इनका तिरस्कार किया करते थे कि “खाना तो जानताहै, और पकाना कैसे नहीं जानता ।” इस प्रकार दीन दशासे कुमार अपने दिन काटते थे । एक समय कईएक राजपूत उधरको आये, उन्होंने कुछ अस्त्र शस्त्र और एक

घोड़ा कुमारको दिया व इनको साथ लेकर श्रीनगर * के राव करमचंदनामक एक सरदारके पास गये। प्रमार वंशका यह सरदार डाके डालकर अपना निर्वाह करता था। सांगाजी भी इसही दलमें मिलकर डांका डालनेको विवश किये गये। सारे दिन लूट मार करके एक दिन कुमार सांगाजी विश्राम करनेके लिये वरगढ़ वृक्षकी छायामें घोड़ेसे उतर पड़े। तलवार शिरहाने रख लेट गये। शीघ्रही नींद आगई। उस वृक्षसे थोड़ीही दूर पर जयसिंह वालिया और जैमूनामक विष्वासी सेवक उनके लिये भोजन बनाने लगे; तीनों घोड़े भी निकटही चरनेको छोड़ दिये गये। उस विशाल वट वृक्षके घने पत्रजातको फोड़कर सूर्यभगवानकी एक तीक्ष्ण किरण सांगाजीके मुखमंडलपर गिर कर सहज २ कांप रहीथी। धूपकी उस तेजीको अनुभव करके एक बड़ा सर्प सोते-हुए सांगाके मस्तकपर अपने विशाल फनको धीरे २ उठा रहाथा। यह देखकर देवी नामक ✕ एक मंगलकारी पक्षी उस सर्पक मस्तकपर ऊंचे शब्दसे बोलनेलगा। मारू नामके एक शकुन जाननेवाले अजपालकने इस वृत्तान्तको देखकर सब बात ममझली, और जैसेही सांगाजी सोकर उठे वैसेही इसने उनको राजसन्मान दिया। परन्तु चतुर सांगाजीने झूठी अप्रसन्नताके साथ उसके आदर मानको अस्वीकार किया। मारूने करमचंदसे यह समस्त वृत्तान्त कहा। सरदार करमचंद सब बातोंको छिपाए रहा और सांगाजीके साथ अपनी बेटीका विवाह करदिया। जबतक सांगाजीने अपने सिंहासनको नहीं पाया, तबतक करमचन्दने उनको अपने स्थानपरही रक्खा।

कुछ दिनोंके पीछे इस समाचारको राणा रायमलने सुना। यह जानगयेथे कि पृथ्वीराज अपने उग्र स्वभावसे मेरे उत्तराधिकारीका ही संहार करना चाहता-था। पृथ्वीराजके ऊपर उन्होंने अत्यन्त क्रोध किया व उसे अपने सामने बुलवाकर बहुत फटकारा और कहा। “तुम अभी मेरे राज्यसे निकल जाओ। तुम सरलतासे अपना निर्वाह करलोगे कारण कि तुम लडाईं झगडेको अच्छा समझतेहो, तुममें साहस और ऊधम बहुत है।” पिताकी आज्ञाको पृथ्वीराजने धीर धारण करके सुना, पलभरके लिये भी उसको घबडाहट या चंचलता उत्पन्न न हुई। केवल पाँच सवारोंको साथ लेकर † पिताके राजको छोड़ वालियोह नामक नगरकी ओर चला, यह नगर गोद्वार देशके अन्तर्गत था।

* यह श्रीनगर अजमेरके पास बसा हुआहै।

✕ यह पक्षी खंजनकी समान होताहै।

† इन पाँचसवारोंके यह नाम थे;—यथा, यज्ञसिंहल, संगम, अभय, जद्गु, पांचवां सवार भादेल राठौर गोत्रमें उत्पन्न हुआथा, इतिहासमें इसका नाम दिखाई नहीं देता।

एक तो राणा कुम्भकी अकाल मृत्युसे मेवाडकी शान्ति नष्ट होगई थी, तिसपर इन घरेलू झगडोंसे राज्यमें खलवली पडगई । वास्तवमें मेवाडको एक २ परगना—विशेष करके गोद्वारदेश तो सम्पूर्णभावसे अरक्षणीय होगया । आरावलीके निकटही गोद्वार बसाहुआहै । अतएव उस पर्वतके रहनेवाले असभ्य मीनगण उस देशके जनस्थानमें आकर देशको लूटने लगे । गोद्वारकी राजधानी नादौल नगरमें जो राजकीय सेना थी, उसको मीनोंने कुछ न समझा । और वह सेनाभी इनकी प्रचंड शक्तिको नहीं रोकसकी । पृथ्वीराजने यह समाचार सुनकर वालियोंहकी ओरको जानेके समय कुछ देरतक नादौल नगरमें विश्राम करनेकी इच्छा की और प्रयोजनीय द्रव्यादिको मोल लेनेके लिये वहाँके ओझा नामक व्यापारीके पास अपनी अंगूठीको गिरवी रखनेके लिये गये । भगवानकी सहिमाका पार कोई भी नहीं पासकता! इसही ओझाने कुमारके हाथ यह अंगूठी बेची-थी उसने तत्काल पृथ्वीराजको पहिचान लिया, और उनके गुप्त वेश धारण करनेके कारणको भलीभांतिसे जानकर प्रतिज्ञा की कि मैं भलीभांतिसे आपकी सहायता करूंगा । वीर पृथ्वीराजने इस व्यापारीकोभी अपने दलमें मिला-लिया । और उसकी सलाहसे मीनलोंगोंको दमन करके गोद्वार राज्यमें शान्ति स्थापन करनेकी चेष्टा करने लगे । पृथ्वीराज, वीर साहसी और तेजस्वी थे । पिताने इन गुणोंके कारणही उनको राज्यसे निकाल दियाथा, इससे क्या उनका पुरुषार्थ नष्ट हो जायगा । उनको निश्चय था कि राजकुलमें जन्म लेनेपर भी अपने पुरुषार्थ सहायतासे हम राजकुटुम्बको धारण कर सकतेहैं । आज पिताके द्वारा त्यागे जानेपर भी अपने पुरुषार्थके बलसे ही बलवान होकर कुछ आदमी इकट्ठे करलिये; उन्होंने प्रतिज्ञा की कि किसीसे सहायता न भी मिलेगी तथापि हम अपने मूलमंत्रको सिद्ध करेंगे । इस प्रकारकी प्रतिज्ञा करके दुराचारी मीन-लोंगोंके कराल ग्राससे गोद्वार राज्यके उद्धार करनेका उचित अवसर देखने लगे । मीनलोग पहलेसेही इन पहाडियोंपर रहते आते थे । उनकेही अधि-कारमें यह समस्त परगने थे, समयानुसार राजपूतोंने चढाई करके इन समस्त परगनोंपर अपना अधिकार किया ।

जिस समय कुमार पृथ्वीराज नादौलनगरमें पहुँचे, उस समय एक “रावत” उपाधिधारी मीनभूपाल नदालयनामक नगरमें अपनी राजधानीको स्थापन करके वहाँका राज करताथा । वह इतना प्रभावशाली होगया था कि बहुतसे राजपूतभी उसकी सेवाकरते थे । ओझाके परामर्शके अनुसार पृथ्वीराजने दल-

सहित उस मीन राजाके: यहां नौकरी: करना स्वीकार किया। राजपूत होकर भी उन्होंने अपनी जातिको छिपाया और उस असभ्य राजाकी सेवा करने लगे। वह गोद्वार राज्यके उद्धार करनेका शुभ अवसर टटोलते रहे, सौभाग्य वशसे यह अवसर आपही आप आ पहुँचा। भील लोगोंमें अहेरिया अर्थात् शवरोत्सव नामक एक बड़ा उत्सव हुआ करताहै। इस उत्सवके आनन्दमें नौकर चाकर-लोगोंको कई दिनकी छुट्टी होजाती है, पृथ्वीराजको भी कुछदिनकी छुट्टी मिली। इस अवसरपर कुमारने अपनी अभिलाषाके सिद्धकरनेका विचार किया। नगरके बाहिर आकर उन्होंने अपने दलके राजपूतोंको बुलाया और उनका इस अवसरपर मीनराज्यपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। आज्ञा पातेही वे राजपूत मीनोंके ऊपर इस प्रकार दूटपडे कि जैसे क्रोधित सिंह मृगशुंडपर दूट-पड़ताहै। नरगमें हाहाकार पड़गया महाबलवान राजपूतोंकी मार खाकर भयसे मीनगण इधर उधर भागने लगे। कुमार पृथ्वीराज नगरके बाहिर खड़ेहुए गुप्त-भावसे इस संग्रामको देखते रहे। धीरे २ महाभयंकर संग्राम होनेलगा। मीनोंका राजा डरसे घोड़ेपर चढ़कर नगर छोड़ भागा। भागतेही कुमार पृथ्वी-राजने पीछाकरके उसको पकड़ लिया। पकड़कर एक जंगली पेड़से बांधा, और अपने भालेसे उसको जीता हुआही छेद डाला, मीनराजको उसके अत्या-चारका भलीभाँतिसे फल मिलगया। इसके उपरान्त कुमार पृथ्वीराजने नदा-लय और उसके साथके नगर गाँव और छोटी २ वस्तियोंमें आग लगाकर पशुकी समान, मीनोंका संहार किया। मीनगण अग्निमें भस्म होनेके डरसे व्याकुल हो चारों ओर भागने लगे, परन्तु किसी प्रकारसे उनके प्राण न बचे, कुमार पृथ्वीराज और इनके बाँके वीरोंने प्रायः सबहीका संहार करडाला। इस प्रकार केवल किलेके सिवाय और समस्त देश पृथ्वीराजके अधिकारमें आगया; इस बचेहुए किलेका नाम देसौड़ी था, उस समय इसमें चौहान माद्रेचा लोग राज करते थे।

मीनलोगोंके हाथसे गोद्वार राज्यका उद्धार करके पृथ्वीराजने वहाँका राज्य ओझा और सदानामक एक सोलंकी राजपूतको देदिया। सदा सोलंकीने इस समय सोदगढ़को अपने अधिकारमें करलिया था। पट्टननगरके ध्वंस होनेके पीछे उसके किसी पूर्व पुरुषने इन पर्वतोंमें आश्रय लिया था। सदाका विवाह माद्रेचा चौहानकी बेटीसे हुआथा, कि जिसका वर्णन हम पहिले कर आयेहैं। इस कारणसे उसने श्वशुरका पक्ष छोड़कर पृथ्वीराजकी ओर न आना चाहा; परन्तु

जब विजयी राजकुमारने उसको देसौडीनगर और उसके परगने * सदाके लिये गुजारा करनेके लिये देदिये । तब उसे विवश हो इनके पक्षमें होना पडा, जब यह समाचार राणा रायमलको शीघ्रतासे पहुंचा तब उन्होंने प्रसन्न होकर पृथ्वी-राजको अपने राज्यमें बुला लिया ।

कुमार पृथ्वीराज लौट आये; उस काल जयमलके भारे जानेसे उनका मार्ग अधिकाईसे साफ होगया, आवश्यकता समझकर यहां पर जयमलकी मृत्युका वृत्तान्त लिखा जाताहै । प्राचीन तक्षशीला अब × तोडातङ्गके नामसे पुकारी जाती है, उस काल वह तोडातंक राय शूरथाननामक एक राजपूतके आधिकारमें था । जिन चौलुक्य राजाओंने बहुत दिनोंतक अनहलवाडापट्टनमें राज्य कियाथा, राव शूरथान इनके ही वंशमें उत्पन्न हुआथा । सन् इस्वीकी तेरहवीं शताब्दीमें यवनवीर अलाउद्दीनके प्रचंड बाहुलके प्रभावे शूरथानक पितृगुरुपगण पट्टनसे निकाले गये और उन्होंने मध्यदेशमें आनकर आश्रय लिया । वहांपर बसकर इन चौलुक्य वंशवालोंने प्राचीन तक्षक कुलका उस तोडातंक पर अपना अधिकार किया । परन्तु उनके वंशवाले बहुत दिनोंतक इस नगरका राज्य नहीं भोग सके इसके उपरान्त लील अफगानने शूरथान; रावको वहांसे निकाल दिया । और शूरथान राव विवश होकर आरावलीके नीचे वसेहुए वेदनौरनगरमें रहताहुआ सुख दुःखसे अपने दिन बिताता रहा । इसके तारावाईनामक एक परब सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुईथी, इसको देखकरही वह प्राणधारण कर रहाथा । कभी २ जब वह मानसिक कष्टोंसे अत्यन्त दुःख पाता और शोकाकुल होता, तब हृदयानन्ददायिनी कन्याके सुखकमलको देखकर सब दुःख भूल जाताथा, यदि तारावाईको उसका प्राण या उसकी आशा कहा-जाय तोभी कुछ अनुचित न होगा । ताराका सारा जीवन दुःखमें बीता था । वह राजकुमारी थी, और बलवान पवित्र सोलंकी कुलकी कमलिनी थी; परन्तु भाग्यदो-षसे आज पहिले गौरवका चिह्नतकभी बाकी न रहा, बालक ताराको गोदमें लेकर शूरथान अपने बड़े बूढ़ोंकी कीर्ति उसको सुनाया करताथा, वहभी कान लगाकर सुनाकरतीथी । वह उपारख्यान—बालकपनकी वह मनोहर कहानियें किसी भांति

* इस भूमिवृत्तिके दानपत्रमें पृथ्वीराजने अपने वंशधरोंके प्रति शपथ दिलाकर लिखाथा कि वे उसे न लौटावें, उनके वंशधरोंने इस आज्ञाका पालन किया ।

× प्राचीन तक्षकलोग थवाईके काममें बहुत चतुरथे इसका पता उनकी स्थापित तक्षशीला नगरीके राजमहलसे लगताहै यद्यपि यह नगरी अब नष्ट होगई है तोभी वचे बचाये चिह्नोंसे पूर्व गौरवका पूर्ण परिचय मिलताहै ।

उसके हृदयसे लोप नहीं हुई। बड़ी होनेपर जब कुछ २ समझने लगी तो अपने पूर्व पुरुषोंके साथ अपनी अवस्थाका मिलान किया करती। आज कलकी अवस्थासे तारा वृत्त न होती। सुकुमार अवस्थासेही उसके हृदयमें चिन्ता होने लगी। कभी इस कारणसे वह अधीर भी हो जाती थी। सैकड़ोंवार अपने भाग्यको धिक्कार दिया करती। अल्प वयसेही स्त्रियोंके आचार विचार और पहिरने ओढ़नेके आडम्बरसे उसको घृणा होगई, घोंडेपर सवार होना और धनुर्विद्याका अभ्यास उसको भली भाँतिसे होगया। यह दोनों विद्या उसको इतनी सिद्ध होगई थीं कि शीघ्रतासे अश्वको चलातीहुई निशानेपर वाण मारदेती थी। शूरथानने जितनी बार तोडातंकके उद्धार करनेको संग्राम किया। तारा प्रचंड काठियावाडी घोंडेपर चढ़कर उन सब लडाइयोंमें पिताके साथ गईथी। उसके अपूर्व रणविक्रमको देख बड़े-बड़े वीरोंनेभी माथा नीचा करलिया था। बहुतसे सुमलमानवीर उसके अमोघ वाणका निशाना हो गयेथे। धीरे-धीरे सप्तमस्त राजस्थानमें इस युवतीकी वीरताका यश फैल गया। बहुतसे राजपूतोंको इस रत्नके प्राप्त करनेकी आशा हुई। परन्तु शूरथानकी प्रचंड प्रतिज्ञाको सुनकर सबकी आशा टूटगई। राव शूरथानने प्रतिज्ञा कीथी “कि जो कोई राजपूत यवनोंके हाथसे तोडातंकका उद्धार करदेगा, उसकेही साथ ताराका विवाह करदिया जायगा।” इसको सुनकर कुमार जयमल बदनौरमें आया और ताराके साथ विवाह करनेकी इच्छा प्रगट की। परन्तु वीरनारी ताराने दम्भपूर्वक कहा कि “पहले तोडातंकको उद्धार कीजिये फिर मेरे साथ विवाह होगा।” जयमलने इस बातको स्वीकार किया; परन्तु वह अपने कुकर्मसे इस सुन्दरी नारीको प्राप्त न करसका। ताराके रूपसे वह ऐसा मोहित होगयाथा कि बिना अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण किये वह शूर्वताके कारण एक कुकर्मके करनेकी चेष्टा करने लगा; इस कारण शूरथानने क्रोधित होकर जयमलको मार डाला। भट्टलोगोंने यहाँपर वर्णन कियाहै कि;—“जयमलके भाग्याकाशके लिये तारा अनुकूल तारा न हुई।”

जयमलके मारेजानेके समय सांगाजी छिपेहुए रहतेथे। पृथ्वीराजभी देशसे निकाले हुए इधर उधर फिरतेथे, जयमलके घरपर रहनेसे सेवन यही निश्चय करलिया था कि यही भेवाडका उत्तराधिकारी होगा, परन्तु अपने अभाग्यसे वह शूरथानके द्वारा मारागया। रायमलको इससे अवश्यही क्रोध होना उचित था। सभासदगणोंने जयमलके मारे जानेका वृत्तान्त राणाजीको सुनाकर कहा कि शूरथानसे पुत्रका बदला लीजिये; परन्तु रायमलजीने उदारभावसे उत्तर दिया कि

“ जिस सूर्यने कुकर्मके करनेसे एक प्रतिष्ठित, सज्जन और विशेष करके विपतमें पड़े उस राजपूतका अपमान करना चाहा था, उसको उसकी करनीका फल मिलगया । ” उदार राणा रायमल इतना कहकरही मौन न हुए वरन उन्होंने उस सोलंकी सर्दारको वेदनौरनामक जनपद वृत्तिमें दे दिया ।

जयमलका संहार होनेके समय कुमार पृथ्वीराज भी देश निकालेका दंड भोग-रहेथे परतु अधिक दिनतक उनको यह दंड न भोगना पडा । मीन लोगोंका दमन करनेसे राणा-रायमलजी पृथ्वीराजसे प्रसन्न होगये और उन्हें देशमें बुला-लिया । कुमार पृथ्वीराजकी वीरताका यश देशमें फैल गयाथा। परमसुन्दरी ताराने भी कुमारका यश सुनकर उन्हींको अपना प्राण सौंप दिया था । कुमारका देशमें आना सुनकर ताराको आनन्दकी सीमा न रही । इस ओर पृथ्वीराजने भी देशमें आकर ताराके रूपगुणकी प्रशंसा सुनी । और उसके पानेकी आशा बलवती हुई । उसी आशाका भरोसा रखके वह अपनी प्राणप्यारीके देखनेको वेदनौर-नगरकी ओर चले । राव शूरथानने उनका बडा आदर मान किया, चित्तहारिणी तारा शीघ्रही कुमारके सामने आई, परस्पर दोनोंने एक दूसरेको मन भरके देख लिया । दोनोंके हृदयमें अनेक प्रकारकी आशा और चिन्ता उदय हुई । पृथ्वी-राज शूरथानके आगे अपनी आशाका वृत्तान्त कहकर बोले:-“आप कुछ चिन्ता न कर मैं शीघ्रही तोडातंकसे सुसलमानोंको निकाल दूंगा आप देखलेंगे कि एक सप्ताहके पीछे वहाँपर सुसलमानोंका नामभी बाकी न रहेगा । ” विदाके समय कुमार ताराके देखनेको गये और प्रेमभरी मनोहर वाणीसे कहा “हे सुन्दर ! तुम्हारे प्राप्तकरनेकी आशासेही मैं इस कठोर कार्यके करनेको तइयार हुआ हूं, देखियो ! उस आशासे कहीं निराश न करना । ” ताराने नम्रतासे उत्तर दिया “ हे वीरवर ! यह हृदय आपहीका है, अनेक कष्ट और विपत्ति सहकर यह अवतक आपहीकी आशासे अटूट रहाहै; अब यही निवेदन है कि आपने जिस कठोर व्रतका आरंभ किया है उसका उद्यापन भलीभांतिसे करनेकी चेष्टा कीजिये । दुराचार यवनोंका संहार करके यथार्थही राजपूत वीरका परिचय दीजिये । ” पृथ्वीराज विदा होकर अपनी इष्ट सिद्धिका अवसर देखने लगे । भगवानकी कृपासे शीघ्रही वह शुभ समय आगया सुसलमानोंका सुहर्षम त्यौहार आनेपरही था उस समय पृथ्वीराज पाँचसौ चुनेहुए सवारोंको साथ लेकर तोडातंककी ओर चले, वीरनारी ताराभी उनके साथ सजकर चली । आज रणचण्डी पुरुषका वेष धारण करके यवनोंका संहार करनेके लिये रणमें विराजमान होगी । आज कौन लोग यवन लोगोंकी रक्षा करेगा ?

जब राजपूतलोग तोडातंकमें पहुँचे उस समय यवनलोग ताजिया महामारोहसे दुर्गके बाहर निकल रहे थे। पृथ्वीराज भी अपने दलके साथ उनमें मिल गए, पहिले तो उनको देखकर मुसलमानोंने कुछ विशेष सन्देह न किया इस कारण कार्य सिद्ध करनेका भला अवसर प्राप्त हुआ। क्रमसे ताजिया बादशाहके महलके निकट पहुँचा, उस समय वरामदेके ऊपर खड़ा हुआ यवनराज वज्राभूषण पहिन रहा था; अनजाने सवारोंको देखकर वह मनमें आंति २ की चिन्ता करने लगा फिर पीछे घोर संदेह हुआ, वह इन सवारोंका नाम धाम पृच्छनेको ही था कि इतनेमें वीरनारी ताराने ताककर उसके एक तीर मारा साथमें पृथ्वीराजने भी अपने हाथका भयंकर शूल चलाकर उस अभाग अफगानको पृथ्वीपर लुटा दिया ! अफगानके गिरतेही यवनोंमें हाहाकार होने लगा। सबही डरके मारे इधर उधर भागने लगे, पृथ्वीराजने सेनाके साथ यवनोंका संहार करना आरंभ किया। इस प्रकार मार धाड़ करते हुए नगरके तोरण द्वारपर पहुँचे, परन्तु निर्विघ्नतासे उसमें प्रवेश न कर सके। एक प्रचंड मतवाला हाथी शूँडको हिलाता हुआ उस द्वारके मार्गको रोक रहा था ताराने एक विशाल फरसा लेकर उस हाथीकी शूँडको काट डाला। दारुण पीडा होनेके कारण वह हाथी चिंघाडता हुआ दूर भाग गया। उस काल यवनलोगभी प्राणोंका मायामोह छोड़ घरवारसे नाता तोड़ पृथ्वीराजके ऊपर आ दूटे। शीघ्रही दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा। कुमार पृथ्वीराज, क्रोधित हुए केशरीकी नाई यवनलोगोंको दलित करने लगे, मुसलमानोंके पाँव उखड़ गये; और वह मोरचे छोड़कर इधर उधर भागे, परन्तु भागकर कहाँ जायेंगे ? संसारमें इन अभागोंको किस स्थानमें सहाग मिल सकता है ? पृथ्वीराजके प्रचंड क्रोधसे कौन बच सकता है। इस प्रकार यवनलोग जिन ओरको भागते थे, पृथ्वीराज और उनके वीरगण उसही ओर उनका घेरकर मार डालते थे। इस प्रकारसे तोडातंकका उद्धार करके वीरवर पृथ्वीराजने अपनी प्रतिज्ञाको पूरा किया। इस कार्यके होजानेपर शुभ लग्नमें ताराके साथ उनका विवाह होगया।

जिस झगड़ेकी प्रबल तरंगमें पड़कर कुमार पृथ्वीराज, सांगा और जयमल तीन तेरह होगये थे इसके पैदा करनेवाले चतुर सूरजमलही थे। जिस दिन चारिणी देवीकी परिचारिकाके कहनेसे उन्हें यह मालूम हुआ कि हमें भी चित्तौरका राज्य मिलजाना संभव है, उस दिनसे एक नई आशाने उनके हृदयमें जड़ जमाई। वे पलभरको भी उस आशासे अलग नहीं रहते थे, वह जहाँपर भी जाते, वह

आशाभी वहीं जाकर मधुर वचनसे उनको उत्साहित करती थी। उस आशाने यहाँतक उत्साह दिलाया कि आखिर कार वे अपनी मनोकामना सिद्ध करनेके लिये विपत्तियें झेलनेको भी तैयार होगये। परन्तु कुमार पृथ्वीराजके देशमें लौट आनेसे उनके मार्गमें कांटेका खटका होगया। उस कांटेके दूर करनेका कोई उपाय न दिखाई दिया तब सूरजमल, सारंगदेवनामक एक राजपूतके साथ मिलकर मालवेके बादशाह सुजफ़रके पास गये उसने मददके लिये अपनी फौज भेजी; उस फौजकी मदद पाकर सूरजमलने मेवाडके दक्खिनी परगनोंपर चढ़ाई की और थोड़ेही समयमें सादी, बाटुरी और नाई तथा नीमचके बीचमें स्थित एक बड़े परगनेको अपने अधिकारमें करके चित्तौरपर अधिकार करनेकी चेष्टा करने लगे। अब तो राणा रायमलसे न देखा गया, वे पलभरकी देरभी न करसके तथा अपनी थोड़ीसी सेनाकोही साथ लियेहुए राजद्रोहीको दंड देनेके अर्थ संग्रामभूमिमें गये। चित्तौरके निकट बहती-हुई गंभीरी नदीके किनारेपर दोनों सेना आमने सामने डटकर खड़ी होगई। युद्ध होने लगा, राणा स्वयं खड्ग हाथमें लेकर साधारण सिपाहीकी समान प्राण-पणसे युद्ध करने लगे, वरावर तलवार चलायेजानेसे उनके बाईस घाव लगे। सब शरीर घावोंसे भरगया, वरावर बाईस घावोंसे रुधिर निकल रहा है; तथापि विश्राम नहीं लेते; क्रमसे अंग प्रत्यंग पथराने लगे, मूर्च्छा आनेके पूर्व लक्षण प्रकाशित हुए। उसही समयमें वीरवर पृथ्वीराज एक हजार छुडसवारोंके साथ आकर पिताके साथ मिलगये, और राणाजीको युद्धसे अलग भेज करके कुमार भीम विक्रमसे शत्रुदलको मथित करने लगे; और उस समय सूरजमलको लडनेके लिये खोजने लगे; युद्ध निपुण सूरजमल उनके सामने आये पृथ्वीराजने बड़ी शीघ्रतासे उनपर आक्रमण किया दोनोंमें घोर द्वंद्व युद्ध होने लगा। सूरजमलकी देहमें अगणित घाव लगे, परन्तु पिछाडीको पाँव नहीं रक्खा। बहुत कालतक संग्राम होतारहा, परन्तु किसी ओरकी सेनाने पीठ नहीं दिखाई। इसके उपरान्त फिर संग्राम बंद होगया, और सबही अपने-अपने डेरोंमें चलेगये।

डेरोंमें लौटनेपर रणकी थकावटको दूर करके कुमार पृथ्वीराज, अपने चचा सूरजमलसे मिलनेके लिये उनके तम्बूमें गये इस समय परस्पर जो कुछ बात चीत हुईथी, उसके * पठनस राजपूत जातिके अनन्त माहात्म्यका प्रकाशित

* सूरजमलके उत्तरकालमें झाला सरदारको सादरीका राज्य मिला था। उसके पुस्तकालयमें एक लिखा हुआ खर्ची मिला था, उसमें यह वर्णन विस्तारसे है।

परिचय पाया जाता है संसारमें और कोई ऐसी जाति नहीं है कि जिसके चारित्र्य घनेभावसे मिले रहते हैं। जिस दिन यह माहात्म्य संसारसे लोप हो-जायगा। उसही दिन राजपूतोंका नामभी पृथ्वीपरसे लोप होगा। हाय ! उस दिनकी बात याद करनेसे अब भी हृदय विदीर्ण होता है। अस्तु पृथ्वीराजने चचाके डेरेपर पहुंचकर देखा कि वे एक साधारण विस्तरेपर लेटे हुए हैं, देहके घावोंसे रुधिर निकल रहा है। एक नाई घावोंको धो-धो कर सी रहा है और पट्टी बांधता जाता है। जो भतीजा उनका प्रचण्ड विरोधी है, जो उनका प्रचण्ड शत्रु है। जिसके द्वारा वे इस दुर्दशाको पहुँचे हैं, जिसका संहार करनेके लिये संग्रामभूमिमें प्राणपणसे परिश्रम किया है आज उसकोही सामनेसे आता हुआ देखकर वीर सूरजमल विस्तरेसे उठ खड़े हुए और भली भाँतिसे आदर मान करके उनको ग्रहण किया। दोनोंके आकार और चेष्टासे उस समय ऐसा ज्ञात हुआ कि माना इनके बीचमें कभी कोई झगड़ा फसादही नहीं हुआ था। मानो सूरजमलको कोई पीडाही नहीं है। विस्तरे परसे उठनेके समय झटका लगनेके कारण उनके घाव फट गये और उनसे रुधिर निकलने लगा। यह देखकर पृथ्वीराजके हृदयमें चोट पहुँची। परन्तु सूरजमलके मुखपर कष्टका कोई चिह्न दिखाई नहीं दिया। वरन अपने भतीजेको आदरसाहित आसनपर बिठलाया। फिर दोनोंकी वार्ता आरंभ हुई।

पृथ्वीराजने कहा;—“ काकाजी ! तुम्हारे घाव कैसे हैं ? ”

सूरजमल ।—“ बेटा तुमको देखकर अब मेरी समस्त पीडा जातीरही ? ” पृथ्वी-राज ।—“ काकाजी ! मैं अभी दीवान* जीसे नहीं मिला, आपको देखनेकी शीघ्रतासे यहाँ चला आया, परन्तु मुझे इस समय क्षुधा बहुत व्याकुल कर रही है, आपके पास क्या कुछ भोजनकी सामग्री है ? ”

सूरजमलने अत्यन्त आनन्दित होकर शीघ्रही भोजन मँगादिया ? दोनोंने एक साथ भोजन किया; पृथ्वीराजको कुछभी सन्देह न हुआ, उन्होंने विदाके समय× पान खानेमें कुछभी इधर उधर न किया। चचासे विदा लेनेके समय पृथ्वीराजने नम्रतासे कहा “ काकाजी ! कल प्रभातके समय मेरे और आपके युद्धसेही संग्रामकी समाप्ति हो जाय ? ”

सूरजमल । “ बहुत अच्छा, बेटा ! बहुत सवेरे चलेआना । ”

* एक लिंगके दीवान होनेसे राणा बहुधा दीवानके नामसेही पुकारे जाते हैं।

× अक्सर विश्वासघाती लोग पानके साथ जहर या विषैली वस्तु मिलाकर दे दिया करते हैं। ऐसे उदाहरण बहुतसे पाये जाते हैं।

रात्रि बीत जानेपर प्रभात हुआ । ऊपाकी मनोहर ललाईके छिपनेसे पहिलेही पृथ्वीराज और सूरजमल प्रचंडयुद्ध करनेके लिये तइयार होकर आगये । उसकाल न चाचाने भतीजेका मुँह देखा, न भतीजेने चचापर कुछ दया दिखाई । माया, ममता, प्रीति, दया सबको पानी देकर अपना मनोरथ सिद्ध करनेको दोनों तत्पर होगये । उस दिन नारंगदेवने सबसे अधिक वीरता दिखाई । तलवारके प्रचंड प्रहारसे वह पृथ्वीराजकी सेनाको व्याकुल करने लगा; सारंगदेवके ३५ घोव लगे, उस भयानक संग्राममें दोनों ओरकी बहुतसी सेना खेत रही । यहाँतक कि प्रत्येक राजपूतकुलके वीरगण समरभूमिमें शयन करगये। डेढ़ घंटेके बीचमेंही तलवार, शैल, शूल और भाले आदिके हथियारोंके ढेरके ढेर दिखाई देने लगे। यद्यपि विद्रोहियोंकी बहादुरी भी कुछ कम नहीं थी, परन्तु वह पृथ्वीराजकी सिरोंहीके आगे कबतक ठहर सकते थे । अन्तमें लड़ाईसे हटकर सादरीनगरकी ओरको भागे । विजय गौरवके हेममुकुटको शिरपर धारण करके कुमार पृथ्वीराज नगरमें लौट आये । इस संग्राममें कुमारके सात घोव लगेथे । पराजित होकरभी विद्रोही सूरजमल अपनी आशाको न छोड़ सका । जिस आशाके मोहिनी मंत्रसे मोहित होकर उसने कठोर कष्ट और विपत्तियोंको सरलतासे सह लिया, जिसकी सफलता सिद्ध करनेके लिये आज अपने प्राण देनेको भी तइयार होगया;—उस आशाको प्राणोंकी प्राणरूप उस आशाको वह किस प्रकारसे छोड़े ? अतएव वह किसी भाँतिसे उस आशाके त्याग करनेमें समर्थ न होकर दिनरात चित्तोरके लेनेकी कामनासे युद्धकी तइयारी करने लगा ।

इस प्रकारसे बहुत दिन बीत गये । चचा भतीजेने कई बार संग्राम किया, परन्तु कोई फल न हुआ । सूरजमलकी आशा न भिटी । पृथ्वीराजके साथ जबही उनकी मुलाकात होती तबही पृथ्वीराज कहते कि “ जबतक मेरे शरीरमें रुधिरकी एक बूंदभी रहेगी, तबतक तुम्हें सूईकी नोकके बराबरभी मेवाडकी भूमि नहीं दीजायगी । ” सूरजमलभी वैसीही कठोर वाणीसे कहता “ तुम्हारे शयन करनेके लिये जितनी भूमिकी आवश्यकता होगी उससे तिलधर अधिक भूमिपर भी तुम अपना अधिकार नहीं कर सकोगे । ” सूरजमलकी आशा, आशाही रही; तेजस्वी भतीजेके डरसे उनकी सदा जिधर तिधर भागना पड़ता-था । वह जहाँपर भागकर जाते पृथ्वीराजभी उनका पीछा करते हुए वहींपर पहुँचते थे । इस प्रकार भागते २ एक बार सूरजमलने बाटौरीनामक गंभीर वनके भीतर आश्रय लिया और वहीं पर एक कुटी बनाकर रहनेका विचार किया ।

वनके भीतर उनके आदमी और घोड़े भी रहने लगे। एकदिन रात्रिके समय उस गंभीर वनमें सारंग देवके साथ बैठे हुए आग तापकर संग्रामके विषयमें अनेकप्रकारकी बातचीत कर रहे थे, कि इतनेहीमें असंख्य, घोड़ोंकी टापोंके शब्द और हिन-हिनानेकी आवाज आने लगी। उनकी बातचीत बंद होगई। सारंगदेवकी ओरको देखकर डरे हुए सूरजमलने कहा “कोई और नहीं,—यह पृथ्वीराजही आता है।” वह यह कहही रहे थे कि अपनी सेनाको साथ लिये हुए पृथ्वीराज वहां आ पहुँचे। अत्यन्त कुलाहल होने लगा। अस्त्रोंकी झनझनाहट तथा वीर सिपाहियोंके सिंहनादसे सारा वन गुंजार गया। पृथ्वीराज छलांग मारकर बोड़ेसे पृथ्वीपर उतरे और अपने चचाको घेर लिया। कुमारके एकही आघातसे सूरजमल पृथ्वीमें गिरपड़े परन्तु सारंगदेवने उनको बचाकर पृथ्वीराजसे कहा “इस समयका एक मूकाभी, पहिले हथियारोंके बीस घावोंसे अधिक असह्य है।” इसपर सूरजमलने कहा, “और जब कि वह मूका मेरे भतीजेके हाथसे लगे।” अस्तु इस रात्रिको सूरजमलसे युद्ध नहीं किया गया। उन्होंने धीरे २ पृथ्वीराजसे कहा। “बेटा यदि मैं यहाँ मारा जाऊंगा, तब तो कुछभी हानि नहीं है क्योंकि मेरे पुत्र राजपूत हैं, देशमें लूट मार करके भी अपना निर्वाह करलेंगे, परन्तु तुम मारे गये तो चित्तौरकी क्या दशा होगी? मेरे मुँहपर कलंक लग जायगा। फिर कैसे किसीको मुँह दिखाऊंगा, सदाके लिये अपयश होगा।”

युद्ध रोक दिया गया। चचा भतीजेने अपनी २ तलवारको म्यानमें किया, कुछ देरके लिये दोनोंही शत्रुताको भूल कर एक दूसरेके गले मिले पीछे पृथ्वीराजने सूरजमलसे कहा; “काकाजी ! मेरे आनेके समय आप क्या कर रहे थे।

सूरजमलने स्नेह सहित उत्तर दिया, “बेटा ! और क्या करता ? भोजनादि करके इधर उधरकी बातें कर रहा था।”

पृथ्वीराज। “काकाजी ! मेरी समान शत्रुके शिरपर रहते हुए आप किसप्रकारसे निश्चिन्त हांगये थे।”

सूरजमल। “बेटा फिर क्या करूँ तुमने तो एक साथही मेरा नाश कर दिया फिर कहीं किसी प्रकारसे तो अपने दिन काटूँ ?”

कुछ देरतक दोनों चुप रह गये। सदाँर सामन्त और सिपाही लोग विश्राम करनेकी चेष्टा करने लगे, कुछदेर पीछे पृथ्वीराजने कहा “काकाजी ! इस वनके निकट जो कालिका देवी है, मुनाहै कि उनकी जागती कलाहै, अतएव निश्चय कियाहै कि कल सेवेरे उठकर उनकी पूजा करने जाऊंगा। क्या आप मेरे संग चलेंगे ? अथवा अपने प्रतिनिधिकी भांति सारंगदेवको भेजेंगे।”

सूरजमलने पलभरतक विचार करके कपटहीन होकर कहा, “ मेरा शरीर अत्यन्त दुर्बल है, अतएव मेरे न जानेसे तुम दुःखित न हो ओ मैं सारंगदेवको अपना प्रतिनिधि करके भेजदूंगा। ” पृथ्वीराज इस बातपर संमत हुआ। प्रभात होतेही काली पूजाकी तइयारी करके सब लोग गये, वलिदान करनेका समय आया, कालिकाजीको एक भैंसा वलि दिया गया, फिर छागवलि की तइयारियाँ होने लगीं। इस समय पृथ्वीराजने अपना खड्ग निकाल कर सारंगदेवको जादवाया। सारंगदेवके पासभी हाथियार थे, दोनोंका घोर युद्ध होने लगा। दोनोंके बहुतसे घाव लगे। परन्तु सारंगदेव हार गया। और पृथ्वीराजने उसका शिर काटकर कालकाजीके खप्पड़में रख दिया। पीछे सूरजमलकी झोपड़ी वनमें जाकर तोड़ दी तथा सब असवावको लूट लिया और शीघ्रही वाटौरनगरपर अपना झंडा जा गाड़ा।

अब सूरजमलके दुःखकी सीमा न रही; आशा टूटी, परग २ पर संकटका सामना करना पड़ा और कुछभी न हुआ। भाई, बन्धु, इष्ट, मित्र, सबको छोड़ना पड़ा, सदाके लिये राजद्रोही कहलाये, तथापि आशा पूरी न हुई। अपने प्राण बचनेका कोई उपाय न देखकर सूरजमल सादरीकी ओरको भागा। वहाँ पहुँचकर उसके मनमें एक नई आशाका संचार हुआ। उसने पहिले प्रतिज्ञा कर ली थी कि यदि सादरीकी सम्पत्ति में न भोग सकूंगा तो ऐसे आदमीको दे जाऊंगा कि जिससे राजाभी किसी प्रकार न छीन सके, यह विचार कर ब्राह्मण और * भट्टलोगोंको सादरीका दान करके मेवाड़भूमिका त्याग किया, सूरजमलने खनयलनामक महावनके भीतर जाते २ देखा कि एक छागके बच्चेको ले जानेके लिये एक व्याघ्र वारम्बार चेष्टा कर रहा है, परन्तु छागीके भली भाँतिसे रखानेपर व्याघ्रका दाव नहीं लगता। इस बातको देखतेही सूरजमलको यह बात याद आ गई कि जिसको चारिणी देवीकी दासीने कहाथा। वह समझा कि यहाँपर रहनेसे कोईभी हमारा अधिकार नहीं छीन सकैगा। यह विचार कर वहीं ठहर गये और वहाँके आदिम निवासियोंको परास्त कर उसही स्थानमें देवलनामक एक किला बन-

* जो कोई ब्राह्मणकी वस्तुको छीनता है, शास्त्रानुसार उसको ६००० वर्ष तक विष्टाका कीट रहना पड़ता है। भागवतमें लिखा है “ स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्तिं हरेत्तु यः । षष्टिर्बर्षसहस्राणि विष्टायां जायते कृमिः ॥ ” सूर्यमलकी दी हुई यह भूमि भिक्षाजीवी ब्राह्मणोंकी दुरभिलाषसे ऊजड़ होगई है। इनमेंसे एकही नगरी १२००० बीघेकी उपजाऊ जमीनके साथ नष्ट होगई। इस प्रकारकी अज्ञानतासेही आज मेवाड़की यह शोचनीय दशा है।

वाया । इस नये किलेके चारों ओर जो छोटी-सहस्र वस्तियें थीं वहभी थोड़ेही समयमें प्राप्त होगईं । इस प्रकारसे प्रतापगढदेवल स्थापित हुआथा । कुमार पृथ्वीराज देशको लौट आये, राणा रायमलने आदर सहित उनको ग्रहण किया । एक समय जां पृथ्वीराज पिताके अत्यन्त विरागभाजन थे, आज राणा-ने उनकोही हृदयमें धारण करके अत्यन्त आनन्द प्राप्त किया, और सुखसे दिन बिताने लगे पुत्रके गौरवसेही उन्होंने अपना गौरव समझा, परन्तु ब्रह्माकी कठोर लिखनके बाधा डालनेसे बहुत दिनतक पृथ्वीराज इस सुखको नहीं भोग सके । कपटीकी कपटता दुष्टतासे कुसमयमें उनका शरीर छूटा । चचासूरलमलके ऊपर विजय प्राप्त करके कुछ दिन चित्तौरमें ठहर कर कुमार पृथ्वीराज अपने वास-स्थान कमलमेर दुर्गको चलेगये । वडे भ्राताकी तलासभी करते रहे और प्राण-प्यारी ताराके साथ आनन्दसे समय व्यतीत करने लगे । एक दिन कुमारने अपनी वहिनका एक पत्र पाया । यह वहन सिरौहीके राजा * पाभूरायके साथ-व्याही गई थी । यह पाभूराय नशा अविकाईसे खाया पिया करता था । प्रति-दिन रात्रिके समय कुसुमरस या अफीम खाकर मतवाला हो जाता और बुराई भलाईको भूलकर अपनी स्त्रीको अनेक प्रकारसे सताता था । कभी गालियें देना कभी मार धाड करना, कभी रातभर पृथ्वीमें लुटायें रखता था । फूलकी सज्जन वह सुकुमारी राजकुमारी पृथ्वीपर रातभर लोटती रहती थी । परन्तु दुराचारीको अपनी स्त्रीपर जराभी दया न आती । राजपूतवाला अनेक समझाती बुझाती थी, कुमार्गसे सुमार्गमें लानेकी बहुतेरी चेष्टा करती थी, परन्तु किसी बातसे कुछभी काम न चलता, तब विवश होकर राजकुमारीने अपना समस्त वृत्तान्त खोलकर लिखके एक पत्र पृथ्वीराजके वापके पास भेजा । ऊपरही इस पत्रका वर्णन कर आयेहैं ।

पृथ्वीराजने आरम्भसे लेकर अंततक अपनी भगिनीके पत्रको पढा, पढतेही क्रोध चढआया, पापीको दंड देनेके लिये वह सिरौहीकी ओर चले और राजिके

* चौहानोंकी देवरकुल शाखामें पाभूरायका जन्म हुआथा, इसको जयमलके नामसे भी पुकारा-गयाहै ।

समय वहनोईके महलके पास पहुँचे सदर दरवाजा बंद था, इस कारण सीढियोंपर चढ़कर दीवार लांघ गये, और जहाँपर वहन शयन करती थी, सीधे वहीं पहुँचे, घरमें पहुँचतेही भगिनीकी दुर्दशा अपनी आँखोंसे देखली। वहनकी कोमल देह कठिन पृथ्वीपर लोट रही है; नींद छूट गई है; सुखपर लावण्यका पता नहीं, आँखोंसे आँसुओंका तार बँध गया है। भइयाको सामने देखकर हिया उमड़ आया, रुका न गया, रोने लगी। पृथ्वीराजने उसको समझाकर अपना खड्ग निकाला, और पाभूरायके गलेपर रखा दिया। परन्तु “पतिव्रता राजपूतवाला भइयाके चरण पकड़कर रोतीहुई बोली। भीख दो भीख दो मुझको विधवा न करो, अपने विधवा करनेके लिये मैंने तुम्हें नहीं बुलाया है।” पाभूरायभी विनीत होकर पृथ्वीराजसे अपने प्राणोंकी भिक्षा करने लगा। पृथ्वीराजने वहनोईसे कहा। “यदि तुम मेरी वहनकी जूतियोंको अपने शिरपर रखो, तो क्षमा करसक्ताहूँ, यदि तुम उसके पाँव छूओ, तो मैं तुमको क्षमा करसक्ताहूँ” पाभूराय इस बातपर सम्मत हुआ। पृथ्वीराजने फिर उसको बन्धु भावसे माना और सब अपराध क्षमा किया। हृदयमें प्रेमानन्द उछलने लगा। पृथ्वीराज समझे कि पाभूरायभी इस बातको भूल गया, परन्तु यह उनका भ्रम था, इस भ्रमसेही उनके प्राण गये। पाभूराय उनकी पहचानमें न आया। उन्होंने इस बातका विचार न किया कि वहनोई साहब झुटिल कपटी और विश्वासघातक हैं। पाभूरायने कुमारको पाँच दिनतक अपने यहाँ ठहराना चाहा, पृथ्वीराजने आनन्द सहित उसके अनुरोधकी रक्षा की।

आनन्दपूर्वक पाँच दिन बीत गये। छठादिन आतेही पृथ्वीराज अपनी वहनसे विदा लेकर कमलमेरकी ओरको चले। पाभूराय एक प्रकारके लड्डू बनाया करता था। सालेको विदा करनेके समय उसने अपने बनाये हुए यह कई मोदक कुमारको भी दिये। पृथ्वीराज किंचित्भी नहीं जानते थे कि इस पापीने इनमें विष मिला दिया न उनको इस प्रकारका संदेह था। कमलमेरके सामने पहुँचतेही उन्होंने वहनोईके दियेहुए उन लड्डूओंमेंसे एकाग्र खाया। उसके खातेही शिर घूमने लगा। समस्त अंग प्रत्यंग शिथिल

होने लगे । बड़े कष्टसे देवी माताके मंदिरके आँगन तक पहुँचे, फिर एक कदम भी आगे न बढ़ा गया । विवश होकर वहीं पडरहे और प्राणप्रांगी ताराको समाचार देनेके लिये आदमी भेजा । परन्तु अब वह अपनी जिंदगीमें प्यारी ताराको नहीं देखसके । तारा नगरसे आ रहीथी कि इसी बीचमें तेजस्वी वीरने सुरपुरको पयान किया । भारतका एक प्रकाशमान नक्षत्र अपने स्थानसे टूट कर महागंभीर समुद्रके नीरमें डूबगया ! सारा संसार हाहाकार करके रोने लगा । मानो त्रिलोकी किसी भयंकर भूपचालसे काँप उठी ! मानो किसी अपरिचित स्थानसे हृदय विड़ारी महाविलाप कलाप सुना जाने लगा ! कैसा शोक है कि ताराने अपने प्राणनाथको इससमय जीवित न पाया ? पृथ्वीराजकी निर्जीव देहको हृदयसे लगाकर वह जीतेजी आगमें जलमरी ।

राणा रायमलके ऊपर यह कठिन वज्र टूट पड़ा । जिसको पाकर वे साँगाके चले जानेका दुःख भूल गयेथे—जयमलके मारेजानेका शोक भूल गयेथे । जिसकी अतुल वीरताके द्वारा वह अपनी प्रतिष्ठा समझते थे; उसही कुमार पृथ्वीराजको आज कालने विना समयही अपने गालमें ग्रास करलिया । पुत्रके शोककी आग उनसे न सहारी गई और प्राणोंको नेवछावर करके पुत्रका साथ दिया । मेवाड राज्यमें महा हाहाकार होने लगा । पृथ्वीराज और राणाके विषम शोकसे सवही रातदिन विलाप करने लगे ।

यद्यपि राणा रायमल अपने बड़ेबूढ़ोंकी समान गुणवान नहीं थे, तथापि देशमें उनका यश फैल रहा है । बड़े २ कष्ट और संकटोंमें पड़कर उन्होंने जिस श्रेष्ठ रीतिसे अपनी प्रजाका लालन पालन किया और बड़े बूढ़ोंके गौरवकी रक्षा की, इन कारणोंसे उनकी अवश्यही एक बुद्धिमान गुणनिधान राणा कहाजायगा । प्रजागण हृदयके साथ उनको भक्ति करते थे, यही कारण है जो राणा रायमलकी मृत्युसे सर्वसाधारणको अत्यन्त शोक हुआ ।

आठवाँ अध्याय ८.

राणा संग्रामसिंहका सिंहासनपर बैठना;--सुसलमानोंके राज्यका वृत्तान्त;--मेवाड़का गौरव;--सांगाजीकी जय;--भारतपर भिन्न २ जातिकी चढ़ाईका वृत्तान्त;--भारतपर वावरकी चढ़ाई;--दिल्लीके बादशाहका वावरसे हारकर मारा जाना;--राणा सांगाका वावरपर चढ़कर जाना;--कनूयास्थानका युद्ध सांगाजीकी पराजय;--सांगाकी मृत्युका वर्णन, तथा उनके चरित्र;--राणा रत्नका सिंहासनपर विराजमान होना;--उनकी मृत्यु;--राणा विक्रमाजित;--विक्रमाजितके आचरण;--सरदारोंसे विद्वेष;--चित्तौरपर मालवेके शाहकी चढ़ाई;--चित्तौर-रध्वंस;--जुहारव्रत;--सुसलमानोंका चित्तौरको भली भाँतिसे लूटना;--चित्तौरकी रक्षाके लिये हुमायूँका आना;--चित्तौरका उद्धार करके उसके सिंहासनपर फिर भी विक्रमाजितको बिठलाना;--सरदारके द्वारा विक्रमाजितका सिंहासनसे उतारा जाना;--वनवीरको राना बनाना;--

विक्रमाजितके मारेजानेका वृत्तान्त ।

सम्वत् १९६९ (सन् १९०९) में राणा संग्रामसिंह चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान हुए । इनकी सुन्दर राजनीतिसे मेवाड़का राज्य उन्नतिके ऊँचे शिखरपर पहुँच गया था । भट्टलोगोंने उनका वर्णन करनेके समय रूपकके छलसे लिखा है कि “महाराणा सांगा मेवाड़के गौरवचोटीके सबसे ऊँचे कलश

थे । "परन्तु दुःखकी बात है कि मेवाड़ राज्यने बहुत दिनोंतक इस गौरवको नहीं भोगा । कारण कि राणा संग्रामसिंहके साथही इस गौरवका अंत होगया था । यद्यपि संग्रामसिंहकी मृत्युके पीछे उस मेवाड़ी गौरवके दो चार चिह्न दिखाई दिये थे, परन्तु विशेष विचार करके देखनेसे ज्ञात हो जायगा कि वह चिह्न छिपते हुए सूर्य भगवानकी पिछली किरणमालाके समान थोड़ेही समयके लिये विराजमान हुएथे ।

इन्द्रकी अमरावती नगरीकी समान जो इन्द्रप्रस्थ नगरी पाण्डवोंकी पवित्र लीलाभूमि थी, जहाँपर तुआर लोगोंने बहुत दिनोंतक अखण्ड प्रतापसे राज्य कियाथा । जो हिन्दूराज चक्रवर्ती चौहान पृथ्वीराजकी प्रथम और शेष साधन भूमि हुई थी;—वही नगरी विधाताकी कठोर लिखनसे, गजनी, गोरी, खिलजी और लोदी वंशके यवन भूपालोंके प्रचंड पदाघातको सहन करती आती है; वह इन्द्र-प्रस्थनगरी आज समयके हेर फेरसे छिन्न भिन्न हो गई है, आज उसके अगणित टुकड़े हो गएहैं और उन छोटे २ टुकड़ोंमें भी छोटे २ अनेक राज्य स्थापित हुए । उन समस्त राज्योंके शासन कर्ता प्रचण्ड निर्दयी और हिन्दुओंसे वैर-रखनेवाले थे । परन्तु उनमें कुछ बल विक्रम नहीं था, इस कारण मेवाड़के राजालोग उनको कुछभी नहीं समझते थे । इस समय दिल्ली और काशीके बीचमें चार स्वतंत्र राज्य स्थापित हो गएथे * परन्तु संग्रामसिंह इनको राजा नहीं मानते थे । जब मेवाड़राज्यमें उपरोक्त घरेलू झगड़ा फैल रहाथा, तब गुजरात और मालवेके दोनों राजा विद्रोहियोंमें मिल गएथे, परन्तु मेवाड़की वह कोई हानि नहीं करसके और जिस समय वीरवर संग्रामसिंहने मेवाड़के वीर पुत्रोंको संग्रामभूमिमें भेजा था, तब वे दोनों बादशाह उन वीरोंके आगे नहीं खड़े हो सके । राणा संग्रामसिंह उस समय भारतके चक्रवर्ती राजा समझे जाते-थे । वरन मारवाड़ और अम्बरके × राजाओंने भेंट पूजा देकर उनके गौरवको बढ़ाया था । ग्वालियर, अजमेर, सीकरी, राईसिन, कालपी, चन्देरी, वृन्दी, गागरान, रामपुर और आवू आदि देशोंके " राव " उपाधिधारी राजालोग सामन्त राजा बनकर उनकी सेवा किया करते थे । वास्तवमें महाराणा

* दिल्ली, वीना, कालपी और जौनपुर ।

× जिस अम्बरके राजाका यहां वर्णन है उसका नाम पृथ्वीराज था; वह अवतक भी रावके नामसे पुकारे जातेहैं । उनके बारह पुत्रोंसे (कछवाहे) कुलके बारह गोत्र उत्पन्न हुए । मुगल बादशाह हुमायूँके समयसे कुशावह लोगोंने राजसमाजमें मान पाना आरम्भ किया ।

संग्रामसिंह ऐसेही प्रतापवान थे । आठ हजार घुड़सवार, ऊंची श्रेणीके सात राजा, नौ राव, और “ रावल ” व “ रावत ” उपाधिधारी १०४ सर्दार और पाँचसौ रणमतवाले हाथी लेकर उपरोक्त राजालोग महाराणा संग्रामसिंहकी सहायता करनेको युद्धमें गएथे ।

विपत्तिके समयमें जिन्होंने महाराणा संग्रामसिंहकी सहायता कीथी वे उनको सम्पत्तिके समयमें भी नहीं भूले अर्थात् उन्होंने सबकाही कुछ न कुछ प्रत्युपकार करके अपनी कृत्यज्ञताका परिचय दियाथा । उन्होंने श्रीनगरके करमचंदको अजमेरकी एक भूमिवृत्ति दान कर दी थी । इस करमचंदके जगमलनामक एक पुत्रथा।चंदेरीनामक जनपदपर अधिकार करनेके समय जगमलने राणाकी सहायता कीथी, इस कारणसे राणाने उसको रावकी उपाधि दीथी ।

वरैलू झगडेके समय राज्यमें जो अशान्ति मच गईथी राणा संग्रामसिंहके सिंहासनपर बैठतेही पुनर्वार शान्ति स्थापित होगई और सब झगडे दूर होगये । जोरके साथ यह बात कही जा सकतीहै कि राणा संग्रामसिंह वीर्यवान और साहसी महाराज थे । इसपर यदि कोई कहने लगे कि फिर वह अपने उत्तराधिकारको छोडकर वन २ में किस कारणसे मारे २ फिरे; इस प्रश्नके उत्तरमें इतनाही कहा जा सकताहै, कि इससे कायरपन या साहसहीनताका परिचय नहीं पाया जाता, वरन उसमें उनकी अपूर्वभावदर्शिता, वीरता, धीरता और सहनशीलता दिखाई देतीहै; यदि वह उस भावदर्शिताके बलसे मेवाडकी होनहार भाग्यलिपिको न पढलेते, यदि वह आगा पीछा न विचारकर स्वार्थसाधनके लिये प्रकटमेंही विरोध करनेलगते तो निस्सन्देह मेवाडकी अत्यन्त हानि होती ।

संग्रामसिंह समर-विशारद महाराणा थे । उन्होंने श्रेष्ठ रणनीतिके अनुसार अपनी सेनाको शिक्षित कियाथा । इसही सेनाको साथलेकर तैमूरके खानदानवालोंके साथ संग्राम करनेके पहिले दिल्ली और मालवेके बादशाहोंसे अठारहवार लडाई की, और सबमें जय पाई । दिल्लीका इब्राहीम लोधीही दो बार महाराणासे भिड़गया था, परन्तु दोनों बारही राणाके प्रचंड पराक्रमसे उसने नीचा देखा।विशेषतः घाटौलीके पिछले संग्राममें यवनदलपर ऐसी मार पड़ी थी कि दो एक सिपाही ही प्राण लेकर रणसे भाग संके थे । बादशाहके किसी रिस्तेदारकोभी संग्रामसिंह उस लडाई-मेंसे कैद करलाये थे । मेवाडराज्यकी सीमा इससमय बहुत दूरतक फैलगईथी ।

उत्तरमें बीनाके* प्रान्तमें बहनेवाली पीलखाल, पूर्वमें सिन्धुनद दक्षिणमें मालवा और पश्चिममें मेवाडकी निविड और दुर्गम शैलमाला थी। इस प्रकार मेवाड-देशका शासन दंड वीरवर राणा संग्रामसिंहके हाथमें था। इस प्रकारसे विशाल राजस्थानके बड़ेभाग मेवाडके सिंहासनपर विराजमान होकर स्वदेशीय और स्वजातीय राजाओंके पूजोपचार ग्रहण करतेहुए प्रतिष्ठाकी ऊंची सोपानपर पहुँच रहेथे, कि इतनेहीमें यवनवीर वावरका भयंकर सिंहनाद भारतवर्षके पश्चिम द्वारपर सुनाई दिया। उस भयंकर शब्दको सुनतेही भारतवर्षकी पृथ्वी कंपायमान होगई। वीरवर वावरके साथ जो अक्षु और जाक्षरतीस किनारेपर रहनेवाले भयंकर उजवक × और तातारीसेना लेकर हिन्दोस्थानमें न आता, यदि भारतके क्षीणजीवी नृपालगण उसके झंडेके तले इकट्ठे न होते तो न जाने आज भारतका शासन भार किसके हाथमें होता। हम कहसकतेहैं कि यदि देशद्रोही राजालोग उस यवनकी सहायता न करते तो भारतवर्षका राजमुकुट फिर हिन्दुओंकेही शिरपर रक्खा जाता। भारतकी विजय वैजयन्ती इन्द्रप्रस्थसे उतर कर चित्तौरके ऊँचे दुर्गपर फहराया करती। परन्तु अभागी भारतसन्तानके भाग्यमें यह सुख नहीं बदा था।

एशियाके मध्यप्रदेशमें रहनेवाले अनार्यलोग सदासे भारतवर्षके वैरीहैं। उन्होंने सदासेही इस देशकी अत्यन्त हानि की, जिसका प्रमाण भारतवर्षके इतिहासमें वर्त्तमानहै। इस वृत्तान्तसे एकवातका तो विश्वास होताहै कि भारतमें कभीभी भलीभांतिसे एकता नहीं हुई। परस्पर झगडा होनेके कारण इस देशमें बहुतसे छोटे २ राज्य होगये। अवसरपर इन लोगोंने परस्पर एक दूसरेकी सहायता कीहै; एकके राज्यको किसी विदेशीके आक्रमणसे रक्षा करनेके लिये कभी एक दूसरेने खड़ धारण कियाहै, इस ऐक्यताके बलसेही विदेशीय राजालोगोंके सामने भारतवर्षके राजाओंने शिर नहीं झुकाया। सिकन्दरकी चढ़ाईके समयभी इस एकप्राणताका प्रकाशमान उदाहरण देखा गयाहै। जब वह महावीर भारतवर्षमें

* आगेसे ५ मील दक्षिणको बीना बसा हुआहै।

× उजवकलोग संकरवर्ण होतेहैं। तुर्क, मुगल, और फिनिक इन कईएक मुसलमान जातियोंसे इनकी उत्पत्ति हुईहै। देखनेमें यह लोग तुर्कसे मालूम होतेहैं। पहिले साईवीरियाके एक बड़े भाग-पर इन्होंने अपना अधिकार करलिया था। इस समय यह लोग अक्सस नदीके किनारोंपर बसे हुएहैं।

(Erskeneas Baber, Introduction P. P ix) सन् १३४० ई० से यह लोग अपने सदा उजवकखाँके साथ मुसलमान होगये। बहुतलोग अनुमान करतेहैं कि उजवकखाँसेही यह लोग उजवक कहलाये।

चढ़कर आया था, उससमय अकेले पंजावमेंही छोटे २ बहुतसे राज्यथे, बहुतसी जगह प्रजातंत्र प्रणाली प्रचलित थी । सिकन्दरके बाद ईरानवाले हिन्दोस्थानमें आये । कहतेहैं कि दारायुने अपने अधिकारके समस्त राज्योंमें भारतभूमिकोही उत्तम और श्रीमान् देश समझा था । इसही प्रकारसे तक्षक, जित, पारद, हून, कात्ति, ग्रीक, यूनानी, तातारी, गोरी और चकतई इत्यादि दुर्द्धर्ष अनार्यलोग क्रमानुसार भारी सेनाको लेकर बारंबार भारतवर्षपर आतेथे और यहांके धन रत्नको लूटकर चल देते थे ।

किसीरने भारतहीके उपजाऊ मयदानमें अपने वंशका वृक्ष लगादिया और अपनी जन्मभूमिके शोकको भूल गये । जो जाति भयंकर सेना लेकर आई, उसनेही कुछकालतक यहांका राज्य किया और कुछदिन पीछे न जानेकहांको बिलाय गई । परन्तु राणा संग्रामसिंहके प्रबल शत्रु वीरवर बाबरने अभागी भारत-संतानोंके हाथोंमें जो पराधीनता की हथकड़ियें पहराईं वे हथकड़ियें आजतक नहीं उतराईं । जबतक ज्ञानरूपी सलाईके द्वारा भ्रमान्व्य भारतवासियोंके अज्ञानसे अन्धेहुए नेत्र नहीं खुलतेहैं, जबतक सभ्यताकी माता भारतभूमि नवीन बलको पाकर नहीं जी उठतीहै; जबतक वह हथकड़ियें—वह परवशताकी जंजीर किसी प्रकारसे नहीं खुलैगी; उस समयतक भारतकी दुःखनिशाको कोईभी दूर नहीं कर सकेगा । परन्तु सातसमुद्रोंके पारसे आकर कितने एक श्वेतद्वीप-निवासी ब्रिटिशवीरोंने भीड़ पारद और तातारवालोंकी सल्तनतको अस्तव्यस्त कर डाला, तब तो आशा की-जासकतीहै, कारण कि सदा किसीके दिन एकसे नहीं रहते; न कोई सदा सुख पाताहै, न कोई सदा दुःखी रहता है । सुखके बाद दुःख और दुःखके पीछे सुखका देना ही परमेश्वरका नियम है । फिर भारतके लिये इस सदाके नियममें कोई परिवर्तन होजायगा ! नहीं ऐसा कभी नहीं होसकता ?—यदि ऐसा हो तो संसारी नियमोंमें बाधा पडजाय; सारा विश्व चूर्ण होकर परमाणुओंमें लीन होजाय । इसही नियमके अनुसार संसारके और अनेक राज्य हीनदशाको पहुँच गए हैं; कोई तो फिर उन्नतिको प्राप्त कर रहाहै, कोई भारतकी समान गंभीर निशामें डूब रहाहै । परन्तु यदि उन-समस्त देशोंकी समानताकी वरावरी कीजाय तो भारतवर्षमें एक बातकी प्रधानता देखी जातीहै । विजातीय और विधर्मी जेता और शासनकर्त्ताओंके कठोर अत्याचारसे दूसरे देशोंके राज्यका मौलिक धर्मभी नष्ट होगया; प्राचीन जातीयता लोप होकर अनेक संकर जातियोंकी उत्पत्ति होगई । उनके प्रथम

और प्राचीन पुरुषोंका नाम इतिहाससे एकबारही उठ गयाहै, परन्तु संसारके एक छोरमें-सभ्यताके आदिभवनमें-भागीरथीके पवित्र जलसे धुले हुए इस पवित्र भारतवर्षमें कुछ औरही बात देखी जातीहै। भारतवर्षने विजातीय और विधर्मियोंके जितने चरण प्रहार सहेहैं, उतने और किसी देशने नहीं सहे होंगे। तथापि भारतका सनातनधर्म और भारतकी राजनीति आजतक प्राचीन भावसे विरामान होरहीहै। यही कारणहै जो भारतके सपूत राजपूत वीरगण अगणित कष्टोंको सहन करतेहुए-कठोर दासपनके द्वारा पीडित होकर आजतक अपने सनातनधर्मको पूर्वभावसेही धारण किये हुए हैं-उन्होंने अपने प्राचीन आचार विचारको अवतक जलांजलि नहीं दीहै। जिस समय महावीर सिकन्दर भारतवर्षपर चढकर आयाथा, उस समयको आज दो हजार वर्षसे अधिक बीतगये, भारतवर्षके मध्य उस समय जो धर्म विराजमान था, जो रीति नीतिथी, जो आचार विचारथे; आजतक वह धर्म, वह रीति, नीति, वह आचार विचार उसही भावसे चले जातेहैं, इस बातकी भीमांसा विज्ञान करलेगा कि उनकी यह नीति रक्षण शीलहै या नहीं; हमारा तो केवल इतनाही कहना है कि जिस उदार जातिके हाथमें इस शोचनीय भारतकी सन्तानका भाग्यचक्र है, उसको चाहिये कि हितकारी विधिके अनुसार भारतवासियोंको प्रतिपालित करे, कारण कि दूरपर बसे हुए सात समुद्रके पारवाले इस देशकी चिताभस्ममें एक इसप्रकारकी तेजवान छोटीसी चिनगारी है, कि जो किसी समय प्रज्वलित होकर उनके भंगलामंगलको साधन कर सकतीहै। अस्तु।

भविष्यपुराणमें भारतकी कठोर भाग्यालिपिका वर्णन इस प्रकारसेहै कि “सूर्य और चंद्रवंशके प्राचीन वैरी तक्षक लोग, तथा यवन वं और दूसरे अनार्य विदेशीय लोग भारतवर्षके राजा होंगे” शाकद्वीपके अक्षु और जक्सरतीस नदीके किनारोंपर बसनेवाले पौराणिक तक्षक लोगोंके वंशवाले बाबरने आज इस भविष्यद्वाणीको पूर्ण किया उन दिनोंमें यह फरगना राज्य * को शासन करता था। उनका राज्य जक्सरतीस नदीके दोनों किनारोंपर था। वह अति-पवित्र स्थानहै, वहांपर जित लोगोंकी तौमीरीनामक रानी रहती थी, वहांपर बडे २ महावीरोंने जन्म लिया था। भारतके उत्तर पश्चिमदेशमें एक समय

* आजकल इसको कोकन कहते हैं। यह जक्सरतीस नदीके किनारेपर बसाहुआ है।

इनकी ही विजयपताका उड़ीथी, एक समय इन्हीं लोगोंकी तलवारसे समस्त यूरोप और एशिया काँप गईथी । यह अपने पुराने वासस्थानको छोड़कर संसारमें चारों ओर फैलगएथे । एक समय इन जितलोगोंके एटिला, एलारिक इत्यादि वीरोंके प्रचंड विक्रमसे वालटिकसे मेडिटरेनियनसमुद्रतक समस्त देशोंमें थरथरी भचगई थी; इन वीर लोगोंकी वीरताका विचार करनेसे स्वयंही उसदेशकी महिमाका ज्ञान होजाताहै । परन्तु उनमें बहुतसे वीरलोग लोकसंख्याकी अधिकाईसे या राज्यके लोभसे उत्कंठित हो पूर्वोक्त देशोंमें आनेके लिये विवश हुएथे । परन्तु उस प्रतिकूल तरंगके समयमें भाग्य उनपर अत्यन्त अनुकूल हुआ और उनके सौभाग्यके मार्गको साफ करा दिया । वे लोग भाग्यके प्रभावसेही २००० अनुचरोंको साथ लिये हुए भारतवर्षमें चले आये और पाण्डवोंके सिंहासनपर अपना अधिकार जमा लिया ।

बादशाह बाबर सब भांतिसे संग्रामसिंहकी वरावर था । राजपूत वीर सांगाकी समान वीर बाबरभी सदा मुसीबतमेंही रहाथा विपत्तिके विद्यालयमें राणाजीकीही समान परिणामदर्शिताका पाठ पढा था । यद्यपि संग्रामसिंहकी अपेक्षा बाबर बादशाहका जीवनचरित्र उपन्यासोंकी सुन्दरताईसे विशेष शोभायमानहै, तथापि वह संग्रामसिंहकी ही भांतिसे अपूर्व परिणामदर्शिताके अनुसार सब कार्य किया करता था । उसने कभीभी अपनी वहादुरी या तेजीपर भरोसा रखके प्राणोंको विपत्तिमें नहीं डाला । सन् १४९४ ई०में बादशाह बाबर फरगनाकी गद्दीपर बैठा, उसकाल बादशाहकी उमर केवल १२ ही वर्षकी थी । इस छोटी उमरमेंही उसकी वीरताकी सूचना होनेलगी थी । गद्दीपर बैठनेसे चारवर्ष पीछेही बहुतसे बादशाहोंको जीतकर फिर समरकन्दको फतह किया, फिर दो वर्ष बाद एकवार समरकन्द अधिकारसे निकलभी गयाथा, परन्तु अत्यन्त परिश्रम करके बादशाहने उसको फिर अपने कब्जेमें करलिया । इसप्रकार सम्पद विपद तथा जय पराजयके अपूर्व मेलवाले बाबरके जीवनचरित्रको अपूर्व कहा जासकता है, वह कभी तो अक्स नदीके किनारेपर बसेहुए देशोंका राज्य करता था, कभी वहांसे निकाला जाता था, कभी हारता था और कभी पराजित होकर अपने प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये किसी दूरदेशमें भागजाता था । कभी अपनी मनोकामनाको सिद्धकरनेके लिये खड्ग धारण करके शत्रुसे अकेलाही युद्ध करता और कभी पराजित—ताड़ित और पीड़ित होकर अकेलाही विना किसी सहायकके जहां तहाँ घूमा करता । इन संग्रामोंमें और सर्व

विपत्ति कालमें बहुधा बाबरकी जीतही हुआ करती थी। बाबरने एकवार दुश्मनोंकी ओरके पांच पहलवानोंको एकसाथही मारडाला था। परन्तु इन कार्योंका कोई फल न हुआ। जैसे २ समय व्यतीत होता गया, वैसे उनके शत्रु भयंकर होते गये। तब बादशाहने रक्षाका कोई उपाय देखकर फरगनानामक स्थानको छोड़ दिया और हिन्दूकुशकी शैलमालाके पार होकर सन् १५१९ ई० में सिन्धुनदके पूर्व पार आनकर उतरा। पीछे काबुल और पंजाबके बीचमें ज्यों त्यों-करके उसने सातवर्ष काटे और अपनी उन्नतिका उपाय करने लगा। उद्योगी और साहसी पुरुष हाजरोँ कष्ट सहनकरके भी सौभाग्यलक्ष्मीको प्राप्त करही लेता है। वह बादशाह—जो कि एक बड़े राज्यका अधिकारी था;—जिसकी आज्ञाको मुनकर हजारों आदमी जानदेनेको तइयार होजाते थे—आज निर्वासित पीडित तथा दुःखी होकर देशविदेशमें मारा फिरताहै—कोई बातभी नहीं पूछता—तथापि एक पलभरके लियेभी उसका साहस नहीं गया—न वह अपने मूलमंत्रको भूला और धीरे २ दिल्लीके बादशाह इब्राहीम लोधीके सामने गया; सौभाग्यलक्ष्मीने प्रसन्न होकर बाबरके शिरपर विजयमुकुट पहिराया और उसकी गोदमें शयन किया। संग्राममें इब्राहीम मारा गया; सेना भाग गई, तब दिल्ली और आगरेके नगरवासियोंने दुर्गका फाटक खोलकर विजयी बाबरका आदर सत्कार किया। करुणानिधान भगवानके इस अनुग्रहसे बाबर आश्चर्य करनेलगा, और कृतज्ञतापूर्णभक्तियुक्त हृदयसे कहने लगा कि “हे जगदीश्वर ! यह मेरी जय नहीं—वरन आपहीकी जयहै—आपकी अपार करुणाकी जयहै।” *

दिल्ली विजय करनेके एकवर्ष पीछेही बाबरने अपनी विजयिनी सेनाको महाराणा संग्रामसिंहसे लडनेके लिये भेजा। अबकी बार बराबरवालेसे बाबरका सामना है। आजंतक जिन वीरोंके ऊपर उसने अपने खड्गको अजमायाथा, महाराणा संग्रामसिंहके आगे वह अतितुच्छ थे। वहलोग वीरनामके योग्य नहीं होसकते। बाबर स्वयं जैसा वीरथा, वैसेही उसकी सेनाभी थी। “भेचाचल” (रेतका भाग)के विक्रमशाली तातारवाले वीरगण संग्राममें उसकी सहायता करनेको गयेथे। तथापि आर्यवीर संग्रामसिंहके भयंकर विक्रमके प्रभावसे उनके प्राणोंपर आनवनी थी। बाबरका आशा भरोसा जाता रहाथा; उसकी सेना निरुत्साह होगई थी; बाबरका बारबार उसकाना और उत्साह दिलाना सबही निष्फल होगया था। लेकिन

* एरस्किनसाहबने बाबरके जीवनचरित्रका अंगरेजी अनुवाद किया है। अंगरेजलोग इसको बड़े चावसे पढ़तेहैं।

अंतमें जो उसको छुटकारा मिला, सो बलकी, या चालाकीकी सहायतासे नहीं मिला । केवल एकदेशकेही विश्वासवाती, कलंकी और नराधमकी अनुकूलतासे वावर इस विपत्तिसे निकल गया । यदि इस असद उपायका अवलम्बन न किया जाता तो उस पीततरंगिणी *के किनारे सेनाके साथ वावरको समरभूमिमें सांना पड़ता । उसका मुकुटशोभित पवित्रमस्तक गृणाल और कुत्तोंके पांवोंसे ढुकराता फिरता । वावरने इस बातको समझकरही एकसमय शोकसे कहाथा कि “क्या इस समय ऐसा कोई नहीं है कि जो इस संकटके नमयमें पुरुषोचित वार्ता कहकर साहस और उत्तेजना दे । ” ?

चित्तौरनाथ राणा संग्रामसिंहके प्रचण्ड बलको रोकनेके लिये आगरेके तोरण-द्वारको छोड़कर वीर वावर अपनी सेनाको साथले उनके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये सीकरी × की ओर चला । इसओर राजपूतकुलशेखर वीर चूडामणि महाराणा संग्रामसिंहभी सेनासहित उसके सामनेको चले । राजस्थानके प्रायः समस्तही राजा राणाकी सहायता करनेके लिये चित्तौरनाथकी पताकाके निकट आनकर एकत्र हुए । संवत् १५८४ (सन् १५२२ ई०) कार्तिक वदी ५ को * राणाजी कनवा और वियाना नामक स्थानमें वावरके सामने आये । उससमय वावरके आगे १५० तातारी सेनाथी । राणाने उन सबका संहार किया ! जो दो चार सुसलमान बचगए उन्होंने मूलदलमें जाकर यह समस्त समाचार सुनाया । इस पराजयका समाचार पातेही वावरकी समस्त सेना उत्साह हीन होगई । छांव लीके चारोंओर परिखा खोदकर वीरगण सशंकभावसे डेरोंमें काल व्यतीत करने-लगे ! इस साहसहीन दलकी सहायता करनेके लिये जो और सेना आई वहभी संग्रामसिंहकी प्रचंड सेनाके रोकनेमें असमर्थ होकर अपने-डे़रोंकी ओर भागी; विजयी राजपूतोंने उस भागती हुई सेनाका पीछा किया और बहुतोंको पकड़कर जानसे मारडाला । वावर घोर संकटमें पड़गया । परन्तु पलभरके लियेभी उसका उत्साह न गया।बालकपनसे कष्ट सहते रडसको सहनशीलता का अभ्यास होगया—

* पीततरंगिणी या पीलीखाल वा पीलनदी यह वियानाके निकट बहतीहै, वावरने इसहीके किनारे अपनी छावनी डाली थी ।

× आजकल इसको फतेपुर सीकरी कहतेहैं । आगरेसे दशकोशपर बसीहुई है । इसके ही निकट केकनवा नामक स्थानमें राणा संग्रामसिंहके साथमें वावरका महासंग्राम हुआ था । उस समरको अवतक फतहपुर सीकरीकी लड़ाई कहतेहैं ।

* वावरके जीवन वृत्तान्तमें लिखाहुआ है कि कनवाकी लड़ाई सन् १५२७ ई० की ११ जनवरीको हुई थी ।

था, और समयपर सूझतीभी बहुत दूरकीथी । आज विपत्तिसे उद्धार पानेके लिये उसही सहनशीलताका सहारा लेकर उपाय सोच लिया । वावरने अपने डेरोंके चारोंओर वडे २ बांध बाँधवादिये और उन बांधोंपर अपनी तोपोंको क्रमानुसार लगा दिया । परन्तु इस उपायकाभी कोई फल न मिला।उसने जिस ओरको आंख उठाई, उसही ओरसे विपत्तिकी भयंकर मूर्ति नजर आई । उसही ओरसे वीरके-शरी संग्रामसिंहकी विकट भुकुटि उसको दिखाई देने लगी । उसही समय एक तातारी ज्योतिषीने ज्योतिषके अनुसार ग्रन्थ लगाकर कहा कि “जब कि मंगल ग्रह पश्चिममेंहै, तब तो जो लोग उसकी विपरीत दिशासे आनकर युद्ध करेंगे, वही पराजित होजायँगे।” कदाचित ज्योतिषीका ग्रन्थ ठीकहीहो, कदाचित तातारवालोंका जडमूलसे नाश होजाय । वावरको महाचिन्ता हुई । वह जितना २ ज्योतिषीके होनहार वचनका विचार करता था, उतना २ही उसको दुःख होता जाता था । कहां तो फरगनाराज्य—कहां दिल्लीका सिंहासन कहां—उसकी मनमोहिनी आशाकी सरलमूर्ति ? क्या वह आशा इससमय वावरका साथ न देगी ? उसका इतना यत्न इतना उद्यम और परिश्रम यह सब निष्फलही होजायगा । वावर किसी प्रकारसेभी वीरवर संग्रामसिंहके प्रचंड बलको न रोक सका, सेनाको किसी प्रकार धीरज न बाँधा सका।मनही मन अत्यन्त कष्ट हुआ।इसप्रकार चिन्ता करते १५ दिन बीत गये, कोई उपाय न सूझा।उसकाल वावरने मानवी शक्तिके तुच्छ आश्रयको छोडकर ईश्वरके ऊपर भरोसा किया और अपने पापोंका प्रायश्चित्त करनेके लिये भगवानसे प्रार्थना करने लगा, वावरने अपने प्रायश्चित्तका विस्तारित वृत्तान्त अपने जीवन चरित्रमें भलीभांतिसे लिखाहै ।

प्रायश्चित्त होजानेपर वावरने समझा कि मेरा मनोरथ पूराहोनेमें अब कोई सन्देह नहीं, परन्तु बात उलटी हुई । उसने जो यह प्रतिज्ञा करके कि “अब शराब न पीऊंगा ।” शराबके प्याले और बोटलोंको जमीनपर लुढका दियाथा; इस कार्यके करनेसे उसकी सेनाका रहासहा उत्साह भी जाता रहाः—वीरोंने संग्राममें किसी भांतिसे नहीं जाना चाहा । तब वावरने सबकोही धर्मभाव (ज़िहाद) से उत्साहित करनेकी चेष्टा की, यद्यपि उसका हृदय निराशाके घोर अंधकारसे ढकाहुआ था, तथापि पुरुषोचित साहस और उत्साह

अवलम्बन करके एक तेजस्विनी वस्तुता दी*इस वस्तुताको सुनकर सेना कुछ २ उत्तेजित हुई। जब बाबरने देखा कि अब कुछ काम चल गया तब प्रत्येक वीरके हाथमें कुरान देकर भेद्यगंभीर वाणीसे कहा कि “अहद करा, कुरानको छूकर खुदाका नाम लेकर कसम खाओ कि या तो फतहही करेंगे वरना इस जंगमें अपनी जान देंगे।” सबके हृदय उत्साहित हुए, सबही वीरगण बाबरकी आज्ञामें अपनी सम्मति देकर भयंकर सिंहनाद करने लगे सेनाका उत्साह देखकर बाबरने शीघ्रही छावनीको तोंड दिया और बिना विलंब किये सेनाके साथ एककोश आगे बढ़ाया और आगे न बढ़ सका। राजपूतोंके झुण्डझुण्ड उसकी तोपोंके आगे आकर तातारी सिपाहियों पर हमला करने लगे। बाबरको विवश होकर वहाँ पर छावनी डालनी पड़ी। परन्तु सीमादंड* और तोपोंके एकसाथ रहनेमें छावनीके

* बाबरके जीवन-चरित्रका ३५७ सफा देखो। *Mencirs of Baber, P. 358.*

∴ छावनीके चारों ओर सीमा निश्चय करनेके लिये जो लकड़ीके डंडे गाड़े जाते हैं, उनको सीमा दंड कहा है।

बाबरने लिखा है कि ९३३ हिजरी पहली जेमादीके तेरहवें दिन सोमवारको घोड़ेपर सवारहो अपनी फौज देखने चला, मार्गमें मुझे बड़ी चिन्ता हुई मैं प्रतिज्ञा कर चुका था कि जो बातें हमारे मतके विरुद्ध होंगी मैं उनमें हाथ न डालूंगा, तथा अपने किये पापोंका प्रायश्चित्त करूंगा, इसका पालन आज तक न हो सका, इसपर जो उसने कहा उसका भाव यह है “ऐ दिल तू कब तक पापका सुख भोगता रहेगा, पछतावा कबवा नहीं है उसका स्वाद ले। रे मूढ़ तू पापमें पड़कर कितना निकृष्ट हुआ निराशामें पड़ेपड़े तैने क्या सुखभोगा ? कितने दिन तक तू ऐश्वर्यका दास बना रहा, तेरे जीवनका कितना समय व्यर्थ गया, आ मैं पवित्र धर्मकी ओर चन्द्र। जिससे कि मरनेके पीछे तुरंत मुक्ति मिले न जात पानेके लिये जो मनुष्य अपना जीवन त्याग करता है वही बड़ा है, और वही मुक्तिपाता है; इसकारण अरे मूर्खमन ! उसके पानेके लिये सब बुरेभोग और बुरी वासनाओं-को त्याग, और जितने तेरे कुकर्म हों उन सबको छोड़। यह तुर्कीकविताका अनुवाद है।

इसप्रकार दुष्कर्मोंको छोड़कर मैंने प्रतिज्ञाकी कि आजसे कभी मद्यपान न करूंगा; फिर सेवकों-को आज्ञा दी कि मद्यपानके सोने चांदी और शीशेके समस्त वर्तन लाये जाय, उनके आतेही मैंने उनको तोड़डाला, और आगेसे मद्य न पीनेकी प्रतिज्ञा की और उनको दीन भिखारी लोगोंमें वट्ठा-दिया, सबसे प्रथम जिस पुरुषने प्रायश्चित्तकर पापोंसे अलग होनेमें मेरा अनुकरण किया उसका नाम अक्सस है, मेरी भांति उसनेभी डाढ़ी न कटानेकी प्रतिज्ञा की, दूसरे दिन दरवार और सेनाके ३०० पुरुषोंने मेरे समान प्रायश्चित्त और मन शुद्ध करनेका प्रण किया, मैंने अपने पासकी मदिरा-को जमीनपर फेंक दिया, और बाबा दोस्त जो थोड़ीसी मदिरा लायाथा उसमें नमक मिलाकर सिरका बनानेको कहा, जहां मद्य फेंकी गईथी वहां पत्थरका एक खोखला स्तम्भ और यतीमखाना बनवानेकी आज्ञा दी, ९३५ हिजरी सुहरर्मके दिनोंमें डोलपुरसे सीकरी गमन करते समय जब मैं-

—ग्वालियर देखने गयाथा, तब मैंने देखा कि वह सतून बनकर तयार होगयाहै, कुछदिन पहले मैंने यह प्रतिज्ञा की थी यदि राणा संग्रामसिंहकी लडाईमें विजय प्राप्त करूंगा, तो मुसल्मानों परसे स्टैम्पकर उठादूंगा. जब मैं प्रायश्चित्त करने लगा तब मुहम्मद सर्वान और शेख जिनने मुझे इस बातकी सुध दिवाई, मैंने इसपर उन लोगोंको धन्यवाद दिया. मेरे राज्यमें जितने मुसलमानहैं उन से स्टैम्पकर न लूंगा. यह कहकर अपने कार्याध्यक्षको बुलाया और आज्ञादी कि वह फरमान सर्वत्र पहुंचाया जाय ।

इससे पहले मैं कहचुकाहूं कि ऊपर लिखी घटनाके हेतुसे उच्च नीच सभी भयसे: उत्साहहीन होगयेथे, किसीके मुखसेभी पुरुषार्थभरी साहसकी बात नहीं निकलती थी, कोई थोडाभी उत्साह वा उत्तेजना नहीं दिखाता था, जिन मंत्रियोंका प्रधानकर्तव्य उत्तम सम्मति देनाहै, वे मंत्रीगण और जिन अमीरोंके लिये बडीबडी जागीरें नियतथीं वे ऐसे हीन होगये कि, उनमें कुछभी साहस दृढता वा पुरुषार्थका लेशभी नहीं पाया जाताथा, परन्तु खलीफानामक एक पुरुषने आदिसे अन्ततक सब बातोंका ठीक प्रबन्ध करनेके लिये अविश्रान्त परिश्रम और उद्योग किया, यद्यपि वह सर्वथा कृतकार्य न होसका, तोभी उसका उद्योग और परिश्रम प्रशंसनीय है, अन्तमें सबको निराश देख चित्त स्थिरकर मैं सोचने लगा, और उमराव तथा सेनाके लोगोंको बुलाकर कहा, माननीय सज्जन सैनिको ! जो भी इस संसारमें आयाहै, उसे मृत्युके आगे शिर झुकाना पडाहै जब हम इस असार संसारसे चले जायेंगे, और जीवजन्तु कोई न रहेंगे तब परमेश्वरके सिवाय उस प्रलयसे बचानेवाला कोई न होगा, यह संसारजीवनका एक उत्सव स्थानहै, इसमें मिलनेके लिये जो लोग आते हैं, वे इस उत्सवके समाप्त होनेसे पहलेही यहांसे चले जातेहैं । यह संसार दुःखका आगार और ध्वंसके मुसाफरखानेकी समानहै, सैकड़ों यात्राओंसे निकलकर जो कोई यहांतक पहुँचताहै, निश्चयही उसे एकदिन विदा होना पडताहै; परन्तु क्या हम इससे यह समझलें कि मनुष्यके जीवनका कुछभी उद्देश्य नहींहै. क्या कलंक और दुर्नामतामें पडकर जीवन विताना चाहिये, पशुओंकी समान इन्द्रियसेवन करते हुए सदा आलसमें रहनेकेही लिये, क्या दयामय परमेश्वरने मनुष्योंको इस जगतमें भेजाहै, क्या हमलोग कीर्ति, मान, मर्यादाका भोग न करसकेंगे, विचारकर देखो कि कलंक और अपयशसे दवेहुए मस्तकको लेकर जीवन व्यतीत करनेकी वगिस्वत सन्मान और प्रतिष्ठाका सुवर्णमुकुट शिरपर धारेहुए जीवनविसर्जन करना कितना बढकर और प्रशंसाके योग्यहै । यह देह अनित्यहै, जगतमें कोई किसीका नहींहै, सबही मृत्युके वशीभूतहैं, मान, ज्ञान, गर्व, यश, एकदिन सबही न रहेंगे, सबही एकदिन कालके गर्भमें लीन होजायेंगे, जब मरनाहीहै तो यशके साथ क्यों न मरें जिससे कि हृदयमें किसीप्रकारका दुःख न रह जाय । ओह ! जीवन जानेकी कुछ परवाह नहीं कलंक दूरकर यशके साथ देहत्याग करो ।

कृपालु ईश्वर हमसे सदा प्रसन्नहै । जब उसने हमको इस घोरसंकटमें डालाहै तो निश्चय फिर विजय प्राप्त करके गौरवके साथ हम इस संकटसे निकलेंगे, मैं अपनेनिमित्त कहताहूं कि शत्रुओंको उनके कर्मोंका फल अवश्य चखाऊंगा, यदि न करसका तो अपने प्राण देदूंगा, यहभी अच्छाहै इससे संसारमें सदा नाम बना रहैगा; बस आओ हमलोग ईश्वरका नाम लेकर प्रतिज्ञा करें कि चाहै जो कुछ हो युद्धमें शत्रुओंको पीठ नहीं दिखावेंगे, जबतक इस देहमें प्राणका अंशभी रहैगा तबतक-

चारों ओर कोई रोक न की जा सकी, इस कारण बहुतसा असुभीता उठाना-पड़ा और वह अपनेको वेखटके नहीं समझ सका । परन्तु बाबरका समय अच्छा था, इस कारणसे राणा संग्रामसिंहने उससमय कोई आक्रमणही नहीं किया । विपत्तिमें पड़ेहुए शत्रुको घेरना, राणा संग्रामसिंहकी समान रणविशारद क्षत्रीके लिये नीतिविरुद्ध कार्य माना जा सकताहै; परन्तु इसकार्यसे राणाजीकीही बड़ी भारी हानि हुई । बाबरपर संकट पड़ा जानकर वह जितनी देर करते थे उतनीही उनके लिये बुराई होती जाती थी । शत्रुगण धीरे २ बलवान होते जातेथे । इस पर भी यदि राणाजीकी सेना वीरधर्मके साथ संग्रामभूमिमें विराजमान होती, यदि संग्रामसिंहकी भांति सेनाके हृदयभी स्वदेशप्रेम और वीरधर्मसे दीक्षित होते तो किसी प्रकारसे चित्तौरकी कोई हानि नहीं होती । परन्तु भारतवर्षके अभाग्यसे हितमें विपरीत हुई । राणा संग्रामसिंह उदारथे उन्होंने अपने सामन्त और सर्दारोंको भलीभांतिसे पहिचाना नहीं; उन्होंने इस बातको नहीं जाना कि यह लोग केवल भूमिके अभिलाषा करनेवाले लोभी जीवहैं, इसही कारण भली-भांतिसे उनका विश्वास करते थे । वह समझते थे कि शत्रुगण कैसीही तइयारी करे राजपूतगण अवश्यही प्राणका दान लगाकर युद्ध करेंगे । यह विश्वासही उनके लिये कालरूप होगया । वे निश्चिन्त हो बादशाहके आगे बढ़नेकी वाट देख रहेथे; कि इतनेहीमें बाबरका एक दूत सन्धिका प्रस्ताव लेकर उनके पास आया । राणाजीने आदरसहित उसको ग्रहण किया । परन्तु उसके आनेका यथार्थ कारण न जाना । सन्धिका प्रस्ताव करतेही राणा अत्यन्त विस्मित हुए; क्योंकि बाबरका सन्धिकरना असंभव बात थी । उन्होंने एलचीसे पूछा “ बादशाह कौन २ से नियमोंसे सन्धि करना चाहतेहैं । ” एलचीने नम्रतासे उत्तर दिया “ इस बातको उन्होंने आपहीके ऊपर छोड़ा है ” शिलादित्यनामक एक तुवर राजपूत उससमय राइसिनका हाकिमथा । संग्रामसिंह उसपर अत्यन्त स्नेह करतेथे और प्रयोजनीय कार्योंमें उससे परामर्श भी ली जातीथी । सन्धिके समय राणाने उसकोही बुला भेजा और उसकी संमति पूछी कि कौन २से नियमोंसे सन्धि करनी चाहिये । तर्क वितर्कके पश्चात् निश्चय हुआ कि दिल्ली और उसके सब परगने बाबरके पास रहेंगे और बीनाके मयदानमें बहनेवाली पीलीखाल

—अपने उद्योगमें सफल मनोरथ होनेके लिये परिश्रम करनेसे कभी न हटेंगे, मेरी यह बात सवने स्वीकार की और हाथोंमें कुरान लेकर सवने कसम खाई । अन्तमें हमारा मतलब सिद्ध हुआ कि जिसकी खबर सब ओर फैल गई ।

मुगल और सेवाडराज्यकी सीमा समझी जायगी। इसके अतिरिक्त प्रतिवर्षमें कुछ करभी बाबर महाराणाको दिया करेगा। बाबरके जीवन चरित्रमें यह वृत्तान्त नहीं पाया जाता परन्तु भट्टग्रंथोंमें इसका विस्तारित विवरण है। दुःखकी बात है कि यह सन्धि अस्वीकृत हुई। एक स्वदेशद्रोही जातवैरी और विश्वासघाती राजपूतने इस सन्धिको नहीं होने दिया। इस क्रूर राजपूतका नाम तुवर शिलादित्य था।

बाबरने सन्धि करना चाहा था परन्तु सन्धि न हुई। इसकारणसे दोनों दल संग्रामके लिये तैयार होगये। १६ मार्चको युद्धकी घोषणा प्रचार करके राजपूतोंकी भेनाने मोरचे लगाय अत्यन्त प्रचंडतासे तातारियोंकी सेनापर दक्षिण ओरने चढ़ाई की। बहुत देरतक दोनों दलोंमें घोर संग्राम होता रहा। घोड़ोंके हिन हिनाने, हाथियोंके चिंघाडने और प्रचण्ड वीरोंकी भयंकर सिंहनादसे संग्राम भूमि बारंबार कम्पायमान होने लगी। बीच २ में तोपोंका भयंकर गर्जनभी बारंबार कानोंके परदोंको डांवाडोल करने लगा। तोपोंसे इतना धुंआ निकला कि संग्रामस्थलमें अंधकार होगया। उस अन्धकार राशिको फाडते हुए, अग्निमय गोले वज्रकी समान तडित वेगसे राजपूत सेनाकी ओरको दौडने लगे। उन भयंकर गोलोंके प्रहारसे शतशः राजपूत वीर गण न जाने किधरको विलाय गये। तथापि राणा संग्रामसिंह अचल अटल रहे। यद्यपि यवन लोगोंके गोलोंकी मानसे बहुतसे सवार मारे गये, तथापि राणाजी अत्यन्त उत्साहके साथ शत्रुदलके व्यूहको फाडनेके लिये भीम विक्रमसे आगे बढ़ने लगे। क्रमानुसार महाभयंकर संग्राम होने लगा। महाराणाजीने, राजपूत कुल कलंक शिलादित्यका विश्वास करके उसको सब सेनाके सन्मुख भागकी रक्षाकरनेको नियत किया था। उनको अचल विश्वास था कि शिलादित्य प्राणपणसे युद्ध करके यवन लोगोंको पराजित करेगा। विशेष करके यह शिलादित्य उस समय इस प्रकारकी वीरता और प्रचंड विक्रमके साथ तातारियोंपर झपट रहाथा कि राणाका विश्वास औरभी प्रबल हुआ। परन्तु फिर सब परिश्रम निष्फल हुआ। वह दुराचारी शिलादित्य धीरे २ आगे बढ़कर बाबरकी सेनामें जा मिला ! तातारीलोग श्रवण भैरव शोर मचाकर सिंहनाद करने लगे ! प्रलयकालीन जलधरोंकी समान मुसलमानोंकी तोपें गगतभेदी शब्द करके फिर एकवार गर्ज उठीं समरभूमिमें फिर घोर अंधकार छा गया ! राणा संग्रामसिंहका हृदय अचानक कम्पायमान होने लगा। क्रमानुसार धुंएके दूर होनेपर महाराणाजीने विस्मय और

व्याकुलताके साथ देखा कि विश्वासघाती पापी शिलादित्य बादशाह बाबरकी ओर चला गया। उनका हृदय मथित होने लगा, चारों ओर अंधकार दिखाई दिया।

हा ! विश्वास करनेका क्या यही फल है ! राणाजीने विश्वास करके उस दुराचारीके हाथमें सेनाके सन्मुख भागकी रक्षा करनेका भार दिया था: पापी विश्वासघातीने इस विश्वासका यह प्रतिफल दिया ! हा नराधम-आततायी विश्वासघातक-देशका नाश करके सजातियोंके साथपर कलंकका टीका लगाकर-देशके वैरी यवनोंकी ओर जाकर दल गया। पीडा और शोकसे व्याकुल होकर महाराणा संग्रामसिंह संग्रामभूमिसे चले गये। जो राजपूत वीर-गण स्वदेश प्रेमिकताके पवित्र मंत्रसे उत्साहित होकर अपनी सेनाके साथ उनकी सहायता करनेके लिये वहां आए थे, वे सबही स्वदेशानुरागी आत्मोत्सर्ग करनेवाले वीरोंका अकाट्य उदाहरण दिखलाकर अनन्त कालके लिये शस्त्र-शय्यापर सो गये। डूंगरपुरके रावल उदयसिंह* और उनके दोसौ चतुर सिपाही; सालुम्बाके राजा रत्नसिंह और उनके तीनसौ चन्द्रावत सिपाही, मारवाड़के राठौर राजकुमार रायभल और उसके भैरता निवासी दो साहसी वीर क्षत्रसिंह और रत्नसिंह; शोनगड़ा सदाँर रामदासराव; झालापति ओझा, परमार वीर गोकुलदास, मेवाड़के चौहान मानकचंद व चंद्रमान और निम्नश्रेणीके बहुतसे राजपूत वीर तथा सावन्त और सरदारगणोंने हृदय चीरकर इस भयंकर यवन समरमें अपने रुधिरको दान किया था। इनके अतिरिक्त दो सुसलमान वीर भी महाराणा संग्राम सिंहकी सहायता करनेके लिये आकर रणभूमिमें गिर गये थे। इनमेंसे एक तो पदच्युत अभागे इब्राहीमलोधीका इकलौता पुत्र था;—दूसरा, मिवाडका स्वामी हुसेनखां था।

यह समस्त वीर अपनी २ सेनाके साथ रणभूमिमें विस्मय कर वीरत्व प्रकाशित करके अनन्त निद्रामें सो गये। इनकी प्रचंड वीरतासे और विक्रमसे यवनलोगोंकी विश्वदाही तोपें अनेकवार विमुख होगई हैं; भयंकर पराक्रम करनेवाले अनेक यवन वीर इस लोकसे विदा हुए। परन्तु यह सब कार्य वृथा होगए ? यदि वह दुराचारी विश्वासघात न करता तो कौन कह सकता है कि वीरवर बाबरका छिन्न

* बाबरके जीवनचरित्रके अनुवादमें रावल उदयसिंहको “मुल्कका वाली राजा” कहा है। परन्तु वास्तवमें यह उपाधि सांगाके उत्तराधिकारी राणा उदयसिंहकोही दी गई है। ऐसा मूलग्रंथमें लिखा है। फिर वितानगरपुरके राजा रावलसिंहको यह उपाधि किस प्रकारसे मिल सकती है।

मस्तक उस पीछे किनारे धारमें लोटता या नहीं? परन्तु भविष्यपुराणके कठोरभावी लिखनको कौन खंडन कर सकता है? नहीं तो राजपूत होकर—पवित्र तुवरकुलमें जन्म लेकर ऐसा कौन है जो दुराचारी शिलादित्यकी समान अपने देशका सत्यानाश कर सकता है? रणभूमिमें गिरे हुए राजपूतोंके कटे हुए मस्तक एकत्र करके विजयी वावग्ने संग्रामस्थलमें बड़े-कई एक पजाये बनाये और उनकी खोपडियोंसे पर्वतके शिखरपर जो कि संग्रामभूमिके सामने ही विराजमान था—एक अटारी बनाई। कपटाचारी नारकी, राजपूत कुलकलंककी विश्वासघातकताका प्रदीप्त विजयस्तम्भ राजपूतोंके मस्तकोंसे बनाया गया। वावरने विजय पाय प्रसूदित हो अपनी जयका प्रचार करनेवाली “गाजी” नामक उपाधि धारण की। इसके वंशवालोंने भी बराबर इस उपाधिको धारण किया था।

महाराणा संग्रामसिंह दारुण मानसिक पीड़ासे पीड़ित होकर मेवाड़की नौलमालाकी ओर बड़े। उनके हृदयमें कष्टदायिनी चिन्ताका आविर्भाव हो रहा था। वह कर्तव्याकर्तव्यको कुछभी न विचार सके। परन्तु चित्तोरमें न आये। उन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि “जो युद्धमें मुसलमानोंका गर्व खर्व न कर सकूँ तो युद्धक्षेत्रही मेरा वासस्थान है, और आकाशमंडलही मेरा चंदोवा (शामियाना) होगा” एक पलभरके लिये भी वह इस प्रतिज्ञाको न भूले। आज इस प्रतिज्ञाके पालन करनेका समय आ गया है, इसही कारणसे राणाने चित्तोरकी ओरको न बढ़कर वनवासका कठोर व्रत अवलम्बन किया। यदि शिशोदीयकुलके नष्ट गौरवका उद्धार न हुआ तो इस वनवासमेंही जीवन समाप्त होगा।

यदि महाराणा संग्रामसिंह कुछ दिनतक जीवित रहते तो उनकी यह प्रतिज्ञा निश्चयही पूर्ण होती। परन्तु होनहारके कठोर लेखके अनुसार उनका पवित्र जीवन, उस पराजयके वर्षमेंही इस संसारको छोड़ गया। मेवाड़का गौरवरवि वसवानामक स्थानके बीच अकालमेंही अस्त होगया। बहुत लोगोंका अनुमान है कि मंत्रियोंनेही विष देकर राणाजीको मार डाला था। इस अनुमानके सत्य होनेमें सन्देह है। परन्तु इसका विचार करनेसे भी हृदयके टूक टूक हुए जाते हैं। कहते हैं कि दुराचारी मंत्रियोंने शान्ति और स्वच्छन्दताको प्राप्त करनेकी आशासेही यह पैशाचिक कार्य किया था। यदि दुराचारियोंके कुअभिप्राय साधन करनेका केवल एक यही कारण हो, अगर इस पापकारणके ही उकसानेसे उन्होंने राजहत्यारूप घोर पापका अनुष्ठान किया हो; तो उन मंत्रियोंको, उनकी स्वच्छन्दताको और उनकी शान्ति तथा कलंकमय

जीवनको हजार बार धिक्कार है ! प्रजावत्सल स्वदेशप्रेमी देवतुल्य राजाका प्राण नाश करनेके बदलेमें जो नराधम शक्तिको मोल लेनेकी इच्छा करे, वह जलती हुई अग्निशिखाका आलिंगन करके, भृगतृष्णासे मोहित होकर जलते हुए रेतपर शयन करे । उन दुष्ट पिशाचोंने—अनाहार और अनिद्रामें रहकर क्यों नहीं अगणित कष्टोंको सहन कर लिया; ऐसा करना उनके लिये अच्छा था । नहीं तो इस अवपूर्ण पापको करके अपनी जन्मभूमिके माथेमें जो कलंक उन्होंने लगाया, उस कलंकको यदि नात समुद्रके जलसे भी धोया-जायगा तो भी वह नहीं छूटैगा ।

बहुतसे विवाह करनाभी अत्यन्त बुरा है । इस कुप्रथासे संसारमें विशेष करके राजोंके यहाँ तो अत्यन्त अमंगल हो जाता है । पुत्रवती होनेसे सब रानियोंकी इच्छा यही होती है कि हमारा पुत्र सिंहासनपर बैठे; इस इच्छाके पूर्ण करनेमें उनको हिताहितका ज्ञान नहीं रहता । राणा संग्रामसिंहके परलोकवासी होनेपर उनकी रानियें परस्पर कलह करने लगीं । सबने अपने-२ पुत्रको राजसिंहासनपर विठलानेकी चेष्टा की । एक रानी तो अपने पुत्रको सिंहासनपर बैठालानेके लिये यहांतक उत्कंठितहुई कि दूसरा कोई उपाय न देख कर बावरसे मेल किया । उसका आशय यही था कि बावर उचित उत्तराधिकारीको छोड़कर मेरे पुत्रको चित्तौरका सिंहासन दे दे । इस रानीने अपना मनोगत कार्य पूर्ण करनेके लिये बावरको रनथम्भौरका किला और फतह कियेहुए मालवराजका ताजभी घूसमें दे दिया ।

राणा संग्रामसिंहका आकार मध्यम था; शरीरमें सामर्थ्य अधिकतासे थी । नेत्र बड़े २ और शरीर गौरवर्ण था । उनके आकारको देखतेही ज्ञात हो जाता था कि यह महाविक्रमशाली वीर हैं । अनेक प्रकारके रणरंगमें उनके कई एक अंग प्रत्यंग जाते रहेथे * उनका साहस अनन्त और चेष्टा त्वावर चलती जाती थी । मालवेके बादशाहको कैद करके उन्होंने भलीभांतिसे अपने साहसका परिचय दियाथा । इसके अतिरिक्त रनथम्भौरका किला विजय करनेके समय जो अद्भुत वीरता उन्होंने दिखाई थी उससे उनका यश दूर २ तक फैल रहा था । संग्रामसिंहके इस प्रकारके उत्तम २ गुण थे इसही कारणसे तो

* एक आंख तो पृथ्वीराजके साथ लड़ाई होनेमें जाती रही थी । दिल्लीश्वर इब्राहीम लोधीके साथ युद्धमें उनका एक हाथ और तोपका एक गोला लगनेसे एक पाँव टूट गयाथा । इसके अतिरिक्त उनके शरीरमें हथियारोंके अस्सी घाव थे ।

वावरने भी उनकी प्रशंसा की है । वावर राणाजीमें भक्ति करता और उनसे डरता भी था । इसी कारणसे उसको महाराणाके साथ दूसरीवार युद्ध करनेका साहस नहीं हुआ । यद्यपि वावरने संग्रामसिंहको 'बुतपरस्तान' और लड़ाईका अपने जीवन चरित्रमें "जहाद" लिखा है, परन्तु मेवाडका वर्णन करनेके समय वह कहता है कि "राणा सांगाने अपने असीम विक्रम और तलवारके जोरसेही सन्मान और प्रतिष्ठाको पाया ।" इस लेखसे ज्ञात होगया कि वावर मर्ली भांतिसे महाराणा संग्रामसिंहके गुणोंको जानता था । दुःखकी बात है राणाने अधिक दिनका जीवन नहीं पाया । राणाके मरनेसे प्रजाको अत्यन्त शोक हुआ । प्रजाने अपने हृदयकी भक्ति और कृतज्ञताका चिह्न अटल रखनेके लिये उनकी चिना-वेदीके ऊपर एक मन्दिर बनवाया । महाराणा संग्रामसिंहजीके सात पुत्रथे । उनमेंसे सबसे बड़ा और छोटा तो बालक पनमें ही मृतक हुआ इस कारणसे नीचरे राजकुमार रत्नसिंहको पिताका सिंहासन मिला ।

संवत् १५८६ (सन् १५३० ई०) में राणा रत्नसिंह चित्तौरके सिंहासनपर बैठे । वीरता, वीरता आदि गुणोंमें रत्नसिंहभी अपने पिताकीही समानथे । पिताकी समान उन्होंने भी प्रतिज्ञा की थी कि राजधानीको छोड़कर बग़ावर युद्धक्षेत्रमेंही रहेंगे । चित्तौरके सिंहद्वारको दिन रात खुले रहनेकी आज्ञा देकर वह दर्पके साथ कहा करते थे कि एक ओर तो दिल्ली और दूसरी ओरसे माण्डू चित्तौरका द्वार है । यदि राणा रत्नभी वीर केसरी सांगाकी समान कार्य करते, यदि वह यौवनोचित प्रगल्भता और तेजस्विताके बश न हो जाते तो वह अपनी प्रतिज्ञाको निश्चय ही पूर्ण करते, फिर तो वावरके वंशधरगण किसी प्रकारसे हिन्दोस्थानके चक्रवर्ती बादशाह न होते । परन्तु अभाग्यवश युवा अवस्थाके प्रारंभमेंही महाराणाने इस लोकसे पयान किया । राजपूतोंके युवा अवस्थाका समय अत्यन्तही भयानक होता है । इस समयमें यह लोग अनर्थक लड़ाई झगड़ोंमें मतवाले होकर अपनी जिन्दगीको बवाले जान कर देते थे । ऐसे लड़ाई झगड़ोंसे अत्यन्त हानि होती थी, उन भयंकर झगड़ोंके कारणसे बहुतसे राजा अकालमेंही इस लोकसे विदा होगये । दुःखकी बात है कि महाराणा रत्नका प्राणभी इसही कारणसे गयाथा ।

राणा रत्नजीने छिपे २ अम्बरके राजा पृथ्वीराजकी बेटीसे विवाह कियाथा । यहांतक कि महाराज पृथ्वीराजको भी यह समाचार विदित नहीं था । इसही कारणसे राजकुमारीके समर्थ होनेपर वह उसके विवाहकी तय्यारियें करने लगे;

और वूंदीके हाडावंशीय राजा सूरजमलके साथ विवाहका संवन्ध ठहराया । शीघ्रही विवाह होगया । राजपूतवालाने लाजके मारे किसीसे अपने पहिले विवाहकी बात नहीं कही । इसही कारणसे किसीने इस विवाहको नहीं रोका । परन्तु थोड़ेही दिनमें यह विवाह एक महाअनर्थका कारण होगया । इस विवाहके वृत्तान्तको जानकर राणा मनमें अत्यन्त दुःखित हुए, सूरजमलके इस आचारणने उनके मनमें दारुण आघात पहुँचाया, उसका बदला लेनेके लिये राणा रत्नजी अवीर होगये, और अवसरकी वाट देखने लगे । सूरजमलसे राणा रत्नजीका निकट सम्बन्ध था, राणाजीने उसकी बहिनके साथ विवाह कियाथा; तथापि इस अपमानका बदला लेनेके लिये उन्होंने संवन्ध वन्धनको काट डाला और दाव देखते रहे । परन्तु इस झंझटमें अहेरिया (वासन्ती मृगया) उत्सवके आतेही राणाने बैर निकालनेका भला अवसर पाया । अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर शिकार खेलनेके लिये जंगलको चले । वूंदीके राजा सूरजमलभी इस समय उनके साथ थे। वूंदीके हाडालोग मेवाडकी पूर्वी पार्श्वकी पहाड़ियोंके भीतर रहते थे । यद्यपि प्रगटमें उनका राज्य मेवाडके अन्तर्भुक्त नहीं था परन्तु वे लोग राणाओंकी पूजा करते थे । युद्धस्थलमें राजचिह्न धारण करते और मेवाडके लिये प्राणपणसे युद्ध करते थे । जिस दिन यवनवीर शहाबुद्दीनके प्रचंड आक्रमणको रोकनेके लिये आर्यवीर समरसिंहने पवित्र दृषद्वतीके किनारेपर अपने प्राणोंको दिया, उसदिन हाडावंशीय युद्धविशारद हमीरने भी भारतभूमिके ऊपर अपने प्राणोंको नेवछावर करदिया था । यह हमीर सूरजमलकाही पितृपुरुष था । उसही समयसे हमीरके वंशवाले गिहोटीकुलके विशेष अनुगत हुए । परन्तु राणा रत्नजीकी क्रुबुद्धिसे वूंदीके साथ मेवाडका जो वैरभाव हुआ उससे दोनों राज्योंकी मित्रताका वन्धन कुछ दिनके लिये ढीला पडगया था ।

शिकार खेलनेको जाकर राणा रत्नजी एक गंभीर वनमें पहुँचे, उनके साथी पीछे रहगये थे । केवल सूरजमल साथ था । अवसर समझकर राणाने अकस्मात सूरजमलके तलवार मारी । वैसेही वह घोड़ेपरसे गिरा, परन्तु मरा नहीं । थोड़ी ही देरमें चैतन्य होकर दुपट्टेसे कसके बावको बांधा और आततायी रत्नजीको अनुसन्धान करनेके लिये तीक्ष्ण दृष्टिसे चारों ओर देखा तो, राणाको दूर भागते-हुआ देखा । तब सूरजमलने दुःख और क्रोधसे अत्यन्त पीडित होकर कहा “अरे कायर पुरुष !—भाग—भाग, अब तू भाग सकताहै; परन्तु तेरे इस कायरपन और

घिनौने आचरणसे मेवाडके श्वेत यशमें सदाके लिये यह कलंक लगा ” रत्नजीने यह सुना, वह समझे थे कि सूरजमल मर गया, इस समय उसको जीता हुआ देखकर फिर आक्रमण किया । परन्तु इस कुबुद्धिका फल शीघ्रही उनको मिल गया । राणाको शीघ्रतासे अपने ऊपर झपटता हुआ देखकर सूरजमलभी क्रोधित सिंहकी समान झपटा और उनको पृथ्वीमें गिराकर छातीपर चढ़कर तलवार मारी, तलवारके लगनेसे राणाजीका काम हो गया और शीघ्रही अपने शत्रुके निकट अनन्त निद्रामें सो गए ।

राणा रत्नजीने केवल पांच वर्षतक राज्य किया था । तथापि इस अल्प कालमें ही भलीभांतिसे राज्यकी उन्नति की । यवन लोग तो इनके समयमें चित्तौरकी नीसापर भी नहीं आसके । राणाकी अकालमृत्युसे कुछदिन पीछे ही उनका भाई विक्रमाजित चित्तौरके सिंहासनपर बैठा ।

मन्वत् १५९१ (सन १५३५ ई०) में विक्रमाजितको चित्तौरका सिंहासन मिला । राणा रत्नजीमें जितने राज्योचित गुण थे, विक्रमाजित उनमेंसे एक गुणकाभी अधिकारी नहीं था, बड़े भ्राताके गुण छोड़े और अवगुण लिये । महाराणा रत्नकी ठिठाई, तेजस्विता और अपरिणामदर्शिता विक्रमाजितके चरित्रमें पूर्णमात्रासे विराजमान थी । इसके अतिरिक्त वह क्षमाहीन और प्रतिहिंसापरायणभी था । क्रमानुसार यह दोष यहांतक बढ़ गए कि मेवाडके सम्पूर्ण सदाँर राणा विक्रमाजितसे अप्रसन्न होगये । उनके अप्रसन्न होनेका एक औरभी कारण था । राणा उनके साथ जरा देरकी नहीं बैठते थे और रातदिन पहलवानोंकी कुस्ती और तरह २ की कसरतें देखा करते थे । विशेष करके राजपूत मवार लोगोंने जिस सन्मानको बहुत दिनसे पारकरा था, विक्रमने उनके उस सन्मानको छीनकर नीचपदवाले ‘पाइक’ (पदातिक) और उक्त मलोंको अर्पण करना आरंभ किया । इस अपमानको देखकर सदाँरलोगोंके हृदयमें घोर दुःख हुआ और वे अत्यन्त दीनभावसे अपने समयको विताने लगे ।

इस प्रकारसे सदाँरलोगोंके अधिकारोंको छीन मल्लादि नीचपदवाले लोगोंको देकर राणा विक्रमाजितने एक नई रीति चलाई । कदाचित् मुसलमानोंसे राणाने यह नीति सीखी हो । वह मुसलमान पदातिक सेनाका भलीभांतिसे आदर करके राजपूतोंको अत्यन्त घृणाकी दृष्टिसे देखते थे । किसी किलेको घेरनेके समय अथवा जब कि राजपूतगण घोड़ेसे उतरकर गलीचा बिछाये

अपनी थकावट दूर किया करते हैं केवल उसही समय उनको पैदल सेनासे काम लेना पड़ताहै, इसके अतिरिक्त और किसी समय वह उनका आदर सत्कार नहीं करते । मुसलमानलोग पहिलेसेही पैदलोंकी सेना रखते थे, परन्तु संग्रामके बीचमें जबसे वह तोपें चलाने लगे उस समयसे पैदल सेनाका आदर विशेषतासे बढ़गया । उसही समयसे वह घोड़ेसवारोंकी सेनाको तुच्छ समझने लगे कारण कि पैदल सेनाही संग्रामभूमिमें तोपोंका व्यवहार सुभीतेसे करसकती है । परन्तु राजपूत लोगोंने अपना पुरानी रीतिको नहीं छोड़ा । प्राचीन समयसेही वह घोड़ा, खड्ग और भालेको प्राणसे भी अधिक समझते थे, जिसको धर्मयुद्धकी प्रधान सामग्री समझते थे, आजतकभी घोड़े, खड्ग और भालेका वह उतनाही आदर करते हैं । नई सभ्यता और नई रीशनीके जमानेमें जो तरह २ के अस्त्र शस्त्र और चालाकीसे युद्ध करनेकी सामग्री वजतीहै; बाहुवलपर भरोसा रखनेवाले राजपूतलोग इनसे घृणा करते हैं उनका विश्वास है कि तोप इत्यादिके व्यवहारसे बाहुवलका कुछभी परिचय नहीं पाया जाता । इस प्रकारके अस्त्र शस्त्रकी सहायतासे जो विजय प्राप्त हो; उसको वह विजयके नामसेही नहीं पुकारते ।

अपमानित सरदारोंके हृदयमें धीरे २ डाहकी आग जल उठी । राणाकी सारी प्रीति और ममता उनके हृदयसे जाती रही । परन्तु इतनेपरभी विक्रमाजितके नेत्र नहीं खुले । उन्होंने अपनी विपत्तिका कुछभी विचार नहीं किया । राणाके आलस्य और दुष्टपनसे राज्यमें घोर अराजकता छा गई । पहाड़ोंके रहनेवाले असभ्यलोग पहेरेदारोंसे किंचितभी न डरकर चित्तौरकी दुर्गप्राचीरके सामनेसेही बलपूर्वक गोमेपादिको छीनकर ले जाते थे । प्रजाको अपने धन और मानकी रक्षाका करना कठिन होगया । सबही प्रजा अत्यन्त पीडित होकर आरत वाणीसे कहने लगी । कि “फिर पपावाई * का राज्य आगया । ” राणाने अपने सरदारोंको बुलाकर असभ्य पहाडियोंका दमन करनेके लिये कहा; तब समस्त सरदारगण एक साथ बोले कि “महाराज ! अपने पायक लोगोंको भेजें । ”

* अतिप्राचीन समयमें पपावाई नामक कोई राजपूतरानी थी, उसके राज्यके समय प्रजामें अत्यन्त अराजकता फैल गई थी । तबसे राजपूतलोग प्रत्येक अराजक जनपदको पपावाईका राज्य कहा करतेहैं ।

थोड़ेही समयमें मेवाडका राज्य अराजकतासे पूर्ण होगया । गुजरातके सुलतान वहादुरने अपने वैरका बदला लेनेके लिये यह अच्छा मौका संभाला । शिशो-दिया कुलभूषण कुमार पृथ्वीराज, गुजरातके बादशाह मुजफ्फरको पराजित करके चित्तौरमें कैद करके लेआये थे । बादशाहका इससमय घोर अपमान हुआ था, आज वहादुरने उस अपमानका बदला लेनेकी प्रतिज्ञा की। गुजरात और मालवेमें जितनी रणविशारद सेना थी बादशाह उस समस्त सेनाको लेकर राणा पर चढ़ धाया । राणा विक्रमाजित उस समय बूंदी राज्यके अन्तर्गत लैचानामक स्थानमें थे। वहादुरने अपनी विशाल अनीकिनीको साथ लिये हुए वहीं राणाजीको जा घेरा । वहादुरकी उस प्रचंड सेनाको बादलकी समान उमड़ी आती देखकर राणा विक्रमाजितको कुछभी भय न हुआ, उन्होंने वीरवर संग्रामसिंहके औरससे जन्म लिया था, अबतक उनकी नाडियोंमें प्रचंड वेगसे संग्रामसिंहका रुधिर बह रहा है, फिर राणा विक्रमाजित किस प्रकारसे कायर हो सकते हैं क्या वह देश-वैरी यवनकी प्रचंड सेनाको रोकनेमें असमर्थ होंगे? नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता, शिक्षाके दोपसे यद्यपि उनका शरीर दूषित था परन्तु इतने कापुरुष नहीं थे कि शत्रुको आताहुआ देखकर निश्चिन्त बैठे रहते । उन्होंने निडर होकर वहादुरका चुकाविला किया, दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा । परन्तु महाराणाकी वेतनभोगी पदातिक सेना, मुसलमानलोगोंके प्रचंड आक्रमणको नहीं रोक सकी । इस कारण वे घोर संकटमें पड़गये । उनके इष्ट मित्र कोई भी इस विपत्तिमें सहारा न देसके । राणाजीको उनकी निर्बुद्धिताका उपयुक्त फल भोग करनेके लिये रखकर इष्ट मित्रगण संग्रामसिंहके छोटे, पुत्र उदयसिंहकी तथा चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये नगरमें चले गये ।

चित्तौरनगरकी ऐसी अपूर्व महिमा है ! गंतयुद्धमें वीरवर संग्रामसिंहके साथ जो अगणित वीरगण अपने देशके गौरवकी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमें गिर गए थे, उससे चित्तौरपुरी वीर शून्य होगई थी । परन्तु आज जैसेही सुलतान वहादुरन चित्तौरपुरीको घेरा, कि वैसेही उन वीरोंकी चिताभस्मसे फिर अगणित वीर उत्पन्न हो गये । जो राजपूत राजालोग इससे पहिले मेवाडके घोर शत्रु थे, आज वह भी शत्रुभावको छोड़कर आत्मोत्सर्गका पवित्र मंत्र सीखकर चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये आये । बहुतसा दुःख पानेके पीछे जब सूरजमलको चित्तौर प्राप्तिकी आशा न रही, तब उन्होंने वनमें देवलनगर बसाया था, आज उनकाही वंशधर बाघजी पितृपुरुषोंके वासस्थान चित्तौ-

रनगरकी रक्षा करनेके लिये प्रसन्न होकर अपने हृदयका रुधिर दान करने आया था । इसही भांतिसे वूंदीका राजकुमार भी अतितेजस्वी ५०० सौ हाडा वीरोंको लेकर और जौनगडे, देवर व अन्यान्य राजपूत वीरगण मेवाड़की रक्षा करनेके लिये खड्ग धारण करके आये ।

मध्यभारतके मुसलमान बादशाहोंने जितनी बार चित्तौरपुरीपर चढ़ाई की यह चढ़ाई उन सब चढ़ाईयोंमें भयंकर थी । इस भयंकर चढ़ाईमें एक चतुर यूरूपियन गोलन्दाज भी बहादुरकी सहायता करनेके लिये समरभूमिमें आया था* भट्टलोगोंने इस गोलन्दाजको “फिरंगानका लाब्रीखां” कहकर पुकारा है । इस × लाब्रीखांकी ही सहायतासे बहादुरने चित्तौरको विध्वंस करके अपने पुराने बैरका बदला लिया था ।

लैचास्थानमें राणा विक्रमाजितको परास्त करके विजयी बहादुर उस सेनाको साथ लिये हुए चित्तौरपर जा पहुँचा। आज चित्तौरपर वोर संकट आपड़ा है! इस संकटसे कौन चित्तौरपुरीकी रक्षा करेगा? आज कौन शिशोदिया कुलके गौरवको उद्धार करेगा? थोड़ेसे जिन राजपूतोंने स्वदेशप्रेमके मंत्रसे ब्रती होकर अस्त्र धारण किया है, बहादुरकी अनीकिनीसे अगर उसकी बराबरी कीजाय तो वह लोग कुछभी न थे;—अनन्त समुद्रके लिये मानो पानीके कुछ बबूले थे । तथापि भग-

* हम पहिलेही एक टिप्पणीमें लिख आए हैं कि प्राचीन समयमें भी आर्यलोग तोप और बन्दूकका व्यवहार करना जानते थे । पुराणोंके तत्त्वको न जाननेवाले इच्छानुसार बकाकरें, हमें उनसे कुछ सम्बन्ध नहीं; कारण कि हमको ज्ञात है कि प्राचीन आर्यलोगोंने अद्भुत विज्ञानके बलसे अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र बनायेथे । भली भांतिसे पुराणोंको पढ़नेपर इस बातके बहुतसे प्रमाण मिल जायगे । महाकवि चंदभट्टने भी अपने ग्रंथमें तोप बन्दूकका वर्णन किया है, उन्होंने इन अस्त्रोंको “नलगोला” के नामसे लिखा है । परन्तु इस बातका निर्णय करना कठिन है कि मुसलमानोंने कबसे तोप और बन्दूकका व्यवहार करना सीखा करतेहैं कि बादशाह अलाउद्दीन किलेपर आक्रमण करनेके समय “मुजनिक” नामक एक प्रकारको कलका व्यवहार किया करता था, लेकिन यह कल बन्दूक या तोपकी समान नहीं थी । जहांतक हमारा विचार पहुँचा उससे हम कह सकते हैं मुसलमानोंमें सबसे पहिले बाबरने तोपका व्यवहार किया । इसकी तोपोंको रूमीखां नामक एक गोलन्दाज चलाता था । यह रूमीखां कौन था ? टाडसाहबने इसको सीरिया देशका रहनेवाला बताया है ।

× टाडसाहबने इस लाब्रीखां (फिरंगी) को पुर्तगीजवीर वास्कोडिगामाकी फौजका एक सिपाही बताया है । परन्तु जब (सन् १५३३ ई० में) बहादुरने चित्तौरको तबाह किया था, वास्कोडिगामा इससे बहुत पहिले मर चुका था, इस कारण ऐसा जान पड़ता है कि यह लाब्रीखां, किसी और पुर्तगालवाले नाविकके दलका था, जो कि वास्कोडिगामासे पीछे हुआ था ।

वान एकलिंगके नामसे शपथ करके उन्होंने प्राणपणसे युद्ध करनेकी प्रतिज्ञा की और प्रचंड रणभेरी बजाकर शत्रुकी विक्रमाग्निको खलवला डाला । उनकी गंभीर रणभेरीका शब्द आकाशमें गुंजारहो रहाथा कि उसी समय बहादुरकी काल-समान तोपें, मानो संपूर्ण संसारको पातालमें भेजनेके लिये विश्व संहार कारी असंख्य वज्रोंकी समान शब्द करके गर्ज उठीं ! प्रकृति स्तंभित होगई मानो पलक मारतेमें संसारका अस्तित्व लोप होगया ! मानो संसार सौ टुकड़े होकर पातालमें प्रवेश करने लगा । राजपूत वीरलोग दूने उत्साहसे उत्साहित हो फिर सिंहनाद कर उठे; तथा अग्रिमय गोलोंको ताक २ कर उनके ऊपर बाण छोड़ने लगे । कदाचित्त उनके दो एक ही वीर निशानेसे चूके-हों-अवकी बार और भी मुसलमानोंकी तोपें गरजीं ! तोपोंके धुएँसे संग्राम भूमिमें अंधकार छागया ।-सूर्यभगवानकी तीव्रकिरणेंभी रुक गईं, पलभर तो कुछभी दिखाई न दिया !-केवल अन्धकार !-घोर अन्धकार !-इस प्रकार बहुत देरतक घोर युद्ध होता राह ! दोनों ओरके अगणित सिपाही मारे गये । बहादुर किसी भांति चित्तौरपर अपना अधिकार न कर सका । फिर चतुर लात्री-खाने वीका पहाडीके नीचे एक बडी भारी सुरंग खोदी और उसमें बारूद भरकर आग लगादी । हजार वज्रकी समान शब्द करके वह बारूद जल उठी-उमके साथही किलेकी ४५ हाथ जमीन भी एक साथ उडगई । उस स्थानमें हार राजकुमार वीर अर्जुन राव अपने पांचसौ सिपाहियोंको साथ लियेहुए युद्ध कर रहा था, वहांकी जमीनके उडतेही वहभी सेनासहित मारा गया ! चित्तौरके किलेकी भीत कई जगहसे टूटगई । उन्हीं छिद्रोंसे होकर किलेमें प्रवेश करनेके लिये यवनवाहिनी नदीके प्रवाहकी समान दौडी । परन्तु चित्तौरपुरी अबतक वीर शून्य नहीं हुई है, जमराजकी समान कई राजपूत लोग अबतक जीवित हैं । जबतक देहमें प्राण रहेंगे-नाडियोंमें जबतक रुधिर बहैगा तबतक क्या वह अपनी मातृभूमि चित्तौरपुरीको शत्रुओंके हाथमें जाने देंगे ? कभी नहीं ! बातकी बातमें वीरवर दुर्गा राव, अन्य, ददूनाप्रक दो चन्दावत वीर और कितनी एक सेना उन छिद्रोंके सामने आनकर डटगई। वह लोग अचल, अटल और पहाडकी समान डटे । प्राण रहते हुए यहांपरसे कभी नहीं हट सकते ! मुसलमानोंके झुण्डके झुण्ड उस ओरको धाये। परन्तु वीरवर दुर्गा राव और उनके साथी वीरगण जबतक जीवित रहे तबतक मुसलमानोंकी एक न चली । परन्तु थोडेसे राजपूत मुसलमानोंकी अगणित प्रचंड सेनाको कबतक रोक सकते हैं ? बहुत देर-

तक अद्भुत विक्रम दिखाकर राजपूत वीरगण उन छिद्रोंके निकटही गिरगए। रणमतवाले यवनलोग सिंहनाद करने लगे और बड़ी शीघ्रतासे उस छिद्र मार्गके निकट आए; अकस्मात् सबही ठठक गए, सब यवनसेना इस प्रकारसे खड़ी होगई कि जैसे सर्पगण मंत्रसे बँधकर चुपचाप रह जाते हैं। उन्होंने देखा कि केश वखरे, भीम रूप धारण किये, वीर वेष बनाये एक स्त्री रणतुरंगपर चढ़ी हुई हाथमें भयंकर भाला लिये, उस छिद्रके पीछे खड़ी है।—यह स्त्री और कोई नहीं है;—राठौर कुलमें उत्पन्न हुई शिशोदीय महारानी जवाहरवाई यहाँपर खड़ी हैं ! वीरनारी जवाहरवाई रणचंडीका वेष धारण करके उस छिद्रमार्गको रोककर खड़ी रही ! मुसलमानोंको आगे बढ़ता हुआ देखकर महारानी झपटकर उनके आगे आई। वीरांगनाके भालेसे बहुतसे यवनोंका संहार होगया। परन्तु यह सब वृथाही है, उफनते हुए समुद्रकी समान यवनगण एकसाथ महारानीके ऊपर आटूटे। तथापि वीरवालाका उत्साह न गया, और अपूर्व वीरता दिखाकर मुसलमानोंसे युद्ध करने लगी। आज वीर नारी अकेली है—कितने एक राजपूत वीरको साथ लिये हुए—अगणित यवनोंसे संग्राम कर रही है, बहादुर हाथीपर बैठा हुआ दूरसे इस कौतुकको विस्मित होकर देख रहा था। वीरवालाका अद्भुत रणरंग देखकर वीरताका अभिमान करनेवाले यवन वीर अकचका कर रह गये ! क्या शक्तिरूपा महादेवीजी आज दैत्योंका संहार कर रही हैं ! परन्तु समुद्रके बीचमें तिनकेका क्या सहारा हो सकता है ? अन्तमें चित्तौरकी रक्षाका कोई उपाय न देख कर वीरनारी जवाहरवाई तडित वेगसे अपने घोड़ेको चलाकर यवन सेनाके बीचमें घुस गई और संसारमें वीरनारीका अपूर्व उदाहरण और प्राण निवछावर करनेका अकाट्य प्रमाण रखकर शत्रुओंके बीचमेंही अपने शरीरको त्यागदिया !

महाशक्तिकी शक्तिसे कुछ न हुआ ! आज चित्तौरके दिन भले नहीं हैं, फिर इस संकटसे कौन चित्तौरपुरीका उद्धार करेगा ! सदाँरलोगोंने एकवार फिर चित्तौरके भविष्य भाग्याकाशकी ओर देखा;—तब ज्ञात हुआ कि अब चित्तौरकी कोई आशा नहीं है, तथापि उसही समय मानो किसीने चित्तौरके ऊँचे किलेपरसे जलद गंभीर वाणीसे पुकारा “राजबालिकी तइयारी करो” सरदारलोग हताश या निरुत्साह नहीं हुए। क्या चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीको शोणित पान करनेकी दारुणप्यास लगी है ? परन्तु राजबालि कहाँसे आवै ? केवल संग्रामसिंहका बालक पुत्र उदयसिंह है।—वह तो बालक है।—वह किस प्रकारसे खड्ग धारण करके संग्राम भूमिमें जायगा ? किस प्रकारसे देवीकी आज्ञाका पालन किया

जाय ? सरदारलोग किलेमें बैठे हुए इस प्रकारसे अनेक विचार कर रहे थे, कि उसही समयमें देवलपति बाधजीने उनके सामने आकर कहा “ क्या बाधाराव-लका पवित्र रुधिर इस हृदयमें नहीं बहता है ? आपलोग राजवलिके लिये क्या चिन्ता करते हैं ? आज मैंही प्राण देकर देवीकी आज्ञाका पालन करूंगा । स-वकी चिन्ता दूर हुई । जिस सूरजमलने चित्तौरके लिये वीरवर पृथ्वीराजके साथ भयंकर संग्राम किया था; यह बाधजी उसके ही वंशमें उत्पन्न हुआ है, यह भी शि-शाद्वियाकुलका भूषण है । बाधजीने क्षणभरके लिये राजसन्मानको भोग किया । छत्र, चामर और किरण क्षणभरके लिये उनके मस्तकपर विराजमान हुए । फिर पीछे पीले कपड़े पहिरे गये । जिसको देखो वही पीले कपड़े पहिर रहा है ! अन्तकालका वीरवेष, पीले कपड़ोंका पहरना समाप्त हुआ । सरदार सामन्त और प्रधान २ सेनापतियोंने सदाके लिये एक दूसरेसे विदालेली । फिर महादर्पके साथ बाधजीके मस्तकपर बाधारावकी विजय वैजयन्ती और उज्ज्वल छेंगी * उठाय श्रवण विदारी वीरनाद करते हुए शत्रुओंके सामने हुए । इस ओर राज-कुमार उदयसिंह वृंदाके विश्वासी राजा शूरथानके हाथमें समर्पण किये गए । उसदिन-चित्तौरकी उस संकटापन्न अवस्थामें वीरवर बाधारावकी हैमतपन मंडित विजयपताका देवलराज्यके मस्तकपर इस अधिकाईसे शोभित हुई कि जैसी कभी शोभित नहीं हुई थी । राजवलिके गरम रुधिरसे चित्तौरकी अधि-ष्ठात्री देवीका खप्पर भरनेसे पहिले ही भयंकर ‘जुहारव्रत’ का कार्य पूरा किया गया । अब समय नहीं है; यवनलोग छिद्रके मार्गसे धीरे २ चित्तौरमें चले आते हैं; अतएव चिता बनानेका तो समय नहीं है । सरदारलोगोंने इस भयंकर व्रतके शीघ्र समाप्त होजानेका एक उपाय सोचा । दुर्गके भीतर एक बड़ा भारी गढा खुदवाया, बारूदके ढेरके ढेर उसमें डाले गये तथा और भी दाहक पदार्थ डालकर आग लगाई प्रचंड शब्द करके अग्नि जलने लगी ! सबके देखते हुए महारानी कर्णावती तेरह हजार राजपूत वालाओंके साथ करुणा शोकके गीतोंसे सारी प्रजाको रुलाती हुई सरलता और प्रसन्नतासे उस अग्निमें कूद पड़ीं । एक मुहूर्तमें तेरह हजार वीर वालाओंने इस असार संसारसे पयान किया, किसीका चिह्नतक भी शेष न रहा । रूप-यौवन-लावण्य गौरव पलभरके बीचमें इन सबका अंत होगया ।—कुछभी शेष न रहा । अब सरदारलोग निश्चिन्त हुए । इस

* छेंगी महाराज बाधारावका एक राजचिह्न है । एक लकड़ीके डंडेके ऊपर प्रायः दो हाथ लम्बा एक चमड़ा लगा रहता है उसके ऊपर शूतरसुर्ग और बीचमें सुवर्णका सूर्य बना होता है ।

समय किसीके मुँह देखनेकी आवश्यकता नहीं है—अब किसीके लिये आँसू नहीं बहाने पड़ेंगे, जिनके लिये हृदय रोता; जो यत्नका धन थीं—व्यथाकी सामग्री थीं वह प्रीतिदायिनी आनन्दमयी कन्या, वहन, और स्त्रियें आज अनलमें प्रवेश कर चुकी हैं । शिशु राजकुमार उदयसिंह भी वेखटके रक्षित होगया । * फिर अब और किसका डर है—और किसका सोच विचार है ! चित्तौरके वीरगण रण-मतवाले होकर वारंवार सिंहनाद करने लगे । श्रवण भैरव रवसे वसुधाको कम्पायमान करते हुए राजपूतोंके रणदशमें फिर वज्र उठे ! हाथमें नंगी तलवार लिये रणोन्मत्त बाधजी किलेका द्वार खोलकर चित्तौरके वचे-हुए वीरोंके साथ झपटकर यवन वाहिनीके बीचमें प्रवेश करगया । उन लोगोंके भयंकर खड्गप्रहारसे अनेक यवनलोग कालकवलित हुए, परन्तु क्या होता है । यह थोड़ेसे राजपूत वीर इस प्रकारसे वहां लीन होगये कि जैसे समुद्रमें २ । ४ पानीके बबूले विला जाते हैं ।

आज बहादुरने भलीभांतिसे चित्तौरवालोंसे अपना वैर निकाला × राजपूत नर नारियोंके हृदयके रुधिरने उसके हृदयकी कठोर ज्वालाको बुझाया ! उस समय वह दुराचारी अपनी विजयके चित्रको देखनेके लिये श्मशानरूपधारी चित्तौरमें आया । वह चित्र अत्यन्त वीभत्स—और हृदय स्तम्भन कारीथा ! वह अत्याचारी भी अपनी करतूतको देखकर सहम गया ! उसके कठोर हृदयपर मानो विजलीसी गिर पड़ी । चित्तौरकी गली २ में मनुष्योंका रुधिर बहरहा-था । स्थान २ पर कटेहुए अगणित शिर हाथ, पांव और लोहू लुहान मृतक देह पड़े हुए थे ! कहीं २ पर अगणित अवमरे मनुष्य मृत्युयंत्रणाका कठोर कष्ट सहते हुए हृदयमेंही आर्त्त नाद कर रहे हैं—यवनोंको वारंवार शाप दे रहे हैं कोई अपमान और कारावासकी पीडासे छुटकारा पानेके लिये विषपान करने-को तइयार हैं । कोई २ तीक्ष्ण छूरीको अपने हृदयमें मार रहे हैं, चित्तौरमें आज मयलकाल आ पहुँचा है ! कोई नहीं है—बालकोंसे लेकर बूढ़े और स्त्रियोंतकने अपनी जान देदी हैं ! आज चित्तौरपुरीकी जान निकल गई ! राजस्थानके प्रधान २ सामन्तकुल रक्षक शून्य होगये;—प्रधान २ वीरवंश निर्मूल हुए ! इस भयंकर

* जिस विश्वासी राजपूतने ऐसे भयंकर समयमें उदयसिंहकी रक्षा कीथी उसका नाम चूकासे नखुण्डेराथा ऐसे महात्माका नाम अवश्यही इतिहासमें लिखना चाहिये ।

× सम्वत् १५८९ (सन् १५३३) के ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशीको चित्तौरका यह विध्वंस हुआ था ।

संग्रामसे सब वत्तीस हजार (३२०००) राजपूत वीरोंने प्राण दिये थे ! यह चित्तौरका दूसरा विध्वंस हुआ ।

बहादुरशाहने पंद्रह दिनतक चित्तौरमें रहकर अनेक प्रकारके आनंद उत्सव किये । इतनेमेंही समाचार आया कि मुगल वीर हुमायूं चित्तौरका उद्धार करनेके लिये सेना सहित चला आताहै।भयके मारे बहादुरसाह थर्रागया;उसने बिना विलम्ब किये देशको लौट जानेकी तइयारी की।इस बातका निर्णय करना जरा कठिनहै कि कौनसे सम्बन्धके कारण हुमायूं वंगदेशकी विजयको छोडकर चित्तौरमें आयाथा । परन्तु यहाँपर यह लोगोंकी युक्ति ही ठीक जान पडतीहै, वे कहते हैं कि एक पवित्र मित्रबन्धनके अनुरोधसे ही मुगल वीर हिमायूं बहादुरके कराल ग्राससे चित्तौरका उद्धार करनेके लिये आयाथा । उदयसिंहकी माता रानी कर्णवतीने हिमायूंको धर्मभ्राता बनाया था।राजपूत लोग इस पवित्र भ्रातृत्व बन्धनको “ राखी बन्धन ” के नामसे पुकारते हैं ।

भट्टग्रंथोंमें लिखाहै कि चित्तौरके भयंकर समरमें जब वीरनारी जवाहरवाईने अपने प्राण दिये, तब रानी कर्णवतीने अपने बालकपुत्रकी प्राण रक्षाका कोई निश्चित उपाय न देखकर विवश हुमायूंकी सहायता चाही और उसके पासको पवित्र राखीबन्धन भेज दिया । वीर प्रथाकी योग्य विधिके अनुसार हुमायूंने उस भ्रातृसम्बन्धको पवित्र हृदयसे ग्रहण किया, और धर्म- भगिनीको विपत्तिसे उद्धार करनेकी प्रतिज्ञा कर सेना सहित चित्तौरकी ओर चला । यदि हुमायूं कुछ पहिले चित्तौरसे आजाता तो बहादुर शाहके द्वारा चित्तौरका यह कठोर विध्वंस न होता, और धर्म बहिनके उद्धार करनेकी जो प्रतिज्ञा की थी वह भी सर्व प्रकारसे पूर्ण हो जाती। परन्तु रानी कर्णवतीका दुर्भाग्य था यदि ऐसा न होता तो वह विलम्ब करके राखी क्यों भेजतीं । *

राखीका उत्सव वसन्तकालमें ही हुआ करताहै । राजपूत बालागण इस समय अपने २ भाइयोंके पास राखी भेजती हैं और उनको अपना धर्मभ्राता बनाती हैं । भारतेश्वर भुवनविदित अकबरका पत्र जहांगीर तथा शाहेजहाँन और

* कहतेहैं कि हुमायूंने बहादुरके सामने आकर उसके साथ कूटार्थमय सदैव वाक्युद्ध कियाथा ।

अवरंगजेव भी * इस पवित्र बन्धनसे बंधकर अपनेको कृतार्थ समझते थे । × कभी २ राजपूतोंकी कुमारी लडकियांभी राखी भेजा करती हैं । परन्तु विपम संकट अथवा अत्यन्त प्रयोजनक समयही वह ऐसा करतीहैं । नियत हुए मनुष्यके पास राखी भेजनेके समय राजपूत ललनागण उसको धर्मभ्राताके नामसे पुकारा करती हैं । उस उपाधीके साथ राखीको पातेही धर्मभ्राता अपनी धर्मवहनका मंगल साधन करनेके लिये अपने प्राणतक भी दे देता है, और अवसर आपडनेपर वरावर अपनी प्रतिज्ञाको पूरा करताहै । परन्तु इस वीर व्यवहारमें भी एक बात विचित्र है । चाहै धर्मभ्राता अपनी धर्मवहिनके लिये अपने प्राणतकका दाव लगादें, परन्तु कभी उस ललनाके लावण्यमय मुखकी प्रसन्न मुसकानको नहीं देखने पाते, कारण कि जिसके लिये वह अपने मुखको जलांजलि देकर प्राणतकको दे डालते हैं, उस राजपूत बालासे कभी उनका प्रत्यक्ष साक्षात् नहीं होता ; तथापि इस पवित्र भ्रातृ बन्धनमें एक ऐसी मायामयी शक्ति है कि उसके प्रभावसे वीरगण मोहित होकर अपने इतने नीचे इस सम्बन्धकी चाहना किया करते हैं । जो राखीबन्धन इतनी पवित्र सामग्री है, जिसको पानेके लिये राजा महाराजा लोगभी ललचाते रहते हैं; उसक बनानेका कोई विशेष नियम नहीं है; सबही अपने २ वित्तके अनुसार उसको बना लेते हैं । कोई रत्न, कोई २ सुवर्णका हार और कोई रसाधारण रेशमकी राखियें बनाकर अपने धर्मभ्राताको अर्पण किया करती हैं । राखीको प्राप्त करतेही वीरगण इसके बदलेमें पशमीना, साटन अथवा मुक्ताजडी जरीकी एक २ † चादर भेजा करते हैं, और कभी २ इस चादरके साथ एक २ जनपद भी भेंटमें दे देते हैं । बादशाह हुमायूँने महारानी कर्णवतीकी राखी पाकर अपनेको कृतार्थ समझा

* जो हिन्दूवैरी औरंगजेव राजपूतोंपर कठोर अत्याचार किया करता था उसनेभी परमानंदके साथ उदयपुरकी राजमाताकी भेजी हुई राखी ग्रहण करली थी । उनके पास जो कईएक पत्र औरंगजेवने भेजे, उनकी लालित्यता और पवित्रता देखनेसे आश्चर्य होता है । टाड साहबको उसमेंके दो पत्र मिल गए थे, औरंगजेवने उन पत्रोंमें राजमाताको “धर्मकी वहिन” कहकर सम्बोधन किया है ।

× आजकल उत्तर पश्चिमादि देशोंमें तो राखीका उत्सव श्रावणीकी पूर्णिमाको हुआ करता है । कदाचित् राजपूतोंमें इस नामका कोई दूसरा उत्सव वसन्त समयमें होता होगा ।

† ज्ञात होता है कि अपमान और विपत्तिसे धर्मवहिनोंको बचानेके लिये ही इस प्रकारकी चादर भेजी जाती है ।

और आनन्दसे कहने लगा । “हमशीरासाहबने जो कुछ कहा है, मैं जहांतक सुमकिन होगा, सब तरहसे उनका काम बजाऊंगा । यहांतक कि अगर रनथम्भौरका किला लेनेकी भी उन्हें ख्वाहिश हो तो मैं वह भी उन्हें दे दूंगा ।” सम्राटने अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये भलीभांतिसे यत्न किया । और अपनी धर्मवहिनको और भानजोंको विपत्तिसे बचानेके लिये बंगालकी चढाईको छोड़ आया था * हुमायूँको सब प्रकारसे योग्य जानकर ही रानीने राखी भेजी थी । हुमायूँमें वीरता, उदारता और सत्य प्रियता यह तीनों गुण समान भावसे विराजमान थे । पिता बाबरके साथ वियाना आदि स्थानोंके संग्रामोंमें रहकर उसने जैसी वीरता दिखाई थी, भारतके इतिहासमें भलीभांतिसे उसका वर्णन पाया जाता है और बाबरने भी अपने जीवन चरित्रमें इस वृत्तान्तको लिखा है । हुमायूँने भलीभांतिसे अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण किया । बहादुरको चित्तौरसे निकालकर भगाया और मालवेकी राजधानी माण्डुनगरको भी छीन लिया, इसके छीन लेनेका यह कारण था कि मालवेके बादशाहने बहादुरकी सहायता की थी । इस प्रकारसे चित्तौरका ऊद्धारकरके वहांके सिंहानपर राणा विक्रमजितको विराजमान किया ।

दुःख कष्ट और अनेक पीडाओंको भोगकर फिर राणा विक्रमजितने चित्तौरके सिंहासनको पाया । परन्तु इतने परभी उनका चाल चलन न सुधरा । घोर संकटमें पड़कर भी उनके हृदयमें ज्ञानका संचार न हुआ । थोड़ेही दिनोंमें फिर वही कठोर स्वभाव हो गया, फिर अपने सरदारोंपर अनेक प्रकारके अन्याचार करने लगे । धीरे २ यह दुष्टता यहांतक बढ़ी कि राणा अपनी मर्यादाको भूलकर पशुकी समान व्यवहार करने लगे । जिस करमचंदने उनके पिताको विपत्तिके समय सहारा दिया था, और जो करमसिंह बुढ़ापेकी अनीपर पहुंचकर संसारसे विदा होनेकी तइयारी कर रहा था, उस माननीय बूढ़े करमसिंह परमार पर भरी सभामें विक्रमजितने प्रहार किया । यह अन्याय और यह दारुण अपमान देखकर समस्त सरदार गण अपने २ आसनसे उठ बैठे और सामन्त शिरांमणि चन्दावतवीर कर्ण-

* टाडसाहब लिखते हैं कि “राखी बन्धनके विषयमें और भी अनेक कहावतें सुनी जाती हैं।” टाडसाहब जैसे प्रतिष्ठित थे उनका पद ऊंचा था और स्वभाव अत्यन्त सरल था । इसकारणसे अनेक राजपूत बालाओंने राखी भेजकर उनको ‘धर्मभइया’ बनाया था । इन राखी भेजनेवालोंमें उदयपुर, बूंदी और कोटेकी रानियें तथा राणाजीकी अनूठा बहिन चांदवाई विशेष प्रसिद्ध हुई । इन साधारण राखियोंको टाडसाहब अमूल्य और अपार्थिवरत्न समझकर हृदयमें धारण करते थे ।

जीने क्रोधसहित चिह्नाकर कहा “भातृगण ! अबतक तो हमलोग फूलकी गंध सूँघते रहे, परन्तु इस समय उसके फलको चाखेंगे ।” तब दलित घोर अपमानित करमसिंहने क्रोधमें भरकर कहा “कलही उस फलका स्वाद मालूम हो जायगा ।” तत्काल समस्त सरदारलोग दरवारमेंसे उठकर चले गये ।

राजपूतगण राजाको अपना आराध्य देवता समझतेहैं, राजाको पवित्र भावसे पूजनेकी आज्ञा उनके धर्मग्रंथोंमें भी लिखी है; इस आज्ञाका उल्लंघन करनेसे उनका लोक परलोक विगडता है ! परन्तु इस आज्ञाकी भी सीमाहै, प्रयोजन आपडनेसे इसका भी निरादर हो जाताहै । राजा दुराचारी हो, अथवा उसके द्वारा प्रजाका कोई महान् अनिष्ट होता तो फिर वह देवताकी समान नहीं समझा-जाता । तब प्रजागण उसको साधारण मनुष्य समझकर राज्यके मंगलार्थ सिंहासनपरसे भी उतार देते हैं, राजपूतोंके विधान ग्रंथमें ऐसे अनेक उदाहरण पाये-जातेहैं । परन्तु कभीही ऐसी घटना होतीहै ऐसा कभी दैवात् ही होजाताहै कि राजपूत नृपति प्रजापर अत्याचार करे । कारण कि राजाके साथ प्रजाका ऐसा दृढ़ प्रेम बन्धन होताहै, कि राजा उस बन्धनको तोडकर प्रजापर अत्याचार नहीं कर सकता । जिन अगणित नर नारियोंके भाग्यकी डोर उसके हाथमें होतीहै, जो राजाको पिता और देवताकी समान समझकर भक्ति करतेहैं, फिर वह राजा छातीपर पत्थर रखकर कैसे उनको सतावैगा ?

क्रोधित सरदारगण राजभवनको छोड़ वीरवर पृथ्वीराजकी उपपत्नीके गर्भसे उत्पन्न हुए पुत्र वनवीरके पास पहुँचे और समस्त समाचार कहकर उसको चित्तौरके सिंहासनपर अभिषेक करना चाहा । पहिले तो वनवीर इस बातपर राजी न हुआ, राजाको गद्दीसे उतारकर उसके सिंहासनपर अपना अधिकार करना उसने एक भयंकर कुकर्म समझा, परन्तु जब मेवाड़की शोचनीय दशाका विचार किया, जब देखा कि सरदारोंकी बात न माननेसे मेवाड़की बड़ी हानि होगी, तब चित्तौरका सिंहासन ग्रहण करनेकी अनुमति दी । अभागा विक्रम-जित् सिंहासनसे उतारा गया; इस घोर अपमानके थोडेही दिन पीछे उसके जीवनरूपी नाटकका पिछला अंक खेला गया और जित् समय रणवासकी स्त्रियोंकी करुणशोक ध्वनिने उसके जीवनावसानकी घोषणा कर दी, उस काल वनवीरके अभिषेक जनित आनन्द कुलाहलसे वह उच्च शोकध्वनि दबकर लोप हो गई ।

नवम अध्याय ९.

वनवीरका राज्यशासन ।—संग्रामसिंहके बालक पुत्र उदयसिंह-
को सारडालनेके लिये वनवीरका उद्योग करना;—उदयसिंह-
की प्राणरक्षा;—उनका बहुत समयतक गुप्त भावसे रहना;—सर-
दारोंका उदयसिंहको राणा समझना;—दूनाका वर्णन;—उद-
यसिंहका चित्तौरको पाना;—वनवीरका सिंहासनसे उतारा
जाना;—नागपुरके भौंसलोंकी उत्पत्तिका वर्णन;—राणा
उदयसिंहके राज्यका वर्णन;—उनकी अयोग्यता;—हुमायूँ
का राज्यभ्रष्ट होना;—अकबरका जन्म;—हुमायूँका दूस-
री बार सिंहासनपर बैठना;—हुमायूँके परलोकवासी
होने पर अकबरका तख्तपर बैठना;—उदय-
सिंह और अकबरके परस्पर विसम्वादी चरि-
त्रकी समालोचना;—अकबरका चित्तौरपर
चढ़ना और राणाका चित्तौरको छोड़कर
भागजाना;—चित्तौरकी रक्षाके लिये
राजपूतवीरोंका खड्ग धारण करना;
जयमल और—पत्त; वीरनारी;—जु-
हारव्रत;—हिन्दू मुसलमानोंका तु-
मुलयुद्ध;—अकबरकी विजय;
नगरवासियोंकी हत्या;—उ-
दयसिंहका उदयपूर ब-
साना;—उदयसिंहका प-
रलोकवासी होना ।

राज्य और संपत्तिमें कौनसी मोहिनी शक्तिहै, इसको राजा या धनवा-
नके अतिरिक्त दूसरा कौन जान सकताहै ? जिस वनवीरने इससे पहिले

सरदार लोगोंके अनुरोधको माननेमें अपनी सम्मति नहीं दीथी; विक्रम-जितको उतारकर जिस सिंहासनको अपने अधिकारमें करलेना उसने घोर पापकर्म समझा था; आज केवल कईएक वंटेतक ही सिंहासनपर बैठकर उसके हृदयका संपूर्ण भाव एक साथ बदल गया। वह राज्यसामर्थ्यको ही सब सुखसे उत्तम समझने लगा। प्रथमवार राजवेष धारण करनेके समय उसने मनही मनमें बहुतेरी इधर उधर कीथी, विक्रमजितके लिये कितनाही दुःख और खेद प्रकाशित किया था, परन्तु न जाने इस समय उसका वह सुकुमार भाव कहां गया? भगवान् एकलिंगकी पूजाको मानकर वह वार-म्बार इस समय कहा करता “ हे भगवन् ! आपहीकी करुणाके वससे आज मैंने मेवाडका सिंहासन पाया है, हे महादेव ! कहीं इलसे वंचित मत करना । ” राज्यकी मोहिनी मायाके फंदेमें फँसकर वनवीर इतना भ्रान्त होगया कि उसने एकवार भी इस बातका विचार न किया कि यह मैं किसके राज्यको भोग-करने चलाहूँ ? यद्यपि सरदारोंने विक्रमजितको गद्दीसे उतारकर वन-वीरको राज्यसिंहासनपर विराजमान कियाहै, तथापि क्या वनवीर सदाके लिये इस सिंहासनपर विराजमान रहेगा ? क्या वनवीरको यह समाचार विदित नहीं है कि संग्रामसिंह का बालक पुत्र उदयसिंह शुक्लपक्षके चंद्रमाकी समान दिन २ बढ़ रहाहै क्या समर्थ होनेपर वह अपने अधिकारको न लेगा ? यह कभी विश्वास नहीं किया जा सकता कि सरदारोंने वनवीरको कुछ ऐसी सम्मति दी हो। वरन ऐसा ज्ञात होता है कि उदयसिंहके समर्थ होनेतक वनवीरको राज्य दिया गया था, परन्तु भट्टग्रंथोंमें इसका कोई भी विवरण नहीं पाया जाता।

सिंहासनपर बैठतेही वनवीरका हृदय बदल गया, तत्कालही उसने प्रतिज्ञाकी कि मेरे सुखके मार्गमें जो कईएक कांटे हैं उन सबको दूर करूंगा। पहिला और प्रधान कण्टक तो छः वर्षका बालक उदयसिंह है ! इस कंटकका नाश करनेके लिये वह क्रूर रात्रिके होनेकी वाट देखने लगा। धीरे २ रात हो आई। कुमार उदयसिंहने भोजनादि करके शयन किया। उनकी धाई विस्तरे पर बैठी हुई सेवा करने लगी। कुछ विलम्बके पीछे रनवासमें घोर आर्त्त नाद और रौनेका शब्द सुनाई आने लगा। इस शब्दको सुनकर पन्ना धाई विस्मित हुई वह डरसे उठनाही चाहतीथी कि इतनेहीमें बारी, राजकुमारकी जूँठनादि उठानेको वहां आया और भय विह्वलभावसे कहने लगा “ बहुत बुरा हुआ सत्यानाश होगया, वनवीरने राणा विक्रमजितको मार डाला ! ”

धाईका हृदय काँप गया वह समझ गई कि निष्ठुर वनवीर केवल विक्रमा-जितको ही मार कर चुप न होगा, वरन उदयसिंहके मारनेकोभी आवैगा । मानो किसी अदृश्य देवताने धाईके कानमें यह बात कहदी, उसने राजकुमारके वचानेका उपाय अत्यन्त शीघ्रतासे कर लिया । गृहके फलादिक रखनेका एक बड़ा भारी टोकरा रक्खा हुआ था, निद्रित राजकुमारको उसमें बड़ी सावधानीसे शयन करा दिया, तथा कितने एक वनवृक्षोंके पत्तोंसे उसको ढक कर उस वारी*के हाथमें देकर कहा “:अभी इस छवडीको लेकर दुर्गसे भाग जा ।” विश्वासी नाईने तत्काल उसकी आज्ञाका पालन किया । धाई राजकुमारके स्थानमें अपने छोटे लडकेको बुलाकर वहांसे लाटती ही थी कि इतनेमें रुधिरसे अपने हाथ लाल किये वनवीर वहां आया और उदयसिंहको खोजने लगा । भयके मारे धाईका प्राण उड़ गया, कंठ सूख गया; उसने विना कुछ बोले चाले कांपते २ राजकुमारकी शय्याको संकेतसे दिखा दिया और भय तथा व्याकुलतासे उस ओरको देखा—निष्ठुर वनवीरने धाईके प्राणसम पुत्रके हृदयमें वह छूरी झोंक दी ! केवल एक बार आर्त्त नाद,—फिर केवल छटपटाना !—अब उस बालकमें कुछभी शेष न रहा ! अभागिनी धाईकी आंखोंके सामने, उसके हृदयका दीपक टिमटिमाकर बुझ गया; तथापि वह एकवार भी अपने पुत्रके लिये जी भरके न रोई । आंसू बहाती हुई प्यारे पुत्रका संस्कार करके चुपचाप किलेसे बाहर निकल गई ! रनवासकी रानियोंको धाईके इस महान् कार्यका कुछभी समाचार विदित न था । उन्होंने यही समझा कि दुराचारी वनवीरने महाराज संग्रामसिंहके छोटे पुत्र उदयसिंहको मार डाला इस कारण वे सबकी सब विलाप कलाप करके रोने लगीं, उनको यह समाचार विदित नहीं था कि उस हेतु धाईने अपने पुत्रके रुधिरके बदलेमें राणा संगके वंशको अनन्त विनाशसे बचाया है । इतिहासमें अवश्यही इस पवित्र धाईका नाम लिखना योग्य है । खीची राजपूत कुलमें इस पन्ना धाईका जन्म हुआ था; जबतक पृथ्वीपर राजपूतोंका नाम रहेगा तबतक ही पन्नाके पवित्र नामको अनुष्यगण याद किया करेंगे ।

प्राणसम पुत्रकी चिताग्रिको अपने आंसूओंसे बुझाकर अभागिनी पन्ना उस विश्वासी वारीकी तलाशमें किलेसे बाहर निकली । चित्तौरकी पश्चिम ओर

* वारी, नाईकी श्रेणीमेंसे हैं, परन्तु हजामत नहीं बनाते केवल राजपरिवारकी उच्छिष्ट साफ करनाही इन लोगोंका प्रधान कार्य होता है ।

वेरिस नदी बहती थी, उसके जनशून्य किनारेपर वह बारी राजकुमारको लिये-
हुए बैठा था । सौभाग्यसे चित्तौरके भीतर उदय सिंहकी आँख नहीं खुली ।
पन्नाभी वहाँ पहुँची और कुमारको साथ लेकर वीर बाघजीके पुत्र सिंहरावके
पास जाकर रहनेकी प्रार्थना की; वनवीरके भयसे उसने राजकुमारकी रक्षा करना
स्वीकार न किया और अत्यन्त शोकयुक्त होकर बोला । “मैं तो बहुतेरा चाहता हूँ
कि राजकुमारकी रक्षा करूँ, परन्तु वनवीर इस बातको जानकर वंशसहित भेरा
संहार कर डालेगा । मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं कि उसका सामना करूँ । इसके
उपरान्त पन्ना देवलको छोड़कर डूंगरपुरनामक स्थानमें गई और वहाँके रावल
ऐशकर्ण (यशकर्ण) के पास राजकुमारको रखना चाहा, परन्तु उसने भी
भयके मारे राजकुमारको नहीं रक्खा । तदुपरान्त विश्वासी और हितकारी
भीलोंके द्वारा रक्षित हो, आरावलीके दुर्गम पहाड और ईडरके कूटमागोंको
लांघकर कुमारको साथ लिये हुए पन्ना कमलमेर दूर्गमें पहुँची । यहाँपर पन्नाकी
बुद्धिमानीसे कार्य सिद्ध हो गया । दीप्राके वणिककुलमें उत्पन्न हुआ आशाशाह
नामक एक जैन राजपूत उस समय कमलमेरमें राज करता था, पन्नाने उससे
मिलना चाहा, आशाशाहने प्रार्थना स्वीकार करके विश्राम गृहमें पन्नाको बुलाया ।
वहाँ पहुँचतेही धात्रीने बालक राजकुमारको आशाकी गोदीमें रखकर नम्रतासे
कहा, “अपने राजके प्राण बचाइये ।” परन्तु आशाने अप्रसन्न और भीत होकर
कुमारको गोदसे उतारना चाहा । आशाकी माता भी वहीं पर थी, पुत्रकी ऐसी
कायरता देखकर उसको फटकार और उपदेश पूर्ण वाक्यसे कहा “स्वामीमें हित
रखनेवाले, स्वामीका हित साधन करनेके लिये किसी समय विपत्ति या विघ्नसे
नहीं डरते । राणा समरसिंहका पुत्र तुम्हारा स्वामी है; विपत्तिमें पडकर आज तुम्हारा
आश्रय चाहता है, इसको आश्रय देनेसे भगवान्के आशीर्वादसे तुम्हारे गौरव
की वृद्धि होगी ।” माताकी नीति पूर्ण शिक्षासे आशाशाहके समस्त संदेह
दूर होगये । उसने राजकुमारको अपना भतीजा कहकर प्रसिद्ध किया और
यत्नके साथ लालन पालन करने लगा । पन्नाकी मनोकामना पूर्ण हुई । कम-
लमेरमें धाईको कोई नहीं जानता, ऐसा न हो कि श्रावक (जैनपुरोहित) के
घरमें उसको देखकर कोई सन्देह करे, इसही कारण वह शीघ्रही आशाशाहके
भवनसे विदा होगई ।

राणा संग्रामसिंहका पुत्र छिपकर आशाशाहके यहाँ अपना समय बिताने
लगा । आशाशाहने कुमारको अपना भतीजा कहकर प्रसिद्ध किया, तथापि

लोगोंके मनमें अनेक प्रकारके सन्देह होने लगे । आशाशाहके पिताका वार्षिक श्राद्धदिन निकट आया, उसके स्थानपर बड़ी भीड़ हुई बहुतसे राजपूतभी नेवता पाकर उसके स्थानपर आये । समस्त शामग्रीके प्रस्तुत होनेपर सब लोग भोजन करनेके लिये बैठे । अनेक प्रकारके भोजन परसे जाने लगे । फिर दहीके परसनेका समय आया । इसही समयमें उदयसिंहने एक परसनेवालेके हाथसे दहीका वर्त्तन छीन लिया । कुमारका यह अयौक्तिक व्यवहार देखकर सबही विस्मित हुए ! सातवर्षके बालकका यह कैसा तेज है ? बहुतेरा समझाया, डरतक दिखाया; परन्तु कुछ भीत न हुआ । सप्तम वर्षीय राजकुमारकी प्रतिज्ञाको कोईभी नहीं टाल सका—दहीका वर्त्तन कुमारने नहीं छोड़ा । इस प्रकार आशाशाहके यहाँ रहते २ सातवर्ष बीत गये । सातवर्षतक उदयसिंह बराबर छिपे रहे; परन्तु सत्य कितने दिनतक गुप्त रह सकता है ? फिर आपसे आप राजकुमारका समाचार प्रकट हो गया । झालौरके शौनगडे सरदार किसी कामके लिये आशाशाहसे मिलनेको आये । शाहजीने उनका आदर मान करनेके लिये उदयसिंहको नियुक्त किया । राजकुमारने इतनी उत्तमतासे इस कार्यको पूर्ण किया कि उक्त सरदारोंको उसपर अत्यन्त सन्देह हुआ । उन्होंने निश्चय किया कि “उदयसिंह किसी प्रकारसे आशाशाहका पुत्र नहीं है ।” धीरे २ यह समाचार चारों ओर फैल गया । मेवाडके सरदार और सामन्तगण वरन और दूसरे देशोंके राजा लोगभी आनन्दित होकर वीरवर सांगाके पुत्रको प्रणाम करनेके लिये वहाँ आने लगे । चंडके प्रतिनिधि शालुम्ब्रापति साहीदास, कैलवापति जागो, वा गौरनाथ सांगा आदि चन्दावत गोत्रके अन्यान्य सामन्त गण; कोटोरिया और वैदलाके चौहानगण, विजौलीके परमाणगण, संचोरपति पृथ्वीराज, और जैतावत लूनकरण—यह सबही राजा लोग आनन्दमें मगन होकर कमलमेरमें आये । पीछे धाई और वारीने राजकुमारकी रक्षाका समस्त विवरण कहकर सबके मनका सन्देह दूर किया ।

उसही दिन कमलमेरके सनागृहमें बड़ाभारी दरवार हुआ । आशाशाहने सबके सामने राजकुमारका यथार्थ वृत्तान्त कह कर उसको मेवाडके वृद्ध चौहान सामन्तके हाथमें सौंप दिया यह सरदार, राजकुमारके समस्त गूढ़ विषयोंको भलीभांतिसे जानता था. इस कारण इस विषयमें उनको कुछ संदेह नहीं रहा । आशाशाहके स्थानमें रहनेसे कदाचित् कोई किसी प्रकारका सन्देह करे उसही कारणसे उस सरदारने एक पात्रमें कुमारके साथ भोजन किया, अब तो

सबको पूर्ण विश्वास होगया, वीरवर संग्रामसिंहके वंशधरको पाकर सबही आनंदमें गगन हो गए । वह आनंदध्वनि अनन्त गगनमार्गमें विस्तारित होकर शिखर २ पर टकराती हुई चित्तौरकी ओरको पहुँची । चित्तौरके सिंहासनपर बैठे हुए राष्ट्रोपहारक वनवीरने उस ध्वनिको सुना । उसका हृदय कम्पायमान होने लगा । अकस्मात् उसका सिंहासन कांपा ! तब शोनगड़ा सरदार अखिल-रावने अपनी कन्याके साथ उदयसिंहका विवाह करना चाहा, पहिले तो कुमारने अस्वीकार किया; कारण कि शोनगड़े मालदेवने जिस दिन राणा हमीरके साथ अपनी कन्याका विवाह किया था, उस दिनसे राणा हमीरसिंहने नियम कर दिया था कि आगेसे कोई गिह्लोट शोनगड़े गोत्रके साथ विवाह न करसकैगा । उनका यह नियम इतने दिनतक पालन होता चला आया था, परन्तु आज उदयसिंहने उस नियमको उलंघन करके उक्त सरदारकी बेटीके साथ विवाह करना स्वीकार किया । विवाहका दिन नियत होने व और बातचीतके समाप्त हो जाने पर, महाराणा कुंभाजीकी उस बड़ी सभामें उदयसिंहने मेवाडके प्रधान प्रधान सरदार और सामन्तोंसे पूजित होकर चित्तौरके राजतिलकको ग्रहण किया ।

वनवीरने शीघ्रही इस समाचारको सुना । सुनतेही हताश होगया, उसको यह समाचार पहेलीकी समान जान पडा, उसने तो अपने हाथसे उदयसिंहको मारा था, अपनी आंखसे कुमारको तडपते हुए देखा था, फिर किस देवताके बलसे और कौनसे संजीवन मंत्रके प्रभावसे उदयसिंह जीवित होगया ? कुछभी समझमें न आया । वनवीरको तो बड़ी आशा थी, दिनरात भगवान् एकांलिङ्गकी प्रार्थना किया करता था; परन्तु सब निष्फल हुआ । उस मूढने अपने मनमें किसी समयभी इस बातका विचार नहीं किया कि यह राज किसी दूसरेका हो जायगा, वरन उसको दृढ़ धारणा होगई थी कि मैं निष्कण्टक हूं । इसही कारण सिंहासनपर बैठकर सरदारोंपर अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगा । उसको राजमद इतना चढ गया था कि अपने हीन वंशको भूलकर मेवाडके शुद्ध राजाओंके योग्य सन्मानको बलपूर्वक भोग करने लगा । एकवार चंडके किसी तेजस्वी वंशधरने उसका “छूना” अर्थात् उच्छिष्ट प्रसाद ग्रहण नहीं किया इस कारण वनवीरने उसका घोर अपमान किया था ।

“दूना” राजाका उच्छिष्ट प्रसाद होताहै, इसके पानेकी कितनेही सरदार और सामन्तगण प्रार्थना किया करते हैं, परन्तु सबकी कामना सिद्ध नहीं होती ।

राणाजीके संग एक पंक्तिमें भोजन करनेका जिन सर्दारोंको अधिकारहै, उनमेंसे कभी ही किसीको दोनों दिया जाताहै । किसी उत्सवके अवसरमें या और किसी अवसर पर राणाजी अपने भोजनगृहमें ऊंचे पदवाले सरदारलोगोंके साथ भोजन करनेको बैठते हैं, सरदारगण भी अपनी २ योग्यताके अनुसार उनके चारों-ओर विराजमान होतेहैं । उस समय बाहिरी गंभीरताको छोड़कर राणाजी सम्पूर्ण सरल और स्वाधीनभावसे सबके साथ मीठी २ बातें किया करतेहैं । उस दिन जिसका भाग्य प्रसन्न होताहै, उसहीको राजप्रसाद मिलताहै । रसोइयेके हाथ उसहीके यहां “दूना” भिजवाया जाताहै । जब वह प्रसाद मनोनीत मनुष्यके पास भेजा जाता है, तब सरदारलोग उत्कंठित भावसे उसकी ओर देखा करतेहैं और उस भाग्यवानके भाग्यको वारस्वार धन्यवाद दिया करते हैं । उस दूनेके प्राप्त करनेसे राजपूत राजालोग भी अपनेको कृतार्थ समझते हैं । एक समय महाराज मानसिंहको वीरश्रेष्ठ राणा प्रतापसिंहका दूना न मिलनेके कारण जो मेवाडमें महा अनर्थ हुआ था, वही मेवाडकी शोचनीय दशाका कारण माना जाता है ।

शीतलसेनी नामक किसी दासीके गर्भसे वनवीर उत्पन्न हुआ था, इस कारण मेवाडकी पुरानी रीतिके अनुसार उनको “पंचमपुत्र” कहते थे । संकटमें पड़कर ही सरदारोंने उसको चित्तौरकी गद्दी दी थी । परन्तु उसका दिया हुआ “दूना” थोड़ेही ग्रहण करसकते थे । क्या पृथ्वीराजका पारश्वपुत्र, मेवाडके ऊंचे कुलवाले सर्दारोंकी बराबर राजसन्मान पावैगा ? वनवीरकी इच्छा तो ऐसीही थी, परन्तु उसकी इस इच्छाको कौन पूर्ण करेगा ? ऐसा कौन है जो अपनी कुलमर्यादाको जलांजलि देकर दासीपुत्रकी जूठन खायगा ? पूर्वोक्त चन्दावत सर्दारोंको जब उसने दूना दिया, तब सर्दारने दूनेको फेर कर कहा “ यदि बाप्पारावलके यथार्थ वंशधरसे मिलता तो वास्तवमें यह प्रसाद गौरवका विषय था, परन्तु शीतलसेनी दासीके पुत्रके हाथसे उसका ग्रहण करना महाघोर अपमानके सिवाय और क्या होसकताहै ? ” मूल बात यह है कि सरदारगण धीरे-धीरे यहांतक अप्रसन्न हुए कि उदयसिंहका अभिषेक करनेके लिये कमलमेर किलेकी ओर चले । यह लोग आरावलीके गिरीमार्गके भीतर होकर जा रहे थे, इतनेहीमें सामनेसे ५०० घोड़े और दश सहस्र बैल जिनपर बड़े मोलकी सामग्री लदी थी—आतेहुए दिखाई दिये, एक सहस्र घरवाल राजपूत इनकी रक्षा करतेहुए चले आते हैं । गुप्त भावसे पूछताछ करने पर उनको मालूम होगया कि यह सब द्रव्य

वनवीरकी वेटीके यौतुकमें कच्छदेशकी ओरसे चले आते हैं, यह सुनकर सर्दारोंके आनंदकी सीमा न रही, वे शीघ्रतासे उन घरवाल रक्षकोंके ऊपर दूटपड़े कि जैसे सिंह मृगझुण्डपर दूट पड़ताहै—सब रक्षक मारे गये और उस समस्त सामग्रीको लूटकर प्रसन्न मनसे उदयसिंहके सामने आये। लूटी हुई यह समस्त सामग्री श्रेष्ठ कार्यमें लगी। झालौरके शौनगडे सरदारकी वेटीके साथ उदयसिंहका विवाह हुआ, उसमें यह द्रव्य बड़े काम आये। वीरवर हमीरकी आज्ञा यद्यपि लंघन की गई, परन्तु मेवाडका एक भारी कार्य सिद्ध होगया। मालदेवने गिहौट कुलमें जिस कलंककी रेखाको लगा दिया था, आज उसही मालदेवके वंशधरने राष्ट्रोपहारक शिशोदिया वनवीरके ग्राससे मेवाडके सिंहासनका उद्धार करके कलंककी उस रेखाको दूर किया। झालौरके अन्तर्गत वहिनामक स्थानमें यह शुभ विवाह हुआ। राजस्थानके ही सर्दारोंके सिवाय और समस्त सर्दार सामन्तोंने इस उत्सवमें भांति २ के उपहार भेजकर सहायता कीथी तथा पीछेसे आपभी उत्सवमें आन मिले। जो दो सर्दार इस विवाहमें नहीं आये उनमेंसे एकका नाम तो मालौजी था, और दूसरा शोलंकीकुलमें उत्पन्न हुआथा इसका नाम इतिहासमें नहीं लिखा। जिस विवाहमें राजस्थानके समस्त बड़े बड़े सर्दार आये, उसमें यह दो सर्दार किस कारणसे नहीं आये? अवश्यही इसमें कोई भेद होगा। राजाका अपमान करनेके कारण सर्दारोंने इन दोनोंपर चढ़ाई की। अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर दोनों सर्दारों वनवीरकी शरणगये। वनवीर उन दोनोंकी रक्षा करनेके लिये सेना सहित उन सर्दारोंके आगे आया; परन्तु उन दोनों अभागे सरदारोंकी रक्षा न हुई। मालजी तो मारा गया और शोलंकीने दूसरा कोई उपाय न देखकर फिर उदयसिंहकी वश्यता स्वीकार की। क्रम २ से अभागे वनवीरकी सहायता कम होती गई; बन्धु बान्धव, इष्ट मित्र सबही छोड़गये। उसका भाग्याकाश धीरे २ घनघोर बादलोंसे छा गया। तथापि जीवनदायिनी आशा न टूटी। उदयसिंहकी समस्त तइयारी और आयोजनको व्यर्थ करनेके अभिप्रायसे वनवीर अचलभावसे राजधानीमें विराजमान हुआ, परन्तु उसका यह अभिप्राय व्यर्थ होगया, उसके मंत्रीने नई सेनाके संग्रह करनेका बहाना करके राजकुमारके एक हजार विकराल सिपाहियोंको किलेमें बुलालिया। दुर्गमें प्रवेश करतेही उन्होंने द्वार रक्षकोंपर आक्रमण किया और उनको मारकर किलेके शिखरपर उदयसिंहकी विजय बैजयन्ती गाड़दी। शीघ्रही दूत और नगरवासी लोग बारंबार उदयसिंहकी जय २ पुकारने

लगे । परन्तु किंसीने वनवीरपर कोई अत्याचार नहीं किया । अपनी धन सम्पत्ति और परिवारवालोंको साथ लेकर वह बेखटके दक्षिणदेशमें जा बसा समयके अनुसार जो वहांपर उसकी सन्तान सन्तति हुई, वही नागपुरके भोंसले नामसे पुकारी गई ।

संवत् १५९७ (सन १५४१-४२ ई०) में सरदारोंने उदयसिंहको चित्तौरके सिंहासनपर बैठाया। अभिषेकके समय सारी प्रजाको ही परमानंद प्राप्त हुआ। घर में नाच और गाना होने लगा । * कुमलमेरके जिस शान्तिमय शैलशिखरपर उदयसिंहका बालकपन गुप्तभावसे बीता था, आज वे वहांसे विदा होकर राजधानीमें आये । कुंभमेरुकी रहनेवाली कोकिलकंठी राजपूतबालागणोंने मधुर स्वरसे गातेहुए राजकुमारको विदा किया; और स्तुतिपाठ करनेवाले स्तावक, भट्ट तथा बन्धियोंने मनोहरतासे आगमन संगीत गायकर राजकुमारकी अगौनी की । इस महोत्सवके समय जो गीत गाये गएथे, वह आजतक सुने जाते हैं; आजभी भगवती ईशानीके वार्षिकोत्सवके समय राजपूतबालागण एक साथ मिलकर उन गीतोंका गाया करती हैं । परन्तु वीरवर संग्रामको शोचनीय पराजयके साथ २ जो कालनिशा भारतमें आई वह अबतक समाप्त न हुई । राणा रत्नकी प्रचंड ढिठाई, विक्रमजितकी घोर अज्ञानता, और वनवीरकी अयोग्यतासे बराबर यह रात्रि अधिकतर अंधकारमयी होती गई । अंतमें उदयसिंहने उसको अपनी कापुरुषतासे पूर्ण किया ! यह बात मेवाडके लिये कलंक होगई, इसके द्वारा मेवाडका एक पुराना नियम टूट गया । मेवाडमें राजा पर राजा होतेगये, चित्तौरका सिंहासन कभी सूना नहीं हुआ । परन्तु ऐसा अवसर कभी नहीं आया कि एक जारजके पीछे एक कापुरुष राजाके हाथमें शिशोदियाकुलका भार सौंपा गया हो; आज वही कुधडी आगई है ! उदयसिंह कापुरुष है—मेवाडके सिंहासनपर बैठनेकी उसमें योग्यता नहीं; यदि उसकी कापुरुषता और अयोग्यताके साथ मिलान किया जाय तो राणा रत्न और विक्रमजितके दोषभी तो गुणोंकी समान जान पड़ेंगे । इस अयोग्यतासे मेवाडका जातीय जीवन सदाके लिये नष्ट होगया । अबतक जिस मेवाडको अजीत समझा जाता था, आज वह गौरव उसका जाता रहा ।

महाकवि चंदने कहाहै,—“ स्त्री अथवा व्यवहारको न जाननेवाला बालक जिस देशमें राजा होताहै, उस देशकी भलाई किसी प्रकारसे नहीं होसकती । परन्तु अभागिनी मेवाडभूमिके अभाग्यसे यह दोनों दुर्निमित्त एकसाथ प्राप्तहुए । इसही

* इसको कुंभलमेरभी कहते हैं ।

कारणसे अमंगलही अमंगल दिखाई देने लगे । जो साहस और जो प्रचंड प्रताप गिहोटे कुलका प्रधान धर्म है, उसका एक परमाणुभी उदयसिंहमें नहीं था। उदयसिंह दिनरात विलास और आलस्यके वशमें रहता था, जो यह सदाशय हुमायूँके समय अथवा पठानोंके राष्ट्रविप्लवके समय अपने जीवनको व्यतीत करता तो मेवाडकी कुछभी हानि नहीं होती, परन्तु सम्पूर्ण राजस्थानके दुर्भाग्यसे ऐसा नहीं हुआ । उदयसिंहके अभिषेक-जनित आनंद कुलाहलमें जो वर्ष कुंभलमेरके मेघमांडित महल दुमहलोंमें गुंजार उठा; उस वर्षमेंही भारतको मरुभूमिमें वसेहुए ऊँचे शिखरसे भारतकी राजलक्ष्मीका घोर विलाप सुनाई दिया, उसही विलापने राजपूतदर्पहारी अकबरके जन्मका वृत्तान्त सारे भारतवर्षमें प्रचार करा दिया । उस वृत्तान्तके श्रवण करतेही समग्र भारतभूमिमें डांवाडोल मच गया । मेवाडके घर २ में रोने और हाय २ करनेका शब्द सुनाई आने लगा ! फिर वह रोदनध्वनि निवारित नहीं हुई । कारण कि अकबरने प्रचंड धूमकेतुकी समान वढकर सम्पूर्ण भारतवर्षको, दासपनकी जिस कठोर जंजीरसे बांधा, वह जंजीर शीघ्रतासे नहीं खुली । उसके कठोर मिलापसे हिन्दुओंकी हड्डियें तक चूर चूर होगईं;—मेवाडका विध्वंस होगया । उस शोचनीय विध्वंसके पीछे भारतमें फिर उठनेकी सामर्थ्य न रही ! यद्यपि कालके सर्वक्षयकारी कराल हाथके लगनेसे वह जंजीर आज बहुतही कमजोर होगई है, परन्तु उसके घोर संघर्षणसे हिन्दू जातिके सारे शरीरमें अगणित घाव होगए हैं । वह घाव अच्छेही नहीं हुए, वरन त्वचाको फाडकर कलेजेतक पहुंचे हैं ! क्या उन रुधिर निकलनेवाले घावोंसे आरोग्यता पाय किसी समय भारतसन्तान फिर भी आनंदसे विहार करेगी ? नहीं कह सकते कि अभी आगे २ भारतसंतानके भाग्यमें क्या रेवदा है। जो जाति दीर्घकालतक महान गौरव और स्वाधीनताको भोग कर एकबार दुर्दशाको प्राप्त होजाती है, वह जाति क्या फिर उठ सकती है ? जिस पवित्र वीर्याग्निके प्रभावसे राजपूतगण चित्तौरके परकोटेकी और ग्रीकवाले थमोंपोलीके गिरिमार्गकी रक्षा करते थे; क्या वह वीर्याग्नि फिर उनके दासत्वपोडित निजीव हृदयमें प्रचंडभावसे जल उठेगी?—इसके विषयमें कुछ कहा नहीं जा सकता ।—इसका योग्य उत्तर इतिहासही पाठकगणोंके सामने उपस्थित करेगा ।

भारतवर्षकी विशाल मरुभूमिके मध्यभागमें एक छाया कुंजके भीतर अमरकोट बसा हुआ है । सिकन्दरने जिसको पुराने शकलोगोंका * पुराना स्थान कहा है, यह वह अमरकोटही है । अकबरका जन्म यहीं [१५४२ ई०] में हुआ ।

* परमार कुलकी शाखाके शोदागणोंकामी यही नाम है ।

था । अकबरके जन्मकालमें हुमायूँ दुर्दशाकी सीमातक पहुंच गया था, राज्य भ्रष्ट होकर इधर उधर भागता था । राज्यके पुनः प्राप्त होनेकी कोई आशाभी नहीं थी । तत्कालपर बैठनेही बराबर दशवर्षतक हुमायूँने अपने झगडालू भाइयोंसे घोर विवाद किया । इसके प्रत्येक भ्राता अलग २ एक २ राज्यके स्वामी थे, परन्तु इसलिये उन्हें संतोष नहीं हुआ, वे दुराकांक्षाके वशमें होकर उसके हाथसे दिल्लीका सिंहासन छीन लेनेकी फिक्रमें लगे हुए थे । परन्तु इस दुरभिलाषाका फल उनको हाथों हाथ मिल गया, पठानवीर शेरशाहने प्रचंड वेगसे आकर उन सबको दमन किया, तथा बाबरका सिंहासन छीनकर उसपर पठानोंका अधिकार जमाया ।

जिस दिन कन्नौजके युद्धमें भारतका राजसकुट हुमायूँके मस्तकसे गिर पडा, उसही दिनसे उसके लिये घोर विपत्तिका सूत्रपात हुआ, शत्रुगण पीछे पडकर बांबंजार सताने लगे । हुमायूँको कहींभी विश्वास न मिला ! वह जहांपर भागकर जाता, शत्रुगण वहीं जाकर उसका पीछा करते थे । यमुनाके किनारेपर वसेहुए सुन्दर आगरेको छोडकर हुमायूँ लाहौरमें चला गया; वहांपर भी विश्वास न मिला, दुर्जन शत्रुओंने वहांभी पीछा किया । अंतमें निरुपाय हो अपने परिवारवर्ग और कितने एक विश्वासी नौकरोंको लेकर सिन्धके राज्यमें गया । मार्गमें अत्यन्त कष्टपाया । अनाहार रहने और कठोर पीरश्रम करनेके कारणसे हुमायूँको अत्यन्त व्याकुलता हुई । दूर देशमें किसीने उसको सहारा नहीं दिया । दो एक दिनके लिये दो एक हिन्दू राजाओंने अपने यहां रखवा फिर निकाल दिया । क्रमानुसार हुमायूँके कुभाग्यने उसको बहुतही व्याकुल किया, उसको किसी प्रकारका भरोसा न रहा । तथापि वह निरुत्साह नहीं हुआ । उत्साहपर भरोसा रखक यथासाध्य बलके साथ मुलतान और समुद्रके किनारेतकके सिन्धुतीरवर्त्ती सब किलोंको अपने काबूमें करनेकी चेष्टा की; परन्तु सब परिश्रम वृथाही गया । शनिग्रहकी विश्वदाही विद्वेषाग्निमें उसका समस्त यत्न और समस्त उत्साह भस्म होगया । इसपर एक औरभी कठोर विपत्ति आपड़ी, उसके साथकी कुछ सेना और कईएक सरदार विद्रोही होगये । तब तो हुमायूँको चारों ओर अंधकार दिखाई दिया। जो लोग इतने दिनतक एक साथ रहते व कष्ट भोगते हुए बादशाहकी आज्ञामें रहे, आज उनको ही बागी होते देखकर हुमायूँ अत्यन्त दुःखित हुआ । उन आदमियोंने— जो कि बागी होगये थे आगे जानेसे इनकार किया । विवश होकर उनको वहीं छोडा, और

भाग्यकी ओर देखताहुआ परमेश्वरकी याद करताहुआ आगे चला । वागी लोगभी अपनी २ इच्छाके अनुसार जिधर तिधरको चले गये । कोई २ तो भूख प्यास और मार्गके धामसे कातर होकर मार्गमेंही मर गया, तथा किसी २ ने हिन्दू राजाओंके यहां जाकर नोकरी कर ली परन्तु हुमायूँका क्या हुआ ? एक समय जो सारे भारतवर्षका अधीश्वर था, एक समयमें अगणित नर नारियोंका भाग्यसूत्र जिसके हाथमें था, आज वही मनुष्य अपने जीवनकी रक्षा करनेके लिये अनाथकी समान द्वार २ पर फिरने लगा । धन्यहै ब्रह्मा तुम्हारे कूट-विधानको धन्यहै ! तुम्हारे कुटिल लेखके अनुसार आज हिन्दोस्थानका बाद-शाह दरदर मारा फिरता है ।

जब कोई आशा न रही तो हुमायूँने जयसलमेर और जोधपुरके महाराजासे आश्रयकी प्रार्थना की, परन्तु दुःखकी बात है कि इन दोनों महाराजाओंमेंसे एकनेभी बादशाहकी प्रार्थनापर ध्यान नहीं दिया । आश्रय देना तो एक ओर रहा वरन जोधपुरके क्रूरहृदय राजा मालदेवने इस दुःसमयमें ही हुमायूँको कैद करना चाहा । हम नहीं कह सकते कि यह बात कहांतक ठीक है ? कारण कि महा-ग्रंथोंमें इसका कुछभी वर्णन नहीं लिखाहै, केवल तवारीख फारिस्तामेंही इसका विस्तारित विवरण पाया जाता है । अस्तु जो कुछभी हो; बुद्धिमान हुमायूँने अपनी अद्भुत परिणाम दर्शिताके गुणसे हिन्दूराजाका यह कपट जाल भेदकर फिर भयंकर मारवाड़भूमिमें प्रवेश किया । इस देशमें आकर उसका कष्ट सीमातक पहुंच गया । दारुण कष्टके मारे उसकी सुकुमारी ललनागणभी कठोर पीड़ासे पीड़ित होने लगी । यदि अकेले उसे कष्ट भोगना पड़ता, तो पलभरके लिये भी न घबडाता, कारण कि पिताके स्नेहगुणसे उसने विपत्तिके सहनेका अभ्यास करलियाथा । परन्तु अब न सहागया ! जिनको वह जी-जानसे चाहता था, जिन्होंने पहिले कभी सूर्यभगवानका मुखभी नहीं देखा था, भूख प्यासने जिनको आजतक नहीं सताया, आज दुर्भाग्यसे वही कोमल शरीरवाली बेगमगण तपतीहुई रेतीलीभूमिमें गिरकर भयंकर कष्ट पारही । हैं यह हालत देखकर किसका जी नहीं दहलता ? ऐसा कौन है जो हुमायूँके साथ एकप्राण न होकर उनके लिये दो बूंद आंसू न गिरावैगा ? यदि हुमायूँ इस समय अधीर हो जाता तो इस मरुभूमिमेंही परिवारके सहित उसका नाश होजाता, परन्तु उसमें धीरता इत्यादि समस्त पुरुषोचित गुण थे इस कारणसेही बड़े २ संकटोंसे छुटकारा पाया । हुमायूँके गुणोंका विचार करनेसे उसकी विपत्तिको देखकर अवश्यही दो आंसू डालने

पढ़ेंगे। तवारीख फरिस्तामें उस शोचनीय दुर्दशाका प्रदीप्त * चित्र खेंचागया- है। इस तवारीखमें लिखा है कि मुगलवीर हुमायूँकी यह दुर्दशा देखकर अमरकोटके मोदाराजको अत्यन्त दुःख हुआ और उसने आदर पूर्वक हुमायूँको अपने यहाँ आश्रय दिया था।

* दोपहर रातके समय अपने घोड़ेपर चढ़कर हुमायूँ अमरकोटको भागा। यह अमरकोट ठाटा (टट्टा) नगरीसे एक सौ कोश दूर है। लम्बामार्ग चलनेसे अत्यन्त कातर हो बादशाहका घोड़ा तो मार्गमें ही मर गया। तब हुमायूँने अपने पारिषद तुर्ही बेगसे उसका घोड़ा मांगा। परन्तु राजमर्यादा उस समय इतनी हीन होगई थी कि मुसाहबने बादशाहकी हुक्मे अदूली की। उसके कठोर हृदयमें लेशमात्र भी दया नहीं आई। इस ओर शत्रुगणभी हुमायूँका पीछा करते २ अत्यन्त निकट आ पहुँचे। उसकाल अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर बादशाह ऊंटपर सवार हुआ। यह देखकर “नादिमकोका” नामक एक आदमीने अपनी बूढ़ी माताको घोड़ेसे उतारकर वह घोड़ा हुमायूँको दिया। और बादशाहके उस ऊंटपर अपनी वालिदाको चढ़ाकर आप पैदल चलने लगा। “रास्ता अत्यन्त भयंकर और रेतीला था, पानीका नाम नहीं, प्यासके मारे सिपाहियोंको घोर कष्ट होने लगा। कोई तो बेहोश होगया; कोई मरगया;—चारोंओर हाहाकार हुआ, प्रत्येक दिशासे प्यासोंका आर्त्त नाद और रोना सुनाई आता था। इतनेहीमें उन कष्टोंको बढ़ाताहुआ समाचार आया कि शत्रुलोग अत्यन्त निकट आगये। इस समाचारको पातेही हुमायूँ औरभी सख्त हुआ और उसने उत्साहके सहित अपनी सेनाको पुकारकर कहा “जिनको लड़नेकी ताकत है, वह यहांपर रहें, और बाकी लोग रसद व औरतोंको साथ लेकर आगे बढ़ें।” परन्तु शत्रुओंके आनेके कोई चिह्न न पाये-गये; तब बादशाहभी कुल आदमियोंको साथ लेकर आगे बढ़ा।

“उस विपत्तिके समयमें अन्धकारमयी रात्रि कालरूप धारण करके संसारमें आन पहुँची। इतना अंधकार हुआ कि हुमायूँकी सेनाके लोग जो पीछे रह गये थे रास्ता भूलकर भटकने लगे। उनको प्रभात होतेही शत्रुओंने घेर लिया। उन भटकते हुओंमें शेखअलीनामक एक साहसी व्यक्ति था। इस शेखअलीने केवल बीस आदमियोंकी सहायतासे शत्रुके रोकनेकी प्रतिज्ञा की और “जाँबाजीका दावाँ” करके शत्रुओंके सामने डर गया। केवल एकही तीर चलाकर शेखअलीने दुश्मनोंके सेनापतिको जमीनपर गिरा दिया। अपने सरदारको गिरता हुआ देखकर दुश्मनोंकी फौज तित्तर वित्तर होगई। विजयी मुगलसेनाने दुश्मनोंका पीछा करके उनके घोड़े और ऊंट छीनलिये। और अपना मार्ग लिया। कुछ दूरपर जाकर हुमायूँको एक कुएंके ऊपर बैठाहुआ देखा। बहुत तलाश करनेपर हुमायूँको यह कुआँ मिला था। शेखअली उसको देखकर परम प्रसन्न हुआ और अपना समस्त वृत्तान्त आद्योपान्त कह सुनाया।

“दूसरे दिन उस कुएंको छोड़कर अपनी सेना सहित हुमायूँ अमरकोटकी ओर चला। परन्तु रास्तेमें दो दिनतक कोई जलाशय न पानेसे पहिलेसेभी दुगुना कष्ट हुआ ! तीसरे दिन फिर एक कुआँ देखा। परन्तु वह इतना गहरा था कि पानी भरनेमें बहुत देर लगती थी। इस वक्त केवल एकही डोल था, इसकारण डोल बजाकर तत्काल सूचना दीगई कि नम्बरवार सबकोही पानी पिलाया-जायगा। परन्तु उस सूचनाको कौन सुनता है? सबही प्यासके मारे व्याकुल थे। सबही पहिली पहिल—

उस अमरकोटकी छायाकुंजके भीतर मुगलकुलतिलक अकबरने जन्म ग्रहण किया। अकबरके जन्म लेनेके कुछदिन पीछे ही हुमायूँ सोदा राजके आश्रयको छोड़कर ईरानको चला गया। कहतेहैं कि हुमायूँ ज्योतिष विद्याको भी भलीभांतिसे जानता था। उसकी समान कोई ज्योतिषी भी होनहारका फल नहीं कहसकता था, परन्तु दुःख इतनाही है कि उसने अपने कामोंमें इस विद्याका कहीं सहारा नहीं लिया। यदि अपने कामोंमें सहारा लेता, यदि इस विद्याकी सहायतासे अपने होनहारके परदेके भीतर प्रवेश करजाता—तो वह घटना,—जिसने उसके सौभाग्याकाशको—ढक रक्खा था, शीघ्रही उड़ जाती, और उसे कभी भी ईरानकी ओरको नहीं भागना पड़ता ।

अपने पिता बाबरके स्नेह गुणसे हुमायूँने जिस विपत्तिके विद्यालयमें संसार नीतिकी शिक्षा कीथी, इस समय अपने पुत्र अकबरको भी उसही शिक्षामें नियुक्त किया। भाग्यचक्रकी बेरोक अदलबदलसे पदच्युत हुआ हुमायूँ बहुत कालतक कहींभी स्थिर होकर न ठहरसका। भारतवर्षसे भागनेके पीछे वरावर बारह वर्षतक वह देश रकी खाक छानता रहा; कभी तो ईरानकी राजसभामें, कभी अपने

—जल पीना चाहते थे । जैसेही डोल कुएंसे निकलता कि वैसेही दश बागह आदमी उसके ऊपर २ पड़ते और पानीकी सफाई करदेते थे । उतनेही में डोलकी रस्सी टूट गई, और कई आदमी उसके साथही कुएंमें गिर कर मरगये । इस भयंकर दुर्घटनाके होनेसे चारों ओर हाहाकार होगया ! अत्यन्त शोकसे सब लोग चिल्लाने लगे कोई २ जमि निकालकर तपे हुए रेतके ऊपर छोटने लगे । कोई २ उन्मत्त होकर कुएंमें गिरकर मरगये । हा ! न जाने इस हृदयविदारक दृश्यको देखकर हुमायूँको कैसा कष्ट हुआ होगा ?

इसके पीछे दूसरे दिन उनको एक जलाशय और मिला, दुर्भाग्यसे इसके द्वारा औरभी कष्ट पहुँचे । बहुत दिनसे जल कसे होरहे थे, कई दिनसे उनको एक बूँदभी पानी नहीं मिला था, इस समय निकटही जलाशयको देखकर उसमें अरापड़े और इतना जल पीगए कि तत्काल सबके सब मरगये । जंटोंको मरताहुआ देखकर कोई आदमी नहीं घबड़ाया और इच्छानुसार सबनेही जल पिया, अकस्मात् उनके हृदयमें एक विषम पीड़ा उत्पन्न हुई, तौर देखते २ आधा घंटेमें बहुतसे औरभी वहींपर परलोकवासी हुए ।

“इस शोचनीय विपत्तिके पीछे वचे वचाये विश्वासी सेवकोंको अपने साथ लेकर शोकार्त हुमायूँ अमरकोटनगरमें आया । अमरकोटका राजा अत्यन्त दयालु था, उसने अत्यन्त आदरके साथ हुमायूँको ग्रहण किया, और सबके क्लेशको दूर करनेका यत्न करने लगा । ”

“सन् हिजरी ९४९, रजब रविवारके हमीदावानोंवेगमके गर्भवासको छोड़कर राजकुमार श्रीमान् अकबर पृथ्वीपर अवतीर्ण हुआ। पुत्रका मुखकमल देखकर हुमायूँके समस्त कष्ट दूर होगये। उसने परम कारुणिक परमेश्वरको धन्यवाद किया और अमरकोटके राणाकी शरणमें अपने परिवारको छोड़कर उसकी ही सेनाको साथ लेकर विकारसे युद्ध करनेके लिये चला । ” Dow's Ferishta.

बड़े बूढ़ोंके प्राचीन राज्यमें, कन्धारके पहाडी देशोंमें और कभी काश्मीरके देव-
काननमय गिरिमार्गके ऊपर भाग्यकी कठोर आज्ञाको मानकर धीर और
अचलभावसे विराजमान रहताथा । इस बारह वर्षके समयमें भारतवर्षके सिंहा-
सनके ऊपर पठानोंके उत्तराधिकारियोंमें घोर झगडा झंझट पैदा हुआ ।
क्रमानुसार छः पठान बादशाह अल्पसमयके लिये दिल्लीका शासन दंड चलाय
करके इस लोकसे विदा होगये । इनके समयमें उत्तराधिकारित्वकी प्राचीन विधि
भली भाँतिसे उलट पुलट होगई थी । उन बादशाहोंमें जिसका बल अधिक था
उसने ही सिंहासनपर अधिकार किया । “जिसकी लाठी उसकी भैंस” वाली कहा-
वत चरितार्थ होगई । जिस समयमें वीरवर हुमायूँ काश्मीरके निकट पहुँचगया-
था, उस काल दिल्लीके तख्तपर बैठकर सिकन्दर अपने भाइयोंके साथ झगडा कर-
रहा था । सिकन्दरको इन झगडोंमें लगाहुआ देखकर बुद्धिमान हुमायूँने अपने
कामको निकालनेका यह अच्छा अवसर देखा । अल्पकालमें ही उसके लिये शुभ
अवसर आगया। उसने देखा कि धीरे-धीरे इन झगडोंसे सिकन्दरका नाश हुआ जाताहै।
तब तो तत्काल सिन्धुनदके पार हो सिकन्दरसे युद्ध करनेके लिये तइयार हुआ ।
उसकी रणतुरहीके प्रचण्ड निर्घोषसे अभाग्य पठान बादशाहके ज्ञाननेत्र खुल-
गये ! वह समझगया कि अनर्थकारी घरेलू झगडाही इस विपत्तिके लानेका कारण
हुआ । बादशाह, हुमायूँके आनेसे निराश नहीं हुआ, वरन अपने शत्रुकी गति
रोकनेके लिये बड़ी भारी सेना इकट्ठी करके आगे बढ़ा । सरहिन्दूनामक स्थानमें
दोनों दल भिडगये । हुमायूँने अपने जवान पुत्र अकबरको इस संग्राममें
सेनापति बनाकर युद्ध आरंभ करनेकी अनुमति दी । शीघ्रही दोनों दलोंमें
घोर संग्राम होने लगा । एक ओर समुद्रसमान पठान अनीकिनीका
प्रचण्ड सिंहनाद, दूसरी ओर समरविशारद कितने एक मुगलवीरोंका अद्भुत
रणरंग ! तरुणवीर अकबरके तेजस्वी आचरणसे, धीरे २ समरभूमि अत्यन्त
भयंकर होगई ! अकबर उस समय केवल बारह वर्षका बालक था । रण-
पंडित प्राचीन वीरगणोंने प्रथम तो उसकी वीरता और तेजस्विताको पागलपनका
प्रलाप समझा था, परन्तु जैसे २ युद्ध प्रचंड होता गया, वैसे २ ही उस तरुण मुग-
ल वीरकी अद्भुत वीरता महावगेसे बढ़ने लगी। इस वीरताको देखकर सबके हृदय
प्रसुदित होगए; सबवीरगण उसको अपूर्व वीरतासे उत्साहित होकर उन्मत्तकी
समान शत्रुकी विशाल सेनाकी ओरको प्रचण्ड तेजसे बढ़ने लगे । उन लोगोंके
उन अल्पमात्र मुगलोंकी प्रचण्ड वीरताके आगे-अगणित पठान सेना मथित,
विमर्दित और खंड २ होकर भूतलशायी हुई ।

विजयलक्ष्मी अकबरको प्राप्त हुई, इस गौरवसे उसके होनहार यशोगौरवकी सूचना हुई । इतनी थोड़ी उमरमें इस प्रकारकी असीम वीरता प्रकाश करनेसे अपने दादा बाबरकी समान प्रसिद्ध हुआ । कारण कि वीरवर बाबरने भी ठीक इसही सुकुमार वयमें अग्रणीत घोर विघ्न और विपत्तिके विरुद्ध अपने पैतृक राज्य फरगजाके सिंहासनपर अपनेको दृढ़ और अचल अटल रक्खा था । ऐसे पिताके औरससे जन्म लेकर और इस प्रकारका पुत्ररत्न पाकर ही हुमायूँने अपनी योग्यताका परिचय दिया था । उस सरहिन्दके समरक्षेत्रमें अपने पुत्रके विजयगौरवसे गौरवान्वित होकर उसने आनन्द सहित दिल्लीके सिंहासनपर फिर अपना अधिकार किया । परन्तु दुःखकी बात है कि इस गौरवको अधिक दिनतक नहीं भोग सका । दिल्लीके सिंहासनको अधिकार करनेके अल्पकाल पीछेही एक दिन अपने पुस्तकालयके ऊँचे सोपान-मंचसे गिरकर हुमायूँ परलोकवासी हुआ । उसकी इस शोचनीय मृत्युका कारण विचारकर देखनेसे पश्चिम देशका एक महान् भ्रम सरलतासे दूर हो जायगा । बहुतसे यूरोपीय विद्वान प्राच्य राजाओंको मूर्ख और बिलासी समझकर घृणा किया करते हैं ! वास्तवमें उनका यह बड़ा भारी भ्रम है । वे पंडितलोग पूर्वदेशीय राजाओंकी भीतरी अवस्थाका बिना विचार किएही ऐसे भ्रमपूर्ण अज्ञानको अपने हृदयमें स्थान दिया करते हैं । हुमायूँ अपने खानदानके बादशाहोंकी समान केवल विद्यानुरागी ही नहीं था, वरन उसकी पंडिताई और विद्याका बहुतसा परिचय पाया जाता है । यदि उन शाकतीय वंशवाले राजाओंकी विद्या और पंडिताईके साथ, उनके समयके यूरोपके राजाओंके गुणकी अपूर्व बराबरी कीजाय तो पूर्वोक्त राजाओंकी विशेष प्रधानता दिखलाई देगी । यहांतक कि भुवनविदित महाराणी एलिजबेथ और फ्रान्सके विख्यात राजा चौथे हेनरीकी विद्याप्रियताकी चारों ओर घूम थी, परन्तु भलीभांति विचार करके देखनेसे मालूम हो जायगा कि यह दोनोंभी पूर्व देशीय राजाओंकी बराबरी करनेके योग्य नहीं हैं । विशेष करके जाक्षरतीसके किनारे जो तृपतिगण उत्पन्न हुए थे, वे अनेक विद्याओंमें पारदर्शी थे । इतिहास, पुराणतत्त्व, काव्य, ज्योतिष, राजनीति, समाजनीति, धर्मनीति और रणनीति इत्यादि चाहें जिस विद्याका विचार कीजिये वे राजा इन सबमेंही प्रवीण थे । इनकी इस अद्भुत विद्याका विचार करनेसे हृदयमें भक्ति और श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है ।

पिताकी शोचनीय मृत्युके कुछ दिन पीछे अकबर सिंहासनपर बैठा। सिंहासनपर बैठनेके कुछही दिन पश्चात् शत्रुओंने दिल्ली और आगरेको छीनकर अकबरको वहाँसे निकाल दिया। तब अकबरने विश्वास हो पंजाबके एक देशमें जाकर आश्रय लिया। परन्तु सौभाग्यसे उसकी यह कुदशा शीघ्रही दूर होगई; बैरमखाने शीघ्रही उसको छिने हुए राज्यको शत्रुओंके हाथसे उद्धार करदिया। इस बैरमखाने भारतीय सली * भी कहते हैं। उसके असीम विक्रम और चतुर्ताके प्रभावसे अकबरने अपने सिंहासनको पर्वतकी समान दृढ़ करलियाथा। कालपी, चन्दा, कलिंगर, सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड और मालवा यह देश कुछकालमें ही उसके हाथ आगये। अठारह वर्षका तरुण युवक इस विशाल राज्यको भलीभाँतिसे शासन करने लगा।

इस विशाल भारत साम्राज्यपर विराजमान होनेके थोड़ेही दिन पीछे शहन्शाह अकबरने राजपूतोंके विरुद्ध युद्ध घोषणा की तथा सबसे पहिले मारवाड राज्यकी ओर अपनी सेनाको साथ लेकर बढ़ा। जिस समय हुमायूँका भाग्य बिगड़ रहाथा और कष्टपर कष्ट वीत रहेथे, दुराचारी मालदेवने उस समय उसको बांधना चाहा था, जान पड़ताहै कि कदाचित् इस दुराचारका बदला लेनेके लिये ही अकबरने उसपर चढ़ाई की हो ! माडवारराज्यमें भैरतानामक एक समृद्धनगर है। उक्त राज्यके मध्य सम्पत्तिशालितामें इस नगरका दूसरा नम्बर है। मुगल सम्राटने इस नगरको अत्यन्तही विदलित किया। शहन्शाहका अखण्डप्रताप और तेज देखकर अम्बरका राजा भरमल्ल अत्यन्त भीत हुआ और होनहार चढ़ाईसे रक्षा पानेकी आशासे अपने पुत्र भगवानदासके साथ अकबरके सामन्तोंमें मिल-गया। कायर अम्बरराजने केवल अपनी स्वाधीनताको ही नहीं बेचा, वरन् सम्राटकी प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये अपने पवित्रकुल गौरवको पानी देकर अपनी बेटीको शाकतीय यवनराजके हाथमें अर्पण करदिया ! पवित्र कुलगौरव और अत्यन्त प्राणधारी स्वर्गीय स्वाधीनताके बदलेमें

* मुगल सम्राट अकबर और फ्रांसका चौथा हेनरी, तथा बैरमखान, तथा फ्रांसका मंत्री सली, यह चारों प्रायः एक समयमें ही विद्यमान थे। आश्चर्यका विषय है कि इन दोनों राजाओं और दोनों मंत्रियोंका चरित्र प्रायः एकही प्रकारका था, परन्तु सलीकी अपेक्षा बैरमखानके चरित्रमें कुछ विचित्रता पाई जाती है। बैरमखान अत्यन्त तेजस्वी और न्यायपरायण था। हृदयके रुधिरको देकर उसने जिस मुगलराज्यको दृढ़ किया, फिर अन्तमें इसही राज्यका विद्रोही हुआ, इस अपराधके दंडमें उसको देशनिकाला हुआ। देशनिकालसे उसका प्राण नहीं गया, परन्तु दुःखकी बात है कि एक गुप्त घातककी विषैली छूरीने उसका काम तमाम किया। बैरमखानका जीवन चरित्र पढ़ने लायक है।

जो राजप्रसाद और शान्ति मोल ली जाय, उस प्रसाद और उस शान्तिका प्रयोजन क्या है? वरन अनन्त कालतक यंत्रणामयी अशान्ति और विपत्तिके अंकुशोंका आघात सहना अच्छा है, तथापि इस प्रकारके कलुषित राजप्रसादका कुछ भी प्रयोजन नहीं है। सौभाग्यकी बात है कि भारामल और राठौर राज पराधीनता रूपी जंजीरके बन्धनको बहुत दिनतक सहन न कर सकनेके कारण स्वाधीनताके प्राप्त करनेकी चेष्टा करने लगे। इतनेहीमें अकबरके उजबक सदाँरगण विद्रोही हो उठे। सबसे पहिले उस विद्रोहके दवानेकी चेष्टा अकबरको करनी पड़ी। अतएव उसके हृदयमें राजस्थानके जीतलेनेकी आशा बलवती-होगई थी वह कुछकालके लिये रुक गई। इस विशृंखलाको दूर करनेके पीछे अकबरने अपनी विजयी सेनाको साथ लेकर चित्तौरपर चढ़ाई की थी।

जिस राजाका राज्य श्रेष्ठ नियमपद्धतिके द्वारा भलीभाँतिसे रक्षित होता है;—जो किसी प्रकारकी दुर्लिप्सा या दुराकांक्षाके वशमें नहीं है; विज्ञानी और श्रेष्ठ चरित्रवाले मन्त्रियोंके साथ जो शुद्ध राजनीतिके अनुसार अपने गौरव, सन्मान तथा अपनी मर्यादाकी रक्षा कर सकता है, वही यथार्थ “ प्रजापाल ” नामका अधिकारी है; उसका राज्यही स्वर्गीय सुखका स्थान और शान्तिका कुसुमोद्यान है। परन्तु जो राजा स्वेच्छाचारी है, जो एक लहमेभरको भी प्रजाके सुख दुःखका विचार नहीं करता, स्वार्थपरता जिसकी मूलमंत्र है, प्रजाके रुधिरका सुखाना ही जो यथार्थ राजधर्म समझता है; राजाओंमें उसको नीच समझना चाहिये—वह प्रजापालनामका कलंक है—वह स्वार्थपर पिशाचका पापमय अवतार है ! उसका राज्य घड़ीके खटकेकी समान सदाही चंचल है; अभी है,—अभी नहीं है; वह अस्थिर और पतनशील है ! मूल बात यह है कि जिस राजाकी इच्छाके ऊपर राज्यकी राजनीति बनाई जाती है, उसके राज्यमें सुख किसी प्रकारसे नहीं रहसकता। यदि सौभाग्यसे वह प्रजाहितैषी हुआ, तब तो वह राज्य उन्नतिके ऊँचे आसनपर अवश्यही पहुँच जाता है; परन्तु उस उन्नतिके चिरस्थाई रहनेमें बराबर सन्देह ही रहता है। संभव है कि कालचक्रके अनिवार्य फेरसे उस प्रजाहितैषी राजाका उत्तराधिकारी प्रजापीडक और स्वार्थी हो; तब वह सुखका राज्य—सुवर्णका मंदिर—निश्चयही श्मशान और अन्धकूपकी समान हो जायगा। संसारका यह अवश्यम्भावी नियम है। अकबर और उदयसिंहके राज्यमें पृथक् २ यह दोनों चित्र दिखाई देंगे।

अकबर और उदयसिंह एकही उमरमें गद्दीपर बैठे थे * पिताकी शोचनीय मृत्युके पीछे तेरह वर्षकी उमरमें जिसदिन अकबरको भारतवर्षकी गद्दी प्राप्त हुई, उसही दिन शाकतीयकुलका भविष्य भाग्याकाश उज्ज्वल प्रकाशसे प्रकाशमान होगया; परन्तु तब भी अकबरको शान्ति प्राप्त न हुई। वह जिस पदपर पहुँचा था, उसके मार्गमें बहुतसे विघ्न थे, उन सब विघ्नोंको दूर करके निष्कण्टक और निरातंकभावसे राज्य शासन करना उसको प्राप्त होगा या नहीं, इसही विचारमें अकबर गोते खाने लगा। करोड़ों आदमियोंके भाग्यकी डोर जिसके हाथमें लगी हुई है, आज वह पुरुष भी अपने भाग्यकी चिन्तासे उत्कण्ठित हो रहा है। परन्तु विधाता एकान्तमें बैठकर जो उसकी भाग्य लिपिको लिख रहा था और आशा पूर्ण भगवती सिद्धिदायी आनन्दमूर्ति धारण करके जो उसके शिरहाने निरन्तर विराजमान रहती थीं, इस बातका समाचार तो शहन्शाहको अवतकभी ज्ञात नहीं था। विधाताके अपूर्व विधानसे जिस नक्षत्रमें अकबरकी जन्मरात्रिमें अमरकोटके मयदानमें प्रसन्न प्रकाशका विकाश किया था, उसकी ही विमल विभासे विचकर महानुभाव वहराम तथा पंडित और धर्मात्मा अब्बुलफ़ज़लकी समान चतुर मंत्रीगण उसको प्राप्त हुए थे। अकबर और उदयसिंह यद्यपि एकही वयसमें सिंहासनपर बैठे, परन्तु दोनोंके चरित्रमें किंचित् भी मेल नहीं था। जन्मसे ही अकबर विपत्तिकी गोदमें रहा था; अस्थिर भाग्यचक्रके अनिवार हेर फेरसे उसने बालकपनसे संसारकी कितनी नईर मूर्ति देखीं, संसारकी कितनी प्रचंड नरगोंकी चोट अपने हृदयपर सही, उसका विचार कौन कर सकता है; इसही कारणसे उसने मनुष्यकी प्रकृतिके गूढ़ तत्त्वमें जिस प्रकारका ज्ञान प्राप्त किया था, वैसा ज्ञान उदयसिंहको कहां है? उदयसिंह भी बालकपनसे एकान्तमें प्रतिपालित हुआ था; कमलमेरकी काननावृत शैलमालाके सिवाय दूसरी शोभा उसके देखनेको नहीं मिलती थी। उस संकीर्ण पहाड़की चोटीपर बनेहुए महलमें रहकर वह बाहरका कोई भी समाचार नहीं जानते थे।

अतएव संसारनीतिका कोई सूत्रही उदयसिंहको ज्ञात नहीं था। जिसको अपने जन्मका विवरणभी ज्ञात नहीं, बालकपनसेही जो एकान्तके बीच पराये घरमें आदरके साथ पालित हो रहा है, जो एक पलभरके लिये भी विपत्तिरूपी अंकुशके आघातसे पीड़ित नहीं हुआ, जिसने एक मिनटके लिये भी संसारी कूटनीतिकी विकट भ्रुकुटिको नहीं देखा; उसको संसारी व्यवहारमें किसप्रकार चतुरता प्राप्त-

* सिंहासनपर बैठनेके समय अकबर और उदयसिंहकी उमर तेरह २ वर्षकी थी।

होसकतीहै ? संसारका व्यवहार न जाननेके कारणसेही पीछे राणाजीको अत्यन्त कष्ट भोगना पडा । उन्होंने समझा था कि ऐसेही सुखसम्पत्तिमें हमारा जीवन व्यतीत होगा । इस अनर्थकारी धारणानेही राजकार्यसे उनके मनको उचाट कर दिया । प्रजाकी भलाई, राजाका कर्तव्य और राजकार्यका कुछ भी विचार उनका न रहा । राज्य क्या विलास लालसाकी तृप्ति साधन करनेका श्रेष्ठ उपाय है ? जिस शासन दंडमें हजारों आदमियोंका सुख दुःख मिला हुआ है, वह क्या केवल गेंदका खिलोना है ? राजगुण समन्वित कौनसा शास्त्रदर्शी राजा इस बातका विचार नहीं करसकताहै ? और कोई करे या न करे—पर—राजपूत—कलंक—शिरोदीयकुलको डवानेवाले उदयसिंहको इन बातोंकी कुछभी परवाह नहीं थी, तथा इसही कारणसे वह अत्यन्त अनाचार करताथा । यद्यपि विगतयुद्धमें पाखण्ड बहादुरकी प्रज्वलित समरपिपासा शान्तकरनेके लिये जाकर चित्तौरके चतुर मंत्रियोंने अपने प्राणखोदिये थे, तथापि राणाको इच्छा होती तो वह किसी चित्तौरके राजनीति विंशारदसे राजनीति सीखलेते; चतुर राजनीति विंशारदके उत्साह, उद्दीपन, और सुशिक्षाके गुणसे उनके हृदयका अन्धकार दूर होजाता; ऐसा होने पर फिर कोईभी उदयसिंहको कापुरुष न समझता । परन्तु दुर्भाग्यसे विधाताने उनको राजगुणोंसे भूषित नहीं किया; नहीं तो उनकी ऐसी कुबुद्धि क्यों होती ? और चतुर मंत्रियोंकी परामर्श पर क्यों नहीं ध्यान देते ? उदयसिंह कायर थे, राजा होनेसे क्या होताहै; जो हृदयमें राजगुण नहीं तो वह राजाही क्या ? वह हृदय दूसरी सामग्रीसे बनाहुआ था, वह किसी दूसरीही शक्तिसे चलायमान था कि जो प्रलय कर देनेवाली थी । वह शक्ति एक तुच्छ वेश्याके द्वारा चलाई जातीथी । यह वेश्याही उदयसिंहकी सलाह देनेवाली,—जीवन सहचरी विद्या बुद्धि, शिक्षा धारणा सबहीकी स्वामिनी थी । राणाजी सब प्रकारसे इसके दास थे, उनके भाग्यसूत्रको वह पिशाचिनी अपने हाथमें थाम रहीथी ! राणा उदयसिंह वेश्याके दास गिहोटेकुलकेशरी, वीरवर वाप्पारावलका वंशधर—मेवाडका महाराणा,—यवन गर्व खर्वकारी राणा संग्रामसिंहका पुत्र अभागा उदयसिंह, पापिनी गणिकाकी आज्ञाके अनुसार चलताहै ! आज वह गणिका अभागे उदयसिंहके भाग्य और अभागिनी मेवाडभूकिके शासनदंडके चलानेकी तइयार हुई है । मूर्ख उदयसिंह उसकेही ऊपर भरोसा रखके पापविलासिताके पंकिलकुंडमें डूब गया । राणाको इस प्रकारका आलसी और विलास मग्न देखकर चतुर अकबरने अपने अभीष्ट साधन करनेका अच्छा अवसर देखा ।

उसकी विद्वेषाग्निकी चिनगरीसे चित्तौरका गौरव स्तम्भ भस्म होगया । उदय-सिंहके पापाचारका उचित प्रायश्चित्त होगया ।

जक्षरतास नदीके किनारेपर वसे हुए दूरदेशके फरगना राज्यको छोड़कर मुगलकुलतिलक वावरने सुर नदी भागीरथीके प्रसन्न जलसे धुलेहुए पुण्यक्षेत्र भारतवर्षमें आकर जो बीज बोयाथा, किसने विचार कियाथा कि एक समय यह छोटासा बीज एक बड़ाभारी वृक्ष होजायगा ? किसने सोचाथा कि एक समय उस वृक्षकी जड़ें दूरतक फैलकर बड़की जड़ोंके समान भारतकी हृदय-रूपी अटारीको विदारित करेंगी ? वावरका बोयाहुआ वह बीज हुमायूँके यत्नमें अंकुरित होगया था ; परन्तु यदि अकबर उसके पानीसे न सींचता, तो वह अंकुर अवश्यही सूखजाता. अतएव अकबरके द्वाराही इस पुण्यतीर्थ भारत-वर्षमें मुगलवादशाहीकी जड़ जमी । अकबरही राजपूत-सौभाग्य-सूर्यके लिये प्रचंड राहु हुआ । राजपूत स्वाधीनतारूपी अटारीपर अकबरही वज्र होकर गिरा । अवतक जडसे उस अटारीको कोईभी नहीं गिरासकाया-परन्तु आज अकबरने उसे खुदवाकर फिकवादिया। आज अकबरके भयंकर वज्रप्रहारसे वह अटारी चूर-चूर होगई । स्वाधीनताकी ऊँची अटारीसे उतारकर अकबरने अभागी हिन्दू जातिको दुःखके अन्धकारागारमें कठोर दासपनकी जंजीरसे जकड़दिया । हम नहीं जानते कि कौनसे गुणके प्रभावसे और कौनसे महामंत्रके बलसे राजपूतोंने उस जंजीरके भारको हलका करदिया था; नहीं जानते कि अकबरके कौनसे गुणसे मोहित होकर राजपूतोंने उसकी पहिराई हुई कठोर जंजीरको बारम्बार चुम्बन किया था ! इस गंभीर रहस्यका भेद करना कोई सहज बात नहीं है । विशेष परीक्षा करके देखनेसे अकबरका कोई गुण तो अवश्यही दिखाई देगा।-वह गुण यह था कि अकबर-गाह मनुष्यके हृदयकी बातको जानताथा, यह ज्ञान उसको यहांतक था कि मनुष्यकी गुप्तसे गुप्त बातभी उसे ज्ञात होजाती थी; तथा आवश्यकता पड़नेपर चतुर-ताके साथ सबहीको संतुष्ट करदेता था । इन्हीं अनुपमगुणोंकी सहायतासे अकबरने हिन्दूजातिके हृदयको प्रीति और भक्तिसे बाँध रक्खाथा । इसही कारणसे एकबार आनन्दमें भरकर विजित हिन्दुओंने उसको "जगद्गुरु" और "दिल्लीश्वरो वा जग-दीश्वरो वा" कहकर पुकारा था । परन्तु इस गर्वित और महिमामयी उपाधिके पानेसे पहिले उसने अपने हाथसे कितनेही भारत सन्तानोंके हृदयको अग्लान होकर चीरडालाथा, सनातनधर्मके कितनेही पवित्र मन्दिरोंको चूर चूर कर उन सबके ऊपर नमाजगाह बनवाई । भारतके कितनेही वीरवंश उसके कठोर हाथके भय-

कर प्रहारसे एकवारही विध्वंस होगएथे, उसकी स्वेच्छाचारितासे किननेही आर्य-सन्तानोंके बड़े २ मुखोंमें कलंककी कालिमा लगीहै । अपनी अपूर्व अभिज्ञता और चतुरताके प्रभावसे जबतक उसने विजित दासपनकी जंजीरसे जकड़हुए, अभाग, भ्रमसे अन्धेहुए भारतमन्तानके हृदयकी प्रीतिका उपहार नहीं पायाथा; तबतक वह निटुर शहाबुद्दीन और अलाउद्दीन आदि हिन्दूविद्वेपी कठोर हृदय-वाले बादशाहोंका भी मरताज गिना जाताथा । विचारकरनेसे निश्चय ज्ञात-होगा कि ऐसा कलंकिन नाम कभी भी अन्यत्र और अविचारसे उसको नहीं दियागया है, परन्तु इमकलंकने सदाके लिये उसमें घर नहीं कियाथा । जवानीके भयंकर मदसे मनवाल होकर अकवरने कठोर दुराकांक्षावृत्तिको तृप्त करनेके लिये हिन्दुओंके हृदयमें जो कठोर घाव करदियेथे, बुढ़ापेके समय उन सब घावोंको चंगा करके कोटिकोटि भारतवासियोंका आशीर्वाद प्राप्त कियाथा ।

राजधर्महीन अकर्मण्य उदयसिंहके हाथमें मेवाड़का राज्यभार सौंपागया-वाप्पा, समरसिंह, हमीर आदि राजनीति विशारद और शान्मज्ज राजाओंने जिस शासनभारको चलाया, आज वही गुरुभार उदयसिंहके हाथ आया; यद्यपि पहिले महाराजागण अत्यन्त चतुर और कार्यकुशल थे तथापि राजकार्यका अत्यन्त बड़ाकाम जानकर सदा सावधान रहनेथे, आज अकर्मण्य उदयसिंहने उसही कार्यको अत्यन्त सहज और सीधा समझा; इन्हीं कारणसे मेवाड़की दुःखराशि पूर्णमात्रासे परिपूर्ण होगई । शिशादीयकुलकी अधिष्ठात्री देवीने प्रतिज्ञाकी थी कि वाप्पारावलके वंशधरगण जबतक मेरी आज्ञा पालन करेंगे, तबतक किसीप्रकारसे चित्तौरपुरीको नहीं छोड़ूंगी । वाप्पारावलके वंशवालोंने इतने दिनतक उसको संतुष्ट करनेके लिये अपने हृदयका रुधिरतक भी दे दियाथा; इसकारण महादेवी-जीकी प्रतिज्ञा भी अबतक भलीभातिसे पूरी हुईथी । स्वदेशकी स्वाधीनता रक्षा करनेके लिये गिह्लोट वंशके राजाओंने जो अद्भुत आत्मात्मसगका प्रकाशमान उदाहरण दिखाया, उसका ध्यान करनेसे हृदय विस्मय रससे परिपूर्ण होजाताहै:— ऐसा कौन है जो चित्तौरकी स्वाधीनता रुपिणी उन भगवती चतुर्भुजा देवीके सामने प्राण विसर्जन करनेको तैयार न हो?— पहिला उदाहरण— वह प्रकाशित उदाहरण—उसदिन—जिसदिन हिन्दूविद्वेपी कठोर हृदय प्रचंड अलाउद्दीनकी प्रचंड विद्वेषाग्निकी चिनगारीसे सुवर्णकी चित्तौरपुरी भस्म होकर इमशान होगई थी, उसदिन—जिसदिन बारह राजकुमारोंने अपने हृदयके रुधिरको देकर चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीकी उत्कट प्यास बुझाई और वीरवर वाप्पारावलकी लोहित विजय वैजयन्तीको मुसलमानोंके

ग्राससे बचाया ! वह दिन चित्तौरका कैसा गौरवमय दुर्दिन था ! राजपूत वीरोंका उद्योग कैसा अनुपम होगया था !—उसके पश्चात् दूसरी वार—जिसदिन मेवाडकी दक्षिणसीमामें स्थित शौलराजिको भेद करके दुष्ट राजबहादुरकी विजयिनी मेना अनन्त ज्वारभाटेकी समान प्रचंड वेगसे मेवाडके हास्यमय क्षेत्रमें आन-पहुंची, उसदिनभी बाप्पारावलके वंशधर वीरवर बाघजीने आत्मोत्सर्गका प्रकाशित उदाहरण रखकर भगवती चतुर्भुजाकी कठोर आज्ञाको पालन किया ।

परन्तु अब तीसरी वार—चित्तौरके इस तीसरे घोर संकटमें—कठोर उद्यममें—शिशोदायकुलके इस अनिवार्य संकटकालमें बाप्पारावलका कौनसा वंशधर प्राणका दाव लगाकर चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीको संतुष्ट करेगा ? कौनसे वीरका हृदयरुधिर पीकर संतुष्ट हो भगवती चामुण्डा आज चित्तौरपुरीकी रक्षा करेंगी ?—कोईभी नहीं आया ? कोईभी उस भयंकर संग्रामभूमिमें नहीं आया ; क्या होगा ? कोई उपाय नहीं । चित्तौरका शोचनीय दारुण अधः पतन होनाही चाहताह ; चित्तौरका स्वाधीनतारूपी सूर्य सदाके लिये इस समय अस्त होने-वालाहै ! वह मोहकरी महामाया कहाँ अन्तर्द्धान होगई ? जिस गूढ भाग्यसूत्रने गिह्लाट कुलको इतने लंबे समयतक बांध रक्खाथा, वह सूत्रभी सदाके लिये टूटगया । जिस महादेवीने गंभीर निशीथकालके समय समरसिंहकी दांनों आंखें खोलकर गंभीर स्वरसे कहाथा कि “हिन्दू-गौरव लोप होनाचाहता है” । जिन्होंने, चिन्ता करतेहुए लक्ष्मणसिंहके सन्मुख ग्रगट होकर बारह राजकुमारोंकी वलि चाही थी । वह—चित्तौरकी मूलभान स्वाधीनता लक्ष्मी भगवती चतुर्भुजाजी अभागे उदयसिंहका कायरपन देखकर सदाके लिये चित्तौरको छोडगई ! उनके साथही राजपूत जातिके एक महान विश्वासका लोप होगया । जिस विश्वासके बलसे वे लोग चित्तौरपुरीको पवित्र सनातनधर्म और स्वाधीनताका दुर्जय दुर्ग समझतेथे, आज वही महान विश्वास उनके हृदयसे लोप होगया, आज वे उसको अलीक कल्पनामात्र समझने लगे ।

इस प्रकारका पवित्र विश्वास और अपूर्व देवभक्ति राजपूतोंकी जीवनशक्ति और देशरक्षाकी महाशक्तिहै । इसके महामंत्रसे दीक्षित होकर अनेकदेशोंके अनेक राजाआने देशकी रक्षाके लिये रणक्षेत्रमें प्रसन्नमुखसे अपने प्राणोंको बलिहार करदियाहै, इसके बहुतसे प्रमाण संसारक इतिहासमें प्रकाशमान अक्षरासे लिखे-हुएहैं । जातीय जीवनके जो कईएक अत्यन्त उज्ज्वलचित्र इतिहासमें दिखाई देतेहैं उन सबकीही जड़में यह महानविश्वास और यह देवभक्ति बीजकी समान वर्तमान है।

वे ज्ञानिकलोगोंको अवश्य इसबातका विचार करना चाहिये कि राजपूतोंके जातीय जीवनसे राजपूतोंकी स्वाधीनता-लालसाका कौनसा सम्बन्ध है ? इतिहासमें अनेकवार उनके असीमगुणोंका बखान किया गया है । हमारा विश्वास है कि यह विश्वासही सदा उनकी विजयका कारण हुआ है ।

अकबरने दोवार चित्तौरपर चढ़ाई की थी । परन्तु तवारीख फरिस्तामें केवल एकही बारकी चढ़ाईका वृत्तान्त लिखा है । जिसवार उसकी प्रचंड क्रोधाग्निसे चित्तौर विध्वंस होगयाथा, उसही बारके आक्रमणका वृत्तान्त तवारीख-फरिस्तामें लिखा है । परन्तु जिसवार वह दलित, पराजित और निराश हो संग्राम-भूमिसे भागाथा, उस बारका किंचित वृत्तान्त भी उक्त तवारीखमें नहीं पाया जाता । ज्ञात होता है कि पराजयरूप अपमानसे अपने शहंशाहको बचानेके लिये मुसलमान इतिहासलेखक इसबातको चबागया । भट्टग्रंथमें इसही आक्रमणको अकबरकी पहिली चढ़ाई लिखा है । उदयसिंहकी वीरा उपपत्नीके विक्रम बाहुबलसे उसवार अकबरको नीचा देखना पड़ा था । इसका वृत्तान्त इस प्रकार है कि सम्राट् अकबरने अपनी विजयिनी सेनाको साथ लेकर जोरशोरसे चित्तौरपर चढ़ाईकी । प्रथम तो कायर उदयसिंहने अकबरसे लड़नेका साहस न किया । परन्तु सरदारोंके कहने सुनने और राज्यजानेके भयसे विवश हो संग्राममें गया । हृदयमें साहस नहीं,—प्रतिज्ञा नहीं,—दृढता नहीं, फिर किसकी सहायतासे मुगलवीरको पराजय किया जायगा? चित्तौरकी सेनाने बहुतदेरतक अकबरकी भयंकर मुगलसेनासे युद्ध किया । परन्तु बिना अपने राजाका उत्साह और ढाढस पाये सेना कबतक युद्ध करसकती है? अन्तमें विवश होकर राजपूतोंकी सेना भागी । अभागा उदयसिंह अकबरके हाथमें कैद हुआ । मुगलसम्राट् राणाको अपने डेरोंमें लेगया । मेवाडका राणा मुसलमानोंके हाथमें कैद हुआ ! वीरजननी मेवाडभूमिके माथेपर यह कलंकका टीका बहुत बुरालगा ! जो बात मेवाडमें आजतक नहीं हुई थी, आज कायर उदयसिंहसे वही असंभव बात आगे आई ! यह कुछ साधारण शोककी बात नहीं है । उदयसिंहके बन्दीहोनेसे राजमंदिरमें अत्यन्त हाहाकार होने लगा । राणाके उद्धार करनेका उपाय किसीसे न सोचा गया । सरदारोंने राणाको छुटानेके लिये किंचित चेष्टा भी नहीं की अधिक कहनेसे क्या है, बस इतनाही कहना अलम् होगा कि उस समय चित्तौरपुरी सब प्रकारसे निस्तेज होगई थी । वह निस्पृह और निस्तेजभाव अवलोकन करके उदयसिंहकी उपपत्नीके हृदयमें दारुण अभिमान और क्रोध होआया । क्या चित्तौरपुरी आज वीर

विहीन होगई ? क्या वीर-माता मेवाड़-भूमिने आज एकसाथही अपना समस्त तेज खोदिया ? अवतक जो वह असंख्य जीव चित्तौरके भीतर वास कर रहे हैं क्या यह समस्तही जीव रहित हैं ? क्या यह केवल मांसके पिण्डही हैं ? क्या क्षत्रिय-वालाओंने निर्जीव मांसपिंडोंको प्रसव किया है ? क्षत्रियोंका साहस, वीरता, तेज-स्वित्ता और आत्माभिमान क्या एकसाथही इसलोकसे लोप होगया ? नहीं तो अपनी आखोंसे अपने राजाका अपमान और कारावास देखकर वे किस प्रकारसे निर्जीव और निश्चिन्त हो रहे हैं ? वीरनारीने दारुण क्रोध और वधाभिलाषासे उन्मादित होकर अपने कोमल अंगपर कठिन लोह वस्त्र धारण किया, तथा हाथमें धनुष बाण व तलवार लेकर घोंड़ेपर सवार हो समरभूमिको चली । चित्तौरका वह निर्जीव और मौनभाव दूर कराके-राजपूतोंकी सेनाको नवीन उत्साहसे उत्साहितकर कापुरुष उदयसिंहकी वीरा उपपत्नी सेनासहित भयंकर वेगसे सुगलोंके डेगोंपर जाटूटी, उसके हाथमें जो भयंकर भालाथा, उसके दारुण आघातसे तथा धनुषके छूटेहुए बाणसे बहुत सी यवनसेना मारीगई । कुछही देर युद्धके पीछे मुसलमान लोग पीछे हटने लगे रुद्रचंडी राजपूत रमणी अत्यन्त उत्साह और विक्रमके साथ उनको भगाती हुई क्रमानुसार अकबरकी प्रधान छावनीकी ओर बढ़ने लगी । वीरनारीकी अद्भुत वीरता देखकर शहन्शाह अकबर विस्मित और चकित हुआ तथा अनेक प्रकारकी विपत्तियोंके भयसे संग्रामभूमिको छोड़ भागा । स्त्रीकी वीरतासे-केवल एक स्त्रीकी वीरतासे आज भारतका सम्राट शेरवर सुगलवीर अकबरशाह हारगया । नारीके विक्रमसे आज विजयिनी सुगलसेना छिन्नभिन्न होगई । राजपूत रमणियोंकी वीरताका यह एक प्रकाशमान उदाहरण इतिहासमें लिखागया !

उदयसिंहभी अकबरके कारगारसे छूट आये, अपने राज्यमें आकर अपनी प्यारी वेश्याकी बहुत कुछ प्रशंसा की, तथा उसकी वीरताको बहुत कुछ सराहा और प्रकाश्य राजदरबारमें गदगद होकर सबके सामने कहने लगे कि वीराकी वहादुरीसे ही हमारा छुटकारा हुआ । राणाजीके मुखसे उसवार वनिताकी बहुतसी प्रशंसा सुनकर चित्तौरके सरदारलोग घृणा लाज और अभिमानसे महाक्रोधित हो उठे तथा शिरझुकाकर राजसभासे एकसाथ चलेगये और विचार किया कि किसी न किसी प्रकारसे इस वेश्याको अवश्य मार डालना चाहिये, यह विचार कर उसके मारनेकी टोहमें रहे । अकेली स्त्री किसप्रकार उन अगणित सरदारोंके क्रोध और डाहसे बच सकती थी ? विचारी शीघ्रही उनके हाथमें फँसकर मारीगई ।

कहां तो अकबरको जीतकर सरदार और सामन्तोंको आनन्द प्राप्तहाता, और कहाँ अब उसके बदलेमें शोक प्राप्त हुआ, आपसके झगड़े झंझटसे राज्यभयंकर अशान्ति उत्पन्न हुई । चित्तौरकी ऐसी अशान्तिका वृत्तान्त जानकर अकबर अपने निरादरका पूरा बदला लेनेको तइयार हुआ और बड़ी भारी सेना साथ लेकर चित्तौरको चला । अकबरकी उमर उस समय पचीस वर्षकी थी; शरीरमें विपुलबल और हृदयमें प्रचंड उत्साह था । उसके अखण्ड प्रतापसे प्रायः समस्त भारतवर्ष उसके चरणोंमें लोटताथा, अनेक दुर्जय दुर्ग उसके भयंकर विक्रमसे विध्वंस होकर चूर २ होगयेथे; बहुतसे राजपूत राजालोग उसकी आज्ञाका पालन करनेके लिये हाथ जोड़े हुए खड़े रहतेथे । फिर मेवाडराजाका शिर किसप्रकारसे उठाहुआ रहसकता है? मेवाडका गर्व किसप्रकारसे वनाहुआ रहसकता है? मेवाडके राजालोग किस कारणसे उसके वशमें न होंगे ! मुगल सम्राटकी प्रचंड अनीकिकी प्रचंड प्रभावसे मेवाडके भीतर बढ़ती चलीगई । चित्तौरके निकट वसेहुए पण्डौली नामक गाँवसे वशशी जानेके समय, पाँच कोशका जो श्रेष्ठ राजमार्ग पडता है, उसके ही ऊपर भागमें मुगल शाहन्शाहकी बड़ीभारी छावनी पडी। यहांपर संगमरमरका एक शुण्डाकार स्तम्भ भी बनाहुआ है । यह स्तम्भ “अकबरका दीपा” *अर्थात् अकबरका दीपक इसनामसे प्रसिद्ध है । अवतक यात्रीगण उस दीपागार अथवा मेवाडके अधः पतनके प्रकाशमान स्मृति स्तम्भको दूरसे देखकर ही चित्तौरकी अतीत दुरवस्थाका विचार करते २ आंसू बहतेहुए चले जातेहैं ।

× टाडसाहबका मत है कि पण्डौलीनामके दो गाँव हैं । उनमेंसे यह तो चित्तौरके प्रसिद्ध मानसरोवरके किनारे पर बसाहुआ है । इस मानसरोवरके किनारेपर बनेहुए पुराने स्तंभमेंसे जो एक शिलालेख उनको मिलाथा, उसकी ही सहायतासे उन्होंने गिहटैकुलके यथार्थ प्रादुर्भावकालको निरूपण कियाथा ।

* टाडसाहब कहतेहैं कि “यह दीपागार अबतक पूर्णशरीरसे विद्यमान है । इसकी कुल वनावट चूनेके पत्थरसे हुई है । इसकी उंचाई ३० फीट; तली वर्ग २० फीट और शीर्ष ४ फीट होगा । ऊपर चढ़नेके लिये इसके नीचे एक सीढ़ी बनीहुई है । एक बड़ी अंगीठीमें आग जलाकर प्रतिरात्रिमें इसके ऊपर रखी जाती थी, यात्रीगण इसकोही चिह्न समझा करतेथे । ” टाडसाहब कहतेहैं कि “यह दीपागार एकप्रकारकी मूर्तिकी नाई बनाया गयाथा । हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, अथवा यहूदी किसीकेभी उपासना मंदिरसे मिलता हुआ इसको नहीं बनाया गयाथा । परन्तु यदि भलीभांतिसे उसकी वनावटपर ध्यान दिया जाय तो ज्ञात होगा कि सब जातियोंके देवाल्योंका निदर्शन उसमें पाया जाता है । ”

भट्टग्रंथोंमें लिखा हुआहै कि मेवाडके सत्यानाश करनेका विचारकर भयंकर मूर्तिसे जैसेही अकबर चित्तौरके सामने आया, वैसेही डरपोक उदयसिंह नगरको छोड़कर भागगया। राजाजीके भागनेसेभी चित्तौर रक्षकशून्य नहीं हुआ। पद्यापि चित्तौरका छोटेजीका राजा चित्तौरको छोड़ गया;परन्तु चित्तौरके नामकी ऐसी पवित्र मोहिनी मायाहै, कि न जाने कहाँसे साहसी और विक्रमशाली अगणित वीरगण नंगीतलवार हाथमें ले चित्तौरकी रक्षा करनेको यवनोंसे संग्राम करनेके लिये आन पहुँचे।मानो किसी अप्रगट देवताके मृतसंजीवनमंत्रके प्रभावसे चित्तौरकी समरभूमिमें गिरेहुए वीरगणोंकी भस्मसे अगणित वीरोंकी सृष्टि उत्पन्न हुई। राजस्थानके भिन्न २ जनपदोंसे सरदार और सामन्तगण अपनी २ सेनाको साथ ले चित्तौरके स्थानोंकी रक्षा करनेको खड़ेहोगये वीरवर सहीदास चंदावत वंशको बहुतसी तेजस्वी और साहसी सेनाको साथ लेकर चित्तौरके प्रधान तोरणद्वार-‘सूर्यद्वार’ पर डट गया।मदेरियापति रावत दूदा गंगावतों[×]की सेनाको लेकर रणरंगमें आन पहुँचा।बैदला और कटोरियानामक दो जनपदसे,दिल्लीश्वर हिन्दूराज चक्रवर्ती महाराज पृथ्वीराजके वंशसे उत्पन्न हुए दो बलवान सामन्त राजा और विजौलीके प्रभार तथा मादीके झालापति इत्यादि कठोर उत्साहके साथ संग्रामभूमिमें आयकर अपने वीरोचित रणाभिनय और उत्साहसे अपनी २सेनाको बढ़ावा देनेलगे। इनमेंसे बहुतसे मेवाडशासनके अन्तर्गत थे, इन सबके अतिरिक्त औरभी बहुतसे विदेशीय राजपूत वीर अकबरके साथ संग्राम करनेके लिये आयेथे। उनमें देवलपति बाधजीका वंशधर,झालौरपति शोनगडेका राव, ईश्वरदास राठौर, करमचंद कछवाहा, और ग्वालियरके तुवरराज यह समस्त वीर विशेष प्रसिद्ध हैं।इन लोगोंकी अद्भुत वीरता और रणरंगका वृत्तान्त सुवर्णके अक्षरोंसे इतिहासरूपी पटपर विराजमानहै।

क्रमानुसार हिन्दू मुसलमानोंमें घोर युद्ध आरम्भ हुआ।यवनसेना भयंकर सिंहनाद करती समरभूमिको कँपाती उत्कट वेगसे चित्तौरके सूर्यद्वारपर धाई, इस ओर रणोन्मत्त राजपूत वाहिनीभी विकट शब्द करती हुई,आकाशको विदारती दहाडती-हुई धनुषबाण लेकर तइयार होगई। चन्दावत वीर सहीदास भीम गम्भीर हुंकार करके यवनसेनापर बाणोंकी वर्षा करने लगा। सूर्यतोरणद्वारके भीतर होकर चित्तौरमें प्रवेश करनेके लिये मुगलोंकी सेना समुद्रकी समान उफनकर उसकी ओर-

[×] यह संगवतलोग राजा सांगा (सांगाजी) की संतान सन्तति नहींहै। वीरवरचंडके वंशमें जो संगनामक एकवीर हुआ था, यहलोग उसहीके वंशमें उत्पन्न हुएथे।

को आने लगी बन्दूकोंकी आग्निय गोलियोंको चला २ कर मुगलसेना अनेक चन्दावत वीरोंको गिराती हुई आगे बढ़ने लगी । वीरवर सहीदासने एक पांवभी पिछाड़ीको नहीं हटाया। एक २ करके उसके बहुतसे सिपाही गिरगए, तथापि उसका उत्साह ज्योंका त्यों बनारहा, जबतक उसके प्राणने शरीरको नहीं छोड़ा, जबतक उसकी नाड़ियोंमें रुधिरका प्रवाह रहा और जबतक उसकी वज्रमुष्टि शिथिल न हुई, तबतक किसीप्रकारसे शत्रुगण तोरण द्वारमें नहीं घुसने पाये ।

चन्दावत वीर सहीदासकी इस अद्भुतवीरताको देखकर और राजपूतलोगभी प्रचंड उत्साहके साथ शत्रुओंका संहार करने लगे । परन्तु जिन दो महावीरोंने दुर्दान्त यवनोंका गर्व खर्व करनेके लिये मेवाडके उस शोकाच्छन्न भाग्याकाशको कुछ देरके लिये निकट उज्ज्वल प्रकाशसे चमका दियाथा, जिनकी लोक-विस्मयकारी अद्भुतवीरता और रणनिपुणताका वृत्तान्त लपटकी समान चमक कर मेवाडके इतिहासके इस अंधेरे अध्यायको प्रकाशित कर रहाहै। स्वयं अकबरने उनकी वीरता तथा रणनिपुणताको अक्षय रखनेके अभिप्रायसे स्वयं उन दोनोंका वृत्तान्त प्रकट कियाहै । इन दोनों वीरोंका नाम जयमल और पत्ते*था । जयमल विदनौरका राजा था । मारवाडके साहसी सामन्तोंमें यह विख्यातथा इसका जन्म राठौरकुलकी शाखा भैरतिया गोत्रमें हुआथा । पत्ते कैलवाडेका स्वामी था; यह चन्दावत कुलकी शाखामें उत्पन्न हुआ था । इसका गोत्र जगवत था । इन दोनों महावीरोंका आजतक राजपूतलोग जप किया करतेहैं; आजतक प्रातःकालके समय विस्तरेसे उठकर प्रातःकालमें स्मरण करने योग्य महापुरुषोंकी पवित्र नाम मालाका जप करनेके समय वे लोग इन महावीरोंके पवित्र नामकोभी जप करते हैं । राजपूतोंकी स्त्रियें आजतक सन्झ्यावाती करनेके समय जयमल और पत्तेकी याद करके अपने लड़का लड़कीका मंगल मनाया-करतीहैं, तथा गृहस्थोंकी लड़कियाँभी अटा पीसनेके समय भट्ठकविजनोंके बनाए-हुए उनकी वीरताके गीतोंको सुन्दर वाणीसे गाया करती हैं । जबतक इस संसारमें वीरताका आदर रहैगा, जितने दिनतक आर्यवीर राजपूतलोगोंके हृदयमें गतकालकी वीरताका एक किनकामात्रभी शेष रहैगा, बीते हुए चित्रकी एक रेखाभी उनके स्मृतिरूपी वस्त्रपर अंकित रहेगी, तबतक किसी प्रकारभी जयमल और पत्तेका नाम इस संसारसे लोप नहीं होगा—ऐसी किसीमें सामर्थ्य नहीं

× यथार्थनाम प्रताप था, परन्तु पत्ते कहा करतेथे ।

है जो इन वीरोंके नामको लोप करसके । जयमल और पत्तेने किसीके मोल लिये हुए उत्साह अपने उत्साहको नहीं बढायाथा—वा किसीके बढावा देनेसे उन्मत्त होकर वे चित्तौरमें प्राणदेनेको नहीं आतेथे; उनके उदार और महान हृदयनेही स्वदेशकी रक्षाके लिये उनको प्रेरण कियाथा । नहीं तो यशाकांक्षा या स्वार्थसाधनकी नीचप्रवृत्तिके वश होकर यवनोंसे संग्राम करनेके लिये तइयार नहीं हुए थे । यह भयानक संग्राम केवल पुरुषोंकाही संग्राम नहीं था, बरन अन्त-पुरमें रहनेवाली अनेक राजपूत ललनागणभी परदेको छोड़ छाड़कर अपने कोमल शरीरपर लोहवस्त्र पर ढाल तलवार ले चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमें गईथी ।

जिससमय शालुम्ब्रापति चंदावतवीर सहीदासने सूर्यद्वारपर गिरकर प्राण दिये, तब वीरवरपत्तेने वचेहुए चंदावत वीरोंकी सरदारीको ग्रहण किया । इस समय पत्तेकी आयु केवल सोलहवर्षकी थी, पिता गतयुद्धमें मारे गयेथे । पिताके मारेजानेके समय पत्तेकी आयु बहुतही छोटीथी, अतएव पुत्रका लालन पालन करनेके लिये माता पतिके साथ सती न होसकी । अकेला पुत्रहै, कैलवापतिका अकेला वंशधरहै, इसका लोपहोनेसे संसारसे जगवत गोत्रका नामभी लोप होजायगा । ऐसी अवस्थामें पुत्रका जीवन कितना मूल्यवानहै सो सरलतासे समझा जासकता है । परन्तु उसकी माता वीरपत्नी थी । पुत्रके प्राणोंकी अपेक्षा उसने चित्तौरके गौरवको अधिक मूल्यवान समझा । पीले कपड़े पहिराकर पुत्रको चित्तौरकी रक्षाके लिये भेजदिया । वह वीरपत्नी, वीरजननी होनेके अतिरिक्त स्वयंभी वीरनारीहै । यह चिन्ता उसके हृदयको पलभरके लियेभी व्याकुल नहीं करसकी कि पुत्रके मृत्युके साथ विपुल जगवत कुलभी अनन्त कालके लिये लोप होजायगा । वीरमाता केवल इतनेहीसे संतुष्ट थी कि मातृभूमिके लिये पुत्रका प्राण जाय और बराबर उसका यही व्रत रहै । इसही कल्पनासे संतोष प्राप्त करके उसने अपने प्यारे कुमारको प्राण होमनेके लिये संग्राममें भेज दिया और स्वयंभी वीरजननीका कर्तव्यसाधन करनेको तइयार हुई । अपनी सुकुमार-देह पर लोहेका वस्त्र पहिरा हथियार लगाये; संग्रामकी तइयारी करनेके समय उसको एक चिन्ता औरभी हुई । घरमें सुकुमारी बालक पुत्रवधूहै । ऐसा न हो कि कहीं पीछे वह कैलवा वंशके निर्मल माथेपर कलंकका टीका लगावै; इस कारण पत्तेकी माताने पुत्रवधूकाभी वीरवेष बनाया । समस्त गहने उतारकर शरीरमें लोहेका कवच पहिरा दिया और हाथमें तीक्ष्ण शूल देकर

उसको साथ लिये हुए पर्वतसे नीचे उतरी । और २ वीरवालाओंनेभी फत्तेकी माताका उत्साह देखकर समरवेषधारणकर रणभूमिको पयान किया । इन समस्त वीरवालाओंने श्रवणभयंकर रणवाजोंके साथ वीररस पूर्ण गीत गाते २ भयंकर रणचंडी मूर्तिसे मुसलमानोंकी सेनापर आक्रमण किया ।

चित्तौरके वीरगण चुपचाप और वज्राहतकी समान खड़े होकर विस्मय विस्फारित अचल नेत्रोंसे उन वीरनारियोंकी अलौकिक वीरताको देखने लगे । जिन्होंने किसी समयभी अन्तःपुरकी छायाको नहीं छोड़ा था, इतने दिनोंतक सुकुमार आचार व्यवहार करनाही जिनके जीवनका मुख्य उद्देश्य था, आज वे समस्त स्नेह, समस्त ममता और समस्त सुकुमार अनुष्ठानोंको पानी देकर घोड़ेपर सवार हो देशकी रक्षाके लिये प्रचंड मुगलसेनाके साथ संग्राम कर रही हैं ? राजपूत वीरगणोंने अपने नेत्रोंसे यह व्यवहार देखा; कि वीरवर पत्तेकी माताने अपनी पुत्रवधू तथा सहोलियोंके साथ समरमें जायकर बड़े २ मुगलवीरोंका संग्राम कर डाला तथा जब देखा कि अब यवनोंके हाथसे बचनेका हमें कोई उपाय नहीं रहा तब अपनी २ तलवारसे अपना २ हृदय छेदकर सदाके लिये उस संग्रामभूमिमें सो गई ।

अपनी कन्या, बहन और स्त्रियोंको यह अद्भुत रणरंग करके प्राण नेवछावर करते देखकर चित्तौरके वीरगण समस्त संसारीबन्धन और माया ममताको भूलकर उन्मत्तकी समान होगये । उन्मत्तकी समान झपटते हुए शत्रुकी सेनापर दौड़े । मुगलोंकी विशाल अनीकिनी प्रचंड वेगसे उफने हुए समुद्रकी समान भयंकर विक्रमके सहित चित्तौरके किलेकी ओर बढ़ने लगी । प्रलयकालीन मेघोंकी समान उनकी विकट तोपें जलते हुए गोलोंकी नेवछावर करके श्रवण-भैरव सिंहनादसे गर्ज उठीं । उन गोलोंके प्रहारसे सैकड़ों राजपूत खंड २ होकर आकाशको उछलने लगे—सैकड़ों राजपूत वीरोंकी वज्रमुष्टिसे विशाल धनुषबाण छूट पड़े ! इस प्रकार धीरे २ राजपूतोंकी सेना घटती गई; परन्तु वे तौभी निरुत्साह न हुए । उन्होंने किसी भांतिसेभी शत्रुओंकी शरणमें न जाना चाहा । शरण !—क्षत्रियकुलमें जन्म लेकर देशवैरी मुसलमानोंकी शरण ! धिक्कारके योग्य तथा नीच उपायका सहारा लेना राजपूतोंने उत्तम न समझा ! ऐसे जीव-नसे क्या प्रयोजनहै ?—शरणमें जाना तो दूर रहा, वह पापी चिन्ताभी तो राज-पूतोंके हृदयमें उदित नहीं हुई। स्वदेशरक्षा और आत्मोत्सर्गके वीरमंत्रसे उत्साहित हो-कर वे लोग उन्मत्तकी समान होगये, और हाथके तेजखड़को चला २ कर छूटे

हुए गोलोंमेंसे दो एक को काटकर वारंवार विकट सिंहनाद करने लगे । परन्तु उनका यह समस्त यत्न वृथा हुआ ! इतनेहीमें एक गोली आकर प्रधान सेनापति जयमलके हृदयमें लगी । गोलीके लगनेमें जयमल घोड़ेसे नीचे गिरा; भयंकर क्रोध और शत्रु सेनाके मारनेकी इच्छासे उसका वीर हृदय उन्मत्तकी समान होगया । कापुरुष शत्रुओंने एक नीच उपायका सहारा लेकर दूरसे उस वीरको मारा । इसका विचार करके किस सहृदयके हृदयमें पीडा न होगी ?

उस भयंकर संकटके समय—चित्तौरकी उस अनिवार दुर्दशाके समय धायल जयमल चित्तौरकी होनहार दशाका विचार करके चिन्ता करने लगा—उसने देखा कि, अरक्षणीय चित्तौरकी रक्षाका अब कोई उपाय शेष नहीं रहा ! दारुण मर्मवेदनासे उसका हृदय विदीर्ण होगया:—लाल २ नेत्रोंसे एक दो दूंद आंसुओंकी गिरी । विकटक्रोध और प्रतिशोध पिपासाके मारे वह वीर दांत पीसकर अकबरको वारंवार धिक्कार देने लगा । क्रमानुसार कराल काल निकट आन पहुंचा । उस समय वीरवर जयमलके सामने; उसकी दुर्दशाकी ओर प्राणप्यारी चित्तौरपुरीकी कठोर भाग्यलिखनकी निविड छाया वारम्बार घूमने लगी ! उस वीरने अपने अन्तिम जीवनको दर्प और गौरवके साथ त्याग करनेकी प्रतिज्ञा की । शीघ्रही जुहार व्रतका अनुष्ठान हुआ । इस ओर आठ हजार राजपूत एकसाथ “ वीड़ा ” * उठाय अन्तिम समयके पीले वस्त्र धारणकर एक दूसरेमें विदा हो, साहस और उत्साहके साथ मुगलसेनामें घुस पड़े । उसकाल दुर्गका द्वार खोल दिया गया; उस खुले हुए राजमार्गमें प्राणोंका मायामोह छांडे उन्मत्त राजपूतगण प्रचंड गिरिनदकी समान निकलकर शत्रुओंकी सेनाको दलित करने लगे । दोनों ओरकी अगणित सेना मारी गई ! परन्तु मुगलसेना तो अनंत थी, यदि कुछ वीर मारे गये तो भी उसकी कौनसी बड़ी हानि होसकतीहै । एक २ रक्तबीजका रुधिर निकलेसे शतशत रक्तबीज उत्पन्न होने लगे । ऐसी शक्ति किसमेंहै जो उन अगणित रक्तबीजोंकी गतिको रोक सकतहै ? मूल बात यह है कि चित्तौरकी दारुणदुर्दशा हुई। उस दुर्दशासे फिर चित्तौरमें उठनेकी सामर्थ्य नहीं रही। हम नहीं कह सकते कि फिरभी कभी चित्तौर उठेगा या नहीं ?

उसदिन—उस दुर्दिनमें पीले वस्त्र पहिरनेवाले किसी राजपूतने भी अपनी रक्षा करनेके लिये पापी यवनके हाथमें आत्मसमर्पण नहीं किया;—किसी राजपूतने भी

* विदा होनेके समय राजपूतगण यह “ वीड़ा ” या ताम्बूल ग्रहण किया करतेहैं ।

उन पवित्र पीले कपड़ोंको कलंकित नहीं किया—किसीने राजपूत-गौरव और माहात्म्यको जलांजलि नहीं दी। वीरजननी चित्तौरपुरी आज वीररहित होकर शोचनीय श्मशानकी भांति वनगई है—कनकनगरीकी आज शोचनीय दशा होरही है। आज तीस हजार राजपूत वीरोंने हृदयके रक्तको देकर—“जगद्धरु” “नरपाल” अकबरकी रुधिर प्यास बुझानेका यत्न किया और उसकी प्रचंड विद्वेषानलमें पतंगकीसमान दग्ध होगये। अगणित नरनारियोंके रुधिरकी कीचड़से चित्तौरके समस्त स्थान भयंकर होगये। उन स्थानोंके ऊपर शोणित लगे छिन्न भिन्न अगणित मृतक देह इधर उधर पड़े हैं! रुधिरकी उस कीचड़से अपने पांवोंको भिगोता, उन छिन्न-भिन्न मृतक देहोंको प्रसन्न चित्तसे ठुकराता हुआ—उस भयंकर चित्तौर श्मशानको औरभी अत्यन्त भयंकर करता हुआ; निठुर कठोर पाषाण हृदय अकबर चित्तौर के भीतर घुसा। देशविद्रोहके अनेक राजपूतोंके सरदार सामन्तने तथा १७०० (सत्रहसौ) राणाजीके अति निकटके सम्बन्धियोंने उस कुदिनमें चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये अपने प्राण देदिये केवल ग्वालियरके तुवर राजाने एक और होनहारकी कठोर लिपिका पालनकरनेके लिये उस भयंकर समरमेंसे अपने प्राण बचा लिये थे। नौ रानिये, पाँच राजकुमारियें, दो बालक और समस्त सरदारकुलकी स्त्रियोंने उसदिन उस कठोर सुहूर्तमें जुहार व्रतको समाप्त करनेके समय अथवा कठोर रणरंगमें अपने प्राणोंको बलिहार करदिया था। उस भयंकर दिनमें जो सत्यानाश चित्तौरका हुआथा वह भूलनेके लायक नहीं है जबतक इस संसारमें “हिन्दू” नाम अचल रहैगा, तबतक कोई इस सत्यानाशकी कहानीको नहीं भूलैगा। जिस दिन चित्तौरके ऊपर यह सर्व संहारकारी विपत्ति पड़ी, उसही दिन राजपूत स्वाधीनताकी महाशक्ति रूपिणी भगवती महामायाजी चित्तौरपुरीको छोडकर चलीगई। उसहीदिन, उस कराल “आदित्यवार” (रविवार)* के दिन, पवित्र गिहोटीकुलके अत्यन्त पूजनीय देवता भुवनप्रकाशक भगवान् दिननाथने, एकवार अपनी गौरवमय किरणका चित्तौरके ऊपर विसार करके सदाके लिये नेत्रबन्द कर लिये! उस दिनसे लेकर आजतक फिर वह सगौरव रश्मिपात किसीने न देख पाया! जो चित्तौर इतने दिनतक स्वाधीनता और सनातन धर्मका अभेद किला समझा जाता था, आज उसकी दारुण दुर्दशा हुई। जिसकी शोभा और सुन्दरता एक समय इन्द्रपुरी अमरावतीको लजाती थी, आज

* रविवार, चैत्रशुदी ११ के दिन संवत् १६२४ (सन १५६८ ई०) में यह भयंकर संग्राम हुआ था।

निटुर अकबरने उसको भूतप्रेतोंके ताण्डव नृत्यका स्थान बना दिया। शोचायमान अटारियं और सुन्दर मंदिरोंको चूर्णकरके धूरिमें मिला दिया ! जिन नगाडोंके भीम गंभीर शब्दमें गिल्लोट राजाओंका पुरीमें आना और बाहर जाना सूचित होता था । जो बड़े २ मोलके शोभायमान दीपवृक्ष भगवती विश्वमाता चतुर्भुजा देवीके मंदिरमें विमल प्रकाश विस्तार करदेते थे, और जो दर्शनीय किवाड चित्तौरके सिंहद्वारमें शोभायमान थे, निर्दयी अकबर अपनी छातीपर पत्थर रखके अपने भावी नगर अकबराबादको सजानेके लिये इन सबको अपने साथ ले गया।

अकबरने अपने हाथसे, जयमलका प्राण संहार किया था । जिस बन्दूककी सहायतासे उसने—यह कायर पुरुषोंकी समान कार्य किया था, उसका नाम 'संग्राम' रक्खा । * इस वृत्तान्तकी सत्यता अब्बुलफजल और बादशाह जहाँगीरके द्वारा प्रमाणित हुई है । यद्यपि अकबरने धर्महीन उपायसे जयमलका संहार किया था, परन्तु उसके गुणोंका भी ध्यान उसको विशेषतासे था । जयमलको मारकर अकबरनेअपनेको कृत्य २ समझा था । यहांक कि वीरवर जयमल और

× "तीजो शाखा चित्तौरा" अर्थात् "तीसरीबार चित्तौरका ध्वंस" होनेसे अकबरका हिन्दुविद्वेष और कठोर अत्याचार सूचित होता है । कारण कि अलाउद्दीन अथवा राजबहादुरकी क्रोधाग्निसे जो महल, मंदिर और स्तम्भादि टूटनेसे बचगए थे अकबरने उन सबकोभी धूरिमें मिला दिया था । ऐसा कहने हैं कि अकबर अत्यन्त शिल्पानुरागी और मनुष्यप्रेमी था, परन्तु चित्तौरकी तबाही—यह दोनों बातें मिथ्यासी जान पड़ती हैं । अलाउद्दीनकी चढ़ाईसे ऐसा कुछ बहुत अनभल नहीं हुआ था; कारण कि दुर्गरक्षाका भार एक हिन्दूराजाकोही दिया गया था और राजबहादुरने अपनी दुर्भिलाषाको सिद्धकरनेके लिये बहुतही कम समय पाया था । विद्वेष करके उस समयमें राजपूतलोग आने टूटे फूटे मंदिरोंका संस्कार करलेते थे । परन्तु अकबरके पश्चात् उनका यह भाव अधिकाईसे हीन हो गया था । अकबरके परवर्ती कालका इतिहास पढ़नेसे इस बातकी सत्यता विदित होगी । अकबरके पश्चात् तो राजपूतोंकी अपनी रक्षाकीही चिन्ता रहती थी । मंदिरादिके बनाने या मरम्मत करानेमें उनका अनुराग नहीं था । देशकी दीनताके समयमें कभी शिल्पकी उन्नति नहीं हुई । शिल्पशान्त्रिमें पारदर्शिता प्राप्त होनेपरभी जबतक उचित उपाय और श्रेष्ठ अवसर नहीं पाया जाता तबतक उस पारदर्शितासे कोई फल नहीं होता । अकबरके कठोर अत्याचारसे ध्वंस हो जानेपर फिर चित्तौरसे नहीं उठा गया; यही कारण है जो फिर चित्तौरकी पूर्वशोभा या सुन्दरताका उद्धार नहीं हुआ !

* " अकबरने जिस बन्दूकसे जयमलका संहार किया था, उसका नाम " संग्राम " रक्खा । संग्राम अत्युत्तम बन्दूक थी, इसकी सहायतासे अकबरने तीन चार हजार पक्षियोंका वध किया था।" जहाँगीर नामा ।

वीरबालक फत्तेकी लोकविस्मयकर वीरताको अचल रखनेके लिये उसने दिल्लीमें अपने किलेके सिंहद्वारपर एक ऊंचे चबूतरेके ऊपर उन दोनोंकी दो पाषाणमूर्तियों प्रतिष्ठाकी थीं । ×

कार्थेज नगरके भुवनविदित महावीर हनिबलके प्रचण्ड प्रतापसे कनानामक समरभूमिमें रूमवाले जिन सवारोंने प्राणत्याग कियेथे; विजयी हनिबलने उनकी अंगुठियोंको तोलकर अपनी जयका परिमाण निर्धारित किया था । वैसेही अकबरने मृतक राजपूतोंके यज्ञोपवीतोंको तराजूमें तोलकर अपनी जयका परिमाण प्रमाणित किया ! तोलमें वे समस्त यज्ञोपवीत ७४॥ मन हुए * ! चित्तौरकी शोचनीय दुर्दशाका वह प्रकाशमान उदाहरण—वह ७४॥ मन 'तिलक' अथवा शपथकी भांति उस दिनसे व्यवहारित होने लगे । वणिक, सेठ, गृहस्थ, प्रेमिक, सबही उसदिनसे उस शोणितमय ७४॥ चिह्नको अपने २ गुप्तपत्रके पीछे या

× दोसी पचास वर्ष पहिले इतिहास वेत्ता वर्नियरने भारतवर्षमें भ्रमण करनेके लिये आकर इन दोनों मूर्तियोंको देखा था । उसने भारतवर्षके सम्बन्धमें जो पत्र स्वदेशी मित्रोंको लिखे थे, उनमेंके अधिकांश पत्र सन् १६८४ई० में लंडननगरमें छपे थे । उनमें जयमल और फत्तेकी प्रतिमूर्तिका वर्णन जिस पत्रमें है वह १ जौलाई सन् १६६३ई० का लिखा हुआ है । वर्नियर कहताहै:—“ सिंहद्वारमें प्रवेशकरनेके समय द्वारकी दोनों बगलोंमें दो बड़े हाथियोंके अतिरिक्त देखनेयोग्य और कुछभी नहीं पाया जाता । उन हाथियोंमेंसे एकहाथीके ऊपर चित्तौरका राजा (जयमल) और दूसरेके ऊपर उसके भाई फत्ते (फत्ते) की मूर्ति है । इन दोनों साहसी वीरोंने अपनी वीरमाताके साथ संग्राम भूमिमें आकर बड़ी वीरता दिखाई थी । यह लोग ऐसे वीर और साहसी थे कि प्राण रहतेहुए शत्रुको शिर नहीं नवाया । इस गौरवके लिये शत्रुनेभी उनकी प्रतिमूर्ति प्रतिष्ठित की है ! राजभवनमें प्रवेश करतेही इन गजारूढ़ मूर्तियोंका दर्शन करनेसे मेरे मनमें एक अपूर्वभाव—भय, भक्ति और आनंद—मिश्रित एकउच्चभाव उदित हुआ था, कि जो मेरी समझमेंभी नहीं आया । ”

वर्नियर राजपूतोंके इतिहासको भलीभांतिसे नहीं जानता था; नहीं तो जयमलको चित्तौरका राजा और फत्तेको जयमलका भाई क्यों लिखता । किन्तु केवल इन दोनों वीरोंकी पाषाणमूर्ति देखकर जब कि उसके हृदयमें उपरोक्त गंभीरभाव उदय हुआ था, तब जिन्होंने अत्यन्त कष्ट और परिश्रम सहकर राजपूत जातिके इतिहासका उद्धार किया है, जिन्होंने जयमल और फत्तेके लीला क्षेत्रको अपने नेत्रोंसे देखकर उनकी चितावेदीके ऊपर भक्तिसहित वनके प्रसून दल चढ़ाये, वरन राजपूतोंके अर्थही जिन्होंने अपने जीवनको दे दिया; उन टाडमहोदयके हृदयमें कौनसा ऊंचा और महानुभाव उदय हुआ था, उसको इस इतिहासके पढ़नेवाले पाठकगण भलीभांतिसे जान लेंगे ।

* वह मन पके चारसेरका था । डौसाहवने इसको ४०सेरका मन बताकर कई जगह धोखा खाया है ।

भरनामेके कोनेमें लिखने लगे । इस साधारण तिलकांकके भीतर जो कठोर ज्ञपथ गुप्तभावसे वर्तमानहै, उसको कोईभी निरादर नहीं करसकता । पत्रपाने-वालेके सिवाय और कोईभी ७४॥ अंकलिखे हुए पत्रको नहीं खोल सकता । जो ऐसा करेगा उसको चित्तौरके ध्वंस करनेका पाप होगा।यद्यपि ऐसा वृत्तान्त इतिहासके लिये विशेष आवश्यकीय नहीं होता, तथापि इसके भीतर जो नैतिक तत्त्वहै, इसही कारणसे इतिहास इसका वर्णन करताहै । यह नैतिक उद्देश साधारण नहींहै; कारण कि इस साधारण ७४॥ अंकके भीतर जो गंभीरभाव विराजमान है, उसका विचार करके किस भारतवासीका हृदय एकप्रकारकी तीक्ष्णचिन्तासे उत्तेजित नहीं होजाता ?—ऐसा कौनहै जो वर्तमानको भूलकर अतीतके अधियारे झुँपमें प्रवेश करके उस दुर्दिनका, उसरुधिरसे रँगहुए चित्रको देख आवै ?

उदयसिंह चित्तौरको छोडकर गोहिललोगोंके पास चला गया । यह गोहिल-लोग राजपिप्पलीनामक गंभीर वनमें रहते थे । अत्यन्त कष्टसे वहांपर कुछ दिन व्यतीतकर वह गिह्लोटनामक स्थानमें चला गया, यह स्थान आरावलीकी शैलमाला भीतरहै । चित्तौरको जीतनेके पहिले उदयसिंहके पूर्वपुरुष वीरकंजरी बाप्पारावलने इसही स्थानके निकट अज्ञात वास किया था । इस वार चित्तौरके ध्वंस होनेसे कईवर्ष पहिले उक्त गिरिकी उपत्यकाके मध्य-भागमें उदयसिंहने एक विशाल झील वनवाईथी, और अपने नामके अनुसार उसका नाम उदयसागर रखवा । इस पहाडीतलैटीकी विशालछातीको धोती हुई बहुतसी छोटी २ नदियें कल २ नाद करती हुई बंकिमाकारसे वहीचली जाती हैं । उदयसिंहने इनमेंसे एक नदीकी धारको रोककर एक विशाल बांध स्थापन किया और उसके ऊपरवाले गिरित्रजके शिखरदेशमें “नवचौकी” नामक एक छोटा महल बनवाया । शीघ्रही इस महलके चारों ओर बड़ी २ अटारियें और महल बनगए । फिर एक छोटासा नगर होकर धीरे २ एक बड़ा नगर बस गया;—उदयसिंहने अपने नामपरही उसका नाम रखवा ।—इस प्रकार उस-दिनसे उदयपुर मेवाडकी राजधानी माना गया ।

चित्तौरध्वंसके चारवर्ष पश्चात् मर्माहत उदयसिंहने गोगुण्डानामक स्थानके मध्य ४२ वर्षकी उमरमें परलोकका मार्ग लिया । उदयसिंह जिससमय परलोक

वांसी हुए उस समय इसके पच्चीस (२५) पुत्र जीवित थे । यह लोग “राणा-वत्” नामसे विख्यात हो समयानुसार विशाल शाखा प्रशाखाओंमें विभक्त होगये । आज राणावत, पुरावत, अथवा कनौतगण उनकेही विस्तारित वंशतरुकी शाखा-प्रशाखा हैं । अन्त समयमें रीते शासन दंडके लेकर उदयसिंह अपने पुत्रोंमें विषम झगडेका बीज बोगया । सनातन उत्तराधिकारी विधिका निरादर करके वह अपने अत्यन्त प्यारे छोटे पुत्र-जोगमलकोही अपना उत्तराधिकारी निश्चय करगया । इससेही झगडेका सूत्रपात हुआ । सिद्धान्त यह है कि राणाजीके अभिप्रायानुसार जोगमलही मेवाडके राजसिंहासनपर बैठा । मेवाडके एक राजाका अन्त्येष्टी संस्कार और दूसरे राजाका राज्याभिषेक थोडेसमयमें ही पूर्ण होजाता है परिवारके लोग कुलपुरोहितके स्थानपर जाकर शोक करते रहतेहैं, और इस ओर नवीन भूपतिका अभिषेकोत्सव समाप्त करनेके लिये परिजन, पुरजन और मंत्रीगण राजभवनको अनेक प्रकारसे सजाया करते हैं । फाल्गुणमासकी वासन्ती पूर्णिमाके दिन जगमलके भ्राता उधर तो पिताका अन्त्येष्टी-संस्कार करनेके लिये इमशानमें गएहुए थे, उससमय जगमल उदयपुरके नवीन सिंहासनपर बैठा । परन्तु विधाताने उसके भाग्यमें राज्यका भोग नहीं लिखाथा । कारण कि जिससमय स्तुतिवादक और दूतोंने उसके सिंहासनपर बैठनेकी घोषणा की, उससमय इमशानके मध्य उसके पिताके शव देहके चारों ओर मेवाडके सरदारलोग एक गुप्त परामर्श कर रहेथे । उस गुप्त परामर्शका फल शीघ्रही सवने जाना । पाठकगण इस बातको जानते हैं कि राणा उदयसिंहने शोनगडे सरदारकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था । उस राजकुमारीके गर्भसे उदयसिंहके औरससे वीरश्रेष्ठ प्रतापने जन्म लिया । प्रतापके मामा झालौर राव अपने भानजेको मेवाडके राज्यपर अभिषेक करनेके लिये अत्यन्त व्यग्र हो उठे उन्होंने मेवाडके प्रधान सामन्त चन्दावत शिरोमणि कृष्णजीसे पूछा “ प्रतापने उपयुक्त उत्तराधिकारी होकर भी सिंहासन नहीं पाया, आपने जीतेजी इस अविचारमें कैसे सम्मति दी ? ” यह सुन सामन्तशेखर कृष्णने नम्र वचनोंसे कहा “ यदि रोगी अंतसमयमें थोडासा दूध पीनेको मांगे, तो क्या वह उसको न देना चाहिये ? ” कृष्णका स्वर क्रमशः गम्भीर होता गया तथा उसने फिर यह कहा कि “ रावजी ! आपके भानजेकोही मैंने मनोनीत कियाहै; मैं प्रतापके पार्श्वमेंही खड़ाहूंगा । ”

जगमल भोजनागारमें प्रवेश करके राणाके बैठनेकी ऊंची गद्दीपर बैठा; इस-
ओर प्रतापसिंह मेवाडराज्यको छोड़नेके लिये अपने घोड़ेको तैयार करने
लगे कि इतनेमें ज्वालियरके पदच्युत नरेशको साथ लेकर रावत कृष्ण उस
घरमें आया कि जहां भोजनागारमें जगमल बैठा हुआ था। प्रवेश करतेही
दोनोंने जगमलकी बांहें पकड़ीं और उनको गद्दीके सन्मुखवाले निचले आसन-
पर स्थित करादिया। राणाकी गद्दीसे उतारनेके समय सामन्त शिरोमणि रावत
कृष्णने धीर और मर्मभेदी वाक्योंसे कहा “ महाराज ! आपको भ्रम हुआ है;
इस आसनपर बैठनेका अधिकार केवल प्रतापसिंहको ही है। ” इसके उपरान्त
शालुम्त्रापतिने राजवेश और देवीजीके दिये हुए खड्गसे सजायकर प्रतापसिंहको
राज्यासनपर स्थापित किया तथा तीनवार पृथ्वीको स्पर्श करके
उनको मेवाडके राणा नामसे पुकारा। और भी जितने सरदार
तथा सामन्तथे उन सबने भी रावतकृष्णके कार्यका अनुमोदन किया। इस
मंगलमय कार्यके समाप्त होतेही नवीन राणा प्रतापसिंहने सब लोगोंको बुला-
कर कहा। “ आहेरिया उत्सव आपहुंचा; अतएव चलिये सबही घोड़ोंपर चढ़-
कर शिकार खेलें और भगवती गौरीके सामने वराहबलि देकर आगामी वर्षका
फलाफल जानें। ” परमानंदसे पुलकित होकर सबही शिकार खेलने लगे।
उन सबने अगणित वराहोंको संहार किया। उसदिन उस लीलायुद्धमें कृत-
कार्यता प्राप्त होनेसे सर्दारों लोगोंने देखा कि मेवाडके भाग्यमें आगेकोभी
मंगल सूचनाही लिखरही है।

दशम अध्याय १०.

प्रतापका सिंहासनपर बैठना;—अकबरके साथ राजपूत राजा-
ओंका मेल;—प्रतापकी दीनावस्था; युद्धकी तयारियें;—मालदेवका
अकबरके अधीनमें होजाना;—प्रतापका राजपूत राजाओंसे
सम्बन्ध छोड़देना;—अम्बरके राजा मानसिंह;—राजकुमार
सलीमकी मेवाड़पर चढाई;—हलदीघाटका युद्ध;—सलीमके
सामने आकर प्रतापका घोरयुद्ध;—प्रतापका घायल होना;—
झालालदरका प्रतापसिंहको बचाना;—प्रतापके भ्राता शक्त-
सिंहका भाईसे साक्षात्, प्रतापपर शक्तसिंहकी अनुकूलता;—
अकबरका कमलमेरको जीतना;—मुगल सेनाका उदयपुरपर
अधिकार;—मुगलसेनापति फरीदका सेनासाहेत प्रतापसिंहके
हाथसे मारा जाना;—भीलोंके द्वारा प्रतापसिंहके परिवारकी
प्राणरक्षा;—खानखाना;—प्रतापपर महासंकट;—अकबरके साथ
प्रतापसिंहकी संधि सूचना;—बीकानेरके राजकुमार पृथ्वी सिंह;—
खुशरोजका वृत्तान्त, मेवाड़को छोड़कर प्रतापसिंहका सिन्धु-
नदीकी ओर जाना;—उनके मंत्रीकी प्रभुपरायणता;—प्रतापका
लौट आना;—एकाएक मुगलोंपर चढाई कर देना;—
प्रतापसिंहके द्वारा कमलमेर और उदयपुरका पुनरु-
द्धार;—उनका विजयगौरव;—उनकी पीड़ा
और मृत्युका वृत्तान्त ।

शिरोदीयकुलकी महान मान मर्यादा और राजपदवीको पायकर राणा-
प्रताप मेवाड़के विशाल राज्यपर अभिविक्त हुए । परन्तु उनपर राजधानी, सहाय,

बल, उपाय अवलम्बनादि कुछभी नहीं । बराबर २ विपत्तियोंके पडनेसे उनके समस्त सरदारलोग निस्तेज होगए थे, परन्तु निडर प्रतापसिंह इससे किंचित्भी भयभीत न हुए । उनका हृदय पितृपुरुषोंके वीरमंत्रसे दीक्षित था, उनकी तेजस्विता उनमें भरीहुई थी । उन अपूर्व राजगुणोंसे शोभायमान रहनेके कारण दिनरात यह चिन्ता करते रहतेथे कि किस प्रकारसे चित्तौरके नष्टहुए गौरवका पुनरुद्धार होगा ? किस प्रकारसे अपने बड़े बूढ़ोंके बलको प्राप्त करके अपमानकारी यवनोंके अत्याचारोंका फल दिया जायगा ? यह चिन्ता जैसे २ बलवती होने लगी वैसे २ ही उनका हृदय नवीन साहस और उत्साहसे दृढ़ होगया । तथा वह महामंत्रके सिद्ध करनेका उपाय देखनेलगे । वह निश्चय जानतेथे कि इस साधनाके प्रतिकूलमें अगणित विद्वान विराजमान हैं । उनको ज्ञातथा कि मेरे पास सहायसेना या द्रव्य कुछभी नहींहै और मुगल बादशाह अकबर विपुलबल उत्पन्नहै । यह जानकरभी राणा प्रतापसिंहने अकबरके विरुद्ध द्विगुण उत्साहसे खड्ग धारण किया था ।

स्वदेशीय भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंमें अपने पितृपुरुषोंकी अलौकिक वीरता और महानताका वृत्तान्त पढ़कर प्रतापसिंहको ज्ञात हुआथा कि गिल्लोटवंशके राजालोगोंने किसीसमय शत्रुके आगे माथा नहीं नवाया । कठोर विपत्तियोंमें पडकरभी उन्होंने कभी देशवैरीको शरणमें जाना स्वीकार नहीं किया । यद्यपि शहाबुद्दीनादि निष्ठुर मुसलमानोंके विद्वेषसे कईबार चित्तौर ऊजड होचुकाथा, तथापि चित्तौर उनके अधिकारमें नहीं हुआथा । अधिकार करना तो एक ओर रहा उलटा कईएक मुसलमान बादशाहोंको चित्तौरके जेलखानेकी हवा खानी पडीथी । अब क्या उस चित्तौरपुरीका उद्धार नहीं होगा ? क्या चित्तौरविजेता अकबरका प्रचण्ड गर्द कभी चूर्ण नहीं होगा ? प्रतापको भलीभांतिसे विश्वासथा कि यद्यपि आज चित्तौरको शत्रुओंने ग्रास कर लियाहै, यद्यपि आज अकबरको महानगौरव प्राप्त हुआहै, परन्तु परिश्रम और चेष्टाकरनेपर एकदिन अवश्यही चित्तौरका उद्धार हो जायगा; संभवहै कि अदृष्ट चक्रके अनिवार्य परिवर्तनसे मुगलबादशाह अकबर उस ऊँचे आसनसे पाताल तोड कुण्डमें गिरे । ऐसा हो सकताहै कि मैं ही अकबरके सिंहासनको डांवाडोल करदूं । वीरश्रेष्ठ प्रतापके ऐसे संस्कारको कभीभी न्यायविरुद्ध या भीरु सुलभ नहीं कहा जा सकता । परन्तु दुर्भाग्यसे इनके विरुद्ध जो अगणित विघ्न धीरे २ उत्पन्न होरहे थे, चतुर अकबरने गुप्तभावेसे बैठेहुए उनका उद्यम व्यर्थ करनेके लिये जो चक्र चलाया था, प्रताप-

सिंहको यह समाचार विदित नहीं था । जिस समय यह अपने मनहीं मनमें इस संस्कारके वश होकर आज्ञावेलको बढा रहेथे; उस समय प्रचंड वैरी अकबर प्रतापसिंहका समस्त उद्यम व्यर्थ करनेके लिये उनके जातिवालोंको वरन उनके परिवारवालोंको भी लोभमें फँसायकर उनसे युद्ध करनेके लिये उभाड रहाथा । मारवाड; अम्बेर और बीकानेरके राजकुमारगण—यहांतक कि मेवाडका दृढमित्र बूंदीराजभी, मुसलमानोंके लोभमें फँसकर स्वदेश और स्वजातिके विरुद्ध, खड्ग धारण करनेको तइयार हुए । सबसे अधिक दुःखकी बात यहहै कि प्रतापसिंहका भाई सागरजीभी * उन स्वदेशद्रोही कापुरुषोंकी भांति अपने भ्राताका सत्यानाश करनेको तइयार हुआ सागरजीने भ्रातासे विश्वासघात करके बादशाहसे इसके बदलेमें अपने पितृपुरुषोंकी प्राचीनराजधानी और राज्योपाधिको पाया था।

इन अशुभ समाचारोंको प्रतापसिंहनेभी सुना; जिस समय उन्होंने जाना कि स्वदेशीय और सजातीयगण और कुटुम्बपरिवारके लोगभी मुसलमानोंकी ओर होकर मुझसे संग्राम करनेको तइयार हुएहैं, तब वह अत्यन्तही दुःखित हुए वारम्बार उन लोगोंको धिक्कारदेने लगे, परन्तु अपने महामंत्रको और अपनी प्रतिज्ञाको एक पलभरके लियेभी न भूले । उनका उत्साह बराबर बढताही गया । बड़ी २ विपत्तियें जैसेर बढने लगीं जैसेही उनका हृदय अधिकरदद होने लगा । शत्रुका गर्व खर्व करनेके लिये वह तैसेही तैसे तइयार होने लगे । प्रतापसिंहकी प्रतिज्ञा थी कि “माताके पावत्र दुग्धको कभी कलंकित न करूंगा ।” इस प्रतिज्ञाका पालन उन्होंने पूर्ण प्रकारसे किया था इसही प्रतिज्ञाके बलसे बलवानहो उन्होंने अकेलेही पच्चीसवर्षतक मुगलोंके गर्वको गिराया और उनकी सेनाका सत्यानाश किया इस लोक विस्मयकर कार्यके करनेमें उनको अनेक संकटोंका सामना करना पड़ा था । विना निद्रा और विना भोजनके अनेक दिन ऐसेही बिताने पड़ेहैं । इस लम्बे समयमें कभी तो भयंकर विक्रमके साथ जनस्थानोंको घेरकर उजाड करदेते और कभी एक पर्वतसे दूसरे पर्वतपर कभी एक वनसे दूसरे वनमें भागकर

* कन्धरनामक दुर्ग सागरजीके अधिकारमें था । इनकी सन्तानसन्तति सागरौत नामसे विख्यात हुई ।

उन्होंने अम्बेरके विख्यात राजा सवाई जयसिंहके समयतक इस कन्धराकिलेको अपने अधिकारसे रक्खाथा । सवाई जयसिंहके समयमें इन्होंने अम्बेरके कछवाहकुलके साथ विवाह करना स्वीकार न किया, इसकारण महाराज जयसिंहने उनसे यह दुर्ग छीन लिया । मध्यभारतमें इनलोगोंने बहुतसे जनपद अपने अधिकारमें करलिये थे । उन जनपदोंमें ऊमरी, भदौडा, गणेशगंज और दिगदोली विशेष प्रसिद्ध हैं ।

अपने प्राण वचाते, कभीर असावधान शत्रुसेनापर गिरकर उसका ध्वंस कर डालते और कभी सघन वनोंमें जायकर छिप जाते थे। इस विपत्तिकालमें उनके परिवारको और बालकपुत्र अमरसिंहको अत्यन्त कष्ट होता था। राजाओंके योग्य भोजन न मिलनेसे केवल कड़वे कषैले खट्टे मीठे कंदमूलफलपर ही उनको निर्वाह करना पड़ता था। जिन्होंने कभीभी राजभवनके बाहर पाँव नहीं रक्खा था आज वहभी वन में पैदल घूमते हैं; काँटोंके लगनेसे पाँव लोड्डुहान हो रहे हैं। हा ! इससे अधिक और कौनसा दुःख हो सकता है ! ऐसी कठोरता, ऐसी विपत्ति और कौनसा मनुष्य सहन कर सकता है ? ऐसा कौनसा मनुष्य है जो बराबर पच्चीसवर्ष तक कभी भोजन पायकर, कभी उपवासी रहकर—देशोद्धारके पवित्रमंत्रको साधन कर सकता है ? प्रताप देवता है;—मनुष्यकुलमें देवता है;—इस पुण्यक्षेत्र भारतवर्षका म्लेच्छग्रामसे उद्धार करनेके लिये ही भूमंडल पर प्रतापका अवतार हुआ था। यद्यपि उनका वह पवित्र उद्देश सिद्ध नहीं हुआ था; यद्यपि भारतके दुर्भाग्यसे वह जननी जन्मभूमिका समस्त दुःख उनसे दूर नहीं हो सकता था; तथापि इस कार्यको सिद्ध करनेके लिये जो कठोर वीरता उन्होंने प्रगट की थी, जो अद्भुत आत्मत्याग स्वीकार किया था, उसहीसे उनको स्वदेशप्रेमी सन्यासियोंके बीचमें सबसे ऊँचा आसन दिया है। इस भयंकर संकटमें पड़कर भी वह अपने मंत्रका ध्यान नहीं भूले थे एक पल भरकोभी अकबरके अनुग्रहकी प्रार्थना नहीं की थी। वीरवन्दनीय बाप्पारावलका वंशधर क्या एक म्लेच्छके सामने शिर झुकावेगा ? स्वाधीनताके हरनेवाले, हिन्दू-विद्वेपी म्लेच्छके अनुग्रहकी कामना करेगा ? कायरोंके योग्य इस पापमयी चिंताका विचार आनेसे भी प्रतापसिंहका हृदय टुकड़े हो जाता था ! उनके अनन्त विक्रमको न रोक सकनेके कारण अकबरने कईवार सन्धिके लिये कहला भेजा था। परन्तु वीरवर प्रतापसिंहने घृणाके सहित उस सन्धिप्रभावको अग्राह्य करके कहा था “क्या-? संधि ? स्वाधीनताको चुरानेवाले मुगलतस्करोंके साथ सन्धि ? इस सन्धिकी क्या अर्थ है ? क्या दासत्व और पराधीनता इस सन्धिकी नामान्तर नहीं है ? ” सिद्धान्त यह हुआ कि उन्होंने किसी प्रकारकी सन्धिको स्वीकार न किया। उनके स्वदेशवाले राजपूत कुलकलंकोंने अपनी वहन और कन्यायें तातारवालोंको समर्पणकर उनके अनुग्रहको प्राप्त किया था यद्यपि अकबरके पास महती सेना थी, धनभी बहुत था, तथापि वीरवर : प्रतापसिंहने उसके किसी प्रस्तावको ग्राह्य नहीं किया। वरन जिन लोगोंने मुगलोंके साथ

वैवाहिक सम्बन्ध स्थापन करदिया था, शिशोदीय वीरने उनसेभी समस्त नाता रिश्ता तोड़दिया । महाराजा प्रतापसिंहके लोक विस्मयकर वीरत्व और अद्भुत कार्योंका ज्वलन्त निदर्शन आजतक मेवाडकी प्रत्येक उपत्यकामें प्रकाशमान होकर विराजमानहैं । उनके वह अपूर्व अनुष्ठान आजतक प्रत्येक राजपूतके हृदयमें सजीव होकर विराज रहेहैं, आजतक प्रत्येक राजपूत भक्तिपूर्ण हृदयसे उस महामंत्रका ध्यान किया करताहै । क्या पृथ्वीमें कोई ऐसा मनुष्य है कि जिसका हृदय उस पवित्र मंत्रका जप करते २ प्रतापकी अनुपम वीरता और महानतासे नहीं उमड़ आताहै ? प्रताप ऐसे गुणसंपन्न भूपालथे कि शत्रुओंने भी अपने इतिहासोंमें उनका प्रशंसा लिखीहै । यदि आजभी कोई पुण्यक्षेत्र मेवाड भूमिमें जाकर उन सामन्त और सरदारोंके वर्तमान वंशधरोंसे उस अद्भुत वीरत्व और महत्वका वृत्तान्त पूछे तो आजतकभी वे लोग उत्साहके साथ उनगुणोंका वर्णन करते २ आँसुओंकी धार बहाया करतेहैं । हाय ! जिन्होंने उस पवित्र भूमिके दर्शन नहीं कियेहैं, जिन्होंने स्वदेश-प्रेमिक संन्यासीश्रेष्ठ प्रतापसिंहकी पवित्र लीलाभूमिमें भ्रमण नहीं कियाहै, वह नेत्ररहते हुएभी अन्धे हैं; ऐसे आदमी तो प्रतापसिंहके इन स्मरणीय कार्योंको उपन्यास या कहानी समझेंगे ।

यद्यपि अनेक राजपूतोंने लोभवश होकर मुसलमानोंका पक्ष ग्रहण कियाथा, तथापि प्रतापसिंह सहायहीन नहीं हुएथे; उन्होंने बड़ी ऊँची सहायता पाई थी विपुलधन देकर अथवा लोभ दिखलानेसे राजाकोभी जो सहायता नहीं मिल सकती, प्रतापसिंहको वही सहायता मिली थी। वह सहायता और अनुकूलता पवित्र और स्वर्गीय थी; वह पवित्र हृदयकी पवित्र सहानुभूति थी। उनपर अनुराग करनेवाले सरदार और सामन्तोंने इस सहानुभूतिको प्रकाश करके अनुकूलता दानकीथी। क्रूर कर्मकारी अकबरने उन सरदार और सामन्तोंको इस कारणसे बहुत लोभ दिखाये कि वे प्रतापका साथ छोड़दें। किसी २ को धनसम्पत्तिदान करनी चाहीथी, और किसीकिसीको एक २ राज्य देना स्वीकार किया था; परन्तु सबही वृथा हुआ; किसीने इसलोभमें ध्यानभी नहीं दिया । चंड, जयमल, तथा फते प्रभृतिके वीर वंशजोंने कठोर विपत्तिमें पड़करभी प्रतापकी छायामें खड़े होकर प्रसन्न वदनसे अपने हृदयका रुधिर दान कियाथा इनकी वीरता, माहात्म्य, और स्वार्थत्यागका वृत्तान्त मेवाडके इतिहासमें अत्यन्त गौरवमय समझा जाताहै ।

चित्तौरनगरीकी जो कुछ सुन्दरताथी और जो कुछ शोभा थी वह समस्त अकबरकी क्रोधाग्निमें भस्म होगई थी। चित्तौरकी ऐसी दीनदशा देखकर भट्टकवि गणोंने उसको “वमन भूषणहीन विधवा स्त्री” के नामसे वर्णन कियाहै। जिस प्रकार माताके परलोक होजानेसे पुत्रगण चैन आरामका सम्बन्ध त्याग कर देतेहैं, स्वदेशप्रेमिक प्रतापनेभी वैसेही जननी जन्मभूमिकी पराधीनता शोकसे अत्यन्त कायर हां सर्व प्रकारके भोगविलासको त्याग दिया था, सोने चांदीके वर्तन, जो भोजनपानमें व्यवहार किये जाते थे उनको दूर फेंककर वृक्षोंके पत्तोंके पात्रव्यवहार करनेलगे, सुखदायी कोमल शय्याको छोड़कर कठिन तृणशय्यापर शयन करनेलगे। उन्होंने अकेलेही इन समस्त विलासोंको नहीं छोड़ दियाथा वरन अपने वंशवालोंके लियेभी इस कठोर नियमका पालन करनेके लिये आज्ञा दी थी कि जबतक चित्तौरपुरीकी दुर्दशा दूर न हो, जबतक चित्तौरकी स्वाधीनताका उद्धार न हो तबतक प्रत्येक शिशोदिया राजपूतको शोकके इन चिह्नोंका व्यवहार करना चाहिये और समस्त सुखोंको छोड़ना उचितहै। केवल इतनाही नहीं वरन जिससे चित्तौरका यह शोकावह दुर्भाग्यचित्र मेवाडवासियोंके हृदयमें भलीभांतिसे अंकित होजाता, इसके लियेभी राणाजीने एक उत्तम उपाय निकाला। चित्तौरकी वर्तमान दुर्दशाके होनेसे पहिले राणाकुलके रणदमामें सेनाके सामन वजाये जाते थे, परन्तु प्रतापसिंहने आज्ञादी कि “इस समयसे इन रणदमामोंका सबसे पीछे वजाया जाया करे।” परन्तु विधाताके कठोर विधानानुसार मेवाडका पूर्वगौरव उद्धार न हो सका। परन्तु यह आदेश-विशेष करके पहिला आदेश तो अवतक प्रतिपालित होता आयाहै। आजतकभी शोक वाद्योंकी समान वह रणदमामें मेवाडकी सेनाके पीछेही वजा करते हैं। आजतक राजपूतलोग अपनी डाढ़ी मूछोंपर अस्तुरा नहीं छुआते हैं। यहांतक कि यद्यपि उस आज्ञाके अनुसार आजकल उन वीरोंके सजातिगण अपने पूर्वजके आज्ञाके प्रति क्रमानुसार श्रद्धाहीन होते जाते हैं तथा सोने चांदीके वर्तन व्यवहार करते हैं, कोमल विस्तरेपर शयन करतेहैं, परन्तु उस आज्ञाको संपूर्णतः अवगत नहीं भूल सकेहैं। तथापि अवतक वीरवर प्रतापके वंशधर उन सोने चांदीके वर्तनोंके नीचे एक २ तरुयत्र और एक एक तिनका रखदेते हैं।

मातृभूमिकी इस शोचनीय दुर्दशाको देखनेसे अत्यन्त कातर हो वीरकेशरी प्रतापसिंह सदा यह कहा करतेथे कि यदि उदयसिंह उत्पन्न न होते, अथवा संग्रामसिंह या उनके बीचमें कोई शिशोदियाकुलमें उत्पन्न न होता तो कोई भी तुरकराजस्थानको

आधीनताकी वेदियोंसे नहीं जकड़ सकता । उस दशाका विचार करनेपर—कि जिसमें हिन्दूलोग उस समयके प्रतापसिंहके उस वीरोचित वाक्यका ठीक २ अर्थ भलीभांतिसे समझमें आजायगा उनके राज्याभिषेकसे पहिले, सौवर्षके मध्यमें हिन्दू-जातिका एक नया चित्र दिखलाई देता है । गंगा व जमुनाकी रेतीसे लेकर आरावली शैलमालातकका देश जो मुसलमानोंके कठोर अत्याचारसे ऊजड़ हो गया था, प्रतापके अभिषेकित होनेसे पहिले उपरोक्त १०० वर्षके बीचमें वह एक नवीनबलसे वलवान होकर धीरे २ अपने मस्तकको उठा रहा था । अम्बेर और मारवाडभी इस विशाल देशके अन्तर्गत थे । इन दोनों राज्योंके गजालोग धीरे २ इतने वलवान होगये थे कि अकेले मारवाडके राजानेहीं दिल्लीश्वर शेरशाहके विरुद्ध खड़ा धारण किया था । इन दो देशोंके अतिरिक्त चम्बलनदके उत्तर तीरपर बसे हुए बहुतसे छोटे २ राज्यभी बलसंग्रह करके उन्नति कर रहे थे । पहले ही कह आए हैं कि इन राज्योंके स्वामी हिन्दूराजा थे । हिन्दुओंकी उन्नति और भारतवर्षकी लक्ष्मीका बढ़ाना ही इन लोगोंका अभिप्राय था । उन सब लोगोंका बलविक्रम अधिकाईसे बढ़ गया था, परन्तु एक अभावभी उन लोगोंमें विशेषतासे था । यदि वह अभावभी पूरा होजाता तो वे निश्चयही भारतके राज-मुकुटको यवनोंके शिरसे उतार लेते और अपने जातिगौरवको उन्नतिके शिखरपर पहुँचाते, साहस, बल, विक्रम, धन सबही कुछ उनके पास था, परन्तु इन शक्तियोंको मिलायकर एक महा-शक्तिको उत्पन्न करके श्रेष्ठ राजनीतिके अनुसार उस शक्तिको शत्रुओंपर चला-नेके लिये एक सेनापति का अभाव था ! यह कहना उचितही होगा कि वीरश्रेष्ठ राणा सांगाजीको पायकर उनका वह प्रभाव भलीभांतिसे दूर हो गया था । संग्रामसिंहके महान कुलगौरव, राजमर्यादा और वीरोचित गुणग्रामोंका विचार करनेसे कहना पड़ता है कि वे इस कठिनकार्यके करनेको सबप्रकारसे योग्य थे । जिन ऊँचे गुणोंका परिचय प्राप्त होनेसे मनुष्यके हृदयरूप स्रोतसे स्वयंही भक्ति और प्रीति उत्पन्न हुआ करती है, वीरवर संग्रामसिंहमें वह समस्तगुण वर्तमान थे । हिमालयसे लेकर सेतुबंध रामेश्वरतक सबनेही राणा संग्रामसिंहके गुणोंकी प्रशंसा की थी । समस्त भारत संताननेही उनको भारतका उद्धार करनेवाला जानकर हृदयको अनन्त आशासे पूर्ण कर लिया था । परन्तु सबही वृथा हुआ; अभागिनी भारतभूमिके भाग्यमें बहुतसमयके लिये यवनोंकी दासी होनेका लेख लिख गया था । महाराणा संग्रामसिंह अकालमेंही इस लोकसे विदा हो-कर स्वर्गको सिधारे इकट्ठा हुआ वह बल विक्रम और जातीयजीवन धीरे २ नष्ट होता

गया। आर्यगण पैतृक राज्यसे संपूर्णतः अलग हुए। भविष्यपुराणकी कठोर लिखन सफल हुई; भारतसन्तानके पावोंमें सदाके लिये कठोर वेडियां पडगईं। यदि संग्रामसिंहके पीछे उदयसिंहका जन्म न होता, यदि संग्रामसिंहके पीछे तत्कालही शिशोर्दीयकुलका शासनदंड प्रतापसिंहके हाथमें समर्पण किया जाता, अथवा यदि अकबरकी अपेक्षा कम समर्थवाले मुसलमानके हाथमें भारतका शासनदंड दिया जाता, तो भारतकी ऐसी दुर्दशा कभी न होती।

अकबरके पास बड़ीभारी सेना थी, प्रतापकी सेना बहुत थोड़ी थी, थोड़ी सेनाको लेकर किसप्रकार अकबरसे युद्ध करना चाहिये, किस उपायके करनेसे कार्य ठीक २ होगा, इसका उपाय निश्चय करनेके लिये प्रतापसिंहने अपने बुद्धिमान सरदारोंको बुलाकर परामर्श की तथा परामर्श निश्चय होनेपर उसके अनुसार कार्यकरना आरंभ किया। समयोपयोगी कार्यकी आवश्यकताका वर्णन करके वह सामन्तोंको नई २ भूमिवृत्ति दान करने लगे। प्रयोजन समझकर कमलमेरमेंही प्रधान राजपाट स्थापन किया, तथा साथ २ में कमलमेर, गोगुन्डा व औरभी पहाड़ी किलोंकी मन्समत करली। अल्पसेना होनेके कारणसे मेवाड़की समतलभूमिमें सेनाकी रक्षा करना प्रतापसिंहके विचारमें ठीक नहीं जचा। इस कारण उन्होंने अपने पितृपुरुषोंकी श्रेष्ठ रीतिका अनुसरण करके सघन और दुर्गम पहाड़ी स्थानोंमें अपनी नेनाके मोरचे जमाये। तथा शीघ्रही इस मर्मकी आज्ञाका प्रचार किया कि “जिस किसीको हमारी अधीनता स्वीकार करनी हो वह शीघ्रही वस्तीको छोड़कर परिवार सहित पर्वतोंमें आश्रय ग्रहणकरे; नहीं तो वह शत्रु समझा जायगा—और प्राणदंडसे दंडित होगा।” इस आज्ञाके प्रचारित होतेही प्रजागण अपने २ स्थानोंको छोड़कर दलकेदल मेवाड़की पर्वतमालामें जाकर बसने लगे। अगणित प्रजाके चलेजानेसे मेवाड़के मार्ग और घाट पूर्ण होगये। थोड़े दिनोंके बीचमें ही मेवाड़के अधिकांश स्थान सूने होगये। यहांतक कि वुनस और बेरिस नदीके विमल जलसे सींचेजानेवाला उपजाऊ और शोभायमान विशाल भूभाग सम्पूर्ण “वेचिराग” अर्थात् निष्प्रदीप होगया!!

जैसी कठोरताके साथ प्रतापसिंहने अपनी प्रजाको इस कठोर विधिका अनुसरण करनेके लिये बाध्य किया था, उसका बहुतसा वृत्तान्त भट्टग्रंथोंमें पाया जाता है। इस बातकी परीक्षा करनेके लिये—कि हमारी आज्ञाका भलीभांतिसे पालन होताहै या नहीं, प्रतापसिंह कितने एक सवारोंको साथ लेकर एकान्त

गिरिनिवासको छोड़कर पर्वतके नीचे आते और सब स्थानोंको भलीभांतीसे देखभालकर दुर्गम पर्वतवासमें चले जाते थे । पहिले जो बस्ती आदिमियोंके कुलाहल और आनंद ध्वनिसे सदा गुंजारती रहती थी और सजीव जान पड़ती थी, आज मौन, नीर्जीव और मरुभूमिकी समान होगई । जिन स्थानोंमें अंगना-कुलके विमलहास्य ज्योतिसे सदा उजाला रहता था, आज वह स्थान विषादके अंधकारसे भरा हुआ है ! जो खेत सांवरी नयनस्निग्धकारी हरी २ सुन्दरतासे लहरें लिया करते थे वे समस्त जंगली घास फूससे परिपूर्ण होगये । जो चौड़े २ मार्ग मनुष्योंके समागमसे परिपूर्ण रहते थे आज उनपर कटेरी और बबूरके वृक्ष उत्पन्न होगए ! आज मेवाडकी वह सुन्दरता सम्पूर्णतः जाती रही । जिस सुन्दरताके प्रभावेसे मेवाडभूमि, मनमोहन नन्दनकाननकी समान सुखकर होगई थी आज उसकी वह सुन्दरता सब प्रकारसे नष्ट हो गई । सुखदायक नन्दनकानन आज शोकदायक श्मशान वनगया । मेवाडभूमिकी जिन अटा अटारियोंमें देवसुन्दरियोंकी समान खियें रहा करती थीं, आज वहांपर हिंसक जन्तु रहने लगे । राणा प्रतापसिंह इस प्रकारकी मेवाडभूमिकी रती २ करके परीक्षा करने लगे । एक समय वह अपने सेवकोंको साथ लिये हुए अन्तल्लानामक स्थानमें—जो कि बुनस नदीके तीरपर बसा हुआ था—भ्रमण कर रहे थे । उस समय उन्होंने देखा कि—एक अजपालक उन उपजाऊ खेतोंमें निर्भय होकर वकरीयें चरा रहा है । अभाग्ये चरवाहेने समझा था कि मुझे कोईभी नहीं देख पावेगा; इसही कारण अपने राजोंकी आज्ञाका निरादर करके निर्भय होकर घूम रहा था । राणाजीने, राजाज्ञाका अपमान करनेके कारण—दो चार प्रश्न करके उसे प्राणदंड दिया तथा राज विद्रोहियोंको ऐसा दंड दिया जाता है, इसके दिखानेको उसकी मृतक देह एक वृक्षपर टांग दी । प्रतापसिंहकी इस कठोर आज्ञाके कारणसे मेवाडकी सुन्दरभूमि श्मशानकी समान होगई थी ! अतएव फिर उस श्मशान भूमिपर यवनोंके दांत पड़नेको कोई शंका न रही । अर्थागमके समस्त उपाय प्रतापसिंहने छोड़ दिये थे, परन्तु इस समय अकबरके साथ जो भयंकर समय आरंभ किया जायगा, उसमें बहुतसे धनकी आवश्यकता है; प्रतापसिंहके पास उतना धन कहां है ? परन्तु उनके सरदारोंने धनके लिये एक दूसरा उपाय किया । उस समय योरूपवालोंके साथ मुगलोंका वनज व्यापार भलीभांतिसे चल रहा था । वाणिज्यकी सामग्री मेवाडके भीतर होकर सूरत या और किसी बन्दरमें जाती थी । सरदारलोग अवसर पाकर उस समस्त सामग्रीको लूटने लगे ।

हिन्दू मुसलमानोंमें घोर समराग्नि प्रज्वलित हुई। एक ओर तो मुगल सम्राट् अकबरकी बड़ीभारी अनीकिनी बनीठनी हुई थी—दूसरी ओर अकेले प्रतापसिंह—केवल साथमें थोड़ेसे सरदार थे। प्रायः समस्त राजपूत जाति और समस्त भारतवर्षने अकबरके चरणोंमें शिर झुका दिया था। उन अभागे राजपूतलोगोंका उद्धार करनकी वासनासे वीरकेशरी प्रतापसिंहने अकेलेही मुगलोंसे युद्ध करनेका विचार किया। यदि अकबरकी प्रचंड सेनाके साथ मिलान किया जाय—तो प्रतापसिंहकी सेना कुछभी नहीं थी। परन्तु उस थोड़ीसी राजपूतसेनाकी नाडियोंमें सनातनवीरांका रुधिर विजलीके प्रवाहकी समान प्रवाहित होरहा-था; उसके हृदयमें जो महामंत्र जपा जाता था, वह साधारण नहीं था। उस महामंत्रकी उत्तेजनासे वह समस्त राजपूतलोग स्वदेशके लिये अपने प्राणदेनेको तैयार होगए। उस ओर अकबरभी अपनी प्रधान सेनाको अजमेरमें स्थापित करके प्रतापसिंहसे युद्ध करनेके लिये आया। अकबरने लडाईकी ऐसी प्रचंड तैयारियां की थीं कि जिनको देखकर मारवाडका राजा मालदेव, अकबरके राजा भगवानदासकी समान मुगलोंकी शरणमें चला आया। इससे पहिले जिसने शेरशाहसे बलीका प्रचंड विक्रम व्यर्थ करदिया था, जिसने मैरता और जोधपुरकी कठोर चढाईको निष्फल करनेकी चेष्टा की थी, जो अवतक एक यथार्थ राजपूत समझा जाता था, न जाने आज दुर्भाग्यसे उसका वह समस्त साहस और तेज किधरको विलागया ? उसने अपने बड़े बेटे उदयसिंहको भांति२ की भेंटकी साथ देकर अकबरके पास भेजा * उस समय अकबर अजमेरकी ओरको बढरहा था। मार्गके बीच नागौर नामक स्थानमें राजकुमार उदयसिंहने बादशाहसे मुलाकात की। अकबरने अत्यन्त आदर मानसे भेंटकी सामग्रीको ग्रहण करके कुमारको राजाकी पदवी दी। उसकालसे मारवाडके रावगण “ राजा ” नामसे पुकारे जाने लगे। कहतेहैं कि राठौर उदयसिंहका शरीर अत्यन्त स्थूल था, इस कारणसे राजपूतलोग उसको “ मोटा राजा ” कहा करते थे। अतएव यहांपर यह कहना अत्यन्त उचित होगा कि राठौरोंकी राजनैतिक उन्नतिका यहींसे आरंभ हुआ। कारण कि इसही समयसे यह लोग बादशाहके “ दाहिने हाथ ” पर स्थान पानेलगे। परन्तु पवित्र कुलमर्यादाको पानी देकर मारवाडके राजाने जिस सन्मानको मोल लिया था, वह सन्मान क्या मारवाड राजके सन्तानकी ऊंचे सन्मानकी

* हिजरी ९७७ (सन् १५६९ई०)।

वरावरी कर सकता है ? इसके अतिरिक्त स्थूल उदयसिंहने सबसे पहिले एक धिनोना उदाहरण दिखाया था । कहते हैं कि राजपूत होकर उसनेही सबसे पहिले मुगलके हाथमें अपनी जोधवाईनामक कन्याको समर्पण किया था * जोधवाईके बदलेमें राजपूत कुलकलंक उदयसिंहको, चार जनपद * जो कि अति सम्पत्तिशुक्त थे—मिले । प्रतिवर्ष इन चारों परगनोंसे बीस लक्ष रुपये राजकरमें वसूल होते थे । इन परगनोंके प्राप्त होजानेसे मारवाड राजकी आमदनी पहिलेसे दूनी होगई । अम्बेर और मारवाडके दो कायर राजाओंने जो धिनोना उदाहरण दिखाया, थोड़ेही समयमें बहुतसे राजपूत लोग उस उदाहरणके अनुसार कार्य करने लगे । इन दोनों राजाओंका यह अनर्थकारी रोग बहुतसे राजपूतोंको उडकर लगाया । उनके पास नैतिक बल नहीं था, इस कारण शीघ्रही मुगलोंके आधीन हो-गए । उपाधि और साधारण सन्मान गौरवके बदलेमें उन्होंने असूल्य स्वाधीनता रत्नको बेचकर अपने हाथसे यवनोंकी पराधीनतारूपी जंजीरको अपने गलोंमें पहिरा । इस प्रकारसे राजस्थानके अधिकांश राजा अकबरके पदानत हुए, उनके विशाल राज्यसमूह मुगलोंकी बादशाहतमें लीन होगए, इन समस्त हिन्दू राजाओंने थोड़ेही समयमें मुगल बादशाहतका इतना बड़ा उपकार किया था कि मुसलमान तवारीख लेखक उन लोगोंको “मुगल राज्यका स्तम्भ और अलंकार स्वरूप ” लिख गये हैं ।

बादशाह अकबरने उन समस्त राजपूत राजाओंको संग लेकर वीर श्रेष्ठ प्रतापके विरुद्ध खड्ग धारण किया । इससे पहिले जिन लोगोंके पितृपुरुषोंने मेवाडके लिये अपने प्राणतक दे डाले थे; आज वही लोग मेवाडभूमि ध्वंस करनेके कारण कुला-झार बन मुसलमानोंकी ओर होगए हैं । प्रतापसिंहके साथ युद्ध करनेको जो वह लोग आये इसका एक कारण औरभी था । यवनोंके हाथ अपनी कुलमर्यादाको बेचकर वे लोग अपनी दारुण दुर्दशाका वृत्तान्त समझगए थे । उन सबके क्रूर हृदयसे यह बात नहीं सही गई कि हम सबकी तो कुलमर्यादा जाय और प्रताप-

* जोधवाईके गर्भसे धर्मप्रिय शाहेजहांका जन्म हुआ था । जोधवाईका मकबरा आगरेके निकट सिकन्दराबादमें बनाहुआ है । अनेक लोगोंका कथन है कि राजपूत राजाओंने मुसलमानोंको अपनी रानियोंके गर्भसे उत्पन्न कन्यायें नहीं दीं किन्तु दासीपुत्रियां दीं ।

× उन चार परगनोंकी सालियाना आमदनी इस प्रकारसे थी:—(गोद्वार) गदवाड़ नौलाख; उज्जयिनी २४९९१४ रुपये; देवलपुर १८२५००) ६०;—और बुदनावरकी आमदनी २५००००) थी ।

सिंह गौरवके ऊँचे आसनपर विरानमान रहै इस बातका विचार करके सबके हृदयमें डाहकी प्रवृत्ति आग जलने लगी। इसही कारणसे इन कुलांगारोंने वीरश्रेष्ठ प्रतापसे युद्ध करनेका विचार करलिया था। इस प्रकारसे राजस्थानके प्रायः समस्त हिन्दू राजाही मुसलमानोंके लोभमें पडकर अकबरकी ओर होगए। केवल बून्दीके हाडाराज*ने उस दुर्दशासे निस्तार पाया था। इसके उपरान्त प्रतापसिंहने उन समस्त राजाओंसे अपना सम्बन्ध छोड दिया कि जो मुसलमानोंसे मिल गए थे और दिल्ली पाटन, मारवाड, तथा धारानगरीके प्राचीन राजपूतोंका अनुसन्धान करके उनके साथ सम्बन्ध स्थापन करने लगे। जो नियम प्रतापसिंहने उस दिन नियत किया था, उनके किसी वंशधरने कभी उसका निरादर नहीं किया। अधिक क्या कहें कवल इतना कहनाही यथेष्ट होगा कि किसी शिशोदिया वंशवाले वीरने अपनी कन्या या बहन मुगलोंको नहीं दी। यहांतक कि मुगलोंकी पडतीके समय-तक भी इस वंशका कोई राजपूत मारवाड या अम्बेरके राजकुलके साथ वैवाहिक सम्बन्धमें आवद्ध नहीं हुआ। इससे प्रतापसिंहकी मान मर्यादाका बढना सहजसेही प्रमाणित होताहै। राजा धनकी तुच्छ लालसासे अपनी कन्या तथा बहिनोंको मुगलोंके हाथमें अर्पण करके भी अम्बेर, मारवाड तथा और २ देशोंके राजपूतगण गौरव हीन तथा कुल हीन होगये थे, उनका प्राचीन कुल गौरव सब भांतिसे नष्ट होगया था। अपने जाति भाइयोंमें वे घृणाकी दृष्टिसे देखे जाते थे, इस बातको स्वयं ही वे लोग समझकर अत्यन्त मर्माहत होगए थे। जिस समयही उनके मनमें यह चिन्ता उदित होती, जिस समयही वह अपने कुलकलंकका ध्यान करते, उस समय उनको अत्यन्तही कष्ट होताथा। इस वृत्तान्तकी सत्यता मारवाड और अम्बेरके दो प्रधान राजाओंके पत्र पढ़नेसे भलीभांतिसे प्रमाणित हो जायगी। इन दोनों राजाओंका नाम भक्तसिंह और जयसिंह था। इन दोनों राजाओंने मुगलवादशाहोंके प्रसादसे एक समय महान-शक्तिको प्राप्त किया था। राजस्थानमें एक समय यही दोनों राजा श्रेष्ठ माने जाते थे। परन्तु जिस समय यह चिन्ता उनके मनमें उदित होती थी, तब उनका मानसिक कष्ट सीमासे बाहर होजाता था, अपनी हीनताका विचार करके महादुःखित होते और तुच्छ राज सन्मानको शतवार धिक्कार देकर शिर पीटा करते थे और शिशोदियाकुलके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बन्धन करने-

* बून्दीके हाडाराजकी कुलमर्यादा जिस कारणसे मुगलोंके सर्वग्राससे बच गई थी वह अत्यन्त अद्भुत कारण है। इसका वृत्तान्त बून्दीके इतिहासमें भलीभांतिसे लिखा जायगा।

के लिये राणा प्रतापसिंहजीसे अनेक प्रकारकी विनय करके कहा करते थे कि “हे महाराज ! हम कलंकित हुए हैं, अधःपतित हुए हैं—राजपूतकुलकी मान मर्यादासे स्वलित होगए हैं, अतएव आप अनुग्रह करके हमलोगोंके पवित्र करें, हमारा संस्कार करें तथा हमको यथार्थ राजपूत समझ कर ग्रहण करें ।”

शिशोदीय वीर चूडामणि विक्रमकेशरी प्रतापसिंहने शिशोदियाकुलके गौरवकी रक्षा करनेके लिये कैसे २ भारी कार्य किये थे, निम्न लिखित वृत्तान्त पाठ करनेसे उसकी यथार्थता भलीभांतिसे प्रमाणित हो जायगी । राजा मान अंबरके कछवाह राजाओंमें विशेष प्रसिद्ध थे इनकेही अभिषेककालसे अम्बेर-राज्यकी उन्नतिका आरंभ हुआथा । वीरवर बाबरने नई जीतीहुई भारतकी विशाल बादशाहतको अचल रखनेके लिये जो श्रेष्ठ उपाय नियत कियेथे, सबसे पहिले अंबरके राजा मानसिंहने ही उन उपायोंका व्यवहार किया था । राजपूतकुलमें मानसिंहनेही अपनी वहनको अकबरके हाथमें समर्पण करके सबसे पहिले बाबरके भावीदर्शनको सफल किया । अर्थात् मुगलराज्यकी उन्नति और दृढ़ता साधन करनेमें राजपूतोंमें सबसे पहिले उन्होंने ही चेष्टा की थी । इससे पहिले कहा जा चुका है कि हुमायूँने भगवान्दासकी कन्याके साथ अपने पुत्र अकबरका विवाह करदियाथा, अतएव अकबर मानसिंहका वहनोई था । इस संबन्धके पीछे साले वहनोईमें परस्पर विशेष प्रीति उत्पन्न होगईथी । मानसिंह साहसी, चतुर, और समर विशारद राजपूत थे; अतएव अकबरके आश्रयमें आजानेसे थोड़े दिनोंके बीचमेंही वह मुगलोंके प्रसिद्ध सेनापति होगये; इनकेही बाहुबलकी सहायतासे आधा राज्य जीता था । अनन्त तुषारमंडित काकेशश शैलमालाकी तराईसे लेकर सुदूर “कनकचर्सनीस” तक विशाल भूभाग एक समय मानसिंहके पराक्रमसे मथित होकर उनके चरणोंमें आपड़ा था । अपने बाहुबलसे उन्होंने बादशाहका राज्य अधिकतर बढ़ा दिया था, उसका विचार करनेसे हृदय एकसाथ उनकी प्रशंसा करनेके लिये तड़पार होता है । कच्छावह (कछवाहे) भट्टकविगणोंने उनके असीम विक्रम तथा उनकी अनुपम वीरताका वृत्तान्त अति तेजस्विनी भाषामें वर्णन किया है । एक ओर काबुल और सिकन्दरकी पारोपमिशन शैलमाला;—दूसरी ओर काननकुन्तला अराकानभूमि; गिरिमेखला और सागराम्बरा यूँस विशाल राज्यके मध्यमें प्रायः समस्तही, राजा मानसिंहके प्रचंड विक्रमसे विजित होकर

मुगल बादशाहतमें मिल गए थे । मान-सिंह हिन्दू होकर शास्त्रकारोंके विधान-को लांघ किस कारणसे सिन्धुनदीके पार गए थे उसका विशेष कारण-अकबरकी-मान व हृदयज्ञता हुई । इस अपूर्व सामर्थ्यके प्रभावसेही बादशाह अकबरने बहुतसे कार्योंको साधन किया था । *

शोलापुरके युद्धमें विजय पाकर महाराज मान-सिंह राजधानीको लौटते थे उस समय उन्होंने प्रतापसिंहके निकट अतिथि सत्कारग्रहण करनेकी वासनासे समाचार भेजा । उस समय प्रताप कमलमेरमें थे । अम्बेरनाथका समाचार पातेही उन्होंने ग्रहण करनेके लिये उदयसागरतक बढ़ आये । उस सरोवरके किनारे कि जहां चट्टानें बिछा हुई थीं, राजा मान-सिंहके लिये अनेक प्रकारकी खाद्यसामग्री प्रस्तुत हुई । भोजन तइयार होनेपर राजकुमार अमरसिंहने अम्बेर-राजमान-सिंहको बुलाया । मान-सिंहने वहां आतेही राणा प्रतापसिंहको देखना चाहा परन्तु राणाजीको वहां न देख पानेसे मनमें अत्यन्त सन्देह हुआ और अमरसिंहसे इसका कारण पूछा, अमरसिंहने नम्रतासे उत्तर दिया कि " पिता-जीके शिरमें दर्दहै इस कारण वह नहीं आसके । " मान-सिंहका संदेह औरभी बढ़-गया, उन्होंने किंचित गर्वके साथ सन्मानित स्वरसे कहा कि "राणाजीसे कहो कि मैं उनके शिरदर्दका यथार्थ कारण समझगयाहूं । अब जो कुछ होना था सो तो होगया, जिस भ्रममें गिराहूं उसके शोधन करनेका कोई उपाय है ही नहीं, फिर

* काबुल राज्य उस समय मुगल राज्यके अन्तर्गत था । अकबरका छोटा भाई मिरजा हाकिम वहांका सूबा था । मिरजाने उस राज्यको स्वयं पचना चाहा और बगावतका झंडा खड़ा कर दिया । तब अकबरशाहने विद्रोह दमन करनेके लिये सेनासहित मानसिंहको भेजा । राजा मानसिंह सिन्धु (अटक) नदीके किनारे पहुँचे, कारण कि काबुलको जाते हुए सिन्धु (अटक) नदी उतरनी पड़ती है, और हिन्दू धर्मशास्त्रमें इस नदीके पार जानेका निषेध किया है । इस कारणसे राजा मानसिंह वहांही रुक गये और इस विषयका पत्र अकबरके पास भेजा । उस काल वाक्यविशारद अकबर-शाहने निम्न लिखित दोहा पत्रमें लिख भेजा;—

दोहा—सबै भूमि गोपालकी, वामें अटक कहा । जाके मनमें अटकहै, सोई अटकरहा ॥

इस सरसभाव पूर्ण कविताको पढ़कर मानसिंहने बादशाहकी आज्ञा शिर माथे चढ़ाकर अटकके पार उतर काबुलमें जाना स्वीकार किया । अकबर, मानसिंहके हृदयको जानता था, इस कारण वही उपाय किया, जिससे मानसिंह प्रसन्न होजाय । नहीं तो डर दिखाने या और किसी उपायसे मानसिंह माननेवाला नहीं था ।

(परन्तु पंजाबके राजा रणजीतसिंहके कटक पार जानेमें यह किंवदन्ती सुनी जाती है । शान्त्रमें अटक पार होकर भी जाति पतित होना नहीं पाया जाता टिप्प. ज्वा० प्र०)

यदि वे ही हमारे साथ भोजन न करेंगे तो और कौन करेगा?" प्रतापसिंहने और भी अनेक भांतिसे टाल वाल की, परन्तु मान-सिंहका सन्देह दूर न हुआ और वे भोजन करनेको सम्मत न हुए। तब राणा प्रतापसिंहने कहला भेजा कि "जिस राजपूतने मुगलके हाथमें अपनी बहनको दिया है, उस मुगलके साथ उसने भोजन भी कियाही होगा, सूर्यवंशीय वाप्पारावलका वंशधर उसके साथ भोजन नहीं करसकता।" राजा मान-सिंह स्वयं ही इस अपमानके भागी हुए थे। कुछ राणाजीने उनको नेवता नहीं भेजा था। मान-सिंह राणाकी प्रतिज्ञाको जानते थे तथा यहभी उनको विदित था कि राणाजीने हम लोगोंसे सम्पूर्णतः सम्बन्ध त्याग कियाहै। फिर उन्होंने किस साहससे राणाजीसे अतिथिसत्कारकी प्रार्थना की थी? यदि स्वयं राणा प्रतापसिंह नेवता भेजते, तो उनका यह व्यवहार अनुचित होता, परन्तु राणाजीका यहां कोई दोष नहीं था, दोषी केवल मानसिंह ही थे।

राजा मान-सिंहने भोजनको छुआ भी नहीं। केवल उन कई एक ग्रासोंको—जो कि इष्ट देवको अर्पण किये थे—पगडीमें रखकर वहांसे चले। मान-सिंहको आसनसे उठता हुआ देखकर प्रतापसिंह वहां आये उनको देखकर मान-सिंहने कहा "आपहीकी मान मर्यादा बचानेको हमने अपने मान गौरवको जलांजलि देकर अपनी कन्या और बहिन मुगलोंको दी। ऐसा करनेपर भी जब आपमें और हममें विषमता रही, तो आपकी स्थितिमें भी न्यूनता आवेगी; यदि आपकी इच्छा सदाही विपत्तिमें रहनेकी है, तो यह अभिप्राय शीघ्रही पूर्ण होगा। अब आपको मेवाडभूमि हृदयमें धारण नहीं करेगी।" पीछे अपने घोड़ेपर सवार हो प्रतापसिंहको कठोर दृष्टिसे निहारकर कहा "यदि मैं तुम्हारा यह मान चूर्ण न करदूं तो मेरा नाम मान-सिंह नहीं।" प्रतापसिंहने घृणाके साथ उत्तर दिया, "अतछा अच्छा, ! मैं आपके वचनसे प्रसन्न हुआ, संग्रामभूमिमें आपका दर्शन पानेसे परम संतोष प्राप्त होगा।"

उसही समय महाराणा प्रतापसिंहका एक सहचर क्लेशयुक्त वाणीसे कह उठा कि "देखना! अपने बहनोई अकबरकोभी साथ ले आना" जिस स्थानपर मान-सिंहके लिये भोजन सजाया गया था वह स्थान अपवित्र समझकर खोद डाला गया और उसपर गंगाजल छिड़कवाया। पात्र इत्यादि तोड़ेगये और जो सरदार व सामन्तादि वहां थे वे सब मानसिंहको जातिभ्रष्ट समझकर घृणा किया-करते थे। इस समय उस मान-सिंहको अपने सन्मुख देखकर उन लोगोंने अप-

नेको पतित समझा, तथा उस पापसे उद्धार पानेके लिये तत्काल स्नान किया और वस्त्रादि बदल डाले। उस दिन उस उदयसागरके किनारे जो जो कार्य हुए अकबरशाहने उन सबको सुना। मान-सिंहके अपमानसे उसने अपने मानका नाश समझा। बादशाहकी क्रोधाग्नि भडक उठी। अकबर समझाया कि राजपूत लोग अपने प्राचीन संस्कारोंको छोड़ बैठे होंगे, परन्तु यह उसकी भूल थी। मान-सिंहके निरादरका बदला लेनेके लिये अकबरने युद्धकी तइयारी की। इन तइयारियोंसे जो भयंकर समर हुआ था, उसमेंही विक्रम प्रकाश करके वीरकेशरी प्रतापसिंहने अपना नाम अमर किया था, उसी युद्धमें प्रचंड वीरता दिखानेसे प्रतापसिंहका नाम-स्वदेशप्रेमिक सन्यासियोंकी नाममालामें सबसे ऊपर लिखा गया है। युद्धका वह स्थान कि जिसमें प्रतापके प्रतापका प्रकाश चारों ओर फैल गया था-हलदीघाटके नामसे प्रसिद्ध है। जवतक मेवाडका शासन दंड किसी शिशोदिया वीरके हाथमें रहेगा, अथवा प्रतापसिंहकी वीरताका वखान करनेके लिये जवतक एक भट्टकविभी जीवित रहेगा तवतक पुण्यक्षेत्र हलदी-घाटका नाम कोईभी नहीं भूलैगा।

प्रथम तो दिल्लीश्वर अकबरका बेटा तथा मुगल बादशाहतका भावी उत्तराधिकारी युवराज सलीम प्रचंड अनीकिनीको साथले प्रतापसिंहसे युद्ध करनेके लिये आया। राजा मान-सिंह और सागरजीका जातिभ्रष्ट विख्यात पुत्र मुहब्बतखॉ भी युद्धका परामर्शादि देनेके लिये युवराजके साथ आया था परन्तु वीरकेशरी प्रतापसिंहके पास इस समय कैसी सहायता थी? केवल २२००० (बाईस हजार) राजपूत और कितनेएक भीलही उनके सहायक थे, तथा सबसे अधिक सहायक उनके हृदयका प्रचंड उत्साह था। इसही सहायताके ऊपर निर्भर करके प्रतापसिंहने मुगलोंकी महान सेनाका सामना किया था। सबसे पहिले तो राणाजीकी सेना प्रचंड प्रतापसे आरावलीके बाहिरी पर्वतप्रदेशमें प्रवेश कर गई तदुपरान्त उस निविड गिरिमार्गका पश्चिम भागस्थान जो कि सुगम था, उसमें होती हुई आरावली शैलमालाके प्रधान गिरिमार्गमें जा पहुँची।

आरावली शैलमालाके इन दुर्गम स्थानोंमें वीरवर प्रतापसिंह सावधानीसे डटे रहे। यह स्थान नवानगर और उदयपुरकी पश्चिम ओरको था। इसकी लम्बाई दश योजन और चौड़ाईभी ४० कोश थी। यह सम चौकोन विशाल देश केवल पर्वत और वनोंसे घिरा हुआ है, बीचमें छोटी २ नदियें वंकिमाकारसे वही जाती हैं। यदि उदयपुरको उस दुर्गम गिरि-देशका मध्यबिन्दु कहा जाय तो भी

ठीकही होगा । उदयपुरसे जो मार्ग वहांको जाता है, वह दुर्गम और तंग पंथ है । वे मार्ग इतने सकरे हैं कि उनमें कठिनाईसे बराबर दो गाड़ियों आवागमन करसकती हैं । उस निविडदुर्गम और कूट मार्गमें खड़े होकर जिधरको देखा जाय उधरसेही पर्वतोंके ऊंचे २ शिखर और घने वृक्षोंके सिवाय दूसरी कोई वस्तु दिखाई नहीं देगी । उसही स्थानका नाम हलदीघाट है । उसही हलदीघाटके मनोहर ऊंचे शिखरोंपर तथा तलैटियोंपर दृष्टि दौडाते हुए राजपूत वीरगण शस्त्र लगाकर खड़े होगए । दूसरी ओर विश्वासी भीलगण भी हाथमें धनुष बाण धारण किये पुनः पर्वतोंके ऊंचे २ शिखरोंपर डट गये । उन भीलोंके पासही पर्वतोंके लाखों टुकड़ेपड़े हैं, जैसेही शत्रु सामने आवेंगे, वैसेही बाण वर्षा कर उन्हें छिन्न भिन्न करेंगे या पत्थरोंके टुकड़ोंसे शिर तोडकर उनको यमलोकका मार्ग दिखावेंगे ।

हलदीघाटके उस भयंकर मैदानमें मेवाडके प्रधान २ वीरोंको साथ लेकर राणा प्रताप खड़े हुए और शत्रुसेनाके आनेकी बाट देखने लगे । संवत् १६३२ (सन् १५७६ ई०) के श्रावण मासकी शुक्लषष्ठी और सप्तमीको दोनों दल सामने भिडकर घोर संग्राम करनेलगे । इस प्रकारका भयानक प्रचंड समर, स्वाधीनताकी रक्षाका ऐसा कठोर उत्साह भारतवर्ष और ग्रीक-भूमिके अतिरिक्त संसारके और किसी स्थानमें नहीं देखा गया । यवनोंके कराल-ग्राससे, मेवाडकी स्वाधीनता और गौरवका उद्धार करनेके लिये अपने राजपूत-वीरोंको साथ लिये उत्कट उत्साहसे उत्साहित हो प्रतापसिंह भयंकर विक्रमके साथ मुगलसेनाकी ओर बढ़े । निडर प्रतापसिंह सिंहविक्रम करतेहुए सबके पहिले आये और शत्रुसेनाका व्यूह तोडनेका यत्न करने लगे । राणाजीके अद्भुत साहस, विक्रम और रणनिपुणतासे उन्मादित हो उनके सरदार और सामन्तगण मुगलसेनाके ऊपर इस प्रकारसे झपटने लगे कि जैसे सिंह अपने शिकारपर झपटता है । प्रतापसिंहका यत्न सफल हुआ; उनके प्रचंड विक्रमसे शत्रुओंके मोरच टूट गए; उस तित्तर वित्तर हुई मुगलसेनाको दलितमयित और त्रासित करके प्रतापसिंह अपनी सेनाके साथ क्रोधमें भरकर राजपूतकुलकलंक मान-सिंहका अनुसन्धान करने लगे; परन्तु कहीं भी उसका खोज न पाया । सैकड़ों वीर उनकी कराल करवालसे खंड २ होकर पृथ्वीमें गिर, कितनेही अभागे उनके भालेकी तीखी नोकसे बिंधकर धराशायी हुए; परन्तु प्रतापसिंह

के तीक्ष्ण वेगको रोकनेकी किसीमें सामर्थ्य नहीं थी। अपने प्रचंड शत्रु मान-सिंह का अनुसन्धान करतेहुए राणाजी सलीमके सामने पहुँच गए। हिंदूवैरी बाद-शाहके बड़े बेटेको सन्मुख देखकर प्रतापसिंहका साहस और उत्साह दूना होगया। उन्होंने भयंकर खड्ग उठाय अपने प्यारे तुरंग चैतकको सलीमकी ओर चलाया। उस भयंकर तरवारके प्रचंड आघातसे सलीमके शरीर रक्षकगण तो अल्पकालमेंही दो टुकड़े होकर पृथ्वीपर गिरे। पीछे मेवाडनाथने सलीमके मदमत्त रणमातंगके सोंही अपने प्रचंड तुरंगको चलाया। उनका चैतक अश्व मानों अपने स्वामीके अद्भुत वीरतासे अत्यन्त बलवान होगया। अपने प्रभुके घोरशत्रु सलीमके प्रचंड रणमातंगकी शूंडको दवायकर चैतकने उसके मस्तक-पर अपने दोनों पाँव रखादिये। तत्कालही राणाजीने सलीमके ऊपर अपना भयंकर शूल चलाया। भाग्यसे सलीमका हौदा लोहेके मोटे पत्तरसे मढ़ा हुआ था, उसही पर वह शूल टकराया और शाहजादा बचगया; नहीं तो उसके मारे जानमें कोई सन्देह नहीं था। यद्यपि प्रतापसिंहका भयंकर शूल सलीमको संहार नहीं करसका, तथापि वह सम्पूर्णतः निरर्थक भी नहीं हुआ। हौदेमें लगे हुए लोहेके पत्तरपर टकराकर वह दूने तेजसे महावतके लगा। महावत तत्कालही पृथ्वीपर गिरकर मरगया। महावतके गिरते ही निरंकुश होकर हाथी सलीमको संग्रामसे लेकर भागा।

सलीम भागा, परन्तु प्रतापसिंहने तब भी उसका पीछा नहीं छोड़ा। भागते हुए उस गजराजके पीछे अपने चैतकको भी दौड़ाया। उस काल दोनों दलोंमें कराल संग्राम होने लगा। एक ओर तो अगणित मुगलसेना शाहजादेको बचानेके लिये खड्ग चलाने लगी, दूसरी ओर निडर और कठोर राजपूतगण,—प्रतापके प्रतापकी रक्षा करनेके लिये तथा मुगलोंका दाप चूर्ण करनेको प्राणका दाव लगाकर युद्ध करने लगे। शतशः मुगलवीर उनके हाथसे मारे गये, परन्तु इससे क्या होताहै ? जो मुगल मरते थे उनके स्थानपर दूसरी मुगलसेना आनकर डट जाती थी। उस समय बहुतसे राजपूत वीरोंने प्रतापसिंहकी रक्षा करनेके लिये रणरूपी यज्ञमें अपने प्राणोंकी आहुति दे दी। प्रतापसिंहका पक्ष हीन होने लगा। परन्तु राणाजीने इसकी कुछभी चिन्ता न की। राजपूतकुलकलंक मान-सिंहका अनुसन्धान करते हुए वह शत्रुकी सेनामें विचरण करने लगे ! परन्तु मस्तकपर मेवाडका राजछत्र लगाहुआ था, उसको ताककर मुगलसेनाने इनको घेरलिया। इन राजचिह्नोंके धारण करनेसे पहिले

भी तीनवार उनके प्राण संकटमें पड़ गए थे, परन्तु अपने असीम विक्रमसे उन्होंने उसकाल अपना उद्धार कर लिया था। तथापि प्रतापसिंहने उन राजचिह्नोंको नहीं छोड़ा; न इस युद्धमें छोड़ना चाहते हैं। परन्तु इस समय विशेष संकट आन पड़ा है, युद्ध करते २ शत्रुओंके बीचमें आन फैसे हैं, निकटमें सरदार या सामन्त कोई भी नहीं हैं, जिस ओरको देखते थे, शत्रुसेनाके ही अगणित शिर दिखाई देते थे तथा सब ही ओरसे शत्रुगण उनके ऊपर दौड़ते थे ! महाराणाजी अपनी वर्तमान अवस्थाको समझ गए कि हम इस समय शत्रुओंसे घिर गए हैं। तथापि उनका उत्साह यथावत बनारहा। कठोर उद्यम, महान् उत्साह और खड्ग चलानेकी अपूर्व हस्तकौशलसे वह शत्रुसेनाको दलित, विभक्त और त्रासित करते हुए मतवाले गजराजकी समान इधर उधर घूमने लगे। शत्रुके अविराम अस्त्राघातोंसे उनके अंग प्रत्यंगमें सात घाव हुए थे * कपड़े रुधिरसे भीज गए थे, तथापि राणाजीके मनमें किंचित् भी उदासी नहीं थी। परन्तु अकेले कबतक युद्ध करेंगे ? वह समझ गए कि यदि अब अधिक देरतक युद्ध करेंगे तो यहींपर प्राण निकल जायेंगे। अतएव अद्भुत रणनिपुणताके साथ वहांसे निकलनेकी चेष्टा करने लगे। इसही समयमें दूसरे “ जय, राणा प्रतापकी जय ! ” ऐसा शब्द सुना। उनका हृदय दूना उत्साहित हुआ और दंभसहित सिंहनाद करने लगे। वह श्रवणभैरव जयनाद पवनके द्वारा आकाशमार्गमें गुंजारही रहा था कि वीरवर झालापति मन्नाजी झपटते हुए सेनासहित प्रतापके निकट आन पहुँचे; और प्राण-नेवछावरका प्रकाशित उदाहरण दिखा करके स्वामीके प्राण बचाये। मन्नाजीने राणाजीके मस्तकसे मेवाडके राजचिह्नोंको उतारकर अपने शिरपर धारण किया और हेम-तपन मंडित लोहित वैजयन्ती उठाकर गर्वसहित शत्रुकी सेनामें प्रवेश किया। प्रकाशित राजचिह्नोंको देखकर शत्रुओंने इनको ही राणा समझा, और मारनेके लिये चारों ओरसे दूटने लगे। प्रतापसिंहने दूरसेही देखा कि वीरवर मन्नाजीने अपनी प्रचंड सेनाके साथ अद्भुत रण करके वहीँपर प्राण दे दिये। इस अपूर्व प्राण निवछावरके कारण झालापति मन्नाजीके वंशधरगण मेवाडके राजचिह्नोंसे युक्त होकर राणाजीके दाहिनी ओर आसन पाते हैं ×। यद्यपि वीरकेशरी प्रतापसिंहके प्रचंड वीरत्वको देखकर

* भालेसे तीन, गोलीसे एक, और तलवारसे तीन, इस प्रकारसे राणाजीके सात घाव लगे थे।

× टाडसाहब कहते हैं कि मन्नाजीके वंशधरगण सान्द्रीजनपद और प्रतापसिंहकी दी हुई अन्यान्य वृत्तियोंको अबतक भोगते हैं। उनका नगाड़ा राजभवनके द्वारतक उनके साथ २ बजता जाता है। ऐसा सन्मान और किसीको प्राप्त नहीं होता। इसके अतिरिक्त वे ‘राजा’ नामसे भी पुकारे जाते हैं।

राजपूतगण दूने उत्साहसे युद्ध करने लगे, परन्तु क्या होता है, इस युद्धसे कोई फल न हुआ। एक तो मुगलसेना, राजपूतोंकी सेनासे चौगुणी अधिक थी, उसपर फिर मुगललोग तोप, बन्दूक तथा और २ आग्नेयास्त्रोंसे युद्ध करते थे फिर भला राणाजीकी सेना और कबतक उनके सामने ठहर सकती है! और कबतक राजपूत वीरगण दूसरे आतेहुए गोली गोलोंकी गतिको रोकेंगे? अधिकांश राजपूतोंने स्वदेशकी रक्षा करनेमें वहींपर अपने प्राण देदिये। उसदिन जो बाईस हजार राजपूत संग्राम करनेके लिये रणभूमिमें गयेथे, उनमेंसे केवल आठ हजार रणभूमिसे लौटे थे!

उस हलदीघाटके प्रथम दिवसका भयानक रणरंग समाप्त होनेपर प्रतापसिंह चैत्तकपर चढ़कर अकेले रणभूमिसे चले आये। उनके सब अंगोंसे रुधिर निकलता था शत्रुसेनाका संहार करते २ थक गए थे। चैत्तककी भी यही दशा थी, परन्तु तो भी वह अपने स्वामीको पीठपर धारण करके निविड पर्वतकी ओर लं चला। परन्तु उस समय भी राणा निरापद नहीं थे। दो मुगल उनको छिपकर जाता हुआ देखकर पीछे लगे। इनमें एक मुलतानी और एक खुरासानी था। वे शीघ्रतासे प्रतापसिंहका पीछा करतेहुए एक तीव्र और गहरी नदीके किनारेपर आन पहुँचे। तुरंगराज चैत्तक एकही छलांग भर उस नदीके पारही अपने स्वामीको दूर लेगया। वे दोनों मुगल चैत्तककी समान उस नदीके पार नहीं हो सके, इस कारण उनका वेग कुछ देरके लिये रुक गया। परन्तु चैत्तकके भी सब अंगोंमें घाव हो रहे थे, इस कारण वहभी पहिलेकी समान शीघ्रतासे नहीं चल सका। इस कारण वे दोनों मुगल प्रतापसिंहके अत्यन्त निकट पहुँच गए। उस ही समय दूरसे बन्दूकका शब्द सुनाई दिया, और साथहीमें किसीने पीछेसे राणाजीकी भातृभाषामें गम्भीर स्वरसे कहा—“हो नीलघोड़ारा असवार!” प्रतापसिंह चकितहुए और पीछे फिरकर देखा तो उनको दूना क्रोध हो आया। उन्होंने अपना पीछा करते हुए केवल एक ही सवारको देखा—यह सवार उनका भ्राता शक्तसिंह था!

अपने भाई प्रतापसिंहसे झगडा करके शक्तसिंह उनसे अलग हो गए और मेवाडभूमिको छोडकर अकबरका पक्ष अवलम्बन किया था। उनकी वासना थी कि भ्राताका नाश करके एक दिन हृदयकी क्रोधाग्निको निर्वाण करेंगे। उस दिन उन्होंने उस हलदीघाटके शोणितमय समरक्षेत्रमें अकबरकी सेनाके व्यूहके बीचसे खड़े होकर देखा कि प्रताप नीले घोड़ेपर चढ़कर अकेलेही

संग्रामभूमिसे भाग रहे हैं। बड़े भ्राताके प्राण और स्वाधीनतापर संकट देखकर शक्तसिंहसे निश्चिन्त न रहा गया; सहसा उनका कठोर हृदय पसीज गया; क्रोध जाता रहा। पिछले वृत्तान्तको याद करके अत्यन्त दुःखित हुए और इस विपत्तिसे भ्राताका उद्धार करनेके लिये तत्काल मुगलसेनाको छोड़कर उसके पीछे चले। मार्गमें प्रतापसिंहके पीछे पड़ेहुए दोनों मुगलोंका संहार करके वीरवर शक्तसिंह बड़ेभ्राताके निकट पहुँचे। दूरसे शक्तसिंहको आते हुए देखकर राणाजीको उत्कटशंका हुई। उनके हृदयमें क्रोध और अभिमानका हृदय हो आया। इस कारण विचार किया “क्या शक्तसिंह बदला लेनेके लिये आताहै?” “मेरी सहायहीन अवस्थामें क्या अपनी प्रतिज्ञाके पालन करनेको आताहै।” बाण लगेहुए सिंहकी समान प्रतापसिंह गर्ज उठे और अपनी कराल कर्वालाको उठाय शक्तसिंहकी प्रतीक्षामें खड़े हुए। परन्तु शक्तसिंहका दीन, मलीन और क्षीण मुख देखकर उनके हृदयका सन्देह दूर हुआ। तथा फिर जब शिशोदिया वीरने बड़े भ्राताके चरणोंमें गिरा आखोंमें आँसूभर दीनवाणीसे क्षमाप्रार्थना की, तब प्रतापसिंहके हृदयमें अद्भुत आनन्दका संचार हुआ। आज परस्पर एक दूसरेको हृदयसे लगाकर दारुण दुःख और मानसिक पीडाको भूल गए।

आज प्रतापसिंहके आँगुओंसे शक्तसिंहकी और शक्तसिंहके आँगुओंसे प्रतापसिंहकी छाती भीजी इस अपूर्व आनन्दके समय प्रतापसिंहके प्यारे अश्व चैत्तकने प्राण त्याग करदिये। चैत्तक सब भांतिसे प्रतापसिंहके ही लायक था। उसके ही गुणसे राणाजी आज मुगलोंकी विशाल सेनाके मध्यसे निरापद चले आये थे। वह चैत्तकको अपना प्राणरक्षक समझतेथे। इस समय उसही प्यारे घोड़ेको प्राण छोड़कर पृथ्वीपर गिरताहुआ निहारकर राणाजीको अत्यन्त शोक हुआ। उनके अनन्त आनन्दजलमें किसने विष मिलादिया? शक्तसिंहने भ्राताके चढनेको अपना घोडा दिया। प्रतापसिंहको विवश हो उसपर चढना पडा। जहाँपर तुरंगराज चैत्तकने प्राण छोडे थे वहाँपर एक वेदिका निर्मित हुई थी *

बहुत दिनके पीछे प्रियजनके साथ प्रियजनका मिलना अत्यन्त सुखदाई होताहै। परन्तु प्रताप और शक्तसिंहके भाग्यमें यह सुख बहुत देरतक नहीं लिखा

* उक्त वेदिका अवतक “चैत्तकका चबूतरा” इस नामसे प्रसिद्ध है। यह वर्तमान जालौरके अत्यन्त निकट बनी हुई है। उपरोक्त वृत्तान्तके पढनेसे जाना जाता है कि चैत्तक प्रतापसिंहका जीवन सहचर अत्यन्त प्यारा घोडा था। प्रतापसिंहके चित्रके साथ चैत्तकका चित्रभी मेवाडके घररमें लिखा होता है।

था । कदाचित् पीछे सलीमके हृदयमें किसी प्रकारका सन्देह हो, इस शंकासे फिर शक्तसिंहने मुगलोंकी सेनामें गमन किया। बड़े भ्राताके चरण स्पर्श कर विदा लेनेके समय उनको धीरज बँधाकर कहा कि “अवसर प्राप्त होतेही मैं शीघ्र आपसे मिलूँगा” वे दोनों मुगल जो राणाजीका पीछा करते हुए आए थे, उनको शक्तसिंहनेही मारा-था, इनमेंसे एक खुरासानका और दूसरा मुलतानका निवासी था । शक्तसिंह उस खुरासानी सैनिकके घोंडेपर चढ़कर सलीमके दरबारमें पहुँचे; परन्तु जो कुछ शंका उन्होंने की थी, वही आगे आई । आनेमें विलम्ब और उनके आकार को देखकर सलीमके हृदयमें तत्काल संदेह हुआ । शहजादेने शक्तसिंहसे खुरासानी और मुलतानी सैनिकका हाल पूछा तब उन्होंने इधर उधर करके कहा कि “वह दोनों प्रतापके हाथसे मारे गये, प्रतापने केवल उनकोही नहीं मारा वरन मेरे घोंडेको भी मार डाला । इस कारण मैं विवश हो खुरासानी मुगलके घोंडेपर सवार होकर आयाहूँ ।” शक्तसिंहको इस प्रकार इधर उधर करते देख सलीमने अभय दान देकर कहा, कि “अगर आप सच २ कहें तो मैं सब कसूर मुआफ करदूँगा।” सलीमका वाक्य शेष होते न होते शक्तसिंहका वदन गंभीर होगया, उन्होंने निःशंक होकर उत्तर दिया। “मेरे बड़े भाईके कंधेपर एक विशाल राज्यका भार है, हजारों आदमियोंका सुख दुःख केवल उनहीके ऊपर निर्भर है, इस समय वह संकटमें हैं, फिर भला उनको संकटमेंसे उद्धार किये बिना मैं कैसे निश्चिन्त रह-सकताहूँ ।” सलीमने पहिलेही शक्तसिंहको अभय दिया था इस कारण कुछ न कहा परन्तु अपने यहांसे उनको विदा दे दी । शक्तसिंहके पक्षमें इससे मंगलही हुआ । वह शीघ्रही उदयपुरमें जाकर अपने भाई प्रतापसे मिले । उदयपुरमें आनेके समय शक्तसिंहने भिसरोरनामक दुर्गपर आक्रमण करके उसको अधिकारमें किया। इसही किलेको “नजर” में देकर अपने भ्राताके चरणोंकी वन्दना की । उदार प्रतापसिंहने वह नया जीताहुआ दुर्ग अपने भ्राताको ही भूमिवृत्तिमें दे दिया । शक्तसिंहके वंशवालोंने बहुत दिवसतक उसको अपने अधिकारमें रक्खा । * उस भयंकर विपत्तिके समयमें प्रतापसिंहका प्राण बचानेके कारण शक्तसिंहकी अत्यन्त प्रशंसा और मर्यादा हुई थी । उनके उस सहान गौरवका विवरण आजतक भट-

* शक्तसिंहकी माता “वाईजी राज” अर्थात् राजमाता थी । परन्तु वह अपने बड़े पुत्र राणा प्रतापसिंहको छोड़ भिसरोरनामक दुर्गमें अपने प्यारे पुत्र शक्तके पास रहतीथी । इससे अवश्य समझना चाहिये कि वह राजपाताके योग्य समस्त सन्मानको नहीं पातीथी । पवित्र पुत्र स्नहके लिये उन्होंने इस सन्मानको त्याग दियाथा, इस कारण शक्तसिंहकी जननीगण “वाईजी राज” कहकर पुकारी जाती हैं ।

लोगोंके मुखसे सुना जाता है। आजतक भी भट्टगण उनके किसी वंशधरको देखते ही आनन्दसे उन्मत्त होकर कहा करते हैं कि “खुरासानी मुलतानीका अगल” ×

संवत् १६३२ (जौलाई सन् १५७६ ई०) श्रावण शुक्ल ७ का दिन—आर्य-कुलकी वीरताका एक प्रसिद्ध दिवस है यह आर्य गौरवका एक पवित्र पर्व हुआ। जितने दिनतक मनुष्य वीरता और महानताकी पूजा करेंगे, जितने दिनतक जगतमें राजपूत जाति रहेगी, उतने दिनतक इस उपरोक्त दिनका वृत्तान्त मनुष्योंके इतिहासमें प्रकाशमान और रक्तमिश्रित अक्षरोंसे लिखा रहेगा। उतने दिनतक वह दिन अनन्तकाल एक भयंकर आवर्त्तको प्रकाश करेगा। उस दिन उस पुण्य-भूमि हलदीघाटके शैलगात्र और समस्त गिरिमार्ग मेवाडके साहसी पुत्रोंके पवित्र शोणितसे भीग गये थे। जिन चौदह हजार वीरोंने आत्मोत्सर्गके महा-संज्ञसे उत्साहित होकर उस भयानक संग्राममें अपने प्राण दिये थे, उन सबके नाम कहांतक गिनावें। परन्तु जो लोग प्रसिद्ध थे उनका संक्षेप वृत्तान्त यहाँपर लिखा जाता है। राणा प्रतापसिंहके अतिनिकटवाले पाँचसौ कुटुंबी ग्वालियरके पदच्युत राजा रामशा * उनका पुत्र खाडे रावने विक्रमशाली साढ़ेतीनसौ तुवर वीरोंके साथ संग्रामभूमिमें प्राण देकर कृतज्ञताका प्रदीप्त परिचय दिखाया था। झालापति वीरवर मन्नाजीकी वीरता और सबसे अधिक और लोकविस्मयकर हुई थी। सबकी बात छोडकर यदि केवल उनकी ही अद्भुत वीरता और प्राणके दावका विचार किया जाय तो केवल उसकेही द्वारा उस दिनका अतुलनीय गौरव अचल रह सकता है ! जिस समय झालापति मन्नाजी १५० सामन्तोंके साथ सागरकी समान उस विशाल मुगलसेनामें प्रवेश करके महोत्साहके साथ युद्ध करने लगे, जिस समय वे मुट्ठीभर वीर उस अनन्त मुगलसेनाको दलित और विन्नसित करके अनन्तधामको चले गये; उस समय जिसने उन राजपूतोंके अनन्त विक्रम और विस्मयकर रणनिपुणताको देखा, उसहीने उनका बखान किया। उसदिनकी बातको अवतक कोई नहीं भूल है। उस दिन मेवाड प्रत्येक वीरवंश सुना होगया था, बहुतसी वीरवालाओंका सीमन्त—सिन्दूर अनन्त कालके लिये धुल गया था।

× खुरासानी और मुलतानीका अगल; अर्थात् उनके सौभाग्यमार्गके भीषण प्रतिरोधक स्वरूप

* बाबरने रामशाके पूर्व पुरुषोंको ग्वालियरसे निकाल दिया, वे आनकर मेवाडमें बसे। राणाजीने आदर सत्कारसे उनको ग्रहण किया, तथा उनके भरण पोषणके लिये प्रतिदिन ८००)४० निर्धारित किये। तबहीसे यह लोग मेवाडमें रहते थे।

विजयके आनंदको मनाताहुआ युवराज सलीम हलदीवाटके पर्वतस्थानको छोड़कर चला गया। वर्षाकाल आगया, नदियां भर गईं, पहाड़ी स्थान दुर्गम होगये, इस कारण शत्रुके कार्योंमें विघ्न हुआ। इस सुअवसरमें प्रतापसिंहको कुछ दिनके लिये विश्राम मिला। परन्तु जब वसन्तके आगमनसे जैसेही मार्गादि ठीक हुए कि वैसेही फिर विशाल मुगलवाहिनी चढ़ धाई। अभाग्यसे उस युद्धमें भी राणाजी पराजित हुए और उन्होंने उदयपुरको छोड़कर कमलमेरमें अपनी छावनी डाली। परन्तु वहांपर भी निश्चिन्त न हो सके बादशाहके सेनापति कोका-शहवाजखाने शीघ्र ही उस पहाड़ी किलेको घेर लिया। मुगलोंके भयंकर पराक्रमको रोकते हुए प्रताप बहुत दिनोंतक कमलमेरमें अटल भावसे रहे, परन्तु स्वदेश-द्रोही देवराजकी शत्रुतासे उनको यह आश्रय स्थल भी त्याग करना पडा। कमलमेरमें नागननामक एक बड़ा कुवां था सब लोग इसहीके जलको पीकर प्राण धारण करते थे। दुष्ट देवराजने यह गूढ वृत्तान्त मुगलोंको सूचित किया तथा विपथर भुजंगद्वारा उस कुएँके जलको दूषित करने का परामर्श दिया। तदनुसार उस कुएँका जल विषैला किया गया, प्रतापसिंहको जलके अभावसे अत्यन्त कष्ट होने लगा। इस कारण कमलमेरको छोड़कर चोंड * नामक गिरिदुर्गमें चले गए। मुगल सेनाने उस स्थानको भी घेर लिया। शनिगुरु सरदार भानसिंहने मुगलसेनाके कराल ग्राससे चोंडका उद्धार करनेके लिये रणमें अपूर्व वीरता दिखाकर अंतमें अपने प्राणतक देदिये। इस कठोर कार्यमें मेवाडका प्रधान भट्टकवि मारा गया। उसके हृदयोत्तेजक समर-संगीत और अद्भुत रणरंगको देखकर राजपूत वीरगण यहांतक उत्तेजित हो गए थे कि सबने स्नेह ममता सब भांतिकी सुकुमार प्रवृत्तियोंको जलांजलि देकर “निर्दई यवनराज” के कठोर आक्रमणको व्यर्थ करनेकी चेष्टा की। चोंडकी चढ़ाईके समयमें उस भट्टकविने अपने राजाकी वीरताका बखान करके जो कईएक तीव्र कविताओंको बनाया था, आजतक भी प्रत्येक मेवाडवासी उत्साहके साथ उन कविताओंको गाया करते हैं परन्तु उस कविकी परलोक प्राप्तिके साथ वीरके-शरी प्रतापकी अमानुषिक वीरत्व सूचक कविता रचनाका अंत नहीं हुआ। यहांतक कि जिस हिन्दू या मुसलमान पर किंचित् भी कविता करनी आती थी,

× संवत् १६३३ गणेशशुक्ल ७ (सन १५७७ ई०) को यह युद्ध हुआ था।

* मेवाडके दक्षिण-पश्चिम पार्श्वके पर्वतदेशमें चप्पननामक एक भील जनपद है। चोंड इसके अन्तरका एक साधारण नगर है। चप्पनके मध्यमें प्रायः ३५० नगर और मौजे हैं। इन सब स्थानोंमें भीललोग रहा करते हैं।

वह भी संन्यासीश्रेष्ठ पुण्यश्लोक प्रतापसिंहके विषयमें कुछ न कुछ कविता कर गया । और फिर जिनके हृदयमें थोड़ा भी कवित्व था, वे भी प्रतापसिंहका गुणकीर्तन करनेमें एक दूसरेको पराजित करनेका यत्न किया करते थे । वह कविता ऐसी तेज होती थीं कि उनके पाठ करनेसे निर्जीव और डरपोक आदमी भी नये बल और नये उत्साहसे जीवित होजाता था । इस बातको सबही जान सकते हैं कि वीरहृदय राजपूतलोगोंके लिये वह कविता कहांतक हृदय ग्राहिणी थीं ।

कमलमेरके घिरजाने पर राजा मान-सिंहने धरमेती और गोगुण्डानामक दो पहाड़ी किलोंपर अधिकार किया । इन ओर मुहम्मदखाने उदयपुर लेलिया । अमीशाहनामक एक यवनराजकुमारने चोंड और अगुणापानोरके मध्यस्थलमें स्थित होकर भीलोंके साथ जो सम्बन्ध प्रतापसिंहका था उसको छिन्न कर दिया । दूसरी ओर फरीदखाना नामक मुगल सेनापति चम्पनको घेरकर दक्षिणको वहांतक बढ़ गया कि जहां चोंडमें राणा प्रतापसिंह स्थित थे । चारों ओरसे चोंडको शत्रुओंने घेरलिया प्रतापसिंह भी सब ओरसे घिरकर आश्रय हीन होगए । जिस मेवाडभूमिपर एक समय उनका अक्षत राज था, जहांपर उनके पूर्वपुरुष प्राचीन कालसे राज करते चले आये हैं; आज उसही भूमिके प्रत्येक नगर, ग्राम, पट्टी, और पहाड़ी दुर्गपर शत्रुओंका अधिकार होगयाहै । आज उसही मेवाडभूमिके किसी भागमें भी प्रतापसिंहके रहनेको स्थान नहीं मिलता आज मुगलगण उस विशाल मेवाड राजकी कन्दरा २ वन वन और शिखर २ पर उस प्रचंड राजपूतका पीछा करने लगे । परन्तु आश्चर्यका विषय है कि कोई भी उस वीरको नहीं पकड़ सका । ऐसा विदित होने लगा कि किसी अपूर्व ऐन्द्रजालिक बलसे प्रतापसिंह उनकी आँखोंमें धूल झाँक कर भ्रमण करते थे । वे कुछ प्राणभयसे पलायन करके नहीं घूमते थे वरन गुप्तभावसे छिपे रहकर शत्रुओंकी गति विधिको देखते भालते थे तथा जब उनको असावधान पाते उसही समय आक्रमण करके जड़ मूलसे उनका संहार कर डालते थे । जिस समय शत्रुगण किसी वनमें छिपाहुआ जानकर उनका पीछा करते थे उस समय वे अपने सामन्त सरदारोंको एकत्रित करके पहाड़के किसी ऊँचे शिखरपर परामर्श किया करते थे । इस प्रकारसे साधारण युद्ध करते २ बहुत दिन बीत गये । शत्रुगण किसी प्रकारसे भी वीरवर प्रतापको नहीं पकड़ सके । उनका पकड़ना तो दूर रहा वरन बहुतसे शत्रु उनकी प्रचंड

क्रोधान्निभे भस्म होगए । सेनापति फ़रीदख़ाने चोंडनगरको घेरकर समझ लिया था कि प्रताप अवश्य ही मेरे हाथमें पकड़ा जायगा, परन्तु शीघ्रही उसकी वह आशा निराशाके रूपमें बदल गई। उसकी चालाकी और विपुलसेना प्रतापसिंहकी रणचातुरीके आगे व्यर्थ हो गई । एक समय राणाजीने इस समस्त सेनाको एक गिरिसंकटमें घेरकर सम्पूर्णतासे संहार कर डाला । इस प्रकारसे कितनेही युद्धविज्ञाद प्रचंड मुगलवीर प्रतापके तीक्ष्ण खड्गसे धराशायी हुए । प्रतापसिंहको कोई भी नहीं पकड़ सका । इस प्रकारसे वेतनभोगी मुगलसेनाका साहस धीरे २ घटता गया । राजपूतवीरके साथ युद्ध करनेका उत्साह उनमें नहीं रहा । इस ओर वर्षाकी अविरल जलधारासे नदी नाले उमड़ आए, राह घाट दुर्गम हुए, समस्त पहाड़ी स्थानोंसे एक प्रकारकी विषैली बाफ निकलकर सम्पूर्ण देशमें विस्तारित होगई । विवश होकर शत्रुओंने युद्ध बंद किया । इस भांतिसे जय वर्षाऋतुका समागम होता उसही समय महाराणा प्रतापसिंहको कुछ दिनोंके लिये विश्राम मिल जाता था ।

क्रमानुसार अनेक वर्ष व्यतीत होगए । संसारमें बहुतेरे अदल बदल हुए परन्तु प्रतापसिंहकी टेक उस ही प्रकारसे बांकी रही, मुगलगण किसी प्रकारसे उनको नहीं पकड़सके । परन्तु कालके प्रभावसे राणाजीके आश्रयस्थान एक २ करके मुगलोंके अधिकारमें जाने लगे, दुःख बढ़ता गया । उनका परिवार ही उनकी चिन्ताका मूल कारण हो उठा । शत्रुओंसे अपनी रक्षाका उपाय तो वह थोड़ेही समयतक विचारा करते थे, परन्तु यह शंका सदा उनको भस्म किया करती थी कि कहीं हमारे पुत्र कलत्रादि शत्रुओंके हाथमें न पड़जायँ अथवा पवित्र शिशोदिया वंशमें कोई कलंक न लग जाय । यह शंका अमूलक नहीं थी कारण कि परवारवाले कईवार शत्रुओंके हाथमें पड़ गये थे । एकवार तो शत्रुओंने उनको सम्पूर्णताहीसे अपने अधिकारमें कर लिया था, परन्तु उस समय भी गिल्लोटकुलके सनातनमित्र विश्वासी भीलोंने उनका उद्धार किया । उसवार कावानिवासी भील लोगोंने राणाजीके परिवारको टोकरोंके भीतर रखकर जावरा स्थानकी खानिमें, जहां टीन निकला करती थी छिपादिया था । परमहितकारी भीलगण आप तो भूखे प्यासे रह जाते थे तथा उनको भोजन जुताते थे और दिन रात सावधानीसे उनकी रक्षा किया करते थे । उनके उस महोपकारका निदर्शन आजतक विद्यमान है । आजतक जावरा और चांडके सून सान वनोंके विशाल २ वृक्षोंकी चोटियोंपर अगणित गड़ी हुई कीलें और

लोहेके कडे दिखाई देते हैं। उन लोहेके कड़ोंमें तथा कीलोंमें वेंतांके टोकरे टांगकर परमविश्वासी भीलगण राजपूतोंको उनमें रखते थे तथा हिंसक जन्तु-ओंसे भी दिनरात उनकी रक्षा करते थे। राणा प्रतापसिंहके बालक वच्चे उन बेंतके टोकरोंमें लालित हो कड़वें कपड़े कन्द मूल फल खाकर प्राण धारण करते थे। मुखसेव्य राजभोग करने और सुन्दर २ महलोंमें रहनेसे भी जिनकी तृप्ति नहीं होती थी, वे लोंग अनाथ, और निर्वासितकी समान कन्द मूल फलोंसे क्षुधा निवारण करके वृक्षांमें बैठेहुए टोकरोंके बीच पड़े २ झूलते रहते थे; इस अवस्थाको देखकर भी महाराणा प्रतापसिंहका नाहस नहीं जाता था।

इस प्रकारसे वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहकी वीरता, धीरता, महनशीलता तथा महान-शक्तिका समाचार शीघ्र ही इहन्शाह अकबरने सुना। अकबरने बारंबार राणाजी-की प्रशंसा की। तथापि मुनीहुई वानोंका मत्स्यामत्य जाननेके लिये अकबरने प्रताप-सिंहके गूढ वामस्थानमें एक गुप्तदूत भेजा। उस गुप्तचरने वहां जाय दूरही खड़े होकर गुप्तभावमे देखा कि प्रतापसिंह अपने सामन्त सरदारोंसे वेष्टित होकर एक बड़े वृक्षके तले तृणासनपर बैठेहुए भोजन करते और योग्य सरदारोंको आनंद-सहित "दोना" (राजप्रसाद) दे रहे हैं। यद्यपि वह राजप्रसाद वनैले कंद मूल फलका ही बनाहुआ था तथापि सरदारलोग उसको पायकर अपनेको कृतार्थ समझ-ते थे। जिस समय प्रतापसिंह उदयपुरके महलोंमें रहकर उत्तम २ भोजन सरदारोंको "दोना" में दिया करते थे और उस समय सरदारलोग जैसे आनंद व उत्साहके साथ उस राजप्रसादको ग्रहण करते थे आज भी वैसे ही आनंद और उत्साहके साथ वह राजपूत वीरगण उस प्रसादको ग्रहण करते हैं। उस गुप्तदू-तने लौटकर यह समाचार दरबारमें जाकर अकबरमे कहा; इस समाचारको सुन-कर सबहीके हृदयमें महती भक्तिका संचार हुआ, सब ही प्रतापकी असीम-महिमासे मुग्ध होकर उनकी प्रशंसा करने लगे; यहांतक कि जिन राजपूतोंने अपने कुलमर्यादाको तिलाञ्जलि दे दिल्लीश्वरके चरणोंमें आत्मसमर्पण किया था वह भी बारंबार प्रतापसिंहके गुणोंका बखान करने लगे। भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है कि दिल्लीश्वरके प्रधान सामन्त खानखाना *प्रतापकी महिमापर इतने मोहित हो गए थे कि उसने उनके उत्साहको बढ़ाकर इस प्रकारसे राणाजीकी प्रशंसा की "इस जगतमें समस्त वस्तुएँ अनित्य और चंचल हैं; राज्य और धन

* वह रामखांके पुत्र मिरजाखांको "खानखाना" का खिताब मिला था। यह खिताब ऊंचे दर्जेका समझा जाता है।

समस्त ही लोप हो जायगा। परन्तु एक महापुरुषकी असीम कीर्ति सदाही अमर रहेगी। प्रतापने अपने राज्य धन इत्यादि समस्त पदार्थोंको छोड़ा, परन्तु कभी किसीके सामने अपने शिरको नहीं झुकाया। भारतवर्षके समस्त राजकुमारोंके बीचमें केवल वही अपने पवित्र क्षत्रियकुलके गौरवकी रक्षा करसके हैं।”

बड़ी २ विपत्तियोंमें पड़नेसे भी राणा प्रतापसिंहका उत्साह नहीं गया था। परन्तु जिनको वह प्राणोंसे भी अधिक प्यारा समझते थे, जिनके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये वह बड़े २ कष्ट भी सहन कर सकते थे; उन लोगोंकी अत्यन्त दुर्दशा देखकर कभी कभी वे उन्मत्त होजाते थे। प्रतापसिंहकी महाराणी मदनवनके बीच राणाजीसे छुटी पड़ी थीं, और प्राणप्यारे राजकुमारगण भी राजसुखको भोगनेके बदलेमें कंद मूल फल खाकर प्राणधारण करते थे, अभाग्यसे समय २ पर वह कंद मूल फल भी नहीं पाये जाते थे, यदि पाये भी जाते थे तो कभी २ भोजन करनेका समयही उनका नहीं मिलता था। कारण कि कठोर मुगलगणोंने इस प्रकार उनका पीछा पकड़ा था कि एक दिनमें पांचबार भोजन तैयार किया गया, परन्तु पांचोंबार शत्रुओंने आ घेरा। एक समय शत्रुओंके आक्रमणसे कुछकालके लिये छुटकारा पायकर राणाजी अपने कुटुम्बके साथ एक सूने वनमें विश्राम कर रहे थे। महाराणीजीने तथा उनकी पुत्रवधूने उस समय तृणबीज* चूर्णीकी कई एक रोटियें बनाई, और उनमेंसे आधाभाग लडके लडकियोंमें बांटकर आधे भागको आगेक लिये रक्खा। राणा प्रतापसिंह भी उनके पासही श्यामलतृण-शय्यापर लेटे हुए अपने दुर्भाग्य और भारतकी होनहार दशाका विचार कर रहे थे; इतनेमें ही अपनी बेटीका मर्मभेदी चिल्लाना सुनकर वह चकित हुए;—उनका ध्यान बढ गया। उन्होंने रोतीहुई लडकीकी जिस अवस्थाको देखा, उससे उनका हृदय फट गया! उन्होंने देखा कि एक वनविलाव कन्याकी आधी रोटीको लेकर भागा इसीसे लडकी रोती है।

प्रतापसिंहका मस्तक चकरा गया। चारों ओर अन्धकार दिखाई देने लगा। इससे पहिले उनका साहस और निश्चय किंचित् भी कम नहीं हुआ था। भयंकर समरभूमिमें उनके प्यारे पुत्रोंने तथा कुटुम्बके लोगोंने पासही खड़े होकर स्वदेशके लिये अपने प्राणोंको नेनछावर किया, प्रतापने अपने नेत्रोंसे यह भयंकर-कार्य देखा, परन्तु इससे वह जरा डरके लिये भी व्याकुल नहीं हुए। कारण कि

* इस घासका नाम मोल था।

वह जानते थे कि जीवनका कर्तव्य साधन करनेके लियेही हमारा जन्म हुआ है; यदि पुत्र और मित्रगण जीवनका कर्तव्य साधन करके समरभूमिमें गिरपड़े तो फिर इसमें दुःखकी कौन बात है? परन्तु आज भोजनके अभावसे प्राणप्यारी कन्याको रोते हुए देखकर वीरहृदय प्रतापका हृदय एक साथ ही अधीर होगया। वे चंचल होकर उन्मत्तकी समान कह उठे कि “यदि इस प्रकारकी पीडाको देखकर राजमर्यादाकी रक्षा करनी पड़े तो उस मर्यादाको शतवार धिक्कार हो” इस प्रकार विचार कर उन्होंने कुछ विलम्ब पीछे ही इस पीडाके दूर करनेकी प्रार्थना अकबरके पास भेज दी।

प्रतापसिंहके इस प्रार्थना पत्रको प्राप्तकर अकबर परमानन्दमें मग्न होगया। इस हर्षके समय राज्यमें नृत्य गीत और उत्सव होने लगे। घर २ आनन्दके वाजे बजते थे। मुगलकुलके आनालवृद्ध वनिता आनन्दमें मग्न होगये। बादशाह अकबरने अत्यन्त हर्षित होकर प्रतापसिंहका वह पत्र पृथ्वीराजनामक एक राजपूतको दिखाया। पृथ्वीराज वीकानेरके राजाके छोटे भाई थे, इस समय यह अकबरकी कैदमें जीवन व्यतीत करते थे। जिस वर्ष (संवत् १५१५में) राठौरवीर जोधरावने मन्दौरसे अपने प्रतिष्ठा किये हुए मारवाड़के सिंहासनको अन्तरित किया, उसही वर्ष उनके एक पुत्र वीकाने भारतके मरुप्रान्तमें अपने नामसे उक्त वीकानेर राज्यको वसाया था। वीकाके वंशधरलोगोंके विक्रम प्रभावसे वीकानेरका राज्य थोड़े ही समयमें उन्नतिके अतिऊँचे शिखरपर पहुँच गया था। परन्तु विस्तारित और अवरोध हीन मरुभूमिमें वसनेके कारण वीकानेरके राजा रायसिंहने भी अपने बड़े राजा मारवाड़के अधिपति मालदेवकी समान घृणित उदाहरण दिखाया। पृथ्वीराज इन्हीं रायसिंहके भ्राता थे। यद्यपि दैवकी विडम्बनाके कारण मुगललोगोंके हाथमें कैद होगये थे, परन्तु उनका हृदय असीमवीरता, महानता और स्वदेशप्रेमसे सुशोभित था केवल वीरही नहीं वरन वह एक योग्य कवि भी थे। उन सुन्दर-गुणोंसे विभूषित रहनेके कारण वह तेजस्विनी कवितासे मनुष्यके हृदयको उन्मादित कर सकते थे तथा आवश्यकता पड़ने पर हाथमें तलवार लेकर उत्तेजना और उत्साहमें भी विलक्षण सहायता करते थे अधिक कहनेसे क्या है केवल इतना कहना ही बहुत होगया कि उस समय वे राजस्थानमें एक उत्तम वीर और कवि गिनेजाते थे। काव्यरसदायिनी भगवती वीणापाणीके अनुग्रहसे पृथ्वीराजने राजस्थानके समस्त भट्टकवियोंके ऊपर जय पाई थी बाल्यकालसे ही प्रतापची वीरता, उदारता तथा माहात्म्यसे उत्साहित होकर राजपूत कवि पृथ्वीराज, राणाजीकी

देवभावसे पूजा करते थे । इस बातको सुनकर कि राणा प्रतापने सन्धिका प्रस्ताव किया है पृथ्वीराजको अत्यन्त कष्ट हुआ । कराल चिन्ताके विषैले डंकके लगनेसे उनको अत्यन्त पीडा होने लगी, उनको विश्वास नहीं हुआ कि प्रतापसिंहने सन्धिका प्रस्ताव करके यह पत्र पठाया है । पृथ्वीराजने अपनी स्वाभाविक सरलता और निडरताके साथ शहन्शाह अकबरसे कहा “यह पत्र प्रतापसिंहका नहीं है, मैं उनको भलीभांतिसे पहिचानता हूँ, यदि आप अपना राजमुकुटभी उनके शिरपर धर दें, तो भी वह दिल्लीके तरन्तके आगे शिर झुकानेवाले नहीं ।” पृथ्वीराजने बादशाहकी आज्ञासे एक पत्र* लिखा और उस-

* पृथ्वीराजके पत्रकी नकल पूरी नहीं मिलती पर ठाकुर पूर्णसिंहजी लिखित मेवाडके इतिहास नामक पुस्तकमें १७३४में कुछ दोहे सोरठे लिखे हैं सो यहां लिखते हैं ।

सोरठा-अकबर समद अथाह, सूरापण भरियो सजल ।

मेवाडो तिणसाहिं, पोयण फूल प्रतापसी ॥ १ ॥

अकबर एकण वार, दागल की सारी दुनी ।

अणदागल असवार, रहियो राणप्रतापसी ॥ २ ॥

अकबर घोरअंधार, अँघाणा हिन्दू अवर ।

जागे जुगदातार, पोहरे राणप्रतापसी ॥ ३ ॥

हिन्दूपति परताप, पतिराखो हिन्दुआणरी ।

सहे विपतिसन्ताप, सत्य शपथ कर आपणी ॥ ४ ॥

चौथो चीतोडाह, वाँटो बाजन्तीतणू ।

दीसै मेवाडाह, तो सिर राणप्रतापसी ॥ ५ ॥

चम्पो चीतोडाह, पौरसतणो प्रतापसी ।

सोरभ अकबरशाह, अडियल आ भडिया नहीं ॥ ६ ॥

पातलखाग प्रमाण, साँची सांगाहरतणी ।

रही सदा लगराण, अकबरसूँ ऊभी अणी ॥ ७ ॥

दोहा-माई जण अहडा जणा, जहडा राणप्रताप ।

अकबर सूतो ओझकै, जाण सिराणै सांप ॥ ८ ॥

सोरठा-राओ अकवरियाह, तेज तिहारो तुरकडा ।

नम नम नीसरियाह, राण विना सह रावजी ॥ ९ ॥

सह गावडियेँ साथ, येकण वाडै वाडियां ।

राणा न मानी नाथ, तोडे राण प्रतापसी ॥ १० ॥

सोयो खो संसार, असुरप दोले ऊपरे ।

जागे जगदातार, पोहरे राण प्रतापसी ॥ ११ ॥

दोहा- धर वांकीदिनपांधरा, मरदन सूकेमाण ।

घणे नरिन्दां बेरिया, रहे गिरिन्दां राण ॥ १२ ॥

को बादशाहके एक दूतको देकर राणाजीके पास जानेको कहा। उस पत्रके पढ़नेसे सहसा बोध होताहै कि मानो पृथ्वीराज इस कारणको प्रतापसिंहसे जानना चाहते हैं कि आप किसकारण बादशाहको शिर झुकाना स्वीकार करते हैं किन्तु इस पत्रके भीतर और भी एक भाव गुप्त था। वास्तविक बात यह थी कि पृथ्वीराजने प्रतापसिंहको उस अपमानसे बचनेके लिये अनुरोध किया था। उस पत्रकी कविता यहांतक तजस्विनी और हृदयग्राहिणी थी कि आजतक भी बहुतसे राजपूतगण उसको पढ़ते २ आनंदमें मग्न होजातेहैं। पाठकोंके अवलोकनार्थ वह पत्र नीचे लिखा जाता है।

“ हिन्दुओंका समस्त आशा भरोसा हिन्दूके ऊपरही निर्भर करता है; तथापि राणा उन सबके छोड़नेका तइयार हुए हैं। किन्तु यदि प्रताप न होते तो अकबरके द्वारा सब ही समान भूमिमें लाये जाते, कारण कि हमारे राजालोग जातीय वीरताको खो बैठे हैं। हमारी स्त्रियों पवित्र सन्मान गौरवसे अलग होगई हैं। राजपूत कुलरूप इस विशाल विपणी (बाज़ार) में केवल एक अकबरही क्रेता (खरीदार) है। केवल उदयके पुत्रके अतिरिक्त बादशाहने और सबहीको मोल लेलिया; परन्तु प्रताप अमूल्य है। यथार्थ राजपूत होकर कौनहै जो नौरोज़के लिये अपने कुलकी मान मर्यादाको त्याग सकता है?—तथापि कितने ही लोगोंने ऐसा कियाहै। क्षत्रियोंके सबही बड़े २ माल विक गये, तो क्या अब चित्तौर भी इसी हाट (बाज़ार) में विकनेको आवेगा? राज्य, धन, सुख, सम्पत्तिको तो पत्तने* त्याग करदिया, तथापि उसने अमूल्यधनको अबतक नहीं छोड़ाहै। ऐसे बहुतसे हैं जो निरुपाय और निरालम्ब होकर इस बाज़ारमें आय अपने नेत्रोंके सामने अपना अपमान देखते हैं। परन्तु केवल हमीरके वंशधर ही इस कलंकसे दूर रह सकेहैं। संसार जिज्ञासा करताहै कि प्रतापको कहांसे यह गूढ अनुकूलता प्राप्त हुई? अपनी तलवार और महाप्रतिज्ञाकी अनुकूलताके सिवाय यह अनुकूलता और कुछ भी नहीं है। उस तरवार और महाउत्साहसे ही उन्होंने क्षत्रियोंके गौरवकी भलीभांतिसे रक्षा की। मनुष्यरूपी पेंठका यह व्यौपारी कुछ चिरंजीवी तो है ही नहीं; अतएव अतिक्रान्त होकर एक दिन उस व्यौपारीको इस लोकसे जानाही पड़ेगा। उस काल हमारे वंशगौरवकी रक्षाका भार प्रतापके हाथमें समर्पण किया जायगा; उस समय प्रताप ही राजपूत बीजको हमारे त्यागे

* प्रतापसिंहका प्रचलित भाषामें नामान्तर ।

हुए खेतोंमें वोवैगा जिससे इस कुलमानकी रक्षा हो, जिसके द्वारा इसकी पवित्रता एक दिन चमकने लगे, उसके लिये सब ही उत्कंठा सहित प्रतापसिंहकी ओर टकटकी लगाये देख रहें हैं ।

राठौरवीर पृथ्वीराजकी इस तेजस्विनी कविताको पढ़कर प्रताप एक प्रचंड उत्साहसे उत्साहित होगए । उनको ज्ञात हुआ कि मानो दशहजार राजपूतवीरोंने आनकर सहायता दी । उस कविताके प्रकाशमान प्रभावसे क्षीण प्रतापका हृदय फिर नवीन बलसे बलवान होगया; कठोर कार्यका सामना करनेके लिये वह फिर तैयार हुए । जब कि प्रत्येक हिन्दू स्वदेशके गौरवका उद्धार करनेके लिये प्रतापके मुखकी ओरको देख रहा है; तब क्या प्रताप निश्चिन्त रह सकते हैं ?

“यथार्थ राजपूत हांकर ऐसा कौन है जो “नौरोज़” के लिये अपने कुलकी मान मर्यादाको त्याग सकता है।” पृथ्वीराजके इस वाक्यके अन्तर्लीन “नौरोजा” शब्दका गूढ़ अर्थ प्रकाश करना यहां पर अत्यन्त आवश्यकीय जान पड़ता है । जिस समय भगवान भास्कर मेघराशिमें प्रवेश करते हैं, पूर्वदेशीय मुसलमानलोगोंमें उस समय “नौरोज़ा” (वर्षका नया दिन) नामक एक उत्सवका आरंभ हुआ करता है । परन्तु वीरवर पृथ्वीराजने अपने पत्रके बीच इस अर्थमें “नौरोज़ा” शब्दका व्यवहार नहीं किया है । पंडितवर अब्बुलफ़ज़लका इतिहास पढ़लेनेसे “नौरोज़ा” शब्दका गूढ़ अर्थ समझमें आजायगा ।

“यह नौरोज़ा नववर्षका दिन नहीं है, यह और एक महोत्सव है । अकबरने स्वयं इसकी प्रतिष्ठा करके इच्छानुसार इसका नाम “खुशरोज़” (आनन्दका-दिन) रखवा था । प्रतिमासके अनुष्ठित महोत्सवके होजानेपर नवें दिन (नौरोज़) इस आनंदमय उत्सवका आरंभ होता था । वह आनंदवासर मुसलमानोंमें एक प्रसिद्ध उत्सव गिना जाता था । मुगल बादशाहतके बीच उस दिन सब ही परमानंदमें मग्न रहते थे । दुःख या विपादकी कालिमा किसीके बदनमंडलपर अंकित नहीं रहती थी; राजदरवारमें उस दिन सर्वसाधारणके आने जानेकी भी कोई रोक टोक नहीं थी । बेगम साहब भी बड़ी धूम धामके साथ दरवारमें विराजमान होती थीं । प्रतिष्ठित मुसलमानों और सामन्त राजपूतोंकी स्त्रियां भी उसदिन दरवारमें आती थीं । परन्तु यह खुशरोज़ और एक बातके लिये प्रसिद्ध था । इस ही समयमें राजमंदिरसे सटेहुए एक गुप्तस्थानमें एक मेला हुआ करता था । इस मेलेमें स्त्रियोंके अतिरिक्त पुरुषोंका

प्रवेश नहीं होसकता था । राजपूत और मुसलमान व्यापारियोंकी स्त्रियें अनेक देशोंके शिल्पजात पदार्थ लाकर उस मेलेमें कारवार किया करती थीं * और राजपरिवारकी स्त्रियें वहां जायकर मनमानी सामग्री मोल लिया करती थीं । “ बादशाह भी वेपवदले हुए वहां जाकर भ्रमण किया करते थे । इस अवसरमें वह व्यापारकी वस्तुओंका यथार्थमोल जानलेते थे, तथा राजाकी अवस्था और राजकर्मचारियोंके ऊपर सर्वसाधारणका कैसा मत है इस विषयको भी वह जान जाते थे । ” प्रत्येक बुद्धिमान् पाठक इस बातको जान सकते हैं कि इस उत्सवकी जड़में एक प्रकारकी कुप्रवृत्तिका बीज गुप्तभावसे छिपा हुआ था । चालवाज अब्बुलफ़जलने इस दुरभिसन्धिको एक दूसरी प्रकारकी मूर्तिमें अवतारित करके संसारकी आँखोंमें धूल डालनेकी चेष्टा की है । मुखका विषय है कि उसकी वह चेष्टा फलवती नहीं हुई । समयके असीम आहात्म्यसे सत्यका उजाला आपसे आपही प्रकाशित होगया । क्या अकबर सब भाषाओंको जानता था ? अच्छा, ऐसा न सही, अनपढ़ी मुसलमानियाँ और राजपूत रमणीगण जिस-कठिन और मिश्र भाषामें परस्पर बातचीत करती थीं, क्या वह उस भाषाको समझ लेता था ? कौन इस बातका प्रमाण देसकता है ऐसा कौनसा बुद्धिमान् है जो चालवाज अब्बुलफ़जलकी चालाकीसे धोका खाकर शिर झुकाय प्रसन्न हृदयसे मुगलबादशाहकी उस भयंकर कुप्रवृत्तिको धन्यवाद देगा ? जिसको साधारण ज्ञान है, जो अच्छे दुरेका विचार करसकता है, वह अवश्य ही कहैगा

* राजवंशोत्पन्न पुरुष और स्त्रियें शिल्पद्रव्य तैयार करके इन राजकीय प्रदर्शिनियोंमें प्रेषित करते थे वदलेमें इनको बहुतसाधन मिलता था । बहुतल्लोग इस बातको नहीं जानते होंगे कि एशिया महादेशके बहुतसे राजा एक-एक कारवार करते थे । दृष्टान्तके लिये दोका नाम बताना ही यथेष्ट होगा । औरंगजेब टोपियें तैयार करके इस नौरोजके मेलेमें बेचा करता था; इस कारवारसे जो धन इसने पैदा किया था, अंतसमयमें उसहीसे बादशाहकी अंत्येष्टि किया हुई थी । खिलजी मंहम्मद भी एक इस ही प्रकारका कारवार करता था, कहते हैं कि वह साहित्यव्यवसाई था । उसके हस्ताक्षर परम मनोहर थे, वह ग्रंथादि लिखकर अपने अमीर उमराओंको बेच देता और वदलेमें बहुतसा धन पाता था । यह बादशाह एकसमय अपने अमीर उमराओंके साथ बैठा हुआ फारसीकी नज़म पुस्तककी नकल कर रहा था, उस ही अवसरमें सभामें बैठे हुए एक मुल्लासाहबने एकशेरको संशोधन करके उसके वदलेमें वहां अपने बनाए हुए मिसरेके लगानेको कहा; बादशाहने तत्काल वैसा ही किया; परन्तु उन मुल्लाजीके चले जानेपर उनके मिसरेको मियाकर वहांपर वही पहिलेका मिसरा लिख दिया । एक उमरावने यह देखकर बादशाहसे इसका कारण पूछा बादशाहने जवाब दिया कि “ एक बूया विद्याभिमानीको लजित करनेकी अपेक्षा, लिखावटमें कालिमा चिह्न देना कई दरजे अच्छा है । ”

और अवश्यही स्वीकार करेगा कि अकबरने अपने वुरे अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये ही इस अनर्थकर " नौरोज़ा " उत्सवको स्थापित किया था। इस पापमय " नौरोज़ा " उत्सवमें कितनेही राजपूत कुलोंकी पवित्र वंशमर्यादा कलंकके लगनेमें कालीहुई है, अनेक अभागी राजपूतवालाओंको विवश हो अपने सतीत्वको यवनके हाथसे गवाना पडाहै। भट्टकाव्यग्रंथोंमें भलीभांतिसे इन गुप्त अत्याचारोंका वर्णन किया गयाहै। राठौरवीर पृथ्वीराजने इसही " नौरोज़ " की दुरभिसन्धिका संकेत अपने पत्रमें कियाहै।

जिस अकबरने " जगद्गुरु " " दिलीश्वरो वा जगदीश्वरो वा " इत्यादि पवित्र और संमान सूचक उपाधियोंको प्राप्त किया था, इतिहासने जिसको निरपेक्ष प्रजापालकके नामसे पुकारा है, सजातीय इतिहासलेखकोंने सत्यसन्ध, धर्मआत्मा और विशुद्धहृदय कहकर बंदन कियौहैं, वह अकबर, वही भुवनविदित "धर्मप्रिय अकबर" अपनी प्रभुताका कुव्यवहार करके कठोर हो निन्दित मार्गमें भ्रमण करताथा; इस बातका विश्वास करनेमें हम हिचकिचाते हैं; इस बातका विचार आनेसेभी हृदय बारंवार डोल जाताहै। भाग्यतरंगकी प्रचंड आंधीमें फँसकर जिन राजपूतोंने बादशाहके हाथ अपनी स्वाधीनताको बेचादिया था, राजधर्मके मस्तकपर चरणप्रहार कर, मूर्खमनुष्यकी समान कामबिसूढ़ हो उन राजपूतोंकी प्राणप्यारी स्त्रियोंका साररत्नका चुराना जब याद आताहै तब फिर उसको भारतका शहंशाह, मुगलकुलकेतु, " जगद्गुरु " अकबर कैसे पुकारसकते हैं; तब तो उसको कपटता, स्वार्थपरायणता, और विश्वास घातकताका मूर्तिमान पिशाच समझकर घृणा करनेकी इच्छा होती है। बादशाहके इस पापमय "नौरोज़ा" उत्सवके समय कितने पवित्र राजकुलोंमें कलंक लगाहै उसकी गिनती नहीं होसकती ! केवल बीकानेरके राजकुमार पृथ्वीराजने ही अपनी भार्याके असीम साहस और धर्मबलके प्रभावसे इस दारुण शोचनीय कलंकसे अपने कुलकी रक्षा की थी। इनकी भार्या पवित्र शिशोदीयकुलमें उत्पन्न हुई थी, वीरवर शक्तिसिंहकी पुत्री थी। यह वीरवाला प्रतिष्ठित वंशमें जन्म लेनेके कारण अत्यन्त गुणवान थी। इस वीरललनाकी समान सर्वाङ्गसुन्दरी राजबाड़ेमें उस समय अल्पही दिखाई देती थीं। यह कहना कुछ अनुचित न होगा कि कुमार पृथ्वीराजने अपने बड़ेही पुण्यबलसे ऐसी भार्याको पायाथा।

अभाग्यसे पृथ्वीराज अकबरके बन्दी हुए; उनका सुख दुःख समस्त अकबरके अधीन था। परन्तु तथापि वह अकबरके प्रसादप्रयासी नहीं थे, न उन्होंने

बादशाहको शिर नवाया था ! सर्वगुणसम्पन्न भार्याके पवित्र प्रेमालापसे वह अधीनताके दुःखको कुछ नहीं समझते थे। उनकी भार्याके सर्वांगसुन्दर और सर्वगुण सम्पन्न होनेका प्रमाण निम्नलिखित वर्णनसे प्राप्त होगा। इस वृत्तान्तमें उस वीरवालाके जद्दुत सतीत्वकी पराकाष्ठा दिखाई गई है। एक समय दिल्लीश्वर अकबर “खुशरोज” के आनन्द बाजारमें गुप्तवेशसे घूमता फिरता था, कि इसही अवसरमें पृथ्वीराजकी स्त्रीकी स्वर्गीय सुन्दरताका प्रतिबिम्ब उसके नेत्रोंमें पडा, उस अपूर्व रूपलावण्यको निहारकर बादशाहका प्राण मोहित होगया। चित्र पुतलीकी समान इकटक लोचनसे वह उस रूपमुधाको पानकरने लगा। दिल्लीश्वरके हृदयमें पापवृत्ति बलवती हुई। विश्रामभवनमें आय अपने मनोरथके पूर्ण करनेका अवसर खोजने लगा। उसकी इस घृणित पाशवी वृत्तिके उकसनेके दो मुख्य कारण थे; प्रथम तो अपनी कामलालसाको तृप्त करना; दूसरे मेवाडके पवित्र कुलमें कलंक लगाना ! रोमांचकारी इन दो कारणोंके वश होकर सुगलसम्प्राप्त कौशलसे उस सुरसुन्दरी राजपूतवालाको हस्तगत करनेकी चेष्टा की। रक्षक ही भक्षकका कार्य करनेके लिये तैयार हुआ, जिसके ऊपर सुखदुःख, धर्माधर्म, जीवन मृत्यु समस्त ही निर्भर है, आज वही निठुर कठोर और पशुकी नाई आचरण करनेको तैयार हुआ है; जो साक्षात् धर्मका अवतार कहकर पूजा जाता है, आज वही अधर्मकी सहायता करनेको तत्पर है। इस विषम संकट—इस दारुण दुर्विपाक और—इस कठोर अग्निपरीक्षाके समय आज कौन पतिव्रताके धर्मकी रक्षा करेगा ?

इसके उपरान्त वह सरला सुकुमारी भलेसे घर लौटनेका विचार करने लगी। जिस आंगनके भीतर होकर वह सदा आया जाया करती थी, आज भी उसही मार्गसे चलने लगी। कुछ दूर आके देखा कि चारों ओरके द्वार बन्द हैं; बाहर जानेका और कोई मार्ग नहीं है, वह अत्यन्त विस्मित हुई, क्रमसे उसके हृदयमें अनेक प्रकारके सन्देह उत्पन्न होने लगे। उसही समय एक ओरका द्वार खुल गया। उस खुलेहुए द्वारसे दिल्लीश्वर अकबर धीरे २ आया और कामोन्मत्त-भावसे अपनी दोनों बांहें फैलाय उसके सामने खड़ा होगया तथा अनेक प्रकारकी बातें कहकर उस वीरवालाको लालच दिखाने लगा। दारुण क्रोधसे सतीका हृदय मथित होने लगा, उसने तत्काल अपनी कमरसे एक छूरा निकालकर अकबरके ऊपर रख-कठोर स्वरसे कहा “ईश्वरके नामसे शपथ करके कह कि और किसी राजपूतकुलमें कलंक लगानेकी इच्छा नहीं करूंगा;—कह-

शपथ कर,—नहीं तो यह तीक्ष्ण छूरी अभी तेरे हृदयके रुधिरसे स्नान करेगी।” राजपूत सतीका अद्भुत साहस देखकर बादशाह हकाचका सा रह गया;—मानो उसके ऊपर वज्र गिर पड़ा ! उसकी पाप प्रवृत्ति न जाने कहांको चली गई ? पापकलुषित मोहान्धहृदय ज्ञानालोकसे प्रकाशित होगया । बादशाहने तत्काल इस वीरवालाकी आज्ञाका पालन किया ! भट्टग्रंथोंमें लिखा हुआ है कि उस समय मेवाडकी अधिष्ठात्री भगवती विश्वमाता उस पाप—विलासभवनकी सुरंगमें सिंहासनपर सवार होकर पहुँच गई उन्होंने ही पातिव्रत धर्मकी रक्षाके लिये उस वीरवालाके हृदयमें साहस और करकमलमें छूरीको सजायाथा । इस राजपूत सतीकं असीम साहस और स्वर्गीय विमलचरित्रके सम्बन्धमें भट्टग्रंथोंमें अनेक प्रकारके सुन्दर २ उपाख्यानोंका वर्णन किया गया है । पृथ्वीराजके बड़े भ्राता रायसिंहको दुर्भाग्यसे ऐसी गुणवती भार्या नहीं मिली थी । पवित्र सती धर्मकी न्यूनतासे कहाँ अथवा कायरपनसे कहाँ रायसिंहकी भार्या अकबरके दिखाये हुए लालचमें फँस गई ! साधारण रत्नभूषणके बदलेमें अमूल्य स्वर्गीय रत्नको बेचकर जब स्वामीके घर लौट आई तब तेजस्वी पृथ्वीराजने मर्मभेदी वाणीके द्वारा बड़े भ्रातासे कहा था “ सुवर्ण और मणि रत्नके गहनोंसे पापभय शरीरको मंडित करके मनोरञ्जिनी ध्वनिके द्वारा चारों दिशाओंको प्रतिध्वनित करती यह तो आपकी धर्मप्रिया गृहलक्ष्मी आपके घरको लौट रही है; परन्तु भइया ! यह क्या ? आपकी अधर भूषण डाढी मूछोंको किसने चुरा लिया ? ”*

पुण्यश्लोक प्रतापसिंहके पवित्र जीवनचरित्रका विचार करते २ प्रयोजनके अनुसार हमको “ नौरोज़ा ” वर्णन करना पड़ा; इस समय पुनर्वार प्रतापकी अमरकीर्तिकी ओर पाठकगणोंको लिये चलते हैं । पृथ्वीराजकी तेजस्विनी कविता पढ़कर वीरकेशरी प्रतापसिंहको नयाजीवन प्राप्त होगया, वे दुर्द्धर्ष मुसलमानोंको उनके अत्याचारका बदला देनेके लिये तयारिये करने लगे । उनको विनीत समझकर मुगलसेनापतिगण अपने २ डेरोंमें अनेक प्रकारके उत्सव करने लगे । जब वह इसप्रकार आनंदसे मग्न थे, तब प्रतापने अपनी सेना लेकर मुसलमानोंपर आक्रमण किया । बहुतसे मारेगये, बहुतसे प्राणोंको लेकर भागे, परन्तु इससे राणाजीको कुछ लाभ न हुआ । जो मुसलमानसेना मारी गई उसके बदलेमें दूनी तिगुनी सेना दिल्लीसे आगई । क्रमसे संख्या बढ़ने लगी । पुनर्वार प्रतापको उत्तेजित देखकर यवनगण फिर वनवन और कन्दरा २ में उनका

* डाढी मूछोंको राजपूत गौरवका चिह्न समझते हैं ।

पीछा करने लगे; परन्तु कोई उनके एक केशकोभी स्पर्श नहीं कर सका । वे अपने गुप्तस्थानमें छिपे रहकर सुयोग और सुभीतेके अनुसार साधारण २ मुगल सेनापर छापासारकर जडमूलसे उनका संहार करने लगे । इस प्रकारसे बहुत-दिन बीत गये; अर्द्धाशन या अनशन और अनिद्राके कठोर छेशको सहन करके वीरश्रेष्ठ प्रतापने बहुत दिनोंतक मुसलमानोंसे युद्ध किया; क्रमसे उनकी सहायता घटती गई । कन्दमूलफल, वृक्षोंके पत्त और तृण बीजादि जिन हीन अपदार्थोंको भक्षण करके वह किसीप्रकार अपना चिर्वाह करने थे, धीरे २ वह पदार्थभी निवर्तित गये । वृक्षोंपर फल नहीं रहे, कन्दमूलका पता नहीं, तृणराजिमें बीज नहीं ! क्या करें ? क्या बिना भोजनके अब पशुकी समान मरना होगा ? मरना हो तो कुछ हानि नहीं, कारण कि मृत्यु तो प्रत्येक प्राणीके लिये अवश्य-स्वाभाविक है ।

परन्तु उन्होंने जो स्वदेशके लिये—“ स्वर्गादपि गरीयसी ” मातृभूमिके लिये इतने दिनतक महाकष्ट सहकर घोरयुद्ध किया, जन्मभूमिको मनुष्योंके रुधिरसे स्नान करादिया ; उस जन्मभूमिका क्या प्रबन्ध होगा ? जिस अभिप्रायसे उन्होंने अपने राज्यको श्मशान बनाकर दीर्घकालतक वनवासके कठोर छेशको सहन किया, क्या वह अभिप्राय सफल होगया ? उनकी अर्द्धाङ्गिनी दुःखकष्ट और विषमयी चिंताके विषदंशसे हीन, दीन, क्षीन, मनमलीन होरही है; पुत्र कन्याको भलीभांति आहार न मिलनेके कारण दुर्बलताने सनारक्खा है ! ऐसी अवस्थामें राणाजी कबतक यवनोंसे युद्ध कर सकते हैं । महाय सहारा सब जाता रहा, अब स्वाधीनताके जानेकी बारी आई । जिस स्वाधीनताकी रक्षा करनेके लिये अबतक उन्होंने इतने कष्ट सहेथे, यदि वही स्वाधीनता चली जाय तो फिर कौनसी वस्तु निकट रह जायगी, बापपारावलके पवित्र कुलमें कलंक लग जायगा । अतएव दूसरा उपाय न देखकर वीरकेशरी प्रतापने स्वदेशको छोड़, जन्मभूमिसे सुख मोड़, प्रीतिका नाता तोड़ सिन्धुनदके किनारेपर बसे हुए सगदी राज्यमें अपनी लोहित वैजयन्तीके गाडनेका पक्का विचार करलिया । यात्राकी समस्त तइयारी होगई । जिन सरदारोंने दुःखमुख समान विपदमें बराबर राणाजीका साथ दिया था वे अब भी सबके सब साथ चलनेको तइयार हुए । उन कई एक सरदारोंको और अपने स्त्री पुत्र कन्यागणको साथ ले शोकसहित प्रतापसिंह आरावली पर्वतके शिखरपर चढ़े । एकवार मन भरकर जन्मभरके लिये अपने प्राण-प्यारे चित्तौरकी ओरको देखा । उस शोकाच्छन्न हृदयमें कितनीही चिन्ता—

कितनीही भावना उठकर विषादकी रेखा खँचती हुई लोप होन लगीं ! उन्होंने विचार किया कि अब कदाचित् इस जीवनमें हमसे चित्तौरनगरका उद्धार न होगा । देवस्थानकी समान मेवाडभूमिमें दानव यवन लोगोंको हम दूर नहीं कर सकेंगे । बालकपनके लीलास्थल—जीवन तोषिणी आशाके विलासक्षेत्र पवित्र मेवाड स्थानसे यही हमारी अंतिम विदाहै । इस प्रकारकी अनेक चिन्ता राणाजीके हृदयको व्याकुल करने लगीं; इनके आघातसे वह अत्यन्त कातर हुए परन्तु विधाताकी अपूर्व करुणासे वह समस्त चिन्ता एक साथ दूर होगई । सौभाग्य लक्ष्मीने शीघ्रही प्रसन्न मूर्ति धारणकर भारतके उस अनुपम महावीरको अपनी गोदमें लेलिया ।

राणाजीको अपनी जन्मभूमिसे विदा नहीं मांगनी पडी । आरावलीके शिखर-से उतर वह मरुभूमिकी सीमापर आयेथे कि उनके परमविश्वासी मंत्री भामशाने असीम धन राज़ि लेकर राणाजीको समर्पण करदी । अकेले भामशाने ही इस विपुलधनको उपाजित नहीं किया था । वरन उसके पूर्वपुरुषोंने—जो कि बहुत दिनसे मेवाडके मंत्री होते आते थे—इस धनको इकट्ठा किया था । सचिव भामशाने वही धन लाकर स्वामीके चरणोंमें निवेदन किया । वह इतना धन था कि जिसकी सहायतामें बारह वर्षतक पच्चीस हजार सेनाका भरण पोषण होसके। इस महान् उपकार करनेके कारण महात्मा भामशा “ मेवाडके उद्धार कर्त्ता कहलाए गये ” । इस विपुल अनुकूलताको पाय राणा प्रतापसिंह अपने सरदार सामन्तोंको इकट्ठा करके अल्पकालमें ही मुगल सेनापति शहवाजखाँके ऊपर ऐसे दूटे कि जिसप्रकार क्रोधितकेशरी अपने शिकारपर टूटताहै। प्रतापसिंहको चुपचाप देखकर मुगललोग समझ चुके थे वह मारवाडकी ओर भाग गये परन्तु शीघ्रही उनका वह मुखस्वप्न टूट गया । उस समय देवीरनामक स्थानमें छावनी डालकर सेनापति शहवाजखाँ निश्चिन्त होकर समय बिताता था; अब प्रतापका श्रवणभैरव सिंहनाद उसने सुना । बाण लगनेपर सोता हुआ शेर जैसे प्रचंड विक्रमके साथ अक्रमणकारी पर झपटताहै, वीरेन्द्रसिंह प्रतापने भी वैसेही अभित विक्रमके साथ मुगलसेनाको घेर लिया । देवीरके मयदानमें बहुत देरतक दोनों सेनाओंका घोर धमसान हुआ । बलगर्वित शहवाजखाँ उसही स्थानमें अपनी समस्त सेनाके साथ प्रतापसिंहके हाथसे मारा गया । बहुतसे मुसलमानलोग आमैतनामक स्थानको भाग गये । इस स्थानमें मुसलमानोंकी

दूसरी सेना पंढाव डाले हुए थी। प्रतापसिंह उन भागे हुए मुगलों का पीछा करते-२ उस स्थान में पहुंच गये। और उस समस्त यवनसेना का संहार कर डाला। यह समाचार सुनकर मुगलों में अत्यन्त घबड़ाहट हुई। प्रतापसिंह को उनकी सेना के साथ कैद करने का विचार यवनलोग करने लगे। उनकी तयारियाँ हो ही रहीं थीं कि इसी अवसर में राणाजीने उस मुगल सेना को घेर लिया कि जो कमलमेर में पड़ी हुई थी। उस सेना के स्वामी अबदुल्ला को दलसहित प्रतापसिंह ने रणभूमि पर गिरा दिया। इस प्रकार थोड़े ही समय में इस वीरने ३२ किले अपने अधिकार में कर लिये। इन बीस किलों में जितने मुसलमान थे वह समस्त ही राणाजी के हाथ से मारे गये। इस भांति थोड़े ही समय में प्रतापसिंह ने संवत् १५८६ (सन् १५३० ई.) में चित्तौर, अजमेर और मंडलगण के अतिरिक्त और समस्त मेवाड़भूमि को यवनों से छीन लिया। जो मान-सिंह, प्रतापसिंह का भयंकर शत्रु था, जिसके विद्वेष से उनको इतना कष्ट उठाना पड़ा, बड़ी २ विपत्तियाँ भोगनी पड़ीं, अपने हाथ से जिसका प्राण संहार करने के लिये जिन्होंने अपने जीवन का माया मोह एकवार छोड़ दिया था, उस राजपूत कुलकलंक स्वदेशद्रोही मानसिंह का विजय गौरव से मत्त होकर निश्चिन्त बैठे रहना प्रतापसिंह से न सहा गया। वह उसको स्वदेशद्रोहिता का भलीभांति से प्रतिफल देने के लिये अम्बेर राज्य पर चढ़ गए तथा वहाँ के प्रसिद्ध वाणिज्य स्थान मालपुर को उजाड़कर अपने राज्य में लौट आये।

कुछ काल में उदयपुर को भी अधिकार में कर लिया, इस नगर के लेने में राणाजी को अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ा। शत्रुगण विना ही संग्राम किये उदयपुर को छोड़कर चलते बने। कहते हैं कि जब उदयपुर के चारों ओर प्रतापसिंह ने अपना अधिकार कर लिया तब बादशाह ने विवश होकर इस नगर को छोड़ा था। परन्तु भट्टग्रंथों में देखा जाता है कि प्रताप के अपूर्व प्रताप, साहस, वीरत्व और असीम उत्साह को निहार बादशाह के हृदय में दया का संचार हुआ और उन्होंने भक्तिरस में मग्न हो राणाजी को दुःख देने का विचार छोड़ दिया।

बादशाह ने अनुग्रह करके प्रतापसिंह को युद्ध करने से शान्ति दी। क्या राणाजी इस कार्य से प्रसन्न हो सकते हैं?—प्रतापसिंह को सुख कहाँ? मेवाड़भूमि को शमशान बनाकर प्रतापसिंह के इष्ट मित्र और सरदारों के हृदय का रुधिर बहाकर जो अकबर सुख से दिल्ली में राज्य करने लगा,—फिर राणा प्रतापसिंह के सुख की इसमें कौन सी बात हुई? उनके लिये अभी तक शान्ति दिखाई नहीं दी। उनको यही पछता-

वा रह गया कि शत्रुओंको उनके अन्यायका बदला भलीभाँति न दिया गया। जिस अभिप्रायसे राज्य धनको छोड़ अपने पराएसें सुख मोड़ वन २ में घूमकर इतना कष्ट सहा; क्या वह अभिप्राय और मनोरथ सिद्ध होगया? यदि सिद्ध नहीं हुआ तो फिर शान्ति कैसी? स्वदेशका उद्धार करनेके लिये मुसलमानोंसे समर करनेके कारण यदि प्रतापका जन्मभरतक भी भयंकर समर-सागरमें सन्तरण करना होता तो वह एकपल भरके लिये भी न घबडाते; प्रतापसिंहने स्वप्नमें भी इस बातका विचार नहीं कियाथा कि-जिस शत्रुने इतने दिनतक सताया, बीस हजार राजपूतोंका रुधिर मेवाडभूमिपर बहाया-अंतमें फिर वही युद्ध बंद करके चला जायगा। मनोरथपूर्ण न होनेसे उनके कष्टकी सीमा न रही, मनकी आशा मनमेंही रह गई; चित्तौरका उद्धार भी न हुआ; दुर्द्धर्ष शत्रुको दंड न देसके। जो चित्तौर उनके पितृपुरुषोंका प्राचीन निवासस्थान था, प्रायः सहस्रवर्ष-तक जहाँपर उन्होंने अखण्ड प्रतापसे गिल्लौटकुलके राजदंडको चलाया था, आज वही चित्तौर प्रतापसे छूटा हुआ है! उनके लिये आज वही चित्तौर मानो अनदेखी और अनसुनी नगरी है! यह विषैली चिन्ता दिन रात राणाजीको सताती और विलखाती थी, कभी २ तो वह अत्यन्तही व्याकुल होजाते थे। अकबरने समझा था कि मेरे दया करके युद्ध बंद कर देनेपर राणा प्रतापसिंहको प्रसन्नता होगी, परन्तु वह बादशाहकी भूल थी, अकबरके युद्ध बंदकर देनेसे उनको महादुःख हुआ। शत्रुका अनुग्रह जितना कोमल होता है, वीरके हृदयमें वह उतनाही सालता है। अकबर यदि जन्मभरतक प्रतापसिंहको युद्धकी पीडा देता, तो वह क्षणभरके लियेभी दुःखी न होते;—परन्तु शत्रुके इस अनुग्रहसे—इस असह्य कठोर कुलिशके प्रहारसे वह अत्यन्तही व्याकुल हुए, अकबरको और अनर्थकारी राजसन्मानको हजारबार धिक्कार देने लगे।

प्रताप प्रवीण अवस्थाको पहुँच चुकेहैं। युवा अवस्थाके सम्पूर्ण उत्साह इस प्रवीण वयसमेंही लोप हुए, समयने इसही अवसरमें बुढापेकी सूचना दी। हम नहीं कह सकते कि जीवनकी यह सीमा औरोंके लिये कैसी सुख या दुःखकी देनेवाली होती होगी, परन्तु वीर बूढामणि प्रतापने इससे किंचितभी विश्राम नहीं पाया। चिन्ता क्लेश और संसारके कठोर कष्टोंके प्रहारसे प्रवीण अवस्थाके समय प्रतापको बुढापा प्राप्त होगया। उनके समस्त अंगोंमें शस्त्र लगनेके चिह्न थे, हृदयका प्रत्येक पर्त चिन्ताकी विषैली आगसे जलता था; शरीर दुर्बल होता गया और प्रकाशमान हृदय! जो एक समय तेजस्विनी आशाके मोहन मंत्रसे उत्साहित होकर

संसाररूपी वनमें मत्तमांतंगकी समान झूमता हुआ फिरता था, इस समय शान्तभूर्तिको प्राप्त होगया है । बलवती न होनेपरभी उस आशाको प्रतापसिंह न छोड़ सके । चित्तौरका उद्धार उनमें न हुआ तथापि वे चित्तौरकी आशाको हृदयसे अलग न करसके । उदयपुरके आगे स्थित हुए उस ऊंचे शैलशिखरपर बैठेहुए वह वहुधा चित्तौरके गगनभेदी स्तंभोंकी ओर एकटक दृष्टिसे देखते रहते थे । उनके जयशीलपुरुषोंने इन स्तंभराशिको अपनी २ विजय होनेपर स्थापन कियाहै । शत्रुओंके हाथसे उनको बचानेके लिये अनेक गिल्लौट वीरोंने अपने हाथसे अपने हृदयके रुधिरको निकालकर रण-पाचकोंको दान दियाहै ! परन्तु प्रतापसिंहने क्या किया ? कठोर उद्यम और परिश्रम सहन करके हजारों कष्ट उठाये, परन्तु शत्रुओंके ग्राससे चित्तौरपुरीका उद्धार न करसके । इस भयंकर पछतावेसे प्रतापसिंह दिनरात व्याकुल हाने रहतेथे । वह एकाग्रचित्तसे चित्तौरके उस ऊंचे परकोटे और जयस्तंभोंको देखा करते थे; अनेक विचार उठकर हृदयको डांवाडोल कर देते थे । उन विचारोंके भयंकर प्रहारसे कभी वह उन्मादित कभी उत्तेजित और कभी २ स्वल्पकालके लिये अचेतनतामें मग्न होजाते थे । मरीचिकामयी कुहकिनी आशाके हाथकी कठपुतली होकर प्रतापसिंहका प्रवीणजीवन अनन्तकाल स्रोतमें लीन होनेके लिये शीघ्रतासे परलोककी ओरका बढ़ने लगा ।

भट्टग्रंथोंमें लिखाहै कि एकसमय ग्रीष्मऋतुकी संध्याके समय प्रतापसिंह उस ऊंचे शृंगपर बैठेहुए एकाग्र चित्तसे उन स्तंभोंकी ओर देख रहेथे। सूर्य भगवान् दिनके लंबे भागको व्यतीत करनेके कारण थककर अस्ताचलपर आरोहण कर रहे थे । उनकी रक्ताभकिरणामाला, उस आकाशमें कि जो सूक्ष्म २ वादरोंसे छाय रहाहै—तरंगायित होकर अनिर्वचनीय शोभा प्रकाशित कररही है । अनन्त-गगनका वह मनोहरचित्र चित्तौरके ऊंचे कोटेपर, स्तंभकी चोटियोंपर और नीचे पृथ्वीमें प्रतिबिम्बित होकर और भी मनोहर जान पडताहै । राणाजी चित्तौरकी उस लालकिरणमंडित दुर्गप्राचीर और स्तंभराशिकी ओर देख रहेहैं; परन्तु वह प्रकृतिकी उस सुन्दरताको नहीं देखते थे । उनके दोनों नेत्र खुले तो हैं, परन्तु अपने कार्यको नहीं कर रहे हैं; वे शून्यदृष्टिमय हैं वे नेत्र वाहिरी संसारको छोड़कर अन्तजगत्के एक विशाल चित्रको देख रहेहैं। वह चित्र बहुत बड़ा और विचित्र बनाहुआ है । वाहिरी जगत्की सीमा है । वाहिरीनेत्र, भौतिकबाधा रुकावट या परदेको भेदकर आगे नहीं बढ़ सकते, परन्तु अन्तरके नेत्रोंकी गतिको कौन रोकसकता है ? प्रतापके वाहिरी नेत्र चित्तौरपर लगे हुएथे, परन्तु आन्तरिक

नेत्रोंके द्वारा वह अनन्त अन्तर्जगत्के अनेक चित्र और कार्य देखरहे हैं । उन्होंने भीतरी नेत्रोंसे देखा कि, मानो युवक बाप्पा रावलने मौर्यवंशीय मानराजाके मस्तकसे रत्नमंडित राजमुकुट उतारकर अपने शिरपर धारण किया । हैमत्पनमंडित लोहिताभ “छेंगी” उनके मस्तकपर लगाई गई । तदुपरान्त वीरकेशरी समरसिंह यवनक वलसे भारतमाताका उद्धार करनेके लिये तइयार हुए और देशरक्षा करनेमें अपने प्राणोंको न्यवछावरं करके वीरवर पृथ्वीराजके साथ दृषद्वतीके किनारे अनन्त निद्रामें शयन किया । इतनेहीमें कहींसे काली २ घटा आकर चित्तौरके ऊपर छांय गई । उस निविड मेघमालाको छिन्न भिन्न करके चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीकी दीप्तिमान मूर्ति चित्तौरके ऊंचे परकोटेपर विराजमान हुई;—अकस्मात् श्रवणभैरव हुंकार नादसे सम्पूर्ण मेवाडभूमि कम्पायमान होगई; उस विकट हुंकार ध्वनिको प्रतिध्वनित करके राणा लक्ष्मणसिंहके वारहपुत्रोंने हृदयके रुधिरको दान करके चामुण्डादेवीका विकट खप्पड रंग दिया । क्रमशः वह भयंकर चित्र और भी अधिक भयंकर होगया । वैसेही देवल सरदार वाघजी, वीरवर जयमल तथा फत्ते, फत्तेकी वीरमाता और वीर वधूने प्रचंड रणतुरंगपर सवार होकर रणरूपी समुद्रमें गोता लगाया ! फिर अकस्मात् चित्तौरका जीवन्तभाव लोप होगया और अनन्त काली कराल घटाओंने भलीभाँतिसे चित्तौरको ढक लिया ! उस मेघमालाको शत सहस्र तीव्र विज्जुचमककी समान छिन्नभिन्न करके चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवी चामुंडाजी करुणायुत शब्द करती हुई चित्तौरको छोड गई । अन्यकार औरभी अधिक घना हुआ; देखते २ निर्बलहृदय उदयसिंह स्वाधीनताकी लीलाभूमि चित्तौरके गिरिदुर्गको छोड दूर भाग गया; उस काल सम्पूर्ण प्रकृति राज्यको रुलाता हुआ, चारों ओर विकट हाहाकार होने लगा । मानो संसारका प्रलयकाल आ पहुँचा ! दारुण विस्मय, शोक, और मानसिक कष्टसे पीडित होकर प्रतापसिंह प्रचंड वेगसे कम्पायमान होने लगे । उनके यह सम्पूर्ण विचार क्षणभरमें लोप होगए ! चैतन्यता प्राप्त हुई ! विस्मय और शोकसे चलायमान होकर उन्होंने बाहिरी संसारमें मनलगाया; तो देखा कि;—सूर्य भगवान छिपना चाहतेहैं, समस्त संसार काले २ बादरोंसे ढका हुआ है; भयंकर पवन अत्यन्त वेगसे चल रहीहै । उस भयंकर पवनके प्रचंड प्रहारसे मेघावली छिन्नभिन्न होकर, बारंबार बिजलीरूप अग्निको उगलती हुई जगत्के एक छोरसे दूसरे छोरको भाग रहीहैं ! कुछ जागते और कुछ सोते इस स्वप्नके बीत जानेपर प्रतापसिंहको फिर अपना ध्यान आया, फिर उन्होंने एकवार बीतती

हुई होनीका विचार किया कि वैसेही नई नई बाधाओंने तत्काल उनके मनपर चोट दी। फिर वही रोप;—वही डाह, और अपने मनका धिक्कार देना उनको याद आगया। दांतसे दांत किस किसाकर उन्मत्तसे होकर विकट चीत्कार कर उठे। शत्रुगण दयाकरके संग्राम करना बंद करगये, क्या प्रताप ना वीर शत्रुओंके इस दयाभावको सहन करसकताहै ? यवनोंकी दयाका स्मरण करके राणाजीके हृदयमें जो कठोर पीडा होती थी, यदि उसका मिलान किया जाय तो शत्रुओंका उपहास और घृणा यह दोनों बातें अत्यन्त ही साधारण ज्ञात होती थीं—अत्यन्त कठोर अत्याचार कुसुमप्रहारकी कोमलतासे हीनतेज हो जायगा। वीराग्रगण्य प्रतापसिंह पीडादायक बाणशय्यापर युग २ तक शयन करसकते, परन्तु शत्रुका अनुग्रह उनपर पलभर-कों भी नहीं सहा जाता ।

उसदिन वीरशेखर प्रतापसिंहके हृदयमें जो दारुण चोट लगी, उसकी पीडा किसी प्रकारसे न मिटी, दिन २ कष्ट बढ़ताही गया। यहांतक कि हृदय छिन्नभिन्न हुआ। जो हृदय एक समय अत्यन्त कठोर पीडा सहकरभी यथावत था, आज वह बुरी तरहसे टूट गया। उस टूट हृदयको साथ लेकर प्रतापसिंह-को अधिक दिनतक संसारमें नहीं रहना पडा। वह अपने जीवनके मध्याह्नकालमें अतिशीघ्रही इस लोकसे चले गये। उनके अंतसमयके वृत्तान्तको पढकर पत्थरका हृदयभी पसीज जाताहै, फिर यदि मनुष्यके आंसू गिरें तो आश्चर्यही क्याहै ? वह जिस प्रकार अलौकिक वीरता और महानताके साथ जीवित थे वैसेही वीरत्व और महत्त्वके साथ संसारसे विदा हुएथे। क्षत्रियोंके गौरव और माहात्म्यके आदर्श बनकर उन्होंने जन्म लिया था। राजकुलमें जन्मलेकर किसी मनुष्यको ऐसी दुर्दशा नहीं हुई होगी कि जैसी दुर्दशा प्रतापसिंहने उठाई;—उनकी समान किसीने भी भयंकर संकट और विघ्नोंका सामना करके दीर्घकालतक संग्राम नहीं किया था, किसीनेभी ऐसे स्वदेशानुराग और सजातिप्रेमके पवित्रमंत्रसे दीक्षित होकर अपने स्वार्थको इस प्रकारसे नहीं छोडा था इसी कारणसे कहा कि राणा प्रतापदेवता—मनुष्यकुलमें—देवता थे। इस अभागिनी भारतभूमिका म्लेच्छ-ग्राससे उद्धार करनेके लिये;—जगन्नाथ आर्य जातिकी हीन अवस्थामें प्राणके बलिहारी करनेका प्रकाशमान उदाहरण संसारको दिखानेके लिये, अभागे भारत-संतानोंके होनहार उद्धारकी श्रीगणेश करनेके लिये प्रतापका जन्म इस पापमय-संसारमें हुआ था। नहीं तो अत्यन्त उत्तम राजकुलमें उत्पन्न हो विभव और

सौभाग्यसंपत्तिका अधिकारी होकर किसने इच्छानुसार राज्यसुखको तिलांजलि दी है ? ऐसा कौन हुआ कि जिसने विशाल राज्यका अधीश्वर होकरभी स्वदेशोद्धार का महामंत्र माधन कर्णोंके लिये दीन भिखारीकी समान बनबन कन्दर २, दुर्गम गिरि गहन और तत्त रेतीले मयदानोंमें बराबर पचीसवर्षतक भ्रमण किया हो ?

उत्तमोत्तम महल दुमहलोंको छोड़कर राणा प्रतापसिंहने पेशोला सरोवरके किनारे पर कईएक कुटीरें * बनाई थीं। उनही कुटियोंमें अपने समस्त सरदारों के साथ रहकर राणाजी दिन व्यतीत किया करतेथे। आज अंतकालके समयभी प्रतापसिंह उन्हींमेंकी एक साधारण कुटीमें लेटे हुए कालकी कठोर आज्ञाकी बाट देख रहेहैं। विश्वासी सरदारगण उनके चारों ओर बैठे हुए प्रत्येक दशाको भली-भांतिसे देख रहेहैं; इतनेहीमें प्रचंड वेगसे शरीरको कम्पायमान करती हुई एक लंबी सांस राणाजीके देहसे निकली ! समस्त सरदार उस समय अत्यन्त दुःखित होकर आँसू बहाने लगे। उसकाल शालुम्त्रापातिने कातर हांकर महाराणा प्रतापसिंहसे पूछा “क्यों, महाराज ! ऐसे कौनसे दारुण दुःखने आपकी पवित्र आत्माको दुःखित किया, इल पिछले शयनमें किसने आपकी शान्तिको भंग किया ?” क्षणभरके पीछे धीरे धीरेसे राणाजीने उत्तर दिया। “सरदारजी ! अबतकभी प्राण नहीं निकलता; केवल एकही धीरजकी वाणी सुनकर यह अभी सुखपूर्वक देहको छोड़ जायगा। वह धीरजकर वाणी आपहीके पास है। आप स्वलोग शपथ करके मेरे सन्मुख प्रतिज्ञा करके कहें कि, जीवित रहते अपनी मातृभूमि किसीभांति तुर्कोंके हाथमें अर्पण नहीं करेंगे।—कहो—यह सुनतेही मैं सुखमें नेत्र बंद करलूंगा। पुत्र अमरसिंह हमारे पितृपुरुषोंके गौरवकी रक्षा नहीं कर सकेगा। वह यवनोंके ग्राससे मातृभूमिको नहीं बचा सकेगा। वह विलासी है, वह कष्ट नहीं झेल सकेगा” यह कहते २ राणाजीका विशाल पीला वदन गंभीर हो गया, फिर उन्होंने अमरसिंहके बालकपनकी दो एक बातें सुनाईं। ‘एकसमय कुमार अमरसिंह उस नीची कुटीमें प्रवेश लरनेके समय शिरकी पगड़ी उतारनी भूल गया था इस कारण शिरकी पगड़ी द्वारके निकले हुए वांसमें लगकर नीचे गिरी। अमरसिंहने इसको कुछ भी न समझा और दूसरेदिन सुझसे कहा कि यहापर बड़े २ महल बनवा दीजिये।’ यह वार्ता कहते २ प्रतापका

* इन कुटीरोंके बदले आजकल इस स्थानमें सरोवरके किनारे संगमर्मरके महल बन रहे हैं। यह महल मेवाडकी हीनावस्थामें बनेथे। इस हीनावस्थामें ऐसे महलोंके बनानेका विचार करनेपर विदित होताहै कि मेवाडकी संपत्ति अटूट है।

वदन और भी अधिक गंभीर होगया । उन्होंने फिर लंबी श्वास ली और कहा ।
 “ इन कुटियोंके वदले यहांपर रमणीक महल बनैंगे, मेवाडभूमिकी दुरवस्था
 भूलकर अमर यहांपर अनेक प्रकारके यांगविलास करैगा; उससे इस कठोर
 व्रतका पालन न होगा । हा ! अमरसिंहके विलासी होनेपर वह गौरव और मातृ-
 भूमिकी वह स्वाधीनता जाती रहैगी कि जिनके लिये मैंने बराबर पच्चीसवर्षतक
 वन २ और पर्वतपर घूमकर वनवासका कठोर व्रत धारण किया, जिसको अचल
 रखनेके लिये सबभौतिकी सुखसम्पत्तिकां छोडा । शोक है कि अमरसिंहसे इस
 गौरवकी रक्षा न होगी । वह अपने सुखके लिये उस स्वाधीनताके गौरवको छोड
 देगा । और तुमलोग—तुम सब उसके अनर्थकारी उदाहरणका अनुसरण करके मेवा-
 डके पवित्र और श्वेतयज्ञमें कलंक लगा लोगे । ” प्रतापसिंहका वाक्य पूरा होते ही
 समस्त सरदारलोग भिड़कर बोले “महाराज! हमलोग बाप्पा रावलके पवित्र सिंहास-
 नकी शपथ करते हैं कि जवतक हममेंमे एकभी जीवित रहैगा, उस दिनतक कोई
 तुरक मेवाडभूमिपर अधिकार नहीं करसकेगा; उतने दिनतक राजकुमारको महारा-
 जकी आज्ञाका निरादर न करने देंगे, और जितने दिनतक मेवाडभूमिकी पूर्व-
 स्वाधीनताको पूर्णभावसे उद्धार न करलेंगे उतने दिनतक इन्ही कुटियोंमें हमलोग
 रहेंगे । ” इस सन्तोषदायक वाणीको सुनकर राणाजीने प्रसन्नतासे
 समस्त चिन्ता, समस्त कष्ट और समस्त शंकाओंसे रहित होकर परमानंदके
 साथ अमरलोककी यात्रा की । संवत् १६५३ (सन् १५७० ई०) में राणा प्रता-
 पसिंहने इस संसारसे विदा ली थी ।

उसदिन—उस शोचनीय बुरेदिनमें भारतके भाग्याकाशका एक प्रकाशमान
 नक्षत्र अनन्त कालके लिये अपने स्थानसे टूट पडा—एक प्रचंड भूचालसे सारी
 भारतभूमि बारम्बार कम्पायमान होने लगी; न जाने कहांसे हृदयविदा-
 रक हाहाकार ध्वनि श्रवणगोचर होने लगी । कौन रोया, कौन नहीं रोया, इस
 बातको किसीने नहीं देखा, परन्तु सबही रोने लगे । बालक, वृद्ध, वनिता,
 धनी, निर्धन, युवक, युवती यहांतक कि समस्त सर्वसाधारण लोग, स्वदेशप्रेमी
 संन्यासियोंमें श्रेष्ठ प्रतापसिंहके शोकसे अधीर होकर अत्यन्त रोदन करने लगे ।
 उस बुरे दिनको बीतेहुए सैंकडों वर्ष होगये, संसारमें तबसे अनेक उलट फेर
 होगये, भारतकी विशाल छातीमें अनेक विदेशीय और विजातीय शत्रु कडेपनसे
 चरण प्रहार कर चुके, अभागी भारतसन्तान तबसे बड़े २ कष्ट सहचुकी;
 परन्तु इस लोकसे गयेहुए महात्मा प्रतापसिंह अबतक किसीसे नहीं भूले

गये । आदमी पुत्र शोकको तो भूल गये, परन्तु प्रतापसिंहके शोकको किसीने नहीं विसराया । क्या कोई ऐसा भी समय आवेगा कि जब लोग प्रतापसिंहके कष्टको भूल जायेंगे ? इस भूल जानेका ध्यान आतेहुए भी हमारी छाती फटने लगती है ।

राजपूत कुलतिलक वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहके जीवनचरित्रको भलीभांतिसे भारतवासी पढ़ें और अनुशीलन करें । जिन लोगोंमें जातीयभाव मिला हुआ है, जो लोग स्वदेश और स्वजातिकी हीनावस्थाका विचार करके कमसे कम दो बूँद भी आँसुओंको गिराया करते हैं, जो लोग जन्मभूमिके माहात्म्यको जानते हैं, उन सबहीको वीरकेशरी प्रतापसिंहके पवित्र जीवनचरित्रका पठन पाठन करना उचित है । हमको सन्देह है कि प्रतापकी समान महावीर जगतके किसीदेशमें किसीसमय पर कभी उत्पन्न हुआ हो । उनकी वीरता, महानता और स्वार्थत्यागका विचार करनेपर आज भी दीनहीन भारतवासियोंका हृदय एक प्रचंड शक्तिसे बलवान होजाता है । जो अकबर उस समयमें समस्त भारतवर्षका शहन्शाह माना जाता था, जिसकी प्रचंड सेनाके विशालताका विचार करनेपर ज़रक्षस (Xerxes) की बड़ी सेनाभी साधारणही जान पड़ती थी; राजपूत वीरप्रतापने थोड़ीसी सेना और कितने एक सरदारोंको साथ लेकर, बराबर पच्चीसवर्षतक उसही शहन्शाह अकबरके साथ युद्ध किया था । जो मेवाडमें एक थुसिडाइडस * अथवा जिनोफन × उत्पन्न हुआ

* थुसिडाइडस ग्रीसका प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता हुआ है । इसका जन्म ग्रीसदेशके एथेन्सनगरके ग्रीक ईसाके जन्मसे ४७१ वर्ष पहिले हुआ था । एकसमय यह इतिहासलेखक ग्रीसकी सेनाका सेनापति था । परन्तु शत्रुओंके द्वारा अपनी सेनाके पराजित होनेसे राजदंडकी शंकाकर स्वदेशको छोड़ बीस वर्षतक अज्ञातवास किया था । ईसवी सन्से ४०३ वर्ष पहिले यह इतिहास लेखक अपने देशको लौटा, लौटनेके थोड़ेही दिन पीछे इसकी मृत्यु हुई । पिलोपोनिसस समरका प्रथम कांडभी इसने बनाया था ।

× जिनोफनभी एक ग्रीक इतिहासवेत्ता और सेनानायक था । सैक्रेटिसका यह शिष्य था । जब फारसके विख्यात राजा साईरसने अपने भ्रातासे संग्राम किया था, उस समय जो दशहजार ग्रीकसेना साईरसकी सहायता करनेके लिये युद्धमें गई थी उपरोक्त जिनीफन भी उस सेनाके साथ था । ईसवी सन्से ४०१ वर्ष पहिले कुनाक्स स्थानमें जब साईरस अपने भाईके हाथसे मारा गया, तब विजयी राजाने निर्दयतासे ग्रीकवाले सिपाहियोंका संहार करना आरंभ किया । उस संकटके समय जिनीफन विशेष रणदक्षता और कौशल दिखाय बचीहुई “ दशहजार ” सेनाको लेकर अत्यन्त कष्टके साथ संग्रामभूमिसे भाग आया । इसका जन्म एथेन्सनगरमें हुआ था; परन्तु एथेन्सके साथ सार्थका भीषण समर होनेपर इसने अपनी जन्मभूमिके विरुद्ध खड्ग धारण किया ! इसने बहुतसे-

होता, यदि मेवाडके इतिहासको कोई रत्ती २ करके प्रगट करता तो पिलोपनी-ससके महासमरका वृत्तान्त अथवा “दशहजार” की दुर्दशाका शोचनीय वृत्तान्त अद्भुत होनहारके परिमाणके आगे, इस वृत्तान्तकी बराबरी नहीं करसकता । राणा प्रतापसिंहकी, अलौकिक वीरता, अचल पराक्रम, उत्साह और उत्तम स्वदेशानुरागादिराजगुणोंसे शोभायमान थे; यही कारण हुआ जो उन्होंने, पराक्रमी अकबरकी दुराकांक्षा और धर्मान्धताके विरुद्ध इतने लम्बे समयतक युद्ध किया था । इसी कारणसे शहन्शाह अत्यन्त बलकरनेपर भी प्रतापसिंहके हृदयको नहीं बदल सके ! उस पवित्र देवहृदयकी अनुपम गुणराशिके विकाशित होनेका स्थान हलदीघाटका समर हुआ । उस पुण्यतीर्थ हलदीघाटके विराट् पहाड़ी देशमें ऐसा कोई स्थान नहीं है, कि जो प्रतापसिंहकी वीरताके गौरवसे नहीं दमक रहा हो । इस संसारमें जितने दिनोंतक वीरताका आदर रहैगा, जितने दिनतक अतीतसाक्षी इतिहास, संसारमें एक ओर बसी मबली आर्यजातिके भूत वृत्तान्तको वर्णन करता रहैगा; उतने दिनतक प्रतापकी वह वीरता, माहात्म्य और गौरव संसारके नेत्रोंके सामने अचलभावसे विराजमान रहैगा । उतने दिनतक वह हलदीघाट मेवाड़की थर्मोपोली * और उसके अन्तरगत देवीरक्षेत्र मेवाडका माराथन × नामसे पुकारा जाया करेगा ।

—ग्रंथ बनाये; उनमें “साईरसकी युद्धयात्रा” “साईरसका जीवन चरित्र, और “सेक्रेटिसका जीवन वृत्तान्त ” यह ग्रंथ विशेष प्रसिद्ध हैं । साईरसकी युद्ध यात्रा में ही प्रसिद्ध “दशहजारकी दुर्दशा ” विस्तारके साथ अति मनोहर भाषामें लिखा है ।

* थर्मोपोली ग्रीसदेशका एक छोटा गिरिमाग है । इस स्थानमें ग्रीसके महावीर लियोनिडसने सन् ईसवीसे ४८० पाहिले कितनी एक सेनाको साथ ले, फारसी बादशाह जारक्ससकी प्रचंड सेनाको रोकलिया था ।

× ग्रीस राज्यके अन्तर्गत अटिका प्रदेशका एक छोटा गांव “माराथन” कहलाता है । प्रसिद्ध ग्रीकवीर मिलटियोडसने एथेन्सकी सेनाको ले इस माराथनके मयदानमें फारसके बादशाहकी एक सेनाके, सन् ईसवीसे ४९० वर्ष पाहिले निर्मूल कर दिया था ।

एकादश अध्याय ११.

अमरसिंहका सिंहासनपर बैठना;—राजा मानसिंहको विष देकर मारनेकी इच्छा करनेमें स्वयं अकबरकी मृत्यु;—पिताके निकट की हुई प्रतिज्ञाके पालन करनेमें अमरसिंहकी आना कानी;—शालुब्जा सरदारका आचारण;—अमरसिंहसे बादशाही सेनाका पराजित होना;—चित्तौरमें सुभाजी (सागरजी) का राज्याभिषेक;—सागरजीका अमरसिंहको चित्तौर समर्पण करदेना;—नवीन २ जय, चन्दावत और शक्तावतोंमें परस्पर झगडा;—शक्तावतलोगोंकी उत्पत्तिका वृत्तान्त;—राणाजीके विरुद्ध बादशाहके पुत्र परवेजका युद्धके लिये तैयार होना;—राणाजीका उसको पराजित करना;—महावतखाँकी पराजय;—सुलतान खुशरूकी मेवाडपर चढ़ाई;—अमरसिंहका निराश;—इङ्गलैण्डसे दूत;—अमरसिंहका अपने पुत्रको राज्यभार देकर वनवास लेना;—अमरसिंहका परलोकवासी होना ।

राजपूतकुल गौरव राणा प्रतापसिंहके सत्रह पुत्रोंमें अमरसिंह सबसे बड़ा होनेके कारण सिंहासनपर बैठा ! आठवर्षकी अवस्थासे लेकर पिताके परलोकवासी होनेतक अमरसिंहने इतना समय पिताके पास ही बिताया था । पिताजीक दुःख, कष्ट, विपत्ति, संकट अथवा कठोर परिश्रमके समय पास ही रहकर कुमार अमरसिंहने उनके महान चरित्र पर चलनेकी चेष्टा की थी । उनका यह परिश्रम सफल भी हुआ था । वीरवर प्रतापकी वीरताके उदाहरणसे उत्साहित और उनके अतिपवित्र महामंत्रसे दीक्षित होकर अमरसिंहने युवा अवस्थाके मध्याह्नकालमें * मेवाड़के राज्यका भार ग्रहण कियाथा । उससमय इनके भी कई पुत्र हो गए थे, वे पुत्र

* संवत् १६५३ (सन् १५९७ई०) में अमरसिंह राजगद्दीपर बैठे थे ।

बालक होनेपर भी अत्यन्त बलशाली और तेजस्वी थे, यहातक कि राज्यकार्यमें भी उनको चतुरता प्राप्त होगई थी ।

वीरकुल मुकुटभ्रमणि प्रतापसिंहके परलोक सिधारनेसे आठवर्ष पीछे उनके भयंकर शत्रु अकबरशाहने भी इस लोकसे विदा ली । जिस आशालताको हृदयमें जमाकर अकबर बादशाहने धनका अनन्त भंडार खर्च करडाला, अत्यन्त परिश्रम किया, सहस्रों मनुष्योंका रुधिर गिराया; वह आशा फलवती न हुई । शहन्शाहका असीम यत्न और उत्साह समस्त ही व्यर्थ होगया । प्रतापसिंहने किसी प्रकार उसकी “इतायत” स्वीकार न की। इस कारण और अधिक आयोजन करना निरर्थक जानकर अकबरने इस कठोर कार्यकी इनिश्री कर दी । मेवाडका दग्ध रेतीला इमशान फिर शान्तिरूपी जलके शीतल कणोंके स्पर्शसे भलीभांति शान्त होगया । अकबरके पिछले जीवनमें अमरसिंहने भलीभांतिसे शान्तिके सुखको भोग किया । यदि अमरसिंह चाहते तो उस शान्तिमें विघ्न करके अपने फूलोंके मार्गमें काँटा बोदेते, परन्तु उनके परिष्कृत ज्ञानमें यह बात उचित नहीं जान पड़ी । अतएव इसी कारणसे सुगलोंके विरुद्ध खड्ग नहीं धारण किया ।

पचास वर्षतक उत्तम रीतिसे राजकरके बादशाह अकबरने इस संसारसे विदा ली । इस चलते समयके बीच सुन्दर राजनीतिके अनुसार उसने अपने विशाल राज्यको जिस प्रकार दृढ भीतके ऊपर स्थापित किया था, उसहीसे वह राज्य बहुत दिनोंतक अचल रहा ! इन सुन्दर राजगुणोंके साथ वरावरी करने पर देखा जाताहै कि उस समयके यूरोपीय शहन्शाह भी अकबरके वरावरही थे । यूरोपके इन राजाओंमें फ्रांसका चौथा हेनरी, स्पेनका पांचवाँ चार्ल्स, और इंग्लैण्डेश्वरी भुवनविदित महाराणी एलेजवेथको अकबरकी वरावर समझा गयाहै । रानी एलेजवेथके साथ अकबरका पत्रव्यवहार भी चलता था । रानी एलेजवेथ ने दिल्लीश्वरके पास एक दूत * भेजकर बन्धुभाव करना चाहा था । भाग्यकी प्रसन्नतासे अकबरने भी हेनरी अथवा एलेजवेथके मंत्रियोंकी समान मंत्रियोंको पाया था । फ्रांसका राजमंत्री प्रसिद्ध सली जिस प्रसिद्ध धर्मनिष्ठा, विपुल रणपाण्डित्य और जिस नीतिज्ञानमें पारदर्शी था सुगलमंत्री बहरामखाँको भी वैसेही रणचातुरी, वही धर्मनिष्ठा और धर्मज्ञान प्राप्त हुआ था । यद्यपि सली इस ओर

* सरटैम्समनरो दूत बनकर आया था । रानी एलेजवेथने इसको हिन्दोस्थानमें भेजनेकी तइयारियेंकी थी, परन्तु महारानीके परलोकवासी होनेपर यह उसके पीछे सरजेम्सके राजत्वकालमें यहाँ आया ।

बहुदर्शितामें अब्बुलफज़लकी बराबर हो तथापि धर्मपरायणता अथवा उदारतामें मुसलमान राजनीतिज्ञोंके साथ वह एक आसनपर बैठनेके योग्य नहीं होसकता। अब्बुलफज़ल और बहरामकी उस असीम बहुदर्शिताके साथ मुगलसम्राट्का बल मिलानेसे एक प्रचंडशक्ति उत्पन्न होगई थी। शोककी बातहै कि इस प्रचंड शक्तिको अकबरने मेवाडका नाश करनेमें लगाया था। यद्यपि अकबरने मेवाडको धूरिमें मिलादिया था; तथापि अपक्षपाती उदारचरित भट्टलोगोंने उसके गुणोंका बखान कियाहै उन राजगुणोंसे मोहित होकर उन्होंने अपने राजाके साथही शहन्शाह अकबरको एक आसनपर बिठलायाहै। अकबरके राजनीतिज्ञ, समरविशारद, महानुभाव और दूरदर्शी होनेको कोई भी अस्वीकार नहीं करेगा; परन्तु उसका हृदय कितना उदार, सरल और ऊंचा था इसके विषयमें बहुतसे आदमी संदेह किया करतेहैं। विशेष करके बूंदीके भट्टकविगणोंने जो बादशाह अकबरके पिछले कार्यका वर्णन कियाहै उसको पढ़नेसे हृदयपर चोट सी लग जातीहै, संसारको कपटता, स्वार्थ-परता, और विश्वासघातकताका आगार कहनेको जी चाहताहै। जो अकबर अपने विपुलबल और अपनी सामर्थ्यके प्रभावसे उससमय समस्त राजाओंका शिरमौर समझा जाता था, जिसकी साम्यवादिता, सूक्ष्मदर्शिता और न्याय-परायणताके बहुतसे वर्णन पाये जातेहैं, जो “जगद्गुरु” के नामसे पुकारा गयाहै; उस ही अकबरने—हाय! लिखते हुए लेखिनी कम्पायमान होती है—जिसको “दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा” की उपाधि मिली थी मानसिंहको विष देकर मार डालनेका विचार किया, इस विचारका फल उलटा हुआ, इस करतूतसे स्वयं बादशाहके जीवनपर विपत्ति पडगई। बूंदीके भट्टकविगणोंने इस वर्णनको खोलकर अपने काव्योंमें कियाहै। उन्होंने प्रतिदिनकी बातोंको अपने ग्रंथमें क्रमानुसार लिखाहै, टाडसाहब बूंदीवाले कवियोंके लिखनेका अत्यन्त ही विश्वास करते हैं। मुसलमान तवारीख लेखकलोगोंकी एकदेशदर्शिता, और पक्षपातके कलंकित सस्तकपर लात मारकर उन्होंने प्रयोजनके अनुसार अपनी जातिके पतित राजाओंका कलंक भी प्रकाश करडालाहै। उनके काव्यग्रंथोंमें लिखाहै कि अम्बेरके राजा मान-सिंहका प्रताप दिनदिन ऐसा बढ़ने लगा कि अकबरके हृदयमें डाह उत्पन्न हुआ। डाहके विषैले डंकसे जर्जरीभूत होकर वह प्रतिमुहूर्त यही समझता था कि मानो मान-सिंह मुझको राज्यसे उतारनेकी चेष्टा करताहै। मानो मान-सिंहके तीव्र दृष्टिपातसे दिल्लीका सिंहासन थरथर कांप रहाहै। क्रमानुसार डाहकी चिन्ता, और चिन्तासे शंका

हुई, शंकासे मान-सिंहको बध करनेकी लालसा हुई । अकबरने गुप्तभावेसे मान-सिंहके संहार करनेका विचार किया । शूर मनुष्योंके लिये ऐसा कोई कार्य नहीं है कि जिसको वे न कर सकते हों। अकबर बादशाह था, महाराज मान-सिंह फिर भी उसके सेवक ही थे; कालकी गतिसे आज स्वामीने अनुगत सेवकके संहार करनेका विचार कर डाला । अकबरने एकप्रकारकी “माजून” बनवाई, जिसके आवेभागमें मान-सिंहको देनेके लिये विष मिलवाया ! परन्तु मारनेवालेसे जिलानेवाला बड़ा होनाहै । देवकी विचित्रगतिमें बादशाहने भ्रम पाकर विषैली “माजून” ही स्वयं खाई; पापका प्रायश्चित्त आरंभ हुआ । निरपराधी, श्रद्धालु तथा उपकारी सेवकके प्राण लेनेके विचारमें स्वयं शाहन्शाहके प्राण गये । हमने माना कि राजा मान-सिंहने यथार्थ उत्तराधिकारी सलीमके बदले अपने भानजे खुशरोको दिल्लीके सिंहासनपर स्थापन करनेकी चेष्टा की थी; परन्तु ऐसा होनेपर भी अकबरकी समान राजाको इस प्रकारके कामरूपका व्यवहार नहीं करना चाहिये था । क्योंकि वह जां प्रतापमें भी मानसिंहसे प्रतिकूलाचरण करसकते थे, यदि बादशाहकी इच्छा होती तो वह सम्मुख संग्राममें अपने मनोरथको पूरा करसकते थे, फिर किस कारणसे बादशाहने अपने विमल यशमें कलंक लगानेके लिये ऐसा कार्य किया? कौन कह सकताहै कि उसके हृदयमें क्या बात थी ? *

* यह बात तो सत्यहै कि असार मनुष्यका हृदय कभी न कभी पापप्रवृत्तिसे चलायमान हो ही जाताहै । कपटी मनुष्य ऊपरकी सरलताके साथ लोगोंका मनप्रसन्न करके अपने दुरभीष्टको साधन करलेते हैं; परन्तु ऐसा कभी नहीं होसकता कि सदाही उस पापप्रवृत्तिके द्वारा चलायमान होकर अपने आदमीपनको भूल जायँ । यदि ऐसा होता तो मनुष्य और पशुमें कुछ भी भेद न रहता । अकबर भी, तो आदमी ही था, उसके हृदयमें पापका आजाना भी कोई नई और अद्भुत बात नहींहै, परन्तु उसने अपने महान पदगौरव, और आदमीपनको भूलकर जो यह विशाचकी समान कार्य किया, इस बातपर विश्वास करनेकी भी इच्छा नहीं होती । यह बात ठीकहै कि अकबरकी अन्तिम वयसमें मुगल बादशाहके उत्तराधिकारित्वके सम्बन्धमें मान-सिंह और बादशाहके बीच कुछ वैमनस्य होगया परन्तु मान-सिंहके बाहुबलसे ही अकबरको आधा राज्य मिला था, मान-सिंह उसके दरबार का रतनर राज्यका अलंकार समझा जाता था, जिसको अकबर अपना दाहिना हाथ समझकर गर्व करता, कृतज्ञताके पवित्र मस्तकपर चरणप्रहार करके उस ही मान-सिंहके सारडालनेका विचार करनाहृदय देकर मारना, इस बातका विचार करनेसे भी मन व्याकुल होताहै । इस कृत्य-समस्याकी मीमांसा करना कोई साधारणबात नहींहै; यदि अटकल पंचू इस बातका निर्णय करलिया जाय तो इतिहासक्षेत्र यशमें कलंक लगनेका डरहै । परन्तु टाडसाहबने बूंदीके भट्टग्रंथोंको सम्पूर्णतः विश्वास को मानाहै; फिर भला किस भांतिरे उन ग्रंथोंका विश्वास न किया जाय ?

जो हो, अब इस समय फिर मेवाडके इतिहासपर विचार किया जाता है। राज्यगद्दीपर बैठते ही अमरसिंहने उन नियमोंका संस्कार किया कि जिनपर उनके राज्यका मंगल निर्भर था। सब खेतोंको दुबारा नापकर उन पर फिर नया महमूल लगाया गया। अपने सामन्त और सरदारोंको नई २ जागीरें दीं। इसके अतिरिक्त और भी कई नियमोंका प्रचार किया। उनमें पगड़ी बांधनेकी प्रथा ही विशेष प्रासिद्ध है * अमरसिंहके चलाये हुए उन नवीन नियम और नवीन रीतिभांतिका वृत्तान्त आजतक मेवाड राज्यके स्तंभोंकी शिल्पलिपिमें खुदा हुआ पाया जाता है।

दूरदर्शी अमरात्मा महाराणा प्रतापसिंहने जो शंका की थी वह शीघ्रही फलवती हुई। विश्राम देनेवाली शान्ति वास्तवमें अमरसिंहके लिये अनर्थकारिणी होगई। पिताकी पवित्र आज्ञाका निरादर करके अमरसिंह अत्यन्तही आलस्यकं वश हो गए। उन्होंने पेशोला सरोवरके किनारे बनी हुई कुटियोंको छोड़कर वहांपर एक “ अमर महल ” बनवाया। इस महलके भीतर खुशामर्दी तस्वाओंके साथ रहकर निश्चिन्त हो दिन व्यतीत किया करते थे। परन्तु इस प्रकारका सुख बहुत दिनतक नहीं भोगसके। अल्पकालके बीचते ही बादशाह जहाँगीरकी रणभेरियोंने मेवाडकी सीमापर शब्द करके आलसी राणाको विलासकी तन्द्रासे जगाडाला। दिल्लीके तख्तपर बैठेहुए चारवर्ष भी नहीं हुए थे कि इस बीचमेंही जहाँगीरने समस्त घरेलू झगडोंको दूरकरके मेवाडनाथके ऊपर चढाई की। उस विशाल भारत साम्राज्यके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्ततक जब कि समस्त राजाओंने ही दिल्लीश्वरकी अधीनताको मान लिया, फिर क्या एक मेवाड ही उस शहन्शाहके सामने गर्वसे अपना मस्तक उठाए रहेगा? जब कि सबने ही उनको भारतका सार्वभौम सम्राट् मान कर स्वीकार किया है, तब क्या एक शिशुादियावंश ही उसका प्रतिद्वंदी रहैगा? क्या राणाजीकी सेना बादशाहकी फौजसे सामना करसकती है? फिर उनको इतना दर्द इतना गर्व—और इतना अहंकार

तो अकबरने यथार्थ ही इस पिशाचोचित कार्यको किया था! हाय! मनुष्यकी करतूतका पारपाना जरा कठिन कार्य है। जिसके साथ अकबरका वैमनस्य होता उस अमीर या दरबारीको अकबर इसी प्रकारसे मारता था दो प्रकारकी गोली उसके पास रहती थीं विषैली और विषरहित इसका भेद वही जानता था दरबारीको विषैली गोली दे आप उसके सामने निर्विषी खाता था ऐसे कई एकको मारा पर अन्तमें स्वयं भी उस गतिको प्राप्त हुआ।

* वह पगड़ी “अमरशाही पगड़ी” के नामसे प्रसिद्ध है। राणाजी तथा मेवाडके बहुतसे सरदार अबतक उसको बांधते हैं।

क्यों है? वह दर्प-वह गर्व-वह अहंकार अवश्य ही चूर्ण करना चाहिये । इस प्रकार मुसाहिवलोगोंने जहांगीरको अमरसिंहके विरुद्ध उकसाया । इसीलिये जहांगीर क्रोध करके मेवाड़की ओर धाया ।

राणा अमरसिंह बड़े संकटमें पड़े । एक ओर तो तुच्छ विलासवासना उनको कठोर और उचित कार्यके करनेसे रोकने लगी । दूसरी ओर यशकी इच्छा भी उठी और उमन भी महाराजके हृदयको किंचित् साहस दिया । दुःखकी वार्ता है कि यह माहस कुछ अधिक विलंबतक न रहा, न जाने कहाँसे कुभावनाओंने उदय होकर उनके हृदयको आलस्यमें परिपूर्ण करा दिया । वह इस बातका विचार नहीं करसके कि अब कौन सा उपाय किया जाय ? उस समय कितने एक हीन चाटुकार उन्हें अनेक प्रकारके लालच दिखाकर समझाने लगे । “महाराज ! संग्राम करके क्या होगा ? क्यों ब्रुथा विपत्तिको बुलाते हो ? जब कि इस भारतवर्षके हिंदू सुसलमान ममस्त राजा और नवाब ही मुगलोंके प्रचंड बाहुबलके आगे पराजित होगएँ, तब क्या आप उसके सामने खड़े रहसकेंगे ? आपके पास न धन बल है, न सेना है । उसके साथ सन्धि होनेसे यदि सबभांतिसे सुभीता होसके, तो फिर उसमें कौन हानि है ? सन्धिके होजानेसे आपका राज्य धन और गौरव सदाके लिये अचल होजायगा, और यह भी संभव है कि बादशाह संतुष्ट होकर आपके राज्यको और भी बड़ा दें । ” इन कायर और भीरुलोगोंकी बातोंको सुनकर कुछदेरतक राणा अमरसिंहका मन दुःखित रहा, परन्तु उनका हृदय उस समय इतना आलसी होगया था कि इच्छा होनेपर भी वह उन बातोंका प्रतिवाद नहीं करसके । राणाको उस विमूढ़ और उत्साह हीन अवस्थामें समय बिताता हुआ देखकर मेवाड़के सरदारलोग अत्यन्त ही दुःखित हुए । वे सब इकट्ठे होकर “अमर महलमें” पहुँचे तथा राणाजीको विपत्तिके आगमनसे सूचित किया । सामन्त शिरोमणि चंदावत वीरने अमरसिंहके सन्मुख आय भीम गंभीर स्वरसे कहा कि “ हे महाराज ! क्या आप इसही प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षा करेंगे तथा पिताके सत्यको पालन करनेके क्या यही नियम है ? वीरवन्दनीय प्रतापसिंहके बड़ेपुत्र होकर इस प्रकारसे ही अपने पवित्र कुलगौरवको अचल रखसकेंगे ? विचार कर देखिये कि आपने कौनसे कुलमें जन्म लिया है ? किसका रुधिर आपकी नसोंमें प्रवाहित होता है ? देशका वैरी प्रचंडशत्रु मुगल सर्वसंहारक रूपसे आपके सामने खड़ा हुआ है और आप तोषामोदी शित्रोंसे घिरेरहकर डरपोक और कायरकी समान अपने समय-

को बिता रहे हैं। आपकी आंखोंके सामने मुसलमानलोग मेवाडका सत्यानाश करदेंगे, प्रजाका मतवेंगे, राजपूतवालाओंको अपने कलंकित राथसे असती करेंगे, आप किसभांतिसे इन अत्याचारोंको देखकर बैठे रहेंगे? आपके राज्यको-आपके ऐश्वर्यको और आपके ऊंचे कुलगौरवको शतवार धिक्कार है! यदि पितृपुरुषोंके पवित्र यशको अचल रखनेकी सामर्थ्य नहीं थी तो क्यों इस पवित्र त्रिशोदीयकुलमें जन्म लिया?

शालुम्ब्रा सरदारकी इस तेजस्विनी व्याख्याको सुनकर समस्त सरदारोंके हृदय उत्साहसे भरगये, परन्तु दुःखके साथ कहना पड़ता है कि अमरसिंहकी जड़ता इस आवेशमयी वाणीको सुनकर भी ज्योंकी त्यों रही। दारुण क्रोध और अभिमानसे चन्दावतवीरके अंगोंमें आग लगगई। सभाग्रहके सामने ही योरूपका बना हुआ एक अत्युत्तम बड़ा दर्पण रक्खा था। क्रोधित शालुम्ब्रा सरदारने अपने पास और कुछ न देखकर, गलीचेके कोने-पर रक्खी हुई एक पीतलकी छड़को उस दर्पणकी ओर फेंका। तत्काल उस दर्पणके टुकड़े टुकड़े होगये। तदुपरान्त उस चन्दावतवीरने दाहिना हाथ पकड़कर अकस्मात् राणा अमरसिंहको सिंहासनसे नीचे उतारकर गंभीरवाणीसे कहा कि "सरदारगण! शीघ्र घोड़ेपर सवार कराकर प्रतापसिंहके पुत्रको कलंकसे बचाओ।" शालुम्ब्रा पतिके ऐसे आचरणसे राणाजी मनमें अत्यन्त ही दुःखित हुए; और उसको "राजद्रोही" तथा "राजापमानकारी" कहकर बारम्बार तिरस्कार किया; परन्तु ज्ञानी चन्दावत सरदार अमरसिंहके इस अनुचित वर्तावसे तिलभर भी दुःखित न हुआ। उसको भलीभांतिसे विश्वास था कि कर्त्तव्यसाधनके लिये मुझको ऐसा कार्य करना पड़ा है, फिर इसमें दोष क्या है। बात भी ठीक यही थी कि शालुम्ब्रापतिने अपना कर्त्तव्य ही प्रतिपालन किया था। यदि वह सरदार इस प्रकारका उपाय न करता तो अमरसिंहकी अत्यन्त ही दुर्दशा होती। दूसरे सरदारगण भी चन्दावतवीरकी यह कर्त्तव्यपरायणता देखकर अतीव प्रसन्न हुएथे। सबने एक मत ही राणाजीसे घोड़ेपर बैठनेको कहा। राणाजीका हृदय उस समयमें भी क्रोधसे जल रहा था। क्रोधके मार आंखोंसे आँसू निकल रहंथे। कुछदूर चलकर किंचित् सावधानता आई। मेवाडके तेजरवी सरदार और सामन्तगण राणाजीके मानसिक विकारकी अपेक्षा न करके सेनासहित पर्वतसे उतरने लगे। इस समय मेवाडके बीच जहांपर श्रीजगन्नाथजीका मन्दिर बना हुआ है, उसी स्थानपर आकर भलीभांतिसे राणाजीका मनो-

विकार दूर होगया । क्रमसे उनके ज्ञान-नेत्र खुल गये वह भलीभांतिसे जान गए कि इसमें तो जो कुछ अपराध है सो हमारा ही है । इस प्रकार ज्ञानका विकाश होनेपर राणाजी अपनी करनीपर स्वयं ही शतशः धिक्कार देने लगे । शीघ्रही मेवाडकी वर्तमान अवस्थाका प्रतिविम्ब राणाजीके मनरूपी दर्पणपर पड़ गया । शिर्षके ऊपर प्रचंड शत्रु करालवेशसे खड़ा हुआ है । शिशोदीयकुलके जिस गौरवकी रक्षा करनेके लिये राणाप्रतापने बहुत समयतक अनन्त कष्ट सहा है, आज वही गौरव जाना चाहता है, क्या ऐसे समयमें अमरसिंहको निश्चित रहना उचित है ? राणाजी समझ गये कि कर्तव्यसाधनसे विमुख होकर हमने अन्यायका कार्य किया । परन्तु जो हो गया सो हो गया, उसमें किसीका क्या चारा ? इस समय उत्साह और परिश्रम करनेके सिवाय इस उपस्थित विपत्तिसे उद्धार नहीं मिल सकता । राणाजी समझ गये कि यद्यपि हमारी सेना थोड़ी है, परन्तु उसके हृदयमें उत्साह अन्यन्त ही भरा हुआ है, इस हृदयको यदि हमारा बड़ावा मिले, तो यही सेना समुद्रकी समान उफन जायगी । यह विचारकर राणाजी निश्चित न रहे । अपने अपराधको क्षमा करनेके लिये समस्त सरदारोंसे प्रार्थना की और अपनी श्मश्रुओंपर हाथ फेरकर शालुम्बापतिसे कहा, “शालुम्बा सरदार ! आप वास्तवमें ही शिशोदीयकुलके हितकारी हैं; मुझको मोहनिद्रासे जगाकर आपने वास्तवमें वीरपनका काम किया । मैं इस आपके उपकारमें नदा ही बँधा रहूँगा । प्रतापसिंह तो स्वर्गवासी हो चुके हैं; परन्तु प्रतापसिंहका पुत्र अबतक भी जीवित है, चलिये समरभूमिमें शत्रुके सामने चलिये, फिर देखना कि अमरसिंह प्रतापसिंहका योग्यपुत्र है या नहीं ?” राणाजीका उत्साह देखकर समस्त सरदारोंके हृदयमें दृढ़ता उत्साह भर गया। सब ही हृदयोत्तेजक सिंह ही आयं करके रणवाघके गगनविदारी नादसे मेवाडके पर्वतोंको कम्पायमान करते हुए शत्रुसेनाके सामने बढे । शत्रुकुल। उस समय देवीरनामक स्थानमें पड़ा था। राजपूतोंने एक साथ उस स्थानमें पहुँचकर प्रचंडतासे शत्रुओंपर आक्रमण किया । खानखानाका भ्राता उस समय मुगलसेनाका सेनापति बनकर आया था । उस देवेरा पर्वतप्रदेशके गिरिमार्गमें हिन्दूमुसलमानोंका घोर युद्ध आरंभ हुआ । राजपूतोंको आगे बढ़ता हुआ देखकर मुगलसेनापतिने भी अपनी सेनाको आगे बढ़ाया । राजपूतगण राणा अमरसिंहके बढ़वा देनेसे उन्मादित होकर स्वदेशके गौरवकी रक्षा करनेके लिये विस्मयकर वीरता प्रगट करते हुए युद्ध करने लगे । बहुत देरतक संग्राम होतारहा । दोनों ओरकी बहुतसी सेना मारी गई । परन्तु शीघ्रतासे यह भीमांसा न होंसकी कि कौनसा

पक्ष इस समय जीतेगा ? मध्याह्नकाल बीत गया । सूर्य भगवान मध्य गगनको छोड़कर धीरे २ पश्चिमकी ओरको बढ़ते-जाते हैं, परन्तु उनकी तीक्ष्णता किंचित् भी नहीं घटी है । उनका प्रचंड तेज उस समय भी प्रदीप्त अनलकणकी वर्षा कर रहा था । मुगलोंकी तोपें विकट गर्जन करती हुई अपने सघन धूमपटलसे प्रज्ञाज्ञमान और चमकीली किरणोंको ढक रही थीं । मानो प्रलयके बादलोंसे त्रिलोकी अंधकारमय हो रही है । एक मुहूर्त भर तक तो कुछ भी दिखाई न दिया । रणवीर राजपूतगण उस गंभीर धूमराशिको भेदकरके हृदय स्तंभनकारी सिंहनादके साथ मुगलोंकी ओरको बढ़ने लगे । उनकी उस प्रचंड शक्तिको न रोक सकनेके कारण मुगलसेना पीठ दिखाकर रणसे भागने लगी । उनके अधिक सिपाही, विजयी राजपूतोंके हाथसे मारे गये । इस प्रकार सम्पूर्ण दिन घोर युद्ध करनेके पीछे राणा अमरसिंह विशाल यवनसेनाके ऊपर जय प्राप्त करके गौरवसहित अपने नगरको चले गए ।

संवत् १६६४ (सन् १६०८ ई०) को प्रसिद्ध देवीरक्षेत्रमें यह महासंग्राम हुआ था । जिन रणविशारद राजपूत वीरगणोंके अद्भुत विक्रमसे मुसलमान हारे थे उनमें राणाजीके चचा वीरवर कर्ण अत्यन्त पराक्रमी थे । उनके ही बाहुबल और अपूर्व सुन्दर रणकौशलसे अमरसिंहने जय पाई थी । वीरवर कर्णसे ही विशाल कर्णावन गोत्रकी उत्पत्ति हुई है । यद्यपि राजपूतोंके बाहुबलमें अगणित मुगलसेना पराजित हुई, परन्तु उस पराजयसे बादशाहका उत्साह किंचित् भी कम नहीं हुआ । वरन उनको राजपूतोंपर पहिलेसे दुगुना क्रोध हो आया एक वर्ष पीछे ही उसने संवत् १६६५के वसंतकालमें युद्धकी भयंकर तइयारियाँ करके बड़ी भारी सेनाके साथ अब्दुल्लानामक सेनापतिको मेवाडको जीतनेकी आज्ञा दी मुगलसेनापति अब्दुल्ला अपनी विशाल सेनाको देखकर अनन्त आशा करता हुआ राणा अमरसिंहसे संग्राम करनेके लिये चला । राणाजी भी उसके आनेका समाचार पाय सेनासहित आगे बढ़े । रणपुरनामक गिरिमार्गमें दोनों दलोंके बीच परस्पर घोर युद्ध आरंभ हुआ । रणविशारद तेजस्वी राजपूतगण स्वदेशप्रेमके पवित्र मंत्रसे दीक्षित हो अद्भुत विक्रमके साथ मुगलसेनाके मोरचोंको तोड़नेकी चेष्टा करने लगे; उनकी वह चेष्टा फलवती हुई । मुगललोगोंके विराट व्यूहका छिन्नभिन्न करके समस्त सेनाको दलित, त्रासित और नाश करके वे राजपूतगण क्रमानुसार आगे बढ़ने लगे । प्रायः समस्त ही मुगलसेना मारी गई । बहुत थोड़ी सेना भागकर अपने प्राण बचासकी । फाल्गुनशुक्ल ७ मीके दिन यह भयंकर युद्ध हुआ

था * उसदिन शिशोदीयकुलकी, बुझती हुई तेजाग्रि एकवार फिर भी प्रचंडतासे धधक उठी; मेवाडकी गौरवगरिमाने एकवार प्रकाशमान ज्योतिसे चमक उठी अति अपूर्व शोभा धारण की। गिहौटकुलकी वीरताके प्रकाशित होनेका वह एक प्रसिद्ध दिन हुआ। गिहौटकुलसिंह वीरवर वाप्पारावलकी लाल विजयपताका एकवार फिर गोद्वारराज्यकी चारों सीमाओंपर फहरा गई थी। जिन राजपूत वीरोंने स्वदेशप्रेमके पवित्र मंत्रसे दीक्षित होकर उसदिन-उस पुण्यतीर्थ रणपुर क्षेत्रमें अपने प्राणोंको नैवेद्यावग किया था, उनकी नामावली स्वदेश-प्रेमियोंकी सूचीमें आदरसहित नाम पानेके योग्य है। ×

देवी और रणपुर यह दोनों स्थान मेवाडके अति पवित्र तीर्थ माने जाते हैं। इन दोनों संग्रामोंमें बराबर पराजित होनेसे बादशाहको अत्यन्त खटका हुआ। वह नहीं समझ सका कि थोड़ेसे राजपूत किस प्रकारसे हमारी अगणित सेनाको पराजित कर देते हैं। परन्तु बादशाहका उत्साह वैसाही रहा। जिस समय वह उस पराजयके वृत्तान्तको याद करते थे, उसी समय उनको दूना क्रोध आता और झुंझलाहटके मारे चैन नहीं पड़ता था। इसवार एक प्रचंड सेनाको तैयार करनेका विचार किया। उस प्रचंड सेनाको मेवाडके विरुद्ध भेजनेसे पहिले जहां-गीरने एक नई चालाकी खेलकर राणाजीके बलको हीन करनेका विचार किया। बादशाहको हिन्दू लोगोंके प्राचीन संस्कारोंकी भलीभांतिसे जानकारी थी, आगेका लेख पढ़नेसे भलीभांतिसे इस बातका प्रमाण मिल जायगा। परन्तु राजपूतोंके आगे बादशाहकी एक चालाकी न चली। राणाजीका बल क्षय करनेके लिये बादशाह जहांगीरने चित्तौरनगरमें एक दूसरे राजपूतका 'राणा' नामसे अभिषेक किया। इस राजपूतका नाम सागरजी था। सागरजीका वृत्तान्त इससे पहिले ही हम वर्णन कर चुके हैं। इस पारवण्ड राजपूत कुलांगारने ही शिशोदीयकुलको कलंक देकर अकबरका पक्ष अवलम्बन किया था। जहांगीरने अपने हाथसे सागरजीका अभिषेक करके उसको खिलत दिया और

* तवारीख फारिस्तामें दूसरा समय लिखा है; यह तवारीख कहती है कि;— सुलतान खुर्रमके युद्धमें जानेसे कुछ दिन पहिलेही यह महासंग्राम हुआ था। टाडसाहब इस मतको नहीं मानते।

× उनवीरोंके नाम यहांपर लिखे जाते हैं;— यथा— देवगढ़के ठाकुर दूधो संगान्त, नारायणदास, सर-जमल, यशकर्ण, यह सब लोग शिशोदियावंशके मुख्य और प्रथम श्रेणीके सरदार थे। शक्तान्त सरदार भानुसिंहका पुत्र पूर्णमल; राठौर हरिदास; साद्रीका भूपति झाला; कहिरदास कच्छवाहे; वैदलाका चौहान केशवदास; मुकुन्ददास राठौर और जयमलान्त (जयमलकेवंशज) ; ।

तलवार भी दी । तदुपरान्त नवीन राणा मुगलसेनाके एक दलसे रक्षित होकर चित्तौरकी ध्वंशराशिमें राजकरनेके लिये आगे बढ़ा । यवनलोगोंके कठोर सत्तानेसे जो चित्तौरका थोड़ा सा भाग बाकी रहा, वह भी साधारण नहीं था । सान्ध्य-गगनकी शेष रश्मिरेखाकी समान उस नष्ट गौरवके क्षीण अवशेषको वर्णन करके सर टामसरोनामक प्रसिद्ध अंगरेज दूतने अपनी यात्राके इतिहासमें जो लेख लिखाहै, उसके पाठकरनेसे वस्मित होना पड़ताहै । *

राजपूत कुलांगार सागरजीने अपने पितृपुरुषोंके नष्टहुए गौरवकी भस्मपर क्षणभंगुर मिंहासनको स्थापन किया । श्मशानकी समान चित्तौर एक प्रकारकी अनदेखी सुन्दरतासे भुशोभित हुआ । परन्तु बादशाहने जिस आशासे सागरजीको चित्तौरकी गद्दी दी थी, वह आशा उनकी सफल न हुई । उसका कारण यह हुआ कि मेवाडके किसी निवासीने भी राणा अमरसिंहके पक्षको नहीं छोड़ा । कोई झौतूहलके वश होकर भी तो सागरजीके दर्शनकरने न आया । अत्यन्त कष्ट और मानसिक पीडाको उठाते २ सागरजीने सात वर्ष चित्तौरमें राज्यकिया । अपनी दुरवस्थाका विचारकरके वह स्वयं ही खिन्न हुआ करता था । जिस चित्तौरपुरीको मेरे पूर्वपुरुषोंने अपने बाहुबलसे लियाथा, आज एक यवनके अलुग्रहसे उसपर अभिषेकित हुआ हूँ । और अभिषेकित होनेसे ही कौनसा फल मिला ? पग २

* चित्तौर एक प्राचीन महानगरी है जो कि एक कठिन पर्वतके शिखरपर बसीहुई है । चारों ओर दीवारें हैं जिनकी लंबाई दश मील है । आजतक भी इसमें सैकड़ों टूटेफूटे देवमन्दिर और मनोहर महल दुमहले दिखाई देते हैं । यद्यपि आज यह टूटेफूटे पड़े हैं, परन्तु उनकी ध्वंशराशिमें भी प्राचीन गौरवका निदर्शन पाया जाताहै । पत्थरके अगणित खंभे इन खंडहरोंमें खड़ेहुए हैं । विचार पूर्वक अंगरेज लोग जहांतक देखसकते हैं, उससे निश्चय ज्ञात होताहै कि चित्तौरमें पत्थरके कमसे कम एकलाख स्थान हैं । नगरके ऊपरभागमें आरोहण करनेके लिये केवल सीढ़ियां हैं जो एकओरको बनी हुई हैं । यदि उन सीढ़ियोंपर जाना हो तो चार दरवाजोंसे होकर पहुंचना होताहै । चित्तौरके वर्तमान रहनेवालोंमें "जूम" और 'वहिम, तथा वनैले पशु और पक्षिगण ही प्रधान हैं । उन्नतिके समय जो सुन्दरता चित्तौरकी थी और जो गौरव था, आज भी खंडहरोंमें उसकी परछाईं दिखाई देतीहै । "एक भारतवर्षीय राणाके पाससे यह विजित हुआथा । वह विजित हिन्दूराजा और उसके वंशवाले उसकालसे इस नगरको छोड़ पहाडके ऊंचे शिखर पर रहनेको चलगये । बादशाह अकबरने (कि जिसकी सलतनतके वक्तमें नानार आयाथा, उसके ही पिताने) उस हिन्दू राजासे चित्तौरको लियाथा । बहुत दिनोंतक घिरेरहने तथा आहार न मिलनेके कारण जब नगरनिवासी मृतकतुल्य होगये, उस ही समय अकबर इसको ले सका था । यदि ऐसा न होता तो वह किसीप्रकारसे भी चित्तौरके जीतनेको समर्थ नहीं होता । "

पर जातिवालोंकी घृणा और विद्वेष रूप विष पीकरके मुझको जीना पड़ता है । न मुझमें स्वतंत्रता है, न सामर्थ्य है, न उत्साह है । मुगल बादशाहके प्रतापसे यह सिंहासन प्राप्त हुआ है, फिर धरोहरकी रीतिसे इसकी रक्षा करनी होगी । फिर इस सिंहासनके पानेसे लाभ कौन सा हुआ ? इस भांति अनेक प्रकारकी चिन्तासे निरन्तर पीडित होनेके कारण सागरजीको एक पलभरके लिये भी सुख नहीं प्राप्त होता था । वह स्थिर होकर एक क्षणके लिये भी कहीं नहीं ठहरसकता था । चित्तौरकी जिस वस्तुको वह देखता, उससेही उसके हृदयमें अनेक भांति की शंका उदय हुआ करती थी । इन चिन्ताओंके विषैले डंकोंसे उसको अत्यन्त पीडा होती थी । वह अपने कायरपन और राजसन्मानको बारंवार धिक्कार दिया करता था । गृहके भीतर शान्ति न पानेके कारण वह कभी रथवरहरे पर चढ़ जाता, परन्तु अभागको कहीं भी शान्ति नहीं मिलती थी । छतके ऊपर जानेसे दूना कष्ट हुआ करता था । धवरहरेके ऊंचे शिखरपर चढ़कर जब चित्तौरके गौरव स्तम्भोंको वह देखता, तब उसको चेतना नहीं रहती थी । सारे संसारमें सूनसान और अंधकार दिखाई दिया—करता था । “ मेरे पूर्वपुरुषोंने हिन्दूविद्वेषी राजाओंके ऊपर जय प्राप्त करके इन गौरव स्तम्भोंको बनवाया था, उन्होंने कितनी ही बार इन स्तम्भोंके वचानेमें अपने हृदयके रुधिरका दान किया है, परन्तु आज मैं ही इनको कलंकित करके अपने पितृपुरुषोंके पवित्र यशका कलंकित करनेका उद्योग कर रहा हूँ । क्या यह कम पछतावेकी बात है । इस परितापसे अभागे सागरजीका हृदय दिनरात जलता था । वह जिस ओरको देखता था, उस ही ओर उसको बड़े बूढ़ोंकी भृकुटि दिखाई देती थी; जहाँपर जाता, मानो वहींपर अगणित मस्तकोंको पददलित करके जाता था । इस प्रकार अत्यन्त कष्टके पडनेसे यह अभागा उन्मत्त सा होगया । भट्टग्रंथोंमें लिखा है कि एक समय सागरजीका चित्त जब इस प्रकारसे घबड़ा रहा था, तब गंभीर निशीथकालके बीच भीमाकार भैरवनाथने उसके सामने प्रगट होकर कठोर वाणीसे कहा “ रे दुराचारी राजपूताधम ! इस पापराज्यको अभी छोड़, नहीं तो किसी प्रकार तेरा मंगल नहीं होगा । ” जो हो और चाहे जिस कारणसे हो शोकाकुल सागरजी बहुत दिनतक चित्तौरमें न रह सका । उसने अपने भतीजे अमरसिंहको बुलायकर चित्तौरका समस्त राज्यभार दे दिया, और मनुष्यसमागमरहित कन्धार*गिरिशृंगमें जायकर विश्राम करने लगा ।

* कन्दरनामक खंडशैल पार्वती और चम्बलके संगमस्थानमें और रनथंमौरकिलेके मध्यवर्ती विस्तृत मयदानमें है ।

परन्तु वहां भी शान्तिने उसका साथ न दिया । कुछ काल बीतनेपर बादशाहकी आज्ञासे राजसभामें आया वहांपर जहाँगीरने उसका अत्यन्त तिरस्कार किया । वह कठोर तिरस्कार उसके हृदयमें बाणोंकी सामन लगा । भयंकर कष्टसे धीरज जाता रहा, इसकारण सब सभाके समाने अपने हृदयमें छूरी मार कर बादशाहके निकट ही प्राण छोड़दिये । स्वदेशद्रोही विश्वासघातीका प्रायश्चित्त इस ही भांतिसे होना उचित था * माता वसुमतीने एक गुरुभारसे छुटकारा पाया ।

अमरसिंहने अपने प्यारे नगर चित्तौरको पाया । परन्तु ऐसी सेना और ऐसा धन तो पास है ही नहीं कि जिससे चित्तौरकी रक्षा होसके । फिर किस प्रकारसे इसकी रक्षा होगी । राणाजीको चित्तौरके पानेसे जो आनंद हुआ था वह बहुत दिनतक नहीं रहा, और उस आनंदके साथ ही चित्तौरकी स्वाधीनता सदाके लिये लोप होगई । यदि राणाजी अधिकतासे चित्तौरका भरोसा न करते, यदि गिल्लोटवीरोंकी सनातन रीतिका अवलंबन करके संकटके समय चित्तौरको छोड़कर पर्वतोंके दुर्गम स्थानोंमें चलेजाते और उन स्थानोंमें रहकर शत्रुओंको सताते, तो उनका यह स्वाधीनतारूपी रत्न न जाता रहता, और सबकुछ जाता रहता तथापि राणा अमरसिंह अपने पूज्य पिताकी समान गौरवसे अपने जीवनको व्यतीत करसकते । परन्तु ऐसा नहीं हुआ । दूरदर्शी अमरात्मा प्रतापसिंहका भावीदर्शन शीघ्रही प्रत्यक्ष होगया । गिल्लोटकुलकी पवित्र स्वाधीनता सदाके लिये जाती रही ! चित्तौरको प्राप्त करके राणा अमरसिंहजीने कमसेकम मेवाडके अस्सी किले और नगर अपने अधिकारमें करलियेथे । उन किलोंमें अन्तला अनटीला दुर्गको उन्होंने जिस प्रकारसे लियाथा, उसका वृत्तान्त आवश्यकीय समझकर नीचे लिखा-जाताहै । इस किलेको लेनेके समय मेवाडकी दो श्रेष्ठ सामन्त सम्प्रदायोंमें जो घोर विवाद हुआ, वैसा विवाद और कभी नहीं हुआ ।

जहाँगीरकी तीसरी चढाईका समाचार पाकर राणा अमरसिंह भी यथासंभव सेना इकट्ठी करने लगे । परन्तु मुगलोंके आनेमें देर विचारकर सोचने लगे कि इतनेमें कितने एक ग्राम और नगर ही मुगलोंसे छीन लें । युद्धकी सब तइयारी होचुकी थीं कि इतनेमें ही चन्दावत और शक्तावतोंमें इस बातपर घोर

* इसही सागरजीके कुलांगारपुत्रने हिन्दूधर्मको छोड़ यवनधर्म ग्रहण किया था; उस पुत्रका नाम मुहम्मदतखा था । जहाँगीरके समयमें मुहम्मदतखा ही साहसी सेनापति गिनाजाता था ।

झगडा हुआ कि सेनाके सन्मुखभागकी रक्षा कौन करेगा ? चन्दावतके ठाकुर ही बड़े होनेके कारणसे अबतक इस सन्मानको प्राप्तकरते आये थे, इस समय शक्तावतगण अत्यन्त विक्रमशाली होकर अपने विक्रमकी श्रेष्ठताका हेतु दिखाय “हिरोल” * चलानेकी सामर्थ्यको अधिकार करनेके लिये तइयारहुए। राणाजी बड़ी कठिनाईमें पड़े। किस पक्षको वह सन्मान दियाजाय, किसको न दिया-जाय इसका कुछ भी विचार उनसे न हुआ। यदि एक दलका सन्मान किया-जायगा तो दूसरा दुःखित होकर यहांसे चलाजायगा।

और जबतक यह दोनों सम्प्रदाय सहायता नहीं करेंगी, तबतक विपत्तिसे भी छुटकारा नहीं मिलसकता। राणाजीने बहुतेरे तर्क वितर्क किये परन्तु कुछ भी समझमें न आया। जब महाराणाजीके मौन देखा तब दोनों सम्प्रदायोंके सामन्तलोग अंतमें खड़की सहायतासे उस कूटप्रश्नकी भीमांसा करने पर उतारू हुए। इस ही समयमें राणा अमरसिंहने ऊंचे और गंभीर स्वरसे कहा, “अन्तलादुर्गमें जो दल पहिले पहुंच जायगा, उसको ही हिरोलकी रक्षाका भार प्राप्तहोगा।” जैसे ही राणाजीने यह वाक्य कहा वैसे ही चन्दावत और शक्तावत गण सब प्रकारके वादविवादको छोड़कर अन्तलादुर्गकी ओर चले।

राजधानीसे नौ कोश पूर्वको उक्त अन्तलादुर्ग स्थित है; जो कि ऊंची भूमिके ऊपर बनाहुआहै, चारों ओर पत्थरकी समान परकोटा बनाहुआहै। उसके ऊपर भागमें एक एक गोलाकार रक्षकशाला बीच २ में बनीहुई है। परकोटेकी तलीको धोती हुई एक नदी बही जातीहै। इस दुर्गके बीचमें दुर्गरक्षकका महल है, इस महलके चारों ओर खाई खुदीहुई है। कोटेके भीतर प्रवेश करनेके लिये केवल एकही द्वारहै। ऊषाकी ललाईसे पूर्वगगनके रंगनेसे पहिले उपरोक्त दोनों सामन्त अपनी २ सेनाको लेकर अन्तलाकिलेकी ओर चले। इतने दिनतक जो लोग विक्रम प्रकाश करनेमें परस्परके प्रतिद्वंद्वी थे, आज यशकी लालसासे उत्साहित हो उस विक्रमका यथार्थ परिचय देनेके लिये कठोर कार्य करनेको आगे बढ़े। इस दुर्गपर यवनोंका अधिकार है, जो वीर दुर्गरक्षक यवनका संहार करके अन्तलाका उद्धार करलेगा, आज वही गौरवके हेममुकटको मस्तकपर धारणकरेगा; आज उसके ही हाथमें मेवाड़की सेनाका सन्मुख रक्षणभार प्राप्तहोगा। प्रचंड उत्साह और विजयी

* सेनाके सन्मुखभागको हिरोल कहतेहैं।

× टाड साहब कहतेहैं कि इस समय वह दुर्ग विध्वंस होगयाहै, केवल परकोटा और दो एक महल अबतक हैं।

वृत्तिके द्वारा उत्साहित होकर आज मेवाडके दो प्रधान सामन्त मेवाडनाथकी कठोर प्रतिज्ञाको पालनकरने चलेहैं। भट्टकविगण उदात्तस्वरसे वीणा बांधकर उनका भंगलगीत गाने लगे। राजपूतोंकी स्त्रियें भी उस स्वरमें अपने कोकिलकंठस्वरका मिलाकर वीरोंको दृढ़ता उत्साह देने लगीं।

सूर्यदेव उदय होचुकेहैं, उनकी किरणें वृक्षोंकी चोटियों और पर्वतोंके शृंगोंपर क्रीडा कररहीहैं, इसी समय शक्तावतगण अन्तलाके सन्मुख द्वारके निकट पहुंचे और उस समय वहांपर आक्रमण किया कि जिस समय शत्रुगणोंको असावधान पाया। परन्तु यवनगण उनके अभिप्रायको समझ अल्पकालमें ही अस्त्रशस्त्र लगाय परकंटिके ऊपर तइयार होगए। उस काल दोनों दलोंमें घोर संग्राम होनेलगा। इस आरंभ चन्दावतगण मार्ग भूलकर एक बड़ी भूमिमें जा पड़े जो कि जलमय थी। उस दुर्गम भूमिसे बाहिर निकलनेका मार्ग न पाकर वे लोग इधर उधर भटक रहेंथे कि इतनेहीमें एक गडरिया उनको मिला। गडरिया मार्गदिखाता हुआ उनको ले चला जिससे वह वीरगण शीघ्रही अन्तलादुर्गके सामने पहुंचे। चन्दावतगण अपनी बुद्धिमानीसे साथमें लकड़ीकी कई एक सीढ़ीसे ले आएथे, उनको किलेकी दीवारपर लगाकर चन्दावत सरदार परकोटेपर चढनेलगे। मुसलमानोंने गोला छोडा, वह गोला सरदारके लगा और वह सीढ़ियोंसे खसककर प्राचीरके नीचे गिरा। विधाताने उसके भाग्यमें हिरोलके चलानेका भार नहीं लिखा। क्रमानुसार दोनों दलोंकी प्रचंड गति रुकगई। चन्दावत और शक्तावतगण पलभरतक चुपचाप रहकर फिर भयंकर बलके साथ शत्रुओंको परास्त करनेकी चेष्टा करने लगे। शक्तावत सरदार एक बडे हाथी पर चढा हुआ था। दूसरा उपाय न देखकर उसने दुर्गके बंदद्वारपर उस गजराजको चलाया। भयंकर चिंघाड करके वह प्रचंड मातंग भयंकर बलके साथ उस फाटकपर धाया। परन्तु किवाडोंमें लोहेके अत्यन्त तीक्ष्ण कांटे लगरहे थे, इस कारण उस गजराजकी एक चाल न चली, वह किसी प्रकार उस द्वारको न तोडसका बहुतसे शक्तावत वीरगण उस द्वारको तोडनेकी चेष्टामें काम आये, परन्तु शक्तावत सरदारका उत्साह यथावत रहा। अकस्मात् गगनमंडलको फाडता हुआ चन्दावतलोगोंकी ओरसे घोर जयजयकार शब्द होनेलगा। शक्तावत सरदारका हृदय कंपायमान होगया। दूसरा उपाय न देखकर वह सरदार हाथीसे उतरा, और उन तीक्ष्ण कीलोंके ऊपर जो कि किवाडोंमें लगी हुईथीं—चढगया।

चढनेके पश्चात् महावतको उन्मत्तभावसे पुकारकर कहा “हार्थीको मेरे ऊपर दौड़ा, नहीं तो अभी तेरा शिर काटडालूँगा ।” महावतने स्वामीकी आज्ञाका पालन किया । अंकुशकी भयंकर पीडासे अत्यन्त दुःखित हो घोर शब्द करते हुए उस प्रचंड गजराजने कठोर बलसे दुर्गद्वारपर टक्कर मारी । उसके भयंकर वेगको न सँभालनेके कारण दोनों किवाड खंड २ होगये; परन्तु साथमें शक्तावत सरदारने भी पृथ्वीमें गिरकर प्राण छोड़दिये । सेनाने इस बातपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया । सरदार मारागया, उसकी देह पृथ्वीपर गिरी, परन्तु राजपूत वीरोंने उस ओरको देखातक नहीं वे उस शरीरपर पाँव धरतेहुए प्रचंड वेगसे खुले हुए द्वारके भीतर चले । परन्तु प्राणोंको इस प्रकार अपूर्व रीतिसे नेवछावर करके भी शक्तावत सरदारने उसदिन अपने पक्षके लिये हिरोलका सन्मान न पाया । शक्तावतोंके दुर्गमें पहुँचनेसे पहिले ही चन्दावत सरदारका मृतकदेह किलेके ऊपर पड़ा हुआ था । प्राण देनेके कुछ समय पहिले चन्दावतलोगोंका जयशब्द जो उन्होंने सुना, वह उस ही समय हुआथा कि जब चन्दावत ठाकुर दुर्गमें प्रवेश करचुकेथे । शत्रुके चलाये गोलसे जब चन्दावत सरदार मरकर जैसे ही नीचे गिरावैसे ही एक दूसरे चन्दावत ठाकुर अपने पक्षका सेनापति बना, यह नया सेनापति प्रथम सरदारसे नीचेकी पदवीपर काम करता था । इसका नाम वान्दा ठाकुर था जो वीरगण अति कठोर विपत्तिको झेलनेसे भी नहीं घबडाते, आवश्यकता होनेपर जो लोग प्रचंड व्याघ्रके साथ कुस्ती लडनेको तइयार रहतेहैं जिनको माया मोह कुछ भी नहीं होता; इसही प्रकारके वीरोंमें वान्दा ठाकुरकी गिनती थी, वीरत्व, तेज, और निडरपनने इस वीरके हृदयमें अपना स्थान बना लिया था । जिस समय चन्दावत सरदारका मृतकदेह दुर्गकी दीवारके नीचे गिरा, उस ही समय वान्दा ठाकुरने डपट्टेमें उस देहको बांधकर अपनी कमरपर लादा और परकोटेपर चढने लगा, वह वीर हाथमें लियेहुए भयंकर शूलसे यवनोंका संहार करता हुआ धीरे २ आगे बढ़ता-गया और सरदारका सबदेह अन्तलाके किलेके ऊपर फेंकदिया ।

“हिरोल ! हिरोल ! चन्दावतगणोंने हिरोल पाई।” पलभरके बीचमें ही उन्मत्त चन्दावत सरदार कठोर शब्दसे इस प्रकार कहनेलगा। यह शब्द अन्तलादुर्गके प्रति शिखरपर गुंजारकर आकाशमें शब्दायमान होनेलगा । उससे सारी प्रकृति कांप-गई। वान्दा ठाकुरके प्रचंड बाहुबलने मुगलोंको पराजित-किया। जो दो चार प्राण-लेकर भागे वही बचगये। मेवाडकी जयपताका शीघ्रही अन्तलादुर्गके शिखरपर

उडने लगी * शक्तावत सरदार सेनासाहित शिर झुकाये हुए लौट आये। “हिरोल” की रक्षाका भार चन्दावत ठाकुरोंपर ही रहा। इस प्रचंड अन्तर्विप्लवमें—इस भयानक जातिविद्वेषमें दोनों ओरके बहुतसे सिपाही, सेनानी, और सरदार अन्तलादुर्गके ऊपर मारे गए थे। प्रयोजन समझकर यहां पर शक्तावत ठाकुरोंकी उत्पत्तिका वर्णन लिखा जाता है। राणा उदयसिंहके चौबीस पुत्र हुए थे, इनमें शक्तसिंह दूसरा था। बालकपनसे ही यह तेजस्वी और निडर था। उस सुकुमार अवस्थामें ही शक्तसिंहमें यौवनकी तेजस्विता और निडरताका पूर्ण विकास हुआ था। कहते हैं कि शक्तसिंहकी जन्मपत्री बनानेके समय ज्योतिपीने कहा था कि “यह शक्त मेवाडका कलंक होगा।” ज्योतिपीकी यह हानहार वाणी ठीक ही हुई थी। राणा उदयसिंह तबसे ही शक्तके ऊपर वीतस्नेह थे। परन्तु सन्तानका मोह अत्यन्त प्रबल होनेके कारण पुत्रपर किसी भांतिका दुरा व्यवहार नहीं किया। कालकी गति विचित्र है। निडर शक्तसिंह कालकी गतिसे ही पिताके नेत्रोंमें खटकने लगे। इसी कारणसे एक बार राणा उदयसिंह सन्तानकी माया ममता भूलकर अपने पुत्रका शिर काटनेको तैयार हुए थे।

शक्तसिंह बालकपनमें अत्यन्त निडर था, इसका प्रमाण नीचेके लेखसे भलीभांति मिलेगा। बालकपनमें एक दिन पिताके निकट बैठा हुआ खेल रहा था, इतनेहीमें एक अस्त्रकार एक नई छूरी बनाकर राणाजीको देनेके लिये आया था। रुईके महीन २ गाले बनाकर छूरी इत्यादि अस्त्रोंकी धारकी परीक्षा की जाती है। इस ही प्रकारसे इस छूरीकी धारकी परीक्षा करनेका सामान हो रहा था।

* संगवत ठाकुरोंका भट्टकवि अमरचंद टाडसाहबका मित्र था। साहबने एक कथा इस मित्रसे सुनी थी वह नीचे लिखी जाती है। कहते हैं कि जिस समय राजपूतोंने अन्तलादुर्गको जीता था उस समय मुगलोंके सेनापति मन लगाकर शतरंज खेल रहे थे। पहरेदारोंने उनसे विपत्तिका समाचार बताया, परन्तु वे लोग खेलमें ऐसे मगल हो गये थे कि पहरेदारोंकी बातपर ध्यान ही नहीं दिया। धीरे २ विजयी राजपूतोंका आकाशको फाड़नेवाला जयनाद बारंवार होने लगा; उस समय भी वे चैतन्य न हुए। दोनों सेनापति एकदूसरेको मति देनेमें लगे हुए थे। बारंशाहको शह दी जाती थी। इतनेहीमें भयंकर वेशसे राजपूत वहां आये और उन दोनोंको मारनेके लिये तैयार हुए, तब दोनों सेनापति सानुनय निवेदन करने लगे कि “बाजी खतम होने तक आप लोग नाअम्मुल करें।” राजपूतोंने इस बातको स्वीकार किया। परन्तु उनकी बाजीको पूर्ण न होता देखकर दोनों अभागोंका संहार किया।

इतनेहीमें वालक शक्तसिंहने उस छूरीको अस्त्रकारके हाथसे छीनकर कहा, “पितः ! क्या हड्डी और मांस काटनेको यह छूरी नहीं बनाई गई है?” यह कहते २ कुमारने अपने कोमलहाथके ऊपर जोरसे उस छूरीको मारा । तीव्र-वेगसे रुधिर निकलने लगा । महाराजका आसन भी शक्तसिंहके रुधिरसे भीजकर लाल हो गया । परन्तु कुमारके सुकुमार मुखमंडलपर किंचित भी कष्टका चिह्न दिखाई नहीं दिया । सभासद यह देखकर अत्यन्त विस्मित हुए शक्तकी निडरता देखकर सब लोग अनेक प्रकारका तर्क वितर्क करने लगे । परन्तु राणा उदय-सिंहके हृदयमें जो भाव पैदा हुआ उसको तो वह स्वयं ही जानते-होंगे । कायर-पनके कारणसे हो अथवा ज्योतिषीके फलकहनेमें हो। उन्होंने तत्काल ही कुमार शक्तसिंहका शिर काटनेकी आज्ञा दी । इस कठोर आज्ञाके पालन करनेकी तइ-यारियें होनेलगीं । कुमारको भयंकर दृश्यभूमिमें पहुँचाया गया; इतनेहीमें शालुम्ब्रा सरदारने राणाके सामने आयकर सविनय निवेदन किया । “महाराज ! कृपाकरके मुझ दीनकी एक प्रार्थना सुनिये । मुझपर सन्तुष्ट होकर आपने अनेकवार वरदान देनाचाहा, परन्तु उचित अवसर न आनेसे अबतक महाराजसे कोई प्रार्थना न करसका; इस समय वह उचित अवसर प्राप्त हुआ है, अतएव कृपा करके इस दीनकी एक कामना पूर्ण कीजिये ।” राणाजीने अकपटभावसे उत्तरदिया “शालुम्ब्रानाथ! आपकी क्या अभिलाषा है, प्रगट करके कहिये, मैं अभी उसको पूर्ण करता हूँ ।” सामन्तशिरोमणिके हृदयमें आशाका संचार हुआ । उन्होंने फिर साहस और नम्रतासे कहा “महाराज ! धन, गौरव या ऊँचे पदकी मुझको अभिलाषा नहीं है;—केवल एक प्रार्थना है कि दया करके राजकुमारको प्राणदंडाज्ञारहित कीजिये। मेरे पुत्र कन्या कुछ भी नहीं हैं। इस विपुल धनसम्पत्तिका, इस ऊँचे कुलगौरवका कोई भी उत्तराधिकारी नहीं है; इस समय राजकुमारको धर्मपुत्रकी भांति ग्रहण करके चन्दावत गोत्रको अनंत विनाशसे रक्षा करनेकी कामना की है । यदि महाराज दीनकी प्रार्थनाको दया करके स्वीकार करलेंगे तो सबभांतिसे मेरी रक्षा होजायगी । उदयसिंहने वचन दे देनेके कारण तत्काल शक्तसिंहकी प्राणदंडाज्ञा रोक दी । शालुम्ब्रापतिने उनको धर्मपुत्रकी समान ग्रहणकरके परम यत्न और आदरके साथ लालन पालन किया था । परन्तु वृद्धावस्थामें इस सरदारके एक पुत्र और कन्या जन्मी । तब तो शालुम्ब्रा सर-दार एक प्रकारके संकटमें पड़ा । वह नहीं निश्चय करसका कि दत्तक पुत्र शक्तसिंहको कौनसी सम्पत्ति दीजाय? उस ही समय राणा प्रतापजीके पाससे

आकर एक दूतने निवेदन किया कि “राणा प्रतापसिंहने अपने भ्राता शक्तसिंहको याद किया है।”

दोनों भ्राता मिलगये। अपने पालकपिता चन्दावत सरदारकी अनुमति लेकर शक्तसिंह अपने बड़े भ्राताके पास परमसुखसे समय बिताने लगे। परन्तु अभाग्यसे उनका वैसा सौहार्द अधिक दिनतक अचल न रहा। एकवार शिकार खेलनेके समय निशानेके ऊपर दोनों भाइयोंमें घोर झगडा हुआ। दोनों ही अनेक प्रकारके सोच विचार करने लगे; परन्तु कुछ भी न हुआ। तब प्रतापने छोटे भ्राताकी ओर भ्रुकुटि चढाय हाथका शूलदंड उठायकर गंभीरवाणीसे कहा कि “आओ ? अब देखाजायगा कि किसका निशाना ठीक है।” शक्तके मस्तकका एक केशतक भी नहीं काँपा, उन्होंने निडर होकर उत्तर दिया “अच्छा, अवश्य ही देखाजाय, आइये।” तत्काल दोनों भाइयोंके भयंकर शूल उठे। वीरोंकी प्रथाके अनुसार शक्तसिंहने बड़े भ्राताकी चरणवन्दना करके उन चरणोंकी धूरिको अपने मस्तक पर चढाया, प्रतापने उनको आशीर्वाद दिया, इसके उपरान्त दोनोंने अपने २ शूलको उठाय परस्पर आक्रमण किया। वहाँपर और जितने आदमी थे वह सबही अपने सामने शिशोदीयकुलका नाश होता हुआ देखकर ऐसे खडे रहे कि जैसे सबके ऊपर बज्र गिरगया हो। रोकने अथवा बीचमें पडनेका किसीको साहस न हुआ। गिल्लोटकुलके परम पवित्र पुरोहितजीने दूरसे इस बातको देखा। वैसेही वह “महाराज ! क्या करते हो ? क्या करते हो। ऐसा न कीजिये ऐसा न कीजिये” यह कहते हुए वहाँ दौड आये और दोनों भ्राताओंके बीचमें आनकर खडे होगये। दोनों भाइयोंको अनेकभांतिसे समझाया बुझाया, परन्तु उनका समस्त यत्न वृथा हुआ। पुरोहितजीने दूसरा उपाय न देखकर अपनी छूरीको लेकर अपने हृदयमें छेद लिया, और झगडा करनेवाले दोनों भाइयोंके बीचमें गिरकर प्राण छोडदिये। सामने ही ब्रह्महत्या होगई। पुरोहितजीके पवित्र रुधिरसे दोनों राजकुमारोंके विमलचरित्रमें कलंक लगा। ब्रह्महत्याका महापातक उनके शिरपर अर्पण किया गया; तब उन मोहान्ध भाइयोंकी आँखें खुलीं। वे दोनों इस बातका विचार करके शान्त होगये कि हमारी अज्ञानतासे ही यह ब्राह्मण मारा गया। प्रतापसिंहने शक्तसिंहको मेवाडके छोडनेकी आज्ञा दी। तेजस्वी शक्त उनकी आज्ञाको मस्तकपर चढाय भ्राताके चरणोंमें शिर नवाय तत्काल ही मेवाडके राज्यको छोडकर चले गये। और बदला लेनेके लिये अकबरका पक्ष अवलम्बन किया।

प्रतापसिंहने विधि विधानसे उस उत्तम ब्राह्मणकी क्रिया की तथा श्राद्धादि समाप्त करके उनके पुत्रको एकवार ही सदाके लिये जागीर दी। उन पुरोहितजीकी सन्तान आजतक उस जागीरको भोगती हुई चली आती है। उस महाहितकारी श्रेष्ठ ब्राह्मणने अपने राजाका महापकार करनेके लिये जिस स्थानमें अपने प्राण दिए थे वहां एक चबूतरा बांधकर स्मारक स्तंभ स्थापित किया गया। वह स्तंभ आजतक उस श्रेष्ठ ब्राह्मणके स्मरणसे भीगे स्थानपर खड़ा हुआ उसके अद्भुत प्राणत्यागका प्रकाशमान परिचय दे रहा है। उस दिन दोनों भाई अलग २ होगये। बहुत दिनतक दोनोंमें परस्पर अत्यन्त शत्रुता रही। तदुपरान्त जिस दिन शक्तसिंहने बड़े भ्राताके प्राणोंको वचायकर “खुरानान-मुलतानका अगगल” यह पवित्र नाम पाया, उसदिन दोनों भाई जिस भ्रातृपनके बन्धनसे बँध गए इस जन्ममें उनका वह बन्धन फिर नहीं टूटा।

शक्तसिंहके १७ पुत्र हुए। इन सबमें एकता या बन्धुताका लेशमात्र भी नहीं था। जिस दिन वीरवर शक्तसिंह इस लोकसे विदा होगये उस दिन उनके पुत्रोंकी धूमयमान विद्वेषाग्निने प्रचंडतेजसे प्रगट होकर नाशकरना आरंभ किया। पिताजीकी और्द्ध्वदेहिक क्रिया करनेके लिये केवल बड़े पुत्र भानुजीके आतिरिक्त और सबही नदीके किनारे गये। विधि विधानसे समस्त कार्य करके वे सब भिंसरोर किलेको लौटे; परन्तु उन्होंने दुर्गमें प्रवेश नहीं करने पाया। उनके आनेसे पहिले ही बड़े भाई भानुजीने किलेका द्वार बंद करलिया था। उन्होंने बारंबार पुकारा, परन्तु द्वार नहीं खोला। जब इस अन्याय आचरणका कारण पूछा गया तब भानुजीने दुर्गके भीतरसे ही कहा, “तुम लोग और कहीं आश्रय लो, यहां पर तुम्हारे रहनेको स्थान नहीं है। मुझे बहुतोंका पेट पालना पड़ेगा।” शक्तके दूसरे पुत्र अचलसिंहने बड़े भ्राताका यह अन्याय देख अत्यन्त दुःखित हो किसी प्रकार प्रतिवाद न करके नम्रताके साथ निवेदन किया “यदि आपकी मति ऐसी ही हो तो मैं उसका प्रतिवाद नहीं करना चाहता, इस समय एक बार किलेका द्वार खोल दीजिये, तो हम लोग अपने स्त्री पुत्रादि, अश्व और अस्त्र शस्त्रोंको लेकर भिंसरोर दुर्गसे विदा लें।” किलेका द्वार खुल गया। अचलसिंहने अपने पंचदश लघुभ्राताओंके साथ दुर्गमें प्रवेशकर घोड़े और अस्त्र शस्त्रादिको लेकर पारिवारिक साथ ईडरराज्यकी ओर गमन किया। ईडर उस समय मारवाडके राठौरोंपर था। अचल, अपनी गर्भवती स्त्रीको लेकर अत्यन्त सावधानीसे चले थे। वह सब पालौडनामक स्थानके निकट पहुँचे, इतने

हीमें अचलकी स्त्री प्रसवपीडासे अत्यन्त पीडित हुई । इस कारण वह सब आगे न बढ़सके और पालौडके शोनगडे सरदारसे आश्रय मांगा । परन्तु दुःखकी बात है कि ऐसे विपत्तिकालमें उस दुराचारी सरदारने उनको आश्रय न दिया । निकट ही श्रीगंगाजीका एक टूटा फूटा मंदिर था*, दूसरा उपाय न देखकर अचलसिंहने यहीं पर आश्रय लिया । उसके एक कोनेमें जाकर आसन्नप्रसवा स्त्री लेटरही । उसही समयमें प्रचंड वेगके साथ मूसलधारसे वर्षा होने लगी । साथ २ में आंधी और प्रचंड वर्षाके कारणसे वह मंदिर बारंबार क्षिप्त होने लगा । उसकी दीवारका एक बड़ाभारी पत्थर खिसककर उस गर्भवती स्त्रीके ऊपर गिरा ही चाहता था कि अचलके छोटे भाई बल्लने जाकर उसको अपने मस्तकपर धारण किया । इसी समय अचलसिंहके दूसरे भाई निकटके वनसे एक बबूलके पेडको काटकर लाये और उसकी टेक उस पत्थरमें लगाई । जबतक टेक नहीं लगी थी तबतक बल्लही उसको शिरपर उठाये रहाथा ।

विश्वमाता भगवती जाह्नवीके उस भग्नमंदिरमें भयंकर विपत्तिके समय शक्ता-वत वीर अचलकी स्त्रीने एक नवकुमार प्रसव किया । उस कुमारके लक्षणादि देखकर वे समस्त वीरगण अनेक प्रकारकी आशा करने लगे, और सबने एकमत होकर उसका नाम “ आशा ” रखवा । महामाया भगवती भागीरथीजी उन सबके प्रति सन्तुष्टही शीघ्रही आशा पूर्णकरनेवाली वरदायिनी रूपसे उन सबके सामने प्रगटहुई । उनके प्रसादसे नवप्रसूतिने शरीरमें उचित बल पाया, तथा वह अपने स्वामी और देवोंके साथ ईडरकी ओर चली । ईडरमें पहुँचने पर वहाँके शासन कर्त्ताने परम आदरके साथ उनको ग्रहण किया और उनके भरण पोषणको वृत्ति नियत कर दी ।

ईडरके शासनकर्त्ता राठौरराजके सरल और सादर व्यवहारसे परम प्रसन्न होकर अचलसिंह अपने भ्राताओंके साथ परम सुखसे वहाँ रहने लगे । उस समय एक बार राणाजीके प्रधान मंत्रीने, प्रसिद्ध जैनपीठ शत्रुंजय गिरि × में लौटकर एक रात विश्राम करनेके लिये ईडरमें अपना डेरा डाला । वह कुटुम्ब-

* इस मन्दिरमें ही टाडसाहबको अनहलवाड़ पट्टनके प्रसिद्ध राजा कुमारपालके राजत्वके विषयमें एक शिलालिपि मिलीथी । पालौड नाम्हरा जनपदके अन्तर्गत है । इस समय यह मेवाडसे अलग है ।

× शत्रुञ्जय जैनलोगोंके पांच पवित्र पर्वतोंमें गिनाजाताहै ।

के साथ डेरमें विश्राम कर रहे थे कि आधीरातके समय घोर आंधी आई और मंत्रीजीका तम्बू उड़ाने लगी; डरके मारे मंत्रीका प्राण उड़ गया। इस भयंकर अवसरमें प्राण बचनेका उन्होंने कोई उपाय न देखा। रात्रिके उस घोर समयमें परम हितैषी बल्ल और जोधने अपने कई एक भ्राताओंके साथ वहाँ पहुँचकर राजमंत्रीकी रक्षा की। उनका वह परमोपकार देखकर मंत्रीवर परमप्रसन्न हुए तथा हाथ जोड़कर उनका वृत्तान्त पूछा। उनसे उत्तर पाकर नम्रभावसे बोले, “आपकी यहां रहनेमें शोभा नहीं है; चलिये उदयपुरको चलिये; मैं निश्चयसे कहता हूँ कि महाराज आपलोगोंको उचित पदपर स्थापन करेंगे। उन वीरोंने मंत्रीके अनुरोधको न मानकरके कहा, “बिना राजाके बुलाये वहाँ जाना कभी ठीक नहीं होगा, अतएव जबतक वह स्वयं हमको वहाँ नहीं बुलावेंगे, तबतक हमारा रहना यहीं पर ठीक होगा।” मूल बात यह है कि अधिक दिनतक इनको ईडरमें नहीं रहनापडा। दिल्लीश्वरके विरुद्ध खड्गधारण करनेके लिये राणा अमरसिंह उस समय पहाड़ी सेना इकट्ठी कर रहे थे। मंत्रीसे अपनी जातिवालोंके विक्रम और हितानुष्ठानका वृत्तान्त जानकर राणाजीने शीघ्रही उनके पास दूत भेजा। दूतके साथ वह समस्त वीरगण चले आये और राणा अमरसिंहने परम आदर मानके साथ उनको ग्रहण किया।

उदयपुरमें आकर राजभक्त शक्तावतलोगोंने जो कार्य कियाथा, यद्यपि वह साधारण था, तथापि उसके द्वारा उनकी सहायता और राज्यभक्तिका अटल परिचय पाया जाताहै। यवन युद्धके समय एकवार रात्रिकालमें राणाजीने किसी पहाड़ी स्थानमें अपनी सेनाकी छावनी डाली थी। एक तो शीतकालकी रात्रि, तिसपर हिम (बरफ) युक्त पहाड़ी स्थान। कदाचित् राणाजीको यहां पर कोई कष्ट हो, यह विचारकर बल्ल और जोध वनसे बहुतसी लकड़ी लेआये और अग्नि जलाय रात्रिकालके दारुण शीतसे राणाजीकी रक्षा की। भट्टकविजनोंके ग्रंथोंमें इन शक्तावत वीरोंके—विशेष करके बल्ल और जोधकी शूरता तथा विक्रम व सहृदयताके बहुतसे वर्णन पाये जातेहैं। जिसदिन परस्परमें भयंकर झगडा हुआ था, जिस दिन शक्तावत और चन्दावत गण अन्तला दुर्गपर पहुँचे थे उसदिन वीरवर बल्लही शक्तावतोंकी सेनाका सेनापति हुआथा। यद्यपि बडा भाई भानुजी भी उस समरमें आयाथा, यद्यपि गौरवको प्राप्त करनेके लिये उसने प्राणपणसे चेष्टा की थी, परन्तु उसदिन जिस वीरके अद्भुत प्राणोत्सर्गकी महिमाके गुणसे शक्तावतकुलका यश दिगदिगन्तमें

फैला, उसहीका नाम बल्ल था । जिस समय महावीर बल्लने अन्तलाके दुर्गद्वार पर प्राण दिये, जिस समय वह विशाल दुर्ग मुसलमानोंके हाथसे छूटगया, उस समय बाकरोलका सामन्त राजा वह शुभ समाचार राणाजीके पास लेगया । राणाजीने सामन्तराजपर प्रसन्न होकर उनको भलीभांतिसे पुरस्कार दिया और स्वयं भी शीघ्र अन्तला दुर्गपर आये, राणा अमरसिंह जब अन्तलादुर्गपर पहुंचेथे उस समय वीरवर बल्लका अंतसमय निकट था । राणाजीको सन्मुख देखकर वीरवर बल्ल उत्साहके साथ बोल उठा:—

“दूना दांत्तार, चौगुना जुझार ।

खुरासानी मुलतानीका अगगल ।”*

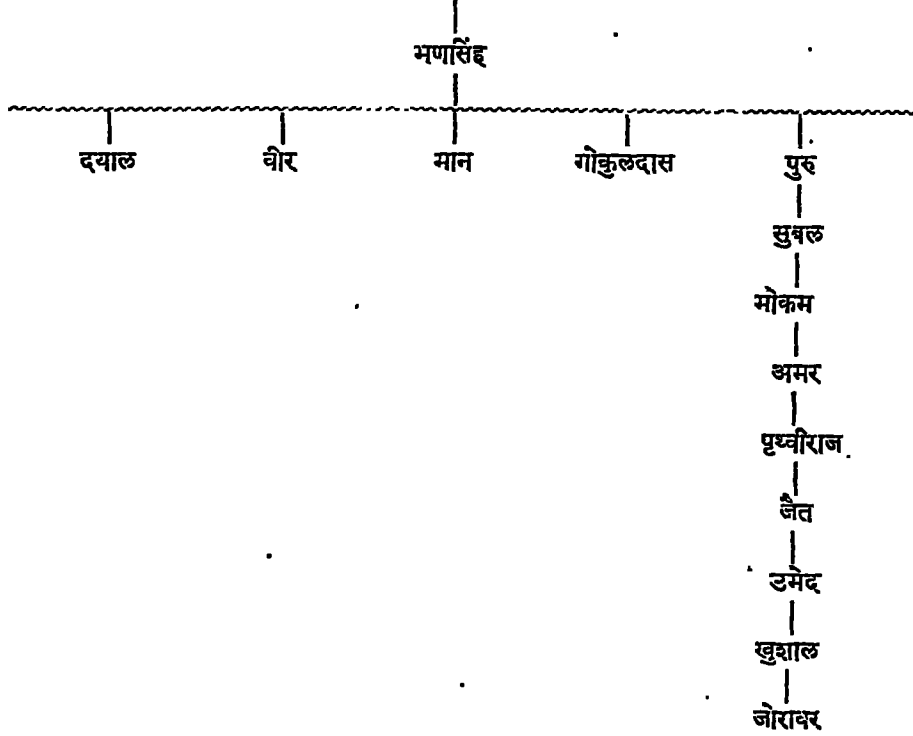
मुनृपु शक्तावत्वीरका यह उत्साह पूर्ण तेजव्यंजक वचन सुनकर राणाजी अत्यानंदसे पुलकित हृदयसे उस वीरको आशीर्वाद देकर नगरको गये । वीरवर बल्लका यह शेष वचन आजतक भट्टलोगोंके मुखसे सुनाजाताहै । यद्यपि शक्तावत् लोगोंकी वह वीरता और वह तेजस्विता आज अधिकाईसे हीन होगई है, यद्यपि आलस्य और अफीमसे आज उनके वंशधर गण अत्यन्त दीन और कर्महीन होगएहैं, तथापि वह लोग उस सन्मानसूचक अभिवादनसे सम्पूर्णतः अलग नहीं हुएहैं । आज भी कोई शक्तावत् सरदार जिस समय राणाजीकी राजसभामें जाताहै, अथवा अपने सामन्त भ्राताओंमें आसनपर बैठताहै, भट्टकाविगण वैसेही ऊंची वाणीसे वीरवर बल्लका वह शेष वाक्य कहकर उसको सम्बोधन करतेहैं । इस वीरत्व और महत्त्वसूचक वाक्यको सुनतेही वर्तमानकालके दीन हीन शक्तावत्गण भी नवीन बल और उत्साहसे बलवान होजातेहैं और वर्तमानकी बातको भूलकर अतीतके उस गौरवमय क्षेत्रमें विचरण किया करतेहैं । वह अन्तलाक्षेत्र, परस्परके झगडेका वह प्रचंड स्थान तत्काल उनके नेत्रोंमें दिखाई देजाताहै । वह विशाल अन्तलादुर्ग,—वीरवर बल्ल उसही प्रचंड रणमातंगपर चढेहुए दुर्गद्वारके सामने ही प्राणोत्सर्ग कर रहेहैं, उनके चार भ्राता—अचलेश,

* दूना दान चौगुना प्राणदान “अर्थात् राजा उनपर जितना अनुग्रह करेगा, उतना ही उनका आत्मोत्सर्ग अधिक होगा ।”

चन्दावत लोगोंमें भी इसप्रकारका एक गौरवमय वाक्य है; यथा—“दस सहस्र मेवाडका बडा किवाड ” अर्थात् मेवाडके दस हजार नगरीके सिंहद्वारके किवाड । कहतेहैं कि चन्दावत् ठाकुरोंके इस गौरवयुक्त वाक्यको सुन शक्तसिंहको डाहहुआ और मेवाडके भट्टकाविके निकट जाय शोकसे कहा “ तो फिर हमारे पास क्या रहा । ” इसके उत्तरमें भट्टकाविनेयह कहा था कि “ किवाडका अगगल ” अर्थात् आप उस द्वारके अगल हैं ।

जोध, दल और छत्रभान साथमें ही प्राणोंको देकर उस वीरका साथ दे रहे हैं; हृदयको उत्तेजित करनेवाला यह प्रकाशमान चित्र उनके ध्यानमें फिराकरता है, उस समय वे लोग अपने डाढीमूछोंको चढा २ कर एक दूसरेकी ओर देखा करते हैं । शक्तसिंहका ज्येष्ठपुत्र भणजी इससे पहिले किसी कारणसे राणाजीका विराग-भाजन हुआ था । इस कारणसे वह सदा दुःखित रहता । परन्तु ऐसे दुःखमें उसको बहुत दिनतक नहीं रहनापडा । भाग्यकी प्रसन्नतासे राणाजी शीघ्रही उसपर प्रसन्न हुए । एकवार भिंदरके राठौरोंने राणाजीका अपमान किया, तब शक्तावत सदांर तेजस्वी भणजीने अपनी सेनाको लेकर उनपर आक्रमण करके वह दुर्ग लेलिया, राठौरगण वहांसे भागगये । जब भणजीने अपमानकारियोंको ऐसा दंड दिया, तब राणाजीने उनको परम प्रसन्न होकर पुरस्कारमें वह भिंदर-किला ही भिसरोरके साथ मिलाकर देदिया । वीरवर शक्तसिंहसे लेकर वर्तमान समयतक दश सरदार शक्तावत्कुलके शासनदंडको क्रमानुसार चलागये हैं * । उनका वंश अल्पसमयमें ही इतना फैलगयाथा कि शक्तसिंहसे दो चार पीढी पीछे ही मेवाडके राणाजी अवश्यकता पडनेपर दश हजार शक्तावत् वीरोंको

* शक्तसिंह—१७ पुत्र



संग्राममें भेजसकेथे । परन्तु घोर गृहविवाद और कालके कठोर प्रभावसे शक्तावत गोत्रके अधिकांश वीरलोग इस संसारसे विदाहोगए । जो शक्तावतसभा एक समय मेवाडकी श्रेष्ठ और विशाल समिति समझी जाती थी आज वह अत्यन्त दीन और हीन होगईहै । जो लोग संग्रामभूमिको लीलाक्षेत्र और अस्त्रशस्त्रादिको खेलनेकी गंद समझतेथे, आज उनके वर्तमान वंशधरगण उन अस्त्रशस्त्रोंको स्पर्शकरने और रणकी सीमापर जानेमें भी भयसे कांपा करतेहैं ।

प्रयोजन समझकर दूर पहुँचगए थे, अब फिर अपने मुख्य विषयका विचार करते हैं । राणा अमरसिंहसे वरावर तीन चार बार पराजित होकर बादशाह जहांगीर अत्यन्त भीतहुआ, परन्तु वह उत्साह हीन न होकर वरावर यही सोच-तारहा कि किस प्रकार राजपूतोंका गर्व तोडाजाय । शीघ्रही एक प्रचंड मुगल-सेना तइयार हो मेवाडके भीतरसे होती हुई राणापर हमलाकरनेको चली । उस विशाल सेनादलका पर्यावेक्षणभार अपने आप ग्रहण करके बादशाहने अपने पुत्र परवेजको सेनापति बनाया । सेना अजमेरमें इकट्ठी हुई । उसकाल जहांगीरने अपने प्यारे पुत्र परवेजको पास बुलाकर कहा “बेटा ! इसबार तुम्हारी वहादुरीका इम्तहान है, मालूम होगा कि तुम उस बडेगुरुर राजपूतका गरूर तोड सकते हो या नहीं । लेकिन मेरी इतनी बात याद रखना कि राणा अमर या उसका बड़ा लडका कर्ण अगर जंगको किनारे रखकर तुमसे मुलाकातके लिये आवे तब तुम खातिरदारीके साथ उनसे पेश आना । याद-रखो, कि उस अदब कायदे और वर्त्तावमें—जो कि बादशाह, बादशाहसे करते आयेहैं, किसी तरहका फरक नमूदार न हो, और यह भी यादरखना कि तुम्हारी मतवाली फौज भारवाडकी सलतनतका कोई नुकसान न करे ।” *

सम्राटकी आशा आकाश कुसुमकी समान अलीक होकर फलवती न हुई। अपनी सेनाकी अधिकता और दृढता देखकर उन्होंने समझा था कि अबके मेवाडका राजा अमरसिंह मजबूर होकर हमसे सुलह करलेगा। इस प्रकारकी वेजड चिन्ताको हृदयमें स्थान देकर बादशाह निश्चय ही भ्रान्त हुएथे । सन्धिकरना तो एक ओर रहा, हमको तो इसमें भी सन्देहहै कि अमरसिंहके हृदयमें कभी ऐसी चिन्ता उदय हुई हो । देशवैरी यवनको विशाल सेनाके साथ मेवाडके ऊपर आता हुआ सुनकर अमरसिंह प्रचंड उत्साहसे उत्साहित हो उठे और अपने सामन्त सरदारोंको इकट्ठा करके मुगलवाहिनीके सन्मुख चले । आरावलीका द्वारस्वरूप एक प्रसिद्ध गिरिमार्ग

* सन् १६११ ई०में यह संग्राम हुआथा ।

था, उसमें दोनों दलोंकी मुठभेड़ हुई, इस गिरिमार्गका नाम खामनौर था; यहाँपर अनेक राजपूतोंने, हिन्दूविद्वेपी यवनलोगोंके आक्रमणसे स्वदेशकी रक्षा करनेके लिये प्रसन्नतासे अपने प्राणोंको दिया था, अतएव यह स्थान पवित्र है । खामनौरके उस ही पवित्र क्षेत्रमें × विक्रमकेशरी राजपूतराजने अपने रणविशारद सामन्त और सरदारोंको साथ लेकर, मुगलसेनाके विरुद्ध प्रचंड खड्ग धारण किया था । दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा । वह विशाल अनीकिनी, रणवीर राजपूतोंकी मुट्ठीभर बनीठनी सेनाकी गति न रोकसकी राजपूतोंके कठोर विक्रमसे यवन सेनाके मोरचे छिन्न भिन्न होगये, मुगललोग पीठ छोड़कर भागने लगे, बहुतसे राजपूतोंके हाथसे मारे गये । वचेहुए सिपाही अजमेरकी ओर भागे । वह दिन मेवाडके लिये एक शुभ दिन था, यहांतक कि मुगल इतिहासवेत्ताने स्पष्ट ही माना है कि वह दिन मेवाडके लिये एक प्रकाशमय गौरवका दिन हुआ, शिशोदिया-कुलकी वीरताके प्रगट होनेको वह दिन एक महापर्व था । उस पर्वके दिन मोहसे अन्वेहुए बादशाह जहांगीरका 'ख्वाब गफलत' छूटा था । उसकी बडीभारी सेनाका विध्वंस होगया; उसके प्यारे पुत्र परवेजके प्राणोंपर आन-बनीथी । अब्बुलफ़ज़लने लिखा है कि " राजकुमार परवेज लडाईसे भागनेके समय पहाडीरास्तेमें पहुँचा जहां कि उस पर घोर विपत्ति पडीथी, उसके सिपाहियोंने अत्यन्त कष्ट पाकर अनेक प्रकारके झगडे कियेथे ! शहजादेके लिये नई सेनाका इकट्ठा करना भी असंभव होगया, यहां तक कि वह बडे कष्टसे अपने प्राण लेकर भागा था । " इस प्रकारसे राजपूतवीरोंने अधिकांश मुगलसेनाका संहार करडाला । परन्तु जहांगीर बादशाहने अपनी दैनिक लिपिमें एकवारही इस सत्यवातको उडादिया है । यथा;-"लाहौरमें मिलनेके लिये मैंने परवेजको हुक्म दिया कि तुम लडाई छोडकर मेरे पास चले आओ और राणाकी चालढालपर नज़र रखनेके लिये उसके एक लडकेको-मय कई एक सरदारोंके-वहां रहनेका हुक्म दिया ।" धन्य सत्यसन्धता! अपने अपमानको छिपानेके अभिप्रायसे बादशाह जहांगीरने सत्यको उडाकर संसारकी आंखोंमें धूल डालनेकी चेष्टा की थी, परन्तु उसने यह विचार नहीं किया कि संसारके बीच सत्यका प्रचार एकवार स्वयं ही विस्तारको प्राप्त होगा ।

जब पराजित परवेज पिताके पास पहुंचा तो बादशाहने उसके पुत्रको सेनापति बनाकर राणाजीके ऊपर भेजा। वारंवार पराजित होनेसे उसका डह और क्रोध दूना

× टोसाहवने भ्रमसे खामनौरको ब्रह्मपुर नाम देकर दक्षिणमें स्थापन किया है । तवारीख फ़रिस्ताके अंगरेजी अनुवादमें टोसाहवने ऐसे बहुतसे भ्रम पाए हैं ।

बढ़ गया था। यही कारण था जो इसबार बादशाहने अपने पोते यवनवीर महा-
वतखाँको भी भेजा। महावतखाँ एक प्रचंड वीर था, इसकी सहायतासे बादशा-
हने अनेकवार जय पाई थी। अबकी बार इसको राणाजीके ऊपर भेजकर बाद-
शाहके हृदयमें “ सव्जवाग ” की हरियाली छाई हुई थी; परन्तु उसकी कोई
आशा फलवती न हुई। राजपूतोंके प्रचंड बाहुबलके सामने बलदर्पित मुगलसे-
नापति पराजित हुआ। परवेजका बेटा भी अपनी सेनाके साथ रणभूमिमें मारा-
गया। परन्तु तेजस्वी बादशाहका उत्साह रत्तीभर भी कम न हुआ। उसकी प्रचंड
मेना किंचित भी नहीं घटी। एक दल माराजाता तो उसके बदले फिर दो तीन दल
इकट्ठे होकर राणाजीपर दौड़ने लगते। राणाजीने उन समस्त चंदाइयोंको व्यर्थ कर-
दिया। किसीसे कुछ न हुआ। जिन रणदक्ष राजपूतवीरोंकी सहायतासे राणा अमर-
सिंहन बादशाहकी अगणित सेनाको बारंबार संहार किया था, इस समय एकर
करके वह वीरगण संग्राम भूमिमें शयन करने लगे। राणाजीकी सेना क्रमानुसार
थोड़ी होती गई। अब न वीर रहे, न धीर रहे, न जुझार दिखाई देते हैं। जो थोड़ेसे
सैनिक बचे बचाये हैं, वह समरविद्यामें भलीभांतिसे चतुर नहीं। तथापि
क्रमानुसार उनको ही शिक्षित करके राणा अमरसिंह जहांगीरकी विशाल
सेनाका सामना करनेको चले। प्रचंड उत्साहसे उत्साहित और राणाजीके
वीर उदाहरणसे अनुप्राणित होकर उन थोड़ेसे राजपूत वीरोंने यवनोंके अनन्त
सेनासागरमें डुबकी लगाई। उनकी विश्वदाही तेजाग्निके दमकीले प्रभावसे
वह सेनासागर सूख गया—परन्तु उन राजपूतवीरोंमें भी दो चार ही ऐसे थे जो
अक्षत देहसे अपने देशको लौटें। वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहके परलोकवासी होनेपर
राणा अमरसिंहजीने इस प्रकार सत्रह बार संग्राममें यवनोंका संहार किया
था। सत्रह बार ही विजयलक्ष्मी उनको प्राप्त हुई थी। परन्तु अबकी बार चित्तौर
पर भयंकर संकट है। अठारहवीं बार बादशाहने क्रोधित होकर अपने चतुर
पुत्र खुर्रमको राणाजीके विरुद्ध भेरणा किया। यह खुर्रम ही फिर शाहेजहाँ
नाम धारण करके दिल्लीके तख्तपर बैठा था। थोड़ी उमरमें ही अस्त्रविद्याको
इसने भलीभांतिसे सीख लिया। बादशाहने जिसदिन इस वीरको सेनापति बना
कर भेजा, शिशोदियाकुलके भाग्याकाशपर उसही दिन घनघोर बादल छागये।
समग्र मेवाडभूमिमें मानो एक भयंकर भूचाल आगया। इस भयंकर संकटसे

कौन चित्तौरपुरीकी रक्षाकरेगा ? इस समय कौन प्रचंड मुगलसेनाके विरुद्ध अव-
तीर्ण होकर सुलतान खुर्रमकी भयंकर गतिको रोकेगा ? अमरसिंहने सावधान
चित्तसे एकवार मेवाडकी वर्तमान अवस्थाका विचार किया, तो ज्ञातहुआ कि
मेवाडकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय है ! कोषागारमें धन नहीं,—दुर्गमें सेना नहीं,—
अस्त्रशालामें अस्त्र शस्त्रोंका पता नहीं ! और समय भी इतना नहीं कि इन अमा-
वोंको पूर्ण करलियाजाय; अतएव अबकी बार मेवाडका मंगल नहीं दिखाई
देता ! ऐसा होनपर भी क्या बिना विवादही मेवाडभूमि यवनोंके हाथमें
आत्मसमर्पण कर देगी ? क्या मुगलवादशाह सरलतासे समस्त मेवाड
निवासियोंको बकरे और भेड़ोंकी समान जंजीरोंसे बाँधलेंगे ? मेवाडके
वीरगण पिछली सत्रह लड़ाइयोंमें समरभूमिपर शयन करचुके हैं, परन्तु
इस समय जो अगणित मनुष्य मेवाडकी विशाल छातीपर निवास करते हैं,
वह क्या निर्जीव हैं ?—या निर्जीव मांसपिण्ड हैं ? क्या वीरजननी मेवाडभूमिने
निर्जीव मांसपिण्डोंको उत्पन्नकिया है ? जहाँके बालक और जहाँकी स्त्रियें भी
संसारमें वीरताका अनुपम दृष्टान्त रखगई हैं, क्या वही मेवाडभूमि आज बिना
विवादके यवनोंकी शृंखला अपने हाथोंमें पहिरलेगी ? कभी नहीं ! यह ठीक
है कि मेवाडके समर विशारद वीरगण संग्राममें शयन करचुके हैं, परन्तु अबतक
भी जो अगणित नरनारियें मेवाडमें वर्तमान हैं, वे अपने कर्त्तव्यको नहीं भूले हैं,
वे सब इस समयतक भी प्रतापसिंहके दीप्तिमान स्मरणको नहीं भूले हैं ।
शत्रु भयंकर वेशसे शिरपर खड़ाहुआ है ! इसी समय मेवाडको विध्वंस
करदेगा—राजपूतोंकी प्राणप्यारी वीरबालाओंपर अत्याचार करेगा । इस
भयंकर अभिनयको कैसे देखसकेंगे ? मेवाडके बालक वृद्ध और युवा
पुरुष केवल इसही भांतिकी चिन्ता करने लगे, सबने प्रतिज्ञा की कि प्राणरहते
हुए किसी प्रकार मेवाडभूमिको यवनोंके हाथमें नहीं जाने देंगे । वरन संग्रामभूमिके
बीच शत्रुओंके हाथसे मरजायेंगे, तथापि जीवितरहते जननी जन्मभूमिकी दुरवस्था
न देखसकेंगे । इसप्रकारसे सबही प्रतिज्ञा करके झुंडके झुंड अमरसिंहके झंडेके
नीचे पड़चगये । सामर्थ्यके अनुसार सबही धन इकट्ठाकरके राजकोषमें भेजने लगे ।
स्त्रियोंने अपने गहने बेचडाले, किसानोंने हल और बैलोंको गिरवी रखदिया,
वणिक्लौंगोंने अपनी बचतके धनको प्रसन्नतासे छोड़दिया । इस प्रकार क्रमा-
नुसार घनागार तो धनसे परिपूर्ण होगया । उस धनकी सहायतासे राणाजीने

थोड़ेही समयमें आवश्यकीय अस्त्रशस्त्रोंको तैयार करालिया । तथा अपने पुत्र वर्ग और प्रस्तुत सेनाको साथ ले मुगलसेनाके आगे बढ़े । शीघ्रही दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा । रणविद्या हीन अशिक्षित राजपूत वीरगण प्राणपणसे मुगल बादशाहके अगणित रणपंडित वीरोंके साथ संग्राम करने लगे । जिन्होंने इस संग्रामसे पहिले किसी समय भी अस्त्रधारण नहीं किया था, किसी समय युद्धमें गजन नहीं किया था, आज वही राजपूतगण इस प्रकारसे संग्राम करनेलगे, कि जिस प्रकार कोई महारणपंडित वीर संग्राम करता हो । परन्तु इन्से क्या होताहै ? समुद्रकी समान उफनतीहुई मुगलसेनाकी गतिको सुट्टीभर राजपूतगण कैसे रोकसकतेहैं ? अतएव जो कुछ हुआ, उसको लिखतेहुए लेखनी भी अरुधर कांपतीहै—हृदय शोकसे उमड़ा-आताहै । वीरपूज्य बाप्पारावलकी जो प्रचंड वैजयन्ती आठसौ वर्षसे भी अधिक विजयी गिह्लौटराजाओंके गर्वोन्नत नग्नकपूर फहरायाकरतीथी, आज वही विजयपताका सुलतान खुर्रमके नन्मुख झुकगई । उस दुर्दैवका वृत्तान्त—शिशोदीयकुलकी वह शोचनीय कथा—हमसे नहीं लिखीजाती । जहाँगीरने स्वयं अपने दैनिकविवरणमें इसका जो कुछ वृत्तान्त लिखाहै, उसका ही अनुवाद नीचे लिखा-जाताहै ।

“ अपने राज्यके आठवें वर्ष सन हिजरी १०२२* में मैंने सोचा कि अजमेरमें जातही अपने खुशकिसमत पुत्र खुर्रमको अपनेसे पहिले भेजदूंगा । बाद इसके जब सफरका पूरा इन्तजाम होगया, तब उसको तरह २—के कीमती खिलत, एक हाथी, एक घोडा, एक तलवार, एक ढाल और एक छूरी ईनाममें दी । जो फौज उसकी मातहतीमें थी उसको और उसके सिवाय १२००० हजार सवार ज़यादा भेजदिये, और अजीमखाँको उसका सिपहसालार मुकर्रर करके उसके कुल मातहत कारिन्दोंको उनके लायक ईनाम दिया । ”

“ बाद इसके मेरी सलतनतके नवें वरसके पहिले दिन ही, यानी हिजरी सन १०२३ (सन् १६१४ ई०) को मैं अपने तख्तपर बैठाहुआ था कि मेरे लडकेने आलमगुमान हाथीके साथ अठारह हाथी और मामूली आदमी व कुछ अस्तूरतें जिनको वरवक्त जंगके पकडलिया था, मेरी नज़रमें भेजे । दूसरे दिन उस आलमगुमान हाथीपर बैठकर मैं शहरमें घूमनेको निकला, और बहुतसी अशरफियें लुटाईं । ”

“इसके बाद मुझको यह खुशखबरी मिली कि राना अमरसिंहने सुलहका पैगाम भेजा, और वह हमारा मातहत राजा होनेके लिये खुशीसे तइयारहै। मेरे खुशकिस्मत बेटेने रानाके राज्यसे जिधर तिधर फौजके नाके कायम करदियेहैं, व उसके ही आदमी वहांका इन्तजाम करतेहैं। सुल्ककी आवहवा खराब है और कुल देश बनजरहै, वहां मुश्किलसे पहुँचना होता है, इसवजहसे कुल सुल्कको कब्जेमें लाना नामुमकिन मालूम हुआथा। लेकिन मेरी फौजने गर्मी-और बरसातकी कुछ परवाह न करके कुल मेवाडको अपने तहतमें कियाथा। और वहांके कितने एक सरदारोंकी, व आमलोंगोंकी मस्तूरातें और उनके लडके भी कैदकिये; राना इन बातोंसे बहुत ही नाउम्मेद होगया, और यह समझकर—कि अगर कुछ दिनतक यह जुल्म और हुआ तो सुल्कको छोड़ना पड़ेगा, या कैदमें जाना होगा—बहुत आजिज होकर सुलहकी दरखास्त की। सूपकर्ण व हरिदास झाला इन दो सरदारोंको खुर्रमके पास भेजकर रानाने कहला भेजा कि यदि वह मुझको क्षमा करके अपने हाथसे ग्रहणकरें तो मैं भी उनका यथायोग्य सन्मान करूँ, और दूसरे न्हिदूराजा जिसप्रकारसे उनकी सेवा करतेहैं, वैसीही सेवा करनेके लिये अपने पुत्र कर्णको भेजसकताहूँ; परन्तु बुढ़ापा आजानेसे मैं स्वयं उनके पास नहीं रहसकूँगा इसके लिये क्षमा करनी होगी। इन कुल हालतोंको “नूरचश्मने शुक्रउल्ला अफ़ज़लखाँके ज़रियेसे मेरे पास भेजाथा।”

“मेरी सलतनतके वक्तमें चित्तौर मातहत हुआ, इसलिये मुझको बड़ी खुशी हुई और हुक्म दिया कि उस (मेवाड) सुल्कके पुराने मुस्तहक वहांसे महरूम नहीं रहेंगे। इस बातका मुझको कामिल यकीन है कि राना अमरसिंह और उनके बड़े बूढ़ोंको अपनी ताकत और अपने ज़ोरपर पूरा एतकाद था, उनको पहाड़ी वाशिन्दोंकी ताकतका पूरा यकीन था, वे अपनी कौमके नामपर मगरूर थे; वह हिन्दोस्थानके किसी राजाको राजा ही नहीं समझतेथे, या उन्होंने कभी किसीके सामने शिर नहीं झुकाया था, इस अच्छे मौकेका हाथसे जाने देना, मुझको अच्छा नहीं मालूमहुआ; इस लिये फौरन ही अपने लडकेको वकील सुकारिंर करके भेजा और रानाको माफी दी। व अपना एक फर्मान भेज कर रानाको लिखदिया कि आप मेरे साथमें वे खटके रहेंगे। अपने सादे वर्तवोंको साबित करनेके लिये मैंने उस फरमान

पर अपना पंजा* भी लगादिया । और लडकेको यह भी लिखभेजा कि हरेक तरहसे उस मुअज्जिज राणाकी मनशाअ और ख्वाहिशके मुआफिक काररवाई करनेमें कसर न कीजाय । ”

“मेरे लडकेने वह फरमान और एक चिट्ठी सूपकर्ण व हरिदासके जरियेसे वहां भेजी, व इन दोनों सरदारोंके साथ शुक्रउल्ला व सुन्दरदासको भी खाना किया । उसने रानासे कहलाभेजा कि वह हमारे सादेपन और नेकीपर यकीन करके बादशाहके इस दस्तखती परवानेको कबूलकरें । बाद इसके २६ तारीखको राना साहबका शाहजादेके पास आना करारपाया । ”

“शिकार खेलनेके लिये जब मैं अजमेर गया, उस वक्त शाहजादे खुर्रमका महम्मदवेगनामी नौकर मेरे पास आया उसने खुर्रमकी दस्तखती एक चिट्ठी सुन्नको देकर कहा कि रानाने शाहजादे साहबसे मुलाकात की थी । ”

“इस खबरको सुनते ही मैंने महम्मदवेगको एक हाथी, एक घोडा और एक छूरी ईनाम दी, व उसको “जुलफिकारखाँ ” के नामसे पुकारा । (यानी उसको जुलफिकारखाँकी पदवी दी) ”

“सुलतान खुर्रमके साथ राना अमरसिंहकी और राजकुमार करनके साथ सुलतान खुर्रमकी मुलाकात और वेगम नूरजहांका करनको इज्जतके साथ ओहदा देनेका बयान । ”

“राना अमरसिंहने ता० २६ इकशम्बाके रोज बादशाहतके दूसरे मातहत राजाओंकी तरह इज्जत और लियाकतके साथ शाहजादेसे मुलाकात की । मुलाकातके वक्त रानासाहबने शाहजादे खुर्रमको एक वेशकीमत पदमराग, बहुतसे हथियार जो कि तिलाई म्यानोंसे मढे हुए थे, बड़ी कीमतके साथ हाथी और नौ घोडे खिराजमें दिये । शाहजादेने भी उनको हलीमियत और

* हृदयमें विश्वास उत्पन्नकरनेके लिये सरल आचरणमें हाथमें हाथ देना अथवा स्वाक्षरित पत्रपर अपने हाथका पंजा लगाना अति प्राचीनकालसे सभ्यलोगोंमें चलाआताहै । सनातनधर्मावलम्बियोंमें हाथमें हाथ देनेकी ही रीति है । शक और तातारवाले अपना पंजा किसी प्रकारके सन्धिपत्रपर, स्वीकृतिपत्रपर, या चुक्तिपत्रपर लगायाकरतेहैं । टाडसाहब कहते हैं कि बादशाह जहांगीरने राणा अमरसिंहके साथ सन्धिकरके प्रमाणपत्रपर जो पंजा लगायाथा, वह राणाजीके दफ्तरमें अबतक वर्त्तमानहै । वह कहतेहैं कि लालचंदनसे पांच उंगलियें भिगाकर उस प्रमाणपत्रपर लगायीहुईथीं । आजतक वह लाल रंगका पंजा स्पष्ट दिखाई देताहै ।

इज्जतके साथ कुचूलकिया । बादजाँ रानाने शाहजादेके घुटनोंको पकडकर माफी चाही, खुर्रमने भी अच्छी तरहसे उनको समझा बुझाकर दिलासा दिया, और एक हाथी, कई एक घोड़े, एक तलवार व लायक खिलत भी उनको दिया । रानासाहबके साथमें जो राजपूत थे उनके लिये भी एकसौ बीस खिलत, पचास घोड़े, और रतनोंसँ जडेहुए वारह शिरेपेच (कलगी) भेजेगये । अगरचे इन लोगोंमें सौ आदमियोंसे ज़्यादा इनाम पानेके लायक नहीं थे, तो भी यह सब सामान उनके दरस्थान वांटदिया गया । इन राजालोगोंमें एक रिवाज चला आताहै कि बाप बेटे दोनों एक साथ हम लोगोंकी मुलाकातको नहीं आते हैं रानाने भी इस रिवाजके मुआफिक काम किया; वह अपने लडकेको साथ नहीं लाये * उस दिन सुलतान खुर्रमने अमरसिंहको रुखसत कर दिया । रुखसत होने के वक्त उनसे बलीअहद करणके भेजदेनेका अहद पैमान लेलिया । वक्तपर करण आया । हाथी, तलवार और छूरीके सिवाय तरहरेके खिलत उसको दियेगये, उस दिनही शाहजादेके साथ वह मुझसे मुलाकात करनेके लिये आया ।”

“सुलतान खुर्रमने मुझसे मुलाकात करके कहा कि अगर हूज़ूर हुक्मदें तो राजकुमार करण आपकी कदमवोसी हासिलकरे मैंने उसके लानेका हुक्मदिया । वह आजजी और अदबके साथ आया। बादजाँ सुलतान खुर्रमकी शिफारससे मैंने उसको अपनी दाहिनी तरफ विठ लाया और एक उमदा खिलत दी। राजकुमार इस लिये शरमाया कि वह सरल पहाड़ी मुल्कोंमें रहनेके सबब दरबारके कायदोंसे महज़ नावाकिफ और ऐश आरामके सामानोंसे विलकुल महरूम था । दरबार शाहीके दबदबेको उसने कभी नहीं देखाथा । वह बहुत कम बोलता और हम लोगोंके साथ बहुत कम मिलना चाहताथा । राजकुमार कर्णके दिलमें अपना यकीन करानेके लिये मैं रोज़ व रोज़ उसको अपनी कोशिश और अपनी मुहब्बतका एक नमूना दिखाताथा । उसके मुकरर होनेसे एक दिन वाद मैंने उसको जवाहिरातसे जडी हुई एक छूरी और तीसरे दिन एक ईराकी घोडा दिया । इसही दिन मैं उसको वेगम नूरजहाँके पास लेगया । नूरजहाँने भी राजकुमारको सजासजाया हाथी, घोडा, तलवार और बहुतसे जवाहर ईनाममें दिये ।”

* टाडसाहब कहतेहैं कि मुसलमानोंकी विश्वासघातकतासे शंकित हो हिन्दू राजालोग पुत्रके साथ शत्रुके यहां नहीं जातेथे ।

“इसही दिन मैंने भी उसको मोतियोंका एक वेवहा हार और दूसरे दिन एक हाथी वतौर ईनामके दिया। मेरी ज़ियादा ख्वाहिश थी कि शाहज़ादेको नफीस और उमदा २ सामान दिया जावै। जिसवक्त मुझको कोई खूबसूरत और उमदा तोयफ़ः मिलता, मैं फौरन राजकुमारको देदेता। एकवार मैंने उसको तीन बाज और तीन तुरा जानवर दिये। वह जानवर यहांतक पोस मानगयेथे कि हाथ बढ़ाते ही हाथपर आकर बैठजातेथे। एक सजोवा और दो कीमती अँगूठियां भी उसको दीगई और इसही “महीनेकी पिछली तारीखको मैंने गलीचे, खूबसूरत ज़रीके कामकी आराम कुरसियों, अतरकी शीशियों, तिलाई वरतन और दो गुजराती बैल दिये।”

“दशवाँ साल। इसवक्त करनको उसकी * जागीरमें जानेके लिये छुट्टी दी। रुक्मसतके वक्त एक हाथी, एक घोडा और एक मोतियोंका हार जिसकी कीमत ५००००) रुपया थी—दिया। उस वार कर्ण जितने दिनतक मेरे दरबारमें रहा, उतने अरसेमें उसको जितना सामान मेरे यहांसे मिला, उसकी कीमत दशलखासे ज़ियादा होगी, इसमें उस ईनाम और सामानकी कीमत नहीं लगाई गई है जो शाहज़ादे खुर्रमने राजकुमारको दियाथा। मैंने मुबारक-खाँको करणके साथ खाना किया और उसकी मारफत रानासाहबको एक हाथी, द घोडे दगैरह और कुछ पोशीदा खबरें भी भेजीं।”

“हिजरीसन् १०२४ सफरमहीनेकी आठवीं तारीखको शाहज़ादे कर्णके लिये पांचहजारी मनसबदारी दीगई × इसवक्त मैंने उसको एक कंठा भी ईनाममें दियाथा कि जिसमें पन्ने लगे हुएथे।”

“बाद इसके मुहम्मदकी २४तारीखको (सन् १६१५ई०) कुमार कर्णका लडका जगतसिंह—जिसकी उम्र वारहवर्षकी थी—दरबारमें आया। उसने अदबके साथ

* शोकहै ! कि स्वाधीनताकी खानि पवित्र चित्तौरपुरीके स्वामी बाप्पारावलके वंशधर गण आज इस नीच और कलंकित नामसे पुकारेगये! हा प्रताप! हा आर्य—कुल—गौरव—रवि! तुम कहां हो ? भगवन् ! तुम तो आज इस यंत्रणामय कष्टसे छुटकारा पाकर अनन्तधाममें परमानंदसे विहार कर रहे हो; परन्तु तुम्हारी “ स्वर्गादपि गरीयसी ” पवित्र मेवाडभूमिको आज मुसलमानोंने जागीरके नामसे पुकारा !

× मट्टग्रंथोंमें देखाजाताहै कि राणाजीको मनसबदारीके वक्त खैरार, फूलिया, बेदनूर, मंडलगढ, जीरन, नीमच, और भिन्सरोर इत्यादि परगने मिले, इसके अतिरिक्त उनको देवला और डोंगरपुरके भागोंपर भी अधिकार मिलाथा।

आदाब बजा लाकर अपने वालिद और दादाकी अर्जी पेश की। उसके आलीखान्दानमें पैदाहोनेका सबूत साफ़ २ उसके चेहरेसे जाहिर होरहाथा × उसके साथ कुल वर्ताव महारानीसे कियागया, मैं तरह२की बखशिशें देकर उसको खुश करने लगा । ”

“सावनके दशवें दिन जगतसिंह मेरी इजाजत लेकर अपने मुल्कको गये । वक्तरखसतके मैंने उसको २००००) रुपये, एक घोडा, हाथी और तरह २ के खिलत दिये । राजकुमार कर्णके उस्ताद हरिदास झालाको ५०००) रुपये एक घोडा और खिलत और उसहीकी मारफत रानाजीके पास सोनेकी छः * मूर्तियाँ भेजीं ।

“तारीख २८ रवि-उल-अव्वल । आज मेरी सलतनतका ग्यारहवाँ साल है । मेरे हुक्मसे रानासाहिव और उनके लडके कर्णकी दो मूर्तियाँ बनाईगईं, यह मूर्तियाँ संगमरमरकी बनीथीं । जिस दिन वह दोनों मूर्तियाँ तइयार करके मेरे पास लाईगईं, उसही दिनकी तारीख़ उनपर खुदवाकर उन्हें आगरेके बाग़में फरोकश करनेका हुक्मदिया । ”

“मेरी सलतनतके ग्यारहवें वर्षमें एतमादख़ाने मुझको लिखभेजा कि सुलतान खुर्रम रानाजीके मुल्कमें भये । वहांपर राना और उनके लडकेने सात हाथी, सत्ताईस घोडे, जवाहरात और तिलाई गहने वगैरह नज़रानेमें दियेथे । इस नज़रानेमेंसे सुलतान खुर्रमने सिर्फ़ तीन घोडे लेकर बाकी सब सामान फेरदिया । उसदिन यह बात भी करारपाई कि राजकुमार कर्ण भये पंद्रह सौ (१५००) राजपूतोंके मयदान जंगमें शाहज़ादे खुर्रमके पास रहें । ”

× सर टैम्स रो इङ्ग्लैंडके पहिले जेम्सके पाससे दूत होकर जहांगीरके पास आयाथा । हिन्दो-स्थानमें आकर बादशाह और राजाओंके सम्बन्धमें जो पत्र उसने इङ्ग्लैण्डको भेजेथे, उनमें भी बहुतसी ऐतिहासिक बातें पौईजातीहैं । कन्टरवारीके प्रधान याजके पास जो पत्र उसने २९ जनवरी सन १६१५ई०को भेजाथा, प्रयोजनं समझकर यहां उसका कुछ अनुवाद कियाजाताहै । “महाराज पुरुके धर्मसम्मत वंशधरगण मुगलोंकी बादशाहीमें राजा बनकर रहतेहैं । गतवर्षसे पहिले कभी कोई इनको पराजित नहीं करसकाथा । परन्तु यदि सत्य बात कहीजाय तो यह कहना होगा कि यह लोग मोललेकर यहां लाएगयेहैं । इनका मुगलसम्राटोंकी वश्यता स्वीकार करना असिब-लंकां प्रभाव नहीं, बरन उपहारादिकी मोहिनी शक्तिका प्रभाव है । ”

* टाडसाहब कहतेहैं कि “ इसप्रकारकी मूर्तियोंका वृत्तान्त बहुधा पायाजाताहै, परन्तु वह किसकी मूर्तियाँ होतीहैं और उनका मूल्य क्या होताहै, सो नहीं जानपडता । ”

“अपनी संलतनतके तेरहवें वर्षमें कि जिसवक्त मेरा दरबार सिंदलामें लगा-
हुआ था, वहींपर राजकुमार कर्णने आकर मुझसे मुलाकात की। मुझको
मुल्क दक्खनमें जो फतह और कामयाबी हासिलहुईथी, उसके लिये खुशी
जाहिरकर करनसिंहने १०० मोहर, (१०००) रुपये तरह २ के नजराने और
(२१०००) रुपयेके सोनेचांदीके जेवरात व बहुतसे हाथी ! घोड़े, मुझको दिये।
हाथी, घोड़ोंको वापिसकरके बाकी सब नजराना मैंने लेलिया, दूसरे दिन
मैंने उसको खिलत देकर फतेहपुरसे लौटजानेका हुक्म दिया। वक्त रुख-
सतके उसको एक हाथी, एक घोड़ा, तलवार व कटार और उसके बापके लिये
एक उमदा घोड़ा यह सामान दिया”।

“चौदहवाँ साल। तारीख १७ रबीउल अब्बल हिजरी सन १०२९ को मैंने
अमरसिंहके बहिस्तनशीन होनेकी खबर पाई। रानाका बेटा भीमसिंह और
पोता जगतसिंह यह खबर लेकर मेरे पास आयेथे। उनको मैंने तरह २ के
खिलत दिये और राजा किशोरीदासकी मारफत एक चिट्ठी जिसमें तसल्ली
दीगईथी, कितने एक उमदा घोड़े, तख्तनशीन होनेका जरूरी सामान
रवानाकरके कर्णसिंहको “राणा”का खिताब दिया। बादजा ७ वीं सब्बालको
विहारीदास वर्मनकी मारफत एक फरमान जिसपर मेरा पंजा लगाहुआ
था—रवाना करके कहलाभेजा कि उनका लडका मुकर्रिर फौजको साथ लेकर
मेरे पास हाजिर हो।”

सम्राट् जहांगीरका हस्ताक्षरित वृत्तान्त यथार्थरीतिसे अनुवादित हुआ। इस
समय प्रयोजन समझकर कुछ विलम्बतक इसकी समालोचना कीजायगी।
जहांगीरका हृदय अति ऊंचा और महान था, उसके लिखेहुए वृत्तान्तको पढ़ने-
से ही यह बात भलीभांतिसे प्रमाणित होतीहै। उस वृत्तान्तकी प्रत्येक पंक्ति और
प्रत्येक शब्दसे उसकी महानता और उच्च हृदयताका पूर्ण परिचय दिखाई देताहै।
वीरकेशरी प्रतापसिंहके वीरपुत्रपर जय प्राप्तकरके जो असीम आनंद उसको प्राप्तहु-
आथा, उसके द्वारा उनके महत्त्वका और भी अधिक विकाश हुआ। उस आनंदकी गं-
भीरतासे बादशाह जहांगीरका हृदय विचलित नहीं हुआ था उन्होंने अपने स्वाभा-
विक महत्त्वको नहीं छोड़दिया। यद्यपि आद्योपान्त सूक्ष्मदृष्टिसे देखाहै, निरपेक्षभा-
वसे वर्णनकियाहै, तथापि दो एक स्थानोंमें भ्रम पायाहै। जहांगीरको यह समाचार
विदित नहींथा कि कौनसी महाशक्तिके प्रभावसे गिल्लीटवंशके राजालोग यवनोंके

कठोर आक्रमणको व्यर्थ करदेतेथे;—इसही कारण भ्रमवश हो बादशाहने उनके आत्मसमर्पणका दूसरा कारण निर्देशकियाहै । ऐसाकरनेपर भी उन्होंने शिशो-दीय वीर अमरसिंहके वीरगर्वकी अवमानना या खर्वता साधन नहीं कीहै । वह अमरसिंहके वीरगर्वको समझगएथे—उसही वीरवर्गसे बलवान होकर कहाथा, “स्वदेश छूटैगा, अथवा वन्दित्व स्वीकार करना पडैगा” यह जानकर विवश हो राणाजीने अंतमें मस्तक झुकायाथा । मर्माहत निरुपाय आश्रयहीन राज-पूतकेशरीकी कठोर हृदयपीडासे जहांगीरके हृदयमें भी चोट लगी थी, इस-ही कारण वह इसवातको समझगएथे, और राणाजीकी विनयके अनुसार सब बातोंका प्रबन्ध कियाथा । जिससमय राणा अमरसिंह सबभांतिसे हताश होगएथे, उसही समय उन्होंने बादशाहको मस्तक नवाया था; उसही समय उन्होंने और हिन्दू राजाओंकी समान बादशाहके दरबारमें रहकर उसकी सेवा करना स्वीकार किया था; यद्यपि सेवाकरना स्वीकार किया, परन्तु यह समझकर कि स्वयं हमसे यह कठोर अपमान न सहाजायगा ।—अपने पुत्र कर्णको भेजकर क्षमा प्रार्थना की थी । बादशाह समझगया कि बड़े कष्टसे वीरवर अमरसिंहने इन बातोंको कहाहै, हृदयको छिन्नभिन्न करके यह कई एक शब्द उनके मुँहसे निकले हैं । जो गिल्लोट वीरगण सहस्र वर्षसे स्वाधीनताका सुख भोगते चलेआते हैं, पराधीनताका नाम भी जिन्होंने कभी नहीं सुना, क्या यह साधारण पश्चात्तापकी बात है कि उनके ही वंशमें जन्म लेकर आज भाग्यहीन अमरसिंहको ब्रह्माकी दारुण करतूतके कारण उस स्वर्गीय स्वाधीनतासे अलग होना पडा ! बादशाह जहांगीरने अपने हाथसे उनके गलेमें पराधीनताकी जंजीर पहिराई थी, अपने हाथसे गौरवमय आसनसे उतारकर उनको पाताली कुएँमें डालदिया था । मंत्रसे बँधा हुआ अजगर जिस प्रकार विवश होजाता है, वैसेही अमरसिंहने भी इस अपमानको सहा, जिसको राजपूतवीरगण किसी प्रकारसे नहीं सहसकते हैं । अमरसिंहको वही अपमान सहना पडाथा । नहीं तो उनके प्रत्येक अंगमें जो भयंकर आग जलती थी, उनकी प्रत्येक शिरामें जो तीक्ष्ण घाव लगा था, उसकी पीडा किसी प्रकारसे कोई दूसरा नहीं सहसकता । यदि कोई दूसरा होता, तो निश्चय ही उसकी छाती फटजाती, इन वचनोंको उच्चारण करनेसे पहिले उसकी रसना जडताको प्राप्त होजाती । दलित और पीडित प्राण स्वयं ही शरीरसे विदा होजाता ! अमरसिंहके हृदयमें इसप्रकारका कष्ट उत्पन्न हुआ

था, परन्तु केवल अद्भुत सहनशीलताके बलसे ही वे इस कष्टको झेल गये थे; कारण उन्हें ज्ञात था कि मनुष्य होकर जिसने सहनशीलता न सीखी, वह मनुष्यनामके योग्य नहीं है, उसका मनुष्य देह धारण करना केवल विडम्बनाही है। यह अपूर्व तत्त्वज्ञान केवल अमरसिंहका ही नहीं था, वरन उनके पवित्र गिल्लोट-कुलमें यह सनातनसे गुणमानकर व्यवहार किया जाता है।

“आज अमरसिंहने उसही गुणकी कार्यकारिताको दिखाया। आज उस प्रचंड सहिष्णुताकी सीमाको उन्होंने दिखा दिया। स्वाधीनताके लोप होजानेसे उनके हृदयमें कठोर पीडा हुई थी इस बातको बादशाह भी समझ गये थे। सम्राट्का हृदय भी इससे व्यथित हुआ था। इसही कारणसे बादशाहने राणाके अनुरोधकी रक्षा करके कहा था कि हरेक तरहसे उस मुअज्जिज राणाकी मनशाय और ख्वाहिशके मुआफिक काररवाई करनेमें कसर न की जाय। * ”

यद्यपि यह बात सत्य है कि वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहके पुत्र अमरसिंहपर विजय पाकर बादशाह आनन्दित हुए थे; परन्तु उनके इस आनन्दमें अत्यानन्द नहीं था, उसमें हीनजनोंकी संमान प्रगल्भता नहीं थी; वरन वह आनन्द शान्त और सरलतामय था। देशके गृह २ में साधारण आनन्दोत्सवकी तइयारी न कराकर बादशाहने केवल राणाजीके प्यारे हाथी आलमगुमानपर सवार हो दीन दरिद्रोंको धन दान किया था, इससे ही उनके उस गंभीर-तथा शान्त आनन्दका विकाश स्पष्टतासे दिखाई देता है। राणापर विजय पाकर उन्होंने अपनेको गौरवान्वित समझा था; कारण कि उनको ज्ञात था कि शिशोदीय वंशके राजा ही राजपूतोंमें श्रेष्ठ होते हैं। उस वीरपूज्य श्रेष्ठ राज्यवंशके ऊपर जय प्राप्त करनेके लिये उसके दादे परदादेने कितना परिश्रम किया था, परन्तु अनन्तधन और अगणित सेनाका प्राण देकर भी उनकी चेष्टा फलवती नहीं हुई थी। आज जहांगीरसे वह कार्य होगया, इसही कारणसे उसने अपनेको गौरवान्वित समझा था। जो खड्गबलसे नहीं हुआ;—नृशंसता, स्वार्थपरता और सर्वग्रासके पापमंत्रसे दीक्षित हो पाशव असिबलके प्रयोगसे उनके पूर्वपुरुषगण जिस कार्यको सिद्ध नहीं करसके; सत्रहवार बराबर कठोर संग्रामभूमिमें आय अगणित हिन्दू मुसलमानोंके रुधिरको गिरायकर वह स्वयं जिस कायको इतने दिनोंतक सिद्ध नहीं करसके थे, आज उनके परम धार्मिक पुत्र

* बादशाहकी यह आज्ञा उचितरीतिसे प्रतिपालित हुई थी।

सुलतान खुर्रमने अपने सदाचरण और सद्ब्यवहारसे उसकार्यको सिद्ध कर दिखाया । वह जानता था कि भारतवर्ष पशुवल या खड्गकी सहायतासे झुकनेवाला नहीं है । इस गूढ़ तत्त्वको जाननेके कारणसे ही उस वीर पुत्रने सरलतासे राजपूत राजाओंको अपने वशमें कर लिया था । मुगलोंके सिवाय और किस विदेशी राजाने इस तत्त्वको जाना है कि भारत पशुवल या असिबलसे शासित नहीं होसकता ? और कौनसी जाति है कि जिसने हिन्दुओंपर जय पाकर अपनेको कृतार्थ समझा हो ? अतीतकी साक्षी देनेवाला इतिहास आज मुगलोंकी उदारताको संसारके सामने अगाणित मुखसे वर्णन कर रहा है । सूक्ष्मदर्शी निरपेक्ष जहांगीरकी पवित्र लेखनी आज सभ्यजगमें एक नवीन सत्यकी जयजयकार पुकार कर ढंडोरा पीट रही है; उस घोषणापत्रको पढ़कर संसार जान ले, संसारके समस्त राजालोग इस बातका ध्यान रखें कि—“भारत खड्गकी सहायतासे अथवा पाशव बलसे शासित नहीं होगा ।”

बादशाह जहांगीरने मेवाडके राणाको पराजित करके अपनेको गौरवान्वित समझा । इसही कारणसे उन राणाके बड़े पुत्र कर्णको अपनी दाहिनी ओर अर्थात् भारतवर्षीय समस्त राजाओंके ऊपर—आसन दिया था । इस प्रकारसे राजपूत राणाके साथ बादशाहके जिस किसी वर्तविका वृत्तान्त पाठ किया जाता है, उससे ही उनका उदारपन, वीरोचित गौरव और शिष्टाचारका उत्तम परिचय पाया जाता है । शिशोदियाकुलकी मानमर्यादा और शिशोदियाकुलके राणाको सदा सुखमें रखनेके लिये मानो जहांगीरशाहको सदा ही चिन्ता लगीरहती थी । परन्तु एक स्थानमें बादशाहने भ्रमसा पाया है उन्होंने मंत्रौषधिसे वशमें आये भुजंगशिशु कर्णके हृदयका भाव न जान करके भ्रान्त चित्तसे कहा है कि “कर्ण शरमीला है।” परन्तु विचारकर देखनेसे कर्णकी वह “लाज” एक अधिक ऊंचे गौरवमय अभिधानमें नाम पानेके योग्य है ! राजकुमार कर्णने प्रसिद्ध और पवित्र गिह्लौट् वंशमें जन्म लिया है, उनके पिता महा बलवान शतराजाओंके वंश-धर हैं । उनकी जन्मभूमि आर्य गौरव गरिमा और स्वाधीनताकी लीला-भूमि है । उस वीरोत्पन्नकारी पवित्र मेवाडक्षेत्रमें जन्म लेकर, उस योग्य पिताके पवित्र औरससे जन्म लेकर, उस जगत्पूज्य वीरवंशमें उत्पन्न होकर म्लेच्छोंके दास हुए । उनके बड़ेबूढ़ोंने प्राण रहते हुए म्लेच्छोंको मेवाडभूमि-की सीमामें भी पांव न रखने दिया । जिनके साथ सम्बन्ध करनेके कारण कलंकित कहलाए जानेसे जिन सजातीय लोगोंको उनके बड़े बूढ़ोंने छोड़ दिया है,

जिन लोगोंको उन्होंने “दैत्य दानव” आदि घृणा सूचक नाम दे रखे हैं, आज विधाताने उनको उसही स्लेच्छका—उसही घृणित स्लेच्छका दास बनाया; सहाय—आश्रय—उपाय—अवलंबन छीनकर सदाके शत्रु उन यवनोंकी अधीनतारूपी जंजीरमें बांधा;—कर्णकी समान तेजस्वी राजकुमारका हृदय किस प्रकारसे इस दुःखको सहन करसकता है ? राजकुमार कर्णभी प्रसिद्ध शिशोदीय कुलका योग्य राजपुत्र है, उसका हृदय अवश्यही इस पराधीनतासे दुःखी हुआ होगा। परन्तु जिनका राजपाटसे कोई भी संबन्ध नहीं है;—जिनके पास तिलभर भी व्यक्तिगत स्वाधीनता नहीं है; जन्मभूमिकी दुरवस्था देखकर, जातीय स्वाधीनताका लोप होना देखकर उन लोगोंका हृदय भी क्षुब्धित, मथित और चुटैल होजाता है, और जिसके हृदयमें इस अवस्थाको देखकर दुःख नहीं होता, उसमें आदमीपन कहाँ है ? वह मनुष्यनामके योग्य नहीं है। कर्ण राजपूत होकर उस स्वाधीनताको खो बैठा। उनके बड़े बूढ़ोंकी वीरत्व गौरव और स्वाधीनताकी खानि मेवाडभूमि स्लेच्छोंके द्वारा “जागीर,, नामसे पुकारी गई; जिस शत्रुने उन्हें इस शोचनीय दशाको पहुँचाया, वह किस प्रकार—हिल मिलकर उससे बातचीत करे ? उसही शत्रुने उनको सन्तुष्ट करनेके लिये अधीनतारूपी जंजीरका भार कम करदिया है, उनको हिन्दूराजाओंमें ऊँचे आसनपर स्थापित कियाहै, सदासे अलग हुए गोद्वार राज्यको फिर दिलादिया “पाँच हजारी सेनापति”के पदपर वरण किया; यह सब सत्यहै—यह समस्त कौशल ही सुन्दर हैं; परन्तु इन सबके बदलेमें जो एक अमूल्य धन जाता रहाहै, यदि उसके साथ मिलान कियाजाय तो इन्द्रकी अमरावती और कुवेरका धनागार भी अतिहीन व तुच्छ जानपडता है। कर्ण उस अमूल्य रत्न—“स्वर्गादपि गरीयसी” उस अमूल्य स्वाधीनता रत्नसे वंचित हुए; उस रत्नके उद्धार करनेका अब कोई उपाय नहीं है, इस बातको विचारकर ही वह चुपचाप रहते थे। इसही कारणसे बादशाहने उनको “शरमीला” और “कमगो” कहकर वर्णन कियाहै।

उदार हृदय जहांगीरने राना अमरसिंहको जैसा मान दियाथा, जैसा उनका गौरव किया था, जीतनेवालेसे किसी और पराजित राजाने भी ऐसा सन्मान या गौरव पाया है ? हमको तो इस विषयमें सन्देह ही है। परन्तु तेजस्वी अमरसिंहके हृदयमें वह सन्मान और गौरव काँटेकी समान खटकता था। बादशाहके दियेहुए सन्मान और गौरवका वह जितना विचार करते थे, उतना ही उनका हृदय उस काँटेके लगनेसे खटकता था। उस दारुण कष्टके प्रचंड

पीडनसे कभी २ वह उन्मत्तसे होकर खुर्रमकी महानता व उदारता और जहां-गीरके उस सन्मान और व्यवहारको हज़ारोंवार धिक्कार दिया करते थे । राजपूतवालाके गर्भसे उत्पन्न होनेके कारणसे सुलतान खुर्रम * राजपूत वीरोंका अत्यन्त आदर सत्कार करता था । उसकी अकपट भक्ति आदर और राजपूतानुरागसे ही मोहित हो तेजस्वी अमरसिंहने जहांगीरकी वश्यता स्वीकार की और उसके साथ मित्रता करनेके लिये अपनी सम्मति दी थी । नहीं तो सम्पूर्ण जीवनभर समर सागरमें तैरते रहनेपर भी और कठोर अत्याचारसे पिडित होनेपर भी वह इस प्रस्तावको कभी स्वीकार नहीं करते । खुर्रमका स्वभाव अत्यन्त सरल और उदार था तथा उसके वाक्य भी वैसेही मनोहर और सरल थे । खुर्रमकी वाक्यावली मानो अमरसिंहके कानोंमें अमृतकी वर्षा करती थी । इस शाहज़ादेने राणाजीके साथ सन्धिकरनेकी वासना करके उस सन्धिके मूल्यमें उनकी मित्रताकी प्रार्थना की थी, और राणाजीसे कहला भेजा था कि “अगर आप शहरसे एक बार बाहर आकर बादशाहके फरमानको, जिसपर उनका पंजा लगाहुआ है, लेलेंगे, तो मैं उसही वक्त कुछ मुसलमानोंको मेवाडसे दूसरे मुकद्दूगामपर भेजदूंगा- फिर आप मुसलमानोंके नामकी वू, तक भी मेवाडमें नहीं पावेंगे ।” इस वाक्यके श्रवण करनेसे तेजस्वी राणाका उदार हृदय प्रचंड तेजसे उफन उठा । उन्होंने शाहज़ादेका कहना स्वीकार न किया । वीरकेशरी प्रतापसिंहके पुत्र होकर—क्या वह एकमनुष्यकी—विशेषकरके स्वाधीनताके हरण करनेवाले मुगलकी अधीनताको स्वीकार करेंगे? देहमें प्राण रहतेहुए वह कभी इस अपमान सूचक वाक्यको उच्चारण नहीं करसकेंगे । यद्यपि उन्होंने सुलतान खुर्रमसे मित्रकी समान साक्षात किया तो, परन्तु उसके प्रस्तावको नहीं माना, वरन दर्पसहित उसके कहनेको अस्वीकारकिया ।

जिसदिन सुलतान खुर्रमने राणाजीके पास यह प्रस्ताव भेजा, उसही दिन उन्होंने राज्यभारको छोड़कर शान्तिमयी मुनिवृत्तिको धारण करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की। उस प्रतिज्ञाके पूर्णहोनेमें थोड़ाही विलम्ब हुआ। खुर्रमके साथ साक्षात करके जब वह लौटे तब उन्होंने तत्काल सरदारोंको अपने पास बुलाया और

* अम्बेरके कछवाहे वंशकी राजकुमारीसे खुर्रमका जन्म हुआ था । इसही कारणसे रसिक भट्टगणोंने उसको कच्छपकुलोत्पन्न कूर्मनामसे पुकारा है । अतएव खुर्रम और कछवाहेके बदले कूर्म और कच्छप नामका व्यवहार होता है ।

उनके सामने अपनी प्रतिज्ञाको प्रकट किया तथा पुत्रके माथेपर राजटीका अर्पण करके राज्यसे विदा ली*। विदाके समय प्रणत पुत्रके शिरको चूमकर उन्होंने धीर गंभीरभावसे कहा "बेटा ! देखियो, मेवाडका सन्मान गौरव इस समय तुम्हारे ऊपर ही निर्भर करता है।" यह कह राजधानीको छोड़ राजनचौकी X के गिरिगहनमें सुख दुःखसे एक प्रकार अपने जीवनके दिन विताने लगे। उस दिनसे फिर कभी उन्होंने उस तापसाश्रमको नहीं छोड़ा था और न राजधानीमें आयेथे। जब संवत् १६७७ (सन् १६२१ ई०) में उनका पवित्रात्मा इस लोक-को छोड़ स्वर्गमें चला गया, जिस दिन पाँच तत्त्व पाँच तत्त्वोंमें मिल गए, उसही दिन उनके देवदेहकी पवित्र भस्म, उनके पितृपुरुषोंकी भस्मराशिके साथ एकत्र रक्षित होनेके लिये राजभवनमें लाई गई।

अमरसिंहके देवचरित्रकी और विशेष क्या समालोचना की जाय। वह वीरकेगरी प्रतापसिंहके योग्यपुत्र और पवित्र गिहौटकुलके परम पवित्र राजाथे। शारीरिक और मानसिक गुणग्राम जो वीरोंके अंगभूषण समझे जाते हैं, अमर-सिंहमें वह समस्त ही गुण थे। मेवाडके समस्त राजाओंसे वह अधिक ऊँचे और अत्यन्त बलवान् थे, परन्तु उनकी समान महाराणा अमरसिंहका रंग गोरा नहीं था। उनके मुखमंडलपर शोक और गंभीरताकी कालिमा बहुधा दिखाई दिया करतीथी, परन्तु यह भाव उनका प्रकृतिगत नहींथा। ज्ञात होता है कि जन्मभर विपत्तिके अंकुशसे पीड़ित होनेके कारण उनके वदन मंडलपर यह शोककी छाया पड़ गईथी। उदारता वीरता, दया तथा न्यायपरायणता इत्यादि गुण ही राजपूतराजाओंके प्रधान गुण समझे जाते हैं, इन समस्त गुणोंके होनेसे ही सेना, सामन्त, इष्ट मित्र और प्रजाके मनुष्य देवभावसे अमरसिंहकी पूजा करतेथे। राणाजीकी अर्पूव गुणगरिमाका अद्भुत वृत्तान्त भट्टग्रंथ, राजस्थानके अनेक स्तंभ और पहाडोंपर लिखाहुआ बहुतायतसे पाया जाता है।

* संवत् १६७२ (सन् १६१६ ई० में) राना अमरसिंहने अपने पुत्रको राज्यभार दियाथा। परन्तु तवारीख फरिस्ताके अनुवादक महानुभाव डौ साहब कहते हैं कि संवत् १६६९ (सन् १६१३ ई०) में राज्यभार दियाथा।

X टाडसाहब कहते हैं कि उक्त स्थानमें ही सुलतान खुर्रमने राणाजीसे मुलाकात कीथी। नगरके उत्तरकी ओर एक गिरिमालाके ऊपर अवतक उस राजनचौकीका खंडहर पड़ा है। इसको राणा उदयसिंहने बनवायाथा।

द्वादशवां अध्याय ।

कर्णके द्वारा उदयपुरका दृढ़होना और उसकी शोभाका बढ़ायाजाना,—सम्राटकी सभामें जानेसे राणाओंका छुटकारा पाना; सम्राटकी सहायताके लिये राणाकी दीहुई सेनाके ऊपर भीमका सरदार होना;—परवेजके विरुद्ध सुलतान खुर्रमके साथ भीमका षडयंत्र; राजद्रोहियोंके ऊपर जहांगीरका आक्रमण; भीमका माराजाना; उदयपुरमें खुर्रमका भागजाना; उसको मानसन्मानके साथ राणाका ग्रहण करना; राणा कर्णका परलोकजाना; राणा जगतसिंहका राजसिंहासन पर बैठना; जहांगीरकी मृत्यु; और शाहजहां नामको धारणकर खुर्रमका सिंहासनपर बैठना; मेवाडमें गंभीरशान्तिका होजाना; पेशोलाके वक्षविहारी द्वीपोंमें राणाका महल बनवाना; चित्तौरका पुनर्वासंस्कार;—जगतसिंहका मृतक होजाना; राणा राजसिंहका राज्याभिषेक; शाहजहांको पदसे उतारकर औरङ्गजेबका सिंहासनपर बैठना; जहांगीर और शाहजहांका हिन्दुओंकी प्रेमिकताके विषयमें यथार्थ कारण निरूपण; औरंगजेबके चरित्रोंका विवरण, राजपूतोंके ऊपर उसका “जिजिया” वा मुंडकर स्थापन; रूपनगरकी राजकुमारीके साथ औरङ्गजेबके विवाहका सम्बन्ध; उसको हरण करके राणा राजसिंहका अपने नगरमें आना,—सम्राटके विरुद्ध युद्धका उद्योग; औरङ्गजेबका युद्धयात्रा करना; गिरवाकी उत्पत्ति, राजकुमार अकबरकी पराजय;—उसका गिरिसंकटमें फँसना; राणाके ज्येष्ठ पुत्रसे अकबरका संकटोद्धार;—दिलेरखाँकी पराजय; राणा और उनकी सहायता करनेवाले राठौरगणोंसे औरङ्गजेबका अपमान; औरङ्गजेबका युद्धभूमिसे भागजाना;—राजकुमार भीमका भयंकर आक्रमण;—राणाके मंत्रियोंसे मालवेका लूटा जाना; एकत्रित होकर राजपूतोंके दलका चित्तौरसे अजीमको परास्तकरके उसको भगा देना; मुगलशाससे मेवाडका उद्धार;—मारवाड़में भयंकर युद्ध; एकत्रितहुई शिशो-दिया और राठौर शक्तिके बलसे सुलतान अकबरकी पराजय;—राजपूतोंका षडयंत्र;—औरङ्गजेबको राजपदसे उतारकर अकबरको सिंहासनपर बैठा देनेकी कल्पना करना; कल्पनाका निष्फल होना;—राणाके साथमें मुगलसम्राटकी संधिका विचार;—संधिका होजाना; भयंकर आघातके लगनेसे राणाका मृतक होना;—राणाके चरित्रकी और औरङ्गजेबके चरित्रकी समालोचना;—समुंदसरोवर; भयंकर दुर्भिक्ष और महामारी;—

मेवाड राज्यके शेष स्वाधीन नृपति महाराज अमरसिंहके ज्येष्ठपुत्र कर्ण अपनेपिताके छोड़ेहुए राजसिंहासनपर संवत् १६७७ (अर्थात् सन् १६२१ ई.) में बैठे;—आज इसराजस्थानमें नंदनकांननकी समान स्वाधीनताकी लीलाको छोड़कर वीरोंकी मेवाडभूमिमें वह गौरव और वह प्रकाश नहीं है कि जिस गौरवसे

गौरवान्वित होकर मेवाडकी भूमि एक समय सभ्य जगतकी शिरोमणि हुई थी; एक समय सूर्यवंशीय वाप्पारावलके वंशवाले जो कि एक प्रचंड सूर्यकी किरणोंकी समान अमित तेज धारण किये हुए थे; आज वह गौरव इस मेवाडभूमिसे चला गया, यह मेवाडराज्यकी भूमि इस समय विषादके मारे श्मशानकी समान होगई है,—मेवाडके वह सूर्यकी प्रभाके समान राजपूतगण उस प्रखर ज्योतिको खाकर सामान्य नक्षत्रोंकी समान क्षीणतेज होकर गिरे हैं; आज इस भारतके हिन्दुराजाओंकी समाजमें यह हीन दशा उपस्थित होगई है; उनका तेज नहीं रहा; ज्योति नहीं है; कान्ति उनकी जातीरही; वह लोग अपनी शक्तिको खोकर दूसरोंकी शक्तिके आकर्षणसे खिंचकर अपनेको भूल गये, तथा प्रचंड मुगलरूपी सूर्यके चारों ओर घूमते फिरते हैं। जो महती शक्ति एक समय हिन्दुओंके रोमरूपी सूर्यमें निकलकर समस्त भारतवर्षके राजाओंकी गतिको रोकती थी; आज वह इस मुगलसूर्यसे परास्त होगई है, इस मुगलसूर्यके प्रचंड तेजको रोकनेकी किसी हिन्दु राजामें सामर्थ्य नहीं है; कालके वशसे ही इसने उस तेज और उस शक्तिको पाया है, और कालके वशसे ही यह उनसे रहित होजायगा; इस संसारमें अवश्य होनहारका नियम चला आया है, इस समस्त संसारमें कोई भी उस नियमको उलंघन नहीं कर सकता; उस उलंघन न करने योग्य नियमके ही आधीन होकर “हिन्दुसूर्य” वाप्पारावलके वंशवाले अपने तेजसे हीन होगये हैं, और मुगलसूर्यकी प्रचंड शक्तिसे खिंचे जाकर साधारण नक्षत्रोंकी समान उसके चारों ओर घूमते हुए फिरते हैं; यद्यपि वह लोग इस मुगलकी उस प्रचंडशक्तिको खिंचते तो हैं, परन्तु समय २ में उसकी गतिको नियमानुसार नहीं रोक सकते हैं, विना अभ्यास किये हुए चरणोंसे घूमकर उस आकर्षणसे खिंचकर, कि जिसका उनको अभ्यास नहीं था वह समय २ पर अपने स्थानसे भ्रष्ट हो अपने स्वभाव और तेजकी तीक्ष्णताका प्रकाश करते हैं।

यद्यपि गौरवान् वीरोंमें श्रेष्ठ वाप्पारावलके वंशवाले अपनी पहली शक्ति और तेजको अपने अधिकारसे खो चुके थे, परन्तु तो भी वे अपनी पहली स्मृतिको नहीं भूल सकते, उस स्मृतिसे ही उनका जीवन है, उसके खोनेसे इनका अस्तित्व भी जाता रहैगा, राजपूतोंका नामतक इस संसारसे सर्वदाके लिये उठ जायगा, जिस दिन वीरकेसरी महाराज कनकसेनने सौराष्ट्रके शिखरपर अपनी विजयबैजयन्तीको गाड़ा था, उसदिनसे लेकर आजके समयतक कि जिसका हम वर्णन करनेके लिये तैयार हैं, डेढ़ हजार वर्ष व्यतीत होगये हैं, इस दीर्घकालके बीचमें

अदृष्ट चक्रके बराबर घूमनेसे उन वीरोंके वंशकी अवस्था जैसी होगईथी उसका वर्णन हम पहले ही भलीप्रकारसे कर आयेहैं, वह अवस्था प्रकाशित होकर चित्रकी समान आजतक भी हमारे नेत्रोंके सामने ज्योंकी त्यों दिखाई देरहीहै । सन् ईसवीकी दूसरी शताब्दीके बीचमें सूर्यवंशके महाराज कनकसेनने लोह कोटको छोड़कर सौराष्ट्रके किनारेपर अपनी विजयकी पताकाको स्थापन किया, वहां उनके वंशवालोंका शताब्दियोंतक राज्य करना, धीरे २ शिलादित्यका आविर्भाव,—असह्य पारदलोंका आक्रमण, उस आक्रमणके बेगको न रोकसकनेसे महाराज शिलादित्यका अपने कुटुम्बियोंके साथ रणभूमिमें माराजाना; उनके शोभायमान और नन्दनकाननकी समान सौराष्ट्र राज्यका बर्वरोंके द्वारा उजड़होना उस भयंकर समयमें सूर्यवंशके वृक्षकी प्राणप्रतिष्ठा करनेके लिये केवल रानी पुष्पवतीका जीवित रहना; धीरे २ ग्रहादित्यका उत्पन्न होना,—फिर “ग्रहिलोट” (गिल्लोट) नामकी उत्पत्ति ईडरमें राज्यकी प्राप्ति, भीलोंके अत्याचारसे ईडरका त्याग, वीरकेसरी बाप्पारावलका प्रादुर्भाव; चित्तौरका अधिकार; उदयपुरकी प्रतिष्ठा; शिशोदियाकुलका गौरवोच्छ्वास, अंतमें हीन दीन मलीन और शोचनीय अवस्थासे उस गौरवका अंतहोना, बाप्पाकी विजय बैजयन्तीका मुसलमानोंके सामने नीचेको झुकना, घटनाकी विचित्रतासे यह सम्पूर्ण चरित्र हमारे नेत्रोंके सामने प्रकाशित होरहेहैं। हमने उस चरित्रके वर्णन करनेमें अपनी सामर्थ्यके अनुसार कुछ भी त्रुटि नहीं की, परन्तु आज मेवाडमें एक नवीन युगका प्रारंभ होचलाहै, श्वेतद्वीपको त्यागकर सात समुद्रोंके पार हो कितने ही अंग्रेज लोग आज इस दीन हीन मलीन अवस्थावाले शिशोदीय राजाओंका उद्धार करनेके लिये इस भारतभूमिमें आयेहैं, उनके आनेसे इस समस्त भारतने किस प्रकारकी एक नवीन मूर्ति धारण कीहै, भारतवासियोंके जीवनका ओत किसरीतिसे एक नवीन ओरको वह चलाहै, अब इस समय आगे उसीका विचार कियाजायगा ।

महाराणा कर्णके चरित्र सम्पूर्णतासे वीरोंके योग्यथे, सहनशीलता, वीर्यवत्ता इत्यादि जो समस्त सुन्दर गुण राजपूतोंके चरित्रोंमें एक भूषण स्वरूप समझे जातेहैं; राणा कर्णमें वह सभी गुण विद्यमानथे; इसके अतिरिक्त उनका साहस और कर्तव्य ज्ञान अत्यन्त ही तेज था, वीतेहुए युद्धके समयमें जब मेवाड राजके खजानेमें द्रव्यका नाम भी न रहा तब महाराणा कर्णने जिस उपायका अवलम्बन करके उसको पुनर्वार धनसे भरकर पहलेकी समान ज्योंका त्यों करादि-

याथा, उससे उनके ऊपर कहेहुए दोनों गुणोंका विशेष परिचय पाया जाताहै; बराबर युद्ध होनेसे मेवाड राज्यका खजाना एकवार ही खाली हो- गयाथा; राज्यके बीचमेंसे धनके इकट्ठा करनेका जब कोई उपाय न रहा, तब महाराणा कर्णके हृदयमें एक नवीन कल्पना उत्पन्न हुई। उसी कल्प- नाकी सहायतासे वह धनके प्राप्त करनेका उत्तम उपाय सोचकर कृतकार्य हुए, किसीसे कुछ न कहकर कितने ही घुडसवार सेनाको अपने साथमें ले शत्रुओंकी सेनाको लांघ सूरतमें जा-पहुँचे, और अपनी वीरताकी सहायतासे शत्रुओंकी सेनाको मयभीत तथा त्रासित करके उनके धनको लूटकर फिर लौट आये, उस इकट्ठे किये हुए धनकी विपुल सहायतासे महाराणा कर्णने अपने देशकी हीन अवस्थाको दूर कर दियाथा।

यह तो हम पहले ही कहआयेहैं, कि महाराणा कर्ण एक साहसी और वीर्यवान् राजा थे, परन्तु दुःखका विषय है कि उचित अवसर न मिलनेके कारण वह इन अपने दोनों ऊँचे राजगुणोंका परिचय नहीं देसकेथे, बहुतसे लोग यहां यह प्रश्न कर सकतेहैं कि, जब इनका तीक्ष्ण गौरव और स्वाधीनताका वास- स्थान पवित्र मेवाडराज जब यवनोंसे घृणित होकर अपवित्र “जागीर” नामसे पुकारागया, तब उससमय महाराणा कर्णने किस लिये मौन होकर इसबातको सहन कियाथा, और वह अपनी तलवारकी सहायतासे उन शत्रुओंसे लगाये हुए इन्द्र भयंकर कलंकका बदला लेनेके लिये आगेको क्यों न बढे? इस प्रश्नके उत्तरमें हम केवल इतना ही कहसकते हैं कि, यद्यपि बादशाहने मेवाडभूमिको “जागीर” नामसे पुकारा तो था, परन्तु महाराणाजीसे कभी भी वह जागीरदारकी समान व्यवहार नहीं करताथा, वरन उनको अपने प्रधानमित्रकी समान मानताथा। सरलतासे मित्रका व्यवहार करके उसने अपने राज्यमें शान्ति- का बीज बोदियाथा, उस समय राणा कर्णकी कोई युक्ति भी फलवती न हुई, इस कारण उन्होंने शान्तिमें उपद्रव करनेकी कोई इच्छा न की होगी; यदि इच्छा करनेसे उनकी अभिलाषा पूर्ण होजाती; तो वह उसको करसकतेथे; यदि ऐसा करते तो शिशोदियाकुलका गौरव व अस्तित्व एकवार ही लोप होजाता, इसलिये देशकाल और पात्रका विचार करके व्यवहार करना सभीको कर्तव्यहै, और जो कोई इस नियमका उलंघन करताहै; वह इस संसारमें कुछ भी प्रतिष्ठाको नहीं पासकता; इन नीतिपूर्ण वाक्योंकी महिमा राणाजीको विदित थी; इस कारणसे वह उसीके अनुसार कार्य करके कर्तव्यको सिद्ध करनेके लिये उसमें ही एकाग्र

चित्तसे अपने मनको लगातेथे । अपने प्रयोजनको जानकर महाराणा कर्णने उदयपुरके चारों ओर दीवार बनाई, और परकोटेके चारों ओर खाइयें खुदवादीं; फिर पेशोला सरोवरके जलको रोकनेके लिये जो बन्ध बंधाथा, उसको इस समय और भी अधिक लम्बा करदिया, आजतक शिशोदियाकुलकी रानियें जिस अन्तःपुरकी वाटिकामें स्वतन्त्रभावसे निवास करतीहैं; उसको भी राणा कर्णने ही बनवायाथा ।

गिहौट वंशवाले राजालोग डेढहजारवर्षतक सम्पूर्ण भारतभूमिके राजाओंके महाराजाधिराज हो ऊंचे गौरवका अधिकार करते आयेहैं; यद्यपि आज महाराणा कर्ण उस ऊंचे गौरवसे नीचे गिरेहैं, तथापि उस ऊंचे आसनसे रहित नहीं हुएहैं, बादशाहने इस समय राणाको अपने सिंहासनके दाहिनी ओर विराजमानकर उनके सन्मानकी रक्षा की थी । यद्यपि बादशाहने उनकी स्वाधीनताको हरण करलियाथा, परन्तु उनके साथमें सामन्तराजाकी समान व्यवहार नहीं करता था, पीछे मेवाडके अधिकारी लोग किसी प्रकारका अपमान समझें, यह विचार कर बादशाहने अमरसिंहके साथ संधिकरनेका विचार करलिया था; उसमें नियम था कि शिशोदिया वंशके राजकुमारगण जितने दिनोंतक मेवाड़राजके सिंहासनपर अभिषेकित न होंगे, उतने दिनोंतक उनको बादशाहकी सभामें उपस्थित होना पड़ेगा; परन्तु जिस दिन उनको “ राणा ” कहकर पुकारा जायगा उसी दिनसे वह इस हाजरीसे छुटकारा पावेंगे; हर्षका विषय है कि उसका यह नियम यथारितीसे पालन होता गया; कारण कि महाराणा कर्ण जबतक अपने पिताके सिंहासनपर अभिषेकित न हुए थे, तभीतक उनको बादशाहकी सभामें उपस्थित होना पड़ता था; परन्तु जिस दिन और जिस मुहूर्तमें वह राणा कहे जाकर जगतमें विख्यात हुए, उसी दिन और उसी मुहूर्तसे उनको बादशाहकी सभामें जानेसे छुटकारा मिला, फिर राणार्जाके युवराज, वहीं कर्णके स्थान पर अभिषेकित हुए, इस रीतिसे शिशोदिया वंशवाले राजालोग अपने पूर्व पुरुषोंके ऊंचे गौरवसे नीचेको खसक कर भी ऊंचे आसनसे अलग नहीं हटे, बादशाहकी सभामें भारतवर्षके सम्पूर्ण हिन्दूराजाओंके शिरमौर स्थानमें शिशोदियावंशके राजा उसही रीतिसे आदर सन्मानके साथ शिशोदिया वंशके सर्दारोंका आदर सन्मान बढ़ानेलेगे, और वह भी अपनी बराबरवाले राजपूत सरदारोंके ऊपर सन्मान और मर्यादाको पानेलेगे, थोड़े दिनोंके बीचमें ही शिशो-

दियावंशके सरदारलोग मुगलोंके आधीन होकर सामन्तोंके बीचमें विशेष प्रतिष्ठाको पाने लगे; इन समस्त शिशोदियासरदारोंके बीचमें महाराणा कर्णके छोटे भाई भीम विशेष प्रसिद्ध हुए; बादशाहकी सहायताके लिये महाराणाको जो सेना देनी पड़ती थी, भीम उसीके प्रधान नायक थे; वह स्वभावसे बड़े साहसी और तेजस्वी थे, मुलतान खुर्रमने उनको बन्धुभावसे अत्यन्त ही अच्छा माना था, और उनकी बिना मलाह लिये कोई कार्य नहीं करता था; भीमकी निष्कपट बन्धुताको देखकर खुर्रम दिन २ प्रसन्न होने लगा, तथा पदवी बढ़ानेके लिये अपने पितामें जाकर निवेदन किया, अपने प्यारे पुत्रकी अभीलाषाको बादशाहने पूर्ण किया। भीमको "राजा" की उपाधि देकर वृनासनदीके किनारेका एक छोटासा जनपद भी उनके अर्पण कर दिया था; तोड़ा उसीकी राजधानी है, उस जनपदको वृत्तिमें पाकर भी भीमकी अभीलाषा शांत नहीं हुई, वह अपने अमरत्वको प्राप्त करनेके लिये उपाय सोचने लगे, और उस वृनासनदीके किनारे एक नवीन नगरीकी प्रतिष्ठा की, वही नगरी अब राजमहल नामसे प्रसिद्ध हुई, वह राजमहल बहुत दिनोंतक भीमके वंशवालोंके हाथमें रहा था, अब वह राजमहल विध्वंस होगया है; परन्तु इस समय भी उस विध्वंस-हुए राजमहलके खंडहरोंके भीतरसे उस नगरीका प्राचीन गौरव चिह्न बनकर दिखाई देता है, इससे तो निश्चय ही जाना जाता है कि यह नगरी एक समयमें विशेष समृद्धिवाली और शोभायमान थी; परन्तु इस समय दुर्जय कालके कठोर क्रमहारसे वह राजमहल आज चूर्ण २ होकर धूरिमें मिल गया है; प्रकृति देवी उन विध्वंस हुए ढेरोंके भीतरसे मृदु स्वरसे कह रही है कि "मनुष्य कितने दिनोंके लिये हैं, यह शोभा और सुन्दरता कितने दिनोंकी है ? यह गौरव, दर्प, गरिमा, अहंकार कितने दिनोंके लिये हैं; दिनोंके पीछे दिन, महीनेके पीछे महीना, वर्षके ऊपर वर्ष अखंडित गतिसे बहते हुए अनन्त कालके समुद्रमें लीन होते जाते हैं, माग्यका चक्र सुख दुःखके नियमानुसार ही बराबर घूमता रहता है; एक दिन जिस राजपूतको अपना बंधु जानकर बादशाहका बड़ा बेटा अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ था, और जिस मित्रके अमृतकी समान संभाषणसे उसने एक परम सुखको माना था, आज उसीके अभागे वंशवाले लोग अपने दुर्भाग्यके नीचेसे नीचे दरजे पर जाकर दीनकी समान एक रुपया रोजकी साधारण तनखाह पर नौकर होकर शाहपुरराजकी परिचर्या करते हैं।

महाराणा कर्ण स्वभावसे ही तेजस्वी और निडर थे; तुच्छ राज्य तथा राजाकी उपाधिके लिये उन्होंने अपने गौरव और पुरुषत्वको नहीं बेचदिया था, बादशाह जहांगीरने राणाको अपने अधिकारमें करनेका जो यत्न कियाथा, वह सिद्ध न हुआ, सैकड़ों अनुग्रह दिखाकर भी वह तेजस्वी भीमसिंहको अपने वशमें न करसका, विशेष करके भीमके ऊपर सुलतान खुर्रमका अधिक स्नेह देखकर बादशाह अपने मनमें भांति २ के संदेह करनेलगा, पीछेसे राज्यमें किसी प्रकारका उपद्रव न होजाय इस कारण महा बलवान भीमको खुर्रमके पाससे अलग करनेका विचार कर उसको गुजरातका शासनकर्ता नियुक्तकिया, परन्तु भीमने इस पद-वीकी कुछ परवाह न करके सुलतानके साथमें रहनेका दृढ संकल्प किया, बादशाहने जो संदेह कियाथा, वह वास्तवमें ठीकही था, कारण कि खुर्रम अपने बड़े भाई परवेज़के विरुद्ध पिताके सिंहासनको अपने अधिकारमें करनेकी चेष्टा करनेलगा; परन्तु उसकी यह अभिलाषा फलीभूत होनेके पहिले ही राज्यके बीचमें एक महाभयंकर उपद्रव उत्पन्न हुआ, उस प्रज्वलितहुई अग्निकी शिखाके सामने यह अभागा परवेज़ पतंगकी समान भस्म होगया ।

तेजस्वी भीमने जो बादशाहकी आज्ञाको विना शंकाके न माना था, इसका एक गूढ़ कारण था । वह परवेज़से अंतःकरणसे घृणा करता था, परवेज़ शिशो-दिया वंशका परम शत्रु था और राजपूतोंका सत्यानाश करनेमें सर्वदा ही तैयार रहता था, उसने बीतेहुए युद्धमें मेवाडपर चढ़ाई करके उस देशका घोर अनिष्ट कियाथा, खुर्रमके जीवितरहते परवेज़का गद्दीपर बैठना भीमसे कभी नहीं देखा-जासकता, इस कारण जिस प्रकार परवेज़के हाथमें भारतवर्षका शासनभार न जाय; भीम उसी कार्यके करनेको तैयारहुए; तथा सुलतान खुर्रमके साथमें इसी विषयकी सलाह करनेलगे, परामर्शमें निश्चय हुआ कि जो खुर्रमको बादशाह होनेकी इच्छाहै, तो विना विलम्ब कियेहुए प्रकाशित शत्रुता करके परवेज़का संहारकरना योग्यहै; सुलतान खुर्रमपर और विलम्ब न कियागया उसने अपने कितने एक अनुच-रोंको साथ ले परवेज़पर हमला किया; उसके आक्रमणसे अभागा परवेज़ मारागया, तब सुलतान खुर्रमने दूसरा उपाय न देखकर पिताके विरुद्ध प्रगट विद्रोह किया, उसकी संकल्पसिद्धिकी सहायताके लिये बहुतसे राजपूत तैयारथे, उन सहायकोंके बीचमें मारवाडके राजा गजसिंह अधिक प्रसिद्धहैं, राठौरके राजा गजसिंह

खुर्रमके पितामह (नाना) थे, यदि कहाजाय तो वही इस कार्यके करनेवालोंमें प्रधान थे; परन्तु पीछे बादशाह किसी प्रकारका संदेह न करै, इस कारण वह अपनी चतुरतासे अगल ही रहकर काम चलातेथे ।

उस विद्रोहकी अग्निको बुझानेके लिये स्वयं बादशाह शत्रुओंके दवानेको आगे बढ़ा, राठौरोंके राजा गजसिंहके विद्रोहियोंके दलमें गुप्तभावसे मिलनेका संदेह बादशाहको पहिले ही हुआथा । उस संदेहके सत्य वा मिथ्या होनेका यद्यपि उसका किसी प्रकारका पक्का प्रमाण नहीं मिला तो भी उसने गजसिंहपर किसी प्रकारका भार न देकर जयपुरके राजाको ही सेनापति बनाया; इससे गजसिंहने अपनी झंडीको झुकाकर एकान्तभावसे रहनेकी प्रतिज्ञा की, परन्तु भीमसिंहसे इसबातको नहीं देखागया । गजसिंह खुर्रमके नाना हैं और वही इस विद्रोहकी अग्निको उत्तेजित करनेमें प्रधान कारण थे, इस लिये वह अपनी चतुराईसे अलग रहतेहैं, यह बात भीमके हृदयमें सहन न हुई; भीमने पहिले तो उनसे कुछ न कहा और कुछ समयतक प्रतीक्षा की, जब दोनों दल आमने सामने आकर युद्धभूमिमें युद्ध करनेके लिये खड़ेहुए, गजसिंह तब भी नहीं आये; तब भीमसिंहने उनसे कहलाभेजा कि “आपका इस रीतिसे चुपचाप एक ओर खड़ेरहना ठीक नहीं है; या तो इस समय आपको प्रकाशित भावसे हमारे साथ मिलना होगा, अथवा हमसे शत्रुकी समान आचरण करना होगा” तेजस्वी भीमकी यह युक्ति सुनकर गजसिंहके हृदयमें वज्राघात लगा; और अपनी सेनाको लेकर प्रगटभावसे भीमके साथ शत्रुता करनेके लिये तलवारको ग्रहण किया, शिशोदीयवीर भीम इससे किंचितमात्र भी भयभीत न हुए, वरन पहिलेसे दुगुने उत्साहके साथ युद्ध करनेलगे; परन्तु उनकी सेना तित्तर वित्तर होगई, और वह इस युद्धमें ही मारेगये * उस समय सुलतान खुर्रम कुछ उपाय न देखकर अपने सेनापति महावतखाँके साथ उदयपुरको भाग गया ।

* शक्तावत सरदार मानसिंह और उसका भ्राता गोकुलदास यह दोनों भीमको सलाहदेनेवाले थे, उन्होंने महावतखाँके साथ मिलकर जहांगीरके विरुद्ध चक्रान्त कियाथा; खैरार जनपदका सनवारनगर मान-सिंहके हाथमें था, महावीर मान-सिंहने अमरसिंहसे युद्धके समय राणाके लिये जो असीम वीरता प्रकाशकी थी; इसी कारण उस समयसे शिशोदीयकुलका महायोधा कहकर पुकाराजाने लगा उसके समस्त शरीरमें अस्सी घाव लगेथे; मुसलमानोंके साथ युद्धमें एक २ समय उसका एक एक अंग प्रत्यंग नष्ट होगयाथा परन्तु तो भी वह युद्धसे नहीं हटताथा; मान भीमका परम मित्र था । इन दोनोंहीके बीचमें परस्पर अकृत्रिम प्रेम होगयाथा, एक जना दूसरेके दुःखको कभी नहीं सहन

उदयपुरके शान्तिरूपी वृक्षकी छायाके नीचे सुलतानने कुछदिनोंतक विश्राम किया, राणाने उसके लिये अपने महलका एक हिस्सा दे दिया था, उसी स्वतन्त्र भवनके अंशमें सुलतान खुर्रम अपने इष्ट मित्रोंके साथ रहकर समयको विताने लगा परन्तु अपने अनुचरोंको राजपूतोंके संस्कारकी ओर उपेक्षा करता हुआ देख सुलतान अत्यन्त ही लज्जित हुआ, और उस राजमहलको छोड़ दूसरे स्थानमें रहनेकी अभिलाषा की, खुर्रमके इस उदारता युक्त भावको देखकर राणा परम प्रसन्न हुए, और शीघ्र हृदगर्भस्थ द्वीपके मध्यभागमें उसके रहनेको एक सुन्दर महल बनवा दिया, वह महल नानाप्रकारकी शोभायमान सामग्रीसे सजाया गया, उसके ऊपर इसलामधर्मकी सूचना देनेवाली अर्द्धचन्द्राकार झंडियें उड़तीहुई सहस्र गुणी शोभाको बढ़ाने लगी, इससे वह स्थान और भी रमणीक हुआ, इस मनोहर महलके बनानेके समय उसके आंगनमें मदारशाह फकीरका स्मरण करनेके लिये एक चौतरा बनवाया गया पेशोला नदीके उज्ज्वल जलसे धोयेहुए उस महलमें जाकर अपने अनुचर और सरदारोंको साथ ले सुलतान खुर्रमने बहुतदिनोंतक वहां निवास किया फिर नानाप्रकारकी चिन्ता और शंकाओंसे दुःखी हो भारतवर्षको त्याग ईरानको चला गया * । यद्यपि विधाताकी कठिन विधिके अनुसार मुगलोंके चरणोंमें मेवाडकी स्वाधीनता विक तो गई; परन्तु उस विजित जातिके ऊपर जीतनेवाला जैसा व्यवहार

—करसकताथा, भीमके मरजानेपर मान—सिंहसे यह वृत्तान्त गुप्त रक्खा गया; मान—सिंह इस विषयमें कुछ भी नहीं जानसकेथे, कारण कि उस समय वह आघातोंके लगनेसे शय्यापर पड़ेथे, उनका सम्पूर्ण शरीर घाव लगनेके कारण पट्टियोंसे बंधाहुआ था, अत्यन्त रुधिरके निकलनेसे इस समय शरीर अत्यन्तही दुर्बल होगया, ऐसा कहाजाताहै कि वह भीमके साथ ही भोजन करतेथे; इसके उपरान्त भीमके मरजानेपर जब रसोइयेने भोजन बनाय उनके सामने रक्खा तब भीमको न देखकर मान—सिंहके हृदयमें भांतिरके संदेह हुए, उन्होंने रसोइये ब्राह्मणसे पूछा, परन्तु उसने सत्य बातको इनसे न कहा; उसको इधर उधर करता हुआ देखकर मानका संदेह दृढ़होगया; वह अपने दांतोंको पीसकर प्रचंड बलके साथ शरीरमें बँधीहुई पट्टियोंको खोलकर फैकने लगे तथा उसी मुहूर्तमें अपने प्राणोंको त्यागकर दिया । मान—सिंहके छोटे भ्राता गोकुलदास भी एक प्रसिद्ध वीर हुए, भट्टकवियोंने राणा कर्णके शान्तिमय राजका वर्णन करनेके समय कहाहै कि कर्णके यशकी माला धीरे-से खरहीथी; परन्तु गोकुलने अपने रुधिरकी धारासे उसकी जड़को सींचकर पुनर्बार जीवित कर दियाथा ।

* कोई २ इतिहास लेखक कहतेहैं कि वह गोलकुंडेको गयाथा ।

करता है; जाहाँगीर वा उनके पुत्र खुर्रमने कभी भी मेवाडके राणासे उस प्रकार-का व्यवहार नहीं किया; सुलतान खुर्रम कर्णको अपने यथार्थ भाईके समान देखते थे, और कर्ण भी उनके साथमें अपने भाईकी ही समान व्यवहार करत थे, उनकी वह बन्धुता उनके जीवनके साथतक ही शेष न हुई, सुलतान खुर्रमके मेवाडभूमि छोड़नेसे राणा कर्ण अत्यन्त ही दुःखित हुए, उन्होंने आशा कीथी कि उस द्वीपभवनमें खुर्रमको बादशाह कहकर सबसे पहिले पुकारेंगे; और सबसे पहिले उसको बादशाहके आसन पर सुशोभित करेंगे, परन्तु उनकी वह आशा पूर्ण न हुई ? आशाको फलवती न होता हुआ देखकर कर्ण अत्यन्त ही दुःखित हुए, उन्होंने जो सुलतान खुर्रमको अपना यथार्थ बन्धु माना था; उसका प्रमाण आजतक भी पाया जाता है; खुर्रमने जो उनके अगणित उपकार किये थे, उनका बदला देनेके लिये राणा सब प्रकारसे समर्थ हुएथे; परन्तु उनका वह बदला पृथ्वीकी साधारण वस्तुसे पूर्ण नहीं था; उसको स्वर्गीय कहाजाय तो भी ठीक हो-सकता है, वह स्वर्गीय हृदयकी पवित्र वस्तुका कृतज्ञता रत्न था, उस कृतज्ञता और पवित्र मित्रताकी निशानी बादशाहकी पगड़ी * थी महाराणा कर्णने बादशाह शाहजहांके स्नेहसे प्रसन्न होकर कृतज्ञतासे भरे हुए हृदयसे जिस समय उस पगड़ीको ग्रहण कियाथा उस समय उनका जो भाव था, आजतक भी वह भाव

* “पगड़ीका बदलना राजपूतोंमें धर्मभाईका सम्बन्ध जताता है यह पगड़ी इसीभावसे आजतक रक्खीहुई है और मदारशाहकी समाधिके भीतर आजतक दीपक वाला जाता है, टाडसाहबने स्वयं अपने नेत्रोंसे यह बंधुताकी दिखानेवाली पगड़ी और मदारशाहकी समाधिको देखा था, उन्होंने कहा है कि हितकारी परम मित्रोंकी मित्रताके समय ही पवित्र कृतज्ञताका चिह्न रखनेके लिये राजपूतोंने अपने महलके भीतर उस मुसलमानकी समाधि बनवाई थी, जब बादशाहके खानदानवालोंने शिशो-दियावंशको पीड़ित किया, तब भी राजपूत उनकी उस पवित्रता और कृतज्ञताको नहीं भूले, ऐसी पवित्र मित्रता और कृतज्ञताका ऐसा परिचय और कहीं नहीं पाया जाता, इस जातिके बीचमें ऐसी मित्रताका व्यवहार कैसे हुआ, क्यों अब ऐसा नहीं होता, हमारा हृदय तो अज्ञानताके अंधकारसे ऐसे ढका हुआ है कि जिससे हमलोग ऐसे पवित्र भावको प्राप्त करनेमें सबप्रकारसे असमर्थ हैं” भारत-बंधु टाडसाहबके हृदयमें ऐसे भावका उत्पन्न होना कुछ विचित्र नहीं था, वह भारतवर्षके माहात्म्य और गौरवको भलीभाँतिसे समझ गये थे इसीकारणसे हीन अवस्थावाली भारतसन्तानके लिये एक-बार उनका हृदय रोया था; एकवार उन्होंने जिस जातिको श्रेष्ठ कहकर पुकारा था आज उन्हींकी जातिके लोग जो कि शानका अहंकार करते हैं तथा अभिमानसे फूले रहते हैं भारतवासियोंको तथा राजपूतोंको असम्य और निरुद्ध कहकर उनके साथ घृणा करते हैं।

उसी प्रकारसे बना है; जिस महलके चिकने और सुथरे आंगनमें बैठकर उन्होंने उस प्रसादरूपी उपहारको ग्रहण किया था; उसी महलके अब अनेक स्थान टूट फूट गये हैं, परन्तु तो भी वह मदारशाहकी समाधिका मंदिर आजतक साफ रहता है, उस मंदिरकी शोभाको बढ़ाने वाला दीपक आजतक एक सुहूर्तके लिये तेलके न होनेसे भी नहीं बुझता है; आज इस मेवाडकी हीन मलीन अवस्थामें भी शिशोदियावंशके राजालोग उस दीपकमें तेल डालनेको नहीं भूलते हैं * महाराणा कर्ण संवत् १६४८ (सन् १६२८ ई०) में अपने प्यारे पुत्र जगतसिंहके हाथमें राज्यका समस्त भार सौंपकर इस लोकसे विदा ले सूर्यलोकमें जाकर अपने पूर्वपुरुषोंके साथ मिले; उन्होंने आठवर्षतक राज किया था, यह आठवर्ष गंभीर शान्तिसे व्यतीत हुएथे; उनके मरनेसे थोड़े दिनोंके पीछे बादशाह जहाँगीर परलोकको चला गया, उससमय सुलतान खुर्रम सूरतमें था; महाराणा जगत सिंहके पिता और चचाने जो अपने प्राणप्यारे सुहृद् खुर्रमको जिस राजसिंहासनपर स्थापित करनेके लिये प्राणतक देनेकी प्रतिज्ञा की थी, आज वही सिंहासन सूना पड़ा है, सिंहासनके साथ ही खुर्रमके भाग्यका आकाश साफ और निर्मल होगया था; इस मंगलमय शुभसमाचारको अपने पितृबंधुसे बिना कहे जगतसिंह न रहसके, उन्होंने क्षणमात्र भी विलम्ब न करके कितनी एक सेनाके साथ अपने भाईको सूरतमें भेज दिया, सुलतान खुर्रम उससे सम्पूर्ण वृत्तान्त जानकर तत्काल उदयपुरमें आकर राणासे मिले; * उसदिन उदयपुरके स्थान भांति २ के शोभायमान अलंकारोंसे शोभित थे, उसकी पवित्र शोभाको देखनेके लिये राजवाड़ेके अनेक राजालोग आये थे; उस शोभायमान उदयपुरमें “बादलमहल” के भीतर दिल्लीके सामन्त और आये हुये करद राजाओंने सबसे पहले सुलतान खुर्रमको “शाहजहाँ” नामसे पुकारा, उसी दिन उस शिशोदिया वंशके राजाओंकी बहुत दिनोंकी आशा पूर्ण होगई, ऐसे मंगलमय अवसरपर उदयपुरके घर २ में नृत्य गीत और भांति २ के उत्सव होनेलगे; और किसी मुसलमान राजाके अभिषेकित होनेके समयमें हिन्दुओंने कभी ऐसा आनन्द और उत्सव नहीं किया था, परमधर्मात्मा शाहजहाँ थोड़ेदिनोंतक मित्रके यहां रहकर फिर उदयपुरसे

* तवारीख फारिश्ताका भूगोलवृत्तान्त साफ २ नहीं है, इसकारण इसग्रन्थमें उसको वर्णन नहीं किया, परन्तु उसके सम्बन्धमें भट्टोंकी टिप्पणियोंके प्रमाण ठीक हैं; भट्टोंने वर्णन किया है महावत, अबदुल्लाखाँजहाँन, और उसका कार्याध्यक्ष शादुल्लाखाँ राजछत्र इत्यादिको उदयपुरमें लाया था ।

चलागया; अपने नगरको जानेके पहिले जगतसिंहको पाँच स्थान उद्धार करके देदिया, और एक बडेमोलकी पद्मरागकी मणि उपहारमें देकर उनको आज्ञा दी कि चित्तौरके महलोंको पुनर्वार बनवाओ ।

राणा जगतसिंहने छब्बीस वर्षतक राज्य कियाथा, यह छब्बीसवर्ष विमल शान्तिसे बीतेथे, इस दीर्घकालके राज्यमें एक मुहूर्तको भी शान्तिभंग नहीं हुई अथवा किसी प्रकारका विघ्न भी नहीं हुआ था, परन्तु भट्टकविजनोंके किसी काव्यग्रन्थमें जगतसिंहके राज्यका विस्तारित वर्णन नहीं पाया जाता । इसका कारण और कुछ नहीं केवल यही है कि मेवाडके भट्टगणोंको वीररस ही प्यारा था; वह हृदयको स्तम्भन करनेवाले वीररसका ही वर्णन करना अच्छा समझते थे; जिससे हृदय उत्साहित, उन्मादित अथवा स्तम्भित हो, वही उनके काव्यकी प्रधान सामग्री थी, वह लोग जिस प्रकारसे वीररससे पूर्ण थे, उसीप्रकारकी अद्भुत चतुराई और अपनी लेखनीकी चातुर्यतासे उसको वर्णन करसक्ते थे; जगतसिंहके शान्ति पूर्णराज्यके समयमें शान्तिमय ऊँचे शिल्पशास्त्रकी भलीप्रकारसे आलोचना हुई थी; और २ ऊँचे अंगके शिलाकी अपेक्षा उनके राजमें थवाईगीरीकी विशेष उन्नति हुई, उदयपुरमें जो ऊँचे २ महल और अटारिये उनके नामसे बनीहुई देखीजाती हैं; वह समस्त स्थान आजतक भी उसी भावसे बने हुएहैं उन सबकी शोभा सुन्दरता तथा मनको हरण करनेवाली बनानेकी चतुराईको देखकर हृदय आनन्दके मारे एकवार ही प्रफुल्लित हो उठता है, उस समय मनही मनमें स्वयं यह प्रश्न उत्पन्न होता था कि जिसका हम पहले वर्णन करआयेहैं; अर्थात् पहले वर्णन कियेहुए उन कठोर उत्पात और अनिष्ट तथा विपत्तिके पडनेपर भी मेवाडके राजाओंने किस प्रकारसे बहुतसे खर्चवाले उन कार्योंको किया था । इस प्रश्नकी भीमांसा हमलोग पहिले ही अनेकस्थानोंमें कर आये हैं, इस कारण अब इसके विषयमें अधिक कहनेका प्रयोजन नहीं है, केवल इतना ही कहना ठीक होगा कि प्रजाकी हितैषिनी राजनीतिके न्यायानुसार चलनेसे सैकड़ों विघ्न विपत्तियोंको दूर करके राज्य सुखके यथार्थ ऊँचे स्थानपर पहुँच सकता है ।

महाराणा जगतसिंहने जिन कई एक स्थानोंकी प्रतिष्ठा की थी, उनमेंसे जगनिवास और जगमंदिर यह दोनों बडे प्रसिद्ध हुए, पेशोला सरोवरके द्वीप हृदयमें जगमंदिर और उसके ऊँचे किनारेपर जगनिवास प्रतिष्ठित हैं, यह दोनों ही स्थान सुन्दर और नेत्रोंको तृप्त करनेवाले अलंकारोंसे शोभायमान हैं, इनके समस्त अंग संगमरमरके बनेहुए हैं, स्तम्भ; व स्नान करनेका स्थान; जलके रख-

नेका स्थान, जलयंत्र इत्यादि सभी वस्तुएँ नेत्रोंको मोहित करनेवाली बनीहुई हैं, उन दोनों ही स्थानोंके दरवाजे और खिडकियोंके किवाड़ोंमें भाँति २ के शीशे लगे हुए शोभायमान हैं, जिससमय सूर्य भगवान्की उज्ज्वल किरणोंकी माला उन किवाड़ोंके ऊपर पड़ती है तब उन कमरोंकी दीवारों पर अगणित इन्द्रधनुषोंका बोध होता था, उस समय जो शोभा उन स्थानोंकी होती है उसका वर्णन करना बहुत कठिन है, उस अनुपम भवनकी सुन्दरताका वर्णन करते हुए हमारी लेखनी भी रुकती है, उस स्थानकी दीवारें ऐतिहासिक चित्रोंसे शोभायमान हैं, यद्यपि समयके हेरफेरसे अब वहाँका कोई २ स्थान काला होगयाहै और कहीं २-का रंग फीका होगयाहै; परन्तु तो भी उन संपूर्ण चित्रोंके देखनेसे ऐसा बोध होता है कि मानों यह जीवित खड़े हुए अभी कुछ कहते हैं, महाराणा कनकसेनके समयसे लेकर मेवाड़के भूतपूर्व राजाके विवाहोत्सवतक जो संपूर्ण घटना हुई थीं उन सभीका चित्र इन दोनों स्थानोंमें तथा उदयपुरके प्रधान २ महलोंकी दीवारोंपर खिंचाहुआ देखाजाता है, इन दोनों स्थानोंके चारों ओर नानाभाँतिके फूल तथा फलवाल वृक्ष लगे हुए हैं; उन संपूर्ण वृक्षोंके साथ मिल जानेसे एक प्रमोद काननके बीच २में बहुतसे कुंज बने हैं, कहीं दश बारह नारियलके पेड़ और ताड़के पेड़ आकाशको छूनेकी इच्छासे परस्पर एक दूसरेकी ईर्ष्या करते हुए ऊपरको माथा उठाये खड़े हैं, कहीं आम, इमली, जामुन इत्यादिके बड़े २ वृक्ष अपनी सघन छायाको फैलातेहुए एक दूसरेसे अपनी शाखाओंको मिलातेहुए गंभीरभावसे खड़े हैं; कहीं स्थान २ पर बहुतसे केले और गुवाक (सुपारी) के वृक्षोंने इकट्ठे होकर मनोहर और छोटी २ कुंजोंको बनाया है, उन छोटी २ कुंजोंके भीतर दर्शकोंके बैठनेके लिये काठके आसन बिछेहुए हैं, पेशोला नदीके किनारे सरदार और सामन्तलोगोंके लिये बहुतसे शोभायमान घाट बनाये गये हैं, वह सभी घाट संगमरमरके बने हैं, घाटके ऊपरभागमें चांदनी बिछी रहती है, सामने ही साफ शोभायमान सीढियें बनीहुई हैं; उन सब सीढियोंके पार्श्वमें अलिन्द बनाहुआ है, सारांश यह है कि उसके घाटोंको एक २ कुंजवाटिका कहाजाय तो भी ठीक होसकताहै, ग्रीष्मकालकी दुपहरियोंके समयमें सूर्यकी तीक्ष्ण धूपसे व्याकुल होकर सरदारलोग उनके भीतर शान्तिपानेकी इच्छासे जाते और अफीम तथा फूलोंके आसवको पीपीकर शीतल पत्थरोंकी चट्टानोंपर शयन करके भट्टलोगोंके सुखसे राजपूतोंकी वीरताके गुणोंको सुना करते हैं, दुपहरियाके तीक्ष्ण पवनके चलनेसे सरोवरकी तरंगोंसे उठे हुए

शीतल जलके कण, पवनमें मिलकर शीतका अनुभव करातेहैं, वह मारुत उस सरोवरमें खिलेहुए कमलोंके परागको उड़ाकर सरदारोंके ऊपर मंद २ गतिसे पंखा करता है, उस शीतल मंद सुगंधवाली पवनके लगनेसे और उस मधुर वाणीसे भट्टलोगोंके गानको सुनते२ सब सरदारलोग सुखको देनेवाली निद्राके गोदीमें शयनकर सुख पातेहैं; फिर जबतक सूर्यभगवान् अस्ताचलको नहीं जाते तबतक सरदारोंकी नींद नहीं टूटती; जब फूलोंके आसव तथा अफीमका नशा धीरे२ दूर होजाताहै, तब उसी समय धीरे२ अपने नेत्रोंको खोल देतेहैं, नींद टूटते ही अपने नेत्रोंके सामने जिस मनोहर चित्रको देखते हैं, इससे वह यथार्थ ही स्वर्गकी समान सुखको अनुभव करते हैं, निद्राकी कोमल गोदीसे उठकर उस हृदयको मोहित करनेवाले चित्रको देखते ही उनको वह स्वप्नकी समान जान पड़ताहै, वह जिस ओरको नेत्र उठारकर देखते हैं, उसही ओर उनको संसारकी अनुपम सुन्दरता दिखाई देती है, अस्ताचलको जातेहुए सूर्यभगवानकी किरणोंकी माला पेशोला नदीके उज्ज्वल जलपर और उसके किनारेके वृक्षोंके ऊपर तथा सामनेके आरावली पर्वत मालाके शिखर पर अथवा उसके कोनमें बसीहुई ब्रह्मपुरीकी चोटीपर गिरकर अनेकप्रकारके रंगोंसे विहार करती है, तब उस सम्पूर्ण चित्रका नकशा पेशोला नदीके निर्मल जलरूपी दर्पणमें खिंचकर उस नीले जलमें हीरोंसे जड़ेहुए सहस्रों रेशमीन वस्त्रोंकी शोभाको विस्तार करताहै; नींदसे जागे हुए सरदारलोग इस अनुपम सुन्दरताको एकटक नेत्रोंसे देखते रहते हैं; वह शोभा जबतक उनके नेत्रोंको दिखाई देताहै तबतक वह उस पेशोलाके निर्मल किनारेको नहीं छोड़ते इससे उनका हृदय बढता है उनकी चिन्तारूपी सहेली गिह्लौटके वीरोंकी वीरताको सूचित करती हुई भांति२ के रंगोंके चित्र उनके बड़ेहुए हृदयके ऊपर खिंच देती हैं, फिर जब धीरे२ सूर्यभगवान् अस्त होतेहुए संसारकी उस सुन्दरताको हरण करके अन्तर्धान हो जाते हैं, तब वह संध्यावंदनादि कृत्योंको समाप्तकर अपने २ घरोंको चले जाते हैं, और अस्त्रोंकी झनकार, और मतवाले वीरोंके हृदयको उत्तेजित करनेवाले सिंहनादके बदले शान्तिके उस मनोहर शब्दको सुनते २ शिशोदिया वंशावतंस राणाजी तथा सरदार लोग यह दोनों ही निश्चिन्त होकर विश्राम करके सुखको भोगते हैं ।

महाराणा जगतसिंह एक अति सन्मानित राजाथे, मुसलमानोंके निर्दयीपनसे मेवाडके हृदयमें एक बड़ा भयंकर घाव होगया था, और मुगलोंकी कठोरतासे मेवाडके

रहनेवालोंके हृदयमें जिस कष्टका उदय हुआथा, आज राणा जगतसिंहने अपने उत्तम स्वभाव और सुन्दर प्रजापालनके गुणकी सहायतासे उस घावको दूर कर दिया; तथा उस कष्टदायक स्मरणको भलीभांति राजपूतोंके हृदयसे दूर कर दिया था । उनके सरलस्वभाव और माहात्म्य, उदारतायुक्त व्यवहार और मनोहर मधुर संभाषणसे शत्रुओंके हृदय भी पिघल जाते थे। बहुत कहनेसे क्या है जो कोई उनके साथ एकवार भी बातचीत करलेताथा वह उनको जीवनतक नहीं भूलसकता था, उनकी उस सरलता, उदारता, और महानताको मुसलमानोंके इतिहास लिखनेवालोंने भी अपने इतिहासोंमें वर्णन कियाहै, अधिक क्या कहें स्वयं बादशाहने अपने जीवनचरित्रमें, और दूतवर सर टैम्स री महोदयने भी उनके गुण और गौरवकी बहुत ही प्रशंसा की है । गिह्लोटवंशकी गौरव भूमि चित्तौरपुरी जो एक समय शोचनीय अवस्थासे मलीन होकर इमजानकी समान पड़ीहुई दिखाई देती थी, आज महाराणा जगतसिंहने अपने प्रजापालनके सुन्दर गुणसे उसका भलीप्रकार पुनरुद्धार किया । इन कार्योंके अतिरिक्त राणाजीने मालवुर्ज * सिंहद्वार क्षेत्र कोट इत्यादि अनेक टूटेफूटे स्थानोंका संस्कार कराकर उनको ठीक करदियाथा।

महाराणा जगतसिंहने मेवाडके राजाकी कन्यासे विवाह कियाथा, उसके गर्भसे इनके दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेंसे बड़े पुत्र राजसिंह ही मेवाडके राजसिंहासनपर बैठे, घटनाकी विचित्रतासे मेवाडकी अवस्था एक साथ दूर होगई; मेवाडराज्यके भीतर जो गंभीर शांति विराजमान थी, आज महाराणा राजसिंहके राज्यासनपर बैठते ही वह शान्ति कहाँको विलायगई; देखते २ घोर अशांति भयंकर मूर्तको धारणकर मेवाडके चारों ओर घूमतीहुई फिरने लगी, जाति विरोध तथा हिन्दूमुसलमानोंके लड़ाई झगड़ेने पुनर्बार प्रज्वलित होकर मेवाड भूमिको पवित्र मेवाडभूमिको ही क्या, —वरन समस्त राजस्थानको भयंकर उपद्रवोंसे पूर्ण किया। यद्यपि यह सम्पूर्ण विपत्तियें परस्परकी विरोधताके सैकड़ों कारणोंसे उत्पन्न हुईथीं; परन्तु अधिक विचारकरनेसे देखा जाताहै कि मेवाडके राणा राजसिंह ही इन उपद्रवोंके प्रधान कारण थे, कारण कि उन भयंकर उपद्रवोंके उत्पन्न होनेमें उन्होंने बहुत सहायता कीथी; धर्मपरायण शाहजहां इससमय बुढापेपर पहुँच गया था, इससमय मुगलराज्यका उत्तराधिकार पानेके लिये बादशाहके पुत्रोंमें झगड़ा होने लगा । पिताके जीवित रहते ही सब पुत्र अनेक प्रकारकी कुबुद्धि करके सिंहा-

* चित्तौरके तीसरीवार विध्वंस होनेके समय अकबर बादशाहने इस मालवुर्जको वास्तदसे उड़ा दियाथा ।

सनको अपने अधिकारमें करनेका यत्न करने लगे। आपसके इन झगड़ोंसे राज्यके बीचमें जो भयंकर अग्नि उत्पन्न हुई थी उससे समस्त भारतभूमि तप गई और बहुतसे अभाग्य पतंगकी समान उसमें भस्म होगये थे, अपना स्वार्थ सिद्ध करनेकी अभिलाषासे बादशाहके चारोंपुत्र राजस्थानके सम्पूर्ण राजाओंसे सहायता माँगने लगे; उस उपद्रवके समय बादशाहके चारोंपुत्रोंने एकसाथ ही महाराणा राजसिंहसे सहायता मांगी परन्तु उन्होंने केवल दाराका पक्ष लिया, दारा सबसे बड़ा पुत्र था, परंपराकी रीतिके अनुसार वही पिताके राज्यसिंहासनपर बैठनेके योग्य था, उस योग्यताका समर्थन तथा मंडन करनेके लिये राजसिंहकी सम्मतिको मान राजस्थानके समस्त राजा दाराके झंडेके निकट आयकर खड़े हुए, परन्तु इनलोगोंने कुअवसरमें औरंगजेबके विरुद्ध खड्ग ग्रहण किया था; उनकी यह अभिलाषा सफल न हुई, फतेहाबादकी रणभूमिमें केवल एक औरंगजेबकी ही भुजाओंके बलसे दाराके संपूर्ण उद्योग व्यर्थ होगये, उस समय दारा, भुजा और सुराद इन सभीके मस्तकपर कठोर वज्र गिराथा ।

फतेहाबादके युद्धमें विजयलक्ष्मी औरंगजेबकी ही प्राप्त हुई; उसके भाग्यका मार्ग उत्तम रीतिसे साफ होगया था, जो लोग उस मार्गके बीचमें कंटककी समानथे, औरंगजेबने तलवार हाथमें लेकर उन्हींको दूर करनेकी प्रतिज्ञा कीथी, उसकी वह प्रतिज्ञा शीघ्रही पूर्ण हुई कारण कि अपने पिता भ्राता वंधु बांधव और पुत्रतकके हृदयका रुधिर निकालनेमें औरंगजेबने भी कसर न कीथी भयंकर दुराकांक्षा और राज्यके लालचसे उसने जो धिनौने और पैशाचिक कार्य कियेथे, उनका ध्यान करते हुए भी हृदय कांपता है उस भयंकरी कुब्रुद्धिसे उत्तेजित होकर उसने यदि एक सुहृत्के लिये भी अपने क्षण भंगुर जीवनका विचार किया होता अथवा तैमूरके वीरवंशकी होनहार अवस्थाका एकवार भी विचार वह करता तो अवश्य समझ सकता था कि मैंने अपने हाथसे ही अपने मंगलमय वंशवृक्षकी जड़में कुल्हाड़ी भारी है ।

तैमूरवंशावतंस वावरने राज्यकी रक्षा करनेवाली जो नीति चलाई थी, अहंकारी औरंगजेब यदि उसीके अनुसार चलता और अपने वंशवालोंको भी उसीके अनुसार चलाता, तो मुगलबादशाहतकी शीघ्रही ऐसी दुर्दशा क्यों होजाती ? यदि ऐसा होता तो सत्यसन्ध प्रजावत्सल शाहजहां बादशाहका शोभायमान "मयूरासन" (तरलताऊस) आजतक दिल्लीके शीशमहलमें विराजमान होता; परन्तु दुराचारी औरंगजेबने पापके मोहमें पड़कर अपने आपसे ही अपने पांवमें कुल्हाड़ी

मारी, उस एकही पापीके बुरे आचरणोंसे समस्त मुगलोंका नाश होगया, उन लोगोंकी अंतिम अवस्था विगडगई; मुगलकुलतिलक अकबरने अपने पितामहकी चलाई हुई रीतिके अनुसार ही काम कियाथा, इसी कारण वह असंख्य विघ्नोके बीचमें भी अपने राज्यको अटल रखनेमें समर्थ हुआ, एक समय प्राच्य और प्रतीच्य मंडलके राजाओंमें वह अकबर ही ऊंचे आसनपर स्थापित हुआथा, उसने अपने पुत्र जहांगीरको इस नीतिका फल भलीभांतिसे समझा दियाथा, चतुर जहांगीरने भी भलीभांतिसे उसही नीतिके अनुसार कार्य किया, उसही नीतिके फलसे उसने शाहजहांकी समान पुत्ररत्नको पाया, शाहजहां भी योग्य पिताका पुत्र हुआ, पितासे उसने जिस नीतिको सीखा था उसको कार्य करनेके समय नहीं भूलता था, उसी कार्यके द्वारा उसने हिंदू राजाओंसे यथार्थ मित्रता करके बड़े २ दुर्घट कार्योंको कियाथा । इस उत्तम पवित्र नीतिकी जड़में जो एक महान् नीतिका बल छिपाहुआ था, वह सरलतासे जाना जा सकता है, परन्तु दुःखका विषयहै कि भारतवर्षके इतिहास लिखनेवालोंने उस नीतिबलके विषयमें आजतक कुछ विचार नहीं किया अतएव जाना जाताहै कि वह लोग इस नीतिका भेदतक नहीं जानते थे, परास्त हुए हिन्दू राजाओंके साथ विवाह सम्बन्ध करके विजयी मुगल बादशाहोंने उस महान् नीतिके बलको दृढ़ किया था, फिर उसीकी सहायतासे असंख्य आपत्तियोंके प्रतिकूल मुगलकुलकी विजयपताकाको खड़ा रखनेमें समर्थ हुए थे । चतुर जहांगीर और न्यायपरायण शाहजहाँके समयमें सम्पूर्ण भारतवर्षके मध्य जो विमल शान्ति विराजमान थी, उससे हिन्दू राजागणोंने यथार्थ और श्रेष्ठ रीतिसे धीरे-२ अपने २ राज्यको ऊंचा और पुष्ट कर दिया था; दूसरे विदेशीय राजाओंके प्रजापालनके समय हिन्दूजाति कभी ऐसी उन्नतिपर नहीं पहुंची, जहांगीर और शाहजहां हिन्दुओंके साथ अन्तःकरणसे स्नेह करते थे और उनके मंगलके लिये सर्वदा तइयार रहते थे इसका कारण बाबरकी चलाई हुई उसही नीतिका फल था, जहांगीर और शाहजहाँ यह दोनों ही मारवांड राजकी पुत्रीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे, इसी कारण सर्वदा हिंदुओंके कार्य सिद्धकरनेमें यत्नवान रहतेथे, उनके उस यत्नको देखकर ही राजपूतलोग सरलतासे अपने प्राणोंको भी उनके लिये देडालते थे, परन्तु जिसदिन उस नीतिका नाश हुआ; जिस दिनसे वह भयंकर जातिवैरताकी वेल फिरसे हरी हुई उसही दिनसे वह गूढ़ संबन्ध जो कि हिन्दू और मुसलमानोंमें अचल था सो जातारहा, फिर तो परस्पर एक दूसरेका नाश करना अच्छा

नमझने लगे, इस बातका कठोर उदाहरण हिंदुओंका वैरी औरंगजेब था, यह तातारी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआथा; उसका शरीर तातारके रुधिरसे पुष्ट था, वह राजपूतोंमेंसे किसीका भी पक्ष नहीं करता था; इसकारण राजपूतलोग भी उसकी कुछ सहायता नहीं करते थे, उसने तो अपने भाई और कुटुंबियोंके रुधिरको पान कियाथा, अपने धर्मात्मा पिताको राज्यसिंहासनसे उतारकर स्वयं राज्यपर बैठनेका उद्योग करता था, इसकारण किसी राजपूतने भी उसकी सहायता नहीं की। सहायता करनी तो दूरही वरन उसके उद्योगको व्यर्थ करनेकी अभिलाषासे तत्पूज्य राजवाड़े भी उसके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये रणक्षेत्रमें आये थे, इसका क्या कारण था? इसका कारण और कुछ भी नहीं था केवल उस यथार्थ नीतिका अभाव था, औरंगजेब स्वयं ही उस महानताके अभावको भली प्रकारसे समझ गया था, वह अभाव ही उसके राज्यमें अग्निस्वरूप होकर उठाथा, औरंगजेब भी इस बातको नमझना था इसही कारणसे अंतमें उस नीतिका अनुसरण किया था, उसके उस अनुसरणका फल—शाहआलम, अजीम और कामबक्श हुए थे, परन्तु उसके कठोर अत्याचार और हिन्दू द्वेषने उसका नाश करदिया था, उसी पापवृत्तिके वश होकर उसने इस नीतिके ग्रहण करनेको भी निष्फल कर दिया।

पिताके राज्यको अपने अधिकारमें करनेकी इच्छासे चारों भाइयोंने जो सम्पूर्ण भारतभूमिमें महा अग्नि जलाई थी, उसका विचार करना मेवाडके इतिहासका काम नहीं है, इसही कारणसे यहांपर उसका वर्णन नहीं किया गया, उक्त वृत्तान्तको इतिहासके समस्त जाननेवाले जानते ही होंगे। औरंगजेबकी कुदृष्टिसे देखे जानेके कारण अभागे दाराकी महानता, मुरादकी तेजस्विता और शुजाकी कर्मचतुरता भस्म होगई थी; भारतके इतिहासको जाननेवाला प्रत्येक मनुष्य इसबातको जानताहै, इस कारण उस वृत्तान्तको यहांपर लिखना आवश्यक नहीं है। हम उस विषयको छोड़कर यथार्थ विषयका निर्णय करनेके लिये आगे बढ़ते हैं।

बादशाह औरंगजेबके समयमें हिन्दुस्थानमें बहुतसे प्रसिद्ध राजा एकसाथही हुएथे; इस बातको भारतके इतिहासमें एक नवीन चित्र कहा जासकताहै, समस्त भारतवर्षके इतिहासमें किसी अध्यायके बीच ऐसा चित्र और कहीं नहीं देखाजाता, आठ भागोंमें विभक्त इस बड़े राजस्थानके प्रत्येक राज्यमें एक २ साहसी और पराक्रमी राजपूत विराजमानथा। वह समस्त भूपालगण तेजस्वी, वीर्यवान् और मंत्रणामें कुशल थे। अम्बेरके राजा जयसिंह, मारवाडके जसवंतसिंह और उनके

आधीनमें बूंदी कोटेके राजा हाडा वीकानेरके राठौर, उच्छा व दतियाके राजा लोग, यह सभी अत्यन्त बलवान थे; यदि अहंकारी औरंगजेब मोहसे अंधा होकर उनके प्राचीन संस्कारोंको अपने पैरसे न टुकराता, और अपने हिताहितका विचार करके उसीके अनुसार कार्य करता तो मुगलोंकी सामर्थ्य निश्चय ही अटल रहती; तथा मुगलोंके वंशकी इतनी शीघ्र ऐसी दुर्दशा न होती, परन्तु उसका नाश तो केवल अहंकारने ही करदिया, बलका अहंकार कर मोहमें पडके उसने अपने हाथसे अपने पांवमें कुहाडी मारी, अपने सौभाग्यके मार्गमें अपने हाथसे ही कांटे वोए, जिन राजपूतोंके अनुरागको और नहायता पानेकी आशासे उसके पूर्व पुरुष सर्वदा तैयार रहतेथे; जिनको संतुष्ट करना वे अपना मुख्य कार्य समझतेथे, आज मोहसे अंधाहुआ औरंगजेब उन्हीं राजपूतोंके सुन्दर गुणोंको भूलकर पाखंडीकी समान दुःखित करनेलगा, अंतमें इस धिनौने व्यवहारसे ही उसका नाश हुआ, इसी कारण सम्पूर्ण हिन्दू उसको विपैले नेत्रोंसे देखते थे, और उसका नाश करनेके लिये तैयार होगये; हिन्दुओंके वैरी कठोर हृदय औरंगजेबके हाथसे अभागी भारतसन्तानोंके उद्धार करनेके लिये वीरोंमें श्रेष्ठ शिवाजी महाराज प्रचंड सूर्यकी समान उत्पन्न हुए, और अपनी मंत्रणकी अपूर्व सहायतासे थोड़ेही दिनोंके बीचमें उस वीरवरने मुगल बादशाहके कठोर आचरणोंका यथार्थ प्रायश्चित्त करायाथा ।

जो मुसलमान बादशाह एक समय भारतवर्षमें भाग्यका चक्र चलागयेथे उनमेंसे कोई भी कपटता, यथार्थ परायणता, वीर्यवत्ता वा विद्या व अभिमानमें* और-

* यूरोपके विद्वान एशियाके राजाओंको असभ्य, मूर्ख और ज्ञान हीन कहकर उनसे घृणा करते थे परन्तु महात्मा टाडसाहबने उनके भ्रमान्ध नेत्रोंको ज्ञानकी सलाईसे खोल दियाथा, कि प्राच्यमल्लिकके राजा यूरोपके राजाओंकी अपेक्षा कितने विज्ञानी और बहुदर्शी थे, बादशाह औरंगजेब यद्यपि कठोर हृदय था परन्तु तो भी एक महापंडित था; इसकी रत्यता इसके बड़े भारी लम्बे चौड़े पत्रके पढनेसे भलीप्रकार जानी जायगी, औरंगजेबके बादशाह होनेपर उसके बालकपनकी शिक्षा देनेवाले मुल्ला सालहने बादशाहके पास बड़ा पद पानेकी आशासे जो युक्तिपूर्ण और खुशामदका भराहुआ एक पत्र भेजाथा तथा स्वयं भी आये उस पत्रको पढकर औरंगजेबने अपने उस्तादको क्रोधित होकर जो उत्तर दिया, प्रयोजन समझकर आदिसे अंततक उसका अनुवाद कियाजाताहै; वर्नियरने भारतमें घूमते हुए आकर यह पत्र तथा और भी अनेक मूल्यवान पत्रोंको इकट्ठे कियाथा, जो बातें उस पत्रमें लिखी हुईथीं; उनके होनेसे तीनसौ वर्ष पीछे (अर्थात् सन् १६८४ ई०) में उसका अंग्रेजी अनुवाद हुआ ।—

—मुहम्मदजी ! मेरे पाससे आप किस बातकी आशा करतेहैं; क्या आप न्यायके अनुत्तर इच्छा करसकते हैं, कि मैं आपको अपनी सभाके बीचमें एक श्रेष्ठ आसनपर स्थापितकरूं ? कर्तव्यके अनुसार मुझको कहना पड़ताहै कि यदि आप मुझे उचित शिक्षा देते, तब मैं आपके उस कार्यका अनुग्रहीत रहता; कारण कि मेरे मनमें ऐसा विश्वास था कि जितना ऋणी मनुष्य पिताकाहै उतना ही ऋणी यदि उपयुक्त शिक्षा मिले तो गुरुके निकट होसकताहै, परन्तु उस प्रकारकी शिक्षा तो आपने मुझको नहीं दी; भूगोलकी शिक्षा देनेके समय आपने मुझसे कहाथा कि जिसको फरंगिस्तान कहतेहैं, वह अत्यन्त ही सामान्यहै, परन्तु मैं नहीं समझसका कि वह कैसा साधारण है। जिस महाद्वीपके एकांशमें तो पुर्तगालका राजा श्रेष्ठहै, तन्त्रज्ञान् हालैंड और तिसके पीछे इंगलैंडके राजाको नीचेके आसनपर स्थित कहकर वर्णन कियाहै; फिर फ्रांस और अन्डुलशिया आदि देशोंको आपने साधारण राज्य बतायाहै, आपकी दी हुई शिक्षासे नहीं ज्ञातहुआ कि उक्त राजाओंसे हिन्दोस्थानके कुल बादशाह अच्छेहुए। तथा इनमें हुमायूँ, अकबर, जहांगीर, और शाहजहां तो यथार्थ ही सौभाग्यवान, महानुभाव, विश्वविजयी, और पृथ्वीका पालन करनेवाले थे। तथा फारस, उजबक कासगर, तातार, कात, पेगू, चीन और महा-चीनका बादशाह भी हिन्दुस्तानी बादशाहोंका नाम सुनकर थरथर कांपतेहैं। वाह !” क्या भूगोलहै ? इसकी अपेक्षा यदि मुझे इस प्रकारकी शिक्षा देते कि जिससे मैं सम्पूर्ण भिन्न २ देशोंको भलीप्रकारसे जानसकता, जिससे सम्पूर्ण देशोंके राजाओंकी युद्धनीति, आचार, व्यवहार, धर्मनीति, प्रजा-पालन और अर्थनीतिको सीखसकता, फिर सारगर्भ इतिहासोंको पढ़कर उन सबका उत्थान, उन्नति, और पतन, किस प्रकार घटनाकी विचित्रतासे राज्योंमें अदलबदल तथा गडबड होजातीहै, यदि आप यह शिक्षा मुझे देते तो मैं उचित शिक्षा पाता, अच्छा ! इन सब बातोंको तो दूर रहनेदो; हमारे जो पूजनीय पिता और पितामह इस राज्यके अधीश्वर थे कि जिन्होंने मुगलराज्य स्थापन किया था, उन्होंने कौनसे उपायसे इतने बड़े भारी राज्यमें जय प्राप्त कीथी; दुःखका विषय है कि आपने इस विषयमें मुझे कुछ भी शिक्षा नहीं दी और अधिक तो क्या कहूँ, आपने तो उनके नामतक भी मुझे न बताये; आपकी इच्छा तो मुझे केवल अरबी भाषामें लिखना पढ़ना सिखानेकी थी, जिस भाषाके सीखनेमें दश बारह वर्षका प्रयोजन था; उसी भाषाके सिखानेमें आपने इतना अधिक समय लगाकर जो उपकार मेरे साथ किया था, निस्सन्देह मैं उसके लिये आपका अनुग्रहीत हूँ, जो लोग राजाके प्रतिवेशी हैं, जिनके साथ दिनरात निवास करना होताहै जिसके बिना एक मुहूर्त्तको भी काम नहीं चरसकता, उस भाषाकी शिक्षाकी आवश्यकता अधिकहै, या उस भाषाकी विशेष आवश्यकता है कि जिसके साथ हमारा कुछ भी संबंध नहीं है, आपका तो यह विचार था कि व्याकरण और व्यवहार शास्त्रको जानकर ही राजकुमार अपनेको ज्ञानवान समझें।

जिसका समय इतना मूल्यवान है, जिसके ऊपर इतना बड़ा भारी कार्य सौंपा हुआहै, उसको क्या ऐसे उपयुक्त ज्ञानका प्रयोजन नहीं है ? —आपही कहिये, परन्तु आपकी शिक्षाके विषयको विचार करके मैं अचम्भेमें होगयाहूँ।” “महोदय ! क्या आप नहीं जानते कि मनुष्यकी बुद्धि बालकपनमें कितनी तीक्ष्ण होतीहै; इसी कारण उस सुकुमार अवस्थामें उत्तम शिक्षा देनेसे और उस मेधाशक्तिके भलीप्रकार परिचालित होनेसे फिर उसका हृदय ऊंचे भावको धारण करताहै, और उत्तम २ अनुष्ठानोंको करसकताहै, आपने अरबी भाषामें जो व्यवहारनीति, उपासनाप—

गजेवकी बराबर नहीं था, यह सम्पूर्ण गुण दोष उसके कठोर हृदयमें एकसाथ विराजमान थे, जो विद्या, और वीरता परोपकार तथा सताए हुए का उद्धार करनेके

—इति और विज्ञान शास्त्रकी शिक्षा दीथी; उसकी समान क्या ? हमारी मातृभाषामें वैसी शिक्षा नहीं हो सकती, मेरे वालिद शाहजहानें आपसे कहा था कि आप मुझे विज्ञानशास्त्र पढावेंगे; ठीक है ! और मुझे भी भलीभांतिसे स्मरण होता है कि आपने बहुत वर्षोंतक कितने एक शून्यगर्भ विषयके प्रश्न दिये थे; जो कि बिना जड़बुनियादके थे, उन सबको विचारनेसे मनको तिलमात्र भी तृप्ति नहीं होती, वह शून्य और अलीकमात्र थे, विचारकर देखा जाय तो वह मनुष्यके किसी कामके नहीं थे; वास्तवमें वह सम्पूर्ण प्रश्न कुछ भी नहीं थे, वह समझमें तो सहजसे नहीं आते परन्तु भूले बड़ी सरलतासे जाते हैं; जिन सम्पूर्ण प्रश्नोंकी समालोचना करते २ अतिबुद्धिमान मनुष्यकी बुद्धि भी नष्ट होजाती है, और उस समय मनमें जिन बुरे संस्कारोंका उदय होता है, वह अत्यन्त ही कष्टके देनेवाले होते हैं, और मुझे यह भी स्मरण होता है कि आपने इस विज्ञान शास्त्रकी समालोचना भी कुछ समयतक सिखाई थी (सो कितनेदिनोंतक इसको मैं नहीं कह सकता) उसमेंसे जो कुछ मुझे याद रहा वह असंर, दुर्बोध और जटिल शब्दमात्र हैं । उन वाक्योंसे श्रेष्ठ पंडितगण विरक्त और पीड़ित हुआ करते हैं; और जो आपकी समान ज्ञानवान मनुष्य हैं; जिनके मनही मनमें यह धारणा है कि हमी सम्पूर्ण शास्त्रोंके जाननेवाले हैं, मैं निश्चय ही कहता हूं, वह सम्पूर्ण प्रश्न केवल उनकी धूर्तता और मूर्खताको ढकनेके ही लिये उत्पन्न हुए हैं । परन्तु जिस विज्ञान शास्त्रकी सहायतासे मन स्वयं उसको करना सीखता है, जिससे केवल सारगर्भ युक्तिके अतिरिक्त और कुछ भी संतोष प्राप्त नहीं होता, अथवा जिस ज्ञानके प्रभावसे मनुष्यका हृदय भाग्यके आक्रमणसे दूर भागना सीखता है, अथवा जिसके बलसे मनुष्य विपत्तिमें व्याकुल और सम्पत्तिमें आनंदित नहीं होता, और चिरकालतक स्थिर होकर अचल अटल रहता है; आप यदि मुझे वह विज्ञान शास्त्र सिखाते तब मैं “कौन हूं?—कहांसे आया हूं ? और कहां जाऊंगा इस ब्रह्मांडके पिंडका मूल तत्त्व क्या है ? यह कितना बड़ा है, और यह कितने अंशोंमें विभक्त है, और वह सम्पूर्ण अंश किस प्रकारकी शक्तिसे चलाये जाते हैं । ” “यदि आप मुझे इस विज्ञान और इन गूढतत्त्वोंका उपदेश करते तो सिकन्दर अरस्तूका जितना ऋणी था मैं भी उससे अधिक आपका ऋणी होता और एक उत्तम पुरस्कार आपको देता, इस नीच और वृणित तथा इस चाटुकार्यकी अपेक्षा क्या आपको मुझे राजनीति और यथार्थ कर्मकी शिक्षा देनी उचित नहीं थी; प्रजाके ऊपर राजाका क्या कर्तव्य है; प्रजाका राजाके प्रति क्या कर्तव्य है, इस भांतिकी शिक्षाका देना क्या आपका कर्तव्य नहीं था ? हमारा जीवन राजमुकुटके लिये है, एक समय जिस हाथसे तलवारको ग्रहण करके अपने भाई बंधुओंके सामने युद्धभूमिमें युद्धकरनेके लिये तैयार होना पड़ेगा, क्या इसका विचार करना आपको उचित नहीं था ? हिन्दुस्तानके राजकुमारोंके भाग्यमें क्या बहुधा ऐसा नहीं लिखा होता ? अच्छा ? किस रीतिसे शत्रुओंके किलेको घेरना होता है, किस प्रकारसे रणभूमिमें सेनाके व्यूहकी रचना कीजाती है; क्या इस प्रकारकी शिक्षा देनेका आपने यत्न किया था ? कभी नहीं मैं जोरके साथ कहसकता हूं कि कभी नहीं ? इन सम्पूर्ण शिक्षाओंके लिये मैं दूसरोंका ऋणी हूं, परन्तु आपका तो बिलकुल भी नहीं; आप जिस मुकामसे आये हैं वहीँको चले जाइये; देखिये कोई जान न सके कि आप कौन हैं, और आपका क्या हुआ है । ”

लिये काम आती है, औरंगजेब अपना स्वार्थ सिद्ध करनेके लिये ही उसका व्यवहार करता था; संसारमें उसको किसीका विश्वास नहीं था; वह अपने प्यारे मित्रोंसे भी अपने अभिप्रायको नहीं कहता था; परन्तु उसकी दुराकांक्षा तो सबसे ही अधिक प्रबल होगई थी, अंतमें इसीने उसका नाश करदिया था; औरंगजेबने सैकड़ों हजारों पाप किये थे कि जिनका विचार करते ही हृदय काँप उठता है, यदि वह जानकी सहायतासे अपनी सामर्थ्यको चलाता तो निश्चय ही उस समयके राजाओंमें शिरमौर समझा जाता; परन्तु हाय ! उसकी कुबुद्धिने ही उसको पारके पंकमें डालदिया और इसी कारणसे अंतमें उसकी बुद्धि नष्ट होगई, अंतमें उसकी असीम सामर्थ्य उसका ही नाश करनेके लिये प्रबल होकर उसे पीड़ा देने लगी थी ।

अपने वन्धु बान्धव और अपने मित्रोंके हृदयको अपने हाथसे ही चीरकर औरंगजेब समझा था कि 'जिन्दगीभर वेखटके वादशाहत करूंगा; परन्तु उसकी यह आशा विफल थी, वह मनमें विचारता था कि वेखटके रहूंगा परन्तु वह मन ही उसके आधीन नहीं था, यदि वह अपने चित्तकी वृत्तिको रोकता, तो क्यों इस भयंकर कुबुद्धिके सोतेकी कीचड़में अपना पैर देता, यदि ऐसा होता तो वह मनुष्य होकर भी क्यों पशुओंकी समान कार्य करता ? उसने पिता भाई और पुत्र इत्यादिको मार इस कठोर पापके भारको अपने शिर पर रखकर निश्चिन्त रहनेकी इच्छा की थी, वह केवल उसकी विडम्बनामात्र थी; जो हो ? वह सहस्रोंवार इच्छा करके सहस्रोंवार प्रतिज्ञा करके भी निश्चिन्त नहीं रह सका, उसे परग २ पर भाँति २ की चिन्ताएँ आय २ कर भयंकर पीड़ा देने लगीं, उसके साथ २ ही हृदयकी शांति जाने कहाँको चली गई, एक तो संसारमें किसीका विश्वास ही नहीं करता था, और फिर तिसपर उसके चित्तकी वृत्ति विगड गई; तथा पहले भावको वह वृत्ति सहस्र गुणा बढ़ाने लगी, साथ ही साथ हृदयकी अशांति उसको भयंकर पीड़ा देकर दुःखित करने लगी, मुहूर्त २ में भाँति २ की चिन्तायें और संदेह उत्पन्न होने लगे; मानो सभी संसार उसका शत्रु है, मानो उसके इष्ट मित्र और मंत्री इत्यादि सभासद लोग सभी मिलकर उसके विरुद्ध कपटजाल बनारहे हैं, यह सम्पूर्ण चिन्ताएँ जितनी ही बढ़ने लगीं, उतना ही वह व्याकुल होने लगा; इस अवस्था में जीवनका व्यतीत करना केवल विडम्बनामात्र था, बुद्धिमान औरंगजेब उसको भलीभाँति समझ गया था, इस कारण हृदयकी शान्तिका उपाय खोजने

लगा, बहुत चिन्ता करनेपर अन्तमें स्थिर किया कि अपनी जातिको ही संतुष्ट रखकर निश्चिन्ततासे राज्य भोगसकूंगा तब यह सम्पूर्ण विघ्न और समस्त शंकायें दूर होजायगी ।

जिस समय जिस मुहूर्त्तमें औरङ्गजेबके मनमें इस पापदायिनी चिन्ताका उदय हुआथा, उसी समय और उसी मुहूर्त्तमें उसके भाग्यका आकाश काले २ बादलोंसे ढकगया; हीरोंसे जडाहुआ मुकुट उसके शिरपरसे पृथ्वीपर गिरपडा; परन्तु वह उस समय भी नहीं समझाथा कि मैं स्वयं ही अपना नाश करनेके लिये तैयार हुआहूँ; सारांश यह है कि वह उस समय मोहसे इतना मोहित होगयाथा; कि अपने हिताहितके विचारको एकवारही भूलगयाथा; उसकी उस कल्पनाका वर्णन करते हुए हृदय काँपताहै, लेखनी चलते २ रुक जातीहै, उस दुर्बुद्धि पापी औरङ्गजेबने अपने मनमें विचाराथा कि अपने कुटुम्बी और बन्धु बान्धवोंके संहार करनेसे जो हाथ कलंकित हुएहैं इन्हीं हाथोंको अब हिन्दुओंके रुधिरसे धोकर छुटकारा पाऊंगा, उस दुर्बुद्धिने अपने मनमें यह विचार कि ऐसा कार्य करनेसे ही चिन्ताके हाथसे मेरा छुटकारा होगा; और मेरी सजातीय, स्वधर्मी प्रजा भी सन्तुष्ट होजायगी । जिस घडी उसके हृदयमें यह विचार उत्पन्न हुआथा उसने उसी मुहूर्त्तमें अपने इष्टमित्रोंको बुलाय इस भयंकर आज्ञाका प्रचार करनेके लिये कहा । कि “ हमारे राज्यके सम्पूर्ण हिन्दुओंको मुसलमान होना पडेगा; जो लोग इस आज्ञाको नहीं मानेंगे उनको बलात्कार इस धर्मपर चलाया जायगा । ” इस महाभयंकर दुःखदाई आज्ञाका प्रचार होते ही सारे राज्यमें हाहाकारशब्दकी ध्वनि सुनाई आनेलगी; सहायता और आश्रय हीनहो अभागे हिन्दूगण भयके मारे इधर उधर भागनेलगे । आज सनातन धर्मकी रक्षाका कोई उपाय न रहा; बहुत हिन्दूलोग मुगलराज्यको छोड व्याकुल हो अतिशीघ्र दक्षिणकी ओरको चलेगये, अनेक हिन्दूसन्तान शाही अहलकारोंके अत्याचारोंसे पीडित हो वहांसे भागनेका कोई उपाय न देखकर उन्मत्तहो अपने हाथसे ही अपने हृदयको छेदन करनेलगे, जो स्त्री पुत्र और परिवार अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यारी वस्तुहै, निःसहाय हिन्दूगण पहले अपने हाथसे उनको मारकर फिर उसी कटारी तथा छूरीसे भयंकर शोकानलमें अपने जीवनकी आहुति देने लगे, सारा राज्य विना राजाकी समान होगया, चारों ओरसे हाहाकारा शब्द सुनाई आनेलगा; उन दुःखितहुए हिन्दुओंका मर्मभेदी आर्तनाद; उन निरुपाय और निःसहाय हिन्दुओंके हृदयको विदीर्ण करनेवाला शोक ही, पल २ में सुनाईदेता था।

हिन्दुओंका मान और मर्यादा जाती है, कुल धर्म और जाति गौरव पातालको चला चाहता है; आज भारतवर्षमें प्रलयका समय आ पहुँचा है, कौन इस प्रलयके समयमें इन अभाग हिन्दुओंको यमराजके हाथसे बचावैगा ? कौन इस कुड्डादिमान दानवके हाथसे सहाय हीन भारत सन्तानोंका उद्धार करेगा कोई भी नहीं ? जो नशा करनेवाला है यदि वही भक्षण करनेवाला होजाय, जिसके ऊपर प्रजाकी शान मर्यादा है, जातिधर्मका विचार स्थित है, यदि वही अपने परायेका विचार कर नजाने और विजातिके मनुष्योंको अलग २ नेत्रोंसे देखकर अपने हृदयमें पत्थर-कों बाँधे और अपनी प्रजा तथा अपने आश्रितोंको पीडित करे तो वह निःसहाय प्रजा किसके सामने जाकर खड़ी होगी ? किसके निकट जाकर सहारा लेगी ? अपना और पराया, सजाति और विजातिको न विचारकर सबको बराबर नेत्रोंसे देखना राजाका अवश्यकीय कर्त्तव्य है, और जो इन कार्योंके पालनकरनेसे वि-मुक्त है वह राजानामके योग्य नहीं, राजसिंहासन, उसके छूनेसे भी कलंकित होता है, राजसिंहासन पर बैठकर जो हिताहितका विचार नहीं करता, और गर्व, मोह, क्रोध, तथा अहंकार जिसके हृदयमें भरा हुआ है, और जो अपनी विवेकशक्तिको खोकर क्रूरधर्मकी क्रूर बुद्धिसे परिचालित होता है, " वह राजा नहीं है, वरन राजाके नामको लजानेवाला है; वह प्रजाके मुखरूपी सूर्यका हरणकरनेवाला राहु है, दंशक भाग्याकाशको धरनेवाला प्रचंड धूमकेतु है; उसके असंख्य पापोंसे उसका राज शीघ्रही पातालको चलाजाता है; विधाताके सूक्ष्मदर्शनसे उस अत्या-चारी पापीके मस्तकपर कठोर यमराजका दंड गिरता है । "

मुगल कुलपांसन पाखंडी औरंगजेबके कठोर, अत्याचारसे सम्पूर्ण राज्यमें अराजकता उत्पन्न होगई, पीडित हुए हिन्दुओंका भागना और आत्महत्या करनेसे नगर, ग्राम और सम्पूर्ण बाजार एक साथ ही सूने होगये । तथा सब स्थान श्मशानकी समान दिखाई देने लगे वनियोंके न होनेसे दुकानोंमें चोरोंने अपना निवास किया, और बेचनेवालोंके न होनेसे सब बाजार सूने दिखाई देने लगे, किसानोंके चलेजानेसे खेती बनकी समान होगई, इस भयंकर उपद्रवके समयमें बादशाहने देखा, कि राज्य अनेक प्रकारसे हीन अवस्था युक्त होगया है, खजाना खाली होगया अब राजकर्मचारी लोग कर नहीं देसकते, जिसके पास जाकर कर मांगें; जिसके पास जाय उसको ही अधमरा पावें, तस्करोंके अत्याचारसे घर सूने होगये । जब उस पापीने धन उपार्जन करनेका कोई उपाय न देखा तो भारतवर्षकी सम्पूर्ण हिन्दूप्रजाके ऊपर मुण्डकर (जि-

जिया) लगानेका विचार किया । इस भयंकर अत्याचारकी सूचना होते ही सम्पूर्ण भारत वर्षके ऊपर मानों वज्र टूटपड़ा, कौनसा उपाय करनेसे इस भयंकर विपत्तिसे छुटकारा मिलेगा, इसको कोई भी स्थिर न करसका, सब ही हताश, निरुत्साह और चैष्टा रहित होकर हाहाकार करने लगे; उस हृदयको विदीर्ण करनेवाले हाहाकार शब्दसे उस पापी बादशाहका हृदय किंचित भी भयभीत न हुआ; अभागे हिन्दुओंकी शोचनीय अवस्थाको वह अपने नेत्रोंसे देखतारहा । उसके कठोर हृदयमें किंचित भी दयाका संचार न हुआ । विख्यात अर्मके लिखेहुए वृत्तान्तको पढ़नेसे जाना जाताहै कि जिस तीक्ष्ण चिन्ता और शंकाओंके हाथसे छुटकारा पानेकी इच्छासे उसने यह पैशाचिक कार्य कियेथे, उस संकटसे तौ भी वह न छूटा, उन चिन्ता और शंकाओंसे छूटना तो दूर रहा वरन वह उनके काटनेसे और भी अधिक दुःखित हुआ; जितने दिन बीतने लगे, उतने दिनतक बराबर अधीर होतारहा, उस विपैली चिन्ताकी तीक्ष्णता जितनी बढ़ने लगी उतना ही उसका धीरज घटने लगा, धीरे २ वह चिन्ता इतनी प्रबल होगई कि वह कुछ भी स्थिर न रहसका, सोते, जागते, किसी अवस्थामें भी निश्चिन्त नहीं रहता था, घोर रात्रिके दूसरे पहरके समयमें, वह अपने आत्मीय और कुटुम्बियोंको देखताथा मानो उसके पिता भ्राता और पुत्रोंके मर्मभेदी वचन उसको सुनाई आतेथे, मानो उन सताए हुआंकी आत्मा तीक्ष्णस्वरसे कह रहीहै “हे पापी ! हमको मारकर क्या तू निश्चिन्त होकर राज्य भोग करसकता है ? देख दुराचारी ! तेरे मस्तकपर गिरनेके लिये भयंकर यमराजका दंड तैयार होरहा है ।” उसी समय औरंगजेब आश्चर्यमें होजाता, और अपनी शय्यासे उठकर गृहसे बाहर जानेकी चेष्टा करता; परन्तु जा नहीं सकता, उन्हीं पैरोंसे लौटकर फिर आकर लेटरहता, कालकी विधिके नियमानुसार जिस समय धीरे २ उसकी परमायु क्षय होनेको हुई, जिस समय भयंकर यमराजका दंड धीरे २ उसके सामने आनेलगा; उस समय उसको महा कष्ट होनेलगा; उस कष्टसे दुःखित होकर फिर वह अपनी रक्षा न करसका, आत्मरक्षा न करनेके शोकसे दुःखित और निराश हो सहसा चिल्लाउठा ? “यह क्या है ?” जिस ओरको मैं देखाताहूं उसी ओर केवल देवता दिखलाई देतेहैं । *

* औरंगजेब एक विद्वान् बादशाह था, उसका यथार्थ कारण नीचे लिखे उसके दो पत्रोंसे भली प्रकार जानपडैगा, मरनेके एक दो दिन पहले उसने जो दो पत्र अपने प्यारे पुत्रोंको लिखेथे, उनसे अपने जीवनके विभीषिकामय शोकोदीपक चित्रको अपनी चतुराईसे खिंचाया, उन पत्रोंके—

—पढ़नेसे आश्चर्य होता है अपने अनुतापकी यंत्रणासे पीड़ित हो अनित्य संसारके सम्पूर्ण मूल तत्त्वका वर्णन किया था उनके पढ़नेसे अत्यन्त पापियोंका हृदय भी कांपजाता है। हाय ! यदि अनर्थकी देनेवाली बुद्धि उसको उत्पन्न न होती तो नहीं कह सकते कि वह इस संसारमें कितनी प्रतिष्ठा पाता ।

“शाह आजिमशाहके पास;—

“हे पुत्र ! आशीर्वाद देता हूँ कि कुशलसे रहो; मेरा मन बहुत दिनोंसे तुममें लगरहा था । अब मैं वृद्ध होगया हूँ, ज्वर मुझे दिन २ दुर्बल करडालता है; शान्ति और सामर्थ्य शरीरको धीरे २ छोड़े जा रही है; मैं अकेला ही अपरिचितकी समान इस संसारमें आया; और अकेला ही अपरिचित की समान यहांसे विदा लेता हूँ मैं कौन हूँ ? और कहाँसे आया, कहाँ जाऊंगा, इसको कुछ भी नहीं जानता, सामर्थ्यकी धूमधामसे यह जो समय बीत गया है वह केवल दुःख और यंत्रणाहीको पीछे रख गया है; यह वादशाही मेरे हाथमें नहीं सौंपी गई थी; न मैंने इसकी रक्षा ही की “हाय ! मेरा ऐसा अमूल्य समय वृथा ही व्यतीत हुआ; मेरे हृदयमंदिरमें एक विवेक नामका रक्षक था; परन्तु मैं अभागा हूँ? मैं इन अंधे नेत्रोंसे उस प्रज्वलित गौरवकी प्रभाको न देख सका; जीवन कभी स्थाई नहीं है; प्राण वायुके चलेजानेपर फिर कुछ भी नहीं रहता; और भाग्यको सम्पूर्ण आशा भरोसा नष्ट होजाता है; यद्यपि मुझे ज्वरने छोड़ दिया है परन्तु इस शरीरमें मांस और हड्डियोंके सिवाय और कुछ भी न रहा, यद्यपि मेरा पुत्र कामवक्स विजयपुरकी ओरको गया है और वह इस समय है भी निकट ही; पर हे वत्स ! तुम सबसे ही अधिक निकट हो, शाह आलम बहुत दूर है; और मेरा पोता आजिम-हुसेन विधाताकी विधिके अनुसार भारतवर्षके निकट आ पहुँचा है, उसकी सेना और अनुचर सभी हमारी समान निःसहाय और शक्ति हैं, यह सभी मेरी समान पीड़ित और कव्तरकी समान चंचल हैं; वह अपने स्वामीके पाससे विछड़गये हैं, इस समय उनका कोई स्वामी हैं या नहीं यह किसीको विदित नहीं है ।

मैं इस संसारमें कुछ भी साथ लेकर नहीं आया; तथा मनुष्यकी दुर्बलताके अतिरिक्त और कुछ भी अपने साथ नहीं ले जाऊंगा; मैं अपनी मुक्तिके विषयको विचारकर कैसी पीड़ा पारहा हूँ, उसकी चिन्ता करके कितना शक्ति हो रहा हूँ, यद्यपि उस जगदीश्वरकी दया दाक्षिण्यता और करुणाके ऊपर मेरा भरोसा है, परन्तु क्या करूँ, मैं अपने कार्योंको विचारकर उन शंकाओंको कुछ भी अपने हृदयसे दूर नहीं कर सकता, परन्तु क्या होसकता है, मैं चला जाऊंगा तब पीछे मेरी स्मृति कुछ भी बाकी नहीं रहैगी, तब तो जो भाग्यमें है वही होगा; मेरी शरीररूपी नौका अनन्तकालके समुद्रमें डूबी जा रही है, इसकी रक्षा परमेश्वर ही करेगा, तो भी इस उपस्थित हुई अवस्थाको विचारकर निश्चय ही बोध होता है, कि इस समय मेरे पुत्रोंको कुछ उद्योग करना अत्यन्त ही आवश्यक है, मेरा यह अन्तिम आशीर्वाद मेरे पोते वेदरवत्स से कहना; मैं इस समय उसको देख नहीं सका; परन्तु उसके दर्शनोंकी अभिलाषासे अत्यन्त ही क्लेश पारहा हूँ; ऐसा जानाजाता है कि उसकी पुत्री बेगम बहुत दुःख पारही है, परन्तु कुछ कह नहीं सकता, ईश्वर ही मनुष्यके हृदयके भावको समझसकता है, स्त्रियोंकी बुद्धिसे उत्पन्न हुई चिन्ता केवल उनकी निराशाताको ही उत्पन्न करती है ।
रखसत ! रखसत !

“ राजकुमारकामबख्शके पास ”

मेरे हृदयके पासही रहनेवाले प्यारे पुत्र! सामर्थ्यसे ऊँचे स्थानमें चढ़कर जगतपति जगदीश्वरकी आशासे मैंने तुमको बहुतसे उपदेश दियेथे; और तुम्हारे साथ कठोर क्लेश भी मैंने भोगे परन्तु उन सब संघर्षोंको ईश्वरकी इच्छाके विरुद्ध जानकर तुमने नहीं माना; इस समय मैं एक विदेशी और अपरिचितकी समान इस संसारसे विदा लेताहूँ, और अपनी तुच्छताका विचार कर शोकसे ढक रहाहूँ; तुम कहोगे कि इससे फायदा क्या ? सम्पूर्ण मनुष्य ही अपूर्ण हैं आज उसी अपूर्णता और अपने कियेहुए पापोंके फलको लेकर मैं इस संसारसे बाहर होताहूँ; हाय! ईश्वरकी लीला कैसी विचित्र है, इस संसारमें मैं अकेला ही आयाथा, और अकेला ही विदा होताहूँ, इस बड़ी भारी यात्राका मार्ग दिखा देनेवाला मुझे छोड़कर चला गयाहूँ, बारह दिनसे जो ज्वर मुझे पीडा दे रहाथा उसने भी इस समय छोड़ दिया है, इस समय जिस ओरको नेत्र उठाकर देखताहूँ उसी ओर देवताके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई नहीं देता, मैं अपनी सेना और अपने सेवकोंकी अवस्थाको विचारकर शंकित हो रहाहूँ परन्तु हाय ! अपने विषयमें कुछ भी नहीं जानता, दुर्बलताके अधिक हो जानेसे कमर झुक गई है, पैरोंमें चलनेकी शक्ति नहीं रही, जो स्वास बढ़ गयाथा; वह भी इस समय जातारहा, हाय ! वह एक सामान्य आघातको भी न छोड़ गया; मैंने असंख्य पाप किये हैं; नहीं कह सकता कि उनका फल कैसा होगा? यद्यपि मनुष्योंका पालक जगदीश्वर छावनीकी रक्षा करेगा, परन्तु धर्मात्मा मनुष्योंको भी मेरे पुत्रोंके ऊपर यत्न करना उचित है, मैं जबतक जीवित था, तबतक मैंने एक सुहृत्तको भी यत्न नहीं किया, अब इस संसारसे चला, इस कारण पीछे उसका क्या फल होगा, उसको मैं नहीं कह सकता, इस बड़े भारी मनुष्योंके समाजको ईश्वरने मेरे पुत्रोंके हाथमें सौंपा है। आजिमशाह इस समय मेरे निकटही है, देखो सावधान रहना तुम्हारे राज्यमें कहीं कोई मुसलमान धर्मात्मा मनुष्य न मारा जाय यदि ऐसा होगा तो वह सम्पूर्ण पाप इखटे होकर मेरे ही माथे पर गिरेंगे, मैं इस समय महाप्रस्थानके मार्गमें पहुँचाहूँ, अतएव तुम्हें और तुम्हारी माता, अथवा पुत्रको ईश्वरके हाथमें सौंपकर चला; मरकर पीडा मुझे धीरे-रूपक डरही है, बहादुरशाह जहाँपर था, वह अब भी उसी स्थानपर है; उनका पुत्र हिन्दुस्थानके निकट आ पहुँचा है, बेदरवस्तु गुजरातमें है; हयातुलनिशाने पहले कभी कट नहीं देखा परन्तु आज उसे वह कष्ट भोग करना होगा; वेगमकी याद रखियो; मानो उसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है तुम्हारी गर्भधारिणी उदयपुरी (वेगम) (क) मेरी पीडाकी अंशभागिनी थी, वह इस समय मेरे साथ जानेकी इच्छा करती है, परन्तु सभी विषयोंका उपयुक्त समय नियत होता है। नौकर और पार्षद लोग चाहें कितने ही कपटी और दुराचारी क्यों न हों, परन्तु उनके साथ बुरा व्यवहार करना उचित नहीं;—चतुराईसे अपना स्वार्थ ठीक करलो; अपनी सीमाके मार्गसे बाहर पैर न फैलाना * * * मैं इस समय चला, पाप अथवा पुण्य जो कुछ भी मैंने किये हैं, वह केवल तुम्हारे ही लिये किये गये हैं, देखो इसके विपरीत विचार न करना, वेतन न पानेवाली सेनाकी प्रार्थना ज्योंकी त्यों बनी हुई है दाराशिकोह न्यायी और चतुर था उसने लोगोंको बड़े-पारितोषिक नियत किये पर ठीक समयपर वेतन न मिलनेसे लोग उससे प्रसन्न न रहतेथे। तुम्हारे ऊपर मैंने जो कुछ अन्याय कियेथे, उन सभीको अब भूल जाना, देखो पुत्र ! इसके पीछे तुम्हारे लिये मुझे और व्याख्या नहीं देनी होगी, कोई भी जीवात्माको अपने शरीरसे निकलता हुआ नहीं देख सकता, परन्तु मैं देख रहाहूँ इस समय मेरी आत्मा मेरे शरीरको छोड़े हुए जा रही है । ”—

अभिप्रेक होनेके समय राजाओंमें जो रीति की जातीहैं उनमें टीकादारे विशेष प्रसिद्ध है। बहुत दिनोंसे यह पुरानी रीति बंदसी होगईथी, इससे विदित होता- है कि राणाकुलकी एक प्रधान रीति इतने दिनोंतक छिपी पड़ीथी, आज महाराज राजसिंहनं राजसिंहासनपर बैठते ही उस छिपीहुई विधिका उद्धार करदिया, अजमेरमें बहुत घोर मालपुरनामका एक नगर है राणाजीने उस वीर-प्रथाका पालन करनेके लिये उस मालपुरपर ही आक्रमण किया; और भलीभांति वीरताका परिचय दे उस नगरको लूटकर अपने स्थानमें लौट आये, फिर थोड़ेही समयके बीचमें इस विषयका समाचार वृद्ध शाहजहाँतक पहुँचा मंत्रियोंने इस वृत्तान्तको भांति २ के रंगोंसे चित्रितकर बादशाहके क्रोधको उत्तेजित करनेकी चेष्टा की; परन्तु बादशाहने उदारबुद्धिसे मुसकुराकर कहा कि "मेरा भतीजा * वालक है इसी लिये उसने यह काम बिना जानेवूझे कियाहै।"

राजपूतकुल गौरव वीर श्रेष्ठ प्रतापसिंहके साथ ही मेवाडकी वीरता एक प्रकारसे लोप होगईथी परन्तु इस समय महाराणा राजसिंहके सिंहासनपर बैठते ही उस वीरताका फिर पूर्ण प्रकाश होगया, शिशोदियाकुलके सरदार शान्तिकी कोमल गोदीको छोड़कर तलवारको हाथमें ले आगे बढ़े। अब तो तलवारकी रगड़ तथा उन्मत्तहुए वीरोंके सिंहनादसे मेवाडभूमि वारम्बार काँपने लगी, महाराणा राजसिंह बाप्पारावलके योग्य वंशधर थे, शिशोदियाकुलके योग्य वीर थे, वह जैसे वीर थे, वैसेही तेजस्वी भी थे। भट्टग्रन्थोंमें अपने पूर्वपुरुषोंकी अलौकिक वीरताका वृत्तान्त पढ़कर वह शत्रुके हाथसे अपने देश और शिशोदियाकुलके गौरवको पुनर्वा उद्धारकरनेके लिये दृढसंकल्प हुएथे। इस समय यौवन अवस्थाके तीक्ष्ण उत्साहसे उन्मत्त होकर उस संकल्पके सिद्धकरनेका उपाय खोजनेलगे, जब प्रतिज्ञा, मंकल्प और साहससे हृदय बँध जाताहै तब फिर कार्यके सिद्ध होनेमें कुछ भी विलम्ब नहीं रहता; राजसिंहका हृदय भी वैसे ही साहस और प्रतिज्ञासे बँधाहुआ था; इसही कारण उनका चिरकालका संकल्प सिद्ध होगया, वह अत्याचारी औरंगजेबसे आंतरिक घृणा करतेथे और उसके नामपर-

—(क) अर्मेंने इसको कश्मीरकी स्त्री कहाहै, वास्तवमें वह कभी भी उदयपुरके राणाके कुलमें उत्पन्न नहीं हुईथी, हां यह असम्भव नहीं कि इस बेगमने शाहपुर अथवा बुनराके राज्यवंशमें जन्म लियाहो, जब कि उसने साथ मरनेकी इच्छा की तब तो अवश्य ही वह राजपूतकुलमें उत्पन्न हुई होगी।

* महात्मा टाडसाहब कहतेहैं कि शाहजहाँ बादशाह 'राणा' कर्णका धर्मभाई था।

सैंकड़ों धिक्कार देतेये; इस समय उसी औरंगजेबको शाही तख्तपर बैठाहुआ देख-कर उन्होंने तलवार हाथमें ले दृढ़ प्रतिज्ञा की; जिस दिन उन्होंने इस महाभयंकर प्रतिज्ञाको हृदयमें स्थापन किया, उसी दिनसे मुगलोंके साथ बहुतसे युद्ध करनेपंडे, उन सभी युद्धोंमें राणाजीकी असीम वीरता और प्रचंड वीर्यमत्तताके साथ पहला प्रताप पूर्णतासे प्रकाशमान होगयाथा; विशेष सेनाकी सहायतासे अत्यन्त बलवान हुआ औरंगजेब भी इन युद्धोंमें कईवार परास्त हुआ था, यहांतक कि कई बार उसका प्राणतक संकटमें पडगयाथा, नहीं कहसकते कि वह अपने कौनसे पुण्यकी सहायताके कारण भयंकर कारागारकी पीडासे बचा रहा; जिस सूत्रको हाथमें लेकर तेजस्वी महाराणाने भयंकर औरंगजेबके विरुद्ध सबसे पहिले अपनी प्रचंड तीक्ष्ण तलवारको निकालाया, उसका वृत्तान्त संक्षेपसे नीचे प्रकाशित कियाजाताहै ।

मारवाडके राठौरकुलमें बहुतसे नवीन भाग वनेहैं, उनमेंसे एक भागके कितने एक राजकुमार अपने प्राचीन राज्यको छोडकर रूपनगरमें आबसेथे । रूपनगर मुगलोंके राज्यमें था, इसकारण वहांपर वे राठौरलोग मुगलोंके आधीनमें साधारण सामन्तरूपसे रहनेलगे । जिस समय औरंगजेबके मस्तकपर भारतवर्षका राजमुकुट रक्खागयाथा, उसी समय रूपनगरके सामन्त राजाके घरमें प्रभावती नामवाली कन्या दिन २ शशिकलाकी भांति बढती जातीथी, थोड़े ही दिनमें परम सुन्दरी प्रभावतीके रूपलावण्यका वृत्तान्त और सुन्दरताका समाचार दुष्ट औरंगजेबने सुना, साथही साथ उसको रूप तृष्णा उत्पन्न हुई तब वह इस स्त्रीरत्नको पानेकी चेष्टा करनेलगे, पेश्वांत मनोरथ सिद्धहोनेका दूसरा उपाय न देखकर उसके साथमें अपना विवाह करनेका प्रस्ताव किया; औरंगजेबने अपने असीम गौरवसे मोहित होकर यह विचार किया कि यदि उस प्रभावतीके पास यह समाचार भेजाजायगा तो वह स्वयं ही इसबातपर राजी होजायगी, और विना विलम्ब किये मुझे अपनेको समर्पण करदेगी, परन्तु उसका यह मनारथ शीघ्रही विफल होगया, उसने अपनी पापकी तृष्णाको योग्य ही फल पालिया: उसने प्रभावतीके पिताके पास यह समाचार पहुँचानेके लिये अपने दो सहस्र सवारोंको रूपनगरकी ओर भेजा, परन्तु वह सम्पूर्ण आडंबर ब्रथा होगया ।

ठीक समयपर औरंगजेबके भेजेहुए वह दो सहस्र छुडसवार रूपनगरमें जा पहुँचे, प्रभावतीके पितासे औरंगजेबके सम्पूर्ण सन्देशा कहे, उस वृत्तान्तको

सुनते ही भयके मारे सामन्तराजके प्राण व्याकुल होगये, वह कुछ भी स्थिर न करसके कि अब क्या करें, फिर धीरे २ प्रभावतीने भी यह सम्पूर्ण समाचार सुना- और पिताके निकट आकर बोली कि इस विपत्तिसे वचनेका उपाय कीजिये, परन्तु राठौर सामन्त उस समय इतने हताश होगयेथे कि उनसे कोई उपाय न सोचागया । पिताको मौन देखकर प्रभावतीने स्वयं ही उपाय खोजनेकी प्रतिज्ञा की पहले तो अपनी उपस्थित अवस्थाको विचारकर देखा, कि मेरा कोई सहा- यक नहीं है, और न कुछ बल ही है, कारण कि पिता एक साधारण सरदार हैं तब क्या मारवाडके राजाके पास जाकर सहायताकी प्रार्थना कीजाय ? सो यह भी कैसे होसकताहै क्योंकि मारवाडके राजाको यदि बादशाहका वेतनभोगी कहाजाय तो भी ठीकही है, अतएव ऐसी अवस्थामें कौन हमारी रक्षा करैगा; कौनसा वीर तलवार हाथमें लेकर बादशाहके विरुद्ध युद्धकरनेके लिये तैयार होगा ? तो अब कोई भी उपाय नहीं है, स्लेच्छके ग्राससे राजपूतसतीकी धर्म- रक्षाका उपाय नहीं है, विष, छूरी, अग्नि, फाँसी, इन उपायोंके करनेसे फिर किसीके भी मुखकी ओर नहीं देखना होगा; प्रभावतीने विचारा कि जब कोई उपाय न मिलैगा तब इन्हींका आसरा लूंगी परन्तु उसको इन कठोर उपायोंका आश्रय करना नहीं पडा; जिस समय वह यह विचार कररहीथी कि उसी समय उसके हृदयमें एक नवीन चिन्ता उत्पन्नहुई, मानो किसी आकाशके देवताने धीरे २ उसके कानमें यह कहा कि “ निराश न होना ? तुम्हारे उद्धारके करनेवाले मेवाडके राणा राजसिंह हैं ” प्रभावतीका व्याकुल हृदय सावधान होगया; उसने उसी समय महाराणा राजसिंहजीके हाथसे अपने उद्धार होनेका निश्चय विश्वास करलिया ।

प्रभावती पहले ही महाराणा राजसिंहके गुणोंका वृत्तान्त सुनचुकीथी, इसी लिये उसके हृदयमें दृढ विश्वास होगयाथा; कि राणा राजसिंह जैसे वीरहैं वैसे ही रसिकहैं, और विशेष करके स्त्रियोंके ऊपर तो उनका अत्यन्त ही प्रेम है । राजसिंहके गुणोंका विचार करते २ प्रभावतीका हृदय उनके ऊपर धीरे २ आसक्त होनेलगा, फिर कुछ विलम्ब न करके उसने महाराणासे कहला भेजा कि यदि मुझे इस उपस्थित हुए संकटसे उद्धार करके मेरी मनोकामनाको पूर्णकरनेमें समर्थहोगे, तो मैं आपको अवश्य ही अपना पति बनाऊंगी; प्रभावतीने और किसीको विश्वासी न देखकर अपने पुरोहितहीको बुलाया और अपना समस्त वृत्तान्त सुनाय महाराणा राजसिंहके पास जानेको कहनेलगी । वालिकाके इस-

कर्तव्यकार्यको देखकर परम हितैषी पुरोहित अत्यन्त ही आनन्दित हुआ; और एक मुहूर्तको भी विलम्ब न करके मेवाडकी ओर चला, ठीक ही समयमें महाराणा राजसिंहकी सभामें पहुँचकर प्रभावतीकी लिखी हुई चिट्ठी दी, वह पत्र आदिसे अंततक सुन्दर हृदयभावसे पूर्ण था, इस कारण उसमेंका एक छोटा-भाग नीचे लिखते हैं; अपने मनके भावका आदिसे अन्ततक वर्णन कर पत्रमें सबसे पहले लिखा था कि “महाराज ! क्या राजहंसीको वगलेकी सहेली होना होगा ? अथवा पवित्र राजपूतकुलकामिनी स्लेच्छकी अंकशायिनी होगी ? महाराज ! मैं आपसे निश्चय कहती हूँ कि जो आप इस विपत्तिसे उद्धार नहीं करेंगे तो मैं अवश्य ही आत्मघात करके प्राणोंका त्याग कर दूंगी, ” इस सुन्दर पत्रके गंभीर और तीक्ष्णभावको जानते ही महाराणा राजसिंह बाणलगे शेरकी समान एक साथही तैयार होगये, उनके शरीरकी प्रत्येक नसोंमें मानो किसीने गरम लोहेकी शलाका लगादी, दारुण क्रोधकें मारे उनका शरीर कांपने लगा, एक राजपूतकुलकी कन्याके ऊपर यवनोंके ऐसे अत्याचारको जानकर कौनसा राजपूत है कि जिसका हृदय क्रोधसे उन्मत्त न होजायगा ? ऐसा कौन है जो उसका उद्धार करनेके लिये जीवनतक न देदेगा; फिर जब कि धर्मपरायण नारी अपनी रक्षाके लिये आर्तस्वरसे सहायता माँगे, तब क्या कोई वीर उसकी प्रार्थनाको बिना पूर्ण किये रहसकता है ? कभी नहीं। यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि अत्याचारी औरंगजेबके भयंकर आचरणोंका योग्य फल देनेके लिये महाराणा राजसिंहजी इतने दिनोंसे अवसर देख रहे थे, आज ऐसे सुयोग्य अवसरको स्वयंही आया हुआ देखकर अत्यन्त ही आनन्दित हुए, माथही माथ, नाहन, उत्साह, और जिघांसा सहस्रगुणी बढ़ गई, उन्होंने फिर किंचित्भी विलम्ब न करके दुराचारी मुगलोंके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये अपनी भयंकर तलवारको पकड़ा, उनके पितृपुरुषोंकी असीम गौरव राशिको यवनोंने अपने अत्याचारसे नष्ट कर दिया था “ उनकी प्राणसे भी अधिक प्यारी ” पवित्र स्वाधीनताकी लीलाकुंज मेवाडभूमि यवनोंके द्वारा “जागीर” नामसे कलंकित हुई, उसके पवित्र मस्तकपर भयंकर कलंकका भार रखवा गया है; आज धुरन्धर वीर राणा राजसिंहजी अपने हाथमें तलवार ले उस लुप्त हुई गौरव गरिमाका पुनरुद्धार करनेके लिये तैयार हुए हैं । उनके सदाँर और सेनाके सम्पूर्ण लोग राणाजीके तीक्ष्ण उत्साहको देखकर आनन्दित हुए और बाणपरावली भारी विजयपताकाको मस्तकके ऊपर लगाय रणभूमिमें राणा राजसिंहके साथ जानेको आगे २ हुए, उस समय अस्त्रोंकी

झनकारके शब्दसे और प्रचंड रणवीरोंके सिंहनाद करनेसे मेवाडभूमि फिरसे जीवित होगई; प्रभावतीके उद्धारको मुख्य कार्य समझकर महाराणा राजसिंहजी आगे बढे, और सम्पूर्ण सदाँर व सेनाको साथ लेकर एकवार ही रूपनगरकी ओरको चले, वह नगर आरावली शैलमालाकी तलैटीमें स्थापित था, महाराणा राजसिंह उस बडे विस्तारवाले स्थानको लांघकर तत्काल भयंकर विक्रमके साथ मुगलोंकी सेनाके ऊपर टूट पडे; बहुत देरतक दोनों दलोंमें घोर युद्ध होता रहा, परन्तु मुगल लोग राणाके प्रचंड विक्रमको न सहकर भलीभाँतिसे दलित और परास्त होगये, इनमेंसे कितनी एक सेना तो बडे कष्टसे अपने प्राणोंको बचाय भाग गई, इस प्रकार मुगलोंके दो सहस्र घुडसवार थोडेसे राजपूत वीरोंके हाथसे दलित और विध्वंस होगये; महाराणा राजसिंह इसके पुरस्कारमें प्रभावतीको पाकर अत्यन्त आनन्दित हुए और अपने नगरमें आये । इनकी इस विपुल वीरताका वृत्तान्त सुनकर सम्पूर्ण राजपूत, राणाजीसे प्रीति करने लगे; प्रतापसिंहका योग्य वंश-धर कहकर सहस्रों मुखसे धन्यवाद देने लगे, इस रीतिसे महावली औरंग-जेबके विरुद्ध राणा राजसिंहने यह प्रथम वीरताका कार्य किया था; मेवाडके रहनेवाले इनके इस कार्यको सफल हुआ देखकर मनही मनमें अनेक प्रकारकी आशा करने लगे, प्रभावतीके उद्धारका विस्तृत वृत्तान्त मेवाडके इतिहासनामक ग्रंथमें जो कुमार हनुमन्तसिंह तथा पूर्णसिंहजी लिखित है लिखा है, उपयोगी समझकर यहां हम उसको उतारते हैं । राजकुमारी रूपवती राजमहलोंसे अलग एकान्त स्थानमें भगवद्भक्ति और पूजापाठमें प्रवृत्त रहकर तथा गीताजीका पाठ व हरिकथा करके अपने दिवस व्यतीत किया करती थी । ईश्वरभक्तिमें इस राजकुमारीकी इतनी दृढ आस्था होगई कि विवाहका स्वप्नमें भी उसे कभी ध्यान नहीं आता था । अपने निवासस्थानमें यह पुरुषकी छायातक नहीं आने देती थी वैराग्य दशामें अपना समय बिताती थी । न किसीको वह अपने यहाँ बुलाती थी और न कहीं आप जाती थी । वैष्णव धर्मकी मर्यादाके अनुसार किसीके साथ स्पर्श भी अपना नहीं होने देती थी । यदि भूलसे जो कभी किसीका स्पर्श होजाय तो वह उसी समय स्नान करडालती थी । ऐसी पवित्र वृत्तिसे यह राजकुमारी रहा करती थी । परन्तु यह राजकुमारी अत्यन्त सुन्दरी थी इसलिये औरङ्गजेबने इसको विवाहना चाहा । जब इस बातकी चर्चा सर्वत्र फैली तो एकदिन राजमहलकी दासियोंने कुँएपर जल भरते २ राजकुमारी रूपवतीकी दासीसे

कहा कि अरी विहन ! क्या तू भी अपनी वाईके साथ दिल्ली जावेगी । यह सुन वह दासी कुछ भी उत्तर न देकर पानी भरकर अपने घर गई, और सुनी हुई सब बात रूपवतीसे कही । इसपर वह राजकुमारी बड़ी शोकातुर हुई और विचार करने लगी कि अब मुझे क्या उचित है ? पन्द्रहदिनमें बादशाह यहाँ आ खड़ा होगा, जो उस समयमें निषेध भी करूंगी तो क्या हो-सकेगा बादशाह मुझे बलात् ले जावेगा । अब क्या करूँ कहाँ जाऊँ ? अब अपनी विपत्ति किसे सुनाऊँ । हाय ! इन तुकोंसे तो मैं सदा घृणा किया करती हूँ, जिन तुकोंको अस्पर्शनीय समझती हूँ उन्हीं तुकोंके साथ उन्हीं धर्मशत्रुओंके साथ, अब मुझे स्पर्श करना पड़ेगा, हाय २ विवाह करना पड़ेगा । अरे रे !! मेरे इस जीवनको कोटि २ धिक्कार है । हाय मेरा यह दुर्भाग्य !!! जो मैं अभागिनी न होती तो क्या यह हृदयविदारी समाचार मुझे सुन पड़ता ? हे ईश्वर ! आपकी क्या इच्छा है ? हे आनथके नाथ ! इस संकटमें मेरी लाज रखनेवाले केवल आपही हो । क्या करूँ और कहाँ जाऊँ ऐसा मार्ग आपही बतलाइये । मैं इन धिक्कारपात्र तुकोंसे कदापि विवाह न करूँगी यह तो निश्चित ही है पर हे घट २ के स्वामी ! यदि आप क्षमा करें तो मैं आत्मघात करके आपकी शरणमें आऊँ । जबतक इस देहमें प्राण हैं तबतक तुर्कसे व्याह कर अपवित्र होना नहीं चाहती । इससे कुछ उपाय शीघ्र सुझाइये १५ दिनमें वरात चढ़कर आजावेगी, इस अन्तरमें जो कुछ कर्तव्य हो करना चाहिये । इसी समय राजकुमारीने अपने काकाको बुलाकर कहा । जिस भयसे मैं संतान त्याग एकान्त वास कर ईश्वर भक्तिमें अपना समय बिताती हूँ और परपुरुषका सुखतक नहीं देखती हूँ और पूजा पाठमें ही दिन बिताती हूँ वही भय मेरे लिये उपस्थित हुआ है । मैंने सुना है कि शीघ्रही म्लेच्छ बादशाह औरंगजेब मुझे व्याहनेको आनेवाला है । मैंने यह समाचार आजही सुना है । अब मुझे अपनी रक्षाका एक भी उपाय नहीं सूझ पड़ता है । मैं म्लेच्छका सुखतकदेखना नहीं चाहती हूँ अतएव अपना प्राण त्यागना तो मुझे स्वीकार है परन्तु म्लेच्छके साथ व्याह करना अंगीकार नहीं । यदि कुछ उपाय न बना तो निश्चय ही आत्मघात करूंगी । इस बातको सुनकर उसके काकाने कहा मेरी समझमें तो दो बातें आती हैं । एक तो यह कि मेरे पास जो सेना है उसके द्वारा तेरी रक्षा मरते समय तक यथा-शक्ति करूँ । परन्तु मेरी सेना बादशाही लश्करके सामने ऐसी है जैसे सागरके सामने एक बूंद—इस लिये अन्तमें हमारा नाश अवश्य होगा । परन्तु तेरे धर्मकी रक्षा करते हुए जो मैंने मृत्यु पाई तो मेरी आत्माको संतोष प्राप्त होगा पर ऐसा

करनेमें संदेह यही है कि तेरी प्रतिष्ठा पीछे कौन वचावेगा ? हमारे मरजानेपर भी आत्मघात तो तुझे करना ही होगा । दूसरा मार्ग यह है और यह बुद्धिमत्तासे भरा हुआ है कि तू अपना विवाह हिन्दुपति महाराणा उदयपुरके साथ कर । जो तू महाराणा उदयपुरमें विवाह करना स्वीकार करे और महाराणाजी वरात लेकर आवें तो हमारा मनोरथ सिद्ध हो जावे । आज समस्त भरतखंडमें ऐसा कोई वीर नहीं है जो बादशाहके साथ वैर करे । केवल उदयपुरके महाराणा राजसिंह ही शरणागतकी रक्षा करनेवाले तथा बादशाहसे निर्भयताके साथ वैर करनेवाले हैं, इसलिये जो तेरी इच्छा हो तो आज ही सांडिनी सवार-द्वारा पत्नी उदयपुर भिजवाऊं । यह सुन रूपवती बोली कि काकाजी उदयपुरके महाराणाजीके साथ विवाह करनेका निषेध मैं कैसे कर सकती हूं ? ऐसी पवित्र और निष्कलंक गद्दीका स्वामी क्या मुझे दूसरा कोई मिल सकता है ? जिन्होंने आज तक झेल्लेच्छोंसे सम्बन्ध नहीं किया यदि ऐसे राजकुलमें व्याहेजानेका मैं निषेध करूँ तो संसारमें कौन मुझसे अधिक मूर्ख होगी । मैं अपनी प्रतिष्ठा बचानेके लिये, और आत्महत्या पापसे पृथक् रहनेके लिये राणाजीके साथ व्याही जानेको प्रसन्न हूं । आप एक पत्र लिखो और एक मैं भी लिखती हूं । इस प्रकार बातचीत होनेपर दोनोंने एक २ पत्र लिखा और एक मनुष्यको वे दोनों पत्र देकर एक दिवसमें उदयपुर पहुँचनेवाली सांडिनीपर चढाकर उसे बिदा किया । दूसरे दिन वह मनुष्य पत्र लेकर उदयपुर जा पहुँचा और सीधा राणाजीके द्वारमें चला गया ।

द्वारमें राणाजी अपने जागीरदार चूड़ावत, शक्तावत, राणावत, दूदावत, झाला, परमार, हाडा, राठौर इत्यादिके साथ बैठे हुए हैं, तरह २ की बातें छिड-रही हैं । इतनेहीमें उस मनुष्यने दोनों पत्र निकालकर राणाजीके हाथमें दे दिये । राणाजी पत्रोंको पढ़कर विचार करने लगे कि क्या करना चाहिये । वह मनुष्य उत्तर पानेकी इच्छासे सामने खड़ा हुआ है, परन्तु राणाजी किसी गम्भीर विचारमें डूबे हुए हैं । इस प्रकार चिन्तामें ग्रस्त राणाजीको देखकर पास बैठे हुए चूड़ावत सरदार बोले कि महाराज क्या है ? पत्र पढ़कर चुप कैसे होगये ? राणाजीने विना कुछ कहेही वे दोनों पत्र चूड़ावतके हाथमें दे दिये । चूड़ावत बोले कि क्या मुझे इनको बाँचनेकी आज्ञा है । राणाजीने कहा इनमें कुछ गुप्त बात नहीं है सब सामन्त सदाँर सुनें ऐसे बाँचिये । चूड़ावतने दोनों पत्रोंको पढ़कर सुनाया ।

इन पत्रोंको पढ़कर चूड़ावत बोले कि महाराणा साहब इसमें विचार करना क्या है ? इन पत्रोंको पढ़कर आप किस चिन्तामें मग्न होगये ? यह विचारी अवला आपको मनसे वरचुकी है जो इसकी रक्षा आप न करेंगे तथा उससे विवाह न करेंगे तो क्या उसे स्लेच्छसे पकड़वा दोगे ? क्या संसारमेंसे क्षात्रधर्मका विनाश ही होनेवाला है ? जो कन्या तुमको वरचुकी है उसे क्या तुर्क व्याह ले जावेगा और हिन्दूपतिकी प्रतिष्ठा छीन लेगा ? क्या जिस प्रतिष्ठाके लिये मेवाड़ने हमारे बाप दादाओं और हमारी माताओंके लाखों सुपुत्र भोग लिये, हैं क्या उस मेवाड़का अधीश्वर अपनी रानीको बादशाहके हाथ चली जाने देगा ? क्या शरणागत अवलाको आत्मघात करके मरजाने देगा ? जो मेवाड़पति शरणागतकी रक्षाकरने और प्रतिष्ठा बचानेके लिये लाखों क्षत्रियोंका बलिदान देता, अपने प्राण देता, राज खोकर जंगलमें भटकता फिरता और तरह २ के दुःख उठाता, वही मेवाड़पति आज क्या शरण आई हुई एक अवलाको सो भी अपनी जातीय राजकुमारी को स्लेच्छके हाथ जाने देगा ? क्या पृथ्वीपरसे क्षत्रियत्व उठगया ? क्या क्षत्राणी अब क्षत्रिय पुत्र जनने बंद करके कायर पुत्र जनने लग गई हैं ? क्या मेवाड़पति बादशाहसे डरेगा ? या जंगलमें भटकते फिरनेसे डरेगा ? अथवा युद्धभयसे महलमें छिपेगा ? महाराज ! आपको इन पत्रोंके उत्तर देनेमें क्या रुकावट आन पड़ी ? मनुष्यमात्रको मरना है, क्या हमारे बाप दादे मरे नहीं जो हम अमर बैठे रहेंगे ? यह शरीर तो नाशवान ही है घरमें या बाहर रणक्षेत्रमें मरना तो अवश्य पड़ेगा तो प्रतिष्ठा खोकर क्यों मरना चाहिये ? प्रतिष्ठा बचाते हुए रणक्षेत्रमें क्षत्रियकी मृत्युसे क्यों न भरे कि स्वर्ग मिले ? राणाजी बोले कि वीर चूड़ावत ! ऐसे उतावले बनकर अविचारसे मत बोलो, मैं राठौरनी व्याहनेका निषेध नहीं करता हूं । जैसे भरे बाप दादे मरगये मुझे भी वैसेही मरना है परन्तु राणा हमीर, सांगाजी, कुंभाजी, तथा प्रतापसिंहजीकी भांति नाम अमर करके मरनेकी हौस मुझे भी है परन्तु मैं और आप दोनों युवा अवस्थाके हैं, अभी संसारका अनुभव नहीं किया, पीछे कोई यह न कहै कि राजसिंहने लडकपन किया कि बादशाहसे लडकर राज्य गँवा बैठा, राज्य बढाना तो छोडा और उसे खो बैठा । बादशाहके साथ वैर बाँधना है सो किसी वृद्ध पुरुषकी इस विषयमें सम्मति लेनी चाहिये । तब चूड़ावतने कहा कि महाराज आप यथार्थ कहते हैं । परन्तु हमारे बाप दादे जब सम्मति लिया करते थे तो राजवार-

हठ या राजकविकी सम्मति लिया करते थे । सो यदि आपकी इच्छा होवे तो उन वृद्ध, अनुभवी और बुद्धिमान पुरुषोंको बुलाया जावे । राणाजीने उन वृद्ध जनोंको बुलाकर दोनों पत्र दिये और उनके विषयमें क्या करना चाहिये यह प्रश्न उनसे किया । तब राजकविने विचार कर यह उत्तर दिया;—

राणाजी आप युवा हो तो भी अपने वंशकी रीति जानते हो, और जान बूझ कर हँसी करनेके लिये मुझसे क्यों पूछते हो ? आपके वंशमें किसीने कभी नकार (निषेध) उच्चारण नहीं किया ? बाप्पारावलके वंशज चाहें जैसी आपत्तिमें क्यों न फँसजावें पर मुखसे “ न ” नहीं निकालते । अपनी गद्दीकी प्रतिष्ठा, प्रतापी प्रतापके नामकी प्रतिष्ठाका ध्यान कर कर्तव्य पालन पर दृढ़ रहो । कर्तव्य पालनसे तो पृथ्वी स्थिर होरहीहै, सूर्य्य प्रकाश कर रहाहै, गंगा बहरही है और भूमंडल स्थिर है । शरण आये हुएको राणा सांगाका वंशज यदि पीछे लौटा देगा तो पृथ्वी रसातलमें चली जावैगी, सूर्य पश्चिममें निकलेगा, ब्रह्माण्ड नष्ट होजावेगा, और आकाश पाताल एक होजावेगा । जो तुकोंको कन्या न देनेकी प्रतिज्ञा कर चुके, अपने शिशोदिया वंशज कटवाडाले, बाल बच्चों और सगे सम्बन्धियोंको रणक्षेत्रमें मरते देखा, राज पाट गँवाकर पहाड जंगलोंमें भटके २ फिरे और वनफल कन्द मूल आदिपर दिन बिताये । वृक्षोंकी डालियोंके टोकरोंमें अपने राजकुमारोंको भीलोंकी भाँति भीलोंके बीचमें रहकर पालन पोषण किया, रोटीके टुकड़ोंके लिये भिखारियोंके बच्चोंकी भाँति अपने राजकुमार व राजकुमारियोंको रुदन करते देखा और असंख्य शत्रुसेनाके पीछे पडनेपर भी शत्रुओंके बीचमें इस पहाडसे उस पहाडमें निकल कर भागना पडा, परन्तु मुसलमानोंको कन्या देनेकी इच्छा कभी न की, उन्हीं प्रतापसिंहजीके वंशज अपनेको अन्तः करणसे बरनेवाली कन्याको उन्हीं देशशत्रु और धर्मशत्रु मुसलमानोंके हाथमें जाने दें ऐसा होना क्या कभी सम्भव है ? मैं वृद्ध हूँ, मेरे शरीरमें बल नहीं रहा है सो ऐसा समझकर आपने यह समझा होगा कि मैं कोई आपको कायरपनेकी सम्मति दूंगा । क्या हुआ जो मैं वृद्ध होगया हूँ किन्तु अबतक मेरी रगोंमें सांगाजी, प्रतापसिंहजी और कुम्भा राणाकी प्रतापी गद्दीके अन्नका लोहू बहरहा है । अन्नदाता मैं भी आपका ही अन्नखाता हूँ, फिर बुढ़ापेमें भी क्योंकर कायरपना मुझमें आसकेगा ? मैं देखनेमें वृद्ध हूँ मेरी देह वृद्ध है, परन्तु मेरी आत्मा तो युवा है इस लिये वृथा विलम्ब क्यों करते हो ? रूपनगरके मनुष्यको उत्तर देकर विदा करो, और लडाईकी तइयारी करके राजकन्या

व्याह लाओ। क्या राजहंसिनी राजहंसको छोड़कर गीध [गृध्र] के साथ जा सकती है ? इस लिये उठो तइयार होओ, और बरात लेकर राजकन्या व्याह लाओ, अब देर करनेमें भलाई नहीं है ।

यह सुनकर राणाजी चूडावतकी ओर लक्ष कर वाले राजकविने जो कहा सो ठीक है । हमको अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिये अवश्य जाना चाहिये, परन्तु एक विघ्न दीख रहा है सां उसका क्या उपाय किया जावे ? हम अपनी सेना लेकर राठौरनीको लेनेके लिये चलेंगे, परन्तु इतनेमें बादशाह स्वयं अपना लश्कर लेकर आन पहुँचेगा और घोर युद्ध होगा । यदि उस लड़ाईमें बादशाहकी अधिक सेनाके आगे हम सब खप गये तो हमारा मनोरथ पूर्ण न होने पावेगा, और उस समयमें भी राठौरनीको आत्मघात करना पड़ेगा, इसका क्या प्रबंध किया जावे ? चूडावत बोले कि महाराज ! मेरा विचार आपसे भिन्न है । आप थोड़ेसे मनुष्य लेकर राठौरनी व्याहनेके लिये रूपनगर जावें और मैं समस्त शिशोदिया दलको साथ ले बादशाहको रोकनेके लिये रूपनगरसे आगे जाता हूँ, और आगरा व रूपनगरके बीचमें राह रोककर बैठूंगा । मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि आप व्याह करके जबतक उदयपुर लौटकर न आजावेंगे तबतक मैं बादशाहको रूपनगरका द्वार न देखने दूंगा, राणाजी बोले कि ऐसा हो तो चिन्ता ही क्या है । मेरे प्रिय शूरवीर ! तुम्हारी वीरता और बुद्धिमत्ताको धन्य है । तुमने जो उपाय बतलाया है वह ठीक है । पीछे उसका सफल होना श्रीएकलिंगजीके हाथमें है । सब सामन्त और राजकविने भी चूडावतके विचारकी सराहना की, और अपनी २ सेना लेकर बादशाहके रोकनेके लिये जानेका निश्चय किया । राणाजीने रूपनगरके मनुष्यको पत्र लिखकर दिया, और उसे विदा किया । चूडावत अपने घर गये और अपनी राजधानीमें पहुँचकर लड़ाईका डंका बजवाया, जिसे सुनकर समस्त चूडावत योद्धा सावधान होगये ।

दूसरे दिन प्रातःकाल चूडावत युद्धस्थलमें जानको तइयार थे कि उन्होंने झरोखेमेंसे उझकतीहुई अपनी रानीको देखा । चूडावतकी अवस्था केवल सत्रह-अठारह वर्षकी थी, और हालहीमें विवाह करके लाये थे, अभी हाथका कङ्कन भी नहीं खुला था। इनकी रूपवती रानी भी सोलह वर्षकी युवती थीं। चूडावतने चौकमें आकर ज्योंही दृष्टि झरोखेकी ओर उठाई तो रानीका मुख ऐसा जानपडा मानो वाद-लमेंसे चन्द्रमा चमका हो। रानीका मुख देखते ही उनकी युद्धउमंग कुछ मंद पड़ गई। और उनकी मुखाकृति फीकी पड़ गई । वे उतरेहुए मुखसे महलपर चढे, परन्तु उनकी

चतुर रानीने पहचान लिया कि स्वामीका पहला तेज नहीं रहा वह बोली कि महाराज ! यह क्या हुआ ? क्या कोई अशुभ समाचार सुन पड़ा जो मुखकी कान्ति फीकी पड़ गई । बड़ी उमंगसे आप डङ्गा बजवाकर चौकमें आये थे और उस समय आपकी आकृति पर जो तेज विराजमान था वह तेज अब न जाने कहाँ उड़ गया ? लडाईका धौंसा आपने जिस उत्साहसे बजवाया था अब वह उत्साह क्यों मन्द पड़ गया सो बताइये । क्या कोई शत्रु चढ़ आया है जो लडाईका डंका बजवाया गया है ? यदि ऐसा है तो आपका सुखारविंद क्यों उतर गया ? लडाईका डंका सुनकर क्षत्रियको तो शूरताका आवेश होता है सो प्राणनाथ ! आपको भी शूरताका आवेश होना चाहिये था परन्तु आप इसके विरुद्ध शिथिल क्यों हो गये ? कोई कारण अवश्य है, आपको मेरी शपथ है जो आप सत्य २ न कहें ।

चूडावतजीने उत्तर दिया कि रूपनगरकी सठौरवंशकी राजकुमारीको दिल्लीका बादशाह बलात् व्याहने आता है और वह राजकुमारी मन वचनसे हमारे राणाजीको बर चुकी है, इसलिये प्रातःकाल ही राणाजी उसे व्याहनेके लिये सिधारेगे और बादशाहका मार्ग रोकनेके लिये समस्त मेवाडी सेना मेरे साथ जाती है वहां घोर संग्राम होगा, और हमें फिर वहांसे लौटनेकी आशा नहीं है, क्योंकि बादशाहकी सेनाके सामने हमारी सेना बहुत थोड़ी है। मुझे मरनेका तो कुछ शोक नहीं है । मनुष्यमात्रको मरना है, जो मरनेसे डरूं तो मेरी माताकी कोखको कलंक लग जावे, मेरे पूर्वज चूडाजीके नामपर धब्बा लग जावे । मरनेसे तो मैं डरता ही नहीं हूं, अमर कोई नहीं रहा, और न मैं रहूंगा, अबेरा सवेरा मरना सभीको है परन्तु मुझे केवल तुम्हारी चिन्ता है । तुम अभी व्याही आई हो अभी व्याहका कुछ सुख भी नहीं देखा, और आज मरनेके लिये जाना है । मुझे तुम्हारा ही विचार व्याकुल कर रहा है । चौकमें आकर ज्योंही मैंने तुम्हारा मुख देखा कि मेरा कठोर हृदय कोमल पड़ गया । यह सुन हाडी रानी बोली कि महाराज ! यह आप क्या कहते हैं ? यदि आप रणक्षेत्रमें विजय प्राप्त करेंगे तो इससे बढ़कर मेरे लिये इस जगतमें दूसरा कौनसा सुख है ? मृत्यु समय आनेपर चलते २ खड़े २ बैठे २ अथवा बातें करते २ अचानक ही मनुष्य कालके वसमें हो जाता है तब भी संसारका सुख छोड़ जाना ही पड़ता है ? जिसकी मृत्यु नहीं है वह रणक्षेत्रमें भी बचता है, और जब मृत्यु समय आजाता है तो सुखशान्तिपूर्ण घरमें भी नहीं बचता । घरमें जब काल आकर

प्रसता है तो कौन बचालेता है? इस लिये युद्धके लिये जातेहुए किसीका मोह करना या सांसारिक सुखोंकी वासना मनमें रखना उचित नहीं है, इसलिये किसी वस्तुमें ध्यान न रखकर सुखपूर्वक युद्धके लिये पधारिये और अपने स्वामी (महाराणाजी) का कार्य निश्चिन्ततासे करिये। आयु होगी और ईश्वरेच्छासे रणमें विजय मिलैगी तो जीते हुए संसारमें हमको सब सुख प्राप्त होगा और कदाचित् जो युद्धमें आप काम आये तो पीछे जो स्त्रीका कर्तव्य है उसे मैं भलीभांति समझे हुए हूं। रणक्षेत्रमें मृत्यु मिलनेपर अनन्त काल पर्यन्त हम स्वर्गमें दाम्पत्य सुख भोगेंगे। सो हे प्राणनाथ ! सहर्ष रणक्षेत्रमें पधारिये, और जय पाकर पीछे आइये या वीरता पूर्वक युद्धमें काम आइये। हम दोनोंकी भेंट स्वर्गमें होगी ही। आप अपने कुलके योग्य सुयशको रणमें प्राप्त कीजिये और पीछे क्षत्राणीको अपना धर्म किस प्रकार पालना चाहिये यह मुझे ज्ञात ही है। मैं आपके पीछे अपने धर्म पालनमें किसी बातकी त्रुटि और विलम्ब न करूंगी।

इस भांति बातें होते २ हाडी रानीसे चूडावत विदा होनेको ही थे कि रानीने कहा “ महाराज ! विजय पाकर शीघ्र लौटना। आप अपने कुलका धर्म जानते हैं इस लिये विजय कामनासे युद्धमें प्रवृत्त हूजिये और दूसरी किसी बातमें मन न रखकर रणक्षेत्रमें केवल शत्रुके संहार करनेमें ही ध्यान लगाइये। ”

चूडावत बोले “हाडी जय पाकर पीछे लौटनेकी तो आशा ही नहीं है। मरना तो निश्चित ही है। शत्रुको पीठ दिखाकर जीता आना भी नहीं है इस लिये हमारी और तुम्हारी यह अन्तिम भेंट है। तुम समझदार हो इस लिये तुम अपने घरकी लाज रखना, और हम रणमें काम आजवें तो पीछे तुम अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षा करना। ” हाडीजीने उत्तर दिया “ महाराज ! आप मेरी ओरसे तो निश्चिन्त ही रहिये। आप अपना धर्म पूरा करें और मैं अपने धर्ममें न चूकूंगी, यह बात आप पत्थरकी लकीर समझें। ” इस प्रकार विश्वास दिलाने पर भी चूडावतको संतोष न हुआ और यही द्विविधा रही कि जाने मेरे मरनेके पीछे हाडीजी सती होंगी कि नहीं। चूडावतका दृढ विश्वास था कि यदि मैं रणभूमिमें मारा जाऊं और हाडीजी मेरे साथ सती होजावें तो स्वर्गमें जाकर निरन्तर सुख भोगूं। उनके हृदयमें यही संदेह जमाहुआ था कि संसार सुखका अनुभव न करनेवाली तरुणावस्थाकी हमारी रानी जाने सती होगी या नहीं। रानीको समझा बुझाकर चूडावत चलदिये परन्तु सीढ़ियोंसे उतरते २ फिर हाडीजीसे कहा कि हम तो जाते हैं तुम अपना धर्म न भूल जाना। फिर

वह चौकमें पहुँचे और युद्धका धौंसा बजवाकर प्रस्थान करने लगे तो अपने निजका एक सेवक हाडीजीकी सेवामें भेजा और उसके द्वारा फिर कहा- लाया कि रानी आप अपना धर्म न भूलना । तब हाडीजी समझीं और उन्हें विदित हुआ कि मेरे स्वामीका मन मुझमें लगा है, और जबतक इनका चित्त मेरी ओर रहैगा इनसे रणक्षेत्रमें कुछ पराक्रम न किया जा सके गा और जिस कामके लिये जाते हैं निष्फल होगा । हाडीजी उस सेवकसे बोलीं कि मैं तुमको अपना शिर देती हूँ इसे ले जाकर अपने स्वामीको देना और कहना कि हाडीजी पहलेसे ही सती हुई हैं और यह भेंट भेजी है कि जिसे लेकर आप आनन्दके साथ रणक्षेत्रमें जाइये और विजय पाइये और अपना मनोरथ सफल कीजिये । किसी प्रकारकी दूसरी चिन्ता न रखिये । यह कहकर तलवारसे अपना शिर काट डाला । उसे लेकर वह सेवक चूड़ावतके पास पहुँचा, और उन्हें रानीका शिर सौंपकर उनका सारा कथन उनको सुना दिया । यह देखकर चूड़ावत आनन्दमें मग्न होगये । एक ग्रन्थकारने लिखा है कि “उन्होंने रानीके चुटीलेके दो भाग करके शिरको गलेमें लटका लिया, उसके लटकते ही चूड़ावतजी ऐसे जान पड़े मानो शिवजी रुंडमाला धारण किये खड़े हो।” अब उन्हें घरकी चिन्ता भिटी । अब यही चिन्ता बढ़ने- लगी कि जिसप्रकार शीघ्रतासे होसके शत्रुको मार स्वर्गको चले कि हाडीजीके मिलनेमें विलम्ब न हो क्योंकि वहांपर वे व्याकुल होरही होंगी । रुद्रकी भाँति क्रोधाग्रमान हो रणक्षेत्रमें मुसलमानोंका विध्वंस करनेके लिये चल दिये । उनके पीछे समस्त चूड़ावत भी चल दिये । उनके निकलते ही अन्य सब सामन्त भी अपनी २ सेना लेकर साथ चल दिये ।

उधर राणाजी प्रातःकाल होनेपर ज्योंही न्हा धो भोजन कर शस्त्र बाँध घोड़ेपर सवार हुए कि उनके साथ जानेके लिये नियुक्त किये हुए १५ सौ मनुष्य घोड़ोंपर चढ़ राजमहलके बाहर आकर खड़े होगये । राणाजी भी चूड़ावतके जानेके समाचार सुनकर निकले और दोनों द्वारके बाहर एक दूसरेसे मिले, थोड़ी दूरतक मार्गमें इकट्ठे चले परन्तु जब मार्ग पृथक् हुए तो राणाजी और चूड़ावत दोनोंका वियोग हुआ । राणाजी तो सीधे रूपनगरको गये और चूड़ावतजी पूर्वके मार्गपर चले गये ।

चूड़ावतके अधीन समस्त सेना पचास हजार राजपूतोंकी थी । उसे लेकर सबके आगे चूड़ावत आप चले । चलते २ वे एक नियत स्थानपर जा पहुँचे । यह स्थान आगरेसे रूपनगर जानेके मार्गमें रूपनगरसे कुछ दूर था । यहीं

मार्गमें सब लोग छावनी डालकर ठहर गये । ढेरे डालनेके पीछे चूड़ावतने बादशाही लश्करका खोज लेंनेके लिये कुछ मनुष्य भेजे । उन मनुष्योंने आकर समाचार सुनाया कि बादशाह हाथीपर बैठा आरहाहै और साथमें बहुत दल लाया है । यह सुनकर चूड़ावतने अपने वीरोंको शस्त्र बांध घोड़ेपर सवार होनेकी आज्ञा दी । सबलोग बादशाही सेनासे भिड़नेके लिये तय्यार होकर खड़े होगये । इतनेमें बादशाही लश्कर आन पहुँचा । मार्गमें दूसरा दल खंडा देख बादशाहने पता लगवाया कि यह किसका दल है और किस लिये मार्ग रोक रहा है ? इसपर उसे विदित हुआ कि मेवाड़के चूड़ावत सरदार अपनी सेना लेकर मार्ग रोक रहे हैं । तब औरंगजेब बादशाहने चूड़ावतको कहलाया कि आप हमको मार्ग दें । हम लडने नहीं आये हैं । हमको उदयपुर नहीं जाना है । हम तो और जगह जा रहेहैं ना आपका मार्ग रोकनेमें कुछ लाभ नहीं है । चूड़ावतने कहला भंजा कि इसप्रकार मार्ग नहीं मिल सकता है । हम शत्रिय हैं, तुमसे डरनेवाले हम नहीं हैं, तुमको आगे जाना है तो हमको भेदकर सुखसे चले जाओ; बादशाहने कहलाया कि व्यर्थ तुम हमारे कार्यमें किसलिये विघ्न डालते हो ? हम तुम्हें बिना हानि पहुँचाये ही चले जानेको कहतेहैं । वृथा दीपकमें पतंगकी भाँति तुम क्यों गिरना चाहते हो ? क्यों अपने हजारों शूरवीर राजपूतोंको निष्प्रयोजन कटकरना चाहते हो ? परन्तु क्या इस धमकीसे कहीं चूड़ावत डरनेवाले थे । वह बादशाहके गैकनेके लिये आयेही थे सो क्या सुखपूर्वक बादशाहको रूपनगर पहुँचजाने देते ? जब किसीभाँति चूड़ावतने न माना तो उनको हटाकर आगे बढ़नेकी आज्ञा बादशाहने अपने लश्करको दी । बादशाहके हुक्मको सुनना था कि सुसलमानी दल युद्धके लिये तइयार होगया । इधर चूड़ावतजीने तो पहिलेहीसे अपनी सेना युद्धके लिये तइयार कर रक्खी थी । अब लड़ाई आरम्भ होगई । सायंकाल होनेतक किसी ओरकी सेना किधरहीको चलायमान न हुई । शिशोदियालोग अंचल पर्वतकी भाँति अडे रहे और बड़ी दृढताके साथ सुसलमानोंको काटते रहे ।

हिरोलमें जो शिशोदिये मरते उनके स्थानमें तत्काल दूसरे आजाते । दोनों ओरके वीरोंमेंसे कोई भी न हटा । इसप्रकार युद्ध करते २ सन्ध्याकाल हो गया, अन्धेरा छागया तब दोनों ओरसे लड़ाई बंद की गई ।

प्रातःकाल होनेपर फिर बादशाहने कहलवाया कि तुम व्यर्थ क्यों राह रोक रहे हो अब भी तुम एक ओर हट जाओ परन्तु चूड़ावत किंचित् भी पीछे न हटे

और न मार्ग छोड़ा । इस कारण फिर युद्ध आरम्भ हुआ । सूर्यास्त होनेतक तुमुल युद्ध होता रहा । दोनों पक्षके सहस्रों मनुष्य मारे गये । परन्तु किवरहीके वीर मन्द न पड़े । उधर मुसलमान लोग यह समझकर कि बादशाहके लिये रूपनगर पहुँचनेकी शायत (सुहूर्त) टल जावैगी लड़ाई शीघ्र समाप्त करनेके विचारसे बड़े वेगके साथ घोर युद्ध करने लगे । इधर राजपूत बादशाहको रोकनेके लिये और इतने समयतक मार्गमें डटे रहनेके लिये कि जितनेमें अपने राणाजी विवाह करके कुशलतासे पहुँच जायें वड़े आवेशके साथ मुसलमानोंपर दूटकर उन्हें काटते रहे परन्तु रात्रि होनेतक कोई पक्ष शिथिल न पड़ा। रात्रिके कारण फिर युद्ध बंद किया गया । अब तीसरा दिन हुआ कि सूर्य निकलनेसे पहिले ही सब लड़नेके लिये तैयार हुए । रात्रिके समयमें भी राजपूत लोग शस्त्रबद्ध सोते थे कि कहीं मुसलमानलोग धोखेसे छापान आ मारें, अथवा अपना प्रयोजन सिद्ध करनेके लिये छिपकर रात्रिमें न चलेजायें इसलिये राजपूतोंको बड़ी सावधानी रात्रि समयमें भी करनी पड़ी थी । पहले एक दो बार क्षत्रियोंको मुसलमानोंने धोखा देदिया था उसे याद करके चूडावत बहुत चैतन्य होकर रात दिन रहते थे । तीसरे दिनके युद्धमें मुसलमान लोग ऐसे पराक्रमसे लड़े कि बहुतसे राजपूत मारे गये । राजपूतोंकी संख्या प्रतिदिन घटती जाती थी । यद्यपि मुसलमानीदलमें तुगुने तिगुने मनुष्य मारे गये थे परन्तु उनके अगणित दलमें वह न्यूनता कुछ जान नहीं पड़ती थी । मुसलमानोंकी अपेक्षा राजपूतोंका घटाव स्पष्ट जान पड़ता था । उनके थोड़ेही वीर शेष रह गये । अब चूडावतजीने विचार किया कि यदि मुसलमानोंने अबकी बार फिर ऐसा ही आक्रमण प्रबल वेगसे किया तो यह लोग थोड़ेसे वचेहुए राजपूतोंको भेदकर चले जा सकेंगे । इस अवसरपर इन्हें वह वचन याद आया कि जो राणाजीको इन्होंने दिया था । इस कारण इन्होंने बड़े आवेशमें आकर घोर युद्ध किया और बड़े पराक्रमसे लड़ते हुए बादशाहके हाथीके समीप पहुँच अपना भाला बादशाहकी ओर खलाया । बादशाह बोला कि नाहक क्यों मारते हो विवाहकी घड़ी तो यहीं पूरी हुई जाती है । चूडावत बोले कि जो मैं माँगू सो अपनी कुरानकी शपथ खाकर देनेकी प्रतिज्ञा करो नहीं तो मेरा भाला तुम्हारे शरीरमें अब निकला ही चाहता है । बादशाहने प्राणको जोखिममें समझकर चूडावतका कथन स्वीकार किया । चूडावत बोले कि आजसे दशवर्षतक तुम उदयपुरपर चढ़ाई न करना । इसके पीछे तुम्हारी इच्छा रही । बादशाहने यह वचन स्वीकार किया । तब चूडावतने अपना घोड़ा लौटाया । इतने अन्तरमें इनके शरीरपर इतने घाव लगे कि ये अपने घोड़ेपर सावधान न

रह सके ज्योंही इन्हें घोड़ेपरसे नीचे उतारा कि अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण होनेके आनन्दमें मग्न होते हुए सुरपुर सिंधारे उसी दिन चैत्रकी पूर्णिमा थी, और वहांसे रूपनगर पहुँचनेके लिये तीन दिनका मार्ग शेष था ।

चूडावत मारे तो गये परन्तु अपना प्रण पूराकरगये; उनकी सम्पूर्ण सेना कट गई । पचास हजारमेंसे कठिनतासे पाँचहजार राजपूत बचे थे जो कि उदयपुरको चले गये । चूडावतके मारेजानेपर बादशाहने लडाई बन्द करके शेष रहेहुए शिशोदियोंको आज्ञा दी कि वे अपने मृत सदाँरोंके शरीरोंका दाह कर्म करें, और बादशाह वहां देरतक रुकना उचित न समझ आगेको बढ़ा ।

दूसरी ओर राणाजी भी रूपनगर ठीक पूर्णिमाको पहुँच गये थे, और राजकुमारी रूपवतीको व्याहकर वैशाख वदी प्रतिपदाको रूपनगरसे बिदा होकर कुशलता पूर्वक उदयपुर पहुँच गये । उदयपुर पहुँचनेपर उनको चूडावतके साथसे लौटे हुए मनुष्योंसे सारावृत्तान्त सुना कि जिसप्रकारसे वीर चूडावतने पराक्रम दिखायाथा तथा बादशाहसे उन्होंने जो वचन लिया था तथा उन सबने नवीन राणी प्रभावतीको विधि विधानसे मंगलाचरण करके राजभवनमें प्रवेश कराया ।

जिस समय राणा राजसिंह प्रभावतीको उद्धार करके लाये उससे कुछदिन पीछे राजस्थानमें जो कई एक बड़े २ कार्य हुए थे, उनका स्पष्ट वृत्तान्त राजवाडेके किसी ग्रन्थमें नहीं पाया जाता, इस कारण उन कार्योंके विषयमें प्रथम संदेह भी हो सकता है, परन्तु भलीभाँतिसे विचार करनेपर वह सभी संदेह दूर होजाते हैं, और उनमेंसे यथार्थ ऐतिहासिक सत्य आपसे आपही उत्पन्न होजाता है, बादशाह औरंगजेबके कठोर हृदयमें जो हिन्दुओंकी विद्वेषानल बलवान होगई थी, उसको तृप्त करनेके लिये उसने नाना प्रकारके पैशाचिक कार्य करनेकी प्रतिज्ञा की, इसका वृत्तान्त संक्षेपसे पहले कह आये हैं, परन्तु सुगल बादशाहकी जो भयंकर प्रतिज्ञा इतने दिनोंतक सिद्ध नहीं हुई थी, उसका कारण इस प्रतिज्ञाके रोकनेवाले दो वीरोंका होना था, उन दोनोंमें पहले तो जयपुरके राजा जयसिंह, और दूसरे मारवाडके राजा जसवंतसिंह थे, जयसिंह और जसवंतसिंहने औरंगजेबके वेतन भोगी होनेपर भी अपने क्षत्री धर्मको नहीं छोड़ा था, विशेष करके यह दोनों ही प्रचंड तेजस्वी राजा थे, इस कारण बादशाह सहस्रों चेष्टा करने पर भी उनकी ज्ञान शक्तिको हरण नहीं कर सका, अपने पद और गौरवसे मोहित होकर उसने विचारा था कि मैं इन दोनों राजाओंकी सामर्थ्यको छीनकर उनको अपने हाथकी कठपुतली बनाऊंगा, परन्तु

उसकी यह आशा सम्पूर्ण ही नष्ट होगई, यदि औरंगजेब उनके साथ किसी प्रकारका भी अयौक्तिक कार्य करता तो वह क्रोधित हुए शेरकी समान गर्जकर अपने तीक्ष्ण वेगसे उसके प्रस्तावको खंडन करदेते; बादशाह मनही मनमें उनके मारनेका विचार किया करता था परन्तु प्रगटमें कुछ भी नहीं कह सकता था, यह दोनों ही राजा हिन्दू थे, स्वजाति और स्वदेशके ऊपर उनका गाढा प्रेम था, अतएव उनके सामने हिन्दुओंको पीडित करनेका कैसे साहस हो सकता है ? यद्यपि यह दोनों वीरही मुगल बादशाहतके आधीन थे परन्तु इनमें सामर्थ्य बड़ी थी, बड़ीभारी सहायताका बल रखते थे, और मुगलोंकी सेनाका बड़ा भाग भी इनके ही हाथमें था, फिर इनके सामने ही जो इनके जातवालों तथा भाई बन्धुओंको पीडित किया जायगा तो कदाचित् विरोधी होजाय, ऐसा होनेपर इनके आधीनकी सभी मुगल सेना इनकी ओर होकर बादशाहसे युद्ध करनेके लिये तैयार होजायगी, फिर तब राजपूत भी इनमें मिलेंगे, तदुपरान्त इस राज्यके भीतर भयंकर उपद्रव होजायगा; इस भांति नाना प्रकारकी चिन्ता और उपाय करने पर भी वह दुर्बुद्धि औरंगजेब अपने अभिप्रायको सिद्ध न करसका; अन्तमें बहुतसी चिन्ताओंके पीछे उसने जो प्रतिज्ञा अपने हृदयमें की उसका स्मरण करतेहुए महा पाखंडियोंका हृदय भी थरकांप उठताहै, उस दुष्टने इन दोनों राजाओंकी सामर्थ्यको हरण करनेका कोई उपाय न देखकर अंतमें दोनोंको मरवा डालनेका संकल्प किया; मारवाड़के राजा महाराज जसवंतसिंह उस समय कुछदूर काबुलके राज्यमें रहते थे, और अम्बेरके राजा जयसिंहजी दक्षिणमें थे, राक्षसने उनको विष देकर मारडालनेके लिये अपने कितने ही दूतोंके द्वारा शीघ्रही उन दोनों राजाओंको विष दिलाकर इस संसारसे विदा करदिया, यह दोनों राजा विश्वासी और धर्मपरायण थे वे अकालमें कालग्रस्त हुए, धर्मके प्रमत्तकण अधर्मने लात मारी, आज कृतज्ञता और प्रभुपरायणताको नीच और धिनौना फल मिला, इस हृदयस्तम्भन और पैशाचिक कार्योंका करतेहुए दुष्टात्माने विचारा था कि अब मेरा यह घृणित संकल्प सिद्ध होजायगा, परन्तु आनन्दका विषय है कि उसका वह मनोरथ सिद्ध न हुआ । अपने देशके प्रेमी वीरकेसरी राणा राजसिंहजीकी भयंकर वीरताके सामने उसका वह संकल्प शीघ्रही छिन्न भिन्न होगया; और अतिशीघ्र उसके असीम पाप कार्योंका असीम फल मिला ।

इन बुरे पैशाचिक कार्योंको करनेसे पापियोंके हृदयमें शान्तिका हांना तो दूररहा वरन उससे उनके हृदयका कठोर भाव और दूना बढ़जाता है, भीरु कापुरुषकी

समान अत्यन्त घाणत कार्योंको करके भारतवर्षके दो प्रधान हिन्दू राजाओंके हृदय रुधिरसे अपने हाथोंको कलंकित करके नररूपी पिशाचका हृदय किंचित भी शान्त न हुआ, उसने इस लोम हर्षणकारी कार्यको करके निरपराधी और सहाय हीन जसवंतसिंहके छोटे रवालकोंको कैद करनेकी अभिलाषा की, और जिससे यह अभिलाषा शीघ्रही सिद्ध होजाय, ऐसा उद्योग भी करने लगा, परन्तु उसकी वह पैशाचिक प्रतिज्ञा सिद्ध न हुई, कारण कि राठौर राजाकी सेनाके सामन्तलोग उस विषयको भलीप्रकारसे जान गये थे, और उन्होंने ऐसा उपयुक्त उपाय किया कि जिससे उन कुमारोंकी भली प्रकारसे रक्षा हो, उनके हृदयमें यह विश्वास दृढ था कि कठोर उत्साह तथा अपने प्राणोंको बिना न्यवछावर किये हुए राठौर राजा महाराज जसवंतसिंहकी विधवा रानी और उनके अनाथ पुत्रोंकी रक्षा इस दुष्ट बादशाहके हाथसे न होगी । इसी कारणसे उन्होंने इसके उचित उपाय किये थे । मारवाडके राजा जसवंतसिंहके बहुतसे पुत्र थे, उनमेंसे सबसे बड़ेका नाम अजित था, जिस समय महाराज जसवंत सिंहजी पारखंडी औरंगजेबकी तीक्ष्ण विद्वेषानलमें पतंगकी समान भस्म होगये थे, उससमय अजितकी अवस्था बहुत थोड़ी थी तथापि उसकी माताने अपने मनमें निश्चयकर लिया था कि इसको ही मारवाडके राजसिंहासनपर अभिषेकित करके फिर मैं आपही राज्यके सम्पूर्ण कार्योंको देखूँ भालूंगी, इसी आज्ञाको हृदयमें रखकर रानीजी, महाराज जसवंतसिंहजीके साथ सती नहीं हुई थीं, परन्तु विधाताके भयंकर विधिके अनुसार उसकी वह आज्ञा मनमें ही रह गई, कदाचित् प्राणनाथकी शोककी अग्निके बिना सुझे ही दारुण पुत्र शोकसे पीडित होना होगा, जिस पुत्रके लिये उन्होंने अपने प्रीतमके भयंकर शोकको हृदयमें छिपा रक्खा था, उस पुत्ररत्नसे क्या यथार्थमें ही वंचित होना होगा ? निर्दयी विधाता क्या और भी निर्दयी होगा ? अजितकी माता भांतिर की चिन्ताओंसे व्याकुल होने लगीं; अन्तमें कुछ उपाय न देखकर राणा राजसिंहकी शरण ली । राणाजीने शिशोदियाकुलमें जन्म लियाथा । इस समय उन्होंने शिशोदियाकुलके रक्षा करनेवाले वीर श्रेष्ठ राणा राजसिंहके आश्रयकी छायाके नीचे विश्राम पानेकी इच्छा करके उनके पास अपने दूतोंको भेजा। महाराणा राजसिंहजी भी रानीकी बातपर राजीहुए, और राजकुमारोंको मेवाडमें बुलाकर उनके रहनेका प्रबंध भलीप्रकारसे कर दिया, बुलावेको पाते ही कुमार अजितसिंह अपनी दो सहस्र सेनाको साथ ले मेवाडसे चले; आरावली "शैलमाला" के दुर्गम पहाड़ोंको लांघतेहुए सब जारहेथे, कि उसीसमय कूटगिरिके एक

संकीर्ण मार्गसे मुगलोंकी दो समस्त सेनाने अतिवेगसे आकर इनकी संपूर्ण सेनाको रोक लिया और अजितसिंहको पकड़नेका उद्योग करने लगी, दुर्गाचारी मुगलोंकी सेनाका ऐसा भयंकर अत्याचार देखकर राठौर राजाकी सेनाके राजपूत क्रोधमें भरकर शत्रुको मारडालनेकी इच्छासे एकबारही उन्मत्त होगये और अपनी तलवारको निकाल शत्रुओंको मारने लगे; इस छोटेसे मार्गके बीचमें राजपूतोंका और मुगलोंकी सेनाका बहुत देरतक भयंकर संग्राम होता-रहा, इस ओर राजकुमार भी सरलतासे ही अपने शरीर रक्षकोंको साथमें ले वहांसे निकल मेवाडमें जा पहुँचे; भयंकर विक्रमशाली राठौर राजाकी सेनाने यवनोंकी सेनाको परास्त कर दिया, फिर मुगलसेना अजितका पीछा न कर सकी। जिस समय राजकुमार अजितसिंहजी मेवाडमें पहुँचे उससमय महाराणा राजसिंहने प्रसन्न होकर आदर सन्मानके साथ उनको ग्रहण किया और रहनेके लिये कैलवानामक जनपद दे दिया, दुर्गादासनामक एक साहसी वीर राजपूत उनकी रक्षा करनेके लिये नियुक्त हुआ, उस भयंकर राजपूतकी रक्षामें रहकर राजकुमार अजित कैलवादेशमें आनन्दके साथ रहने लगे, इस ओर अजितकी माता मारवाडमें गई और विश्वासघाती मुगल बादशाहके अत्याचारोंका बदला लेनेके लिये योग्य अवसर ढूँढनेलगी। उनके हृदयमें दारुण क्रोधाग्नि भड़क रही थी, उन्होंने इस अग्निको शान्त करनेके लिये एक बड़ाभारी कार्य अपने हाथमें लिया, वह भयंकर गुरुतर कार्य और कुछ नहीं था, केवल राजवाडेके प्रधान २ राजपूतोंका परस्पर एकत्रित होना था, महारानीने इस बड़ेभारी कार्यको सिद्ध करनेके लिये तन मन धनसे चेष्टा की; और शीघ्रही मेवाड, मारवाड और अम्बरेके राजालोग सहानुभूतिके एक सूत्रमें बँधकर मुगल बादशाहके विरुद्ध युद्ध करनेको तैयार हुए, राजपूतोंमें इसप्रकारका मेल पहिले कभी नहीं हुआ था, परन्तु दुःखका विषय है कि यह एकताका बंधन बहुत दिनोंतक नहीं रहा और शिशोदिया राठौर तथा कुशावह लोगोंके बीचमें पिछला वैरभाव बहुत शीघ्रही उत्पन्न होगया, यदि ऐसा मेल सौवर्षतक भी रहता, यदि वह एक रहकर अपनी प्रतिज्ञाका पालन करते, तो भारतवर्षमें दुःखकी रात्रिका प्रभाव घट जाता, और भारतका राजमुकुट मुसलमानोंके मस्तकपरसे गिरकर हिन्दुओंके शिरपर स्थापित होता।

राजधर्मसे रहित मार्गमें जाकर अत्याचार और प्रजापीडनकी पराकाष्ठा दिखाय निमोही कठोर बादशाह औरगजेवने अपने परम विश्वासी दो राजपूतोंको मारा था, उसका यह पैशाचिक कार्य बहुत ही थोड़े समयमें प्रसिद्ध होगया,

कारण कि वही दोनों वीर उसके दो कांटे थे इस समय दोनों ही दूर होगये, इस कारण वह अपनी अभिलाषाको सिद्ध करनेका यत्न करनेलगा, परन्तु फिर भी एक तेजस्वी बलवान राजाने औरंगजेबके मार्गमें कांटे बिछाये थे, वह तेजस्वी वीर कौन था ? महाराणा राजसिंहजी; जब बादशाहने देखा कि मैं निष्कण्टक होगया तब वृणित “मुंडकर” को स्थापन किया, जब इस भयंकर करके बोझ-से सम्पूर्ण हिन्दूजाति हाहाकार करती हुई आर्तनादसे पुकारने लगी, तब वीर्यवान राजसिंहके हृदयमें एक गंभीर प्रश्न उत्पन्न हुआ, उन्होंने विचारा कि “क्या आज भीष्म, कर्ण, भीम इत्यादिकी जन्मभूमि क्षत्रियोंसे हीन होगई ? या विधाताने ही इस दुराचारी औरंगजेबको अमर करके इस संसारमें भेजा है? कभी नहीं? ऐसा तो हो ही नहीं सकता, मुगलोंकी दासतामें पडकर यह अभागी हिन्दूसंतान बहुत दिनोंसे हीन होगई थी, और अत्याचारी मुसलमानलोग अपने भयंकर पराक्रमसे इस भारतवर्षके भाग्यचक्रको पीसकर चले गये थे, परन्तु उनमेंसे किसीने भी ऐसे अत्याचार नहीं किये ! “फिर भला भारतसंतानगण ऐसे कठोर अत्याचारोंको प्रसन्नतासे सहन करलेंगे ?” इस प्रकारकी चिन्ता करते २ उन्होंने मुंडकर स्थापनके विरुद्ध कार्य करनेकी प्रतिज्ञा की और अतिशीघ्र उग्रभाषाका एक लम्बा चौड़ा पत्र लिखकर अपनी उस प्रतिज्ञाको पूर्ण किया । यदि उस पत्रको संसारकी प्रेमिकता और मनुष्योंको हितकारिता और उदार नीतिका तीक्ष्ण उदाहरण कहाजाय तो भी ठीक होसकता है, इस भारी संसारके बीचमें इस प्रकारका पत्र कभी भी किसीकी लेखनीसे निकला होगा या नहीं इसमें भी संदेह ही होता है, सारांश यह है कि उस पत्रके किसी स्थानको भी पढ़नेसे मोहित होना पडता है । *

* अर्धने यह पत्र सबसे पहले यूरोपमें प्रकाशित किया था, परन्तु शोकका विषय है कि उसने भूलसे इसको मारवाडके राजा जसवंतसिंहका लिखाहुआ बताया, महामान्यवर टाडसाहबने कहा है कि “यह पत्र कभी जसवंतसिंहका नहीं हो सकता, कारण कि इसमें जो “मुंडकर” का वृत्तान्त लिखा हुआ है वह उनके जीतेजी प्रचरित नहीं हुआ था और विशेष करके इस पत्रमें एकजगह रामसिंहका जो वृत्तान्त पायाजाता है वह जसवंतसिंहके समयमें हुए, तथा वही महाराज जयसिंहके उत्तराधिकारी थे और मारवाड राजके मरने उपरान्त एकवर्ष पीछे अपने पिताके सिंहासनपर बैठे थे” इस कारण स्पष्ट विदित होता है कि महाराज राजसिंहने ही इस पत्रको लिखा और भेजा था; टाडसाहबने और भी कहा है कि “हमारे उदयपुरके मुन्शीने उस असल पत्रकी मौलिक लिपिको पाया था। फिर तब तो यह यथार्थमें ही राजसिंहका लिखाहुआ है” कारण कि उस पत्रके प्रारम्भमें—

—ही लिखा था कि “महाराणा श्री श्री राजसिंहजीके पाससे औरंगजेबके समीप यह पत्र भेजा गया” इस समय वह पत्र नीचे लिखा जाता है।

“सर्व प्रकारकी स्तुति, सर्व शक्तिमान् जगदीश्वरको उचित है; और आपकी महिमा भी स्तुति करनेके योग्य है। आपकी उदारता और समदृष्टि चंद्र और सूर्यकी भांति चमकती है यद्यपि मैंने आजकल अपनेको आपके हाथसे अलग कर लिया है, किन्तु आपकी जो सेवा होसके उसको मैं सदा चित्तसे करनेको उद्यत हूँ। मेरी सदा इच्छा रहती है कि हिन्दुस्तानके बादशाह, रईस, मिर्जा, राजे, और रायलोग तथा ईरान, तूरान, रूम और शामके सरदारलोग और सातों बादशाहतके निवासी और वे सब यात्री, जो जल या थलके मार्गसे यात्रा करते हैं वे सब, मेरी अभेद बुद्धि सेवासे उपकार लाभ करें।

“वह इच्छा मेरी ऐसी उत्तम है कि जिसमें आप कोई दोष नहीं देख सकते। मेरे पूर्वजोंने पूर्वकालमें जो कुछ आपकी सेवा कीहै, उसपर ध्यान करके मुझको अति उचित जान पड़ता है कि, मैं नीचे लिखीहुई बातोंपर आपका ध्यान दिलाऊँ, जिसमें राजा और प्रजा दोनोंकी भलाई है। मुझको यह समाचार मिला है कि आपने मुझ शुभचिन्तकके विरुद्ध एक सेना नियत कीहै, और मैंने यह भी सुना है कि, ऐसी सेनाओंके नियत होनेसे आपका खजाना, जो खाली होगया है, उसके पूरा करनेको आपने नाना प्रकारके कर भी लगाए हैं।

“आपके परदादा महम्मद जलालुद्दीन अकबरने, जिनका सिंहासन अब स्वर्गमें है, उन्होंने इस बड़े राज्यको बावन वर्षतक ऐसी सावधानी और उत्तमतासे चलाया कि, सब जातिके लोगोंने उससे सुख और आनन्द उठाया। क्या ईसाई, क्या मूसाई, क्या दाऊदी, क्या मुसलमान, क्या ब्राह्मण, क्या नारिक, सबने उनके राज्यमें समान भागसे राज्यका न्याय और राज्यका सुख भोग किया और यही कारण है कि सब लोगोंने एक मुंह होकर उनको जगद्गुरुकी पदवी दी थी।

“शहन्शाह मुहम्मद नूरुद्दीन जहांगीरने, जो अब नन्दन वनमें विहार करते हैं, उन्होंने भी उसी प्रकार २२ वर्ष राज्य किया, और अपनी रक्षाकी छायासे सब प्रजाको शीतल रक्खा और अपने आश्रित या सीमास्थित राजन्यवर्गको भी प्रसन्न रक्खा और अपने बाहुबलसे शत्रुओंका दमन किया।

“वैसे ही उनके शाहजादे और आपके बड़े परम प्रतापी शाहजहानने बत्तीस वर्ष राज्य करके अपना शुभ नाम अपने शुद्ध गुणोंसे विख्यात किया।

“आपके पूर्व पुरुषोंकी यह कीर्ति है। उनके विचार ऐसे उदार और महत थे कि, जहां उन्होंने चरण रक्खा वहां विजयलक्ष्मीको हाथ जोड़े अपने सामने पाया और बहुतसे देश और द्रव्यको अपने अधिकारमें किया। किन्तु आपके राज्यमें वे देश अब अधिकारसे बाहर होते जाते हैं और जो लक्षण दिखलाई पड़ते हैं, उनसे निश्चय होता है कि दिन२ राज्यका क्षय ही होगा। आपकी प्रजा अत्याचारसे अति दुःखी है और सब दुर्बल पड़ गए हैं, चारों ओरसे वस्तियोंके ऊजड़ पड़जानेकी और अनेक प्रकारकी दुःखही की बातें सुननेमें आती हैं। राजमहलमें दरिद्रता छाई-हुई है जब बादशाह और शाहजादोंके देशकी यह दशा है तब और रईसोंकी कौन कहे ? शूरता तो केवल जिह्ममें आरही है, व्यापारी लोग चारों ओर रोते हैं, मुसलमान अव्यवस्थित हो रहे हैं,—

इस तेजस्विनी पत्रिकाने औरंगजेवकी क्रोधाग्निके लिये धीका काम किया; जिस समय महाराणा राजसिंहजीने रूपनगरके सामंतकी कन्या प्रभावतीको हरज करके दुष्ट औरंगजेवके हृदयमें छिपीहुई क्रोधकी अग्निको भडका दिया था, वही क्रोधाग्नि राजकुमार अजितसिंहको आश्रय देनेसे अत्यन्त बलवती थी, परन्तु आज इस तीक्ष्ण प्रविष्ट भंडुए पत्रको पढ़कर बादशाह अपनी क्रोधानलको न रोक सका, कारण कि उसकी वह तीक्ष्ण क्रोधानल वधाभिलाषासं एकवार ही असह्य होगई थी। इस समय उसने अत्यन्त क्रोधित होकर मेवाड़-भूमिपर चढ़ाई करनेकी प्रतिज्ञा की और शीघ्रही भयंकर संग्राम करनेके लिये अपनी सेनाका तैयार होनेका हुक्म दिया। उसही दिन उसकी आज्ञाका

—हिन्दु महादुःखी हैं, यहां तक कि प्रजाको सन्ध्याकालके समय खानेका भी नहीं मिलता और दिनको सब, दुःखके मारे अपना धिर पीटा करते हैं।

“ ऐसे बादशाहका राज्य कै दिन स्थिर रह सकता है ? जिसने भारी करसे अपनी प्रजाकी ऐसी दुर्दशा करवाली है ? पूर्वसे पश्चिमतक सबलोग यही कहते हैं कि, हिन्दुस्तानका बादशाह हिन्दुओंका ऐसा द्वेषी है कि, वह रंक ब्राह्मणसे बड़ा योगी, वैरागी और सन्यासी पर भी क्रूर लगाता है, और अपने उत्तम तैमूरी वंशजों, इन धनहीन और निरुपद्रवी उदासीन लोगोंको दुःख देकर कलंकित करता है। अगर आपको उस किताब पर विश्वास है, जिसको आप ईश्वरका वाक्य कहते हैं, तो उसमें देखिये कि ईश्वरको मनुष्य मात्रका स्वामी लिखा है, केवल मुसलमानोंका नहीं। उसके सामने हिन्दू और मुसलमान दोनों समान हैं। मनुष्यमात्रको उसीने जीवन दान दिया है। नाना रंगके मनुष्य उसहीने अपनी इच्छासे उत्पन्न किये हैं। आपकी मसजिदोंमें उसहीका नाम लेकर चिह्नित हैं, और हिन्दुओंके यहां देवमन्दिरोंमें उसीके निमित्त घंटा बजाते हैं। किन्तु सब उसहीको स्मरण करते हैं, इससे किसी जातिको दुःख देना परमेश्वरको अप्रसन्न करना है। हमलोग जब कोई चित्र देखते हैं, उसके चित्तेरेको स्मरण करते हैं यदि हम उस चित्रको बिगाड़ें तो चित्तेरेकी अप्रसन्नता होगी और कविकी उत्तिके अनुसार जब कोई फूल सँघते हैं उसके बनानेवालेको ध्यान करते हैं। उसको बिगाड़ना उचित नहीं।

“ सिद्धान्त यह कि, हिन्दुओंपर जो आपने कर लगाना चाहा है, वह न्यायके परम विरुद्ध है, राज्यके प्रबन्धको नाश करनेवाला है, ऐसा करना अच्छे राज्याधीश्वरोंका लक्षण नहीं है, और बलको क्षीयित करनेवाला है। हिन्दुस्तानकी नीति रीतिके अति विरुद्ध है। यदि आपको अपने मतका ऐसा आग्रह हो कि, आप इस बातसे बाज न आवें तो पहिले रामसिंहसे, जो हिन्दुओंमें मुख्य हैं, यह कर लीजिये और फिर अपने इस शुभचिन्तकको बुलाइये। किन्तु यों प्रजापीडन वारणभंग, वीरधर्म और उदारचित्तके विरुद्ध है। बड़े आश्चर्यकी बात है कि आपके मंत्रियोंने आपको ऐसे हानिकर विषयमें कोई उत्तम मंत्र नहीं दिया ! ”

(गुजराती प्रेस बम्बईसे प्रकाशित औरंगजेव पुस्तकके पृष्ठ १६३।१६४।१६५से ।)

पालन होगया परन्तु उस भयंकर युद्धको करनेके लिये जो बड़ी सेना इकट्ठी की गई थी उसको जानकर सहसा यह विश्वास होता है कि मानो बादशाहने किसी बड़े भारी और प्रतापी राजाको जीतनेकी इच्छासे अपनी भयंकर विक्रमवाली सेनाको तैयार किया होगा, परन्तु जो राणा राजसिंह आज एक निर्वल राजा हैं, भाग्यके दोषसे अपने पूर्व पुरुषोंके असीम गौरवसे अलग हुए तथा आज मुगलोंके द्वारा एक साधारण जिमीदार माने जाते हैं; इस बड़ीभारी मुगल बादशाहतके सामने जिनका राज्य एक किनका-मात्र गिना जाता है आज क्रोधसे उन्मत्त हुए औरंगजेबने उनको ही पराजित करनेकी इच्छासे अपनी बड़ीभारी सेनाको तैयार किया है; अपने प्रधान सेनापतिको पास बुलाकर औरंगजेबने कहा कि “ मेरे राज्यमें जितनी सेना है, सबको इकट्ठा करके एक भयंकर प्रचंड और अजीत दल बनाओ, बादशाहकी आज्ञाका प्रचार होतेही विशाल मुगलोंके राज्यमें जितनी सेना थी जितने सामन्त सेनापति थे वह सब ही बादशाहके शोभायमान झंडेके नीचे आकर इकट्ठे होनेलगे; इस भारी युद्धके पूर्ण करनेके और बढ़ानेके लिये राजकुमार अकबर अपने वंगराज्यसे और अजीम काबुल राज्यसे बुलाया गया था, बादशाहका उत्तराधिकारी सुलतान मौजमः महाराष्ट्र सिंह शिवाजीके साथ युद्ध करना छोड़कर अपनी बड़ीभारी सेनाको साथ लेकर आया, दुष्ट औरंगजेब अपनी प्रचंड सेनाको ले मेवाड राज्यकी ओर चला, उफने हुए समुद्रकी समान उस असीम मुगल सेनाका विकट गर्जन और कुलाहलका शब्द दूरसे ही महाराणा राजसिंहजीने सुना, वैसेही उनके वीर हृदयमें उत्साह भर गया, उन्होंने तत्काल विकट तेजस्विनी भापासे उत्साह देकर अपने सरदार और सामन्तोंको उन्मादित कर दिया। मुगलोंकी युद्ध खुजलाहटको दूर करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेनाको तैयार होनेकी आज्ञा दी, और अपनी सेनाको थोड़ा देखकर गिहोटी वीरगणोंकी पुरानी रीतिके अनुसार सेनाके साथ पहाड़ी किलेके बीचवाले उचित स्थानोंमें शिशोदीय वीरोंकी रक्षा करनेकी प्रतिज्ञा की—उनके साथही मेवाडकी प्रजा भी अपने नीचेके स्थानोंको त्यागन करके दुर्भेद्य आरावलीकी तलैयाँके भीतर जाय २ कर आश्रय लेने लगी; इस रीतिसे मेवाडके नीचेकी सम्पूर्ण भूमि खाली होगई, दुष्ट औरंगजेबने उन सम्पूर्ण स्थानोंको खाली हुआ देखकर शीघ्रही अपने अधिकारमें कर लिया इस प्रकारसे चित्तौर मंडलगढ—मन्दसौर जीरन व और २ देश तथा किले भी थोड़े ही समयमें

मुगलोंके हाथमें चले गये, बादशाह औरङ्गजेबने तत्काल उन किले और देशोंमें अपनी सेनाको स्थापित किया, और राजपूत राणा राजसिंहजीके पकडनेकी इच्छासे आरावली पहाडके भीतर जानेकी प्रतिज्ञा की, इस भयंकर संग्राममें यवनोंकी सेनाके भारसे मेवाडकी भूमि वारम्बार कम्पायमान होने लगी, उनके घोर अत्याचारोंसे दुःखित हुए हिन्दू भयसे व्याकुल हो इधर उधर भागने लगे; राणा राजसिंहने विचारा कि इस भयंकरयुद्धमें पवित्र शिशोदियाकुलका मान और गौरव ही नहीं जायगा, वरन सबसे पहले राजपूत जातिका सनातनधर्म और प्राचीन संस्कारोंतकके जानेकी नौबत आवेगी, जिस पवित्र धर्मको भयंकर स्लेच्छोंके आससे बचानेके लिये दूर पुरुषोंने अपने हृदय रुधिर तकको देदिया था, आज वह शुद्ध पवित्र सनातनधर्म नहीं रहेगा। अधिक कहनेसे क्या है कि जो राजपूतोंके जीवनका भी जीवन है, और स्त्रियोंका स्वर्गीय सतीत्व रत्न है, वह भी पापी दुराचारी मुगलोंके हाथसे जाना चाहता है, यह संकट देखकर क्या राजपूतगण निर्बल और निस्सहायकी समान निश्चिन्त होकर घरमें बैठे रह सकते हैं ? जिनके शिष्टाचारमें किंचित्मात्र भी हीनता आनेपर हृदयमें सहस्रों वज्र गिरते थे, स्लेच्छोंके पाप स्पर्शसे रक्षा करनेके लिये जिनको वह अपने हाथसे मारने अथवा जलती हुई अग्नि के झुंडमें डालनेसे भी नहीं हिचकते थे, आज वीरवालाओंका वही सतीत्व पापाचारी यवनोंके हाथसे कलंकित होगा ऐसा कौन राजपूत पृथ्वीपर है जो अपने देहमें प्राण रहते हुए इस अत्याचारको सहन कर सके ? कोई भी कहीं भी नहीं ? ऐसा कोई भी नहीं करेगा ? इसी कारण बलवान औरङ्गजेबके इस भयंकर पराक्रमके रोकनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा करके संपूर्ण राजपूत वीरगण राणा राजसिंहके लाल झंडेके नीचे दलके दल इकट्ठे होने लगे, अधिक तो क्या कहें मेवाडके पश्चिम ओर रहनेवाले अरण्यचारी “ पलिन्द और पलिपतगण ” भी * सहस्रों धनुष बाण लेकर, राजा राजसिंहका सन्मान तथा गौरव रक्षा करनेके लिये उन्मत्त हृदय हो मेवाडके लाल झंडेके चारों ओर इकट्ठे हुए । आज बहुत दिनोंके पीछे वीरसिंह बाप्पारावलकी प्रचंड “ छेंगी ” भीम दर्पके साथ गिहौट राजके मस्तक पर शोभित हुई ! उसकी तीक्ष्ण कान्तिको देख घोर उत्साहसे उत्साहित हो सम्पूर्ण राजपूत सेना गम्भीर

* देशकी चलित भाषामें इन गिरिभागोंको पलनामसे पुकारते हैं, इसी कारणसे वहाँके अधीश्वर पगेन्द्र वा पलिपति कहते हैं ।

स्वर्गमे जय शब्दको उच्चारण करने लगी; वह जय शब्द आरावली पर्वत-मालाकी तलैटीमें होना और कन्दरा पहाड़ोंमें टकराता हुआ बड़ी दूर तक पहुँचा, मुगलोंकी भेनाने भी “अल्लाहुअकबर” उच्चारण करके राजपूतोंकी सेनाका प्रत्युत्तर दिया, इस प्रकारसे हिन्दू और मुसलमानोंकी सेना घोर उत्साहित हो परस्पर एक दूसरेका सामना करनेके लिये आगेको बढ़ने लगी !

अनन्तर राणा राजसिंहजीने अपनी सम्पूर्ण सेनाको इकट्ठा हुआ देखकर उसके तीन भाग किये और योग्य सेनापतिके आधीनमें उसको भिन्न २ स्थानोंपर स्थापित किया, ज्येष्ठ राजकुमार, जयसिंहने अपनी सेनाको आरावलीके शिखरपर ठहराकर उसके ऊपरके भागको बड़ी चतुराईके साथ सेनासे सजाया, जिससे शत्रुलोगोंका आक्रमण दोनों ओरसे ही बंद होसकै, गुर्जर तथा उसके चारों ओर रहनेवाले भीलोंसे संपर्क नियत रखनेके लिये राजकुमार भीमसिंह गुजरातमें पश्चिम ओरसे पर्वतकी रक्षा करनेलगे, इस ओर राणा भी स्वयं अपनी सेनाको लेकर नायननामक गिरिवर्त्मके बीचमें जाय विराजमान हुए, यदि उस स्थानको शत्रुओंसे अभेद्य कहाजाय तो भी ठीक होगा, उस संकटमय देशके बीचमें उन्होंने इसप्रकार चतुरता और निपुणतासे अपनी प्रचंड सेनाको स्थापन किया कि शत्रुलोगोंको भीतर आतेही वह उन्हें घेर लें, इस प्रकार सेनाके ३ भागों × को भिन्न २ स्थानोंमें टिकाय महाराणा राजसिंह विकट उत्साहके साथ शत्रुसेनाके आनेकी वाट देखने लगे; यदि उस नायनगिरि-मार्गमें औरंगजेब प्रवेश करता तो अवश्यही राणा राजसिंहके हाथसे अपनी सेना-सहित मारा जाता; परन्तु उसका बड़ा भाग्य कहना चाहिये कि वह इस मार्गसे न गया और बाहर ही बाहर चलकर देवारीनामक भीलजनपदमें ठहर रहा, तथा बुद्धिमान तहव्वरख़ाँकी सलाहसे पचास हजार सेना साथ कर अपने पुत्र अकबरको उदयपुरकी ओरको भेजा और बादशाह अपनी सेनाके साथ उसी स्थान-पर ठहरा रहा, वह स्थान जहाँ बादशाह ठहरा रहा राजधानीके चारोंओरसे अंडाकार था, उदयपुरको इसका मध्य बिन्दु मानकर उसके ऊँचे स्थानोंसे चारों ओरको देखनेसे इसका अंडाकारभाव भलीभाँतिसे दीखता है यह दक्षिण उत्तरको लम्बा और पूर्व पश्चिमको संकीर्ण है, इसकी लम्बाई चौदह और

× कहते हैं कि शकावत सम्प्रदायके अधिपति गरीबदासने ही इस कौशलसे सेनाको स्थापित किया था, औरंगजेबको सेना दलके साथ आता हुआ देखकर उन्होंने अपनी सम्पूर्ण सेनाके सामने जो तेजस्वी व्याख्या की थी, भट्टग्रन्थोंमें उसका विस्तारसहित वर्णन है ।

संकीर्णभाग प्रायः ११ ग्यारह मीलका होगा । विशाल आरावलीके विशाल शरीरसे बहुतसे शाखा पर्वतोंने निकलकर इस अंडाकार गिरिप्रदेशकी प्रशस्त देहको पुष्ट किया है—भूमिके नीचसे इन शाखा पहाड़ोंका कोई २ स्थान छः सौ और कोई २ स्थान आठ सौ हाथ ऊंचा है, इसकी एकओर पेशोला प्रवाहित हांकर इस देशकी सुन्दरताईका सहस्रों गुणा बढ़ा रही है, इस निविडभूमिसे बाहर आनेके लिये इमके पूर्वभागके जनस्थानमें आनेके समय केवल तीन गिरिमार्ग ही मिलते हैं, पहला तो अधिकतर उत्तरकी ओरको स्थित है, जो कि देलवाडाकी बगलमें होकर गया है, दूसरा पहले और तीसरेके बीचमें है, यह पूर्वाक्त देवागी स्थानकी बगलमें है, और तीसरा दुर्गम चप्पनकी ओरको फैलाहुआ है, इसीका नाम नाइन है । महागणा राजसिंहने इसी गिरिमार्गमें अपनी सेनाको स्थापित किया था, इन तीन पर्वती मार्गोंमें जो सबसे सरल है, बादशाह उसी स्थानसे गया और उम सरावर्गके किनारे ही पर अपनी छावनीको डाल दिया ।

पिताकी आज्ञानुसार राजकुमार अकबर अपनी पचास हजार सेनाको साथ ले राजधानीकी ओर चला । “कोई भी उसकी गतिको न रोक सका; बहुतसे महल—बाग—सरोवर और द्वीप उमको दिखाई दिये, परन्तु उनमें कहीं भी कोई प्राणीका चिह्नमात्र न था, सभी मौन थे ” अकबरने अपनी सेनाको ठहराया । अत्याचारी शत्रुसंनाके प्रचंड आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेके लिये मेवाडकी प्रजा घरोंको छोड़ २ कर पहाड़ोंपर जाकर रही थी, इम बातको अकबर जानता था, इस कारण उसने इसका कुछ आश्चर्य न किया, वह अपनेको निष्कण्टक जानकर निश्चिन्त हो गहने लगा; परन्तु ऐसी निश्चिन्तता बहुत दिनोंतक नहीं रही, शीघ्रही राणाजीके पाटवी राजकुमार जयसिंहने अपने प्रचंड विक्रमसे उसको घोर रूपसे दलित और त्राग्मिण करदिया—भट्टकवियोंने कहा है कि “कोई २ उस समय नवाज़ पढ़ रहे थे, कोई २ दावत खाकर आनन्द भोग रहे थे, कोई शतरंज खेल रहे थे, सारांश यह कि चोरी करनेके लिये आकर सब सौगये थे, जो कुछ भी हो, वीरनंदन जयसिंहने अकबरकी सेनाके ऊपर जाकर उसे भलीभांतिसे दलित और विताडित कर दिया, बहुतसी यवनोंकी सेना उन्मत्त हुए राजपूत सिपाहियोंके द्वारा तलवार और भांति २ के हथियारोंसे मारी गई, जो बाकी रही वह अपने प्राणोंको बचानेके लिये इधर उधर भागनेकी चेष्टा करने लगी; परन्तु चारों ओरसे मार्गको घिराहुआ देखकर फिर

क्रोधमें भरेहुए राजपूतोंके तीक्ष्ण हथियारोंसे मारी जाने लगी, इस ओर अकबर भयभीत हो बादशाहसे सहायता पानेकी अभिलाषासे देवारीके आगे जानेकी चेष्टा करने लगा, परन्तु राणा राजसिंहने अपनी सेनाको उस गिरिमार्गके भीतर खड़ा करके सम्राटके पुत्र अकबरकी सम्पूर्ण चेष्टा व्यर्थ करदीं, तब संकटमें पड़ाहुआ अकबर अपनी रक्षाका उपाय न देखकर गोगुण्डाके भीतर हो मारवाड राज्यके खेतोंमें होकर भागनेका उपाय करने लगा; परन्तु उसने विपत्तिसे मूढ़ हो चंदनके वृक्षके भ्रमसे भयंकर विषैले वृक्षका आश्रय लिया; फूलोंको तोड़ न पाकर कांटोंके वृक्षमें फँस गया; अपने छुटकारा पानेकी इच्छासे उसने जिस मार्गको लिया; वह अत्यन्त ही संकटसे भराहुआ था; पर्वतोंकी भूमिमें सामन्तलोग भीलोंकी सेनाको साथ लिये अकबरका मार्ग रोकेहुए खड़े थे, कोई २ संकीर्ण उपत्यकाभूमिके ऊपर काठका परकोटा बनाय पर्वतोंके शिखरपर चढ़कर शत्रुओंके ऊपर पत्थरोंकी व तीखे तीरोंकी वर्षा करने लगे; इस ओर राजकुमार जयसिंहने अकबरके पीछे खड़े हो उसके जानेके मार्गको रोक दिया इसप्रकार चारों ओरसे घिरकर सम्राटका पुत्र अकबर वडीभारी विपत्तिमें पड़ा, वह जिस ओरको देखता, उसी ओर उसको दिखाई देता कि मानो मृत्यु भांति २ की भयंकर मूर्ति धारण करके भय दिखा रही-है, इस रीतिसे भयंकर संकटमें पड़कर अकबरने कितने ही दिन बिताये, धीरे २ जितने दिन बीतने लगे उतनी ही उसकी विपत्ति दूनी बढ़ने लगी, अन्तमें भयंकर दुर्भिक्षकी विकट मूर्ति उसके ऊपर पड़ी; तब अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर जयसिंहसे अनुग्रह प्रार्थना करनेके लिये कहला भेजा, और उनको संतुष्ट करनेके लिये इस युद्धके होनेके कारणको भी नष्ट करनेकी प्रतिज्ञा की, उदारहृदय जयसिंहने उसके वचनोंपर विश्वास किया; और उसकी बुरी अवस्था देख दयालु होकर छोड़दिया, अधिक क्या कहैं उसके साथ अपने कितने ही रक्षक मार्ग दिखानेके लिये जिलवाडाके गिरिमार्गतक भेज दिये, उन्हीं रक्षकोंकी सहायतासे उस अगम्य मार्गको पाकर बादशाहका पुत्र अकबर निर्विघ्नतासे चित्तौरके परकोटेके निकट पहुँच गया *

* प्रसिद्ध अर्मेने औरंगजेबका वृत्तान्त अपने ग्रन्थमें लिखा है। उसने लिखा है कि औरंगजेब स्वयं भी अपनी सेनाके साथ ऐसी विपत्तिमें पड़ा था, और उसने भी उदार हृदय राजपूत राजाके वीरोचित गुणोंसे छुटकारा पाया। प्रयोजन समझकर कुछ थोडासा वृत्तान्त यहांपर लिखते हैं।

मुगलोंकी सेना पहाड़ोंके भीतर हो भयंकर परिश्रमके साथ आगेको बढ़ने लगी, परन्तु औरंगजेबके साथ जो सेना थी वह इतनी अज्ञान थी कि थोड़ी ही दूर आगे बढ़कर उसकी गति छोटे-

प्रसिद्ध यवन वीर दिलेरखाने मुगलोंकी सेनाका साथ ले दैशूरी गिरिमार्गके भीतरसे जाय उस दुर्गम प्रदशके बीचमें प्रवेश किया था; बहुतसे ऐसा अनुमान करते हैं, कि वह राजकुमार अकबरका ही उद्धार करनेके अभिप्रायसे उस मार्गमें गया था, पहले तो कोई भी उस यवनसेनापतिकी गतिको न रोक सका, परन्तु जिस समय वह उस बड़े भारी गिरिमार्गके बीचमें पहुँचा तब विक्रम शोलङ्की * और गोंपिनाथ × राठौरने उसके ऊपर प्रचंड विक्रमके द्वारा धार रूपसे आक्रमण किया, उस स्थानमें बहुत देरतक हिन्दू सुसलमानोंमें धार युद्ध होता रहा, परन्तु अभागा दिलेरखाने राजपूतवीरोंके प्रचंड विक्रमको न रोक सका, अपनी सेनाके साथ उसी स्थानमें मारा गया, दोनोंपक्षके युद्धोंमें पराजित हुई मुगलोंकी सेनाके हथियार और डेरोंकी बहुतसी सामग्री विजयी राजपूतोंके हाथमें आ गई ।

—पर्वतोंने अकस्मात् रोक दी, इस और राजपूतोंने एक रात्रिके बीचमें ही उसके पीछेके भागको वृक्षोंकी लम्बी २ डालियोंसे घेरकर मुगलोंकी सेनाके पीछेका मार्ग रोक दिया, तब औरंगजेव बड़े भारी संकटमें पड़ा क्योंकि उसने उस छोटे मार्गमें फँसकर अपनी सेनाके छुटानेका उपाय किया तो था परन्तु राजपूतवीरोंने पहाड़ोंके शिखरोंपर चढ़कर अलोंके प्रहारोंसे उसकी सम्पूर्ण चेष्टाओंको नष्ट कर दिया । उस अवरोधके बाहर शत्रुओंकी जो सेना थी उसने भी बहुतसी चेष्टा की, परन्तु कोई भी उस दारुण परकोटेको भेद नहीं कर सका, औरंगजेवकी अत्यन्त ध्यारी वेगम भी इस उदयपुरके युद्धमें साथ आई थी, वह भी अपनी सेना और रक्षकोंकी साथ ले उस पर्वतके एक स्थानमें ठहरी हुई थी वह भी कैद होगई, परन्तु वेगमके रक्षकोंने विनाशिके डरसे अपनेको राजपूतोंके हाथमें समर्पण कर दिया; बादशाहकी वेगम राणा राजसिंहजीके पास गई; उदारचित्त बुद्धिमान् राणा राजसिंहजीने उसको उचित आदर सम्मान करके ठहरनेको स्थान दिया उस दुष्ट औरंगजेवको इस युद्धका भलीभाँति फल दिखानेकी इच्छासे राणा राजसिंहने दो दिनतक उसकी वेगमको अपने यहां रखकर बादशाहको घोर संकटमें डाल रक्खा, यदि वह ऐसी दुःखित अवस्थामें कुछ अधिक दिनतक रहता तो उसको अवश्य ही मृत्युके मुखमें जाना पड़ता; परन्तु महाराणा राजसिंहजीने तीसरे ही दिन अपने राजपूतोंको बुलाकर बादशाहके मार्गको साफ करनेकी आज्ञा दी; जब औरंगजेव उस भयंकर संकटसे छूट गया तब महाराणा राजसिंहने उसकी वेगमको अपने सेनापतियोंके साथ उसके पास भेज दिया, और कहला भेजा कि “ मैं इसके बदलेमें और कुछ नहीं चाहता केवल इतना चाहता हूँ कि मार्गमें यदि कोई गौ इत्यादि मिले तो तुम उसको न मारना; इसीसे मैं आपका अनुगृहीत होऊँगा । परन्तु दुराचारी औरंगजेवने राणा राजसिंहके कहनेपर किंचित भी ध्यान न किया और वह कहने लगा कि भविष्यत् युद्धसे छुटकारा पानेकी आज्ञासे राणाने हमको जाने दिया था ।

* रूपनगरका स्वामी ।

× गानौरनगरका राजा । इस समय गोद्वार मेवाडसे अलग होगया है ।

यह पहाड़ी संग्राम बड़ी ही चतुराईके साथ हुआ था, फिर अकबर और दिलेरखाँके परास्त होते ही राणा राजसिंहने तत्काल बादशाह औरंगजेब पर हमला किया, आशाके मोहसे अंधा हुआ औरंगजेब अकबर और दिलेरखाँके युद्धका फलाफल जाननेकी इच्छासे अपने पुत्र अजीमके साथ उस देवारी ग्राममें ठहरा हुआ था, उसके हृदयमें आशाकी कितनी ही तरंगें उठ रहीं थीं, उस जीवनतोषिणी आशालहरीकी लीलाको देखते-वह कितने ही सुखदाई स्वप्नोंको देखने लगा परन्तु उसके वह सम्पूर्ण स्वप्न शीघ्रही भंग हो गये, शीघ्रही वीर केशरी राजसिंहके प्रचंड आक्रमणसे उसको अपनी रक्षाका उपाय खोजना पड़ा। उस देवारी गिरमार्गके भीतर हिन्दू मुसलमानोंका भयंकर युद्ध हुआ; राजपूत सेनाके लोग राणा राजसिंहजीकी तीक्ष्ण वीरतासे उत्कंठित और उत्साहित हो सुगलोंकी सेनाके बड़े भारी व्यूहको भेद करनेके लिये भयंकर पराक्रमके साथ उसकी ओरको बढ़ने लगे; राठौर वीर साहसी दुर्गादासने अपनी कठोर प्रतिशोध पिपासासे उन्मत्त हो भयंकर पराक्रमवाले राठौर वीरोंको औरंगजेबके विरुद्ध भेजा। जिस दुष्टात्माने राठौर कुलका सर्व नाश किया है, पिशाचकी समान घृणित मार्गमें पैर डालकर; शान्तमनवाले श्रेष्ठ धार्मिक राठौर राजाको विष देकर संहार करके राठौरोंके हृदयमें भयंकर शोकानलको जला दिया, आज राठौरोंके हृदयमें वह शोकाग्नि भडक उठी है; उस प्रचंड अग्निको बुझानेके लिये उन्मत्त हुए राठौर वीरगण, रणवीर दुर्गादासके साथ सुगलोंके भयंकर व्यूहके सामने बढ़ने लगे। आज औरंगजेब भारी संकटमें पड़ा है। जिसने पत्थरसे हृदयको बांध नृशंस, निठुर और पाखंडीकी समान हिन्दुओंको कठोर लोहदंड द्वारा ताड़ित किया था, जिसने उनका सत्यानाश करनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा की आज इस तीक्ष्ण समरानलको प्रज्वलित कर दिया है, वह लोग क्या आज उसके दुराचरणोंके उपयुक्त फलको न देकर वैसे ही छोड़ देंगे ?—कभी नहीं, चाहे बादशाहकी सेना इनकी सेनासे सहस्र गुणी भी क्यों न हो परन्तु शरीरमें प्राण रहते हुए कोई राजपूत भी अपनी सामर्थ्यके अनुसार आज उसको क्षमा नहीं करेगा। धीरे-धीरे हिन्दू मुसलमानोंका युद्ध भयंकर रूपसे बढ़ने लगा; रणविशारद मुसलमानोंकी ओरसे फिरंगी गोलंदाजोंने तोपोंका चलाना प्रारम्भ किया, उनके श्रवण भैरव निनादसे अनर्गल धुंयेका ढेर निकलने लगा; उस हृदयको स्तम्भन करनेवाले भयंकर शब्दको सुनकर रणसे उन्मत्त हुए सम्पूर्ण राजपूतवीर अपने प्रचंड सिंहनादको मिलाय

घोर उत्साहके साथ मुगलोंकी सेनाकी ओरको बढ़नेलगे, तोपोंके धुँएँसे सम्पूर्ण आकाश ढक गया, उन दिग्गदाही गोलोंके संहार करनेके स्पर्शसे ही बहुतसे राज-पूतोंका प्रचंड वाहुचल मथित होगया, बहुतसे राजपूत एक पलके बीचमें ही न जाने कहांको विलाय गये, परन्तु इससे राजपूतोंका उत्साह कुछ भी मंद न हुआ; वरन और भी दृगुना बढ़ने लगा। तोपोंके निकलेहुए उस वडेभारी धुँएँका भेद करके अन्तमें वहलोग अपने प्रचंड केशरी विक्रमके साथ मुगलोंकी सेनाके ऊपर जा-पडे उनके हाथकी तीक्ष्ण तलवारोंके भयंकर प्रहारसे फिरंगी गोलंदाजलोग मारेगये; तोपोंकी जंजीरोंने खंड २ होकर उनका मार्ग साफ करदिया, फिर धीरे २ भयंकर मुगलोंका व्यूह भी छिन्न भिन्न होगया, म्णवीर राजपूतगण उस छिन्न भिन्न हुई सेनाके भीतर जाकर मतवाले हाथीकी समान उसको दलित मथित और आसित करने लगे, उनकी भयंकर तलवारोंके आघातसे बची बचाई मुगलोंकी सेना मारी गई, तब औरंगजेब अपनी रक्षाका उपाय न देखकर कुछ बचीहुई सेनाको साथ ले युद्धभूमिको छोड भागा, उसकी तोपें और बहुतसे अस्त्र शस्त्रें राजकीय ध्वजा, और बहुतसे हाथी और डेरोंमें गड्ढे हुए बहुतसे द्रव्य विजयी राजपूतोंके हस्तगत होगये। यह भयंकर संग्राम, राज-पूतोंके धर्म और गौरवकी रक्षाका यह भयंकर भीषण संवर्ष; संवत् १७३७ वि० के * फाल्गुनमें वसंतके समय हुआ था; यद्यपि वीर श्रेष्ठ राणा राजसिंह-ने इस युद्धमें जय पाई थी परन्तु इसके बदलेमें मेवाडराज्यके बहुतसे राजपूत वीरोंका रुधिर दिया गया था।

पराजित और अपमानित हुआ औरंगजेब इस दुःखसे पीडित होने लगा, परन्तु एक सुहृत्तके लिये भी वह निरुत्साह न हुआ इस भयंकर पराजय और अपमानका बदला लेनेकी इच्छासे उसने अपनी सेनाको चित्तौरके परकोटेके नीचे इकट्ठा किया और अपने पुत्र सुलतान मुअज्जमको दक्षिणसे बुलाया, मुअज्जम, उस समय महाराष्ट्रकेशरी सहावीर शिवाजीके साथ युद्ध कर रहा था, परन्तु बादशाहने शिवाजीकी स्वाधीनताके हंरण करनेकी अपेक्षा उत्तर देशके गौरवको नष्ट हुआ जानकर उसको जीवित करनेका प्रयोजन समझ अपने पुत्रको शीघ्र आनेकी आज्ञादी परन्तु उसका यह उद्योग शीघ्रही विफल होगया, वीरवर जयमलके वंशवाले श्यामलदासने अपनी कितनी एक सेनाको साथ ले चित्तौर और अजमेरके बीचके स्थानोंमें जाकर इन दोनों नगरोंको भलीभांतिसे

छिन्न भिन्न कर दिया और मुगलोंकी सेनापर भयंकर आक्रमण करके उसको दलित और भयभीत करने लगा, उसकी रणचतुरताको देखकर औरंगजेब अत्यन्त ही भयभीत हुआ; अन्तमें अपनी स्वाधीनता और जीवनका भी खटका देखकर उस संकटदायी युद्धभूमिको छोड़नेका विचार करने लगा; परन्तु उसके प्रतिशोधकी प्यास शान्त न हुई, जिस कारण वह मेवाडराज्य-पर चढ़ाई करके आया था उसका वह मनोरथ भी पूर्ण न हुआ, मनोरथ पूर्ण होना तो दूर रहा वरन स्वयं ही अपमानित और पराजित होकर समरभूमिको त्याग भागना पड़ा; बादशाहके मर्ममें जो पीडा हुई उसकी सीमा न रही, परन्तु कैरे क्या? अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर उसने अपने पुत्र अकबर और अजीमको इस युद्धका भार सौंपा, तथा जबतक इस सेनामें मुगलोंकी और सेना आकर न मिलजाय तबतकके कर्तव्य कार्यकी परामर्श देकर अजमेरकी ओरको चला गया अजमेरमें पहुँचते ही उसने अपने दोनों पुत्रोंकी सहायताके लिये बहुतसी सेना भेजी और राठौर वीर श्यामलदासके विरुद्ध खाँ रोहेला नामक सेनापतिको वारह सहस्र सेनाके साथ चित्तौरनगरको भेजा, युद्धविशारद बुद्धिमान् श्यामल-दासने खाँ रोहेलाको सेनाके साथ आगे आता हुआ देखकर मारवाडकी सेनाके साथ पुरमंडल नामक स्थानमें शीघ्रतासे शत्रुसेनाके ऊपर हमला किया और उसको भयंकररूपसे परास्त करके अजमेरकी ओरको पुनर्वाग भगाया, इस युद्धमें भी मुगलसेनाकी बहुतसी हानि हुईथी ।

वीर केशरी महाराणा राजसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा साथके वीरगण आरावलीके पूर्वोक्त युद्धमें जय प्राप्त करके, परमानंद भोगने लगे । इस ओर राजकुमार भीम अपनी सेनाको साथ ले उस पर्वतकी पश्चिम एक नये प्रकारका वीराभिनय करने लगे; युद्ध प्यासकी शान्तिका दूसरा उपाय न देखकर उसने गुर्जरराज्यपर चढ़ाई की । ईडर नगर ध्वंस किया, वीरवर भीमने वहाँके यवन बादशाह हुसेन और उसकी सेनाको वहाँसे निकाल दिया, तथा बडनगरके मध्यमें हो सहसा पट्टनमें जा पहुँचे—पट्टन उस समय उस देशकी राजधानी थी । शिशोदीय राजकुमार भीमने उस नगरीको लूटा, इस प्रकारसे सिद्धपुर—मौडासा—तथा और नगरोंकी भी इनके द्वारा ऐसी ही दशा हुई । उनके कठोर आक्रमणसे पीडित हो दुःखको न सहनकर उस नगरीके रहनेवाले सम्पूर्ण मनुष्य अपने प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगे, और अत्यन्त भयभीत हो राणाके पास क्षमा माँगनेके लिये आये; उनकी दीन दशाको देख कृपालु तथा उदार हृदय राजसिंहने अपने पुत्र

भीमको लौट आनेके लिये कहला भेजा, भीम उससमय जय प्राप्त होनेके उत्साहसे उत्साहित होकर मूर्त जा रहे थे, पिताकी आज्ञाको पातेही उस युद्धको छोडकर भेवाडमें आपहुंचे ।

परास्तहुए शत्रुओंके ऊपर क्षमाका दिखाना वीर हृदय राजपूतजातिका एक प्रधान धर्म है, इस वीरमंत्रके अनुसार ही वह लोग कार्य करतेथे, परन्तु आज दुष्ट औरंगजेबके कठोर अत्याचारोंके झेलनेके कारण उन्होंने इस मंत्रके विरुद्ध कार्य किया । दुराचारी औरंगजेब जैसा निटुर था वैसा ही कृतघ्न भी था उदार हृदय गणाने अनुग्रह करके उमरको और उसके पुत्रको बंधनसे छोड दियाथा, दुष्टमति औरंगजेब उस उपकारको भूलगया और उसने फिर उन्हींको सताना प्रारंभ किया, परन्तु उस दुराचारीका वह आशय फलीभूत न हुआ, तो भी उसने अपने दुष्ट अभिप्रायोंको न छोडा, उसके पहिले किये हुए अत्याचारोंकी पीडाके विषयका राजपूत लोग न भूले वह अवश्य बदला लेंगे राणाजीके दयालदास नामक एक अत्यन्त साहसी और कार्यचतुर दीवान थे, मुगलोंसे बदला लेनकी प्यास उनके हृदयमें सर्वदा प्रज्वलित रहतीथी, उन्होंने शीघ्र चलनेवाली घुडसवार सेनाको साथ लेकर नर्मदा और वितवा नदीतक फैलेहुए मालवा राज्यको लूटलिया, उनकी प्रचंड भुजाओंके बलके सामने कोई भी खडा नहीं रह सकता था—सारंगपुर—देवास—सरोंज—माडू—उज्जैन और चंदेरी इन सब नगरोंको इन्होंने बाहुबलसे जीतलिया, विजयी दयालदासने इन नगरोंको लूट कर वहांपर जितनी यवनसेना थी उसमेंसे बहुतसीको मारडाला, इस प्रकारसे बहुतसे नगर और गाँव इनके हाथसे उजाडेगये, “इनके भयसे नगरनिवासी खवन इतने व्याकुल होगयेथे कि किसीका भी अपने बन्धु बान्धवके प्रति प्रेम न रहा अधिक क्या कहें वे लोग अपनी प्यारी स्त्री तथा पुत्रोंको भी छोड कर अपनी रक्षाके लिये भागने लगे; जिन सम्पूर्ण सामग्रियोंके लेजानेका कोई उपाय दृष्टि न आया अन्तमें उनमें अग्नि लगाकर चले गये” अत्याचारी औरंगजेब हृदयमें पत्थरको बांधकर निराश्रय राजपूतोंके ऊपर पशुओंकी समान आचरण करताथा, आज उन लोगोंने ऐसे सुअवसरको पाकर उस दुष्टको उचित प्रतिफल देनेमें कुछ भी कसर नहीं की, अधिक क्या कहें, हिन्दुधर्मसे वैर करनेवाले बादशाहके धर्मसे भी अपना पलटा लिया “काजियोंके हाथ पैरोंको बाँधकर उनकी डाढी मूछोंको मुडा और उनके कुरानोंको कुएँमें फेंकदिया ” दयालदासका हृदय इतना कठोर होगयाथा कि-

उसने अपनी सामर्थ्यके अनुसार किसी मुसलमानको भी क्षमा नहीं किया। तथा मुसमानोंके मालवाराज्यको तो एकवार ही मरुभूमिकी समान करदिया, इस प्रकार देशोंको लूटने और पीडित करनेसे जो विपुल धन इकट्ठा किया वह अपने स्वामीके धनागारमें देदिया और अपने देशकी अनेक प्रकारसे वृद्धि की थी।

विजयके उत्साहसे उत्साहित होकर तेजस्वी दयालदासने राजकुमार जयसिंहके साथ मिलकर चित्तौरके अत्यन्त ही निकट बादशाहके पुत्र अजीमके साथ भयंकर युद्ध करना आरंभ किया, इस भयंकर युद्धमें मेवाडके वीरोंके सहकारी*राठौर और खीचीवीरोंकी अनुकूलतासे तथा उत्साहके साथ उनके सम्मिलित होनेसे अजीमकी सेनाको भयंकररूपसे वीरवर दयालदासने दलित करके अन्तमें परास्त करदिया पराजित अजीम प्राण वचानेके लिये रण थम्भौरको भागा। परन्तु इस नगरमें आनेसे पहिले ही उसकी बहुत हानि हुईथी। कारण कि विजयी राजपूतोंने उसका पीछा करके बहुतसी सेनाको मारडाला जिस अजीमने पहले वर्षमें चित्ताडनगरीका स्वामी बनकर अकस्मात् उसको अपने हाथमें करलियाथा आज उसको उसका उचित फल दियागया, परन्तु राजपूत केशरी राणा राजसिंहके बदलेकी प्यास शांत न हुई, जिस दुष्टमुगलने उनके असंख्य हिन्दुभाइयोंको पीडित करके दुःखित कियाथा, जिसने सोनेकी मेवाडभूमिको इमशानकी समान करदियाथा, जिसने सनातनधर्मको पैरके नीचे दलित करदियाथा, क्या उसका बदला थोडासा होसकताहै? जबतक पवित्र मेवाडभूमि पापी म्लेच्छोंके अपवित्र चरणभारसे पीडित रहैगी, जबतक मुगलोंको एक सिपाही भी मेवाडराज्यके भीतर रहैगा तबतक राणाका क्रोध शान्त नहीं होगा और उनका हृदय ठंडा न होगा। उन्होंने मुगलोंकी सेनाको जडसे नाश करनेकी प्रतिज्ञा की, और थोडे ही समयमें उस प्रतिज्ञाको सिद्ध करके कुछ कालके लिये शान्ति भोग करनेलगे, परन्तु वह शान्ति थोडेही समयके लिये थी, फिर शीघ्रही उनको अजितसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये तलवार पकड़कर यवनोंके विरुद्ध युद्ध करना पड़ा।

* सहकारी वीरोंके यह नाम हैं मेवाडके मुख्य सामन्त मोहकम और गंगा, शक्तावत, सलंवर (सालंवा) के रतनसिंह, चूडावत, सादरीके चन्द्रसेन झाला, वेदलाके सवलसिंह चौहान और बीजोलीके वैरीसाल पंवारथे। मुगलोंके साथ युद्ध करनेसे पहले इन चारों वीरोंने अपनी २ तेजस्विनी भाषाओंमें व्याख्यान दियेथे वह सम्पूर्ण व्याख्यान भट्टग्रंथोंमें लिखे हैं।

राठौरकुलमणि धार्मिक श्रेष्ठ जसवंतसिंह पापी औरंगजेवकी प्रचंड विद्वेषाग्निमें गिरकर पंतगकी समान भस्म होगये थे। जिस दिन पिताके शोकसे शोकित हुए कुमार अजितसिंहको कैद करनेके लिये औरंगजेवने अभिलाषा की थी, उसी दिनसे राठौरकी राजरानीने मारवाडराज्यका भार अपने हाथमें लेलिया। उसी दिनसे वह अपने पुत्रके स्वार्थके लिये बड़ी चतुरता और बुद्धिमान्नीसे राजकाजको देखने भालने लगीं। कई वारमें कितनी ही भयंकर विपत्तियोंने उनको आक्रमण कियाथा, कितनी ही वार उनको महासंकटमें पडना पडा था परन्तु एक तेजस्विता और बुद्धिकी सहायतासे उन्होंने उन सम्पूर्ण विपदां और संकटोंसे छुटकारा पाया, वरन शत्रुओंसे अपना बहुतसा विभव छीन लियाथा। वह वीर स्त्री थीं, वाप्पारावलके पवित्र वंशमें उत्पन्न हुईथीं, इस कारण जितने गुण वीर स्त्रियोंमें होने आवश्यक थे वे सब गुण उनमें विद्यमान थे, इतने दिनोंतक वह अपने उन समस्त गुणोंकी सहायतासे ही अपने पुत्रके स्वार्थकी रक्षा करनेमें समर्थ हुईथीं। परन्तु अब कठोर हृदय औरंगजेवने उनके ऊपर ऐसे कठोर अत्याचार करने आरंभ किये कि उनका रोकना उनके पक्षमें सर्वथा असम्भव हुआ। तब राणा राजसिंह मारवाड और मेवाडकी सेनाको इकट्ठा करके अवकी वार गोद्वार (गोडवाड) जनपदके प्रधान नगर गनोरामें बादशाहके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये तैयार हुए। राजकुमार भीम अकेले ही उन राठौर व शिशोदियोंकी सेनाको लेकर अकबर और तहवरखाँके सामने हुए, शीघ्र ही दोनों दलोंमें भयंकर संग्राम होनेलगा, मुगललोग रणविशारद राजपूत भीमके पराक्रमको न सहकर रण स्थानमें भलीभांतिसे हारगये; ऐसा कहते हैं कि एक चतुर राजपूतकी अपूर्व चतुराईसे ही इस युद्धमें जय प्राप्त हुईथी। राजपूतोंने मुगलोंकी सेनामेंसे पांच सौ ऊंट छीन लिये, और उनकी पीठोंके ऊपर जलतीहुई मसाल रखकर बादशाहकी सेनामें छोड़दिया; रात्रिके घोर अंधकारमें जलतीहुई मसालोंको देखकर मुगलोंकी सेना भयभीत हो इधर उधर भागनेलगी, उस सुअवसरमें राजपूतोंने मुगलोंकी सेनापर आक्रमण कर उसे घोररूपसे परास्त करदियाथा।

औरंगजेवका कोई भी आशय सिद्ध न हुआ, असीम सुयोग और विपुल सहायताका बल होनेपर भी वह राजपूतोंके प्रचंड केशरी विक्रमको न रोकसका; उसको बारम्बार युद्धमें परास्त करके वीर श्रेष्ठ राजसिंह और उनके सहकारी मित्रभाव रखनेवाले राजपूत राजा और सामन्तोंने उसको तख्तपरसे उतारकर

उसके पुत्र अकबरको अभिषेकित करनेका विचार किया। शीघ्रही यह समाचार गुप्तभावसे अकबरको कहला भेजा, परम धार्मिक वृद्ध शाहजहांको तख्त-परसे उतारकर पितासे द्राह करनेवाले दुष्ट औरंगजेबने संसारमें जो अत्यन्त घृणित उदाहरण स्थापित कियाथा, राजकुमार अकबर भी उस उदाहरणके अनुसार उस सुयोगको त्याग न करसका, इस कारण उसने आनन्दित हृदयसे राजपूतोंके प्रस्तावका ग्रहण किया, और शुभ कार्यको सिद्ध करनेके निमित्त राजपूतोंने अपने एक विश्वासी राजपूतको अकबरके पास भेजा, शीघ्रही राजपूतलोग अपनी रसना लेकर इकट्ठेहुए। ज्योतिषीने आकर अकबरके अभिषेकका दिन निश्चय किया। गुप्तभावसे तैयारियाँ होनेलगीं; परन्तु उसकी असावधानीसे शीघ्रही वह समस्त तैयारियाँ निष्फल हुई, और राजपूतोंके उद्देश भी व्यर्थ होगये, जिस चतुरता और तीक्ष्ण बुद्धिसे औरंगजेबके कार्य सिद्ध हुएथे, यदि अकबर उन्हें किंचित्मात्र भी जानता होता तो उसकी यह अभिलाषा शीघ्रही सिद्ध होजाती, तब वह जानलेता कि जिस ज्योतिषीने उसके अभिषेकका दिन निश्चय करदिया है वह कैसा कपटी और विश्वासघातक है, उस कपटाचारीने जब देखा कि राजकुमार अकबरके तख्तपर बैठनेकी सम्पूर्ण तैयारियाँ होगीहैं और अब केवल सिंहासनपर बैठना बाकी है, तब वह बादशाहके पास गया और यह सम्पूर्ण वृत्तान्त कहसुनाया, औरंगजेब एक मुहूर्तके लिये तो स्तम्भित हुआ, परन्तु उत्साहरहित न हुआ, उसने उस विपत्तिके समय एक बार अपनी अवस्थाको देखा, उसने देखा कि मैं अकेला हूं, औरंगजेबके शरीर रक्षकोंके अतिरिक्त उस समय और कोई भी उसके पास नहीं था, मुअज्जम और अजीम-बहुत दूरपर है, इस ओर अकबर भी थोड़ी ही दूर है, अजमेर केवल एक दिनका ही मार्ग हैं, अब और उपाय क्या है? कौन पुत्रके हाथसे रक्षा करेगा? अकबरके साथ प्रगटमें युद्ध करना होगा, इस समय कोई मुगल वीर भी पास नहीं है, अतएव ऐसी अवस्थामें क्या उपाय है? एक दिनसे अधिक और समय भी नहीं है। ऐसे संकटके समयमें वह एक दिनको एक मुहूर्त जानने लगा; परन्तु एक दिनके उस एक मुहूर्तको वृथा कार्यमें न लगाकर बुद्धिमान औरंगजेब अपनी रक्षाका उपाय ढूंढने लगा। उपाय निकल आया। वह उपाय अत्यन्त सीधा था, उस उपायसे मनुष्योंकी हत्या अथवा रुधिर भी न वहेगा बादशाह अपनी रक्षा करनेको भलीभांतिसे समर्थ हुआ; उसने अकबरको एक पत्र लिखा और अपने गुप्त दूतके हाथ उस पत्रको राजपूतके सेनापति दुर्गा-

दासके डेरेमें डालनेको कहा, अकबरके ऊपर राजपूतवीरोंका संदेह होना ही उस पत्रका मुख्य उद्देश था, चतुर बादशाहने आज छल कपटसे उस मनोरथको सिद्धकिया । उस पत्रमें अकबरकी प्रशंसा करके बादशाहने लिखाथा “ हे वत्स ! तुम्हारी इस चतुरताके वृत्तान्तको जानकर मैं अत्यन्त ही संतुष्ट हुआ, परन्तु सावधान रहना देखो कहीं राजपूतलोग इस हमारे गुप्त षडयंत्रको न जानसकें, जब वह हमारे साथ युद्ध करने लगें उसी समय तुम अपनी सेनाको साथ लेकर भलीभांतिसे उनका संहार करना, ऐसा करनेहीसे हमारी अभिलाषा सिद्धहोगी ।” इस प्रकारसे ही कूटनीतिका अवलम्बन करके कूटबुद्धि शेरशाहने राजपूत मालदेवके हाथसे अपनी रक्षा कीथी । तथा वर्तमान समालोच्य समयमें महाराष्ट्र वीर शिवाजीके विरुद्ध भी यह नीति सफल हुईथी । औरंगजेवकी वह कपटमयी पत्रिका दुर्गादासके * हाथमें पड़ी, अकबरके नामका सिरनामा और बादशाहके नामकी मोहर देखकर उस वीरने अत्यन्त ही शंका और संदेहसे उस पत्रको खोल प्रारंभसे लेकर अंततक पढ़ा । सब ही उनको स्वप्नकी समान दिखाई दिया, औरंगजेवकी छलनाको न जानकर दुर्गादासने उस पत्रको सत्य ही विचारलिया, जिस अकबरको बादशाह बनानेको उसने वह अपनी सेना तैयार कीथी, वही अकबर विश्वासघातक है ? इस बातका विश्वास क्या सहजहीमें आसकतहै ? परन्तु राठौर वीर दुर्गादासने ऐसा विश्वास कर लिया, कारण कि वह जानतेथे, कि चतुरता और विश्वासघातकता यवनजातिका धर्म ही है, अकबर भी यवन है, इस कारण वह ऐसी चतुरता और विश्वासघातकता करसकता है, इस बातका दुर्गादासके हृदयमें दृढ़ विश्वास होगया वह अत्यन्त ही दुःखी हुए और सहस्रों बार यवन जातिको धिक्कार देकर अपनी सेनाको साथ ले वहांसे लौट आये; राजपूतोंके एकवार ही बदलजानेका कारण अकबरने न जाना, वह अपने दुर्भाग्यको ही विचारकर अत्यन्त शोकित हुआ, उसका परम विश्वासी तहव्वरखाँ दारुण दुःखसे व्याकुल होनेलगा, उसकी

* महात्मा टाडसाहबको हस राठौरवीर दुर्गादासकी तरवीर मिलीथी, दुर्गादास लूती नदीके किनारे पर स्थित दुरनारनामक स्थानका अधीश्वर था । उन्होंने ही कुमार अजितसिंहको दुराचारी औरंगजेवके हाथसे छुटाय उसके अत्याचारी व्यवहारोंसे कुमारकी रक्षा कीथी, और अपने देशकी स्वाधीनता पुनर्वाप्त करनेके लिये बादशाहके विरुद्ध अगणित युद्ध कियेथे, वह जिस समय अकबरको संकटसे छुटाकर लियेजारहेथे, उस समय अजीमने उनके पास चालीस हजार मोहरें नजरके लिये भेजीं, रिशवत देनेका उद्देश्य स्पष्ट था परन्तु सुलतान अजीमने साफर नहीं कहाथा । यह कहना अनावश्यक है, कि दुर्गादासने उन अशरफियोंको वृणाके साथ पैरसे ठुकरा दियाथा ।

यह आन्तरिक इच्छा थी कि अकबर तख्तपर बैठे आज वह अभिलाषा पूरी होतेहुए भी पूरी न हुई, इस कारण उसको जो दुःख हुआ था उसे वही जानता होगा उसके दुःखकी सीमा न रही, दुःखके पीछे निराशाने आकर धर दवाया उसी निराशासे उसका हृदय पत्थरकी समान होगया, अकबरके सौभाग्यके मार्गको साफ करनेके लिये उसने बादशाहको विष देकर मारडालनेकी अभिलाषा कीथी, परन्तु उसकी वह अभिलाषा भी निष्फल होगई, अन्तमें तहव्वरखांका जीवन भी नष्ट होगया, इस ओर औरंगजेबकी उस कूटनीतिके प्रकाश होनेसे पहलेही मुअज्जम और अजीम उसके पास आगयेथे, तब औरंगजेब भलीभांतिसे निष्कण्टक होगया, अकबरने अत्यन्त भयभीत होकर राजपूतोंके पास आय उनका आश्रय लिया, राजपूतलोग बादशाहकी चतुराईको भलीभांतिसे जानगयेथे इसकारण अकबरको आदरसहित ग्रहणकरनेमें कुछ भी विचार न किया परन्तु अकबर तो भी निश्चिन्त न रहसका, वह जहां जहां जाता था वहां ही उसे यह दिखाई देताथा कि मानो पिताकी क्रोधाग्नि पीछे २ आरही है वह अपने पिताके कठोर चरित्रोंको भलीप्रकारसे जानता था उन्हीं चरित्रोंका विचार करते-उसको दुगुना भय होगया था, अन्तमें धीरे रहते हुए अपनी रक्षाका उपाय न देखकर उसने औरस्थानपर जानेका विचार किया; राठौर वीर दुर्गादास उसकी इस उत्कंठाको देखकर पांच सौ राजपूतोंकी सेनाको साथ लेकर उसे पालवगढ़ स्थानमें महाराष्ट्र वीर संभाजीके पास लेजानेको मेवाड और डूंगरपुरके गिरिमार्गको उलंघन कर उस नगरमें जा पहुँचे, मार्गका कोई विघ्न तथा बाधा उनकी प्रचंड गतिको न रोकसकी; पालवगढ़में अकबर कुछ दिन रहा और इङ्गलैण्डके जहाज पर चढकर फारसको चलागया ।

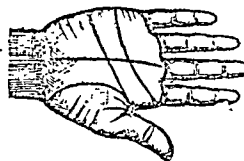
पंडितवर अर्मने कहाहै कि “अपने भ्राता शुजाकी छायामयी प्रेममूर्तिको पठानोंके बीचमें देखकर औरंगजेब जैसी चिंतासे पीडित हुआ था आज संभाजीके पास अकबरके जानेका वृत्तान्त सुनकर भी उसे उसी प्रकारका दुःख हुआ, और फिर राजपूतोंसे अकबरकी मित्रताका होना उसके लिये और भी दुःखदायी होगया, यदि उसकी अपेक्षा राजपूतोंसे युद्ध होता तो वह उतनी चिन्ता नहीं करता यद्यपि राजपूत उसके प्राणोंको नाश करना नहीं चाहतेथे वह केवल उसको तख्तसे उतारनेकी इच्छा करतेथे । आज उन राजपूतोंको अकबरके साथ मिलाहुआ देखकर बादशाह अत्यन्त ही शंकित हुआ, उसकी इच्छा राजपूतोंके साथ संधिकरनेकी हुई परन्तु अपनी मर्यादाको विचारकर

उसने स्वयं संधिका प्रस्ताव न उठाया, मुगलोंके सेनापति दिलेरखाँ-
के आधीनमें एक विचक्षण राजपूतसैनिक अतिप्रतिष्ठाके साथ कार्य
करता था; इस समय उसने ही इस उपस्थित संकटसे बादशाह-
का उद्धार किया, अपने देशको जानेका वहाना कर उसने अपनी सेनाको
छोड़ा और मार्गमें जाते २ मानो बड़े शिष्टाचारके वशसे ही महाराणासे साक्षात्
किया । दोनोंमें परस्पर वार्तालाप होतारहा; होते २ युद्धका वृत्तान्त भी आपडा
राजपूतोंने उसके लिये अधिक दुःख प्रकाश किया; ऐसा जानाजाताहै वह
दुःखप्रकाश काल्पनिक नहीं था, इसके उपरान्त उस सैनिकने राणाजीसे कहा
कि “ यद्यपि औरंगजेब स्वयं संधिके प्रस्तावको नहीं उठासकताहै परन्तु
वह उसको स्वीकार करलेगा ” यह सुनकर राणाने अनुरोधके साथ कहा कि
“ तो आपही हमारी तरफसे बादशाहसे संधिका प्रस्ताव उठाइये । ” यह वृत्तान्त
गेवाडके भट्टकवियोंने अपने ग्रंथोंमें लिखाहै उन्होंने उस मध्यस्थ राजपूतको बीका-
नेरका राजा श्यामसिंह निर्देश कियाहै ।

श्यामसिंहसे राणाके मनका वृत्तान्त जानकर चतुर औरंगजेबने अपने स्वभा-
वके अवलम्बन करनेमें कुछ भी त्रुटी न की, राणाजी संधिकरनेको तैयार
हुएहै यही उसके लिये एक योग्य अवसर था उसी सुयोग अवसरमें औरंगजे-
बने आज कल करके राणाको तो युद्धसे विमुख रखवा और आप धीरे-रगुप्तभावसे
युद्धकी तैयारियाँ करनेलगा, इस प्रकारसे वर्षात्रहत्तु आगई अतएव राणाजीको
युद्ध छोडना पडा, वर्षाके वीतजानेपर दुष्ट औरंगजेब सेनाको साथ ले राणाके
ऊपर चढाई करके आया, परन्तु उस समय दोनोंमें संधि होगई; दुःखका विषय
है कि उस संधिपत्रमें मुंडकरके दूर करनेका कोई प्रस्तावतक न रहा यहांतक कि
उसका नामतक भी न आया । केवल उसमें यही लिखा गया कि राणा राजसिंह-
को चित्तौरके जनपद फिर मिलजाँयें जोधपुरके विषयमें भी उसमें लिखाथा;
इस संधिके वृत्तान्तको भलीभांति अर्जने लिखाहै, संधिपत्रके अनुवाद देखनेसे
उसकी यथार्थता प्रगट होगी । *

* बादशाहके साथ शूरसिंह (राणा राजसिंहके चचा) और नरहर भट्टकी संधिका वृत्तान्त
महाकुमावकी अभिलाषा और आह्वान (बुलाने) के अनुसार आपके दोनों सेवक नीचे लिखेहुए
प्रस्तावोंके निवेदन करनेके लिये राणाजीके द्वारा श्रीमानके निकट आवेहैं आशाहै कि जो कुछ यह
पद्मसिंह निवेदन करेंगे उसमें श्रीमान् सम्मति देंगें ।

स्वहस्तालिखित “ मंजूरी ” शब्दके साथ
बादशाहका पंजाया पंचागुलिका अंक ।



“ मंजूरी ”
स्वीकार !

परन्तु यह समस्त वृत्तान्त राणा राजसिंहके उत्तराधिकारी जयसिंहके ही राज्यमें हुआ इस कारण इस स्थानमें इसका भलीभांतिसे विचार करना युक्तियुक्त नहीं होसकता, कारण कि संधिकी तैयारीके शेष नहोते राजपूत वीर केशरी वीर श्रेष्ठ राणा राजसिंह इस असार संसारको छोड़कर चलेगये थे, जबसे राणा राजसिंह गद्दीपर बैठे तभीसे उन्होंने मुगलबादशाह औरंगजेबके साथ कितनी ही बार युद्ध किये इससे उनके अंगप्रत्यङ्गोंमें बहुतसे घाव होगयेथे, उन्हीं घावोंकी पीडा होनेसे उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहा, एक तो उनको हृदयज्वरकी चिन्ता दिन रात भस्म करेडालती थी फिर घावोंकी भयंकर पीडा अधिक सताती थी वीर श्रेष्ठ राजसिंह उस भयंकर पीडासे छुटकारा पाय स्वर्गके सिंहासनपर अपने पूर्व पुरुषोंके साथ जाकर मिलगये । * जिस दिन हिन्दूकुलसूर्य वीर श्रेष्ठ प्रतापसिंहने अपने देशकी प्रेमिकता और संन्यासकी पराकाष्ठा दिखाकर इस लोकसे विदा लीथी उसदिनसे मेवाडकी भूमि जिस विषादरूपी भयंकर अंधकारसे ढकगई थी उस अंधकारको, अमर, कर्ण अथवा जगतसिंह इनमेंसे कोई भी दूर न करसका परन्तु वीर केशरी राजसिंहने अपने अद्भुत विक्रम और प्रकाशमान देशकी प्रेमिकताके बलसे उसको भलीभांतिसे दूरकर मेवाडके नष्टहुए गौरवका पुनरुद्धार किया। जैसे अविश्रान्त विक्रम और अध्यवसायके साथ उन्होंने दुष्ट औरंगजेबके विरुद्ध तलवार धारणकर उसके अखर्व गर्व और अहंकारको चूर्ण करदियाथा, इससे उनकी देशप्रेमिकताका स्पष्ट परिचय पायाजाताहै, राणा राजसिंह, वीर श्रेष्ठ

—१ चित्तौरके अन्तर्गत और सन्निकट जनपदोंको लौटा देनेकी आज्ञा हो ।

२ हिन्दुओंके बहुतसे मंदिर तोड़ २ कर उन स्थानोंमें मस्जिदें बनवाईगईहैं इस बातके विषयमें हमको अब कुछ नहीं कहनाहै परन्तु आगेको ऐसा घृणितकार्य नहीं किये जायँ ।

३ राणाजी जिस प्रकारसे बादशाहकी अनुकूलता करते आवेहैं वह वैसेही रहेंगी । परन्तु उसमें और अधिक दावा न कियाजाय ।

४ “हम आज्ञा करतेहैं कि स्वर्गीय राजा जसवंतसिंहके पुत्र और उनके कुटुम्बी अपनेकार्यको साधनकरनेमें सामर्थ्यवान होनेपर अपने राज्यको फिर पावें । ” (क)

(क) राणा राजसिंहने मारवाड कुमार अजितसिंहको राज्य दिलाने और जिजियाकरको रोकनेके लिये ही खड्ग धारण किया था । अजित उस समय राणाजीके पास ही था ।

अपनी मर्यादाका विचार करके किसीप्रकारके नीच विषयको नहीं चाहता भुवनविकाशक भगवान दिवाकरकी किरणमालावत् श्रीमानकी सौभाग्यकी ज्योति सदैव वर्द्धितहो और कभी अस्त न होवै । श्रीमानके सेवक शूरसिंह और नरहरभट्टकी विनीत प्रार्थना ।

* संवत् १७३७ (अर्थात् सं० १६८१ ई०) ।

प्रतापसिंहके योग्य वंशधर थे। उन्होंने इसही कारणसे भारतके उस भयंकर प्रलय-कालमें, दलित और पीडित अभागी भारतसन्तानोंका उद्धार करनेके लिये अपने तीक्ष्ण विक्रमसे औरंगजेवके विरुद्ध कठोर युद्धकियाथा। भारतकी उस भयंकर दुर्दशाके समयमें यदि वह उत्पन्न न होते तो हिन्दूसंतान और हिन्दुओंका धर्म अस्त होकर शीघ्रही लोप होजाता, उनके देवचरित्रके साथ पापाचारी औरंगजेवके किसी चरित्रकी बराबरी नहीं होसकती, उन दोनोंके चरित्रोंको बराबर कहना सम्पूर्णतः न्यायके विरुद्ध है, कारण कि प्रत्येकका चरित्र एक दूसरेके विपरीत था। विशाल एशियामंडलमें जितने राजा हुएथे, उन सबमें कोई भी औरंगजेवकी समान दुस्तर पापपंक्तिमें नहीं फँसा था, किसीने भी उसकी समान पशुवृत्तिसे जीवनको नहीं चलायाथा; पराये जीवनके ऊपर अन्यायका दिखाना उसकी जाति और कुटुम्बियोंका एक मुख्य धर्म था, औरंगजेवने उस धर्मको भलीभाँतिसे पढाया, उसका हृदय अत्यन्त कठोर था जयके उल्लाससे उत्साहित होकर उसने कभी किसीके ऊपर तिलमात्र अनुग्रह न किया; जिन समस्त गुणोंके होनेसे इस लोकमें मनुष्य, मनुष्य नामके योग्य होताहै, औरंगजेवके हृदयमें उनमेंसे किसीने भी स्थान नहीं पाया। अधिक तो क्या कहें, शत्रु जिस समय उसकी शरणागत आता, वह पिशाच उसी समय अपने पैरसे ठुकराकर तत्काल उससे अपने बैरका पलटालेता, उसके इन पापोंका तीक्ष्ण और भयंकर उदाहरण यह है कि गोलकुंडेके राजाको उसने मंलीभाँतिसे पीडित कियाथा। परन्तु संसारप्रेमी राजपूतोंके चरित्र इसकी अपेक्षा अत्यन्त विपरीत हैं नृशंस बादशाह हृदयमें पत्थरको बांध असीम अनिष्टोंके करनेमें तिलमात्र भी कसर नहीं करताथा; करुणानिधान राणा राजसिंहने उसको असंख्योंवार क्षमाकियाथा, उनका हृदय दया, दाक्षिण्य, क्षमा इत्यादि गुणोंसे विभूषित था, इसी कारण अत्याचारी शत्रुओंने उनसे क्षमा पाई थी, यदि वह इच्छा करते तो औरंगजेवको सेनाके साथ संहार करडालते परन्तु उस अत्याचारी और उसकी स्वजातीय प्रजाका होनहार दुःखका विचारकर उन्होंने अपने विजयी पुत्र जयसिंहको युद्धसे लौटा लियाथा ! अपने देशकी रक्षाके लिये उन्होंने युद्धविशारद सेनापति तथा तेजस्वी वीरकी समान जो अद्भुत रणकुशलतासे प्रचंड विक्रम प्रकाश कियाथा; यदि उस वीरताकी स्वयं अनन्तदेव भी सहस्र सुखसे अनन्तकालतक प्रशंसाकरें तो उसका पार नहीं पासकते, विशेष करके उन्होंने दुःखित हुए भारतसंतानोंका उद्धार करनेके लिये जो असीम वीरता और महानताका परिचय दियाथा, उस वीरता और महानताकी उपमा इस संसारमें नहीं है, वह एक परम विद्वान और

हितैषी राजा थे, इसका प्रमाण उनकी लिखी हुई प्रथमोक्त पत्रिका है उस पत्रिकाकी रचनासे उन्होंने अनुपम लिपिचातुर्य और अपने उदार हृदयका परिचय दिया था, इससे उनको नीतिके जाननेवाले परम विद्वान् और महात्माओंमें उंचा स्थान दिया जा सकत है, वह एक शिल्पप्रिय राजा भी थे, इसका यथार्थ प्रमाण उनका बनवाया हुआ बड़ा भारी राजसमंद सरोवर है, उस राजसमंद सरोवरकी प्रतिष्ठाका कारण और उसका समस्त वृत्तान्त यथारीतिसे वर्णन करके हम मेवाड़के इतिहासका यह दीप्तिमान् परिच्छेद समाप्त करेंगे।

राजसमंद सरोवर । जातीय महती प्रतिष्ठा और राजपूतोंकी कीर्तिका विशाल प्रमाणक्षेत्र यह राजसमंद सरोवर राजधानीसे साढ़े बारह कोश उत्तर और आरावलीकी तलैटीसे एक कोशपर स्थित है, गोमतीनामकी टेढ़ी चलनेवाली पहाड़ी नदीकी धारको एक बड़े भारी बंधेसे बांधकर इस सरोवरको बनाया गया था। महाराणाने अपने नामके अनुसार ही उसका नाम “ राजसमंद ” (राजसमुन्द) रखवा था, ईशान और वायुकोणके अतिरिक्त और सभी ओर बन्धा बंधा हुआ है। यह सरोवर बड़ा गहरा है, इसका घेरा प्रायः छः कोश १२ मील तक होगा, यह संगमर्मरका बना हुआ है, इसके किनारेसे नीचे तक संगमर्मरकी रमणीय सीढियाँ बनी हुई हैं, जिन्होंने चारों ओरसे इस सरोवरको घेर रक्खा है, इस सरोवरके किनारे भी इस ही पत्थरके हैं इसका बंधा मिट्टीके परकोटेसे घिरा हुआ, यदि राजसिंह और कुछ दिन जीते तो चारों ओर सुन्दर २ वृक्षोंको लगाकर इसकी शोभा बढ़ाई जाती, सरोवरके दक्षिण ओर राणाने एक नगरी और किला बनावाया था, उस नगरको अपने नामके अनुसार ही “ राजनगर ” नामसे विख्यात किया पूर्वोक्त बंधेके ऊपरीभागमें श्रीकृष्णजीका एक अत्यन्त शोभायमान मंदिर बनवाया गया, जिसमें समस्त कार्य संगमर्मरसे हुआ, इसमंदिरके भीतर नानाप्रकारके मनोहर चित्र लगे हुए हैं, बीचमें एक स्थानपर बड़े मोटे और साफ अक्षरोंमें लिखा हुआ उसकी प्रतिष्ठा करानेवालेका वृत्तान्त पाया जाता है। इसके बनवानेमें और इसकी प्रतिष्ठा करनेमें महाराणाने ९८ लाख रुपये खर्च किये थे, उनके सर्दार और प्रजाने भी बहुत सी सहायता की थी, इसमें जो मर्मर पत्थर लगाया गया था वह पहाड़ोंसे इकट्ठा किया गया, यदि राणा उसको भी मोल लेते तो न जाने कितना रुपया लगता कि जिसका अनुमान करना भी कठिन है, परन्तु मेवाड़भूमि रत्नगर्भा थी, ऐसी मर्मर शिला तो उसकी भेखलारूपी अनेक शैलमालाओंसे इकट्ठी हो सकती हैं, यह राजसमंद सरोवर शोभायमान और प्रयोजनीय है, सुन्दरतामें भी अनुपम गिना जाता-

है परन्तु जिसकारण इसकी प्रतिष्ठा हुई थी, उसका विचार करनेसे उसके भीतर जो एक गंभीर सुन्दरता दिखाई देती थी, उस सुन्दरताके साथ और सुन्दरताकी उपमा दीजाय तो वह अस्त होजायगी, वह कारण अत्यन्त गंभीर है, राणा राजसिंहके समयमें मेवाडभूमि भयानक दुर्भिक्ष और महामारीसे पीडित हुई; असंख्य प्रजा भूख प्याससे दुःखित होकर मृत्युका आश्रय लेने लगीं, अपनी प्रजाकी ऐसी दुर्दशा देखकर राणा अत्यन्त ही दुःखित और शंकित हुए, और जिससे प्रजा इस भयंकर दुर्भिक्षके हाथसे छुटकारा पावै, जिससे सर्वसाधारणका महाउपकार हो, और देशमें अनन्त कीर्ति स्थापित रहै उसकार्यके करनेकी राणा राजसिंहको अभिलाषा हुई; उन्होंने उस बड़ेभारी राजसमंद सरोवरको बनवाकर अपनी अभिलाषाको पूर्ण किया, यही राजसमंद सरोवरका इतिहास है ।

राजस्थानमें नन्दनकाननकी समान मेवाडभूमिके ऊपर प्रकृति देवीका अचल अनुग्रह था इस लिये बहुधा देखा जाता है कि भारतवर्षके और देशोंकी अपेक्षा मेवाडभूमि दुर्भिक्ष और महामारीसे थोड़े २ ही समयमें पीडित होजाती है, सिंहासनपर बैठनेके सात वर्ष पीछे संवत् १७१७ (सन् १६६१) में मेवाडके ऊपर इन दोनों ही कुग्रहोंने इस प्रकारसे कठोर आक्रमण लियाथा कि जैसा पहले और कभी नहीं हुआ, भयंकर दुर्भिक्षसे पीडित हुई प्रजाके असीम कष्टको विचार करके “ मेवाडके राणा इस प्रकारकी एक कीर्तिको स्थापन करनेमें दृढप्रतिज्ञ हुए कि जिससे उनकी अभागी प्रजाका पालन और उनका नाम सर्वदाके लिये स्मरण रहसकै, ऐसी चिन्ता करनेके पीछे महाराणाने इस बड़े भारी सरोवरके बनवानेका विचार किया, उसीके अनुसार ज्योतिषीका परामर्श लेकर पौष शुक्ल अष्टमी मंगलके दिन हस्त नक्षत्रमें पहला पत्थर स्थापित हुआ ” यह सरोवर सात वर्षमें बनकर पूर्ण हुआथा, इसके प्रारम्भ और उपसंहारमें देवताओंकी षोडशोपचारसे पूजा कीगई तथा नाना प्रकारके बलिदान किये गयेथे ।

“आषाढका महीना बीतगया परन्तु एक बूँद भी पानी नहीं वर्षा, आकाश निर्मल होरहा है यह देख कर राणाजी कृपा प्रार्थना करनेके लिये भगवती चतुर्भुजा देवीके मंदिरमें गये, परन्तु कुछ भी न हुआ, इस रीतिसे श्रावण और भादोंका महीना भी सूखा चलागया पर तो भी बादलोंका गर्जन सुनाई नहीं दिया । जलके न पडनेसे सम्पूर्ण संसार एक बारही हताश होगया दुःखसे पीडितहुई प्रजा उन्मत्त होगई; जिस सामग्रीको मनुष्य यह नहीं जानतेथे कि यह खानेकी वस्तु है, आज उसीको खाने लगे, स्वामी अपनी प्राणप्यारी स्त्रीको, और स्त्री

अपने पतियोंको अनायास ही छोड़कर इधर उधरको भागीं, माता पिता अपने छोटे २ बालकोंको बेचने लगे, क्रमसे उस कालमें बहुतसे अनर्थ होनेलगे । दारुण कुग्रह और महामारीकी छायाने बड़ी दूरतक विस्तार किया; अधिक क्या कहें, कीड़े और पतंगतक भी प्यासके मारे मरनेलगे, सहस्रों बालक, वृद्ध, युवा, और स्त्रियोंने क्षुधासे व्याकुल होकर अपने प्राणोंको त्यागदिया । जो लोग एक दिनके खानेके लिये भोजनको पावे उसको वह दो दिन करके खातेथे, पछादिया पवन तीक्ष्ण वेगसे चलनेलगा वह पवन विपसे परिपूर्ण था, प्रायः रात्रिमें धूमकेतु इत्यादि नक्षत्र आकाशमें दिखाई देने लगे, दिनमें बादलोंका नाम निशानतक भी दिखाई नहीं देता था, विजलीके प्रकाश, बादलोंके गर्जनेकी ध्वनिको तो मानो लोग सम्पूर्णतः भूल ही गयेथे इन कुलक्ष्णोंको देखकर मनुष्य भयके मारे अत्यन्त ही व्याकुल हो उठे, नद, नदी, संरोवर; झरने और सोते सभी सूखगये । धनवान मनुष्य भोजनकी सामग्रीको तोल २ कर वांटने लगे, धर्माचारी मनुष्य अपने कर्तव्य कर्मको भूल-गये, अब जातिका भेद भी न रहा, ब्राह्मण शूद्रोंका विचार करना कठिन होगया ! बल, विक्रम, ज्ञान, गौरव, जाति, वर्ण, सब ही जाता रहा, एकमात्र भोजन ही मनुष्योंको मोक्षका देनेवाला दिखाई देने लगा ! चारोंवर्गोंने अपने २ जाति-भेदोंको दूर फेंकदिया, केवल एक क्षुधाकी पीडासे ही सबका नाश होनेलगा । फल, मूल, कन्द, वृक्षोंके पत्ते और वृक्षोंकी छालतकको मनुष्य खानेलगे; यहां-तक कि मनुष्यको मनुष्य खाने लगा, नगर गांव शहर इत्यादि सभी सूने होगये ! बीजके न होनेसे वंश नष्ट होनेलगे । अब तालाबोंमें मच्छी इत्यादि जन्तु नहीं रहे सबका आशा भरोसा एकवार ही लोप होगया *”

संवत् १७१७ के भयानकदुर्भिक्ष × और महामारीके लोमहर्षण वृत्तान्त प्रगट हुआ जिस समय यह दोनों कुग्रह मेवाडभूमिको पीडित कर रहेथे उसी समय दुष्टात्मा औरंगजेबने भी यह युद्ध किये थे, उसके कठोर अत्याचारोंसे दुर्भिक्षसे पीडित हुए मेवाडकी दुर्दशा और भी अधिक बढ गई थी, इसका अनुमान सहजसे ही किया जासकता है, किन्तु उन पैशाचिक अत्याचारोंका योग्य फल बादशाहको भोगना पडाथा, उसके नामको सुगलकुलकलंक कहकर इतिहासोंमें लिखाहै, उसके वंशवाले अपने पितृपुरुषोंकी बादशाहत और राज्यसे उतर अलग होगयेथे । संसारमें किसीका भी गौरव स्थायी नहीं है ।

* “राजविलास ” से संकलित ।

× सन् १६६१ ई० ।

तेरहवां अध्याय १३.

राणा जयसिंह और उनके यमज भ्राताके सम्बन्धमें एक कहा-
वत; राणा और राजकुमार अजीमकी वार्ता, संधिहोना, संधिका
टूटजाना, राणाजीका जयसमंद तरोवरको बनवाना, सांसारिक
लड़ाई झगड़े; युवराज अमरसिंहका विद्रोहाचरण, राणाका मृतक
होजाना;—अमरका सिंहासनपर बैठना;—औरंगजेबके उत्तरा-
धिकारीके साथ उनकी संधिका होजाना—युद्धके विषयमें विचार
करना; मुंडकरका स्थापन होना, औरंगजेबके हाथसे राजपूतोंकी
स्वतंत्रताका होना; इसका कारण औरंगजेबकी मृत्यु;—राज्यमें
झगडा; वहादुरशाहका मुगलोंके राज्यपर अभिषेक; सिक्खोंके
द्वारा स्वाधीनताका प्रचार होना; मेवाड और अंवेर राज्यके
बीचमें एकताका होना; उनका परस्पर वैर, वहादुरशाहका मृतक
होजाना; फर्रुखसियरका अभिषेकहोना;—मारवाडकी राजकु-
मारीके साथ उसका विवाह होना;—भारतमें ब्रिटिशप्रधान-
ताका सूत्रपात; वादशाहके साथ राणाजीकी संधि-
होना; जाटोंका स्वाधीन होजाना; राणा अमरसिं-
हजीका स्वर्ग वासी होना; उनके
चरित्रोंका विचार;—

राजपूतकलकेशरी वीर श्रेष्ठ राजसिंह सम्पूर्ण राजस्थानकी भूमिको विपाद-
रूपी अंधकारसे ढककर अकालमें ही इस लोकसे विदा होगये, उनके स्वर्ग-
वासी होजानेपर समस्त राजपूत शोकसे कातर हुए; राजसिंहके मरनेके पीछे
संवत् १७३७ अर्थात् (सन १६८१ ई ०) में उनका दूसरा पुत्र जयसिंह
मेवाडके सिंहासनपर बैठा, जयसिंहके जन्मके समयमें जिस प्रकारकी घटना
हुईथी उसका वृत्तान्त पढ़नेसे राजपूत जातिके एक प्रसिद्ध आचार व्यवहार-

का परिचय पाया जाता है, उस वृत्तान्तका इस स्थानपर अत्यन्त प्रयोजन जानकर हम वर्णन करते हैं, जयसिंहके जन्म होनेसे कुछ ही देर पहले उनकी सौतेली माताके एक पुत्र उत्पन्न हुआ । जिसका नाम भीम था नवीन कुमारके उत्पन्न होनेपर सोवरमें ही राजपूतलोग उसके हाथमें अमरधव नामक एक प्रकारका स्वास्थ्यकर खँडुआ पहरादिया करतेथे, जो तिनकोंका वनता था, महाराणाने भी आज उसी खँडुआके पहरानेका आयोजन किया किन्तु छोटे पुत्रकी माताके ऊपर अत्यन्त अनुराग करनेके कारण राणाजीने उसीके पुत्रकी भुजामें वह “ अमरधव ” पहरादिया, राणाने इस कार्यको इस भावसे किया कि मानो भूलसे ही किया हो, परन्तु वास्तवमें मूल नहीं हुई, अस्तु अपनी सुकुमार अवस्थाको लांघकर दोनों भाई अब धीरे २ तरुणाईकी विचित्रमयी सीमा पर पहुँचे छोटेके ऊपर पिताका अधिक प्रेम देखकर बड़ा पुत्र ईर्ष्यासे परस्पर झगडा न करे, इस शंकासे शंकित हो राणाने एक समय भीमसिंहको अपने पास बुलाया, और अपनी तलवारको स्यानमेंसे निकाल उसके हाथमें दे गंभीर स्वरसे बोले—“इस तलवारको लेकर शीघ्रही अपने छोटे भाईको मार डाल, नहीं तो आगेको इस राज्यमें घोर विपत्तिके होनेकी सम्भावना है ।” उदार हृदय तेजस्वी भीम अपने पिताकी इस अकपट युक्तिको सुनकर किंचित् भी विस्मित न हुए, पिताने जिस संकटमें पडकर यह कष्टकर वचन कहे थे, उसको भीम भी समझ गये थे, उस संकटसे उद्धार करनेके लिये भीमने स्थिर और अचल भावसे उत्तर दिया “हे पितः! आप कुछ भी शंका न करें मैं आपके सिंहासनको स्पर्श करके कहता हूँ, कि आजसे मैं अपने समस्त स्वत्वको त्यागकर जयसिंहको देदूंगा, आजसे मैंने इस राज्यको भी छोडा, आपके चरणोंको छूकरके कहता हूँ कि आजसे देवारी गिरिमार्गके बीचमें यदि एक बूंद जलतक भी पान कल्ले तो मैं महाराणा राजसिंहका पुत्र नहीं ।” यह कहकर भीमने पिताके निकटसे विदा ली, तथा अपनी सेना और सामन्तोंको बुलाया और अपनी सौभाग्य लक्ष्मीका प्रसाद पानेकी आशासे उनके साथ उदयपुरसे निदा होगये ।

इस समय ग्रीष्मकालकी कठिन दुपहरी है, सूर्यदेव आकाशमें विराजमान होकर अग्निके समान अपनी किरणोंको वर्षाय २ पृथ्वीको दग्ध कर रहे हैं, प्रकृति स्थिर गंभीर और निश्चल है । वृक्षका एक पत्तातक भी नहीं हिलता, उदयपुरके सामने देवारी गिरिमार्ग, दुपहरियाके सूर्यकी अग्निके समान तीक्ष्ण

किरणोंके पडनेसे मानो एक बड़ा भारी अग्निकुंड होकर तप रहा है, इसी समयमें भीमसिंहने अपनी घुड़सवार सेनाको साथ लिये हुए उस पर्वतके मार्गमें प्रवेश किया,—गरमीकी अधिक तीक्ष्णता होनेसे उनका सम्पूर्ण शरीर पसीनेसे भीज रहा था, अब और अधिक दूर चलनेकी सामर्थ्य न देखकर विश्राम करनेके लिये घन वृक्षकी छायाके नीचे घोड़ेसे उतरें, और एक वार अपनी अवस्थाको विचारकर जन्मभूमिकी ओरकों देखने लगे, हृदय उमड़ आया, बड़े वेगसे दो दीर्घ श्वास लिये, उनके बड़े २ नेत्रोंसे आसुओंकी बूँदें पृथ्वीपर गिरने लगीं ; कहां तो उत्तराधिकारी होकर नियमके अनुसार अपने देशपर राज्य करते और कहां आज विधाताका विडम्बनासे एक अपरिचित और निर्बलकी समान जन्मभूमिकी छोड़कर भाग्यरूपी तरंगोंके भँवरमें घूमतेहुए गोते खाने लगे; परन्तु तेजस्वी भीम इस दुर्दशाको विचार कर कुछ भी कातर न हुए, उनको अपने बाहुबल और हृदयकी दृढ़ता पर अधिक विश्वास था, वह जानतथे कि कठोर संकटके पडनेसे अपने बाहुबल और हृदयकी दृढ़ताकी सहायतासे छुटकारा पा सकेंगे, इस प्रकारसे धीरज धरकर निरुत्साह और हताश नहीं हुए, भीम प्यासके अधिक लगनेसे व्याकुल होगये पात्रवाहकों जल लानेकी आज्ञा दी । वह उसी समय चांदीके गिलासमें सामनेके झरनेसे शीतल जल ले आया और पीनेके लिये भीमके हाथमें दिया भीमने उस शीतल जलसे भरेहुए पात्रको पीनेके लिये लिया और मुंहसे लगाना ही चाहते थे कि सहसा उनके हृदयमें एक दूसरे भावका उदय हुआ, उन्होंने उसीसमय उस पात्रके शीतल जलको पृथ्वीपर डालकर पात्रको झरनेकी ओर फेंका,—और वनदेवीको पुकार कर कातर स्वरसे बोले कि “हे वनदेवि ! अपराध क्षमा करना, मैं भूल गया था, इसीसे अपनी प्रतिज्ञाको भंग करना चाहता था, इस देवारी गिरिमार्गके भीतर सुझे एक बूँद जल पीनेकी सामर्थ्य भी नहीं है । ” इसके पीछे कुमार अपने घोड़ेपर सवार हुए और चाबुक मारकर तेनाके सहित गिरिमार्गसे बाहर होगये, वैसे ही देवारीका प्रचंड लोहकिवाड उनके पीछे ही भयंकर शब्द करके बंद होगया, अपने देशका छोड़कर कुमार भीमसिंह वादशाहके पुत्र वहादुरशाहके पास जा पहुँचे, वहादुरने उनको अत्यन्त आदर सन्मानके साथ ग्रहण करके तीन सहस्र घुड़सवारी सेनाका सरदार बनाया, और उनके भरण पोषणके लिये वारह जनपद दे दिये, परन्तु मुगलोंके सेनापतिके साथ उनका झगडा होनेसे वहादुरशाहके द्वारा भीमसिंह थोड़े

दिनोंमें ही सिन्धुनदीके पलीपार भेजे गये, दुःखका विषय है कि काबुल-देशसे फिर इस भारतवर्षमें आनेका सुअवसर उनके भाग्यमें नहीं था । अपनी निर्बुद्धिके वशसे कठोर व्यायाम करते हुए वह अकालमें कालके मालमें गये*

इस समय हम महाराणा जयसिंहजीके चरित्रोंकी समालोचना करेंगे, राजसिंहासनपर बैठनेके कुछ दिनों पीछे उन्होंने औरंगजेबके साथ संधि कर ली । बादशाहका पुत्र अजीम और मुगलसेनाका सरदार दिलेरखाँ उस संधिपत्रको लेकर राणाके निकट पहुँचा, राणाजी उनको आदरसहित ग्रहण करनेके लिये दश हजार अश्वारोही और चालीस हजार पैदलोंकी सेनाको मेवाड़के विस्तारित क्षेत्रमें लाकर उनकी वाट देखने लगे । यह कौतुक देखनेके लिये बड़ी भीड़ हुई, प्राणोंसे भी अधिक प्यारी मेवाड़भूमिको बहुतकालके पीछे फिर देखनेके लिये परमानंदसे पुलकायमान होकर मेवाड़के रहनेवाले लोग पर्वतोंको छोड़कर उस बड़े विस्तारित क्षेत्रमें आय २ कर खड़े होगये, सभीके मुखारविंदोंपर आशा, उत्साह और आनंदकी हास्यमयी प्रभा प्रकाशमान थी, जय और आनंदके शब्दसे आकाशमंडलको कंपायमान करते हुए उस बड़ेभारी जनस्थानके भूभागमें सब लोग खड़े थे कि इसी अवसरमें अजीम और दिलेरखाँ अपने कितने एक शरीररक्षकोंको साथ लियेहुए उस स्थानमें आपहुँचे, उनको अपने नामने खड़ा हुआ देखकर राजपूतोंने “जय महाराज जयसिंहजीकी जय !” कहकर भयंकर गंभीरस्वरका उच्चारण किया, लाख २ मनुष्योंके ऊँचे स्वरकी गंभीरता प्रतिध्वनित होकर अनंत आकाशमें जाकर गूँजने लगी दिलेरखाँके पहुँचनेपर राणाने उसको उचित आदर सन्मानके साथ ग्रहण किया, राणा जयसिंहनेभी दिलेरखाँकी गिरिसंकटके समय रक्षा कीथी इसीसे मुगलसेनापतिने राणा जयसिंहके निकट वारम्बार कृतज्ञताको स्वीकार करके उनके स्वर्गीय पिता आदिकोंको सहस्रों करोड़ों धन्यवाद दिये, राणाजीके भारी सेनावलकी सहायताको देख अजीम मनहीमनमें कुछ भयभीत हुआ, परन्तु विद्वान् दिलेरखाँ राजपूतोंकी महानता और उदारताके विषयको विचराकर कृतज्ञताके स्निग्धरसको पानकरता

* भीमसिंहके वंशधर बुनिराराजके निकटसे महात्मा टाडसाहबने इस वृत्तान्तको सुना था, ऐसा कहतेहैं कि भीमसिंह एक श्रेष्ठ अश्वारोही थे, घोड़ेके शीघ्रतासे चलने पर भी वह उसकी पीठपर खड़े हो वृक्षोंकी शाखाको पकड़ कर झूलने लगते थे; दुःखका विषय है कि ऐसे वीरताके कार्यको करनेसेही उनको इसलोकसे अकालमें ही विदा होना पड़ा ।

हुआ मनहीमनमें अतुल आनन्दका भोगने लगा ! वह यह जानता था कि वीर हृदय राजपूतलोग कभी भी विश्वासघात करनेवाले नहीं हैं, अपने घरपर आये हुए शत्रुके ऊपर वह अन्याय नहीं करेंगे; विशेष करके जिस जयसिंहने अपना बदला लेनेमें सामर्थ्यवान होकर भी अनुग्रह करके एकवार छोड़ दियाथा, वही राजा जयसिंह क्या आज अपने घर आये हुए शत्रुके ऊपर कुछ कठोरता करेंगे ? हीनबुद्धि अजीम राजपूतोंके चरित्रोंपर यद्यपि अविश्वासी था परन्तु बुद्धिमान दिलेरखाँने उनपर किंचित्मात्र भी संदेह न किया; वह राणाजीके द्वारा ग्रहण किया जाकर अत्यन्त ही आनन्दित हुआ । संधि बंधन समाप्त होगया, अकबरके विद्रोहाचरणमें राणाजीने जो सहायता की थी उसके दंडमें उन्होंने तीन जनपद वादशाहको दिये । वादशाहके अभिप्रायके अनुसार अजीमने यह भी कहा कि राणा अपने लालछेरे और छत्रको अवसे व्यवहार नहीं कर सकेंगे, परन्तु यह दंड नाममात्रके ही थे, केवल वादशाहके सन्मानकी रक्षाके लिये इस प्रकारका प्रस्ताव उठाया गया था, परन्तु राणाजीको इससे भी लाभ ही हुआ कारण कि अजीमके हृदयमें विश्वासको उत्पन्न करनेके लिये दिलेरखाँने विदा होनेके समय राणाजीसे कितनी ही बातें कहीं थीं उनके पाठ करनेसे हमारी युक्तिकी सत्यता प्रगट होजायगी । जयसिंहसे विदा होनेके समय मुगलसेनापतिने नम्रतापूर्वक कहा कि “आपके सरदारलोग स्वभावसे ही कठोर हैं, और मेरा पुत्र आपके मंगलके लिये बंधक रक्खा गया है, परन्तु उसके जीवनके बदलेमें यदि आपके देशकी पूर्ण स्वाधीनताको पूर्णोद्धार करसकूँ तो मैं इसमें भी न्यूनता नहीं करूँगा, आप अपने चित्तको स्थिर रखिये ! आपके स्वर्गीय पिताके साथ मेरी मित्रता थी ।”

राजपूतोंके मित्र दिलेरखाँका उद्योग सफल न हुआ, यद्यपि उसका वह उद्योग महान था परन्तु अनिवार्य कालकी गतिको रोकनेकी मनुष्यमें सामर्थ्य नहीं, दिलेरखाँ मनुष्य है, इस कारण उस प्रचंड घटनाकी परम्पराकी गतिको रोकनेकी उसमें सामर्थ्य नहीं हुई, उसका उद्देश विफल होनेपर राणाने अपने खड्गके ऊपर भरोसा किया, राजसिंहासन पर बैठनेके कोई चार पांच वर्षके पीछे उनको दुर्घर्ष कामोरी मुगलोंके कठोर आक्रमणोंसे अपनी रक्षाके लिये पुनर्बार पर्वतोंका आश्रय ग्रहण करना पडा था, कभी २ उन पर्वतोंसे बाहर आयकर भी युद्ध किया था । राज्यकी इस प्रकार दुर्दशाके समय और लगातार युद्धके अवसर पर राणाजीका बहुत सा धन खर्च होगया था, परन्तु उस व्य-

यको निर्वाह करके भी राणाजीने जो अनन्त कीर्ति स्थापन की है, उसका विवरण पाठ करनेसे कहना पड़ेगा कि वास्तवमें मेवाडभूमि रत्नगर्भा है, प्रसन्न सलिला गिरितरंगिणीके बीचमें एक विशाल बंधेको बांधकर राणाजीने “जयसमुन्द” नामक एक विशाल सरोवर बनाया। भारतवर्षके बीचमें जितने सरोवर हैं, उन सबमें “जयसमुन्द” बड़ा सरोवर है; प्रकृतिकी अनुकूलतासे जयसमुन्द सरोवरके बनानेमें बहुत ही सहायता मिली थी, कारण कि जिस स्थानमें यह सरोवर बना है, वहां पहले भी ढेवरनामक एक छोटा तालाब था, महाराणा जयसिंहने बुद्धिबलसे उस तालाबकी असीम जल राशिको एकत्रित करके चारोंओर ऊंचा बंधा बंधवाया इस जयसमुन्दका घेरा पन्द्रह कोशसे कम नहीं है, जयसमुन्दसे हरे २ खेतोंका और विशेष करके धानोंके खेतोंका बड़ा उपकार हुआ। इस सरोवरके किनारेही बंधेके ऊपर राणाजीने अपनी प्यारी रानी कमलादेवीके * लिये एक शोभायमान महल बनवाया था।

परिवारिक झगडोंमें बंधनेसे राणाका शेष जीवन अत्यन्त कष्टदायी हो उठा उनकी आन्तरिक सुखशान्ति बहुतायतसे जाती रही, इस झगडेकी मूल जड़ उनकी अधिकतर स्त्रीपरायणता थी, इस अनर्थकारी प्रवृत्तिसे उनका सन्मान और गौरव सभी जाता रहा, और फिर अपने उत्तराधिकारीसे भी अलग होना पड़ा, जयसिंहकी जितनी रानियें थीं उनके बीचमें उनके उत्तराधिकारी अमरसिंहकी माता ही सबसे बड़ी थीं; वह बूंदीके हाड़ाकुलमें उत्पन्न हुई थीं उस हाड़ाकुलसे गिहौटकुलके बहुतसे उपकार और अनिष्ट हुए थे, हाड़राजकुमारी सबसे बड़ी थीं, विशेष करके मेवाडके होनहार राजा अमरसिंहकी माता थीं धर्मकी रीतिके अनुसार उस बड़ी रानीके ऊपर ही राणाजीको अधिक अनुराग और सन्मान करना सब प्रकारसे उचित था परन्तु वह तो कामके वशवर्ती थे इस कारण अपनी धर्म स्त्रीके ऊपर विराग प्रकाश करके नवीन कमलादेवी रानीमें आसक्त हुए, कमलादेवी छोटी होनेपर भी स्वामीकी अधिक सन्मान पात्री होनेसे अपनी सौतसे वैरभाव करने लगी, इसी वैरभावके कारण राणाके कुटुम्बमें झगडा बढ गया, इन झगडोंहीके कारण शत्रु प्रबल हुए और मेवाडका राज्य अत्यन्त हीन दशाको पहुँच गया; अनर्थकारी लडाईं झगडोंसे राज्यका जो अनिष्ट हुआ था वैसा अनिष्ट शत्रुओंके साथ युद्ध करनेसे भी नहीं होसकता था, भारतवर्षके राजाओंको बहुतसे विवाह करनेसे जो कष्ट होता है, उसकी सत्यता इस वृत्ता-

* कमला देवीने पमारकुलमें जन्म लिया था। अपने देशमें यह “रुतारानी” नामसे पुकारी जाती थीं !

न्तके पढ़नेसे भलीप्रकार जानी जायगी, प्रधानता और प्रतिष्ठाकी प्राप्तिके लिये भारतवर्षके अन्यान्य राजालोग जिस कुरीतिका अवलम्बन करके राज्यमें महा अनर्थ करते हैं, मेवाडके इतिहासको पाठ करनेसे जाना जायगा कि महाराज बाप्पारावलके वंशवाले कभी उस घृणित रीतिका अवलम्बन नहीं करते थे, इसका कारण और कुछ नहीं केवल गिहौदराजाओंकी श्रेष्ठ शासन नीति ही समझी जाती है, उन्होंने अपने पुत्रोंको वह नीति पढ़ाई थी इस प्रकारके चरित्रोंसे राजपूतोंके चरित्र अत्यन्त उच्च और ऊंचे भावको पहुँच गये थे ।

अमरसिंहकी मातासे कमलादेवीका सवतियाडाह दिन २ बढ़ने लगा अन्तमें वह इतना प्रबल होगया कि उन दोनोंका एक साथ रहना असम्भव बोध होने लगा, जिन जयसिंहने इससे पहले औरंगजेबके साथ युद्धमें अद्भुत वीरता और प्रचंड विक्रम प्रकाश किया था, आज उन्होंने ही इन झगड़ोंसे छुटकारा पानेके लिये अपनी बड़ी रानियोंको छोड़कर प्राणप्यारी कमलादेवीको साथ ले जयपुरके स्थानमें रहकर अपने जीवनको व्यतीत करनेका विचार किया, राजधानीको और अमर सिंहको पांचौली मंत्रीके हाथमें समर्पण कर उस चित्तविनोदिनीके स्वर्गीय प्रेमालापसे उस एकान्त स्थानमें अत्यन्त आलसीकी समान समयको बिताने लगे । परन्तु वहाँभी शान्तिको न पासके शीघ्रही उनको अपने पुत्रके अत्याचारोंसे उस स्थानको छोड़कर अपने नगरमें आना पडा, अमरसिंहने अपनी युवावस्थाकी चंचलताके कारणसे एक मतवाले हाथीको नगरमें छाड दिया, उस मतवाले हाथीके द्वारा अनिष्टकी शंकासे अथवा और किसी कारणसे पांचौली मंत्रीने राजकुमारका तिरस्कार किया, इस कारणसे अमरसिंहने भी उसका घोर निरादर किया, मंत्रीके ऊपर अमरके इन अत्याचारोंका वृत्तान्त शीघ्रही राजातक पहुँचा, वह पुत्रके ऐसे दुष्ट व्यवहारोंका विचारकर अपने मनमें अत्यन्त शंकित हुए; और अमरको उचित शिक्षा देनेके विचारसे उस निर्जन स्थानको छोड मार्गमें चित्तौरपुरीको देखते हुए उदयपुर जा पहुँचे; परन्तु निर्वुद्धि अमरने अपने पिताके आनेकी भी बात नहीं देखी; वरन उनकी आलस्यता और अकर्मण्यताका विचार कर माताकी आज्ञाके अनुसार पितासे वैरभाव करनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा की, तथा बून्दीके राज्यमें अपने मामा हाडराजाके पास जाकर एकवार ही दश सहस्र अस्त्रधारी सेनाको साथ ले पिताके राज्यमें आया, इस समय अमरसिंहके सदर्शोंने भी अपने स्वामीकी सहायता की थी । धीरे २ यह झगडा अनिवार्य होगया, क्रमानुसार बहुतसे सर्दार और सामन्त आलसी राजाको

छोडकर अमरसिंहके पक्षका आश्रय लेने लगे, राणा वडेभारी संकटमें पड़े, उस न रोकने योग्य झगडेके निवारण करनेका उपाय न देखकर अन्तमें आरावलीके पार हो अपने राज्यमें गढ़वाड राज्यमें भाग गये और पुत्रको सावधान करनेके लिये वहांके प्रधान सामन्त राजाको उसके पास भेजा, परन्तु राज्यके बहुतसे सर्दारोंकी सहायता पाकर अमर गर्वित हो गया था, इस कारण उसने पिताकी कोई बात न सुनी, और खजानेको अपने हाथमें करनेकी इच्छासे सेनाको साथ ले कमलनरकी ओरको बढ़ादिमा सरदारके हाथमें उस नगरका शासन भार था, यह सर्दार एक विद्वान् और चतुर योधा था, विद्रोही अमरसिंहके पास यद्यपि बहुत सी सेना थी तथापि उस सर्दारने राजकुमारका समस्त परिश्रम नष्ट कर दिया, विफल मनोरथ होनेपर भी अमर अपने पिताके वचनोंपर सम्मत न हुआ; तदुपरान्त जब उसने सुना कि राठौर लोग इस विद्रोहानलको क्षुभित करनेकी चेष्टा कर रहे हैं; और राज्यके बहुतसे सर्दार भीतर ही भीतर इस राज्यको अपने हाथमें करनेका उपाय करते हैं, तथा राणाके सामन्तोंने जिलवाडा गिरिमार्गकी रक्षा करनेमें प्राणतकका दाव लगादिया है* तब वह भयभीत हुआ, और अपन पिताके साथ संधि करनेका विचार करने लगा, भगवान् एक लिंगजीके मंदिरमें जाकर पिता पुत्र दोनोंने संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये, उस संधिके अनुसार यह निश्चय हुआ कि राणा तो जयसमंद सरोवरको छोडकर अपने नगरमें आजाय और अमरसिंह उस निर्जन महलमें जाकर पिताके जीवनकालतक निवास करें ।

राणा जयसिंहने बीसवर्षतक राज्य किया था, सुकुमार अवस्थामें उन्होंने अपने जिन ऊंचे गुणोंका परिचय दियाथा यदि राजसिंहासनपर बैठकर उसी प्रकार सद्ब्यवहार करते तो वह मुगलोंके ग्राससे अपने देशकी स्वाधीनताका भलीभांतिसे उद्धार कर सकते थे, परन्तु स्त्रीपरायणताने ही उनका सत्यानाश कर दिया था, स्त्रीपरायणतारूपी पापोंने मूढ होकर अत्यन्त आलसी और कर्महीन होगये, बाल्यावस्थामें इकट्ठे कियेहुए यश और गौरवको चिरकालके लिये खो बैठे, यदि जयसिंह उस वडेभारी सरोवरको न बनाते तो उनका नाम भी मेवाडके इतिहाससे शून्य होजाता ।

राणा जयसिंहके स्वर्गवासी होनेपर उनका बड़ा पुत्र अमरसिंह (दूसरा) संवत् १७५६ (सन् १७०० ई०) में राजसिंहासन पर बैठा अमरनामका

* जो कितने एक सर्दार राजाके अनुगत थे उनमेंसे विजौलीके वैरीशाल, सलंवरके कुंडलसिंह, मनोराके गोपीनाथ और देशोरीका शोलंकी ।

जो माहात्स्य है उसका बहुतसा भाग इनमें था, अपने पूर्वपुरुष अमरसिंहकी भी वीरता और महानता इनमें बहुतायतसे थी, परन्तु पिताके साथ जो इनका बड़ाभारी झगडा था उससे इनका और मेवाडभूमिका बहुतसा आन्तरिक बल नष्ट होगया था यदि ऐसा न होता, यदि अमरसिंह झगडा करके अपने राज्यका सर्व नाश न करते तो मुगलोंके राज्यकी अवनाति होनेके समय मेवाडभूमि अपने नष्ट हुए गौरवको फिर प्राप्त कर लेती; परन्तु मेवाड भाग्य हीन है, नहीं तो वीर श्रेष्ठ देशप्रेमी राजसिंहके पुत्र होकर अभाग्य जयसिंह स्त्रीपरायण क्यों होते? राणा राजसिंह और उनके राज्यका वृत्तान्त पढनेसे स्पष्ट ही विदित होताहै कि राजाके चरित्रोंपर ही राज्यका दुःख मुख निर्भर रहताहै । राजपूत कुलगौरव, स्वदेशानु रागी वीर केशरी राजसिंहने अपनी स्वभाव सिद्ध वीरता महानता और तेजस्विताके बलसे अपने अनुगत मनुष्योंके हृदयमें प्रकाशमान स्वदेशानुराग तथा आत्मोत्सर्गको उद्दीपित करदिया था, फिर उसी असीम स्वदेशानुराग और आत्मोत्सर्गके प्रभावसे मुगलवादशाहकी विपुल सेनाके विरुद्ध तलवार पकड़कर वादशाहको और उनके पुत्रोंको तथा उसकी रणविशारद सेनाको परास्त किया था परन्तु उनका उत्तराधिकारी, मेवाडवालोंकी अनुकूलता तथा सहानुभूति पाकर भी मेवाडभूमिको ऐसी दीन हीन दशामें छोड़ गया कि और कोई सहजों चिन्ता करके भी उस दुःखस्थासे इस भूमिका उद्धार न करसका ।

राजसिंहासनपर बैठनेके थोडे दिन पीछे ही अमरसिंहने सम्राट्के उत्तराधिकारी शाह आलमके साथ संधि कर ली, ऐसी संधि करनेमें उनकी होनहार दूर दर्शिताका विलक्षण परिचय पाया जाता है जिस समय वह अपने पिताके राज्यपर बैठे थे उस समयसे मुगलोंके राज्यमें एक भयंकर घरेलू झगडा हो रहा था, मुगलोंके राज्यकी ऐसी दुःखस्थाको देखकर दूरदर्शी राणा अमरने इसही कारणसे मुगलोंके होनहार वादशाह आलमके साथ संधि कर ली थी । यह सन्धि चुपचाप हुई थी, जिस समय शाह आलम सिन्धुनदके पश्चिमपार होगया था, उस समय मेवाडकी सहकारी सेनाने उसकी सहायता करनेके लिये वहां गमन किया और एक शक्तावत् सर्दारको सेनापति बनाकर उस स्थानपर अत्यन्त वीरता प्रकाश की थी । ऐसा कहाहै कि

उस सुअवसरमें उस दूरदेशके बीच शाह आलमके साथ यह संधि स्थापित की गई थी । *

जिस चक्रमें पड़कर मुगलोंके कुलका नाश हुआ, / तैर जिसने इस दूरदेशमें आनेके लिये श्वेतद्वीपके निवासी ब्रिटिशसिंहकी प्रभुताका मार्ग साफ करदिया उसका विचार करना इस स्थानमें अत्यन्त प्रयोजनीय बोध होता है, इस बातका विचार करनेसे एक अमूल्य राजनैतिक तत्त्व स्वयं ही प्राप्त होजायगा, उस तत्त्वकी महिमासे मोहित होकर भारतवन्धु महात्मा टाडसाहबने साफ ही कह-दिया है कि “इस तत्त्वने संकेतकी समान हमारे सामने आकर सावधान

* राणा और शाह आलम बहादुरशाहके मध्यमें गुप्त सन्धि, संधिपत्रपर शाह आलमके हस्ताक्षर हैं “प्रजागणके मंगलकारी जो छः प्रस्ताव श्रीमान्के द्वारा उठाये गये हैं और मुझकरके स्वीकार किये गयेहैं, ईश्वरकी कृपासे वह सम्पूर्ण पूरेहोंगे । ”

“पहला, शाह आलमकी समान चित्तौरका पुनर्धार संस्कार हो । ”

“दूसरा; गोहत्या बंद हो ” (क)

“ तीसरा;—शाहजहाँके समयमें जो सम्पूर्ण जनपद मेवाडके अन्तर्गत थे वह सब फिर हमको मिलजाय । ”

“ चौथा;—जो (अकबर) स्वर्गधाममें निवास करते हैं, उनके शासनकालकी समान हिन्दूलोग स्वाधीनता भावसे इष्टदेवकी पूजा तथा धर्माचरण कर सकें । ”

“ पांचवां;—आप जिसको पदवीसे उतार देंगे राजाके समीप वह किसी अनुग्रहको न पा सकैगा । ”

“ छठा;—दक्षिणावर्तके युद्धमें अब आपको अपनी सेनाकी सहायता नहीं देनी होगी । ” (ख)

(क) गोहत्यासे हिन्दूलोग अत्यन्त घृणा करते हैं, टाडसाहबने कहाहै कि गोजातिके ऊपर हिन्दुओंकी आन्तरिक भक्तिके विषयको विचारनेसे हम एक महान् राजनैतिक शिक्षाको पासकेंगे । सन् १८१७-१८में राजपूतोंके साथ ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी जो संधि हुईथी उसमें सब प्रस्तावोंके बीचमें गोहत्याका निवारण ही मुख्य था ।

(ख) मेवाडकी सहाकारी सेना अजीमकी सहायताके लिये दक्षिणावर्तमें युद्ध कर रही थी इस बातकी सत्यता राणाके पास भेजे हुए अजीमके पत्रको पढ़नेसे जानी जायगी ।

“ राणा अमरसिंहजीके समीप यह विज्ञापित हो कि अर्जो यथा समयमें मुझे मिलगई । आपकी माताके वृत्तान्तको जानकर मैं अत्यन्त ही दुःखित हुआ, परन्तु क्या कियाजाय विधाताकी विधिको कोई भी उलंघन नहीं कर सकता । हमारे मंगलके लिये सर्वदा प्रार्थना कीजिये, राजा रायसिंहने आपके लिये एक बातका अनुरोध किया था, आपको मैं अपना सम्बन्धी ही जानता हूं, राजभक्ति दिखाते रहकर आप निश्चिन्त रहें; आपके महानुभाव पितृपुरुषोंकी समस्त भूमि सम्पत्ति आपकी ही होगी; परन्तु इस समय आपको कर्तव्य साधन करनेका अवसर है विशेष वृत्तान्त आपको अपने नौकरसे ज्ञात होगा । मुझे भूलियेगा नहीं । आपकी राजपूत सेनाने अत्यन्त उत्तम शूरता दिखाकर कीर्ति पायी है । ”

करदिया है कि नीतिबलकी सहायता न लेकर केवल खड्गके बलसे भारतवर्षको शासन करनेसे विपत्तिमें पडना होगा । ”

हिन्दुओंके वैरी औरंगजेबके शासनकी रीतिका विचार करनेसे महात्मा टाड्-साहबकी युक्तिकी सत्यता भलीभांति जानी जाती है । बलगर्वित दुराचारी औरंगजेब अपने असीम बलकी सहायताको विचारकर शुद्धाचरण करनेवाले राजपूतोंसे घृणा करता था इसीसे उसने अपने और अपने बडेभारी राज्यकी जडमें स्वयं ही कुल्हाडी मारी थी । बलसे अंधा होनेके कारण यद्यपि वह अपनी यथार्थ अवस्थाको नहीं जान सकता था, तथापि यह स्पष्ट देखा जाता है कि राजनीतिके जाननेवाले अकबरने जिस बडे भारी राज्यकी जडको जमाया था, वह जड केवल औरंगजेबके ही दुराचरणोंसे जड कटे हुए वृक्षकी समान कंपायमान होती थी । औरंगजेब यदि एकपलभर भी अपने राज्यके सम्बन्धका विचार करके देखता तो, मुगलोंका अतिशीघ्र नाश न होता, इन बातोंको विचारनेपर दृढ विश्वास होता है कि राज्यशासन करनेमें चाहै कोई कितना ही चतुर तथा रण करनेमें कितना ही कुशल हो अथवा कितना ही सहाय बल और विक्रमका अधिकार करनेवाला हो परन्तु जबतक प्रजाके हृदयका अनुराग नहीं प्राप्त करेगा, प्रजाको संतुष्ट नहीं करेगा तबतक वह कभी अपने राज्यपदको अखंड अथवा दृढ नहीं रख सकता है । महात्मा टाड्साहबके समयमें ब्रिटिशसिंहका राज्य जितनी दूरतक फैलाहुआ था, औरंगजेबके समयमें मुगलोंका राज्य उसकी अपेक्षा अधिक था, फिर मुगलोंके पास रक्षाके सामान भी अत्यन्त दृढ थे, तथा विशेष करके राजपूतोंके साथ उनका शोणित सम्बन्ध नियत होचुका था । राजपूतलोग सताये जाकर भी उसके राज्यका मंगल करनेके अर्थ अपने प्राणोंतकके देनेमें भी न्यूनता नहीं करते थे, अधिक क्या कहें वह सिंधुनदके पार हो काबुलमें पहुँच कर उसके लिये देश जय करते थे, भारतवासी चिरकालसे राजभक्त होते आये हैं, इसी कारणसे उसके कठोर अत्याचारोंको सहन करके भी प्राण देनेको आगे बढ़ते थे । भारतवासियोंकी राजभक्तिको अकबर भलीभांति समझ गया था, जहाँगीर और शाहजहाँ भी इसही रीतिके अनुसार चलते थे, यही समझकर वह भारतसंतानोंको उस राजभक्तिका बदला दिया करते थे, परन्तु दुराचारी औरंगजेबने उस राजभक्तिकी महिमाको न जाना, अथवा जानकर भी समझनेकी इच्छा न की, कारण कि वह हिन्दूसन्तानोंकी राजभक्ति और उदारताको घृणित नामसे पुकारता था, वह कहता था कि भारतवासी मेरे प्रचंड विक्रमसे

भयभीत होकर शरण लेते हैं, भारतवासियोंकी पवित्र राजभक्तिका यही शोचनीय पुरस्कार दिया गया। औरंगजेब यदि इच्छा करता तो सरलतासे ही अपने पितृपुरुषोंकी श्रेष्ठ रीतिको ग्रहण करके भारतसंतानोंको उंची राजभक्ति और उदारताका उचित बदला देसकता था, परन्तु ऐसा न करके उसने परम विश्वासी राजभक्त राजपूतोंके ऊपर पशुओंके समान आचरण किया और निकृष्ट धिनोना मुंडकर स्थापन करके उनकी उस अतुल राजभक्तिका यथोचित निरादर किया था, उस घृणित “जिजिया” करसे ही मुगल बादशाहका नाश हुआ, यदि औरंगजेब अपने वंशवालोंकी रीतिके अनुसार ही चलकर इस घृणित मुंडकरको स्थापन न करके भारतवासियोंपर कठोर अत्याचार न करता, तो मुगलवादशाहतका इतनी शीघ्र अधःपतन न होता दुराचारी औरंगजेबने सम्पूर्ण हिन्दुओंको बलपूर्वक इसलाम धर्मपर चलाना चाहा था, परन्तु राजपूत केशरी राजसिंहके प्रचंड विक्रमके भयसे इस दुष्ट अभिप्रायको सिद्ध न करसका; आज उनके ऊपर उसी कठोर मुंडकरको स्थापन करके उसने अपने दुष्ट आशयको सिद्ध किया, उस दुष्टके इस करभारसे कोई हिन्दू भी छुटकारा न पासका।

औरंगजेब हिन्दुओंका भयंकर वैरी था, उसके जीवनकी एक २ पंक्ति इसकी सत्यताका प्रमाण देती है, यदि कोई हिन्दू अपने धर्मको छोड़कर इसलामधर्मको ग्रहण करता उसहीको यह पापाचारी बादशाह आदरसहित अपने स्थानमें आश्रय देता था, बहुतसे कुलकलंक हिन्दूगण अपने धर्मको छोड़कर उसके आश्रयको पाय अपने जातिवालोंकी क्रोधाग्निसे छुटकारा पाते थे, ऐसे धर्मसे वैर करनेवाले पाखंडियोंके बीचमें केवल एकका वृत्तान्त लिखते हैं, इस चरित्रके पढनेसे साफ जाना जायगा कि उसको आश्रय देकर ही औरंगजेबने अपने हाथसे अपने पांवमें कुल्हाड़ी मारी थी, अविचारिताके इस दोषसे जो विषैला फल उत्पन्न हुआ था उसे उसकी सन्तान और संततिको चिरकालतक भोगना पडा मुगलवादशाहतके नाश होनेका मार्ग साफ होगया, शिशोदियाकुलकी नीची शाखाके कुलमें राव गोपाल नामक एक राजपूत उत्पन्न हुआ, वह चंबल नदीके किनारेपर स्थित रामपुर*देशको सामन्त वृत्तिरूपसे भोग करता था, दक्षिणके युद्धके समय बहुतसी

* रामपुर टोंक नामका एक नगर और भी है, उसी रामपुर टोंकसे भेद करनेके लिये यह रामपुर भनपुर नामसे विख्यात है। राव गोपालने प्रसिद्ध चन्द्रावत गोत्रमें जन्म लिया था, चन्द्रावत कुलने बहुत दिनोंतक इस उत्कृष्ट भूमिवृत्तिको भोग किया था। फिर राणा जगतसिंह (दूसरे) ने अपने भानजे अम्बेर राजकुमार मधुसिंहको यह वृत्ति देदी, मधुसिंहने सिंहासनपर बैठकर कृतज्ञता और न्यायके पवित्र मस्तकपर लात मारकर यह रामपुर जनपद हुलकरको देदिया, इस प्रकारसे

राजपूत सेनाने उसकी सहायता की राव गोपाल दक्षिणको जानेके समय अपने पुत्रके हाथमें रामपुरका शासन भार सौंप गया था, परन्तु उसके कुलकलंक पुत्रने वहाका कर पिताके पासको न भेजकर अपने पास ही रख लिया । तब राव गोपालने उसके नाम बादशाहके यहां अभियोग चलाया, वह मूर्ख अपने पिताके क्रोधित नेत्रोंसे और बादशाहके क्रोधाग्निसे छुटकारा पानेका उपाय ढूँढने लगा, बहुत समयके पीछे उपाय मिलगया; इस उपायसे ही उसका संकट छूटा और अभिलाषा पूर्ण हुई वह उपाय यह था कि उस दुराचारीने अपने धर्मको छोड़ इसलासधर्मको ग्रहण किया तब औरंगजेबने संतुष्ट होकर केवल उसको क्षमा ही नहीं किया वरन राव गोपालकी भूमिवृत्ति रामपुर जनपद भी उसको ही दे दिया, कुलकलंक पुत्रके ऐसे दुराचारोंसे राव गोपालको अत्यन्त घृणा हुई उसने अत्यन्त दुःखित हो पाखंडी पुत्रको इस कार्यका प्रतिफल देनेकी इच्छासे सेनाके साथ रामपुरपर चढ़ाई की, परन्तु उसका उद्योग सफल न हुआ, तब गोपाल रावने अपनी रक्षाका उपाय न देखकर राणा अमरसिंहका आश्रय लिया, दुष्टस्वभाव औरंगजेब इस बातको सह्य न कर सका, गोपालको आश्रय देनेके कारण राणाको वह विद्रोही समझने लगा और उनका चाल ढाल देखनेके लिये उसने अपने पुत्र अजीमको मालवराज्यमें रहनेकी आज्ञा दी, बादशाहका परम अनुगत एक राजपूत * अपने जीवनचरित्रमें औरंगजेबके उक्त दुराचरणोंका साफ २ वर्णन कर गया है उस ग्रन्थमें एक स्थानपर लिखा है कि “बादशाह अपने अत्यन्त विश्वासी और सहकारी राजपूतोंपर किंचित् ही अनुग्रह करता था । इसी कारणसे उसकी सेवा करनेमें राजपूतोंका आग्रह मंद होगया था ” बादशाहके दुष्ट अभिप्रायको जानकर ही राणा अमरसिंहने उसके विरुद्ध तलवार पकड़ी थी, राणाकी सहायता करनेके लिये मालवराज भी युद्धभूमिमें आया था । अजीम उस समय नर्मदाके पल्लीपार था वहांपर महाराष्ट्रियोंने नीमसिन्धिया नामक एक रणविशारद महाराष्ट्रीको सेनापति बनाकर उस देशमें भयंकर झगड़ा मचा रक्खा था × उसही

मेवाडका एक प्रधान अंग अलग होगया, चन्दावत दामन्त अपने पितृपुरुषोंकी प्राचीन भूमिवृत्तिसे सम्पूर्णतया अलग नहीं हुआ, इसके भीतरी भागके आर्मूद किलेके सहित थोड़ेसे अंशको वह भोग करता था; इस अंशको राजवाडेके समस्त दुःख और कष्टोंमें पडकर भी उसने नहीं छोड़ा और सन् १८२१ ई० तक भोगता रहा ।

* इनके जीवन चरित्रका कुछ एक अंश टाडसाहबको मिलाथा ।

× १७०६-७ संवत्में यह महाराष्ट्री झगड़ा हुआ था ।

भयंकर अग्नि को बुझाने के लिये बादशाह औरंगजेब ने राजा जयसिंह को अजीम के पास भेजा, परन्तु किसी ओर कोई फल न निकला उसके कठोर अत्याचारों से उस समय भारत के ममस्त देशों में झगड़ों की आग जल गई थी। सब लोग बादशाह की अंतिम अवस्था का विचार और परिवार के झगड़ों से छुटकारा पाने के लिये मुगल की दासत्व जंजीर को तोड़ने का उद्योग करने लगे, अब बादशाह किस ओर की रक्षा करें ? या किसको दमन करें ? इस ओर तो भयंकर पराक्रमी महाराष्ट्री लोग वीरकेशरी शिवाजी के अंश से दीक्षित हो स्वाधीनता प्राप्त करने के लिये उदय होते हुए सूर्य की समान धीरे २ गंभीर मूर्ति धारण कर रहे थे, और दूसरी ओर पीडित तथा दुःखित राजपूत लोग मुगलों के राज्य से अलग होते जाते थे, इन सम्पूर्ण झगड़ों से भयभीत होकर बादशाह छुटकारा न पा सका। उसकी अंतिम अवस्था देखकर वेटे पांते राज्य को पाने के लिये हृदय के रुधिर को निकालने में तैयार हुए, इन भयंकर झगड़ों से पीडित हो पचास वर्ष तक भयंकर नीति से राज्य करके मुगल बादशाह औरंगजेब अपने नाम से बसाये हुए औरंगाबादनगर में सन् १७०७ ई० में (जिहाद की ९ तारीख को) इस असार संसार में शांति करके यमराज के भवन को चला गया, उसही दिन औरंगजेब के वेटे पोतों में महाकुलाहल मच गया, पिता के मरने का शोक करना तो दूर रहा, सभी तरुत को पाने की इच्छा से राजधानी की ओर दौड़े, पहले तो बादशाह के दूसरे पुत्र अजीम ने बादशाह को अपने अधिकार में किया, परन्तु अपने बड़े भाई सुलतान मौअज्जम को सेना के साथ आता हुआ देख उसका मनोरथ नष्ट करने की इच्छा से वह धात और कोटे के राजपूतों को साथ ले * भाई की गतिको रोकने के कारण आगरे में पहुंचा, मेवाड,

* ऐसे कितने एक अंग्रेज हैं जो दीन हीन अवस्था युक्त अभागी भारतसंतान के लिये चिन्ता करते हैं और कितने महात्माओं ने उनकी चिन्ता की है ऐसे लोगों में देवचरित्र महात्मा टाडसाहब ही श्रेष्ठ हैं; हमलोग पदगौरव की बराबरी से इस श्रेष्ठता का बदला नहीं करते, यह श्रेष्ठता उनके उदार हृदय से ही उत्पन्न हुई थी, वह भारत ही के लिये इस संसार में उत्पन्न हुए और भारत का हित साधन करके ही यहां से विदा होगये; यद्यपि उनका वह महान संकल्प सम्पूर्णता से पूरा न हुआ था परन्तु तो भी वह जो कुछ कर गये हैं वही बहुत है, उस ही उपकार से भारतसंतान गण बहुत काल तक देवता की भांति उनकी पूजा करेंगे, उनकी समान और कौनसा विदेशी, इस अभागी भारत संतान के वीते हुए गौरव का स्मरण करके शोक से उन्मत्त हुआ था, उन्होंने इस भारत के लिये कितनी चिन्ता की है, उसका यथार्थ प्रमाण यह पवित्र " राजस्थान " ग्रन्थ है। औरंगजेब हिन्दुओं का भयंकर वैरी और अत्याचारी था, वह हिन्दुओं का अनुराग पाने के लिये उनको कैसा पुरस्कार देता

मारवाड, राजवाडेके पश्चिम राज्यके समस्त राजा मौअज्जमके झंडेके नीचे आकर खड़े हुए थे। उन सब राजपूतोंको साथ लेकर सुलतान मौअज्जमने जाजौ नामक स्थानमें अजीमकी सेनाका सामना किया, परन्तु अजीम अपने बड़ेभाईके भयंकर प्रतापको न सहनेके कारणसे कोटा और धातनगरके दोनों राजा तथा अपने बेटे वेदारवरत्तके साथ उसही मुद्धमें मारा गया। पीछे मौअज्जम भलीभांतिसे निष्कंटक हो शाह आलम बहादुरशाह नामकी पदवीको धारण कर पिताके तख्तपर विराजमान हुआ। मौअज्जममें बहुतसे सुन्दर गुण थे, उन गुणोंसे मोहित होनेके कारणसे ही राजपूतलोग उससे स्नेह करते थे, विशेष करके इसका जन्म भी राजपूत स्त्रीके गर्भसे हुआ था, इसी कारणसे सबही इसपर अनुग्रह करते थे, यदि सुलतान मौअज्जम हिन्दूहितापी धर्मात्मा शाहजहाँके बाद ही दिल्लीके सिंहासनपर बैठता, तो वीरवर तैमूरका स्थापन कियाहुआ वंश-वृक्ष इतनी शीघ्रताके साथ भारतभूमिसे न उखड़ जाता, तब तो आजतक भी मुगल लोग तख्त ताऊसपर बैठकर एशियाके बीचमें एक प्रबल राजवंशके नामसे विख्यात हो सकते थे, परन्तु इस संसारमें किसीका भी गौरव सर्वदा स्थिर नहीं रहसकता, नहीं तो यह दुराचारी औरंगजेव बादशाहीपर बैठते ही अपनी प्रजाको लोहदंडके प्रहारसे पीड़ित क्यों करता, और क्यों उसका राज्य नरककी समान समझा जाता? वीरवर तैमूरके वंशमें औरङ्गजेव अयोग्य हुआ उसके पूर्वपुरुषोंने इस विस्तारित भारतवर्षके बीच अपने राज्यको अखंड रखनेकी इच्छासे जिन नीतियोंका आश्रय लियाथा, मतवाले औरङ्गजेवने वलके बसंडसे उन्हीं श्रेष्ठ नीतियोंके मस्तकपर लात मारी। वह भारतका बादशाह था, समुद्ररूपी वख्रको धारण करनेवाली और पर्वतरूपी तगडीको पहरनेवाली विशाल भारतभूमि उसके चरणोंके नीचे गिरी थी, यदि वह इच्छा करता तो अपने पितृपुरुषोंकी श्रेष्ठ नीतिका अनुसरण करके विश्वासी राजपूतोंको एक जनपद वा प्रदेश देकर उत्साहित और अनुगृहीत करसकता था, परन्तु उसकी कठोर हिन्दुविद्वेषिताने ही किसी प्रकारका उत्तम कार्य उसको न करने दिया* वीरवर बाबरने जिन हिन्दु-

था; और अंग्रेजलोग आजकल कैसा पुरस्कार देते हैं; महात्मा टाडसाहबने एक स्थानमें इन दोनोंकी बराबरी करके कहा है कि “ ब्रिटिश आज भारतवासियोंकी राजभक्तिको प्राप्त करनेके लिये उनको कैसा पुरस्कार देता है ? करके अधिक बढ जानेसे वह लोग परिश्रमसे बनाईहुई अपनी सामग्रीको नगरके हाट बजारोंमें भी नहीं ले जा सकते ।

* जिन विश्वासी राजभक्त सैनिकोंकी छातियें प्रशंसापदकी मालासे शोभायमान हैं उनको पुरस्कार स्वरूप वार्षिक १२० पौंड और (१२००) रुपये) से अधिक तनखाह नहीं मिलती, अधिक

ओंको सर्वदा संतुष्ट रखनेकी इच्छा कीथी, जिनकी मान सर्यादाको अटल रखने-
के लिये उसके वंशवाले सर्वदा उद्योग किया करतेथे, आज औरङ्गजेबके
कठोर अत्याचारोंसे उनके हृदयमें जो भयंकर घाव उत्पन्न होगया था उसे कोई
भी आरोग्य न करसका, उन समस्त घावोंकी भयंकर पीडासे दुःखित हो
राजपूतोंने विप जानकर मुगल बादशाहके साथ सब सम्बन्ध छोडादिया; राज-
पूतप्रिय गुजवान वहादुरशाह अपने स्वल्पकाल व्यापी राज्यके बीचमें उसको
आरोग्य न करसका यद्यपि वह गुणवान था परन्तु राजपूतोंने उसका विश्वास
नहीं किया, बहुत कालसे उत्पन्न हुई दूरदर्शितासे उनके हृदयमें ऐसा संस्कार
उत्पन्न होगया था कि सभी मुगललोग अविश्वासी और निष्ठुर हैं, उन्होंने
भयंकर ज्वालाकी समान राजस्थानके सम्पूर्ण रुधिरको शुष्क कर लियोहै, वहा-
दुरशाहका जन्म भी उसी मुगल वंशमें है, इस कारण वह भी तो राजवाडेके
सम्पूर्ण रुधिरको शुष्क करनेकी इच्छा करेगा इसमें आश्चर्य ही क्याहै ? ऐसा
विचार करके राजपूतोंने एक दूसरेकी रक्षा करनेकेलिये आपसमें संधि
कर ली, वहादुरशाहने उनको संतुष्ट करनेके लिये अनेक चेष्टायें कीं
उनके पूर्वपुरुषोंके दृढ उदाहरणोंको दिखाकर उनको मुगलोंके साथ सम्बन्ध
करनेके लिये बहुत ही कहा, परन्तु उसकी वह चेष्टा और यत्न सभी व्यर्थ
होगये × उनके मनमें जो दृढ विश्वास होगया था वह किसी प्रकारसे भी
न टला, वह निश्चय यह जानगये थे, कि अगणित कार्य साधन वरके वृथा
प्राणदान करके मुगलोंकी कृतघ्नता और निष्ठुरताके हाथसे छुटकारा न होगा,
इसी कारणसे उन्होंने वहादुर शाहकी कोई बात न मानी, मुगल बादशाहकी
आज्ञाको लेकर दूत उनके पास पहुंचा तब उन्होंने केवल यही कहा कि “ देव-
ताके विसुख होनेसे लोगोंको मतिभ्रम हुआ करता है । ” राजपूतोंके ऐसे
आचरणोंको देखकर वहादुरशाह शीघ्रही यह समझ गया कि आगेको इससे
बहुत कम सहायता मिलेगी । इसही समयमें उसके छोटे भाई कम्बक्सके
साथ बादशाहका भयंकर झगडा हुआ । कम्बक्सने दक्षिणमें अपनेको बादशाह
कहकर विख्यात किया था, वहादुर शाहको इन सब कार्योंसे विना ही छुट-

—क्या कहें जिन संस्कारोंका निरादर करके औरंगजेब और उसके वंशवाले अनेक प्रकारका सुभीता
होनेपर भी भारतके सिंहासनसे अलग हो गये थे, आज उन्ही संस्कारोंके ऊपर अत्यन्त न्यून विचार
किया जाता है ।

× सन् १७०९-१० ई०

कारा पाये शीघ्रही सिक्खोंके दवानेको उत्तरमें जाना पडा, गुरु नानकने इस विकराल जातिकी प्रतिष्ठा की थी, यह जाति सिक्ख (शिष्य) लोगोंकी थी । कहते हैं कि अक्सस नदीके किनारे शाकद्वीपके प्राचीन जितकुलमें यह जाति उत्पन्न हुई थी पीछे चढाई करके ईसवीकी पांचवीं शताब्दीके मध्य भारतवर्षके पश्चिम देशमें आकर बसी, गुरु नानकके महामंत्रसे दीक्षित होनेके एक शताब्दी पीछे अपनी रक्षा करने योग्य नीति और बल विक्रमसे युक्त हो सिक्खोंने क्रमशः अपनेको स्वाधीन कहकर विख्यात किया । आज बहादुर-शाहके शासनकालमें सम्पूर्ण मुगलोंकी सलतनतके बीच केवल एक सिक्खोंकी ही जाति स्वाधीन है । इस समय उनकी स्वाधीनताको देखकर बादशाह सेनाके साथ पंजाबकी ओरको चला, युद्ध करनेको जाते समय अम्बेर और मारवाड़के दो राजाओंने शीघ्रही जाकर बहादुर शाहसे साक्षात् किया, परन्तु उससे कुछ न कहकर और आज्ञाको बिना ही लिये वहाँसे चले गये, उनके ऐसे चित्तके बदलनेका कोई भी कारण नहीं जाना गया, परन्तु इतिहासके किसी २ ग्रन्थमें देखा जाता है कि वह लोग सिक्खोंके तीक्ष्णभावको अनुसरण करके मुगलोंकी परतंत्रतासे अपनेको छुटानेका विचार कर रहे थे ।

भारतकी ऐसी हीन अवस्थाके समय पराक्रमी सिक्खोंके उदाहरणका दृष्टान्त लेकर राजपूतोंने मुगलोंकी आधीनता रूपी जंजीरको तोड़नेका विचार किया, बादशाह बहादुरने उनको सावधान और शान्त करनेके लिये अपने बड़े पुत्रको भेजा, तब वह बादशाहकी आज्ञाको उलंघन न कर सके, परन्तु सावधान नहीं हुए । राजपूतोंको सावधान करनेके लिये बादशाहने कितने ही यत्न किये परन्तु कोई यत्न भी फलीभूत न हुआ, इसके उपरान्त बादशाहकी विना आज्ञाके ही राजपूतलोग उन डेरोंको छोड़कर उदयपुरमें राणा अमरसिंहके पास चले गये, वहाँ जाकर परस्पर संधि कर ली, इस प्रकारसे राजस्थानमें तीन महाबल एकात्रित हुए, छोड़ेहुए राठौर और कुशावह बहुत समयके पीछे राजपूतकुल चूडामणि परम पवित्र शिशोदियोंके साथ एकत्र भोजन कर सके और विवाह इत्यादिक सम्बन्ध भी होने लगे, इस सन्मानको पानेके लिये ही उन्होंने बड़ी उत्कंठासे संधि की थी, इस संधिपत्रपर हस्ताक्षर करनेके समय मारवाड़ और अम्बेरके दोनों राजाओंने अपने २ इष्टदेवताका नाम लेकर शपथ की थी कि आजसे कोई कभी मुगल बादशाहके साथ पारिवारिक अथवा राजनैतिक किसी प्रकार कोई सम्बन्ध न करेगा, उसके साथ ही यह निश्चय भी होगया कि

शिशोदियोंके कुलके साथ विवाह होनेके पीछे शिशोदीय राजकुमारियोंके गर्भसे जो सन्तान और सन्तति उत्पन्न होगी उसको ऊँचा सन्तान मिलेगा यदि पुत्र हुआ तो वह राजसिंहासनपर बैठेगा और कन्या हुई तो ऊँचे राजकुलमें अर्पण की जायगी, प्राण रहते हुए उसको मुगलोंके हाथमें अर्पण करके अपने कुलको कलंकित नहीं करेंगे ।

शिशोदीयकुलके निकट फिर अपने पहले सन्मानको पाकर मुगलोंकी जंजीरसे छूटनेकी इच्छासे राठौर और कुशावह दोनों राजाओंने इस प्रकारके व्यवस्थापनपर हस्ताक्षर कर दिये थे, परन्तु इससे उनकी एक और महा-प्राचीन कालसे चली आई हुई अखंड रीतिका व्यभिचार हुआ । उसके एक साथ उलट पलट होनेसे जो विषैला फल उत्पन्न हुआ वह सरलतासे ही अनुमान किया जा सकता है, मारवाड़ और अम्बेरके राजाओंने इस चिरकालकी रीतिका उलट पलट करनेके समय राज्यमें जो भयंकर झगड़ा उत्पन्न किया था वह सरलतासे दूर नहीं हुआ, उसको निवारण करनेमें जो मध्यस्थ उपस्थित हुए, उनके कठोर स्पर्शसे सम्पूर्ण राजस्थान ही सूना होगया । वह स्पर्श मुगलोंकी जंजीरकी अपेक्षा भी कठोर था । वह स्पर्श महाराष्ट्रियोंका था । उस त्रिवलात्मिका संधिसे राजपूतोंने बाबरके बड़े भारी सिंहासनको पृथ्वीपर गिरा दिया, परन्तु उस अवसरपर जिन शत्रुओंने उनके घरमें प्रवेश किया उनसे ही राजपूतोंका नाश हुआ था ।

जिसादिन हिन्दूवैरी औरंगजेबने कुलकलंक रतनसिंहको * उसके पिताकी क्रोधाग्निसे रक्षा करनेके लिये अपने यहां आश्रय दिया, उसी दिन हताश होकर राव गोपालने उदयपुरवालोंकी शरण ली; राणा अमरसिंह उसही रामपुर वृत्तिका उद्धार करनेके लिये तैयार हुए थे, परन्तु संसारके अनेक कार्योंमें फँसनेके कारण अबतक इस कार्यको सिद्ध नहीं करसके, इस समय राठौर और कुशावह दोनों राजाओंके साथ मिलकर उन्होंने अपने पहले संकल्पको सिद्ध करनेका विचार किया, परन्तु उनका संकल्प सिद्ध न हुआ, राज मुसलिमख़ाँ × ने उनके सम्पूर्ण उद्योग व्यर्थ कर दिये, बादशाहने इस विजयका समाचार पाकर मुसलिमख़ाँको उचित पुरस्कार दिया, दूतने मुसलिमके जय समाचारको सुनानेके समय और एक वृत्तान्त कहा, उसका मर्म यह है कि “राणाने अपने राज्यको उजाड़ कर पर्वतोंपर जा बसनेकी दृढ प्रतिज्ञा की है ।” इन दोनों समाचार पानेके

* रामपुरका राजा और राव गोपालका पुत्र ।

† लोकहितवादीने निर्णयसागरके छापे राजस्थानके अनुवादमें इसका नाम हिम्मत राव लिखा है ।

× मुसलमान धर्मके अवमूलन करनेसे रतनसिंहका नाम मुसलिम हुआ था ।

कुछ काल पीछे बादशाहने और एक वृत्तान्त सुना कि राणाके सुवलदासनामक कर्मचारीने पुरुषमंडलके शासनकर्ता फीरोजख़ाँपर आक्रमण किया, उसके आक्रमणको निवारण न कर सकनेके कारण फीरोजख़ाँ अत्यन्त दुःखित और पीड़ित होकर अजमेरको भाग गया है । परन्तु वीरवर जयमलका वंशधर उस युद्धमें मारा गया*फीरोजख़ाँके वृत्तान्तको जानकर बादशाह अत्यन्त ही दुःखित हुआ, पहली दोनों बातें भी उसको सत्यसी दिखाई देने लगीं, जो साहसी और बलवान दुर्गादास पितासे वैर करनेवाले अकबरको सहस्रों बाधा और विपत्तियोंके बीचमेंसे लेकर जाकर निष्क्रान्तक स्थानमें पहुँचाआया था वही वीर आज फिर मुगल बादशाहके इस सर्वजनीन संघर्षणके समय रंगभूमिमें आ पहुँचाहै । उसके राजा इस समय उसको पालन पोषण न करसके इसहीसे दुर्गादास उदयपुरमें चला आया था । राणाने आदर सन्मानके साथ उसको अपने यहां रक्खा और प्रतिदिन पांचसौ रुपये नियत कर दिये परन्तु इन सब राजपूत वीरोंके इकट्ठा होनेसे जिस महाबलकी उत्पत्ति हुई, उसके कार्यका आरम्भ शाह आलम बहादुर शाहके समयमें नहीं होनेपाया, कारण कि उस महाबलवान शक्तिका कार्य आरम्भ होनेसे पहले ही शाह आलम बहादुर आततायी पाखंडियोंके विष देनेसे अकालमें ही इस लोकसे विदा हुए × यह एक सरल स्वभाववाला बादशाह था, परन्तु अभाग्यसे उसके दुराचारी पिताके असीम पापोंका फल सहस्रों करोड़ों वज्रोंका रूप बनाय अंतमें पुत्रके भस्तकपर गिरा, पिताके कियेहुए पापोंका फल पुण्यवान पुत्रको भोगना हुआ, शाह आलमका आशा भरोसा सभी नष्ट होगया, हिन्दुकुशसे प्रारंभ करके समुद्रतक फैलेहुए समस्त देश औरंगजेबके अत्याचारसे उत्तेजित होगये थे, बहादुर शाहने विचाराथा, कि इन सम्पूर्ण उपद्रवोंको दूर करके मुगल राज्यमें सुख और शान्तिकी रक्षा करेंगे परन्तु दुर्भाग्यतासे उसकी वह आशा सफल न हुई, यदि पाखंडी और पिशाचके हाथसे छुटकारा पाकर वह और कुछ दिनतक जीवित रहता तो मुगल राज्यका इतनी

* जिस आज्ञाको पाकर सुवलदासने यह कार्य किया था, टाडसाहबको वह आज्ञा एक दफ्तरमें मिली थी, सुवलदासके पुत्रको यह आज्ञापत्र भेजा गया था ।

“ राठौर रायसिंह सौवलदासके प्रति महाराणा अमरसिंह । ”

“ आपके चारों ओर जितने स्थान हैं उन सबको उजाड दीजिये आपके परिवारको रहनेके लिये दूसरा स्थान प्राप्त होगा, विशेष समाचारको अवगत होनेके लिये चन्द्रावत दौलतसिंहके साथ साक्षात् कीजिये हमारी इस आज्ञाके पालन करनेमें त्रुटि न करना जी (सन् १७०८-९-दिसम्बर)। ”

× आततायी पाखंडीने सन् १७१२ई०में शाह आलमको विष देकर मारा था ।

शीघ्र अधःपतन न होता, शाह आलम कार्यचतुर दूरदर्शी और सहनशील बाद-शाह था; यदि उसके जीवनरूपी वृक्षकी जड़में अकालमें कुठाराघात न होता तो वह अपने उत्तम गुणोंसे सलतनतकी रक्षा कर लेता, परन्तु विधाताकी विधिके अनुसार मुगलकुलका विध्वंस कौन रोक सकता है, नहीं तो अकालमें ही बहादुरकी मृत्यु क्यों होती? या उसके सभी वंशधर अयोग्य क्यों होते? इन लोगोंने अपनी अयोग्यतासे ही मुगल गौरवको रसातलमें फेंक दिया था, उसके उद्धार करनेकी सामर्थ्य किसीमें नहीं है।

जिसदिन साधुचरित्र शाह आलम बहादुर शाह विष देनेसे अकालमें ही इस लोकसे विदा हुआ, उस ही दिनसे वीरवर बाबरके सिंहासनकी जड़ मूल कटेहुए वृक्षकी समान थरथर कांपने लगी, उस दिनसे ही मुगल राज्यके उत्तराधिकारियोंने शोणितसरमें तैर करके उस कम्पायमान सिंहासनपर बैठना आरम्भ किया, परन्तु कोई भी उसको स्थिर न रख सका, अन्तमें गंगा यमुनाके संगममें स्थित हुए बेरानगरसे दो सइयद भ्राताओंने * आकर मुगल सिंहासनको व्यापारकी वस्तु बना दिया, बाबर अकबर जहांगीर और शाहजहांके पवित्र रत्नसिंहासनको क्रूरचरित्र सइयदोंने जिसको चाहा उसको दिया, सनातनका उत्तराधिकार जातारहा, धर्म और न्यायके पवित्र मस्तकपर पदाघात हुआ, धन देकर जो उन दोनों भाइयोंके मनको आनन्दित कर सके थे, वही भारतकी बाद-शाहतके सिंहासनको कुछ कालके लिये पालते थे; परन्तु कुछ दिनके पीछे पहले-को तरबतसे उतारकर किसी दूसरेको इन दोनोंने तरबतपर बिठलाया। इस प्रकारसे मुगलोंका सिंहासन और मुगलोंके वंशधरगण हुसेनअली और अबदुल्लाख़ाँके हाथकी कठपुतली बनकर मुगलकुलकी शोचनीय अवस्थाका वर्णन प्रचारित करते हुए अनन्तकालके समुद्रमें लीन होगये। जिस समयमें राजस्थानका त्रिवल मुगल राज्यके विरुद्ध कार्य करनेको तइयार हुआ, उसी समयमें उपरोक्त भाइयोंने फ़र्रुखसियरको तरबतपर बैठाया था, हिन्दूवैरियोंके दीर्घकाल व्यापी कठोर अत्याचारोंको सहन करके भी केवल एक सहनशीलताहीके बलसे तेजस्वी राजपूतलोग सब बातोंको सहते आये, इस समय दोनों सइयद भ्राताओंका अत्याचार और भारतमाताकी शोचनीय अवस्थाको देखकर वह लोग अधिक स्थिर न रहसके, इस कारण उनकी सहनशीलता चलायमान होगई; और उसके साथ ही अन्तरमें छिपीहुई विद्वेषाग्नि प्रचण्ड तेजसे प्रज्वलित हो उठी, आततायी यवनोंने

* हुसेनअली और अबदुल्लाख़ाँ ।

देवताओंके मंदिरोंको तोड़कर वहां मस्जिदें बनवा लीं थी, आज राजपूतोंने उन मस्जिदोंको चूर्ण २ करके मुगलोंके धर्म याजक अर्थात् मुल्लाओंका अपमान करना आरंभ किया स्वाधीनताके स्वर्गीय मस्तकपर लात मारकर यवनोंने राजपूतोंकी प्रायः सभी सामर्थ्यको छीनकर मुल्ला और काजियोंको उसका अधिकार दियाथा, इस समय राजपूतोंने और विशेष करके राठौरोंने उस सम्पूर्ण सामर्थ्यको पुनः ग्रहण करके उस स्वर्गीय स्वाधीनताको मुगलोंके पाससे अलग कर दिया, जशवंतसिंहके मृत्युकालके पीछेसे प्रतापवान राठौरगण मुगलोंके आससे अपने सम्पूर्ण अधिकार भलीप्रकारसे रक्षा करतेहुए आये हैं । इस समय अजितसिंहने मारवाड़में मुगलोंको भलीप्रकारसे परास्त कर दिया इस अवसरपर राजस्थानके यह तीनों प्रसिद्ध बल साम्बर सरोवरके किनारेपर इकट्ठे हुए थे, वह तालाब मेवाड़ मारवाड़ और अम्बेरका साधारण सीमारूपसे नियत हुआ और उससे जो कुछ आमदनी होती थी उसको यह तीनों बलवान परस्पर बांट लेते थे ।

राजपूतोंका विक्रम और बाहुबल धीरे २ बढ़ता ही गया, बादशाहने अंतमें उनके कठोर आचरणोंको रोकनेकी दृढ प्रतिज्ञा की अमीरलउमरा, * अजितसिंहके गर्वको चूर्ण करनेकी इच्छासे सेनाको साथ ले युद्ध करनेको चला, उस समय अजितसिंहके पास बादशाहके हाथका लिखाहुआ एक गुप्त पत्र पहुंचा । बादशाहने लिखाथा कि इस मगहर सइयदकी खबर अच्छीतरह लेना, बादशाहने अपने सेनापतिकी गति रोकनेके लिये क्यों शत्रुके पास गुप्त पत्र भेजा था, उसका एक विशेष कारण था दोनों सइयद भ्राताओंके द्वारा बादशाहको पाना तथा दिनरात उनके दवानेसे फर्रुखसियर समझ गया था कि मैं कुछ भी नहीं हूं । वह जानता था कि यह राज्यभोग केवल विडम्बनामात्र है । दोनों सइयदोंकी प्रतिष्ठा दिन २ बढ़ने लगी इस कारण बादशाहके मनमें भय हुआ, उसने उनकी प्रतिज्ञा भंग करनेकी इच्छा और चेष्टा की थी परन्तु उनके द्वारा सइयदोंने और भी उन्नति पाई इस कारण बादशाहके मनमें भ्रांति २ के संदेह उदय होने लगे, सइयदोंका दर्प चूर्ण करने और उन सम्पूर्ण संदेहोंसे छुटकारा पानेको दूसरा उपाय न देखकर अंतमें अजितसिंहके पास वह गुप्त पत्र भेजा था × परन्तु उसका

* हुसेनअली अमीरलउमरा और उसका भाई अबदुल्ला कुतबुल मुल्क नामसे विख्यात हुआ ।

× बादशाह फर्रुखसियरने जो गुप्तभावसे सइयदका अनिष्ट करनेकी चेष्टा की थी, उसको सइयद भ्राता उस समय तक नहीं जानसके; इस कारणसे ही वह बादशाहकी ओरसे अजितसिंहके साथ युद्ध करने गये थे ।

वह गूढ आशय सिद्ध न हुआ, राठौर राज अजितसिंहने दोनों सइयदोंके साथ संधि करली, और बादशाहको नियमित कर और अपनी कन्या देनेमें सन्मत होगये, ऐसा कार्य करके अजितसिंह मुगलोंकी सभामें विशेष सामर्थ्यवान होगये थे।

जिसदिन बादशाह फर्खसियरके साथ मारवाडराजकी राजकुमारीका विवाह स्थिर हुआ था, इसही दिन सातसमुद्रके मध्यसे श्वेतद्वीपमें होकर बृटिशसिंहकी प्रभुताका मार्ग निष्कण्टक होगया; विवाहका सम्बन्ध होनेके कुछदिन पहले बादशाहकी पीठमें एक भयंकर फोडा निकल आया जो कि बहुत ही बढ गया था, हकीम और जर्जरोंने उसके आरोग्य करनेकी बहुतसी चेष्टा की परन्तु किसीकी भी चेष्टा फलवती न हुई; क्रमसे बादशाहकी पीडा अधिक बढने लगी; विवाहका दिन निकट आ पहुंचा तथापि उसको आराम न हुआ, विवाहका दिन बीत गया, बादशाह अत्यन्त ही दुर्बल होगया, यह देखकर सबका मन अत्यन्त भयभीत हुआ जो तइयारियाँ विवाहके निमित्त की गई थीं क्या वह शाहकी अंतिम क्रियामें लगाई जायगीं, यह विचारकर सबका ही मन अत्यन्त भयभीत हुआ और चारों ओर ही इसके शान्त होनेका उपाय खोजा जाने लगा, इसी अवसरमें सूरतका रहनेवाला बृटिशकंपनीका एक दूत बादशाहकी सभामें आ पहुंचा, वह एक अच्छा डाक्टर था विशेष करके शस्त्र चिकित्सामें अत्यन्त ही चतुर था, सबकी चेष्टा व्यर्थ होनेपर अन्तमें बादशाहने उनकी चिकित्सा करानेका विचार किया। उस चिकित्सकका नाम हेमिल्टेन था। महात्मा हेमिल्टेनने शाहके अंतःपुरमें जाकर थोडे ही दिनोंमें इस भयंकर फोडेको आराम किया, उसकी उत्तम चिकित्साके गुणसे आरोग्य होकर बादशाहने मारवाडकी मनमोहिनीके साथ विवाह किया, महा धूम धामके साथ विवाहका समारोह समाप्त होगया * बादशाहने एकदिन महात्मा हेमिल्टेनको अपने पास बुलाया कि “आप हमसे क्या इनाम चाहते हैं?” महानुभाव हेमिल्टेनने उत्तर दिया कि बादशाह !

* यह विवाह महा धूम धामके साथ हुआ था। सर वान्टर स्कॉटने इस प्रकारसे उसका वर्णन किया है, कि “अमीरलउमराने कन्याकी ओरसे सम्पूर्ण उत्सव किया था, और विवाह भी ऐसी धूम धामके साथ समाप्त हुआ, कि इससे पहिले हिन्दुओंने इस प्रकारकी धूम धाम कभी नहीं देखी थी, आलोक मालाकी तीक्ष्ण ज्योतिप्रभा युक्त होकर नक्षत्र मंडलीको धिक्कार देती हुई चारों दिशाओंमें व्याप्त होगई थी, उस प्रखर ज्योतिके सामने सम्पूर्ण ग्रह भी हीन होगये थे, अमीरलउमराने मंदिरमें यह विवाहकार्य समाप्त हुआ था, इसके उपरान्त बादशाह अनेक प्रकारके गीत बाजे और अनन्त जय नादोंसे अपनी नवीन रानीको अधिक धूम धामके सहित अपने नगरमें लाया था।”

मैं धन नहीं चाहता,—मानका अभिलाषी नहीं और ऊँचे पदगौरवकी भी इच्छा नहीं है, मैं दूरदेशसे वाणिज्य करता हुआ आया हूँ, आपके इस राज्यमें हमको पैर रखनेतकका भी स्थान नहीं है, इस समय केवल मेरी यही प्रार्थना है कि यदि आप कृपाही करते हैं तो दया करके कुछ स्थान दान कीजिये, और जिससे व्यापारमें हम लोगोंका सुभीता हो ऐसा कोई अपने हाथका परवाना दीजियेगा, बादशाहने संतुष्ट होकर उसकी प्रार्थनाको पूर्ण किया। उसदिन इस विशाल भारतक्षेत्रमें ब्रिटिश प्रभुताका जो बीज बोया गया था वह थोड़े ही समयमें अंकुरित होकर विशाल वृक्षका रूप बन सम्पूर्ण भारत-भूमिमें फैल गया, आज उसी विशाल वृक्षकी छायाके नीचे अगणित भारत-संतान विश्राम कर रही है। विधाता ! कहीं इस वृक्षके नीचे कालसर्पका निवास न होजाय।

बादशाह फर्रुखसियर हेमिल्टेनका यथार्थ स्वदेशानुराग और आत्मत्याग देखकर अत्यन्त विस्मित हुआ था, यदि हेमिल्टेन इच्छा करता तो निश्चय ही असीम धनका अधिकारी होजाता; परन्तु उसने अपने तुच्छ स्वार्थको त्याग करके स्वदेशका जो महोपकार किया था उस महोपकारका बदला कहां है ? जिस हेमिल्टेनके असीम माहात्म्य और आत्मत्यागके गुणोंसे आज इस भारतवर्षमें ब्रिटिशसिंहका अखंड प्रभुत्व है उसने अपने देशवालोंसे इसका क्या बदला पाया था ? कुछ भी नहीं। दुःखका विषय है कि जिसदिन उस महात्माका जीवनरूपी पक्षी इस पवित्र देहरूपी पींजरेसे विदा होगया, उस दिन उसका पवित्र शरीर कलकत्तेके एक साधारण समाधि मंदिरमें आडम्बर शून्य विधानके साथ पृथ्वीके नीचे दबा दिया गया, उसदिन किस वृटिनने कृतज्ञताके पवित्र रससे अभिषिक्त होकर उसकी पवित्र समाधिपर किसी स्मरण चिह्नको स्थापित किया था ?—किसीने नहीं, उस निर्जन इमशान क्षेत्रमें उस ब्रिटिश गौरवकी पवित्र देहके समस्त उपादान पंचभूतोंमें लीन होगये, दुर्जयकाल उसके एक २ परमायुको अनन्त सागरमें फेंक रहा है, परन्तु उसको कोई भी नहीं देखता है, न कोई जानता है कि इंग्लैण्डका महाप्राण इस स्थानपर शयन कर रहा है ! शोक है कि इस संसारमें यथार्थ कृतज्ञता नहीं।

आरवाड़ राजकुमारीके साथ सम्राट्का विवाह होनेसे बहुतेरे समझ लिया था कि बादशाह राजपूतोंके साथ उत्तम व्यवहार करेगा, परन्तु उन लोगोंकी आशाके विरुद्ध फल होने लगा। इस विवाहके कुछ दिन पीछे ही फर्रुख सिय-

रने फिर वही घृणित जिजिया कर स्थापन किया था। औरंगजेबने जिस कठोर ताके साथ इसका प्रचार किया था, यद्यपि इस समय वैसी कठोरताके साथ यह नहीं था * तथापि हिन्दूलोग तो इसका नाम सुनते ही उत्तेजित हो गये। इसके पहिले मुगलोंके ऊपर जो उनका थोडा बहुत अनुराग शेष रहा था, इस जिजिया करके पुनर्वार स्थापित होनेसे वह रहासहा अनुराग भी जाता रहा। वह समझ गये कि विश्वासघाती मुगलोंके सम्बन्धमें हमारी जैसी धारणा है वह किसी प्रकारसे मिथ्या न होगी।—मुगललोग किसी समय भी हिन्दुओंपर सदैव व्यवहार नहीं करेंगे, तथा जिस आशयसे मुंडकरकी यह धिनौनी रीति स्थापित हुई थी, उस आशयमें भी किसी भांतिका कोई हेर फेर न होगा। दोनों सइयद भ्राताओंकी असीम सामर्थ्यकी हरण करनेके अभि-प्रायसे क्षीण हृदयवाले बादशाह फर्रुखसियरने औरंगजेबके प्राचीन मंत्री इनायत उल्लाखाँको अपना दीवान बनाया। कहते हैं कि वह दीवान देशकाल और पात्रापात्रका बिनाही विचार किये हुए हिन्दू प्रजापर कठोर अत्याचार करने लगा और इसके साथ ही साथ जिजिया कर भी पुनर्वार लगाया गया। यद्यपि यह जिजिया कर औरंगजेबके उस घृणित मुंडकरसे बहुत ही अलग था; यद्यपि सालि-याना आमदनी पर यह महसूल बहुत ही कम दरके साथ लगाया था; यद्यपि लूले लंगड़े अन्ये और दीन दरिद्रगण इस करसे छुटकारा पा गए थे, तथापि “यह महसूल काफिरोंसे लिया जाता है” इस विधिसे हिन्दुओंमें घोर विद्वेष उत्पन्न हुआ। ऐसा कौन है जो सामर्थ्यानुसार अपने ऊपर किसी प्रकारका कर लगाने दे? या मनुष्य होकर जो बिना ही कारणके किसी दूसरेको अपने हृदयका रुधिर दान करनेकी इच्छा करे। जो धर्मभीरु भारत-सन्तानगण, देवभावसे अपने राजाकी पूजा करती है, जिस राजाको मनुष्य समझना भी हिन्दूगण पाप मानते हैं। वह भारतसन्तान भी आज करभारसे पीडित होनेके कारण उस देवोपम राजाके कल्पित देवभावको भूल गई। इस प्रकारसे कर स्थापनकी वार्ताका विचार करते २ मनुष्यकी स्वार्थपरताको निहार कर हम स्तंभित होजाते हैं × !

* बादशाह फर्रुखसियर २०००) पर जिजिया करके १३) रु० लिया करता था।

× जिजिया करसे बहुत पहिले तेमगा (स्याम्पकर) प्रचारित होगया था।

संग्रामसिंहके ऊपर जय प्राप्त करनेके समय बाबरने हिन्दुओंके ऊपर इस करको लगाया था। यद्यपि जिजिया करकी समान यह तेमगा कर दुर्भर नहीं था, तथापि हिन्दूलोगोंके हृदयमें इसके द्वारा विद्वेष उत्पन्न होता था।

राजस्थानके दूसरे छोर मरुमय मारवाड़ राज्यमें जब इस प्रकारका व्यापार हो रहा था, तब अमरसिंह इसको भलीभांतिसे जान गए थे। यद्यपि अनर्थ करनेवाली गौरव प्यासने त्रिवलके सन्धिपत्रको खंड करके अजितसिंहको राणाजीके निकटसे अलग कर दिया, तथापि अमरसिंहका उत्साह इस बातसे कुछ भी कम न हुआ। पराई तुच्छ अनुकूलताको कुछ भी न समझ कर वह अपने विक्रम और अध्यवसायका भरोसा करने लगे। अनन्तर अपनी तथा समस्त राजपूत जातिकी स्वाधीनताको पुनः प्राप्त करनेके लिये कठोर कार्यको करनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा हुआ। किस प्रकारकी चतुरता और कैसे उत्साहके साथ राणाजी अपना संकल्प सिद्ध करनेको तैयार हुए थे; उसका एक विशेष प्रमाण भी पाया जाता है। एक सन्धिपत्र ही उसका प्रमाण है * वादशाह फर्रुखसियरने राणाजीके साथ यह सन्धि स्थापित की थी। इसके दूसरे नियममें ही जिजिया करके रहित करनेका लेख है।

* यह सन्धिपत्र “ प्रार्थनापत्र ” के नामसे प्रसिद्ध हुआ है।

“ १—सातहजार सवारोंकी मनसबदारी हमको दी जाय । ”

“ २—पंजा लगेहुए प्रमाण पत्र द्वारा इस प्रकारकी प्रतिज्ञा प्रकाशित होती है कि जिजिया कर रहित होगा, अब हिन्दू लोगोंके ऊपर यह कभी भी स्थापित नहीं होगा। किसी प्रकारसे या किसी चेष्टासे कोई बादशाह मेवाड़में इसको प्रचारित न कर सकेगा। यह एक साथ ही रहित होवे । ”

“ ३—दक्षिण देशके लिये जो एकहजार राठौर सवार लिये जाते हैं, सरकार उनका लेना माफ करे । ”

“ ४—हिन्दुओंके धर्ममंदिर जो मुसलमानोंने तोड़ डाले हैं, वह फिर बनवा दिये जाय, और हिन्दूलोग स्वाधीनभावसे अपने धर्मकी चर्चा करने पावें । ”

“ ५—मेरे मामा, चचा, भ्राता, अथवा सदासगण यदि आपके (बादशाहके) निकट आवें, तो उन लोगोंको किसी प्रकारका आश्रय या उत्साह न दिया जावे । ”

“ ६—देवल, वांसवाडा, डोंगरपुर, सिरौही तथा अन्यान्य समस्त भूम्यधिकारियोंके ऊपर मेरा आधिपत्य रहे, उनकी और बादशाहकी परस्पर भेंट न हो, उनकी मुलाकात मेरी मर्फत होनी चाहिये । ”

“ ७—मेरे पास जो फौज है वह सदाओंकी है, बादशाहका जब आवश्यकता हो नियमित समयके लिये उसको मंगवाले। जबतक वह सेना सहायमें रहेगी तबतक उसकी रसद इत्यादिका खर्च दरबारसे होता रहेगा और कार्य शेष होतेही उसका हिसाब वेवाक करना होगा । ”

“ ८—बादशाहकी नोकरीको जो हकदार, जमींदार व मनसबदार इत्यादि सरदार अंतःकरण पूर्वक उत्साहसे करते हैं, उनकी सूची मेरे पास भेजी जाय, और जो बादशाहकी आज्ञाका मान्य नहीं करते उनको मैं दंड दूंगा। परन्तु मेरे सदास जब बादशाहके कार्यके लिये इधर उधर घूमेंगे, उस समय उस सेनासे खेत इत्यादिकी जो हानि होगी उसकी जवाबदारी मुझपर नहीं होनी चाहिये । ”

इस सन्धिपत्रको आद्योपान्त देखनेसे भलीभांति ज्ञात होजायगा कि अठार-हवीं शताब्दीके आरंभमें राजपूत और मुगललोगोंकी अवस्था किस दशामें थी। यद्यपि सन्धिपत्रका नाम सुनते ही राजपूतनाथ अमरसिंहके सम्बन्धमें अपमान सूचक चिन्ता हृदयके बीच उदय होतीहै; परन्तु यदि विशेष विचारके साथ देखा-जाय तो वह चिन्ता तत्काल ही दूर होजाती है। आठवाँ सूत्र पढ़नेसे यह भली-भांतिसे जाना जाता है कि राणाजीकी इससे कोई हानि नहीं हुई थी। क्योंकि इस सूत्रमें राणाजी बादशाहके रक्षक रूपसे सूचित हुए हैं। “सातहजारी मन-सवदारी” का विचार करते ही तेजस्वी अमरसिंहकी याद आती है। उन्होंने राज्यधनको छोड़कर वनवासव्रत अवलम्बन किया, तथा किसीकी अधीनता नहीं मानी थी। परन्तु राजपूत जातिकी भीतरी अवस्था बहुतायतसे बदल गई, संगरमें उसका मत भी बदलता चला। क्षण स्थाई लौकिकसन्मानके सम्बन्धमें राजस्थानके दूसरेदेश मेवाडकी बराबर होगएथे। पदके तुच्छ लालचसे सबहीने मुगलोंको सन्मानका खजाना समझा था। उसकाल वे इस बातको नहीं समझे कि हमारा यह ध्यान सम्पूर्णतः भ्रमसंकुल है। स्वाधीनता और जातीय गौर-वके बदलेमें जो सन्मान प्राप्त हो, उस सन्मानका क्या प्रयोजन है? इसके उपरान्त जेताके निकट दास जातिका सन्मानही क्या? सहस्र सन्मानसे भूषित होकर जिसको जेताकी जूतियें उठानी पडें, उसका वह सन्मान किस अर्थका है? वह सन्मान तो केवल विडम्बनामात्रहै, वह तो असारता, कायरता, और पराधीनताका प्रकाशमान चिह्न स्वरूप है। राजस्थान-

“ ९-फूलिया, मंगलगण, वेदनोर, वसार, गयासपुर, पुरधर, वांसवाडा व डोंगरपुर यह महाल व उनके पांच हजार सवारोंकी मनसबदारी मुझे मिलनी चाहिये। इन पुराने ५००० सवारोंके अतिरिक्त गढ़ीपर बैठनेके समय स्वीकार कियेहुए, व सिन्धुसिनीमें जय मिलनेके समय स्वीकार कियेहुए १००० सवार, इस प्रकार ७००० हजार सवारोंका मनसब पहिले नियमके अनुसार मुझको मिलना चाहिये। व इसही भांतिसे सिन्धुसिनीमें जय मिलनेके समय १००० सवारोंको पांच २ घोड़ोंकी परवानगी भी बचनके अनुसार मिलनी उचित है।

“ १०-तीनकरोड दाम (क)पुरस्कारमें मिलने चाहियें। यथा;—दो करोड दाम सन्धिपत्रमें स्वीकार करनेके अनुसार व एक करोड दाम दक्षिणकी सेनाके वेतनका, यह ईनाम अब मिलजाय। उप-रोक्त दो करोड दामोंकी तो मुझे इसही समय अत्यन्त आवश्यकता है, और उसके बदलेमें सिरोही प्रान्तका देना बादशाहने स्वीकार भी करलिया है, अतएव वह प्रान्त मुझको मिलना उचित है।”

“ ११-इस समय जो महाल मुझे मिलने चाहियें उन सबके नाम इस प्रकार हैं, यथा;—ईडर, केक्रीमंडल, जिहाजपुर, मालपुर व दूसरा एक (ख) यह मिलने उचित हैं।”

(क) चालीस दामका एक रुपया होता है। यह तीन करोड दाम साठेसातलाख रुपयेका हुआ।

(ख) इसके नामकी स्याही उड़जानेसे साफ नहीं पड़े जानेके कारण नाम नहीं लिखागया।

की और समस्त जातियें उस सन्मानसे अपनेको सन्मानित समझती हैं; परन्तु बाप्पारावलके वंशवालोंने कभी भूलतेहुए भी बायें चरणसे उस सन्मानको नहीं ठुकराया । इसही कारण दुर्दशाप्राप्त होनेपर भी वह अधिक सन्मानके पात्र थे । बादशाह फर्खसियरके साथ सन्धि करके राणा अमरसिंहको जैसा सन्मान प्राप्त हुआथा, उसका वृत्तान्त सन्धिके अन्यान्य नियमोंको पढ़ते ही विदित होजाता है । उन अवशिष्ट नियमोंमें धर्माचरणकी स्वाधीनताका पाना, शिशोदीयकुलके प्राचीन सामन्तोंपर राणाजीका अधिकार पाना; गईहुई सम्पत्तिका प्राप्त होना, यह तीन अधिकार सर्वप्रधान थे । इन तीन अधिकारोंका अनुशीलन करनेसे स्पष्ट प्रतीत होगा कि मुगलकुलकी सौभाग्यलक्ष्मी मुगलोंको धीरे २ छोड़ रही थी । क्या वास्तवमें ऐसाही था । भारतकी उससमयकी राजनैतिक अवस्थाका विचार करनेसे हमारे कथनकी सत्यता प्रमाणित होजायगी । विशाल दक्षिणदेशमें वीर महाराष्ट्रीयगण राजा साहुजीको अपना सर्दार बनाएहुए अपनी कठोर लूट खसोटकी वृत्तिको सिद्ध कर रहे थे । उनके प्रचंड भुजबलसे बहुतसे राज्य लौटपौट होगये । परन्तु वे महाराष्ट्रीयगण उन विजित राज्योंपर अपना अधिकार नहीं जमाते थे, वरन निठुराईके द्वारा सबसे “ चौथ ” और “ दशमुकी ” वसूल किया करते थे ।

मुगल बादशाहतकी इस शोचनीय दुर्दशाके समय दिल्लीके निकट रहनेवाली एक और वीरजातिने स्वाधीनता प्राप्त कर ली । यह जाति ‘जाट’ के नामसे प्रसिद्ध थी । इससे पहिले हम कईवार लिख आए हैं कि जाटलोग प्राचीन जितकुलके सारखाकुलमें उत्पन्न हुए थे । यह लोग चम्बलनदके पश्चिम किनारेपर बसेहुए थे । मुगलोंके कठोर अत्याचारोंको सहतेहुए भी विकराल जाटगण धीरे २ समयानुसार अपने बलको बढ़ा रहे थे । इस समय मुगलबादशाहतकी हीनावस्था निहार अवसर समझ, उन समस्त अत्याचारोंका बदला लेनेके लिये जाटलोगोंने अपने विशाल मस्तकको उठाया और भारतमें अपनी स्वाधीनताका डंका पीट दिया । उस समय प्राचीन जितवंशकी ऊंची पताका एकवार ही दिल्लीके सिंहद्वारपर फहराने लगी । सिन्धुनीके अवरोधकालसे लेकर बहुत दिवसतक वह ध्वजा फहराती रही थी । अनन्तर बृटिश वीरकी चतुरतासे जिसदिन भरतपुरका किला तोड़ा गया, उस ही दिन जाट-वीरोंके मस्तकपरसे विजय-मुकुट नीचे उतर गया । उनकी स्वाधीनतारूपी ध्वजा उखड़कर बृटिशसिंहके चरणोंपर गिरपड़ी ।

चतुर्दश अध्याय १४.

राणा संग्रामसिंह;—मुगलवादशाहतकी अवनति;—निजासुल्तानके द्वारा हैदरावादराज्यकी प्रतिष्ठा;—सम्राट फर्रुखसियरकी हत्या;—जिजिया करका रहितकरना;—महम्मदशाहका दिल्लीके सिंहासनपर बैठना;—सैदखाँके द्वारा अयोध्याकी प्राप्ति;—मेवाड़की शासननीति;—राणा संग्रामसिंहका परलोकगमन;—उनके विषयकी कई एक कहावतें;—राणा जगतसिंह(दूसरे)का सिंहासनपर बैठना;—मारवाड़ और अंवेरराजके साथ उनकी सन्धि;—महाराष्ट्रियोंका मालवा और गुजरातपर आक्रमण करके वहांपर अधिकार करना;—हिन्दोस्थानपर नादिर शाहकी चढ़ाई;—दिल्लीका सत्यानाश;—राजपूतानेकी उस समयकी अवस्था;—मेवाड़की सीमा;—राजपूतोंके मेलका वर्णन;—बाजीरावका मेवाड़पर चढ़ाना;—राणाजीपर वार्षिक कर लगाना;—अंवेरके सिंहासनपर माधोसिंहका अभिषेक होनेमें झगड़ा;—राजमहलकी लड़ाई;—राणाकी पराजय, मल्हार राव हुलकरके साथ उनकी सन्धि;—विष पानकरनेसे अंवेरके ईश्वरीसिंहका प्राणत्याग;—राणाजीका परलोकवासी होना;—

उनके चरित्रका वर्णन ।

जिसदिन वीरवर राणा अमरसिंह (दूसरे) अमरधामको चलेगये, उसही दिन संग्रामसिंह मेवाड़के सिंहासनपर बैठे । इस पवित्र नामका स्मरण करते ही बावखैरी उन प्रचंड वीर महाराणा संग्रामसिंहकी याद आतीहै । इस यादके साथमेंही मेवाड़का अतीत और वर्तमान चित्र मानसिक दर्पणपर

प्रातिफलित होकर चित्तको आनंद और शोकके रसमें सरावोर कर देता है। यह उन्मत्त हृदय इस पवित्र नामामृतपानसे और अधिक उन्मत्त होकर जिज्ञासा करता है कि—क्या यह वही संग्रामसिंह हैं? जिन्होंने तैमूरके वीरवंशधर वीर केशरी बाबरके असीम विक्रमको रोक दिया था—यह क्या वही संग्रामसिंह हैं? आततायी विश्वासघातकने अधर्मयुद्ध करके जिनको परास्त किया था,—यह क्या वही संग्रामसिंह हैं? सन्झ्यावाती हाथमें ले रात्रिकी अगौनी करनेके समय राजपूतललनागण जिनका स्मरण किया करती हैं; गेहूं पीसनेके समय चक्की चलाती हुई कुमारीगण एकसाथ मिलकर जिनके वीरत्वकी गाथाका गीत गाया करती हैं; प्रभातकाल विस्तरेपरसे उठनेके समय राजपूतगण जिनके पवित्र नामका जप किया करते हैं; चित्तौरके विजयखंभपर, आरावली पर्वतमालाके गगनस्पर्शी शृङ्गोपर जिनका नाम खुदाहुआ दिलखाई देता है, यह क्या वही संग्रामसिंह हैं, अन्तरमें बैठकर मानो किसी देवताने तत्काल वज्रगंभीर कंठसे उत्तर दिया,—“अपूर्ण मनुष्यका तेज, वीर्य, गौरवादि सबही अनित्य है! आज उसही अनित्यका संसारमें प्रचार करनेके लिये यह दूसरे संग्रामसिंह राणा, प्रथम संग्रामसिंहके आसनपर विराजमान हैं!”

जिस महम्मदशाहके साथ तैमूरके वीरवंशका प्रकाशमान गौरव निर्वाण होगया, जो पिछला “मुगल बादशाह” था, महाराणा संग्रामसिंह इसहीके समयमें सिंहासनपर बैठे थे। इसही बादशाहके समय (सन् १७१६-३४) में मुगलबादशाहतकी अवनति आरंभ हुई। बाबरका सिंहासन टूटकर खंडर होने लगा। जलके बवूलोंकी समान उन खंडोपर छोटे २ स्वतन्त्र राज्य प्रतिष्ठित होने लगे। मुगल, पठान, शिया और सुन्नी, महाराष्ट्रीय और राजपूत यह सबही स्वतन्त्रताकी ध्वजा उड़ाकर कुछसमयके लिये राज्यसुख भोगने लगे। अनन्तर जिससमय होनहारके अवश्यम्भावी नियमके पूर्ण होनेका दिन आया, जिसदिन हिमाद्रिसे लेकर सिंहलतक जल, थल, पर्वत, वन,—यह समस्त स्थान अचानक ताड़ित प्रभावसे कंपाबमान होकर एक प्रचंड उपद्रव उत्पन्न करने लगे; उसही दिन सातसमुद्रके पार आय थोड़ेसे वृद्धनवीरोंने उन समस्त मुसलमान, महाराष्ट्रीय और राजपूतोंके सिंहासनको धूरिमें मिलाय एक विशालसिंहासनको स्थापित किया! मुसलमान, महाराष्ट्रीय, शिख, और राजपूतगण आज उसही विराटसिंहासनके सामने भयसहित शिर झुकाते हैं!

गुण गौरव और स्वामिभक्तिके ऊपर निर्भर करके अभागा मुगलवादशाह जिस किसी सेनापति या प्रतिनिधिपर किसी देशका शासनभार अर्पण करता था; वही सेनापति या वही प्रतिनिधि कृतज्ञताके पवित्र मस्तकपर पदाघातकर विद्रोहितारूप कलंकित उपायके द्वारा उस स्थानको निगलजानेमें कसर नहीं करता था । इसभांतिके वृणित उपायके सहारे राज्यको हस्तगत करके भी यदि वे उत्तमतासे वहांकी प्रजाका पालन करसकते यदि राज्यकी दृढ़ भीतस्वरूप प्रजाके प्रति पुत्रकी समान आचरण करके उनकी मुखसम्पत्तिको बढ़ाते, तो शीघ्रतासे ही पापका कठोर दंड उनके मस्तकपर न गिरता; और बंगाल, अयोध्या, हैदराबाद व अन्यान्य राज्योंके अधर्मसे लियेहुए सिंहासनपर अवतक वह विश्वासघाती लोग बैठे रहते । परन्तु इस विषयमें महाराष्ट्रियोंका राष्ट्रतंत्र सम्पूर्णतः भिन्नभावसे दिखाई देता है । उनके अकस्मात् उन्नत होजानेका विचार करके आश्चर्य होताहै । न जाने किस दैवीशक्तिके प्रभावसे हिन्दूकुलचूडामणि महाराजाधिराज शिवाजीने, दीन शान्तजीवन धर्म-याजक और किसानोंको चतुर राजकर्मचारी और रणविशारद सिपाही बनाडाला था । यह बात सत्य है कि हिन्दुओंसे डाह करनेवाले मुगल-वादशाह औरङ्गजेवके कठोर सत्तानेसे दुःखित होकर वीरवर शिवाजीने स्वदेशियोंको वीरमंत्रसे दीक्षित और रणाभिनयसे उत्साहित किया था; परन्तु उस अल्पसमयका विचार करके कि जिसमें यह कार्य पूर्ण होगया था, प्रत्येक हिन्दूका हृदय अत्यन्त उत्साहित होजाता है ! ऐसा कौन है जो महात्मा शिवाजीको देशका उद्धार करनेवाला जानकर पूजनेके लिये आगे न बढ़ेगा ? परन्तु भारतका अत्यन्त दुर्भाग्य समझना चाहिये, कि वीरवर शिवाजीके महामंत्रपर उनके वंशवालोंने भलीभांतिसे अत्याचार किया था । यदि वे लोग अनन्त दुराकाक्षाके वशसे उन्मत्त होकर उस महामंत्रका व्यभिचार न करते तो आज भी उन राज्योंको वह अपने अधिकारमें देखते कि जिनको महात्मा शिवाजीने औरंगजेवके हाथसे छीनलिया था । परन्तु भारतकी कठोर कर्म-रेखको कौन मेट सकता है; नहीं तो वह जयशील होकर भी किस कारणसे दूसरी नीतिका अवलंबन करते ? नहीं तो उनका वीराचार, दुराचारका रूप किस कारणसे बनजाता ? वह महाराष्ट्रीयगण अपने असीम विक्रमके प्रभावसे जो राज्य जय करते थे, वहांपर प्रभुता स्थापन नहीं करते थे, वरन उनको लूट खसोटकर अपने देशको लौट जातेथे । इससे पहिले

जो उन्होंने साहस, उत्साह, धीरता व शान्तिप्रियता आदि सुन्दर गुणोंका परिचय दियाथा, आज अभाग्यसे उन सबको छोड़दिया और उनके बदले शीघ्रही दुराकांक्षा, चतुरता और लूट खसोट आदि घृणित दोषोंके समुद्र होगये। जिस दक्षिणावर्तमें उनका अखंड प्रताप विराजमान होगयाथा, जहाँके रहनेवालोंकी भाषा और आचार व्यवहारके साथ उनकी भाषा और आचार व्यवहारका सम्पूर्णतः मेल था; राजनीतिके श्रेष्ठ अनुशासनका अनुसरण करके; अपनी पूर्व गुणावलीका अवलम्बन करके यदि वह वीरगण उस विशाल दक्षिणावर्तके अक्षय राज्यपर ही संतुष्ट रहते, तो उस विशाल देशसे महाराज शिवाजीका लगायाहुआ वंशवृक्ष शीघ्रही न उखड़जाता। परन्तु उनकी प्रचंड अभिलाषा ही उनके लिये काल होगई। उसके पापमंत्रसे उत्साहित होकर उन्होंने जैसेही उत्तरीय देशोंपर थाबा नारना आरंभकिया, वैसे ही वह समस्त भारतवर्षकी हिन्दूसन्तानके नेत्रोंमें काँटेसे खटकनेलगे। उनका मार्ग कंटकमय होगया। राजपूत और महाराष्ट्र दोनों ही हिन्दू हैं, धर्म और जातिके विषयमें दोनोंके आशय सम्पूर्णतः एकही हैं, परन्तु दोनोंके स्वभावमें परस्पर इतना अन्तर देखा जाता है कि जितना राजपूत और मुसलमानोंमें भी नहीं देखाजाता। यह ठीक है कि मुसलमानोंके शासनके भीतर अत्याचार जमाहुआ रहता है, परन्तु महाराष्ट्रियोंकी समान वह अत्याचार घोर अनभल नहीं करता। इसही कारणसे मुसलमानोंके दीर्घकालव्यापी राज्यमें भी राजस्थानकी उतनी हानि नहीं हुईथी कि जितनी हानि सरहटोंने थोड़े ही समयमें की। मुगलवादशाहकी अवनतिके समय दीर्घ काल व्यापी उपद्रवोंको सहकरके यदि भारतवर्षके रहनेवाले शान्तिसुखको प्राप्तकरके धीरे २ जातीयबलको संग्रह करसकते तो फिर भी भारतमें सौभाग्य सूर्यका उदय होजाता। परन्तु मुसलमानोंके कठोर अत्याचारसे छूटते न छूटते ही, महाराष्ट्रियोंके सतानेसे भारतवर्षका कलेजा टूटगया। उस पीड़नके प्रभावसे भारतवर्षसे सार निकलगया, और भारतसन्तान फिर न उठसकी। भीम, भीष्म, कर्ण, अर्जुन और प्रतापसिंहकी मातृभूमिने कितनी एक बृटिशसन्तानके चरणोंमें एकसाथ ही शिर झुकादिया ! हाय ! दुर्जयकालका साहात्म्य कैसा विचित्र है !

वादशाह फर्रुखसियरकी क्षणभंगुर हुकूमतका धीरे २ लोप होताचला, बादशाहने किस बुरी साइतमें सैय्यदोंके प्रभावको हरणकरनेकी चेष्टा कीथी, और किस बुरे वक्तमें उसने दुष्ट इनायतउल्लाको अपना सलाहगीर बनायाथा।

शोक है कि इस इनायत उल्लाने ही बादशाहका सत्यानाश किया। बादशाहने जिस आशासे औरंगजेबके वृद्धमंत्रीको अपना दीवान बनायाथा—वह सफल नहीं हुई। दुष्ट इनायत उल्लाने औरंगजेबके पैतरेपर पाँव धरके हिन्दुओंको सताना आरंभ किया। इस कारणसे समस्त हिन्दूलोग उससे घृणा करने लगे। तदुपरान्त दुर्द्धर्ष सइयदोंकी क्रोधाग्निने उसके ऊपर गिरकर एक साथ इनायत-उल्लाको भस्म कर डाला।

जिस निज़ाम-उल-मुल्कने हैदराबाद राज्यकी प्राणप्रतिष्ठा कीथी, दोनों सइयदोंकी अयथाप्रभुता और अन्याययुक्त सामर्थ्यका हरण करनेके लिये बादशाहने उसको बुलाया। इससे पहिले यह निज़ाम-उल-मुल्क, मुरादाबादनामक देशका सूबेदार था; परन्तु उसके उत्तम ज्ञान और कार्यदक्षताका परिचय पाकर मालवराज्य देनेकी प्रतिज्ञा करके बादशाहने उसको दिल्लीमें बुलाया। दोनों सइयदभ्राता इस वृत्तान्तको सुनते ही महाराष्ट्रियोंकी दश हजार सेना लेकर राजसभामें आये और अत्यन्त क्रोधके साथ फर्रुखसियरको तख्तपरसे उतारदिया। बादशाहकी समस्त आशा धूम्रमें मिलगई उस विपत्तिके समय अस्वेरें * और वूंदीके दो राजाओंके सिवाय और कोई भी उसके पास न रहा। यदि इससमय भी बादशाह इन महाराजाओंके उत्तम परामर्शको ग्रहण करता तो उसके प्राण अकालमें ही न निकलते; परन्तु उसके दुर्भाग्यने किसीकी बात न चलने दी। नहीं तो अपने परमहितैषी मित्रोंकी परामर्शपर बादशाहका ध्यान क्यों न होता? इन दोनों राजाओंने सम्राटको यथार्थ वीरकी समान प्रगट युद्धक्षेत्रमें जानेका परामर्श दिया था।

* टाडसाहबको महाराणाके दफ्तरखानेमें, जयपुरनरेश महाराज जयसिंहकी हस्ताक्षरित एक पत्रिका प्राप्तहुईथी, उसके पढ़नेसे अभागे फर्रुखसियरकी दुर्दशाका वर्णन भलीभाँतिसे पायाजाताहै। महाराज जयसिंहने यह पत्र राणाजीके दीवान बिहारीदासको लिखाथा।

“अमीर—उल—उमरा” आन पहुंचे, और वालाजी पंडितके द्वारा बातचीत ठीक हुईहै। उन्होंने कहाहै कि वह मुझको मित्र समझतेहैं; परन्तु मुझको यात्राकरनेका अनुरोध कियाहै; किस-नसिंह और जीवालाखने भी ऐसा ही परामर्श दिया है, इसलिये मैंने बादशाहको एक अर्जी भेजी है, अर्जीमें इस परामर्शका समस्त वृत्तान्त लिखदिया, और उनकी आज्ञाको अवगतहोनेकी इच्छा प्रगट कीहै। परन्तु बादशाहने मुझको आज्ञा दी; सबकी इस प्रकार इच्छा होनेपर मैंने फाल्गुनके नवें दिन वृहस्पतिवारको यात्रा की और कुछ दूरतक चलकर श्रीवलसरायमें डेरे डाले। वूंदीके रावराजासे अपने साथ आनेको कहा; परन्तु यह बात उनकी मनोगत न हुई। वह कुतब—उल—मुल्कके साथ मिलगए। कुतब—उल—मुल्कने कितनी एक सेना देकर उनको अजितसिंहके साथ डेरे डालनेको कहा। रावराजाने ऐसा ही किया। कोटेके भीमसिंहकी सेना आगई; उसके साथ

परन्तु बादशाहने अत्यन्त भीरु और कायरमनुष्यकी सभान उनके किसी परामर्शपर ध्यान न दिया। इस कारण वह दोनों राजा भी उसको छोड़ गये। फर्रुखसियर अत्यन्त ही कायर था वह राजपूत राजाओंके परामर्शका निरादर करके “जनानखाने” में ही रहने लगा। उसको अपनी रक्षाका कोई उपाय न सूझा और शत्रुकी दयाका मार्ग देखनापड़ा क्रोधित सइयदने बादशाहसे कहलाभेजा कि “अपने विश्वासी राजपूतोंको दूर कर दीजिये, और हमारे एक सेनापतिको दुर्गमें प्रवेश कर दीजिये, ऐसा होनेसे हम आपपर किसी प्रकारका अत्याचार न करेंगे।”

अभागे फर्रुखसियरकी समस्त आशाएँ नष्ट होगईं, उसने निराश होकर समझा कि शत्रुगण महलमें किसी तरहका जोर जुल्म नहीं करेंगे। इसीसे वह जनानमें वेगमोंका दामन पकड़कर बैठारहा, परन्तु उसकी वह उम्मेद भी दूर होगई। “असित वस्त्र पहिरनेवाली विभावरी (रात्रि) कराल वेश धारणकरके संसारमें आई, और दिवासती बादशाहके पतित भाग्य-नक्षत्रकी नाई गंभीर अन्धकारमें लोपहोगई। दुर्गका द्वार बन्द हुआ; बादशाहका कोई भी मित्र किलेमें नहीं रहने पाया; केवल वजीर और अजितसिंह वहाँपर थे। विकल दशनवाली रात्रि नगरवासियोंको अनेक प्रकारके भय दिखाने लगी। सबहीको अत्यन्त चिन्ता थी। इस बातकी किसीको खबर नहीं थी कि महलमें क्या होरहाथा। दूसरी ओर अमीर-उल-उमरा महाराष्ट्रियोंकी दश हजार सेनाको सजाएहुए बाट देखरहाथा। ऊषाके ललाई लिये रंगने नौबतके साथ साथही नये दिवसका आगमन और अभागे फर्रुखसियरकी दुर्दशायुक्त कहानीको संसारमें गंभीरनादसे प्रचार किया। सबकी आशा लोपहुई। फर्रुखसियरकी पदच्युतिपर रफे-उल-दिर्जातु दिल्लीके तख्तपर बैठा।” पूर्वदेशीय राजाओंकी पदच्युति और निधनके बीचमें थोड़ा ही समय लगा करताहै। अभागे फर्रुखसियरके लिये भी ऐसा ही हुआ। यहांतक कि बन्दीलोगोंने जब नवीन बादशाहको “उम्रदराजहो” यह कहकर आशीर्वाद दिया, अभागे फर्रुखसियरके गलेपर उस समय भी धनुषकी डोरी लगी हुई थी। *

—एक युद्ध हुआ। इस युद्धमें जयसिंह हाड़ा मारागया और रावराजा भयके मारे अलीवर्दीखांकी सरायमें भागगये। उनकी सहायताके लिये मैंने सेना भेजीथी। बादशाहने हमामखाना और तोशाखाना सइयदोंको देदिया। सइयदोंने इच्छानुसार सब वस्तुओंको हजमकिया और करतेहैं। सइयदोंको तो आप भलीभांतिसे पहिचानतेहैं। अब मैं स्वदेशको लौटा जाताहूँ। हजूरसे (राणाजीसे) ज़वानी बहुतसी बातें निवेदन करनीहैं। इससे पहिले तुम मुझसे मिलनेके लिये आना। इति फाल्गुन शुक्ल ९ संवत् १७७५ (सन् १७१९ ई०)

* दोषीको मारनेके समय मुसलमान लोग उसके गलेमें धनुषका डोरा फांसीकी भांति लगादेते हैं।

तख्तपर बैठते ही नये बादशाहने अजितसिंहको तथा और दूसरे राजाओंको संतुष्ट रखनेका विचार किया और इसही कारण उसने जिजिया करको उठा दिया । राजपूतोंको प्रसन्न करनेके लिये चतुर सइयदोंने बादशाहके दीवान इनायत उल्लाको पदच्युत करके उस पदपर उनके एक स्वजातीयको नियत किया । इस नये दीवानका नाम राजा ग़नचंद था । रफ़ेउलदिर्जात केवल तीनमास-तक बादशाहत करके परलोकवासी हुआ । इसको ख़ाँसीका रोग अत्यन्त प्रवल हुआ था । इसकी मृत्युके पीछे और भी दो बादशाह राज्यके क्षणस्थायी सुखको भोगकर थोड़े ही दिनोंमें संसार रंगभूमिसे विदाहुए । तदुपरान्त बहादुर शाहका बड़ा बेटा तोशनअख़्तर महम्मद शाह नाम धारण करके सन् १७२० ई० में दिल्लीके तख्तपर बैठा । महम्मद शाहने कुल तीस वर्षतक बादशाहत की थी । इसके ही समयमें मुगलवादशाहीकी सम्पूर्णतः अवनति हुई । राज्यमें अनेकप्रकार वाद-विवाद उत्पन्न होगये, जिससे वह विशालदेश छिन्नभिन्न होगया । उस झगड़ेके अवसरको अमूल्य समझकर मरहटे और पहाड़ी अफगानोंने भारतवर्षपर आक्रमण किया और नगर व गावोंमें लूट खसोट मचाने लगे ।

एक तो राज्यमें अनेक प्रकारके उपद्रव हो रहे थे, उसके ऊपर तेजस्वी सइयदोंके कठोर अत्याचारसे घोर विनाश होने लगा । जो लोग उनसे मिलेहुए थे, उनमें अधिकांश विशेष करके निज़ाम*—उनपर अत्यन्त अप्रसन्न हुआ । पहिले ही कहआए हैं कि निज़ाम एक चतुर सेनापति था । मालवेका उद्धार और श्रीवृद्धिसाधन करनेमें उसने अत्यन्त चतुराईसे काम लिया था, इसकारण दोनों सइयदोंको उसपर अत्यन्त खटका हुआ । इस समय निज़ामको अप्रसन्न देखकर वह भय दूना बढ़ा । परन्तु उन्होंने आपही अपना काम विगाड़ा, उनके ही दुराचारने भारतवर्षसे “मुगल बादशाहत” के नामको लोप करदिया । गर्वसे मत्त हो अपनी सामर्थ्य अचल रखनेके लिये वह जिस २ को बादशाह बनाते थे वही अयोग्य निकलता था । अतएव यह कहना ठीक ही होगा कि प्रजाका उन दोनों भाइयोंसे किंचित् भी संगल

* राजा जयसिंहने इस विषयमें राणाजीके मंत्री विहारीदासको एक पत्र लिखा था, उसके कुछ अंशका अनुवाद यहां दिया जाता है:—

“आपने लिखा है कि आपके महाराज सेनाके लिये रुपया भेजते हैं;—इस विषयमें मेरा कोई हिसाब नहीं है । ऊंटपर लादकर उन रुपयोंको जल्दी भिजवा दीजिये । नव्वाब निज़ामउलमुक्क उज्जैनसे शीघ्रही यात्रा करते हैं और जवीलाराम इधर आता है । आगरेसे समाचार आया है कि वह काल्पीनदीके पार होगया । दीवानजीसे कहना कि वह जल्दी फौज लेकर मिलें । देरका काम नहीं है । धन पास होनेसे समस्त कार्य होजाता है । भाद्रपद शुद्ध ४ संवत् १७७६ (सन् १७२० ई०),

नहीं हुआ। उनके बनाएहुए बादशाह कठपुतलीकी समान तरुतपर बैठे रहतेथे। उनको कोई भी बादशाह नहीं समझताथा; प्रजाकी जो कुछ भक्ति उनपर थी वह उनके कठोर अत्याचारसे निर्मूल होगई, अमीरउल उमराके द्वारा बादशाहका अर्थ शून्यनामसे प्रकाशित होनेपर सब ही स्वाधीन जीवनका आनंद लूटने लगे। चतुर निजामने भी इस अवसरमें अपना स्वाधीन होना प्रचार करदिया और असीरगढ व बुरहानपुर इन दोनों शहरोंके किलोंपर अधिकार करके अपना बल बढ़ाया। इन सैयदोंके हृदयमें अनेकभांतिकी शंका उठने लगीं। स्वार्थरक्षाका कोई उपाय न देखकर उन्होंने राजपूतसामन्तों * से सहायता मांगी। वैसेही कोटा और नरवरके दोनों राजकुमार निजामकी सेनापर अधिकार करनेके लिये अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर नर्मदा नदीके किनारेपर आये। परन्तु यह दोनों राजपूत, संग्रामविशारद निजामकी प्रचंड सेनाको नहीं रोकसके, और उस नर्मदाके किनारे ही निजामकी क्रोधाग्निसे कोटेका राजा भस्म होगया।

मुगलोंके हाथसे हैदराबादका राज्य निकलते ही अयोध्याका राज्य भी स्वाधीन हुआ चतुर सइयदख़ाने × इस स्वाधीनताको प्राप्त कियाथा। जिससमय निजाम-

* इस समय नागोरके राजा भक्तसिंहने राणाजीके प्रधानमंत्री विहारीदासको जो पत्र लिखा था उसके पढ़नेसे उस समयके बहुतसे समाचार ज्ञात होंगे।

“आपका पत्र पाया; उसको पढ़कर प्रसन्न हुआ। श्रीदीवानजीसाहबका रुका भी समयपर मुझको मिला, उनके मनोभावको मैं समझगया। आप कहतेहैं कि दोनों नव्वाब ही (सैयद) रणक्षेत्रमें आये हैं। वे दोनों महाराजा (कोटे और नरवर) भी उनसे जा मिले, और तुम्हारी सेना भी उनकी सहायताके लिये जानेको तइयार हुईहै। कारण कि पुरानी मित्रता किस प्रकारसे छिन्न होसकतीहै ? यह सब जाना। परन्तु नव्वाबोंमेंसे कोई भी रणमें न जायगा, और कोई भी महाराज दक्षिणकी यात्रा न करेगा, वह सबही निश्चिन्त हो घर बैठकर मौज उड़ावेंगे। परन्तु यदि कार्यवशासे नव्वाबोंको संग्राममें जाना पड़े, तो उनका ही पक्ष अवलम्बन करना, इसके अतिरिक्त यदि दूसरे पक्षकी सहायता की जायगी तो आपको विपत्तिमें फँसना पड़ेगा। अच्छा, जो समाचार होगा वह मैं सूचित करता रहूंगा, इस समय सावधान रहियेगा। अपने हितके लिये यदि स्वयं आपमें सामर्थ्य है तो फिर उसमें दूसरेको यश आने देना ठीक नहीं ?—आप ज्ञानवानहैं, और संकेतसे सबके मनोभाव समझ सकतेहैं। जहांपर आपकी समान कर्मचारी विद्यमानहैं, वहांपर किसीप्रकारकी विपत्ति संभावित नहीं।”

× सआदतख़ान एक खुरांसानी सौदागरथा, यह अपनी कोशिशसे ही सेनापतिके पदपर—और फिर अयोध्याका नव्वाब होगयाथा। सआदतख़ाने अपने हाथसे हुसेनअलीको नहीं माराथा।

मने स्वाधीनताका झंडा उड़ाया । सइयदख्वाँ उससमय वियानादुर्गकी सरंदारी करताथा। सइयदोंका गर्व तोडनेके लिये महम्मद शाहने उसको दिल्लीमें बुलाया । बादशाहकी आज्ञा पातेही सआदतख्वाँ अमीरउलउमराके संहार करनेकी चेष्टा करने लगा । हैदरख्वाँ × नामक एक विश्वासघातीने, धोखेसे अमीरकी छातीमें छूरी मारकर उसको संहार किया । मुहम्मद शाह उसवक्त डेरोंमें था । अमीर-उल-उमराकी मृत्युका समाचार पाते ही वह उसके भ्राता अबदुल्लाको कैदकरनेके लिये तइयार हुआ । दुष्ट वजीरने यह समाचार पाते ही दिल्लीके तख्तपर इब्राहीम नामक एक और मनुष्यको बिठलाया और महम्मद शाहको रोकनेके लिये युद्ध करनेको चला । इस संग्राममें राजपूतलोगोंने किसी पक्षसे भी शस्त्र नहीं पकड़ाया । अनन्तर दोनों इल मैदानमें आनकर सामने खड़ेहुए; परन्तु युद्ध शीघ्रतासे आरम्भ हुआ, कुछकाल बीता । दोनों ओरकी सेना ही युद्धके लिये अत्यन्त उत्कंठित हुई तदुपरान्त दीवान राजा रत्नचंदको पकडकर उनका शिर कटवाले-नेसे संग्रामके लिये दोनों ओरसे घोर उत्तेजना हुई । बहुतदेरतक संग्राम होनेके पीछे, दिल्लीक सेनापति सआदतख्वाँने वज़ारको पकडकर महम्मद शाहके सामने पेश किया, बादशाहने उसको तत्काल फांसीपर लटकाकर इस लोकसे विदा-किया * सआदतख्वाँकी इस चेष्टासे बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ । इसके लिये उसको बहादुरजंगकी उपाधि दी और अयोध्याका राज्य समर्पण करदिया । राजपूत नृपतिगण विजयी बादशाहको वधाई देनेके लिये गये । राजाओंने इस युद्धमें किसीओरका पक्ष ग्रहण नहीं कियाथां इस लिये बादशाह उनसे बहुत प्रसन्न हुए और इसक पुरस्कारमें अम्बेर और जोधपुरके राजाओंको

× हैदरख्वाँ अथवा मीर हैदर एक असभ्यकालमकथा। हुसेनअलीको मारनेके लिये वह एक अर्जी हाथमें लेकर मार्गमें एक ओरको खड़ा होगया । हुसेनअली पालकीमें सवार होकर अपने आदमियोंके साथ उसही मार्गसे जा रहाथा, इसही समय हैदरने ऊंचाहाय करके अपनी अर्जी उसको दिखाई । अमीर-उल-मुल्कने हैदरको पास आनेके लिये कहा । आज्ञा पाकर वह निकट आया, और अर्जी वजीरसाहबके हाथमें दी। वजीरसाहब मनलगाकर उस अर्जीको पढनेलगे, इसही समयमें दुष्ट हैदरने उसकी छातीमें छूरी मारी । तत्काल ही हुसेनअलीका मृतकशरीर पालकीसे नीचे गिरा। यह देखकर वजीरके अनुचरगण अत्यन्त क्रोधित हुए, और उसही स्थानमें हैदरके टुकड़े २ करडाले।

Elphinstone's History of India. P. 694.

* एल्फिन्स्टनसाहब लिखतेहैं कि सैय्यद पढ़ा. पवित्र वंशमें उत्पन्न हुआथा, इस कारण बादशाहने उसको नहीं मरवाया ।

कितने एक परगने दिये* गिरधरदासने × महाराष्ट्रियोंको आगे बढ़नेसे रोकाथा, इस लिये उनको मालवा दियागया । और निजामको हैदराबादसे वजीर बनानेके लिये बुलाया ।

भारतके घोर राजनैतिक विप्लवके समय मेवाडकी नीति सम्पूर्णतः भिन्न प्रकारसे ज्ञात हुआ करतीहै । जिससमयमें उनके सजातीय और आसपासके रहनेवाले राजा-लोग समयानुसार अवसर पाय, मुगलबादशाहतकी गडबडीमें पडकर सावधानीके साथ अपने २ राज्यको बढारहेथे, उससमय मेवाडके राणागण आलस-भावसे पड़ेहुए समय काट रहेथे । पराई उन्नति देखकर भी उनको डाह नहीं होताथा । अंबरका प्रचंड प्रताप यमुना नदीके किनारे तक फैल गयाथा । इस ओर मारवाडके राजा अजयसिंहने अजमेरदुर्गके सौधपर अपनी विजयपताकाको उडादियां और गुजरातके राज्यको छिन्नभिन्न करके अपनी विजयी सेनाको मरुभूमिसे द्वारकातक चलाया । ऐसे समयमें मेवाडके मध्य कुछ भी उत्कण्ठा दिखाई नहीं देती थी । मेवाडके राणा अपने † प्राचीन सामन्तराजाओंके साथही निश्चिन्तहो प्रसन्न रहते थे । इस प्रकारकी नीतिके व्यवहार करनेका मूल कारण खोजनेके लिये हमको अधिक दूर नहीं जाना पडेगा । केवल एकवार मेवाडकी प्राचीन नीतिका अनुशीलन करनेसे इसकी सत्यता हाथमें आजायगी । जिसनीति और जिन संस्कारोंको अचल रखनेके लिये गिहौट वीरगणोंने प्रसन्नतासे अपने हृदयका रुधिर दान किया, कदाचित् पश्चात् उस नीति और उस संस्कारमें कुछ विघ्न पडजाय, या मुसलमानोंसे मेल करना पडे, इसही भयके मारे वह अपना राज्य बढानेके लिये आगे नहीं बढ़तेथे, तथा राजनीति विषयमें अपकर्ष सिद्ध होने पर भी उस नीति और संस्कारको नहीं छोड सकतेथे । इसही कारणसे उनके राज्यकी सीमा नहीं बढ़तीथी । राज्यकी श्रीवृद्धि साधन करनेमें जो विरुद्ध सामन्त सम्प्रदाय भी प्रतिकूलाचरण कियाकरती थीं । इन दोनोंमें इतना विरोध था कि यदि एक दल किसी दूसरे राज्यको जीत लेता तो दूसरादल उससे विरुद्ध कार्य कियाकरताथा, इसकारण पहिला दल पहिले जीतेहुए राज्यको छोडकर अपने देशमें लौट-आताथा । यहांपर एक ऐसा उदाहरण भी दियाजाताहै । शक्तावत सर्दार साहसी

* जयसिंहको आगरा, व अजीतसिंहको गुजरात और अजमेरनगर मिलाथा ।

× गिरधरदास, रत्नचंद्रके प्रधानकर्मचारी जुवीलराम नागरब्राह्मणका पुत्र था ।

† डंगरपुर और बांसवाडा भी इसमें लम्बिलित था ।

जैतसिंहने राठौरोके हाथसे ईडरदेश छीनकर कोलीवाडाके पर्वत प्रदेशतक समस्त भूमिको अपने अधिकारमें करलिया; फिर वह दूसरे देशोंको जीतनेके लिये आगे बढ़ता था कि राणाजीने उसको युद्ध छोडकर उदयपुरमें लौट आनेकी आज्ञा दी । अतएव जैतसिंहकी जय असम्पूर्ण रह गई । इसका कारण यह था कि प्रतिद्वन्दी चन्दावत सर्दारने विद्वेषभावको ग्रहणकर राणाजीसे जैतसिंहकी कुछ बुराई कीथी, इसही लिये राणाजीने शक्तावत सर्दारको लौट आनेकी आज्ञा दीथी । इसप्रकार परस्परके डाह और वैरभावसे ही मेवाडका भीतरी बल अधिकतासे हीन होगयाथा । इससमयमें मेवाडका कोई सामन्त भी अपने अधिकारमें दुर्ग नहीं बनाने पाताथा, इसका कारण यह था कि उसको तीन वर्षसे अधिकके लिये पट्टा नहीं मिलताथा । भरण पोषणके लिये उनको भूसम्पत्ति दीजाती थी, देशकी पर्वतमाला उनको किलेका काम देतीथी; और सीमापर जो किले बनेहुए होते थे, वही शत्रुओंसे उनकी रक्षा करते थे । जैसे २ मुगलोंका राज्य घटता गया—वैसे ही वैसे उनकी यह रक्षणनीति छूटती गई; परन्तु इसके थोडेदिन पीछे ही कठोर महाराष्ट्रीय और पठानगण जब प्रचंड वेगसे मेवाडभूमिमें घुसने लगे, तब विवश होकर मेवाडके सर्दारोंने अपने देशको किलोंसे घेरदिया ।

राणा संग्रामसिंहने अठारहवर्षतक राज्य कियाथा । मेवाडका सन्मान इनके समयमें अचल रहाथा, तथा शत्रुओंने जो राज्य लेलियेथे वह फिर लौटा लिये गयेथे । राणाजीने जो विहारीदास पंचौलीको अपना दीवान बनायाथा इससे ही उनकी दूरदर्शिता और तीक्ष्ण बुद्धिका परिचय भलीभांतिसे प्राप्त होताहै । विहारीदासके समान चतुर और विश्वासी मनुष्य इससे पहिले कभी मेवाडका मंत्री नहीं बनाथा । इस बातकी सत्यता उनके समकालीन राजाओंके लिखेहुए पत्र पढनेसे भलीभांति जानीजायगी । विहारीदासने तीन राणाओंके राज्यतक अपने मंत्रीपदका भलीभांतिसे निर्वाह कियाथा । परन्तु राणा संग्रामसिंहके परलोकवासी होनेपर मेवाडमें जो प्रचंड महाराष्ट्रीय विद्रुव प्रवाहित हुआ; उसकी तीक्ष्णधारको पंचौलीमंत्रीकी सहस्रों युक्तियों किसीप्रकारसे न रोकसकीं ।

महाराणा संग्रामसिंहके चरित्र सम्बन्धमें बहुतसी बातें प्रसिद्धहैं । उनका विचार करनेसे निश्चय होता है कि प्रजापालन, गृहपालन इत्यादि संव ही विषयमें राणाजी विशेष पारदर्शी थे । राणाजी विज्ञ, न्यायी, दृढप्रतिज्ञ राजा

जिस कार्यको आरंभ करते, उसको बिना पूरा किये हुए नहीं छोड़ते थे; वह राजकीय और व्यवहारिक सब प्रकारका कार्य निर्वाह करते थे। यहां तक कि जिन बातोंमें वृथा ही बहुतसा व्यय हुआ करता था, उनकी भलीभांतिसे परीक्षा करके खर्चको कम कर दिया करते थे। महाराणाजीकी कहावतोंमें जो बातें विशेष मनोहर ज्ञात हुईं उनको ही आगे लिखा जाता है। मेवाडकी प्रथम श्रेणीके चौहानोंमें कोटारियोंके चौहान भी माने जाते हैं। राजसभामें इन लोगोंकी अत्यन्त प्रतिष्ठा थी। एक समय इन लोगोंने राणाजीके राजसाजको भारी करनेकी प्रार्थना की। प्रचलित शिष्टाचारके अनुरोधसे राणाजीने उनकी प्रार्थनाको स्वीकार किया। कोटारिया चौहानोंके आनंदकी सीमा न रही। वह लोग इस बातका विचार करते २ कि राणाजीने हमारी प्रार्थनाको स्वीकार कर लिया—आनन्दके साथ अपनेको धन्यवाद देते हुए बरको गये। परन्तु राणाजीने अपने मंत्रीको बुलाकर आज्ञा दी कि “कोटारियोंकी जागीर-मेंसे शीघ्र ही दो गांव अलग कर लो।” यह आज्ञा थोड़े ही समयमें कोटारिया सरदारने सुना। उसने तत्काल राणाजीके गृहपर आय भयसहित पूछा “महाराज! इस दिनसे कौनसा दुष्कर्म बन पड़ा जो श्रीमान्ने असन्तुष्ट होकर मुझे ऐसी दंडाज्ञा दी है।” राणाजीने मुस्कुराकर धीरे २ उत्तर दिया कि “कुछ भी नहीं रावजी! तो भी जो आपने मेरे पहिरावके बढ़ानेका अनुरोध किया है, मैंने भलीभांति विचार कर देखा कि इन दोनों गांवोंकी आमदनीसे ही इसका खर्च चल सकेगा। जब कि मेरी आदमनीका कुल रुपया अलग २ मदमें व्यय हुआ करता है, तब अपने बड़ेबूढ़ोंके साज सरंजामके आडम्बरको बढ़ाकर आपलोगोंका मनोमिलाप पूर्ण करना होगा, फिर यह खर्च आवै कहांसे, इसकारण आपके दोनों गांवकी आमदनीके सिवाय यह खर्च और कहींसे नहीं किया जा सकता।” यह उत्तर सुनकर चौहान-सर्दारके ज्ञाननेत्र खुल गए और उसने अपनी प्रार्थनाका प्रतिसंहार किया।

दूसरी कहावत—स्मरणशक्तिकी हीनतासे अथवा भ्रान्तिसे एकवार राणाजीने स्वयं ही अपनी प्रतिष्ठित विधिका लंघन किया था। भोजनभवन, तोशाखाना और गुप्तकोषागार, रनिवास इन सबके खर्चको अलग २ भूमि नियत थी। इस भूमिको थुआ नामसे पुकारते थे। प्रत्येक थुआ एक २ कर्मचारीको सौंपा हुआ रहता था। इन कर्मचारियोंको थुआदार कहा जाता था। थुआदारलोग अपना २ हिसाब मंत्रीके पास दाखिल किया करते थे, राणाजीने इनमेंसे एक थुआदारका एक थुआ अलग कर लिया था। परन्तु इसको वह भूल गए थे। एक

समय राणाजी अपने सदर्कोंके साथ “रसोडा” भवन (भोजनागार) में भोजन करनेको बैठे। परोसनेवाला नियमानुसार सब पदार्थोंको परोसने लगा। क्रमानुसार दही परसागया; परन्तु बूरा कोई न लाया। इसके लिये राणाजीने कार्याध्यक्षका तिरस्कार किया; तब उसने हाथजोड़कर विनीतभावसे उत्तर दिया कि “अन्नदाताजी! मंत्रीसाहब कहतेथे कि बूराके लिये जो गांव नियत था उसको महाराजने अलग करलिया।” “ठीकहै।” राणाजीने प्रत्युत्तर दिया और बिना कुछकहे बूराबिहीन दहीको ही भोजन करलिया।

तीसरी कहावत। कष्टदेनेवाले अप्राप्तव्यवहार कालके वीतजानेपर राणा संग्रामसिंहने राजकार्यके भारको ग्रहण कियाथा। पिताकी मृत्यु होने उपरान्त महाराजके वालिग होनेतक माताने ही राजकार्यको संभालाथा। सिंहासनपर बैठनेके उपरान्त महाराणा संग्रामसिंहने किसीकारणसे दरियावट्सदर्की भूमिसम्पत्तिपर राज्याधिकार करलियाथा। दोषीके अतिरिक्त राणाजी किसीको दंड न दिया करतेथे, यह बात प्रसिद्ध थी। एकवार दंडदेनेपर फिर वह किसीकी क्षमा भी नहीं करतेथे। अतएव कोई भी साहस करके उनके पास दरियावट्सदर्की क्षमा करानेके लिये नहीं गया। सम्पत्तिहीन सदर्कने बड़ेकष्टसे दोवर्ष वितायकर तीसरेवर्षके आरंभमें ही करुणाकी प्रार्थना करके बंदोरों * के द्वारा राजभाताके निकट एक आवेदनपत्र भेजा। उसने उस प्रार्थनापत्रमें दो लाख रुपयेका एक तमस्सुक भेजा था, और पुरस्कारमें उन दासियोंको भी बहुतसा धन दियाथा। दुहहारका भोजन करनेसे पहिले राणाजी प्रतिदिन माताजीके चरणोंका दर्शन करनेके लिये जाया करतेथे। एकदिन जब कि महाराज माताजीके भवनमें गये तब उन्होंने उस सदर्कका प्रार्थनापत्र उनके हाथमें दिया और इसवातका विशेष अनुरोध किया कि उस सदर्ककी सम्पत्ति राज्यसे लौटाकर देदीजाय। किसीको कोई भूमिसम्पत्ति दीजातीथी तो पहिले राणाजी मंत्रीको आज्ञा दिया करतेथे। जिसदिन वह आज्ञा देतेथे उसदिनसे पानेवालेके हाथमें दानपत्र पहुँचनेमें नियमानुसार आठदिन लगतेथे। कारण कि इन आठदिनके बीचमें उस दानपत्र पर आठ मोहर× छापीजातीथीं। मेवाडके राजकुलका यही सनातन नियम था। परन्तु राणा संग्रामसिंहने उसदिन इस नियममें फेरफार करके दर्यावट्को तत्का-

* राजपूतवालाओंकी दासियें बंदोर कहलातीहैं।

× मेवाडमें आठ मंत्री हैं, जो नियमानुसार दानपत्रपर हस्ताक्षर कियाकरतेहैं। इसही भांति महाराष्ट्रियोंमें भी “अष्टप्रधान” विद्यमानथे।

लही दानपत्र देनेके लिये मंत्रीको आज्ञा दी। शीघ्रही वह राणाजीके समीप आया। तब उन्होंने माताके हाथमें वह दानपत्र रखकर विनयसे कहा कि “यह दानपत्र उसको देकर तमस्सुक लौटा दीजो।” तदुपरान्त राणाजी माताके चरणोंमें शिर नवायकर आशीर्वाद ले भोजनकरनेको चलेगये। दूसरे दिन एक घंटा पहिले भोजन सजानेकी आज्ञादेदी। परन्तु मातासे आशीर्वाद लेने न गये। इस बातसे सबको आश्चर्य हुआ;—परन्तु और सबका विस्मित होना राजमाताके विस्मित होनेसे कहीं घटकर था। वह दिन बीता, दूसरा दिन आया; तथापि माताको पुत्रका दर्शन प्राप्त न हुआ; अब तो उनका आश्चर्य शतगुण बढ़गया। महारानीजीने पुत्रके पास आदमी भेजा; प्रत्युत्तरमें राणाजीने शिष्टाचारके साथ कहलाभेजा कि “सुझको समय नहीं मिलता, इस कारण जानेमें असमर्थ हूँ” पुत्रका विरागयुक्त भावदेखकर राजमाता अत्यन्त भयभीत हुई ऐसे चित्तविकारका कारण खोजनेलगीं। अनन्तर उस “दानपत्र” के अतिरिक्त और कोई कारण नहीं देखपाया। यह जानकर मंत्रीसे अनुरोध करनेको कहा; परन्तु मंत्रीको महाराणासे कुछ कहनेका साहस न हुआ तब राजमाताने दूसरा उपाय अवलम्बन किया। परन्तु उनका वह उपाय भी न चला—कोई चेष्टा फलवती न हुई। तब राजमाताजीके हृदयका शोक सीमासे बाहर होगया, हृदयमें क्रोधका संचार हुआ, बिना ही अपराधके दासियोंको दंड देने लगीं—पश्चात् आहार करना छोड़दिया। तथापि महाराणा संग्रामसिंहकी प्रतिज्ञा अचल और अटल रही। अनन्तर राजमाताजीने गंगास्नानको जानेका विचार किया, तीर्थयात्राकी सब तैयारियाँ हुई; उनके शरीररक्षकगण सज्जितहोकर चलनेकी वाट देखनेलगे। विदाके समय पुत्रका मुखकमल देखनेकी इच्छासे कुछ विलम्ब किया, परन्तु संग्रामसिंह न आये। दुःखित होकर यात्रा की सबसे प्रथम तो ब्रजकिशोर श्रीकृष्णजीकी पूजाकरनेके अभिप्रायसे उन्होंने मथुराकी ओर जानेका विचार किया। जयपुरकी ओरको उनकी पालकी जानेलगी, इस नगरमें राजमाताजीका जामातृभवन था। अतएव जानेके समय कन्या और जामाताके देखनेको महिषीने जयपुरनगरमें प्रवेश करनेके लिये कहा। महाराज जयसिंहने उचित आदर सन्मानके साथ (श्वश्रू) सासजी की अगवानीकी और उनको अपने नये जयपुरनगरमें लेगये और प्रतिष्ठा बढ़ानेके लिये सासकी पालकीके डंडेके नीचे क्षणभरको अपना कंधा लगाया। × सासके मुखसे सालेके मनोविकारका वृत्तान्त जानकर

* राजपूतोंका यह सनातन रीतिहै।

जयसिंहने उनको समझा बुझा ढाँढस बँधा कर कहा “ मैं आपके सामने प्रतिज्ञा करताहूँ, कि जब आप तीर्थयात्रासे लौटेंगी, तब साथ ही उदयपुरमें जाकर राणाको मनादूंगा । ” तदुपरान्त तीर्थयात्राको समाप्त करके राजमाता अम्बेरको लौटी और जामाताको साथ ले उदयपुरमें आई । राजपूतलोगोंमें अतिथि सत्कारका नियम अति कठोर है । अतिथि सत्कारमें साधारण त्रुटि होनेपर भी राजपूतगण उससे अपना घोर अपमान समझतेहैं । राणा संग्रामसिंहने जयसिंहके उदयपुरमें आनेका अर्थ समझलिया । वह जानते थे कि वहनोईका कहना किसीभांतिसे टालनेके योग्य नहीं है । इस कारण राणाजी पहलेसे ही तैयार होगये । उन्होंने जयसिंहको कहनेका अवसर भी न दिया और स्वयं ही माताके श्रीचरणोंका दर्शन किया । उनका हृदय-माताके आचरणसे किंचित् दुःखित हुआ, यह बात राणाजीने किसीपर विदित न होने दी और आज भी उनका आशीर्वाद ग्रहण करनेको जानेके समय किसीसे कुछ नहीं कहा । प्रथमतः मानो जयसिंहका ही सन्मान करनेके लिये कितने एक अनुचरोंको साथ लिये हुए राजमन्दिरसे चले; परन्तु वहां न जाकर सीधे माताके डेरोंकी ओरको गमनकिया । समयानुसार माताके शिविरमें पहुँच कर उनके चरणोंकी वन्दना की और आशीर्वाद ग्रहणकरनेके पीछे राजमन्दिर तक पहुँचाआये, फिर वहनोईका आदर सन्मान किया । इस सम्बन्धमें उन्होंने केवल इतना ही कहाथा कि “परिवारका क्लेश और झगडा परिवारमें ही छिपा रहना ठीक है । ”

चौथी कहावत।—एक समय संग्रामसिंह मध्याह्नकालके भोजनपर बैठेथे, इतने हीमें समाचार आया कि मालवके पठानोंने मन्दसोरग्रान्तके कितने एक खेडोंको लूटकर उजाड़ किया, और वहाँके रहवासियोंको कैदकरके मेवाडभूमिपर आक्रमण किया है । यह समाचार पाते ही राणा संग्रामसिंह भोजनको छोडकर तत्काल उठ खड़े हुए और आचमनादि समाप्त करके अस्त्र शस्त्र सजाय वर्मधारण किया, फिर नगाडा बजानेकी आज्ञा दी, गंभीर ध्वनिसे नगाडेके शब्दने समस्त सदाँरोंको सजग करदिया । किसीको भी इस अचानक रणघोषणाका कारण विदित न हुआ । समस्त सेना शीघ्रतापूर्वक अस्त्र शस्त्र सजाय राजमंदिरके निकट आनकर खडी होगई । राणाजीने स्वयं सेनाके साथ जानेकी इच्छा प्रकाश की, परन्तु सवमे उस समय एक वाणीसे यह कहा कि “ महा-राज ! हमलोगोंके जीवित रहते एक साधारण शत्रुके दमन करनेके लिये श्रीमानका

अनुग्रह सदाके लिये हम लोगोंके स्मृतिपटपर अंकित रहैगा। आज राजभवनसे जो अनेक प्रकारके भोजन मेरे लिये आये, आगेको श्रीमान् अथवा श्रीमान्का कोई वंश-धर सुझको या मेरे किसी वंशवालेको पुनर्वार राजधानीमें बुलावें तो राजरन्धनशा-लासे इसही प्रकारके खाद्यपदार्थ प्राप्त हुआकरें।” राणा संग्रामसिंहने हर्षके साथ सर्दारके अनुरोधको स्वीकारकिया। उसही दिनसे वीरवर चंडके वंशवाले इस सन्मानको भोगते आतेहैं।

इन बातोंसे संग्रामसिंहका महान चरित्र भलीभांतिसे प्रमाणित होताहै। अतएव इसके ऊपर कुछ मीन भेष लगाना ठिठाई करना है। उन्होंने अठारह वर्षतक राज्यकरके भलीभांतिसे मेवाडका मंगलसाधन कियाथा। शत्रुओंसे देशकी रक्षाकरनेको उन्होंने अठारहवार रणभूमिमें गमन कियाथा। यद्यपि संग्रामसिंहकी शासन नीति अत्यन्त सीमावद्ध थी, यद्यपि वह अपने बड़े बूढ़ोंके पुराने संस्कारोंको अल्प त्याग करके भी स्वदेशका अत्यन्त मंगल कर-सकते थे; तथापि जो कुछ उपकार, मेवाडदेशका उनके द्वारा हुआथा, उससे ही प्रजाका उनमें अत्यन्त अनुराग था। प्रजाका हितसाधन करने और कौरकसर-को दूर करनेमें वह सदा ही दत्तचित्त और सावधान रहते थे। इसकारण स्वदेश और विदेशके सब ही स्थानोंमें उनका सन्मान था। महाराज बाप्पारावलके पवित्र वंशका ऊंचा सन्मान गिहौट वंशके जो भूपालगण अचल और अटल रखसक्तथे उनमें राणा संग्रामसिंहजी पिछले हुए उनके परलोकवासी होनेके साथ ही मेरुभूमिमें महाराष्ट्रोंकी प्रभुताका प्रारंभ हुआ। अब हम इस बातका वर्णन करेंगे कि उस प्रभुताके स्थापन होनेपर मेवाडका राजनैतिक स्रोत किस ओरको चलाथा।

राणा संग्रामसिंहके चार पुत्र थे, उनमें बड़ा पुत्र जगतसिंह (दूसरा) संवत् १७९० (सन् १७३४ ई.) में पिताके सिंहासनपर बैठा। इनके राज्यका पहिला कार्य राजपूतोंके तीन वलोंको एकत्र करना था। पहिले ही कहआये हैं कि दूसरे अमरसिंह राणाने इस वलका समीकरण कियाथा, फिर अजितसिंहकी विनाविचारे कार्यकरने (अविमृश्यकारिता) ने इस त्रिवलमें कुहाडी मारी की आज जगतसिंहने अमृतकुंडका जल छिडककर फिर इसको जिलाया। तीनों राजाओंने जो वहांपर मौजूद थे, अपने २ देवताके नामसे शपथ करके कहा कि कोई भी मुसलमानोंके साथ विवाहादि सम्बन्ध न करेगा, और कभी कोई इस त्रिवल सन्धिको न तोड़ेगा। मेवाडके अन्तर्गत हुर्ला नामक नगरीमें उन तीनों राजाओंने

अपने अपने सामन्तोंके साथ आकर इस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर करदिये । एक चित्तताको अटल रखनेके लिये एक नायकका प्रयोजन था; इस कारणसे सवने ही यह ऊंचा पद राणा जगतसिंहको दिया, और उनको ही समस्त राजपूत सेनाका अधिपति बनाया । क्रमानुसार सेना इकट्ठी होने लगी । सवने सन्मुख ही वर्षाऋतुका आगमन जानकर निश्चय करलिया कि वर्षाऋतुके व्यतीत होनेपर श्रीमान् राणा जगतसिंहजी अपनी विशाल राजपूत अनीकिनीको साथ ले मुगलोंसे संग्रामकरने जायेंगे । * युद्धकी सम्पूर्ण तैयारियाँ होगई । परन्तु

* सन्धिपत्र ।

राणाजीकी मोहर ।

श्रीएकलिङ्ग.
(क)

मान्यता ।

सीतारामो जयति.
(ग)

मान्यता ।

ब्रजाधीश.
(ख)

मान्यता ।

अभयसिंह.
(घ)

स्वास्तिश्री।—ऐक्यतावद् चार राजाओंके द्वारा निम्नलिखित सन्धिपत्र स्वीकृतहुआ । इस विधिमें किसी प्रकारका व्यभिचार न होगा । संवत् १७९१ श्रावण शुद्ध १३ (सन् १७३५, मुकाम हुर्ला ।

(१) सम्पद विपदमें सब ही ऐक्यताके सूत्रसे बँधगाए । इस सम्बन्धमें सवने शपथ कर परस्पर एक दूसरेपर अपना विश्वास स्थापन किया । आगेको कोई भी इससे अलग नहीं होगा जो कोई इसके विरुद्ध कार्य करेगा वह सबके विश्वाससे भ्रष्ट होगा । एकका जो मान है व सबका मान है, एककी जो लाज है, वही सबकी लाज है; एकका अपमान दूसरेका अपमान है । इसमें सब कुछ आगया ।

(२) जो कोई एकको विश्वासघातक जानपड़ेगा; उसका कोई भी विश्वास न करेगा । वह किसीके निकट आश्रय न पावेगा ।

(३) वर्षाकाल बीतजानेपर कार्यका आरंभ होगा । प्रत्येक सम्प्रदायके मुखियाको सेना सहित रामपुरमें पहुँचना होगा । यदि किसी कारणसे सर्दार स्वयं न आसके, तो वह अपने कुमारको अथवा किसी ऊँचे कर्मचारीको भेजे ।

(४) उस कुमारसे अनुभव न होनेके कारण जो कुछ भूल होजाय उसको सुधारनेका अधिकार राणाजीके अतिरिक्त और किसीको नहीं होगा ।—

अभाग्यसे यह कार्य फलीभूत न हुआ । तैयारियें होते २ ही फिर यह सन्धि-पत्र शिथिल होगया सब राजा अलग २ हुए । सामर्थ्यप्रियता राजपूतोंका एक सुन्दर गुणहै, परन्तु समय २ पर इसका फल बुरा भी होताहै । आज राज-स्थानके अभाग्यसे इसने ही विषमय फल उत्पन्नकिया । राजपूतोंकी ऐक्यता छिन्नभिन्न होगई । मुगलवादशाहीकी अवनतिके समय अस्वेर और मारवाड़के राजालोग बहुत ही बढ़गयेथे यहांतक कि मेवाड़वालोंकी बराबरी करनेलगेथे । सूर्यवंशीय महाराज कनकसेनके वंशधरगण राजस्थानके अन्यान्य राजपूतोंपर अचल प्रधानता भोगते आएहैं, परन्तु उन्होंने किसी समय भी सबकी इकट्ठी सहानुभूतिको नहीं पाया । यह महान अभाव ही उनकी ऐक्यतामें मुख्य विघ्न था । इस अभावके कारण ही वह स्वाधीनतासे अलग हो बैठे । यह महान अभाव ही उनकी सामर्थ्य प्रियताका विषमय फल हुआ । इस ही प्रवृत्तिसे उक्साकर वह अपने २ स्वार्थकी रक्षा करनेको एक दूसरेके विरुद्ध अगणित समर किया करतेथे । कि जिनका वर्णन पहिले कर आएहैं । मेवाड़के राजालोग जिस प्रकार सबभांतिसे उनके शिरमौर थे, वैसे ही यदि वह भी उनको अपना अपना अगुआ मानकर एकसाथ मिलवैठते तो भारतकी ऐसी दुर्दशा क्यों होती? फिर तो किसी प्रकारसे भी विदेशी मुसलमान लोग भारतरत्नको नहीं लूटसकते । परस्परकी फूट और परस्परके बैरने ही भारतका सत्यानाश करदिया । यह ठीक है कि राजपूतलोग स्वाधीनताको प्यारा समझतेहैं, परन्तु जिस महान सामग्रीसे जातीय स्वाधीनता प्राप्तहोती और जिसके द्वारा उसकी रक्षा होतीहै, राजपूतोंमें वह सामग्री नहीं है । यही कारण है जो उनकी स्वाधीनताकी लालसा कभी फलवती नहीं हुई । आज राणा जगतसिंहके समयमें—मुगल शहन्शाहीकी बुरी हालतके वक्तमें—सरलता और सुभीता होनेपर भी स्वाधीन होनेकी चेष्टा और ऐक्यताका परिश्रम सबही विफल होगया ।

—(५) प्रत्येक महान कार्यमें सबही एकसाथ मिलकर इनसमस्त नियमोंके पालन करनेको वाध्यहैं ।

(क) एकलिङ्ग या महादेवजी सिशोदियावंशके कुलदेवता हैं ।

(ख) नन्नाधीश श्रीकृष्णजीका नाम है । यह मारवाड़स्थ हाड़ावंशके कुलदेवता हैं ।

(ग) सीताराम । यह अम्बेरराजवंशके देवता हैं । इस राजवंशकी मूलपीठिका भगवान राम-चंद्रजीसे आरंभ है ।

(घ) अभयसिंह।—मारवाड़का एक राजकुलीन पुरुष था ।

निज़ामउलमुल्क—अधीनताकी जंजीरको तोड़कर पूरा स्वाधीन बन गया था। बादशाह देहलीका सेनापति * निज़ामको दमन करनेके लिये जाकर स्वयं ही उसकी क्रोधाग्निमें भस्म हो गया था। चतुर निज़ामने उस अभागे मुगलसेनापतिका शिर काटकर बादशाहके पास भेज दिया और कहलाभेजा कि “यह नालायक वागी हो गया था इसही लिये इसका शिर काटकर हुजूरकी कदमबोसीमें खाना किया है।” हीनबल महम्मदशाह निज़ामउलमुल्कके आशयको भलीभांतिसे समझ गया, परन्तु चारा क्या था, अपने राज्यकी स्वाधीनताको बर्बाद करके निज़ामने राजपूतोंके साथ मेल किया और मालवे तथा गुजरातमें मरहटोंकी विजयिनी सेनाको चालित करनेका उत्साह दिलाया। इसके अनुसार महाराष्ट्रीय वीर बाजीरावने अपनी सेनाको साथ ले सबसे पहिले मालवेको घेरा और वहाँके हाकिम दयाराम बहादुर † को शुद्धमें संहार करके निज़ामकी अभिलाषा पूर्ण की। इसके उपरान्त अंबरके राजा जयसिंहको मालवेका राज्य दिया गया, परन्तु उन्होंने ग्रहण न करके बाजीरावको ही फेर दिया इस प्रकारसे मालवेका राज्य मरहटोंके हाथ लगा। गुजरातका राज्य भी शीघ्र इसही दशाको पहुँच गया। पहिले यह राज्य बादशाहने राठौरोंको दे दिया था, परन्तु राठौरोंने अपनी प्रतिज्ञाका पालन नहीं किया, इस कारण अजितसिंहके पुत्र अभयसिंहने उस राज्यको घेरा और वहाँके हाकिम सर बुलंदखाँको निकाल दिया। उस मौकेको अच्छा समझकर मरहटोंने राठौरोंके जीतेहुए गुर्जरराज्यको अपने अधिकारमें कर लिया। राठौरराज्य अभयसिंहने इसको देखकर भी अनदेखा किया × उन्होंने केवल उसदेशके उत्तरी परगनोंको ही अपने अधिकारमें कर लिया।

* इस सेनापतिका नाम मुवारिज़ख़ाँ था। प्रथम तो निज़ामने चालाकी करके मुवारिज़की सेनामें फूट डलवाना चाही थी। परन्तु वह चेष्टा फलवती न हुई, इस कारण फिर प्रगट युद्ध करके उसको पराजित किया।

Elphinstone's History of India. P. 698.

† दयाराम बहादुर मालवेके पूर्व शासनकर्त्ता गिरधरसिंहका भतीजा था।

× अभयसिंहने सहजसे ही गुजरातको नहीं छोड़ा था। इसके लिये उसको बहुत हानि उठानी पड़ी थी। अप्रेल सन् १७३१ में प्रचंड वीर बाजीरावने जब दोवारीको परास्त करके गुर्जरराज्यपर अधिकार किया, तब इसका शासनभार पिलाजी गायकवाडको समर्पण किया गया। पिलाजी, गायकवाडोंका पूर्व पुरुष था। अभयसिंहने गुप्तरीतिसे इसको मारकर गुजरातपर अधिकार किया था। पिलाजीके अन्यायरूपसे मारेजानेपर उसके पुत्र और भ्राताने अत्यन्त क्रोधित हो अभयसिंहपर—

जिस समय दक्षिणदेश और राजस्थानकी यह दशा होरही थी, उस समय बंगाल विहार, और उड़ीसाके राज्यमें गुजाअ-उदौला अपने भरीर अलीवर्दीखानेके साथ अचल प्रभुताको भोगरहाथा। इस ओर अयोध्याराज्यमें सआदतखानेका पुत्र सफ़्दरजंग दृढ़भावसे विराजमान था। यद्यपि बादशाहकी प्रसन्नतासे ही सआदतखाने अयोध्याका सिंहासन पाया था, परन्तु इस कृतघ्नीने शीघ्रही इस पवित्र प्रसादका बदला एक घृणित और निन्दितकार्यके द्वारा चुकाया। सआदतखाने कृतघ्न और विश्वासघातक था। इस दुराचारीने ही परमअत्याचारी नादिर शाहको भारतवर्षमें बुलाकर देहलीकी बादशाहतका सत्यानाश कियाथा।

मालवे और गुजरातमें जब महाराष्ट्रियोंकी प्रभुता दृढ़ होगई, तब विजयी मरहटोंने और और स्थानोंमें अपना पाँव गढ़ानेकी इच्छा की और टीड़ीके समान नर्मदा नदीके पार हो उत्तरीदेशोंपर टूटनेलगे। उनकी विक्रमाग्निके प्रचंड प्रभावसे अनेक साधारणजातियें भी—जिनका अवतक कोई नामतक भी न जानता था—जोशमें आकर अपनी सेनाको बढ़ाती हुई प्रतिष्ठा प्राप्त करनेलगीं। उस काल शान्तजीवन भलेमानस किसान * लोग भी हल और गोधनको छोड़कर तलवार हाथमें लेनेलगे घोड़ोंपर चढ़नेलगे और अजपालक अपने पैंनें (पशु हांकनेकी लकड़ी) को छोड़कर तेज भाला हाथमें लेने लगे। हुलकर, × सेन्धिया, पँवारगण † उन सम्प्रदाओंमें विशेष प्रसिद्धहैं। इस प्रकारसे विपुल सेनाको प्राप्त कियेहुए वीर महाराष्ट्रीयलोग हीनबल राजपूतोंके राज्यको घेरने लगे, उन देशोंको लूटतेहुए उजाड़नेलगे फिर वहां ही रहनेलगे। प्रयोजन अथवा सुयोग पाकर जबतक वह एकहो और एक झंडेके नीचे खड़े होकर लड़ाई करतेथे, तबतक कोई भी उनके प्रचंड प्रभावका सामना नहीं करसकाथा। वीरवर बाजीराव (पहिला) ने महाशक्तिको सिद्ध करके उस महान महाराष्ट्रीय बलको अपने हाथसे शृंखलित कियाथा सन् १७३५ ई० में वह सबसे पहिले चम्बलनदीके पार हो दिल्लीके सिंहद्वार पर आ डटा।

—चढ़ाई की। उस चढ़ाईको न रोकसकनेके कारणसे राठौरराजने विवश होकर गुजरातके राज्यको छोड़दिया।

Elphinstone's History of India. P. P. 703-705.

* सेंधियाके बड़े बूढ़े किसानथे।

× हुलकर गढ़रिया था।

† मालवेपर हमलाकरनेके समय बाजीरावने ऊदाजी पँवार, महारराव हुलकर और रणजी सेंधियाके ऊपर सेना चलानेका भार दियाथा। समय पाकर यही लोग प्रधान होगये और एक एक विख्यात वंशकी प्रतिष्ठा की।

उसके कठोर विक्रमसे वह नगरी अत्यन्त ही उलट पुलट होगई। फिर निर्बलवादशाहने चौथ देकर कठोर पीडासे छुटकारा पाया। बादशाहकी यह कायरता देखकर निज़ामके मनमें अनेक प्रकारके सन्देह होनेलगे। बादशाहको जीतकर कदाचित् महाराष्ट्रीयलोग निज़ामराज्यपर आक्रमण करें इस भांति विचारकर निज़ामने महाराष्ट्रियोंको मालवेसे निकालनेका निश्चय करलिया। उसके मनमें दृढ़ धारणा होगई कि अगर महाराष्ट्रीयलोग मालवेमें भलीभांतिसे जमजायंगे, तो फिर वहांसे इन लोगोंका निकालना कठिन होगा और फिर यह हमारे उत्तरदेशके सम्बन्धको एकदम तोड़देंगे। यह विचारकर निज़ामने मालवे पर आक्रमण किया और वाजीरावको पराजित करके अपने खटकेको दूर हटाया। विजयी निज़ाम, पराजित महाराष्ट्रियोंको वहाँसे निकालनेकी तैयारीमें था ही कि उसने प्रचंड वीर महा अत्याचारी नादिर शाहके भारतवर्षमें आनेका समाचार पाया। यह सुनकर निज़ाम-उल-मुल्क अत्यन्त भयभीत हुआ और मरहटोंको छोड़कर अपने राज्यमें चलाआया। जिस समय * नादिर शाहकी प्रचंड तुरहीका शब्द भारतवर्षके पश्चिम प्रान्तमें सुनाई दिया; उसकाल मुगलवादशाहके विक्रमकी आग संपूर्णतः निर्वाण होचुकी थी। नादिर शाहके विगुलको सुनकर संपूर्ण भारतवर्ष वारंवार इस प्रकारसे कांपने लगा कि जैसे भूचालसे पृथ्वी कांपाकरतीहै। अभागे महम्मदशाहका रत्नमुकुट सहसा शिरसे उतरकर पृथ्वीपर गिरपड़ा ! न जाने वारंवार कहाँसे रोनेका विकट शब्द सुनाई पड़ने लगा। इस संकटकालमें—मुगलराज्यके इस अनिवार्य अधःपतन समयमें—अभागे महम्मदशाहने “राज-पूतजातिके विक्रमपर बहुत कुछ आशा कीथी।” परन्तु उसकी कोई आशा भी फलवती नहीं हुई। जिन राजपूतोंके बलकी सहायतासे भारतकी छातीमें मुगलोंका तख्त स्थापन हुआ था। जिन्होंने उस सिंहासनको अचल रखनेके लिये इतने दिनोंतक प्रसन्न हृदयसे अपना रुधिर बहायाथा। आज उस ही सिंहासनपर संकटपड़नेके समय उनमेंसे किसीने भी उसकी रक्षा करनेके लिये खड़ा नहीं पकड़ा। इस ही कारणसे करनालके भयंकर युद्धमें मुगलोंका “तख्तताउस” छिन्नाभिन्न होगया, और उसके साथ ही भारतकी होनहार कठोर रेख भी अभागे महम्मदशाहके माथेपर प्रकाशित अक्षरोंसे लिखीगई !

* टाडसाहब कहतेहैं कि सन् १७४०ई०में नादिरशाह भारतमें आयाथा। परन्तु एलफिंस्टनने नादिरनामा इत्यादिग्रंथोंका अवलम्बनकरके अपने वनाये भारतके इतिहासमें वर्णनकियाहै कि नादिरशाह सन् १७३८ई०के नवम्बरमासमें भारतपर चढ़कर आयाथा।

करनालयुद्धके शोचनीय परिणामसे निज़ाम और सआदतख़ाँको अत्यन्त भय हुआ। यह दोनों उस विजयी प्रचंड वीरकी सेनाको रोकनेके लिये मुगलोंसे मिलगए। परन्तु यहां भी अभिप्राय सिद्ध न हुआ। अमीर-उल-उमरा तो संग्राममें मारागया और महम्मद शाह अपने वज़ीरके साथ नादिरशाहकी कैदमें हुआ। पाखण्डी वज़ीरकी कृतघ्नता और विश्वासघातकतासे आज दिल्लीके बादशाहकी ऐसी अवस्था होगई। हतभाग्य महम्मदने सन्धिके लिये निज़ामको दूत बनाकर नादिर शाहके पास भेजा। एक प्रकारसे सन्धि भी होगई, परन्तु दुराचारी सआदतख़ाँने चाल चलकर सब बातोंको रद्द करदिया। और अपने पांवमें स्वयं ही कुल्हाड़ी मारी। सआदतख़ाँने नादिर शाहसे उसका लोभ बढ़ानेके अभिप्रायसे कहा। “निज़ामने हज़ूरको धोका दिया। खज़ानेमें इसकी वनिस्वत कहीं ज़ियादा दौलत है।” इस पापीने यह भी कहा कि “निज़ामने बदलेमें जितने रुपयेके देनेका वायदा कियाहै, इतना तो वह सिर्फ़ अपने ही खज़ानेसे देसकताहै।” इस दुष्टके कहनेपर नादिर शाहको भलीभाँतिसे विश्वास होगया। उसका लोभ हज़ारगुणा बढ़ा। निज़ामके साथ जो सन्धि हुई थी उसको तोड़कर दिल्लीके खज़ानेकी समस्त कुंजियें माँगीं। अभागे महम्मद शाहका सुखस्वप्न टूटा अर्थपिशाच नादिरके स्वीकार पत्रपर विश्वासकरके उसने समझाया कि अब अधिक कष्ट न होगा, परन्तु यह उसकी भूल थी। सन्धिपत्र छिन्न करते ही दुष्ट नादिर शाह विजित दिल्लीश्वरको महादंभके साथ अपने डेरोंमेंको निकालकर लेगया, और वीरवर तैमूरके सिंहासनपर बैठकर सन् १७४० ई० में मार्चकी ८ तारीखको अपना सिक्का चलाया। उसपर लिखाहुआ था;—

दो० “शहन्शाह सब जगतको, नादिर है महराज।

राजनको अधिराज है, समय नियामक आज ॥

यद्यपि मुगललोगोंके यहाँ बहुत सा रुपया परस्परके विवादमें खर्च होगया था, यद्यपि प्रतिद्वन्दी राजकुमारोंने अइयाशीमें बहुतसे धनको स्वाहा करदिया था, तथापि जो धन उस समय खज़ानेमें था * उसके प्राप्तहोनेसे साक्षात् लोभकी भी तृप्ति होजाती, परन्तु आश्चर्यका विषय है कि दानव नादिर शाहका

* नादिरशाह भारतवर्षसे कितना धन लेगयाथा, अनेक ग्रंथोंमें इसका भिन्नमतहै। टाडसा-हव कहतेहैं कि नगद रुपया और सोना चांदी व जवाहरात सब मिलाकर चालीस करोड़; नादिर नामेका लेखक १५ करोड़, हानवे ३० करोड़ और फेज़र भी ३० करोड़ बतलाता है।

लोभ उस विपुल धनको पाकर घटनेकी जगह बढ़ता गया ! तब उसने चारों ओर डोंडी फेरदी कि बिना (२॥) ढाई करोड़ रुपयेके और पायेहुए मैं हिन्दोस्थानको नहीं छोड़ूँगा; अतएव जिसप्रकारसे हो शीघ्र इस रुपयेको अदा करना चाहिये । इस धोषणापत्रके पाते ही यमदूतकी समान ईरानी लोग हाथमें तलवार लिये चारों ओरको धाये और कठोर अत्याचारके साथ २ पशुओंकी समान आचरण करके नगरवासियोंका धन लूटने खसोटने लगे । उनके अत्याचारसे नगरमें हाहाकार मच गया । नगरनिवासी व्याकुलहोकर इधर उधर भागनेलगे । परन्तु भागकर जाँय कहां ? कौन उनकी रक्षाकरे ? कोई भी नहीं ! ईरानियोंके सामने आज समस्त वीर लोगोंका बाहुबल निकम्मा होगया ! अतएव बचानेवाला अब कोई भी नहीं है ! सब ही अपनी २ रक्षाकरनेके लिये इधर उधर भागरहेहैं । ऐसा साहस किसीमें नहीं जो इन राक्षसोंके अत्याचारको रोके । भागनेसे भी अभागोंका निस्तार नहीं होता । पिशाचगण पीछे दौडकर उनका साधारण सहारा—केवल मार्गव्यय भी छीनेलेतेहैं;—उनकी प्राणप्यारी स्त्रियोंपर कठोर अत्याचार करतेहैं ! हाय ! आज दिल्लीनगरमें प्रलयकाल उपस्थितहै ! आज नगरवासियोंका प्राण और नगरवासियोंकी मानमर्यादा कठोररूपसे पीसी जा रहीहै । उनका सर्वस्व लुट रहाहै ! ऊंचे पदके मनुष्य अपमानकी अपेक्षा मरनेको अच्छा समझते हैं । ऐसे लोगोंने पारखंडियोंसे रक्षाका कोई उपाय न देखकर पहिले तो अपनी स्त्रियोंको मार-डाला और तदुपरान्त उस शोकानलमें अपने प्राणोंको होमदिया । सिद्धान्त यह है कि आत्महत्याके सिवाय उस भयंकर अपमानसे बचनेका दूसरा कोई उपाय भी न था इस ही भयंकर प्रलयकालमें यह 'अफवाह, (किस्व-दन्ती) उंडी कि राक्षस नादिर शाह मारागया ।' पलभरमें यह बात चारोंओर फैल गई । तत्काल अनेक नगरवासी नंगी तलवारें हाथमें लियेहुए इधर उधर मतवालोंकी समान घूमतेहुए दुष्ट ईरानियोंपर दूटपडे । किसीको अपने प्राणोंका मोह नहीं, कोई अपने इष्ट मित्र और सम्बन्धीका ध्यान नहीं करता सबही पारखंडियोंसे बदला लेनेके लिये उनपर दूटे और ऐसे संहार करनेलगे कि जैसे कोई भेड़ बंकीरियोंको छांटताहै । उस समय दोनों दलमें घोर घमसान होने लगा । ईरानी और नगरवासियोंके छिन्नाभिन्न देहसे दिल्लीकी गलियें

ढकगई * खूनके वहनेसे मार्ग और गलीकूचोंमें कीचड़ हांगई। जैसे ही यह समाचार नादिरशाहने सुना वैसे ही वह राक्षस एक मसजिदके ऊंचे मीनारपर-चढ़कर अपनी निरुत्साहित सेनाको घोर उत्साह देने लगा और नगरके बूढ़े, जवान, बाल, बच्चे, स्त्री, पुरुष, सबहीको संहार करनेकी आज्ञा देदी। इस भयंकर आज्ञाका प्रचार होते ही पिशाच नादिर शाहकी पिशाच समानसेना नगरके द्वार २ पर जायकर सबको इस प्रकारसे वध करने लगी कि जैसे कसाई पशुओंका वधकरता है। रोनेके शब्द और आर्त्तनादसे नगर गुंजार-ने लगा “नगरकी गलियोंमें रुधिरकी धार वहने लगी।” इन पिशाचोंने नगर-वासियोंका सर्वस्व लूटकर प्रत्येक गृहमें आग लगा दी। यह राक्षसगण उस लपट उठती हुई अग्निमें मरे, अधमरे और जीवित मनुष्योंके शरीरोंको डालने लगे! आज दिल्लीनगरी भयंकर श्मशान बन गई है—श्मशानसे भी भयंकर—नरककुंडकी समान उसका दृश्य होगया है × इस वीभत्स और शोकोदीपक तथा जघन्यकार्यके

* हाजिन नामक एक मुसल्मानने अपने नेत्रोंसे यह संहार देखा था वह कहता है कि क्रोधित हिन्दुओंने ७०० ईरानियोंको मारा था। इसके बताएहुए ग्रंथका बेलफोर साहबने अंग्रेजीमें अनुवाद किया है, इसमें ७००० का अंक पाया जाता है। एलफिन्स्टोन साहब कहते हैं कि यह छापेकी भूल है। इस ओर स्काट साहबने अपने इतिहासमें १००० लिखा है।

× इस हत्याके रोकनेके मौलिक वृत्तान्तमें भिन्न २ भाव पाये जाते हैं। कहते हैं कि जब ईरानी सेना दिल्लीवालोंपर ऐसा क्रूर अत्याचार कर रही थी उस समय नादिर शाह बड़े बाजारकी “रकम-उद्दौला” नामक छोटी मसजिदमें चुपचाप गंभीरभावसे बैठा था। अनन्तर महमूदशाह अपने सदा रोंके साथ वहांपर पहुँचा। जब बादशाह शिर झुकाये बहुत देर वहां खड़ा रहा तब नादिरशाहने आज्ञा दी कि जो कुछ कहना है सो कहो, तब महमूदशाहने आँखोंमें आसू भरकर विनय सहित प्रार्थना की कि “मेरी रहयतकी जाँ बख्शी फरमाई जावे। इस लोमहर्षण संहारके वर्णनमें जितने लेख पाये जाते हैं, उनमें हाजिनका प्रमाण सर्वोत्तम है। हाजिन अपने नेत्रोंसे देखकर जो कुछ वर्णन कर गया है “शेरलमुताक्सरीज़” नामक ग्रंथके रचयिताने बात २ में उसकी नकिल की है और सरबुलन्दखाने के पास जो हिन्दू कारिन्दा था उसने उक्त हाजिनके विवरणको संग्रह करके एक पुस्तक बनाई थी। “नादिरशाहका इतिहास” नामक ग्रंथमें फेजरसाहबने आद्योपान्त उसके अवलम्बनसे लिखा है। हाजिन कहता है कि आधेदिनतक यह हत्या होतीरही थी और उसमें बहुत ही आदमी मारे गये थे। फेजरका अनुमान है कि १२०००० और १५०००० के लगभग, और नादिर नाम ग्रंथका लेखक कहता है कि प्रायः सारेदिन ही यह भयंकर खूनखराबी होतीरही है और अत्याचारियोंने उसदिन ३०००० आदमियोंका प्राण संहार कर डाला था। स्काटसाहबने दृढ़तासे प्रमाण दिया है कि केवल ८००० मनुष्य मारे गये। परन्तु यह उन्होंने अपने ग्रंथमें नहीं लिखा कि ऐसा प्रमाण कहांसे मिला। स्काटसाहबके लेखपर एलफिन्स्टोन साहबने अविश्वास किया है। वह—

अभिनयमें यदि कुछ सन्तोषकर दृश्य पाया जाता है तो वह केवल दुराचारी सआदतखाँका शोचनीय परिणाम है ।

इस लोमहर्षणकारी घोर वधके समय नादिरशाहने पाखंडी सआदतखाँके मंत्रीको आज्ञा दी कि “ तुम्हारी और सआदतखाँकी जो कुछ दौलत हो, उसकी एक ठीक फहरिस्त मैं इस ही वक्त देखना चाहता हूँ, अगर इस फहरिस्तको नहीं दिखाओगे, तो मैं तुम्हारा शिर कटवा डालूँगा ।” तदुपरान्त निजामने जो ढाई करोड़ रुपये पणमें देने स्वीकार किये थे, नादिरशाहने इन रुपयोंको केवल बज़ीरसे ही लेना चाहा । इस कठोर आज्ञाको गुनते ही सआदतखाँको चारों ओर अंधकार दिखाई दिया । उसको निराशाने आघेरा । इस दुराचारीने मदमत्त होकरके अपने पाँवमें आपही कुल्हाड़ी मारी थी, आज उसका पाँव दुःख देने लगा । आज उसके ज्ञाननेत्र खुल गये; आज समझा कि नादिर शाहको बुलाकर मैंने स्वयं ही अपना नाश किया । जिस ओरको देखता उस ही ओरसे भयंकर दृश्य दिखाई देते थे; उस ही ओरसे यमदूतगण उसका संहार करना चाहते थे । इस विकट दुःखसे छुटकारा पानेके लिये ही अथवा नादिर शाहकी क्रोधानलसे बचनेके लिये अभागे सआदतखाँने जहर खाकर परलोकका मार्ग लिया * उसके दीवान राजा मजलिसरावने भी विष पान करके स्वामीका अनुगमन किया । इस भयंकर नाटकका पिछला अंक इसप्रकारसे अभिनीत होनेपर राक्षस नादिरशाहने अभागे महम्मद शाहका दियाहुआ सन्धिपत्र ग्रहण किया और भारतवर्षका सर्व-स्व लूटकर वसन्तकालमें श्मशानकी समान दिल्लीको छोड़कर अपने देशको

—कहते हैं कि बीसहजार वधिकोंने इतने समयमें केवल आठहजार आदमियोंको ही मारा, इस बातका विश्वास कैसे किया जा सकता है ।”

Elphinstone, s History of India

* डौ साहबकृत “हिन्दुस्तान” नामक ग्रंथमें नादिरके आक्रमणकी कई एक कथा लिखी हैं। उन कथाओंमें लिखा है कि सआदतखाँ और आसफजा इन दोनोंने ही नादिर शाहको हिन्दुस्तानमें बुलाया और इन्हीं दोनोंकी विश्वासघातकतासे कर्नालकी लड़ाईमें बादशाह हारा था। कहते हैं कि नादिर शाहने इन दोनोंकी डाँडीपर थूका और सभासे निकलवाया। राजसभामें इस प्रकारका अपमान होनेसे ही इन दोनोंने आत्महत्या करके सांसारिक कष्टोंसे छुटकारा पाया। यह दोनों परस्पर प्रतिद्वन्दी और अविश्वासी थे । दोनों एक दूसरेके यहां गुप्तचर भेजा करते थे कि दूसरा क्या कर रहा है। आसफजा बड़ा चालाक था; वह एकप्रकारका स्वल्पहानिकरनेवाला विष खाया छलसे मृतककी समान गिरपड़ा । मूढ़ और अभागे सआदतखाँने उसको मृतक समझ कठोर कालकूट खाया और शीघ्रही मर गया !

E. H. I. (P. 720)

सिधारा* । इस पत्रके अनुसार काबुल टट्टा सिन्ध और मुलतान आदि समस्त पश्चिमका राज्य ही नादिर शाहको दिया गया जिसको उसने ईरानमें मिलाया । इस विप्लव और संकटके समय भारतवासियोंकी कैसी दुर्दशा हुई थी;—वह भारत-वर्षीय एक इतिहास लेखकके कई एक निम्नलिखित वाक्योंके पढ़नेसे भलीभांति विदित होजायगी । वह कहता है कि “ इस समय हिन्दोस्थानके रहनेवाले केवल आत्मरक्षा और आत्मतुष्टिके विषयका ही विचार किया करते थे । जो लोग

✕ विदाका समय जितनाही निकट आताथा इन राक्षसोंकी निरुता उतनीही बढ़ती थी । इसके सम्बन्धमें एकप्रत्यक्ष देखनेवालेने जो कुछ कहा है, वह प्रमाणके लिये यहांपर लिखते हैं । “ गतदिव-सकी वंशनामयी स्मृतिने नगरवासियोंको भयंकर विपत्तिमें डाल दिया । अबतक तो केवल “कतले-अम” था; परन्तु इसवक्तसे “कतलेखास” होना आरंभ हुआ । नगरके प्रत्येक गृहसे हृदय-भेदी आर्तनाद और रोनेका शब्द सुनाई आने लगा। वृत्तिविभागके कर्मचारी बसंतरायने कठोर अप-नानसे छुटकारा पानेका कोई उपाय न देखकर पहिले तो सारे कुटुम्बको मार डाला और फिर इस शोकग्रिमें अपनी आहुति दी रखा लिक्कारखाने अपने हृदयमें खंजर मारकर जीवनका अन्त किया। इसी प्रकारसे बहुतोंने विष पान करके आत्महत्या की। महामान्य प्रधान नगरपालको मार्गमें खड़ाकराकर कोड़ेलगवाये गए । निद्रा और शान्तिने नगरसे विदा लेली थी । समासदोंपर निरुता-के प्रहार किये जाते थे । अनन्तर पिशाचोंने बादशाहके “फरीशखाने” में आग लगादिये कि जिससे एक करोड़ रुपयेका सामान जल गया। नाज बहुत ही कम मिलताथा । रुपयेके दो सेर तो मोटेचावल विक्रते थे । इस ओर नगरमें महामारी फैल गई, और अगणित नर नारी मरने लगे । नगरनिवासी गुप्त स्थानोंमें जाकर छिपने लगे । उससे भी किसीका निस्तार न हुआ । इसभांति चार पांच करोड़ आदमी इसलोकसे विदा होगए। पांचवीं अप्रैलको बादशाहके भांडारसे नादिर शाहकी शील-मंहर शहर लाई गई और उसके “प्रियभ्राताके ऊपर” देशीय सामन्त राजा भक्ति स्थापन करें और राज्यमें शान्तिकी विज्ञापनाहो इसका प्रमाणपत्र सबके पास भेजा गया । मेवाडके राणा, मारवाड, अम्बेर, नागौर, सितारा इन देशोंके राजाओंपर और पेशवा बाजीराव इत्यादिके पास यह फरमान भेजे गये । उन फरमानोंमें लिखा था । कि,—“ हमारे प्यांगभाई महम्मद शाहके साथ फिर हमारी मुलह और दोस्ती कायम होगई । वस सब हम एकजान दोकालिय होगये । इसवक्त हमारे प्यारे भाई फिर इस बड़ी बादशाहतकी हुक्मतपर कायम होकर तख्तपर बैठ गए; अब दूसरे मुल्कोंको फतेह करनेके लिये हमलोग इस मुल्कसे जाते हैं; इसवक्त तुमलोगोंको मुनासिब है कि तुम्हारे दादा परदादा जिसतरह खान दान तैमूरके पिछले बादशाहोंके साथमें रहते और उनको इज्जत देते थे, तुमलोग भी हमारे प्यारे भाईके साथ वैसेही वर्त्ताव करके उनपर थकीन करो, उनके खैरखाह रहो, उनको इज्जत दो।—खुदा न करे । अगर तुम्हारी बगावतकी खबर मुझको लगी तो मैं दुनियाके सफेसे एकवारही तुम्हारा नाम निकाल दूंगा । ” *Memoirs of Eraduf khan.—Scott's History of the Dekhan, Vol. ii page 213.*

लेशकर कष्टोंके आक्रमणसे छुटकारा पासकते वह फिर उस बातका विचार नहीं करतेथे और जो आदमी केवल स्वार्थपरताहीकी सेवा करता वह अपने मानवभ्राताओंके साथ किंचित भी सहानुभूति प्रगट नहीं करता था । स्वार्थपरता अपने और पराये धर्ममें सम्पूर्ण विघ्नकारकहै । जिस समय नादिरशाहने हिन्दु-स्तानपर चढ़ाई की थी, उसकाल सवने ही इस स्वार्थपरताकी शरण ली थी । इस नैतिक बलके अपकर्षसे भारतवासी अपने धर्मसे जो हटे तो फिर उसको प्राप्त न करसके अतएव सुख और स्वाधीनताके अमृतमय स्वादसे उस ही दिनसे पृथक्-कहोगये । ”

भारतके इस सार्वजनीन विप्लवकालमें—भारतीय राजनैतिक इतिहासके इस घटनापूर्ण समयमें आर्यवीर राजपूतगण अपने प्राचीन राज्यसे भ्रष्ट नहीं हुएथे । उनका राज्यसे भ्रष्ट होना तो दूर रहा वरन इसलामके उस छः सौ वर्षके शासन-कालमें राजस्थानके तीन प्रधानकुलोंमेंसे दो वंशोंने—मारवाड और अम्बेरवालोंने कौशल और विक्रमकी सहायतासे साधारण २ स्थानोंके द्वारा जिन कईएक* स्थाई राज्योंको उत्पन्न किया था, उनके राजालोग आजतक भी बृटिशसिंहके साथ मित्रता स्थापन करके स्वाधीनताको संभोग कर रहेहैं । राजपूतकुल बूढा-मणि राणाकुलकी लीलाभूमि पवित्र मेवाडभूमिके विषयमें भी प्रायः ऐसा ही कहाजासकताहै । सन् ईसवीकी दशवीं शताब्दीके आरंभमें जब प्रचंडवीर दुर्धर्ष महम्मद गज़नवीने भारतवर्षपर चढ़ाई की थी, उस समय मेवाडकी सीमा जहांतक फैली-हुईथी, आज सातसौवर्ष पीछे भी ठीक वैसेही फैली हुई हैं । यद्यपि बूंदी, आबू, ईडर, और देवलादि कितने एक करदराज्य राणाजीके हाथसे निकल गएहैं, तथापि उनका प्राचीनराज्य प्रायः पूरापूरा विद्यमानहै । पश्चिममें गोद्वार गदवाड देशकी उपजाऊ भूमि, मेवाडकी दैवीसीमा आरावली पर्वतमालाको लांघतीहुई शिरझु-कायेहुए महाराणाकी प्रभुताका कीर्तन कर रहीहैं । प्रशस्त हृदयवाला चम्बल-नद उसके पूर्वप्रान्तको धोताहुआ सूर्यवंशीय महाराज कनकसेनके वंशवालोंका शोचनीय वृत्तान्त सुरधुनीगंगाजीसे कहनेके कारण कलकल करता वेगसे दौड़ा चलाजाताहै । उत्तरमें खारीनदी अजमेर और मेवाडके बीचमें विराज-मानहै । और दक्षिणमें विस्तारित हुआ मालवाराज्य मरहटोंके सतानेसे अत्यन्त दीनदशामें पडाहै । इस चार सीमावाले देशकी दीर्घता १४० और चौड़ाई

* बीकानेर और किसनगढ मारवाडका और मछेरी अम्बेरका शाखा राज्यहै । शिखा राज्यको भी अम्बेरका शाखाराज्य माना जासकताहै ।

१३० मील थी। इस देशमें दश हजार नगर व ग्राम बसते थे। रत्नगर्भा मेवाड-भूमिके खेत अत्यन्त उपजाऊ हैं, किसानलोग खेतीके कार्य कुशल और विशेष पारदर्शी थे, वणिक्गण सदा ही व्यापारमें मन लगाते थे। इस समस्त कार्यकुशल प्रजाकी सहायतामें मेवाडमें प्रतिवर्ष दश करोड रुपये राजकरमें आते थे। * इस ओर परमभक्त और अनुरागी सामन्तगण अपने हृदयका रुधिर दानकरके मेवाडभूमिको शत्रुओंसे बचाते थे। पहिले वर्णन कियेहुए दीर्घकालव्यापी कठोर उपद्रवके वीतजानेपर स्वाधीनताकी लीलाभूमि प्राचीन मेवाडराज्यकी ऐसी अवस्था थी। इस समय हम इस बातका वर्णन करनेके लिये तैयार होते हैं कि अब दुर्द्धर्ष महाराष्ट्रियोंके कठोर आक्रमणसे आधी शताब्दीके बीचमें इस राज्यकी कैसी दशा होगई।

जिसदिन बादशाह महम्मद शाहने अपने दुष्टमंत्रियोंके परामर्शको मानकर मरहटोंको अपने राज्यका चतुर्थांश चौथकी भांति दिया, उसही दिन विशाल राजस्थानके मध्यमें मरहटोंकी प्रभुताका मार्ग साफ हो गया × राजस्थान मुगलोंकी बादशाहतके अधीन था; जब कि महाराष्ट्रियोंने मुगलोंसे ही चौथ ले ली तब तो वह उन सब राजा और नव्वावोंसे चौथ लेनेके अधिकारी होगये कि जो मुगलबादशाहोंको खिराज देते थे। वह जहां जाते थे वहीं जयलक्ष्मी उनका साथ देती थी, वहांका राजा या नव्वाव हाथ जोड़कर कर-चौथ देता और जैसे वनता वैसे उनको प्रसन्न करता। ऐसी अवस्थामें विजितराजाओंसे कर अदा करनेके लिये विजयी महाराष्ट्रियोंने केवल पाशव वलको ही अपना साधन समझ लिया था या नहीं, इस बातका अनुमान करना कठिन है। परन्तु यह बात तो स्पष्टही पाई जाती है कि उन्होंने महम्मद शाहके इस प्रकारसे कर देनेको अपनी सिद्धिका एक प्रधान द्वार समझा था।

विजयोन्मत्त महाराष्ट्रीगण जिस प्रकार प्रचंड विक्रमसे धीरे धीरे, जय प्राप्त करने लगे, उससे राजपूतोंको अत्यन्त भय हुआ। वे उस भयसे छुटकारा प्राप्त करनेके लिये परस्पर मिल गए। उनकी सनातनरीतिके अनुसार उक्त ऐक्यता-बन्धन वैवाहिक सम्बन्ध सूत्रद्वारा बांधा गया। राणा जगतसिंहने मारवाडके उत्तराधिकारी कुमार विजयसिंहके हाथमें अपनी बेटीको देकर उक्त एकताकी प्राणप्रतिष्ठा की थी और मारवाड और अम्बेरके राजाओंमें जो घोर वाद विवाद

* कोई २ एक करोड बताते हैं।

× सन् १७३५ ई०

चला आताथा, उसको दूर करके परस्पर दोनोंका मेल करादिया । उदयपुरकी सभाके आंगनमें यह ऐक्यतारूपी बन्धन बांधा गयाथा * परन्तु जिसप्रकारसे

* इस समयमें राजस्थानके भिन्न राजा, राजकुमार और राजपुरुषोंने जो कितने एक पत्र राणाजीके पास भेजेथे, वे सब अत्यन्त मनोहरहैं । विशेषकर उनको पढ़नेसे यह बात भलीभांतिसे विदित होतीहै कि अन्यान्य राजालोग राणाजीमें कैसी श्रद्धा और भक्ति रखतेथे । प्रयोजन-समक्षकर यहां उनमेंसे कई एक पत्र उद्धृत किये जातेहैं ।

पहिला पत्र ।

मारवाडके राजकुमार विजयसिंहके निकटसे श्रीश्रीश्रीमहाराणा जगतसिंहके चरणकमलमें ।

“ महाराणा श्रीश्रीश्रीजगतसिंहजीको मेरा सविनय नमस्कार विदितहो । रावत केसरीसिंह और विहारीदासको मेरे पास भेजकर और एक शुभ परिणयसूत्रमें आवद्ध होनेकी अनुमति देकर श्रीमान्ने मुझको विशेष अनुग्रहीत किया । श्रीमान्का आदेश भवदीय सन्तानको शिरोधार्यहै । मैं श्रीमान्का दासहूँ, आपकी समस्त आज्ञाओंका पालन करना मैं स्वीकार करताहूँ । इस समय मैं श्रीमान्को सन्तानहूँ, और जबतक जीवित रहूँगा, तबतक श्रीमान्का ही रहूँगा । यदि मैं यथार्थ राजपूत हूँ तो श्रीमान्के मानापमान और जीवन मरण समस्तहीपरनिर्भर रहूँगा । आज बीस हजार राठौर श्रीमान्के दास हुए । यदि इसकार्यमें कृतकार्यता प्राप्त न हुई तो सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर हमलोगोंको शान्ति देगा । मेरेसाथ जिनका शोणित सम्बन्धहै, वह भी श्रीमान्की आज्ञाका पालन करेंगे । अब यह निवेदन है कि इस शुभविवाहसे जो फल उत्पन्न होगा, वही राजसिंहासन पावेगा; और यदि कन्या हो, और उसको तुर्कोंके हाथमें समर्पण कर्त्तं तो मैं असल राजपूत नहीं । श्रीमान्की परामर्शके अनुसार वह किसी उपयुक्त पात्रको दीजायगी । यहांतक कि यदि भावोजी (विजयसिंहके पिता इसही नामसे पुत्रोंके द्वारा पुकारे जातेथे ।) अथवा और कोई माननीय महाशय वैसा करनेका अनुरोध करें, तो मैं ईश्वरका नाम लेकर शपथ करता हूँ कि मैं उसे सम्मति न दूँगा । और कोई सम्मति दे या न दे, सम्प्रदान करनेवाला तो मैं ही हूँ । आषाढ शुक्ल पूर्णिमा वि०सं० १७९१ (सन् १७३५-३६ ई०)”

“ विशेष द्रष्टव्य।—यह लेख रावत केसरीसिंह और विहारीदास पंचोलीके देखते हुए कृष्ण-विलास मन्दिरके आंगनमें पंचोली लालाजीने लिखा और उसपर मारवाडके राजा बखतासिंहके पुत्र विजयसिंहने हस्ताक्षर किये । ”

दूसरा पत्र ।

विजयसिंहके निकटसे राणाजीके समीप:-

“ यहांपर समस्त आनंदमंगलहै । श्रीमान् अपना अनुग्रह और अपनी मित्रता सदाही समान रखें । और कुशलसमाचारसे सदा मुझको सूचित करते रहाकरें । जिसवेला वह सुदिन (विवाहका दिन) मुझे प्राप्त होगा, उस दिनका मूल्य निर्द्धारित नहीं होसकता । श्रीमान्ने मुझको यथार्थ राजपूत करडाला है । सामर्थ्यके अनुसार श्रीमान्की सेवा करनेमें त्रुटि न करूँगा । श्रीमान् कुलपतिहैं:-

—योग्यताके अनुसार सबको पुरस्कार दिया करते हैं; श्रीमान् प्रतिवेशियोंके रक्षक और पालनकर्त्ता हैं; शत्रुओंका नाश करनेवाले; विद्वानोंको माननेवाले और ब्रह्माकी समान हु.देवान हैं । त्रिलोकीनाथ सदाही श्रीमान्को मुखसे रखकर रक्षा करें । आपादवदी १३ ।”

तीसरा पत्र ।

राजा बखतसिंहके निकटसे राणाजीके समीप ।

“ महाराणा श्रीश्रीश्रीजगतसिंहजीको भक्तसिंहका प्रणाम । आपने मुझको यथार्थ राजपूत कर-
डाला । इसप्रकारके आचरणसे आपका अनुग्रह जगत्विदित हुआ । आप देखलेंगे कि सामर्थ्य
रहते मैं किसीकर्मके साधन करनेमें कभी विमुख न हूंगा । जिसदिन आपके दर्शन प्राप्तहोंगे, उस
दिन मेरे लुन्का सीमा न रहेगी । आपके साथ सम्मिलित होनेके लिये हृदय अत्यन्त उत्कण्ठित हो-
उठा है आपादवदी ११ । ”

चौथा पत्र ।

जयसिंहसवाईके निकटसे राणाजीके समीप ।

“ महाराणाजीके निकट सवाई जयसिंहका नमस्कार पहुँच । श्रीदीवानजीकी आज्ञानुसार मैं
उस करारनामेपर हस्ताक्षर करता हूँ कि जो आपने मारवाटके अभयसिंहके साथ स्नेहबन्धन जोड़ा है ।
हिन्दू अथवा मुसलमान किसीके कारण भी मैं इससे अलग न हूंगा । इस सम्वन्धपत्रमें ईश्वर हम
दोनोंके बीचमें है, और दीवानजी इसके साक्षी हैं । आपाद सुदी ७ । ”

पाँचवाँ पत्र ।

बखतसिंहके पाससे राणाजीके समीप ।

“आपका खास रुक्ता पाकर और पढ़कर सुखी हुआ । जयसिंहका और मेरा पत्र आपके पास
पहुँचा ही होगा । आपकी आज्ञाके अनुसार मैंने उनके साथ मित्रता करली है; और इसमें कोई
सन्देह नहीं कि इस मित्रताकी मैं भलीभाँतिसे रक्षा करूँगा । कारण कि जब आपको प्रतिभू स्वरूप
निर्देश किया है तब इस विषयमें किसी प्रकारका व्यत्यय न होगा । इस समय आप उनकी जाभिनी
लें । पिता, माता, या बन्धु जिसकी भाँति आप मुझे देखें, परन्तु मैं हूँ सबभाँतिसे आपका ही ।
बिना आपके मैं इष्ट, मित्र, स्वजन और जाति, गोत्र, किसीको भी नहीं चाहता आपाद वदी ६ ।”

छठवा पत्र ।

अभयसिंहकी ओरसे राणाजीको ।

“महाराज अभयसिंह, महाराणा जगतसिंहजीके समीप यह पत्र भेजते हैं, उनका ‘मुजरा’ (क)
ग्रहण किया जाय । आपने जो परस्पर स्नेहबन्धन रखनेका वचन दिया है, उसका साक्षी ईश्वर है, इसको
जो कोई तोड़ेगा, उसका दैव अमंगल करेगा । सुख, दुःख, सम्पत्ति और विपत्ति इन सबमें हम एक
हुए हैं; एकमन होकर ऐक्यतासे रहेंगे । स्वार्थपरता हमलोगोंको अलग २ न करे । आपके समस्त
सर्दार हमलोगोंके साक्षी हैं । जो खरा राजपूत है, वह कभी भी इस सम्वन्ध बन्धनसे अलग न होगा ।”
आपाद वदी ३ गुरुवार ।—

बहुधा देखाजाताहै, वैसेही इस मेलमिलापसे सर्व साधारणका कोई उपकार नहीं हुआ। कारण कि फिर उन्हीं साम्प्रदायिक झगडोंने, जो कि सदासे इन जातियाक बीचमें चले आतेथे उस मेलरूपी डोरको तोडडाला। यहांतक कि जिस समय उस सन्धिके सम्बन्धमें राजपूतोंके बीच चर्चा होरही थी उस समय उनकी पहिली ऐक्यताका विषमय फल उत्पन्न होकर राजपूतोंमें शत्रुताकी नींव डाल रहाथा। अल्पकालमेंही इसकी यथार्थता प्रगट होगई।

मालवेपर अधिकार करके महाराष्ट्रीगणोंने वहांसे चौथ ले ली। अनन्तर वाजीराव सेनासाहित मेवाडमें आया। उसके आनेका समाचार सुनकर समग्र मेवाडभूमि भयके मारे व्याकुल होगई। राणाजीने उनके साथ मिलनेकी इच्छा प्रकाश न की और शालुब्रासरदार व अपने प्रधान मंत्री विहारीदासको दूतस्वरूप भेजा *। इस ओर वाजीरावको किसप्रकारसे ग्रहण करना चाहिये उसको कौन आसन दियाजायगा, इस विषयकी चर्चा होनेपर राजसभामें महावादानुवाद होनेलगा। अनेक तर्क वितर्कोंके पश्चात् यह निश्चय हुआ कि वह

—अभयसिंह और भक्तसिंह यह दोनों मारवाडके राजा अजितसिंहके पुत्र थे। इन दोनों भ्राताओंमें अभयसिंह पिताके सिंहासनपर बैठाथा और भक्तसिंहने नागौरराज्यको स्वाधीनभावसे अधिकार कियाथा। जिन विजयसिंहके साथ राणा जगतसिंहकी कन्याका विवाह हुआ वह भक्तसिंहहीके पुत्र थे। इसके उपरान्त विजयसिंह ही मारवाडके सिंहासनपर बैठाथा।

* महाराष्ट्रियोंकी चढ़ाईके समय राणा जगतसिंहजीने अपने मंत्री पांचोली विहारीदासजीको जो कईएक पत्र लिखेथे, उन पत्रोंके पढ़नेसे राणाजीके हृदयका भाव स्पष्ट पायाजाताहै। उन पत्रोंका अनुवाद नीचे लिखतेहैं।—

प्रथम पत्र ।

(ख)

“स्वस्तिश्री मंत्रिप्रवर पांचोलीजी। जोहार। तुम्हारा स्मरण मुझे एक पलभरको भी नहीं छोडता। दक्षिणी (मरहटे) लोगोंके विषयमें जो व्यवस्था तुमने की, वह ठीक है परन्तु यदि संकट (ग) अनिवार्य ही होजाय, तो वह देवल जनपदसे परली ओर हो, निकट होना ठीक नहीं। सेनाकी संख्या कुछ कम कर दो, भगवान्के आशीर्वादसे पैसैकी कमती न रहेगी। गतवर्षके अनुसार रामपुरका बन्दोबस्त करना। और दौलतसिंहको सूचित करना कि, फिर ऐसे सुदृशत्तरके मिलनेकी संभावना नहीं। राजमाताजी इस समय रुग्णहै। गजराव और गजमाणिकने उत्तम युद्ध कियाहै और सुन्द-साजने भी सहस्रोंमांसिकी लीलाकौशल दिखाई (घ) उस समय तुम्हारे न रहनेसे मुझे दुःख हुआ इस समय शोभारामको कैसे भेजाजाय ? आषाढ़ वदी ६ संवत् १७९१ (सन् १७३५ ई०)

(क) ऊंचेपदवालेको नीचे पदवाला जो मानमर्यादा दिखाताहै उसको राजमूत लोग ‘मुजरा’ कहतेहैं।

सिंहानके सामने बनेडाराजकी समान आसनपर बैठेंगे। इसके अनुसार बाजीराव गृहीत और सम्मानित हुआ। शीघ्रही दोनों दलोंमें सन्धि स्थापित होगई। उस-

—(ख) नीचे पदवालेने ऊंचे पदवाला मनुष्य जो संभाषण किया करता है, उसको राजपूत लोग “जुहार” कहते हैं।

(ग) यहांपर पेशवाके साथ युद्धहोनेका संकेत है।

(घ) राणाजी, राजकार्यकी अपेक्षा गजलीलाको विशेष आनंददायक समझते थे, इस बातका प्रमाण आगे चलकर दिया जायगा।

दूसरा पत्र।

“हमको इस बातका विश्वास नहीं होता; इस कारण उनके प्राप्य रूपोंकी फहरिस्त और थोड़े-से नक्षी भेजिये। बाजीराव आपहुँचा है। जमीनके दावेको छोड़कर वह यहाँसे कर ग्रहण करके अपनी क्रीतिको विस्तारित कर जायगा। उसने मेरे राज्यमें पांच अडाना आरंभ कर दिया। अन्यान्य राजाकी अपेक्षा वह यहांसे बीस गुण अधिक लेगा। यदि नियमित होगा तो दिया जायगा। गतवर्ष नल्हारराव आया था; वह तो कुछ भी नहीं था। बाजीराव उससे अधिक पराक्रमशाली है। यदि भगवानने प्रार्थना सुनी तो वह हमारी भूमि नहीं लेसकेगा, और समस्त वृत्तान्त देवीसिंह कहेंगा। बृहस्पतिवार, संवत् १७९२।”

“होलिके समय जगमन्दिरमें अत्यन्त आनंद हुआ था परन्तु लवणके विना अन्नसे क्या है इस ही प्रकार विना विहारीदासके उदयपुर क्या है?”

तीसरा पत्र।

“आपकी समान मनुष्यके राज्यमें रहतेहुए मैं इसकी दृढ़ताके विषयमें एक पलभरको भी सन्देह नहीं करता। परन्तु दरिद्रताकी यह तामसी छाया किसलिये है? कदाचित् आप कहें कि इसमें मेरा क्या दोष है, जैसी आप आज्ञा देते हैं, वैसा ही मैं कहता हूँ।” इसका अभिप्राय और कुछ भी नहीं है; पैसा ही सब कुछ है; उपस्थित विपत्तिको आपके सिवाय और कोई भी दूर नहीं कर-सकेगा और दूसरी सब प्रतिज्ञा भी कृत्या है। आप यह कह सकते हैं कि “मेरे पास कुछ भी नहीं फिर किस प्रकारसे झगड़े झंझटका निवटारा करूं? यद्यपि आप कुछ कालके लिये मेरे पाससे दूर चले गए हैं, तथापि मानो सर्वदा ही आप मेरे निकट रहते हैं, परन्तु बहुत अच्छा हो यदि इस समय आप और भी निकट आजाय। कारण कि आपके आजानेसे मैं रुपयेके इकट्ठा करनेका उपाय करसकता हूँ। गुप्त करनेमें आप विख्यात हैं; परन्तु यह पुत्र आपसे कुछ भी न छिपावैगा (क)। अतएव आपका धन इकट्ठा करना कृथा है; क्योंकि उसका उपयोग न होनेसे सन्देहका उदय होता है, आपको एक विश्वासी आदमीसे कुछ रत्न और कुछ तामस्तुक मिलेंगे, उनको मेरे पास लेआइयेगा। इन विवादोंको दूर करनेके लिये इसके अतिरिक्त दूसरा उपाय नहीं है। आप स्वयं जानी हैं, और अधिक क्या लिखूँ, आगेके परिणामपर लक्ष देकर जो करना उचित समझो सो करो इसके विषयमें मैं अब दूसरा पत्र आपको न लिखूंगा।” संवत् १७९२

* राजसिंहका पुत्र, भीमसिंहका वंशधर। जो आसन बाजीरावको मिलाया, वही फिर वृत्तिश प्रतिनिधिगणके लिये नियत हुआ था।

सन्धिमें यह निश्चय हुआ कि राणाजी वाजीरावको एक नियमित वार्षिक कर देंगे × महाराष्ट्रीय लोगोंने दशवर्षतक इस सन्धिपत्रके नियमानुसार नियमित कर लिया था परन्तु फिर न ले सके । मेवाडके समस्त राजस्वको पचानेकी इच्छा करके उन्होंने उस सन्धिपत्रको तोड़डाला ।

चतुर महाराष्ट्रीयलोग मुईके नकुएकी समान छिद्रमें प्रवेश करके क्रमानुसार जो विराट्मूर्ति धारण कर रहेथे वह क्रमशः ही प्रगटहुई । वह छिद्र क्या था ? राज-पूतोंका परस्पर विरोध ! विरोधका यह बीज राजपूतानेमें किस प्रकारसे अंकुरित हुआ था, इसका वृत्तान्त एक प्रकार पहिले ही वर्णन किया जा चुका है; इस समय विस्तारसे वर्णन करेंगे । पहिले ही कहा जा चुका है कि राणाने अम्बेरराजपुत्रके हाथमें अपनी बेटीको अर्पण करनेके समय अम्बेरराजसे प्रतिज्ञा करालीथी कि इस शुभ सम्मिलनका जो फल होगा उसको अग्रजस्वत्व प्राप्त होगा । इस समय उस विवाहके फलस्वरूप माधोसिंह उत्पन्न हुए । पाखण्डी नादिर शाहकी सर्वसंहारकारी चढ़ाईके दो वर्ष पीछे महाराज सवाई जयसिंह इस लोकसे सिधार गये । उनके परलोक गमनके कुछ दिन पीछे ही महाराजका बड़ा पुत्र ईश्वरीसिंह अम्बेरके सिंहासनपर बैठा । परन्तु एक बलवान सम्प्रदायने अम्बेरराज्यकी पहिली प्रतिज्ञाके अनुसार राणाजीके भानजे माधवसिंहको अधिकार पर वरण करके सिंहासनपर उपवेशन करना चाहा । हम ठीक २ नहीं कहसकते कि सनातनरीतिको तोड़कर माधवसिंहको सिंहासनपर विराजमान करनेके लिये महाराज जयसिंहकी इच्छा थी या नहीं । परन्तु यह भली-भांतिसे कहा जा सकता है कि माधोसिंह सिंहासनके लिये व्यग्र नहीं हुआ था । यदि वह सिंहासनके लिये व्यग्र हुए होते तो राणा संग्रामसिंहके दिये हुए रामपुर जनपदको नियमित सामन्तप्रथाके अनुसार भूमिवृत्तिमें न लेते । परन्तु इस ओर अनुज्ञापत्रमें इसका विपरीत भाव देखा जाता है, वहांपर उनको “स्वीमा” अर्थात् युवराजका स्वत्व प्राप्त हुआ है । जो कुछ भी हो इन बातोंके ऊपर किसी प्रकारका वादानुवाद अथवा झगडा उपस्थित होनेसे पहिले ही ईश्वरीसिंहने पांचवर्षतक राज्य किया । इसही समयमें सवाई ईश्वरीसिंह *

× वार्षिक करमें १६०००० रुपये नियत हुए । यह रुपया हुलकर, सेंभिया और पंवारके मध्यमें समानभागसे बटजाता था ।

(क) विहारीदास पंचौलीको राणा पिता कहकर पुकारते थे ।

* कन्धारको जीतनेके समय नादिरशाहने पराजित खिलजियोंके साथ अहमदखॉ आवेदली नामक एक अफगानको कैद किया था । अफगानिस्तानमें सादोती नामक एक वंश है, वहांके रहने-

दुरानियोंकी गतिको रोकनेके लिये अपनी सेनाके साथ शत्रुके किनारे पर गये। परन्तु यह वृत्तान्त अम्बरेके इतिहासका है यहांपर इसका विचार करनेकी आवश्यकता नहीं अतएव अम्बरेके इतिहासमें ही इसका समावेश किया जायगा।

भागिनेय माधवसिंहके स्वार्थकी रक्षा करनेके लिये उनको साथ ले राणाजी सेनासहित ईश्वरीसिंहके सामने हुए। शीघ्रही दोनों दलोंमें घोर संग्राम आरम्भ हुआ। शिशोदीय वीरगण ईश्वरीसिंहको पराजित करनेके लिये गयेथे, परन्तु वह स्वयं ही हारगये। ज्ञात होताहै कि अन्यायपक्ष समर्थन करना उनके विचारमें नीति विरुद्ध था इस ही लिये वह इसके लिये उत्तेजित नहीं हुए। राणाजीकी सेना तित्तर वित्तर होकर युद्धसे भागी। इस प्रकार पराजितहोनेसे राणाजी अत्यन्त ही व्यथित हुए। परन्तु जिस समय उन्होंने देखा कि सेनाके अनुत्साहसे ही यह हार हुई है, तब तो क्रोधसे अत्यन्त भरगये अत्यन्त क्रोधके न सहनेके कारण राणाजीने गिल्लौटकुलकी प्रचंड तलवार एक साधारण वाराङ्गनाके हाथमें दे दी और व्यङ्गवाणीसे कहा कि "इस अवनतिकी अवस्थामें यह अस्त्र स्त्रीहीके व्यवहार करनेयोग्य है।" यह व्यंग वचन मेवाडभूमिके अवनतिकालके अनुसार ही था। मेवाडवासियोंके हृदयमें यह दृढतासे अंकित होगया; यहांतक कि अवलों वहांके निवासी उसको नहीं भूलें।

कोटा और वूँदीके हाडागणोंने गतयुद्धमें राणाजीकी सहायता कीथी; इसही कारणसे ईश्वरीसिंहने उनके आचरणका योग्य फल देनेके लिये आपाजी संधियाकी सहायता लेकर उनपर आक्रमण किया। हाडा रानाने उस आक्रमणका अत्यन्त वीरतासे रोकदिया। इस युद्धमें आपाजी संधियाका एक हाथ कटगया। इस युद्धके फलसे दोनों दलोंको कुछ कुछ हानि पहुँची और दोनों राजाओंको संधियाके पेटभरनेको नियमित कर

—नाल इस वंशको अत्यन्त पवित्र मानतेहैं। आवेदली इस वंशका गोत्र है। अहमदखाँ आवेदली इसही वंशमें उत्पन्न हुआथा यह अत्यन्त तेजस्वी और पराक्रमी था। नादिर शाहने आदरसहित इसको छोड़दिया और एक जमींदारी बखशीशमें दी। जब नादिर शाह गुप्तभावसे मारागया तब अहमद शाहने उसके राज्यपर अधिकार किया और थोड़े ही समयमें सन् १७४७ ई०के अक्टोबर महीनेमें कन्धारराज्यमें खुद मुखतार बादशाह मानागया। महाराज ईश्वरीसिंहजी इसहीको रोकनेके लिये शत्रुनदीके किनारेपर चढ़गएथे। अनन्तर अहमदखाँने अपने आवेदली गोत्रको "दुरानी" नामसे बदल डाला।

देनापड़ा । राणा जगतसिंहने इस पराजयसे अत्यन्त दुःखित हो बड़ालालेनेके लिये मल्हारराव हुलकरसे सहायता चाही । बातचीत होनेमें उन्होंने मल्हारराव हुलकरसे प्रतिज्ञा की कि यदि आप ईश्वरीसिंहको सिंहासनसे हटा देंगे तो मैं ६४ लाख रुपया दूंगा । जिस दिन जगतसिंहने इस प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर किये उस ही दिन राजस्थानभूमिमें महाराष्ट्रियोंकी प्रभुता दृढतासे जम गई । इस समाचारको शीघ्रतासे ईश्वरीसिंहने सुना । अपनी पदच्युति और अपने अपमानको अनिवार्य जानकर अंतमें अभागिने जहर पीकर प्राण देदिये । ईश्वरीसिंहके मरनेपर माधवसिंह अम्बेरके सिंहासनपर बैठे तथा चतुर हुलकरने अपने प्राप्य चौंसठ लक्ष रुपये लेकर महाराष्ट्रियोंकी विजयवैजयन्तीको राजस्थान क्षेत्रमें दृढतासे गाड़दिया । राजपूतजातिकी दुर्दशाका यही मुख्य कारण हुआ । इसही कारणसे शिशोदीय, राठौर और कुशावहगण अपने बड़े बूढ़ोंके अनन्त गौरवसे सदाके लिये बंचित हो दीन हीन दशामें गिरपड़े । इस समयसे उनके भीतर जिस कठोर अन्तर्विवादने प्रवेश किया, वह उनके सारभागको भस्म करता गया । इसके उपरान्त महाराष्ट्रियोंने राजपूतोंका सर्वस्व हरण करके राजस्थानको श्मशान बनादिया । परस्परके इस प्रचंड क्लेश और महाराष्ट्रियोंके कठोर सतानेसे राजपूतगण बहुत समयतक दुःखित रहे; फिर सन् १७९७ ई० के सन्धिसूत्रके अनुसार अत्यन्त दयाशील ब्रिटिश केशरीने उनको इस संकटसे उद्धारकिया ।

अठारह वर्षके अयोग्य राज्यशासनके पीछे राणा जगतसिंहजीने संवत् १८०८ (सन् १७९२ ई०) में परलोकका मार्ग लिया । जगतसिंह बाप्पारावलके पवित्र सिंहासन और शिशोदीयकुलके अयोग्य राजा थे । हाथी युद्ध देखकर वह अपने समयको बृथा ही गँवाया करतेथे * महाराष्ट्रियोंके प्रचंड पराक्रमको रोकनेकी अपेक्षा वह इस प्रकारके क्रीडायुद्धको ही अत्यन्त प्रयोजनीय समझतेथे । परन्तु एक बातमें भलीभाँतिसे उनकी गुणग्राहकताका परिचय पायाजाताहै । अपने बड़े बूढ़ोंकी समान जगतसिंह भी शिल्पशास्त्रके उत्कर्षमें अपनी प्रजाको उत्साहित किया करतेथे । उदयपुरके राजमन्दिरको इन्होंने बहुत बढादियाथा । और पेशोलाके वक्षविहारी द्वीपपुंजके संस्कार करनेमें एक लक्ष रुपया व्यय कर दिया । तराईमें जो ग्राम दिखाई देते हैं उनकी प्रतिष्ठा जगतसिंहने ही कीथी । इसके अतिरिक्त आलस्य और विलासकी सूचना देनेवाले जो उत्सव अबतक उदयपुरमें हुआ करते हैं; इन सबकी प्रतिष्ठा भी राणा जगतसिंह (दूसरे) ने कीथी ।

* राणाजीने अपने मंत्री विहारीदास पंचोलीको जो पत्र लिखेहैं, उनमेंसे पहिला पत्र ही उसबात की साक्षी देताहै ।

पंचदश अध्याय १५.

दूसरे राणा प्रतापसिंह;—दूसरे राजसिंह राणा;—राणा अमर-
सिंह;—हुलकरकी सेवाडपर चढ़ाई और करप्राप्ति;—राणाजीको
षट्च्युतकरनेके लिये विद्रोहाचरण;—विद्रोही सदर्कोंके द्वारा
एक नकली राणाका निर्वाचित होना;—कोटेके जालिमसिंह;—
सैंधियाके साथ नकली राणाका खेल;—इन दोनोंकी मिलीहुई
सेनापर राणाजीकी चढ़ाई;—राणाजीकी हार;—सैंधियाकी
सेवाडपर चढ़ाई और उदयपुरको घेरना;—राणाजीका अमर-
चंदको मंत्री बनाना;—अमर चंदकी तेजस्विता;—सैंधियाके साथ
सान्धि;—सैंधियाका वहांसे जाना;—सेवाडराज्यका क्षय;—विद्रो-
हीसदर्कोंका राणाजीकी शरणआना; गदवाड़प्रान्तका अधि-
कार जाना;—राणाजीका गुप्तवध;—राणा हमीरका सिंहा-
सनपर विराजमान होना;—राजमाता और अमर-
चंदमें परस्पर विवाद;—अमरचंदका महान च-
रित्र, श्रुत्यु, स्वभाव गुण इत्यादि;—सेवाड-
राज्यकी क्षयप्राप्ति ।

दिनपर दिन जाताहै; परन्तु जो दिन एकबार चलागया वह फिर लौटकर
नहीं आता । जिस शारदीय पूर्णशशधरकी माधुरीमय मुसकानसे एक समय
असीम आनंद प्राप्त किया था; उस चंद्रमाको तो तत्पश्चात् अनेक बार
देखा, चंद्रमाकी उस विमल कौमुदीराशिने अनेक बार प्रकृतिको वैसे ही तरल
रजतधारासे सिंचित कियाहै, परन्तु कहाँ? वह आनन्द तो फिरकर कहीं भी न
पाया । वह आनंद जो कि उस शशधरकी अमृतभरी मुसकानके साथ उस अन-
न्तमें लीन होगया; हमें आजतक फिर उसका पता ठिकाना न लगा? इस पता

ठिकाना प्राप्त न होने और दर्शन न मिलनेका कारण और कुछ नहीं है—केवल उस दिनका पुनर्वा लौटकर न आना ही इसका प्रधान कारण है—क्या कभी वह दिन आवैगा ?—कह नहीं सकते । परन्तु प्राण रहतेहुए प्राणदायिनी आशाको कौन छोड़ सकता है ? 'जब तक स्वाँसा । तब तक आशा' की कहावत किसने नहीं सुनी ? यह मनुष्य आशाका दास है । आशा ही इस क्षणभंगुर जीवनप्रसूनके लिये वृन्तस्वरूप है; एकवार इस वृन्तके गिरते ही जीवनरूपी प्रसून सदाके लिये अनन्त काल सागरमें डूबजायगा । आशा ही मनुष्यकी प्रधान सहेली है । परन्तु अभाव ही आशाको उत्पन्न करनेवाला है । जिसको अभाव नहीं, उसको आशा भी नहीं । उसका जीवन जड़ है, उत्साह हीन है । यह सत्य है कि अभाव आशाको उत्पन्न करता है; परन्तु उस आशासे फिर अभावको यथार्थ ज्ञान उत्पन्नहुआ करता है । उस अभाव—ज्ञानसे चेष्टा; चेष्टासे उद्योग; उद्योगसे सिद्धि प्राप्त होती है । आशासे मूढ़हुआ मनुष्य अपने अभावको नहीं समझसकता; और जो समझकर भी उन अभावोंको पूर्ण करनेका उपाय नहीं करता; उसकी कोई भी अभिलाषा सिद्ध नहीं होती; वरन उसका जीवन ही कष्टकर होजाता है ।

यूरोपकी रानीसे रोमका एक दिन पतन हुआथा; एक दिन उसके विश्व-विजयी पुत्रोंके चरणोंमें दासपनकी भारी २ जंजीरें पड़गई थीं, परन्तु वह रोम फिर उठा है;—उठा है केवल अपने आशामुग्ध पुत्रोंके अनन्त उद्योग और उत्साहके प्रभावसे ! वह अपने अभावको भलीभाँतिसे समझगयेथे । वह जानगएथे, कि इस समय वह इटली नहीं है । जिन इटलीवालोंके प्रचंड प्रभावसे एक समय आधा संसार कंपायमान होगया था; इटलीवाले इटलीकी अवनतिके समय समझचुकेथे कि अब वह इटली नहीं है, स्वाधीनतासे हम लोग पृथक् होगयेंहैं, शत्रुओंने दवाकर हमको सता रक्खा है; इस समय हम लोग आस्ट्रेलियावालोंके दास हैं । इटलीवालोंने स्वाधीनताके अभावको भलीभाँतिसे अनुभव किया था इसी कारणसे उस अभावके पूर्ण करनेकी चेष्टा की; अब शेषमें उद्योगिता और उद्यमशीलताकी सहायतासे उन्होंने अपनी अभिलाषाको सिद्ध किया । आस्ट्रेलियावालोंकी पहिराईहुई दासपनकी कठोर जंजीरको खंड २ करके समुद्रके अगाध जलमें डालदिया, जननी जन्मभूमिके मस्तकपर स्वाधीनताका रत्नसुकुट पुनर्वा उड़ादिया । इटली स्वाधीन होगई । परन्तु इस स्वाधीनता और उस स्वाधीनतामें बहुत भेद है । उस स्वाधीनताके प्रकाशमान प्रतापने एक समय

आधे जगतको खलवलादिया था। परन्तु यह स्वाधीनता केवल इटलीके ही परकोटेमें समाप्त होगई। इटलीके भाग्यगगनमें पुनर्वा स्वधीनतारूपी मूर्य उदित हुआहै; परन्तु यह सूर्य वह सूर्य नहीं है। इसही कारणसे कहागया कि जो दिन एक बार गया वह फिर लौटकर नहीं आता। जो रक्त एकवार गया, वह फिर दुबारा नहीं पायाजाता। संसारका नियम ही ऐसा है। इस ही विश्वजनीन नियमके अधीन होनेसे आज विश्वविख्यात भारतवर्ष दीन हीन अवस्थाको प्राप्त हुआहै। श्रीभगवान् रामचंद्रजी गए,—लक्ष्मणजी गए,—वेदव्यासजीका आज पता नहीं लगता। इनकी चिताभस्मसे समया-नुसार लक्षों वर्ष पीछे पुनर्वा भीष्म, द्रोण, भीम, अर्जुन, कर्ण, कृष्ण व जरास-न्वादि महारथियोंने जन्म लिया। इसके उपरान्त फिर जिस दिन कुरुक्षेत्रकी भयंकर समरभूमिमें—आर्यगौरवके विशाल समाधिक्षेत्रमें यह समस्त महावीरगण महानिद्रामें शयन करगये; जिस दिन भगवान् ब्रह्माजीने एकान्तमें बैठकर लौह-लेखनीसे भारतके होनहार कठोर विधानको धीरे-रे लिखा; उस ही दिन भारतमें जिस कालरात्रिका आगमन हुआ, उसका प्रभात बहुत समयके पीछे हुआ;—प्रभात हुआ;—परन्तु भारतके उस प्रकाशमान गौरवका दिन फिर न आया। तदुपरान्त उस विशाल समाधि क्षेत्रसे पुरु, चन्द्रगुप्त, अशोक, पृथ्वीराज, समरसिंह, संग्रामसिंह, और प्रताप-सिंह क्रमानुसार उत्पन्न हुए; इन महावीरोंने भारतकी जयका गीत गाकर,—एकता महाप्रणता, आत्मोत्सर्ग और देशप्रेमकी विजयवैजयन्ती हाथमें लेकर पुनर्वा भारतको आनंदमय करदिया। परन्तु यह आनन्द और यह उत्साह क्षणभरके लिये था; कालचक्रके धीरे-रे बदलनेसे वह दिन शीघ्रही व्यतीत होगया। उस दिनके साथही भारतकी होनहारगति कठोरतासे पूरी हुई; पुनर्वा भारतका पतन हुआ।—पुनर्वा भारत सन्तानकी अधोगति हुई;—दारुण;—शोचनीय—अत्यन्त कठोर दुर्दशा हुई! शिशोदीय वीर प्रतापसिंहने आर्यवीरत्वकी परा काष्ठा दिखाकर महाप्राणता और प्राण निछावरका आदर्श रखकर पितृपुरुषोंके अनन्त मार्गका आश्रयलिया। उनके परलोक जानेसे ही—भारतका यह दारुण—शोचनीय और अत्यन्त कठोर अधःपतन हुआ! आज स्वर्गकी समान भारत भयंकर श्मशान बनगयाहै,—निर्जीव, निष्पन्द और जडभावको प्राप्तहै आज उस अवनतिकी कहा-नीका प्रचार करनेके लिये—उस विश्वजनीन नैसर्गिक नियमकी सार्थकता सम्पादन करनेके लिये, पुरुषश्रेष्ठ प्रथम प्रतापसिंहके सिंहासनपर, अपदार्थ, हीनजीवन, दूसरा प्रतापसिंह विराजमान हुआ! हाय! संसारमें कुछ भी स्थिरता नहीं!

दूसरा प्रतापसिंह सन् १७५२ ई० में मेवाडके सिंहासनपर बैठा । जिस गौरव-मय पवित्र नामको धारण करके वह संसाररूपी रंगभूमिमें अवतीर्ण हुआ, उसको श्रवण करते ही उस प्रातःस्मरणीय सन्यासी श्रेष्ठ महात्मा प्रतापसिंहकी याद आतीहै; परन्तु इतिहास तत्काल ही वज्रगंभीर स्वरसे कह उठताहै कि “यह प्रतापसिंह वह वीर श्रेष्ठ स्वजातिप्रेमिक प्रतापसिंह नहीं है, यह तो अकर्मण्य अपदार्थ हीनजीवन दूसरा प्रतापसिंह है; “प्रताप” नामका स्वर्गीय भाव नष्ट करनेके लिये ही पृथ्वीपर उसका जन्म हुआहै । ” इसके समयमें कोई वर्णन करने योग्य विशेष बात नहीं हुई । तीन वर्ष तक इसने राज्य किया, इस कालमें बराबर महाराष्ट्रीय लोग ही मेवाडभूमिको सताते रहे । इस तीन वर्षके समयमें दुर्द्धष महाराष्ट्रियोंने * तीनवार मेवाडभूमिपर आक्रमण करके अभागे शिशोदीयराजासे कर और पण लियाथा अम्बेरके राजा जयसिंहकी कन्यासे प्रतापसिंहका विवाह हुआथा । इस कन्याके गर्भसे राजसिंह नामक एक पुत्र उत्पन्नहुआ; यह राजसिंह ही पश्चात् मेवाडके सिंहासनपर बैठे ।

जिस वीर राजसिंहने क्षत्रियोंकी लोप होती हुई वीरताको पुनर्वा प्रचण्ड करदिया-था, जिसके प्रचण्ड प्रतापसे एक समय दुर्द्धष औरंगजेबका सिंहासन कम्पायमान होगयाथा, आज उन्हींके पवित्र नामको धारण करके मेवाडके सिंहासनपर एक दूसरा अपदार्थ राजा बैठा । इस दूसरे राजसिंहने सातवर्षतक राज कियाथा । इसके समयमें महाराष्ट्रियोंने मेवाडभूमिपर सात बार चढ़ाई कीथी । महाराष्ट्रियोंकी इन कठोर चढ़ाईयोंसे मेवाडका यहांतक सत्यानाश होगया था, मेवाडका राणा यहांतक धनहीन होगया था कि अपने विवाहके लिये राणाजीने अपने एक ब्राह्मणमंत्रीसे धन लिया था । इस राणाका विवाह राठौर राजकुमारीके साथ हुआ था । इस दूसरे राजसिंहके परलोकवासी होनेके उपरान्त मेवाडकी सनातनरीतिमें भलीभांतिसे व्यभिचार हुआ था । राजसिंहके पश्चात् इसके चचाको मेवाडका सिंहासन मिला । इसका नाम अरिसिंह था ।

संवत् १८१८ (सन् १७६२ ई०) में अरिसिंह अपने भतीजेके सिंहासनपर बैठा । इसका स्वभाव अत्यन्त क्रोधमय था । एक तो जगतसिंहकी चपलता

* सटवाजी, जनकोजी राव, और राघोबा दादा पेशवा, यह तीन सेनापति मेवाडपर तीन बार चढ़े थे ।

× संवत् १८७२ में राजा बहादुरने, संवत् १८१३ में मल्हारराव हुलकर और विठ्ठल शिवदेव विचूर करने संवत् १८१४ में राणोजी मुंटेने, इनके अतिरिक्त संवत् १८१३ (सन् १७५७ ई०) में सदाशिवराव भाऊ, गोविन्दराव और खानोजी जाधवने मेवाडके राणासे तीन बार कर लियाथा ।

और दूसरे प्रताप तथा राजसिंहकी अकर्मण्यतासे मेवाडराज्यकी दशा अत्यन्त हीन होगई थी; इसके ऊपर वर्तमान राजाके कुटिल स्वभाव और अदम्यप्रकृतिने एक महा अनर्थ उत्पन्न किया। राज्यमें जो उपाय इस अनर्थसे हुए उन्होंने मेवाडका नाश करदिया। इससे पहिले भी महाराष्ट्रियोंके अत्याचारोंसे मेवाडपर बहुतसी विपत्तियें पड चुकी थीं, परन्तु इनसे मेवाडकी तिलभर भूमि भी अलग नहीं हुई थी। पंचोली मंत्रियोंकी दूरदर्शिता और सितारेके महाराजकी भक्तिसे अवतक मेवाडभूमि अपनी रक्षा करनेमें समर्थ थी। परन्तु जिस समय भयंकर उपद्रवने राज्यमें उत्पन्न होकर प्रजाके मेलमिलापका नाश कर डाला, जिस समय महाराष्ट्रीयलोग भिन्न २ दलोंमें विभक्त होकर उस प्रजाकी सहायता करने लगे कि जो परस्पर विवाद कर रही थी—जिस समय महाराष्ट्रीयगण अवसर समझकर अपनी भेट भरने लगे, उस काल धीरे २ राज्यकी दुर्दशा होनेलगी। प्रतापको राजगद्दीसे उतारकर सिंहासनपर उसके चचा नाथजीका अभिषेक करनेके लिये मेवाडके सर्दारोंने कई बार विद्रोहाचरण किया था, उस उपद्रवको दवानेके लिये मल्हारराव हुलकरको बुलायागया। महाराष्ट्री नीतिके अनुसार चतुर हुलकरने इस समय तक मेवाडके बहुतसे अंश अपने अधिकारमें करलिये थे; परन्तु इस समय अवसर पाकर और भी बहुतसे देश गडपजानकी अभिलाषा की।

यद्यपि शान्तिवन्धन और कृतज्ञतावन्धन कठिन है, परन्तु राजनीतिमें आवश्यकता पडनेपर यह बन्धन भी मकड़ीके तारकी समान तोड दिया जाताहै; परन्तु ऐसा होनेपर भी मानव धर्मशास्त्रके किसी परिच्छेदमें ऐसा नहीं लिखाहै कि महोपकारीका अनभल करके ही उसके उपकारका बदला दियाजाय! अम्बेरके सिंहासनपर जिस माधोसिंहका अभिषेक करनेके लिये राजाजीने बहुतसा धन व्यय करदिया, यहाँतक कि यदि राजाजी यह त्याग स्वीकार न करते तो माधवसिंहको कोई राजा भी नहीं कहता उन्हीं माधवसिंहने अपने मामाके समस्त उपकारोंपर चरणग्रहार करके मेवाडका श्रेष्ठ अंग रामपुर नामक परगना मल्हारराव हुलकरको देदिया * मेवाडपर जो कर बाजीरावने लगाया था, उसके उगाहनेका भार हुलकरको सौंपा गया था। परन्तु जिन नियमोंके अनुसार

* संवत् १८०८में यह घटना हुई। इसके पश्चात् रामपुर जमादारीका कोई २ अंश मेवाडके अन्तर्गत था। रामपुरके सम्बन्धमें इससे पहिले बहुत बातें कही जा चुकी हैं।

राणाजीने उस करका देना स्वीकार किया था, उन नियमोंको महाराष्ट्रियोंने तोड़ डाला; × अतएव राणाजीने उस करभारसे अपनेको छूटाहुआ समझा था। इस कारण बहुतसा रुपया बाकी पडगया । वह बाकी खजाना और चम्बलन-दके ऊपरी भागके कई एक परगनोंका महसूल अदाकरनेका वहाना करके मल्हारराव हुलकरने सेनासहित मेवाडपर चढाई की । इससे पहिले हुलकरने राणाजीके पास कईएक पत्र भी भेजेथे जिनमें उनको बहुत सा भय दिखाया था, परन्तु इस समय मेवाडके वर्तमान अन्तर्विप्लवका सुअवसर पाकर सेना सहित मेवाडभूमिमें आया और राजधानीपर आक्रमण करनेकी तय्यारियें करने लगा । उसकाल राणाजीने अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर हुलकरको इक्यावन लाख रुपये दिये और उससे सन्धि कर ली । * एक तो मेवाडके राज्यकी दशा वैसेही अत्यन्त बुरी होरहीथी, इसके ऊपर यह इक्यावन लाख रुपया इकट्ठा करनेमें राज्यमें जो खराबियां उत्पन्न हुईथीं उनका अनुमान करना सहज है । इसही वर्षमें एक दुर्भिक्ष पडा कि जिसने मेवाडभूमिका शेष रक्त भी चूसलिया † इस भयानक दुर्भिक्षके समय समस्त पदार्थ बहुत ही महँगे होगए । गेहूँके आटे और इमलीका एक ही भाव होगया । इस भयंकर दुर्भिक्षके दमन होनेके उपरान्त चार वर्ष पीछे मेवाडराज्यमें एक घोर विप्लव उत्पन्नहुआ । यह विप्लव केवल घराऊ झगडेका था । इस अनर्थकारी घरेलू झगडेसे मेवाडकी प्रजा इतनी निर्बल हुईथी कि तस्कररूप महाराष्ट्रियोंसे अपनी सम्पत्तिकी रक्षा भी कठिनतासे करतीथी । इस प्रकार शोचनीय अवस्थामें पतित होकर मेवाडवासियोंने बहुत समयतक अनेक कष्ट सहे ! अनन्तर सन् १८१७ ई० में अनुग्रहवान ब्रिटिशसिंहने उनके दग्ध हृदयपर शान्तिका जल छिडका और अपने आश्रयवृक्षकी छायामें आश्रय दिया ।

सर्दारोंके विद्रोहका यथार्थ कारण अवतक किसीको भी ज्ञात नहीं हुआ और न कभी जाना जायगा ! कारण कि इस विषयमें सबके मत पृथक् हैं । तेजस्वी

× बाजीरावके साथ जो सन्धि हुई उसमें निश्चय हुआ था कि अब महाराष्ट्रीयलोग मेवाडपर न चढेंगे । परन्तु इससमय उनको आक्रमण करताहुआ देखकर राणाजीने उस सन्धिपत्रको व्यर्थ जाना ।

* हुलकर अन्तलागढतक बढगयाथा । यहांपर कोणवारके अर्जुनसिंह और राणाके धायभाइयोंने उससे मिलकर ५१ लाख रुपये देनेका निश्चय किया ।

† संवत् १८२० (सन् १७६४ ईसवी ।)

राजपूतोंने अपने राणाको महाराष्ट्रियोंके दुराचार रोकनेमें सम्पूर्ण असमर्थ देखकर उनको पदच्युत करनेका उपाय किया था। किसी २ का अनुमान है कि मेवाडकी प्रतिद्वन्द्वी सामन्त सम्प्रदायने ईर्ष्या और स्वाथपरतासे ऐसा अनर्थ कियाथा। कहतेहैं कि राणा अरिसिंह (राणा उरसी) ने अपने भतीजे राजसिंहको अन्याय उपायके द्वारा वध करके राजसिंहासनको अधिकारमें कियाथा बहुत कालसे चलीआती हुई किम्बदन्तियोंके पाठकरनेसे यद्यपि राणाके चरित्रोंपर घोर सन्देह उत्पन्न होताहै, तथापि ऐसा कोई प्रमाण कहीं भी नहीं पायाजाता कि जिससे वह सन्देह दृढ हो। मेवाडकी सनातन उत्तराधिकारकी रीतिमें विघ्न होनेपर वहां अनेक प्रकारके अमंगल और अनर्थ उत्पन्न हुआ करतेहैं इस ओर मेवाडके सिंहासनपर अधिकार करनेकी सामर्थ्य भी राणा उरसीमें न थी। बहुत दिनसे इसका आसन शिशोदीयकुलके सोलह सर्दारोंके नीचे था। एक भूमिवृत्ति इसको प्राप्तहुई थी जिसकी आमदनीसे ३०००० हजार रुपये वसूल होतेथे यह राणा उरसी पहिले दूसरे दर्जेके सर्दारोंमें गिनाजाताथा। जो सर्दार लोग बराबर इतने दिन ऊंचे आसनका सन्मान भोग करतेआयेहैं, वह क्या इस समय उसके आगे शिर नवाते ? आज क्या वह उरसीको राजा समझकर सन्मान देते?— कभी नहीं ! अवैध राज्याधिकार प्राप्तकरनेसे सवही सर्दार उससे घृणा करतेथे। दीर्घ कालतक साथ रहनेसे सर्दारलोग उसके समस्त गुप्त चरित्र जानगएथे; वह समझगयेथे कि राणा उरसीका स्वभाव अत्यन्त रूखा है और इसमें राज्यकरने लायक कोई गुण भी नहीं है चरित्रके गुप्त भेद तक जाननेके कारणसे सर्दार उरसीसे अत्यन्त ही घृणाकरतेथे तथा उसे किंचित भी सन्मान नहीं देतेथे। राणाके कठोर स्वभावने शीघ्रही मेवाडके प्रधान सरदार साद्रीपतिको अलग करदिया * जिस महानुभाव झाला सरदारने हलदीघाटके भयंकर समरक्षेत्रमें निस्सहाय प्रतापकी जीवनरक्षा करके शिशोदीय कुलकी अनन्त कृतज्ञता पानेकी

* साद्रीके ठाकुरने, विहारीदास पंचोलीके वंशज यशवंतरावके पास जो उस समय मेवाडका दीवान था, एक पत्र भेजा, उसका अविकल अनुवाद नीचे लिखाजाताहै।

“ दीवान बहादुर यशवंतराव पंचोलीजीको राजरघुरणदेवका प्रणाम। श्रीमान्का पत्र पाया। प्राचीनकालसे आप हमारे मित्र हैं, और जन्मकालसे आप हमारा विश्वास करते आए हैं; कारण कि मैं राणाकुलके भक्तोंको ही हृदयसे स्नेह करताहूं। आपके निकट मैं कुछ भी नहीं छिपाऊंगा; इस ही कारणसे आज लिखताहूं कि काम करनेकी मेरी कुछ भी इच्छा नहीं। आगामी आषाढमें श्रीगयाजीको जानेका मेरा विचार है। (क) जब राणाजीके आगे यह विचार प्रगटकिया तो उन्होंने श्लेष करके उत्तर दिया कि “ तुम द्वाराकाकी यात्रा करसकतेहो (ख)

(क) गयाजी परम पुण्यमय तीर्थ है।

योग्यता प्राप्तकीर्ती, आज राजाधम उरसीके कठोर, आचरणने उसको भी शिशोदीयकुलसे अलग करदिया । इस ओर देवगढके राजा यशवन्तसिंहके प्रति निर्वोध राणाने कुछ व्यंग्य वचन कहे, कि जिससे वह भी विद्वेष करने लगे । यशवन्तसिंहने तेजस्वी चंडके वंशमें जन्म लियाथा । इसकारण वह भी इन व्यंग्य वचनोंके प्रतिफल देनेको अवसर खोजने लगे ।

अपमानित विद्वेष भावापन्न सर्दारोंने अवसर देखकर राणा उरसीको सिंहासनसे उतारनेका चक्रान्त किया। उन्होंने प्रचार करदिया कि इस सिंहासनका यथार्थ उत्तराधिकारी रत्नसिंह नामक एक व्यक्ति है । सर्दारगण इसप्रकारसे कहने लगे कि रत्नसिंहने राजसिंहके औरससे तथा गोरुण्डासर्दारकी बेटीके गर्भसे जन्म लियाहै । इस बातके सत्य या मिथ्या होनेका अवतक कोई निराकरण नहीं हुआ, और अब आगेको भी इसके निराकरण होनेकी कोई आशा नहीं । अनन्तर असन्तुष्ट और क्रोधित सर्दारगण उस रत्नसिंहको ही अपने विवादका मध्यविन्दु-स्वरूप समझकर द्वेषाग्निको भडकाने लगे । मेवाडके प्रधान सोलह सर्दारोंमेंसे अधिकांश सर्दार रत्नसिंहसे मिलगये । केवल पांच * सर्दार राणा उरसीकी ओर रहे । इनमेंसे शालुम्बासर्दार तो सबसे पहिले ही रत्नसिंहकी ओर मिलगयाथा परन्तु थोडे ही दिनोंमें उस पक्षको छोड गणाजीकी ओर चलाआया । जिस महान राजभक्तिके द्वारा उत्साहित होकर चंडके वंशधरगण शिशोदीयकुलके लिये अपने प्राणतक दे देनेमें भी सोच विचार नहीं करतेथे, वृद्ध शालुम्बाविपातिने आज उस राज भक्तिके अनुरोधसे भी राणाजीका पक्ष ग्रहण नहीं किया । इसमें एक विशेष कारण था । सरदार प्रभुताका अभिलाषी था, उसने समझाथा कि विद्रोहियोंमें मिलजानेसे विशेष प्रभुताई प्राप्त होगी । परन्तु जिस समय उसने यह जाना कि विरोधी शक्तावत सर्दारोंके सामने मेरी एक न चलेगी X तब वह विद्रोहियोंको छोडकर राणाके पक्षमें चलाआयाथा ।

(ख) राजपूतोंके मतानुसार द्वारका तीर्थ धर्मभूमि और युद्धसामर्थ्यहीन मनुष्योंके जाने लायक तीर्थ है ।

“ जो मैं रहूंगा तो राणाजी मेरी सम्पत्तिके परजनोंका जेतजीके समयकी समान पुनरुद्धार कर दंगे । हमारे बडेबूढे भलीभांतिसे राणाओंकी सेवा करगयेहैं, और मैं भी १४ वर्षसे उस गद्दीकी सेवा प्रमाणिकपन और विश्वाससे करता चला आताहूँ । इतत समय मेरी सामर्थ्य जाती रहीहै; यदि दरबारकी इच्छा मेरे ऊपर अनुग्रह करनेकी हो तो यही उचित अवसरहै । ”

* शालुम्बा (चूडावत) विजौली, अमावत, गनौराके और विदनोर सर्दारगण ।

X भेंदर (शक्तावत) देवगढ, साद्री, गोरुण्डा, देलवाडा, नैदला, कोटारियो और कान्होरके सर्दारगण, रत्नसिंहके पक्षके मुख्य सर्दारथे ।

: दिमागोत्रमें उत्पन्न हुआ वसंतपाल नामक सर्दार रत्नसिंहका मंत्री नियत किया गया। सन् ईसवीकी बारहवीं शताब्दीमें वसंतपालके पूर्वपुरुष दिल्ली नगरीसे-समरकेशरी समरगिंहके साथ मेवाडमें आयेथे, तथा इ.से पहिले वह भारतके शेष सम्राट् महाराज पृथ्वीराजकी सभामें एक ऊंचे पदपर विराजमानथे। इन समस्त सर्दारोंके साथ “ फितूरी ” * ने कुम्हलमेर (कमलमेर) पर अधिकार किया और वहांपर सर्दारोंके द्वारा यथाविधिसे अभिषेकित हो मेवाडका राणा बनजानेके कारण राजनियमावलीपर स्वाक्षर करने लगा। राजनीतिके मूल-तत्त्वका निरादर करके रत्नसिंहके सर्दारोंने अन्तमें इष्टसिद्धिके लिये जिस घृणित उपायका अवलम्बन किया उससे मेवाडका दुर्दिन और भी निकट आगया। तदनन्तर उन सर्दारोंने संधियासे सहायता चाही और राणा उरसीको सिंहासन-से उतारनेके बदलेमें उसको १२५००००० रुपये देने स्वीकार किये।

मेवाडके इस भयंकर अन्तर्विध्वंसके समय जालिमसिंह नामक एक प्रचंड राज-पूतवीर राजस्थानकी रंगभूमिमें अवतीर्ण हुआ। जालिमसिंहने राजस्थानक्षेत्रमें विशेषकरके मेवाडकी भूमिमें जिसप्रकारका अभिनय कियाथा उसको सुनकर सबही गुणग्राही लोग उस वीरकी वीरता, महानता, तेजस्विता और राजनीति-ज्ञाताकी विशेष प्रशंसा करेंगे। मेवाडके क्षेत्रमेंही इसवीरकी तीक्ष्ण राजनीतिका विस्फुरण हुआ। यद्यपि यहांपर उसका वृत्तान्त लिखना प्रसंगानुसार नहीं है तथा-पि मेवाडकी रंगभूमिमें जो महानकार्य जालिमसिंहने कियेथे इनकार्योंमें इनका जीवनचरित्र इतना जड़ाहुआ है कि उनका वर्णन करनेसे पहिले उनके जीवन-चरित्रका कुछ अंश यहांपर लिखना भी आवश्यकीय है। माधोसिंहको अम्बेरके सिंहासनपर स्थापित करनेके विषयमें ईश्वरीसिंहके साथ राणा जगतसिंहका जो संवर्ष उपस्थित हुआ, उसने ही जालिमसिंहके होनेवाले महानचरित्रका-द्वार खोलदिया जालिमसिंहके पिता उससमय कोटिकी शासन करतेथे। बदला लेनेके लिये जब कि ईश्वरीसिंहने संधियाके साथ मिलकर कोटाराज्यपर आक्रमण किया उस समय जालिमसिंह वहींपरथे, उस समय महाराष्ट्री सेनाके साथ पहली बार उनकी खुठमेंड हुई। इस प्रथम साक्षात्से ही महाराष्ट्रीयोंकी नीति-कौशलको वह उत्तमतासे लिखगएथे। तथा उसही नीतिके अनुसार पचासवर्षतक उन्होंने कार्य कियाथा। अपने राजाके अनुग्रहको खोकर जालिमसिंह कोटिसे

* हिन्दीभाषामें चक्रान्ती, उर्दूमें फितूरी, और अंग्रेजीमें “ प्रिटेन्डर ” (Pretander) शब्दके बदले रत्नसिंहको “ अपनृपति ” कहना ठीक होगा।

दूर होगए और आश्रय प्राप्त करनेके लिये राणाके पास आये ज़ालिमसिंहजी ज्ञानबुद्धि और कार्यकुशलताका परिचय पाकर राणाजीने आदरसहित उनको अपनी सरदारश्रेणीमें ग्रहण किया। तथा “ राजरण ” उपाधिके साथ छत्रखैरीकी भूमि सम्पत्ति दान कर दी। ज़ालिमसिंहके ही परामर्शसे महाराष्ट्रीसेनापति रघुपागेवाला और दौलामियानामक एक सुसलमान यह दोनों अपनी २ सेनाको साथ लेकर मेवाडमें आये। इस ओर राणाने प्राचीन पंचोलियोंको मंत्रीपदसे अलग करके उग्रजी महताके हाथमें राज्यका समस्त कारवार सौंपदिया। इस समय सं० १८२४ (सन् १७६८ ई०) में माधोजी सेंधिया उज्जैननगरीमें विराजमान था, उस सेंधियाकी सहायता पानेके लिये प्रतिद्वन्दी सर्दारगण उज्जयिनीमें पहुँचे। सबसे पहिले रत्नसिंह गया। प्रथमसे ही सेंधियाके साथ बातचीत करके उसने क्षिप्रा नदीके किनारे अपना डेरा डाला, इस कारण राणा उरसीका समस्त आडम्बर वृथा होगया।

अनन्तर माधोजी सेंधियाकी सहायता न पाकर उरसी राणा स्वयं ही अपनृपति सेनाको रोकनेके लिये आगे बढ़ा। शालुम्ब्राका सर्दार, शाहपुर और बुनेराके दोनों राजे और ज़ालिमसिंह तथा महाराष्ट्रीसेनानेभी राणाकी सेनाकी सर्दारी ली और सबही सहायताके लिये आगे बढ़े। इन सबहीने एक साथ मिलकर प्रचंड वेगसे माधोजी सेंधियाकी सेनापर आक्रमण किया। दोनों ओरसे घोर युद्ध होनेलगा। राणाकी सेना अदमनीय वीरताके साथ शत्रुओंकी सेनाको मथित और विन्नासित करतीहुई क्रमशः प्रचंड गिरितरंगिणीकी समान आगे बढ़ने लगी। सेंधिया और अपनृपतिपर उस सेनाका वेग न सहागया, तथा वह दोनों ही पराजित अपमानित और अत्यन्त हानिग्रस्त होकर उज्जयिनीके द्वारभागमें पलायन करगये। वहाँपर फिर नई सेना इकट्ठी की और अपने पहिले अपमानका बदला लेनेके लिये दुवारा राजपूतोंकी सेनापर आक्रमण किया। विजयी राजपूतोंने विजयके आनंदसे मतवाले होकर एकवार भी इस बातका विचार नहीं किया कि माधवजी सेंधिया सहजसे हमारा पीछा नहीं छोड़ेगा। इस कारण वह निश्चिन्त होकर शत्रुओंकी छावनीको लूटरेहेथे। एकदल एकदल ओरकी लूटमें मग्नथा, इसीसमयमें माधवजीने रणसिंहा बजवादिया। क्षणभरके लिये तो राजपूतगण विस्मित होगये और फिर तत्काल अपनी अवस्थाको समझ लिया, वह समझ गये कि शत्रुगण सहजसे पीछा नहीं छोड़ेंगे। अभी राणाजीकी सेना श्रेणीबद्ध होकर खड़ी भी नहीं हुईथी कि माधोजीने भयंकर

बलके साथ उनपर धावा करदिया । सेंधियाके भयंकर बलको न सहसकनेके कारण, शालुम्ब्रा, शाहपुर और बुनेराके सर्दार रणभूमिमें मारेगये और सहकारी दौलामिया, नरवरका पदच्युत राजाभान, और साद्रीका उत्तराधिकारी कल्याणराज यह तीनों घोररूपसे घायल हुए । जालिससिंह भी घायल हुए, इनका घोडा भी यहीं मरगयाथा, इस कारण रणभूमिसे भाग नहीं सके और शत्रुओंने उनको कैद करलिया । कैद करलेने पर भी उनसे कैदियोंकी समान व्यवहार नहीं किया । ज्यम्बकजी नामक एक सदाशय महाराष्ट्रीने उनको अतियत्न और सन्मानके साथ ग्रहण किया । ज्यम्बकजीका ही पुत्र प्रसिद्ध अम्बजी हुआ । पराजित और अपमानित राजपूतगण उदयपुरको भागआये ! इस ओर अपनृपतिके पक्षवाले उदयपुरपर चढ़ाई करने और रत्नसिंहको वहांके सिंहासनपर स्थापित करनेके लिये सेंधियाको उत्तेजित करनेलगे । विजयी महाराष्ट्रपतिने कुछ कालके पीछे विशाल सेनाको साथ ले गिरिमार्गके भीतर प्रवेश करके उदयपुरको घेर लिया । सहायता व द्रव्यादिके अभाव होनेसे राणाजी हताश हुए । जो कितने एक साहसी वीर अवलक उनकी ओर थे उनमेंसे अधिकांश क्षिप्रानदीके किनारे रणभूमिमें गिरगयेथे । अब इससमय राणाको कोई सहारा नहीं । महाराष्ट्रियोंके ग्राससे किसप्रकार उदयपुरकी रक्षाकरें केवल शालुम्ब्राके भीमसिंह उनकी ओर उपयुक्त सर्दार थे । नगररक्षाका भार इसही सर्दारको समर्पण कियागया । उज्जयिनीके युद्धमें जो शालुम्ब्रा सर्दार मारागया यह भीमसिंह उसका चचा और उत्तराधिकारी था । इससमय यही सरदार राणाजीके द्वारा सेनापति पदपर अभिषिक्त होकर वीरवर जयमलके वंशधर राठौर वीर विदनौरपतिके साथ इस संकट कालमें नगर और राजाकी रक्षा करनेके लिये भयंकर कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ । परन्तु केवल एक ही महापुरुषके कठोर उद्योग और उत्साहसे सबओरकी रक्षा हुई । उस महापुरुषका नाम अमरचंदवरवा था ।

अमरचंद वरवाका जन्म वैश्यकुलमें हुआथा । पहिले यह मेवाडका मंत्री था । इसकी समान चतुर और दक्षमंत्री संसारमें विरला ही था । स्वर्गीय राणाजीके समय मेवाडमें जो महा अनर्थ हुआथा, अमरचन्दवरवाके सिवाय उस अनर्थको रोकनेकी और किसीमें सामर्थ्य नहीं थी । वास्तवमें यह मंत्री मेवाडका स्तम्भस्वरूप था । इस समय राणा उरसीके समयमें अमरचंदका मंत्रीपद छीनलिया गया । जिसदिन इसका मंत्रीपद गया उसहीदिनसे मेवाडको उपद्र-

वोंने घेरलिया । सर्दारोंके साथ विवाद, महाराष्ट्रियोंका सत्ताना, इसके ऊपर राणा उरसीका तीव्र और रूढ़ आचरण; यह समस्त अनर्थ क्रमशः इकट्ठे होगये । इस समयमें अमरचंदने मंत्रीपदको पुनः पानेकी आशा सम्पूर्णतः त्याग दी थी । अमरचंदका स्वभाव प्रचंड और अरिसिंहकी समान अदमनीय था । वर्तमान समालोच्य समयतक दशवर्ष व्यतीत होगए कि अमरचंद अपने कार्यसे अलग होचुकेथे । इन दशवर्षके मध्यमें मेवाडराज्यमें बहुतसा फेर बदल होगया । जिन सर्दारोंने उरसी राणाके पक्षको छोडकर रत्नसिंहका पक्ष अवलम्बन किया, उनके स्थानमें वेतनभोगी सिंधीलोग नौकर रखे गये । इन सिंधीलोगोंने पूर्वोक्त सर्दारोंकी छूटी हुई भूमिपर अपना अधिकार करके राज्यमें मानो अप्रसन्नताका बीज बोदिया । इस बीजने मेवाडके समस्त विक्रम, तेज और बलका नाश करडाला। इस अप्रसन्नताकी सघन छाया इतनी दूरतक फैलगई थी, कि जिन सर्दारोंने रत्नसिंहका पक्ष अवलम्बन कियाथा, वह भी सबसे अलग हो अपने किलेका द्वार बन्दकरके गंभीरभावसे रहतेथे । इस भांति राणाकी आशा सबओरसे टूट-गईथी उनका पक्ष अत्यन्त दुर्बल होगयाथा। जिस समय मेवाडपर यह विपत्ति पड-रहीथी, उस समय परमेश्वरके द्वारा प्रेरित हो अमरचंद फिर भी कार्यक्षेत्रमें दिखाई दिये । उदयपुरके चारों ओर रक्षाके लिये खाई या परिखा कुछ भी न थी । कुछ-दूर दक्षिणमें एक लिंगगढ नामक एक ऊंचा शैलकूट था । यदि समझाजाय तो उदयपुरका यही प्रधान द्वार था । अतएव इसके चारों ओर परकोटा बनाने और तोपें लगानेसे उदयपुरकी रक्षाका होना विचारकर राणाजीने उक्त कार्यमें मन लगाया । एकलिंगगढ अत्यन्त दुरारोह था, यहाँकी ज़मीन बराबर नहीं थी, इसकारण राणाजीकी समस्त कौशल वृथा होगई एक समय राणाजी उसकी देखभाल करनेको स्वयं वहां गये कि वहांपर अचानक अमरचंदवरवासे उनका साक्षात् हुआ । अमरचंदकी अप्रसन्नता दूर करनेके लिये राणाजीने अपने अपराधको स्वीकार किया और मधुर वचन कहकर वार्त्तालाप करनेलगे । कुछ देरतक वार्त्तालाप होनेपर अरिसिंहने अमरचंदसे पूछा, “ आप कहसक्तेहैं कि इस कार्यको समाप्त करनेमें कितना रुपया और कितना समय लगेगा ? ” अमरचंदने गंभीरभावसे उत्तरदिया “ कुछ धान्य और कई दिन-का समय । ” तदुपरान्त राणाने अमरचंदसे इस कार्यके करनेको कहा; तब मंत्रीने संकोच छोडकर उत्तर दिया कि “ जितने दिनतक इस कार्यका भार मेरे हाथमें रहै, तबतक इसमें मेरी आज्ञा ही चलै, और किसीके हस्तक्षेपकी

आवश्यकता नहीं, यदि यह अधिकार मिले तो मैं इस कार्यको कर सकता हूँ ” राणाजी इस बात पर सम्मत हुए । अमरचंदने तत्काल जदूरोको बुलाकर एक मार्ग बनवाया और कुछदिनके बीचमें ही एकलिंगगढके शिखरसे तोप छोडकर राणाजीको अभिवादन किया ।

माधोजी सेंधियाने उत्तर, पूर्व और दक्षिणकी ओरसे उदयपुरको घेरलिया । केवल पश्चिमदिशा उसकी सेनासे छूटगई । उदयसागरके फैलेहुए जलने पश्चिमदिशाको बचालिया तथा ऊंचेरशिखर और वनके वृक्षोंने भी सेंधियाके इस कार्यमें बाधा दीथी । आवश्यकतानुसार नगरवासी इस पश्चिमदिशासे ही नगरके बाहर आते और उदयसागरके जलको नावपर बैठ पारकरके अपने प्राचीनमित्र भीलोंको भोजन पहुंचातेथे । मेवाडके दडेवडे सर्दार शत्रुओंसे मिलगए, इस समय सिंधीसेनाके सिवाय राणाजीकी सहायता करनेवाला दूसरा नहींथा । इस समय केवल इसही सेनाके ऊपर विश्वास और भरोसा था । परन्तु राणाजीकी अभाग्यतासे इस समय यह सेना भी बिगड़ खडी हुई और अपनी चढ़ीहुई वेतन पानेके लिये झगडा करनेपर उतारू हुई । इस मूर्ख सेनाको राज्यका यह महाअनर्थ देखकर भी किंचित् दया न आई । बातचीतके दावेको छोडकर सिन्धीलोगोंने राणाके शरीरपर हाथ लगाकर राज्यका घोर अपमान किया । एकदिन राणाजी महलको जारहेथे कि सिंधीलोगोंने उनके डुपट्टेको पकडकर खेंचा उनसे छुटकारा पानेके लिये राणाने बलसहित अपने डुपट्टेको खेंचा । डुपट्टा फटगया । उस फटेहुए डुपट्टेको लेकर राणाजी रणवासमें चलेगये । अपने तीक्ष्ण स्वभावके परिवर्तनमें अपमान सहनापडा । उनका संकट धीरे २ भारी होतागया । आशा भरोसा दूर हुआ । जिन सिंधीलोगोंको उन्होंने अपना सहारा समझाथा आज वह भी विद्रोही होगये । फिर अब इसका उपाय क्याहै ? चारों ओर विपत्तिकी भयंकर झुकुटी देखआई देनेलगी । रघुदेव नामक एक व्यक्ति राणाका धाईभाई (दूधभाई) था । वह झाला सर्दारका उत्तराधिकारी होकर मंजभवनके कार्यको समाप्त करताथा । इस महा संकटके समयमें उसने राणाको परामर्श दी कि “आप उदयसागरके पार होकर मंडलगढको चलेजाँय ।” कायरपनकी यह परामर्श देकर रघुदेवने अपनी अकर्मण्यताका पूरा प्रमाण दियाथा । परन्तु राणाने इस परामर्शको न मानकर शालुम्ब्रा सर्दारसे पूछा; उसने शोकित होकर कहा कि “मैं इसका निश्चय नहीं करसकता कि इस संकटके समय कौनसा उपाय करनेसे मंगल होगा आप अमरचन्दको बुलावें । ”

अमरचंद बुलाया गया। तथा संकटके रोकनेका समस्त भार उनको दिया गया। कार्य लेनेके समय अमरचंदने कहा “इस भारीकार्यके ग्रहण करनेकी मुझको कुछ भी सामर्थ्य नहीं है। न इसकी मुझे इच्छा है। महाराज भलीभांतिसे जानतेहैं कि इससे पहिले मेवाडपर कितने कष्ट पड़ चुके हैं तथा दासने कैसे २ उपायोंसे उन अनर्थोंको दूर कियाथा। इस समय उनसे भी अधिक अनर्थ आपडेहैं; इस समय भी उन्हीं उपायोंके द्वारा मुझको यह अनर्थ दूर करने पड़ेंगे।” क्षणभरतक ठहरकर फिर अमरचंदने कहा; “मेरे स्वभावमें बड़ा भारी दोष है कि जिसको आप जानते हैं, वह यह है कि मैं किसीकी आज्ञामें नहीं रहना चाहता। मैं जहां रहताहूं सर्व सर्वा होकर रहताहूं, जो कुछ करता हूं, उसपर किसीकी बुद्धि नहीं चलने देता;—किसी गुप्तमंत्री या परामर्शदाताकी सहायताको मैं ग्रहण नहीं करता आपका धनागार रीतहै, सेना विद्रोही होरहीहै; भोजनकी समस्त सामग्री भी खर्च हो चुकीहै;—यदि ऐसी अवस्थामें आप मेरे ऊपर निर्भर रहनेकी इच्छा करें; तो शपथ करके कहिये कि जिस बातकी मैं आज्ञा करूं वह न्यायहो, अन्यायहो, अच्छीहो, बुरीहो, परन्तु कोई भी उसके, विरुद्ध कार्य न करेगा; यदि ऐसा होजाय तो जहांतक मनुष्यकी सामर्थ्य है वहांतक मैं समस्त कार्योंको सिद्ध करूंगा। परन्तु स्मरण रखियेगा कि “न्यायपरायण” अमर इस समय अन्याय परायण होगा और अपने पूर्व चरित्रके विपरीत कार्य करेगा।” राणाने भगवान् एकलिंगके नामकी सौगन्ध लेकर कहा कि “आपकी समस्त वासना पूर्ण होगी, आप जो आज्ञा देंगे, उसका पालन किया जायगा। आप जो कुछ चाहेंगे वह दिया जायगा। यहांतक कि यदि आप रानीका रत्नहार और नथ भी मांगें तो उसके देनेमें भी मुझे आपत्ति न होगी।” राणाके धाईभाई रघुदेवकी कायरतासूचक परामर्शकों सुनकर अमरचंदको अत्यन्त क्रोध हुआथा। इस समय उसको सामने ही बैठा हुआ देखकर वह क्रोध दूना बढ़ा। इसही कारण रघुदेवका तिरस्कार करके कहा कि तुम्हारी जैसी अवस्था और विद्या बुद्धि है वैसेही परामर्श तुमने राणाको दिया। यदि मानलियाजाय कि राणा उदयपुरसे मंडलगढको भागजाते, तो वहां पर कौन रक्षाकरता ? तथा तुमने ऐसा कौनसा उपाय सोच स्वखाहै, कि जिसके द्वारा तुम अपनी रक्षा करलोगे ? इस प्रकारका कार्य तुम्हारे ही योग्य है; राजकार्यका विचार करनेकी अपेक्षा यदि इससमय अपनी पूर्ववृत्तिका अवलम्बन करके भैंस चराओ और दुग्ध बेचते फिरो तो बहुत अच्छा हो, कारण कि इस वृत्तिका आश्रय

लेना तुम्हारे कुलका धर्म है और तुम्हारी बुद्धि भी इसके योग्य है। तुम तो हो ही क्या वस्तु, राजकार्य तो अबतक तुम्हारे राजाको भी सीखने पड़ेंगे। अमरकी इस तेजस्विता और इस निडर आचरणसे राणा तथा समस्त सदाँरोंने शिर झुकालिया। पीछे प्राङ्गणमें आयकर तेजस्वी अमरचंदने मिथी सेनाको गंभीर वाणीसे अपने पास लाकर कहा, “आओ! हमारे पीछे आओ, मैं तुम्हारी चढ़ी हुई समस्त वेतन दिये देता हूँ परन्तु निश्चय जानलेना कि यदि तुम सफल कार्य न होगे तो समस्त दोष मेरे ही कंधे पर पड़ेगा।” सेनाके जिन सिपाहियोंने पहिले राणाका अपमान किया था इस समय वे चुपचाप होकर मंत्रीके पीछे चले गये। अमरचंदने उनके चढ़े हुए समस्त वेतनका हिसाब करके दूसरे दिन भुगतान करना चाहा और प्रतिहारीसे धनागारकी ताली मांगी। चाबी न देकर प्रतिहारी दूर भाग गया, तदुपरान्त अमरसिंहने कोषागारके किवाड़ तुड़वाकर वहां पर जो कुछ धन रत्न या सोना चांदी था उन सबके रुपये करलिये और मणिरत्नादिको गिरवी रख दिया इससे जो धन इकट्ठा हुआ उससे सेनाका वेतन चुका दिया। बारूद, गोला, गोली आदिकी खरीद हुई अस्त्र शस्त्र भी मोल लिये गये, रसदका प्रबन्ध किया गया। इस प्रकारसे जो नया बल संग्रहीत हुआ उसकी सहायतासे अमरसिंहने शत्रुओंको दबाया और छः मास तक और भी उनके आक्रमणको रोक दिया।

नकली राणा रत्नसिंहने राणा उरसीकी अधिकांश “खास जमीन” हस्तगत करके उदयपुरकी तलैटीतक अपनी प्रभुताका विस्तार किया। परन्तु संधियाको उतना न दे सकनेके कारण कि—जितनेके देनेकी प्रतिज्ञा की थी—उस पर महाविपत्ति आपड़ी चतुर महाराष्ट्रीय लोग समयको अमूल्य रत्न समझते हैं; उन्होंने समयको वृथा ही जाता हुआ देखकर अमरसिंहके साथ सन्धि स्थापन करनेकी वासना प्रगट की और कहलाभेजा कि यदि सत्तर लाख (७००००००) रुपये दो तो हम रत्नसिंहको छोड़कर चले जायेंगे। इस बातको स्वीकार करके अमरचंदने सन्धिकी तैयारी की। सन्धिपत्र लिखा गया जब दोनों ओरके हस्ताक्षर उसपर होगये तो संधियाने सुना कि यदि शीघ्रही कोई आक्रमण किया जायगा तो विशेष फल प्राप्त होनेकी संभावना है। यह समाचार सुनते ही संधियाकी दुराकांक्षा दूनी बढ़ गई। उसने तत्काल अमरचंदसे कहलाभेजा कि बीस लाख (२००००००) रुपये और दो तो संधि होगी, नहीं तो नहीं।” यह बात सुनते ही अमरचंदको अत्यन्त

क्रोध हुआ और अनेक प्रकारके आस्फालन करके सन्धिपत्रके टुकड़े २ करदिये और वह टुकड़े विश्वासघातक महाराष्ट्रीयके पास भेजदिये विपत्तिके बढ़नेके साथ २ ही अमरचंदका साहस और तेज बढ़ने लगा । इससे पहिले जो अत्यन्त ही निराश होगये थे अमरचंदने उनके हृदयमें भी अपने उत्साहके द्वारा अत्यन्त उत्साह भरदिया । सिन्धी सेना और विश्वासी राजपूत सर्दार तथा और समस्त सेनाको संग्रह करके उन्होंने सब बातें समझाई । अमरचंद एक सद्गुण थे । जो वाणी मनुष्यके मर्मको भी स्पर्श करदेती है; अमरचंदमें उस वाणीका भलीभांतिसे विकास था । अतएव असीम उत्साह और उद्योधनके समय उनकी उस व्याख्यानशक्तिने प्रचंड वेगसे उनके सिपाही और सामन्तोंके हृदयमें प्रवेश करके सबको मतवाला बनादिया । यह वाणी इस प्रकारकी तीव्रतासे निकलतीथी कि जैसी ज्वालामुखी पर्वतोंसे धातु उपधातु निकलतीहों । सर्दारोंकी उत्साहाग्निमें योग्य ईंधन डालनेके लिये चतुर मंत्रीने उनको अनेक प्रकारके रत्नजटित गहने और बड़े मोलके पदार्थ उपहारमें दिये ।

राजकाषमें यह समस्त पदार्थ वृथा ही पड़े हुए थे । राजनीति विशारद अमरचंदने उन सबको मुकार्यमें लगाकर स्पष्ट ही अपनी कार्यपरायणताका परिचय दिया । नगरके या निकटके गांवगोठोंमें गृहस्थ और व्यापारियोंके यहां जितना धान्य था, उस सबको मोल लेकर हाट बाजारमें बेचनेके लिये भिजवाया गया । चारों ओर डोंडी पिटवादी गई कि जो कोई वीर प्रार्थना करेगा उसको छः मासके भोजनयोग्य धान्य मिलजायगा । इससे पहिले रुपयेका आध सेर नाज विकरहा था, इस समय अमरचंद एकसाथ इतने धान्यको कहाँसे ले आया । इस बातका विचार करके शत्रुगण भी विस्मितहुए । सिन्धी सेनाके असन्तोषका समस्त कारण दूरहोगया । इस समय वह समस्त वीर अमरचंदकी तेजस्वितासे उत्साहित होकर प्रगट सभास्थानमें राणाजीको अपना विश्वास दिखानेके लिये एकसाथ दरवारमें गये । राजसभामें जाते ही उनके सरदार आदिलवेगने * नम्रतायुक्त गंभीरभावसे कहा । “ महाराज ! हमलोगोंने बहुत दिनसे आपका नम्रक खायाहै व आपके पाक खानदानसे अब तक बहुतसे सलूक हमलोगोंपर कियेगएहैं; इस वक्त हम सब कसम लेकर कहते हैं कि आपका साथ नहीं छोड़ेंगे । आज उदयपुर ही हमारी कदीम जगह है, उदयपुरके साथ ही अपनी जान देंगे । अब हमको तनख्वा-

* इसके बेटे मिर्जा अब्दुलरहीम वेगको राणाजीने एक जागीर दीथी ।

हकी ज़रूरत नहीं है; जब खानेपीनेका सामान खत्म होजायगा, उस वक्त चोर मरहटोंकी फ़ौज पर टूटकर शमशेर हाथमें ले मयदाने जंगमें जानको कुरवान करेंगे । ” तेजस्वी अमरचंदने जो तेजस्विता सिन्धीसेनाके हृदयमें ढाल दीथी, आज उसका प्रमाण स्पष्ट दिखाई दिया । सिन्धीलोगोंकी यह कसम सुनकर राणाके नेत्रोंसे आंसू निकल आये ।—आज पत्थर पसीजगया—वज्रमें शीतलताका संचार हुआ । राजाको विह्वल निहारकर सिन्धीलोग राजपूतोंके साथ मिलकर जयनाद करनेलगे । राजपूतोंकी वीरताका यह प्रचंड विस्फुरण शीघ्र ही दूरतक प्रवाहित होगया,—उनका प्रचंड सिंहनाद भयंकर शब्दसे प्रतिध्वनित होकर दुराचारी संधियाके कानमें पडा । इस ओरसे उत्साहित राजपूतगण संधियाकी उस सेनापर—जो आगे बढ़आई थी तोपोंकी मार करने लगे । राजपूतोंकी विक्रमाग्निको अचानक प्रचंडहुआ देखकर संधियाके मनमें अनेक प्रकारके सन्देह होनेलगे । इस ही कारणसे उसने फिर सन्धिकी प्रार्थना की । इस वार अमरसिंहको जयका अवसर प्राप्त हुआ है उन्होंने चतुर महाराष्ट्रीयसे कहलाभेजा कि “ छः मास अवरोध सहनेसे जो खर्च हुआहै, वह पहिली निश्चित रकमसे काटलिया जायगा यदि इसमें आपकी सम्मति हो तो सन्धि स्वीकार है, नहीं तो युद्धके लिये तइयार होजाइये । ” आज राजपूतके जालमें चतुर संधियाको फसना ही पडा । अनन्तर साढे तिरसठ लाख (६३५००००) रुपये लेकर उसको अमरचंदके साथ सन्धि करनीपडी ।

मणि, रत्न, सोना, चांदी चौर सरदारोंको नई २ जागीरें दे राणाने ३३०००००रुपये इकट्ठाकरके संधियाको दिया, शेष रुपया भुगतानके लिये स्थावर सम्पत्तिको गिरवी रखने लगे । इसके लिये जावद, जीरण, नीमच और मोरवण इत्यादि गांवोंका स्वतंत्र बन्दोबस्त हुआ । यहां पर यह नियम कियागया कि इन गांवोंका कर दोनों राज्योंके कर्मचारी मिलकर वसूल करेंगे, और वर्षमें एक बार हिसाब साफ होजाया करैगा । सन्धिवन्धन समाप्त होगया । संवत् १८२५ से लेकर संवत् १८३१ तक इस सन्धिपत्रके नियमानुसार कार्य हुआ, परन्तु पिछले वर्षमें संधियाने राणाजीके कर्मचारियोंको वहांसे दूरकर दिया और किसी प्रकारका प्रबन्ध करनेको राजी न हुआ । अतएव यह कई परगने मेवाडके अधिकारसे निकलगये संवत् १८५१ में विधाताकी लिखी कर्मरेखके अनुसार संधियाका भाग्यगगन काले २ वादलोंसे ढकगया । इस अवसरमें राणाने उन छूटेहुए परगनोंपर अपना अधिकार करलिया, परन्तु यह अधिकार

कुछ ही दिनके लिये था । पुनर्वार वह सब परगने हाथसे निकलगए । संवत् १८३१ में महाराष्ट्र समितिके प्रचंड सर्दारोंने पेशवाकी अधीनतारूपी जंजीर-को छिन्न भिन्न करना चाहा फिर स्वतंत्र होनेकी इच्छा करने लगे । सेंधियाने अपने प्रतिष्ठित राज्यके लिये पूर्वोक्त समस्त जनपदोंको रखकर केवल मोरवण गांव हुलकरको देदिया । मेवाडवालोंका ऐसा दुर्भाग्य था कि राज्यक्षयके अल्पकाल पीछेही नीमवहेडानामक जनपद भी राणाके हाथसे जातारहा । दुष्ट हुलकरने सेंधियासे मोरवण पाय एकवर्षके पश्चात् ही राणासे इस नीमवहेडा नामक परगनेको मांगा और भय दिखायकर कहलामेजा कि यदि यह परगना न दोगे तो मैं भी तैसाही व्यवहार तुम्हारे साथ करूंगा जैसा सेंधियाने कियाथा । राणाके दुर्भाग्यका वृत्तान्त कहांतक वर्णन कियाजाय; यदि दुर्भाग्यकी करतूत न होती तो उनको वीरश्रेष्ठ महाराज बाप्पारावलके वंशमें जन्म लेकर आज चोर महाराष्ट्रियोंके विकट झुकुटि विलाससे भयकेमारे किस कारणसे कम्पायमान होना पडता ? यदि ऐसा न होता तो आज प्रतापसिंहके वंशधरको हुलकरकी अयोग्य और न्यायविरुद्ध आज्ञा क्यों पालन करनी पडती ?

इस प्रकार संवत् १८२६ में दुर्द्धर्ष सेंधियाके आक्रमणसे उदयपुरको छुटकारा मिला । पहिले ही कहायेहैं कि मेवाडराज्यकी अन्तर्गत बहुतसी उपजाऊ, भूमि राणाजीके हाथसे निकलगई थी परन्तु यह अवश्य याद रखना चाहिये कि यह समस्त जनपद न तो विकेहीथे, न सदाके लिये राणाजीने इनका स्वत्व ही छोडाथा; केवल इनको गिरवी रक्खाथा * किन्तु इससे भी मेवाडकी अत्यन्त हानि हुई थी, इस हानिसे ही मेवाडका पतन शीघ्रतासे आरंभ होगया। यद्यपि मेवाडकी शोचनीय दशा होजानेसे राणाजी उन परगनोंको अपने अधिकारमें फिर नहीं करसके; तथापि मेवाडवालोंने इन स्थानोंका स्वत्व कभी नहीं छोडाथा । १० जनवरी सन् १८१७ ई० में राणा भीमसिंहके साथ जो सन्धि गर्वनमेंटकी हुई थी, उसमें भी राणाके दूतोंने इस प्रस्तावको उठाया परन्तु दुःखकी बातहै कि वृटिशसिंहने इसविषयमें कोई भी फैसला नहीं किया । इसका वृत्तान्त भी उचितस्थानमें लिखागयाहै ।

केवल छोटी मिलौनी (गंगापुर) और इसकी लगी हुई भूमि अलग होगईथी । इसका कारण यह था कि सेंधियाकी गंगाबाई नामक रानीको यह स्थान दियागयाथा ।

अमरचंदके प्रचंड बलको न सहसकनेके कारण जिसदिन चतुर महाराष्ट्री सेनासहित उदयपुरको छोडकर चलागया, रत्नसिंह अब गेकी आशालता उस ही दिन निर्मूल होगई। रत्नसिंहने बहुतसे दुर्ग अपने अधिकारमें करलियेथे कि जिससे वह उदयपुरकी तलैटीमें दृढतासे जमगयाथा। परन्तु उसके भाग्यने साथ न दिया। पराई सहायता और अनुकूलताके प्रभावसे जो उसने कई एक नगर, ग्राम और पल्लियोंको अपने अधिकारमें कियाथा, धीरे२ वह सबही स्थान उसके हाथसे निकल गये। राजनगर, रायपुर और अन्तला इनपर फिर उदयपुरवालोंका अधिकार होगया। रत्नसिंहको छोडकर अनेक सर्दार उदयपुरको चलेआये, राणाजीने अनुग्रह करके उनको उनकी भूमिवृत्ति भी देदी। रत्नसिंहको फिर कोई भी आशा न रही। केवल देप्रामंत्री और मेवाडके सोलह उत्तम सर्दारोंमें जो कईएक उसकी ओर रहे उनमें देवगढ, भिण्डी और अमैताके तीन सर्दारोंके सिवाय और सबही उसको छोडगये। यह झगडे शीघ्र नहीं दवेथे। फिर संवत् १८३१ में उक्त तीन सर्दार भी मेवाडके मुकुट स्वरूप उर्वर गदवाड राज्यको जलांजलि देकर उदयपुरके राणाकी ओर आगये। गदवाडदेश मेवाडके और सब देशोंसे अधिक उपजाऊ है। इसके सीमाबन्धनपर जो सामन्तलोग रहतेहैं। और २ सामन्तोंकी अपेक्षा वह लोग मेवाडपर अत्यन्त अनुराग करतेहैं। राणावत, राठौर, तथा सोलङ्गीने बहुत दिनतक उत्तम राजभक्तिका परिचय देकर अपने विश्वासपात्र होनेका प्रमाण दिया गदवाडदेशकी अधिकांश जमीन सामन्तप्रथाके अनुसार इन सर्दारोंके ही पास रहतीथी। यह सर्दारलोग (३०००) तीनहजार घोडे और बहुतसी पदातिसेनाको लेकर निश्चिन्ततासे अपने २ भूमिभागको भोगतेथे। जोधपुरके बसनेसे पहिले सन्मानसूचक राणा उपाधिके साथ उक्त गदवाड (गोद्वार) जनपद मुन्दरके पुरीहार राजासे पाया गयाथा। गठौर वीर जोधके समयमें शिशोदीयश्री चंडके प्राणप्यारे कुमारके हृदयरुधिरसे कैसे इसदेशकी सीमा बांधीगईथी, यह पहिले अनेकवार वर्णन किया जाचुका है। जब नकली राजा रत्नसिंह कमलमेरमें विराजमान हुआ तब राणा अरिसिंह (उरसी) ने जोधपुरके राजा विजयसिंहको गदवाडका शासन भार देदिया। राणाजीके ऐसा करनेका एक विशेष कारण था। कमलमेर गदवाडके निकट ही बसाहुआ है, इसकारण राणाको संदेह हुआ था कि रत्नसिंह सुअवसर पाकर इसको छीनलेगा, इसही शंकाके कारण यह जनपद विजयसिंहको दिया गया। इसके सम्बन्धमें जो चुक्तिपत्र राणा और विजयसिंहके

बीचमें हुआ वह आजतक वर्त्तमान है। उस इकरारनामके अनुसार मारवाडके राजकुमार राणाकी सहायता करनेके लिये उसदेशकी आमदनीसे तीन हजार सिपाहियोंका भरणपोषण करनेके लिये नियत किये गएथे। यदि दुष्टके दुराचारसे राणा उरसी अकालमें इसलोकसे विदा न होजाते तो निश्चयही इसगढ़वाड राज्यका उद्धार होजाता परन्तु ऐसा होनेसे ही समझा गया कि उनका भाग्य अत्यन्त मन्द था !

वासन्तिक अहेरिया उत्सव राजपूतोंका एक सनातन उत्सव है। परन्तु इस उत्सवके समयपर बहुधा मेवाड़में बहुतसे अनर्थ हुए हैं। मेवाड़के तीन राणा इससे पहिले अहेरियाउत्सवके समय अपने प्राण दे चुके थे। इसही कारणसे किसी राजपूतवालाने सती होनेके समय जलतीहुई चितापर चढ़कर कहाथा कि “यदि अहेरिया मृगयाके समय राणा और राव मिलकर चलेंगे तो दोनोंमेंसे एकको अवश्य ही अपना प्राण देनाहोगा।” राणा अरिसिंह इस पतिव्रताकी पवित्र भविष्यद्वाणीका निरादर करके शिकार खेलने चलेथे। जब शिकार खेलकर राणाजी अपने घरको लौटने लगे कि इतनेहीमें हाडराजकुमार अजितने अचानक अपने घोड़ेको राणाकी ओर फेर कर उनके भाला मारा। राणाने बाण विद्ध केशरीकी समान अजितकी ओर फिरकर देखा और कठोर शब्दोंसे चिल्लाकर कहा कि “रे हाड ! तूने यह क्या किया ?” राणाजी अचेतन होकर घोड़ेसे गिराही चाहतेथे, कि तत्काल इन्दुगढ़के पारखंडी सर्दारने अपनी तलवारसे उनका शिर काट डाला ! इस कार्यसे अजितके पिता अपने पुत्रपर इतने अप्रसन्न हुए, फिर उसदिनसे उन्होंने अपने पापीपुत्रका मुख नहीं देखा। कहतेहैं कि समस्त हाडवीरगण अजितपर अप्रसन्न हुएथे। इस भयंकर वधके समय एक रक्षकके अतिरिक्त और कोई भी राणाके साथ नहींथा। राणाजीके सर्दार और सामन्तलोग इस समाचारको सुनतेही अपनेरे डेरे और अपनी समस्त सामग्रीको छोड़कर भयभीतकी समान चारों ओरको भागे।

कहतेहैं कि वूंदीराजकुमारने मेवाड़के सर्दारोंके द्वारा उकसाए जानेपर ही यह विश्वासघात कियाथा। इसवातका प्रमाण हम पहिले कईबार देआयेहैं कि सर्दारगण राणा अरिसिंहसे किंचित् भी स्नेह नहीं करतेथे। राणाजी इसवातको भलीभांतिसे जानते और इसका उपाय करनेके लिये उचित अवसरकी प्रतीक्षा किया करतेथे। यहांपर एक उदाहरण लिखनेसे ही इसवातका पक्का प्रमाण मिलजायगा जिस शालुम्बा सर्दारके पिताने राणाजीके लिये उज्जैनके संग्राममें अपने

प्राण देदियेये; राणाने सन्देह करके एकसमय उसको अपने पास बुलाया और बिदासूचक पान हाथमें देकर कहा कि “तुम मेरे राज्यसे बाहर चलेजाओ।” शालुम्त्रासर्दारके ऊपर मानो वज्र टूटपडा। राणाकी यह अधानक अप्रसन्नता और इस कठोर आज्ञाके कारणको अवगत होनेके लिये सर्दारने विनयपूर्वक उनसे क्षमा मांगी। राणाजीको कुछ भी दया न आई। वरन उन्होंने अधिक कठोर स्वरसे चन्दावतसर्दारसे कहा कि “यदि तुम मेरी आज्ञाका पालन न करोगे तो अभी तुम्हारा शिर काटडालूंगा।” चन्दावतसर्दारने निरुपाय होकर क्रोधित हुए राणाकी आज्ञाका पालन किया, जानेके समय वज्रगंभीर कंठसे कहता गया कि “आपकी आज्ञाका पालन करताहूँ, परन्तु इससे आपको और आपके परिवारका विशेष हानि पहुँचैगी।” अवमानित चन्दावत वीरका दियाहुआ शाप शीघ्रही फलवान् हुआ। परन्तु राणाके वधमें एक और कारण भी मुनाजाताहै। कहतेहैं कि मेवाडके सीमाप्रान्तमें विलैतानामक एक साधारण गांवहै। मेवाडके अन्तर्गत हुए इस ग्रामपर बूंदीके राजाने बलपूर्वक अधिकार करलिया। इसहीसे झगडेकी जड़ जमी। अतएव ऊपर कहेहुए इन दो कारणोंमेंसे एक अवश्य ही इस वधलीलासे मिला होगा। परन्तु बूंदीके दुष्ट राजकुमारने राणाको विश्वासघातसे मारकर कायरपन और धूर्तपनका उत्तम नमूना दिखादिया।

इस वधके समय समस्त सर्दार कायरपनके कारण राणाके शरीरको छोडकर चलेगये; केवल राणाकी एक उपपत्नी वहाँपर रही, इस उपपत्नीने ही क्रिया कर्म किये; श्रेष्ठ चन्दन मँगाकर उसने एक बडी चिताको बनानेकी आज्ञादी। शीघ्रही चिता बनी। बहुतसा चन्दन, घी, तिलसट, राल और फूलोंके हार इत्यादि सब सामग्री इकट्ठी हुई। राणाका मृतक देह गोदमें लेकर वह उपपत्नी चितापर बैठी सामने ही बटका एक बडा वृक्ष था; उसको साक्षी मानकर उस मरनेको तइयार हुई स्त्रीने पतिके मारनेवालेको यह कठोर शाप दिया कि;—“हे वनस्पति! तुम साक्षीहो; यदि स्वार्थके लिये विश्वासघात करके मेरे प्राणपतिको किसीने वध कियाहै, तो निश्चय जानो कि दो महीनेमें उस पाखण्डीके सब अंग गलजां-यगे;—संसारमें वह विश्वासघातक और राजघातक लंगोंका प्रकाशित उदाहरण स्थापन करेगा। किन्तु यदि प्राचीन वादविवाद अथवा पहिले किसी अपका-रका बदला लेनेके लिये यह कार्य कियाहो, तो कुछ भी न होगा। देखो तुम साक्षी रहियो! यदि मैं सतीहूँ, यदि महाराज अरिसिंहके अतिरिक्त और किसी-

को हृदयमें स्थान न दियाहो, तो मेरा यह वचन अवश्य ही फलीभूत होगा ।” सतीका वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि उस वटवृक्षकी एक बड़ी शाखा सहसा टूटकर गिरगई; वैसेही चिता भी प्रचंड होकर धुधकारने लगी । उस वीरवालाने अरिसिंहके मृतक देहको गोदमें लेकर चिताकी अग्निमें अपने शरीरको प्रसन्नतासे होम दिया ।

राजा अरिसिंह (उरसी) दो पुत्र छोड़कर परलोकवासी हुएथे । उनमें पहिलेका नाम हमीर और दूसरेका भीमसिंह था । संवत् १८२८ (सन् १७७२ई०) में वीर हमीर मेवाडके गौरवहीन सिंहासनपर बैठा । यद्यपि यह वीर गिहौटकुलके एक पवित्र नामको धारण करके संसाररूपी रंगभूमिमें अवतीर्ण हुआ, परन्तु मेवाडके अभाग्यसे इस वीरके द्वारा उस पवित्रनामकी किंचित् भी सार्थकता न हुई । सिंहासनपर बैठनेके समय हमीर वारहवर्षका था, इस कारण राजकार्यको माता ही सम्हालतीथी, आज मेवाडके समस्त अनर्थ एक मूर्ति बनाकर प्रगट होगये । एक तो मेवाडकी दशा वैसेही दीन थी, फिर महाराष्ट्रियोंका सताना, बालकका राज्य और स्त्रीका राज्यशासन—उसपर तुरा यह कि उस स्त्रीकी अभिलाषा भी अत्यन्त बढीथी अतएव आज कविवर चंदके कहे अनुसार मेवाडका सर्वनाश होना अनिवार्य है । इसही समयमें आपसका झगडा उत्पन्न होगया कि जिसने अनर्थके ऊपर अनर्थ किया । चन्दावत और शक्तावतोंमें सदाका विरोध था, आज इस विपत्तिके समयमें अपनीर प्रधानता प्राप्त करनेके कारण दोनोंने प्रतिपक्षीगणोंके रुधिर बहानेका विचार करलिया। शक्तावत् सरदारने राजभाताकी नीतिका अवलम्बन किया । इस ओर अपमानित शालुस्त्रासरदार अरिसिंहके कियेहुए अपमानका बदला लेनेके लिये स्वर्गीय राणाकी विधवा रानीके विरुद्ध कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ । इस भयंकर जातिवैरसे जो भयंकर अग्नि उत्पन्न हुई उससे सारी मेवाडभूमि श्मशान बनगई, अल्पदिनमें ही समस्त राज अनाथ होगया । अवसर पाकर चोरचकार तक भी मेवाडके धनको विना रोक टोकके लूटने खसोटने लगे । मेवाडके दान किसानोंपर घोर अत्याचार होने लगा । आज मेवाड अत्यन्त शोचनीय दशाको पहुंचगया । मार्ग, घाट, भयदान, समस्त ही मनुष्योंके रुधिरसे गीले होगए । राजस्थानका नन्दनकाननकी समान मेवाड आज शोकोदीपक चिताभस्ममय श्मशानकी मूर्ति बनवैठा ।

तेजस्वी अमरचंदके उत्साह और तेजसे उत्साहित होकर जिन सिन्धीलोगोंने इससे पहिले विशेष राजभक्तिका परिचय दिया था, आज राणा अरिसिंहकी

मृत्युके होते ही उन्होंने अपनी मूर्ति धारण की और बलपूर्वक राजधानीपर अधिकार करके अपनी चढ़ी हुई वेतनको लेनेके लिये शालुम्ब्रासरदारको अनेक प्रकारके कष्ट देनलगे। राजधानीकी रक्षाका भार शालुम्ब्रासरदारहीके ऊपर था। इस सरदारका अपनी वेतन देनेमें अपारग जाकनर सिन्धीसेना उसको तप्तलौह* पर बिठलानेकी तइयारियें कर रही थीं; इसही समय अमरचन्द बूंदीसे आया। पापिष्ठ सिन्धीलोगोंने अमरचन्दको देखते ही शालुम्ब्रासरदारको छोड़ दिया मंत्री अमरचन्दने शत्रुओंके आक्रमणसे राजकुमारके सत्यको रक्षा करनेकी दृढप्रतिज्ञा करली। संसारके चरित्रको अमरचंद भलीभांतिसे जानतेथे, उनको ज्ञातथा कि मंत्री-पदपर बहुतसे आदमियोंका दांतहै तथा सुझसे बहुतसे आदमी डाह करतेहैं, राजकुमारकी रक्षाका भार लेनेसे बहुतसे आदमी इसमें भी मीनमेख लगावेंगे; अतएव ऐसा करना उचित है कि जिसमें किसी मनुष्यको भी कुछ कहने सुननेका अवसर न मिले। इसही कारणसे मंत्री अमरचंदने अपनी सम्पत्तिका एक सूचीपत्र बनाया और वह समस्त सम्पत्ति राजमाताके निकट भेज दी। सुवर्ण, मोती, मणि, रत्न चांदीके पात्रादि यहांतक कि तोषेखानेके समस्त वस्त्र भी भिन्न २ पात्रमें राजमाताके निकट भेजे गये। अमरचंदका यह उदार अनुष्ठान देखकर सबहीको आश्चर्य हुआ, तथा माताका मन मंत्रीकी ओरसे साफ होगया। राजमाताने वह सब सम्पत्ति लौटानेके लिये अमरचंदसे वारम्बर अनुरोध किया, परन्तु दृढप्रतिज्ञा अमरचंदने उनका लौटालेना अस्वीकार किया। परन्तु राजमाताके कहनेसे केवल उन वस्त्रोंको लौटालिया कि जिनका वह व्यवहार कर चुकेथे।

राजमाताकी दुराकांक्षा और अहंता दिन २ बढ़नेलगी। रानी बुद्धिमानथी परन्तु शोकसे लिखनापडताहै कि एक दुरी चालचलनकी स्त्रीने उसके ऊपर सबभांतिसे अपना प्रभाव जमा लिया था। जो कुछ वह कहती, राजमाताको वही करना पडता था, बिना उस सहेलीकी परामर्श लियेहुए एक चरण भी नहीं धरती थी! इस सहेलीकी बुद्धिवृत्तिको एक साधारण युवक कर्मचारी चलाया करता था। अतएव यह कहना कुछ अनुचित न होगा कि परीक्षभावसे वह युवा ही राजमाताका नियन्ता था। वह अपने घरमें बैठकर जो चक्र चलाता, उसके अनुसारही

* अपराधियोंको दंड देनेके लिये राजपूतगण एकप्रकारका लौहपात्र गरम करके उसके ऊपर दंडित मनुष्यको बिठलाया करतेथे।

हमीरकी माताके समस्त कार्य हुआ करतेथे। परन्तु वह कर्मचारी बहुतदिनतक जीवित नहीं रहसका। इस प्रकार उस पाखंडीके द्वारा चलायमान होकर राजमाता प्रत्येक कार्यमें अमरचंदकी विरुद्धता करने लगी। वह क्षणभरके लिये भी इस बातका विचार नहीं करती थी कि अमरचंद मेरे पुत्रकी रक्षा करनेको ही यह सब कार्य करताहै। वास्तवमें उसकी दुर्बुद्धि यहांतक बढ़ी कि वह चन्दावतोंकी अनुकूलता ग्रहण करके अमरचंदके समस्त कार्योंका ही प्रतिवाद किया करती थी। कर्त्तव्य परायण अमर इससे किंचित् भी विचलित नहीं होताथा। वह अपनी सिंधी सेनाकी सहायतासे अपने पदपर अचल और अटल रहे। उन्होंने महाराष्ट्रियोंको नगरमें प्रवेशकरनेसे रोकदिया और राजकीय भूमिकी भलीभांतिसे रक्षाकी। परन्तु उनका शरीर भी तो रक्त सांगहीका बनाहुआ था; क्रूर लोगोंके विद्वेषको इकला आदमी कब तक सँभाल सकता है? जिनके लिये उन्होंने सर्वस्वका त्याग करदिया वही लोग अंतमें कृतज्ञताको भूलकर परग २ पर अमरचंदका अपमान करनेलगे। इस बातसे ऐसा कौन मनुष्य है जो स्थिर रहसकता है? अमर स्वभावसे ही तेजस्वी थे; उनसे थोडा सा अपमान भी नहीं सहाजाता था। परन्तु मंत्रीपद पर आरूढ होनेके समयसे उन्होंने बहुतसे दुराचारियोंके वागवाण और अपमान सहे। केवल राजकुमार हमीरका स्वार्थ रक्षित रखनेके लिये उन्होंने यह वागवाण सहे थे। परन्तु आज उस हमीरकी माताको ही अपना शत्रु बनाहुआ देखकर रोष, अभिमान और घृणाने अमरचंदको उत्तेजित करदिया। तथापि कर्त्तव्यपरायण अमरने कर्त्तव्यको हाथसे नहीं जाने दिया। एक समय मंत्री अपने कार्यालयमें बैठेहुए थे कि दुष्ट रामप्यारी वहां आई और राजमाताका नाम लेकर किसी कार्यके सम्बन्धमें अमरचंदका तिरस्कार किया। तेजस्वी अमरचंदको क्रोध चढ़आया उन्होंने इच्छानुसार उस पापिनी रामप्यारीको दुर्वचन कहकर घरसे निकलवादिया। अपमानित रामप्यारी रोतीहुई राजमाताके निकट गई और अपना समस्त वृत्तान्त रंगकरकह सुनाया। राजमाताने रामप्यारीकी कहानी सुनकर उससे अपना अपमान समझा और तत्काल एक पालकी मँगवाकर शालुम्ब्रासर्दारके पास चली। अमरचंदने समझालियाथा कि आज कुछ अवश्य ही होनहार है, इस कारण वह तत्काल सभासे उठ चले, और मार्गमें ही राजमाताकी पालकीको जातेहुए पाया, उन्होंने वाहक और अनुचरोंको राजभवनमें लौटजानेकी आज्ञादी। ऐसी सामर्थ्य किसमें थी जो अमरचंदकी आज्ञाको न मानता? जब पालकी रनवासके द्वारपर

आगई तो मंत्रीने राजमाताको प्रणाम करके धीरगंभीर भावसे कहा कि “देवि ! रनिवाससे राजमार्गमें बाहर आकर क्या आपने अचरण कार्य किया है ? क्या इस कार्यसे आपके महामान्य स्वर्गीय स्वामीका अपमान नहीं हुआ ? स्वामीकी मृत्युपर छः मासलों तो साधारण कुंभकारकी स्त्रीभी घरसे नहीं निकलती। परन्तु आप शिशोदीयकुलकी राजरानी महारानी होकर अपने स्वर्गीय पतिकी मृत्युका अशौचकाल व्यतीत होनेसे पहिले ही रनिवास छोडकर बाहर जाती हैं। आप स्वयं बुद्धिमती हैं, आपको अधिक क्या समझाऊं ? अमरचंदको शुभचिन्तकके अतिरिक्त अपना शत्रु न समाझियेगा। अमर विश्वासघातक नहीं है कि महाराज अरिसिंहके कुमार वज्रपर किसी प्रकारका अत्याचार करेगा मेरा एक निवेदन है कि इस समय मैंने एक गुरुतर कर्तव्य साधन करनेका विचार करलिया है। इस कार्यपर आपका और आपके पुत्रोंका भंगल भलीभांतिसे निर्भर करता है। अतएव विरुद्धता करनेकी अपेक्षा इस समय मेरी सहायता करना आपको भलीभांतिसे उचित है। इस समय मेरे निवेदनको आप स्वीकार करें वा न करें, मैं निश्चय कहता हूँ कि उस कर्तव्य कार्यको अवश्य ही साधन करूंगा।” अमरके इन सारगर्भ वाक्योंने उस क्रूर हृदय राजमाताके हृदयमें स्थान न पाया। अमरचंद जब तक जीवित रहे उतने दिन राजमाताकी आँखोंमें खटकते ही रहे। अनन्तर जिस दिन उस न्यायवान धार्मिकप्रवर मंत्रीशिरोमणिने इसलोकसे विदा ली, जिस दिन उसका पवित्र देह जलकर राखकी ढेरी होगया; उस ही दिन वह इस मनुष्य संसारकी स्वार्थपरता, विश्वासघातका और कृतघ्नतासे छुटकारा पाकर अनन्त सुखके धाम अमरलोकको चलेगये। बहुतसे लोगोंका ऐसा अनुमान है कि उस पापिनी राजमाताने जहर दिलवाकर अमरसिंहका संहार कराया था ! राजमाताकी दुराकांक्षा, क्रूरता, निठुरपन देखकर यह अनुमान सत्य ही जानपडता है। हा ! मनुष्य कैसा निठुर है ! कृतघ्नता कहां तक अपना बल करती है ! स्वार्थपरता भी हो तो इतनी ही हो ! यह संसार नरककी पीडाका भयंकर अन्धकूप है ! यह कौन कहता है कि—पशुओंसे मनुष्य श्रेष्ठ है ?—यदि श्रेष्ठ है तो कौनसे गुणसे श्रेष्ठ है ? हिंसा, द्वेष, कृतघ्नता, स्वार्थपरता, विश्वासघातकता यदि यह उस श्रेष्ठपनके चिह्न गिनेजाते हों, यदि एक भ्राताका सत्यानाश करके स्वार्थकी रक्षा करलेनेसे ही श्रेष्ठता प्रमाणित होती है, दुर्बलके ऊपर सबलका सताना ही यदि अच्छेपनको प्रगट करता है, जो वह श्रेष्ठता पशुजातिसे ऊंची श्रेष्ठता नहीं है;—उसको तो पशुपन, कठोरपन और पिशाचपन कहना ही उचित होगा, उदार-

हृदय धर्मात्मा अमरचंदने अपनी मातृभूमिका उपकार करनेके लिये सर्वस्वका त्याग करदिया, संसारमें जिस धनके लिये असंख्य उपद्रव हुआ करतेहैं; विना याचित हुए ही वह अपार धन परोपकारमें लगादिया; परन्तु इस परोपकारका उन्हें कौनसा बदला मिला ? परग २ पर जातिवालों तथा इष्टमित्रोंका विद्वेष सहन करके जीवन धारण करनापडा । तथापि दृढप्रतिज्ञा अमरचंदने कर्तव्य-कार्यसे किसी समय भी झुँह नहीं मोडा था । जिसके लिये उन्होंने इतना कष्ट सहा और इतना त्याग स्वीकारकिया; जिसके लिये मंत्रिश्रेष्ठको अपने बिरानोंका विद्वेषभाजन होनापडा; उस ही पिशार्चीने घृणित मार्गमें पाँव रखके जहर देकर अपने हाथसे उस महात्माका प्राण संहार किया ! हाय ! मनुष्योंका चरित्र क्या इतना घृणित और इतना नरकमय है ?

जिस महापुरुषने स्वदेशके लिये जीवन धारण करके अंतमें स्वदेशवालोंकी विश्वास घातकतासे इस लोकसे विदा ली, वह किसी भी देशका गौरवस्वरूप होसकता था । परन्तु मेवाडका अत्यन्त दुर्भाग्य है कि, मेवाडकी अयोग्य रानीने मंत्री अमरचंदके गुणोंका माहात्म्य नेक भी न समझा । संसारमें और भी दो चार मंत्री इस प्रकारके महान गुणोंसे विभूषित थे, परन्तु अमरचंदकी समान किसीकी भी शोचनीयदशा नहीं हुई । यद्यपि अमरचंद एक प्रधान राज्यके मंत्री थे, परन्तु वह यहांतक वेसहारे होगयेथे कि अन्तमें उनका अन्त्येष्टिसंस्कार नगरवासियोंने चन्दाडालकर कियाथा ! भारतके इतिहासका यह एक नया उदाहरण है ! परन्तु ऐसा होनेसे कोई यह न समझे कि भारतमें साधारण ज्ञान ध्वनि नहीं है; या भारतीयगण गौरवका सन्मान करना नहीं जानते । जो ऐसा समझतेहैं उनको भारतवर्षका पूरा २ ज्ञान नहीं है । कारण कि अमरचंदके महान्गुणोंका वर्णन अबतक भी कोई नहीं भूलहै । यदि अबतक भी कोई वैसे गुणग्रामोंसे विभूषित होताहै तो राजपूतगण उसको “अमरचंदके नामसे पुकारा करतेहैं ।

अभागिनी राजमाताने अनसमझीसे स्वयं ही अपने पाँवमें कुहाड़ी मारी । अमरसिंहका संहार करके उसने समझाथा कि अब कोई मेरी आज्ञाके विरुद्ध न चलेगा, परन्तु थोड़े ही समयमें उसका यह सुखस्वप्न भंग होगया । संवत् १८३१ (सन् १७७५ ई०) में वेगू सर्दारने विद्रोही होकर उसके राज्यको नष्ट करना चाहा । वेगू एक मेघावत सावन्त था । मेघावत वंश चंद्रावत गोत्रकी एक बड़ी शाखा है । हीनबुद्धि राजमाताने इस मेघावत सर्दारके प्रचंड प्रतापको

रोकनेमें असमर्थ होकर सेंधियासे सहायता चाही। चतुर महाराष्ट्रीय वीरने सुअवसर समझकर सेनासहित वेगू सर्दारपर चढ़ाई की। वेगू सर्दारने राणाजीकी जिन "खास ज़मीनोंपर" दखल करलियाथा, उन सबको सेंधियाने छुडालिया और विद्रोहके अपराधमें इस सर्दारपर १२००००० (बारह लाख) रुपया जुमाना किया * परन्तु अभागिनी राजमाताने सेंधियाको जिस आशयसे बुलाया था, स्वार्थी महाराष्ट्रीय वीरने उस आशाको पूर्ण न करके समस्त धन सम्पत्तिको अपने आप पचालिया। उसको उचित था कि उसको बालक हमीरके हाथमें समर्पण करता, परन्तु कुमारको न देकर अपने जामाता वीरजी तापको रतनगढ़खेडी और सिंगोली जनपदमें स्थापन करके अवाशिष्ट ईरनिया जाठ बिचूर व नदोयी आदि कई एक जनपद हुलकर सरकारको देदिये। इन परगनोंकी वार्षिक आमदनी सालियाना ६००००० रुपये थी। मरहटे लोग मेवाडके केवल इनही परगनोंको हज़म करके शान्त न हुए; वरन उन्होंने पुनर्वार संवत् १८३०-३१ में चार × आर संवत् १८३६ में और भी तीन † खंडनियोंका दावा किया। इस विपुल-धनके प्राप्त न होनेसे उन्होंने मेवाडकी और भी बहुतेरी भूमि सम्पत्ति दवाली। इस प्रकार दुरन्त महाराष्ट्रियोंक प्रचंड कष्टसे पीडित होकर और दारुण घरेलू झगडोंसे दिक्कहोकर हमीर राजपूतने पूर्ण वयसमें † चरण न धरकर ही संवत् १८३४ (सन् १७७८ ई०) में परलोककी यात्रा की।

जिस दिन महाराष्ट्रीयलोग सबसे पहिले मेवाडभूमिमें आये थे उस दिनसे लेकर इस दूसरे हमीरके शासनकालतक मेवाडके अनेक स्थान राणाके पाससे निकल गये जिनका विचार आगे किया जाता है। यह समय लगभग ४० वर्षका हुआ होगा। इस लंबे समयमें जिन निठुर महाराष्ट्रियोंने पाशवीय स्वार्थपरतासे उत्साहित होकर मेवाडकी जो भूमि ली और जितना धन लिया यदि उस सबका

* जिस सन्धिपत्रके अनुसार सेंधियाने इन परगनोंपर अधिकार किया, वह अबतक वर्तमान है।

× यह चार खंडनियें निम्न लिखित मनुष्योंने ली थीं। संवत् १८३० में बेगूका विद्रोह दवानेको माधोजी सेंधियाने; संवत् १८३१ में वीरजी तापने गोविन्दराव गणपतरावकी मार्फत ली; संवत् १८३१ में ही तीसरी खंडनी अन्नाजी इज़ले और चौथी खंडनी बापू हुलकर तथा दादोजी पंडितने ली।

† इन तीन खंडनियोंमेंसे पहिली हुलकरकी ओरसे आप्पाजी व मकाजीने ग्रहणकी, दूसरी सोमाजीकी मार्फत तुकोजी हुलकरने ली; तीसरी सोमाजीकी मार्फत अलीबहादुरने ली।

† हमीरकी उमर अन्तसमयमें केवल १८ वर्षकी थी।

दक्षिणकी ओर आरावलीकी आकाश भेदी शिखरमालाको देखा। पश्चिममें बहुतसी बड़ी गिरीहुई पृथ्वी और बीच २ में वेलवूटोंसे आच्छादित तरंगाकारमें नीचे ऊंचे समतलक्षेत्र दिखाई देतेहैं इस स्थानकी मट्टी उर्वरा है, किन्तु जल पृथिवीके बहुत नीचे होनेसे खेतीका सुभीता नहीं है। ग्रामोंके पासवाले खेतोंमें ज्वार, मक्का और तिल बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं। यह नगर ऊंची भूमिके ऊपर स्थापित है, इस कारण देखनेमें बड़ा रमणीय है। अत्याचारी औरंगजेबने एक हिंदूमन्दिर विध्वंस करके उसके ऊपर जो एक मसजिद बनवादी है उसकी चोटी चारों ओरके बड़े २ हिन्दू मंदिरोंसे ऊंची है। यद्यपि उक्त मुगलसम्राट् सम्पूर्ण हिंदूजातिके-विशेष करके राठौरलोगोंके (जिस राठौर जातिके साहसी राजा यशवन्त और उनके ज्येष्ठ पुत्रको विष देकर मारा तथा अजितको बीस वर्ष तक राज्यच्युत करके सैंकड़ों राठौरोंके रक्तसे मारवाडको सींचा था) क्रोधके पात्र थे, किन्तु हिन्दूजातिकी सहनशीलता और राजभक्ति इतनी प्रबल है कि एक पत्थर फारसी और हिंदीभाषामें सब प्रकारके अत्याचार करनेका निषेध लिखकर उस मसजिदमें लगा दिया है। सुनतेहैं कि मारवाडसिंहासनके लोभी धौकुल सिंहने इन हत्यारे पठानोंकी सहायता की और उनके प्रसन्न करनेके लिये उक्त पत्थरको उस मसजिदमें लगा दिया था। किन्तु अन्तमें वह किस प्रकार ठगा गया था और उस धनके पठान नायक अमीरखाँने कैसे कठोर चित्त और अकृतज्ञतासे धौकुलसिंहकी सेनाको मारा था, पाठक गण इस बातको भलीभाँति जानते हैं।

मन्दौरके राव दूधाने इस मैरतानगरको वसाया था और उनके प्रसिद्ध पुत्र मालदेवने मालकोट नामक दुर्ग बनवाया था। * उन्होंने यह तीन सौ साठ ग्राम नगर पूर्ण मैरता प्रदेश अपने पुत्र जयमलको प्रदान किया और साहसी राठौर जातिके सबसे श्रेष्ठ सम्प्रदायको इस प्रदेशके नामपर मैरतीया उपाधि देगये। महावीर जयमल मारवाडके बाहर अपना नाम अक्षय करनेके लिये ही उत्पन्न हुए थे। जयमलने युद्धके समय दिल्लीश्वर शेरशाहके साथ वीरोचित कार्य नहीं किया उनकी इस असावधानीसे यवनसम्राट् विश्वासघात करके भाग गये थे, इस अपराधपर मालदेवने जयमलको मन्दौरसे निकाल दिया। निकाले हुए राठौर राजकुमार जयमल मेवाडपति राणाकी शरणमें गये मेवाडपतिने उनको बड़े आदरके साथ लिया और अपने राज्यकी समान

* राव दूधाके मालदेवके अतिरिक्त और भी तीन पुत्र थे, पहिले वीरमल दूसरे वीरसिंह थे, इन्होंने मालव प्रदेशमें अमजेरा नामक राज्य स्थापन किया था, वह राज्य अबतक उनके उत्तराधिकारियोंके हाथमें है; तीसरे रत्नसिंह थे, यह राणा कुम्भकी सुविख्यात रानी मीराबाईके पिता थे।

बडा और समृद्धिशाली विदनौर प्रदेश उनको दे दिया । जयमल जिस प्रदेशसे सत्वच्युत हुए थे, विदनौर उसकी अपेक्षा अधिक उपजाऊ और मूल्यवान प्रदेश था जयमलने मेवाडेश्वरकी इस कृपाका ऋण किस प्रकार उतारा था उस उत्तम वृत्तान्तको हम लिख ही चुके हैं । मुगलकुलतिलक अकबरने अपने हाथसे इन महावीर जयमलके प्राणनाश करनेके समय अपनेको महा सन्मानित समझा था, और जिस बन्दूकसे उक्त वीरके प्राण लिये थे उसको बड़ी प्रतिष्ठाके साथ स्थापनकिया । सम्राट् जहाँगीरने वीरश्रेष्ठ जयमल की बड़ी भारी प्रशंसा करके वालक राणाको स्वाधीन करदिया, और चित्तौडकी रक्षाके लिये बड़ी वीरताके साथ मरे हुए उन जयमलके स्मरणार्थ एक कीर्तिस्तंभ बनवा दिया । विख्यात इतिहासवेत्ता अब्दुलफजल अंग्रेज दूतके पुरोहित हरवर्ट और वर्नियर आदि सब ही महाशयोंकी लेखनीसे जयमलकी जय घोषणा और बड़ी भारी प्रशंसा लिखी गई है । इधर परम तेजस्वी लार्ड हेष्टिंग्स जो राजपूत जातिके वीरत्व विक्रम प्रताप प्रभुत्वके एक विलक्षण पक्षपाती थे उन्होंने भी जयमलके अनुपमेय विक्रम स्मरणमें उनके सम्मानार्थ उन जयमलके वंशधर विदनौरके वर्त्तमान साहसी सामन्तको प्रसन्न किया था ।

मेडतानगर बड़े भारी दृढ पर कोटे और बुर्जोंसे भलीभांति रक्षित है । पश्चिमका परकोटा मटीका बना है और पूर्ववाला पत्थरका है । नगरकी समान भीतरके सम्पूर्ण दृश्य टूटे फूटे हैं । यह नगर बीस हजार घरोंकी वस्ती है समग्र हिंदू नगरोंकी समान धनी लोगोंके मनोहर पक्के महलोंके निकट दीन हीन लोगोंकी पर्णकुटीर दिखाई देते हैं । नगरके दक्षिण पश्चिम प्रान्तमें दुर्ग है, उसका परिमाण लगभग एक कोशके होगा । दुर्गके पूर्व और पश्चिम प्रान्तमें छोटे २ सरोवर हैं । नगरके भीतर कूप भी बहुत हैं परन्तु जल सबका खराब है । नगरके चारों ओर “ दूधसार ” “ वाइजपा ” “ दुराणी ” “ धनगोलिया आदि नामवाले बहुतसे बड़े २ जलाशय हैं ।

मेडताका समतल क्षेत्र अगणित समाधिमन्दिर वा स्मारक स्तम्भोंसे सुशोभित है । जिन महावीर लोगोंने परस्पर विग्रहके समय अथवा दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंके कराल गालसे स्वाधीनताकी रक्षा करनेके समय अपने रक्तसे जन्मभूमिको सींचा था उनकी कीर्तिके घोषण और स्मरणार्थ यह मन्दिरबने हैं । किस कारणसे राठौर लोगोंमें जातीय एकताका बंधन छिन्नभिन्न हुआ ? किस कारणसे दक्षिणी लोग मारवाडमें घुसे ? और किस कारणसे मारवाडियोंकी जातीय

जीवनशक्ति अत्यन्त दुर्बल होगई ? इन मूलघटनाओंके स्मरण विना इस चिर स्मरणीय क्षेत्रको अतिक्रम करके जाना अवश्य ही असंभव है। राजा अजितसिंहके हत्याकाण्डका आंशिक विवरण मैं पीछे लिख चुका हूँ। साक्षात् नरपिशाचस्वरूप दो सत्यद भ्राताओंने सम्राट् फर्रुख सियरको सिंहासनच्युत करके जिस समय अपने कीडकस्वरूप एक दूसरे मनुष्योंको भारतके सम्राट् आसनपर बैठाया था, उसी समय उन सत्यदोंकी अवलंबित राजनीतिके फलसे अजितसिंह अपने औरस पुत्रके पापरूप कलुपित हाथोंसे शोचनीय दशामें मारे गये थे। अजितसिंह अपने पुत्र अभयसिंहको दिल्लीमें छोड़ अपनी कन्याको (जिसके साथ सम्राट् फर्रुखसियरके विवाहके उपलक्षमें ईष्ट इण्डिया कम्पनीको भारतमें प्रथम भूवृत्ति प्राप्त हुई।) लौटनेका कारण यह था कि, वह इन दोनों सत्यदभ्राताओंकी घृणित, जघन्य राजनीतिका पक्ष समर्थन करना किसी प्रकारसे भी नहीं चाहते थे। राजा अजितको उस भावसे षडयंत्र जालमें न फँसता हुआ देखकर इसने अपनी स्वाभाविक मूर्ति धारणकी और उनके पुत्र अभयसिंहको बुलाकर कहा कि “ तुम यदि अपने पिताका जीवन नष्ट करके हमारी अवलंबित नीतिका अनुसरण करसको तो मारवाडके राज्यसिंहासनपर बैठालदिये जाओगे, अन्यथा मारवाडराज्य नष्ट करदिया जायगा। ” नरपिशाचरूपी उन दोनों सत्यद राक्षसोंने जो उपाय अवलम्बन किया और जिस उद्देशको पूर्ण करनेके लिये यत्न किया, उसके द्वारा राजपूत जातिके स्वभावका एक दूसरा अंश उज्ज्वलरूपसे चित्रित हो रहा है। जब अभयसिंहने अपने पिताका जीवनदीप निर्वाणकरना स्वीकार न किया तब दोनों सत्यदोंने प्रश्न किया कि “ मा बापकी शाखा, या जमीनकी शाखा ? ” अर्थात् “ तुम मातापिताकी शाखा हो वा जन्मभूमिकी शाखा हो ! ” हम ऊपर लिख चुके हैं कि मातृभूमि ही राजपूत जातिका सर्वस्व है और उसके लिये वह सब कुछ करसकते हैं। इस कारण अभयसिंहको मारवाडके राजसिंहासनका लोभ आगया। अजितसिंहकी समान साधु राठौर राजपूतके औरससे अभयसिंह और वक्तसिंह इन दो नरराक्षसोंने जन्म लेकर सत्यदोंका उद्देश सिद्ध करदिया था यह बात यद्यपि कभी विश्वासमें नहीं आसकती, किन्तु प्रत्यक्ष प्रमाण पूर्ण घटना उस संदेहको दूर करदेती है। मैं राजपूत जातिका बड़ा भारी आदर करनेवाला और उनका प्रबल पक्षसमर्थक हूँ, इस कारण मेरी इच्छा नहीं थी कि उस घोर कलङ्कजनक घटनाको लिखूँ; किन्तु राजपूतोंके चरित्रकी अपेक्षा सत्यको विशेष आदरकी वस्तु

समझकर मैं यहांपर खेदके साथ उस विषयके प्रकाशित करनेको वाध्य हूं । अजितसिंहके बारह पुत्रोंमें अभयसिंह और वक्तसिंह बड़े थे; यह दोनों बूंदीकी राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे ।

राठौर कुल कलंक अभयसिंह जिस समय साक्षात् कालकी समान दोनों सय्यद भ्राताओंके प्रस्तावानुसार महापातकमें संलिप्त होनेको प्रस्तुत हुआ, उस समय मारवाडेश्वर अजितसिंह मध्यमकुमार उक्त वक्तसिंहके सहित नागरमें स्थित थे । अभयसिंहने चुपचाप वक्तसिंहको पत्रद्वारा लिख भेजा कि, “यदि तुम पिताके प्राणनाश करसको तो उसके पुरस्कारमें मैं तुम्हें पांच सौ पैसठ नगर पूर्ण नागर प्रदेश देदूंगा और तुम उसको स्वाधीन भावसे राजाकी उपाधि धारण करके शासन करसकोगे ।” दुरात्मावक्त सिंह भाईके इस प्रस्तावसे कुछ भी विचलित न हुआ, वरन बड़े साहसके साथ अपने हाथसे जन्मदाता पिताके प्राण संहार करनेको उद्यत होगया इसकी माता इसको दुर्दान्तप्रकृति, उग्रस्वभाव, असमसाहसी, क्रोधी और नररक्त बहानेवाला जानकर सदा भयभीत रहनेलगीं और अपने स्वामीसे एक दिन अवसर पाकर कहा कि “सन्ध्याके पीछे कभी आप अकेले न रहें और एकान्तमें कभी वक्तसिंहके पास न जावें ।” किन्तु राजा अजितसिंह जैसे साहसी थे वैसे ही बलिष्ठ थे, इस कारण उन्होंने रानीकी बातपर कुछ ध्यान न दिया और कहा कि “वह क्या मेरा औरस पुत्र नहीं है ? मैं उसको एक थप्पड़ मारकर सीधा करसकता हूं ।” हा ! साधु अजितसिंहने भूलसे भी इस बातको नहीं विचारा कि कुबडीमें उन्होंने कालसर्पको उत्पन्न किया था ।

महापातकी वक्तसिंह अभयसिंहका पत्र पाते ही राजाकी आज्ञासे उस कमरेमें रहनेलगा जो राजाके शयन करनेके कमरेसे मिलाहुआ था । वह बड़ी भारी पापपङ्कमें डूबने और निर्मल राठौर राजपूतकुलमें कलङ्कका टीका लगानेके लिये समयकी प्रतीक्षा करने लगा । अजितसिंहके लिये उस कालरात्रिने शीघ्र ही भयानक मूर्ति धारण करके संसारको निद्रित करदिया; महलमें सन्नाटा छागया; निद्राकी मोहिनी शक्तिने महलके प्रत्येक स्त्रीपुरुषके ऊपर अपना अधिकार जमालिया । उस सन्नाटेके मयदानमें भयङ्कर अन्धकार भी चारों ओर नाचनेलगा ॥ महाराज अजितसिंहके रानीसहित निद्राकी गोदमें शयन करनेपर वक्तसिंह कालकूट विषधरकी समान निर्भय चित्तसे धीरे २ कमरेमें आया, और विस्तरेके नीचेसे अजितसिंहकी तलवार लेकर उस नारकीने अपने

जन्मदाता पिताके पवित्र जीवनको नष्ट करदिया । जब अजितसिंहके शरीरसे उष्ण रक्त निकलकर उनकी रानीके शरीरसे लगा तो उसकी निद्रा भंग होगई, उसने आश्चर्यमें भरकर क्या देखा कि, जिस पुत्रको नौ मास गर्भमें रक्खा-था, जिसके चरित्रके ऊपर उसको विषम सन्देह था उसी नरकके कीड़े वक्त-सिंहको अपने पतिके प्राण संहार करते हुए देखा । रानी पतिवियोगसे उन्मत्त होकर रोने लगीं, उनके रोनेसे निकटके कमरेमें सोये राजपूत रक्षक जाग उठे । सब शीघ्रतासे कमरेका द्वार तोडकर भीतर आगये, उन्होंने वहां आकर महाराज अजितसिंहको मृतक पाया ।—उनका प्राण शून्य रक्तमें सनाहुआ शरीर शय्याके ऊपर पड़ा था । रानी पतिके शोकमें उन्मत्त थीं ।

पितृघाती वक्तसिंह रक्षकोंके आनेसे पहिले ही महलकी छतके ऊपर भाग गया और भागते समय सब द्वारोंके किवाड बन्द करगया । सब लोग विशेष चेष्टा करके भी प्रातःकालसे पहिले सम्पूर्ण द्वार नहीं तोडसके । प्रातःकाल होनेपर वक्तसिंहने महलकी छतसे बड़े भाई अभयसिंहका पत्र आंगनमें फेंककर कहा कि “मैंने अपनी इच्छासे महाराजके प्राण नहीं लिये, किन्तु इस पत्रने मुझको उनके प्राणनाशकी आज्ञा दी थी ।” राजपूत लोग बड़े भारी राजभक्त हैं, इस कारण जब उन्होंने जाना कि अभयसिंह मारवाडके अधीश्वर हुए, तो और कुछ बात न कहकर उस पितृघातकको ही भक्ति दिखाना स्थिर करलिया । महाराज अजितसिंहकी उस अकालमृत्युसे उनकी चौरासी रानियें उनके शरीरके साथ चितामें जलगई, और इस नश्वर संसारको छोड पतिलोकको चलीगई अजितसिंह और उनकी रानियोंके चिताधूमसे सम्पूर्ण मारवाड मानो वोर अन्धकारसे ढकगया । महाराज अजितसिंहने प्रजाके हृदयमें जैसा अधि-कार पाया था, वैसा और किसी कालमें भारतमें नहीं दीखा, उनकी भस्मीभूत चितामें उनके प्रेमी बहुतसे पुरुषोंने जीवन विसर्जन कियाथा ! महाबली अजित सिंहकी इस वियोगान्त लीलाने सम्पूर्ण सामन्त; प्रजा और मारवाडके आवाल वृद्ध नरनारियोंके हृदयमेंदी रुदनसे मारवाडको प्रतिध्वनित करदिया । इतिहास इन राठौरकुलके घृणित कीट अभयसिंह और वक्तसिंहकी घटनाको बहुत काल तक कीर्त्तन करेगा । कवियोंकी लेखनीने शोकमयी मूर्त्ति धारण करके इन महा-पातकियोंको धिक्कारदेनेमें क्षणमात्र भी विलम्ब नहीं किया । उनमें की एक शोक-मयी कविता यहां लिखते हैं;—

“ वरुत, वरुत, वाइरा,
क्यों मारा अजमाल, *
हिन्दुयानीको सेवरा,
तुर्कानीका शाल ? ”

कविताका आशय यह है कि, “ रे वरुत ! कुसमयमें क्यों तैने आजमलकी हत्या करी ? वह हिन्दुओंके प्रबल रक्षक स्वरूप और मुसलमानोंका शाल स्वरूप थे ? ” ।

पिताकी हत्या करनेके अपराधमें वक्तसिंहने बड़े भाईसे नागर प्रदेश और पापी अभयसिंहने नरपिशाच सय्यदोंकी मनकामना पूरी कर देनेसे पुरस्कारमें मारवाडका सिंहासन तथा गुजरातका राज प्रतिनिधिपद पाया । जब मुगल-सम्राटके घोर दुर्दिन उपस्थित हुए तब अभयसिंहने गुजरातराज्य महाराष्ट्रमें विभक्त करनेका सुभीता साधन और गुजरातके अधीन वीणमहल, सांचोर और दूसरे समृद्धिशाली प्रदेश मारवाडमें मिलालिये, तथा उस अवसरमें मारवाडके कवियोंने जिसको “वदवक्त” की उपाधि दी थी, उस छोटे भाई वक्तसिंहको शालोरप्रदेश दिया । उस पितृहत्याके फलसे शीघ्र ही सम्पूर्ण मारवाडमें भयानक आत्मविग्रहानल प्रज्वलित होगया ।

अपने औरस पुत्र द्वारा मरे हुए महावीर अजितसिंहके अन्यान्य जिन कई पुत्रोंके साथ रजवाडेका राजनैतिक सम्बन्ध है उनका संक्षिप्त विषय नीचे लिखतेहैं ।—अजितसिंहके पुत्रोंमें देवीसिंह चम्पावत् सम्प्रदायके नेता अपुत्रक महासिंहके द्वारा पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण कियेगये थे । देवीसिंह उस समय वीणामहलके अधीश्वर थे, किन्तु उक्त स्थानके चारों ओरके निवासी जब कोली जातिके उपद्रवोंको न सहकर वीणामहलकी रक्षा करनेमें असमर्थ होगये तो देवीसिंहको उसके बदलेमें पाकर्णप्रदेश देदिया । सुवलसिंह और सालिमसिंह (निघाजके सामन्त जिन्होंने मारे न जाकर अपना उद्धार आप करलिया-था) उक्त देवीसिंहके पुत्र और पौत्र थे ।

अजितसिंहके अन्य पुत्र आनन्दसिंह इन्दौरके स्वाधीन महाराज द्वारा दत्तक पुत्ररूपसे गृहीत हुए थे । मारवाडका राजसिंहासन शून्य होनेपर अर्थात् वर्तमान महाराजके अपुत्रक अवस्थामें प्राणत्याग करनेपर आनन्दसिंहके वंशधर लोगोंमें जो सबसे बड़ा हो वही मारवाडराजके छत्रतले बैठनेका अधिकारी है ।

* अजितको अजेय समझकर कविने यहां “अजमल” शब्द प्रयोग किया है ।

राठौरजातिमें एक विचित्र प्रथा प्रचलित देखी जाती है । छोटा भाई यदि किसी भिन्न स्वाधीन राज्यमें दत्तक पुत्ररूपसे गृहीत हो तो मारवाडके राजसिंहासनके ऊपर उनके वंशधरोंका स्वत्वाधिकार रहता है । किन्तु यदि वह पुत्र स्वदेशकी किसी सम्प्रदायके सामन्त द्वारा पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण किया जाय तो उक्त सिंहासनके ऊपर उस पोष्य पुत्र वा उसके वंशवालोंका किसी प्रकारका स्वत्व वा सम्पर्क नहीं रहता, अधीन सामन्तके पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण किये जानेके समय उसका सम्पूर्ण पैतृक स्वत्वाधिकार लुप्त होजाता है । और वह उस सामन्तके स्वत्वसे स्वत्ववान होता है। इस चिर प्रचलित प्रथाके अनुसार ही देवीसिंह चम्पावत सम्प्रदायके नेता महासिंहके पोष्य पुत्र होनेके कारण मारवाडके सिंहासनपर उनके उत्तराधिकारियोंका कुछ भी स्वत्व न रहा ।

पितृवातक अभयसिंहके शिरपर जिस समय मारवाडका राजछत्र रक्खा गया, उस समय दिल्लीके यवन सम्राटकी बड़ी भारी शासनशक्ति विलकुल छिन्न भिन्न, प्रतापलुप्त, विशाल राज्यके अङ्ग प्रत्यङ्ग खण्ड २ और सिंहासन कांपता था । अवसर पाते ही अभयसिंहने उस समयके सम्राटके आधीन दूसरे राजप्रतिनिधियोंकी समान बहुतेसे प्रदेश अपने राज्यमें मिला लिये थे, इस कारण उसने अपनी शासन शक्तिका चूडान्त निदर्शन रख कर शरीर छोड़ा । अभयसिंहके मरने पर उनके पुत्र रामसिंहके हाथमें मारवाडका राज्यभार सौंपा गया । वक्तसिंह उस समय नागरमें राज्य करता था । भतीजेके राजतिलकके समय राजटीका और अभिनन्दन चिह्नस्वरूप बहुत उपहार द्रव्योंके साथ अपनी पालनकरनेवाली वृद्धायको जोधपुरमें भेजदिया । पालनेवाली धायोंका गजवाडेमें बड़ा आदर होता है । रामसिंह राजपूत स्वभाव सिद्ध उग्र प्रकृतिके थे; इस कारण चचाके उस धायको दूतीरूपसे भेजने पर बड़े क्रुद्ध हुए और धात्रीसे बोले कि “नये अधीश्वरकी संवर्द्धनाके लिये क्या चचाको दूतपदके योग्य कोई और मनुष्य नहीं मिला ?” यह कर उसको अपमानके साथ विदा करदिया । नागर जोधपुरके अधीन है, इस कारण वक्तसिंह नागरके स्वामी और वक्तसिंहके चचा होने पर भी राजनैतिक संबन्धसे वह अवश्य ही छोटे थे, अतः वक्तसिंहके स्वयं न आने और उपयुक्त प्रतिनिधि न भेजनेके कारण रामसिंहने उनके सब उपहार लौटाकर धायके द्वारा कहला भेजा कि “चचा शीघ्र झालार प्रदेश लौटादे यह मेरी आज्ञा है । अपमानित धायने रामसिंहकी सब कटुक्तियोंको वक्तसिंहसे कहदिया । वक्तसिंहने भतीजेके इस उद्दण्ड आचरण और अन्याय आज्ञाको सुनकर विनयके साथ मधुर शब्दोंमें यह उत्तर भेजा कि “ झालौर और नागर

दोनों प्रदेश ही आपके स्वाधीन हैं।” इस व्यंगोक्तिके कारण दोनोंमें झगडा बढ़ गया, उसका जो कुछ फल हुआ पाठकोंके जाननेके निमित्त उसको नचि लिखते हैं।

मारवाडेश्वर रामसिंह जिस प्रकार उद्धत प्रकृतिके थे, उसी प्रकार शिष्टाचार हीन थे। अपने अधीनस्थ सामन्त मंडलीके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये इस विषयमें कुछ भी शिक्षित नहीं थे, आहोयाके अधिनायक कुशलसिंह मारवाडकी सामन्त मंडलीमें सबसे श्रेष्ठ और चम्पावत संप्रदायके नेता थे, उनका शरीर छोटा और वलिष्ठ था, तथा वह असभ्य और स्थूल बुद्धिके थे, इस कारण वह नये महाराजके उपहास पात्र बनगये। रामसिंहने उनको “गुरजिगंडक” अर्थात् वृणित कुत्तेकी उपाधि दी। एक दिन महाराजने कुशलसिंहको स्पष्ट अक्षरोंमें “गुरजि” कहकर पुकारा। महाराजके उस अपमान जनक पुकारनेसे सामन्त श्रेष्ठने तत्काल उत्तरदिया कि, “यह गुरजी सिंहको काटखानेका साहस रखताहै।”—

यद्यपि रामसिंह इस उत्तरसे मन २ में बड़े अप्रसन्न हुए परंतु प्रगट कुछ न बोले। इसी प्रकारकी एक और बातसे उन दोनोंका परस्परका प्रेम दूर होगया। एक दिन राजा रामसिंह और कुशलसिंह दोनों मंदौरके वनमें टहल रहेथे, टहलते २ महाराजने एक वृक्षको संकेत करके कुशलसिंहसे पूछा कि “इस वृक्षका नाम क्याहै”? कुशलसिंहने आग्रह और धमंडके साथ उत्तर दिया कि “आपकी राजपूत जातिके बीचमें जिस प्रकार मैं गौरवस्वरूप हूँ, उसी प्रकार यह चंपेका वृक्ष भी इस वनकी शोभा बढ़ा रहाहै।” यह उत्तर सुनकर रामसिंहने क्रोधमें भरकर कहा कि, “अभी इस वृक्षको जड़से उखाडकर फेंकदो। मारवाडमें चंपेनामवाला कोई पदार्थ भी नहीं रहेगा।” कुशलसिंह उस समय तो मौन होगये, परन्तु हृदयमें क्रोधको बढ़ाने लगे।

चंपावत नेता कुशलसिंहकी समान मारवाडके कंपावत नामक और एक महान साहसी संप्रदायके नेता आसोपके अधिनायक कुन्नीराम भी रामसिंहकी विष-दृष्टिमें गिरे। उनके मुखकी बनावट कुछेक बुरीथी। एक दिन रामसिंहने उनको “बुड्ढे बन्दर” कहकर पुकारा। इस पुकारनेसे उत्तेजित होकर कुन्नीरामने कहा कि, “जिस समय यह बन्दर नाचेगा उस समय आपको खूब आनन्द मिलेगा। यह कहकर कुन्नीराम शीघ्रही आहोयाके सामन्त सहित राजसभासे चलेगये और नागरमें जाकर सेनाका संग्रह करने लगे। जिस समय अपमानित दोनों साम-

न्त नागरमें पहुँचे उस समय वहाँ वक्तसिंह उपस्थित नहीं थे, उनके आनेकी बात और भतीजेकी कठोरतासे ही वह तत्काल राजधनीमें पहुँचगये। सुनते हैं कि वक्तसिंहने उन दोनों सामन्तोंको शान्त करके कहा कि “मैं मध्यस्थ बनकर तुम्हारे इस विवादको शान्त कर दूंगा। किन्तु अपमानित सामन्तोंने किसी प्रकारसे भी इस बातको नहीं माना और वक्तसिंहके सामने प्रतिज्ञा करी कि “हम कभी स्वामी समझकर रामसिंहका दर्शन नहीं करेंगे।” उन्होंने यह भी कहा कि “हम आपके जोधपुरके सिंहासनपर बैठनेमें यथोचित सहायता देंगे और यदि आप हमारी बातको नहीं मानेंगे तो हम सदाके लिये मारवाड छोड़कर दूसरे राज्यमें चले जायेंगे।” वक्तसिंहने कुछदिन तक इंग्लैंडेश्वर रिचर्डकी समान आचरण किया, किन्तु उनके भतीजेकी स्वाभाविक उग्रताने शीघ्रही भयानक काण्ड संघटित करदिया।

“मारवाडकी सामन्त मण्डलीमें सबसे श्रेष्ठ कुशलसिंह और कुन्नीरामको चचाने आश्रय दियाहै” इस बातको सुनकर रामसिंहने चचाको फिर पत्र लिखे कि “झालोरका राज्य शीघ्रही लौटादो।” वक्तसिंहने फिर कुछ नम्र शब्दोंमें इसका उत्तर लिखा कि, “मैं अपने स्वामीके विरुद्ध विवाद करनेका साहस नहीं रखता, यदि आप स्वयं यहां आसकें तो मैं अभिपेक जलसे भराहुआ कलश हाथमें लेकर आपसे भेंट करूंगा।” उत्तर प्रत्युत्तरके पीछे दोनोंने युद्ध करना स्वीकार किया। मैरता मैदानमें दोनों अपनी २ सेना लेकर मतवाले हाथियोंकी समान पहुँच गये। मारवाडके सम्पूर्ण साहसी सम्प्रदायोंमें मैरतीय सम्प्रदायके वीर सबसे अधिक साहसी हैं, यह सब लोग रामसिंहके झंडेके नीचे एकत्रित होगये। रिया, बुदसु, मिथरि, खोलर, भरावर, कोचामुन, अलनिवास, जुसुरि, वकरि, भूरुन्दा, दूर हो और चन्दारुणके सामन्त लोग अपनी २ सेनाके साथ युद्धमें जाने लगे। जोधपुरके अधिकांश सम्प्रदाय राजभक्तिके वशीभूत होकर मैरतीय लोगोंमें आमिले; यद्यपि लाण्ड, निम्बी आदिके कई सामन्त अशुपक्षमें मिलगये, किन्तु खैरोया, गोविन्दगढ और भद्रार्जुन आदिके नेतृ स्थानीय सामन्त इस समय राजभक्तिको न भूले। इधर रामसिंहका अशिष्टाचरण याद करके उनका साथ नहीं दिया। दूसरे कई सामन्त इस जातीय युद्धमें लड़ना अनुचित समझकर तटस्थ होगये।

उद्धतस्वभाव रामसिंह अपनी असभ्यता और दुर्बुद्धिके कारण पाँचसहस्र साहसी सेनाकी सहायतासे सर्वथा बंचित होगये। रामसिंहका विवाह भोजकी

राजपुत्रीके साथ हुआ था; उस राजकुमारीके साथ वे रामसिंहकी सहायता करने-
के लिये पांचसहस्र सेना लेकर आये थे । इनके डेरे राजधानीके बाहर रखे गये,
उस समय एक घटनाके द्वारा रामसिंहकी सिंहासन च्युतिका असली कारण और
राजपूत स्वभावका एक विचित्र लक्षण प्रगट होगया । अर्थात् जिस डेरेमें
रानी थी, उसकी कनातके ऊपर एक कुलक्षण सूचक काक बैठगया । रानी
उस कुलक्षणकी निवृत्तिका उपाय जानती थी, इस कारण तत्काल उसका उद्योग
किया । राजपूत वीरोंकी समान राजपूत स्त्रियों भी बन्दूक चलानेमें चतुर होती
हैं । भोजराजपुत्रीने तत्काल बन्दूक हाथमें ली और उस काकके प्राण बध कर
के कुलक्षण दूर करदिया । क्रुद्धस्वभाव रामसिंहने उस बन्दूकका शब्द सुनकर
अपना अनादर समझा और तत्त्वानुसंधानके विना ही बन्दूक छोडनेवालेको
अपने सन्मुख लानेकी आज्ञा दी; रानीका नाम बतानेपर भी उनके क्रोधकी
शान्ति न हुई । रानीको कटुभाषामें गाली देकर कहा कि “रानीसे कहो कि अभी
हमारे राज्यसे निकल जायँ और जिस देशसे आई हैं वहीं चली जावें ।” अपने
क्रुद्ध स्वामीकी उक्त आज्ञा सुनकर रानी महाराजकी मझल कामनेके लिये ही
बडी विनयके साथ क्षमा प्रार्थना करने लगी । किन्तु रामसिंहने किसी प्रकार-
से भी उस प्रार्थनाको स्वीकार नहीं किया । अन्तमें रानीने कहा कि “आप विना
ही कारण मुझको दूर किये देतेहैं, इसके परिणामके मारवाडका राजसुकुट आपके
शिरसे अवश्य गिर जायगा ।” यह कहकर रानी उस समय अपनी पांच सहस्र
सेनासहित मारवाड छोडकर पिताके घर चलीगई । वह पांच सहस्र सेना इस
समय अवश्य ही हतबुद्धि रामसिंहके बडे काम आती ।

निमाज, रायपुर और राउसके अधीन सम्पूर्ण उदावत सम्प्रदाय और
किउवनसारके ठाकुरके अधीनमें सम्पूर्ण करुणासोत सम्मिलित होकर वक्तसिं-
हके झंडेके नीचे नीचे खडे हुए चम्पावत और कम्पावत लोगोंमें आकर
मिलगये ।

यद्यपि रामसिंहकी सेना शत्रुओंकी सेनासे कम थी । किन्तु मारवाडके
स्वामी होनेके कारण उनका साहस शत्रुओंकी अपेक्षा अधिक था । रामसिंहने
भैरताके अजमेर तोरणद्वारपर पहुंचकर अपने डेरे डाल दिये । उनके चचा
वक्तसिंह भी नगरके द्वारपर डेढ कोशकी दूरीपर पडाव डालकर समयकी
प्रतीक्षा करने लगे । वक्तसिंहकी सेनाका पडाव जिस स्थानपर था, वह पवित्र

स्थान “माताजीका स्थान” इस नामसे विख्यात है। इस स्थानमें आद्या-शक्तिका एक मन्दिर और पांचों पाण्डवोंका बनाया हुआ एक कुण्ड है।

सबसे पहिले वक्तसिंहने युद्धकी भेरी बजाई और रामसिंहकी आगे बढ़नेसे पलिले ही तोपोंके गोले बरसाने लगे। कुछ देर पीछे रामसिंहके गोलन्दाज भी भयानक शब्द करके गोलोंकी वर्षा करने लगे। सारे दिन तोपें हीं चलती रहीं, इस कारण खड़गयुद्ध करनेका किसीको अवसर न मिला। जातीय समरने क्रमसे भयानक मूर्ति धारण करी। इस युद्धमें विदेशी, विधर्मी और विजातीय कोई पुरुष नहीं था, केवल भ्राताके विरुद्ध भ्राता और मित्रके विरुद्ध मित्र खड़े थे। सबकी नाडियोंमें समभावसे रक्त बह रहा था। सन्ध्या होते ही एक आश्चर्य घटनाके द्वारा यह युद्ध बन्द होगया।

रणक्षेत्रके निकट बाजिवा सरोवरके तटपर दादूपन्थी संन्यासीका एक आश्रम है। सुनते हैं कि राजा सूरसिंहने इस आश्रमको बनवाया था। यह आश्रम रणोन्मत्त दोनों पक्षवालोंके ठीक बीचमें स्थापित है। इस आश्रममें बाबा कृष्णदास अपने शिष्योंसहित रहते थे। शिष्यलंग तोपके गोलोंके भयसे भाग गये। परन्तु कृष्णदास शिष्योंके समझाने पर भी वहांसे नहीं भागे, जब दोनों ओरके सैनिकोंने उनसे दूसरे स्थानमें चले जानेका बहुत अनुरोध किया तो उन्होंने कहा कि “यदि तोपके गोलेसे निश्चय ही मेरी मृत्यु होनी लिखी है, तो मैं उसको किसी प्रकारसे नहीं हटा सकूंगा और यदि परमात्माकी वैसी इच्छा नहीं है तो यह तोपके गोले मेरी कुछ हानि नहीं कर सकते।” यह उत्तर सुनकर सब मौन होगये। सारे दिन आश्रममें गोले बरसते रहे। यद्यपि उन गोलोंके लगनेसे कृष्णदासका आश्रम और उद्यान नष्ट भ्रष्ट होगया, परन्तु बाबाजीके शरीरको कुछ हानि नहीं पहुँची और न वह इन गोलोंके गिरनेसे कुछ भयभीत हुए। सन्ध्या होने पर दोनों ओर युद्ध बन्द कर देनेके लिये कहला भेजा। दोनों दलोंने दादूपन्थी संन्यासीकी दैवीशक्तिसे भयभीत होकर युद्ध बन्द कर दिया और रणक्षेत्र छोड़कर अपने घरको चले गये।

दूसरे दिन प्रातःकालसेही फिर जातीय समरानल भयानक वेगसे प्रज्वलित करनेके लिये दोनों ओरके सैनिक सज गये आज राजा रामसिंहने सबसे पहिले अपनी सेना सहित आगे बढ़कर चचाको आक्रमण किया। थोड़ी देरमें ही तोपोंके धुँएँसे आकाशमें घोर अन्धकार छा गया, इन तोपोंके शब्दसे प्रकृति प्रकम्पित और वीरोंके हृदय उत्तेजित होगये। अपमानकी अग्निमें दग्ध हृदय दृढ़ प्रतिज्ञा

अयोके सामन्त शुभ अवसर पाकर “कुत्ता भी सिंहको काटनेमें समर्थ है” इस बात-
के दिखानेके लिये बड़ी वीरताके साथ अपनी चंपावत सेनासहित आगे बढ़े ।
रामसिंहके अत्यंत उद्धत और हिताहित विचार शून्य होने पर भी साहसी
भैरतीय वीरगण राजभक्तिके वशीभूत होकर तत्काल आगे बढ़े । “संग्राम जय
पाकर हटावेंगे अथवा प्राण त्याग करेंगे ” इस प्रतिज्ञाने और भी उन वीरोंको
हृदयको दूने साहससे भरदिया, इस कारण दोनों ओरके वीर अपने भाई वन्धु
और इष्ट मित्रोंकी ममता छोड़ कर एक दूसरेको निर्मूल करनेके लिये तलवार
चलाने लगे । मारवाडके वीरोंमें भैरतीय लोग सबसे श्रेष्ठ वीर गिने
जाते हैं; इस कारण उस अपने नामकी रक्षा करनेके लिये वे अत्यन्त साहसके
साथ लड़नेका उद्योग करने लगे । इन भैरतीय वीरोंका यश चम्पावत लोगोंको
सदासे असह्य है, इस कारण चम्पावतलोग अपने नेताके उस अपमानको स्म-
रण करके बड़ी वीरताके साथ शत्रुओंका हृदय प्रकम्पित करने लगे । चारों
ओर भयङ्कर सामरिक ध्वनि, तलवारकी झनकार, बाणका सन् सन् शब्द
और तोपोंकी आकाशभेदी ध्वनि सुनाई देने लगी । रणक्षेत्रने क्रमसे वीभत्समूर्ति
धारण कर ली । प्रबल उद्दीपना और साहसकी जीवित मूर्तियोंने प्रगट हो-
कर शत्रुओंके संहारमें दोनों पक्षवालोंको दृढ़ प्रतिज्ञ करदिया । प्रत्येक सम्प्र-
दायके वीरनेता दोनों पक्षके सामन्तोंका नाम लेकर पुकारने लगे और पर-
स्पर अस्त्र शिक्षा,—बाहुबल,—साहस—और वीरता दिखानेमें सम्पूर्ण शक्तिका
प्रयोग करने लगे ।

राजभक्तिके चूडान्त निदर्शन स्वरूप भैरतीय अधिनायक शेरसिंहके सबसे
पहिले शत्रुके शस्त्रने प्राण लिये । शेरसिंहका भाई यह देखकर अपनी सेनासहित
आगे बढ़ा । इसके पीछे घोर संग्राम होने लगा, अहोयाके वीर सामन्त अपनी
वीरता दिखानेके पीछे स्वर्ग सिधारे; चम्पावत लोगोंने उनको तत्काल स्थाना-
न्तरित कर दिया । दोनों पक्षके सामन्तोंके मरनेपर उनके अधीनस्थ वीर जय-
लक्ष्मीकी इच्छासे बड़ी वीरताके साथ लड़ने लगे । बहुत कालतक युद्ध होनेपर
भी कोई वीर पीछे नहीं हटा । किन्तु वक्तसिंहकी सेना अधिक थी, वह जहां
अपने भतीजेको देखता वहीं बारम्बार दौड़ता; मारवाडके श्रेष्ठ भैरतीयवीर दूने
शत्रुओंके साथ लड़कर जबतक सर्वथा निर्मूल नहुए तथा जबतक प्रत्येक सामन्त
एक २ कर पृथिवीपर न सो गया, तबतक वक्तसिंहकी विजय नहीं होसकी । अन्त-
में बाध्य होकर जयलक्ष्मी वक्तसिंहका आश्रय लिया । इस जातीय महा संग्रा-

ममें मैरतीय वीर सर्वथा समूल नष्ट होगये । रियाके सामन्त श्रेष्ठके अतिरिक्त इरो-
हा, शिडरा, जुसुरी और मिथरीके अधीन सामन्तगण तथा मिथरीके सामन्तके
तीन साहसी पुत्र और प्रत्येक सामन्तकी समस्त सेनाने इस भयानक संग्राममें
जीवन बलिदान कर दिया था ।

मिथरीके सामन्तके उत्तराधिकारीने जिस अत्यन्त वीरता और असीम साह-
के साथ संग्राम भूमिमें प्राण दिये थे, इंग्लेण्डके और क्रोशिके शासन कालमें
भी वह वीरता किसीमें नहीं देखी गई । उक्त सामन्तके पुत्र अपने पिता
और भाइयोंके साथ प्राणदान करके राजभक्तिका अतुलनीय परिचय देगये
हैं । मारवाडके सर्वनाशकारी इस जातीय महासमरके बहुत दिन पहिले उक्त
सामन्त कुमारके साथ जयपुरके अधीन निरुकाकी सामन्त पुत्रीका विवाह संबंध
स्थिर हुआथा । जिस समय साहसी सामन्त कुमार पात्रीका पाणिग्रहण कर रहेथे,
उस समय उन्होंने सुना कि विद्रोहियोंकी सेना मैरताके निकट आ गई है ।
वीरका हृदय प्रफुल्लित हो उठा; उसी समय गंठ बंधन खोलकर नई बहूका हाथ
छोड़ दिया और शिरपर सेहरा गलेमें जयमाला पहरेहुए ही घोड़ेपर चढ़कर
सूर्यलोकमें अप्सराओंको प्राप्त करनेकी इच्छासे रणभूमिमें पहुँच गये । दूसरे
दिनके युद्धमें यह सामन्त बड़ी भारी वीरता दिखानेके पीछे स्वर्ग सिधार गये ।
मारवाडके कवियोंने मिथरीके उत्तराधिकारीका अनुपमेय वीरत्व विक्रम गौरव
अक्षय करनेकी इच्छासे लिखा है कि:-

“काणेमतिबुलबुला
गल्लादोलिएमाला;
अस्सीकोशखाडा होआया
कन्नवारमिथरिवाला ।”

स्वामीके युद्धकी ओर प्रस्थान करते ही नवपरिणीता पात्री भी जयपुर
छोड़कर मिथरीके ओर आगे बढ़ी । किन्तु शोक ! मिथरीमें पहुँचते ही उत्सव
मूचक शंखआदि मांगल्य ध्वनिके बदले रोदन और हाहाकारका शब्द
उसके कानमें पड़ा । तत्काल उसने एक चिता जलवाई और उसमें स्वामीके
शवके साथ भस्मीभूत होकर सूर्यलोकको चली गई । इस युद्धभूमिमें जाकर मैंने
उपरोक्त सामन्त पुत्रका स्मारक चिह्न खोजा परन्तु उक्त कविताके सिवाय और
कुछ न पाया ।

मारवाडेश्वर रामसिंहके पक्षवाले मैरतीय तथा अन्यान्य संप्रदायके सैनिकोंने
यद्यपि शत्रुओंकी बहुत सी सेनाको संहार किया था किन्तु अंतमें उन्होंने अपनी

पराजयके विषयमें सूचित करदिया कि केवल शत्रुओंकी गोलन्दाजोंके द्वारा यह पराजय हुई है । मैरतीय लोगोंके असीमसाहसी और प्रबल राजभक्त नेता रियाके सामन्त शेरसिंहने इस जातीय युद्धके होनेसे पहिले अपने साले उक्त अहोयाके सामन्तको रामसिंहके विरुद्ध युद्ध करनेसे बहुत रोका, परन्तु अहोयाके सामन्तने इस बातको किसी प्रकारसे भी नहीं माना, अन्तमें शेरसिंहने व्यङ्ग भावसे कहा कि “वक्तसिंहकी सहायतामें रामसिंहके परास्त करनेकी तुममें जितनी शक्तिहै वह किसीसे छिपी नहीं है ।” अहोयाके सामन्तने इसके उत्तरमें कहा कि “और कुछ हो या न हो मैं इस राज्यको अवश्य ही छिनवा दूंगा ।” इस गर्वभरे उत्तरको सुनकर शेरसिंहने महा क्रोधके साथ प्रतिज्ञा करी कि “मैं भी यथासाध्य तुम्हारी इस इच्छाको अपूर्ण रखनेकी चेष्टा करूंगा ।” मैरताकी उस भयंकर रणभूमिमें परस्पर खड़गयुद्धके पहिले दोनों वीरोंमें फिर दुवारा मुलाकात नहीं हुई थी ।

जिस स्थानपर इस शोचनीय हत्याकाण्डमें आत्मीय, ज्ञाति, भ्राता, मित्रोंने आपसमें एक दूसरेको मारकर जातीय एकताकी हीनताका परिचय दिया था, उस स्थानपर एक भी ग्राम नहीं है चारों ओर बड़ा भारी मैदान है । उस युद्ध-भूमिके स्थान २ में उन मृतक वीरोंके स्मारक मंदिर और छोटे २ स्मरण-चिह्न विद्यमान हैं । जो वीर जैसे पदपर था उसके सन्मानार्थवैसा चिह्न ही स्थापित किया है । किसीके स्मरणार्थ मनोरम स्तंभ श्रेणीके शोभित ऊंची चोटीके महल किसीका स्मरणचिह्न सामान्य मंदिर, किसीके शव स्थानपर पाषाण स्तूप स्थापन कराके उसके ऊपर उस वीरका नाम गोत्र और शाखा अङ्कित है । मैंने उन स्मारक मन्दिरोंकी खादित लिपियोंमेंसे बीसकी नकल उतार ली है । यह सब लिपियें राजपूतजातिके प्रशंसनीय चरित्रको सूचित करती हैं ।

इस भयङ्कर जातीय समरमें पराजित होनेके पीछे मारवाडेश्वर रामसिंह चहार दिवारीवाले मैरता नगरके भीतर आश्रय लेनेको बाध्य हुए, किन्तु इस इतने बड़े नगरकी अल्प सेनाद्वारा शत्रुओंके कराल गालसे रक्षा करना असंभव समझकर बुरे अवसरमें मारवाडकी सर्वनाश करनेवाली एक कल्पनाको मनमें सोचा । महाराष्ट्र डाँकू उस ससय बड़े प्रबल होगये थे, रामसिंहने उनकी सहायतासे चचाको परास्त करनेका निश्चय करलिया और आधीरातको उठकर अवशिष्ट सेनाके साथ दक्षिणको भागगये । उन्होंने उज्जयनीमें पहुंचकर महाराष्ट्र

सेनाकी सर्दारीपर नियत था । इस ओर सेंधिया भी मारवाडके राजासे खंडनी लेनेके लिये उस ओरको गया था । जालिमसिंह और अस्वाजी इंगले यह दोनों ही सेनासहित चित्तौरकी ओरको बढ़ने लगे; उनकी दुर्द्धर्ष सेनाने बहुतसे हरेभरे खेतोंको कुचलकर नाश करदिया । अनेक रमणीक ग्राम और मौजे अत्यन्त ही सताये गये । विशेष करके जो ग्राम या नगर जालिमसिंहकी क्रोधाग्निमें पतित हुए उनकी तो अत्यन्त ही दुर्दशा हुई । जालिमसिंह इच्छानुसार वहांके हाकिम और ग्रामीणोंसे कर लेने लगा । धीरजसिंह नामक एक मनुष्य चन्दावत सर्दार भीमसिंहका प्रधान परामर्शदाता था । जिस समय यह झगडा होरहा था उस समय बुद्धिमान् धीरजसिंह हमीरगढका हाकिम था । विद्रोहियोंमें भिलाहुआ जानकर जालिमसिंहने उसके हमीरगढको घेरा । छःसप्ताहतक दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ । किसी ओरकी जय पराजयका कोई लक्षण दिखाई न दिया । इसके पीछे विधाताकी कठोर लिपिके अनुसार धीरजसिंहका भाग्य विगडा।हमीरगढके समस्त कुँए जालिमसिंहकी तोपोंकी रगडसे टूट फूट गये, जलके सोते बंद हुए, तब विवश होकर नगरवासियोंने किलेका द्वार खोलदिया । जालिमसिंहने, हमीरगढको धीरजसिंहसे लेलिया । इस प्रकार और भी दो एक किलोंपर अधिकार करके राजकीय सेना क्रमानुसार चित्तौरकी ओरको बढ़ी । मार्गमें बसी नामक और एक स्थानमें उनकी प्रचंड गति कुछ विलम्बके लिये रुक गई । बसी चन्दावतोंकी भूमिवृत्ति थी । परन्तु इसपर भी जालिमसिंहने अपना अधिकार स्थापित किया था, विजयके आनन्दसे मतवाला होकर चित्तौर पहुँचा चित्तौरके ऊँचे परकोटेके नीचे स्थित होनेके कुछ ही समय पीछे उसको सेंधिया और उसकी सेनाकी सहायता प्राप्त हुई ।

ऊँचापद पाते ही मनुष्य गर्व और अहंकारसे फूलकर कुप्पा होजाताहै । जिन राणाजीका दर्शन पानेसे स्वयं पेशवा अपनेको कृतार्थ समझता था, आज माधोजी सेंधियाने उनको ही चित्तौरके सामने देखना चाहा । सेंधियाकी इस अन्याय अभिलाषासे जालिमसिंहके हृदयमें चोट लगी, परन्तु चारा क्या था ? गर्वित माधोजीकी अभिलाषा पूर्ण करनेको उन्हें चित्तौर जाना पडा । भाग्यचक्रका लौट फेर ऐसा ही होताहै; गौरवगरिमाकी ऐसी ही अनित्यताहै कि जिन राणाजीके पूर्वपुरुषोंका दर्शन करनेके लिये भारतवर्षके अनेक भूपालगण भेंट लियेहुए शिशोदीय राजसभामें आते थे । आज उन्हीं राणाजीको एक महाराष्ट्रीसे साक्षात् करनेके लिये राजसिंहासन छोड राजमार्गमें आनापडा ! राजधानीसे

होगा । ईश्वरीसिंहने इसको स्वीकार करलिया । ईश्वरीसिंहकी रानी इन्दौर-राजपुत्री वक्तसिंहकी भतीजी थी । इस कारण उन्होंने इस सम्बन्धसे अपने चचाके साथ साक्षात् करनेकी प्रार्थना करी, वक्तसिंहने मेवाड मारवाड और अम्बेर तीन राज्योंकी सम्मिलित सीमान्तके बीचोंबीच स्थानमें स्थापित अपने डेरेपर आनेकी आज्ञा देदी । रानी प्रतिहिंसा चरितार्थ करनेवाले अव्यर्थ अस्त्ररूप एक मूल्यवान राजवेशको हालाहल विषसे मिश्रित करके चचाको उपहार देनेके लिये अपने साथ लेगई ।

जयपुरराजरानीके डेरेमें पहुंचनेके कुछ ही पीछे वक्तसिंहको भयङ्कर ज्वर चढआया । तत्कालचिकित्सक बुलायागया । किन्तु राजवैद्यने रोगके सम्पूर्ण लक्षण देखकर कहा कि, “इस रोगका निवारण किसी औषधिसे नहीं होसकता, इस कारण आप परलोकजानेके लिये तैयार होजाइये ।” निभीक हृदय राठौर राजने वैद्यकी इस उक्तिको व्यङ्ग्य समझकर कहा कि, “क्या तुम आरोग्य नहीं करसकोगे ? मेरे इस रोगके आरोग्य करनेकी यदि तुममें शक्ति ही नहीं है तो क्यों मेरी दीहुई भूवृत्तिका भोग करतेहो ? और तुम्हारी इस चिकित्साविद्यासे क्या लाभ है ?” राजाके इस उत्तरको सुनकर वैद्यने शीघ्रही डेरेके निकट एक गढा खोदकर उसमें जल डाला, और जलमें एक औषधि डाली, औषधिके डालते ही जल बहुत शीतल होगया । मृत्युके मुखमें गिरे हुए वक्तसिंहको पुकारकर वैद्यने कहा कि—“महाराज ! आप जिस रोगसे पीडितहैं उसकी केवल यही एक अंतिम औषधि है, किन्तु आपके रोगके लक्षण देखकर मैं समझताहूं कि इससे भी कुछ उपकार नहीं होगा । अब देर करनेका समय नहीं है अन्त समयके धर्म कर्म समाप्त करलीजिये ।” राजवैद्य यह बात भलीभाँति जानतेथे कि विषमिलीहुई पोषाक ही वक्तसिंहकी मृत्युका मूल कारण है, किन्तु उन्होंने इस बातको प्रगट नहीं किया । राजवैद्यके अन्तिम शब्द सुनकर वक्तसिंहने शीघ्रही सब सामन्तोंको डेरेमें आनेकी आज्ञा दी। सब सामन्तोंके आजानेपर उन्होंने मारवाड और निजपुत्रकी स्वार्थरक्षाके लिये उनसे अंतिम अनुरोध किया, वह सब इस बातको स्वीकार करके विदा हुए । इसके पीछे राजगुरुको बुलाकर वक्तसिंहने इष्टदेव और देवालयके उद्देशसे भूवृत्ति निर्धारण कर दी । इसी अवसरमें उनके निर्भय और धीराचित्तमें एक शाप-वाणी प्रतिध्वनित हुई । वक्तसिंहने जिस समय अपने पिताकी हत्या करी थी उस समय अजितसिंहकी अस्सी विधवा रानियोंने चितामें जलनेके अवसर कहा था

शालुम्ब्रासर्दार भीमसिंहने अम्बाजीके साथ कपटका दाव रचकर निश्चय किया कि “ यदि जालिमसिंह इस कार्यसे विदा होजाय तो मैं बीस लाख रुपया देकर राणाजीकी अधीनता स्वीकार करूँ । ” चन्दावत सर्दारकी इस कहनको सवने ही स्वीकारकिया । इस प्रस्तावको सुनकर सबको ही यह विश्वास हुआ होगा कि जालिमसिंहसे शत्रुता होनेके कारण ही सरदारने इस प्रस्तावको पेशकिया । परन्तु यथार्थमें यह बात नहीं थी । कपटी अम्बाजीने चन्दावत सरदारसे यह बात कहलाई थी । होनहारका प्रताप भी कैसा फेरफार करदेताहै ? उसही समय सेंधियाको भी पूनामें लौटजानेकी अत्यन्त शीघ्रता थी । केवल विद्रोहियोंकी मीमांसा न होनेसे वह अवतक नहीं लौट सका था । इस समय चन्दावत सरदारका प्रस्ताव सुनकर उसको अभीष्ट सिद्ध करनेका अवसर मिला और तत्काल उसमें सम्मति दी ।

जालिमसिंह स्वभावसे ही अम्बाजीको अपना मित्र समझता था । उज्जैनके युद्धमें महाराष्ट्र वीर ज्यम्बकजीने प्राण और स्वाधीनता देकर जो महोपकार किया था, यद्यपि उसका बदला जालिमसिंहने अभी नहीं दिया था, तथापि इस उपकारको वह सदा ही अपने हृदयमें स्मरण किया करता था । उस ही उपकारके कारण सदासे अम्बाजीको भ्राता मानता आया । जहांपर दोनोंके स्वार्थकी टक्कर नहीं लड़ी, वहांपर ही उनकी मित्रता अटलभावसे रही । परन्तु आज दोनोंमें अत्यन्त ही मनचली हुई । यह झगडा शीघ्रही निवारण होनेवाला नहीं है । इससे जिस महाअग्निकी उत्पत्ति होगी, उसके द्वारा एक ओर तो अवश्य ही भस्म होगी । अस्तु ! जिस समय राणाके साथ जालिमसिंह चित्तौरके निकट पहुंचा तो अम्बाजीने वनावटी दुःखसे कहा । “ विद्रोही भीमसिंह शरणमें आना चाहताहै, परन्तु उसका कहन यह है कि “ जालिमसिंहके यहां रहतेहुए मैं किसी प्रकार राणाकी शरणमें न आऊंगा, अतएव इस विषयमें जो कुछ उचित हो सो कीजिये । ” पीछे इस प्रस्तावमें असम्यक्त होनेसे शायद किसीके मनमें किसी भांतिका कोई सन्देह हो, इसही कारणसे जालिमसिंहने सबसे पहिले उत्तर दिया; “ यदि यही उसकी आपत्ति है, यदि मुझे ही वह प्रतिबन्धक समझताहै, तो मैं हर्ष सहित अभी इस स्थानसे विदा होताहूँ; विशेष करके मेरे यहां रहनेसे खर्च भी अधिक होजानेकी संभावना है; यदि राणाजीकी इच्छा हो तो एक बार मैं अपने कोटा नगरको ही चलाजाऊँ । ” आज चतुर जालिमसिंह महाराष्ट्रीय वीरके जालमें फँस गया । उसने समझाथा कि मेरा अभिप्राय किसीने नहीं जाना, परन्तु

सिंहासनभ्रष्ट रामसिंहने महाराष्ट्रदस्युनेता जयआप्पा सेंधियाके साथ मिलकर कोटाराज्यपर आक्रमण किया । फिर मेवाडका विध्वंस करके अजमेरमें पहुंचे । इस स्थानपर साहसी राठौर रामसिंहके साथ जयआप्पा सेंधियाका कुछ विवाद होगया था, किन्तु दोनोंके सौभाग्यसे यह विवाद दूर होगया, दोनों सीमान्त पार होकर संहारमूर्तिसे मारवाडमें घुसे । नवीन मारवाडेहक विजयसिंह राजपूत स्वभाव सुलभवीरत्व विक्रम साहस उद्दीपना भूषणा विलक्षणरूपसे भूषित थे । विदेशी डाकुओंके साथ रामसिंहका अतमान समाचार सुनकर वह भी शीघ्र ही मारवाडके सम्पूर्ण सामन्त और अपने अधीनस्थ २००००० दो लाख सेनाको साथ लेकर बड़ी वीरतासे आगे बढे ।

जिस प्रकार दो भिन्न प्रान्तोंसे उत्ताल तरङ्गमाला विस्तारके साथ हुङ्कार शब्दसे दौडते हुए दो समुद्रोंके संघर्षणसे भयङ्कर काण्ड संघटित होताहै, उसी प्रकार इन दोनों सेनाओंके साक्षात् दर्शनसे हुआ । जातीय महासंग्राममें जन्मभूमिकी छातीपर विजातीय महाराष्ट्रियोंके आनेसे महावीर राठौर लोगोंका रक्त जिस भयानकरूपसे गरम हो उठा होगा, एकता, उद्दीपना, शौर्य, वीर्य, विक्रमने उनके हृदयमें जिस पूर्ण शक्तिका सञ्चालन करदिया होगा, उसका सहजमें ही अनुमान होसकताहै । यदि सिंहासनभ्रष्ट रामसिंह अकेले ही मारवाडी सेनाके साथ संग्रामसागरमें कूदते, यदि वह मारवाडका सर्वनाश साधनेके लिये विजातीय महाराष्ट्रियोंकी सहायताके लिये मातृभूमिमें न लाते तो इस संग्राममें इतनी उद्दीपना कभी दिखाई नहीं देती । रामसिंहने सिंहासनके लाभकी इच्छासे समरक्तवाही भ्राता आत्मीय, मित्र स्वजातीय सबके प्राणसंहारके लिये जो दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंको प्रमत्त करदियाथा, अन्तमें उस प्रमत्ताने ही वीरक्षेत्र मारवाडको ठीक मरुक्षेत्र बनादिया । रजवाडेके प्रत्येक राज्यके अधःपतनका मूल कारण निश्चय ही लुण्ठनप्रिय पैशाचिकस्वभाववाली यह महाराष्ट्र जाति ही है ।

दोनों पक्षके सैनिकोंने मैरताकी बहुत दूरीपर एक दूसरेको देखते ही गोली चलाना आरंभ करदिया । घुँएँसे चारों ओर अन्धकार छागया, तोपोंके वज्रकी समान गंभीर शब्दसे मारवाड काँप उठा । उस दिन दोनों पक्ष ही समान साहस, और समान तेजसे बड़ी वीरताके साथ गोले वरसानेमें लगेरहे, खङ्ग-युद्ध बहुत कम हुआ । मैरताके निवासियोंने इस युद्धमें सैनिकोंके भोजनकी सामग्री संग्रह कर दी; किन्तु इस सम्बन्धसे बहुतसे मारे भी गये; यहांतक

सकी । उसने समझा कि अंवाजी कभी सेंधियाकी बातको न मानेगा; यदि वह मान भी लेगा तो राणाजी प्रतिवाद करेंगे, क्योंकि वह मेरे विक्रमको भलीभांतिसे जानते हैं । सेंधियाके ऊपर आशा रखनेका एक विशेष कारण था । सेंधियाने गुप्तभावसे जालिमसिंहसे प्रतिज्ञा कीथी कि “मेवाडका पुनरुद्धार करनेके लिये मैं तुम्हें बहुत सी सेना दूंगा।” इसके सिवाय एक भारी कारण यह भी हुआ कि जालिमसिंहने मनमें समझा था कि यदि मैं सहायता नहीं करूंगा तो सेंधिया कभी भी राणाजीसे अपनी खंडनीको नहीं वसूल करसकेगा । * बुद्धिमान अम्बाजीने इस बातको समझकर पहिले ही सब प्रबन्ध करलियाथा । सेंधियाने जब उस अपनी वदनीके रुपयेको मांगा तब वह स्वयं उसके देनेको राजी होगया × सेंधियाने भी अम्बाजीकी बातको मानलिया । अम्बाजीने वह समस्त रुपया देदिया, रुपयेको पाते ही सेंधियाने पूनाकी यात्रा की । उसही दिन राणा और जालिमसिंहके साथ उसका संबन्ध अलग होगया । जानेके समय सेंधियाने अंवाजीको अपना प्रतिनिधि बनाया और इस बातके प्रबंधकरनेके लिये कि वह समस्त रुपया अंवाजीको वसूल होगया एक बड़ी सेना भी वहां स्थापित करता गया । सेंधियासे अपना कार्य निकालकर चतुर अंवाजी राणाके मन्त्री शिवदास और सतीदासके पास गया और उनका अभीष्ट साधन करने और राणाजीका प्रताप अंचल रखनेकी प्रतिज्ञा करके सब भांति सफलकार्य हुआ । कुछ थोड़ेसे घंटोंमें ही यह समस्त कार्य सिद्ध करके धूर्त अम्बाजी जालिमसिंहके पास पहुंचा और हृदयके आनन्दको छिपाता हुआ धीरभावसे बोला— “आपकी वासना पूर्ण करनेके लिये सवने सम्मति देदी।” अंवाजीने इस कार्यको इतनी उत्तमतासे पूर्ण किया था कि जैसे ही जालिमसिंहसे वह यह वचन कहरहा था कि वैसे ही राणाके प्रतिहारिने आकर नम्रतासे निवेदन किया । “आपकी रुखसतकी नज़र तैयार है।” जालिमसिंहकी समस्त आशा टूटगई, परन्तु वह किंचित भी कातर न होकर शीघ्रता पूर्वक चित्तौरसे चले गये । इसके पश्चात् शालुम्बासर्दारने चित्तौरके दुर्गसे बाहर आकर राणाजीके चरणोंको छूआ और क्षमाप्रार्थना की । अंवाजीकी आशा पूर्ण हुई और वह मेवाडका सर्वमय कर्ता होकर सुखसे अपना काल व्यतीत करने लगा ।

* चन्दावतोंको चित्तौरसे दूर करनेकी एवजमें राणाने सेंधियाको २० लाख रुपया देना स्वीकार किया था । यहांपर उस ही खंडनीका वर्णन है ।

× दक्षिणपथमें अम्बाजीकी जो सम्पत्ति थी, उसहीके ऊपर इसने हुंडी करके अपने नायवके पास भेज दी । उस ही सम्पत्तिसे सेंधियाको सम्पूर्ण रुपया दियागया ।

प्रस्तुत हुए । राठौर राज विजयसिंहकी नस २ में उत्तेजनाका रक्त दौडरहा था, यद्यपि विजयसिंहकी सलाह युद्ध करनेकी थी, परन्तु उनके सहायकारी वीकानेर-के महाराजने युद्धसे भागनेका परामर्श दिया । वीकानेरके महाराजने युद्धकी दशा देख कर मन मनमें निश्चय कर लिया कि महाराष्ट्रीय डाकुओंके हाथसे वीकानेरकी रक्षा करनेके लिये भागना ही उचित है । इस महा संकटके समय वक्तसिंहकी समान परमसाहसी सेनापतिकी आवश्यकता थी, किन्तु विजयसिंहकी सेनामें वैसा साहसी और निर्भय चित्त कोई भी नायक नहीं था, इस कारण इस भागनेके प्रस्तावमें अधिक सामन्तोंने सम्मति देदी; यह भागनेका समाचार शीघ्र ही सब सेनामें फैलगया, यहां तक कि शत्रुओंको भी इस बातका पता लगगया । सन्ध्या होते ही वीकानेरके महाराजने सेना सहित अपनी राजधानीका मार्ग लिया । इधर रामसिंह राजपूत और महाराष्ट्रीयसेनाको साथ लेकर विजयसिंहके शिविरकी ओर दौडे । यद्यपि सब सेनाका मैरताकी ओर भागना निश्चय होगया था, परन्तु रामसिंहके सेनासहित आते ही राठौर लोग अपनी २ सेना लेकर अपने २ प्रदेशोंको भाग गये । रामसिंह और महाराष्ट्रनेताने विनाही युद्धके रणक्षेत्रमें अपनी जय पताका फहरादी । भागे हुए राठौर लोग तोपोंको युद्धमें ही छोड गये थे, इस कारण महाराष्ट्रियोंने बडे आनन्दसे जयध्वनिके साथ उनपर अधिकार करलिया । राठौर लोगोंने भागनेसे पहिले शोच लिया था कि भगवान् हमारे और विजयसिंहके विरुद्ध है यदि प्रसन्न होता तो क्या भ्रान्तिसे हम अपने ही पक्षकी सेनाके साथ परस्पर युद्धकरते ? इस कारण युद्धसे भागना ही उचित है । यदि यह कुसंस्कार राठौर लोगोंके चित्तमें न घुसता तो निश्चय ही महाराष्ट्रीय लोग जयलक्ष्मीका आलिङ्गन करनेमें समर्थ न होते ।

वीकानेरके महाराजकी समान कृष्ण गढके राठौर राज भी तत्काल अपने राज्यकी ओर भागगयेथे । सम्पूर्ण सैनिक इसी प्रकार हतवीर्य, भंगसाहस और भयभीत होकर भागगये, जब विजयसिंह अकेले रहगये तो उन्होंने भी भागनेका निश्चय करलिया । खूब अन्धेरा होजानेपर विजयसिंहने भी राहिनके सामन्त और वचे हुए रक्षकोंको साथ लेकर नागरकी ओर घोडा हांक दिया । हा ! भाग्य क्या ही प्रबल है ! कई दिन पहिले जिन मारवाडेश्वरके लिये दो लाख मनुष्य जीवनदान करनेके लिये प्रस्तुत थे, इस समय वही मारवाडेश्वर साधारण पुरुषकी समान असहाय अवस्थामें जारहे हैं । समयके प्रभावसे विजयसिंहके सहगामी राहिनके सामन्तने राजाके स्वार्थकी ओर दृष्टि न देकर अपना स्वार्थ सिद्ध किया ।

सेनाका खर्च देकर भेंटमें और भी साठ लाख रुपये दिये जायगे । अपनृपाति रत्नसिंह दो वर्षमें कमलमेरसे दूरकिया गया; विद्रोही रणावत सर्दारसे जिहाज-पुर व दूसरे सर्दारोंसे राणाकी राजभूमिका पुनरुद्धार कियागया * इन कई एक कार्योंके सिद्ध होजानेसे यद्यपि मेवाडका बहुत उपकार हुआ, परन्तु दो एक महान कर्तव्य जो थे उनका प्रबन्ध अम्बाजीने क्या किया ? मेवाडराज्यके सुकुटस्वरूप गदवाड जनपदका पुनरुद्धार, वूंदी और मेवाडके बीचके झगडेको दवाना, और महाराष्ट्रीय लोगोंको छीनीहुई जागीरोंका उद्धार साधन करना । क्या अम्बाजीने इन तीन महानकार्योंका कुछ भी विचार किया था ? जिस प्रकार वह पहिले २ अनुरागके साथ मेवाडकी भलाइयें किया करता था, उनको देखकर सबने आशा कीथी । परन्तु प्रभुताका स्वाद चखते ही अम्बाजी घोर स्वार्थी होगया और तीन महान् कार्योंको विना साधनकिये ही “मेवाडका सूवेदार बनबैठा । क्रूर विषधर और कितने दिनतक परोपकार मंत्रसे दीक्षित रहैगा ? कुछ कालके बीतते ही स्वार्थपर महाराष्ट्रीयने अपनी मूर्ति धारण की और तत्काल उन लोगोंके साथ मिलगया कि जो उस कालमें क्रूरकर्म किया करते थे; परन्तु राजपूतलोग कृतज्ञताको भूलनेवाले नहीं होते । यद्यपि चतुर और स्वार्थसे अंधेहुए अम्बाजीने इकरार नामेके अनुसार कार्य नहीं किया । यद्यपि उसने मेवाडका बहुतसा धन पचालिया था, तथापि जो साधारण उपकार उसके द्वारा हुआ राजपूतगण उसको भूल नहीं सके । जबतक अम्बाजी मेवाडका उपकार करतारहा, उतने दिन तक मेवाडके रहनेवाले हृदयसे उसकी भक्ति करते थे । इस समयमें चन्दावतोंको राजसभामें उनके पूर्व अधिकार मिलगये थे, इस कारण राजमंत्री सतीदास और शिवदासकी शंकाकी सीमा न रही । भ्राता सोमाजीके शोचनीय वधकी बात याद करके वह प्रतिदिन भयके मारे कंपायमान सुआ करते थे । वह समझतेथे कि यह चन्दावतलोग हमारे विरुद्ध कोई कपट जाल रचरहेहैं, या हमको भी सोमाजीकी भांतिसे मारडालनेका उपाय कररहेहैं । इन असार चिन्ताने उन्हें यहांतक व्याकुल किया कि अन्तमें दोनोंने अम्बाजीसे सेनाकी सहायता मांगी । और इसके लिये विशेष अनुरोध किया कि मेवाडमें एक ग्हकारी सेना भी स्थित रहै । वह दोनों मंत्री इस बातको जानते थे कि विना अम्बाजीकी सहायताके

* सिन्धियोंसे रायपुर राजनगर; पुरावतोंसे गुरला और गादरमाला; सरदारसिंहसे. हमीरगढ; और शालुम्रासर्दारसे कुरजकुवारियो;—राजभूमिके अन्तर्गत इन परगनोंका उद्धार हुआ था ।

और इस अंधेरी रातमें उक्त ग्राममें भी घोड़ेके मिलनेकी संभावना नहीं थी; परन्तु विजयसिंह स्वयं ही घोड़ेकी खोजमें घूमने लगे ।

विशेष अनुसंधान करनेके पीछे एक जाट कृषकसे भेंट हुई, विजयसिंहने अपना असली परिचय छिपाकर उससे निश्चय करलिया कि “वह उनको सूंघों-दयसे पहिले नागर पहुँचा देगा और उसके बदले पाँच रुपये लेगा ।” किसानने यह भी कहा कि “बाजी साही अर्थात् प्रचलित मुद्रा लूंगा । छद्मवेषी महाराजने इसको स्वीकार कर लिया । वह जाट किसान शीघ्रही अपने खेतीके कामकी एक साधारण बैल गाड़ी लेआया । मारवाडके रत्नासनपर बैठनेवाले महाराज विजयसिंह उसके ऊपर बैठे । विजयसिंह बहुत शीघ्र नागरमें पहुँचनेके लिये व्याकुल थे; इस कारण दोनों बैलोंके मध्यमगतिसे दौड़नेपर भी महाराज “हांक ! हांक” शब्द कहकर गति वृद्धिकी चेष्टा करने लगे । सरलस्वभाव जाटने देखा कि बैल पूरी शक्तिसे दौड़ रहे हैं । इस कारण विजयसिंहके वारम्बार हांक २ शब्द कहनेसे उसका धीरज जाता रहा; उसने क्रोधके साथ कहा कि हांक ! हांक ! तुम हो कौन ? इतनी शीघ्रतासे जानेका क्या प्रयोजन है ? तुमसे बलिष्ठको इतनी शीघ्रतासे पहुँचनेकी अपेक्षा विजयसिंहको सेनासहित भैरताके युद्धमें रक्षा करना शोभनीय है । तुम्हारे व्यवहारसे मालूम होता है कि महाराष्ट्री लोग तुम्हारे पीछे आ रहे हैं । अब वृथा हांक २ शब्द मत कहना कारण कि इससे अधिक वेगसे मैं गाड़ी नहीं लेजा सकूँगा । मारवाडेश्वरने अपनी अवस्था समझकर यद्यपि उसको कुछ प्रत्युत्तर नहीं दिया; परन्तु बीच २ में फिर भी “हांक २ शब्द कहकर विरक्त करने लगे । जाट पहिलेकी समान ही बैलोंको चलाने लगा । जब नागर एक कोशकी दूरीपर रह गया तो प्रभात हो गया, ऊषादेवी हास्यमयी मूर्ति धारण करके दिखाई दी । उस धुँधले प्रकाशमें अधीर आरोहीकी मूर्ति पूर्ण रूपसे देखनेके लिये सरल जाट किसानने अपना मुख फिराया और मारवाडाधीश्वर विजयसिंहको पहचानकर भय और विस्मयसे व्याकुल होगया । राज्येश्वरके साथ एक आसनपर बैठा था, इस कारण भयभीत होकर पृथ्वीपर कूदकर क्षमा प्रार्थना करने लगा । जाटकी सरलतासे प्रसन्न होकर विपत्तिमें पड़े हुए विजयसिंहने मुस्कराकर धीरेसे कहा कि “डरो मत, मैंने तुमको क्षमा कर दिया, गाड़ी हाँको ।” राजाकी आज्ञा पाकर जाट फिर अपने आसनपर बैठगया । गाड़ी जब तक राजधानीके द्वारपर न पहुँची—विजयसिंह तब तक बराबर हांक हांक शब्द कहते रहे । इसके अनन्तर नागरमें पहुँचकर विजयसिंहने

करनेलगे । इन तीनोंने अपनी थोड़ेकालकी स्थिर रहनेवाली प्रभुताईसे ऐसे कठोर कार्य किये कि मेवाडका रक्त चूसलिया । विवश होकर अम्बाजीने गणेशपंतको पदच्युत किया, और उस पदपर प्रसिद्ध रायचंदको स्थित किया । रायचंद अम्बाजीका प्रतिनिधि हुआ तो, परन्तु किसीने उसकी आज्ञाको मान नहीं दिया, न किसीने उसको प्रतिनिधि समझा । इसही कारणसे फिर राज्यमें लड़ाई झगड़े उत्पन्न होकर अराजकता फैल गई । फिर नगर वासियोंके धन मान पर आन बनी । प्रत्येक दलके मनुष्य अपना २ अभिप्राय पूर्ण करनेके लिये राज्यमें उपद्रव करके घोर अत्याचार करने लगे । अत्याचार, कष्ट और लोभने मेवाडभूमिको इमशानभूमिकी समान डरावना बना दिया । इस अवसरको मनमाना समझकर भरहटे, रुहेले और फिरंगीलोग बिना रोक टोकके आयकर अभागे राजपूतोंकी समस्त संपत्ति लूटकर और भी भय उपजाने लगे । इसही अवसरमें चंदावतलोगोंने अपने गोत्रपति वीरवर चंडके मंत्रका निरादर करके दुष्ट सिन्धीयोंसे भेल किया और उनकी सहायतासे लूट खसोट करने लगे । इन लोगोंके अत्याचारका निवारण करना कठिन विचारकर राणाजीने आज्ञा दे दी कि चंदावतोंकी जागीरें छीन ली जाय । इस आज्ञाको पाते ही राजकीय सेनाने कोरावडको अपने अपने अधिकारमें कर दिया और शालुम्बा कोट पर भी जाकर तोपें लगा दीं । सिन्धीलोग यह देखकर शालुम्बाको छोड़ देवगढकी भागे । तब तो चंदावत लोगोंपर बड़ी विपत्ति आई । विपत्तिसे छुटकारा पानेका कोई उपाय न देखकर उनके मुख्य अध्यक्ष अजितसिंहने अम्बाजीके पास एक दूत भेजा, और कह दिया कि हमें सहायता मिली तो हम दश लाख रुपये देंगे । लोभी भरहटा इस लोभको संभाल न सका और ललचाया । दश-लाख रुपयेके लिये उसने अपने प्रतिनिधि रायचंदको मेवाड छोड़कर जानेकी आज्ञा दी, तथा शिवदास और सतीदासका मंत्रीपद छीनलेकर चंदावतोंकी अनुकूलता करनेको तैयार हुआ * शालुम्बा सद्दरको राजसभामें फिर वही पहिली प्रतिष्ठा मिली और अग्रजी*मेहताको दीवान बनाया तथा विरोधी शक्ता-

—था । जब मैं उदयपुरमें आया तो यह भी राणाजीका एक मंत्री था । यह श्रीजी अत्यन्त कुचक्री होनेपर भी महा उत्साही और सदाशय था । यह विश्वाचिका रोगसे मृत्युको प्राप्त हुआ था ।

* यह घटना संवत् १८५३ (सन् १७९७ ई०) में हुई थी ।

× टाडसाहब जब उदयपुरमें पहुंचे, उस समय अग्रजीमेहता राणाजीका दीवान था । टाडसाहब कहते हैं कि “अग्रजी किसी प्रकारसे भी दीवानीके लायक नहीं था।” जिससमय राजनीति जाननेवाले धर्मपरायण पंचौलगण मेवाडकी दीवानीसे अलग हुए हैं, उसही समय मेवाडकी प्रतिष्ठापर घोर आघात—

प्रतिद्वन्दी राठौर लोगोंसे बहुत ही डरते थे । पाठकोंको स्मरण होगा कि, भयके कारण ही ईश्वरीसिंहने जघन्य उपायसे वक्तसिंहके प्राण संहार किये थे, विजयसिंहके सहायता मांगनेपर वह भयभीत होगये और जिस अतिथि धर्मको राजपूतजाति सदासे पालन करती चली आरही है उस आतिथ्य धर्मके शिरपर लात मार कर विजयसिंहको बन्दी करना निश्चय कर लिया । किन्तु व्यक्ति विशेषकी राजभक्ति और अनुरक्तिसे उनकी वह पापवासना सर्वथा व्यर्थ होगई । सत्यप्रिय इतिहास लेखक राजपूत जातिकी समालोचना करनेके अवसर समय २ पर अग्रिय बातें लिखनेको बाध्य है, किन्तु उस राजपूत चरित्रका उज्ज्वलांश कहांतक है इस बातको भी उपरोक्त राजभक्ति और अनुरक्ति भलीभाँति प्रगट किये देतीहै । जिस राज्यमें आत्मविग्रहानल प्रज्वलित हो उठे उस राज्यके अधिवासी लोग सर्वथा हिताहित ज्ञान शून्य और आत्मीय मित्र भ्रातृ राजनैतिक सम्बन्ध भूलकर किसी पापके करनेमें भी पराङ्मुख नहीं होते । संसारके प्रत्येक भागकी प्रत्येक जातिमें यह शोचनीय दृश्य दिखाई देताहै । अतः राजपूत जातिमें यह दृश्य न होगा” ऐसी आशा अनुचित है । इंग्लैंड और फ्रांसके आत्मविग्रहानलमें जैसी अत्यन्त भयङ्कर और लोमहर्षण घटनायें घटी थीं, उनको स्मरण करनेपर कौन इस बातको स्वीकार नहीं करेगा “ कि आपसकी लड़ाईके समय अधिवासी लोग विचार बुद्धि शून्य होकर मनुष्यके न करने योग्य कामोंको कर डालतेहैं । हम जिस घटनाद्वारा उस आत्मविग्रहके समय राजपूत चरित्रका प्रशंसनीय अंश प्रगट करना चाहते हैं, उसको नीचे लिखते हैं ।

भैरतीय लोगोंके सर्वप्रधान अधिनायक शेरसिंहके राजभक्ति दिखानेके लिये जीवन दान करनेका वर्णन ऊपर लिखचुके हैं । वीर श्रेष्ठ शेरसिंह जिस ओरसे लड़ेथे उस पक्षकी पराजय हुई थी, इस कारण वक्तसिंहने शेरसिंहके अधिकृत प्रदेश रियापर अधिकार करके उस परिवारकी एक कनिष्ठ शाखाके अधिकारमें उसका सब स्वत्व देदिया था । वक्तसिंहद्वारा अनुगृहीत उस रियाके नवीन सामन्तका नाम जवानसिंह है । विजयसिंह जिस समय सेनाकी सहायता मांगनेके लिये जयपुरमें पहुँचे थे, जवानसिंह भी उस समय निजहित साधक प्रभुपुत्र विजयसिंहके साथ वहां गये थे । जवानसिंहने जयपुर राज्याधीन अटचोलनामक स्थानके प्रबल शक्तिसम्पन्न सामन्तकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था । उक्त सामन्त जिस प्रकार शक्तिशाली थे उसी प्रकार जयपुर राजके विश्वासपात्र थे । अम्बेरपाति ईश्वरीसिंहने षड्यंत्र जालके समय केवल

एक समय जिस महाराष्ट्री वीरके भुजबलसे राजस्थानकी समस्त भूमि काप गई थी, जिसकी लोभरूपी अग्निमें मेवाडभूमि भस्म होगई थी आज वही माधोजी सेंधिया इस असार संसारको छोड़ परलोकवासी हुआ । जो दुराकांक्षा

—दुराकांक्षाके पापमंत्रसे उत्साहित होकर अपने कुटुम्बियोंको बड़े कष्टमें डाला। इससे शत्रुता सन्देह, धोखेवाजी, विश्वासघातकता, इत्यादि, दुराचार चारों ओर फैल गए । जिस समय अमरचंदके तेजस्वी आचरणने पंचौलियोंमें परस्पर झगडा फैलाया, और देप्रालेगोंपर अमरचंदका वैर जब प्रबल हो उठा, तब मेवाडको चारों ओरसे विपत्तियोंने आ घेरा । इन उपद्रवोंको देखकर भी किसीके शान-नेत्र नहीं खुले; किसीने भी इन उपद्रवोंके शान्त करनेका विचार नहीं किया । लडाईं झगडने ही पूर्वोक्त रोगको पिछली हद तक पहुंचा दिया। हीथके अधिकारकी वायतमें फिर खुमानसिंह और शक्ता-वतोंमें जो झगडा पैदा हुआ, उसहीने इस रोगकी पीडाको बढ़ाया। महाराज नाथजीका भयानक वध और उससे देवगढके राजा जसवन्तसिंहका वैरभाव व एकांतवास, अपनृपति रत्नसिंहका खडा होना (क) माधवसिंहको अम्बेरके सिंहासनपर स्थापित करनेके समय जो उपद्रव हुआ था, यहांपर उसको ही लक्ष किया गया है ।

झाला रघुदेवका कठोर उद्यम और अमरचंदके द्वारा सिन्धीसेनाके पालन होने, इत्यादि अनर्थोंने पूर्वोक्त रोगको अधिकाईसे बढ़ाकर मेवाडको भयंकर विपत्तिमें डाला । इसके ऊपर राणाने भोग विलासमें मग्न होकर जो राजकार्यका देखना छोड़ दिया इसने और राणा अरिसिंहके धाईभाइयोंके कपट जालमें । मिलकर राज्यमें अनर्थका ऐसा बीज बोया कि फिर उत्त संकटसे मेवाडको कोई भी न छुड़ा सका । संवत् १८२९ में बूंदीके राजाकी विश्वासघातकतासे राणाके मारे जानेपर राज्यमें सबही कोई अपनेको बड़ा समझने लगे । बालक हमीरको किसीने कुछ न समझा । दुष्टोंके अत्याचारसे राज्यमें राजश्रीकी परछाई तक भी न रही । इस समय आप (राणा भीमसिंहसे), शालुभ्रासर्दार भीमसिंह और उसके भाई अर्जुनकी परामर्शसे विदेशीय सेनाको घेतन देकर रख रहे हैं; क्या इसके द्वारा आप समस्त प्राचीन भ्रम और अनर्थोंको दृढ़ नहीं करते हैं ? स्वयं आप, और श्रीवाईजीराज (राजमाता) विदेशी और दक्षिणियोंका विश्वास करके राज्यके पाहिले रोगको संक्रामक किये डालते हैं; इसके अतिरिक्त राज्यकार्यमें श्रीमान्का मन नहीं लगता है । इस समय क्या किया जा सकता है ? अब भी औषधि पानेका उपाय है । आइये! हम लोग एक प्राण होकर मंत्रांके कर्त्तव्यकार्योंका उद्धार करनेकी चेष्टा करें; इस कार्यमें जीत होगी; यदि जीत न भी हुई तथापि यह बढ़ता हुआ रोग रुक तो अवश्य ही जायगा। परन्तु अब भी यदि ध्यान न दिया जायगा, तो इस रोगका दूर करना मनुष्यकी सामर्थ्यसे बाहर समझिये, यह दक्षिणीलोग धावकी नाई हैं । आइये उनका हिसाब चुकाई, और सर्वप्रकार उनके संसर्गको छोड़नेका यत्न करें;—नहीं तो हम लोग सदाके लिये जननी जन्मभूमिसे हाथ धो बैठेंगे । इस समय राज्यमें सबकहीं सन्धि बन्धनादिका आडम्बर हो रहा है । मैंने सबही बातोंको देखा है। यदि इसमें कुछ अयोग्य बात हुई हो तो क्षमा कीजिये; आइये हम लोग होनहारकी प्रतीक्षा करें । सर्दार, सामन्त, मंत्री, सभासद सबही एक प्राण होजायें । राज्यका मंगल होगा, और इस विषयके साथ सबही मंगल होगा । परन्तु विचारकर देखिये कि यह प्रयोग साधारण नहीं है, यदि यह दूर न होगा, तो हम सबकी दुर्दशा होजायगी । ”

दिखाई थी । विजयसिंहने भी उनके साथ उसी प्रकारका व्यवहार किया । उन्होंने घोड़ेपर चढ़कर समाचार भेजा कि “ मैं आपके आनेकी बाट देख रहा हूँ । ” विश्वासघाती ईश्वरीसिंहने भी इस बातका अर्थ भलीभाँति समझ लिया । मैरतीय सामन्त नेताने समाचार पाते ही अपनी तलवार म्यानमें कर ली; और ईश्वरीसिंहके सम्मुख आकर आदरके साथ प्रणाम किया । जवानसिंहकी यह राजभक्ति मनुष्यके हृदयपर जिस विचित्र भावका उदय करनेमें समर्थ है, उस राजभक्तिने ईश्वरसिंह नर पिशाचके हृदयतकमें उस विचित्र भावका उदय करदिया था । ईश्वरीसिंहने प्रत्यभिवादन पूर्वक सामन्त मण्डलीको लक्ष्य करके कहा कि “ इस अभूत पूर्व प्रशंसनीय राजभक्तिको देखो ! ऐसे राज सामन्तसे रक्षित राजाके विरुद्ध जय प्राप्त करनेकी आशा वृथा है ।

राजपूत जातिके प्रबल शत्रु महाराष्ट्रियोंको मारवाड निकाल देनेके लिये ही विजयसिंह उस शोचनीय दूरावस्थाके समय अन्यत्र सहायप्राप्तिकी आशासे स्वयं बाहर निकले थे, किन्तु कहीं भी उनका मनोरथ सिद्ध न हुआ, अन्तमें हताश होकर जिस साहस और सावधानीके साथ बाहर निकले, उसी साहस और सावधानीके साथ नगरमें फिर लौटआये । देखते देखते छः मास और समाप्त होगये, तथापि महाराष्ट्री लोग नागरके भीतर रामसिंहकी जयपताका न फहरा सके । किन्तु रामसिंहका माग्यचक्र बदल जानेके कारण मारवाडके अन्यान्य प्रदेशोंको महाराष्ट्रियोंने अपने अधिकारमें करलिया । मारावोत, पूरवत्सार, पाली और सुजात आदिके निवासी रामसिंहकी अधीनता स्वीकार करनेको बाध्य होगये । केवल राजधानी जोधपुर, नागर झालोर सिजवाली और फलोदी प्रदेश उस समय तक विजयसिंहके ही शासनमें रहे । जब एक वर्ष इसी प्रकार घोर विपत्तिमें समाप्त होगया, तब इस विपत्तिसे बचनेके लिये विजयसिंहने एक ऐसे प्रस्तावमें सम्मति दी जिसके कारणसे मारवाड राजका चमकता हुआ रत्न स्वरूप प्रधान प्रदेश बहुतकालके लिये मारवाडसे विच्छिन्न होगयाथा ।

विजयसिंहके अधीनस्थ एक राजपूत और एक अफगानी सैनिकने प्रस्ताव किया कि “ महाराज यदि हमारे कुटुम्बका भरण पोषण भार लेना स्वीकार करें तो इस संपूर्ण विपत्तिके मूलकारण महाराष्ट्रियोंके सेना नायकका हम दोनों मिलकर प्राण संहार करदें । विजय सिंहने इस बातको स्वीकार करलिया । दोनों पदाति महाशत्रुताके बहानेसे विषम विवाद करते हुए महाराष्ट्र नेताके

शिविरकी ओर चलने लगे। जयआप्पा सेंधिया उक्त समय हाथ मुँह धोनेके काममें लगे हुए थे। उनको देख कर दोनों एक दूसरेको बहुत ही कटु वाक्य कहने लगे, उनके सामने पहुँचते ही एकने हिसाबका कागज फेंक दिया और विवाद निवटानेके लिये महाराष्ट्रनेताको मध्यस्थ होजानेकी प्रार्थना करने लगा। क्रमसे दोनोंने जयआप्पा सेंधियाके बहुत निकट जाकर विवादका कारण कहना आरंभ कर दिया। जयआप्पा सेंधिया धीर चित्तसे उस सब विषयको सुन रहे थे, इसी अवसरमें अफगानी प्यादेने, “यह लो नागर !” कहकर जयआप्पासेंधियाके हृदयमें अपनी तलवार घुसेड दी; तत्काल दूसरे राजपूतने भी “यह लो जोधपुर” कहकर अपनी तलवार मारी। दोनों शीघ्रतासे भागे, अफगानी उसी समय पकड़कर टुकड़े कर दिया गया; किन्तु चतुर राजपूत बहुतसे लोगोंमें जा भिला और सिपाहीकी समान “चोरा चोर !” पुकारता हुआ वेखटके नागरके भीतर पहुँच गया। विजयसिंहने इस समाचारको सुनकर प्रतिज्ञानुसार पुरस्कार तो दे दिया परन्तु, हत्यारेका मुख देखना स्वीकार न किया।

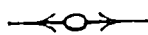
जयआप्पासेंधियाके परलोक सिधारनेपर माधोजी सेंधिया सेनापतिके पद-पर प्रतिष्ठित हुए। महाराष्ट्र सेना पहलेकी समान ही नागरको घेरे रही, यथा-साध्य चेष्टा करके भी दूसरे स्थानोंसे आती हुई सेना और भोजन सामग्रीको नागरमें जानेसे न रोक सके। इन महाराष्ट्रियोंको एक स्थानसे दूसरे स्थानमें जानेका पूरा अभ्यास था, इस कारण एक वर्षसे अधिक कालतक एक स्थानपर खाली बैठना उनको अत्यन्त कष्ट दायक होगया। विशेष कर नागरकी अपेक्षा किसी समृद्धिशाली देशपर आक्रमण करनेसे विशेष लाभकी संभावना समझकर माधोजी विजयसिंहके साथ संधि करनेक लिये विवश होगये। विजयसिंहने महाराष्ट्रियोंके ध्वंसका कोई उपाय न देखकर संधि करनेमें सम्मति सूचित कर दी। अन्तमें यह निश्चय हुआ कि महाराष्ट्री लोग रामसिंहका पक्ष छोडकर मारवाडसे विलकुल चलेजायँगे; विजयसिंह तीन वर्ष पीछे उनको निर्धारित कर दिया करेंगे; “मुण्डकाटी” अर्थात् जयआप्पाके प्राण संहारके बदलेमें दुर्गसहित सम्पूर्ण अजमेर प्रदेश महाराष्ट्रियोंके अधिकारमें दे दिया जायगा और सेंधिया उस प्रदेशमें अपनी पूर्ण राजशक्ति सञ्चाल कर सकेंगे।” वर्षाकाल निकट देखकर माधोजी सेंधिया उक्त निर्धारित संधि बन्धनमें बँधकर अजमेरको चलेगये।

उस अजमेर दुर्गकी चोटी पर इस समय ब्रिटिश जयपताका फहरा रही है । यदि राजनैतिक घोरणामें सत्य उक्ति है तो वह पताका समग्र रजवाड़ेका अधिकार-ब्रिटिश भारतका खजाना भरनेके लिये नहीं उडरही है, वरन केवल अति प्राचीन राजपूतराज्योंकी स्वाधीनता और शान्तिरक्षाके लिये, तथा लूटमार अत्याचार और उपद्रवके हाथसे रक्षा करनेके लिये ही बड़े अभिमानके साथ फहरा रही है ।

महाराष्ट्रियोंसे त्यागे हुए रामसिंह राजसिंहासनपर अधिकार और अपनी शासन शक्ति फैलानेके लिये विशेष चेष्टा करने लगे । रामसिंहने अपने चचा और उनके पुत्र विजयसिंहको जीतनेके लिये क्रमसे अठारह बार अपने प्राण संशयमें डाले थे । रामसिंहके प्रधान सहायक ईश्वरीसिंह जब परलोक सिधार गये तो वह निर्वल होगये, तब विजयसिंहके प्रस्तावानुसार केवल संबर सरोवर जिसके अर्द्धांशमें मारवाडराज्यका अधिकार था, वह अर्द्धांश और उस सरोवरमें जयपुरपति ईश्वरीसिंहका जो आधा सत्व था, उसको लेकर जीवनपर्यन्त उसी स्थानपर रहनेको विवश होगये थे ।

तीसवां अध्याय ३०.

माधोजी सेंधिया:-राठौर और कछवाहा लोगोंका मिलन; तथा महाराष्ट्रियोंके विरुद्ध युद्धमें उनके साथ तलमाइलवेग और हामदानीका सम्मिलित होना;-तङ्गाका समर;-सेंधियाका पराजय;-राठौरोंका अजमेरपर फिर अधिकार, और करदान सन्धिभंजन;-डिवेनीकी सहायतासे माधोजी सेंधियाका सेनासंग्रह;-जयपुरके सीमान्तमें सम्मिलित राजपूतसेनाका साक्षात्;-सम्मिलित राजपूतमित्र राजगणमें जातिविद्वेष;-श्लानिसूचक संगीतसूत्रसे राठौर लोगोंके साथ कछवाहगणका विच्छेद;-पातनका समर;-जयपुरसेनाके कृतघ्नतासूत्रसे राठौरोंका पराजय;-कछवाह-कविकी कविता;-विजयसिंहका सन्धिवन्धन प्रस्ताव;-मारवाडसामन्तोंका उसमें असम्मतिज्ञापन और मारवाडेश्वरद्वारा महा समरायोजन;-कृष्णगढके राठौर सामन्तकी कृतघ्नता; महाराष्ट्रियोंके द्वारा मारवाडआक्रमण;-आहोया और आसोपके सामन्तोंकी “जीतिंगे वा प्राण देंगे” ऐसी प्रतिज्ञा;-भैरवाके मैदानमें राठौरसेनाका शिविरस्थापन;-महाराष्ट्रसेनाका विनाश शुभअवसरका परित्याग;-सामन्तमंडलीद्वारा शासनविभागीय राजमंत्रिका शोचनीय फलदायक आदेशपालन;-सेनाका शिविर छोड़कर भागना;-राठौरोंकी वीरता;-उनका नाश;-सिद्धई सम्प्रदायकी कृतघ्नता;-प्रधान मंत्रीका विषपानसे प्राणत्याग;-वृटिशगवर्नमेंटके साथ रक्षणपीडन सन्धिवन्धनसे राजपूतजातिका मनोभाव;-भ्रमणारंभ;-हिसार;-झारोणक्षेत्रमें होकर गमन;-शीतकोट अर्थात् मरुक्षेत्र अदृष्टपूर्व रमणीक दृश्यका दर्शन;-सगदियानाका मरुप्रान्तर;-हिसार;-झारोका विवरण;-हरकर्णदासका स्मारकमन्दिर;-अलनिवास;-रिया;-पहाड़ी माहीरजाति;-पहाड़ियोंके द्वारा रियाका आक्रमण और सामन्तनिधन;-गोविन्दगढ़;-पुष्करसरोवर-सरोवरका विवरण-तन्मूलकजनश्रुति-(अजमेर) स्थापक अजपाल;-विशालदेव वा अजमेरके चौहानसिंह;-सर्पगिरिकी चोटीपर निर्मित भजनालय;-अजमेर;-धार-बल-खैरका दृश्य;-अजमेरनगर।



महाराष्ट्र दस्युदलके नेता जयआप्पा सेंधियाके परलोक सिधारनेपर उनके कुटुम्बी माधोजी सेंधिया उस पदपर सर्व सम्मतिसे अभिषिक्त हुए। माधोजी बड़े तेजस्वी पुरुष थे; राठौर राजपूतोंके साथ युद्ध करनेसे उनको यह भलीभाँति निश्चय होगया था कि “दक्षिणवासी अश्वारोही किसी प्रकारसे भी राजपूत घुडसवारोंकी बराबरी नहीं करसकते।” माधोजीने सर्वत्र अपने अश्वारोहियोंको शिक्षित करना आरंभ करदिया, और अपने सौभाग्यके कारण थोड़े ही कालमें सफलमनोरथ होगये, क्योंकि इन रणकुशल अश्वारोहियोंके द्वारा

ही अन्तमें उनकी विजय हुई थी । चतुर माधोजीने विचारा कि “राजस्थानके प्रधान २ राज्योंकी इस समय जैसी अवस्था है उसके द्वारा इस प्रदेशमें अपना प्रभुत्व फैलानेका अच्छा अवसर है । ऐसा अवसर फिर नहीं मिलेगा, नवीन बलसे उद्दीप्त जातिके भिन्न प्रान्तमें राज्यस्थापन करनेके लिये जितनी सामग्रियोंकी आवश्यकता होती है, सौभाग्यलक्ष्मीने मेरे लिये वह सामग्री उपस्थित कर दी है । मारवाडके राजा लोग केवल स्वजातीय मित्र राजगणोंके साथ विषम शत्रुतामल प्रज्वलित करके ही शान्त नहीं हैं, किन्तु उनके राज्यमें अभ्यन्तरिक जातीय विग्रहअग्नि भी भयङ्कर वेगसे प्रज्वलित होकर उनको क्रम २ से अन्तःशरशून्य बनारही है । राजालोग एक दूसरेके ध्वंससाधने और भीतर २ भारतविख्यात महाबली राजपूतजातिकी प्रशंसनीय कीर्तिको लुप्त करनेमें हैं; इस कारण यह सब लक्षण हमारी विजयको सूचित कर रहे हैं ।”

उस जातीय विग्रह और अभ्यन्तरिक विद्रोहमें नवीन शक्तिशाली उन्नतिशील महाराष्ट्रियोंकी सहायता पानेके लिये रजवाडेके सब राजा लोग उस समय व्यग्रहो उठे । और दुर्भाग्यका परिचय देनेवाली दुर्बुद्धिके वशीभूत हुए उन महाराष्ट्रियोंको बड़े आदरपूर्वक अपने २ राज्यमें बुलाने लगे । इसका परिणाम यह हुआ कि सब राजा लोग महाराष्ट्रियोंकी आधीनतारूपी जंजीरमें बँध गये । इस कारण संधियाकी समान क्षमताप्रिय और नवीन राज्यके स्थापन करनेमें उद्यत व्यक्तिकी आशा अपूर्ण रहनेकी संभावना कहां ? पाठकोंको याद होगा कि उदयपुरके महाराजाने अपने भानजे मधुसिंहके जयपुरके सिंहासनको अधिकारमें करनेके लिये महाराष्ट्रियोंकी सहायता ली; और अन्तमें मारवाडकी समान महाराष्ट्रियोंको निर्द्धारित कर देनेके लिये बाध्य हुए थे ।

यद्यपि उस समय महावीर राजपूत राजा लोगोंमें एकता अदृश्य होगई थी तथापि कुछ शेष थी । ऐसी विजयी ऐसी साहसी वीर जातिमें जो एकता सदा चली आरही है, वह सहसा नष्ट नहीं होसकती । चौहानोंके साथ जयपुरके राजा लोगोंकी शत्रुता कुछ प्रबल होनेपर भी राठौरोंके साथ कुछ २ मित्रता बनी हुई थी । मधुसिंह यद्यपि मामा उदयपुरेश्वरकी दया और महाराष्ट्रियोंकी सहायतासे अम्बेर सिंहासनपर बैठ गयेथे, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि वह बहुत दिन इस जगत्में नहीं रहसके । मधुसिंहके परलोक सिंघारनेपर अम्बेरका राज-छत्र प्रतापसिंहके शिरपर सुशोभित हुआ । साहसी अम्बेरवासी गण नये अधीश्वर प्रतापसिंहकी उत्तेजनासे महाराष्ट्रियोंकी अधीनता शृंखलको दुर्वह समझकर

अरक्षणीय हमीरगढको छोडकर गोसुन्दनगरमें नई आई हुई सेनाके साथ जा मिला। दोनों प्रतिद्वन्द्वी वीरोंने क्षीणाङ्गिनी वेरीस नदीके दोनों किनारोंपर अपनी-तोंपें लगा दीं और युद्धहोनेकी बात देखनेलगे । दोनों ओरसे युद्धकी तैयारियाँ होने लगीं । परन्तु उस ही समय सेनाके बेतनके विषयमें नाना और वालाराव इङ्गलेके बीचमें एक झगडा खडा होजानेसे संग्रामके होनेमें विघ्न पडा । उस झगडेकी कुछ भी सीमांसा न हुई । अंतमें नाना गणेश उस स्थानको छोडकर संगानेर नामक गांवको चलागया । इस भीतरी झगडेका विचार करतेहुए अचानक मनमें यह बात उदय होतीहै कि कदाचित् महाराष्ट्रियोंकी सेना छिन्न भिन्न होकर परस्पर लडमरीहोगी, और राजपूतोंने इस अवसरपर उनमें प्रवेश करके भलीभांतिसे महाराष्ट्रीयसेनाका संहार किया होगा, परन्तु इतिहास उसही समय गंभीर वाणीसे कह उठता है कि “ यह महाराष्ट्रीयलोग इस प्रकारकी राजनीति नहीं पढेहैं कि साधारण झगडेसे अलग होकर शत्रुओंको शिर झुकावेंगे ।

नाना गणेशपंतके अलग होजानेपर दोनों दल बराबर होकर खडेहुए । चतुर वालाराव इंगलेने उस समय युद्ध करना स्वीकार नहीं किया । गोगुल छप्राके उपद्रवमें लखवादादाने वालाराव इंगलेके प्राण बचाए थे । इस समय महाराष्ट्रीय सेनापतिने पहिले कियेहुए उसही उपकारका स्मरण करके उसके धन्यवादमें इस समय युद्ध न करनेका बहाना किया । सेनापतिके संग्राम न करनेका यहां एक और कारण भी पाया जातहै; कहतेहैं कि उसके पास इस समय धनका बहुत अभाव था । लखवादादाने उस अभावको पूर्ण करनेका वचन दिया इसही कारण दोनों दलमें सन्धि होगई थी । दोनों सदर्शोंने मिलकर उस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर किये । शीघ्रही संग्रामकी तय्यारियां लोप होगईं, लखवादादाःअपनेको बेखटका जानकर परम प्रसन्न हुआ । कुछ कालके लिये दोनों पक्ष शान्त रहे । परन्तु अम्बाजीने शीघ्रही इस शान्तिको भंग करके दोनों दलोंको फिर रणरंगमें उन्मादित किया । नानाकी सहायता करनेके लिये उसने सदलैण्ड नामक एक अंगरेज वीरको बहुतसी सेना और तोपोंके साथ भेजा । परन्तु किसी कारणसे विवाद होनेपर वह इस नई सेनाकी सहायता पानेसे वांचित रहा, वरन उसने जार्जटैमस् नामक और एक प्रसिद्ध युद्ध विशारद अंगरेजसेनापतिसे सहायता मांगी । इस पिछले अंगरेज वीरकी अनुकूलताको प्राप्त होकर अम्बाजीका प्रतिनिधि नाना, और लखवादादा यह दोनों बराबर होगए । दोनों ही बुनास नदीके

सामन्त जवानसिंहने राठौर अश्वारोहियोंको दलबद्ध करके पृथ्वीको कम्पित—और सेंधियाके श्रेष्ठ दलको छिन्नभिन्न करदिया । सेंधियाके सैनिक यद्यपि सुविख्यात फरासीसी सेनापति डिवाइनके द्वारा भलीभाँति रणशिक्षित हुए थे, किन्तु राठौर अश्वारोहियोंके अतुलनीय बाहुबलके निकट खड़े रहनेमें समर्थ न होकर क्षणमात्रमें नष्ट होगये, और शेष सैनिक प्राणोंके भयसे भागगये । सम्मिलित सेनादलने थोड़े कालमें ही जयलक्ष्मीका आलिङ्गन प्राप्त करलिया । सेंधियाने भी कलङ्कका भार लेकर भागती हुई सेनाका अनुसरण किया, और मथुरामें आकर आश्रय लिया । सुनतेहैं इस महासंग्राममें राजपूतोंने सेंधियाकी जो दुर्दशा और हानि की थी, माधोजी बहुत काल तक उसको विस्मृत और क्षतिपूर्ण न करसके थे । जवानसिंहने महाराष्ट्रियोंके भागनेसे विजयलक्ष्मी प्राप्त करनेके पीछे अजमेरपर द्वितीय बार अधिकार करनेके लिये एक सेनादल भेजदिया । यह कहनेसे अत्युक्ति न होगी कि विजयी सेनादलने विना ही युद्धके अजमेरपर अधिकार करके उसको फिर मारवाडराज्यके अन्तर्भुक्त करदिया । मारवाडेश्वर विजयसिंहने माधोजीके साथ संधि करके प्रति तीन वर्षके पीछे जो बहुतसा धन देना स्वीकार किया था, इस विजयप्राप्तिसे वह सन्धि टूटगई परम तेजस्वी दुर्द्धर्ष साहसी राजपूतजाति—मेवाड, मारवाड अम्बेर आदिके चौहान राठौर लोग यदि एकताकी जंजीरमें बंधे रहें तो विदेशी कोई जाति भी राजवाडेमें किसी प्रकार अपना अधिकार नहीं जमासकती, तङ्गाका युद्ध इस बातकी पूर्ण साक्षी देरहाहै ।

माधोजी तङ्गाके महा समर क्षेत्रमें जयलक्ष्मीकी गोदसे गिर कर यद्यपि दुःखित हृदयसे लौट आये थे, किन्तु बदला लेने और महाराष्ट्र प्रताप प्रभुत्व फिर स्थापित करनेके लिये फिर बड़ी भारी चेष्टा करनेलगे । वह फिर फरासीसी सेनापति डिवाइनके साथ मिलकर श्रेष्ठ सेना संग्रह करने और उसको श्रेष्ठ युद्धशिक्षा दिलानेके लिये व्यग्र हो उठे । रणचतुर विजातीय वीर डिवाइनकी शिक्षा और माधोजीकी सहायतासे जैसी प्रबल बलशाली और समर कुशल सेना बनी थी भारतमें वैसी सेना किसी समय भी नहीं देखी गई । डिवाइनकी पाश्चात्य प्रतिभाके साथ भारतीय शौर्य, वीर्य और साहसने एकत्रित होकर उस सेनादलको सर्वसाधारणके भयका कारण स्वरूप बनादिया । तङ्गाके रणक्षेत्रमें जिस घोर कलङ्ककी स्थाहीने महाराष्ट्र वीरत्व गौरव रविको ढक लिया था, माधोजी नवीन सेनाकी सहायतासे उस कलङ्कको दूर करनेके लिये शीघ्र ही संहारमूर्ति धारण करके रजवाडेको चलदिये ।

आगया । वर्षा वीती । शरदकी तीखी धूपसे मार्ग और घाट सूखगये-गणेशपंतने अम्बाजीसे सेना पाकर लखवादादासे भयंकर संग्राम करनेकी तइयारियां कीं । जो क्रोधाग्नि अत्यन्त तीक्ष्णतासे उसके रोयेंरोयेंमें जलरही थी, उसके ठंडा करनेको अपनी कठोर प्रतिज्ञा पालन करनेके अर्थ वह मनुष्य वध, लूट, खसोट, इत्यादि समस्त भयंकर कार्योंके करनेपर उतारू हुआ । आरावली-शैलमालाकी तराईमें चंदावतलोंगोंकी जो जागीरें थीं; उन सबको घेरकर क्रोधित नानाने वहांके रहनेवालोंको सताना आरम्भ किया उसके कठोर व्यवहारसे सैकड़ों घर एक साथ ही भस्म होगये, पशुओंकी समान अनेक नरनारी मारे और सताये गये, कितने ही गृहस्थोंकी सम्पत्ति लुटने लगीं ! परन्तु इस पर भी छुटकारा नहीं था । जिन लोगोंने उस निठुर महाराष्ट्रीय सेनापतिके पशुतुल्य व्यवहारसे किसी तरह अपने प्राणोंको बचाया, वह भी किसी प्रकारसे उसके क्रोधसे छुटकारा न पासके । नानाने कठोर कर लगाकर उन अभागोंको तबाह कर दिया, इस ओर टैमसने देवगढ़ और अमाइतको घेरकर वहांके राजा के गंकर देनेके लिये विवश किया, इसी प्रकारसे काशीतल और लुसानी यह दो शहर किले उसके अधिकारमें आये । परन्तु लुसानीके नगरवासियोंने अपनी रक्षा करनेके लिये घोर वीरता प्रकाश की थी इस कारण विजयी टैमस साहबने उस नगरका नाश करडाला, जयके ऊपर जय प्राप्त करके कठोरताकी सीमा दिखाताहुआ नाना गणेशपंत जिस समय धीरे २ रुधिरके तालावमें पैररहा था उसी समयमें सेंधियाने अम्बाजीको वरतरफ करके और उस पदपर लखवादादाको नियत किया * अम्बाजीकी समस्त आशा लोप होगई । उसने गर्वित होकर जिन शैनवी ब्राह्मणोंका सत्यानाश करना चाहा था, आज विधाताने उन्हीं लोगोंके द्वारा अम्बाजीको नीचा दिखाया । अम्बाजीकी दुर्दशा होनेपर उसके प्रतिनिधि नानापंतने मेवाडके उन समस्त किलों और नगरोंको कि जिनको उसने अपने अधिकारमें करलिया था, लौटा-दिया । इस प्रकारसे दो हिन्दूवीरोंकी प्रचंड लड़ाई शांत हुई । परन्तु इससे मेवाडका कोई लाभ नहीं हुआ; वरन अनर्थ दिनपर दिन बढ़नेलगे । यदि मानाजाय,

* वालोवा तात्या और बकसीनारायणराव यह दोनों इस समय सेंधियाके दीवान थे । इन दोनोंका जन्म शैनवी गोत्रमें हुआ था अतएव यह सहजसे अनुमान होसकताहै कि स्वजातीय लखवादादाकी सहायता करनेमें इन्होंने भी अत्यन्त चेष्टा की होगी ।

राजपूतजातिके स्वाधीनतारूपी सूर्यको अस्ताचलकी चोटीपर प्राप्त होनेको वाध्य करदिया ।

जब राठौर कविकुलके उस संगीतने अम्बरीय सैनिकोंके हृदयमें अपमानाग्नि प्रज्वलित करदी, तब उन्होंने छिपे २ महाराष्ट्रियोंके साथ यह संधिकरी कि जिस समय राठौर वीर महाराष्ट्रियोंके विरुद्ध युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण होंगे, अम्बरीय सेनादल उस समय उनके साथ सम्मिलित न होकर अलग खड़ा रहेगा और महाराष्ट्र सेना उसके वदलेमें अम्बेर राज्यको विध्वंस नहीं करेगी। राठौर सैनिक युद्ध करनेसे इस षड्यन्त्रका कुछ भी समाचार न जान सके, वह इस विचारमें थे कि तद्वाके युद्धके समान यहां भी दोनों सेनादल मिलकर महाराष्ट्रियोंको पराजित कर देंगे । शीघ्रही रणभेरी बजाई गई । दुर्द्धर्ष साहसी राठौरगण स्वभाव सिद्ध तेजसे प्रबल तरंगकी समान फरासीसी सेनापति डिवाइनके अधीनस्थ गोलन्दाज दलको आक्रमण पूर्वक गोलोंकी वर्षा करके सामनेके सब पदार्थोंको विध्वंस करने लगे, उन्होंने अपने आकाशभेदी शब्दसे युद्धस्थलको कम्पायमान कर दिया । किन्तु कुछ देरके पीछे वह सब वीर कृतज्ञ जयपुरीय सेनादलकी सहायता न पानेसे बहुत गुणयुक्त महाराष्ट्रियोंकी सेनाद्वारा चारों ओरसे घिर गये, इस कारण उपायान्तर न देखकर असहाय अवस्थामें राठौर वीर रणक्षेत्र छोड़नेको वाध्य हुए । विजयलक्ष्मीने महाराष्ट्रियोंका आश्रय लिया । सुनते हैं कि राठौर वीर “ पर भूमि ” अर्थात् विदेश और स्वदेशमें समान भावसे नहीं लड़ सकते, यह पातनका युद्ध ही उसका प्रमाण है । इस युद्धमें राठौर लोगोंकी ऐसी दुर्दशा हुई थी कि स्त्रियोंतकने उनके अश्वादि लूट लिये थे । हम्प निःशंक होकर कह सकते हैं कि जयपुरियोंके विश्वासघातने ही पातनके युद्धमें उपरोक्त शोचनीय दृश्य उपस्थित किया । तंगाके युद्धके पीछे मारवाडके कवियोंने अम्बरीय सेनाके अपमान सूचक जैसे संगीत रचे थे, पातनके इस युद्धमें राठौर वीरोंकी पराजयमें अम्बेरके कवियोंने भी वैसे ही संगीत रचे थे । जयपुरनिवासी कवियोंके संगीतका एक अंश नीचे लिखते हैं;

“घोडा, जोडा, पागडी,

मुट्ठा,—खड़ मारवाड ।

पाँचरकमेभेल— लिदा,

पातनमेंराठौरि ।”

अर्थात् पातनके युद्धमें राठौर सैनिकोंको घोडा, जोडा, पागडी, गोंप और खड़ शत्रुओंके हाथमें सौंपदेना पडा था ।

इसमें बहुतसे धनका प्रयोजन है, राज्यकर इतना थोड़ा आता था कि उसकी सहायतासे उस बड़े खर्चका होना किसी तरहसे सम्भव नहीं था । अतएव सर्दारोंसे कुछ २ अनुकूलता पानेकी आशासे मौजीरामने उनके पास एक २ आज्ञापत्र भेजा । परन्तु सरदारलोग ऐसे अनुगतथे कि उन्होंने आज्ञापत्र पाते ही उक्त मंत्रीको कैद करके अपने देशानुरागका पूर्ण परिचय दिया । सतीदासको उसकी पहिली प्रतिष्ठा प्राप्त होगई । चन्दावतलोगोंके डरसे सतीदासका भाई शिवदास कोटेमें जाकर रहा था । इस समय वह भी बुलवाया गया । परन्तु बलवान् चन्दावतलोग अपने पहिले पदोंपर विराजमान रहकर राजपरिवारकी भूमि संपत्तिका अधिकांश भाग निर्विघ्नतासे भोग करने लगे ।

सन् १८०२ ई० में इन्दौरकी विशाल समरभूमिके बीच महाराष्ट्री राज्यके शासनसम्बन्धमें अपने २ भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये जो १ लाख ५० हजार आदमी इकट्ठा हुए थे उन्होंने मिलकर हुलकरके मस्तकसे राजमुकुट उतार लिया; हुलकरकी राजधानी हाथी घोड़े बंदूक तलवार इत्यादि और बहुतसे अस्त्र शस्त्रके साथ शत्रुओंके हाथ लगी थी । अवशेषमें विवश होकर मेवाडकी ओर भागा । परन्तु वहां भी छुटकारा न मिला । विजयी सेंधियाकी जयोन्मत्त सेनाने वहां पर भी उसका पीछा किया । उस समय सदाशिवराव और बालाराव सेंधियाके मुख्य सेनापति थे । मेवाडकी ओर भागनेके समय रतलामका किला बीचमें पड़ा, उसको भी हुलकरने लूटा और शक्तावतोंके प्रधान वासस्थान भेंदर दुर्गको घेरकर वहांसे खंडनी माँगने लगा । भयके मारे शक्तावत लोग अत्यन्त व्याकुल हुए । महाराष्ट्रियोंसे छुटकारा पानेका वह कोई भी यत्न न सोच सके । धीरे २ यह समाचार राणाजीने सुना । उसकाल राणाजीके हृदयमें यह शंका उत्पन्न हुई कि भेंदरको छोड़ते ही सेंधिया उदयपुरको घेरेगा, फिर उसके क्रोध और लालचसे उदयपुरकी रक्षा कौन करेगा ? उन्होंने अपनी रक्षाकरनेका उपाय सोचना निश्चय करलिया । परन्तु राणाजीको इस विषयमें परिश्रम नहीं करना पड़ा । कारण कि जब हुलकरके निकट सेंधियाकी सेना-जो उसका पीछा करती हुई आती थी-पहुंची, तब उसने विवश हो भेंदरको छोड़दिया । भगवानकी दयासे भेंदरनगरकी विपत्ति टल गई । अपनी आशाको पूर्ण न होता हुआ देखकर हुलकर निराश हृदय पुण्यतीर्थ नाथद्वारा * में पहुंचा । अपना अभिप्राय व्यर्थ होनेसे वह अत्यन्त ही

* उदयपुरसे २५ मील उत्तरको नाथद्वारा बसा हुआ है । आगे नाथद्वारेका वर्णन भलीभांतिसे किया जायगा ।

भूमिमें शीघ्रताके साथ आनेकी आज्ञा दीगई । मारवाड फिर रणरंगसे प्रकम्पित होगया । मैरताके उस चिर स्मरणीय युद्धस्थलमें अनेक प्रान्तोंसे राठौर वीर आने लगे । जितने राठौर युवक तलवार चलाना जानते थे, वह सब स्वजातीय गौरव और जन्मभूमिके आनन्दसे आआकर सम्मिलित हुए । इस प्रकार सन् १७९० ईस्वीकी १० वीं दिसंबरको तीस सहस्र राठौर सैनिक पातनके युद्धकी कलंककालिमा दूर करनेके लिये बडे आग्रहके साथ आकर सम्मिलित हुए ।

उस समय राठौर कुलकलङ्क कृष्णगढ़के राजा बहादुरसिंह स्वजातिके गलेमें पराधीनताकी जंजीर डालनेकी विशेष सहायता करके अपना नाम इतिहासमें घृणितरूपसे लिखागये हैं । राठौर राज और राठौर जातिके विश्वासहन्ता बहादुरसिंह रूपनगरके अधिपति सहित दो सौ (२००) नगरपूर्ण प्रदेशका एकत्र उपभोग करते थे । मारवाडेश्वरने वृत्तिस्वरूप ही यह समस्त प्रदेश दोनोंको समर्पण किये थे । यद्यपि यह दोनों स्वाधीनभावसे अपने २ राज्यमें रहते थे, तथापि मारवाडेश्वर अभिषेकके समय आजतक राजटीका अपने हाथसे करते हैं और यह भी जोधपुरेश्वरको शीर्षस्थानीय रूपसे माननेके लिये वाध्य हैं । रूपनगरके स्वामीका बहादुरसिंहके साथ भ्रातृसम्बन्ध था । किसी कारणसे दोनोंमें विवाद होजानेपर बहादुरसिंहने अपने भ्राताकी सब सम्पत्ति लूट ली । इस विवादमें बहादुरसिंहने जब मध्यस्थताका प्रस्ताव किसी प्रकारसे स्वीकार नहीं किया तो अन्तमें विजयसिंहने वहां स्वयं सेना सहित जाकर उनका राज्यभार और सब सम्पत्ति बहादुरसिंहसे दिलवादी थी ।

उपरोक्त घटनाके कुछ ही काल पीछे यह पातनका शोचनीय युद्ध हुआ । बदला लेनेके लिये बहादुरसिंह शीघ्र फरासीसी सेनापति डिवाइनका आश्रय लेकर उनको बडे आदरके साथ अपनी जन्मभूमिको विध्वंस करानेकी इच्छासे लेआये । डिवाइनने सबसे पहिले रूपनगरपर आक्रमण करके उसको २४ घंटेमें अपने अधिकारमें करलिया । फरासीसी सेनापतिका गोलन्दाज दल कैसा सुशिक्षित था उपरोक्त घटना इस बातको भलीभाँति सूचित कर रही है । इसके पीछे डिवाइनने अजमेर पर आक्रमण किया । राजा विजयसिंहने उस समय माधोजी सेंधियाके निकट अजमेर प्रत्यर्पण और पूर्व संधि प्रबल रखनेका प्रस्ताव भेजा । माधोजीने अजमेरपर अधिकार करके वहीं निवास किया और लकवा, जीवदादा सदाशिवभाऊ तथा अन्यान्य अश्वारोही सैनिकोंके नेता द्वारा संचालित महाराष्ट्रसेना, डिवाइनके अधीनस्थ अस्सी तोपोंके साथ गोलन्दाज

कर कोटारियोंके सदर्दारे उसके दोनों अगले पांवमें जंजीरें भरदीं और अपने सिपाहियों को भी ऐसाही करनेकी आज्ञा दे, नंगी तलवार हाथमें लिये वेगसे शत्रुओंकी ओर झपटा; उसके विश्वासी वीरगण भी उसकी सहायता करने लगे । केवल उन बीस सिपाहियोंको साथ लेकर कोटारियोसर्दार भयरहित हो शत्रुओंकी बड़ी सेनाके सम्मुख जापड़ा, और अपने बहुतसे बलवान सिपाहियोंके साथ संग्रामभूमिमें प्राण देदिये । कोटारियो चौहान राजपूतोंकी वीरताके तथा निडरताके ऐसे बहुतसे प्रमाण मेवाडके इस घटना पूर्ण कालमें पाये जातेहैं । कोटारियो सदर्दारेके मारेजानेसे ऐसा कोई नहीं रहा कि जो नाथद्वारेकी रक्षा करे । हिन्दूकुलकलंक दुलकरने उस अरक्षित तीर्थ स्थानमें प्रवेश करके देवालयकी समस्त सामग्री लूट ली । लूट खसोटको वह इतना पसंद करताथा कि देवसम्पत्तिके लेनेमें भी कोर कसर न की । उसके पिशाच तुल्य अत्याचारोंसे नाथद्वारेके रहनेवाले अत्यन्त दुःखी हुए और नगरको छोड़ कर भागे । इसही कारणसे वह पवित्रस्थान शीघ्रही श्मशानकी समान भयंकर होगया । विष्णुभक्त और शुद्ध चित्तवाले यात्रियोंके निरन्तर आवा गमनसे जो स्थान परम रमणीक जानपड़ता था, गवइये वैष्णवोंका अमृतमय भगवन्नामकीर्तन जहां चारों ओर सुनाई दियाकरता था, आज वही स्थान निर्जन होकर छोड़ दियागया, आज यह रमणीक स्थान शोकोदीपक भावको प्राप्त होगया ।

उदयपुरमें पहुँचकर भी प्रधानपुजारी दामोदर निश्चिन्त होकर पूजापाठमें मन नहीं लगासका । आलसी राणाकी राजपुरीमें भी उसको विघ्न घेरने लगे । इस कारण छःमासके पश्चात् ही पुजारीजी, भगवान् कृष्णचंद्रकी मूर्ति लेकर गासियर नामक शैलमालापर चलेगए और वहां एक मन्दिर बनाया मन्दिरकी चाहरदिवारी अत्यन्त ऊंची और दृढ़ थी, यहांपर वह निर्विघ्न होकर रहने लगे । परन्तु क्रमशः उनके मनमें धारणा हुई कि केवल ब्रह्मतेजके बलसे ही देवताकी रक्षा नहीं होसकती । इसही कारणसे उन्होंने खड्गबलके ऊपर निर्भर करनेका विचार किया । तथा शीघ्रही ढाल तलवार धारण करके उस पवित्र तीर्थकी तस्करोंके आक्रमणसे रक्षा करनेलगे । कुछ ही कालमें चारसौ सवार दामोदरजीके दलमें मिलगये । उन विष्णुपरायण धर्मवीरोंके साथ दामोदरजी बहुधा गासियर गिरिप्रदेशसे उतरते और अपने अधीनकी समस्त विष्णु पीठोंकी देखभाल किया करते थे ।

छुड़ाने और महाराष्ट्रियोंको उचित प्रतिफल देनेके लिये अहोयाके सामन्त माहीदासने बड़े साहसके साथ प्रतिज्ञा करी कि “यातो इस युद्धमें जन्मभूमिको बहुत कालके लिये शत्रुओंके कराल गालसे उद्धार करके जातीय स्वाधीनता प्राप्त करेंगे नहीं तो युद्धमें लडकर प्राण देंगे। यह प्रतिज्ञा करके उन्होंने भीमराजसे सेना आगे बढ़ानेका प्रस्ताव किया, अन्यान्य सम्पूर्ण सामन्त इस प्रस्तावको बड़े आनन्दसे समर्थन करके शत्रुओंकी छातीमें तलवार मारनेके लिये अधीर हो उठे। विशेष करके उस समय एक दल राठौर सेनाने महाराष्ट्रियोंके बोझा ढोनेवाले पशुपालकोंपर आक्रमण करके सब पशु छीन लिये थे; इस कारण राजपूत वीर स्वाभाविक उत्साह, उत्तेजना और आग्रहसे और भी वलिष्ठ दिखाई देने लगे। सब सामन्तोंने भीमराजसे कहा कि—“जिस डिवाइनके अधीनस्थ सुशिक्षित गोलन्दाज दलने पातनके युद्धमें केवल अपना रणकौशल दिखाकर पराजित करदिया था, वह गोलन्दाज दल इस समय नहीं है, इस कारण इस शुभ अवसरपर सम्राट् प्रज्वलित करनेसे अवश्य ही विजय प्राप्ति की संभावना है, किन्तु दुर्भाग्यके कारण भीमराज इस प्रस्तावको स्वीकार नहीं करसके। हतबुद्धि भीमराजने खूबचन्दका भेजा हुआ एक पत्र बाहर निकालकर दिखाया, प्रधानमंत्रीने उसमें लिखा था कि “जबतक इसमाईलवेग न पहुंच जायँ तबतक किसी प्रकार शत्रुओंपर आक्रमण न करना।” इसमाईलवेग उस समय नागरमें थे, इस कारण राजभक्त और चिरप्रचलित प्रथाके ऊपर विशेष सन्मान दिखानेवाले राठौर वीर अनिच्छापूर्वक प्रधानमंत्रीकी उस विषमय फलदायक आज्ञाको पालन करनेमें बाध्य होगये। शुभ अवसर व्यर्थ ही चला गया। यदि भीमराज प्रधानमंत्रीकी वह आज्ञा प्रबल रखनेकी चेष्टा न करके उपस्थित राजनैतिक अवस्थानुसार सामन्तलोगोंकी कामना पूरी करदेते, तो हम निश्चयके साथ कहसकतेहैं कि राठौरवीर दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंके एक मनुष्यको युद्धस्थलसे जीवित न लौटने देते।

समर कुशल डिवाइनने उन कीचडमें आधी घुसीहुई तोपोंको अनेक युक्तियोंसे निकाल लिया और वहांसे बड़ी शीघ्रताके साथ चलकर प्रधान सेनाके साथ आ मिले। राठौर सैनिक जिस समय स्वतःही ज़दला लेनेके लिये अधीर होगये थे, उस समय भीमराजके उस शोचनीय व्याघातसे दुःखित होकर निश्च्येष्ट होगये। डिवाइनके आनेकी बात सुनने और राठौरसेनाकी अवस्था तथा प्रधान मंत्रीकी मूर्खताको विचारनेसे कायर बीकानेरके स्वामी अपने

चन्दावतोंकी जागीरें भलीभांतिसे लूटीं और उनपर कठोर अत्याचार करने लगा । उसके दुराचारोंसे चन्दावतोंका सर्वनाश होगया, बहुतसे घर भस्म होगये । वालाराव इंगलेके प्रचंड अत्याचारसे अत्यन्त दुःखित हो चन्दावत लोग अपने उद्धारका उपाय विचारनेके लिये एकसाथ मिलकर परामर्श करने लगे । इस ओर वालारावने सेनासहित राणाजीके महलपर पहुंचकर मंत्रीके कार्याध्यक्ष मौजीरामको देखना चाहा । परन्तु राणाजी किसी भांतिसे मौजीरामको देनेको सम्मत न हुए । उनकी दृढ़ प्रतिज्ञा थी कि मौजीरामको किसी प्रकारसे भी शत्रुओंको न देंगे । दुराचारी मरहटोंने विनती की, भय दिखाया, परन्तु राणाजीकी प्रतिज्ञा अचल और अटल रही । तदुपरान्त वालाराव इंगलेने अपनी सेनाको महलकी ओर जानेकी आज्ञा देदी । परन्तु उनकी कोई दुरभिसन्धि पूर्ण न हुई । कारण कि तेजस्वी मौजीरामने अपने आदमियोंसे उन सबको कैद करालिया । नानागणेशपंत, जमालकर, और ऊदाजीकुंवर यह तीनों कैद हुए । इनमें ऊदाजीकुंवर अत्यन्त दुष्ट व क्रूरकर्मकारी था, इसही कारणसे इसके गलेमें हाथीके पांवकी जंजीरें भरवा दी गई । व और भी सबको उचित फल दियागया । दुष्ट वालाराव इंगले एक स्नानघरमें छिपाथा, इसको भी पकड़कर कैद किया । जब मरहटे सर्दार इसप्रकारसे कैद होगये, तब चन्दावत लोग अत्यन्त तेजके साथ नगरसे निकले और महाराष्ट्रियोंके उस गोदपर, आक्रमण किया कि जो पर्वतपर बसाहुआ था । वहांपर जो कुछ था, सबपर ही चन्दावतोंने अधिकार किया । हियसें नामक एक अंग्रेज सेनापति महाराष्ट्रियोंकी सहायता करनेको सेनासहित आया था । परन्तु वह अपना कार्य विना ही पूरा किये भयभीत हो उन्हें छोड़कर चला गया और उसने अपनी अधीन सेनाको साथ ले एक बड़े मैदानमें चौकोन व्यूह बनाया, तथा गडरमाला नामक नगरमें कुशलपूर्वक चलागया ।

अभागे वालाराव इंगलेकी दुर्दशाका वृत्तान्त श्रवण करके जालिमसिंहको अत्यन्त दुःख हुआ, शत्रुके कारागारसे विना अपने मित्रको छुटाये हुये वह कैसे निश्चिन्त रह सकताहै ? जालिमसिंह मित्रको छुड़ानेके लिये निश्चय करके भाइन्दर और लावाके सर्दारोंके साथ राजधानीके सामनेको जानेवाले चैजाघाटनामक गिरिमार्गकी ओर सेनासहित बढ़ा । जो राणाजी इन दुष्ट विद्रोही सर्दारोंको पकड़ते ही मारडालते तो उनका अत्यन्त भंगल होता । इस कारणसे संपूर्ण मरहटे क्रोधकरके उनपर चढ़ दौड़ते परन्तु राणाका इससे कुछ अमंगल

उत्साहित हृदयसे कहा, “युद्धस्थलमें चलो ।” जन्मभूमि और स्वजातिके निमित्त प्राण देनेका संकल्प करके चार सहस्र राठौर वीर घोड़ोंपर सवार हुए और बहुत शीघ्रतासे युद्धमें पहुंचगये ।

महाराष्ट्रियोंके प्रधान सेनापति डिवाइन अस्सी तोपोंको चतुराईके साथ स्थापित करके प्रतीक्षा कर रहेथे, प्राणोंकी ममता छोडकर उन चार सहस्र दृढ प्रतिज्ञा राठौर अश्वारोहियोंको नंगी तलवार हाथमें लिये आता हुआ देखकर डिवाइनकी तोपें जलते हुए गोले उगलने लगीं; किंतु थोड़ी देरमें ही “पातनकी बात मत समझना” कहकर उन जलते हुए तोपके गोलोंको अग्राह्य करके वह चार सहस्र साहसी राठौर वीर तोपोंके निकट पहुंच गये । सामनेके प्रत्येक पदार्थको नष्ट भ्रष्ट करके तोपोंकी रक्षा करनेवाले महाराष्ट्रियोंको छिन्न भिन्न करदिया और आकाशभेदी शब्दसे शत्रुव्यूहको भेदकर शत्रुओंका नाश करने लगे । उस भयंकर आक्रमणसे भयभीत हुए महाराष्ट्रीलोग पहिले तोपें छोडकर भाग गये थे, हा शोक ! उस समय यदि वहां राठौर पैदल सेनाका एक दल पहुँचकर तोपोंपर अधिकार करलेता तो उस प्रथम आक्रमणमें ही वह चार सहस्र राठौरवीर महाराष्ट्रियोंको पराजित कर देते—तझाके युद्धकी अपेक्षा मेरताका यह समर राठौरोंके वीरत्व यश गौरवको प्रबल रूपसे बढ़ा देता, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि राठौर पदातिसैनिक सबसे पहिले ही भाग गये थे ।

राठौरवीर महाराष्ट्रियोंके गोलन्दाजोंको यद्यपि छिन्नभिन्न करके लौट आये थे, किन्तु चतुर डिवाइन उनके लौटते ही सम्पूर्ण तोपोंको फिरसे श्रेणीबद्ध करके राठौरोंके आनेकी प्रतीक्षा करने लगे । रणोन्मत्त राजपूत अश्वारोही एक श्रेणीके महाराष्ट्रियोंको मारकर दूसरी ओर जा रहे थे, इतनेमें डिवाइनके गोलन्दाज बदला लेनेकी इच्छासे उत्तेजित होकर बडे २ गोकोंकी वर्षा करने लगे तथा उसी समय अन्यान्य सेनादलने आकर उनको चारों ओरसे घेर लिया परमसाहसी राठौरवीर अपनी वीरता दिखाके पीछे एक २ करके सम्पूर्ण वीर पृथ्वीपर शयन कर गये । यह सब वीर चौबीस घंटे तक अचेतन अवस्थामें पड़े रहे, इसके पीछे उनका एक विश्वासी पुराना सेवक वहां आया । रात्रिका समय था और युद्ध समाप्त होनेके पीछे मूसलाधार पानी बरस गया था । इस कारण चलनेकी शक्तिसे हीन होकर घायल वीर विषम यंत्रणा भोग रहे थे । उस सेवकने सबसे पहिले अपने स्वामीको खोजकर थोड़ी सी अफीम सेवन कराई, जब उनको चैतन्यता हुई तो कई चरोंकी सहायतासे उनको युद्धकी भूमिसे

उनमें नहीं थी, तो किस कारणसे वीरवर प्रतापसिंहके सिंहासनपर बैठे? लोभी मरहटोंके वारंवार सतानेसे मेवाडकी सुनहरी ज़मीन आज श्मशानसी बन गई है;—प्रजाका सर्वस्व लूटा गया; नगरनिवासी लोग भयके मारे चोरोंकी सेवा करते हैं? जिस तुच्छ जीवनके लिये राणाने असंख्य प्रजाका कुछ भी ध्यान न किया उस जीवनसे प्रयोजन क्या है? दीन, हीन, मलीन, क्षीन प्रजाका उद्धार करनेके लिये जो प्राण तैयार नहीं हुआ, जिसने सदा ही शत्रुओंके चरणचोट, उन घृणित, कलंकित, और तुच्छ प्राणोंसे क्या प्रयोजन है? उनको स्वदेशकी रक्षाके लिये शत्रुओंके साथ प्राणका दांव लगाकर युद्ध करना चाहिये था परन्तु बात इससे विपरीत हुई, उदयपुरके राणा शत्रुओंके चरणोंमें गिर गये। ऐसा करनेसे जो कलंक उनके नामपर लगा यदि उसको सात समुद्रोंके जलसे धोया जाय तौ भी नहीं छूटेगा।

संधि करनेके बदलेमें हुल्करने ४० लाख रुपये मांगे परन्तु मेवाडकी अवस्था उनदिनोंमें ऐसी होरही थी कि उतने रुपयेका दियाजाना असंभव था। राणाने समझ लिया कि बिना इस रुपयेके दिये पीछा न छूटेगा उन्होंने अपनी सुवर्ण की बनी हुई चीज़ोंको बेच डाला और स्त्रियोंके गहने भोजनपात्रोंको गिरवी रख दिया। ऐसा करनेसे और नगरवासियोंसे केवल १२ लाख रुपये इकट्ठा हुये। परन्तु इनसे क्या होता है चालीस लाख रुपयेके लिये १२ लाख रुपया तो तिहाई हिस्सा भी नहीं है बाकी रुपयेके बदलेमें राजपरिवारके प्रधान २ मनुष्य और कितने एक नगरवासियोंके शरीर गिरवी रखे गये, रुपया न देनेतक उनको महाराष्ट्रियोंके डेरोंमें रहनेकी आज्ञा हुई। इस भांतिसे चालीस लाख रुपयेके पानेमें निःसंदेह हो निठुर हुल्करने राणासे मुलाकात की, इस ओर हुल्करकी आज्ञाके अनुसार महाराष्ट्री सेनाने लावा और विदनौरके किलेको घेरकर सरलतासे अपने अधिकारमें कर लिया, वहांके ठाकुरोंने बहुतसा धन देकर उन नगरोंको लौटाया। इतना रुपया पाकर भी इस दुराचारीका लोभ दूर न हुआ। तदुपरांत देवगढके किलेपर अधिकार करके वहांसे साठेचार लाख रुपये लिये। इस प्रकार आठमहीनेतक मन्नाडेके रुधिरको चूसकर वह दुराचारी उत्तरकी ओर सिधारा। राणाजीके ऋणके बदलेमें अजितसिंह उसके साथ गये, और उस रुपयेके इकट्ठा करनेको बलरामसेठ मेवाडमें रह गया। * जो

* हुल्करके यहां हरनाथचेली नामक एक कर्मचारी था, यह सर्दार वनसेन नामक नगरके भीतर होकर जारहा था इतनेहीमें सातौलागांवके कुछेक भीलजातिके चोरोंने बाहर निकलकर उसके ऊंटोंको ले लिया और चले गये। हरनाथने उन चोरोंको दमन करनेके लिये चंदावत गुलाबसिंहको पुकारा; गुलाब-

कर उन्होंने विजयप्राप्तिमें धक्का पहुंचानेके लिये ही भीमराजको इस आशयको पत्र लिखा था कि “जबतक इसमाईलवेग न पहुंचे तबतक युद्ध मत करना ।” खूबचन्दको जब अपने पक्षकी पराजय कराना स्वीकार थी तो उसने ऐसे जघन्य उपायको अवलम्बन किया, इसमें आश्चर्य क्या है ?

जातिविद्वेष और आभ्यन्तरिक ईर्ष्याने ही राठौरोंको महाराष्ट्रियोंके द्वारा दो बार पराजित कराया । यदि जयपुरकी सेनाके विरुद्ध राठौर कवि निन्दा-सूचक कविता न बनाता, तथा खूबचन्द और भीमराजके बीचमें ईर्ष्यानि-प्रज्वलित न होती तो साहसी राठौर सैनिकवीर निःसंदेह पातन और मैरताके युद्धमें अपनी विजयपताका उड़ाकर जातीय गौरव रविकी तीक्ष्ण किरणोंसे भारतवर्षको दीप्तिमान करदेते । यद्यपि मैरताके अन्तिम युद्धमें चार सहस्र राठौरवीर अपनी जाति और स्वाधीनताके लिये बड़ीभारी वीरता दिखानेके पीछे जीवन बलिदान करके स्वर्ग सिंधार गये थे और यद्यपि इसी कारणसे महाराष्ट्रियोंका प्रताप विशेषरूपसे फैलागया था, तथापि राठौर जातिके वीरत्व विक्रम और साहस शौर्यमें विन्दुमात्र भी लघुता नहीं आई वह क्षत्रियतेज, वह दृढप्रतिज्ञा, वह असीमसाहस, वह महावीरत्व राठौर जातिको ऊंची कक्षाकी वीरश्रेणीमें आजतक परिगणित करा रहेहैं इसमें कुछ सन्देह नहीं है । *

* कर्नेल टाड इस स्थानपर टिप्पणीमें लिखतेहैं कि, “ तीन वर्ष हुए जब मैं इन राजपूत विजेता डिवाइनकी जन्मभूमि कैवोरिकी उपत्यकामें गया था, दो दिनतक इनके साथ बड़े आनन्द पूर्वक रहा । चार सहस्र राजपूतोंने महाराष्ट्र राजपताकाके विरुद्ध युद्ध करके राजपूत स्वाधीनताके लिये अपने प्राण न्योछावर कर दिये थे, यद्यपि मैं इन डिवाइनके दीर्घजीवनकी इच्छा करताहूं किन्तु इस बातका मुझे बड़ा दुःख है कि “ वह उन राजपूतोंको अधीनताकी जंजीरमें बांधनेकी इच्छासे अपने संपूर्ण शान और साहसको लगा देनेके लिये ही जीवित थे। यह राठौर वीरोंकी खूब प्रशंसा करते हैं । जब मैंने इनसे मैरताके युद्धकी बात कही, उस समय पिछले सब दृश्य इनके मनमें जाग उठे, इन्होंने कहा कि “ वह सब बातें स्वप्नकी समान अब मालूम होतीहैं । “ स्वदेशी अधीश्वर द्वारा पुरस्कृत, असंख्य प्रिय आत्मीय स्वजनों द्वारा प्रसन्न और स्वदेशी लोगोंद्वारा सन्मानित होकर वह अस्सी वर्षकी अवस्थामें अपनी जन्मभूमिमें निवास करके शान्ति भोग रहेहैं वह जिस गलीमें रहते हैं वह गली प्राच्य जगत्के महा ऐश्वर्य और आडम्बरोंसे सजी हुई है और उन्होंने अपने मकानको भी उसी प्रकारकी सजावटसे मनोहर बना रक्खा है बड़े आश्चर्य की बात है कि जिस समय मैंने इस इतिहासका लिखना आरंभ किया, उस डिवाइनकी एक जीविनी मेरे हाथ लग गई थी । उसके देखनेसे ज्ञात हुआ कि डिवाइन इस बातको नहीं जानते थे कि मैरताके क्षेत्रमें आभ्यन्तरिक ईर्ष्या और गुप्त षड्यन्त्रके कारण राठौर परास्त हुए थे,,

जब अंगरेजोंके प्रचंड विक्रमसे महाराष्ट्रीगण हारे तब हुलकर और सेंधिया अपने अपमानका बदला लेनेके लिये पुनर्वार सेना इकट्ठी करने लगे । उनका आशा भरोसा समस्त ही लोप होगयाथा । तथापि बदला लेनेकी चिन्ता उनका पीछा नहीं छोडती थी । यद्यपि डाह बढ़ता गया परन्तु इतना साहस तो नहीं था कि प्रगटमें अंगरेजोंसे संग्राम करें । पीछे साहस करके सन् १८०५ ई० के वर्षाकालमें हुलकर और सेंधियाने विदनोरके अच्छे मैदानमें अपनी २ सेनाको डाला और युद्धका परामर्श करने लगे । उस परामर्शका प्रतिपाद्य विषय यही था कि अंगरेजोंके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये ? सहस्रशः अत्याचार करके भारतके नगर २ से जो धन महाराष्ट्रियोंने लूटाथा, तथा जो बल प्राप्त कियाथा आज वह समस्त धन और बल उनके हाथसे निकल गया । जिस प्रचंड सेनाकी सहायतासे एकदिन भारतवर्षमें केवल अपनाही डंका बजारहेथे आज वेतन न पानेसे वह सेना भी विगड रही है । इसके ऊपर अपमान और पराजय पायकर आज दोनों ही भूपाल राक्षसोंकी समान बन गए हैं । किसीकी भक्ति नहीं करते, न किसीका मान कर तेहैं । केवल मतवाले हाथियोंकी समान कुरूप कियेहुए चारों ओर घूमतेहैं । उनकी गतिका रोकनेवाला कौनहै ? ऐसा कौनहै जो खड्ग धारण करके उनकी गतिको रोकै ? कोई भी नहीं; कोई भी आगे नहीं बढ़ा । उस रोमहर्षण पैशाचिक अत्याचारके निवारण करनेका किसीने साहस नहीं किया । आज वीर जननी भेवाडभूमि वीरशून्याहै; आज महाराष्ट्री लोगोंने भलीभांतिसे उसे दलित कियाहै ! आज सुवर्णभूमिने श्मशानभूमिका रूप धारण कियाहै । महाराष्ट्री सेनाने उस समय ऐसी विकट मूर्त्ति बनाई थी कि यदि उनका राजा भी उस समय उनको रोकता तो भी उनके रुकनेमें सन्देह ही था । परन्तु आश्चर्यकी बात यह थी उनके राजाओंने उनको पापकार्य करनेके लिये दूना उत्तेजित किया । फिर किसकी सामर्थ्य थी जो मरहटोंकी अनिवारित गतिको रोकसकता । वह सेना

—हुई थी, उन महाराष्ट्री वीरोंको अंग्रेजोंने क्या एक बारही जंजीरोंमें बाँध लियाथा?—इस प्रकारका प्रश्न स्वयं ही पाठकोंके हृदयमें उत्पन्न होसकताहै । इसका उत्तर प्राप्त करनेके लिये भारतका एक इतिहास पढना चाहिये । तथापि इतना निवेदन किये देतेहैं कि भयंकर महाराष्ट्रियोंको सीधा करनेमें अंग्रेजोंका बहुतसा धन, बहुतसा रुधिर और बहुतसा समय लगाथा । यहलोग एकदिन, एकवर्ष या एकही बारकी चढाईसे मरहटोंको विनीत नहीं करसकेथे । ३१ दिसम्बर सन् १८०३ ई०को वेसिन स्थानमें जिस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर हुएथे, उसही संधिपत्रने अंग्रेज और महाराष्ट्र-

अग्राह्य नहीं है, किन्तु मेरा विश्वास यही है: कि उनकी यह भविष्यद्वाणी कभी सफल न होगी । *

२८ वीं नवम्बर—उस दिन पाँच कोशकी दूरीपर झारोनामक स्थानमें डेरा डाला गया । मैरता छोड़नेके पीछे जिस रणक्षेत्रमें चार सहस्र राठौरवीर जन्मभूमि और स्वाधीनताके लिये बड़ी वीरताके साथ प्राण न्योछावर करके इतिहासमें अपनी जातिका नाम अक्षय करगये हैं, उनकी उस पवित्र लीलाभूमिको देखते हुए आगे बढे । हम जिस मार्गसे चलरहे थे, यदि उसी मार्गमें चलेजाते तो सीधे दिल्ली पहुँच जाते, इस कारण उस मार्गको छोड़कर फिर आरावलीको पार किया और अजमेर पहुँचनेके लिये पूर्वप्रान्तके दक्षिणांशमें होकर जलने लगे । मार्ग श्रेष्ठ और मही उत्तम है । यद्यपि ग्रामोंके निकट कृषि-कार्यके चिह्न दिखाई देतेहैं, किन्तु गिरीहुई भूमिकी संख्या अधिक है; वेल-वूटे भी दिखाई देतेहैं । बहुत दूरीपर आरावलीकी आकाशभेदी चोटी क्रम २ से दक्षिण पूर्वमें हमारे नेत्रोंसे छिप गई और बीच २ में बहुत ऊँचे २ भूखण्ड दृष्टिको रोकने लगे ।

उस दिन प्रातःकाल ही हमने एक बड़ा विचित्र और मनोहर प्राकृतिक दृश्य देखा; हम जहांतक सोचतेहैं ऐसा बड़ा अनेक मूर्तियुक्त दृश्य हमने किसी समय किसी स्थानपर भी नहीं देखा । उस समय बड़ी भारी सर्दी थी तथा उत्तर पूर्व प्रान्तसे ठंडी २ वायु आ रही थी । पृथ्वी बड़े भारी बरफसे ढकी हुई थी । छोटी २ जड़ी वृष्टियाँ विशेष करके गन्ने उस भयंकर शीतसे विलकुल विध्वस्त होगये थे इससे पहिले शीतका प्रादुर्भाव मध्यम होनेसे, अकस्मात् प्राकृतिक परिवर्तनके कारण चेतन और अचेतन सब ही पदार्थ चञ्चल हो उठे । केवल शीतकालमें ही यह रमणीक दृश्य दिखाई देता है । मारवाड निवासी इसको शीतकोट” अर्थात् शरत् कालका महल कहते हैं । पश्चिम प्रान्तमें विस्तृत मरुभूमिके किसान लोग इस दृश्यको “चित्राम” अर्थात् तसवीर और यमुना तथा चम्बलवासीगण इसको “देशा-सुर ” कहते हैं । बहुत कालसे इस मरीचिका दृश्यका उल्लेख देखा जाता है ।

* खेदका विषय है कि समयने टाड महोदयकी ही भविष्यद्वाणीको व्यर्थ कर दिया । जालिम सिंहकी समान पञ्जाबके रणजीतसिंहने भी भारतवर्षके नकशेमें वृटिशगवर्नमेंटके शासित स्थानोंमें लाली देखकर कहा था कि “ एक दिन सब लाल होजायगा । ” इस समय वही बात सत्य हुईहै । यद्यपि देशी राजा लोगोंमें अब भी दो एक नृपति अपनेको स्वाधीन मानतेहैं, परन्तु यह उनकी भूल है ।

उसको एक साथ ही लोप करदिया * मरहटे लोग इस प्रकारसे अत्याचार करते हुए उस झमझानभूमिमें पिशाचोंकी समान घूमनेलगे । उनको उनके अत्याचारकी बदला देनेवाला कोई भी नहीं था; ऐसा कोई राजपूत नहीं था कि जो संजीविनी विद्याके मंत्रवलद्वारा उस झमझानभूमिकी चिता भस्मसे फिर असंख्य महावीरोंको उत्पन्न करसकता ? अतएव राजस्थान दीन दशमें ही रहा ।

जिस समय राजस्थानमें ऐसा उपद्रव मचरहा था, उस काल कितने एक अंगरेज़वीरोंने धीरे २ इस झमझानभूमिमें प्रवेश करके महाराष्ट्रियोंको बलपूर्वक वहांसे निकालदिया और इस देशको धीरे २ अपनी शक्तिसे जिलाया । जिस समय भारतवर्षमें अंगरेज़ोंकी प्रभुता पहले पहिल स्थापित हुई थी, उस समय जिन लोगोंने इनकी बहुत सी सहायता की; आज वही लोग निर्बल, निराश्रय और दीनहीन होकर अत्यन्त दुर्दशाको प्राप्तहुए । किसीने भी हाथ बढ़ाकर उनका उद्धार नहीं करना चाहा । यहां तक कि जिन राजाओंने अंगरेज़ोंकी ओर होकर बहुतसे संग्राम कियेथे आज एकवार भी अंगरेज़ोंने उनके मुखकी ओर न देखा । मुख देखना तो दूर रहा वरन उनको दुर्दशाग्रस्त होतेहुए देखकर वृद्धिनवीरोंने कुछ भी चिन्ता न की और चालाकीसे उनका राज्य लेनेकी इच्छा करनेलगे । इस प्रकारसे बहुतसे राज्य लेलिये ।

अंगरेज़ और महाराष्ट्रियोंका भयंकर संग्राम कुछ दिनोंके लिये शान्त रहा । परन्तु उसके फिर होनेकी शंका करके मरहटे लोग अपने २ परिवार और धन रत्नको मेवाडके किलोमें छिपाने लगे । आज सब ही लोग आसपासके घरोंका और मित्रोंका सहारा तकनेलगे । चन्दावतोंका मुख्य पात्र सद्दार्सिंह सेंधियाकी सभामें राणाजीका प्रतिनिधि नियत हुआ । अम्बाजीने पुनर्वार सेंधियाके मंत्र-भवनमें ऊंचे आसनको पाया † मेवाडके राणाने इससे पहिले लखवांदादाकी सहायता की थी, अम्बाजीने इस बातको अपने हृदयमें रक्खा । राणाके इस व्यवहारने महाराष्ट्री मंत्रीके हृदयमें जो आग जलादी थी. वह किसी भांतिसे नहीं बुझी । इतने दिन तक जो धीरे २ सुलगरहीथी इस समय वह एक साथ धधक-उठी । अम्बाजीने राणासे बदला लेनेका विचार किया और मेवाडके राज्यको

* अंगरेज़ोंके आनेके समयमें भारतके जिन राजाओंने उनकी सहायता कीथी उनमें गोहुद, ग्वालियर, राधोगढ और बहादुरगढके राजा और भूपालका नव्वाब ही प्रधान था । वारनहेस्टिंगके साथ मिलकर इन लोगोंने अंगरेज़ोंकी सहायता कीथी । परन्तु शोकके साथ लिखना पडताहै कि इनमेंसे कोई भी स्वाधीन नहींहै ।

† अम्बाजी, बापू चितनवीस, माधव हजूरिया और अन्नाजी भास्कर सेंधियाके मंत्री थे ।

एक एक स्थानका दृश्य ढका रहा । उस विचित्र दृश्यके ऊपर जितना २ प्रकाश गिरने लगा, यह “चित्राम्” उतना २ ही बदलता हुआ दिखाई देने लगा । सबसे पहिले गंभीर धुँएँका परकोटा दिखाई दिया, फिर महल दुर्ग, ऊँची चोटियें आदि रूपसे दिखाई दिया, अब वही सहस्र खण्डोंमें विभक्त अति सूक्ष्म तथा विराटकाय रंगे हुए काचकी समान आकृतियुक्त होगया—क्रमसे वह समस्त रमणीक महल, दुर्ग ऊँची चोटी आदि मानों गलीहुई धातुकी समान शून्य हृदयमें विलीन होगये ।

बहुत दिनतक मेरी यही धारणा थी कि इस प्रदेशकी मृत्तिकाके गुणसे ही यह नैसर्गिक दृश्य दिखाई देतेहैं, विशेष करके यह “चित्राम्” केवल सजी अर्थात् क्षार युक्त इस भूमिमें देखा जाताहै । किन्तु इसके अनन्तर मैंने इस प्रदेशके सब स्थानोंमें इस प्रकारके दृश्य देखे । इस प्रदेशकी मट्टी लवण मिली हुई है, इस कारण उसके द्वारा इस प्रकारके दृश्य उत्पन्न होनेकी संभावना है । किन्तु “सिराव” वा “चित्राम्” वा “शीतकोट” वा “देशासुर” दृश्योंमें यह भेद है कि “देशासुर” केवल शीतकालके सिवाय और कभी दिखाई नहीं देता । मैंने सबसे पहले जयपुरमें इस दृश्यको देखा था, ब्रिटिश साम्राज्यके किसी स्थानमें भी मैंने इसको नहीं देखा । जयपुरमें यह पहिले बड़े लंबे चौड़े दुर्ग प्राकार वेष्टित और बुर्ज युक्त नगरकी समान हमारे दृष्टिगोचर हुआ । पथ प्रदर्शकने इसको “शीतकोट कहकर परिचय दिया । किन्तु हमने सहसा उसके वचनमें विश्वास नहीं किया । मैंने इस जीवनमें फिर एक बेर इस प्रकारके विचित्र चित्तहारी दृश्यको देखा किन्तु यह दृश्य अतुलनीय है ।

कोटेके जिस वागकी कोठीमें मैं रहता था, एक दिन प्रभात ही उसकी छत पर चढ़कर टहलने लगा सूर्योदय होते ही वह दृश्य दृष्टिगोचर हुआ । कोटेके दक्षिण पूर्व प्रांतमें कुछ ऊँची शिखरावलीपर दृष्टि डालते ही यह मालूम हुआ कि शिखरमाला मानों तरंगाकारसे शून्य मार्गमें उठती चली जा रही है । वृक्ष और महलोंकी श्रेणियें विचित्र चमत्कार मूर्तिमें मानों इन्द्रजाल मन्त्रसे बनी हुई हैं । मैं कई मिनटतक इस आश्चर्यरूप दृश्यका असली कारण नहीं समझ सका; अन्तमें निश्चय किया कि—मरीचिका द्वारा ही यह दृश्य पूर्ण रूप धारण करके धीरे पवनसे आकाशमें उठाया जाता है । देखते २ वह सम्पूर्ण दृश्य धीरे २ शिखरके निकट होकर चलागया ।

कहताहूँ कि मेवाडकी ऐसी दुर्दशा कभी न होगी । आप लोग एक प्राण होंगे; आज पुरानी शत्रुता भूलकर परस्पर एक दूसरेको हृदयसे धारण कीजिये और एक साथ अफीम सेवन करके एक प्राणताका परिचय दिखाइये । ” हुलकरका वचन सुनकर सबको धीरज आया और एकसाथ अफीमका सेवन करके एक प्राणताका प्रमाण दिखाया । चन्दावन और शक्तावतोंको धीरज देकर ही हुलकर मौन नहीं हुआ, वरन् वह सबको साथ लेकर संधियाके डेरोंमें गया और बातोंमें राणाजीके ऊँचे कुलकी पवित्रता और मानपर्यादाका वर्णन करके गंभीर भावसे कहनेलगा । “ इस बातको आप भलीभाँति जानतेहैं कि राणाजीने कैसे ऊँचे वंशमें जन्म लियाहै । जाँ हमारे जाननीय हैं वह भी राणाजीको पूजनीय समझतेहैं * फिर क्या उनके विरुद्ध शत्रुता करना हमको शोभा देताहै ? इस संकटके समयमें उनके सर्वनाशसाधनका व्रत धारण करना क्या हमलोगोंका उचित कर्म है ? मेवाडकी समस्त बन्धकी भूसम्पत्तिको जो हमारे पितृगुरुपगण बहुत दिनोंसे सरलतापूर्वक भोगतेआएहैं, उचित तो यह था कि हम उसको लौटा देते और अब उसके बदलेमें उनके राज्यको टुकड़े २ करके बाँटेंगे ? हमलोगोंके राज्यको धिक्कार है ! आपकी जैसी इच्छा हो वैसा कीजिये; परन्तु मैं शपथ करचुकाहूँ कि राणाके पक्षको किसी प्रकार नहीं छोंडूंगा । यदि विश्वास न हो तो इसका प्रमाण लीजिये कि मैंने अभी अपना अधिकार किया हुआ नीमवहेडा जनपद राणाजीको दिया । ” हुलकरके इन तेजस्वी वचनोंको सुनकर सब ही मौन होगये, संधियासँ भी कुछ न कहागया। हुलकरके वाक्यने उसके हृदयकी तलीमें प्रवेश करके संधियाके मनरूपी राज्यमें एक प्रकारकी चपलता उत्पन्न कर दी हुलकर समझगया कि मेरी बातने अपना प्रभाव दिखाया, इस कारण उसको अधिक तेज करनेके लिये फिर कहनेलगा, “और यह भी तो आप विचार कर देखिये कि इस समय राणा यदि अलग होजाय तो हमारी कितनी हानि होगी ? यदि फिरंगीलोगोंके साथ फिर लड़ाई होनेलगे तो अपने कुटुम्ब और द्रव्य सामग्रीको कहाँपर रखेंगे ? जो राणाजीके साथ खेल न होगा तो उनके दुर्ग किस भाँतिसे हमको मिलेंगे विचारकर देखिये कि उनको अप्रसन्न करनेसे हम लोगोंको विपद

* पूजनीय कहनेका यह कारण था कि पेशवा, संधिया और हुलकरका राजाथा, पेशवाके राजा सितारेके छत्रपति हुए, और छत्रपतिके राजा उदयपुरके राणा थे । इस कारण राणाको पूजनीय कहा ।

जोड़े खड़ी है । यह स्त्री अपने स्वामीके शवके साथ चितामें भस्मीभूत होकर स्वर्गलोकको सिधारी थीं । उस मन्दिरकी दीवारपर यह खुदाहै— “१६८९ संवत्के (सन् १६३३ ईस्वी) माघकी द्वितीयाको महाराज जशवन्तसिंहने शत्रु (औरङ्गजेब) की सेनाको आक्रमण किया था; उसी समय मैरतीय सम्प्रदायके ठाकुर हरकर्णदास मारे गये थे । उन्हींके स्मरणार्थ संवत् १६९७ के माघ मासमें यह स्मारक मन्दिर बनाया गयाहै ।”

२९ वीं नवम्बर ।—पाँचकोशकी दूरीपर अलनिवासमें डेरा डाला गया । मार्गके अधविचमें रियानगर विराजमान है । मैरतीय सम्प्रदायके जिन सर्व-प्रधान नेताका विषय हमने कई जगह लिखाहै यह रियाही उन सामन्तकी निवासभूमि है । नगर बड़ा है, निवासियोंकी संख्या भी अधिक है, नगरके चारोंओर दृढ पत्थरका परकोटा है, उक्त पत्थरको यहांके लोग मरूर कहते हैं, रियाके वर्तमान सामन्तका नाम वदनसिंह है । मारवाडके सर्व श्रेष्ठ आठ सामन्तोंमें यही एक प्रधान हैं । नगर अब भी “शेरसिंहकारिया” इस नामसे पुकारा जाता है । पाठकोंको याद होगा कि, महावीर शेरसिंहने अपने अधीश्वर रामसिंहकी ओरसे वक्तसिंहके विरुद्ध युद्ध करके अपने प्राण न्यौछावर किये थे । नगर ऊंची भूमिके ऊपर स्थापित है, इसके ऊपरसे पर्वतमालाके सन्मुखवाले प्रदेशोंका रमणीक दृश्य दिखाई देताहै । नगरसे आरंभ करके सीमान्ततक ऊंची चोटीके पर्वततक बड़े २ समृद्धिशाली ग्राम वसे हुए हैं । बीच २ में इस प्रदेशके असाधारण बेल बूटे दिखाई देतेहैं ।

आरावली पर्वतवासी दुर्दान्त चरित्र माहीरलोग कैसे अत्याचारी और दुर्द्धर्ष साहसी हैं, मैंने यहांके बने एक समाधिमन्दिरकी दीवारपर खुदेहुए लेखद्वारा इस बातका विलक्षण प्रमाण पाया । उस लेखकी नकल यह है,— “संवत् १८३५ के (सन् १७७९ ईस्वी) माघकृष्ण तृतीया सोमवारके दिन माहीरलोगोंके आक्रमणसे नगर रक्षाके लिये भूपालसिंहने युद्ध किया था, वह अपनी स्त्रीकी सतीत्व रक्षा करनेके लिये उसका शिर अपने हाथसे काटकर युद्धभूमिमें शयन करगये थे ।” * पचासवर्ष पहिले माहीरजाति उपरोक्त प्रकारसे विक्रान्त और दुर्दान्त थी, उससे आगे इनके अत्याचार बढ़तेही गये । शिखरके दोनों प्रान्तमें जो राठौर सामन्तोंके ग्राम हैं, उनमें एक सामन्त वंश-

* यहांके एक और स्मारकमन्दिरमें लिखाथा कि, :रियालोगोंके संवत् १८१३ में मैरिया आक्रमण करनेपर वाओरिजातिके सिवया मारेगयेथे ।

“महाराज ! आपने इन रांगणलोगोंका व्यौहार अपनी आखोंसे देखा * यह आपके साथ सेंधियाका झगडा कराके दोनों राज्योंको नष्ट करेंगे इनके पक्षको छोडकर सेंधियासे, मिलिये, सुरजी रावको दूर करके अम्बाजीको मेवाडका सूवेदार बनानेकी चेष्टा करिये नहीं तो मैं आपको छोड सेंधियाके पास जाकर उसको साथ ले मालवे चला जाऊंगा”

केवल भाऊ भास्करके अतिरिक्त और सब मंत्रियोंने तात्याकी रायको ठीक ठहराया । हुल्करने भी तात्याका परामर्श माना और सुरजी रावको विदा कर दिया और अँगरेजी सेनाका सामना करनेके लिये उत्तरकी ओरको चला । परंतु अभाग्यके कारण उसका बल कम होतागया । सामना न करने पर भी उसने अंगरेजोंके क्रोधसे छुटकारा न पाया—रणदक्ष लार्ड लेकने पीछा करके उसको संधिकरनेके लिये विवश किया, प्रसिद्ध व्यासानदीके किनारे लार्ड लेकके साथ हुल्करकी संधि स्थापित हुई ।

मेवाडपर क्रोधित होनेसे भी हुल्करने राणाजीका कोई अमंगल नहीं किया; वरन मेवाडको छोडनेके समय राणा और राजस्थानको निरापद रखनेके लिये सेंधियासे कहता गया कि; “मैंने राणाजीके राज्यको अम्बाजीकी चढाईसे वेखटके रखनेकी प्रतिज्ञा करलीहै, कहीं ऐसा न हो कि मेरी प्रतिज्ञा टूटजाय । यदि इस अनुरोधको न मानेंगे तो आपको इसका उत्तरदायी होना पडेगा ” भय भक्ति अथवा अनुरागके कारण सेंधियाने हुल्करके अनुरोधको कुछ दिनतक माना; परन्तु जब देखा कि हुल्करपर विपत्ति पडीहै तब सब बातें भूलगया और मेवाडसे १६ लाख रुपया वसूलकरनेके लिये शीघ्रतासे सदाशिव रावको भेजा, सदाशिव राव आहत मेवाडका रुधिर चूसनेके लिये जान व्याप्तिसुकी कवायद सिखाईहुई गोलंदाज पल्टन लेकर मेवाडकी ओरको चला, सन् १८०६ के जून मासमें यह सेना मेवाडकी ओरको बढी । सेंधियाने दो कार्योंका साधन करनेके लिये अपनी सेनाको मेवाडके विरुद्ध भेजाथा । पहिला सोलह लाख रुपयोंका वसूलकरना । दूसरा, महाराजा जैपुरकी सेनाको उदयपुरसे दूर करना । राणाकी बेटीके साथ जैपुरके राजाको विवाह निश्चय होनेसे दोनों ओरके समाचार और दान दहेज लेजानेके लिये कछवाहे राजकुमारकी सेना उस कालमेवाडमें ही थी ।

* महाराष्ट्री लोग राजपूतोंको रांगडानामसे पुकारा करतेहैं । रांगडा शब्दका अर्थ प्रचंडहै ।

शिखरके बाहर स्थापित है, किंतु पूषानगर और उससे मिलेहुए वारह ग्राम, विजाथाल और उसके पश्चिम प्रांतवर्ती सम्पूर्ण करद ग्राम भी अजमेरके अंतर्भूत हैं; यह सब प्रदेश यदि पुराने अधीश्वर मारवाड राजको लौटादिये जावें तो वह उनको बड़ी कृतज्ञताके साथ स्वीकार करसकते हैं ।

गोविंदगढ़के कुछ दूरीपर पश्चिममें एक नदीको पार करके आगे चले । उसका नाम शुभ्रमती है, कोई २ इसको लूनी नदी भी कहते हैं । उक्त शुभ्रमती और सरस्वती नामकी एक दूसरी नदी, दोनों पुष्कर सरोवरसे बाहर निकलकर आपसमें मिल गई हैं ।

१ ली दिसम्बर ।— वहांसे चलकर चार कोशकी दूरीपर सुप्रसिद्ध हिन्दूतीर्थ पुष्करसरोवरपर पहुँचे इस मार्गकी भूमि रेतसे भरी है । नन्दनाम सरस्वतीको उतरकर आये । उक्त नदीके दोनों किनारोंपर दश २ फिट् ऊँची घास उत्पन्न होती है । आभ्यन्तरिक प्रदेशके अनेक स्थानोंमें वह सब घास गाड़ियोंद्वारा पहुँचाई जाती है । यह घास छप्पर छानेके लिये बहुत उपयोगी है । तथा हाथियोंका दूध भी इसको बड़े आनन्दसे खालेता है । वर्तमान पुष्करसरोवरके दो कोशकी दूरीपर प्राचीन पुष्कर विराजमान है; मन्दारके पुरीहर लोगोंके अन्तिम राजाने इसको खुदवाया था । उस प्राचीन सरोवरसे निकली हुई सरस्वती नदी हमने फिर उपत्यकाके निकट बहती हुई देखी । उपत्यके मुहानेपर बालूका स्तूप आधे कोश तक चला गया है । समतल भूमिसे आई हुई वायुके द्वारा यह रेतका स्तूप बन गया है । बीच २ में यह रेतका स्तूप बहुत ऊँचा होगया । यह स्तूप मानों उपत्यकामें प्रवेशद्वारके परकोटे रूपसे विराजमान है । दक्षिणभागके पर्वतके लाल पत्थरोंमें बड़ा मनोहर दृश्य दिखाई देताहै । उस नन्दनामक शृङ्गके ऊपर आद्याशक्तिका मन्दिर बना हुआ है । उस प्रान्तके पर्वतके वैसे ही रंगके पत्थर हैं; चोटी बहुत ऊँची चली गई है । दक्षिणभागकी पर्वतमाला लाल पत्थरोंकी है; तथा उसके शिखर सफेद रंगके हैं ।

भारतवर्षमें पुष्कर बहुत प्रसिद्ध और पवित्र तीर्थ है । इसकी पवित्रताकी तुलना केवल तिब्बतके मानसरोवरके साथ की जासकती है पुष्करसरोवर उपत्यकाके ठीक मध्यस्थलमें विराजमानहै । यहांपर उपत्यकामें बहुतसे मकान बने हुए हैं । भारतवर्षके धर्मानुरागी राजा और धनाढ्य लोगोंने इस सरोवरके तटको अनगिन्त मन्दिर, देवालय, संगीतशाला स्मारकचिह्न आदिके द्वारा अत्यन्त शोभायमान करदिया है । पूर्व प्रान्तके सिवाय सरोवरके तीनों ओर रेतके शिखर हैं । सरोवरकी आकृति वृत्ताभासकी समान है । केवल पूर्वका तट छोड़कर शेष

रहूंगा । ” कहते हैं कि मानसिंहने अपने सरदारोंसे यह असत्पराक्रम प्राप्त की थी । उस समयमें चन्दावतलोगोंपर राजाकी कृपादृष्टि रहती थी । दुष्ट राठौर सरदारोंने अपना अभिप्राय सिद्ध करनेके लिये उनके सरदार अजितसिंहको रुशवत दी और यह अनुरोध किया कि जगतसिंहके साथ कृष्णकुमारीका विवाह न होने पावै ।

ललनाललाम हेलेना*की अनुपम सुन्दरताने जिस प्रकार उसके स्वामी और शत्रुओंको सदाकी नींदमें मुलादिया था, वैसेही सुरसुन्दरी कृष्णकुमारीके ललित लावण्यने भी उसके पिता और प्रेमियोंको सदाके लिये नष्ट करदिया, फिर उस सुन्दरीके भी प्राण लेलिये । उसकी सुन्दरता ही उसका काल होगया । कृष्णाके पानेकी अभिलाषासे मारवाडका राजा मानसिंह अम्बेरके राजापर अपनी सेना लेकर चढाया । महाराष्ट्रीलोगोंने भी इस अवसरमें एक ओरका पक्ष अवलंबन करके इस झगडेको अत्यन्त ही बढादिया । थोडे दिन हुए कि सेंधियाने महाराजा जयपुरसे कुछ धन मांगाथा; जगतसिंहने न दिया; इस ही कारणसे वह भी जगतसिंहसे शत्रुता निकालनेके लिये चला और कृष्णकुमारीका विवाह जगतसिंहके साथ न होनेका यत्न करने लगा और मारवाडके राजा मानसिंहसे मिलगया । उसने राणाजीसे कहलाभेजा कि जयपुरकी सेनाको शीघ्रही भेवाडसे निकालदीजिये । सेंधियाको विश्वासथा कि राणा भरे कहनेको नहीं टालसकेंगे । परन्तु वह विश्वास आज मिथ्या होगया, राणाजीने उसके कहनेपर कुछ भी ध्यान न दिया । पीछे सेंधिया अपनी गोलन्दाज सेना लेकर भेवाडपर चढा । उसकी गतिको रोकनेके अभिप्रायसे राजा

* इस लावण्यमयीको नायिका बनाकर ग्रीसदेशके महाकवि होमरने इल्लिमडग्रंथको बनायाहै । ग्रीस इतिहासके मतानुसार हेलेनाने जूपितरके औरससे स्पार्टाकी रानी लीडरके गर्भसे जन्म लिया था । केष्टर और पोलक्स नामक इसके दो भ्राताथे । एथेनका महावीर थिसियस यौवन कालमें ही उसको हरण करके लेगया; परन्तु पोलक्स और केष्टरने उसके हाथसे अपनी बहनका उद्धार करलिया । हेलनाकी अपूर्व सुन्दरताका वृत्तान्त ग्रीसराज्यमें चारों ओर फैलगया । जिसको सुनकर उस देशके समस्त राजालोग विवाह करनेकी इच्छासे उस मनमोहिनीके घरपर आने लगे । अन्तर मिजिलस नामक एक राजाके साथ उसका विवाह हुआ । विवाहके कुछही दिन पीछे टपेका प्रसिद्ध राजकुमार हेलेनाको हरण करके लेगया । कहते हैं कि हेलेना इच्छापूर्वक उसके साथ गईथी । इसही झगडेके कारणसे टीजनकी लडाई हुई । इस युद्धके समाप्त होजानेपर हेलेना अपने पहिले स्वामी अभागे मिनिलसके पास गई । हेलेनाके वृत्तान्तको लेकर जो इल्लियड ग्रंथ बनाया गया है, उसके साथ भगवान् वाल्मीकिजीकी रामायणमें बहुतसा मेल पाया जाताहै ।

प्रगट हुई, अपने आसनपर अन्य स्त्रीको बैठा देख महाक्रोधके साथ रत्नगिरिपर जाकर अदृश्य होगई । जिस स्थानसे सावित्री अंतर्द्धान हुई थीं अकस्मात् उस स्थानपर एक झरना उत्पन्न होगया । वह इस समय “ सावित्री झरना ” इस नामसे विख्यात है । उस झरनेके निकट ही सावित्री देवीका मन्दिर विराजमान है । पुष्कर तीर्थ यह एक सामान्य दृश्य नहीं है ।

पुष्कर सरोवरके पास जो बहुत ऊंचा रेतका स्तूप दिखाई देता है, उसके विषयमें ऐसी जनश्रुति है कि, यज्ञस्थलमें देवदेव महादेव प्रज्वलित आहुति दान करके धतूरा पीनेके कारण अग्निका विना निवारण किये विह्वल चित्तसे अपने स्थानको चलेगये । धीरे २ अग्नि भयंकर रूप धारण करके संसारके जलानेको उद्यत हुई । तब ब्रह्माजीने वहां आकर बालुकाद्वारा अग्निको विलकुल बुझा दिया । इस कारणसे ही उपत्यकाके मूलमें बालुका पर्वत उत्पन्न हुआ है ।

एक और जनश्रुति है कि, कलियुगमें मंदौरके एक राजा शिकार खेलते हुए वहां आपहुंचे; इस सावित्री झरनेमें स्नान करनेसे उनका एक असाध्य रोग दूर होगया । महाराजने जाते समय मार्गकी पहिचानके लिये अपनी पगड़ी एक वृक्षकी शाखामें बांध दी । वह अपने राज्यसे बहुतसे मनुष्योंको साथ लेकर यहां फिर आये और उनके द्वारा उक्त सरोवर खुदवाया । यहांके ब्राह्मण लोगोंने मुझसे कहाकि “हमारे पूर्वपुरुषोंने उक्त पुरीहर राजाके निकटसे पुष्करतीर्थकी भूवृत्ति प्राप्तिके बहुतसे अनुशासनपत्र प्राप्त किये थे । किन्तु मैंने केवल एक ताम्रानुशासन लिपिका फारसी भाषामें अनुवाद पाया । अनेक समयपर अनेक प्रान्तके अधीश्वरोंने देवलों और धर्मशालाओंके व्यय निर्वाहार्थ जितने अनुशासनपत्र दिये हैं; मुझको उनमेंसे बहुतसे अनुशासन पत्रोंकी नकल मिली ।

अजमेरकी चौहानजातिके सुप्रसिद्ध महाराज विशालदेवका नाम इस पवित्र तीर्थमें आजतक प्रतिध्वनित हो रहा है । विशालदेवके प्रतिष्ठित आदिपुरुष अजपाल इस सरोवरके ठीक दक्षिण भागमें “ नागपहाट ” अर्थात् सर्प गिरिपर जिस स्थानमें निवास करते थे, ब्राह्मण उस स्थानको भी यात्रियोंको दिखाते हैं । वास्तवमें उस स्थानपर “अजपालका” ध्वंसावशिष्ट दुर्ग अवतक दिखाई देता है । यह आदि पुरुष वकारियोंके पालनेके कारण “अजपाल नामसे विख्यात हुए थे । अजपाल इस तीर्थके एक संन्यासीको प्रतिदिन वकरीका दूध दिया करते थे; संन्यासीके सन्तुष्ट होनेपर उनके ही वरदानसे राज्येश्वर हुए थे । यह पुष्कर तीर्थ उनकी जन्मभूमि थी, इस कारण ममताके कारण उन्होंने सबसे श्रेष्ठ सर्पगिरिके

अपने हाथसे उखाड़ डाला;—जगतसिंहके लिये क्या यह कम संतापकी बात थी; वह जितना ही राणाके व्यौहारका विचार करतेथे उतना ही उनका हृदय दुःखित होताथा अंतमें निश्चय कर लिया कि मेवाडवालोंसे इसका बदलालेंगे । तदनुसार एक बड़ी सेना ले मेवाडपर चढ़ाई की उसवक्त जितनी सेना तैयार कीगई थी, अम्बेरराजके स्थापन समयसे लेकर वैसी सेना कभी भी नहीं तैयार हुईथी । इधरमारवाडके राजा मानसिंहने अपने शत्रुकी मेवाडपर चढ़ाई सुनकर स्वयं उससे लड़नेका विचार किया और अपनी सेनाको ले मेवाडकी ओर आया । लेकिन उसके राज्यमें इस समय भीतरी झगडे उत्पन्न होगये कि जिन्होंने इस कार्यमें अत्यन्त विघ्न किया । सिंहासनके लिये ही यह झगडा पैदा हुआ था । राज्यकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंने मारवाडके सामन्तोंको पृथक् २ श्रेणीमें विभक्त करदियाथा । सहजसे इन झगडोंका निवारण नहीं हुआ इनमें बहुत साधन और रुधिर खर्च हुआथा; इस अवसरको उत्तम समझकर मरहटेलोग भी भीतर घुसगये और राज्यके बलको बहुतायतसे घटादिया । जातिका विवाद ही राज्यके लिये अनर्थका प्रधान कारण है । मारवाड बहुत दिनसे इस विवादकी रंगभूमि होरहाथा । इन झगडोंसे कभी किसीका भला हुआ और किसीका बुरा । मानसिंह इन्हींकी सहायतासे मारवाडके सिंहासनपर बैठाथा । उसने समझलिया था कि विना विवादकी सहायताके अपना अभिप्राय सिद्ध न होगा; इसी कारण सेना और सामन्तोंमें ऐक्यता फैलानेकी चेष्टा उसने नहीं की थी ।

मानसिंह जगतसिंहसे लड़नेको चला । इतने दिनतक जो लोग सतानेसे दुःखी होगयेथे अब उन्होंने अवसर पाकर शत्रुओंकी तरफदारी की; और मेवाडकी दुर्नीतिका अनुसरण करके एक कल्पित राजाको अपना सर्दार बनाकर कार्य सिद्धि करनेको आगे बढे । उस कल्पित राजाकी प्रचण्ड पताका जैपुरके राजाकी विशाल फौजके बीचमें उड़ी, महाराजा जैपुर एक लाख २० हजार सेना लेकर चढेथे, मानसिंहके पास इनसे आधी सेना थी मारवाड और अम्बेरके पुरुबुतसर नामक स्थानमें दोनों सेनाओंका सामना हुआ । जिस उत्साहके साथ संग्राम आरम्भ हुआथा उससे ज्ञात होताथा कि घोर रण होगा परन्तु वह न हुआ, कारण कि कुछ देरतक युद्ध होनेके पश्चात् मानसिंहके बहुतसे सर्दार कल्पित राजाकी तरफ चलेगये । मानसिंहकी आशा लोप होगई; जिनके ऊपर विश्वास करके संग्राममें आयाथा, अंतमें वही लोग छोडकर चलेगये यह क्या

बहुतसे चिह्न देदीप्य मान हैं । सिंधु नदीके तटपर सिवयानका दुर्ग जल-
वरकी गुफा और आवू शिखर तथा काशीमें उनके योग साधनके स्थान अव-
तक विराजमान हैं । यदि ऐसा स्वीकार कर लिया जाय कि वास्तवमें वह भारतवर्षके
इन सब दूर २ देशोंमें गये थे, तो उनको एक दीर्घजीवीप्रधान संन्यासी कहना
उचित है । विक्रमादित्य और भर्तृहरि प्रमारजातिके थे । कवियोंकी कवितासे
प्रगट है कि “ सम्पूर्ण संसार प्रमार राजवंशाधीन ” था । यह नागपहाड वा
सर्पगिरि अत्यन्त रमणीक और पवित्र दृश्ययुक्त है । सुनते हैं कि सदासे
बहुतसे ऋषि, मुनि, यती, संन्यासी इस पर्वतगुफामें आश्रय लेकर योग साधन
किया करते थे । ब्राह्मण उन सब पवित्र गुफाओंको यात्रियोंको भलीभाँति
दिखाते हैं । वह सम्पूर्ण आश्रम इस समय नयनानन्ददायक कानन और
निर्झरमालासे सुशोभित हैं । जिन अगस्त्यमुनिने समुद्र पान किया था, एक
झरना उनके नामका भी इस सर्पगिरिपर विद्यमान है ।

२ री दिसम्बर ।—पुष्करसे अजमेर तीन कोशकी दूरीपर है । हम पुष्कर
छोडकर उपत्यकाकी ओर आगे बड़े शिखरपर चढ़नेके समय देखा कि,
आकाशभेदी दोनों पर्वत पीतवर्ण आंखलेसे शोभित होकर खड़े हैं । उस आं-
लेके देखनेसे यह ज्ञात होता है कि, शिखर हमारी इस आरावलीका अंशमात्र है ।
हम जितना २ शिखरके ऊपर चढ़ते जाते थे उपरोक्त बालुकाशिखर उतना २
ही छोटा होता जाता था । एक छोटी नदी उपत्यकासे बहकर घूमती हुई चली-
गई है । सहसा हमारे उत्तरकी ओरसे पूर्वप्रान्तके मार्गमें चरण रखते ही
शिखरमालाके एक ओरसे “ धारवलखैर ” दृश्य दृष्टिगोचर हुआ । यह दृश्य
जैसा रमणीक है, वैसा ही विचित्र है हमारे निम्नस्थानमें स्थित उस कुञ्जका-
ननसे घिरा हुआ विशालदेवका खुदाया हुआ बड़े सरोवरसे शोभित वह विस्तृत
प्रान्तर अनिर्वचनीय है । निकट ही एक बहुत ऊँचे पर्वतके ऊपर अजपालका
वह विध्वंस दुर्ग भी नेत्रोंको बहुत आनन्द देता है । इस पर्वतपर बहुतसे चमत्कार
और उत्तम मर्मर पत्थर देखे जाते हैं ।

उपरोक्त दृश्योंको देखते हुए अन्तमें अजमेर नगरके भीतर पहुँचे । यद्यपि
अजमेर नगर एक समय राजधानी था, किन्तु हमने इसको जैसा समृद्धिशाली

बुरा समय था कि जव उसने मानसिंहपर चढाई की। अपने कुकर्मका फल बहुत दिनतक उसको भोगना पडा। अपने नगरमें पहुँचकर भी वह सुखी नहीं हो सका, पराजित होकर अनेक कष्ट पानेसे उसकी सेना अत्यंत अधीर होगई थी; तिसपर वेतन न मिलनेसे उसका दुःख और भी बढ गया था। वेतन पानेकी आशासे बहुत दिनतक वह सेना जयपुरमें रही कि जहां उसको अत्यंत कष्ट प्राप्त हुआ। उन सिपाहियोंकी चिताभस्म और उनके घोडोंकी हड्डियां बहुत दिनोंतक जैपुरकी चहारदिवारीके निकट पडीहुईथीं;—शोभायमान जयपुरने बहुत दिनोंके लिये श्मशान भूमिका रूप धारण कियाथा। * भगवानकी क्या विचित्र लीलहै;—भाग्यतरंगका कैसा अद्भुत परिवर्तनहै; जो मानसिंह अपने सामन्त और सदाओंके द्वारा त्यागा जाकर दुर्दशाके शिखरपर पहुँच चुकाथा आज वही समस्त विपत्ति और संकटोंसे छुटकारा पाकर राज-कार्य करने लगा। उसके शत्रुओंका नाश होगया। गया हुआ गौरव पुनः प्राप्त हुआ। इस विषयमें उसको अमीरखाँनामक एक दुर्धर्प पठानकी सहायता मिली-थी। भारतवर्षमें जितने पाखंडी मुसलमानोंको आश्रय प्राप्त हुआ है;—जिनकी कलंकमयी नामावली इतिहासके पवित्र पत्रोंको कलंकित कर रही है, अमीरखाँ उन सबमें प्रधान था। इससे पहिले यह अमीरखाँ मानसिंहका शत्रु होकर कल्पित राजाकी तरफदारी करनेलगा परन्तु पश्चात् लोभके वश होकर यह राक्षस कल्पित राजाको छोड मानसिंहकी ओर जा मिला। जिस कल्पित राजाने इत-नेदिनोंतक अत्यन्त आदर मानसे उसको टिकाया था अब यह पापी उसहीका नाश करनेको तइयार होने लगा। कल्पित राजा और उसके सेवकोंका संहार करनेकी इच्छासे अमीरखाँने उससे मिलना चाहा और एक मसजिदके भीतर दोनोंमें मित्रताका वचन हुआ। अभाग्य कल्पितराजा अमीरखाँके कपटको नहीं जान-सका, वरन अमीरखाँके अपनी ओर चले आनेसे बहुत ही प्रसन्न हुआ। तथा उसकी कपट मित्रताईको ईश्वरानुग्रह समझकर मनही मनमें भगवानका स्मरण करने लगा। उसने अपने डेरोंमें नाच गाना आरंभ करादिया। जिस समय नाच-ना गाना होरहाथा उसही समय दुष्ट अमीरखाँने सेनासहित उनके ऊपर चढाई करके डेरोंकी रस्सियां काटडालीं, और वहीं पर घेरकर सबको गोलियोंसे मारडाला।

* टाडसाहबने अपनी आंखोंसे इस शोचनीय घटनाको देखाथा। जो आदमी इस कार्यमें शामिल थे उनसे बात चीत भी हुईथी। सन् १८०८के जनवरीमासमें जयपुरके भीतर होकर जानेके समय टाडसाहबने इस नगरके रेतीले मयदानमें उक्त युद्धके २।४ चिह्न देखेथे।

इकतीसवां अध्याय ३१.

अजमेर;—प्राचीनजैनमन्दिर;—अजमेरदुर्ग;—विशालसरोवर;—
अन्नासागर;—चौहान राजगणके स्मृतिचिह्न;—अजमेर परित्याग;
बुनाई, उसका दुर्गप्रासाद;—देवडा;—देवला;—वाणेश;—राजा-
भीम;—उनका वंश;—उनके अधिकृत प्रदेश;—दुर्गप्रासादमें
गमन;—भीलवारा;—वणिकोंके साथ साक्षात्;—नगरकी श्री
वृद्धि;—मंडल;—वहांका सरोवर;—आर्य्य-पुर;—दरवार;—पुरव-
तोंका विभक्त प्रदेश;—पुरका प्राचीन इतिहास;—मेवाडके राज-
कुमार;—रश्मि वा रश्मि;—मेवाडके किसानोंद्वारा सम्बर्द्धना;—
सुहेलिया;—बुनाशनदी;—मैरता;—बारीश नदीका उत्पत्तिस्थान
दर्शन;—उदयसागर;—उपत्यकामें प्रवेश;—उदयपुर;—प्राचीन-
आहर;—राणाके पूर्व पुरुषोंका स्मारक मन्दिर;—आहर सम्बन्धी
जनश्रुति;—अग्निके उत्पातसे उसकी ध्वंसता प्राप्ति;—
प्राचीन ध्वंसावशेष;—रानाके साथसाथ साक्षात्;—
उदयपुरमें प्रत्यावर्त्तन ।

भारतवर्षमें अजमेर जिस प्रकार बहुत पुराना प्रदेश है, उसी प्रकार विदे-
शीय—विजातीय विधर्मी लोग स्वर्णपुष्प भारत वर्षकी छातीपर पापचरण रखते ही
सबसे पहिले इस अजमेरके विजय करनेकी चेष्टा करते हैं । दुर्दांत मुगल पठानोंने
बहुत कालतक इस अजमेरमें अपना पैशाचिक लीलाभिनय दिखाया था । उन
मुगल पठानोंके अत्याचार, उपद्रव, लूटमारसे सौभाग्यवश हिंदुओंके प्राचीन
कीर्ति चिह्न जो कुछ शेष रहगयेथे अन्तमें यवनोंके द्वारा वह भी नष्ट होगये ।
हिंदुओंके जितने विचित्र कारीगरीके साथ बने हुए चित्ताकर्षक स्थान थे,
विजयी यवनोंने उन सबको मसजिद् बनालिया । परन्तु सबका भक्षण करनेवाला

अनहलवाडा पट्टनमें राज्य कियाथा, कृष्णाकी माताका जन्म उसी प्राचीन और पवित्र कुलसे था । कृष्णकुमारीने अपने वंशकी समान ही ऊंचे गुण पायेथे । इसी कारणसे 'राजस्थानकी कमलिनी' के नामसे विख्यात थी । परन्तु भारत अपने दुर्भाग्यसे उस देववालाकी अनुपम सुन्दरता तथा लावण्यराशिको देखकर अपने नेत्र तृप्त नहीं करसका, उस कमलिनीके स्वर्गीय सौरभकी सुगंध प्राप्त नहीं करसका । जिस समय उस अनुपम सुन्दरताका प्रगट होना आरम्भ हुआथा, उसी समय वह कल्पवृक्षका सुमन टूटकर अनंत कालके जलमें मिलगया । इस संसारमें कृष्णाकी समान सर्वांगसुन्दरी और अभागिनी स्त्रियें दो ही चार जन्मी हैं; ऊंचे राजकुलमें जन्म लेकर ऐसे असहनीय कष्टको दो चार ही स्त्रियोंने सहै, और जन्मभूमिके लिये उस प्रकारकी पीडामयी मृत्युको आलिङ्गन करके जगत्में दो चार ही स्त्रियोंने अपने प्राणोंको बलिहार कियाहै अथवा विश्वासघातीके कपटजालमें थोड़ी ही वीरवाला इस प्रकारसे पीसी गई हैं । कृष्णाका अमूल्य जीवन वृथा ही गया । रोमकी रहनेवाली अभागिनी वर्जिनियाने भी* निराश्रय हो पिताकी छूरीकी नोकपर अपने हृदयको रखदियाथा; और ग्रीसकी सुंदरी इफीजिनिया × ने भी खम्भेपर अपने प्राणोंको न्यौछावर कियाथा । परन्तु इनके अभागे कुटुम्बियोंने इनके पवित्र जीवनके बदलेमें भलीभांतिसे शांति पाईथी । विचारकर देखनेसे यद्यपि पवित्र हृदया सुंदरी कृष्णाकी समान ललना, यूरोपमें नहीं देखी जाती; तो भी विशेष मिलानकरके देखनेसे उसकी असीम सुंदरता, अनुपम गुणराशि, और कठोर अभाग्यके साथ उस देशकी दो स्त्रियोंका किसी २ अंशमें मिलान होसकताहै । कृष्णाके उस शोकोदीपक मरण वृत्तांतको श्रवण करनेसे छाती फटतीहै और आँसू

* श्रीमती वर्जिनिया रोमके विख्यात महारथी वियूसियस वर्जिनियसकी बेटीथी । कहतेहैं कि एपियस क्लडियस नामक एक दुष्टने वर्जिनियाको माता मिताके निकटसे बलपूर्वक हरण करनेकी चेष्टा की थी । अपनी प्यारी बेटीके सतीत्व और उसके सन्मानके बचनेका कोई उपाय न देखकर वियूसियसने सबके सामने फोरमक्षेत्रमें उसको अपने हाथसे मारडाला । कहतेहैं कि यह घटना सन् ई०से४४९ वर्ष पहिले हुईथी ।

× इफीजिनिया ग्रीसके महावीर एगेमेमननकी बेटीथी । जब अलिसनामक द्वीपमें ग्रीसवालोंका जंगी जहाज रुक गया तब डियाना देवीकी प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये एगेमेमननने अपनी बेटीको उसके सामने बलिदिया था । परंतु ग्रीसवालोंके पुराणोंको पढ़नेसे जाना जाताहै कि देवीडियानाने इफीजिनियाको बलि नहीं देने दिया तथा उसको हरण करके लेगई और टरिसनगरके मंदिरमें उसको अपनी योगिनी बनाकर रक्खा ।

और ऊँची चोटीका महल अबतक विचित्र दृश्य प्रगट कर रहा है। उस दुर्गकी चोटी पर इस समय वृटिशपताका फहरा रही है।

“विशालतलाव” नामका अजमेरमें एक बहुत बड़ा सरोवर है। इसकी परिधि चारकोश परिमित है। सुविख्यात विशालदेवने इस विराट जलाशयको बनवाया था। यह जिस प्रकार अजमेर उपत्यकाका परम शोभावर्द्धक है उसी प्रकार लूनी नदीके साथ इसका संयोग होनेसे यह एक विशेष द्रष्टव्य स्थल है। इसके उत्तरके भागमें “दौलतवाग” नामक मनोरम वाग है। दिल्लीपति जहांगीर जिस समय राजपूतोंकी पराजयके लिये आगे बढ़े उस समय यह वाग तिम्रमाण कराया था। इस वागके जिस मर्मर महलमें इंग्लेण्डेश्वर प्रथम जार्जके द्वारा भेजे हुए राजदूत ग्रहण किये गये थे, वह महल इस समय ध्वंस प्राय है और इंग्लेण्डेश्वरके द्वारा उपहारमें दी हुई सवारीपर चढ़कर दिल्ली-सम्राट जिस मार्गमें वायु सेवन करते थे वह मार्ग भी इस समय लता औषधियोंसे घिरा हुआ है।

उक्त विशाल तलावके आधकोश पूर्वमें अन्नासागर नामका एक दूसरा बड़ाभारी सरोवर है। सुनते हैं कि विशाल देवके पोतेने उसको खुदवाकर अपने नामसे विख्यात किया था। विशालदेवके उक्त पौत्र बड़े उदार और दाता थे। उन्होंने उस सागरके बीचकी द्वीपाकार भूमिके ऊपर और तटपर बड़ाभारी महल बनवाया था, उसके द्वारा एक समय उस सागरकी परम रमणीक शोभा थी, किन्तु दुर्दान्त पठान उसको विध्वस्त करके सब सामग्री अन्यत्र ले गये। इस सागरके निकटवर्ती शिखरके ऊपर “खाजाकुतुब” और अन्य कई मुसलमान पीरोंकी मसजिदें बनी हुई हैं।

खेदका विषय है कि प्राचीन चौहान अधिराजोंके शासनमूलक इतिहास वा खोदित लिपियें संग्रह करनेमें सफलता न हुई। किन्तु सौभाग्यसे मैंने उन पुराने राजालोगोंके शासन समयके कई सिक्के प्राप्त कर लिये थे। वह सब बौद्ध और जैनियोंके प्राचीन विवरण संकलनमें विशेष सहायक हैं। सिक्केके एक ओर बहुत प्राचीन अक्षर लिखे हैं, तथा दूसरी ओर राजपूत जातिके पूजनीय अश्वकी मूर्ति अङ्कित है। ऐसा अनुमान होता है कि, अग्रिकुल चौहानलोग इस चिह्नको उत्तर एशियासे लाये थे। इस देशकी प्राचीन गवेषणासे उस अनुमानके सत्य वा मिथ्या होनेका पता लगसकता है। पुष्कर तीर्थमें भी मैंने कई पुरानी मुद्रा पाई थी। हिन्दू जातिके प्रधान शत्रु सम्राट औरङ्गजेबके भारतसिंहासनारोहणसे पहिले यदि कोई पुरुष खोजके लिये इस देशमें आता, तो निःसंदेह वह विशेष

ओरसे स्वर्गीय सुकुमार संतानस्नेह उनके रोम २ में अमृतकी वर्षा करनेलगा, दूसरी ओरसे अमीरखांका कठोर उपाय मेवाडकी रक्षाका हौनहार कठोर चित्र सामने लाकर उस सुकुमारहृदयको कठोर करनेलगा । एकसाथ ही कोमल और कठोर वृत्तियोंसे मथेजानेके कारण राणाजीका हृदय पैशाचिकपीडासे दुःखित होनेलगा । उनसे स्थिर न रहागया और उन्मत्तकी समान होगये । क्रमानुसार सुकुमार संतानके स्नेहको पानी देकर उन्होंने अपने हृदयको पत्थर बनाया और मेवाडकी रक्षाका दूसरा उपाय न देखकर कृष्णाके मरणको स्वीकारकिया ।

कृष्णकुमारी मृतक होगी;—राजस्थानकी फूलीहुई कमलिनी ललनाललाम राजकुमारी कृष्णकुमारी मेवाडभूमिकी रक्षाके लिये वलि दीजायगी ! परन्तु कौन उसको उत्सर्ग करेगा ? संसारमें ऐसा कौनसा पाखंडी है, मनुष्योंमें ऐसा कौनसा राक्षस है जो हृदयमें पत्थर बांधकर अपने हाथसे उस सुकुमारीके कमलकी समान कोमल कलेजेमें तीखी छूरी चलावेगा ? ऐसा कौन है जो उस शान्त विकच नलिनीको नखाघातसे छिन्नभिन्न करेगा ? इस समस्याकी मीमांसा करनेके लिये राणाजी रनिवासमें ही कई एक सर्दार और कुटुम्बियोंको बुलाकर अनेक प्रकारके तर्क वितर्क करनेलगे । बहुतसा वाद विवाद होनेपर निश्चयहुआ कि इस क्रूर कार्यको करनेके लिये किसी पुरुषको ही नियत करना चाहिये । यदि पुरुषसे यह कार्य न होसके तो कोई स्त्री नियत होगी । भारतवर्षीय राजाओंके रनिवासको यदि एक २ स्वतंत्र राज्य भी कहाजाय तो ठीकही है; कारण कि रनिवासकी बातोंमें बाहरकी बातोंका कुछ दखल ही नहीं रहता इस बातका अनुमान करना कठिन है कि उस रनिवासकी निविड छायाके भीतर कितने अभागोंकी दुर्भाग्यरूपी गांठ लगी रहती है । उसमें धीरे २ प्रजाके सुख दुःखका बीज अंकुरित हुआकरता है । जिनके हाथमें उस बीजके पालन पोषणका भार रहताहै, उसके अतिरिक्त और कोई भी उसे नहीं देखसकता । आज मेवाडके दुर्भाग्यसे राणालीके विशाल रनिवासकी एकसूनी कक्षामें अभागिनी कृष्णकुमारीके भाग्यकी कठोर लिखाई लिखी जाने लगी । प्रथम तो मनुष्य ही उस कार्यके करनेपर नियत होना निश्चय हुआ ! शिशोदीयकुलके महाराज दौलतसिंह * उस समय रनिवासमें थे । राणाजी परम कुटुम्बी होनेके कारण सबसे पहिले यही नियत

* दाडसाहब कहतेहैं कि “मैं दौलतसिंहको भलीभांति जानताथा । यह सरल और उत्तम स्वभाव वाले थे ।”

समझते हैं। बुनाईके किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर अभिषेक समय मारवाडेश्वर तिलकदान करते हैं। इस समतल प्रदेशके बीचमें बुनाई दुर्ग-प्रासादका दृश्य परम रमणीय है। आरावलीके पूर्वप्रांतमें जैसे सुंदर तृण उत्पन्न होते हैं, इस प्रदेशमें वह बहुतायतसे होते हैं। पहिले मंदरके पुरीहर राजवंशके एक सामन्त इस प्रदेशके स्वामी थे और अजमेरके चौहान राजको वह कर दिया करते थे। राठौर राजपूतके साथ यहांके आरंभके अधिवासियोंके मिलनेसे पुरीहर भीनानामक एक मिश्रजातिके बहुतसे लोग यहां उत्पन्न हुए थे।

६ दिसंबर।—इस दिन अजमेर और मेवाडके वर्तमान सीमान्तमें खाडी नदीके पास देवर नामक स्थानमें पहुंचे। अजमेरसे देवर वा देवडा दक्षिणपूर्वकी ओर बीस कोसकी दूरीपर है। सन् १८१८ ईसवीमें राजपूतानेके बीचमें यह प्रयोजनीय जिला और सीमा तथा मऊ प्रदेश सेंधियाके निकटसे वृटिशगवर्न-मेंटको भिला। यह जिला बहुत बड़ा है अर्थात् इसके पूर्व प्रांतमें बुनाश और पश्चिममें आरावलीके बीचमें चालीस कोस परिमित पृथ्वी होगी। देवरसे कृष्णगढराज्यका सीमांत दिखाई देता है। अजमेरकी मृत्तिका वैसी उपजाऊ नहीं है, साधारण शस्य ही अधिक उपजते हैं। इस प्रदेशके सब स्थानोंमें युद्ध, अत्याचार और उपद्रवके चिह्न दृष्टिगोचर होते हैं।

७ दिसंबर।—देवल यह नगर वनेडाराजके अधीनस्थ एक सामंतके अधिकारमें है। जिस समय महाराष्ट्रियोंने राजपूतानेमें प्रचल अत्याचार कियेथे, उस समय यह देवलके सामन्त उनकी सहायतासे बड़े उद्धत हो उठे, और महाराष्ट्रियोंका अत्याचार निवृत्त होनेपर भी उन्होंने किसी प्रकार वनेडा पतिकी अधीनता स्वीकार नहीं करी विशेष करके कोटेके वृद्ध अधिनायकके साथ उनका वैवाहिक संबन्ध था, इस कारण वह कोटापतिकी सहायतासे और भी उद्धत होगये। कोटेके अधीश्वरने उनकी सहायतामें वनेडाके दुर्गपर तक आक्रमण किया। बहुत काल तक आधीनता स्वीकार न करनेके कारण देवलाके सामन्त एक प्रकारसे स्वतंत्र बनवैठे। यद्यपि अन्तमें वह बीस अनुचरोंके साथ वनेडा-राजकी सभामें निर्धारित काल तक रहनेके लिये सम्मत हुए, किन्तु वनेडा-राजके अनगिन्त प्रमाणित पत्रोंद्वारा प्रमाणित करनेपर भी उन्होंने देवलाके लिये निर्धारित कर देना किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं किया। वनेडापतिने परम अनुग्रहके साथ यह भी कहा कि, अन्यान्य निष्कर, भोगनेके लिये देसकताहूं, परन्तु देवलाके निमित्त उपयुक्त निर्धारित कर देना ही होगा। उद्धत साम-

जब एक भा मस्तावको स्वीकार न किया, तो बनेडाधीश्वरने देवलके प्रत्यर्पण करनेकी आज्ञा दी। यथार्थ राजपूतवीरकी समान सामन्तने उत्तर दिया कि, “जब तक मेरे शरीरपर मस्तक रहेगा, तबतक देवला प्रदेश पर बनेडापति अधिकार नहीं करसकेगे।” इस उत्तरसे बनेडाराजने महा क्रुद्ध होकर, शीघ्र ही देवला अधिकार करनेके लिये महाराष्ट्र सेनाका एक दल भेजदिया। देवलाके सामन्त जैसे वीर और साहसी थे, वैसे ही समरकुशल भी थे; उन्होंने बड़े साहसके साथ कई मास तक बहुतसे महाराष्ट्रियोंके कराल गालसे देवलाकी रक्षा की थी। उनकी इस वीरताके कारण ही देवला “छोटा नागपुर” नामसे विख्यात हुआ। प्रबल महाराष्ट्रसेनासे जब देवलका बचाना असंभव होगया तो सामन्त अपनी शोचनीय दशासे विचलित होकर कांटेके बकीलद्वारा मेवाडेश्वर राणाको २०००० बीस हजार रुपये नजर देकर उनसे उक्त प्रदेशका स्वत्वाधिकार मांगा, किन्तु राणाने उसको स्वीकार नहीं किया, बनेडाराजने देवला अधिकार करलिया। देवला मेवाडका सीमान्त प्रदेश है, इस कारण राणाने उसको अपने अधिकारमें रखना उचित समझकर बनेडाराजसे उसको लेलिया, और इसके बदलेमें दूसरे उपायसे बनेडाराजकी वृत्ति पूर्ण कर दी।

सुप्रसिद्ध महावीर राठौर जयमाल, जो मारवाड छोडकर मेवाड चलेगये थे, उनहीके वंशधर लोग ३६० ग्रामोंसे पूर्ण विदनौर प्रदेशका स्वत्वोपभोग करतेहैं। यह प्रदेश जैसा उपजाऊ है, वैसा ही समृद्धिशाली है। विदनौरके प्रधान सामन्त राजधानीमें मुझसे मिले थे; किन्तु महावीरमें जाना असंभव समझ कर मैंने कप्तान बाघको अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजदिया। प्रधान सामन्तने उनको बड़े आदरके साथ विदनौरमें ग्रहण करके सम्बर्द्धना करी। कप्तान बाघ राजपूत स्वभाव सिद्ध सरल हृदय वृद्ध सामन्तके साथ मृगया और फाग क्रीडामें सम्मिलित हुए थे। फाग उत्सवके समय राजपूतजातिके विलकुल साम्राजिक स्वाधीनता भोगनेके कारण सुनीति दूर होजाती है। इस कारण उस समय सामन्त यथेच्छ क्रीडा विहार करते हैं।

८ दिसम्बर।—बनेडा। मेवाडकी सामन्तमण्डलीके अधिकृत प्रदेशोंमें बनेडाका दुर्गप्रसाद दृश्य सबसे मनोहर है, और बनेडाके अधिनायक भी मेवाडकी सामन्त श्रेणीमें सबसे श्रेष्ठ हैं। बनेडापति केवल राजाकी उपाधि ही पाकर शान्त नहीं हैं, बरन राजपदोचित सब सन्मान प्राप्त करते हैं, और ध्वजा पताका दण्ड आदि सब राजचिह्न व्यवहार करनेके अधिकारी हैं। बनेडाके

वर्तमान स्वामीका नाम उनके स्वामीके ही नाम पर है। इनका नाम राजा भीम है, और मेवाडेश्वरका नाम राणा भीम है। × अधीश्वर और सामन्त सम्बन्धके अतिरिक्त दोनों समरक्तवाही और सांसारिक सम्बन्धवन्धनमें बँधे हुए हैं। दुर्भाग्यके कारण ही राजा भीम इस समय बनेडाके सिंहासनपर विराजमान हैं; नहीं तो यही यथा समयपर मेवाडके राजछत्रके नीचे बैठ सकते थे। पूर्वपुरुषोंका द्वारा ही भाग्य परिवर्तित होगया है। पाठकोंको स्मरण होगा कि मुगल सम्राट कुलकलङ्क औरंगजेबके परम साहसी शत्रु राणा राजसिंहके एक समय पर दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। उनमें एकका नाम भीमसिंह और दूसरेका नाम जयसिंह था। भीमसिंह पिताकी आज्ञासे सदाके लिये मेवाड छोड़कर मुगलोंकी सेनामें चले गये, और राजपूत सेनाके साथ कन्धारमें जाकर रहने लगे। एक दिन दौड़ते घोड़ेकी पीठसे वृक्षकी शाखा पकड़नेके कारण वोड़ेसे गिरकर प्राण छोड़ दिये, इस बातको हम पीछे लिखचुके हैं। बनेडाके वर्तमान राजा उन्हीं भीमसिंहके वंशधर हैं। राजसिंहके पुत्र भीमके बेटे सुराजसिंह मुगल सम्राटके द्वारा विशेष सन्मानित और पुरस्कृत हुए थे। उन्होंने मुगलसेना सहित बीजापुर अधिकारके समय युद्धमें जीवन विसर्जन किया। सुराजके परलोक सिंघारनेपर यवन सम्राटने बड़ा शोक किया। और उनके शिशुपुत्रके लिये राणाके अधिकार भुक्त चार प्रदेश लेकर उनको उस प्रदेशके स्वामी रूपसे अभिषिक्त करदिया था। सुनते हैं कि सुराजसिंह मुगल सम्राटके इतने प्रियपात्र बने थे कि, सम्राटने उनके सन्मानके लिये “ सुलतान ” की उपाधि दी थी। मुगलोंकी शासन शक्तिके नष्ट होजानेपर सुराजपुत्र सरदारसिंह अपने असली स्वामी राणाके साथ मिले। सरदार सिंहके परलोक सिंघारनेपर रायसिंह और उनके पीछे हमीर सिंह बनेडाके सिंहासनपर बैठे थे। हमारे मित्र राजा भीमसिंह हमीरके पुत्र हैं। राजा भीमसिंह मेरे आनेका समाचार सुनकर मुझको महलमें लेजानेके लिये एक कोशतक आगे आये और बड़े आदरके साथ महलमें लेगये, उन्होंने मेरे सन्मान और सेवा शुश्रूषामें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं की। सामन्त मण्डली अपने २ अधिकृत प्रदेशोंमें किस प्रकारसे रहती है? और सामन्त लोग किस प्रकार अपनी शक्तिको काममें लाते हैं? प्रदेशीय रीति नीति कैसी है? तीन घंटे तक राजा भीमसिंहके साथ इसी विषयमें बात चीत होती रही। राजा भीम-

× पाठकलोगोंको इस बातका स्मरण कराना विशेष आवश्यक नहीं है कि टाड साहब यह अपने समयकी बात कह रहे हैं इस समय मेवाड और बनेडा दोनों प्रदेशके स्वामी स्वतंत्र हैं।

[illegible]

पहुँचते ही सबने उठकर आदरके साथ ग्रहण किया, और मुझे राणाके पास ले जाकर सिंहासनके एक ओर बैठा दिया । राजा भीमने उस समय अपने प्रदेश सम्बन्धी तथा सांसारिक सब विषय एक २ करके मुझे सुनादिये, और मुझको भ्राता कह कर सब विषयोंमें परामर्श पूँछने लगे । मैंने इस सभास्थानमें अपने प्राचीन मित्र विदनौरके सामन्तके साथ राजा भीमका जो वैवाहिक सम्बन्धी झगडा था उसको भी तय करादिया । बनेडाके उत्तराधिकारीके साथ विदनौर सामन्तकी पोतीका शुभ विवाह हुआ । राजा भीमके साथ उनके अधीनस्थ कई सरदारोंका जो भूमि सम्बन्धी झगडा था, मैं बहुतसे हिसाबपत्र लिखित आदेश सनद आदिको पढकर उस सबकी मीमांसा कर देनेको बाध्य हुआ । इनका यह झगडा बहुत कालसे चला आरहा था, इस कारण इसकी मीमांसा परमावश्यक समझी गई । मैं जिसपदपर नियुक्त था, केवल उस पदके कारण मुझको मध्यस्थ स्वीकार नहीं किया था, किन्तु राजा भीमके साथ विशेष मित्रता होनेके कारण उन्होंने मुझसे बहुत अनुरोध किया था । मैं इस बातसे बहुत प्रसन्न हूँ कि साधारणकी सुख शान्ति वृद्धि भी होगई, और विवाद भी निवटगया । विदाहोनेके समय मेरे मित्र राजा भीम उपहारकी सामग्री सजाकर लाये, मैंने उसको स्वीकार तो कर लिया, परन्तु लिया नहीं । किसी प्रकारका असन्तोष विना उत्पन्न किये ऐसा किया जासकता है । माननीय विशप हेवर मेवाडकी यात्राके समय राजा भीमके जिस प्रकार सम्बर्द्धित और सन्मानित हुए थे, मैं उस सब विषयको सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ ।

बनेडाराज्य राठौरोंके अधिकृत प्रदेशोंके साथ मिलाहुआ है और आरावलीके मूलमें ही सङ्गावत और जगवत सम्प्रदायके प्रदेशोंके भी निकट ही है । मुगल, पठान और महाराष्ट्रगण इन सब प्रदेशोंमें बहुत काल तक अत्याचार उपद्रव करके अधिवासियोंकी जैसी शोचनीय दशा कर गये हैं, दीर्घकालस्थायी शान्ति और यत्नके बिना उनकी उस दशाका परिवर्तन असम्भव है । मेरे मित्र राजा भीम डेरेतक मेरे साथ आये, डेरेपर पहुँचकर मैंने उपहारमें उनको पिस्तौल और एक दूर वीक्षण (दूरबीन) यन्त्र दिया । हम दोनों प्रीतिभाव और आन्तरिक दुःखसे परस्पर एक दूसरेको विदा करनेके लिये बाध्य हुए ।

९ दिसंबर !—भीलवाडा । हमने भीलवाडेसे लगभग एक कोशकी दूरीपर डेरा डाला । इस समय नगर निवासियोंमें सांप्रदायिक मनोविवाद बढा हुआ होनेपर भी इस क्रमिक उत्कर्षता साधनमें कुछ विघ्न नहीं हुआ । अधिवासियोंके

देखकर वह सब कष्ट और पीडाको भूलगयेथे और समझे थे कि पुत्र गिहौट-कुलकी रक्षा करेगा पितरोंको इसके द्वारा जल मिलता रहेगा, परन्तु दुर्भाग्यसे जवानसिंहके कोई पुत्र न हुआ ।

स्वदेशकी दारुण दुरवस्था देखकर अत्यन्त पीडित हो वीर संग्रामसिंहने स्वदेशद्रोही अजितसिंहको जो शाप दियाथा वह भलीभांतिसे पूरा हुआ । इस शोचनीय कार्यके एक महीना बीतनेसे पहिले ही उसकी भार्या अपने दो पुत्रोंके साथ कालकवलित हुई, उसके समस्त सुख जाते रहे, संसारकी ओर माया ममता कुछ न रही आज स्वार्थी अजितसिंह संसारसे उदासीन होगया, आज बुढापेकी संकुचित सीमापर पहुँचकर वह पाप छुडानेके लिये प्रार्थना करनेलगा । जिन कुटिल कटाक्षोंसे दिन रात कपटता निकला करतीथी । आज वह सरल होगये; जिस पापरसनासे दिनभर पराई निंदा पराई वदनामी, पराया द्वेष और पापमंत्र निकला करताथा, आज वही राम राम करने लगी; और जो हाथ पापकार्योंके साधनमें सहायता किया करतेथे अब उनमें नारायणके नामकी माला रहने लगी, परन्तु उसका हृदय आजतक भी पवित्र नहीं हुआ एक समय जो हृदय हिंसा, द्वेष, स्वार्थपरता और विश्वासघातकताका आगार बनरहाथा वह आजतक उस नारकीभावसे भलीभांतिसे नहीं छूटसकाहै वह अपने पापोंका प्रायश्चित्त करनेको मंदिरमें घूम कर तप कियाकरताथा, दीन, दरिद्र, और उपवासियोंको धन रत्न और अन्न देताथा परन्तु उस पाशवी दुराकांक्षाको हृदयसे दूर न करसका । पाठकगण ! इस समय उस पापीका नाम लेनेकी अधिक आवश्यकता नहीं है; आओ हम लोग संग्रामसिंहके साथ मिलकर कहें; कि “उसके शिरपर स्वाक पडे” दुराचारी अजितने मोहसे विमूढ होकर जो घोर पाप कियेहैं उनसे छूटना कठिनहै । वृथा ही सरला, अबला, बाला कृष्ण-कुमरीका प्राण नाश करनेपर जो कलङ्क उसको लगा यदि गंगाके समस्त पानीसे धोयाजाय तो भी वह न धुलसकेगा ।

—हुआथा, कुछ काल निद्रा लेनेके पीछे जिस समय उन्होंने आनंदभरी आँखोंसे सुप्तको देखकर जो कृतज्ञता प्रकाश की थी, उसको मैं इस जन्ममें कभी नहीं भूलसकूँगा । ” जवानसिंहने इस कराल रोगसे छुटकारा पाया, तदुपरांत कुमारका मुख्य मंत्री शिरजी मेहता इस रोगमें पडा, इस ग्राससे उसको छुटकारा नहीं मिला, यह शिरजी मेहता कपट जाल फैलानेमें विशेष पारदर्शी था उसने मानो अम्बाजीकी पाठशालामें यह बातें सीखीथीं, टाडसाहब कहतेहैं “ ऐसे चालचलनके आदमी जबतक मेवाडसे दूर न होंगे तबतक मेवाडका किसी भांति मंगल नहीं होगा । ”

और इसकी शोचनीय दशा धीरे २ बदलती जाती है । विध्वंसावस्थामें जो लोग मण्डल छोड़कर दूसरे स्थानोंमें भागगये थे, उनमेंसे एक मनुष्यने फिर यहां आकर अपने पैतृक घरके ध्वंसस्तूप खोदे, खोदते २ उसको सुवर्ण और अलङ्कारोंसे भराहुआ एक पात्र मिला । उसके किसी पूर्व पुरुषने उस पात्रको गाड़ दिया था । नियमके अनुसार यह राणाका हुआ । किन्तु राणाने उसको नहीं लिया । आज मैंने पानसाल और आर्य्याप्रदेशोंमें होकर गमन किया । प्रथमोक्त प्रदेश आजतक शक्तावत् लोगोंके अधिकारमें हैं । आर्य्याप्रदेशके विषयमें जो शक्तावत् और पुरावत् लोगोंमें विवादकी अग्नि प्रज्वलित हुई, उसका विशेष विवरण अन्यत्र लिखा गया है । मेवाडमें यह आर्य्याका दुर्ग सबसे अधिक अभेद्य है, और इसके अधीनमें ५२००० बावन हजार बीघे भूमि निर्धारित है, इस कारण इसके लाभके लिये विवाद होना न्याय संगत है । यद्यपि आर्य्य प्रदेश शक्तावत् लोगोंके अधिकृत प्रदेशके बीचमें ही स्थित है, परंतु शक्तावत् लोग कहते हैं कि उक्त प्रदेशमें पुरावतोंका कुछ अधिकार नहीं है ।

११ दिसंबर १—पुर । मेवाडके बहुत प्राचीन नगरोंमें यह एक प्रधान है और यदि हम जनश्रुतिपर विश्वास कर लें तो कहसकते हैं कि, यह नगर राजा विक्रमादित्यके शासनसे बहुत पुराना है । मण्डलसे पुरतक कोटीश्वरी नामकी जो नदी बहती है । हम लोग उसके पार होकर दंरीवाके टिन और ताम्रखानके निकट होकर पुरावतोंके अधिकृत पीतवास नामके प्रदेशमें होते हुए यहां पहुंचे । पुर एक निःसंदेह पुराना नगर है । राणाके अधिकृत सब नगरोंमें यह एक प्रधान है । जिस सांढेदेश कोश परिमित स्थानमें मेवाडके राजकुमारगण वास करते हैं यह पुर ठीक उस भूमिके बीचमें स्थापित है; आरावलीकी विच्छिन्न शिखरमाला, उत्तरमें बनेडा और दक्षिणमें गुरलाप्रदेश होती हुई भूखण्डमें चली गई है; राजा शिवधन सिंहका अधिकृत वा गोरप्रदेश इसके पश्चिममें स्थित है । मेवाडके ठीक बीचवाले इस भूखण्डमें राज रक्तधारी राणा वंशके निवासके लिये इसे निर्धारित करके, राणाओंने उत्कृष्ट परिचय दिया है कारण कि यह राजकुमारगण स्वदेश वा विदेशके करदाता सामंतोंके साथ किसी प्रकारका राजनैतिक संबंध नहीं रखते, इस निमित्त ही यह राजवंशधर विश्वासके साथ मेवाडकी दुर्ग रक्षाका भार प्राप्त और युद्धके समय राणाके प्रतिनिधि रूपसे सामंतोंकी सेनाके नेता बनकर गमन करते हैं । इनके बैठनेके लिये राणाकी सभामें स्वतंत्र स्थान और आसन निर्दिष्ट हैं वह “वावाका बल” नामसे

रही । अनन्तर अंगरेज गवर्नमेंटने राणाजीके साथ सन्धि करके मेवाडवालोंको ढाँढस बँधाया ।

सन् १८०६ ई० के वसंतकालमें अंगरेजोंके दूतने इमशानकी समान मेवाड-भूमिमें प्रवेश किया । मेवाडकी दुखस्थाका शोचनीय चित्र उनके नेत्रोंके सामने दिखाई देने लगा । जो मेवाड एक समयमें राजस्थानका नंदनकानन गिना जाता था; जिसके हरे २ खेतोंमें अनेक प्रकारके नाज लहराया करते थे, जिसके नगर गाँव और वस्तियोंमें दिनरात चुहल मची रहती थी आज उसके चारों ओर अगणित खँडहर और टूटे फाट स्थान दिखाई देते हैं । जिधरको आंख फिराये उसही ओरको प्रकृतिकी शोचनीय और हृदयभेदी भूर्त्ति दिखाई देगी । कहींपर तो दो चार गांवोंका खेडा नजर आता है—कहींपर कोई नगर विलकुल सूनासा पड़ा है, गृहमें, गृहस्थ नहीं हैं, बाजारोंमें दूकानदार नहीं हैं—खेतोंमें किसान नहीं हैं, अन्नका नाम नहीं पाया जाता । सबही सूना पड़ा है;—जो कुछ है वह रुलानेवाला ही है । जहांपर एकवार भी महाराष्ट्रियोंका आगमन होता, वहांकी दुर्दशा शेष सीमाको पहुँच जाती और आठ पहरके भीतर ही वह सुंदरसे सुन्दर स्थान, शोकालय बनजाता था । जहांपर महाराष्ट्री सेना गई, वहींपर सबका विध्वंस किया । परन्तु सुखकी बात यह थी कि समस्त दुष्टोंने अंतिम समयमें अपने रपाप कर्मोंका फल भलीभाँतिसे पाया था । अम्बाजीने मेवाडकी सम्पत्ति लूटी थी, परन्तु पश्चात् उसको वह सबही लौटानी पड़ी थी । उसकी कठोरता और स्वार्थपरतासे जो मेवाडकी भारी हानि हुई थी, उसका प्रतिफल उसको भलीभाँतिसे प्राप्त होगया था । जिस संधियासे उसके सौभाग्यका मार्ग साफ होगया था, अम्बाजीने उसका ही निरादर करके ग्वालियरमें अपनी स्वाधीनताकी ध्वजा उड़ायी थी । इस कारण संधिया उससे घोर विद्वेष करने लगा । अम्बाजीको दंड देनेके लिये अवसर देखने लगा । फिर एकदिन उसको एक साधारण छोटेसे तम्बूमें कैद करके जलतेहुए अंगारोंसे उसके हाथ पांवकी अंगुलियाँ जला दीं और उसका समस्त धन रत्न छीन लिया । सामने ही अपने समस्त धन रत्नका जाना लोभी अम्बाजीसे न देखा गया । सन्मुख ही एक छोटी विलायती छूरी रक्खी थी अभागने उसको मारकर आत्महत्या करनी चाही । उसने छूरी मार ली, परन्तु अंगरेज दूतके साथ जो डाक्टर साहबथे उन्होंने तत्काल घावको सीदिया । अम्बाजीके अचेतन होने पर उसके खजानेकी ताली सहजसे ही संधियाके हाथ आई; उस समय ९९ लाख रुपया संधियाको अम्बाजीके

सुरमें और देहकी गठनप्रणाली मनोरम थी । रश्मिनामक स्थानमें हमने बहुतसे प्राचीन स्मृतिचिह्न पाये थे ।

१६ दिसम्बर ।—मैरता । * हमने जिस स्थानसे भ्रमण आरंभ किया था, मेवाड़, मारवाड़ देखनेके अन्तमें दो मास पीछे हम फिर उसी मैरतेमें आकर उपस्थित हुए और फिर “सुखमय उपत्यकामें” शीघ्र प्रविष्ट होसकनेके कारण सब ही आनन्दसागरमें मग्न होगये । दो आव अर्थात् वारीश और बुनाश नदीसिक्त प्रदेशमें होते हुए चार स्थानोंमें विश्राम करनेके पीछे आगे बढ़े । यह प्रदेश स्वाभाविक उपजाऊ है, पहिले इस प्रदेशमें कई समृद्धिशाली नगर थे, उनकी ऋद्धिशालीके कुछ लक्षण अवतक दिखाई देतेहैं । सम्पूर्ण भारतवर्षमें ऐसी उपजाऊ भूमि दूसरी जगह नहीं है; यथोचित व्यय करनेपर खेतीसे उत्पन्न हुई वस्तुएं विशेष लाभ देसकतीहैं । किन्तु सबसे पहिले किसानोंको कई वर्षतक विशेष उत्साह दान, राणाद्वारा न्यून कर निर्धारण और इसी प्रकारसे वृद्धिश-वर्गनमेंटद्वारा राणाका देयकर हास करना सब प्रकारसे उचित है ।

भयङ्कर मरुक्षेत्रमें चलनेके समय हमारे बोझा ढोनेवाले ऊंटोंको सबसे अधिक कष्ट हुआ, यहांतक कि उनमेंसे आधे विलकुल निकम्मे होगये । “वाटीमें” लौटानेके कारण राणाने बड़े आनन्दसे अभिनन्दन भेजा । उनका वह लेख जैसा मित्रतासूचक है, वैसा ही मेरे दर्शनके लिये उनकी अधीरताका प्रकाशक है । किन्तु दुःखका विषयहै कि, राणा ज्योतिपसे पूछनेपर उन्होंने कहा कि “अभी शुभ सुहूर्त नहीं है ।” इस कारण मैं राजधानीमें न जाकर उस शुभ दिनकी प्रतीक्षामें मैरता वा उपत्यकामें रहनेको बाध्य हुआ । मैंने उक्त अवसरपर रेजिडेन्स अर्थात् अपने रहनेका स्थान तुष शिखरके ऊपर निर्वाचन किया और वारी नदीमें मछली पकडकर समय बिताने लगा ।

१९ दिसंबर ।—दो दिनतक अलसभावसे रहनेके पीछे हमलोग देवारिके द्वारमें होकर अर नामक स्थानकी ओर चले । क्योंकि राणाने यह कहला भेजा था कि “राजधानीसे मैं स्वयं उक्त स्थानमें आकर लेजाऊंगा ।” इस समाचारसे सुझको बड़ा आनंद हुआ, किंतु मेरे साथ राणाका यह सन्मान अचितनीय है । पूर्व प्रांतसे निकट बर्ती होनेपर उदयपुर राजधानीका दृश्य परम मनोहर दृष्टिगोचर होताहै । राणा और युवराजका प्रासाद, ऊंचे २ मंदिर, बड़े सामंतोंके ऊंची

* पाठकलोगोंको यह स्मरण कराना अनुचित न होगा कि “मैरतानामक ग्राम मेवाड़ और मारवाड़ दोनों राज्योंमें है ।”

सेनाको लेगया। उनकी प्रचंड गतिको कोई भी नहीं रोकसका, पठानोंने नगरमें प्रवेश किया। राणाजीसे उनका दमन न होसका, राणाका अपमान करके वे लोग नगरवासियोंपर अत्याचार करने लगे, कितने ही अभागोंकी समस्त सम्पत्ति लुटगई, बहुतसे लोगोंकी प्रतिष्ठा धूलमें मिलगई, उन दुराचारियोंका अत्याचार यहांतक बढ़गया कि कोई आदमी भी अपने स्त्री पुत्रोंके साथ सुखसे नहीं रहसकताथा; उनके डरसे कोई स्त्री घरके बाहर पांव नहीं रखतीथी, कोई आदमी भलेमानसका बेप वनाकर उसके सामने नहीं जासकताथा, लूट खसोटका यह हाल था कि यदि किसीके पास कोई उत्तम पगडी या अंगरखा देखते तो पाखण्डी गण उसके लेनेकी इच्छा करतेथे इन पिशाचोंके अत्याचारके कुछ चिह्न अवतक उदयपुरके टूटेफूटे खंडहरोंमें पाये जातेहैं। आज भी प्रकृतिसती उस भग्नावशेष राशिमेंसे करुणापूर्वक शब्द करतीहुई पठानोंके पाशविक अत्याचारका वृत्तान्त कहरहीहै।

परन्तु इस दुःखको पाकर भी मेवाड भूमि इन पाखण्डियोंके हाथसे नहीं छूटी बिना अन्नके पाये नगरके नगर उजड़ गये, राजपूतजातिका जीवन लोप होगया तो भी यह लोग कंकालमालिनी मेवाडभूमिका रुधिर पीनेके लिये तैयारथे। संवत् (१८६७ सन् १८११) में क्रूरचरित्र वापूसंधियाजी सूवेदाकी उपाधि धारण करके सेनासहित उदयपुरमें आपडा। दूसरी ओर अमीरखांकी पठानसेना राजधानीके एक स्थानमें प्रवेश करके भयंकर अत्याचार करतीहुई इस प्रकारसे घूमने लगी कि जैसे इमशानभूमिमें प्रेत फिराकरतेहैं। कभी २ इन दोनों दलोंके बीचमें किसी लूटी हुई वस्तुके ऊपर घोर झगडा हुआ करता था। इस प्रकारसे परस्पर विवाद करनेवाले दो वैरियोंके बीचमें गिरकर मेवाडभूमि अत्यन्त कष्ट पाने लगी उस कष्टका विचार करनेसे हृदय कम्पायमान होजाताहै। दुराचारी पठान और पिशाचोंकी समान मरहटोंके सताने और परस्पर विवादसे उत्पन्न हुए अत्याचारसे मेवाडभूमिकी रक्षाका कोई उपाय न देखकर राणाजीने निश्चय करलिया कि अपनी मातृभूमि शत्रुओंको भाग करके दे दीजाय। इस वार्त्ताको निश्चय करनेके लिये “धवलमूंगरा (धवलमेरु) नामक स्थानमें एक सभा बुलाई गई * राणाजीके कई एक प्रतिनिधि उस सभामें गयेथे, सभाका अभिप्राय शीघ्रही सबको सुनाया गया। दोनों पिशाचोंकी मनोकामना पूर्ण हुई, मेवाडके घायल शरीरमें फोड़े निकल आये। आज इमशानको लेकर प्रेत और पिशाचगण

* सतीदास, किशनदास और रूपराम इस सभामें थे।

नाम “धूलकोट” है । सुनते हैं कि पर्वतकी अग्निके उत्पातसे धूलद्वारा नगर बिल्कुल नष्ट होगया था। वास्तवमें जिस अग्निके उत्पातसे आहर नगर नष्ट हुआ, उससे ही उपत्यका सरोवर उत्पन्न हुआ, वा नहीं ? इस बातको केवल भूतत्त्वानुसंधायी विशेष अनुसंधानसे बतासकता है । नगरके मध्यसे प्रधान मार्ग इस बाँधके ऊपर होकर चलागया है । उस बाँधका जो २ स्थान खोदागयाहै, उसी २ स्थानसे खोदित पाषाणखण्ड और मृत पात्रावली प्राप्त हुईथी, इस कारण पुराने पदक रूपये आदि मिलनेकी आशासे मैंने भी उस बाँधके खोदनेकी आज्ञा दी, सौभाग्यसे कई पुरानी मुद्रा मुझेभी मिलीं। उन सिक्कोंके एक ओर किसी पशुकी मूर्ति अङ्कित है; मेरे अनुमानमें वह सिंहकी मूर्तिहै । अन्य कई सिक्कोंके ऊपर गधेकी मूर्ति बनीहै । सुनते हैं कि विक्रमादित्यके आता गन्धर्वसेन अपने सिक्केमें गधेकी मूर्ति अंकित करते थे, इस कारण यह सब उन्हींके प्रचलित किये हुए सिक्के हैं सिक्केमें गधेकी मूर्ति व्यवहारके कारण इस विषयमें एक बहुत बड़ा प्रवाद प्रचलित है ।

यह आहर एक बहुत प्राचीन और बहुत बड़ा नगर था, इस बातको सब लोग निस्संदेह होकर स्वीकार करेंगे । इस समय स्मारकमन्दिर परिशोभित इस आहरके चारोंओर जो प्राचीन परकोटा विराजमान है, वह परकोटा भी उसी प्राचीन विध्वंस मन्दिरावलीके उपकरणसे बनाया गया है । कई देवालय प्रधानतः जैनमन्दिर आजतक ध्वंसावस्थामें देदीप्यमान हैं यह भी बहुत पुराने हैं । इन मन्दिरोंमें जितनी मूर्तियाँ खुदीहैं, सब उलटी हैं अर्थात् मस्तकनीचे और पैर ऊपर हैं महावीर और महादेव दोनोंकी मूर्तियाँ एकत्र रखी हैं और दोनों सफेद पत्थरपर खुदी हैं । दो खोदित लिपि भी मिलीं, एक जैनभाषामें है और दूसरी किस भाषेमें है इसका अभी पता नहीं चला ।

हिन्दुकुलसूर्य राणाके साथ मेरी मुलाकातके लिये शुभ नक्षत्रका अभाव होनेसे फिर यही निर्द्धारित हुआ कि, मुझको अभी और एक दिनतक इसी स्थानमें रहना होगा, किन्तु केवल मेरे ही ऊपर उस नक्षत्रकी शुभ दृष्टि न होनेसे मैं उसकी कुदृष्टिका फल भोगनेके लिये सम्मत हुआ । नक्षत्रका प्रकोप न्यून करनेके लिये अन्तमें ज्योतिषीने यह निर्द्धारण किया कि, मुझको पूर्व द्वारके बदले दक्षिण द्वारसे नगरके भीतर प्रवेश करना चाहिये । इस दिन राणा भीमसिंहने अपने पुत्र, सम्पूर्ण सामन्त, मंत्रीवर्ग, एक प्रकारसे मानों समग्र नगरवासियों सहित आगे बढकर मुझसे मुलाकात करी । सबने ही शुद्धान्तःकरणसे हमलोगोंको महासन्मानके साथ सम्बर्द्धित किया हजारों मुखोंसे “रामराम

वीर जननी मेवाडभूमि वीरोंसे रहित होकर आज पातालको चलीजाती है; आज सुवर्णभूमिने श्मशानका रूप धारण किया है? अब मेवाडकी वह सुंदरता नहीं है; अब मेवाडका वह ऊंचा सम्मान नहीं है; अब मेवाडकी वह सभ्यता तेजस्विता और शूरता नहीं है, आज मेवाड भयंकर श्मशान है, चिताभस्मको हृदयपर लियेहुए अग्निमें श्मशान बनाहुआ है। इसके खेत सूने पड़े हैं, नगर गाँव विध्वंस हुए हैं, घर रीते दिखाई देते हैं। शहरवाले निकाल दिये गये हैं, सरदार और सामन्तलोग डरपोक व कायर कहलाते हैं; राजा और राजपरिवार दुःखित, निरुपाय और निरवलंब हैं। ऐसा कोई नहीं है कि जो महाराजा बाप्पारावलके वीरवंशकी इस घोर दुर्दशासे रक्षा करे! अब ऐसा कोई महापुरुष नहीं है कि जो संजीवन मंत्रके बलसे मेवाडकी अगणित चिताओंपर संजीवन मंत्रका जल छिड़के और नये वीरोंको उत्पन्न करे! इस लिये कहाजाता है कि सुवर्णपुरी मेवाडभूमि आज चिताभस्मयुक्त श्मशान बन गई है। श्मशानभूमिके हृदय विदारी भयंकर चित्रको सौगुण बढ़ाते हुये राक्षस पठान और मरहटेलोग मेवाडवालोंका जो कुछ पाते थे, वही छीन लेते थे। भिखारी कहींसे भीख माँगकर चावल लाया है उसके वह चावल भी छीन लिये गये, कोई विचारा मैले कुचैले कपड़े पहिनकर निकला कि उसके कपड़े भी उतार लिये गये। आज मेवाडमें कौनसी बात बाकी है। राजस्थानकी महारानी मेवाडभूमि आज भिखारिन है वरन भिखारिनसे भी दीन और हीन है। मेवाडभूमिकी यह दशा थी, उस समय भी दुराचारी बापूजी संधिया * मेवाडका वचा वचाया धन और सरदार, सामन्त, वनिये; व किसानोंको कैद करके अजमेरमें ले गया। अजमेरके उन अंधियारे कारागारोंमें मेवाडवासी जंजीरोंसे जकड़े हुए पड़े थे। बहुतसे कैदी छूटनेके लिये रुपया देकर छूट गये और जिनके पास कुछ नहीं था उन्होंने उस अंधियारे स्थानमें ही लोहेकी जंजीरसे पीड़ा पानेके कारण प्राण त्याग दिये और जो लोग सन् १८१७ ई ० तक जीते रहे, वह उक्त वर्षकी संधिके अनुसार छुटकारा पाकर कंकाल शरीरको साथ लियेहुए जेलखानेसे बाहर आये।

* अंगरेजोंके साथ राणाकी संधि होनेपर बापूजी संधिया अजमेरसे निकाल दिया गया। उसकाल वह मेवाडके भीतर होकर उस स्थानको चला गया कि जहाँपर उसने रहनेका विचार किया था। मेवाडके रहनेवाले उससे यहांतक अप्रसन्न होगये थे कि जानेके समय उसके शरीरपर थूका था और अनेक प्रकारके दुर्वचन कहे थे। अहंकारसे पीछेवही दशा होती है जो बापूजी संधियाकी हुई।

बत्तीसवां अध्याय ३२.

राजस्थानकी सामन्त शासनकी रीति ।

उपक्रमणिका;—राजस्थानकी शासनविधि;—एशिया और यूरो-
पकी पुरातन शासनरीतिमें साधारण समानता;—राजपूत
जातिकी श्रेष्ठवंशमें उत्पत्ति;—मारवाड़के राठौरगण;—अम्बे-
रके कछवाहे;—मेवाड़के सिसोदिया;—पदमर्यादाका श्रेणीवि-
भाग;—राजसम्बन्धी अधिकार;—राजधनसंग्रहकी रीति;—

वराड खरलकड़ ।

पुरब्रह्म परमात्माकी कृपाकटाक्षसे इतने दिनके उपरान्त इस बड़े इतिहा-
सके प्रथमखण्डके शेषभागमें हम एक बड़े कठिन विषयके प्रतिपादन करनेमें
आगे बढ़तेहैं वह कार्य इस ग्रंथकी प्राणप्रतिष्ठा है, इस इतने बड़े इतिहासकी
अपने जातिके भ्राता राजपूतोंके वंशकी प्राणप्रतिष्ठाकी आवश्यकता है, महा-
गुणी, पंडित टाड साहबके अनुगामी होकर हम उनके ही अवलम्बित किये
मूलमंत्रसे इस ग्रंथकी प्राणप्रतिष्ठा करना चाहते हैं, किसी एक प्राचीन राज्यकी
किसी जगतविख्यात प्राचीन जातिकी, क्रमानुसार घटनायें समरके वृत्तान्त,
सामाजिक आचार व्यवहार, और धर्मानुष्ठान उस जातिके इतिहासके साधारण
अंग प्रत्यंग प्राणप्रतिष्ठाके विना प्राणहीन देहकी समान हैं, इतिहासका जीवन
क्या है ? प्रजाशासन रीतिका वृत्तान्त ही इतिहासका प्राण है, इस समय आर्योंके
निवासस्थान राजस्थानकी हिन्दूवंशोत्पन्न राजपूतजातिके इतिहासकी वह
प्राणप्रतिष्ठा ही अवशेष है, हमको आशा है कि पाठकगण इसको पढ़कर अवश्य
लाभ उठावेंगे ।

साधारण क्रमानुसार घटनायें—समरके वृत्तान्त, जातिकी वीरता, पराक्रम,
गौरव, गुरुता, प्रताप, और प्रभुताईको प्रगट करती है, समाजकी रीति, नीति,
आचार, व्यवहार, सभ्यता और जातिके चरित्रका प्रकाश करती है ।
धर्मका अनुष्ठान तथा धर्मका शासन जातिकी पवित्रता और नीतिका वि-

होगई । सबके ऊपर महाराष्ट्रियोंने इस स्वर्गभूमिकी वची वचाई जान भी निकाल ली । इन सब अवस्थाओंका वर्णन पहिले ही लिखा जा चुका है अतएव उसका दिग्दर्शन कराना यहांपर पुनरुक्ति दोषमें गिना जायगा । केवल इतना ही कहना उचित है कि उस समय राजपूत लोग अपने प्राणोंको भी भारी समझने लगथ । उस ही संकटके समय मंगलमय विधाताने राजपूतजातिके हृदयमें नवीन बलका संचार किया । महाराष्ट्रीय पठान, पुर्तगीज़, फरासीसी आदिने चोर डाँकुओंकी सहायतासे बडे २ अड्डे अनेक स्थानोंमें बनालिये और बडे बडे भयंकर दल स्थापन कियेथे । इनके द्वारा बहुधा अनर्थ ही हुआ करताथा भारतके तत्ते हृदयपर शान्तिरूपी जल छिड़कनेकी इच्छा करके अंगरेजोंने सबसे पहिले उन दुष्ट दलोंके दमनकरनेका विचार किया । अक्टूबर सन् १८१७ ई०में भारतवर्षके शासनकर्त्ता लार्ड हेस्टिङ्सकी चतुरताके प्रभावसे उन पाखंडियोंके समस्त उद्यम व्यर्थ होगये, उनका दलबल चारों ओरको छिन्नभिन्न होगया । उन समस्त पाखंडियोंके अत्याचारसे छुटकारा पाकर बहुतदिनके पीछे जिस-दिन भारतवासियोंने शान्ति प्राप्तकरके अपने कलेजेको ठंढा किया उस ही दिन सात समुद्रके पार रहनेवाले वणिकवेशी बृटिनलोगोंकी प्रभुता भारतवर्षमें दृढ हुई ।

अंगरेज शासनकर्त्ताके कठोर यत्नसे पाखंडियोंके दल तित्तर वित्तर होगये । परन्तु इसकारणसे सब राजाओंका परस्पर मेल कराना राजनीतिसे सिद्ध समझा गया कि जिससे दुष्टोंका दल इकट्ठा होकर फिर बलवान न होजाय ! यह विचार कर अंगरेज शासनकर्त्ताने राजपूत राजाओंके साथ मंतव्यपत्र प्रेरणकरके मेल करानेके लिये सबको बुलाया । महाराजा जयपुरके अतिरिक्त और सब ही राजाओंने इस प्रस्तावमें अपनी सम्मति दी । दिल्लीमें इस विराट सभाका होना नियत कियागया । इस निमंत्रणके अनुसार अनेक देशोंके राजदूत दिल्लीमें पहुँचे । कई एक सप्ताहोंके बीचमें ही समस्त राजपूत जातिका भाग्यसूत्र बृटिन लोगोंके हाथमें पहुँचगया । उस सन्धिपत्रमें यह निश्चय हुआ कि भीतर ही भीतर राजपूत लोग राजनैतिक स्वाधीनताका सुख भोगें; अंगरेजगवर्नमेंट उनको शत्रुओंके आक्रमण और अत्याचारसे रक्षा करेगी, इसके बदलेमें उसको राजस्वका थोडासा अंश करस्वरूपमें दियाजाय । *

* ईष्ट इण्डिया कंपनीके साथ राणा भीमसिंहकी जो सन्धि हुईथी उसके प्रत्येक सूत्रका अवि-कल अनुवाद नीचे लिखाजाताहै ।

उंगली देकर कहेंगे कि सत्ताईस करोड़ भारतसंतान बृटिश यथेच्छाचार शासनके क्रीत दास हैं । इसी लिये हम कहतेहैं कि शासन शैली ही प्रधान लक्ष्यका स्थल है ।

अनेक लोगोंके हृदयमें यही विश्वासहै कि भारतमें बहुत कालसे यथेच्छाचार शासन प्रचलित होता आरहाहै, मनुष्य जन्मका जो ईश्वरका दियाहुआ प्रधान व्यक्तिगत स्वत्वहै, स्वाधीनभावसे मतवादका प्रकाश, स्वाधीनभावसे चिन्ता और अपनी अवस्थानुसार सत्त्वका चलानाहै । भारतवासी बहुतकालसे ही उस स्वत्वसे वंचितहैं बहुतोंका यही विचारहै, किन्तु हम साहसके साथ कह सकते हैं कि वह विश्वास-वह विचार सर्वथा भ्रान्त है । भविष्य इतिहास मेघ-की समान गंभीर शब्दसे कीर्तन कर रहाहै कि भारतमें प्रजाओंका व्यक्तिगत राजनैतिक स्वत्व अधिकताके साथ था और अब भी देशी राज्योंमें वह विद्यमान है । बृटिश भारतके यथेच्छाचार शासन की समान देशी शासनकी शक्ति प्रजाओंके राजनैतिक स्वत्वको लोप ही नहीं करती है वरन इतिहास और भी दिखा रहा है कि पश्चिमी जगतने इस समय प्रजामें साधारण स्वतंत्र शासन प्रचलित करके यहांके निवासियोंके बीचमें जो राजनैतिक स्वत्व विभाग कर दिया है उसी पश्चिमी जगतने इस समय अवनतिके सागरमें मग्नहुए इस आर्य-क्षेत्र भारतवर्षसे ही शासन प्रणालीका मूलबीज संग्रह कर लियाहै ।

अब टाडमहोदयका अनुसरण कियाजाता है । वह सबसे पहले लिखते हैं कि इन मेवाड मारवाड आदि राजपूत राज्योंमेंसे किसी एक राज्यमें पहले किसी समय दीवानी और फौजदारीकी कार्य विधि वा दंडविधिकी (कानूनी) पुस्तक प्रचलित थी अथवा नहीं, यह एक बड़े संदेहका स्थल है ? इस समय भी उन महाराजोंकी राजसभामें उस प्रकारकी कार्य विधि वा दंडविधिकी पुस्तक नहीं है, यह भी निश्चित है, किन्तु इन राजपूत राज्योंमें युद्धके नियमोंकी रीति ऐसे विस्तृत भावसे प्रचलितहै कि समाजका सब प्रकारका उद्देश, शासन विभागका प्रत्येक अंगही उसके द्वारा पूरा होजाताहै । पश्चिमी राज्य जिस समय ज्ञान शिक्षा सभ्यताके प्रथम प्रकाशमें प्रकाशित हुआ था, उस समय उस यूरोपकी सम्पूर्ण प्राचीन सामन्त शासनकी रीतिके साथ राजपूत राज्यकी सामन्त शासनकी प्रथा इतनी समान थी कि मैं दोनोंके बीचमें समानताका निर्धारण करताहूं । इस प्राचीन शासनरीतिके सम्बन्धकी लिखित पुस्तकका सर्वथा अभावहै, किन्तु बहुत कालतक दृढ़ मन लगाकर विचारनेपर मैंने इस विषयमें जहाँतक ठीक बात

जिन देशी राजाओंने अत्याचारी लोगोंके हाथसे छुटकारा पानेके लिये, संधिकी इच्छा की उन सबमें अधिक राणाजीको संधि करनेकी आवश्यकता थी, इस संधिके द्वारा राणाजीको ही अधिक शांति मिली थी। १६ वीं जनवरी सन् १८१८ को राणाजीने उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये। पीछे फरवरी मासमें ही उस नई संधिके नियमोंकी रक्षा करनेके लिये अंगरेजोंका एक दूत राणाजीके दरबारमें आया। संधियाके सेवकोंने राणाजीके देशपर अन्यायसे अपना अधिकार करलियाथा, उन समस्त देशोंका उद्धार करने तथा उपद्रवी सर्दार और सामन्तोंका दमन करनेके लिये अंगरेजोंका सेनापति मेजर जनरल सर. आर. डंकिन सेना लेकर तैयार हुआ। * रायपुर, राजनगर इत्यादि जो किले थे उनपर विद्रोही सरदारोंने अपना अधिकार करलियाथा। परंतु इस समय वह सब लेलिये गये। सौभाग्यवान, चतुर अंगरेजोंने उसके साथ ही एक विशाल किला अपनेआप भी लेलिया। कमलमेरमें जो राजकीय सेना रहतीथी उसने बहुत दिनोंसे तनख्वाह नहीं पाई थी। अंगरेज सरकारने उस सब वेतनका भुगतान करके किलेको अपने अधिकारमें करलिया।

कमलमेरके पूर्वभाग स्थित जिहाजपुरसे अंगरेजोंका दूत उदयपुरकी ओर चला उस स्थानसे उदयपुर कोई १४० मील होगा। दूत लिखताहै कि “इतने लम्बे मैदानमें मुझे केवल दो शहर ही बीचमें पडे, वह भी ऊजड होरहेथे। उनकी घनी वस्ती इस समय वीरान होगईथी, मनुष्योंका चिह्न तक दिखलाई नहीं देताथा, चारों ओर वन, वृक्ष और कीकर, करील खडेहुये थे; झाडियोंमें भयङ्कर वाघोंने अपना स्थान बनालिया था वडे २ राजमार्ग नष्ट होगये थे। रमणीय देशोंकी आज यह दुर्दशा होरहीथी; विपरीत कालका वह चित्र अवतक नेत्रोंके आगे फिरताहै। राजपूतानेमें भीलवाडा नामक एक बडा शहर था, वारह वर्ष पहिले अर्थात् सन् १८०६ ई० के मई महीनेमें इस शहरकी ओर गयाथा उस समय वहां पर ६००० कुटुम्ब अपने परिवारके साथ रहतेथे, साधारण शहरोंकी समान उस समय यह नगर उत्तम श्रेणीका गिनाजाताथा, परन्तु इस

* लार्ड हेस्टिङ्सके द्वारा टाडसाहब ठीक इसी समयमें; “पश्चिमराजपूतप्रदेशोंके पोलिटिकल एजेंट” उपाधि प्राप्त होकर राणाकी राजसभामें लार्डसाहबके प्रतिनिधि नियत हुएथे। सन् १८१७ व १८ ई०के युद्धमें टाडसाहबके अधीनमें उत्तरभागका अंगरेजी लङ्कर था और यह अपनी सेनाके समस्त भागोंपर सावधानी रखतेथे। उस समय उन्होंने हुल्कर और बूंदीके राजाओंसे संग्राम किया, और कोटेके राजासे संधि की।

विधान देखनेमें नहीं आता । राजपूत राज्यमें भी यही दशा हुई, इसी कारण इतिहासलेखक टाड महोदयको इस देशमें प्राचीनकालका लिखित शासनविधान ग्रंथके आकारमें प्राप्त नहीं हुआ और इस कारणसे ही वह यह लिखगयेहैं कि, “ राजपूत राज्योंमें किसी समय फौजदारी और दीवानी कार्यविधि वा दंड-विधिकी पुस्तक थी अथवा नहीं यही संदेह है ?

कनैल टाड लिखतेहैं कि, “ जिस समय ब्रिटिशगवर्नमेंटके साथ रजवाडेके राजागण किसी प्रकारकी सम्बन्धशृंखलामें नहीं बँधेथे, जिस समय हमलोग राजपूतानेका भूवृत्तान्त और इतिहास सामान्यरूपसे जानते थे, उस समयके बहुत काल पहलेसे रजवाडेकी शासनशैलीके सम्बन्धमें मेरे हृदयमें ऊपरवाली धारणाने स्थान पाया था । उस समय मैं प्रायः ही आनंद प्राप्तिके लिये राजपूतोंमें भ्रमण करता था और उस कारणसे ही अपने भ्रमणका मुख्य उद्देश, उक्त शासन प्रणालीका विवरण, भूवृत्त और इतिहास संकलन करके मैं अपनी गवर्नमेंटके पास भेजदेता था । मन्टेकु, हूम, मिलर, और गिविन आदि प्रसिद्ध इतिहासवेत्तागण सामन्त शासन प्रणालीके विषयमें जितने अमूल्य ग्रंथ लिखगयेहैं, मैंने उन सबके अवलम्बनसे पश्चिमी राज्यकी शासनप्रणालीके साथ राजपूतोंकी सामन्तशासनप्रणालीकी समानता निर्धारणके लिये अनेक प्रकारसे यथायोग्य तत्त्वानुसंधान और खोजमें सहायता पाई, किन्तु मैं उस समय संगृहीत विवरणके साथ केवल दोनों जातिकी शासनप्रणालीके साधारण सादृश्य निर्धारणमें प्रवृत्त हुआ था, उसके उपरान्त ही विख्यात इतिहासवेत्ता हालमका सर्वाङ्ग सम्पन्न इतिहास प्रकाशित हुआ । इस सामन्त शासन प्रणालीका मूलरहस्य जो इतने दिनतक छिपाहुआ था, उक्त इतिहासके द्वारा वह एक साथ प्रगट होगया । मैंने उक्त इतिहास चित्रके साथ राजपूत समाजके सम्पूर्ण दृश्यमान लक्षण विशेष रूपसे तुलना करे हैं और इतने दिनतक जो सामन्त शासन शैली केवल यूरोप खंडके निवासियों द्वारा बनाईहुई विख्यातथी इस समय वह शासन शैली इस राजपूत जातिके द्वारा सबसे पहले बनाई गई थी इस बातको दृढरूपसे प्रतिपादन करसकनेपर मुझको अवश्य ही बड़ा भारी आनंद मिलैगा; मैं इस बातको भली भाँति समझताहूँ कि केवल अनुमानके ऊपर निर्भर करनेसे मनोरथ सफलकी संभावना नहीं होसकती किंतु मैं विवाद रहित प्रमाणोंको छोडकर केवल अनुमान द्वारा यह सिद्ध नहीं करना चाहता कि इस सामन्त शासन प्रणालीकी बनानेवाली केवल राजपूत जाति ही है ।

विचित्र है, इस राजकुमारका मुख उसके इतिहासप्रसिद्ध, पराक्रमशाली, राजकुलको शोभायमान करनेवाला था ।

“मैंने सूरजदरवाजेसे उदयपुरमें प्रवेश किया। गमनमार्गके दोनों ओर वृक्ष लगाये गयेथे। उस समय भी ज्ञात होताथा कि हमलोग एक ऊँजड और वीरान शहरके भीतर चले जातेहैं । प्रसिद्ध रामप्यारीका (इसका वर्णन पन्द्रहवें अध्यायमें आचुकाहै) महल यही था। यह महल राजपूतानेके साधारण राजमहलोंकी समान ही चौकोन व अनेक भंजिलवाला था । उसकी शोभा अत्यंत उत्तम और वर्णनकरनेके योग्य थी। चारों ओर जालीदार काम व पृथक् २ दांलानोंमें आमने सामने कोठरियें और बीच २में खुला हुआ दीवानखाना शोभायमान होरहाथा, इसी स्थानमें हमारे स्वागतकी तैयारियां की गई थीं । अंगरेज सरकारका रसीडेंट पीछे यहीं रहने लगा । इसी महलकी एक कक्षामें हमारे लिये भोजन बनाथा । उस भोजनकी तैयारीका क्या वर्णन करें ? पृथक् २ नमकीन और मीठे सैकड़ों पकवान तैयार किये गयेथे, ताजे व सूखे हुए फल भी बहुतायतसे थे । एक हजार रुपयेकी थैली भी वहां रखी गई । राणाके निजके नौकरोंको उस समयके आनंद दिखानेके लिये यह रुपये बटनेको आयेथे कारण कि अंगरेजकम्पनीके एजेंट साहबका आना राजधानीमें जिन लोगोंने सूचित कियाथा उनको इस प्रकारका पुरस्कार देना राजपूत राणाओंकी रीतिके अनुसार ही था । राणाजीकी दूसरी मुलाकातका होना दूसरे दिन निश्चित हुआ ।

“ परन्तु दिनके चार बजनेपर राणाजीका मुख्य दीवान, चन्दावतोंका सर्दार चोबदार, भालेदार, इत्यादि हमारे पास आये और कहा कि;—‘राणाजीने आप लोगोंके स्वागत करनेकी तैयारियां आजही करली हैं, जहांपर हम लोग ठहरे हुए थे उस स्थानके सामने थोड़ीही देरमें लोगोंकी भारी भीड होगई। सबही कोई उत्तम २ वस्त्रभूषण धारण किये चुपचाप * हमारी ओरको देख रहे थे । राजभवनमें जानेके लिये हम लोग मार्गमें आये । उस काल चारों ओरसे “जय-जय ! फिरंगीका राज ।” यह शब्द प्रत्येक मनुष्यके मुखसे निकलरहाथा । भाट लोग ऐसे अवसर पर भला कब चुपचाप रहसकतेहैं? उन्होंने अंगरेजोंके एजेंटका नाम अपनी कवितामें डालकर भांति २ से स्तुति करना आरंभ किया । स्थान २ पर वाजेवाले ताललयसे युक्त मनोहर बाजा बजारेहेथे ।

* हम लोग अर्थात् एजेंट, मिशनके सेक्रेटरी कप्तान वाघ, लेफ्टिनेंट केरी और डाक्टर डंकन यह चार यूरोपियन थे ।

मूलनीतिपर बने दिखाई नहीं देते, यह शासन, प्रणाली अपूर्ण अंगवाला एक यंत्र है ।

किन्तु यह सिद्धान्त विशेष तत्त्वानुसंधानका फल नहीं है, इस मन्तव्यको कभी एक साथ संकलित हुआ समझ सकते हैं । रजवाड़ेकी वर्तमान शासनशैलीके प्रत्येक दीखनेवाले लक्षणपर तीक्ष्णदृष्टि देनेसे यद्यपि वह पहले साधारण विदित होंगे किन्तु एक समय इस राजवाड़ेकी शासनशैली सर्वाङ्गसम्पन्न थी, विजातियोंके द्वारा आक्रान्त होकर भी शासनरीतिने अटल भाव धारण किया था, सामन्तोंकी शासनशैलीका जन्म इसी रजवाड़ेमें हुआ था इन सब बातोंके प्रगट करनेमें वह दीखनेवाले सम्पूर्ण लक्षण पूर्ण सहायताके साधक हैं । जो सामन्त शासनशैलीरूप बीज पहले यूरोपमें गिरा था, वह इस दूरवर्ती देश अर्थात् पश्चिमी राज्यमें जो देश सर्वथा अपरिचित था, जिस देशके आचार व्यवहारादि विजेतालोंगोंके आचार व्यवहारादिके द्वारा ढक रहे हैं, ऐसे इस रजवाड़ेसे ही वह सामन्तोंकी शासनप्रणालीका बीज यूरोपमें गया था अथवा नहीं ? हम इस राजपूतानेमें उसका खोज कर सकते हैं; पूर्वी राज्यमें हमारे जितने स्वजातीय (यूरोपियन) वास करते हैं; वह एशियाकी किसी रीति किसी व्यवस्था अथवा किसी पदार्थके ऊपर घृणित दृष्टि डालते हैं; परन्तु एक ऐसा समय था कि जिस समय इस घृणित दृष्टिके विपरीत दृश्य दिखाई देता था ।”

कर्नेल टाडकी यह उक्ति अभ्रान्त और सत्यपूर्ण है, इसके द्वारा उनके उदार हृदयका निःसन्देह परिचय मिलता है । अब यह देखना उचित है कि वह इस विषय रहस्यको किस प्रकारसे प्रगट कर गये हैं ।

यूरोपखंडके मध्य समयके निवासियोंमें जैसा आचार व्यवहार संस्कार और शासनरीति प्रचलित थी, उन सबके साथ रजवाड़ेके आचार व्यवहार आदिकी विचित्र समानताका उल्लेख करनेपर भी हमको ऐसे बड़े विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है कि एक प्रकारकी शासन शैलीका परस्पर एक दूसरेने अनुकरण कर लिया है । वास्तवमें दोनों सहादेशके प्रयोजनके अनुसार ही नृपतिवृन्दके साथ प्रजाओंके सांसारिक पितापुत्रके सम्बन्ध बंधनकी बतानेवाली रीतिसे इस अभिन्न शासनरीतिकी सृष्टि हुई है इसमें संदेह नहीं ।

विख्यात इतिहासवेत्ता गिविन साहबने हमारे पूर्व पुरुषोंकी शासनरीतिको असम्प्रतिपूर्ण और घटना क्रमसे रचित हुआ लिखा है मैं समयपर उनके इस मतका समर्थन करनेको तैयार हूँ ।

“इस राजवाड़ेके बड़े दरवाजेपर सिन्धीसिपाहियोंका पहिरा था। शनिवार होनेके कारण नियमानुसार उस दिन शक्तावत सर्दार लोग दीवानखानेमें आगत स्वागतका प्रवन्ध कर रहेथे। राजभवनसे लेकर दीवानखानेतक पहुंचनेके मार्गमें दोनों ओर राजपूत लोग शस्त्रवांधे खड़ेथे। राजभवनकी भीतरी बगलमें एक गणेशदरवाजा है, इसके भीतर प्रवेश करनेपर दीवानखानेके जानेका मार्ग मिलताहै। दीवानखानेकी सीढियोंपर—जो कि पत्थरसे बनीहुई थीं—हम लोग चढ़कर गये। जीनेपर जानेके समय ललकारकर आगमनकी सूचना देनेवाले बहुतसे चौबदार भी खड़ेहुए वहांपर दिखाईदिये। दीवानखानेमें जानेके लिये कितने एक दालानोंको लांघकर जाना पड़ताहै। दीवानखानेके द्वारपर पहुंचतेही भालेदारने चिल्लाकर सूचितकिया कि “अंगरेजोंका वकील महाराजसे मुलाकात करनेके लिये हाजिर है।” यह सुनते ही राणाजी सिंहासनसे उठकर कई परग आगे आये, उनके उठते ही साथमें सरदारोंने भी उठकर हम लोगोंको खड़ी ताज़ीम दी। दिल्लीदरवारकी सभान यहांकी सजावट दिखलाईदेती थी। सिंहासनके सम्मुख ही हमारे लिये स्थान मिला था मरेठोंकी चढाईके समय उदयपुरके दरबारमें बैठनेके लिये पेशवाको जो स्थान दियागया था वही स्थान आज अंग्रेजी वकीलमंडलीको मिला। जिस महलमें यह दरवार हुआ था उसको ‘सूर्यमहलके’ नामसे पुकारतेहैं। ‘सूर्यमहल’ नाम रखनेका यह कारण था कि इसमें जो चित्रादि बनाएगयेथे उनमें सूर्यका चित्र मुख्य और मध्यभागमें खेंचागया था। जहां सूर्यका चित्र था, वहीं पर राणाजीका सिंहासन शोभायमान था। उस सिंहासनपर चांदीके चार पतले खंभोंमें मखमली चंदोवा बनाहुआ था। यह सिंहासन या राजगद्दी ऊंची बैठकपर है; उसपर कलावत्के कामकी मखमली चादर बिछरहीथी। दरवारके मुख्य सोलह सर्दार अपनी २ योग्यताके अनुसार राणाजीके दाहिने और बायें बैठेहुए थे। उनसे आगे एक बगलको राजकुमार जवानसिंह व उमरावसिंह बैठेहुए थे और २ स्थानोंपर दूसरे सर्दार लोग विराजमान थे। राणाजीके सम्मुख मुलकी दीवानका आसन था। पिछली ओर राणाजीके विशेष कर्मचारी व अधिकारी व नौकर चाकर आदि विश्वासी लोग बैठेथे। उस समय राणाजीका यह आनन्द मानसिक और अनिर्वचनीय था। अंगरेजी वकीलसे मुलाकात होनेपर आजतक जो जो दुःख व संकट राणाजीको भोगने पड़ेथे, उन सबका थोड़ेहीमें परन्तु श्रवणकरनेवालेके हृदय पर प्रभाव करनेवाला वर्णन राणाजीने एजेंटसे कह सुनाया। तदनुसार यह

प्रगट करनेका बड़ा प्रयोजन है; किन्तु तर्कनाके साथ उसही रीतिकी समानताका देखना उचित है, क्योंकि अनेक स्थलोंपर सूक्ष्मदृष्टि डालनेपर कुछ भी सादृश्य नहीं दीखता, सामन्त शासन रीतिकी कुछ समानता सहजमें ही दिखाई गई, रोमके साधारण तंत्र शासनकालमें उच्च अधिकारी रक्षकोंके साथ नीची कोटि-के निवासियोंका जैसा सम्बन्ध विराजमान था, और वर्वर तथा वीरगण जिस प्रकार आत्मरक्षा और सीमान्त रक्षाके लिये सीमान्तकी भूमि जागीरके निज स्वत्वसे भोग करते थे, इस सामन्त शासन प्रणालीके साथ उसकी कुछ समानता देखी जाती है । किन्तु वह लोग किसी व्यक्ति विशेषका अनुसरण स्वीकार न करके राज्यके लिये उसके करनेमें बाध्य होते थे हिन्दुस्थानकी जिमीदार मंडली और नुरस्कके टिमारियटोंमें प्रचलित भूवृत्तिकी रीतिमें भी एक प्रकारकी समानता देदीप्यमान है । हाइलैंडर और आइरिस जातिकी नाना सम्प्रदाय अपने-उपरवाले सामन्तोंके अधीनमें युद्धके लिये जाते हैं, किन्तु उनका वह जाना स्वेच्छानुसार नहीं है, उस सामन्त मंडलीके साथ वह लोग समानरक्त सम्बन्धका बन्धन कल्पना करके ही उस प्रकारसे युद्धमें जानेकी इच्छा करते हैं ।

इसके अनन्तर इतिहासवेत्ता टाड लिखतेहैं कि “ मैंने इस स्थलमें इस उद्देश-से उस मन्तव्यको उद्धृत करदियाहै, कि यद्यपि मैं राजपूत शासनरीतिको केवल विशुद्ध समान रक्तसम्बन्धके बंधनसे उत्पन्न हुई सिद्ध करनेका यत्न कर रहाहूँ, तौ भी पूर्वोक्त समानतारूप संकट एशिया मेरे नेत्रोंके सामने उपस्थित होताहै । किन्तु उसके साथ प्रकाशित किये दानपत्र सनदोंकी नकलें और जन श्रुतियें मेरे मन्तव्योंकी दृढता समर्थन करतीहैं, हिन्दुस्तानके उत्तर प्रान्तकी रह-नेवाली जातियोंमें यह रीति प्रचलित थी, मैं इस बातके समर्थन करनेकी आशा करताहूँ । उस प्रदेशसे ही यह प्रथा रजवाड़ेमें प्रचलित हुई और सातवीं शताब्दी तक मुगल पठानोंके अकथनीय अत्याचार और उपद्रवोंसे राजपूत जातिको विध्वस्त करनेपर भी उस नियमके मूल लक्षण आजतक प्रत्यक्ष दिखाई देतेहैं, राजपूतानेके जिस २ राज्यमें विजातियोंके आक्रमणसे थोड़ा सा विध्वस्त हुआहै उस २ राज्यमें वह प्राचीन शासनप्रणाली उसी प्रकारसे अवतक वर्तमान है । जो कुछभी हो विशेष कर केवल मेवाडके इतिहास और शासन नीतिके द्वारा ही मैं सामन्त शासन रीतिका सबसे प्राचीनताका उदाहरण दिखाना चाहताहूँ क्योंकि विजातीय आक्रमणसे मेवाडकी भीतरी राजनीति और शासननीतिमें सामान्य रीतिसे ही भेद पडाहै । यहांतक कि जिस समय दिल्लीके मुगलसम्राट्-

पिताके साथ नहीं आयाथा, परन्तु एजेंट साहबने उसके लिये भी एक घोडा, व ऊपर उक्त वस्तुओंसे भरे हुए ११ पात्र नजरानेके राणाजीके आगे रखे। राणाजीका दूसरा पुत्र उमरावका भ्राता जवानसिंह साथही था, उसको एजेंट साहबने एक घोडा व ९ पात्रोंका नजराना दिया । इनके अतिरिक्त कर्मचारी, व सर्दारादिको भी उनकी योग्यताके अनुसार नजराना दियागया । इस भेंटमें, एजेंट साहबको २००००) रु० खर्च करने पडे। इस साक्षात् प्रतिसाक्षात् व भेंट लेनेदेनेकी वार्त्ताका वर्णन राणाके सर्दार तथा सेवक लोग कई सप्ताहतक परस्पर करतेरहे । उनको इसका वर्णन करते हुए आनन्द सा ज्ञात होताथा ।

राणाजीका चरित्र अत्यंत महान, मर्यादाके सर्वथा योग्य नहीं था । प्रजापालनके समस्त गुण उनमें थे परंतु मनकी दुर्बलताके कारण उनसे कोई कार्य नहीं होसकताथा । आडम्बर और दिखावेने तथा साधारण आनंद और वृथा उदारताने उनके हृदयपर अपना अधिकार करलियाथा । जिस समय यह प्रवृत्तियां जोर पकड़जातीथीं उसी समय वह उनके पूर्ण करनेकी चेष्टा करतेथे; तबतक राजकार्यमें उनका मन नहीं लगता था । उस कालतक वह अपनी न्यायानुसार प्रभुताके स्थापनकरने और राज्यका संस्कार करनेमें दूसरे आदमीका मुह देखा करतेथे । चित्तमें स्थिरताका नाम तक नहीं था । जन्मसे दुःख ही देखे थे, इस कारण शान्तिका न होना कोई विचित्र बात नहीं थी । बहुत दिनोंतक दुःख पाकर जिस समय सबसे पहिले विश्रामदायिनी निद्राका सुख भोगा उस समय वह किसी झंझटमें नहीं पडना चाहते थे । राजस्थानमें उनकी समान मंत्रणाकुशल राजा दूसरा कोई नहीं था; परन्तु दुःखकी बात यह है कि वह कदाचित ही अपने सिद्धान्तके अनुसार कार्य करतेथे । उनके परामर्शदाताओंमें केवल किशनदास दृढप्रतिज्ञ और चतुर था, यह बहुत दिनोंतक राणाजीका दूत रहा; उसके यत्न और चेष्टासे मेवाड और राणाजीका बहुत कुछ उपकार हुआथा, परंतु दुःखकी बातहै कि मेवाड भूमि शीघ्रही उस पुरुष रत्नको खो बैठी, राजनीतिविशारद किशनदास अकालमें ही परलोक वासी हुआ ।

मेवाडराज्यका संस्कार करनेकी इच्छासे ब्रिटिश एजेंटने सबसे पहिले, उपद्रवी सर्दार तथा सामंतोंको राणाके वशमें लानेका यत्न किया । उसको भलीभांतिसे ज्ञात था कि इन लोगोंको राजसभामें लाते ही अभिप्राय सिद्ध हो जायगा, जिन

अच्छे प्रबंधके साथ कल्पना करगये हैं, एक चेंटिया वाणिज्यके सिवाय कर ग्रहणमें निषेध, वाणिज्यपर महसूलके नियम, पवित्र और पर्वतके दिन नौकरी करनेवालोंकी छुट्टियें, मुक्तिदान, अनुग्रह-वाणिज्यकी प्रधान सनदें, शांति और श्रेष्ठताकी रक्षाके लिये प्रजाके बीचमें समानरूपसे पंचायत स्थापन और प्रजाकी स्वतंत्रतामें रहनेकी विधि जिसके द्वारा वह राजनीतिके कार्यमें सर्वसाधारणका मत जाननेमें समर्थ हो, इन सब विषयोंकी व्यवस्था भलीभाँति करदी थी, शासनप्रणालीके सम्बन्धवाले नियम व्यवस्थाकी रीतियें जब मुझको राज्यप्रसादमें नहीं मिलीं तो मैंने दूसरे प्राचीन चिह्न, खोदित लिपि, अनुशासनपत्र, और पाषाण-स्तंभोंपर खोदेहुए आदेश तथा पत्रावलीके तत्त्वानुसंधानसे उनको प्राप्त किया; यद्यपि अत्याचारी मुसलमानोंने सभ्यताके स्मृतिचिह्नोंमेंसे बहुतसे विध्वंस करदियेहैं, तथापि अब भी बहुतसे चिह्न ज्योंकेत्यों बनेहुए हैं, वह सब चिह्न विशेष कौतूहलके दिखानेवाले हैं । रजवाडेकी वाणिज्य व्यवसायके एक चेंटिया और वाणिज्य कार्यमें किसी प्रकारका भी व्याघात नहीं होसकता था, उन सब विधानोंके द्वारा यह भी दृढ रूपसे प्रमाणित होताहै, यह सब खोदे हुए अनुशासन पत्र स्तंभोंका निर्माण बहुत पुराने समयसे ही प्रचलित होता आरहाहै स्तंभावलीका नाम शिवरा अर्थात् शालहै । उन सब खोदेहुए आदेश विधान वा व्यवस्थामें सबसे पहले सूर्य और चंद्रको साक्षी देकर मूल विषय लिखनेके अन्तमें लिखाहै कि जो पुरुष इस विधान, व्यवस्था वा आज्ञाको अमान्य करेगा उसको बड़ा भारी दंड वा नरक भोग करना होगा । मैंने बारह और चौदह सौ वर्षोंसे पहलेकी लिखी हुई ऐतिहासिक स्मारक लिपियें पाईहैं, किन्तु जो भूवृत्तिदान वा किसी प्रकारकी राजपुरस्कार दान सम्बन्धी खोदीहुई लिपियें पाईहैं, उनमें एक हजार वर्षोंसे पहलेकी कोई नहींहै । यद्यपि सर्व संहारी काल भी अनेक स्मृति चिह्न और खोदीहुई लिपियोंको ग्रास करगयाहै, किन्तु उसकी अपेक्षा मनुष्योंके द्वारा ही अधिक नष्ट हुई हैं; गत तीन शताब्दीके भीतर उस प्रकारकी अनुशासन रीति और खोदित स्तंभ अधिकाईके साथ बनाये गये थे कारण कि उन तीन शताब्दियोंमें राणा लोग विजातीय शत्रुओंके विरुद्ध युद्धमें विजय पाकर अनेक लोगोंको भूवृत्ति दान, अनेक विषयोंमें अनुग्रह प्रकाश और इधर उधर भागीहुई प्रजाके एकत्रित करनेके लिये नई २ व्यवस्था करनेमें प्रवृत्त हुए थे, एक खोदे हुए स्तंभके पढनेसे यह भी विदित हुआ कि उसके

उन वाक्योंके भीतर जो गंभीर और हृदयउत्तेजक भाव विराजमान था, उसका विचार करनेसे स्वदेशद्रोही और पाखण्डियोंके हृदयमें भी देशानुरागका प्रकाश होजाता है। और जिनलोगोंके मनमें ऐसा निश्चयहै कि राजपूतलोग स्वदेशप्रेमिक नहीं हैं उनके भी ज्ञाननेत्र खुलकर उनको समझादेंगे कि स्वदेशप्रेमिकताका हिंदूसंतानको सदासे अभ्यासहै। भारतके जिस किसी स्थानमें जो कोई मेवाडी गुप्त या प्रगट रीतिसे बसता था उस विज्ञापनपत्रके पाते ही वह उत्साहके साथ कह-उठा कि;— “शत्रुका अत्याचार अथवा देशद्रोही पाखण्डियोंके सतानेको कुछ भी न समझेंगे; कोई किसीप्रकारसे हमको अपने “बापोता” × से अलग न करसकेगा ” यद्यपि वह समय बीतगयाहै, यद्यपि राजपूतोंकी वह महानता वह वीरता और वह गौरव गरिमा कालरूपी समुद्रमें लीन होगई है, तो भी मेवाडके किसानोंकी अटल भक्ति जिसको कि वह जन्मभूमिमें रखतेहैं, उसके दर्शवें भागका एक भाग भी लेखनी द्वारा लिखकर प्रगट नहीं किया जासकता। दरिद्रताके विराटचक्रमें जो लोग कभी नहीं पिसं हैं, निराशाके हृदयबंधी अंकुश लगानेके पीछे जिनको आशारूपी जीवनदायिनी शांति नहीं मिली है उनकेलिये तो यह समस्त वृत्तांत किस्सा कहानी जानपडेगा; परंतु जो लोग इन सताये हुए आर्य संतानोंका हृदयविदारक, आर्त्तनाद अपने कानोंसे सुनचुके हैं, जिन्होंने आंखोंसे देखाहै कि मरहटोंके घोर अत्याचारसे राजस्थानका एक २ देश एक वार ही विध्वंस होगया है; कितने नगर भस्म होगयेहैं, विचारे किसानलोगोंके कितने ही खेत ऊजड़ होचुके हैं और महाराष्ट्रियोंके घोड़ोंने अपने दांतोंसे जिनको छिन्न भिन्न करदियाहै, कितने गृहस्थोंका सर्वस्व लूटागया और गाय, बैल, मरहटोंके डेरोंमें पहुंचे, तथा नगरवासी और गांवके रहनेवाले भेड बकरियोंकी नाईं जंजीरोंसे बांधकर देशसे निकाले गयेहैं;—वही लोग केवल समझ सकेंगे, कि बहुत दिनोंके पीछे दुःखसे छुटकारा पाकर मेवाडवासियोंने सुखका कैसा अनुभव कियाथा। जिस दिन उनके हाथ पैरोंसे जंजीरें दूर हुईं, जिस दिन वह वनवासके लस्वे दुःखसे छुटकारा पाय विदेशसे चलकर अपने घर आये, जिस दिन मातृभूमिके शांति निकेतनमें आय पिता, पुत्र, भ्राता, बहिन, बंधु, बांधव इत्यादि बहुत दिनोंके पीछे एक दूसरेको हृदयसे लगाकर आनंदके आंसू वहाने लगे;—शांतिका सुखदायी स्थान, संसाररूपी मरुभूमिका शीतल छाया कुंज, हृदयकी आशा पिपासाका केन्द्रस्थल

× दादे परदादेके रहनेकी भूमिको राजपूतलोग “ बापोता ” कहतेहैं ।

उस समय मेवाड उन्नतिकी सबवसे ऊँची सीढ़ीपर आरूढ़ था, और उसका व्यवहार वीरत्व, विक्रम, यश गौरव और सामन्तशासन सर्वत्र विदित था, तथा उस समय राणागण जैसी प्रबल सेनाकी सहायतासे राष्ट्रविप्लव और विजातीय शत्रुओंके आक्रमण निवारणमें अग्रवर्ती हुए थे, फ्रांस बहुत पुरुष पीछे भी वैसी प्रबल सेना उत्पन्न करनेमें समर्थ नहीं हुआ। दुर्भाग्यसे कई सौ वर्षों-तक विजातीय वैरियोंके आक्रमण, उपद्रव, अत्याचार और अज्ञता तथा आलस-ताने इन मेवाडके निवासियोंको अपने पूर्वपुरुषोंके ज्ञान, नीतिज्ञता और विद्याके परिचय स्वरूप उन स्मृति चिह्न और खोदेहुए स्तंभावलीके यत्न तथा सन्मानको भुलादिया; राजपूत जातिने एक समय कहाँतक गौरवगरिमा वीरत्वविलास और प्रताप प्रभुत्वसे जगत्में अक्षय यश संग्रह किया था, वह सम्पूर्ण स्मृति चिह्न ही इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं, किन्तु अब सौभाग्यलक्ष्मीकी गोदसे गिरीहुई राजपूतजाति अन्तिम दशामें पूर्वपुरुषोंके उन सम्पूर्ण कीर्तिचिह्नोंके ऊपर यहां तक अनादर दिखारहीहै, कि उन सब स्मृतिचिह्नोंको तोड़कर उनकी सामग्रीसे अपने घर निर्माण करनेमें भी लज्जित नहीं होती, इस कारणसे ही बहुतसे स्मृति चिह्न राजपूत सामन्तोंके मकान बनानेमें लगगये और बहुतसे पृथ्वीके गर्भमें समा गये हैं।”

यहांपर हम दो एक बातें लिखते हैं। इतिहासलेखक टाड साहबने पहले तो यह स्वीकार नहीं किया कि राजपूत राज्योंमें दीवानी तथा फौजदारी दंडविधि और कार्यविधिकी लिखीहुई कोई पुस्तक थी, किन्तु अन्तमें उन्होंने बड़ी दृढताके साथ प्रमाणित करदिया कि बहुत वर्ष पहलेसे ही मेवाडेश्वरगण समयपर प्रयोजनीय विधान रचकर राज्य और समाज शासनका सम्पूर्ण अभाव दूर कर रहे थे। हमारा दृढ विश्वास है कि कुरुक्षेत्रमें महा भारतके युद्धके पीछे जब चन्द्र और सूर्य वंशका रवि क्षीणकान्ति होगया, अर्थात् भारतके महा श्मशानमें चलनेके पीछे भारतवर्षमें व्यवस्थाकी जाननेवाली ब्राह्मण जातिका प्रभुत्व भी क्रमशः न्यून होगया। उसी प्रकारसे मनुजीके लिखे राज्यशासन नियम और समाज शासनकी व्यवस्था भारतके अनेक स्थानोंमें ज्योंकी त्यों प्रचलित न होकर उन २ स्थानोंके प्रयोजनके अनुसार नवीन २ विधिकी व्यवस्थाओंमें परिणत होगई। रजवाड़ेकी राजपूतजातिके प्रधानपुरुष वाप्पारावलने जिस समय अमित तेजसे दुवारा शिर उठाकर नवीन राज्यके नवीन नवीन अनुष्ठान किये, उस समयसे ही नये २ विधान भी प्रयोजनके अनुसार प्रगट हुए

रहनेके क्लेशसे छुटकारा पाकर अपने देशको लौटआये; परंतु उनके पास ऐसा कोई सहारा नहीं था कि जिसकी सहायतासे वह शिल्प और वाणिज्य व्यौपारकी उन्नति कर सकें। जो विदेशी वणिक, और व्यौपारी तथा सेठलोग मेवाडमें रहतेथे महाराष्ट्रियोंके उपद्रवमें वह लोग मारवाडको छोड़कर अपने २ देशको चलेगये; और मेवाड जिनकी जन्मभूमि थी, और जिन्होंने प्रचंड अत्याचारको सहन करके भी जन्मभूमिका रहना नहीं छोड़ा, ऐसे लोग अन्यान्य मेवाडवालोंकी समान अत्यंत ही दरिद्र होगयेथे। राजकोष सूनाहै, प्रजाके पास पैसा नहीं। जिन्होंने समस्त अत्याचारोंको सहन करके हृदयका दाव लगाय अपने इकट्ठे कियेहुए धनको बचा लिया था, राणाजीने जब उन लोगोंसे ऋण माँगा तब वे ३६) सैकडेका सूद माँगने लगे। विवश होकर वही सूद देनापड़ा। इस लिये राणाजीका ऋण अधिक बढ़गया था। इन समस्त संकटोंसे उद्धार प्राप्त होनेका दूसरा उपाय न देखकर राणाजीने विदेशीय वणिक और सेठोंको बुलाया। मेवाडकी दुर्दशा देखकर कदाचित किसी बनिये या सेठको राणाका विश्वास न हो, इस शंकासे बृटिश एजेंटने राणाका और अपना लिखाहुआ एक २ प्रतिज्ञापत्र उनके पास भेजा। परन्तु इसके सम्बन्धमें जो कुछ शंका एजेंटसाहबको हुई थी, वही आगे आई। भारतके वणिकोंने मेवाडके समस्त नगरोंमें शाखा कार्यालय स्थापन किये; परन्तु मूल कार्यालयके स्थापन करनेकी किसीको हिम्मत नहीं पड़ी। उन समस्त शाखा-कार्यालयोंमें उनका एक २ कारिन्दा देश काल और पात्रका विचार करके अपने कार्यका निर्वाह करने लगा। जिन बुरे नियमोंसे बाहिरी वाणिज्यकी उन्नतिके मार्गमें रोक होगई थी वह सब रोक टोक एकसाथ ही जाती रही। तथा पण्यद्रव्यादि लाने ले जानेके लिये देशके स्थान २ में बहुत खर्चके कार्यालय स्थापन कियेथे वह सब उठाकर उनके बदलेमें बहुत उत्तम बंदोबस्त किया गया। इस प्रकार मेवाडके वाणिज्य स्रोतके विरुद्ध जो रुकावटें थीं, उनके दूर होनेसे धीरे २ मेवाडकी उन्नति होने लगी।

मेवाडमें भीलवाडा नामक एक प्रसिद्ध वाणिज्य नगरहै। पहिले ही कहआयेहैं कि इसही भीलवाडेको महाराष्ट्रियोंने भलीभांतिसे लूट लिया था। इसकी दुर्दशा पहिले ही कही जाचुकीहै। आज बृटिश एजेंटके उत्तम बन्दोबस्तसे फिर भी यह नगर पहिली शोभाके प्राप्त करनेमें समर्थ हुआ। मानो उसकी ध्वंसराशिमेंसे अगणित बनिये और सेठ उत्पन्न होने लगे। इस प्रकार अल्पकालके

आवश्यक्रीय समझे जातेथे । परन्तु मेवाडकी विधान संख्या जो मुझको विदित हुई है वह अधिक है, और उन सबमें जितनी विशेष प्रयोजनीय रीति हैं वह पारिशिष्टमें लिखदीगईहैं ।

राजपूत जातिकी श्रेष्ठ वंशमें उत्पत्ति ।—राजस्थानके छोटे राज्यसमूहोंके जितने प्रतिष्ठायुक्त और बहुत प्राचीन वंशके लोग शासन करगयेहैं, और अब भी शासन कर रहे हैं, उनके साथ यदि यूरोपखण्डके प्रसिद्ध वंशवालोंकी हम तुलना करें, तो यह अवश्य ही कहेंगे कि उनकी अपेक्षा राजपूतगण ही श्रेष्ठहैं । राजपूत जातिकी उत्पत्ति विषयमें बहुत पुराने समयके वृत्तान्त पढ़नेसे मैं यह कहसकताहूँ कि यह जाति नीच वंशमें उत्पन्न वा करद राजवंशवाली नहींहै । यद्यपि राजपूत जातिके गौरवगारिमा प्रताप प्रभुत्व और शक्ति इस समय विलकुल हास होगई है, यद्यपि उनके अधिकृत राज्य इस समय क्षीण होगयेहैं, यद्यपि वह वंशका गौरव प्रकाशक और पदमर्यादाके जतानेवाले ऐश्वर्याडम्बरके चिह्न छोडनेको बाध्य होगयेहैं, तथापि प्रसिद्ध बडे ऊँचे राजवंशोंमें उत्पन्न होनेके कारण वह अब भी विलक्षण रूपसे परिचित हैं, और उन्होंने उस पुरानेज्ञानसे उत्पन्न हुए दर्प और गर्वको किंचिन्मात्र भी नहीं छोडाहै । इस नीतिके अनुसार ही असंख्य राष्ट्र विप्लवोंके बीचमें भी राणाका परिवार अविचल भावसे अपने वंशकी पवित्रता और गौरव रक्षा करता आरहाहै । प्रबल बलशाली मुगल सम्राट जहांगीरने शजेरेकी समान इस शिशोदीय जातिका इतिहास स्वयं लिखाहै । * मेवाडेश्वरने उनके साथ संधि करके वश्यता स्वीकार करनेके कारण अपनेको विशेष गौरवान्वित समझा था । भारतमें मुगलराज शासनशक्ति संस्थापक उनके पूर्वपुरुष बाबर जिस कामको सिद्ध न करसके, दुमायूं जिस विषयमें कृतकार्य न हुए तथा उनके पिता जिस काममें कुछेक सफल मनोरथ हुए थे, जहांगीर पूर्णरूपसे उस काममें सफलता प्राप्त करनेके कारण जगदीश्वरको हृदयके साथ धन्यवाद दे गये हैं । विजेता बाबर और जहांगीर इन राजपूतोंके विषयमें जैसे महान् ऊँचे मन्तव्य प्रकाशकर

* मेवाडकी राजपूतजाति बहुत कालसे ही अनेक घटनाओंसे अनेक उपाधियां प्राप्त करती आतीहै । पहिले राजपूतजाति “ सूर्यवंशीय ” नामसे विख्यात थी, उसके पीछे ग्रहलोट वा गिहोट उपाधि प्राप्त हुई । उसके पीछे आहारिया उपाधि मिली, और इस समय सिसोदीय नामसे विख्यात है । राष्ट्रविप्लव और अन्य घटनाओंसे ही यह उपाधियें बदलती रही हैं ।

योंमें वैष्णव और जैन नामक दो तंत्र दिखलाई देतेहैं इन दोनों सम्प्रदायोंमें विद्वेषकी अग्नि ऐसे प्रचण्ड वेगसे जलउठी किं शांतिके लिये दोनों दलवालोंको न्यायालयका आश्रय लेना पडा । इससे दोनों ओरकी हानि हुई । कारण कि अवसर पाकर विचारालयके कीड़े चालाकीके द्वारा उन सबसे ही धन लियाकरतेथे, इन्हीं समस्त कारणोंसे भीलवाडेकी उन्नति बहुतायतसे रुक गई । राणाजीने समझाया कि भीलवाडेको मध्य भारतका प्रधान वाणिज्य स्थान बनवेंगे; परन्तु उनकी वह आशा पूरी न हुई ।

मेवाडमें शांति स्थापन और उन्नति करनेके लिये दो तीन उपाय विचारकर प्रयोग कियेगयेथे उनमेंसे केवल व्यौपारियोंका वृत्तांत यहांपर वर्णन कियागया । शेष दोमेंसे सामन्त प्रथाका संस्कार साधन करना सबसे कठिन जान पडनेलगा, किसान और वनियोंको तो उत्साहने ही ठीक करदिया, वह लोग उसीसे अपने देशकी वृद्धि करनेके लिये प्राणपणसे परिश्रम करेंगे । परन्तु सामन्त लोगोंका संस्कार साधन करनेमें बहुतोंको कुछ र छोडना पडेगा । उस स्वार्थत्यागका उचित बदला किसीसे नहीं होसकता । परन्तु यह बात नहीं थी कि समस्त सामन्तोंको ही अपना स्वार्थ छोडना पडे । वरन दो चार ऐसे भी हैं कि जिनको इस अनुष्ठानसे लाभ भी होगा । इसके प्रमाणमें कोटारियोंके सर्दारका नाम लिखा जासकताहै, इस कार्यसे उसकी कोई हानि नहीं होसकती । परन्तु देवगढ, सलखूर या विदनौरकी समान जो लोग विदेशियोंकी सहायतासे कपटजाल फैलाकर अथवा खंझके बलसे अपनी प्रभुताको अखंड रखनेका सदा यत्न करते हैं; उनके मनमें ऐसी शंका हुई कि इस कार्यसे हमारी बहुत हानि होगी । क्यों कि उन्होंने अपना स्वार्थ साधनके लिये जिस टेढी चालको ग्रहण कियाथा, राज्यमें शांति होनेसे उनकी वह चाल बिगडजायगी । पचासवर्षकी अराजकता से जो अत्याचार करके अपनेको तृप्त कियाथा आज उनका हिसाबदेना पडेगा; आज उनको अपनी र भूमिवृत्तिके पट्टे बदलने पडेंगे । इसी प्रकारकी शंका उनके हृदयको व्याकुल करने लगी । इसके अतिरिक्त सर्दारोंमें जो साम्प्रदायिक विद्वेष विराजमान था उसका दूर करना तथा परस्परमें एक दूसरेकी भूमि सम्पत्तिके छीननेवालेका निराकरण करना यह दो कर्तव्य भी आवश्यकीय समझे गये । इनमेंसे पहिले कर्तव्यका विचार करके राजाजी अत्यन्त दुःखित हुए । वह जानतेथे कि;— “शेर और बकरीको एक घाटपर पानी पिलालिया जासके परन्तु राजा और राज्यके संगलार्थ चंदावत और शक्तावतोंको एकसाथ मिलाकर कार्य

मेवाडके सिसोदीयगण-मेवाडकी राजनीति समाजनीति और शासननीति अन्यान्य राज्योंसे सर्वथा पृथक् है, इस बातको सब जानते हैं। नवीन स्थापित राज्योंकी जिस समय बाल्यावस्था थी, मेवाडके राजवंशने उस समय प्राचीन पदवीमें पदार्पण किया था। मेवाडकी अवनीति-राज्यक्षय किस प्रकार किस कारणसे होते रहे, इस बातको हम प्रगट कर सकते हैं, किन्तु मेवाड राज्य किस प्रकारसे विस्तृत हुआ, इस विषयको बड़ी कठिनतासे प्रकाश कर सकते हैं; इधर मारवाड, अम्बेर और अन्यान्य छोटे २ राज्योंने किस प्रकार राज्य सीमा बढ़ाई, इसका लिखना भी बहुत सहज है। कई छोटे २ राज्य लेकर ही मारवाडकी उत्पत्ति हुई है; वह प्राचीन छोटे २ प्रदेश अन्तमें नवीन राठौर राजवंशके अधीन कर-दरूपसे वर्तने लगे राजगण सामन्त मण्डलीके ऊपर जिस विशेष स्वाधीनभावसे शासनशक्ति सञ्चालनमें समर्थ हुए, वह केवल उनके देशाधिकारकी रीतिसे ही स्थिर है। यूरोपकी सामन्त शासन प्रणाली जिस समय प्रचलित थी उस समयके सामन्तोंके स्वत्वाधिकारकी समान इनका स्वत्वाधिकार ज्योंका त्यों है।

अति दीन अवस्थामें प्राप्त होकर भी निर्बल राजपूत आजतक अपना पैतृक स्वत्व-वंशगौरव बड़े अभिमानके साथ रक्षा कर रहे हैं; वह कृषिकार्य-हल चलाने और अश्वारोहणके सिवाय अन्य समयमें बरछा चलानेमें आन्तरिक हृदयसे घृणा प्रकाश करते हैं। बड़े ऊँचे वंशमें उत्पन्न होनेके कारण राजपूतोंके हृदयमें जो अभिमान विद्यमान है। उनके ऊपरके स्वामियोंके प्रीति बढ़ानेवाले आचरण और नीचे पदोंके स्थित जनोंके विशेष सन्मान द्वारा वह गर्व समर्थित होता हुआ आरहा है। राणाओंने जैसा पदसन्मान अनुग्रह और पद श्रेणी विभाग कर दिया है, वह सब ही समाजकी बहुत ऊँची और निर्मल अवस्थाका बतानेवाला है। उच्च पदमें स्थित प्रत्येक पुरुष ही सन्मान सूचक एक २ पताकाका व्यवहार बाजा और चांदीका आसाधारी अनुचर साथमें रखनेका अधिकारी है। इसके सिवाय किसी २ सामन्तके पूर्वपुरुषोंने राजभक्ति प्रकाशक वा वीरता सूचक कार्य करनेसे राजप्रसाद और अनुग्रह स्वरूप जितने स्मरणीय सन्मान चिह्न प्राप्त कियेथे, उनके उत्तराधिकारी उन सन्मानसंभोग वा गौरव चिह्नोंको आजतक व्यवहार करते आ रहे हैं।

आजकल यूरोपके राजगण, वीरवृन्द और महानपुरुष जैसे आत्मपरिचय देनेवाले समरके अस्त्र विशेष २ चिह्नोंसे पृथक् २ अङ्कित करते हैं, प्राचीन राज

पन्द्रह घंटोंमें राणाजीने जैसे सुविचार और जैसी दृढ़ताके साथ कार्य कियाथा उससे बहुतोंको यह आशा होगईथी कि राणाजीसे मेवाडकी बहुत कुछ उन्नति होगी ।

इस प्रकार निश्चय और अधिकार पत्रिका पर हस्ताक्षर होजानेपर सन्धिके * नियमोंका पालन करना और कराना विशेष प्रयोजनीय होगया । सबने ही

* राणाजीकी की हुई सन्धि इस प्रकारसेहै:-

“ सिद्धश्रीमहाराजाधिराज महाराणा भीमसिंहके द्वारा,—हमारे राज्यके समस्त सर्दार, वन्धुवर्ग व आसिष्ट, राजा, पटेल, शाला, चौहान, चंदावत, पँवार, सारंगदेवत, शक्तावत, राठौर, और राणावत् इत्यादिकोंको ।

“ गत संवत् १८२२ (सन् १७७६ई०) से जयसे कि राणा अरिसिंहजी गद्दीपर बैठेथे, उस समयसे मेवाडमें अस्वास्थ्य उत्पन्न हुआ । पुरानी रीति और कारभार दूर होकर अव्यवस्थाने देशपर अधिकार किया । इस कारण आज, वैशाख वदी १४ संवत् १८७४ (सन् १८१८ई०) के दिन मैंने अपने समस्त सर्दार, माननीय, व मांडलीक ठाकुरोंकी सभा करके उनको अपने रक्तव्य-पालनके लिये सन्मार्ग बतानेको नवीन रीति व, नये प्रकारका एक निश्चय प्रगट कियाहै ।”

“ (१) राणाकी मालिकीके या राणाजीके अधीन जो देश उपरोक्त अधाधुन्यके समय जिस किसीके पास चलीगयी है; अथवा किसी सर्दारकी ज़मीन किसी दूसरे सर्दारके पास चलीगयीहै, अथवा कोई ठाकुर उसका मालिक बन बैठाहै समस्त देश या ज़मीन उस असली मालिकको मिलना कर्त्तव्यहै । ”

“ (२) उपरोक्त समयसे ही रखवाली, भूमि (लोकसंरक्षण कर) व लगान, कर जो लगाये गये वह इस समय उठादियेगये । ”

“ (३) धन और विखनामक कर कि जिनपर केवल राणाका ही अधिकार था उठादिये गये । ”

“ (४) प्रत्येक सर्दार तथा ठाकुरको अपनी २ सीमामें अत्याचार, बलात्कार, चोरी, लूट खसोट नहीं करना चाहिये, या नहीं करनेदेनी चाहिये । उनको उचितहै कि अपनी सीमामें ठग, बटमार, लुटेरे आदिको मार्ग न दें । परन्तु वहलोग जो अपने धंधेको छोड़ देशमें निरुपद्रवसे रहकर अपना कुछ दूसरा कार रोज़गार करें, तो उनको रहनेकी आज्ञा दें । यदि उनमेंसे फिर कोई लुटारूपनका कार्य करके प्रजाकी शान्तिको भंग करे तो उसका शिर काटना उचितहै । वह धन जो ऐसे लोगोंके पाससे निकले वह उसको जव्त करलेना उचितहै कि जिसकी सीमामें यह लूट खसोट हुईहो । ”

“ (५) देशी, परदेशी, उद्यमी, व्यापारी, काफले, वनजारे या और जो कोई अपने देशमें आवें अथवा अपने देशमें भ्रमण करें; सब प्रकारके उपद्रवोंसे उनकी रक्षा करनी चाहिये । जो कोई इस नियमको पालन न करके व्यौपारियोंको हानि पहुंचावैगा; उसकी समस्त मिलकियत जव्त होकर दंडस्वरूप सरकारी खजानेमें दाखिल होजायगी । ”

“ (६) जैसी आज्ञा हो, उसके अनुसार, मेवाड या मेवाडके बाहर समस्त सर्दार आदिको अपनी २ नोकरी करनी चाहिये । सर्दार व ठाकुरोंके चारभाग हुए, प्रत्येक भागको तीन २ मास—

जाते थे । जयसिंहके वह कुलदेवता स्वपक्ष और विपक्षके सैनिकोंके रक्तसे स्नान किया करते थे ।

हिन्दू राजाओंके जितने पूर्व पुरुष ग्रीक विजेता अलिकजण्डरका भारतपर आक्रमण निवारणके लिये युद्धमें प्रवृत्त हुए थे, उन्होंने उक्त प्रथाके अनुसार अपने कुलदेवता बलदेवकी मूर्ति सेनाके शीर्षस्थानपर रखकर समराग्नि प्रज्वलित की थी ।

ग्रीक इतिहासवेत्ता एरियन लिखते हैं कि अधीन सामन्तोंके ऊपर राजाकी प्रभुता जतानेवाली पताका दानकी रीति सिन्धुनदीके तीरवर्ती राज्योंसे ही ग्रीक लोगोंने ग्रहण की है ।

अलिकजण्डर जिस समय उक्त प्रदेश विजय करनेके लिये बाहर हुए थे, और उन्होंने कम्पियन सरोवरके पूर्व तीरवासी राज्योंको जयपूर्वक उन प्रदेशोंको विभाग करके वहाँके प्राचीन राजवंशियोंको दिये, उस समय उक्त राजोंने अलिकजण्डरकी वश्यता स्वीकार करके करदान और निर्धारित संख्या सेनाद्वारा उनके भारत विजयमें सहायता करनेकी प्रतिज्ञा करी थी, अलिकजण्डरने अपने हाथसे उन राजालोगोंको प्रचलित रीतिके अनुसार पताकायें दी थीं । स्थानीय किसी रीतिके मानने और उसके अनुसरण करनेमें वह असम्मत नहीं हुए । सामन्त शासनकी रीतिका यह केवल बाहरी आभासमात्र है, इस कारण हम और भी जितने पिछले समयके इतिहासमें पहुँचेंगे, उतने प्रणालीके अङ्ग प्रत्यङ्ग हमारे नयनदर्पणमें प्रति विवित होने लगेंगे । मुसलमान जातिकी प्रथम शताब्दीमें ही जब प्रथम नवीन धर्म प्रचारार्थ भयङ्कर उत्पात हुए थे उस समय मेवाडेश्वर कैसे शक्तिसम्पन्न थे ? उस शक्तिका एक बड़ा चित्र यथोचित स्थानमें चित्रित हुआ है । उस चित्रमें क्या दिखाई देता है ? जिस समय खड्ग बलकी सहायतासे दुर्दान्त यवन गण भारत आक्रमण और नवीन धर्मसे भारतको नष्ट करनेके लिये संहारमूर्ति धारण करके आगे बढ़ रहे थे, उस समय आत्मरक्षाके लिये मेवाडपति अपने अधीनस्थ सैकड़ों मित्र और कर देनेवाले सामन्तोंके साथ युद्धके लिये भलीभाँति सज्जित हुए थे ।

सिन्धुनदीकी पश्चिम सीमामें स्थित पहाड़ी प्रदेशमें - जिस समय यह धर्म युद्धाग्नि प्रज्वलित हुई थी, उसके बहुत काल पहिले युधिष्ठिरके राजछत्रके नीचे यवनोंने आश्रय पाया था । चन्दकवि उस समयकी बहुत सी प्रयोजनीय बातें लिख गये हैं; वह सब बातें इतिहास और सामरिक वृत्तांतमें

ही और अत्याचारी सर्दारोंने मेवाडकी जिन जमीनोंको अन्यायसे ले लियाथा, उन समस्तका उद्धार करना सब कार्योंकी अपेक्षा कठिन ज्ञात हुआ । क्यों कि उन भूमियोंके छुड़ानेमें अत्याचारी सर्दारोंसे जरूर झगडा होनेकी सम्भावना है, वह लोग सहजसे उन जमीनोंको नहीं देना चाहेंगे । कोई तो चार पुरुषके स्वत्वाधिकारका प्रमाण दिखावेगा, कोई विद्रोही हो जायगा । इसी कारणसे यह कार्य कठिन समझागया । बहुत दिन तक तर्क वितर्क हुए परन्तु शीघ्र कोई फल न निकला । राणाजी सब सर्दारोंको बुलाकर अनेक प्रकारके मधुर वाक्योंसे सबके हृदयको नरम करनेलगे, और अतीत घटनाओंका चित्र सामने लाकर अनेक प्रकारसे समझानेकी चेष्टा करनेलगे । मेवाडके उस स्वर्ण युगमें—गिल्हौटकुलकी स्वाधीनताके गौरवकालमें तुम्हारे ही पुरुषोंने मेवाडकी स्वाधीनता, मेवाडके गौरवगरिया, मेवाडकी सुखशांति बचानेके लिये किस प्रकार वीरोंकी नाई अपने प्राण दियेथे, और तुम लोग उन्हींके वंशधर होकर अपने देशका नाश करोगे ? क्या तुम लोगोंका जन्म मेवाडमें नहीं हुआ है ? क्या तुम उन सर्दारोंके वंशधर नहीं हो कि जिन्होंने चित्तौडके लिये, मेवाडके लिये अपने तन मन, धनको वार कर दिया था ? उस स्वाधीनताके लीलक्षेत्र मेवाडमें जन्म ग्रहण करके स्वदेशानुरागी महात्माओंके पवित्ररक्तसे देह परिपुष्ट करके क्या मेवाडके वर्तमान सर्दार अपने स्वार्थके आगे “स्वर्गादिपि गरीयसी” जन्मभूमिकी ओर दृष्टि न डालेंगे इत्यादि बहुतसी बातें राणाजीने कहीं । आनंदकी वार्ता है कि धीरे २ उनकी चेष्टा फलवती होनेलगी, सर्दारोंका कठोर हृदय धीरे २ नरम होनेलगा, ज्ञानके नेत्र खुलनेलगे । जैसे जैसे समय बीतता था वैसे ही वैसे वह चित्र उनके हृदयपर गहरा खुदता जाताथा । मानो किसी अपूर्व दैवी शक्तिके प्रभावसे सर्दारोंका पूर्वभाव लोप होनेलगा । अपना कर्तव्य और मातृ-भूमिकी अवस्थाका विचार करके राणाजीकी सम्मतिका अनुमोदन किया और जिनके बड़े बृढ़ोंने मेवाडकी भूमि सम्पत्तिकी अन्यायसे ले लियाथा वे सब उनके देनेको राजी होगये । इस प्रकार छः महीनेके ही बीचमें यह कठिन कार्य होगया ।

जिस समय मेवाडका यह संस्कार होरहाथा उस समय बहुतसे राजपूतोंका वीरचरित्र प्रसफुटित होगया था । उनमें दो एकका वृत्तांत नीचे लिखाजाता है । मेवाडमें अरझानासक एक किलाहै, यह किला पहले राणाजीके अधिकारमें था अनंतर पुरावत गोत्रके सर्दारोंने बलपूर्वक उसको अपने अधिकारमें करलिया

चला गये हैं। एक दूसरी श्रेणीके लोग कहते हैं कि “यह बद्ध मूल जाति भेद प्रथा विना दूर हुए हमारी राजनैतिक उन्नति होना असंभव है।” तथा एक श्रेणीके अंग्रेज भी हृदयके साथ हमारे इस जातिभेदकी निन्दा करते हैं। किन्तु हम सबसे पहिले यह कहना चाहते हैं, अत्यन्त गूढ़ कारणसे समाजकी विशेष प्रयोजनीयता देखकर ही हमारे पूर्व पुरुषगण यह जातिभेद प्रथा प्रचलित कर गये हैं। समाजका मङ्गल साधन ही उनका मुख्य उद्देश था। शान्ति और समाज रक्षा करनेके लिये निर्धारित रीतिके अनुसार एक २ श्रेणीके ऊपर एक एक प्रकारका कार्यभार समर्पण अवश्य कर्त्तव्य है, उन्होंने विशेष परीक्षाके पीछे इस बातको निर्धारित किया था। जिस श्रेणीके लोग जिस कार्यमें विशेष दक्ष हैं; उस श्रेणीको केवल उसी कार्यमें नियुक्त रखकर उस कार्यका क्रमसे उत्कर्ष साधनभार समर्पण करना कर्त्तव्य समझकर ही हम एक २ श्रेणीके ऊपर एक २ प्रकारका सामाजिक कार्य समर्पित हुआ देखते हैं धर्म साधन, ज्ञान शिक्षा विस्तारमें ब्राह्मण मण्डलीको सर्वांशमें योग्य जानकर ही ब्राह्मण वर्णके ऊपर वह भार समर्पित हुआ, राज्यशासन, प्रजापालन, शत्रुके भय निवारण पक्षमें बलिष्ठ वीर क्षत्रिय जातिको सर्वांगमें योग्य जानकर ही उनके हाथमें राज्यभार समर्पित हुआ और उसी प्रकार दूसरी जातियोंकी योग्यतानुसार ही उनके ऊपर भी स्वतंत्र २ भार रक्खा गया। इसका फल यह देखा जाता है कि, जिस श्रेणीके ऊपर जो जो भार समर्पित था, वह २ श्रेणी वंशानुक्रमसे उसी २ विषयका अधिक उत्कर्ष साधन कर गई है। विविध व्यवस्था और ज्ञानशिक्षाकी जहांतक उन्नति होसकती है, ब्राह्मण वर्णने उसके करनेमें कोई त्रुटि नहीं रक्खी राज्यरक्षा, पुत्रकी समान प्रजापालन और बाहुलसे भारतभूमिका गौरव जहां तक विस्तृत होसकता है, सूर्य और चन्द्रवंशके भूपालकुल उसको विस्तृत कर गये हैं। शिल्पी भास्करआदि अपने अवलम्बित विभागके उन्नति साधन विषयमें कहांतक सचेष्ट थे, प्राचीन कीर्त्तिस्तंभ आदि उसकी पूरी साक्षी दे रहे हैं। हमारा विश्वास है कि एक २ श्रेणीके ऊपर ऐसा धारावाहिक भार विना सौंपे कभी भी कोई कार्य सर्वांग सुन्दर रूपसे सम्पादित नहीं होसकता। किसी एक-नाट्यशालामें यदि बीस अभिनेताओंको एक दृश्यकाव्य अभिनयके लिये एकत्रित करके उनमेंसे प्रत्येकके अंशको विना निर्धारण किये इच्छानुसार कार्य करने दिया जाय, यदि उसमें एक अंशका दश मनुष्य अभिनय करने लगे और दूसरे अंशको कोई न करे तो क्या वह दृश्य सुन्दररूपसे संपादित हो सकता है?

जैतसिंह हमारा कहना मानलेगा, परन्तु यह उनकी झूल थी, सनमान छीन लेनेवालेके गुण किसीने नहीं गायेहैं ? कोई बुद्धिमान् ऐसा नहीं करेगा । जैतसिंहके साथ राणाजी जैसा व्यौहार करनेके लिये तैयार हुये, उससे जैतसिंहने समझ लिया कि अब राणाकी सामर्थ्यका दवाना कठिन है । यह समझकर उसने अत्यंत शोकसे राणाजीकी प्रार्थना की । “ आपकी आज्ञा हो मैं अपनी भूमिवृत्तिको त्यागकर मेवाडको छोड़े जाताहूं । ” इस अभिप्रायको सिद्धकरनेके लिये जैत सिंह महलके आँगनमें खड़ा होगया । वहुतोंने समझाया बुझाया परन्तु वह वहीं पर खड़ा रहा । अंतमें दूसरा उपाय न देखकर राणाजीने इसकी मीमांसाका भार पोलिटिकेल एजेंट टाडसाहबके हाथमें सौंपा ।

प्राचीनकालसे ही पवित्र गिल्लौटकुलमें यह नियम चला आताहै कि कोई सर्दार मुख्य करके अपने अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये किसी समय स्वयं राणाजीसे प्रार्थना नहीं करसकता । कारण कि ऐसा करनेसे राजसन्मानमें बाधा पडती है । जैतसिंह मेवाडके मंत्रियोंसे आन्तरिक घृणा करता था । उसके मनमें यह निश्चय था कि यह मंत्री लोग रिश्वत लेकर प्रत्येक मनुष्यका काम कर दिया करते हैं । इसहीसे यह रिश्वत देनेको बहुत बुरा समझता था । यही कारण था जो राणाजीकी मंत्रीसभामें इसके बहुतसे शत्रु थे । उसके अधिक शोकित होनेका विशेष कारण यह भी था कि विदनौरका यह स्वामी था । ३६० वस्तियों और मौजे विदनौरके अन्तर्गत थे । उन सबका भी स्वामी जैतसिंह ही था । सामन्त प्रथाके अनुसार वह समस्त वस्तियों और मौजे उसने अपने अधीनके सर्दारोंको वांटदियेथे । जैतसिंह उनकार्योंको करनेके लिये तैयार होता था जो कि उसकी सामर्थ्यसे बाहर होतेथे । जिन कार्योंमें राणाजीके अतिरिक्त और किसीको हस्तक्षेप करनेका अधिकार नहीं था यह उनमें भी हाथ डालना चाहता था । इससे राजतंत्रका अपमान होताथा । जिन लोगोंके हाथमें उन वस्ती और मौजोंका शासनभार अर्पित था, वह समस्त ही तीसरे दरजेके सामन्त थे । मेवाडवाले उनको “गोल” नामसे पुकारा करते थे । मेवाडमें जिस समय वेतनभोगी सेना रखनेकी रीत नहीं थी, उस समय यह “गोल” नामक सर्दारगण मेवाडकी स्वाधीनता तथा गौरवको बचानेके लिये संग्राममें अपने प्राण देदिया करते थे । उस समय उनकी वीरता ही राणाकी प्रभुताके रक्षा करनेमें प्रधान उपाय समझी जाती थी । अस्तु;—राजपूत हि-
तैषी राजनीतिज्ञ महोदय टाडने उस विषादित सर्दारके पास पहुंचकर धीरे २ कहा, सर्दार चंडामणि आपने वीर केशरी जयमलके पवित्र वंशमें जन्म लियाहै; जिसके

सागरमें डूब जायगा । यद्यपि हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि इस समय हमारी उस प्राचीन जातिभेद प्रथाके मूलमें दारुण वज्राघात हो रहा है, सामाजिक सुधामय रीति-नीति धीरे २ अदृश्य होती जाती है, समाजनेताओंका अभावसा है, यहांतक कि मूल समाजतक विध्वंसप्राय है, तथापि इसको समूल नष्ट कोई नहीं करसकता । देशकाल और अवस्था भेदसे परिवर्तनको कोई निवारण नहीं करसकता यह हम भी स्वीकार करते हैं, किन्तु हमारा भाग्यचक्र इस समय जैसा परिवर्तित हो रहा है, उससे हमारी यह अवस्था परिणाममें अवश्य ही शोचनीय होजायगी । हम यदि इस समय विजातीय अनुकरण विजातीय शिक्षाके गुण और विजातीय शिक्षाके तत्त्व स्रोतमें भासमान न होकर अपने पूर्व पुरुषोंके अवलंबित मार्गमें चलनेकी चेष्टा करें और समयकी अवस्थानुसार धर्मपर दृष्टि रखते हुए साधारण बातोंको कुछ बदल दें तो हमारा आर्य्यनाम अक्षय होगा, समाज शान्ति सौरभसे पूर्ण होगा, और जातीय गौरव रवि प्रबल तेजके साथ पूर्णरूपसे चमकेगा । नहीं तो हम लोग इस जगत्में एक अभूतपूर्व जातिमें परिणत होजायेंगे । जो लोग पूर्व पुरुषोंको अज्ञ, भ्रूख आदि उपाधि देनेमें लज्जित नहीं होते, वह लोग निश्चय जानें कि एक ऐसा समय आवेगा जिस समय उनके उत्तराधिकारी भी अधिक धृणाके साथ उनके प्रति उक्त उपाधियों वर्णनमें कुछ भी लज्जित न होंगे । इस कारण पूर्व पुरुषोंका दिखाया मार्ग ही हमको सबसे पहिले अवलम्बन करना उचित है । एक श्रेणीके अंग्रेज यदि हमारे जातिभेदकी निन्दा करते हैं तो क्या हम भी उसका विशेष तत्त्वानुसंधान न लेकर अपनी प्राचीन प्रथाकी निन्दा करने लगें ? यदि अंग्रेजोंकी सामाजिक दशाके ऊपर हम तीक्ष्णदृष्टि डालें तो हमारे नेत्रदर्पणमें कैसा दृश्य प्रतिबिम्बित होगा ? हमारे समाजमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, यह चार वर्ण सृष्टिके पूर्वसे ही विराजमान हैं । हम इस बातको मानते हैं कि अंग्रेजोंमें प्रगटमें वैसा वर्णभेद नहीं देखाजाता । किन्तु हम पूछते हैं कि क्या इस सभ्य शिक्षित विश्वविजयी अंग्रेज जातिमें जात्यभिमान नहीं है ? हमलोगोंमें जैसा जात्याभिमान प्रचलित है, उनमें भी क्या वैसा जात्यभिमान स्थान नहीं पाता ? अवश्य ही प्रस्तक नवाकर स्वीकार करना होगा कि अंग्रेज जातिमें विलक्षण जात्यभिमानकी अग्नि भयानक वेगसे प्रज्वलित है । अंग्रेज जातिके बीचमें उत्तम, मध्यम और अधम श्रेणीके सबलोग सबके साथ क्या एकत्र भोजन करते हैं ? हम कहते हैं नहीं । अधिक प्रमाणकी क्या आवश्यकता है ?—भारतवर्षके भूतपूर्व स्टेटसेक्रेटरी ड्यूकऑफ अर्गालके ज्येष्ठ पुत्र मार

भोग सकता था । तथापि वह बल विक्रमकी सहायतासे अस्सी हजार रुपयेकी सम्पत्तिको अपने दरबारमें किये हुए था । हमीरसिंह कपटकी राजभक्ति दिखाय, राणाजीको लुभाताहुआ सदा ही सभामें विराजमान रहता था । लावहाका शक्तावत सर्दार उसका भारी मित्र था । उस समय इसके पास खैरोदा किलेका अधिकार था । इन दोनोंका स्वभाव एकसा ही था; दोनोंने ऐसी चालाकीसे राणाके मनको मोहित कियाथा कि यह लोग उस समय भी अपनी भूमि सम्पत्तिको बेखटके भोग रहेथे कि जिस समय राणाजीने दूसरे सर्दारोंकी जागीरें छीन ली थीं इस प्रकारसे कुछ दिन बीतगये । अनन्तर मंत्रीने लावहासर्दारपर राणाजीकी आज्ञा प्रचारित की “जबतक आप खैरोदा किला तथा छीनीहुई अन्यान्य भूसम्पत्ति न लौटादेंगे, तबतक राजसभामें आपका प्रवेश करना वर्जित है ।” इस आज्ञाको सुनते ही हमीर जलगया और गर्वसहित अपनी मूर्खोंपर हाथ फेरकर बोला कि “अपने पूर्वपुरुष सोमाजीकी दुर्दशा याद रखना !”

तेजस्वी हमीरका स्वभाव दिन २ प्रचंड होनेलगा । यद्यपि उसके दुर्धर्मभावका अनुकरण करनेकी किसीको सामर्थ्य नहीं थी, परन्तु आश्चर्यकी बात है कि बहुतसे आदमी उसकी प्रशंसा किया करतेथे । विशेष करके उसके सगोत्री इस बातका बहुत ही आनंद करतेथे । हमीरका दुर्धर्म व्यवहार दिन २ बढ़नेलगा ! उसको दमनकरनेमें राणाजीको चुपचाप देखकर सबको स्पष्ट विदित होगया कि भय या अनुग्रहके कारण राणाजी उससे कुछ नहीं कहते । एजेंट साहब उस कार्यका भार लेकर अवसरकी वाट । देखनेलगे । शीघ्रही वह सुअवसर भी आगया । जो राजकर्मचारी उस किलेकी अधिकारमें करनेको गयेथे, किलेदारने घोर अपमान करके उनको किलेमें नहीं घुसनेदिया । अपमानको सहकर लाजके मारे वह उदय-

—पढ़नेसे मालूम होजाताहै कि राजपूतजातिमें बदलालेनेका कैसा घोर उत्साह है । मूहटोंके उपद्रवके समय अमीरखों और उसका जमाई तथा प्रतिनिधि जमशैद उदयपुरमें अपनी सेनाको डालेहुए राजधानीको तथा उसके मौजोंको लूट रहेथे । सर्दारसिंहका प्रताप उस समय बहुत बढ़गयाथा । एक दिन जमशैदने उसको पकडकर ३००००) रुपयोंके लिये अपने डेरेमें कैद रक्खा । सर्दारसिंह ३००००)रुपया न देसका । उस समय दीवान सोमजीके दोनों भ्राताओंने यह रकम देकर सर्दारसिंहको जमशैदसे मोल लेलिया । सर्दारसिंहके सर्दार और सामन्तोंने जैसे ही इस समाचारको सुना वैसे ही वह अपने स्वामीका उद्धार करनेका उपाय करनेलगे । इस ही अवसरमें दीवान सोमजीके शिवदास और सतीदास नामक दोनों भाइयोंने अपने भाईका बदला लेनेको सर्दारसिंहका शिर काटडाला और वह शिर रामपियारीके महलके द्वारपर लटकवाया । इस क्रूर कार्यको करनेके उपरान्त शिवदास और सतीदास भी शत्रुकी छुरीसे मारेगयेथे ।

सेवाकार्य शूद्रका स्वाभाविक कर्म है । ” यह भगवद्वाक्य कभी अन्यथा नहीं होसकता । इस वर्ण व्यवस्थाका भलीभाँति पालन न करनेसे ही भारतकी यह दुर्दशा होरहीहै । जाति बदलनेकी प्रथा चलानेसे वर्णसंकर संतान होने लगेंगी और सन्तानके वर्णसंकर होनेपर जातिधर्म और कुलधर्म नष्ट होजायगा । क्या ही अच्छा हो कि सबलोग वर्णव्यवस्थाके अनुसार अपने स्वाभाविक कर्मकी चर्म्मोन्नति करके भारतका पुनरुद्धार करें ।

इसके अनंतर कर्नेल टाड लिखते हैं कि—“ रजवाड़ेकी प्रचलित समाजनीति-के अनुसार केवल जिन मनुष्योंके पिता माता दोनोंके कुल ऊँचे वंशसे उत्पन्न शुद्धरक्तधारी हैं; केवल उस वंशके लोग ही मेवाडेश्वरके अधीनमें सामन्त पदपर अभिषिक्त होकर भूवृत्ति संभोग कर सकते हैं । जिनकी नाडियोंमें शुद्ध राजपूतरक्त वह रहा है, वह राजपूत यदि अत्यन्त निर्धन और एक चरसा भूमिके अधीश्वर हों तो उनके साथ सर्वश्रेष्ठ सामन्त भी आदान प्रदान चलन द्वारा अपनेको अपमानित नहीं समझते । केवल वह वंशगौरव ही उन निर्धन राजपूतोंके अङ्कुशित सन्मानकी रक्षा करता है । ऐसा संमिलन किसी प्रकारसे दूषणीय वा राजनैतिक अशान्ति उत्पन्न करनेवाला नहीं समझा जाता । मंत्रीआदि राजपुरुष और साधारण कर्मचारीलोग जो राजपूत नहीं हैं, यद्यपि उनको भी उपाधि और भूवृत्ति दीजातीहै, किन्तु उस भूवृत्तिमें उनका चिर स्थायी वंशानुक्रमिक स्वत्व नहीं रहता; जितने दिनतक वह अपने २ पदपर रहते हैं, उतने दिनतक ही भोगनेका अधिकार है । जिस कारणसे यूरोपमें राजमंत्री और प्रधान २ राजपुरुषोंको भूवृत्ति देनेकी प्रथा प्रचलित थी, उसी कारणसे रजवाड़ेमें भी यह प्रथा प्रचलित हुई । प्रारंभमें सिक्का बननेसे पहिले मंत्री वा राजपुरुषोंको वेतन देनेका कोई विशेष सुवीता न होनेके कारण ही यह भूवृत्ति दान प्रचलित हुआ होगा । मेवाडके मंत्रीवर्ग वेतनके बदले इस भूवृत्तिको ही सबसे श्रेष्ठ समझतेहैं । यूरोपकी आरंभिक अवस्थामें फ्रांसराज सार्लमेनके राजसंसारमें, पानपात्रके लानेवाले, मद्यभाण्डारके रक्षक, प्रासादके प्रधान तत्त्वके ज्ञाता, वस्त्रागारके अध्यक्ष, पाकशालाके प्रधान परिचारक और अश्वशालाके अध्यक्ष आदि ऊँचे पदके राजकर्मचारीलोग जिस प्रकार मंत्री समाज भुक्त गिने जातेथे, * हम इस राज-

* हालमका इतिहास, १९५ पृष्ठसंख्या । कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, “टिउटनोंके द्वारा यह प्रणाली प्रथम प्रचलित हुई थी । ” किन्तु हमारा विश्वासहै कि भारतवर्षसे ही इसकी शिक्षा पश्चिममें पहुंची थी ।

भदेश्वर किलेका अधिकार भी राणाजीको सौंप दिया । सबहीने आश्चर्यके साथ देखा कि—शिशोदीयकुलकी लाल पताका भदेश्वर दुर्गके ऊपर फहरा रही है *

एक सरदारका वृत्तान्त यहां पर और भी लिखा जाता है । आमली किला और उसकी समस्त सम्पत्ति २७ वर्ष तक अमाइतके सरदारके पास थी । प्रायः ५० वर्षसे उस सम्पत्तिपर अमाइतवालोंका अधिकार था । अमाइतके सरदारगण जगवतकुलमें उत्पन्न होकर मेवाडके सोलह सरदारोंमें गिनेजाते थे । विदनोरके सरदारके नीचे यदि कोई राजभक्त समझा जाता था, तो वह अमाइतका ही सरदार था । जिस जगवतकुलमें—वीर वालक फत्तेने जन्म लिया था—उस ही कुलसे अमाइतके सरदारकी उत्पत्ति हुई थी । यद्यपि वीरपुत्र फत्तेकी ही वीरता और अद्भुत स्वार्थत्यागको जगवतकुलकी राजपरायणताका पक्का प्रमाण मानकर ग्रहण किया जा सकता है; परन्तु जगवतकुलके राजानुरागका केवल एक यही प्रमाण नहीं है । विगत महाराष्ट्रीय उपद्रवके समय फत्तेसिंहके पिता प्रतापसिंहने भी महाराष्ट्रियोंसे अपने देशको बचानेके लिये प्राण देदिये थे । प्राणोंके पुरस्कारमें ही उसके पुत्रको आमलीका किला दिया गया था । फत्तेसिंहने अपने किसी चतुर सख्खन्धीकी चालाकीमें आकर चंदावतोंका कोई विशेष कार्य करना चाहा । परन्तु इसमें बुद्धि कम और ऊधमीपन अधिक था, यही कारण हुआ जो उस कार्यको वह किंचित् भी न कर सका । फत्तेसिंहका अंतःकरण सरल था इससे अपने क्रोधको नहीं छिपा सकता था । एक समय एजेंट साहब मुलाकातको गये तब उसका उत्साह भडक उठा था । यद्यपि कुछ कहा नहीं तथापि लाल लाल आँखें क्रोधका पूर्ण परिचय दे रही थीं । राणाजी उसका कुछ फैसला न कर सके और एजेंट साहबको सब बातोंका भार दिया गया । तदनुसार एजेंट साहब उसके मकानमें पहुँचे । एक श्रेष्ठ गृहमें उनको आसन दिया गया । उस बड़े गृहमें दीवारोंपर फत्तेसिंहके दादे परदादोंकी उत्तम २ तसवीरें लग रही थीं । ब्रिटिश एजेंट टाडसाहब अपने सेवकवर्गके साथ उसी घरमें आनकर बैठ गये । फत्तेसिंह भी वहीं पर आया और उसके नौकर चाकर भी उसके सामने एकसाथ खड़े होगये । टाडसाहबने

* टाडसाहब कहते हैं कि, “ इस बातसे एक वर्षके पीछे सरकारी कार्यके लिये मुझको कोटे जानापडा मार्गमें नीमबहेडा भी देखलिया घोड़ेपर जानेसे नीमबहेडेसे हमीरका दुर्ग प्रायः एक घंटेका मार्ग है । टाडसाहबका आना सुनकर हमीर मिलनेके लिये आया, और उनको अपना सर्वश्रेष्ठ मित्र कहकर माना और खड्गको छूकर कहा कि “ मैं अपनी तलवारको छूकर शपथ करता हूँ कि मैं यथार्थ राजपूत हूँ, सदा ही आज्ञाकारी और राजभक्त रहूँगा । ”

नीय और राजका शुभ मूलक कार्य विना किये कोई पुरुष भी इस खालसा भूमिका थोड़ा अंश भी नहीं पाता था; उदयपुर राजधानीके निकट कुछ वीधे भूमि यदि कोई सामन्त वगीचा लगानेके लिये प्राप्त करलेता था तो वह अपने आपको महा संन्मानित समझता था । जिस अर्थचन्द्राकार उपत्यकाके बीचमें उदयपुर राजधानी विराजमान है, उसमें कोई ग्राम किसी सामन्त वा किसी उच्चपदस्थ व्यक्तिको किसी विशेष क्षति पूरणके लिये ही दिया जाता था । किन्तु राणा भीमसिंह इतने हिताहित विचारशून्य दाता थे कि कुछ अधिक वारह कोश परिधियुक्त इस खालसा भूभागमेंसे एक ग्राम भी राजभुक्त न रखगये, अर्थात् उन्होंने सब ग्राम ही वृत्तिरूपसे अनेक व्यक्तियोंको देदिये ।

इस भूभागके कारण, सीमान्तवर्ती पहाड़ी जातिके उपद्रवसे और मुगल, पठान, महाराष्ट्रियोंके आक्रमणसे सामन्तलोगोंको बराबर युद्धमें संलिप्त रहना होता था । अर्थात् वीर सामन्तगण प्रायः सदा ही किसी न कीसी कारणसे भूवृत्तिके बदलेमें सेनासहित राणाके अधीनमें नियुक्त होनेको बाध्य होतेथे ।

सम्पूर्ण प्रदेश जिले २ में विभक्त हैं; पचाससे सौ वा किसी स्थानमें इससे अधिक संख्यक नगर और ग्राम लेकर एक २ जिला बनाया गया है । सम्पूर्ण उपविभाग “चौरासी” नामसे विख्यात हैं । आजतक बहुतसे उपविभाग “चौरासी” नामसे कहाते हैं; जिहाजपुर और कमलमीरके “चौरासी” उपविभाग अवतक विराजमान हैं । कर्नेल टाड कहतेहैं कि “हमलोगोंका स्यक्सन पूर्वपुरुषोंके समयमें सैंकड़ों ग्राम नगर मिलकर एक २ विभाग बनाया जाता था ।”

मेवाडराज्यके चारों ओरके विभिन्न स्थानोंमें एक २ सीमान्तरक्षक नियुक्त हैं और निकटवर्ती सामन्तमंडलीके सैनिक उस रक्षकके अधीनमें रहकर रक्षा करते हैं । राणा स्वयं उन सामन्तरक्षकोंको नियुक्त करते हैं और वह कई राजकीय चिह्न पताकाका व्यवहार, मान्यसूचक वाजे और घोसक दूत रखनेके अधिकारी हैं । सर्वसाधारणमें वह दीवानी राजपुरुष रूपसे गिने जाकर सामरिक कार्यके साथ २ विचारासनपर भी बैठते हैं । * उच्च श्रेणीके सामन्तगण किसी समय भी स्वयं उस सीमान्तमें उपस्थित नहीं होते, केवल अपनी सेनाके साथ अपने परिवारके

* कर्नेल टाड लिखगयेहैं कि “प्रत्येक सामन्त अपने २ अधिकृत प्रदेशमें इस समय दीवानी विभागके प्रत्येक मुकदमेकी विचार क्षमता चलानेके लिये दावेदार हैं; किन्तु फौजदारी अपराधका विचारभार राणाकी विशेष अनुमतिके बिना नहीं दिया जाता । जितने भूस्त्व सम्बंधी दीवानी अभियोग हैं, वह सब प्रायः स्वतः सृष्ट विचारालय अर्थात् पञ्चायतोंके द्वारा ही विचारित होतेहैं।

से अपने दिन बिताया करते हैं, उन लोकहितकारी भले मनुष्य किसानोंकी अवस्थाका संक्षेपसे विचार करना हमको बहुत ही उचित जान पड़ता है । इस विचारके साथ हम उनका अतीत और वर्तमान चित्र पाठकोंके सामने रखकर अपनी बुद्धिके अनुसार उनके अधिकार अनधिकारका विचार करेंगे ।

मेवाडराज्यमें किसान ही भूमिका अधिकारी होता है । मेवाडकी भूमिमें उनका जो अधिकार है उसको वह लोग अपने देशमें उत्पन्न हुए अमरधव* के साथ उपमा दिया करते हैं । उस अमर तृणकी समान वह अधिकार भी दृढ और अमर होता है; भाग्यकी अदल बदलसे भी उस अधिकारमें कुछ अंतर नहीं आता । वे किसान लोग अपनी भूमिको (वापोता) नामसे पुकारा करते हैं । उनकी मातृभाषामें पैतृक अधिकार समझानेके लिये इस वापोताके अतिरिक्त और कोई शब्द अति प्राचीन, अति शुद्ध अति भावपूर्ण और अत्यंत तेजयुक्त नहीं समझा जाता । यदि कोई स्वार्थी और अभिमानी राजा उनके इस पुराने अधिकारको छीनना चाहता है; तब वह भगवान मनुजीके अमृतमय वाक्योंको उच्चारण करके गंभीर कंठसे कह उठते हैं कि “ जिन्होंने वनको काट छांट कर खेतोंको साफ किया और जोता, वह भूमि उनकी ही है ” × जवतक संसारसे प्रेम करनेवाले व्यवस्थाकारोंके ऊपर भगवान मनुजीका नाम विराजमान रहेगा, जितने दिन तक उनकी बनाई हुई विधिका एक सूत्र भी इस जगतमें व्यवहार किया जायगा, उतने दिनतक कभी कोई इस अमृतमय वाक्यको नहीं भूल सकेगा । उतने दिनतक हजारों लडाईं झगडे होनेपर भी हिंदू जातिकी यह पुरानी रीति कभी भी नहीं उठेगी । इस विधिके अनुसार ही मेवाड—केवल मेवाडके ही क्यों समस्त राजस्थानके रहनेवाले अत्यंत प्राचीन कालसे कहते हुए आये हैं कि, ‘ भोगराधनीराजहो; भोमराधनी माछो, । अर्थात् राजभागका (राजकरका) अधिकारी है; परंतु भूमिके अधिकारी हम हैं । भगवान मनुजीके समयसे हिंदु-

* अमरधव नामक तिनका सब ऋतुओंमें एक सा रहता है । विशेष करके प्रचंड धूपके समय इसकी सजीवता अधिकाईसे दिखाई देती है । यह केवल अमर ही नहीं है वरन इसको अक्षय कहा जाय तो भी ठीकही होगा । पृथ्वीके साथ अछेद सम्बन्ध होनेके कारण राजपूत किसानलोग इससे अपने भूम्यधिकारकी बराबरी किया करते हैं ।

× भगवान मनुजीने पुरुषके शुक्रन्यासका कर्तव्याकर्तव्य विचारने और न्यस्त शुक्रजाति संतानके ऊपर न्यास कर्त्ताका अधिकार अनधिकारका विषय विधान करनेके समय कहा है, “ स्थानुः—च्छेदस्य केदारम् ” जो आदमी जंगल काटकर खेत तइयार करे वह खेत उसका ही है । ”

इस श्रेणीमें शाहपुरा और वनेडाके राजगण प्रबल क्षमताशाली हैं । प्रधान २ सामन्तोंकी समान राणाके साथ इनकी किसी प्रकारकी अधीनता सूचक व्यवस्था न होनेपर भी वह अपनेको राणाके अधीन समझकर राणाकी आज्ञा पालनेके लिये यथा समयपर अग्रसर होते हैं । यह राणाके बहुत ही अनुगत हैं । इस समय श्रेणीमें राणाके अति निकट आत्मीयके अतिरिक्त दूसरोंने भी पोष्य पुत्र ग्रहणकी क्षमता पाई है, पहिले यह क्षमता विलकुल नहीं थी । इस श्रेणीमें किसीके अपुत्रक अवस्थामें प्राण त्याग करनेपर पहिले समयके राणा ही उनकी सब भूवृत्ति लेलेते थे ।

ऊपर लिखित सामन्तश्रेणीसे लेकर एक चरिस्ता परिमित भूमिके अधिकारी तक प्रत्येकके ऊपर किसप्रकारका कार्य्य समर्पित है और कैसी विधि व्यवस्थासे उनको भूवृत्ति दीगई है, इतिहासलेखक टाड इस स्थानपर उसीका वर्णन करगयेहैं । ×

राजकीय स्वत्व और राजधन ।—मेवाडेश्वरके राजस्वके प्रधान २ अङ्गोंका केवल स्थूल २ विवरण यहां लिखतेहैं, विशेष विवरण यथोचित स्थानपर लिखा जायगा । खालिसा भूमिका करही राणाकी प्रधान आय है; उसके पीछे व्यवसाय, वाणिज्यशुल्क और प्रधान २ नगर और बाजारोंका कर आताहै । पहिले राणा लोग राजस्वके इस विशेष प्रयोजनवाले अङ्ग बाजारके ऊपर अधिक दृष्टि देते थे, और उस समय कर अधिक न होनेसे वाणिज्य द्रव्य भी बहुतायतसे आते थे । राणागण व्यापारियोंके ऊपर बहुत न्यून शुल्क निर्धारण द्वारा बड़ी लुंची उदारता दिखाते थे, इधर व्यापारी भी निर्धारित करको प्रसन्न चित्तसे देते थे । परस्परके सदाचरणसे ही विश्वास और प्रीति बढ़ती थी । कर्नेल टाड जिस समय मेवाडके वाणिज्य विस्तारके लिये विशेष यत्नशील हुए थे, उस समय राणाके साथ पूर्वोक्त भावका बहुत ही अभाव था; वाणिज्य शुल्क अधिक परिमाणसे लिया जाता था, इससे व्यापारी लोग विरक्त होगये थे, और वह शुल्कसंग्रहकी रीति भी बहुत बुरी थी । उस समय एक व्यापारीने कर्नेल टाडसे आकर कहा, “ हमारे पूर्वपुरुष सीमापर स्थित प्रथम वाणिज्य करके अधिकारीसे वाणिज्य सनदपत्र लेकर बैलके सींगपर लगा देते थे, (क)

× कर्नेल टाडके समय मेवाडमें जो भूकर शुल्कआदि प्रचलित था, इस समय उसका कोई २ अंश बदल गयाहै ।

(क) रजवाडेके भीतर व्यापारकी चीजें लेजानेके लिये बैलगाडी व्यवहार की जातीहैं; वेदेशिक वाणिज्यमें ऊंट नियुक्त होतेहैं ।

तब अपनी जमीनको जोत सकता है, उसकी भूमिके ऊपर कभी कोई पैमायशकी लकड़ी न डालसकेगा या उसमेंसे किसीको किसी प्रकारका कर न मिलसकेगा । न कोई कर लगाने पावेगा । तथापि वह अपने दिये हुए करसे इस बातको प्रमाणित करते हैं कि हम सार्वभौम राजाके अधीन हैं । राणाजी परोक्षमें इन भूमियां किसानोंसे अनुकूलता पाया करते हैं; परन्तु ब्रिटिश प्रभुताके स्थापन करनेके समय जब मेवाडभूमिने बहुत दिनोंके पीछे शांतिका सुख प्राप्त किया तब उस समय वहांके मौजोंमें उसकी रक्षा अरक्षाका कोई विचार न हुआ, उस समयसे राणाजी ने पूर्व करसे उनको छुटकारा देकर उन भूमियां लोगोंको साधारण बेतन-भोगीकी समान देशकी शांति, रक्षा अथवा सैनिक पदपर नियत करना आरंभ किया ।

वापोताके ऊपर राजपूत किसानोंका अधिकार कहांतक दृढ़ है और वह लोग कैसी दृढताके साथ उस पर अधिकार किया करते हैं; इस बातको हम कई एक पुराने प्रमाणोंसे प्रमाणित करेंगे । जिस समयमें मन्दौर नगर मारवाडकी राजधानी गिनाजाताथा । उस समय कोई गिहौट राजकुमार एकदिन मारवाडकी राजकमारीको विवाहनेके लिये चला । राजपूतोंमें ऐसी रीति चली चली आई है कि यदि कोई नया जामाता विवाहकी रात्रिमें कन्याके पितासे दहेजमें कोई सम्पत्ति मांगे, तो वह उसको अवश्य ही देनी पडती है । इस रीतिने राजस्थानमें बहुत ही अनर्थ किये हैं । तदनुसार उस नए गिहौट राजकुमारने मेवाडमें बसानेके लिये अपने मंत्रीके परामर्शसे दश हजार जाट जो कि किसानीका काम करते थे अपने स्वशुरसे मांगे । इस अद्भुत दहेजका मांगना सुनकर मारवाडके राजाको आश्चर्य हुआ, परन्तु जामाताकी प्रार्थनाको पूर्ण तो करना ही होगा । इसकारण उन्होंने आज्ञा दी कि दश हजार जाटोंको इस देशसे जाना पडेगा । इस आज्ञाको सुनते ही जाट-किसान लोग अत्यन्त घबडाये और मंहारोंजकी आज्ञा पालन करनेको किसी प्रकार सम्मत न हुए । अनन्तर जब राजाने बहुत ही कडाई की तब सबने इकट्ठे होकर एक साथ कहा;—“क्या हमलोग अपना बपोता और अपने पुत्रोंकी सम्पत्ति छोडकर एक अपरिचित मनुष्यके लिये परिश्रम करनेको उसके साथ परदेशमें जाँय ? महाराज ! आप अपनी इच्छानुसार हमारा वध करा सकते हैं; परन्तु प्राण रहते हुए हमलोग बपोतेको नहीं छोड सकते ।” मन्दौरके राजाने पहिले ही समझ लियाथा कि जाटलोग इसमें यह आपत्ति उठावेंगे। जाटोंके असम्मत होनेसे यद्यपि

विवाह कर। यह सब और और अन्यान्य कई प्राचीन और आधुनिक कर संग्रहीत होते आते हैं। युद्धका कर इस समय प्रजासे संग्रहीत नहीं किया जाता। पूर्व-कालमें सदा ही युद्धविग्रह उपस्थित रहते थे, इस कारण उसी कालसे अर्थसंग्रह भी राणाके लिये अत्यंत आवश्यक होगया था। शान्तिके समय जिस प्रकार खेतीके उत्पन्न द्रव्योंका परिमाण स्थिर करके करलिया जाता है युद्धके समय शीघ्रताके कारण उस प्रकारका परिमाण स्थिर असंभव और राणाके लिये सुवीता जनक न होनेके कारण ही, अनुमानके ऊपर निर्भर करके उक्त सामरिक कर संग्रहीत होता था। पहाड़ी प्रदेशोंमें यह कर निर्धारण ही अधिक सुवीतका है, क्योंकि राज्यमें प्रचलित नियमानुसार अन्नका परिमाण देखकर वहां कर ग्रहण करना सर्वथा असंभव है। पहाड़ी प्रदेशमें पृथ्वीके परिमाणके अनुसार अन्न उत्पन्न नहीं होता, इस कारण अनुमानके ऊपर निर्भर करके कर लेना आवश्यक होगया है।

किसी सामंत वा सरदारके नवीन अभिषेकमें अथवा किसी सरदारके पद परिवर्तनके समय सामन्त वा सरदार लोग राणाको जो नजर भेंट करते हैं, वह सामान्य होनेपर भी एक आयका उपाय कही जासक्ती है। इसके अतिरिक्त भूमिया सरदारगण निर्धारित नियमानुसार वार्षिक वा त्रैवार्षिक राजधन देते हैं। नियमादि भङ्गकारी और अन्यान्य अपराधियोंके ऊपर जो अर्थ दण्ड होता है, वह भी आयमें गिना जासकता है। कर्नेल टाड लिखगये हैं कि, राणा-लोग अपराधीके पकड़ने और दण्ड देनेमें विशेष यत्न करें तो इस आयके अधिक वृद्धि होनेकी संभावना है।

दण्ड विधानके अनुसार कठोर दण्ड देनेमें राणालोग अनिच्छा दिखाते हैं। अपराधियोंको प्राणदण्डकी अपेक्षा अर्थदण्ड देनेमें अधिक लाभकी संभावना है क्यों कि अपराधीलोग विशेष करके पहाड़ी जाति कायदण्डकी अपेक्षा अर्थदण्ड वा संपत्तिक्षयको बहुत भारी मानती है। प्राणका मोह किसको कहते हैं? वीर राजपूत-जाति और पहाड़ी जाति इसको बहुत कम जानती है।

खड लकड़।—कर्नेल टाड लिखगये हैं कि इसके द्वारा यथेष्ट धन संग्रहीत होता है। बहुत काल पहिलेसे ही यह काष्ठ और खडका कर चला आता है। जिस समय राणालोग महल छोडकर युद्धक्षेत्रमें सेनासहित अवतीर्ण होते थे, उस समय प्रत्येक अधिवासी राणाकी सेनाके व्यवहारके लिये काष्ठ और खड देनेके लिये

भलीभांति ज्ञात होजायगा कि पटैल शब्द संस्कृत पति शब्दसे उत्पन्न हुआ है । मेवाडवाले ठीक ऐसेही अर्थमें इसका व्यवहार किया करते हैं । पूर्वकालमें निर्वाचनके सिवाय पटैलका और कोई कर्त्तव्य नहीं था । गांवमें वह सबसे अच्छा गिना जाता था । राजाके यहां गांवका प्रतिनिधि तथा किसान और राजाका मध्यस्थ भी पटैलको ही समझते थे । इस कारण राजा, प्रजा, दोनोंमें पटैलजीका सन्मान था । पटैलके पास वापोता भी होता है, तथा किसान जो धान्य उत्पन्न करता है, उसका चालीसवाँ भाग भी उसको मिला करता है । राजाकी ओरसे एक कृपा उसपर और भी की जाती है । अपने वापोताके अतिरिक्त वह जिस जमीनको जोतता है, राजाज्ञाके द्वारा, वह उसपर नियत हुए करके तीसरे अंशसे भी छुटकारा पाजाता था । इस प्रकार मेवाडभूमिके पटैलोंका कर्त्तव्य निश्चय किया गया । पटैल ही राजा और किसानको एक बन्धनमें जोड़ सकता है । किसानोंका प्रतिनिधि, ग्रामीण समाजका अगुआ पटैल ही है । राजा पटैलके द्वारा ही असामी किसानोंकी अवस्थाको जान लिया करता है । महाराष्ट्रियोंके कठोर अत्याचारसे मेवाडकी भाग्यतरंग जब दूसरी ओरको फिरी थी, उससे पहिले, स्वाधीनकी लीलाभूमि मध्यपाटक्षेत्रमें पटैलोंकी ऐसी ही सामर्थ्य थी । परन्तु जैसे २ महाराष्ट्रियोंकी लूट खसोट बढ़ने लगी उसहीके साथ पटैल लोग भी अपनी सामर्थ्यको बढ़ाते गये और यहांतक बढ़े कि फिर तो गांवमें जो कुछ थे सो पटैलही थे । महाराष्ट्रीलोग जो कर किसानोंपर लगाते थे उसको यही वसूल करते थे और कभी २ यही लोग जामिनकी भांति उन दुष्टोंके डेरोंमें पड़े रहते थे । शत्रुओंने जितनी बार चढ़ाई करके मेवाडवालोंसे कर मांगा, उतनी ही बार पटैलोंने आनन्दसे उस करको भुगताना किया । प्रगटमें तो पटैल लोग अपनेको किसानोंका प्रतिनिधि बताते थे, परन्तु अवसर पाते ही विचारे किसानका नाश करदेते थे । अगणित किसान लोग पटैल लोगोंका ही भरोसा करके निश्चिन्त रहते थे, परन्तु लालची पटैल मौका पाकर उन्हींकी सम्पत्तिसे अपना पेट भरते थे । पठान या महाराष्ट्रीलोग जिस समय चढ़ाई करते थे उस समय पटैलोंकी, पौवारह होती थी । सबसे पहिले तो वह अपनी रक्षाका उपाय सोचते थे तथा किसानोंका सत्यानाश करके अपनी गोडी-बनालेते थे । पहिले तो वह किसानोंसे रुपया ही लेते थे,—रुपया न मिला तो उनकी जमीन तथा जमीन भी हाथ न लगती थी तो उनके वरतन भांडे गिरों रखकर अपना काम चलाया करते थे । इस प्रकारसे जब-

तैंतीसवां अध्याय ३३.

व्यवस्था और विचार विभाग;—रोजाना भूवृत्ति प्राप्त सामन्त
वा सरदारोंका सामरिक कर्त्तव्य निर्णय;—शासन प्रग-
लीकी अपूर्णता;—पाटवतोंका कर्त्तव्य कर्म ।

कूर्नेल टाड मेवाडके जिस समयका इतिहास लिखगये हैं, इस समय समयपरिवर्तनके साथ उस शासन विभागके सामान्य २ विषयोंमें कुछ २ रूपान्तर होगया है । टाड साहब मेवाडके जिस समय तकका इतिहास लिखगयेहैं, हमने उससे आगेके समयका इतिहास यथोचित स्थानोंमें लिख दियाहै; उसके पठनेसे पाठकोंको यह अवश्य ही विदित होजायगा कि, मेवाडेश्वर राणाके साथ अधीन सामन्त मण्डलीके सम्बन्ध बन्धनका इस समय कितना रूपान्तर होगयाहै । इस समय हमको उस रूपान्तरका पुनरुल्लेख न करके कर्नेल टाडका अनुसरण करना ही उचित ज्ञात होता है ।

इतिहासलेखक लिखगयेहैं कि, जिस समय मेवाडने धन, मान, गौरव व वीरता विक्रममें बहुत ऊंचा स्थान पाया था, जिस समय राणालोगोंके प्रबल प्रतापसे मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें पूर्णरूपसे शान्ति विराज रही थी, उस सुखमय समयमें राणागण व्यवस्थापक सभामें चार प्रधान मंत्री और उनके सहकारी मंत्रियोंके साथ बैठकर, साधारणत्व निर्णय और प्रजाके सम्पूर्ण अभाव दूर करनेके लिये प्रयोजनीय विधि व्यवस्थाओंकी रचना किया करते थे । केवल दीवानी कर्मचारियोंके सिवाय सैनिक सामन्तमण्डली भी उस व्यवस्थापक सभामें प्रवेश नहीं करसकती थी ।

मेवाडकी पतन दशामें—जिस समय राज्यके चारों ओर ही विशृंखलता होरही थी, जिस समय शान्तिदेवी एक साथ अन्तर्द्धान होगई थीं, जिस समय राजशासन शक्ति बहुत दुर्बल होगई थी, उस समय व्यवस्थापन और विचार विभागका कार्य प्रायः रुक गया था, किन्तु सन्तोषका विषय है कि, स्थानीय प्रयोजन संबन्धी सब व्यवस्थाके कार्य उन स्थानोंकी स्वयं सिद्ध विचारालय पञ्चायत

लोग फिर अपने देशमें आते और उन खेतोंसे सुवर्णमय फल उत्पन्न किया करते थे; पटैलोंके घरमें फिर घीकी कड़ाही चढ़ जाती थी, किसानोंके साथ फिर उनका वही वर्ताव होजाताथा । विचारे किसानोंको देशमें लौटनेपर भी शांति नहीं मिलती थी । पिशाचरूपी पटैलोंके घोर अत्याचारसे किसानोंका जीवन दुःखमय होजाताथा । इस प्रकार दुःखके ऊपर दुःख पाकर मेवाडका कृषक कुल निर्मूल होने लगा; मेवाडकी सुख शांति नष्ट हुई । धीरे २ सभीलोग इस बातको जानगये कि पटैललोग मेवाडके सुखरूपी सूर्यके लिये छद्मवेशी राहुहैं । सभी समझगये कि बिना शत्रुको पराजित कियेहुए देशका मंगल न होगा । परन्तु शत्रु अभी पराजित होंगे कि जब इन पटैलजीका मेवाडसे नामतक लोप होजाय । परन्तु यह कार्य कुछ सरल न था । क्योंकि बहुतसे बड़े राजकर्मचारी उन लोगोंकी तरफदारी करतेथे । उनको पदच्युत करनेसे बड़ों २ के स्वार्थमें आघात लगेगा । और वह लोग पटैलोंकी तरफदारी करनेके लिये राज्यमें अशांतिका बीज बोवेंगे ।

जिस समय दीन जन हितकारी टाडसाहबने किसानोंकी दुर्दशाका यह वृत्तांत सुना, वह तत्काल उस विपत्तिको दूर करनेके लिये तैयार होगये । प्रथम तो उन्होंने सब प्रकारसे पटैलोंकी अवस्थाका विचार करदिया । मेवाडके पुराने इतिहासको विचारमेंसे उनको ज्ञात होगया, कि गाँववाले लोभी पटैलोंको चुना करते थे । वह लोग एकमत होकर जिसको चाहतेथे उसको पटैल बना दिया- करते थे राजा भी उसीको स्वीकार करके पटैलकी सनद देदेता था । तदनुसार मेवाडमें इस समय वही रीति चलाई गई । मेवाडवालोंने एकसाथ परामर्श करके उसको ही निर्वाचित किया । राणाजी भी उसीको मंजूर करते और सबके सामने उसके शिरपर पगिया बाँधवाकर पटैलका पद देते थे । निर्वाचित हुआ नया आदमी राजाको “नजर” देकर नये पदपर विराजमान होजाताथा । पटैलका उहदा पहले बिका करता था । राजा कुछ बाँधाहुआ धन लेकर चाहे जिसको पटैल बना दिया करतेथे, ऐसा करनेसे राज्यका अत्यंत अमंगल होताथा कहीं वही रीति इस समयमें फिर न चलजाय उसको रोकनेके लिये टाडसाहबने उत्तम प्रबंध करलिया । उन्होंने राणासे प्रतिज्ञा करा ली, जिसमें राणाजीने यह कहा था “ कि पटैलके चुनावमें हम कभी दखल न देंगे और न उनके साथ कोई गुप्त सलाह की जायगी । ”

किसी प्रकारका अधिकार नहीं था ।” वह ऊपरके प्रस्तावको पढ़कर क्या फिर ऐसा कहेंगे ? वर्तमान सभ्य जगत्में समाजसृष्टिके बहुत काल पहिले भारतवर्षकी साधारण प्रजाको शासन विभागके अनेक विषयोंमें जो शक्ति थी, इतिहासके पढ़नेवाले उसको भलीभाँति जानते हैं । केवल तबही नहीं अब भी भारतके अनेक प्रान्तोंमें इस प्रकारकी पञ्चायत शैली विराजमान है । एक समय बङ्गदेशमें भी पञ्चायती शासन प्रचलित था—उत्तरप्रान्तमें अबतक है दुर्दान्त यवनोंके शासनमें भी उस रीतिका कुछ व्यत्यय नहीं हुआ था । बङ्गालमें ब्रिटिश शासन जैसे प्रबल प्रभुत्व विस्तार कर रहा है, भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमें—भारतके देशी राजोंके अधिकारमें वैसा प्रभुत्व विस्तार नहीं कर सका । प्रबल प्रभुत्व विस्तारके साथ ब्रिटिश शासनने प्राचीन पञ्चायत प्रथा भी एक साथ लुप्त कर दी है । इस कारण स्वदेशमें उस पञ्चायत प्रथाका दीर्घकालसे अभाव देखकर ही बहुतोंको विश्वास होगया है कि “विचार वा शासन विभागमें पहिले भी हमारी कुछ क्षमता नहीं थी ।” यद्यपि ब्रिटिश गवर्नमेंटने इस समय भारतके अनेक स्थानोंमें इस देशवालोंको अवैतनिक विचारक (मजिस्ट्रेट) और जूरी पदपर स्थापन करनेकी विधि बना दी है, किन्तु प्राचीन पञ्चायतके साथ तुलना करनेपर इसका फल बहुत सामान्य ज्ञात हुआ जो लोग भारतसे शासन रीति सिखकर मनुष्यनामसे गिने गये हैं—इस समय वह लोग ही भारतके नेता बनकर उस भारतकी प्राचीन प्रथाके स्थानमें नवीन प्रथा प्रचलित कर रहे हैं ! कालकी क्या ही विचित्र गति है ! जो जाति एक समय जगत्की शिक्षक थी, उस जातिको इस समय अन्य जातियों शिक्षा दे रही हैं ? कालचक्रकी अधीनतामें ही यह परिवर्तन होता है, कौन कहसकता है कि, उस कालचक्रके अधीनमें अब फिर परिवर्तन न होगा ।

टाड साहब लिखते हैं कि, पूर्वकालमें चबूतरें अर्थात् विचारालय केवल खालिसा जमीन अर्थात् राणाके अधिकृत भूखण्डमें ही स्थापित होती थी । किसी सामंतके आधीनवाले देशमें वैसे विचारालयका अधिवेशन होनेपर, सामंत लोग उसके द्वारा अपनेको बहुत ही कलङ्करूप समझते हैं । सामन्त वृन्द यद्यपि राणाके अधीन हैं, किन्तु वह अपने अपने देशमें विलकुल स्वाधीनता भोगते हैं, इस कारण शत्रुओंका आक्रमण निवृत्त करनेके लिये राणा यदि किसी सामन्तके अधिकृत देशमें छावनी स्थापनके कारणसे, वा बाणिज्य शुल्क संग्रहके लिये राजपताका स्थापन करें, तो सामन्त लोग उससे अपने लिये अपमानित समझते

होगा कि यह सब संस्कार अमूलक और भ्रमयुक्त हैं । कारण कि अधिकांश किसान लोग वर्णज्ञान हीन होनेके कारण राज्यविधिको किञ्चित भी नहीं जानते हैं । राजकर्मचारी ही अपना मतलब सिद्ध करनेके लिये उनको भय दिखाते और अनेक प्रकारके अत्याचार करते हैं; उनका प्रतिनिधि पटैल भी अपना पेट भरनेके लिये तइयार होकर किसानोंके सुखदुःखको नहीं विचारता । यही कारण है जो किसानगण कष्टके मोरे उन नरपिशाच कर्मचारियोंकी पूजा करते हैं । मूल बात तो यह है कि किसानोंको कहीं पर भी सुख नहीं है । जबतक वह स्वयं विद्याको न सीखकर स्वयं अपनी रक्षा न कर सकेंगे तबतक कि सी प्रकारसे उनका मंगल नहीं होगा । हाय ! वह दिन कब आवेगा ? वह समय कब आवेगा कि भारतके किसान लोग अज्ञानरूपी अँधेरेसे छुटकारा पाकर स्वयं अपनी अवस्थाको समझजायेंगे ?—वह कौन सी घड़ी होगी कि जब जमींदार और प्रजाकी विषमता जडसे उखडजायगी ? वह कौन सा युग होगा कि जिस दिन भारतके भ्रातागण ऐक्यताके पवित्र मंत्रसे दीक्षित होकर परस्पर एक दूसरेको हृदयसे लगाय जातीयबलको इकट्ठा करेंगे ? क्या वह दिन आवेगा ? रुधिरकी प्यासी कूट सामाजिक और राजनैतिक विषमता जब उठ जायगी ?—कह नहीं सकते ।—परंतु आशा होती है कि—गिराहुआ भारत फिर उठेगा । भारतवासीगण इस जमींदार और प्रजाकी घोर विषमतासे छुटकारा पाय एक साथ ऐक्यताके सुखको अनुभव करेंगे । हमको आशा है कि फिर कोई शाक्यसिंह और गुरु गोविंदसिंह उत्पन्न होकर ऐक्यताकी विजयदुंदुभीको बजाय;—जन्मभूमिका दुःख दूर बहाय;—इस असार संसारमें प्राणोत्सर्ग और देशानुरागका प्रचंड प्रमाण दिखावेंगे ।

जिस दिन परम हितकारी ब्रिटिश गवर्नमेंटने मेवाडके दग्ध हृदयपर शान्तिका जल छिडका उसही दिनसे मेवाडकी अवस्था उन्नत वा अवनत होनेलगी, उस बातका विचार करना इस समय हमारा मुख्य कर्तव्य है । अतएव आगे उसहीका विचार कियाजाताहै । फरवरी सन् १८१८ ई० से मई सन १८२२ ई० तक मेवाडमें जिस शासन विज्ञापनका प्रचार हुआ था, उसका पाठ करनेसे स्पष्ट ही समझमें आसकताहै कि मेवाडकी दशा बहुतायतसे उन्नतिपर पहुँचीहै । मेवाडकी यह उन्नति किस प्रकारसे हुई उसका निश्चय करनेके लिये सन् १८२१ ई०के शेष भागमें मेवाडके मऊ, वरक और कुपाशन इन तीन जनपदोंकी मनुष्यगणना कीगई थी । दूसरे अंशोंको छोडदेने पर केवल नगरविभागको ही ग्रहण करनेसे

निर्णय करतेहैं, अपनी इच्छानुसार किसी कार्य करनेमें अग्रसर नहीं होते । मेवाडके राजनैतिक किसी गूढ़ प्रश्नके उपस्थित होनेपर सबसे पहिले प्रत्येक सामन्त अपनी २ सभामें उसका विशेष आन्दोलन करके यह निश्चय करलेते हैं कि राणाकी सभामें कैसा मन्तव्य प्रकाशित करना उचित है, इसके अनन्तर प्रधान सभामें जाकर प्रत्येक सामन्त युक्ति और प्रमाणसहित अपना २ मन्तव्य सूचित करदेते हैं ।

यदि किसी सामन्तको उपरोक्त मंत्रणा सभामें स्थान न मिले तो वह अपनेको महा अपमानित समझता है । उस महासभामें उक्त श्रेणीके प्रश्नके आन्दोलन और समालोचनासे सामन्तोंके द्वारा जो मन्तव्य दियाजाताहै, वह सामान्य नहीं होता । मेवाडेश्वर राणा राज्यशासनके लिये जिस प्रणालीसे सभा स्थापन और कर्मचारी नियुक्त करते हैं, सामन्त मण्डली भी उसी रीतिपर अपने २ अधिकृत प्रदेशोंमें पुरातन कालसे उसी प्रकार सभा और कर्मचारियोंको नियुक्त करती चली आतीहै । सामन्तके अधीनमें स्थित सरदारगण, प्रधान राजस्व-कर्मचारी, पुरोहित, कवि और दो तीन प्रजाके प्रतिष्ठित लोग प्रत्येक सामन्तकी सभामें एकत्रित होकर साधारण गंभीर प्रश्नके विषयमें मतवाद संगठन करतेहैं । राणा स्वयं जिस प्रकार अपने मंत्री और सभासदोंके साथ उस श्रेणीका प्रश्न लेकर आन्दोलन करनेमें नियुक्त होते हैं, सामन्तगण भी उसी प्रकार आन्दोलन करके अपना २ मन्तव्य स्थिर करतेहैं, अन्तमें महासभामें जाकर सब पृथक् २ मन्तव्य प्रगट करदेतेहैं । इस प्रकार प्रत्येक राजनैतिक अनुष्ठान वा साधारण कार्य विशेष आन्दोलन और तर्कवादके पीछे राणा द्वारा निर्धारित होताहै ।

उपरोक्त वाक्य हमारे हृदयपर किस भावका आविर्भाव करतेहैं ? अब कौन कहेगा कि भारत चिरकालसे यथेच्छाचार शासनद्वारा शासित होता आताहै ? वर्तमान सभ्य जगत्में पार्लियामेंट महासभा वा साधारण तंत्र सभा स्थापनके बहुतकाल पहिले रजवाडेमें साधारण मतवादके ऊपर ही सब कार्य निर्भर रहते थे । इसके द्वारा क्या वह निःसंदेह रूपसे प्रतिपन्न नहीं होताहै ? अनेक अंग्रेजोंका विश्वासहै कि—“भारतमें अब भी स्वाधीन मतवादकी उत्पत्ति नहीं हुई ।” हम कहतेहैं कि यह उनकी भलहै । चाहे जातीय समस्त शक्ति लुप्त होजाय, जातिव्य विन्दुमात्र भी न हो, परन्तु जहां मनुष्य है; वहां साधारण मतवाद चिरकालसे अवस्थान करता आता है । असभ्य जंगली जातिमें भी साधारण मतवाद बहुत कालसे विराजमान है । जिस देशमें साधारण मतवादके ऊपर राजा

वासन्तिक धान्य	सन् १८१८ ई० का	४००००) रु०
" "	" १८१९ ई० का	४५१२८१) रु०
" "	" १८२० ई० का	६५९१००) रु०
" "	" १८२१ ई० का	१०१८४७८) रु०
" "	" १८२२ ई० का	९३६६४०) रु०

पिछले दो वर्षोंकी एजंट साहबने कुछ विशेष देखभाल नहीं की थी, तथापि यह बड़ी आमदनी हुई थी ।

पूर्वोक्त पांचवर्षोंमें जो आमदनी वाणिज्य करसे हुई थी, उसकी सूची भी नीचे लिखी जाती है ।

" सन् १८१८ ई०	नाममात्र आमदनी । (कुछ थोड़ी)
" १८१९ ई०	९६६८३) रु०
" १८२० ई०	१६५१०८) रु०
" १८२१ ई०	२२००००) रु०
" १८२२ ई०	२१७०००) रु०

ऊपरकी जो दो सूची लिखी गई यदि उनका मिलान मेवाडकी पूर्वावस्थाके साथ किया जाय तो साफ मालूम होजायगा कि अंगरेज एजेन्टकी सहायतासे राणाजीने भलीभांतिसे अपने देशकी दशाका सुधार कियाथा । खेती, शिल्प और वाणिज्यको एक ओर रखकर मेवाडभूमिकी उन धातु खानोंका विचार किया जाय कि जो पृथ्वीके नीचे छिपीहुई हैं; यदि उनका उचित व्यवहार हो तो थोड़े ही समयके बीचमें मेवाडभूमि नन्दन काननकी समान शोभायमान होस-ती है । ५० वर्षसे कुछ पहिले जावडा और दुरेवाड*की टीन खानिसे ही प्रतिवर्ष ३०००००) रु० की आमदनी होती थी । इसके अतिरिक्त मेवाडमें ताँबेकी खानी भी हैं । इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन खानोंसे मेवाडको बहुत सी आमदनी होती थी । परन्तु मेवाडके दुर्भाग्यसे खानोंके खोदनेवाले कालके गालमें चले गये ।

—भीलवाडा	"	०	"	"	२७०००
पुरा	"	२००	"	"	१२००
मंडल	"	८०	"	"	४००
गोसुन्द	"	६०	"	"	३५०

यह समस्त यह मनुष्योंसे भरेहुए थे ।

* संवत् १६१८में जावडाकी टीनखानिसे २२२०००) रु० दुरिवासे ८००००) रु० की आमदनी हुई थी । यहाँसे टीनके साथ थोड़ा रचांदी भी निकलती थी ।

बाध्य है । प्रधान २ सामन्त जिस प्रकार भूवृत्तिके वदलेमें राणाके निकट सेना भेजनेको बाध्य हैं, वह स्वयं भी उसी प्रकार अधीनके सरदारोंको भूवृत्ति देकर उनके निकटसे सेना संग्रह करलेते हैं । वर्तमानमें चारों ओर शान्ति विराजित होने और बाहरी शत्रुओंका भय विलकुल दूर होजानेसे भूवृत्तिके वदलेमें सेना भेजनी नहीं होती । इस कारण उस प्रथाका थोडा परिवर्तन होगया है मेवाड इतिहास वृत्तिके शेष अंशमें हमने यह विवरण लिख दिया है । इस कारण उसका यहां लिखना अनावश्यक है ।

भूवृत्ति प्राप्त होकर उसके वदलेमें सामन्तोंको कितनी सेना भेजनी होती थी, वह निर्धारित रीति बद्ध नहीं है । पृथक् २ देशके सामन्तगण भिन्न २ संख्याके अनुसार ही सेना रखते हैं । किंतु प्रत्येक सहस्र मुद्रा आयके लिये तीन वा दो से कम नहीं होते । इस प्रकार अश्वारोही सेनाके देनेकी व्यवस्था है । विशेष करके जिस समय सनद वा भूवृत्ति दीजाती है; उस समयकी व्यवस्थाके अनुसार किसी २ को तीन अश्वारोही और तीन पैदल प्रतिसहस्र मुद्रा आयके लिये देनेकी व्यवस्था है । भिन्न २ भूवृत्ति दानपत्रोंको पढकर ही पाठकगण इन भिन्न २ व्यवस्थाओंका विशेष विवरण जान सकेंगे । × इंग्लेण्डके राजा विलियमने * जिस समय अपना राज्य साठ हजार भागोंमें विभक्त किया था, उस समय प्रत्येक अंश प्रत्येक सेनाके लिये (२००) दो सौ रुपये देनेको बाध्य होतेथे, अर्थात् प्रत्येक सेनाके लिये गढमें इतने रुपये व्यय होते थे । जो विभक्त देश सेना उपस्थित न करसकता, उस देशको उपरोक्त धन देना होता था । मेवाडके प्रत्येक सेनापतिके ऊपर (२५०) ढाई सौ रुपये निर्धारित हैं ।

इंग्लेण्डमें सामन्त शासन रीति बहुत कालसे तिरोहित होगई है । किन्तु जिस समय वहां उक्त प्रणाली पूर्णरूपसे प्रचलित थी, उस समय राजा उक्त प्रकारके सेनादलके ऊपर सब समय क्षमता नहीं चला सकतेथे । एक वर्षमें केवल चालीस दिन प्रत्येक सैनिक राजकार्यमें नियुक्त होता था, अधिपतिके बुलानेपर स्वदेश वा विदेशमें जाकर संग्राम करना होता था । इस विषयमें रजवाडेके अधीश्वर भूतपूर्व इंग्लेण्डेश्वरोंकी अपेक्षा अधिक सुवीता संभोग और सामर्थ्य संचालन करते थे तथा करतेहैं ।

× परिशिष्ट-चौथी, पाँचवीं और छठी अनुलिपि देखो ।

* William the Conqueror.

अठारहवां अध्याय १८.

महाराणा जवानसिंह;—उनका चरित्र;—मेवाडकी शासन शृंखला, माहिरवाडाके सम्बन्धमें बृटिश गवर्नमेन्टके साथ राणाका नव सन्धि बन्धन;—राणाकी अपरिमित व्ययिता;—ऋण वृद्धि;—राजधनकी कमी;—बृटिश गवर्नमेन्टको कर देनेमें राणाकी असामर्थ्यता;—राणाके ऊपर कोर्ट आफ डाइरेक्टरकी अनुज्ञता;—राणा जवानसिंहका प्राणत्याग, राणा सरदारसिंह;—सामन्तोंके साथ उनका विवाद;—नवसंधि बंधन;—उदयपुरकी बृटिशसेनाके लिये राणाकी प्रार्थना;—उसमें अंग्रेज गवर्नमेन्टकी असम्मति;—राणा सरदारसिंहका प्राणत्याग ।

महाराणा भीमसिंहके औरससे पन्द्रह पुत्र उत्पन्न हुए; परन्तु एक मात्र कुमार जवानसिंहके अतिरिक्त और सभी असमयमें मृत्युको प्राप्त होगये, भीमसिंहके स्वर्गवासी होनेपर जवानसिंह ही मेवाडके राज्यसिंहासनपर सन् १८२८ ईसवीमें बैठे । आदिपुरुष बाप्पारावलके समयसे लेकर जो राणागण वीरता, विक्रम शूर वीरताका चमत्कार, जातीय स्वाधीनताकी रक्षा, स्वराज और स्वजातीयका गौरववर्द्धन तथा अपने जीवनका कर्तव्य कर्म प्रकाश करगये हैं; जो उस कर्तव्यके पालन करनेमें एक मुहूर्तमात्रको भी शान्त नहीं हुए, जिन्होंने अपने प्राणोंकी भी बाजी लगादी थी, मेवाडकी हीन दशामें वही राणाओंके वंशधर आलस्य तथा विलासिताकी दासत्व शृंखलाको धारण कर एक साथ ही उसके विपरीत आचरण करनेमें प्रवृत्त होगये । महाराणा भीमसिंहने सबसे पहिले इस प्रकार विलासिताकी उपाधि ग्रहण करनेमें कुछ भी लज्जा न की, उनके पुत्र नवीन राणा जवानसिंह उनसे भी अधिक वासनाओंमें आसक्त, अधिक खर्चाळू और राज्यशासनमें

शासित होता था, अब भी जो सामंत शासन प्रणाली कुछ कुछ रूपांतरित होकर रजवाडेमें विराजमान है, कर्नेल टाडका मत है कि वह शासनशैली सर्वांग संपन्न नहीं है उसकी अनेक विषयोंमें अपूर्णता देखी जाती है। उनकी इस उक्तिको अनेक अंशोंमें अवश्य ही सत्य कहना होगा, किंतु सामन्तशासन प्रणाली शुभ फलदायक नहीं, यह बात नहीं मानी जा सकती । कर्नेल टाड लिखते हैं कि संपूर्ण राजस्थानमें केवल नरपति वृन्दके चरित्रके ऊपरही राज्यकी उन्नति और मंगल निर्भर है । प्रचलित शासन रीतिके केवल वही मूलदंड हैं; विधिके अन्यान्य विखरे हुए अंशोंको यथोचित स्थानमें रखने और कार्यमें नियोग करनेकी शक्ति केवल वही रखते हैं । राजा यदि क्षणमात्र भी अपनी कार्य सिद्धिसे मुंह मोडले तो सब रीतियें अपनी इच्छानुसार छिन्नभिन्न होकर गिर पड़ें । ऐसे समयमें अशान्ति, उपद्रव अत्याचार सबही प्रबल वेगसे दिखाई देने लगें । यदि एक प्रबल क्षमताशाली राजा उस शासनयंत्रको भलीभाँति तीव्रतासे चलासके तो उनके परलोकजानेपर क्रमसे तीन राजा अत्यन्त अयोग्यता दिखानेपर भी उस शासनरीतिसे पहिलेकी समान ही अपना कार्य सिद्ध करसकते हैं । उस समय यदि कोई बाहरी शत्रु प्रगट हो तो अवश्य ही विपरीत फल हो । इस सामन्तशासन शैलीके अनेक अंग अपूर्ण हैं; परन्तु राजपूत जातिकी राजभक्ति, देशहितैषिता, समाजविधि-धर्मविधानके ऊपर दृढभक्ति और जन्मभूमिके ऊपर गाढी प्रीति इस प्रणालीके अनेक शोचनीय काण्डोंको भुलादेती है । यूरोप वा एशियाके किसी देशमें भी यह सामंतशासन शैली सब अंशमें शुभफल नहीं उत्पन्न करसकती । यह रीति एक समय केवल राज्यमें अशान्ति, आत्म निग्रह और यथेच्छाचारका स्रोत प्रवाहित करती थी । किसी समय यदि कोई बाहरी शत्रु उपस्थित न होता, तो भी राज्यमें भयंकर अशान्ति उत्पन्न होकर अन्तमें शोचनीय दशा परिवर्तित कर देती थी । चन्दावत और शक्तावत दोनों संप्रदाय चिरकालतक परस्पर शत्रुताका आचरण करते रहे । राणाका बल क्षीण होनेसे और तीसरी श्रेणीके सामन्तोंकी राणाकी वश्यता स्वीकारमें असंमति होनेपर वह दोनों संप्रदाय परस्पर एक दूसरेके ऊपर अत्याचार, उपद्रव और राणाकी आज्ञा अमान्य करके राज्यमें हृदय भेदी काण्ड उपस्थित करदेते थे । दोनों सम्प्रदायोंके आत्म निग्रहमें प्रमत्त होनेपर, उस समय यदि कोई बाहरी शत्रु मेवाड आक्रमणके लिये संहारमूर्त्तिसे दिखाई देता तो उस समय प्रबल ऐश्वर्य और प्रतापशालीके सिवाय क्षीणबल और साहस हीन राणा कभी उनके दमन करनेमें समर्थ न होते । किन्तु यह शासन

महाराणा जवानसिंहने एक लिखेहुए संधिपत्रमें * आठ वर्षके लिये उनको फिर लौटादिये सन् १८३३ ईसवीमें सात मार्चको वियायोर नामक स्थानमें संधिपत्र लिखागया, अंग्रेज गवर्नमेन्टकी ओरसे लैफ्टिनेन्ट कर्नल केटने और महाराणाकी ओरसे प्रधानमन्त्री महता शेरसिंह, प्रधान श्यामनाथ पुरोहित और राय चिरंजीवलालने उसपर हस्ताक्षर किये। आलस्य विलासिता और इन्द्रियोंकी आसक्ति जिस राजाके ऊपर अपना अधिकार करलेतीहैं, उस राजाका खजाना अतुल धनसे पूर्ण होनेपर भी बहुत जल्दी खाली होजाताहै। महाराणा जवानसिंहने विलासभोगमें मोहमंत्रसे मोहित हो बहुत थोड़े ही समयमें अपना सम्पूर्ण धन उठादिया, इसी कारणसे उनका सम्पूर्ण खजाना खाली होगया, जैसे २ उनकी आयु बढ़ती जातीथी वैसे २ ही उनकी इन्द्रियोंमें आसक्ति और पापकरनेमें अधिक मन बढ़ता जाताथा, इसी कारण राज्यके पालनमें उनको पहलेकी भाँति राज्यके देखने भालनेका अवकाश न मिला और इसीसे राज्यकी अवस्था धीरे २ अत्यन्त ही शोचनीय होगयी। और अन्तमें राणा जवानसिंहने धनहीन होकर सामन्त और धनवान प्रजासे ऋण करनेमें भी कसर न की। भोग विलासताके कारण वह ऋण दिनपर दिन बढ़ता ही गया।

राणाने शासन भागकी ओरको आँख उठाकर भी न देखा, इसीसे प्रत्येक वर्षमें दो लाख रुपयेका खर्च होने लगा। इधर गवर्नमेन्टकी जो सन्धिपत्रके

* सन्धिपत्र ।

“(१) पहिलीधारा। मूगरा माहिरवाडाके देशमें उदयपुरकी राजधानीमें जितने भी ग्राम हैं, उनके शासनके सम्बन्धमें इस समय जो रीति प्रचलित है, वह और भी आठवर्षतक प्रचलित रहेगी।”

“(२) दूसरीधारा। प्रचलित व्यवस्थाके मतसे ब्रिटिश गवर्नमेन्टके अतिरिक्त खर्चके भारसे ग्रस्त बरन उदयपुर राज्यमें अधिक सुभीता होनेसे भी यह प्रस्ताव स्थिर हुआ कि उदयपुरके दरवारमें पहले जैसे वियायोर सेनाके निवासी पन्द्रह सहस्र रुपया सालियाना देतेथे, इस समय और भी अधिक पांच हजार रुपये अर्थात् बीस हजार रुपये देने लगे, उससे और भी आठवर्षतक राज्यका काम काज चलासकताहै।”

“(३) तीसरी धारा। दो मुसद्दी रखे जाँय और वह मेजारहलके पास जाकर माहिरवाडाके देश उदयपुरके अधिकारी सम्पूर्ण ग्रामोंमें सद्दीत राजस्वके हिसाबकी परीक्षा करें; और वह ब्रिटिश गवर्नमेन्टके मुसद्दियोंसे प्राप्त हुए उन ग्रामोंसे संग्रह किये हुए राजधनकी तालिका और हिसाबको मिलाकर दिखावें, बरन उनके आगे रखें”

“(४) चौथी धारा। इस संधिपत्रपर जब महामाननीय गवर्नमेन्ट जनरलके हस्ताक्षर होजायँ तब इसके एक खण्डकी नकल उदयपुरके दरवारमें भेजदी जाय।”

ऊँचे भूखण्डके ऊपर स्थापित है चारों ओर अभेद्य पत्थरका बना ऊँचा परकोटा है और उसके बीच २ में ऊँची चोटीके महल विराजमान हैं । एक नदी परकोटेके नीचे २ निकल गई है ।* उस बीचमें शासनकर्त्ताका निवास भवन है, उसके चारोंओर भी परकोटा है । केवल एक द्वारमें होकर ही उस दुर्गमें प्रवेश किया जाता है ।

सामर्थ्य और प्रभुत्वके लिये सदाके प्रति द्वन्द्वी वह शक्तावत् और चन्दावत् गण गौरव प्राप्त करनेकी इच्छासे प्रतियोगी बनकर एक समयमें ही सूर्योदयके पहिले अपने २ लक्ष्य स्थल अन्तलाकी ओर बड़ी वीरताके साथ दौड़े हिरोलके सन्मानका लाभ ही उनका उद्देश था दोनों सम्प्रदायके हृदय ही आशासे भरे थे इस कारण दोनों ओरके कवियोंने वीर राजपूतोंके हृदयोद्दीपक सङ्गीत रचानासे प्रत्येकको रणोन्मत्त करदिया । प्रबल उद्दीपना दोनों सम्प्रदायोंको बड़े वेगसे लेचली ।

शक्तावत सम्प्रदायने अन्तला दुर्गके द्वारकी ओर ही चरण बढाये थे, इस कारण उन्होंने सूर्योदयके पहिले ही वहाँ पहुँचकर असावधान शत्रुसेनाको चौंका दिया । यवन सैनिक अकस्मात् राजपूतोंको आया हुआ देखकर तत्काल दुर्गके परकोटेमें आत्मरक्षाके निमित्त शस्त्र लेकर खड़े होगये । उस समय समराग्नि प्रज्वलित होगई ।

चन्दावतलोग भी यद्यपि उस ही समय बड़े वेगसे वहिर्गत हुए थे, किन्तु वह भिन्न मार्गमें जाने और मार्गके न जाननेसे एक जलाशयपर जा पहुँचे । वह उसमें कुछ दूर जाकर लौटनेको बाध्य हुए उसी समय सौभाग्यसे एक अन्तला वासी गडरिया वहाँ आगया, उसने उनको मार्ग बतादिया । रणोन्मत्त चन्दावत लोग बड़े साहससे उसको पार करके अन्तला दुर्गकी ओर दौड़े । शक्तावत लोगोंकी अपेक्षा चन्दावत विशेष समर कुशल और दुर्गके आक्रमणकी सामग्री रखनेमें बहुत शिक्षित थे, इस कारण वह अपने साथ सीढ़ी ले आये थे ।

जिस समय शक्तावतलोग दुर्गमें प्रवेश करनेकी यथासाध्य चेष्टा कर रहे थे, उसी समय चन्दावतलोग वहाँ पहुँच गये, और हुंकार शब्दसे दुर्गके भीतर रहनेवाले शत्रुओंके हृदय प्रकम्पित करके दुर्गके अधिकार करनेमें प्रवृत्त हुए ।

* कर्नेल टाड साहब लिखतेहैं कि “यह दुर्ग इस समय बिलकुल ध्वंस होगया है, किन्तु ऊँची चोटीके महल और प्राकारके कुछ अंश अब भी पाये जातेहैं ।

पहिले महीनेमें दोनोंमें एक संधिवंधन * नियुक्त करदिया । यद्यपि मेजर रवि-
न्सनके मध्यस्थ होनेसे महाराणा भी सामन्तोंके साथ संधिकरनेमें सम्मत होगये,

* कबूलनामा ।

“ १८१४ई०वैशाखमें (मे० १८१८ईसवीमें) कप्तान टाडसाहवने मध्यस्थ हो दोनोंके हितकी
इच्छासे महाराणा और उनके सामन्तोंके हस्ताक्षर कराय दशधारासे पूर्ण एक कबूलनामा (स्वीका-
रपत्र) नियुक्त कर दियाथा ।

बहुतसे स्थानोंमें सामन्तोंने उस स्वीकारपत्रकी ओर ध्यान भी न दिया और उसके विपरीत
आचरण करनेलगे, इसमें महाराणा भी सम्मत हुए उनकी यह राय हुई कि कप्तान कविके उप-
देशसे तथा उनकी सम्मतिसे एक दूसरा नया कबूलनामा बनायाजाय, और उसमें पहले कबूल-
नामेकी सम्पूर्ण धाराओंके साथ महामान्य राणा एवं सामन्तगण दोनों पक्षमें उपकारी जिन नवीन
धाराओंकी आवश्यकता विचारें, वैसी धारा और रक्खीजाँय, अर्थात् दशहरेके उत्सवके उपलक्षमें
सम्पूर्ण सर्दार इकट्ठेहों, और कबूलनामेकी सम्पूर्ण धारा पढीजाकर उसका मतलब प्रत्येक सरदारको
समझाया जाय तथा उसपर सामन्त और महामान्य (राणा) के हस्ताक्षर कराये जाँय । और
कबूलनामेकी प्रत्येक धाराका पालन नियम सहित हो और प्रतिभूस्वरूप महाराणा तथा
सम्पूर्ण सरदार पोलिटिकल एजन्टको साक्षी बनाकर इसपर उसके हस्ताक्षर करानेको कहें ।
कितने ही वर्षके बीतजानेपर वह कबूलनामा बनाया गया, परन्तु उसपर महाराणा सर्दार
अथवा पोलिटिकल एजन्टके हस्ताक्षर नहीं हुए । इस समय मेवाडके सामन्तोंने भ्रमजालमें पड़ेहुए
मनुष्योंके अनुरोधसे उपरोक्त कबूलनामेका विना अदल बदल किये अथवा कोई नयी धारा कायम
न करके उसमें अपनी सम्मति देकर उसको स्वीकारकिया और वह मेवाडके प्रतिनिधि पोलिटिकल
एजन्ट मेजर रविन्सनके सामने नियमसहित १८४० ईसवीके १ म विधिमें बँधगये, और उस
पर महाराणा तथा मेवाडके सरदार और भ्रान्तचित्त हुए मनुष्योंने भी अपने हस्ताक्षर करदिये ।

दोनों पक्षोंके हितकारक अतिरिक्त धारावली ।

१म—प्रथम कबूलनामेकी नवीं धारामें लिखागयाहै कि सरदारगण उनके आधीनकी प्रजाके
ऊपर किसी प्रकारके अत्याचार न करनेपावें, और ऐसा भी कोई काम न करें कि जिससे प्रजाको
पीडा पहुँचै; राज्यकी विशृंखलताके समयमें जो नये दंड कर आदि देने नियुक्त हुएहैं, वह एकवार ही
छोड़दियेजाँय, परन्तु वह इस संधिवंधन तक उस प्रकारका कार्य न करें और उसके पीडित सूत्रमें
बँधकर बहुत सी प्रजा जो मेवाडसे भागगयीहैं, ऐसी यह विधि रक्खीजाय कि वह अब ऐसे
आचरण करनेमें कसर न करें कि जिससे प्रजा फिर वास करनेकी इच्छा करें, तथा भूमिकी
आमदनी अधिक बढ़ा दीजाय इस सूत्रसे नगरकी सफाई होगी ।

२ दूसरे प्रत्येक सरदार अपनी नियुक्त की हुई सेनाके साथ एक वर्षके बीचमें तीन मासतक
राजधानीमें रहै, यह रीति इस समय प्रचलितहै । धीरे२ जब यह नियम प्रचलित होजायगा, तथा
नियमित समयके अतिरिक्त किसी सरदारको भी उदयपुरमें जानेकी आज्ञा न दीजायगी, कारण
कि सामन्तोंके अतिरिक्त समयके रहतेहुए उन्हींको अधिक व्यय और कष्ट सहनकरना होगा, जिस
किसी सरदारके विना हाजिरहुए आज्ञा देनेमें राणाकी इच्छा रहगयी, तो वह गैर हाजिर विना आज्ञा
प्राप्त किया सरदार उस समय नियमानुसार हाजिर रहेगा, उस समयके बीच विना राणा और

चन्दावत सम्प्रदायके नेता गोला लगनेके कारण जिस समय सीढीसे नीचे गिरगये, उसी समय उनके नीचेके अधिकारी और अतिनिकट आत्मीयने चन्दावतदलकी अध्यक्षताका भार ग्रहण किया। वह नवीन अधिनायक देवगढके सामन्त थे। वह जैसे गर्वी और निडर थे, वैसे ही सब विपत्तियोंमें आगे बढनेके साहसी थे, और भयङ्कर सिंहके साथ भी युद्ध करनेमें नहीं डरते थे। देवगढ पतिके इस अनुपम साहसको देखकर सबने उनको वातुल ठाकुरकी उपाधि दीथी। चन्दावत सम्प्रदायके नेताके गिरते ही देवगढ पतिने उनके शवको अपनी चादरमें बांधकर पीठपर लादलिया, और भाला हाथमें लिये साक्षात् यमराजकी समान संहार मूर्ति धारण करके सीढीपर चढ़गये; दुर्गके परकोटेपर पहुँचकर बड़ी वीरताके साथ युद्ध करने लगे और मुहूर्त्तमात्रमें ही यवनोंकी सेनाका संहारकर दुर्गप्राकारके ऊपर स्वामीका शव स्थापन करदिया, उस समय उन्होंने भयङ्कर शब्दसे जय घोषणा करके कहा कि, “हमने ही पहिले प्रवेश किया है ? हिरोल चन्दावत सम्प्रदायको मिलेगा।” देवगढपतिका वह शब्द क्षणमात्रमें ही सम्पूर्ण चन्दावत सैनिकोंद्वारा प्रतिध्वनित हुआ, और जिस समय शक्तावत लोग दुर्गद्वारमें प्रविष्ट हुए उसी समय दुर्गप्राकार चन्दावत सैनिकों द्वारा अधिकृत होगया। यद्यपि उन शक्तावत सैनिकोंके द्वारा ही मुगल सेना विलकुल नष्ट भ्रष्ट और भेवाडकी जयपताका उड़ी थी, परन्तु हिरोल सन्मान चन्दावत सम्प्रदायको ही प्राप्त हुआथा। *

* कर्नेल टाड टीकामें लिखते हैं कि, “हमारे मित्र अमरने (यह चन्दावत सम्प्रदायकी महाबली शाखा संग्रहवतके कवि थे। सङ्गावत लोगोंके नेता देवगढपति थे; उनका विषय कई जगह लिखागया है; यह प्रायः ही दो सहस्र सेना सहित रणक्षेत्रमें उपस्थित होते थे) एक विश्वासयोग्य घटना मुझसे कही थी। जिस समय राजपूत सेनाने अन्तला दुर्ग आक्रमण किया, उस समय दो ऊँचे पदके मुगल चतुरङ्ग क्रीडामें मत्त थे जब उन्होंने राजपूतोंके आक्रमणका समाचार सुना तो उन्होंने यह सिद्धान्त करके कि “मुगलसेनाकी अवश्य ही विजय होगी। ” युद्ध करनेके बदले उस खेलमें और भी मन लगाया। जिस समय भीतरका दुर्गप्राकार राजपूत सेनाने अधिकार करलिया, उस समय उनको चैतन्यता हुई। दूसरे मुहूर्त्तमें ही राजपूत सेनाने उस कमरेमें घुसकर दोनों खेलनेवालोंको घेर लिया। खेलमें उन्मत्त हुए दोनों मुगलोंने विजेता लोगोंसे यह प्रार्थना करी कि “हमारा खेल समाप्त होजाने दो। ” राजपूत लोगोंने इस बातको स्वीकार करलिया, किन्तु शक्तावत और चन्दावत दोनों सम्प्रदायके नेताओंके स्वर्ग सिंघारनेसे राजपूतोंके हृदयसे दया विलकुल दूर होगई थी, इस कारण खेल समाप्त होजानेपर उन खेलनेवाले दोनों मुगलोंका जीवन दीप निर्वाण करदिया गयाथा। ”

परन्तु कुछ ही कालके बीचमें फिर पहलेकी समान मनमें भेद पडजानेसे अनेक भौतिकी विशृंखलता उपस्थित कर दी । परस्परका लडाई, झगडा ही मेवाडकी अवनतिका कारण हुआ, इस कारण ब्रिटिश गवर्नमेन्टके कल्याणमें महाराष्ट्र चोरों-के भयंकर अत्याचारोंसे मेवाड छुटकारा पाकर भी इस परस्परकी अग्रिसे धीरे २ जर्जर होनेलगा; राणा प्रतापसिंह व राणा राजसिंहके प्रबल प्रतापके समयमें किसी सामन्तका उनके विरुद्धमें शिर उठाना तो दूर रहा वरन उनके विरुद्ध बोल-नेकी सामर्थ्य भी नहीं थी, यदि राणा प्रतापसिंह वा राजसिंह अपने किसी सामन्तके ऊपर अत्याचार भी कर लेते तो भी वह सामन्त उनका सामना करनेको अत्यन्त ही घृणित कार्य विचारता, उस समय राणागण तथा सामन्तमंडली जातिके सन्मानकी रक्षाके लिये एकमत हो कार्यक्षेत्रका विचार करतेथे, परन्तु इस समय दोनोंके हृदयकी अवस्थाके बदलजानेसे देशके अधःपतनके सूत्रमें शीघ्र-ही दोनोंके बीचमें विवादकी आग भयंकर रूपसे प्रज्वलित होगयी । इस सूत्रसे बहुतसी प्रजा मेवाडको छोडकर जहांतहां भागगयी । अपना बल अत्यन्त ही घटा-हुआ जानकर राणा सरदारसिंहने १८४१ ईसवीमें ब्रिटिश गवर्नमेन्टके सन्मुख यह प्रस्ताव किया, कि एक दल तो अंग्रेजी पैदल सेनाका उनकी सामर्थ्यको चलाने और उत्तेजित करनेके लिये सामन्तोंको शासन करनेके निमित्त उदयपुरकी रक्षा करनेमें नियुक्त रहे, परन्तु इसका विचार विशेष होनेके कारण अंग्रेज गवर्नमेन्टने उसमें अपनी सम्मति नहीं दी ।

राणा सरदारसिंहने १८४२ ईसवीमें इस मायामय शरीरको छोडदिया । राणा भीमसिंह और राणा जवानसिंह भोग विलासिताके वशीभूत होकर जिस-भौति राज्यके शासनमें कर्महीनता प्रकाश कर गयेहैं, सरदारसिंह उस चरित्रके मनुष्य न होनेपर भी केवल अपने ऊधमी स्वभावके कारण सम्पूर्ण सामन्तोंके अग्रिय होगये ।

—बुलाकर मंत्रियोंके साथ सलाह कर पांच वर्षके बीचमें दो बार छातूनके कर देनेका विचार किया है । इससे राजीना हस्ताक्षर करानेकी आवश्यकता न रहेगी । जिस दिन छातूनका कर दियाजायगा यदि उसी दिनसे सामन्तगण कर देनेमें असमर्थ होंगे तो उनकी असामर्थ्यके अनुसार उनके अधिकारी समस्त ग्रामोंसे तथा भूमिसे वह वसूल किया जायगा तथा वह ग्राम लेलिये जायेंगे और फिर न लौटाये जायेंगे ।

एकवार माघके महीनेम और एकवार ज्येष्ठके महीनेमें छातूनके कर देनेका समय निश्चय हुआ ।

बैदलाके राव भक्तसिंह ।

सलम्बूरके राजा पद्मसिंह ।

देवगणके रावत लहरसिंह ।

रावत सलीमसिंह ।

महाराज हमीरसिंह ।

रावत अमरसिंह ।

रावत ईश्वरीसिंह ।

रावत दुनियासिंह ।

होनेपर यह प्रणाली कभी कार्यरत नहीं हो सकती । जिस स्थानमें किसी पुरुष विशेषका स्वेच्छाचार सम्पूर्ण जातिको शासित करता है, उस स्थानमें उस जातिकी स्वाधीनता अवश्य ही परिणाममें बहुत न्यून होजाती है ।” कर्नेल टाडकी यह उक्ति वास्तवमें नीतिपूर्ण है ।

फिर टाड साहब लिखते हैं कि अपने प्रभुत्व और सामर्थ्यकी रक्षाके लिये रजवाड़ेके राजालोग दिल्लीके यवन सम्राटके हाथमें कुछ सामर्थ्य और स्वाधीनता समर्पण करनेमें बाध्य हुए थे । राजपूत नरपतियोंने यवन सम्राटोंके हाथोंमें नाममात्रको अपने २ राज्य सौंपकरं सम्राटोंसे फिर सनदद्वारा राज्य ग्रहण किये थे । प्रत्येक राज्यके प्रत्येक राजाके पीछे नवीन भूपाल इसी प्रकार सम्राटोंके निकटसे राज्यशासनके लिये सनद ग्रहण करते थे, इस कारण ही वह यवन सम्राटको अपना सर्वोपरि स्वामी मानलेते थे । उस सनद देनेके समय सम्राट देशी राजोंको मान्यसूचक खिलअत स्वरूप हाथी, घोडा; अस्त्र और रत्नालङ्कारादि पुरस्कार देकर “महाराज ” वा “राणा” की उपाधिके साथ सम्मानसूचक मनसबदारकी उपाधिसे भूषित करते थे । देशी राजा सम्राटकी वश्यता स्वीकारके मुसलमानोंके नौ वर्ष पीछे सम्राटको नजराना अर्थात् धनादि देनेको बाध्य होते थे । सम्राटके साथ देशी राजालोगोंका इस प्रकारका सन्धिवन्धन निश्चित था कि, सम्राटके बुलानेपर निर्धारित संख्या सेनासहित प्रत्येक राजा सम्राटभवन वा युद्धक्षेत्रमें उपस्थित होनेको बाध्य थे । यवन सम्राट प्रत्येक देशी राजाको एक २ राजपताका, एक २ जयघोषणाका बाजा और अन्यान्य राजचिह्न भी दिया करतेथे; राजालोग अपनी २ सेनाके साथ उन सबका व्यवहार किया करतेथे । * इन सब लक्षणोंद्वारा हम यह देखते हैं कि, यवन शासनमें महान सामन्त शासन प्रणाली प्रचलित थी । दिल्लीके तातारी सम्राटोंने यह पताका आदि देनेकी प्रथा अपने अधीनवाले देशी राजाओंसे सीखी थी अथवा मध्य एशियासे सीखी थी, यह बात अन्य स्थानमें प्रगट होगी ।

* सन् १८७७ ईसवीमें दिल्लीके महा रदवारमें उस समयके राज प्रतिनिधि लार्ड लिट्टिने जिस समय ब्रिटिश राजकी “भारतेश्वरी” उपाधि धारणा घोषणा करी थी, उस समय भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तसे आये हुए हिन्दू और मुसलमान नरपतियोंको उसी प्रकार एक २ पताका दी गई थी । जयघोषण करनेवाले बाजेके बदले एक २ स्वर्णपदक भी दिया गया था । आर्यजातिके निकटसे यवनोंने और उनके निकटसे ब्रिटिश जातिने यह पताका देनेकी प्रथा सीखकर, उन हिन्दू जातिके राजालोगोंको फिर कई सौ वर्ष पीछे पताकायें दीं ! कालकी लीलाको कौन समझ सकता है ?

जानकर अंग्रेजी पक्षके दूत लेफ्टिनेन्ट कर्नल रविन्सनने फिर दोनोंमें संधि करानेका निश्चय किया, अन्तमें १८४५ ईसवीके फरवरी महीनेकी आठ तारीखको वह संधि बन्धन समाप्त होगया । ×

यद्यपि महाराणा स्वरूपसिंह सामन्तोंके साथ इस नवीन सन्धि बन्धनमें सम्मत हो तो गये परन्तु उनके राज्यकी अवस्था किसी प्रकार भी सन्तोषदायक न हुई, विगृह्यत्वलताके कारण राणाकी आमदनी बहुत ही घटगयी, तब वह ब्रिटिश गवर्नमेन्टसे करको कमती करानेके लिये गये। राजधनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय देखकर गवर्नमेन्टने १८२६ ईसवीमें जिस करकी संख्या तीन लाख रुपया की थी, जब राणाने कहा कि इस स-

× “ पहले कप्तान टाडसाहबके समयमें महाराणा भीमसिंह और सरदारोंके बीचमें दश धाराओंसे युक्त एक स्वीकारपत्र बनायागया । पीछे कप्तान कविके समयमें पांच धारावाला और एक कबूलनामेका निश्चय किया, और अंतमें कर्नल रविन्सनके सामने महाराणा सरदारसिंह और सामन्तोंने एक स्वीकारपत्रको स्थितकर दोनों पक्षवालोंने उसपर हस्ताक्षर करदिये; परन्तु सामन्तोंने कबूलनामेकी धाराके अनुसार एक भी कार्य न किया, उन धाराओंकी भलीभांति रक्षा करनेकी इच्छासे महाराणाने सामन्तोंके साथ मिलकर अपने पक्षवालोंसे सम्मतिकर निम्नलिखित अतिरिक्त धाराओंसे युक्त किया, और इन्हीं कर्नल रविन्सनको इसका मध्यस्थ बनाया दांनों पक्षवालोंने उसपर अपने हस्ताक्षर किये ।

१ म—जब पत्र स्वीकार कियागया उस समय स्वीकारपत्रकी समस्त धारा बड़ी प्रबलतासे प्रचलित हुई। प्रत्येक वर्षकी विजयादशमीसे दश दिन पहले सब सरदारोंकी एक साधारणसमिति बनाईजाय। उस सेना दलको देखने उपरान्त राणा अपनी इच्छानुसार चाहें जिस सामन्तको तीन महीनेके लिये जानेकी आज्ञा दें; और जिस सामन्तको किसकिस समयमें हाजिर होना होगा उसको भलीभांति सुनाकर उनको अपने स्थानपर जानेकी आज्ञा दीजाय । सम्पूर्ण सरदारोंकी सेना किसी प्रकार भी अपने कर्तव्यपालनेमें शान्त न हो । यदि वह नियत कियेहुए समयमें हाजिर न होसकैगी, या वह अपने कर्तव्यपालनेमें ध्यान न देगी, अथवा सम्पूर्ण सेना एकत्रित न होसकैगी, तो जिस सरदारके आपीनकी वह सेनाहै उसको सेनाके कार्य ठीक न करनेसे राणाको रुपये देनेहोंगे ।

२ य । जो सरदार नियम सहित जितनी सेनाकी रक्षा करताहै वह अपनी उससे आधी सेना देकर ही छुटकारा पावेगा, और उसे रुपये पीछे दो आनेके हिसाबसे सप्ताहके आधे दिनोंमें छातूनका कर जो पहले कबूलनामेके अनुसार स्थिर कियाहुआ है वह इस समय नियम सहित देना होगा ।

३ य—सम्पूर्ण सामन्त अपने २ अधिकारी देशोंकी रक्षा भलीभांतिसे करें; और न वह किसी अन्य राज्यके चोर तथा हत्या करनेवाले, व डाकू आदिको अपने नगरमें स्थान दें । और ऐसा करनेपर भी यदि कोई अपराधी उनकी सीमामें आनेकी इच्छा करे, तो उसको पकड़लें, और

हिन्दू ललनाओंका पाणिग्रहण किया था, किन्तु सूर्यवंशावतंस मेवाड़के राणा लोगोंने प्राणान्तमें भी म्लेच्छके हाथमें कन्या देकर पवित्र रक्तको कलङ्कित नहीं किया । आजतक उसके कारण ही उदयपुरका राणावंश देशी राजालोगोंमें सबसे अधिक मान्य और पवित्र गिना जाकर आदरके साथ पूजा जाताहै ।

अम्बेर वा वर्तमान जयपुर राज्य दिल्लीके पास है, इस राज्यके उस समयके राजा अत्यन्त क्षीणबल थे । उन्होंने ही सबसे पहिले भारतके इतिहासकी इस चिर स्मरणीय कलङ्कजनक घटनाको अर्थात् यवन रक्तके साथ पवित्र राजपूत रक्त मिलानेमें प्रधान सहायता करी थी ।

अम्बेरपति राजा भगवान्दासने सम्राट हुमायूँके हाथमें अपनी कन्याका दान किया था, अन्तमें यह प्रथा यहांतक बढ़ी कि सुप्रसिद्ध मुगल सम्राटोंमेंसे बहुतसे राजपूत राजनन्दनीके गर्भसे उत्पन्न हुएथे ।

मुगल सम्राटके औरससे, राजपूत क्षेत्रमें उत्पन्न उन विख्यात सम्राटोंके मध्यमें सम्राट जहांगीर एक प्रधानहैं; उनके हतभाग्य पुत्र खुर्रम; शाहजहां * कामबक्स और औरंगजेबके विद्रोही पुत्र अकबर, × राजपूत राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुएथे । औरङ्गजेबके पुत्र पूर्वोक्त अकबरके साथ राजपूत जातिका सम्बन्ध बन्धन होनेसे अर्थात् अकबरके राजपूत कन्याके गर्भसे उत्पन्न होनेके कारण सवही औरङ्गजेबको सिंहासन च्युत करके उन अकबरको ही भारत सम्राट पदपर अभिषिक्त करनेमें सेनासहित सज्जित हुए थे । राजपूत राजवंशके साथ मुगल सम्राटके वैवाहिक सम्बन्ध बन्धनसे दोनोंके मध्यमें कैसी आत्मीयता और स्नेहभाव उत्पन्न हुआ था, अकबरके प्रति राजपूतोंका आचरण ही उसका पूरा उदाहरण है । जिस समय मुगलोंकी शासनशक्ति छिन्नभिन्न होगई उस समय भी उस आत्मीयता और स्नेह रक्षाके लिये सम्राट् फर्रुखसियरने मारवाड़पति राजा अजितसिंहकी कन्याका पाणिग्रहण किया था । *

* सम्राट् शाहजहां राजकुमारी जोधवाईके गर्भसे उत्पन्न हुए थे । आगरेके निकट सिकन्दरेमें इन जोधवाईका परम रमणीय समाधिमन्दिर अवतक विराजमान है ।

× यह अकबर बादशाह अकबर नहीं है औरंगजेबका पुत्र है ।

* कनेल टाड लिखतेहैं कि, “केवल यह विवाह ही हमलोगोंके शासन संग्रहका मूलहै । जिस समय विवाहका आयोजन हुआ, उस समय सम्राट् रोगी होगये । उस समय सूरतमें हमलोग (अंग्रेज) वाणिज्यकरते थे; सूरतसे दिल्लीमें उस समय जो दूत आयेथे, उनके साथ मिष्टर-

करनेमें भी झुटि नहीं की । दोनों ही पक्षोंका विवाद क्रमशः बढ़ने लगा । महाराणा स्वरूपसिंहने एक पक्षमें जिस भाँति अपने भयंकर प्रतापसे . सामन्तोंकी मंडली-के ऊपर अत्याचार करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की, दूसरे पक्षके सर्दारोंने भी उसी मतसे उनके ऊपर घृणा दिखाना प्रारंभ किया तथा उनकी आज्ञाको न मान कर किसी २ ने तो उनके विरुद्धमें खड़े होनेके लिये किंचित् भी विलम्ब नहीं किया । यही नहीं कि राणा और सामन्तोंमें इस विवादका फल केवल दोनोंके ही भोगनेके लिये हुआ हो । वरन सम्पूर्ण प्रजाने भी इसी चक्रमें पड़कर अनेक भाँतिके कष्ट सहन किये ।

सबमें प्रधान मेवाडके सलम्बूरके अधिपति और देवगणके सरदारोंके साथ महाराणाका विवाद अत्यन्त ही बढ़ गया । राणा स्वरूपसिंह इनके नीच आचरणोंसे ऐसे क्रोधित हुए कि १८५० ईसवीमें उनके आधीनके सम्पूर्ण ग्रामोंको अपने कब्जेमें करनेका विचार किया । राणा स्वरूपसिंहने उसी सालमें बहुत सी सेना भेजकर सलम्बूर और देवगणोंके नायकोंके अधिकारी सम्पूर्ण ग्रामोंको बल करके अपने अधिकारमें कर लिया, जैसे ही सेनापर उन्होंने अपना अधिकार किया कि वैसे ही दोनों सरदारोंने अपनी बचीबचायी सेनाको साथ ले राणाकी सेनाको परास्त करके छिन्नभिन्न कर दिया, और शीघ्रतासे अपनी सम्पूर्ण सेना पर अपना अधिकार कर लिया, जब इस प्रकारसे दोनों सामन्तोंने राणाकी सेनाको छिन्न भिन्न कर दिया, तब स्वरूपसिंहके हृदयमें भयंकर क्रोधानलके प्रज्वलित होनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न हुआ, परन्तु वह उन ग्रामोंपर अपना अधिकार करनेके लिये असमर्थ हो चुपचाप अपमानकी अग्निसे स्वयं भस्मीभूत होने लगे ।

अंतमें राणा स्वरूपसिंह और असन्तुष्ट हुए सरदारोंने अपने झगड़ेकी मीमांसाके लिये ब्रिटिश गवर्नमेन्टके दूतको मध्यस्थके पद पर वरण किया । उस तत्त्वकी खोजका फल ब्रिटिश गवर्नमेन्टको शुभ सुयोग्य जानकर पोलिटिकल एजेन्टकी सामर्थ्य बढ़ाने, और प्रधान विस्तार सहित मेवाडाधिपति राणाकी सामर्थ्यको अधिक घटानेकी चेष्टा करने लगा । बाप्पारावल, राणा प्रतापसिंह और राणा राजसिंहके वंशवालाने केवल नाममात्रको ही मेवाडक अधिपति होकर एजेन्टकी पूर्ण आधीनतामें समय व्यतीत किया, गवर्नमेन्टने उसपर ही अधिक दृष्टि डाली, राणा और सामन्तोंके झगड़को दूर करनेकी इच्छासे १८५५ ईसवीमें सर हेनरी

पदपर नियुक्त होकर चार सौ से सात सौ तक अश्वारोहियोंके मनसबदार हुए थे । इस सम्प्रदायमें हम शक्तावत सम्प्रदायके आदिपुरुषको भी देखतेहैं; यही अपने भ्राता राणा प्रतापके साथ विवाद करके सम्राट अकबरके अधीनमें नियुक्त हुए थे । एक प्रकारसे इस मनसबदार परपद भारतके प्रायः सब श्रेणीके राजा ही नियुक्त हुए थे । मुगल सम्राटने देशी राजालोगोंको यह मनसबदार पद ग्रहण करनेके लिये पहिले बल प्रयोजन और भय दिखाया था किन्तु अन्तमें सब राजालोगोंने समयके प्रभावसे इच्छानुसार इस पदको ग्रहण करके अपनेको सम्मानित समझा था ।

जिन हिन्दू रक्तधारी राजालोगोंने यवन सम्राटोंको कन्या वा भगिनी प्रदान करी थीं, वह निःसंदेह अपनी जाति और अपने देशके कलङ्क स्वरूप थे । सम्राट् भवनमें अपनी शक्ति, प्रभुत्व और सन्मान अर्जन ही उनका मुख्य उद्देश था, यह बात इतिहासके पढनेसे मालूम होतीहै । अपने स्वार्थके लिये जो पुरुष जातीय गौरव और सन्मानका बलिदान करसकता है, जो पुरुष वंशगौरवको विस्मृतिके जलमें विसर्जन करके अस्पृश्य यवनके साथ वैवाहिक सम्बंध करनेमें कुछ भी लज्जित नहीं होता, वह पुरुष अवश्य ही जातिका शत्रुहै, इस बातको कौन नहीं स्वीकार करेगा ? राजनीति कुशल अकबरका मुख्य उद्देश क्या था, उस समयके राजा इस बातको विलकुल नहीं समझसके थे, अथवा वह ऐसे बलहीन होगयेथे कि, यवनोंके साथ वैवाहिक सम्बंध करनेको बाध्य हुयेथे । किन्तु सूर्यवंशावतंस मेवाड़ेश्वर महाराणा लोंगोंकी कन्या वा भगिनीको विवाह करनेमें कोई सम्राट जब किसी प्रकारसे भी समर्थ न हुए, तो और राजालोग भी उनका अनुसरण करके इस कलंकसे बच सकतेथे इसमें क्या संदेह है ? भारतका भाग्य उस समय मानों विलकुल दग्ध होगया था, इसी कारण आर्यवंशी राजालोंोंने अपनी शास्त्रविधिके ऊपर लात मारके विजातीय और विधर्मियोंके साथ वैवाहिक सम्बंध कियाथा । केवल उदयपुरके महाराणा वंशने अपनी जातिके गौरवकी रक्षा करी थी, इतिहास अनन्तकालतक उस राणावंशका जयकीर्त्तन करेगा, इसमें क्या संदेह है ?

कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, “ देशी राजाके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बन्धनसे अकबरने दो विषयोंमें बड़ा लाभ उठाया । प्रथम आत्मीयताके कारण मुगल सम्राटके ऊपर राजोंका विजातीय भाव दूर होकर प्रीतिभाव बढ़ना, और दूसरे उस आत्मीयताके कारणसे क्रम २ से सब देशी राजोंकी सेना सम्राटके कार्य

और जो लोग अपनी २ भूमिमें उत्पन्नहुए धान्यका यथार्थ परिमाण देनेमें राजी होंगे तो उनके ऊपर मध्यस्थके द्वारा कर नियत कियाजायगा, परन्तु परिमाणके अतिरिक्त करका भागी नहीं किया जायगा ।

यद्यपि सलम्बूरके सामन्त छातूनका कर नहीं देंगे । परन्तु वह बारह महीने तक राजधानीमें रहकर राणाकी आज्ञाका पालन करते रहेंगे ।

आधे दो आना हारमें छातून करके अतिरिक्त जो सामन्तगण वर्तमान नियमके अनुसार उत्पन्नहुए धान्यका प्रत्येक १०००, रुपये मूल्यके ऊपर जिस भांति दो अश्वारोही और चार पैदल देतेहुए आयेहैं, अब उसके बदलेमें एक अश्वारोही और दो पैदल एक वर्षके बीचमें तीन मासके लिये स्वदेश वा विदेशमें नियुक्त होनेके लिये सरवराही करते रहेंगे । यदि इसके अतिरिक्त सेनाकी आवश्यकता होगी तो राणा प्रत्येक अश्वारोहीके निमित्त १६, रुपये और प्रत्येक पैदलको ६ रुपये महीना और खुराक देंगे । यदि सेना कामकरनेमें ठीक न होगी तो सामन्तोंसे उस खुराकके दाम लेलिये जायेंगे, प्रत्येक सामन्त अपनी २ सेना ले दशहरेसे दशदिन पहले महाराणाका सन्मान करनेके लिये उदयपुरमें जायें, और दशहरेके पाँच दिन पीछे तक वहां रहें, उस समय उनको अपने २ कामोंका समय बताना होगा, और यदि जो कुछ विशेष आवश्यकता हुई तो प्रत्येक सामन्तको राणाके हस्ताक्षर और मोहर लगेहुए आज्ञापत्रको पानेके लिये प्रत्येक सामन्तको अपनी २ सेनाके साथ हाजिर होना होगा ।

जिनको राणासे पृथक् भावसे जागीर मिलीहै, उनको छातून देना या पृथक् भावसे कार्य साधन करना होगा ।

दूसरी धारा । “ तलोयाका बंधन ” अर्थात् सामन्तके पदपर अभिषेकित सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें एक वर्षतक जब तक कि धान्य उत्पन्न न हो तबतक उसके मूल्यके ऊपर रुपये पीछे बारह आनेके हिसाबसे देना होगा, इससे वह उस वर्षके छातूनसे छुटकारा पा जायेंगे । आमाइतगोइन्दा और बाणेरियाकी सामन्त मंडलीने और कृष्णावत गणोंने इस प्रकार अभिषेकके कर देनेसे छुटकारा पायाथा, कारण कि वह नियम सहित नजराना देतेथे, वह नजराना राणाकी इच्छाके आधीनमें न रहकर उससे भी अधिक उत्पन्न हुए धान्यके ऊपर मूल्य शतकरा ८, रुपया नियत हुआ ।

तीसरी धारा । चोर और डकैतोंके लिये राणाने प्रजाओंकी हानि पूर्ण करनेके लिये जो धन दियाथा, वा जितना उसके लिये नियत किया; जिन सामन्तोंके अधिकारमें उस चोरी वा डकैतीका प्रमाण मिलजाय, वह सब सरदार राणासे परिशोधित रुपयेके शतकरा छः रुपये कुसीदके हिसाबसे तथा परिमाणमें परिशोध्य रुपयेके शतकरा बारह मुद्रा व्याजके राणाको परिशोध करदें ।

चौथी धारा । सामन्तमंडली चोर, डकैत, ठग, वाडरि, मदी और हत्या करनेवालोंको आश्रय न देने पावें । जो चुराईहुई वस्तुको तथा उसके अंशको ग्रहण करेंगे, तथा चोरसे ही धन लेंगे, या चोरोंकी रक्षा करेंगे, वह चोरोंकी समान अपराधी ठहरेंगे । पोलिटिकल एजन्टकी सम्मतिके अनुसार उनको अर्थदंड वा कर देना पड़ेगा । सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें जो वणिज, व्यवसायी, बेचनेकी सामग्री लेजानेवाले सौदागर, बंजारे और मुसाफिर जायेंगे, सामन्तमंडलीको उचित है कि उनकी रक्षा भलीभांतिसे करे, और यदि उनके धनआदिको किसीने छूटलिया तो वह उसके देनदार होंगे, परन्तु उन वणिजआदिकोंको सामन्तोंसे अपने आनेकी वार्ता तथा अपनी रक्षाका उचित

ताका सुधामय फल भोगनेके लिये एकताके सूत्रमें बँधे थे, किन्तु भारतक भाग्य पतनके समयसे जो एक दूसरेके प्रति विद्वेषाग्नि भीतर २ सुलग रहीथी उसने उस समय प्रज्वलित होकर इस एकताको समूल भस्म करदिया । तथापि मुगल शासनशक्तिकी क्षीणता देखकर सम्पूर्ण देशी राजाओंने अपने राज्य परिमाणकी वृद्धि और स्वाधीनता सञ्चय कर ली थी । किन्तु केवल मेवाडेश्वर महाराणा म्लेच्छाधम मुगल सम्राटके हाथमें किसी प्रकार किसी कालमें किसी कारणसे कन्या वा भगिनी प्रदान द्वारा राजपूत जातिका प्रधान गर्वस्वरूप जात्याभिमानसे हीन वा पवित्र आर्यरक्त कलंकित करके साधारण राजाओंकी समान पतित नहीं हुए थे, इस कारण सबही राजा उनके ऊपर ईर्ष्या दिखानेमें प्रसन्न हो उठे । कई शताब्दीतक राणाओंने अनेक प्रकारसे उत्पीडित और मेवाड राज्यकी सीमा क्रम २ से क्षय प्राप्त होनेपर भी किसी प्रकार सम्राटोंकी पापआशा हरी न करके अपने गौरवको निष्कलंक रक्खा था, उस गौरवको देखकर ही दूसरे राजा जल उठेथे । यद्यपि मुगल शासनके समय मारवाडराज सम्राटके साथ वैवाहिक सम्बंध करनेके कारण अपनेको “ राजराजेश्वर ” और अम्बेरपति अपनेको “ राजराजेन्द्र ” के नामसे विख्यात करते थे । परन्तु सूर्य वंशावतंस मेवाडेश्वर सामान्य भावसे अपनेको “ अरिसिंहके पुत्र महाराणा भीमसिंह ” कहकर परिचय दिया करते थे । *

यद्यपि इस समय परिवर्तनके साथ प्रबल ब्रिटिश शासन और ब्रिटिश गवर्न-मेंटके साथ सन्धिवंधनसे रजवाडे में सामन्तशासन प्रणालीका बहुत कुछ रूपान्तर होगयाहै, यद्यपि कर्नेल टाडने उस शासन प्रणालीकी जो अवस्था देखी थी, इस समय ठीक वही दशा नहीं है, यद्यपि सामन्तोंके साथ अधिपति लोगोंके सम्बंधने अब कुछ नवीन मूर्ति धारण करली है, तथापि कर्नेल टाड उस समयकी शासन प्रणालीकी दशा देखकर जो कुछ लिखगये हैं, वह समयके गुण और परिवर्तनके कारणसे अप्रासङ्गिक होनेपर भी हम यहां इतिहासके सन्मान की रक्षाके निमित्त लिखते हैं । टाड साहब लिखते हैं कि, “ देशी राज्योंके शासनमें किस प्रकारकी प्रणाली सबसे श्रेष्ठ होसकती है, इस समय उसकी ठीक २ कल्पना करना कठिन है । इन सम्पूर्ण राज्योंकी सामन्त शासन प्रणाली-

* अब ब्रिटिश गवर्नमेंटके शासन समयमें भारतवर्षके राजाओंको अनेक प्रकारकी विलायती उपाधियें मिलीहैं । जातीय उपाधिके साथ २ दिल्लीके सम्राटकी दीहुई फारसी शब्दोंकी उपाधियोंका पहिले संयोग था, इस समय अंग्रेजी भाषाकी उपाधियोंके संयोग होनेसे वे सुननेमें बड़ीही विचित्र होगई हैं ।

उन्होंने आवश्यक विचारा तो यह तो विदित ही नहीं है कि सामन्त राणाके विपक्षी हैं इस कारण ऐसे चार वा छः सामन्तोंके साथ मिलकर उसतत्त्वका पता लगावें ।

जो भूमिके अधिकारी महाराणासे राजधनमें भूमि लेतेहैं वह पहलेकी समान अपने २ ग्रामोंकी रक्षाके निमित्त तथा चोर और डकैतोंसे जो हानि हुईहै उसको पूरा करनेके लिये जिम्मेवार रहेंगे ।

ग्यारहवीं धारा । दान, वाणिज्य, शुल्क, लगान (कर) खड्ड, तून, काष्ठ, ऊंटका लगान खाना सुमारी (घरका कर) सभी राणोंको मिलसकता है, परन्तु जिन्हें टाड और कविके समयसे सम्पूर्ण करदेनेकी सामर्थ्य है और जिन्हें नियमकी सनद मिलगईहै वही उसे अदा करते रहेंगे ।

बारहवीं धारा । कप्तान टाड और कप्तान कविके समयमें जो कर नियत होगयाहै—वह अचल भावसे प्रचलित रहैगा, इसके पीछे जो सम्पूर्ण कर अर्थात् वाणिज्य शुल्क कर अर्थ दंड इत्यादि नियत हुआहै, वह दूर होजायगा, भूत कालमें पहले महाराणाओंने और वर्तमानके महाराणाओंने जो क्षमापत्रमें लिखीहै, उसके ऊपर सन्मान दिखाकर उसको समभावसे प्रचलित रक्खाजाय ।

तेरहवीं धारा । कारागार, डाइन, तोपा, त्याग, भाट, चारण इत्यादिके सम्बन्धमें गवर्नर जनरल-के राजपूतानेमें स्थित एजन्टने जिस कार्यकी आज्ञा दीहै और जिसमें महाराणाने अपनी सम्मति भी देदी है मेवाडके सभी श्रेणीके मनुष्योंको उस आज्ञाका पालन करना होगा, कैदियोंको उनकी अवस्थाके अनुसार भरण पोषण करना होगा, परन्तु प्रत्येक कैदीको प्रतिदिन, व्यवस्वरूप एक आना से कमती वा आठ आनेसे अधिक नहीं देना होगा । किसीको भी किसी भांतिका दुःख न होगा ।

चौदहवीं धारा । महाराणा पोलिटिकल एजन्ट और सरदारोंकी मंडली तीन जने स्थिर कर सचरित्र और शिक्षित बनाकर प्रतिनिधिके पदपर नियुक्त करें; और वह नियुक्तहुए प्रतिनिधि और एक प्रतिनिधिको बनाकर सात जने भविष्यमें दिवानी और फौजदारीके मुकद्दमेके राजधारा प्रचलित सामाजिक आचार व्यवहार और व्यवस्थाके मतसे विधानकी रीति बनावें । और आगेको उन विधानोंकी सब सम्प्रदायोंका विचार, शेष होजायगा । सम्मति लेनेके लिये वह विधान पोलिटिकल एजन्टके सन्मुख हाजिर कियाजाय ।

पंद्रहवीं धारा । नियमित विचारालय सभी प्रयोजनीय अभियोगोंकी मीमांसा करें, और जो दूसरे अनुयोग हाजिर हों तो उनका भी विचार करें, सामन्तोंके आधीनवाले अनुचर तथा प्रजामें जो सामान्य अभियोग उपस्थित होजाय, सामन्तगण स्वयं उसका विचार करसकतेहैं, और अपराधियोंको एक महीनेतक कर दंड देनेकी सामर्थ्य रहैगी, परन्तु उनके ऊपर किसी प्रकारका भी अत्याचार न होसकैगा; सामन्तोंके विचारके विरुद्धमें मंत्रियोंके निकट और उनके सन्मुखसे पोलिटिकल एजन्टके सन्मुख अपील होसकैगा ।

सोलहवीं धारा । हत्याकरनेवाले, डकैत, और विश्वासघातकोंके अतिरिक्त और सभी शरणागत होसकैगे, जो शरणागतोंको आश्रय देनेमें क्षमा करतेहैं वह उनको पहली रीतिके मतसे आश्रय देसकैगे ।

सत्रहवीं धारा । भंजगुरिया अर्थात् उत्तराधिकारीके क्रमसे मंत्रिपदके पानेकी रीति कप्तान टाड दूर करदें, और वह कभी प्रचलित न हो । इसके उपरान्त किसी विशेष प्रयोजनके होनेपर महा-

कोई भय नहीं करता था । मारवाडकी सामन्तमण्डली प्रबल सामर्थ्यशालिनी थी, इस कारण मारवाड राज पहिले विजातीय सेनाकी सहायता लेनेमें किसी प्रकार समर्थ न हुए थे; किन्तु परिणामने मुगलोंके अत्याचार उपद्रवके पीछे पठानोंकी सेनाने संहारमूर्तिसे मारवाडमें प्रविष्ट होकर सब ही छार खार कर दिया । रजवाडेका प्रत्येक राज्य इसी प्रकार विध्वस्त होनेपर प्रबल क्षमता शाली जातिने आकर उनके ऊपर अधिकार स्थापन करलिया । ”

पट्टावतु संप्रदायके कर्त्तव्य कर्म ।—विख्यात इतिहास लेखक हालम लिखते हैं कि, “ राजा आश्रय दे और सामंतगण राजभक्ति दिखानेके साथ अपना २ २ निर्धारित कर्त्तव्य पालन करें, सामंत शासन शैलीकी यही दोनोंके द्वारा निर्धारित मूलनीति है । एक पक्षमें यह नीति सामन्त मण्डलीको अपने प्रभुके निर्धारित कार्य करनेमें बाध्य करती है, दूसरे पक्षमें अधीनतामें स्थित सामन्तोंको अत्याचार उत्पीडन वा शत्रुओंके आक्रमणसे सदा रक्षा करनेमें उसी प्रकार समर्थ हों। यदि दोनों दोनोंके निर्धारित कार्योंको न सिद्ध करें तो एक ओर सामन्त जिस प्रकार अपना प्रभुत्व खोदेते हैं, राजा भी उसी प्रकार सामन्तोंके ऊपर प्रभुत्व और शक्तिसंचालनकी प्रभुतासे हीन होजातेहैं । ” *

सामन्त शासन प्रणालीका मूल उद्देश उक्त लेखसे भलीभाँति प्रगट है; इसके द्वारा यह भी प्रगट है कि राजा और सामन्त परस्पर एक दूसरेकी सहायता करनेके लिये सम भावसे बाध्यहैं । सामन्त शासन नीतिका यह सरल सत्य उद्देश राजपूतोंके द्वारा अति विशद रूपसे दो लिपियोंमें प्रकाशित हुआ है । मारवाडकी सामन्तमण्डली, अधिपति और सामन्तोंके परस्पर कर्त्तव्य कर्म क्या है इस विषयमें एक लिपिहै, × और दूसरी लिपिमें राणाके अधीन देवगढके सामन्तके सरदारोंका स्वत्व निर्णय, देवगढपति द्वारा उस स्वत्वमें हस्तक्षेप और उसका अन्तिम फल वर्णन किया गया है । *

पूर्वकालमें मारवाडके कोई नरपति यदि उस प्रकारसे सामंत मण्डलीके ऊपर अन्याय प्रभुत्व दिखानेमें अग्रसर होते, तो किसी प्रकार कृतकार्य नहीं होसकते थे, वरन सम्मिलित दुर्दान्त सामंतगण उनके जीवन और सिंहासनको महा विपत्तिमें डाल देतेथे । सामन्तोंकी उक्ति एक पक्षमें जिस प्रकार न्यायमूलक है, अन्य

* हालम, १ लावालम, १७३ पृष्ठ ।

× परिशिष्ट—पहिली अनुलिपि देखो ।

* परिशिष्ट—दूसरी और तीसरी अनुलिपि देखो ।

नवीन कबूलनामके ऊपर केवल महाराणा और चार प्रधान सामन्त उसपर हस्ताक्षर करें, परन्तु अधिक दिनोंके उपरान्त वह कबूलनामा खारिज होजायगा । फिर उस धाराके पालनेमें सामन्त अथवा महाराणा कोई भी अगुआ नहीं होगा; इसी कारण पहले ही की समान विशृंखलता चारों ओर फैलती जाती है । हमें ऐसा जानपड़ता है कि बृटिशदूतको अधिक सामर्थ्य देनी होगी, अधिक क्या महाराणाकी अपेक्षा उसकी सामर्थ्य बढ़ानेके लिये दोनों पक्षके हस्ताक्षर कबूलनामके अनुसार कार्य करनेमें सम्मत होंगे । कबूलनामके पढ़नेसे सरलतासे जाना जायगा कि राणाकी सामर्थ्य एक बार ही घटाकर बृटिशदूतको यथार्थ पक्षम मेवाडके सर्वमय कर्त्ताके पदपर वरण करना ही गवर्न-

—वह किसी प्रकारका व्यापार करके अपनी रक्षा करे, तो उनको किसी प्रकारसे ऐसा कार्य न करने दिया जाय ।

छठवीसवीं धारा । पहली पहलके कबूलनामके मतसे सरदारोंको एकसाथ दल बाँधकर आनेका निषेध हो चुका था । इस निषेधकी आज्ञाको उन्होंने नहीं माना, इस समय उस प्रकारका एक साथ सम्मिलन होना निष्प्रयोजन है, कारण कि यदि कोई भी किसी प्रकारका यथार्थ अनुयोग करे तो उसका विचार वह शीघ्रही न्यायपूर्वक करसकते हैं, इसके उपरान्त फिर जो दल बाँधें तो वह राज्यके शत्रु माने जायेंगे, और उनके ऊपर उसीके अनुसार व्यवहार किया जायगा ।

सत्ताईसवीं धारा । प्रत्येक सरदार एक २ प्रतिनिधि राणाकी सभामें भेजें, और उन्हींसे सब कार्य करवावें केवल सम्मानित मनुष्य ही प्रतिनिधि रूपसे चुने जायेंगे, और उनको स्वामीके पदोचित और रीतिके अनुसार सम्मान मिलेगा ।

अष्टाईसवीं धारा । राणा वा सामन्तोंके सम्पूर्ण किसान प्रजाके किसी भी स्थानमें इच्छानुसार निवास करसकेंगे, उसके ऊपर कोई भी अत्याचार नहीं करसकेगा । यदि कभी उनके विरोधमें कोई अभियोग विचारालयमें उपस्थित हो वह छोटा हो या बड़ा, सभी श्रेणीकी प्रजाको उसका अपील पोलिटिकल एजन्टके सम्मुख करना होगा ।

उन्तीसवीं धारा । राणा जिस भांति बृटिश गवर्नमेन्टको डांक और वंगीकी रक्षाके लिये देते हैं, सरदारबृन्द भी उसी भांति अपनी २ जागीरमेंसे कर दें जिस भांति राणा डांक वा वंगियोंके लुटजानेपर उनकी हानिको पूरा करते हैं उसी भांति इनको भी इनकी हानि पूरी करनी होगी ।

तीसवीं धारा । इस कबूलनामपर जब हस्ताक्षर होजायें तो इससे पहले कबूलनामकी सभी धारा खारिज होजायगी । यदि इसके उपरान्त राणा और सामन्तोंमें कोई विवाद होजायगा, जो कि इसमें नहीं लिखा गया है, या जिस सम्बन्धमें कोई संदेह उपस्थित होजाय, तो वह सभी तीन दिन के बीचमें मेवाडमें स्थित पोलिटिकल एजेंट और गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेंटके निकट विचारके लिये भेजना होगा, और उसका विचार ही कालांतर तक माना जायगा, यदि ऊपर कहे हुए निश्चित समयमें कोई अभियोग उपस्थित न होगा तो उसको अयोग्य मानकर त्याग दिया जायगा ।

“राजके मालिक वह, मस्तकका मालिक यह ।” इसका अर्थ यह है कि, राजा तो अपने राज्यके मालिक हैं, किन्तु मेरा मस्तक मेरे प्रभुका है । यथार्थ बात यही है कि सरदार लोग अपने प्रभु सामन्तकी आज्ञा पालन ही सब प्रकारसे उचित समझते हैं ।

ऊपरके सामन्तोंसे लेकर नीचेके सरदारतक प्रत्येक श्रेणी ही प्रबल पक्षके अत्याचारसे उद्धार प्राप्तिके लिये उपाय करनेमें सचेष्ट हैं । सामन्तोंके साथ आधीनके सरदारोंका मनोविवाद व किसी प्रकारका भारी विवाद उपस्थित होनेपर राजा ही उस स्थानमें विचारभार पाते हैं । राजाके साथ सामन्तोंकी जैसी बाध्यबाधकता-प्रभु भृत्य सम्बन्ध है, सामन्तमण्डलीके आधीनमें स्थित सरदार वा किसी प्रजाके साथ राजाका वैसा कोई सम्बन्ध वा किसी प्रकारका मेल नहीं है । वह सरदार वा प्रजागण साक्षात् सम्बन्धमें राजाकी किसी आज्ञाके पालन करनेमें बाध्य नहीं हैं । दूसरे पक्षमें राजाके निकटसे किसी प्रकारका अनुग्रह वा पुरस्कार भी वह नहीं पासकते । सामन्तकी आज्ञानुसार राजाके लिये कोई कार्य करते हैं किन्तु राजा कभी किसी सामन्तके किसी सरदार वा प्रजा मण्डलीको स्वयं बुलाकर किसी कार्यमें नियुक्त नहीं करसकते । दूसरे सरदार और प्रजावर्ग सामन्तोंके यहांतक अनुगत हैं कि सामन्त यदि राजाके विरुद्ध कोई अन्याय कार्य करें अथवा विद्रोह सूचक कार्यमें किसी सरदार वा प्रजाको नियुक्त होनेकी आज्ञा दें तो वह शीघ्र बिना किसी विचारके उस कार्य में तत्पर होजाते हैं; सामन्तके उस दृष्ट अभिप्राय वा अन्याय मूलक उद्देशके विरुद्ध वह किसी प्रश्नके उठानेमें साहसी नहीं होते । सामन्त जिस समय जैसी नीति अवलम्बन और जैसा आचरण करें, आधीनके सरदार और साधारण प्रजावर्ग द्विरुक्ति न करके उसीका अनुसरण करना सिद्धान्त करलेते हैं । सामन्त यदि राजभक्त हो तो वह भी राजभक्तिके वशीभूत होकर जन्मभूमि और स्वजातिके गौरव वर्द्धनमें जीवन उत्सर्ग करदेते हैं और यदि सामन्त विद्रोही और स्वजातिके शत्रु होजायें तो वह भी उसी प्रकार विद्रोह करनेमें कुछ भी नहीं हिचकते । इसके प्रमाणमें यहां बहुतसे प्रमाण उद्धृत किये जासकते हैं किन्तु हम उन प्रमाणोंको अनावश्यक समझते हैं क्योंकि मूल इतिहासके पढनेसे पाठकोंकी भलीभाँति विदित होगया है कि कई स्थानोंपर विद्रोही सामन्तके अधीनमें और उनकी आज्ञाओंमें सम्पूर्ण सम्प्रदायने राजाके विरुद्ध खड़े होकर अत्यन्त भयंकर

बीसवाँ अध्याय २०.

महाराणा स्वरूपसिंह;—शासनसमिति स्थापन;—शासनकर्त्ता-
ओंके अत्याचार;—शासनसमिति भंग;—पोलिटिकेल एजन्ट-
को मेवाडके आसनके भारकी प्राप्ति;—मेवाडमें शान्ति
स्थापन; महाराणाशंभुसिंहके राज्यशासनकी अशिक्षा;—
ब्रिटिश गवर्नमेन्टके द्वारा महाराणाको पोष्यपुत्रके ग्र-
हण करनेकी सामर्थ्य देनी;—महाराणाको उपाधिकी
प्राप्ति;—ब्रिटिश गवर्नमेन्टका अविचार;—महाराणा
शंभुसिंहको शासनकी सामर्थ्य प्राप्त होना;—
उनका अकालमें प्राणत्याग;— ।

महाराणा स्वरूपसिंहके पुत्रहीन अवस्थामें मरजानेपर उनके भतीजे सत्रह
वर्षकी अवस्थामें व्यवहारोंके न जाननेवाले शार्दूलसिंहके बेटे शंभुसिंह १८६१
ईसवीमें राणाके पदपर विराजमान हुए; ब्रिटिश गवर्नमेन्टके प्रस्तावके मतसे शीघ्र-
ही एक शासनसमिति स्थापनकर कितने ही सम्मानित सरदारोंको उनके सदस्य
पदपर नियुक्त किया गया, वही राणाके नामसे मेवाडको पालन करनेलगे । परन्तु
शासनके विषयमें अपनी पूरी सामर्थ्य न रखनेके कारण ब्रिटिश गवर्नमेन्टके
उपदेशानुसार कार्य करने लगे; शासनकी समितिके सभ्यगणोंके न्याययुक्त
प्रचलित विधानके मतसे शासनके बदलेमें इच्छानुसार शासनका आरंभ कराकर
शीघ्र ही विपरीत फल फलना आरंभ हुआ । और फिर चारों ओर अत्याचार
होनेलगे, अविचार और स्वेच्छाचारितासे, तथा उत्पीडितानलके प्रज्वलित होनेसे
मेवाडनिवासी फिर अत्यन्त ही व्यथित होगये । पोलिटिकल एजन्टकी उक्ति
और परामर्शके प्रतिशासन समितिके मतकी ओर दृष्टि न करनेके कारण
ब्रिटिश गवर्नमेन्टने मेवाडके शासनकी नवीन व्यवस्था करना अपना एकान्त

स्वाधीनता कुछ भी नहीं थी ।” वह इस शासन प्रणालीका मूल मर्म समझनेपर अवश्य ही अपना भ्रान्त मत छोड़नेमें बाध्य होंगे । रजवाड़ेकी शासनशैली इस बातको भलीभाँति प्रगट कर रही है कि,—नरपतिगण, सामन्तवृन्द और उनके आधीन स्थित सरदार यह तीनों ही परस्पर एक दूसरेके ऊपर अकृत्रिम विश्वास स्थापनसे जातीय शक्ति प्रबल, स्वाधीनता रक्षा और गौरव अर्जन करगये हैं । शासन प्रणालीके अनुसार राजाकी जितनी शक्ति और प्रभुत्व निर्धारित है, उससे अधिक क्षमता वा प्रभुत्व प्रकाशद्वारा सामन्तोंके प्रति अन्यान्य आचरण करनेपर विपरीत फल मिलता था, उस समय सब सामन्त एकत्र सन्मिलित होकर राजाका जीवन और सिंहासन तक विचलित कर डालते थे । दूसरे पक्षमें वह सामन्तमण्डली यदि अपने अधीनस्थ सरदारोंके प्रति अत्याचार करनेमें उद्यत होती, तो वह सरदारलोग भी उसी प्रकार उनको विपद ग्रस्त कर डालते थे, इस कारण कोई भी साहसके साथ यथेच्छाचार करनेमें अग्रसर नहीं हो सकता था । सबकी क्षमता, सबका दायित्व और सबका कर्त्तव्य कर्म शासन नीतिके द्वारा ही बहुत समय पहिले ही निर्णीत होगयाहै, इस कारण चिर प्रथा रक्षाके लिये जो जाति प्राणतक देनेमें भयभीत नहीं हुई, वह जाति किस कारणसे यथेच्छाचार शासनके मुखमें स्वाधीनताको वलिदान करेगी ?

इस समय पोलिटिकल एजन्टको आज्ञा दी, पोलिटिकल एजन्टने उसी आज्ञाके मतसे शीघ्रही शासन विभागकी सम्पूर्ण रीति महाराणाको सिखा दी, ऐसा होनेसे महाराणा शीघ्रही राजधर्ममें विलक्षण रूपसे शिक्षा पागये इस समय मेवाडका राजस्वभी प्रीतिप्रद रूपसे बढ़ रहा है । सिपाही विद्रोहके अन्तमें भारत वर्षके गवर्नर जनरल और प्रथम राजप्रतिनिधि लार्ड क्यानिंगने भारतके समस्त देशीय राजाओंको उत्तराधिकारी बनानेमें सामर्थ्य दी । महाराजा शंभु सिंह देशीय राजाओंके शिरमौर हुए, इस कारण उन्हें भी इस समय क्रमानुसार उत्तराधिकारीके लिये पुत्रको गोद लेनेकी सामर्थ्य प्राप्त हुई × सिपाही विद्रोहके उपरान्त भारत साम्राज्यको ईष्ट इन्डिया कंपनीके हाथसे इंग्लैन्डेश्वरीने स्वयं ग्रहण किया, देशी राजाओंके सन्मान बढ़ानेके निमित्त एक प्रकारके नवीन मान्यसूचक उपाधिकी सृष्टि हुई । उसका नाम भारतनक्षत्र हुआ । ब्रिटिश गवर्नमेन्टने पहली श्रेणीके पदक सहित “ ग्राण्ड कमान्डार एर आफ इन्डिया ” की उपाधिरूपी भूषणसे महाराणा शंभुसिंहको भूषित करदिया । १८५७ सत्तावन ईसवीमें सिपाहियोंके विद्रोहके समय उदयपुरकी महाराणाकी सेनाने ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी विशेषसहायता की थी, यद्यपि यह उसीकी पुरस्कारस्वरूप उपाधि मिली । और मेवाडेश्वर भी भलीभांतिसे पुरस्कारको प्राप्तहुए, परन्तु इस स्थानपर हम एक अत्यन्त अप्रीतिकारक विषयका उल्लेख करना आवश्यक समझतेहैं । यह हमारे पाठकोंको विलक्षणभावसे विदितहै कि महाराष्ट्रियोंमें सिन्धिया और हुलकरने अन्याय करके मेवाडके बहुतसे देशोंपर अपना अधिकार करलिया था, और जिस समयमें ब्रिटिश गवर्नमेन्टके साथ महाराणा भीमसिंहका प्रथम संधिवन्धन हुआ उस समय ब्रिटिश गवर्नमेन्टने प्रतिज्ञा की थी कि किसी अच्छे

× महामान्य (रानी विक्टोरिया)की यह अभिलाषा है कि जो भारत वर्षके सम्पूर्ण राजा इस समय अपने २ देशको शासन कर रहेहैं वह सब देश चिरकालके लिये उनके वंशधरोंसे शासित और उनके वंशके सन्मान अक्षत भावसे रक्षित होते रहें, उस अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त हम आपको अंगीकार करना विदित करतेहैं कि यदि आपके पुत्र उत्पन्न न हो तो आप अपने वा अपने राज्यके भावी शासनकर्ता गण हिन्दू विधिसे अपने वंशकी रीतिके अनुसार पुत्रको गोद लेलें, गवर्नमेन्ट इसमें सम्मति देनेमें किसी भांतिकी आनाकानी नहीं करेगी ।

जबतक आपके वंशधर राजभक्तरूपसे रहेंगे, और जिन संध्यादिकोंसे ब्रिटिश गवर्नमेन्टके साथ वाध्यता स्थापित हुईहै, उन संध्यादिकोंके प्रति जबतक स्वस्थभावसे दृष्टि रखेंगे तबतक किसी प्रकार भी स्वीकारको भंग नहीं कियाजायगा ।

(हस्ताक्षर) क्यानिंग । ”

स्वाधीनताकी सनदपर (Magna charta) हस्ताक्षर किये उस समयसे उस सनदके अनुसार सामन्तोंके अभिषेक समयमें नजराना निर्धारित संख्याके अनुसार गृहीत होने लगा । * फ्रांसके नये अभिषिक्त सामन्तकी एक वर्षमें जितनी आय होती, राजा उसीको नजरानेमें लेते थे । मेवाड राज्यमें इस फ्रांसकी व्यवस्थाके अनुसार ही प्रत्येक नवीन सामन्त अभिषेकके समय राणाके निकटसे नई सनद लेकर अपने अधिकृत प्रदेशकी एक वर्षकी आयके रुपये नजरानेमें देते आते हैं फ्रांसकी उक्त प्रथाकी रीतिपर मेवाडमें यह प्रथा प्रचलित हुई पाठक ऐसा अनुमान न करें क्योंकि फ्रांसकी उक्त रीतिके चलनेके बहुत काल पहिले मेवाडमें यह प्रथा प्रचलित थी ।

मेवाडके किसी सामन्तके स्वर्ग सिंघारनेपर, राणा शीघ्र ही जुवातिनामक सम्प्रदायको × उस मृत सामन्तके अधिकृत प्रदेशमें भेजते हैं । उस सम्प्रदायके अध्यक्ष एक दीवानी कर्मचारी और उनके अधीन कई सैनिक राणाके नामसे उक्त प्रदेश तत्काल अधिकार कर लेते हैं । जब राणाके कर्मचारी देश अधिकारमें कर लेते हैं तब मृत सामन्तके पुत्र वा उत्तराधिकारी उसी समय पिताके पदपर अभिषिक्त और भूवृत्ति प्राप्तिके लिये राणाके निकट प्रार्थनापत्र भेजते हैं, और उसमें नियमानुसार नजराना देनेकी प्रतिज्ञाभी कर देते हैं । उक्त उत्तराधिकारीके निर्धारित नियमानुसार राणा भवनमें नजराना भेजनेपर राणा उनको तत्काल राजसभामें बुलाते हैं उक्त उत्तराधिकारी राजसभामें जाकर राणाकी चरण वंदना करते हैं । और सामन्त पदके प्रत्येक कर्तव्य कर्म पालन और प्रत्येक आज्ञा साधनकी प्रतिज्ञा करनेपर राणासे सामन्तपदकी नई सनद लेते हैं । सनदके साथ राणा प्राचीन वीर प्रथाके अनुसार नवीन सामन्तोंकी कमरमें एक तलवार बांधकर उनका अभिषेक कार्य्य सम्पन्न करते हैं । यह अभिषेककार्य्य बहुत मनोहर है; सम्पूर्ण साधनोंसे भरे हुए सभामण्डपमें यह कार्य्य सम्पादन किया जाता है । नजराना देते ही राणा उक्त प्रकारसे तलवार बांधकर सन्मानस्वरूप घोडा, दुपट्टा और दुशाला देते हैं । अभिषेककार्य्य समाप्त होनेपर

* अर्ल लोगोंके उत्तराधिकारी पिताके पद और सम्पत्ति लेनेके समय १०० मुद्रा देते हैं । बैरन लोगोंके उत्तराधिकारी एक सौ मार्क और नाइट लोगोंके उत्तराधिकारी ५० मुद्रा नजरानेमें देते हैं । मागनाकार्ग तीसरी धारा देखो ।

× जो लोग सामन्तके परलोक सिंघारनेपर उनके प्रदेशको राणाके अधिकारमें करनेके लिये जाते हैं, उस सम्प्रदायको जुवाति कहते हैं ।

इक्कीसवां अध्याय २१.

महाराणा सज्जनसिंह;—मेवाड़की शासन व्यवस्था;—शिक्षाका प्रयोजन;—भारतके भावी सम्राट्के साथ महाराणाका साक्षात्;—विक्टोरियाके राजसूययज्ञमें महाराणाका जाना;—मेवाड़का वर्तमान संक्षिप्त विवरण;—
महाराणा फतहसिंहका राज्यशासन और उपसंहार;— ।

महाराणा शंभुसिंहके अकालमें ही मरजानेके पीछे उनके भतीजे शक्तसिंह और सोहनसिंह इन दोनोंमें किसीको भी मेवाड़के राज्य पानेकी संभावना नहीं थी, परन्तु शंभुसिंहने अपने वचनेकी आशा एक बार ही छोड़ दीथी, अंत समयमें अंग्रेज गवर्नमेन्टके दियेहुए पोष्यपुत्रको गोदलेनेकी सामर्थ्यके अनुसार अपने बड़े भतीजे सोलह वर्षकी अवस्थावाले सज्जनसिंहको अपने उत्तराधिकारीके पदपर नियुक्त किया, इस कारण शंभुसिंहके परलोक जानेपर वही आजकलके महामान्य महाराणा सज्जनसिंह मेवाड़के सिंहासनपर अभिषिक्त हुए ।

महाराणा सज्जनसिंहके गद्दीपर बैठते ही मेवाड़के शासनकी अवस्था भी शीघ्रही बदल गई । महाराणा अभी व्यवहारोंको नहीं जानतेथे, इस कारण फिर शासनसमिति स्थापित कर मेहता गोकुलचन्द और अर्जुनसिंहको मंत्रीके पदपर वरण किया वह दोनों और चारों सरदारोंके साथ शासनकार्यमें लगे, तथा पोलिटिकेल एजन्टने उस समितिके सभापतिके पदको ग्रहण किया, शासनसमितिने मेवाड़में सुख और शांतिके उपायका अवलम्बन करनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न किया, और शीघ्रही उस विषयमें अधिक कार्यकी सफलता दिखाई ।

नवीन शासनसमितिके सबसे पहिले एक विशेष प्रार्थनीय और प्रयोजनीय विषय पर हाथ डाला । यद्यपि मध्यकालके देशीय राजाओंमें बहुतसे ऐसे हैं कि जो राजनीतिज्ञताका विलक्षण परिचय दिखाते हैं, और बहुतोंने अपने बाहुबलकी वीरतासे

कच्छके झारिजा । * यद्यपि संप्रदायके मध्यमें सामंतोंके अधीन स्थित सरदारगण, सामंतोंके निकटसे अपना भूस्वत्व स्वतंत्र करसकतेहैं, किंतु वहांकी सामंत मंडली सबका स्वत्व दूसरेके हाथमें नहीं करसकती । रजवाड़ेमें केवल धर्मोद्देश वा किसी प्रकारके धर्मानुष्ठानके लिये सामंतगण भूमिके स्वत्व को हस्तांतरित करनेमें समर्थ हैं, किंतु उसमें भी राजाकी अनुमतिकी आवश्यकता है । देवगढके सामन्तने राणाकी विना अनुमतिके और सदारांकी अनिच्छासे एक बार भूमिका स्वत्व हस्तांतरित करदिया था, यह देखकर राणाने उनकी सब भूवृत्ति छीन ली, अंतमें जब उन्होंने फिर पहिली व्यवस्था अवलंबन करी तो उनको भूवृत्ति लौटा दी गई थी ।

जितने किसान साक्षात् राणाके निकटसे पट्टा ग्रहण करके कृषिकार्य निर्वाह करते हैं, वह कुछ धन दण्डमें देकर भूस्वत्व सर्वथा अपने अधिकारमें करसकते हैं । अधिपति उनके निकटसे केवल कर लेनेके अधिकारी हैं ॥

भूवृत्तिका प्रतिग्रहण । — जिन सामन्तोंको इस प्रतिज्ञासे भूवृत्ति दीजाती है कि वह वंशानुक्रमसे भूवृत्ति भोग करेंगे, किन्तु पोष्य पुत्रग्रहण वा अन्य किसीको भी नहीं देसकेंगे, उनमेंसे किसीके अपुत्रक दशमें प्राण त्यागने पर अधिपति वह भूभूवृत्ति लौटा लेते हैं । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, मैंने उक्त कारणसे राणा द्वारा भूवृत्तिका लौटा लेना स्वयं देखा है और यदि पोष्यपुत्र ग्रहणकी रीतिका प्रचल सोत निवारित हुआ तो यह प्रथा और भी देखनेमें आवेगी । कोई सामन्त किसी प्रकारके अपराधमें अपराधी होजाय तो उसके हाथसे भी भूवृत्ति प्रतिग्रहण कर ली जाती है । अपराधके परिमाणके अनुसार किसीका सम्पूर्ण भूखण्ड और किसीका अर्द्धांश ले लिया जाता है । पश्चिमके राज्योंमें भी पहिले यह रीति प्रचलित थी ।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि, “ इस समय मारवाड राज्यकी सामन्त मण्डलीमें प्रथम श्रेणीके प्रायः सब सामन्त ही निर्वासित होकर भिन्न देशमें वास करते हैं । मारवाड राजवंशीय इन्दौरके महाराज भी उस दृष्टान्तके अनुसार अपने राज्यके सब सामन्तोंको निर्वासित करनेमें उद्यत हुए थे, किंतु बम्बई प्रेसीडेंसीके उस समयके गवर्नर मि० एल्फिनिष्टनने राजाकी उस आशाको व्यर्थ करदिया ”

पीडन नहीं

* कच्छकी राजपूत जाति झारिजा नामसे विख्यात है । यह अपनेको यदुवंशीअपने राजाके वंशधर बताते हैं । पूर्वकालमें यह लग सिन्धु नदीके तटकी भूमिमें वास करते थे ।

साथ संभाषण और कार्यमूलक तत्त्वके अनुसंधानसे ज्ञान और बुद्धिके बढ़नेकी अधिक संभावना है, उसीसे यथार्थ शिक्षा प्राप्त होती है और वही शिक्षा मनुष्यको संसारमें देवताकी समान पूजनीय करदेती है। उस मानसिक शिक्षाके साथ फिर नैतिक शिक्षाका संयोग साधन सबसे पहले प्रार्थनीय है, नैतिक बलही इस संसारमें सबसे श्रेष्ठ बल है। जिनमें नैतिक बल नहीं है, या जिन्होंने नीतिकी शिक्षाके समयमें उदासीनता प्रकाश की है, पंडितोंके विचारसे उनकी मानसिक शिक्षा एक बार ही कर्महीन होजायगी। मनुष्य संसारमें एक श्रेष्ठ जीव है। मनुष्य अपने आपही अपने आचार व्यवहारसे ऋषिकी समान, देवताकी समान, सर्वत्र पूजने योग्य और सभी मनुष्योंके हृदयमें अधिकार करता है, फिर नरकके कीड़ोंको देखकर घृणा होती है। जो मनुष्य नैतिक बलसे बलवान है उस मनुष्यके भाग्यकी लक्ष्मी प्रधान सहायक होकर उसको दूसरोंके निकट यशकी अधिकारिणी बना देती है, और जो मनुष्य नैतिक बलसे हीन है, वह मनुष्य सहस्रों ग्रंथोंके पढ़ानेसे भी सर्व साधारणमें घृणास्पद है। इस कारण राजाओंके पक्षमें निस्सन्देह नैतिक शिक्षाका विशेष प्रयोजन है। राजा जितना सच्चरित्र, शुशील और नीति-संपन्न होगा, उतने ही उसके चरित्रोंके आदर्शमें प्रजाके चरित्र विगठित होंगे; सब प्रकारसे शारीरिक शिक्षाका भी विशेष प्रयोजन है। अमूल्य जीवनकी रक्षाके लिये शारीरिक शिक्षाका प्रचार बहुत कालसे सभ्य जगत्में है। मानसिक, नैतिक और शारीरिक, इन तीन श्रेणियोंकी शिक्षा जिस राजाको मिल गई है, उस राजासे प्रजा अधिक सुखपानेकी अधिकारिणी है, मेवाडकी नवीन शासन समितिने उदार नीतिके वश होकर महाराणा सज्जनसिंहको यथार्थ शिक्षा-देनेमें सबसे प्रथम हाथ डाला।

दीवान जानि बिहारीलालने महाराणके शिक्षकपदपर नियुक्त हो महाराणा सज्जन सिंहको नैतिक और दैहिक श्रेष्ठ शिक्षाके देनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न किया। यह निर्वाचित शिक्षक सब अंशोंमें योग्य पुरुष है, इन्हींकी अध्यक्षतामें महाराणाने इस समय अंग्रेजी, उर्दू और मातृभाषामें भलीभाँतिसे अभ्यास करलिया, बाप्पारावलके वंशधरोंमेंसे इन्हींने इस पहली रीतिके मतसे अंग्रेजी भाषामें अधिकार प्राप्त किया है। महाराणाका स्वभाव और इनके चरित्र भी संतोषदायक हुए, हमने इस विषयमें बहुतसे प्रमाण पाये हैं।

शासनसमिति केवल वर्तमानके महाराणा सज्जनसिंहको शिक्षाकी व्यवस्था करके ही शान्त न हुई, वरन सर्व साधारणको अंग्रेजी पढ़ानेके लिये उदयपुरकी

नुसार देती है अधिपति वा सामन्तकी कन्याके विवाहमें सहायता देना वह सम्मानका विषय समझते हैं । फ्रांसकी प्राचीन सामन्त शासन प्रणालीके अनुसार ऐसे धन देनेकी सथा प्रचलित थी और मागनाकार्टा अर्थात् इंग्लैण्ड सम्बन्धी साधारण प्रजाकी प्रधान स्वाधीनताकी सनदके अनुसार वहाँके सामन्तलोग अपने ज्येष्ठ पुत्रके कुलीनताके पद ग्रहण, बड़ी कन्याके विवाहमें तथा वैरियोंके द्वारा स्वयं बन्दी हो जानेपर दण्डरूप धन देकर छुटकारा पानेकी आवश्यकता पडनेपर साधारण प्रजा तकसे धनकी सहायता लेते थे, राजपूत राज्योंमें भी जिस समय मुगल पठान उपद्रव अत्याचार और हमले करके सामन्तोंको बन्दी कर लेजाते थे । उस समय उनकी प्रजा धन देकर सामन्तोंको वैरियोंके हाथसे छुटाती थी, कर्नेल टाड लिखते हैं कि इंग्लैण्डेश्वर विख्यात सिंहविक्रमी वीर रिचर्ड यदि राजपूतोंके अधिपति होते तो दीर्घकालतक उनको बन्दी दशमें आश्रित्यामें रहना न पडता ।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि अम्बेर अर्थात् वर्तमान जयपुर राज्यमें इस प्रकारकी सहायता केवल युवराजके विवाहमें ही लीजाती है सामन्त पुत्रकी नाबालिग अवस्थामें उसके देशका प्रबन्ध—किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर यदि उनका पुत्र नाबालिग हो तो उसके देशका प्रबन्ध करनेके लिये यथोचित व्यवस्था कर दीजाती है उस सामन्त पुत्रके समर्थ होते ही उसके हाथमें फिर उसके देशका अधिकार सौंप दिया जाता है । टाड साहब लिखते हैं कि यह प्रबन्धका भार समय समय पर राणाके अनुग्रह प्राप्त किसी सामन्तके धन प्राप्तिके निमित्त उसके हाथमें देनेसे बुरे परिणाम भी निकलते हैं, यूरोपमें भी इसी प्रकार होता था मृत सामन्त जिस अवस्थामें है जिस सम्प्रदायमें है उस सम्प्रदायके नेताके हाथमें ही राणा उस असमर्थ सामन्त पुत्रके ऐश्वर्य और देशरक्षाका प्रबन्ध सौंपते हैं । कभी २ स्वयं राणाजी भी प्रबन्ध करते हैं और कभी २ उस असमर्थ (नाबालिग) सामन्तकी माता भी देशका प्रबन्ध अपने हाथमें लेकर सब कार्योंको स्वयं सँभालती हैं ।

विवाह—विवाहके पहले प्रत्येक सामन्त अपने अधिपतिकी इस विषयमें अलेलेते हैं विवाहके समय सामन्तकी पद मर्यादाके आनुसार अधीश्वर वस्त्र तथा दूसरे पदार्थ भी यौतुक स्वरूप देते हैं ।

कोई राजपूत अपनी सम्प्रदायके किसी पुरुषकी कन्याका पाणि नहीं करसकता । जर्मन शासनमें इसी प्रकार अपनी श्रेणीके और राजाके पक्षके किसी पुरुषकी कन्याका पाणिग्रहण करनेकी आज्ञा ।

लिये राजधानी दिल्लीमें जानेसे अपने गौरवकी हानि समझतेथे, उन्हीं महाराणाओंके वंशधर इंग्लैण्डेश्वरीके ज्येष्ठपुत्रके साथ साक्षात् करनेके लिये कितनी दूर बम्बईमें जाकर उनके आनेकी वाट जोह रहेथे!

१८७७ ईसवी जनवरीमें जिस समय बृटिशरानी महामान्या श्रीमती विक्टोरियाके प्रतिनिधि लार्ड लिटनने भारतकी प्राचीन राजधानी दिल्लीमें राजसूय यज्ञका अनुष्ठान किया और जनवरी महीनेकी पहली तारीखको बृटिश राज्ञीकी “ भारतेश्वरी ” उपाधि बडे आडम्बरसे विधोषित हुई महाराणा सज्जनसिंह भी उस विक्टोरिया राजसूय यज्ञमें निमंत्रित होकर गये, उस समय महाराणाके साथमें बहुतसे सामन्त और सेवक भी गयेथे । जब १८७६ ईसवीकी २६ वीं दिसम्बरमें महाराणा सज्जनसिंह बहादुरने दिल्लीमें स्थित बृटिशराज प्रतिनिधियोंके वस्त्रावासमें गमन किया तब उनके सन्मानके लिये सत्रह तोपोंका फेर कर उनके यानसे उतरते ही अंग्रेजी सेनाने समरकी रीतिसे अस्त्र दिखाकर मान किया । इसके उपरान्त भारतवर्षकी गवर्नमेन्टके वैदेशिक सेक्रेटरीने उनको सन्मानके साथ ग्रहणकर राज वस्त्रावासके भीतर लेजाकर राज प्रतिनिधियोंके निकट परिचित कर दिया । महाराणाके जाते ही माननीय राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन (इस समय अर्ल)ने उनको आदरसहित लेकर अपने दक्षिण पार्श्वमें ऊंचे आसनपर बैठाया और फिर आप सिंहासनपर बैठे, मेवाडके पिछले महाराणाओंने गवर्नमेन्टके साथ जिस प्रकार मित्रताकी रक्षा की थी इस बातका कथन कियागया, पश्चात् हाइलार्डके सैनिकने एक रमणीय पताका * लाकर सिंहासनके सामने उपस्थित की महाराणा प्रतिनिधिके सहित पताकाकी ओरको आगे बढे और निम्नलिखित युक्तियोंके साथ महाराणाके हाथमें वह पताका दीगई अपने वंशके राजचिह्नोंसे अंकित यह पताका महामाननीया महारानीकी स्वयं उपहारस्वरूप है, यह भारतेश्वरीके उपाधि धारणके स्मरणमें आपको उपहारस्वरूप दीजाती है ।

इंग्लैंडके सिंहासन और आपके राजभक्त वंशके बीचमें जो दृढ सम्बन्ध है तथा प्रधान शासनकी सामर्थ्य [अंग्रेजगवर्नमेन्ट] अपने वंशकी प्रबलता, सुख स्वच्छन्दता और अविनाशिताके दर्शनाभिलाषी आप जबतक इस पताकाको उडावेंगे तब तक इससे आपका स्मृतिमार्ग उदय होगा यह महामान्यको विश्वास है ।

* यह पताका देखनेमें बड़ी शोभायमान थी, सोनेके डंडेके ऊपर एक छोटा सोनेका मुकुट और उसके कुछ नीचे सुवर्णसे रंजित दोमुखा दंड था उसके अवलम्बमें तांबूलाकार शालरके साथ चीनी वस्त्रकी पताका लटक रहीथी, पताकाकी एक ओर हिन्दी अक्षरोंमें “ विक्टोरिया कैसरहिन्द ” और दूसरी ओर महाराणाके वंशके राजचिह्न अंकित थे ।

शब्दोंका कुछ २ उच्चारण समान होनेपर और अर्थ भी प्रायः दोनोंका समान होने पर भी दोनों शब्द समान भावसे उत्पन्न हुए हैं, यह कभी स्वीकार नहीं किया जासकता ।

भूवृत्तिका पुनर्ग्रहण ।—कनेल टाड लिखते हैं कि सामन्त मण्डली बहुत काल पूर्वसे राणाके निकटसे प्राप्त हुई जिस भूमिको भोगती आती है, उन सामन्तोंके किसी प्रकारके अपराध, अराजभक्ति, नियम भङ्ग वा किसी विशेष कारणके बिना राणा अपनी इच्छानुसार वह प्रदेश पुनर्ग्रहण करसकते थे या नहीं इसमें संदेह है । यूरोपमें जो सामन्त शासनकी रीति प्रचलित थी, उस शैलीके निर्धारित विधानके अनुसार सामन्तलोग जितने दिन जीवित रहतेहैं, केवल उतनेही दिन उसको भोगते हैं, उनके परलोक सिधारनेपर वह देश फिर स्वामीके अधिकारमें होजाता है । किंतु मेवाड राज्यके किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर जितने कार्य प्रचलित होते आते हैं उनके द्वारा उस प्रश्नकी पूरी मीमांसा होगई है । मेवाडके किसी सामन्तके मरनेपर उनके उत्तराधिकारी, राणाके सन्मानार्थ जिस प्रकार नजराना देकर फिर सनद प्राप्त करते और राणाके द्वारा सामन्त पदपर अभिषिक्त होते हैं उसके द्वारा भलीभाँति प्रगट है कि राणा इच्छा करनेपर भूवृत्ति रहित करके उस देशको अपने अधिकारमें करनेकी शक्ति रखते हैं, किंतु राणालोग उस सामर्थ्यको कार्यमें न लाकर पूर्व समयसे सामन्तोंके ययार्थ उत्तराधिकारियोंको ही देते चले आते हैं, इस कारण उनकी वह शक्ति मृतप्राय सी होगई है । राणालोग सत्य २ ही प्रतिग्रहणकी शक्ति रखते थे, उसके प्रमाणके लिये कनेल टाड लिखते हैं कि, राणा संग्रामसिंहके शासन समयमें मेवाडके सामन्तोंके अधिकृत देश वास्तवमें ही दूसरोंके हाथमें भी जाते थे । प्रायः दोशताब्दीसे यह प्रथा विलकुल बंद है । उक्त समयके पहिले किसी राठौर सामन्तका अधिकृत देश निर्धारित समयके पीछे अधीश्वर दूसरे सामन्तको देदेतेथे, उस समय वह राठौर सामन्त परिवार, गौ आदि पशु और अनुचरों सहित उत्तर प्रान्त छोडकर 'चुप्पान' * की वनैली भूमि में जाकर वास करते थे; इधर उसी भावसे कोई शक्तावत, सामन्त आरावालीकी तलैटीमें आकर नये देशमें आश्रय लेतेथे; उधर चन्दावत सामन्त चम्बलतीरवर्ती देश छोडकर किसी प्रमार वा चौहान सामन्तके अधिकार किये मेवाडके पूर्व

* मेवाड और गुजरातके जिस वनमय पहाडी देशको विभाग कर दियाहै, दक्षिण पश्चिममें स्थित उस देशको चुप्पान कहते हैं ।

निवास नामक वाग लगवाया इसमें तरह तरहके मेवेके फूल फलके वृक्ष लगवाये । सन् १८८४ में महाराणा सज्जनसिंहजी २५ वर्षकी अवस्थामें कुछ दिन अस्वस्थ रहकर परलोकको सिधारे तो समस्त मेवाड ही नहीं किन्तु समस्त राजस्थान मेवाडमें डूबगया । राजस्थान बाहर भी भारतवर्षके निवासियोंको इनकी अकाल मृत्युसे बड़ा खेद हुआ क्योंकि यह महाराणा साहब बड़े तीव्रबुद्धि, परोपकारी, गुणग्राही, उच्च मनस्क, और देशहितैषी थे, और इनकी सत्कीर्ति भारतवर्ष-भरमें फैल गईथी । यद्यपि ये मेवाडके राज्याधीश थे परन्तु इन्होंने उच्च विचार और शुभ गुणोंसे समस्त भारतकी आर्य्य सन्तानके हृदयमें ऐसा प्रभाव जमायाथा कि वह इनको वास्तविक हिन्दूपति समझती थी ।

मेवाडके राज्यका परिमाण पहिलेहीकी समान अर्थात् ११६१४ वर्गमील था । यह कलकत्तेकी राजधानीसे ११३६ मील दूरहै । सुशासनके गुणसे राज-धनकी संख्या इस समय अधिक बढ़गईहै । राजधनका परिमाण ६४०००००) रुपयाहै; इसमें महाराणा अंग्रेज गवर्नमेंटको कर स्वरूपसे दो लाख रुपया और भीलसेना दलका व्ययस्वरूप वार्षिक ५००००) रुपया देतेहैं सुख शान्तियुक्त मेवाडके निवासियोंकी संख्या जो इस समय क्रमशः बढ़ती जा रहीहै उसका अनुमान सरलतासे हो सकताहै । महाराणाके आधीनमें इस समय २५३ कमान १३३८ गोलन्दाज ६२४० अश्वारोही और १३२९०० पैदलोंकी सेनाहै । लफ्टिनेन्ट कर्नल सी. के. स्मिथ. सी. एस. आई. उस समय रजिडेन्टरूपसे उदयपुरमें निवास करतेथे ।

श्री १०८ श्रीमहाराणा फतहसिंहजी जी. सी.

एस. आई.

श्रीमान् महाराणा सज्जनसिंहजीके निस्सन्तान परलोकवास होनेपर मही-महेन्द्र यावदार्थकुलकमल दिवाकर श्री १०८ श्रीमान् महाराणा फतहसिंहजी २४ दिसम्बर सन् १८८४ ई० को राजगद्दीपर विराजे ।

किसी क्षत्रिय नरेशमें जो गुण होने चाहियें वे प्रायः सभी आपमें वर्तमान हैं । आपके विशुद्ध जीवन और सदाचरणसे पूर्वसमयके क्षत्रिय राजा महाराजाओंके धर्माचरण और शास्त्रोक्त मर्यादा पालनका स्मरण होताहै । आप बड़े पराक्रमी, श्रमशील, संयमी, बुद्धिमान्, गम्भीर, मितभाषी, दूरदर्शी, दृढप्रतिज्ञ और न्यायशीलहैं । शस्त्रसंचालन और अश्वारोहणमें सुदक्ष हैं । आपको सिंहके आखेटका बड़ा अनुराग है परन्तु हमने सुनाहै कि सिंहनी या मृग आदिका आखेट

सत्त्व मूलक और तीसरी वंशानुक्रमके अधिकारी है । किसी सामंतके परलोक सिधारनेपर उनके पुत्र पौत्र लोग उत्तराधिकारी क्रमसे भोग करते आते हैं, इस समय उस भावसे ही अधिकृत देशोंमें सामन्तोंका चिरस्थायी स्वत्व वर्त रहा है । और उस देशमें राणाका निःसंदेह पूर्णस्वत्व विराजमान है अर्थात् वह इच्छानुसार किसी सामन्तके वंशधरको वृत्ति रहित कर सकते हैं । इतिहास लेखक लिखते हैं कि, यह प्रथा बहुत पुरानी है, सामयिक राजनीतिके अनुसार सामन्त मंडलीको आज्ञाधीन रखनेके लिये निःसंदेह इसका जन्म हुआ था ।

राधु टाड यहांपर लिखते हैं कि जो राणागण गर्वित और उद्धत सामन्त मण्डलीके हृदयमें प्रबल भाव उद्दीपन करनेमें समर्थ थे, उनके प्रति अवश्य ही उच्च मन्तव्य प्रकाश करनेको बाध्य हैं । पुत्र अपने पिताकी उपाधि और सत्त्वके अधिकारसे आधीनके सरदारोंके प्रति पितासम्बन्धी सामर्थ्य विस्तार करनेमें समर्थ और पिताकी समान अपने प्रभु अधीश्वरकी अनुकूलता स्वीकार करनेमें बाध्य हैं, किन्तु उसके उल्लंघन करनेमें किसी प्रकार समर्थ नहीं हैं, यह भाव बहुत ऊंचा है, और इसीसे शुभफल होता है ।

सामन्त मण्डली जिससे परस्पर वैवाहिक भावमें बंधकर प्रबल शक्ति संग्रह पूर्वक राणाके विरुद्ध न उठे और राज्यमें विद्रोह फैलानेमें समर्थ न हो सके, उसके लिये गूढ़ राजनीतिज्ञ राणाओंने सामन्तोंको भिन्न सम्प्रदाय भोगी और विदेशी सामन्तोंके साथ मिलाकर मङ्गलमय फल उपजाया था । किन्तु समयपर उस अवलम्बित नीतिका अनादर करनेसे आत्मविग्रह और विद्रोह अग्निने मेवाडकी जातीय भीतरी दशाको अत्यन्त हृदयभेदी और शोचनीय कर दिया था ।

मेवाडकी भिन्न श्रेणी भोगी सामन्त मण्डलीमें भिन्न रक्तधारी भिन्न देशीय राजपूत सामन्तोंको बुलाकर मेवाडमें रखनेसे राजनैतिक महान उद्देश पूर्ण होगा, पूर्व राणाओंने इस बातको भलीभाँति समझ लिया था; और उसी उद्देशको कार्यमें लाये थे । राठौर, चौहान, प्रमार, सोलंकी और भट्टजातीय सामन्तोंके साथ राणा लोग वैवाहिक प्रबन्ध बंधन द्वारा मिल गये थे । उक्त राठौर चौहान आदि जातिके सामन्तोंमें कई वंश दिल्ली और अनहलवाड़ा नगरके बहुत पुराने हिन्दू राजवंशमें उत्पन्न हैं । शुद्ध आर्यरक्त पवित्र रखनेके लिये ही मेवाडके राणा लोग उक्त सामन्तोंकी कन्याका पाणिग्रहण करते थे, राणा-

निमित्त ही हम अनन्त धन रत्नकी खान, महावीरोंकी प्रगट करनेवाली, अनन्त साध्वी रानियोंकी: जननी मेवाडभूमिके भाग्यका परिवर्तन होता हुआ देखेंगे, हृदय कहताहै कि मेवाड एकदिन फिर उन्नातिके शिखरपर पहुंचेगा, पहली दशाका मिलान कर इस समयकी मेवाडकी दशा देखकर किसका हृदय व्यथित नहीं होता कौन ऐसी आर्य्यसन्तान है जो राजपूत जातिको आलस्यमें शयन करताहुआ देखकर दुःखित न हो जिसके हृदयमें एक वृंद भी आर्योंका रक्तहै वह मेवाडकी शोचनीय अवस्थापर अवश्य दुःखी होगा ।

हाय ! एकदिन वह थे और एकदिन आज हैं वह मेवाड वह वीरक्षेत्र चित्तौर वह वीरलीलाभूमि उदयपुर वह राजपूत जातियोंका ' शिव ' ' शिव ' उच्चारण, वह पवित्र हिन्दू रक्तका प्रवाह, वह अभ्रभेदी आरावलीकी भूधरमालाकी शोभा अब कहाँ है । वह राजपूतोंकी शक्ति अब कहाँ चली गई ? वह वीरव्रत, वीराचार, शूरता, बाहुबल, विक्रम, साहस, प्रतिभा, एकता, उद्दीपना आरावलीके किस गढेमें जा छिपी, आज मेवाड अन्तसार शून्य हो रहाहै मणि मुक्ताओंसे खचित सूर्यकी समान प्रकाशमान महलोंमें वीरोंके अस्त्रागारोंमें मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें कवियोंकी अमृतमय लेखनीसे निकली गाथा अब नहीं गाई जाती, अब मृतसंजीवनी मंत्रका प्रचार नहीं होता, धनुष बाणका सन् सन् शब्द, तलवारोंकी कनकनाहट, गगनभेदी जयशब्द, दृढ प्रतिज्ञाका जीवन परिचय आज कहाँ चला गया, भारतका गौरव स्वरूप मेवाड इस समय भी निद्रित है प्रत्येक प्रान्तमें यह शब्द गूँज रहाहै कि अमित तेजस्वी प्रबल पराक्रमी दृढ प्रतिज्ञा महावीर दुर्धर्ष साहसी राजपूतोंकी राणा जातीय जीवनी शक्ति लोप सी होगई है, बाप्पारावल राणा प्रताप, राजसिंहकी चिताभस्मसे मेवाड ढक गयाहै ऐसा क्यों हुआ इस प्रश्नका उत्तर कौन देसकताहै ? ।

एक श्रेणीका इतिहास कहताहै कि मेवाड स्वाधीन है आजतक भी स्वाधीन है राजपूतजाति स्वाधीनहै मेवाडेश्वर राणाजी स्वाधीनहैं परन्तु हाय ! राजनीतिके जाननेवालोंसे क्या यह बात छिपीहै कि इस समय ब्रिटिशनीतिके बलसे कोई भी भारतमें स्वतन्त्र नहीं है, जिन्होंने स्वाधीनताके अमृतमय चित्रका दर्शन कियाहै जिन्होंने मेवाडका अतीत इतिहास देखाहै, जो अनन्त वीरताओंकी गाथासे पूर्ण इतिहासको हृदयंगम करनेमें समर्थ हुएहैं यह बात कभी भी उनके हृदयको तृप्त नहीं करसकैगी, एक बार नहीं सहस्रबार मानना होगा कि ब्रिटिश जातिने मुगल पठान और महाराष्ट्रियोंसे विदलित राजपूत जातिको आश्रय देने और

कालापट्टा ।—यथा स्थानमें लिखा जा चुका है कि राणा रायमल और राणा उदयसिंहके वंशधरलोग जिन दो प्रधान शाखाओंमें विभक्त हुए थे; उनके ही असंख्य वंशधर यथा समय भिन्न २ पैतृक उपाधियोंकी प्राप्तिसे होकर अनेक उपशाखाओंमें विभक्त होकर, मेवाडके प्रधान सामन्त और सरदार श्रेणीमें गिने गये थे ।

चन्दावत और शक्तावत यह दो प्रधान शाखा हैं; पहिली दश और दूसरी छः शाखाओंमें विभक्त हैं । राजपूतोंमें चिर प्रचलित नियमके अनुसार वह कभी अपने वंशवालोंके साथ कन्याके लेने देनेका सम्बंध नहीं कर सकते । यह बात सर्वथा निषिद्ध है । उक्त शाखा और उपशाखामें विभक्त सम्पूर्ण राजपूत एक जाति अर्थात् “सिसोदीयकुल” नामसे विख्यात हैं सिसोदीयस्त्रीके साथ सिसोदीय पुरुषका विवाह किसी प्रकारसे भी नहीं हो सकता; सिसोदीय लोग सब ही राजरक्तधारी रूपसे प्रसिद्ध हैं ।

भूवृत्तिके ऊपर सिसोदीय राजपूतोंका जैसा प्रबल स्वत्त्वाधिकार है, वह राठौर, प्रभार; चौहान आदि जितने विदेशीय राजपूत मेवाडमें सामन्त पदपर प्रतिष्ठित होकर भूवृत्ति भोगते आते हैं उनका वैसा प्रबल स्वात्त्वाधिकार नहीं है । सिसोदीय गण राजवंशी हैं इस कारण उनका स्वत्त्व बलवान है । सिसोदीय सामन्तोंकी भूवृत्ति यद्यपि चिर स्थायी पट्टेके अनुसार नहीं है और राणालोग किसी सिसोदीय सामन्तको भी अपनी इच्छानुसार वृत्तिसे रहित नहीं करते, तथापि भूवृत्तिमें उनका मानो एक स्थायी स्वत्त्व वर्त रहा है । किन्तु प्रभार, चौहान आदि सामन्तोंके परवर्त्ती बीस पुरुष क्रमानुसार किसी भूवृत्तिके संभोग करनेपर भी वह यह नहीं कह सकते कि “भूवृत्तिमें हमारा स्थायी स्वत्त्व होगया है ।” वह वैदेशिक सामन्तोंको जो पट्टा वही दिया जाता है, कालापट्टा “नामसे विख्यात है । वैदेशिक सामन्तगण विख्यात भी करते हैं कि, “हम कालापट्टा धारी हैं ।” किन्तु उनके आत्मीय सिसोदीय सामन्तगण उस काले पट्टेके अधीन न होनेके कारण गर्व कर सकते हैं । कालेपट्टेका असली अर्थ यह है कि जब इच्छा हो तभी वह भूवृत्ति लौटा ली जा सकती है, दूसरे पक्षमें सिसोदीय सामन्तगण राणाके दिये हुए पट्टेके अनुसार अपनेको जिस प्रकार अनेक विषयोंमें सुविधा सुयोग सम्पन्न समझते हैं, विदेशी सामन्तगण उस प्रकार अनुभव नहीं कर सकते ।

और उद्दीपनका त्याग तथा संहारकर्ता एक लिंग महादेवके मंदिरके सन्मुख जातीय स्वभाव सुलभ वीरप्रतिज्ञाके वलिदानसे अन्तःसार शून्य अवस्थामें निद्रित है तथापि हमें विश्वास है कि प्रतापवान राजसिंहकी समान मृतसंजीवनी मंत्रके प्रचार करनेवाले नेताका इस सुशासनमें प्रचार होते ही राजपूत-जाति अपने गौरवको फिर भारतमें प्रकाश कर दिखावैगी, साधारण लोगोंतक शिक्षाका फैलाना नेताका प्रधान कार्य होगा, शिक्षापाते ही निर्मल बुद्धिवाले राजपूत फिर अपने गौरवको प्राप्त होसकतेहैं। इस मेवाडमें फिर कब प्रतापसिंह राजसिंह नेतारूपसे दर्शन देंगे ? राजपूतजाति फिर कब उन्नतिके शिखरपर चढ़कर भारतके अनन्त गौरवका प्रकाश करैगी ? क्या वह प्रार्थनीय शुभदिन फिर नहीं आवैगा, अवश्य आवैगा ? संसारकी उक्तिहै कि सर्वदा किसीके एकसे दिन नहीं रहते ।

इस समय जगतके सप्तम अंशमें बृटिशराजकी पताका फहरा रहीहै, यद्यपि सूर्य भगवान एक सुहूर्तको इस राज्यमें अस्त नहीं होते कहीं न कहीं दर्शन देते ही रहतेहैं, सम्पूर्ण संसार एक स्वरसे कह रहाहै कि बृटिश शासनका सूर्य ग्रीष्मकालिक मध्याह्न मार्तण्डके समान अपने किरणजालका विस्तार कर रहाहै परन्तु विचारकर देखाजाय तो भारतके बलसे ही ग्रेट ब्रिटिनका बल है, आर्य-क्षेत्र बृटिशराजकी मुकुटमणि है, इस बातको अवश्य ही मानना होगा कि बृटिशके शासनसे, बृटिशके प्रतापसे बृटिशके राजनीतिबलसे इस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें शान्ति विराजरही है, यह अंग्रेजी राज्यका ही प्रताप है कि देशीय राजाओंमें तथा भिन्न २ धर्मावलम्बी अनेक जातियोंमें विद्रोह अत्याचार निर्वलको सताना इत्यादि सभी बातें दूर होगईहैं सब अंशोंमें सभी विषयोंमें न भी हो परन्तु ऐसे अनेक स्थान हैं जिनमें न्यायशासनकी पराकाष्ठा दृष्टिमें आ रही है परन्तु इस शान्तिमें सौरभसे आमोदित भारतवर्षमें हमारा कर्तव्य क्या है ? शान्तिके आलिंगनमें आलस्य विलासिताके वशीभूत न होकर शासनविधिके ऊपर अपना पूर्णसन्मान् दिखाते हुए हमारे प्रत्येक जातिके सत्त्वकी रक्षा तथा लुप्तहुए सत्त्वका उद्धार यही हमको इस समय प्रार्थनीय है, राजपूत बंगाली सिक्ख-महाराष्ट्र तथा आर्य्यवर्तनिवासी सब कोई प्राचीन द्वेषभावको भारतके महासमुद्रके अगाध जलमें विसर्जन कर परस्पर सहानुभूति प्रकाशकर एक दूसरेके हृदयसे हृदयको मिलाय फिर जन्मभूमि भारतका सुखकमल खिलानेके लिये विशेष यत्नवान हो यही भारतहितैषी और नीतिज्ञोंकी आन्तरिक प्रार्थना है, यह

रखते थे । विदेशी सामन्तोंमें वैदला और कोथारियाके चौहान और मेवाडके मध्यवर्ती देशोंके प्रमार सामन्तगण प्रथम श्रेणीके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित हैं ।

रजवाडेके अधीश्वर यद्यपि अपनी इच्छानुसार किसी सामन्तको पदच्युत करके उसको भूवृत्ति रहित और उसके अधिकृत देशको अपने अधिकारमें कर लेनेके अधिकारी हैं । किन्तु, किसी प्राचीन प्रबल शक्तिमान सामन्तको उस प्रकार पदच्युत करनेमें उद्यत होनेपर अधिपतिको अनेक विघ्न और विपत्तियें भोगनी होती हैं यद्यपि रजवाडेके राज्योंमें विदेशी सामन्तोंकी संख्या भी सामान्य नहीं है, किंतु स्वजातीय सामन्तलोग ही प्रबल शक्तिवाले हैं, और उन स्वजातीय सामन्त मण्डलीमेंसे एक सामन्त सबके नेता पदपर प्रतिष्ठित होते हैं यदि उनको स्वजातीय नेता प्राप्त न हो तो वह निकटवर्ती समीपी सामन्तको नेता पदमें वरण करलेते हैं । सम्पूर्ण आधीनके सरदार ही उसनेताके आज्ञाधीन रहते हैं । इस कारण किसी नेताको पदच्युत करनेमें उद्यत होनेपर वह आधीनके सब सरदार और उस सम्प्रदायके दूसरे सामन्त इकट्ठे होकर महाविघ्न करते हैं । अतः एक सामन्तको पदच्युत करने पर उस संप्रदायके सब ही विरुद्ध होजाते हैं । यदि कोई सामन्त राणाके विरुद्ध भारी अपराध करे वा सामन्त पदकी अयोग्यता दिखावे तो अधिपति उस संप्रदायके किसी योग्य पुरुषको उस पदपर अभिषिक्त कर देते हैं । सब प्रकारसे योग्य पुरुषको निर्धारित करनेके लिये राणाकी समान दूसरे सामन्त और सरदार भी विशेष तीक्ष्ण दृष्टि रखते हैं । यदि राणा किसी सामन्तका पद सर्वथा खाली करके अपने अधिकारमें करलें तो उन सामन्तके अधीनस्थ सरदारगण अपना पूर्वस्वत्व अपने हाथमें ही रखकर साक्षात् संबंधमें राणाकी आज्ञाके आधीन रहते हैं ।

जिस समय मेवाड उन्नतिकी ऊँची सीढ़ीसे गिरकर अवनातिके समुद्रमें डूब गया जिस समय राणाकी शासन शक्ति बिलकुल क्षीण होगई प्रताप प्रभुत्व लुप्त होकर चारों ओर विद्रोह और आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित होगई, उस समय चतुर प्रबल सामन्तोंने बल प्रकाश, भय प्रदर्शन और अन्यान्य अनेक प्रकारके असत उपायोंसे राणाके अधिकारके अनेक देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया । बलहीन और लुप्त प्रताप राणा तथा उनके मंत्रिके दुर्बुद्धि दोषसे भी अनेक ग्राम उसी प्रकार सामन्तोंके अधिकारमें होगये थे । कर्नेल टाडने मेवाडमें पहुँच कर जिस समय सब सामन्तोंके पट्टेके अनुसार उपभोग्य देशका निर्णय और व्यवस्था निर्धारण करी उस समय उन उदार नीतिवाले टाडने उन

इस प्रकारसे मेवाडकी कथा पूर्ण हुआ चाहती है महात्मा टाडसाहबने केवल महाराणा भीमसिंहके समयतकका ही वर्णन किया है महाराणा भीमसिंहको स्वर्गवासी हुए इस समय ७१ इकहत्तर वर्षके लगभग हुए हैं, इस इकहत्तर वर्षके इतिहासका हमने संक्षेपसे वर्णन किया है यद्यपि यह बात उचित नहीं, कारण कि संक्षेपसे वर्णन करनेमें इतिहासका अंग विकृत होजाताहै, इससे उसका वर्णन विस्तारसे करना चाहिये भला विचार तो कीजिये कि अंग्रेजीके केवल एक दो ग्रंथोंके पढ़नेसे मेवाडकी परिशिष्टि किस प्रकारसे बनसकतीहै, इतिहासके प्रेम रखनेवाले चतुर पाठक अवश्य ही समझगये होंगे कि भारतहितैषी महात्मा टाड साहबने अत्यंत क्लेश और कठोर परिश्रमके साथ विशेष यत्न करके मेवाडके जिस इतिहासको बनाया है, उस इतिहासकी परिशिष्टिको घरके कोनेमें बैठकर केवल अंग्रेजी पुस्तकोंकी सहायतासे दो चार दिनके बीचमें बना लेना प्रथम श्रेणीकी मूर्खता है, इस प्रकारका कार्य करना मानो मान्यका आनादर करना है, इस प्रकारका कार्य कोई निरपेक्ष लिखनेवाला किसी प्रकार नहीं करसकता, कोई भी सहृदय ऐसा कार्य करके वीरजननी मेवाडभूमिका निरादर न करेगा, मेवाडकी परिशिष्टि लिखनेके लिये सबसे पहले तो यह कर्तव्य है कि मेवाडमें भलीभांति भ्रमण करके भट्टग्रंथोंको संग्रह करे फिर अंग्रेजी रिपोर्ट और गजेटियरके साथ मिलाकर स्वतंत्र भावसे लेखनी चलाना चाहिये संक्षेपसे इस कारण लिखाहै कि ग्रंथका अंग भंग न होजाय, मेवाडकी परिशिष्टि लिखने की बड़ी अभिलाषा है, परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि इस जीवनमें यह कार्य पूरा होसकैगा या दूसरे जन्ममें, इस जीवनमें यदि इस व्रतका उच्चापन पूर्ण होजाय तो बहुत ही अच्छा हो, भगवानको सब सामर्थ्य है, इस वर्तमान व्रतको निर्विघ्नतासे पूर्ण करके यह सम्पूर्ण पवित्र राजस्थान पाठकोंके करकमलोंमें पहुँचा-दूंगा तब एक बार अवश्य ही राजस्थानकी परिशिष्टि लिखनेका यत्न करूंगा, यदि इसमें कुछ विघ्न हुआ तब मनकी अभिलाषा मनहीमें रहजायगी ।

मान्यवर टाडसाहबने इस ग्रंथमें महाराणा भीमसिंहके चरित्रतकका उल्लेख कियाहै इससे आगे अठारहवें अध्यायसे महाराणा फतहसिंहजी तकके चरित्रका दिग्दर्शन अन्यत्रसे किया है जो महाराणा भीमसिंहजीसे पीछेकी शताब्दीमें मेवाडभूमिको सुशोभित करगयेहैं और इस समय मान्यवर श्री १०८ महाराणा फतहसिंहजी महोदय उदयपुरके सिंहासनको सुशोभित कर रहे हैं ।

सभामें गमन और राजकार्यमें नियोगकी प्रार्थना अनुचित समझकर ही जीविका निर्वाहके लिये कृषिकार्यमें नियुक्त हुए । यद्यपि वह वीर राजपूतजाति राणाके वंशकी होकर भी साधारण कृषिकार्य अवलम्बन करनेमें बाध्य हुई थी, तथापि उन्होंने कभी जातिके अवलम्बित वीर व्रतको नहीं छोड़ा । तलवार, भाला, और धनुष बाण उनके चिर सहचर बने हुए हैं । यद्यपि वह आरावलीके स्थान २ में हल चलाने और पशुपालनेमें आनन्दपूर्वक नियुक्त हैं, किन्तु वह जातीय दर्प, वीरतेज, गौरवगरिमा और वंशमर्यादा उनके हृदयमें उसी प्रबल भावसे विराजमान है । भूमियां लोगोंके वर्तमान आत्मीय कुटुंब सामन्त जो इस समय शिक्षित, लभ्य और राणाकी संगतिसे अपनेको बहुत ऊंचा मानते हैं, कर्नेल टाड लिखते हैं कि उनकी अपेक्षा उक्त भूमियांगण अधिक बुद्धिमान् शान्त और धीर हैं । भूमियां लोगोंमें बहुतसे लोग प्राचीन समयसे अपनेसे छोटी जाति-वाले आरंभिक निवासियोंकी कन्याका पाणिग्रहण करते आते हैं, इस कारण वर्तमान राजवंशधरगण उनका उपहास करते हैं । उपहासका कारण यह है कि उन विवाहोंसे जितनी सन्तानें उत्पन्न हुई हैं, वह परिचय देते समय दादा और नाना दोनों गोष्ठीकी मिलीहुई उपाधियें प्रगट करती हैं ।

उक्त भूमियां लोगोंमें बहुतसे एक २ ग्रामके अधिकारी हैं । वह उसके लिये बहुत साधारण कर देते हैं । आवश्यकता होनेपर स्थानीय शासनकर्त्ता उनको स्थानीय सेनारूपसे दलबद्ध करते हैं । उस समय अर्थात् जिस समय वह राणाकी आज्ञानुसार राज्यरक्षा, विग्रह निवारण, वा शत्रुओंके विरुद्ध खड़े होनेके लिये सेना दलमें नियुक्त होते हैं, उस समय वह केवल भोजनके सिवाय और कुछ नहीं पाते । सामन्त शासन शैलीके अनुसार यही लोग मेवाडकी अधीन प्रजा हैं * और मेवाडके

* पश्चिमी देशकी सामन्त शासन शैलीके अनुसार विख्यात इतिहासलेखक हालम इस श्रेणीके स्वत्व सम्बन्धमें लिखते हैं कि “यह भूस्वत्व उत्तराधिकारी भावसे प्राप्त है और इसके अधिकारी स्थानीय शान्ति स्थापनके लिये सेनामें भरती होनेको बाध्य हैं, किन्तु अन्य किसी प्रकारके कर देनेमें बाध्य नहीं हैं । यह भूस्वत्व पिताके सव पुत्र समान भागमें विभाग कर सकते हैं सन्तानके अभावमें शातिगण उस भूस्वत्वका विभाग करलेनेमें समर्थ हैं । ” मेवाडमें भूमियां स्वत्व उत्तराधिकारियोंके बीचमें कुछ अंशोंमें विभक्त होसकता है किन्तु कच्छमें यह अंश बहुत भागोंमें विभक्त होजाता है और उक्त स्वत्वके अधिकारी स्थानीय आवश्यक कार्योंमें सेनादलमें प्रविष्ट होते हैं । मेवाडके भूमियांगण कहते हैं कि, “हमारा यह भूस्वत्व राज्य स्थापनके आरंभसे प्रचलित है । किसी लिखित विधान वा सनद द्वारा यह स्वत्व उनके पूर्व पुरुषोंने नहीं पाया, उत्तराधिकारी रूपसे ही अधिकार करते चले आते हैं ।

(७०८)

राजस्थान इतिहास ।

मेवाड़के षोडश प्रधान सरदारोंकी उपाधि कुल तथा भूमिसम्पत्ति नाम-

	उपाधि.	नाम.	गोत्र.	कुल.	भूमिसम्पत्ति	ग्राम संख्या.
१	राजा	चंदनसिंह	झाला	झाला	सादरी	१२७
२	राव	प्रतापसिंह	चौहान	चौहान	बैदला	८०
३	राव	मोहकमसिंह	चौहान	चौहान	कोटारिया	६५
४	रावत	पद्मसिंह	चन्दावत	शिशोदीय	सलम्बूर	८५
५	ठाकुर	जोरावरसिंह	मैरतिया	राठौर	गानौर	१००
६	राव	केसोदास	"	परमार	विजौली	४०
७	रावत	गोकुलदास	संगावत	शिशोदीय	देवगढ	१२५
८	रावत	महासिंह	मेघावत	शिशोदीय	वेगू	१५०
९	राजा	कल्याणसिंह	झाला	झाला	दैलवाडा	१२५
१०	रावत	सालिमसिंह	जगावत	शिशोदीय	अमाइत	६०
११	राजा	छत्रसाल	झाला	झाला	वोगुंडा	५०
१२	रावत	फतहसिंह	सारंगदेवत	शिशोदीय	कानोड	५०
१३	महाराजा	जोरावरसिंह	शक्तावत	शिशोदीय	भाइन्दर	६४
१४	ठाकुर	जैतसिंह	मैरतिया	राठौर	विदनौर	८०
१५	रावत	सालिमसिंह	शक्तावत	शिशोदीय	बानसी	४०
१६	राव	सूरजमल	चौहान	चौहान	पारसौली	४०
१७	रावत	केशरीसिंह	किसनावत	शिशोदीय	भैसरौड	६०
१८	रावत	जवानासिंह	किसनावत	शिशोदीय	कुरावड	३५

साठ वर्ष पहिले भैसरौड और कोरावडके सरदार दूसरी श्रेणीके सरदारोंमें गिनेजाते थे इस कारण इन दोनोंको छोडकर शेष सबकी भूमिसम्पत्तिसे यह आमदनी होती थी इनसे नीचेके सरदार अधिक भूमिसम्पत्ति भोगते थे उनकी आमदनी ३००००००) तीस लाख रुपये थी ।

जोड

११८१

पूर्वकालमें कोई उक्त श्रेणीकी स्वतंत्र प्रजा सामन्त पद पाने और पूर्ण शक्ति चलानेके लिये विशेष चेष्टा करती थी । किन्तु उनकी वह इच्छा प्रायः पूर्ण नहीं होती थी । देवलाके राठौर सरदारने अपने प्रभु वनेडाके राजासे पट्टा ग्रहण करके तीन प्रधान २ देशोंका अधिकार पाया था । क्रमसे सामर्थ और प्रभुत्व अर्जनके साथ उस सरदारने अपनेको सामन्त रूपसे गिनानेके लिये वनेडा राजकी अधीनता अस्वीकार करी । वनेडा राजको वह जिस प्रकार निर्द्धारित कर देते आते थे उसमें कोई व्यत्यय न करके निर्दिष्ट व्यवस्थाके अनुसार वनेडा राजके दरबारमें गमन और वहां रहनेमें सर्वथा उदासीनता दिखाने लगे। यह निश्चित था कि, किसी विदेशी शत्रुके आक्रमणके उपस्थित होनेपर उक्त सरदार पैतीस सवार देंगे । किन्तु वैसी घटना अर्थात् विदेशी शत्रु उपस्थित होनेपर देवलापति सेना भेजनेमें सर्वथा उदासीन होगये । युद्ध समाप्तके पीछे वनेडा राजने उक्त सरदारके ऊपर महा क्रुद्ध होकर उनको राजसभामें बुला भेजा । देवलाके सरदार पूर्ण स्वाधीनता का सुधामय फल भोग रहे थे, उनके स्वाधीनता स्वीकार न करनेपर वनेडा राजने देवला लौटा देनेकी आज्ञा दी । उसके उत्तरमें उक्त सरदारने सूचित किया कि मेरा मस्तक और देवला दोनों एक साथ बँधे हैं । ” उनके इस उत्तरका अर्थ यह है कि देहमें प्राण रहते २ देवला कभी नहीं लौटा सकता । अन्तमें वनेडाधीश्वरने सरदारके इस गर्वित आचरणको राणासे कहला भेजा, तब देवलादेश वलपूर्वक छीनकर राणाके अधिकृत भूखण्डके अन्तर्गत कर लिया गया । देवलाके अतिरिक्त और जितनी भूमि उस सरदारके पास थी वह केवल उसी भूमिमें राणाके आधीन रहने लगे, और उस भूवृत्तिके बदलेमें उनको स्थानीय युद्धसम्बन्धी कार्य साधनेकी आज्ञा हुई । वनेडा राज्यमें बहुतसे स्वाधीन भूमियां रहते हैं । उनमें बहुतसे लोग छोटे २ ग्रामोंके भी स्वामी हैं । वह लोग किसी प्रकारके निर्द्धारित कर दानके बदले स्थानीय कार्य सम्पादन करते हैं । राजाके साथ किसी स्थानमें गमन करनेपर वनेडापति उनके भोजनकी सामग्रीका सब प्रबन्ध करदेते हैं ।

रजवाडेमें यह भूमियां स्वत्त्व इतना सन्मान सूचक है कि, प्रधान २ सामन्ततक अपने सम्पूर्ण आधीनके ग्रामोंमें इस भूमियां स्वत्त्व पानेके लिये सदा चेष्टा करते हैं । साधारणतया पट्टेके द्वारा जो भूस्वत्त्व मिलता है; विना पट्टेका यह भूमियां स्वत्त्व उसकी अपेक्षा विघ्नरहित और दीर्घ स्थायी है इस कारण सामन्तलोग इस स्वत्त्वके प्राप्त करनेके लिये सदा सचेष्ट रहते हैं ।

मेवाडमें धर्मप्रतिष्ठा, पर्वोत्सव व आचार-व्यवहार ।

बाईसवाँ अध्याय २२.

पौराणिक इतिहासकी उपकारिता;—भारतके पुराणोंका फल;—मेवाडकी शिवपूजा;—भगवान् एकलिंगजीका मंदिर;—शैव;—गोस्वामी;—जैनसमिति;—नाथद्वारे-में श्रीकृष्णजीका मंदिर और पूजाकी रीति;—राजपूतोंमें वैष्णवधर्मसे उपकार ।

भारतवर्षके सनातन धर्मावलम्बियोंकी रीति, नीति, आचार, व्यवहार, इतिहास व धर्मतत्त्व इत्यादि समस्त प्रयोजनीय बातें पौराणिक इतिहासोंमें सन्निवेशित हैं। जगतपूज्य विद्वान् और वीरलोगोंको जिन्हें हम अपना पितृपुरुष कहकर श्लाघा किया करते हैं;—जिनके अमानुषीय कार्योंका विचार करके विलायतके विद्वान् लोग आश्चर्य करते हैं; जिनकी स्मृति और जिनके विज्ञान, काव्य, अलंकार और तर्क शास्त्र द्वारा आज यूरोप देशमें ज्ञानके नये २ प्रकाश हो रहे हैं, उनकी पवित्र चरित्र-माला भी आज पौराणिक इतिहासके जटिल और निविड आवरणमें छिपी हुई है। विलायतके बहुतसे अभिमानी पंडितगण पुराणोंके इतिहासको मिथ्या और अत्युक्ति समझते हैं। परन्तु ऐसे लोगोंको एक बार यह विचार लेना चाहिये कि संसारके सब देशोंकी आदि घटनावली पौराणिक इतिहासके नीचे छिपी रहती है। जो इंग्लैंड भूमि आज इस संसारमें सभ्यताके मदसे गर्वित होकर खड़ी हो रही है, उसके प्रथम पुत्रका आचार व्यवहार भी पुराणोंके जटिल वर्णनमें ऐसा छिप गया है कि उसमेंसे सत्यका निकालना जरा कठिन कार्य है। संसारकी चाहें जिस प्राचीन जातिका आचार व्यवहार देखिये, तो सबसे पहिले आपको पुराणरूपी समुद्र ही मथना पड़ेगा। किंचित् विचारके साथ देखनेसे भलीभांति ज्ञात होजायगा कि संसारकी आदिम अवस्थाका जो कोई इतिहास पाया जाता है। तो वह पुराण ही है। क्लार्कनामक एक वैज्ञानिक परिव्राजकने कहा है “ कि मनुष्योंके पुराने कुसंस्कारोंके भीतर प्रवेश करके विचारपूर्वक अनुसंधान करने

पट्टेका आदर्श और उसमें लिखित व्यवस्था । राणा सामन्त और आधीनके प्रधान २ पुरुषोंको भूवृत्ति देनेके समय जितने प्रकारके पट्टे और सनदें देतेहैं परिशिष्टमें उनके कई नमूने लिखेगये हैं । उनके देखनेसे सामन्तोंका स्वत्व, अधिकार, सन्मान, अनुग्रह, अर्थ संग्रहका मूलकारण और किस व्यवस्थाके अनुसार वह भूवृत्ति दी गई यह सब बातें भलीभाँति ज्ञात होसकती हैं । अनेक वृत्ति प्राप्त राजासे अनुगृहीत सामन्तोंने समयके गुणसे राणाकी निर्वुद्धिता देखकर, अनेक विषयोंमें अपनी स्वाधीनता संग्रह करली थी । एक २ राणाने यहांतक अविवेकताका कार्य किया कि, नवीन सामन्तके अभिषेक कालमें जो नजराना लियागया, वही अपने प्रभुत्वका परिचायक जानकर दो एक सामन्तोंको उस नजरानेसे भी सर्वथा रहित कर दिया । आने और जानेवाली वस्तुकी चुंगी (पारावार शुल्क) और दूसरी इसी श्रेणीके अंश भी अनेक सामन्तोंने अपने संभोग करनेके लिये हत प्रताप मेवाडपतिके निकटसे सम्मति कर लेलिये बहुतसे अपने २ देशमें अपने २ नामसे ताम्रमुद्रा चलाने और दूसरे अनेक विषयोंमें राणाका प्रभुत्व प्रताप लोप करके अपना भण्डार पूर्ण करते थे । यह चित्र इस बातको भलीभाँति प्रगट करे देताहै कि मेवाडपतिके भाग्यमें घोर कालरात्रि आगई थी इसी कारण सामन्तगण अपनी स्वार्थ पूर्तिके साथ २ अन्यायसे शक्ति संग्रह करते थे ।

महामना टाड यहांपर लिखतेहैं कि, “बहुत वर्ष हुए, जिस समय सबसे प्रथम पश्चिमी राज्यकी सामन्त शासन रीतिके साथ रजवाडेकी सामन्त शासन शैलीकी एकताने मेरे चित्तको आकर्षित किया, उस समयमें जयपुरके अधीश्वरकी आधीनतामें स्थित एक सर्वप्रधान सामन्तकी सनद वा पट्टा लेकर, उसको क्रमानुसार देखने और प्रत्येक धारा और व्यवस्थाको पृथक् करनेमें नियुक्त हुआ । उक्त सामन्तके एक प्रधान कर्मचारीने उस विषयमें मेरी विशेष सहायता की । उस सनद वा पट्टेमें सामन्तके अधीनस्थ सरदार और अन्य भूम्यधिकारियोंके स्वत्वाधिकारादि भी विशेष रूपसे विवृत देखे गये, और उसी समय से ही मैं इस प्रणालीके यथार्थ वृत्तान्त संग्रहमें कौतूहलयुक्त हुआ था ।”

रजवाडेके राजा लोगोंके आदर्शपर ही आधीनमें स्थित प्रधान २ सामन्त भी अपने सम्पूर्ण कार्य करते हैं; प्रधान अर्थात् मंत्रीसे लेकर पनवाडी तक उसी प्रकार प्रत्येक नामके कर्मचारी नियुक्त हैं, यहांतक कि सांसारिक सम्पूर्ण विषय ही अधिपतिकी स्वीकार की हुई रीतिके अनुसार अवलम्बन करते आते हैं

विज्ञानकी सहायतासे कि जो इसके भीतर छिपा हुआ है, दीन हीन मनमलीन जन्म-भूमिको फिर भी सुख और स्वाधीनताके ऊंचे शिखरपर पहुँचा देंगे । जिस दिन भारतवर्षके समस्त हिन्दूगण इस सनातनधर्मको ही ग्रहण करनेयोग्य मुख्य धर्म समझलेंगे, उसही दिन भारतके नगर २ और ग्राम २ में आनन्दका भंडार खुल जायगा;—पुनर्वार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्णभेदकी कुछ चिन्ता न करके विपक्ष पक्ष नाशिनी जगज्जननी, भगवती महामायाको आनन्दसे आवाहन करेंगे ।

वीर्यवान् राजपूतगण पुराणोंको भी वेदकी समान अति पवित्र मानते हैं । उनके पूजनीय पितृपुरुषोंकी महान् कीर्ति और लीलाकी साक्षी इन पुराणोंमें ही है । राजपूतगण, वीरता, महानता और संन्यासधर्मका प्रकाशमान आदर्श समझकर देवदेव महादेवजीकी पूजा किया करते हैं, भगवान् भूतभावन राजदूतोंके और विशेष करके मेवाडी राजपूतोंके प्रधान उपास्यदेवता हैं । गंगा यमुनाके किनारे वसेहुए देशोंमें अनेक प्रकारके देवताओंकी पूजाका प्रचार होनेसे यद्यपि राजस्थानके और २ देशोंमें भगवान् भूतभावनकी पूजा किंचित् कम होगई है, तथापि वीरता और स्वाधीनताकी जन्मभूमि मेवाडभूमिमें, आजतक भी पहिलेकी समान उनकी पूजा होती है । गिहौटवंशके राजालोग महादेवजीकी पूर्ण-मूर्ति पौरलिंग इन दोनों मूर्तियोंकी पूजा करते हैं । तथापि महादेवजी बहुधा यहाँपर एकलिंग*हीके नामसे पुकारे जाते हैं । एकलिंगजीके जितने मन्दिर मेवाडमें हैं, उन सबमें देवमूर्तिके आगे उनके प्यारे वृषभकी धातुमय मूर्ति स्थापित हुई देखीजाती है ।

गिहौटकुलके प्रधान उपास्यदेवता भगवान् एकलिंगजीका पवित्र मन्दिर उदयपुरसे तीनकोश उत्तरको एक गिरिभार्गके बीचमें बनाहुआ है । चारों ओर बड़े २ पर्वत और वनके वृक्ष शोभायमान हैं । पर्वत मालाकी शोभा भी अत्युत्तम दिखाई देती है । औषधियोंका नयनरंजनकारी हराभरा दृश्य और कल २ शब्द करनेवाली छोटी २ नदियोंके मनोहर शब्दने इस स्थानकी शोभाको और भी अधिक बढ़ा रक्खा है ।

एकलिंगजीके पुरोहितगणोंको गोस्वामी कहते हैं । यह लोग विवाह नहीं करते हैं; अतएव अन्तिम समयमें पालेहुए शिष्यको पूजा पाठ और मन्दिरादिका

* सूरत और सिन्धुनदीके पूर्व मुहानेपर सहस्र लिंग और कोटिलिंग नामक दो मूर्ति दिखाई देती हैं; ग्रीस और मिसर देशमें जो बेकसर लिंगमूर्ति दिखाई देती हैं; उनके साथ इन समस्त मूर्तियोंका कुछ २ मेल पायाजाता है ।

में सन्मानका कारण स्वरूप है और परलोकमें सुखका बीजस्वरूप है। राजपूत काविकुल केशरी चन्द्रकविने अपने सुधामय काव्यमें राजभक्तिका जो मनोहर दृश्य खेंचा है; उस राजभक्ति सन्मान रक्षामें जो अक्षय अमृतमय फल बोधित किया है, वही राजपूत जातिको सदा जातीय गौरव रक्षामें नियुक्त रखेगा। एक ओर सामन्तमण्डली जिस प्रकार राजभक्त रूपसे विख्यात और राजाकी आज्ञा पालनमें प्राणपणसे यत्नवान् है, दूसरी ओर उन सामन्तोंके आधीनवाले सरदार और प्रजावर्ग भी उसी प्रकार उनके प्रति अनुरक्ति, भक्ति और अनुगमन प्रकाश करनेमें सदा यत्नवान् हैं। राजाकी समान सामन्त भी अपने अधिकृत देशमें पूज्यपाद स्वामी रूपसे सन्मानित होते आते हैं। उनकी प्रजामण्डली भी उनके लिये जीवनदान और उनकी आज्ञासे सम्पूर्ण स्वार्थ छोड़नेमें कुण्ठित नहीं होती। सामन्तके अभिषेक दिनसे ही उनके हाथमें अपने जीवन मरणका भार आनन्दपूर्वक सौंप देती है। मृगयाके समय सरदारलोग सामन्तके साथ दुर्गम वनमें गमन करके पहाड़ोंकी चट्टानोंपर एकत्र खान पान करते हैं। सामन्त भवनमें सदा ही उनका आदर होता है। जिस समय सामन्त सर्वप्रधान प्रभु राणाकी सभामें जाते हैं, उस समय सरदार भी उनके साथ जाते हैं। आशय यह है कि वह सदासे सामन्तके साथ अभिन्न भावसे रहते आते हैं। यद्यपि समयके प्रभाव और दीनताके दोषसे इस समय सामन्तमण्डलके साथ उनके अधीनस्थ सरदारोंकी अब वैसी धनिष्ठता नहीं है, किन्तु कर्नेल टाटकी समान हम भी आशा कर सकते हैं, कि, मेवाडका सुखसूर्य फिर उदय होनेपर, अवश्य ही वह प्रीतिमय दृश्य नेत्रोंके सामने प्रतिबिम्बित होगा।

कई शताब्दीतक वर्णनके अयोग्य अत्याचार, दुःसह उपद्रव, और भयानक पीडा सहकर भी राजपूत जाति जिस भावसे अपना जातीय आचार व्यवहार और नियम प्रणालीकी रक्षा करती आ रही है, उससे वह सामाजिक आचार व्यवहार जातीय विधिव्यवस्थावली उनकी आत्माके साथ मिल गई है। जिस राजपूत वीरका चरित्र जातीय प्रत्येक उपकरणसे गठित है, वह राजपूत आत्मगौरव रक्षामें जीवनतक त्याग करनेमें नहीं डरते। जहां सन्मानको लेकर बात है, वहां यदि कोई भ्रमसे साधारण झुटि भी करे, तो वहां वीरगण उसको घोर अपराध समझकर प्रतिकारके लिये तलवार हाथमें लेते हैं। आत्मसन्मानके प्रति राजपूत जातिकी प्रबल दृष्टि इस घोर दुर्दिनमें भी देदीप्यमान है। यद्यपि स्वजातिका गौरव गरिमा रवि अस्ता-चलकी चोटीपर पहुंच गया है यद्यपि मेवाडकी वह विजय वैजयन्ती अब उस

सम्बन्धमें केवल यही कहना पूरा होगा कि केवल क्षत्रगाछा × शाखाके प्रधान पुरोहितके * ग्यारह हजार दीक्षित चले भारतके भिन्न २ स्थानोंमें निवास करते हैं। केवल यही नहीं वरन इन जैनलोगोंकी एक ओसवाल * नामक शाखास-
मिति है। इसके एक लाख परिवार राजस्थानमें वास करते हैं और भारतके वाणिज्यसे जो धन उत्पन्न हुआ करता है उसका आधेसे अधिक भाग जैन सरा-
वगियोंके हाथसे परिचालित हुआ करता है। प्रथम राजस्थान और सूरतमें जैन तथा बौद्धलोगोंका आगमन हुआ। यह लोग जिन पाँच पर्वतोंको पवित्र समझते हैं, उनमें आवू, पालिथान × और गिरनार यह तीन पर्वत ही उनके धर्मयुद्धके प्रधान रंगस्थल हैं। मेवाडकी मंत्रीसभा और राजस्वविभागके बहुतसे कर्मचारी जैन ही हैं और पंजाबसे लेकर समुद्रके किनारे तकके प्रायः सब ही नगर जैन सेठोंसे शोभायमान हैं। उदयपुर तथा अन्योन्य नगरके शान्तिरक्षक और कर संग्रहकारक भी इसही सम्प्रदायके लोग होते हैं। 'अहिंसा परमो धर्मः' जैनलोगोंका मूलमंत्र है; जहाँतक संभव होता है, यह लोग जीवहत्या नहीं करते; इस ही कारणसे जो लोग दीवानी विभागके कर्मचारी हैं, वह फौजदारी विभागके स्वधर्मा-
नुरागी कर्मचारियोंकी अपेक्षा अधिक चतुरतासे अपना काम किया करते हैं। अहिंसाको परम धर्म समझनेके कारण ही राजनीतिविद्यामें जैन लोग पीछे पड़े रहते हैं। अनहलवाडा पट्टनका पिछला राजा कुमारपाल जैन एक घोर जैनी था। वर्षासे उत्पन्न हुए कीड़े मकोड़े मार्गमें दबकर मरजाते हैं, इसी कारणसे असल जैन लोग वर्षाकालमें चलना फिरना बंद कर देते हैं। जैनी लोगोंको

× कहते हैं कि सन् ११०० ई० में अनहलवाडा पट्टनके प्रसिद्ध जैन नरपति सिद्धराजके शासन समयमें उसकी राजधानीमें ही धर्मका एक बड़ा विचार हुआ था। विचारके समय सिद्धराजने जैन सम्प्रदायकी एक शाखाको क्षत्रगाछा नामसे पुकारा था। जैनलोगोंके मतानुसार क्षत्रशब्दका अर्थ सत्य है विख्यात हेमचन्द्र आचार्य इस क्षत्रगाछानामक सम्प्रदायका गुरु था। महात्मा टाडसाहबने जिस जैन यतीकी सहायतासे राजस्थान लिखनेके उपकरणको बहुतायतसे पाया था वह हेमचंद्र आचार्यका एक चेला था।

✽ टाडसाहबके समयमें यह वर्तमान था। टाडसाहब इसको महाविद्वान् बतलाते हैं प्राचीन शिलालेखोंकी कठिन भाषा भी यह समझलेता था। राणा भीमसिंह इसको बहुत मानते थे।

* मारवाडमें अपस नामक एक नगर है, टाडसाहब कहते हैं कि ओसकालोंका निकास इस ही अपसवालसे हुआ है।

× पालीथाना वा पालिस्तान, यह प्रसिद्ध जैन तीर्थ शत्रुंजय पर्वतकी तराईमें है। टाडसाहबने निस्संदेह ऐसा निर्णय किया है, कि शाकद्वीपसे जो भिन्न २ जातियें भारतवर्षमें चढ़कर आई थीं उनमें ही एक पाली भी थी। उस पाली जातिसे ही उक्तनगरका नाम पालीथाना हुआ है।

मेवाडमें वही एक चरसा भूमि नामसे विख्यात है । वडे आश्चर्यकी बात है कि, रजवाडेकी सामन्त शासन रीतिके अनुसार नीची श्रेणीके सामरिक भूवृत्तिधारी लोग जितनी भूमि प्राप्त करते आते हैं, इंग्लेण्डकी शासन शैलीके अनुसार उस श्रेणीके सैनिक ठीक उतनी ही भूमि वृत्तिस्वरूप पाते हैं । रजवाडेमें यह जिस प्रकार चरसा अर्थात् चर्म नामसे कही जाती है, इंग्लैंडमें भी उसी प्रकार हाइड अर्थात् चर्म शब्दसे विख्यात है; और दोनोंका ही परिमाण समान है । ग्रेट ब्रिटनके ऐंग्लोसेक्सन शासनारंभ समयसे ही सम्पूर्ण भूमि हाइड परिमाणमें विभक्त होती थी । राजपूतानेकी एक चरसा भूमिके अर्थसे जिस प्रकार केवल एक हलसे खेचने योग्य भूमि समझी जाती है, इंग्लेण्डमें उसी प्रकार उस अर्थमें वह गृहीत होती थी । * इंग्लेण्डके नाइट (Knight) उपाधिधारी एक २ बीरको चार हाइड परिमित भूमि वृत्तिस्वरूप दीजाती थी; * उसका परिमाण वर्तमान समयमें प्रायः दश एकड़की बराबर है; × मेवाडमें एक चरसा भूमिका परिणाम पच्चीससे तीस बीघेतक है, अर्थात् सेक्सनके एक हार्डकी समान है ।

प्रधान २ पट्टावत् सामन्तोंके अधीनस्थ नीची श्रेणीके पट्टाधारी सरदारोंका स्वत्वाधिकार, शक्ति कैसी है ? , दोनोंके बीचमें विधि व्यवस्था निर्द्धारित है, किस २ कार्य पालनमें दोनों भाग लेते हैं? देवगढ देशके नीची श्रेणीके पट्टाधारी सरदारोंने उक्त देशके सामन्तके विरुद्ध जो व्यवस्था पत्र एक समय उपस्थित किया था, पाठकगण उसके पढ़नेसे सब विषय भलीभाँति जानकर उस संबन्धमें अपना मन्तव्य निश्चित कर सकेंगे । यह विचित्र बात है कि, देवगढके सामन्तके साथ उनके आधीनके सरदारोंका जिस कारणसे विवाद हुआ था इस्लीके प्रथम श्रेणीके सामन्तोंके साथ उनके अधीनस्थ सरदारोंका उसी प्रकार विवाद उपस्थित होनेसे, सन् १०३७ ईस्वीमें कनराडने जो विधान निर्द्धारित किया, * देवगढके नीची श्रेणीके सरदारोंने उसी प्रकारका विधान करनेके लिये मेवाडेश्वरके निकट प्रार्थना करी थी ।

* Millars Historical view of the english Government, P. 85.

* Hume, History of England, Appendix 2d, vol, ii. P. 261.

× ४४ हाथ लम्बी और ४४ हाथ चौड़ी मूमिमें एक एकड़ होता है ।

* जो पुरुष सम्राट अथवा सामन्तसे पट्टा लेकर भूमिका अधिकार भोगता आता है साम्राज्यके विधान और स्वजातीय विचारको निर्द्धारित व्यवस्थाके बिना कोई उसको उस स्वत्वसे खारिज नहीं कर सकता ।

मेर, प्राचीन अनहलवाडा, कम्बेर और अन्यान्य जैन पीठोंके पुस्तकालय आज-तक भी रत्नोंसे पूर्ण हो रहे हैं। कठोर शासन और भयंकर अत्याचारोंको सहन करके भी परम धार्मिक जैनलोगोंने उन समस्त रत्नोंकी रक्षा कर ली है।

मेवाड सब भाँतिसे ही हिन्दूधर्मका आदर्शस्वरूप है। समय २. पर इसके पर्वतयुक्त उद्यानोंमें समस्त धर्मोंकी ही उत्कर्षता साधित हुई है। इस देशके धर्म परायण राजा केवल शैव या जैन धर्मके पृष्ठपोषक नहीं थे; वरन वैष्णव धर्ममें भी उनका विशेष अनुराग पाया जाता था। मेवाडके अन्तर्गत नाथद्वारेमें भगवान् श्रीकृष्णजीका पवित्र मंदिर ही इस बातका साक्षी दे रहा है। हिन्दू विद्वेपी औरंगजेबके कठोर अत्याचारोंसे सताये जाकर जब परम पवित्र वैष्णवलोग श्रीव्रज धामसे दूर किये गये, वह किसी स्थानमें भी अपने उपास्य देवताकी रक्षा करनेका स्थान नहीं पा सके; तब उदयपुरके राणाने अपना हृदय लगाय मुगलोंके अत्याचारोंको सहन करके भी श्रीकृष्णजीकी पवित्र मूर्तिको अपने राज्यमें आश्रय दिया था।

उदयपुरसे ११ कोश पूर्व उत्तरको यह पवित्र मंदिर विराजमान है। इसकी संगमरमरसे बनी हुई सफेद सीढियोंको धोता हुआ वृनाश नद कल कल शब्द करता हुआ बहा जाता है, यद्यपि नाथद्वारा वैष्णवोंका एक प्रधान तीर्थस्थान है, परंतु उसमें श्रीकृष्णभगवान्के अतिरिक्त और कोई दूसरा दृश्य दर्शन करनेके योग्य नहीं है। नाथद्वारेकी मंदिरकी बनावटमें किसी भाँतिकी अपूर्व कारीगरी नहीं पाई जाती। नाथद्वारेका जो कुछ नाम है और जो कुछ पवित्रता है वह केवल श्रीकृष्णभगवान्जीके पवित्र समागमसे है। महानुभाव ईसामसीहके जन्मसे दो हजार वर्ष पहिले पवित्र जलवाली यमुनाजीके पवित्र किनारेपर श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकंदकी जो मूर्ति प्रतिष्ठित हुई थी, बहुतसे महाशयोंका अनुमान है कि यह वही मूर्ति है। गयाजीकी गिरिकन्दरामें, द्वारकाके उपकूलमें अथवा हृदय आनन्दकारी श्रीवृन्दाविपिनमें जो हृदयमोहन चित्र दिखाई देते हैं, नाथद्वारेमें वह दिखलाई नहीं देते; तथापि मेवाडके इस पवित्र तीर्थमें प्रत्येकवर्ष अंगणित यात्री भारतके अनेक देशोंसे आया करते हैं।

हजारों वर्षोंसे जो व्रजधाम गोपीमोहन श्रीकृष्णभगवान्का प्रधान पीठस्थान गिना जाता था, वैष्णवगण मुगल्लोगोंके अत्याचारसे उस पवित्र तीर्थभूमिको छोड़कर देवमूर्तिकी रक्षा करनेके लिये भारतके अनेक स्थानोंमें भ्रमण करने लगे। यद्यपि महमूदगजनवीके कठोर अत्याचारसे भी भगवान् विष्णुजीका

दो ।” उस नवीन वंशाधिकारीकी परिवार वृद्धिके साथ वह साधारण अंश यथा-समय सैकड़ों अंशोंमें विभक्त होकर अन्तमें सबको दीनदशामें गिरा देता है । फ्रांसकी सामाजिक विधिव्यवस्था जिस भावसे प्रचलित थी, * और अब भी वर्तमान है। उससे किसी सामन्तका अधीनस्थ देश वा किसी पट्टाधारी सामन्तके आधीनका प्रदेश उत्तराधिकारियोंके लिये खण्ड २ में विभक्त नहीं हो सकता, ज्येष्ठपुत्र ही सब स्थावर सम्पत्तिका अधिकारी होता है, और मध्यम वा छोटे पुत्रोंको मार्गका भिखारी वा दूसरेका गलग्रह होकर जीवन यात्रा निर्वाह करना नहीं होता । राजपूतानेमें प्रचलित उत्तराधिकारियोंके मध्यमें भूस्वत्व खण्ड २ की विभाग प्रथा यदि कुछ सीमावद्ध करी जा सकती तो राजपूत जातिको अधिक उपकार लाभ, और जातीय उन्नतिकी सम्भावना थी, किंतु इस रोगकी औषधि प्रगट करना दुस्साध्य है । कच्छ और काठियावाड देशमें जितना भूस्वत्व भाग अंश २ में विभक्त होता जाता है, उतने ही वहां मामले मुकद्दमे भारी अपराध और कष्ट बढ़ते दिखाई देते हैं । जहां २ इस भूस्वत्वके अधिक अंशोंमें विभाग करनेकी प्रथा नहीं है, वहां २ उसके द्वारा उपकार देखा जाता है । यद्यपि प्रत्येक उत्तराधिकारीको एक २ विभागकी भूमि पालन करती है, और यह बात देखनेमें भी सुन्दर है, किन्तु कार्य साधनमें यह किसी प्रकार अच्छा फल उत्पन्न नहीं कर सकता । मेवाडमें यह भूस्वत्व कितनी अधिकताके साथ विभक्त होता है ? हम इस बातके कहनेमें असमर्थ हैं । केवल इतना ही कह सकते हैं कि, मेवाडके रहनेवाले अपने २ भूस्वत्वको अधिक अंशोंमें विभाग न करके अनेक उत्तराधिकारियोंको विदेशमें जीविकाके लिये भेज देते हैं । यह विभागकी रीति और कन्याके विवाहके दहेजकी रीति ही शोचनीय शिशुहत्याका प्रधान कारण है ।”

कनेल टाडकी ऊपर लिखी बातके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि, बहुत काल पहलेसे शास्त्रविधानके अनुसार भारतमें जो दायभाग व्यवस्था प्रचलित है, सामन्त शासन शैलीके लिये वह कार्य साधक न होकर अनिष्ट साधन कर रही है । देशभेद और समाजभेदसे दायभाग प्रणाली भिन्न प्रकारकी है । हमारे देशमें पिताका प्रत्येक पुत्र ही समभावसे पैतृक धनसम्पत्तिमें उत्तराधिकारी है ।

× र्क सम्राट् भी ज्येष्ठ कुमारको सिंहासन देकर दूसरे पुत्रोंको भिन्न २ छोटे २

* जो पुरुषगते थे । राजपूत राजगण उसी मर्यादा पर-बड़े पुत्रको राज-साम्राज्यके विधान और स्वजा-
खारिज नहीं कर सकता । १९६ पृष्ठ ।

दारुण क्रोध हुआ था। भगवान् को अपमानसे वचानेके लिये उन्होंने औरंगजेबके विरुद्ध अपने प्रचंड खड्गको उठाया । राणाजीके प्रचंड उत्साहको निहारकर एकलक्ष राजपूत वीरोंने यवनोंके हाथसे देवमूर्तिकी रक्षा करनेके लिये अपने प्राणोंको नेवछावर करदिया । उन स्वर्गीय वीरोंके अनुभव प्राणोत्सर्गके प्रभावसे पापी अव-रंग हिन्दू देवताके पवित्र अंगको स्पर्श नहीं करसका । उसकाल श्रीविष्णु भगवान् कोटेके बीचमें हो रामपुरकी ओरसे मेवाडमें आन पहुँचे । राणाजीकी इच्छा थी कि उदयपुरमें ही मूर्तिको ले आवें, परन्तु मार्गमें एक अनहोनी वातने होकर उनकी इस इच्छाको विफल करदिया, मेवाडके ही शियोर नामक गाँवके भीतर होकर श्रीभगवान् जीका रथ चल रहा था उसही समय रथका पहिया इस प्रकारसे पृथ्वीमें प्रवेश करगया कि अनेक यत्न करनेसे भी न निकला । तब एक ज्योतिषी आया उसने विचारकर कहा कि “ भगवान् यहींपर रहना चाहतेहैं । नहीं तो उनके रथ-का पहिया किस कारणसे अचल होजाता ” ज्योतिषीका यह वचन सुनकर राणाको पूरा विश्वास होगया, उन्होंने वहींपर श्रीकृष्णजीका मंदिर बनानेकी आज्ञा दी । शीआर ग्राम मेवाडके दैलवाडा सर्दारकी जागीरमें था । भगवान् के अनुग्रहका वृत्तान्त सुनकर दैलवाडाका सर्दार वहाँपर आया और शीग्रही एक मंदिर बनवादिया, भगवत सेवाके लिये वह गाँव तथा और भी बहुत सी जमीन लगा दी । राणाजीने उसका पट्टा मानलिया । तदनन्तर भगवान् नाथजी विधिपूर्वक रथसे उतारे जाकर मंदिरमें विराजमान किये गये । उसीदिनसे शीआ-रग्राम नाथद्वारा हुआ और थोडे ही समयके बीचमें एक नगर सा बनगया। मेवाड-के प्रसिद्ध पुरुषतीर्थ नाथद्वाराकी उत्पत्ति इस प्रकारसे हुई ।

नाथद्वारेके पूर्वकी ओर पर्वतोंकी दीवार सी बनीहुई है; और पश्चिम उत्तरके किनारेको धोता हुआ बूनास नद गढखाईकी समान प्रवाहित हुआहै । नद और पर्वतके बीचमें भगवान् श्रीकृष्णजीका अत्यन्त पवित्र मंदिर स्थापितहै; राज-पूतोंका विश्वासहै कि घोर पापी भी यहां आकर पवित्र होजाता और अन्त समय स्वर्गको गमन करताहै, इस देशके सिवानेके भीतर राजदण्डका भी प्रवेश नहीं होसकता । घोर अपराधी भी यदि नाथद्वारेमें चलाआता तो राजा उसको दंड नहीं देसकता । क्योंकि यह स्थान शांतिमय और साम्यमय है । लडाई, झगडा, हंश, डाह इत्यादि किसी प्रकारकी विषमता यहाँपर नहीं रहसकती । सभी आन-न्द पूर्वक धेद वेदान्तका विचार किया करतेहैं । यद्यपि नाथद्वारा एक साधारण ग्रामहै; परन्तु इसकी सीमाके भीतर अगणित मनुष्य विश्राम करसकतेहैं । स्थानरमें झमली, पीपल और बडके वृक्ष लगे रहकर दूरसे आये हुए यात्रियोंपर छाया करतेहैं।

पैतीसवां अध्याय ३६.

रेकोयाली कर;—दासत्व;—वसी [शी] गोला और दास;—
राजपूतप्रधान वा मंत्री ।

रेकोयाली—पूर्वराजकी सामन्त शासन शैलीके साथ पश्चिमी राजकी सामन्त शासन शैलीकी समानता पहिले अनेक विषयोंमें दिखा चुके हैं, करनेल टाड साहब यहां पर और एक विषयकी समानता लिख गये हैं, पञ्चायती प्रबन्ध शिथिल होने, तथा चारों ओर अशान्ति फैलनेसे, और उस समयके अधीश्वरकी शासन शक्तिका हास होनेसे प्रजाके धन और प्राणकी रक्षामें असमर्थ होनेके कारण रजवाडेमें जिस प्रकार रेकोयाली करका प्रचार हुआ यूरोपमें भी इसी कारणसे सालवामेण्टा (Salvamenta) का जन्म हुआ, रेकोयाली शब्दका अर्थ रक्षा करना, और आश्रय देनेके सम्बन्धका है, करनेल टाड लिखते हैं कि राजपूत राज्योंमें इस प्रकारका कर पूर्व कालमें भी कुछ २ प्रचलित था, जिस समय मेवाड़में महाराष्ट्र पठान आदि दस्युदलने संहार मूर्ति धारण करके अत्याचार लूट मार और उपद्रव आरंभ किया था, जिस समय मेवाड़की प्रत्येक प्रजाकी धन प्राणकी रक्षा अत्यन्त दुस्साध्य होगई उस समयमें ही यह रेकोयाली कर शोचनीय रूपसे प्रजाओंका खून चूसता था, धन प्राण और भूमि सम्पत्तिकी रक्षाके लिये ही प्रजा सबल सामन्तोंके आश्रयको ग्रहण करके रक्षाके बदलेमें यह रेकोयाली कर देनेको विवश हुई थी, प्रायः नगदरूपये अथवा रक्षा करनेवाले अधीश्वरकी भूमिको कई मास तक बिना कुछ लिये यह जोत देतेथे, इसके सिवाय आश्रय देनेवाले सामन्त इन आश्रित जनोंसे अपनी इच्छानुसार दूसरे स्वार्थ भी पूर्ण करलेते थे विशेष कर सामन्तगण भूमियां लोगोंके निकटसे अनेक उपाधियोंसे उनकी भूमिका अधिकार लेलेनेका विशेष यत्न करते थे, कारण कि सामन्तगण यदि राणाके द्वारा किसी प्रकारसे सामन्त पदसे विच्युति—पट्टाधीन भूस्वत्व छोडनेमें बाध्य होते, तो इस भूमियांस्वत्व संग्रह द्वारा सहजमें जीविका निर्वाह करते थे भूमियांस्वत्व राणा किसी प्रकार भी अपने अधिकारमें नहीं कर सकते । इस कारण चतुर सामन्तगण भूमियांस्वत्व संचयके लिये ही आश्रय दान

मधुकैटभ संहारक वेश दूसरी ओर गोपाल नारायण मूर्ति । जहाँपर दो आदमियोंके स्वार्थमें संघर्ष होगा वहाँपर बिना एक आदमीका संहार किये दूसरेकी रक्षा नहीं की जासकती । जहाँ शान्ति स्थापन करनी होगी वहाँपर बिना अशांतिका नाश किये हुए काम नहीं चलेगा । वस यही यथार्थ वैष्णवधर्म है । राजपूतलोग यदि इसी वैष्णवधर्मका अवलम्बन करें तो उनका विशेष उपकार होसकताहै; नहीं तो मिथ्या वैरागी और हठीले वैष्णवधर्मको ग्रहण करनेसे उनकी शोचनीय दशा और भी बुरी होजायगी । वैष्णवधर्मका एक गुण यह भी है कि अकारण रुधिर गिराना या इधर उधर खड़ चलवैठना उसको अच्छा नहीं लगता । जहाँपर एकके स्वार्थसे बहुतोंको हानि पहुँचतीहै, जहाँपर एकके मंगलसे बंधुतोंका अनिष्ट हुआहै, विष्णुजीने वहाँपर अपने अमोघ चक्रको चलायाहै । नहीं तो हजारों मधुकैटभ जन्म लेलेते तो भी उनको क्या चिंता थी । विष्णुजी न्याय और धर्मके पक्षपाती हैं । यदि कोई अन्यायी और अधर्मी आदमी उनका प्रसाद प्राप्त करनेके लिये सामने ही प्राणतक देदं तो भी वह उसकी ओरको नहीं देखते; परन्तु जहाँपर न्यायका अपमान होताहै; जहाँपर धर्मके मस्तकपर लात मारीजातीहै, विष्णुजीका मन वहाँपर पडा रहताहै; उस दुःखपाये सतायेहुए मनुष्यका उद्धार करनेके लिये श्रीविष्णुभगवान्जी प्राणपणसे चेष्टा करतेहैं । भगवान् श्रीकृष्णजीने अवतार होनेके कारण इसी श्रेष्ठ और सूक्ष्म नीतिका अवलम्बन कियाथा । हम भी इसी वैष्णवधर्मके पक्षपातीहैं । यदि राजपूतगण इसी वैष्णव धर्मको स्वीकार करलें, यदि वह इसकी यथार्थ नीतिका व्यौहार करने लगे तो हमको कुछ भी आपत्ति नहींहै । समस्त भारत इस वैष्णवधर्मसे दीक्षित होजाय, पुनर्वार भगवान् श्रीकृष्णजी अवतार लेकर इस श्रेष्ठधर्मका विस्तार करें; नगर नगर, गाँव गाँव और स्थान २ में भ्रमण करके “हरे मुरारे मधुकैटभारे” इत्यादि नारायणजीके यथार्थ मंत्रोंका प्रचार करें;—तो निश्चय ही सताये दुःख पाये राज्यहीन पाण्डवकुलकी जय होगी ।

वसी ।—यद्यपि क्रीत दास रखनेकी प्रथा पश्चिमसे इस समय विलकुल दूर होगई है । तथा ब्रिटिश शासनमें भारतवर्षसे भी दास व्यवसायने इस समय भूत उपाधि धारण करली है । किन्तु कर्नेल टाड लिखते हैं कि, पूर्वकालमें पश्चिमी राज्य की सामाजिक प्रत्येक अवस्थामें ही जिस प्रकार कृषिदास देखे जाते थे रजवाडोंमें पूर्वकालमें उस प्रकारके कोई नहीं थे । स्वाधीन राजपूत और राजालोंके अधीन स्थित गोला नामक * उपाधिकारी दासोंमें वसी नामक एक श्रेणी में दासोंका उल्लेख देखाजाता है । यह वसीगण सालिकफ्रांकोंके प्राचीन सारभिनामक दास श्रेणीके प्रायः समान हैं । हालम साहब लिखते हैं कि, सरभिदासों की निजकी सम्पत्ति होनेपर भी वह अपने प्रभुके अधीनमें कृषिकार्य और प्रभुके अधिकृत देशमें ही निवास करनेको बाध्य होते थे । आरावलीकी एक श्रेणीके किसान जो इस समय हाली नामधारी हैं, उनकी दशा भी अब ऐसी ही होगई है । पूर्वकालमें जो खेत उनकी निजकी सम्पत्ति थे, इस समय सामन्तगणोंका उन क्षेत्रोंके ऊपर अधिकार होजानेसे वह हाली लोग × उस सामन्त मण्डलीके दासरूपसे उन प्रभुकी आज्ञानुसार खेत जोतनेमें नियुक्त होते हैं ।

हालम लिखते हैं कि, “छोटे २ भूस्वामिगण लूट मार और अत्याचारके समय भूस्वत्वसे वंचित होनेपर अपनी व्यक्तिगत स्वाधीनता भी खो बैठते हैं ।” कर्नेल टाड लिखते हैं कि; “हारावली देशके हालीगण इस उक्तिकी सत्यता भलीभाँति प्रगट करदेते हैं । विद्रोह विदेशीय आक्रमण आदिके कारणसे पहिले छोटे २ भूस्वामी जनोंके सामन्तोंका आश्रय लेनेपर उनके द्वारा ही वसी दास श्रेणीकी उत्पत्ति हुईहो, ऐसा ही नहीं किन्तु भीतरी अत्याचार उत्पीडन भी इसका मूल है । कोटा राज्यके हालीगण यद्यपि दासस्वरूप हैं, किन्तु वह दास उपाधिको धारण नहीं करते । वसी लोगोंकी दशा उनकी अपेक्षा शोचनीय है । क्योंकि उनकी निजकी किसी प्रकार की धनसम्पत्ति वा भूमि नहीं है । पहिले जिस भूमिमें उनका अधिकार था, इस समय उस भूमिमें ही वह सामन्तोंकी आज्ञानुसार जीविका निर्वाहके लिये कृषिकार्य करनेमें बाध्य हैं, और

* यवनोंका “ गुलाम ” शब्द जिस अर्थका बोधक है, राजपूतोंका “ गोला ” भी उसी अर्थका सूचक है ।

× हाली शब्द कृषिकार्य साधक हलसे उत्पन्न हुआ है । सेक्सन लोगोंके हलका नाम Sye था, । मारवाडमें “ स ” वर्णके स्थानमें “ ह ” वर्णका व्यवहार होता है, यथा;—सालिमसिंह नाम “ हालिमसिंह ” रूपसे उच्चारण कियाजाता है ।

लोगोंके साथ उपरोक्त प्रकारका आनन्द लूटते हैं। जिस समय राजस्थानकी चारों सीमाओंपर इस प्रकारका आनन्द उफना करता है, उसही समय असभ्य भील लोग भी अपने २ वनोंसे आनकर राजपूतोंमें मिल जातेहैं। राजपूतोंको भी भीलोंके मिलनेसे परमानन्द होताहै।

भानुसप्तमी ।—वसंत पंचमीके दो दिन पीछे भानु सप्तमीका आगमन होता-है। कहते हैं कि सूर्य भगवान्का जन्म इसही तिथिको हुआ था। सूर्यवंशीय राणागण अपने कुलदेवताकी जन्मतिथिको अनेक प्रकारके उत्सव किया करते हैं। इस दिन राणाजी अपने सदाँर और सामन्तोंको साथ लेकर चोंगा नामक पवित्र स्थानमें जाया करते हैं; वहीं पर सूर्य भगवान्की पूजा की जातीहै। इस दिन जयपुरमें सूर्य भगवान्की पूजा कुछ विशेष धूमधामके साथ होती है। कुशावह (कछवाहे) राजा उस दिन सूर्यनारायणके अंदिरमें प्रवेश करके उनके रथको जिसमें आठ घोड़े जुते हुए होते हैं, बाहर लाते हैं। नगरवासी और जनपद-वासी उस रथको खैचकर महा आनन्दके साथ नगरके चारों ओर फिराते हैं।

शिवरात्रि ।—फाल्गुन मासकी कृष्ण चतुर्दशीको यह उत्सव होताहै। प्रत्येक हिन्दू और विशेष करके राणाजी इस शिवरात्रिको परम पवित्र मानतेहैं। घोर पापी निषद सुन्दरसेन जिस दिन अपने समस्त पापोंसे छूटकर शिवलोकको चलागया; उस दिनको सबही हिन्दूगण पवित्र मानेंगे। भारतवर्षमें चित्तौरके राणाजी “ शिवके प्रतिनिधि” समझे जातेहैं; इसही कारणसे वह धूम धामके साथ शिवजीकी पूजा किया करतेहैं। राजपूतलोग शिवरात्रिके दिन निर्जल व्रत रखतेहैं। प्रत्येक शैव इस पवित्र दिनमें किसी प्रकारका कोई संसारी कार्य नहीं करते और सारी रात्रि जागरण करके केवल महादेवजीका ही भजन करतेहैं।

अहेरिया ।—अहेरिया अर्थात् वासन्तिक शिकारके साथ २ संसारमें मधुरतामय फाल्गुन मासका प्रवेश होताहै। इसके पहिले दिन राणाजी अपने सदाँर और नौकर चाकरोंको एक हरेरंगका अँगरखा दिया करतेहैं। राणाजीके दिये हुए उस अँगरखेको पहिने हुए समस्त सदाँर और सेवकलोग ज्योतिषीकी बनाईहुई शुभ लग्नमें राणाजीके साथ बराहका शिकार करनेके लिये नगरके बाहर जातेहैं। तदनन्तर वह वनैला सूकर भगवती पार्वतीजीके सामने उत्सर्ग कियाजाताहै। ज्योतिषीके बतानेपर मृगयाकी लग्न नियत होतीहै, इस कारणसे अहेरियाका दूसरा नाम “ महरतका शिकार ” है। इस महान शिकारके समयमें राजपूतलोग अपने २ भाग्यकी परीक्षा किया करतेहैं। जो उस

पूर्वकालमें जर्मन जातियोंके मध्यमें द्यूतक्रीडा प्रचलित होनेसे किस प्रकार विषमय फल उत्पन्न और व्यक्तिगत स्वाधीनता लुप्त होती थी, टासिटस उसका भलीभाँति वर्णन कर गयेहैं; जुयेमें परास्त होने पर वह दासरूपसे बाजारमें बेचे जाते थे । उस जर्मन जातिकी समान राजपूत जाति भी अत्यन्त द्यूतक्रीडाके आसक्त है, यह बात यथास्थानमें लिखी जा चुकी है । टासिटसने जर्मनकी जिस समयकी द्यूतक्रीडाका उल्लेख कियाहै, उसके सैंकड़ों वर्ष पहिले— यहाँतक कि टुइष्टों देवोपासकोंके द्वारा जर्मनके गहनवन वस्ती पूर्ण होनेके बहुत वर्ष पहिले राजपूत वीरोंमें यह सर्वनाशकारी द्यूतक्रीडाकी रीति प्रचलित थी, भारत-वर्षके इतिहास पुराणोंसे इस बातका पता चलता है । इस द्यूतक्रीडाने भारत वर्षके कितने प्राचीन वंशोंका नाश किया है, इस बातको हिन्दूपाठक भलीभाँति जानते हैं महाराज युधिष्ठिर यदि द्यूतक्रीडामें आसक्त न होते, यदि वह पणमें राज्यधन—और अन्तमें प्राणप्यारी कृष्णा तकको न हारदेते तो कभी कुरुक्षेत्रका महासमर न होता, कभी भी उस युद्धाग्निमें करोड़ों भारत सन्तानकी जीवनाहुति न दीजाती, तथा भारत अनन्त श्मशानमें परिणत—हिंदूजाति अन्तःसारशून्य और उस कारणसे भारतका गौरव रवि अस्ताचल छूटावलम्बी न होता । उस द्यूतक्रीडासे ही भारतके सम्राट् युधिष्ठिरको दासत्व करना पडा था । भारतवर्षके राजवाडोंमें अब भी अनेक हिन्दूजातियें जुआ खेलनेमें उन्मत्त हैं । प्रबल ब्रिटिश शासनने यद्यपि इस विषमयकी प्रथाको बहुत कुछ दूर करदियाहै, किंतु अब भी छिपे २ बहुत लोग उस खेलमें आसक्त रहते हैं ।

राजपूत सामन्तोंके औरससे उत्पन्न दासीगर्भ संभूत पुत्र जिस प्रकार गोला नामसे विख्यात है, राणालोगोंके औरससे उसी प्रकार राजपूतानी दासियोंके गर्भसे जो जन्म लेते हैं, वह भी उसी प्रकार दासकी उपाधि प्राप्त करते आते हैं । यह दासलोग यद्यपि राणागणके द्वारा जीवनयात्रा निर्वाहके लिये भ्रूवृत्ति और धनादि पाते हैं किन्तु उनको सभी पंचायतमें कोई प्रतिष्ठित पद नहीं दियाजाता । वसी लोग अपनी इच्छानुसार दास नामसे विख्यात हैं, और गोलालोग वंशानुक्रमिक दास नामसे कहे जाते हैं । गोला केवल गोली अर्थात् दासीहीके साथ विवाह करसकते हैं । राणालोगोंके औरससे उत्पन्न जाति दासोंको बहुत साधारण दशावाले राजपूत भी अपनी कन्या देना नहीं चाहते । वसीगण भाग्य परिवर्तनके साथ अपना क्रीत दासत्व छुडाकर व्यक्तिगत स्वाधीनता फिर प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु गोलालोग वैसी स्वाधीनता पाना नहीं चाहते क्योंकि वह

तक अवीर गुलाल और रंग पड़ा होता है—वस यही कहावत चरितार्थ होती है किं “ लाले लालके लाले लोचन लाले मुखमें लाले बीरा । ” स्त्री पुरुष बालक वृद्ध सभी अवीरसे शरीरको चित्रित करते फिरते हैं । सभी कुंकुम और पिचकारीको हाथमें लिये स्त्रियोंकी सारी रंगनेके कारण मार्गघाटमें घूमतेहुए फिरते हैं । जिन्होंने कभी भी घरके भीतरसे बाहर पाँव नहीं दिया होता, भुवनप्रकाशक सर्वत्रगामी, भगवान् मरीचिमाली भी और समय जिनके मुखकमलको नहीं देखसकते वह भी आज घरसे बाहर आकर होरी २ कहा करती हैं ।

मेवाडी लोग इस उत्सवको फागके नामसे पुकारा करते हैं । इन दिनों राणाजी भी रनवासमें जाकर रानी और उनकी सहेलियोंसे अवीरका खेल खेलते हैं । उस समय किसीको जरा भी शरम नहीं रहती;—किसीके मुखमंडलपर तिल-मात्र भी निरानन्दकी छाया नहीं दिखाई देती । उन सुन्दरी नारियोंके साथ होरी खेलनेमें राणाजीको अपार आनंद प्राप्त होता है । परंतु सबसे अधिक वह होली अत्यंत अद्भुत होती है जो कि घोड़ेपर चढ़कर खेली जाती है । सरदार और सामंतगण कुंकुम और अवीर लेकर अपने घोड़ोंपर चढ़े हुए महलोंके मैदानमें फाग खेला करते हैं । कोई अत्यन्त चतुरताके साथ अपने घोड़ेको झपटाकर कुंकुमरूपी शस्त्रसे शत्रुको आक्रमण करता है, दूसरा आदमी भी अपने अंगको बचाकर उसके आक्रमणको व्यर्थ करदेता है । कहीं पर एक अदमीको पाँच आदमी घेर रहे हैं, कहीं पर एकही बलवान और चतुर सवार दूसरे पाँच सवारोंपर अवीर कुंकुमकी बौछार करता हुआ शीघ्रतासे अपने घोड़ेको भगाये हुए आता है । कहींपर एकसाथ दश आदमी मिलकर परस्पर एक दूसरेको रंगसे सराबोर कर रहे हैं । पिचकारियोंके रंग और अवीर फेंकनेका दंग सदर्ारलोगोंको बेरंग करदेता है ।

जिस दिन इस होलीलीलाकी समाप्ति होती है उस दिन किलेके तीन अंजिले पर बराबर एक नगाडा बजा करता है । उस गंभीर डफके शब्दको सुनते ही सदर्ार लोग अपनी २ सेना और सामंतोंके साथ राणाजीके निकट पहुँचते हैं । राणाजी उन सबको साथ लिये हुए चौगान महलको चले जाते हैं । यह स्थान राजपूतोंका प्रधान रंगस्थल है । लीलायुद्ध अथवा कोई नई कौशलका अभिनय दिखानेके लिये राजपूतलोग इसी स्थानपर इकट्ठे हुआ करते हैं । इस स्थानके बीचमें एक छायाहुआ बड़ा आँगन है वडे २ खम्भोंपर यह बड़ी छत ठहरी हुई है, चौगानके चारों ओर किसी भांतिकी कोई दीवार नहीं है इस कारणसे चारों

भारतके अनेक प्रान्तोंमें बहुतसे देश वस्ती वशी नामसे पुकारे जाते हैं । टोंक (रामपुरा) राज्यके निकटमें विख्यात वशी नगरका नाम इसी कारणसे उत्पन्न हुआ है । सबसे पहिले सोलङ्की राजने विजातीय आक्रमणसे अपना पैतृक राज्य गुजरात छोड़कर उक्त देशमें वस्ती स्थापन करी थी । उनके आधीनकी सब प्रजाने भी उस कारणसे विजातीय शासनमें रहना अनुचित समझ अपनी इच्छानुसार उनके साथ आकर ऊपर कहे स्थानमें निवास करना आरंभ किया । कर्नेल टाड लिखते हैं कि विजलीकी मूल घटना भी कदाचित् इसी प्रकार हुई थी । किन्तु इसके निवासीलोग अवतक वशी नामसे गिने जाते हैं । कृतज्ञ चित्तसे बहुतसे राजपूत यही कहते हैं कि, “मैं आपका वशी हूं, आप मुझको दास रूपसे बेच सकते हैं । ×

आत्मकलह ।—कर्नेल टाड लिखते हैं कि, “राजपूत समूहकी जिस समयकी अवस्थाका चित्र यहां अङ्कित होता है, जिस समय राणाके व्यक्तिगत चरित्रके ऊपर सबही निर्भर होता था, उस समय सबको ही स्वेच्छाचार वृत्तिके पूर्ण करनेकी इच्छा और राजपूत जातिको दुर्दमनीय बदला लेनेकी इच्छा अवश्य ही प्रबल होगई थी । समयके गुणसे जातिसाधारण अवनतिके साथ आत्म-क्लेशने भी इस देशका सर्वनाश साधन किया है । इस आत्मक्लेशकी अग्निने भयानक रूपसे प्रज्वलित होकर बीतीहुई अर्द्धशताब्दीके समयमें मेवाडको जैसी शोचनीय दशामें फेंक दिया है, जो आत्मक्लेश और कुछ समयतक प्रबल रहता तो मेवाडको अनन्त श्मशान और गहन वनमें परिणत करदेता, उस आत्मकलहके कई दृष्टान्त और किस उपायसे आत्मकलहमें उन्मत्त हुए राजपूतलोग बदला लेकर अपना नाम चरितार्थ करलेते थे, इस स्थानमें उस विवरणके पढ़नेसे समाजकी उस समयकी अवस्था पाठकगण बहुत कुछ जान सकेंगे ।

× एक समय महाराष्ट्र लोगोंने कई युवक राजपूत सामन्तोंको युद्धसम्बन्धी कर दानके बदलेमें बन्दी करलिया । कर्नेल टाडने मध्यस्थ बनकर उनको छुड़ाया । उन सामन्तोंमें पूरवत् सम्प्रदायके नेताके छोटे भ्राता भी थे; उनकी माता मृत्यु शय्यामें गिरकर उनको देखनेके लिये अधीर होगई, किन्तु कर्नेल टाड टीकामें लिखगये हैं कि, यद्यपि वह छुटकारा पायेहुए राजपूत मार्गमें अपनी उन माताका दर्शन कर सकते थे, किन्तु उनके हृदयमें कृतज्ञता यहाँतक प्रबल हुई कि, वह वैसा न करके पहले सीधे कर्नेल टाडके पास पहुंचे और कृतज्ञताके साथ गद्गद हृदयसे वारम्बार यही कहनेलगे कि, “मैं आपका राजपूत, आपका गोला और आपका वशी हूं, आप मुझको जो आज्ञा देंगे उसीको तत्काल पालन करूंगा ।” कर्नेल टाडने उनको उसी समय उनकी पुत्रदेखनेकी उत्कंठावाली माताके पास भेजदिया ।

मेवाडकी इस शुक्ला छठको टाडसाहवने और एक उत्सव देखा था वह उत्सव राणा भीमसिंहकी जन्मतिथिको हुआकरताथा । राजपूतलोगोंमें पुरानी रीति है कि वे अपने अपने जन्मदिनको एक २ उत्सव कियाकरतेहैं । वर्ष-गाँठका उत्सव तो अंगरेजोंमें भी हुआकरताहै । जिस दिन अनंत कालसागरमें एक नवीन तरंग उठतीहै, जिस दिन दशमहीनेकी कठोर पीडासे छुटकारा पाकर संसारमें पहुँच होतीहै, जिस दिन अनंत भूत और होनहारके मध्यमें नये उत्पन्नहुए जीवका वर्तमान रूप, एक संधि करदेताहै, जीवनके उस श्रेष्ठ दिनको संसारके समस्त सभ्य लोग मानते आयेहैं । देवताके निकट राणाजीका मंगल और दीर्घजीवनकी प्रार्थना करके मेवाडके रहनेवाले अनेक प्रकारकी भेंट लेकरके उदयपुरके राजभवनमें आयाकरतेहैं । यह उत्सव रनवासमें हुआकरताहै । दूसरा कोई मनुष्य नहीं देखने पाता । इसी कारणसे उसदिन राणाजी नये वस्त्र और नये गहनोंसे भूषित होकर भ्राति २ के भोजन सेवन कियाकरतेहैं । राजभवनके चारों ओर नाचना गाना हुआ करताहै । रनवासकी स्त्रियां मंगल और संगीतको गाकर भगवानसे राणाजीका मंगल मनातीहैं ।

फूलडोल ।—महाराज राज्यचक्रवर्ती श्रीमान् विक्रमादित्यके चान्द्र सौर वर्षारंभके साथ ही मेवाडमें इस उत्सवका आरम्भ होताहै । कार मासकी नवरात्रिमें जो अनुष्ठान हुआकरताहै, अधिकांशसे फूलडोलमें भी वही विधि हुआ करती हैं । इस पर्वका पहिला अनुष्ठान खड्गपूजा है । राणाजीके महलमें यह पूजाविधि समाप्त होतीहै । परन्तु भगवती वासन्तीकी पूजाके लिये जो समस्त उत्सव हुआ करतेहैं; उनके सामने खड्गपूजा तो साधारण ही ज्ञात होतीहै । वसंतकालके आगमनसे सारा संसार आनन्दमय ज्ञात हुआ करताहै । आकाशसे निशानाथ अमृतकी वर्षा किया करतेहैं, अंतरीक्षमें पवनदेव मधुरताका विकाश किया करतेहैं ।

मानवलोकमें कुसुमकुन्तला वनदेवियाँ आनन्दसौरभको प्रकट किया करती हैं । सिद्धान्त यह है कि वसंतकालमें जो कुछ है सबही आनन्दमय है । इस समयमें राजपूतोंके घरमें आनन्द हुआ करताहै । कमलकी समान सुकुमार राज-पूतवालागण और कामदेवविजयी पुरुषगण फूलोंके गहनोंसे अपने अंगोंको सजाकर फुलवाडीमें या प्रमोदवनमें जातेहैं । वहाँपर फूलीहुई बेलों और फूलें वृक्षोंकी चिकनी छायाके नीचे बैठेहुए वह जोडा भी फूलकी ही समान जान पडताहै । मस्तकपर फूलोंका ही मुकुट, गलेमें फूलोंका हार, यहाँतक कि सबही

लिये रक्तही लेती है। जो राजपूत नरपति बदला लेकर अथवा शत्रु राजाके किसी पुत्र वा प्रधान आत्मीयका शिर काटकर, उस राजाको “मुण्डकाटा” के लिये क्षतिपूरण स्वरूप धन वा देश लेनेमें बाध्य कर सकते हैं, वह राजा ही राजपूत जातिके निकट प्रबल प्रतापयुक्त गिने जाते हैं, अर्थात् शत्रुपक्ष यदि प्राणनाशके कारण बदला लेनेके लिये प्राणनाशक राजाके प्राणनाश करनेमें तत्पर न होकर, केवल दूसरी प्रकारसे हानि भरकर ही प्रसन्न होजाय तो बदलेकी वृत्ति पालनमें शिक्षित राजपूत जाति उस राजाको महावली कहकर पूजा करनेमें स्वतः ही बाध्य है। *

इतिहासलेखक टाड लिखते हैं कि, केवल एक उपायके द्वारा ही यह विषम आत्मकलह वा प्रतिहिंसा निवारित हो सकती है, किन्तु वह कार्य राजपूत जातिमें घृणित समझा जाता है। परस्परमें विवाद आरंभ और उस कारणसे दोनोंके बदला लेनेमें प्रमत्त होनेपर, यदि क्षतिग्रस्त पुरुष क्षमा प्रार्थना करे, अथवा अत्याचारी यदि उसके अधिकारके स्थानमें जाकर क्षमा चाहे; तो परस्परकी शत्रुता दूर होजाती है। क्योंकि ऐसे किसी बदलेके लेनेपर समाजमें अत्यन्त कलङ्कित और अपमानित होता है। ऐसी घटना पहिले प्रायः नहीं घटती थी, अर्थात् राजपूतगण पूर्वकालमें किसी प्रकार ऐसे आत्मह्नेशमें अग्रसर नहीं होते थे। वर्तमान निर्जीव और जातीय गुणोंसे हीन राजपूतगण ही अब इस मार्गका अवलम्बन करते हैं।

हम यह ऊपर ही लिख चुके हैं कि शाहपुराके राजा राणावंशमें उत्पन्न और मेवाड़में एक प्रबल बलशाली पुरुष थे। एक समय उन शाहपुराके उमेदसिंह नामक अधिपतिके साथ अमर गढ़के भूमियां स्वत्वाधिकारी राणावत् सामन्तका महा ह्नेश उपस्थित हुआ। शाहपुराधीश्वर केवल राणाके दियेहुए भूखण्डके अधीश्वर ही नहीं थे, किन्तु दिल्लीके सम्राटका दियाहुआ एक और देश भी उनके अधिकारमें था? वाणिज्य शुल्कके सिवाय उक्त दोनों देशोंकी उस समय-

* पारीशिष्ट-१८वीं अनुलिपि देखो। ऍंग्लोसेक्सन लोगोंके शरीरकी अङ्गहानिकी क्षति पूरणके लिये जो विधि निश्चित थी, कर्नेल टाड स्वयं स्वीकार करगये हैं कि, उसकी अपेक्षा विवाद विधि बहुत काल पहिलेसे हिन्दू जातिमें प्रचलित होती आती है। मनुके विधानमें ब्रह्महत्यासे लेकर एक कुत्तेका हत्यातकका दण्ड और प्रायश्चित्त लिखा है। पाठकगण शब्दकल्पद्रुममें प्रायश्चित्त शब्दका अर्थ देखनेपर इस विषयमें बहुत सी बातें जान सकेंगे। वह लेख बहुत बड़ा है, इस कारण हम इस स्थानमें उसको उद्धृत नहीं करसकते।

की वार्षिक आय १००००००) दस लाख रुपये थी। मेवाडके मंडलगढ नामक जिस देशमें उन्होंने राणाके निकटसे भूवृत्ति पाई थी, उस मंडलगढमें ही उनके शत्रुका भी अधिकार था। दोनोंके देश परस्पर संलग्न और कुछ भूमि दोनों देशोंमें मिश्रित होनेके कारण सदा विवाद, भयदर्शन, यहांतक कि युद्ध भी होजाता था। दोनों देशके किसानलोग भी उस विवादमें प्रभक्त होकर परस्पर विनारक्त पात किये शान्त न होतेथे। दिलालनामधारी उक्त भूमियां शाहपुरापतिकी अपेक्षा अल्प शक्तिशाली थे; केवल देशग्राम उनके अधिकारमें होनेसे, वह वार्षिक कुछ अधिक (१२०००) बारह सहस्र रुपये अपने धनके पाते थे। किन्तु सम्पूर्ण प्रजाको न्यायानुसार शासित करनेसे दिलाल सबके प्रिय होगये, और उनके स्वजातीय भ्रातागण उनके लिये सब समय तलवार धारण करनेमें तत्पर रहतेथे। एक शिखरके ऊपर दिलालका दुर्ग महल स्थापित और उसमें पश्चिम मुखवर्ती (शाहपुराके सन्मुख) ऊंची चौटीवाले महलके ऊपर कई तोंपें सज्जित रहती थीं। दुर्गप्रासादके चारोंओर ही गहन वन है, केवल दो तीन दुर्गम मार्गोंमें होकर उस प्रासादमें प्रवेश किया जासकताहै, उस कारण कोई शत्रु सहसा उसमें घुसकर आक्रमण नहीं करसकता था। अतएव शाहपुरा पतिके प्रबल सामर्थ्ययुक्त और रणक्षेत्रमें सहस्र योद्धा उपस्थित करनेमें समर्थ होनेपर भी दिलाल निर्भय वास करता था। दोनोंमें विवादप्रति समय समय पर भयानक वेगसे प्रज्वलित और कभी २ क्षीण शक्ति भी होजाते थे। राजाके अधिकारके ग्राम दुर्ग वद्ध न होनेसे वा अन्य किसी प्रकारके उपायसे आत्मरक्षामें असमर्थ होनेसे दिलाल सहजमें ही निकृष्ट उपायसे उन ग्रामोंके प्रति अपनी बदलेकी वृत्ति चरितार्थ करलेते थे। दिलाल समय २ पर शाहपुरा राजके अधिकारी ग्रामोंमें घुसकर गौ आदि पशु लूट लेते और धनवान प्रजाओंको बंदी करके अमरगढके भयङ्कर कारागारमें डाल देतेथे। वह बहुत साधन देनेपर छुटकारा पाते थे। इस निरन्तर रहनेवाले विवादसे दोनों पक्षके किसानोंकी यथेष्ट हानि होती थी, कृषिकार्य विलकुल बन्द होगया और शाहपुरके पति उम्मेदके मण्डलगढके समीपी ग्रामोंकी आधी प्रजा प्राण लेकर अन्यत्र भागनेको बाध्य हुई। शाहपुरके राजाकी अपेक्षा उनके शत्रु दिलाल अपने निवासियोंके अधिक सहानुभूतिके पात्र थे, क्यों कि शाहपुरावीश्वर स्वेच्छाचारसे सर्वधारणके अत्यन्त अप्रिय होगये थे, और दिलालको पदानत करनेके अभिलाषी होनेसे

दूसरे भूमियांलोग उनसे महारुष्ट होगये । इस निरन्तर विवादसे प्रजा पुञ्ज भी “ वरसादोहाई ” * कर देते २ सर्वस्वान्त होगई ।

शाहपुराके राजा उम्मेद एक अस्थिर चित्त और कठोरहृदयपुरुष थे । एक समय उन्होंने क्रुद्ध होकर अपने पुत्रकी कमरमें रस्सी बाँधी और शाहपुरेके देवालयकी ऊंची चोटीमें बांधकर नीचे लटकादिया, तथा उसीकी माताको बुलाकर वह हृदय भेदी दृश्य दिखाया था! वह सदा घोड़ेपर अथवा शीघ्रगामी ऊंटपर चढ़कर अनेक स्थानोंमें अकेले घूमा करते थे । बीच २में कई दिनतक उनका कुछ समाचार नहीं पाया जाता था । एक दिन राजा उम्मेद इसी प्रकार अकेले भ्रमण करते हुए अपने शत्रु दिलालके अमरगढमें पहुँच गये, और दैव योगसे दिलालकी दृष्टिमें पड़ गये । दिलालने देखा कि एक ऊँचे पदके सामन्त उनकी दयाके अधीन हैं, उस समय उन्होंने कोई शत्रुताका आचरण नहीं किया, और विनय नम्रभावसे प्रणाम करके उनको अपने दुर्ग ग्रासादमें लेगये । बड़े आदरसे राजाके पदोचित सन्मानके साथ उनका अतिथि सत्कार करके राजाके स्वास्थ्यकी कामनासे “मनुयार प्याला” × पिया, फिर दोनोंने परमानन्दके साथ भोजन करके परस्परकी शत्रुता सदाके लिये छोड़ देनेकी प्रतिज्ञा करी थी ।

राजा उम्मेद और सामन्त दिलालके मध्यमें इस शत्रुताकी अग्नि बुझजानेके कुछ दिन पीछे दोनों ही उदयपुर राजधानीमें राणाकी सभामें बुलाये गये । राणाके साथ मुलाकात होनेके पीछे राजाने प्रस्ताव किया कि; दोनों एक साथ ही स्वदेशमें जायँगे । अन्तमें दिलालको अपने घर ले जानेके लिये सादर निमंत्रण दिया । दिलालने उस आमंत्रणको स्वीकार करके अपने बीस अश्वारोही राजपूत सैनिक और आवश्यकीय वस्तु साथ लीं, तथा राजाके साथ शाहपुराकी ओर घोड़ा हांक दिया । राजा उम्मेदने सामन्त दिलालको अपनी राजधानीमें लेजाकर बड़ा आदर किया और यथेष्ट आत्मीयता दिखाकर दोनोंने एकत्र

* जिस समय मेवाडके चारों ओर अराजकता, अत्याचार और लूटमार प्रचल होगई, उस समय डाँकूलोग भिन्न २ ग्रामोंमें जाकर लूटमार और अत्याचार आरंभ कर देतेथे । असहाय निवासियोंकी छातीपर बरछा लगाकर प्राण नाशका भय देकर धन संग्रह करलेते थे । छातीपर बरछा चुसेडनेमें उद्यत होनेपर प्रजा “ दोहाई ” देकर छुटकारा चाहतीथी, इसी कारण उसका नाम “ वरसादोहाई ” हुआहै । कृषिकार्यके समय डाँकूओंके हाथसे धान्य रक्षाके लिये भी प्रजा “ वरसादुहाई ” देती थी ।

× अतिथि सन्मानार्थ अफीम पीनेका प्याला ।

अशोकाष्टमी ।— इस त्यौहारको सम्पूर्ण राजपूत लोग विश्वमाता भगवतीकी पूजा किया करते हैं । राणाजी अपने सम्पूर्ण सदाँर और सामन्तोंको साथ ले चौगान महलमें जाते तथा सारे दिन वहीं रहकर आनन्द किया करते हैं । आजके दिन समस्त राजपूत भगवती भवानीकी उपासना करते हैं ।

रामनवमी ।—अशोकाष्टमीका दूसरा दिन रामनवमीके नामसे प्रसिद्ध है । इसही शुभतिथिको पुनर्वसु नक्षत्रमें रघुकुल कमल दिवाकर भगवान श्रीराम-चन्द्रने जन्म लियाथा । यही कारण है जो उनके वंशवाले इस दिनको अत्यन्त ही पवित्र समझते हैं । आजके दिन हाथी घोड़ और अस्त्र शस्त्रोंकी पूजा हुआ करती है । राणाजी आजके दिन भी महा धूम धामसे चौगान महलमें जाते हैं । वहां पर अनेक प्रकारके आनन्द होते हैं । हिन्दू शास्त्रमें लिखा है कि इस दिन जो कोई श्रीरामचंद्रजीकी पूजाके लिये जो कुछ करता है उसको बहुत ही पुण्य होता है । विशेष करके जो उपवास और जागरण करके पितृलोगोंका तर्पण करते हैं, उनको ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है । यथा;—

“ तस्मिन् दिने महापुण्ये राममुद्दिश्य भक्तितः ॥

यत्किंचित् क्रियते कर्म तत्तदक्षयकारकम् ॥ १ ॥

उपोषणं जागरणं पितृनुद्दिश्य तत्पर्णम् ॥

तस्मिन् दिने तु कर्तव्यं ब्रह्मप्राप्तिमभीप्सुभिः ॥ २ ॥” अगस्त्यसंहिता ।

मदनत्रयोदशी ।—चैत्रशुक्ल त्रयोदशीके दिन सनातन धर्मावलम्बी लोग पंच-वाणकी पूजा किया करते हैं । यद्यपि इससे पहिलेकी और पीछेकी द्वादशी तथा चतुर्दशीमें भी पूजा करनेकी व्यवस्था है, तथापि राजपूत इसही दिवसको बहुत अच्छा समझते हैं । मधुमास व्यतीत होगया है; धीरे २ ग्रीष्मकालकी तत्ती २ पवनके झकोरे आने लगे हैं । सुमनोलंकारयुक्त वनदेवीके फूलदार जूड़ेसे सुगन्धित पुष्प धीरे २ गिरते चले जातेहैं । परन्तु फूलरानी चमेली अबतक भी प्रकृतिके अंगसे अलग नहीं हुईहै। राजपूतोंकी स्त्रियां इसही चमेलीके हारोंको अपने जूड़ोंमें लपेटकर पंचवाणकी पूजा करतीहैं । टाडसाहब कहतेहैं कि जैसी भक्तिके साथ उदयपु-रमें मीनकेतनकी पूजा होतीहै; भारतवर्षकी और कोई रमणी वैसी भक्तिसे कामदेवकी पूजा नहीं करती-राजपूतसुन्दरी इस प्रकारसे भगवान मन्मथकी स्तुति किया करतीहैं; यथा—

“ पुष्पधन्वन् ! नमस्तेऽस्तु नमस्ते मीनकेतन ! ॥

मुनीनां लोकपालानां धैर्यच्युतिकृते नमः ॥ १ ॥

सीमा विवाद लेकर ही सामन्तोंमें सदा विवाद और आत्मकलह उपस्थित होता था। जयसलमेर और बीकानेर इन दोनों राज्योंके सीमान्तवर्ती दोनों देशोंके सामन्तोंमें सीमान्त विषयपर कभी २ ऐसा क्लेश उपस्थित होता था कि, अन्तमें उस कारणसे दोनों राज्यके अधिपति युद्ध करनेको बाध्य हुए थे। प्रतिहिंसा प्रवृत्ति यद्यपि आजतक राजपूत जातिके हृदयमें विराजमान है, किन्तु समयके गुण और कठोर शासनसे सामन्त मण्डली वा साधारण प्रजामें संहार मूर्ति धारण करके यथेच्छाचार नहीं होसकता। सीमान्त विषयका विवाद इस समय विलकुल दूर होगया है। इस समय केवल रजवाडेमें ही नहीं बरन भारतके सम्पूर्ण देशी राज्योंमें शान्ति नृत्य कर रही है।

राजपूत मंत्री।—रजवाडेकी सामन्त मण्डली अधीश्वरोंकी किस २ आज्ञा पालनमें बाध्य है, और राजसभामें कितने दिनतक रहकर क्या क्या कार्य्य करनी है, इन सब बातोंको यथास्थानमें लिखचुके हैं। सामन्तगण जिस समय राजकार्य्यसे सीमान्तमें गमन वा सीमान्त रक्षामें नियुक्त अथवा अधिपतिकी आज्ञानुसार अपने अपने अधिकृत देशमें नहीं रहते, उस समय वह सपरिवार राजधानीमें ही रहनेको बाध्य हैं। पूरे वर्षभर किन्हीं सामन्तोंको भी राजधानीमें रहना नहीं पडता; एक २ सम्प्रदायके कई २ पुरुष करके सामन्त अपनी निर्द्धारित संख्यक सेना और अनुचर सहित राजधानीमें स्थिति और राज सभाका कार्य्य निर्वाह करते थे। इस सुन्दर नियमके अनुसार उदयपुर राजसभा सदा ही सामन्तोंसे पूर्ण रहती थी। किन्तु मेवाडमें ऊंची श्रेणीके सामन्त अधिक अनुग्रह और स्वाधीनता भोगते हैं। रजवाडेके अन्यान्य राज्योंके सामन्तोंको जितना शृंखला बद्ध और अधीश्वरकी आज्ञा पालनमें सदा बाध्य देखा जाता है, मेवाडकी ऊंची श्रेणीकी सामन्त मंडली उतनी अधीनता शृंखलामें बद्ध नहीं है। मेवाडमें विशेष २ पर्वोत्सव और राजकीय नवीन अनुष्ठानोंके समय वह प्रधान श्रेणीकी सामन्तमण्डली

—लित विवादामिको विलकुल शान्त कर देनेके लिये विशेष चेष्टा करी थी। उनके घर यदि कन्या होती तो वह अवश्य ही महाराणा भीमसिंहको दान करके विवादको दूर करसकते। अन्तमें उन्होंने कर्नेल टाडके साथ छद्मवेषसे जाकर राणाके निकट क्षमा प्रार्थना करनेकी इच्छा करी। किन्तु छद्मवेषके पहिले ही प्रगट होनेके भयसे और विष्णुसिंहके किसी क्रोधी राजपूत द्वारा प्राण संहार कर देनेके भयसे कर्नेल टाड साहस करके उनको राणाके निकट न लेजासके थे। कर्नेल टाड लिख गये हैं कि महाराणा भीमसिंह जैसे उदारहृदय और ऊंची प्रकृतिके थे, उससे अनुमान होता है कि बूंदीराज स्वयं उनके निकट क्षमा मांगनेपर सफल मनोरथ होसकते थे।

छातीपर भ्रमण किया करते हैं । उस दिन राणाके सर्दार ही नावको चलाया करते हैं वह नाव प्रचंड वेगसे चलाई जानेके कारण सरोवरके घने जलको खलवलाती हुई चारों ओरको दौड़ती है । इस प्रकार संध्यातक आनन्द विहार करके राणाजी सर्दारोंके साथ घरको लौटते हैं । इस नये उत्सवके समयमें भगवती गौरीकी पूजा वासन्ती अन्नपूर्णाकी समान होती है ।

सावित्रीव्रत ।—ज्येष्ठकृष्ण चतुर्दशीको सावित्रीव्रत होता है इसमें जो स्त्रियें उपवास करके पतिव्रता सावित्रीकी पुण्य कथा सुनती हैं और उनकी पूजा करती हैं, विधवापनका कष्ट उन्हें कभी नहीं भोगनापड़ता । मेवाडकी राजपूत स्त्रियां उस दिन एक नियत कियेहुए बटके निकट जाकर विधि विधानसे सावित्रीकी पूजा करके उसकी पुण्यमय कथाको सुनती हैं ।

रम्भातृतीया ।—ज्येष्ठशुक्ल तृतीयाको स्त्रियें यह व्रत करती हैं । रम्भाभगवती गौरीकी दूसरी मूर्ति है । वारहों महीनेमें वारह मूर्तिसे हिन्दू लोग जो पूजते हैं यह मूर्ति भी उन्हींमेंसे एक है, राजपूत वाला गण धनकी कामना करके खिलीहुई शतपुष्पीके फूलसे देवीकी आराधना किया करते हैं ।

अरण्यषष्ठी ।—ज्येष्ठ महीनेके शुक्लपक्षमें देवसेना भगवती षष्ठी देवीकी जो पूजा हुआ करती है उसको ही अरण्यषष्ठी कहते हैं । वारह महीनेमें भगवती सहामायाकी जो वारह मूर्तियां * प्रसूतियोंके द्वारा पूजी जाती हैं । यह भी उनमेंसे एक है इस पर्वके दिन पुत्रके चाहनेवाली अथवा पुत्रका मंगल चाहनेवाली हिन्दूललनागण वनमें प्रवेश करके बट या पीपलकी जड़में देवीकी पूजा किया करते हैं ।

रथयात्रा ।—आषाढ शुक्ल तृतीयाको भगवान् विष्णुजीकी रथयात्रा हुआ करती है । हिन्दूशास्त्रमें नारायणजीकी एक २ महीनेमें एक २ यात्रा कही है ।

* “प्रसूत्या द्वादशे मासि सम्पूर्वापत्यवृद्धये ॥

सुते जाते तथा षष्ठ्या षष्ठी द्वादशरूपिणी ॥ १ ॥

वैशाखे चादनी षष्ठी ज्येष्ठे चारण्यसंज्ञिता ॥

आषाढे कार्दमीशेया श्रावणे लुण्ठनी तथा ॥ २ ॥

भाद्रे चपेदिनी ख्याता दुर्गाख्याश्चयुजे तथा ॥

नाडाख्या कार्तिके मासि मागे मूलकरूपिणी ॥ ३ ॥

पौषे मास्यन्नरूपा च शीतला तपसि स्मृता ॥

गौरूपिणी फाल्गुने वै चैत्रेऽशोका प्रकीर्तिता ॥ ४ ॥” स्कन्दपुराणे ।

और उसको बंद करके उसके ऊपर राणाकी गुप्त अंगूठी चिह्न भी अंकित करदेते हैं ।

कनेल टाड लिखगये हैं कि, रजवाड़ेके सम्पूर्ण राज्योंमें ही सामन्त श्रेणीमें जो सबसे चतुर, वीर, साहसी, बुद्धिमान और षडयंत्रकुशल हैं, वही राजाका चित्त प्रसन्न करके मंत्रीपदपर अधिकार करलेते हैं । अधिराज उन प्रियपात्रके अत्यन्त वशीभूत होकर, उनकी इच्छा, योग्यता और आकांक्षाके अनुसार मंत्रित्व भार उनके हाथमें सौंपते हैं । किन्तु वह राजपूत सामन्त मंत्री दीवानी शासन विभागमें किसी प्रकार हस्तक्षेप नहीं कर सकते; एक स्वतंत्र मंत्री उस विभागका सम्पूर्ण कार्य्य सम्पन्न करतेहैं । किन्तु वह दोनों ही एकमत होकर कार्य्य करनेमें विरत नहीं होते । राजपूत मंत्री देशके युद्ध विभागके अमात्य रूपसे गिने जातेहैं । और अधीनकी सामन्त श्रेणीका राजनैतिक शासनभार उनके हाथमें समर्पित होताहै । दीवानी विभागके मंत्री पदपर राजपूत जातिका कोई पुरुष नियुक्त नहीं होसकता । देशभेदसे मंत्रियोंकी उपाधियें भी विभिन्न हैं । उदयपुरमें “भञ्जगड” जोधपुरमें “प्रधान” जयपुरमें (दिल्लीकी सम्राट सभाके अनुसार जयपुर पातिने अपने कर्मचारियोंके नाम यावनी भाषामें रखे हैं) “मुसाहिव” और कोटेमें “किलेदार” तथा “दीवान” नामसे यहलोग विख्यात हैं । वह राजपूत सामरिक मंत्री अपने गुणोंसे अधीश्वरको वशीभूत करके राज्यमें एक सर्वप्रधान शक्तिशाली पुरुष होजाते हैं सर्व साधारण उनकी ही आधीनता स्वीकार करके उन्हींके द्वारा अधिराजाके निकट सब प्रार्थनायें भेजते हैं, क्योंकि उनके अनुरोध करनेपर सफलताकी पूरी संभावना रहतीहै । राजपूत मंत्री राज्यकी सामरिक श्रेणी और नीची श्रेणीके कर्मचारियोंके ऊपर पूरी सामर्थ्य रखते हैं ।

कनेल टाड लिखते हैं कि, रजवाड़ेके कई राज्योंमें वंशानुक्रमसे मंत्रित्व-प्राप्तिका विधान प्रचलित है किन्तु हम कहतेहैं कि; प्रवल बृटिश शासनमें कूट-नीति चक्रके घुमानेके लिये वह प्रथा इस समय बंद होगई है । भारतवर्षके प्रत्येक प्रधान २ देशी राज्योंके प्रधान मंत्री पदपर नरपतिगण अपनी इच्छानुसार अब किसीको भी नियुक्त नहीं करसकते । राजगणके इस समय किसी व्यक्तिको मंत्री पदपर नियुक्त करनेकी इच्छा करनेपर, स्थानीय पोलिटिकल एजेंट उस विषयमें मतवाद प्रकाश करके उसको राज प्रतिनिधिके पास भेजते हैं । राज प्रतिनिधि यदि उसमें सम्मत हों तो उक्त इच्छित पुरुष नियुक्त

विघ्न और विपत्तिसे दूर रहनेके लिये अपने प्रकोष्ठमें एक बलय धारण कियाथा उसीको राजपूत लोग राखी कहाकरतेहैं । राजपूतोंके मतानुसार केवल धर्मयाजक और स्त्रियां ही इस बलयको वितरण करसक्तीहैं और किसीको इनके बाँटनेका अधिकार नहीं है । राजपूतोंकी स्त्रियां जिसको अपना भ्राता बनानेकी इच्छा करतीहैं अपनी सखियोंके हाथ अथवा कुलपुरोहितोंके हाथ उसके पास राखी भेजतीहैं । राखी पानेवाले भी विधिविधानसे अपनी बहनोंको यथाविधिसे दक्षिणा दिया करतेहैं । मेवाडके इतिहासमें पहिले ही कहा जा चुकाहै कि राखीबंधन एक पवित्र और दृढसम्बन्ध है ।

जन्माष्टमी ।— भादों कृष्ण अष्टमीकी तिथि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रका दिन है । समस्त हिन्दू ही इस दिनको अत्यन्त पवित्र समझतेहैं । भादों बदी तीजको राणाजी अपने सदाँर सामन्तोंके साथ चौगान महलको चले जातेहैं । उस तीजसे लेकर अष्टमी तक वहाँपर बराबर श्रीकृष्णजीकी पूजा होतीहै, अष्टमीको प्रातः-कालसे ही उदयपुरके घर २ में उत्सव आरम्भ होताहै । सबके कपडे हलदीसे रंगे होतेहैं, सभी कन्हैयालालकी जय बोला करतेहैं । मेवाडके घर २ में बाजेगाजे और आनन्दका शब्द होता रहताहै ।

इसके उपरान्त राणाजी एक पक्ष तक बराबर अपने पितरोंका तर्पण किया करतेहैं । निसधारानामक नगरमें राणाके पितृपुरुषोंका एक समाधिमंदिर है, वहाँ पर जाकर राणाजी धूप, दीप, फूलोंके हार और कई प्रकारकी नैवेद्यसे उनकी पूजा किया करतेहैं । मेवाडके प्रत्येक सदाँरको ही इसी प्रकारसे तर्पण करना पडताहै ।

खड्गपूजा ।— जिस उत्सवमें राजपूत लोग खड्गकी पूजा करतेहैं उसका नाम नवरात्रिउत्सव है । यह उत्सव राजपूतोंके समरदेवताकी पूजाका होताहै, आश्विन शुक्ल पडिवासे जिस समय यह पूजा आरम्भ होती है उस समय राणाजी उपवास करतेहैं । प्रातःकाल होते ही प्रातः कृत्यादि समाप्त करके खड्गपूजामें निमग्न होतेहैं । गिह्लौटकुलका प्रसिद्ध दुधारा खड्ग इस समय शस्त्रागारसे बाहर लायाजाताहै फिर विधानसे उसकी पूजा होतीहै । तदनन्तर राणाजी अपनेसदाँर लोगोंके साथ उस पवित्र खड्गको कृष्ण पौरनामक एक प्रसिद्ध तोरणद्वारमें लेजाते हैं । वहींपर भगवती अष्टभुजाका मंदिर विराजमान है । मंदिरके द्वारपर राजयोगी* अपने अनुगत महंत और दूसरे योगियोंके साथ

* राजस्थानमें एक प्रकारके योगी हैं जो कि आवश्यकता पडनेपर तलवार बाँधकर संग्राम भूमिमें जातेहैं । उन योगियोंके सदाँरका नाम राजयोगी है ।

सामन्तके हाथसे छुटकारा पाया । ब्रिटिश गवर्नमेंटके साथ सन्धिवंधनके समयसे ही षड्यंत्र जाल फैलानेवाले सामन्तोंका प्रताप प्रभुत्व विलकुल दूर होगयाहै ।

हिंदूकुलसूर्य राणा जिस समय किसी कारणसे राजधानी छोडकर बाहर जाते, उस समय उक्त सलम्बूर सामन्तके हाथमें ही नगर शासन और प्रासाद रक्षणका भार सौंपा जाता था । राणाके वंशधरगण जिस समय तलवार धारण करनेमें समर्थ होते, उस समय केवल यह सलम्बूरके सामन्त ही अस्त्रदीक्षा गुरु पदपर वरण होते थे । अर्थात् सबसे पहिले “ खड्गबंधन और नवीन राणाके अभिषेकके समय यह सलम्बूरके सामन्त ही राणाके माथेपर राजटीका लगाते थे । राणाके साथ चलनेके समय वह दाहिनी ओर चलना, युद्धके समय सबसे आगे सेना लेजाना, और किसी विदेशीके राजधानी उदयपुरपर आक्रमण करने पर वह सूर्यकुल और उससे लगे हुए दुर्गकी रक्षा करते थे । उस दुर्गमें ही सलम्बूरके सामन्त सपरिवार एक मनोरम महलमें रहते थे । वह महल इस समय विध्वंस प्राय है ।

कर्नेल टाडके समय सलम्बूर देशके सामन्त पदपर जो प्रतिष्ठित थे, वह पञ्चसिंह उनके (कर्नेल टाडके) परम प्रियपात्र हुए थे । उनकी माता बडी बुद्धिमती थीं । प्राणान्तके समय तक उन्होंने अपने पुत्रको नेत्रोंके सामने रक्खा । किसी कार्यसे राजधानीमें जानेपर सामन्त सदा ही कर्नेल टाडके स्थानमें स्थिति उनके ग्रंथोंका निरीक्षण, उनके साथ झुग्यामें गमन, और मत्स्य पकडनेमें सम्मिलित होते थे । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, वह एक अद्वितीय अश्वारोही थे, अपने पुत्रके कल्याण साधन, और तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये उनकी माता बीच २ में कर्नेल टाडको बडे़ पत्र लिखा करती थीं । पद्मसिंहके एक पूर्वपुरुषने राणाके विरुद्ध विद्रोही होकर एक दूसरे पुरुषको राणा पदपर प्रतिष्ठित करनेके लिये विशेष चेष्टा करी थी, मेवाडके इतिहासमें पाठक इस बातको पढचुके हैं । किन्तु राजपूत जातिके हृदयमें स्वदेश हितैषिता इतनी प्रबल है कि, राणा जब अपने राज्यमें शान्ति स्थापनके लिये विदेशियोंकी सहायता लेनेमें उद्यत हुए, तब वह विद्रोही सलम्बूरपति शीघ्रही विद्रोहिता छोड राणाके साथ मिलकर राजधानीकी रक्षामें नियुक्त होते थे । मेवाडकी चिर प्रचलित रीतिके अनुसार सलम्बूरके वीर सामन्तगण “ प्रधान ” पदपर नियुक्त होतेथे, इस कारण कर्नेल टाड गुप्त रीतिसे उसके विषमय फलका उल्लेख करगये हैं किन्तु हम कहतेहैं कि, यह

सातवाँ दिन ।—चौगान महलकी नियमित क्रियाओंको समाप्त करके राणा साहब अश्वपालको आज्ञा देतेहैं कि समस्त घोड़ोंको लेआवो, वह तत्काल समस्त घोड़ोंको स्नान कराय और सजायकर लेआताहै । महलमें रात्रिके समय उसदिन होमकी धूम पडजातीहै । एक मेंढे और एक भैंसेको भी उस दिन बलि दियाजाताहै । उस दिन राणाजी कनफटे योगियोंको निमंत्रण करके अनेक प्रकार के अन्न व्यंजन भोजन करातेहैं ।

आठवाँ दिन ।—महलमें होम होताहै, संध्याके समय राणाजी कई एक मुख्य सर्दारोंके साथ नगरके बाहर शमीनानामक गाँवमें जाकर वहाँके गोस्वामिसे साक्षात् करतेहैं ।

नौवाँ दिन ।—आज चौगान अर्थात् और किसी स्थानमें नहीं जाना पडता । राणाजीकी आज्ञासे अश्वपाल गण अस्तबलसे घोड़ोंको नहलानेके लिये सरोवरमें लेजातेहैं, स्नान समाप्त होनेपर फिर उनको सजधजके साथ महलमें लातेहैं । सर्दार और सामंतगण उस समय घोड़ोंकी पूजा कियाकरतेहैं, अश्वपाललोगोंको राणाजीसे बहुत इनाम मिलताहै । उसी दिन दुपहरकी तीन घडी पर एक साथ तीन बार नगाडा बजताहै । उस समय राज्यके समस्त सर्दार सामंत और सिपाही लोग माताचलनामक पहाडमें जाकर उस प्रसिद्ध दुधारे खड्गको ले आतेहैं । सब लोगोंके लौट आते ही राणाजी आसनसे उठकर विधिपूर्वक वंदना करनेके पीछे राजयोगीके हाथसे उसको ग्रहण करतेहैं । अनन्तर उन योगिराजको राणाजीकी ओरसे कुछ पुरस्कार मिलताहै । जो महंत ९ दिन तक व्रत करके उस खड्गकी पूजा करताहै, राणाजी काक (लोटा) पूर्ण करके उसको अशर्फी और रुपये देतेहैं । फिर समस्त योगियोंको भलीभांतिसे भोजन कराया जाताहै * ।

दशवाँ दिन ।—भारतके समस्त सनातन् धर्मावलम्बी इस दशमी तिथिकी महिमाको जानते हैं । कहते हैं कि भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने भगवती सीताजीका उद्धार करनेके लिये इसी पवित्र तिथिको दुर्घर्ष लंकानाथके विरुद्ध यात्रा की थी । संग्रामके कार्योंमें राजपूत लोग इस दिनको बहुत अच्छा समझते हैं । इस दिन प्रभात होते ही राणाजी अपने दीक्षा गुरुसे मिलते हैं । इस ओर चौगान अथवा माताचल शिखर पर अनेक प्रकारके आसन बिछाये जाते हैं । वहाँ पर

* इसी दिन राजपूत कुमार गण अपने पिताकी पूजा करतेहैं, इन दिनोंमें समस्त राजपूत बहुधा कंद मूल फल ही खातेहैं ।

साथ अपने सम्प्रदायके राठौरोंसहित सभास्थानमें बैठकर अपनी निर्भयताका पूरा प्रमाण दियाथा । उससमय मारवाडराजने तीव्र स्वरसे प्रश्न किया था कि, “विश्वासघाती ! जिस तलवारके ऊपर मारवाडका भाग्य निर्भर करतेथे, अब वह तलवार कहाँहै ?” मृत्यु सुखमें गिरेहुए उस सामन्तने तत्काल उत्तरदिया कि “पोकर्णमें अपने पुत्रके पास उसको रख आयाहूँ । ” उस गर्वभरे उत्तरसे महाराजने अपनेको महा अपमानित समझकर तत्काल उस सामन्तके शिर काटलेनेकी आज्ञा दी, घातकने सङ्केत पाते ही उस वीरश्रेष्ठका शिर दो टुकड़े करदिया ! देवसिंहके पुत्र सुवलसिंहने पिताकी समान संहारसूक्ति धारण करके राजाके विरुद्ध विषम विषद् उपस्थित करदी थी । मारवाडराज विशेष चेष्टा करके भी पोकर्णके अभेद्य दुर्गपर अधिकार नहीं करसकेथे ।

कोटा और जयसलमेरके दोनों सामन्तोंकी शक्ति असीम थी । फरासीसी इतिहासलेखक गान्टेस्कू प्राचीन फ्रांसके मंत्री पिपिल लोगोंकी क्षमताके विषयमें जो कुछ वर्णन करगये हैं, यहाँपर उसके उद्धृत करनेसे कोटा और जयसलमेरके मंत्रियोंकी समान ही प्रभुता जँचेंगी वह लिखते हैं कि, “ पिपिल लोग अपने राजाको मानों बंदी दशामें प्रासादके भीतर ही रखते थे, केवल वर्षमें एक दिन ही बाहर निकालकर प्रजाको दर्शन कराते थे । उस दिन वह मंत्रीवर्ग जो कुछ कहदेंते, राजा प्रजाके सन्मुख वही बोलते थे, और किसी विदेशी राजदूतको ग्रहण करनेकी आवश्यकता होनेपर, उन मंत्रियोंके सिखाये वाक्योंसे ही उस दूतके साथ वातचीत करते थे । ” *

कनेल टाड रजवाड़ेके जिससमय तकका इतिहास लिखगयेहैं, और जिस समयकी मंत्रियोंकी योग्यता, प्रभुत्व और प्रतापके परम प्रमाणसे जो मन्तव्य प्रगट करगयेहैं, अब वह समय नहीं है समय परिवर्तनके साथ २ रजवाड़ेके राज्योंकी अनेक विषयोंमें अवस्था बदल गईहै । जो कुछ भी हो मंत्री नियुक्त करनेके विषयमें हम केवल इतना ही कह सकतेहैं कि, ब्रिटिशगवर्नमेंट यदि अपने स्वार्थके ऊपर अधिक दृष्टि न देकर कनेल टाडकी समान देशी राज्योंकी सब प्रकारसे मंगल मूलक राजनीति अवलम्बनके साथ वर्तमान शिक्षित राजालोगोंको उनकी इच्छानुसार योग्य पुरुषोंको मंत्री पदपर वरण करनेकी मूर्ण सामर्थ्य दे,तो बहुतसे विषयोंमें विशेष लाभकी संभावना होसकती है ।

जितने राजपूत उपस्थित होतेहैं, वह सबही राणाजीको भँति २ की भेट और नजरें देतेहैं । उस समय तोपें बराबर छूटती रहतीहैं, और बन्दी तथा भाटगण मेवाडके व्यतीत वीरोंकी गुणावलीका गान करतेहुए राणाजीकी स्तुति किया करतेहैं उस दिन बहुतसे नये खरीदे हुए घोड़े रंगभूमिमें लाये जातेहैं । सेनासहित राणाजी जैसे गिरिकूटसे उतरना आरम्भ करतेहैं, वैसेही अश्वपालगण उन नवीन घोड़ोंके नामोंका बखान किया करतेहैं । उन घोड़ोंमें किसीका नाम मानक किसीका नाम वाजीवाज होताहै । इस प्रकार नये २ नाम सुनतेहुए राणाजी राजभवनमें आकर सदाओंको उचित पुरस्कार देतेहैं । उस दिन जो पोशाक राणाजी पहनतेहैं, उत्सवके अन्तमें कोटारिओंका चौहान सदांर उसको प्राप्त करलेताहै । जिस दिन दुराचारी यवनवीरके अत्याचारसे उदयसिंहकी जानके लाले पड़ेथे, जिस दिन परम विश्वासिनी धात्री पन्नाने अपने प्राणप्यारे पुत्रके हृदय रुधिरसे उस पिशाचकी प्यास बुझाकर अनाथ राजकुमारके जीवनकी रक्षा की थी, उसही दिन जिस चौहान सदांरने राणा उदयसिंह और पन्नाको अपने घरमें रक्खा था, वर्तमान कोटारियों सदांर उसी चौहान सदांरका वंशधरहै । राणाजी उसही राजभक्तिके बदलेमें उसके वंशवालोंको अपनी पोशाक दिया करतेहैं ।

गणेशपूजा।—प्रत्येक सनातन धर्मावलम्बी सिद्धदाता गणेशजीकी पूजा करतेहैं। कोई भी राजपूत गणेशजीका नाम लिये बिना किसी कार्यको आरंभ नहीं करता है । वीरलोग भी उन्हींको मनातेहैं, बनिये भी अपने वहीखातेमें पृष्ठके ऊपर श्रीगणेशाय नमः लिखतेहैं । स्थान या मंदिरादि बनानेके समय भी उनकी प्रतिमाको भीतमें बनवालेते हैं । राजस्थानमें राजपूतोंका ऐसा कोई घर नहीं दिखाई देता जिसके द्वारकी चौखटपर अथवा किवाडमें गणेशजीकी मूर्ति नहीं बनीहोती । बहुतसे हिंदू नगरोंमें गणेशपौर नामक एकद्वार भी गणेशजीके नामपर बनाया जाताहै उदयपुरमें भी गणेशद्वारनामक एक तोरणद्वार है । राजस्थानके प्रायः प्रत्येक शैलकूटपर चढनेके समय मार्गके आरम्भमें ही गणेशजीका एक २ मंदिर दिखाई देताहै । गणेशजीकी पूजाके साथ उनका प्रिय वाहन चूहा भी पूजा जाताहै ।

गणेशजीकी पूजाका वर्णन करतेहुए, हम उस देवीके दियेहुए दुधारे खड्गका वृत्तांत लिखना भूलगये कि जो राजपूतोंका प्रधान अवलम्बहै और उनके वीर्यका प्रधान परिचायकहै । इस खड्ग विषयके राजपूतोंमें अनेक प्रकारके गुढ़ व

है, केवल युद्ध सम्बन्धवाली जातिकी दुर्दशा और राणाओंकी शक्तिके लोपसे ही यह शोचनीय दृश्य समय २ पर देखे जातेथे । ”

जिस समय सन्तानोन्पत्तिकी किसी प्रकार आशा नहीं रहती । प्रायः उस समय ही सामन्तगण अपनी जीवन दशामें पुत्र गोद लेते हैं । सामन्त सबसे पहिले अपनी स्त्रीके साथ एकान्तमें परामर्श और विचार करतेहैं । किसीको पोष्यपुत्र बनाना उचित है स्त्री पुरुष पहिले यह स्थिर करते हैं, फिर सामन्त अपने आधीनके सरदारोंको बुलाकर अपने मनका भाव प्रगट करदेते हैं । जिसको पोष्यपुत्र बनाया जायगा, वह यदि अति निकट आत्मीय और गुणवान् हो तो सरदारगण उसको स्वीकार करके राणाके निकट निवेदन करतेहैं राणा उस बातको ठीक जानकर सरदारोंकी वह इच्छा पूर्ण करते हैं । इस पुत्रके गोदलेनेके समय सामन्तको अनेक विषयोंमें तीक्ष्ण दृष्टि, विशेष विचार और बहुत सी चिन्ताओंमें निमग्न होना होताहै; वह अपनी इच्छानुसार किसी प्यारे बालकको भी पोष्यपुत्र पदपर वरण नहीं करसकते हैं । आधीनके सम्पूर्ण सरदार पहिले परीक्षा करके देखतेहैं कि, मनोनीत शिशु; सामन्तका अति निकट सम्बन्धी, राजपूत सामंतोंके सब गुणोंसे भूषित, प्रतिभाशाली और नेतापदके योग्य है वा नहीं । यदि निकटका सम्बन्धी न हो तो परिणाममें दूसरे समीपी विवाद खडा करके विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित करदेते हैं । इस कारण वह पहिले सब अंशमें योग्य और आत्मीय पुरुषको ही नियत करतेहैं ।

यदि किसी अपुत्रक सामन्तकी पुत्र गोदलेनेसे पहिले ही सहसा मृत्यु होजाय तो प्रचलित विधानके अनुसार उनकी स्त्री निकटके सम्बन्धी और सरदारोंके साथ संक्षिप्त होकर पोष्यपुत्रको निर्वाचन करलेती हैं । जबतक पोष्यपुत्र नावालिग रहै, तबतक उस सामन्तकी पत्नी प्रतिनिधि रूपसे वह देश शासन करती हैं ।

कर्नेल टाड कहते हैं कि, मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमेंसे देवगढके एक सामन्त अपुत्रक दशामें परलोक सिधार गये । मृत्युशय्यामें शयन करके उन्होंने अपनी स्त्री और सरदारोंसे अनुरोध करदिया कि, “आपलोग नाहरसिंहको ही पोष्यपुत्र बनावें । ” नाहरसिंह संग्रामगढके स्वाधीन सामन्तके पुत्र थे । नाहरसिंहके साथ उक्त सामन्तका ग्यारहवीं पीढीका सम्बन्ध था, किन्तु सातवीं और आठवीं पीढीके भी कई पुरुष उस समय जीवित थे । देवगढके

उसने इस बातका विचार नहीं किया कि यह विकट प्रकाश किसी भूत प्रेत पिशाच अथवा सर्पद्वारा तो उत्पन्न नहीं हुआ है; वरन दूने साहसके साथ निडर हृदयसे उस प्रकाशकी ओर बढ़ता गया । इस प्रकार आगे चलनेपर कुछ ही दूरपर एकसाथ हकावका सा होकर खड़ा होगया । सम्पूर्ण अंग शिहरित हुआ; हृदय बारम्बार धडकने लगा, रोम २ खड़ा होगया उसने देखा कि एक बड़े-भारी चूल्हेके भीतर नीली और लाल आग जलती है, उसही अग्निके प्रकाशसे सुरंगमें कुछ दूरतक उजाला था । वीभत्स वेष धारिणी कई एक नागिनी उस बड़े कड़ाहको चारों ओरसे घेरेहुए विकट गंभीर शब्दसे मंत्र पढ़तीहुई तान्दव नृत्य करतीं और एक २ बार अपनी उस मायामयी लकड़ीसे जो उनके हाथोंमें थीं, उस कड़ाहको स्पर्श कर रही हैं । मालदेव इस अद्भुत दृश्यको देखकर कुछदेर भौचक सा खड़ा रहा । क्या करूं, किस प्रकारसे मंगल होगा, इन बातोंका वह कुछ भी निश्चय न कर सका । उसका पिछला पद-शब्द उस गंभीर मन्त्रोच्चारण और नृत्यके शब्दमें जब लीन होगया तब नागिनियोंने स्थिर भावसे खड़े होकर उसकी ओर देखा । अंगारकी समान उनके लाल २ नेत्र और विकट मुखको देखकर मालदेवका हृदय भयभीत हुआ । परन्तु मुखपर भयके कुछ भी चिह्न न थे । वह स्थिरभावसे खड़ा होगया । तब उन भयंकर भुजंगिनियोंने उसके आनेका कारण पूछा । शानगडे सरदारने धीरे २ उत्तर दिया कि “ यक्ष, रक्ष, गन्धर्व, किन्नर अथवा नाग आपलोग जो कोई भी हों मैं आपके चरणोंमें प्रणाम करता हूं । आपकी गंभीर शान्तिको भंग करने अथवा आपके गूढ़ स्थानका भेद खोलनेके लिये मैं यहाँपर नहीं आया हूं । गि-ह्लौटकुलके अधीश्वर वीरवर वाप्पारावलको जां देवी खड़्ग चतुर्भुजा देवीने दिया था, अबतक वह चित्तौरमें ही था, परन्तु गत यवनविप्लवके समयसे न जाने कहाँ चला गया सो ज्ञात नहीं । अतएव निवेदन यह है कि यदि आपलोगोंने उसको रख लिया हो तो मुझको दे दीजिये । ” भुजंगिनियोंने मालदेवका निडर-पन देखनेके लिये उस कड़ाहका ढकना खोल दिया । ढकना खुलते ही मालदेवको वीभत्स दृश्य दिखाई दिया । मालदेवने देखा कि उस कड़ाहमें अनेक प्रकारके जन्तुओंके अंग खण्ड २ होकर पड़े हुए हैं । उन अंगोंके बीचमेंसे एक बच्चेकी कोमल बाँह उसको दिखाई दी । मालदेवने चकित होकर विचार किया कि यह बालक कौन है ? कुछ देर पीछे उन नागिनियोंने रक्त मांस व चर्बीसे मिलेहुए उन अंग प्रत्यंगोंको एक पात्रमें रखकर मालदेवके सामने ला,

क्रुद्ध राणाने शीघ्रही देवगढ देश अपने अधिकारमें करके, एक राजपुरुषको यह आज्ञा देकर वहां भेजा कि, देवगढके निवासियोंने जो अन्न बोया है, वह सब काटकर ले आओ, क्योंकि स्थानीय सरदारोंने मेरी विना सम्मति लिये मेरा अपमान करनेके निमित्त अपनी इच्छानुसार एक पुरुषको सामन्त पदपर स्थापित कर लिया है । देवगढके सरदारोंने राणाकी आज्ञा सुनकर विशेष चतुरताके साथ उत्तर दिया कि, “हमने केवल गोकुलदासका एक पुत्र निर्वाचन कर दिया है देवगढका उत्तराधिकारी निर्वाचन नहीं किया है, यह निर्धारणकी सामर्थ्य केवल राणाको ही है, हमारा दृढ विश्वास है कि, राणा देवगढके सहस्रों राजपूतोंके नेता पदपर किसी योग्य पुरुषको ही निर्वाचित करदेंगे । सरदार लोगोंने उक्त निवेदनके साथ नाहरसिंहके गुणग्राम प्रकाश और उनको ही सामन्त पददेनेका भी सङ्केत कर दिया था । देवगढके कविवर उस समय राणाके चिकित्सकरूपसे राजधानीमें नियुक्त थे । * उन्होंने सरदारोंके दूत वनकर अपनी विज्ञता और चतुराईके द्वारा राणाको प्रसन्न करके, उनकी क्रोधाग्नि विलकुल शान्त कर दी । अन्तमें राणाके नाहरसिंहको अभिषिक्त करनेमें सम्मत होनेपर, युवक नाहरसिंह राजधानीमें आये । उसी समय नाहरसिंह मेवाडमें सबसे अधिक समृद्धिशाली और विक्रमी राजपूतोंकी वासभूमि देवगढ मदारियाके सामन्त पदपर वरण किये गये । देवगढका प्राचीन नाम मदारिया है । नाहरसिंह जिस संग्रामगढके उत्तराधिकारी थे, वह संग्रामगढ यथासमय मदारियासे विच्छिन्न होगया, और अन्तमें किसी उपायसे राणाके अधिकारमें होगया ।

कर्नेल टाड रजवाडेकी सामन्त शासन प्रणालीके विषयमें सबसे अन्तमें लिखते हैं कि, “ राजपूत जातिके मध्यमें सामन्त शासन शैलीने अवश्य ही दृढ रूपसे स्थान पाया था, और उस कारण से ही राजपूत राज्य अवनतिके सागरमें निमग्न और राजपूत जातिकी दशा शोचनीय होनेपर भी उस रीतिके प्रबल चिह्न आजतक दिखाई देतेहैं । किन्तु वर्तमान समयमें विशेष तर्कनावाली राजनीतिका

* कविवर केवल चिकित्सा गुणके कारण ही नहीं वरन अपनी विज्ञताके गुणसे भी राणाके भव-नमें सन्मानके साथ रहते थे । उन्होंने राणाको सूचित किया कि, “ जो राणा संवेंस्वर हैं, अफीम-सेवी विदूषकगण कभी उनकी सेवाके उपयुक्त नहीं होसकते । यदि युवक नाहरसिंह राणाकी सभामें शिक्षा पावेंगे, तो यथा समय उनके द्वारा देशका विशेष उपकार होगा । इसके सिवाय नाहरसिंहके अभिषेकसे तलवार बन्धी स्वरूप एक लक्ष मुद्रा नजराना आपको शीघ्रही मिलेगा । ”

उत्सवमें उसही जुएको खेला करते हैं । आजके दिन जिसकी जीत होतीहै, उसका सम्पूर्ण वर्ष आनन्दसे व्यतीत होताहै; ऐसा उन सबका विश्वासहै ।

इसके आगे दोयजको भइयादोयज (भ्रातृद्वितीया) का उत्सव होताहै । कहतेहैं कि सूर्यकी पुत्री यमुनाने इस तिथिको अपने भ्राता यमको नेवता देकर अपने घरपर भोजन कराया था । इसही कारणसे हिन्दूशास्त्रमें भ्रातृप्रेमका पवित्र प्रकाश करनेके लिये यह दिन श्रेष्ठ मानागयाहै । शास्त्रग्रन्थोंमें लिखाहै कि जो कोई स्त्री कार्तिक शुक्ल २ का चन्दन व ताम्बूलआदि द्वारा अर्चनाकरके अपने घरपर भोजन करातीहै विधवापनके कष्टका वह कभी नहीं भोगती और उसका भ्राता भी दीर्घायुको प्राप्त करके अंतसमय यमराजके दंडसे छुटकारा पाजाताहै ।

इस ही तिथिको राजपूतगण गोपार्वणको आरंभ करतेहैं । संध्याके समय जब गाये गोधूलिका उडातीहुई अपने २ घरको आतीहैं, उस ही समय उनकी पूजा होती है ।

अन्नकूट ।—भगवान् श्रीकृष्णजीकी पूजाके लिये राजस्थानमें जितने उत्सव होतेहैं, उन सबमें अन्नकूट प्रधान है । नाथद्वारेमें यह उत्सव बड़ी धूमधामके साथ होताहै । भारतवर्षके अनेक स्थानोंमें वैष्णव, साधु संत और कृष्णभक्तगण आकर इस उत्सवकी शोभाको बढ़ातेहैं । राजस्थानके भिन्न २ नगरोंमें भगवान् विष्णुकी जो सात मूर्तियाँ विरामान हैं, इस उत्सवके आरम्भमें ही वह समस्त नाथद्वारेमें जाकर विधिपूर्वक पूजी जातीहैं । उन सात मूर्तियोंको संतुष्ट करनेके लिये नाथजीके मंदिरके आँगनमें अन्नव्यंजनकी राशियोंके कूट लगायेजातेहैं । राज पूतजातिके गौरवकालमें यह अन्नकूट महोत्सव अत्यन्त ही धूमधामके साथ होताथा । जिस समय अनर्थकारी युद्धोंकी दिग्दाही आगसे राजस्थान भस्म नहीं हुआथा; जिस समय विष्णुपरायण राजपूतगण अपने महाराणाओंके ऊँचे गौरवसे गौरवान्वित होकर परमानंदसे परमेश्वरके चरणोंमें भक्तिपूर्वक कुसुमांजलिको देसकते थे, राजस्थानके उस सौभाग्य दिनमें अन्नकूट उत्सवके समय राजपूतोंके चार प्रधान राजा नाथद्वारेमें आकर अमूल्य मणिरत्न दान करतेहुए राजपूतोंके गौरवका प्रकाशमान परिचय देतेथे । मेवाडके राणा अरिसिंह (उरसी) मारवाडके राजा विजयसिंह, बीकानेरके महाराजा गजसिंह, और किशनगढ़के महाराजा बहादुरसिंह यह चारों महाराज अपनी २ शक्तिके अनुसार एक एक रत्नालंकार दान करके भगवानकी प्रसन्नताको प्राप्त करतेथे । यदि महाराजाओंकी बात छोडकर साधारण अवस्थावाली राजपूतवालाओंके दानका वर्णन श्रवणकरतेहैं तो बहुत ही आश्चर्य होताहै । कहतेहैं कि ऊपर कहेहुए चारों महा-

कर्नेल टाड साहब जिस समय राजपूतानेके पोलिटिकल एजेण्ट पदपर स्थित थे, उस समय ब्रिटिश जाति जिस प्रणाली और नीतिसे भारतका शासन करती थी, उस समय राजनीतिज्ञ टाड साहबकी नीति बहुत कुछ काममें लाई जाती थी किन्तु उनके जानेके साथ साथ ही ब्रिटिश नीतिने भिन्न मूर्ति धारण की, जिससे राजपूत राज, राजपूत नरपति, राजपूत सामन्त, राजपूत सरदार, राजपूत प्रजाकी दशाका ही परिवर्तन होगया, यद्यपि गवर्नमेण्टने इस समय देशी राजाओंकी भीतरी नीतिमें सर्वथा हस्तक्षेप नहीं किया है, किन्तु मूलतत्त्वके जाननेवालोंको इतना अवश्य ही कहना पड़ेगा, कि इस समय राजा महाराजाओंको रेजिडेण्ट वा पोलिटिकल एजेण्ट लोगोंकी आज्ञाके आधीन ही सर्वथा रहना पड़ताहै, जिस प्रकार मुगल शासनके समयमें राजा महाराजा अपने २ राज्यमें स्वाधीनताके साथ प्राचीन रीति नीतिका पालन तथा सामाजिक विधानके अनुसार अपने कार्य करनेमें समर्थ थे यदि सत्यताका सन्मान रखनेके लिये इस समय उस बातकी तुलना कीजाय तो यह स्वीकार करना होगा कि इस समय उस प्रकारकी पूर्ण स्वाधीनता संभोग वा उस प्रकार शक्तिका व्यवहार अब नहीं करसक्ते साथमें यह भी मानना पड़ताहै कि राज्योंमें अब वैसा प्रताप भी नहीं है । कर्नेल टाडका उपदेश अब सब प्रकारसे ग्रहण नहीं होता, उन्होंने कहाहै कि देशी राजा जितने शक्तिसम्पन्न सामर्थ्यवान् प्रभुता युक्त होंगे जितनेही वे राजा धनधान्य सैन्यबल सम्पन्न होंगे उतना ही ब्रिटिश गवर्नमेण्टके शासनमें मंगल होगा इस कारण देशी राजाओंको वैसी स्वाधीनता समर्पणमें मंगल है परन्तु इस समयकी नीतिसे यह देखा जाताहै कि देशी राज्य दुर्बल निस्तेज और शक्तिहीन होते जातेहैं, और जहांतक देखा जाताहै वीरत्व प्रताप प्रभुता प्रायः लोप सी होती जाती है, हमारा इसमें यह कहना है कि जो लोग राजपूत जातिके चरित्र प्रतिज्ञा और व्यवहारोंको भलीभाँतिसे जानतेहैं वह लोग इसी बातका समर्थन करेंगे कि देशीराज्योंकेबलकी जितनी २ वृद्धि होती जायगी उतना ही ब्रिटिश राज्यका प्रताप बढ़कर भारतका मंगल होगा ।

राजपूत राजोंके कुल गवर्नमेण्टका किसी प्रकार अनिष्ट नहीं कर सकते इस बातको कर्नेल टाडने रजवाडेमें बहुत कालतक निवास करके राजासे लेकर साधारण सरदार तक, प्रत्येक श्रेणीके सरदारके साथ अभिन्न मित्रता, बातचीत और सुहृदतासे भलीभाँति जान लिया था, इस ही कारण वह लिख गये हैं कि, राजपूत राजा यदि पूर्वकी समान बल पराक्रम गौरव धन मर्यादाके संग्रह करने-

आजतक उस ही भाँतिसे पूजा ले रहे हैं। आज भी उन प्रधान वैष्णवाचार्यकी सन्तान परम भक्तिके साथ वालमुकुन्दजीकी पूजा करती है । भगवान् श्रीकृष्णजीकी दूसरी मूर्ति मेवाड़के अन्तर्गत कामनरनगरमें विराजमान थी परन्तु किसी कारण वश वहाँसे चलकर इस समय कोटमें स्थित है ।

बल्लभाचार्यके तीसरे परपांत वालकृष्णको भगवान् श्रीकृष्णजीकी द्वारकानाथनामक मूर्ति मिली थी । कहते हैं कि सत्ययुगमें अमरिक नामक एक राजाने सूर्यवंशमें जन्म लेकर एक विष्णुमूर्तिकी पूजा की थी; वर्तमान द्वारकानाथकी यह मूर्ति उसकी प्राचीन मूर्तिके अनुसार बनाई गई है । चौथी मूर्ति गोकुल चन्द्रमाका भी ऐसा ही वर्णन पाया जाता है; सुनते हैं कि बल्लभाचार्यजीको यह मूर्ति यमुनातीरेके किसी विलमें मिली थी; उन्होंने अपने सालेको दे दी । तदनन्तर गोकुलचन्द्रमाजी, गोपजीवन गोकुलपुरीमें प्रतिष्ठित हुए । यद्यपि वर्तमान समयमें वह जयपुरके मध्यमें विराजमान हैं, तथापि गोकुलवासी भक्तजन प्रतिदिन उनके पुराने मन्दिरमें जाकर विधिविधानसे उनकी पूजा करते हैं ।

भगवान्जीकी पंचम मूर्ति यदुनाथजी पहिले मथुराके निकट महावन स्थानमें विराजमान थी । महावली महम्मद गजनवीने जिस समय मथुरानगरीको उजाड़किया उस समय यदुनाथजी सूरतनगरमें लाए गए । छठी मूर्ति;—वेतालनाथ या पाण्डुरंगजी संवत् १९७२ वै ० में गंगाजीमें पाये गये थे । सातवीं मदनमोहनजीकी मूर्तिकी पूजा आजतक एक स्त्री ही करती है ।

जिन अन्नकूट उत्सवका वर्णन करते हैं हम भगवान् श्रीकृष्णजीकी सात मूर्तियोंका वर्णन करने लगे थे, उसकी दो चार बातें अभी और लिखनेसे रह गई हैं । अन्नकूटके दिन राजा जी दिनभर आनन्द मनाते हैं । उदयपुरके प्राचीन रंगस्थल चौगान नामक स्थानमें जाकर मैदानमें छुडदौड़ और गजयुद्ध इत्यादि खेल देखाकरते हैं,—संध्याके समय आतिशवाजी छूटती है और अन्नकूटका उत्सव समाप्त होता है ।

मकरसंक्रान्ति ।—टाडसाहबने भ्रमसे कार्तिकी विष्णुपदी संक्रान्ति मकरकी संक्रान्ति लिखी है, अस्तु ! इस बातको सम्पूर्ण सनातन धर्मावलम्बी जानते हैं कि कार्तिकमासकी संक्रान्तिका दिन परम पवित्र है । इस दिन भी राणाजी अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर चौगाननामक प्रासादमें जाते हैं । सदाओंके साथ घोड़ेपर चढ़कर उस दिन राणाजी गोलकनामक खेल करते हैं ।

मार्गशीर और पौष मासमें ऐसा कोई विशेष पर्व नहीं होता । यद्यपि तिथि और नक्षत्रोंका संयोग होनेसे इन दो महीनोंमें भी दो एक दिन पवित्र गिने जाते

राजपूत बांधव टाड फिर लिखते हैं कि, “औरङ्गजेबकी आज्ञासे समरक्षेत्रमें राजपूत जातिने कैसा व्यवहार किया था, वह हमको स्मरण रखना उचित है; अब भी उनके हृदयमें वही भाव विराजमान है। कृतघ्नता, आत्म सन्मान रक्षा और विश्वास पालन एक समय राजपूत जातिके समस्त सद्गुणोंकी मूल भूमिथे। आजतक प्रत्येक राजपूत उस कृतज्ञता, आत्मसन्मान और विश्वस्तताका मूल अर्थ समझते हैं; किन्तु केवल अपने भाग्यके बलसे ही समय परिवर्तनके साथ वह लोग उस कृतज्ञताका प्रकाश आत्मसन्मानरक्षा और विश्वास पालनके पूर्ण उदाहरण दिखानेका कोई उपलक्ष नहीं पाते हैं। किसी राजपूतसे यह प्रश्न किया जाय कि, “सबसे भारी अपराध क्या है?” वह तत्काल उसके उत्तरमें कहेगा कि “गुणछोड़” अर्थात् कृतघ्नता। राजपूत जातिकी आत्माके साथ मानो कृतज्ञता जड़ीहुई है, वह लोग जीवनके प्रत्येक अनुष्ठानमें कृतज्ञताकी पूजा करते हैं, और उस कृतज्ञताके मान रक्षाके लिये ही वह समधर्मी राजाके साथसे वियुक्त नहीं होसकते। जो राजपूत उस कृतज्ञतासे हीन है, वह राजपूत इस संसारमें रहनेके योग्य नहीं है, उसको दूसरे जन्ममें साठ सहस्र वर्षतक नर्कमें निवास करना पडता है, यही उसके लिये निर्धारित है; राजपूत जातिका यही विश्वास है।” *

इसके अनन्तर कर्नेल टाड लिखते हैं कि, “राजपूत जाति चाहे कितनी ही उग्र स्वभावयुक्त हो, उसके हृदयमें राजभक्ति और देशहितैषिता भलीभाँति विराजमान है। यद्यपि राजपूतलोग वीचर में अपने पिता और अधीश्वर^x के प्रति उद्धतता सूचन करते रहते हैं, किन्तु किसी विजातीय शत्रुके जन्मभूमि अधिकारमें उद्यत होनेपर, वह किस प्रकार वीरमूर्ति धारण कर एकता पूर्वक राणाका

* कर्नेल टाड टिपणीमें लिखते हैं कि, “गुणछोड़ अर्थात् कृतघ्नता और सत् छोड़ अर्थात् विश्वासघात करनेवाले साठ हजार वर्षतक नर्कमें वास करते हैं, राजपूत काविवर्ण ऐसा वर्णन करगये हैं, जितने यूरोपियन अपने बुद्धिमान होनेका अभिमान करके यह कहते हैं कि, देशीलोग कृतज्ञता किसको कहते हैं यह नहीं जानते, और देशीलोगोंकी भाषामें कृतज्ञता शब्दही नहीं है। ऐसे लोग केवल गङ्गातीरवर्ती देशोंमें प्रचलित केवल नमकहराम शब्दको ही जानते हैं। गुण छोड़ शब्द कृतघ्नताका पूर्ण अर्थ प्रकाशक है। विश्वासघातकता भी राजपूत जातिमें सबसे प्रधान अपराध गिना जाता है।”

x जिस राजपूतके पास केवल एक प्रकार परिमित भूखण्ड है, वह व्यक्ति भी अपनेको अधीश्वरकी समान समरक्तवाला समझकर राणाको “बापजी” अर्थात् प्रजामात्रका पिता और जातिमात्रका प्रतिनिधि समझता है। राजभक्तिका क्या पूर्ण नमूना है।

अब वह तेज नहीं है !—वह दमक नहीं है ! वह विश्वदाही उपाय नहीं है ! सबका ही अन्त होगया ! सबहीको शीतने जकडलिया !—आज कल तो जडता, निस्त-
ब्धता और मौनताने मेवाडके सम्पूर्ण अंगोंमें निवास करलिया है ! उन्नत, प्रति-
ष्ठित, गौरवान्वित मेवाडका दारुण शोचनीय और हृदयविदारक विध्वंस हुआ है।
उसके आकाशस्पर्शी गौरवरूपी शिखर खंडखंड होकर आज पृथ्वीसे लिपट-
रहे हैं, आज मेवाडमें उठनेतककी सामर्थ्य नहीं है ! जो मेवाड शक्तिका
आगार समझा जाता था; आज वही मेवाड शक्तिहीन है ! परन्तु अब
मेवाड क्या उठेगा ही नहीं ? क्या इस दारुण दुर्दशाके होनेसे अब मेवाड अपना
शिर नहीं उठासकेगा ? हम कहते हैं कि अवश्य उठावैगा ! आशा होती है कि—
मेवाड फिर जी उठेगा । चित्तौरकी प्रकार और ध्वंसराशिसे फिर भी मेवाडका
अवतार होगा । हम कहसकते हैं कि पुनर्वार वाप्यारावल, समरसिंह, प्रतापसिंह,
राजसिंह, तथा संग्रामसिंहकी चिताभस्मसे नये २ महावीर उत्पन्न होकर जननी
जन्मभूमिके गौरवको आकाशतक पहुँचा देंगे । पुनर्वार चित्तौर प्रफुल्लित होगा,
उसके प्रफुल्लित होनेसे सम्पूर्ण भारतभूमि उज्ज्वल होजायगी । आशा तो होती है;—
परन्तु इस आशाके पूर्ण होने न होनेका कौन ठिकाना है ? आशा ! हा कपटिन् !
हा मायाविन् ! तेरा रूप हमारे ध्यानमें नहीं आसकता ।—

गीतिका ।

गंभीरतम छायो चराचर, झार नहिं सूझत मही ।
वेताल भूत पिशाच डोलत, दुर्दशा न परे कही ॥
जहँ सघन उपवन हैं प्रफुल्लित, सुमन नित वरषावते ।
तहँ काक कोट उलूक बैठे, विकट शोर मचावते ॥
चित्तौर उन्नति व्योमदेखी, दुर्दशा अब अतिभई ।
स्वर्गहिं रसातल भेद व्याप्यौ, सुखद जो भई दुखमई ॥
गिह्लौट रविकुल कमल प्रगटे, वीर अगणित बाँकुरे ।
सो वंश अजहँ रख्यौ पर नहिं, वीर वैसे अवतरे ॥
कहँ समरसिंह कराल कहँ भट, विकट वीर प्रतापसों ? ।
कहँ धीर लछमनसिंह रण मद, भरचौ रवि उतापसों ? ॥

राजनीतिज्ञ टाडकी अन्तिम उक्ति, “जो लोग केवल बाहिरी दृश्य देखकर सिद्धान्त गठन करते हैं; वह सहजमें ही अनुमान करसकते हैं कि, दीर्घकालतक विजातीय आक्रमणसे राजपूत जातिके उद्यम प्रतिभा, वीरत्व विक्रम बिलकुल दूर होगये हैं किन्तु यह कल्पना बिलकुल भ्रान्तिपूर्ण है । विजातीय उत्पीडन तथा अत्याचारसे राजपूत चरित्रमें इस समय जितने शोचनीय लक्षण दिखाई देतेहैं, शान्ति विस्तारके साथ २ ही वह सब दूर होजायेंगे और स्वदेशकी सुख समृद्धि जितनी ही बढ़ेगी, उतने ही उनके हृदयमें नये २ भाव उत्पन्न होकर प्रत्येक जातिसम्बन्धी आचार व्यवहार तथा सद्गुण पूर्ण मूर्तिसे दिखाई देंगे । राजपूत जाति उस समय कुंकुमवर्णकी पौशाक धारण करके × [जो लोग निःस्वार्थ भावसे उनके मंगल साधनमें सदा तत्पर हैं उनके लिये] संग्राम स्थलमें निश्चय ही उपस्थित होसकेंगे । इतिहासके ऊपर लक्ष्य रखकर हमको राजनैतिक मार्गका अवलम्बन करना उचितहै । बहुत बड़े साम्राज्य शासन और अनगिन्त भिन्न राज्यके साथ सम्बन्धसे जो महाविपत्ति निवारण नहीं होसकती, उसके प्रमाण संग्रहके लिये हमको प्राचीन रोमके ऊपर दृष्टि देनेकी आवश्यकता न होगी । भारतवर्षमें बाईसदेशी प्रधानराज्य—जिनमें अधिकांश बृटिश साम्राज्यके अधीन हुए हैं, यहांतक कि एक सौ वर्ष पहिले उन सवने राजशासनके परम रमणीय दृश्य दिखाये थे । एक सम्राटको जिस विशाल साम्राज्यका सफलतासे शासन करना अत्यन्त कठिन था उसको कई सौ वर्षतक मुगल शासन करगयेहैं । किन्तु जब उन सम्राटोंने देशीय राजा और राजपूत नरपतियोंके स्वत्त्व पर हस्तक्षेप करके उनके सामाजिक आचार व्यवहार और धर्मके प्रति अत्याचार आरंभ किया, उस समयसे ही सम्पूर्ण देशी राजा और राजपूत भूपालोंने सम्राटकी आधीनता अस्वीकार करके सर्वथा पृथक्भाव अवलम्बन किया, तथा दक्षिणी लोग इसी कारणसे उत्तेजित होकर मुगल अत्याचारियोंके विरुद्ध खड़े हुए । एक समय जिस मुगल सम्राट् औरङ्गजेबके नामसे सम्पूर्ण भारत काँपताथा यथासमय उस मुगल सम्राटका वह विश्वविख्यात सिंहासन एक ब्राह्मणके करुणाधीन हुआ था और खानदेशके एक किसानके पौत्रने * तैमूरवंशके लोगोंको वृत्ति भोगी

× राजपूत जाति अपने जीवन त्यागकी प्रतिज्ञा करके जिस समय युद्धक्षेत्रकी यात्रा करतीथी, उस समय कुंकुम वर्णके वस्त्र धारण करती थी ।

* महाराज सेंधिया ।

चौबीसवां अध्याय २४.

समाजनीतिमें ज्ञानकी आवश्यकता; धर्मविधिकी अपेक्षा समाजके आचार व्यवहारकी प्रचलता; तथा उनकी परवर्तन शैली; राजस्थानकी अनेक जातियोंमें आचार व्यवहारकी भिन्नता; राजस्थानकी स्त्रियोंपर राजपूतोंकी भक्ति और सन्मान; रनवासकी रीतिका उपयोगी होना; राजपूतोंका राजकुमारियोंके गौरवको रखना; राजपतनियोंकी असीम पतिभक्ति; इतिहास तथा काव्योंके लेख इस समय उसके सम्बन्धके उदाहरण; राजपूत स्त्रियोंकी उदारता साहस प्रत्युत्पन्नसत्त्व; पुगालके साधु मालिनी देवीका विवरण; रनवासकी प्रथा; राजपूत-स्त्रियोंकी प्रधानताका विस्तार; ऐतिहासिक प्रमाण; संसारकी अन्यजातिकी स्त्रियोंके साथ हिन्द स्त्रियोंकी तुलना.

पूर्वसाधारणमें प्रचलित हुए इतिवृत्तसे हम केवल जातिकी बाहिरी अवस्था तथा वीर नीतिसे शासन करनेवाले अधीश्वरों तथा मनुष्योंके चरित्रोंको जाननेके लिये समर्थ हुए हैं। उस जातिके भीतरी और बाहिरी चरित्रोंकी व्यवस्था किस प्रकार थी, उस साधारण इतिहासमें उसके जाननेका सुभीता हमको नहीं मिला। इसी कारण बुद्धिमान् टाडसाहबकी युक्तिमें “सामाजिक आचार व्यवहार ही किसी जातिके इतिवृत्तका अधिक प्रयोजनीय अंश है। उस जातीय आचार व्यवहारके प्रति बहुत समय तक तीव्र दृष्टिपूर्वक देखनेसे उसका फलस्वरूप उस जातिकी आभ्यन्तरिक अवस्थाके सम्बन्धमें निश्चित ज्ञान प्राप्त होसकताहै। अनेक प्रकारके दृश्योंसे पूर्ण इस बृहत् इतिवृत्तके चित्रपटपर उस राजपूत जातिका आभ्यन्तरिक, सामाजिक, परिवारिक और

परिशिष्ट ।

कनेल टाड द्वारा लिखित ।

ताम्रानुशासनपत्र;—सनद;—पट्टा;—दानपत्र;—व्यवस्था
पत्र;—राजके प्रादेशपत्र;—आवेदनपत्र और
खोदित लिपियोंका अविकल

अनुवाद । ❀

प्रथम—संख्या १.

मारवाडके निर्वासित सामन्तों × के द्वारा पश्चिमी राज्योंमें स्थित ब्रिटिश
गवर्नमेंटके पोलिटिकल एजेंटके निकट प्रेरित पत्रका ज्योंका त्यों अनुवाद ।

यथोचित सम्भाषणके अनन्तर निवेदन यह है कि, हम आपके निकट एक
विश्वासी पुरुषको भेजते हैं, वह हमारी दशाके विषयमें आपको सब बातें
सूचित करेंगे । सरकार कम्पनी ईष्ट इण्डियाकम्पनी हिन्दुस्थानकी अधिपति
है; हमारी दशा इस समय कैसी शोचनीय है, इस बातको आपलोग भली-
भाँति जानते हैं । यद्यपि हमारे और हमारे देशका कोई विषय भी आपसे छिपा
नहीं है; किंतु अपने विषयका एक विशेष वृत्तान्त आपको सूचित करना
अत्यन्त आवश्यक है ।

श्रीमहाराज और हमलोग एकही वंशमें उत्पन्न हैं और सबही राठौर हैं । वह
हमारे अधिपति, हम उनके अनुगत दास हैं, किन्तु इस समय वह महा क्रोधमें
भरे हुए हैं, और उसीसे हम अपने स्वदेशके सम्पूर्ण स्वत्व और विषय विभवसे
वञ्चित होगये हैं । हमारी पिताके अधिकारकी भूमि महाराजने खालिसा अर्थात्
अपने अधिकारमें करली है, और जितने सामन्त वर्तमान राजनैतिक विप्लवके
समयमें दूर रहनेकी इच्छा करते हैं, उनके भाग्यमें भी वैसे ही फल लाभकी
संभावना है । महाराजने अनेक सामन्तोंको अभयदान और प्राणरक्षाकी दृढ़

* इनमेंसे बहुतसे पत्र कनेल टाड अपने देशमें लेगये थे । उनके स्वर्ग सिधारनेके पीछे वह
सब पत्र किसके हाथ लगे, इसके जाननेका कुछ उपाय नहीं है ।

× क्रोधोन्मत्त मारवाडपति जिससे उक्त पत्र प्रेरकोंके प्रति अत्यन्त क्रुद्ध होकर उनपर विपत्ति
उपस्थित न करें, कनेल टाडने इस निमित्तही पत्र प्रेरक सामन्तोंके नाम नहीं लिखे ।

कि रोमकोंके ' मोरस (Mores) तथा मध्य इटालियोंके कपूमी (Costumi) बराबर अर्थके जाननेवालेकी धर्मनीतिके संमुख यह राजपूतजातिकी चाल प्राचीन साधु और ऋषियोंके द्वारा चलाई हुई अनुसरणके योग्य और समाजनीतिके संमुख अपरिहार्य (छोड़नेके अयोग्य) है । धर्मनीतिके उपदेशक राजपूत इस बातको कहतेहैं, कि " कैसी बुरी चाल चलतेहो " । अर्थात् कैसे दुराचारियोंके मार्गपर पैर धराहै, तथा समाजनीतिके ऊपर अधिक निष्ठा रखनेवाले राजपूतोंकी कहावत है कि " बाप दादेकी चाल छोड़दो " अर्थात् उन्होंने बाप दादेके आचार व्यवहारोंको एकसाथ ही छोड़दिया है । धर्मनैतिक और सामाजिक आचारोंके पालन करनेका राजपूतजातिको भलीभाँतिसे अभ्यास था । "

महात्मा टाडसाहबका कथन है कि अत्यन्तही वन्यजातिके अतिरिक्त और सब जातियोंका धर्म समानहै । मनु, मुहम्मद, मोजस अथवा क्राइष्ट इन सभीका धर्म एक मूल अर्थका बोधक था । प्रत्येकका उद्देश्य एकही प्रकारका था । प्रत्येकका लक्ष्य एकही पदार्थपर था । यद्यपि हम कर्नेल टाडसाहबकी इस कहावतको समर्थन करनेके लिये सम्मत नहीं हैं, दुःखका विषयहै कि उनकी समान मनुकी विधान करी हुई स्मृतिको यहूदियोंके धर्मके अनुरूप बनाकर हम उसको स्वीकार नहीं करसकते । राजपूतोंके बांधव टाडसाहबने कहाहै कि एक धर्मके भिन्नजातिमें प्रचलित होतेही उस भिन्नजातिकी मानसिक अवस्थाएँ कई प्रकारकी होंगी, यदि उनमें धर्मनीतिके सम्बन्धका पृथक्भाव कुछ है तो वह बड़ी सरलतासे पाया जासकता है, परन्तु भिन्न स्थानकी जातियोंका आचार व्यवहार इतनी दूर पृथक् वा ऐसा असमान है कि चिन्ताशील मनुष्य इसको सरलतासे जान सकता है । इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि शिशोदियोंकी निवासभूमि मेवाडके बालुकामय मारवाडपर पैर धरते ही इस उक्तिकी सत्यता सरलतासे जानी जासकतीहै । अधर्माचरण करनेवालोंके द्वारा पराजय होकर नवीन नवीन मतवाले सम्प्रदायोंके आचार व्यवहारोंका बदल होता रहताहै । यह सब बातें सत्य हैं, इसीसे प्रकाशमानहैं, इतिहासकी गोदमें जो उज्ज्वल और सशक्त थे, इस समय हम उनमेंसे एक २ का वर्णन करनेकी अभिलाषा करतेहैं । हमारे पाठकगण इसको पढ़कर बड़ी सरलतासे राजपूतजातिके गुणागुण, पापपुण्योंकी कल्पना, सामाजिक विधान, उनका प्रकाश्य और गुप्त जीवनका आनंद, एवं उत्सव और राजपूतजातिमें प्रसिद्ध आतिथेयता किस भाँति होती थी, उसको सहजसे जान सकतेहैं । इसमें कुछ भी संदेह नहीं ।

अन्यथा वह हमारे भ्राता ज्ञाति और देशोंके अधिकारी हैं और वही अधिकार पानक लिये हम प्रार्थना करते हैं। वह हम लोगोंको हमारे भूमिस्वत्वसे विलुलुल वाञ्छित करना चाहते हैं किन्तु हमलोग क्या वह सत्त्व सहजमें ही छोड़ सकते हैं अंग्रेजलोग सब हिंदुस्तानके स्वामी हैं।.....सामन्तनें अपने प्रतिनिधिको अजमेर भेजा था। उनसे दिल्ली जानेके लिये कहा गया। उस उपदेशके अनुसार ठाकुर दिल्ली गये, किन्तु उनको कुछ आज्ञा नहीं दी। यदि अंग्रेज अधीश्वर हमारी प्रार्थना न सुनेंगे, तो फिर कौन सुनेगा ? अंग्रेज कभी एकका स्वत्व दूसरेको अन्यायरूपसे अधिकार नहीं कर देते मारवाड हमारी जन्मभूमि है इस कारण हम लोग मारवाडसे अवश्य ही अन्नजल ग्रहण करेंगे। हजारों राठौर शोचनीय दशामें पड़े हैं वह कहां जायँ केवल अंग्रेज जातिके प्रति अखण्डनीय सन्मानके कारण ही हमलोग इतने दिनोंतक मौन रहे हैं। हमारा अभिप्राय क्या है, वह पहिले विदित न करनेसे आप पीछे हमको अपराधी बता सकते हैं, इस कारण ही इस समय आपको सब बातें विदित करके आपके निकट हम निर्दोषी होते हैं। मारवाडसे हम जो कुछ धन रत्न लाये थे और यहां ऋण लेकर जो कुछ संग्रह किया था, वह सबही समाप्त होगया है। इस समय अन्नाभावसे जब हम नष्ट हुआ चाहते हैं, तो उस अन्नके लिये हमारी जो इच्छा है उसीके करनेमें उद्यत हैं।

अंग्रेज हमारे शासनकर्त्ता और स्वामी हैं, श्रीमानसिंहने हमारी भूसम्पत्ति अन्यायरूपसे अधिकार दारली है; आपके मध्यस्थ होनेपर वह सब विवाद मिट सकता है। आपके निर्णय और मध्यस्थ विना हुए हमको किसी विषयमें कुछ विश्वास नहीं है। आप हमारी इस प्रार्थनाका उत्तर देंगे। हम आग्रहके साथ उत्तरकी प्रतीक्षामें हैं किन्तु यदि हमको कुछ उत्तर न मिला, तो परिणाममें जो कुछ काण्ड उपस्थित होगा, उसके लिये हम अपराधी वा उत्तरदाता न होंगे; क्योंकि सर्वत्र ही हम प्रार्थना विज्ञापन और संवाद देखते हैं। अनाहारका दारुण कष्ट मनुष्यको उपयोग उपायके खोजनेमें विवश करेगा ही। एक मात्र आपलोगोंके प्रति हमारा जो प्रबल सन्मान विराजमान है, केवल उसके ही कारणसे हम इतने दिनोंतक मौन रहे हैं। हमारे सरकार (राजा) बहिरे होगये हैं, कोई निवेदन न सुनेंगे। किन्तु फिर कितने कालतक उपेक्षा करेंगे? हमारी आशा पूर्ण कीजिये संवत् १८७८, श्रावण (सन् १८२१ ईसवी, अगस्त)

अविकल नकल ।

(हस्ताक्षर) जेम्स टाड ।

समाजतत्त्वके जाननेवाले सदा तैयार रहतेहैं। किस जातिने जगतमें जीवित रूपिणी स्त्रीके ऊपर किस प्रकारका आचरण किया, समाजमें उस स्त्रीके स्वाभित्वकी सामर्थ्य, सन्मान, आदर, यत्न और प्रबलताका विस्तार किस प्रकारसे हुआ, समाजनीतिने स्त्रियोंको किस प्रकारकी विधिसे जड़कर कितनी स्वाधीनता दी और उन रमणियोंके कुलका कर्त्तव्य कर्म किस प्रकारसे नियुक्त करदिया था, सबसे प्रथम उनकी ओर दृष्टि करनेसे नीतिके जाननेवाले मनुष्य सरलतासे इसका पीछा करसकतेहैं, उस जातिकी सभ्यता उन्नतिकी कितनी ऊँची सीढ़ियोंपर चढ़ीहै। महात्मा टाडसाहबका अनुसरण करनेके पहले ही हम इस स्थानपर आर्य धर्मशास्त्र और पुराण आदिमें जिनका वर्णन हुआहै उसको हिन्दूलोग अवश्य जानतेहैं, दूसरे लोग भी जानें इसीलिये आर्यस्त्रियोंके सम्बन्ध की कितनी ही कथाओंको वर्णन करनेकी अभिलाषा करतेहैं। हिन्दूसमाजमें, राजपूतसमाजमें स्त्रीजातिका ऊँचा सन्मान चिरकालसे विराजमानहै। आर्यजातिने स्त्रियोंको जगत्की जीवितरूपिणी लक्ष्मी स्वरूपणी जानाहै। मनुष्योंका सुख, सम्पत्ति एकमात्र पतिव्रता सतीके कल्याणसे होतीहै, जिस स्थानमें भार्या है, वही स्थान संसारका गृह है, भार्यासं रहित जो गृह है वह गृह नहीं कहाता, भार्याहीन मनुष्य गृहस्थी नहीं कहा जासकता। पराशर स्मृतिकी यही प्रधान उक्ति है, भार्याहीन मनुष्यको तो वनमें ही निवास करना कल्याणकारी है, * अथवा उसका रमणीय घर भी गहन वनकी समान है; संसारमें जितने भी रत्न हैं, उनमें स्त्रीरत्न सबसे श्रेष्ठ है, एकमात्र स्त्री ही संसारका जीवन है, शक्ति है, बल है, तथा सम्पूर्ण पुराणोंका भी यही मत है × इस कारण आर्य मुनि ऋषिगण आर्यस्त्रियोंका सन्मान कितना ऊँचा नियुक्त करगयेहैं, उसी उक्तिसे वह भलीभाँतिसे प्रकाश पारहीहैं। स्त्रियोंकी एकमात्र पुरुषजातिकी पशुवृत्तिको चरितार्थ करनेहीके लिये सृष्टि नहीं हुई है, सुख, शांति, मंगल, पवित्रता, पुण्य, धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्तिका मूलकारण जिसस्त्रीको आर्यशास्त्रोंने

* “ भार्याधीनं सुखं पुंसां भार्याधीनो घनागमः ।

भार्याधीना मखोत्पत्तिर्भार्याधीनः सुखोदयः ॥

यत्र भार्या गृहं तत्र भार्याधीनं गृहे वसेत् ।

न गृहेण गृहस्थः स्यात् भार्यायाः कथ्यते गृही ॥ ” पराशरस्मृति ।

× “ यस्य नास्ति सती भार्या गृहेषु प्रियवादिनी ।

अरण्यं तेन गन्तव्यं यथारण्यं तथा गृहम् ॥ ”

समय किसी व्यक्तिके उस प्रकार आक्रान्त वा धन नष्ट होनेपर यथास्थानमें हानि पूर्तिके लिये प्रार्थना करनेपर कोई फल नहीं दीखता, क्योंकि डाँकू लोग लूटे हुए द्रव्यका चतुर्थांश फौजदारको * देते हैं। भीरा अर्थात् पहाडीलोग इस समय विलकुल स्वाधीन होगये हैं, पहिले कभी कोई हत्या नहीं करते थे किन्तु इस समय वह जिस प्रकार हमारे आत्मीय लोगोंका सर्वस्व लूटते हैं उसी प्रकार हत्या भी करते हैं। इस डकैती और नर हत्या निवारणका कोई उपाय नहीं दीखता, यहाँतक कि डाँकूलोग देवगढनगरमें लूटका माल बेचते हैं।

१० म। केवल अर्थ दण्ड करनेकी इच्छासे वह निरपराधियोंका अधिकार किया भूमिस्वत्व अपने अधिकारमें कर लेते हैं और अर्थ दण्ड दिये जानेपर वह खेतोंका सब अन्न अपने घोड़ोंके लिये कटवा मँगाते हैं।

११ श। अधीनस्थ सरदारोंके खेतोंमेंसे सब किसानोंको बलात्कारसे पकड कर अर्थदण्ड करते हैं और उनके गौ आदि पशु और हल बेचकर धन वसूल करलेते हैं। इस कारण खेतीका काम विलकुल बंद होगया है और निवासी लोग देश छोडकर अन्यत्र भाग रहे हैं।

१२ श। देवगढ नगरके विचारपतिगण × उनके प्रबल अत्याचारके कारण रायपुरमें भागनेको विवश हुए हैं। वह उनको पकडवाकर उनसे भी धनदण्डलेनेके लिये तीक्ष्ण दृष्टि रखते हुए हैं।

१३ श। बलपूर्वक अकारण अथ संग्रहके लिये वह आधीनके सरदारोंको अपने पास बुलाते हैं। यदि वह किसी उपायसे भाग जाँय तो उनकी स्त्री और कन्याको कारागारमें डाल देते हैं। इस घोरतर अपमानसे अनेक स्त्रियोंने कुँएमें गिरकर आत्मघात किया है।

१४ श। यदि कोई पुरुष किसीका ऋणी हो तो वह मध्यस्थ बनकर उसका ऋण चुकवा देनेमें प्रवृत्त होते हैं। और उस ऋणीकी स्थावर जंगम सब सम्पत्ति विकवाकर आधा धन आप लेलेते हैं।

* प्रत्येक राजपूत सामन्तके अधिकृत प्रदेशमें फौजदार नामक एकसामरिक नेता हैं। वह आधीनके सरदारोंको सैन्यदलभुक्त और उनका प्रभुत्व करते हैं। अन्य जातिके राजपूत ही इस पदपर नियुक्त होते हैं।

× प्रत्येक नगरमें ही एक २ विचारालय है। नगरसेठ अर्थात् प्रधान अधिवासी चार चोटी-याके साथ मिलकर दीवानी विचार करते हैं। वह किसी प्रकारका वेतनादि नहीं पाते।

कारोंका यही मूल लक्ष था, इसी लिये अंतःपुरकी रीतिकी सृष्टि हुई और इसी लिये वह यह आज्ञा करगये हैं कि स्त्रियोंकी रक्षा भलीभाँतिसे करे । *

जो लोग आर्यशास्त्रको नहीं जानते हैं, अथवा जो हिन्दुओंके अंतःपुरके निवास-को नहीं जानते हैं, उनका तथा पाश्चात्यजातिका यह विश्वास है कि हम लोग घरके भीतर निवास करनेवाली स्त्रियोंके ऊपर मोल ली हुई दासीकी समान व्यवहार करते हैं; उनका यह अनुमान और ऐसा विश्वास कदापि ठीक नहीं होसकता । परन्तु स्त्रियोंके ऊपर किस प्रकारसे दृष्टि रखनी उचित है, आर्य शास्त्रकारोंने उसके सम्बन्धमें क्या कहा है ? जो पुरुष स्त्रीके मानकी रक्षा करता है, उसको पग २ पर कल्याणकी प्राप्ति होती है और जो मनुष्य स्त्रीका अपमान करता है वह मनुष्य अधम और उसके भाग्यमें अशुभ होते रहते हैं । हमारे प्रधान धर्मशास्त्रके नेता महात्मा मनुजी स्वयं कहगये हैं × “ कि जो मनुष्य स्त्रियोंके सन्मानकी रक्षा करता है, देवता उसके ऊपर प्रसन्न होते हैं, और जो मनुष्य स्त्रियोंका अपमान करता है, उसके सम्पूर्ण धर्म कर्म और पुण्योंका नाश होजाता है, और जिस संसारमें स्त्रियोंके सन्मानकी रक्षा भलीभाँतिसे नहीं होती वहां स्त्री शाप देती है, इसीसे वह संसार एक बार ही विध्वंस होजाता है । ” आर्य संसारमें स्त्रियोंका कैसा उत्तम सन्मान होताथा, कहाँ-तक उनको दयादृष्टिसे देखाजाता था, मनुकी उक्ति उसकी चूडान्ततक का परिचय देती है अबलाके ऊपर किसी भाँतिका भी प्रहार करना उचित नहीं, इस बातको मनुजी स्पष्टतासे कहगये हैं । उसका विधान यह है कि चारों स्त्रियें सहजों अपराध भी करलें परन्तु मनुष्य उनको फूलसे भी न मारें । आर्यजातिमें स्त्रियोंका मारना किसीभाँति भी उचित नहीं. हम सबसे पहले यही पूछते हैं कि संसारमें

* पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने । रक्षन्ति दयाविरे पुत्रा न ली स्वातंत्र्यमर्हति । मनुः

× मनुः— यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् ॥

न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धन्ते तद्धि सर्वदा ॥ ५७ ॥

जामयो यानि गेहानि पश्यन्त्यप्रतिपूजिताः ॥

तानि कृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्ततः ॥ ५८ ॥

स्त्रियां तु रोचमानायां सर्वे तद्रोचते कुलम् ॥

तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते ॥ ६२ ॥ अ० ३

वह हमारे ऊपर धनदण्ड करके कहते हैं कि, “पहाड़ियोंको उक्त प्रकारसे पशु रोकलेनेकी शक्ति हमने दी है ।” इस प्रकार वह हमारी मर्यादा घटा देते हैं । अथवा हम उक्त हत्याकारी डाँकुओंमेंसे किसीको भी पकड़ते हैं, तो वह छुड़ानेके लिये एक अस्त्रधारी दल भेजते हैं और उससे फौजदार रिशवत लेते हैं । फिर छूटे हुए डाँकूके साथ कलह होता है और उससे निराश्रय राजपूत अपनी पैतृक भूमि छोड़नेको विवश होजाते हैं । देवगढमें अब प्रजाको सहायता और आश्रय पानेका कोई उपाय नहीं है। सामन्त बिलकुल हिताहित विचार शून्य हैं और सम्मान रक्षाके प्रति यहांतक उदास हैं कि, “पहाड़ियोंको धन देकर अपनी लूटीहुई सम्पत्तिका उद्धार करलो । ऐसा कहते हैं जबसे वर्तमान फौजदार नियुक्त हुए हैं तबसे हमारे अदृष्टमें हालाहल विष लिखागया है । विदेशी लोग सर्व कर्ता धर्ता हैं देशी दूर फेंक दियेहैं । दक्षिणी (महाराष्ट्र) और लुटेरे उनके (सामन्तके) स्वजातीय लोगोंकी भूमि भोग रहे हैं । विना अपराधके सरदारोंकी भूमि छीन ली जातीहै। उसके फिर प्राप्त करनेमें बहुत सा समय और धन व्यय करना होता है । न्याय विचार बिलकुल लुप्त होगयाहै ।

राणा भवनमें उन (सामन्त) का जैसा अनुग्रह भोग और स्वत्वाधिकार विराजित है उनके निकट भी हम उसी अनुग्रहके अधिकारी और स्वत्ववान हैं जबसे आप (कर्नेल टाड) ने मेवाडमें पदार्पण किया है, उससे बहुत पहिले दूसरोंके द्वारा अन्यायसे अधिकृत भूमियोंका उद्धार किया जाता है । हमने ऐसा क्या अपराध कियाहै जो अब अपने पैतृक स्वत्वसे वञ्चित रहें ?

हमलोग महा विपत्ति सागरमें मग्न हैं ।

तीसरी संख्या ३.

महाराज श्रीगोकुलदास ।

देवगढके चार मिसल अर्थात् चार श्रेणीके पदावत् गणके प्रति आदेश करते हैं ।

विदित हो—

विना अपराधके किसी सरदार वा भूमि अधिकारीकी सम्पत्ति वा चरसा भूमि नहीं छीनी जायगी ।

करनेके लिये सर्वदा तैयारी करनी होतीहैं। हमारा कहना केवल उन्हींसे है कि अनंक बड़े २ घरानोंमें नौकर चाकरोंके न मिलनेसे उनको अपने घरके काम स्वयं अपने हाथसे करने पड़तेहैं, इसलिये हमें यही पूछना है कि उस समय उनके स्वामी और उनकी स्त्रियोंका चिह्नस्वरूप आलस्य विलासिता न जाने कहाँ अदृश्य होजाताहै ? उस समय क्या उनकी सभ्यता नहीं रहती; स्त्री जातिके कर्त्तव्य कर्म सांसारिक कार्योंसे उनका छुटकारा देनेसे ही यदि उनको सभ्य बनाते हों तो वह सभ्यता संसारसे जितनी जल्दी बिदा होजाय उतना ही कल्याणका विषय है ।

आर्यजाति स्त्रियोंको माल ली हुई दासीकी समान नहीं जानती, इस विषयमें हम दो एक प्रमाण और भी उद्धृत करते हैं । आर्यशास्त्रकारोंका कथन है, कि बाल्यावस्थामें स्त्री पतिकी मंत्रीकी समान है, सलाह देनेमें सखीकी तुल्य है, और स्नेहमें माताकी समान आचरण करतीहै । × भला यह तो विचारो कि यह कहीं मोल ली हुई दासीके लक्षण हो सकतेहैं ? संसारका मंगल-समाजमें शान्ति, संसारकी उन्नति और जातिकी पवित्रताके संग्रहमें क्या यह मूलमूत्र नहीं है ? शास्त्रको क्या भलीभाँतिसे नहीं विचार सके हो ? भारतवर्षमें आर्यजातिके बीचमें विषमय बहुतसे विवाहकी रीति प्रचलित देखकर विलायतके निवासियोंने यह सिद्धान्त स्थिर करलियाहै कि आर्यजातिमें केवल भोगविलासकी इच्छाको चरितार्थ करनेहीके लिये स्त्रीजातिकी सृष्टि हुईहै, अथवा स्त्रीजातिकी मोल ली हुई दासीकी समान न जानकर क्यों बहुविवाहकी रीति प्रचलित हुई ? परन्तु इस प्रश्नका उत्तर देनेके पहले हम अहंकार, गौरव और साहसके साथ कह सकतेहैं कि आर्यशास्त्रकार अनेक विवाहोंके पक्षपाती नहीं हैं । जिस मनुष्यके पुत्र विद्यमान है उसको दूसरा विवाह करना किसी प्रकार भी उचित नहीं । यदि स्त्री सर्वदा रोगी रहतीहो, या वंध्य हो तो ऐसे स्थानपर दूसरे विवाह करनेकी प्रथा है । जो पुरुष बहुत सी स्त्रियोंका पति है वह अधम है, महापापी है, पुराणोंमें ऐसा भी कहाहै । *

× “ काव्येऽपि मंत्री पत्नी त्यात्स्वस्त्री त्यात्करणेषु च ।
स्नेहेषु भार्या माता त्याद्वेष्ट्या च शयने शुभा ॥ ”

गरुड पुराण ।

* “ बहुदारः पुमान् यत्तु रागादेकां भजेत्स्त्रियम् ॥
स पापभाक् स्त्रीजितश्च तस्याशौचं सनातनम् ॥ १ ॥ ”

४ थ । रहनेके लिये “भारत सिंहकीवाटी” नामक घर ।

५ म । उद्यान बनानेके लिये नगरके बाहर एक सौ बीघे भूमि ।

६ छ । काष्ठ और तृणादिके निमित्त उपत्यकाका भितुना नामक ग्राम ।

७ म । अजमेरीवेग, जो युद्धभूमिमें मारे गयेथे, उनके समाधि मन्दिरकी रक्षाके कारण एक सौ बीघे भूमि ।

अनुग्रह और सन्मान ।

८ म । दरवारमें एक आसन और सादरके सामन्तकी समान सब विषयोंमें सन्मान और पदमर्यादा । *

९ म । राजप्रासादास्थित तोरणके वहिर्देशमें अपना नगाडा वजासकेंगे, किन्तु केवल एक लकड़ी द्वारा ।

१० दशहरा उत्सवमें अमर घोडा और × सन्मान सूचक पौशाक ।

११ श । आहरमें विजयढक्का वजासकेंगे । अन्यान्य सब विषयोंमें सलम्बूर-के सामन्तकी समान आपका वंश भी सदा सन्मान पासकेगा । इस कारण अपनी भूवृत्ति मूल्यके अनुसार आप राजाकी आज्ञा पालन करते रहेंगे ।

१२ श । आप स्वयं जिस किसी भ्राता वा भृत्यको पदच्युत करेंगे, मैं उनको आश्रय न दूंगा, और मेरे सामन्तलोग भी उनको आश्रय न दे सकेंगे ।

१३ श । राजसभाके सिवाय अन्यत्र जब आप अकेले रहेंगे, तब चमर और किंरनिया व्यवहार करसकेंगे

१४ श । मुनवरवेग, अनवरवेग, चमनवेगको सिंहासनके सम्मुख आसन लेनेकी आज्ञा दीगई । अमरघोडा और दशहरेके समय मानसूचक पौशाक आपको दी जायगी और आपके दूसरे दो दीन आत्मीय सन्मानके योग्य होनेपर, राजसभामें आसन पासकेंगे ।

१५ श । आपके वकील अपने पदोचित सन्मानके साथ राजसभामें स्थिति करसकेंगे ।

आदेशक्रमसे—

साअतिरामवलिया ।

संवत् १६२६, (सन् १७७०ई०) }
११ शी भाद्र सांमवार }

* सादरके अधिपति राणाकी सभाके प्रथम वैदेशिक सामन्त हैं ।

× राणा सामन्तको जो घोडा देतेहैं, उसके मरजानेपर फिर दूसरा घोडा देतेहैं । इस कारण इसमें अमरशब्दका प्रयोग हैं ।

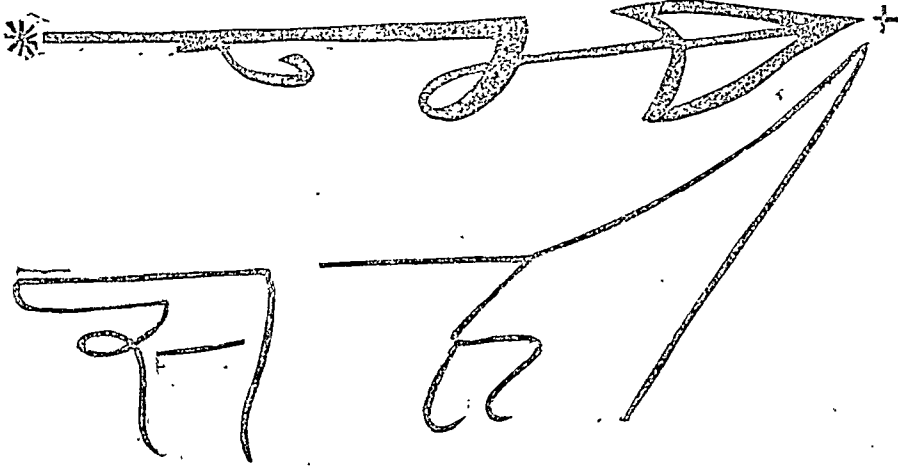
विज्ञानके वह ऊँचे आसनपर विराजमान हैं, इस सभ्य अमेरिकामें हम लोगोंने उन्नी-
सवीं शताब्दीमें बहुविवाहकी रीति प्रचलित होती हुई क्यों देखी ? विख्यात कोपे-
कारकी सम्प्रदायमें आजतक इस बहुविवाहकी प्रथाकी समभावसे रक्षा कर-
ते हैं ? एक नहीं, दो नहीं, वरन् सैकड़ों हजारों स्त्रियें एक एक मनुष्यको पति-
भावसे वरण कर रही हैं ? उन्हें क्या अमेरिकाकी उच्च सभ्यताका उज्ज्वल प्रकाश
प्राप्त नहीं हुआ ? उनका क्या विलायतकी उच्च शिक्षा नहीं मिली ? अच्छा
हमने बहुतसे तर्क कुतर्क न करके इस बातको भी मानलिया कि कोपेकारके
ऊपर वहाँके सर्व साधारणने सहानुभूति न दिखाई, परन्तु यहाँ पर हमारा यह
प्रश्न है कि कई वर्षोंके बीतजानेपर अमेरिकामें स्त्रियोंकी संख्या अधिक
बढ़ गई, क्या समाजके नेताओंने इसका प्रस्ताव तक भी नहीं किया कि
समाजमें शान्तिकी रक्षाके लिये बहुविवाहकी रीतिका प्रचार करना आवश्यक
है ? प्रधान २ समाचारपत्रोंमें क्या इस बातका विचार नहीं हुआ ? आजतक
भी क्या अमेरिकाके समाजमें गण स्त्रियोंकी संख्याको बढ़ता हुआ देख-
कर उस बहुविवाहकी रीतिको चलाकर समाजनीतिके मानकी रक्षाके अभिलाषी
नहीं हुए ? पात्रके न मिलनेसे अमेरिकामें बहुत सी युवतियें दीर्घकालतक विवाह
न करके समाजको बराबर कलंकित कर रही हैं, इसे क्या वह अपनी दिव्यदृष्टिसे
नहीं देखते हैं ? इसीलिये हम कहते हैं कि केवल समाजनीतिके सम्मानकी रक्षाके
लिये असवर्णा विवाह अप्रार्थनीय हैं, निम्न लिखित वंशोंमें कन्यादान निन्दनीय
है— और सवर्णमें तथा बराबरके वंशमें पात्रके न मिलनेसे बहुविवाहकी
रीतिका प्रचार करना अत्यन्त आवश्यक है । परन्तु इस समय स्थान २ पर उस
रीतिके परिवर्तनका पूर्ण लक्षण प्रकाश पा रहा है ।

इस समय महात्मा टाड साहबका अनुकरण करना ठीक होगा, वह इति-
वृत्तके उपाख्यानमें कह गये हैं कि अपने दुर्भाग्यवशसे ही विलायती जगत्
होते हुए भी ऊँची श्रेणीकी महिलामंडली स्वभावसे अंतःपुरमें बंद रहती है,
तथापि समाजके ऊपर उनकी प्रभुत्व शक्ति कहाँतक पहुँची है, उसका जानना
अत्यन्त कठिन है । परन्तु महामाननीय टाड साहबने इस बातको स्वयं
कहा है कि राजस्थानमें अंतःपुरकी रीतिके प्रचलित होनेसे समाजके ऊपर
उनकी प्रधानताका विस्तार कुछ कम नहीं था, चुम्बक पत्थरके गुप्त स्थानमें
रखो या न रखो उसकी आकर्षणीय शक्ति जिस भाँति निश्चित है,

श्रीरामो जयति ।

श्रीगणेशः प्रसीदतु ।

श्रीएकलिङ्गः प्रसीदतु ।



महाराजाधिराज महाराणा संग्रामसिंह आदेश करते हैं, ।-मेरे भानजे कुमार मधुसिंहजीको ग्रास प्रदान किया गया,-

रामपुरा प्रदेशका पट्टा ।

अतएव एक सहस्र अश्वारोही और दो सहस्र पदाति सहित तुम वार्षिक छः मासतक राज्य कार्यमें नियुक्त रहोगे, और किसी समय विदेश जानेकी आवश्यकता होने पर, तीन सहस्र अश्वारोही और तीन सहस्र पैदल सहित तुमको युद्ध क्षेत्रमें उपस्थित होना होगा ।

उक्त प्रदेश (रामपुरे) में जबतक महिमवर राणाका प्रभुत्व विस्तृत रहेगा, तबतक तुमको इस अधिकारके जानेका कुछ भय नहीं है ।

आदेशक्रमसे

संवत् १७८५ (सन् १७२९ ईसवी)

पांचोली रायचन्द

७ मी चैत्र, सुदि मंगलवार ।

और

महता मल्लदास

(राणाके निज हाथसे लिखित)

मदीय भागिनेय मधुसिंहसमीपेषु-

* मेवाडके वंशानुक्रमिक सामरिक मंत्री सलम्यूरके सामन्तके स्वाक्षर चिह्नस्वरूप भाला ।

† राणाके सांकेतिक निज अक्षर ।

कुछ सार भी है, 'परन्तु हम भारतके अंतःपुरकी रीतिकी प्रतिष्ठा करनेमें कोई भी उचित कारण ठीक नहीं मानते । हम इस बातको भलीभाँतिसे मानतेहैं कि महात्मा टाड साहबने सत्यताकी मृदुल उन्नतिकी अवस्थाके ही लिये स्त्रियोंको एकान्तमें निवासके करनेके लिये कहाहै । उनके इस मतको हम लोग भी माननेके लिये समर्थ हैं । इस बातको हम कहसकतेहैं कि जिस समय विलायती जगत्में वर्तमान आसुरिक सभ्यताकी चूडान्त उन्नतिके पीछे हिन्दू समाज स्त्रियोंकी स्वाधीनताका विषैला फल भोग करैगी । उस समय जगत्में शान्ति, समाजका मंगल और संसारमें पवित्रताकी रक्षा करनेके लिये स्त्रीजातिको अंतःपुरमें रखकर उनके पदोचित अवस्थाके उपयोगी और विधिकी विधिके मतसे सीमाबद्ध स्वाधीनताका देना ठीक विचारा जायगा । सभ्यताके बीचमें उन्नतिकी अवस्था और अंतःपुरकी रीतिकी प्रतिष्ठा किस प्रकारसे सम्भव होसकतीहै ? अंग्रेजजातिकी आदि मध्य और वर्तमान अवस्थाकी ओर आँख उठाकर देखनेसे हमलोग देखसकतेहैं कि अंग्रेज जाति इस समय सभ्यताके ऊँचे शिखरपर पहुँच गई है और इसीसे वह अहंकारसे युक्त है, परन्तु जिस समय यही अंग्रेज जाति सभ्यताकी मध्य अवस्थामें थी उस समय क्या ग्रेटब्रिटनमें अंतःपुरकी रीतिका प्रयोजन नहीं था ? इंग्लैण्डकी स्त्रियोंको सभ्यताकी वृद्धिके साथही साथ अधिक स्वाधीनता मिलीहै । और किसी समयमें पुरुषोंकी समान स्वाधीनता पानेके लिये महायुद्ध करैगी । उसके पूर्व लक्षण भी दीखरेहैं, परन्तु जब उन पूर्ण स्वाधीनता प्राप्तहुई अंग्रेज ध्वलाङ्गिनियोंमें स्वेच्छाचारिताका भयंकर अभिनय होगा, उनके उस आचरणसे जब अंग्रेजसमाज भयंकरतासे लुप्त होगा, अंग्रेजजाति जब उनके विषमय फलको भोग करैगी तब तो अवश्यही उनको भारतवर्षमें प्रचलित हुई रीतिका अनुसरण करना होगा । भारतके महात्मा ऋषि मुनियोंने स्त्रियोंके चरित्रोंको किस प्रकार कहाहै, और स्त्रियोंकी स्वाधीनतासे कैसा विषैला फल उत्पन्न हुआ है, उसको भलीभाँतिसे जानकर स्त्रियोंके कर्तव्य कर्मोंको विचार तथा स्वाधीनताकी सीमा बताकर धर्मनीति, समाजनीति और स्त्रियोंके सारधन सतीत्वकी रक्षाकी उचित व्यवस्था की है ।

पंडितश्रेष्ठ टाड साहबने कहाहै कि, प्राचीन यहूदीजाति स्त्रियोंको अंतःपुरमें नहीं रखती थी; राजपूतानेमें नीचजातिकी स्त्रियें जिस प्रकार घरके कामकाजके लिये कुँएसे जल भरकर लाती थीं और वहाँ जाकर पुरुषोंके साथ वार्तालाप करतीं थीं वहीसे उनका पति भी वरण होजाता था, उसी प्रकार

आमाइतके रावत् फतेसिंहको जो भूमि दी थी,
उसका दानपत्र ।

राणावत् सामन्तसिंह और सौभाग्यसिंहने वृत्तिस्वरूप आमिली पाई थी । किंतु वह वहाँके रहनेवालोंके प्रति अत्यन्त अत्याचार और उत्पीडन करते थे, पटेल जोध और भाग्यको मारडाला, और ब्राह्मणोंके ऊपर ऐसा अत्याचार और उत्पीडन किया कि, कुशल और लालने जलती हुई आगमें जीवन विसर्जन किया । तब प्रजाने राणासे सहाय और आश्रय मांगा । पट्टावत्गण वदल गयेहैं और इस समय ग्रामवासीगणोंने रेकोयाली स्वरूप फतेसिंहको एक सौ पचास बीघे भूमि दान करी । ×

नवीं संख्या ९

दोंगलानगरवासी जनोद्वारा भिन्दीरके महाराज
जोरावरसिंहको भूमिदान ।

श्रीमहाराज जोरावरसिंहके निकट हम पटेलगण, व्यापारीवृन्द, व्यवसायी मंडली, ब्राह्मण वर्ग और दोंगलाके सम्पूर्ण निवासी एकत्रित होकर दानपत्र लिखेदेते हैं ।

इससे पहिले दोंगलामें डाकुओंका भय अत्यन्त प्रबल था; महाराजने उनके हाथसे हमारी रक्षा करी, इस कारण हम निम्न लिखित भूम्यादि दान करते हैं ।
यथा;—

तेली हीराका अधिकृत एक कुआ ।

तेली दीपाका अधिकृत एक कुआ ।

तेली दीवाका एक कुआ ।

कुलः तीन कुएँ चौवालीस बीघे पीवुल (कूपसहितभूमि) और एक सौ इक्यान्वे बीघे मालभूमि और एक ज्वारका खेत ।

रेकोयाली भूमि सम्बन्धी मर्यादा ।

१ म । प्रत्येक परिवारके विवाह समय एक पात्र अन्न ।

× भूमियां स्वत्वका कैसा आदरहै, वह इसके द्वारा प्रमाणित होताहै । फतेसिंह यद्यपि राणाके निकटसे सर्व देशके पट्टा ग्रहणमें अधिकारी थे, किन्तु उनका भूमियां स्वत्व नहींथा । उन्होंने वह स्वत्वही संग्रह करलिया । यद्यपि यथासमयपर राणाने असली देश अपने अधिकारमें करलिया, किन्तु भूमियां स्वत्व सामन्तके अधिकारमें रहा ।

“हे राणात्मजे पीनेके निमित्त एक पात्र जलका लाओ” राणाकी कन्याने अपने पतिके वचनोंका तिरस्कार करके उत्तर दिया कि “सैकड़ों वरन हजारों राजेश्वर राणाकी कन्या सादरीकी समान सामान्य देशके सामान्य सरदारको जलके पात्रकी देनेवाली नहीं होसकती ।” यह वचन सुनकर वीरश्रेष्ठ सरदारने क्रोधित हो शीघ्र ही उत्तर दिया कि, “अच्छा यदि तुमसे मेरा कुछ भी उपकार नहीं होता तो तुम इसी समय अपने पिताके यहां चली जाओ ।” इसके पीछे सामन्तने शीघ्र ही अपने एक दूतको बुलाकर समस्त समाचार राणासे कहनेके लिये कहा; और उसी दूतके साथ राणाकी कन्याको भी भेजदिया। उस दूतने जाकर समस्त वृत्तान्त राणाको सुनाया । यह समाचार सुनकर राणाने कुछ ही समयके उपरान्त सादरी सामन्तको अपनी सभामें बुलानेके लिये भेजा । राणा सभासदोंसे युक्त हो राजकार्य कर रहे थे कि इसी समयमें राणाके जामाता सादरीके सरदार वहाँ आ पहुँचे, उनको देखते ही राणाने बड़े आदरभाव से उनको अपनी दहिनी ओर सिंहासनपर बैठाया; सभाके सम्पूर्ण होजानेपर पूर्व इशारेके अनुसार नीचेके आसनके ऊपर खड़ेहुए युवराजको, अत्यन्त नीचे सेवक अर्थात् सादरीके सामन्तको उसकी रक्षामें तथा सत्कारमें नियुक्त देखकर अपनेको ऊँचे सन्मानका पात्र जान सामन्तने आश्चर्यमें भर विस्मित और विचरित चित्तसे राणाके सम्मुख बड़ी नम्रतासे शिष्टता प्रकाश की, राणाने उत्तर दिया, “कि अब तुम अपनी स्त्रीको अपने घर लेजाओ, अब यह कभी भी तुम्हें जलका पात्र देनेको मना न करेगी”।* ऐसा ही हुआ जीवनपर्यन्त परस्परमें जो विश्वासहै

* स्वामीके प्रति स्त्रीजातिका क्या कर्तव्यहै उसके सम्बन्धमें वहाँपर हम दो एक प्रमाण देतेहैं ।

“या स्त्री भर्तुरसौभाग्या सौभाग्याय च सर्वतः । शयने भोजने तस्या न सुखं जीवनं वृथा ॥
यस्य नास्ति प्रियप्रेम तस्या जन्म निरर्थकम् । तत्किं पुत्रं घने रूपे सम्पत्तौ यौवनेऽथवा ॥
यद्भक्तिर्नास्ति कान्ते च सर्वप्रियतमे परे । साऽशुचिर्वर्महीना च सर्वकर्मविवर्जिता ॥
पतिर्वन्धुः पतिर्भर्ता दैवतं गुरुरेव च । सर्वस्वाच्च गुरुः स्वामी न गुरुः स्वामिनः परः ॥
पतिभक्तिविहीनाया भस्मीभूतं निरर्थकम् । पतिसेवा व्रतं स्त्रीणां पतिसेवा परं तपः ॥
सर्वदेवमयः स्वामी सर्वतीर्थमयः शुचिः । सर्वपुण्यस्वरूपश्च पतिरूपी जनार्दनः ॥
या सती भर्तुर्लच्छिष्टं भुङ्क्ते पादोदकं सदा । तस्या दर्शमुपस्पर्शं नित्यं वाञ्छन्ति देवताः ॥

ब्रह्मवैवर्तपुराण, ५१ अध्याय ।

“भर्ता हि दैवतं स्त्रीणां भर्ता च गतिरुच्यते । जीवपत्याः स्त्रियो भर्ता दैवतं प्रभुरेव च ॥
या धर्मचारिणी नारी पतिव्रतपरायणा । नानुवर्तति भर्तारं सा सद्भिर्न प्रशस्यते ॥
पतिव्रता भर्तृपरा नारी भर्तृपरायणा । इह कीर्त्तिं परां प्राप्य प्रेत्य स्वर्गे महीयते ॥”

वाहि पुराण.

दोहनमो । *

होली और दशहरा पर्वोंके समयमें नारियल मिलेगा ।

बोझा ढोनेवाले प्रति सौ बैलोंपर बारह आने शुल्क लेसकोगे । ×

जिहाज पुरके भीतर जितने घोड़े विकेंगे, उनमें प्रतिघोडा २ आने मिलेंगे ।

जितने ऊंट विकेंगे, उनमें एक ऊंट पीछे एक आना पाओगे ।

तेलीकी धानीपर एक २ पला पाओगे ।

प्रत्येक लोह खानसे सिकीमुद्रा ।

प्रत्येक सुरा प्रस्तुतके कारखानेसे सिकीमुद्रा ।

प्रत्येक छाग बलिदानमें एक पैसा ।

जन्म और विवाहके समय पाँचपात्र अन्न । †

प्रत्येक नाजरा फलकी एक २ अंजुलि ।

भूमि सम्बन्धी अन्यान्य अधिकार और अनुग्रह ।

कूपादियुक्त भूमि (पिवुल) ५१ बीघे

कूपहीन भूमि (माल) ११० बीघे

पहाडी भूमि (सुग्र) ४० बीघे

तृणाच्छादित भूमि [बीडा) २५ बीघे

कुल २२६ बीघे

आषाढ संवत् १८५३ (सन् १७९७ ईसवी)

* निवासी किसानोंमें पर्याय क्रमसे हलके साथ दो मनुष्योंसे किसानका निर्धारित खेत कर्षणका नाम हनमो है ।

× जिस समय मेवाडके चारोंओर विद्रोह, अशान्ति, अत्याचार, प्रबल हुआ, उस समय सामन्तोंने अनेक प्रकारका कष्ट दायक कर संग्रह करना आरंभ किया था । उसीसे वाणिज्य कार्य प्रायः बिलकुल बंद होगया, स्थानान्तरमें आनेजानेमें भी बहुतसे विघ्न पडगये । उस समय प्रत्येक विषयमें कर लिया जाताथा । दुर्गसंस्कार, पारजानेके कारण नौकाकी रक्षा, साधारण मार्गमें चौकीदारोंका नियत करना और रात्रिमें रक्षक नियोग आदि अनेक विषयोंके कर देनेको प्रजा विवश होतीथी ।

† राजपूत सामन्तोंके आधीनके सरदार वा प्रजाके लोगोंमेंसे किसीका विवाह होनेपर सामन्त लोग भोज्यद्रव्य अथवा उसके बदलेमें नगद रुपये पातेहैं । किन्तु फ्रांसमें इस विषयमें सामन्तगण नियमित धन ग्रहणके सिवाय और भी बहुत दुःखदायक कार्य करतेथे । वह अथवा उनके प्रतिनिधि कन्याके सन्मुख जाकर बैठतेथे ।

लिये आत्मीय स्वजनोंका क्या प्रयोजन है ? आज मैं अवश्य ही आपके साथ चलूँगी; मेरा जब ऐसा विचार है तब आप मुझे साथ चलनेमें क्यों बाधा देते हैं ? वनके फल मूलोंको खाकर मैं जीवन धारण करूँगी; मेरे साथ चलनेसे आपको कुछ भी कष्ट नहीं होगा, मैं आपके साथ चलनेमें किसी भाँतिका झेस नहीं मानूँगी; और वनके कंद मूल फल खानेमें कभी अनिच्छा प्रकाश नहीं करूँगी ।

इस प्रकारसे मैं सहस्र वर्ष तक व्यतीत करसकती हूँ; परन्तु प्रीतम ! आपके विरहमें स्वर्ग भी मुझे सुखका देनेवाला नहीं है ।

दोहा—प्राणनाथ करुणायतन, सुन्दर सुखद सुजान ।

तुम विनरघुकुलकुमुद विधु, सुरपुर नरक समान ॥

स्वामी ! मैं आपके चरण छूती हूँ मेरे ऊपर दया करो, मैं उस गहन वनको पित्रालय स्वरूप जानकर वहाँ निवास करूँगी । मेरी अब कोई इच्छा नहीं है। केवल आपके चरणकमलोंका सर्वदा दर्शन होतारहै यही मेरी अभिलाषा है। मेरे इस अनुरोधकी आप रक्षा कीजिये । वनके बीचमें मैं किसी समय भी शोक प्रगट नहीं करूँगी, आपको कंठग्रही स्वरूप नहीं हूँगी । राघव ! यदि आप इस दासीकी इस प्रार्थनाको स्वीकार न करेंगे तो अवश्य ही मैं प्राण त्याग दूँगी । ”

हिन्दुओंके चरित्रोंको जाननेवाले महात्मा टाड साहबने इस बातको लिखा है कि बिलसन साहबने जो हिन्दूजातिके नाटकोंका अनुवाद किया है उससे उन्होंने प्राचीन हिन्दुओंके आचार विचार विशेषकर स्त्रीपुरुषोंका परस्पर प्रेम परस्पर स्वामी और नारीका विश्वास तथा उनका अकृत्रिम प्रेम इस बातको सर्वसाधारण अंग्रेज जातिपर भलीभाँतिसे प्रगट करदिया है। उत्तररामचरित्र, विक्रमोर्वशी और मुद्राराक्षसमें इस विषयके अनेकों उदाहरण पायेजाते हैं, दूसरे ग्रन्थोंमें भी गृहस्थ हिन्दुओंके कुटुम्बोंमें पातके ऊपर स्त्रियोंकी प्रबल प्रेमभक्ति त्रिलक्षणरूपसे दीखती है शेक्सपियरके मर्चेंट आफ वेनिस नामक नाटकमें अन्त न्यायकी समान चन्दनदासने जब अपने प्यारे भाईकी रक्षाके लिये प्राणदंडकी आज्ञा प्राप्तकी थी, और उनकी स्त्री अपने इकलोते पुत्रको साथ लेकर स्वयं वधस्थानमें आई तब नीचे लिखे अनुसार बातचीत हुई ।

चन्दनदास ।— प्रिये ! तुम यहाँ क्यों आई ? पुत्रको अपने साथ लेकर घर चलीजाओ ।

स्त्री ।—नाथ ! क्षमा करो—आप भिन्न जगत्में प्रस्थान करते हैं; आप क्या दूर नहीं जाते हैं ? फिर क्या नियत समयमें आपके चरणकमलोंका दर्शन कर-

पारमोप्रथा * विलकुल उठा दी गई । जो मनुष्य नगरमें वास और वाणिज्य करेंगे, हारावतीमें साधारण रीतिसे जो शुल्क लिया जाता है, उन सबका आधा कर छोड़ा गया और मापुया × सबका पद विलकुल उठा दिया गया ।

बारहवीं संख्या १२.

अकोला नामक स्थानके लक्ष्मीनारायण विग्रहके मन्दिरमें खोदित लिपि । पूर्वकालमें केवल एक बाजारमें ताम्रकूट बेचा जाता था; राणा राजसिंहने वह ठेकेकी प्रथा विलकुल उठा देनेकी आज्ञा दी । संवत् १६४५ ।

राणा जगतसिंह अपने आधीनके राजकर्मचारियोंको आकोलाके शिल्पियोंके निकटसे बलात्कारसे खाट और रजाई लेनेमें निषेधकी आज्ञा देगये ।

तेरहवीं संख्या १३.

मेवाडके अन्तर्गत बड़ा आकोला नगरके निवासी और छोट बख रंगने-वालों (रंगरेजो) के प्रति राजानुग्रह प्रकाशक स्मरण स्तंभकी

खोदित लिपि ।

बड़ा आकोला नगरके निवासियोंके प्रति

महाराणा भीमसिंह आदेश करतेहैं,—

मण्डलगढके दुर्गकी सेनाके खर्च निर्वाहके निमित्त इस ग्रामके निवासियोंके निकटसे जो कर लिया जाता था, वह उठाया गया और किन उपायोंके द्वारा यह ग्राम फिर समृद्धिशाली होसकता है, निवासियोंके निकट उपस्थित करनेपर सब एक स्वरसे कहेंगे कि, “बहुत प्राचीन कालसे जिस रीति और दरसे निर्दिष्ट कर लेते आतेहैं, उसके सिवाय कर कभी न लिया जाय, एक ऐसा स्तंभ बनवाकर उसपर प्रतिज्ञा खुदा दी जाय कि, खेतोंमें जितना अन्न उत्पन्न होगा, उसके आधे भागसे अधिक कर कभी नहीं लिया जायगा, और जो लोग उक्त नियमसे कर देंगे, वह किसी प्रकारसे पीडित वा दण्डित नहीं किये जायेंगे ।”

राणा इसमें सम्मत हुए और उनहीकी आज्ञानुसार यह स्तंभ स्थापित किया गया । जो पुरुष इस आज्ञाका तिरस्कार करेगा, उसके ऊपर एकलिंगजीका

* राजप्रतिनिधि कोटेके कृषि विभागके सर्वाध्यक्ष थे । वह जैसा मूल्य निर्धारित करदेते, वणिग उची मूल्यपर द्रव्य बेचनेको विवश होतेथे । इसीका नाम पारमोहै ।

× परिमापक (नापने सम्बन्धका)

स्त्रियोंकी समान अपने सत्त्व और अधिकारको लेकर महा आन्दोलन मचा-
रही हैं, उसी दिन जानोगे कि आर्यावर्तकी स्त्रियोंके गौरवका सूर्य चिरकालके
लिये अस्त होगया; उसी दिन जानोगे कि “सती” शब्दका अभिधान भारतसे
लुप्त होगया। यह बात तो सत्य है कि हम कुछ भविष्यद्वक्ता नहीं हैं, परन्तु
जो स्त्रियोंके चरित्रको जानते हैं, जिन्होंने विलायती जगत्की सामाजिक अव-
स्थाके यथार्थ तत्त्वको जान रक्खा है, जो विलायती स्त्रीपुरुषोंके हृदयके भावको
जानते हैं, वह अवश्य ही हमारी उक्तिको समर्थन करेंगे ।

महामाननीय टाड साहब पीछे इस बातको लिखते हैं कि केवल देवीमें जैसी
पतिभक्तिकी पराकाष्ठा थी—वह स्वामीके ऊपर स्त्रीका अतुराग ऊँचे हृदयमें
चूडान्त तक दिखागये हैं; अन्य समस्त जातियोंमेंसे किसी जातिके इतिहासमें
इस भाँति दिखाई नहीं देता; उसके पढ़नेसे राजपूत-वीरवालाओंके चरित्र
कैसे थे, और समाजके ऊपर उनका प्रभुत्व तथा सामर्थ्य किस प्रकार था वह
भलीभाँतिसे जाना जाता है ।

दिल्लीके शेष हिन्दू सम्राट चौहानजातीय पृथ्वीराज समेताकी राजकन्याको
हरण करके लेगये, भागनेके समय जो सेना उनके पीछे रक्षाकरनेके लिये गई थी,
महोबानामक स्थानमें चन्दाइलजातीय राजा परिमालने उसको पकड़कर मार-
डाला । इसी अपमानका बदला लेनेके लिये चौहान बादशाहने उस कुमारीको
महलमें लाकर शीघ्रतासे सेनाको आगे कर उसके राज्यकी शेष सीमामें स्थित
चन्दाइल राज्यपर आक्रमण किया और सिरसानामक स्थानमें × अपमान
करनेवाली सेनाको नष्ट करदिया; जब पृथ्वीराज इस भाँतिसे प्रतिहिंसा करनेमें
प्रवृत्त हुए, तब चन्दाइलने एक समितिको बुलाकर रानी मालिनी देवीके
परामर्शके अनुसार आल्हा और ऊदल नामक अपने प्रधान दो सामन्तोंको गैर-
हाजिर कहकर पृथ्वीराजके पास एक महीनेके लिये समर न करनेकी प्रार्थनाका
विचार किया । महोबके प्रधान राजकविके भ्राताने दूतरूपसे आगे बढ़कर देखा,
कि चौहान पृथ्वीराज पहोजनदीके पारजानेका उपाय कर रहे हैं । कविश्रेष्ठने
पृथ्वीराजके साथ साक्षात् कर नजर देनेके उपरान्त यथार्थ राजपूतोंके विषयमें
इस प्रकारकी असहाय अवस्थामें स्थित छिन्न भिन्न राज्यपर आक्रमण करना
अत्यन्त बुरा कार्य बताकर समर मुलतूवी करनेके लिये उनसे विशेष आग्रह

× पहोजनामक स्थान यहां स्थापित है । इस समय यह देश दौंतियाके बुन्देलराज्यके आधीन
है । महामाननीय इस समरक्षेत्रको देखनेके लिये गये थे ।

मारामिके निवासियोंके प्रति ।

श्रीमहाराणा संग्रामसिंहका आदेश—

सब प्रकारके उत्सवोंके भोजन और श्राद्धसे कोई व्यक्ति भी भोजनसे अधिक पदार्थ नहीं लेजासकेगा । जो इस आज्ञाका अनादर करेगा उसको अधीश्वरके निकट एक सौ रुपये दण्डके देने होंगे ।

संवत् १७६९ (सन् १७१३) शुक्ला ७ मी चैत्र ।

पन्द्रहवीं संख्या १५.

वाकरोल वणिक् और महाजनोंके प्रति

महाराणा संग्रामसिंहका आदेश ।

राजधनके लेनेवाले कर्मचारियोंके शीतवस्त्र दानके विरुद्धमें तुम लोगोंने जो अभियोग उपस्थित कियाहै, वह शीतवस्त्र देनेकी रीति बहुत कालसे प्रचलित है । इस समय राजधन और शुल्क संग्रह करनेवाले और उनके आधीनके कर्मचारीगण जब वाकरोलमें पहुँचेंगे, उस समय वणिक् उनको शय्या और शीतवस्त्र देंगे, तथा दूसरे निवासीगण दूसरे कर्मचारियोंको उक्त वस्तुयें देंगे ।

यदि नदीका बांध किसी कारणसे किसी प्रकार टूटा तो उसकी मरम्मतमें जो मनुष्य सहायता न करेगा, उसको उस दण्डमें एक सौ ब्राह्मण जिमाने होंगे ।

संवत् १७१५ (सन् १६५९ ईसवी) आषाढ ।

सोलहवीं संख्या १६.

दिल्लीके सामन्त द्वारा अपने आधीनस्थ सर-

दार गोकुलदास शक्तावतके प्रति

आदेश ।

महाराज भान्वाता, शक्तावत् गोपालदासके प्रति

आज्ञा करते हैं, विदित होवे,—

किसान और नीची श्रेणीके लोग ज्वारका आटा, तेल और शाक देंगे । एक समय फागुनके, उत्सवके समय किसी रंगरेजने अपने आत्मीय मित्रोंको श्रेष्ठ खांडके बनेहुए लड्डू बांटकर उस आज्ञाका अनादर किया था, महाराजने उससे पांच सौ रुपये दण्डमें लिये । पुत्रवधूके गर्भवती होनेपर उसके श्वसुर वधूके पिताके निकट भेजतेथे, महाराजने इसका भी निर्द्धारण करदिया । पूर्वकालमें इस अवसरपर वहुंत सा धन दिया जाताथा । महाराज जयसिंह इसी प्रकार सामाजिक बहुतसे विधान कर गये, और उन्होंने विशेष करके शिशुहत्या निवारणके लिये विशेष व्यवस्था कर दी थी ।

ऊदलके पास कन्नौजमें अपने एक दूतको भेजदिया उस श्रेष्ठ दूतने उस स्थानपर जाँकर उन दोनों वीरोंसे क्या कहाथा, महामाननीय टाड साहबने चन्दकविके ग्रन्थसे निम्न लिखितरूपसे उसे उद्धृत कियाहै,—“ चौहान सम्राट्ने महोबेके भीतर अपने डेरे डालदियेहैं; नरसिंह और वीरसिंहने समरकी अग्निमें अपना जीवन विसर्जन कियाहै, शिरसा देश भस्म होगयाहै और परिमालका राज्य भी चौहानोंके द्वारा विध्वंस होता चलाहै । एक महीनेके लिये समर रोकागयाहै; इस समय इस महाविपत्तिसे आपही हमारा उद्धार करेंगे; आपकी सहायताकी इच्छासे ही मैं यहां पर आयाहूँ । हे वत्सराजके दोनों पुत्रो ! सुनो-जबसे आपने महोबेको छोड़दियाहै, उसी दिनसे मालिनी देवी घोरशोकमें मग्न होकर समय व्यतीत कररहीहैं; उनकी दृष्टि सदा कान्यकुब्जकी ओर ही रहतीहै; और जब आपका स्मरण होताहै तब उनके नेत्रोंसे बराबर आँसुओंकी झड़ी लगजातीहै; और वह दीर्घश्वास लेकर यह कहा करतीहैं; कि चन्देलोंका यशका गौरव अस्त होता चलाहै ! हे वत्सराजनन्दन ! जब आप वहां जायँगे तब आपका हृदय भी अत्यन्त दुःखी होगा, अब भी समय है, आप महोबेको न भूलिये । ”

कविके यह वचन सुनकर वीरश्रेष्ठ आल्हाने उत्तर दिया कि, “ महोबा चाहे विध्वंस होजाय, और चन्देलोंका भी मूल सहित वंश नष्ट होजाय, परन्तु हम किसी प्रकार भी महोबेमें नहीं जायँगे कारण कि विना अपराध ही हमें हमारी मातृभूमिसे निकालदियाहै उनके कार्यमें हमारे पिताने अपने जीवनका बलिदान कर दिया और हमारे मृतक पिता ही उनके राज्यकी सीमाका विस्तार करगये हैं । विश्वनिन्दक पुरीहर पतिको ही समरक्षेत्रके सन्मुखसे दिल्लीके महावीरोंके विरुद्धमें तुम्हारी सेनाको चलानेके लिये कहगयेहैं । हमारे मस्तकपर महोबा स्तम्भस्वरूप था; हमारे द्वारा ही गौन्दगण परास्त होकर उनके प्रबल दुर्ग देव-गढ़ और चाँदवाटी महोबेके अधिकार मुक्त हुएहैं । हमने यादुनोंके विरुद्धमें समर भूमिमें जय प्राप्त की है, हिन्दोल * को विध्वंस करदिया, और परमालकी विजय पताकाको कात्वाइरदेशमें उड़ादिया है । हम विजयी वीरोंने कुशावहरके जयके स्रोतको रोक दियाथा । मुलतानके अमीरोंने उनके सन्मुख ही रणमें भंग डालदिया था । गयाके समरमें हमें जयलक्ष्मी प्राप्त हुई थी—और वेगुया

* हिन्दोल देश यादुनगरकी राजधानी वियानाके आधीनमें स्थिर एक नगर है यादुनगरियोंके उत्तराधिकारी गण आजतक करौली और श्रीमथुराजीमें अधिनायकत्व कररहेहैं ।

अठारहवीं संख्या १८.

जयतसिंह चन्दावतको मुण्डकाटि अर्थात् क्षतिपूरण
स्वरूप भूमि दान ।

पटेलके पुत्रने अपने गृहमें अपनी स्त्रीको लानेके लिये जैतसिंहके राजपूत सैनिकोंकी रक्षामें गमन किया । वह सब मार्गमें ताडित हुए, रक्षक सैनिक मारे गये, और हत्याकारियोंको दंड विधान तथा क्षतिपूर्णका कोई उपाय न होनेसे, मुण्डकाटि स्वरूप यह छब्बीस बीघे भूमि दी गई ।

उन्नीसवीं संख्या १९.

रावत मेघसिंह द्वारा उनके भ्राता यमुनादासको पट्टा प्रदान किया गया;—
रायपुरग्राम मूल्य ४०१) रुपये
भोगरा पुष्पका एक उद्यान ११) रुपये
कुल ४१२) रुपये

विश्वासके साथ स्वदेश और विदेशमें कार्य करते रहो; तथा प्रचलित रीतिके अनुसार कर और शुल्क दान करने तथा अधीनस्थ सरदारोंकी समान आज्ञा पालनमें तत्पर रहो ।

बीसवीं संख्या २०.

तक्षकजाति और जैनियोंके द्वारा राजपूत इतिहासके समय निर्द्धा-
रक खोदित लिपिका अनुवाद ।

पञ्चमशताब्दीके जित जातीय नरपतिके स्मरणार्थ एक ताम्रालिपि ।
यह सन् १८२० ईसवीमें कोटा राज्यके दक्षिणमें चम्बल नदके तटस्थ
कंसनाम स्थानके एक मन्दिरमें पाई गई ।

जटा आपकी रक्षक हों ! जो जटा जीवनसमुद्र पारको नौकास्वरूप हैं, जो
कुछेक श्वेतवर्ण और कुछ लालवर्ण युक्त हैं, उन जटाओंका विभव देखा जाता
है ? जिन जटाओंमें क्रुद्ध भीषण शब्दकारी सर्प विराजमान हैं; वह जटा कैसी
प्रकाशमान हैं ? जिन जटाओंके मूलसे प्रवल तरंगें निकल रही हैं उन जटा-
ओंके साथ क्या किसीकी तुलना करी जासकती है ? उन जटाओं द्वारा
आप रक्षित हों (१) ?

(१) कर्नेल टाड मंगलाचरण पढ़कर लिखते हैं कि, यद्यपि यह मंगलाचरण कविका वर्णना-
मूलक है, किन्तु इसके द्वारा जित जातिकी उत्पत्तिका निर्णय किया जासकता है । वह कहते हैं,
रणदेव शम्भूसे रजवाडेकी अनेक जातियें अपनी उत्पत्ति कहती हैं; वह कहते हैं, शिवके बाहुसे—

रहती हैं कि आपके जीवन तथा महोबेपर विपत्ति पडनेके समय वह दोनों कुँवर कभी भी अलग नहीं रह सकते. रानीने इस समय उस प्रतिज्ञाके पूर्ण करनेके लिये उनको याद दिलाई है, प्रतिज्ञा भंग करनेवाले मनुष्यसे इस संसारमें लोग घृणा करने लगते हैं, और जबतक चंद्रमा सूर्य उदय होते रहेंगे तबतक उसको नरकमें निवास करना होता है ।”

देवलदेवीने रानी मालिनीदेवीके भेजे हुए दूतके मुखसे यह समाचार सुनकर कहा, “कि चलो मैं इसी समय महोबेको चलती हूँ ।” आल्हा चुप रहा; ऊदलने ऊँचे स्वरसे कहा “कि महोबेका चाहै सर्व नाश क्यों न होजाय—जिस दिन परिमालने हमको वहाँसे निकाल दियाथा वह दुःखके दिन क्या हम भूल सकतेहैं ? क्या महोबेमें फिर जाँयगे ?—कभी नहीं चाहै वह विध्वंस होजाय, अथवा चाहै पहली सी अवस्था रहै, हमारे लिये तो दोनोंही समानहैं, कान्यकुब्ज ही इस समय हमारा वासस्थान है ।”

पुत्रके ऐसे वचन सुनकर देवलदेवीने कहा; “हाय ! विधाता ! तैने मुझे वंध्या क्यों न किया, राजपूत जातिके जानेयोग्य मार्गका त्यागन करनेवाले तथा विपत्तिग्रस्त राजाओंकी सहायता न करनेवाले ऐसे पुत्रको गर्भमें धारण करनेसे क्या होता है ।” वीरांगना देवलदेवीके दोनों नेत्रोंसे अग्निकी चिनगारियें निकलने लगीं समस्त शरीर मारे क्रोधके काँपने लगा, शोक और दुःखके मारे हृदय टुकड़े २ होने लगा पृथ्वीकी ओर देखकर फिर कहना आरंभ किया “हा जगदीश्वर ! तैने इन यशनाश करनेवालोंके लिये मुझे गर्भकी पीडा क्यों दी थी कुलांगनाओंकी सन्तानोंका हृदय युद्धके नाम मात्रसे ही तथा राजपूत जातिका हृदय अनन्त आनंदसे पूर्ण होजाताहै—परन्तु पितृधर्म भ्रष्ट !—तू कभी भी वत्सराजका पुत्र नहीं है,—ऐसा विदित होताहै कि किसी कुत्तेने मुझे आलिंगन किया था जिससे कि तू उसीके औरससे उत्पन्न हुआ है ।”

गर्भधारिणी माताके इस वीरतापूर्ण वचनोंने दोनों वीरोंको चैतन्य करदिया । उन दोनों वीरश्रेष्ठोंने खेदित हो खड़े होकर कहा कि “ जब हम शत्रुओंके ग्रासमें पडकर महोबेकी रक्षाके लिये प्राण त्यागदेंगे; और शरीरमें घाव लगाकर वीरत्वताके प्रकाश करनेवाले कार्यमें अपने नामको अमर करेंगे; जब हमारा मस्तक संग्राम भूमिमें पडा होगा; जिस समय हम रणभूमिमें वडे २ वीरोंके साथ समरके आलिंगनसे लिप्त और साहसी वीरोंके अनुकरणसे महावीर चौहानोंके सामने दोनों ओरके रुधिरको बहादेंगे तब हमारी माता प्रसन्न होगी ।”

कियाथा और जिस वंशके नरपतियोंने शत्रुओंके सब देश अपने अधिकारमें कर लिये थे, यह वही सूर्य वंशधर हैं । (३) होम यज्ञादिके द्वारा यह नरेश्वर पवित्र हुए थे, इनका राज्य परम रमणीय तथा तक्षका दुर्ग भी अजेय है । इनके धनुषकी टंकारसे सब ही महा भयभीत होतेथे यह क्रुद्ध होनेपर महा समराग्नि प्रज्वलित करदेते थे, किन्तु मोती जिस प्रकार गलेकी शोभा बढ़ाताहै; अनुगत लोगोंके प्रति इनका आचरण भी वैसा ही था, लाल तरंगोंसे समरक्षेत्र रँगनेपर भी यह संग्रामसे नहीं हटते थे । प्रचण्ड मार्त्तण्डकी प्रखर किरणोंसे पद्मिनी जिस प्रकार मस्तक नवाती हैं, उसी प्रकार इनके शत्रुदल इनके चरणोंपर नवते थे, और भीरु कायर लोग युद्ध छोडकर भागते थे ।

इन राजा शालेन्द्रसे दोगलाकी उत्पत्ति हुई, आज इतने समयके पीछे भी उनका यश सर्वत्र फैला हुआ है ।

उनसे शम्बुकने जन्म लिया । शम्बुकके औरससे देगालीने जन्म लिया । उन्होने यदुवंशकी दो कन्याओंके साथ विवाह किया था । (४) उनमें एकके गर्भसे प्रफुलित कमलकी समान वीर नरेन्द्र नामक पुत्रने जन्म लिया था । आमके कुञ्ज अर्थात् जिन आमके वृक्षोंकी खिली हुई मञ्जरीमें सहस्रों मधुमक्षिका विराजमान हैं जिन वृक्षोंके नीचे थके हुए यात्री आनकर विश्राम करते हैं उन आमके वृक्षोंकी कुञ्जमें यह मन्दिर स्थापित हुआ, जबतक समुद्रकी तरङ्गें बहेंगी, और जबतक चन्द्र, सूर्य और पर्वतमाला विराजमान रहेगी, तबतक मानों इस मन्दिर और मन्दिर प्रतिष्ठाका यश फैला रहेगा । ९९७ संवत् तावेली नदीके तटपर मालवमेंके शेष सीमान्तमें वीरचन्द्रके पुत्र शालिचन्द्रके द्वारा (५) मन्दिर, प्रतिष्ठित हुआ ।

(३) भारतके वंश लिखनेवाले भारतकी ३६ राजपूत जातियोंमें इस सर्पजातिका भी उल्लेख कर गयेहैं । कुमारपालचरित्र पुस्तकमें जिस सर्पजातिका उल्लेख है, संभवतः यह भी वह सर्प जाति होसकती है ।

(४) कर्नेल टाड कहतेहैं कि, यह जितरण जब यदुवंशके साथ वैवाहिक सम्बन्ध प्रचलित करनेमें समर्थ हुए थे, तब अवश्य ही वह भारतके छत्तीस राजवंशोंमेंसे एक वंश गिनेगये । किन्तु यथा समय वह फिर जातिच्युत हुए । क्योंकि कोई राजपूत भी जितलोगोंको कन्यादान नहीं करता, और न उनकी कन्याका पाणिग्रहण करता है ।

(५) शालिचन्द्र पहले कहेहुए जित् शालेन्द्रसे पाँचपुरुष पीछेके हैं । उक्त शासनपत्रमें लिखे समयके अनुसार ईसवी सन्की उत्पत्तिके ४०९ वर्ष पहिले जाक्षरतीसके किनारेसे जती लोगोंने पञ्जाब अधिकार करके, वहां नगर स्थापन कियाथा, ऐसा जानाजाताहै ।

नरश्रेष्ठ आल्हा और ऊदल महोबेके समीप ही आगये हैं यह सुनकर चन्देल राजा परिमालने अत्यन्त प्रसन्न हो उनको आलिंगन किया और रानी मालिनी देवीने वीरांगना देवलदेवीको आदर सहित लानेके लिये क्षणमात्रका भी विलम्ब न किया । साक्षात् होनेके उपरान्त सभी राजधानीमें चलेआये । पहली पहल बहुतसे मूल्यवान् द्रव्योंको देकर समाधान किया । रानी मालिनीदेवीने आल्हाको बुलाकर उसके शिरपर हाथ धरकर आशीर्वाद × दिया; आल्हाने हाथ जोड़कर प्रतिज्ञा की कि महोबेकी जय पराजयके ही ऊपर हमें जीवन धारण कर रहे हैं । रानीने एक मुट्ठी मोतियोंकी वर्षा कर उसके सेवकोंको बाँटदिये * जो कविवर दूत कान्यकुब्जमें जाकर निकाले हुए दोनों वीरोंको महोबेमें लाया था उसने भी शीघ्र ही कार्य सिद्धीके पुरस्कारमें चार ग्रामोंको पाया ।

हमने काव्यमें इसके उपरान्त भारतसम्राट् पृथ्वीराजके डेरोंकी घटना देखी । सेनासहित दोनों वीरोंके आनेका समाचार सुनकर कविश्रेष्ठ चाँदने पृथ्वीराजसे कहा कि “समरस्थितिका समय बीतगयाहै इस कारण क्या तो आप शीघ्र ही चंदेलेपति परमालके पास दूत भेजिये जिससे कि वह समरभूमिमें आजायँ और नहीं तो महोबेसे चलेजानेकी आज्ञा दीजिये ।” कविवरने उसी समय आर्यक्षेत्रके शेष आर्यसम्राट् परमालके पास एक एक दूतको पत्र लेकर भेजदिया । परमाल आहतहुई सेनाको भी निर्दयीपनसे नियत कर रहा था, इस समरके उपस्थित हुए पत्रमें भी सबसे आगे यही लिखा था । पृथ्वीराज इसको लिखकर भी शान्त न हुए जिस समय तक समरको स्थित रखनेकी बात निश्चय हुई थी, उन्होंने राज-पूत जातिकी रीतिके अनुसार और भी सात दिनतकका समय दियाहै “और बहुत दिन हुए कि जब कन्नौजसे सेना सहायताके लिये आई थी उस समय सिंहनाद भी नहीं किया था । यदि परमाल युद्धकरनेकी इच्छा छोड़ दें तो वह अपनेको दिल्लीके आधीनमें विचारै अथवा वह महोबेको ही छोड़ दें ।

× कर्नेल टाड साहब टीकामें लिखगयेहैं कि एकमात्र पूजनीय स्त्री और पुरोहित आशीर्वाद देतेहैं; आशीर्वाद पात्रके मस्तकपर सुवर्ण वा चाँदीकी मुद्रा स्थापित कर दोनोंको मिलानेसे ही आशीर्वाद हुआ । वह सुवर्ण वा चाँदीकी मुद्रा दीन दुःखियोंको बाँट दी जातीहै ।

* यह रीति अत्यन्त प्राचीन है, और “नाथरावली” के नामसे विख्यात है । माहात्मा टाड साहब लिखगयेहैं कि नित्य उनके शिरके ऊपर पात्र पूर्ण चाँदीकी मुद्रा आशीर्वादके समयमें वर्षाई जातीहैं, और फिर वह सेवकोंको बाँट दी जातीहैं अंतःपुरमें निवास करनेवाली रानी और राजकुमारियें इस प्रकारसे अपने २ सेवक और पुरोहितोंको प्रतिनिधिरूपसे भेजकर कर्नेल टाड-साहबको आशीर्वाद देतीथीं ।

गरिमा फैलाते थे कर्नेल टाडने यहांके कई श्लोक निष्प्रयोजन समझ कर उनका अनुवाद नहीं किया । मूल लिपिके अभावसे हम भी अनुवाद नहीं करसके ।

दारुकके कुहल नामक एक पुत्र उत्पन्न हुए । कुहलके औरससे धुनकका जन्म हुआ । उन्होंने बड़े २ कार्य सिद्ध किये । वह मनुष्यके हृदयका भाव अनुभव कर सकतेथे, उनका चित्त समुद्रकी समान गंभीर था । उन्होंने पहाड़ी ग्रीना जातिको परास्त, विताडित और सर्वथा विध्वस्त कर दिया था, उनको फिर कहीं स्थान न मिला वह अपने छोटे भ्राता दोकके सहित देवता और ब्राह्मणोंकी पूजाकरते थे । उन्होंने अपने धनसे अपनी प्राणधारीकी प्रसन्नताके लिये सूर्यके उद्देशसे यह मंदिर स्थापन किया ।

जबतक सुमेरु सुवर्ण बालुकाके ऊपर खड़ा रहेगा, तबतक यह मंदिर विराजमान रहेगा । जबतक जगद्धारिणी हयनियोंके देहमें प्राण रहेगा (१) जबतक आकाश रहेगा, जबतक लक्ष्मी धनदान करेगी, तबतक उनका यश और मन्दिर अक्षयभावसे विराजमान रहेगा ।

कुहलने यह मन्दिर और इसके पूर्व पार्श्वमें महेश्वरके मन्दिरकी प्रतिष्ठा करी थी । महाबली महाराज यशोवर्माके पुत्र अचलके द्वारा इसकी प्रसिद्धि फैली है ।

बाईसवीं संख्या २२.

चित्तौरनगरके मध्यस्थ मान सरोवरके तटमें मरि-
राजगणके द्वारा संस्थापित स्तंभपर
खोदित लिपि ।

जलपति वरुणदेवके द्वारा आप रक्षित हों ! जिस नीरनिधिके किनारेपर स्थित मधुपूर्ण लाल फलोंसे शोभित वृक्षावलीमें मधुमक्षिकादल विहार करता है, जिस समुद्रसे सैकड़ों शाखातरङ्गिणी उत्पन्न होकर उसकी शोभा बढ़ा रही हैं, इस जगत्में उस जलधिका उपमा स्थल और क्या है ? जो जलनिधि पारिजात [२] की गन्धसे आमोदित है जिस समुद्रनेकरस्वरूप सुरा, रत्न और अमृत प्रदान किया था, वह समुद्र आपकी रक्षा करै.

यह एक बड़ी उदारताका स्मारक चिह्न है । यह सरोवर दर्शकमात्रके नेत्रोंको मोहित करता है । इसके ऊपर अनेक जातिके जलचर पक्षी बड़े आनन्दसे जल

(टीका १) शास्त्रमें दिग्गज आठ दिशाओंके रक्षक हैं ।

(२) रजवाड़ेमें पारिजात नाम एक प्रकारके फूल “हारसिंगार” नामसे विख्यात हैं । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, यह फूल थोड़ी देर रहकर सूख जाते हैं ।

सुरपुर निवासी गण कनककुंडल और मणिमुक्ताओंकी वेणीको सुशोभित कर रहे हैं, सेनाके नायक जिस समय अपनी २ तलवारोंको निकालेंगे, अप्सरागण उसी समय अपने विशाल नेत्रोंमें अंजनकी रेखा लगावेंगी। साहसी वीरोंके किरच ग्रहण करते ही सुरपुरकी सुन्दरियों अपने मस्तकपर सिंदूरका टीका लगेली वीरोंके ढालको ग्रहण करते ही, अमरकी संगिनियें अपने कानोंमें कुंडल धारण करेंगी। वीरोंके भुजाओंपर उज्ज्वल पीतलके वर्मको धारण करते ही अप्सरागण अपने करकमलोंमें खड्ग धारण करेंगी। जिस समय सेना व्याघ्रके नखोंसे अपने हाथोंको सुशोभित करेगी उसी समय सुवर्णकी अँगूठी और अलंकारोंसे सुन्दरियोंके हाथोंकी प्रभा और भी अधिक प्रकाशमान होगी। वीरोंके बड़े-बड़े वल्होंके उठाते ही अप्सरागण युद्धक्षेत्रमें निहतहुए वीरोंके लिये वरमाल्यके बनानेमें विलम्ब न करेंगी; सुन्दरियोंके गलेमें मृगोंकी माला और वीरोंके गलेमें तुलसीकी माला विराजमान होगी। वीरोंके धनुषको खेंचते ही सुन्दरियें अपने नेत्रोंके कटाक्षरूपी बाणोंके वर्षानेका उद्योग करेंगी। वीरोंके घोड़ोंपर सवार होतेही अप्सरायें अपने २ रथोंके सजानेमें लगेंगी। ”

चन्दकवि इस बातको लिखगये हैं कि उन्होंने जिस बातका अपने नेत्रोंसे देखाथा; काव्यमें भी उसीका वर्णन कियाहै। राजपूतगण स्मरणातीत समयसे जातीय प्रधान कविको त्रिकालदर्शी कहते आये हैं। चन्दकवि भी वष्यद्वक्तारूपसे पूजे जाते थे। दुःखका विषय है कि उनके परलोक चलेजानेपर रजवाड़ोंमें फिर इस प्रकारके कविकी अमृतमयी लेखनीसे निकलीहुई कविता आजतक दृष्टि नहीं आई। चन्द ही राजपूतजातिके शेष भविष्यद्वक्ता कवि थे।

इस समय महोबेका वृत्तान्त वर्णन करनेके योग्य है। सबसे पहले परमाल प्रधान २ सेनानायक और मंत्रियोंके साथ मिलकर कर्तव्याकर्तव्यके विचारनेमें नियुक्त हुए। परदेके भीतर रानी मलिनदे, विराज ती थीं। रानी मलिनदेने सबसे पहले क्रोधित हो दीर्घश्वास लेकर कहा, “ आल्हाकी जनानि ! पृथ्वीराजके विरुद्धमें हमारी विजय किस प्रकारसे होगी ? यदि हारगये तो सदाके लिये महोबा छोड़देना होगा; यदि हम उनके वशमें होना स्वीकारकर कर देना विचारलें, तो अपमानका शेष होजायगा ” देवलदेवीने सन्मुख बैठे हुए वीरोंकी सम्मतिको सुनकर रानीको अनुरोध किया कि, आल्हाने वीरताके गर्वमें भरकर कहना प्रारंभकिया, “ हे मातः ! आप अपने पुत्रोंके निवेदनको सुनिये—जो मनुष्य भलीभाँतिसे राजभक्तिकी रक्षा करके अपने सम्पूर्ण सुख और स्वार्थोंको छोड़कर

यहांतक कि, जिस स्थानमें पवित्र जलवाली गंगाने अपनी तरंगें विस्तार करी हैं (१) उन्होंने वह दूरवर्ती स्थान भी विजय करलियाथा । उनकी राजधानी अवन्ती थी (२) वह अपने शत्रुओंकी जिन स्त्री कन्या आदिकोंको हरण करके लाते, जिन स्त्रियोंके मुखमण्डल शरदऋतुके चन्द्रमाकी समान निर्मल थे जिन कामनियोंके अधरोंमें उनके पतियोंके प्रेमानुराग सूचक काटनेके चिह्न दिखाई देतेथे, राजा भीम उन सुन्दरियोंका हृदय भी अधिकार करतेथे । वह अपने बाहुबलसे अपने शत्रुओंका भय दूर करते थे । वह यहांतक उदार थे कि शत्रु-ओंको सर्वथा विध्वस्त न करके उनको भ्रान्तिकूपमें गिरेहुए कहकर क्षमा कर देते थे । उनकी मूर्ति अग्निकी समान प्रकाशमान थी । वह समुद्रगामी नाविक लोगोंको भी शिक्षा देनेमें समर्थ थे । (३)

उन राजा भीमके औरससे महाराज भोजने (४) जन्म लिया । जिन महाराज भोजने अपने बाहुबलसे रणक्षेत्रमें तलवारद्वारा विशाल हाथीका मस्तक

—विख्यात हैं । वह राजपूत रक्तधारी होनेसे सर्वत्र गर्व करते हैं और उनको किसी विश्वासी राज कीय पदपर नियुक्त करनेपर, वहलोग लेख चलानेकी समान स्वच्छन्दतासे तलवार चलानेमें भी समर्थ हैं ।

(१) गंगासागर । सुनते हैं कि महाराज भीमने अपने बाहुबलसे इस गंगासागरके निकटके देशतकको विजय कियाथा । जैन ग्रन्थोंसे प्रगटहै कि यही महाराज भीमकी राज्यसीमा थी । कर्नेल टाड अनुमान करगये हैं कि, गंगासागरमें कदाचित् महाराज भीमका कोई स्मरणाचिह्न अब भी होसकता है ।

(२) अवन्ती अर्थात् उज्जयिनी नगरी ।

(३) इस स्मारक लिपिके द्वारा भलीभाँति ज्ञात होताहै कि, पूर्वकालमें समुद्रद्वारा गमनागमन देशी राजोंमें प्रचलित था । महाराज भीम नौका जहान विद्यामें भलीभाँति शिक्षित थे, इस स्मारक लिपिसे यह भी प्रगट होताहै ।

(४) राजपूत जातिके इतिहास और काव्यसाहित्यमें राजाभोजकी समान किसीका भी नाम प्रशंसनीय और सुप्रसिद्ध रूपसे नहीं देखाजाता । प्रमार जातिके राजपूतोंमें भोजनामधारी तीन राजा थे । कर्नेल टाड बहुतसे ताम्रानुशासन और दूसरे प्राचीन खोदित लिपिकी सहायतासे उदयादित्यके पिता शेष राजा भोजका समय सन् १०३५ ईसवी निर्धारण करगये हैं । अन्य भोजनामधारी दो राजाओंके समयके सम्बन्धमें कर्नेल टाड नादोलके देवालयमें प्राप्त एक बहुत प्राचीन जैन हस्तलिखित ग्रन्थके पत्राङ्कसे ६३१ और ७२१ संवत् अर्थात् ५७५ ख्रिष्टाब्द और ६६५ ख्रिष्टाब्द निर्धारण करगये हैं । सम्राट अकबरके मंत्री अबुलफजल प्रथम राजा भोजका समय ५४५ संवत् लिखगये हैं, किन्तु कर्नेल टाड बहुत प्राचीन और विश्वस्त हस्तलिखित ग्रन्थसे

देखकर मौन होकर बैठ रहतेहैं, वह कभी राजपूत नहीं हैं—जिस राजाका राज्य शत्रुओंसे घिरजाताहै यदि वीर पुरुष यह बात देखकर डरजाय तो उनके शरीर बड़े भारी नरकमें पड़तेहैं । और उनकी आत्मा छः हजार वर्षतक भूतयोनिमें पड़कर संसारमें घूमती रहतीहै; परन्तु जो वीर अपने कर्त्तव्यको पालन करते रहतेहैं, अंतमें उनको सूर्यलोकमें स्थान मिलताहै, और उनकी कीर्ति अक्षय रहतीहै । ”

भीरुता और निष्ठुरताके अनुगामी सहचर । दोनों वीर भ्राताओंके वीरोचित वचनोंसे परमालका हृदय किसी भाँति भी साहस करनेमें समर्थ न हुआ । परमाल अपनी रानीके सन्मुख जाकर शोच करने लगा । रानी मालिनी देवीने अपने पतिको कायरकी भाँति भयमाने देख उनको प्रोत्साहित कर सेना लेकर रणक्षेत्रमें जानेको राजी किया । और सेनामें सूचना दे दी कि राजा युद्धक्षेत्रमें जायँगे । काव्योंमें ऐसा लिखाहै कि उसके पीछे वीर पुरुषोंने अपनी प्राणप्यारी स्त्रियोंके साथ अन्तिम प्रेमालिङ्गन किया, और प्रातःकालके मूर्योदयके साथ ही साथ सबोंने रणभूमिमें जानेसे पहले संध्यावन्दन पाठपूजा आदि नित्यकर्म करलिये । आलहाने नवग्रहोंकी पूजा करके अपने पूर्वजोंकी स्थापित हनुमानजीकी मूर्तिका पूजन किया और उनको फूलोंकी माला पहराकर अपने पुत्र इन्दल और छोटे भाई ऊदलको बुलाकर आद्याशक्तिका स्मरण कर प्रतिज्ञा करी “ जो जस्सराजका नाम अक्षय रखनेकी अभिलाषा है और जो देवलदेवीका पवित्र रक्त अपने नसोंमें धारण करके गर्वित होना चाहतेहो तो आज रणभूमिमें जहाँ शत्रुओंको देखो वहीं उनका संहार करडालो । ” बड़े भाईकी इस प्रतिज्ञाको सुन ऊदलने कहा आपने वीरपुरुषोंकी समान प्रतिज्ञा करी है । मेरी चमचमाती हुई तलवारकी धार भी क्या पृथ्वीराजके नेत्रोंको न झुलसादेगी वह क्या मेरे साथ संग्राममें ठहरसकेंगे ? ” रणके मदसे उन्मत्त राजपूत प्रतिज्ञाके पालनकरनेमें उद्यत हुए रणके भेषको धारे दोनों वीर पुत्रोंको आशीर्वाद देकर वीरभार्या-वीर माता देवलदेवीने कहा, “ युद्धमें प्राणोंको निछावर करके प्रतिज्ञा पालन करना; यदि तुम्हारा शिर अपने स्वामीके कारण समरक्षेत्रमें कटजाय तो निश्चय जानलो कि तुम उसके पुरस्कारमें देवताओंके सिंहासनपर विराजमान होगे । ” वीरमाताके कहचुकनेपर दोनों वीरोंकी साध्वी स्त्रियें उठकर बोलीं, “ जो रमणी साध्वी सती है वह क्या पतिके मरनेके उपरान्त जीवित रहसक्तीहै ? गौरी देवीका कथन है—कि जो स्त्री स्वामीको समरक्षेत्रमें सोते देख जीवित रहनेकी इच्छा करतीहै

भेरुकी समान थे जो सामन्त उनके अनुग्रहकी दृष्टिमें गिरे थे, वह सौभाग्य लक्ष्मीका सम्पूर्ण अनुग्रह भोगनेमें समर्थ हुए । जब उनके चरणकमलोंपर दूसरे राजाओंका मस्तक अर्पित हुआ, तब उनकी चरणरेणुने उस मस्तककी अनुपम शोभा बढ़ाई ।

जिस सरोवरके चारों ओर अनागिन्त वृक्ष विराजमान हैं, अनेक जातिके पक्षी जिन वृक्षोंकी शाखामें रहकर निरन्तर मधुर शब्द करते हैं, परम सौभाग्यवान् श्रीमान् राजा मानने बहुत धन व्यय और परिश्रमसे यह सरोवर खुदवाया था । प्रतिष्ठाके पवित्र नामके अनुसार ही इस सरोवरका नाम “ मानसरोवर ” रूपसे जगत्में विख्यात है । नागभट्टके पुत्र अलंकार शास्त्र विशारद पुण्यने यह श्लोक रचे हैं । सात सौ सत्तर वर्ष बीते कि, मालवके अधीश्वर द्वारा (१) यह सरोवर निर्मित हुआ । क्षेत्रीखड्गके पौत्र शिवादित्यने यह श्लोकावली खोदी ।

तेईसवीं संख्या २३.

सौराष्ट्रके निकटवर्ती सोमनाथ पत्तनमें सन् १८२२ ईसवीमें मिलीहुई प्राचीन वल्लभी राजाओंके शासन समयकी करनेवाली देवनागरी अक्षरोंमें खोदित लिपिका यथार्थ अनुवाद ।

जगत्के प्रकाशस्वरूप सर्वान्तर्यामी प्रभुकी चरण वन्दना करता हूँ । जिनकी मूर्ति अवर्णनीय है, जिनके चरणोंमें सब प्राणी सदा नमस्कार करते हैं, उनके चरणकमलोंमें प्रणाम करता हूँ (२)

(१) राजा मान मालवेश्वर रूपसे वर्णित हुए हैं, इसके द्वारा जानाजाता है कि, चित्तौर राजधानी धार और अवन्ती राजधानीकी अपेक्षा श्रेष्ठ थी । वर्तमान चित्तौरमें “ मानमारि ” नामसे एक बहुत प्राचीन महल दिखाई देता है ।

(२) मंगलाचरण बहुत बटा होनेके कारण कर्नेल टाडने उसका अनुवाद प्रकाश नहीं किया । सोमनाथ नगरमें जिस मूर्तिकी पूजा होती थी वह “ बालनाथ ” नामसे भी विख्यात थी । जो राजवंश इस देशका शासन करते वह भी बालराज नामसे पुकारे जाते थे, और राजधानी भी बालराज नामसे पुकारे जाते थे, और राजधानी भी उसी कारणसे “ बालिकपुरि ” उपाधिसे भूषित हुई थी । साधारणतया यह “ बालाभि ” अथवा वल्लभी नामसे कही जाती थी । कर्नेल टाडने कई दिनतक दीर्घ मार्गमें चलनेके पीछे टूटीफूटी राजधानीके दर्शन किये, और वहां यह अनुलिपि प्राप्त करी । राणाके सूर्योपासक पूर्व पुरुषोंने इस देशका नाम “ सौराष्ट्र ” रक्खा था । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, अन्तमें पार्थिवगणके द्वारा वह लोग विताडित होनेपर, चौरा और चालुक्य वा सोलंकी राजवंशने यह स्थान अधिकार करके, “ बालिकाराय ” नामसे विख्यात किया ।

वीरता दिखाते रही किन्तु दुर्भाग्यवश सायंकालके समय जब चारों ओरसे शत्रुओंकी सेनाने घेरलिया तब राजपूतगण घायल दश हजार सेनाको छोड़ भाग खड़े हुए । * महाराज जशवंतसिंह अपने राज्यमें लौट आये, किन्तु फारिस्ता अपने ग्रंथमें लिखताहै कि वह उदयपुरके महाराणाकी पुत्रीसे ब्याहा था, इस कारण उस प्रधान रानीने अपने पराजित स्वामीको नहीं अपनाया और किलेका दर्वाजा बंद करालिया ।

इतिहासवेत्ता वर्णियर जो उस समय वहीं उपस्थित था वह अपने ग्रंथमें लिखगयाहै कि, “ जशवंतसिंहके परास्त होने और भागनेके पीछे उनकी रानी राणाकी पुत्रीने जो उनसे तिरस्कारसूचक वचन कहे मैं उनको विना लिखे नहीं रहसकता । जब रानीने सुना कि महाराज अपने स्वाभाविक वीरतासे संग्राममें लड़ेहैं, जब उन्होंने अपने अधिकारी सेनाके दलमें चार वा पांच सौ सेना जीवित रही देखी तब शत्रुदलमें रहना असम्भव जान समरक्षेत्रको छोड़है, इस बातको सुनकर भी राजाको इस घोर विपत्तिमें ढाढस देनेके लिये प्रतिनिधि भेजनेके बदले रानीने दुःखित होकर महलका द्वार बंद कराकर उस कलंकित वीरको न आनेको आज्ञा दी । रानीने महाराजके आचरणपर आक्षेप किया, कि वह मेरे स्वामी नहीं है; महाराणाके जमाईकी आत्मा कभी ऐसी नीच नहीं होसक्ती; उनको स्मरणकरना चाहिये था कि श्रेष्ठवंशमें सम्बन्ध होनेसे श्रेष्ठ ही कार्य करना उचित है; ऐसा विचारकर महाराज समरभूमिमें जय प्राप्त करते यदि जय न पास के थे तो शत्रुओंके सन्मुख ही अपने जीवनको विसर्जन करदेते, क्रोधित रानीने कुछ देके पीछे दूसरे भावमें बदलकर चिता जलानेकी आज्ञा दी और जलती हुई चितामें स्वामीके वर्तमान रहते ही अपने शरीरके भस्म करनेकी मनमें ठान ली । रानीकी यह अखंडनीय आज्ञाको अन्तःपुरवासिनी रमणीमंडलीने सुन विनयपूर्वक प्रार्थना करी कि तुम्हारे ऐसा करनेसे राजाको भी तुम्हारे साथ जीते हुए जलना पड़ेगा; नहीं तो यह कार्य पूर्ण नहीं होसकता । थोड़ी देर विचारकर क्रोधमयी रानी महाराजपर कटाक्ष करके अनेक प्रकारसे तिरस्कार करनेलगी । राणाकी पुत्रीने इस भाँतिसे आठ नौ दिन तक स्वामी-

* वर्णियर लिखगया है राजपूतजाति रणभूमिमें जानेके पहले जीवन विसर्जन करनेमें संकल्पकर जब परस्परमें भेंटते और विदा मांगतेहैं वह दृश्य बड़ा ही मनोहर होताहै ।

और नाखोदा नूरउद्दीनके प्रति यह आदेश दिया गया कि, वह सब श्रेणियोंके ऊपर इस आज्ञाको प्रबल करनेका यत्न करें । जो लोग इस आज्ञाका पालन करेंगे उनको स्वर्ग मिलेगा और जो लोग इस आज्ञाका अनादर करेंगे, उनको निश्चय ही नरकवास मिलेगा ।

चौबीसवीं संख्या २४.

आइतपुरके ध्वंसावशेषमें मिली हुई

खोदित लिपि ।

संवत् १०३४ वैशाख मासके सोलहवें दिन नानकस्वामीने यह आवासमंदिर प्रतिष्ठित किया ।

आनन्दपुरसे विप्रकुलसंभूत महीदेव श्रीगोहादित्य आयेथे । उनसे ही गोल-जाति इस जगत्में सर्वत्र विख्यात और प्रबल शक्तिशालिनी हुई ।

उनके पुत्र [२] भोज [३] महीन्द्र (४) नागादित्य । (५) । शिला-दित्य । (६) । अपराजित । [७] महीन्द्र, पृथिवीमण्डलपर इनकी समान महाबली कोई भी न था । (८) कालभोज, सूर्यकी समान दीप्तिमान थे । (९) खुमान, यह बड़े वीर थे; उनके पुत्र (१०) भ्रातृपद, त्रिभुवनके तिलकथे, उनके औरससे उत्पन्न [११] सिंहजी, वीरव्रतातलम्बी राष्ट्र (राठौर) जातिकी महालक्ष्मी उनकी रानी थी, उनके गर्भसे जिन पुत्रने जन्मलिया उनका नाम [१२] श्रीउल्लुत । वह सागरपर्यन्त पृथ्वीका अधिकार करके उसके अधी-श्वर हुए । उनके औरससे हरियादेवीने जन्म लिया । उन हरियादेवीकी प्रशंसा हर्षपुरतक फैली थी । उनके गर्भसे महाबलवान एक वीरने जन्म लिया । उन वीरकी भुजामें जय लक्ष्मीने आश्रय लियाथा । वह वीर रणक्षेत्रमें अपने शत्रुओंको विलकुल निर्मूल करदेते थे । वह परम सौभाग्यशाली और महापंडित थे । उनके पुत्र (१३) नरवाहन, चौहानजाति श्रीजाइजाकी कन्याके गर्भसे उनके एक पुत्रने जन्म लिया था । उनका नाम (१४) शालीवाहन, मैंने ऊपर जिन राजा लोगोंके नाम लिखेहैं, वह सबही गुणवान् थे । शालीवाहनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उनका नाम, (१५) शक्तिकुमार । इस जगत्में इनकी तुलना कहां है ? इन्होंने त्रिविधशक्ति * को जीतकर

* १-प्रभुत्वशक्ति ।

२-उच्चताशक्ति ।

३-मंत्रशक्ति ।

हुई । हृदयवल्लभको रणके भेषसे सजाकर जातीय स्वाधीनता और अपने अतुल गौरवकी रक्षाके लिये प्राणत्यागनेका उपदेश देकर बोली, “हे नाथ ! अन्तमें मेरा और आपका सूर्यलोकमें अवश्य ही मिलाप होगा ।”

प्रसिद्ध चंदकविके ग्रंथमें यह घटना भारतका अधःपतन और संयुक्ताके वीरनारियोंकी समान आचरण प्रशंसाके साथ पाये जातेहैं । पृथ्वीराजने भारतमें यवनोंके आनेसे पहले नीचे लिखे अनुसार स्वप्न देखकर रानीसे कहा, “आजकी रातमें जिस समय मैं निद्रादेवीकी गोदमें अचेत था, उस समय रम्भाकी समान एक अनुपम सुन्दरी रमणीने आकर दृढताके साथ मेरी दोनों भुजाओंको पकडकर हिलादिया फिर उसने तुम पर आक्रमण किया और जिस समय तुमने अपने छुटानेकी चेष्टा की थी उसी समयमें एक विराट् मूर्ति पिशाचकी समान विकटाकार क्रोधसे उन्मत्त हाथीने आकर मुझे दवालिया । * फिर निद्रा भंग होगई तब रम्भा वा उस विराट्मूर्तिको नहीं देखा किन्तु मेरा हृदय धडधडाने लगा काँपतेहुए अधरोंसे शिव ! शिव ! इस नामका उच्चारण किया । भाग्यमें क्या होगा इसको विधाता जानै ।”

संयुक्ताने इस स्वप्नको सुनकर उत्तर दिया “प्राणनाथके गौरवकी वृद्धि और जय होगी । हे चौहानकुलसूर्य ! आपकी समान इस जगत्में किसने विशाल आनन्द और असीम गौरवको भांगाहैं । केवल मनुष्योंका ही मरण निश्चित है ऐसा नहीं बरन् देवताओंको भी मरण प्राप्त होताहै । सभी प्राचीन शरीरके बदलनेकी अभिलाषा करतेहैं, चिरकाल तक जीवित रहनेसे मृत्युका होना ही श्रेष्ठ है । केवल अपने स्वार्थपर ही दृष्टि नहीं रखना चाहिये, अक्षय कीर्तिके संचय करनेमें ध्यान देना योग्यहै । आपकी तीक्ष्ण तलवारसे शत्रुओंका नाश होगा और मैं अधम भी परलोकमें आपकी अर्द्धाङ्गिनी हूँगी ।”

पृथ्वीराजने कविकुल चूडामणि चंदको बुलाया और स्वप्नका समस्त वृत्तान्त सुनाया कविने स्वप्नके अर्थकी व्याख्या कर दी कि राजगुरु अमुक २ भंत्रोंको अमुक २ वर्णोंसे पुटितकर सम्राट्की पगडीपर लिखें फिर सूर्य और चन्द्रमाके उद्देशसे हजार दूधसे भरे कलशोंके द्वारा अखंडधारा बाँधकर पगडीपर लिखे मंत्रका अभिषेक करें ।

पृथ्वीके धारण करनेवाले अत्यन्त देवताके निमित्त दश भैसोंका बलिदान किया, और ब्राह्मण तथा अनार्योंको बहुत सा धन दान किया । कविका वचन

* स्वप्नमें ऐसी मूर्तिका देखना अशुभ है ।

शालपुरी नगरमें पहाड़ी अधिराजको प्राप्त कियाथा ।

छत्रकोटेश्वरके देवाल्योंके मध्यस्थलमें सबसे ऊंची चोटीपर उन्होंने यह खोदित स्मारकलिपि स्थापित करी । कारण ? कि जिससे यह मूर्खोंके हस्तगत न होसके, इस कारण ही सबसे ऊंचे शिखरपर स्थापित हुई ।

निशानाथ जिस प्रकार पृथ्वीकी सुन्दरी कामिनियोंके निर्मल मुखमण्डल देखकर अपने शरीरके कलंक चिह्नोंके स्मरणसे लज्जित होते हैं, उसी प्रकार इस शिखरकी चोटीपर इस लिपिके प्रतिष्ठित होनेसे छत्रकोट लज्जित होताहै ।

संवत् १२०७ (तारीख और महीना लुप्त होगयाहै) ।

[समाप्त]

दोहा ।

सीता लक्ष्मण भरतयुत, वंदो श्री रघुराज ॥
जिनकी कृपाकटाक्षसे, सिद्धहुए सब काज ॥
रिपुसूदन पदकमलगाहि, वंदों श्रीहनुमान ॥
भानुवंशको चरित यह, वरनो सुखद महान ॥ २ ॥
राजस्थान सुग्रंथको, प्रथमखण्ड अनुवाद ॥
हिन्दीभाषामें कियो, द्विज बलदेवप्रसाद ॥ ३ ॥
मेवाडेश्वरको चलै, युग युग वंश अपार ॥
रहै राज सुस्थित सदा, जबतक जगसंसार ॥ ४ ॥
सेठ शिरोमणि सकलगुण-मंडित पंडित पाल ॥
वेंकटेश्वरयन्त्रपति, खेमराज गुणमाल ॥ ५ ॥
कियो प्रकाशित ग्रंथ यह, राजनीतिको सार ॥
पढ़ैं सुनैं मन लाय जे, पावहिं मोद अपार ॥ ६ ॥
चन्द्र ऋतुग्रह भूमियुत, संवत् शुभ मधुमास ॥
पूर्ण कियो शुभग्रंथ यह, बुधजनको सुखरास ॥ ७ ॥

शुभमस्तु ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

“ श्रीवेङ्कटेश्वर ” स्टीम प्रेस-बंबई.

सजा दिया । संयुक्ताके बड़े २ नेत्र मानो पृथ्वीराजको ही देख रहे हैं । रणका वाजा बजने लगा मानो मृत्युके समाचारने आकर उस रनवासमें स्थित राज-रानीके हृदयपर भयंकर आघात किया । वीरश्रेष्ठने अपनी प्राणप्यारीसे जन्मभरके लिये बिदा ली, संयुक्ताने प्रतिज्ञा की कि जबतक समर समाप्त नहीं होगा तबतक मैं केवल जल पान करके ही अपने जीवनको धारण करूंगी । संयुक्ताके शेष वचन “इस योगिनीपुरमें * अव प्राणेश्वरके दर्शन नहीं मिलेंगे; सूर्यलोकमें फिर साक्षात् होगा ” उसका यह अनुमान सफल हुआ । उस महासमरमें, भारतके भाग्यका पतन, हिन्दूजातिकी स्वाधीनताका लोप, पृथ्वीराज पराजित बन्दी और निहत हुए । वीरवाला संयुक्ताने चिताकी प्रज्वलित अग्निमें अनुपम रूप लावण्यमय शरीरको समर्पण कर अपनी प्रतिज्ञाके पूर्ण करनेमें एक सुहूर्त्तका भी विलम्ब न किया ।

अंग्रेजी पढ़े हुए युवक अंग्रेजी साहित्यमें लुकेशियाके चरित्रोंको पढ़कर उसकी ऊँची प्रशंसासे उन्मत्त होजाते हैं, उनको सावधान करनेके लिये ही उस लुकेशियाकी अपेक्षा साध्वी सती और बुद्धिमती राजपूत वीरवालाओंके चरित्रोंको यहां लिखना आवश्यक विचारते हैं । गानोरकी राजरानी हमारी वह राजपूत लुकेशिया हो कठिन यवनोंकी सेनाके दलने यमराजकी समान जब गानोरपर आक्रमण किया । राजरानीने राजपूत वीरांगनाओंकी समान असीम साहससे, क्रमानुसार शत्रुओंके कराल गालसे पाँच दुर्गोंकी रक्षा कर—पाँच स्थानोंमें महावीरता दिखाकर अंतमें नर्मदानदीके किनारे उनके राज्यके शेष दुर्गका आश्रय किया. रानी अपनी सेनादल और अपने सेवकोंके साथ तरणीमें उतरने भी न पाईथीं कि शत्रुओंकी यवनसेना वहां आ पहुँची । रानीके साथमें उस समय बहुत थोड़ी सेना थी; वह लोग शत्रुओंके आतेही हताश होगये, इस कारण किला शीघ्र ही यवनोंकी सेनापतिके अधिकारमें होगया । भूपालमें जो नवावका वंश आजतक विराजमान है इस विजय पाईहुई: यवनोंकी सेनामें उसी वंशके आदिपुरुष हैं । वह गानोरकी उक्त वीरवाला राजरानीके अनुपम रूप लावण्यको देखकर मोहित हो गानौर राज्यके अधिकारके साथ ही साथ उक्त स्त्रीरत्नके हृदयमें अधिकारकी इच्छासे सेना लेकर आगे बड़े दुर्गको अधिकारमें करनेके उपरान्त यवनोंकी सेनाने एक दूतके हाथ रूपवती वीरवालाके पास अपना संदेश भेज दिया । गानोरकी रानी किलेके ऊपरके कमरेमें बैठी हुई थीं,

* दिल्लीका दूसरा नाम योगिनीपुर है, चंदकविके ग्रंथोंमें भी इसी प्रकारका लेख है ।

अग्निपुराणमें दियेहुए भूगोलमें इसशब्दका प्रयोग वास्तविक भूगोल सम्बन्धी सीमाके समान कियागयाहै कितनी ही नदियां उस पर्वतसे निकली हैं और सुमेरुके संग सम्बन्ध दिखानेवाला भी स्थान उक्तपुराणके १०८ अध्यायमें दिया हुआ है, वे अबतक अपने पुराने नामोंसे ही पुकारी जाती हैं, स्पष्ट बातोंका वर्णन जो अलंकारके साथ कियागयाहै उसका लक्षणावाला अर्थही ग्रहण करके हमको वह विषय गूढ़ नहीं करना चाहिये, हिन्दुओंके सात द्वीपोंका विभाग कर उनके मध्यमें दूध, दही, घृत, रस, मद्य आदिके सात समुद्र लिखेगये हैं और पीछे अज्ञानी पुरुषोंने उनमें बहुतसा क्षेपक मिला दिया है तो भी उनमें बहुतसी बातोंको निरर्थक मानकर हम छोड़ नहीं सक्ते यूनानी लोग इस सुमेरुको वेक्सका स्थान बताते हैं और वहांसे यह कथा चलीहै कि यह “जुपिटर देवताकी जाँघसे प्रगट हुआहै, इस कारण भारतके इस देवताके पर्वतको भ्रमसे मेरोस [जंघा] समझ लिया है, इस स्थानके समीप सिकन्दरके साथियोंको सेटरमेलिया नामक त्यौहार पडाथा, जिसमें उन्होंने वहांके उत्पन्न हुए अंगूरोंका मद्य विशेषरूपसे पान कियाथा, और अपने भायोंपर आइवी नामक वील बांधी, जो पूर्व पश्चिमके वायेशके निमित्त अधिक पवित्र है जिसके उपासक समानभावसे मद्य पीते हैं। इन कथाओंसे सबकी उत्पत्तिका एक ही केन्द्र विदित होताहै।

हिन्दूलोग सुमेरुका ऐसे स्थानपर होना बताते हैं जिसकी बाहरकी सीमापर वामियाँ काबुल और गजनी होंगे इन नगरोंमें और इनके समीपकी गुफाओंमें बुद्ध-धर्मके चिह्न और उनकी टूटी मूर्तियाँ अब भी पाईजातीहैं पैरोपै मिस्रेन इस्कन्दरिया

१ महादेवको लता अधिक प्रिय है इनके पुजारी भी मादक पदार्थोंमें रुचि करतेहैं अमरवेल एक उत्तम लताहै, यह महादेवकी पवित्र वाटिकामें छाईहोती है।

२ वामियाँदेशमें जो हाक नामक एक बहुत पुराना किला अभीतक अच्छी दशामें वर्तमान है, पर वामियाँका किला सर्वथा टूटफूटगया है पर्वतोंकी चट्टानोंमें १२००० गुफा कटी हुईहैं, जिनकी खुदाई बहुत सुंदर हुईहै, इनको समाज कहतेहैं जहां शीतकालके समय देशीलोग जाकर रहतेथे यहांपर तीनमूर्ति बड़ी अद्भुतहैं एक पुरुषकी मूर्ति ८० एल (पौनेचार फुटका एल होताहै) ऊंचीहै, दूसरी स्त्रीकी ५० एल और तीसरी बालककी पचास एल ऊंची है, इन समाजोंमें एक कब्रहै, जिसके सन्दूकमें एक शंख रक्खाहै, इसके विषयमें वृद्धसे वृद्ध भी कुछ नहीं जानते, इसको लोग बड़ी श्रद्धासे देखतेहैं, पुरानेलोग कोई ऐसा मसाला जानते थे जो मृतकपर लगादेनेसे वह सड़ता नहीं था आईन अकबरी जिल्द २ पृ० १६९।

नरककी पीडा दूर न हुई; अंतमें खाँ साहबने मतवाले हाथीके समान खड़े होकर दोनों हाथोंसे उन मूल्यवान आभूषणोंको फेंकना प्रारंभ किया; राजपूत सतीके साथ विवाह करनेकी इच्छा करनेवाले यवनोंके सेनापतिको पुकारकर गानोरकी रानीने कहा; खाँ साहब ! आपका अन्तिम समय आ पहुँचा है ! विधाताको यही करना था कि आपका शुभ विवाह और हमारा प्राणत्याग यह दोनों कार्य एक ही समयमें होंगे । जो भेष आपने धारण किया है यह कालकूट विषमय है, आपके सन्मुख राजपूत स्त्री अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये और क्या उपाय करें ?” राजपूत वीर वालाके यह वचन महाभयंकर थे; इनसे सभीको महाविस्मय हुआ। कहाँ तो वह विवाहकी तैयारियाँ थीं और कहाँ यह समाधिका स्थान है। कहाँ तो मिलनेका उद्योग था, और कहाँ यह सदाके लिये वियोग होगया । विवाहके उत्सवके स्थानमें जीवान्तका विषाद दिखादिया । जरादेरमें ही क्यासे क्या होगया;—वह राजपूत वीरवाला राजपूत सती श्रेष्ठ गानोरकी रानी धीरे २ उस किलेकी छतपर जा चढ़ी और एक बार उस यम यंत्रणाके भोगी खाँ साहबकी ओर देखकर उस विश्वमोहिनीने हँसते २ ऊँची छतपरसे अनुपम रूपराशियुक्त अपने शरीरको किलेके नीचे बहनेवाली परिखा नदीकी गोदीमें डालदिया ! अभागि खाँ साहबका प्राणवायु भी उस विषम यंत्रणासे शीघ्र ही पापयुक्त शरीरको छोड़कर पंचभूतमें लीन होगया, भूपाल जानेके मार्गमें वह चाँदखाँकी समाधिका मंदिर आजतक बनाहुआ है । इस देशके लोगोंका यह विचार है कि इस समाधिमंदिरको देखनेके लिये जो मनुष्य जाते हैं तीन ही दिनमें कोई रोग भी क्यों न हो उसी समय दूर होजाताहै ।

राजपूतोंकी स्त्रियें अपना सन्मान और अपने गौरवकी रक्षाके लिये कितना यत्न करती थीं उनका एक चूडान्त निदर्शन महामाननीय टाड साहबने यहां पर दिखाया है । अम्बेरके विख्यात महाराज जयसिंहने कोटेकी राजकुमारीके साथ विवाह कियाथा । उस कोटेकी राजवालाका स्वभाव, उसकी आचरण और पहनावा साधारण रानियोंकी समान अत्यन्त सरल और आडम्बरहीन था । परन्तु सभ्य समृद्धिशाली अम्बेरराजके रनवासमें रहनेवालियोंके बीचमें राजरानियोंकी समान अत्यन्त मूल्यवान वस्त्र और आभूषणोंके धारण करनेकी रीति प्रचलित थी, कोटेकी राजकुमारी इनको पहलेसे ही अच्छा नहीं मानती थी । एक समय अम्बेरके महाराज जयसिंह कोटेकी राजकुमारीके साथ बैठे हुए थे, उन्होंने बातों-ही बातोंमें कहा कि कोटेकी राजरानियोंकी अपेक्षा हमारे राजकी नीच जातिकी स्त्रियें भी अच्छे सुन्दर रमणीय वस्त्र और आभूषण पहरतीहैं । अम्बेरके बहा-

मध्यमें है, सुमेरुके विषयमें इतनी आलोचना करनेका प्रयोजन केवल इस बातको दिखाना है कि हिन्दूजाति अपने जन्मका आदिस्थान सिन्धुके इस ओरवाले भारतको नहीं किन्तु पश्चिम ओर काकेशस पर्वतोंके मध्यमें बताती है, जहाँसे चलकर वैवस्वतमनु सिन्धु और गंगाजीके तटपर आये और कोशलदेशमें अयोध्याकी नीम डाली ।

—प्रकार कि शकजातिके सेथियन लोगोंके यहां होते हैं और वे इस समयतकभी काबुल और वामियाँके बीच जईके रंगके उत्पन्न होते हैं, दूसरी बात यह है कि अरशट् पर्वत अरमेनियामें नहीं होसक्ता, कारण कि गार्डियन पर्वत जिसपर नूहकी नाव ठहरी थी ७५ रेखांशमें और शिनारकी वादी ७९० से आरम्भ कर ८० रेखांशमें है इसप्रकार स्थानान्तरमें जानेका रास्ता उलटा होजाया, जैसे कि उन्होंने पूर्वसे गमन किया तो उनको शिकारकी भूमिका एक जंगल मिला और वे वहां रहे जिनेसस्की पुस्तक अ० २ आयत २ और उनका यह भी कहना है कि मूसाने जिसको अरान्ट कहा है वह किसी एक पहाड़का नाम नहीं किन्तु काकेशसकी विशाल श्रेणीका एक साधारण नाम है, इसकारण हमको इस अरान्टको उडादेना वा उसे अलगकर अरमीनियासे दूर लेजाना अथवा उसको गरम देशमें किसी दूसरे स्थानपर और शिनारके पूर्वमें खोजना चाहिये, इससे वह उसको १४० रेखांश और ३५० से ३६० अक्षांशके मध्य इण्डो सीथियामें नियत करते हैं ।

जहाँ बहुत ऊँची पर्वतमाला हैं पीछे सर वालटरैलेने यह कहा है कि वह स्थान जहाँ नूहने स्थिति की थी, बहुत गरमीवाले पूर्वदेशमें था, उस स्थानपर उसने अंगूरके वृक्ष लगाये, तथा खेती की जिससे उसका जीवन निर्वाह हुआ, ऐरियस मानटेनस् एक बड़ा विद्वान् लिखता है कि इस कृषिकर्मसे नूहको बड़ी प्रसन्नता हुई, और कहाजाता है कि इस विषयमें वह सबसे अधिक होगया, और उससमय वह अपनी भाषामें [ईश आदमठ] पृथ्वीके कार्यमें तत्पर रहनेवाला पुरुष कहलाता था, यह पदवी, प्रकृति और निवास स्थान जैनसम्प्रदायके पहले तीर्थङ्कर आदिनाथके चरित्रके साथ बहुत कुछ मिलते हैं, जिन्होंने मनुष्योंको कृषिकार्य, और अन्न गाहनेके समय मनुष्यके मुहमें छींका लगाना सिखाया था ।

यदि सर वालटर इस बातको जानते होते कि हिन्दुओंकी धर्मपुस्तकमें उनके देशका नाम

१ संस्कृतमें ईशका अर्थ स्वामी है, आद आदिका विभडा है जिसका अर्थ प्रथमका है, माठ वा मठ पृथ्वी वा मट्टी है, इस स्थलमें संस्कृत और इब्रानी भाषाका अर्थ समान है, इसका अर्थ यह निकलता है कि पृथ्वीका पहला स्वामी, दूरके राजपूतदेशोंमें जहाँ अबतक पुरानी भाषा और रीति नीति चली आती है मनुष्यके निमित्त जो बलिष्ठ शब्द है वह मट्टी है जिसका अर्थ भूमि है अपने मनुष्य और सीमाके मनुष्योंको मध्यकी लडाईका वृत्तान्त कहनेके समय कि जिसमें कोई मारागया हो तो सरदार कहता है कि “मेरा मांटीमारा” अर्थ यह कि मेरी भूमि मारी गई यह ऐसा वचन है कि इसपर टिप्पणीकी आवश्यकता नहीं इसका आशय यह है कि वह रुधिरके बदलेमें रुधिर चाहता है ।

करुणायुक्त वचन कहकर अपनी सहायताके लिये उसे बुलाया । स्त्रीके करुणायुक्त वचनोंको सुनकर वह सैनिक उसी समय वहाँ गया और शूकरको अपने दोनों हाथोंसे पकड़ लिया, स्त्री छूटकर दो चार पैर आगे बढ़ी थी कि इसी समयमें वह सैनिक पुरुष उसको ऊँचे स्वरसे पुकारकर बोला कि मैं इस बलवान शूकरको किसी प्रकार नहीं पकड़सकता । कृष्णकुमारी सैनिकके यह वचन सुनकर हँसतीहुई शीघ्रतासे चली । और बड़ी शीघ्रतासे स्वामीके पास आकर उसकी तलवार लेजाकर शूकरको मारकर उस सैनिक पुरुषका उद्धार किया । इस बातको टाड साहब लिखगयेहैं कि राजपूतोंकी स्त्रियोंका साहस, शक्ति और उनके सतीत्वके उदाहरण अनेक पायेजातेहैं ।

बड़े प्रसिद्ध इतिहासोंमें राजपूतनारियोंकी वीरता और उनके चरित्रोंका गठन तथा राजपूतस्त्रियोंकी सामर्थ्यके सम्बन्धमें और एक उदाहरण दिखाकर महामाननीय टाड साहबने अध्यायका उपसंहार कियाहै । यह घटना राजवाड़ेके सब ग्रान्तोंमें थी मरुभूमिमें स्थापित जयशालके इतिवृत्तसे गृहीत हुई थी । जयशाल मीरके आधीनमें पुगालनामक देशका रणङ्गदेव नामवाला एक सामन्त था उसका उत्तराधिकारी पुत्र साधु उस मरुभूमिके सब मनुष्योंमें भयका कारण होगया । साधु ऐसा साहसी वीर और अत्याचारी था कि वह दक्षिणमें तो सिन्धनद तक पूर्वमें नागौर तक उपद्रव करताहुआ घूमता था । एक समय वह दुर्द्धर्ष साहसी साधु एक स्थानपर लूटनेकी वृत्तिको चरितार्थ करनेके उपरान्त बहुतसे ऊँट और हाथियोंको हस्तगत कर १४४० खंडके ग्रामोंके अधीश्वर महीलजातिके नायक माणिकरावकी राजधानी अरिन्त नगरकी ओरको जा रहा था । माणिकरावने उसके आनेका समाचार सुनते ही उसको उसी समय अपनी राजधानीमें बुलाभेजा । वीरश्रेष्ठ साधु महीलपतिका आतिथ्य स्वीकार करनेके लिये आया, सबने उसका बड़ेसन्मानके साथ आदर सत्कार किया । वृद्ध माणिक रावके कर्म देवीनामकी परमसुन्दरी युवती कन्या थी । वह युवती साधुको मरुभूमिमें सबसे श्रेष्ठ अश्वारोही जानती थी । इस समय उसी साधुको स्वयं अपने नेत्रोंसे देखकर कि जिसका संवन्ध मंदौरके राठौर नियत होचुका था । उसने सिंहासनकी आशा छोडकर पुगालके सामन्तके पुत्रको पति रूपसे वरणकरनेका संकल्प किया । मंदौरके राजकुमार प्रबल बलशाली थे और जब कि उनके साथ विवाहका सम्बन्ध निश्चय होगयाहै, तब वह सम्बन्ध न होनेसे भयानक विपत्ति पड़ेगी यह जानकर भी महिलपति माणिकरावने

और वह अबतक उनमें विद्यमान हैं यहाँ इतनी अधिक गरमी होती है कि वे पुरुष बड़े उत्साहके साथ दक्षिणके मार्गसे आकर उत्तरके अर्धगोलेको खिलानेवाले भगवान भास्करका स्वागत प्रसन्नतापूर्वक कभी नहीं करसक्ते, यह धर्म विशेषकर शीतप्रधान देशोंका ही होसक्ता है, जिस धर्मको वे अपनी आदिजन्मभूमिसे लायेथे जहाँसे जेहून [आक्सस वा आमूदरिया] और जेगजार्दिस [सेहन वा सिरेदरिया] नदियें निर्गत हुई हैं, और यह विशेषरूपसे सम्भवहै, कि अश्वमेध वा घोडेका यज्ञ [सूर्यका चिह्न] नामक पर्वोत्सव अर्थात् बड़ा संक्रान्तिका त्यौहार जिसे सूर्यके पुत्र वैवस्वत मनुकी सन्तति मानती थी, उसको सीथियन देशसे एक ही समय उनलोगोंने भारतमें लाकर प्रचलित किया, और ओडिन वोडेन वा बुधके पुत्रोंने पश्चिमकी ओर स्केराडीने वियामें लेजाकर प्रचलित किया, जहां यह शीतसमयकी संक्रान्तिका हिएल वा हिउल नामक पर्व विख्यात हुआ, वह उत्तरकी जातियोंका एक बड़ा महोत्सव था, और ईसाई धर्मके आरम्भके समयमें इसके प्रचलित होनेका समय समीप होनेसे ईसाइयोंके आरम्भके पादरी उस घटनाके स्मरण रखनेके लिये इसको प्रसन्नतापूर्वक मानतेथे ।

१ हय वा ही संस्कृतमें घोडेका नाम है एल सूर्यका नामहै जिससे इप्योस और इलिओस यह दो यूनानी शब्द निर्मित हुएहैं सूर्यका वाचक हेलशब्द सीथियन जातिका विदित होताहै

२ हरि वा भारतका अपोलो सूर्यका नामहै, उत्तरकी जातिके हिडल वा जुलशब्द और फ्रान्स जातिका नोइल शब्द हिन्दुओंके इस पवित्र पर्व संक्रान्तिके नामान्तर हैं, जिसका विशेष वर्णन आगे चलकर करेंगे ।

मैलेटकी नार्दर्न एण्टी किटीज नामक पुस्तक देखो ।

अचानक आकर उनके विश्रामके सुखमें बाधा दी । संकल पहलेसे ही साधुको पहचानता था, इस समय उसको सावधान करनेके लिये शीघ्र ही दूतको भेजदिया ।

सोतेहुए साधुके एक और खड़ीहुई प्रवीण रणकी घोड़ीने पंचकल्याणके शत्रुदलके आनेका समाचार पातेही शीघ्रतासे अपने श्वेतपैरोंके आघातसे स्वामीको जगादिया । शत्रुपक्षके दूतने आकर देखा, कि पंचकल्याणीने अपने पैरोंको सरल आघातसे साधुकी निद्राको भंग करदिया, इससे वीरश्रेष्ठ साधु उसका तिरस्कार कर रहे हैं । दूतने सन्मान दिखाते हुए कहा कि आरण्य कमल तुम्हारे साथ अपने बाहुबलकी परीक्षा करनेकी अभिलाषा करते हैं । साधुने यथार्थ राजपूतवीरकी समान विना उत्तर दिये समरके प्रस्तावको स्वीकार करलिया । परन्तु उन्होंने दूतसे कहा, कि हम अपने साथमें जो अफीम लायेथे न जाने वह कहाँ खोगर्ह, इसलिये तुम थोड़ी सी अफीम अपने स्वामीसे लेकर भिजवादेना । शत्रुओंके अनुचरोंके द्वारा शीघ्र ही साधुके सेवनकरनेके लिये अफीम भेजदीगई, साधु उसे सेवनकर फिर थकावट दूर करनेके लिये शय्यापर लेटरहा । कुछ कालके उपरान्त उठकर अपने वीर शरीरको रणकी पोशाक सुसज्जित कर फिर समस्त अस्त्रोंको धारण किया; इसके पीछे अपनी उस घोड़ीको बुलाकर उसे स्मरण दिलाया, कि अन्य समरोंमें जिस भाँति मुझे अपनी पीठपर चढाकर विजयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त करायाहै उसी प्रकार आज भी मुझे वहन करना । चन्दनकुमार साधुको अपनी घोड़ीसे इस प्रकारके वचन कहते हुए देखकर, विशेष प्रशंसा करके अपनी सेनादलके नेता चौहानजातिके योधाको पाहु-सम्प्रदायके जयतुअंगके साथ सबसे प्रथम बाहुबलकी परीक्षा करनेका हुक्म दिया । दोनों वीरोंके घोड़ोंपर सवार होकर भयंकर मूर्तिसे अस्त्रोंके चलाते ही शत्रुपक्षके चौहान भट्टवीरोंके अस्त्राघातसे वीरगण शीघ्रही पृथ्वीपर शयन करनेलगे जयकी इच्छासे उन्मत्त हुए भट्टवीर रुद्रकी समान तेजसे शत्रुओंके पक्षमें नक्षत्रवेगकी समान जाकर अपने सम्पूर्ण वरावरवाले वीरोंके साथ बाहुबलकी परीक्षा दिखाने लगे ।

इस प्रकारसे दोनों ओरके वीरोंमें घोर युद्ध होनेलगा । दोनों प्रतिद्वन्द्वी चुपचाप उस वीरयुद्धको देखने लगे, एक २ पक्षके दूसरे पक्षके वीरोंके साथ जा मिडे अंतमें वीरश्रेष्ठ साधु प्रलयकालीन प्रज्वलित मूर्ति धारण कर घोड़ेपर सवार हो अपनी तीक्ष्ण तलवारके आघातसे राठौरसेनाके संहारमें मतवाले होगये । प्राण-

बहुतसे छिन्नभिन्न हुए उपयोगी विषय और वृत्तान्त जो इससमय अज्ञान और रूपककी जवनिकाके भीतर छिपे पड़े हैं प्राप्त होसक्ते हैं ।

प्राचीन हिन्दुओंमें बुद्धि और बल किसप्रकारका था इस बातका प्रमाण उनकी बचीकुची इमारतोंके सुडौलपन और खुदेहुए पुराणसम्बन्धी चित्रोंकी उत्तमतासे पायाजाताहै, परन्तु ज्यों ही उनकी बुद्धि और बल घटा उसके साथ ही उनमेंसे सत्यकी सरसता भी जाती रही और उसके स्थानमें अपने लेखों और इमारतोंमें विचित्र विषयोंको ग्रहण करलिया, यदि बनावटके खुलजाने और लज्जाका भय न होता तो यूरोपके सभ्य देशोंमें भी ऐतिहासिक विषयोंकी इसीप्रकार गडबडी होती, परन्तु पूर्वके देशोंमें पुरातन एशियाके सत्यव्यवहारकी कमीके समय किसी ज्ञानी आलोचक और सत्य प्रशंसा करनेवालेके न होनेसे यहांके भाष्यकार ब्राह्मणोंने बन्धन मुक्त होकर मनमानी कलम चलाई होगी ऐसा अनुमान होताहै उन्होंने यह समझा होगा, कि अपने ग्रंथोंमें हम जितनी अधिक आश्चर्य्यकी * बातें लिखेंगे उतनी ही हमारी विशेष बड़ाई होगी, इस बनावटी कल्पनाके फेरमें पडकर इनको सत्य ऐतिहासिक बातें सुनने और स्पष्ट लिखनेको बहुत कालसे अरुचि होगई है ।

इसी प्रकार इससे पहले समयमें अर्थात् ईसासे तीन सौ वर्ष पहले वैविलोनियां देशके इतिहास लिखनेवाले वैरोससने इस प्रकार अपनी कल्पित कहानियां रचीं कि जिनसे अपने राज्यको इतना प्राचीन ठहराया है जो विश्वासके योग्य नहीं होसकता, परन्तु उसके पहलेके बहुतसे विख्यात इतिहास लेखकोंके लेखोंसे उसकी कल्पनाओंका खण्डन होजाताहै परन्तु भारतवर्षकी कल्पनाओंकी परीक्षाका ऐसा कोई साधन नहीं है, यदि इस समयकी विद्यमान कथाओंको स्वयं व्यासजीका लिखा मान लें तब तो इतिहासका प्रवाह मूल सोतेसे ही विगडा हुआ समझना चाहिये, जब मूलकी दशा ऐसी हो तो अज्ञताके जुगोंसे निथरती चली आनेवाली धारामें केवल मलीनताकी बढवार ही मानीजायगी, जब कि पुरातन बातोंकी सत्य-

* बहुतसी जातियें अनादिकालसे अपनी उत्पत्ति बताना चाहती हैं, उनकी इस अज्ञानतापर विख्यात गोगट अपनी सम्मति प्रगट करताहै कि वैविलोनियां मिसर सीथियाके रहनेवाले अपनी प्राचीनताका विशेष अभिमान करतेहैं वैविलोनियांवाले तो हिन्दुओंकी समान अपनी प्राचीनताका डंका बजातेहैं कि वे ४७३००० चार लाख तिहत्तर सहाय वर्षोंसे नक्षत्रगति देखते चलेआते हैं, इस प्रकार प्रत्येकजातियोंने युगपर युग लगादियेहैं, परन्तु इसकाल्पनिक बनावटी प्राचीनताके आधारकी पुष्टि अनुमानसे नहीं होती, और यह सब कल्पनाएँ अर्वाचीन विदित होतीहैं ।

निसे रणभूमि गुंजारउठी । कर्मदेवीकी आज्ञानुसार उसकी दोनों भूजा यथास्थानपर भेजदी गईं । पुगालके वृद्ध राजने अपनी पुत्रवधूकी उस कटीहुई भुजाको दाह करके उस स्थानपर एक बड़ा भारी सरोवर खुदवादिया । आज तक वह “ कर्म देवीके सरोवर ” नामसे विख्यात है ।

पूर्वोक्त घटना १४९२ संवत्में (१४०७ ईसवीमें) हुई थी । इस युद्धमें संकलके पक्षकी बहुत सी सेना मारी गई । साढे तीन हजार सेनामेंसे केवल पांच सौ मनुष्य जीवित रहेथे; और उनके प्रधान नेता मेघराज बहुत घायल हुए थे । आरण्यकमलके चार भाइयोंके भी बड़ी भारी चोट आईथी, और आरण्य कमलके जो बड़े २ घाव होगये थे उनको छः महीनेतक चिकित्सा होनेपर भी आराम न हुआ, और वह मुरलोकको सिंधारगये । इतिवृत्तके आख्यायकने लिखाहै, कि जिस दिन साधुका दशमासिक श्राद्ध होताहै, उसी दिन आरण्यकमलका चातुर्मासिक श्राद्ध होताथा ।

यद्यपि वीरवालाकी प्रशंसा इसी स्थानपर समाप्त होगईथी तथापि इस घटनासे राजवाडेके एक प्रान्तमें जो भयंकर विवादकी अग्नि प्रज्वलित हुईथी, वह प्रसंगरहित होनेपर भी उसका वर्णन टाड साहब इस स्थानपर करगयेहैं । राजपूतजातिमें अपना सन्मान अपने गौरवकी रक्षा की अभिलाषा तथा शत्रुसे उसका बदला लेनेकी वृत्तिको चरितार्थ करनेकी इच्छासे वह लोग कैसे प्रबल पराक्रमी थे । पुगाल और मन्दौरके राजा अपने २ पुत्रोंका बदला लेनेके लिये वीरतेजसे मतवाले होगये । मन्दौरके आधीनमें संकलके सामन्तोंसे मारेहुए वीरोंसे साधुकी सेनाका दल विध्वंस होगया था, इस कारण वृद्धवीर रणङ्गदेवने शीघ्र ही बदला लेनेके लिये पुगालकी समस्त वीर सेनाको अपने साथ लेकर मेहराजके अधिकारी देशोंपर लूट मार करनी प्रारंभ करदी । चाहैं ऐसा हो कि मेहराज अपनी रक्षा करनेमें तैयार थे अथवा रणङ्गदेवकी सेनाकी संख्याके अधिक होनेसे हो तीन सौ आत्मियोंके रुधिरसे लूनीका बालुमय शिखर लाल होगया । वीर रणङ्गदेवने जय प्राप्त करके प्रसन्नचित्त हो लूटेहुए बहुतसे द्रव्योंको साथ लेकर अपने देशकी सीमाके अन्तमें जातेही देखा कि भयंकर विपत्ति उपस्थित है, मन्दौरके अधीश्वरने अपनी बहुत सी सेना लेकर अपने प्राणप्यारे पुत्र आरण्यकमलकी अकाल मृत्यु होनेसे अपने सामन्तोंके अपमानका बदला देनेके लिये विजयी रणङ्गदेवपर आक्रमण किया । दोनों ओरके वीरोंने असीम साहस करके रणकी अग्नि प्रज्वलित कर दी । अन्तमें वृद्ध रणङ्गदेव

जिससमय सूर्य और चन्द्रवंशोंका आदिकाल था, उससमय नियत कुटुम्बोंमें धर्मगुरुका पद परंपरा सम्बन्धी नहीं था, किन्तु यह एक साधारण वृत्ति थी, और यह भी देखाजाता है कि इनजातियोंकी शाखा अपने क्षत्रियकृत्यको पूर्ण करके धर्मसम्बन्धी शाखा वा गोत्र आरंभ करनेमें प्रवृत्त हुई तथा उनके वंश-वालोंके पुनः अपना क्षत्रियधर्म धारण करनेके वंशावलियोंमें उदाहरण मिलते हैं इक्ष्वाकुके दश पुत्रोंमेंसे तीन पुत्रोंके विषयमें लिखाहै कि वे संसारके व्यवहारोंको त्यागकर धर्मकार्यमें प्रवृत्त होगये, और इनमेंसे एक कानिनके विषयमें लिखा-गयाहै कि वह प्रथम पुरुष था, जिसने अग्निहोत्र ग्रहण किया, अग्निकी पूजा की एक दूसरे पुत्रने व्यापारमें मन लगाया, चन्द्रवंशी पुरुषोंके छः पुत्रोंमेंसे चौथेका नाम रहे [रय] था इसकी पन्द्रहवीं पीढीमें हारीत हुआ, यह अपने आठ भ्राताओंके साथ धर्मकार्यमें प्रवृत्त हुआ, इसीने कौशिक गोत्र चलाया जो ब्राह्मणोंकी एक शाखा कहातीहै ।

भरद्वाज नामक राजाके नामसे ययातिकी चौबीसवीं पीढीमें “ भरद्वाज ” नामक प्रसिद्ध गोत्र निकला, इस गोत्रवाले इससमय भी इसी नामसे विख्यात होकर राजपूत जातियोंके पुरोहित हैं ।

छब्बीसवें राजा मन्युके दो पुत्रोंने धर्मात्मा होकर प्रसिद्ध गोत्र स्थापन किये अर्थात् महावीर्य—कि जिनके सन्तान पुष्कर ब्राह्मण हुए और संस्कृति कि जिसकी सन्तति वेदपाठी हुई यह धर्मगुरुओंकी शाखा अजमीढके वंशसे बराबर विभक्त होती रही ।

मिसर तथा रोमन देशके पुरुषोंकी समान बहुत पुरातन समयसे सूर्यवंशी नरपति राज्याधिकारके साथ साथ धर्माचार्यका कार्य भी करते थे, चाहे वह ब्राह्मण धर्मावलम्बी हों, चाहे बौद्धमतबलम्बी महाराज रामचन्द्रके पहले

—तारीख फारिस्तेमें भी प्राचीन ग्रन्थोंसे अनुवाद करके ऐसा ही लेख लिखाहै ।

कन्नौजके राजा मेघराजके समय एक ब्राह्मण ईरानसे आया था जिसने जादू मूर्तिपूजन तथा नक्षत्रपूजन चलाया इससे विदितहै कि मतसम्बन्धी नवीन बातोंके प्रवेश होनेके अनेक प्रमाणहैं । (ब्राह्मणमत कोई नहीं है यह वैदिकसिद्धान्तहै वैदिकधर्मको ब्राह्मणमत मानना टाड साहबकी भूल है) (अनुवादक) ।

१ सनातन धर्मको ब्राह्मणधर्म कहकर टाड साहबने भूल की है, और अंग्रेजोंने भी ऐसा लिखाहै यदि यह ब्राह्मणोंका चलाया है तो ग्रंथकारको बताना चाहिये था कि इसका चलानेवाला प्रथम पुरुष कौन था (अनुवादक)

२ जैनोंके २४ तीर्थकरोंमेंसे कई एक पहले तीर्थकर अपनी उत्पत्ति सूर्यवंशी राजोंसे बतातेहैं ।

पूत भोजनकी सामग्रीको ऊँटोपर लादकर आगे २ चले । और सामान्य सेना अस्त्र धारण करके सेनाके पीछे भागकी रक्षा करतीहुई चली । चंड अपनी होनहार प्राणप्यारीको आदर सहित लानेके लिये नागरसे आगे बढे । परन्तु रथके पास जाते ही उनको महा संदेह होगया । जब चंडने इनके और ही ठाट देखे तब वह भागनेका उपाय करनेलगा जैसे ही चंड भागा कि वैसेही रथपर बैठेहुए भट्टियोंने शीघ्रतासे उसका पीछा कर नागरदेशके तोरणद्वारपर चंडको पकड़कर मारडाला । शत्रु लोग उठतीहुई तरंगमालाकी समान नगरमें जाकर चारों ओरसे लूट करनेलगे ।

इस प्रकारसे दोनों ओरके वीरोंने अपना २ बदला लेलिया । फिर दोनों पक्षमें सन्मान और गौरवकी रक्षाके निमित्त संधि होगई. दोनों ही पक्षके जातीय शत्रु सम्राट् सेनाको उचित दंड देनेमें राजी हुए । दोनों पक्षने एक ही मनुष्यकी समान खड़े होकर वादशाह खिजीर खाँ साहवकी भेजीहुई सेनाको छिन्न भिन्न करदिया; उसकी सेनाका एक मनुष्य भी जीवित न रहा । रणङ्गदेवके दोनों पुत्र मुसलमान होकर पुगालराज्यके अधिकारसे बाहर हो आभोरिकयाके भट्टियोंके साथ जा मिले । अवतक उनके वंशधर ममान मुसलमान भट्टी नामसे विख्यात हैं । राजकुमार कल्याण सबकी सम्मतिसे पुगालके राजा हुए ।

महामाननीय टाड साहव कहगयेहैं कि अपने सन्मानकी रक्षाके निमित्त राजपूतजाति कितना यत्न करती थी, उपरोक्त घटना उसीके प्रमाणस्वरूप उदाहरणहैं, और जो लोग ऐसा कहतेहैं कि राजपूतोंका रनवासमें रहनेवालियोंके ऊपर पुरुषजातिका प्रभुत्व नहीं था । वह लोग भी इससे अपनी सम्पूर्ण भ्रान्तियोंको दूर करसकते हैं । समाजतत्त्वके जाननेवाले महात्मा टाड साहवने जिनका वर्णन इस स्थानपर कियाहै, कि हिन्दू स्त्रियोंके अन्तःपुरमें निवास करनेपर भी उनके गुणग्राम और व्यक्तिगत सुन्दरताको भ्रमणकरनेवाले कविकुलकी मधुरमयी कविताकी लीला मलयानिलमें बहन करनेवाली वसन्ती फूलके सौरभकी समान सर्वत्र व्याप्त करतीहै । यद्यपि वह सर्वसाधारणकी दृष्टिसे बाहर रहतीहै, परन्तु वह उन अन्तःपुरकी निवासियोंको भिन्न उपायसे देखनेमें समर्थ है साधु और कर्मदेवीका सम्मिलन उसको उज्ज्वलतासे प्रकाशित कररहाहै । वह यवनोंके अधीनमें रहकर सभी देशके युवकोंको देखसकतेथे वीरोंके परस्परमें अस्त्रोंका बल दिखानेके लिये साधारण कार्य-

इस कथासे यह बात स्पष्ट जानी जाती है कि यहां गऊसे किसी देशविशेषका अभिप्राय है जो वशिष्ठ ऋषिके अधिकारमें था, जब कि गऊका अर्थ पृथ्वी और गाय दोनोंसे है तब निःसन्देह यह विश्वामित्रके किसी ज्ञानशून्य पूर्वजका दान था, जिसे विश्वामित्र फेरलेना चाहते थे, वहां लिखा है उस गऊसे देवता और पितरोंके कार्य सिद्ध होतेथे नैवेद्य अग्निहोत्र यज्ञकार्य सब इसीपर निर्भर थे, यह शबला ही वशिष्ठजीकी धर्मानुष्ठानकी मूलकारण थी, इसके बदलेमें विश्वामित्र लाख गऊदेना चाहते थे, वास्तवमें यह रत्न राजाओंके ही योग्य था, विदित होता है जब वशिष्ठकी प्रजाने ऐसे बदलेको स्वीकार न किया, तब शबलाके आक्रमण करनेके कारण उसके रांभनेसे बहुतसे विदेशी सहायक वहां आकर उपस्थित होगये, जिससे वशिष्ठजी विश्वामित्रसे युद्ध करनेको समर्थ हुए, इनमेंसे पल्लव (ईरानी) राजा, भयंकर शक, तथा खड्ग और सुवर्ण कवच-धारी यवन (यूनानी) और कम्बोजी आदि वीर इससे प्रगट होगये, विश्वामित्रने पल्लव राजाओंकी सेनाको छिन्नामित्र करदिया, और फिर विश्वामित्रको निरन्तर सहायक सेनाके प्रगट होनेसे अन्तमें वशिष्ठजीसे हारमाननी पड़ी ।

इन प्राचीन ईरानी शक यूनानी आसाम तथा दक्षिण भारतके निवासी सहायक पुरुषोंके नामसे यह विदित होता है कि, यह हिन्दूधर्मके न माननेवाले प्राचीन जातियोंके पुरुष थे, यहाँके लोग इन सबको म्लेच्छ कहकर पुकारतेथे, यह शब्द यूनानियों और रोमवालोंके बारबेरियन (असभ्य) शब्दके समान है ।

राजा विश्वामित्र वशिष्ठजीसे पराजित होकर भग्नदन्त सर्प और ग्रहणलगे सूर्यकी समान तेज रहित होनेसे बहुत व्याकुल हुए, अपने पुत्र और सेनाके नष्ट होनेसे पंखहीन पक्षीकी समान निराधार होकर पुत्रको अपना राजभार समर्पण कर तपस्याचरणके द्वारा ब्राह्मणत्व प्राप्ति का दृढसंकल्प किया, जिसप्रकार कि आपत्कालमें हिन्दू राजा किया करतेथे ।

पुष्करक्षेत्रमें जाकर कन्दमूल भक्षण कर विश्वामित्र तपस्या करने लगे, और मन स्थिर करके कहा कि मैं ब्राह्मण बनूंगा, इस प्रकारके तप करनेसे उनकी अध्यात्मशक्ति इतनी प्रबल होगई कि वह ब्राह्मणत्व ग्रहण करनेमें समर्थ हुए, उससमय देववाणी हुई कि वेद पढनेके वही अधिकारी हैं जो उनके तत्त्वोंको समझते हैं, तुमको यह उचित नहीं कि प्राचीनोंकी बांधीहुई मर्यादाका भंग करो।

उनके भ्रमण तपस्याके भंग करनेके जो जो उपाय कियेगये उनसबका वर्णन किया है, उनका तप भंग करनेके निमित्त अष्टरायें भेजीगई कामदेवकी जननी उनके पास गई; ब्राह्मणोंका पक्ष लेकर इन्द्रने कोकिलका रूप धारण किया, रम्भाके मनोहर नृत्य, तथा शीतल मन्द सुगंध लिये वसंत वायुके स्पर्शसे भी उनका चित्त चलायमान न हुआ, और अन्तमें विश्वामित्रने रम्भाको शिला स्तम्भ होजानेका शाप दिया, जबतक उनकी सब वासनायें दमन न हुई और जबतक पापका लेशमात्र भी उनमें न रहा, वरावर तप करते रहे; जिसके कारण ब्राह्मणलोग बहुत व्याकुल हुए, कि कहीं विश्वामित्रकी परम पवित्रता हमारे लिये हानि कारक न हो, और यह भी भय हुआ कि मनुष्यजाति नास्तिक होजायगी, अन्तमें देवगण और उनके अधिष्ठाता ब्रह्माजीने विवश होकर उनको ब्राह्मणपद प्रदान किया, और देवताओंके कहनेसे वशिष्ठजीने भी यह बात मान ली, और उनकी अभिलाषामें सहमत होकर उनसे मित्रता स्थापन कर ली ।

भय पाये हुए पिता कठिन यवनदन्तके हाथमें समर्पण करनेके लिये तैयार हुए, रूपनगरकी अनुरूपवती राजकुमारीने किस प्रकारसे महाराणा राजसिंहकी सहायताके लिये प्रार्थना कीथी, उससे हमारे पाठकोंका हृदय अवश्य ही शंकित हुआ होगा । राजपूतजातिके हिन्दूजातिके इतिहासमें इस भौतिके सैकड़ों उदाहरण विद्यमान हैं; महामाननीय टाड साहब उनकी यथार्थता कह गयेहैं । उनका अंतिम कहना यह है—कि राजपूत स्त्रियोंकी सुन्दरता और राजपूत स्त्रियोंके गुण कविकुलके काव्योंमें आज तक गायेजातेहैं । राजपूत जननी अपने पुत्रके यश और गौरव, तथा वीरता और जयप्राप्तिके निमित्त अनन्त आनन्दसे उनके अंशकी भागिनी हुई थीं । राजपूत वीरमाता वालक पनसे ही अपने पुत्रोंको उपदेश देतीथीं—“वत्स ! तुम अपनी माताके दूधको उज्ज्वल करदो” अर्थात् वीरनामसे विख्यात होकर माताके जीवनको सार्थक करनेमें झुटि न करना । पुत्र तुम सर्वत्र ही विजयी हो वीररूपसे सन्मान पाओ, यह इच्छा राजपूतोंकी माताओंके हृदयमें कितनी प्रबल थी, अपने प्राणप्यारे पुत्रकी वीरता प्रकाशकरनेके साथ समरभूमिमें प्राण त्यागनेका समाचार पाकर बूंदीकी राजरानीने शोकके बदलेमें आनन्द प्रकाश कियाथा, वह भी यहां पर साक्षी देरहाहै । कविका वचन है कि “राजकुमार जिस माताके दूधको पीकर पाले गयेथे; उनकी मृत्युका समाचार पाकर उसी माताके उन दूधहीन दोनों स्तनोंमें दूध भर आया, जिससे कि वह दोनों स्तन दूधके वेगको न सहन करके तर्रीने लगे; शीघ्रतासे उनमेंसे दूधकी बूंदें गिरने लगीं ।” कविके लिखनेके उपरान्त इस बातका अनुभव हम स्वयं भी करसकते हैं । अपने पुत्रको वीरगति प्राप्त होनेपर वीरमाताका हृदय चिकित् भी दुःखित न हुआ राजपूतोंकी स्त्रियें अपने छोटे २ सुकुमार लडकोंको पालनेमें न सुलाकर बड़ी २ ढालोंमें शयन करातीथीं, और उनके खेलनेके लिये छोटी २ तलवारें उनके हाथमें देदेती थीं । तथा वह वीरगर्भधारिणी उन बालकोंके कानोंमें यह बीजमंत्र देतीथीं—“कि पिताके शत्रुका संहार करना” राजपूत वीरकुमार उसी मंत्रके बलसे आयुवृद्धिके साथ ही साथ महर्षि द्वैपायनप्रणीत काव्योंमें भारत तथा कविश्रेष्ठ चन्दकी लेखनीसे निकलेहुए काव्यमें वीरता विलासके प्रभामय चित्रको देखकर उसीका अनुकरण करतेथे. इस समय इस बातको कौन कहसकताहै कि अंतःपुरके निवासकी राजपूतोंकी स्त्रियें समाजके प्रति—अथवा पुरुषजातिके प्रति अपनी प्रधानताका

महाभारत नामक वीररसात्मक बृहत्काव्यके निर्माता व्यासजी इन्द्रप्रस्थके राजा शान्तनु (हरिकुल) के पुत्र थे जो योजनगन्धा नामवाली एक धीमर × कन्यासे जन्मे थे इस कारण यह अनौरस पुत्र थे वह शान्तनुके दूसरे पुत्र तथा उत्तराधिकारी विचित्रवीर्यकी पुत्रियों अर्थात् अपनी भतीजियोंके धर्मपिता वा शिक्षक नियत हुए थे ।

विचित्रवीर्यके कोई पुत्र नहीं था, उसकी तीन कन्याओंमेंसे एकका नाम पाण्ड्या था और शान्तनुके कुलमें केवल एक व्यास ही पुरुष रहजानेसे वह अपनी भतीजी तथा धर्मपुत्री पाण्ड्याको अपनी स्त्री * बनाकर पाण्डुके पिता बने, पीछे जो पाण्डु इन्द्रप्रस्थका राजा हुआ ।

× यह बड़े अचम्भेकी बात है कि हिन्दुओंमें महापवित्र दो प्रसिद्ध ग्रन्थकर्ताओंकी उत्पत्ति भारतकी जंगली तथा संकरजातियोंसे लिखी है, व्यासजी धीमरीसे और वीररसात्मक रामयण-काव्यके निर्माता वाल्मीकीजी एक वधिक लुटेरेसे जो आवू पर्वतके निकट रहनेवाली भीलजा-तिका साथी था उत्पन्न हुए हैं, जब यह किसी देवमंदिरमें चोरी करते थे उससमय वाल्मीकिके वर्ण-परिवर्तनका वृत्तान्त आश्चर्यरूपसे हुआ था, चन्दकविने अपने काव्यमें पुराने प्रमाणोंको लेकर प्रभावशाली कवितामें इसे लिखा है. †

* इस पाण्ड्या नामका कारण यह है कि इन कन्याओंमेंसे एकका जन्म दासीसे हुआ था, इस बातके निर्णय करनेकी आवश्यकता हुई कि इनमें दासीसे कौन सी जन्मी है, परदेमें रखेजानेके कारण इस बातका निर्णय करना कठिन था, इससे वंशकी शुद्धिकी परीक्षा व्यासजीको सौंपी गई उन्होंने उसका निश्चय कर लिया और आज्ञा दी की राजकन्या नम्र होकर मेरे सामने निकलें वडी कन्या नेत्र बंदकर व्यासजीके आगे निकली जिसके अंधे धृतराष्ट्र जन्मे, दूसरीने लज्जासे अपने शरीरपर पीली मट्टी लेप ली, इसीसे इसका नाम पाण्ड्या पड़ा और इसका पुत्र पाण्डु नामक हुआ, तीसरी कन्याने कुछ संकोच न किया और निर्लज्जतासे व्यासके आगे होकर निकल गई वह शुद्ध कुलकी नहीं समझी गई उससे दासी पुत्र विदुर हुए.

‡ यह सारी कथा टाडमहोदयने अट्टसट्ट लिख दी है या तो इसमें उनकी भूल है वा एरियनसे मिलानेको यह मनगढ़न्तकी हो, महाभारतमें इसप्रकार लेख है कि राजा शान्तनुके दो पुत्र थे चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य दोनों निःसन्तान मरे विचित्रवीर्यके काशीराजकी पुत्री अम्बिका और अम्बालिका दो स्त्री थीं इनके कोई सन्तान न होनेसे विचित्रवीर्यकी माता सत्यवतीने कुरुवंशको नष्ट होता देख भीष्मकी सम्मतिसे व्यासजीको बुलाकर वंशरक्षाके लिये कहा व्यासजीने कहा कि वे एक वर्ष व्रत रखें पीछे मेरे सन्मुख आँवें तब पुत्र होंगे; और ऐसा ही हुआ, जो आँवें मीचकर सामने आई उसके धृतराष्ट्र और शरीरमें पाण्डु लपेटकर आई उसके पाण्डु हुए इन दोनों पुत्रोंको रोगी जान सत्यवतीने फिर पुत्रके लिये प्रार्थना की और अम्बिकाको व्यासजीके समीप भेजा वह उनसे इतनी भीत थी कि उसने अपनी दासीको अपने बदलेमें भेज दिया, उसने—

‡ यह कथा टाडमहोदयने बहुत ही भूलसे लिखी है व्यासजी पराशरऋषिके पुत्र थे, योजनगन्धा धीमरी नहीं है एक राजा वसुका वीर्य पानीमें गिरा उसे मछली निगल गई उससे एक कन्या जन्मी उसको धीमरने पाला था ।

नवयौवनमें विषके द्वारा अपने प्राणोंको छोड़ जगत्में अक्षय कीर्तिका स्तम्भ स्थापित कर गई है ? सतीत्व, पातिव्रत्य, हृदयकी सरलता, साहस, बुद्धिबल और धर्मके पालन करनेमें सदासे हिन्दू रमणी जगत्में अतुलनीय होती आई हैं यह बातें हिन्दू रमणीके चरित्रमें सत्यप्रिय और न्यायी पुरुषको अवश्य माननी होगी । वही आर्य सन्तान इस समय मोल लिये हुए दासकी जातिमें बदल गई है किन्तु इस मोल ली हुई दासजातिकी स्त्रियां आजलों आदर्शस्वरूप हैं ।

यद्यपि उस राजवाड़ेमें उस आर्यक्षेत्र भारतमें आज देवलदेवी, कर्मदेवी, पद्मिनी, कृष्णकुमारी, संयुक्ताकी लीला प्रकाशित नहीं होती हैं, यद्यपि हमारी हिन्दूजातिकी माता, भगिनी, वधू और कन्यागण इस समय वीरनारियोंके अभिनयको नहीं करती हैं किन्तु जगत् स्वतः ही घोषण कर रहा है कि इस पतित दशामें भी हिन्दू रमणी अखंड भावसे अपने सतीत्वकी रक्षा करके ही अपने अन्तःपुर और अपने घरको शान्ति, सन्तोष, सुख और मंगलकी गंधसे सुगन्धित बनाये हुई हैं । सती द्रौपदीके अपमानमें कुरु और पांडवोंके महायुद्धसे भारत महाशमशानके रूपमें बदल गया है, उस सतीकुलके ही पुण्यसे उस सतीकुलकी कृपासे उस सतीकुलके सतीत्वके अक्षय तेजसे और उस सतीकुलके बीजमंत्रसे भारत अवश्यही फिर अपने शिरको उठावेगा, लक्ष्मी स्वरूपिणी—शक्तिरूपिणी हिन्दूरमणी अवश्य ही फिर अपने सेते हुए पतिपुत्रोंकी नसोंमें शक्ति उत्पन्न करेंगी, यह निश्चय है कि समय २ पर अवश्य ही केवल राजवाड़ेहीमें नहीं वरन् हिमालयसे कन्याकुमारी तक और अरबके उपसागरसे ब्रह्मपुत्र पर्यन्त आर्यक्षेत्रमें हजारों देवल देवी, कर्मदेवी, पद्मिनी-कृष्णकुमारी उत्पन्न होकर नवीन लीलाओंसे भारतके यशकी पताकाको फैलाती रहेंगी ।

—भी आया था, भारतवर्षके सम्बन्धके लेखमें यूनानियोंने यह नाम शिवकृष्ण और बलदेवके लिये कदाचित् लिखाहो टाड साहबने इस हर्क्यूलीज शब्दको हरकुलईश संस्कृतका शब्द बनाकर चन्द्रवंशी राजाओंका साधारण शब्द बतायाहै परन्तु किसी संस्कृत पुस्तकमें यह प्रयोग नहीं पाया जाता, टाड साहबने इस यूनानियोंके हर्क्यूलीज, और भारतवर्षके चन्द्रवंशियोंके एकही होनेके सिद्ध करनेकी इच्छासे बहुत खँचतान कीहै इसीप्रकार पुराणोंके शिशु नागवंशको शेष नागवंश समझलियाहै पर पुराणोंमें ऐसा नहींहै [अनुवादक]

—ईशहैं यूनानवालोंने इन तीनों शब्दोंका समास करके हर्क्यूलीज शब्द निर्माण किया होगा, इसमें आश्चर्य नहीं कि महाभारत संग्रामके पीछे कुछ लोगोंने पश्चिममें जाकर निवास कियाहो (अठरि यस्—अत्रि) हरिकुलका आदि पुरुष है, उसकी सन्तति देराव लाइट (हर्क्यूलीजके सन्तान) के सन्तानके पश्चात् लौटनेका समय इस प्रश्नका उत्तर देसकताहै और अनुमान होताहै कि महाभारतके संग्रामसे पचासवर्षके पीछे यह घटना घटीहो ।

हमें इस बातका खेदहै कि हिन्दूजातिके गुप्त भेदोंको सिकन्दरके इतिहास लेखक न भेदसके जैसा कि हेरोडाटस मिश्रवालोंके भेदोंको जाननेवाला प्रतीत होताहै, एक तो हिन्दूजातिके धर्म ग्रन्थ विद्या और इतिहास, इस भाषामें थे जिसका जानना सिकन्दरको दुःसाध्य था, दूसरे वह भारतमें बहुत थोड़े दिनोंतक ठहरा इससे उसको यहाँके भेदोंकी यथार्थता न खुलसकी, हिन्दू भाषाकी समानताके जानेबिना, उनकी भाषाके अध्ययनमें उनकी उन्नति बहुत अल्प हुईहोगी ।

इन बातोंमें एरियनने अपनी वृद्धि बहुत २ लगाई है और उसने इसमें शीघ्रही विश्वास भी नहीं कियाहै, उसने कहाहै कि हर्क्यूलीज की कहानीके विषयमें मेरी यह सम्मति है कि यदि हर्क्यूलीज अपनी कन्याके साथ विवाह करनेके योग्य था तो वह ऐसा वृद्ध नहीं था जैसा कि लोग हमको विश्वास उत्पन्न कराना चाहतेहैं ।

सैण्ड्रोकाटस् (चन्द्रगुप्त) का भी एरियनने इसी वंशमें होना लिखाहै, इसीकारण हमको ययातिके द्वितीय पुत्र पुरुकी वंशावलीमें उसको स्थान दान करनेमें शंका नहीं होती जहाँसे इस—

१ सिकन्दरके लेखकोंको यदि आर्यजातिका भेद न मिला तो कोई खेद नहीं पर हमको इस बातका आश्चर्य है कि वीसवर्षतक परिश्रम करके टाड महोदय हिन्दूजातिके पुराणसम्पादित सत्य कथानकको ज्योंका त्यों न लिखसके, भारतमें न कोई हर्क्यूलीज है उसने वा किसीने भी आजतक अपनी कन्यासे विवाह नहीं किया न मात्रम यह मनगढन्त कथा किस प्रकारसे लिखीगई (अनुवादक)

—जातिके वंशका नाम चलाहै, और जो कुल अब नष्ट होगयाहै जैसा कि पुरुके बड़ेभाईका वंश विख्यात नाम यदु हुआ था, इसप्रकारसे यदि चन्द्रगुप्त स्वयं पुरुवंशी नहींहै तो भी उसका उस वंशसे सम्बन्धहै, जिसमें जरासंध (मगधेश्वर) और तेईसवीं पीढ़ीमें रिपुंजय हुआ; जिस समय ख्रीष्टसे ६०० छः सौ वर्ष पहले एक नवीन कुलेन जिसके अधिनायक शुनक और शेष नाग थे पुरुवंशियोंसे राज्य छीनलिया; इस विजेताधरानेमें ही मोरी जातिका चन्द्रगुप्त जन्मा है, जो सिकन्दरके समयका सैण्ड्रोकाटस गिनाजाताहै, यह मोरीजाति शेष नाग तक्षक वा नागवंशकी एक—

टाड साहब कहगये हैं कि राजपूतोंकी स्त्रियें भी आदर्शके अन्तमें फिर प्राणपतिके साथ मिलनेकी आशासे प्रज्वलित हुई; चितामें निर्भय होकर भक्तिसहित अपने शरीरको त्याग देती थीं । उन्होंने कहाहै कि इस रीतिका प्रचार सबसे पहले- शैवियोंके द्वारा हुआहै और प्राचीन जातिमें भी इस रीतिका प्रचार भली भाँतिसे था । वह इसके प्रमाण स्वरूप उदाहरण दिखागये हैं । जाक्षारती सती वासी प्राचीन सिखीयजित और जूटवीरजातिमें किसी वीरने भी इस प्रकारसे शरीर त्याग नहीं किया । मृतक हुए वीरोंकी प्रज्वलित चिताके ऊपर उनकी स्त्रियें अपने स्वामीके सम्पूर्ण अस्त्रोंको भस्म करदेती थीं । वाल्टीक सागरके तीरवासी स्कन्धने बियाके जित्गणोंमें भी इस रीतिका प्रचार था और फिरोसियन प्राङ्गसे निकली सैक्सन जाति भी चिरकाल तक इस रीतिको उत्तम प्रकारसे रक्षा करके बहुत वर्षोंके पीछे केवल मात्र स्त्रीको मृतक पतिके साथ जलानेकी रीतिको रोकसकी थी ।

टाड साहेबने पीछे कहाहै कि इस रीतिका प्रधान उद्देश्य रमणीको सतीत्वका प्रकाशहै। इस सहमरणसे भार्या केवल अपने स्वामीके पापोंको और अपने पापोंको ही नहीं दूर करती है वरन् अंतमें मृतक स्वामीके साथ पुनः स्त्रीका मिलन अवश्य होगा उनको ऐसा अटल विश्वास है। एक बार इस विश्वासमें दृढ होकर राजपूत वीर नारियोंके वीरचरित्र-साहस शक्तियें इस रीतिके सहायता करती थीं। कर्नल टाडने इसी प्रसंगमें कहाहै कि बंगालकी भयनामसे डरनेवाली स्त्रियें भी प्रसन्न चित्तसे अपनी इच्छानुसार जलती हुई चिताकी अग्निमें स्वामी केशवको आलिंगन करनेमें नहीं हिचकती थीं ।

सतीदाहकी रीति हिन्दुओंके धर्मसंगत है वा नहीं यहांपर उसीकी आलोचना करते हैं । टाड साहबका कथन है कि प्राचीन शास्त्र ही निश्चित भीष्मांसाके प्रधान सहायक हैं । जिन्होंने इस सहमरणकी रीतिके संबंधमें शास्त्रके विधानको देखाहै वह अवश्य ही विना दुहराये मानलेंगे कि उसमें बड़ा भ्रतभेद है । महर्षि वेदव्यासजी महाभारतमें इस सहमरणकी रीतिको दृढतासे समर्थन करगये हैं । किन्तु विधानकारोंमें श्रेष्ठ महाराज मनुने इस रीतिकी प्रथम व्यवस्था नहीं दीहै और आर्यविधवानारियोंके आचार व्यवहारके संबंधमें मनुने जिस प्रकारकी निर्धारणा की है, विलायतकी स्त्री-समाजके नेत्रोंमें वह बड़ी कठोर होनेपर भी भारतवर्षमें हिन्दूस्त्रियोंके हृदयमें वह बड़ी सरल प्रतीत होती है। विधवा हिन्दूरमणीके प्रति मनुका आदेश है—'विधवा स्त्री अपने जीवनको

जब उत्तरकी ओरसे भारतकी राजधानी उठकर दक्षिणमें नियत हुई तब विक्रमके ४०० संवत्तक वा कितने एक ग्रन्थकारोंके लेखानुसार ८०० संवत् तक दिल्लीमें कोई राजा न रहा, इसके पीछे अपनेको पाण्डवोंके वंशमें मानने-वाली राजपूत तुवर जातिने फिर युधिष्ठिरके सिंहासनपर अधिकार किया, और उही समय यह प्राचीन इन्द्रप्रस्थनाम देहली वा दिल्ली नामसे विख्यात हुआ, और इसके पश्चात् स्थापन पहले अनंगपालका वंश बाह्वीं शताब्दीतक स्थित रहा, इसके पश्चात् उसने अपने धेवते भारतके अन्तिम राजपूत सम्राट् पृथिवी-राजको अपना सिंहासन सौंप दिया, जिस महाराजके पराजय होनेपर भारतमें मुसलमानोंका प्रवेश हुआ ।

इस खान्दानकी पूर्ति भी एक नाममात्रके बादशाहके साथ होगई और इससमय केवल पश्चिम ओरके बड़ी दूरसे आये हुए वीरपुरुष ही पाण्डु तथा तैमूर राजसिंहासनके अधिकारी हैं ।

जो बुद्ध और इलाके वंशधरोंने बनाये थे इन्द्रप्रस्थके वे स्मारकचित्र पाण्डवोंके लोहस्तम्भ * जिनकी नीचे पातालतक पहुँची हैं जो स्तम्भ विजयके स्मारकोंमें बनाये गये थे, और जिनके लेख इस प्रकारकी लिपिमें हैं जो इस समय

—जोल्कीने मारकर उसका राज छीनाथा और विजराज जयसिंहके उत्तराधिकारी कुमारपालका चौदान होना और सोलंकीके यहाँ उसका गोदजाना जो उन्होंने मानाई वह भी भूद्धै, कारण इसका यह है कि कुमारपाल सोलंकी प्रसिद्धराज जयसिंहके दादा पहले भीमदेवके बंशका था, चौदान नहीं था, पृथ्वीराज न तो अनंगपालका धेवताही था और न इसे अनंगपालने देहलीका राज दियाथा परन्तु अजमेरके चौदान राजा वीसलदेवने अपने पुत्रवल्से संवत् १२२० के लगभग तुवरोंसे राज छीनाथा तभीसे उसपर चौदानोंका अधिकार था. (अनुवादक)

* चन्दकविके बृहत् काव्यमें इस पाण्डवोंके लोहस्तम्भका वर्णन है कि एक भट्टाहीन तुवर-राजाने इसकी गहराईके विषयमें सत्यताकी परीक्षा करनी चाही थी, पंडितोंने कहा था यह कीली शेषनागके क्षिरपर गड़ी है राजाने जब उसे उखड़ाया तो पृथ्वीमेंसे रुधिर लगाहुआ स्तम्भ उठा, स्तम्भ ढीला होनेसे यह कीली ढीली होगई, और इस गर्हितकार्यसे उसकुलका प्रारब्धभी ढीला पड़गया, यही दिल्लीके नामका मूलकारण है । “ यदि यह पुरानी दिल्लीवाले स्तम्भका वर्णन है जो कुतुबके हातेमें है तो यह पाण्डवोंका निर्माणकिया नहीं है, कहते हैं कि यह गुप्तवंश प्रतापवान महाराज चन्द्रगुप्तने दूसरे किछी विष्णुपदनामक पर्वतपर विष्णुमंदिरके आगे खड़ा किया था, यह बात उसपर खुदे लेखसे पाईजाती है तुवरोंने उसे लाकर यहाँ गाड़दिया है परन्तु यह कीली ढीली होनेकी बात बड़ी विख्यात है, देहलीके म्यूजियममें संवत् १३८४ का एक पाषाण खुदाहुआ है उसपर लिखा है “ देशोक्ति हरियानाख्यः पृथिव्यां स्वर्गसन्निभः ॥ दिल्लीकाख्या पुरी तत्र तो—

बड़ी खोज, बड़ी चिन्ता, हजारों परीक्षाओंके पीछे समाजकी शान्ति, मंगल और सन्तोषके लिये ही जब उन्होंने सब व्यवस्था बनाई है तब निश्चय ही हमें मानना पड़ेगा कि यह व्यवस्था भी वैसी ही खोज, चिन्ता, और परीक्षाओंके द्वारा बनाई गई है। केवल एक कारणसे नहीं वरन् अनेक कारणोंसे इस सहमरणकी रीतिका प्रचार हुआ है किन्तु उन अनेक कारणोंमेंसे कोई मूल और प्रबल कारण उसका इस समय घोर अंधकारसे ढक गया है। उस मूल कारणसे ही यह रीति प्रचलित हुई थी, वह मूल कारण आज तक भी विद्यमान है। हमारी समाज इस समय अस्तव्यस्त हो रही है, समाजकी नीति छिन्न भिन्न होगई है समाजके नेताका इस समय पूर्णतासे अभाव है, समयके फेरसे हमारी इच्छा भिन्न होगई है। सारांश यह है कि हम उन्हीं कारणोंसे इसका उद्धार करनेमें सब प्रकारसे असमर्थ हैं; अथवा उन्हीं आदिकारणोंसे इस समय हमारे चित्तपर इतना प्रबल आघात नहीं होता है; इस महामाननीय गवर्नमेन्टके सुराज्यमें सतीदाहकी रीति × लुप्त होगई है, तब उस रीतिके बदलेमें क्या, फल हो सकता है, ? इस समय हम साहसके साथ केवल इतना ही कह सकते हैं कि इस रीतिके लोप होनेके पहले अवश्य ही करोड़ों भस्म हुई सतियोंमें बहुत सी ऐसी हुई थीं कि जो यथार्थ दाम्पत्यप्रेमके वशीभूत होकर अपनी इच्छासे ही मृतकपतिके साथ एक ही चितापर भस्म होगई हैं। आज तक भी ऐसी अनेक हिन्दू स्त्रियों हैं कि जिन्होंने अपने पतिके परलोक चले जानेपर उसीके साथ ही साथ अन्य उपायोंसे अपने प्राणोंका त्याग कर दिया है। जैसी हिन्दुजातिकी स्त्रियोंमें यथार्थ पति भक्ति, शुद्ध दाम्पत्यप्रेम और प्रबल साहस पाया जाता है, हम इस बातको इसके साथ कह सकते हैं कि भारतवर्षमें अन्य किसी जातिकी स्त्रियोंमें इस प्रकारकी प्रबल सामर्थ्य नहीं पाया जाता।

इस समय हम राजपूतोंकी समाजमें प्रचलित हुई और भी एक रीतियोंकी समालोचना करनेकी अभिलाषा करते हैं। डाड साहबके समयमें उस रीतिका प्रचार राजवारेके राजपूतसमाजमें बड़ी दृढतासे था। परन्तु इस समय गवर्नमेन्टके शासनसे उस रीतिका सहमरणकी रीतिकी समान एक साथ ही लोप होगया है। जब उस रीतिका प्रचार नहीं है तब उसकी समालोचनाके करनेकी भी आवश्यकता नहीं जान पड़ती, परन्तु जब कि महात्मा डाड साहब ही उसका वर्णन कर गये हैं, और उस रीतिके लोप होनेका मूल

× अब भी सती विद्यमान है पतिके परलोकगमनमें अब भी कितनी एक साध्वी अपने प्राण दे देती हैं।

अध्याय तीसरा ३.

शेष वंशावलियों; सर विलियम जौन्स; मिस्टर वेटले
कप्तान विलफर्ड, और ग्रन्थकर्ता (टाड) की
दी हुई वंशावलीकी सूचियोंका परस्पर
मिलान उससमयकी घटना:-
ओंका वर्णन ।

वैवस्वतमनुसे आरम्भ कर भगवान रामचन्द्रतक व्यासजीने ५७ राजाओं-
की नामावली दीहै, भेरे देखनेमें उससमयकी ऐसी कोई वंशावली नहीं आई कि
जिसमें उसी समयके होनेवाले चन्द्रवंशी राजाओंकी संख्या ५८ से विशेष-
हो मिश्रके धर्मगुरुओंकी दी हुई संख्यासे यह संख्या बहुत थोड़ी है जिन्होंने हेरो-
डोटसके लेखानुसार अपने पहले राजा अर्थात् सूर्यपुत्र मीनससे आरम्भ कर
उस समय ३३० राजाओंकी नामावली दीहै ।

मनुका पुत्र इक्ष्वाकु सबसे पहला राजा था जिसने पूर्वकी ओर आकर
अयोध्या नगरी बसाई ।

बुध चन्द्रवंशका मूलपुरुष है परन्तु हमको इस बातका भेद नहीं खुला कि
उनकी प्रथम राजधानी प्रयागकी स्थापना किसने की, कई प्रमाणोंद्वारा इतना
पता मिलताहै कि बुधसे छठी पीढ़ीमें पुरुने इसकी नीम डाली थी ।

इक्ष्वाकुसे आरम्भकर श्रीरामचन्द्रतक क्रमशः ५७ राजा अयोध्याके सिंहा-
सनपर स्थित हुएहैं, और ययातिके पुत्रोंसे जो चन्द्रवंशकी शाखाओंका विस्तार
हुआहै, उनकी पीढ़ियों संख्यामें समान नहीं हैं, यदुवंशकी वह शाखा जो कृष्ण

१ मिसरदेशवासी सूर्यको ही अपना प्रथम राज्य स्थापनकर्ता मानतेहैं ।

२ हेरोडाटस मेलंपियोंमेनी प्रकरण १४ पृ० २००

३ जैसलमेरकी ख्यातिमें लिखाहै कि भारतके युद्धके पहले प्रयाग मथुरा कुशस्थली द्वारका
यह क्रमसे चन्द्रवंशकी राजधानी रही हैं, हस्ती राजाने इससे बीच पीढ़ी पीछे हस्तिनापुर बसाया
जिससे अजमीठ और पुरमीठ यह तीन बड़ी शाखा चलीं, इनमें यदु (इन्दु) वंशकी अनेक
शाखा होगई ।

ओंमें स्त्रियोंको जन्मभर तक बंदी रखतेहैं*उसी उद्देशसे और उसीका रणसे राजपूत लोग शिशुकन्याको मारडालतेथे, इसमें कुछ भी संदेह नहीं । यह रीति कितनी ही हृदयको विदीर्ण करनेवाली क्यों न हो कन्याको जन्मभर कारी रखनेकी अपेक्षा इस रीतिको अच्छा कहना होगा, फ्रान्सके फिरिसियान गण इटालीके लाङ्गो-वाडिंगण, और स्पेनरके भिसिगोथ गण जिन कन्याओंको जन्मभरतक कुमारी अवस्थासे धर्मशालामें कारावासिनीकी समान बंद करके रखते थे वही रीति जिन गोथियोंके जन्मक्षेत्रमें आकर मानीगई है इसमें और कुछ भी संदेह नहीं है । राजपूत और प्राचीन जर्मनके वीरोंमें भी ऊपर उक्त कारणसे ही अर्थात् स्त्रियोंके कलंकके भयसे ही इस रीतिका प्रचार था. प्राचीन जर्मनके वीर अपनी २ स्त्रियोंको दूसरेके हाथमें नहीं देखसकतेथे, इसीसे वह अपनी स्त्रीके हृदयमें छूरी मारदेतेथे, और इसीकारणसे राजपूत भी अपनी २ कन्याओंको बराबरवाले पात्रके हाथमें समर्पित करनेमें असमर्थ हो वंशमें कलंक लगनेकी अपेक्षा उस सुकुमारी कन्याको अफीम देकर मारडालतेथे । ”

यह तो हम पहिले ही कहआये हैं कि इस समय सुकुमार कन्याके प्राण-नाशकी रीति दूर होगईहै, परन्तु इसका मूल कारण अभीतक दूर नहीं हुआहै । वह मूलकारण क्या है, और किसकारणसे यह रीति प्रबल होगई है टाड साहबकी उक्तियोंके पढनेसे इसका निश्चय हमारे पाठकोंको भली-भाँतिसे हो जायगा । टाड महोदय कहगयेहैं “ यद्यपि धर्मकी विधिसे इस नृशंसाचारको किसी प्रकारसे भी समर्थन नहीं किया है. परन्तु राजपूत जातिमें प्रचलित विवाहकी रीतिने इस शिशुकन्याकी हत्याको भयंकर

* आजतक विलायतमें यह रीति प्रचलितहै ।

× सिंधुनदीके समीपमें रहनेवाली घाईकार नामकी सिक्खजाति शिशुकन्याका वध इस प्रकारसे करती थी । फिरिस्ता प्रकाशमें, उन इस प्रकारकी रीतिथी, कि “कन्याके उत्पन्न होते ही उसी समय वह उसको बाजारमें लेजातेथे, एक हाथमें तो उनके तीक्ष्ण छूरी होती थी और एक हाथमें वह तुरन्तकी उत्पन्न हुई कन्या होती थी, इस भाँति कन्याको बाजारमें लेजाकर वह ऊँचे स्वरसे कहते कि यदि कन्याके विवाह करनेकी किसीको इच्छा हो तो वह इसको ले ले; यदि कोई कन्याके लेनेमें सम्मत न होता तो उसी समय उस छूरीसे उसके प्राण लेलेते । ” टाड साहबका कथन है कि इसी कारणसे उनमें स्त्रियोंकी संख्या अधिक थी । और उसीसे एक स्त्री बहुतसे पति प्राप्त करतीथी । जिस समय एक पति स्त्रीके पास जाता उस समय घरके द्वारपर एकप्रकारका संकेत (चिह्न) रक्खाजाताथा; उसी चिह्नको देखकर दूसरा पति उसके यहां नहीं जासक्ताथा, जब वह चिह्न मिटजाता तब दूसरा पति उसके पास जाताथा ।

प्रमाणिक मानकर सूर्यवंशकी सूचीको उससे मिलानकरनेके लिये काम करके उसकी अशुद्धताको और भी बढादिया है ।

मिस्टर वेंटलेकी रीतिको इसकारण विशेष उपयोगी मान्ते हैं कि उसका यह अनुमान है कि चंद्रवंशकी सूचीमें राजा जन्मेजय और प्राचीनवानके बीच ग्यारह नरपतियोंके नाम छूटगये हैं, परन्तु जब कि इसमें कोई प्रमाण नहीं है, इसकारणसे वंशसूचीमें चंद्रवंशी राजाओंकी नाभावली सूर्यवंशी राजाओंके सम्मुख दी है, कि जिससे उनका समकालीन सम्बन्ध बनारहै, और उनका एकही समयमें होना सिद्ध भी होजाय, इसरीतिसे सब शंका मिटजायंगी और वंशावलियोंकी शुद्धता, चन्द्रवंशकी जिस प्रधानशाखामें पुरु अजमीठ, हस्ती, कुरु शान्तनु और युधिष्ठिर बडे विख्यात पुरुष हुए उनकी जो नाम-सूची सर विलियम जौन्स और कर्नल विल्फर्डने लिखी हैं, उनमें परस्पर बहुत थोडा भेदहै, और इतनी अधिक सादृश्यता पाईजातीहै कि इसमें शंका नहीं रहती कि यह दोनों एक ही स्थानसे लीगई हैं, पर विचारनेसे हमको यह विदित होताहै कि विल्फर्डके पास विशेष सामग्री थी जिस्से कि हस्ती और कुरु इन दोनों वंशकी नई शाखायें उनके लेखमें पाईजाती हैं अन्तमें एक 'भीमसेन' नाम उसने और भी दियाहै जो मेरी वंशावलीमें है और जौन्सकी वंशावलीमें नहीं है, भीमसेनके पश्चात् दोनों वंशावलियोंमें राजा दिलीपका नामहै, जो मेरे पासकी भागवत पुस्तकमें नहीं लिखा, और अग्निपुराणमें लिखाहै इस्से यह बात सिद्ध होसकतीहै कि इन्होंने अपनी २ सामग्री भिन्नग्रन्थोंसे संग्रह की है, और जब उन ग्रन्थोंकी प्राचीनताका विचार कियाजाताहै तो चित्तमें बडा संतोष होता है, मेरी वंशावलीमें बुधसे १९ वां नाम तन्सु (रंतितार लिखा) है वह जौन्स और विल्फर्डकी वंशसूचीमें नहीं है उसके सिवाय विल्फर्डने हस्तीसे पहले सुहोत्रका नाम लिखा है, जो जौन्सकी वंशावलीमें नहीं है और अग्निपुराणमें लिखाहुआहै ।

आगे उसने जहुको कुरुका क्रमानुयायी लिखा है पर पुराणोंमें उद्धृत की हुई वंशावलीमें परीक्षितको कुरुका क्रमानुयायी लिखा है, जिसने जहुके पुत्रको दत्तक किया था, यह पुत्र सुरथ नामवाला था जिसका नाम तीनों वंशावलियोंमें पाया जाताहै कहीं भेद है तो मात्रा मात्रका ।

यदि मेरे निर्माण किये हुए सूर्यवंशके वंशवृक्षसे सर विलियम जौन्सकी सूर्य-वंशावलीसे मुकाबला किया जाय तो असली मुख्य बातें प्रायः एकही होंगी, में

प्रस्ताव निश्चय होजायगा, तब सलम्बूरके सरदार यश और गौरवकी आशाके वश होकर सबसे पहले ही इस विधिको भंग करदेंगे । वह अपनी कन्याओंके विवाहके समयमें इतना अधिक धन खर्च करते थे कि उनके स्वामी राजाको इतना धन उठानेकी सामर्थ्य नहीं थी । कवि और वंशकारिकाओंने उनकी उस दानशूरताकी ऊँची प्रशंसासे राजवाड़ेको प्रतिध्वनित करदिया था, उन्होंने अपने नाम जातीयके काव्यमें उज्ज्वलरूपसे चित्रित करके राजपूत ज्ञानी श्रेष्ठ महाराजा जयसिंहके इस शुभ उद्देशपर कुठाराघात किया, जितने दिनोंतक वृथा गौरवकी इच्छाका दमन तथा आडम्बर प्रिय राजपूत सरल सामान्य भावका अवलम्बन न करें, जो उतने दिनतक विवाहके समयमें अधिक धनके खर्चका विषमय फल दूर नहीं होगा । दुर्भाग्यकी बात है कि जो लोग इस रीतिको दूर करनेमें भलीभाँतिसे समर्थ हैं इस अधिक धनके व्ययने उनके स्वार्थको और भी सिद्ध कर दिया है । उन्होंने इसकी और भी पुष्टता कर दी थी, अर्थात् कवि, ब्राह्मण, गाथाके बाँचनेवाले और रहस्य क्रीडकगण विवाहकी सभामें दलकेदल बाँधकर आते थे, और कन्याके पिताकी उच्च प्रशंसा करके दानशूरताको अधिक बढ़ा देते थे । राजपूत कवियोंका कुलही प्रधान यशका घोषक था, वह लोग पहले २ सामन्तोंकी कन्याओंके विवाहमें अधिक धन व्यय करके कन्याके पिताको अधिक धन देनेमें उत्तेजित कर देते थे । यदि कन्याका पिता उनकी उस प्रार्थनाको पूरा न करता तो कविगण उसके अपमानकी कविता बनाकर उसका घोर तिरस्कार करते थे । इसी डरसे कन्याके पिताके अधिक धनमें सामर्थ्य न भी होती तो भी वह उस समय किसी न किसी प्रकारसे अधिक धन खर्च करता था । राजपूतोंके कविश्रेष्ठ चंदकवि इस बातको लिख गये हैं,—“ कि पृथ्वीराजके साथ अपनी कन्याके विवाहके समयमें दाहिमाने अपने खजानेको खाली कर दिया था; और उसका फल उनको यह मिला कि मनुष्योंके समाजसे उनको अनन्त यश मिला । विवाहके समयमें राजकविको पुरस्कारमें एक लाख रुपया मिलता था । ” महात्मा टाड साहब इसको लिखगये हैं कि अपनी शोचनीय अवस्थाका समयमें भी महाराणा भीमसिंहने अपनी कन्याके विवाहके समयमें प्रधान राज कविको एक लाख रुपये दान करके दिये थे ।

बहुत छोटी सी कन्याके हत्याके सम्बंधमें हमें यह कहना है; कि यद्यपि प्रबल प्रतापशाली ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी आज्ञासे इस समय यह रीति दूर होगई

कलियुगका आरम्भ होता है, मैं उनकी समकालीनताको थोड़े विषयमें शीघ्र ही वर्णन करूँगा, जिसको भिन्न २ ग्रन्थकर्ताओंने स्वीकार किया है ।

इस प्राचीन निर्णय करनेमें हमारा यही ध्यान है जहां तक बने यह निर्णय सत्य २ हो हम समकालीनता रामायण और पुराणोंद्वारा स्थिर करते हैं ।

प्रथम समय तो सूर्यवंशके विख्यात त्रिशंकुके पुत्र राजा हरिश्चन्द्रके साथ आरम्भ होता है कि जिनका नाम सत्यवचनके लिये विशेष प्रसिद्ध है, यह उसवंशका चौबीसवाँ राजा है [देखो स्कन्दपुराणका सहास्रि खण्ड] और नर्मदा नदीके तटपर स्थित माहिष्मतीके हयहयवंशमें उत्पन्न हुए विख्यात नरपति सहस्रार्जुनको वध करनेवाले परशुरामका समसामयिक माना गया है, रामायणमें इसका प्रमाण भी है जिसमें इक्कीसवार क्षत्रियोंके नष्ट किये जाने और ब्राह्मणोंको परशुरामके अधिष्ठातृत्वमें राज्य अधिकारका वर्णन किया गया है, इसके साथ उस समयका भी पता लगता है कि जब क्षत्रियोंने राजसिंहासन खोदिया, जिसके विषयमें ब्राह्मण उपहास करते हुए कहते हैं कि उन्होंने अपने वंशकी पवित्रता गँवा दी, और इस पिछली बातका खंडन स्वयं उन्हींके ग्रन्थोंमें स्पष्टरूपसे पाया जाता है जैसा कि आगेकी समकालीनता पर लिखा है ।

यही समय सूर्यवंशकी सूचीके बत्तीसवें राजा सगरसे सम्बन्ध रखता है जो चंद्रवंशी सहस्रार्जुनके छोटे वंशधर तालजंघके समसामयिक था जिस समय

१ भविष्यपुराणमें सहस्रार्जुनको चक्रवर्ती निर्देश किया है, इसके निमित्त यह कहा गया है कि इसने तक्षक तुरुष्क अथवा नागवंशके कर्कोटकको विजय किया, माहिष्मतीकी प्रजाको अपने साथ लेकर वहाँके राज्यसे च्युत होनेपर इसने भारतके उत्तरमें हेमनगर बसाया, नर्मदाकिनारेके देशोंमें इस राजाके विषयमें कितनी एक कहावतें प्रसिद्ध हैं, उसको सहस्र भुजावाला कहा जाता है और अलंकाररूपसे इसके बहुत सन्तान बताई जाती हैं, तक्षक वा नागकुलके विषयमें हम आगे चलकर विचार करेंगे, पुराने समयकी ऐसी रीति थी कि अनेक जातियें जन्तुग्रह वा जड़ पदार्थोंके नामसे पुकारी जन्ती थीं, हमारी धर्मपुस्तक बाइबिलमें भी इटीप्रकार मिश्र साम मकदनियोंके नरपतियोंको मक्खी और मेढा कहकर निर्देश किया है, और भारतमें नाग तुरंग और वानर नामसे संकेत किया है ।

यह नागवंश एशियाके ऊँचे देशोंमें प्राचीनकालसे भी बहुत फैला हुआ था, और बड़ा विख्यात था, जिसका वर्णन कुछ आगे करेंगे, रामायणके लेखसे जाना जाता है कि एक तक्षक नागने अश्वमेधयज्ञके घोड़ेको अनन्तका रूप धारण करके चुराया था ।

(तुरुक्ष वंश तक्षकवंशसे भिन्न है देखो राजतरंगिणी)

(अनुवादक)

अत्यन्त भयंकर मानी जाती थी । उस रीतिका नाम जुहार है । यह जुहारकी रीति एक समयमें इकट्ठी हुई हजारों राजपूत वालाओंको प्रज्वलित हुई चिताकी अग्निमें भस्म करदेती थी । मेवाडके इतिहासमें कई स्थानोंमें हमारे पाठकोंने इस जुहारकी रीतिका वृत्तान्त पढ़ा होगा । कर्नेल टाड साहबके समयमें इस रीतिका प्रचार बड़ी प्रबलतासे था; अंगरेजी राज्यके शासनसे इस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें शान्तिमति सती विराजमान हो रही है । देशीय राजाओंमें परस्परके लड़ाई झगड़ोंका नाश जड़से होगया है, जिस कारणसे पहले जहर दिया जाता था इस समय वह कारण स्वयं ही दूर होगया है, इस रीतिका एक साथ लोप होते ही हम यहांपर इतिहासवेत्ता टाड साहबका अनुसरण करते हैं । महामानीय टाड साहब लिखगये हैं कि “अन्यदेशोंकी स्त्रियोंके सम्मुख राजपूतोंकी स्त्रियोंका भाग्य अत्यन्त ही शोचनीय विदित होता है । जीवनके एक २ पगपर मानों उनके लिये मृत्यु मुँहफैलाये खड़ी रहती थी; सुकुमार अवस्थामें अफीमका सेवन और बड़े होनेपर प्रज्वलितहुई चिताकी अग्नि उन राजपूत वीरवालाओंके प्राण लेनेको तैयार रहती थी; और यदि इन दोनोंके बीचमें जो कुछ उपद्रव होगया तो जहर देकर प्राण लेलिये जाते थे । सारांश यह है कि पग २ पर उनकी मृत्यु समीप खड़ी रहती थी; जिस समय राजपूतोंकी युद्धमें पराजय होगई अथवा अपना नगर शत्रुओंके अधिकारमें होगया तो राजपूत वीरवाला अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये मृत्युका होना कल्याणकारक मानती थीं । यूरोपकी स्त्रियें युद्धमें विपत्ति पडनेपर जिसभाँति निर्विघ्नतासे रहती हैं, एकमात्र ईसाई धर्मही उसका मूल कारण है । और मध्यकालकी कुलीन वीरवाला भी निस्संदेह अवलाओंको निर्विघ्नतासे रहनेमें सहायता करती थीं । परन्तु बड़े आश्चर्यका विषय है कि जो सम्य राजपूत स्त्रियोंके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना यत्न करते थे उन्होंने अपनी जातिमें इस विधिको नियुक्त नहीं किया । जिससे युद्धके समयमें स्त्रियोंके ऊपर ऐसे अन्यायके अत्याचार दूर होसकते ।”

टाड साहब इसको पीछे लिखगये हैं, कि “वर्बरके तातारियोंकी समान पाखंडी शत्रुके उपस्थित होनेपर हम इस भयंकर विषप्रयोगकी रीतिसे स्त्रियोंके सतीत्वके सम्मानकी रक्षाकी प्रशंसा करके सहानुभूति कर सकते हैं । परन्तु यह रीति राजपूतोंकी अन्तर जातिके समरमें भी प्रचलित थी । इस प्रकारके सैकड़ों खुदेहुए पत्र हमने पाये हैं; इससे प्रकाशित होता है कि शत्रुपक्षकी स्त्रियोंके बंदा होतेही युद्धमें विजयका होना पाया जाता है ।” महात्मा टाड साहबने ऐसे

वंशधर शल, जरासंध, तथा युधिष्ठिर क्रमानुसार ५१।५३। और ५४ में वंशधर होते हैं ।

अंगवंशोत्पन्न पृथुसेन बुधसे त्रेपन ५३ वां था जो भारतके युद्धमें युद्ध करके बचरहा था ।

इसप्रकार सबका औसत लगानेसे बुधसे श्रीकृष्ण और युधिष्ठिरतक पच-पन पीढ़ी होती हैं, और प्रत्येकका शासनकाल बीसवर्षका लगावें तो इतनी पीढ़ियोंमें ११०० वर्ष होते हैं, फिर यदि यह ग्यारहसौ वर्ष ईसासे ५६ वर्ष पहले होनेवाले विक्रमादित्य और श्रीकृष्णके मध्यवर्ती राजोंके समयके साथ जोड़ दिये जायें तो सूर्य और चंद्रवंश दोनोंके समयका निर्णय ईसासे २२५६ वर्ष पहलेका निकलता है, कि जिसके कुछ दिनों पीछे ही मिश्र चीन और असीरियाके राज्योंका स्थापित होना बहुधा माना जाता है, और यह आरम्भ महाप्रलयकी घटनासे डेढ़सौ वर्ष पीछेसे जानना चाहिये ।

यूलर तथा भारतवर्षके हनहूण होंगे अनुमान होता है कि यह तातारीजाति चंद्र अथवा बुधके वंशमें हों । ❀

❀ यह दोनोट भी टाडसाहबकी सर्वथा मनगढन्त हैं परशुरामने सूर्यवंशकी सहायताके निमित्त शस्त्र धारण नहीं किया किन्तु सहस्राब्दिनके पुत्रोंने जब इनके पिता जमदग्नि को मार डाला तब उनसे बैर लेनेके लिये इन्होंने क्षत्रियमात्रपर शस्त्र उठाया था, राजा दुश्शरथ सूर्यवंशोत्पन्न थे उनसे तथा रामचन्द्रसे युद्धकी इच्छा की. (अनुवादक)

श्रीकृष्ण तो बौद्धधर्मावलम्बी न थे न उन्होंने कोई मत चलाया और न चन्द्रवंशियोंका बौद्धमत था यह बुद्धमत तो बहुत पीछेका है ।

मिसरवालोंने सन् ई० से २१८८ वर्ष पहले मिसराइम, असीरियावालोंने ई० २०५९ पूर्वमें और चीनियोंने २२०७ में अपने देश बसाये थे ।

यह बात कदाचित् जैन पंडितकी कृपासे वा सहायतासे लिखी होगी चम्पा जिसको अंगपुरी कहते हैं, गंगाके किनारे भागलपुरके समीप थी टाडसाहबका इसको तिब्बतके समीप लिखना भ्रम है हूणोंके विषयकी कल्पना भी अप्रमाण है । न अभिपुराणके देखनेसे यह बात पाई जाती है कि सूर्यवंशका मुख्य पुरुष मध्यएशियासे आया था, इसीप्रकार वंशवृक्षमें भी बहुत गड़बड़ है जैसा कि तालजंघकी उन्होंने सहस्राब्दिनकी छठी पीढ़ीमें लिखा है, परन्तु वंशवृक्षसे उसमें अन्तर आता है; समसामयिकताका समाधान हमने पहले पृ० १४ के नोटमें कर दिया है, सृष्टिके वर्षोंका समाधान तो सहजमें होसکتा है, इससमय जब कि विक्रम संवत्तक युधिष्ठिर संवत्को ही ३०५० वर्ष होते हैं, तब इक्ष्वाकुसे लेकर ईसातकके वर्षोंकी गणना २२५६ वर्ष बताना सर्वथा निर्मूल है और युधिष्ठिरसे ईसवी संवत्के प्रारंभतक ३१०७ वर्ष होते हैं तथा १९०५ ई० तक ५०१२ वर्ष होते हैं और इक्ष्वाकुसे ईसूतकके वर्षोंकी गणना २२५६ वर्ष मानना सर्वथा अशुद्ध है । (अनुवादक)

गयेहैं, “ कि मनुकी आज्ञा है कि यदि कोई पुरुष पराई स्त्रीको भगिनी कहकर पुकारले, तब उसको, वृद्धको, पुरोहितको, राजाको और नवविवाहिता वधूको मार्ग छोड़ देना होगा । और अतिथिसेवाकी प्रशंसनीय विधिसे उन्हें नियुक्त कर दिया है कि गर्भवती स्त्री, नवविवाहिता वधू और सुन्दरी युवती स्त्रीको अन्य अतिथियोंके पहले भोजन करावे ।” इस प्रकारकी अन्य विधियाँ भी भलीभाँतिसे प्रकाशित हो रही हैं । एक समयमें स्त्रीजातिको इतना बंद करके नहीं रखा जाता था; मुसलमानोंके प्रबल प्रतापके समयसे इस रीतिका प्रचार हुआ है, और हिन्दुओंने उनका अनुकरण कठोरतासे किया है । परंतु मनुके ग्रन्थोंमें ऐसी परस्परमें विवाद करनेवाली रीतियाँ अनेक दृष्टि आती हैं कि जिनसे हम कह सकते हैं कि वह समस्त रीतियाँ मानों एक शास्त्रकारकी बनाई हुई नहीं हैं, कारण कि इन रीतियोंमें स्त्रियोंके प्रति सम्मान और अवज्ञामूलक दोनों विधियोंकी व्यवस्था देखी जाती है । * मनुके नियत किये हुए निम्नलिखित विधान अवश्य ही प्रशंसाके साथ ग्रहण किये जाते हैं, “ पर्व और आनन्द उत्सवके समयमें स्त्रियोंको रत्नोंके आभूषण देने उचित है. कारण उसका यह है कि यदि भार्या सुन्दर वस्त्रभूषणोंसे न सजाई जाय तो वह भार्या स्वामीको प्रफुल्लित नहीं करती है. यदि स्त्रीको सुन्दर २ वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित किया जाय तो वह स्त्री पतिको अत्यंत प्रसन्न करती है । ” निम्नलिखित विधिसे मनुजीने स्त्रियोंकी सामर्थ्यमें निःसन्दिग्ध शक्ति स्वीकार की है, “ स्त्रियाँ केवल इस जीवनमें अज्ञानी अथवा मूर्ख नहीं हैं, वह ऋषियोंको भी पुण्य मार्गसे हटाकर पापकी ओर ले जा सकती हैं । ” इसकारण सर्वश्रेष्ठ शास्त्रकारोंकी

—पुकारा था, और उसके निकटसे पात्र और रस्तीको मांगा । राजपूत स्त्रीने उसके इस वचनसे महाक्रोधित होकर कहा, “ महाराज ! मैं राजपूतनी हूँ, अर्थात् मैं राजपूतकी स्त्री हूँ; और मैं राजपूतोंकी जननी भी हूँ । उसके इस क्रोधभरे वचनको सुनकर कल्याणनामक उक्त सैनिकने हाथ जोड़कर अपने अपराधकी क्षमा मांगी और माता कहकर उसके क्रोधको शान्त किया । इसके पीछे उस राजपूतकी स्त्रीने जलके पात्र उठाकर अपने पुत्रको बुला उसको उपदेश दे समझा बुझाकर जल दे विदा किया । १८०७ ईसवीमें यह घटना हुई थी, यह सैनिक विदोष साहसी था । १८१७ ईसवीमें जब टाड साहबने ७२ बंदूकधारी शरीररक्षकोंके साथ १५०० पिंडारिकों परास्त किया था यह कल्याण भी उन्हीं ७२ जनोंमेंका एक मनुष्य था ।

* यह बात निरीभ्रमकी है कि यह बातें भिन्न २ ग्रंथकारोंकी हैं. मनुजी सबके गुण और दोष दोनों ही लिखते हैं ।

चौथा अध्याय ४.

भिन्न २ जातियोंद्वारा राज्यों और नगरोंका
स्थापित होना ।

सूर्यवंशियोंन सबसे प्रथम अयोध्यानगरी बसाई जो बड़ी ऐश्वर्यशालिनी थी उससे अवधका नाम आजतक प्रसिद्ध है और यह नाम उसदेशका भी है जो मुगल बादशाहके नाममात्रमंत्रीके अधिकारमें है, और जिस देशकी पच्चीस वर्ष पहले प्रायः वही सीमा थी जो सूर्यवंशियोंके पुराने राज्य कौशल की थी, एशियाकी सब ही पुरानी राजधानी बड़े ऐश्वर्य सम्पन्न थीं, उनमें अयोध्याका वैभव सबसे अधिक था, इस समय प्रसिद्ध लखनऊ नगर प्राचीन अवधनगरके बाहरी-भागोंमेंसे एक था जिसका नाम भगवान् रामचन्द्रने अपने भ्राता लक्ष्मणके सन्मानके निमित्त लक्ष्मणपुर रक्खा था ।

१ वाल्मीकिजीने रामायणमें इस प्रकार इसका वर्णन लिखा है कि—सरयूके तटपर कौशलनाम एक बड़ा देश है जो धनधान्यसे पूर्ण है, उसके भीतर बारह योजनके विस्तारमें मनुकी बसाई अयोध्या नगरी है, तीन योजनकी चौड़ाई है, जिसके राजमार्ग यथोचित निर्माण हुए हैं, जहाँ छिडकाव होतारहता है, इसमें सुन्दर बाटिका लगी हैं, यह व्यापारियोंसे पूर्ण है, विशालद्वार और ऊँचे महारावदार दालनोंसे शोभित अलखस्त्रोंसे सम्पन्न रथ, हाथी, घोड़े और दूसरे देशके राज-दूतोंसे संगठित है, पर्वतशृंगोंकी समान गुम्फजवाले राजमहलोंसे शोभित, बड़े ऊँचे २ महल हैं, जिनमेंसे बाँसुरी वीन पखावजकी ध्वनि गूँजती रहती है, नगरीके चारों ओर गहरी खाई खुदी हुई है, बड़े २ धनुषधारी योधाओंसे यह नगरी रक्षित है, महाराज दशरथ इसके अधिपति हैं, यहाँके सब पुरुष धर्मात्मा हैं, कोई नास्तिक नहीं है, सब अपनी २ स्त्रियोंसे प्रेम रखते हैं स्त्रियें सुन्दर चतुर मधुर बोलनेवाली, विवेकिनी परिश्रमशील पतिव्रता पतिकी आज्ञा माननेवाली उत्तम भूषण और वस्त्र धारण किये रहती हैं, पुरुष सत्यवादी अतिथिसत्कार करनेवाले गुरुजनों पित्रों और देवताओंकी पूजा करनेवाले हैं, वहाँ आठ राजमंत्री, दो उत्तम शास्त्रके ज्ञाता धर्माचार्य, तथा दूसरे छः उपमंत्री हैं, यह जितेन्द्रिय निलोभी सहनशील धैर्यवान् हैं सुख तथा सन्तोषी हैं अपने कार्यदेशके व्यवहारमें बड़े चतुर सेना और खजानेपर ध्यान रखनेवाले अपराधी होनेपर पुत्रको भी दंड देनेवाले, शत्रुओंपर भी न्याय न करनेवाले अभिमानरहित स्वच्छ वस्त्र धारण करनेवाले संदेहके विषयोंमें निश्चिन्त न रहनेवाले पूरे राजभक्त हैं ।

उदारचित्त टाड साहव हिन्दू स्त्रियोंकी शिक्षा और ज्ञान बुद्धिके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन करगये हैं “जो मनुष्य किसी समयमें भी गंगाजीके पार नहीं जासकते थे उनके द्वारा जो हिन्दू स्त्रियोंके चित्र अंकित हुए हैं, ऐसा देखा जाता है कि उनसे बहुतसे मनुष्योंके हृदयमें संदेह उत्पन्न हुआ है। उन हिन्दू जातिकी स्त्रियोंका वर्णन मोल ली हुई दासी कहकर किया है; और सैकड़ों हजारों स्त्रियोंमेंसे एक भी ग्रन्थ नहीं पढ़ सकती थी। उनको ऐसा विश्वास था कि मैं उन सब भ्रमण करनेवालोंसे प्रश्न करूंगा कि उन्होंने “राजपूत” इस नामको सुना है या नहीं ? कारण कि राजपूत जातिकी नीच जातियोंके सामन्तोंकी कन्याओंमें भी ऐसी अल्प संख्यक हैं, कि जो लिखना पढ़ना नहीं जानती हैं अपने २ अप्राप्त व्यवहारी पुत्रोंको धन सम्पत्तिके अविभाविका पदपर नियुक्त हुई राजपूतजननीके साथ जो वार्तालाप किया है वह अवश्यही उन राजपूतोंकी स्त्रियोंकी बुद्धि और समाज तत्त्वके ज्ञानके सम्बन्धमें अपना मन्तव्य प्रकाश करेंगे × यद्यपि भारतवर्षमें स्त्रियें राज्यशासनकी अधिकारिणी नहीं होती थीं, परन्तु अपने २ पुत्रोंके अप्राप्त व्यवहारके समय प्रतिनिधिरूपसे राज्यशासनमें पूर्ण सामर्थ्य रखती थीं, अब भारतके इतिहासको पढ़नेसे उसी भाँति असीम साहस और योग्यतायुक्त बहुतसी स्त्रियोंका शासन विवरण, उज्ज्वलतासे वर्णित हुआ है । *

महात्मा टाड साहवने इसी अभिप्रायसे कि राजपूतजातिके चरित्रोंके प्रधान २ लक्षण और उनके गुणोंकी विलक्षणता हमारे पाठकगणोंको भलीभाँतिसे दृष्टि आजाय, इसी कारणसे उनका वर्णन करना आवश्यक विचारा; उस वर्णन किये हुए

× महात्मा टाड साहव अपने टीकेमें लिखगये हैं, कि “बूंदीके राजाने अपनी मृत्युके समयमें मुझे अपने पुत्रके अभिवाचक पदपर नियुक्त करगये । उस सुकुमार पुत्रके कल्याणके निमित्त और राज्यके शासनके निमित्त मैंने एक २ समयमें बहुत सी घटनाओंकी बातचीत बूंदीराजकी माताके साथ की थी । उन्होंने मेरे साथ भ्रातृसम्बन्ध स्थापन किया परन्तु सर्वदा उनके एक विद्रवासी तीसरे मनुष्यके सामने मेरी चर्चा हुआकरती । और एक परदा हम दोनोंके बीचमें पड़ा रहता उनकी उक्ति ऐसी निभ्रान्त थी और सब प्रकारसे वह गाढ़ज्ञानकी प्रकाशक थीं, उसी भाँतिसे उसके पत्र भी उसके प्रकाश करनेवाले हैं । उस प्रकारके बहुतसे पत्र मेरे पास विद्यमान हैं । मैं ऐसे अनेक प्रमाण दिखासकता हूँ ।”

* फारिश्ता अपने इतिहासमें अकबरके आक्रमणके विरुद्ध अपने सुकुमार पुत्रके स्वत्वकी रक्षाके निमित्त गाढ़की रानी दुर्गावतीकी वीरताको उज्ज्वलतासे चित्रित करगया है । वोडिसियाकी समान उन्होंने वीरसाजसे सुसज्जित होकर चतुरंगिणी सेनाकी सहायतासे अकबरके भेजे हुए-

सिकन्दरका सामना करनेवाले पोरसनामके दो महाराजाओंमेंसे एक पुरुवंशकी नगरी हस्तिनापुरमें निवास करता था, संभव है कि वह चन्द्रगुप्तका पुत्र वरुसर हो जिसके लिये ऐसा अनुमान है कि वे यूनानियोंके उल्लेख किये हुए सेडों कोटस और अविस्तरस हो, सिकन्दरके इतिहास लेखकोंने जिन दो पोरसराजाओंका वृत्तान्त लिखाहै उनमेंसे एक तो ऊपर लिखे पुरुवंशियोंके आदि स्थानमें ही रहता था, और दूसरा पंजाबकी सीमापर था, जिससे यह बात कि सिकन्दरके समय पुरी चन्द्रवंशी थे सिद्ध होती है तथा अनेक ग्रन्थकारोंने मेवाडके नर-पतियोंको जो पोरस कुलमें होना बताया है उसको निर्भूल सिद्धकरताहै ।

—नरपति हुए, इसमें दुमित्रको भी संयुक्त करतेहैं,—हमारे विचारमें (यूथिडिमिस) का पुत्र (डेमिट्रियस) ही था, परन्तु मिनेण्टरके मध्यमें सिंहासनपर स्थित होनेके कारण अपने पिताके सिंहासनका अधिकारी न होसक्ता, मेरे पास एक सिक्का इस अन्तिम विजेता 'मिनेनडर' का भी विद्यमान है यह मुझे शूरसेन देशसे मिलाथा, यह पदक विजयके स्मरणके निमित्त निमि कियागयाथा, उसके ऊपर एक चित्र स्वर्गीय शान्तिके पंखवाले दूतकाहै, वह हाथमें ताडवृक्षकी शाखा लियेहै यह दोनों नाम बाक्ट्रियाके इतिहासकी अपूर्णताको पूरी करदेंगे, कारण कि मिनेनडरको लोग भलीभांतिसे जानतेहैं, यदि एरियन इतिहासलेखक न होता तो अपोलोडोटसका नामतक लुप्त होजाता, जिसने [पैरीप्लस आफ दी इरीथियन्सी] नाम पुस्तक दूसरी शताब्दीमें बनाई थी, जब कि एरियन भडौचको संस्कृतमें भृगु कच्छ और यूनानी वरूगज कहतेहैं । और यह बात सत्यहै यदि एरियन न होता तो मेरे अपोलोडोटसके पदककी आधी प्रतिष्ठा होती, और यूरुपमें आनेके पीछे मुझे डेमोट्रियसके बुखारामें प्राप्तहुए, एक पदकके विद्यमान होनेका भी पता मिला, जिसपर सेंटपिटर्स बर्ग (रूसकी राजधानी) के निवासी एक विद्वानने निबन्ध लिखाहै ।

१ गंगाजीकी एक तीव्र बाढ़से हस्तिनापुर बहगयाहै, विल्फर्ड साहबका कथनहै कि महाभारतके पश्चात् छठी वा आठवीं पीढ़ीमें यह घटना हुई होगी, दो आवेकी यात्रा करनेवालोंने इस स्थानको देखाहोगा, जहाँ गंगा और यमुनाने अपने स्थानको परिवर्तन कियाहै ।

२ सर टामस रो सर, टामस हर्बर्ट, सर होल्सटीन, राजदूत ओलीरियस, डेलाविली, चर्चिलने अपने संग्रहमें और इन्हींकी पुस्तकोंसे लेकर एन्विलवेयर और आर्नी तथा रेनल आदिने लिखाहै ।

३ यदि किसी दूसरी रीतिसे यह बात प्रमाणित हो तो केवल मेवाडके वंशकी इस बातसे अज्ञानकारी थी इसके विरुद्ध कोई दृढ़ प्रमाण हो ही नहीं सकता, परन्तु उससमय सिन्धु और पश्चिम ओरसे भारतमें आनेवाली चन्द्रवंशीय तथा अन्यजातियोंसे सूर्यवंशी राजा दबगये थे, और उनके द्वारा उनको राज्यसे च्युत होना पडा ।

—होनेकी बात लिखी है वहां आठ राजाओंके नाम लिखे हैं, पुष्प, मित्र और दुर्मित्रको यवन और बाल्कीकराजाओंसे पृथक् मानाहै ।

राजस्थानकी प्रत्येक राजसभाहीको अपने २ कार्यके अनुसार उपाधि प्राप्त हुई है । और जयपुरकी राजसभाके प्रति जैसी “झूटे दरवार” की उपाधि मिली है × राजसभाके पक्षमें उसकी अपेक्षा अपमानकारी शब्द दूसरा नहीं है । सामान्य सत्य उपाधि राजदरवारकी समान सुविचार और प्रशंसापूर्णकी परिचय देनेवाली है । शठता और प्रतारणामें बहुत सी भिन्न छाया दृष्टि आती है; स्वाभाविक नीति की हीनताके हेतुमें शठताने जन्म ग्रहण किया है; परन्तु इस स्थानपर प्रतारणका राजपूतजातिकी आत्मरक्षाके अर्थ ही अवलम्बित कहना ठीक होगा । परन्तु किसी एक जातिके चरित्रोंके सम्बन्धमें न्यायसे मन्तव्योंके गठनके पहले अवश्य ही उस जातिके विधिसमूह, उन समस्त कार्योंके परिणत करनेकी प्रक्रिया और आभ्यन्तरिक उपद्रवोंको शान्त करनेकी रीतिको मन लगाकर समालोचना करनी उचित है । जिस समय राजपूतजातिके हाथमें राजनैतिक स्वाधीनता विराजमान थी, हम अवश्य ही उस समयके योग्य मनुष्योंके मन्तव्योंकी परीक्षा करनेके अभिलाषी हैं । केवल कितने विपक्षके काल्पनिक भ्रान्त ज्ञानके ऊपर निर्भर करके किसी एक जातिके प्रति मन्तव्य प्रकाश करनेको हम आगे नहीं बढ़ें, हमने इस स्थानपर उसीका अनुसरण किया है कि जिसका वर्णन वह हिन्दू जातिके सम्बन्धमें कर गये हैं । यदि कोई बुद्धिमान् मनुष्य प्रत्येक हिन्दुओंके स्वभाव और उनके मनकी वृत्तिकी परीक्षा करे तो प्रत्येक मनुष्यको ही किसी न किसी भिन्न विषयका अवलम्बन करते देखा जायगा । उनमें कितने तो ऐसे होंगे कि जिनके चरित्र अत्यन्त ऊँचे हैं, और कितने ऐसे होंगे कि जिनके चरित्र अत्यन्त दुष्ट हैं । उनका यह ज्ञान है कि निःस्वार्थ मित्रता स्वामीकी भक्ति और अन्यान्य श्रेष्ठ गुणोंसे विभूषित कहे जाकर विख्यात हैं; परन्तु उसके साथ ही साथ उनमेंसे बहुतोंका अंतःकरण कठोर है वह निर्लज्ज, ऊधमी और साधारण झगडोंसे प्रबल अत्याचारोंके करनेमें भी शान्त नहीं होते ।” यवनोंके मंत्रीने फिर कहा है कि हिन्दू जाति धार्मिक, मधुर भाषी, और अपरिचितोंके ऊपर दयाकरनेवाली आनंदस्वभाव, सुशिक्षित, न्याय विचार प्रिय, कार्यमें कुशल सभ्यप्रिय और सम्पूर्ण कार्योंमें असीम विश्वासके पात्र हैं । विपत्तिके समयमें उनके चरित्र उज्ज्वलतासे प्रकाशमान हुए हैं । उनकी सेना युद्धभूमिसे भागनेके नामको भी नहीं जानती थी, परन्तु जिस युद्धमें अपने

× सुखका विषय है कि इस समय जयपुर राजदरवारके प्रति इस प्रकारकी परितापदायक उपाधिका प्रयोग नहीं है ।

उसके वंशजोंने अनेक राज्य स्थापन किये । उससे आठवें राजा विसतके आठ बेटे हुए, जिनमेंसे दुह्यु तथा वभ्रुनामकी दो शाखाओंका विशेष वृत्तान्त पायाजाताहै ।

अब्बुलफजलको काशिल और उसकी राजधानीका नाम विदित था पर इस स्थानका पता नहीं जानता था, जिसको उसने देविल वा देवल लिखाहै, जो इस समय नगरठडा कहाताहै, इस परिश्रमी इतिहासलेखने उसके लिखनेमें इस प्रकार लेखनी चलाईहै कि पुराने समयमें सिहारिस (शल) नामक एक राजा था, जिसकी राजधानी अलोर थी, उत्तरमें काश्मीर और दक्षिणमें सागर पर्यन्त उसका राज फैलाहुआ था । उस देशका सल्वोसिहर और वहांके राजाओं तथा निवासियोंका सहराई उपनाम पडगया ।

इससे यह विदित होताहै कि आलौर सिंगाटिसे राज्यकी राजधानी थी जिसको वाकिट्याके मिनेनडरने जीता था, भूगोलवेत्ता अरबनिवासी इनहाँकलने इसका वृत्तान्त लिखाहै, परन्तु कदाचित् लिखनेमें एक बिन्दुअधिक लगानेसे आरोरके बदले आजोर वा अजोर होगया, हो जैसे कि सर डब्ल्यूऔसलेने अपने अनुवादमें लिखाहै ।

विख्यात डैनविलने भी इसका वृत्तान्त लिखाहै परन्तु वह इसके स्थानको न जानताथा, उसने अब्बुलफिदाके लेखको उद्धृत करके लिखाहै कि आजोर ऐश्वर्यमें मुलतानके समान था ।

यदि भारतवर्षके उत्तरीभागकी राजधानियोंका पता लगानेवाले पुरुषका नाम पूछाजाय तो वह पता लगानेवाला ' मैं ' कहाजासकताहूँ जैसे कि यादवोंकी राजधानी झरपुर यमुना नदीपर, सोढोंकी राजधानी आलौर सिन्धुके तटपर, पाडिहारोंकी राजधानी, मन्द्रोदरी (मंदोर), चन्द्रावती अर्बलीकी तलैटीमें । बाह्लीकराजोंकी राजधानी वल्लभीपुर गुजरातमें, जिनको अरबयात्रियोंने वल्लहरानाम दिया है, बाह्लीकवंशी अरोरके शलके वंशधर सौराष्ट्रके वल्लोराजपूतोंने. इसका नाम वल्लोपुर रक्खाहोगा, उन लोगोंको ठडामुलतानका राव कहकर आजतक भाटलोग आशीर्वाद देतेहैं, यह ठडा और मुलतान बाह्लीकके पुत्रोंकी राजधानियां थी, और यह बात भी संभव हो सकतीहै कि महाभारतके युद्धके पीछे जब भारतवर्षके हर्षवर्धन (वल्लराम) भारत वर्षको त्याग कर चलेगये तब उनकी आधीनतामें रहनेवाले इस कुलकी एक शाखाने बलिक वा वल्ल वसाया हो जो नगरोंकी जननीके नामसे विख्यात है, जेसलमेरके इतिहासमें लिखाहै कि चन्द्रवंशकी यादव तथा बलिक (बाह्लीक) शाखायें महाभारतके पश्चात् खुरासानमें राज्य करती थीं, जिनको इनडोसीथिक जातिके नामसे यूनानी ग्रन्थकारोंने लिखाहै ।

१ सहाराशब्द फारसीमें जंगलवाचक है कदाचित् उससे सहराई शब्द बनाहो ।

२ कदाचित् यह नाम कच्छसागरके तटके लिये दियागयाहो ।

३ मन्द्रोद्री नाम नहीं संस्कृतमें इसको माण्डव्यपुर लिखाहै, अब मंडोरहै (अनु०)

४ अरबवालोंने वल्लहराशब्द दक्षिण राठौरोंको लिखाहै, वल्लभीपुरके राजोंको नहीं कारण कि अरबवालोंने उनकी राजधानी मानकेर वा मान्यखेट लिखाहै जो दक्षिणमें राजधानी है (अनु०)

५ शलवंशी राजपूत चन्द्रवंशीहैं और वल्लभी पुरवाले सूर्यवंशी हैं (अनुवादक)

इसिहासवेत्ता टाड साहबने राजपूतोंके और भी दो एक चरित्रोंका वर्णन करके इस प्रसंगको समाप्त कियाहै । उनकी उक्तिसे प्रकाशित होताहै, कि मुगलसम्राट्के आदि पुरुष बाबरके द्वारा भारतवर्षमें सबसे पहले अंगूर आयेथे । और उनके पोते जहाँगीरने तमाखूकी रीति चलाईथी, भारतवर्षमें सबसे पहले किसी समय अफीमका सेवन भी आरंभ हुआ था. टाड साहब इस बातको कहगयेहैं कि इसको मैं नहीं जानसका । विशेष करके चंदकविने अपने काव्यमें कहीं भी इसका उल्लेख नहीं किया । उनका यह मत है कि अफीमने राजपूत जातिके बहुतसे उपकारी गुणोंको एक बारही विनष्ट करदिया था । स्वाभाविक वीरताके स्थानपर उन्मत्तता क्रूरता और मुखमंडलमें ज्ञानके प्रकाशकी प्रभाके स्थानपर दुर्बलताने सशक्तित करदियाहै समस्त मादक द्रव्योंकी समान इस अफीमका फल क्षणिक इंद्रजालकी समान है; परंतु उसकी प्रतिक्रिया भी कुछ अल्प नहीं है । शरीर और मनके प्रति इस मादक द्रव्यको अनिष्ट करनेवाली शक्ति भलीभाँतिसे सर्वदा प्रकाश पातीहै । यद्यपि राजपूत जाति “ माधवा वा थाला ” अर्थात् मत्तताको देनेवाले द्रव्यके पूर्ण पात्रका व्यवहार बहुत दिनोंसे था, परन्तु इस समय जिस प्रकार जलमें बिलाकर अफीमको सेवन करतेथे, अत्यन्त प्राचीन कालके किसी काव्यके ग्रन्थमें भी इस प्रकारसे अफीमके सेवनका वृत्तांत दृष्टि नहीं आया । पुष्प, मूल और सस्यसार युक्त पानी यद्यपि इस समय आमंत्रियोंमें दियाजाताहै । परन्तु अफीमके सारका पानी मुख्यरूपसे व्यवहार करते देखाजाताहै । सबजने एक साथ अफीमको सेवन करतेथे, राजपूतजातिमें यह प्राणपणसे रक्षणीय प्रतिज्ञाका प्रमाणस्वरूप था । राजपूत इस प्रकारसे परस्परमें एक साथ बैठकर अफीमका सेवन करते हुए जिस प्रतिज्ञाको करतेथे वह प्रतिज्ञा शपथकी अपेक्षा भी कहीं श्रेष्ठ थी । कोई राजपूत अपने सम्बन्धी तथा मित्रके यहां जाकर यह प्रश्नकरता,—कि “अमलखाया” अर्थात् अफीमका सेवन कियाहै ? जिस किसी सामन्तके पुत्रका जन्म होता तो उत्सवके समयमें अन्यान्य सामन्त भी उसके अभिनंदनके निमित्त जाते और एक बड़ा पात्र सभामें लायाजाता, तथा उसमें जल डालकर तालके प्रमाण बराबर अफीम डालीजाती और एक बड़ी लकड़ीसे घोलकर पीनेके निमित्त तैयार कियाजाता । पानीके तैयार होतेही एकत्रितहुए सभी एक २ पात्रके ग्रहण करनेके बदलेमें अंजली भर २ कर देतेथे । इस पीनेके समयमें उनके मुख-चंद्रको देखनेसे ऐसा बोध होताथा कि कोई भी इच्छानुसार उसके पीनेका

और इस समय तक चीनी तातारकी सीमापरका तिब्बतका उच्चप्रदेश अंगदेशसे विख्यात है ।

प्रस्तुसेन (पृथुसेन) पर अंगवंशकी पूर्ति होगई महाभारतके युद्धमें यही राजा बचा था, संभव है कि, इसके वंशके लोग उन देशोंमें फैले हों जहां कि, जाति-भेद न माना जाता था ।

इसप्रकार मनु बुधसे लेकर भगवान राम और श्रीकृष्णजीतक सूर्य और चन्द्रवंशी राजाओंकी संक्षेपसे समालोचना कीगई हमको आशा है कि इससे कई एक नई बातें सिद्ध होगई होंगी. और इससे हमारे मनोरथमें कुछ दृढ़ता भी हुई होगी.

इन महाराजाओंके स्थापित किये वड़े २ नगरोंके खंडहरोंका अवतक पता लगताहै इक्ष्वाकुवंशकी राजधानी सरयूके किनारे अयोध्या, इन्द्रप्रस्थ, मथुरा, सूरपुर और प्रयाग यमुनाके किनारेपर, गंगाजीके किनारे हस्तिनापुर, कान्यकुब्ज, और राजगृह, नर्मदाके किनारे माहेश्वर, सिन्धुके किनारे अरोर, पश्चिम सागरके किनारे कुशस्थली द्वारका, इनमें अवतक पुराने समयका कोई २ चिह्न पायाजाता है यदि विशेष पता लगायाजाय तो अब भी बहुतसे चिह्न पाये जासकतेहैं ।

पाँचालिकमें अभी एक देश और भी पता लगानेको है; जिसमें उसकी राजधानी कम्पिलनगर तथा वे सब नगर संयुक्त थे जो वाजस्व पुत्रोंद्वारा सिन्धुके पश्चिममें बसायेगये थे ।

यदि कोई यात्री साहस करके आक्सस नदीके आगेके देशोंमें जाकर साइरोपोलिस और इस्कन्दरियाके सबसे उत्तरी स्थानोंमें बलख तथा बाभियाकी कन्दराओंमें ढूँढ भाल करै तो होसकताहै कि पुराने इण्डोसीथिक [भारतकी शक] जातिके चिह्नोंकी खोज लग सकै ।

अवतक अनेक प्राचीन नगर भारतभूमिमें विद्यमान हैं जिनके खंडहरोंसे कुछ २ वृत्तान्त जाना जासकताहै, जहाँ ऐसे लेख शिलाओंपर लिखे पाये जातेहैं जो अवतक पढ़े नहीं जाते परन्तु उनकी सदा न पढ़नेकी सी दशा नहीं रहैगी, यदि इस विषयकी बराबर खोज होती रही और एक दिन उनके पढ़नेकी कुंजी हाथ लगगई तो इस विषयमें बड़ी सहायता प्राप्त होगी, जिस २ स्थानमें कुरु उरु और यदुवंशियोंका राज्य रहा है वहां वहां ऐसे शिलालेख मिलेहैं जो अवतक पढ़नेमें नहीं आते * ।

* परन्तु अब ऐसी शिलालिपिकी पुस्तक बनगई है कि, जिससे सब प्रकारके लेख पढ़े जासकतेहैं (अनुवादक)

लोग आगेको अनिष्ट करनेवाली इस अफीमका सेवन नहीं करें। इसी कारणसे ऐसे बहुतसे राजपूत हैं कि जिनको आजतक अफीमका स्वाद विदित नहीं हुआ। कर्नेल टाड साहबका अंतिम कहना यह है कि “जो मनुष्य इस कुरीतिको दूर करसकतेहैं वही राजपूत जातिमें सबसे श्रेष्ठ बंधु गिनेजाँयगे; उदयपुरका पर्वत अनेक प्रकारके रंगविरंगे सुगंधित फूलोंसे वगीचास्वरूप था। नीलनदीके किनारेवाले देशोंमें इसके शिखरपर जिस प्रकारका राजमुकुट शोभा-यमान था, हिन्दुस्थानकी राजलक्ष्मी उसकी अपेक्षा अनेक प्रकार रंगोंसे मुकुटको इस स्थानपर पासकती थी।”

बहुत दूरके निवासी चैनेय लोग भी भारतकी अफीमको सेवन करके निकम्मे होजातेथे। बहुत वर्षोंसे भारतवर्षमें गवर्नमेन्ट भी इसका वाणिज्य करनेके लिये महाआन्दोलन मचा रहीहै और शोध किरीटानी इंग्लेण्डके अनेक उदारनीति अंग्रेज समाजमें बँधकर भारतवर्षीय गवर्नमेन्टको इस अपकार करनेवाली अफीमके प्रबल वाणिज्यको रोकनेके लिये बड़ी २ सभाएँ हो रहीहैं और पार्लिमेन्ट भी घोर आन्दोलन मचा रहीहै, परन्तु भारतवर्षमें राजपूत वीरोंके वंशधर इस हालाहलस्वरूप अफीमका सेवन करके कर्महीन होगयेहैं, इस विषयमें आज तक भी किसीने दृष्टि नहीं डाली ! इस बातको कौन नहीं कहैगा कि वीर राजपूतजातिकी जीवनी शक्ति खोई गई है और इसका दूसरा प्रबल कारण क्या यह विषमय अफीम नहीं होसकती ? सुराकी प्रबलअग्निसे बंगालका प्रत्येक प्रान्त जलरहाहै । विश्वविद्यालयकी ऊँची उपाधि धारण करनेवालोंसे लेकर कृषक तक भी सुराके रंगमें निमग्न हो रहेहैं, सहस्रों कुटुम्ब इसी सुराके निमित्त घर २ के भिखारी होगयेहैं । जब गवर्नमेन्टने इसके रोकनेका यत्न न पाया तो बंगालको छारखार करनेकी सहायता करनेके लिये प्रत्येक ग्राममें मदकी भट्टीस्वरूप विषके कुँएँ खुदवा दियेहैं । तब हम किस प्रकारसे आशा करसकें कि हमारी गवर्नमेन्ट अफीमभक्त राजपूत जातिके प्रति दयादृष्टि करनेमें आगे बढ़ेगी ? राजपूतजातिके भाग्यके परिवर्तनका भार राजपूतजातिके ही हाथमें है। यही विचार कर नीतिके जाननेवालोंने अपने चित्तको स्थिर कियाहै ।

प्रतिज्ञाशब्दका यथार्थ अर्थ क्या है, किस प्रकारसे प्रतिज्ञाका पालन होताहै, इस बातको जिस भाँतिसे वीर राजपूतजाति जानतीथी हम साहसके साथ इस बातको कहसकतेहैं कि अन्य कोई जाति भी इस प्रकारसे प्रतिज्ञाके सन्मानकी रक्षा करनेमें समर्थ न हुई। महात्मा टाड साहब कहगये हैं कि, एक साथ अफीमका सेवन, पगडीका बाँधना, अथवा अत्यन्त सामान्य कार्य—

पाँचवाँ अध्याय ५.

भगवान् रामचन्द्र और श्रीकृष्णचन्द्रजीके पश्चात् की वंशावली ।

महाराज इक्ष्वाकुसे लेकर श्रीरामचन्द्रजीतक और बुध [चन्द्रवंशका *
आदि पुरुष जो शाकद्वीप अथवा सीथियासे भारतवर्षमें आयाथा] से आरम्भ-
कर श्रीकृष्णजी तथा युद्धिष्ठिरपर्यन्त बारहसौ वर्षके समयकी आलोचना करके
अब वंशसूचीके दूसरेभाग और दूसरे वंशवृक्षकी समालोचना करनेमें प्रवृत्त होते हैं।

मेवाड जयपुर मारवाड और बीकानेरके नरेश अपनेको महाराज रामच-
न्द्रका वंशधर कहकर सूर्यवंशी बतातेहैं, और उनकी शाखाएँ भी अपनेको सूर्य-
वंशी कहती हैं, इसी प्रकार जैसलमेर और कच्छके राजपुरुष [भाटी^१ और
जाडेजा जो सतलज नदीसे समुद्रपर्यन्त भारतवर्षके मरुस्थलमें सब जगह फैले-
हुए हैं, अपनी उत्पत्ति चन्द्रवंशमें बुध और श्रीकृष्णजीसे बताते हैं ।

श्रीरामचन्द्रजी श्रीकृष्णजीसे बहुत पहले नहीं हुए, कारण कि, उनके इति-
हासलेखक वाल्मीकि और व्यासजी समकालीन थे जिन्होंने अपनी आँखों देखी
घटनाएँ लिखी हैं ।

सूर्यवंश, इन्दुवंश, और जरासंधकी वंशावलियें भागवत अग्निपुराण, और
पाण्डुवंशमें राजतरंगिणी तथा राजावलीसे उद्धृत की गई हैं । सूर्यवंशी राजपूत

* संस्कृतमें चन्द्रका नाम इन्दु और सोम है, इससे इनको सोमवंशी भी कहतेहैं, संभव है
कि, इन्दुशब्दसे ही हिन्दूशब्दकी उत्पत्ति हुई हो ।

१ एकान्तमें स्थित घाट जिसकी राजधानी अमरकोट भाटियोंको जाडेजोंसे पृथक् करता है,
घाटको अब सिन्धदेशमें मिलालिया है, वहाँका राजा परमार सोढा जातिका है, जो पहले समस्त
सिन्धुदेशके स्वामी थे ।

२ व्यास और वाल्मीकि समकालीन नहीं यह व्यास २८ वें हैं वाल्मीकिके समयमें यह
व्यास नहीं थे; और ऋषि दीर्घायुवाले होते हैं, इनका समकालीन होनेसे राजाओंका समकाल
नहीं हो सकता (अनुवादक)

३ यह तीन वंशावली दी हैं चौथे और पाँचवें वंशकी भी वंशावली भी हम देते परन्तु वे
पूर्णरूपमें नहीं हैं उनमें पहले तो रामचन्द्रके दूसरे पुत्र कुशका वंश जिसमें नरवर तथा अमे-
रके राजा संयुक्त हैं, दूसरे वंशमें श्रीकृष्णजीके वंशधर जिनके कुलमें जैसलमेरके राजा हैं [राम-
चन्द्रके बड़े पुत्रका नाम लव नहीं किन्तु कुश है] (अनुवादक)

उदय न हो जिससे बालकपनसे ही वीरतामें साहस उत्पन्न होजाय, इस निमित्त राजपूतोंके छोटे २ बालक खेलकूदके समयमें छोटी २ तलवारें अपने हाथमें ले बकरे और मेषशावकोंके शिरको काटाकरतेथे उनके माता पिता बालकपनसे ही ऐसी शिक्षा देतेथे । जिस दिन राजपूतोंके बालक सबसे पहले अपने बाहुबलकी परीक्षाके निमित्त अस्त्र चलाकर हरिणआदिका शिकार करतेथे । उस दिन उनके कुटुम्बके मनुष्य उनको अभिनन्दन करके महाआनंदसे उन्मत्त होजातेथे । * महामाननीय टाड साहब कहगये हैं कि इस प्रकारसे राजपूतोंके बालक वीरधर्ममें दीक्षित हो साहस, शूरता और वीरताके अभ्यासमें निपुण होजातेथे । राजपूतोंका आनंद उत्सव ही समररंजक था, जातीय नृत्य और वीरत्वताका प्रकाशक संगीत उनको अधिक साहसी और प्रबल विक्रमशाली करदेता था. कसरत करनेवालोंकी कुस्तीको देखकर राजपूत अत्यन्त आनंदित होकर समय व्यतीत करतेथे । राजवाड़ेके प्रत्येक राजा कितने ही बलवान कसरतमें चतुर कुस्तीकरनेवालोंका पालन करतेथे । प्रसिद्ध २ कुस्ती करनेवाले मनुष्य मिर्जाराज्यमें विख्यात कुस्तीकरनेवालोंको अपनी योग्यता दिखानेके निमित्त बुलानेमें भी त्रुटी नहीं करतेथे । उसी भाँति प्रतियोगिताके दिखानेमें असंख्यों राजपूत उसके घर जाकर जेताको उत्साहित करतेथे ।

प्रत्येक सामन्तकाही एक २ अस्त्रागार स्थापितहै और हर एक सामन्त प्रतिदिन वहाँ जाकर अपने अस्त्रोंकी परीक्षा करते हुए नियमके अनुसार कुछ समय उस स्थानपर रहतेहैं । तलवार, बंदूक, बरछा, छूरी और धनुष—आदि अनेक प्रकार अपने प्रिय अस्त्रोंका राजपूतोंने एक २ नाम धरा है । अस्त्रागारका स्वामी राजपूतोंका बड़ा विश्वासी होताहै । अस्त्र जैसे सुन्दर मनको हरनेवाले होते हैं वैसे ही वह बड़े मूल्यके भी होतेहैं । सब प्रकारकी तलवारोंमें “शिरोही” नामकी तलवार सब राजपूतानेमें सबसे अच्छी मानीजातीहै, दोनों ओर धारवाला (खाँडा) और बड़ी तलवार भी उनको विशेष प्रिय है । लाहौर और राजवाड़ेमें अनेक प्रकारकी बंदूकें बड़ी उत्तमतासे बनती और मुक्ता तथा सुवर्णसे रञ्जित होकर मनोहारिणी होजातीहैं । बूँदीकी बन्दूक सब स्थानोंकी बन्दूकोंसे श्रेष्ठ होतीहै ।

* महात्मा टाड साहब लिखगयेहैं कि बूँदीके राजकुमार व्यवहार जाननेमें रहित हो जिस दिन प्रबल साहसके साथ वीरता करके मृगका शिकार करतेथे, उस दिन उनकी मातानें आनंदित होकर टाड साहबको एक पत्र लिखदिया था, उस दिन बूँदीमें एक बड़ा भारी दरबार हुआ था । और सम्पूर्ण सामन्तोंको बहुमूल्य द्रव्य उपहारमें दिये गये थे ।

कुशसे नहीं जैसा कि सर विलियम जौन्सने जिस ग्रन्थसे वंशावली तैयार की है उस ग्रन्थमें और कई एक पुराणोंमें पाई जाती है ।

जिस ग्रन्थके सहारे सर विलियम जौन्सने अपनी वंशावली तयार की है परन्तु नामोंका हेर फेर करके उसको बिगाड़ दिया है और उसके लिये जो प्रमाण दिये हैं, वे भी अधूरे हैं, तथा वह हिन्दुओंके सिद्धान्तके विरुद्ध हैं, जिनको शुद्धिष्टिका समसामयिक माना है उन बृहद्बल और बृहत्शूरके नामोंको देखकर उन्होंने अपनी वंशसूचीमें तक्षक तथा बाहुमानके मध्यके दश राजाओंके नाम उलट पुलट करदिये हैं ।

* बाहुमान [लम्बी भुजावाला] राजा श्रीरामचन्द्रजीसे चौतीसवीं पीढ़ीमें है, और उसके राज्यशासनका समय रामचन्द्रजीसे छःसौ वर्ष पीछे वा सुमित्रसे उतनाही प्रथम होना चाहिये, कारण कि यह रामचन्द्र और सुमित्र वा उसके समकालीन विक्रमके बीचमें है ।

भागवत पुराणके देखनेसे सुमित्रके साथ सूर्यवंशकी समाप्ति होती है, और मेवाडके वर्तमान वंशका जिस जयसिंहके साथ सम्बन्ध बताया गया है, उसका मिलान कई वंशसूचियोंसे किया, और विशेषकर जैनियोंकी वंशसूचीसे मिलान किया गया है जैसा कि मेवाडके इतिहासमें लिखा गया है ।

१ एनेलीसिस पुस्तकमें ब्रायण्टने लिखा है कि कुशाइट हामके वंशधर सलाम करनेके समयमें उसके आदरके निमित्त उसका नाम उच्चारण करते थे, इस विषयमें हिन्दूजातिमें राम राम और दूसरा पुरुष उत्तरमें सीताराम कहता है (यह बात तो नहीं है रामरामके बदलेमें रामरामही कहा जाता है (अनुवादक)

२ मेरी वंशावलीमें यह नाम पच्चीसवाँ और बेंटलेकी वंशावलीमें रामचन्द्रसे पच्चीसवीं पीढ़ीमें है ।

३ यह नाम मेरी सूचीमें ३४ वां और बेंटलेकी नामावलीमें छे तीसवाँ है, परन्तु बीचके नाम रामचन्द्रजीके पीछे तथा बाहुमान (जिसको बेंटलेने वानुमत लिखा है) का नाम तक्षकके पीछे लिखा है ।

* लोगोंने समय मिलता हुआ देखकर मिथरस-सूर्यको पूजनेवाले दाराके पिता और अर्तजर्क सीजके पुत्रको सूर्यवंशमें संयुक्त करलिया हो, राजा जयसिंहने इस वंशावलीके पिछले एक पुरुषको नौशेरवाँ लिखा है, जिससे इस मिलानकी और भी पुष्टि होती है, अवश्य ही एक बड़ी भारी सेना लेकर बाहुमानने मिथिला और मगधके सूर्यवंशी नरेशोंपर आक्रमण किया था, उस समयमें ठीक प्रथम दारा और उसके पिताका होना पायाजाता है, हेरोडाटस कहता है कि, दाराके राज्यका सबसे अधिक ऐश्वर्य सम्पन्न सूत्रा हिन्दूजातिका देश था । डीहवेल्लेटकी बाइबिल और अंटल वहमनका निर्वन्ध देखो ।

त्रित होती थीं तभी चन्द्रदेवकी निर्मल चाँदनीमें सुन्दर बिछेहुए बड़े गलीचेपर बैठनेसे स्वच्छ जलवाले संगेवरके जलसे शीतल हुआ पवन दिनके प्रचंड सूर्यके तापसे तप्त शरीरोंको शीतल करदेताथा । इसी अवसरपर उनका प्रेम, व्यंग और वीररससे युक्त संगीत हम सबको उन्मत्त करदेताथा । ऐसे गानेकी समितियोंमें सदाँर लोग मुझे भी बुलातेथे । पुत्रोत्सव और विवाहोत्सवमें विशेष करके प्रधान २ कवि और गानेबजानेवाले और २ देशोंसे आते जातेथे ।

महाराज शिवधनसिंहके संबंधमें कर्नल टाडने पीछेसे कहा है कि यूरोपके डलकी समान वह अपनी सन्तानके शिरपर एक द्रव्य रखकर बंदूककी गोलीसे उड़ादेतेथे लेकिन संतानके शिरमें कोई कष्टका अनुभव नहीं होताथा । परवाले उड़तेहुए पक्षीको वह गोलीसे मार गिरातेथे और सामनेसे आतीहुई बंदूककी गोलीके छूरीसे दो टुकड़े करदेतेथे । जब इन बातोंमें कोई अविश्वास करता तो वह सत्य दिखानेके लिये किसी दिनको नियत करदेते और उस दिन उससे पहले यही कहते कि सामनेसे तुम बंदूकमें गोली भरकर मेरे ऊपर छोड़दो और आतीहुई गोलीको छूरीसे दो टुकड़े करडालते ऐसे ही वह अनेक विचित्र चरित्र दिखाया करतेथे । एक दिन उन्होंने एक मिट्टीकी हाँडीमें जल भरकर छूरी रखदी और बंदूककी गोली दूसरेसे भरवाकर अपने हाथमें ले बीस कदम हाँडीसे दूर खड़े होकर कहा कि मैं इस गोलीसे हाँडीमें स्थित छूरीके दो टुकड़े करताहूँ यह कहकर गोली छोड़ी मैंने स्वयं जाकर देखा तो हाँडीके बीच छूरीके दो टुकड़े पड़ेहैं । सबसे बढ़कर एक उसका चमत्कार बड़ा ही विलक्षण यह था कि वह एक लकड़ीके ऊपर एक नींबूको रखवाते और दूसरे मनुष्यसे गोली बंदूकमें भरवाकर अपने हाथमें लेकर दूर खड़े हो सबके सामने उस नींबूपर गोली मारते; गोलीके लगनेसे नींबू पृथ्वीपर गिरपडता परन्तु नींबूमें गोलीके लगनेका कोई चिह्न नहीं दीखपडता और न वारूदके धुँएसे ही नींबूका रंग बदलता, नींबू ज्योंका त्यों रहता और गोली अदृश्य होजाती, चतुरंगक्रीडामें भी वह बड़े दक्ष थे । उदयपुरका एक अन्धा इस क्रीडामें उनका प्रधान प्रतिद्वन्दी था । महात्मा टाड लिखगयेहैं कि विलायतकी सबसे बड़ी सभ्य और सुनीतिपूर्ण राजसभाके मध्यमें भी महाराज एक ही यथेष्ट पारिषद होसक्तेहैं ।

प्रत्येक सामन्तके यहां कंठसे और यंत्रसे संगीत जाननेवाली संप्रदायके मनुष्य नियुक्त रहतेहैं किन्तु कर्नल टाडने लिखाहै कि “कुछ वर्षोंके पहले

हम अनुमान करतेहैं कि, पाण्डुवंशकी किसी बड़ी दुर्नामता छिपानेके लिये ऐसी कथाओंकी कल्पनाएँ की गईहों, जिनका सम्बन्ध ऊपर लिखीहुई व्यास-जीकी कथा तथा हरिकुल वंशकी शाखाके हलकेपनसे हो, पाण्डुराजाके पर-लोकवासी होनेपर उसके भतीजे तथा अन्ये धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्योधनने हस्तिना-पुरमें अपने बन्धुवर्गोंके समीप युधिष्ठिरादिको पाण्डवोंका क्षेत्रज अनौरस होना बताया । तिसपर भी ब्राह्मणों तथा अंधे धृतराष्ट्रकी सहायतासे पाण्डुके ज्येष्ठपुत्र युधिष्ठिरको हस्तिनापुरका राज्य अधिकार सौंपागया, तब दुर्योधन पांडव और उनके सहायकारियोंके विरुद्ध पड्यन्त्र करनेलगा जिसके कारण विवश होकर पाँचों भ्राताओंको अपनी पैतृक राजधानी छोडकर कुछ समयके लिये गंगाकि-नारे जानापडा, पीछे उन्होंने सिन्धुके निकटवर्ती दूसरे देशोंमें निवास किया, सबसे प्रथम पंचालके राजा द्रुपदने उनकी रक्षा की, द्रुपदकी राजधानी कम्पिल नगर थी, जब उसने अपनी पुत्री द्रौपदीका स्वयंवर किया, तब समीपके कित-ने ही नरेश उपस्थित हुए, पर यह कन्या तो निजदेशसे निर्वासित हुए पाण्डवोंके भागमें थी, वहां अर्जुनने अपनी धनुर्विद्याके प्रभावसे उसको प्राप्त किया, उस सुन्दरीने अर्जुनके गलेमें जयमाला पहराई, उस समय दूसरे राजोंने निराश होकर पाण्डवोंसे युद्ध किया परन्तु अर्जुनने उन सबकी वह दशा की जैसी पैतृ-लोपसे विवाहकी इच्छा करनेवालोंकी हुईथी, विजयी अर्जुन दुलहिनको अपने घर लाया वह समानरूपसे पाँचों भ्राताओंकी स्त्री हुई, निःसन्देह यह रीति शक

१ हम आमेरके राजाकी बुद्धिमानीकी प्रशंसा करते हैं जिन्होंने बहुतसी जनश्रुतियोंको संग्रह करके अपनी वंशसूचीमें संयुक्त करदिया, वह राजा सवाई जयसिंह कि, जिन्होंने पुर्तगालके नरेश तीसरे एम्बेनुएलके यहांसे यूरोप और एशियाके ज्योतिषसम्बन्धी नकशेको मिलादेनेवाले डिसिल्व्वाको बुलाया, और भारतके सम्पूर्ण मुख्य नगरोंमें अपने प्रिय ज्योतिषशास्त्रसम्बन्धी चतु-राईके स्मारक चिह्न (वेधशाला) ऐसे समय निर्माण कराये जब कि, वह बहुतसे राजनैतिक बखेडे तथा युद्धसम्बन्धी कार्योंमें लगेहुएथे जो अब मानमन्दिर कहलाताहै, जिसकी प्रशंसा तथा प्रतिवादकी आवश्यकता नहीं है ।

२ यह द्रुपद अजमीठका वंशधर वाजस्व वा ह्यास्वके वंशमें अश्ववंशी था ।

३ यद्यपि यह विवाह हिन्दूरीतिके विरुद्ध हुआ है पर इसपर बड़ी कलई की गई है, बहुप-तिकी जातीय रीति न होनेसे उसके निमित्त ओछेपनकी दलीलें दी गई हैं, जैसलमेरके पूर्वपुरुषा उसीवंशके हैं ।

उनके पुराने इतिहाससे प्रगट होता है कि, छोटे पुत्रको राजगद्दी मिलीहै यह रीति सीधिया (शक) वा तातारवालोंकी है.

नाम “मेसेक” था । दौसुखवाली वंशी भी राजस्थानमें वजाई जातीथी । अनंक भौतिके बाजोंको पढ़कर इनको निरस विचार महात्मा टाड साहबने इसीसे इनका विशेष वर्णन नहीं कियाहै ।

राजपूतोंके बंधु इस स्थानपर राजपूत राजाओंकी विद्याशिक्षाके विषयमें उल्लेख करके कहगयेहैं, दानपत्र वा “रेकउयाली” का कारण स्वीकारपत्रके पढ़नेमें किसी प्रकार भी चतुर नहीं है, राजाओंमें ऐसा कोई भी नहीं है और इंग्लैण्डके महान कुलीन वंशधरगण जिस प्रकारसे पैत्रिक ज्ञानके अधिकारी कहा कर गर्वित थे और फिर वह अपनी प्रधानता स्वाधीनताके सानन्दमें पत्रपर अपने नामके हस्ताक्षर तक भी नहीं करसकतेथे राजपूत राजा वा सामन्तोंमें उस प्रकारके मूर्ख और गर्वित आजतक कहीं दिखाई नहीं पड़े । लेखनीके चलानेमें उदयपुरके महाराणामें असीम शक्ति थी, उनके लिखेहुए पत्रोंकी अत्यन्त प्रशंसा होतीथी । परन्तु दूसरे इंग्लैंडेश्वरके प्रति जैसी उक्तिका प्रयोग कियाथा राणाके सम्बन्धमें भी हम उसी प्रकार कहसकते हैं,—“उन्होंने कभी मूर्खता मूलक पत्र नहीं लिखा, वरन् वह विद्वत्ताका प्रकाश करनेवाला पत्र लिखतेथे ।” राजस्थानके राजा और सामन्तोंने आत्मीयताकी सूचनाकरनेवाले जो पत्र लिखे थे । उनसे उनके मनकी वृत्ति अत्यन्त ऊँची पाईजातीहै । उन समस्त पत्रोंमें प्राचीनग्रन्थोंसे उपमा उद्धृत कीगई, और अनेक प्रकारके चरित्रोंका ज्ञान भी उनके सम्बन्धमें दृष्टि आया । प्रत्येक राजपूत राजा और प्रत्येक सामन्त ही इन सम्पूर्ण पत्रोंकी रक्षा बड़े यत्नसे करते थे, इससे भलीभाँतिसे जानाजासकताहै कि वह शिक्षाके सम्बन्धमें मनुष्यजातिकी अन्यान्य सम्प्रदायोंकी बराबरी करनेमें समर्थ नहीं थे, और शिक्षाकी चर्चामें भी वह विशेष चतुर थे । यूरोपखंडके राजा इलियट और होमरकी कविता पत्रोंमें उद्धृत कर तो सकेथे परन्तु राणाने जिस भाँतिसे व्यास और वाल्मिकिजीके श्लोकोंको उद्धृत कियाथा वह अत्यन्त आश्चर्यदायक है । और राणा उनके प्रधानधर्मविधानके कर्ता मनुके वचनोंका जिस प्रकारसे चतुरताके साथ प्रयोग करनेमें सामर्थ्यवान थे उस प्रकारसे विलायतके पंडितगण भी मोजिसकी विधानावलीको कदापि प्रयोग नहीं करसकेथे । जिस समय राजपूत उनके पूर्व पुरुषोंके ज्ञान और शिक्षाका उल्लेख करके गौरव प्रकाश करते थे, उस समय उनका वह उल्लेख और गौरव केवल वचनमें ही नहीं होता था वरन् उनके हृदयके भीतरसे उठताथा । प्राचीन वैदिक रीतिके मतसे राजकुमार विद्याकी शिक्षा पातेथे और वह यूरोपके विश्वविद्यालयकी शिक्षाकी

कौरवोंका हृदय पाण्डवोंके इस महान पद प्राप्त होनेसे जलने लगा, कारण कि हस्तिनापुरके राजाको प्रसाद बाँटनेपर नियुक्त होना पडा था ।

इन दोनों कुलोंमें फिरसे वैरानल धधक उठी, परन्तु दुर्योधन अपने शत्रु युधिष्ठिरको हानि पहुँचानेके लिये जितने उपाय करता सबमें विफल मनोरथ होता तब उसने युधिष्ठिरके धर्मात्मापनको अपनी सफलताका साधन बनानेकी दृढ प्रतिज्ञा की और जुआ खेलकर उसमें लाभ उठाना चाहा जो सीथियन जातिसे मिलती हुई रीति राजपूतोंमें आजतक चली आतीहै, युधिष्ठिर उसके प्रपंचमें फँस गये और द्यूतमें अपना समस्त राज्य स्त्री तथा अपनी और अपने भ्राताओंकी स्वतन्त्रता बारहवर्षके लिये हार दी, और सब कुछ छोडकर यमुना-किनारेपर अपने देशसे बाहर होगये ।

हिन्दूजातिकी पुरानी कथाओंमें पाण्डवोंके वनवासके समयके आख्यान उनके अज्ञातवासके स्थान इस समय अति पवित्र मानेजाते हैं जब वह पीछे अपने स्थानपर लौटे और फिर जो महासमर हुआ उसकी आख्यायिका बहुत ही मनोहर है ।

इस परस्पर होनेवाले युद्धके निमित्त काकेशससे लेकर सागरपर्यन्त प्रत्येक जातिके विख्यात राजा कुरुक्षेत्रमें आये थे, और उस स्थानमें इस महाभारतके पीछे भी भारतसाम्राज्यके निमित्त अनेक बार संग्राम हुए और यह देश एकके हाथसे दूसरेके पास जाता रहा ।

इस युद्धमें यदुकी छप्पन शाखाओंका प्रबल प्रभाव प्रायः नष्ट होगया, यह युद्ध बराबर अठारह दिनतक होतारहा, और इसमें संहस्रों मनुष्य काम आये, उस युद्धमें पिताने पुत्रको और गुरुने शिष्यको न पहचाना ।

अन्तमें युधिष्ठिरकी विजय हुई, पर विजय प्राप्त करके भी उनको कोई सुख न हुआ, इष्ट बन्धुजनोंके मारेजानेसे उनको संसारसे विराग हुआ, और इसको छोडनेकी इच्छा की, और भीमसेनके हाथसे मृतक हुए दुर्योधनकी दाहक्रिया

१ हेरोडाटस सीथिक लोगोंमें द्यूत खेलनेकी विनाशकारी प्रकृतिका वर्णन करताहै, जिस रीतिको ओडन पश्चिमकी ओर स्कण्डि नेविया और जर्मनीमें लेगया होगा, डैसिटसका कथन है कि, जर्मनलोग पाण्डवोंकी समान अपनी शारीरिक स्वतन्त्रता भी दावपर लगादेते थे और जीतनेवालेको यह अधिकार प्राप्त था कि, वह चाहें तो हारे हुएको दासकी समान बँचदे ।

२ इसी रणक्षेत्रमें अन्तिम हिन्दूपति महाराज पृथ्वीराजने अपनी स्वतन्त्रता और राज्य तथा जीवन त्याग करदियाथा ।

राजस्थानके राजपूत राजा, राजपूत सामन्त, राजपूत राजकर्मचारी और राजपूत सामर्थ्यशाली मनुष्योंमें विलायती शिक्षाकी ज्योति धीरे २ प्रवेश कर रही है । इस समय अंगरेजी भाषामें बहुतोंको अधिकार हो गया है । प्रत्येक व्यवहारको न जाननेवाले अनेक राजा भारतके अन्य प्रान्तोंके राजाओंकी समान अंगरेजी पढ़नेके लिये देशी वा अंगरेजी शिक्षकोंके आधीनमें रहते हैं । और बड़े सामन्तोंके पुत्रोंकी विद्या शिक्षाके लिये स्थान २ पर अनेक कालेज बन गये हैं । राजपूतोंके महान परिवारके पुत्र जिससे भलीभाँतिसे अंगरेजी भाषा पढ़ सकें उस विषयमें अंगरेजोंकी अधिक दृष्टि है, इस बातको माननेके लिये हम सदा तैयार रहते हैं, परन्तु हम इतना तो कहे देते हैं कि राजवाड़ेमें मध्यश्रेणी अथवा नीची श्रेणीके मनुष्योंकी शिक्षाके लिये आज तक उपयुक्त प्रयोजनोंकी खोज नहीं की जाती है यद्यपि शिक्षित देशके राजा अपने २ राज्यमें लोकशिक्षाको प्रचलित करनेके लिये तैयार रहते हैं, तथापि हमें ऐसा विश्वास है कि गवर्नमेन्ट वा असीम सामर्थ्यवाले अंगरेजोंके रेसिडेन्ट गणके इस विषयमें राजपूतोंकी सहायताके बिना किये आशाके पूर्ण होनेकी संभावना अत्यन्त कठिन है । समयके गुणसे देशके भूपाल इस समय अंगरेजोंके रेसिडेन्टके क्रीडाकी पुतलीस्वरूप हैं । इस कारण महात्मा टाडकी समान कितने ही उदार हृदय रेसिडेन्ट वा पोलिटिकल एजन्टोंका भारतवर्षमें बिना प्रादुर्भावहुए राजवाड़ेमें सर्वसाधारणमें यथार्थ लोकशिक्षाकी आशा नहीं की जा सकती ।

राजपूतोंके बंधु महात्मा टाड साहब राजपूतजातिके नित्य व्यवहारके कई एक द्रव्योंको उल्लेख करके प्रसंगका उपसंहार कर गये हैं । उनका कथन है कि सहस्रों वर्षोंके बीतजानेपर भी राजपूतोंके नित्य व्यवहारके द्रव्य, शय्याकी रीति, सब प्रकारसे अचलभावसे स्थित रही है । यद्यपि राजपूतोंके महल रमणीय स्तंभोंसे शोभायमान थे—घरके भीतरकी दीवारोंपर विचित्रतासे चित्र खुद रहे थे, समस्त घर मुकुर मर्मर इत्यादिसे ढंकरहे थे, परन्तु इनमें किसी प्रकारका काष्ठासन वा कमनीय कौंच आज तक दिखाई नहीं दिया, केवल घरके भीतर कोमल गलीचा बिछा हुआ रहता था, और उसकी रक्षा सफेद वस्त्रसे की जाती थी; उस शय्याके ऊपर आयेहुए मनुष्य अपने २ पदके अनुसार बैठजाते थे । साधु टाड साहब इस बातको लिख गये हैं, कि उनके समयके सौ अधिक वर्ष पहले इंग्लैण्डेश्वरका जो पहला दूत दिल्लीके बादशाहके निकट आया, उस दूतके साथवाले पादरियोंके सम्बन्धमें जो वर्णन कर गये हैं वह इस प्रकारसे आजकलके

—ऐसा माननेसे हमें क्या हानि है कि युधिष्ठिर और बलदेवकी आधीनतामेंका एक दल उससे आठ सौ वर्ष पहले यूनानमें जाकर बस गया हो, वे अन्न शस्त्र और वैज्ञानिक व्यवहारोंमें अधिक चतुर तो थे ही, संभव है कि, सरलतासे उन्होंने यूनानियोंको जीत लिया हो, जिस समय पांचालिकके स्वतंत्र नगरोंपर सिकन्दरने आक्रमण किया तब तो अपनी पताका पर अपने पूर्वपुरुष था उस समय जब पुरुवंशी और हरिकुलियोंने उसका सामना किया हर्क्यूलीजका चित्र दिखाया, यदि हिन्दू जाति और यूनानियोंको देवकथाका परस्पर मिलान किया जाय तो सिद्ध होजायगा कि, यह एकही सिद्धान्तसे प्रगटहुए हैं, और प्लेटो अर्थात् अफलातून कहता है कि यूनानियोंने अपनी देवकथाओंका मिश्र और पूर्वादेशोंसे संग्रह किया है, मैं पूछता हूं यह हरिकुलियोंका दल क्या हेराक्लाइडी लोग नहीं होंसकते, जो बालनेके कहनेके अनुसार पेलोपनेससमें ईसासे १०७८ वर्ष पहले जा बसे थे, और वह समय हमारे निर्धारण किये हुए महा-भारतके समयके बहुत ही समीप समयका है ।

हेराक्लाइटीलोग अट्रियसके वंशधर होनेका दावा करतेहैं, और हरिकुलि पुरुष अत्रिके वंशधर अपनेको कहतेहैं ।

हेराक्लाइडियोंका यूरिस्थेनीज प्रथम राजा था स्पार्टाके इस प्रथम राजाके साथ युधिष्ठिरका नाम ऐसी समानता रखता है कि, मेरे इस लेखसे शब्द व्युत्पत्ति विद्याके जाननेवाले नहीं चौंकेंगे, कारण कि, संस्कृतमें र और उ सदा एक दूसरेके स्थानमें आसकतेहैं ।

यूनानी वा आयोनियन—यवन वा जवनके वंशधर हैं, जो जेफेटकी सातवीं पीढ़ीमें उत्पन्न हुआथा, हरिकुलि भी अपनेको यवन वा जवनके वंशधर बतातेहैं, जो उनके वंशके आदिपुरुषके तीसरे बेटे ययातिसे तेरहवीं पीढ़ीमें जन्मा था ।

यूनान देशके पुराने हेराक्लाइडी लोगोंका कथन है कि, वे सूर्यके समसामयिक और चन्द्रमासे बहुत पुराने हैं, क्या इस अहंकारमें यह वास नहीं छिपी है कि, यूनानके हेरियाडी (सूर्यवंशी) उस स्थानमें हरिकुलके चन्द्रवंशवालोंके बसनेसे पहले वहां स्थिति कर चुके थे । भारतके अवतार-धारी पुरुष बलदेवजी (हर्क्यूलीज) कृष्णजी वा कन्हैयाजी (अपोलो) और कुध (मर्क्यूरी) के पुराण सम्बन्धी इतिहासोंसे सम्बन्ध रखनेवाले सब विषयोंकी हिन्दुओं यूनानियों और मिश्रानों कथाओंमें बहुत ही कुछ समानता विदित होतीहै, हरिकुल (बलदेवजी) की अवतक वैसी ही पूजा होतीहै, जिसप्रकार कि, सिकन्दरके समय हुआकरती थी व्रजमें बलदाऊ स्थानपर बलदेवजीका मंदिर है, (इसीको यूनानियोंने सूरसेनी कहाहै) आयुध उनका हल और सिंहचर्म वस्त्र हैं ।

भारतवर्षसे मिलेहुए एक दुप्राप्यनगर हर्क्यूलीजकी ठीक वैसी ही प्रतिमा बनी है, जिस प्रकार कि, एरियनने उसका वृत्तान्त लिखाहै, उस नगरके ऊपर दो पुराने अक्षरोंमें एक नामका उल्लेख भी है, वे अक्षर इस समय पढ़े नहीं जाते परन्तु जहाँ कहींकी कथा कहानियोंमें हर्क्यूलीजका कुछ सम्बन्ध मिलता है, वहां वह मूर्ति अवश्य मिलती है, और जहाँपर वे दिह्रीसे निकलकर सौराष्ट्रदेशमें बहुतकालतक रहेथे वहां वह मूर्ति विशेषकर पाईजाती है ।

१ बलदेवजी सिंहका चर्म धारण नहीं करते उनका नीलाम्बर प्रसिद्ध है हर्क्यूलीजसे संयोग मिलानेको ग्रन्थकारकी यह कल्पना है (अनुवादक)

ग्रीष्मकालकं सूक्ष्म वस्त्र और शीतकालके स्थूल चित्रित वस्त्रोंके भीतर रुई पूर्ण करके उसके द्वारा वेष बनाया जाता है; राजपूतोंकी स्त्रियोंका पहरावा केवल बाँधरा, चोली और डुपट्टेका प्रचलित था। डुपट्टेसे ही घूँघटका कार्य भी चलता है, वह अगणित प्रकारसे अलंकारोंको पहरती हैं पुरुष अनेक प्रकारके पैजामें अंगरखे और चादरोंका व्यवहार करते हैं। उनके सब वस्त्रोंमें प्रधान पगडी है। वर्णभेदकी पगडी अनेक भाँतिकी है और समय तथा अवस्थाके भेदसे राजपूत लोग उसको भिन्न प्रकारसे बाँधते हैं। यूरोपके राजा जिस प्रकार सामान पदकी सूचना करनेवाली कुलीनता पदके साथ फीता देते थे एक समयमें राजपूत लोग भी उसी प्रकारसे निवासियोंके द्वारा राजप्रसादस्वरूप “वालाबंद” नामक महान्ताममूलक बंदिनी भेषकी प्राप्तिमें महागौरवका अनुभव करते थे। ऋतुके बदलनेके साथ ही साथ राजपूतगण पगडी और अंगरखेके वर्णको भी बदल लेते हैं, यद्यपि सफेद वर्णका प्रचार सर्वसाधारणमें है। परन्तु लाल, कुंकुमाभ और बैंगनका रंग सबसे श्रेष्ठ और आदरणीय गिना जाता है; नीची श्रेणीके मनुष्य एक ही प्रकारकी पादुकाका व्यवहार करते हैं इससे पैरके ऊपरका भाग नहीं ढकता। यहांके निवासी युद्धके समयमें और शिकारके समयमें बकरेके चमड़ेसे बने हुए बूट पहरते हैं; और चमड़ेके ही बने हुए अंगरखे पहरते हैं, वस्त्रकी अपेक्षा बकरेके चमड़ेका अंगरखा उनका अल्पकष्टदायक होता है, राजपूतोंकी कमरमें एक बड़ी लम्बी छूरी लटकती रहती है।

राजपूतजातिकी भांजनविद्या, चिकित्साविद्या, कुसंस्कारमंत्र, जादूके मंत्र, शारीरिक और मानसिक विपत्तियोंको दूर करनेके लिये अनुष्ठान इत्यादि विषयोंका वर्णन यथास्थानपर हो गया है, इसी कारणसे महात्मा टाड साहबने यहांपर मेवाडके धर्मानुष्ठान पर्वोत्सव, और सामाजिक आचारोंका उपसंहार कर दिया है। इसी कारणसे हमलोग भी इस स्थानपर उनका अनुसरण करनेमें समर्थ हुए।

अंतमें हमें केवल इतना ही कहना है कि यद्यपि साधु टाड साहब अर्द्धशताब्दीके अधिक काल पहले राजपूतजातिकी धर्मनीति और समाजनीतिको उपरोक्त प्रकारसे चित्रित कर अंकित कर गये हैं परन्तु इस अर्द्धशताब्दीका समय बीत जानेपर भी वह धर्मनीति और समाजनीति इस प्रकारके अचल भावसे विराजमान है। विजातीय उच्च शिक्षाके बलसे उत्तर भारत और बंगालकी धर्मनीति और समाजनीति जिस प्रकार इस समय एकसाथ ही अस्तव्यस्त हो गई है। विद्यालयमें ईश्वरके नामसे हित नीति और उपदेशसे शून्य

सौ क्षत्रिय राजा दिल्लीकी गद्दीपर बैठे हैं इनके पीछे यह गद्दी रावर*जातिके लोगोंके अधिकारमें आई हमको इस बातसे बड़ा हर्ष है कि ग्रन्थकर्ताओंने केवल राजाओंके राजत्व समयकी वृद्धि ही की है परन्तु राजाओंकी संख्या ज्योंकी त्यों रहनेदी है, इससे वचेकुचे ऐतिहासिक तत्त्वोंका पता मिलता है, युधिष्ठिर और विक्रमादित्यके मध्यमें ६६ पीढ़ियोंका उल्लेख सर्वथा सत्य है ।

हमको युधिष्ठिरसे पृथ्वीराजपर्यन्त १०० राजाओंके होनेमें कोई विरोध नहीं है यद्यपि विक्रमादित्यसे पहले और पिछले राजाओंकी संख्याका कोई ठीक विभाग नहीं हुआ है, कारण कि उससे पहले ६६ और पीछे होनेवाले ३४ राजा बताये जाते हैं, तथापि इन दोनों समयोंमें पचास वर्षोंका भी अन्तर नहीं पडसकता ।

हमारी परीक्षाके अनुसार युधिष्ठिरसे पृथ्वीराजतक १०० राजाओंका समय २२५० वर्ष होना चाहिये ।

हमारी यह जांच राजवाडेके मुख्य २ राजाओंके राजत्वके समयके* ६३३ से ६६३ वर्षतक अथवा पृथ्वीराजसे इस कालतकका औसत निकालकर की गई है ।

मेवाडके राजा ३४ × प्रत्येक राजाके निमित्त वर्ष	१९
मारवाडके २८	२३
आमेरके २९	२२
जैसलमेरके २८	२३

—जिसका जन्म संवत् १२१५ में हुआ कारण कि यदि ४१०० में से २९१५ बटा दें तो ११८५ शेष रहते हैं और चौहानोंके इतिहासके अनुसार पृथ्वीराजके जन्मसे पूर्वका है ।

१२१५ में पृथ्वीराजका जन्म नहीं किन्तु १२२५ के लगभग होना चाहिये कारण कि पृथ्वी-राजविजय काव्यमें सोमेश्वरके देहान्तसमयमें पृथ्वीराजको बालक लिखा है, सोमेश्वरका त्वर्गवास १२३६ में हुआ १२१५ में जन्म होनेसे पृथ्वीराज २१ वर्षका होनेसे बालक नहीं लिखा जा सक्ता (अनुवादक)

× पृथ्वीराजके पीछे दिल्लीपर रावरोंका नहीं मुसलमानोंका अधिकार हुआ था (अनुवादक)

* संवत् १२५० अर्थात् १९९४ ई० से अर्थात् पृथ्वीराजके सिंहासनसे च्युत होने और बन्दी होनेके समयसे ।

× संवत् १२१२ अर्थात् ११५६ ई० में जब जैसलने जैसलमेर बसाया तबसे वर्तमान महाराज गजसिंहके राज्याभिषेक सं० १८७६ वा सन् १८२० तक ।

ॐ यहाँके आरम्भके बहुतसे राजा लडाईमें मारे गये, वर्तमान महाराजके पिता अपने भतीजेके उत्तराधिकारी हुए जिससे समय बहुत न्यून लगा ।

कर्नल टाड के मारवाड़ जानेका वृत्तान्त ।

छब्बीसवां अध्याय २६.

उदयपुरकी उपत्यका;—मारवाड़की ओर गमन;—तुषशिखरपर विश्वास;—यात्रारंभ;—दूरसे उदयपुरका दृश्य;—देवपुर;—जालिम-सिंह;—पुलानी;—रामसिंह मेहता;—माणिकचंद;—नरसिंहगढ़के भूतपूर्व राजा;—पुलानोंसे गमन;—इस स्थानका भूतत्वमूलक विवरण, नाथद्वारेका ऊंचा मार्ग;—नाथद्वारेमें आगमन;—मन्दि-राध्यक्षके संग साक्षात्;—असुरवासग्रामकी ओर जाना;—जलमें हाथीका गिरना;—असुरवास;—एक संन्यासी;—सुमाड़चाकी ओर जाना;—शिरोनाला;—पङ्कपाल;—ठंढीवायु;—सुमाड़चा;—राजधानी कैलवारामें जाना;—करीसरोवर महाराज दौलतसिंह;—कमलमीर दुर्गका विवरण और ध्वंसावशेष इतिहास;—मारवाड़में जाना;—गन्तव्यसार्गका सङ्कट;—अश्वा-रोही सम्प्रदाय उपत्यकामें विश्वास ।

भारतकी गौरवस्वरूप वीर राजपूतजातिके वीरक्षेत्र रजवाड़ेके विशाल इतिहास कल्पवृक्षके प्रथमकाण्डकी नयी २ कोंपल और फूले फले फल फूलोंसे शोभित अन्तिम शाखा इतने दिन पीछे पाठकोंके दृष्टिपाथका पथिक होना चाहती है । इस बातको कौन स्वीकार नहीं करेगा कि हिन्दूबान्धव टाड साहबको भाग्य लक्ष्मीकी सुदृष्टिसे वञ्चित, अत्याचारी जीवित नरपिशाचस्वरूप विभिन्नजातिके द्वारा बहुत कालसे पीडित, निगृहीत, पग २ पर दलित और सर्वस्वान्त राजपूत जातिके तथा वीरस्थान सुखमय मेवाड़के उस शोचनीय भाग्यपरिवर्तनके निमित्त ही जगदीश्वरने भेजा था ? यद्यपि टाड साहब ईस्ट इंडिया कम्पनीके प्रतिनिधि बनकर रजवाड़ेमें गयेथे, और ईस्ट इंडिया कम्पनीने ही इनको भेजा था,

और दश पीढीतक जिनका वंश चलकर अन्तमें अनौरस राजा महानन्दके साथ पूर्ण हुआ, इस वैकत नामक अन्तिम राजाने शुद्धवंशी राजाओंसे ऐसा युद्ध किया कि उनका सर्वथा विनाश करदिया, पुराणोंमें ऐसा आयाहै कि शेषनागके समयसे ही राजा शूद्र होगये, इन दश राजाओंके राजत्वका समय ३६० वर्ष माना गयाहै ।

इसी तक्षकवंशके चन्द्रगुप्त मौरिवंशसे चौथी वंशावलीका आरम्भ होताहै, इस वंशमें दश राजा हुए और १३७ वर्ष पर्यन्त इनका राज्य रहा ।

पांचवंशके आठ राजाओंने शृंगी देशसे आकर १०२ वर्षतक राज्य शासन किया, और कण्व देशके एक राजाने आकर अन्तिम राजाको मारडाला, और उसका राज हरण करलिया, इनमें चार तो शुद्धवंशके थे, और पीछे शूद्राणीसे उत्पन्न कृष्ण नामक राजा हुआ, यह कण्वदेशी वंश २३ पीढीतक चलता रहा और इसके पिछले राजाका नाम सुलोमधी था ।

इस प्रकार महाभारतसे पीछेकी छः वंशावली दीगईहैं जिनमें जरासंधके उत्तराधिकारी सहदेवसे आरम्भ कर वयासी राजाओंकी अविच्छिन्न शृंखला सुलोमधीतक बराबर चली गई है ।

कितनी एक छोटी वंशावलियोंके निमित्त भी उचित समय दियागयाहै तिसपर प्रथम और अन्तिम वंशावलीके लिये ऐसा नहीं हुआ है, इस कारण पहली जाँचकी रीति काममें लानी चाहिये, जिस्से उनका समय विक्रमके संवत् ६०४ तक १७०४ वर्ष होंगे, इस रीतिसे राजा वसुदेव विक्रमका समकालीन होगा, जो राजा सहदेवसे छठी वंशावलीमें पचपनवां है, और कत्तरदेशसे आकर राज्य जीतनेवाला

१ शिशुनाग वा मौरिवंशियोंको तक्षकवंशी मानना टाड् साहबका भ्रम मूलक है, बौद्ध जैन लेखकोंने इनको सूर्यवंशी लिखाहै । (अनुवादक)

२ यहां भी शृंगी नाम भ्रमसे लिखागयाहै वास्तवमें शृंग शब्द है पुराणोंमें शृंगी देशसे आना नहीं लिखा । (अनुवादक)

३ पुराणोंमें यह बात पाईजाती है कि शृंगवंशके पिछले राजा देवभूतिको उसके कण्ववंशी मंत्रीने मारा, भूमित्र उसका पुत्र था । (अनुवादक)

४ कृष्ण राजा शूद्राणीसे उत्पन्न नहीं किन्तु यह आन्ध्रवंश पुराणोंमें शूद्रही लिखाहै, इसका प्रथम राजा सिमुक लिखाहै, पुराणोंमें कण्वदेशसे आना नहीं लिखा (अनुवादक)

५ नकशेमें सात वंशावली दीहैं और वंशनाममें भी अन्तर है (अनुवादक)

पहचान लिया है, प्रत्येक देवालय, धर्मशाला प्राचीन तत्त्व अनुसन्धान, और खोज समाप्त होगई है। समस्त ध्वंसावशिष्ट स्थानोंके इतिहासकी खोज, उन सबकी खुदीहुई लिपियोंका उद्धार, प्रत्येक शिखरका नाम कारण तथा सामन्त मंडली और राजसभाके प्रधान २ कर्मचारियोंके गुण और स्वभावका पता देनेवाला एक २ उपाधिदानका कार्य भी समाप्त होगया। नगरमें महल, सरोवरमें नाव, कुञ्जकाननमें मनोहर वाटिका, बड़े सरोवरके निकट रमणीय द्वीप हम लोगोंके निमित्त निर्धारित हैं। हमारे शिकारके लिये वनमें मृग, तालाबमें मछलियें क्रीडा करती हैं; हमारे नयनोंकी तृप्ति और चित्तरंजनके निमित्त किसी बातका भी अभाव नहीं है—किंतु इस भूधरवेष्टनीके बाहर क्या है ? यह देखनेके निमित्त सब ही इस 'सुखमय' उपत्यकाको छोड़नेके लिये अभिलाषी हैं। अबतक दोवारीके विराट काय ! तोरणद्वारने एक बार भी बाहर जानेके लिये मार्ग नहीं दिया; और यद्यपि निर्दिष्ट कार्यमें अविश्रान्त तृप्त रहनेसे मैं एक स्थानमें बहुत समय तक रहनेसे उत्पन्न होनेवाली चित्तकी कान्तिको दूर करसका हूं, किन्तु मेरे अनुचरोंको वैसे कार्यमें समय काटनेका अवसर नहीं मिला, इस कारण मैं उनको इस "सुखपूर्ण बन्दीदशामें रहकर मानसिक थकावट दूर करनेका विशेष अनुरोध करनेपर भी कृतकार्य नहीं होसका—धीरे २ सब दृश्य चक्षुशूल होगये और मुझे विश्वास होगया कि यदि शीशोदीय लोगोंकी राजधानीमें पंख बनानेवाले कारीगर होते तो सरोवरमें गिरना निश्चित जानकर भी वह (अनुचरगण) उन पंखोंको लगाकर आकाशमार्गसे भागनेकी चेष्टा करते। उनकी समान रासेलालने भी कभी भागनेकी चेष्टा नहीं की थी"।

अन्तमें प्रार्थनीय दिन आकर उपस्थित हुआ, यद्यपि मनोरम काम दृश्यावली पूर्ण—वन सरोवर, पर्वत और शिखरपथ, श्यामल तृण और फल फूल शोभित वृक्षोंसे रंगे हुए मेवाड़से मारवाड़की रेतली भूमिमें जाना होगा, तथापि उसको स्थानपरिवर्तन समझकर सबके मुखपर प्रसन्नता झलकने लगी। हमारे यात्री सम्प्रदायमें कप्तान बाघ, लेफ्टिनेन्ट केरि, डाक्टर उनकान और दो दल पैदल तथा स्किनरके ६० छुडसवार थे। उपत्यका छोड़नेसे सब ही प्रसन्न थे, क्योंकि उनमेंसे सभी वर्षाकालके ज्वरका स्वाद ले चुके थे। वर्षान्तुमें उदयपुर सर्वसाधारण और विशेष करके विदेशी लोगोंके लिये बड़ा अस्वास्थ्यकारी बनजाता है; उस समय सब झरने और नदियोंका जल प्रबल होकर कुँए और

छिन्नभिन्न होनेके समयसे आरम्भ करके वेवलोनिया असीरिया और (१) मीडियाकी पीछेवाली तीन मिलाई हुई वंशसूचियोंका मिलान करनेसे पृथक् २ औसतके वर्ष निकलतेहैं ।

जब हम आसीरियाकी वंशावली देखतेहैं तो इससे मध्यम औसतका समय दीखताहै, वेवलोनियां और मीडियाकी वंशसूचीका औसत बहुत अधिक निकलताहै, वेवलोनियां देशपर असीरियासे पृथक् होनेके समयसे आरम्भकर पीछे उसीमें संयुक्त होनेतक राज्य करनेवाले नौ राजाओंके समयके ५२ वर्ष आतेहैं परन्तु साठवर्षतक जिसने राज्य किया वह मीडियाका राजा दारा सबसे अधिक दिनोंतक जीवित रहा, इन दोनों राज्योंके अलग होनेके समयसे लेकर उनके फिर संयुक्त होनेतक दासके वंशके छः राजा १७४ वर्षके मध्यमें हुए जिनमें प्रत्येकके राज्यशासनका औसत २९ वर्ष निकलताहै ।

यदि देखाजाय तो असीरियाके नरपतियोंके राज्यका समय बहुत मध्यम-श्रेणीका है, प्रत्येक राजाका राजत्व समय नेबुकैट नेजरसे आरंभ कर सार्डेना पालसतक औसत २२ वर्ष होताहै, परन्तु उस समयसे समाप्तितक औसत निकालें तो १८ वर्ष ही निकलतेहैं ।

ईसासे १०७८ वर्ष पहलेके लेसी डीमनकाहेरोक्लाइडी कहलानेवाले यूरस्थीनीससे लेकर पहले ११ राजोंका राज्यशासनका समय औसतसे ३२ होताहै, और लगभग उसी समयसे आरंभकर एथेन्सके प्रजातंत्र राज्यमें मृत्युपर्यन्त स्थित रहनेवाले प्रधान अधिपतिके शासनकालसे आरंभ कर उससमय पर्यंत जब कि यह पद सातवें ओलम्पियडके समयमें दश २ वर्षका होगया था, जबतक मुख्यशासनोंकी संख्या बारह हुईथी जिसका औसत २८ वर्ष निकलताहै ।

इसप्रकार यहूदियोंका स्पार्टावालोंका और एथियनलोगोंके राजत्वकालका समय मिलताहै जिनका आरंभ ईसासे ११०० वर्ष पहले हुआ था अर्थात् महा-भारतसे पचास वर्षसे भी अधिक दूर नहीं, और इनके संगही वैविलन, असीरिया मीडियाके राज्यके समयहै, जिनका प्रारंभ यूनानी राज्यकालको छोड़नेके समयसे होताहै, यह ईसासे आठवीं शताब्दीमें और यहूदियोंका राजत्वकाल पिछली छठी शताब्दीमें हुआ था ।

१ एशियाखण्डके पश्चिमी विभागका एक खण्ड । . . .

२ यूनानके स्पार्टानगरका नाम लेसिडिमोनियावाले सिडिमन था ।

३ यूनानमें प्रति पांच वर्षके पीछे कसरती खेल होतेथे, उनको ओलिंपिक गेम कहतेथे और चार वर्षका खेल ओलम्पियड कहलाताथा ।

में राणा और उनके सामन्त लोगोंका मृगोंसे मराहुआ शिकारस्थान—व्याघ्र शिखर है; दक्षिणमें—आध कोश उत्तरकी ओर बहुत मछलियोंसे भरीहुई वारीश नदी और पश्चिममें डेढकोशकी दूरीपर बहुत बड़ा उदयसागर है । कई विशेष कारणोंसे राजधानीके बाहर रेजिडेन्सी स्थापनकरना परमावश्यक समझा गया । यद्यपि स्वास्थ्यरक्षा तो सबका उद्देश है ही किन्तु राजमहलसे इतनी दूर रेजिडेन्सीके स्थापन करनेका केवल यही कारण नहीं था । प्रथम तो राजधानीको हमने जिस शोचनीय दशामें गिराहुआ देखा, उससे वहां कुछ कालतक अपना कर्तव्य चलानेकी आवश्यकता जानपड़ी, किन्तु राजपूत लोगोंकी स्वाधीनता रक्षा करनेके निमित्त उस कर्तव्यको छोड़ देना पडा । हम जब पहले उनके पास गये तो राजाको भारी शोचनीय दशामें पाया, राजाने हमसे सहायताके लिये अनुरोध किया, हमने भी सोचा कि सहायताके वहानेसे प्रत्येक विषयमें हस्तक्षेप कर सकेंगे तथा उन लोगोंको कोई शंका भी नहीं होगी; इसहीसे यह बात निश्चय होगई । राजमहलसे वृटिशगवर्नमेंटके प्रतिनिधिका डेरा दूर होनेसे उनकी वह शंका न्यून होगई और शासनयन्त्र भलीभाँति चलने लगा, उनको आत्मज्ञान बुद्धिवलके ऊपर निर्भर करना पडा । तुम शिखरके ऊपर हमारा बख्ताल, स्थापित हुआ, सैन्यदल परिचालित और सेंट जार्जकी जयपताका मन्दवायुमें उड़ाईगई । यहाँ बनैले ऊंटोंकी पीठपर लाद २ कर हमारी सामग्री लाईजाने लगी । उनके विकट चीत्कारसे ऐसा मालूम होताथा कि वह शोकके संग अपने भाग्यको धिक्कार दे रहेहैं; केवल यह सौभाग्यका विषय था जो उनको यह अनुभवशक्ति नहीं थी कि, हमको सुखमय उपत्यकाकी हरी घासको छोडकर मारवाडके कठोर तृण खाने होंगे ।

पुलानो—१३ वीं अक्टोबर—“बहुत कालतक स्थानमें रहनेके पीछे अन्य यात्राकी तैयारी करते समय मनुष्यके धीरजकी जैसी भारी परीक्षा होतीहै, वैसी और किसी समय नहीं देखी जाती । तरुण अरुणोदयके संग २ ही हमने डेरेको छोडदिया । उस समय मारवाडी सैकडों बनैले ऊंटोंके चिल्लानेकी ऐसी विकट ध्वनी सुनि जाती थी कि दूसरा कोई शब्द ही सुनाई नहीं देता था; इधर हाथी हृदयमें आनन्दानुभव करके एक प्रकारका विचित्र शब्द बोलने लगे; उन हाथियोंमेंसे एक बच्चा गूंखलावद्ध और वोझ उठानेमें नियुक्त न होनेके कारण स्वाधीन भावसे इधर उधर दौडने लगा, कभी सिपाहियोंकी वस्तु

मिलान कर जगत्की उत्पत्तिसे २८२५ वर्ष पीछे युधिष्ठिरके संवत्का समय माना है, यदि संसारकी सृष्टिसे लगाकर ईसाके जन्मतक ४००४ मेंसे निकाल दिया जाय तो ईसासे ११७९ वर्ष पहले अर्थात् विक्रमादित्यसे ११२३ वर्ष पहले युधिष्ठिरके वंशका प्रारम्भ सिद्ध होजायगा * ।

पुराणोंमें तुरुष्क कहाहै यह वंही जाति जानपडतीहै जो शाकद्वीप वा सीथियामें अरक्सीजपर राज्यशासन करती थी ।

* प्रायः अंग्रेजोंके लिखे निबन्धोंमें सबका यही सिद्धान्त रहताहै कि सृष्टिकी उत्पत्तिकी पांच सहस्र वर्षसे कुछ अधिक हुएहैं, परन्तु हिन्दूशास्त्रके परंपरा सिद्धवंशसे तथा पंचागसे और राज-तरंगिणी आदिके मतसे ५००० हजार वर्षसे कुछ विशेष कलियुगको बीतेहैं, और सृष्टिकी उत्पत्ति तो करोड़ों वर्षकी है, जिसका वृत्तान्त प्रतिदिनतकके संकल्पमें बद्ध रहताहै, इसके लिये विशेष कहनेकी आवश्यकता नहीं, संस्कृतके ज्ञाता विद्वान् पुरुष इसको जानतेहैं ।

ध्यान न देकर संभ्रान्त हो जिस समयको आलस्यके मुखमें बलिदान करदेतेहैं उन्होंने उस कालको विद्याशिक्षामें काटा । उन्होंने न्यायतत्त्व, विज्ञान, ज्योतिर्विद्या और अपने देशकी इतिहास शिक्षामें पारदर्शिता लाभ करनेके संग २ जयदेवकी मधुमयी कवितावली और आधुनिक कवियोंकी कविताको विलक्षणरूपसे कंठस्थ करलिया । वह स्वयं कल्पनाके एक प्रियपुत्र और सुकावि थे, इस कारण मनोहर कविता रचकर काव्यशास्त्रकी विशेष उन्नति करते और प्रसिद्ध २ कविजन सदा उनके स्थानपर उपस्थित रहते थे । मेरे महामान्य शिक्षकने जालिमसिंहके पाण्डित्य और ज्ञानकी प्रशंसा नहीं की, यह उन गुरुदेवके ज्ञान और शिक्षाद्वारा मैंने ज्ञान प्राप्त कियाहै, (जालिमसिंहके संग गुरुदेवकी शिक्षा और ज्ञान तुलनाके समय गुरुदेव अपनी शिक्षाको सामान्य कहकर शान्त नहीं होते थे) कारण कि मारवाडके उक्त उत्तराधिका-रीके निकटसे ही उन्होंने विद्याशिक्षा और ज्ञान प्राप्त किया था । जालिमसिंह मरुमय क्षेत्रके पैतृक सिंहासन अधिकार सूत्रमें ही मरेथे ।

हमलोग कीचड और संकटपूर्ण मार्गमें चार घंटे बराबर चलनेके पीछे पुला-नोंके अग्रवर्ती शिखरपर पहुँचे । देवपुरकी समान यह भी ध्वंसप्राप्त दृश्य दिखाई देताहै । अब केवल नगरके एक प्रान्तमें ही अधिवासीलोग रहतेहैं; यह स्थान पहिले कैसा जनसमृद्धि सम्पन्न था ? इस बातको यहांके देवमंदिर और मकानोंके खंडहर भलीभाँति प्रगट कर रहेहैं, यह दोनों नगर पहिले राणाके अधिकार-में थे, अनन्तर निज भागिनियकी परलोक प्राप्ति होनेपर उन्होंने यह सम्पत्ति कनाइयाकी सेवाके लिये निर्धारित कर दी । बस्त्रागारमें मैंने राजमंत्रीके दक्षिण हस्तस्वरूप रामसिंहमहता, मिन्दीके देवयान माणिकचंद, नरसिंहगढके पदच्युत राजा, (जो अब उदयपुरमें समय काटते हैं) उनको देखा । रामसिंह इस देशकी असाधारण व्यवसाई जातिका श्रेष्ठ आदर्शस्वरूप है और यद्यपि उन्होंने मेवा-डकी सीमाके बाहर पैर नहीं रक्खा, किन्तु किसी देशमें उनकी समान मित-भाषी और भद्रपुरुष नहींहै; उनका शरीर दीर्घ, अङ्ग प्रत्यङ्ग सुगठित और मनोहर, वर्ण गोरा, बाल काले और छुँछुरारे तथा मुखमंडलपर गलमुच्छैं विराज रहीहैं । रामसिंह इस बातको भलीभाँति जानते थे कि, प्रकृतिदेवी उनसे विशेष प्रसन्न है । तोषामोदके अतिरिक्त उन्होंने लोगोंके हृदयमें भी अधिकार कर लिया था । वह सदा सुन्दर वस्त्र पहनते रहे । रामसिंह जैनधर्मावलम्बी और ओसिजातके हैं । इस ओसिजातकी संख्या सब रजवाडेमें लगभग एक लाखके

आरक्सीज नदीके किनारे निवास करते थे, ईलामें जुपिटर [बृहस्पति] से एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम सीथिस था, इसके पलस [पालास] नापस वा [नापान] दो पुत्र हुए ।

हम पूछते हैं क्या यह तातारियोंकी वंशावलीका नागवंश है जो अपने महान् कार्योंके निमित्त प्रसिद्ध था, जिन्होंने देशोंके विभाग किये, उन्हींके नामसे उनका नाम पालियन वा पाली विख्यात हुए, उनकी सेना नीलनदी-तक मिसरमें पहुँची, बहुत सी जातियोंको अपने आधीन किया और अपने सीथियन राजकी पूर्वमें महासागर कास्पियन सागर और मोई टिसकीलतक बढ़ाया, इस जातिके अनेक राजा हुए जिनके वंशमें सैकैन्स [सैकी] मैसे-जेथी [जटवाजिट] एरी अस्पियन एरियाके अश्व नामक पुरुष और दूसरी अनेक जातियां हैं जिन्होंने असीरिया और मीडिया जीतकर राज्यको तहस नहस करदिया, और वहाँके निवासियोंको अरक्सस नदीके किनारेपर लेजाकर बसाया ।

हमारे छत्तीस वंशोंमें सकी जट अश्व और तक्षक ऐसे नाम पाये हैं और यही नाम यूरोपके प्रारंभिक सभ्यताके समयकी दूसरी जातियोंमें भी पायेजाते हैं, इससे उनके मूल निवास्थानके खोजनेमें और भी बहुतसे प्रमाण खोजनेकी आवश्यकता है ।

देवोंका कथन है कि जो समस्त जातियां कास्पियनझीलके पूर्वमें रहती हैं उन सबका सीथिक कहतेहैं, उसमें उसी समुद्रके निकट डाही (दाँही) जाति

१ चन्द्रवंशकी माता इला पृथ्वी है इसको मनुष्यरूप माना है सैक्सन इसको अर्था, यूनानी इरा, और इब्रानी अदे कहते हैं ।

२ क्या यह पालियन मिसरके गडारिये नहीं होसके, पाली अक्षर इस समय तक चलते हैं, और वे बौद्धोंके शिलालेखके टुकड़ोंकी समान अब भी पायेजातेहैं वे मेरे पास हैं और बहुतसे अक्षर कापटिक वर्णमालासे मिलते हैं ।

३ चंद्रवंशकी तीन महान् अश्वजातिकी शाखा मीड कहलाती है, यथा पुरमीड अजमीड और देवमीड, वाजस्वके पुत्र अश्वजातिके लोगोंने असीरिया और मीडिया पर आक्रमण किया, जब उन्होंने अपने पैतृक स्थान पांचालिक देशसे चलकर सिन्धुनदीके पश्चिमदेशमें आगमन किया वहाँपर उनकी संख्या बहुत बढ़गई थी यह स्पष्ट है ।

४ दाहिया जाति राजपूतोंके ३६ वंशोंमेंसे एक थी जो अब लुप्त होगई ।

लिखना चाहता हूँ । हम इससे पहिले जिस स्थानको वख्तागार लिख चुके हैं, उस स्थानपर ही मेरा और उनका शेष साक्षात् हुआ था ।

माणिकचंदने मेवाड राज्यके समय शुल्क संग्रहका भार वार्षिक २५०००० रुपया देना स्वीकार किया । वह अपने आधीनस्थ सहकारी शुल्क संग्रहकारियोंके विश्वासघातकताके दोषसे वा स्वयं मन न लगानेके कारणसे उक्त व्यवस्थाके अनुसार सब रुपयेका छठा अंश देनेमें भी असमर्थ होगये । उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और चतुराई देखकर आशाकी गई थी कि, दूसरोंके हाथसे इस भारको उनके हाथमें सौंपनेसे राज्यके इस प्रयोजनीय विभागका कार्य अति उत्तमताके संग चलेगा । उन्होंने मेरे वख्तागारके पास अपना वख्तागार स्थापन करके मेरे संग मुलाकातकी प्रार्थना की । साक्षात्के समय मैंने उनको बहुत व्याकुल पाया, तथा उन्होंने प्रगट किया कि “मैं कई बार आपके दर्शन करनेकी इच्छासे बाहर निकला किन्तु सब ही समय विपरीत दशामें कुलक्षण सूचक पक्षियोंको उड़ता हुआ देखकर लौट र गया । ” अन्तमें उन्होंने राणाके विश्वाससे गिरजानेकी बातको विचार भविष्यत्की ओर दृष्टि न करके मुलाकात करनेकी प्रतिज्ञा की थी । “ निज अधीनस्थ कर्मचारियोंके ऊपर यथोचित तीक्ष्ण दृष्टि न रखनेके कारण ही उन्होंने विश्वासघातकता की ” इस बातको स्वीकार करके उन्होंने प्रतिज्ञा की कि “मेरे ऊपर जितना रुपया चाहिये उतना सब देदूंगा । ” किन्तु वह षड्यंत्री नामसे विख्यात हो गये थे इस कारण उनकी इस प्रतिज्ञाके ऊपर सन्देह हुआ । मानिकचंद इस प्रतिज्ञाको पूरी न कर सकनेके कारण अर्थात् हमारे अनुमानके अनुसार सब धन अपनी सम्पत्तिमें लगाकर साहपुरेके राजाकी शरणमें चलेगये । इस शोचनीय दशामें उनके शत्रुओंने महाआनन्द प्रगट करके उनके हृदयमें अपमानका बाण मारा, इस कारण उन्होंने इस देशमें प्रचलित सहज उपाय विषपानसे इस शरीरको छोड़ दिया ।

ऊपर लिख चुके हैं कि तीसरे दर्शक नरसिंहगढ़के राजा यहां देश निकालेकी दशामें वास करते हैं । प्रमारजातिके छत्तीस शाखाके अन्तर्भुक्त उच्च जातिमें इनका जन्म हुआ । पन्द्रह पीढ़ीसे यह मध्यभारतमें वास करते हैं । इनके क्षुद्र-राज्यका नाम उमतवाडा और राजधानीका नाम नरसिंहगढ़ है । लुटेरे और उत्पीड़क अत्याचारी पिण्डारी और महाराष्ट्रियोंके अधिकृत स्थानके ठीक बीचमें यह प्रदेश स्थापित होनेसे उक्त पिण्डारी और महाराष्ट्रीलोगोंने इनके

शेषनागसे आना हिसाब लगानेसे जिसका समय ईसासे छःसौ वर्ष पहलेका निश्चित होता है, पुराणोंमें प्रथम यह सूचित किया है कि इसी समयके ओरे धोरे इन जातियोंने चढ़ाई करके एशिया माइनरको जीतलिया था और पीछे स्कैंडिनेवियाको तथा वाकट्रियाके यूनानी राज्यको असी और टाचरी जातिने उलट पुलट करदिया, उसके पीछे असी* काही और किम्बरीजातियों तथा रोमनलोगोंने बाल्टिक समुद्रके किनारेपरसे चढ़ाई की ।

यदि हम पहले जर्मनलोगोंको सीथियन वा गाथ जेटी वा जिट होना सिद्ध करसकें तो शासनरीति, और आचार विचार आदिके विषयमें खोजनेयोग्य विषयोंका हमको एक बड़ा स्थान प्राप्त होसकेगा, यूरोपकी सम्पूर्ण पुरानी बातोंका रूपकही नया होजायगा, और जर्मनवालोंके समूहोंसे उनका पता लगानेके स्थानपर जिस प्रकार किमाण्डेस्कू और बडे २ लिखनेवालोंने इस समयतक किया है उनकी खोज सीथियन आदि जातिके आचार विचारकी विस्तारपूर्वक घटनाओंसे जो हेरोडाटसने लिखी हैं लगायाजासकता है, सीथियनजातिने सन् ई० से ५०० वर्ष पहले स्कैंडिनीवियाको अपने अधिकारमें करलिया था इन सीथियनलोगोंमें मर्क्यूरी (बुध) वोडन वा ओडनकी पूजा होती थी, तथा अपनेको बुधका वंशधर मानते थे यदि गाथलोगोंकी देवकथाओंका मिलान करें तो वे यूनानियोंकी विदित होती है जिनके देवता केलस और टेरा बुध और इलके सन्तान विदित होते हैं, जितनी यूनान और रोमकी मिथ्या विश्वासकी बातें हैं जैसे वनदेवी वनदेवता और परियें इन्हीं सब बातोंका स्कैंडिनेवियावाले भी विश्वास करते हैं, गाथलोगोंका बलिके हृदयसे शकुन लेना; और भविष्य कहनेवाले स्त्री पुरुषोंपर पूरा विश्वास था, और यह लोग वीनसके स्थानपर फ्रेयाको और पारसीके स्थानपर वल्काइरीको मानतेथे ×

इन देवकथाओंकी समानताका पता लगानेसे प्रथम हमारी यह इच्छा है कि यूरोपकी प्राचीन जातियोंके और साथियन राजपूतोंके एकही मूलके निकासको सिद्ध करनेके लिये हम कुछ और सम्मतियोंको खोज कर लियें ।

जिसने अब्बुलगाजीकी पुस्तकका अनुवाद किया है, । वह अपनी भूमिकामें लिखता है कि हमारा तातारियोंको घृणाकी दृष्टिसे देखना न्यून होजायगा,

* यह असी शब्द जेटीयूट वा जटलोगोंके निमित्त उस समय उच्चारण कियाजाता था जब कि उन्होंने स्कैंडिनेवियापर चढ़ाई की थी, और यूटलैण्ड वा जटलैण्ड नामक नगर उन्होंने बसाये ।

× गाथलोगोंके विषयमें पिकर्टनका लेख जिल्द ७२ पृ० ९४ देखो ।

निमित्त नियुक्त हैं । हम लोगोंका वस्त्रागार नाथद्वारे नगरके नीचे बहनेवाली बुनाश नदीके दूसरी पार स्थापित हुआ, इस कारण जब हम नगरके बीचमें होते हुए चले तो सब नगरनिवासियोंने राजमार्गमें एकत्र होकर महाआनन्द प्रगट किया, जिस अंग्रेजी शासनद्वारा उन्होंने विजातीय अत्याचारियोंके हाथसे उद्धार पायाहै, तथा जिस शासनसे कन्हैयाजीके पवित्र मंदिरकी रक्षामें पूर्ण सहायता की है वह सब ही एक स्वरसे उस अंग्रेजी शासनकी प्रशंसा करने लगे, और आग्रह सहित अन्नकूट पर्वके पुनः प्रतिष्ठा दिनकी बाट जोहने लगे ।

१५ वीं अक्टूबर अब आगे मार्ग जलमय, अत्यन्त दुर्गम है, और भारवाही पशु अवाध्य प्रकृति होनेके कारण मेरतानामक मरुस्थानमें हमारा तथा बोझा ठोनेवालोंका बिछोह होगया, अतः फिर मिलनेके लिये इस स्थानपर ठहरगये । श्रीमन्दिरके प्रधान धर्मयाजकने सुराटवासी एक धनी महाजनके संग आकर हमारा अभिनन्दन किया । एक सुनहरी अँगरखा और एक सुवर्णमंडित नीले रंगका डपट्टा धर्मयाजकने मूर्तिका उपहारस्वरूप लाकर मुझको दिया । इसके अतिरिक्त एक बड़े पात्रमें पूर्वदेशके अनेक प्रकारके पके और स्वादिष्ट फल मूल देकर मुझे सन्मानित किया । अपराह्नमें भोगका दूध और अनेक प्रकारके मिष्ठान्न भोजनके लिये भेजेगयेथे । किन्तु दुःखका विषय है कि, सामान्य रीतिसे भोग राग बनानेके दिनमें अब विशेषउपाधि धारण कर ली है, कारण कि अब दुग्ध आदिमें गुलाबका जल और इतर मिलादिया गया ।

लोदीनामक जिस स्थानका मंदिर बहुत प्रसिद्ध है, वहांके देवमंदिरके अधीन जैसे चालीस हजार दूध देनेवाली गौ हैं, नाथद्वारेकी गौसंख्या उससे दशांशका एक अंश परिमित होनेपर भी भारतवर्षमें यहांकी समान दूध देनेवाली गायें और कहीं नहीं हैं । इन चार हजार गौओंके दूधसे खीर, रबड़ी, मक्खन आदि बनाकर भोग लगानेके पीछे सर्व साधारणको प्रसादरूपसे बाँट दीजाती हैं । सुराटके उक्त वृद्ध वणिकने मूर्तिकी आश्चर्य्य शक्ति और दैवशक्तिके विषयमें मुझसे अनेक बातें कहीं । यमुनातटसे श्रीकृष्ण जिस रथमें नाथद्वारे आये थे, यह बनिया उसके सामने प्रणत होकर पूजा करताहै । भक्त और धार्मिकके अतिरिक्त साधारणको यह रथ पूजाके लिये नहीं दियाजाता । नारायणने श्रीकृष्ण अवतार लेकर जिस आयुमें जैसा शृंगार कियाथा, मूर्तिको भी दिनमें क्रमसे वैसे ही सजाया जाताहै । बालवेषसे कंसवधकारी धनुर्वाणधारी राजवंश तक दिखाया जाताहै । मैंने मंदिरके प्रधान पुजारीके हाथमें एक

कर पैरोपैमिसनको उलंघनकर जैगजाटीज वा जैहूनपर होकर सकिटाई * वा शाकद्वीपमें पहुँचनेकी इच्छा करते हैं, और वहाँसे इसी प्रकार डेस्टी किपचकसे तक्षकजेटीकैमेरीकट्टी और हूनजातिको भारतवर्षके मैदानोंमें लानेकी इच्छा करते हैं बहुतसे विषयोंकी इन अजान देशोंसे हमको जानकारी प्राप्त करनेकी इच्छा है यहाँ पुराने समयमें सभ्यताको स्थान मिलाथा, और यह बड़े २ नगर चंगेजखांकी चढाईके समयतक विद्यमान थे, जो यह सोचते हैं कि एशियाकी उच्च भूमिकी जातियाँ पशुमात्रको चराया करती थीं, वे बड़ी भूलमें पड़े हैं, डिडिगनीजने पुराने प्रमाणोंसे इस बातको सिद्ध करदियाहै कि जवसूलोगोंने यूची वा जिट जातिपर चढाई की तो उन लोगोंका ऐसे नगर संख्यामें सौसे अधिक मिले जिनमें भारतकी सौदागरीकी वस्तुएँ थी, और उन लोगोंमें जो मुद्रा प्रचलित थी उसपर वहाँके राजाओंकी मूर्ति अंकित थीं ।

मध्य एशियाकी यह दशा सन् ई ० से बहुत पहले की थी जो इन देशोंमें होनेवाली लडाइयोंसे बरवादी हुई जिसका निदर्शन यूरोपमें नहीं पाया जाता, और जिनके कारण यह देश निर्जन और उजाड हो रहाहै और इस कालमें जैटिक जातिके साथ तैमूरकी लडाईमें उसके लुब्ध पूर्वजोंके संहारकारी जीवनका निदर्शन होगी ।

साइरिसके समयमें ईसासे छः सौ वर्ष पहले इस बड़ी जैटिक जातिके राजकीय प्रभावकी यदि हम परीक्षा करें तो यह बात हमारी समझमें आजायगी कि तैमूरकी उन्नत दशामें भी इन जातियोंका पराक्रम हास नहीं हुआ था यद्यपि २० वीस शताब्दीका समय व्यतीत हो चुकाथा, उस [१३३० ई.] में जैटिक जातिके पिछले राजा तुगलक तैमूरखांके राज्यशासनमें चगताई राज्यकी पश्चिम ओरकी सीमा जेस्टी किप्चिप् और दक्षिण ओरकी जैगजाटीज और जैहून नदी थी और जिसके तटपर टोमिरिसके समान जैटीजातिके खानकी राज-

* पिक्टनेने सकिटाईजातिकी खोजकी है, यद्यपि जिस शाकद्वीपका पुराणोंमें वर्णन आया है, उसके लिये उन्होंने डियन बिलका कोई प्रमाण नहीं दिया है, यह सकिटाई आक्सस और जैगजाटीजनामवाली नदियोंके निकासका देश है, जिसको सैकीलोगोंके निवासके कारण सकिटा कहा जाता है । जो जाबुलिस्तानका शासन करते थे तथा जिन्होंने गजनी बसाई वह जैसलमेरकी यदुजाति चकताई जातिको अपने इन्दुवंशसे होना मानते हैं, और यह कहते हैं कि गूढ विचारके बिना यह बात मानने योग्य विदित नहीं होती, परन्तु मेरी समझमें यह विश्वासके योग्य है ।

× पुराणोंमें लिखा चगिताई वा सकिटाई शाकद्वीप है यूनानियोंने इसे बिगाडकर सीथिया कियाहै जो लोग सूर्यको पूजते और अरवर्मा नदीको अपना निकास मानते हैं ।

नेपर एक म्लेच्छने नारियलके वदले मट्टीका ढेला देदिया, तबसे देवी हाथ नहीं निकालतीहैं ।” ठीक आधी रातको हम लोग यथेष्ट स्थान पर पहुँचे ।

बोझा उठानेवाले ऊंट और अनुचर लोगोंके मिलनेकी आशासे १७ वीं तारीखको हमें यहीं विश्राम करना पडा । असुरवास एक समृद्धिशाली ग्राम है, किन्तु अब यहांके निवासियोंकी संख्या बहुत न्यूनहै । चारण काविके एक पुराने संगीतसे मुग्ध होकर राणा भीमसिंहने भविष्यकी चिन्ता छोड अब यह गाँव उक्त काविको देदियाहै । हमारे वस्त्रागारके निकट ही ऊंचे शिखरके ऊपर एक संन्यासीका आश्रम था, संन्यासी मुझसे साक्षात् करने आये, और मैंने भी उनके आश्रममें जाकर प्रतिसाक्षात् किया । साधारण संन्यासियोंकी समान यह भी एक बुद्धिमान् और देशविदेशकी बहुत सी बातें जानतेहैं । यह भगुवा वस्त्र पहनतेहैं और पगडीके ऊपर एक कमलगट्टेकी माला लगीहुईहै, तथा कमलगट्टेकी माला हाथमें लिये सदा इष्टदेवका नाम जपतेरहतेहैं । उन्होंने अंग्रेजी शासनमें साधारण प्रजा निर्विघ्न शान्तिके संग २ परमसुखसे वास करती है, इस बातका उल्लेख करके यह भी प्रगट किया कि अंग्रेजशक्ति मनुष्यशक्तिकी अपेक्षा प्रबल है और वास्तवमें एक समय राजा और सामन्तलोगोंने इन संन्यासीकी समान अंग्रेजोंको दैवशक्तिसम्पन्न कहनेका सिद्धान्त करलिया था ।

१८ वीं अक्टूबर-नवीन सूर्योदयके संग २ ही छः कोशकी दूरीपर सुमाइचा नामक स्थानकी ओर यात्रा कर दी । जिस मार्गमें हम चलरहेथे वह वृक्षमार्गकी समान बहुत सङ्कीर्ण, तथा नाथद्वारेसे टेढ़ा, ऊंचा नीचा और उच्चभूमिका सीमा-प्रान्त मात्र है; चारों ओर खैर, कीकड़ और वबूलके वृक्ष लगरहेहैं । हम बीच मार्गमें स्थित गङ्गगुड़ानामक ग्राम होकर शिरनालानामक ग्राम होकर शिरनाला नामक उपत्यकामें पहुँचे । विस्तृत विराट्काय शिखरके जिस मूलसे नदी कलकल शब्द करतीहुई वही है, गोडाग्राम उस स्थानपर ही वसाहुआ है । नदीकी कुण्डलाकार टेढ़ी गति देखकर हमने सहजमें ही अनुमान करलिया कि, इस विशाल उपत्यकाका केवल एक यही मार्ग है । उपत्यका सर्वत्र असमभावसे फैलीहुई है, किन्तु किसी स्थानका परिमाण आध कोशसे कम नहीं है । उपत्यकाके निकटसे ही शिखरश्रेणी ऊपरको उठीहैं; किसी शिखरके ऊपर आमके वृक्ष लगेहुए हैं और कोई २ शिखर अभ्रभेदी रूपसे खड़ा हुआहै । इस रमणीय दृश्यपूर्ण स्थानके ऊपर प्रकृतिकी भी विशेष शुभ दृष्टि देखीजातीहै । गूलर, सीताफल तथा बादामके वृक्ष अधिकाईसे उत्पन्न होतेहैं; नदीके तटकी भूमि लताओंसे घिरीहुई तथा आम, तेन्दू, पीपल, बट आदि बड़े २ वृक्षोंसे चारोंओर

वेह अपने प्राचीन इतिहासको नहीं जानते, तो भी यह अपने पुराने नियमके अनुसार लाहौरके जिटअधिपतिके अधिकारमें रंगरूट सवारोंकी समान बीकानेर और भारतवर्षके मरुस्थल और दूसरे प्रदेशोंमें भी चरवाहों [राजचरवाहों] की समान रहतेहैं, थोड़े समयसे ही इन्होंने चरवाहोंका कार्य छोड़कर किसानी करनी आरम्भ करदीहै, ट्रान्स और आक्सियानाकी जो निरन्तर भ्रमण करनेवाली जाती थीं उनके वंशधर अब भारतके जंगलोंमें सबसे उत्तम खेतीका कार्य करनेवाले हैं ।

विचारसे यह बात जानीजातीहै कि इन हिन्दूसीथिक जातियों अर्थात् जेटी तक्षक, असीकट्टी राजपाली, हूनकैमेरीकी चढाइयोंके कारणसे ही चन्द्रवंश वा इन्दुवंशके स्थापन करनेवाले बुधकी पूजा आरंभ हुई है ।

हेरोडाटसने जेटीलोगोंको आस्तिक * बतायाहै, और कहाहै कि वे आत्माके अमर होनेका सिद्धान्त रखते थे, यही बौद्धलोगोंका सिद्धान्तहै ।

परन्तु हम पहले असी वा अश्वजातिके विषयमें कुछ आलोचना करके पीछे असी जेटी वा स्कैण्डेनेवियाके जट जिनके द्वारा किम्बरीक चिरसोनीजका नामकरण हुआहै और सीथिया तथा भारतवर्षकी जेटीजातिके धर्मविषयकी समानताका उल्लेख करेंगे ।

अश्वका इन्दुवंश [देवमीढ और वाजश्वके वंशधर] सिन्धुनदीके दोनों तटोंपर बसगया, और सम्भव है कि इस अश्वनामसे ही 'एशिया' खण्डका नाम पड़गयाहो ।

हेरोडाटस लिखताहै कि यूनानवालोंने प्रोमिथियसकी स्त्रीके नामपर एशिया नाम रक्खा है, और कोई ऐसा कहते हैं कि यह मेनेसके एक पोतेके नामसे हुआ था, जिससे आदिपुरुष मनुके वंशधर अश्व जातिका ही ज्ञान होता है ।

आशाशकम्भरी × माता आशाकी देवी है, जो जातियोंकी रक्षा करनेवाली माता है ।

* यह सूर्यको अपना सबसे बृहत् देवता मानते थे, इतनेपर जौमौलक्सिज इनके भयका देवताथा, जो हिन्दुओंके प्लुटोयमके समान है, इसीप्रकार 'यमलू' सीथिक जातिके फ्रैसलोगोंका मुख्य देवताथा पिंकर्टनकी हिस्ट्री आफ दी गाथ जिल्द २ पृष्ठ २१५

× शाकम्भरी शाकम्-शाखाका बहुवचन और अम्बर रक्षा करना (टाड् साहबकी यह व्युत्पत्ति ठीक नहीं शाकम् शब्द बहुवचन नहीं एक वचन है और शाकादिपत्रोंका वाचक है, अम्बरका अर्थ भी रक्षा करना नहीं वस्त्रका है, शाकम्भरीका अर्थ शाकादिकेद्वारा भत्तोंको पोषण करनेवाली शाकम्भर यह दो शब्दहैं ।

दिया है । यही लोग असली आधीन कर देनेवाली प्रजा है, एक ओर राणाका स्थानीय श्रमसाध्य कार्य करते हैं और दूसरी ओर नियमित वार्षिक कर देते हैं । पूर्वकालमें इनके पूर्वपुरुष जैसी वीरता दिखलागये हैं, मेरे उन सब बातोंका उल्लेख और प्रशंसा करनेपर वह मुझसे बहुत प्रसन्न हुए, कोई राजपूत भी अपने पूर्व पुरुषोंकी वीरताको कभी नहीं भूल सकता । डुम्पुर वृक्षके नीचेकी इस समितिने वास्तवमें ही अधिक शोभा पाईथी । हमारे बोझा उठानेवाले ऊंट इस सुमा-इचामें आकर हमसे मिलगये ।

१९ अक्टूबर राणा लोग चित्तौड और बुनाश नदीके समतल प्रदेशसे विताडित होकर तुङ्ग शृंगमाला वेष्टित पहाडी स्थानमें रहनेको बाध्य हुएये, तथा इस सम्बन्धसे मेवाडकी बहुत सी प्रजाने आकर निज उपत्यकाओंमें वास कियाथा। हमने वहांके प्रधान नगर कैलवाडाकी ओर यात्रा की । उक्त प्रदेशमें जितने पर्वत और नदियें हैं उन सबके संग ही उपरोक्त समयकी किसी न किसी ऐतिहासिक घटनाका सम्बन्ध अवश्य लगा हुआ है । पूर्व वर्णित उपत्यकाकी समान यह स्थान प्राकृतिक रमणीय सौन्दर्यसे शोभायमान है । यही विदीर्ण पर्वतमें होकर जो मार्ग गया है उसके वामभागमें “ करी सरोवर ” नामक एक छोटी नदी हमारे दृष्टिगोचर हुई । यद्यपि पैदल चलनेवाले पथिक यहांसे एक सीधे मार्गमें होकर कैलवारा नगरमें जासकतेहैं, किंतु वह स्थान ऐसे घने जंगल और विपत्तियोंसे भरा हुआ है कि, अपरिचित मनुष्यको वहां जानेमें सहसा साहस करना असंभव है । इसका नाम “करी सरोवर” क्यों पडा ? इस बातका हमें कुछ भी पता नहीं चला, कदाचित् प्राचीन कालके किसी समरोपलक्षमेंही यह नाम रक्खा गयाहोगा । हम मूर्खनामक ग्राममें होते हुए आगे बढ़े । यह ग्राम एक राठौर सामन्तके अधीन है । उक्त ग्रामसे लगे हुए एक क्षुद्र सरोवरके तटपर एक अत्यन्त रमणीक नीचे मंदिरने हमारी दृष्टिको आकर्षण किया । एक मनुष्यसे प्रश्नकरनेपर ज्ञात हुआ कि यह सती मंदिर है । किन्तु इस सामान्य उत्तरसे प्रसन्न न होकर ग्रामके अध्यक्षको साक्षात्के लिये बुलाया । उसके आनेपर प्रगट हुआ कि उक्त मंदिर उस ग्रामाध्यक्षके पूर्व पुरुषोंने बनवाया था । जब औरंगजेबने इस प्रदेशमें समराशि प्रज्वलित कर दी, तब इस ग्रामके स्वामीने युद्धमें लडकर अपने प्राण देदियेथे; उसकी अर्द्धांगिनीने पतिभक्ति प्रगट करनेके लिये अपने स्वामीका स्मरण चिह्न छातीपर रखकर इस स्थानमें अपने शरीरको चितामें भस्म कर दियाथा ।

अपसालाके मंदिरमें स्कैण्डिनेवियाकी लडाईके देवताका घोडा स्थापित कियाजाता था, जो लडाईके पीछे सदा ही पसीनेसे भीजा हुआ और मुंहसे झाग-उगलता पायाजाता था, टसीटसने लिखाहै कि घोडेकी आकृति बनीहुई देखकर ही जर्मनलोग मुद्रा (सिक्के) का व्यवहार करतेथे अन्यथा नहीं ।

एड्डामें लिखाहै कि स्कैण्डिनेवियामें प्रवेश करनेवाले जेटी वा जिटलोग असीनामसे विख्यात थे उनकी प्रथम वस्ती असगईथी × परन्तु पिकर्टनएड्डाका प्रमाण स्वीकार नहीं करते, और टर्फियसकी सम्मतिमें अपनी सम्मति मिलातेहैं, जिसने आइस लैण्डके इतिहास और वंशसूचियोंके लेखोंसे सन् ई०से ५०० वर्ष पहले डेरियस हिस्पास्टसके समयमें ओडनका स्कैण्डिनेवियामें आना मानाहै ।

यही अन्तिम बुद्ध वा महावीरका समय है ई०से ५३३ और विक्रमसे ४७७ वर्ष पहले जिनका संवत् चलाथा ।

ओडनका उत्तराधिकारी गोतम स्कैण्डिनेवियामें था, और यह गोतम अन्तिम बुद्ध महावीरका उत्तराधिकारी था । जिसकी पूजा अबतक मलकाके जल डमरू-मध्यसे लेकर कास्पियन समुद्रतक गौतम वा गोदम नामसे होतीहै ।

पिकर्टन साहब कहतेहैं जो ईसवीसे एक सहस्र वर्ष पहले मुख्य देवता गिना-जाता था वह दूसरा ओडन दूसरे प्राचीन वृत्तान्त बतलाताहै ।

मैलेटने भी दो ओडनका होना मानाहै, परन्तु पिकर्टनकी सम्मति है कि उस मैलेटको टर्फियसके मतके अनुसार ई० से ५०० वर्ष पहले ओडनका ग्रानना उचित था ।

यह एक बड़े अचम्भेकी बातहै कि स्कैण्डिनेवियाके निवासी दोनों ओडनोंका समय बाईसवें बुद्ध नेमिनाथ और चौबीसवें तथा पिछले बुद्ध महावीरके समयसे मिलजाताहै इनमें पहलेका समय कृष्णके समयके साथ ईसवीसे लगभग १००० वा ११०० वर्ष पहले और पिछला ५३३ वर्ष पहले हुआ था, यूरोपके असी-जेटी आदिलोग पूर्वके असीतक्षक और जेटियोंकी समान मर्क्यूररी (बुध) को अपने वंशका आदिपुरुष मानकर उसका पूजन करते थे ।

चीन और तातारके इतिहासवेत्ताओंका मत है कि ईसासे १०२७ वर्ष पहले बुद्ध वा फोका जन्महुआ था ।

× असगई—असीगड अर्थात् असीलोगोंका गड ।

१ महावीर—बड़ा युद्ध करनेवाला ।

सरल चित्त और सब कार्योंमें अग्रसर रहते थे, वैसे ही महान् नम्र, गर्वहीन और अल्पभाषी थे । मेवाड प्रवेशके प्रथमरूप इस पाश्चात्य सीमान्तमें वह जिस पद पर नियुक्त थे, उनके गौरव और स्वभावने उनको इस पदके सम्पूर्ण उपयोगी बनादिया । सन् १८१८ ईसवीके फरवरी मासमें मैंने कमल मीर दुर्गमें स्थित सेनाकी शेष वेतन चुकाकर दुर्ग अधिकार करलिया था । जिस श्रेणीकी अर्थ लिप्सु सेना सरलतासे ही अपनी पगडी बदलनेकी समान स्वामीके परिवर्तन करनेमें अभ्यस्त हैं, प्राच्यजगतके सेनापतियोंके पक्षमें उस श्रेणीकी सेनाको हस्तगत करनेका मुद्रा ही एक प्रधान, निश्चित और सरल उपाय है । चौबीस घंटेके बीचमें हमने दुर्गमें अधिकार पालिया, किन्तु जितना रुपया देना निश्चित हुआ हमारे पास उसके तीन अंशका एकांशाधिक नगद रुपया न होनेसे उन्होंने मारवाडके पालिनामक वाणिज्य नगरकी बराती चिंटी लेनेमें कुछ भी ध्वर उधर नहीं किया । भारतकी नितान्त निधान भङ्गकारी जाति तक भी ब्रिटिश जातिका ऐसाही विश्वास करती है । दूसरे दिन प्रातःकाल हमने देखा कि, उस दुर्गकी सेना पश्चिमी पहाड़ी मार्गसे जारही है; उस समय टूटेफूटे प्राचीन देवमन्दिरमें बैठेहुए हम भोजन कर रहे थे । मेरे अनुगामी सेनादल और अनुचरोंने एक सप्ताहतक दुर्गका अधिकार अपने हाथमें रखवा, पीछे राणाकी भेजीहुई सेनाके आनेपर दुर्गका भार उसके हाथमें सौंप दिया गया । इस विभिन्न दृष्ट्यापूर्ण स्थानके असंख्य स्मरण स्तंभोंमें खुदेहुए लेखोंकी वर्णवलीका उद्धार और उन सबकी नकल करनेमें उक्त आठदिन बीतगये । यद्यपि इस सुप्रसिद्ध स्थानका बाह्यदृश्य चित्रपटपर अंकित होगया था, किन्तु इसके भीतरी दृश्यके वर्णन करनेकी चेष्टा करना मानों वृथा साहस करना है । दुर्गके चारों ओर अभेद्य विशाल प्राकार है, अनगिन्त बहुत ऊंचे गोलाकार दुर्गालय और वाणचलानेके लिये छेदवाली परकोटाश्रेणी इटस्कानकी समान दिखाई देती है । पत्थरोंके ऊपर क्रमसे वाण, बन्दूक और गोला चलानेके निमित्त छेदयुक्त परकोटा ऊपर उठगया है और सबसे अन्तिम चोटीमें “ वादलमहल ” नामक राणालोगोंका वर्णानिवास बनाहुआ है । उस वादलमहलसे बालुकामय मरुप्रान्तर और चारों ओर विराजित अनेक शिखरश्रेणियों दृष्टिगोचर होती हैं । कमलमीर दुर्गपर चढ़नेके प्रथम संकीर्ण मार्गमें कैलवारासे सिकि कोशकी दूरीपर “ अराइतपोल ” नामक पहली तोरण दिखाई देती है । उसके आगेही “ हुल्लापोल ” और “ हनुमानपोल ” नामक और दो तोरण

जेटीजातियोंके सदृशहीहै, जिनका वृत्तान्त हेरोडाटस, जसटिन, और स्ट्रैबोने कियाहै और जो व्यवहार राजपूतशाखामें इस समयतक विद्यमानहै ।

अब हमें वह समानता मिलानी उचितहै जो इतिहाससे धर्म और आचार विषयमें पाईजातीहै, सबसे प्रथम धर्म विषयक समानताकी आलोचना करतेहैं । देववंश तथा देवोत्पत्ति जर्मनियोंके आदि देवता दुइसटो मर्क्यूरी [बुध] और अर्था (पृथ्वी) थे ।

दुइसटो×-इला और मनुसे उत्पन्नहैं, लोगोंने भूलसे उसको ओडिन वा वोडेन समझाहै, जो पूर्वी जातियोंका बुधहै, इससे बड़ी गडबड हुईहै यद्यपि वे इन जातियोंके मंगल और बुधहैं ।

धर्मसम्बन्धी रीति-सुओनीज वा सुएवी [शैवी] जो स्कैंडिनेवियाकी जेटी-जातियोंमें सबसे अधिक बलिष्ठ जाति थी, वह बहुतसे सम्प्रदाय जातियोंमें विभक्त होगई, जिनमें सेसू [यूची वा जिट] लोग अपनी बगीचियोंमें अर्थाको मनुष्यवलि देते थे और अर्थाका रथ एक गाय खेंचती थी ।

सुएवी लोग ईसिसकी पूजा करते थे जो राजस्थानके ईसिस और सीरीस अर्थात् हरगौरीहैं, जिसकी रीतिमें-एक जहाजकी मूर्ति होतीहै, टसिटस कहताहै कि यह रीति विदेशी होनेकी सूचना देती है, जिसप्रकार मिसर देशमें, ईसिस और असिरिसका उत्सव होताहै, उदयपुरकी भीलपर वैसा ही ईश, गौरीका उत्सव होता है, हेरोडाटस इसके वृत्तान्तको इस प्रकार लिखता है कि ओसिरिसके हाथमें जो अपनी स्त्रीसे दूसरी कक्षाके हैं खिले हुए प्याजके फूलोंकी एक लकड़ी रहती है, जिसको मिसरके लोग पवित्र मानते हैं, परन्तु हिंदू जाति इससे वृणा करती है ।

उप सालाका प्रसिद्ध मंदिर सुएवी वा सुइयोनीज लोगोंने बनवाया था, और उसमें उन्होंने थोर, वोडेन और फ्रेयाकी मूर्तियोंकी स्थापना की, यही स्कैंडिनेविया

× सूलपुरमें जिटजातिके राजाका लेख पांचवीं शताब्दीका है उसमें उसको तुष्टाजातिका लिखा है, वह वर्णन कीलकी आक्रातिके शिरवांली लिपिमें है जिसका प्रचार भारतके प्राचीन बौद्धोंमें था जिसे तातारी अपनी पवित्र लिपि मानते हैं, जिसे पाली कहते हैं । मेरे पास जितने प्राचीन शिलालेख अग्निकुलके चौहान परमार सोलंकी और पारहारोंके हैं वह सब इन्हीं अक्षरोंमें हैं जिटराजाके शिलालेखमें उसको जितके थोडा [प्रश्न कैसे काडा] लिखाहै हमारे यहाँके दुइजडे और वेडनेसडे यह मंगल और बुधके नाम दुइसटो और वोडेनसे पडेहैं यह ह्यूजडे फरासीसियोंका मंडीहै ।

था । * पाठकोंके सामने जो जैनमन्दिर उपस्थित है वह ग्रीक शिल्पकारोंके द्वारा बनाया गया है । अथवा राजपूत शिल्पकारोंने ग्रीकशिल्पकारोंके आदर्शपर इसको बनाया है, इसको सत्य वा संभव कहकर अनुमान करनेसे कौतूहल उपस्थित होता है । यही हमारे सिथरका × मेवाडवाला मंदिर है । जैनियोंके इस मंदिरमें हिन्दुओं द्वारा “जीवपितृ” का कृष्ण पाषाण निर्मित खण्ड अन्यायसे ही स्थापित कर दिया गया है । * यह मंदिर पर्वतके ऊपर बना हुआ है और वह पर्वतपृष्ठ ही इसका भित्तिस्वरूप होनेसे यह कालके कराल दांतोंसे चूर २ न होकर अवतक खड़ा है । इसके पास ही जैनियोंका एक और पवित्र देवालय दिखाई देता है, किन्तु विलकुल दूसरी रीतिसे बनाया गया है । यह तिमंजला बना हुआ है, प्रत्येक मंजिल छोटे २ असंख्य स्थूल स्तंभोंसे शोभायमान है, वह सब स्तंभ खोदे हुए प्राकारके ऊपर स्थापित है, और स्तंभोंके ऊपर इस प्रकारकी छत है कि सूर्यकी किरणों उसके भीतर जाकर अंधकार दूर करनेमें समर्थ हैं ।

जहाँतक दृष्टि जाती है दुर्गके ऊपर वा नीचे जितने देवालय वा मंदिर विद्यमान हैं उन सबका एक २ करके विवरण करते समय विभिन्नता नहीं ज्ञात होगी ।

* महात्मा टाडकी इस उक्तिको हम भूल समझते हैं; अन्यान्य इतिहासोंमें देखा जाता है कि मगधके स्वामी चन्द्रगुप्तके संग सिल्यूकसकी विशेष मित्रता होगई थी, और चन्द्रगुप्तने उनको एक कन्यादान कर दी । यहाँ कर्नल टाड लिखते हैं कि राजा सम्प्रीति चन्द्रगुप्तके प्रपौत्र थे । यही बात यदि सत्य हो तो हम यह कैसे कह सकते हैं कि सिल्यूकस उस समय जीवित थे ? और यदि उनका जीवित होना भी मान लिया जाय तो सिल्यूकसकी आयु उस समय सौ वर्षके लगभग कहनी होगी ? उस समय इस अत्यन्त वृद्धके हाथमें सम्प्रीतिका कन्या सौपना कैसे संभव हो सकता है ? और यदि इस बातको स्वीकार कर लिया जाय तो चन्द्रगुप्तके जीवित होनेका क्या प्रमाण है ? तथा सम्प्रीतिकी कन्याके संग विवाह होनेपर सम्प्रीतिके आधीनमें रक्षाके निमित्त ग्रीक सेना न भेजकर चन्द्रगुप्तके निकट ही क्यों भेजी ? ज्ञात होता है कि टाड साहब भ्रमसे ही सिल्यूकसके संग सम्प्रीतिकी मित्रताकी बात लिख गये हैं । ग्रीकदूत भोगा स्थितिसने सम्प्रीतिका कुछ भी उल्लेख नहीं किया ।

× ग्रीकदेवता ।

* कर्नल टाडने केवल बहुत पुराने साधारण हिंदू मंदिरोंकी विचित्र कारीगरी इस मंदिरमें न पाकर अनुमान किया है कि यह जैनमंदिर है । किंतु “जीवपितृ” का चिह्न देखकर हम टाड साहबके अनुमानको निर्भ्रान्त नहीं समझ सकते । जैनमंदिरमें हिंदुओंके देवताकी प्रतिष्ठा होना किसी प्रकारसे संभव नहीं हो सकती ।

किम्ब्रीचेसौनीजका छः शिरवाला मार्स वेजर नदीके किनारे जिसके नामसे इर्मनस्योल बनाया गया था, सैकेसनी, कही सीवी वा सुएवी (शैवा) जोटी वा जेटी और किम्ब्री जातिके लोग उसकी पूजा करते थे जिनके नाम तथा धर्म सम्बन्धी आचार विचारसे भारतवर्षके वीर पुरुषोंके आचार विचारका एकही मूलसे प्रगट होना विदित होता है ।

इतने बड़े विस्तारित विषयके मिलान करनेमें उनकी समस्त रीति और व्यवहार तथा धर्मसम्बन्धी विश्वास भी संशुक्त किये जायेंगे, इसकारण हम इस विषयको एक पृथक् ग्रन्थके लिये रखछोड़ते हैं । हेवियोंकी अप्सराओंमेंसे दो जौरिया वहने सुएवी * वा सीवीजातिकी बल्काइरी वा नाशकरनेवाली भगिनियोंकी अप्सराओंमेंसे जाननी चाहिये, जो समरभूमिसे वीरराजपूतोंको अपने समीप बुलाती हैं, तथा जो यूनानियोंके हेलियाडी लोगोंके एल्यूसियम [स्वर्ग] के समान है, ऐसे सूर्यलोकमें उन वीरोंको लेजाती हैं, जहां पहुँचनेकी स्कैंडेनेविया (स्कन्धाधार) को रीवासी ओडिनके वंशधर तथा सीथियाके मैदानोंके रहनेवाले तथा गंगातटवासी, बुध और सूर्यके वंशधर सबही इच्छा करते हैं ।

युद्धके दिन प्रत्येक वीरजातिमें हम देखते हैं कि यशके निमित्त वे उत्तेजित होकर मृत्युकी कुछ भी चिन्ता नहीं करते और युद्धकी रणरंगभूमिपर नाट्य करनेवाले यह पात्र चाहें देवलोक चाहें मर्त्यलोक सम्बन्धी हों दोनों एक ही प्रचारसे आचार विचार करते तथा अभिनय करते दिखाई देते हैं, थोर अर्थात् गर्जनेवाले देवताको सीथिजातिके लोग लडाईमें लेजाते हैं, और

* मैं ऐसा विचार कर रहा हूँ कि हिन्दुस्थानके पिछले महाराज पृथ्वीराजके अन्तिम महाकवि चन्द्रचित्त काव्यके ६९ अध्यायोंमेंसे कुछ अनुवाद करके पाठकोंके सन्मुख बरूँ, जिसमें वीररसका चित्र खिचाहुआ है उस वीरपुरुषोंमें अग्रगण्य राजाके एक २ वीरतामयकार्यके विषयमें एक २ अध्याय लिखा गया है, उनसे स्कैंडेनेविया और राजपूतोंके भाटोंके मध्यमें मिलान करेंगे तो बड़ी सहायता मिलेगी और उनसे यह बात दीखजायगी कि प्रोवेंकलके ट्राडवेडर, न्यूसट्रियाके टाड-वियर और जर्मनीके मिनेसिंगरके साथ राजपूतोंके वरदाई भाटोंमें कितनी समानता पाईजाती है ।

१ एल्यूसिओस शब्दकी उत्पत्ति इलियससे हुई है जिसका अर्थ सूर्य है यह उपाधि भारतके (अपोलो) हरिकी भी है ।

मंदिर जहां बना हुआ है, वह स्थान बड़ा रमणीक है, और वहांसे मारवाड जानेका मार्ग दृष्टिगोचर होता है। मन्दिरकी चोट मध्यमें है चारों ओर केवल स्तंभ हैं, इस कारण मंदिरके भीतरकी ऊंची छोटी स्मारक वेदी सहजमें ही देखी जासकती है। यह टिभोलीके मंदिरका नमूना है। मैं इस मंदिरके ऊपर, शिखर और ध्वंशावशिष्ट स्थानोंपर चढ़गया। मेवाडके सुप्रसिद्ध महावीर पृथ्वीराज और उनकी वीर सहधर्मिणी तारावाईकी भस्म इसको बीचमें स्मरणार्थ स्थापित है। उनकी जीवनी और वीरताका प्रशंसनीय विवरण मेवाडके उपन्यासमें आजतक जीवितभावसे अंकित है।

सुन्दरी ताराविदनरके अधिनायक राओ सुरतानकी प्यारी लडकी थी। राओ सुरतान सोलंकी जातीय और अनहलवाडाके सुप्रसिद्ध बलहरराजवंशमें उत्पन्न हुए हैं। सुरतानके पूर्व पुरुषलोग सन् १३ शताब्दीमें अनहलवाडासे विताडित होकर मध्यभारतमें आये और टंकखोदा तथा बुनाश नदीके समस्त प्रदेशको अधिकारमें करलिया। तक्षजातिने स्मरणातीत कालसे पहिले उक्त टंकखोदा राज्यमें वास वा उसको स्थापित किया। उन तक्षोंके नामानुसार उक्त स्थान तक्षशील नगर वा साधारणमें तक्षपुर अथवा खोदा नामसे विख्यात हुआ * अफगानवीर लिल्लाखुदाने इसपर अधिकार करके सुरतानको वहाँसे निकाल दिया, इस कारण सुरतान मेवाडके सीमान्तवर्ती आरावली भूधरकी तलैटीमें स्थापित वर्तमान विदतौरमें आश्रय लेनेको बाध्य हुआ। सुन्दरी तारावाईने अपने पिताके इस भाग्य पतन और पूर्व गौरव गरिमाको लुप्त देखकर बख्साभूषणोंसे घृण की तथा युद्धमें घोड़ा चलाने और नक्षत्रगतिसे दौडते हुए घोड़ेकी पीठसे बाण छोडनेकी शिक्षामें आग्रहसहित नियुक्त हुई। जिस समय दुर्दान्त अफगानियोंके बलसे थोडा उद्धार करनेके निमित्त सुरतानकी सेना वीरवेशसे आगे बढी। वीरकुमारी तारावाई भी इस समय वीरसाजसे सज, धनुर्वाण हाथमें ले काठियावाडी घोडेपर चढकर बडे साहसके संग उस सेनामें जा मिली।

* उक्त स्थानके ध्वंशावशिष्ट मंदिरोंमें तक्षक जातिके निर्माण चिह्न अधिक देखे जाते हैं, इस स्थानके चारों ओर मनोरम दृश्य हैं; उनमेंसे बुनाशनदीके तीरवर्ती राजमहल तथा गोकर्ण आदि स्थान सबसे अधिक रमणीक हैं। हारवर्टने लिखा है कि सबसे अधिक चित्तौरग्रीफ वीर अत्येक जेंडरके परममित्र तक्षशीलोंका निवासस्थान था। तक्षलोग पुरुवंशसे उत्पन्न हुए हैं; इस कारण पौरस किसी व्यक्ति विशेषका नाम नहीं है, केवल वंशपरिचायक मात्र है। तक्षशील नगर देखनेमें बहुत बडा था।

स्त्रियोंके सम्मान भी राजपूतोंमें जर्मनकी भाँति हैं सम्मानके लिये उनके पीछे देवी वा देव शब्द लगाते हैं, उनके लिये ही जुहारव्रतको करते हैं शाकावन्धकी उपाधिपर राजपूतोंको गर्व रहता है, जो यह रीति शाका करनेसे ही प्राप्त होती है, यह सीथियन और जेटीलोंकी सैसिया रीतिसे मिलती है जैसा कि, स्ट्रैबोने लिखा है ।

१ सैकी जातिका आक्रमण पाण्डिक सागरके किनारे रहनेवाली जातिपर हुआ था, जिस समय वे लोग लूटका माल वांट रहे थे कि, अकस्मात् रातमें आकर यूनानी सेनाने उनको मार डाला, इस विजयके स्मरणके लिये यूनानियोंने उस युद्धक्षेत्रमें एक चट्टानके चारों ओर मट्टीका एक बड़ा टीला कर दिया, उसपर दो मंदिर निर्माण कराये गये, एक तो ओमेनस, और अनेन डेट देवताओंका और एक अनाइटिस देवीका बनवाया और उसी समयसे वहां सैथियानामक वार्षिकोत्सव आरंभ हुआ, जिसको अद्यतक जेलाके अधिकारी करते हैं, सैसियाकी उत्पत्तिके विषयमें कई ग्रन्थकारोंका यही मत है, और दूसरे लोग तो यह कहते हैं कि, उसका आरंभ साइरसके राजत्वकालसेही है, वह कहते हैं कि, इस बादशाहने जब सैकी (हेरोडाटसके मानेमेंसे जेटी) लोगोंके देशमें जाकर युद्ध किया तो एक लड़ाईमें इसकी पराजय हुई, तब वह विवश होकर अपने मेग जीनकी ओर लौट आया जिसमें बहुतायतसे खानेके पदार्थ और विशेषकर मदिरा थी, और कुछ समयतक अपनी सेनाको विश्राम देनेके निमित्त शत्रुकी सेनाके सामनेसे हट गया, और शत्रुलोग यह समझें कि, यह भाग गया है अपने उस स्थानको खाद्य पदार्थोंसे भरा छोड़ गया, जब शत्रुसेनाके लोग पीछा करते हुए उस स्थानमें पहुँचे तब उस स्थानको खाद्यपदार्थोंसे भरा हुआ देखकर मद्यपान करनेमें लग गये, तब साइसने पीछेसे लौटकर उन असभ्य मूर्खोंको आक्रमण किया, उस सेनामें कोई तो सोते ही मारे गये, कोई मद्यपानमें आसक्त और नृत्यमें मग्न होनेके कारण न चल सके, और शस्त्रधारी वीरियोंके हाथमें पड़ गये, इस प्रकार वह सब सेना मारी गई विजेताने यह विजय देवताद्वारा समझकर इस दिनको अपनी उपास्य देवीके नामसे पवित्र माना और सर्वत्र यह आज्ञा प्रचार कर दी कि, आजसे यह दिन सिखोदियाका दिन समझा जाय * ।

राजपूतशाखाओंमें जो सबसे बड़ी सर्वनाशकारी लड़ाइयाँ होती थीं, वह शाका कहलाती हैं, जब राजपूत सब प्रकारसे विरजाते हैं और सहायताकी आशा नहीं रहती, तब विवश होकर अपनी स्त्रियोंका भी वध कर डालते हैं, और केशरिया बागे पहनकर मृत्यु मुखमें कूद पड़ते हैं इसीका नाम शाका है इसमें प्रत्येक शाखा नष्ट होजाती है, चित्तौड़को साठेतीन बार शाकेका अभिमान है, और चित्तौड़की महाशपथ “चित्तौड़शाकेका पाप” है जिसको गिहोटकुलके लोग किया करते हैं ।

* यह वही लड़ाई है, हेरो टाटसने इसका वर्णन किया है यह लड़ाई जिटि लोगोंकी रानी टोमिरिस और ईरानके बादशाहके बीचमें हुई थी, और इसका उल्लेख स्ट्रैबोने भी किया है ।

उस अफगान सरदारको धराशायी करदिया, जबतक वह समारोह अपने आतं-
कसे-सचेत हो तबतक यह तीनों नगरके फाटकपर पहुँचगये. जहाँ एक हाथीके
द्वारा इनका साग्री मारागया तारावाईने अपने खांडेसे इसकी सूंड काटडाली,
और हाथीके भागते ही वे लोग अपनी सेनामें जो पास ही थी जा मिले. अफगा-
नोंपर चढ़ाई कर दी गई, और वह उस वेगके सामने न ठहर सके, जो नहीं भागे
उनको वहीं चकनाचूर करदिया गया और इस भांति पृथ्वीराजने अपनी
प्राणप्यारीके पिताके उत्तराधिकारको ग्रहण किया, अफगानके एक भाईने उसके
फेरलेनेके लिये युद्धमें अपने प्राण देदिये, अजमेरके नवाब मूलूखाने शिशोदीय
राजकुमारके सन्मुख स्वयं युद्ध करनेका विचार किया, पृथ्वीराजने इस अभि-
प्रायको जानकर स्वयं अजमेरपर चढ़ाई की, अरुणोदयके समय वह शत्रुके
शिविरमें पहुँचगये और भीषण मारकाटके उपरान्त वितलीगढके नगरको दूसरे
भगेडों सहित जय करलिया. चारण कहताहै इस कार्यसे रजवाडेमें पृथ्वीराजका
यश छागया, एक सहस्र राजपूत श्रद्धा और भक्तिसे पृथ्वीराजके नकारेके
चारों ओर एकत्रित होगये, उनकी तलवार आकाशमें चमचमाती थी और
पृथ्वीको भयभीत करतीथी यह सब निर्वलके सहायक थे । मुसलमान लेखकों
द्वारा लिखित और प्रमाणित बात उसके यशमें × एक और ही है चाहै वह उस
आकास्मिक घटनासे अनभिज्ञ हैं । एक समय पृथ्वीराजने राणाको मालवेके
वादशाहके दूतके साथ नम्रतापूर्वक संभाषण करते देखा, पृथ्वीराजको यह
नम्रता असह्य हुई और-उत्तर दिया, राणाने व्याजस्तुतिसे कहा वास्तवमें तुम
बड़े प्रबल वादशाहोंके बांधनेवाले हो परन्तु मुझे अपने राज्यकी रक्षा करनीहै,
पृथ्वीराज सक्रोध वहाँसे चलागया, और सेनाको एकत्रित करके नीमच गया,
वहाँ उसने पाँच सहस्र घुडसवार इकट्ठे किये, देपालपुरमें पहुँचकर उसे लूटलिया
और वहाँके सरदारको मारडाला, इस उपद्रवके समाचार पाकर वादशाह सेना
इकट्ठी कर मंडूसे चला, राजपूतकुमारने गुप्त होकर भागनेके बदले आगे बढकर
धावा किया, जिस समय शत्रु अपने ठहरनेका प्रबन्ध कर रहेथे शिविरपर छापा
मारा, वादशाही झण्डपको पहचानकर कि जहाँ खोजे और स्त्रीही थीं वादशा-
हको बाँधलिया, और पृथ्वीराजके पीछे एक शीघ्रगामी सांडनीपर बैठादिया
गया, पीछाकरनेवालोंसे कहदिया कि यदि शान्त न रहोगे तो वादशाहके

× अपने मूलग्रंथमें टाड साहबने सहधर्मिणीका विशेषण एमेजो नियन लिखाहै जिसका तात्पर्य
एमेजने नदीके किनारेके देशकी पत्नी है, उस देशकी स्त्री युद्धमें अपने पतियोंका साथ देती थी ।

बल हल्लाके समान जो इन्द्रलोक हिन्दुजातिका स्वर्ग है वहां स्कैनियाकी स्वर्गीय हीवीकी जौरिया वहनें वीर राजपूतोंको अपने हाथसे मद्यका प्याला देतीहैं जिसकी जिटी * वीर इच्छा करताहै ।

राजपूतोंकी मदोन्मत्त दशा बहुत ही कम प्रतीत होती है, परन्तु इस समय एक विशेष हानिकारक और नवीन कुञ्जालकी रीतिने निमंत्रणके उस प्यालेकी प्रतिष्ठा बहुत घटादी है, और उस पवित्र पुष्पके स्थानपर अफीम खानेकी रीति बहुत प्रचलित होगई है, उससे प्रत्येक उत्तम गुण नष्ट होजाते हैं, जो बात जर्मनीके इतिहास लिखनेवाले लोगोंने बेजर और एल्वनदीके किनारोंपर रहनेवाली जातियोंके विषयमें उनके उन्मत्त बनानेवाले नशीले द्रव्योंकी प्रीतिके विषयमें लिखी हैं, इस हानिकारक स्वभावके विषयमें इनके निमित्त हम भी उन्हीं शब्दोंका प्रयोग करेंगे, वह उन लोगोंके लिखे शब्द यह हैं कि उनको मतवाला होने दो उनके निमित्त तुमको अपने आयुधोंका भय दिखानेकी आवश्यकता न होगी, उनकी कुरीतियें उनको स्वयं तुम्हारे आधीन बनादेंगी ।

स्कैडिनेवियाके लडाईके देवताका नाम थोर है शत्रुकी खोपड़ी उनका पानपात्र है ।

हर उन सब लोगोंकी रक्षा करते हैं जो लडाई या तीव्र मादक द्रव्योंसे प्रेम रखते हैं, राजपूत वीरोंकी विशेषकर उनमें शक्ति होती है, इस कारण रक्त वा मद्य इस देवताके अर्घके मुख्य द्रव्य हैं, हरवल वा सूर्यके मुख्य पुजारी गुसाई लोग होते हैं यह सब मादक पदार्थ पोदों और सेवन करतेहैं व्याघ्र चीते वा मृग चर्म पर बैठा करते हैं, केशोंका जूडा बांधे शरीरमें भस्म लगाये चीमटा लिये

* यह ऊपरके वाक्य रेगनर लाड ब्रागने उस जेटीवीरकी मृत्युकालके गोतोंमेंसे लिखे हैं, जब उसे उसके भाग्यकी उपयुक्तदेवी उसे बुलाती हैं ।

१ यह फूल महुएका है राजपूत इसकी मद्य बड़े चावसे पीते हैं, संस्कृतमें इसका नाम मधूप पुष्प है, एशियाटिक रिसर्चेंज जि० १ पृ० ३००

२ यह देशमें खप्पर कहलाताहै, क्या यह सैक्सन लोगोंका कप होसकताहै ।

३ कनफटे योगियोंकी सैकडों जमातें होतीहैं, और विशेष कर रक्षा वा युद्धमें सहायताके निमित्त इनको बुलाते हैं राजपूतोंमें जो नवरात्रिमें युद्धके देवताके निमित्त बड़ा उत्सव कियाजाताहै उसमें खड्ग जो मार्सका चिह्न है गिहोटकुलके वंशधर जिसका पूजन करते हैं इन्ही लोगोंको सौंप दिया जाता है ।

उससे आगे न बढ़ागया, यहांसे उसने अपनी प्राणप्यारी ताराके पास संदेशा भेजा कि वह आकर उससे अन्तिम भेंट करले, परन्तु वह विष इतना तीव्र था कि ताराके गठीसे नीचे आनेके पूर्व ही उसको मृत्युने दाबलिया, ताराने तुरन्त आकर विचार करलिया, चिता चिनीगई और वह वीर पृथ्वीराजके मृतक शरीरको गोदमें लेकर सूर्य लोककी इच्छा करके उसमें बैठगई, इस भाँति शीशो-दिया राजकुमार और विदनौरके सूर्यका अस्त हुआ. ऐसे उदाहरणोंसे ही हम इन मनुष्योंके रहनसहन पर सम्मति प्रगट करसकतेहैं, यदि सिरौहीका नायक अपना विषमय मिश्रान्न पृथ्वीराजको न देता तो पृथ्वीराज अपने वीर और उत्तराधिकारी भ्राता सांगासे कहीं बढकर यशके साथ बाबरका सामना करता, इस बातका विचार कर्तव्य है कि वह अपने रणकौशलसे और विजयकी लालसासे जो उसके यशको बढ़ातीथी अधिक सफलता प्राप्त करता ।

२० अक्टूबर हम दुपहरतक रुकेरहे जिससे कि नौकर चाकर भोजन बनाले और मारवाड अर्थात् मृत्युलोकमें जानेको उद्यत होलें, वह घाटी जिसमें होकर हमको उस देशमें जाना होगा बहुत भयानक बताई गई थी, फिर इस ध्यानसे कि हाथी और घोड़े अंकुश तथा चाबुकके प्रयोगसे उस स्थानमें होकर चले जाया करतेहैं, हमने वहां होकर जानेका निश्चय किया दुपहरको डेरे उखाड दिये और जब असवाव बांधा जा रहा था, हम तीन वजेतक रुकेरहे, लैनडोरी अगाडीका डेरा और मार्गशोधक मंडली भेजदीगई, हम अपने चित्तमें ध्यान कररहेथे कि रात्रि वहां वीतैगी जहां मेवाड और मारवाडकी प्राकृतिक सीमा है, और जिस स्थानके लिये हम सुनचुकेथे कि बहुत चौडा है, उस घाटीकी चर्चाने यदि हमारी विपत्तियोंको न बढ़ादिया होता, यदि जहां तहां फैलेहुए गड्डोंको आगे बढ़ानेमें पूरा घंटा न लगगया होता, तो हम शीघ्र पहुँचते, परन्तु एक मील तक हमको इतना चौडा मार्ग भी नहीं मिला जिसमें होकर लदाहुआ हाथी सुखपूर्वक चलाजाय, यह मार्ग क्षितिजसे ५५ अंशपर था, और उसके दोनों ओरको ऊंची नीची घाटियोंमें होकर जलके सोते कलकल शब्द करते वह रहेथे, जब हम इस पहले मार्गके नीचे तक पहुँचगये, तब विदित हुआ कि मेरे मित्र बूँदीनरेशका दियाहुआ चैतन्यमनिका (घोडा) पैर फिसलनेसे लुढ़ककर नीचे जापडाहै, उसकी काठीका तंग टूटगया था, उससे कुछ आगे बबचीं दिखाई पडा, वह दुःखी बिखरी हुई बबचींखानेकी चीजोंको बटोररहा था, और उसका ऊंट झोलेको फिरसे लादनेमें दुःखी करताथा, अगले मीलमें जाकर

कहांजाताहै जहां सती होती है उनके पवित्र मंदिरोंमें डाकिन * निवास करती हैं, समाधिपर भोजन द्रव्यादि जो चढाये जाते हैं, जो लोग समाधि-परसे विस्तरे वा भोजनको उठा ले जातेथे सैलिक आईन दशवाँ अध्याय उन लोगोंके दण्डविधानमें है ऐसे पवित्र स्थानमें जो लोग चोरी करते थे उनको जल और अग्नि कोई नहीं देसकता था ।

शहावा × एक प्रकारकी अग्नि है जो स्थानपरिवर्तन करके फिर फिर दीखती है युद्ध क्षेत्र वा महासतीके स्थानोंमें यह बड़ी मनोहर दिखाई देतीहै, तो भी इससे उदासीनताका भाव प्रगट होताहै हिन्दू जातिके हृदयमें इससे मिथ्या विश्वासका भय और भक्ति उत्पन्न होती है, जिसकी उत्पत्तिका स्वाभाविक कारण वही है जो ओडिनकी स्थानपरिवर्तनशील ज्वालाका है अर्थात् मृतकोंके सडनेसे फास्फोरस सम्बन्धी एक प्रकारका खार उत्पन्न होता है ।

स्केंडे नेवियाके रहनेवाले मृतकोंकी राखपर गुम्बज बनातेथे और जैगजटीज नदीके किनारेपर रहनेवाले भी इसी प्रकार करते थे और इसी प्रकार हिन्दुओंके देवता हरके पुजारी भी गुम्बज बनाते हैं ।

* यह डाकिन सिंधदेशकी जीवित कलेजा भक्षण करनेवाली हैं, उदयपुरके कवरिस्तानमें एक लकड़ वग्धा रहा करता था, कप्तान डब्लू साहबने बहुत कालतक पीछा करके उसको वरछेसे मारा जिसे प्रसिद्ध हो हाडकी डाकिनीका थोडा कहते थे, जिसपर वह चढकर रातमें फिरा करती थी, लोगोंने समझा कि, इसके मारनेसे कुछ आपत्ति आवैगी, और जब वह साहब एक बारहसिंगेका पीछा करते हुए घोडेपरसे गिरपडे तो लोगोंने यही कहा कि, उस डाकिनीके वाहनके मारनेसे ऐसा हुआहै ।

× ग्वालियरके विख्यात किलेकी पूर्व ओर जहां सहस्रों योधा जलगये थे इस फास्फोरस सम्बन्धी ज्वालाका आश्चर्य जनक दृश्य दिखाई देता है मैंने अपने मित्रोंके साथ इस दृश्यको जाकर देखा था, जब हम उस चंचल ज्वालाकी ओर आगे बढे तो देखा कि, एक जगह बुझकर फिर वह दूसरी जगह प्रकाशित होती थी, और विषम दूरीपर होनेके कारण महाराष्ट्र राजाके दिनभर शिकार करने और रातको मशालचियोंसहित फिर लौटनेका भ्रम उत्पन्न करती है, मैंने एक बडे हिम्मत-वाले राजपूतसे उस ज्वालासमूहके समीप जानेके लिये कहा, उसकी आश्रुति और बातोंसे यह झलक गया कि, उसने मेरे इस कथनको व्यर्थ समझा, उसने यह उत्तर दिया कि, मैं मनुष्योंसे युद्ध करनेको सन्नद्ध हूं परन्तु पूर्व युद्धोंमें मृतक हुआंकी आत्माके साथ युद्ध नहीं करसक्ता वर्षाके अन्तमें यह ज्वाला दीखती है जिस समय दल दल वाले खार भरे स्थानोंसे भाफ निकलती है ।

किसी एक स्थानसे देखनेमें तारागण बड़े चमत्कृत जानपडतेथे, हम मौनरूपसे आगेको बढे जारहेथे और इसी विचारमें मग्नथे कि हमारे इस दलपर वनैले बाघ और लुटेरे पर्वतियोंका क्या अत्याचार होगा, कि अकस्मात् एक झाडमेंसे कुछ प्रकाश दृष्टि पडा और वहां वटवृक्षके नीचे अग्निके चारों ओर उतरे हुए छुडसवारोंका एक दल जानपडा ।

हम वहां ठहरगये और युद्धका मन्तव्य करने लगे हमारे पथदर्शकोंने हमको सुभीतेका स्थान बता दिया, और मैदानमें पहुँचनेसे पहले हमको ओससे वचनेका समय मिला, वहां जलकी भी बहुतायत थी, उस समय सचेत रहना अच्छा था, परन्तु हम ठहरगये कारण कि अंधकारके कारण पांचमीलके अगम्य वन, जिसमें किंचित् भी दायें बायें होनेसे हिंसक बाघोंके मुखमें पहुँच जाते अथवा वैसीही मैर जातिके दलमें जा फँसते, अब हमने एक बार फिर उपरोक्त समूहकी ओर देखा, चाहें प्रातःकाल होनेकी लालसा शीत और भूखके कारण विलकुल मंद हो चुकी थी, परन्तु यह बात असंभव थी कि विना किसी उत्कंठाके हम अपने सामनेके दृश्यका विचार करते । पचीस या तीस लम्बे शस्त्रधारी मनुष्य अपने रात्रिके अलावके चारों ओर बैठे थे और परस्पर धीरे २ बात चीत कर रहे थे, और परस्पर एक दूसरेको हुक्केकी नगाली देते थे, उनके काले घूँघरवाले बाल और पचरंगी पगडी कहेदेती थी कि यह मरुदेशके रहनेवाले हैं । कभी काले पर्वतियोंने किसी सत्पुरुषको मारडाला होगा, उसके स्मरणकी चवूतरी इस दलके नायककी बैठनेका स्थान था. नायककी पगडीमें उसकी श्रेष्ठताकी जतानेवाली एक सोनेकी शृंखला बँध रहीथी, और वह मृगचर्मकी बंडी पहरेहुए था, मैंने उसको और उसके दलको नियमित प्रणाम अर्थात् [राम राम] किया, और उनके सरदार गनो हापतिकी कुशल क्षेम पूछी; जिसके अनुग्रहसे उन लोगोंने ध्यान पूर्वक बात चीत की, पचास वर्ष पहले जबसे गोद्वारके जिलेको मेवाड खोजुका था यह स्थान मेवाड और मारवाड राज्योंकी सीमा थी, इस स्थानपर अनेक क्लेशभरी घटना हो चुकी थीं, उसके समीप पहुँचनेसे ज्ञात हुआ कि यहां अनेक मृतपुरुषोंके स्मारक बने हुए हैं, प्रत्येक स्मारकपर अपने युद्धके घोडेपर चढे बल्लम साधे हुए उस सवारकी मूर्ति खडी है और यह मूर्ति इस बातका स्मरण दिलाती थी कि अमुकपुरुष इस प्रकारसे इस घाटीकी रक्षा करताहुआ

जेटी अटीलाने जो ऐथन्सके किलेमें खड़ पूजा की थी वह बड़े समारोहसे हुई थी, रोमकी अवनति और जवालके इतिहासमें यह एक प्रशंसाके योग्य लेखहै, मेवाडके महाराणाको अपने समस्त सरदारोंसहित यदि दुधारी धारकी पूजा करते गिविन साहब देख लेते तो वह मार्स अर्थात् मंगलके चिह्न रूप तलवारकी पूजाको और भी अपनी भडकदार लेखनीसे लिखते ।

शस्त्रविद्यामें प्रवेश—सैनिक कार्यमें प्रवेश करनेके समय जिस प्रकार जर्मन लोगोंमें कार्यवाही की जातीहै, वही प्रथा राजपूतोंमें है, अर्थात् सेनामें प्रवेश करनेके समय युवकको एक बछाँ मिलता है, वा डाल बांधकर तलवार बाँधते हैं जागीरदारोंकी रीतियें वर्णन करनेके समय हम इन रीतियोंका वर्णन करेंगे, तथा दूसरे गुणोंका उल्लेख भी वहीं करेंगे ।

इसप्रकारकी समानता दिखानेवाली रीतियोंको लिखकर उनकी सूचीका बढाना, एक ऐसा सरल कार्य होगा, जिनमें जो वस्तुएँ उनके यहां अभिष्य समझी जाती हैं, उनका मुकाबला राजपूत और प्राचीनके लूटोंके बीच सम्बंध दिखानेमें काम आवेगा, हम सबसे पुरानी रीतियोंके विस्तार पूर्वक वर्णनके साथ इन रीतियोंके वर्णनको समाप्त करेंगे ।

अश्वमेध यज्ञ—सूर्य चंद्र, स्वर्गका समस्त समूह तारागण तलवार रेंगनेवाले जीव सर्प जानवर यह कई एक जड और चैतन्य वस्तुएँ जगतकी जातियोंमें पूजाके साधारण पदार्थ गिने जाते हैं, उसमें अश्व सबसे श्रेष्ठ है, इस अश्वकी अन्तिम भक्तिकी साक्षात् वस्तुकी नाई ही नहीं पूजा होती थी, किन्तु उस कान्तिसे पूर्ण बिम्बवाले भास्करके चिह्नकी समान जिसका आदर प्रकृतिका प्रत्येक सन्तान करताहै, लीवियाकी मरुभूमि, तातारके मैदान, ईरानके पहाड गंगाकी रेतीली भूमिके समीप तथा ओरिनेकोंके जंगलोंमेंसे प्रत्येक स्थानमें ही उनकी कान्ति अर्थात् इस बड़े जगतके नेत्र और सूर्यके समानही उत्साहवाले भक्त जन्मे हैं ।

उसके प्रतिरूपकी पूजा और चढावा जलवायुके स्वभावके अनुसार भिन्न २ प्रकारका होता था, उस समय इस एशियामें बलकी और गाल तथा ब्रिटिन देशके कैलूट लोगोंके वेलिनसकी वेदिकाएँ मनुष्यके बलिदानके धुँसे आच्छादित रहती थीं, मिश्रास [सूर्य] के सांडकी * वैवलिनमें बलि चढाई जाती थी ।

* प्राचीन समयमें भारतमें भी बलदेवके लिये जो बलनाथ है यही बलि उनको दीजाती थी, अर्थात् सूर्यको सांडका बलिदान अच्छी तरहसे लिखा हुआ है वालिमके अनेक मंदिर राजस्थानमें

सत्ताईसवां अध्याय २७.

माहीर वा मीराजाति;—उनका इतिहास और आचार व्यवहार;—गोकुलगढके डांकू;—गाडोराके सामन्त अजीतसिंह;—मारवाडका समतल क्षेत्र;—रूपनगरके सामन्त;—द्वैसुरीसम्बन्धीय इतिहास;—मेवाडके शिशोदियोंके साथ मारवाडके राठोरीकी तुलना;—राजपूतोंके प्रमादमूलक इतिहासगाडोरा;—राणाके दूत कृष्णदास;—मेवाड और मारवाडमें स्थानीय विभिन्नता;—प्राचीन विवादका कारण;—आओनला और वावुल;—नादोल;—चौहानजातिकी श्रेष्ठता;—वातिन्दाके गोगा;—आजसीरके लाक्षा;—उनका नादोलास्थ प्राचीन दुर्ग;—जैनियोंके वहांके स्मरणचिह्न;—हिन्दुओंके प्राचीन तोरण;—खोदितलिपि;—नादोलाका प्राचीन इतिहास इन्दुरि;—वाणिज्य प्रधान नगर पाली;—वाणिज्यद्रव्यावली;—कवि और कारिकाकारगण;—“पुण्यगिरि”—कङ्कनी;—वाणिज्यद्रव्य लेजानेवाले दो सम्प्रदायोंमें विवाद;—भाटोंका निष्ठुरतामूलक आत्मनाश;—झालामन्दजोधपुरमें यात्रा;—पोकर्ण और निमाज इन दो सामन्तोंद्वारा सम्बर्द्धना;—दोनों सामन्तोंका जीवनचरित;—निमाजके सुरतानका स्वार्थत्याग;—राजधानीमें वस्त्रालय स्थापन;—जोधपुरराजसभामें सम्बर्द्धनाकी व्यवस्था ।

माहीर वा मीराजाति पहाडकी रहनेवाली है और यह लोग जिस प्रदेशमें रहतेहैं साधारण लोगोंमें उसका नाम माहीरवाडां है । माहीरशब्द केवल स्थाना-

यण महाभारत और चन्दकविके महाकाव्यमें इस प्रभावशाली यज्ञ और उसके परिणामके उदाहरण विद्यमान हैं × ।

बाल्मीकिरामायणमें अश्वमेधका वर्णन बड़ी उत्तमतासे किया है रामचन्द्रके पिता महाराज दशरथने यज्ञके निमित्त इस प्रकारकी आज्ञा दी थी यज्ञका सामान इकट्ठा करके सरयूके * उत्तर किनारेपर यज्ञभूमि विधानकी जाय ।

जब वर्षादिन बीत गया और समस्त देशोंमें घूमकर घोड़ा लौट आया तब जहाँसे वह छोड़ा गया था वहाँ यज्ञभूमि निर्माणकी गई ‡ केकय, काशीके राजा अंगदेश

—मिलटने जिससे अपना भूगोल लिया है उस मार्कोपोलोके लिखनेके अनुसार सिकन्दरने इन सब जेटीजातिवालोंकी वक्ष्यतासूचक सेवा (नगरोंकी माता) वल्लभ नगरमें स्वीकार की थी, जिस स्थानपर मेरे कैथियन खानकी राजगद्दी थी, जो मेरे शिलालेखका जिटकैथीज है । मेघका अर्थ मारना नहीं है किन्तु पवित्रता और बुद्धिका है (सम्पादक)

× आमेरके प्रसिद्ध राजा सवाई जयसिंहने पिछला अश्वमेध किया था, परन्तु मुझे विश्वास है कि उस समय दुग्धवर्णकी समान श्वेतघोड़ा नहीं छोड़ा गया था नहीं तो राठौर अवश्य युद्धकरते (घोड़ेके बिना अश्वमेध कैसा (अनुवादक)

‡ यह सरयू (गण्डक) कमायूँके पर्वतोंसे निकलकर कौशलदेशमें बहती है घोड़ेका एकवर्षमें लौटकर आना, सूर्यका क्रान्तिमण्डलमें लौटकर एकवर्षमें आनेकी ज्योतिषकी गतिको प्रगट करता है, जिससमय सूर्य दक्षिणायनसे लौटता है उस समय सीथियन और स्कैण्डिनेवियाके निवासी बड़ा उत्सवकरते थे, इसमें गिबनने यह लिखा है कि जब उत्तरीय शीतल पवन चलती होगी, तब वे अपने उस बड़े रहनेके स्थानको नरकसे भी अधिक कष्टकर मानते होंगे, इस देवताके निमित्त दक्षिणकी ओरको वह दृष्टि दिये रहते होंगे, इसीसे धर्मानुसार राजपूत गण अपने घरका दर्वाजा उत्तरकी ओर रखते हैं ।

१ अश्वमेधका घोड़ा लक्षण देखकर चुना जाता है, छोड़नेके समय उसकी भंलीभांति रक्षा की जाती थी, वह अपनी इच्छानुसार विचरता है, इसका यह प्रयोजन है जो युद्धकरना चाहै वह घोड़ेको पकड़े, युधिष्ठिरके अश्वमेध सम्बन्धी घोड़ेका रक्षक अर्जुन हुआ था, जब परीक्षितने अश्वमेध सम्बन्धी घोड़ा छोड़ा था उसे उत्तरके तक्षकलोगोंने पकड़ा था यही दशा दशरथके पिता सगरके अश्वकी हुई इसीके कारण उनका राज्य गया, सगर दशरथके पिता नहीं किन्तु दशरथसे कितनी ही पीढ़ी पहलेके पुरुष थे (अनुवादक)

‡ डाक्टर कैरे जिन्होंने रामायणका अनुवाद किया है वह केकयको ईरानका राजा मानते हैं, दारासे कैवंश पहले हुआ था, यह उपाधि हिन्दुओंके एक दोहेमें मिलती है, यह मुझे स्मरण है कि वह जयपुर राज्यके अन्तर्गत अभयनेरके पुराने खंडहरोंसे सम्बन्ध रखता है जिसमें कैकम्बकी बेटीके साथ एक राजाके विवाहका वर्णन है यथा—“तू बेटीकेकम्बकी, नाम परमलाहोय” ।

अर्थात् तू कैकम्बकी कन्या और तेरा नाम परमलाह है, ईरान राजवंशकी कै नामक उपाधि थी, इस प्रमाणसे यूनानियोंका कामवल्खा कैम्ब्रिसेज नहीं होसता ।

एक मीनासामन्तकी कन्याके साथ अनलका विवाह हुआ और उस स्त्रीके गर्भसे चित्ताका जन्म हुआ चित्ताके वंशवाले माहीरवाराका सर्वोपरि एकाधिपत्य करते आये हैं । चित्ताके जो उत्तराधिकारी लोग अजमेरकी उत्तर सीमामें रहते हैं, पन्द्रह पुरुष हुए * जिस समय इस जातिके सोलहवें पुरुषने अजमेरके हाकिमद्वारा मुसलमानधर्ममें दीक्षित होकर दाऊदखां नाम धारण किया, उस समय यह लोग मुसलमानजातिमें मिलगये । दाऊदखां आथुननामक गाँवमें रहता था इस कारण उस सम्बन्धसे महारोतोंका अधिपति "आथुनकाखाँ" इस नामसे विख्यात है । आथुनके ग्रामोंमेंसे चाङ्ग, झक और राजसिनगर सबमें प्रधान हैं । अनूपने भी एक मीनाकुमारीके साथ विवाह किया, इस सम्बन्धसे उसके बुडारनामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ । बुडारके वंशवाले अपनी प्राचीन रीति नीति और धर्मकी वरावर रक्षा करते चले आते हैं । बुडार, बाहिरवाडा, मन्दिला आदि नगर उनके प्रधान निवासस्थान हैं । यद्यपि इन मीनालोगोंके वंशमें राजपूतोंका रक्त मिलनेसे उत्कर्षता आ गई है, तथापि वे दुश्चरित्रता, अत्याचार, उपद्रव आदिके लिये बहुत दिनसे प्रसिद्ध हैं । विख्यात चंदकविने लिखा है कि, अजमेरके सुप्रसिद्ध राजा विशालदेवने इस मीनाजातिको ऐसा दमन किया कि वे लोग अजमेरकी सड़कोंपर जल ढोनेका कार्य करनेको बाध्य हुए । इससे प्रगट है कि इस जातिका बहुत कालसे दुर्दान्त स्वभाव था । अन्यान्य पहाड़ी जातियोंकी सम्मान उन लोगोंने जब अधीश्वरशक्तिका हास देखा, तबसे ही अत्याचार करना आरंभ कर दिया । अजमेरके चौहानोंके साथ मन्दरके पुरीहरलोगोंके युद्धमें जब पृथ्वीराज प्रथम रणक्षेत्रमें गये थे, तब उनके विरुद्ध गिरिपथरक्षाके निमित्त चार सहस्र धनुर्धारी माहीर नाहर रावोंके अधीनमें नियुक्त हुए थे । कविवर चन्दने अपने काव्यमें उनकी वीरताके सम्बन्धमें निम्नलिखित प्रकारसे वर्णन किया है;— × "जहां अगणित शिखरश्रेणी आपसमें मिली हैं, माहीर और मीनागण उस स्थानमें एकत्र हुए । मन्दरराजने आज्ञा दी कि गिरिपथ रक्षाकरना ही होगा,— चार सहस्र वीरोंने इस आज्ञाको सुनकर कालान्तक कालदूतके समान

* महाशय टाडके समयकी गणनासे १५ पुरुष समझने चाहिये ।

× कर्नल टाडने यहांपर टीकेके बीचमें वर्णन किया है कि आरावलीके किस प्रान्तसे मन्दर आक्रमण करनेका उद्योग हुआ, मैं उस स्थानके आविष्कार करनेमें असमर्थ हूं हम इस समय जिस पहाड़ी मार्गपर उपस्थित हैं कदाचित् यही मार्ग होगा, क्योंकि यह प्रगट है कि अजमेरकी सीमान्तसे आक्रमणका उद्योग नहीं किया गया ।

और जिस समय ब्राह्मण मंत्रोच्चारणकर प्रसन्नतासे कोलाहल करनेलगे उस समय उसका बलिदान * किया गया, ।

उस समय मुख्य ऋत्विजने महाराज और महारानीको अश्वके समीप बैठाया, वहां वे पक्षियोंका निरीक्षण करते हुए सब रात बैठे रहे, पुरोहितने शास्त्रानुसार जीवोंके हृदय निकालकर तैयार किये, जिस समय उन हृदयोंका हवन किया गया महाराजने उनकी सुगंधि ली, और जिस क्रमसे अपराध किये थे उसी क्रमसे महाराजने उनको स्वीकार किया ।

उस समय यज्ञ करानेवाले ९६ ऋत्विज शास्त्रानुसार घोड़ेके अवयवोंको अग्निमें हवन करनेलगे, इनमें घोड़ेका हव्य वेतके शरवेसे, और शेषजीवोंका हव्य लकड़ीके शरवेसे किया गया ।

जिससमय यज्ञ पूर्ण हुआ, तब भविष्यद्वक्ताओंको पृथिवी दान की गई, उनमें जो पवित्रपुरुष ब्राह्मण थे, उन्होंने केवल सुवर्णदान स्वीकार किया, इसकारण उनको एक करोड जाम्बुनद × दियेगये ।

इस प्रकार यह सबसे पुरातन और अधिक प्रभावशाली अश्वमेधका वृत्तान्त मूर्तिपूजकोंके यहां विस्तारपूर्वक लिखाहुआ है दूसरी जातियोंमें भी जो इस प्रकारकी रीतियें हैं उनमेंकी रीतियोंमें ईश्वरके निर्णीत लोगोंसे आरंभ करके रोमके औरैस्पेक्स मनुष्योंतक, और कैथलिकधर्मकी पापस्वीकारकी रीतियोंके मध्यमें समानता दिखानेकी आवश्यकता नहीं है ।

* नये वर्षके उत्सवमें मुगलबादशाह अपने हाथसे ऊंटका वध करतेहैं वह मर्जीदानोंमें विभक्त करदियाजाताहै, और वे उसे भक्षणकरजातेहैं ।

× यह एक प्रकारका देशी सोना होता है, जिसका रंग चमकदार श्यामतालिये हुए होताहै, जिसकी उपमा जम्बूफल (जामन) (जे डिम्सनामक वेरसे मिलता हुआहै) से दीजातीहै हिन्दुओंमें प्रायः सभी बातें रूपकके साथ लिखीजाती हैं, इसकी उत्पत्ति उस समय मानीहै जब कि गंगाने अग्निदेवसे गर्भधारणकर युद्धके देवता कुमारको उत्पन्न कियायां, जो देवताओंके सेनापति हैं यह वृत्तान्त उस समयका है जब कि गंगाजीनेअपने पिता हिमालय (जो सब खनिज पदार्थोंका भंडारहै) को त्यागा इससे हमको बहुत ही प्राचीनकालका बोध होताहै, जब कि गंगाजीने अपने शिलामयमार्गको विदीर्णकर अपनी कुक्षिसे बहुमूल्य धातुकी खान दिखाईथी, यह इसकी बहुत पुरातनताहै ।

उसके गिरनेपर भी वैसे ही शब्द सुनाई दिया । उसही सुहूर्तमें क्रुद्ध हुए व्याघ्रकी समान नाहरआजा दिखाई दिया; उस वीरने अपने मृत अधिनायक और भ्राता ×की प्रतिहिंसा चरितार्थके लिये बड़े भीषण स्वरसे मीनालोगोंको उत्तेजित किया और उनके हृदयमें दूने उत्साहको भरदिया । इधर पहाड़ी सेनापतिके गिरनेपर चौहानपतिने अपनी सेनाको भीषण जयध्वनि करनेकी आज्ञा दी । आज्ञा पाते ही उन्होंने आकाशभेदी शब्दसे जयध्वनि की, यद्यपि उसको सुनकर मीनालोग क्षणमात्रके लिये स्तम्भित होगये, परंतु कुछ ही देर पीछे उनका साहस चमक उठा । चौहान सेनापति स्वयं रणक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ । सोमेशनंदन की पताकाएँ वर्षाकालीन आपाढकी प्रथम जलधाराकी सपत २ शब्दसे उडने लगी और उसकी सेनाके अजमेर और मन्दोरके बीचकी सीमा अतिक्रम करते ही चारों ओरसे जयजयकी ध्वनी सुनाई देने लगी । हाथियोंकी चिंघाड और घोडोंके हींसनेसे चारों ओर भय छागया । उसी समय गिरनार और सैधवी सेना वसंतकालीन फूलोंके नाना प्रकारके रंगोंकी समान पताकाएँ हाथमें लिये मंदोरके पक्षमें आकर मिलगई । दोनों सेनाके लोग कवचधारी थे; केवल नेत्र और नखोंके अग्रभाग ही खुले हुए थे । प्रत्येक वीर खड्ग निकालते समय निज २ कुलदेवताके नामोच्चारणसे रणक्षेत्रको प्रकम्पित करने लगा ।

पृथ्वीराजकी कान्ति इन्द्रके समान और पुरीहरपतिकी प्रभा प्रभातकालके तारोंकी समान होगई; दोनोंके शरीर अभेद्य कवचोंसे ढके हुए थे । चौहानपतिने बड़े वेगसे अपने खड्गको घोड़ेपर रक्खा, घोडा तत्काल ही पृथ्वीपर गिरगया, नाहर भी तत्काल सावधान होगया और दोनों परस्पर खड्गयुद्ध करने लगे, दोनों ओरके सैनिकोंने दुर्गाकारसे दोनोंको घेर लिया । प्रमारपतिके पताकाधारी वीर दौडते हुए काले बादलोंकी समान आगे बड़े और चमकते हुए खड्ग म्यानसे बाहर निकाल लिये । मन्दरेश्वरका भ्राता मोहन उनके साथ लडनेके लिये आगे बढ़ा, एक दूसरेको देखनेके पीछे खड्गयुद्ध आरंभ हुआ, प्रमारपतिका शिरस्त्राण खड्गकी चोटसे दोटुकडे होगया । कुछ देरमें ही चाओन्द दाहिमा क्रोधमें भरकर आगे बढ़ा और बड़ा भारी बल्लम उठाकर पुरीहरके मारां । एक चांटमें ही उसका प्राणपक्षी शरीररूपी पींजरेसे उडगया और जीवनशून्य शरीर कटे हुए वृक्षकी समान पृथ्वीपर गिरगया ।

× मीनालोगोंके अधिनायकको सम्मानार्थ भ्राता कहकर पुकारते हैं ।

जिस समय परमेश्वरकी दृष्टिमें जूडह पापी ठहरा तब उसने प्रत्येक ऊंचे पर्वतोंपर प्रत्येक वृक्षके नीचे ऊंचे २ चौतरे मूर्ति और बगीचे बनाये जो बालिके निमित्तथे और स्तम्भ भी अनेकप्रकारके निर्माणकिये जिससे यह रीति निकलीहुई विदित होतीहै ।

इसप्रकारके मिलान करनेसे सहजसे ही यह बात सिद्ध होजाती है कि सबका आदिमूल एकही पुरुषहै और एकही जातिकी रीतियें रूपान्तरको प्राप्तहोगई हैं ।

परिशिष्ट सम्पूर्ण ।

शुभमस्तु ।



“ श्रीवेङ्कटेश्वर ” स्टीम् यन्त्रालय—बंबई.

उसके अनुचर कल्पित आश्रयस्थानमें पकड़े गये तथा मध्यरजनीके आक्रमणसे उनका दलबल छिन्नभिन्न होगया, उस समय उन्होंने जिधर दृष्टि डाली उधर ही प्रत्येक पहाड़ी मार्गपर लालवस्त्र धारिणी सेनाको देखा; तब उनका साहस जाता रहा और क्षमा मांगनेको बाध्य हुए ।

इस समय एक अंग्रेज सेनापतिके अधीनमें इस पहाड़ी माहीर जातिका एक सेनादल तैयार हुआ है और समयपर यही एक उपकारी सेना गिनी जायगी इसमें कुछ भी संदेह नहीं है । * यद्यपि यह लोग उपद्रवकारी और अत्याचारी हैं, किन्तु शिरोमालामें जो बांधका वर्णन किया है, यह लोग उसी प्रकारका बांध बंधन वा खेतीका काम करेंगे । माहीरवारामें एक ऐसा जिला स्थापित हुआ है कि किसी समय उसके द्वारा राणाको लक्षशुद्धा वार्षिक आय होसकेगी ।

इन लोगोंके कितने ही आचार व्यवहार इनसे नीचेकी भूमिमें रहनेवाले प्रतिवादियोंकी अपेक्षा ऐसे विचित्र और विभिन्न हैं कि उनमेंसे कई एक वर्णन हम यहां कर सकते हैं । मीनालोगोंका चरित्र और इतिहास आगे विस्तारके साथ लिखा जायगा, इस लिये उसी जगह उनके चरित्रके प्रधान अंश—शुभाशुभ लक्षण संबंधमें कुसंस्कारादि वर्णन करनेकी इच्छा है; इस समय केवल स्त्रियोंके साथ उनके आचरणकी दो एक बातें लिखते हैं । माहीरलोगोंके पूर्वपुरुषोंने जो विधान बांधा था, यह लोग आजतक उस ही विधिका पालन करते हैं । यह लोग विधवा स्त्रीके संग विवाह करनेमें कुछ भी संकोच नहीं करते । इसका नाम “ नाथ ” विवाह है, और माहीरलोगोंके सभ्य प्रभु राजपूत विवाहके समय कागलि नामक दण्डस्वरूप पाँच रुपये लेते हैं । ऐसे विवाहके समय वरके शिरपर प्रचलित खजूरके मुकुटके बदले पगड़ीके ऊपर पीपलकी पवित्र शाखा लगाते हैं । साधारण हिन्दूविवाहकी अनेक रीति नीति ही पालन करते हैं । “ सातफेरे ” अर्थात् सात अन्नसे भरेहुए कलश तलाऊपर रखकर सात-वेर प्रदक्षिण,—“ गठजोडा ” अर्थात् वरकन्याके वस्त्रमें ग्रन्थिवन्धन और वरकन्याका पाणिग्रहण आदि प्रथा माहीरलोगोंमें प्रचलित है । यहांतक कि उत्तर प्रान्तके जो माहीर मुसलमान होगयेहैं वे भी इस विवाहके समय अपने पूर्वपुरुषोंकी अवलम्बित प्रथाका ही अनुसरण करते हैं और ब्राह्मण पुरोहित परिणय कार्य्य कराते हैं । माहीर जातिके आचार व्यवहारके तत्त्वानुसंधान कालमें

* कर्नल टाड साहबने जिस सेनाके तैयार होनेकी बात ऊपर लिखी है, यह आजतक भारतेश्वरीकी सेनामें है और यह सेना “माहीरवारा सैन्य” नामसे गिनी जाती है ।

वर्णन किया जाय तो एक बड़ी सूची बनानी पड़े । अतएव अनावश्यक समझकर ऐसा नहीं किया जाता । इस ४० वर्षके समयमें महाराष्ट्रियोंने मेवाडकी अत्यन्त ही दुर्दशा की कि जिसको वह देश फिर किसी समय दूर नहीं कर सका । यह सत्य है कि मुगल बादशाह भी स्वार्थपर और प्रजापीडक थे, यह भी सत्य है कि वह हिन्दू लोगोंके सुखदुःखका किंचित् भी विचार नहीं करते थे; परन्तु उनका राज्य था, वे भारतके रहनेवालोंको अपनी प्रजा समझते थे; ऐसा समझनेके कारणसे ही हिन्दुओंके ऊपर कठोर अत्याचार नहीं करते थे, इसहीसे उनका अत्याचार कभी २ मन्द होजाता था । परन्तु महाराष्ट्रीय वैसे नहीं थे ! वह भारतके रहनेवाले थे तो क्या हुआ ! वह पलभरके लिये भी भारतका विचार नहीं करते थे । महावीर शिवाजीने उनको जिस महामंत्रसे दीक्षित कर दिया था, यदि वह उस मंत्रका पालन करते तो निश्चय ही अपनी जन्मभूमिके अनन्तकष्टको दूर कर सकते थे । परन्तु भारतकी कठोर ललाट-लिखनको कौन भेट सकता है ? इसही कारणसे उन्होंने महात्मा शिवाजीके महामंत्रका निरादर करके भारतको अपनी पैशाचिक लीलाके अविनय करनेसे भयंकर शमशान बनाकर उसकी भयंकरताको सहस्रगुण बढ़ा दिया । महाराष्ट्रीय लोग रुधिरके प्यासे, पिशाचकुलकी समान झुंडके झुण्ड चारों ओर घूमाकर करते थे । जहां कहीं किंचित् भी धनकी गंधपाते, वहींपर फैलकर समस्त रुधिरको चूसजाते थे । हमने केवल तीनखंडनियोंको विचार करके देखा । इनमें मेवाडका एक करोड़ इक्यासी लाख रुपया खर्च हुआ । इसके अतिरिक्त राणाके कुटुम्बियों और सर्दारोंसे जो धनगया वह अलहदा * महाराष्ट्रियोंके पैशाचिक उत्पीडनसे मेवाडकी आज जो शोचनीय दशा होगई है उसका

* अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनीके कामदारोंने भी राज्य स्थापन करनेके प्रारंभमें महाराष्ट्रियोंके अनुसार ही व्यवहार किया था । जहांतक होसका धन लिया और फिर देश दबाया, उस बातको सबही इतिहास पढ़नेवाले जानते हैं । काशीके महाराज, लखनऊकी बेगम और बंगालके नवाब गुजाअउद्दौला आदिकोंसे अंग्रेजी अमलदारोंने करोड़ों रुपये अन्याय और अत्याचारसे लिये । तदनुसार लार्ड डलहौसीने भी पंजाब, नागपुर व सिताराआदि राज्योंको डुबाकर जप्त किया । बली लोग निर्बलेंपर ऐसा ही व्यवहार किया करते हैं । राजतृष्णामें धर्मबुद्धि और न्यायानुवर्त्तन तो कभी ही पाया जाता है ! ऊपर लिखे अनुसार अंग्रेजोंने इन रियासतोंमें पुष्कल अपहार किया, तथापि बडौदा, महसौर धार इत्यादि दबायेहुए कुछ राज्योंको लौटा भी दिया । अंग्रेजोंके न्याय और उदारपनका यह एक उत्तम उदाहरण है तथा इससे कम्पनीकी कीर्ति अवतक प्रसिद्ध है । ऐसा समंजसपन महाराष्ट्रियोंसे किंचित् भी नहीं हुआ !

“दूधदाजदख्वाँ” के नामसे अथवा और भी प्राचीन पूर्वपुरुष “चित्तावडाकी आन” कहकर शपथ ग्रहण करते हैं । दक्षिण प्रान्त निवासी माहीरगण भी शेषोक्त प्रकारसे शपथ ग्रहण करते हैं । वह लोग सूर्यके नामसे “सूर्यकालोगान” कहकर शपथ लेते हैं । अथवा अपने योगी याजकनाथके नामसे “नाथका आन” कहकर शपथ लेते हैं । सुसलमान माहीरलोग इस समय शूकर नहीं खाते; किन्तु दक्षिण प्रान्त निवासी माहीरलोग सबकुछ खाते हैं, केवल अपने प्रतिवासी लोगोंके आदर्श और अपने प्राचीन योगी याजकनाथकी प्रीतिके निमित्त गो भक्षण नहीं करते । तीतर और मालेली नामके दो पक्षियोंको वह लोग शुभलक्षणवाले समझते हैं । माहीरलोग जिस समय लूटनेके अभिप्रायसे बाहर निकले उस समय यदि बाई-ओर तीतरपक्षी बोले तो उस दिन अपनी कार्य सिद्धि निश्चय ही समझते हैं । माहीरजातिका निवास सौराष्ट्रसे लेकर उत्तरमें चम्बल तक विस्तृत है । माहीर-वाडा इस समय मेवाडके राणाके अधिकारमें है । जितने माहीर सम्प्रदाय अत्यन्त दुर्दान्त हैं उनके दमन करनेके लिये राणाने उनके गाँव २ में छोटे दुर्ग बनवा दिये हैं । सब प्रदेशोंसे ही इस समय कर लिया जाता है । प्रत्येक विभागके माहीर-पाति राणाके निकट लाये जाते हैं, वह जब शपथ खाकर राणाकी अधीनता स्वीकार करते हैं तब अपने २ पदोचित स्वर्ण केयूर औं दुपट्टे राणासे पारितोषिक पाते हैं । माहीरवाराके पहाडियोंको दमन करके जिस दिन उदयपुर राजमहलके आँगनमें उन लोगोंके अस्त्र शस्त्र इकट्ठे हुए उस दिन मेवाडके इतिहासका युगा-न्तर आरंभ कहना चाहिये । किन्तु यह घटना हमारे कमलमीर उपत्यकामें बास करनेसे पहिले ही घटी है ।

छब्बीसवीं अक्टूबर-दिनका प्रकाश होतेही सबलोग प्रसन्न हुए । कप्तान बाघ और डाक्टर डनकानने हाथीकी “झूल” कपडे छोड़े और मैं भी पालकीके भीतरसे बाहर निकला । रातकी ओससे शरीररक्षाके लिये वह पालकी विशेष उपकारी हुई । भूख प्यासके लगनेसे प्रकृतिके रमणीय दृश्य देखनेकी इच्छा कम होगई । जो कुछ भी हो यदि मैं अपनी इच्छानुसार कार्य करनेके लिये आगे बढ़ता तो अपने मित्रवर्ग और अनुचरोंको दक्षिणके भयानक पहाडी मार्गसे चलकर डाँकुओंको खोजनेके लिये अपना अनुसरण करनेको कहता ।

यह छोटा सामन्त बडवटिया नामसे सर्व साधारणमें विख्यात है यह व्यक्ति चौहानोंकी दूसरी शाखा शनि गुरु जातीय है । इस जातिमें कई शताब्दी-

षोडश अध्याय १६.

राणाभीम;-शिवगढका झगडा;-राणाजीका निकलगई हुई भूमिपर पुनर्वार अधिकार करना;-राणाकी सेनापर अहल्याबाईकी चढाई;-राणाकी पराजय;-चन्दावतसर्दारका विद्रोह;-मंत्रीसोमाजीका वध;-विद्रोहियोंका चित्तौरपर अधिकार;-राणाका माधोजी सेंधियासे सहाय मांगना;-चित्तौरपर चढाई;-विद्रोहियोंका शरणमें आना;-मेवाडमें अपना अधिकार स्थापित करनेके लिये जालिमसिंहका मनोरथ;-अम्बाजीके द्वारा उसका विद्रोहिता चरण;-अम्बाजीका सूवेदार होना;-लखवाके साथ उसका झगडा;-झगडेका फल;-जालिमसिंहको जहाजपुरकी प्राप्ति;-हुलकरकी मेवाडपर चढाई;-नाथद्वारेके पुरोहितोंको बन्दीकरना;-कोतारियोंके ठाकुरकी शूरता;-लाखूवाकी मृत्यु;-महाराष्ट्रीसेनानियोंपर राणाकी चढाई;-जालिमसिंहके द्वारा उन सेनानियोंका उच्चार;-हुलकरका पुनर्वार उदयपुरमें आकर कठोर कर स्थापन करना;-सेंधियाकी चढाई;-कृष्णकुमारीका पाणिग्रहण करनेके लिये राजपूतोंमें झगडा;-परस्पर युद्ध;-कृष्णकुमारीका आत्मत्याग;-मीरखाँ और अजितसिंह;-उनका दुराचरण;-उदयपुरस्थ सेंधियाकी राजसभामें बृटिशदूतका आगमन;-अपमानित होकर अम्बाजीका आत्महत्याका विचार करना;-मीरखाँ और बापूसेंधियाके द्वारा मेवाडका ऊजड होना;-अंग्रेजोंसे राणाजीकी सन्धि ।

राणा हमीरकी अकालमृत्युके कुछही दिन पीछे उसका छोटाभाई भीमसिंह संवत् १८३४ (सन् १७७८ ई०) में मेवाडके सिंहासन पर बैठा । चालीस

बन्धालयको घोडा फेर दिया । उसने आग्रह पूर्वक राणासे कुशल पूछी सामंत अजितसिंह एक श्रेष्ठ मनुष्य हैं; आयु ३० वर्ष, लम्बाशरीर, सुन्दर और साहसी राठोर घुडसवारकी तरह वह घोडेपर बैठते हैं । गंदवार प्रदेशमें वाणिज्य प्रधान पाली और सेना निवास द्वैसुरीको छोडकर गाडोरा सर्व प्रधान नगर है । इस धनधान्य सम्पन्न प्रदेशसे राणा पहिले चार सहस्र राठोरसेना युद्धके समय प्राप्त करते थे । यह सेना वेतनके बदलेमें बिना करदिये भूमिको भोगते थे । मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें यह गाडोरा पति भी एक थे । यद्यपि कालक्रमसे यह प्रदेश मारवाडमें मिलायागया और उदयपुरके राणाके बदले मारवाडेश्वर स्वामी हुए हैं, किन्तु मेवाडपतिके ऊपर गाडोराके अधिनायककी प्राचीन राजभक्ति और प्रेम इतना प्रबल है कि वर्तमान ठाकुर अभिषेक समयमें अपने वर्तमान असली स्वामी मारवाडराज्यके बदले प्राचीन स्वामी राणासे अभिषेक असिबन्धन करालेते हैं । इस प्रगट राजभक्तिको देखकर मारवाडेश्वर बहुत क्रुद्ध हुआ और बदला लेनेके अभिप्रायसे गाडोराका प्राकार गिरा दिया । उसका यह कार्य निःसंदेह कलङ्कचिह्न है । अब भी जब कभी राणाका दूत आकर गाडोरापतिको कमलमीरमें जानेका स्मरण दिलाता है वह तत्काल सम्मानसहित राणाकी आज्ञाका पालन करता है । शत्रुओंके कराल गालसे इस प्रदेशकी रक्षा करना गाडोरा वंशका बडा भारी कार्य है और प्रायः वर्तमान सर्दारके पूर्व पुरुषोंने गाडोरा रक्षाके लिये दुर्दान्त मुगलसेनाके विरुद्ध भयंकर संग्राम किया था, यहांतक कि किसी २ ने बडी भारी वीरता दिखाकर अपने प्राणतक देदिये । गाडोरा प्रदेश यद्यपि इस समय मेवाडसे अलग है, तथापि राजपूत जातिके चिरप्रचलित सम्मान दिखानेका इतना अभ्यास है कि, अब भी गाडोराका सामन्त अथवा उनका कोई निकटका कुटुम्बी सभामें आवे तो पुरानी रीतिके अनुसार एक अनुचर चांदीका आसा हाथमें लेकर युद्धमें आगे आता है, पुराना सामरिक आह्वान—“कमलमीरका स्मरण करेंगे” कहकर सम्मान दिखाता है । प्रत्येक छित्सव और पर्वमें राणा अवतक पुरानी रीतिके अनुसार गाडोरापतिको उपहार देता है । गाडोराका स्वामी राणाकी समान समरक्तवाहीके नामसे गौरव पाता है और सर्व साधारणमें “मेवाडका भतीजा” इस नामसे सम्मानके साथ पुकारा जाता है । अपने घर चलनेके लिये ठाकुरने बडी नम्रताके साथ मेरा निमंत्रण किया; मैं जानता था कि वह यदि अनुरोधपूर्वक जाऊंगा तो स्वामी क्रुद्ध होकर उसको महा विपत्तिमें डालेगा, अतः “मार्गकी थकावट और सवेरे प्रभात ही

सम्बन्धी थे। चंदावत सदाँरने इस समय उन दोनों राजपूतोंके साथ मंत्रभवनपर अधिकार किया और समस्त सिन्धी सेना और उसके दोनों सेनापति चंदन तथा सिद्दीकको वशमें करके अपनी दुरभिलाषाको सिद्ध करनेके लिये तइयार हुए। इतने दिनतक तो यह लोग सुअवसरकी बाट देखरहेथे। इस समय उस वांछित सुअवसरको पायकर शालुम्ब्रांसदाँरने अपने प्रतिद्वन्दी शक्तावतसदाँर मोहकमके भेंदरकिलेको घेरलिया और तोपादि लगाकर सबभाँतिसे युद्धके लिये तइयार रहा।

शक्तावत गोत्रकी एक नीची शाखामें संग्रामसिंह नामक एक वीरपुरुष उत्पन्न हुआथा। इसके द्वारा मेवाडके होनहार इतिहासमें बहुतसे प्रसिद्धकार्य हुएथे। परन्तु उसकी प्रतिष्ठा उस समय एकसाथ न बढ़कर धीरे २ बढ़रहीथी। भेंदरको घेरनेसे कुछ पहिले संग्रामसिंहने अपने प्रतिद्वन्दी पुरावतसरदारके साथ एक घोर झगडा उठाया। पुरावतसरदारका लव्हानामक एक किला था। जब संग्रामसिंहने इस किलेको लेलिया*तब दोनोंका झगडा मिटगया। तदनन्तर विजयी संग्रामसिंह अपने माननीय कुलपति शक्तावतसरदारका हितसाधन करनेके लिये कार्य करने-लगा। भेंदरकिलेको चन्दावतलोगोंसे घिराहुआ देखकर संग्रामसिंहने कोरावडके शासक अर्जुनकी भूमिवृत्तिपर चढाई करके वहाँपर जितने गवादि पशुथे सबको अपने अधिकारमें करलिया। जब कि वह उन पशुओंको लियेहुए आरहाथा उस समय अर्जुनसिंहके पुत्र सालिमसिंहने मार्ग रोककर उसपर आक्रमण किया। थोड़ी-देरतक इस स्थानमें युद्ध होतारहा। संग्रामसिंहने वहाँ मारकर सालिमसिंहके प्राण लेलिये। अर्जुनसिंहने शीघ्रही इस समाचारको सुना। विषम शोकके मारे उसका मस्तक कांपनेलगा। शीघ्रतासे शिरपर बँधाहुआ डपटा दूर फेंककर उसने वज्रगंभीर कंठसे प्रतिज्ञा की कि “जब तक वदला नहीं लेलूंगा तबतक यह डपटा शिरपर नहीं बांधूंगा।” अपनी सेनासे किसीप्रकारकी अकुशलका बहाना करके वह उस अवरोधकारी कटकसे विदा हो कोरावडकी ओर यात्रा करके सहसा शिवगढकी ओर चला। संग्रामसिंहका वृद्ध पिता लालजी इस शिवगढमें रहताथा। भीलदेश चप्पनके हृदय-विहारी अत्यन्त ऊँचे पहाडोंपर और महावनके भीतर यह शिवगढ बसाहुआहै। शिवगढके अत्यन्त दुर्गम और दुरारोह होनेसे संग्रामसिंहने समझा था कि शत्रुगण सहसा इसको अपने अधि-

* संग्रामसिंहके वंशवाले अबतक इसको भोगतेहैं।

समझमें आजायगी कि पैतृक भूस्वत्व अधिकार करनेके लिये राजपूत जातिको कोई काम असाध्य नहीं है ।

राणा रायमलके पुत्रोंमें परस्पर कलह और दिल्ली मालवाधीश्वरको इन दोनोंके संग राणाके सदा संग्रामद्वारा वलपरीक्षा देखनेसे गदवार प्रदेशमें उनका स्वामित्व बड़ी अनिश्चित दशामें होगया । मीना और माहीरलोग इस प्रदेशकी समतल भूमिमें रहते थे । इस प्रान्तकी पुरानी राजधानी नादोलके भूतपूर्व स्वाधीन चौहान राजगणके वंशधर षण्डद्वारा विशेष सहायता प्राप्त होती थी । उक्त षण्डसैनाने द्वैसुरी अधिकार करलिया । उनको दूर करनेके लिये वीरवर पृथ्वीराजने शुद्धगढ़के सोलङ्की जातीय सामन्तकी सहायता ली । उक्त सामन्तके पुत्रके संग षण्डकी एक कन्याका विवाह हुआथा । गुप्त षडयंत्रजाल विस्तारसे निश्चय हुआ कि षण्डके भगानेमें सहायता करनेपर उक्त सामन्तको उसकी स्त्री सहित द्वैसुरी और उससे मिलीहुई सब भूमिका अधिकार दिया जायगा, किन्तु निर्धार कर देना होगा । सामन्त पुत्रने इस बातको सहजमें ही मान लिया, और काय्योंद्धारकी सहायताके लिये स्त्री सहित द्वैसुरीमें रहनेके वहाने वहां चला गया । किन्तु बहुत कालतक कोई अवसर नहीं मिला; अन्तमें षण्डके एक पुत्रके साथ बालेचोके सामन्त सागरकी एक कन्याका विवाह निश्चय हुआ, शुद्धगढ़के सामन्तपुत्रने लिपे २ यह संवाद लिखकर अपने पिताके पास भेजदिया उसने अपने पिताको यह लिखकर सतक करादिया कि षण्ड अपने पुत्रसहित बालेचोमें जायगा, मैं द्वैसुरीके दुर्गकी ऊंचे शिखरपर अग्नि जलादूंगा, आप उस संकेतके अनुसार सेनासहित आकर द्वैसुरी अधिकार करलेना । पुत्रका पत्र पढ़कर शुद्धगढ़पति उस संकेतकी प्रतीक्षा करने लगे । किन्तु अधिक समयतक उनको ठहरना नहीं पडा । एक दिन उन्होंने किलेकी चोटीपर धुआं उठता देखा तत्काल सेनासहित आरावलीसे उतरकर कार्य्य सिद्ध करनेके लिये आगे बढ़े । इधर उस धुएँको देखकर षण्डकी स्त्रीने अपने जामाताको कहला भेजा कि मेरा पुत्र शीघ्रही नई बहूके साथ आवेगा, इस लिये शव दाहकी समान अशुभ लक्षण स्वरूप यह अग्निकुण्ड क्यों प्रज्वलित किया है ? । इतनेमें शीघ्रही तलवारकी झनकार षण्डकी स्त्रीके कानमें सुनाई दी; उसने सुना कि सोलङ्कीलोग नगरमें घुसकर चारोंओर आगलगा रहेहैं । किन्तु शुद्धगढ़पति और महावीर पृथ्वीराजके जयलक्ष्मीका आलिंगन करनेसे पहिले ही षण्ड अपने पुत्र और पुत्रवधू सहित आपहुँचा । भयंकर युद्धाग्नि प्रज्वलित हो उठी । शुद्ध

अधिकारमें थी । राणाके साथ इसकी किंचित् भी सहानुभूति नहीं थी । कारण यह कि जिस समय राणाधनके अभावसे अत्यन्त कष्ट पारहेथे उस समय यह मंत्री अपने इष्टमित्रोंके साथ अच्छी रीतिसे गुलछरें उडारहाथा, धनके लुटानेकी भरमार थी । यहांतक कि राणा भीमको ईडरमें अपना विवाह करनेके लिये रुपया कर्ज लेना पडा । परन्तु इस विश्वासघाती सामन्तने अपनी बेटीके विवाहमें प्रायः १०००००० रुपये प्रसन्नतासे व्यय करदिये । चन्दावत सर्दारका यह आचरण देखकर राजमाता अत्यन्त अप्रसन्न हुई और चन्दावतोंसे राज्यभारको छीनकर शक्तावतोंको निकट बुलाया तथा भेदर और लव्हाके सामन्तोंको भलीभांतिसे सन्मानित करके प्रतिष्ठित किया । शक्तावतोंको राजमाताकी दी हुई प्रतिष्ठा मिली; परन्तु इन लोगोंके पास इतनी सेना नहीं थी कि यहलोग वैरियोंको पराजित करके उनके विक्रमको रोक सकते । इसकारण चारों ओर सहायताकी खोज करते २ कोटेकेसर्दार जालिमसिंहसे सहायताकी प्रार्थना की । जालिमसिंह चन्दावतोंसे बहुत ही अप्रसन्न था । इस ओर शक्तावतगण तो उसके अतिनिकटके सम्बन्धी थे; कारण कि इनलोगोंके साथ जालिमसिंहका वैवाहिक सम्बन्ध था । अतएव शक्तावतोंका अभिप्राय जानते ही उनके पक्षमें होगया और अपने महाराष्ट्रियमित्र नानाजी बल्लालके साथ १०००० सेना लेकर अपने कुटुम्बियोंसे जामिला । इस समय शक्तावतोंके दो कर्तव्य कार्य हुए; प्रथम तो विद्रोही चन्दावतोंका दमन करना; दूसरे अपनृपति रतनसिंहको कमलमेरसे भगाना;—चन्दावतलोग सिन्धियोंके साथ मिलकर चित्तौरके प्राचीन दुर्गमें स्थित हो राणाके विरुद्ध अनेक प्रकारके कपटजाल फैला रहेथे । इस समय सबसे इनका दमन करना ही शक्तावतोंने उचितकार्य समझा और वह इसके लिये तैयारहुए ।

जिस समय मेवाडमें यह बातें होरहीथीं, उस समय माधोजी सेंधियाकी प्रचंड प्रभुता सहसा मारवाड और जयपुरवालोंके मिलेहुए विक्रमसे एकसाथ ही छिन्न होगई । तथा लालसोट क्षेत्रमें विजयी राजपूतोंकी जयलिपि विजयी महाराष्ट्रीय वीरोंके माथेपर स्पष्टभावेसे दिखाई देनेलगी । जब कराल माधोजीका विषैला दांत टूटगया तब राजपूतोंने अवसर पाकर अपनी समस्त सूमिसम्पत्तिको उनके ग्राससे उद्धार करलिया ।

विजयी राठौर और कछवाहोंके कार्यका अनुसरण करक शशादीय राजाने भी उस राज्यको,—जो कि महाराष्ट्रियोंने छीन लियाथा उद्धार करनेका विचार किया ।

भी प्रत्येक संभ्रान्त राजपूतकी समान चतुर पाया । इस प्रकारकी मीठी बात चीतके पीछे जो लोग उनके मनका जाननेमें समर्थ हैं, वह अवश्य इन सामंत लोगोंके शिक्षा और ऊंचे ज्ञानकी प्रशंसा करेंगे । मैं केवल इन गाडोराके अधिनायककी ही नहीं किंतु सामंतमात्रकी ही बात कहता हूं । क्रमसे संघटित घटनाओंके प्रधान प्रधान विवरणको यदि इतिहास कहा जाय तो सम्पूर्ण राजपूत उस इतिहासको जानते हैं । क्योंकि वह लोग अपने पूर्व पुरुषोंका वीरत्व विलासादि भलीभाँति वर्णन करते हैं, और अपने बहुत पुराने अधीश्वरोंके शासनकालकी घटनायें (जिनका कि उनके समाजके साथ संबंध है) अच्छी तरह जानते हैं । उन्होंने इतिहासकी पुस्तक वा इतिहास जाननेवालोंसे यह ज्ञान पाया है, इसका अनुसन्धान करना अनावश्यक है । यह इतिहासज्ञान केवल उनकी मूर्खता और अज्ञानताको ही दूर नहीं करता है किन्तु जो लोग जातीयचरित्र समालोचक हैं, उनका बराबरीका परिचय भी देता है ।

२८ वीं अक्टूबर—बहुत सवेरे ही यात्राका आरंभ कर दिया । ठाकुरके राज्यमें होकर जाते समय उन्होंने सहायताके लिये अपने एक विश्वासी मनुष्यको मेरे पास भेजा । आरावली शिखरमालाके पार होजानेके कारण हम लोगोंको चारोंका दृश्य दिखाई दिया । गदवारेके उर्वर समतल क्षेत्रने किसी ओरसे भी हमारी दृष्टिके मार्गको नहीं रोका । हम गाडोराके पाससे होकर चलने लगे । दुर्ग और महलोंसे ही ऊंची चोटियां और द्वारशून्य तोरण गाडोराकी अत्यन्त अपमान जनक हीन अवस्थाको जतारहे थे । गाडोराके सामन्तलोगोंने पीछे पुराने स्वामी मेवाडके रानाकी अधीनता स्वीकार करके इस प्रदेशको मेवाडमें मिलादियाथा, इस कारण बीस वर्ष पहिले मारवाडके अधीश राणा भीमसिंहने इस प्रकारसे गाडोराके नगर प्राकार और दुर्गादि तुडवादिये । वास्तवमें यह प्रदेश इस समय जिस प्रकार मारवाडराजमुकुटकी एक उज्ज्वल मणि है, उसी प्रकारसे निश्चय ही यह राणाके मुकुटका चमकता हुआ रत्न था । जब हम इस प्रदेशके नदी नदी जलाशयपूर्ण, नाना प्रकारके सुन्दर दृश्योंसे घिराहुआ, चारों ओर सुन्दर नगरोंसे शोभित, समृद्धिशाली और रमणीय समतल क्षेत्रमें होकर चलरहे थे उस समय राणाका दूत हमारे पास आया, हम लोग उसके साथ बातचीत करने लगे । ऊपर लिखचुके हैं कि देशहितसाधक कई सरल और ज्ञानियोंमें कृष्णदास भी एक प्रधान मनुष्य हैं । वह प्राचीन शिक्षाके

समझकर राजपूतोंने उनसे वह जनपद (परगने) भी लेने चाहे कि जो महाराष्ट्रियों-हीके थे। परन्तु वीरनारी अहल्यावाईके प्रचंड बाहुबलने उनके समस्त कार्योंको विफल कर दिया। हुलकरराज्यकी महारानी अहल्यावाईने राजपूतोंको नीमवहेडा नामक जनपद हस्तगत करते देखकर अत्यन्त क्रोध किया। राजपूतोंको दलित करनेके लिये वह सेंधियाकी सेनाके साथ मिल गई। अहल्यावाईकी आज्ञाके अनुसार तुलाजीराव सेंधिया और श्रीभाई यह पांच हजार घुडसवारोंको साथ लेकर, पराजित हुए शिवाजी नानाकी सहायता करनेके लिये मन्दसोरकी ओर चले। शिवाजी नाना उस समय मन्दसोरमें स्थित होकर अपने प्रचंड बाहुबलसे अवरोधकारी राजपूतोंको दलित कर रहा था। इसही समयमें सहयोगी महाराष्ट्रीगण सेना-सहित उस नगरके निकट पहुंचे और चुपचाप राणाकी सेनापर आक्रमण कर दिया। माघ शुक्ल ४, मंगलवार संवत् १८४४ (सन् १७८८ ई०) को दोनों-सेनाका घोर युद्ध आरंभ हुआ। राजपूतलोग असतर्क थे इस कारण महाराष्ट्रियोंकी गतिको न रोक सके और घोररूपसे पराजित हुए। राणाका मंत्री बहुतसे सैनिक और सामन्तोंके साथ संग्राममें मारा गया। कानोर और साद्रीके सरदार अपनी २ सेनाके साथ अत्यन्त ही बायल हुए। साद्रीपतिका घाव अधिक था इस कारण वह संग्रामभूमिसे भाग नहीं सका और शत्रुओंके हाथमें कैद होगया * माधोजी सेंधियाके पराजित होनेसे राजपूतोंने जिन परगनोंको अपने अधिकारमें कर-लिया था, केवल जावदके सिवाय और सबको पुनर्वार महाराष्ट्रियोंने ले लिया वीर दीपचंदके अद्भुत विक्रमसे केवल जावद ही रक्षित रहा। दीपचंदने बराबर एकमासतक अत्यन्त वीरताके साथ जौदकी रक्षा करी फिर अपनी तोप, बन्दूक और सेनाके साथ शत्रुओंकी सेनाके मोरचे भेदकर मंगलगढ़ किलेको गया। इस प्रकार अभागे राजपूत लोंगोकी दुःख निशा प्रभात होते २ फिर भी गाढ़ अन्धकारसे छा गई। राजपूतोंके समस्त उपाय व्यर्थ होगये।

इस भीषण संघर्षमें केवल चन्दावतोंके अतिरिक्त और समस्त सरदार मिल-गए थे। इससे चन्दावतोंकी आन्तरिक क्रूरताका स्पष्ट प्रमाण मिलता है। क्रमानु-सार यहलोग यहांतक ठीठ होगये कि राजमाता और राणाके नवीन सचिव सोमजीने उनको दवानेका पूर्ण विचार कर लिया। परन्तु इनसे कुछ भी न हो सका इस कारण शान्त होगये और मध्यस्थतामें रामप्यारीको शालुम्ब्रा सर्दारके पास भेजा। शालुम्ब्रा सर्दार शान्त हुआ और राजकुमारसे क्षमा प्रार्थी होनेको उदयपु-

* यह दो वर्षतक कैदमें रहा फिर अपनी भूमिवृत्तिके चार उत्तम नगर देकर छूटा।

कहा ? यहां इस बातका लिखना आवश्यक है । प्रधान मूलघटना इतिहासमें कई जगह लिखी हुई है, इस कारण कविकी लेखनीसे निकलीहुई उक्त उद्धृत कविता किस कारणसे सीमानिर्धारण सबसे बड़ा प्रमाण माना गया है ? पाञ्चोली द्वारा लिखित उस विवरणको मैं बहुत संक्षेपसे लिखनेका अभिलाषी हूं । यह कविता बहुत काल पहिलेसे एक वंशधरसे दूसरे वंशधर तक क्रमसे अतीत इतिहासका प्रमाणस्वरूप प्रचलित होतीआई है । चौदहवीं शताब्दीके शेष भागमें चन्दावत सम्प्रदायके आदि पुरुषने चण्डमन्दरके अधीश्वर रणमलकी कीहुई विश्वासघातकताके दण्डमें उसका जीवन नाशकरके उक्त राजधानी और राठोर लोगोंका सम्पूर्ण प्रदेश (उस समयमें राज्य बहुत छोटा था) कई वर्ष तक अपने अधिकारमें रक्खा । मन्दोरेश्वरके उत्तराधिकारी आरावलीकी दुर्गम गुफाओंमें छद्मवेषमें छिपेहुए रहतेहैं; उस समय उसने भूलसे भी अपने मनमें नहीं विचाराथा कि मेरा नाम एक वंशका आदिपुरुष मानकर लिखा-जायगा, वह अपने वंशका दूसरा राज्यस्थापक माना जाकर सब जगह सम्मानित होगा और मन्दौर उस नवीन राज्य जोधपुरमें मिलाया जायगा । मन्दौर प्रदेश मेवाडके अन्तर्गत होनेके समयको जब बहुत वर्ष बीतगये, तो दोनों पक्षने विवादके मूल कारणको विस्मृतिके जलमें छोड़दिया । मेवाडका अप्राप्त व्यवहार राणा राजपूतजातिकी निष्ठारण की हुई आयुमें आया; इधर निकाला हुआ योध कई घुडसवारोंके संग मारवाडके कई स्वाधीन मनुष्योंके अनुग्रहसे जीवन धारण करनेलगा । एक दिन योधके एक चारण वा कविका साक्षात् हुआ; कविवरने भविष्यत् वक्ता रूपसे परिचित होनेकी आशा न करके उससे कहा कि चित्तौडकी राजमाताके अनुरोधसे राणाने तुमको मन्दौर लौटा देनेकी इच्छा करी है । योधके इस मन्दौरके अधिकार विषयमें दो प्रकारकी कथा प्रचलित है । मेवाडके इतिहासमें लिखा है कि राणाने दयाके वशीभूत होकर योधको राज्य लौटा दिया; किन्तु मारवाडके इतिहासमें लिखा है कि राजा योधने युद्धमें जय प्राप्त करके हत पैतृकराज्यको फिर प्राप्त किया । वास्तवमें योधकी भागिनीने अपने भ्राताकी इस दुवारा राज्यप्राप्तिकी जय सूचना करनेके लिये एकान्तमें कौशल किया अथवा मनुष्य श्रेष्ठ योधने शुभअवसर पाकर मन्दौरमें प्रवेश करके जयपताका उड़ाई और अपने पिताका कलङ्क छुड़ाया; इन दोनोंमें कौन सी बात ठीक है इसका निश्चय करना बहुत कठिन है । यदि इस प्रश्नकी सीमांसो बहुत आवश्यक हो तो हम कहसकते हैं कि दोनों बातें ही सत्य हैं ।

मेवाडके द्वार २ पर भ्रमण करने लगी । जिसपक्षकी जय हुई, उसके ही उन्मत्त आचरणसे अभागीप्रजाका धन और प्राण नष्ट हुआ । किसानने अत्यन्त परिश्रम करके नाजको उत्पन्न किया परन्तु वह उसको भोग न सका । सुनार, लोहार और चमारादि कारीगरलोग सामग्री बनाकर तइयार करतेथे परन्तु फल उनको कुछ भी नहीं मिलता था । वनियें लोग सर्वस्व खर्च करके धान्यको मोल लेतेथे, परन्तु उसको बेच नहीं पाते थे;—समस्त सामग्रीको चोर और ठग लूट लेते थे। पहिले समयमें चोरीका नाम ही नाम मेवाडमें वाकी था, वास्तवमें जिसका अभिनय कहीं भी नहीं देखा जाता था, आज चन्दावतोंके अत्याचारसे मेवाडके घर २ में वह अविनय होने लगा । धन संपत्तिके सिवाय प्रजाका प्राण और मर्यादा भी छिन्नभिन्न होने लगी । सबही अपने २ स्थानको छोडकर इधर उधर भागने लगे । इस चोरी डकैतीके कारण थोडे ही समयमें मेवाडका आदाराज्य ऊजड होगया । जमींदारोंके नाजके खेत, किसानोंके हल बैल, जुलाहोंका ताना बाना, और वनियोंकी दुकानें यह सबही स्थान शून्य होगये । जिन शोभायुक्त महल दुमहलोंके भीतर स्त्रियोंका नाच गाना सुना जाता था, वहां पर इस समय श्मशानकी भयंकरता दिखाई देती थी । अब तो भयंकर वनैले हिंसक जन्तुओंने उन स्थानोंमें अपना अड्डा जमाया था ।

मेवाडके इस सर्वव्यापी विप्लवके समय राजा, प्रजा, धनी, निर्धन किसीमें कुछ भेद न रहा । उस समय वही अपनी रक्षा करनेको समर्थ हुआ कि जिसमें कुछ बल था । शेष सबहीको पाखण्डी लोग सतातेथे । मूल बात यह है कि राज्य अत्यन्त ही दीनदशाको पहुँच गया था । राणाकी अवस्था भी अत्यन्त शोचनीय हुई कहाँ तो वह ! दीन प्रजाकी रक्षा करते और कहाँ अब स्वयम् ही आश्रयके लिये व्याकुल थे । अतएव प्रजाके साथ जो सम्बन्ध उनका था वह छिन्न होगया । सब ही अपनी २ रक्षाके लिये बलसे काम लेने लगे । राणाकी इस अकर्मण्यतासे राज्यमें और भी कितने एक महाअनर्थ उत्पन्न होगये । जिन किसानोंकी यह इच्छा नहीं थी कि अपनी मातृभूमिको छोडें उन्होंने अपनी आशाको पूर्ण करनेके लिये किसी एक वीरकी सहायता ले ली और उसकी सहायताके बदलेमें उसे कुछ धन देना स्वीकार करलिया । स्वार्थके रक्षा करनेकी लालसा जैसे २ बढ़ती गई, वैसे ही वैसे रक्षकोंकी चाह बढ़ी । जो राजपूत लोग घोडेपर चढ़ने और भाला चलानेमें कुशल थे वही वीर बन-

गदवार प्रदेश मेवाडके राज्यान्तर्गत होजानेसे उसका बदला अन्य प्रकारसे पूरा होगया । चण्डपुत्र मञ्ज सीमान्तके आँवलापूर्ण प्रदेशमें मारागया था, इस कारण पुत्रके प्राणनाशके पीछे वह प्रदेश राणाके अधिकारमें आजानेसे वह जैसा प्रसन्न हुआ, मेवाडवासी लोग भी वैसेही इस आँवलेको अपने गौरवका बढानेवाला समझनेलगे । मन्दौरसे जितने खुदेहुए पत्थर मिलेहैं, वह सब ही इस प्रचलित जनभूति वाक्यके समर्थक हैं ।

यद्यपि इस समय खेतोंसे सब अन्न संचित करलियाथा, और अधिवासियोंकी सामान्य वचीहुई धनसम्पत्तिमें लूटने और अत्याचार करनेके चिह्न भी हमने देखे, और अमीरखाँके नरपिशाचस्वरूप अनुचरोंने अधिवासियोंके जो अकथनीय अत्याचार कियेथे उनमेंसे बहुत सी बातें सुनीथी, तथापि मेवाडके साथ तुलना करनेपर मैं इस प्रदेशको ही उत्तम समझताहूँ । आरावली शिखरसे जो अगणित नदियें निकलकर लूनी अर्थात् लवणाक्त नदीमें मिलीहैं, यात्राके समय उनमेंसे कई नदियोंको हमने पार कियाथा । ग्राम वडे और अधिक प्रजासे भरेहुए हैं; किन्तु मेवाडके किसान लोग दरिद्रदशमें होनेपर भी जैसे प्रसन्न दिखाई देतेहैं, इस स्थानके किसान वैसे नहीं हैं; मानो निर्जीव और अन्तःसार शून्य हैं । मेवाडमें जैसी शोचनीय दशप्रतिक्रियाके समय अतिक्रम करतीहै, मारवाडमें अब उस प्रतिक्रियाका समय उपास्थित है । मारवाडेश्वरके हृदयमें इस समय अतिआग जलरही है, इधर चतुर प्रधान मंत्री राजाको अपने हस्तगत करके अपनी स्वार्थसिद्धिके साथ २ मारवाडको अवनतिके समुद्रमें डबाना चाहताहै, अतः साधारण प्रजा जन्मभूमिकी उस शोकदायक अवस्थाके कारणसे ही दुःखी और निरानन्द है ।

शीतल और आच्छादित स्थानमें केम्प स्थापित होनेपर हृदयमें स्वयं ही संतोष उदय होताहै; नादोलनामक स्थानमें हमने उस आनन्दको भोगा । यहां भी हमने लिखनेयोग्य इतनी सामग्री देखी कि मौन होकर बैठना असंभव होगया । पाठकोंको यह हमारे थोड़े लेखसे ही प्रसन्न होना चाहिये । नान्दोल प्रदेश मन्दरावलीके कारण यद्यपि अब भी प्रधान गिनाजाताहै, किन्तु यह इस प्रदेशकी राजधानी था ऐसा चिह्न कुछ नहीं दिखाई देता । पश्चिम प्रान्तमें ढाई कोशकी दूरीपर नादोलय नगरके सहित यह नादोल बहुत प्राचीन कालमें अजमेरके चौहानोंकी एक शाखासे उत्पन्नहुए राजपूतोंकी वासभूमि था । इस नादोलसे ही शिरोहीके देवर और झालोरके शनि गुरु लोगोंकी

संधियासे कहा । जालिमसिंहसे राणाजीके अभिप्रायको सुनकर संधिया सम्मत हुआ । इस घटनासूत्रसे बँधकर राजस्थानकी राजनैतिक रंगभूमिमें जो महामहोपाध्याय अवतीर्ण हुए उनके अद्भुत वीरानुष्ठानसे राजपूतानेके इतिहासमें एक नये युगका अवतार हुआ । इस समय प्रयोजन समझकर हम संक्षेपसे उसका विचार करतेहैं । ×

इस बातसे पहिले ही जालिमसिंहको कोटेकी सूवेदारी मिल चुकी थी । इस प्रकारके ऊँचे पदपर दृढभावसे स्थित रहके चारों ओरके वैरियोंको दबाकर रखना, यद्यपि साधारण कार्य नहीं है, तथापि जालिमसिंह इसको तुच्छ ही समझता था । उसके हृदयमें जो एक ऊँची अभिलाषा धीरे २ गुप्तभावसे फैलती जाती थी उसके संतोषको कोटेकी सूवेदारी अत्यन्त ही साधारण थी । उस सीमा बद्ध अल्प राजनैतिक क्षेत्रमें विचरण करनेसे वह ऊँची अभिलाषा किसीप्रकारसे भी पूर्ण नहीं होगी । वह ऊँची अभिलाषा यह थी कि मेवाडराज्यकी गद्दी मिलजाय । राजनैतिक होनेके अतिरिक्त जालिमसिंह मनुष्यके हृदयस्थ विचारोंको भी भलीभाँतिसे जान लेता था । इस अपूर्व पारदर्शिताके बलसे वह भलीभाँति समझ गया था कि नाचीज राणा मेरी अभीष्टसिद्धिके विषयमें कुछ भी रोक टोक नहीं करसकताहै अतएव मेवाडके साथ हाडावर्तोंका राजस्व इकट्ठा करके समस्त राजस्थान पर शासन करलेना फिर क्या कोई बड़ी बात है ? जालिमसिंहको निश्चय था कि जयपुर और मारवाडके राजा यदि मिल भी जाय तो भी वह मुझको पराजित नहीं करसकते । जयपुरके राजाको जालिमसिंह डरपोक तथा खीके नामसे पुकारता और घृणा करता था । इसमें कारण यह था कि उसने केवल कोटेकी सेनाकी सहायतासे ही कुशावह राजाकी विशाल सेनाको युद्धमें पराजित कियाथा । इस ओर मारवाडके श्रेष्ठ सामन्तगण उसके अनुरागी होगये । इससे जालिमसिंहने समझ लिया कि मेरे विरुद्ध वह लोग कदापि अस्त्र धारण नहीं करेंगे । राजनीति विशारद, मनतत्त्ववेत्ता जालिमसिंहकी आशा और अभिलाषा महान थी, आशापूर्णा भगवती की सिद्धिदायक वरदा मूर्ति उसके सामने खड़ी होगई; केवल सौभाग्यरूपी लक्ष्मीका प्रसाद न पानेसे ही उसको अमूल्य वर न मिलसका; उसके साथ ही भारतका भागचक्र भी दूसरी ओरको घूमने लगा । भारतके भाग्यगगनमें फिर एकवार स्वाधीनता-

× राणा भीमसिंह और जालिमसिंह आदिकोंने जो यह कार्य किया था । इसका वृत्तान्त टाड-साह्यको इन्हींलोगोंसे मिला था ।

किया, इस कारण वह लूटनेकी आशा छोड़ शिरपर कलङ्क लेकर भागा । फिर महमूद नादोल होकर नाहरवाला और सोमनाथको गया । नादोलेश्वरने बड़ी वीरतासे महमूदके साथ युद्ध किया । मैंने सौभाग्यसे इस नादोलेश्वर सुविख्यात लाक्षाके नामकी एक खुदीहुई लिपि पाई । उसमें लिखाहै कि लाक्षाही अजमेरसे आईहुई इस चौहान शाखाका आदि पुरुष है । सम्वत् १०३९ (सन् ९८३ ई०) में यह नादोल अजमेरको कर देता था । लाक्षाने जो दुर्ग बनायाहै वह नगर पश्चिमी शिखरके ढालू स्थानपर बना है । उसमें बहुत प्राचीन कालकी रुचिका परिचायक ऊँची चोटीवाला चौकोण दुर्ग बना है । पर्वत जिन विचित्र पत्थरोंसे आच्छादित है, दुर्ग भी उन्हीं पत्थरोंसे बना हुआ है । एक दूसरी खोदित लिपि मेरे हाथ लगी है, वह सम्वत् १०२६ (सन् ९६८ ई०) की है, उसमें लिखाहै कि लाक्षा भेवाडेश्वर राणा भीमसिंहके पूर्वपुरुष आइतपुरके शक्तिकुमारके समयमें थे । वह नगर भी महमूदके पिताने नष्ट किया ऐसा अनुमान है । चौहान कविने अपनी लेखनी द्वारा राओ लाक्षाके वीरत्व विक्रमकी बहुत प्रशंसा करते हुए इस स्थानपर लिखा है कि “ वह अनहलवाडाके शेष प्रवेश द्वारसे शूलकसंग्रह कर लेते थे, और चित्तौरके अधीश्वर उनको कर देते थे । महल मन्दिर और दुर्गादिके जितने ध्वंशावशिष्ट दिखाई देते हैं तुलिकाके सिवाय उन सबका वर्णन करना असम्भव है । इस स्थानके प्रत्येक पदार्थसे मालूम होता है कि एक समय जैनधर्मका इस स्थानपर बड़ा प्रभुत्व रहाथा । जैनियोंके धर्मकी समान शिल्पकार्य्य भी शैवोंसे बिल्कुल अन्य प्रकारके थे ।” जिनके चिह्न अब तक पाये जाते हैं । जैनियोंके चौबीस देवताओंमेंसे अन्तिम देव महावीरका मन्दिर अतिरमणीय शिल्पकार्य्यका आदर्श स्वरूप है । इस मन्दिरके गुम्बजकी आकृति प्राच्यजगत्के अतिप्राचीनकालके गठनकी समान है कदाचित् रूमियोंके मन्दिरनिर्माणके बहुत पहिले ऐसी गठन प्रणालीका आरंभ हुआ होगा । महावीरके मन्दिरके सामनेकी तोरण बड़ी विचित्र कारीगरीसे खोदी गई है, और वहां कई पाषाण प्रतिमाओंका भास्कर कार्य्य भी परम रमणीय है । यह सब प्रतिमायें डेढ़ सौ वर्ष पहिले नदीसे निकालकर यहां स्थापित कीगई हैं । जिस समय महमूद भारतवर्षपर अधिकार करनेके लिये आयाथा, उस समय उसके भयसे यह प्रतिमा नदीमें

१ फारिस्ता वा उनके अनुलिपिकार. लोगोंने भूलमें पड़कर नादोलके स्थानमें बाजोल लिखदियाहै ।

सेनाकी सर्दारीपर नियत था । इस ओर सेंधिया भी मारवाडके राजासे खंडनी लेनेके लिये उस ओरको गया था । जालिमसिंह और अम्बाजी इंगले यह दोनों ही सेनासहित चित्तौरकी ओरको बढ़ने लगे; उनकी दुर्द्धर्ष सेनाने बहुतसे हरेभरे खेतोंको कुचलकर नाश करादिया । अनेक रमणीक ग्राम और मौजे अत्यन्त ही सताये गये । विशेष करके जो ग्राम या नगर जालिमसिंहकी क्रोधाग्निमें पतित हुए उनकी तो अत्यन्त ही दुर्दशा हुई । जालिमसिंह इच्छानुसार वहाँके हाकिम और ग्रामीणोंसे कर लेने लगा । धीरजसिंह नामक एक मनुष्य चन्दावत सर्दार भीमसिंहका प्रधान परामर्शदाता था । जिस समय यह झगडा होरहा था उस समय बुद्धिमान् धीरजसिंह हमीरगढका हाकिम था । विद्रोहियोंमें मिलाहुआ जानकर जालिमसिंहने उसके हमीरगढको घेरा । छःसप्ताहतक दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ । किसी ओरकी जय पराजयका कोई लक्षण दिखाई न दिया । इसके पीछे विधाताकी कठोर लिपिके अनुसार धीरजसिंहका भाग्य विगडा।हमीरगढके समस्त कुँए जालिमसिंहकी तोपोंकी रगडसे टूट फूट गये, जलके सोते बंद हुए, तब विवश होकर नगरवासियोंने किलेका द्वार खोलदिया ! जालिमसिंहने, हमीरगढको धीरजसिंहसे लेलिया । इस प्रकार और भी दो एक किलोंपर अधिकार करके राजकीय सेना क्रमानुसार चित्तौरकी ओरको बढ़ी । मार्गमें बसी नामक और एक स्थानमें उनकी प्रचंड गति कुछ विलम्बके लिये रुक गई । बसी चन्दावतोंकी भूमिवृत्ति थी । परन्तु इसपर भी जालिमसिंहने अपना अधिकार स्थापित किया था, विजयके आनन्दसे मतवाला होकर चित्तौर पहुँचा चित्तौरके ऊँचे परकोटेके नीचे स्थित होनेके कुछ ही समय पीछे उसको सेंधिया और उसकी सेनाकी सहायता प्राप्त हुई ।

ऊंचापद पाते ही मनुष्य गर्व और अहंकारसे फूलकर कुप्पा होजाताहै । जिन राणाजीका दर्शन पानेसे स्वयं पेशवा अपनेको कृतार्थ समझता था, आज माधोजी सेंधियाने उनको ही चित्तौरके सामने देखना चाहा । सेंधियाकी इस अन्याय अभिलाषासे जालिमसिंहके हृदयमें चोट लगी, परन्तु चारा क्या था ? गर्वित माधोजीकी अभिलाषा पूर्ण करनेको उन्हें चित्तौर जाना पडा । भाग्यचक्रका लौट फेर ऐसा ही होताहै; गौरवगरिमाकी ऐसी ही अनित्यताहै कि जिन राणाजीके पूर्वपुरुषोंका दर्शन करनेके लिये भारतवर्षके अनेक भूपालगण भेंट लियेहुए शिशादीय राजसभामें आते थे । आज उन्हीं राणाजीको एक महाराष्ट्रीसे साक्षात् करनेके लिये राजसिंहासन छोड राजमार्गमें आनापडा ! राजधानीसे

योंके नामोंकी सूची और विक्रम तथा महावीरका प्रादुर्भाव समयके जैनधर्मावलम्बी नरपतियोंमें सबसे श्रेष्ठ श्रीनीक और सम्प्रीतिके वंशधर लोगोंका इतिहासमूलक भी एक ग्रन्थ पायाहै । महसूद, तुलवन, हत्याकारी नामसे परिचित अल्ला और भारतविजेता नादिरशाहकी नामाङ्कित मुद्रा मैंने इस स्थानमें संग्रह कीं । किन्तु मेरे दूत लोग नादोलसे चौहानोंकी नामाङ्कित जो एक विचित्र सांकेतिक छोटी मुद्रा लायेथे, उन सबके साथ तुलना करनेसे यह सामान्य मूल्यकी जँचतीहै । * एक मुद्रामें एक तरफ एक घुडसवारकी मूर्ति और कई सांकेतिक चिह्न अङ्कित हैं । कईमें बैलकी मूर्ति खुदीहै; जैसे फ्रांसके एक समयकी मुद्राके एक तरफ चौदह लुईसकी मूर्ति और दूसरी ओर साधारण तंत्र सभाका निदर्शन रहता था, इस प्रकार कई मुद्राके एक तरफ आदि

—उन्होंने अपने अनुचरोंद्वारा सामन्तलोगोंके पास यह आज्ञा भेजी कि “आप लोग परस्पर एक-दूसरेको सुख वितरण करतेहुए धर्मके मार्गपर चलें ।”

सम्बत् १२१८ श्रावणमासकी शुक्ल चतुर्दशी तिथिमें २९ वीं तारीखको होमकार्य समाप्त हुआ और विपत् निवारणके उद्देशसे जलदानपूर्वक सर्वज्ञ तथा चराचर जगत्के प्रभु सदाशिवकी मूर्तिको पञ्चामृतसे स्नान कराया, और अपने ज्ञानगुरु, शिक्षादाता और ब्राह्मणोंको उनकी इच्छानुसार सुवर्ण, अन्न और वस्त्र दिये । उँगलियोंमें कुशकी पवित्री धारणकर तिल, चावल और जल लेकर महावीरके मन्दिरमें व्यवहारके निमित्त कुंकुम, चन्दन और धी नगरके बाजारसे खरीदनेके लिये पाँच मुद्रा मासिकका संकल्प छोड़ा, और यह भी कहा कि यह धन सुन्दर गाछा (ग) लोगोंकी वंशपरम्पराको बराबर मिलतारहेगा । यही वह वृत्तिनिर्द्धारणपत्र है । जब तक सुन्दर गाछालोगोंके वंशका कोई और हमारे वंशका कोई जीवित रहेगा, तबतक मैंने यह वृत्ति निर्द्धारण करदीहै ।

इसका जो कोई स्वामी होगा मैं उसका हाथ पकड़कर कहताहूँ कि यह वृत्ति वंशपरम्परा तक चलीजावे । जो इस वृत्तिको दान करेगा वह साठ सहस्र वर्ष तक स्वर्गमें वसेगा, जो इस वृत्तिको तोड़ेगा वह साठ सहस्र वर्ष नरकमें रहेगा ।

प्राग्वंशीय (घ) धरणीधरके पुत्र करमचन्द मेरे मंत्री, और शाल्मी मनोरथराम, इनके विशाल और श्रीधर दो पुत्र, इतने लोगोंने इस अनुशासनलिपिको खोदित करके मेरा नाम उज्ज्वल करदियाहै । श्रीआलनने अपने हाथसे यह पत्र प्रदानकिया । सम्बत् १२१८ ।

* रायल एशियाटिक सोसाइटीके मासिकपत्रमें कर्नल टाड साहब भारतमें प्राप्त प्राचीन मुद्रा-वलीके विषयमें जो प्रस्ताव प्रकाश करगयेहैं, पाठकगण उसके पढ़नेसे इस विषयमें विशेष विवरण प्राप्त करसकेंगे ।

(ग) जैनियोंकी ८४ शाखाओंमेंसे यह एक शाखाहै ।

(घ) जैनधर्मावलम्बी ओसवाल लोगोंकी एक शाखाहै ।

शालुम्ब्रासर्दार भीमसिंहने अम्बाजीके साथ कपटका दाव रचकर निश्चय किया कि “ यदि जालिमसिंह इस कार्यसे विदा होजाय तो मैं बीस लाख रुपया देकर राणाजीकी अधीनता स्वीकार करूँ । ” चन्दावत सर्दारकी इस कहनको सुनने ही स्वीकारकिया । इस प्रस्तावको सुनकर सबको ही यह विश्वास हुआ होगा कि जालिमसिंहसे शत्रुता होनेके कारण ही सरदारने इस प्रस्तावको पेशकिया । परन्तु यथार्थमें यह बात नहीं थी । कपटी अम्बाजीने चन्दावत सरदारसे यह बात कहलाई थी । होनहारका प्रताप भी कैसा फेरफार करदेताहै ? उसही समय सेंधियाको भी पूनामें लौटजानेकी अत्यन्त शीघ्रता थी । केवल विद्रोहियोंकी मीमांसा न होनेसे वह अवतक नहीं लौटसका था । इस समय चन्दावत सरदारका प्रस्ताव सुनकर उसको अभीष्ट सिद्ध करनेका अवसर मिला और तत्काल उसमें सन्मति दी ।

जालिमसिंह स्वभावसे ही अम्बाजीको अपना मित्र समझता था । उज्जैनके युद्धमें महाराष्ट्र वीर ज्यम्बकजीने प्राण और स्वाधीनता देकर जो महोपकार किया था, यद्यपि उसका बदला जालिमसिंहने अभी नहीं दिया था, तथापि इस उपकारको वह सदा ही अपने हृदयमें स्मरण किया करता था । उस ही उपकारके कारण सदासे अम्बाजीको भ्राता मानता आया । जहांपर दोनोंके स्वार्थकी टक्कर नहीं लड़ी, वहांपर ही उनकी मित्रता अटलभावसे रही । परन्तु आज दोनोंमें अत्यन्त ही मनचली हुई । यह झगडा शीघ्रही निवारण होनेवाला नहीं है । इससे जिस महाअग्निकी उत्पत्ति होगी, उसके द्वारा एक ओर तो अवश्य ही भस्म होगी । अस्तु ! जिस समय राणाके साथ जालिमसिंह चित्तौरके निकट पहुंचा तो अम्बाजीने बनावटी दुःखसे कहा । “ विद्रोही भीमसिंह शरणमें आना चाहताहै, परन्तु उसका कहन यह है कि “ जालिमसिंहके यहां रहतेहुए मैं किसी प्रकार राणाकी शरणमें न आऊंगा, अतएव इस विषयमें जो कुछ उचित हो सो कीजिये । ” पीछे इस प्रस्तावमें असम्मत होनेसे शायद किसीके मनमें किसी भांतिका कोई सन्देह हो, इसही कारणसे जालिमसिंहने सबसे पहिले उत्तर दिया; “ यदि यही उसकी आपत्ति है, यदि मुझे ही वह प्रतिबन्धक समझताहै, तो मैं हर्ष सहित अभी इस स्थानसे विदा होताहूँ; विशेष करके मेरे यहां रहनेसे स्वर्च भी अधिक होजानेकी संभावना है; यदि राणाजीकी इच्छा हो तो एक बार मैं अपने कोटा नगरको ही चलाजाऊँ । ” आज चतुर जालिमसिंह महाराष्ट्रीय वीरके जालमें फँसगया । उसने समझाथा कि मेरा अभिप्राय किसीने नहीं जाना, परन्तु

बड़े २ पवित्र बडआदि वृक्षोंके बड़ले छोटे २ वृक्ष लगेहुए हैं । इस दृश्यको देख कर मुझे एक कविकी उक्ति याद आगई; राणाके दूत कृष्णदासको वह कविता कई बार पढ़कर सुनाई । उसने उस कविताके लक्ष्यकरतेहुए कहा कि, प्रकृतिने स्वयं ही हम लोगोंकी राज्यसीमा निर्धारित कर दी है । कविता यह है:-

“ आखार्रा झोंपडा,
फोगार्री बाड,
बाजरारी रोटी,
मोठार्री दाल ”

देखीहो राजा तेरी मारवाड । ”*

सब ग्राम विचित्रप्रणालीसे बनेहुए हैं; प्रत्येक मोहलेके चारोंओर काँटोंकी बाढहै, और बीच २ में वह काँटोंकी बाढ भूसीसे ढकीहुई होनेके कारण देखनेमें दुर्गके परकोटेके समान है. जिस समय खेत अन्नसे भरजातेहैं अथवा वर्षाकालमें गो आदिके लिये आहार नहीं मिलता उस समय यह भूसी ही उनके खानेके काममें आतीहै । इस भूसीको तेरह वा बीस हाथ ऊंची रखकर मट्टी और गोबरसे लहेसदेतेहैं, बीच २ में पक्षियोंसे बचानेके लिये काँटे लगा देतेहैं । इस तरह बीच २ में गोबर लीपदेनेसे दश वर्ष तक रहतीहै, और देशमें जब गौआदिका आहार बिलकुल दुष्प्राप्य होजाताहै, तब इसीसे ही सब पशु प्राणधारण करतेहैं । मरुक्षेत्रमें क्रमसे एक ही प्रकारका दृश्य देखनेके कारण चित्त अप्रसन्न होजाताहै, किन्तु लूनीनदीके पार होते ही विचित्र परकोटेके देखनेसे चित्त अवश्य ही प्रसन्न होजाताहै ।

३० वीं अक्टूबर-साढे दश कोश मार्गचलनेके पीछे हम लोग राजवाडेके वाणिज्य प्रधान नगर पालीमें पहुँचे। इस प्रदेशके दिखाई देते हुए निदर्शनके साथ साथ अत्याचार उत्पीड़नके चिह्न भी इस नगरमें दिखाई दिये । जिस समय इस राज्यमें परस्पर भयंकर युद्ध हुआ, उस समय दोनों पक्षोंने पालीको अधिकारमें लाना आवश्यक समझा । अधिवासियोंने नगरके भीतर युद्धके कोलाहल सुननेकी अनिच्छासे एक बड़ा परकोटा बना लिया। उक्त उद्देशके वशीभूत होकर पासके वाणिज्यप्रधान देश भीलवाडेको भी इसी परकोटेसे वेष्टित करनेका प्रस्ताव करनेपर आपत्ति उठाई गई थी। पालीके उस पुराने परकोटेका कुछ हिस्सा अवतक

* इस कविताका अर्थ आकोंका झोंपडा (घर) फोगों (टीलोंमें होनेवालाबाड) की बाढ, बाजरेकी रोटी और मोटकीदाल मारवाडका परिचायक है ।

सकी । उसने समझा कि अंवाजी कभी सेंधियाकी बातको न मानेगा; यदि वह मान भी लेगा तो राणाजी प्रतिवाद करेंगे, क्योंकि वह मेरे विक्रमको भलीभांतिसे जानते हैं । सेंधियाके ऊपर आशा रखनेका एक विशेष कारण था । सेंधियाने गुप्तभावसे जालिमसिंहसे प्रतिज्ञा कीथी कि “मेवाडका पुनरुद्धार करनेके लिये मैं तुम्हें बहुत सी सेना दूंगा।” इसके सिवाय एक भारी कारण यह भी हुआ कि जालिमसिंहने मनमें समझा था कि यदि मैं सहायता नहीं करूंगा तो सेंधिया कभी भी राणाजीसे अपनी खंडनीको नहीं वसूल करसकेगा । * बुद्धिमान अम्बाजीने इस बातको समझकर पहिले ही सब प्रबन्ध करलियाथा । सेंधियाने जब उस अपनी वदनीके रुपयेको मांगा तब वह स्वयं उसके देनेको राजी होगया × सेंधियाने भी अम्बाजीकी बातको मानलिया । अम्बाजीने वह समस्त रुपया देदिया, रुपयेको पाते ही सेंधियाने पूनाकी यात्रा की । उसही दिन राणा और जालिमसिंहके साथ उसका संबन्ध अलग होगया । जानेके समय सेंधियाने अंवाजीको अपना प्रतिनिधि बनाया और इस बातके प्रबंधकरनेके लिये कि वह समस्त रुपया अंवाजीको वसूल होगया एक बड़ी सेना भी वहां स्थापित करता गया । सेंधियासे अपना कार्य निकालकर चतुर अंवाजी राणाके मन्त्री शिवदास और सतीदासके पास गया और उनका अभीष्ट साधन करने और राणाजीका प्रताप अंचल रखनेकी प्रतिज्ञा करके सब भांति सफलकार्य हुआ । कुछ थोड़ेसे घंटोंमें ही यह समस्त कार्य सिद्ध करके धूर्त अम्बाजी जालिमसिंहके पास पहुंचा और हृदयके आनन्दको छिपाता हुआ धीरभावसे बोला— “आपकी वासना पूर्ण करनेके लिये सबने सम्प्रति देदी।” अंवाजीने इस कार्यको इतनी उत्तमतासे पूर्ण किया था कि जैसे ही जालिमसिंहसे वह यह वचन कह रहा था कि वैसे ही राणाके प्रतिहारीने आकर नम्रतासे निवेदन किया । “आपकी रुखसतकी नज़र तैयार है ।” जालिमसिंहकी सम्प्रति आशा टूट गई, परन्तु वह किंचित् भी कातर न होकर शीघ्रता पूर्वक चित्तौरसे चले गये । इसके पश्चात् शालुम्ब्रासर्दारने चित्तौरके दुर्गसे बाहर आकर राणाजीके चरणोंको छूआ और क्षमाप्रार्थना की । अंवाजीकी आशा पूर्ण हुई और वह मेवाडका सर्वमय कर्त्ता होकर सुखसे अपना काल व्यतीत करने लगा ।

* चन्दावतोंको चित्तौरसे दूर करनेकी एवजमें राणाने सेंधियाको २० लाख रुपया देना स्वीकार किया था । यहांपर उस ही खंडनीका वर्णन है ।

× दक्षिणापथमें अम्बाजीकी जो सम्पत्ति थी, उसहीके ऊपर इसने हुंडी करके अपने नायवके पास भेज दी । उस ही सम्पत्तिसे सेंधियाको सम्पूर्ण रुपया दियागया ।

गन्धक, पारा, मसाला, चन्दनकी लकड़ी, कपूर, चाय, औषधी बनाने योग्य मोम * और हरे रंगका काच आता है। भावलपुरसे सजीमिटी, आल और मजीठ नामक रंग, वन्दूक, पके फल, हींग, मुलतानी छींट, और संदूक तथा पलंगआदिके लिये लकड़ी आती है। कोटा और मालवेसे अफीम और छींट आती है। भोजसे तलवार और घोड़े भेजेजाते हैं।

इस स्थानसे लवण और पश्म भेजा जाता है। पालीनगरका जो एक प्रकारका कागज और सूतका मोटा कपडा प्रसिद्ध है, सौदागर लोग इन वस्तुओंको भी बहुतायतसे दूसरे नगरोंको लेजाते हैं। भारतवर्षके सब स्थानोंके निवासी यहांकी लोई ओढते हैं और उसका मूल्य ८] जोड़ेसे ६०] साठ रुपये तक है। ओढनी और पगडी भी उसी सामग्रीसे तैयार होती हैं, किन्तु वह दूसरे देशोंमें विक्रयार्थ नहीं भेजीजातीं। खाना होनेवाली वस्तुओंमेंसे लवण ही सबसे प्रधान है, इस लवणवाणिज्यसे जो शुल्क एकत्रित होता है वह देशके भूराजस्वके आधे अंशकी वरावर है। लवणके चौबच्चोंमें पञ्चभद्रा, फिलोदी और दिदोवाना प्रधान हैं। पञ्चभद्राका परिमाण कई कोस तक है।

पालीमें प्रतिवर्ष वाणिज्यशुल्कके ७२०००] रुपये आते हैं। मारवाडसे दरिद्र राज्यके लिये यह अवश्य ही अधिक धन माना जायगा।

चारण और भाट अर्थात् कवि और वंशका उच्चारण करनेवाले लोग ही इस प्रदेशमें वाणिज्य द्रव्य एक देशसे दूसरे देशमें भेजनेके समय रक्षक होकर जाते हैं। कवि और भाट लोग पूजनीय और मान्य गिनेजाते हैं; कट्टर लुटेरे सामन्त यहां तक कि जंगली कोल, भील और मरुक्षेत्रके सराई लोग तक इनके अभिशापसे बहुत डरते हैं; इस कारण कवि और भाट लोग बड़े २ भयंकर और संकटयुक्त मार्गसे निर्भयचित्तसे वाणिज्यद्रव्य सहजमें ही लेजाते हैं; कोई भी भयसे उनको नहीं छूटता। जितने पथिक समुद्रोप-कूलवर्ती प्रदेशोंमें जाना चाहते हैं, वह सब उन वाणिज्यद्रव्यके संरक्षक भाट

* इस स्थलपर कर्नेल टाड साहबने टीकामें लिखा है कि “जिस समय मैं सेंधियाकी राजधानीमें गया, उस समय साधारण लोगोंने मेरे पास सब प्रकारके रोगोंकी औषधि होनेका निश्चय किया था। एक सामन्तकी स्त्रीको कुछ मोमकी आवश्यकता हुई, उसने मेरे पास एक अनुचरको भेजदिया। यद्यपि मेरे पास मोम नहीं था, परन्तु अनुचरको किसी प्रकारसे भी इस बातका विश्वास न हुआ, जब उसने रीते हाथ लौटजानेकी अनिच्छा दिखाई तो मजबूर होकर मैंने हिन्दुस्तानी खड्कका एक टुकड़ा देदिया, वह मनुष्य उसीको मोम समझकर लेगया।”

सेनाका खर्च देकर भेंटमें और भी साठ लाख रुपये दिये जायगे । अपनृपति रत्नसिंह दो वर्षमें कमलमेरसे दूरकिया गया; विद्रोही रणावत सर्दारसे जिहाजपुर व दूसरे सर्दारोंसे राणाकी राजभूमिका पुनरुद्धार किया गया * इन कई एक कार्योंके सिद्ध होजानेसे यद्यपि मेवाडका बहुत उपकार हुआ, परन्तु दो एक महान कर्त्तव्य जो थे उनका प्रबन्ध अम्बाजीने क्या किया ? मेवाडराज्यके मुकुटस्वरूप गदवाड जनपदका पुनरुद्धार, वूंदी और मेवाडके बीचके झगडेको दवाना, और महाराष्ट्रीय लोगोंको छीनीडुई जागीरोंका उद्धार साधन करना । क्या अम्बाजीने इन तीन महानकार्योंका कुछ भी विचार किया था ? जिस प्रकार वह पहिले २ अनुरागके साथ मेवाडकी भलाइयें किया करता था, उनको देखकर सबने आशा कीथी । परन्तु प्रभुताका स्वाद चखते ही अम्बाजी घोर स्वार्थी होगया और तीन महान् कार्योंको विना साधनकिये ही “मेवाडका सूवेदार बनवैठा । क्रूर विषधर और कितने दिनतक परोपकार मंत्रसे दीक्षित रहैगा ? कुछ कालके बीतते ही स्वार्थपर महाराष्ट्रीयने अपनी मूर्ति धारण की और तत्काल उन लोगोंके साथ मिलगया कि जो उस कालमें क्रूरकर्म किया करते थे; परन्तु राजपूतलोग कृतज्ञताको भूलनेवाले नहीं होते । यद्यपि चतुर और स्वार्थसे अंधेदुए अम्बाजीने इकरार नामेके अनुसार कार्य नहीं किया । यद्यपि उसने मेवाडका बहुतसा धन पचालिया था, तथापि जो साधारण उपकार उसके द्वारा हुआ राजपूतगण उसको भूल नहीं सके । जबतक अम्बाजी मेवाडका उपकार करता रहा, उतने दिन तक मेवाडके रहनेवाले हृदयसे उसकी भक्ति करते थे । इस समयमें चन्दावतोंको राजसभामें उनके पूर्व अधिकार मिलगये थे, इस कारण राजमंत्री सतीदास और शिवदासकी शंकाकी सीमा न रही । भ्राता सोमाजीके शोचनीय वधकी बात याद करके वह प्रतिदिन भयके मारे कंपायमान भुआ करते थे । वह समझतेथे कि यह चन्दावतलोग हमारे विरुद्ध कोई कपट जाल रच रहेहैं, या हमको भी सोमाजीकी भांतिसे मारडालनेका उपाय कर रहेहैं । इन असार चिन्ताने उन्हे यहांतक व्याकुल किया कि अन्तमें दोनोंने अम्बाजीसे सेनाकी सहायता मांगी । और इसके लिये विशेष अनुरोध किया कि मेवाडमें एक गृहकारी सेना भी स्थित रहै । वह दोनों मंत्री इस बातको जानते थे कि विना अम्बाजीकी सहायताके

* सिन्धियोंसे रायपुर राजनगर; पुरावतोंसे गुरला और गादरमाला; सरदारसिंहसे हमीरगढ; और शालुम्रासर्दारसे कुरजकुवारियो;—राजभूमिके अन्तर्गत इन परगनोंका उद्धार हुआ था ।

वचे हुए बहुतसे छकडे अपने अधिकारमें करलिये और शत्रुके शिरपर लकड़ी मारकर घाव कर दिया । उन दोनोंका झगडा निबटाना असम्भव होगया । यहांपर यह रीति है कि जो सबसे अधिक कर देता है मुकदमेमें उसीकी जीत होती है, इस कारण पाइमा सरसरी विचारमें विजयी हुआ और प्रति वादी श्यामाको दूर कर दिया गया ।

हम ऊपर लिख चुके हैं कि राजपूतजातिमें भाट लोग अपने पवित्र चरित्रके कारण ही सौदागरी मालके संरक्षक होकर जाते हैं, किन्तु अत्याचारकरने और कर दान न करनेसे वह संरक्षक पदके अनधिकारी समझे जाते हैं । उक्त पाइमाके पूर्व पुरुषोंके साथ राणा अमरसिंहका एक विशेष स्मरणीय झगडा हुआ था । भाटलोगोंने बडे अन्यायके साथ अपने वाणिज्य शुल्कके कम कर देनेकी राणाके निकट प्रार्थना की, राणा अमरसिंहने उस प्रार्थनाको अस्वीकार कर दिया । संपूर्ण भाटलोग अपना काम सिद्ध करनेके लिये ब्रह्महत्याका भय दिखाया करते हैं, राणा अमरसिंहको भी उसी आत्मघातका भय दिखाने लगे । साहसी अमरसिंहने उनकी किसी बातपर भी ध्यान नहीं दिया । तब भाटलोगोंने अपने प्रचलित उपायका अवलम्बन किया अर्थात् प्रायः (८०) अस्सी स्त्री पुरुषोंने राणाके महलके सन्मुख आकर छूरीसे आत्मघात कर डाला; राणा महापातकके भागी हुए । भाटलोगोंका सपरिवार यह आत्मघात राणाके लिये जातिसे बाहर कर देनेका कारण हुआ, क्योंकि भविष्यद्वक्ता भाटलोगोंके प्राणनाशका कारण बननेपर राजपूतलोग इस लोक और परलोक दोनोंमें नरक भोगते हैं । जो एक बार स्वामी इस भाटजातिकी प्रार्थना पूरी कर दें तो यह लोग अन्यायसे बारम्बार प्रार्थना पूरी करानेपर भी शान्त नहीं होते । अमरसिंहने शेष जीवित वचेहुए भाटोंको अपने राज्यसे निकाल दिया और भूमानिया प्रदेश अपने अधिकारमें कर लिया ।

राणा अमरसिंहने इन भूमानिया भाटोंको अपने राज्यसे निकालकर मेवाड-राज्यमें घुसनेका निषेध करदिया, इस आज्ञाका अवतक पालन होता था । अन्तमें जिस समय राणा भीमसिंहके घोषणापत्रद्वारा मेवाडकी भागी और निकालीहुई प्रजाको फिर वास करनेकी आज्ञा मिली, उस समय उक्त पाइमालोग भी ^{या}ने कुटुम्बसहित मेवाडमें फिर आ बसे । जिस कारणसे पाइमाके पूर्व पुरु ^जमेवाडसे निकाले गयेथे, उस कारण सम्बन्धी प्रवादका सर्व साधारणमें प्रचार है—यद्यपि यह बात पाइमाके हृदयपर भी विशेषरूपसे अङ्कित है, तथापि

करनेलगे । इन तीनोंने अपनी थोड़ेकालकी स्थिर रहनेवाली प्रभुताईसे ऐसे कठोर कार्य किये कि मेवाडका रक्त चूसलिया । विवश होकर अम्बाजीने गणेशपंतको पंदच्युत किया, और उस पदपर प्रसिद्ध रायचंदको स्थित किया । रायचंद अम्बाजीका प्रतिनिधि हुआ तो, परन्तु किसीने उसकी आज्ञाको मान नहीं दिया, न किसीने उसको प्रतिनिधि समझा । इसही कारणसे फिर राज्यमें लडाई झगडे उत्पन्न होकर अराजकता फैलगई । फिर नगर वासियोंके धन मान पर आन बनी । प्रत्येक दलके मनुष्य अपना २ अभिप्राय पूर्ण करनेके लिये राज्यमें उपद्रव करके घोर अत्याचार करने लगे । अत्याचार, कष्ट और लोभने मेवाडभूमिको शमशानभूमिकी समान डरावना बनादिया । इस अवसरको मनमाना समझकर मरहटे, रुहेले और फिरंगीलोग विना रोक टोकके आयकर अभागे राजपूतोंकी समस्त संपत्ति लूटकर और भी भय उपजाने लगे । इसही अवसरमें चंदावतलोगोंने अपने गोत्रपति वीरवर चंडके मंत्रका निरादर करके दुष्ट सिन्धियोंसे भेल किया और उनकी सहायतासे लूट खसोट करने लगे । इन लोगोंके अत्याचारका निवारण करना कठिन विचारकर राणाजीने आज्ञा देदी कि चन्दावतोंकी जागीरें छीन ली जाय । इस आज्ञाको पाते ही राजकीय सेनाने कोरावडको अपने अपने अधिकारमें करदिया और शालुम्ब्रा कोट पर भी जाकर तोपें लगा दीं । सिन्धीलोग यह देखकर शालुम्ब्राको छोड़ देवगढको भागे । तब तो चन्दावत लोगोंपर बड़ी विपत्ति आई । विपत्तिसे छुटकारा पानेका कोई उपाय न देखकर उनके मुख्य अध्यक्ष अजितसिंहने अम्बाजीके पास एक दूत भेजा, और कहदिया कि हमें सहायता मिली तो हम दश लाख रुपये देंगे । लोभी मरहटा इस लोभको सँभाल न सका और ललचाया । दश-लाख रुपयेके लिये उसने अपने प्रतिनिधि रायचंदको मेवाड छोड़कर जानेकी आज्ञा दी, तथा शिवदास और सतीदासका मंत्रीपद छीनलेकर चंदावतोंकी अनुकूलता करनेको तैयार हुआ * शालुम्ब्रा सदाँरको राजसभामें फिर वही पहिली प्रतिष्ठा मिली और अग्रजी-मेहताको दीवान बनाया तथा विरोधी शक्ता-

—था । जब मैं उदयपुरमें आया तो यह भी राणाजीका एक मंत्री था । यह श्रीजी अत्यन्त कुचक्री होनेपर भी महा उत्साही और सदाशय था । यह विश्वचिकित्सा रोगसे मृत्युको प्राप्त हुआ था ।

* यह घटना संवत् १८५३ (सन् १७९७ ई०) में हुई थी ।

× टाडसाहब जब उदयपुरमें पहुँचे, उस समय अग्रजीमेहता राणाजीका दीवान था । टाडसाहब कहतेहैं कि “अग्रजी किसीप्रकारसे भी दीवानीके लायक नहीं था।” जिससमय राजनीति जाननेवाले धर्मपरायण पंचौलगण मेवाडकी दीवानीसे अलग हुएहैं, उसही समय मेवाडकी प्रतिष्ठापर घोर आघात—

तकी किस प्रणालीसे अभ्यर्थना करनी उचित है, इस बातको वे लोग भलीभाँति स्थिरकर सकते हैं, और राजप्रतिनिधिके पाससे आये हुये दूतकी किस प्रकारसे अभ्यर्थना करनी चाहिये, यह भी जानते हैं । किन्तु वर्तमान प्रश्न विलकुल विभिन्न है; सम्पूर्ण भारतवर्षके शासनकर्त्ता अंग्रेज केवल वणिक संप्रदायके कर्मचारी रूपसे गिने जाते हैं, और उनके हाथमें चाहे कितना ही शक्ति और प्रभुत्व सोंपा जाय, किन्तु वे कभी राजाके वा उसके निम्नपदस्थ व्यक्तिके समक्ष नहीं हो सकते । इस कारण राजनैतिक दूतोंको इस प्रकारकी अभ्यर्थनामें बहुत सी कठिनाइयें उपस्थित होती हैं । शेष शतलजसे समुद्रतक हम लोगोंका शासन विस्तृत हो जानेसे ईष्टइण्डिया कम्पनीके दूतोंकी अभ्यर्थना सम्बन्धी गड़बड़ दूर होगई है । एक दूसरे कारणसे भी इस अभ्यर्थना सम्बन्धी गड़बड़के भिटानेमें सहायता मिली है । सेंधिया और हुल्करके दुर्दान्त अत्याचारी सेनानायकोंने उक्त राज्योंके आक्रमणकालमें राजालोगोंके पदमर्यादा और सन्मानको छोटा कर दिया था । अमीरखाँ, जैनवपट्टी और वापूसेंधियाकी समान जितने लोग इससे पहिले ऊँचे आसन पाकर अपनेको महा सन्मानित समझते थे, वही इस समय अन्य राजालोगोंकी समान सन्मान पानेकी इच्छा करते हैं । और कान्यकुब्ज सम्राट्के उत्तराधिकारी वा रामचन्द्रके वंशधरको किसने किस प्रकारसे क्षतिग्रस्त, परास्त और निगृहीत किया है, उसका उल्लेख करके आत्मश्लाघा करनेमें तत्पर हैं । बाहरी सन्मान और आडम्बरसे ही संसार प्रवश्रित होता आया है । इस कारण महाराष्ट्र डाकूदलके नेताको जैसा सन्मान दिखाया गया, उससे हीन सन्मानके साथ अभ्यर्थनामें सम्मति ज्ञापन असंभव होगया । अमीरखाँकी अभ्यर्थनाके लिये राजाने अपने प्रतिनिधिको कितनी दूर आगे जाकर अभ्यर्थना करनेकी आज्ञा दी थी ? वह भेजा हुआ प्रतिनिधि किस श्रेणीका सामन्त था ? और सूर्यवंशावसंत राजाने कितनी दूरतक आगे जाकर सामयिक प्रभुको स्वयं ग्रहण किया था ? मैंने यह सब प्रश्न अपने पास बहुत कालसे रहनेवाले वकीलसे किये, उक्त वकील इन सब प्रश्नोंकी भीमांसाके लिये राजदरबारमें भेजा गया, इस अवसरमें मैंने राजधानीसे ढाई कोशकी दूरीपर झालामाँदमें कैम्पडाला । यद्यपि मैं स्वयं इस प्रकारके बाहरी सन्मानसे बहुत ही घृणा करता हूँ, तथापि ईष्टइण्डिया कम्पनीके प्रतिनिधि पदपर स्थित होनेके कारण उक्त कम्पनीके उपयुक्त सन्मान प्राप्तिके लिये यथोचित उपायावलम्बन करनेमें बाध्य हुआ, इस विषयमें अपनी इच्छानुसार किसी कामके करनेकी

एक समय जिस महाराष्ट्री वीरके भुजवलसे राजस्थानकी समस्त भूमि काप गई थी, जिसकी लोभरूपी अग्निमें मेवाडभूमि भस्म होगई थी आज वही माधोजी सेंधिया इस असार संसारको छोड़ परलोकवासी हुआ । जो दुराकांक्षा

—दुराकांक्षाके पापमंत्रसे उत्साहित होकर अपने कुटुम्बियोंको बड़े कष्टमें डाला। इससे शत्रुता सन्देश, धोखेवाजी, विश्वासघातकता, इत्यादि, दुराचार चारों ओर फैल गए । जिस समय अमरचंदके तेजस्वी आचरणने पंचौलियोंमें परस्पर झगडा फैलाया, और देप्रालोगोंपर अमरचंदका वैर जब प्रबल हो उठा, तब मेवाडको चारों ओरसे विपत्तियोंने आ घेरा । इन उपद्रवोंको देखकर भी किसीके ज्ञान-नेत्र नहीं खुले; किसीने भी इन उपद्रवोंके शान्त करनेका विचार नहीं किया । लडाईं झगडेने ही पूर्वोक्त रोगको पिछली हदतक पहुंचा दिया। हीथाके अधिकारकी वायतमें फिर खुमानसिंह और शक्तावतोंमें जो झगडा पैदा हुआ, उसहीने इस रोगकी पीडाको बढ़ाया। महाराज नाथजीका भयानक वध और उससे देवगढके राजा जसवन्तसिंहका वैरभाव व एकांतवास, अपनृपति रत्नसिंहका खडा होना (क) माधवसिंहको अम्बेरके सिंहासनपर स्थापित करनेके समय जो उपद्रव हुआ था, यहांपर उसको ही लक्ष किया गया है ।

झाला रघुदेवका कठोर उद्यम और अमरचंदके द्वारा सिन्धीसेनाके पालन होने, इत्यादि अनर्थोंने पूर्वोक्त रोगको अधिकाईसे बढ़ाकर मेवाडको भयंकर विपत्तिमें डाला । इसके ऊपर राणाने भोग विलासमें मग्न होकर जो राजकार्यका देखना छोड़ दिया इसने और राणा अरिसिंहके भाईभाइयोंके कपट जालमें । मिलकर राज्यमें अनर्थका ऐसा बीज बोया कि फिर उत्त संकटसे मेवाडको कोई भी न छुड़ा सका । संवत् १८२९ में बूंदीके राजाकी विश्वासघातकतासे राणाके मारे जानेपर राज्यमें सबही कोई अपनेको बड़ा समझने लगे । बालक हमीरको किसीने कुछ न समझा । दुष्टोंके अत्याचारसे राज्यमें राजश्रीकी परछाई तक भी न रही । इस समय आप (राणा भीमसिंहसे), शालुमन्त्रासर्दार भीमसिंह और उसके भाई अर्जुनकी परामर्शसे विदेशीय सेनाको वेतन देकर रख रहे हैं; क्या इसके द्वारा आप समस्त प्राचीन भ्रम और अनर्थोंको दृढ़ नहीं करते हैं ? स्वयं आप, और श्रीवाईजीराज (राजमाता) विदेशी और दक्षिणियोंका विश्वास करके राज्यके पहिले रोगको संक्रामक किये डालते हैं; इसके अतिरिक्त राज्यकार्यमें श्रीमान्का मन नहीं लगता है । इस समय क्या किया जासकता है ? अब भी औपधि पानेका उपाय है । आइये! हम लोग एक प्राण होकर मंत्रीके कर्त्तव्यकार्योंका उद्धार करनेकी चेष्टा करें; इस कार्यमें जीत होगी; यदि जीत न भी हुई तथापि यह बढता हुआ रोग रुक तो अवश्य ही जायगा। परन्तु अब भी यदि ध्यान न दिया जायगा, तो इस रोगका दूर करना मनुष्यकी सामर्थ्यसे बाहर समझिये, यह दक्षिणीलोग घावकी नाई हैं । आइये उनका हिसाब चुका दें, और सर्वप्रकार उनके संसर्गको छोड़नेका यत्न करें;—नहीं तो हम लोग सदाके लिये जननी जन्मभूमिसे हाथ धो बैठेंगे । इस समय राज्यमें सबकी सन्धि वन्धनादिका आडम्बर हो रहा है । मैंने सबही बातोंको देखा है। यदि इसमें कुछ अयोग्य बात हुई हो तो क्षमा कीजिये; आइये हम लोग हौनहारकी प्रतीक्षा करें । सर्दार, सामन्त, मंत्री, सभासद सबही एक प्राण हो जायें । राज्यका मंगल होगा, और इस विषयके साथ सबही मंगल होगा । परन्तु विचारकर देखिये कि यह प्रयोग साधारण नहीं है, यदि यह दूर न होगा, तो हम सबकी दुर्दशा होजायगी । ”

पुत्र और उत्तराधिकारी सवाईसिंह भी राजा भीमसिंहके ऊपर पिताका समान व्यवहार करनेसे शान्त न हुए और सन् १८०६ ईसवीमें उन्होंने युद्धाग्नि प्रज्वलित करके धौकुलसिंहको मारवाड़के सिंहासनपर अभिषिक्त करनेका यत्न किया था। नागोरनामक स्थानमें अमीरखाँने कम्पावत लोगोंके नेता सवाईसिंह और उनके अनुचरोंको विश्वासघात करके मारडाला, राजा मानसिंहने कुग्रहके हाथसे अपने वंशका उद्धार किया और सवाईसिंहके पुत्र वर्त्तमान सामन्तको अपने राज्यके प्रधान कर्मचारी पदपर अभिषिक्त करके बड़ा सन्मान किया, यहां तक कि प्रसन्न करके अपनी मुठ्ठीमें कर लिया। चतुर सामन्तने समय पाकर अपना सहजमें ही उद्धार कर लिया, यदि सामन्त ऐसा न करते तो उनका जीवन और पोकर्ण प्रदेश दोनों नष्ट होजाते। मेरे साथ मुलाकातको आये हुए पोकर्ण अधिनायक वंशका यही संक्षिप्त इतिहास है। इनकी आयु लगभग पैंतीस वर्षकी है मूर्ति यद्यपि मनोहर नहीं है, तथापि वीरोचित और गंभीर है। शरीर लम्बा और बलवान है, गठनप्रणाली सुन्दर है किन्तु मारवाड़के अन्य सामन्तोंकी समान उजला रंग नहीं है।

पोकर्ण सामन्तके साथी और राजसभामें सहयोगी निमाजके सामन्त सुरतानसिंहकी आकृति, बनावट आदि सालिम विलकुल विपरीत था, सुरतानसिंह उदावत सम्प्रदायके नेता थे, यह आरावलीके सीमान्तस्थ स्थानके निवासी चार सहस्र वीरोंके एकात्रित करनेकी शक्ति रखतेथे। इनके अधिकृत प्रदेशोंमें निमाज, रायपुर और चन्दावत सबसे प्रधान थे; सुरतानसिंह राजपूत जातिके श्रेष्ठ आदर्शस्वरूप थे; इनका शरीर लम्बा और सुडौल था. रंग गोरा, मूर्ति वीरोचित और नम्रभावसूचक थी, यह बड़े बुद्धिमान और शिक्षित मनुष्य थे।

जिस विपदचक्रसे सुरतानके सहकारी सलीमने उद्धार पायाथा, वह किस लिये इस विपत्तिमें फसाये गये थे, उसका प्रत्येक कारण इस स्थानमें लिखना असंभव है। सालिमसिंहके साथ मित्रताही उनके इस दुर्भाग्यका मूल है, पुरवत्सारके उस घोरतर कलङ्कजनक युद्धमें पराजयके समय जब मारवाड़ेश्वरने अपने पेटमें छूरी झोंकना चाहा था, उस समय इन सामन्त सुरतानने ही उनको आत्मघात करनेसे रोका था; और जिस समय अनेक राज्योंकी सनाने

मोहसे अन्धे हुए मनुष्यके ज्ञाननेत्र नहीं खुलते ! यह सुनकर भी परहिंसा, परनिंदा, विद्वेष, विश्वासघातकता और कृतघ्नता करनेकी इच्छा करता है । मनुष्यका यह जीवन क्षणभंगुर है । समयरूपी समुद्रमें एक छोटे ववूलेकी समान है । सूर्यकी किरणोंमें क्षणभरतक वर्तमान रहकर फिर न जाने कहां को विलाय जाता है । यदि इस थोड़ेसे समयमें कोई अच्छा कार्य न सधसका तो फिर मनुष्यके जीवनकी सायकता ही क्या हुई ? यों पेट भरनेको तो पशु भी अपना पेट भरही लेता है; यहां प्रश्न यह है कि तो फिर मनुष्य और पशुमें अन्तर ही कौनसा रहा ? माधवजी सेंधिया अपने सौभाग्यसे अनन्तधाम विशाल-राज्य और प्रचंड सामर्थ्यका अधिकारी हुआ था; परन्तु जननी जन्म भूमिका उसने कौनसा उपकार किया ? यदि वह उस असीम धन और सामर्थ्यको भले-कार्यमें लगाता तो भारतकी दुःखरूपी रात्रि दूर होकर शीघ्रही आनन्दमय प्रभातका उदय होजाता । ऐसा होने पर आज इस महाराष्ट्री वीरका नाम भी स्वदेश-प्रेमी संन्यासियोंकी पवित्र नाममालाके साथ भारतवासियोंके लिये प्रातःसमयकी जपमालामें मिलजाता । परन्तु वह मोहान्ध था; इसही कारण वृथा गर्वमें मत्त होकर अपने गौरवके अनन्त मार्गमें कांटा बोया, अभागिनी जन्मभूमिको दुर्दशाके अंधियारे कुँएमें डुवाया । उसने लोभमें आकर जो अगणित भारत सन्तानका नाश किया था, उससे कौनसा फल हुआ ? परग २ पर भारत-भ्राताओंका घृणित पात्र होकर उसने जीवनको बिताया और अन्तमें पश्चात्ताप करके संसारसे विदा ली । अंतसमयमें उसके आत्मीय व कुटुंबवालोंके अतिरिक्त और किसीके नेत्रसे एक बूंद आँसू भी उसके लिये न निकला । बहुत समय हुआ कि वह दिन अनन्तकालके विराट् शरीरमें समागया, परन्तु आजतक भी भारतवासीगण उनके नामपर शतसहस्र धिक्कार दिया करते हैं । उसका अत्याचार सताना और प्रचंड लोभ इन सबका प्रमाण राजस्थान भूमिका दीनावस्थाको प्राप्त होनाही है । उस श्मशानभूमिकी अगणित चिताओंसे प्रकृति सती करुणाको ज्ञापन करती हुई उसके पैशाचिक कार्योंका वृत्तान्त संसारको सुना रही है ।

माधोजी सेंधियाकी मृत्युके पीछे उसका भतीजा दौलतराव बलपूर्वक सिंहासनपर बैठा । सेंधियाका पुत्र उससमय नावालिग था, इस लिये दौलतरावने सरलतासे ही चचाके सिंहासनको अपने अधिकारमें किया । सिंहासनपर बैठते ही दौलतरावने सेंधियाकी विधवा पत्नियोंके साथ घोर झगड़ा आरम्भ

“ प्रोकर्णके सामन्त इस सप्ताचारके पाते ही घोड़ेपर चढ़कर नगर छोड़नेको उद्यत हुए; किन्तु महाराज, कोचासुनके शिवनाथसिंहने भद्रार्जुनके सामन्त और दूसरे सामन्तोंको उनके पास भेजकर आश्वासित किया और रहनेकी आज्ञा कहलां भेजी किन्तु वह इस स्थानके छोड़नेके लिये बड़े उत्सुक हुए। मेरा भतीजा और पच्चीस अनुचर भी इस युद्धमें मारेगये। सब संसार उनकी प्रशंसा करताहै और हिन्दू तुरक दोनों जातियें ही यह कहतेहैं कि वह वीर गतिको पहुंचगये। शिवनाथसिंह, वखतावरसिंह; रूपसिंह, और अनारसिंहने उनकी दाहक्रिया समाप्त करी है। ” ×

अपनी सन्मानरक्षाके लिये राजपूत जाति इस प्रकारसे ही जीवन वलिदान करदेती है ! जबतक सुरतानके शरीरमें प्राण रहे तबतक उनके किसी अनुचरने आत्मसमर्पण नहीं किया, और जो लोग आगेथे उन्होंने केवल उदावत सम्प्रदायके बालक प्रभु-सुरतानके पुत्रकी रक्षाके लिये ही जीवन धारण कियाहै !

× यह शेषोक्त मनुष्य ही पत्रलेखक है, यह जैसा साहसी है वैसाही गुणीहै। अपने अधीश्वर मारवाडराजकी रक्षाके लिये अपनी संपूर्ण संपत्ति (यहांतक कि अपनी रूँके अलंकारतक बेच डाले, और अन्तमें अपने प्राणरक्षाके लिये छिपकर विदेशमें चलागया। ’ कर्नेल टाड लिखते हैं कि अंग्रेजी गवर्नमेंटके इन सब राज्योंपर उदासीनता प्रकाश करनेसे ही यह सब अनिष्ट हुए थे।

देनेका लोभ दिखाकर फिर उसको युद्ध करनेके लिये उभारा । उनके वचनोंपर भरोसा रखके अभागे नानाने अपनी तित्तर वित्तर हुई सेनाको फिर इकट्ठा किया और खड़की सहायतासे भाग्यरूपी नदीकी गतिको फिरानेके लिये और एक-वार संग्रामभूमिमें आया । चन्दावतोंके ऊपर भरोसा रखके वह युद्ध करनेके लिये तइयार हुआ था, परन्तु उसकी वह आशा पूर्ण न हुई । कूटनीतिवाले चन्दावतोंने किसी प्रकारकी सहायता उसको न दी । सहायता करना तो एक ओर रहा वे उसके प्रतिकूलमें कार्य करने लगे । दूसरी बार भी गणेशपंत हारकर हमीरगढ़को भाग गया । उस काल चन्दावतोंने उसके शत्रुओंसे मिलकर पंद्रह हजार सेनाको ले हमीरगढ़को घेरा । उस भयंकर विपत्तिसे अपनी रक्षा करनेके लिये तेजस्वी गणेशने अत्यन्त साहस और विक्रमके साथ क्रमानुसार नौ युद्ध किये । परन्तु उसका सारा परिश्रम बृथा गया । हमीरगढ़के राणा धीरजसिंहके दो पुत्र भी इन भयंकर संग्रामोंमें मारे गयेथे ।

अम्बाजीने इस महाविपत्तिसे शीघ्रही गणेशपंतको छुटाया । सूवेदारने उसको विपत्तिमें घिराहुआ जानकर गुलावराव कदम नामक एक सेनापतिके साथ थोड़ेसे सवार भेजे । उनलोगोंके द्वारा विपत्तिसे छूटकर गणेशपंत अजमेरकी ओरको गया । कुछ ही दूर गया होगा कि मूसामूसी नामक स्थानमें शत्रुओंने फिर उसको घेरलिया । दोनों दलोंमें घोर युद्ध होने लगा । चन्दावतलोग रणोन्मत्त होकर प्राणका दाव लगाय युद्ध करने लगे । उनके भयंकर भुज-बलके प्रभावसे गणेशकी सेना पीछेको पग धरने लगी । विजयलक्ष्मी सुवर्णका मुकुट लेकर चन्दावतोंके मस्तकपर पहिराना ही चाहती थी, कि इसही समयमें शत्रुओंकी ओरका एक सिपाही भागती हुई घोड़ीको पकड़नेके अभिप्रायसे “ भागा ! भागा ! ” कहकर चिल्लाने लगा । कुछही देरमें वह घोड़ी पकड़ी गई । तब सबलोग एक साथ “ मिल गई ! मिल गई ! ” कहकर ऊंचे स्वरसे चिल्लाने लगे । चन्दावतोंने जब इस शब्दको सुना तब उन लोगोंको मनमें खटका सा होगया । “ मिल गई ” शब्दको सुनकर उन्होंने ऐसा समझा कि हमारी सेना शत्रुओंके साथ मिल गई । इस अमूलक विश्वासके उत्पन्न होते ही चन्दावतगण रणमें पीठ दिखलाकर चारों ओर भाग गए । उन्हें भागता हुआ देखकर शत्रुओंने पीछा किया और जिसको सामने पाया, तत्काल मार डाला । इस प्रकारसे सिन्धीसेनाका जमादार चन्दन मारा गया व और भी बहुतसे अफसर मरे व घायल हुए । भागेहुए रजपूत शहापुरमें

कुछ उठी हुई शिखर मालाके बीचमें समतलस्थानमें बना हुआ है, इस कारण निकटके सब स्थानोंसे ऊंचा और स्वतन्त्र भावसे स्थित है । जिस स्थानपर दुर्ग बना है वह तीन सौ फुटसे अधिक ऊंचा नहीं है, इस कारण इसको पर्वत दुर्ग नहीं कह सकते; किन्तु मरुक्षेत्रमें इतना ऊंचा दुर्ग अवश्य ही विचित्र दृश्य है । इसकी लंबाई साढ़े बारह कोशतक है; और जहांतक मैंने दृष्टि डालकर देखा है उससे अनुमान होता है कि इसकी चौड़ाई एक कोशसे अधिक नहीं है । राजधानी दक्षिणकी ओर सबसे ऊंचे स्थान पर है । उत्तर प्रान्तके जिस सबसे ऊंचे स्थानपर राजमहल बना हुआ है उसकी ऊंचाई ३०० फुट है । स्थान सब तरफ ढालू है । विशेष करके १८०६ ईसवीमें जिस समय संमिलित सेनादलने जिस स्थानपर गोले बरसाये थे, तबसे वह स्थान टेढ़ा होकर केवल एक सौ बीस फुट ऊंचा रह गया है । अभेद्य महल श्रेणी और बीच २ में गोल और चौकोने असंख्य बुरजोंसे शिखरके चार कोशका व्यास दृढ़ताके साथ संरक्षित है । नीचेसे ऊपरकी ओर जो टेढ़ा मार्ग गया है, वह सात प्राकार और बहुतसे तोरणोंसे घिरा हुआ है । प्रत्येक परकोटेके द्वारपर अलग ३ सैनिक पहरे वाले रक्षा करते रहते हैं । इन सब परकोटोंमें दो सरोवर हैं । पूर्वकी ओरके जलाशयका नाम “रानी सरोवर” और दूसरा “गुलाब सागर” के नामसे विख्यात है । गुलाबसागर दक्षिणकी ओर है और दुर्गके सैनिक लोग अपने २ व्यवहारके लिये उससे जल लाते हैं । इन सब परकोटोंके बीचमें एक कुण्ड भी है; यह पर्वतको खोदकर बनाया गया है और नब्बे फुट गहरा है । उपरोक्त दोनों सरोवरोंसे जल लाकर यह कुण्ड भरा गया है; यद्यपि भीतरी भागके स्थान २ में बहुतसे कूप हैं; किन्तु उनका जल शुद्ध नहीं है । अनगिन्त महल और छोटे बड़े मकानोंसे इसका भीतरी भाग परम रमणीय है । प्रत्येक राजाने अपनी २ महलनिर्माणकी रुचिके स्मरणचिह्नरूपसे ही मानो एक २ महल बनवा दिया है, इस कारण महलोंकी आकृति क्रमसे बढ़ती चली गई है । दुर्गके पश्चिमप्रान्तवर्ती राजधानी तीन कोशतक अभेद्य परकोटेसे वेष्टित है; और परकोटेमें एकसे एक बुरज लगे हैं, तथा परकोटेके ऊपर पाइकलानामक बहुत सी तोपें रक्खी हैं । राजधानीमें प्रवेश करनेके सात सिंहद्वार हैं; जिस द्वारसे होकर बाहरके जिस स्थानको जाते हैं वह द्वार उसी नामसे विख्यात है । राजमार्ग बहुत सुन्दर रीतिसे बने हैं और मार्गके दोनों ओर पत्थरोंकी मनोहर सीढियों विराजमान हैं । सुनते हैं कि कई वर्ष पहिले यह नगर २०००० परिवारकी अर्थात् सम्भवतः ८०००० प्रजाकी वस्ती था । वर्तमानकालमें उप-

अरक्षणीय हमीरगढको छोडकर गोसुन्दनगरमें नई आई हुई सेनाके साथ जा मिला। दोनों प्रतिद्वन्द्वी वीरोंने क्षीणाङ्गिनी वेरीस नदीके दोनों किनारोंपर अपनी-तोंपें लगा दीं और युद्धहोनेकी वाट देखनेलगे । दोनों ओरसे युद्धकी तैयारियाँ होने लगीं । परन्तु उस ही समय सेनाके वेतनके विषयमें नाना और वालाराव इङ्गलेके बीचमें एक झगडा खडा होजानेसे संग्रामके होनेमें विघ्न पडा । उस झगडेकी कुछ भी मीमांसा न हुई । अंतमें नाना गणेश उस स्थानको छोडकर संगानेर नामक गांवको चलागया । इस भीतरी झगडेका विचार करतेहुए अचानक मनमें यह बात उदय होतीहै कि कदाचित् महाराष्ट्रियोंकी सेना छिन्न भिन्न होकर परस्पर लडमरीहोगी, और राजपूतोंने इस अवसरपर उनमें प्रवेश करके भलीभांतिसे महाराष्ट्रीयसेनाका संहार किया होगा, परन्तु इतिहास उसही समय गंभीर वाणीसे कह उठता है कि “ यह महाराष्ट्रीयलोग इस प्रकारकी राजनीति नहीं पढेहैं कि साधारण झगडेसे अलग होकर शत्रुओंको शिर झुकावेंगे ।

नाना गणेशपंतके अलग होजानेपर दोनों दल बराबर होकर खडेहुए । चतुर वालाराव इंगलेने उस समय युद्ध करना स्वीकार नहीं किया । गोसुल छप्राके उपद्रवमें लखवादादाने वालाराव इंगलेके प्राण बचाए थे । इस समय महाराष्ट्रीय सेनापतिने पहिले कियेहुए उसही उपकारका स्मरण करके उसके धन्यवादमें इस समय युद्ध न करनेका वहाना किया । सेनापतिके संग्राम न करनेका यहां एक और कारण भी पाया जाताहै; कहतेहैं कि उसके पास इस समय धनका बहुत अभाव था । लखवादादाने उस अभावको पूर्ण करनेका वचन दिया इसही कारण दोनों दलमें सन्धि होगई थी । दोनों सदारोंने मिलकर उस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर किये । शीघ्रही संग्रामकी तइयारियां लोप होगई, लखवादादाःअपनेको बेखटका जानकर परम प्रसन्न हुआ । कुछ कालके लिये दोनों पक्ष शान्त रहे । परन्तु अम्बवाजीने शीघ्रही इस शान्तिको भंग करके दोनों दलोंको फिर रणरंगमें उन्मादित किया । नानाकी सहायता करनेके लिये उसने सदलैण्ड नामक एक अंगरेज वीरको बहुतसी सेना और तोपोंके साथ भेजा । परन्तु किसी कारणसे विवाद होनेपर वह इस नई सेनाकी सहायता पानेसे वांचित रहा, वरन उसने जार्जटैमस् नामक और एक प्रसिद्ध युद्ध विशारद अंगरेजसेनापतिसे सहायता मांगी । इस पिछले अंगरेज वीरकी अनुकूलताको प्राप्त होकर अम्बवाजीका प्रतिनिधि नाना, और लखवादादा यह दोनों बराबर होगए । दोनों ही बुनास नदीके

छत बहुत ऊँची नहीं है । सभागृहके बीचमें एक वेदीके ऊपर राजसिंहासन स्थापित है उसके ऊपर चांदीके बने स्तंभोंके सहारे एक सोनेके बेलबूटोंवाला चंदोवा लगा है । राणाके दक्षिण ओर पोकर्ण और निमाजके दोनों सामन्त बैठे । इन दोनों सामन्तोंने यद्यपि महाराजसे ऊँचा सन्मान पाया था, किन्तु यदि वह किसी प्रकारसे जानपाते कि, उनके विपत्तिमें डालनेके लिये ही महाराजने प्रगटमें इतना अधिक सन्मान दिखाया है तो कभी वह प्रसन्न चित्त होकर नहीं बैठते । दूसरे कई सामन्त और अन्यान्य कर्मचारी चारों ओर पड़े थे । उनके नाम लिखनेकी आवश्यकता नहीं है । वकील विष्णुगुप्त, सरकारी सन्मुख मेरे पास आसन ग्रहण किया । साधारण बात चीटिका, कलम, तबसे अन्यान्य अनेक विषयोंमें कथोपकथन आरंभ हुआ । मारवाड़े के बोलनेमें विलक्षण शक्ति दिखाई । दिल्लीके बादशाहकी सभा में रहते थे उनमेंसे इनकी समान कोई भी शुद्ध हिन्दीभाषा नहीं जानते । महाराजका शरीर न बहुत लम्बा न बहुत छोटा अधिक गर्मा जा चुकता किन्तु स्वाभाविक अनमनी प्रकृतिवाला है । यद्यपि इनकी मूर्ति विलकुल राजोचित और वीरोंकी समान है, किन्तु स्वाभाविक महत्त्व अल्प है । महाराज मेवाड़के राणाने जिस प्रकार सहजमें ही सुझसे सम्मानाधिकार किया था, इनकी मूर्तिमें उन सबका विलकुल अभाव है । राजा मानसिंहका अङ्ग प्रत्यङ्ग बहुत मनोहर है; इनके दोनों नेत्र ज्ञानसूचक हैं और यद्यपि इनकी आकृतिके बाहर वदान्यताकी आभा प्रगटहै किन्तु बीच २ में क्षणस्थायी ऐसे कितने ही लक्षण दिखाई देते हैं, जिनके द्वारा मानसिक भाव स्वतः ही प्रकाशित हो पड़ता है कि यह मानो सरलताके निदर्शनस्वरूप हैं । यह प्रतारित होकर जो बहुत कालतक वन्दी अवस्थामें रहे थे और जिसके कारणसे उन्मत्तप्राय होगये थे कदाचित् इनकी प्रकृति उस सम्बन्धसे ही इस भावमें बदल गई होगी ।

महाराज मानसिंहने सब देश औरसब कालमें अपने मानकी रक्षा की थी । किन्तु घोरतर क्लेशमें गिरकर वह कुन्म कठोर होगये और मानसिक कल्पनाको किस प्रकार छिपाकर रखना चाहियेकेस विषयमें विशेष शिक्षित होगयेथे । यद्यपि यह बाघकी समान कठोरता नहीं दिखाते थे, किन्तु उस पशुकी भयंकर वृत्ति-धूर्तताको इन्होंने अर्जन करलिया था । बहुत थोड़े समयमें ही महाराज वन्दी दशासे छूटगये थे, किन्तु अब भी इनकी मूर्तिमें नम्रता, आत्मतुष्टि और सुख ऐश्वर्यका तिरस्कार प्रदर्शकभाव होनेपर भी अपने अधीनस्थ अगणित

आगया । वर्षा वीती । शरदकी तीखी धूपसे मार्ग और घाट सूखगये-गणेशपंतने अम्बाजीसे सेना पाकर लखवादादासे भयंकर संग्राम करनेकी तइयारियां कीं । जो क्रोधाग्नि अत्यन्त तीक्ष्णतासे उसके रोयेंरोयेंमें जलरही थी, उसके ठंडा करनेको अपनी कठोर प्रतिज्ञा पालन करनेके अर्थ वह मनुष्य वध, लूट, खसोट, इत्यादि समस्त भयंकर कार्योंके करनेपर उतारू हुआ । आरावली-शैलमालाकी तराईमें चंदावतलोंगोंकी जो जागीरें थीं; उन सबको घेरकर क्रोधित नानाने वहांके रहनेवालोंको सताना आरम्भ किया उसके कठोर व्यवहारसे सैकड़ों घर एक साथ ही भस्म होगये, पशुओंकी समान अनेक नरनारी मारे और सताये गये, कितने ही गृहस्थोंकी सम्पत्ति लुटने लगी ! परन्तु इस पर भी छुटकारा नहीं था । जिन लोगोंने उस निठुर महाराष्ट्रीय सेनापतिके पशुतुल्य व्यवहारसे किसी तरह अपने प्राणोंको बचाया, वह भी किसी प्रकारसे उसके क्रोधसे छुटकारा न पासके । नानाने कठोर कर लगाकर उन अभागोंको तवाह पर दिया, इस ओर टैमसने देवगढ़ और अमाइतको घेरकर वहांके राजा के गकर देनेके लिये विवश किया, इसी प्रकारसे काशीतल और लुसानी यह देशों किले उसके अधिकारमें आये । परन्तु लुसानीके नगरवासियोंने अपनी रक्षा करनेके लिये घोर वीरता प्रकाश की थी इस कारण विजयी टैमस साहबने उस नगरका नाश करडाला, जयके ऊपर जय प्राप्त करके कठोरताकी सीमा दिखाताहुआ नाना गणेशपंत जिस समय धीरे २ रुधिरके तालावमें पैररहा था उसी समयमें सेंधियाने अम्बाजीको वरतरफ करके और उस पदपर लखवादादाको नियत किया * अम्बाजीकी समस्त आशा लोप होगई । उसने गर्वित होकर जिन शैनवी ब्राह्मणोंका सत्यानाश करना चाहा था, आज विधाताने उन्हीं लोगोंके द्वारा अम्बाजीको नीचा दिखाया । अम्बाजीकी दुर्दशा होनेपर उसके प्रतिनिधि नानापंतने मेवाडके उन समस्त किलों और नगरोंको कि जिनको उसने अपने अधिकारमें करलिया था, लौटा-दिया । इस प्रकारसे दो हिन्दूवीरोंकी प्रचंड लड़ाई शांत हुई । परन्तु इससे मेवाडका कोई लाभ नहीं हुआ; वरन अनर्थ दिनपर दिन बढ़नेलगे । यदि मानाजाय,

* वालोवा तात्या और बकसीनारायणराव यह दोनों इस समय सेंधियाके दीवान थे । इन दोनोंका जन्म शैनवी गोत्रमें हुआ था अतएव यह सहजसे अनुमान होसकताहै कि स्वजातीय लखवादादाकी सहायता करनेमें इन्होंने भी अत्यन्त चेष्टा की होगी ।

बड़ा और समृद्धिशाली विद्वानों प्रदेश उनको दे दिया । जयमल जिस प्रदेशसे सत्त्वच्युत हुए थे, विद्वानों उसकी अपेक्षा अधिक उपजाऊ और मूल्यवान प्रदेश था जयमलने मेवाड़ेश्वरकी इस कृपाका ऋण किस प्रकार उतारा था उस उत्तम वृत्तान्तको हम लिख ही चुके हैं । मुगलकुलतिलक अकबरने अपने हाथसे इन महावीर जयमलके प्राणनाश करनेके समय अपनेको महा सम्मानित समझा था, और जिस बन्दूकसे उक्त वीरके प्राण लिये थे उसको बड़ी प्रतिष्ठाके साथ स्थापनकिया । सम्राट् जहाँगीरने वीरश्रेष्ठ जयमल की बड़ी भारी प्रशंसा करके बालक राणाको स्वाधीन करदिया, और चित्तौड़की रक्षाके लिये बड़ी वीरताके साथ मरे हुए उन जयमलके स्मरणार्थ एक कीर्तिस्तंभ बनवा दिया । विख्यात इतिहासवेत्ता अबुलफजल अंग्रेज दूतके पुरोहित हरवर्ट और बर्नियर आदि सब ही महाशयोंकी लेखनीसे जयमलकी जयघोषणा और बड़ी भारी प्रशंसा लिखी गई है । इधर परम तेजस्वी लार्ड हेष्टिंग्स जो राजपूत जातिके वीरत्व विक्रम प्रताप प्रभुत्वके एक विलक्षण पक्षपाती थे उन्होंने भी जयमलके अनुपमेय विक्रम स्मरणमें उनके सम्मानार्थ उन जयमलके वंशधर विद्वानोंके वर्त्तमान साहसी सामन्तको प्रसन्न किया था ।

मेडतानगर बड़े भारी दृढ़ पर कोटे और बुर्जोंसे भलीभांति रक्षित है । पश्चिमका परकोटा महीका बना है और पूर्ववाला पत्थरका है । नगरकी समान भीतरके सम्पूर्ण दृश्य टूटे फूटे हैं । यह नगर बीस हजार घरोंकी बस्ती है समग्र हिंदू नगरोंकी समान धनी लोगोंके मनोहर पक्के महलोंके निकट दीन हीन लोगोंकी पर्णकुटीर दिखाई देते हैं । नगरके दक्षिण पश्चिम प्रान्तमें दुर्ग है, उसका परिमाण लगभग एक कोशके होगा । दुर्गके पूर्व और पश्चिम प्रान्तमें छोटे २ सरोवर हैं । नगरके भीतर कूप भी बहुत हैं परन्तु जल सबका खराब है । नगरके चारों ओर “ दूधसार ” “ वाइजपा ” “ दुराणी ” “ धनगोलिया आदि नामवाले बहुतसे बड़े २ जलाशय हैं ।

मेडताका समतल क्षेत्र अगणित समाधिमन्दिर वा स्मारक स्तम्भोंसे सुशोभित है । जिन महावीर लोगोंने परस्पर विग्रहके समय अथवा दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंके कराल गालसे स्वाधीनताकी रक्षा करनेके समय अपने रक्तसे जन्मभूमिको सिंचा था उनकी कीर्तिके घोषण और स्मरणार्थ यह मन्दिरबने हैं । किस कारणसे राठौर लोगोंमें जातीय एकताका बंधन छिन्नभिन्न हुआ ? किस कारणसे दक्षिणी लोग मारवाडमें घुसे ? और किस कारणसे मारवाडियोंकी जातीय

इसमें बहुतसे धनका प्रयोजन है, राज्यकर इतना थोड़ा आता था कि उसकी सहायतासे उस बड़े खर्चका होना किसी तरहसे सम्भव नहीं था । अतएव सर्दारोंसे कुछ २ अनुकूलता पानेकी आशासे मौजीरामने उनके पास एक २ आज्ञापत्र भेजा । परन्तु सरदारलोग ऐसे अनुगतथे कि उन्होंने आज्ञापत्र पाते ही उक्त मंत्रीको कैद करके अपने देशानुरागका पूर्ण परिचय दिया । सतीदासको उसकी पहिली प्रतिष्ठा प्राप्त होगई । चन्दावतलोगोंके डरसे सतीदासका भाई शिवदास कोटेमें जाकर रहा था । इस समय वह भी बुलवाया गया । परन्तु बलवान् चन्दावतलोग अपने पहिले पदोंपर विराजमान रहकर राजपरिवारकी भूमि संपत्तिका अधिकांश भाग निर्विघ्नतासे भोग करने लगे ।

सन् १८०२ ई० में इन्दौरकी विशाल समरभूमिके बीच महाराष्ट्री राज्यके शासनसम्बन्धमें अपने २ भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये जो १ लाख ५० हजार आदमी इकट्ठा हुए थे उन्होंने मिलकर हुलकरके भस्तकसे राजमुकुट उतार लिया; हुलकरकी राजधानी हाथी घोड़े बंदूक तलवार इत्यादि और बहुतसे अस्त्र शस्त्रके साथ शत्रुओंके हाथ लगी थी । अवशेषमें विवश होकर मेवाडकी ओर भागा । परन्तु वहां भी छुटकारा न मिला । विजयी सेंधियाकी जयोन्मत्त सेनाने वहां पर भी उसका पीछा किया । उस समय सदाशिवराव और बालाराव सेंधियाके मुख्य सेनापति थे । मेवाडकी ओर भागनेके समय रतलामका किला बीचमें पड़ा, उसको भी हुलकरने लूटा और शक्तावतोंके प्रधान वासस्थान भेंदर दुर्गको घेरकर वहांसे खंडनी माँगने लगा । भयके मारे शक्तावत लोग अत्यन्त व्याकुल हुए । महाराष्ट्रियोंसे छुटकारा पानेका वह कोई भी यत्न न सोच सके । धीरे २ यह समाचार राणाजीने सुना । उसकाल राणाजीके हृदयमें यह शंका उत्पन्न हुई कि भेंदरको छोड़ते ही सेंधिया उदयपुरको घेरेगा, फिर उसके क्रोध और लालचसे उदयपुरकी रक्षा कौन करेगा ? उन्होंने अपनी रक्षाकरनेका उपाय सोचना निश्चय करलिया । परन्तु राणाजीको इस विषयमें परिश्रम नहीं करना पड़ा । कारण कि जब हुलकरके निकट सेंधियाकी सेना-जो उसका पीछा करती हुई आती थी-पहुंची, तब उसने विवश हो भेंदरको छोड़दिया । भगवानकी दयासे भेंदरनगरकी विपत्ति टल गई । अपनी आशाको पूर्ण न होता हुआ देखकर हुलकर निराश हृदय पुण्यतीर्थ नाथद्वारा * में पहुंचा । अपना अभिप्राय व्यर्थ होनेसे वह अत्यन्त ही

* उदयपुरसे २५ मील उत्तरको नाथद्वारा बसाहुआ है । आगे नाथद्वारेका वर्णन भलीभांतिसे किया जायगा ।

समझकर मैं यहांपर खेदके साथ उस विषयके प्रकाशित करनेको वाध्य हूं । अजितसिंहके बारह पुत्रोंमें अभयसिंह और वक्तसिंह बड़े थे, यह दोनों वूदीकी राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे ।

राठौर कुल कलंक अभयसिंह जिस समय साक्षात् कालकी समान दोनों सय्यद भ्राताओंके प्रस्तावानुसार महापातकमें संलिप्त होनेको प्रस्तुत हुआ, उस समय मारवाडेश्वर अजितसिंह मध्यमकुमार उक्त वक्तसिंहके सहित नागरमें स्थित थे । अभयसिंहने चुपचाप वक्तसिंहको पत्रद्वारा लिख भेजा कि, “यदि तुम पिताके प्राणनाश करसको तो उसके पुरस्कारमें मैं तुम्हें पांच सौ पैसठ नगर पूर्ण नागर प्रदेश देदूंगा और तुम उसको स्वाधीन भावसे राजाकी उपाधि धारण करके शासन करसकोगे ।” दुरात्मावक्त सिंह भाईके इस प्रस्तावसे कुछ भी विचलित न हुआ, वरन बड़े साहसके साथ अपने हाथसे जन्मदाता पिताके प्राण संहार करनेको उद्यत होगया इसकी माता इसको दुर्दान्तप्रकृति, उग्रस्वभाव, असमसाहसी, क्रोधी और नररक्त वहानेवाला जानकर सदा भयभीत रहनेलगीं और अपने स्वामीसे एक दिन अवसर पाकर कहा कि “सन्ध्याके पीछे कभी आप अकेले न रहें और एकान्तमें कभी वक्तसिंहके पास न जावें ।” किन्तु राजा अजितसिंह जैसे साहसी थे वैसे ही बलिष्ठ थे, इस कारण उन्होंने रानीकी बातपर कुछ ध्यान न दिया और कहा कि “वह क्या मेरा औरस पुत्र नहीं है ? मैं उसको एक थप्पड़ मारकर सीधा करसकता हूं ।” हा ! साधु अजितसिंहने भूलसे भी इस बातको नहीं विचारा कि कुवडीमें उन्होंने कालसर्पको उत्पन्न कियाथा ।

महापातकी वक्तसिंह अभयसिंहका पत्र पाते ही राजाकी आज्ञासे उस कमरेमें रहनेलगा जो राजाके शयन करनेके कमरेसे मिलाहुआ था । वह बड़ी भारी पापपङ्कमें डूबने और निर्मल राठौर राजपूतकुलमें कलङ्कका टीका लगानेके लिये समयकी प्रतीक्षा करने लगा । अजितसिंहके लिये उस कालरात्रिने शीघ्र ही भयानक मूर्ति धारण करके संसारको निद्रित करदिया; महलमें सन्नाटा छागया; निद्राकी मोहिनी शक्तिने महलके प्रत्येक स्त्रीपुरुषके ऊपर अपना अधिकार जमा लिया । उस सन्नाटेके मयदानमें भग्नङ्गर अन्धकार भी चारों ओर नाचनेलगा ॥ महाराज अजितसिंहके रानीसहित निद्राकी गोदमें शयन करनेपर वक्तसिंह कालकूट विषधरकी समान निर्भय चित्तसे धीरे २ कमरेमें आया, और विस्तरेके नीचेसे अजितसिंहकी तलवार लेकर उस नारकीने अपने

कर कोटारियोंके सद्गर्ने उसके दोनों अगले पांवमें जंजीरें भरदीं और अपने सिपाहियों को भी ऐसाही करनेकी आज्ञा दे, नंगी तलवार हाथमें लिये वेगसे शत्रुओंकी ओर झपटा; उसके विश्वासी वीरगण भी उसकी सहायता करने लगे । केवल उन बीस सिपाहियोंको साथ लेकर कोटारियोंसद्गर् भयरहित हो शत्रुओंकी बड़ी सेनाके सम्मुख जापडा, और अपने बहुतसे बलवान सिपाहियोंके साथ संग्रामभूमिमें प्राण देदिये । कोटारियों चौहान राजपूतोंकी वीरताके तथा निडरताके ऐसे बहुतसे प्रमाण मेवाडके इस घटना पूर्ण कालमें पाये जातेहैं । कोटारियों सद्गर्के मारेजानेसे ऐसा कोई नहीं रहा कि जो नाथद्वारेकी रक्षा करे । हिन्दूकुलकलंक हुलकरने उस अरक्षित तीर्थ स्थानमें प्रवेश करके देवालयकी समस्त सामग्री लूट ली । लूट खसोटको वह इतना पसंद करताथा कि देवसम्पत्तिके लेनेमें भी कोर कसर न की । उसके पिशाच तुल्य अत्याचारोंसे नाथद्वारेके रहनेवाले अत्यन्त दुःखी हुए और नगरको छोड २ कर भागे । इसही कारणसे वह पवित्रस्थान शीघ्रही श्मशानकी समान भयंकर होगया । विष्णुभक्त और शुद्ध चित्तवाले यात्रियोंके निरन्तर आवा गमनसे जो स्थान परम रमणीक जानपड़ता था, गवइये वैष्णवोंका अमृतमय भगवन्नामकीर्तन जहां चारों ओर मुनाई दियाकरता था, आज वही स्थान निर्जन होकर छोड दियागया, आज यह रमणीक स्थान शोकोदीपक भावको प्राप्त होगया ।

उदयपुरमें पहुँचकर भी प्रधानपुजारी दामोदर निश्चिन्त होकर पूजापाठमें मन नहीं लगासका । आलसी राणाकी राजपुरीमें भी उसको विघ्न घेरने लगे । इस कारण छःमासके पश्चात् ही पुजारीजी, भगवान् कृष्णचंद्रकी मूर्ति लेकर गसियर नामक शैलमालापर चलेगए और वहां एक मन्दिर बनाया मन्दिरकी चाहरदिवारी अत्यन्त ऊंची और दृढ़ थी, यहांपर वह निर्विघ्न होकर रहने लगे । परन्तु क्रमशः उनके मनमें धारणा हुई कि केवल ब्रह्मतेजके बलसे ही देवताकी रक्षा नहीं होसकती । इसही कारणसे उन्होंने खड़बलके ऊपर निर्भर करनेका विचार किया । तथा शीघ्रही ढाल तलवार धारण करके उस पवित्र तीर्थकी तस्करोंके आक्रमणसे रक्षा करनेलगे । कुछ ही कालमें चारसौ सवार दामोदरजीके दलमें मिलगये । उन विष्णुपरायण धर्मवीरोंके साथ दामोदरजी बहुधा गसियर गिरिप्रदेशसे उतरते और अपने अधीनकी समस्त विष्णु पीठोंकी देखभाल किया करते थे ।

“ वरत्त, वरत्त, वाइरा,
क्यों मारा अजमाल, *
हिन्दुयानीको सेवरा,
तुर्कानीका शाल ? ”

कविताका आशय यह है किं, “ रे वक्त ! कुसमयमें क्यों तैंने आजमलकी हत्या करी ? वह हिन्दुओंके प्रबल रक्षक स्वरूप और मुसलमानोंका शाल स्वरूप थे ? ” ।

पिताकी हत्या करनेके अपराधमें वक्तसिंहने बडे भाईसे नागर प्रदेश और पापी अभयसिंहने नरपिशाच सय्यदोंकी मनकामना पूरी कर देनेसे पुरस्कारमें मारवाडका सिंहासन तथा गुजरातका राज प्रतिनिधिपद पाया । जब मुगल-सम्राटके घोर दुर्दिन उपस्थित हुए तब अभयसिंहने गुजरातराज्य महाराष्ट्रोंमें विभक्त करनेका सुभीता साधन और गुजरातके अधीन वीणमहल, सांचोर और दूसरे समृद्धिशाली प्रदेश मारवाडमें मिलालिये, तथा उस अवसरमें मारवाडके कवियोंने जिसको “वदवक्त” की उपाधि दी थी, उस छोटे भाई वक्तसिंहको झालोरप्रदेश दिया । उस पितृहत्याके फलसे शीघ्र ही सम्पूर्ण मारवाडमें भयानक आत्मविग्रहानल प्रज्वलित होगया ।

अपने औरस पुत्र द्वारा मरे हुए महावीर अजितसिंहके अन्यान्य जिन कई पुत्रोंके साथ रजवाडेका राजनैतिक सम्बन्ध है उनका संक्षिप्त विषय नीचे लिखतेहैं ।—अजितसिंहके पुत्रोंमें देवीसिंह चम्पावत् सम्प्रदायके नेता अपुत्रक महासिंहके द्वारा पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण कियेगये थे । देवीसिंह उस समय वीणामहलके अधीश्वर थे, किन्तु उक्त स्थानके चारों ओरके निवासी जब कोली जातिके उपद्रवोंको न सहकर वीणामहलकी रक्षा करनेमें असमर्थ होगये तो देवीसिंहको उसके वदलेमें पाकर्णप्रदेश देदिया । सुवलसिंह और सालिमसिंह (निम्राजके सामन्त जिन्होंने मारे न जाकर अपना उद्धार आप करलिया-था) उक्त देवीसिंहके पुत्र और पौत्र थे ।

अजितसिंहके अन्य पुत्र आनन्दसिंह इन्दौरके स्वाधीन महाराज द्वारा दत्तक पुत्ररूपसे गृहीत हुए थे । मारवाडका राजसिंहासन शून्य होनेपर अर्थात् वर्त्तमान महाराजके अपुत्रक अवस्थामें प्राणत्याग करनेपर आनन्दसिंहके वंशधर लोगोंमें जो सबसे बडा हो वही मारवाडराजके छत्रतले बैठनेका अधिकारी है ।

* अजितको अजेय समझकर कविने यहां “अजमल” शब्द प्रयोग किया है ।

चन्दावतोंकी जागीरें भलीभांतिसे लूटीं और उनपर कठोर अत्याचार करने लगा । उसके दुराचारोंसे चन्दावतोंका सर्वनाश होगया, बहुतसे घर भस्म होगये । वालाराव इंगलेके प्रचंड अत्याचारसे अत्यन्त दुःखित हो चन्दावत लोग अपने उद्धारका उपाय विचारनेके लिये एकसाथ मिलकर परामर्श करने लगे । इस ओर वालारावने सेनासहित राणाजीके महलपर पहुंचकर मंत्रीके कार्याध्यक्ष मौजीरामको देखना चाहा । परन्तु राणाजी किसी भांतिसे मौजीरामके देनेको सम्मत न हुए । उनकी दृढ़ प्रतिज्ञा थी कि मौजीरामको किसी प्रकारसे भी शत्रुओंको न देंगे । दुराचारी मरहटोंने विनती की, भय दिखाया, परन्तु राणाजीकी प्रतिज्ञा अचल और अटल रही । तदुपरान्त वालाराव इंगलेने अपनी सेनाको महलकी ओर जानेकी आज्ञा देदी । परन्तु उनकी कोई दुरभिसन्धि पूर्ण न हुई । कारण कि तेजस्वी मौजीरामने अपने आदमियोंसे उन सबको कैद करालिया । नानागणेशपंत, जमालकर, और ऊदाजीकुंवर यह तीनों कैद हुए । इनमें ऊदाजीकुंवर अत्यन्त दुष्ट व क्रूरकर्मकारी था, इसही कारणसे इसके गलेमें हाथीके पांवकी जंजीरें भरवा दी गई । व और भी सबको उचित फल दियागया । दुष्ट वालाराव इंगले एक स्नानघरमें छिपाथा, इसको भी पकड़कर कैद किया । जब मरहटे सर्दार इसप्रकारसे कैद होगये, तब चन्दावत लोग अत्यन्त तेजके साथ नगरसे निकले और महाराष्ट्रियोंके उस गोदपर, आक्रमण किया कि जो पर्वतपर बसाहुआ था । वहांपर जो कुछ था, सबपर ही चन्दावतोंने अधिकार किया । हियसें नामक एक अंग्रेज सेनापति महाराष्ट्रियोंकी सहायता करनेको सेनासहित आया था । परन्तु वह अपना कार्य विना ही पूरा किये भयभीत हो उन्हें छोड़कर चला गया और उसने अपनी अधीन सेनाको साथ ले एक बड़े मैदानमें चौकोन व्यूह बनाया, तथा गडरमाला नामक नगरमें कुशलपूर्वक चलागया ।

अभ्रागे वालाराव इंगलेकी दुर्दशाका वृत्तान्त श्रवण करके जालिमसिंहको अत्यन्त दुःख हुआ, शत्रुके कारागारसे विना अपने मित्रको छुटाये हुये वह कैसे निश्चिन्त रह सकताहै ? जालिमसिंह मित्रको छुड़ानेके लिये निश्चय करके भाइन्दर और लावाके सर्दारोंके साथ राजधानीके सामनेको जानेवाले चैजाघाटनामक गिरिमार्गकी ओर सेनासहित बढ़ा । जो राणाजी इन दुष्ट विद्रोही सर्दारोंको पकड़ते ही मारडालते तो उनका अत्यन्त भंगल होता । इस कारणसे संपूर्ण मरहटे क्रोधकरके उनपर चढ़ दौड़ते परन्तु राणाका इससे कुछ अमंगल

दोनों प्रदेश ही आपके स्वाधीन हैं।” इस व्यंगोक्तिके कारण दोनोंमें झगडा बढ गया, उसका जो कुछ फल हुआ पाठकोंके जाननेके निमित्त उसको नचि लिखते हैं।

मारवाडेश्वर रामसिंह जिस प्रकार उद्धत प्रकृतिके थे, उसी प्रकार शिष्टाचार हीन थे। अपने अधीनस्थ सामन्त मंडलीके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये इस विषयमें कुछ भी शिक्षित नहीं थे, आहोयाके अधिनायक कुशलसिंह मारवाडकी सामन्त मंडलीमें सबसे श्रेष्ठ और चम्पावत संप्रदायके नेता थे, उनका शरीर छोटा और वलिष्ठ था, तथा वह असभ्य और स्थूल बुद्धिके थे, इस कारण वह नये महाराजके उपहास पात्र बनगये। रामसिंहने उनको “गुरजिगंडक” अर्थात् घृणित कुत्तेकी उपाधि दी। एक दिन महाराजने कुशलसिंहको स्पष्ट अक्षरोंमें “गुरजि” कहकर पुकारा। महाराजके उस अपमान जनक पुकारनेसे सामन्त श्रेष्ठने तत्काल उत्तरदिया कि, “यह गुरजी सिंहको काटखानेका साहस रखताहै।”—

यद्यपि रामसिंह इस उत्तरसे मन २ में बडे अप्रसन्न हुए परंतु प्रगट कुछ न बोले। इसी प्रकारकी एक और बातसे उन दोनोंका परस्परका प्रेम दूर होगया। एक दिन राजा रामसिंह और कुशलसिंह दोनों मंदौरके वनमें टहल रहेथे, टहलते २ महाराजने एक वृक्षको संकेत करके कुशलसिंहसे पूछा कि “इस वृक्षका नाम क्याहै”? कुशलसिंहने आग्रह और घमंडके साथ उत्तर दिया कि “आपकी राजपूत जातिके बीचमें जिस प्रकार मैं गौरवस्वरूप हूँ, उसी प्रकार यह चंपेका वृक्ष भी इस वनकी शोभा बढा रहाहै।” यह उत्तर सुनकर रामसिंहने क्रोधमें भरकर कहा कि, “अभी इस वृक्षको जड़से उखाडकर फेंकदो। मारवाडमें चंपेनामवाला कोई पदार्थ भी नहीं रहेगा।” कुशलसिंह उस समय तो मौन होगये, परन्तु हृदयमें क्रोधको बढाने लगे।

चंपावत नेता कुशलसिंहकी समान मारवाडके कंपावत नामक और एक महान साहसी संप्रदायके नेता आसोपके अधिनायक कुन्नीराम भी रामसिंहकी विष-दृष्टिमें गिरे। उनके मुखकी बनावट कुछेक बुरीथी। एक दिन रामसिंहने उनको “बुड्डे बन्दर” कहकर पुकारा। इस पुकारनेसे उत्तेजित होकर कुन्नीरामने कहा कि, “जिस समय यह बन्दर नाचेगा उस समय आपको खूब आनन्द मिलेगा। यह कहकर कुन्नीराम शीघ्रही आहोयाके सामन्त सहित राजसभासे चलेगये और नागरमें जाकर सेनाका संग्रह करने लगे। जिस समय अपमानित दोनों साम-

उनमें नहीं थी, तो किस कारणसे वीरवर प्रतापसिंहके सिंहासनपर बैठे ? लोभी मरहटोंके वारंवार सतानेसे मेवाडकी सुनहरी ज़मीन आज श्मशानसी बन गई है;—प्रजाका सर्वस्व लूटा गया; नगरनिवासी लोग भयके मारे चोरोंकी सेवा करते हैं ? जिस तुच्छ जीवनके लिये राणाने असंख्य प्रजाका कुछ भी ध्यान न किया उस जीवनसे प्रयोजन क्या है ? दीन, हीन, मलीन, क्षीन प्रजाका उद्धार करनेके लिये जो प्राण तैयार नहीं हुआ, जिसने सदा ही शत्रुओंके चरणचोट, उन घृणित, कलंकित, और तुच्छ प्राणोंसे क्या प्रयोजन है ? उनको स्वदेशकी रक्षाके लिये शत्रुओंके साथ प्राणका दांव लगाकर युद्ध करना चाहिये था परन्तु बात इससे विपरीत हुई, उदयपुरके राणा शत्रुओंके चरणोंमें गिर गये । ऐसा करनेसे जो कलंक उनके नामपर लगा यदि उसको सात समुद्रोंके जलसे धोया जाय तो भी नहीं छूटेगा ।

संधि करनेके बदलेमें हुल्करने ४० लाख रुपये मांगे परन्तु मेवाडकी अवस्था उनादिनोंमें ऐसी होरही थी कि उतने रुपयेका दियाजाना असंभव था । राणाने समझ लिया कि विना इस रुपयेके दिये पीछा न छूटेगा उन्होंने अपनी सुवर्ण की बनी हुई चीज़ोंको बेच डाला और स्त्रियोंके गहने भोजनपात्रोंको गिरवी रख दिया । ऐसा करनेसे और नगरवासियोंसे केवल १२ लाख रुपये इकट्ठा हुये । परन्तु इनसे क्या होता है चालीस लाख रुपयेके लिये १२ लाख रुपया तो तिहाई हिस्सा भी नहीं है बाकी रुपयेके बदलेमें राजपरिवारके प्रधान २ मनुष्य और कितने एक नगरवासियोंके शरीर गिरवी रखे गये, रुपया न देनेतक उनको महाराष्ट्रियोंके डेरेमें रहनेकी आज्ञा हुई । इस भांतिसे चालीस लाख रुपयेके पानेमें निःसंदेह हो निठुर हुल्करने राणासे मुलाकात की, इस ओर हुल्करकी आज्ञाके अनुसार महाराष्ट्री सेनाने लावा और विदनौरके किलेको घेरकर सरलतासे अपने अधिकारमें कर लिया, वहांके ठाकुरोंने बहुतसा धन देकर उन नगरोंको लौटाया । इतना रुपया पाकर भी इस दुराचारीका लोभ दूर न हुआ । तदुपरांत देवगढके किलेपर अधिकार करके वहांसे साठेचार लाख रुपये लिये । इस प्रकार आठमहीनेतक मेवाडके रुधिरको चूसकर वह दुराचारी उत्तरकी ओर सिधारा । राणाजीके ऋणके बदलेमें अजितसिंह उसके साथ गये, और उस रुपयेके इकट्ठा करनेको बलरामसेठ मेवाडमें रह गया । * जो

* हुल्करके यहां हरनाथचेली नामक एक कर्मचारी था, वह सर्दार बनसेन नामक नगरके भीतर होकर जारहा था इतनेहीमें सातौलागांवके कुलेक भीलजातिके चोरोंने बाहर निकलकर उसके ऊंटोंको ले लिया और चले गये । हरनाथने उन चोरोंको दमन करनेके लिये चंदावत गुलावसिंहको पुकारा; गुलाव-

राजपुत्रीके साथ हुआ था; उस राजकुमारीके साथ वे रामसिंहकी सहायता करनेके लिये पांचसहस्र सेना लेकर आये थे । इनके डेरे राजधानीके बाहर रखे गये, उस समय एक घटनाके द्वारा रामसिंहकी सिंहासन च्युतिका असली कारण और राजपूत स्वभावका एक विचित्र लक्षण प्रगट होगया । अर्थात् जिस डेरेमें रानी थी, उसकी कनातके ऊपर एक कुलक्षण सूचक काक बैठगया । रानी उस कुलक्षणकी निवृत्तिका उपाय जानती थी, इस कारण तत्काल उसका उद्योग किया । राजपूत वीरोंकी समान राजपूत स्त्रियें भी बन्दूक चलानेमें चतुर होती हैं । भोजराजपुत्रीने तत्काल बन्दूक हाथमें ली और उस काकके प्राण वध कर के कुलक्षण दूर करदिया । क्रुद्धस्वभाव रामसिंहने उस बन्दूकका शब्द सुनकर अपना अनादर समझा और तत्त्वानुसंधानके बिना ही बन्दूक छोड़नेवालेको अपने सन्मुख लानेकी आज्ञा दी; रानीका नाम बतानेपर भी उनके क्रोधकी शान्ति न हुई । रानीको कटुभाषामें गाली देकर कहा कि “रानीसे कहो कि अभी हमारे राज्यसे निकल जायँ और जिस देशसे आई हैं वहीं चली जावें ।” अपने क्रुद्ध स्वामीकी उक्त आज्ञा सुनकर रानी महाराजकी मझल कामनेके लिये ही बड़ी विनयके साथ क्षमा प्रार्थना करने लगी । किन्तु रामसिंहने किसी प्रकारसे भी उस प्रार्थनाको स्वीकार नहीं किया । अन्तमें रानीने कहा कि “आप बिना ही कारण मुझको दूर किये देतेहैं, इसके परिणामके मारवाडका राजमुकुट आपके शिरसे अवश्य गिर जायगा ।” यह कहकर रानी उस समय अपनी पांच सहस्र सेनासहित मारवाड छोड़कर पिताके घर चलीगई । वह पांच सहस्र सेना इस समय अवश्य ही हतबुद्धि रामसिंहके बड़े काम आती ।

निमाज, रायपुर और राउसके अधीन सम्पूर्ण उदावत सम्प्रदाय और किउवनसारके ठाकुरके अधीनमें सम्पूर्ण करुणासोत सम्मिलित होकर वक्तसिंहके झंडेके नीचे नीचे खड़े हुए चम्पावत और कम्पावत लोगोंमें आकर मिलगये ।

यद्यपि रामसिंहकी सेना शत्रुओंकी सेनासे कम थी । किन्तु मारवाडके स्वामी होनेके कारण उनका साहस शत्रुओंकी अपेक्षा अधिक था । रामसिंहने भैरताके अजमेर तोरणद्वारपर पहुंचकर अपने डेरे डाल दिये । उनके चचा वक्तसिंह भी नगरके द्वारपर डेढ़ कोशकी दूरीपर पडाव डालकर समयकी प्रतीक्षा करने लगे । वक्तसिंहकी सेनाका पडाव जिस स्थानपर था, वह पवित्र

जब अंगरेजोंके प्रचंड विक्रमसे महाराष्ट्रीगण हारे तब हुलकर और संधिया अपने अपमानका बदला लेनेके लिये पुनर्वार सेना इकट्ठी करने लगे । उनका आशा भरोसा समस्त ही लोप होगयाथा । तथापि बदला लेनेकी चिन्ता उनका पीछा नहीं छोडती थी । यद्यपि डाह बढता गया परन्तु इतना साहस तो नहीं था कि प्रगटमें अंगरेजोंसे संग्राम करें । पीछे साहस करके सन् १८०५ई० के वर्षाकालमें हुलकर और संधियाने विदनोरके अच्छे मैदानमें अपनी २ सेनाको डाला और युद्धका परामर्श करने लगे । उस परामर्शका प्रतिपाद्य विषय यही था कि अंगरेजोंके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये ? सहस्रशः अत्याचार करके भारतके नगर २ से जो धन महाराष्ट्रियोंने लूटाथा, तथा जो बल प्राप्त कियाथा आज वह समस्त धन और बल उनके हाथसे निकलगया । जिस प्रचंड सेनाकी सहायतासे एकदिन भारतवर्षमें केवल अपनाही डंका बजारहेथे आज वेतन न पानेसे वह सेना भी विगड रही है । इसके ऊपर अपमान और पराजय पायकर आज दोनों ही भूपाल राक्षसोंकी समान बनगए हैं । किसीकी भक्ति नहीं करते, न किसीका मान कर तेहें । केवल मतवाले हाथियोंकी समान कुरूप कियेहुए चारों ओर घूमेतेहें । उनकी गतिका रोकनेवाला कौनहै ? ऐसा कौनहै जो खड्ग धारण करके उनकी गतिको रोकें ? कोई भी नहीं; कोई भी आगे नहीं बढा । उस रोमहर्षण पैशाचिक अत्याचारके निवारण करनेका किसीने साहस नहीं किया । आज वीर जननी भेवाडभूमि वीरशून्याहै; आज महाराष्ट्री लोगोंने भलीभांतिसे उसे दलित कियाहै ! आज सुवर्णभूमिने श्मशानभूमिका रूप धारण कियाहै । महाराष्ट्री सेनाने उस समय ऐसी विकट मूर्ति बनाई थी कि यदि उनका राजा भी उस समय उनको रोकता तो भी उनके रुकनेमें सन्देह ही था । परन्तु आश्चर्यकी बात यह थी उनके राजाओंने उनको पापकार्य करनेके लिये दूना उत्तेजित किया । फिर किसकी सामर्थ्य थी जो मरहटोंकी अनिवारित गतिको रोकसकता । वह सेना

—हुई थी, उन महाराष्ट्री वीरोंको अंग्रेजोंने क्या एक बारही जंजीरोंमें बाँध लियाथा?—इस प्रकारका प्रश्न स्वयं ही पाठकोंके हृदयमें उत्पन्न होसकताहै । इसका उत्तर प्राप्त करनेके लिये भारतका एक इतिहास पढना चाहिये । तथापि इतना निवेदन किये देतेहैं कि भयंकर महाराष्ट्रियोंको सीधा करनेमें अंग्रेजोंका बहुतसा धन, बहुतसा रुधिर और बहुतसा समय लगाथा । यहलोग एकदिन, एकवर्ष या एकही बारकी चढाईमें मरहटोंको विनीत नहीं करसकेथे । ३१ दिसम्बर सन् १८०३ ई०को वेसिन स्थानमें जिस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर हुएथे, उसही संधिपत्रने अंग्रेज और महाराष्ट्र-

अयोके सामन्त शुभ अवसर पाकर “कुत्ता भी सिंहको काटनेमें समर्थ है” इस बात-
के दिखानेके लिये बड़ी वीरताके साथ अपनी चंपावत सेनासहित आगे बढ़े ।
रामसिंहके अत्यंत उद्धत और हिताहित विचार शून्य होने पर भी साहसी
मैरतीय वीरगण राजभक्तिके वशीभूत होकर तत्काल आगे बढ़े । “संग्राम जय
पाकर हटावेंगे अथवा प्राण त्याग करेंगे ” इस प्रतिज्ञाने और भी उन वीरोंको
हृदयको दूने साहससे भरदिया, इस कारण दोनों ओरके वीर अपने भाई बन्धु
और इष्ट मित्रोंकी ममता छोड़ कर एक दूसरेको निर्मूल करनेके लिये तलवार
चलाने लगे । मारवाडके वीरोंमें मैरतीय लोग सबसे श्रेष्ठ वीर गिने
जाते हैं; इस कारण उस अपने नामकी रक्षा करनेके लिये वे अत्यन्त साहसके
साथ लड़नेका उद्योग करने लगे । इन मैरतीय वीरोंका यश चम्पावत लोगोंको
सदासे असह्य है, इस कारण चम्पावतलोग अपने नेताके उस अपमानको स्म-
रण करके बड़ी वीरताके साथ शत्रुओंका हृदय प्रकम्पित करने लगे । चारों
ओर भयङ्कर सामरिक ध्वनि, तलवारकी झनकार, बाणका सन् सन् शब्द
और तोपोंकी आकाशभेदी ध्वनि सुनाई देने लगी । रणक्षेत्रने क्रमसे वीभत्समूर्ति
धारण कर ली । प्रबल उद्दीपना और साहसकी जीवित मूर्तियोंने प्रगट हो-
कर शत्रुओंके संहारमें दोनों पक्षवालोंको दृढ़ प्रतिज्ञ करदिया । प्रत्येक सम्प्र-
दायके वीरनेता दोनों पक्षके सामन्तोंका नाम लेकर पुकारने लगे और पर-
स्पर अस्त्र शिक्षा,—वाहुवल्ले,—साहस—और वीरता दिखानेमें सम्पूर्ण शक्तिका
प्रयोग करने लगे ।

राजभक्तिके चूडान्त निदर्शन स्वरूप मैरतीय अधिनायक शेरसिंहके सबसे
पहिले शत्रुके शस्त्रने प्राण लिये । शेरसिंहका भाई यह देखकर अपनी सेनासहित
आगे बढ़ा । इसके पीछे घोर संग्राम होने लगा, अहोयाके वीर सामन्त अपनी
वीरता दिखानेके पीछे स्वर्ग सिधारे; चम्पावत लोगोंने उनको तत्काल स्थाना-
न्तरित कर दिया । दोनों पक्षके सामन्तोंके मरनेपर उनके अधीनस्थ वीर जय-
लक्ष्मीकी इच्छासे बड़ी वीरताके साथ लड़ने लगे । बहुत कालतक युद्ध होनेपर
भी कोई वीर पीछे नहीं हटा । किन्तु वक्तसिंहकी सेना अधिक थी, वह जहां
अपने भतीजेको देखता वहीं बारम्बार दौड़ता; मारवाडके श्रेष्ठ मैरतीयवीर दूने
शत्रुओंके साथ लड़कर जबतक सर्वथा निर्मूल नहुए तथा जबतक प्रत्येक सामन्त
एक २ कर पृथिवीपर न सो गया, तबतक वक्तसिंहकी विजय नहीं होसकी । अन्त-
में बाध्य होकर जयलक्ष्मी वक्तसिंहका आश्रय लिया । इस जातीय महा संग्रा-

उसको एक साथ ही लोप करदिया * मरहटे लोग इस प्रकारसे अत्याचार करते हुए उस इमशानभूमिमें पिशाचोंकी समान घूमनेलगे। उनको उनके अत्याचारका बदला देनेवाला कोई भी नहीं था; ऐसा कोई राजपूत नहीं था कि जो संजीविनी विद्याके मंत्रबलद्वारा उस इमशानभूमिकी चिता भस्मसे फिर असंख्य महावीरोंको उत्पन्न करसकता ? अतएव राजस्थान दीन दशमें ही रहा ।

जिस समय राजस्थानमें ऐसा उपद्रव मचरहा था, उस काल कितने एक अंगरेजवीरोंने धीरे २ इस इमशानभूमिमें प्रवेश करके महाराष्ट्रियोंको बलपूर्वक वहांसे निकालदिया और इस देशको धीरे २ अपनी शक्तिसे जिलाया । जिस समय भारतवर्षमें अंगरेजोंकी प्रभुता पहले पहिल स्थापित हुई थी, उस समय जिन लोगोंने इनकी बहुत सी सहायता की; आज वही लोग निर्बल, निराश्रय और दीनहीन होकर अत्यन्त दुर्दशाको प्राप्तहुए। किसीने भी हाथ बढाकर उनका उद्धार नहीं करना चाहा । यहां तक कि जिन राजाओंने अंगरेजोंकी ओर होकर बहुतसे संग्राम कियेथे आज एकवार भी अंगरेजोंने उनके मुखकी ओर न देखा । मुख देखना तो दूर रहा वरन उनको दुर्दशाग्रस्त होतेहुए देखकर वृटिनवीरोंने कुछ भी चिन्ता न की और चालाकीसे उनका राज्य लेनेकी इच्छा करनेलगे । इस प्रकारसे बहुतसे राज्य लेलिये ।

अंगरेज और महाराष्ट्रियोंका भयंकर संग्राम कुछ दिनोंके लिये शान्त रहा । परन्तु उसके फिर होनेकी शंका करके मरहटे लोग अपने २ परिवार और धन रत्नको मेवाडके किलोमें छिपाने लगे । आज सब ही लोग आसपासके घरोंका और मित्रोंका सहारा तकनेलगे । चन्दावतोंका मुख्य पात्र सर्दारसिंह सेंधियाकी सभामें राणाजीका प्रतिनिधि नियत हुआ । अम्बाजीने पुनर्वार सेंधियाके मंत्र-भवनमें ऊंचे आसनको पाया † मेवाडके राणाने इससे पहिले लखवांदादाकी सहायता की थी, अम्बाजीने इस बातको अपने हृदयमें रक्खा । राणाके इस व्यवहारने महाराष्ट्री मंत्रीके हृदयमें जो आग जलादी थी, वह किसी भांतिसे नहीं बुझी । इतने दिन तक जो धीरे २ सुलगरहीथी इस समय वह एक साथ धधक-उठी । अम्बाजीने राणासे बदला लेनेका विचार किया और मेवाडके राज्यको

* अंगरेजोंके आनेके समयमें भारतके जिन राजाओंने उनकी सहायता कीथी उनमें गोहुद, ग्वालियर, राधोगढ और बहादुरगढके राजा और भूपालका नव्वाब ही प्रधान था । वारनहेस्टिंगके साथ मिलकर इन लोगोंने अंगरेजोंकी सहायता कीथी । परन्तु शोकके साथ लिखना पडताहै कि इनमेंसे कोई भी स्वाधीन नहींहै ।

† अम्बाजी, बापू चितनवीस, माधव हजूरिया और अन्नाजी भास्कर सेंधियाके मंत्री थे ।

पराजयके विषयमें सूचित करदिया कि केवल शत्रुओंकी गोलन्दाजोंके द्वारा यह पराजय हुई है । मैरतीय लोगोंके असीमसाहसी और प्रबल राजभक्त नेता रियाके सामन्त शेरसिंहने इस जातीय युद्धके होनेसे पहिले अपने साले उक्त अहोयाके सामन्तको रामसिंहके विरुद्ध युद्ध करनेसे बहुत रोका, परन्तु अहोयाके सामन्तने इस बातको किसी प्रकारसे भी नहीं माना, अन्तमें शेरसिंहने व्यङ्ग भावसे कहा कि “वक्तसिंहकी सहायतामें रामसिंहके परास्त करनेकी तुममें जितनी शक्तिहै वह किसीसे छिपी नहीं है ।” अहोयाके सामन्तने इसके उत्तरमें कहा कि “और कुछ हो या न हो मैं इस राज्यको अवश्य ही छिनवा दूंगा ।” इस गर्वभरे उत्तरको सुनकर शेरसिंहने महा क्रोधके साथ प्रतिज्ञा करी कि “मैं भी यथासाध्य तुम्हारी इस इच्छाको अपूर्ण रखनेकी चेष्टा करूंगा ।” मैरताकी उस भयंकर रणभूमिमें परस्पर खड़गयुद्धके पहिले दोनों वीरोंमें फिर दुवारा मुलाकात नहीं हुई थी ।

जिस स्थानपर इस शोचनीय हत्याकाण्डमें आत्मीय, ज्ञाति, भ्राता, मित्रोंने आपसमें एक दूसरेको मारकर जातीय एकताकी हीनताका परिचय दिया था, उस स्थानपर एक भी ग्राम नहीं है चारों ओर बड़ा भारी मैदान है । उस युद्ध-भूमिके स्थान २ में उन मृतक वीरोंके स्मारक मंदिर और छोटे २ स्मरण-चिह्न विद्यमान हैं । जो वीर जैसे पदपर था उसके सन्मानार्थवैसा चिह्न ही स्थापित किया है । किसीके स्मरणार्थ सनांगम स्तंभ श्रेणीके शोभित ऊंची चोटीके महल किसीका स्मरणचिह्न सामान्य मंदिर, किसीके शव स्थानपर पाषाण स्तूप स्थापन कराके उसके ऊपर उस वीरका नाम गोत्र और शाखा अङ्कित है । मैंने उन स्मारक मन्दिरोंकी खोदित लिपियोंमेंसे बीसकी नकल उतार ली है । यह सब लिपियें राजपूतजातिके प्रशंसनीय चरित्रको सूचित करती हैं ।

इस भयङ्कर जातीय समरमें पराजित होनेके पीछे मारवाडेश्वर रामसिंह चहार दिवारीवाले मैरता नगरके भीतर आश्रय लेनेको बाध्य हुए, किन्तु इस इतने बड़े नगरकी अल्प सेनाद्वारा शत्रुओंके कराल गालसे रक्षा करना असंभव समझकर बुरे अवसरमें मारवाडकी सर्वनाश करनेवाली एक कल्पनाको मनमें सोचा । महाराष्ट्र डाँकू उस ससय बड़े प्रबल होगये थे, रामसिंहने उनकी सहायतासे चचाको परास्त करनेका निश्चय करलिया और आधीरातको उठकर अवशिष्ट सेनाके साथ दक्षिणको भागगये । उन्होंने उज्जयिनीमें पहुँचकर महाराष्ट्र

कहता हूँ कि मेवाडकी ऐसी दुर्दशा कभी न होगी । आप लोग एक प्राण होंगे; आज पुरानी शत्रुता भूलकर परस्पर एक दूसरेको हृदयसे धारण कीजिये और एक साथ अफीम सेवन करके एक प्राणताका परिचय दिखाइये । ” हुलकरका वचन सुनकर सबको धीरज आया और एकसाथ अफीमका सेवन करके एक प्राणताका प्रमाण दिखाया । चन्दावत और शक्तावतोंको धीरज देकर ही हुलकर मौन नहीं हुआ, वरन् वह सबको साथ लेकर संधियाके डेरोंमें गया और बातोंमें, राणाजीके ऊँचे कुलकी पवित्रता और मानपर्यादाका वर्णन करके गंभीर भावसे कहने लगा । “ इस बातको आप भलीभाँति जानते हैं कि राणाजीने कैसे ऊँचे वंशमें जन्म लिया है । जाँ हमारे जाननीय हैं वह भी राणाजीको पूजनीय समझते हैं * फिर क्या उनके विरुद्ध शत्रुता करना हमको शोभा देता है ? इस संकटके समयमें उनके सर्वनाशसाधनका व्रत धारण करना क्या हमलोगोंका उचित कर्म है ? मेवाडकी समस्त बन्धकी भूसम्पत्तिको जो हमारे पितृपुरुषगण बहुत दिनोंसे सरलतापूर्वक भोगते आये हैं, उचित तो यह था कि हम उसको लौटा देते और अब उसके बदलेमें उनके राज्यको टुकड़े २ करके बाँटेंगे ? हमलोगोंके राज्यको धिक्कार है ! आपकी जैसी इच्छा हो वैसा कीजिये; परन्तु मैं शपथ कर चुका हूँ कि राणाके पक्षका किसी प्रकार नहीं छाँटूंगा । यदि विश्वास न हो तो इसका प्रमाण लीजिये कि मैंने अभी अपना अधिकार किया हुआ नीमबहेडा जनपद राणाजीको दिया । ” हुलकरके इन तेजस्वी वचनोंको सुनकर सब ही मौन होगये, संधियासे भी कुछ न कहा गया । हुलकरके वाक्यने उसके हृदयकी तलीमें प्रवेश करके संधियाके मनरूपी राज्यमें एक प्रकारकी चपलता उत्पन्न कर दी हुलकर समझ गया कि मेरी बातने अपना प्रभाव दिखाया, इस कारण उसको अधिक तेज करनेका लिये फिर कहने लगा, “और यह भी तो आप विचार कर देखिये कि इस समय राणा यदि अलग होजाय तो हमारी कितनी हानि होगी ? यदि फिरंगीलोगोंके साथ फिर लड़ाई होनेलगे तो अपने कुटुम्ब और द्रव्य सामग्रीको कहाँपर रक्खेंगे ? जो राणाजीके साथ धेल न होगा तो उनके दुर्ग किस भाँतिसे हमको मिलेंगे विचारकर देखिये कि उनको अप्रसन्न करनेसे हम लोगोंको विपद

* पूजनीय कहनेका यह कारण था कि पेशवा, संधिया और हुलकरका राजा था, पेशवाके राजा सितारेके छत्रपति हुए, और छत्रपतिके राजा उदयपुरके राणा थे । इस कारण राणाको पूजनीय कहा ।

होगा । ईश्वरीसिंहने इसको स्वीकार करलिया । ईश्वरीसिंहकी रानी इन्दौर-राजपुत्री वक्तसिंहकी भतीजी थी । इस कारण उन्होंने इस सम्बन्धसे अपने चचाके साथ साक्षात् करनेकी प्रार्थना करी, वक्तसिंहने मेवाड मारवाड और अम्बेर तीन राज्योंकी सम्मिलित सीमान्तके बीचोंबीच स्थानमें स्थापित अपने डेरेपर आनेकी आज्ञा देदी । रानी प्रतिहिंसा चरितार्थ करनेवाले अव्यर्थ अस्वरूप एक मूल्यवान राजवेशको हालाहल विषसे मिश्रित करके चचाको उपहार देनेके लिये अपने साथ लेगई ।

जयपुरराजरानीके डेरेमें पहुंचनेके कुछ ही पीछे वक्तसिंहको भयङ्कर ज्वर चढआया । तत्कालचिकित्सक बुलायागया । किन्तु राजवैद्यने रोगके सम्पूर्ण लक्षण देखकर कहा कि, “इस रोगका निवारण किसी औषधिसे नहीं होसकता, इस कारण आप परलोकजानेके लिये तैयार होजाइये ।” निर्भीक हृदय राठौर राजने वैद्यकी इस उक्तिको व्यङ्ग्य समझकर कहा कि, “क्या तुम आरोग्य नहीं करसकोगे ? मेरे इस रोगके आरोग्य करनेकी यदि तुममें शक्ति ही नहीं है तो क्यों मेरी दीहुई भूवृत्तिका भोग करतेहो ? और तुम्हारी इस चिकित्साविद्यासे क्या लाभ है ?” राजाके इस उत्तरको सुनकर वैद्यने शीघ्रही डेरेके निकट एक गढा खोदकर उसमें जल डाला, और जलमें एक औषधि डाली, औषधिके डालते ही जल बहुत शीतल होगया । मृत्युके मुखमें गिरे हुए वक्तसिंहको पुकारकर वैद्यने कहा कि—“महाराज ! आप जिस रोगसे पीडितहैं उसकी केवल यही एक अंतिम औषधि है, किन्तु आपके रोगके लक्षण देखकर मैं समझताहूं कि इससे भी कुछ उपकार नहीं होगा । अब देर करनेका समय नहीं है अन्त समयके धर्म कर्म समाप्त करलीजिये ।” राजवैद्य यह बात भलीभाँति जानतेथे कि विषमिलीहुई पोषाक ही वक्तसिंहकी मृत्युका मूल कारण है, किन्तु उन्होंने इस बातको प्रगट नहीं किया । राजवैद्यके अन्तिम शब्द सुनकर वक्तसिंहने शीघ्रही सब सामन्तोंको डेरेमें आनेकी आज्ञा दी। सब सामन्तोंके आजानेपर उन्होंने मारवाड और निजपुत्रकी स्वार्थरक्षाके लिये उनसे अंतिम अनुरोध किया, वह सब इस बातको स्वीकार करके विदा हुए । इसके पीछे राजगुरुको बुलाकर वक्तसिंहने इष्टदेव और देवालयके उद्देशसे भूवृत्ति निर्धारण कर दी । इसी अवसरमें उनके निर्भय और धीरचित्तमें एक शाप-वाणी प्रतिध्वनित हुई । वक्तसिंहने जिस समय अपने पिताकी हत्या करी थी उस समय अजितसिंहकी अस्सी विधवा रानियोंने चितामें जलनेके अवसर कहा था

“महाराज ! आपने इन रांगणलोगोंका व्यौहार अपनी आखोंसे देखा * यह आपके साथ संधियाका झगडा कराके दोनों राज्योंको नष्ट करेंगे इनके पक्षको छोडकर संधियासे, मिलिये, सुरजी रावको दूर करके अम्बाजीको मेवाडका सूबेदार बनानेकी चेष्टा करिये नहीं तो मैं आपको छोड संधियाके पास जाकर उसको साथ ले मालवे चला जाऊंगा”

केवल भाऊ भास्करके अतिरिक्त और सब मंत्रियोंने तात्याकी रायको ठीक ठहराया । हुल्करने भी तात्याका परामर्श माना और सुरजी रावको विदा कर दिया और अंगरेजी सेनाका सामना करनेके लिये उत्तरकी ओरको चला । परंतु अभाग्यके कारण उसका बल कम होतागया । सामना न करने पर भी उसने अंगरेजोंके क्रोधसे छुटकारा न पाया—रणदक्ष लार्ड लेकने पीछा करके उसको संधिकरनेके लिये विवश किया, प्रसिद्ध व्यासानदीके किनारे लार्ड लेकके साथ हुल्करकी संधि स्थापित हुई ।

मेवाडपर क्रोधित होनेसे भी हुल्करने राणाजीका कोई अमंगल नहीं किया; वरन मेवाडको छोडनेके समय राणा और राजस्थानको निरापद रखनेके लिये संधियासे कहता गया कि; “मैंने राणाजीके राज्यको अम्बाजीकी चढाईसे वेखटके रखनेकी प्रतिज्ञा करलीहै, कहीं ऐसा न हो कि मेरी प्रतिज्ञा टूटजाय । यदि इस अनुरोधको न मानेंगे तो आपको इसका उत्तरदायी होना पडेगा ”: भय भक्ति अथवा अनुरागके कारण संधियाने हुल्करके अनुरोधको कुछ दिनतक माना; परन्तु जब देखा कि हुल्करपर विपत्ति पडीहै तब सब बातें भूलगया और मेवाडसे १६ लाख रुपया वसूलकरनेके लिये शीघ्रतासे सदाशिव रावको भेजा, सदाशिव राव आहत मेवाडका रुधिर बूसनेके लिये जान व्याप्तिसृकी कवायद सिखाईहुई गोलंदाज पल्टन लेकर मेवाडकी ओरको चला, सन् १८०६ के जून मासमें यह सेना मेवाडकी ओरको बढ़ी । संधियाने दो कार्योंका साधन करनेके लिये अपनी सेनाको मेवाडके विरुद्ध भेजाथा । पहिला सोलह लाख रुपयोंका वसूलकरना । दूसरा, महाराजा जैपुरकी सेनाको उदयपुरसे दूर करना । राणाकी बेटीके साथ जैपुरके राजाको विवाह निश्चय होनेसे दोनों ओरके समाचार और दान दहेज लेजानेके लिये कछवाहे राजकुमारकी सेना उस काल मेवाडमें ही थी ।

* महाराष्ट्री लोग राजपूतोंको रांगड़ानामसे पुकारा करतेहैं । रांगड़ा शब्दका अर्थ प्रचंडहै ।

सिंहासनभ्रष्ट रामसिंहने महाराष्ट्रदस्युनेता जयआप्पा सेंधियाके साथ मिलकर कोटाराज्यपर आक्रमण किया । फिर भेवाडका विध्वंस करके अजमेरमें पहुंचे । इस स्थानपर साहसी राठौर रामसिंहके साथ जयआप्पा सेंधियाका कुछ विवाद होगया था, किन्तु दोनोंके सौभाग्यसे यह विवाद दूर होगया, दोनों सीमान्त पार होकर संहारमूर्तिसे मारवाडमें घुसे । नवीन मारवाडेहमें विजयसिंह राजपूत स्वभाव सुलभवीरत्व विक्रम साहस उद्दीपना भूषणाविलक्षणरूपसे भूषित थे । विदेशी डाकुओंके साथ रामसिंहका अचमन समाचार सुनकर वह भी शीघ्र ही मारवाडके सम्पूर्ण सामन्त और अपने अधीनस्थ २००००० दो लाख सेनाको साथ लेकर बड़ी वीरतासे आगे बढ़े ।

जिस प्रकार दो भिन्न प्रान्तोंसे उत्ताल तरङ्गमाला विस्तारके साथ हुङ्कार शब्दसे दौडते हुए दो समुद्रोंके संघर्षणसे भयङ्कर काण्ड संघटित होताहै, उसी प्रकार इन दोनों सेनाओंके साक्षात् दर्शनसे हुआ । जातीय महासंग्राममें जन्मभूमिकी छातीपर विजातीय महाराष्ट्रियोंके आनेसे महावीर राठौर लोगोंका रक्त जिस भयानकरूपसे गरम हो उठा होगा, एकता, उद्दीपना, शौर्य, वीर्य, विक्रमने उनके हृदयमें जिस पूर्ण शक्तिका सञ्चालन करदिया होगा, उसका सहजमें ही अनुमान होसकताहै । यदि सिंहासनभ्रष्ट रामसिंह अकेले ही मारवाडी सेनाके साथ संग्रामसागरमें कूदते, यदि वह मारवाडका सर्वनाश साधनेके लिये विजातीय महाराष्ट्रियोंको सहायताके लिये मातृभूमिमें न लाते तो इस संग्राममें इतनी उद्दीपना कभी दिखाई नहीं देती । रामसिंहने सिंहासनके लाभकी इच्छासे समरक्तवाही भ्राता आत्मीय, मित्र स्वजातीय सबके प्राणसंहारके लिये जो दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंको प्रमत्त करदियाथा, अन्तमें उस प्रमत्तताने ही वीरक्षेत्र मारवाडको ठीक मरुक्षेत्र बनादिया । रजवाडेके प्रत्येक राज्यके अधःपतनका मूल कारण निश्चय ही लुण्ठनप्रिय पैशाचिकस्वभाववाली यह महाराष्ट्र जाति ही है ।

दोनों पक्षके सैनिकोंने मैरताकी बहुत दूरीपर एक दूसरेको देखते ही गोली चलाना आरंभ करदिया । धुँएँसे चारों ओर अन्धकार छागया, तोपोंके वज्रकी समान गंभीर शब्दसे मारवाड काँप उठा । उस दिन दोनों पक्ष ही समान साहस, और समान तेजसे बड़ी वीरताके साथ गोले वरसानेमें लगेरहे, खङ्गयुद्ध बहुत कम हुआ । मैरताके निवासियोंने इस युद्धमें सैनिकोंके भोजनकी सामग्री संग्रह कर दी; किन्तु इस सम्बन्धसे बहुतसे मारे भी गये; यहांतक

रहूंगा । ” कहतेहैं कि मानसिंहने अपने सरदारोंसे यह असत्परामर्श प्राप्त की थी । उस समयमें चन्दावतलोगोंपर राजाकी कृपादृष्टि रहती थी । दुष्ट राठौर सरदारोंने अपना अभिप्राय सिद्ध करनेके लिये उनके सरदार अजितसिंहको रुशवत दी और यह अनुरोध किया कि जगतसिंहके साथ कृष्णकुमारीका विवाह न होने पावे ।

ललनाललाम हेलना*की अनुपम सुन्दरताने जिस प्रकार उसके स्वामी और शत्रुओंको सदाकी नींदमें सुलादिया था, वैसेही सुरसुन्दरी कृष्णकुमारीके ललित लावण्यने भी उसके पिता और प्रेमियोंको सदाके लिये नष्ट करदिया, फिर उस सुन्दरीके भी प्राण लेलिये । उसकी सुन्दरता ही उसका काल होगया । कृष्णाके पानेकी अभिलाषासे मारवाडका राजा मानसिंह अम्बेरके राजापर अपनी सेना लेकर चढ़ाया । महाराष्ट्रीलोगोंने भी इस अवसरमें एक ओरका पक्ष अवलंबन करके इस झगडेको अत्यन्त ही बढ़ादिया । थोड़े दिन हुए कि सेंधियाने महाराजा जयपुरसे कुछ धन मांगाथा; जगतसिंहने न दिया; इस ही कारणसे वह भी जगतसिंहसे शत्रुता निकालनेके लिये चला और कृष्णकुमारीका विवाह जगतसिंहके साथ न होनेका यत्न करने लगा और मारवाडके राजा मानसिंहसे मिलगया । उसने राणाजीसे कहलाभेजा कि जयपुरकी सेनाको शीघ्रही भेवाडसे निकालदीजिये । सेंधियाको विश्वासथा कि राणा भेरे कहनेको नहीं टालसकेंगे । परन्तु वह विश्वास आज मिथ्या होगया, राणाजीने उसके कहनेपर कुछ भी ध्यान न दिया । पीछे सेंधिया अपनी गोलन्दाज सेना लेकर भेवाडपर चढ़ा । उसकी गतिको रोकनेके अभिप्रायसे राजा

* इस लावण्यमयीको नायिका बनाकर ग्रीसदेशके महाकवि होमरने इलियडग्रंथको बनायाहै । ग्रीस इतिहासके मतानुसार हेलेनाने जूपितरके औरससे स्पार्टाकी रानी लीडरके गर्भसे जन्म लिया था । केष्टर और पोलक्स नामक इसके दो भ्राताथे । एथेनका महावीर थिसियस यौवन कालमें ही उसको हरण करके लेगया; परन्तु पोलक्स और केष्टरने उसके हाथसे अपनी बहनका उद्धार करलिया । हेलनाकी अपूर्व सुन्दरताका वृत्तान्त ग्रीसराज्यमें चारों ओर फैलगया । जिसको सुनकर उस देशके समस्त राजालोग विवाह करनेकी इच्छासे उस मनमोहिनीके घरपर आने लगे । अनन्तर मिजिलस नामक एक राजाके साथ उसका विवाह हुआ । विवाहके कुछही दिन पीछे टपेका प्रसिद्ध राजकुमार हेलेनाको हरण करके लेगया । कहतेहैं कि हेलेना इच्छापूर्वक उसके साथ गईथी । इसही झगडेके कारणसे ट्रोजनकी लड़ाई हुई । इस युद्धके समाप्त होजानेपर हेलेना अपने पहिले स्वामी अभागो मिनिलसके पास गई । हेलेनाके वृत्तान्तको लेकर जो इलियड ग्रंथ बनाया गया है, उसके साथ भगवान् वाल्मीकिजीकी रामायणमें बहुतसा मेल पाया जाताहै ।

प्रस्तुत हुए । राठौर राज विजयसिंहकी नस २ में उत्तेजनाका रक्त दौडरहा था, यद्यपि विजयसिंहकी सलाह युद्ध करनेकी थी, परन्तु उनके सहायकारी बीकानेरके महाराजने युद्धसे भागनेका परामर्श दिया । बीकानेरके महाराजने युद्धकी दशा देख कर मन मनमें निश्चय कर लिया कि महाराष्ट्रीय डाकुओंके हाथसे बीकानेरकी रक्षा करनेके लिये भागना ही उचित है । इस महा संकटके समय वक्तसिंहकी समान परमसाहसी सेनापतिकी आवश्यकता थी, किन्तु विजयसिंहकी सेनामें वैसा साहसी और निर्भय चित्त कोई भी नायक नहीं था, इस कारण इस भागनेके प्रस्तावमें अधिक सामन्तोंने सम्मति देदी; यह भागनेका समाचार शीघ्र ही सब सेनामें फैल गया, यहां तक कि शत्रुओंको भी इस बातका पता लग गया । सन्ध्या होते ही बीकानेरके महाराजने सेना सहित अपनी राजधानीका मार्ग लिया । इधर रामसिंह राजपूत और महाराष्ट्रीयसेनाको साथ लेकर विजयसिंहके शिविरकी ओर दौड़े । यद्यपि सब सेनाका मैरताकी ओर भागना निश्चय होगया था, परन्तु रामसिंहके सेनासहित आते ही राठौर लोग अपनी २ सेना लेकर अपने २ प्रदेशोंको भाग गये । रामसिंह और महाराष्ट्रनेताने विनाही युद्धके रणक्षेत्रमें अपनी जय पताका फहरा दी । भागे हुए राठौर लोग तोपोंको युद्धमें ही छोड़ गये थे, इस कारण महाराष्ट्रियोंने बड़े आनन्दसे जयध्वनिके साथ उनपर अधिकार कर लिया । राठौर लोगोंने भागनेसे पहिले शोच लिया था कि भगवान् हमारे और विजयसिंहके विरुद्ध है यदि प्रसन्न होता तो क्या भ्रान्तिसे हम अपने ही पक्षकी सेनाके साथ परस्पर युद्धकरते ? इस कारण युद्धसे भागना ही उचित है । यदि यह कुसंस्कार राठौर लोगोंके चित्तमें न घुसता तो निश्चय ही महाराष्ट्रीय लोग जयलक्ष्मीका आलिङ्गन करनेमें समर्थ न होते ।

बीकानेरके महाराजकी समान कृष्ण गढके राठौर राज भी तत्काल अपने राज्यकी ओर भाग गयेथे । सम्पूर्ण सैनिक इसी प्रकार हतवीर्य, भंगसाहस और भयभीत होकर भाग गये, जब विजयसिंह अकेले रह गये तो उन्होंने भी भागनेका निश्चय कर लिया । खूब अन्धेरा होजानेपर विजयसिंहने भी राहिनके सामन्त और बचे हुए रक्षकोंको साथ लेकर नागरकी ओर घोडा हांक दिया । हा ! भाग्य क्या ही प्रबल है ! कई दिन पहिले जिन मारवाडेश्वरके लिये दो लाख मनुष्य जीवनदान करनेके लिये प्रस्तुत थे, इस समय वही मारवाडेश्वर साधारण पुरुषकी समान असहाय अवस्थामें जारहे हैं । समयके प्रभावसे विजयसिंहके सहगामी राहिनके सामन्तने राजाके स्वार्थकी ओर दृष्टि न देकर अपना स्वार्थ सिद्ध किया ।

अपने हाथसे उखाड़ डाला;—जगतसिंहके लिये क्या यह कम संतापकी बात थी; वह जितना ही राणाके व्यौहारका विचार करतेथे उतना ही उनका हृदय दुःखित होताथा अंतमें निश्चय कर लिया कि मेवाडवालोंसे इसका बदला लेंगे । तदनुसार एक बड़ी सेना ले मेवाडपर चढ़ाई की उसवक्त जितनी सेना तैयार कीगई थी, अम्बेरराजके स्थापन समयसे लेकर वैसी सेना कभी भी नहीं तैयार हुईथी । इधरमारवाडके राजा मानसिंहने अपने शत्रुकी मेवाडपर चढ़ाई सुनकर स्वयं उससे लड़नेका विचार किया और अपनी सेनाको ले मेवाडकी ओर आया । लेकिन उसके राज्यमें इस समय भीतरी झगडे उत्पन्न होगये कि जिन्होंने इस कार्यमें अत्यन्त विघ्न किया । सिंहासनके लिये ही यह झगडा पैदा हुआ था । राज्यकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंने मारवाडके सामन्तोंको पृथक् २ श्रेणीमें विभक्त करदियाथा । सहजसे इन झगडोंका निवारण नहीं हुआ इनमें बहुत साधन और रुधिर खर्च हुआथा; इस अवसरको उत्तम समझकर मरहटेलेग भी भीतर घुसगये और राज्यके बलको बहुतायतसे घटादिया । जातिका विवाद ही राज्यके लिये अनर्थका प्रधान कारण है । मारवाड बहुत दिनसे इस विवादकी रंगभूमि होरहाथा । इन झगडोंसे कभी किसीका भला हुआ और किसीका बुरा । मानसिंह इन्हींकी सहायतासे मारवाडके सिंहासनपर बैठाथा । उसने समझलिया था कि बिना विवादकी सहायताके अपना अभिप्राय सिद्ध न होगा; इसी कारण सेना और सामन्तोंमें ऐक्यता फैलानेकी चेष्टा उसने नहीं की थी ।

मानसिंह जगतसिंहसे लड़नेको चला । इतने दिनतक जो लोग सतानेसे दुःखी होगयेथे अब उन्होंने अवसर पाकर शत्रुओंकी तरफदारी की; और मेवाडकी दुर्नीतिका अनुसरण करके एक कल्पित राजाको अपना सर्दार बनाकर कार्य सिद्धि करनेको आगे बढे । उस कल्पित राजाकी प्रचण्ड पताका जैपुरके राजाकी विशाल फौजके बीचमें उडी, महाराजा जैपुर एक लाख २० हजार सेना लेकर चढेथे, मानसिंहके पास इनसे आधी सेना थी मारवाड और अम्बेरके पुरुवुत्तसर नामक स्थानमें दोनों सेनाओंका सामना हुआ । जिस उत्साहके साथ संग्राम आरम्भ हुआथा उससे ज्ञात होताथा कि घोर रण होगा परन्तु वह न हुआ, कारण कि कुछ देरतक युद्ध होनेके पश्चात् मानसिंहके बहुतसे सर्दार कल्पित राजाकी तरफ चलेगये । मानसिंहकी आशा लोप होगई; जिनके ऊपर विश्वास करके संग्राममें आयाथा, अंतमें वही लोग छोडकर चलेगये यह क्या

और इस अंधेरी रातमें उक्त ग्राममें भी घोड़ेके मिलनेकी संभावना नहीं थी; परन्तु विजयसिंह स्वयं ही घोड़ेकी खोजमें घूमने लगे ।

विशेष अनुसंधान करनेके पीछे एक जाट कृषकसे भेंट हुई, विजयसिंहने अपना असली परिचय छिपाकर उससे निश्चय करलिया कि “वह उनको सूंघ्यो-दयसे पहिले नागर पहुंचा देगा और उसके बदले पांच रुपये लेगा ।” किसानने यह भी कहा कि “बाजी साही अर्थात् प्रचलित मुद्रा लूंगा । छद्मवेषी महाराजने इसको स्वीकार कर लिया । वह जाट किसान शीघ्रही अपने खेतीके कामकी एक साधारण बैल गाड़ी लेआया । मारवाडके रत्नासनपर बैठनेवाले महाराज विजयसिंह उसके ऊपर बैठे । विजयसिंह बहुत शीघ्र नागरमें पहुंचनेके लिये व्याकुल थे; इस कारण दोनों बैलोंके मध्यमगतिसे दौड़नेपर भी महाराज “हांक ! हांक” शब्द कहकर गति वृद्धिकी चेष्टा करने लगे । सरलस्वभाव जाटने देखा कि बैल पूरी शक्तिसे दौड़ रहे हैं । इस कारण विजयसिंहके बारम्बार हांक २ शब्द कहनेसे उसका धीरज जाता रहा; उसने क्रोधके साथ कहा कि हांक ! हांक ! तुम हो कौन ? इतनी शीघ्रतासे जानेका क्या प्रयोजन है ? तुमसे वलिष्ठको इतनी शीघ्रतासे पहुंचनेकी अपेक्षा विजयसिंहको सेनासहित भैरताके युद्धमें रक्षा करना शोभनीय है । तुम्हारे व्यवहारसे मालूम होता है कि महाराष्ट्री लोग तुम्हारे पीछे आ रहे हैं । अब वृथा हांक २ शब्द मत कहना कारण कि इससे अधिक वेगसे मैं गाड़ी नहीं लेजा सकूंगा । मारवाडेश्वरने अपनी अवस्था समझकर यद्यपि उसको कुछ प्रत्युत्तर नहीं दिया; परन्तु बीच २ में फिर भी “हांक २ शब्द कहकर विरक्त करने लगे । जाट पहिलेकी समान ही बैलोंको चलाने लगा । जब नागर एक कोशकी दूरीपर रह गया तो प्रभात हो गया, ऊषादेवी हास्यमयी मूर्ति धारण करके दिखाई दी । उस धुंधले प्रकाशमें अधीर आरोहीकी मूर्ति पूर्ण रूपसे देखनेके लिये सरल जाट किसानने अपना मुख फिराया और मारवाडाधीश्वर विजयसिंहको पहचानकर भय और विस्मयसे व्याकुल होगया । राज्येश्वरके साथ एक आसनपर बैठा था, इस कारण भयभीत होकर पृथ्वीपर कूदकर क्षमा प्रार्थना करने लगा । जाटकी सरलतासे प्रसन्न होकर विपत्तिमें पड़े हुए विजयसिंहने मुस्कराकर धीरेसे कहा कि “डरो मत, मैंने तुमको क्षमा कर दिया, गाड़ी हांको ।” राजाकी आज्ञा पाकर जाट फिर अपने आसनपर बैठगया । गाड़ी जब तक राजधानीके द्वारपर न पहुँची—विजयसिंह तब तक बराबर हांक हांक शब्द कहते रहे । इसके अनन्तर नागरमें पहुँचकर विजयसिंहने

बुरा समय था कि जब उसने मानसिंहपर चढ़ाई की। अपने कुकर्मका फल बहुत दिनतक उसको भोगना पड़ा। अपने नगरमें पहुंचकर भी वह सुखी नहीं हो सका, पराजित होकर अनेक कष्ट पानेसे उसकी सेना अत्यंत अधीर होगई थी; तिसपर वेतन न मिलनेसे उसका दुःख और भी बढ़ गया था। वेतन पानेकी आशासे बहुत दिनतक वंद सेना जयपुरमें रही कि जहां उसको अत्यंत कष्ट प्राप्त हुआ। उन सिपाहियोंकी चिताभस्म और उनके घोड़ोंकी हड्डियां बहुत दिनोंतक जैपुरकी चहारदिवारीके निकट पड़ीहुई थीं;—शोभायमान जयपुरने बहुत दिनोंके लिये श्मशान भूमिका रूप धारण किया था। * भगवानकी क्या विचित्र लीलाहै;—भाग्यतरंगका कैसा अद्भुत परिवर्तनहै; जो मानसिंह अपने सामन्त और सदाियोंके द्वारा त्यागा जाकर दुर्दशाके शिखरपर पहुंच चुका था आज वही समस्त विपत्ति और संकटोंसे छुटकारा पाकर राज-कार्य करने लगा। उसके शत्रुओंका नाश होगया। गया हुआ गौरव पुनः प्राप्त हुआ। इस विषयमें उसको अमीरखाँनामक एक दुर्द्धर्ष पठानकी सहायता मिली-थी। भारतवर्षमें जितने पाखंडी मुसलमानोंको आश्रय प्राप्त हुआ है;—जिनकी कलंकमयी नामावली इतिहासके पवित्र पत्रोंको कलंकित कर रही है, अमीरखाँ उन सबमें प्रधान था। इससे पहिले यह अमीरखाँ मानसिंहका शत्रु होकर कल्पित राजाकी तरफदारी करनेलगा परन्तु पश्चात् लोभके वश होकर यह राक्षस कल्पित राजाको छोड़ मानसिंहकी ओर जा मिला। जिस कल्पित राजाने इतनेदिनोंतक अत्यन्त आदर मानसे उसको टिकाया था अब यह पापी उसहीका नाश करनेको तइयार होने लगा। कल्पित राजा और उसके सेवकोंका संहार करनेकी इच्छासे अमीरखाँने उससे मिलना चाहा और एक मसजिदके भीतर दोनोंमें मित्रताका वचन हुआ। अभागा कल्पितराजा अमीरखाँके कपटको नहीं जान-सका, वरन अमीरखाँके अपनी ओर चले आनेसे बहुत ही प्रसन्न हुआ। तथा उसकी कपट मित्रताईको ईश्वरानुग्रह समझकर मनही मनमें भगवानका स्मरण करने लगा। उसने अपने डेरोंमें नाच गाना आरंभ करादिया। जिस समय नाच-ना गाना होरहा था उसही समय दुष्ट अमीरखाँने सेनासहित उनके ऊपर चढ़ाई करके डेरोंकी रस्सियां काटडालीं, और वहीं पर घेरकर सबको गोलियोंसे मारडाला।

* टाडसाहबने अपनी आंखोंसे इस शोचनीय घटनाको देखा था, जो आदमी इस कार्यमें शामिल थे उनसे बात चीत भी हुई थी। सन् १८०८के जनवरीमासमें जयपुरके भीतर होकर जानेके समय टाडसाहबने इस नगरके रेतिले मयदानमें उक्त युद्धके २४ चिह्न देखे थे।

प्रतिद्वन्दी राठौर लोगोंसे बहुत ही डरते थे । पाठकोंको स्मरण होगा कि, भयके कारण ही ईश्वरीसिंहने जघन्य उपायसे वक्तसिंहके प्राण संहार किये थे, विजयसिंहके सहायता मांगनेपर वह भयभीत होगये और जिस अतिथि धर्मको राजपूतजाति सदासे पालन करती चली आरही है उस आतिथ्य धर्मके शिरपर लात मार कर विजयसिंहको बन्दी करना निश्चय कर लिया । किन्तु व्यक्ति विशेषकी राजभक्ति और अनुरक्तिसे उनकी वह पापवासना सर्वथा व्यर्थ होगई । सत्यप्रिय इतिहास लेखक राजपूत जातिकी समालोचना करनेके अवसर समय २ पर अप्रिय बातें लिखनेको बाध्य है, किन्तु उस राजपूत चरित्रका उज्ज्वलांश कहांतक है इस बातको भी उपरोक्त राजभक्ति और अनुरक्ति भलीभाँति प्रगट किये देतीहै । जिस राज्यमें आत्मविग्रहानल प्रज्वलित हो उठे उस राज्यके अधिवासी लोग सर्वथा हिताहित ज्ञान शून्य और आत्मीय मित्र भ्रातृ राजनैतिक सम्बन्ध भूलकर किसी पापके करनेमें भी पराङ्मुख नहीं होते । संसारके प्रत्येक भागकी प्रत्येक जातिमें यह शोचनीय दृश्य दिखाई देताहै । अतः राजपूत जातिमें यह दृश्य न होगा” ऐसी आशा अनुचित है । इंग्लैंड और फ्रांसके आत्मविग्रहानलमें जैसी अत्यन्त भयङ्कर और लोमहर्षण घटनायें घटी थीं, उनको स्मरण करनेपर कौन इस बातको स्वीकार नहीं करेगा “ कि आपसकी लडाईके समय अधिवासी लोग विचार बुद्धि शून्य होकर मनुष्यके न करने योग्य कामोंको कर डालतेहैं । हम जिस घटनाद्वारा उस आत्मविग्रहके समय राजपूत चरित्रका प्रशंसनीय अंश प्रगट करना चाहते हैं, उसको नीचे लिखते हैं ।

भैरतीय लोगोंके सर्वप्रधान अधिनायक शेरसिंहके राजभक्ति दिखानेके लिये जीवन दान करनेका वर्णन ऊपर लिख चुके हैं । वीर श्रेष्ठ शेरसिंह जिस ओरसे लड़ेथे उस पक्षकी पराजय हुई थी, इस कारण वक्तसिंहने शेरसिंहके अधिकृत प्रदेश रियापर अधिकार करके उस परिवारकी एक कनिष्ठ शाखाके अधिकारमें उसका सब स्वत्व देदिया था । वक्तसिंहद्वारा अनुगृहीत उस रियाके नवीन सामन्तका नाम जवानसिंह है । विजयसिंह जिस समय सेनाकी सहायता मांगनेके लिये जयपुरमें पहुंचे थे, जवानसिंह भी उस समय निजहित साधक प्रभुपुत्र विजयसिंहके साथ वहां गये थे । जवानसिंहने जयपुर राज्याधीन अटचोलनामक स्थानके प्रबल शक्तिसम्पन्न सामन्तकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था । उक्त सामन्त जिस प्रकार शक्तिशाली थे उसी प्रकार जयपुर राजके विश्वासपात्र थे । अम्बेरपाति ईश्वरीसिंहने षड्यंत्र जालके समय केवल

अनहलवाडा पट्टनमें राज्य कियाथा, कृष्णाकी माताका जन्म उसी प्राचीन और पवित्र कुलसे था । कृष्णकुमारीने अपने वंशकी समान ही ऊंचे गुण पायेथे । इसी कारणसे 'राजस्थानकी कमलिनी' के नामसे विख्यात थी । परन्तु भारत अपने दुर्भाग्यसे उस देववालाकी अनुपम सुन्दरता तथा लावण्यराशिको देखकर अपने नेत्र तृप्त नहीं करसका, उस कमलिनीके स्वर्गीय सौरभकी सुगंध प्राप्त नहीं करसका । जिस समय उस अनुपम सुन्दरताका प्रगट होना आरम्भ हुआथा, उसी समय वह कल्पवृक्षका सुमन टूटकर अनंत कालके जलमें भिलगया । इस संसारमें कृष्णाकी समान सर्वोत्तम सुन्दरी और अभागिनी स्त्रियें दो ही चार जन्मी हैं; ऊंचे राजकुलमें जन्म लेकर ऐसे असहनीय कष्टको दो चार ही स्त्रियोंने सहाहै, और जन्मभूमिके लिये उस प्रकारकी पीडामयी मृत्युको आलिङ्गन करके जगतमें दो चार ही स्त्रियोंने अपने प्राणोंको बलिहार कियाहै अथवा विश्वासघातीके कपटजालमें थोड़ी ही वीरवाला इस प्रकारसे पीसी गई हैं । कृष्णाका अमूल्य जीवन वृथा ही गया । रोमकी रहनेवाली अभागिनी वर्जिनियाने भी* निराश्रय हो पिताकी छूरीकी नोकपर अपने हृदयको रखदियाथा; और ग्रीसकी सुंदरी इफीजिनिया × ने भी खम्भेपर अपने प्राणोंको न्यौछावर कियाथा । परन्तु इनके अभागे कुटुम्बियोंने इनके पवित्र जीवनके वदलेमें भलीभांतिसे शांति पाईथी । विचारकर देखनेसे यद्यपि पवित्र हृदया सुंदरी कृष्णाकी समान ललना, यूरोपमें नहीं देखी जाती; तो भी विशेष मिलानकरके देखनेसे उसकी असीम सुंदरता, अनुपम गुणराशि, और कठोर अभाग्यके साथ उस देशकी दो स्त्रियोंका किसी २ अंशमें मिलान होसकताहै । कृष्णाके उस शोकोद्दीपक मरण वृत्तांतको श्रवण करनेसे छाती फटतीहै और आँसू

* श्रीमती वर्जिनिया रोमके विख्यात महारथी वियूसियस वर्जिनियसकी बेटीथी । कहतेहैं कि एपियस क्लडियस नामक एक दुष्टने वर्जिनियाको माता मिताके निकटसे बलपूर्वक हरण करनेकी चेष्टा की थी । अपनी प्यारी बेटीके सतीत्व और उसके सन्मानके वचनेका कोई उपाय न देखकर वियूसियसने सबके सामने फोरमक्षेत्रमें उसको अपने हाथसे मारडाला । कहतेहैं कि यह घटना सन् ई०से४४९ वर्ष पहिले हुईथी ।

× इफीजिनिया ग्रीसके महावीर एगोमेमननकी बेटीथी । जब अलिसनामक द्वीपमें ग्रीसवालोंका जंगी जहाज रुक गया तब डियाना देवीकी प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये एगोमेमननने अपनी बेटीको उसके सामने बलिदिया था । परंतु ग्रीसवालोंके पुराणोंको पढ़नेसे जाना जाताहै कि देवीडियानाने इफीजिनियाको बलि नहीं देने दिया तथा उसको हरण करके लेगई और टरिसनगरके मंदिरमें उसको अपनी योगिनी बनाकर रक्खा ।

दिखाई थी । विजयसिंहने भी उनके साथ उसी प्रकारका व्यवहार किया । उन्होंने घोड़ेपर चढ़कर समाचार भेजा कि “ मैं आपके आनेकी बात देख रहा हूँ । ” विश्वासघाती ईश्वरीसिंहने भी इस बातका अर्थ भलीभाँति समझ लिया । मैरतीय सामन्त नेताने समाचार पाते ही अपनी तलवार ग्यानमें कर ली; और ईश्वरीसिंहके सम्मुख आकर आदरके साथ प्रणाम किया । जवानसिंहकी यह राजभक्ति मनुष्यके हृदयपर जिस विचित्र भावका उदय करनेमें समर्थ है, उस राजभक्तिने ईश्वरसिंह नर पिशाचके हृदयतकमें उस विचित्र भावका उदय करदिया था । ईश्वरीसिंहने प्रत्यभिवादन पूर्वक सामन्त मण्डलीको लक्ष्य करके कहा कि “ इस अभूत पूर्व प्रशंसनीय राजभक्तिको देखो ! ऐसे राज सामन्तसे रक्षित राजाके विरुद्ध जय प्राप्त करनेकी आशा वृथा है ।

राजपूत जातिके प्रबल शत्रु महाराष्ट्रियोंको मारवाड निकाल देनेके लिये ही विजयसिंह उस शोचनीय दूरावस्थाके समय अन्यत्र सहायप्राप्तिकी आशासे स्वयं बाहर निकले थे, किन्तु कहीं भी उनका मनोरथ सिद्ध न हुआ, अन्तमें हताश होकर जिस साहस और सावधानीके साथ बाहर निकले, उसी साहस और सावधानीके साथ नगरमें फिर लौटआये । देखते देखते छः मास और समाप्त होगये, तथापि महाराष्ट्री लोग नागरके भीतर रामसिंहकी जयपताका न फहरा सके । किन्तु रामसिंहका माग्यचक्र बढ़ल जानेके कारण मारवाडके अन्यान्य प्रदेशोंको महाराष्ट्रोंने अपने अधिकारमें कर लिया । मारावोट, पूरवत्सार, पाली और सुजात आदिके निवासी रामसिंहकी अधीनता स्वीकार करनेको बाध्य होगये । केवल राजधानी जोधपुर, नागर झालोर सिजवाली और फलोदी प्रदेश उस समय तक विजयसिंहके ही शासनमें रहे । जब एक वर्ष इसी प्रकार घोर विपत्तिमें समाप्त होगया, तब इस विपत्तिसे बचनेके लिये विजयसिंहने एक ऐसे प्रस्तावमें सम्मति दी जिसके कारणसे मारवाड राजका चमकता हुआ रत्न स्वरूप प्रधान प्रदेश बहुतकालके लिये मारवाडसे विच्छिन्न होगयाथा ।

विजयसिंहके अधीनस्थ एक राजपूत और एक अफगानी सैनिकने प्रस्ताव किया कि “ महाराज यदि हमारे कुटुम्बका भरण पोषण भार लेना स्वीकार करें तो इस संपूर्ण विपत्तिके मूलकारण महाराष्ट्रियोंके सेना नायकका हम दोनों मिलकर प्राण संहार कर दें । विजय सिंहने इस बातको स्वीकार कर लिया । दोनों पड़ाति महाशत्रुताके बहानेसे विषम विवाद करते हुए महाराष्ट्र नेताके

ओरसे स्वर्गीय सुकुमार संतानस्नेह उनके रोम २ में अमृतकी वर्षा करनेलगा, दूसरी ओरसे अमीरखांका कठोर उपाय भेवाडकी रक्षाका होनहार कठोर चित्र सामने लाकर उस सुकुमारहृदयको कठोर करनेलगा । एकसाथ ही कोमल और कठोर वृत्तियोंसे मथेजानेके कारण राणाजीका हृदय पैशाचिकपीडासे दुःखित होनेलगा । उनसे स्थिर न रहागया और उन्मत्तकी समान होगये । क्रमानुसार सुकुमार संतानके स्नेहको पानी देकर उन्होंने अपने हृदयको पत्थर बनाया और भेवाडकी रक्षाका दूसरा उपाय न देखकर कृष्णाके मरणको स्वीकारकिया ।

कृष्णकुमारी मृतक होगी;—राजस्थानकी फूलीहुई कमलिनी ललनाललाम राजकुमारी कृष्णकुमारी भेवाडभूमिकी रक्षाके लिये बलि दीजायगी ! परन्तु कौन उसको उत्सर्ग करेगा ? संसारमें ऐसा कौनसा पाखंडी है, मनुष्योंमें ऐसा कौनसा राक्षस है जो हृदयमें पत्थर बांधकर अपने हाथसे उस सुकुमारीके कमलकी समान कोमल कलेजेमें तीखी छूरी चलावेगा ? ऐसा कौन है जो उस शान्त विकच नलिनीको नखाघातसे छिन्नभिन्न करेगा ? इस समस्याकी भीमांसा करनेके लिये राणाजी रनिवासमें ही कई एक सर्दार और कुटुम्बियोंको बुलाकर अनेक प्रकारके तर्क वितर्क करनेलगे । बहुतसा वाद विवाद होनेपर निश्चयहुआ कि इस क्रूर कार्यको करनेके लिये किसी पुरुषको ही नियत करना चाहिये । यदि पुरुषसे यह कार्य न होसके तो कोई स्त्री नियत होगी । भारतवर्षीय राजाओंके रनिवासको यदि एक २ स्वतंत्र राज्य भी कहाजाय तो ठीकही है; कारण कि रनिवासकी बातोंमें बाहरकी बातोंका कुछ दखल ही नहीं रहता इस बातका अनुमान करना कठिन है कि उस रनिवासकी निविड छायाके भीतर कितने अभागोंकी दुर्भाग्यरूपी गांठ लगी रहती है । उसमें धीरे २ प्रजाके सुख दुःखका बीज अंकुरित हुआकरता है । जिनके हाथमें उस बीजके पालन पोषणका भार रहताहै, उसके अतिरिक्त और कोई भी उसे नहीं देखसकता । आज भेवाडके दुर्भाग्यसे राणाजीके विशाल रनिवासकी एक सूनी कक्षामें अभागिनी कृष्णकुमारीके भाग्यकी कठोर लिखाई लिखी जाने लगी । प्रथम तो मनुष्य ही उस कार्यके करनेपर नियत होना निश्चय हुआ ! शिशोदीयकुलके महाराज दौलतसिंह * उस समय रनिवासमें थे । राणाजी परम कुटुम्बी होनेके कारण सबसे पहिले यही नियत

* टाडसाहब कहतेहैं कि “मैं दौलतसिंहको भलीभांति जानताथा । यह सरल और उत्तम स्वभाव वाले थे ।”

उस अजमेर दुर्गकी चौटी पर इस समय बृटिश जयपताका फहरा रही है । यदि राजनैतिक घोषणामें सत्य उक्ति है तो वह पताका समग्र रजवाड़ेका अधिकार-बृटिश भारतका खजाना भरनेके लिये नहीं उडरही है, वरन केवल अति प्राचीन राजपूतराज्योंकी स्वाधीनता और शान्तिरक्षाके लिये, तथा लूटमार अत्याचार और उपद्रवके हाथसे रक्षा करनेके लिये ही बड़े अभिमानके साथ फहरा रही है ।

महाराष्ट्रियोंसे त्यागे हुए रामसिंह राजसिंहासनपर अधिकार और अपनी शासन शक्ति फैलानेके लिये विशेष चेष्टा करने लगे । रामसिंहने अपने चचा और उनके पुत्र विजयसिंहको जीतनेके लिये क्रमसे अठारह बार अपने प्राण संशयमें डाले थे । रामसिंहके प्रधान सहायक ईश्वरीसिंह जब परलोक सिधार गये तो वह निर्वल होगये, तब विजयसिंहके प्रस्तावानुसार केवल संबर सरोवर जिसके अर्द्धांशमें मारवाडराज्यका अधिकार था, वह अर्द्धांश और उस सरोवरमें जयपुरपति ईश्वरीसिंहका जो आधा सत्व था, उसको लेकर जीवनपर्यन्त उसी स्थानपर रहनेको विवश होगये थे ।

कठोर छूरीसे बाहर निकाले जायँगे ? क्या वह कोमल कमल किसी शस्त्रसे टुकड़े २ किया जायगा ? कभी नहीं ? जिस लोहके आघातसे कठोर पत्थरके भी टुकड़े होजातेहैं, आज वही लोहा एक अवलाका हृदय वेधनेमें हार खागया । आज उस स्वर्गीय दीपकको निर्वाणकरनेके लिये विषकी आवश्यकता हुई । एक स्त्रीने वह विष तैयार करके राणाजीके नामसे कृष्णाके हाथमें दिया । सुकुमारी कृष्णाने सरल और धीरभावसे उस विषको अपने हाथमें लेलिया, उसके शिरका एक केशतक नहीं काँपा । न कोई लम्बी श्वास ली । भगवानसे अपने पिताके दीर्घ जीवन और संपत्ति वृद्धिकी प्रार्थना करके अचल होकर उस विषको पीगई । महारानीजी वहीं थीं, वह राणाजीको वारंवार शाप देनेलगीं, उनको मूच्छा आने लगी । परन्तु सरला सुकुमारी कृष्णाके बड़े २ नेत्रोंमें आंसूकी एक बूंद भी नहीं पाईगई ! वह अपने डुपट्टेके आंचलसे माताके आंसू पोंछकर धीर और नम्रभावसे बोली—“ मा तुम क्यों रोती हो मैं तो संसारकी पीडासे छुटकारा पातीहूँ फिर तुम शोक किस कारणसे करती हो ? मैं मरनेसे नहीं डरती और क्यों डरूँ ? मैंने क्या तुम्हारे गर्भसे जन्म नहीं लिया है ? क्या मैं तुम्हारी बेटी नहीं हूँ ? तब मैं मृत्युका भय क्यों करूँगी ? भैया जब कि मैंने राजपूतकुलमें स्त्री होकर जन्म लिया है तब मैंने निश्चय जानालिया था कि एक दिन अपघात मृत्युसे मरना ही पड़ेगा । अभागिनी राजपूत कन्या जिस घडी माताके गर्भसे उत्पन्न होतीहै, उस घडीमें ही उसका मरण * निश्चय है; तो भी मैं इतने दिन तक बचगई, इसके लिये अपने पिताजीको वारंवार धन्यवाद देतीहूँ । ” प्राणोंका नाश करनेवाला विष आज कृष्णकुमारीके प्राणोंसे पराजित हुआ । एक प्याला जहर भी उसका कुछ न करसका । अतएव दूसरा प्याला तैयार किया गया कृष्णा उसको भी प्रसन्नतासे पीगई, इस विषने भी कृष्णाके प्राणोंपर दया की । अनंतर मानो मानवी सहनशीलताकी अंतिम परीक्षा करनेके लिये तीसरी बार विषका प्याला तैयार हुआ ! सुकुमारी कृष्णा उसको भी सरल स्वभावसे पान करगई; एक पलभरके लिये भी उसका हाथ न काँपा उसकी आंखोंमें आंसूकी एक बूंद भी न देखी गई । इस बार भी विधाताने उन पाखण्डियोंका मनोरथ पूरा न होने दिया । तीसरी बार भी विषकं प्यालेको व्यर्थ देखकर सबने अपने मनमें यह निश्चय किया कि जिस मोहिनी मायाने वीर-

* यहां पर राजपूतोंके बालकवधका धिनौना आचार सूचित कियाहै ।

ही अन्तमें उनकी विजय हुई थी । चतुर माधोजीने विचारा कि “राजस्थानके प्रधान २ राज्योंकी इस समय जैसी अवस्था है उसके द्वारा इस प्रदेशमें अपना प्रभुत्व फैलानेका अच्छा अवसर है । ऐसा अवसर फिर नहीं मिलेगा, नवीन बलसे उद्दीप्त जातिके भिन्न प्रान्तमें राज्यस्थापन करनेके लिये जितनी सामग्रियोंकी आवश्यकता होती है, सौभाग्यलक्ष्मीने मेरे लिये वह सामग्री उपस्थित कर दी है । मारवाडके राजा लोग केवल स्वजातीय भिन्न राजगणोंके साथ विषम शत्रुतामय प्रज्वलित करके ही शान्त नहीं हैं, किन्तु उनके राज्यमें आभ्यन्तरिक जातीय विग्रहअग्नि भी भयङ्कर वेगसे प्रज्वलित होकर उनको क्रम २ से अन्तःशरशून्य बनारही है । राजालोग एक दूसरेके ध्वंससाधने और भीतर २ भारतविख्यात महाबली राजपूतजातिकी प्रशंसनीय कीर्तिको लुप्त करनेमें हैं; इस कारण यह सब लक्षण हमारी विजयको सूचित कर रहे हैं ।”

उस जातीय विग्रह और आभ्यन्तरिक विद्रोहमें नवीन शक्तिशाली उन्नतिशील महाराष्ट्रियोंकी सहायता पानेके लिये रजवाडेके सब राजा लोग उस समय व्यग्रहो उठे । और दुर्भाग्यका परिचय देनेवाली दुर्बुद्धिके वशीभूत हुए उन महाराष्ट्रियोंको बड़े आदरपूर्वक अपने २ राज्यमें बुलाने लगे । इसका परिणाम यह हुआ कि सब राजा लोग महाराष्ट्रियोंकी आधीनतारूपी जंजीरमें बँध गये । इस कारण संधियाकी समान क्षमताप्रिय और नवीन राज्यके स्थापन करनेमें उद्यत व्यक्तिकी आशा अपूर्ण रहनेकी संभावना कहां ? पाठकोंको याद होगा कि उदयपुरके महाराजाने अपने भानजे मधुसिंहके जयपुरके सिंहासनको अधि कारमें करनेके लिये महाराष्ट्रियोंकी सहायता ली; और अन्तमें मारवाडकी समान महाराष्ट्रियोंको निर्धारित कर देनेके लिये बाध्य हुए थे ।

यद्यपि उस समय महावीर राजपूत राजा लोगोंमें एकता अदृश्य होगई थी तथापि कुछ शेष थी । ऐसी विजयी ऐसी साहसी वीर जातिमें जो एकता सदा चली आरही है, वह सहसा नष्ट नहीं हो सकती । चौहानोंके साथ जयपुरके राजा लोगोंकी शत्रुता कुछ प्रबल होनेपर भी राठौरोंके साथ कुछ २ भिन्नता बनी हुई थी । मधुसिंह यद्यपि मामा उदयपुरेश्वरकी दया और महाराष्ट्रियोंकी सहायतासे अम्बेर सिंहासनपर बैठ गयेथे, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि वह बहुत दिन इस जगत्में नहीं रह सके । मधुसिंहके परलोक सिंधारनेपर अम्बेरका राज-छत्र प्रतापसिंहके शिरपर सुशोभित हुआ । साहसी अम्बेरवासी गण नये अधीश्वर प्रतापसिंहकी उत्तेजनासे महाराष्ट्रियोंकी अधीनता शृंखलको दुर्बल समझकर

उकसायाथा । अमीरखांका भी हृदय पत्थरकी समान कठोर था, पगन्तु जब यह भयंकर कार्य पूरा होगया और जिस समय यह वृत्तान्त अमीरखांने सुना तब वह उस स्वदेशद्रोही पाखण्डी अजितको वारंवार धिक्कार कठोर स्वरसे कहने लगा “ अरे दगावाज ! राजपूतोंके लायक क्या यही काम है ? हट मेरे सामनेसे दूर हो; मैं तेरे मुखको नहीं देखना चाहता । ” पाखण्डी अजितसिंहका, शक्तावत सरदार वीर, धीर, न्यायपरायण संग्रामसिंहने भी अत्यंत ही तिरस्कार किया था; सत्यमार्गपर धूमतेहुए यह सरदार अपने राजाका भी डर नहीं मानता था; अथवा शत्रुकी तीखी तलवारका भी कुछ ध्यान नहीं करता था । कृष्णाके मरनेके चार दिन पीछे संग्रामसिंह राजधानीमें आया, और अपने आनेकी सूचना बिना ही दिये तीव्रवेगसे राणाके सामने आकर अति कठोर वाणीसे कहनेलगा “ हा कायर ! शिशोदीयकुलके पवित्र और निर्मल मस्तकपर किसने धूल डाली ? शिशोदियाकुलके पवित्र रुधिरको कि जो हजारों वर्षसे बहा चला जाता था आज किसने दूषित करदिया ? बिना दोषके सरला कृष्णाका संहार करनेसे आज शिशोदियाकुलको जो घोर पाप लगाहै उस पापक फलसे निश्चय ही इसका नाश होजायगा । आज मेवाडके इतिहासमें—और वीरवर वाप्पारावलके पवित्र कुलमें जिस गंभीर कलंककी स्याही लगीहै वह किसीसे न छुटाई जायगी, अबसे कोई शिशोदिया वीर अपना शिर नहीं उठासकेगा । हाय ! विधाताने क्षत्रियोंके कुलको निर्मल करनेकी पूरी प्रतिज्ञा करलीहै; आज उसके कठोर लेखसे क्षत्रियोंकी दुर्दशा निकट आन पहुंचीहै । आज वाप्पारावलका वंश लोप हुआ ” तेजस्वी संग्रामसिंहके इन कठोरवचनोंको सुनकर सारी राजसभा कांपगई । लाज, शोक और विपादसे राणा भीमसिंह हाथोंसे वदनको छिपाकर दीनभावसे आंसू बहानेलेगे ।

इसके उपरान्त पाखण्डी अजितकी ओर मुख फिराकर वज्रगंभीर वाणीसे कहा । “ रे शिशोदीयकुल—कलंक ! तुझमें राजपूतोंका रुधिर नहीं बहताहै । तूने जिस प्रकार हमलोगोंको कलंक लगाकर दूषित किया, वैसेही तेरे शिरपर खाक पड़े । तू निःसन्तान रहकर मरे, तुझ पापीका नाम तेरे पापजीवनके साथ पृथ्वीसे लोप होजाय । यह सर्व नाशकारी शीघ्रता किसके लिये थी ? क्या पठानने राजधानीको दलित करदिया था ? रनिवासकी पवित्रताको क्या उसने नष्ट करना चाहा था ? अच्छा, यदि यह मान भी लियाजाय कि उसने ऐसा करनेकी इच्छा की थी, तब क्या तुमपर अपने बड़ेबूढ़ोंकी समान और यथार्थ राजपूतोंकी

सामन्त जवानसिंहने राठौर अश्वारोहियोंको दलबद्ध करके पृथ्वीको कम्पित—और सेंधियाके श्रेष्ठ दलको छिन्नभिन्न करदिया । सेंधियाके सैनिक यद्यपि सुखिल्यात फरासीसी सेनापति डिवाइनके द्वारा भलीभाँति रणशिक्षित हुए थे, किन्तु राठौर अश्वारोहियोंके अतुलनीय बाहुबलके निकट खड़े रहनेमें समर्थ न होकर क्षणमात्रमें नष्ट होगये, और शेष सैनिक प्राणोंके भयसे भागगये । सम्मिलित सेनादलने थोड़े कालमें ही जयलक्ष्मीका आलिङ्गन प्राप्त करलिया । सेंधियाने भी कलङ्कका भार लेकर भागती हुई सेनाका अनुसरण किया, और मथुरामें आकर आश्रय लिया । सुनतेहैं इस महासंग्राममें राजपूतोंने सेंधियाकी जो दुर्दशा और हानि की थी, माधोजी बहुत काल तक उसको विस्मृत और क्षतिपूर्ण न करसके थे । जवानसिंहने महाराष्ट्रियोंके भागनेसे विजयलक्ष्मी प्राप्त करनेके पीछे अजमेरपर द्वितीय बार अधिकार करनेके लिये एक सेनादल भेजदिया । यह कहनेसे अत्युक्ति न होगी कि विजयी सेनादलने विना ही युद्धके अजमेरपर अधिकार करके उसको फिर मारवाडराज्यके अन्तर्भुक्त करदिया । मारवाडेश्वर विजयसिंहने माधोजीके साथ संधि करके प्रति तीन वर्षके पीछे जो बहुतसा धन देना स्वीकार किया था, इस विजयप्राप्तिसे वह सन्धि टूटगई परम तेजस्वी दुर्द्धर्ष साहसी राजपूतजाति—मेवाड, मारवाड अम्बेर आदिके चौहान राठौर लोग यदि एकताकी जंजीरमें बँधे रहें तो विदेशी कोई जाति भी राजवाडेमें किसी प्रकार अपना अधिकार नहीं जमासकती, तङ्गाका युद्ध इस बातकी पूर्ण साक्षी देरहाहै ।

माधोजी तङ्गाके महा समर क्षेत्रमें जयलक्ष्मीकी गोदसे गिर कर यद्यपि दुःखित हृदयसे लौट आये थे, किन्तु बदला लेने और महाराष्ट्र प्रताप प्रभुत्व फिर स्थापित करनेके लिये फिर बड़ी भारी चेष्टा करनेलगे । वह फिर फरासीसी सेनापति डिवाइनके साथ मिलकर श्रेष्ठ सेना संग्रह करने और उसको श्रेष्ठ युद्धशिक्षा दिलानेके लिये व्यग्र हो उठे । रणचतुर विजातीय वीर डिवाइनकी शिक्षा और माधोजीकी सहायतासे जैसी प्रबल बलशाली और समर कुशल सेना बनी थी भारतमें वैसी सेना किसी समय भी नहीं देखी गई । डिवाइनकी पाश्चात्य प्रतिभाके साथ भारतीय शौर्य, वीर्य और साहसने एकत्रित होकर उस सेनादलको सर्वसाधारणके भयका कारण स्वरूप बनादिया । तङ्गाके रणक्षेत्रमें जिस घोर कलङ्ककी स्याहीने महाराष्ट्र वीरत्व गौरव रविको ढक लिया था, माधोजी नवीन सेनाकी सहायतासे उस कलङ्कको दूर करनेके लिये शीघ्र ही संहारमूर्त्ति धारण करके रजवाडेको चलदिये ।

देखकर वह सब कष्ट और पीडाको भूलगयेथे और समझे थे कि पुत्र गिहौट-कुलकी रक्षा करेगा पितरोंको इसके द्वारा जल मिलता रहेगा, परन्तु दुर्भाग्यसे जवानसिंहके कोई पुत्र न हुआ ।

स्वदेशकी दारुण दुरवस्था देखकर अत्यन्त पीडित हो वीर संग्रामसिंहने स्वदेशद्रोही अजितसिंहको जो शाप दियाथा वह भलीभांतिसे पूरा हुआ । इस शोचनीय कार्यके एक महीना बीतनेसे पहिले ही उसकी भार्या अपने दो पुत्रोंके साथ कालकवलित हुई, उसके समस्त सुख जाते रहे, संसारकी ओर माया ममता कुछ न रही आज स्वार्थी अजितसिंह संसारसे उदासीन होगया, आज बुढ़ापेकी संकुचित सीमापर पहुँचकर वह पाप छुड़ानेके लिये प्रार्थना करनेलगा । जिन कुटिल कटाक्षोंसे दिन रात कपटता निकला करतीथी । आज वह सरल होगये; जिस पापरसनासे दिनभर पराई निंदा पराई वदनामी, पराया द्वेष और पापमंत्र निकला करताथा, आज वही राम राम करने लगी; और जो हाथ पापकार्योंके साधनमें सहायता किया करतेथे अब उनमें नारायणके नामकी माला रहने लगी, परन्तु उसका हृदय आजतक भी पवित्र नहीं हुआ एक समय जो हृदय हिंसा, द्वेष, स्वार्थपरता और विश्वासघातकताका आगार बनरहाथा वह आजतक उस नारकीभावसे भलीभांतिसे नहीं छूटसकाहै वह अपने पापोंका प्रायश्चित्त करनेको मंदिरमें घूम कर तप कियाकरताथा, दीन, दरिद्र, और उपवासियोंको धन रत्न और अन्न देताथा परन्तु उस पाशवी दुराकांक्षाको हृदयसे दूर न करसका । पाठकगण ! इस समय उस पापीका नाम लेनेकी अधिक आवश्यकता नहीं है; आओ हम लोग संग्रामसिंहके साथ मिलकर कहें; कि “उसके शिरपर खाक पड़े” दुराचारी अजितने मोहसे विमूढ होकर जो घोर पाप कियेहैं उनसे छूटना कठिनहै । वृथा ही सरला, अवला, वाला कृष्ण-कुमरीका प्राण नाश करनेपर जो कलङ्क उसको लगा यदि गंगाके समस्त पानीसे धोयाजाय तो भी वह न धुलसकेगा ।

—हुआथा, कुछ काल निद्रा लेनेके पीछे जिस समय उन्होंने आनंदभरी आँखोंसे मुझको देखकर जो कृतज्ञता प्रकाश की थी, उसको मैं इस जन्ममें कभी नहीं भूलसकूंगा । ” जवानसिंहने इस कराल रोगसे छुटकारा पाया, तदुपरांत कुमारका मुख्य मंत्री शिरजी मेहता इस रोगमें पडा, इस ग्रससे उसको छुटकारा नहीं मिला, यह शिरजी मेहता कपट जाल फैलानेमें विशेष पारदर्शी था उसने मानो अम्बाजीकी पाठशालामें यह बातें सीखीथीं, टाडसाहब कहतेहैं “ ऐसे चालचलनके आदमी जबतक मेवाडसे दूर न होंगे तबतक मेवाडका किसी भांति संगल नहीं होगा । ”

राठौर राज्यमें समाचार आया कि; माधोजी संधिया बड़ी भारी सेना लेकर रजवाडा आक्रमण करनेके लिये बड़े बमंडसे आ रहे हैं। चिरवीर व्रतावलम्बी राठौर जाति इस समाचारको सुनकर कुछ भी भयभीत न हुई, वरन दुवारा अपने बाहुबल वीरत्व दिखाने—और अपनी जातिके प्रबल शत्रुदलके मथनेका विशेष सुवीता जानकर आनन्दसे उन्मत्त होगये। मारवाडेश्वर विजयसिंह विलक्षण राजनीति कुशल थे; उन्होंने विचारा कि महाराष्ट्रियोंको अपने राज्यके भीतर न घुसाकर राज्यके बाहर ही युद्धाग्नि प्रज्वलित करना उचित है। शीघ्र ही जयपुर पत्तिके पास समाचार भेजागया। अम्बेर और राजपूतसेनाने दुवारा अपने आकाशभेदी शब्द द्वारा पृथिवीको कम्पित करके अपने प्रदेशोंसे युद्धकी ओर प्रस्थान किया। जयपुर राज्यकी उत्तर सीमान्तके पातन नामक नगरमें (तुवारावती) राठौर और जयपुरकी सेना परस्पर मिलकर बड़ी वीरताके साथ आगे बढ़नेलगीं। उस समय पर राठौर कविकुलने जिन सामरिक संगीतोंसे सेनाको उत्तेजित करदिया था, वह सब संगीत मारवाडमें अवतक सुनाई देतेहैं।

यद्यपि एकताका अमृतमय हार धारणकरनेसे राठौर और जयपुरके सैनिक एक मनुष्यकी समान शत्रुओंके विरुद्ध खड़ेहुए थे, यद्यपि जातीय गौरव—जातीय सन्मान—जातीय स्वाधीनता और जन्मभूमिहितैपितामूलक सामरिक संगीतोंने सबहीके हृदय प्रबल उत्साहसे भरदिये थे, किन्तु एक सामान्य कारणसे मारवाडके अल्पवयस्क एक कविके एक संगीतने वह एकताकी जंजीर गुप्तरूपसे तोड़दी। तझाके युद्धमें राठौर लोग ही बड़ी भारी वीरता दिखाकर जयलक्ष्मीका आलिङ्गन प्राप्त करनेमें समर्थ हुए थे, जयपुरके सैनिक वैसी वीरता नहीं दिखासके थे। इस कारण उक्त मारवाडवासी कविने अम्बर सेनाका श्लेष व्यंजक एक संगीत रचना किया। दुर्भाग्यके कारण उस समय वह संगीत राठौर सेनादलमें गाया जानेपर अम्बरके सैनिकोंने अपनेको घोर अपमानित समझा। उस संगीतका एक चरण नीचे लिखाजाताहै।—

“ उदल ताइन अम्बररा राठौरराण । ”

इसका अर्थ यह है कि राठौर वीरोंने ही युद्धस्थलमें नारीस्वरूप अम्बरीय सेनादलकी रक्षा करी थी। विश्वजनीन साक्ष्यको यदि प्रमाणस्वरूप गिनाजाय तो कहना होगा कि इस संगीतने ही युद्धमें शोचनीय फल उत्पन्न किया और

रही । अनन्तर अंगरेज गवर्नमेंटने राणाजीके साथ सन्धि करके मेवाडवालोंको ढाँढस बँधाया ।

सन् १८०६ ई० के वसंतकालमें अंगरेजोंके दूतने इमशानकी समान मेवाड-भूमिमें प्रवेश किया । मेवाडकी दुखस्थाका शोचनीय चित्र उनके नेत्रोंके सामने दिखाई देने लगा । जो मेवाड एक समयमें राजस्थानका नंदनकानन गिना जाता था; जिसके हरे २ खेतोंमें अनेक प्रकारके नाज लहराया करते थे, जिसके नगर गाँव और वस्तियोंमें दिनरात चुहल मची रहती थी आज उसके चारों ओर अगणित खँडहर और टूटे फाटे स्थान दिखाई देते हैं । जिधरको आंख फिराये उसही ओरको प्रकृतिकी शोचनीय और हृदयभेदी शूर्ति दिखाई देगी । कहींपर तो दो चार गांवोंका खेडा नजर आता है—कहींपर कोई नगर विलकुल सूनासा पडा है, गृहमें, गृहस्थ नहीं हैं, बाजारोंमें दूकानदार नहीं हैं—खेतोंमें किसान नहीं हैं, अन्नका नाम नहीं पाया जाता । सबही सूना पडा है;—जो कुछ है वह रुलानेवाला ही है । जहांपर एकवार भी महाराष्ट्रियोंका आगमन होता, वहांकी दुर्दशा शेष सीमाको पहुँच जाती और आठ पहरके भीतर ही वह सुंदरसे सुन्दर स्थान, शोकालय बनजाता था । जहांपर महाराष्ट्री सेना गई, वहींपर सबका विध्वंस किया । परन्तु सुखकी बात यह थी कि समस्त दुष्टोंने अंतिम समयमें अपने २ पाप कर्मोंका फल भलीभाँतिसे पाया था । अम्बाजीने मेवाडकी सम्पत्ति लूटी थी, परन्तु पश्चात् उसको वह सबही लौटानी पड़ी थी । उसकी कठोरता और स्वार्थ-परतासे जो मेवाडकी भारी हानि हुई थी, उसका प्रतिफल उसको भलीभाँतिसे प्राप्त होगया था । जिस संधियासे उसके सौभाग्यका मार्ग साफ होगया था, अम्बाजीने उसका ही निरादर करके ग्वालियरमें अपनी स्वाधीनताकी ध्वजा उड़ायी थी । इस कारण संधिया उससे घोर विद्वेष करने लगा । अम्बाजीको दंड देनेके लिये अवसर देखने लगा । फिर एकदिन उसको एक साधारण छोट्टेसे तम्बूमें कैद करके जलतेहुए अंगारोंसे उसके हाथ पांवकी अंगुलियाँ जला दीं और उसका समस्त धन रत्न छीन लिया । सामने ही अपने समस्त धन रत्नका जाना लोभी अम्बाजीसे न देखा गया । सन्मुख ही एक छोटी विलायती छूरी रक्खी थी अभागने उसको मारकर आत्महत्या करनी चाही । उसने छूरी मार ली, परन्तु अंगरेज दूतके साथ जो डाक्टर साहब थे उन्होंने तत्काल घावको सीदिया । अम्बाजीके अचेतन होने पर उसके खजानेकी ताली सहजसे ही संधियाके हाथ आई; उस समय ५५ लाख रुपया संधियाको अम्बाजीके

भूमिमें शीघ्रताके साथ आनेकी आज्ञा दीगई । मारवाड फिर रणरंगसे प्रकम्पित होगया । मैरताके उस चिर स्मरणीय युद्धस्थलमें अनेक प्रान्तोंसे राठौर वीर आने लगे । जितने राठौर युवक तलवार चलाना जानते थे, वह सब स्वजातीय गौरव और जन्मभूमिके आनन्दसे आआकर सम्मिलित हुए । इस प्रकार सन् १७९० ईस्वीकी १० वीं दिसंबरको तीस सहस्र राठौर सैनिक पातनके युद्धकी कलंककालिमा दूर करनेके लिये बड़े आग्रहके साथ आकर सम्मिलित हुए ।

उस समय राठौर कुलकलङ्क कृष्णगढ़के राजा बहादुरसिंह स्वजातिके गलेमें पराधीनताकी जंजीर डालनेकी विशेष सहायता करके अपना नाम इतिहासमें घृणितरूपसे लिखागये हैं । राठौर राज और राठौर जातिके विश्वासहन्ता बहादुरसिंह रूपनगरके अधिपति सहित दो सौ (२००) नगरपूर्ण प्रदेशका एकत्र उपभोग करते थे । मारवाडेश्वरने वृत्तिस्वरूप ही यह समस्त प्रदेश दोनोंको समर्पण किये थे । यद्यपि यह दोनों स्वाधीनभावसे अपने २ राज्यमें रहते थे, तथापि मारवाडेश्वर अभिषेकके समय आजतक राजटीका अपने हाथसे करते हैं और यह भी जोधपुरेश्वरको शीर्षस्थानीय रूपसे माननेके लिये बाध्य हैं । रूपनगरके स्वामीका बहादुरसिंहके साथ भ्रातृसम्बन्ध था । किसी कारणसे दोनोंमें विवाद होजानेपर बहादुरसिंहने अपने भ्राताकी सब सम्पत्ति लूट ली । इस विवादमें बहादुरसिंहने जब मध्यस्थताका प्रस्ताव किसी प्रकारसे स्वीकार नहीं किया तो अन्तमें विजयसिंहने वहां स्वयं सेना सहित जाकर उनका राज्यभार और सब सम्पत्ति बहादुरसिंहसे दिलवादी थी ।

उपरोक्त घटनाके कुछ ही काल पीछे यह पातनका शोचनीय युद्ध हुआ । बदला लेनेके लिये बहादुरसिंह शीघ्र फरासीसी सेनापति डिवाइनका आश्रय लेकर उनको बड़े आदरके साथ अपनी जन्मभूमिको विध्वंस करानेकी इच्छासे लेआये । डिवाइनने सबसे पहिले रूपनगरपर आक्रमण करके उसको २४ घंटेमें अपने अधिकारमें करलिया । फरासीसी सेनापतिका गोलन्दाज दल कैसा सुशिक्षित था उपरोक्त घटना इस बातको भलीभाँति सूचित कर रही है । इसके पीछे डिवाइनने अजमेर पर आक्रमण किया । राजा विजयसिंहने उस समय माधोजी सेंधियाके निकट अजमेर प्रत्यर्पण और पूर्व संधि प्रबल रखनेका प्रस्ताव भेजा । माधोजीने अजमेरपर अधिकार करके वहीं निवास किया और लकवा, जीवदादा सदाशिवभाऊ तथा अन्यान्य अश्वारोही सैनिकोंके नेता द्वारा संचालित महाराष्ट्रसेना, डिवाइनके अधीनस्थ अस्सी तोपोंके साथ गोलन्दाज

सेनाको लेगया। उनकी प्रचंड गतिको कोई भी नहीं रोकसका, पठानोंने नगरमें प्रवेश किया। राणाजीसे उनका दमन न होसका; राणाका अपमान करके वे लोग नगरवासियोंपर अत्याचार करने लगे, कितने ही अभागोंकी समस्त सम्पत्ति लुटगई, बहुतसे लोगोंकी प्रतिष्ठा धूलमें मिलगई, उन दुराचारियोंका अत्याचार यहांतक बढ़गया कि कोई आदमी भी अपने स्त्री पुत्रोंके साथ सुखसे नहीं रहसकताथा; उनके डरसे कोई स्त्री घरके बाहर पांव नहीं रखतीथी, कोई आदमी भलेमानसका वेप वनाकर उसके सामने नहीं जासकताथा, लूट खसोटका यह हाल था कि यदि किसीके पास कोई उत्तम पगड़ी या अंगरखा देखते तो पाखण्डी गण उसके लेनेकी इच्छा करतेथे इन पिशाचोंके अत्याचारके कुछ चित्र अवतक उदयपुरके टूटेफूटे खंडहरोंमें पाये जातेहैं। आज भी प्रकृतिसती उस भग्नावशेष राशिमेंसे करुणापूर्वक शब्द करतीहुई पठानोंके पाशविक अत्याचारका वृत्तान्त कह रहीहै।

परन्तु इस दुःखको पाकर भी मेवाड भूमि इन पाखण्डियोंके हाथसे नहीं छूटी विना अन्नके पाये नगरके नगर उजड़ गये, राजपूतजातिका जीवन लोप होगया तो भी यह लोग कंकालमालिनी मेवाडभूमिका रुधिर पीनेके लिये तैयारथे। संवत् (१८६७ सन् १८११) में क्रूरचरित्र बापूसेंधियाजी सूत्रेदाकी उपाधि धारण करके सेनासहित उदयपुरमें आपडा। दूसरी ओर अमीरखांकी पठानसेना राजधानीके एक स्थानमें प्रवेश करके भयंकर अत्याचार करतीहुई इस प्रकारसे घूमने लगी कि जैसे श्मशानभूमिमें प्रेत फिराकरतेहैं। कभी २ इन दोनों दलोंके बीचमें किसी लूटी हुई वस्तुके ऊपर घोर झगडा हुआ करता था। इस प्रकारसे परस्पर विवाद करनेवाले दो वैरियोंके बीचमें गिरकर मेवाडभूमि अत्यन्त कष्ट पाने लगी उस कष्टका विचार करनेसे हृदय कम्पायमान होजाताहै। दुराचारी पठान और पिशाचोंकी समान मरहटोंके सताने और परस्पर विवादसे उत्पन्न हुए अत्याचारसे मेवाडभूमिकी रक्षाका कोई उपाय न देखकर राणाजीने निश्चय करलिया कि अपनी मातृभूमि शत्रुओंको भाग करके दे दीजाय। इस वार्त्ताको निश्चय करनेके लिये “धवलमृंगरा (धवलमेरु) नामक स्थानमें एक सभा बुलाई गई * राणाजीके कई एक प्रतिनिधि उस सभामें गयेथे, सभाका अभिप्राय शीघ्रही सबको सुनाया गया। दोनों पिशाचोंकी मनोकामना पूर्ण हुई, मेवाडके घायल शरीरमें फोड़े निकल आये। आज श्मशानको लेकर प्रेत और पिशाचगण

* सतीदास, किशनदास और रूपराम इस सभामें थे।

छुड़ाने और महाराष्ट्रियोंको उचित प्रतिफल देनेके लिये अहोयाके सामन्त माहीदासने बड़े साहसके साथ प्रतिज्ञा करी कि “यातो इस युद्धमें जन्मभूमिको बहुत कालके लिये शत्रुओंके कराल गालसे उद्धार करके जातीय स्वाधीनता प्राप्त करेंगे नहीं तो युद्धमें लडकर प्राण देंगे । यह प्रतिज्ञा करके उन्होंने भीमराजसे सेना आगे बढ़ानेका प्रस्ताव किया, अन्यान्य सम्पूर्ण सामन्त इस प्रस्तावको बड़े आनन्दसे समर्थन करके शत्रुओंकी छातीमें तलवार मारनेके लिये अधीर हो उठे । विशेष करके उस समय एक दल राठौर सेनाने महाराष्ट्रियोंके बोझा ढोनेवाले पशुपालकोंपर आक्रमण करके सब पशु छीन लिये थे; इस कारण राजपूत वीर स्वाभाविक उत्साह, उत्तेजना और आग्रहसे और भी वलिष्ठ दिखाई देने लगे । सब सामन्तोंने भीमराजसे कहा कि—“जिस डिवाइनके अधीनस्थ सुशिक्षित गोलन्दाज दलने पातनके युद्धमें केवल अपना रणकौशल दिखाकर पराजित करदिया था, वह गोलन्दाज दल इस समय नहीं है, इस कारण इस शुभ अवसरपर समराग्नि प्रज्वलित करनेसे अवश्य ही विजय प्राप्तिकी संभावना है, किन्तु दुर्भाग्यके कारण भीमराज इस प्रस्तावको स्वीकार नहीं करसके । हतबुद्धि भीमराजने खूबचन्दका भेजा हुआ एक पत्र बाहर निकालकर दिखाया, प्रधानमंत्रीने उसमें लिखा था कि “जबतक इसमाईलवेग न पहुंच जायँ तबतक किसी प्रकार शत्रुओंपर आक्रमण न करना ।” इसमाईलवेग उस समय नागरमें थे, इस कारण राजभक्त और चिरप्रचलित प्रथाके ऊपर विशेष सन्मान दिखानेवाले राठौर वीर अनिच्छापूर्वक प्रधानमंत्रीकी उस विषमय फलदायक आज्ञाको पालन करनेमें बाध्य होगये । शुभ अवसर व्यर्थ ही चलागया । यदि भीमराज प्रधानमंत्रीकी वह आज्ञा प्रबल रखनेकी चेष्टा न करके उपस्थित राजनैतिक अवस्थानुसार सामन्तलोगोंकी कामना पूरी करदेते, तो हम निश्चयके साथ कहसकतेहैं कि राठौरवीर दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंके एक मनुष्यको युद्धस्थलसे जीवित न लौटने देते ।

समर कुशल डिवाइनने उन कीचडमें आधी घुसीहुई तोपोंको अनेक युक्तियोंसे निकाल लिया और वहांसे बड़ी शीघ्रताके साथ चलकर प्रधान सेनाके साथ आ मिले । राठौर सैनिक जिस समय स्वतःही त्रदला लेनेके लिये अधीर होगये थे, उस समय भीमराजके उस शोचनीय व्याघातसे दुःखित होकर निश्चेष्ट होगये । डिवाइनके आनेकी बात सुनने और राठौरसेनाकी अवस्था तथा प्रधान मंत्रीकी मूर्खताको विचारनेसे कायर बीकानेरके स्वामी अपने

वीर जननी मेवाडभूमि वीरोंसे रहित होकर आज पातालको चलीजाती है, आज सुवर्णभूमिने श्मशानका रूप धारण किया है? अब मेवाडकी वह सुंदरता नहीं है; अब मेवाडका वह ऊंचा सम्मान नहीं है; अब मेवाडकी वह सम्यता तेजस्विता और शूरता नहीं है, आज मेवाड भयंकर श्मशान है, चिताभस्मको हृदयपर लियेहुए अग्निमें श्मशान बनाहुआ है। इसके खेत सूने पड़े हैं, नगर गाँव विध्वंस हुए हैं, घर रीते दिखाई देते हैं। शहरवाले निकाल दिये गये हैं, सरदार और सामन्तलोग डरपोक व कायर कहलाते हैं; राजा और राजपरिवार दुःखित, निरुपाय और निरवलंब हैं। ऐसा कोई नहीं है कि जो महाराजा बाप्पारावलके वीरवंशकी इस घोर दुर्दशासे रक्षा करे! अब ऐसा कोई महापुरुष नहीं है कि जो संजीवन मंत्रके बलसे मेवाडकी अगणित चिताओंपर संजीवन मंत्रका जल छिड़के और नये वीरोंको उत्पन्न करे! इस लिये कहाजाता है कि सुवर्णपुरी मेवाडभूमि आज चिताभस्मयुक्त श्मशान बन गई है। श्मशानभूमिके हृदय विदारी भयंकर चित्रको सौशुण्य बढ़ातेहुये राक्षस पठान और मरहटेलोग मेवाडवालोंका जो कुछ पाते थे, वही छीन लेते थे। भिखारी कहींसे भीख माँगकर चावल लाया है उसके वह चावल भी छीन लिये गये, कोई विचारा मैले कुचैले कपड़े पहिनकर निकला कि उसके कपड़े भी उतार लिये गये। आज मेवाडमें कौनसी बात बाकी है। राजस्थानकी महारानी मेवाडभूमि आज भिखारिन है वरन भिखारिनसे भी दीन और हीन है। मेवाडभूमिकी यह दशा थी, उस समय भी दुराचारी बापूजी संधिया * मेवाडका वचा वचाया धन और सर्दार, सामन्त, वनिये; व किसानोंको कैद करके अजमेरमें ले गया। अजमेरके उन अधियारे कारागारोंमें मेवाडवासी जंजीरोंसे जकड़े हुए पड़े थे। बहुतसे कैदी छूटनेके लिये रुपया देकर छूट गये और जिनके पास कुछ नहीं था उन्होंने उस अधियारे स्थानमें ही लोहेकी जंजीरसे पीड़ा पानेके कारण प्राण त्याग दिये और जो लोग सन् १८१७ ई ० तक जीते रहे, वह उक्त वर्षकी संधिके अनुसार छुटकारा पाकर कंकाल शरीरको साथ लियेहुए जेलखानेसे बाहर आये।

* अंगरेजोंके साथ राणाकी संधि होनेपर बापूजी संधिया अजमेरसे निकाल दिया गया। उसकाल वह मेवाडके भीतर होकर उस स्थानको चला गया कि जहांपर उसने रहनेका विचार किया था। मेवाडके रहेनवाले उससे यहांतक अप्रसन्न होगये थे कि जानेके समय उसके शरीरपर थूका था और अनेक प्रकारके दुर्वचन कहे थे। अहंकारसे पीछेवही दशा होती है जो बापूजी संधियाकी हुई।

उत्साहित हृदयसे कहा, “ युद्धस्थलमें चलो । ” जन्मभूमि और स्वजातिके निमित्त प्राण देनेका संकल्पकरके चार सहस्र राठौर वीर घोड़ोंपर सवार हुए और बहुत शीघ्रतासे युद्धमें पहुंचगये ।

महाराष्ट्रियोंके प्रधान सेनापति डिवाइन अस्सी तोपोंको चतुराईके साथ स्थापित करके प्रतीक्षा कर रहेथे, प्राणोंकी ममता छोडकर उन चार सहस्र दृढ प्रतिज्ञ राठौर अश्वारोहियोंको नंगी तलवार हाथमें लिये आता हुआ देखकर डिवाइनकी तोपें जलते हुए गोले उगलने लगीं; किंतु थोड़ी देरमें ही “ पात-नकी बात मत समझना ” कहकर उन जलते हुए तोपके गोलोंको अग्राह्य करके वह चार सहस्र साहसी राठौर वीर तोपोंके निकट पहुंच गये । सामनेके प्रत्येक पदार्थको नष्ट भ्रष्ट करके तोपोंकी रक्षा करनेवाले महाराष्ट्रियोंको छिन्न भिन्न करदिया और आकाशभेदी शब्दसे शत्रुव्यूहको भेदकर शत्रुओंका नाश करने लगे । उस भयंकर आक्रमणसे भयभीत हुए महाराष्ट्रीलोग पहिले तोपें छोडकर भाग गये थे, हा शोक ! उस समय यदि वहां राठौर पैदल सेनाका एक दल पहुँचकर तोपोंपर अधिकार करलेता तो उस प्रथम आक्रमणमें ही वह चार सहस्र राठौरवीर महाराष्ट्रियोंको पराजित कर देते—तज्ञके युद्धकी अपेक्षा मेरताका यह समर राठौरोंके वीरत्व यश गौरवको प्रबल रूपसे बढ़ा देता, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि राठौर पदातिसैनिक सबसे पहिले ही भाग गये थे ।

राठौरवीर महाराष्ट्रियोंके गोलन्दाजोंको यद्यपि छिन्नभिन्न करके लौट आये थे, किन्तु चतुर डिवाइन उनके लौटते ही सम्पूर्ण तोपोंको फिरसे श्रेणीबद्ध करके राठौरोंके आनेकी प्रतीक्षा करने लगे । रणोन्मत्त राजपूत अश्वारोही एक श्रेणीके महाराष्ट्रियोंको मारकर दूसरी ओर जा रहे थे, इतनेमें डिवाइनके गोलन्दाज बदला लेनेकी इच्छासे उत्तेजित होकर बड़े २ गोकोंकी वर्षा करने लगे तथा उसी समय अन्यान्य सेनादलने आकर उनको चारों ओरसे घेर लिया परमसाहसी राठौरवीर अपनी वीरता दिखाके पीछे एक २ करके सम्पूर्ण वीर पृथ्वीपर शयन कर गये । यह सब वीर चौबीस घंटे तक अचेतन अवस्थामें पड़े रहे, इसके पीछे उनका एक विश्वासी पुराना सेवक वहां आया । रात्रिका समय था और युद्ध समाप्त होनेके पीछे सूसलाधार पानी बरस गया था । इस कारण चलनेकी शक्तिसे हीन होकर घायल वीर विषम यंत्रणा भोग रहे थे । उस सेवकने सबसे पहिले अपने स्वामीको खोजकर थोड़ी सी अफीम सेवन कराई, जब उनको चैतन्यता हुई तो कई चरोंकी सहायतासे उनको युद्धकी भूमिसे

होगई । सबके ऊपर महाराष्ट्रियोंने इस स्वर्गभूमिकी वची वचाई जान भी निकाल ली । इन सब अवस्थाओंका वर्णन पहिले ही लिखा जा चुकाहै अतएव उसका दिग्दर्शन कराना यहांपर पुनराक्ति दोषमें गिनाजायगा । केवल इतना ही कहना उचित है कि उस समय राजपूत लोग अपने प्राणोंको भी भारी समझने लगथ । उस ही संकटके समय मंगलमय विधाताने राजपूतजातिके हृदयमें नवीन बलका संचार किया । महाराष्ट्रीय पठान, पुर्तगीज़, फरासीसी आदिने चोर डाँकुओंकी सहायतासे बडे २ अड्डे अनेक स्थानोंमें बनालिये और बडे बडे भयंकर दल स्थापन कियेथे । इनके द्वारा बहुधा अनर्थ ही हुआ करताथा भारतके तत्ते हृदयपर शान्तिरूपी जल छिड़कनेकी इच्छा करके अंगरेजोंने सबसे पहिले उन दुष्ट दलोंके दमनकरनेका विचार किया । अक्टूबर सन् १८१७ ई०में भारतवर्षके शासनकर्त्ता लार्ड हेस्टिङ्सकी चतुरताके प्रभावसे उन पाखंडियोंके समस्त उद्यम व्यर्थ होगये, उनका दलबल चारों ओरको छिन्नभिन्न होगया । उन समस्त पाखंडियोंके अत्याचारसे छुटकारा पाकर बहुतदिनके पीछे जिसदिन भारतवासियोंने शान्ति प्राप्तकरके अपने कलेजेकी ठंडा किया उस ही दिन सात समुद्रके पार रहनेवाले वणिकवेशी बृटिनलोगोंकी प्रभुता भारतवर्षमें दृढ हुई ।

अंगरेज शासनकर्त्ताके कठोर यत्नसे पाखंडियोंके दल तित्तर वित्तर होगये । परन्तु इसकारणसे सब राजाओंका परस्पर मेल कराना राजनीतिसे सिद्ध समझा गया कि जिससे दुष्टोंका दल इकट्ठा होकर फिर बलवान न होजाय ! यह विचार कर अंगरेज शासनकर्त्ताने राजपूत राजाओंके साथ मंतव्यपत्र प्रेरणकरके मेल करानेके लिये सबको बुलाया । महाराजा जयपुरके अतिरिक्त और सब ही राजाओंने इस प्रस्तावमें अपनी सम्मति दी । दिल्लीमें इस विराट सभाका होना नियत कियागया । इस निमंत्रणके अनुसार अनेक देशोंके राजदूत दिल्लीमें पहुँचे । कई एक सप्ताहोंके बीचमें ही समस्त राजपूत जातिका भाग्यसूत्र बृटिन लोगोंके हाथमें पहुँचगया । उस सन्धिपत्रमें यह निश्चय हुआ कि भीतर ही भीतर राजपूत लोग राजनैतिक स्वाधीनताका सुख भोगें; अंगरेजगवर्नमेंट उनको शत्रुओंके आक्रमण और अत्याचारसे रक्षा करेगी, इसके बदलेमें उसको राजस्वका थोडासा अंश करस्वरूपमें दियाजाय । *

* ईष्ट इण्डिया कंपनीके साथ राणा भीमसिंहकी जो सन्धि हुईथी उसके प्रत्येक सूत्रका अविकल अनुवाद नीचे लिखाजाताहै ।

कर उन्होंने विजयप्राप्तिमें थका पहुंचानेके लिये ही भीमराजको इस आशयका पत्र लिखा था कि “जबतक इसमाईलवेग न पहुंचे तबतक युद्ध मत करना ।” खूबचन्दको जब अपने पक्षकी पराजय कराना स्वीकार थी तो उसने ऐसे जघन्य उपायको अवलम्बन किया, इसमें आश्चर्य क्या है ?

जातिविद्वेष और आभ्यन्तरिक ईर्ष्याने ही राठौरोंको महाराष्ट्रियोंके द्वारा दो बार पराजित कराया । यदि जयपुरकी सेनाके विरुद्ध राठौर कवि निन्दा-सूचक कविता न बनाता, तथा खूबचन्द और भीमराजके बीचमें ईर्ष्यानि-प्रज्वलित न होती तो साहसी राठौर सैनिकवीर निःसंदेह पातन और भैरताके युद्धमें अपनी विजयपताका उड़ाकर जातीय गौरव रविकी तीक्ष्ण किरणोंसे भारतवर्षको दीप्तिमान कर देते । यद्यपि भैरताके अन्तिम युद्धमें चार सहस्र राठौरवीर अपनी जाति और स्वाधीनताके लिये बड़ीभारी वीरता दिखानेके पीछे जीवन बलिदान करके स्वर्ग सिंघार गये थे और यद्यपि इसी कारणसे महाराष्ट्रियोंका प्रताप विशेषरूपसे फैला गया था, तथापि राठौर जातिके वीरत्व विक्रम और साहस शौर्यमें विन्दुमात्र भी लघुता नहीं आई वह क्षत्रियतेज, वह दृढप्रतिज्ञा, वह असीमसाहस, वह महावीरत्व राठौर जातिको ऊंची कक्षाकी वीरश्रेणीमें आजतक परिगणित करा रहे हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं है । *

* कर्नेल टाड इस स्थानपर टिप्पणीमें लिखते हैं कि, “ तीन वर्ष हुए जब मैं इन राजपूत विजेता डिवाइनकी जन्मभूमि कैथोरिकी उपत्यकामें गया था, दो दिनतक इनके साथ बड़े आनन्द पूर्वक रहा । चार सहस्र राजपूतोंने महाराष्ट्र राजपताकाके विरुद्ध युद्ध करके राजपूत स्वाधीनताके लिये अपने प्राण न्योछावर कर दिये थे, यद्यपि मैं इन डिवाइनके दीर्घजीवनकी इच्छा करता हूँ किन्तु इस बातका मुझे बड़ा दुःख है कि “ यह उन राजपूतोंको अधीनताकी जंजीरमें बाँधनेकी इच्छासे अपने संपूर्ण ज्ञान और साहसको लगा देनेके लिये ही जीवित थे । यह राठौर वीरोंकी खूब प्रशंसा करते हैं । जब मैंने इनसे भैरताके युद्धकी बात कही, उस समय पिछले सब दृश्य इनके मनमें जाग उठे, इन्होंने कहा कि “ वह सब बातें स्वप्नकी समान अब मालूम होती हैं । “ स्वदेशी अधीश्वर द्वारा पुरस्कृत, असंख्य प्रिय आत्मीय स्वजनों द्वारा प्रसन्न और स्वदेशी लोगोंद्वारा सम्मानित होकर वह अस्सी वर्षकी अवस्थामें अपनी जन्मभूमिमें निवास करके शान्ति भोग रहे हैं वह जिस गलीमें रहते हैं वह गली प्राच्य जगत्के महा ऐश्वर्य और आडम्बरोंसे सजी हुई है और उन्होंने अपने मकानको भी उसी प्रकारकी सजावटसे मनोहर बना रक्खा है बड़े आश्चर्य की बात है कि जिस समय मैंने इस इतिहासका लिखना आरंभ किया, उस डिवाइनकी एक जीविनी मेरे हाथ लग गई थी । उसके देखनेसे ज्ञात हुआ कि डिवाइन इस बातको नहीं जानते थे कि भैरताके क्षेत्रमें आभ्यन्तरिक ईर्ष्या और गुप्त षड्यन्त्रके कारण राठौर परास्त हुए थे,,

जिन देशी राजाओंने अत्याचारी लोगोंके हाथसे छुटकारा पानेके लिये, संधिकी इच्छा की उन सबमें अधिक राणाजीको संधि करनेकी आवश्यकता थी, इस संधिके द्वारा राणाजीको ही अधिक शांति मिली थी। १६ वीं जनवरी सन् १८१८ को राणाजीने उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये। पीछे फरवरी मासमें ही उस नई संधिके नियमोंकी रक्षा करनेके लिये अंगरेजोंका एक दूत राणाजीके दरबारमें आया। संधियाके सेवकोंने राणाजीके देशपर अन्यायसे अपना अधिकार करलियाथा, उन समस्त देशोंका उद्धार करने तथा उपद्रवी सर्दार और सामन्तोंका दमन करनेके लिये अंगरेजोंका सेनापति मेजर जनरल सर. आर. डंकिन सेना लेकर तैयार हुआ। * रायपुर, राजनगर इत्यादि जो किले थे उनपर विद्रोही सरदारोंने अपना अधिकार करलियाथा। परंतु इस समय वह सब लेलिये गये। सौभाग्यवान, चतुर अंगरेजोंने उसके साथ ही एक विशाल किला अपनेआप भी लेलिया। कमलमेरमें जो राजकीय सेना रहतीथी उसने बहुत दिनोंसे तनखाह नहीं पाई थी। अंगरेज सरकारने उस सब वेतनका भुगतान करके किलेको अपने अधिकारमें करलिया।

कमलमेरके पूर्वभाग स्थित जिहाजपुरसे अंगरेजोंका दूत उदयपुरकी ओर चला उस स्थानसे उदयपुर कोई १४० मील होगा। दूत लिखताहै कि “इतने लम्बे मैदानमें मुझे केवल दो शहर ही बीचमें पड़े, वह भी ऊजड़ होरहेथे। उनकी घनी वस्ती इस समय वीरान होगईथी, मनुष्योंका चिह्न तक दिखलाई नहीं देताथा, चारों ओर वन, वृक्ष और कीकर, करील खड़ेहुये थे; झाड़ियोंमें भयङ्कर वाघोंने अपना स्थान बनालिया था वड़े २ राजमार्ग नष्ट होगये थे। रमणीय देशोंकी आज यह दुर्दशा होरहीथी; विपरीत कालका वह चित्र अबतक नेत्रोंके आगे फिरताहै। राजपूतानेमें भीलवाडा नामक एक बड़ा शहर था, वारह वर्ष पहिले अर्थात् सन् १८०६ ई० के मई महीनेमें इस शहरकी ओर गयाथा उस समय वहां पर ६००० कुटुम्ब अपने परिवारके साथ रहतेथे, साधारण शहरोंकी समान उस समय यह नगर उत्तम श्रेणीका गिनाजाताथा, परन्तु इस

* लार्ड हेस्टिङ्सके द्वारा टाडसाहब ठीक इसी समयमें; “पश्चिमराजपूतप्रदेशोंके पोलिटिकल एजेंट” उपाधि प्राप्त होकर राणाकी राजसभामें लार्डसाहबके प्रतिनिधि नियत हुएथे। सन् १८१७ व १८ ई०के युद्धमें टाडसाहबके अधीनमें उत्तरभागका अंगरेजी लश्कर था और यह अपनी सेनाके समस्त भागोंपर सावधानी रखतेथे। उस समय उन्होंने हुल्कर और बूंदीके राजाओंसे संग्राम किया, और कोटेके राजासे संधि की।

अग्राह्य नहीं है, किन्तु मेरा विश्वास यही है: कि उनकी यह भविष्यद्वाणी कभी सफल न होगी । *

२८ वीं नवम्बर-उस दिन पाँच कोशकी दूरीपर झारोनामक स्थानमें डेरा डाला गया । मैरता छोड़नेके पीछे जिस रणक्षेत्रमें चार सहस्र राठौरवीर जन्मभूमि और स्वाधीनताके लिये बड़ी वीरताके साथ प्राण न्योछावर करके इतिहासमें अपनी जातिका नाम अक्षय करगये हैं, उनकी उस पवित्र लीलाभूमिको देखते हुए आगे बढे । हम जिस मार्गसे चलरहे थे, यदि उसी मार्गमें चलेजाते तो सीधे दिल्ली पहुँच जाते, इस कारण उस मार्गको छोड़कर फिर आरावलीको पार किया और अजमेर पहुँचनेके लिये पूर्वप्रान्तके दक्षिणांशमें होकर जलने लगे । मार्ग श्रेष्ठ और मटी उत्तम है । यद्यपि ग्रामोंके निकट कृषि-कार्यके चिह्न दिखाई देतेहैं, किन्तु गिरीहुई भूमिकी संख्या अधिक है; बेल-वृटे भी दिखाई देतेहैं । बहुत दूरीपर आरावलीकी आकाशभेदी चोटी क्रम २ से दक्षिण पूर्वमें हमारे नेत्रोंसे छिपगई और बीच २ में बहुत ऊँचे २ भूखण्ड दृष्टिको रोकने लगे ।

उस दिन प्रातःकाल ही हमने एक बड़ा विचित्र और मनोहर प्राकृतिक दृश्य देखा; हम जहांतक सोचतेहैं ऐसा बड़ा अनेक मूर्तियुक्त दृश्य हमने किसी समय किसी स्थानपर भी नहीं देखा । उस समय बड़ी भारी सर्दी थी तथा उत्तर पूर्व प्रान्तसे ठंडी २ वायु आ रही थी । पृथ्वी बड़े भारी बरफसे ढकी हुई थी । छोटी २ जड़ी वृष्टिमें विशेष करके गन्ने उस भयंकर शीतसे विलकुल विध्वस्त होगये थे इससे पहिले शीतका प्रादुर्भाव मध्यम होनेसे, अकस्मात् प्राकृतिक परिवर्तनके कारण चेतन और अचेतन सब ही पदार्थ चञ्चल हो उठे । केवल शीतकालमें ही यह रमणीक दृश्य दिखाई देता है । मारवाड निवासी इसको शीतकोट" अर्थात् शरत् कालका महल कहते हैं । पश्चिम प्रान्तमें विस्तृत मरुभूमिके किसान लोग इस दृश्यको " चित्राम" अर्थात् तसवीर और यमुना तथा चम्बलवासीगण इसको " देशा-सुर " कहते हैं । बहुत कालसे इस मरीचिका दृश्यका उल्लेख देखा जाता है ।

* खेदका विषय है कि समयने टाड महोदयकी ही भविष्यद्वाणीको व्यर्थ करदिया । जालिम सिंहकी समान पञ्जाबके रणजीतसिंहने भी भारतवर्षके नक्शेमें बृटिशगवर्नमेंटके शासित स्थानोंमें लाली देखकर कहा था कि " एक दिन सब लाल होजायगा । " इस समय वही बात सत्य हुईहै । यद्यपि देशी राजा लोगोंमें अब भी दो एक नृपति अपनेको स्वाधीन मानतेहैं, परन्तु यह उनकी भूलहै ।

विचित्र है, इस राजकुमारका मुख उसके इतिहासप्रसिद्ध, पराक्रमशाली, राजकुलको शोभायमान करनेवाला था ।

“मैंने सूरजदरवाजेसे उदयपुरमें प्रवेश किया। गमनमार्गके दोनों ओर वृक्ष लगाये गये थे। उस समय भी ज्ञात होता था कि हमलोग एक ऊजड़ और वीरान शहरके भीतर चले जाते हैं । प्रसिद्ध रामप्यारीका (इसका वर्णन पन्द्रहवें अध्यायमें आ चुका है) महल यही था। यह महल राजपूतानेके साधारण राजमहलोंकी समान ही चौकोन व अनेक झंजिलवाला था । उसकी शोभा अत्यंत उत्तम और वर्णन करनेके योग्य थी। चारों ओर जालीदार काम व पृथक् २ दांलानोंमें आमने सामने कोठरियाँ और बीच २ में खुला हुआ दीवानखाना शोभायमान हो रहा था, इसी स्थानमें हमारे स्वागतकी तैयारियाँ की गई थीं । अंगरेज सरकारका रसीडेंट पीछे यहीं रहने लगा । इसी महलकी एक कक्षामें हमारे लिये भोजन बना था । उस भोजनकी तैयारीका क्या वर्णन करें ? पृथक् २ नमकीन और मीठे सैकडों पकवान तैयार किये गये थे, ताजे व सूखे हुए फल भी बहुतायतसे थे । एक हजार रुपयेकी थैली भी वहां रखी गई । राणाके निजके नौकरोंको उस समयके आनंद दिखानेके लिये यह रुपये बटनेको आये थे कारण कि अंगरेजकम्पनीके एजेंट साहबका आना राजधानीमें जिन लोगोंने सूचित किया था उनको इस प्रकारका पुरस्कार देना राजपूत राणाओंकी रीतिके अनुसार ही था । राणाजीकी दूसरी मुलाकातका होना दूसरे दिन निश्चित हुआ ।

“परन्तु दिनके चार बजनेपर राणाजीका मुख्य दीवान, चन्दावतोंका सर्दार चोवदार, भालेदार, इत्यादि हमारे पास आये और कहा कि;—‘राणाजीने आप लोगोंके स्वागत करनेकी तैयारियाँ आजही करली हैं, जहांपर हम लोग ठहरे हुए थे उस स्थानके सामने थोड़ीही देरमें लोगोंकी भारी भीड़ होगई। सबही कोई उत्तम २ वस्त्रभूषण धारण किये चुपचाप * हमारी ओरको देख रहे थे । राजभवनमें जानेके लिये हम लोग मार्गमें आये । उस काल चारों ओरसे “जय-जय ! फिरंगीका राज ।” यह शब्द प्रत्येक मनुष्यके मुखसे निकल रहा था । भाट लोग ऐसे अवसर पर भला कब चुपचाप रह सकते हैं ? उन्होंने अंगरेजोंके एजेंटका नाम अपनी कवितामें डालकर भांति २ से स्तुति करना आरंभ किया । स्थान २ पर वाजेवाले ताललयसे युक्त मनोहर बाजा बज रहे थे ।

* हम लोग अर्थात् एजेंट, मिशनके सेक्रेटरी कप्तान वाघ, लेफ्टिनेंट केरी और डाक्टर डंकन यह चार यूरोपियन थे ।

एक एक स्थानका दृश्य ढका रहा । उस विचित्र दृश्यके ऊपर जितना २ प्रकाश गिरने लगा, यह “चित्राम्” उतना २ ही बदलता हुआ दिखाई देने लगा । सबसे पहिले गंभीर धुँँका परकोटा दिखाई दिया, फिर महल दुर्ग, ऊँची चोटियें आदि रूपसे दिखाई दिया, अब वही सहस्र खण्डोंमें विभक्त अति सूक्ष्म तथा विराटकाय रंगे हुए काचकी समान आकृतियुक्त होगया—क्रमसे वह समस्त रमणीक महल, दुर्ग ऊँची चोटी आदि मानों गलीहुई धातुकी समान शून्य हृदयमें विलीन होगये ।

बहुत दिनतक मेरी यही धारणा थी कि इस प्रदेशकी मृत्तिकाके गुणसे ही यह नैसर्गिक दृश्य दिखाई देतेहैं, विशेष करके यह “चित्राम्” केवल सज्जी अर्थात् क्षार युक्त इस भूमिमें देखा जाताहै । किन्तु इसके अनन्तर मैंने इस प्रदेशके सब स्थानोंमें इस प्रकारके दृश्य देखे । इस प्रदेशकी मट्टी लवण मिली हुई है, इस कारण उसके द्वारा इस प्रकारके दृश्य उत्पन्न होनेकी संभावना है । किन्तु “सिराव” वा “चित्राम्” वा “शीतकोट” वा “देशासुर” दृश्योंमें यह भेद है कि “देशासुर” केवल शीतकालके सिवाय और कभी दिखाई नहीं देता । मैंने सबसे पहले जयपुरमें इस दृश्यको देखा था, ब्रिटिश साम्राज्यके किसी स्थानमें भी मैंने इसको नहीं देखा । जयपुरमें यह पहिले बड़े लंबे चौड़े दुर्ग प्राकार वेष्टित और बुर्ज युक्त नगरकी समान हमारे दृष्टिगोचर हुआ । पथ प्रदर्शकने इसको “शीतकोट कहकर परिचय दिया । किन्तु हमने सहसा उसके वचनमें विश्वास नहीं किया । मैंने इस जीवनमें फिर एक बेर इस प्रकारके विचित्र चित्तहारी दृश्यको देखा किन्तु यह दृश्य अतुलनीय है ।

कोटेके जिस वागकी कोठीमें मैं रहता था, एक दिन प्रभात ही उसकी छत पर चढ़कर टहलने लगा सूर्योदय होते ही वह दृश्य दृष्टिगोचर हुआ । कोटेके दक्षिण पूर्व प्रांतमें कुछ ऊँची शिखरावलीपर दृष्टि डालते ही यह मालूम हुआ कि शिखरमाला मानों तरंगाकारसे शून्य मार्गमें उठती चली जा रही है । वृक्ष और महलोंकी श्रेणियें विचित्र चमत्कार मूर्तिमें मानों इन्द्रजाल मन्त्रसे बनी हुई हैं । मैं कई मिनटतक इस आश्चर्यरूप दृश्यका असली कारण नहीं समझ सका; अन्तमें निश्चय किया कि— मरीचिका द्वारा ही यह दृश्य पूर्ण रूप धारण करके धीरे पवनसे आकाशमें उठाया जाता है । देखते २ वह सम्पूर्ण दृश्य धीरे २ शिखरके निकट होकर चलागया ।

“इस राजवाड़ेके बड़े दरवाजेपर सिन्धीसिपाहियोंका पहिरा था। शनिवार होनेके कारण नियमानुसार उस दिन शक्तावत सर्दार लोग दीवानखानेमें आगत स्वागतका प्रबन्ध कर रहे थे। राजभवनसे लेकर दीवानखानेतक पहुँचनेके मार्गमें दोनों ओर राजपूत लोग शस्त्रवांधे खड़े थे। राजभवनकी भीतरी बगलमें एक गणेशदरवाजा है, इसके भीतर प्रवेश करनेपर दीवानखानेके जानेका मार्ग मिलता है। दीवानखानेकी सीढ़ियोंपर—जो कि पत्थरसे बनी हुई थीं—हम लोग चढ़कर गये। जीनेपर जानेके समय ललकारकर आगमनकी सूचना देनेवाले बहुतसे चौबदार भी खड़े हुए वहाँपर दिखाई दिये। दीवानखानेमें जानेके लिये कितने एक दालानोंको लांघकर जाना पड़ता है। दीवानखानेके द्वारपर पहुँचतेही भालेदारने चिल्लाकर सूचित किया कि “अंगरेजोंका वकील महाराजसे मुलाकात करनेके लिये हाजिर है।” यह सुनते ही राणाजी सिंहासनसे उठकर कई परग आगे आये, उनके उठते ही साथमें सरदारोंने भी उठकर हम लोगोंको खडी ताजीम दी। दिल्लीदरवारकी सभान यहाँकी सजावट दिखलाई देती थी। सिंहासनके सम्मुख ही हमारे लिये स्थान मिला था मरेठोंकी चढाईके समय उदयपुरके दरवारमें बैठनेके लिये पेशवाको जो स्थान दिया गया था वही स्थान आज अंग्रेजी वकीलमंडलीको मिला। जिस महलमें यह दरवार हुआ था उसको ‘सूर्यमहलके’ नामसे पुकारते हैं। ‘सूर्यमहल’ नाम रखनेका यह कारण था कि इसमें जो चित्रादि बनाए गये थे उनमें सूर्यका चित्र मुख्य और मध्यभागमें खेंचा गया था। जहाँ सूर्यका चित्र था, वहीं पर राणाजीका सिंहासन शोभायमान था। उस सिंहासनपर चांदीके चार पतले खंभोंमें मखमली चंदोवा बना हुआ था। यह सिंहासन या राजगद्दी ऊंची बैठकपर है; उसपर कलावत्के कामकी मखमली चादर बिछ रही थी। दरवारके मुख्य सोलह सर्दार अपनी २ योग्यताके अनुसार राणाजीके दाहिने और बायें बैठे हुए थे। उनसे आगे एक बगलको राजकुमार जवानसिंह व उमरावसिंह बैठे हुए थे और २ स्थानोंपर दूसरे सर्दार लोग विराजमान थे। राणाजीके सम्मुख मुलकी दीवानका आसन था। पिछली ओर राणाजीके विशेष कर्मचारी व अधिकारी व नौकर चाकर आदि विश्वासी लोग बैठे थे। उस समय राणाजीका यह आनन्द मानसिक और अनिर्वचनीय था। अंगरेजी वकीलसे मुलाकात होनेपर आज तक जो जो दुःख व संकट राणाजीको भोगने पड़े थे, उन सबका थोड़ेहीमें परन्तु श्रवणकरनेवालेके हृदय पर प्रभाव करनेवाला वर्णन राणाजीने एजेंटसे कह सुनाया। तदनुसार यह

जोड़े खड़ी है । यह स्त्री अपने स्वामीके शवके साथ चितामें भस्मीभूत होकर स्वर्गलोकको सिधारी थीं । उस मन्दिरकी दीवारपर यह खुदाई है— “१६८९ संवत्के (सन् १६३३ ईस्वी) माघकी द्वितीयाको महाराज जशवन्तसिंहने शत्रु (औरङ्गजेब) की सेनाको आक्रमण किया था; उसी समय मैरतीय सम्प्रदायके ठाकुर हरकर्णदास मारे गये थे । उन्हींके स्मरणार्थ संवत् १६९७ के माघ मासमें यह स्मारक मन्दिर बनाया गया है ।”

२९ वीं नवम्बर ।—पाँचकोशकी दूरीपर अलनिवासमें डेरा डाला गया । मार्गके अधविचमें रियानगर विराजमान है । मैरतीय सम्प्रदायके जिन सर्वप्रधान नेताका विषय हमने कई जगह लिखा है यह रियाही उन सामन्तकी निवासभूमि है । नगर बड़ा है, निवासियोंकी संख्या भी अधिक है, नगरके चारोंओर दृढ पत्थरका परकोटा है, उक्त पत्थरको यहांके लोग मरुर कहते हैं, रियाके वर्त्तमान सामन्तका नाम बदनसिंह है । मारवाडके सर्व श्रेष्ठ आठ सामन्तोंमें यही एक प्रधान हैं । नगर अब भी “शेरसिंहकारिया” इस नामसे पुकारा जाता है । पाठकोंको याद होगा कि, महावीर शेरसिंहने अपने अधीश्वर रामसिंहकी ओरसे वक्तसिंहके विरुद्ध युद्ध करके अपने प्राण न्यौछावर किये थे । नगर ऊंची भूमिके ऊपर स्थापित है, इसके ऊपरसे पर्वतमालाके सन्मुखवाले प्रदेशोंका रमणीक दृश्य दिखाई देता है । नगरसे आरंभ करके सीमान्ततक ऊंची चोटीके पर्वततक बड़े २ समृद्धिशाली ग्राम बसे हुए हैं । बीच २ में इस प्रदेशके असाधारण बेल बूटे दिखाई देते हैं ।

आरावली पर्वतवासी दुर्दान्त चरित्र माहीरलोग कैसे अत्याचारी और दुर्द्धर्ष साहसी हैं, मैंने यहांके बने एक समाधिमन्दिरकी दीवारपर खुदेहुए लेखद्वारा इस बातका विलक्षण प्रमाण पाया । उस लेखकी नकल यह है,— “संवत् १८३५ के (सन् १७७९ ईस्वी) माघकृष्ण तृतीया सोमवारके दिन माहीरलोगोंके आक्रमणसे नगर रक्षाके लिये भूपालसिंहने युद्ध किया था, वह अपनी स्त्रीकी सतीत्व रक्षा करनेके लिये उसका शिर अपने हाथसे काटकर युद्धभूमिमें शयन करगये थे ।” * पचासवर्ष पहिले माहीरजाति उपरोक्त प्रकारसे विक्रान्त और दुर्दान्त थी, उससे आगे इनके अत्याचार बढ़तेही गये । शिखरके दोनों प्रान्तमें जो राठौर सामन्तोंके ग्राम हैं, उनमें एक सामन्त वंश-

* यहांके एक और स्मारकमन्दिरमें लिखाथा कि, :रियालोगोंके संवत् १८१३ में मैरिया आक्रमण करनेपर वाओरिजातिके सिवया मारेगये थे ।

पिताके साथ नहीं आयाथा, परन्तु एजेंट साहवने उसके लिये भी एक घोडा, व ऊपर उक्त वस्तुओंसे भरे हुए ११ पात्र नज़रानेके राणाजीके आगे रखे। राणाजीका दूसरा पुत्र उमरावका भ्राता जवानसिंह साथही था, उसको एजेंट साहवने एक घोडा व ९ पात्रोंका नज़राना दिया । इनके अतिरिक्त कर्मचारी, व सर्दारादिको भी उनकी योग्यताके अनुसार नज़राना दियागया । इस भेंटमें, एजेंट साहवको २००००) रु० खर्च करने पडे। इस साक्षात् प्रतिसाक्षात् व भेंट लेनेदेनेकी वार्त्ताका वर्णन राणाके सर्दार तथा सेवक लोग कई सप्ताहतक परस्पर करतेरहे । उनको इसका वर्णन करते हुए आनन्द सा ज्ञात होताथा ।

राणाजीका चरित्र अत्यंत महान, मर्यादाके सर्वथा योग्य नहीं था । प्रजापालनके समस्त गुण उनमें थे परंतु मनकी दुर्बलताके कारण उनसे कोई कार्य नहीं होसकताथा । आडम्बर और दिखावेने तथा साधारण आनंद और वृथा उदारताने उनके हृदयपर अपना अधिकार करलियाथा । जिस समय यह प्रवृत्तियां जोर पकड़जातीथीं उसी समय वह उनके पूर्ण करनेकी चेष्टा करतेथे; तबतक राजकार्यमें उनका मन नहीं लगता था । उस कालतक वह अपनी न्यायानुसार प्रभुताके स्थापनकरने और राज्यका संस्कार करनेमें दूसरे आदमीका मुह देखा करतेथे । चित्तमें स्थिरताका नाम तक नहीं था । जन्मसे दुःख ही देखे थे, इस कारण शांतिका न होना कोई विचित्र बात नहीं थी । बहुत दिनोंतक दुःख पाकर जिस समय सबसे पहिले विश्रामदायिनी निद्राका सुख भोगा उस समय वह किसी झंझटमें नहीं पडना चाहते थे । राजस्थानमें उनकी समान मंत्रणाकुशल राजा दूसरा कोई नहीं था; परन्तु दुःखकी बात यह है कि वह कदाचित ही अपने सिद्धान्तके अनुसार कार्य करतेथे । उनके परामर्शदाताओंमें केवल किशनदास दृढप्रतिज्ञ और चतुर था, यह बहुत दिनोंतक राणाजीका दूत रहा; उसके यत्न और चेष्टासे मेवाड और राणाजीका बहुत कुछ उपकार हुआथा, परंतु दुःखकी बातहै कि मेवाड भूमि शीघ्रही उस पुरुष रत्नको खो बैठी, राजनीतिविशारद किशनदास अकालमें ही परलोक बासी हुआ ।

मेवाडराज्यका संस्कार करनेकी इच्छासे ब्रिटिश एजेंटने सबसे पहिले, उपद्रवी सर्दार तथा सामंतोंको राणाके वशमें लानेका यत्न किया । उसको भलीभांतिसे ज्ञात था कि इन लोगोंको राजसभामें लाते ही अभिप्राय सिद्ध हो जायगा, जिन

शिखरके बाहर स्थापित है, किंतु पूषानगर और उससे मिलेहुए वारह ग्राम, विजाथाल और उसके पश्चिम प्रांतवर्ती सम्पूर्ण करद ग्राम भी अजमेरके अंतर्भूत हैं; यह सब प्रदेश यदि पुराने अधीश्वर मारवाड राजको लौटादिये जावें तो वह उनको बड़ी कृतज्ञताके साथ स्वीकार करसकते हैं ।

गोविंदगढके कुछ दूरीपर पश्चिममें एक नदीको पार करके आगे चले । उसका नाम शुभ्रमती है, कोई २ इसको लूनी नदी भी कहते हैं । उक्त शुभ्रमती और सरस्वती नामकी एक दूसरी नदी, दोनों पुष्कर सरोवरसे बाहर निकलकर आपसमें मिल गई हैं ।

१ ली दिसम्बर ।— वहांसे चलकर चार कोशकी दूरीपर सुप्रसिद्ध हिन्दूतीर्थ पुष्करसरोवरपर पहुँचे इस मार्गकी भूमि रेतसे भरी है । नन्दनाम सरस्वतीको उतरकर आये । उक्त नदीके दोनों किनारोंपर दश २ फिट ऊँची घास उत्पन्न होती है । आभ्यन्तरिक प्रदेशके अनेक स्थानोंमें वह सब घास गाड़ियोंद्वारा पहुँचाई जाती है । यह घास छप्पर छानेके लिये बहुत उपयोगी है । तथा हाथियोंका चूथ भी इसको बड़े आनन्दसे खालेता है । वर्तमान पुष्करसरोवरके दो कोशकी दूरीपर प्राचीन पुष्कर विराजमान है; मन्दारके पुरीहर लोगोंके अन्तिम राजाने इसको खुदवाया था । उस प्राचीन सरोवरसे निकली हुई सरस्वती नदी हमने फिर उपत्यकाके निकट बहती हुई देखी । उपत्याके मुहानेपर बालूका स्तूप आधे कोश तक चला गया है । समतल भूमिसे आई हुई वायुके द्वारा यह रेतका स्तूप बन गया है । बीच २ में यह रेतका स्तूप बहुत ऊँचा होगया । यह स्तूप मानों उपत्यकामें प्रवेशद्वारके परकोटे रूपसे विराजमान है । दक्षिणभागके पर्वतके लाल पत्थरोंमें बड़ा मनोहर दृश्य दिखाई देता है । उस नन्दनामक शृङ्गके ऊपर आद्याशक्तिका मन्दिर बना हुआ है । उस प्रान्तके पर्वतके वैसे ही रंगके पत्थर हैं; चोटी बहुत ऊँची चली गई है । दक्षिणभागकी पर्वतमाला लाल पत्थरोंकी है; तथा उसके शिखर सफेद रंगके हैं ।

भारतवर्षमें पुष्कर बहुत प्रसिद्ध और पवित्र तीर्थ है । इसकी पवित्रताकी तुलना केवल तिब्बतके मानसरोवरके साथ की जासकती है पुष्करसरोवर उपत्यकाके ठीक मध्यस्थलमें विराजमान है । यहांपर उपत्यकामें बहुतसे मकान बने हुए हैं । भारतवर्षके धर्मानुरागी राजा और धनाढ्य लोगोंने इस सरोवरके तटको अनगिन्त मन्दिर, देवालय, संगीतशाला स्मारकचिह्न आदिके द्वारा अत्यन्त शोभायमान करदिया है । पूर्व प्रान्तके सिवाय सरोवरके तीनों ओर रेतके शिखर हैं । सरोवरकी आकृति वृत्ताभासकी समान है । केवल पूर्वका तट छोड़कर शेष

उन वाक्योंके भीतर जो गंभीर और हृदयउत्तेजक भाव विराजमान था, उसका विचार करनेसे स्वदेशद्रोही और पाखण्डियोंके हृदयमें भी देशानुरागका प्रकाश होजाता है। और जिनलोगोंके मनमें ऐसा निश्चयहै कि राजपूतलोग स्वदेशप्रेमिक नहीं हैं उनके भी ज्ञाननेत्र खुलकर उनको समझादेंगे कि स्वदेशप्रेमिकताका हिंदूसंतानको सदासे अभ्यासहै। भारतके जिस किसी स्थानमें जो कोई मेवाड़ी गुप्त या प्रगट रीतिसे बसता था उस विज्ञापनपत्रके पाते ही वह उत्साहके साथ कह-उठा कि;- “शत्रुका अत्याचार अथवा देशद्रोही पाखण्डियोंके सतानेको कुछ भी न समझेंगे; कोई किसीप्रकारसे हमको अपने “वापोता” × से अलग न करसकेगा” यद्यपि वह समय बीतगयाहै, यद्यपि राजपूतोंकी वह महानता वह वीरता और वह गौरव गरिमा कालरूपी समुद्रमें लीन होगई है, तो भी मेवा-डके किसानोंकी अटल भक्ति जिसको कि वह जन्मभूमिमें रखतेहैं, उसके दशवें भागका एक भाग भी लेखनी द्वारा लिखकर प्रगट नहीं किया जासकता। दरिद्र-ताके विराटचक्रमें जो लोग कभी नहीं पड़े हैं, निराशाके हृदयवेधी अंकुश लग-नेके पीछे जिनको आशारूपी जीवनदायिनी शांति नहीं मिली है उनकेलिये तो यह सप्रस्त वृत्तांत किस्सा कहानी जानपडेगा; परंतु जो लोग इन सताये हुए आर्य संतानोंका हृदयविदारक, आर्त्तनाद अपने कानोंसे सुनचुके हैं, जिन्होंने आंखोंसे देखाहै कि मरहटोंके घोर अत्याचारसे राजस्थानका एक २ देश एक वार ही विध्वंस होगया है; कितने नगर भस्म होगयेहैं, विचारे किसानलोगोंके कितने ही खेत ऊजड़ होचुके हैं और महाराष्ट्रियोंके घोड़ोंने अपने दांतोंसे जिनको छिन्न भिन्न करदियाहै, कितने गृह-स्थोंका सर्वस्व लूटागया और गाय, बैल, मरहटोंके डेरोंमें पहुंचे, तथा नगरवासी और गांवके रहनेवाले भेड वकरियोंकी नाईं जंजीरोंसे बांधकर देशसे निकाले गयेहैं;-वही लोग केवल समझ सकेंगे, कि बहुत दिनोंके पीछे दुःखसे छुटकारा पाकर मेवाडवासियोंने सुखका कैसा अनुभव कियाथा। जिस दिन उनके हाथ पैरोंसे जंजीरें दूर हुईं, जिस दिन वह वनवासके लम्बे दुःखसे छुटकारा पाय विदेशसे चलकर अपने घर आये, जिस दिन मातृभूमिके शांति निकेतनमें आय पिता, पुत्र, भ्राता, बहिन, वंधु, बांधव इत्यादि बहुत दिनोंके पीछे एक दूसरेको हृदयसे लगाकर आनंदके आंसू वहाने लगे;-शांतिका सुखदायी स्थान, संसार-रूपी मरुभूमिका शीतल छाया कुंज, हृदयकी आशा विपासाका केन्द्रस्थल

× दादे परदादेके रहनेकी भूमिको राजपूतलोग “वापोता” कहतेहैं।

प्रगट हुई, अपने आसनपर अन्य स्त्रीको बैठा देख महाक्रोधके साथ रत्नगिरिपर जाकर अदृश्य होगई । जिस स्थानसे सावित्री अंतर्द्धान हुई थीं अकस्मात् उस स्थानपर एक झरना उत्पन्न होगया । वह इस समय “ सावित्री झरना ” इस नामसे विख्यात है । उस झरनेके निकट ही सावित्री देवीका मन्दिर विराजमान है । पुष्कर तीर्थ यह एक सामान्य दृश्य नहीं है ।

पुष्कर सरोवरके पास जो बहुत ऊंचा रेतका स्तूप दिखाई देता है, उसके विषयमें ऐसी जनश्रुति है कि, यज्ञस्थलमें देवदेव महादेव प्रज्वलित आहुति दान करके धतूरा पीनेके कारण अग्निका विना निवारण किये विह्वल चित्तसे अपने स्थानको चलेगये । धीरे २ अग्नि भयंकर रूप धारण करके संसारके जलानेको उद्यत हुई । तब ब्रह्माजीने वहां आकर बालुकाद्वारा अग्निको विलकुल बुझा दिया । इस कारणसे ही उपत्यकाके मूलमें बालुका पर्वत उत्पन्न हुआ है ।

एक और जनश्रुति है कि, कलियुगमें मंदौरके एक राजा शिकार खेलते हुए वहां आपहुंचे; इस सावित्री झरनेमें स्नान करनेसे उनका एक असाध्य रोग दूर होगया । महाराजने जाते समय मार्गकी पहिचानके लिये अपनी पगड़ी एक वृक्षकी शाखामें बांध दी । वह अपने राज्यसे बहुतसे मनुष्योंको साथ लेकर यहां फिर आये और उनके द्वारा उक्त सरोवर खुदवाया । यहांके ब्राह्मण लोगोंने मुझसे कहाकि “हमारे पूर्वपुरुषोंने उक्त पुरीहर राजाके निकटसे पुष्करतीर्थकी भूवृत्ति प्राप्तिके बहुतसे अनुशासनपत्र प्राप्त किये थे । किन्तु मैंने केवल एक ताम्रानुशासन लिपिका फारसी भाषामें अनुवाद पाया । अनेक समयपर अनेक प्रान्तके अधीश्वरोंने देवलों और धर्मशालाओंके व्यय निर्वाहार्थ जितने अनुशासनपत्र दिये हैं; मुझको उनमेंसे बहुतसे अनुशासन पत्रोंकी नकल मिली ।

अजमेरकी चौहानजातिके सुप्रसिद्ध महाराज विशालदेवका नाम इस पवित्र तीर्थमें आजतक प्रतिध्वनित हो रहा है । विशालदेवके प्रतिष्ठित आदिपुरुष अजपाल इस सरोवरके ठीक दक्षिण भागमें “ नागपहाड ” अर्थात् सर्प गिरिपर जिस स्थानमें निवास करते थे, ब्राह्मण उस स्थानको भी यात्रियोंको दिखाते हैं । वास्तवमें उस स्थानपर “अजपालका” ध्वंसावशिष्ट दुर्ग अवतक दिखाई देता है । यह आदि पुरुष वकारियोंके पालनेके कारण “अजपाल नामसे विख्यात हुए थे । अजपाल इस तीर्थके एक संन्यासीको प्रतिदिन बकरीका दूध दिया करते थे; संन्यासीके सन्तुष्ट होनेपर उनके ही वरदानसे राज्येश्वर हुए थे । यह पुष्कर तीर्थ उनकी जन्मभूमि थी, इस कारण ममताके कारण उन्होंने सबसे श्रेष्ठ सर्पगिरके

रहनेके क्लेशसे छुटकारा पाकर अपने देशको लौटआये; परंतु उनके पास ऐसा कोई सहारा नहीं था कि जिसकी सहायतासे वह शिल्प और वाणिज्य व्यौपारकी उन्नति कर सकें। जो विदेशी वणिक, और व्यौपारी तथा सेठलोग मेवाडमें रहतेथे महाराष्ट्रियोंके उपद्रवमें वह लोग मारवाडको छोड़कर अपने २ देशको चलेगये; और मेवाड जिनकी जन्मभूमि थी, और जिन्होंने प्रचंड अत्याचारको सहन करके भी जन्मभूमिका रहना नहीं छोड़ा, ऐसे लोग अन्यान्य मेवाडवालोंकी समान अत्यंत ही दरिद्र होगयेथे। राजकोष सूनाहै, प्रजाके पास पैसा नहीं। जिन्होंने समस्त अत्याचारोंको सहन करके हृदयका दाव लगाय अपने इकट्ठे कियेहुए धनको बचा लिया था, राणाजीने जब उन लोगोंसे ऋण माँगा तब वे ३६) सैकडेका सूद माँगने लगे। विवश होकर वही सूद देनापड़ा। इस लिये राणाजीका ऋण अधिक बढ़गया था। इन समस्त संकटोंसे उद्धार प्राप्त होनेका दूसरा उपाय न देखकर राणाजीने विदेशीय वणिक और सेठोंको बुलाया। मेवाडकी दुर्दशा देखकर कदाचित किसी वनिये या सेठको राणाका विश्वास न हो, इस शंकासे ब्रिटिश एजेंटने राणाका और अपना लिखाहुआ एक २ प्रतिज्ञापत्र उनके पास भेजा। परन्तु इसके सम्बन्धमें जो कुछ शंका एजेंटसाहबको हुई थी, वही आगे आई। भारतके वणिकोंने मेवाडके समस्त नगरोंमें शाखा कार्यालय स्थापन किये; परन्तु मूल कार्यालयके स्थापन करनेकी किसीको हिम्मत नहीं पड़ी। उन समस्त शाखा-कार्यालयोंमें उनका एक २ कारिन्दा देश काल और पात्रका विचार करके अपने कार्यका निर्वाह करने लगा। जिन बुरे नियमोंसे बाहिरी वाणिज्यकी उन्नतिके मार्गमें रोक होगई थी वह सब रोक टोक एकसाथ ही जाती रही। तथा पण्यद्रव्यादि लाने ले जानेके लिये देशके स्थान २ में बहुत खर्चके कार्यालय स्थापन कियेथे वह सब उठाकर उनके बदलेमें बहुत उत्तम बन्दोबस्त किया गया। इस प्रकार मेवाडके वाणिज्य स्रोतके विरुद्ध जो रुकावटें थीं, उनके दूर होनेसे धीरे २ मेवाडकी उन्नति होने लगी।

मेवाडमें भीलवाडा नामक एक प्रसिद्ध वाणिज्य नगरहै। पहिले ही कहा-येहैं कि इसही भीलवाडेको महाराष्ट्रियोंने भलीभांतिसे लूट लिया था। इसकी दुर्दशा पहिले ही कही जा चुकीहै। आज ब्रिटिश एजेंटके उत्तम बन्दोबस्तसे फिर भी यह नगर पहिली शोभाके प्राप्त करनेमें समर्थ हुआ। मानो उसकी ध्वंसराशिमेंसे अगणित वनियें और सेठ उत्पन्न होने लगे। इस प्रकार अल्पकालके

बहुतसे चिह्न देदीप्य मान हैं। सिंधु नदीके तटपर सिवयानका दुर्ग जल-
वरकी गुफा और आवू शिखर तथा काशीमें उनके योग साधनके स्थान अव-
तक विराजमान हैं। यदि ऐसा स्वीकार कर लिया जाय कि वास्तवमें वह भारतवर्षके
इन सब दूर २ देशोंमें गये थे, तो उनको एक दीर्घजीवीप्रधान संन्यासी कहना
उचित है। विक्रमादित्य और भर्तृहरि प्रमारजातिके थे। कवियोंकी कवितासे
प्रगट है कि “सम्पूर्ण संसार प्रमार राजवंशाधीन” था। यह नागपहाड वा
सर्पगिरि अत्यन्त रमणीक और पवित्र दृश्ययुक्त है। सुनते हैं कि सदासे
बहुतसे ऋषि, मुनि, यती, संन्यासी इस पर्वतगुफामें आश्रय लेकर योग साधन
किया करते थे। ब्राह्मण उन सब पवित्र गुफाओंको यात्रियोंको भलीभाँति
दिखाते हैं। वह सम्पूर्ण आश्रम इस समय नयनानन्ददायक कानन और
निर्झरमालासे सुशोभित हैं। जिन अगस्त्यमुनिने समुद्र पान किया था, एक
झरना उनके नामका भी इस सर्पगिरिपर विद्यमान है।

२ री दिसम्बर।—पुष्करसे अजमेर तीन कोशकी दूरीपर है। हम पुष्कर
छोडकर उपत्यकाकी ओर आगे बढे शिखरपर चढनेके समय देखा कि,
आकाशभेदी दोनों पर्वत पीतवर्ण आंवलेसे शोभित होकर खडे हैं। उस आंव-
लेके देखनेसे यह ज्ञात होता है कि, शिखर हमारी इस आरावलीका अंशमात्र है।
हम जितना २ शिखरके ऊपर चढते जाते थे उपरोक्त वालुकाशिखर उतना २
ही छोटा होता जाता था। एक छोटी नदी उपत्यकासे बहकर घूमती हुई चली-
गई है। सहसा हमारे उत्तरकी ओरसे पूर्वप्रान्तके मार्गमें चरण रखते ही
शिखरमालाके एक ओरसे “धारवलखैर” दृश्य दृष्टिगोचर हुआ। यह दृश्य
जैसा रमणीक है, वैसा ही विचित्र है हमारे निम्नस्थानमें स्थित उस कुञ्जका-
ननसे घिरा हुआ विशालदेवका खुदाया हुआ बडे सरोवरसे शोभित वह विस्तृत
प्रान्तर अनिर्वचनीय है। निकट ही एक बहुत ऊंचे पर्वतके ऊपर अजपालका
वह विध्वंस दुर्ग भी नेत्रोंको बहुत आनन्द देता है। इस पर्वतपर बहुतसे चमत्कार
और उत्तम मर्मर पत्थर देखे जाते हैं।

उपरोक्त दृश्योंको देखते हुए अन्तमें अजमेर नगरके भीतर पहुँचे। यद्यपि
अजमेर नगर एक समय राजधानी था, किन्तु हमने इसको जैसा समृद्धिशाली

योंमें वैष्णव और जैन नामक दो तंत्र दिखलाई देतेहैं इन दोनों सम्प्रदायोंमें विद्वेषकी अग्नि ऐसे प्रचण्ड वेगसे जलउठी किं शांतिके लिये दोनों दलवालोंको न्यायालयका आश्रय लेना पडा । इससे दोनों ओरकी हानि हुई । कारण कि अवसर पाकर विचारालयके कीड़े चालाकीके द्वारा उन सबसे ही धन लियाकरतेथे, इन्हीं समस्त कारणोंसे भीलवाडेकी उन्नति बहुतायतसे रुक गई । राणाजीने समझाथा कि भीलवाडेको मध्य भारतका प्रधान वाणिज्य स्थान बनावेंगे; परन्तु उनकी वह आशा पूरी न हुई ।

मेवाडमें शांति स्थापन और उन्नति करनेके लिये दो तीन उपाय विचारकर प्रयोग कियेगयेथे उनमेंसे केवल व्यौपारियोंका वृत्तांत यहांपर वर्णन कियागया । शेष दोनोंसे सामन्त प्रथाका संस्कार साधन करना सबसे कठिन जान पडनेलगा, किसान और वनियोंको तो उत्साहने ही ठीक करदिया, वह लोग उसीसे अपने देशकी वृद्धि करनेके लिये प्राणपणसे परिश्रम करेंगे । परन्तु सामन्त लोगोंका संस्कार साधन करनेमें बहुतोंको कुछ २ छोडना पडेगा । उस स्वार्थत्यागका उचित बदला किसीसे नहीं होसकता । परन्तु यह बात नहीं थी कि समस्त सामन्तोंको ही अपना स्वार्थ छोडना पडे । वरन दो चार ऐसे भी हैं कि जिनको इस अनुष्ठानसे लाभ भी होगा । इसके प्रमाणमें कोटारियोंके सर्दारका नाम लिया जासकताहै, इस कार्यसे उसकी कोई हानि नहीं होसकती । परन्तु देवगढ, सलखूर या विदनौरकी समान जो लोग विदेशियोंकी सहायतासे कपटजाल फैलाकर अथवा खंझके बलसे अपनी प्रभुताको अखंड रखनेका सदा यत्न करते हैं; उनके मनमें ऐसी शंका हुई कि इस कार्यसे हमारी बहुत हानि होगी । क्यों कि उन्होंने अपना स्वार्थ साधनके लिये जिस टेढी चालको ग्रहण कियाथा, राज्यमें शांति होनेसे उनकी वह चाल विगडजायगी । पचासवर्षकी अराजकतासे जो अत्याचार करके अपनेको तृप्त कियाथा आज उनका हिसावदेना पडेगा; आज उनको अपनी २ भूमिवृत्तिके पट्टे बदलने पडेंगे । इसी प्रकारकी शंका उनके हृदयको व्याकुल करने लगी । इसके अतिरिक्त सर्दारोंमें जो साम्प्रदायिक विद्वेष विराजमान था उसका दूर करना तथा परस्परमें एक दूसरेकी भूमि सम्पत्तिके छीननेवालेका निराकरण करना यह दो कर्तव्य भी आवश्यकीय समझे गये । इनमेंसे पहिले कर्तव्यका विचार करके राजाजी अत्यन्त दुःखित हुए । वह जानतेथे कि;— “शेर और बकरीको एक घाटपर पानी पिला लिया जासके परन्तु राजा और राज्यके भंगलार्थ चंदावत और शक्तावतोंको एकसाथ मिलाकर कार्य

इकतीसवां अध्याय ३१.

अजमेर;—प्राचीनजैनमन्दिर;—अजमेरदुर्ग;—विशालसरोवर;—
अन्नासागर;—चौहान राजगणके स्मृतिचिह्न;—अजमेर परित्याग;
बुनाई, उसका दुर्गप्रासाद;—देवडा;—देवला;—बाणेश;—राजा-
भीम;—उनका वंश;—उनके अधिकृत प्रदेश;—दुर्गप्रासादमें
गमन;—भीलवारा;—वणिकोंके साथ साक्षात्;—नगरकी श्री
वृद्धि;—मंडल;—वहांका सरोवर;—आर्य-पुर;—दरवार;—पुरव-
तोंका विभक्त प्रदेश;—पुरका प्राचीन इतिहास;—मेवाडके राज-
कुमार;—रशमि वा रश्मि;—मेवाडके किसानोंद्वारा सम्बर्द्धना;—
सुहेलिया;—बुनाशनदी;—मैरता;—बारीश नदीका उत्पत्तिस्थान
दर्शन;—उदयसागर;—उपत्यकामें प्रवेश;—उदयपुर;—प्राचीन-
आहर;—राणाके पूर्व पुरुषोंका स्मारक मन्दिर;—आहर सम्बन्धी
जनश्रुति;—अग्निके उत्पातसे उसकी ध्वंसता प्राप्ति;—
प्राचीन ध्वंसावशेष;—रानाके साथसाथ साक्षात्;—
उदयपुरमें प्रत्यावर्त्तन ।

भारतवर्षमें अजमेर जिस प्रकार बहुत पुराना प्रदेश है, उसी प्रकार विदे-
शीय—विजातीय विधर्मी लोग स्वर्णपुष्प भारत वर्षकी छातीपर पापचरण रखते ही
सबसे पहिले इस अजमेरके विजय करनेकी चेष्टा करते हैं । दुर्दांत मुगल पठानोंने
बहुत कालतक इस अजमेरमें अपना पैशाचिक लीलाभिनय दिखाया था । उन
मुगल पठानोंके अत्याचार, उपद्रव, लूटमारसे सौभाग्यवश हिंदुओंके प्राचीन
कीर्ति चिह्न जो कुछ शेष रहगयेथे अन्तमें यवनोंके द्वारा वह भी नष्ट होगये ।
हिंदुओंके जितने विचित्र कारीगरीके साथ बने हुए चित्ताकर्षक स्थान थे,
विजयी यवनोंने उन सबको मसजिद बनालिया । परन्तु सबका भक्षण करनेवाला

पन्द्रह घंटोंमें राणाजीने जैसे सुविचार और जैसी दृढताके साथ कार्य कियाथा उससे बहुतोंको यह आशा होगईथी कि राणाजीसे मेवाडकी बहुत कुछ उन्नति होगी ।

इस प्रकार निश्चय और अधिकार पत्रिका पर हस्ताक्षर होजानेपर सन्धिके * नियमोंका पालन करना और कराना विशेष प्रयोजनीय होगया । सवने ही

* राणाजीकी की हुई सन्धि इस प्रकारसेहै;—

“ सिद्धश्रीमहाराजाधिराज महाराणा भीमसिंहके द्वारा,—हमारे राज्यके समस्त सर्दार, बन्धुवर्ग व आतइध, राजा, पटेल, जाला, चौहान, चंदावत, पँवार, सारंगदेवत, शक्तावत, राठौर, और राणावत् इत्यादिकोंको ।

“ गत संवत् १८२२ (सन् १७७६ई०) से जयसे कि राणा अरिसिंहजी गद्दीपर बैठेथे, उस समयसे मेवाडमें अस्वास्थ्य उत्पन्न हुआ । पुरानी रीति और कारभार दूर होकर अव्यवस्थाने देशपर अधिकार किया । इस कारण आज, वैशाख वदी १४ संवत् १८७४ (सन् १८१८ई०) के दिन मैंने अपने समस्त सर्दार, माननीय, व मांडलीक ठाकुरोंकी सभा करके उनको अपने कर्त्तव्य-पालनके लिये सन्मार्ग बतानेको नवीन रीति व, नये प्रकारका एक निश्चय प्रगट कियाहै । ”

“ (१) राणाकी मालिकीके या राणाजीके अधीन जो देश उपरोक्त अधाबुन्धके समय जिस किसीके पास चलीगयी है; अथवा किसी सर्दारकी जमीन कितनी दूसरे सर्दारके पास चलीगयीहै, अथवा कोई ठाकुर उसका मालिक बन बैठाहै समस्त देश या जमीन उस असली मालिकको मिलना कर्त्तव्यहै । ”

“ (२) उपरोक्त समयसे ही रखवाली, भूमि (लोकसंरक्षण कर) व लगान, कर जो लगाये गये वह इस समय उठादियेगये । ”

“ (३) धन और विखनामक कर कि जिनपर केवल राणाका ही अधिकार था उठादिये गये । ”

“ (४) प्रत्येक सर्दार तथा ठाकुरको अपनी २ सीमामें अत्याचार, बलात्कार, चोरी, लूट खसोट नहीं करना चाहिये, या नहीं करनेदेनी चाहिये । उनको उचितहै कि अपनी सीमामें ठग, बटमार, लुटेरे आदिको मार्ग न दें । परन्तु वहलोग जो अपने धंधेको छोड देशमें निरुपद्रवसे रहकर अपना कुछ दूसरा कार रोजगार करें, तो उनको रहनेकी आज्ञा दें । यदि उनमेंसे फिर कोई लुटारूपनका कार्य करके प्रजाकी शान्तिको भंग करे तो उसका शिर काटना उचितहै । वह धन जो ऐसे लोगोंके पाससे निकले वह उसको जव्त करलेना उचितहै कि जिसकी सीमामें यह लूट खसोट हुईहो । ”

“ (५) देशी, परदेशी, उद्यमी, व्यापारी, काफले, वनजारे या और जो कोई अपने देशमें आवें अथवा अपने देशमें भ्रमण करें; सब प्रकारके उपद्रवोंसे उनकी रक्षा करनी चाहिये । जो कोई इस नियमको पालन न करके व्यौपारियोंको हानि पहुंचावैगा; उसकी समस्त मिलकियत जव्त होकर दंडस्वरूप सरकारी खजानेमें दाखिल होजायगी । ”

“ (६) जैसी आज्ञा हो, उसके अनुसार, मेवाड या मेवाडके बाहर समस्त सर्दार आदिको अपनी २ नोकरी करनी चाहिये । सर्दार व ठाकुरोंके चारभाग हुए, प्रत्येक भागको तीन २ मास—

और ऊँची चोटीका महल अबतक विचित्र दृश्य प्रगट कर रहा है । उस दुर्गकी चोटी पर इस समय बृटिशपताका फहरा रही है ।

“विशालतलाव” नामका अजमेरमें एक बहुत बड़ा सरोवर है । इसकी परिधि चारकोश परिमित है । सुविख्यात विशालदेवने इस विराट जलाशयको बनवाया था । यह जिस प्रकार अजमेर उपत्यकाका परम शोभावर्द्धक है उसी प्रकार लूनी नदीके साथ इसका संयोग होनेसे यह एक विशेष द्रष्टव्य स्थल है । इसके उत्तरके भागमें “दौलतबाग” नामक मनोरम बाग है । दिल्लीपाति जहांगीर जिस समय राजपूतोंकी पराजयके लिये आगे बढ़े उस समय यह बाग तिमर्माण कराया था । इस बागके जिस मर्मर महलमें इंग्लेण्डेश्वर प्रथम जार्जके द्वारा भेजे हुए राजदूत ग्रहण किये गये थे, वह महल इस समय ध्वंस प्राय है और इंग्लेण्डेश्वरके द्वारा उपहारमें दी हुई सवारीपर चढ़कर दिल्ली-सम्राट जिस मार्गमें वायु सेवन करते थे वह मार्ग भी इस समय लता औषधियोंसे घिरा हुआ है ।

उक्त विशाल तलावके आधकोश पूर्वमें अन्नासागर नामका एक दूसरा बड़ाभारी सरोवर है । सुनते हैं कि विशाल देवके पोतेने उसको खुदवाकर अपने नामसे विख्यात किया था । विशालदेवके उक्त पौत्र बड़े उदार और दाता थे । उन्होंने उस सागरके बीचकी द्वीपाकार भूमिके ऊपर और तटपर बड़ाभारी महल बनवाया था, उसके द्वारा एक समय उस सागरकी परम रमणीक शोभा थी, किन्तु दुर्दान्त पठान उसको विध्वस्त करके सब सामग्री अन्यत्र लेगये । इस सागरके निकटवर्ती शिखरके ऊपर “खाजाकुतुब ” और अन्य कई मुसलमान पीरोंकी मसजिदें बनी हुई हैं ।

खेदका विषय है कि प्राचीन चौहान अधिराजोंके शासनमूलक इतिहास वा खोदित लिपियें संग्रह करनेमें सफलता न हुई । किन्तु सौभाग्यसे मैंने उन पुराने राजालोगोंके शासन समयके कई सिक्के प्राप्त करलिये थे । वह सब बौद्ध और जैनियोंके प्राचीन विवरण संकलनमें विशेष सहायक हैं । सिक्केके एक ओर बहुत प्राचीन अक्षर लिखे हैं, तथा दूसरी ओर राजपूत जातिके पूजनीय अश्वकी मूर्ति अङ्कित है । ऐसा अनुमान होता है कि, अग्रिकुल चौहानलोग इस चिह्नको उत्तर एशियासे लाये थे । इस देशकी प्राचीन गवेषणासे उस अनुमानके सत्य वा मिथ्या होनेका पता लगसकता है । पुष्कर तीर्थमें भी मैंने कई पुरानी मुद्रा पाई थी । हिन्दू जातिके प्रधान शत्रु सम्राट औरङ्गजेबके भारतसिंहासनारोहणसे पहिले यदि कोई पुरुष खोजके लिये इस देशमें आता, तो निःसंदेह वह विशेष

ही और अत्याचारी सर्दारोंने मेवाडकी जिन ज़मीनोंको अन्यायसे ले लियाथा, उन समस्तका उद्धार करना सब कार्योंकी अपेक्षा कठिन ज्ञात हुआ । क्यों कि उन भूमियोंके छुड़ानेमें अत्याचारी सर्दारोंसे जरूर झगड़ा होनेकी सम्भावना है, वह लोग सहजसे उन ज़मीनोंको नहीं देना चाहेंगे । कोई तो चार पुरुषके स्वत्वाधिकारका प्रमाण दिखावेगा, कोई विद्रोही हो जायगा । इसी कारणसे यह कार्य कठिन समझागया । बहुत दिन तक तर्क वितर्क हुए परन्तु शीघ्र कोई फल न निकला । राणाजी सब सर्दारोंको बुलाकर अनेक प्रकारके मधुर वाक्योंसे सबके हृदयको नरम करनेलगे, और अतीत घटनाओंका चित्र सामने लाकर अनेक प्रकारसे समझानेकी चेष्टा करनेलगे । मेवाडके उस स्वर्ण युगमें—गिल्हौटकुलकी स्वाधीनताके गौरवकालमें तुम्हारे ही पुरुषोंने मेवाडकी स्वाधीनता, मेवाडके गौरवगरिया, मेवाडकी सुखशांति बचानेके लिये किस प्रकार वीरोंकी नाई अपने प्राण दियेथे, और तुम लोग उन्हींके वंशधर होकर अपने देशका नाश करोगे ? क्या तुम लोगोंका जन्म मेवाडमें नहीं हुआ है ? क्या तुम उन सर्दारोंके वंशधर नहीं हो कि जिन्होंने चित्तौडके लिये, मेवाडके लिये अपने तन मन, धनको वार कर दिया था ? उस स्वाधीनताके लीलाक्षेत्र मेवाडमें जन्म ग्रहण करके स्वदेशानुरागी महात्माओंके पवित्ररक्तसे देह परिपुष्ट करके क्या मेवाडके वर्तमान सर्दार अपने स्वार्थके आगे “स्वर्गादपि गरीयसी” जन्मभूमिकी ओर दृष्टि न डालेंगे इत्यादि बहुतसी बातें राणाजीने कहीं । आनंदकी वार्ता है कि धीरे २ उनकी चेष्टा फलवती होनेलगी, सर्दारोंका कठोर हृदय धीरे २ नरम होनेलगा, ज्ञानके नेत्र खुलनेलगे । जैसे जैसे समय बीतता था वैसे ही वैसे वह चित्र उनके हृदयपर गहरा खुदता जाताथा । मानो किसी अपूर्व दैवी शक्तिके प्रभावसे सर्दारोंका पूर्वभाव लोप होनेलगा । अपना कर्तव्य और मातृभूमिकी अवस्थाका विचार करके राणाजीकी सम्मतिका अनुमोदन किया और जिनके बड़े बूढ़ोंने मेवाडकी भूमि सम्पत्तिको अन्यायसे ले लियाथा वे सब उनके देनेको राजी होगये । इस प्रकार छः महीनेके ही बीचमें यह कठिन कार्य होगया ।

जिस समय मेवाडका यह संस्कार होरहाथा उस समय बहुतसे राजपूतोंका वीरचरित्र प्रस्फुटित होगया था । उनमें दो एकका वृत्तांत नीचे लिखाजाता है । मेवाडमें अरझानामक एक किलाहै, यह किला पहले राणाजीके अधिकारमें था अनंतर पुरावत भोजके सर्दारोंने वलपूर्वक उसको अपने अधिकारमें करलिया

समझते हैं। बुनाईके किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर अभिषेक समय मारवाडेश्वर तिलकदान करते हैं। इस समतल प्रदेशके बीचमें बुनाई दुर्ग-प्रासादका दृश्य परम रमणीय है। आरावलीके पूर्वप्रांतमें जैसे सुंदर तृण उत्पन्न होते हैं, इस प्रदेशमें वह बहुतायतसे होते हैं। पहिले मंदरके पुरीहर राजवंशके एक सामन्त इस प्रदेशके स्वामी थे और अजमेरके चौहान राजको वह कर दिया करते थे। राठौर राजपूतके साथ यहांके आरंभके अधिवासियोंके मिलनेसे पुरीहर भीनानामक एक मिश्रजातिके बहुतसे लोग यहां उत्पन्न हुए थे।

६ दिसंबर।—इस दिन अजमेर और मेवाडके वर्तमान सीमान्तमें खाडी नदीके पास देवर नामक स्थानमें पहुंचे। अजमेरसे देवर वा देवडा दक्षिणपूर्वकी ओर बीस कोशकी दूरीपर है। सन् १८१८ ईसवीमें राजपूतानेके बीचमें यह प्रयोजनीय जिला और सीमा तथा मऊ प्रदेश संधियाके निकटसे बृटिशगवर्न-मेंटको मिला। यह जिला बहुत बड़ा है अर्थात् इसके पूर्व प्रांतमें बुनाश और पश्चिममें आरावलीके बीचमें चालीस कोश परिमित पृथ्वी होगी। देवरसे कृष्णगढराज्यका सीमांत दिखाई देता है। अजमेरकी मृत्तिका वैसी उपजाऊ नहीं है, साधारण शस्य ही अधिक उपजते हैं। इस प्रदेशके सब स्थानोंमें बुद्ध, अत्याचार और उपद्रवके चिह्न दृष्टिगोचर होते हैं।

७ दिसंबर।—देवल यह नगर वनेडाराजके अधीनस्थ एक सामंतके अधिकारमें है। जिस समय महाराष्ट्रियोंने राजपूतानेमें प्रबल अत्याचार किये, उस समय यह देवलके सामन्त उनकी सहायतासे बड़े उद्धत हो उठे, और महाराष्ट्रियोंका अत्याचार निवृत्त होनेपर भी उन्होंने किसी प्रकार वनेडा पतिकी अधीनता स्वीकार नहीं करी विशेष करके कोटेके बृद्ध अधिनायकके साथ उनका वैवाहिक संबन्ध था, इस कारण वह कोटापतिकी सहायतासे और भी उद्धत होगये। कोटेके अधीश्वरने उनकी सहायतामें वनेडाके दुर्गपर तक आक्रमण किया। बहुत काल तक आधीनता स्वीकार न करनेके कारण देवलाके सामन्त एक प्रकारसे स्वतंत्र बनबैठे। यद्यपि अन्तमें वह बीस अनुचरोंके साथ वनेडाराजकी सभामें निर्धारित काल तक रहनेके लिये सम्मत हुए, किन्तु वनेडाराजके अनशित प्रमाणित पत्रोंद्वारा प्रमाणित करनेपर भी उन्होंने देवलाके लिये निर्धारित कर देना किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं किया। वनेडापतिने परम अनुग्रहके साथ यह भी कहा कि, अन्यान्य निष्कर, भोगनेके लिये देसकताहूँ, परन्तु देवलाके निमित्त उपयुक्त निर्धारित कर देना ही होगा। उद्धत साम-

जैतसिंह हमारा कहना मानलेगा, परन्तु यह उनकी भूल थी, सनमान छीन लेनेवालेके गुण किसीने नहीं गायें ? कोई बुद्धिमान् ऐसा नहीं करेगा । जैतसिंहके साथ राणाजी जैसा व्यवहार करनेके लिये तैयार हुये, उससे जैतसिंहने समझ लिया कि अब राणाकी सामर्थ्यका दवाना कठिन है । यह समझकर उसने अत्यंत शोकसे राणाजीकी प्रार्थना की । “ आपकी आज्ञा हो मैं अपनी भूमिवृत्तिको त्यागकर मेवाडको छोड़े जाता हूँ । ” इस अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये जैत सिंह महलके आँगनमें खड़ा होगया । बहुतोंने समझाया बुझाया परन्तु वह वहीं पर खड़ा रहा । अंतमें दूसरा उपाय न देखकर राणाजीने इसकी भीमांसाका भार पोलिटिकेल एजेंट टाडसाहबके हाथमें सौंपा ।

प्राचीनकालसे ही पवित्र गिहौटकुलमें यह नियम चला आता है कि कोई सद्गुरु मुख्य करके अपने अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये किसी समय स्वयं राणाजीसे प्रार्थना नहीं करसकता । कारण कि ऐसा करनेसे राजसन्मानमें बाधा पड़ती है । जैतसिंह मेवाडके मंत्रियोंसे आन्तरिक घृणा करता था । उसके मनमें यह निश्चय था कि यह मंत्री लोग रिश्वत लेकर प्रत्येक मनुष्यका काम कर दिया करते हैं । इसहीसे यह रिश्वत देनेको बहुत बुरा समझता था । यही कारण था जो राणाजीकी मंत्रीसभामें इसके बहुतसे शत्रु थे । उसके अधिक शोकित होनेका विशेष कारण यह भी था कि विदनौरका यह स्वामी था । ३६० वस्तियों और मौजे विदनौरके अन्तर्गत थे । उन सबका भी स्वामी जैतसिंह ही था । सामन्त प्रथाके अनुसार वह समस्त वस्तियों और मौजे उसने अपने अधीनके सदाचारोंको बांटदिये थे । जैतसिंह उनकार्योंको करनेके लिये तैयार होता था जो कि उसकी सामर्थ्यसे बाहर होते थे । जिन कार्योंमें राणाजीके अतिरिक्त और किसीको हस्तक्षेप करनेका अधिकार नहीं था वह उनमें भी हाथ डालना चाहता था । इससे राजतंत्रका अपमान होता था । जिन लोगोंके हाथमें उन वस्ती और मौजोंका शासनभार अर्पित था, वह समस्त ही तीसरे दर्जेके सामन्त थे । मेवाडवाले उनको “गोल” नामसे पुकारा करते थे । मेवाडमें जिस समय वेतनभोगी सेना रखनेकी रीति नहीं थी, उस समय यह “गोल” नामक सदाचारगण मेवाडकी स्वाधीनता तथा गौरवको बचानेके लिये संग्राममें अपने प्राण देदिया करते थे । उस समय उनकी वीरता ही राणाकी प्रभुताके रक्षा करनेमें प्रधान उपाय समझी जाती थी । अस्तु;—राजपूत हितैषी राजनीतिज्ञ महोदय टाडने उस विषादित सदाचारके पास पहुँचकर धीरे २ कहा, सदाचार चूडाभणि आपने वीर केशरी जयमलके पवित्र वंशमें जन्म लिया है; जिसके

चला गयेहैं। एक दूसरी श्रेणीके लोग कहतेहैं कि “यह बद्ध मूल जाति भेद प्रथा बिना दूर हुए हमारी राजनैतिक उन्नति होना असंभव है।” तथा एक श्रेणीके अंग्रेज भी हृदयके साथ हमारे इस जातिभेदकी निन्दा करते हैं। किन्तु हम सबसे पहिले यह कहना चाहते हैं, अत्यन्त गूढ़ कारणसे समाजकी विशेष प्रयोजनीयता देखकर ही हमारे पूर्व पुरुषगण यह जातिभेद प्रथा प्रचलित करगयेहैं। समाजका मङ्गल साधन ही उनका मुख्य उद्देश था। शान्ति और समाज रक्षा करनेके लिये निर्धारित रीतिके अनुसार एक २ श्रेणीके ऊपर एक एक प्रकारका कार्यभार समर्पण अवश्य कर्त्तव्य है, उन्होंने विशेष परीक्षाके पीछे इस बातको निर्धारित किया था। जिस श्रेणीके लोग जिस कार्यमें विशेष दक्ष हैं; उस श्रेणीको केवल उसी कार्यमें नियुक्त रखकर उस कार्यका क्रमसे उत्कर्ष साधनभार समर्पण करना कर्त्तव्य समझकर ही हम एक २ श्रेणीके ऊपर एक २ प्रकारका सामाजिक कार्य समर्पित हुआ देखते हैं धर्म साधन, ज्ञान शिक्षा विस्तारमें ब्राह्मण मण्डलीको सर्वांशमें योग्य जानकर ही ब्राह्मण वर्णके ऊपर वह भार समर्पित हुआ, राज्यशासन, प्रजापालन, शत्रुके भय निवारण पक्षमें बलिष्ठ वीर क्षत्रिय जातिको सर्वांगमें योग्य जानकर ही उनके हाथमें राज्यभार समर्पित हुआ और उसी प्रकार दूसरी जातियोंकी योग्यतानुसार ही उनके ऊपर भी स्वतंत्र २ भार रक्खा गया। इसका फल यह देखाजाता है कि, जिस श्रेणीके ऊपर जो जो भार समर्पित था, वह २ श्रेणी वंशानुक्रमसे उसी २ विषयका अधिक उत्कर्ष साधन करगई है। विधि व्यवस्था और ज्ञानशिक्षाकी जहांतक उन्नति होसकती है, ब्राह्मण वर्णने उसके करनेमें कोई त्रुटि नहीं रखी राज्यरक्षा, पुत्रकी समान प्रजापालन और बाहुलसे भारतभूमिका गौरव जहां तक विस्तृत होसकताहै, सूर्य और चन्द्रवंशके भूपालकुल उसको विस्तृत कर गयेहैं। शिल्पी भास्करआदि अपने अवलम्बित विभागके उन्नति साधन विषयमें कहांतक सचेष्ट थे, प्राचीन कीर्तिस्तंभ आदि उसकी पूरी साक्षी देरहेहैं। हमारा विश्वास है कि एक २ श्रेणीके ऊपर ऐसा धारावाहिक भार बिना सौंपे कभी भी कोई कार्य सर्वांग सुन्दर रूपसे सम्पादित नहीं होसकता। किसी एक-नाट्यशालामें यदि बीस अभिनेताओंको एक दृश्यकाव्य अभिनयके लिये एकत्रित करके उनमेंसे प्रत्येकके अंशको बिना निर्धारण किये इच्छानुसार कार्य करने दिया जाय, यदि उसमें एक अंशका दश मनुष्य अभिनय करने लगे और दूसरे अंशको कोई न करे तो क्या वह दृश्य सुन्दररूपसे संपादित हो सकता है?

सागरमें डूब जायगा । यद्यपि हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि इस समय हमारी उस प्राचीन जातिभेद प्रथाके मूलमें दारुण वज्राघात हो रहा है, सामाजिक सुधामय रीति-नीति धीरे २ अदृश्य होती जाती है, समाजनेताओंका अभावसा है, यहां तक कि मूल समाजतक विध्वंसप्राय है, तथापि इसको समूल नष्ट कोई नहीं करसकता । देशकाल और अवस्था भेदसे परिवर्तनको कोई निवारण नहीं करसकता यह हम भी स्वीकार करते हैं, किन्तु हमारा भाग्यचक्र इस समय जैसा परिवर्तित हो रहा है, उससे हमारी यह अवस्था परिणाममें अवश्य ही शोचनीय होजायगी । हम यदि इस समय विजातीय अनुकरण विजातीय शिक्षाके गुण और विजातीय शिक्षाके सबल स्रोतमें भासमान न होकर अपने पूर्व पुरुषोंके अवलंबित मार्गमें चलनेकी चेष्टा करें और समयकी अवस्थानुसार धर्मपर दृष्टि रखते हुए साधारण बातोंको कुछ बदल दें तो हमारा आर्य्यनाम अक्षय होगा, समाज शान्ति सौरभसे पूर्ण होगा, और जातीय गौरव रवि प्रबल तेजके साथ पूर्णरूपसे चमकेगा । नहीं तो हम लोग इस जगत्में एक अभूतपूर्व जातिमें परिणत होजायेंगे । जो लोग पूर्व पुरुषोंको अज्ञ, मूर्ख आदि उपाधि देनेमें लजित नहीं होते, वह लोग निश्चय जानें कि एक ऐसा समय आवेगा जिस समय उनके उत्तराधिकारी भी अधिक वृणाके साथ उनके प्रति उक्त उपाधियों वर्णनेमें कुछ भी लजित न होंगे । इस कारण पूर्व पुरुषोंका दिखाया मार्ग ही हमको सबसे पहिले अवलम्बन करना उचित है । एक श्रेणीके अंग्रेज यदि हमारे जातिभेदकी निन्दा करते हैं तो क्या हम भी उसका विशेष तत्त्वानुसंधान न लेकर अपनी प्राचीन प्रथाकी निन्दा करने लगें ? यदि अंग्रेजोंकी सामाजिक दशाके ऊपर हम तीक्ष्णदृष्टि डालें तो हमारे नेत्रदर्पणमें कैसा दृश्य प्रतिविम्बित होगा ? हमारे समाजमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, यह चार वर्ण सृष्टिके पूर्वसे ही विराजमान हैं । हम इस बातको मानते हैं कि अंग्रेजोंमें प्रगटमें वैसा वर्णभेद नहीं देखाजाता । किन्तु हम पूछते हैं कि क्या इस सभ्य शिक्षित विश्वविजयी अंग्रेज जातिमें जात्यभिमान नहीं है ? हमलोगोंमें जैसा जात्याभिमान प्रचलित है, उनमें भी क्या वैसा जात्यभिमान स्थान नहीं पाता ? अवश्य ही प्रस्तक नवाकर स्वीकार करना होगा कि अंग्रेज जातिमें विलक्षण जात्यभिमानकी अग्नि भयानक वेगसे प्रज्वलित है । अंग्रेज जातिके बीचमें उत्तम, मध्यम और अधम श्रेणीके सबलोग सबके साथ क्या एकत्र भोजन करते हैं ? हम कहते हैं नहीं । अधिक प्रमाणकी क्या आवश्यकता है ?—भारतवर्षके भूतपूर्व स्टेटसेक्रेटरी ड्यूकऑफ अर्गालके ज्येष्ठ पुत्र मार

भदेश्वर किलेका अधिकार भी राणाजीको सौंप दिया। सबहीने आश्चर्यके साथ देखा कि—शिशोदीयकुलकी लाल पताका भदेश्वर दुर्गके ऊपर फहरा रही है *।

एक सरदारका वृत्तान्त यहां पर और भी लिखा जाता है। आमली किला और उसकी समस्त सम्पत्ति २७ वर्ष तक अमाइतके सरदारके पास थी। प्रायः ५० वर्षसे उस सम्पत्तिपर अमाइतवालोंका अधिकार था। अमाइतके सरदार-गण जगवतकुलमें उत्पन्न होकर मेवाडके सोलह सरदारोंमें गिने जाते थे। विदनोरके सरदारके नीचे यदि कोई राजभक्त समझा जाता था, तो वह अमाइतका ही सरदार था। जिस जगवतकुलमें—वीर बालक फत्तेने जन्म लिया था—उस ही कुलसे अमाइतके सरदारकी उत्पत्ति हुई थी। यद्यपि वीरपुत्र फत्तेकी ही वीरता और अद्भुत स्वार्थत्यागको जगवतकुलकी राजपरायणताका पक्का प्रमाण मानकर ग्रहण किया जा सकता है; परन्तु जगवतकुलके राजानुरागका केवल एक यही प्रमाण नहीं है। विगत महाराष्ट्रीय उपद्रवके समय फत्तेसिंहके पिता प्रतापसिंहने भी महाराष्ट्रियोंसे अपने देशको बचानेके लिये प्राण दे दिये थे। प्राणोंके पुरस्कारमें ही उसके पुत्रको आमलीका किला दिया गया था। फत्तेसिंहने अपने किसी चतुर सम्बन्धीकी चालाकीमें आकर चंदावतोंका कोई विशेष कार्य करना चाहा। परन्तु इसमें बुद्धि कम और ऊधमीपन अधिक था, यही कारण हुआ जो उस कार्यको वह किंचित् भी न कर सका। फत्तेसिंहका अंतःकरण सरल था इससे अपने क्रोधको नहीं छिपा सकता था। एक समय एजेंट साहब मुलाकातको गये तब उसका उत्साह भडक उठा था। यद्यपि कुछ कहा नहीं तथापि लाल लाल आँखें क्रोधका पूर्ण परिचय दे रही थीं। राणाजी उसका कुछ फैसला न कर सके और एजेंट साहबको सब बातोंका भार दिया गया। तदनुसार एजेंट साहब उसके मकानमें पहुँचे। एक श्रेष्ठ गृहमें उनको आसन दिया गया। उस बड़े गृहमें दीवारोंपर फत्तेसिंहके दादे परदादोंकी उत्तम २ तसवीरें लगरहीं थीं। बृटिश एजेंट टाडसाहब अपने सेवकवर्गके साथ उसी घरमें आकर बैठ गये। फत्तेसिंह भी वहीं पर आया और उसके नौकर चाकर भी उसके सामने एकसाथ खड़े होगये। टाडसाहबने

* टाडसाहब कहते हैं कि, “ इस बातसे एक वर्षके पीछे सरकारी कार्यके लिये मुझको कोटे जानापडा मार्गमें नीमबहेडा भी देख लिया। घोड़ेपर जानेसे नीमबहेडेसे हमीरका दुर्ग प्रायः एक घंटेका मार्ग है। टाडसाहबका आना सुनकर हमीर मिलनेके लिये आया, और उनको अपना सर्वश्रेष्ठ मित्र कहकर माना और खड्गको छूकर कहा कि “ मैं अपनी तलवारको छूकर शपथ करता हूँ कि मैं यथार्थ राजपूत हूँ, सदा ही आज्ञाकारी और राजभक्त रहूँगा। ”

सेवाकार्य शूद्रका स्वाभाविक कर्म है । ” यह भगवद्वाक्य कभी अन्यथा नहीं होसकता । इस वर्ण व्यवस्थाका भलीभाँति पालन न करनेसे ही भारतकी यह दुर्दशा होरही है । जाति बदलनेकी प्रथा चलानेसे वर्णसंकर संतान होने लगेंगी और सन्तानके वर्णसंकर होनेपर जातिधर्म और कुलधर्म नष्ट होजायगा । क्या ही अच्छा हो कि सबलोग वर्णव्यवस्थाके अनुसार अपने स्वाभाविक कर्मकी चम्मोन्नति करके भारतका पुनरुद्धार करलें ।

इसके अनंतर कर्नेल टाड लिखते हैं कि—“ रजवाडेकी प्रचलित समाजनीति-के अनुसार केवल जिन मनुष्योंके पिता माता दोनोंके कुल ऊँचे वंशसे उत्पन्न शुद्धरक्तधारी हैं; केवल उस वंशके लोग ही मेवाडेश्वरके अधीनमें सामन्त पदपर अभिषिक्त होकर भूवृत्ति संभोग कर सकते हैं। जिनकी नाडियोंमें शुद्ध राजपूतरक्त वह रहा है, वह राजपूत यदि अत्यन्त निर्धन और एक चरसा भूमिके अधीश्वर हों तो उनके साथ सर्वश्रेष्ठ सामन्त भी आदान प्रदान चलन द्वारा अपनेको अपमानित नहीं समझते । केवल वह वंशगौरव ही उन निर्धन राजपूतोंके अकुंठित सम्मानकी रक्षा करता है । ऐसा संमिलन किसी प्रकारसे दूषणीय वा राजनैतिक अशान्ति उत्पन्न करनेवाला नहीं समझा जाता । मंत्रीआदि राजपुरुष और साधारण कर्मचारीलोग जो राजपूत नहीं हैं, यद्यपि उनको भी उपाधि और भूवृत्ति दीजाती है, किन्तु उस भूवृत्तिमें उनका चिर स्थायी वंशानुक्रमिक स्वत्व नहीं रहता; जितने दिनतक वह अपने २ पदपर रहते हैं, उतने दिनतक ही भोगनेका अधिकार है । जिस कारणसे यूरोपमें राजमंत्री और प्रधान २ राजपुरुषोंको भूवृत्ति देनेकी प्रथा प्रचलित थी, उसी कारणसे रजवाडेमें भी यह प्रथा प्रचलित हुई । प्रारंभमें सिक्का बननेसे पहिले मंत्री वा राजपुरुषोंको वेतन देनेका कोई विशेष सुवीता न होनेके कारण ही यह भूवृत्ति दान प्रचलित हुआ होगा । मेवाडके मंत्रीवर्ग वेतनके बदले इस भूवृत्तिको ही सबसे श्रेष्ठ समझते हैं । यूरोपकी आरंभिक अवस्थामें फ्रांसराज सार्लमेनके राजसंसारमें, पानपात्रके लानेवाले, मद्यभाण्डारके रक्षक, प्रासादके प्रधान तत्त्वके ज्ञाता, वस्त्रागारके अध्यक्ष, पाकशालाके प्रधान परिचारक और अश्वशालाके अध्यक्ष आदि ऊँचे पदके राजकर्मचारीलोग जिस प्रकार मंत्री समाज भुक्त गिने जातेथे, * हम इस राज-

* हालमका इतिहास, १९५ पृष्ठसंख्या । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, “टिउटनोंके द्वारा यह प्रणाली प्रथम प्रचलित हुई थी । ” किन्तु हमारा विश्वास है कि भारतवर्षसे ही इसकी शिक्षा पश्चिममें पहुंची थी ।

से अपने दिन बिताया करते हैं, उन लोकहितकारी भले मनुष्य किसानोंकी अवस्थाका संक्षेपसे विचार करना हमको बहुत ही उचित जान पड़ता है । इस विचारके साथ हम उनका अतीत और वर्तमान चित्र पाठकोंके सामने रखकर अपनी बुद्धिके अनुसार उनके अधिकार अनधिकारका विचार करेंगे ।

मेवाडराज्यमें किसान ही भूमिका अधिकारी होता है । मेवाडकी भूमिमें उनका जो अधिकार है उसको वह लोग अपने देशमें उत्पन्न हुए अमरधव* के साथ उपमा दिया करते हैं । उस अमर तृणकी समान वह अधिकार भी दृढ़ और अमर होता है; भाग्यकी अदल बदलसे भी उस अधिकारमें कुछ अंतर नहीं आता । वे किसान लोग अपनी भूमिको (वापोता) नामसे पुकारा करते हैं । उनकी मातृभाषामें पैतृक अधिकार समझानेके लिये इस वापोताके अतिरिक्त और कोई शब्द अति प्राचीन, अति शुद्ध अति भावपूर्ण और अत्यंत तेजयुक्त नहीं समझा जाता । यदि कोई स्वार्थी और अभिमानी राजा उनके इस पुराने अधिकारको छीनना चाहता है; तब वह भगवान मनुजीके अमृतमय वाक्योंको उच्चारण करके गंभीर कंठसे कह उठते हैं कि “ जिन्होंने वनको काट छांट कर खेतोंको साफ किया और जोता, वह भूमि उनकी ही है ” × जवतक संसारसे प्रेम करनेवाले व्यवस्थाकारोंके ऊपर भगवान मनुजीका नाम विराजमान रहेगा, जितने दिन तक उनकी बनाई हुई विधिका एक सूत्र भी इस जगतमें व्यवहार किया जायगा, उतने दिनतक कभी कोई इस अमृतमय वाक्यको नहीं भूल सकेगा । उतने दिनतक हजारों लडाईं झगडे होनेपर भी हिंदू जातिकी यह पुरानी रीति कभी भी नहीं उठेगी । इस विधिके अनुसार ही मेवाड—केवल मेवाडके ही क्यों समस्त राजस्थानके रहनेवाले अत्यंत प्राचीन कालसे कहते हुए आये हैं कि, ‘ भोगराधनीराजहो; भोमराधनी माछो, । अर्थात् राजभागका (राजकरका) अधिकारी है; परंतु भूमिके अधिकारी हम हैं । भगवान मनुजीके समयसे हिंदु-

* अमरधव नामक तिनका सब ऋतुओंमें एक सा रहता है । विशेष करके प्रचंड धूपके समय इसकी सजीवता अधिकाईसे दिखाई देती है । यह केवल अमर ही नहीं है वरन इसको अक्षय कहा जाय तो भी ठीकही होगा । पृथ्वीके साथ अछेद सम्बन्ध होनेके कारण राजपूत किसानलोग इससे अपने भूम्यधिकारकी वरावरी किया करते हैं ।

× भगवान मनुजीने पुरुषके शुक्रन्यासका कर्तव्याकर्तव्य विचारने और न्यस्त शुक्रजाति संतानके ऊपर न्यास कर्त्ताका अधिकार अनधिकारका विषय विधान करनेके समय कहा है, “स्थाणुः—च्छेदस्य केदारम्” जो आदमी जंगल काटकर खेत तैयार करे वह खेत उसका ही है ।”

नीय और राजका शुभ मूलक कार्य विना किये कोई पुरुष भी इस खालसा भूमिका थोड़ा अंश भी नहीं पाता था; उदयपुर राजधानीके निकट कुछ वीधे भूमि यदि कोई सामन्त वगीचा लगानेके लिये प्राप्त करलेता था तो वह अपने आपको महा सम्मानित समझता था । जिस अर्थचन्द्राकार उपत्यकाके बीचमें उदयपुर राजधानी विराजमान है, उसमें कोई ग्राम किसी सामन्त वा किसी उच्चपदस्थ व्यक्तिको किसी विशेष क्षति पूरणके लिये ही दिया जाता था । किन्तु राणा भीमसिंह इतने हिताहित विचारशून्य दाता थे कि कुछ अधिक बारह कोश परिधि युक्त इस खालसा भूभागमेंसे एक ग्राम भी राजभुक्त न रखगये, अर्थात् उन्होंने सब ग्राम ही वृत्तिरूपसे अनेक व्यक्तियोंको देदिये ।

इस भूभागके कारण, सीमान्तवर्ती पहाडी जातिके उपद्रवसे और मुगल, पठान, महाराष्ट्रियोंके आक्रमणसे सामन्तलोगोंको बराबर युद्धमें संलिप्त रहना होता था । अर्थात् वीर सामन्तगण प्रायः सदा ही किसी न कीसी कारणसे भूवृत्तिके बदलेमें सेनासहित राणाके अधीनमें नियुक्त होनेको बाध्य होतेथे ।

सम्पूर्ण प्रदेश जिले २ में विभक्त हैं; पचाससे सौ वा किसी स्थानमें इससे अधिक संख्यक नगर और ग्राम लेकर एक २ जिला बनाया गयाहै । सम्पूर्ण उपविभाग “चौरासी” नामसे विख्यात हैं । आजतक बहुतसे उपविभाग “चौरासी” नामसे कहाते हैं; जिहाजपुर और कमलमीरके “चौरासी” उपविभाग अबतक विराजमान हैं । कर्नेल टाड कहतेहैं कि “हमलोगोंका स्यक्सन पूर्वपुरुषोंके समयमें सैंकडों ग्राम नगर मिलकर एक २ विभाग बनाया जाता था ।”

मेवाडराज्यके चारों ओरके विभिन्न स्थानोंमें एक २ सीमान्तरक्षक नियुक्त हैं और निकटवर्ती सामन्तमंडलीके सैनिक उस रक्षकके अधीनमें रहकर रक्षा करते हैं । राणा स्वयं उन सामन्तरक्षकोंको नियुक्त करते हैं और वह कई राजकीय चिह्न पताकाका व्यवहार, मान्यसूचक वाजे और घोसक दूत रखनेके अधिकारीहैं । सर्वसाधारणमें वह दीवानी राजपुरुष रूपसे गिने जाकर सामरिक कार्यके साथ २ विचारासनपर भी बैठते हैं । * उच्च श्रेणीके सामन्तगण किसी समय भी स्वयं उस सीमान्तमें उपस्थित नहीं होते, केवल अपनी सेनाके साथ अपने परिवारके

* कर्नेल टाड लिखगयेहैं कि “प्रत्येक सामन्त अपने २ अधिकृत प्रदेशमें इस समय दीवानी विभागके प्रत्येक मुकदमेकी विचार क्षमता चलानेके लिये दावेदार हैं; किन्तु फौजदारी अपराधका विचारभार राणाकी विशेष अनुमतिके बिना नहीं दिया जाता । जितने भूस्वत्व सम्बंधी दीवानी अभियोग हैं, वह सब प्रायः स्वतः सृष्ट विचारालय अर्थात् पञ्चायतोंके द्वारा ही विचारित होतेहैं।

तब अपनी जमीनको जोत सकता है, उसकी भूमिके ऊपर कभी कोई पैमायशकी लकड़ी न डालसकेगा या उसमेंसे किसीको किसी प्रकारका कर न मिलसकेगा । न कोई कर लगाने पावेगा । तथापि वह अपने दिये हुए करसे इस बातको प्रमाणित करते हैं कि हम सार्वभौम राजाके अधीन हैं । राणाजी परोक्षमें इन भूमियां किसानोंसे अनुकूलता पाया करते हैं; परन्तु ब्रिटिश प्रभुताके स्थापन करनेके समय जब मेवाड़भूमिने बहुत दिनोंके पीछे शांतिका सुख प्राप्त किया तब उस समय वहांके मौजोंमें उसकी रक्षा अरक्षाका कोई विचार न हुआ, उस समयसे राणाजी ने पूर्व करसे उनको छुटकारा देकर उन भूमियां लोगोंको साधारण वेतन-भोगीकी समान देशकी शांति, रक्षा अथवा सैनिक पदपर नियत करना आरंभ किया ।

वापोताके ऊपर राजपूत किसानोंका अधिकार कहांतक दृढ़ है और वह लोग कैसी दृढ़ताके साथ उस पर अधिकार किया करते हैं; इस बातको हम कई एक पुराने प्रमाणोंसे प्रमाणित करेंगे । जिस समयमें मन्दौर नगर मारवाड़की राजधानी गिनाजाताथा । उस समय कोई गिहौट राजकुमार एकदिन मारवाड़की राजकमारीको विवाहनेके लिये चला । राजपूतोंमें ऐसी रीति चली चली आई है कि यदि कोई नया जामाता विवाहकी रात्रिमें कन्याके पितासे दहेजमें कोई सम्पत्ति मांगे, तो वह उसको अवश्य ही देनी पड़ती है । इस रीतिने राजस्थानमें बहुत ही अनर्थ किये हैं । तदनुसार उस नए गिहौट राजकुमारने मेवाड़में बसानेके लिये अपने मंत्रीके परामर्शसे दश हजार जाट जो कि किसानीका काम करते थे अपने स्वशुरसे मांगे । इस अद्भुत दहेजका मांगना सुनकर मारवाड़के राजाको आश्चर्य हुआ, परन्तु जामाताकी प्रार्थनाको पूर्ण तो करना ही होगा । इसकारण उन्होंने आज्ञा दी कि देश हजार जाटोंको इस देशसे जाना पड़ेगा । इस आज्ञाको सुनते ही जाट-किसान लोग अत्यन्त घबड़ाये और महारोंजकी आज्ञा पालन करनेको किसी प्रकार सम्मत न हुए । अनन्तर जब राजाने बहुत ही कड़ाई की तब सबने इकट्ठे होकर एक साथ कहा;—“क्या हमलोग अपना बपोता और अपने पुत्रोंकी सम्पत्ति छोड़कर एक अपरिचित मनुष्यके लिये परिश्रम करनेको उसके साथ परदेशमें जाँय ? महाराज ! आप अपनी इच्छानुसार हमारा बंध करा सकते हैं; परन्तु प्राण रहते हुए हमलोग बपोतेको नहीं छोड़ सकते ।” मन्दौरके राजाने पहिले ही समझ लियाथा कि जाटलोग इसमें यह आपत्ति उठावेंगे। जाटोंके असम्मत होनेसे यद्यपि

इस श्रेणीमें शाहपुरा और बनेडाके राजगण प्रबल क्षमताशाली हैं । प्रधान २ सामन्तोंकी समान राणाके साथ इनकी किसी प्रकारकी अधीनता सूचक व्यवस्था न होनेपर भी वह अपनेको राणाके अधीन समझकर राणाकी आज्ञा पालनेके लिये यथा समयपर अग्रसर होते हैं । यह राणाके बहुत ही अनुगत हैं । इस समय श्रेणीमें राणाके अति निकट आत्मीयके अतिरिक्त दूसरोंने भी पोष्य पुत्र ग्रहणकी क्षमता पाई है, पहिले यह क्षमता विलकुल नहीं थी । इस श्रेणीमें किसीके अपुत्रक अवस्थामें प्राण त्याग करनेपर पहिले समयके राणा ही उनकी सब भूवृत्ति लेलेते थे ।

ऊपर लिखित सामन्तश्रेणीसे लेकर एक चरिसा परिमित भूमिके अधिकारी तक प्रत्येकके ऊपर किसप्रकारका कार्य्य समर्पित है और कैसी विधि व्यवस्थासे उनको भूवृत्ति दीगई है, इतिहासलेखक टाड इस स्थानपर उसीका वर्णन करगयेहैं । ×

राजकीय स्वत्व और राजधन ।—मेवाडेश्वरके राजस्वके प्रधान २ अङ्गोंका केवल स्थूल २ विवरण यहां लिखतेहैं, विशेष विवरण यथोचित स्थानपर लिखा जायगा । खालिसा भूमिका करही राणाकी प्रधान आय है; उसके पीछे व्यवसाय, वाणिज्यशुल्क और प्रधान २ नगर और बाजारोंका कर आताहै । पहिले राणालोग राजस्वके इस विशेष प्रयोजनवाले अङ्ग बाजारके ऊपर अधिक दृष्टि देते थे, और उस समय कर अधिक न होनेसे वाणिज्य द्रव्य भी बहुतायतसे आते थे । राणागण व्यापारियोंके ऊपर बहुत न्यून शुल्क निर्धारण द्वारा बड़ी ऊंची उदारता दिखाते थे, इधर व्यापारी भी निर्धारित करको प्रसन्न चित्तसे देते थे । परस्परके सदाचरणसे ही विश्वास और प्रीति बढ़ती थी । कर्नेल टाड जिस समय मेवाडके वाणिज्य विस्तारके लिये विशेष यत्नशील हुए थे, उस समय राणाके साथ पूर्वोक्त भावका बहुत ही अभाव था; वाणिज्य शुल्क अधिक परिमाणसे लिया जाता था, इससे व्यापारीलोग विरक्त होगये थे, और वह शुल्कसंग्रहकी रीति भी बहुत बुरी थी । उस समय एक व्यापारीने कर्नेल टाडसे आकर कहा, “ हमारे पूर्वपुरुष सीमापर स्थित प्रथम वाणिज्य करके अधिकारीसे वाणिज्य सनदपत्र लेकर बैलके सींगपर लगा देते थे, (क)

× कर्नेल टाडके समय मेवाडमें जो भूकर शुल्कआदि प्रचलित था, इस समय उसका कोई २ अंश बदल गयाहै ।

(क) रजवाडेके भीतर व्यापारकी चीजें लेजानेके लिये बैलगाडी व्यवहार की जातीहैं; वेदेशिक वाणिज्यमें ऊंट नियुक्त होतेहैं ।

भलीभांति ज्ञात होजायगा कि पटैल शब्द संस्कृत पति शब्दसे उत्पन्न हुआ है । मेवाडवाले ठीक ऐसेही अर्थमें इसका व्यवहार किया करते हैं । पूर्वकालमें निर्वाचनके सिवाय पटैलका और कोई कर्त्तव्य नहीं था । गांवमें वह सबसे अच्छा गिना जाता था । राजाके यहां गांवका प्रतिनिधि तथा किसान और राजाका मध्यस्थ भी पटैलको ही समझते थे । इस कारण राजा, प्रजा, दोनोंमें पटैलजीका सन्मान था । पटैलके पास वापोता भी होता है, तथा किसान जो धान्य उत्पन्न करता है, उसका चालीसवाँ भाग भी उसको मिला करता है । राजाकी ओरसे एक कृपा उसपर और भी की जाती है । अपने वापोताके अतिरिक्त वह जिस जमीनको जोतता है, राजाज्ञाके द्वारा, वह उसपर नियत हुए करके तीसरे अंशसे भी छुटकारा पाजाता था । इस प्रकार मेवाडभूमिके पटैलोंका कर्त्तव्य निश्चय किया गया । पटैल ही राजा और किसानको एक बन्धनमें जोड़ सकता है । किसानोंका प्रतिनिधि, ग्रामीण समाजका अगुआ पटैल ही है । राजा पटैलके द्वारा ही असामी किसानोंकी अवस्थाको जान लिया करता है । महाराष्ट्रियोंके कठोर अत्याचारसे मेवाडकी भाग्यतरंग जब दूसरी ओरको फिरी थी, उससे पहिले, स्वाधीनकी लीलाभूमि मध्यपाटक्षेत्रमें पटैलोंकी ऐसी ही सामर्थ्य थी । परन्तु जैसे २ महाराष्ट्रियोंकी लूट खसोट बढ़ने लगी उसहीके साथ पटैल लोग भी अपनी सामर्थ्यको बढ़ाते गये और यहांतक बढ़े कि फिर तो गांवमें जो कुछ थे सो पटैलही थे । महाराष्ट्रीलोग जो कर किसानोंपर लगाते थे उसको यही वसूल करते थे और कभी २ यही लोग जामिनकी भांति उन दुष्टोंके डेरोंमें पड़े रहते थे । शत्रुओंने जितनी बार चढाई करके मेवाडवालोंसे कर मांगा, उतनी ही बार पटैलोंने आनन्दसे उस करको भुगताना किया । प्रगटमें तो पटैल लोग अपनेको किसानोंका प्रतिनिधि बताते थे, परन्तु अवसर पाते ही विचारे किसानका नाश करदेते थे । अगणित किसान लोग पटैल लोगोंका ही भरोसा करके निश्चिन्त रहते थे, परन्तु लालची पटैल मौका पाकर उन्हींकी सम्पत्तिसे अपना पेट भरते थे । पठान या महाराष्ट्रीलोग जिस समय चढाई करते थे उस समय पटैलोंकी, पौवारह होती थी । सबसे पहिले तो वह अपनी रक्षाका उपाय सोचते थे तथा किसानोंका सत्यानाश करके अपनी गोडी-बनालेते थे । पहिले तो वह किसानोंसे रुपया ही लेते थे,—रुपया न मिला तो उनकी जमीन तथा जमीन भी हाथ न लगती थी तो उनके वरतन भांडे गिरों रखकर अपना काम चलाया करते थे । इस प्रकारसे जब-

तैंतीसवां अध्याय ३३.

व्यवस्था और विचार विभाग;—रोजाना भूवृत्ति प्राप्त सामन्त
वा सरदारोंका सामरिक कर्त्तव्य निर्णय;—शासन प्रग-
लीकी अपूर्णता;—पाटवतोंका कर्त्तव्य कर्म ।

कैर्नेल टाड मेवाडके जिस समयका इतिहास लिखगये हैं, इस समय राज्यपरिवर्तनके साथ उस शासन विभागके सामान्य २ विषयोंमें कुछ २ रूपान्तर होगया है । टाड साहब मेवाडके जिस समय तकका इतिहास लिखगयेहैं, हमने उससे आगेके समयका इतिहास यथोचित स्थानोंमें लिख दियाहै; उसके पढनेसे पाठकोंको यह अवश्य ही विदित होजायगा कि, मेवाडेश्वर राणाके साथ अधीन सामन्त मण्डलीके सम्बन्ध बन्धनका इस समय कितना रूपान्तर होगयाहै । इस समय हमको उस रूपान्तरका पुनरुल्लेख न करके कर्नेल टाडका अनुसरण करना ही उचित ज्ञात होता है ।

इतिहासलेखक लिखगयेहैं कि, जिस समय मेवाडने धन, मान, गौरव व वीरता विक्रममें बहुत ऊंचा स्थान पाया था, जिस समय राणालोगोंके प्रबल प्रतापसे मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें पूर्णरूपसे शान्ति विराज रही थी, उस सुखमय समयमें राणागण व्यवस्थापक सभामें चार प्रधान मंत्री और उनके सहकारी मंत्रियोंके साथ बैठकर, साधारणत्व निर्णय और प्रजाके सम्पूर्ण अभाव दूर करनेके लिये प्रयोजनीय विधि व्यवस्थाओंकी रचना किया करते थे । केवल दीवानी कर्मचारियोंके सिवाय सैनिक सामन्तमण्डली भी उस व्यवस्थापक सभामें प्रवेश नहीं करसकती थी ।

मेवाडकी पतन दशामें—जिस समय राज्यके चारों ओर ही विशृंखलता होरही थी, जिस समय शान्तिदेवी एक साथ अन्तर्द्धान होगई थीं, जिस समय राजशासन शक्ति बहुत दुर्बल होगई थी, उस समय व्यवस्थापन और विचार विभागका कार्य प्रायः रुक गया था, किन्तु सन्तोषका विषय है कि, स्थानीय प्रयोजन संबन्धी सब व्यवस्थाके कार्य उन स्थानोंकी स्वयं सिद्ध विचारालय पञ्चायत

लोग फिर अपने देशमें आते और उन खेतोंसे सुवर्णमय फल उत्पन्न किया करते थे; पटैलोंके घरमें फिर धीकी कडाही चढ जाती थी, किसानोंके साथ फिर उनका वही वर्ताव होजाताथा । विचारे किसानोंको देशमें लौटनेपर भी शांति नहीं मिलती थी । पिशाचरूपी पटैलोंके घोर अत्याचारसे किसानोंका जीवन दुःख मय होजाताथा । इस प्रकार दुःखके ऊपर दुःख पाकर मेवाडका कृषक कुल निर्मूल होने लगा; मेवाडकी सुख शांति नष्ट हुई । धीरे २ सभीलोग इस बातको जानगये कि पटैललोग मेवाडके सुखरूपी सूर्यके लिये छद्मवेशी राहुँहे । सभी समझगये कि विना शत्रुको पराजित कियेहुए देशका मंगल न होगा । परन्तु शत्रु जभी पराजित होंगे कि जव इन पटैलजीका मेवाडसे नामतक लोप होजाय । परन्तु यह कार्य कुछ सरल न था । क्योंकि बहुतसे बडे राजकर्मचारी उन लोगोंकी तरफदारी करतथे । उनको पदच्युत करनेसे बडों २ के स्वार्थमें आघात लगेगा । और वह लोग पटैलोंकी तरफदारी करनेके लिये राज्यमें अशांतिका बीज बोवेंगे ।

जिस समय दीन जन हितकारी टाडसाहबने किसानोंकी दुर्दशाका यह वृत्तांत सुना, वह तत्काल उस विपत्तिको दूर करनेके लिये तइयार होगये । प्रथम तो उन्होंने सब प्रकारसे पटैलोंकी अवस्थाका विचार करदिया । मेवाडके पुराने इतिहासको विचारमेंसे उनको ज्ञात होगया, कि गाँववाले लोभी पटैलोंको चुना करते थे । वह लोग एकमत होकर जिसको चाहतेथे उसको पटैल बनवा दिया- करते थे राजा भी उसीको स्वीकार करके पटैलकी सनद देदेता था । तदनुसार मेवाडमें इस समय वही रीति चलाई गई । मेवाडवालोंने एकसाथ परामर्श करके उसको ही निर्वाचित किया । राणाजी भी उसीको मंजूर करते और सबके सामने उसके शिरपर पगिया बँधवाकर पटैलका पद देते थे । निर्वाचित हुआ नया आदमी राजाको "नजर" देकर नये पदपर विराजमान होजाताथा । पटैलका उहदा पहले बिका करता था । राजा कुछ बंधाहुआ धन लेकर चाहे जिसको पटैल बना दिया करतेथे, ऐसा करनेसे राज्यका अत्यंत अमंगल होताथा कहीं वही रीति इस समयमें फिर न चलजाय उसको रोकनेके लिये टाडसाहबने उत्तम प्रबंध करलिया । उन्होंने राणासे प्रतिज्ञा करा ली, जिसमें राणाजीने यह कहा था " कि पटैलके चुनावमें हम कभी दखल न देंगे और न उनके साथ कोई गुप्त सलाह की जायगी । "

किसी प्रकारका अधिकार नहीं था ।” वह ऊपरके प्रस्तावको पढ़कर क्या फिर ऐसा कहेंगे ? वर्तमान सभ्य जगत्में समाजसृष्टिके बहुत काल पहिले भारतवर्षकी साधारण प्रजाको शासन विभागके अनेक विषयोंमें जो शक्ति थी, इतिहासके पढ़नेवाले उसको भलीभाँति जानते हैं । केवल तबही नहीं अब भी भारतके अनेक प्रान्तोंमें इस प्रकारकी पञ्चायत शैली विराजमान है । एक समय बङ्गदेशमें भी पंचायती शासन प्रचलित था—उत्तरप्रान्तमें अवतक है दुर्दान्त यवनोंके शासनमें भी उस रीतिका कुछ व्यत्यय नहीं हुआ था । बङ्गालमें ब्रिटिश शासन जैसे प्रबल प्रभुत्व विस्तार कर रहा है, भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमें—भारतके देशी राजोंके अधिकारमें वैसा प्रभुत्व विस्तार नहीं कर सका । प्रबल प्रभुत्व विस्तारके साथ ब्रिटिश शासनने प्राचीन पंचायत प्रथा भी एक साथ लुप्त कर दी है । इस कारण स्वदेशमें उस पंचायत प्रथाका दीर्घकालसे अभाव देखकर ही बहुतोंको विश्वास होगया है कि “विचार वा शासन विभागमें पहिले भी हमारी कुछ क्षमता नहीं थी ।” यद्यपि ब्रिटिश गवर्नमेंटने इस समय भारतके अनेक स्थानोंमें इस देशवालोंको अवैतनिक विचारक (मजिस्ट्रेट) और जूरी पदपर स्थापन करनेकी विधि बना दी है, किन्तु प्राचीन पञ्चायतके साथ तुलना करनेपर इसका फल बहुत सामान्य ज्ञात हुआ जो लोग भारतसे शासन रीति सिखकर मनुष्यनामसे गिने गये हैं—इस समय वह लोग ही भारतके नेता बनकर उस भारतकी प्राचीन प्रथाके स्थानमें नवीन प्रथा प्रचलित कर रहे हैं ! कालकी क्या ही विचित्र गति है ! जो जाति एक समय जगत्की शिक्षक थी, उस जातिको इस समय अन्य जातियों शिक्षा दे रही हैं ? कालचक्रकी अधीनतामें ही यह परिवर्तन होता है, कौन कह सकता है कि, उस कालचक्रके अधीनमें अब फिर परिवर्तन न होगा ।

टाड साहब लिखते हैं कि, पूर्वकालमें चबूतरें अर्थात् विचारालय केवल खालिसा जमीन अर्थात् राणाके अधिकृत भूखण्डमें ही स्थापित होती थी । किसी सामंतके आधीनवाले देशमें वैसे विचारालयका अधिवेशन होनेपर, सामंत लोग उसके द्वारा अपनेको बहुत ही कलङ्करूप समझते हैं । सामन्त वृन्द यद्यपि राणाके अधीन हैं, किन्तु वह अपने अपने देशमें विलकुल स्वाधीनता भोगते हैं, इस कारण शत्रुओंका आक्रमण निवृत्त करनेके लिये राणा यदि किसी सामन्तके अधिकृत देशमें छावनी स्थापनके कारणसे, वा वाणिज्य शुल्क संग्रहके लिये राजपताका स्थापन करें, तो सामन्त लोग उससे अपने लिये अपमानित समझते

होगा कि यह सब संस्कार अमूलक और भ्रमयुक्त हैं । कारण कि अधिकांश किसान लोग वर्णज्ञान हीन होनेके कारण राज्यविविधको किञ्चित भी नहीं जानते हैं । राजकर्मचारी ही अपना मतलब सिद्ध करनेके लिये उनको भय दिखाते और अनेक प्रकारके अत्याचार करते हैं; उनका प्रतिनिधि पटैल भी अपना पेट भरनेके लिये तइयार होकर किसानोंके सुखदुःखको नहीं विचारता । यही कारण है जो किसानगण कष्टके मोरे उन नरपिशाच कर्मचारियोंकी पूजा करते हैं । मूल बात तो यह है कि किसानोंको कहीं पर भी सुख नहीं है । जबतक वह स्वयं विद्याको न सीखकर स्वयं अपनी रक्षा न कर सकेंगे तबतक कि सी प्रकारसे उनका मंगल नहीं होगा । हाय ! वह दिन कब आवेगा ? वह समय कब आवेगा कि भारतके किसान लोग अज्ञानरूपी अँधेरेसे छुटकारा पाकर स्वयं अपनी अवस्थाको समझजायेंगे ?—वह कौन सी घड़ी होगी कि जब जमींदार और प्रजाकी विषमता जडसे उखडजायगी ? वह कौन सा युग होगा कि जिस दिन भारतके भ्रातागण ऐक्यताके पवित्र मंत्रसे दीक्षित होकर परस्पर एक दूसरेको हृदयसे लगाय जातीयबलको इकट्ठा करेंगे ? क्या वह दिन आवेगा ? रुधिरकी प्यासी कूट सामाजिक और राजनैतिक विषमता जब उठ जायगी ?—कह नहीं सकेंगे ।—परंतु आशा होती है कि—गिराहुआ भारत फिर उठेगा । भारतवासीगण इस जमींदार और प्रजाकी घोर विषमतासे छुटकारा पाय एक साथ ऐक्यताके सुखको अनुभव करेंगे । हमको आशा है कि फिर कोई शाक्यसिंह और गुरु गोविंदसिंह उत्पन्न होकर ऐक्यताकी विजयदुंदुभीको बजाय;—जन्मभूमिका दुःख दूर बहाय;—इस असार संसारमें प्राणोत्सर्ग और देशानुरागका प्रचंड प्रमाण दिखावेंगे ।

जिस दिन परम हितकारी ब्रिटिश गवर्नमेंटने मेवाडके दग्ध हृदयपर शान्तिका जल छिडका उसही दिनसे मेवाडकी अवस्था उन्नत वा अवनत होनेलगी, उस बातका विचार करना इस समय हमारा मुख्य कर्तव्य है । अतएव आगे उसहीका विचार कियाजाताहै । फरवरी सन् १८१८ ई० से मई सन् १८२२ ई० तक मेवाडमें जिस शासन विज्ञापनका प्रचार हुआ था, उसका पाठ करनेसे स्पष्ट ही समझमें आसकताहै कि मेवाडकी दशा बहुतायतसे उन्नतिपर पहुँचीहै । मेवाडकी यह उन्नति किस प्रकारसे हुई उसका निश्चय करनेके लिये सन् १८२१ ई०के शेष भागमें मेवाडके मऊ, वरक और कुपाशन इन तीन जनपदोंकी मनुष्यगणना कीगई थी । दूसरे अंशोंको छोडदेने पर केवल नगरविभागको ही ग्रहण करनेसे

निर्णय करतेहैं, अपनी इच्छानुसार किसी कार्य करनेमें अग्रसर नहीं होते । मेवाडके राजनैतिक किसी गूढ़ प्रश्नके उपस्थित होनेपर सबसे पहिले प्रत्येक सामन्त अपनी २ सभामें उसका विशेष आन्दोलन करके यह निश्चय करलेते हैं कि राणाकी सभामें कैसा मन्तव्य प्रकाशित करना उचित है, इसके अनन्तर प्रधान सभामें जाकर प्रत्येक सामन्त युक्ति और प्रमाणसहित अपना २ मन्तव्य सूचित करदेते हैं ।

यदि किसी सामन्तको उपरोक्त मंत्रणा सभामें स्थान न मिले तो वह अपने-को महा अपमानित समझता है । उस महासभामें उक्त श्रेणीके प्रश्नके आन्दोलन और समालोचनासे सामन्तोंके द्वारा जो मन्तव्य दियाजाताहै, वह सामान्य नहीं होता । मेवाडेश्वर राणा राज्यशासनके लिये जिस प्रणालीसे सभा स्थापन और कर्मचारी नियुक्त करते हैं, सामन्त मण्डली भी उसी रीतिपर अपने २ अधिकृत प्रदेशोंमें पुरातन कालसे उसी प्रकार सभा और कर्मचारियोंको नियुक्त करती चली आतीहै । सामन्तके अधीनमें स्थित सरदारगण, प्रधान राजस्व-कर्मचारी, पुरोहित, कवि और दो तीन प्रजाके प्रतिष्ठित लोग प्रत्येक सामन्तकी सभामें एकत्रित होकर साधारण गंभीर प्रश्नके विषयमें मतवाद संगठन करतेहैं । राणा स्वयं जिस प्रकार अपने मंत्री और सभासदोंके साथ उस श्रेणीका प्रश्न लेकर आन्दोलन करनेमें नियुक्त होते हैं, सामन्तगण भी उसी प्रकार आन्दोलन करके अपना २ मन्तव्य स्थिर करतेहैं, अन्तमें महासभामें जाकर सब पृथक् २ मन्तव्य प्रगट करदेतेहैं । इस प्रकार प्रत्येक राजनैतिक अनुष्ठान वा साधारण कार्य विशेष आन्दोलन और तर्कवादके पीछे राणा द्वारा निर्धारित होताहै ।

उपरोक्त वाक्य हमारे हृदयपर किस भावका आविर्भाव करतेहैं ? अव कौन कहेगा कि भारत चिरकालसे यथेच्छाचार शासनद्वारा शासित होता आताहै ? वर्तमान सभ्य जगत्में पार्लियामेंट महासभा वा साधारण तंत्र सभा स्थापनके बहुतकाल पहिले रजवाडेमें साधारण मतवादके ऊपर ही सब कार्य निर्भर रहते थे । इसके द्वारा क्या वह निःसंदेह रूपसे प्रतिपन्न नहीं होताहै ? अनेक अंग्रेजोंका विश्वासहै कि—“भारतमें अव भी स्वाधीन मतवादकी उत्पत्ति नहीं हुई ।” हम कहतेहैं कि यह उनकी भलहै । चाहे जातीय समस्त शक्ति लुप्त होजाय, जातिव विन्दुमात्र भी न हो, परन्तु जहां मनुष्य है; वहां साधारण मतवाद चिरकालसे अवस्थान करता आता है । असभ्य जंगली जातिमें भी साधारण मतवाद बहुत कालसे विराजमान है । जिस देशमें साधारण मतवादके ऊपर राजा

वासान्तिक धान्य	सन् १८१८ ई० का	४००००) रु०
" "	" १८१९ ई० का	४५१२८) रु०
" "	" १८२० ई० का	६५९१००) रु०
" "	" १८२१ ई० का	१०१८४७८) रु०
" "	" १८२२ ई० का	९३६६४०) रु०

पिछले दो वर्षोंकी एजंट साहवने कुछ विशेष देखभाल नहीं की थी, तथापि यह बड़ी आमदनी हुई थी ।

पूर्वोक्त पांचवर्षोंमें जो आमदनी वाणिज्य करसे हुई थी, उसकी सूची भी नीचे लिखी जाती है ।

" सन् १८१८ ई०	नाममात्र आमदनी । (कुछ थोड़ी)
" १८१९ ई०	९६६८३) रु०
" १८२० ई०	१६५१०८) रु०
" १८२१ ई०	२२००००) रु०
" १८२२ ई०	२१७०००) रु०

ऊपरकी जो दो सूची लिखी गई यदि उनका मिलान मेवाडकी पूर्वावस्थाके साथ किया जाय तो साफ मालूम होजायगा कि अंगरेज एजेन्टकी सहायतासे राणाजीने भलीभांतिसे अपने देशकी दशाका सुधार कियाथा । खेती, शिल्प और वाणिज्यको एक ओर रखकर मेवाडभूमिकी उन धातु खानोंका विचार किया जाय कि जो पृथ्वीके नीचे छिपी हुई हैं; यदि उनका उचित व्यवहार हो तो थोड़े ही समयके बीचमें मेवाडभूमि नन्दन काननकी समान शोभायमान होसती है । ५० वर्षसे कुछ पहिले जावडा और दुरेवाड*की टिन खानिसे ही प्रतिवर्ष ३०००००) रु० की आमदनी होती थी । इसके अतिरिक्त मेवाडमें ताँबेकी खानी भी हैं । इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन खानोंसे मेवाडको बहुत सी आमदनी होती थी । परन्तु मेवाडके दुर्भाग्यसे खानोंके खोदनेवाले कालके गालमें चले गये ।

—भीलवाडा	"	०	"	"	२७०००
पुरा	"	२००	"	"	१२००
मंडल	"	८०	"	"	४००
गोसुन्द	"	६०	"	"	३५०

यह समस्त यह मनुष्योंसे भरेहुए थे ।

* संवत् १६१८में जावडाकी टिनखानिसे २२२०००) रु० दुरिवासे ८००००) रु० की आमदनी हुई थी । यहांसे टिनके साथ थोड़ा रचांदी भी निकलती थी ।

वाध्य है । प्रधान २ सामन्त जिस प्रकार भूवृत्तिके बदलेमें राणाके निकट सेना भेजनेको वाध्य हैं, वह स्वयं भी उसी प्रकार अधीनके सरदारोंको भूवृत्ति देकर उनके निकटसे सेना संग्रह करलेते हैं । वर्त्तमानमें चारों ओर शान्ति विराजित होने और बाहरी शत्रुओंका भय विलकुल दूर होजानेसे भूवृत्तिके बदलेमें सेना भेजनी नहीं होती। इस कारण उस प्रथाका थोडा परिवर्तन होगया है मेवाड इतिहास वृत्तिके शेष अंशमें हमने यह विवरण लिख दिया है । इस कारण उसका यहां लिखना अनावश्यक है ।

भूवृत्ति प्राप्त होकर उसके बदलेमें सामन्तोंको कितनी सेना भेजनी होती थी, वह निर्धारित रीति बद्ध नहीं है । पृथक् २ देशके सामन्तगण भिन्न २ संख्याके अनुसार ही सेना रखते हैं । किंतु प्रत्येक सहस्र मुद्रा आयके लिये तीन वा दो से कब नहीं होते । इस प्रकार अश्वारोही सेनाके देनेकी व्यवस्था है । विशेष करके जिस समय सनद वा भूवृत्ति दीजाती है; उस समयकी व्यवस्थाके अनुसार किसी २ को तीन अश्वारोही और तीन पैदल प्रतिसहस्र मुद्रा आयके लिये देनेकी व्यवस्था है । भिन्न २ भूवृत्ति दानपत्रोंको पढकर ही पाठकगण इन भिन्न २ व्यवस्थाओंका विशेष विवरण जान सकेंगे । × इंग्लेण्डके राजा विलियमने * जिस समय अपना राज्य साठ हजार भागोंमें विभक्त किया था, उस समय प्रत्येक अंश प्रत्येक सेनाके लिये (२००) दो सौ रुपये देनेको वाध्य होतेथे, अर्थात् प्रत्येक सेनाके लिये गढमें इतने रुपये व्यय होते थे । जो विभक्त देश सेना उपस्थित न करसकता, उस देशको उपरोक्त धन देना होता था । मेवाडके प्रत्येक सेनापतिके ऊपर (२५०) ढाई सौ रुपये निर्धारित हैं ।

इंग्लेण्डमें सामन्त शासन रीति बहुत कालसे तिरोहित होगई है । किन्तु जिस समय वहां उक्त प्रणाली पूर्णरूपसे प्रचलित थी, उस समय राजा उक्त प्रकारके सेनादलके ऊपर सब समय क्षमता नहीं चला सकतेथे । एक वर्षमें केवल चालीस दिन प्रत्येक सैनिक राजकार्यमें नियुक्त होता था, अधिपतिके बुलानेपर स्वदेश वा विदेशमें जाकर संग्राम करना होता था । इस विषयमें रजवाडेके अधीश्वर भूतपूर्व इंग्लेण्डेश्वरोंकी अपेक्षा अधिक सुवीता संभोग और सामर्थ्य संचालन करते थे तथा करतेहैं ।

× परिशिष्ट—चौथी, पाँचवीं और छठी अनुलिपि देखो ।

* William the Conqueror.

अठारहवां अध्याय १८.

महाराणा जवानसिंह;—उनका चरित्र;—मेवाडकी शासन शृंखला, माहिरवाडाके सम्बन्धमें ब्रिटिश गवर्नमेन्टके साथ राणाका नव सन्धि बन्धन;—राणाकी अपरिमित व्ययिता;—ऋण वृद्धि;—राजधनकी कमी;—ब्रिटिश गवर्नमेन्टको कर देनेमें राणाकी असामर्थ्यता;—राणाके ऊपर कोर्ट आफ डाइरेक्टरकी अनुज्ञता;—राणा जवानसिंहका प्राणत्याग, राणा सरदारसिंह;—सामन्तोंके साथ उनका विवाद;—नवसंधि बंधन;—उदयपुरकी ब्रिटिशसेनाके लिये राणाकी प्रार्थना;—उसमें अंग्रेज गवर्नमेन्टकी असम्मति;—राणा सरदारसिंहका प्राणत्याग ।

महाराणा भीमसिंहके औरससे पन्द्रह पुत्र उत्पन्न हुए; परन्तु एक मात्र कुमार जवानसिंहके आतिरिक्त और सभी असमयमें मृत्युको प्राप्त होगये, भीमसिंहके स्वर्गवासी होनेपर जवानसिंह ही मेवाडके राज्यसिंहासनपर सन् १८२८ ईसवीमें बैठे । आदिपुरुष बाप्पारावलके समयसे लेकर जो राणागण वीरता, विक्रम शूर वीरताका चमत्कार, जातीय स्वाधीनताकी रक्षा, स्वराज और स्वजातीयका गौरव-वर्द्धन तथा अपने जीवनका कर्तव्य कर्म प्रकाश करगये हैं; जो उस कर्तव्यके पालन करनेमें एक मुहूर्तमात्रको भी शान्त नहीं हुए, जिन्होंने अपने प्राणोंकी भी बाजी लगादी थी, मेवाडकी हीन दशामें वही राणाओंके वंशधर आलस्य तथा विलासिताकी दासत्व शृंखलाको धारण कर एक साथ ही उसके विपरीत आचरण करनेमें प्रवृत्त होगये । महाराणा भीमसिंहने सबसे पहिले इस प्रकार विलासिताकी उपाधि ग्रहण करनेमें कुछ भी लज्जा न की, उनके पुत्र नवीन राणा जवानसिंह उनसे भी अधिक वासनाओंमें आसक्त, अधिक खर्चाछू और राज्यशासनमें

शासित होता था, अब भी जो सामंत शासन प्रणाली कुछ कुछ रूपांतरित होकर रजवाडेमें विराजमान है, कर्नेल टाडका मत है कि वह शासनशैली सर्वांग संपन्न नहीं है उसकी अनेक विषयोंमें अपूर्णता देखी जाती है। उनकी इस उक्तिको अनेक अंशोंमें अवश्य ही सत्य कहना होगा, किंतु सामन्तशासन प्रणाली शुभ फलदायक नहीं, यह बात नहीं मानी जा सकती । कर्नेल टाड लिखते हैं कि संपूर्ण राजस्थानमें केवल नरपति वृन्दके चरित्रके ऊपर ही राज्यकी उन्नति और मंगल निर्भर है । प्रचलित शासन रीतिके केवल वही मूलदंड हैं; विधिके अन्यान्य विखरे हुए अंशोंको यथोचित स्थानमें रखने और कार्यमें नियोग करनेकी शक्ति केवल वही रखते हैं । राजा यदि क्षणमात्र भी अपनी कार्य सिद्धिसे मुंह मोडले तो सब रीतियें अपनी इच्छानुसार छिन्नभिन्न होकर गिर पड़ें । ऐसे समयमें अशान्ति, उपद्रव अत्याचार सबही प्रबल वेगसे दिखाई देने लगें । यदि एक प्रबल क्षमताशाली राजा उस शासनयंत्रको भलीभाँति तीव्रतासे चलासके तो उनके परलोकजानेपर क्रमसे तीन राजा अत्यन्त अयोग्यता दिखानेपर भी उस शासनरीतिसे पहिलेकी समान ही अपना कार्य सिद्ध कर सकते हैं । उस समय यदि कोई बाहरी शत्रु प्रगट हो तो अवश्य ही विपरीत फल हो । इस सामन्तशासन शैलीके अनेक अंग अपूर्ण हैं; परन्तु राजपूत जातिकी राजभक्ति, देशहितैषिता, समाजविधि-धर्मविधानके ऊपर दृढभक्ति और जन्मभूमिके ऊपर गाढी प्रीति इस प्रणालीके अनेक शोचनीय काण्डोंको भुलादेती है । यूरोप वा एशियाके किसी देशमें भी यह सामंतशासन शैली सब अंशमें शुभफल नहीं उत्पन्न कर सकती । यह रीति एक समय केवल राज्यमें अशान्ति, आत्म निग्रह और यथेच्छाचारका स्रोत प्रवाहित करती थी । किसी समय यदि कोई बाहरी शत्रु उपस्थित न होता, तो भी राज्यमें भयंकर अशान्ति उत्पन्न होकर अन्तमें शोचनीय दशा परिवर्तित कर देती थी । चन्दावत और शक्तावत दोनों संप्रदाय चिरकालतक परस्पर शत्रुताका आचरण करते रहे । राणाका बल क्षीण होनेसे और तीसरी श्रेणीके सामन्तोंकी राणाकी वश्यता स्वीकारमें असमति होनेपर वह दोनों संप्रदाय परस्पर एक दूसरेके ऊपर अत्याचार, उपद्रव और राणाकी आज्ञा अमान्य करके राज्यमें हृदय भेदी काण्ड उपस्थित कर देते थे । दोनों सम्प्रदायोंके आत्म निग्रहमें प्रमत्त होनेपर, उस समय यदि कोई बाहरी शत्रु मेवाड आक्रमणके लिये संहारमूर्त्तिसे दिखाई देता तो उस समय प्रबल ऐश्वर्य और प्रतापशालीके सिवाय क्षीणबल और साहस हीन राणा कभी उनके दमन करनेमें समर्थ न होते । किन्तु यह शासन

महाराणा जवानसिंहने एक लिखेहुए संधिपत्रमें * आठ वर्षके लिये उनको फिर लौटादिये सन् १८३३ ईसवीमें सात मार्चको वियायोर नामक स्थानमें संधिपत्र लिखागया, अंग्रेज गवर्नमेन्टकी ओरसे लैफ्टिनेन्ट कर्नल केटने और महाराणाकी ओरसे प्रधानमन्त्री महता शेरसिंह, प्रधान श्यामनाथ पुरोहित और राय चिरंजीवलालने उसपर हस्ताक्षर किये। आलस्य विलासिता और इन्द्रियोंकी आसक्ति जिस राजाके ऊपर अपना अधिकार करलेतीहैं, उस राजाका खजाना अतुल धनसे पूर्ण होनेपर भी बहुत जल्दी खाली होजाताहै। महाराणा जवानसिंहने विलासभोगमें मोहमंत्रसे मोहित हो बहुत थोड़े ही समयमें अपना सम्पूर्ण धन उठादिया, इसी कारणसे उनका सम्पूर्ण खजाना खाली होगया, जैसे २ उनकी आयु बढ़ती जातीथी वैसे २ ही उनकी इन्द्रियोंमें आसक्ति और पापकरनेमें अधिक मन बढ़ता जाताथा, इसी कारण राज्यके पालनमें उनको पहलेकी भाँति राज्यके देखने भालनेका अवकाश न मिला और इसीसे राज्यकी अवस्था धीरे २ अत्यन्त ही शोचनीय होगयी। और अन्तमें राणा जवानसिंहने धनहीन होकर सामन्त और धनवान प्रजासे ऋण करनेमें भी कसर न की। भोग विलासताके कारण वह ऋण दिनपर दिन बढ़ता ही गया।

राणाने शासन भागकी ओरको आँख उठाकर भी न देखा, इसीसे प्रत्येक वर्षमें दो लाख रुपयेका खर्च होने लगा। इधर गवर्नमेन्टको जो सन्धिपत्रके

* सन्धिपत्र ।

“ (१) पहिलीधारा । मूगरा महिरवाडाके देशमें उदयपुरकी राजधानीमें जितने भी ग्राम हैं, उनके शासनके सम्बन्धमें इस समय जो रीति प्रचलित है, वह और भी आठवर्षतक प्रचलित रहैगी । ”

“ (२) दूसरीधारा । प्रचलित व्यवस्थाके मतसे ब्रिटिश गवर्नमेन्टके अतिरिक्त खर्चके भारसे अस्त बरन उदयपुर राज्यमें अधिक सुभीता होनेसे भी यह प्रस्ताव स्थिर हुआ कि उदयपुरके दरबारमें पहले जैसे वियायोर सेनाके निवासी पन्द्रह सहस्र रुपया सालियाना देतेये, इस समय और भी अधिक पांच हजार रुपये अर्थात् बीस हजार रुपये देने लगे, उससे और भी आठवर्षतक राज्यका काम काज चलासकताहै । ”

“ (३) तीसरी धारा । दो मुसद्दी रक्खे जाँय और वह मेजारहलके पास जाकर माहिरवाडाके देश उदयपुरके अधिकारी सम्पूर्ण ग्रामोंमें सदृहीत राजस्वके हिसाबकी परीक्षा करें; और वह ब्रिटिश गवर्नमेन्टके मुसद्दियोंसे प्राप्त हुए उन ग्रामोंसे संग्रह किये हुए राजधनकी तालिका और हिसाबको मिलाकर दिखावैं, बरन उनके आगे रक्खैं ”

“ (४) चौथी धारा । इस संधिपत्रपर जब महामाननीय गवर्नमेन्ट जनरलके हस्ताक्षर होजायँ तब इसके एक खण्डकी नकल उदयपुरके दरबारमें भेजदी जाय । ”

ऊँचे भूखण्डके ऊपर स्थापित है चारों ओर अभेद्य पत्थरका बना ऊँचा परकोटा है और उसके बीच २ में ऊँची चोटीके महल विराजमान हैं । एक नदी परकोटेके नीचे २ निकल गई है ।* उस बीचमें शासनकर्त्ताका निवास भवन है, उसके चारोंओर भी परकोटा है । केवल एक द्वारमें होकर ही उस दुर्गमें प्रवेश किया जाता है ।

सामर्थ्य और प्रभुत्वके लिये सदाके प्रति द्वन्द्वी वह शक्तावत् और चन्दावत गण गौरव प्राप्त करनेकी इच्छासे प्रतियोगी बनकर एक समयमें ही सूर्योदयके पहिले अपने २ लक्ष्य स्थल अन्तलाकी ओर बड़ी वीरताके साथ दौड़े हिरोलके सन्मानका लाभ ही उनका उद्देश था दोनों सम्प्रदायके हृदय ही आशासे भरे थे इस कारण दोनों ओरके कवियोंने वीर राजपूतोंके हृदयोद्दीपक सङ्गीत रचानासे प्रत्येकको रणोन्मत्त करदिया । प्रवल उद्दीपना दोनों सम्प्रदायोंको बड़े वेगसे लेचली ।

शक्तावत सम्प्रदायने अन्तला दुर्गके द्वारकी ओर ही चरण बढ़ाये थे, इस कारण उन्होंने सूर्योदयके पहिले ही वहां पहुंचकर असावधान शत्रुसेनाको चौंका दिया । यवन सैनिक अकस्मात् राजपूतोंको आया हुआ देखकर तत्काल दुर्गके परकोटेमें आत्मरक्षाके निमित्त शस्त्र लेकर खड़े होगये । उस समय समराग्नि प्रज्वलित होगई ।

चन्दावतलोग भी यद्यपि उस ही समय बड़े वेगसे बहिर्गत हुए थे, किन्तु वह भिन्न मार्गमें जाने और मार्गके न जाननेसे एक जलाशयपर जा पहुँचे । वह उसमें कुछ दूर जाकर लौटनेको बाध्य हुए उसी समय सौभाग्यसे एक अन्तला वासी गडरिया वहां आगया, उसने उनको मार्ग बतादिया । रणोन्मत्त चन्दावत लोग बड़े साहससे उसको पार करके अन्तला दुर्गकी ओर दौड़े । शक्तावत लोगोंकी अपेक्षा चन्दावत विशेष समर कुशल और दुर्गके आक्रमणकी साधग्री रखनेमें बहुत शिक्षित थे, इस कारण वह अपने साथ सीढ़ी ले आये थे ।

जिस समय शक्तावतलोग दुर्गमें प्रवेश करनेकी यथासाध्य चेष्टा कर रहे थे, उसी समय चन्दावतलोग वहां पहुंच गये, और हुंकार शब्दसे दुर्गके भीतर रहनेवाले शत्रुओंके हृदय प्रकम्पित करके दुर्गके अधिकार करनेमें प्रवृत्त हुए ।

* कर्नेल टाड साहब लिखगयेहैं कि “यह दुर्ग इस समय बिल्कुल ध्वंस होगया है, किन्तु ऊँची चोटीके महल और प्राकारके कुछ अंश अब भी पाये जातेहैं ।

पहिले महीनेमें दोनोंमें एक संधिवंधन * नियुक्त करदिया । यद्यपि मेजर रवि-
न्सनके मध्यस्थ होनेसे महाराणा भी सामन्तोंके साथ संधिकरनेमें सम्मत होगये,

* कबूलनामा ।

“ १८१४ई०वैशाखमें (मे० १८१८ईसवीमें) कप्तान टाडसाहबने मध्यस्थ हो दोनोंके हितकी
इच्छासे महाराणा और उनके सामन्तोंके हस्ताक्षर कराय दशधारासे पूर्ण एक कबूलनामा (स्वीका-
रपत्र) नियुक्त कर दियाथा ।

बहुतसे स्थानोंमें सामन्तोंने उस स्वीकारपत्रकी ओर ध्यान भी न दिया और उसके विपरीत
आचरण करनेलगे, इसमें महाराणा भी सम्मत हुए उनकी यह राय हुई कि कप्तान कविके उप-
देशसे तथा उनकी सम्मतिसे एक दूसरा नया कबूलनामा बनायाजाय, और उसमें पहले कबूल-
नामेकी सम्पूर्ण धाराओंके साथ महामान्य राणा एवं सामन्तगण दोनों पक्षमें उपकारी जिन नवीन
धाराओंकी आवश्यकता विचारें, वैसी धारा और रक्खीजाँय, अर्थात् दशहरेके उत्सवके उपलक्षमें
सम्पूर्ण सर्दार इकट्ठेहों, और कबूलनामेकी सम्पूर्ण धारा पढीजाकर उसका मतलब प्रत्येक सरदारको
समझाया जाय तथा उसपर सामन्त और महामान्य (राणा) के हस्ताक्षर कराये जाँय । और
कबूलनामेकी प्रत्येक धाराका पालन नियम सहित हो और प्रतिभूस्वरूप महाराणा तथा
सम्पूर्ण सरदार पोलिटिकल एजन्टको साक्षी बनाकर इसपर उसके हस्ताक्षर करानेको कहें ।
कितने ही वर्षके बीतजानेपर वह कबूलनामा बनाया गया, परन्तु उसपर महाराणा सर्दार
अथवा पोलिटिकल एजन्टके हस्ताक्षर नहीं हुए । इस समय मेवाडके सामन्तोंने भ्रमजालमें पड़ेहुए
मनुष्योंके अनुरोधसे उपरोक्त कबूलनामेका विना अदल बदल किये अथवा कोई नयी धारा कायम
न करके उसमें अपनी सम्मति देकर उसको स्वीकारकिया और वह मेवाडके प्रतिनिधि पोलिटिकल
एजन्ट मेजर रविन्सनके सामने नियमसहित १८४० ईसवीके १ म विधिमें बँधगये, और उस
पर महाराणा तथा मेवाडके सरदार और भ्रान्तचित्त हुए मनुष्योंने भी अपने हस्ताक्षर करदिये ।

दोनों पक्षोंके हितकारक अतिरिक्त धारावली ।

१म—प्रथम कबूलनामेकी नवीं धारामें लिखागयाहै कि सरदारगण उनके आधीनकी प्रजाके
ऊपर किसी प्रकारके अत्याचार न करनेपावें, और ऐसा भी कोई काम न करें कि जिससे प्रजाको
पीडा पहुँचै; राज्यकी विशृंखलताके समयमें जो नये दंड कर आदि देने नियुक्त हुएहैं, वह एकबार ही
छोड़दियेजाँय, परन्तु वह इस संधिवंधन तक उस प्रकारका कार्य न करें और उसके पीडित सूत्रमें
बँधकर बहुत सी प्रजा जो मेवाडसे भागगयीहैं, ऐसी यह विधि रक्खीजाय कि वह अब ऐसे
आचरण करनेमें कसर न करें कि जिससे प्रजा फिर वास करनेकी इच्छा करै, तथा भूमिकी
आमदनी अधिक बढ़ा दीजाय इस सूत्रसे नगरकी सफाई होगी ।

२ दूसरे प्रत्येक सरदार अपनी नियुक्त की हुई सेनाके साथ एक वर्षके बीचमें तीन मासतक
राजधानीमें रहै, यह रीति इस समय प्रचलितहै । धीरे२ जब यह नियम प्रचलित होजायगा, तथा
नियमित समयके अतिरिक्त किसी सरदारको भी उदयपुरमें जानेकी आज्ञा न दीजायगी, कारण
कि सामन्तोंके अतिरिक्त समयके रहतेहुए उन्हींको अधिक व्यय और कष्ट सहनकरना होगा, जिस
किसी सरदारके विना हाजिरहुए आज्ञा देनेमें राणाकी इच्छा रहगयी, तो वह गैर हाजिर विना आज्ञा
प्राप्त किया सरदार उस समय नियमानुसार हाजिर रहेगा, उस समयके बीच विना राणा और

चन्दावत सम्प्रदायके नेता गोला लगनेके कारण जिस समय सीढीसे नीचे गिरगये, उसी समय उनके नीचेके अधिकारी और अतिनिकट आत्मीयने चन्दावतदलकी अध्यक्षताका भार ग्रहण किया। वह नवीन अधिनायक देवगढके साधन्त थे। वह जैसे गर्वी और निडर थे, वैसे ही सब विपत्तियोंमें आगे बढ़नेके सोहसी थे, और भयङ्कर सिंहके साथ भी युद्ध करनेमें नहीं डरते थे। देवगढ पतिके इस अनुपम साहसको देखकर सबने उनको वातुल ठाकुरकी उपाधि दी थी। चन्दावत सम्प्रदायके नेताके गिरते ही देवगढ पतिने उनके शवको अपनी चादरमें बांधकर पीठपर लादलिया, और भाला हाथमें लिये साक्षात् यमराजकी समान संहार मूर्ति धारण करके सीढीपर चढ़गये; दुर्गके परकोटेपर पहुँचकर बड़ी वीरताके साथ युद्ध करने लगे और मुहूर्त्तमात्रमें ही यवनोंकी सेनाका संहारकर दुर्गप्राकारके ऊपर स्वामीका शव स्थापन करदिया, उस समय उन्होंने भयङ्कर शब्दसे जय घोषणा करके कहा कि, “हमने ही पहिले प्रवेश किया है ? हिरोल चन्दावत सम्प्रदायको मिलेगा।” देवगढपतिका वह शब्द क्षणमात्रमें ही सम्पूर्ण चन्दावत सैनिकोंद्वारा प्रतिध्वनित हुआ, और जिस समय शक्तावत लोग दुर्गद्वारमें प्रविष्ट हुए उसी समय दुर्गप्राकार चन्दावत सैनिकों द्वारा अधिकृत होगया। यद्यपि उन शक्तावत सैनिकोंके द्वारा ही मुगल सेना विलकुल नष्ट और मेवाडकी जयपताका उड़ी थी, परन्तु हिरोल सन्मान चन्दावत सम्प्रदायको ही प्राप्त हुआ था। *

* कर्नेल टाड टीकामें लिखते हैं कि, “हमारे मित्र अमरने (यह चन्दावत सम्प्रदायकी महाबली शाखा संगावतके कवि थे। सङ्गावत लोगोंके नेता देवगढपति थे; उनका विषय कई जगह लिखागया है; यह प्रायः ही दो सहस्र सेना सहित रणक्षेत्रमें उपस्थित होते थे) एक विश्वासयोग्य घटना मुझसे कही थी। जिस समय राजपूत सेनाने अन्तला दुर्ग आक्रमण किया, उस समय दो ऊँचे पदके मुगल चतुरङ्ग क्रीडामें मत्त थे जब उन्होंने राजपूतोंके आक्रमणका समाचार सुना तो उन्होंने यह सिद्धान्त करके कि “मुगलसेनाकी अवश्य ही विजय होगी।” युद्ध करनेके बदले उस खेलमें और भी मन लगाया। जिस समय भीतरका दुर्गप्राकार राजपूत सेनाने अधिकार करलिया, उस समय उनकी चैतन्यता हुई। दूसरे मुहूर्त्तमें ही राजपूत सेनाने उस कमरेमें घुसकर दोनों खेलनेवालोंको घेर लिया। खेलमें उन्मत्त हुए दोनों मुगलोंने विजेता लोगोंसे यह प्रार्थना करी कि “हमारा खेल समाप्त होजानेदो।” राजपूत लोगोंने इस बातको स्वीकार करलिया, किन्तु शक्तावत और चन्दावत दोनों सम्प्रदायके नेताओंके स्वर्ग सिंघारनेसे राजपूतोंके हृदयसे दया विलकुल दूर होगई थी, इस कारण खेल समाप्त होजानेपर उन खेलनेवाले दोनों मुगलोंका जीवन दीप निर्वाण करदिया गया था।”

परन्तु कुछ ही कालके बीचमें फिर पहलेकी समान मनमें भेद पडजानेसे अनेक भ्रांतिकी विशृंखलता उपस्थित कर दी । परस्परका लडाई, झगडा ही मेवाडकी अवनतिका कारण हुआ, इस कारण ब्रिटिश गवर्नमेन्टके कल्याणमें महाराष्ट्र चोरोंके भयंकर अत्याचारोंसे मेवाड छुटकारा पाकर भी इस परस्परकी अग्निसे धीरे २ जर्जर होनेलगा; राणा प्रतापसिंह व राणा राजसिंहके प्रबल प्रतापके समयमें किसी सामन्तका उनके विरुद्धमें शिर उठाना तो दूर रहा वरन उनके विरुद्ध बोलनेकी सामर्थ्य भी नहीं थी, यदि राणा प्रतापसिंह वा राजसिंह अपने किसी सामन्तके ऊपर अत्याचार भी कर लेते तो भी वह सामन्त उनका सामना करनेको अत्यन्त ही घृणित कार्य विचारता, उस समय राणागण तथा सामन्तमंडली जातिके सन्मानकी रक्षाके लिये एकमत हो कार्यक्षेत्रका विचार करतेथे, परन्तु इस समय दोनोंके हृदयकी अवस्थाके बदलजानेसे देशके अधःपतनके सूत्रमें शीघ्रही दोनोंके बीचमें विवादकी आग भयंकर रूपसे प्रज्वलित होगयी । इस सूत्रसे बहुतसी प्रजा मेवाडको छोडकर जहांतहां भागगयी । अपना बल अत्यन्त ही घटा-हुआ जानकर राणा सरदारसिंहने १८४१ ईसवीमें ब्रिटिश गवर्नमेन्टके सन्मुख यह प्रस्ताव किया, कि एक दल तो अंग्रेजी पैदल सेनाका उनकी सामर्थ्यको चलाने और उत्तेजित करनेके लिये सामन्तोंको शासन करनेके निमित्त उदयपुरकी रक्षा करनेमें नियुक्त रहै, परन्तु इसका विचार विशेष होनेके कारण अंग्रेज गवर्नमेन्टने उसमें अपनी सम्मति नहीं दी ।

राणा सरदारसिंहने १८४२ ईसवीमें इस मायामय शरीरको छोडदिया । राणा भीमसिंह और राणा जवानसिंह भोग विलासिताके वशीभूत होकर जिस-भ्रांति राज्यके शासनमें कर्महीनता प्रकाश कर गयेहैं, सरदारसिंह उस चरित्रके मनुष्य न होनेपर भी केवल अपने ऊधमी स्वभावके कारण सम्पूर्ण सामन्तोंके अग्रिय होगये ।

—बुलाकर मंत्रियोंके साथ सलाह कर पांच वर्षके बीचमें दो बार छातूनके कर देनेका विचार किया है । इससे रोजीना हस्ताक्षर करानेकी आवश्यकता न रहेगी । जिस दिन छातूनका कर दियाजायगा यदि उसी दिनसे सामन्तगण कर देनेमें असमर्थ होंगे तो उनकी असामर्थ्यके अनुसार उनके अधिकारी समस्त ग्रामोंसे तथा भूमिसे वह वसूल किया जायगा तथा वह ग्राम लेलिये जायेंगे और फिर न लौटाये जायेंगे ।

एकवार माघके महीनेम और एकवार ज्येष्ठके महीनेमें छातूनके कर देनेका समय निश्चय हुआ ।

बैदलाके राव भक्तसिंह ।

सलम्बूरके राजा पद्मसिंह ।

देवगणके रावत लहरसिंह ।

रावत सलीमसिंह ।

महाराज हमीरसिंह ।

रावत अमरसिंह ।

रावत ईश्वरीसिंह ।

रावत दुनियासिंह ।

और कोई नहीं था । बातचीत करनेसे मुझको यह भलीभाँति ज्ञात होगया कि महाराज एक बहुत बुद्धिमान पुरुष हैं, और केवल स्वदेशका ही नहीं किंतु सम्पूर्ण भारत वर्षके इतिहासके साधारण विषयोंको भलीभाँति जानतेहैं । यह प्रशंसनीय रूपसे शिक्षित हैं, और मुलाकातके समय इन्होंने मुझको वर्तमान और भविष्यकालके अनेक विषयोंसे जानकारी करदिया । महाराजने अपने वंशके इतिहासकी पुस्तकका जो अनुवाद मुझे दिया था वह इस समय रायल एशियाटिकसोसाइटीके पुस्तकालयमें रक्खा है । उन्होंने अपने जीवनमें इतिहासकी घटनावली विशेष आग्रहके साथ कही, और उनके गुरु (केवल दीक्षागुरु ही नहीं किन्तु मंत्री और मित्र भी थे) जिस समय मारेगयेथे उस समय उन्होंने अपना राज्यभार पुत्रको देकर आत्मरक्षाके लिये जो २ उपाय किये थे, वह सब एक २ करके मुझसे कहे । यह सब घटनाएँ विचित्र रहस्यजालमें जकडी हुई हैं, और केवल महाराज ही उस रहस्यजालको भेदन करनेमें समर्थ हैं । किन्तु जिस उद्देशसाधनके लिये इस लिये साहसी वीर सुरतानका जीवन नष्ट कियागया मैं वह उद्देश आविष्कार करनेके लिये उस गुप्त रहस्यका वह परिमित अंश भेदन करके एक प्रधान याजकका पाठकोंको अवश्य ही परिचय दूंगा ।

अभयसिंहने अपने पिता राजा अजीतसिंहका जीवन नष्ट कियाथा, उस महापापसे ही मारवाडके और उनके परवर्ती तीन चार पुरुषोंका सर्वनाश हुआ । पापीको उपयुक्त दण्ड देनेके लिये ही मानो जगदीश्वरने मारवाडकी वह शोचनीय दशा उपस्थित करदी थी । जिन परमोत्साही महावीर राजा अजीत सिंहने बड़ी वीरताके साथ बादशाह औरंगजेबके कराल गालसे अपना पैतृक राज्य उद्धार करलिया था, उनके ही ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंहने राजमुकुट धारणके लिये पिताके स्वर्गारोहणसमयकी बाट न देखी, और नरपिशाचकी समान अधीर होकर अपने अपवित्र हाथसे जन्मदाता पितृदग दीप निर्वाण करदिया । सुनाजाता है कि दिल्लीके बादशाहने अभयसिंहको गुजरातके राजप्रतिनिधिपर नियुक्त करनेकी आशा देकर उनको इस महापातकरूप गहरी कीचमें डबाया था । अभयसिंहके छोटे भाई भक्तसिंहने राजाकी उपाधधारणके साथ नागर प्रदेश पाया । अभयसिंहने उक्त प्रदेश अपने भ्राताके हाथमें सौंपदिया; किन्तु समय पलटनेपर उनके ही उत्तराधिकारियोंने भयानक युद्धाग्नि प्रज्वलित करके सहस्रों नररक्तसे बालुकापूर्ण मरुक्षेत्रको सींचा था । रजवाडेकी सामन्त शासनप्रणालीका यही विषमय फल है । इस शासनप्रणालीके द्वारा जैसा

जानकर अंग्रेजी पक्षके दूत लेफ्टिनेन्ट कर्नल रविन्सनने फिर दोनोंमें संधि करानेका निश्चय किया, अन्तमें १८४५ ईसवीके फरवरी महीनेकी आठ तारीखको वह संधि बन्धन समाप्त होगया । ×

यद्यपि महाराणा स्वरूपसिंह सामन्तोंके साथ इस नवीन सन्धि बन्धनमें सम्मत हो तो गये परन्तु उनके राज्यकी अवस्था किसी प्रकार भी सन्तोषदायक न हुई, विगृह्णलताके कारण राणाकी आमदनी बहुत ही घटगयी, तब वह ब्रिटिश गवर्नमेन्टसे करको कमती करानेके लिये गये । राजधनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय देखकर गवर्नमेन्टने १८२६ ईसवीमें जिस करकी संख्या तीन लाख रुपया की थी, जब राणाने कहा कि इस स-

× “ पहले कप्तान टाडसाहबके समयमें महाराणा भीमसिंह और सरदारोंके बीचमें दश धाराओंसे युक्त एक स्वीकारपत्र बनायागया । पीछे कप्तान कविके समयमें पांच धारावाला और एक कबूलनामेका निश्चय किया, और अंतमें कर्नल रविन्सनके सामने महाराणा सरदारसिंह और सामन्तोंने एक स्वीकारपत्रको स्थितकर दोनों पक्षवालोंने उसपर हस्ताक्षर करदिये; परन्तु सामन्तोंने कबूलनामेकी धाराके अनुसार एक भी कार्य न किया, उन धाराओंकी भलीभांति रक्षा करनेकी इच्छासे महाराणाने सामन्तोंके साथ मिलकर अपने पक्षवालोंसे सम्मतिकर निम्नलिखित अतिरिक्त धाराओंसे युक्त किया, और इन्हीं कर्नल रविन्सनको इसका मध्यस्थ बनाया दोनों पक्षवालोंने उसपर अपने हस्ताक्षर किये ।

१ म—जब पत्र स्वीकार कियागया उस समय स्वीकारपत्रकी समस्त धारा बड़ी प्रबलतासे प्रचलित हुई। प्रत्येक वर्षकी विजयादशमीसे दश दिन पहले सब सरदारोंकी एक साधारण समिति बनाईजाय। उस सेना दलको देखने उपरान्त राणा अपनी इच्छानुसार चाहें जिस सामन्तको तीन महीनेके लिये जानेकी आज्ञा दें; और किस सामन्तको किसकिस समयमें हाजिर होना होगा उसको भलीभांति सुनाकर उनको अपने स्थानपर जानेकी आज्ञा दीजाय । सम्पूर्ण सरदारोंकी सेना किसी प्रकार भी अपने कर्तव्यपालनेमें शान्त न हो । यदि वह नियत कियेहुए समयमें हाजिर न होसकैगी, या वह अपने कर्तव्यपालनेमें ध्यान न देगी, अथवा सम्पूर्ण सेना एकत्रित न होसकैगी, तो जिस सरदारके आधीनकी वह सेनाहै उसको सेनाके कार्य ठीक न करनेसे राणाको रुपये देनेहोंगे ।

२ य । जो सरदार नियम सहित जितनी सेनाकी रक्षा करताहै वह अपनी उससे आधी सेना देकर ही छुटकारा पावेगा, और उसे रुपये पीछे दो आनेके हिसाबसे सप्ताहके आधे दिनोंमें छातूनका कर जो पहले कबूलनामेके अनुसार स्थिर कियाहुआ है वह इस समय, नियम सहित देना होगा ।

३ य—सम्पूर्ण सामन्त अपने २ अधिकारी देशोंकी रक्षा भलीभांतिसे करें; और न वह किसी अन्य राज्यके चोर तथा हत्या करनेवाले, व डाकू आदिको अपने नगरमें स्थान दें । और ऐसा करनेपर भी यदि कोई अपराधी उनकी सीमामें आनेकी इच्छा करै, तो उसको पकड़ें, और

की थी उसके फलीभूत होनेके लिये विषप्रयोग आवश्यक समझा, इस कारण उस उपासना और हलाहलने राजा मानसिंहके मृत्युका निवारण करके मारवाडके राज्यसिंहासन पर बैठादिया। देवनाथने मानसिंहका जो उपकार कियाथा, उसके लिये बड़ा भारी सन्मान और अगणित वृत्ति निर्द्धारण करके भी राजा मानसिंह अपनेको उन धर्मयाजकका ऋणी समझतेहैं उक्त याजकने जब मंत्रसे पवित्र करके राजवेश उतारा और स्वयं अपने प्रभु राजा मानसिंहके साथ राजकार्य करनेकी सम्मति दी तो राजसिंहासन भी पवित्र माना गया। देवनाथने जिस समय आशीर्वाद देकर मानसिंहके गलेमें जयमाला डाली उस समय राजा हाथ जोड़कर उनके सामने खड़े थे। धर्मयाजकके लिये राज्यके प्रत्येक प्रदेशमें इतनी अधिक भूवृत्ति निर्द्धारित करदी गई है कि वह जिस देवालयके प्रधान याचक हैं उस देवताकी सम्पत्ति मारवाडके श्रेष्ठतम सामन्तोंकी अपेक्षा बहुत अधिक है, और सम्पूर्णमारवाडका जितना कर एकत्रित होता है उनकी आय उसका दशांश है। कई वर्षतक देवनाथने अपने अधीश्वर मानसिंहको अपनी मुट्ठीमें रक्खा और उतने समयमें उन्होंने राज्यके कोषागारसे असंख्य धन लेकर ८४ चौरासी मन्दिर और उनके साथ धर्मशाला बनवा दी। उन धर्मशालाओंमें इनके शिष्यलोग सुखपूर्वक स्वच्छन्दतासे निवास करते हैं और वहांके कारीगरोंसे धन लेकर अपना पालन करते हैं। इङ्गलैण्डके विलसिके समान मरुदेशके यह देवनाथ प्रतिक्षण अपनी शक्तिको इस प्रकारसे काममें लाते हैं कि हतबुद्धि मानसिंहके सिवाय और सबलोग उनसे होगये हैं और भीतर २ शत्रुता रखते हैं। इनकी और राजमन्त्रीकी उपरी मित्रता है दोनों ही राजाको हस्तगत करके मारवाड शासनमें स्थित हुए हैं। उक्त प्रकारके स्वभाव चरित्र-वाले याजकगण अपनी निर्द्धारित कर्तव्य सीमासे बाहर कार्य करें तो सहजमें ही धर्मके नाममें कलङ्क लगाता है। मारवाडकी उद्धृत प्रकृति सामन्त मण्डली इन गर्वित याजकोंके द्वारा जिस प्रकार अपमानित, लुप्तप्रताप और हतगौरव हुई थी उससे उन्होंने नरहत्याको अति सामान्य अपराध समझा। विख्यात इतिहास वेत्ता गिवनसाहब सामोसाटाके पालके विषयमें जो वचन लिख गये हैं मारवाडके देवनाथके विषयमें भी ठीक वही बात प्रयोग की जासकती है; “ उनकी धर्मयाजक पद सम्बन्धी शक्ति केवल अर्थ संग्रह और लूटमारमें ही लगाई जाती है, यह धर्म विश्वासियोंमेंसे जो बड़े बड़े धनीलोग हैं उनके निकटसे सदा बलपूर्वक धनका संग्रह कर लेते हैं और साधारण राजकरका बहुत सा धन अपने कामोंमें

करनेमें भी झुटि नहीं की । दोनों ही पक्षोंका विवाद क्रमशः बढ़ने लगा । महाराणा स्वरूपसिंहने एक पक्षमें जिस भाँति अपने भयंकर प्रतापसे . सामन्तोंकी मंडली-के ऊपर अत्याचार करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की, दूसरे पक्षके सर्दारोंने भी उसी मतसे उनके ऊपर घृणा दिखाना प्रारंभ किया तथा उनकी आज्ञाको न मान कर किसी २ ने तो उनके विरुद्धमें खड़े होनेके लिये किंचित् भी विलम्ब नहीं किया । यही नहीं कि राणा और सामन्तोंमें इस विवादका फल केवल दोनोंके ही भोगनेके लिये हुआ हो । वरन सम्पूर्ण प्रजाने भी इसी चक्रमें पड़कर अनेक भाँतिके कष्ट सहन किये ।

सबमें प्रधान मेवाडके सलम्बूरके आधिपति और देवगणके सरदारोंके साथ महाराणाका विवाद अत्यन्त ही बढ़ गया । राणा स्वरूपसिंह इनके नीचे आचरणोंसे ऐसे क्रोधित हुए कि १८५० ईसवीमें उनके आधीनके सम्पूर्ण ग्रामोंको अपने कब्जेमें करनेका विचार किया । राणा स्वरूपसिंहने उसी सालमें बहुत सी सेना भेजकर सलम्बूर और देवगणोंके नायकोंके अधिकारी सम्पूर्ण ग्रामोंको बल करके अपने अधिकारमें कर लिया, जैसे ही सेनापर उन्होंने अपना अधिकार किया कि वैसे ही दोनों सरदारोंने अपनी बचीवचायी सेनाको साथ ले राणाकी सेनाको परास्त करके छिन्नभिन्न कर दिया, और शीघ्रतासे अपनी सम्पूर्ण सेना पर अपना अधिकार कर लिया, जब इस प्रकारसे दोनों सामन्तोंने राणाकी सेनाको छिन्न भिन्न कर दिया, तब स्वरूपसिंहके हृदयमें भयंकर क्रोधानलके प्रज्वलित होनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न हुआ, परन्तु वह उन ग्रामोंपर अपना अधिकार करनेके लिये असमर्थ हो चुपचाप अपमानकी अग्निसे स्वयं भस्मीभूत हो नें लगे ।

अंतमें राणा स्वरूपसिंह और असन्तुष्ट हुए सरदारोंने अपने झगडेकी मीमांसाके लिये ब्रिटिश गवर्नमेन्टके दूतको मध्यस्थके पद पर वरण किया । उस तत्त्वकी खोजका फल ब्रिटिश गवर्नमेन्टको शुभ सुयोग्य जानकर पोलिटिकल एजेन्टकी सामर्थ्य बढ़ाने, और प्रधान विस्तार सहित मेवाडाधिपति राणाकी सामर्थ्यको अधिक घटानेकी चेष्टा करने लगा । बाप्पारावल, राणा प्रतापसिंह और राणा राजसिंहके वंशवालाने केवल नाममात्रको ही मेवाडक अधिपति होकर एजेन्टकी पूर्ण आधीनतामें समय व्यतीत किया, गवर्नमेन्टने उसपर ही अधिक दृष्टि डाली, राणा और सामन्तोंके झगडको दूर करनेकी इच्छासे १८५५ ईसवीमें सर हेनरी

नवीन जीवनकी वेल अकालमें सूख गई, यह सब बातें पीछे लिखआये हैं। मुझको झालामन्दसे राजधानीमें लानेवाले वीरवर सुरतानपर जो आक्रमण किया गयाथा, इतने वर्ष पहिले बोया हुआ यह बीज ही उसका मूल कारण है। केवल सुरतानका ही जीवन नष्ट किया हो ऐसा नहीं; किंतु मरुक्षेत्रके अधीश्वर मानसिंह क्रमसे प्रथम श्रेणीके शक्तिशाली सामन्तोंमेंसे किसीको निर्वासित और किसीको निधन कर रहेहैं। यद्यपि इन सब षड्यंत्र जालभेदका वर्णन अत्यन्त नीरस मालूम होना संभव है तथापि उनमेंसे कई बातोंका लिखना आवश्यक है, कारण कि उसको पढ़कर पाठक लोग राजा मानसिंहके (जो इस समय बृटिश गवर्नमेंटके मित्र हैं) हिंमस्वभावका पूर्ण परिचय पासकेंगे।

संवत् १८६० (सन् १८०४ ईस्वी) में माघमासकी पाँच तारीखको मानसिंह जालोरसे जोधपुरमें आकर अभिषिक्त हुए। मानसिंहसे पहिलेके राजा भीमसिंह अपनी एक गर्भवती स्त्रीको छोड़ गयेथे। विधवा रानीने पतिके परलोक सिधारनेपर अपने गर्भकी वात छिपाकर रक्खी, और यथा समय एक पुत्र उत्पन्न किया रानीने उस बालकको एक छवडीमें रक्खकर पोकर्णके सामन्त सवाईसिंहके पास भेजदिया। उक्त सामन्तने दो वर्ष तक उस बालकको छिपाकर रक्खा, अन्तमें मारवाड़की सामन्त समितिमें इस बातको प्रकट किया और सबकी सम्मतिसे राजा मानसिंहसे यह सब रहस्य वर्णन करके कहा कि “मारवाड़का असली उत्तराधिकारी यह बालक धौकुलसिंह है, अतः नागर और उसके अधीनस्थ प्रदेशको इसे दे दीजियो।” राजा मानसिंहने कहा कि यदि बालककी माताने इसको सत्य सत्यही भीमसिंहका औरस पुत्र बतायाहै, तो मैं इस अनुरोधका अवश्य ही पालन करूंगा। रानीने अपने प्राणनाशके भयसे अथवा पोकर्णके सामन्तके षड्यंत्रजाल विस्तारसे उस बालकको अपना पुत्र नहीं माना। सामन्त मण्डली इस बातको असत्य समझकर भी कई वर्षतक चुपरही। प्रकृतिकी शान्तमूर्ति जिस प्रकार प्रबल वायुके आनेका पूर्व लक्षण प्रकट करतीहै, सामन्तलोगोंकी इस निरवलताने भी उसी प्रकार मारवाड़में राजनैतिक आंधीकी सूचना दी थी; शीघ्रही उस प्रचण्ड वायुसे मारवाड़के राजनैतिक महलकी जडतक काँपगई स्थान २ में लुटेरे और विजातीय शत्रु घुसगये, राजाको सिंहासनसे उतारदिया और उन प्रधान षड्यंत्र कारीने भूलसे भी अपने मनमें जिस बातकी कल्पना नहीं की थी वह सामने आगई अर्थात् सेनासहित नष्ट होगया। उस विश्वासघातकताके कारण सामन्त

और जो लोग अपनी२ भूमिमें उत्पन्नहुए धान्यका यथार्थ परिमाण देनेमें राजी होंगे तो उनके ऊपर मध्यस्थके द्वारा कर नियत कियाजायगा, परन्तु परिमाणके अतिरिक्त करका भागी नहीं किया जायगा ।

यद्यपि सलम्बूरके सामन्त छातूनका कर नहीं देंगे । परन्तु वह बारह महीने तक राजधानीमें रहकर राणाकी आज्ञाका पालन करते रहेंगे ।

आधे दो आना हारमें छातून करके अतिरिक्त जो सामन्तगण वर्तमान नियमके अनुसार उत्पन्नहुए धान्यका प्रत्येक १०००, रुपये मूल्यके ऊपर जिस भांति दो अश्वारोही और चार पैदल देतेहुए आयेहैं, अब उसके बदलेमें एक अश्वारोही और दो पैदल एक वर्षके बीचमें तीन मासके लिये स्वदेश वा विदेशमें नियुक्त होनेके लिये सरवराही करते रहेंगे । यदि इसके अतिरिक्त सेनाकी आवश्यकता होगी तो राणा प्रत्येक अश्वारोहीके निमित्त १६, रुपये और प्रत्येक पैदलको ६ रुपये महीना और खुराक देंगे । यदि सेना कामकरनेमें ठीक न होगी तो सामन्तोंसे उस खुराकके दाम लेलिये जायेंगे, प्रत्येक सामन्त अपनी२ सेना ले दशहरेसे दशदिन पहले महाराणाका सन्मान करनेके लिये उदयपुरमें जायें, और दशहरेके पाँच दिन पीछे तक वहां रहें, उस समय उनको अपने २ कामोंका समय बताना होगा, और यदि जो कुछ विशेष आवश्यकता हुई तो प्रत्येक सामन्तको राणाके हस्ताक्षर और मोहर लगेहुए आज्ञापत्रको पानेके लिये प्रत्येक सामन्तको अपनी २ सेनाके साथ हाजिर होना होगा ।

जिनको राणासे पृथक् भावसे जागीर मिलीहै, उनको छातून देना या पृथक् भावसे कार्य साधन करना होगा ।

दूसरी धारा । “ तलोयाका बंधन ” अर्थात् सामन्तके पदपर अभिषेकित सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें एक वर्षतक जब तक कि धान्य उत्पन्न न हो तबतक उसके मूल्यके ऊपर रुपये पीछेबारह आनेके हिसाबसे देना होगा, इससे वह उस वर्षके छातूनसे छुटकारा पा जायेंगे । आमाइतगोइन्दा और बाणेरियाकी सामन्त मंडलीने और कृष्णावत गणोंने इस प्रकार अभिषेकके कर देनेसे छुटकारा पायाथा, कारण कि वह नियम सहित नजराना देतेथे, वह नजराना राणाकी इच्छाके आधीनमें न रहकर उससे भी अधिक उत्पन्न हुए धान्यके ऊपर मूल्य शतकरा ८, रुपया नियत हुआ ।

तीसरी धारा । चोर और डकैतोंके लिये राणाने प्रजाओंकी हानि पूर्ण करनेके लिये जो धन दियाथा, वा जितना उसके लिये नियत किया; जिन सामन्तोंके अधिकारमें उस चोरी वा डकैतीका प्रमाण मिलजाय, वह सब सरदार राणासे परिशोधित रुपयेके शतकरा छः रुपये कुसीदके हिसाबसे तथा परिमाणमें परिशोध्य रुपयेके शतकरा बारह मुद्रा व्याजके राणाको परिशोध करदें ।

चौथी धारा । सामन्तमंडली चोर, डकैत, ठग, वाडरि, मदी और हत्या करनेवालोंको आश्रय न देने पावें । जो चुराईहुई वस्तुको तथा उसके अंशको ग्रहण करेंगे, तथा चोरसे ही धन लेंगे, या चोरोंकी रक्षा करेंगे, वह चोरोंकी समान अपराधी ठहरेंगे । पोलिटिकल एजन्टकी सम्मतिके अनुसार उनको अर्थदंड वा कर देना पड़ेगा । सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें जो वणिक्, व्यवसायी, बेचनेकी सामग्री लेजानेवाले सौदागर, बंजारे और मुसाफिर जायेंगे, सामन्तमंडलीको उचित है कि उनकी रक्षा भलीभांतिसे करै, और यदि उनके धनआदिको किसीने लूटलिया तो वह उसके देनदार होंगे, परन्तु उन वणिक्आदिकोंको सामन्तोंसे अपने आनेकी वार्ता तथा अपनी रक्षाका उचित

उपाय करनेके लिये कहना होगा; । सब श्रेणियोंके लूटनेवालोंको पकडकर महाराणाके सन्मुख लेजाना होगा । यदि सामन्त उस कार्यमें असमर्थ हुए, तो इस समाचारको अवश्य ही महामान-नीय राणाके सन्मुख निवेदन करें, और पोलिटिकल एजन्ट राणाके साथ मिलकर उन सामन्तोंके साथ सुव्यवस्था करेंगे । मेवाडके जिन ग्रामोंमें चोरोंकी शेष उपस्थितिके चिह्न पायेजाँय तो उन ग्रामोंके निवासियोंको उस चोरीकी हानि पूरी करदेनी होगी ।

पांचवीं धारा । सामन्तोंने महाराणासे जिस धनको कर्ज लियाहै, अथवा महाराणाके प्रतिभूसे लियाहै वह सभी चुकाना होगा; पहला ऋण शतकरा छः रुपया हारा, और शेषोक्त ९ रुपया हारा कुसीदके साथ देना होगा, यदि प्रतिभूके समयमें अन्य कोई हार निश्चुत हुआहो तो वह उस हारके ही मतसे देना होगा, पोलिटिकल एजन्ट इस प्रकार कर चुकानेका समय नियत करदेंगे ।

छठी धारा । निम्नलिखितके अतिरिक्त ओर सबको नजरानेसे रहित कियागया;—

क—राणाके सिंहासनपर बैठने वा युवराजके पहले विवाहके समयमें सोलह सरदार और पहली श्रेणीके दो जने राजाके पाससे ८००) रुपये और जो नियमप्रचलितहै उसके अनुसार एक २ दो २ घोड़े लें; और जो सरदार नीचे पदपर स्थितहैं, वह दूसरोंसे जितने धान्य उत्पन्न हुएहों उनका मूल्य प्रति सैकडे दो रुपयेके हिसाबसे लें ।

ख—राणाकी भगिनी तथा कन्याओंके विवाहके समयमें एक वर्षमें जो धान्य उत्पन्नहुएहैं उनके ऊपर प्रत्येक रुपयेके आधे दो आनेके हिसाबसे राणा भीमसिंहके राज्यके समयकी समान सामन्त घोड़ेआदि भी राणाको दें ।

ग—जब राणा तीर्थकी यात्रा करनेको जाँय तो जो धान्य एक वर्षमें उत्पन्न हुएहैं उनके रुपया कर, उन रुपयोंमेंसे ५ हारे राणाको दें ।

सातवीं धारा । वर्तमान कालके राणाकी भगिनीके विवाहके हिसाबमेंसे जो रुपया सामन्तोंपर वचरहाहै, वह वर्तमानके एक वर्षमें उत्पन्न हुए धान्योंके मूल्यके ऊपर रुपयेके आधे दो आनेके हिसाबसे चुकादेना होगा ।

आठवीं धारा । सामन्तगण अभिषेक होनेके समयमें जो नजराना राणाको दें, उसके अतिरिक्त रुपया वह लोग अपनी २ प्रजासे नहीं लेंसकेंगे ।

नवीं धारा । ऐसे अनेक सामन्त हैं कि जिन्होंने राणाकी आज्ञाको नहीं मानाहै और राजमें अभक्ति दिखानेके कारण वह लोग अपराधी ठहराये जाकर धनका दंड देचुकेहैं । परन्तु महाराणाने एजन्टकी सम्मतिके अनुसार सलम्वूर और देवगणोंके दोनों सामन्तोंके अतिरिक्त और सबका अपराध क्षमा करदियाहै । और बाकी देवगणके नायकोंने राणाके अधिकारी ग्रामोंपर बलपूर्वक अपना अधिकार कर राणाकी सेनाको छिन्नभिन्न करदियाहै; उस अपराधके कारण प्रत्येक मनुष्यको पचीस हजार रुपया दंडमें देना होगा । मनुष्यकी हत्याके अतिरिक्त और सभी अपराध महाराणाने क्षमा करदिये अन्तमें विचार करनेपर जैसी आज्ञा होगी अपराधियोंको वैसा ही दंड मिलेगा ।

दशवीं धारा । करद जमी—बाटी, जागीर, ग्राम, बन्धकी, जमीखंड, दलील, दानपत्र, दातव्य जमी इत्यादि इस समय यह जिन मनुष्योंके अधिकारमें है वह सब उन्हींके अधिकारमें रहेगी ।

भीमसिंहके राज्यके समयसे जो भूमि आदि दीगईहै और कप्तान टाड तथा कप्तान कविके समयमें जो समस्तकी दलील लिखीगई है, उपयुक्त कारणके विना उनको फिर ग्रहण नहीं किया जायगा; और उसके अधिकारके विषयमें पोलिटिकल एजन्ट उसका अनुसन्धान करेंगे, और यदि

उन्होंने आवश्यक विचारा तो यह तो विदित ही नहीं है कि सामन्त राणाके विपक्षी हैं इस कारण ऐसे चार वा छः सामन्तोंके साथ मिलकर उसतत्त्वका पता लगावें ।

जो भूमिके अधिकारी महाराणासे राजधनमें भूमि लेतेहैं वह पहलेकी समान अपने २ ग्रामोंकी रक्षाके निमित्त तथा चोर और डकैतोंसे जो हानि हुईहै उसको पूरा करनेके लिये जिम्मेवार रहेंगे ।

ग्यारहवीं धारा । दान, वाणिज्य, शुल्क, लगान (कर) खड, तून, काष्ठ, कंटका लगान खाना सुमारी (घरका कर) सभी राणोंको मिलसकता है, परन्तु जिन्हें टाड और कविके समयसे सम्पूर्ण करदेनेकी सामर्थ्य है और जिन्हें नियमकी सनद मिल गईहै वही उसे अदा करते/रहेंगे ।

बारहवीं धारा । कप्तान टाड और कप्तान कविके समयमें जो कर नियत होगयाहै—वह अचल भावसे प्रचलित रहैगा, इसके पीछे जो सम्पूर्ण कर अर्थात् वाणिज्य शुल्क कर अर्थ दंड इत्यादि नियत हुआहै, वह दूर होजायगा, भूत कालमें पहले महाराणाओंने और वर्तमानके महाराणाओंने जो क्षमापत्रमें लिखीहै, उसके ऊपर सन्मान दिखाकर उसको समभावसे प्रचलित रक्खाजाय ।

तेरहवीं धारा । कारागार, डाइन, तोपा, त्याग, भाट, चारण इत्यादिके सम्बन्धमें गवर्नर जनरल-के राजपूतानेमें स्थित एजन्टने जिस कार्यकी आज्ञा दीहै और जिसमें महाराणाने अपनी सम्मति भी देदी है मेवाडके सभी श्रेणीके मनुष्योंको उस आज्ञाका पालन करना होगा, कैदियोंको उनकी अवस्थाके अनुसार भरण पोषण करना होगा, परन्तु प्रत्येक कैदीको प्रतिदिन, व्ययस्वरूप एक आना से कमती वा आठ आनेसे अधिक नहीं देना होगा । किसीको भी किसी भांतिका दुःख न होगा ।

चौदहवीं धारा । महाराणा पोलिटिकल एजन्ट और सरदारोंकी मंडली तीन जने स्थिर कर सचरित्र और शिक्षित बनाकर प्रतिनिधिके पदपर नियुक्त करै; और वह नियुक्तहुए प्रतिनिधि और एक प्रतिनिधिको बनाकर सात जने भविष्यमें दिवानी और फौजदारीके मुकद्दमेके राजधारा प्रचलित सामाजिक आचार व्यवहार और व्यवस्थाके मतसे विधानकी रीति बनावै । और आगेको उन विधानोंकी सब सम्प्रदायोंका विचार, शेष होजायगा । सम्मति लेनेके लिये वह विधान पोलिटिकल एजन्टके सन्मुख हाजिर कियाजाय ।

पंद्रहवीं धारा । नियमित विचारालय सभी प्रयोजनीय अभियोगोंकी मीमांसा करै, और जो दूसरे अनुयोग हाजिर हों तो उनका भी विचार करै, सामन्तोंके आधीनवाले अनुचर तथा प्रजामें जो सामान्य अभियोग उपस्थित होजाय, सामन्तगण स्वयं उसका विचार करसकतेहैं, और अपराधियोंको एक महीनेतक कर दंड देनेकी सामर्थ्य रहैगी, परन्तु उनके ऊपर किसी प्रकारका भी अत्याचार न होसकैगा; सामन्तोंके विचारके विरुद्धमें मंत्रियोंके निकट और उनके सन्मुखसे पोलिटिकल एजन्टके सन्मुख अपील होसकैगा ।

सोलहवीं धारा । हत्याकरनेवाले, डकैत, और विश्वासघातकोंके अतिरिक्त और सभी शरणागत होसकैंगे, जो शरणागतोंको आश्रय देनेमें क्षमा करतेहैं वह उनको पहली रीतिके मतसे आश्रय देसकैंगे ।

सत्रहवीं धारा । भंजगुरिया अर्थात् उत्तराधिकारीके क्रमसे मंत्रिपदके पानेकी रीति कप्तान टाड दूर करदे, और वह कभी प्रचलित न हो । इसके उपरान्त किसी विशेष प्रयोजनके होनेपर महा-

राणाकी इच्छानुसार विशेष स्थानमें पोलिटिकल एजन्ट और चार पाँच जने राजभक्त तथा अच्छे चरित्रवाले सरदारकी सलाह और उपदेशके मतसे परिणाममें कार्य करें ।

अठारहवीं धारा । सामन्तोंके देवमंदिर और धर्मशाला इत्यादिमें प्राचीन आचार व्यवहार और सामर्थ्य अचल भावसे रहे, प्राचीन रीतिके अनुसार राजभक्तिको दिखानेवाली शपथ ग्रहणकर-नेकी रीति मान्य करनी होगी ।

उन्नीसवीं धारा । जादूमंत्रके चलनेवाले, डाइन वा इन्द्रजाली कहकर किसीको नहीं पकड़ना होगा, विप देनेसे जो विचार धर्मानुसार राणाको करना योग्य है उसमें किसी प्रकार भी उदासी-नता न करें ।

बीसवीं धारा । महाराणा केवल मंत्रियोंके ही लिखेहुए आज्ञापत्रसे अर्थदंड करसकतेहैं, उस आज्ञापत्रके दंडका कारण, और जितना भी दंड हुआहो उसकी समान विधिके अनुसार निश्चय कर लिखना होगा । जो सामन्त पहलेसे ही सामान्य दंड देनेमें सामर्थ्य रखतेहैं, उनके ऊपर भी यह नियम चलेगा, और जो हार अथवा नियममें अर्थ दंड करें उसे पोलिटिकल एजन्टके कार्या-लयमें लिखदेना होगा । घौस दसतक (सम्मन) केवल मंत्रियोंसे ही लिखाजायगा, अथवा टाड और कविके समयमें जिन्होंने उसे लिखाहै वही लिखेंगे ।

इक्कीसवीं धारा । एक गवर्नमेन्टकी सेनाका कर्मचारी वर्तमान और भविष्यत्में भूमिकी सीमाके सम्बन्धकी समस्त विवादकी मीमांसा कर देगा; जिसने एक पक्षके सीमाके चिह्नको नष्ट करदियाहै उसके बिना जानेहुए, दोनों ओरके खर्चका भार उसे उठाना होगा; और जिसने एक पक्षकी सीमाके चिह्न नष्ट करदियेहैं यह विदित होगया तो अपराधीके पक्षवालेको सम्पूर्ण व्यय देना होगा; और विचारके अनुसार उसको दंड भी होगा ।

बाईसवीं धारा । महाराणाकी सम्मतिसे प्रचलित आचार व्यवहारके अनुसार और हिन्दू विधान-के अनुयायीको सामन्तगण पोष्यपुत्र वा उत्तराधिकारी करसकतेहैं । किसी सामन्तके परलोक-गामी होनेपर उसकी विधवा स्त्री अपने कुटुम्बियोंकी सलाहसे पोष्यपुत्रको गोद लेले । यदि इस विषयमें कुछ हड़चल होजाय तो पोलिटिकल एजन्टके सन्मुख कहाजाय ।

तेईसवीं धारा । एकलिंगजी, नाथद्वारा, पांचोली विहारीदास, और चौबोंको जो भूमिकी वृत्ति दीगईहै उसके अधिकारी उसको भोग करतेरहें, जो नायकियोंको मिलताहै और जो अदालतके कर-संग्रहमें अधिकारी हैं उनको वह सब मिलतारहें, और छातूनके करके साथ उसका संग्रह और कोई भी नहीं कर सकेगा ।

चौबीसवीं धारा । सरदारोंके जो घर उदयपुरकी राजधानीमें हैं जबतक वह वहाँ निवास करें तबतक उत्तम अवस्थामें रहें, वह तबतक अपने अधिकारको पोलिटिकल एजन्टकी सम्मतिके अतिरिक्त और किसीको भी नहीं देसकेंगे । पीसोला सरोवरसे बिना मूल्य दिये ही अपने २ बगीचे को सींच सकेंगे ।

पच्चीसवीं धारा । यदि कोई घर या कुछ पृथ्वी इत्यादि दान कीजाय तो राणा उसपर हस्तक्षेप नहीं करेंगे। परन्तु जिससे प्रजाके लोंग उस विषयमें अधिक लिप्त न हों, उसके सम्बन्धमें उत्साहहीनता दिखावें । ऐसा करना होगा वह जो सेनाको अग्रिम तनखाह देतेहैं इसलिये उनसे उस धनका व्याज नहीं लिया जायगा, और प्रत्येक चार महीनेके भीतर नियमितभावसे तनखाह दी जायगी । यदि—

नवीन कबूलनामके ऊपर केवल महाराणा और चार प्रधान सामन्त उसपर हस्ताक्षर करें, परन्तु अधिक दिनोंके उपरान्त वह कबूलनामा खारिज होजायगा । फिर उस धाराके पालनेमें सामन्त अथवा महाराणा कोई भी अगुआ नहीं होगा; इसी कारण पहले ही की समान विशृंखलता चारों ओर फैलती जाती है । हमें ऐसा जानपडता है कि ब्रिटिशदूतको अधिक सामर्थ्य देनी होगी, अधिक क्या महाराणाकी अपेक्षा उसकी सामर्थ्य बढ़ानेके लिये दोनों पक्षके हस्ताक्षर कबूलनामके अनुसार कार्य करनेमें सम्मत होंगे । कबूलनामके पढ़नेसे सरलतासे जाना जायगा कि राणाकी सामर्थ्य एक बार ही घटाकर ब्रिटिशदूतको यथार्थ पक्षमं मेवाडके सर्वमय कर्ताके पदपर वरण करना ही गवर्नर-

—वह किसी प्रकारका व्यापार करके अपनी रक्षा करै, तो उनको किसी प्रकारसे ऐसा कार्य न करने दिया जाय ।

छत्तीसवीं धारा । पहली पहलके कबूलनामके मतसे सरदारोंको एकसाथ दल बाँधकर आनेका निषेध हो चुकाया । इस निषेधकी आज्ञाको उन्होंने नहीं माना, इस समय उस प्रकारका एक साथ सम्मिलन होना निष्प्रयोजन है, कारण कि यदि कोई भी किसी प्रकारका यथार्थ अनुयोग करै तो उसका विचार वह शीघ्रही न्यायपूर्वक करसकते हैं, इसके उपरान्त फिर जो दल बाँधें तो वह राज्यके शत्रु मानेजायेंगे, और उनके ऊपर उसीके अनुसार व्यवहार किया जायगा ।

सत्ताईसवीं धारा । प्रत्येक सरदार एक २ प्रतिनिधि राणाकी सभामें भेजें, और उन्हींसे सब कार्य करवावें केवल सम्मानित मनुष्य ही प्रतिनिधि रूपसे चुने जायेंगे, और उनको स्वामीके पदोचित और रीतिके अनुसार सम्मान मिलेगा ।

अष्टाईसवीं धारा । राणा वा सामन्तोंके सम्पूर्ण किसान प्रजाके किसी भी स्थानमें इच्छानुसार निवास करसकेंगे, उसके ऊपर कोई भी अत्याचार नहीं करसकेगा । यदि कभी उनके विरोधमें कोई अभियोग विचारालयमें उपस्थित हो वह छोटा हो या बड़ा, सभी श्रेणीकी प्रजाको उसका अपील पोलिटिकल एजेंटके सन्मुख करना होगा ।

उन्तीसवीं धारा । राणा जिस भांति ब्रिटिश गवर्नरमेंटको डांक और वंगीकी रक्षाके लिये देते हैं, सरदारचुन्द भी उसी भांति अपनी २ जागीरमेंसे कर दें जिस भांति राणा डांक वा वंगियोंके लुटजानेपर उनकी हानिको पूरा करते हैं उसी भांति इनको भी इनकी हानि पूरी करनी होगी ।

तीसवीं धारा । इस कबूलनामेपर जब हस्ताक्षर होजायें तो इससे पहले कबूलनामकी सभी धारा खारिज होजायगी । यदि इसके उपरान्त राणा और सामन्तोंमें कोई विवाद होजाय, जो कि इसमें नहीं लिखा गया है, या जिस सम्बन्धमें कोई संदेह उपस्थित होजाय, तो वह सभी तीन दिन के बीचमें मेवाडमें स्थित पोलिटिकल एजेंट और गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेंटके निकट विचारके लिये भेजना होगा, और उसका विचार ही कालांतर तक मानाजायगा, यदि ऊपर कहेहुए निश्चित समयमें कोई अभियोग उपस्थित न होगा तो उसको अयोग्य मानकर त्याग दिया जायगा ।

मेन्टका मुख्य उद्देश था। परन्तु यह उद्देश ब्रिटिश गवर्नमेन्टके पक्षमें शुभ-
दायक जानकर भी मेवाडके निवासी राजपूतोंने इसमें अपनी स्वाधीनता और
राणाके अधिक सामर्थ्यका व्याघात करनेवाला विचार किया। जिस कारणसे
भी हो नवीन कबूलनामेके व्यर्थ होनेपर गवर्नमेन्टने सामन्तमंडलीको जो आश्रय
देनेकी प्रतिज्ञा की, उस प्रतिज्ञाके पालनेमें शान्त न हुए। महाराणा स्वरूप-
सिंहने जो मेहता शेरसिंहकी सम्पत्ति अपने अधिकारमें करली थी, गवर्नमेन्टने
उस कबूलनामेके अनुसार राणासे वह देश लौटानेके लिये अत्यन्त आग्रह किया;
राणाने १८६१ के सालमें उस अनुरोधका पालन किया उस समय राणाका
झगडा जो सामन्तोंसे था वह भी शान्त सा होगया, १८६१ ईसवीमें यह
नवेश्वरके महाराणा स्वरूपसिंह इस जगत्को छोडकर दूसरे जगत्को चलेगये।
इन्होंने अपने नामका सिक्का चलाया जो अवतक उदयपुरमें चलताहै।

इस समय समस्त मेवाडके राज्यकी संख्या ११६१४ वर्गमील थी और
जनसंख्या ११६१४०० थी। राज्यकी मोटी आमदनी ४००००००) रुपया
थी; इसमें सामन्त १२०००००) रुपया राजधन भोगतेथे, परन्तु वह इसके छः
अंशोंमें एक अंश नियम सहित राणाको देतेथे। जो कर ब्रिटिश गवर्नमेन्टको
दियाजाता था वह धर्मसम्बन्धी खर्चमें लगता था, और सामन्तोंकी उपरोक्त
आमदनीके अतिरिक्त राणाको मोटा १४०००००) रुपया मिलता था।

सन् १८५७के सिपाही विद्रोहमें राणाजीने अंग्रेज सरकारसे अत्युत्तम वर्त्ताव
किया अंग्रेज लोग महाराणाके आश्रयमें चलेगये उनके खानेपीनेका प्रबन्ध
उत्तम था जिनको अपने प्राणोंका भय था उनकी रक्षा भलीभांतिसे की गयी
इस व्यवहारके लिये अंग्रेजोंने राणाजीको कोई भी देश भेंट आदिमें नहीं दिया,
वरन राणाजीके नीमच जावद गदवाड यह तीन प्रदेश जो सरकारमें चलेगयेथे
वह भी न लौटाये।

बीसवाँ अध्याय २०.

महाराणा स्वरूपसिंह;—शासनसमिति स्थापन;—शासनकर्त्ताओंके अत्याचार;—शासनसमिति भंग;—पोलिटिकेल एजन्टको मेवाडके आसनके भारकी प्राप्ति;—मेवाडमें शान्ति स्थापन; महाराणाशंभुसिंहके राज्यशासनकी अशिक्षा;—ब्रिटिश गवर्नमेन्टके द्वारा महाराणाको पोष्यपुत्रके ग्रहण करनेकी सामर्थ्य देनी;—महाराणाको उपाधिकी प्राप्ति;—ब्रिटिश गवर्नमेन्टका अविचार;—महाराणा शंभुसिंहको शासनकी सामर्थ्य प्राप्त होना;—
उनका अकालमें प्राणत्याग;— ।

महाराणा स्वरूपसिंहके पुत्रहीन अवस्थामें मरजानेपर उनके भतीजे सत्रह वर्षकी अवस्थामें व्यवहारोंके न जाननेवाले शार्दूलसिंहके बेटे शंभुसिंह १८६१ ईसवीमें राणाके पदपर विराजमान हुए; ब्रिटिश गवर्नमेन्टके प्रस्तावके मतसे शीघ्र ही एक शासनसमिति स्थापनकर कितने ही सम्मानित सरदारोंको उनके सदस्य पदपर नियुक्त किया गया, वही राणाके नामसे मेवाडको पालन करनेलगे । परन्तु शासनके विषयमें अपनी पूरी सामर्थ्य न रखनेके कारण ब्रिटिश गवर्नमेन्टके उपदेशानुसार कार्य करने लगे; शासनकी समितिके सभ्यगणोंके न्याययुक्त प्रचलित विधानके मतसे शासनके बदलेमें इच्छानुसार शासनका आरंभ कराकर शीघ्र ही विपरीत फल फलना आरंभ हुआ । और फिर चारों ओर अत्याचार होनेलगे, अविचार और स्वेच्छाचारितासे, तथा उर्पीडितानलके प्रज्वलित होनेसे मेवाडनिवासी फिर अत्यन्त ही व्यथित होगये । पोलिटिकल एजन्टकी उक्ति और परामर्शके प्रतिशासन समितिके मतकी ओर दृष्टि न करनेके कारण ब्रिटिश गवर्नमेन्टने मेवाडके शासनकी नवीन व्यवस्था करना अपना एकान्त

कर्तव्य विचारा अन्तमें विशेष चिन्ता और तर्कवादके उपरान्त उक्त प्रतिष्ठित शासनकी समितिको भंग करके गवर्नमेन्ट नवीन व्यवस्थामें प्रवृत्त हुई। सबसे प्रथम एक नवीन शासनकी समिति स्थापन कर दूसरे सुयोग्य सामन्तोंको उसके सभापद पर वरण कर अथवा केवल एक सुयोग्य सामन्तको राणाके प्रतिनिधि स्वरूपमें नियुक्त करके उनके हाथमें मेवाडके शासनका भार अर्पणकरना कर्तव्य विचारनेका आन्दोलन होने लगा। परन्तु पोलिटिकल एजन्टकी उक्तिके अनुसार इस समय प्रतिनिधि पदके उपयुक्त मनुष्य प्राप्त न हुए, इसलिये प्रतिनिधि नियोगका प्रस्ताव शीघ्र ही तोड़ दिया गया। “परन्तु हम कहते हैं कि सम्पूर्ण मेवाडोंके सामन्तोंमें प्रतिनिधियोंके योग्य एकमात्र सामन्त भी दृष्टि नहीं आया। यह बात सरलतासे अविश्वासके योग्य है। इसमें अवश्य ही कोई गुप्त कारण था।” प्रतिनिधि प्राप्तिके अभावमें अन्तमें तीन सामन्तोंको शासनकी समितिके सभ्यपदपर नियुक्त कर और उनमें एक जनेको सभापतिके पदपर वरण करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया गया। पोलिटिकल एजन्टने उस सभापतिके पदपर एक सामन्तको चुना। उस स्वभावसे सरल राज-पूतने साहसमें भरकर कहा कि जबतक शासनके सम्बन्धमें उनको पूर्ण सामर्थ्य न होगी तो वह शासनके भारको ग्रहण नहीं करेंगे। ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी यह इच्छा नहीं थी कि किसी सामन्तको भी पूर्ण सामर्थ्य न दी जाय, इस कारण पोलिटिकल एजन्ट स्वयं उन दोनों सदस्योंके साथ नवीन शासन समितिके सभापतिके पदपर स्थित हुए। बहुतोंको इस बातका विश्वास था कि पोलिटिकल एजन्टने अपनी पूर्ण सामर्थ्यसे अथवा शासन विभागमें करतत्त्व करनेकी इच्छासे ही एक राजपूत सभापतिके नियोगके विरुद्धमें भयंकर बाधा देनेके लिये स्वयं करतत्त्वका भार लिया है।

जिस समय पोलिटिकल एजन्टने शासनका भार ग्रहण कर लिया उस समय स्वजातिके राजनीति मतसे राज्यके प्रत्येक भागमें संस्कार साधन और आम-दनीके बढ़नेका विशेष यत्न होनेमें कुछ भी विलम्ब न हुआ। अधिक कहना व्यर्थ है कि एक नवीन व्यवस्थाका मत शीघ्र ही मेवाडकी सम्पूर्ण विशृङ्खलताको दूर करके प्रजामें फिर शान्ति करनेके लिये समर्थ हुआ। इस समय ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी यह व्यवस्था अत्यन्त ही प्रशंसनीय है। यद्यपि राणा शंभुसिंह अभी अपनी ठीक अवस्थापर नहीं पहुँचे हैं, परन्तु अत्यन्त बालक भी नहीं हैं, ब्रिटिश गवर्नमेन्टने महाराणाको राज्यशासनकी शिक्षा देनेके लिये

इस समय पोलिटिकल एजन्टको आज्ञा दी, पोलिटिकल एजन्टने उसी आज्ञाके मतसे शीघ्रही शासन विभागकी सम्पूर्ण रीति महाराणाको सिखा दी, ऐसा होनेसे महाराणा शीघ्रही राजधर्ममें विलक्षण रूपसे शिक्षा पागये इस समय मेवाडका राजस्वभी प्रीतिप्रद रूपसे बढ़ रहा है । सिपाही विद्रोहके अन्तमें भारत वर्षके गवर्नर जनरल और प्रथम राजप्रतिनिधि लार्ड क्यानिंगने भारतके समस्त देशीय राजाओंको उत्तराधिकारी बनानेमें सामर्थ्य दी । महाराजा शंभु सिंह देशीय राजाओंके शिरमौर हुए, इस कारण उन्हें भी इस समय क्रमानुसार उत्तराधिकारीके लिये पुत्रको गोद लेनेकी सामर्थ्य प्राप्त हुई × सिपाही विद्रोहके उपरान्त भारत साम्राज्यको ईष्ट इन्डिया कंपनीके हाथसे इंगलैण्डेश्वरीने स्वयं ग्रहण किया, देशी राजाओंके सन्मान बढ़ानेके निमित्त एक प्रकारके नवीन मान्यसूचक उपाधिकी सृष्टि हुई । उसका नाम भारतनक्षत्र हुआ । ब्रिटिश गवर्नमेन्टने पहली श्रेणीके पदक सहित “ ग्रान्ड कमान्डर थार आफ इन्डिया ” की उपाधिरूपी भूषणसे महाराणा शंभुसिंहको भूषित करदिया । १८५७ सत्तावन ईसवीमें सिपाहियोंके विद्रोहके समय उदयपुरकी महाराणाकी सेनाने ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी विशेष सहायता की थी, यद्यपि यह उसीकी पुरस्कारस्वरूप उपाधि मिली । और मेवाडेश्वर भी भलीभांतिसे पुरस्कारको प्राप्त हुए, परन्तु इस स्थानपर हम एक अत्यन्त अप्रीतिकारक विषयका उल्लेख करना आवश्यक समझते हैं । यह हमारे पाठकोंको विलक्षणभावसे विदित है कि महाराष्ट्रियोंमें सिन्धिया और हुलकरने अन्याय करके मेवाडके बहुतसे देशोंपर अपना अधिकार करलिया था, और जिस समयमें ब्रिटिश गवर्नमेन्टके साथ महाराणा भीमसिंहका प्रथम संधिबन्धन हुआ उस समय ब्रिटिश गवर्नमेन्टने प्रतिज्ञा की थी कि किसी अच्छे

× महामान्य (रानी विक्टोरिया) की यह अभिलाषा है कि जो भारत वर्षके सम्पूर्ण राजा इस समय अपने २ देशको शासन कर रहे हैं वह सब देश चिरकालके लिये उनके वंशधरोंसे शासित और उनके वंशके सन्मान अक्षत भावसे रक्षित होते रहें; उस अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त हम आपको अंगीकार करना विदित करते हैं कि यदि आपके पुत्र उत्पन्न न हो तो आप अपने वा अपने राज्यके भावी शासनकर्ता गण हिन्दू विधिसे अपने वंशकी रीतिके अनुसार पुत्रको गोद लें, गवर्नमेन्ट इसमें सम्मति देनेमें किसी भांतिकी आनाकानी नहीं करेगी ।

जबतक आपके वंशधर राजभक्तरूपसे रहेंगे, और जिन संध्यादिकोंसे ब्रिटिश गवर्नमेन्टके साथ वाध्यता स्थापित हुई है, उन संध्यादिकोंके प्रति जबतक स्वस्थभावसे दृष्टि रखेंगे तबतक किसी प्रकार भी स्वीकारको भंग नहीं किया जायगा ।

(हस्ताक्षर) क्यानिंग । ”

अवसरके आनेपर वह सब देश जिससे राणाको फिर मिलजाँय, उस विषयमें विशेष यत्न किया जायगा । राणा उसी आशयसे सावधान होकर समय व्यतीत करतेथे १८५७ ईसवीमें विद्रोहके समयमें मेवाडके राजपूत सैन्यदल और स्वयं राणा स्वरूपसिंहने ब्रिटिश गवर्नमेन्टका विशेष पक्ष समर्थन किया; उस समय मेवाडके पोलिटिकेल एजन्ट कप्तान साडयार्सने राणाके बहुत समयसे प्रार्थना करनेपर पूर्वाधिकृत निस्तारियादेशमें अपना फिर अधिकार करनेके लिये राणाकी सेनाको आज्ञा दी । उस आज्ञाके पाते ही अत्यन्त प्रसन्नताके साथ मेवाडवाहिनीने निस्तारियापर अपना अधिकार करलिया, परन्तु अत्यन्तही दुःखका विषयहै कि विग्रह शान्तिके उपरान्त ब्रिटिश गवर्नमेन्टने राणाके हाथसे फिर उस निस्तारिया देशको लेलिया । केवल इतना करके भी गवर्नमेन्ट शान्त न हुई । कई महीने तक निस्तारिया राणाके द्वारा शासितहुई थी और उन्हीं कई महीनोंमें उपरोक्त देशोंसे संग्रह किया हुआ समस्त राजधन भी राणाके पाससे लेलिया । इसका कहना वृथा है कि गवर्नमेन्टका यह कार्य अत्यन्त ही अनुचित और अन्याय कारक हुआ । प्रगटमें पोलिटिकेल एजन्ट कप्तान साडयार्सने गवर्नमेन्टकी विना अनुमति लेकर राणाको निस्तारिया देश देदिया, परन्तु यह बात कहांतक सत्य है, इसको गवर्नमेन्ट ही बतासकती है, यद्यपि निस्तारिया देश गवर्नमेन्टने टोंकके नवाब अमीरखाँको देदिया था, परन्तु न्यायसे यह देश महाराणाको ही मिलनाथा, इसको कौन नहीं मानैगा ?

महाराणा शंभुसिंह १८६५ ईसवीकी १७ वीं नवम्बरको मेवाडके सिंहासनपर विराजमान हुए, और मेवाडके शासनकी पूर्ण सामर्थ्यको भी तभीसे ग्रहण किया । परन्तु दुःखका विषय है—महाराणा शंभुसिंहका अधिकार प्रजाके ऊपर अधिक दिनतक नहीं रहा । बहुत थोड़े दिनोंमें ही अर्थात् १८७४ ईसवीकी ७ अक्टूबरको सत्ताईस वर्षकी अवस्थामें पुत्रहीन अवस्थामें उन्होंने शरीर छोडदिया । अकालमें ही शंभुसिंहके स्वर्गजानेपर मेवाडकी सम्पूर्ण प्रजा मारे शोकके अधीर होगई । प्रजाको यह विलक्षण आशा थी कि राणा शंभुसिंहके राज्यमें बडे आनंदके साथ समय व्यतीत करेंगे, परन्तु निर्दयी विधाताने उस आशाकी जडको एक बार ही काटडाला ।

इस समय मेवाडके राज्यकी सीमा ११६२४ मील थी, प्रजाकी संख्या ११६१४०० थी पैदल सेनाकी संख्या १५१०० थी, घुडसवारोंकी संख्या ६२४० थी और कमान ५३८ थीं । राजधन ४०००००० रुपया था ।

इक्कीसवां अध्याय २१.

महाराणा सज्जनसिंह;—मेवाड़की शासन व्यवस्था; शिक्षाका
 प्रयोजन;—भारतके भावी सम्राट्के साथ महाराणाका
 साक्षात्;—विक्टोरियाके राजसूययज्ञमें महाराणाका
 जाना;—मेवाड़का वर्तमान संक्षिप्त विवरण;—
 महाराणा फतहसिंहका राज्यशासन
 और उपसंहार;— ।

महाराणा शंभुसिंहके अकालमें ही मरजानेके पीछे उनके भतीजे शक्तसिंह और सोहनसिंह इन दोनोंमें किसीको भी मेवाड़के राज्य पानेकी संभावना नहीं थी, परन्तु शंभुसिंहने अपने वचनेकी आशा एक बार ही छोड़ दीथी, अंत समयमें अंग्रेज गवर्नमेन्टके दियेहुए पोष्यपुत्रको गोदलेनेकी सामर्थ्यके अनुसार अपने बड़े भतीजे सोलह वर्षकी अवस्थावाले सज्जनसिंहको अपने उत्तराधिकारीके पदपर नियुक्त किया, इस कारण शंभुसिंहके परलोक जानेपर वही आजकलके महामान्य महाराणा सज्जनसिंह मेवाड़के सिंहासनपर अभिविक्त हुए ।

महाराणा सज्जनसिंहके गद्दीपर बैठते ही मेवाड़के शासनकी अवस्था भी शीघ्रही बदल गई । महाराणा अभी व्यवहारोंको नहीं जानतेथे, इस कारण फिर शासनसमिति स्थापित कर मेहता गोकुलचन्द और अर्जुनसिंहको मंत्रीके पदपर वरण किया वह दोनों और चारों सरदारोंके साथ शासनकार्यमें लगे, तथा पोलिटिकेल एजन्टने उस समितिके सभापतिके पदको ग्रहण किया, शासनसमितिके मेवाड़में सुख और शांतिके उपायका अवलम्बन करनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न किया, और शीघ्रही उस विषयमें अधिक कार्यकी सफलता दिखाई ।

नवीन शासनसमितिके सबसे पहिले एक विशेष प्रार्थनीय और प्रयोजनीय विषय पर हाथ डाला । यद्यपि मध्यकालके देशीय राजाओंमें बहुतसे ऐसे हैं कि जो राजनीतिज्ञताका विलक्षण परिचय दिखाते हैं, और बहुतोंने अपने बाहुबलकी वीरतासे

अपने वंशवालोंका सन्मान और गौरव बढ़ाया है, परन्तु यह अवश्य ही मानना होगा कि उनमेंसे दो एक जनोंको छोड़कर और शेष सभी ऐसे हुए कि जिन्होंने विद्या शिक्षाके अमृतमय फलको न पाया; जितने राजा शिक्षित और मार्जित-बुद्धि थे वह राजधर्ममें अभिज्ञ और सुनीतिके जाननेवाले हुए, राज्यका जो मंगल है इस बातको कौन नहीं मानेगा कि इसीसे प्रजामें सुख और शान्तिकी संभावना है ? देशी राजाओंको जो सर्वसाधारण शिक्षा मिली, उसे कभी भी सर्वाङ्ग सुन्दर नहीं कहा जा सकता, वह शिक्षा केवल नाममात्रकी शिक्षा है। नीति जाननेवालोंका यह कथन है कि पूर्णरूपसे विद्या शिक्षा करना कर्तव्य है, और जो ऐसा न हो तो मूर्ख ही रहना ठीक है। आधी शिक्षा सब विषयोंमें भयंकर अनिष्ट करनेकी जड़ है। देशीय राजाओंको जो शिक्षा मिलती थी वह सर्वसाधारण आधी शिक्षासे भी कहीं थोड़ी होती थी। विद्याकी एक विधि नहीं है, अठारह विधि हैं; उन अठारहों विधियोंपर एक मनुष्यका अधिकार होना अवश्य ही असंभव है, परन्तु जिस मनुष्यके हाथमें हजारों लाखों मनुष्योंके जीवनका भार है और जो मनुष्य अपने भाग्यबलसे ही राजसिंहासनपर विराजमान हुआ है जिसका ज्ञान, बुद्धि और विचारकी शक्तिके ऊपर राज्य, स्वजाति और समाजके श्रेष्ठ साधन निर्भर होकर रहते हैं, जिसकी एकमात्र उदारताहीके बलसे जातिका साधारण सब प्रकार उन्नतिका द्वार खुल सकता है, केवल जिसके एकमात्र उत्साह और उद्योगके प्रकाशसे जीवनकी शक्ति संघटित होती है-जातिय में भ्रातृभाव बढ़ता है-जातिमें बल विक्रमका विस्तार होता है, शान्तिके बढ़नेकी पूर्ण संभावना होती है, वही मनुष्य है, उस राज्यसिंहासनपर बैठे हुए मनुष्यके पक्षमें अपने पदकी उचित शिक्षाके भूषणसे भूषित होना उसको अवश्य कर्तव्य है। सब देशोंमें सभी जातियोंने इस बातको मान लिया है कि जबतक राजा भलीभांतिसे शिक्षापूर्ण न होगा तब तक वह कदापि अपने भारी दायित्वके अनुभव करनेमें किसी प्रकार समर्थ न होगा। सब विषयोंकी उन्नतिकी जड़ एकमात्र शिक्षा है, शिक्षाके अतिरिक्त किसी विषयकी भी विना प्रयोजनके भली-भांतिसे सिद्ध होनेकी कुछ भी संभावना नहीं है। मानसिक, शारीरिक और नैतिक जिस स्थानपर इन तीनों श्रेणीकी शिक्षाका अभाव है वह स्थान कभी भी उन्नतिका स्थान नहीं हो सकता। ज्ञान, बुद्धि और विचारशक्ति यह केवल ग्रंथोंके पढ़नेसे ही नहीं आती है; ग्रंथोंकी विद्या तो केवल अनुष्ठान मूलक शिक्षा है, वह शिक्षा तो केवल मार्ग साफ करती है, देशमें भ्रमण, स्वभाव सन्दर्शन, पंडितोंके

साथ संभाषण और कार्यमूलक तत्त्वके अनुसंधानसे ज्ञान और बुद्धिके बढ़नेकी अधिक संभावना है, उसीसे यथार्थ शिक्षा प्राप्त होती है और वही शिक्षा मनुष्यको संसारमें देवताकी समान पूजनीय करदेती है। उस मानसिक शिक्षाके साथ फिर नैतिक शिक्षाका संयोग साधन सबसे पहले प्रार्थनीय है, नैतिक बलही इस संसारमें सबसे श्रेष्ठ बल है। जिनमें नैतिक बल नहीं है, या जिन्होंने नीतिकी शिक्षाके समयमें उदासीनता प्रकाश की है, पंडितोंके विचारसे उनकी मानसिक शिक्षा एक बार ही कर्महीन होजायगी। मनुष्य संसारमें एक श्रेष्ठ जीव है। मनुष्य अपने आपही अपने आचार व्यवहारसे ऋषिकी समान, देवताकी समान, सर्वत्र पूजने योग्य और सभी मनुष्योंके हृदयमें अधिकार करता है, फिर नरकके कीड़ोंको देखकर घृणा होती है। जो मनुष्य नैतिक बलसे बलवान है उस मनुष्यके भाग्यकी लक्ष्मी प्रधान सहायक होकर उसको दूसरोंके निकट यशकी अधिकारिणी बना देती है, और जो मनुष्य नैतिक बलसे हीन है, वह मनुष्य सहस्रों ग्रंथोंके पढ़ानेसे भी सर्व साधारणमें घृणास्पद है। इस कारण राजाओंके पक्षमें निस्सन्देह नैतिक शिक्षाका विशेष प्रयोजन है। राजा जितना सच्चरित्र, शुशील और नीति-संपन्न होगा, उतने ही उसके चरित्रोंके आदर्शमें प्रजाके चरित्र विगठित होंगे; सब प्रकारसे शारीरिक शिक्षाका भी विशेष प्रयोजन है। अमूल्य जीवनकी रक्षाके लिये शारीरिक शिक्षाका प्रचार बहुत कालसे सभ्य जगत्में है। मानसिक, नैतिक और शारीरिक, इन तीन श्रेणियोंकी शिक्षा जिस राजाको मिल गई है, उस राजासे प्रजा अधिक सुखपानेकी अधिकारिणी है, मेवाडकी नवीन शासन समितिने उदार नीतिके वश होकर महाराणा सज्जनसिंहको यथार्थ शिक्षा-देनेमें सबसे प्रथम हाथ डाला।

दीवान जानि बिहारीलालने महाराणके शिक्षकपदपर नियुक्त हो महाराणा सज्जन सिंहको नैतिक और दैहिक श्रेष्ठ शिक्षाके देनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न किया। यह निर्वाचित शिक्षक सब अंशोंमें योग्य पुरुष हैं, इन्हींकी अध्यक्षतामें महाराणाने इस समय अंग्रेजी, उर्दू और मातृभाषामें भलीभाँतिसे अभ्यास करलिया, वाप्पारावलके वंशधरोंमेंसे इन्हींने इस पहली रीतिके मतसे अंग्रेजी भाषामें अधिकार प्राप्त किया है। महाराणाका स्वभाव और इनके चरित्र भी संतोषदायक हुए, हमने इस विषयमें बहुतसे प्रमाण पाये हैं।

शासनसमिति केवल वर्तमानके महाराणा सज्जनसिंहको शिक्षाकी व्यवस्था करके ही शान्त न हुई, वरन सर्व साधारणको अंग्रेजी पढ़ानेके लिये उदयपुरकी

राजधानीमें एक स्कूल प्रतिष्ठित किया और उसमें एक अंग्रेज तत्त्वावधान एवं शिक्षा देता है उस विद्यालयमें अंग्रेजी, उर्दू और मातृभाषाकी शिक्षा दी जाती है। अनेक सामन्तोंके लड़के इसी विद्यालयमें पढ़ते हैं; जितना २ शिक्षाका विस्तार होता जायगा उतनी उतनी ही राजपूत जातिकी उन्नति बढ़ती जायगी, इसमें कुछ भी संदेह नहीं।

जिस समयसे नवीन शासन समितिने शासनका भार लिया उसी समयसे राज्यके प्रत्येक भागमें विशृंखलता दूर होकर सुरीतिका प्रचार हुआ और क्रमानुसार उसी दिनसे राज्यकी आमदनी भी बढ़ती जा रही है। विचार विभाग और शांतिकी रक्षाके विभागमें योग्य मनुष्य नियुक्त हुए, इसीसे उन दोनों कामोंके सरलतासे सिद्ध होनेमें कोई विघ्न भी उत्पन्न न हुआ। मेवाडमें जिसभाँति पहले प्रजाका धन और प्राण सर्वदा ही अत्याचारियोंके द्वारा नष्ट होता था, जिसभाँति चोर निर्भय होकर इच्छानुसार प्रजाका धन लूटते थे, इस समय भलीभाँतिसे शासनके होनेसे वह उपद्रव एकसाथ ही दूर होगये हैं, इस समय सामन्तोंमें भी लडाई झगडा होता हुआ दिखाई नहीं पड़ता। मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें शान्तिसत्ता निर्भय होकर नृत्य कर रही है; यद्यपि दुर्बुद्धि भीलगण बीच २ में विद्रोहानल और उपद्रव करना आरंभ करते हैं, परन्तु उससे राणाकी शासनशक्तिकी अयोग्यता किसी प्रकार भी नहीं पाई जाती। भीलगण तो अपने स्वभावसे ही सैकड़ों वर्षोंसे उपद्रव करते चलेआये हैं, इस कारण जबतक वनेले पहाड़ियोंकी भीलजातिमें शिक्षाकी पूर्ण ज्योतिका प्रकाश न होगा, तबतक वह इस प्रकारके उपद्रव करनेसे न चूकेंगे।

महामाननीय भारतेश्वरीके ज्येष्ठपुत्र भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स ऑफ वेल्स वहादुर १८७५ सालके नवम्बर महीनेमें भारतवर्षको देखनेकी इच्छासे बम्बईमें आये, महाराणा सज्जनसिंह वहादुर गवर्नमेन्ट और ब्रिटिशदूतकी सम्मतिसे बम्बईमें गये और ५ वीं नवम्बरको प्रिन्स ऑफ वेल्सने बम्बई बन्दरमें आकर महाराणा तथा अन्यान्य राजाओंसे साक्षात् कर उनका सन्मान ग्रहण किया। और छठी नवम्बरके (१८७५ ईसवीमें) प्रिन्स ऑफ वेल्स बम्बईमें ही गवर्नमेन्टके मकानोंमें बड़े आदरभावके साथ महाराणा सज्जनसिंहको भी लेगये और कई दिनतक वहां रहकर महाराणाके सन्मानके निमित्त उनके निवासस्थानमें जाकर साक्षात् करके लौट आये। कालकी कैसी विचित्र गति है! कि जिस मेवाडके राणा प्रबल प्रतापशाली होकर यवन सम्राट् के साथ साक्षात् करनेके

लिये राजधानी दिल्लीमें जानेसे अपने गौरवकी हानि समझतेथे, उन्हीं महाराणाओंके वंशधर इंगलैन्डेश्वरीके ज्येष्ठपुत्रके साथ साक्षात् करनेके लिये कितनी दूर बम्बईमें जाकर उनके आनेकी वाट जोह रहेथे!

१८७७ ईसवी जनवरीमें जिस समय ब्रिटिशरानी महामान्या श्रीमती विक्टोरियाके प्रतिनिधि लार्ड लिटनने भारतकी प्राचीन राजधानी दिल्लीमें राजसूय यज्ञका अनुष्ठान किया और जनवरी महीनेकी पहली तारीखको ब्रिटिश राज्ञीकी “भारतेश्वरी” उपाधि बडे आडम्बरसे विधोषित हुई महाराणा सज्जनसिंह भी उस विक्टोरिया राजसूय यज्ञमें निमंत्रित होकर गये, उस समय महाराणाके साथमें बहुतसे सामन्त और सेवक भी गयेथे। जब १८७६ ईसवीकी २६ वीं दिसम्बरमें महाराणा सज्जनसिंह बहादुरने दिल्लीमें स्थित ब्रिटिशराज प्रतिनिधियोंके वस्त्रावासमें गमन किया तब उनके सन्मानके लिये सत्रह तोपोंका फैर कर उनके यानसे उतरते ही अंग्रेजी सेनाने समरकी रीतिसे अस्त्र दिखाकर मान किया। इसके उपरान्त भारतवर्षकी गवर्नमेन्टके वैदेशिक सेक्रेटरीने उनको सन्मानके साथ ग्रहणकर राज वस्त्रावासके भीतर लेजाकर राज प्रतिनिधियोंके निकट परिचित कर दिया। महाराणाके जाते ही माननीय राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन (इस समय अर्ल)ने उनको आदरसहित लेकर अपने दक्षिण पार्श्वमें ऊंचे आसनपर बैठाया और फिर आप सिंहासनपर बैठे;मेवाडके पिछले महाराणाओंने गवर्नमेन्टके साथ जिस प्रकार मित्रताकी रक्षा की थी इस बातका कथन कियागया, पश्चात् हाइलार्डके सैनिकने एक रमणीय पताका * लाकर सिंहासनके सामने उपस्थित की महाराणा प्रतिनिधिके सहित पताकाकी ओरको आगे बढे और निम्नलिखित युक्तियोंके साथ महाराणाके हाथमें वह पताका दीगई अपने वंशके राजचिह्नसे अंकित यह पताका भ्रह्माननीया महारानीकी स्वयं उपहारस्वरूप है, यह भारतेश्वरीके उपाधि धारणके स्मरणमें आपको उपहारस्वरूप दीजाती है।

इंगलैंडके सिंहासन और आपके राजभक्त वंशके बीचमें जो दृढ सम्बन्ध है तथा प्रधान शासनकी सामर्थ्य [अंग्रेजगवर्नमेन्ट] अपने वंशकी प्रबलता, मुख स्वच्छन्दता और अविनाशिताके दर्शनाभिलाषी आप जबतक इस पताकाको उडावेंगे तब तक इससे आपका स्मृतिमार्ग उदय होगा यह महामान्यको विश्वास है।

* यह पताका देखनेमें बड़ी शोभायमान थी, सोनेके डंडेके ऊपर एक छोटा सोनेका मुकुट और उसके कुछ नीचे सुवर्णसे रंजित दोमुखा दंड था उसके अवलम्बमें तांबूलाकार झालरके साथ चीनी वस्त्रकी पताका लटक रहीथी, पताकाकी एक ओर हिन्दी अक्षरोंमें “विक्टोरिया कैसरहिन्द” और दूसरी ओर महाराणाके वंशके राजचिह्न अंकित थे।

महाराणा सज्जनसिंह बहादुरके सन्मानसहित उस पताकाको ग्रहण करनेके उपरान्त माननीय राजप्रतिनिधि बहादुरने लालसूत्रमें पोया हुआ एक सुवर्ण पदक * महाराणाके गलेमें डालकर कहा भारतेश्वरीकी आज्ञाके अनुसार मैंने आपको इससे विभूषित किया है आप इसको दीर्घकालतक धारण करें इसमें जो तारीख लिखी गई है उसे स्मरण करनेके लिये आपके वंशधर इसकी दीर्घकालतक उत्तराधिकारी पदकरूपसे रक्षा करनेमें समर्थ होंगे । पदक पानेके उपरान्त महाराणाको एक और सन्मानसूचक संवाद मिला पहले भारतवर्षीय महाराणाओंको गवर्नमेंटसे उनके सन्मानके लिये उन्नीस तोपोंकी सलामी होतीथी परन्तु इस समय उनकी संख्या बढ़ाकर २१ तोपें नियत की गईं, महाराणाकी समान उनके राजस्व विभागके प्रधान मंत्री महता पन्नालाल और कोषागारके अध्यक्ष छगनलालको राजप्रतिनिधिसे सन्मानसूचक रायकी उपाधि मिली ।

पहली जनवरीको राजसूय यज्ञमें अंग्रेज राज प्रतिनिधि लार्डलिटिन बहादुरसे ब्रिटिश रानीके भारतेश्वरी उपाधि धारण करनेका समाचार सुनते ही महाराणा सज्जनसिंह बहादुरने उठकर कहा कि महामान्या श्रीमती ब्रिटिशराज्ञीके भारतेश्वरीकी उपाधि धारण करनेसे सम्पूर्ण राजपूतानेके अधिकारी इकट्ठे होकर उनकी राजभक्तिका प्रकाशक अभिनंदन करते हैं और शीघ्रही तारद्वारा यह समाचार उनके पास भेजाजाय, महाराणा सज्जनसिंह बहादुर इस विक्टोरिया राजसूय यज्ञमें अधिक सन्मानित होकर अपने देशको लौट आये; राजसूय यज्ञमें जो उनको सन्मान मिलाथा वह शेष सन्मान नहीं था उनको फिर भी भारत गवर्नमेंटने १८८१ ई० में G.C.S.I. जी.सी.एस. आई. "ग्रेट कमाण्डर स्टार आफ इण्डिया" अर्थात् भारतवर्षके प्रथम नक्षत्रकी उपाधिसे भूषित किया, इन्होंने महद्राजसभाके नामसे एक कौंसिल बड़े २ सुकदमों और राजकार्योंके लिये नियत की, योग्य व ईमानदार अहलकारोंकी पदोन्नति और वेतनवृद्धि की, सड़क पाठशालायें अस्पताल बनाये और एक यंत्रालय स्थापन किया जिसमें एक उत्तम समाचारपत्र सज्जनकीर्ति सुधाकर नामक निकलने लगा; यह प्रतिसप्ताह उदयपुरसे निकलता है शहरके बाहर पश्चिमोत्तर तरफ सज्जनगढ़ नामक किला बनवाया और शहरके पश्चिम दक्षिण ओर सज्जन

* सुवर्णपदकके एक ओर भारतेश्वरी विक्टोरियाका मुख और दूसरी ओर उर्दू अंग्रेजी और हिन्दीभाषामें 'कैसरहिन्द' लिखाथा ।

निवास नामक वाग लगवाया इसमें तरह तरहके मेवेके फूल फलके वृक्ष लगवाये । सन् १८८४ में महाराणा सज्जनसिंहजी २५ वर्षकी अवस्थामें कुछ दिन अस्वस्थ रहकर परलोकको सिधारे तो समस्त मेवाड ही नहीं किन्तु समस्त राजस्थान मेवाडमें डूबगया । राजस्थान बाहर भी भारतवर्षके निवासियोंको इनकी अकाल मृत्युसे बड़ा खेद हुआ क्योंकि यह महाराणा साहब बड़े तीव्रबुद्धि, परोपकारी, गुणग्राही, उच्च मनस्क, और देशहितैषी थे, और इनकी सत्कीर्ति भारतवर्ष-भरमें फैल गई थी । यद्यपि ये मेवाडके राज्याधीश थे परन्तु इन्होंने उच्च विचार और शुभ गुणोंसे समस्त भारतकी आर्य्य सन्तानके हृदयमें ऐसा प्रभाव जमाया था कि वह इनको वास्तविक हिन्दूपति समझती थी ।

मेवाडके राज्यका परिमाण पहिलेहीकी समान अर्थात् ११६१४ वर्गमील था । यह कलकत्तेकी राजधानीसे ११३६ मील दूर है । सुशासनके गुणसे राज-धनकी संख्या इस समय अधिक बढ़ गई है । राजधनका परिमाण ६४००००० रुपया है; इसमें महाराणा अंग्रेज गवर्नमेंटको कर स्वरूपसे दो लाख रुपया और भीलसेना दलका व्ययस्वरूप वार्षिक ५०००० रुपया देते हैं । सुख शान्तियुक्त मेवाडके निवासियोंकी संख्या जो इस समय क्रमशः बढ़ती जा रही है उसका अनुमान सरलतासे हो सकता है । महाराणाके आधीनमें इस समय २५३ कमान १३३८ गोलन्दाज ६२४० अश्वारोही और १३२९०० पैदलोंकी सेना है । लफ्टिनेन्ट कर्नल सी. के. स्मिथ. सी. एस. आई. उस समय रजिडेन्टरूपसे उदयपुरमें निवास करते थे ।

श्री १०८ श्रीमहाराणा फतहसिंहजी जी. सी.

एस. आई.

श्रीमान् महाराणा सज्जनसिंहजीके निस्सन्तान परलोकवास होनेपर मही-महेन्द्र यावदार्थकुलकमल दिवाकर श्री १०८ श्रीमान् महाराणा फतहसिंहजी २४ दिसम्बर सन् १८८४ ई० को राजगद्दीपर विराजे ।

किसी क्षत्रिय नरेशमें जो गुण होने चाहियें वे प्रायः सभी आपमें वर्तमान हैं । आपके विशुद्ध जीवन और सदाचरणसे पूर्वसमयके क्षत्रिय राजा महाराजाओंके धर्माचरण और शास्त्रोक्त मर्यादा पालनका स्मरण होता है । आप बड़े पराक्रमी, श्रमशील, संयमी, बुद्धिमान्, गम्भीर, मितभाषी, दूरदर्शी, दृढप्रतिज्ञ और न्यायशील हैं । शस्त्रसंचालन और अश्वारोहणमें सुदक्ष हैं । आपको सिंहके आखेटका बड़ा अनुराग है परन्तु हमने सुना है कि सिंहनी या मृग आदिका आखेट

आप कभी नहीं करते । राज्यके मुख्य २ काम आपकी निरीक्षणतामें ही होतेहैं और प्रतिदिन प्रायः सात घंटे स्वयं राजकाज करतेहैं । छोटे २ आदमी तककी प्रार्थना स्वयं सुनतेहैं । यह आपके राजशासनकी उत्तमताका ही कारण है कि मेवाडकी प्रजा सर्वथा शान्त और सन्तुष्ट है । गत मासमें राजपूतानेके एजेन्ट गवर्नर जनरल मिस्टर मारटिन्डेलने अपनी स्पीचमें श्रीमान् महाराणा साहबके सद्गुणोंकी प्रशंसामें कहाथा कि महाराणा साहब आदर्श नरेशहैं । वर्तमान महाराजाओंका इनका अनुकरण करना चाहिये । श्रीमान्को अपने महत्त्व और कुलमर्यादाका पूर्ण ध्यानहै । प्राचीन रीति नीति और राजसी ठाट जैसा उदयपुर दरबारमें दृष्टिगत होताहै वैसा अन्यत्र देखनेमें नहीं आता ।

सबसे अधिक प्रशंसा आपकी इस बातकी है कि आप पूर्ण सदाचारी हैं और आपकी एक ही महारानी हैं । श्रीमानका चरित्र नवयुवा नरेशोंके अनुकरण योग्यहै ।

श्रीमानके राज्यशासन समयमें विद्याकी उन्नति हुई है । उदयपुरके स्कूल (जो पहले सामान्य अवस्थामें था) में एन्ट्रीस तक की पढाईका उत्तम प्रबन्ध होगयाहै । सर्व साधारणके उपकारके लिये पुस्तकालय और म्यूजियम (अजायबखाना) स्थापित हुआहै । चिकित्सालयकी भी उन्नति हुईहै । राजधानीके सिवाय गावों और कसबोंमें भी मदर्स और अस्पताल स्थापित हुएहैं । सर्वसाधारण सम्बन्धी कितने ही काम हुए और पूर्व प्रचारित कार्योंमें उन्नति हुई । श्रीमान्के नामपर फतहसागर तालाब बड़ा प्रजोपयोगी बनाहै ।

श्रीमान्को सन् १८८७ में महाराणी विक्टोरियाके जुबिली उत्सवमें जी. सी. एस. आई. की पदवी मिलीहै ।

श्रीमान्के अब एक महाराजकुमार और दो महाराजकुमारी हैं । महाराजकुमारका नाम श्रीभूपालसिंहजीहै । कई वर्षसे महाराजकुमार रोगग्रसित थे परन्तु अब ईश्वरकी कृपासे आरोग्य हैं ।

मेवाडके घटनापूर्ण इतिहासकी यहींपर पूर्ति हुई, जगतपूज्य गिलहौटकुलके रंगस्थलमें यहींपर यह जवनिका गिरगई बहुत अभिलाषा थी कि वर्तमान महाराजा साहब बहादुरका वृत्तान्त विस्तारके साथ लिखा जाय पर वह इस समय उपलब्ध न होसका, उपसंहारमें जो दो एक प्रश्न हमारे हृदयमें उठतेहैं उनको यहां लिखना उचितहै, जगतका इतिहास इस विषयकी साक्षी देताहै कि यह जगत् परिवर्तन शीलहै, इसकी उन्नति अवनति कालचक्रके आधीन है इस

निमित्त ही हम अनन्त धन रत्नकी खान, महावीरोंकी प्रगट करनेवाली, अनन्त साध्वी रानियोंकी: जननी मेवाडभूमिके भाग्यका परिवर्तन होता हुआ देखेंगे, हृदय कहताहै कि मेवाड एकदिन फिर उन्नातिके शिखरपर पहुंचेगा, पहली दशाका मिलान कर इस समयकी मेवाडकी दशा देखकर किसका हृदय व्यथित नहीं होता कौन ऐसी आर्यसन्तान है जो राजपूत जातिको आलस्यमें शयन करताहुआ देखकर दुःखित न हो जिसके हृदयमें एक बूंद भी आर्योंका रक्तहै वह मेवाडकी शोचनीय अवस्थापर अवश्य दुःखी होगा ।

हाय ! एकदिन वह थे और एकदिन आज हैं वह मेवाड वह वीरक्षेत्र चित्तौर वह वीरलीलाभूमि उदयपुर वह राजपूत जातियोंका 'शिव' 'शिव' उच्चारण, वह पवित्र हिन्दू रक्तका प्रवाह, वह अन्नभेदी आरावलीकी भूधरमालाकी शोभा अब कहाँ है । वह राजपूतोंकी शक्ति अब कहाँ चली गई ? वह वीरव्रत, वीराचार, शूरता, बाहुबल, विक्रम, साहस, प्रतिभा, एकता, उद्दीपना आरावलीके किस गढेमें जा छिपी, आज मेवाड अन्तसार शून्य हो रहाहै मणि मुक्ताओंसे खचित सूर्यकी समान प्रकाशमान् महलोंमें वीरोंके अस्त्रागारोंमें मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें कवियोंकी अमृतमय लेखनीसे निकली गाथा अब नहीं गाई जाती, अब मृतसंजीवनी मंत्रका प्रचार नहीं होता, धनुष बाणका सन् सन् शब्द, तलवारोंकी कनकनाहट, गगनभेदी जयशब्द, दृढ प्रतिज्ञाका जीवन परिचय आज कहाँ चला गया, भारतका गौरव स्वरूप मेवाड इस समय भी निद्रित है प्रत्येक प्रान्तमें यह शब्द गूँज रहाहै कि अमित तेजस्वी प्रवल पराक्रमी दृढ प्रतिज्ञा महावीर दुर्धर्ष साहसी राजपूतोंकी राणा जातीय जीवनी शक्ति लोप सी होगई है, बाष्पारावल राणा प्रताप, राजसिंहकी चिताभस्मसे मेवाड ढक गयाहै ऐसा क्यों हुआ इस प्रश्नका उत्तर कौन देसकताहै ? ।

एक श्रेणीका इतिहास कहताहै कि मेवाड स्वाधीन है आजतक भी स्वाधीन है राजपूतजाति स्वाधीनहै मेवाडेश्वर राणाजी स्वाधीनहैं परन्तु हाय ! राजनीतिके जाननेवालोंसे क्या यह बात छिपीहै कि इस समय बृटिशनीतिके बलसे कोई भी भारतमें स्वतन्त्र नहीं है, जिन्होंने स्वाधीनताके अमृतमय चित्रका दर्शन कियाहै जिन्होंने मेवाडका अतीत इतिहास देखाहै, जो अनन्त वीरताओंकी गाथासे पूर्ण इतिहासको हृदयंगम करनेमें समर्थ हुएहैं यह बात कभी भी उनके हृदयको तृप्त नहीं करसकैगी, एक बार नहीं सहस्रबार मानना होगा कि बृटिश जातिने मुगल पठान और महाराष्ट्रियोंसे विदलित राजपूत जातिको आश्रय देने और

उद्धार करनेमें अपनी महिमाका परिचय दिया, अवश्य ही मानना होगा कि, आलस्य विलासिताके वशीभूत होनेसे ही राजपूत जातिकी ऐसी शोचनीय अवस्था हुई अधिक क्या कहें हुआ तो ऐसा था कि संसारकी गोदीसे मेवाडके चिह्नतक भिटजाते परन्तु जिसदिन महाराणा भीमसिंहके प्रतिनिधि ईस्टइन्डिया कम्पनीके साथ संधिवन्धनमें नियुक्त हुए तभी मेवाडका वचाव हुआ, उस समय मेवाडका कैसा दृश्य था वह हमारी आंखोंके सामने धूम रहा है।

राजपूत जाति इस बातके माननेको तैयार है कि कर्नल टाडसाहबके सुशासन सुव्यवस्थाके समय मेवाडमें अमृतमय फल उत्पन्न हुआ था, परन्तु परवर्ती इतिहास क्या कह रहे हैं कि ब्रिटिश जातिने फिर वह शक्ति संग्रह करानेमें उदासीनता प्रकाश की जिसका फल संतोष दायक न हुआ, जिस नीतिसे भारतका शासन होता है उस नीतिसे मेवाडकी राजपूत जातियोंकी उन्नति असंभव है नीति जानने-वाले अपनी दिव्य दृष्टिसे देखते हैं कि राजपूत जातिका उदय राजपूत जातिके ही हाथमें है।

जगत्की वयो वृद्धिके साथ प्रत्येक विषयका परिवर्तन देखा जाता है केवल साहस, शूरवीरता, एकता, उद्दीपना और बाहुबलसे जातिकी उन्नति करनेका समय अतीत उपाधिके धारण करनेसे अदृश्य हो रहा है, इस समय साधारण लोकशिक्षा और विज्ञानशिक्षा ही जातिकी उन्नतिकी प्रधान उपाय है, मेवाडवासी इस विज्ञान शिक्षाके संग्रह करनेमें तत्पर हों वरावर शांतिभोगके लिये राजपूत जातिने वीरव्रत वीराचरण वीरधर्म और महाशक्तिकी आराधनाका बीजमंत्र एक बार ही विस्मृतिके जलमें फेंक दिया था, उनका जाति स्वभाव लुप्त होकर हृदयभेदी दृश्य दिखा रहा है राजपूत जातिका नमः शिवाय शब्द नवीन रुधिरका स्रोत प्रवाहित करके हृदयके भीतर लुप्त हुए जातीय गौरवको फिर उद्दीप्त करके विज्ञान शक्तिका संचार करेगा, ऐसा करनेको कौन तैयार हुआ ? मेवाडके अधिपति राणा और राजपूत जाति भी दूसरी बार सावधान होकर अपने दुर्भाग्यरूपी जलके जालसे ढके हुए गौरवरूपी सूर्यको उदय कर स्वजातिका मेवाडका राजवाडेका और भारतका मुख उज्ज्वल करनेको समर्थ न हुए।

यद्यपि लगभग आधी शताब्दीसे अधिक समयसे मेवाडकी राजपूतजाति ब्रिटिश गवर्नमेन्टके साथ संधिका नियम पालन कर अपना समय सुखसे वितारहीं-है यद्यपि इस समय चिर अवलम्बनीय तलवारोंकी वर्षा आरावलीकी गुफामें निक्षिप्त है उदयसागरके गंभीर जलमें गगनभेदी जयशब्द विसर्जित प्राचीन राजधानी चित्तौरके विध्वंस होजानेपर शेष चित्तौरके ऊपर असीम साहस, शौर्य विक्रम

और उद्दीपनका त्याग तथा संहारकर्ता एक लिंग महादेवके मंदिरके सन्मुख जातीय स्वभाव सुलभ वीरप्रतिज्ञाके बलिदानसे अन्तःसार शून्य अवस्थामें निद्रित है तथापि हमें विश्वास है कि प्रतापवान राजसिंहकी समान मृतसंजीवनी मंत्रके प्रचार करनेवाले नेताका इस सुशासनमें प्रचार होते ही राजपूत-जाति अपने गौरवको फिर भारतमें प्रकाश कर दिखावैगी, साधारण लोगोंतक शिक्षाका फैलाना नेताका प्रधान कार्य होगा, शिक्षापाते ही निर्मल बुद्धिवाले राजपूत फिर अपने गौरवको प्राप्त होसकतेहैं। इस मेवाडमें फिर कब प्रतापसिंह राजसिंह नेतारूपसे दर्शन देंगे ? राजपूतजाति फिर कब उन्नतिके शिखरपर चढ़कर भारतके अनन्त गौरवका प्रकाश करेगी ? क्या वह प्रार्थनीय शुभदिन फिर नहीं आवैगा, अवश्य आवैगा ? संसारकी उक्ति है कि सर्वदा किसीके एकसे दिन नहीं रहते ।

इस समय जगतके सप्तम अंशमें ब्रिटिशराजकी पताका फहरा रही है, यद्यपि सूर्य भगवान एक सुहृत्को इस राज्यमें अस्त नहीं होते कहीं न कहीं दर्शन देते ही रहतेहैं, सम्पूर्ण संसार एक स्वरसे कह रहा है कि ब्रिटिश शासनका सूर्य ग्रीष्मकालिक मध्याह्न मार्तण्डके समान अपने किरणजालका विस्तार कर रहा है परन्तु विचारकर देखाजाय तो भारतके बलसे ही ग्रेट ब्रिटिनका बल है, आर्य-क्षेत्र ब्रिटिशराजकी मुकुटमणि है, इस बातको अवश्य ही मानना होगा कि ब्रिटिशके शासनसे, ब्रिटिशके प्रतापसे ब्रिटिशके राजनीतिबलसे इस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें शान्ति विराज रही है, यह अंग्रेजी राज्यका ही प्रताप है कि देशीय राजाओंमें तथा भिन्न २ धर्मावलम्बी अनेक जातियोंमें विद्रोह अत्याचार निर्वलको सताना इत्यादि सभी बातें दूर हो गईहैं सब अंशोंमें सभी विषयोंमें न भी हो परन्तु ऐसे अनेक स्थान हैं जिनमें न्यायशासनकी पराकाष्ठा दृष्टिमें आ रही है परन्तु इस शान्तिमें सौरभसे आमोदित भारतवर्षमें हमारा कर्तव्य क्या है ? शान्तिके आलिंगनमें आलस्य विलासिताके वशीभूत न होकर शासनविधिके ऊपर अपना पूर्णसन्मान दिखाते हुए हमारे प्रत्येक जातिके सत्त्वकी रक्षा तथा लुप्तहुए सत्त्वका उद्धार यही हमको इस समय प्रार्थनीय है, राजपूत बंगाली सिक्ख-महाराष्ट्र तथा आर्यावर्तनिवासी सब कोई प्राचीन द्वेषभावको भारतके महासमुद्रके अगाध जलमें विसर्जन कर परस्पर सहानुभूति प्रकाशकर एक दूसरेके हृदयसे हृदयको मिलाय फिर जन्मभूमि भारतका मुखकमल खिलानेके लिये विशेष यत्नवान हो यही भारतहितैषी और नीतिज्ञोंकी आन्तरिक प्रार्थना है, यह

प्रार्थना करके ही हम राजपूत भ्राताओंके पुनर्बार उदय होनेकी अभिलाषा करते हैं, क्या समाज क्या स्वजाति तथा स्वधर्मके निकट प्रत्येक पुरुष ही समभावसे दायी है ईश्वरके दिये हुए दायित्वके पालनकरनेमें जो मनुष्य कातर हैं वा इस दायित्वके पालन करनेमें जो मनुष्य प्रतापसिंह और राजसिंहकी समान जीवन उत्सर्ग करनेमें तैयार नहीं हैं वे मनुष्य अवश्य ही स्वजातिके कलंकस्वरूप हैं ।

भारतहितैषी नीतिके जाननेवाले इस समय दिव्यनेत्रोंसे देखरहेहैं अंग्रेजी शासनके फलसे अंग्रेजी शिक्षाके गुणसे हमारे परम सौभाग्यके बलसे इस समय नवीन युगकी मृष्टि हुईहै, आर्यसंतानकी अवस्था नवीन भावमें बदल गईहै, आर्यजातिकी जीवनी शक्ति अलक्ष्यभावसे नवीन रीतिके उपकरणमें प्रस्फुरित हुई है, इस परिवर्तनशील जगतके नियमके अनुसार तथा प्राकृतिक नियमके आधीन होकर अलक्ष्यका नवीन प्रकाश, नवीन दृश्य, नवीन भाव नवीन आशा मधुर मूर्तिसे भारतहिताभिलाषीके चित्तको तृप्त कर रहीहै, इस समय सबसे पहले हमारी यही प्रार्थना है कि जातिमें सहानुभूति हो मेवाडका इतिहास क्या इस सहानुभूतिकी शिक्षा नहीं करसक्ताहै, राजपूत बंगाली महाराष्ट्र सिक्ख सहानुभूतिके प्रकाशमें उदारतासे प्रफुल्लितमुख होकर मातृभूमिकी संतान कहाकर परस्पर एकताका हार पहरकर अमृतमय स्वर्गीय फलकी उत्पत्तिकी संभावना करसकते हैं मेवाडका इतिहास क्या हमारे हृदयपर इसवातकी शिक्षा नहीं देसक्ताहै ।

क्रिया प्रतिक्रियाकी विधिका विधान है आर्यजाति वीरसाजसे सजकर वीर मदसे मतवाली हो वीरव्रतको धारणकर जगतकी वीरताका अभिनय दिखाकर इस समय प्रतिक्रियाके वशीभूत हो शान्तिकी गोदीमें सोरहीहै, किस बलसे भारतका सुखमूर्त्य भारतके गौरवका मार्तण्ड चिरकालके लिये अस्ताचलको चला गया, किस कारणसे भारतमें कुछ भी नहीं रहा, भारतमें सब कुछ है, ऐसे दिन सुशासनकी कृपासे फिर आवेंगे कि जिस दिन यह भारत फिर अनन्त चिताभस्मको दूरकर नवीन मूर्तिको धारण करेगा, ऐसे दिन फिर आवेंगे कि जिस दिन हिन्दूवंशधर पैतृकगुणोंसे भूषित होकर नवीन जीवनी शक्तिके बलसे जगत्तमें नवीन लीलाका आरंभ करेंगे, ऐसे दिन अवश्य आवेंगे कि जिस दिन संसारके प्रत्येक प्रान्तमें भारतवर्षीय जयजयकारकी ध्वनि उठेगी, फिर गर्वमे-
न्टके प्रतापसे देश सुंदर जायगा यह जन श्रुति चरितार्थ होगी कि सदा किसीके एकसे दिन नहीं रहते ।

इस प्रकारसे मेवाडकी कथा पूर्ण हुआ चाहती है महात्मा टाडसाहबने केवल महाराणा भीमसिंहके समयतकका ही वर्णन किया है महाराणा भीमसिंहको स्वर्गवासी हुए इस समय ७१ इकहत्तर वर्षके लगभग हुए हैं, इस इकहत्तर वर्षके इतिहासका हमने संक्षेपसे वर्णन किया है यद्यपि यह बात उचित नहीं, कारण कि संक्षेपसे वर्णन करनेमें इतिहासका अंग विकृत होजाताहै, इससे उसका वर्णन विस्तारसे करना चाहिये भला विचार तो कीजिये कि अंग्रेजीके केवल एक दो ग्रंथोंके पढ़नेसे मेवाडकी परिशिष्टि किस प्रकारसे बनसकतीहै, इतिहासके प्रेम रखनेवाले चतुर पाठक अवश्य ही समझगये होंगे कि भारतहितैषी महात्मा टाड साहबने अत्यंत क्लेश और कठोर परिश्रमके साथ विशेष यत्न करके मेवाडके जिस इतिहासको बनाया है, उस इतिहासकी परिशिष्टिको घरके कोनेमें बैठकर केवल अंग्रेजी पुस्तकोंकी सहायतासे दो चार दिनके बीचमें बना लेना प्रथम श्रेणीकी मूर्खता है, इस प्रकारका कार्य करना मानो मान्यका आनादर करना है, इस प्रकारका कार्य कोई निरपेक्ष लिखनेवाला किसी प्रकार नहीं करसकता, कोई भी सहृदय ऐसा कार्य करके वीरजननी मेवाडभूमिकां निरादर न करेगा, मेवाडकी परिशिष्टि लिखनेके लिये सबसे पहले तो यह कर्तव्य है कि मेवाडमें भलीभांति भ्रमण करके भट्टग्रंथोंको संग्रह करे फिर अंग्रेजी रिपोर्ट और गजेटियरके साथ मिलाकर स्वतंत्र भावसे लेखनी चलाना चाहिये संक्षेपसे इस कारण लिखाहै कि ग्रंथका अंग भंग न होजाय, मेवाडकी परिशिष्टि लिखने की बड़ी अभिलाषा है, परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि इस जीवनमें यह कार्य पूरा होसकैगा या दूसरे जन्ममें, इस जीवनमें यदि इस व्रतका उद्यापन पूर्ण होजाय तो बहुत ही अच्छा हो, भगवानको सब सामर्थ्य है, इस वर्तमान व्रतको निर्विघ्नतासे पूर्ण करके यह सम्पूर्ण पवित्र राजस्थान पाठकोंके करकमलोंमें पहुँचा-दूंगा तब एक बार अवश्य ही राजस्थानकी परिशिष्टि लिखनेका यत्न करूंगा, यदि इसमें कुछ विघ्न हुआ तब मनकी अभिलाषा मनहीमें रहजायगी ।

आन्यवर टाडसाहबने इस ग्रंथमें महाराणा भीमसिंहके चरित्रतकका उल्लेख कियाहै इससे आगे अठारहवें अध्यायसे महाराणा फतहसिंहजी तकके चरित्रका दिग्दर्शन अन्यत्रसे किया है जो महाराणा भीमसिंहजीसे पीछेकी शताब्दीमें मेवाडभूमिको सुशोभित करगयेहैं और इस समय मान्यवर श्री १०८ महाराणा फतहसिंहजी महोदय उदयपुरके सिंहासनको सुशोभित कररहे हैं ।

चारण सामलदास ।

महाराज पृथ्वीराजसं चारण लोगोंकी उत्पत्ति हुई है राजपूत लोग गुरुवत् जानकर इनको दान दियाकरतेहैं, दानमें जमीन धन और गाँव इनको दियेजातेहैं, इस ही चारण वंशमें कविराज सामलदासका जन्म १८३७ में हुआ, महाराणा स्वरूपसिंहके दरबारमें इनका आगमन हुआ, सामलदासके घड़े बूढ़े जब स्वर्गवासी हुए तब स्वरूपसिंहके चिरंजीव शंभुसिंह उनके घरपर सहानुमति दिखाने गये थे सामलदासके रहनेको एक घर भी राणाजीने बनवादिया, और दरबारमें इनको तीसरे नम्बर पर बैठनेकी आज्ञा दी पीछे १८७७ में महाराणा सज्जनसिंहने कविराजके स्थानपर जाकर उनको प्रतिष्ठा तथा चांदीकी छडी दी, पीछे पाँचमें डालनेको सोनेका लंगर दिया पश्चात् कविराजकी उपाधिने ग्रहित किया, सन् १८८४ में उदयपुरके राणा सज्जनसिंह, जोधपुरके महाराज यशवन्तसिंह, कृष्णगढ़के महाराज शार्दूलसिंह यह तीनों उदयपुरके सामलदासमें न्योतेहुए आये थे । सन् १८८८ में अंग्रेज सरकारने कविराज सामलदासको महाप्रहोपाध्यायकी उपाधि दी कलकत्तेकी एशियाटिक सोसाइटीने इनको अपना मेम्बर बनाया, यह उदयपुरमें नेकसलाहकार मुसाहिव अदालत व इजलास खासके मेम्बर हुए, कविराज महोदयने बहुत पुस्तकें बनाई हैं इन्होंने अपने भतीजे गोपालदासके पुत्र यशकर्णको गोद लिया है ।

॥ भजन ॥

कर मन भानुवंश को ध्यान ॥ टेकं ॥

नेक हिये विच धार चित्र वह, गुणयुत महा महान ॥ १ ॥

दशरथ सुवर्ण भक्तहितकारी, सब शोभाकी खान ॥

अंशन सहित मनुजतन धरिके, प्रगटे यहि कुलं आन ॥ २ ॥

बाप्या समर साँग लछमनसिंह, राजसिंह बलवान ॥

भयं प्रताप प्रताप भानुसम, कीरति छई जहान ॥ ३ ॥

वर्तमान रविवंश दिवाकर, देत प्रजहि कल्याण ॥

फतहसिंह प्रभु युगयुग जीवो, यह मांगहुँ वरदान ॥ ४ ॥

धन चित्तौर उदयपुर धनधन, को करसकै बखान ॥

मिश्र धन्य वे टाढ़ कियो जिन, राजपूत गुणगान ॥ ५ ॥

मेवाड़का इतिहास समाप्त ।

(७०८)

राजस्थानइतिहास ।

मेवाड़के षोडश प्रधान सरदारोंकी उपाधि कुल तथा भूमिसम्पत्तिका नाम-

	उपाधि.	नाम.	गोत्र.	कुल.	भूमिसम्पत्ति	ग्राम संख्या.
१	राजा	चंदनसिंह	झाला	झाला	सादरी	१२७
२	राव	प्रतापसिंह	चौहान	चौहान	बैदला	८०
३	राव.	मोहकमसिंह	चौहान	चौहान	कोटारिया	६५
४	रावत	पद्मासिंह	चन्दावत	शिशोदीय	सलम्बूर	८५
५	ठाकुर	जोरावरसिंह	मैरतिया	राठौर	गानौर	१००
६	राव	केसोदास	"	परमार	विजौली	४०
७	रावत	गोकुलदास	संगावत्	शिशोदीय	देवगढ	१२५
८	रावत	महासिंह	मेघावत	शिशोदीय	वेगू	१५०
९	राजा	कल्याणसिंह	झाला	झाला	दैलवाडा	१२५
१०	रावत	सालिमसिंह	जगावत्	शिशोदीय	अमाइत	६०
११	राजा	छत्रसाल	झाला	झाला	बोगुंडा	५०
१२	रावत	फतहसिंह	सारंगदेवत	शिशोदीय	कानोड	५०
१३	महाराजा	जोरावरसिंह	शक्तावत	शिशोदीय	भाइन्दर	६४
१४	ठाकुर	जैतसिंह	मैरतिया	राठौर	विदनौर	८०
१५	रावत	सालिमसिंह	शक्तावत	शिशोदीय	बानसी	४०
१६	राव	सूरजमल	चौहान	चौहान	पारसौली	४०
१७	रावत	केशरीसिंह	किसनावत	शिशोदीय	भैसरौड	६०
१८	रावत	जवानसिंह	किसनावत	शिशोदीय	कुरावड	३५

साठ वर्ष पहिले भैसरौड और कोरावडके सरदार दूसरी श्रेणीके सरदारोंमें गिनेजाते थे इस कारण इन दोनोंको छोडकर शेष सबकी भूमिसम्पत्तिसे यह आमदनी होती थी इनसे नीचेके सरदार अधिक भूमिसम्पत्ति भोगते थे उनकी आमदनी ३००००००) तीस लाख रुपये थी ।

जोड

११८१

प्रत्येकका अधिकृत ग्राम इन सबकी सूची नीचे लिखी है.

स. १७६० में प्रत्येक
भूमिसंपत्तिका जो
मूल्य निश्चित हुआ.

मन्तव्य.

१०००००)	इन सरदारोंकी भूमिसंपत्ति केवल नाममात्रको आधी घटाई गई इन सबका राजकर बहुतायतसे आता है।
१०००००)	
८००००)	
८४०००)	इनकी यह समस्त भूमि जोतीजाय तो इतनी उत्पत्ति होगी।
१०००००)	जिस समय गदवाडा राज्य राणाजीसे निकल गया उसी समय यह सरदार १६ सरदारोंसे अलग किया गया।
४५०००)	इसकी सब भूमि जोतीजाय तो यह रुपया पैदा हो।
८००००)	सब भूमि जोतीजाय तो इससे अधिक रकम उठे।
२०००००)	इसकी बहुतसी भूमि इस समय सेंधियाके पास चली गई है सब भूमि जोती जाय तो इस समय ७०००००)की आमदनी होसकती है।
१०००००)	जोतनेसे इसकी ३ दोवृत्तियां आमदनी होसकती है।
६००००)	" " " "
५००००)	जोतनेसे आमदनी होगी।
१५०००)	जोतनेसे आधी आमदनी होगी।
६४०००)	जोतनेसे यह आमदनी होगी।
८००००)	" " " "
४००००)	इस सरदारने अपनी समस्त प्रभुता और आधी आमदनी छोदी।
४००००)	" " " "
६००००)	उपरोक्त दोनों सरदारोंके पडतेके समय यह दोनों सरदार मेवाडके १६ सरदारोंमें गिनेगये एकसाथ यह दोनों कभी राजसभामें नहीं गये।
३५०००)	

जोड

१३१००००)

मेवाडमें धर्मप्रतिष्ठा, पर्वोत्सव व आचार-व्यवहार ।

बाईसवाँ अध्याय २२.

पौराणिक इतिहासकी उपकीरिता;—भारतके पुराणोंका फल;—मेवाडकी शिवपूजा;—भगवान एकलिंगजीका मंदिर;—शैव;—गोस्वामी;—जैनसमिति;—नाथद्वारे-में श्रीकृष्णजीका मंदिर और पूजाकी रीति;—राजपूतोंमें वैष्णवधर्मसे उपकार ।

भारतवर्षके सनातन धर्मावलम्बियोंकी रीति, नीति, आचार, व्यवहार, इतिहास व धर्मतत्त्व इत्यादि समस्त प्रयोजनीय बातें पौराणिक इतिहासोंमें सन्निवेशित हैं। जगतपूज्य विद्वान् और वीरलोगोंको जिन्हें हम अपना पितृपुरुष कहकर श्लाघा किया करते हैं;—जिनके अमानुषीय कार्योंका विचार करके विलायतके विद्वान् लोग आश्चर्य करते हैं; जिनकी स्मृति और जिनके विज्ञान, काव्य, अलंकार और तर्क शास्त्र द्वारा आज यूरोप देशमें ज्ञानके नये २ प्रकाश हो रहे हैं, उनकी पवित्र चरित्र-माला भी आज पौराणिक इतिहासके जटिल और निविड आवरणमें छिपी हुई है। विलायतके बहुतसे अभिमानी पंडितगण पुराणोंके इतिहासको मिथ्या और अत्युक्ति समझते हैं। परन्तु ऐसे लोगोंको एक बार यह विचार लेना चाहिये कि संसारके सब देशोंकी आदि घटनावली पौराणिक इतिहासके नीचे छिपी रहती है। जो इङ्गलैंड भूमि आज इस संसारमें सभ्यताके मदसे गर्वित होकर खड़ी हो रही है, उसके प्रथम पुत्रका आचार व्यवहार भी पुराणोंके जटिल वर्णनमें ऐसा छिप गया है कि उसमेंसे सत्यका निकालना जरा कठिन कार्य है। संसारकी चाहें जिस प्राचीन जातिका आचार व्यवहार देखिये, तो सबसे पहिले आपको पुराणरूपी समुद्र ही मथना पड़ेगा। किंचित् विचारके साथ देखनेसे भलीभांति ज्ञात होजायगा कि संसारकी आदिम अवस्थाका जो कोई इतिहास पाया जाता है। तो वह पुराण ही है। क्लार्कनामक एक वैज्ञानिक परिव्राजकने कहा है “ कि मनुष्योंके पुराने कुसंस्कारोंके भीतर प्रवेश करके विचारपूर्वक अनुसंधान करने

पर हम उनके बड़े बूढ़ोंकी रीति नीति और आचार व्यवहारोंका जिस प्रकार निश्चयसे उद्धार कर सकते हैं, उनकी भाषाकी समालोचना करें तब वैसा ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता। कारण कि कुसंस्कार राशि उन पुराणोंके रोमरमें घुसी हुई रहती है; परन्तु जल वायुके बदलनेसे भाषा भी बदल करती है।” क्लार्कसाहबकी इस ध्वनिसे विस्मित होकर टाडसाहबने मेवाडके पर्वोत्सव और कुसंस्कारोंकी समालोचना करनेके लिये इसको अपना मानदंड माना है। इसी कारणसे टाडमहोदय अपने परिश्रममें कृतकार्य हुए थे। टाडसाहबने कहा है कि धनुर्वेद, आयुर्वेद, स्मृतिशास्त्र, राजनीति, या विज्ञान, चाहे जो कोई शास्त्र हो जिसके मूलमें पौराणिक इतिहास नहीं है वह निश्चय ही अपूर्ण है। पौराणिक कथामालाके भीतर जो लोग केवल तेजस्विनी कल्पनाकी अधिकाई देख पाते हैं उन्होंने विज्ञानके मूल सूत्रोंको थोड़ा ही पढ़ा है। पुराण ही जगत्की पहिली अवस्थाके विषयमें साक्षी देते हैं और सकल देशोंके इतिहासकी जड़ केवल पुराणोंपर ही लगी हुई है। संसारके और दूसरे देशोंको पौराणिक इतिहासका फल चाहै जैसा मिलता हो परन्तु सभ्यताके आदिस्थान इस भारतवर्षके लिये वह अत्यन्त उपकारी है। सनातन हिन्दूधर्म विज्ञान मूलक है; विज्ञान स्वभावसे ही नीरस और कठोर होता है। परन्तु पुराणोंमें इस रसहीन और कठोर शास्त्रको ऐसे सुन्दर ढक्कनेसे ढक रक्खा है कि करोड़ों वर्षोंके हेरफेरसे भी वह पर्दा दूर नहीं हुआ हिन्दूलोग इन पुराणोंको वेदकी समान पवित्र माना करते हैं। इन पुराणोंमें जिन महा पुरुषोंको देवभावसे पूजा गया है वह लोग आजतक भी देवभावसे पूजित हुआ करते हैं। भगवान् शिव और श्रीविष्णुजी आजतक भी इस विशाल भारतभूमिके करोड़ों मनुष्योंसे पूजे जाते हैं। भारतके और देशोंकी अपेक्षा राजस्थानमें पुराणोक्त धर्मका आदर भलीभांतिसे देखा जाता है। शताब्दी पर शताब्दी बीत गईं राजस्थानके बहुतसे स्थान इमशानभूमिकी समान होगये कितने ही प्राचीन राजवंश इस संसारसे लोप होगये, कितने ही स्थानोंमें कितना ही घोर परिवर्तन होगया है; तो भी इस राजपूत जातिके बड़े बूढ़े दो हजार वर्ष पहले जिस पौराणिक धर्मको अपना मूलमंत्र समझते थे, आजतक भी वह जाति उसी प्रकारसे अनुसरण किया करती है। नहीं भालूम होता कि इस सनातन धर्मके भीतर कौन सी मोहिनी आया छिपी हुई है। परन्तु जिस समय देखते हैं कि इसके भीतर सुन्दर वैज्ञानिक तत्त्व लगा हुआ है। जब देखते हैं कि शतसहस्र वर्षोंके कठोर कष्टने भी हिंदुओंके हिंदूपनको सम्हाले हुए रक्खा है, तब एक साथ उसको सारात्सार कहना कुछ अनुचित न होगा ऐसा भी दिन आवेगा, कि जिस दिन भारतवासी उस

विज्ञानकी सहायतासे कि जो इसके भीतर छिपा हुआ है, दीन हीन मनमलीन जन्म-भूमिको फिर भी सुख और स्वाधीनताके ऊँचे शिखरपर पहुँचा देंगे । जिस दिन भारतवर्षके समस्त हिन्दूगण इस सनातनधर्मको ही ग्रहण करनेयोग्य मुख्य धर्म समझलेंगे, उसही दिन भारतके नगर २ और ग्राम २ में आनन्दका भंडार खुल जायगा;—पुनर्वा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्णभेदकी कुछ चिन्ता न करके विपक्ष पक्ष नाशिनी जगज्जननी, भगवती महामायाको आनन्दसे आवाहन करेंगे ।

वीर्यवान राजपूतगण पुराणोंको भी वेदकी समान अति पवित्र मानते हैं । उनके पूजनीय पितृपुरुषोंकी महान कीर्ति और लीलाकी साक्षी इन पुराणोंमें ही है । राजपूतगण, वीरता, महानता और संन्यासधर्मका प्रकाशमान आदर्श समझकर देवदेव महादेवजीकी पूजा किया करते हैं, भगवान् भूतभावन राजदूतोंके और विशेष करके मेवाडी राजपूतोंके प्रधान उपास्यदेवता हैं । गंगा यमुनाके किनारे वसेहुए देशोंमें अनेक प्रकारके देवताओंकी पूजाका प्रचार होनेसे यद्यपि राजस्थानके और २ देशोंमें भगवान् भूतभावनकी पूजा किंचित् कम होगई है, तथापि वीरता और स्वाधीनताकी जन्मभूमि मेवाडभूमिमें, आजतक भी पहिलेकी समान उनकी पूजा होती है । गिह्लौटवंशके राजालोग महादेवजीकी पूर्ण-मूर्ति पौरलिंग इन दोनों मूर्तियोंकी पूजा करते हैं । तथापि महादेवजी बहुधा यहाँपर एकलिंग*हीके नामसे पुकारे जाते हैं । एकलिंगजीके जितने मन्दिर मेवाडमें हैं, उन सबमें देवमूर्तिके आगे उनके प्यारे वृषभकी धातुमय मूर्ति स्थापित हुई देखीजाती है ।

गिह्लौटकुलके प्रधान उपास्यदेवता भगवान् एकलिंगजीका पवित्र मंदिर उदयपुरसे तीनकोश उत्तरको एक गिरिमागके बीचमें बनाहुआ है । चारों ओर बड़े २ पर्वत और वनके वृक्ष शोभायमान हैं । पर्वत मालाकी शोभा भी अत्युत्तम दिखाई देती है । औषधियोंका नयनरंजनकारी हराभरा दृश्य और कल २ शब्द करनेवाली छोटी २ नदियोंके मनोहर शब्दने इस स्थानकी शोभाको और भी अधिक बढ़ा रक्खा है ।

एकलिंगजीके पुरोहितगणोंको गोस्वामी कहते हैं । यह लोग विवाह नहीं करते हैं; अतएव अन्तिम समयमें पालेहुए शिष्यको पूजा पाठ और मन्दिरादिका

* सूरत और सिन्धुनदीके पूर्व मुहानेपर सहस्र लिंग और कोटिलिंग नामक दो मूर्ति दिखाई देती हैं; ग्रीस और मिसर देशमें जो बेकसर लिंगमूर्ति दिखाई देती हैं; उनके साथ इन समस्त मूर्तियोंका कुछ २ मेल पायाजाता है ।

सम्पूर्ण भार देजाते हैं । शैवपुरोहितगणोंके माथेपर अर्द्धचन्द्र चिह्न लंगा रहता है, उनके मस्तकपर जटा कलुएकी समान लगी रहतीहैं । उन जटाओंमें एक २ वेलपत्र और कमलमाला गुथी रहतीहै । सब अंगोंमें भस्म और गेरुआवस्त्र यह लोग धारण किया करतेहैं । यह लोग अपने कुटुम्बीलोगोंके शरीरको जलाते नहीं तथा उसको समाधिमें विराजमान करदेतेहैं और उस समाधिके ऊपर एक २ छत्री सी बनादिया करतेहैं । वह समस्त मृत्तिका शिखरकी नाईं ऊपरको उठा करतीहैं । कभी २ शुद्धाचारिणी योगिनियोंको भी पुरोहितोंके कहीं चलेजानेपर यह कार्य करना पडताहै । मेवाडमें ऐसे बहुतसे गुसाईं हैं कि कौमारव्रतका अवलम्बन करनेपर भी शिल्प, वाणिज्य और युद्धकार्यके द्वारा अपनी जीविकाको निर्वाह किया करतेहैं । गोस्वामीलोग भारतवर्षमें विशेषतासे धनवान होतेहैं । मेवाडमें ऐसी बहुत जातियां हैं ।

राणाजी उनपर अत्यन्त ही अनुग्रह करतेहैं । अस्त्रधारीलोग मेवाडके भिन्न २ विभागवाले मठ या आश्रमोंमें वास किया करतेहैं । थोड़ी २ भूसम्पत्ति भी यह लोग भोगतेहैं, कभी २ भिक्षासे भी इन लोगोंकी जीविकाका निर्वाह हुआ करताहै । यह गोस्वामीलोग अपने कानोंको वेधकर उनमें शंख-निर्मित कुंडल धारण किया करतेहैं । इन कुंडलोंको वह रणभेरीकी समान समझा करतेहैं । ब्राह्मण और राजपूत दोनों ही वरन गुर्जरलोग भी इस सम्प्रदायमें मिल सकतेहैं । महाकवि चंदबरदाईने कन्नौजके महाराजा जयचंदकी ऐसी ही एक शरीर रक्षक सेनाका वर्णन अत्यन्त मनोहरतासे कियाहै ।

मेवाडके राणागण“एकलिंगका दीवान”इस उपाधिको पाया करतेहैं । राणाजी जब कभी मंदिरमें जातेहैं उस समय पूजाका बडा समारोह होताहै ।

शैवलोगोंका वृत्तान्त कहाजाचुका । अब जैनलोगोंका * विचार किया जाताहै । इनकी सामर्थ्य और संख्याके विषयमें विलायतवाले बहुत ही कम जानतेहैं । वह कहतेहैं कि संसारमें जैनियोंकी संख्या बहुत थोड़ी है, तथा यह लोग अलग २ छितरायेहुए पडेहैं । जैन लोगोंके धर्म और राजनैतिक विचारोंके

* शैवगण जैनलोगोंको पारिहासके द्वारा“विद्यावान”नामसे पुकारा करतेहैं । विद्यावान शब्दके भीतर वाजीगर अर्थ मिलाहुआ है । बहुतसे आदमियोंका विश्वास है कि जैनीलोग जादूगर होतेहैं । कहते हैं कि प्रसिद्ध कोषकार अमरसिंहने अपनी जादूविद्याके बलसे अमावस्याकी रात्रिमें चन्द्रमा दिखलादियाथा ।

सम्बन्धमें केवल यही कहना पूरा होगा कि केवल क्षत्रगाछा × शाखाके प्रधान पुरोहितके * ग्यारह हजार दीक्षित चले भारतके भिन्न २ स्थानोंमें निवास करते हैं । केवल यही नहीं वरन इन जैनलोगोंकी एक ओसवाल * नामक शाखा-मिति है । इसके एक लाख परिवार राजस्थानमें वास करते हैं और भारतके वाणिज्यसे जो धन उत्पन्न हुआ करता है उसका आधेसे अधिक भाग जैन सरा-वगियोंके हाथसे परिचालित हुआ करता है । प्रथम राजस्थान और सूरतमें जैन तथा बौद्धलोगोंका आगमन हुआ । यह लोग जिन पाँच पर्वतोंको पवित्र समझते हैं, उनमें आवू, पालिथान × और गिरनार यह तीन पर्वत ही उनके धर्मयुद्धके प्रधान रंगस्थल हैं । मेवाडकी मंत्रीसभा और राजस्वविभागके बहुतसे कर्मचारी जैन ही हैं और पंजाबसे लेकर समुद्रके किनारे तकके प्रायः सब ही नगर जैन सेठोंसे शोभायमान हैं । उदयपुर तथा अन्योन्य नगरके शान्तिरक्षक और कर संग्रहकारक भी इसही सम्प्रदायके लोग होते हैं । 'अहिंसा परमो धर्मः' जैनलोगोंका मूलमंत्र है; जहाँतक संभव होता है, यह लोग जीवहत्या नहीं करते; इस ही कारणसे जो लोग दीवानी विभागके कर्मचारी हैं, वह फौजदारी विभागके स्वधर्मा-नुरागी कर्मचारियोंकी अपेक्षा अधिक चतुरतासे अपना काम किया करते हैं । अहिंसाको परम धर्म समझनेके कारण ही राजनीतिविद्यामें जैन लोग पीछे पड़े रहते हैं । अनहलवाडा पट्टनका पिछला राजा कुमारपाल जैन एक घोर जैनी था । वर्षासे उत्पन्न हुए कीड़े मकोड़े मार्गमें दबकर मरजाते हैं, इसी कारणसे असल जैन लोग वर्षाकालमें चलना फिरना बंद कर देते हैं । जैनी लोगोंको

× कहते हैं कि सन् ११०० ई० में अनहलवाडा पट्टनके प्रसिद्ध जैन नरपति सिद्धराजके शासन समयमें उसकी राजधानीमें ही धर्मका एक बड़ा विचार हुआ था । विचारके समय सिद्धराजने जैन सम्प्रदायकी एक शाखाको क्षत्रगाछा नामसे पुकारा था । जैनलोगोंके मतानुसार क्षत्रशब्दका अर्थ सत्य है विख्यात हेमचन्द्र आचार्य इस क्षत्रगाछानामक सम्प्रदायका गुरु था । महात्मा टाडसाहबने जिस जैन यतीकी सहायतासे राजस्थान लिखनेके उपकरणको बहुतायतसे पाया था वह हेमचन्द्र आचार्यका एक चेला था ।

✽ टाडसाहबके समयमें यह वर्तमान था । टाडसाहब इसको महाविद्वान् वतलाते हैं प्राचीन शिलालेखोंकी कठिन भाषा भी यह समझलेता था । राणा भीमसिंह इसको बहुत मानते थे ।

* मारवाडमें अपस नामक एक नगर है, टाडसाहब कहते हैं कि ओसवालोंका निकास इस ही अपसवालसे हुआ है ।

× पालीथाना वा पालिस्तान, यह प्रसिद्ध जैन तीर्थ शत्रुंजय पर्वतकी तराईमें है । टाडसाहबने निस्संदेह ऐसा निर्णय किया है, कि शाकद्वीपसे जो भिन्न २ जातियें भारतवर्षमें चढ़कर आई थीं उनमें ही एक पाली भी थी । उस पाली जातिसे ही उक्तनगरका नाम पालीथाना हुआ है ।

सन् १८०९ ईसवीसे १८१७ ईसवीतक मारवाडकी दशा बहुत बुरी रही। उस ही समय घटनाचक्रसे राजस्थानका भाग्य अंग्रेजोंके हाथमें आया। छत्रसिंहने ब्रिटिश गवर्नमेंटके साथ संधि स्थापन करनेके लिये एक दूतको भेजा, किन्तु संधिस्थापनसे पूर्व ही छत्रसिंह स्वर्गको सिधार गये। उनकी इस अकालमृत्युके विषयमें अनेक लोग अनेक बातें कहते हैं। कोई २ कहतेहैं कि अतिशय लम्पटताके कारण शरीरकी दुर्बलताने उनके जीवन दीपकी अकालमें निर्वाण करदिया, दूसरे लोग कहतेहैं कि उन्होंने एक राजपूत-युवतीका सतीत्व नष्टकरनेकी चेष्टा की थी इस कारण युवतीके पिताने अपनी तलवारसे उनके प्राण लेलिये। छत्रसिंहकी मृत्यु और राजनैतिक दशा परिवर्तित देखकर मारवाडकी सामान्तमंडली एकान्तवासी मानसिंहके ऊपर दृष्टि डालनेके लिये बाध्य होगई। मैंने जो कुछ बातें लोगोंसे सुनी उनमें यदि आधी बातें भी सत्य हो तो मैं यह कहसकताहूं कि देवनाथके हत्याकाण्डसे छत्रसिंहकी मृत्युतक जितने समय तक महाराज इस दशामें रहे वह समय उनके पापोंका प्रायश्चित्तस्वरूप था। जिस समय सम्वाददाताने छत्रसिंहकी मृत्युका समाचार सुनकर उनको राज्यशान्ति रक्षाके लिये प्रस्तुत होनेको कहा, उस समय वह दोनों बातोंका भाव कुछ भी नहीं समझसके। दीर्घकाल तक उन्मत्तता प्रगट करनेके कारण वह वास्तवमें विक्षिप्तकी समान होगये थे। क्षौर न करानेके कारण उनकी डाढ़ी मूछें और जटाजालने उनकी आकृतिको पागलोंकी समान बनादिया था। किन्तु इस विरक्तिके समयमें उन्होंने अपने जीवनकी रक्षामें विशेष यत्न किया था। जो कई सामन्त छत्रसिंहकी राज्यशासन सहायता करतेथे उन्हींके अनुचर राजा मानसिंहकी सेवा करतेथे, सुनतेहैं कि इन सेवकोंने राजा मानसिंहकी हत्या करनेको कई बार विष दियाथा। उनका यह बुरा उद्देश सिद्ध न होनेके कारण लोग सत्य सत्य ही उनको विक्षिप्त समझनेलगे, और इस बातको भी भलीभांति समझगये कि इनका जीवन दैवमन्त्रसे रक्षित है। यथार्थमें बात यह थी कि राजा मानसिंहका एक अति विश्वासी सेवक था, उसने इस घोर विपत्तिमें भी राजाका सङ्ग नहीं छोड़ा था, वह अपना लाया हुआ भोजन ही राजाको खिलाता था।

राजा मानसिंहने धीरे-धीरे अपनी उन्मत्तताको छोड़दिया। अंग्रेजोंके साथ संधि होते ही उन्होंने इस बातको भलीभांति समझ लिया कि राज्यकी शान्ति रक्षा करनेके लिये सेना लेकर युद्धमें जाना ही उचित है। उन्होंने अपनी इस इच्छाको स्वयं ही प्रगट कर दिया। राजा मानसिंहने ब्रिटिशगवर्नमेंटकी सहायतासे सम्पूर्ण शत्रुओंको दमन करदिया।

मेर, प्राचीन अनहलवाडा, कम्बेर और अन्यान्य जैन पीठोंके पुस्तकालय आज-तक भी रत्नोंसे पूर्ण हो रहे हैं । कठोर शासन और भयंकर अत्याचारोंको सहन करके भी परम धार्मिक जैनलोगोंने उन समस्त रत्नोंकी रक्षा कर ली है ।

मेवाड सब भाँतिसे ही हिन्दूधर्मका आदर्शस्वरूप है । समय २. पर इसके पर्वतयुक्त उद्यानोंमें समस्त धर्मोंकी ही उत्कर्षता साधित हुई है । इस देशके धर्म परायण राजा केवल शैव या जैन धर्मके पृष्ठपोषक नहीं थे; वरन वैष्णव धर्ममें भी उनका विशेष अनुराग पाया जाता था । मेवाडके अन्तर्गत नाथद्वारेमें भगवान् श्रीकृष्णजीका पवित्र मंदिर ही इस बातका साक्षी दे रहा है । हिन्दू विद्वेपी औरंग-जेबके कठोर अत्याचारोंसे सताये जाकर जब परम पवित्र वैष्णवलोग श्रीव्रज धामसे दूर किये गये, वह किसी स्थानमें भी अपने उपास्य देवताकी रक्षा करनेका स्थान नहीं पासके; तब उदयपुरके राणाने अपना हृदय लगाय मुगलोंके अत्याचारोंको सहन करके भी श्रीकृष्णजीकी पवित्र मूर्तिको अपने राज्यमें आश्रय दिया था ।

उदयपुरसे ११ कोश पूर्व उत्तरको यह पवित्र मंदिर विराजमान है । इसकी संगमरमरसे बनी हुई सफेद सीढियोंको धोता हुआ वृन्दा नद कल कल शब्द करता हुआ बहा जाता है, यद्यपि नाथद्वारा वैष्णवोंका एक प्रधान तीर्थस्थान है, परंतु उसमें श्रीकृष्णभगवान्के अतिरिक्त और कोई दूसरा दृश्य दर्शन करनेके योग्य नहीं है । नाथद्वारेकी मंदिरकी बनावटमें किसी भाँतिकी अपूर्व कारीगरी नहीं पाई जाती । नाथद्वारेका जो कुछ नाम है और जो कुछ पवित्रता है वह केवल श्रीकृष्णभगवान्जीके पवित्र समागमसे है । महानुभाव ईसाभूषीहके जन्मसे दो हजार वर्ष पहिले पवित्र जलवाली यमुनाजीके पवित्र किनारेपर श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकंदकी जो मूर्ति प्रतिष्ठित हुई थी, बहुतसे महाशयोंका अनुमान है कि यह वही मूर्ति है । गयाजीकी गिरिकन्दरामें, द्वारकाके उपकूलमें अथवा हृदय आनन्दकारी श्रीवृन्दाविपिनमें जो हृदयमोहन चित्र दिखाई देते हैं, नाथद्वारेमें वह दिखलाई नहीं देते; तथापि मेवाडके इस पवित्र तीर्थमें प्रत्येक वर्ष अंगणित यात्री भारतके अनेक देशोंसे आया करते हैं ।

हजारों वर्षोंसे जो ब्रजधाम गोपीमोहन श्रीकृष्णभगवान्का प्रधान पीठस्थान गिना जाता था, वैष्णवगण मुगललोगोंके अत्याचारसे उस पवित्र तीर्थभूमिको छोड़कर देवमूर्तिकी रक्षा करनेके लिये भारतके अनेक स्थानोंमें भ्रमण करने लगे । यद्यपि महमूदगजनवीके कठोर अत्याचारसे भी भगवान् विष्णुजीका

द्वारा सामन्त मण्डलीका जीवन हनन कार्य पूरा करलिया । उसके उस हत्या-काण्डनाटकका प्रथम अभिनयस्वरूप सुरतानका स्वर्गवास सबसे पहिले समाप्त हुआ; इसके पीछे बहुतसे सामन्त इसी प्रकारसे मारेगये, यहां तक कि राजा मानसिंहका प्रथम उद्देश सिद्ध होनेमें कुछ भी शेष नहीं रहा । अन्तमें प्रतिहिंसाके फल देनेका समय उपस्थित हुआ; मंत्रीवर अक्षयचंद और उसके साथी लोग राज्यके पदोंसे अलग करके वन्दीभावसे कारागारमें भेजेगये । राजा मानसिंहने अक्षयचंदको जीवनदानकी आशा देकर ठगलिया; उसने अपनी चालीस लाख रुपयेकी सम्पत्तिकी एक सूची राजाके हाथमें सौंप दी । राजाने उस सब सम्पत्तिको अपने हस्तगत करके अन्तमें अक्षयचंदको मार डाला । दुर्गाध्यक्ष नागजी और मल्लजी धोन्धलनामक दो मनुष्य राजाके मृतपुत्रके परम प्रेमपात्र और उपदेशक थे; जब राजाने निकाले हुए अपराधियोंको क्षमा कर देनेका ढंढोरा पिटवाया तो उपरोक्त दोनों व्यक्ति राज्यमें फिर लौट आये और अपनेको अविद्रोही समझकर निवास करनेलगे । छत्रसिंहके शासनसमयमें इन्होंने जितना धन राजकोषसे संग्रह कर लिया था, उस सब धनको राजाने अपने हस्तगत करके उन दोनोंको विष देदिया और उन दोनोंके शवको परिखाकी धारमें डालदिया । उपरोक्त हत्याओंके करडालनेपर भी राजा मानसिंहकी पैशाचिक कामना निवृत्त न होकर क्रमसे प्रबल होने लगी । इनके नवीन मंत्री फतेहराज, अक्षयचन्द और सम्पूर्ण चम्पावत सम्प्रदायके प्रबल शत्रु थे; कारण कि उसकी धारणा यह थी कि, “यही सब मेरे भ्राता इन्दुराजको याजक देवनाथके जीवन हनन कालमें मारनेके कारणस्वरूप थे ।” इस कारण उसने इस लोमहर्षण अभिनयकालमें पूर्ण उद्योगके साथ राजा मानसिंहकी सहायता की थी । राजा मानसिंहकी इसी प्रकार प्रतिदिन अगणित मनुष्योंमेंसे किसीके प्राणनाश, किसीको वन्दी और किसीकी समस्त सम्पत्ति छीननेकी आज्ञा देतेथे । सुनते हैं कि राजा मानसिंहने इस प्रकार एक करोड रुपया अपने राजकोशमें बढ़ाया ।

इस राजसभामें मेरे जानेके छः मास और ब्रिटिश गवर्नमेंटके साथ मित्रता स्थापनके अठारह मास पीछे उक्त शोचनीय हत्याकाण्डादि कियेगये थे । राजपूतानेके देशी राजा लोगोंके साथ अपना औदास्य भाव सूचक राजनीतिका विषय ऊपर लिख चुके हैं । रक्तपिपासु दुर्दान्त अत्याचारी राजा महताजातीय प्रत्येक वाणिकका वाणिज्यद्रव्य अपना करलेंगे और प्रतिष्ठित निर्दोषी सामन्त-

दारुण क्रोध हुआ था। भगवान्‌को अपमानसे वचानेके लिये उन्होंने औरंगजेबके विरुद्ध अपने प्रचंड खड्गको उठाया । राणाजीके प्रचंड उत्साहको निहारकर एकलक्ष राजपूत वीरोंने यवनोंके हाथसे देवमूर्तिकी रक्षा करनेके लिये अपने प्राणोंको नेवछावर करदिया । उन स्वर्गीय वीरोंके अनुभव प्राणोत्सर्गके प्रभावसे पापी अव-रंग हिन्दू देवताके पवित्र अंगको स्पर्श नहीं करसका । उसकाल श्रीविष्णु भगवान्‌ कोटेके बीचमें हो रामपुरकी ओरसे मेवाडमें आन पहुँचे । राणाजीकी इच्छा थी कि उदयपुरमें ही मूर्तिको ले आवें, परन्तु मार्गमें एक अनहोनी वातने होकर उनकी इस इच्छाको विफल करदिया, मेवाडके ही शियोर नामक गाँवके भीतर होकर श्रीभगवान्‌जीका रथ चल रहाथा उसही समय रथका पहिया इस प्रकारसे पृथ्वीमें प्रवेश करगया कि अनेक यत्न करनेसे भी न निकला । तब एक ज्योतिषी आया उसने विचारकर कहा कि “ भगवान्‌ यहींपर रहना चाहतेहैं । नहीं तो उनके रथका पहिया किस कारणसे अचल होजाता ” ज्योतिषीका यह वचन सुनकर राणाको पूरा विश्वास होगया, उन्होंने वहींपर श्रीकृष्णजीका मंदिर बनानेकी आज्ञा दी । शीआर ग्राम मेवाडके दैलवाडा सर्दारकी जागीरमें था । भगवान्‌के अनुग्रहका वृत्तान्त सुनकर दैलवाडाका सर्दार वहाँपर आया और शीग्रही एक मंदिर बनवादिया, भगवत सेवाके लिये वह गाँव तथा और भी बहुत सी जमीन लगा दी । राणाजीने उसका पट्टा मानलिया । तदनन्तर भगवान्‌ नाथजी विधिपूर्वक रथसे उतारे जाकर मंदिरमें विराजमान किये गये । उसीदिनसे शीआरग्राम नाथद्वारा हुआ और थोडे ही समयके बीचमें एक नगर सा बनगया। मेवाडके प्रसिद्ध पुरुषतीर्थ नाथद्वाराकी उत्पत्ति इस प्रकारसे हुई ।

नाथद्वारेके पूर्वकी ओर पर्वतोंकी दीवार सी बनीहुई है; और पश्चिम उत्तरके किनारेको धोता हुआ बूनास नद गढखाईकी समान प्रवाहित हुआहै । नद और पर्वतके बीचमें भगवान्‌ श्रीकृष्णजीका अत्यन्त पवित्र मंदिर स्थापितहै; राजपूतोंका विश्वासहै कि घोर पापी भी यहां आकर पवित्र होजाता और अन्त समय स्वर्गको गमन करताहै, इस देशके सिवानेके भीतर राजदण्डका भी प्रवेश नहीं होसकता । घोर अपराधी भी यदि नाथद्वारेमें चलाआता तो राजा उसको दंड नहीं देसकता । क्योंकि यह स्थान शांतिमय और साम्यमय है । लडाई, झगडा, क्लेश, डाह इत्यादि किसी प्रकारकी विषमता यहाँपर नहीं रहसकती । सभी आनन्द पूर्वक वेद वेदान्तका विचार किया करतेहैं । यद्यपि नाथद्वारा एक साधारण ग्रामहै; परन्तु इसकी सीमाके भीतर अगणित मनुष्य विश्राम करसकतेहैं । स्थानरमें झमली, पीपल और बडके वृक्ष लगे रहकर दूरसे आये हुए यात्रियोंपर छाया करतेहैं।

किन्तु हम लोग बहुत धीरे २ चले थे । राजधानीसे नगरकी ओर जो मार्ग गया है, उस मार्गसे जानेके लिये मैंने सुजात तोरणमें होकर राजधानीको छोड़ा । कुछ ही दूर चलनेपर “महामन्दिर” को देखा । राजा मानसिंहने ध्वंशप्राय जालौरसे उद्धार पाकर अपने व्ययसे इस विशाल मंदिरको बनवाया था । डेढ़ कोश मार्ग आगे २ को पूर्वको नीचा होता चला गया है । मैं उस मार्गसे होता हुआ पश्चिमकी ओर जानेवाले मार्गमें चलकर चारों ओर शिखर मालासे घिरे हुए मारवाडके राजवंशके प्राचीन कीर्ति पूर्ण स्थानमें पहुँचा । यह मार्ग बहुत छोटा है; शिखर बहुत ऊँचे तक सीधे चले गये हैं और पर्वतमें सैकड़ों गुफा संन्यासियोंका निवास स्थान बनी हुई हैं; पूरीहर लोगोंकी प्राचीन राजधानी इस मन्दिरमें शत्रुओंका प्रवेश रोकनेके लिये चारों ओर दुर्ग प्राकार बना था, उसका ध्वंसावशेष अब भी दिखाई देता है । इस स्थानसे निर्मल और स्वादिष्ट जलवाली नदी नाचती हुई चली हैं और एक सुन्दर खिलानमें होकर जलधार चली गई है । कुछ दूर चलनेके पीछे मार्ग क्रमसे चौड़ा आने लगा; और दो सौ घरोंसे युक्त ग्रामके अतिक्रम करनेपर एक ऊँचे स्थान पर बने हुए मंदिरोंन हमारे दृष्टिको आकर्षित किया । यह सब राठौर राजालोगोंके समाधि मंदिर हैं; मरुक्षेत्रके चिरस्मरणीय अधीश्वरोंके शव जिस स्थानपर रानियोंके साथ भस्मी भूत किये थे उस २ स्थानपर उनके स्मरणार्थ यह मंदिरावली बनाई गई है । दक्षिणसे उत्तरकी ओर तक जितने प्रधान मंदिर हैं यह क्षुद्र नदी उनके दक्षिणमें होकर मन्द चालसे चलती है । पूर्वोक्त मंदिर श्रेणीके आरम्भमें सुविख्यात राव मालदेवका स्मारक मंदिर है, उसमें उनकी विक्रम प्रताप गौरवोचित मूर्ति स्थापित है । साहसी शेरशाह जिसने बड़ी वीरताके साथ मुगलसिंहासनपर आक्रमण किया था, इन मालदेवने बड़े विक्रमके साथ उन शेरशाहके विरुद्ध तलवार चलाई थी । सबसे अन्तमें महाराज अजितसिंहका स्मारक मंदिर है, और बीचमें सूरसिंह उदयसिंह, गजसिंह और यशोवन्त सिंह आदिके स्मारकमंदिर दिखाई देते हैं ।

जातीय इतिहासकी मूल आख्यायिकास्वरूप इस स्मारक मंदिरावलीने मारवाडके गौरवगारिमाका समय निर्धारण कर दिया है । मालदेवके समयते राठौर कीर्तिभूधर शुङ्ग आकाशभेद करके अजितसिंहके पुत्रोंकी शासनलीला तक नीचे झुके रहे । वीरवर मालदेवका स्मारक मंदिर जो बहुत सीधे और सामान्य भावसे बना हुआ है और जिसने चण्ड और योधके स्मारक मंदिरोंको अपनी छायामें ढकालिया है

मधुकैटभ संहारक वेश दूसरी ओर गोपाल नारायण मूर्ति । जहाँपर दो आदमियोंके स्वार्थमें संघर्ष होगा वहाँपर विना एक आदमीका संहार किये दूसरेकी रक्षा नहीं की जासकती । जहाँ शान्ति स्थापन करनी होगी वहाँपर विना अशांतिका नाश किये हुए काम नहीं चलेगा । वस यही यथार्थ वैष्णवधर्म है । राजपूतलोग यदि इसी वैष्णवधर्मका अवलम्बन करें तो उनका विशेष उपकार होसकताहै; नहीं तो मिथ्या बैरागी और हठीले वैष्णवधर्मको ग्रहण करनेसे उनकी शोचनीय दशा और भी बुरी होजायगी । वैष्णवधर्मका एक गुण यह भी है कि अकारण रुधिर गिराना या इधर उधर खड़ग चलावैठना उसको अच्छा नहीं लगता । जहाँपर एकके स्वार्थसे बहुतोंको हानि पहुँचतीहै, जहाँपर एकके मंगलसे बहुतोंका अनिष्ट हुआहै, विष्णुजीने वहाँपर अपने अमोघ चक्रको चलायाहै । नहीं तो हजारों मधुकैटभ जन्म लेलेते तो भी उनको क्या चिंता थी । विष्णुजी न्याय और धर्मके पक्षपाती हैं । यदि कोई अन्यायी और अधर्मी आदमी उनका प्रसाद प्राप्त करनेके लिये सामने ही प्राणतक देदं तो भी वह उसकी ओरको नहीं देखते; परन्तु जहाँपर न्यायका अपमान होताहै; जहाँपर धर्मके मस्तकपर लात मारीजातीहै, विष्णुजीका मन वहींपर पडा रहताहै; उस दुःखपाये सतायेहुए मनुष्यका उद्धार करनेके लिये श्रीविष्णुभगवान्जी प्राणपणसे चेष्टा करतेहैं । भगवान् श्रीकृष्णजीने अवतार होनेके कारण इसी श्रेष्ठ और सूक्ष्म नीतिका अवलम्बन कियाथा । हम भी इसी वैष्णवधर्मके पक्षपातीहैं । यदि राजपूतगण इसी वैष्णव धर्मको स्वीकार करलें, यदि वह इसकी यथार्थ नीतिका ब्यौहार करने लगें तो हमको कुछ भी आपत्ति नहींहै । समस्त भारत इस वैष्णवधर्मसे दीक्षित होजाय, पुनर्वा भगवान् श्रीकृष्णजी अवतार लेकर इस श्रेष्ठधर्मका विस्तार करें; नगर नगर, गाँव गाँव और स्थान २ में भ्रमण करके “हरे मुरारे मधुकैटभारे” इत्यादि नारायणजीके यथार्थ मंत्रोंका प्रचार करें;—तो निश्चय ही सताये दुःख पाये राज्यहीन पाण्डवकुलकी जय होगी ।

वंशवाले राणागण और तैमूरवंशके सुप्रसिद्ध उत्तराधिकारियोंकी नामावली संयुक्त करके बड़े अभिमानके साथ यूरूपके राजालोगोंसे पूछतेहैं कि यूरूपमें किसी समय एक कालमें क्या ऐसे महावीर सुशासन कर्त्ता और विद्वानोंने जन्म लियाथा ?

मेवाड	मारवाड	दिल्ली
राणासांगा	रावमालदेव	बाबर और शेरशाह
○	राव सूरसिंह	हुमायूँ
राणा प्रतापसिंह	राजा उदयसिंह	अकबर
राणा अमरसिंह (१ मृ)	राजा गजसिंह	{ जहांगीर और शाहजहां
राणाकर्णसिंह		
राणा राजसिंह	राजा जशवंतसिंह	औरंगजेब ।
राणा जयसिंह	राजा अजितसिंह	{ फर्रुखसियादके परवर्ती दिल्लीके सिंहासनप्रार्थी गण
राणा अमरसिंह(२य)		

मालदेव और अकबरके मित्र और मारवाडके प्रथमराजोपाधि धारी (इससे पहिले रावोंकी उपाधि थी) उदयसिंहसे आरंभ करके औरंगजेबके प्रबल शत्रु जशवंतसिंह और अजितसिंह (जिन्होंने निज बाहुबलसे मुगलोंके भयङ्कर अत्याचारसे अपने राज्यका उद्धार किया) आदि यह सब ही राजा बड़े वीर और स्वदेशहितैषी थे ।

मैंने अपने साथी प्रदर्शकसे पूछा कि “अजितसिंहके बच्चोंकी समान साहसी सन्तानगण—जिन्होंने उनके स्मरणार्थ यह मन्दिर बनवायाहै और जो अपने राज्यका परिमाण बढ़ागयेहैं उनका स्मारक मन्दिर कहां है ?” उसने छोटे २ दो कमरोंकी ओर संकेत करके कहा कि “इस स्थानमें उनका प्रेतकृत्य समाप्त हुआ था । बड़े ऊंचे मनोरम मन्दिरोंसे सहसा एक साथ ही इतनी बड़ी अवन-तिका क्या कारण है, यह दोनों कमरे बड़ी तीव्र और प्रबलभाषामें उसको—और मारवाडके राजसमूहकी घटनापूर्ण जीवननाट्यके चरम नैतिक फलको प्रगट कर रहेहैं । अभयसिंहने अपने जन्मदाता पिताके प्राण संहार किये थे, यद्यपि इनका शासनकाल सन्मानके साथ समाप्त हुआ, तथा इन्होंने अपने राज्यका परिमाण दूना करलिया था, तथापि उनके पुत्रके साथ उनके भ्राता भक्त सिंहके बड़े भारी अपराधी होनेके कारण ही मारवाडको असीम निग्रह भोगना पडा । उनकी विशेष इच्छा होनेपर भी अपनी शवभस्म रक्षाके लिये कुछ शक्ति

लोगोंके साथ उपरोक्त प्रकारका आनन्द लूटते हैं । जिस समय राजस्थानकी चारों सीमाओंपर इस प्रकारका आनन्द उफना करता है, उसही समय असम्भव भील लोग भी अपने २ वनोंसे आनकर राजपूतोंमें मिल जातेहैं । राजपूतोंको भी भीलोंके मिलनेसे परमानन्द होताहै ।

भानुसप्तमी ।—वसंत पंचमीके दो दिन पीछे भानु सप्तमीका आगमन होता-है । कहते हैं कि सूर्य भगवान्का जन्म इसही तिथिको हुआ था । सूर्यवंशीय राणागण अपने कुलदेवताकी जन्मतिथिको अनेक प्रकारके उत्सव किया करते हैं । इस दिन राणाजी अपने सदाँर और सामन्तोंको साथ लेकर चोंगा नामक पवित्र स्थानमें जाया करते हैं; वहीं पर सूर्य भगवान्की पूजा की जातीहै । इस दिन जयपुरमें सूर्य भगवान्की पूजा कुछ विशेष धूमधामके साथ होती है । कुशावह (कछवाहे) राजा उस दिन सूर्यनारायणके मंदिरमें प्रवेश करके उनके रथको जिसमें आठ घोड़े जुते हुए होते हैं, बाहर लाते हैं । नगरवासी और जनपद-वासी उस रथको खैचकर महा आनन्दके साथ नगरके चारों ओर फिराते हैं ।

शिवरात्रि ।—फाल्गुन मासकी कृष्ण चतुर्दशीको यह उत्सव होताहै । प्रत्येक हिन्दू और विशेष करके राणाजी इस शिवरात्रिको परम पवित्र मानतेहैं । घोर पापी निषद सुन्दरसेन जिस दिन अपने समस्त पापोंसे छूटकर शिवलोकको चलागया; उस दिनको सबही हिन्दूगण पवित्र मानेंगे । भारतवर्षमें चित्तौरके राणाजी “ शिवके प्रतिनिधि ” समझे जातेहैं; इसही कारणसे वह धूम धामके साथ शिवजीकी पूजा किया करतेहैं । राजपूतलोग शिवरात्रिके दिन निर्जल व्रत रखतेहैं । प्रत्येक शैव इस पवित्र दिनमें किसी प्रकारका कोई संसारी कार्य नहीं करते और सारी रात्रि जागरण करके केवल महादेवजीका ही भजन करतेहैं ।

अहेरिया ।—अहेरिया अर्थात् वासन्तिक शिकारके साथ २ संसारमें मधुरतामय फाल्गुन मासका प्रवेश होताहै । इसके पहिले दिन राणाजी अपने सदाँर और नौकर चाकरोंको एक हरेरंगका अँगरखा दिया करतेहैं । राणाजीके दिये हुए उस अँगरखेको पहिने हुए समस्त सदाँर और सेवकलोग ज्योतिषीकी वनाईहुई शुभ लग्नमें राणाजीके साथ बराहका शिकार करनेके लिये नगरके बाहर जातेहैं । तदनन्तर वह वनैला सूकर भगवती पार्वतीजीके सामने उत्सर्ग कियाजाताहै । ज्योतिषीके वतानेपर मृगयाकी लग्न नियत होतीहै, इस कारणसे अहेरियाका दूसरा नाम “ महरतका शिकार ” है । इस महान शिकारके समयमें राजपूतलोग अपने २ भाग्यकी परीक्षा किया करतेहैं । जो उस

स्त्री भी पतिभक्ति और प्रेमका परिचय देनेके लिये चितामें न जले। वह मुझको अपने बालक पुत्रके अभिभावक पद पर वरण करगये,—कुछ दिन पीछे मैं बून्दीमें चलागया और उनकी इस आज्ञाका भलीभाँति पालन करदिया ।

दुर्गके नीचेवाले स्मारक चिह्नोंके विषयमें भी लिखतेहैं। पर्वतके ऊपर और मन्दिर दुर्गप्राकारके बाहरी स्थानमें राव रणमल्ल, राव गङ्गा और पुरीहर लोगोंके हाथमेंसे जिन्होंने मंदिर छीनलिया था उन चंडका मंदिर विराजमान है। इन राजवंशीय तीनों महावीरोंका उक्त मन्दिरके दो सौ हाथकी दूरीपर एक स्वतंत्र स्थान है स्वाभाविक रोगसे जिन रानियोंने प्राणत्याग कियेथे उनके लिये निर्धारित है। प्रियं पाठक ! अब राठोर लोगोंके इस समाधिक्षेत्रसे बीभत्सदृश्यमें परिणत पुरीहर लोगोंकी राजधानीके देखनेके लिये आगे बढ़िये ।

जिन्होंने प्राचीन टास्कोनका कांटोना, बलटेरा अथवा अन्यान्य नगर देखेहैं, वह लोग मन्दिरके प्राकारकी असली आकृति सहजमें ही कल्पना करसकेंगे, क्योंकि यह नगरप्राकार ठीक वैसा ही विराटकाय है। यह बड़ी विचित्र बात है कि, यूरोपकी समान भारतवर्षकी प्राचीन जातियों (यूरोपके गालाटी और केल्टो जातिकी समान पालिनाम तुल्यार्थबोधक है) में यंत्र-विज्ञानशिक्षाके अभावसे एक ही प्रकारकी प्रणालीसे यह सब विराटकाय प्राकार एक दूसरेके ऊपर स्तूपकारसे निर्माण कियेगये हैं; उनके उत्तराधिकारी लोग इन ऊँचे प्राकारोंको देखकर विचार सकतेहैं कि पूर्वकालमें इस प्रदेशमें बड़े २ शरीरवाले राक्षस रहते थे। सम्पूर्ण राजपूताना और सौराष्ट्रसहित भारतके इस पाश्चात्य प्रदेशके राजालोग जिस भावसे अपने नामको अक्षयकरनेके लिये अगणित कीर्तिस्तंभ और स्मारक मन्दिरादि निर्माण तथा जिस भावसे अपनी धर्मप्रणाली और पवित्र चरित्र चिह्न अङ्कित करगये हैं, वह सब उनके प्रतापप्रभुत्व और बड़ी भारी शक्तिका परिचय देनेवाले हैं। प्राचीन भारतके छत्तीस राजवंशोंमें “राजपालि” भी एक प्रधान गिनाजाता है। सौराष्ट्रमें सतरञ्ज शिखर नामका जो बौद्धोंका पवित्र तीर्थस्थान है, उस शिखरकी तलैटीमें “पालिथाना” अर्थात् पालियोंकी जो वासभूमि है और गदवारका पालिनगर उस पालिजातिकी प्राचीन राजनैतिक शक्ति और धर्मप्राबल्यकी विशेष साक्षी देरहेहैं। सम्पूर्णराजपूतानेमें ऐसा एक भी प्राचीन नगर नहीं देखा जहां यथाकार स्तंभावली, शिखरमालासे मैने खोदित स्मारकचिह्न-अनुलिपि और

तक अवीर गुलाल और रंग पड़ा होता है—वस यही कहावत चरितार्थ होती है कि “ लालै लालके लालै लोचन लालै मुखमें लालै वीरा । ” स्त्री पुरुष बालक बूढ़े सभी अवीरसे शरीरको चित्रित करते फिरते हैं । सभी कुंकुम और पिचकारीको हाथमें लिये स्त्रियोंकी सारी रंगनेके कारण मार्गघाटमें धूमतेहुए फिरते हैं । जिन्होंने कभी भी घरके भीतरसे बाहर पाँव नहीं दिया होता, भुवनप्रकाशक सर्वत्रगामी, भगवान् भरीचिमाली भी और समय जिनके मुखकमलको नहीं देखसकते वह भी आज घरसे बाहर आकर होरी २ कहा करती है ।

मेवाडी लोग इस उत्सवको फागके नामसे पुकारा करते हैं । इन दिनों राणाजी भी रनवासमें जाकर रानी और उनकी सहेलियोंसे अवीरका खेल खेलते हैं । उस समय किसीको जरा भी शरम नहीं रहती;—किसीके मुखमंडलपर तिल-मात्र भी निरानन्दकी छाया 'नहीं' दिखाई देती । उन सुन्दरी नारियोंके साथ होरी खेलनेमें राणाजीको अपार आनन्द प्राप्त होता है । परंतु सबसे अधिक वह होली अत्यंत अद्भुत होती है जो कि घोड़ेपर चढ़कर खेली जाती है । सरदार और सामंतगण कुंकुम और अवीर लेकर अपने घोड़ोंपर चढ़े हुए महलोंके मैदानमें फाग खेला करते हैं । कोई अत्यन्त चतुरताके साथ अपने घोड़ेको झपटाकर कुंकुमरूपी शस्त्रसे शत्रुको आक्रमण करता है, दूसरा आदमी भी अपने अंगको बचाकर उसके आक्रमणको व्यर्थ करदेता है । कहीं पर एक अदमीको पाँच आदमी घेर रहे हैं, कहीं पर एकही वलवान और चतुर सवार दूसरे पाँच सवारोंपर अवीर कुंकुमकी बौछार करता हुआ शीघ्रतासे अपने घोड़ेको भगाये हुए आता है । कहींपर एकसाथ दश आदमी मिलकर परस्पर एक दूसरेको रंगसे सराबोर कर रहे हैं । पिचकारियोंके रंग और अवीर फेंकनेका दंग सदा रंगारंगोंको बेरंग करदेता है ।

जिस दिन इस होलीलीलाकी समाप्ति होती है उस दिन किलेके तीन मंजिले पर बराबर एक नगाडा बजा करता है । उस गंभीर डफके शब्दको सुनते ही सदा रंग लोग अपनी २ सेना और सामंतोंके साथ राणाजीके निकट पहुँचते हैं । राणाजी उन सबको साथ लिये हुए चौगान महलको चले जाते हैं । यह स्थान राजपूतोंका प्रधान रंगस्थल है । लीलायुद्ध अथवा कोई नई कौशलका अभिनय दिखानेके लिये राजपूतलोग इसी स्थानपर इकट्ठे हुआ करते हैं । इस स्थानके बीचमें एक छायाहुआ बड़ा आँगन है वडे २ खम्भोंपर यह बड़ी छत ठहरी हुई है, चौगानके चारों ओर किसी भाँतिकी कोई दीवार नहीं है इस कारणसे चारों

ओले खुला हुआ है। राणाजी सर्दार और गुमाहियोंके साथ भीतर प्रवेश करके आनन्द का विगजनान होते हैं। सर्दार चारों ओरसे घेरकर उनको बैठ जाते हैं, तदुपरांत नकीर्तन प्रारम्भ होता है। अनेक प्रकारके बाजोंको बजाकर एकस्वरसे नकीर्तन गीत गाये जाते हैं; अभिप्राय यह है कि उस समय चारों ओर आनन्द दिगमयी विद्या कम्पा है। कोई गाता है, कोई बजाता है, कोई नाचता है। कोई २ विकट गीतोंके जंगार लगाकर अल्लोल शोक पड़कर बावली गतिसे नाचना आरम्भ करता है। आनन्दके उस प्रचंड प्रवाहमें राजा, मन्त्रा, सर्दार, सिपाही सभी एकसे हो जाते हैं। जेठाके प्रायः सभी रहनेवाले उस उत्सवमें मिल जाते हैं। चौगानके भीतर जिन प्रकारके गीत और बाजे बजाकर गेते हैं, वैसे ही उसके साथ २ होली-लीलाका प्रचंड आचरण हुआ करता है। फिर सबही एक २ अद्भुत जीवकी कृति धारण करके उस रंगभूमिमें बाहर हुआ करते हैं। उस समय वह जिसको नामने पाते हैं उसीको अर्धर गुलालसे बेहाल कर देते हैं। वह अनुष्य चाहें किसी वर्मके हों परन्तु होलीके मतवालोंसे किसी प्रकार नहीं बचने पाते।

फाल्गुन मासके अन्ततक फागांतव्य हुआ करता है। पिछले दिन राणाजी अपने प्यारे सर्दारको “खाँडा नारियल” अर्थात् खड़ और नारियलको बाँटा करते हैं, बहुधा यह खड़ कागज अथवा काठके बनाये जाकर भाँतिर से चित्रित किये जाते हैं। इसके बाद चाँचरका तेवहार होता है। चाँचर नगरके चारों ओर अग्निक्रीडा हुआ करती है। देशके सभी लोग अवीर और गुलालसे उस अग्निक्रीडाके चारों ओर पिशाचोंकी समान नृत्य करते फिरते हैं। सारी रात इस प्रकारसे खेल कूदमें दिनाई जाती है। फिर जबतक चैत्रमासका पहिला दिन अरुणोदयके साथ प्रकाशित नहीं होता तबतक वह लोग भी अपने उत्सवको नहीं छोड़ते हैं। जिस समय सूर्य भगवान् मीनराशिमें प्रवेश करते हैं, राजपूतलोग उसी लग्नमें संध्यावन्दन करके अपने कपड़ोंको बदलकर घरोंको लौट आते हैं। उस दिन सेवक लोग भी अपने २ प्रभुको अनेक प्रकारके द्रव्य उपहारमें दिया करते हैं।

शीतला पट्टी।—चैत्रमासके शुक्लपक्षमें छठके दिन यह उत्सव होता है। राजपूतोंका कथन है कि शीतलादेवी वच्चोंकी रक्षा करती हैं, राजपूतोंकी स्त्रियें अपने २ पुत्रोंकी मंगलकामनासे इस छठकी तिथिको शीतलादेवीके मंदिरमें आयाकरती हैं। उदयपुरकी उपत्यकाके एक पहाड़ी गिरिशिखरपर शीतलाजीका मंदिर बना हुआ है राजपूतोंकी स्त्रियां वहां पर भलीभाँतिसे शीतलादेवीकी पूजा करके अपने २ घरोंको लौटजाती हैं।

मेवाडकी इस शुक्ला छठको टाडसाहबने और एक उत्सव देखा था वह उत्सव राणा भीमसिंहकी जन्मतिथिको हुआकरताथा । राजपूतलोगोंमें पुरानी रीति है कि वे अपने अपने जन्मदिनको एक २ उत्सव कियाकरतेहैं । वर्ष-गाँठका उत्सव तो अंगरेजोंमें भी हुआकरताहै । जिस दिन अनंत कालसागरमें एक नवीन तरंग उठतीहै, जिस दिन दशमहीनेकी कठोर पीडासे छुटकारा पाकर संसारमें पहुँच होतीहै, जिस दिन अनंत भूत और होनहारके मध्यमें नये उत्पन्नहुए जीवका वर्तमान रूप, एक संधि करेदताहै, जीवनके उस श्रेष्ठ दिनको संसारके समस्त सभ्य लोग मानते आयेहैं । देवताके निकट राणाजीका मंगल और दीर्घजीवनकी प्रार्थना करके मेवाडके रहनेवाले अनेक प्रकारकी भेंट लेकरके उदयपुरके राजभवनमें आयाकरतेहैं । यह उत्सव रनवासमें हुआकरताहै । दूसरा कोई मनुष्य नहीं देखने पाता । इसी कारणसे उसदिन राणाजी नये वस्त्र और नये गहनोंसे भूषित होकर भौंति २ के भोजन सेवन कियाकरतेहैं । राजभवनके चारों ओर नाचना गाना हुआ करताहै । रनवासकी स्त्रियां मंगल और संगीतको गाकर भगवानसे राणाजीका मंगल मनातीहैं ।

फूलडोल ।—महाराज राज्यचक्रवर्ती श्रीमान् विक्रमादित्यके चान्द्र सौर वर्षारंभके साथ ही मेवाडमें इस उत्सवका आरम्भ होताहै । कार मासकी नवरात्रिमें जो अनुष्ठान हुआकरताहै, अधिकांशसे फूलडोलमें भी वही विधि हुआ करती हैं । इस पर्वका पहिला अनुष्ठान खड्गपूजा है । राणाजीके महलमें यह पूजाविधि समाप्त होतीहै । परन्तु भगवती वासन्तीकी पूजाके लिये जो समस्त उत्सव हुआ करतेहैं; उनके सामने खड्गपूजा तो साधारण ही ज्ञात होतीहै । वसंतकालके आगमनसे सारा संसार आनंदमय ज्ञात हुआ करताहै । आकाशसे निशानाथ अमृतकी वर्षा किया करतेहैं, अंतरिक्षमें पवनदेव मधुरताका विकाश किया करतेहैं ।

मानवलोकमें कुसुमकुन्तला वनदेवियाँ आनन्दसौरभको प्रकट किया करती हैं । सिद्धान्त यह है कि वसंतकालमें जो कुछ है सबही आनन्दमय है । इस समयमें राजपूतोंके घरमें आनन्द हुआ करताहै । कमलकी समान सुकुमार राज-पूतवालागण और कामदेवविजयी पुरुषगण फूलोंके गहनोंसे अपने अंगोंको सजाकर फुलवाडीमें या प्रमोदवनमें जातेहैं । वहाँपर फूलीहुई बेलों और फूलें वृक्षोंकी चिकनी छायाके नीचे बैठेहुए वह जोडा भी फूलकी ही समान जान पडताहै । मस्तकपर फूलोंका ही मुकुट, गलेमें फूलोंका हार, यहाँतक कि सबही

चौकोन हैं । जब मैं इस स्थानपर पहुंचा तो मुझको थकावट और ज्वर आगया था इस कारण इस प्रकारकी भूमिका परिमाण नहीं जानसका, किन्तु ऊपरके भागमें पुरीहरलोगोंके प्राचीन महलके ऊपर चढ़कर चारोंओर ध्वंस स्तूपोंपर दृष्टि डालनेसे मेरा वह क्षोभ जातारहा । यद्यपि ध्वंस चिह्न बहुत साधारण हैं, तथापि अबतक दिखाई देतेहैं । जिन उपकरणोंसे यह सब बनेथे उन्हीं उपकरणोंसे नवीन जोधपुर राजधानी और उपरोक्त सम्पूर्ण स्मारक मन्दिर बनाये गयेहैं । राजमहलसे मिले हुए कितने देवमन्दिर और महलके कितने ही कमरे अब भी स्पष्टरूपसे दिखाई देतेहैं । इन सब कमरोंके बाहरकी खुदाईका काम देखकर अनुमान होताहै कि यह तक्षक अथवा बौद्धोंके हाथके बने हैं । महलकी दीवारोंपर धर्मसम्बन्धी बहुतसे सांकेतिक चिह्न अंकित हैं । यह सब बौद्ध और जैनियोंके निदर्शन चिह्नकी समान हैं, किन्तु शैवोंके त्रिकोण चिह्न भी कई स्थानोंमें खुदे हैं । पुरीहरलोगोंके सर्व प्रधान चिह्नोंमें दुर्गके दक्षिण पूर्वमें बना हुआ सिंह-द्वार (सदरदरवाजा) और जयतोरण परम रमणीक है । यह देखनेमें बहुत बड़ा है; मन्दिरके प्राचीन राजालोगोंमेंसे किसी एक राजाने अपनी विजय घटना चित्र स्मरणीय करनेके लिये ही इसको बनवाया है । अवकाशाभावके कारण मैं इस जयतोरणका नकशा नहीं लेसका ।

उत्तर प्रान्तके कुछ ही दूर थानापीरका थान है । थानशब्द स्थानका बोधक है । अजमेरमें जिन ख्वाजाकुतुबकी प्रसिद्ध मसजिद है, उक्त थानापीर उन्ही कुतुबके शिष्य थे । इस प्रदेशमें बहुतकालसे जितने धनके लोभी सैधवी और अफगान लूटमार और डकैती करते चले आरहेहैं, यह सब अपवित्र काफरलोग प्रायः इन ही पीरकी मसजिदमें एकत्रित होतेहैं । उक्त उत्तरकी ओर ही परकोटेके बाहर पुराने राठौर राजगणों और उपरोक्त वर्णित सती स्त्रियोंके मन्दिर बनेहैं । किन्तु पुरीहर राजकुलके शव किस स्थानमें जलाये जाते थे और किस स्थानमें उनके समाधिमन्दिर बनाये गये थे जनश्रुति वा इतिहाससे इस बातका कुछ भी पता नहीं चलता । पूर्व और उत्तर पूर्व प्रान्तमें प्रकृतिने अपने हाथसे प्राचीन दुर्गका अमेघ परकोटा बना दिया है । वह स्थान नगर निवासियोंके थकावट दूर करनेके लिये सर्वांशमें उपयुक्त है ।

हम लोग जिस मार्गसे ऊपर चढ़े थे, उस ही मार्गसे होकर पुसकुण्डकी ओर आगे बढ़े । स्थान २ में जिस प्रकार अनेक तरहके मनोहर दृश्य दृष्टिगोचर हुए उसी प्रकार पुराने महल भी दिखाई दिये । उक्त मार्गकी तलैटीमें निर्मल जलका

भगवतीकी पूजा आरम्भ करनेसे पहिले राजपूतोंकी स्त्रियें देवीजीको वरण कर लेतीहैं । तदनुसार जैसे ही उनकी सरोवर यात्राकी तइयारियें होतीहैं, वैसे ही कुलकानिनिधैं उनको वरणकरनेका सामान करतीहैं। राजपूतोंकी स्त्रियें वरण डला हाथमें लिये, सुन्दर गीत गातीहुई प्रतिमाकी प्रदक्षिणा करतीहैं । वस यहीं पर वरण शेष हुआ । उसही समयमें आकाश मंडलको विदारण करताहुआ नगाडेका शब्द होनेलगताहै नगाडेका यह शब्द देवीकी यात्राका प्रचार करताहै । उस घोर नगाडेके वजते ही एकलिंगगढके शिखरसे तोप भी गंभीर कड़कडाहटसे गर्जउठी । तोपके शब्दको सुनतेही नगरवासी अनेक प्रकारके वस्त्रोंको धारण कियेहुए पेशोला सरोवरके किनारे इकट्ठे होने लगे ।

पेशोला सरोवरका किनारा इस उत्सवके दिन अत्यन्त शोभायमान दिखाई देताहै चारों ओर किनारेकी भूमिके बीचमें जो ऊंचा चबूतरा बना हुआहै, उसके ऊपर समस्त सर्दारोंके साथ खडे हुए राणाजी देवीके आनेकी वाट देखतेहैं । ठके ढोल नगाडे इत्यादि अनेक प्रकारके बाजे गाजेके साथ जब वह प्रतिमा वहांपर आजाती है, तब नगरवासी देवीजीका नौकारोहण देखनेके लिये सरोवरके किनारे पर उत्तमतासे खडे होजातेहैं । बहुतसे आदमी ऊंचे २ महलों पर चढकर इस अपूर्व शोभाको निहारतेहैं । उपरोक्त चबूतरके सामने ही बड़ा घाट है; घाटकी उत्तम सीढियाँ संगमरमरकी बनी हुईहैं । सरोवरमें अगणित नावें सीढियोंके निकट ही लगी रहती हैं; उस समय सरोवरके जिस किनारेको देखिये वहींपर लावण्यवती स्त्रियोंकी अगणित श्रुतियां दिखाई देतीहैं। वह स्त्रियें अनेक प्रकारके रंगविरंगे कपडे और रत्नजडित जेवर पहरे रहतीहैं । जूडेमें फूलोंका हार भी अपनी न्यारी ही बहार दिखाताहै । उनके चंद्रवदन फूलेहुए कमलकी समान मुस्कानयुक्त दिखाई देतेहैं। आश्चर्यकी बात यहहै कि उन स्त्रियोंमें पुरुष एक भी दिखाई नहीं देता इस शुभलभमें पेशोलाके किनारेकी भूमि जो मनमोहन वेश धारण करतीहै, उसका वर्णन करना असंभवहै । हम नहीं कहसकते कि इससे अधिक सुंदर और भी कोई चित्र कल्पनामें आसक्ताहै ? नगरके युवा वृद्ध बालक सब ही उत्तम वस्त्राभूषण पहिरकर उस स्थानमें आतेहैं । सबहीके मुखपर प्रसन्नता, नेत्रोंमें आनन्द ज्योति और मुखमें संगीतध्वनि विराजमान रहतीहै । वसंतका आकाश साफ व निर्मल होताहै, कहींपर मेघका लेशमात्र भी दिखाई नहीं देता । पेशोला सरोवर भी निर्मल और अचल दिखाईदेताहै । पानीमें वृक्ष, अटा अटारी और आकाशका अत्यन्त सुन्दर प्रतिबिम्ब दिखाईदेताहै । किनारेका लोकारण्य निविडवनके

देखनेमें परम सुन्दर है । प्रत्येक सामन्तके हाथमें वरछा, तलवार, ढाल, पीठपर धनुष बाण और कमरमें लम्बी छूरी बँधी है । सबका रंग देखनेमें सुन्दर है; किन्तु मैं यह नहीं कहसकता कि इन वीरोंका शरीर असली ऐसा ही था अथवा कारीगरोंने अपनी इच्छानुसार बना दिया है । इस कमरेमें प्रविष्ट होनेसे पहिले एक बड़ी गणेशजीकी मूर्तिके दर्शन होते हैं । गणेशजीकी मूर्तिके निकट रणदेवके भीरुनामक दो पुत्रोंकी मूर्तियाँ विराजमान हैं । उनके अनन्तर चण्डमुण्डा और कङ्काली देवीकी मूर्तियाँ स्थापित हैं । कालीकी मूर्ति कृष्णकाय भयङ्कर महिषासुरकी छातीसे ऊपर एक चरण और सिंहकी पीठपर दूसरा चरण रखकर खड़ी है; सिंह उक्त राक्षसकी छातीको भयानक रूपसे काट रहा है । देवीके हाथोंमें अस्त्र शस्त्र शोभायमान हैं । कालीकी मूर्ति और रणधर्ममें दीक्षित संग्रामभूमिमें मरे हुए वीरोंकी मूर्तियोंमें राठौर लोगोंके सर्व प्रधान धर्मयाजक नाथजीकी प्रतिमूर्ति स्थापित है । नाथजीके एक हाथमें माला और दूसरे हाथमें धर्मदण्ड हैं । मल्लीनाथ सफेद घोड़ेके ऊपर चढ़े हुए हैं, उनके हाथमें स्थित वरछेके शिरपर एक झंडी है और तरकस बाँडेके नितम्बोंपर लटकता है; उनकी भार्या पद्मावती भोजनपूर्णपात्र हाथमें लिये मल्लीनाथके समरक्षेत्रसे लौटनेकी अभ्यर्थना कर रही हैं । मल्लीनाथके युद्धमें मारेंजानेपर पद्मावती अपने शरीरको उनके शवके साथ भस्मी भूतकरके सूर्यलोकको चली गई ।

इसके अनन्तर कृष्णकाली नामक भयङ्कर घोड़ेपर सवार प्रभुजीकी प्रतिमा है । कवि और प्रदर्शक लोग प्रतिवर्ष मारवाडके अनेक प्रान्तोंमें घूमकर इन प्रभुजीकी कीर्ति गान और महावीरत्व सूचक चित्रावली ग्रामीण लोगोंको दिखाकर बहुत सा धन संग्रह करते हैं ।

इसके पीछे सुप्रसिद्ध वीर रामदेव राठौरकी मूर्ति दिखाई दी । इनके सन्मानके लिये इस प्रदेशके प्रत्येक राजपूतग्राममें एक २ वेदी बनाई गई है ।

हरवसङ्गल नामक जिन वीरवरने निर्वासित राजा योधकी विशेष सहायता की थी तथा चित्तौरके राणाका मन्दौरपर अधिकार करलेनेपर उसके पुनरुद्धारके लिये बड़ी भारी चेष्टा की थी उनकी प्रतिमूर्ति को इसी स्थानपर देखा ।

सुलतान महमूदके भारताक्रमणके लिये सेनासहित आनेपर गोगानामक जिन चौहान वीरने जन्मभूमि-स्वाधीनता और पितृधर्म रक्षाके निमित्त अपने सैतालीस पुत्रोंसहित शत्रु नदीके तटपर प्राण विसर्जन किये थे, इसके अनन्तर उनकी प्रतिमाको देखा । सबसे पीछे गिहोट जातिके मधु मङ्गल नामक

अशोकाष्टमी ।— इस त्यौहारको सम्पूर्ण राजपूत लोग विश्वमाता भगवतीकी पूजा किया करते हैं। राणाजी अपने सम्पूर्ण सदाँर और सामन्तोंको साथ ले चौगान महलमें जाते तथा सारे दिन वहीं रहकर आनन्द किया करते हैं। आजके दिन समस्त राजपूत भगवती भवानीकी उपासना करते हैं।

रामनवमी ।—अशोकाष्टमीका दूसरा दिन रामनवमीके नामसे प्रसिद्ध है। इसही शुभतिथिको पुनर्वसु नक्षत्रमें रघुकुल कमल दिवाकर भगवान श्रीराम-चन्द्रने जन्म लियाथा। यही कारण है जो उनके वंशवाले इस दिनको अत्यन्त ही पवित्र समझते हैं। आजके दिन हाथी घोड़ और अस्त्र शस्त्रोंकी पूजा हुआ करती है। राणाजी आजके दिन भी महा धूम धामसे चौगान महलमें जाते हैं। वहाँ पर अनेक प्रकारके आनन्द होते हैं। हिन्दू शास्त्रमें लिखा है कि इस दिन जो कोई श्रीरामचंद्रजीकी पूजाके लिये जो कुछ करता है उसको बहुत ही पुण्य होता है। विशेष करके जो उपवास और जागरण करके पितृलोगोंका तर्पण करते हैं, उनको ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। यथा;—

“ तस्मिन् दिने महापुण्ये राममुद्दिश्य भक्तितः ॥

यत्किंचित् क्रियते कर्म तत्तदक्षयकारकम् ॥ १ ॥

उपोषणं जागरणं पितृनुद्दिश्य तर्पणम् ॥

तस्मिन् दिने तु कर्तव्यं ब्रह्मप्राप्तिमभीप्सुभिः ॥ २ ॥” अगस्त्यसंहिता ।

मदनत्रयोदशी ।—चैत्रशुक्ल त्रयोदशीके दिन सनातन धर्मावलम्बी लोग पंच-वाणकी पूजा किया करते हैं। यद्यपि इससे पहिलेकी और पीछेकी द्वादशी तथा चतुर्दशीमें भी पूजा करनेकी व्यवस्था है, तथापि राजपूत इसही दिवसको बहुत अच्छा समझते हैं। मधुमास व्यतीत होगया है; धीरे-धीरे ग्रीष्मकालकी तत्ती २ पवनके झकोरे आने लगे हैं। सुमनोलंकारयुक्त वनदेवीके फूलदार जूडेसे सुगन्धित पुष्प धीरे २ गिरते चले जाते हैं। परन्तु फूलरानी चमेली अबतक भी प्रकृतिके अंगसे अलग नहीं हुई है। राजपूतोंकी स्त्रियां इसही चमेलीके हारोंको अपने जूडोंमें लपेटकर पंचवाणकी पूजा करती हैं। टाडसाहब कहते हैं कि जैसी भक्तिके साथ उदयपुरमें मीनकेतनकी पूजा होती है; भारतवर्षकी और कोई रमणी वैसी भक्तिसे कामदेवकी पूजा नहीं करती—राजपूतसुन्दरी इस प्रकारसे भगवान मन्मथकी स्तुति किया करती हैं; यथा—

“ पुष्पधन्वन् ! नमस्तेऽस्तु नमस्ते मीनकेतन ! ॥

मुनीनां लोकपालानां धैर्यच्युतिकृते नमः ॥ १ ॥

वृक्ष है । “पुरीहर लोगोंके अन्तिम अधीश्वर नाहररावके सन्मुख अपनी इन्द्रजाल विद्याशक्ति दिखानेके लिये एक ऐन्द्रजालिकने इस वृक्षको आरोपण किया था ।” जनश्रुति यह है कि उक्त वृक्षकी शाखासे गिरनेके कारणसे ही उस ऐन्द्रजालिका जीवनरूपी दीपक बुझगयाथा । * इस वृक्षकी बड़ी २ डालियोंपर वन्दर निर्भय होकर कूदते और विचरण करते हैं । वृक्षकी जड़में दो राठौर राजपूत शयन किये हुए हैं और बड़े २ दो छोड़े भी तंद्रामें हैं । यह उस शान्त निर्जन प्रदेशका कमनीय दृश्य है ।

पर्वतकी चोटीपर नीचे जानेवाली उपत्यकाके सामने बहुत सी गुफायें हैं, जिनमें संन्यासीलोग निवास करते हैं । हमको इस बातका बड़ा ही आश्चर्य है । कि प्रबल गर्मीके दिनोंमें यह लोग ऐसे संकीर्ण और पवनरहित स्थानमें किस प्रकारसे रहते होंगे ? संध्या होजानेके कारण मेरे कैम्पमें लौटनेका समय आगया, इस कारण फिर एक बेर मारवाडके बीरोंकी प्रतिमाओंके दर्शन कर और “कृष्णकाली” घोड़ेके चरणतलपर अपना नाम लिखकर प्राचीन मन्दरसे लौट आया ।

१३ वीं नवम्बर—आज राजा मानसिंहने अपने महलमें भोजन करनेके लिये मुझे निमंत्रण दिया था, इस कारण मैं नई पोशाक पहनकर राजपूतका आतिथ्य ग्रहण करनेके लिये गया । राजाने मुझसे एक अनुरोध किया, जो मुझको कुछ एक विचित्र मालूम हुआ,—उन्होंने यह विचारकर कि “ देशी भोजन साहबको अच्छा नहीं लगेगा और न इससे उनकी तृप्ति होगी ” मुझसे मेरे खानसामाको पहिलेसे मांगलिया । संधियाके कैम्पमें मैं प्रायः ऐसा ही किया करता था, वहां महाराष्ट्रीय भोजनके साथ २ अपने देशका भोजन भी खाता था । मैंने मारवाडेश्वरको कहलाभेजा कि “जोधपुरके भोजनकी सामग्रीसे मेरी उदर पूर्ति और तृप्ति अवश्य होजायगी । ” मैंने अपनी टेबिल और मारवाडाधीश्वरके दीर्घजीवनलाभ और स्वस्थ्योद्देशसे पान करनेके लिये “क्लारेट” नामक सुरा महलमें भेज दी । मेरे वहां पहुँचने पर महाराजने मुझको बड़े आदरके साथ ग्रहण किया और भोजनगृहमें जानेका अनुरोध करके महलमें चले गये । सुवर्ण और चांदीके आसे लिये बहुतसे अनुचर मेरे पीछे २ चले ।

* प्राच्यभाषा तत्त्वविद् मेजरप्राइस साहबने जहांगीरके हाथकी लिखीहुई जहांगीर जीवनीका जो अनुवाद कियाहै, उसके पढ़नेवाले पाठक जानते होंगे कि, यह ऐन्द्रजालिकलोग अपनी इन्द्रजाल विद्याके दलसे केवल वृक्ष ही नहीं वरन फलतक क्षणमात्रमें उत्पन्न करके आश्चर्यमें डाल देतेथे ।

छातीपर भ्रमण कियाकरतेहैं। उस दिन राणाके सर्दार ही नावको चलायाकरतेहैं वह नाव प्रचंड वेगसे चलाई जानेके कारण सरोवरके घने जलको खलवलाती हुई चारों ओरको दौडतीहै। इस प्रकार संध्यातक आनन्द विहार करके राणाजी सर्दारोंके साथ घरको लौटतेहैं। इस नये उत्सवके समयमें भगवती गौरीकी पूजा वासन्ती अन्नपूर्णाकी समान होतीहै।

सावित्रीव्रत ।—ज्येष्ठकृष्ण चतुर्दशीको सावित्रीव्रत होताहै इसमें जो स्त्रियें उपवास करके पतिव्रता सावित्रीकी पुण्य कथा सुनती हैं और उनकी पूजा करतीहैं, विधवापनका कष्ट उन्हें कभी नहीं भोगनापडता। मेवाडकी राजपूत स्त्रियां उस दिन एक नियत कियेहुए वटके निकट जाकर विधि विधानसे सावित्रीकी पूजा करके उसकी पुण्यमय कथाको सुनतीहैं।

रम्भातृतीया ।—ज्येष्ठशुक्ल तृतीयाको स्त्रियें यह व्रत करतीहैं। रम्भाभगवती गौरीकी दूसरी मूर्ति है। वारहों महीनेमें वारह मूर्तिसे हिन्दू लोग जो पूजतेहैं यह मूर्ति भी उन्हींमेंसे एक है, राजपूत वाला गण धनकी कामना करके खिलीहुई शतपुष्पीके फूलसे देवीकी आराधना कियाकरतीहैं।

अरण्यपक्षी ।—ज्येष्ठ महीनेके शुक्लपक्षमें देवसेना भगवती पक्षी देवीकी जो पूजा हुआ करतीहै उसको ही अरण्यपक्षी कहतेहैं। वारह महीनेमें भगवती महामायाकी जो वारह मूर्तियां * प्रसूतियोंके द्वारा पूजी जातीहैं। यह भी उनमेंसे एक है इस पक्षके दिन पुत्रके चाहनेवाली अथवा पुत्रका मंगल चाहनेवाली हिन्दूललनागण वनमें प्रवेश करके वट या पीपलकी जड़में देवीकी पूजा कियाकरतीहैं।

रथयात्रा ।—आषाढ शुक्ल तृतीयाको भगवान् विष्णुजीकी रथयात्रा हुआ करतीहै। हिन्दूशास्त्रमें नारायणजीकी एक २ महीनेमें एक २ यात्रा कही है।

* “प्रसूत्या द्वादशे मासि सम्पन्वापत्यवृद्धये ॥

सुते जाते त्रया पष्ठ्यां षष्ठी द्वादशरूपिणी ॥ १ ॥

वैशाखं चादनी पक्षी ज्येष्ठे चारण्यसंज्ञिता ॥

आषाढे कार्दमीश्या श्रावणे लुण्ठनी तथा ॥ २ ॥

भाद्रे चपेटीनी ख्याता दुर्गाख्याश्वयुजे तथा ॥

नाडाख्या कार्तिके मासि मार्गे मूलकरूपिणी ॥ ३ ॥

पौषे मास्यन्नरूपा च शीतला तपसि स्मृता ॥

गोरूपिणी फाल्गुने वै चैत्रेऽशोका प्रकीर्तिता ॥ ४ ॥” स्कन्दपुराणे ।

२७ वीं नवम्बर—को मैं महाराजके पास बिदा मांगनेके लिये गया । इस अन्तिम मुलाकातमें विशेष प्रयोजनीय विषयोंपर बहुत देर तक बातचीत हुई । महाराज अपने उद्यम और प्रतिमाकी शक्तिसे सम्पूर्ण विपत्तियोंका निवारण, अत्याचारियोंको—उनके मृत पुत्रके कुपरामर्शदातागणोंको—मंत्रीवर और प्रधान धर्मयाजक देवनाथके हत्याकारी लोगोंको और महाराजके बहुत काल बन्दी दशाके कारणस्वरूप लोगोंको उपयुक्त दण्ड देकर शीघ्र ही निश्चिन्त होसकेंगे मैं उनको इस प्रकारका धीरज देआया ।

“नियमित विदायी उपहारकी सामग्रीके साथ महाराजके व्यक्तिगत अनुग्रहका चिह्नस्वरूप उनके एक सुप्रसिद्ध पूर्वपुरुषकी एक तलवार, एक छूरी और एक ढाल मुझको मिली । तलवार इतनी भारी है कि उसको देखकर सर्वसाधारण भी यह समझसकतेहैं कि जिस हाथमें यह तलवार शोभा पाती थी वह बंडा बलिष्ठ था । सादर संभाषणके पीछे परस्परमें पत्रआदि भेजनेके लिये अनुरोध हुआ (यह पत्रादि भेजना आरंभ तो हुआ था किन्तु शीघ्र ही बंद होगया)इसके अनन्तर महाराज मानसिंहसे बिदा ली ।”

(कर्नेल टाड साहबके मारवाडमें जानेका विवरण समाप्त हुआ)

विघ्न और विपत्तिसे दूर रहनेके लिये अपने प्रकोष्ठमें एक वलय धारण कियाथा उसीको राजपूत लोग राखी कहाकरतेहैं। राजपूतोंके मतानुसार केवल धर्मयाजक और स्त्रियां ही इस वलयको वितरण करसक्तीहैं और किसीको इनके वाँटनेका अधिकार नहीं है। राजपूतोंकी स्त्रियां जिसको अपना भ्राता बनानेकी इच्छा करतीहैं अपनी सखियोंके हाथ अथवा कुलपुरोहितोंके हाथ उसके पास राखी भेजतीहैं। राखी पानेवाले भी विधिविधानसे अपनी वहनोंको यथाविधिसे दक्षिणा दिया करतेहैं। मेवाडके इतिहासमें पहिले ही कहा जा चुकाहै कि राखीबंधन एक पवित्र और दृढसम्बन्ध है।

जन्माष्टमी।— भादों कृष्ण अष्टमीकी तिथि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रका दिन है। समस्त हिन्दू ही इस दिनको अत्यन्त पवित्र समझतेहैं। भादों वदी तीजको राजाजी अपने सदाँर सामन्तोंके साथ चौगान महलको चले जातेहैं। उस तीजसे लेकर अष्टमी तक वहाँपर बराबर श्रीकृष्णजीकी पूजा होतीहै, अष्टमीको प्रातः-कालसे ही उदयपुरके घर २ में उत्सव आरम्भ होताहै। सबके कपडे हलदीसे रंगे होतेहैं, सभी कन्हैयालालकी जय बोला करतेहैं। मेवाडके घर २ में वाजेगाजे और आनन्दका शब्द होता रहताहै।

इसके उपरान्त राजाजी एक पक्ष तक बराबर अपने पितरोंका तर्पण किया करतेहैं। निसधारानामक नगरमें राजाके पितृपुरुषोंका एक समाधिमंदिर है, वहाँ पर जाकर राजाजी धूप, दीप, फूलोंके हार और कई प्रकारकी नैवेद्यसे उनकी पूजा किया करतेहैं। मेवाडके प्रत्येक सदाँरको ही इसी प्रकारसे तर्पण करना पडताहै।

खड्गपूजा।— जिस उत्सवमें राजपूत लोग खड्गकी पूजा करतेहैं उसका नाम नवरात्रिउत्सव है। यह उत्सव राजपूतोंके समरदेवताकी पूजाका होताहै, आश्विन शुक्ल पडिवासे जिस समय यह पूजा आरम्भ होती है उस समय राजाजी उपवास करतेहैं। प्रातःकाल होते ही प्रातः कृत्यादि समाप्त करके खड्गपूजामें निमग्न होतेहैं। गिहौटकुलका प्रसिद्ध दुधारा खड्ग इस समय शस्त्रागारसे बाहर लायाजाताहै फिर विधानसे उसकी पूजा होतीहै। तदनन्तर राजाजी अपनेसदाँर लोगोंके साथ उस पवित्र खड्गको कृष्ण पौरनामक एक प्रसिद्ध तोरणद्वारमें लेजाते हैं। वहींपर भगवती अष्टभुजाका मंदिर विराजमान है। मंदिरके द्वारपर राजयोगी* अपने अनुगत महंत और दूसरे योगियोंके साथ

* राजस्थानमें एक प्रकारके योगी हैं जो कि आवश्यकता पडनेपर तलवार बाँधकर संग्राम भूमिमें जातेहैं। उन योगियोंके सदाँरका नाम राजयोगी है।

“राजधानीसे एक कोश तक रेतीला मार्ग है; और उससे आगेके मार्गमें लाल पत्थरका रेत है, इस लिये एक कोशसे आगे चलकर पथिकोंको चलनेमें कुछ सुबीता होजाता है। आधा मार्ग समाप्त करनेपर हमने एक छोटा सा सरोवर देखा। उसको मारवाडसिंहासनके लोभी धौकुलसिंहकी माता शिखावती ने बनवाया था, इस कारण इसका नाम “शिखावत तालाब” विख्यात है। शिखावतीने इस सरोवरके तटपर एक धर्मशाला और एक हनुमानजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित करा दी है, तथा अपनी पवित्र कीर्तिका चिह्नस्वरूप एक स्तंभ बनवा दिया है। इस प्रदेशमें कहीं भी बेल बूटा दिखाई नहीं देता। झाला मन्दसे जोधपुर जाते समय हमने योगिनी नामकी जिस नदीको पार किया था जो मन्दौरके निकट नागदाके साथ मिलकर लूनी नदीमें गिरिहै, हमने इस ग्रामप्रान्तमें फिर उस ही नदीको पार किया। नदीके पास जो कूये बने हुए हैं ग्रामवासी लोग उनहीका जल व्यवहार करतेहैं। इन दोनों कुओंमें यथेष्ट जल है परन्तु जल साफ नहीं है। नँदोला ग्राम एक सौ पच्चीस घरोंकी वस्ती है। यह प्रदेश आहरेके सामन्तके अधीन है। यहां शुष्क प्राय एक पुष्करिणी है। उसके तटपर समाधिके मन्दिर बने हुए हैं। मैंने वहां जाकर एक एक करके सबको देखा, परन्तु उनके ऊपर जिन लोगोंके नाम खुदे हुए हैं वह सब अप्रसिद्ध हैं।

आगेका ग्राम वीसलपुर यहांसे छः कोशकी दूरीपर है; मार्ग गहरी बालूसे ढका हुआ है। वीसलपुर ऊंची भूमिके ऊपर बसा हुआ है रहनेके घर सब एकसे बने हैं; घरोंकी दीवारें मट्टी और भूसीसे लिहसी हुई होनेके कारण देखनेमें बड़ी विचित्र हैं। जैसे इन्दुराग्राम भूसी और कांटोंके बने हुए परकोटेसे ढका हुआ है, वैसे ही यह ग्राम भी भूसी और कंटकसंलित परकोटेसे वेष्टित है। इस प्रदेशमें यह दृश्य शिल्पकार्यका परिचय देनेसे देखनेमें सुन्दर मालूम होता है। बहुत प्राचीन कालमें यहां एक नगर था, किन्तु भूकम्पसे वह विलकुल नष्ट होगया। तोरणके कई अंश और परकोटेका एक भाग अब भी उस नगरका पूर्ण परिचय दे रहा है। यहां पर हमको कोई प्राचीन खोदित लिपि नहीं मिली। यहांके अधिवासी लोग एक बड़े सरोवरसे नित्य व्यवहारके योग्य जलको लेजाते हैं।

२१ वीं नवम्बर।—पाँचकुल्ला वा विचकुल्ला पाँच कोशकी दूरीपर है; जो जुरी नदीके पार उतरकर उसके तटपर डेरा डाला। क्रमसे मट्टीकी उत्कर्षता

सातवाँ दिन ।—चौगान महलकी नियमित क्रियाओंको समाप्त करके राणा साहब अश्वपालको आज्ञा देतेहैं कि समस्त घोड़ोंको लेआवो, वह तत्काल समस्त घोड़ोंको स्नान कराय और सजायकर लेआताहै । महलमें रात्रिके समय उसदिन होमकी धूम पड़जातीहै । एक मेंढे और एक भैंसेको भी उस दिन बलि दियाजाताहै । उस दिन राणाजी कनफटे योगियोंको निमंत्रण करके अनेक प्रकार के अन्न व्यंजन भोजन करातेहैं ।

आठवाँ दिन ।—महलमें होम होताहै, संध्याके समय राणाजी कई एक मुख्य सर्दारोंके साथ नगरके बाहर शमीनानामक गाँवमें जाकर वहाँके गोस्वामीसे साक्षात् करतेहैं ।

नौवाँ दिन ।—आज चौगान अर्थात् और किसी स्थानमें नहीं जाना पड़ता । राणाजीकी आज्ञासे अश्वपाल गण अस्तबलसे घोड़ोंको नहलानेके लिये सरोवरमें लेजातेहैं, स्नान समाप्त होनेपर फिर उनको सजधजके साथ महलमें लातेहैं । सर्दार और सामंतगण उस समय घोड़ोंकी पूजा कियाकरतेहैं, अश्वपाललोगोंको राणाजीसे बहुत इनाम मिलताहै । उसी दिन दुपहरकी तीन बड़ी पर एक साथ तीन बार नगाडा बजताहै. उस समय राज्यके समस्त सर्दार सामंत और सिपाही लोग माताचलनामक पहाडमें जाकर उस प्रसिद्ध दुधारे खड़को ले आतेहैं । सब लोगोंके लौट आते ही राणाजी आसनसे उठकर विधिपूर्वक वंदना करनेके पीछे राजयोगीके हाथसे उसको ग्रहण करतेहैं । अनन्तर उन योगिराजको राणाजीकी ओरसे कुछ पुरस्कार मिलताहै । जो महंत ९ दिन तक व्रत करके उस खड़की पूजा करताहै, राणाजी काक (लोटा) पूर्ण करके उसको अशर्फी और रुपये देतेहैं । फिर समस्त योगियोंको भलीभांतिसे भोजन कराया जाताहै *

दशवाँ दिन ।—भारतके समस्त सनातन् धर्मावलम्बी इस दशमी तिथिकी महिमाको जानते हैं । कहते हैं कि भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने भगवती सीताजीका उद्धार करनेके लिये इसी पवित्र तिथिको दुर्धर्ष लंकानाथके विरुद्ध यात्रा की थी । संग्रामके कार्योंमें राजपूत लोग इस दिनको बहुत अच्छा समझते हैं । इस दिन प्रभात होते ही राणाजी अपने दीक्षा गुरुसे मिलते हैं । इस ओर चौगान अथवा माताचल शिखर पर अनेक प्रकारके आसन बिछाये जाते हैं । वहाँ पर

* इसी दिन राजपूत कुमार गण अपने पिताकी पूजा करतेहैं, इन दिनोंमें समस्त राजपूत बहुधा कंद मूल फल ही खातेहैं ।

ब्राह्मण उक्त सरोवरके तटपर रहनेवाले एक तक्षकजातीय सर्पको प्रतिदिन दूध पिलाया करता था, और सर्प उसकी सेवासे प्रसन्न होकर प्रतिदिन दो सुवर्णमुद्रा दिया करताथा । किसी कारणसे नगरमें जानेको बाध्य होनेके कारण पीपा अपने पुत्रको सब बातें समझाकर उस कामको सौंपगया । ब्राह्मणकुमारने विचारा कि यदि इस सर्पको मारडालूं तो सब धन एक साथ ही मिलजायगा । यह विचार, दूध और लकड़ी दोनों हाथमें लेकर उस सरोवरके तटपर पहुँचा । सर्प प्रतिदिन जिस समय दूध पीता था, ठीक उसी समय बाहर निकलकर दूध पीनेलगा, धनके लोभी ब्राह्मणकुमारने तत्काल उसके शिरपर लकड़ी मारी । उसके लगनेसे सर्पके प्राण नहीं निकले, किन्तु सामान्य चोट लगी, सर्प तत्काल विलमें घुसगया । ब्राह्मण उदास होकर अपने घर आया और मातासे सब वृत्तान्त निवेदन किया; ब्राह्मणी डरी और सोचने लगी कि सर्प अवश्य ही बदला लेगा । उसने स्थिर किया कि “कल प्रभातमें पुत्रको पतिके पास भेज दूँगी।” यह विचारकर पुत्रके साथ भेजनेके लिये एक बैल और सेवक वहीं रक्खा । रात्रिमें ब्राह्मणीको नींद नहीं आई, प्रभात ही उठकर वह अपने पुत्रको जगानेके लिये उस शयनागारमें गई, वहाँ उसने देखा कि पुत्रके बदलेमें वहीं बड़ा भारी सर्प शयन कर रहा है । इसी अवसरमें पीपा ब्राह्मण भी नगरसे लौट आया, अपने पुत्रको सर्पसे भक्षित हुआ सुनकर शोकसागरमें डूबगया, फिर बड़े कष्टसे प्रतिहिंसावृत्तिको शान्त करके दुग्धद्वारा उस सर्पको प्रसन्न करने लगा । सर्प ब्राह्मणकी इस सेवासे फिर प्रसन्न होगया और अपने बहुत कालसे रक्षा किये हुए बड़े भारी धनको ब्राह्मणको दिखाकर बोला कि “इस घटनाके बहुत काल तक स्मरण रहनेके लिये यहां कोई चिह्न अवश्य कर देना, यह सब धन अब तुम्हारा है । ” इस संवन्धसे ही पाली जातीय पीपाने यह पीपल नगर और धन दाता सर्पके नामसे “साँपूसरोवर” बनवाया था । यह रूपक प्रवाद बौद्ध वा जैनधर्मावलम्बी तक्षकजातिके साथ ब्राह्मणोंके विवादकी सूचना देता है ।

इस नगरमें लक्षफुलानीके नामसे एक कुण्ड है । अति प्राचीन कालमें मारवाड-के बहुत दूरवर्ती प्रांतके फुलैरानामक स्थानमें लक्षफुलानीका राज्य था, और सुनते हैं कि एक समय उनकी जयपताका समुद्रके किनारे तक उड़ी थी । लूनी

जितने राजपूत उपस्थित होतेहैं, वह सबही राणाजीको भाँति २ की भेट और नजरें देतेहैं । उस समय तोपें बराबर छूटती रहतीहैं, और बन्दी तथा भाटगण मेवाड़के व्यतीत वीरोंकी गुणावलीका गान करतेहुए राणाजीकी स्तुति किया करतेहैं उस दिन बहुतसे नये खरीदे हुए घोड़े रंगभूमिमें लाये जातेहैं । सेनासहित राणाजी जैसे गिरिकूटसे उतरना आरम्भ करतेहैं, वैसेही अश्वपालगण उन नवीन घोड़ोंके नामोंका बखान किया करतेहैं । उन घोड़ोंमें किसीका नाम मानक किसीका नाम वाजीवाज होताहै । इस प्रकार नये २ नाम सुनतेहुए राणाजी राजभवनमें आकर सर्दारोंको उचित पुरस्कार देतेहैं । उस दिन जो पोशाक राणाजी पहनतेहैं, उत्सवके अन्तमें कोटारियोंका चौहान सर्दार उसको प्राप्त करलेताहै । जिस दिन दुराचारी यवनवीरके अत्याचारसे उदयसिंहकी जानके लाले पडेथे, जिस दिन परम विश्वासिनी धात्री पन्नाने अपने प्राणप्यारे पुत्रके हृदय रुधिरसे उस पिशाचकी प्यास बुझाकर अनाथ राजकुमारके जीवनकी रक्षा की थी, उसही दिन जिस चौहान सर्दारने राणा उदयसिंह और पन्नाको अपने घरमें रक्खा था, वर्तमान कोटारियों सर्दार उसी चौहान सर्दारका वंशधरहै । राणाजी उसही राजभक्तिके बदलेमें उसके वंशवालोंको अपनी पोशाक दिया करतेहैं ।

गणेशपूजा।—प्रत्येक सनातन धर्मावलम्बी सिद्धदाता गणेशजीकी पूजा करतेहैं। कोई भी राजपूत गणेशजीका नाम लिये बिना किसी कार्यको आरम्भ नहीं करता है । वीरलोग भी उन्हींको मनातेहैं, वनिये भी अपने बहीखातेमें पृष्ठके ऊपर श्रीगणेशाय नमः लिखतेहैं । स्थान या मंदिरादि बनानेके समय भी उनकी प्रतिमाको भीतमें बनवालेते हैं । राजस्थानमें राजपूतोंका ऐसा कोई घर नहीं दिखाई देता जिसके द्वारकी चौखटपर अथवा किवाडमें गणेशजीकी मूर्ति नहीं बनीहोती। बहुतसे हिंदू नगरोंमें गणेशपौर नामक एकद्वार भी गणेशजीके नामपर बनाया जाताहै उदयपुरमें भी गणेशद्वारनामक एक तोरणद्वार है । राजस्थानके प्रायः प्रत्येक शैलकूटपर चढ़नेके समय मार्गके आरम्भमें ही गणेशजीका एक २ मंदिर दिखलाई देताहै । गणेशजीकी पूजाके साथ उनका प्रिय वाहन चूहा भी पूजा जाताहै ।

गणेशजीकी पूजाका वर्णन करतेहुए, हम उस देवीके दियेहुए दुधारे खड्गका वृत्तांत लिखना भूलगये कि जो राजपूतोंका प्रधान अवलम्बहै और उनके वीर्यका प्रधान परिचायकहै । इस खड्ग विषयके राजपूतोंमें अनेक प्रकारके गुढ़ व

“राजके मालिक वह, मस्तकका मालिक यह ।” इसका अर्थ यह है कि, राजा तो अपने राज्यके मालिक हैं, किन्तु मेरा मस्तक मेरे प्रभुका है । यथार्थ बात यही है कि सरदार लोग अपने प्रभु सामन्तकी आज्ञा पालन ही सब प्रकारसे उचित समझते हैं ।

ऊपरके सामन्तोंसे लेकर नीचेके सरदारतक प्रत्येक श्रेणी ही प्रबल पक्षके अत्याचारसे उद्धार प्राप्तिके लिये उपाय करनेमें सचेष्ट हैं । सामन्तोंके साथ आधीनके सरदारोंका मनोविवाद व किसी प्रकारका भारी विवाद उपस्थित होनेपर राजा ही उस स्थानमें विचारभार पाते हैं । राजाके साथ सामन्तोंकी जैसी बाध्यबाधकता-प्रभु भृत्य सम्बन्ध है, सामन्तमण्डलीके आधीनमें स्थित सरदार वा किसी प्रजाके साथ राजाका वैसा कोई सम्बन्ध वा किसी प्रकारका मेल नहीं है । वह सरदार वा प्रजागण साक्षात् सम्बन्धमें राजाकी किसी आज्ञाके पालन करनेमें बाध्य नहीं हैं । दूसरे पक्षमें राजाके निकटसे किसी प्रकारका अनुग्रह वा पुरस्कार भी वह नहीं पासकते । सामन्तकी आज्ञानुसार राजाके लिये कोई कार्य करते हैं किन्तु राजा कभी किसी सामन्तके किसी सरदार वा प्रजा मण्डलीको स्वयं बुलाकर किसी कार्यमें नियुक्त नहीं करसकते । दूसरे सरदार और प्रजावर्ग सामन्तोंके यहांतक अनुगत हैं कि सामन्त यदि राजाके विरुद्ध कोई अन्याय कार्य करें अथवा विद्रोह सूचक कार्यमें किसी सरदार वा प्रजाको नियुक्त होनेकी आज्ञा दें तो वह शीघ्र बिना किसी विचारके उस कार्य में तत्पर होजाते हैं; सामन्तके उस दुष्ट अभिप्राय वा अन्याय मूलक उद्देशके विरुद्ध वह किसी प्रश्नके उठानेमें साहसी नहीं होते । सामन्त जिस समय जैसी नीति अवलम्बन और जैसा आचरण करें, आधीनके सरदार और साधारण प्रजावर्ग द्विरुक्ति न करके उसीका अनुसरण करना सिद्धान्त करलेते हैं । सामन्त यदि राजभक्त हो तो वह भी राजभक्तिके वशीभूत होकर जन्मभूमि और स्वजातिके गौरव वर्द्धनमें जीवन उत्सर्ग करदेते हैं और यदि सामन्त विद्रोही और स्वजातिके शत्रु होजायें तो वह भी उसी प्रकार विद्रोह करनेमें कुछ भी नहीं हिचकते । इसके प्रमाणमें यहां बहुतसे प्रमाण उद्धृत किये जासकते हैं किन्तु हम उन प्रमाणोंको अनावश्यक समझते हैं क्योंकि मूल इतिहासके पढ़नेसे पाठकोंकी भलीभाँति विदित होगया है कि कई स्थानोंपर विद्रोही सामन्तके अधीनमें और उनकी आज्ञामें सम्पूर्ण सम्प्रदायने राजाके विरुद्ध खड़े होकर अत्यन्त भयंकर

उसने इस बातका विचार नहीं किया कि यह विकट प्रकाश किसी भूत प्रेत पिशाच अथवा सर्पद्वारा तो उत्पन्न नहीं हुआ है; वरन दूने साहसके साथ निडर हृदयसे उस प्रकाशकी ओर बढ़ता गया। इस प्रकार आगे चलनेपर कुछ ही दूरपर एकसाथ हकावका सा होकर खड़ा होगया। सम्पूर्ण अंग शिहरित हुआ; हृदय बारम्बार धडकने लगा, रोम २ खड़ा होगया उसने देखा कि एक बड़े-भारी चूल्हेके भीतर नीली और लाल आग जलती है, उसही अग्निके प्रकाशसे सुरंगमें कुछ दूरतक उजाला था। वीभत्स वेष धारिणी कई एक नागिनी उस बड़े कड़ाहको चारों ओरसे घेरेहुए विकट गंभीर शब्दसे मंत्र पढतीहुई तान्दव नृत्य करतीं और एक २ बार अपनी उस मायामयी लकड़ीसे जो उनके हाथोंमें थीं, उस कड़ाहको स्पर्श कर रही हैं। मालदेव इस अद्भुत दृश्यको देखकर कुछदेर भौचक सा खड़ा रहा। क्या कलं, किस प्रकारसे मंगल हांगा, इन बातोंका वह कुछ भी निश्चय न कर सका। उसका पिछला पद-शब्द उस गंभीर मन्त्रोच्चारण और नृत्यके शब्दमें जब लीन होगया तब नागिनियोंने स्थिर भावसे खड़े होकर उसकी ओर देखा। अंगारकी समान उनके लाल २ नेत्र और विकट मुखको देखकर मालदेवका हृदय भयभीत हुआ। परन्तु मुखपर भयके कुछ भी चिह्न न थे। वह स्थिरभावसे खड़ा होगया। तब उन भयंकर भुजंगिनियोंने उसके आनेका कारण पूछा। शोनगडे सरदारने धीरे २ उत्तर दिया कि “यक्ष, रक्ष, गन्धर्व, किन्नर अथवा नाग आपलोग जो कोई भी हों मैं आपके चरणोंमें प्रणाम करता हूँ। आपकी गंभीर शान्तिको भंग करने अथवा आपके गूढ़ स्थानका भेद खोलनेके लिये मैं यहाँपर नहीं आया हूँ। गि-ह्लौटकुलके अधीश्वर वीरवर वाप्पारावलको जो देवी खड्ग चतुर्भुजा देवीने दिया था, अवतक वह चित्तौरमें ही था, परन्तु गत यवनविप्लवके समयसे न जानें कहाँ चलागया सो ज्ञात नहीं। अतएव निवेदन यह है कि यदि आपलोगोंने उसको रख लिया हो तो मुझको दे दीजिये।” भुजंगिनियोंने मालदेवका निडर-पन देखनेके लिये उस कड़ाहका ढकना खोल दिया। ढकना खुलते ही मालदेवको वीभत्स दृश्य दिखाई दिया। मालदेवने देखा कि उस कड़ाहमें अनेक प्रकारके जन्तुओंके अंग खण्ड २ होकर पड़े हुए हैं। उन अंगोंके बीचमेंसे एक वज्रकी कोमल बाँह उसको दिखाई दी। मालदेवने चकित होकर विचार किया कि यह बालक कौन है? कुछ देर पीछे उन नागिनियोंने रक्त मांस व चर्बीसे मिलेहुए उन अंग प्रत्यगोंको एक पात्रमें रखकर मालदेवके सामने ला,

धरे और उसको भोजन करनेके लिये संकेत किया । पिशाचोंके खानेयोग्य उन दुर्गन्धमय पदार्थोंके खानेमें मालदेवने कुछ भी सोच विचार न किया; उसने तत्काल स्वा पीकर शीना पात्र नागिनियोंको लौटा दिया । इस कठोर और निडर कार्यमें यह भलीभाँति प्रमाणित होगया कि उस देवीके दियेहुए खड्गको भली-भाँतिमें मालदेव व्यवहार करनेके योग्य है । नागिनियोंने प्रसन्न होकर वह खड्ग दे दिया । मालदेव भी उस खड्गको लिखेहुए अपनी विजयका होना समझकर विकट सुरंगके बाहर आया । *

शानगड मंदारकी बेटीसे विवाह करके जिसदिन हमीरका चित्तौरका सिंहासन मिलाथा, उसही दिन यह खड्ग भी मिलाथा, किसी भट्टग्रन्थमें ऐसा लेख है कि गणा हमीरने ही भगवनी चारणीदेवीकी पूजा करके फिर इस खड्गको पायाथा ।

लक्ष्मीपूजा ।—कार्तिकी शुक्ला पूर्णिमाका परम श्रद्धा भक्तिके साथ राजपूत लोग सौभाग्यदायिनी लक्ष्मीजीकी पूजा करतेहैं । इस उत्सवके समय भी बड़ी धूम धाम होतीहै ।

कार्तिक वदी ३० अमावस्याको मेवाडमें दीवाळी (दीवाली, दीपावली दीपदान) का उत्सव हुआ करताहै । इस दिनकी रात्रिको समस्त राजस्थानमें रोशनी होतीहै । नगर, गाँव और प्रत्येक छावनीमें ऐसी रोशनी होतीहै कि रातका भी दिनही मालूम होताहै । राजासे लेकर निर्वन भिखारी तक भी सामर्थ्यके अनुसार अपने २ स्थानपर दीपक जलातेहैं । मेवाडके सबही लोग इस उत्सवके दिन नैवेद्य लेकर लक्ष्मीजीके मंदिरमें जातेहैं । गणाजी भी आज अपने प्रधान मन्त्रीके सम्मुख बैठकर भोजन करतेहैं; और वह मन्त्री उस दीप वृक्षके अग्रभागमें कि जिनको गणाजी स्थापित करतेहैं,—तेल डालता रहताहै । गणाजीके इष्ट मित्र और सम्बन्धी ऐसा ही करतेहैं । जिस अक्षकीडा (जुआ) को त्रिकालदर्शी भगवान् मनुजीने अत्यन्त अनिष्टकर समझके वर्जदियाहै, राजपूत लोग दीवालीके

* मालदेवने जिस प्रकार इस खड्गको उद्धार कियाथा, उसही भाँतिसे जिन वीरोंका त्रिशूंगनामक खड्ग भी उद्धार हुआथा । राजपूत जो प्राचीन वीरगण खड्गको प्रधान सहायक समझते थे । इतिहासमें भलीभाँतिसे इसका समस्त प्रमाण पाया जाताहै । अभी जिस स्त्रीका नाम लिखागया, यह एक प्रसिद्ध जितवीरकी लडकी थी । पिताकी मृत्युके उपरान्त अपने पवित्र खड्गको न देखपाकर उसने अनेक प्रकारकी मंत्रीकी सहायतासे उसका उद्धार कियाथा । इसका वर्णन “हर्वराका शाग” नामक आइसलेण्डके इतिहासमें पायाजाताहै ।

उत्सवमें उसही जुएको खेला करते हैं । आजके दिन जिसकी जीत होतीहै, उसका सम्पूर्ण वर्ष आनन्दसे व्यतीत होताहै; ऐसा उन सबका विश्वासहै ।

इसके आगे दोयजको भइयादोयज (भ्रातृद्वितीया) का उत्सव होताहै । कहतेहैं कि सूर्यकी पुत्री यमुनाने इस तिथिको अपने भ्राता यमको नेवता देकर अपने घरपर भोजन कराया था । इसही कारणसे हिन्दूशास्त्रमें भ्रातृप्रेमका पवित्र प्रकाश करनेके लिये यह दिन श्रेष्ठ मानागयाहै। शास्त्रग्रन्थोंमें लिखाहै कि जो कोई स्त्री कार्तिक शुक्ल २ को चन्दन व ताम्बूलआदि द्वारा अर्चनाकरके अपने घरपर भोजन करातीहै विधवापनके कष्टका वह कभी नहीं भोगती, और उसका भ्राता भी दीर्घायुको प्राप्त करके अंतसमय यमराजके दंडसे छुटकारा पाजाताहै ।

इस ही तिथिको राजपूतगण गोपार्वणको आरंभ करतेहैं । संध्याके समय जब गाये गोधूलिकां उडातीहुई अपने २ घरको आतीहैं, उस ही समय उनकी पूजा होती है ।

अन्नकूट ।—भगवान् श्रीकृष्णजीकी पूजाके लिये राजस्थानमें जितने उत्सव होताहैं, उन सबमें अन्नकूट प्रधान है । नाथद्वारमें यह उत्सव बड़ी धूमधामके साथ होताहै । भारतवर्षके अनेक स्थानोंसे वैष्णव, साधु संत और कृष्णभक्तगण आकर इस उत्सवकी शोभाको बढ़ातेहैं । राजस्थानके भिन्न २ नगरोंमें भगवान् विष्णुकी जो सात मूर्तियाँ विरामान हैं, इस उत्सवके आरम्भमें ही वह समस्त नाथद्वारमें जाकर विधिपूर्वक पूजी जातीहैं । उन सात मूर्तियोंको संतुष्ट करनेके लिये नाथजीके मंदिरके आँगनमें अन्नव्यंजनकी राशियोंके कूट लगायेजातेहैं । राज पूतजातिके गौरवकालमें यह अन्नकूट महोत्सव अत्यन्त ही धूमधामके साथ होताथा । जिस समय अनर्थकारी युद्धोंकी दिग्दाही आगसे राजस्थान भस्म नहीं हुआथा; जिस समय विष्णुपरायण राजपूतगण अपने महाराजाओंके ऊँचे गौरवसे गौरवान्वित होकर परमानंदसे परमेश्वरके चरणोंमें भक्तिपूर्वक कुसुमांजलिको देसकते थे, राजस्थानके उस सौभाग्य दिनमें अन्नकूट उत्सवके समय राजपूतोंके चार प्रधान राजा नाथद्वारमें आकर अमूल्य मणिरत्न दान करतेहुए राजपूतोंके गौरवका प्रकाशमान परिचय देतेथे । मेवाडके राणा अरिसिंह (उरसी) मारवाडके राजा विजयसिंह, बीकानेरके महाराजा गजसिंह, और किशनगढके महाराजा बहादुरसिंह यह चारों महाराज अपनी २ शक्तिके अनुसार एक एक रत्नालंकार दान करके भगवानकी प्रसन्नताको प्राप्त करतेथे । यदि महाराजाओंकी बात छोडकर साधारण अवस्थावाली राजपूतबालाओंके दानका वर्णन श्रवणकरतेहैं तो बहुत ही आश्चर्य होताहै । कहतेहैं कि ऊपर कहेहुए चारों महा-

राजाओंके आनेके समयमें सूरतकी एक विधवास्त्रीने (७००००) रुपये ठाकुरजीको चढ़ायेथे । यद्यपि आज राजस्थानकी शोचनीय दुरावस्थाके समयमें ऐसा विवरण असम्भव समझाजायगा । परन्तु उस समय कि जब राजस्थानका गौरव उन्नतिके शिखरपर पहुँच चुकाथा, राजपूतलोग देवसेवामें इस प्रकार और कभी इससे भी अधिक धन उत्सर्ग करदेतेथे, इस बातका स्पष्ट प्रमाण मेवाडके बहुतसे स्थानोंमें पायाजाताहै ।

यहांपर प्रयोजन समझकर भगवान् श्रीकृष्णजीकी पूर्वोक्त सात मूर्तियोंका वृत्तान्त लिखाजाताहै । प्रसिद्ध वैष्णव वल्लभाचार्यजी महाराजने इन सातमूर्तियोंको एकत्र करके इस महान् अन्नकूट उत्सवकी प्रतिष्ठा की थी । बहुत दिनतक यह सातों मूर्तियाँ एक ही मन्दिरमें रक्खी हुई थीं, पीछे श्रीमान् वल्लभाचार्यके पोते महाराज गिरिधारीजीने अपने सातपुत्रोंको श्रीभगवान्जीके यह सात रूप बाँटदिये । उन सात पुत्रोंके वंशधरगण आजतक प्रधान पुरोहित बनेहुए सात देवमूर्तियोंके मन्दिरोंमें विराजमान हैं । भगवान्जीके सात रूपोंका नाम, आधुनिक वासस्थानका नाम तथा अपरापर प्रयोजनीय विषय नीचे लिखेजातेहैं ।

श्रीनाथजी	नाथद्वारा ।
१ नवनीत	नाथद्वारा ।
२ मथुरानाथ	कोटा ।
३ द्वारकानाथ	कंकारावली [काकरौली]
४ गोकुलनाथ वा गोकुलचन्द्रमा...				जयपुर ।
५ यदुनाथ	सूरत ।
६ वेतालनाथ	कोटा ।
७ मदनमोहन	जयपुर ।

भगवान् श्रीनाथजीको सर्वप्रधान होनेके कारण इन सातमूर्तियोंमें नहीं मिलायाहै । नवनीतजीका मन्दिर नाथजीके निकट ही बनाहुआहै । इनका दूसरा बालमुकुन्द हैं इन बालकमूर्तियोंके दहिने हाथमें लड्डू रक्खा हुआ है । प्राचीन कालसे श्रीबालमुकुन्दजी महाराज गृह-देवताओंमें गिनेजातेहैं। मुसलमानोंके द्वारा मंदिर तोड़ेजानेपर भगवान् मुकुन्दजी बहुत दिनोंतक जमुनाजलमें स्थितरहें । एक समय श्रीवल्लभाचारीजीने स्नान करनेके समय उनको पाया । उन्होंने इस मूर्तिको अपने स्थानपर लाकर गृहदेवताके मन्दिरमें स्थापनकिया और भक्तिके साथ उनकी पूजा करने लगे । उसदिनसे श्रीभगवान्जी नवनीतवल्लभके कुलदेवता होकर

आजतक उस ही भाँतिसे पूजा ले रहे हैं। आज भी उन प्रधान वैष्णवाचार्यकी सन्तान परम भक्तिके साथ बालमुकुन्दजीकी पूजा करती है । भगवान श्रीकृष्णजीकी दूसरी मूर्ति मेवाड़के अन्तर्गत कामनरनगरमें विराजमान थी परन्तु किसी कारण वश वहाँसे चलकर इस समय कोटेमें स्थित है ।

बल्लभाचार्यके तीसरे परपति बालकृष्णको भगवान श्रीकृष्णजीकी द्वारकानाथनामक मूर्ति मिली थी । कहते हैं कि सत्ययुगमें अमरिक नामक एक राजाने सूर्यवंशमें जन्म लेकर एक विष्णुमूर्तिकी पूजा की थी; वर्तमान द्वारकानाथकी यह मूर्ति उसकी प्राचीन मूर्तिके अनुसार बनाई गई है । चौथी मूर्ति गोकुल चन्द्रमाका भी ऐसा ही वर्णन पाया जाता है; सुनते हैं कि बल्लभाचार्यजीको यह मूर्ति यमुनातीरेके किसी विलमें मिली थी; उन्होंने अपने सालेको दे दी । तदनन्तर गोकुलचन्द्रमाजी, गोपजीवन गोकुलपुरीमें प्रतिष्ठित हुए । यद्यपि वर्तमान समयमें वह जयपुरके मध्यमें विराजमान हैं, तथापि गोकुलवासी भक्तजन प्रतिदिन उनके पुराने मन्दिरमें जाकर विधिविधानसे उनकी पूजा करते हैं ।

भगवानजीकी पंचम मूर्ति यदुनाथजी पहिले मथुराके निकट महावन स्थानमें विराजमान थी । महावली महम्मद गजनवीने जिस समय मथुरानगरीको उजाड़किया उस समय यदुनाथजी मुरतनगरमें लाए गए । छठी मूर्ति,—बेतालनाथ या पाण्डुरंगजी संवत् १५७२ व ० में गंगाजीमें पाये गये थे । सातवीं मदनमोहनजीकी मूर्तिकी पूजा आजतक एक स्त्री ही करती है ।

जिस अन्नकूट उत्सवका वर्णन करते २ हम भगवान श्रीकृष्णजीकी सात मूर्तियोंका वर्णन करने लगे थे, उसकी दो चार बातें अभी और लिखनेसे रह गई हैं । अन्नकूटके दिन राजा जी दिनभर आनन्द मनाते हैं । उदयपुरके प्राचीन रंगस्थल चौगान नामक स्थानमें जाकर मैदानमें घुड़दौड़ और गजयुद्ध इत्यादि खेल देखाकरते हैं,—संध्याके समय आतिशवाजी छूटती है और अन्नकूटका उत्सव समाप्त होता है ।

मकरसंक्रान्ति ।—टाड़साहवने भ्रमसे कार्तिकी विष्णुपदी संक्रान्ति मकरकी संक्रान्ति लिखी है, अस्तु ! इस बातको सम्पूर्ण सनातन धर्मावलम्बी जानते हैं कि कार्तिकमासकी संक्रान्तिका दिन परम पवित्र है । इस दिन भी राणाजी अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर चौगाननामक प्रासादमें जाते हैं । सरदारोंके साथ घोड़ेपर चढ़कर उस दिन राणाजी गोलकनामक खेल करते हैं ।

मार्गशिर और पौष मासमें ऐसा कोई विशेष पर्व नहीं होता । यद्यपि तिथि और नक्षत्रोंका संयोग होनेसे इन दो महीनोंमें भी दो एक दिन पवित्र गिने जाते

हैं; । तथापि राजपूतलोग उनका विशेष त्यौहार नहीं मानते । केवल मार्गशिर शुक्लसप्तमीको उनका एक उत्सव होता है । इस तिथिको वह मित्रसप्तमी कहते हैं । भगवान् दिवाकरजी इसही तिथिको अपनी माता अदितिके गर्भसे उत्पन्न हुए थे । इसही कारणसे सूर्यवंशीय राणाजी इस दिनको पवित्र मानते हैं । *

राजपूत स्वाधीनताकी लीलाभूमि, वीरता और महानताकी साधन पीठ, हिन्दुगौरवकी खानि, वीरमाता मेवाडभूमिमें जितने त्यौहार और पर्व होते हैं, उनका वर्णन भलीभांतिसे होगया । जिस लेखनीकी सहायतासे बाप्पारात्रलकी वीरता, समरसिंहकी समरकौशल, प्रतापसिंहका स्वदेशप्रेम और प्रतापराजसिंहका निडरपन और तेजवर्णन किया गया; उसही लेखनीकी सहायतासे उनकी संतानकी विलासप्रियता भीरुता और अन्तमें वीरवन्दनीय गिल्लौटकुलकी शोचनीय दुर्दशा भी लिखी गई है जो गिल्लौट वंश एक समय वीरता, सभ्यता, तेजस्विता, और महानुभावतामें संसार शिरमौर समझा जाता था; जिसकी वीरताके डंकेका शब्द हिन्दुकुशपर्वतको तोडकर पौराणिक शाकद्वीपकी छाती तक पहुँच गयाथा, जिसके अकेले वंशधरकी अलौकिक वीरतासे एक समय, गहनशाह अकबरका सिंहासन कंपायमान हुआ था आज उसही कुलका एक साधारण वंशधर अत्यन्त दीन तन छीन और मन मलीन होकर समयको व्यतीत कर रहे हैं । जिसके पूर्व पुरुषोंके रोमर से अग्निकी चिनगारियाँ निकलकर भारतवर्षको ही नहीं वरन ईरान तूरान तकको डावाँडोल कर देती थीं; आज दुर्भाग्यरूपी कठोर शीतके लगनेसे वही चिनगारियाँ निर्वाण हो गई हैं ।

* मान्यवर टाडसाहबने अंग्रेज होकर राजपूतोंके धर्म और उत्सवादिका कैसा उत्तम वर्णन किया है, यद्यपि कहीं २ पर उन्होंने धोखा भी खाया है, परन्तु विचारकर देखनेसे वह भ्रम भी नाज्जिन करनेके योग्य है। जो उक्तमहोदय संस्कृत विद्या जानते होते तो उनसे कभी भी यह दो चार भ्रम न होते । इस अध्यायके प्रथमांशमें जिस भानुसप्तमीका विवरण लिखा गया है, वह इस मित्रसप्तमीका दूसरा नाम होनेके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। टाडसाहबने इस भानुसप्तमीको ही सूर्यभगवान्का जन्मदिन बताया है; परन्तु हम देखते हैं कि आदित्य भगवानने मार्गशिर मासकी शुक्ल सप्तमीको जन्म लिया है । पाठकगणोंको समझानेके लिये भविष्यपुराणका एक प्रमाण नीचे लिखा जाता है । यथा; “अदित्यां कस्यपाज्ज्ञे मित्रो नाम दिवाकरः । मार्गशीर्षस्य मासस्य शुक्लपक्षे शुभे तिथौ । सप्तम्यां तेन सा ख्याता लोकेऽस्मिन् मित्रसप्तमी ॥” भविष्यपुराणे ।

अब वह तेज नहीं है !—वह दमक नहीं है ! वह विश्वदाही उपाय नहीं है ! सबका ही अन्त होगया ! सबहीको शीतने जकडालिया !—आज कल तो जडता, निस्तब्धता और मौनताने मेवाडके सम्पूर्ण अंगोंमें निवास करलिया है ! उन्नत, प्रतिष्ठित, गौरवान्वित मेवाडका दारुण शोचनीय और हृदयविदारक विध्वंस हुआ है। उसके आकाशस्पर्शी गौरवरूपी शिखर खंडखंड होकर आज पृथ्वीसे लिपट-रहे हैं, आज मेवाडमें उठनेतककी सामर्थ्य नहीं है ! जो मेवाड शक्तिका आगार समझा जाता था; आज वही मेवाड शक्तिहीन है ! परन्तु अब मेवाड क्या उठेगा ही नहीं ? क्या इस दारुण दुर्दशाके होनेसे अब मेवाड अपना शिर नहीं उठासकंगा ? हम कहते हैं कि अवश्य उठावैगा ! आशा होती है कि—मेवाड फिर जी उठेगा । चित्तौरकी प्रकार और ध्वंसराशिसे फिर भी मेवाडका अवतार होगा । हम कहसकते हैं कि पुनर्वाार वाप्पारावल, समरसिंह, प्रतापसिंह, राजसिंह, तथा संग्रामसिंहकी चिताभस्मसे नये २ महावीर उत्पन्न होकर जननी जन्मभूमिके गौरवको आकाशतक पहुँचा देंगे । पुनर्वाार चित्तौर प्रफुल्लित होगा, उसके प्रफुल्लित होनेसे सम्पूर्ण भारतभूमि उज्ज्वल होजायगी । आशा तो होती है;—परन्तु इस आशाके पूर्ण होने न होनेका कौन ठिकाना है ? आशा ! हा कपटिन् ! हा मायाविन् ! तेरा रूप हमारे ध्यानमें नहीं आसकता ।—

गीतिका ।

गंभीरतम छायो चराचर, झार नहिं सूझत मही ।
 वेताल भूत पिशाच डोलत, दुर्दशा न परे कही ॥
 जहँ सघन उपवन हैं प्रफुल्लित, सुमन नित वरषावते ।
 तहँ काक कीट उलूक बैठे, विकट शोर मचावते ॥
 चित्तौर उन्नति व्योमदेखी, दुर्दशा अब अतिभई ।
 स्वर्गाहि रसातल भेद व्याप्यौ, सुखद जो भइ दुखमई ॥
 गिह्लौट रविकुल कमल प्रगटे, वीर अगणित बाँकुरे ।
 सो वंश अजहँ रह्यौ पर नहिं, वीर वैसे अवतरे ॥
 कहँ समरसिंह कराल कहँ भट, विकट वीर प्रतापसों ? ।
 कहँ धीर लछमनसिंह रण मद, भरचौ रवि उत्तापसों ? ॥

वह धवल मुभट हमीर कहँ, संग्राम राणा अति बली ? ।
 वे आज भुजकांडं कहँ जिन, चलत नित वसुधा हली ? ॥
 धन धन्य नगर चित्तौर जग, शिर-मौर वीर शिरांमनी ।
 अब हाय ! क्या अवनत भयो, नित २ विपति बाढत घनी ॥
 अनुपम अनूपम रूप खोयां, केतु अरु आयुध विना ।
 कव बहुदि देखहि नयनभर, तेरी मनाहर मुरचना ? ॥
 कव उदय होंगे मुदिन तें, उच्च पदवी सां लहै ? ।
 पुनि वीरभूमि शिरोरतन, निजछत्र तें शिर रहै ! ॥
 अब लही छाया वृटिनगणकी, कामना सब पूरहीं ।
 सम्पति मुजस आनन्द आदि, विभूति सकल बहोर्हीं ॥
 श्रीकृष्णचन्द्र कृपाल आनंद-कन्द, यह वर दीजियं ।
 चित्तौरकं संग बाँह द्विज, बलदेवकी गह लीजिये ॥
 पर्वोत्सव समाप्त ।



चौबीसवां अध्याय २४.

समाजनीतिमें ज्ञानकी आवश्यकता; धर्मविधिकी अपेक्षा समाजके आचार व्यवहारकी प्रबलता; तथा उनकी परवर्तन शैली; राजस्थानकी अनेक जातियोंमें आचार व्यवहारकी भिन्नता; राजस्थानकी स्त्रियोंपर राजपूतोंकी भक्ति और सन्मान; रनवासकी रीतिका उपयोगी होना; राजपूतोंका राजकुमारियोंके गौरवको रखना; राजपतनियोंकी असीम पतिभक्ति; इतिहास तथा काव्योंके लेख इस समय उसके सम्बन्धके उदाहरण; राजपूत स्त्रियोंकी उदारता साहस प्रत्युत्पन्नमतित्व; पुगालके साधु मालिनी देवीका विवरण; रनवासकी प्रथा; राजपूत-स्त्रियोंकी प्रधानताका विस्तार; ऐतिहासिक प्रमाण; संसारकी अन्यजातिकी स्त्रियोंके साथ हिन्द स्त्रियोंकी तुलना.

सर्वसाधारणमें प्रचलित हुए इतिवृत्तसे हम केवल जातिकी बाहिरी अवस्था तथा वीर नीतिसे शासन करनेवाले अधीश्वरों तथा मनुष्योंके चरित्रोंको जाननेके लिये समर्थ हुए हैं । उस जातिके भीतरी और बाहिरी चरित्रोंकी व्यवस्था किस प्रकार थी, उस साधारण इतिहासमें उसके जाननेका सुभीता हमको नहीं मिला । इसी कारण बुद्धिमान् टाडसाहबकी युक्तिमें “सामाजिक आचार व्यवहार ही किसी जातिके इतिवृत्तका अधिक प्रयोजनीय अंश है । उस जातीय आचार व्यवहारके प्रति बहुत समय तक तीव्र दृष्टिपूर्वक देखनेसे उसका फलस्वरूप उस जातिकी आभ्यन्तरिक अवस्थाके सम्बन्धमें निश्चित ज्ञान प्राप्त होसकताहै । अनेक प्रकारके दृश्योंसे पूर्ण इस बृहत् इतिवृत्तके चित्रपटपर उस राजपूत जातिका आभ्यन्तरिक, सामाजिक, परिवारिक और

मनुष्यगत चरित्रोंका अंश चित्रित करना अत्यन्त प्रयोजनीय है, बिना इसके हमारा संचित किया हुआ उपकरण मानों सभी असम्पूर्ण रहेगा. इससे हम उस कार्यके साधनेके लिये आगे बढ़ें। नैतिक कारण और इसके फलके ऊपर दृष्टि न रखकर इतिवृत्तके हृदयमें वर्णन किये हुए अविश्रान्त समरके वृत्तान्तको पढ़नेसे मनुष्य समाज कैसे उपकार प्राप्त कर सकता है? धर्मनीतिके साथ समाजनीतिका विलक्षण संयोग है, इस बातको कोई अस्वीकार न करेगा। हमारे प्राचीन इतिहासवेत्तागण वर्णनीय इतिहासोंमें धर्मनीति और समाजनीति-की विलक्षण अवतारणा करगये हैं। परन्तु प्राचीन जगत्के वर्तमान उदारचेता मनुष्योंका मत है कि इतिवृत्त, समाजनीति और धर्मनीति इन तीनोंको इकट्ठा न जड़कर एक एकका स्वतंत्र स्वतंत्र रूपसे वर्णन करना उचित है, हमलोग इस वानके बहुतसे अंश सत्य माननेमें तैयार हैं। आर्य इतिहासवेत्तागण कल्पना और कविताकी सहायतासे इतिवृत्त दामको संग्रथित करगये हैं, इतिहासकी गोदीमें धर्मनीति, समाजनीति और राजनीति इन तीनोंको छिन्नभिन्न भावसे स्थान मिला है. ऐसा बहुतोंका विश्वास है कि इसका फल एक पक्षमें ऐसा प्रीति-कारक नहीं है, एक वीरपुरुष अपने प्रबल प्रताप और असीम विक्रमके साथ सेनाको चला रहा है, पृथ्वीमें वीरोंके मदसे मतवाले होकर-वीररसके सांते चारों-ओर वह रहे हैं। आकाशभेदी, रणभेदी शब्द, प्रतिज्ञा उद्दीपना जीवन्तमूर्तिका आविर्भाव हो रहा है, कवि इतिहासवेत्ताओंने सहसा उसही समय समात्पिक पहिले मुहूर्तमें ही धर्मनीतिका प्रसङ्ग लाकर फिर एक रसका आविर्भाव कर दिया। इस रसको भंगहुआ देखकर हमारे रसिक पाठक अवश्यही जल उठेंगे। इतिहासवेत्ताके पक्षमें प्रत्येक कार्य प्रत्येक घटनाका फलाफल स्वतंत्ररूपसे प्रकाश पाजाता है, यद्यपि हम उपरोक्त रूपसे इतिहासवृत्तद्वारा जातिके नैतिक जीवनकी गतिका पीछा नहीं कर सकते, परन्तु परिवारिक जीवनके चित्रकी प्रत्येक रेखा और प्रत्येक अंगकी पूर्ण मूर्ति देखनेमें हमारी सामर्थ्य न हुई। जातीय आचार व्यवहार ही एकमात्र उसके पक्षमें प्रधान सहायकारी है। सामाजिक नीति वा जातीय आचार व्यवहार ही जातीय भीतरी अवस्था का पूर्ण परिचारक है। किसी देशकी किसी जातिका आचार व्यवहार किसी समय भी समभावसे स्थित हुआ दृष्टि नहीं आता। आचार व्यवहारका सर्वदा परिवर्तन होता रहता है। जातीय धर्मनीति सीमाबद्ध और परिवर्तन रहित है। परन्तु जगत्की प्रत्येक जातिका आचारही निरन्तर परिवर्तनके चक्रमें घूमता रहता है। महामाननीय टाडसाहब कहगये हैं,

कि रोमकोंके ' मोरस (Mores) तथा मध्य इटालियोंके कष्टूमि ' (Costumi) वरावर अर्थके जाननेवालेकी धर्मनीतिके सम्मुख यह राजपूतजातिकी चाल प्राचीन साधु और ऋषियोंके द्वारा चलाई हुई अनुसरणके योग्य और समाजनीतिके संमुख अपरिहार्य (छोड़नेके अयोग्य) है । धर्मनीतिके उपदेशक राजपूत इस बातको कहतेहैं, कि " कैसी बुरी चाल चलतेहो " । अर्थात् कैसे दुराचारियोंके मार्गपर पैर धराहै, तथा समाजनीतिके ऊपर अधिक निष्ठा रखनेवाले राजपूतोंकी कहावत है कि " बाप दादेकी चाल छोड़दो " अर्थात् उन्होंने बाप दादेके आचार व्यवहारोंको एकसाथ ही छोड़दिया है । धर्मनैतिक और सामाजनैतिक आचारोंके पालन करनेका राजपूतजातिको भलीभाँतिसे अभ्यास था । "

महात्मा टाडसाहबका कथन है कि अत्यन्तही वन्यजातिके अतिरिक्त और सब जातियोंका धर्म समानहै । मनु, मुहम्मद, मोजस अथवा क्राइष्ट इन सभीका धर्म एक मूल अर्थका बोधक था । प्रत्येकका उद्देश्य एकही प्रकारका था । प्रत्येकका लक्ष्य एकही पदार्थपर था । यद्यपि हम कर्नेल टाडसाहबकी इस कहावतको समर्थन करनेके लिये सम्मत नहीं हैं, दुःखका विषयहै कि उनकी समान मनुकी विधान करी हुई स्मृतिको यहूदियोंके धर्मके अनुरूप बनाकर हम उसको स्वीकार नहीं करसकते । राजपूतोंके बांधव टाडसाहबने कहाहै कि एक धर्मके भिन्नजातिमें प्रचलित होतेही उस भिन्नजातिकी मानसिक अवस्थाएँ कई प्रकारकी होंगी, यदि उनमें धर्मनीतिके सम्बन्धका पृथक्भाव कुछ है तो वह बड़ी सरलतासे पाया जासकता है, परन्तु भिन्न स्थानकी जातियोंका आचार व्यवहार इतनी दूर पृथक् वा ऐसा असमान है कि चिन्ताशील मनुष्य इसको सरलतासे जान सकता है । इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि शिशोदियोंकी निवासभूमि मेवाडके बालुकाप्रय मारवाडपर पैर धरते ही इस उक्तिकी सत्यता सरलतासे जानी जासकतीहै । अधर्माचरण करनेवालोंके द्वारा पराजय होकर नवीन नवीन मतवाले सम्प्रदायोंके आचार व्यवहारोंका बदल होता रहताहै, यह सब बातें सत्य हैं, इसीसे प्रकाशमानहैं, इतिहासकी गोदमें जो उज्ज्वल और सशक्त थे, इस समय हम उनमेंसे एक २ का वर्णन करनेकी अभिलाषा करतेहैं । हमारे पाठकगण इसको पढ़कर बड़ी सरलतासे राजपूतजातिके गुणागुण, पापपुण्योंकी कल्पना, सामाजिक विधान, उनका प्रकाश्य और गुप्त जीवनका आनंद, एवं उत्सव और राजपूतजातिमें प्रसिद्ध आतिथेयता किस भाँति होती थी, उसको सहजसे जान सकतेहैं । इसमें कुछ भी संदेह नहीं ।

समाजतत्त्वके जाननेवाले सदा तैयार रहतेहैं। किस जातिने जगत्में जीवित रूपिणी स्त्रीके ऊपर किस प्रकारका आचरण किया, समाजमें उस स्त्रीके स्वाभित्वकी सामर्थ्य, सन्मान, आदर, यत्न और प्रबलताका विस्तार किस प्रकारसे हुआ, समाजनीतिने स्त्रियोंको किस प्रकारकी विधिसे जड़कर कितनी स्वाधीनता दी और उन रमणियोंके कुलका कर्त्तव्य कर्म किस प्रकारसे नियुक्त करदिया था, सबसे प्रथम उनकी ओर दृष्टि करनेसे नीतिके जाननेवाले मनुष्य सरलतासे इसका पीछा करसकतेहैं, उस जातिकी सभ्यता उन्नतिकी कितनी ऊँची सीढ़ियोंपर चढ़ीहै। महात्मा टाडसाहबका अनुसरण करनेके पहले ही हम इस स्थानपर आर्य धर्मशास्त्र और पुराण आदिमें जिनका वर्णन हुआहै उसको हिन्दूलोग अवश्य जानतेहैं, दूसरे लोग भी जानें इसीलिये आर्यस्त्रियोंके सम्बन्ध की कितनी ही कथाओंको वर्णन करनेकी अभिलाषा करतेहैं। हिन्दूसमाजमें, राजपूतसमाजमें स्त्रीजातिका ऊँचा सन्मान चिरकालसे विराजमानहै। आर्यजातिने स्त्रियोंको जगत्की जीवितरूपिणी लक्ष्मी स्वरूपिणी जानाहै। मनुष्योंका सुख, सम्पत्ति एकमात्र पतिव्रता सतीके कल्याणसे होतीहै, जिस स्थानमें भार्या है, वही स्थान संसारका गृह है, भार्यासहित जो गृह है वह गृह नहीं कहाता, भार्याहीन मनुष्य गृहस्थी नहीं कहा जासकता। पराशर स्मृतिकी यही प्रधान उक्ति है, भार्याहीन मनुष्यको तो वनमें ही निवास करना कल्याणकारी है, * अथवा उसका रमणीय घर भी गहन वनकी समान है; संसारमें जितने भी रत्न हैं, उनमें स्त्रीरत्न सबसे श्रेष्ठ है, एकमात्र स्त्री ही संसारका जीवन है, शक्ति है, बल है, तथा सम्पूर्ण पुराणोंका भी यही मत है × इस कारण आर्य मुनि ऋषिगण आर्यस्त्रियोंका सन्मान कितना ऊँचा नियुक्त करगयेहैं, उसी उक्तिसे वह भलीभाँतिसे प्रकाश पारहीहैं। स्त्रियोंकी एकमात्र पुरुषजातिकी पशुवृत्तिको चरितार्थ करनेहीके लिये सृष्टि नहीं हुई है, सुख, शान्ति, मंगल, पवित्रता, पुण्य, धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्ति मूलकारण जिसस्त्रीको आर्यशास्त्रोंने

* “ भार्याधीनं सुखं पुंसां भार्याधीनो घनागमः ।

भार्याधीना मखोत्पत्तिर्भार्याधीनः सुखोदयः ॥

यत्र भार्या गृहं तत्र भार्याधीनं गृहे वसेत् ।

न गृहेण गृहस्थः स्यात् भार्यायाः कथ्यते गृही ॥ ” पराशरस्मृति ।

× “ यस्य नास्ति सती भार्या गृहेषु प्रियवादिनी ।

अरण्यं तेन गन्तव्यं यथारण्यं तथा गृहम् ॥ ”

जलद गर्भार स्वर्गने वर्णन किया है। जगत्के प्रत्येक जातिके धर्मशास्त्रको बारम्बार पढ़ा, आपका कहीं भी ऐसा ऊँचा विधान नहीं मिलेगा। पुराण यही कह रहे हैं, कि माध्वी सती पतिव्रता स्त्रीको त्याग करके यदि कोई मनुष्य संन्यासी, ब्रह्मचारी, या यती होकर पारलौकिक पुण्यसंचय करनेके लिये चेष्टा करे। वा यदि कोई वाणिज्य करनेके लिये बहुत दूर चलाजाय, अथवा मोक्षप्राप्तिके लिये तीर्थमें निवास करे, या तपस्यामें मनको लगावै तो उसको मोक्ष कदापि नहीं मिल सकती, वह धर्मसे पतित है; इसी जन्ममें उसका यश लोप होगयाह, और उसका सती स्त्रीके शापसे मरणकाल तक नियम संहित वनमें निवास करना होता है। अनन्त महिमामय जगदीश्वरने स्त्रियोंकी स्वभावसे ही कोमलांगी अवलारूपसे सृष्टि की है, इस कारण आर्य शास्त्रकारक गण उस ईश्वरसृष्टिके नियमके ऊपर तीक्ष्णदृष्टिसे स्त्रीजातिकी रक्षाविधान उक्त रूपसे स्थिर करगये हैं। पिता, पति और पुत्र यह तीनों ही स्त्रीजातिके तीन समयोंके उपयुक्त रक्षक हैं। धर्मनीति, समाजनीति-पवित्र सभ्यता और जगदीश्वरके अभिप्रायकी ओर दृष्टि करके पुरुषकी समान स्त्रियोंकी पूर्ण स्वाधीनता अवश्य ही अप्रार्थनीय है-और उस पूर्ण स्वाधीनताके सूत्रमें स्त्रियोंको एक मात्र सार धन सतीत्वकी रक्षामें विषम व्याघात होनेकी पूर्ण संभावना है। प्राचीन आर्यजाति उसका भलीभाँतिसे जानकर उन स्त्रियोंके कुलकी स्वाभाविक शक्ति मती स्वाधीनताकें देनेमें पक्षपातिनी थी। अन्यायके अतिरिक्त स्त्रियोंकी स्वाधीनता यद्यपि आसुरिक सभ्यताके उपयोगी होसकती थी, परन्तु आर्यधर्मका विधान और आर्यसम्मतिके मतसे तथा आर्यसमाज नीतिके मतसे वह अनुपयोगी है। इसीसे पिता, पति, पुत्र और बंधुओंके ऊपर उनकी रक्षाकें विधानका भार सौंपगये हैं। आर्यस्त्रियोंमें अंतःपुरकें निवासकी प्रथा पश्चिमी जगत्में आसुरिक सभ्यताकें सन्मुख अत्यन्त ही दूषित है, और उन्हें यही असभ्यताका चिह्न-स्वरूप दृष्टि आयाहै, परन्तु आर्यमुनि, ऋषिगण अपनी बहुत कालकी परीक्षाके फलसे इस बातका भलीभाँतिसे जानगये थे कि परदेकी रीतिका प्रचार हुए बिना समाजकी सुनीति, संसारकी पवित्रता, धर्मनीतिका आदेश, जगत्की शान्ति, पतिका चित्त स्थिर, तथा स्त्रियोंके सारवन सतीत्वकी रक्षाका होना असंभव है। आर्यजातिकी स्त्रियोंकी सीमाबद्ध स्वाधीनता है, जिस स्वाधीनतासे उनकी मानसिक धर्मसंगतिकी कोई इच्छा भी अपूर्ण नहीं रहती-उसी स्वाधीनताको संभोगकर संसारको पवित्र पुण्यक्षेत्रमें परिणत करतेहैं, आर्यशास्त्र-

कारोंका यही मूल लक्ष था, इसी लिये अंतःपुरकी रीतिकी सृष्टि हुई और इसी लिये वह यह आज्ञा करगये हैं कि स्त्रियोंकी रक्षा भलीभाँतिसे करै । *

जो लोग आर्यशास्त्रको नहीं जानते हैं, अथवा जो हिन्दुओंके अंतःपुरके निवास-को नहीं जानते हैं, उनका तथा पाश्चात्यजातिका यह विश्वास है कि हम लोग घरके भीतर निवास करनेवाली स्त्रियोंके ऊपर मोल ली हुई दासीकी समान व्यवहार करते हैं; उनका यह अनुमान और ऐसा विश्वास कदापि ठीक नहीं होसकता । परन्तु स्त्रियोंके ऊपर किस प्रकारसे दृष्टि रखनी उचित है, आर्य शास्त्रकारोंने उसके सम्बन्धमें क्या कहा है ? जो पुरुष स्त्रीके मानकी रक्षा करता है, उसको पग २ पर कल्याणकी प्राप्ति होती है और जो मनुष्य स्त्रीका अपमान करता है वह मनुष्य अधम और उसके भाग्यमें अशुभ होते रहते हैं । हमारे प्रधान धर्मशास्त्रके नेता महात्मा मनुजी स्वयं कहगये हैं × “ कि जो मनुष्य स्त्रियोंके सन्मानकी रक्षा करता है, देवता उसके ऊपर प्रसन्न होते हैं, और जो मनुष्य स्त्रियोंका अपमान करता है, उसके सम्पूर्ण धर्म कर्म और पुण्योंका नाश होजाता है, और जिस संसारमें स्त्रियोंके सन्मानकी रक्षा भलीभाँतिसे नहीं होती वहां स्त्री शाप देती है, इसीसे वह संसार एक बार ही विध्वंस होजाता है । ” आर्य संसारमें स्त्रियोंका कैसा उत्तम सन्मान होताथा, कहाँ-तक उनको दयादृष्टिसे देखाजाता था, मनुकी उक्ति उसकी चूडान्ततक का परिचय देती है अबलोके ऊपर किसी भाँतिका भी प्रहार करना उचित नहीं, इस बातको मनुजी स्पष्टतासे कहगये हैं । उसका विधान यह है कि चाहें स्त्रियें सहस्रों अपराध भी करलें परन्तु मनुष्य उनको फूलसे भी न मारें । आर्यजातिमें स्त्रियोंका मारना किसीभाँति भी उचित नहीं, हम सबसे पहले यही पूछते हैं कि संसारमें

* पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने । रक्षन्ति स्थाविरे पुत्रा न ली त्वातंच्यमर्हति । मनुः

× मनुः— यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् ॥

न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धन्ते तद्वि सर्वदा ॥ ५७ ॥

जामयो यानि गेहानि पश्यन्त्यप्रतिपूजिताः ॥

तानि कृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्ततः ॥ ५८ ॥

स्त्रियां तु रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम् ॥

तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते ॥ ६२ ॥ अ० ३

किस जातिके धर्मशास्त्रमें ऐसा विधान है ? ऐसी कौन सी जाति है कि जिनमें स्त्रियोंको ऐसा उँचा सम्मान दिया गया है ।

आर्यशास्त्रकारोंने स्त्रियोंको किसप्रकारके कर्तव्य कर्म बताये हैं ? पुराणोंका कथन है—कि स्त्री नूर्योदयसे प्रथम उत्कर देवता और पतिको प्रणाम करके घरका झाड़ बुहार कर गोबरमें म्वच्छ जल डालकर आँगन और घरको लीपे, उनके उपरान्त घरके अन्यान्य कार्योंको समाप्त कर स्नान करे, फिर देवता, ब्राह्मण और पतिको प्रणाम करके घरके देवताकी पूजामें लगे, इसके उपरान्त ग्लोडे तैयार कर दानिको भोजन कराये अनिधि सेवाके उपरान्त फिर स्वयं भोजन करे, आजकल आधुनिक सभ्यताके ऊँचे शिखर पर पहुँचे हुए पश्चिमी संसारके निवासियोंने आर्यशास्त्रकारोंकी इस विधिकी पटकर हिन्दू स्त्रियोंको मोल ली हुई दानीकी नमान जाना है, और कहते हैं कि जो कुछ भी इस समय इस देशमें है वह विलायती ही शिक्षा है, जो विलायती सभ्यताके तरंगमालाके प्रबल आघातसे चोट खाये हुए हैं, यद्यपि उनमेंसे किसी २ ने तो समयके अनुसार इस विधिकी भारतके महामुद्रमें डालकर यूरोपीय सभ्यताका अनुकरण करनेका साहस किया है, परन्तु यह विधान उनको अथवा उनके वंशधरोंको अवश्य ही स्मरण कराना होगा, कि आर्यशास्त्रकारोंने स्त्रियोंके चरित्रोंको भलीभाँतिसे जानकर, उनके चरित्रोंके दोष, गुण, तथा उनके चरित्रोंकी दुर्बलता—उन चरित्रोंकी प्रत्येक अवस्था—उन चरित्रोंकी शक्ति—तथा उनके चरित्रोंकी पूर्ण स्वाधीनताका विषमय फल—समाजका विश्वम करनेवाला फल—और शान्तिका नाश करनेवाला फल भलीभाँतिसे जानकर बहुत सी परीक्षाओंके उपरान्त इस विधिकी सृष्टि की है । स्त्रियें जिस भाँति कोमल स्वभावसे युक्त हैं, स्त्रियोंका हृदय जिस प्रकारकी धातुसे बना हुआ है, स्त्रियोंका शरीर जैसा कोमल है, उसमें विधातार्का नृष्टिके अनिरिक्त संसारमें सुख शान्ति और मंगलप्राप्तिकी कुछ भी आशा नहीं है, आजकल विलायती सभ्यताके स्रोतेमें मग्न हुए बहुतसे मनुष्य इस देशकी स्त्रियोंको घरके कार्य करते-हुए देखकर तथा उनके कामोंको सुनकर अत्यन्त क्रोधित होजातेहैं, परन्तु मृत्युके सम्मानकी रक्षा अवश्य करनी होगी, इस बातको हम अवश्यही कहेंगे कि वह लोग जो कि विलायती संसारमें हैं और उन नवीन जगत्के निवासियोंको इन्द्रका ऐश्वर्य भोगनेके लिये कि जिनके पास प्राणप्यारी स्त्रियोंके लिये अनेक दास दासी विद्यमान हैं और जिन्हें ऊँचे ऊँचे २ महल दुमहलोंके ऊपर आलस्य विलासिताकी गोदीमें शयन करताहुआ देखकर सभ्यताके सम्मानकी रक्षाके लिये उनके अनुकरणमें अपनी २ गृहिणियोंकी उस भावसे रक्षा

करनेके लिये सर्वदा तैयारी करनी होतीहैं। हमारा कहना केवल उन्हींसे है कि अनंक बड़े २ घरानोंमें नौकर चाकरोंके न मिलनेसे उनको अपने घरके काम स्वयं अपने हाथसे करने पड़तेहैं, इसलिये हमें यही पूछना है कि उस समय उनके स्वामी और उनकी स्त्रियोंका चिह्नस्वरूप आलस्य विलासिता न जाने कहाँ अटश्य होजाताहै ? उस समय क्या उनकी सभ्यता नहीं रहती; स्त्री जातिके कर्तव्य कर्म सांसारिक कार्योंसे उनका छुटकारा देनेसे ही यदि उनको सभ्य बनाने हों तो वह सभ्यता संसारसे जितनी जल्दी विदा होजाय उतना ही कल्याणका विषय है ।

आर्यजाति स्त्रियोंको मोल ली हुई दासीकी समान नहीं जानती, इस विषयमें हम दो एक प्रमाण और भी उद्धृत करते हैं । आर्यशास्त्रकारोंका कथन है, कि बाल्यावस्थामें स्त्री पतिकी मंत्रीकी समान है, सलाह देनेमें सखीकी तुल्य है, और स्नेहमें माताकी समान आचरण करतीहै । * भला यह तो विचारो कि यह कहीं मोल ली हुई दासीके लक्षण हो सकतेहैं ? संसारका मंगल-समाजमें शान्ति, संसारकी उन्नति और जातिकी पवित्रताके संग्रहमें क्या यह मूलमूत्र नहीं है ? शास्त्रको क्या भलीभाँतिसे नहीं विचार सके हो ? भारतवर्षमें आर्यजातिके बीचमें विषमय बहुतसे विवाहकी रीति प्रचलित देखकर विलायतके निवासियोंने यह सिद्धान्त स्थिर करलियाहै कि आर्यजातिमें केवल भोगविलासकी इच्छाको चरितार्थ करनेहीके लिये स्त्रीजातिकी सृष्टि हुईहै, अथवा स्त्रीजातिको मोल ली हुई दासीकी समान न जानकर क्यों बहुविवाहकी रीति प्रचलित हुई ? परन्तु इस प्रश्नका उत्तर देनेके पहले हम अहंकार, गौरव और साहसके साथ कह सकतेहैं कि आर्यशास्त्रकार अनेक विवाहोंके पक्षपाती नहीं हैं । जिस मनुष्यके पुत्र विद्यमान है उसको दूसरा विवाह करना किसी प्रकार भी उचित नहीं । यदि स्त्री सर्वदा रोगी रहतीहो, या बंध्या हो तो ऐसे स्थानपर दूसरे विवाह करनेकी प्रथा है । जो पुरुष बहुत सी स्त्रियोंका पति है वह अधम है, महापापी है, पुराणोंमें ऐसा भी कहाहै । *

× “ कायेंऽपि मंत्री पत्नी त्यात्तस्त्री त्यात्करणेषु च ।
त्नेहेषु भार्या माता त्याद्देश्या च शयने शुभा ॥ ”

गरुड पुराण ।

* “ बहुदारः पुमान् यत्तु रागादेकां भजेत्स्त्रियम् ॥
स पापभाक् स्त्रीजितश्च तस्याशौचं सनातनम् ॥ १ ॥

इस समय यह प्रश्न होसकताहै कि आर्यशास्त्रकारोंने विधिके विरुद्ध आर्य-गणोंकी किस प्रकारसे बहुतसे विवाहकी रीति प्रचलित की ? हम कहसकतेहैं कि दो कारणोंसे बहुविवाह भारतवर्षकी एक श्रेणीमें प्रचलित हुए । एक तो जो राजा आलस्य विलासिताके मोललिये हुए दास थे, केवल वही अधिक स्त्रियोंको ग्रहण करते थे; और इस समय उनके वंशधर उस पैत्रिक आचारकी रक्षा करते आयेहैं । भारतवर्षमें सर्वसाधारणमें बहुत विवाहकी रीति प्रचलित नहीं थी । रघुकुलतिलक रामचंद्रजीने कितने विवाह किये थे ? महात्मा सत्यवानके केवल एक सती साध्वी सावित्री ही स्त्री थी ? बहुतसे विवाहके प्रचारका दूसरा कारण सामाजिक प्रयोजन था । समाजमें शांति, मंगल, नीति और आज्ञाकी रक्षा करनेके लियेही बहुतसे विवाहोंकी रीति प्रचलित होगई; और पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंकी संख्या अधिक बढ़नेसे बहुतसे विवाहोंका होना आवश्यक विचारा गया ।—इसका प्रत्यक्ष उदाहरण बंगालमें विराजमान है । देवीश्रेष्ठ घटकरने कुलीन श्रेणियोंमें मेल बढ़ानेके साथ विवाहकी विधिका उमके मेलमें बाँधदिया, अब वह सामाजिक विधिमें गिनागयाहै, उस विधिको पालन करनेके ही लिये उस मेलबंधनकी रक्षाके निमित्त ही देवीश्रेष्ठ घटकरके बहुत वर्षोंके उपरान्त धीरे-२ बहुत विवाहकी प्रथा प्रबल होगई । कुलीन कुलोंमें लड़कोंकी अपेक्षा कन्या अधिक हैं, बहुत विवाहके अतिरिक्त उस मेलबंधनकी रक्षा असंभव विचारकर बंगालमें केवल कुलीनोंमें ही बहुविवाह प्रचलित हैं; यदि चारों मेलोंमें पुरुष और स्त्रियोंकी संख्या समान होती, तो पात्रके अभावमें बहुविवाहकी कुछ भी आवश्यकता नहीं होती । अच्छा—माना, हमलोग अशिक्षित हैं, वनवासी हैं, वर्वरहैं, मूर्खजाति हैं, हमने उस समाजके मानकी रक्षा करके बहुविवाह स्वरूप विषम अग्निमें बंगालको प्रज्वलित करदिया था, इस समय वह अग्नि प्रायः निर्वाणही होगई है; परन्तु कहना यह है कि नवीन जगत् अमेरिका जो बड़ा देश है—इस समय सभ्यता

यदुःखं जायते स्त्रीणां त्वात्स संनोगजं यथा ॥

न तस्य सदृशं दुःखं किञ्चिदन्यद्वि विद्यते ॥ २ ॥

सतीनृत्तुमती जायां योनेयात् पुरुषाधमः ॥

ऋतृवक्षेपु शुद्धेषु भ्रूणहा तस्य जायते ॥ ३ ॥

बहुभायस्य भार्याणामृतु मैथुन नाशनम् ॥

न किञ्चिद्विद्यते कर्म शान्तिनाथि यदीरितम् ॥ ४ ॥ ”

कालिका पुराण २० अध्याय ।

विज्ञानके वह ऊँचे आसनपर विराजमान है, इस सभ्य अमेरिकामें हम लोगोंने उन्नी-
सवीं शताब्दीमें बहुविवाहकी रीति प्रचलित होती हुई क्यों देखी ? विख्यात कोपे-
कारकी सम्प्रदायमें आजतक इस बहुविवाहकी प्रथाकी समभावसे रक्षा कर-
ते हैं ? एक नहीं, दो नहीं, वरन् सैकड़ों हजारों स्त्रियें एक एक मनुष्यको पति-
भावसे वरण कर रही हैं ? उन्हें क्या अमेरिकाकी उच्च सभ्यताका उज्ज्वल प्रकाश
प्राप्त नहीं हुआ ? उनका क्या विलायतकी उच्च शिक्षा नहीं मिली ? अच्छा
हमने बहुतसे तर्क कुतर्क न करके इस बातको भी मान लिया कि कोपेकारके
ऊपर वहाँके सर्व साधारणने सहानुभूति न दिखाई, परन्तु यहाँ पर हमारा यह
प्रश्न है कि कई वर्षोंके बीतजानेपर अमेरिकामें स्त्रियोंकी संख्या अधिक
बढ़ गई, क्या समाजके नेताओंने इसका प्रस्ताव तक भी नहीं किया कि
समाजमें शान्तिकी रक्षाके लिये बहुविवाहकी रीतिका प्रचार करना आवश्यक
है ? प्रधान २ समाचारपत्रोंमें क्या इस बातका विचार नहीं हुआ ? आजतक
भी क्या अमेरिकाके समाजनेना गण स्त्रियोंकी संख्याको बढ़ता हुआ देख-
कर उस बहुविवाहकी रीतिका चलाकर समाजनीतिके मानकी रक्षाके अभिलाषी
नहीं हुए ? पात्रके न मिलनेसे अमेरिकामें बहुत सी युवतियें दीर्घकालतक विवाह
न करके समाजको बराबर कलंकित कर रही हैं, इसे क्या वह अपनी दिव्यदृष्टिसे
नहीं देखते हैं ? इसीलिये हम कहते हैं कि केवल समाजनीतिके सन्मानकी रक्षाके
लिये असवर्णा विवाह अप्रार्थनीय है, निम्न लिखित वंशोंमें कन्यादान निन्दनीय
है— और सवर्णमें तथा बराबरके वंशमें पात्रके न मिलनेसे बहुविवाहकी
रीतिका प्रचार करना अत्यन्त आवश्यक है । परन्तु इस समय स्थान २ पर उस
रीतिके परिवर्तनका पूर्ण लक्षण प्रकाश पा रहा है ।

इस समय महात्मा टाड साहबका अनुकरण करना ठीक होगा, वह इति-
वृत्तके उपाख्यानमें कह गये हैं कि अपने दुर्भाग्यवशसे ही विलायती जगत्
होते हुए भी ऊँची श्रेणीकी महिलामंडली स्वभावसे अंतःपुरमें बंद रहती है,
तथापि समाजके ऊपर उनकी प्रभुत्व शक्ति कहाँतक पहुँची है, उसका जानना
अत्यन्त कठिन है । परन्तु महामानीय टाड साहबने इस बातको स्वयं
कहा है कि राजस्थानमें अंतःपुरकी रीतिके प्रचलित होनेसे समाजके ऊपर
उनकी प्रधानताका विस्तार कुछ कम नहीं था, चुम्बक पत्थरके गुप्त स्थानमें
रखो या न रखो उसकी आकर्षणीय शक्ति जिस भाँति निश्चित है,

नुसार देती है अधिपति वा सामन्तकी कन्याके विवाहमें सहायता देना वह सन्मानका विषय समझते हैं । फ्रांसकी प्राचीन सामन्त शासन प्रणालीके अनुसार ऐसे धन देनेकी सथा प्रचलित थी और मागनाकाटी अर्थात् इंग्लैण्ड सम्बन्धी साधारण प्रजाकी प्रधान स्वाधीनताकी सनदके अनुसार वहाँके सामन्तलोग अपने ज्येष्ठ पुत्रके कुलीनताके पद ग्रहण, बड़ी कन्याके विवाहमें तथा वैरियोंके द्वारा स्वयं बन्दी हो जानेपर दण्डरूप धन देकर छुटकारा पानेकी आवश्यकता पडनेपर साधारण प्रजा तकसे धनकी सहायता लेते थे, राजपूत राज्योंमें भी जिस समय सुगल पठान उपद्रव अत्याचार और हमले करके सामन्तोंको बन्दी कर लेजाते थे । उस समय उनकी प्रजा धन देकर सामन्तोंको वैरियोंके हाथसे छुटाती थी, कर्नेल टाड लिखते हैं कि इंग्लैण्डेश्वर विख्यात सिंहविक्रमी वीर रिचर्ड यदि राजपूतोंके अधिपति होते तो दीर्घकालतक उनको बन्दी दशामें आश्रियामें रहना न पडता ।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि अम्बेर अर्थात् वर्तमान जयपुर राज्यमें इस प्रकारकी सहायता केवल युवराजके विवाहमें ही लीजाती है सामन्त पुत्रकी नाबालिग अवस्थामें उसके देशका प्रबन्ध—किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर यदि उनका पुत्र नाबालिग हो तो उसके देशका प्रबन्ध करनेके लिये यथोचित व्यवस्था कर दीजाती है उस सामन्त पुत्रके समर्थ होते ही उसके हाथमें फिर उसके देशका अधिकार सौंप दिया जाता है । टाड साहब लिखते हैं कि यह प्रबन्धका भार समय समय पर राणाके अनुग्रह प्राप्त किसी सामन्तके धन प्राप्तिके निमित्त उसके हाथमें देनेसे बुरे परिणाम भी निकलते हैं, यूरोपमें भी इसी प्रकार होता था मृत सामन्त जिस अवस्थामें है जिस सम्प्रदायमें हैं उस सम्प्रदायके नेताके हाथमें ही राणा उस असमर्थ सामन्त पुत्रके ऐश्वर्य और देशरक्षाका प्रबन्ध सौंपते हैं । कभी २ स्वयं राणाजी भी प्रबन्ध करते हैं और कभी २ उस असमर्थ (नाबालिग) सामन्तकी माता भी देशका प्रबन्ध अपने हाथमें लेकर सब कार्योंको स्वयं सँभालती हैं ।

विवाह—विवाहके पहले प्रत्येक सामन्त अपने अधिपतिकी इस विषयमें अलेलेते हैं विवाहके समय सामन्तकी पद मर्यादाके आनुसार अधीश्वर वस्त्र तथा दूसरे पदार्थ भी यौतुक स्वरूप देते हैं ।

कोई राजपूत अपनी सम्प्रदायके किसी पुरुषकी कन्याका पाणि नहीं करसकता । जर्मन शासनमें इसी प्रकार अपनी श्रेणीके और राजाके पक्षके किसी पुरुषकी कन्याका पाणिग्रहण करनेकी आज्ञा ।

कुछ सार भी है, परन्तु हम भारतके अंतःपुरकी रीतिकी प्रतिष्ठा करनेमें कोई भी उचित कारण ठीक नहीं मानते । हम इस बातको भलीभाँतिसे मानतेहैं कि महात्मा टाड साहबने सत्यताकी मृदुल उन्नतिकी अवस्थाके ही लिये स्त्रियोंको एकान्तमें निवासके करनेके लिये कहाहै । उनके इस मतको हम लोग भी माननेके लिये समर्थ हैं । इस बातको हम कहसकतेहैं कि जिस समय विलायती जगत्में वर्तमान आसुरिक सभ्यताकी चूडान्त उन्नतिके पीछे हिन्दू समाज स्त्रियोंकी स्वाधीनताका विषैला फल भोग करेगी । उस समय जगत्में शान्ति, समाजका मंगल और संसारमें पवित्रताकी रक्षा करनेके लिये स्त्रीजातिको अंतःपुरमें रखकर उनके पदोचित अवस्थाके उपयोगी और विधिकी विधिके मतसे सीमाबद्ध स्वाधीनताका देना ठीक विचारा जायगा । सभ्यताके बीचमें उन्नतिकी अवस्था और अंतःपुरकी रीतिकी प्रतिष्ठा किस प्रकारसे सम्भव होसकतीहै ? अंग्रेजजातिकी आदि मध्य और वर्तमान अवस्थाकी ओर आँख उठाकर देखनेसे हमलोग देखसकतेहैं कि अंग्रेज जाति इस समय सभ्यताके ऊँचे शिखरपर पहुँच गई है और इसीसे वह अहंकारसे युक्त है, परन्तु जिस समय यही अंग्रेज जाति सभ्यताकी मध्य अवस्थामें थी उस समय क्या ग्रेटब्रिटनमें अंतःपुरकी रीतिका प्रयोजन नहीं था ? इंग्लैण्डकी स्त्रियोंको सभ्यताकी वृद्धिके साथही साथ अधिक स्वाधीनता मिलीहै । और किसी समयमें पुरुषोंकी समान स्वाधीनता पानेके लिये महायुद्ध करेगी । उसके पूर्व लक्षण भी दीखरहेहैं, परन्तु जब उन पूर्ण स्वाधीनता प्राप्तहुई अंग्रेज धवलाङ्गिनियोंमें स्वेच्छाचारिताका भयंकर अभिनय होगा, उनके उस आचरणसे जब अंग्रेजसमाज भयंकरतासे लुप्त होगा, अंग्रेजजाति जब उनके विषमय फलको भोग करेगी तब तो अवश्यही उनको भारतवर्षमें प्रचलित हुई रीतिका अनुसरण करना होगा । भारतके महात्मा ऋषि मुनियोंने स्त्रियोंके चरित्रोंको किस प्रकार कहाहै, और स्त्रियोंकी स्वाधीनतासे कैसा विषैला फल उत्पन्न हुआ है, उसको भलीभाँतिसे जानकर स्त्रियोंके कर्तव्य कर्मोंको विचार तथा स्वाधीनताकी सीमा बताकर धर्मनीति, समाजनीति और स्त्रियोंके सारधन सतीत्वकी रक्षाकी उचित व्यवस्था की है ।

पंडितश्रेष्ठ टाड साहबने कहाहै कि, प्राचीन यहूदीजाति स्त्रियोंको अंतःपुरमें नहीं रखती थी; राजपूतानेमें नीचजातिकी स्त्रियें जिस प्रकार घरके कामकाजके लिये कुँएसे जल भरकर लाती थीं और वहाँ जाकर पुरुषोंके साथ वार्तालाप करती थीं वहाँसे उनका पति भी वरण होजाता था, उसी प्रकार

शब्दोंका कुछ २ उच्चारण समान होनेपर और अर्थ भी प्रायः दोनोंका समान होने पर भी दोनों शब्द समान भावसे उत्पन्न हुए हैं, यह कभी स्वीकार नहीं किया जासकता ।

भूवृत्तिका पुनर्ग्रहण । —कनेल टाड लिखते हैं कि सामन्त मण्डली बहुत काल पूर्वसे राणाके निकटसे प्राप्त हुई जिस भूमिको भोगती आती है, उन सामन्तोंके किसी प्रकारके अपराध, अराजभक्ति, नियम भङ्ग वा किसी विशेष कारणके बिना राणा अपनी इच्छानुसार वह प्रदेश पुनर्ग्रहण करसकते थे या नहीं इसमें संदेह है । यूरोपमें जो सामन्त शासनकी रीति प्रचलित थी, उस शैलीके निर्धारित विधानके अनुसार सामन्तलोग जितने दिन जीवित रहतेहैं, केवल उतनेही दिन उसको भोगते हैं, उनके परलोक सिधारनेपर वह देश फिर स्वामीके अधिकारमें होजाता है । किंतु मेवाड राज्यके किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर जितने कार्य प्रचलित होते आते हैं उनके द्वारा उस प्रश्नकी पूरी मीमांसा होगई है । मेवाडके किसी सामन्तके मरनेपर उनके उत्तराधिकारी, राणाके सन्मानार्थ जिस प्रकार नजराना देकर फिर सनद प्राप्त करते और राणाके द्वारा सामन्त पदपर अभिषिक्त होते हैं उसके द्वारा भलीभाँति प्रगट है कि राणा इच्छा करनेपर भूवृत्ति रहित करके उस देशको अपने अधिकारमें करनेकी शक्ति रखते हैं, किंतु राणालोग उस सामर्थ्यको कार्यमें न लाकर पूर्व समयसे सामन्तोंके यथार्थ उत्तराधिकारियोंको ही देते चले आते हैं, इस कारण उनकी वह शक्ति मृतप्राय सी होगई है । राणालोग सत्य २ ही प्रतिग्रहणकी शक्ति रखते थे, उसके प्रमाणके लिये कनेल टाड लिखतेहैं कि, राणा संग्रामसिंहके शासन समयमें मेवाडके सामन्तोंके अधिकृत देश वास्तवमें ही दूसरोंके हाथमें भी जाते थे । प्रायः दोशताब्दीसे यह प्रथा विलकुल वंद है । उक्त समयके पहिले किसी राठौर सामन्तका अधिकृत देश निर्धारित समयके पीछे अधीश्वर दूसरे सामन्तको देदेतेथे, उस समय वह राठौर सामन्त परिवार, गौ आदि पशु और अनुचरों सहित उत्तर प्रान्त छोडकर 'चुप्पान' * की वनैली भूमि में जाकर वास करते थे; इधर उसी भावसे कोई शक्तावत, सामन्त आरावालीकी तलेटीमें आकर नये देशमें आश्रय लेतेथे; उधर चन्दावत सामन्त चम्बलतीरवर्ती देश छोडकर किसी प्रमार वा चौहान सामन्तके अधिकार किये मेवाडके पूर्व

* मेवाड और गुजरातके जिस वनमय पहाडी देशको विभाग कर दियाहै, दक्षिण पश्चिममें स्थित उस देशको चुप्पान कहते हैं ।

“हे राणात्मजे पीनेके निमित्त एक पात्र जलका लाओ” राणाकी कन्याने अपने पतिके वचनोंका तिरस्कार करके उत्तर दिया कि “सैकड़ों वरन हजारों राजेश्वर राणाकी कन्या सादरीकी समान सामान्य देशके सामान्य सरदारको जलके पात्रकी देनेवाली नहीं होसकती ।” यह वचन सुनकर वीरश्रेष्ठ सरदारने क्रोधित हो शीघ्रही उत्तर दिया कि, “अच्छा यदि तुमसे मेरा कुछ भी उपकार नहीं होता तो तुम इसी समय अपने पिताके यहां चली जाओ ।” इसके पीछे सामन्तने शीघ्र ही अपने एक दूतको बुलाकर समस्त समाचार राणासे कहनेके लिये कहा; और उसी दूतके साथ राणाकी कन्याको भी भेजदिया। उस दूतने जाकर समस्त वृत्तान्त राणाको सुनाया । यह समाचार सुनकर राणाने कुछ ही समयके उपरान्त सादरी सामन्तको अपनी सभामें बुलानेके लिये भेजा । राणा सभासदोंसे युक्त हो राजकार्य कर रहे थे कि इसी समयमें राणाके जामाता सादरीके सरदार वहाँ आ पहुँचे, उनको देखते ही राणाने बड़े आदरभाव से उनको अपनी दहिनी ओर सिंहासनपर बैठाया; सभाके सम्पूर्ण होजानेपर पूर्व इशारेके अनुसार नीचेके आसनके ऊपर खड़ेहुए युवराजको, अत्यन्त नीचे सेवक अर्थात् सादरीके सामन्तको उसकी रक्षामें तथा सत्कारमें नियुक्त देखकर अपनेको ऊँचे सन्मानका पात्र जान सामन्तने आश्चर्यमें भर विस्मित और विचरित चित्तसे राणाके सम्मुख बड़ी नम्रतासे शिष्टता प्रकाश की, राणाने उत्तर दिया, “कि अब तुम अपनी स्त्रीको अपने घर लेजाओ, अब यह कभी भी तुम्हें जलका पात्र देनेको मना न करेगी” । * ऐसा ही हुआ जीवनपर्यन्त परस्परमें जो विश्वासहै

* स्वामीके प्रति स्त्रीजातिका क्या कर्तव्यहै उसके सम्बन्धमें यहांपर हम दो एक प्रमाण देतेहैं ।

“या स्त्री भर्तुरसौभाग्या सौभाग्याय च सर्वतः । शयने भोजने तस्या न सुखं जीवनं वृथा ॥
यस्य नास्ति प्रियप्रेम तस्या जन्म निरर्थकम् । तर्हि पुत्रे धने रूपे सम्पत्तौ यौवनेऽथवा ॥
यन्द्रक्तिर्नास्ति कान्ते च सर्वप्रियतमे परे । साऽशुचिर्धर्महीना च सर्वकर्मविवर्जिता ॥
पतिर्वन्धुः पतिर्भर्ता दैवतं गुरुरेव च । सर्वस्वाच्च गुरुः स्वामी न गुरुः स्वामिनः परः ॥
पतिभक्तिविहीनाया भस्मीभूतं निरर्थकम् । पतिसेवा व्रतं स्त्रीणां पतिसेवा परं तपः ॥
सर्वदेवमयः स्वामी सर्वतीर्थमयः शुचिः । सर्वपुण्यस्वरूपश्च पतिरूपी जनार्दनः ॥
या सती भर्तुर्बच्छिष्टं भुङ्क्ते पादोदकं सदा । तस्या दर्शमुपस्पर्शं नित्यं वाञ्छन्ति देवताः ॥

ब्रह्मवैवर्तपुराण, ५१ अध्याय ।

“भर्ता हि दैवतं स्त्रीणां भर्ता च गतिरुच्यते । जीवपत्याः स्त्रियो भर्ता दैवतं प्रभुरेव च ॥
या धर्मचारिणी नारी पतिव्रतपरायणा । नानुवर्तति भर्तारं सा सद्भिर्न प्रशस्यते ॥
पतिव्रता भर्तृपरा नारी भर्तृपरायणा । इह कीर्तिं परां प्राप्य प्रेत्य स्वर्गं महीयते ॥”

वाल्मीकि पुराण,

सत्त्व मूलक और तीसरी वंशानुक्रमके अधिकारी है । किसी सामंतके परलोक सिधारनेपर उनके पुत्र पौत्र लोग उत्तराधिकारी क्रमसे भोग करते आते हैं, इस समय उस भावसे ही अधिकृत देशोंमें सामन्तोंका चिरस्थायी स्वत्व वर्त्तरहा है । और उस देशमें राणाका निःसंदेह पूर्णस्वत्व विराजमान है अर्थात् वह इच्छानुसार किसी सामन्तके वंशधरको वृत्ति रहित करसकते हैं । इतिहास लेखक लिखतेहैं कि, यह प्रथा बहुत पुरानी है, सामयिक राजनीतिके अनुसार सामन्त मंडलीको आज्ञाधीन रखनेके लिये निःसंदेह इसका जन्म हुआथा ।

साधु टाड यहांपर लिखते हैं कि जो राणागण गर्वित और उद्धत सामन्त मण्डलीके हृदयमें प्रबल भाव उद्दीपन करनेमें समर्थ थे, उनके प्रति अवश्य ही उच्च मन्तव्य प्रकाश करनेको बाध्य हैं । पुत्र अपने पिताकी उपाधि और सत्त्वके अधिकारसे आधीनके सरदारोंके प्रति पितासम्बन्धी सामर्थ्य विस्तार करनेमें समर्थ और पिताकी समान अपने प्रभु अधीश्वरकी अनुकूलता स्वीकार करनेमें बाध्य हैं, किन्तु उसके उलंघन करनेमें किसी प्रकार समर्थ नहीं हैं, यह भाव बहुत ऊंचा है, और इसीसे शुभफल होता है ।

सामन्त मण्डली जिससे परस्पर वैवाहिक भावमें बँधकर प्रबल शक्ति संग्रह पूर्वक राणाके विरुद्ध न उठे और राज्यमें विद्रोह फैलानेमें समर्थ न होसके, उसके लिये गूढ़ राजनीतिज्ञ राणाओंने सामन्तोंको भिन्न सम्प्रदाय भोगी और विदेशी सामन्तोंके साथ मिलाकर मङ्गलमय फल उपजाया था । किन्तु समयपर उस अवलम्बित नीतिका अनादर करनेसे आत्मविग्रह और विद्रोह अग्निने मेवाडकी जातीय भीतरी दशाको अत्यन्त हृदयभेदी और शोचनीय करदिया था ।

मेवाडकी भिन्न श्रेणी भोगी सामन्त मण्डलीमें भिन्न रक्तधारी भिन्न देशीय राजपूत सामन्तोंको बुलाकर मेवाडमें रखनेसे राजनैतिक महान उद्देश पूर्ण होगा, पूर्व राणाओंने इस बातको भलीभाँति समझ लिया था; और उसी उद्देशको कार्यमें लाये थे । राठौर, चौहान, प्रमार, सोलंकी और भट्टजातीय सामन्तोंके साथ राणा लोग वैवाहिक प्रबन्ध बंधन द्वारा मिल गयेथे । उक्त राठौर चौहान आदि जातिके सामन्तोंमें कई वंश दिल्ली और अनहलवाड़ा नगरके बहुत पुराने हिन्दू राजवंशमें उत्पन्न हैं । शुद्ध आर्यरक्त पवित्र रखनेके लिये ही मेवाडके राणा लोग उक्त सामन्तोंकी कन्याका पाणिग्रहण करते थे, राणा-

लिये आत्मीय स्वजनोंका क्या प्रयोजन है ? आज मैं अवश्य ही आपके साथ चलूंगी; मेरा जब ऐसा विचार है तब आप मुझे साथ चलनेमें क्यों बाधा देते हैं ? वनके फल मूलोंको खाकर मैं जीवन धारण करूंगी; मेरे साथ चलनेसे आपको कुछ भी कष्ट नहीं होगा, मैं आपके साथ चलनेमें किसी भाँतिका क्लेश नहीं मानूंगी; और वनके कंद मूल फल खानेमें कभी अनिच्छा प्रकाश नहीं करूंगी ।

इस प्रकारसे मैं सहस्र वर्ष तक व्यतीत करसकती हूँ; परन्तु प्रीतम ! आपके विरहमें स्वर्ग भी मुझे सुखका देनेवाला नहीं है ।

दोहा—प्राणनाथ करुणायतन, सुन्दर सुखद सुजान ।

तुम विनयकुल कुमुद विधु, सुरपुर नरक समान ॥

स्वामी ! मैं आपके चरण छूती हूँ मेरे ऊपर दया करो, मैं उस गहन वनको पित्रालय स्वरूप जानकर वहां निवास करूंगी । मेरी अब कोई इच्छा नहीं है. केवल आपके चरणकमलोंका सर्वदा दर्शन होतारहै यही मेरी अभिलाषा है. मेरे इस अनुरोधकी आप रक्षा कीजिये । वनके बीचमें मैं किसी समय भी शोक प्रगट नहीं करूंगी, आपको कंठग्रही स्वरूप नहीं हूंगी । राघव ! यदि आप इस दासीकी इस प्रार्थनाको स्वीकार न करेंगे तो अवश्य ही मैं प्राण त्याग दूंगी । ”

हिन्दुओंके चरित्रोंको जाननेवाले महात्मा टाड साहबने इस बातको लिखा है कि विलसन साहबने जो हिन्दूजातिके नाटकोंका अनुवाद किया है उससे उन्होंने प्राचीन हिन्दुओंके आचार विचार विशेषकर स्त्रीपुरुषोंका परस्पर प्रेम परस्पर स्वामी और नारीका विश्वास तथा उनका अकृत्रिम प्रेम इस बातको सर्वसाधारण अंग्रेज जातिपर भलीभाँतिसे प्रगट करदिया है. उत्तररामचरित्र, विक्रमोर्वशी और मुद्राराक्षसमें इस विषयके अनेकों उदाहरण पायेजाते हैं, दूसरे ग्रन्थोंमें भी गृहस्थ हिन्दुओंके कुटुम्बोंमें पातिके ऊपर स्त्रियोंकी प्रबल प्रेमभक्ति त्रिलक्षणरूपसे दीखती है शेक्सपियरके मर्चेंट आफ वेनिस नामक नाटकमें अन्त न्यायकी समान चन्दनदासने जब अपने प्यारे भाईकी रक्षाके लिये प्राणदंडकी आज्ञा प्राप्तकी थी, और उनकी स्त्री अपने इकलोते पुत्रको साथ लेकर स्वयं वधस्थानमें आई तब नीचे लिखे अनुसार बातचीत हुई ।

चन्दनदास ।— प्रिये ! तुम यहाँ क्यों आई ? पुत्रको अपने साथ लेकर घर चलीजाओ ।

स्त्री ।—नाथ ! क्षमा करो—आप भिन्न जगत्में प्रस्थान करते हैं; आप क्या दूर नहीं जाते हैं ? फिर क्या नियत समयमें आपके चरणकमलोंका दर्शन कर-

कालापट्टा ।—यथा स्थानमें लिखा जा चुका है कि राणा रायमल और राणा उदयसिंहके वंशधरलोग जिन दो प्रधान शाखाओंमें विभक्त हुए थे; उनके ही असंख्य वंशधर यथा समय भिन्न २ पैतृक उपाधियोंकी प्राप्तिसे होकर अनेक उपशाखाओंमें विभक्त होकर, मेवाडके प्रधान सामन्त और सरदार श्रेणीमें गिने गये थे ।

चन्दावत और शक्तावत यह दो प्रधान शाखा हैं; पहिली दश और दूसरी छः शाखाओंमें विभक्त हैं । राजपूतोंमें चिर प्रचलित नियमके अनुसार वह कभी अपने वंशवालोंके साथ कन्याके लेने देनेका सम्बन्ध नहीं कर सकते । यह बात सर्वथा निषिद्ध है। उक्त शाखा और उपशाखामें विभक्त सम्पूर्ण राजपूत एक जाति अर्थात् “सिसोदीयकुल” नामसे विख्यात हैं सिसोदीयस्त्रीके साथ सिसोदीय पुरुषका विवाह किसी प्रकारसे भी नहीं होसकता; सिसोदीय लोग सब ही राजरक्तधारी रूपसे प्रसिद्ध हैं ।

भूवृत्तिके ऊपर सिसोदीय राजपूतोंका जैसा प्रबल स्वत्त्वाधिकार है, वह राठौर, प्रमार, चौहान आदि जितने विदेशीय राजपूत मेवाडमें सामन्त पदपर प्रतिष्ठित होकर भूवृत्ति भोगते आते हैं उनका वैसा प्रबल स्वात्त्वाधिकार नहीं है । सिसोदीय गण राजवंशी हैं इस कारण उनका स्वत्व बलवान है । सिसोदीय सामन्तोंकी भूवृत्ति यद्यपि चिर स्थायी पट्टेके अनुसार नहीं है और राणालोग किसी सिसोदीय सामन्तको भी अपनी इच्छानुसार वृत्तिसे रहित नहीं करते, तथापि भूवृत्तिमें उनका मानो एक स्थायी स्वत्व वर्त रहा है । किन्तु प्रमार, चौहान आदि सामन्तोंके परवर्त्ती बीस पुरुष क्रमानुसार किसी भूवृत्तिके संभोग करनेपर भी वह यह नहीं कहसकते कि “भूवृत्तिमें हमारा स्थायी स्वत्व होगया है ।” वह वैदेशिक सामन्तोंको जो पट्टा वही दियाजाता है, कालापट्टा “नामसे विख्यात है । वैदेशिक सामन्तगण विख्यात भी करते हैं कि, “हम कालापट्टा धारी हैं ।” किन्तु उनके आत्मीय सिसोदीय सामन्तगण उस काले पट्टेके अधीन न होनेके कारण गर्व करसकते हैं । कालेपट्टेका असली अर्थ यह है कि जब इच्छा हो तभी वह भूवृत्ति लौटा ली जासकती है, दूसरे पक्षमें सिसोदीय सामन्तगण राणाके दिये हुए पट्टेके अनुसार अपनेको जिस प्रकार अनेक विषयोंमें सुविधा सुयोग सम्पन्न समझते हैं, विदेशी सामन्तगण उस प्रकार अनुभव नहीं करसकते ।

स्त्रियोंकी समान अपने सत्त्व और अधिकारको लेकर महा आन्दोलन मचा-
रही हैं, उसी दिन जानोंगे कि आर्यावर्तकी स्त्रियोंके गौरवका सूर्य चिरकालके
लिये अस्त होगया; उसी दिन जानोंगे कि “सती” शब्दका अभिधान भारतसे
लुप्त होगया। यह बात तो सत्य है कि हम कुछ भविष्यद्वक्ता नहीं हैं, परन्तु
जो स्त्रियोंके चरित्रको जानते हैं, जिन्होंने विलायती जगत्की सामाजिक अव-
स्थाके यथार्थ तत्त्वको जान रक्खा है, जो विलायती स्त्रीपुरुषोंके हृदयके भावको
जानते हैं, वह अवश्य ही हमारी उक्तिको समर्थन करेंगे ।

महामाननीय टाड साहब पीछे इस बातको लिखते हैं कि केवल देवीमें जैसी
पतिभक्तिकी पराकाष्ठा थी—वह स्वामीके ऊपर स्त्रीका अनुराग ऊँचे हृदयमें
चूड़ान्त तक दिखागये हैं; अन्य समस्त जातियोंमेंसे किसी जातिके इतिहासमें
इस भाँति दिखाई नहीं देता; उसके पढ़नेसे राजपूत-वीरवालाओंके चरित्र
कैसे थे, और समाजके ऊपर उनका प्रभुत्व तथा सामर्थ्य किस प्रकार था वह
भलीभाँतिसे जाना जाता है ।

दिल्लीके शेष हिन्दूसम्राट चौहानजातीय पृथ्वीराज समेताकी राजकन्याको
हरण करके लेगये, भागनेके समय जो सेना उनके पीछे रक्षाकरनेके लिये गई थी,
महोबानामक स्थानमें चन्दाइलजातीय राजा परिमालने उसको पकड़कर मार-
डाला । इसी अपमानका बदला लेनेके लिये चौहान बादशाहने उस कुमारीको
महलमें लाकर शीघ्रतासे सेनाको आगे कर उसके राज्यकी शेष सीमामें स्थित
चन्दाइल राज्यपर आक्रमण किया और सिरसानामक स्थानमें × अपमान
करनेवाली सेनाको नष्ट करदिया; जब पृथ्वीराज इस भाँतिसे प्रतिहिंसा करनेमें
प्रवृत्त हुए, तब चन्दाइलने एक सभितिको बुलाकर रानी मालिनी देवीके
परामर्शके अनुसार आल्हा और ऊदल नामक अपने प्रधान दो सामन्तोंको गैर-
हाजिर कहकर पृथ्वीराजके पास एक महीनेके लिये समर न करनेकी प्रार्थनाका
विचार किया । महोर्वके प्रधान राजकविके भ्राताने दूतरूपसे आगे बढ़कर देखा,
कि चौहान पृथ्वीराज पहोजनर्दके पारजानेका उपाय कर रहे हैं । कविश्रेष्ठने
पृथ्वीराजके साथ साक्षात् कर नजर देनेके उपरान्त यथार्थ राजपूतोंके विषयमें
इस प्रकारकी असहाय अवस्थामें स्थित छिन्न भिन्न राज्यपर आक्रमण करना
अत्यन्त बुरा कार्य बताकर समर मुलतूवी करनेके लिये उनसे विशेष आग्रह

× पहोजनामक स्थान यहां स्थापित है । इस समय यह देश दाँतियाके बुन्देलराज्यके आधीन
है । महामाननीय इस समरक्षेत्रको देखनेके लिये गये थे ।

रखते थे । विदेशी सामन्तोंमें वैदला और कोथारियाके चौहान और मेवाडके मध्यवर्ती देशोंके प्रमार सामन्तगण प्रथम श्रेणीके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित हैं ।

रजवाड़ेके अधीश्वर यद्यपि अपनी इच्छानुसार किसी सामन्तको पदच्युत करके उसको भूवृत्ति रहित और उसके अधिकृत देशको अपने अधिकारमें कर लेनेके अधिकारी हैं । किन्तु, किसी प्राचीन प्रबल शक्तिमान सामन्तको उस प्रकार पदच्युत करनेमें उद्यत होनेपर अधिपतिको अनेक विघ्न और विपत्तियें भोगनी होती हैं यद्यपि रजवाड़ेके राज्योंमें विदेशी सामन्तोंकी संख्या भी सामान्य नहीं है, किंतु स्वजातीय सामन्तलोग ही प्रबल शक्तिवाले हैं, और उन स्वजातीय सामन्त मण्डलीमेंसे एक सामन्त सबके नेता पदपर प्रतिष्ठित होते हैं यदि उनको स्वजातीय नेता प्राप्त न हो तो वह निकटवर्ती समीपी सामन्तको नेता पदमें वरण करलेते हैं । सम्पूर्ण आधीनके सरदार ही उसनेताके आज्ञाधीन रहते हैं । इस कारण किसी नेताको पदच्युत करनेमें उद्यत होनेपर वह आधीनके सब सरदार और उस सम्प्रदायके दूसरे सामन्त इकट्ठे होकर महाविघ्न करते हैं । अतः एक सामन्तको पदच्युत करने पर उस संप्रदायके सब ही विरुद्ध होजाते हैं । यदि कोई सामन्त राणाके विरुद्ध भारी अपराध करे वा सामन्त पदकी अयोग्यता दिखावे तो अधिपति उस संप्रदायके किसी योग्य पुरुषको उस पदपर अभिषिक्त कर देते हैं । सब प्रकारसे योग्य पुरुषको निर्द्धारित करनेके लिये राणाकी समान दूसरे सामन्त और सरदार भी विशेष तद्विषय दृष्टि रखते हैं । यदि राणा किसी सामन्तका पद सर्वथा खाली कराके अपने अधिकारमें करलें तो उन सामन्तके अधीनस्थ सरदारगण अपना पूर्वस्वत्व अपने हाथमें ही रखकर साक्षात् संबंधमें राणाकी आज्ञाके आधीन रहते हैं ।

जिस समय मेवाड उन्नतिकी ऊँची सीढ़ीसे गिरकर अवनातिके समुद्रमें डूब गया जिस समय राणाकी शासन शक्ति बिलकुल क्षीण होगई प्रताप प्रभुत्व लुप्त होकर चारों ओर विद्रोह और आत्मविग्रहकी आग्नि प्रज्वलित होगई, उस समय चतुर प्रबल सामन्तोंने बल प्रकाश, भय प्रदर्शन और अन्यान्य अनेक प्रकारके असत उपायोंसे राणाके अधिकारके अनेक देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया । बलहीन और लुप्त प्रताप राणा तथा उनके मंत्रिके दुर्बुद्धि दोषसे भी अनेक ग्राम उसी प्रकार सामन्तोंके अधिकारमें होगये थे । कर्नेल टाडने मेवाडमें पहुँच कर जिस समय सब सामन्तोंके पट्टेके अनुसार उपभोग्य देशका निर्णय और व्यवस्था निर्द्धारण करी उस समय उन उदार नीतिवाले टाडने उन

ऊदलके पास कन्नौजमें अपने एक दूतको भेजदिया उस श्रेष्ठ दूतने उस स्थानपर जाकर उन दोनों वीरोंसे क्या कहाथा, महामाननीय टाड साहबने चन्दकविके ग्रन्थसे निम्न लिखितरूपसे उसे उद्धृत कियाहै,—“ चौहान सम्राट्ने महोबेके भीतर अपने डेरे डालदियेहैं; नरसिंह और वीरसिंहने समरकी अग्निमें अपना जीवन विसर्जन कियाहै, शिरसा देश भस्म होगयाहै और परिमालका राज्य भी चौहानोंके द्वारा विध्वंस होता चलाहै । एक महीनेके लिये समर रोकगयाहै; इस समय इस महाविपत्तिसे आपही हमारा उद्धार करेंगे; आपकी सहायताकी इच्छासे ही मैं यहां पर आयाहूं । हे वत्सराजके दोनों पुत्रो ! सुनो-जबसे आपने महोबेको छोड़दियाहै, उसी दिनसे मालिनी देवी घोरशोकमें मग्न होकर समय व्यतीत कररहीहैं; उनकी दृष्टि सदा कान्यकुब्जकी ओर ही रहतीहै; और जब आपका स्मरण होताहै तब उनके नेत्रोंसे बराबर आँसुओंकी झड़ी लगजातीहै; और वह दीर्घश्वास लेकर यह कहा करतीहैं; कि चन्देलोंका यशका गौरव अस्त होता चलाहै ! हे वत्सराजनन्दन ! जब आप वहां जायेंगे तब आपका हृदय भी अत्यन्त दुःखी होगा, अब भी समय है, आप महोबेको न भूलिये । ”

कविके यह वचन सुनकर वीरश्रेष्ठ आल्हाने उत्तर दिया कि, “ महोबा चाहै विध्वंस होजाय, और चन्देलोंका भी मूल सहित वंश नष्ट होजाय, परन्तु हम किसी प्रकार भी महोबेमें नहीं जायेंगे कारण कि विना अपराध ही हमें हमारी मातृभूमिसे निकालदियाहै उनके कार्यमें हमारे पिताने अपने जीवनका बलिदान कर दिया और हमारे मृतक पिता ही उनके राज्यकी सीमाका विस्तार करगये हैं । विश्वनिन्दक पुरीहर पतिको ही समरक्षेत्रके सन्मुखसे दिल्लीके महावीरोंके विरुद्धमें तुम्हारी सेनाको चलानेके लिये कहगयेहैं । हमारे मस्तकपर महोबा स्तम्भस्वरूप था; हमारे द्वारा ही गौन्दगण परास्त होकर उनके प्रबल दुर्ग देवगढ और चाँदवाटी महोबेके अधिकार भुक्त हुएहैं । हमने यादुनोंके विरुद्धमें समर भूमिमें जय प्राप्त की है, हिन्दोल * को विध्वंस करदिया, और परमालकी विजय पताकाको कात्वाइरदेशमें उड़ादिया है । हम विजयी वीरोंने कुशावहरके जयके स्त्रोतको रोक दियाथा । मुलतानके अमीरोंने उनके सन्मुख ही रणमें भंग डालदिया था । गयाके समरमें हमें जयलक्ष्मी प्राप्त हुई थी—और वेगुया

* हिन्दोल देश यादुनगरकी राजधानी वियानाके आधीनमें स्थिर एक नगर है यादुनगरियोंके उत्तराधिकारी गण आजतक करौली और श्रीमथुराजीमें अधिनायकत्व कररहेहैं ।

सभामें गमन और राजकार्यमें नियोगकी प्रार्थना अनुचित समझकर ही जीविका निर्वाहके लिये कृषिकार्यमें नियुक्त हुए । यद्यपि वह वीर राजपूतजाति राणाके वंशकी होकर भी साधारण कृषिकार्य अवलम्बन करनेमें बाध्य हुई थी, तथापि उन्होंने कभी जातिके अवलम्बित वीर व्रतको नहीं छोड़ा । तलवार, भाला, और धनुष बाण उनके चिर सहचर बने हुए हैं । यद्यपि वह आरावलीके स्थान २ में हल चलाने और पशुपालनेमें आनन्दपूर्वक नियुक्त हैं, किन्तु वह जातीय दर्प, वीरतेज, गौरवगरिमा और वंशमर्यादा उनके हृदयमें उसी प्रबल भावसे विराजमान है । भूमियां लोगोंके वर्तमान आत्मीय कुटुंब सामन्त जो इस समय शिक्षित, सभ्य और राणाकी संगतिसे अपनेको बहुत ऊंचा मानते हैं, कर्नेल टाड लिखते हैं कि उनकी अपेक्षा उक्त भूमियांगण अधिक बुद्धिमान् शान्त और धीर हैं । भूमियांलोगोंमें बहुतसे लोग प्राचीन समयसे अपनेसे छोटी जाति-वाले आरंभिक निवासियोंकी कन्याका पाणिग्रहण करते आते हैं, इस कारण वर्तमान राजवंशधरगण उनका उपहास करते हैं । उपहासका कारण यह है कि उन विवाहोंसे जितनी सन्तानें उत्पन्न हुई हैं, वह परिचय देते समय दादा और नाना दोनों गोष्ठीकी मिलीहुई उपाधियें प्रगट करती हैं ।

उक्त भूमियां लोगोंमें बहुतसे एक २ ग्रामके अधिकारी हैं । वह उसके लिये बहुत साधारण कर देते हैं । आवश्यकता होनेपर स्थानीय शासनकर्त्ता उनको स्थानीय सेनारूपसे दलबद्ध करते हैं । उस समय अर्थात् जिस समय वह राणाकी आज्ञानुसार राज्यरक्षा, विग्रह निवारण, वा शत्रुओंके विरुद्ध खड़े होनेके लिये सेना दलमें नियुक्त होते हैं, उस समय वह केवल भोजनके सिवाय और कुछ नहीं पाते । सामन्त शासन शैलीके अनुसार यही लोग मेवाडकी अधीन प्रजा हैं * और मेवाडके

* पश्चिमी देशकी सामन्त शासन शैलीके अनुसार विख्यात इतिहासलेखक हालम इस श्रेणीके स्वत्व सम्बन्धमें लिखते हैं कि “यह भूस्वत्व उत्तराधिकारी भावसे प्राप्त है और इसके अधिकारी स्थानीय शान्ति स्थापनके लिये सेनामें भरती होनेको बाध्य हैं, किन्तु अन्य किसी प्रकारके कर देनेमें बाध्य नहीं हैं । यह भूस्वत्व पिताके सब पुत्र समान भागमें विभाग करसकते हैं सन्तानके अभावमें शातिगण उस भूस्वत्वका विभाग करलेनेमें समर्थ हैं । ” मेवाडमें भूमियां स्वत्व उत्तराधिकारियोंके बीचमें कुछ अंशोंमें विभक्त होसकता है किन्तु कच्छमें यह अंश बहुत भागोंमें विभक्त होजाता है और उक्त स्वत्वके अधिकारी स्थानीय आवश्यक कार्योंमें सेनादलमें प्रविष्ट होते हैं । मेवाडके भूमियांलोग कहते हैं कि, “हमारा यह भूस्वत्व राज्य स्थापनके आरंभसे प्रचलित है । किसी लिखित विधान वा सनद द्वारा यह स्वत्व उनके पूर्व पुरुषोंने नहीं पाया, उत्तराधिकारी रूपसे ही अधिकार करते चले आते हैं ।

रहती हैं कि आपके जीवन तथा महोबेपर विपत्ति पडनेके समय वह दोनों कुँवर कभी भी अलग नहीं रह सकते. रानीने इस समय उस प्रतिज्ञाके पूर्ण करनेके लिये उनको याद दिलाई है, प्रतिज्ञा भंग करनेवाले मनुष्यसे इस संसारमें लोग घृणा करने लगते हैं, और जबतक चंद्रमा सूर्य उदय होते रहेंगे तबतक उसको नरकमें निवास करना होता है ।”

देवलदेवीने रानी मालिनीदेवीके भेजे हुए दूतके मुखसे यह समाचार सुनकर कहा, “कि चलो मैं इसी समय महोबेको चलती हूँ ।” आल्हा चुप रहा; ऊदलने ऊँचे स्वरसे कहा “कि महोबेका चाहै सर्व नाश क्यों न होजाय—जिस दिन परिमालने हमको वहांसे निकाल दियाथा वह दुःखके दिन क्या हम भूल सकतेहैं ? क्या महोबेमें फिर जाँयगे ?—कभी नहीं चाहै वह विध्वंस होजाय, अथवा चाहै पहली सी अवस्था रहै, हमारे लिये तो दोनोंही समानहैं, कान्यकुब्ज ही इस समय हमारा वासस्थान है ।”

पुत्रके ऐसे वचन सुनकर देवलदेवीने कहा; “हाय ! विधाता ! तैने मुझे वंध्या क्यों न किया, राजपूत जातिके जानेयोग्य मार्गका त्यागन करनेवाले तथा विपत्तिग्रस्त राजाओंकी सहायता न करनेवाले ऐसे पुत्रको गर्भमें धारण करनेसे क्या होता है ।” वीरांगना देवलदेवीके दोनों नेत्रोंसे अग्निकी चिनगारियें निकलने लगीं समस्त शरीर मारे क्रोधके काँपने लगा, शोक और दुःखके मारे हृदय टुकड़े २ होने लगा पृथ्वीकी ओर देखकर फिर कहना आरंभ किया “हा जगदीश्वर ! तैने इन यशनाश करनेवालोंके लिये मुझे गर्भकी पीडा क्यों दी थी कुलांगनाओंकी सन्तानोंका हृदय युद्धके नाम मात्रसे ही तथा राजपूत जातिका हृदय अनन्त आनंदसे पूर्ण होजाता है—परन्तु पितृधर्म भ्रष्ट !—तू कभी भी वत्सराजका पुत्र नहीं है,—ऐसा विदित होता है कि किसी कुत्तेने मुझे आलिंगन किया था जिससे कि तू उसीके औरससे उत्पन्न हुआ है ।”

गर्भधारिणी माताके इस वीरतापूर्ण वचनोंने दोनों वीरोंको चैतन्य करदिया । उन दोनों वीरश्रेष्ठोंने खेदित हो खड़े होकर कहा कि “ जब हम शत्रुओंके ग्रासमें पडकर महोबेकी रक्षाके लिये प्राण त्यागदेंगे; और शरीरमें घाव लगाकर वीरत्वताके प्रकाश करनेवाले कार्यमें अपने नामको अमर करेंगे; जब हमारा मस्तक संग्राम भूमिमें पडा होगा; जिस समय हम रणभूमिमें वडे २ वीरोंके साथ समरके आलिंगनसे लिप्त और साहसी वीरोंके अनुकरणसे महावीर चौहानोंके सामने दोनों ओरके रुधिरको बहादेंगे तब हमारी माता प्रसन्न होगी ।”

पूर्वकालमें कोई उक्त श्रेणीकी स्वतंत्र प्रजा सामन्त पद पाने और पूर्ण शक्ति चलानेके लिये विशेष चेष्टा करती थी । किन्तु उनकी वह इच्छा प्रायः पूर्ण नहीं होती थी । देवलाके राठौर सरदारने अपने प्रभु वनेडाके राजासे पट्टा ग्रहण करके तीन प्रधान २ देशोंका अधिकार पाया था । क्रमसे सामर्थ्य और प्रभुत्व अर्जनके साथ उस सरदारने अपनेको सामन्त रूपसे गिनानेके लिये वनेडा राजकी अधीनता अस्वीकार करी । वनेडा राजको वह जिस प्रकार निर्द्धारित कर देते आते थे उसमें कोई व्यत्यय न करके निर्दिष्ट व्यवस्थाके अनुसार वनेडा राजके दरबारमें गमन और वहां रहनेमें सर्वथा उदासीनता दिखाने लगे। यह निश्चित था कि, किसी विदेशी शत्रुके आक्रमणके उपस्थित होनेपर उक्त सरदार पैंतीस सवार देंगे । किन्तु वैसी घटना अर्थात् विदेशी शत्रु उपस्थित होनेपर देवलापति सेना भेजनेमें सर्वथा उदासीन होगये । युद्ध समाप्तिके पीछे वनेडा राजने उक्त सरदारके ऊपर महा क्रुद्ध होकर उनको राजसभामें बुला भेजा । देवलाके सरदार पूर्ण स्वाधीनता का सुधाभय फल भोग रहे थे, उनके स्वाधीनता स्वीकार न करनेपर वनेडा राजने देवला लौटा देनेकी आज्ञा दी । उसके उत्तरमें उक्त सरदारने सूचित किया कि मेरा मस्तक और देवला दोनों एक साथ बँधे हैं । ” उनके इस उत्तरका अर्थ यह है कि देहमें प्राण रहते २ देवला कभी नहीं लौटा सकता । अन्तमें वनेडार्थीश्वरने सरदारके इस गर्वित आचरणको राणासे कहला भेजा, तब देवलादेश बलपूर्वक छीनकर राणाके अधिकृत भूखण्डके अन्तर्गत कर लिया गया । देवलाके अतिरिक्त और जितनी भूमि उस सरदारके पास थी वह केवल उसी भूमिमें राणाके आधीन रहने लगे, और उस भूवृत्तिके बदलेमें उनको स्थानीय युद्धसम्बन्धी कार्य साधनेकी आज्ञा हुई । वनेडा राज्यमें बहुतसे स्वाधीन भूमियां रहते हैं । उनमें बहुतसे लोग छोटे २ ग्रामोंके भी स्वामी हैं । वह लोग किसी प्रकारके निर्द्धारित कर दानके बदले स्थानीय कार्य सम्पादन करते हैं । राजाके साथ किसी स्थानमें गमन करनेपर वनेडापति उनके भोजनकी सामग्रीका सब प्रबन्ध करदेते हैं ।

रजवाडेंमें यह भूमियां स्वत्व इतना सन्मान सूचक है कि, प्रधान २ सामन्ततक अपने सम्पूर्ण आधीनके ग्रामोंमें इस भूमियां स्वत्व पानेके लिये सदा चेष्टा करते हैं । साधारणतया पट्टेके द्वारा जो भूस्वत्व मिलता है; विना पट्टेका यह भूमियां स्वत्व उसकी अपेक्षा विघ्नरहित और दीर्घ स्थायी है इस कारण सामन्तलोग इस स्वत्वके प्राप्त करनेके लिये सदा सचेष्ट रहते हैं ।

नरश्रेष्ठ आल्हा और ऊदल महोबेके समीप ही आगये हैं यह सुनकर चन्देले राजा परिमालने अत्यन्त प्रसन्न हो उनको आलिंगन किया और रानी मालिनी देवीने वीरांगना देवलदेवीको आदर सहित लानेके लिये क्षणमात्रका भी विलम्ब न किया । साक्षात् होनेके उपरान्त सभी राजधानीमें चलेआये । पहली पहल बहुतसे मूल्यवान् द्रव्योंको देकर समाधान किया । रानी मालिनीदेवीने आल्हाको बुलाकर उसके शिरपर हाथ धरकर आशीर्वाद × दिया; आल्हाने हाथ जोड़कर प्रतिज्ञा की कि महोबेकी जय पराजयके ही ऊपर हम जीवन धारण करगए हैं । रानीने एक मुट्ठी मोतियोंकी वर्षा कर उसके सेवकोंको बाँटदिये * जाँ कविवर दूत कान्यकुब्जमें जाकर निकाले हुए दोनों वीरोंको महोबेमें लाया था उसने भी शीघ्र ही कार्य सिद्धीके पुरस्कारमें चार ग्रामोंको पाया ।

हमने काव्यमें इसके उपरान्त भारतसम्राट् पृथ्वीराजके डेरोंकी घटना देखी । सेनासहित दोनों वीरोंके आनेका समाचार सुनकर कविश्रेष्ठ चाँदने पृथ्वीराजसे कहा कि “समरस्थितिका समय बीतगयाहै इस कारण क्या तो आप शीघ्र ही चंदेलेपति परमालके पास दूत भेजिये जिससे कि वह समरभूमिमें आजायँ और नहीं तो महोबेसे चलेजानेकी आज्ञा दीजिये ।” कविवरने उसी समय आर्यक्षेत्रके शेष आर्यसम्राट् परमालके पास एक एक दूतको पत्र लेकर भेजदिया । परमाल आहतहुई सेनाको भी निर्दयीपनेसे नियत कर रहा था, इस समरके उपस्थित हुए पत्रमें भी सबसे आगे यही लिखा था । पृथ्वीराज इसको लिखकर भी शान्त न हुए जिस समय तक समरको स्थित रखनेकी बात निश्चय हुई थी, उन्होंने राज-पूत जातिकी रीतिके अनुसार और भी सात दिनतकका समय दियाहै “और बहुत दिन हुए कि जब कन्नौजसे सेना सहायताके लिये आई थी उस समय सिंहनाद भी नहीं किया था । यदि परमाल युद्धकरनेकी इच्छा छोडें तो वह अपनेको दिल्लीके आधीनमें विचारै अथवा वह महोबेको ही छोडें ।

× कर्नेल टाड साहब टीकामें लिखगयेहैं कि एकमात्र पूजनीय स्त्री और पुरोहित आशीर्वाद देतेहैं; आशीर्वाद पात्रके मस्तकपर सुवर्ण वा चाँदीकी मुद्रा स्थापित कर दोनोंको मिलानेसे ही आशीर्वाद हुआ । वह सुवर्ण वा चाँदीकी मुद्रा दीन दुःखियोंको बाँट दी जातीहै ।

* यह रीति अत्यन्त प्राचीन है, और “नाथरावली” के नामसे विख्यात है । माहात्मा टाड साहब लिखगयेहैं कि नित्य उनके शिरके ऊपर पात्र पूर्ण चाँदीकी मुद्रा आशीर्वादके समयमें वर्षाई जातीहै, और फिर वह सेवकोंको बाँट दी जातीहै अंतःपुरमें निवास करनेवाली रानी और राजकुमारियें इस प्रकारसे अपने २ सेवक और पुरोहितोंको प्रतिनिधिरूपसे भेजकर कर्नेल टाड-साहबको आशीर्वाद देतीथी ।

पट्टेका आदर्श और उसमें लिखित व्यवस्था । राणा सामन्त और आधीनके प्रधान २ पुरुषोंको भूवृत्ति देनेके समय जितने प्रकारके पट्टे और सनदें देतेहैं परिशिष्टमें उनके कई नमूने लिखेगये हैं । उनके देखनेसे सामन्तोंका स्वत्व, अधिकार, सन्मान, अनुग्रह, अर्थ संग्रहका मूलकारण और किस व्यवस्थाके अनुसार वह भूवृत्ति दी गई यह सब बातें भलीभाँति ज्ञात होसकती हैं । अनेक वृत्ति प्राप्त राजासे अनुगृहीत सामन्तोंने समयके गुणसे राणाकी निर्वुद्धिता देखकर, अनेक विषयोंमें अपनी स्वाधीनता संग्रह करली थी । एक २ राणाने यहांतक अविवेकताका कार्य किया कि, नवीन सामन्तके अभिषेक कालमें जो नजराना लियागया, वही अपने प्रभुत्वका परिचायक जानकर दो एक सामन्तोंको उस नजरानेसे भी सर्वथा रहित कर दिया । आने और जानेवाली वस्तुकी चुंगी (पारावार शुल्क) और दूसरी इसी श्रेणीके अंश भी अनेक सामन्तोंने अपने संभोग करनेके लिये हत प्रताप मेवाडपतिके निकटसे सम्मति कर लेलिये बहुतसे अपने २ देशमें अपने २ नामसे ताम्रमुद्रा चलाने और दूसरे अनेक विषयोंमें राणाका प्रभुत्व प्रताप लोप करके अपना भण्डार पूर्ण करते थे । यह चित्र इस बातको भलीभाँति प्रगट करे देताहै कि मेवाडपतिके भाग्यमें धीरे कालरात्रि आगई थी इसी कारण सामन्तगण अपनी स्वार्थ पूर्तिके साथ २ अन्यायसे शक्ति संग्रह करते थे ।

महामना टाड यहांपर लिखतेहैं कि, “बहुत वर्ष हुए, जिस समय सबसे प्रथम पश्चिमी राज्यकी सामन्त शासन रीतिके साथ रजवाडेकी सामन्त शासन शैलीकी एकताने मेरे चित्तको आकर्षित किया, उस समयमें जयपुरके अधीश्वरकी आधीनतामें स्थित एक सर्वप्रधान सामन्तकी सनद वा पट्टा लेकर, उसको क्रमानुसार देखने और प्रत्येक धारा और व्यवस्थाको पृथक् करनेमें नियुक्त हुआ । उक्त सामन्तके एक प्रधान कर्मचारीने उस विषयमें मेरी विशेष सहायता की । उस सनद वा पट्टेमें सामन्तके अधीनस्थ सरदार और अन्य भूम्यधिकारियोंके स्वत्वाधिकारादि भी विशेष रूपसे विवृत देखे गये, और उसी समय से ही मैं इस प्रणालीके यथार्थ वृत्तान्त संग्रहमें कौतूहलयुक्त हुआ था ।”

रजवाडेके राजा लोगोंके आदर्शपर ही आधीनमें स्थित प्रधान २ सामन्त भी अपने सम्पूर्ण कार्य करते हैं; प्रधान अर्थात् मंत्रीसे लेकर पनवाडी तक उसी प्रकार प्रत्येक नामके कर्मचारी नियुक्त हैं, यहांतक कि सांसारिक सम्पूर्ण विषय ही अधिपतिकी स्वीकार की हुई रीतिके अनुसार अवलम्बन करते आते हैं

सुरपुर निवासी गण कनककुंडल और मणिमुक्ताओंकी वेणीको सुशोभित कर-
 रहे हैं, सेनाके नायक जिस समय अपनी २ तलवारोंको निकालेंगे, अप्सरागण
 उसी समय अपने विशाल नेत्रोंमें अंजनकी रेखा लगावेंगी. साहसी वीरोंके
 किरच ग्रहण करते ही सुरपुरकी सुन्दरियें अपने मस्तकपर सिंदूरका टीका लगे-
 ली वीरोंके ढालको ग्रहण करते ही, अमरकी संगिनियें अपने कानोंमें कुंडल
 धारण करेंगी । वीरोंके भुजाओंपर उज्ज्वल पीतलके बर्मको धारण करते ही अप्स-
 रागण अपने करकमलोंमें खड्ग धारण करेंगी । जिस समय सेना व्याघ्रके
 नखोंसे अपने हाथोंको सुशोभित करेगी उसी समय सुवर्णकी अँगूठी और
 अलंकारोंसे सुन्दरियोंके हाथोंकी प्रभा और भी अधिक प्रकाशमान होगी. वीरोंके
 बड़े-बड़े वल्गुओंके उठाते ही अप्सरागण युद्धक्षेत्रमें निहतहुए वीरोंके लिये वरमाल्यके
 बनानेमें विलम्ब न करेंगी; सुन्दरियोंके गलेमें मृगोंकी माला और वीरोंके गलेमें
 तुलसीकी माला विराजमान होगी । वीरोंके धनुषको खेंचते ही सुन्दरियें अपने
 नेत्रोंके कटाक्षरूपी बाणोंके वर्षाके उद्योग करेंगी । वीरोंके घोड़ोंपर सवार होतेही
 अप्सरायें अपने २ रथोंके सजानेमें लगेंगी । ”

चन्दकवि इस बातको लिखगये हैं कि उन्होंने जिस बातका अपने नेत्रोंसे
 देखाथा; काव्यमें भी उसीका वर्णन कियाहै । राजपूतगण स्मरणातीत समयसे
 जातीय प्रधान कविको त्रिकालदर्शी कहते आयेहैं । चन्दकवि भीवर्ण्यद्वत्तारूपसे
 पूजेजाते थे । दुःखका विषय है कि उनके परलोक चलेजानेपर रजवाड़ोंमें फिर
 इस प्रकारके कविकी अमृतमयी लेखनीसे निकलीहुई कविता आजतक दृष्टि नहीं
 आई । चन्द ही राजपूतजातिके शेष भविष्यद्वत्ता कवि थे ।

इस समय महोबेका वृत्तान्त वर्णन करनेके योग्य है । सबसे पहले परमाल
 प्रधान २ सेनानायक और मंत्रियोंके साथ मिलकर कर्तव्याकर्तव्यके विचारनेमें
 नियुक्त हुए । परदेके भीतर रानी मलिनदे, विराज ती थीं । रानी मलिनदेने
 सबसे पहले क्रोधित हो दीर्घश्वास लेकर कहा, “ आल्हाकी जननि !
 पृथ्वीराजके विरुद्धमें हमारी विजय किस प्रकारसे होगी ? यदि हारगये तो सदाके
 लिये महोबा छोड़देना होगा; यदि हम उनके वशमें होना स्वीकारकर कर देना
 विचारलें, तो अपमानका शेष होजायगा ” देवलदेवीने सन्मुख बैठे हुए वीरोंकी
 सम्मतिको सुनकर रानीको अनुरोध किया कि, आल्हाने वीरताके गर्वमें भरकर
 कहना प्रारंभकिया, “ हे मातः ! आप अपने पुत्रोंके निवेदनको सुनिये—जो मनुष्य
 भलीभाँतिसे राजभक्तिकी रक्षा करके अपने सम्पूर्ण सुख और स्वार्थोंका छोड़कर

में सन्मानका कारण स्वरूप है और परलोकमें सुखका बीजस्वरूप है । राजपूत काविकुल केशरी चन्द्रकविने अपने सुधामय काव्यमें राजभक्तिका जो मनोहर दृश्य खेंचा है; उस राजभक्ति सन्मान रक्षामें जो अक्षय अमृतमय फल घोषित किया है, वही राजपूत जातिको सदा जातीय गौरव रक्षामें नियुक्त रखेगा । एक ओर सामन्तमण्डली जिस प्रकार राजभक्त रूपसे विख्यात और राजाकी आज्ञा पालनमें प्राणपणसे यत्नवान् है, दूसरी ओर उन सामन्तोंके आधीनवाले सरदार और प्रजावर्ग भी उसी प्रकार उनके प्रति अनुरक्ति, भक्ति और अनुगमन प्रकाश करनेमें सदा यत्नवान् हैं । राजाकी समान सामन्त भी अपने अधिकृत देशमें पूज्यपाद स्वामी रूपसे सन्मानित होते आते हैं । उनकी प्रजामण्डली भी उनके लिये जीवनदान और उनकी आज्ञासे सम्पूर्ण स्वार्थ छोड़नेमें कुण्ठित नहीं होती । सामन्तके अभिप्रेत दिनसे ही उनके हाथमें अपने जीवन मरणका भार आनन्दपूर्वक सौंप देती है । मृगयाके समय सरदारलोग सामन्तके साथ दुर्गम वनमें गमन करके पहाड़ोंकी चट्टानोंपर एकत्र खान पान करते हैं । सामन्त भवनमें सदा ही उनका आदर होता है । जिस समय सामन्त सर्वप्रधान प्रभु राणाकी सभामें जाते हैं, उस समय सरदार भी उनके साथ जाते हैं । आशय यह है कि वह सदासे सामन्तके साथ अभिन्न भावसे रहते आते हैं । यद्यपि समयके प्रभाव और दीनताके दोषसे इस समय सामन्तमण्डलीके साथ उनके अधीनस्थ सरदारोंकी अब वैसी धनिष्ठता नहीं है, किन्तु कर्नेल टाटकी समान हम भी आशा कर सकते हैं, कि, मेवाडका सुखसूर्य फिर उदय होनेपर, अवश्य ही वह प्रीतिमय दृश्य नेत्रोंके सामने प्रतिविम्बित होगा ।

कई शताब्दीतक वर्णनके अयोग्य अत्याचार, दुःसह उपद्रव, और भयानक पीडा सहकर भी राजपूत जाति जिस भावसे अपना जातीय आचार व्यवहार और नियम प्रणालीकी रक्षा करती आरही है, उससे वह सामाजिक आचार व्यवहार जातीय विधिव्यवस्थावली उनकी आत्माके साथ मिल गई है । जिस राजपूत वीरका चरित्र जातीय प्रत्येक उपकरणसे गठित है, वह राजपूत आत्मगौरव रक्षामें जीवनतक त्याग करनेमें नहीं डरते । जहां सन्मानको लेकर बात है, वहां यदि कोई भ्रमसे साधारण झुटि भी करे, तो वहां वीरगण उसको घोर अपराध समझकर प्रतिकारके लिये तलवार हाथमें लेते हैं । आत्मसन्मानके प्रति राजपूत जातिकी प्रबल दृष्टि इस घोर दुर्दिनमें भी देदीप्यमान है । यद्यपि स्वजातिका गौरव गरिमा रवि अस्ता-चलकी चोटीपर पहुंच गया है यद्यपि मेवाडकी वह विजय वैजयन्ती अब उस

देखकर मौन होकर बैठ रहतेहैं, वह कभी राजपूत नहीं हैं—जिस राजाका राज्य शत्रुओंसे घिरजाताहै यदि वीर पुरुष यह बात देखकर डरजाय तो उनके शरीर बड़े भारी नरकमें पड़तेहैं । और उनकी आत्मा छः हजार वर्षतक भूतयोनिमें पड़कर संसारमें घूमती रहतीहैं; परन्तु जो वीर अपने कर्त्तव्यको पालन करते रहतेहैं, अंतमें उनको सूर्यलोकमें स्थान मिलताहै, और उनकी कीर्ति अक्षय रहतीहै । ”

भीरुता और निष्ठुरताके अनुगामी सहचर । दोनों वीर भ्राताओंके वीरोचित वचनोंसे परमालका हृदय किसी भाँति भी साहस करनेमें समर्थ न हुआ । परमाल अपनी रानीके सन्मुख जाकर शोच करने लगा । रानी मालिनी देवीने अपने पतिको कायरकी भाँति भयमाने देख उनको प्रोत्साहित कर सेना लेकर रणक्षेत्रमें जानेको राजी किया । और सेनामें सूचना दे दी कि राजा युद्धक्षेत्रमें जायँगे । काव्योंमें ऐसा लिखाहै कि उसके पीछे वीर पुरुषोंने अपनी प्राणप्यारी स्त्रियोंके साथ अन्तिम प्रेमालिङ्गन किया, और प्रातःकालके सूर्योदयके साथ ही साथ सबोंने रणभूमिमें जानेसे पहले संध्यावन्दन पाठपूजा आदि नित्यकर्म करलिये । आलहाने नवग्रहोंकी पूजा करके अपने पूर्वजोंकी स्थापित हनुमानजीकी मूर्तिका पूजन किया और उनको फूलोंकी माला पहराकर अपने पुत्र इन्दल और छोटे भाई ऊदलको बुलाकर आद्याशक्तिका स्मरण कर प्रतिज्ञा करी “ जो जस्सराजका नाम अक्षय रखनेकी अभिलाषा है और जो देवलदेवीका पवित्र रक्त अपने नसोंमें धारण करके गर्वित होना चाहतेहो तो आज रणभूमिमें जहाँ शत्रुओंको देखों वहीं उनका संहार करडालो । ” बड़े भाईकी इस प्रतिज्ञाको सुन ऊदलने कहा आपने वीरपुरुषोंकी समान प्रतिज्ञा करी है । मेरी चमचमाती हुई तलवारकी धार भी क्या पृथ्वीराजके नेत्रोंको न झुलसादेगी वह क्या मेरे साथ संग्राममें ठहरसकेंगे ? ” रणके मदसे उन्मत्त राजपूत प्रतिज्ञाके पालनकरनेमें उद्यत हुए रणके भेषको धारे दोनों वीर पुत्रोंको आशीर्वाद देकर वीरभार्या-वीर माता देवलदेवीने कहा, “ युद्धमें प्राणोंको निछावर करके प्रतिज्ञा पालन करना; यदि तुम्हारा शिर अपने स्वामीके कारण समरक्षेत्रमें कटजाय तो निश्चय जानलो कि तुम उसके पुरस्कारमें देवताओंके सिंहासनपर विराजमान होगे । ” वीरमाताके कहचुकनेपर दोनों वीरोंकी साध्वी स्त्रियें उठकर बोलीं, “ जो रमणी साध्वी सती है वह क्या पतिके मरनेके उपरान्त जीवित रहसक्तीहै ? गौरी देवीका कथन है—कि जो स्त्री स्वामीको समरक्षेत्रमें सोते देख जीवित रहनेकी इच्छा करतीहै

मेवाडमें वही एक चरसा भूमि नामसे विख्यात है । वडे आश्चर्यकी बात है कि, रजवाडेकी सामन्त शासन रीतिके अनुसार नीची श्रेणीके सामरिक भूवृत्तिधारी लोग जितनी भूमि प्राप्त करते आते हैं, इंग्लेण्डकी शासन शैलीके अनुसार उस श्रेणीके सैनिक ठीक उतनी ही भूमि वृत्तिस्वरूप पाते हैं । रजवाडेमें यह जिस प्रकार चरसा अर्थात् चर्म नामसे कही जाती है, इंग्लैंडमें भी उसी प्रकार हाइड अर्थात् चर्म शब्दसे विख्यात है; और दोनोंका ही परिमाण समान है । ग्रेट ब्रिटनके ऐंग्लोसेक्सन शासनारंभ समयसे ही सम्पूर्ण भूमि हाइड परिमाणमें विभक्त होती थी । राजपूतानेकी एक चरसा भूमिके अर्थसे जिस प्रकार केवल एक हलसे खेचने योग्य भूमि समझी जाती है, इंग्लेण्डमें उसी प्रकार उस अर्थमें वह गृहीत होती थी । * इंग्लेण्डके नाइट (Knight) उपाधिधारी एक २ वीरको चार हाइड परिमित भूमि वृत्तिस्वरूप दीजाती थी; * उसका परिमाण वर्तमान समयमें प्रायः दश एकड़की बराबर है; × मेवाडमें एक चरसा भूमिका परिणाम पच्चीससे तीस बीघेतक है, अर्थात् सेक्सनके एक हार्डकी समान है ।

प्रधान २ पट्टावत सामन्तोंके अधीनस्थ नीची श्रेणीके पट्टाधारी सरदारोंका स्वत्वाधिकार, शक्ति कैसी है ?, दोनोंके बीचमें विधि व्यवस्था निर्धारित है, किस २ कार्य पालनमें दोनों भाग लेते हैं? देवगढ देशके नीची श्रेणीके पट्टाधारी सरदारोंने उक्त देशके सामन्तके विरुद्ध जो व्यवस्था पत्र एक समय उपस्थित किया था, पाठकगण उसके पढ़नेसे सब विषय भलीभाँति जानकर उस संबन्धमें अपना मन्तव्य निश्चित कर सकेंगे । यह विचित्र बात है कि, देवगढके सामन्तके साथ उनके आधीनके सरदारोंका जिस कारणसे विवाद हुआ था इस्लीके प्रथम श्रेणीके सामन्तोंके साथ उनके अधीनस्थ सरदारोंका उसी प्रकार विवाद उपस्थित होनेसे, सन् १०३७ ईस्वीमें कनराडने जो विधान निर्धारित किया, * देवगढके नीची श्रेणीके सरदारोंने उसी प्रकारका विधान करनेके लिये मेवाडेश्वरके निकट प्रार्थना करी थी ।

* Millars Historical view of the english Government, P. 85.

* Hume, History of England, Appendix 2d, vol, ii. P. 261.

× ४४ हाथ लम्बी और ४४ हाथ चौड़ी मूमिमें एक एकड़ होता है ।

* जो पुरुष सम्राट अथवा सामन्तसे पट्टा लेकर भूमिका अधिकार भोगता आता है साम्राज्यके विधान और स्वजातीय विचारको निर्धारित व्यवस्थाके बिना कोई उसको उस स्वत्वसे खारिज नहीं कर सकता ।

वीरता दिखाते रही किन्तु दुर्भाग्यवश सायंकालके समय जब चारों ओरसे शत्रुओंकी सेनाने घेरलिया तब राजपूतगण धायल दश हजार सेनाको छोड़ भाग खड़े हुए । * महाराज जशवंतसिंह अपने राज्यमें लौट आये, किन्तु फरिस्ता अपने ग्रंथमें लिखताहै कि वह उदयपुरके महाराणाकी पुत्रीसे ब्याहा था, इस कारण उस प्रधान रानीने अपने पराजित स्वामीको नहीं अपनाया और किलेका दर्वाजा बंद करालिया ।

इतिहासवेत्ता वर्णियर जो उस समय वहीं उपस्थित था वह अपने ग्रंथमें लिखगयाहै कि, “ जशवंतसिंहके परास्त होने और भागनेके पीछे उनकी रानी राणाकी पुत्रीने जो उनसे तिरस्कारसूचक वचन कहे मैं उनको बिना लिखे नहीं रहसकता । जब रानीने सुना कि महाराज अपने स्वाभाविक वीरतासे संग्राममें लड़ेहैं, जब उन्होंने अपने अधिकारी सेनाके दलमें चार वा पांच सौ सेना जीवित रही देखी तब शत्रुदलमें रहना असम्भव जान समरक्षेत्रको छोड़ाहै, इस बातको सुनकर भी राजाको इस घोर विपत्तिमें ढाढस देनेके लिये प्रतिनिधि भेजनेके बदले रानीने दुःखित होकर महलका द्वार बंद कराकर उस कलंकित वीरको न आनेको आज्ञा दी । रानीने महाराजके आचरणपर आक्षेप किया, कि वह मेरे स्वामी नहीं है; महाराणाके जमाईकी आत्मा कभी ऐसी नीच नहीं होसक्ती; उनको स्मरणकरना चाहिये था कि श्रेष्ठवंशमें सम्बन्ध होनेसे श्रेष्ठ ही कार्य करना उचित है; ऐसा विचारकर महाराज समरभूमिमें जय प्राप्त करते यदि जय न पास के थे तो शत्रुओंके सन्मुख ही अपने जीवनको विसर्जन करदेते, क्रोधित रानीने कुछ देके पीछे दूसरे भावमें बदलकर चिता जलानेकी आज्ञा दी और जलती हुई चितामें स्वामीके वर्तमान रहते ही अपने शरीरके भस्म करनेकी मनमें ठान ली । रानीकी यह अखंडनीय आज्ञाको अन्तःपुरवासिनी रमणीमंडलीने सुन विनयपूर्वक प्रार्थना करी कि तुम्हारे ऐसा करनेसे राजाको भी तुम्हारे साथ जीते हुए जलना पड़ेगा; नहीं तो यह कार्य पूर्ण नहीं होसकता । थोड़ी देर विचारकर क्रोधमयी रानी महाराजपर कटाक्ष करके अनेक प्रकारसे तिरस्कार करनेलगी । राणाकी पुत्रीने इस भाँतिसे आठ नौ दिन तक स्वामी-

* वर्णियर लिखगया है राजपूतजाति रणभूमिमें जानेके पहले जीवन विसर्जन करनेमें संकल्पकर जब परस्परमें भेंटते और बिदा मांगतेहैं वह दृश्य बड़ा ही मनोहर होताहै ।

दो ।” उस नवीन वंशाधिकारीकी परिवार वृद्धिके साथ वह साधारण अंश यथा-समय सैकड़ों अंशोंमें विभक्त होकर अन्तमें सबको दीनदशमें गिरा देता है । फ्रांसकी सामाजिक विधिव्यवस्था जिस भावसे प्रचलित थी, * और अब भी वर्तमान है। उससे किसी सामन्तका अधीनस्थ देश वा किसी पट्टाधारी सामन्तके आधीनका प्रदेश उत्तराधिकारियोंके लिये खण्ड २ में विभक्त नहीं हो सकता, ज्येष्ठपुत्र ही सब स्थावर सम्पत्तिका अधिकारी होता है, और मध्यम वा छोटे पुत्रोंको मार्गका भिखारी वा दूसरेका गलग्रह होकर जीवन यात्रा निर्वाह करना नहीं होता । राजपूतानेमें प्रचलित उत्तराधिकारियोंके मध्यमें भूस्वत्व खण्ड २ की विभाग प्रथा यदि कुछ सीमावद्ध करी जा सकती तो राजपूत जातिको अधिक उपकार लाभ, और जातीय उन्नतिकी सम्भावना थी, किंतु इस रोगकी औषधि प्रगट करना दुस्साध्य है । कच्छ और काठियावाड देशमें जितना भूस्वत्व भाग अंश २ में विभक्त होता जाता है, उतने ही वहां मामले मुकद्दमे भारी अपराध और कष्ट बढ़ते दिखाई देते हैं । जहां २ इस भूस्वत्वके अधिक अंशोंमें विभाग करनेकी प्रथा नहीं है, वहां २ उसके द्वारा उपकार देखा जाता है । यद्यपि प्रत्येक उत्तराधिकारीको एक २ विभागकी भूमि पालन करती है, और यह बात देखनेमें भी सुन्दर है, किन्तु कार्य साधनमें यह किसी प्रकार अच्छा फल उत्पन्न नहीं कर सकता । मेवाडमें यह भूस्वत्व कितनी अधिकताके साथ विभक्त होता है ? हम इस बातके कहनेमें असमर्थ हैं । केवल इतना ही कह सकते हैं कि, मेवाडके रहनेवाले अपने २ भूस्वत्वको अधिक अंशोंमें विभाग न करके अनेक उत्तराधिकारियोंको विदेशमें जीविकाके लिये भेज देते हैं । यह विभागकी रीति और कन्याके विवाहके दहेजकी रीति ही शोचनीय शिशुहत्याका प्रधान कारण है ।”

कनेल टाडकी ऊपर लिखी बातके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि, बहुत काल पहलेसे शास्त्रविधानके अनुसार भारतमें जो दायभाग व्यवस्था प्रचलित है, सामन्त शासन शैलीके लिये वह कार्य साधक न होकर अनिष्ट साधन कर रही है । देशभेद और समाजभेदसे दायभाग प्रणाली भिन्न प्रकारकी है । हमारे देशमें पिताका प्रत्येक पुत्र ही समभावसे पैतृक धनसम्पत्तिमें उत्तराधिकारी है ।

× जे सम्राट भी ज्येष्ठ कुमारको सिंहासन देकर दूसरे पुत्रोंको भिन्न २ छोटै २

* जो पुरुषनरते थे । राजपूत राजगण उसी मर्यादा पर—बड़े पुत्रको राज-साम्राज्यके विधान और स्वजा-
खारिज नहीं कर सकता । १९६ पृष्ठ ।

हुई । हृदयवल्लभको रणके भेषसे सजाकर जातीय स्वाधीनता और अपने अतुल गौरवकी रक्षाके लिये प्राणत्यागनेका उपदेश देकर बोली, “हे नाथ ! अन्तमें मेरा और आपका सूर्यलोकमें अवश्य ही मिलाप होगा ।”

प्रसिद्ध चंदकविके ग्रंथमें यह वटना भारतका अधःपतन और संयुक्ताके वीरनारियोंकी समान आचरण प्रशंसाके साथ पाये जातेहैं । पृथ्वीराजने भारतमें यवनोंके आनेसे पहले नीचे लिखे अनुसार स्वप्न देखकर रानीसे कहा, “आजकी रातमें जिस समय मैं निद्रादेवीकी गोदमें अचेत था, उस समय रम्भाकी समान एक अनुपम सुन्दरी रमणीने आकर दृढताके साथ मेरी दोनों भुजाओंको पकडकर हिलादिया फिर उसने तुम पर आक्रमण किया और जिस समय तुमने अपने छुटानेकी चेष्टा की थी उसी समयमें एक विराट् मूर्ति पिशाचकी समान विकटाकार क्रोधसे उन्मत्त हाथीने आकर मुझे दवालिया । * फिर निद्रा भंग होगई तब रम्भा वा उस विराट्मूर्तिको नहीं देखा किन्तु मेरा हृदय धडधडाने लगा काँपतेहुए अधरोंसे शिव ! शिव ! इस नामका उच्चारण किया । भाग्यमें क्या होगा इसको विधाता जानै ।”

संयुक्ताने इस स्वप्नको सुनकर उत्तर दिया “प्राणनाथके गौरवकी वृद्धि और जय होगी । हे चौहानकुलसूर्य ! आपकी समान इस जगत्में किसने विशाल आनन्द और असीम गौरवको भाँगाहै । केवल मनुष्योंका ही मरण निश्चित है ऐसा नहीं वरन् देवताओंको भी मरण प्राप्त होताहै । सभी प्राचीन शरीरके बदलनेकी अभिलाषा करतेहैं, चिरकाल तक जीवित रहनेसे मृत्युका होना ही श्रेष्ठ है । केवल अपने स्वार्थपर ही दृष्टि नहीं रखना चाहिये, अक्षय कीर्तिके संचय करनेमें ध्यान देना योग्यहै । आपकी तीक्ष्ण नलवारसे शत्रुओंका नाश होगा और मैं अधम भी परलोकमें आपकी अर्द्धाङ्गिनी हूँगी ।”

पृथ्वीराजने कविकुल चूडामणि चंदको बुलाया और स्वप्नका समस्त वृत्तान्त सुनाया कविने स्वप्नके अर्थकी व्याख्या कर दी कि राजगुरु अमुक २ मंत्रोंको अमुक २ वर्णोंसे पुटितकर सम्राट्की पगडीपर लिखें फिर सूर्य और चन्द्रमाके उद्देशसे हजार दूधसे भरे कलशोंके द्वारा अखंडधारा बाँधकर पगडीपर लिखे मंत्रका अभिषेक करें ।

पृथ्वीके धारण करनेवाले अत्यन्त देवताके निमित्त दश भैसोंका बलिदान किया, और ब्राह्मण तथा अनाथोंको बहुत सा धन दान किया । कविका वचन

* त्वममें ऐसी मूर्तिका देखना अशुभ है ।

पैंतीसवां अध्याय ३५.

रेकोयाली कर;—दासत्व;—वसी [शी] गोला और दास;—
राजपूतप्रधान वा मंत्री ।

रेकोयाली—पूर्वीराजकी सामन्त शासन शैलीके साथ पश्चिमी राजकी सामन्त शासन शैलीकी समानता पहिले अनेक विषयोंमें दिखा चुके हैं, करनेल टाड साहब यहां पर और एक विषयकी समानता लिख गये हैं, पञ्चायती प्रबन्ध शिथिल होने, तथा चारों ओर अशान्ति फैलनेसे, और उस समयके अधीश्वरकी शासन शक्तिका हास होनेसे प्रजाके धन और प्राणकी रक्षामें असमर्थ होनेके कारण रजवाडेमें जिस प्रकार रेकोयाली करका प्रचार हुआ यूरोपमें भी इसी कारणसे सालवामेण्टा (Salvamenta) का जन्म हुआ, रेकोयाली शब्दका अर्थ रक्षा करना, और आश्रय देनेके सम्बन्धका है, करनेल टाड लिखते हैं कि राजपूत राज्योंमें इस प्रकारका कर पूर्व कालमें भी कुछ २ प्रचलित था, जिस समय मेवाडमें महाराष्ट्र पठान आदि दस्युदलने संहार मूर्ति धारण करके अत्याचार लूट मार और उपद्रव आरंभ किया था, जिस समय मेवाडकी प्रत्येक प्रजाकी धन प्राणकी रक्षा अत्यन्त दुस्साध्य होगई उस समयमें ही यह रेकोयाली कर शोचनीय रूपसे प्रजाओंका खून चूसता था, धन प्राण और भूमि सम्पत्तिकी रक्षाके लिये ही प्रजा सबल सामन्तोंके आश्रयको ग्रहण करके रक्षाके बदलेमें यह रेकोयाली कर देनेको विवश हुई थी, प्रायः नगदरूपये अथवा रक्षा करनेवाले अधीश्वरकी भूमिको कई मास तक बिना कुछ लिये यह जोत देतेथे, इसके सिवाय आश्रय देनेवाले सामन्त इन आश्रित जनोंसे अपनी इच्छानुसार दूसरे स्वार्थ भी पूर्ण करलेते थे विशेष कर सामन्तगण भूमियां लोगोंके निकटसे अनेक उपाधियोंसे उनकी भूमिका अधिकार लेलेनेका विशेष यत्न करते थे, कारण कि सामन्तगण यदि राणाके द्वारा किसी प्रकारसे सामन्त पदसे विच्युति—पट्टाधीन भूस्वत्व छोडनेमें बाध्य होते, तो इस भूमियांस्वत्व संग्रह द्वारा सहजमें जीविका निर्वाह करते थे भूमियांस्वत्व राणा किसी प्रकार भी अपने अधिकारमें नहीं कर सकते । इस कारण चतुर सामन्तगण भूमियांस्वत्व संचयके लिये ही आश्रय दांन

सजादिया । संयुक्ताके बड़े २ नेत्र मानो पृथ्वीराजको ही देख रहे हैं । रणका वाजा बजने लगा मानो मृत्युके समाचारने आकर उस रनवासमें स्थित राज-रानीके हृदयपर भयंकर आघात किया । वीरश्रेष्ठने अपनी प्राणप्यारीसे जन्मभरके लिये विदा ली, संयुक्ताने प्रतिज्ञा की कि जबतक समर समाप्त नहीं होगा तबतक मैं केवल जल पान करके ही अपने जीवनको धारण करूंगी । संयुक्ताके शेष वचन “इस योगिनीपुरमें * अब प्राणेश्वरके दर्शन नहीं मिलेंगे; सूर्यलोकमें फिर साक्षात् होगा ” उसका यह अनुमान सफल हुआ । उस महासमरमें, भारतके भाग्यका पतन, हिन्दूजातिकी स्वाधीनताका लोप, पृथ्वीगज पराजित बन्दी और निहत हुए । वीरवाला संयुक्ताने चिताकी प्रज्वलित अग्निमें अनुपम रूप लावण्यमय शरीरको समर्पण कर अपनी प्रतिज्ञाके पूर्ण करनेमें एक मुहूर्त्तका भी विलम्ब न किया ।

अंग्रेजी पढ़े हुए युवक अंग्रेजी साहित्यमें लुकेशियाके चरित्रोंको पढ़कर उसकी ऊँची प्रशंसासे उन्मत्त होजाते हैं, उनको सावधान करनेके लिये ही उस लुकेशियाकी अपेक्षा साध्वी सती और बुद्धिमती राजपूत वीरवालाओंके चरित्रोंको यहां लिखना आवश्यक विचारते हैं । गानोरकी राजरानी हमारी वह राजपूत लुकेशिया हो कठिन यवनोंकी सेनाके दलने यमराजकी समान जब गानोरपर आक्रमण किया । राजरानीने राजपूत वीरांगनाओंकी समान असीम साहससे, क्रमानुसार शत्रुओंके कराल गालसे पाँच दुर्गोंकी रक्षा कर—पाँच स्थानोंमें महावीरता दिखाकर अंतमें नर्मदानदीके किनारे उनके राज्यके शेष दुर्गका आश्रय किया. रानी अपनी सेनादल और अपने सेवकोंके साथ तरणीमें उतरने भी न पाई थीं कि शत्रुओंकी यवनसेना वहां आ पहुँची । रानीके साथमें उस समय बहुत थोड़ी सेना थी; वह लोग शत्रुओंके आतेही हताश होगये, इस कारण किला शीघ्र ही यवनोंकी सेनापतिके अधिकारमें होगया । भूपालमें जो नवाबका वंश आजतक विराजमान है इस विजय पाईहुई: यवनोंकी सेनामें उसी वंशके आदिपुरुष हैं । वह गानोरकी उक्त वीरवाला राजरानीके अनुपम रूप लावण्यको देखकर मोहित हो गानौर राज्यके अधिकारके साथ ही साथ उक्त स्त्रीरत्नके हृदयमें अधिकारकी इच्छासे सेना लेकर आगे बड़े दुर्गको अधिकारमें करनेके उपरान्त यवनोंकी सेनाने एक दूतके हाथ रूपवती वीरवालाके पास अपना संदेश भेजदिया । गानोरकी रानी किलेके ऊपरके कमरेमें बैठी हुई थीं,

* दिल्लीका दूसरा नाम योगिनीपुर है, चंद्रकविके ग्रंथोंमें भी इसी प्रकारका लेख है ।

वसी ।—यद्यपि क्रीत दास रखनेकी प्रथा पश्चिमसे इस समय विलकुल दूर होगई है । तथा ब्रिटिश शासनमें भारतवर्षसे भी दास व्यवसायने इस समय भूत उपाधि धारण करली है । किन्तु कर्नेल टाड लिखते हैं कि, पूर्वकालमें पश्चिमी राज्य की सामाजिक प्रत्येक अवस्थामें ही जिस प्रकार कृषिदास देखे जाते थे रजवाड़में पूर्वकालमें उस प्रकारके कोई नहीं थे । स्वाधीन राजपूत और राजालों-गोंके अधीन स्थित गोला नामक * उपाधिकारी दासोंमें वसी नामक एक श्रेणी में दासोंका उल्लेख देखाजाता है । यह वसीगण सालिकफ्रांकोंके प्राचीन सारभिनामक दास श्रेणीके प्रायः समान हैं । हालम साहब लिखते हैं कि, सरभिदासों की निजकी सम्पत्ति होनेपर भी वह अपने प्रभुके अधीनमें कृषिकार्य्य और प्रभुके अधिकृत देशमें ही निवास करनेको बाध्य होते थे । आरावलीकी एक श्रेणीके किसान जो इस समय हाली नामधारी हैं, उनकी दशा भी अब ऐसी ही होगई है । पूर्वकालमें जो खेत उनकी निजकी सम्पत्ति थे, इस समय सामन्त-गणोंका उन क्षेत्रोंके ऊपर अधिकार होजानेसे वह हाली लोग × उस सामन्त मण्डलीके दासरूपसे उन प्रभुकी आज्ञानुसार खेत जोतनेमें नियुक्त होते हैं ।

हालम लिखते हैं कि, “छोटे २ भूस्वामिगण लूट मार और अत्याचारके समय भूस्वत्वसे वंचित होनेपर अपनी व्यक्तिगत स्वाधीनता भी खो बैठते हैं ।” कर्नेल टाड लिखते हैं कि; “हारावली देशके हालीगण इस उक्तिकी सत्यता भलीभाँति प्रगट करदेते हैं । विद्रोह विदेशीय आक्रमण आदिके कारणसे पहिले छोटे २ भूस्वामी जनोंके सामन्तोंका आश्रय लेनेपर उनके द्वारा ही वसी दास श्रेणीकी उत्पत्ति हुईहो, ऐसा ही नहीं किन्तु भीतरी अत्याचार उत्पीडन भी इसका मूल है । कोटा राज्यके हालीगण यद्यपि दासस्वरूप हैं, किन्तु वह दास उपाधिको धारण नहीं करते । वसी लोगोंकी दशा उनकी अपेक्षा शोचनीय है । क्योंकि उनकी निजकी किसी प्रकार की धनसम्पत्ति वा भूमि नहीं है । पहिले जिस भूमिमें उनका अधिकार था, इस समय उस भूमिमें ही वह सामन्तोंकी आज्ञानुसार जीविका निर्वाहके लिये कृषिकार्य्य करनेमें बाध्य हैं, और

* यवनोंका “ गुलाम ” शब्द जिस अर्थका बोधक है, राजपूतोंका “ गोला ” भी उसी अर्थका सूचक है ।

× हाली शब्द कृषिकार्य्य साधक हलसे उत्पन्न हुआ है । सेक्सन लोगोंके हलका नाम Sye था, । मारवाड़में “ स ” वर्णके स्थानमें “ ह ” वर्णका व्यवहार होता है, यथा;—सालिमसिंह नाम “ हालिमसिंह ” रूपसे उच्चारण कियाजाता है ।

नरककी पीडा दूर न हुई; अंतमें खाँ साहबने मतवाले हाथीके समान खडे होकर दोनों हाथोंसे उन मूल्यवान आभूषणोंको फेंकना प्रारंभ किया; राजपूत सतीके साथ विवाह करनेकी इच्छा करनेवाले यवनोंके सेनापतिको पुकारकर गानोरकी रानीने कहा; खाँ साहब ! आपका अन्तिम समय आ पहुँचा है ! विधाताको यही करना था कि आपका शुभ विवाह और हमारा प्राणत्याग यह दोनों कार्य एक ही समयमें होंगे । जो भेष आपने धारण किया है यह कालकूट विषमय है, आपके सन्मुख राजपूत स्त्री अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये और क्या उपाय करें ?” राजपूत वीर वालाके यह वचन महाभयंकर थे; इनसे सभीको महाविस्मय हुआ. कहाँ तो वह विवाहकी तैयारियाँ थीं और कहाँ यह समाधिका स्थान है. कहाँ तो मिलनेका उद्योग था, और कहाँ यह सदाके लिये वियोग होगया । विवाहके उत्सवके स्थानमें जीवान्तका विषाद दिखादिया । जरादेरमें ही क्यासे क्या होगया;—वह राजपूत वीरवाला राजपूत सती श्रेष्ठ गानोरकी रानी धीरे २ उस किलेकी छतपर जा चढ़ी और एक बार उस यम यंत्रणाके भोगी खाँ साहबकी आंर देखकर उस विश्वमोहिनीने हँसते २ ऊँची छतपरसे अनुपम रूपराशियुक्त अपने शरीरको किलेके नीचे बहनेवाली परिखा नदीकी गोदीमें डालदिया ! अभागे खाँ साहबका प्राणवासु भी उस विषम यंत्रणासे शीघ्र ही पापयुक्त शरीरको छोडकर पंचभूतमें लीन होगया, भूपाल जानेके मार्गमें वह चाँदखाँकी समाधिका मंदिर आजतक बनाहुआ है । इस देशके लोगोंका यह विचार है कि इस समाधिमंदिरको देखनेके लिये जो मनुष्य जाते हैं तीन ही दिनमें कोई रोग भी क्यों न हो उसी समय दूर होजाता है ।

राजपूतोंकी स्त्रियें अपना सन्मान और अपने गौरवकी रक्षाके लिये कितना यत्न करती थीं उनका एक चूडान्त निदर्शन महामाननीय टाड साहबने यहां पर दिखाया है । अम्बेरके विख्यात महाराज जयसिंहने कोटेकी राजकुमारीके साथ विवाह कियाथा । उस कोटेकी राजवालाका स्वभाव, उसकी आचरण और पहनावा साधारण रानियोंकी समान अत्यन्त सरल और आडम्बरहीन था । परन्तु सम्य समृद्धिशाली अम्बेरराजके रनवासमें रहनेवालियोंके बीचमें राजरानियोंकी समान अत्यन्त मूल्यवान वस्त्र और आभूषणोंके धारण करनेकी रीति प्रचलित थी, कोटेकी राजकुमारी इनको पहलेसे ही अच्छा नहीं मानती थी । एक समय अम्बेरके महाराज जयसिंह कोटेकी राजकुमारीके साथ बैठे हुए थे, उन्होंने बातों-ही बातोंमें कहा कि कोटेकी राजरानियोंकी अपेक्षा हमारे राजकी नीच जातिकी स्त्रियें भी अच्छे सुन्दर रमणीय वस्त्र और आभूषण पहरती हैं । अम्बेरके महा-

राज कुछ कालके उपरान्त एक काँचका टुकड़ा लेकर रानीके पहरेहुए वस्त्रोंको काटनेलगे । कोटेकी राजकुमारीने विचारा कि इससे तो मेरा घोर अपमान हुआ है, उसने उसी समय अपने धोरसे तलवार निकालकर क्रोधित हो वज्रके समान गंभीर वचनसे कहा कि मैंने जिस वंशमें जन्म लिया है वह राजवंश कदापि इस प्रकारकी वृणा और उपहासके योग्य नहीं होसकता । इस बातको आप स्मरण रखें परस्परके प्रति सन्मान दिखानेसे केवल दम्पत्तिका सुख नहीं मिलसकता—धर्मकी भी रक्षा होती है ।” फिर उस वीरवालाने कहा-कि “महाराज ! यदि आप मेरा इस प्रकारसे अपमान करेंगे तब आप इस बातको भलीभाँतिसे मजझजायेंगे कि अम्बेरके महाराज काँचके टुकड़ेको चलानेमें इतने चतुर नहीं हैं कि जितनी कोटेकी राजकुमारी तलवारके चलानेमें निपुण होंगी ।” कोटेके राजवंशकी किसी स्त्रीका भी ऐसा अपमान न हो इसलिये उस वीरवालाने राजासे शपथ भी ले ली । महात्मा टाड साहब कह गये हैं कि उस शपथकी आजतक अटल भावसे रक्षा होती है ।

राजपूत स्त्रियोंके सतीत्व, साहस और शारीरिक बलके सम्बन्धमें कोटेके विख्यात वीर जालिमसिंहके मुखसे निकलेहुए वचनको कर्नेल टाड साहब इस स्थानपर वर्णन करगये हैं । नीचजातिकी राजपूत स्त्रियें अपने २ पतिको कृषिकार्यमें सहायता देती थीं । और अन्नादिको बनाकर खेतपर ही स्वामीके लिये लंजाती थीं, यह बात सबको विदित है । एक समय एक किसानकी स्त्री इस प्रकार पंचपहाड़नामक शिखरसे लगेहुए वनके भीतर अपने स्वामीके लिये भोजन बनाकर लिये जाती थी । इसी समयमें अचानक एक बड़ा भारी शूकर वनसे आकर उस किसानकी स्त्रीको पकड़नेकी इच्छासे उसके पीछे २ दौड़ा । शूकर भोजनके लालचसे इसके पीछे आरहा है; या मेरे पकड़नेकी इच्छासे भागा चलाआता है, इस बातको न समझकर किसानकी स्त्री एक वृक्षके नीचे खड़ी होगई । शूकर उसी भावसे देहको ऊँचा करके उस स्त्रीके पकड़नेकी चेष्टा करनेलगा । वह स्त्री अपनी रक्षाके निमित्त वृक्षके चारों ओर घूमनेलगी, उसके पकड़नेके लिये शूकर भी वृक्षकी परिक्रमा करनेलगा । इसके उपरान्त जब वह स्त्री अपनी रक्षा करनेमें असमर्थ होगई तब प्रबल साहस करके अपने दोनों हाथोंसे भलीभाँति उस शूकरको पकड़ लिया; वह शूकर बलहीन होकर अपने छोटे शरीरसे उस प्रबलशक्तियुक्त हाथोंके काटनेको किसी भाँति भी समर्थ न हुआ । इसी समय एक सैनिकको जातेहुए उस स्त्रीने देखा तब उससे

करुणायुक्त वचन कहकर अपनी सहायताके लिये उसे बुलाया । स्त्रीके करुणायुक्त वचनोंको सुनकर वह सैनिक उसी समय वहाँ गया और शूकरको अपने दोनों हाथोंसे पकड़ लिया, स्त्री छूटकर दो चार पैर आगे बढ़ी थी कि इसी समयमें वह सैनिक पुरुष उसको ऊँचे स्वरसे पुकारकर बोला कि मैं इस बलवान शूकरको किसी प्रकार नहीं पकड़सकता । कृष्णकुमारी सैनिकके यह वचन सुनकर हँसतीहुई शीघ्रतासे चली । और बड़ी शीघ्रतासे स्वामीके पास आकर उसकी तलवार लेकर शूकरको मारकर उस सैनिक पुरुषका उद्धार किया । इस बातको टाड साहब लिखगयेहैं कि राजपूतोंकी स्त्रियोंका साहस, शक्ति और उनके सतीत्वके उदाहरण अनेक पायेजातेहैं ।

बड़े प्रसिद्ध इतिहासोंमें राजपूतनारियोंकी वीरता और उनके चरित्रोंका गठन तथा राजपूतस्त्रियोंकी सामर्थ्यके सम्बन्धमें और एक उदाहरण दिखाकर महामाननीय टाड साहबने अध्यायका उपसंहार कियाहै । यह घटना राजवाड़ेके सब प्रान्तोंमें थी मरुभूमिमें स्थापित जयशालके इतिवृत्तसे गृहीत हुई थी । जयशाल मीरके आधीनमें पुगालनामक देशका रणङ्गदेव नामवाला एक सामन्त था उसका उत्तराधिकारी पुत्र साधु उस मरुभूमिके सब मनुष्योंमें भयका कारण होगया । साधु ऐसा साहसी वीर और अत्याचारी था कि वह दक्षिणमें तो सिन्धनद तक पूर्वमें नागौर तक उपद्रव करताहुआ घूमता था । एक समय वह दुर्द्धर्ष साहसी साधु एक स्थानपर लूटनेकी वृत्तिको चरितार्थ करनेके उपरान्त बहुतसे ऊँट और हाथियोंको हस्तगत कर १४४० खंडके ग्रामोंके अधीश्वर महीलजातिके नायक माणिकरावकी राजधानी अरिन्त नगरकी ओरको जा रहा था । माणिकरावने उसके आनेका समाचार सुनते ही उसको उसी समय अपनी राजधानीमें बुलाभेजा । वीरश्रेष्ठ साधु महीलपतिका आतिथ्य स्वीकार करनेके लिये आया, सबने उसका बडेसन्मानके साथ आदर सत्कार किया । वृद्ध माणिक रावके कर्म देवीनामकी परमसुन्दरी युवती कन्या थी । वह युवती साधुको मरुभूमिमें सबसे श्रेष्ठ अश्वारोही जानती थी । इस समय उसी साधुको स्वयं अपने नेत्रोंसे देखकर कि जिसका संबन्ध मंदौरके राठौर नियत होचुका था । उसने सिंहासनकी आशा छोडकर पुगालके सामन्तके पुत्रको पति रूपसे वरणकरनेका संकल्प किया । मंदौरके राजकुमार प्रबल बलशाली थे और जब कि उनके साथ विवाहका सम्बन्ध निश्चय होगयाहै, तब वह सम्बन्ध न होनेसे भयानक विपत्ति पड़ेगी यह जानकर भी महिलपति माणिकरावने

भारतके अनेक प्रान्तोंमें बहुतसे देश वस्ती वशी नामसे पुकारे जाते हैं । टोंक (रामपुरा) राज्यके निकटमें विख्यात वशी नगरका नाम इसी कारणसे उत्पन्न हुआ है । सबसे पहिले सोलङ्की राजने विजातीय आक्रमणसे अपना पैतृक राज्य गुजरात छोडकर उक्त देशमें वस्ती स्थापन करी थी । उनके आधीनकी सब प्रजाने भी उस कारणसे विजातीय शासनमें रहना अनुचित समझ अपनी इच्छानुसार उनके साथ आकर ऊपर कहे स्थानमें निवास करना आरंभ किया । कर्नेल टाड लिखते हैं कि विजलीकी मूल घटना भी कदाचित् इसी प्रकार हुई थी । किन्तु इसके निवासीलोग अबतक वशी नामसे गिने जाते हैं । कृतज्ञ चित्तसे बहुतसे राजपूत यही कहते हैं कि, “मैं आपका वशी हूं, आप मुझको दास रूपसे बेच सकते हैं । ×

आत्मकलह ।—कर्नेल टाड लिखते हैं कि, “राजपूत समूहकी जिस समयकी अवस्थाका चित्र यहां अङ्कित होता है, जिस समय राणाके व्यक्तिगत चरित्रके ऊपर सबही निर्भर होता था, उस समय सबको ही स्वेच्छाचार वृत्तिके पूर्ण करनेकी इच्छा और राजपूत जातिको दुर्दमनीय बदला लेनेकी इच्छा अवश्य ही प्रबल होगई थी । समयके गुणसे जातिसाधारण अवनतिके साथ आत्मक्लेशने भी इस देशका सर्वनाश साधन किया है । इस आत्मक्लेशकी अग्निने भयानक रूपसे प्रज्वलित होकर बीतीहुई अर्द्धशताब्दीके समयमें मेवाडको जैसी शोचनीय दशामें फेंक दिया है, जो आत्मक्लेश और कुछ समयतक प्रबल रहता तो मेवाडको अनन्त श्मशान और गहन वनमें परिणत करदेता, उस आत्मकलहके कई दृष्टान्त और किस उपायसे आत्मकलहमें उन्मत्त हुए राजपूतलोग बदला लेकर अपना नाम चरितार्थ करलेते थे, इस स्थानमें उस विवरणके पढनेसे समाजकी उस समयकी अवस्था पाठकगण बहुत कुछ जान सकेंगे ।

× एक समय महाराष्ट्र लोगोंने कई युवक राजपूत सामन्तोंको युद्धसम्बन्धी कर दानके बदलेमें बन्दी करलिया । कर्नेल टाडने मध्यस्थ बनकर उनको छुड़ाया । उन सामन्तोंमें पूरवत् सम्प्रदायके नेताके छोटे भ्राता भी थे; उनकी माता मृत्यु शय्यामें गिरकर उनको देखनेके लिये अधीर होगई, किन्तु कर्नेल टाड टीकामें लिखगये हैं कि, यद्यपि वह छुटकारा पायेहुए राजपूत मार्गमें अपनी उन माताका दर्शन कर सकते थे, किन्तु उनके हृदयमें कृतज्ञता यहांतक प्रबल हुई कि, वह वैसा न करके पहले सीधे कर्नेल टाडके पास पहुंचे और कृतज्ञताके साथ गद्गद हृदयसे वारम्बार यही कहनेलगे कि, “ मैं आपका राजपूत, आपका गोला और आपका वशी हूं, आप मुझको जो आज्ञा देंगे उसीको तत्काल पालन करूंगा । ” कर्नेल टाडने उनको उसी समय उनकी पुत्रदेखनेकी उत्कंठावाली माताके पास भेजदिया ।

अचानक आकर उनके विश्रामके सुखमें बाधा दी । संकल पहलेसे ही साधुको पहचानता था, इस समय उसको सावधान करनेके लिये शीघ्र ही दूतको भेजदिया ।

सोतेहुए साधुके एक ओर खड़ीहुई प्रवीण रणकी घोड़ीने पंचकल्याणके शत्रुदलके आनेका समाचार पातेही शीघ्रतासे अपने श्वेतपैरोंके आघातसे स्वामीको जगादिया । शत्रुपक्षके दूतने आकर देखा, कि पंचकल्याणीने अपने पैरोंको सरल आघातसे साधुकी निद्राको भंग करदिया, इससे वीरश्रेष्ठ साधु उसका तिरस्कार कररहेहैं । दूतने सन्मान दिखाते हुए कहा कि आरण्य कमल तुम्हारे साथ अपने बाहुबलकी परीक्षा करनेकी अभिलाषा करतेहैं । साधुने यथार्थ राजपूतवीरकी समान विना उत्तर दिये समरके प्रस्तावको स्वीकार करलिया । परन्तु उन्होंने दूतसे कहा, कि हम अपने साथमें जो अफीम लायेथे न जाने वह कहाँ खोगई, इसलिये तुम थोड़ी सी अफीम अपने स्वामीसे लेकर भिजवादेना । शत्रुओंके अनुचरोंके द्वारा शीघ्र ही साधुके सेवनकरनेके लिये अफीम भेजदीगई, साधु उसे सेवनकर फिर थकावट दूर करनेके लिये शय्यापर लेटरहा । कुछ कालके उपरान्त उठकर अपने वीर शरीरको रणकी पोशाक सुसज्जित कर फिर समस्त अस्त्रोंको धारण किया; इसके पीछे अपनी उस घोड़ीको बुलाकर उसे स्मरण दिलाया, कि अन्य समरोंमें जिस भाँति मुझे अपनी पीठपर चढाकर विजयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त करायहै उसी प्रकार आज भी मुझे वहन करना । चन्दनकुमार साधुको अपनी घोड़ीसे इस प्रकारके वचन कहते हुए देखकर, विशेष प्रशंसा करके अपनी सेनादलके नेता चौहानजातिके योधाको पाहु-सम्प्रदायके जयतअंगके साथ सबसे प्रथम बाहुबलकी परीक्षा करनेका हुक्म दिया । दोनों वीरोंके घोड़ोंपर सवार होकर भयंकर मूर्तिसे अस्त्रोंके चलाते ही शत्रुपक्षके चौहान भट्टवीरोंके अस्त्राघातसे वीरगण शीघ्रही पृथ्वीपर शयन करनेलगे जयकी इच्छासे उन्मत्त हुए भट्टवीर रुद्रकी समान तेजसे शत्रुओंके पक्षमें नक्षत्रवेगकी समान जाकर अपने सम्पूर्ण वरावरवाले वीरोंके साथ बाहुबलकी परीक्षा दिखाने लगे ।

इस प्रकारसे दोनों ओरके वीरोंमें घोर युद्ध होनेलगा । दोनों प्रतिद्वन्द्वी चुपचाप उस वीरयुद्धको देखने लगे, एक २ पक्षके दूसरे पक्षके वीरोंके साथ जा मिडे अंतमें वीरश्रेष्ठ साधु प्रलयकालीन प्रज्वलित मूर्ति धारण कर घोड़ेपर सवार हो अपनी तीक्ष्ण तलवारके आघातसे राठौरसेनाके संहारमें मृतवाले होगये । प्राण-

लिये रक्तही लेती है । जो राजपूत नरपति वदला लेकर अथवा शत्रु राजाके किसी पुत्र वा प्रधान आत्मीयका शिर काटकर, उस राजाको “ मुण्डकाटा ” के लिये क्षतिपूरण स्वरूप धन वा देश लेनेमें बाध्य कर सकते हैं, वह राजा ही राजपूत जातिके निकट प्रबल प्रतापयुक्त गिने जाते हैं, अर्थात् शत्रुपक्ष यदि प्राण नाशके कारण वदला लेनेके लिये प्राणनाशक राजाके प्राणनाश करनेमें तत्पर न होकर, केवल दूसरी प्रकारसे हानि भरकर ही प्रसन्न होजाय तो वदलेकी वृत्ति पालनमें शिक्षित राजपूत जाति उस राजाको महावली कहकर पूजा करनेमें स्वतः ही बाध्य है । *

इतिहासलेखक टाड लिखते हैं कि, केवल एक उपायके द्वारा ही यह विषम आत्मकलह वा प्रतिहिंसा निवारित हो सकती है, किन्तु वह कार्य्य राजपूत जातिमें घृणित समझा जाता है । परस्परमें विवाद आरंभ और उस कारणसे दोनोंके वदला लेनेमें प्रमत्त होनेपर, यदि क्षतिग्रस्त पुरुष क्षमा प्रार्थना करे, अथवा अत्याचारी यदि उसके अधिकारके स्थानमें जाकर क्षमा चाहे; तो परस्परकी शत्रुता दूर होजाती है । क्योंकि ऐसे किसी वदलेके लेनेपर समाजमें अत्यन्त कलङ्कित और अपमानित होता है । ऐसी घटना पहिले प्रायः नहीं घटती थी, अर्थात् राजपूतगण पूर्वकालमें किसी प्रकार ऐसे आत्मक्लेशमें अग्रसर नहीं होते थे । वर्तमान निर्जीव और जातीय गुणोंसे हीन राजपूतगण ही अब इस मार्गका अवलम्बन करते हैं ।

हम यह ऊपर ही लिख चुके हैं कि शाहपुराके राजा राणावंशमें उत्पन्न और मेवाडमें एक प्रबल बलशाली पुरुष थे । एक समय उन शाहपुराके उमेदसिंह नामक अधिपतिके साथ अमर गढ़के भूमियां स्वत्वाधिकारी राणावत् सामन्तका महा क्लेश उपस्थित हुआ । शाहपुराधीश्वर केवल राणाके दियेहुए भूखण्डके अधीश्वर ही नहीं थे, किन्तु दिल्लीके सम्राटका दियाहुआ एक और देश भी उनके अधिकारमें था? वाणिज्य शुल्कके सिवाय उक्त दोनों देशोंकी उस समय-

* पारिशिष्ट—१८वीं अनुलिपि देखो । एंग्लोसेक्सन लोगोंके शरीरकी अङ्गहानिकी क्षति पूरणके लिये जो विधि निर्धारित थी, कर्नेल टाड स्वयं स्वीकार करगये हैं कि, उसकी अपेक्षा विवाद विधि बहुत काल पहिलेसे हिन्दू जातिमें प्रचलित होती आती है । मनुके विधानमें ब्रह्महत्यासे लेकर एक कुत्तेकी हत्यातकका दण्ड और प्रायश्चित्त लिखा है । पाठकगण शब्दकल्पद्रुममें प्रायश्चित्त शब्दका अर्थ देखनेपर इस विषयमें बहुत सी बातें जान सकेंगे । वह लेख बहुत बड़ा है, इस कारण हम इस स्थानमें उसको उद्धृत नहीं करसकते ।

निसे रणभूमि गुंजारउठी । कर्मदेवीकी आज्ञानुसार उसकी दोनों भूजा यथास्थानपर भेजदी गई । पुगालके वृद्ध राउने अपनी पुत्रवधूकी उस कटीहुई भुजाको दाह करके उस स्थानपर एक बड़ा भारी सरोवर खुदवादिया । आज तक वह “ कर्म देवीके सरोवर ” नामसे विख्यात है ।

पूर्वोक्त घटना १४९२ संवत्में (१४०७ ईसवीमें) हुई थी । इस युद्धमें संकलके पक्षकी बहुत सी सेना मारी गई । साढे तीन हजार सेनामेंसे केवल पांच सौ मनुष्य जीवित रहेथे; और उनके प्रधान नेता मेघराज बहुत घायल हुए थे । आरण्यकमलके चार भाइयोंके भी बड़ी भारी चोट आईथी, और आरण्य कमलके जो बड़े २ घाव होगये थे उनको छः महीनेतक चिकित्सा होनेपर भी आराम न हुआ, और वह सुरलोकको सिधारगये । इतिवृत्तके आख्यायकने लिखाहै, कि जिस दिन साधुका दशमासिक श्राद्ध होताहै, उसी दिन आरण्यकमलका चातुर्मासिक श्राद्ध होताथा ।

यद्यपि वीरवालाकी प्रशंसा इसी स्थानपर समाप्त होगईथी तथापि इस घटनासे राजवाडेके एक ग्रान्तमें जो भयंकर विवादकी अग्नि प्रज्वलित हुईथी, वह प्रसंगरहित होनेपर भी उसका वर्णन टाड साहव इस स्थानपर करगयेहैं । राजपूतजातिमें अपना सन्मान अपने गौरवकी रक्षा की अभिलाषा तथा शत्रुसे उसका बदला लेनेकी वृत्तिको चरितार्थ करनेकी इच्छासे वह लोग कैसे प्रबल पराक्रमी थे । पुगाल और मन्दौरके राजा अपने २ पुत्रोंका बदला लेनेके लिये वीरतेजसे मतवाले होगये । मन्दौरके आधीनमें संकलके सामन्तोंसे मारेहुए वीरोंसे साधुकी सेनाका दल विध्वंस होगया था. इस कारण वृद्धवीर रणङ्गदेवने शीघ्र ही बदला लेनेके लिये पुगालकी समस्त वीर सेनाको अपने साथ लेकर मेहराजके अधिकारी देशोंपर लूट मार करनी प्रारंभ करदी । चाहैं ऐसा हो कि मेहराज अपनी रक्षा करनेमें तैयार थे अथवा रणङ्गदेवकी सेनाकी संख्याके अधिक होनेसे हो तीन सौ आत्मीयोंके रुधिरसे लूनीका बालुमय शिखर लाल होगया । वीर रणङ्गदेवने जय प्राप्त करके प्रसन्नचित्त हो लूटेहुए बहुतसे द्रव्योंको साथ लेकर अपने देशकी सीमाके अन्तमें जातेही देखा कि भयंकर विपत्ति उपस्थित है, मन्दौरके अधीश्वरने अपनी बहुत सी सेना लेकर अपने प्राणप्यारे पुत्र आरण्यकमलकी अकाल मृत्यु होनेसे अपने सामन्तोंके अपमानका बदला देनेके लिये विजयी रणङ्गदेवपर आक्रमण किया । दोनों ओरके वीरोंने असीम साहस करके रणकी अग्नि प्रज्वलित कर दी । अन्तमें वृद्ध रणङ्गदेव

दूसरे भूमियांलोग उनसे महारुष्ट होगये । इस निरन्तर विवादसे प्रजा पुञ्ज भी “ वरसादोहाई ” * कर देते २ सर्वस्वान्त होगई ।

शाहपुराके राजा उम्मेद एक अस्थिर चित्त और कठोरहृदयपुरुष थे । एक समय उन्होंने क्रुद्ध होकर अपने पुत्रकी कमरमें रस्सी बाँधी और शाहपुरेके देवालयकी ऊँची चोटीमें बांधकर नीचे लटकादिया, तथा उसीकी माताको बुलाकर वह हृदय भेदी दृश्य दिखाया था! वह सदा घोड़ेपर अथवा शीघ्रगामी ऊंटपर चढ़कर अनेक स्थानोंमें अकेले घूमा करते थे । वीचरमें कई दिनतक उनका कुछ समाचार नहीं पाया जाता था । एक दिन राजा उम्मेद इसी प्रकार अकेले भ्रमण करते हुए अपने शत्रु दिलालके अमरगढमें पहुँच गये, और दैव योगसे दिलालकी दृष्टिमें पड़ गये । दिलालने देखा कि एक ऊँचे पदके सामन्त उनकी दयाके अधीन हैं, उस समय उन्होंने कोई शत्रुताका आचरण नहीं किया, और विनय नम्रभावसे प्रणाम करके उनको अपने दुर्ग प्रासादमें लेगये । बड़े आदरसे राजाके पदोचित सन्मानके साथ उनका अतिथि सत्कार करके राजाके स्वास्थ्यकी कामनासे “मनुयार प्याला” × पिया, फिर दोनोंने परमानन्दके साथ भोजन करके परस्परकी शत्रुता सदाके लिये छोड़ देनेकी प्रतिज्ञा करी थी ।

राजा उम्मेद और सामन्त दिलालके मध्यमें इस शत्रुताकी अग्नि बुझजानेके कुछ दिन पीछे दोनों ही उदयपुर राजधानीमें राणाकी सभामें बुलाये गये । राणाके साथ मुलाकात होनेके पीछे राजाने प्रस्ताव किया कि; दोनों एक साथ ही स्वदेशमें जायँगे । अन्तमें दिलालको अपने घर ले जानेके लिये सादर निमंत्रण दिया । दिलालने उस आमंत्रणको स्वीकार करके अपने वीस अश्वारोही राजपूत सैनिक और आवश्यकीय वस्तु साथ लीं, तथा राजाके साथ शाहपुराकी ओर घोड़ा हाँक दिया । राजा उम्मेदने सामन्त दिलालको अपनी राजधानीमें लेजाकर बड़ा आदर किया और यथेष्ट आत्मीयता दिखाकर दोनोंने एकत्र

* जिस समय मेवाडके चारों ओर अराजकता, अत्याचार और लूटमार प्रचल होगई, उस समय डाँकुलोग भिन्न २ ग्रामोंमें जाकर लूटमार और अत्याचार आरंभ कर देतेथे । असहाय निवासियोंकी छातीपर बरछा लगाकर प्राण नाशका भय देकर धन संग्रह करलेते थे । छातीपर बरछा घुसेडनेमें उद्यत होनेपर प्रजा “ दोहाई ” देकर लुटकारा चाहतीथी, इसी कारण उसका नाम “ वरसादोहाई ” हुआहै । कृषिकार्यके समय डाँकुओंके हाथसे धान्य रक्षाके लिये भी प्रजा “ वरसादुहाई ” देती थी ।

× अतिथि सन्मानार्थ अफीम पीनेका प्याला ।

पूत भोजनकी सामग्रीको ऊँटोपर लादकर आगे २ चले । और सामान्य सेना अस्त्र धारण करके सेनाके पीछे भागकी रक्षा करतीहुई चली । चंड अपनी होनहार प्राणप्यारीको आदर सहित लानेके लिये नागरसे आगे बढे । परन्तु रथके पास जाते ही उनको महा संदेह होगया । जब चंडने इनके और ही ठाट देखे तब वह भागनेका उपाय करनेलगा जैसे ही चंड भागा कि वैसेही रथपर बैठेहुए भट्टियोंने शीघ्रतासे उसका पीछा कर नागरदेशके तोरणद्वारपर चंडको पकड़कर मारडाला । शत्रु लोग उठतीहुई तरंगभालाकी समान नगरमें जाकर चारों ओरसे लूट करनेलगे ।

इस प्रकारसे दोनों ओरके वीरोंने अपना २ बदला लेलिया । फिर दोनों पक्षमें सन्मान और गौरवकी रक्षाके निमित्त संधि होगई. दोनों ही पक्षके जातीय शत्रु सम्राट् सेनाको उचित दंड देनेमें राजी हुए । दोनों पक्षने एक ही मनुष्यकी समान खड़े होकर बादशाह खिजीर खाँ साहबकी भेजीहुई सेनाको छिन्न भिन्न करदिया; उसकी सेनाका एक मनुष्य भी जीवित न रहा । रणङ्गदेवके दोनों पुत्र मुसलमान होकर पुगालराज्यके अधिकारसे बाहर हो आभोरिकयाके भट्टियोंके साथ जा मिले । अवतक उनके वंशधर मूमान मुसलमान भट्टी नामसे विख्यात हैं । राजकुमार कल्याण सबकी सम्मतिसे पुगालके राजा हुए ।

महामाननीय टाड साहब कहगयेहैं कि अपने सन्मानकी रक्षाके निमित्त राजपूतजाति कितना यत्न करती थी, उपरोक्त घटना उसीके प्रमाणस्वरूप उदाहरणहैं, और जो लोग ऐसा कहतेहैं कि राजपूतोंका रनवासमें रहनेवालियोंके ऊपर पुरुषजातिका प्रभुत्व नहीं था । वह लोग भी इससे अपनी सम्पूर्ण भ्रान्तियोंको दूर करसकते हैं । समाजतत्त्वके जाननेवाले महात्मा टाड साहबने जिनका वर्णन इस स्थानपर कियाहै, कि हिन्दू स्त्रियोंके अन्तःपुरमें निवास करनेपर भी उनके गुणग्राम और व्यक्तिगत सुन्दरताको भ्रमणकरनेवाले कविकुलकी मधुरमयी कविताकी लीला मलयानिलमें वहन करनेवाली वसन्ती फूलके सौरभकी समान सर्वत्र व्याप्त करतीहै । यद्यपि वह सर्वसाधारणकी दृष्टिसे बाहर रहतीहै, परन्तु वह उन अन्तःपुरकी निवासियोंको भिन्न उपायसे देखनेमें समर्थ है साधु और कर्मदेवीका सम्मिलन उसको उज्ज्वलतासे प्रकाशित कर रहाहै । वह यवनोंके अधीनमें रहकर सभी देशके युवकोंको देखसकतेथे वीरोंके परस्परमें अस्त्रोंका बल दिखानेके लिये साधारण कार्य-

सीमा विवाद लेकर ही सामन्तोंमें सदा विवाद और आत्मकलह उपस्थित होता था । जयसलमेर और बीकानेर इन दोनों राज्योंके सीमान्तवर्ती दोनों देशोंके सामन्तोंमें सीमान्त विषयपर कभी २ ऐसा क्लेश उपस्थित होता था कि, अन्तमें उस कारणसे दोनों राज्यके अधिपति युद्ध करनेको बाध्य हुए थे । प्रतिहिंसा प्रवृत्ति यद्यपि आजतक राजपूत जातिके हृदयमें विराजमान है, किन्तु समयके गुण और कठोर शासनसे सामन्त मण्डली वा साधारण प्रजामें संहार मूर्ति धारण करके यथेच्छाचार नहीं होसकता । सीमान्त विषयका विवाद इस समय विलकुल दूर होगया है । इस समय केवल रजवाडेमें ही नहीं वरन भारतके सम्पूर्ण देशी राज्योंमें शान्ति नृत्य कर रही है ।

राजपूत मंत्री ।—रजवाडेकी सामन्त मण्डली अधीश्वरोंकी किस २ आज्ञा पालनमें बाध्य है, और राजसभामें कितने दिनतक रहकर क्या क्या कार्य्य करनी है, इन सब बातोंको यथास्थानमें लिखचुके हैं । सामन्तगण जिस समय राजकार्य्यसे सीमान्तमें गमन वा सीमान्त रक्षामें नियुक्त अथवा अधिपतिकी आज्ञानुसार अपने अपने अधिकृत देशमें नहीं रहते, उस समय वह सपरिवार राजधानीमें ही रहनेको बाध्य हैं । पूरे वर्षभर किन्ही सामन्तोंको भी राजधानीमें रहना नहीं पडता; एक २ सम्प्रदायके कई २ पुरुष करके सामन्त अपनी निर्द्धारित संख्यक सेना और अनुचर सहित राजधानीमें स्थिति और राज सभाका कार्य्य निर्वाह करते थे । इस सुन्दर नियमके अनुसार उदयपुर राजसभा सदा ही सामन्तोंसे पूर्ण रहती थी । किन्तु मेवाडमें ऊंची श्रेणीके सामन्त अधिक अनुग्रह और स्वाधीनता भोगते हैं । रजवाडेके अन्यान्य राज्योंके सामन्तोंको जितना शृंखला बद्ध और अधीश्वरकी आज्ञा पालनमें सदा बाध्य देखा जाता है, मेवाडकी ऊंची श्रेणीकी सामन्त मण्डली उतनी अधीनता शृंखलामें बद्ध नहीं है । मेवाडमें विशेष २ पर्वोत्सव और राजकीय नवीन अनुष्ठानोंके समय वह प्रधान श्रेणीकी सामन्तमण्डली

—लित विवादामिको विलकुल शान्त करदेनेके लिये विशेष चेष्टा करी थी । उनके घर यदि कन्या होती तो वह अवश्य ही महाराणा भीमसिंहको दान करके विवादको दूर करसकते। अन्तमें उन्होंने कर्नेल टाडके साथ छद्मवेषसे जाकर राणाके निकट क्षमा प्रार्थना करनेकी इच्छा करी । किन्तु छद्मवेषके पहिले ही प्रगत होनेके भयसे और विष्णुसिंहके किसी क्रोधी राजपूत द्वारा प्राण संहार करदेनेके भयसे कर्नेल टाड साहस करके उनको राणाके निकट न लेजासके थे । कर्नेल टाड लिख गयेहैं कि महाराणा भीमसिंह जैसे उदारहृदय और ऊंची प्रकृतिके थे, उससे अनुमान होताहै कि बूंदीराज स्वयं उनके निकट क्षमा मांगनेपर सफल मनोरथ होसकते थे ।

भय पाये हुए पिता कठिन यवनदन्तके हाथमें समर्पण करनेके लिये तैयार हुए, रूपनगरकी अनुरूपवती राजकुमारीने किस प्रकारसे महाराणा राजसिंहकी सहायताके लिये प्रार्थना कीथी, उससे हमारे पाठकोंका हृदय अवश्य ही शंकित हुआ होगा । राजपूतजातिके हिन्दूजातिके इतिहासमें इस भाँतिके सैकड़ों उदाहरण विद्यमान हैं; महामाननीय टाड साहब उनकी यथार्थता कह गयेहैं । उनका अंतिम कहना यह है—कि राजपूत स्त्रियोंकी सुन्दरता और राजपूत स्त्रियोंके गुण कविकुलके काव्योंमें आज तक गायेजातेहैं । राजपूत जननी अपने पुत्रके यश और गौरव, तथा वीरता और जयप्राप्तिके निमित्त अनन्त आनंदसे उनके अंशकी भागिनी हुई थीं । राजपूत वीरमाता बालक पनसे ही अपने पुत्रोंको उपदेश देतीथीं—“वत्स ! तुम अपनी माताके दूधको उज्ज्वल करदो” अर्थात् वीरनामसे विख्यात होकर माताके जीवनको सार्थक करनेमें झुटि न करना । पुत्र तुम सर्वत्र ही विजयी हो वीररूपसे सन्मान पाओ, यह इच्छा राजपूतोंकी माताओंके हृदयमें कितनी प्रबल थी, अपने प्राणप्यारे पुत्रकी वीरता प्रकाशकरनेके साथ समरभूमिमें प्राण त्यागनेका समाचार पाकर वूँदीकी राजरानीने शोकके बदलेमें आनंद प्रकाश कियाथा, वह भी यहां पर साक्षी देरहाहै । कविका वचन है कि “राजकुमार जिस माताके दूधको पीकर पाले गयेथे; उनकी मृत्युका समाचार पाकर उसी माताके उन दूधहीन दोनों स्तनोंमें दूध भर आया, जिससे कि वह दोनों स्तन दूधके वेगको न सहन करके तराँने लगे; शीघ्रतासे उनमेंसे दूधकी बूँदें गिरने लगीं । ” कविके लिखनेके उपरान्त इस बातका अनुभव हम स्वयं भी करसकते हैं । अपने पुत्रको वीरगति प्राप्त होनेपर वीरमाताका हृदय चिंकित भी दुःखित न हुआ राजपूतोंकी स्त्रियें अपने छोटे २ सुकुमार लडकोंको पालनेमें न सुलाकर बड़ी २ ढालोंमें शयन करातीथीं, और उनके खेलनेके लिये छोटी २ तलवारें उनके हाथमें देदेती थीं । तथा वह वीरगर्भधारिणी उन बालकोंके कानोंमें यह बीजमंत्र देतीथीं—“कि पिताके शत्रुका संहार करना” राजपूत वीरकुमार उसी मंत्रके बलसे आयुवृद्धिके साथ ही साथ महर्षि द्वैपायनप्रणीत काव्योंमें भारत तथा कविश्रेष्ठ चन्दकी लेखनीसे निकलेहुए काव्यमें वीरता विलासके प्रभामय चित्रको देखकर उसीका अनुकरण करतेथे. इस समय इस बातको कौन कहसकताहै कि अंतःपुरके निवासकी राजपूतोंकी स्त्रियें समाजके प्रति—अथवा पुरुषजातिके प्रति अपनी प्रधानताका

और उसको बंद करके उसके ऊपर राणाकी गुप्त अंगूठी चिह्न भी अंकित करदेते हैं ।

कनेल टाड लिखगये हैं कि, रजवाडेके सम्पूर्ण राज्योंमें ही सामन्त श्रेणीमें जो सबसे चतुर, वीर, साहसी, बुद्धिमान और षडयंत्रकुशल हैं, वही राजाका चित्त प्रसन्न करके मंत्रीपदपर अधिकार करलेते हैं । अधिराज उन प्रियपात्रके अत्यन्त वशीभूत होकर, उनकी इच्छा, योग्यता और आकांक्षाके अनुसार मंत्रित्व भार उनके हाथमें सौंपते हैं । किन्तु वह राजपूत सामन्त मंत्री दीवानी शासन विभागमें किसी प्रकार हस्तक्षेप नहीं कर सकते; एक स्वतंत्र मंत्री उस विभागका सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न करतेहैं । किन्तु वह दोनों ही एकमत होकर कार्य करनेमें विरत नहीं होते । राजपूत मंत्री देशके युद्ध विभागके अमात्य रूपसे गिने जातेहैं । और अधीनकी सामन्त श्रेणीका राजनैतिक शासनभार उनके हाथमें समर्पित होताहै । दीवानी विभागके मंत्री पदपर राजपूत जातिका कोई पुरुष नियुक्त नहीं होसकता । देशभेदसे मंत्रियोंकी उपाधियें भी विभिन्न हैं । उदयपुरमें “मञ्जगड” जोधपुरमें “प्रधान” जयपुरमें (दिल्लीकी सम्राट सभाके अनुसार जयपुर पातिने अपने कर्मचारियोंके नाम यावनी भाषामें रखे हैं) “मुसाहिव” और कोटमें “ किलेदार” तथा “ दीवान” नामसे यहलोग विख्यात हैं । वह राजपूत सामरिक मंत्री अपने गुणोंसे अधीश्वरको वशीभूत करके राज्यमें एक सर्वप्रधान शक्तिशाली पुरुष होजाते हैं सर्व साधारण उनकी ही आधीनता स्वीकार करके उन्हींके द्वारा अधिराजाके निकट सब प्रार्थनायें भेजते हैं, क्योंकि उनके अनुरोध करनेपर सफलताकी पूरी संभावना रहतीहै । राजपूत मंत्री राज्यकी सामरिक श्रेणी और नीची श्रेणीके कर्मचारियोंके ऊपर पूरी सामर्थ्य रखते हैं ।

कनेल टाड लिखते हैं कि, रजवाडेके कई राज्योंमें वंशानुक्रमसे मंत्रित्व-प्राप्तिका विधान प्रचलित है किन्तु हम कहतेहैं कि; प्रबल ब्रिटिश शासनमें कूट-नीति चक्रके घुमानेके लिये वह प्रथा इस समय बंद होगई है । भारतवर्षके प्रत्येक प्रधान २ देशी राज्योंके प्रधान मंत्री पदपर नरपतिगण अपनी इच्छानुसार अब किसीको भी नियुक्त नहीं करसकते । राजगणके इस समय किसी व्यक्तिको मंत्री पदपर नियुक्त करनेकी इच्छा करनेपर, स्थानीय पोलिटिकल एजेंट उस विषयमें मतवाद प्रकाश करके उसको राज प्रतिनिधिके पास भेजते हैं । राज प्रतिनिधि यदि उसमें सम्मत हों तो उक्त इच्छित पुरुष नियुक्त

नवयौवनमें विषके द्वारा अपने प्राणोंको छोड़ जगत्में अक्षय कीर्तिका स्तम्भ स्थापित करगई है ? सतीत्व, पातिव्रत्य, हृदयकी सरलता, साहस, बुद्धिबल और धर्मके पालन करनेमें सदासे हिन्दू रमणी जगत्में अतुलनीय होती आई हैं यह बातें हिन्दू रमणीके चरित्रमें सत्यप्रिय और न्यायी पुरुषको अवश्य माननी होगी । वही आर्य सन्तान इस समय मोल लियेहुए दासकी जातिमें बदलगई है किन्तु इस मोल लीहुई दासजातिकी स्त्रियां आजलों आदर्शस्वरूप हैं ।

यद्यपि उस राजवाड़ेमें उस आर्यक्षेत्र भारतमें आज देवलदेवी, कर्मदेवी, पद्मिनी, कृष्णकुमारी, संयुक्ताकी लीला प्रकाशित नहीं होतीहैं, यद्यपि हमारी हिन्दूजातिकी माता, भगिनी, वधू और कन्यागण इस समय वीरनारियोंके अभिनयको नहीं करतीहैं किन्तु जगत् स्वतः ही घोषण कर रहा है कि इस पतित दशमें भी हिन्दू रमणी अखंड भावसे अपने सतीत्वकी रक्षा करके ही अपने अन्तःपुर और अपने घरको शान्ति, सन्तोष, सुख और मंगलकी गंधसे सुगन्धित बनाये हुई हैं । सती द्रौपदीके अपमानमें कुरु और पांडवोंके महायुद्धसे भारत महाश्मशानके रूपमें बदलगया है, उस सतीकुलके ही पुण्यसे उस सतीकुलकी कृपासे उस सतीकुलके सतीत्वके अक्षय तेजसे और उस सतीकुलके बीजमंत्रसे भारत अवश्यही फिर अपने शिरको उठावेगा, लक्ष्मी स्वरूपिणी-शक्तिरूपिणी हिन्दूरमणी अवश्य ही फिर अपने सोतेहुए पतिपुत्रोंकी नसोंमें शक्ति उत्पन्न करेंगी, यह निश्चय है कि समय २ पर अवश्य ही केवल राजवाड़ेहीमें नहीं वरन् हिमालयसे कन्याकुमारी तक और अरबके उपसागरसे ब्रह्मपुत्र पर्यन्त आर्यक्षेत्रमें हजारों देवल देवी, कर्मदेवी, पद्मिनी-कृष्णकुमारी उत्पन्न होकर नवीन लीलाओंसे भारतके यशकी पताकाको फैलाती रहेंगी ।

सामन्तके हाथसे छुटकारा पाया । बृटिश गवर्नमेंटके साथ सन्धिवंधनके समयसे ही षड्यंत्र जाल फैलानेवाले सामन्तोंका प्रताप प्रभुत्व विलकुल दूर होगयाहै ।

हिंदूकुलसूर्य्य राणा जिस समय किसी कारणसे राजधानी छोडकर बाहर जाते, उस समय उक्त सलम्बूर सामन्तके हाथमें ही नगर शासन और प्रासाद रक्षणका भार सौंपा जाता था । राणाके वंशधरगण जिस समय तलवार धारण करनेमें समर्थ होते, उस समय केवल यह सलम्बूरके सामन्त ही अस्त्रदीक्षा गुरु पदपर वरण होते थे । अर्थात् सबसे पहिले “ खड्गबंधन और नवीन राणाके अभिषेकके समय यह सलम्बूरके सामन्त ही राणाके माथेपर राजटीका लगाते थे । राणाके साथ चलनेके समय वह दाहिनी ओर चलना, युद्धके समय सबसे आगे सेना लेजाना, और किसी विदेशीके राजधानी उदयपुरपर आक्रमण करने पर वह सूर्य्यकुल और उससे लगे हुए दुर्गकी रक्षा करते थे । उस दुर्गमें ही सलम्बूरके सामन्त सपरिवार एक मनोरम महलमें रहते थे । वह महल इस समय विध्वंस प्राय है ।

कर्नेल टाडके समय सलम्बूर देशके सामन्त पदपर जो प्रतिष्ठित थे, वह पद्मसिंह उनके (कर्नेल टाडके) परम प्रियपात्र हुए थे । उनकी माता बडी बुद्धिमती थीं । प्राणान्तके समय तक उन्होंने अपने पुत्रको नेत्रोंके सामने रक्खा । किसी कार्य्यसे राजधानीमें जानेपर सामन्त सदा ही कर्नेल टाडके स्थानमें स्थिति उनके ग्रंथोंका निरीक्षण, उनके साथ भ्रमणमें गमन, और मत्स्य पकडनेमें सम्मिलित होते थे । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, वह एक अद्वितीय अश्वारोही थे, अपने पुत्रके कल्याण साधन, और तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये उनकी माता बीच २ में कर्नेल टाडको बडेर पत्र लिखा करती थीं । पद्मसिंहके एक पूर्वपुरुषने राणाके विरुद्ध विद्रोही होकर एक दूसरे पुरुषको राणा पदपर प्रतिष्ठित करनेके लिये विशेष चेष्टा करी थी. मेवाडके इतिहासमें पाठक इस बातको पढचुके हैं । किन्तु राजपूत जातिके हृदयमें स्वदेश हितैषिता इतनी प्रबल है कि, राणा जब अपने राज्यमें शान्ति स्थापनके लिये विदेशियोंकी सहायता लेनेमें उद्यत हुए, तब वह विद्रोही सलम्बूरपति शीघ्रही विद्रोहिता छोड राणाके साथ मिलकर राजधानीकी रक्षामें नियुक्त होते थे। मेवाडकी चिर प्रचलित रीतिके अनुसार सलम्बूरके वीर सामन्तगण “ प्रधान ” पदपर नियुक्त होतेथे, इस कारण कर्नेल टाड गुप्त रीतिसे उसके विषमय फलका उल्लेख करगये हैं किन्तु हम कहतेहैं कि, यह

टाड साहब कहगये हैं कि राजपूतोंकी स्त्रियों भी आदर्शके अन्तमें फिर प्राणपतिके साथ मिलनेकी आशासे प्रज्वलित हुई; चितामें निर्भय होकर भक्तिसहित अपने शरीरको त्याग देतीं थीं । उन्होंने कहा है कि इस रीतिका प्रचार सबसे पहले-शैवियोंके द्वारा हुआ है और प्राचीन जातिमें भी इस रीतिका प्रचार भली भाँतिसे था । वह इसके प्रमाण स्वरूप उदाहरण दिखागये हैं । जाक्षारती सती वासी प्राचीन सिखीयजित और जूटवीरजातिमें किसी वीरने भी इस प्रकारसे शरीर त्याग नहीं किया । मृतक हुए वीरोंकी प्रज्वलित चिताके ऊपर उनकी स्त्रियें अपने स्वामीके सम्पूर्ण अस्त्रोंको भस्म करदेतीं थीं । वालटीक सागरके तीरवासी स्कन्धने वियाके जित्गणोंमें भी इस रीतिका प्रचार था और फिरोसियन प्राङ्गसे निकली सैक्सन जाति भी चिरकाल तक इस रीतिको उत्तम प्रकारसे रक्षा करके बहुत वर्षोंके पीछे केवल मात्र स्त्रीको मृतक पतिके साथ जलानेकी रीतिको रोकसकी थी ।

टाड साहेबने पीछे कहा है कि इस रीतिका प्रधान उद्देश्य रमणीको सतीत्वका प्रकाश है। इस सहमरणसे भार्या केवल अपने स्वामीके पापोंको और अपने पापोंको ही नहीं दूर करती है वरन् अंतमें मृतक स्वामीके साथ पुनः स्त्रीका मिलन अवश्य होगा उनको ऐसा अटल विश्वास है। एक बार इस विश्वासमें दृढ़ होकर राजपूत वीर नारियोंके वीरचरित्र-साहस शक्तियें इस रीतिके सहायता करतीं थीं। कर्नल टाडने इसी प्रसंगमें कहा है कि बंगालकी भयनामसे डरनेवाली स्त्रियें भी प्रसन्न चित्तसे अपनी इच्छानुसार जलती हुई चिताकी अग्निमें स्वामी केशवको आलिंगन करनेमें नहीं हिचकतीं थीं ।

सतीदाहकी रीति हिन्दुओंके धर्मसंगत है वा नहीं यहांपर उसीकी आलोचना करते हैं । टाड साहबका कथन है कि प्राचीन शास्त्र ही निश्चित भीष्मांसाके प्रधान सहायक हैं । जिन्होंने इस सहमरणकी रीतिके संबंधमें शास्त्रके विधानको देखा है वह अवश्य ही बिना दुहराये मानलेंगे कि उसमें बड़ा भ्रतभेद है । महर्षि वेदव्यासजी महाभारतमें इस सहमरणकी रीतिको दृढतासे-समर्थन करगये हैं । किन्तु विधानकारोंमें श्रेष्ठ महाराज मनुने इस रीतिकी प्रथम व्यवस्था नहीं दी है और आर्यविधवानारियोंके आचार व्यवहारके संबंधमें मनुने जिस प्रकारकी निर्धारणा की है, विलायतकी स्त्री-समाजके नेत्रोंमें वह बड़ी कठोर होनेपर भी भारतवर्षमें हिन्दूस्त्रियोंके हृदयमें वह बड़ी सरल प्रतीत होती है-विधवा हिन्दूरमणीके प्रति मनुका आदेश है-‘विधवा स्त्री अपने जीवनको

साथ अपने सम्प्रदायके राठौरोंसहित सभास्थानमें बैठकर अपनी निर्भयताका पूरा प्रमाण दियाथा । उससमय मारवाडराजने तीव्र स्वरसे प्रश्न किया था कि, “विश्वासघाती ! जिस तलवारके ऊपर मारवाडका भाग्य निर्भर करतेथे, अब वह तलवार कहाँहै ?” मृत्यु मुखमें गिरेहुए उस सामन्तने तत्काल उत्तरदिया कि “पोकर्णमें अपने पुत्रके पास उसको रख आयाहूँ । ” उस गर्वभरे उत्तरसे महाराजने अपनेको महा अपमानित समझकर तत्काल उस सामन्तके शिर काटलेनेकी आज्ञा दी, घातकने सङ्केत पाते ही उस वीरश्रेष्ठका शिर दो टुकड़े करदिया ! देवसिंहके पुत्र सुवलसिंहने पिताकी समान संहारमूर्ति धारण करके राजाके विरुद्ध विषम विपद् उपस्थित करदी थी । मारवाडराज विशेष चेष्टा करके भी पोकर्णके अभेद्य दुर्गपर अधिकार नहीं करसकेथे ।

कोटा और जयसलमेरके दोनों सामन्तोंकी शक्ति असीम थी । फरासीसी इतिहासलेखक मान्टेस्क्यू प्राचीन फ्रांसके मंत्री पिपिल लोगोंकी क्षमताके विषयमें जो कुछ वर्णन करगये हैं, यहांपर उसके उद्धृत करनेसे कोटा और जयसलमेरके मंत्रियोंकी समान ही प्रभुता जँचेंगी वह लिखते हैं कि, “ पिपिल लोग अपने राजाको मानों बंदी दशामें प्रासादके भीतर ही रखते थे, केवल वर्षमें एक दिन ही बाहर निकालकर प्रजाको दर्शन कराते थे । उस दिन वह मंत्रीवर्ग जो कुछ कहदेते, राजा प्रजाके सन्मुख वही बोलते थे, और किसी विदेशी राजदूतको ग्रहण करनेकी आवश्यकता होनेपर, उन मंत्रियोंके सिखाये वाक्योंसे ही उस दूतके साथ बातचीत करते थे । ” *

कर्नेल टाड रजवाड़ेके जिससमय तकका इतिहास लिखगयेहैं, और जिस समयकी मंत्रियोंकी योग्यता, प्रभुत्व और प्रतापके परम प्रमाणसे जो मन्तव्य प्रगट करगयेहैं, अब वह समय नहीं है समय परिवर्तनके साथ २ रजवाड़ेके राज्योंकी अनेक विषयोंमें अवस्था बदल गईहै । जो कुछ भी हो मंत्री नियुक्त करनेके विषयमें हम केवल इतना ही कह सकतेहैं कि, बृटिशगवर्नमेंट यदि अपने स्वार्थके ऊपर अधिक दृष्टि न देकर कर्नेल टाडकी समान देशी राज्योंकी सब प्रकारसे मंगल मूलक राजनीति अवलम्बनके साथ वर्तमान शिक्षित राजालोगोंको उनकी इच्छानुसार योग्य पुरुषोंको मंत्री पदपर वरण करनेकी मूर्ण सामर्थ्य दे, तो बहुतसे विषयोंमें विशेष लाभकी संभावना होसकती है ।

बड़ी खोज, बड़ी चिन्ता, हजारों परीक्षाओंके पीछे समाजकी शान्ति, मंगल और सन्तोषके लिये ही जब उन्होंने सब व्यवस्था बनाई है तब निश्चय ही हमें मानना पड़ेगा कि यह व्यवस्था भी वैसी ही खोज, चिन्ता, और परीक्षाओंके द्वारा बनाई गई है। केवल एक कारणसे नहीं वरन् अनेक कारणोंसे इस सहमरणकी रीतिका प्रचार हुआ है किन्तु उन अनेक कारणोंमेंसे कोई मूल और प्रबलकारण उसका इस समय घोर अंधकारसे ढकगया है। उस मूल कारणसे ही यह रीति प्रचलित हुई थी, वह मूल कारण आजतक भी विद्यमान है। हमारी समाज इस समय अस्तव्यस्त हो रही है, समाजकी नीति छिन्न भिन्न होगई है समाजके नेताका इस समय पूर्णतासे अभाव है, समयके फेरसे हमारी इच्छा भिन्न होगई है। सारांश यह है कि हम उन्हीं कारणोंसे इसका उद्धार करनेमें सब प्रकारसे असमर्थ हैं; अथवा उन्हीं आदिकारणोंसे इस समय हमारे चित्तपर इतना प्रबल आघात नहीं होता है; इस महामाननीय गवर्नमेन्टके सुराज्यमें सतीदाहकी रीति × लुप्त होगई है, तब उस रीतिके बदलेमें क्या, फल होसकता है, ? इस समय हम साहसके साथ केवल इतना ही कहसकते हैं कि इस रीतिके लोप होनेके पहले अवश्य ही करोड़ों भस्महुई सतियोंमें बहुत सी ऐसी हुई थीं कि जो यथार्थ दाम्पत्यप्रेमके वशीभूत होकर अपनी इच्छासे ही मृतकपतिके साथ एक ही चितापर भस्म होगई हैं। आज तक भी ऐसी अनेक हिन्दूस्त्रियें हैं कि जिन्होंने अपने पतिके परलोक चले जानेपर उसीके साथ ही साथ अन्य उपायोंसे अपने प्राणोंका त्याग करदिया है। जैसी हिन्दुजातिकी स्त्रियोंमें यथार्थ पति भक्ति, शुद्ध दाम्पत्यप्रेम और प्रबल साहस पायाजाता है, हम इस बातको इसके साथ कहसकते हैं कि भारतवर्षमें अन्य किसी जातिकी स्त्रियोंमें इस प्रकारकी प्रबल सामर्थ्य नहीं पाया जाता।

इस समय हम राजपूतोंकी समाजमें प्रचलितहुई और भी एक रीतियोंकी समालोचना करनेकी अभिलाषा करते हैं। टाड साहबके समयमें उस रीतिका प्रचार राजवारेके राजपूतसमाजमें बड़ी दृढतासे था। परन्तु इस समय गवर्नमेन्टके शासनसे उस रीतिका सहमरणकी रीतिकी समान एक साथ ही लोप होगया है। जब उस रीतिका प्रचार नहीं है तब उसकी समालोचनाके कग्नेकी भी आवश्यकता नहीं जान पडती, परन्तु जब कि महात्मा टाड साहब ही उसका वर्णन करगये हैं, और उस रीतिके लोप होनेका मूल

× अब भी सती विद्यमान है पतिके परलोकगमनमें अब भी कितनी एक साध्वी अपने प्राण दे देती हैं।

है, केवल युद्ध सम्बन्धवाली जातिकी दुर्दशा और राणाओंकी शक्तिके लोपसे ही यह शोचनीय दृश्य समय २ पर देखे जातेथे । ”

जिस समय सन्तानोन्पत्तिकी किसी प्रकार आशा नहीं रहती । प्रायः उस समय ही सामन्तगण अपनी जीवन दशामें पुत्र गोद लेते हैं । सामन्त सबसे पहिले अपनी स्त्रीके साथ एकान्तमें परामर्श और विचार करतेहैं । किसीको पोष्यपुत्र बनाना उचित है स्त्री पुरुष पहिले यह स्थिर करते हैं, फिर सामन्त अपने आधीनके सरदारोंको बुलाकर अपने मनका भाव प्रगट करदेते हैं । जिसको पोष्यपुत्र बनाया जायगा, वह यदि अति निकट आत्मीय और गुणवान् हो तो सरदारगण उसको स्वीकार करके राणाके निकट निवेदन करतेहैं राणा उस बातको ठीक जानकर सरदारोंकी वह इच्छा पूर्ण करते हैं । इस पुत्रके गोदलेनेके समय सामन्तको अनेक विषयोंमें तीक्ष्ण दृष्टि, विशेष विचार और बहुत सी चिन्ताओंमें निमग्न होना होताहै, वह अपनी इच्छानुसार किसी प्यारे बालकको भी पोष्यपुत्र पदपर वरण नहीं करसकते हैं । आधीनके सम्पूर्ण सरदार पहिले परीक्षा करके देखतेहैं कि, मनोनीत शिशु; सामन्तका अति निकट सम्बन्धी, राजपूत सामंतोंके सब गुणोंसे भूषित, प्रतिभाशाली और नेतापदके योग्य है वा नहीं । यदि निकटका सम्बन्धी न हो तो परिणाममें दूसरे समीपी विवाद खडा करके विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित करदेते हैं । इस कारण वह पहिले सब अंशमें योग्य और आत्मीय पुरुषको ही नियत करतेहैं ।

यदि किसी अपुत्रक सामन्तकी पुत्र गोदलेनेसे पहिले ही सहसा मृत्यु होजाय तो प्रचलित विधानके अनुसार उनकी स्त्री निकटके सम्बन्धी और सरदारोंके साथ संमिलित होकर पोष्यपुत्रको निर्वाचन करलेती हैं । जबतक पोष्यपुत्र नावालिग रहै, तबतक उस सामन्तकी पत्नी प्रतिनिधि रूपसे वह देश शासन करती हैं ।

कर्नेल टाड कहते हैं कि, मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमेंसे देवगढके एक सामन्त अपुत्रक दशामें परलोक सिधार गये । मृत्युशय्यामें शयन करके उन्होंने अपनी स्त्री और सरदारोंसे अनुरोध करदिया कि, “आपलोग नाहरसिंहको ही पोष्यपुत्र बनावें । ” नाहरसिंह संग्रामगढके स्वाधीन सामन्तके पुत्र थे । नाहरसिंहके साथ उक्त सामन्तका ग्यारहवीं पीढीका सम्बन्ध था, किन्तु सातवीं और आठवीं पीढीके भी कई पुरुष उस समय जीवित थे । देवगढके

ओंमें स्त्रियोंको जन्मभर तक बंदी रखतेहैं*उसी उद्देशसे और उसीका रणसे राजपूत लोग शिशुकन्याको मारडालतेथे, इसमें कुछ भी संदेह नहीं । यह रीति कितनी ही हृदयको विदीर्ण करनेवाली क्यों न हो कन्याको जन्मभर कारी रखनेकी अपेक्षा इस रीतिको अच्छा कहना होगा, फ्रान्सके फिरिसियान गण इटालीके लाङ्गो-वार्डिगण, और स्पेनके भिसिगोथ गण जिन कन्याओंको जन्मभरतक कुमारी अवस्थासे धर्मशालामें कारावासिनीकी समान बंद करके रखते थे वही रीति जिन गोथियोंके जन्मक्षेत्रमें आकर मानीगई है इसमें और कुछ भी संदेह नहीं है । राजपूत और प्राचीन जर्मनके वीरोंमें भी ऊपर उक्त कारणसे ही अर्थात् स्त्रियोंके कलंकके भयसे ही इस रीतिका प्रचार था. प्राचीन जर्मनके वीर अपनी २ स्त्रियोंको दूसरेके हाथमें नहीं देखसकतेथे, इसीसे वह अपनी स्त्रीके हृदयमें छूरी मारदेतेथे, और इसीकारणसे राजपूत भी अपनी २ कन्याओंको बराबरवाले पात्रके हाथमें समर्पित करनेमें असमर्थ हो वंशमें कलंक लगनेकी अपेक्षा उस सुकुमारी कन्याको अफीम देकर मारडालतेथे । ”

यह तो हम पहिले ही कहआये हैं कि इस समय सुकुमार कन्याके प्राण-नाशकी रीति दूर होगईहै, परन्तु इसका मूल कारण अभीतक दूर नहीं हुआहै । वह मूलकारण क्या है, और किसकारणसे यह रीति प्रबल होगई है टाड साहबकी उक्तियोंके पढ़नेसे इसका निश्चय हमारे पाठकोंको भली-भाँतिसे हो जायगा । टाड महोदय कहगयेहैं “ यद्यपि धर्मकी विधिसे इस नृशंसाचारको किसी प्रकारसे भी समर्थन नहीं किया है. परन्तु राजपूत जातिमें प्रचलित विवाहकी रीतिने इस शिशुकन्याकी हत्याको भयंकर

* आजतक विलायतमें यह रीति प्रचलितहै ।

× सिंधुनदीके समीपमें रहनेवाली घाईकार नामकी शिखलजाति शिशुकन्याका वध इस प्रकारसे करती थी । फिरिस्ता प्रकाशमें, उन इस प्रकारकी रीतियों, कि “कन्याके उत्पन्न होते ही उसी समय वह उसको बाजारमें लेजातेथे, एक हाथमें तो उनके तीक्ष्ण छूरी होती थी और एक हाथमें वह तुरन्तकी उत्पन्न हुई कन्या होती थी, इस भाँति कन्याको बाजारमें लेजाकर वह ऊँचे स्वरसे कहते कि यदि कन्याके विवाह करनेकी किसीको इच्छा हो तो वह इसको ले ले; यदि कोई कन्याके लेनेमें सम्मत न होता तो उसी समय उस छूरीसे उसके प्राण लेलेते । ” टाड साहबका कथन है कि इसी कारणसे उनमें स्त्रियोंकी संख्या अधिक थी । और उसीसे एक स्त्री बहुतसे पति प्राप्त करतीथी । जिस समय एक पति स्त्रीके पास जाता उस समय घरके द्वारपर एकप्रकारका संकेत (चिह्न) रक्खाजाताथा; उसी चिह्नको देखकर दूसरा पति उसके यहां नहीं जासक्ताथा, जब वह चिह्न मिटजाता तब दूसरा पति उसके पास जाताथा ।

क्रुद्ध राणाने शीघ्रही देवगढ देश अपने अधिकारमें करके, एक राजपुरुषको यह आज्ञा देकर वहां भेजा कि, देवगढके निवासियोंने जो अन्न बोया है, वह सब काटकर ले आओ, क्योंकि स्थानीय सरदारोंने मेरी बिना सम्मति लिये मेरा अपमान करनेके निमित्त अपनी इच्छानुसार एक पुरुषको सामन्त पदपर स्थापित कर लिया है । देवगढके सरदारोंने राणाकी आज्ञा सुनकर विशेष चतुरताके साथ उत्तर दिया कि, “हमने केवल गोकुलदासका एक पुत्र निर्वाचन कर दिया है देवगढका उत्तराधिकारी निर्वाचन नहीं किया है, यह निर्धारणकी सामर्थ्य केवल राणाको ही है, हमारा दृढ विश्वास है कि, राणा देवगढके सहस्रों राजपूतोंके नेता पदपर किसी योग्य पुरुषको ही निर्वाचित करदेंगे । सरदार लोगोंने उक्त निवेदनके साथ नाहरसिंहके गुणग्राम प्रकाश और उनको ही सामन्त पददेनेका भी सङ्केत कर दिया था । देवगढके कविवर उस समय राणाके चिकित्सकरूपसे राजधानीमें नियुक्त थे । * उन्होंने सरदारोंके दूत वनकर अपनी विज्ञता और चतुराईके द्वारा राणाको प्रसन्न करके, उनकी क्रोधाग्नि विलकुल शान्त कर दी । अन्तमें राणाके नाहरसिंहको अभिषिक्त करनेमें सम्मत होनेपर, युवक नाहरसिंह राजधानीमें आये । उसी समय नाहरसिंह मेवाडमें सबसे अधिक समृद्धिशाली और विक्रमी राजपूतोंकी दासभूमि देवगढ मदारियाके सामन्त पदपर वरण किये गये । देवगढका प्राचीन नाम मदारिया है । नाहरसिंह जिस संग्रामगढके उत्तराधिकारी थे, वह संग्रामगढ यथासमय मदारियासे विच्छिन्न होगया, और अन्तमें किसी उपायसे राणाके अधिकारमें होगया ।

कर्नेल टाड रजवाडेकी सामन्त शासन प्रणालीके विषयमें सबसे अन्तमें लिखते हैं कि, “ राजपूत जातिके मध्यमें सामन्त शासन शैलीने अवश्य ही दृढ रूपसे स्थान पाया था, और उस कारण से ही राजपूत राज्य अवनतिके सागरमें निमग्न और राजपूत जातिकी दशा शोचनीय होनेपर भी उस रीतिके प्रबल चिह्न आजतक दिखाई देतेहैं । किन्तु वर्तमान समयमें विशेष तर्कनावाली राजनीतिका

* कविवर केवल चिकित्सा गुणके कारण ही नहीं वरन अपनी विज्ञताके गुणसे भी राणाके भवनमें सन्मानके साथ रहते थे । उन्होंने राणाको सूचित किया कि, “ जो राणा सर्वेश्वर हैं, अफीमसेवी विदूषकगण कभी उनकी सेवाके उपयुक्त नहीं होसकते । यदि युवक नाहरसिंह राणाकी सभामें शिक्षा पावेंगे, तो यथा समय उनके द्वारा देशका विशेष उपकार होगा । इसके सिवाय नाहरसिंहके अभिषेकसे तलवार बन्धी स्वरूप एक लक्ष मुद्रा नजराना आपको शीघ्रही मिलेगा । ”

प्रस्ताव निश्चय होजायगा, तब सलम्बूरके सरदार यश और गौरवकी आशाके वश होकर सबसे पहले ही इस विधिको भंग करदेंगे। वह अपनी कन्याओंके विवाहके समयमें इतना अधिक धन खर्च करते थे कि उनके स्वामी राजाको इतना धन उठानेकी सामर्थ्य नहीं थी। कवि और वंशकारिकाओंने उनकी उस दानशूरताकी ऊँची प्रशंसासे राजवाड़ेको प्रतिध्वनित करदिया था, उन्होंने अपने नाम जातीयके काव्यमें उज्ज्वलरूपसे चित्रित करके राजपूत ज्ञानी श्रेष्ठ महाराजा जयसिंहके इस शुभ उद्देशपर कुठाराघात किया, जितने दिनोंतक वृथा गौरवकी इच्छाका दमन तथा आडम्बर प्रिय राजपूत सरल सामान्य भावका अवलम्बन न करें, जो उतने दिनतक विवाहके समयमें अधिक धनके खर्चका विषमय फल दूर नहीं होगा। दुर्भाग्यकी बात है कि जो लोग इस रीतिको दूर करनेमें भलीभाँतिसे समर्थ हैं इस अधिक धनके व्ययने उनके स्वार्थको और भी सिद्ध कर दिया है। उन्होंने इसकी और भी पुष्टता कर दी थी, अर्थात् कवि, ब्राह्मण, गाथाके वाँचनेवाले और रहस्य क्रीडकगण विवाहकी सभामें दलकेदल बाँधकर आते थे, और कन्याके पिताकी उच्च प्रशंसा करके दानशूरताको अधिक बढ़ा देते थे। राजपूत कवियोंका कुलही प्रधान यशका घोषक था, वह लोग पहले २ सामन्तोंकी कन्याओंके विवाहमें अधिक धन व्यय करके कन्याके पिताको अधिक धन देनेमें उत्तेजित कर देते थे। यदि कन्याका पिता उनकी उस प्रार्थनाको पूरा न करता तो कविगण उसके अपमानकी कविता बनाकर उसका घोर तिरस्कार करते थे। इसी डरसे कन्याके पिताके अधिक धनमें सामर्थ्य न भी होती तो भी वह उस समय किसी न किसी प्रकारसे अधिक धन खर्च करता था। राजपूतोंके कविश्रेष्ठ चंदकवि इस बातको लिख गये हैं,—“ कि पृथ्वीराजके साथ अपनी कन्याके विवाहके समयमें दाहिमाने अपने खजानेको खाली कर दिया था; और उसका फल उनको यह मिला कि मनुष्योंके समाजसे उनको अनन्त यश मिला। विवाहके समयमें राजकविको पुरस्कारमें एक लाख रुपया मिलता था।” महात्मा टाड साहब इसको लिखगये हैं कि अपनी शोचनीय अवस्थाका समयमें भी महाराणा भीमसिंहने अपनी कन्याके विवाहके समयमें प्रधान राज कविको एक लाख रुपये दान करके दिये थे।

बहुत छोटी सी कन्याके हत्याके सम्बंधमें हमें यह कहना है; कि यद्यपि प्रबल प्रतापशाली ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी आज्ञासे इस समय यह रीति दूर होगई

कर्नेल टाड साहब जिस समय राजपूतानेके पोलिटिकल एजेण्ट पदपर स्थित थे, उस समय ब्रिटिश जाति जिस प्रणाली और नीतिसे भारतका शासन करती थी, उस समय राजनीतिज्ञ टाड साहबकी नीति बहुत कुछ काममें लाई जाती थी किन्तु उनके जानेके साथ साथ ही ब्रिटिश नीतिने भिन्न मूर्ति धारण की, जिससे राजपूत राज, राजपूत नरपति, राजपूत सामन्त, राजपूत सरदार, राजपूत प्रजाकी दशाका ही परिवर्तन होगया, यद्यपि गवर्नमेण्टने इस समय देशी राजाओंकी भीतरी नीतिमें सर्वथा हस्तक्षेप नहीं किया है, किन्तु मूलतत्त्वके जानने-वालोंको इतना अवश्य ही कहना पड़ेगा, कि इस समय राजा महाराजाओंको रेजिडेण्ट वा पोलिटिकल एजेण्ट लोगोंकी आज्ञाके आधीन ही सर्वथा रहना पड़ताहै, जिस प्रकार मुगल शासनके समयमें राजा महाराजा अपने २ राज्यमें स्वाधीनताके साथ प्राचीन रीति नीतिका पालन तथा सामाजिक विधानके अनुसार अपने कार्य करनेमें समर्थ थे यदि सत्यताका सन्मान रखनेके लिये इस समय उस बातकी तुलना कीजाय तो यह स्वीकार करना होगा कि इस समय उस प्रकारकी पूर्ण स्वाधीनता संभोग वा उस प्रकार शक्तिका व्यवहार अब नहीं करसक्ते साथमें यह भी मानना पड़ताहै कि राज्योंमें अब वैसा प्रताप भी नहीं है । कर्नेल टाडका उपदेश अब सब प्रकारसे ग्रहण नहीं होता, उन्होंने कहाहै कि देशी राजा जितने शक्तिसम्पन्न सामर्थ्यवान् प्रभुता युक्त होंगे जितनेही वे राजा धनधान्य सैन्यबल सम्पन्न होंगे उतना ही ब्रिटिश गवर्नमेण्टके शासनमें मंगल होगा इस कारण देशी राजाओंको वैसी स्वाधीनता समर्पणमें मंगल है परन्तु इस समयकी नीतिसे यह देखा जाताहै कि देशी राज्य दुर्बल निस्तेज और शक्तिहीन होते जातेहैं, और जहांतक देखा जाताहै वीरत्व प्रताप प्रभुता प्रायः लोप सी होती जाती है, हमारा इसमें यह कहना है कि जो लोग राजपूत जातिके चरित्र प्रतिज्ञा और व्यवहारोंको भलीभाँतिसे जानतेहैं वह लोग इसी बातका समर्थन करेंगे कि देशीराज्योंके बलकी जितनी २ वृद्धि होती जायगी उतना ही ब्रिटिश राज्यका प्रताप बढ़कर भारतका मंगल होगा ।

राजपूत राजोंके कुल गवर्नमेण्टका किसी प्रकार अनिष्ट नहीं कर सकते इस बातको कर्नेल टाडने रजवाड़ेमें बहुत कालतक निवास करके राजासे लेकर साधारण सरदार तक, प्रत्येक श्रेणीके सरदारके साथ अभिन्न मित्रता, बातचीत और सुहृदतासे भलीभाँति जान लिया था, इस ही कारण वह लिख गये हैं कि, राजपूत राजा यदि पूर्वकी समान; बल पराक्रम गौरव धन मर्यादाके संग्रह करने-

अत्यन्त भयंकर मानी जाती थी । उस रीतिका नाम जुहार है । यह जुहार की रीति एक समय में इकट्ठी हुई हजारों राजपूत वालाओं की प्रज्वलित हुई चिता की अग्नि में भस्म कर देती थी । मेवाड़ के इतिहास में कई स्थानों में हमारे पाठकों ने इस जुहार की रीतिका वृत्तान्त पढ़ा होगा । कर्नेल टाड साहब के समय में इस रीतिका प्रचार बड़ी प्रबलता से था; अंगरेजी राज्य के शासन से इस समय भारत के प्रत्येक प्रान्त में शान्ति भूति सती विराजमान हो रही है । देशीय राजाओं में परस्पर के लड़ाई झगड़ों का नाश जड़ से हो गया है, जिस कारण से पहले जहर दिया जाता था इस समय वह कारण स्वयं ही दूर हो गया है, इस रीतिका एक साथ लोप होते ही हम यहां पर इतिहासवेत्ता टाड साहब का अनुसरण करते हैं । महामानीय टाड साहब लिख गये हैं कि “अन्य देशों की स्त्रियों के सम्मुख राजपूतों की स्त्रियों का भाग्य अत्यन्त ही शोचनीय विदित होता है । जीवन के एक २ पग पर मनों उनके लिये मृत्यु मुँह फैलाये खड़ी रहती थी; सुकुमार अवस्थामें अफीम का सेवन और बड़े होने पर प्रज्वलित हुई चिता की अग्नि उन राजपूत वीरवालों के प्राण लेने को तैयार रहती थी; और यदि इन दोनों के बीच में जो कुछ उपद्रव हो गया तो जहर देकर प्राण ले लिये जाते थे । सारांश यह है कि पग २ पर उनकी मृत्यु समीप खड़ी रहती थी; जिस समय राजपूतों की युद्ध में पराजय होगई अथवा अपना नगर शत्रुओं के अधिकार में हो गया तो राजपूत वीरवाला अपने सतीत्व की रक्षा के लिये मृत्यु का होना कल्याणकारक मानती थीं । यूरोप की स्त्रियें युद्ध में विपत्ति पड़ने पर जिस भाँति निर्विघ्नता से रहती हैं, एकमात्र ईसाई धर्म ही उसका मूल कारण है । और मध्यकाल की कुलीन वीरवाला भी निस्संदेह अबलाओं को निर्विघ्नता से रहने में सहायता करती थीं । परन्तु बड़े आश्चर्य का विषय है कि जो सभ्य राजपूत स्त्रियों के सम्मान की रक्षा के लिये इतना यत्न करते थे उन्होंने अपनी जाति में इस विधिको नियुक्त नहीं किया । जिससे युद्ध के समय में स्त्रियों के ऊपर ऐसे अन्याय के अत्याचार दूर हो सकते ।”

टाड साहब इसको पीछे लिख गये हैं, कि “वर्बर के तातारियों की समान पाखंडी शत्रु के उपस्थित होने पर हम इस भयंकर विषप्रयोग की रीति से स्त्रियों के सतीत्व के सम्मान की रक्षा की प्रशंसा करके सहानुभूति कर सकते हैं । परन्तु यह रीति राजपूतों की अन्तर जातिके समर में भी प्रचलित थी । इस प्रकार के सैकड़ों खुदे हुए पत्र हमने पाये हैं; इससे प्रकाशित होता है कि शत्रुपक्ष की स्त्रियों के बंदा होते ही युद्ध में विजय का होना पाया जाता है ।” महात्मा टाड साहब ने ऐसे

राजपूत बांधव टाड फिर लिखते हैं कि, “औरङ्गजेबकी आज्ञासे समरक्षेत्रमें राजपूत जातिने कैसा व्यवहार किया था, वह हमको स्मरण रखना उचित है; अब भी उनके हृदयमें वही भाव विराजमान है। कृतघ्नता, आत्म सन्मान रक्षा और विश्वास पालन एक समय राजपूत जातिके समस्त सद्गुणोंकी मूल भूमिथे। आजतक प्रत्येक राजपूत उस कृतज्ञता, आत्मसन्मान और विश्वस्तताका मूल अर्थ समझते हैं; किन्तु केवल अपने भाग्यके बलसे ही समय परिवर्तनके साथ वह लोग उस कृतज्ञताका प्रकाश आत्मसन्मानरक्षा और विश्वास पालनके पूर्ण उदाहरण दिखानेका कोई उपलक्ष नहीं पाते हैं। किसी राजपूतसे यह प्रश्न किया जाय कि, “सबसे भारी अपराध क्या है?” वह तत्काल उसके उत्तरमें कहेगा कि “गुणछोड़” अर्थात् कृतघ्नता। राजपूत जातिकी आत्माके साथ मानो कृतज्ञता जड़ीबुई है, वह लोग जीवनके प्रत्येक अनुष्ठानमें कृतज्ञताकी पूजा करते हैं, और उस कृतज्ञताके मान रक्षाके लिये ही वह समधर्मी राजाके साथसे वियुक्त नहीं हो सकते। जो राजपूत उस कृतज्ञतासे हीन है, वह राजपूत इस संसारमें रहनेके योग्य नहीं है, उसको दूसरे जन्ममें साठ सहस्र वर्षतक नर्कमें निवास करना पड़ता है, यही उसके लिये निर्धारित है; राजपूत जातिका यही विश्वास है।” *

इसके अनन्तर कर्नेल टाड लिखते हैं कि, “राजपूत जाति चाहे कितनी ही उग्र स्वभावयुक्त हो, उसके हृदयमें राजभक्ति और देशहितैषिता भलीभाँति विराजमान है। यद्यपि राजपूतलोग बीचर में अपने पिता और अधीश्वर^x के प्रति उद्धतता सूचन करते रहते हैं, किन्तु किसी विजातीय शत्रुके जन्मभूमि अधिकारमें उद्यत होनेपर, वह किस प्रकार वीरमूर्ति धारण कर एकता पूर्वक राणाका

* कर्नेल टाड टिपणीमें लिखते हैं कि, “गुणछोड़ अर्थात् कृतघ्नता और सत् छोड़ अर्थात् विश्वासघात करनेवाले साठ हजार वर्षतक नर्कमें वास करते हैं, राजपूत काविगण ऐसा वर्णन कर गये हैं, जितने यूरोपियन अपने बुद्धिमान होनेका अभिमान करके यह कहते हैं कि, देशीलोग कृतज्ञता किसको कहते हैं यह नहीं जानते, और देशीयलोगोंकी भाषामें कृतज्ञता शब्दही नहीं है। ऐसे लोग केवल गङ्गातीरवर्ती देशोंमें प्रचलित केवल नमकहराम शब्दको ही जानते हैं। गुण छोड़ शब्द कृतघ्नताका पूर्ण अर्थ प्रकाशक है। विश्वासघातकता भी राजपूत जातिमें सबसे प्रधान अपराध गिना जाता है।”

x जिस राजपूतके पास केवल एक प्रकार परिमित भूखण्ड है, वह व्यक्ति भी अपनेको अधीश्वरकी समान समरक्तवाला समझकर राणाको “बापजी” अर्थात् प्रजामात्रका पिता और जाति मात्रका प्रतिनिधि समझता है। राजभक्तिका क्या पूर्ण नमूना है।

गयेहैं, “ कि मनुकी आज्ञा है कि यदि कोई पुरुष पराई स्त्रीको भगिनी कहकर पुकारले, तब उसको, वृद्धको, पुरोहितको, राजाको और नवविवाहिता वधूको मार्ग छोड़देना होगा । और अतिथिसेवाकी प्रशंसनीय विधिसे उन्हें नियुक्त करदियाहै कि गर्भवती स्त्री, नवविवाहिता वधू और सुन्दरी युवती स्त्रीको अन्य अतिथियोंके पहले भोजन करावे ।” इस प्रकारकी अन्य विधियें भी भलीभाँतिसे प्रकाशित होरहीहैं । एक समयमें स्त्रीजातिको इतना बंद करके नहीं रक्खाजाताथा; मुसलमानोंके प्रबल प्रतापके समयसे इस रीतिका प्रचार हुआहै, और हिन्दुओंने उनका अनुकरण कठोरतासे कियाहै । परंतु मनुके ग्रन्थोंमें ऐसी परस्परमें विवाद करनेवाली रीतियें अनेक दृष्टि आतीहैं कि जिनसे हम कहसकतेहैं कि वह समस्त रीतियें मानों एक शास्त्रकारकी बनाई हुई नहीं हैं, कारण कि इन रीतियोंमें स्त्रियोंके प्रति सन्मान और अवज्ञामूलक दोनों विधियोंकी व्यवस्था देखी जातीहै । * मनुके नियत कियेहुए निम्नलिखित विधान अवश्य ही प्रशंसाके साथ ग्रहण किये जाते हैं, “ पर्व और आनन्द उत्सवके समयमें स्त्रियोंको रत्नोंके आभूषण देने उचितहै, कारण उसका यहहै कि यदि भार्या सुन्दर वस्त्रभूषणोंसे न सजाईजाय तो वह भार्या स्वामीको प्रफुल्लित नहीं करती है, यदि स्त्रीको सुन्दर २ वस्त्रभूषणोंसे सुसज्जित कियाजाय तो वह स्त्री पतिको अत्यंत प्रसन्न करती है ।” निम्नलिखित विधिसे मनुजीने स्त्रियोंकी सामर्थ्यमें निःसन्दिग्ध शक्ति स्वीकार कीहै, “स्त्रियें केवल इस जीवनमें अज्ञानी अथवा मूर्ख नहीं हैं, वह ऋषियोंको भी पुण्य मार्गसे हटाकर पापकी ओर लेजा सकती हैं ।” इसकारण सर्वश्रेष्ठ शास्त्रकारोंकी

—पुकाराथा, और उसके निकटसे पात्र और रस्सीको मांगा । राजपूत स्त्रीने उसके इस वचनसे महाक्रोधित होकर कहा, “ महाराज ! मैं राजपूतनी हूं, अर्थात् मैं राजपूतकी स्त्री हूं; और मैं राजपूतोंकी जननी भी हूं । उसके इस क्रोधभरे वचनको सुनकर कल्याणनामक उक्त सैनिकने हाथ जोड़कर अपने अपराधकी क्षमा मांगी और माता कहकर उसके क्रोधको शान्त किया । इसके पीछे उस राजपूतकी स्त्रीने जलके पात्र उठाकर अपने पुत्रको बुला उसको उपदेश दे समझा बुझाकर जल दे दिया किया । १८०७ ईसवीमें यह घटना हुईथी, यह सैनिक विशेष साहसी था । १८१७ ईसवीमें जब टाड साहबने ७२ बंदूकधारी शरीररक्षकोंके साथ १५०० पिंडारिको परास्त कियाथा यह कल्याण भी उन्हीं ७२ जनोंमेंका एक मनुष्य था ।

* यह बात निरीभ्रमकी है कि यह बातें भिन्न २ ग्रंथकारोंकी हैं, मनुजी सबके गुण और दोष दोनों ही लिखते हैं ।

राजनीतिज्ञ टाडकी अन्तिम उक्ति, “जो लोग केवल बाहिरी दृश्य देखकर सिद्धान्त गठन करते हैं; वह सहजमें ही अनुमान करसकते हैं कि, दीर्घकालतक विजातीय आक्रमणसे राजपूत जातिके उद्यम प्रतिभा, वीरत्व विक्रम विलकुल दूर होगये हैं किन्तु यह कल्पना विलकुल भ्रान्तिपूर्ण है । विजातीय उत्पीडन तथा अत्याचारसे राजपूत चरित्रमें इस समय जितने शोचनीय लक्षण दिखाई देतेहैं, शान्ति विस्तारके साथ २ ही वह सब दूर होजायेंगे और स्वदेशकी सुख समृद्धि जितनी ही बढ़ेगी, उतने ही उनके हृदयमें नये २ भाव उत्पन्न होकर प्रत्येक जातिसम्बन्धी आचार व्यवहार तथा सद्गुण पूर्ण सृष्टिसे दिखाई देंगे । राजपूत जाति उस समय कुंकुमवर्णकी पौशाक धारण करके × [जो लोग निःस्वार्थ भावसे उनके मंगल साधनमें सदा तत्पर हैं उनके लिये] संग्राम स्थलमें निश्चय ही उपस्थित होसकेंगे । इतिहासके ऊपर लक्ष्य रखकर हमको राजनैतिक मार्गका अवलम्बन करना उचितहै । बहुत बड़े साम्राज्य शासन और अनगिन्त भिन्न राज्यके साथ सम्बन्धसे जो महाविपत्ति निवारण नहीं होसक्ती, उसके प्रमाण संग्रहके लिये हमको प्राचीन रोमके ऊपर दृष्टि देनेकी आवश्यकता न होगी । भारतवर्षमें बाईसदेशी प्रधानराज्य—जिनमें अधिकांश बृटिश साम्राज्यके अधीन हुए हैं, यहांतक कि एक सौ वर्ष पहिले उन सबने राजशासनके परम रमणीय दृश्य दिखाये थे । एक सम्राटको जिस विशाल साम्राज्यका सफलतासे शासन करना अत्यन्त कठिन था उसको कई सौ वर्षतक मुगल शासन करगयेहैं । किंतु जब उन सम्राटोंने देशीय राजा और राजपूत नरपतियोंके स्वत्व पर हस्तक्षेप करके उनके सामाजिक आचार व्यवहार और धर्मके प्रति अत्याचार आरंभ किया, उस समयसे ही सम्पूर्ण देशी राजा और राजपूत भूपालोंने सम्राटकी आधीनता अस्वीकार करके सर्वथा पृथक्भाव अवलम्बन किया, तथा दक्षिणी लोग इसी कारणसे उत्तेजित होकर मुगल अत्याचारियोंके विरुद्ध खड़े हुए । एक समय जिस मुगल सम्राट औरङ्गजेबके नामसे सम्पूर्ण भारत काँपताथा यथासमय उस मुगल सम्राटका वह विश्वविख्यात सिंहासन एक ब्राह्मणके करुणाधीन हुआ था और खानदेशके एक किसानके पौत्रने * तैमूरवंशके लोगोंको वृत्ति भोगी

× राजपूत जाति अपने जीवन त्यागकी प्रतिज्ञा करके जिस समय युद्धक्षेत्रकी यात्रा करतीथी, उस समय कुंकुम वर्णके वस्त्र धारण करती थी ।

* महाराज सेंधिया ।

उदारचित्त टाड साहव हिन्दू स्त्रियोंकी शिक्षा और ज्ञान बुद्धिके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन करगये हैं “जो मनुष्य किसी समयमें भी गंगाजीके पार नहीं जासकते थे उनके द्वारा जो हिन्दू स्त्रियोंके चित्र अंकित हुए हैं, ऐसा देखा जाता है कि उनसे बहुतसे मनुष्योंके हृदयमें संदेह उत्पन्न हुआ है। उन हिन्दू जातिकी स्त्रियोंका वर्णन मोल ली हुई दासी कहकर किया है; और सैकड़ों हजारों स्त्रियोंमेंसे एक भी ग्रन्थ नहीं पढ़ सकती थी। उनको ऐसा विश्वास था कि मैं उन सब भ्रमण करनेवालोंसे प्रश्न करूंगा कि उन्होंने “राजपूत” इस नामको सुना है या नहीं? कारण कि राजपूत जातिकी नीच जातियोंके सामन्तोंकी कन्याओंमें भी ऐसी अल्प संख्या है, कि जो लिखना पढ़ना नहीं जानती हैं अपने २ अप्राप्त व्यवहारी पुत्रोंको धन सम्पत्तिके अविभाविका पदपर नियुक्त हुई राजपूतजननीके साथ जो वार्तालाप किया है वह अवश्यही उन राजपूतोंकी स्त्रियोंकी बुद्धि और समाज तत्त्वके ज्ञानके सम्बन्धमें अपना मन्तव्य प्रकाश करेंगे × यद्यपि भारतवर्षमें स्त्रियें राज्यशासनकी अधिकारिणी नहीं होती थीं, परन्तु अपने २ पुत्रोंके अप्राप्त व्यवहारके समय प्रतिनिधिरूपसे राज्यशासनमें पूर्ण सामर्थ्य रखती थीं, अब भारतके इतिहासको पढ़नेसे उसी भाँति असीम साहस और योग्यतायुक्त बहुतसी स्त्रियोंका शासन विवरण, उज्ज्वलतासे वर्णित हुआ है। *

महात्मा टाड साहवने इसी अभिप्रायसे कि राजपूतजातिके चरित्रोंके प्रधान २ लक्षण और उनके गुणोंकी विलक्षणता हमारे पाठकगणोंको भलीभाँतिसे दृष्टि आजाय, इसी कारणसे उनका वर्णन करना आवश्यक विचारा; उस वर्णन कियेहुए

× महात्मा टाड साहव अपने टीकेमें लिखगये हैं, कि “बूंदीके राजाने अपनी मृत्युके समयमें मुझे अपने पुत्रके अभिवाचक पदपर नियुक्त करगये। उस सुकुमार पुत्रके कल्याणके निमित्त और राज्यके शासनके निमित्त मैंने एक २ समयमें बहुत सी घटनाओंकी बातचीत बूंदीराजकी माताके साथ की थी। उन्होंने मेरे साथ भ्रातृसम्बन्ध स्थापन किया परन्तु सर्वदा उनके एक विश्वासी तीसरे मनुष्यके सामने मेरी चर्चा हुआकरती। और एक परदा हम दोनोंके बीचमें पड़ा रहता उनकी उक्ति ऐसी निर्भ्रान्त थी और सब प्रकारसे वह गाढ़ज्ञानकी प्रकाशक थीं, उसी भाँतिसे उसके पत्र भी उसके प्रकाश करनेवाले हैं। उस प्रकारके बहुतसे पत्र मेरे पास विद्यमान हैं। मैं ऐसे अनेक प्रमाण दिखासकता हूँ।”

* फारिश्ता अपने इतिहासमें अकबरके आक्रमणके विरुद्ध अपने सुकुमार पुत्रके स्वत्वकी रक्षाके निमित्त गाड़की रानी दुर्गावतीकी वीरताको उज्ज्वलतासे चित्रित करगया है। वोडिसियाकी समान उन्होंने वीरसाजसे सुसज्जित होकर चतुरंगिणी सेनाकी सहायतासे अकबरके भेजेहुए-

परिशिष्ट ।

कनेल टाड द्वारा लिखित ।

ताम्रानुशासनपत्र;—सनद;—पट्टा;—दानपत्र;—व्यवस्था

पत्र;—राजके प्रादेशपत्र;—आवेदनपत्र और

खोदित लिपियोंका अविकल

अनुवाद । ❀

प्रथम—संख्या १.

मारवाडके निर्वासित सामन्तों × के द्वारा पश्चिमी राज्योंमें स्थित ब्रिटिश गवर्नमेंटके पोलिटिकल एजेंटके निकट प्रेरित पत्रका ज्योंका त्यों अनुवाद ।

यथोचित सम्भाषणके अनन्तर निवेदन यह है कि, हम आपके निकट एक विश्वासी पुरुषको भेजते हैं, वह हमारी दशाके विषयमें आपको सब बातें सूचित करेंगे । सरकार कम्पनी ईष्ट इण्डियाकम्पनी हिन्दुस्थानकी अधिपति है; हमारी दशा इस समय कैसी शोचनीय है, इस बातको आपलोग भली-भाँति जानते हैं । यद्यपि हमारे और हमारे देशका कोई विषय भी आपसे छिपा नहीं है; किंतु अपने विषयका एक विशेष वृत्तान्त आपको सूचित करना अत्यन्त आवश्यक है ।

श्रीमहाराज और हमलोग एकही वंशमें उत्पन्न हैं और सबही राठौर हैं । वह हमारे अधिपति, हम उनके अनुगत दास हैं, किन्तु इस समय वह महा क्रोधमें भरे हुए हैं, और उसीसे हम अपने स्वदेशके सम्पूर्ण स्वत्व और विषय विभवसे वञ्चित होगये हैं । हमारी पिताके अधिकारकी भूमि महाराजने खालिसा अर्थात् अपने अधिकारमें करली है, और जितने सामन्त वर्त्तमान राजनैतिक विप्लवके समयमें दूर रहनेकी इच्छा करते हैं, उनके भाग्यमें भी वैसे ही फल लाभकी संभावना है । महाराजने अनेक सामन्तोंको अभयदान और प्राणरक्षाकी दृढ

* इनमेंसे बहुतसे पत्र कनेल टाड अपने देशमें लेगये थे । उनके स्वर्ग सिधारनेके पीछे वह सब पत्र किसके हाथ लगे, इसके जाननेका कुछ उपाय नहीं है ।

× क्रोधोन्मत्त मारवाडपति जिससे उक्त पत्र प्रेरकोंके प्रति अत्यन्त क्रुद्ध होकर उनपर विपत्ति उपस्थित न करें, कनेल टाडने इस निमित्तही पत्र प्रेरक सामन्तोंके नाम नहीं लिखे ।

राजस्थानकी प्रत्येक राजसभाहीको अपने २ कार्यके अनुसार उपाधि प्राप्त हुई है। और जयपुरकी राजसभाके प्रति जैसी “झूटे दरवार” की उपाधि मिली है × राजसभाके पक्षमें उसकी अपेक्षा अपमानकारी शब्द दूसरा नहीं है। सामान्य सत्य उपाधि राजदरवारकी समान सुविचार और प्रशंसापूर्णकी परिचय देनेवाली है। शठता और प्रतारणामें बहुत सी भिन्न छाया दृष्टि आती है; स्वाभाविक नीति की हीनताके हेतुमें शठताने जन्म ग्रहण किया है; परन्तु इस स्थानपर प्रतारणका राजपूतजातिकी आत्मरक्षाके अर्थ ही अवलम्बित कहना ठीक होगा। परन्तु किसी एक जातिके चरित्रोंके सम्बन्धमें न्यायसे मन्तव्योंके गठनके पहले अवश्य ही उस जातिके विधिसमूह, उन समस्त कार्योंके परिणत करनेकी प्रक्रिया और आभ्यन्तरिक उपद्रवोंको शान्त करनेकी रीतिको मन लगाकर समालोचना करनी उचित है। जिस समय राजपूतजातिके हाथमें राजनैतिक स्वाधीनता विराजमान थी, हम अवश्य ही उस समयके योग्य मनुष्योंके मन्तव्योंकी परीक्षा करनेके अभिलाषी हैं। केवल कितने विपक्षके काल्पनिक भ्रान्त ज्ञानके ऊपर निर्भर करके किसी एक जातिके प्रति मन्तव्य प्रकाश करनेको हम आगे नहीं बढ़ें, हमने इस स्थानपर उसीका अनुसरण किया है कि जिसका वर्णन वह हिन्दू जातिके सम्बन्धमें करगये हैं। यदि कोई बुद्धिमान् मनुष्य प्रत्येक हिन्दुओंके स्वभाव और उनके मनकी वृत्तिकी परीक्षा करे तो प्रत्येक मनुष्यको ही किसी न किसी भिन्न विषयका अवलम्बन करते देखाजायगा। उनमें कितने तो ऐसे होंगे कि जिनके चरित्र अत्यन्त ऊँचे हैं, और कितने ऐसे होंगे कि जिनके चरित्र अत्यन्त दुष्ट हैं। उनका यह ज्ञान है कि निःस्वार्थ मित्रता स्वामीकी भक्ति और अन्यान्य श्रेष्ठ गुणोंसे विभूषित कहे जाकर विख्यात हैं; परन्तु उसके साथ ही साथ उनमेंसे बहुतोंका अंतःकरण कठोर है वह निर्लज्ज, ऊधमी और साधारण झगड़ोंसे प्रवृत्त अत्याचारोंके करनेमें भी शान्त नहीं होते।” यवनोंके मंत्रीने फिर कहा है कि हिन्दू जाति धार्मिक, मधुर भाषी, और अपरिचितोंके ऊपर दयाकरनेवाली आनंदस्वभाव, सुशिक्षित, न्याय विचार प्रिय, कार्यमें कुशल सभ्यप्रिय और सम्पूर्ण कार्योंमें असीम विश्वासके पात्र हैं। विपत्तिके समयमें उनके चरित्र उज्ज्वलतासे प्रकाशमान हुए हैं। उनकी सेना युद्धभूमिसे भागनेके नामको भी नहीं जानती थी, परन्तु जिस युद्धमें अपने

× सुखका विषय है कि इस समय जयपुर राजदरवारके प्रति इस प्रकारकी परितापदायक उपाधिका प्रयोग नहीं है।

अन्यथा वह हमारे भ्राता ज्ञाति और देशोंके अधिकारी हैं और वही अधिकार पानक लिये हम प्रार्थना करते हैं । वह हम लोगोंको हमारे भूमिस्वत्वसे विलकुल वाञ्छित करना चाहते हैं किन्तु हमलोग क्या वह सत्त्व सहजमें ही छोड़ सकते हैं अंग्रेजलोग सब हिंदुस्तानके स्वामी हैं।.....सामन्तने अपने प्रतिनिधिको अजमेर भेजा था । उस दिल्ली जानेके लिये कहा गया । उस उपदेशके अनुसार ठाकुर दिल्ली गये, किन्तु उनको कुछ आज्ञा नहीं दी यदि अंग्रेज अधीश्वर हमारी प्रार्थना न सुनेंगे, तो फिर कौन सुनेगा ? अंग्रेज कभी एकका स्वत्व दूसरेको अन्यायरूपसे अधिकार नहीं कर देते मारवाड हमारी जन्मभूमि है इस कारण हम लोग मारवाडसे अवश्य ही अन्नजल ग्रहण करेंगे। हजारों राठौर शोचनीय दशामें पड़े हैं वह कहां जायँ केवल अंग्रेज जातिके प्रति अखण्डनीय सन्मानके कारण ही हमलोग इतने दिनोंतक मौन रहे हैं । हमारा अभिप्राय क्या है, वह पहिले विदित न करनेसे आप पीछे हमको अपराधी बता सकते हैं, इस कारण ही इस समय आपको सब बातें विदित करके आपके निकट हम निर्दोषी होते हैं । मारवाडसे हम जो कुछ धन रत्न लाये थे और यहां ऋण लेकर जो कुछ संग्रह किया था, वह सबही समाप्त होगया है । इस समय अन्नाभावसे जब हम नष्ट हुआ चाहते हैं, तो उस अन्नके लिये हमारी जो इच्छा है उसीके करनेमें उद्यत हैं ।

अंग्रेज हमारे शासनकर्त्ता और स्वामी हैं, श्रीमानसिंहने हमारी भूसम्पत्ति अन्यायरूपसे अधिकार करली है; आपके मध्यस्थ होनेपर वह सब विवाद मिट सकता है । आपके निर्णय और मध्यस्थ विना हुए हमको किसी विषयमें कुछ विश्वास नहीं है । आप हमारी इस प्रार्थनाका उत्तर देंगे । हम आग्रहके साथ उत्तरकी प्रतीक्षामें हैं किन्तु यदि हमको कुछ उत्तर न मिला, तो परिणाममें जो कुछ काण्ड उपस्थित होगा, उसके लिये हम अपराधी वा उत्तरदाता न होंगे; क्योंकि सर्वत्र ही हम प्रार्थना विज्ञापन और संवाद देखे हैं । अनाहारका दारुण कष्ट मनुष्यको उपयोग उपायके खोजनेमें विवश करेगा ही । एक मात्र आपलोगोंके प्रति हमारा जो प्रबल सन्मान विराजमान है, केवल उसके ही कारणसे हम इतने दिनतक मौन रहे हैं । हमारे सरकार (राजा) बाहरे होगये हैं, कोई निवेदन न सुनेंगे । किन्तु फिर कितने कालतक उपेक्षा करेंगे ? हमारी आशा पूर्ण कीजिये संवत् १८७८, श्रावण (सन् १८२१ ईसवी, अगस्त)

अविकल नकल ।

(हस्ताक्षर) जेम्स टाड ।

इसिहासवेत्ता टाड साहबने राजपूतोंके और भी दो एक चरित्रोंका वर्णन करके इस प्रसंगको समाप्त कियाहै । उनकी उक्तिसे प्रकाशित होताहै, कि मुगलसम्राट्के आदि पुरुष बाबरके द्वारा भारतवर्षमें सबसे पहले अंगूर आयेथे । और उनके पोते जहाँगीरने तमाखूकी रीति चलाईथी, भारतवर्षमें सबसे पहले किसी समय अफीमका सेवन भी आरंभ हुआ था. टाड साहब इस बातको कहगयेहैं कि इसको मैं नहीं जानसका । विशेष करके चंदकविने अपने काव्यमें कहीं भी इसका उल्लेख नहीं किया । उनका यह मत है कि अफीमने राजपूत जातिके बहुतसे उपकारी गुणोंको एक बारही विनष्ट करदिया था । स्वाभाविक वीरताके स्थानपर उन्मत्तता क्रूरता और मुखमंडलमें ज्ञानके प्रकाशकी प्रभाके स्थानपर दुर्बलताने संशंकित करदियाहै समस्त मादक द्रव्योंकी समान इस अफीमका फल क्षणिक इंद्रजालकी समान है; परंतु उसकी प्रतिक्रिया भी कुछ अल्प नहीं है । शरीर और मनके प्रति इस मादक द्रव्यको अनिष्ट करनेवाली शक्ति थलीभाँतिसे सर्वदा प्रकाश पातीहै । यद्यपि राजपूत जाति “ माधवा वा थाळा ” अर्थात् मत्तताको देनेवाले द्रव्यके पूर्ण पात्रका व्यवहार बहुत दिनोंसे था, परन्तु इस समय जिस प्रकार जलमें भिलाकर अफीमको सेवन करतेथे, अत्यन्त प्राचीन कालके किसी काव्यके ग्रन्थमें भी इस प्रकारसे अफीमके सेवनका वृत्तांत दृष्टि नहीं आया । पुष्प, मूल और सस्यसार युक्त पानी यद्यपि इस समय आमंत्रियोंमें दियाजाताहै । परन्तु अफीमके सारका पानी मुख्यरूपसे व्यवहार करते देखाजाताहै । सबजने एक साथ अफीमको सेवन करतेथे, राजपूतजातिमें यह प्राणपणसे रक्षणीय प्रतिज्ञाका प्रमाणस्वरूप था । राजपूत इस प्रकारसे परस्परमें एक साथ बैठकर अफीमका सेवन करते हुए जिस प्रतिज्ञाको करतेथे वह प्रतिज्ञा शपथकी अपेक्षा भी कहीं श्रेष्ठ थी । कोई राजपूत अपने सम्बन्धी तथा मित्रके यहां जाकर यह प्रश्नकरता,—कि “अमलखाया” अर्थात् अफीमका सेवन कियाहै ? जिस किसी सामन्तके पुत्रका जन्म होता तो उत्सवके समयमें अन्यान्य सामन्त भी उसके अभिनंदनके निमित्त जाते और एक बड़ा पात्र सभामें लायाजाता, तथा उसमें जल डालकर तालके प्रमाण बराबर अफीम डालीजाती और एक बड़ी लकड़ीसे घोलकर पीनेके निमित्त तैयार कियाजाता । पानीके तैयार होतेही एकत्रितहुए सभी एक २ पात्रके ग्रहण करनेके बदलेमें अंजली भर २ कर देतेथे । इस पीनेके समयमें उनके मुख-चंद्रको देखनेसे ऐसा बोध होताथा कि कोई भी इच्छानुसार उसके पीनेका

समय किसी व्यक्तिके उस प्रकार आक्रान्त वा धन नष्ट होनेपर यथास्थानमें हानि पूर्तिके लिये प्रार्थना करनेपर कोई फल नहीं दीखता, क्योंकि डाँकू लोग लूटे हुए द्रव्यका चतुर्थीश फौजदारको * देतेहैं । भीरा अर्थात् पहाडीलोग इस समय विलकुल स्वाधीन होगये हैं, पहिले कभी कोई हत्या नहीं करतेथे किन्तु इस समय वह जिस प्रकार हमारे आत्मीय लोगोंका सर्वस्व लूटते हैं उसी प्रकार हत्या भी करते हैं । इस डकैती और नर हत्या निवारणका कोई उपाय नहीं दीखता, यहाँतक कि डाँकूलोग देवगढनगरमें लूटका माल बेचते हैं ।

१० म । केवल अर्थ दण्ड करनेकी इच्छासे वह निरपराधियोंका अधिकार किया भूमिस्वत्व अपने अधिकारमें कर लेतेहैं और अर्थ दण्ड दिये जानेपर वह खेतोंका सब अन्न अपने घोड़ोंके लिये कटवा मँगाते हैं ।

११ श । अधीनस्थ सरदारोंके खेतोंमेंसे सब किसानोंको बलात्कारसे पकड कर अर्थदण्ड करते हैं और उनके गौ आदि पशु और हल बेचकर धन वसूल करलेते हैं । इस कारण खेतीका काम विलकुल बंद होगयाहै और निवासी लोग देश छोडकर अन्यत्र भाग रहेहैं ।

१२ श । देवगढ नगरके विचारपतिगण × उनके प्रबल अत्याचारके कारण रायपुरमें भागनेको विवश हुए हैं । वह उनको पकडवाकर उनसे भी धनदण्डलेनेके लिये तीक्ष्ण दृष्टि रखे हुए हैं ।

१३ श । बलपूर्वक अकारण अथ संग्रहके लिये वह आधीनके सरदारोंको अपने पास बुलाते हैं । यदि वह किसी उपायसे भाग जाँय तो उनकी स्त्री और कन्याको कारागारमें डाल देतेहैं । इस घोरतर अपमानसे अनेक स्त्रियोंने कुँएमें गिरकर आत्मघात कियाहै ।

१४ श । यदि कोई पुरुष किसीका ऋणी हो तो वह मध्यस्थ बनकर उसका ऋण चुकवा देनेमें प्रवृत्त होते हैं । और उस ऋणीकी स्थावर जंगम सब सम्पत्ति विक्रवाकर आधा धन आप लेलेते हैं ।

* प्रत्येक राजपूत सामन्तके अधिकृत प्रदेशमें फौजदार नामक एकसामरिक नेता हैं । वह आधीनके सरदारोंको सैन्यदलभुक्त और उनका प्रभुत्व करतेहैं । अन्य जातिके राजपूत ही इस पदपर नियुक्त होतेहैं ।

× प्रत्येक नगरमें हीएक २ विचारालय है । नगरसेठ अर्थात् प्रधान अधिवासी चार चोटियाके साथ मिलकर दीवानी विचार करतेहैं । वह किसी प्रकारका वेतनादि नहीं पाते ।

लोग आगेको अनिष्ट करनेवाली इस अफीमका सेवन नहीं करें। इसी कारणसे ऐसे बहुतसे राजपूत हैं कि जिनको आजतक अफीमका स्वाद विदित नहीं हुआ। कर्नेल टाड साहबका अंतिम कहना यह है कि “ जो मनुष्य इस कुरीतिको दूर करसकतेहैं वही राजपूत जातिमें सबसे श्रेष्ठ बंधु गिनेजायेंगे; उदयपुरका पर्वत अनेक प्रकारके रंगविरंगे सुगंधित फूलोंसे बगीचास्वरूप था। नीलनदीके किनारेवाले देशोंमें इसके शिखरपर जिस प्रकारका राजमुकुट शोभा-यमान था, हिन्दुस्थानकी राजलक्ष्मी उसकी अपेक्षा अनेक प्रकार रंगोंसे मुकुटको इस स्थानपर पासकती थी। ”

बहुत दूरके निवासी चैनेय लोग भी भारतकी अफीमको सेवन करके निकम्मे होजातेथे। बहुत वर्षोंसे भारतवर्षमें गवर्नमेन्ट भी इसका वाणिज्य करनेके लिये महाआन्दोलन मचारहीहै और शोध किरीटानी इंग्लेण्डके अनेक उदारनीति अंग्रेज समाजमें बँधकर भारतवर्षीय गवर्नमेन्टको इस अपकार करनेवाली अफीमके प्रबल वाणिज्यको रोकनेके लिये बड़ी २ सभाएँ होरहीहैं और पार्लिमेन्ट भी घोर आन्दोलन मचारहीहै, परन्तु भारतवर्षमें राजपूत वीरोंके वंशधर इस हालाहलस्वरूप अफीमका सेवन करके कर्महीन होगयेहैं, इस विषय-में आज तक भी किसीने दृष्टि नहीं डाली ! इस बातको कौन नहीं कहैगा कि वीर राजपूतजातिकी जीवनी शक्ति खोई गई है और इसका दूसरा प्रबल कारण क्या यह विषमय अफीम नहीं होसकती ? सुराकी प्रबलअग्निसे बंगालका प्रत्येक प्रान्त जलरहाहै । विश्वविद्यालयकी ऊँची उपाधि धारण करनेवालोंसे लेकर कृषक तक भी सुराके रंगमें निमग्न होरहेहैं, सहस्रों कुटुम्ब इसी सुराके निमित्त घर २ के भिखारी होगयेहैं । जब गवर्नमेन्टने इसके रोकनेका यत्न न पाया तो बंगालको छारखार करनेकी सहायता करनेके लिये प्रत्येक ग्राममें मदकी भट्टीस्वरूप विषके कुँ खुदवा दियेहैं । तब हम किस प्रकारसे आशा करसकें कि हमारी गवर्नमेन्ट अफीमभक्त राजपूत जातिके प्रति दयादृष्टि करनेमें आगे बढ़ेगी ? राजपूतजातिके भाग्यके परिवर्तनका भार राजपूतजातिके ही हाथमें है। यही विचार कर नीतिके जाननेवालोंने अपने चित्तको स्थिर कियाहै ।

प्रतिज्ञाशब्दका यथार्थ अर्थ क्या है, किस प्रकारसे प्रतिज्ञाका पालन होताहै, इस बातको जिस भाँतिसे वीर राजपूतजाति जानतीथी हम साहसके साथ इस बातको कहसकतेहैं कि अन्य कोई जाति भी इस प्रकारसे प्रतिज्ञाके सन्मानकी रक्षा करनेमें समर्थ न हुई। महात्मा टाड साहब कहगये हैं कि, एक साथ अफीमका सेवन, पगडीका बाँधना, अथवा अत्यन्त सामान्य कार्य—

वह हमारे ऊपर धनदण्ड करके कहते हैं कि, “पहाड़ियोंको उक्त प्रकारसे पशु रोकलेनेकी शक्ति हमने दी है ।” इस प्रकार वह हमारी मर्यादा घटा देते हैं । अथवा हम उक्त हत्याकारी डाँकुओंमेंसे किसीको भी पकड़ते हैं, तो वह छुड़ानेके लिये एक अस्त्रधारी दल भेजते हैं और उससे फौजदार रिशवत लेते हैं । फिर छूटे हुए डाँकुके साथ कलह होता है और उससे निराश्रय राजपूत अपनी पैतृक भूमि छोड़नेको विवश होजाते हैं । देवगढमें अब प्रजाको सहायता और आश्रय पानेका कोई उपाय नहीं है । सामन्त विलकुल हिताहित विचार शून्य हैं और सन्मान रक्षाके प्रति यहाँतक उदास हैं कि, “पहाड़ियोंको धन देकर अपनी लूटीहुई सम्पत्तिका उद्धार करलो । ऐसा कहते हैं जबसे वर्तमान फौजदार नियुक्त हुए हैं तबसे हमारे अदृष्टमें हालाहल विष लिखागया है । विदेशी लोग सर्व कर्ता धर्ता हैं देशी दूर फेंक दियेहैं । दक्षिणी (महाराष्ट्र) और लुटेरे उनके (सामन्तके) स्वजातीय लोगोंकी भूमि भोग रहे हैं । विना अपराधके सरदारोंकी भूमि छीन ली जातीहै । उसके फिर प्राप्त करनेमें बहुत सा समय और धन व्यय करना होता है । न्याय विचार विलकुल लुप्त होगयाहै ।

राणा भवनमें उन (सामन्त) का जैसा अनुग्रह भोग और स्वत्वाधिकार विराजित है उनके निकट भी हम उसी अनुग्रहके अधिकारी और स्वस्ववान हैं जबसे आप (कर्नेल टाड) ने मेवाडमें पदार्पण किया है, उससे बहुत पहिले दूसरोंके द्वारा अन्यायसे अधिकृत भूमियोंका उद्धार किया जाता है । हमने ऐसा क्या अपराध किया है जो अब अपने पैतृक स्वत्वसे वञ्चित रहें ?

हमलोग महा विपत्ति सागरमें मग्न हैं ।

तीसरी संख्या ३.

महाराज श्रीगोकुलदास ।

देवगढके चार मिसल अर्थात् चार श्रेणीके पहावत् गणके प्रति आदेश करते हैं ।

विदित हो—

विना अपराधके किसी सरदार वा भूमि अधिकारीकी सम्पत्ति वा चरसा भूमि नहीं छीनी जायगी ।

उदय न हो जिससे बालकपनसे ही वीरतामें साहस उत्पन्न होजाय, इस निमित्त राजपूतोंके छोटे २ बालक खेलकूदके समयमें छोटी २ तलवारें अपने हाथमें ले बकरे और भेषशावकोंके शिरको काटाकरतेथे उनके माता पिता बालकपनसे ही ऐसी शिक्षा देतेथे । जिस दिन राजपूतोंके बालक सबसे पहले अपने बाहुवलकी परीक्षाके निमित्त अस्त्र चलाकर हरिणआदिका शिकार करतेथे । उस दिन उनके कुटुम्बके मनुष्य उनको अभिनन्दन करके महाआनंदसे उन्मत्त होजातेथे । * महामाननीय टाड साहब कहगये हैं कि इस प्रकारसे राजपूतोंके बालक वीरधर्ममें दीक्षित हो साहस, शूरता और वीरताके अभ्यासमें निपुण होजातेथे । राजपूतोंका आनंद उत्सव ही समररंजक था, जातीय नृत्य और वीरत्वताका प्रकाशक संगीत उनको अधिक साहसी और प्रबल विक्रमशाली करदेता था. कसरत करनेवालोंकी कुस्तीको देखकर राजपूत अत्यन्त आनंदित होकर समय व्यतीत करतेथे । राजवाडेके प्रत्येक राजा कितने ही बलवान कसरतमें चतुर कुस्तीकरनेवालोंका पालन करतेथे । प्रसिद्ध २ कुस्ती करनेवाले मनुष्य भिन्नराज्यमें विख्यात कुस्तीकरनेवालोंको अपनी योग्यता दिखानेके निमित्त बुलानेमें भी झुटी नहीं करतेथे । उसी भाँति प्रतियोगिताके दिखानेमें असंख्यां राजपूत उसके घर जाकर जेताको उत्साहित करतेथे ।

प्रत्येक सामन्तकाही एक २ अस्त्रागार स्थापितहै और हर एक सामंत प्रतिदिन वहाँ जाकर अपने अस्त्रोंकी परीक्षा करते हुए नियमके अनुसार कुछ समय उस स्थानपर रहतेहैं । तलवार, बंदूक, बरछा, छूरी और धनुष—आदि अनेक प्रकार अपने प्रिय अस्त्रोंका राजपूतोंने एक २ नाम धरा है । अस्त्रागारका स्वामी राजपूतोंका बड़ा विश्वासी होताहै । अस्त्र जैसे सुन्दर मनको हरनेवाले होते हैं वैसे ही वह बड़े मूल्यके भी होतेहैं । सब प्रकारकी तलवारोंमें “शिरोही” नामकी तलवार सब राजपूतानेमें सबसे अच्छी मानीजातीहै, दोनों ओर धारवाला (खाँडा) और बड़ी तलवार भी उनको विशेष प्रिय है । लाहौर और राजवाडेमें अनेक प्रकारकी बंदूकें बड़ी उत्तमतासे बनती और मुक्ता तथा सुवर्णसे रञ्जित होकर मनोहारिणी होजातीहैं । बूँदीकी बन्दूक सब स्थानोंकी बन्दूकोंसे श्रेष्ठ होतीहै ।

* महात्मा टाड साहब लिखगयेहैं कि बूँदीके राजकुमार व्यवहार जाननेमें रहित हो जिस दिन प्रबल साहसके साथ वीरता करके मृगका शिकार करतेथे, उस दिन उनकी मातानें आनंदित होकर टाड साहबको एक पत्र लिखदिया था, उस दिन बूँदीमें एक बड़ा भारी दरबार हुआ था । और सम्पूर्ण सामन्तोंको बहुमूल्य द्रव्य उपहारमें दिये गये थे ।

४ थ । रहनेके लिये “भारत सिंहकीवाटी” नामक घर ।

५ म । उद्यान बनानेके लिये नगरके बाहर एक सौ बीघे भूमि ।

६ ष । काष्ठ और तृणादिके निमित्त उपत्यकाका भितुना नामक ग्राम ।

७ म । अजमेरीवेग, जो युद्धभूमिमें मारे गयेथे, उनके समाधि मन्दिरकी रक्षाके कारण एक सौ बीघे भूमि ।

अनुग्रह और सन्मान ।

८ म । दरबारमें एक आसन और सादरिके सामन्तकी समान सब विषयोंमें सन्मान और पदमर्यादा । *

९ म । राजप्रासादस्थित तोरणके वहिर्देशमें अपना नगाडा वजासकेंगे, किन्तु केवल एक लकड़ी द्वारा ।

१० दशहरा उत्सवमें अमर घोडा और × सन्मान सूचक पौशाक ।

११ श । आहरमें विजयढका वजासकेंगे । अन्यान्य सब विषयोंमें सलम्बूर-के सामन्तकी समान आपका वंश भी सदा सन्मान पासकेगा । इस कारण अपनी भूवृत्ति मूल्यके अनुसार आप राजाकी आज्ञा पालन करते रहेंगे ।

१२ श । आप स्वयं जिस किसी भ्राता वा भृत्यको पदच्युत करेंगे, मैं उनको आश्रय न दूंगा, और मेरे सामन्तलोग भी उनको आश्रय न दे सकेंगे ।

१३ श । राजसभाके सिवाय अन्यत्र जब आप अकेले रहेंगे, तब चमर और किंरनिया व्यवहार करसकेंगे ।

१४ श । मुनवरवेग, अनवरवेग, चमनवेगको सिंहासनके सम्मुख आसन लेनेकी आज्ञा दीगई । अमरघोडा और दशहरेके समय मानसूचक पौशाक आपको दी जायगी और आपके दूसरे दो दीन आत्मीय सन्मानके योग्य होनेपर, राजसभामें आसन पासकेंगे ।

१५ श । आपके वकील अपने प्रदोचित सन्मानके साथ राजसभामें स्थिति करसकेंगे ।

आदेशक्रमसे—

साअतिरामवलिया ।

संवत् १६२६, (सन् १७७०ई०) }
११ शी भाद्र सांमवार

* सादरिके अधिपति राणाकी सभाके प्रथम वैदेशिक सामन्त हैं ।

× राणा सामन्तको जो घोडा देतेहैं, उसके मरजानेपर फिर दूसरा घोडा देतेहैं । इस कारण इसमें अमरशब्दका प्रयोग है ।

त्रित होती थीं तभी चन्द्रदेवकी निर्मल चाँदनीमें सुन्दर बिछेहुए बड़े गलीचपर बैठनेसे स्वच्छ जलवाले संरोवरके जलसे शीतल हुआ पवन दिनके प्रचंड सूर्यके तापसे तप्त शरीरोंको शीतल करदेताथा । इसी अवसरपर उनका प्रेम, व्यंग और वीररससे युक्त संगीत हम सबको उन्मत्त करदेताथा । ऐसे गानेकी समितियोंमें सर्दार लोग मुझे भी बुलातेथे । पुत्रोत्सव और विवाहोत्सवमें विशेष करके प्रधान २ कवि और गानेवजानेवाले और २ देशोंसे आते जातेथे ।

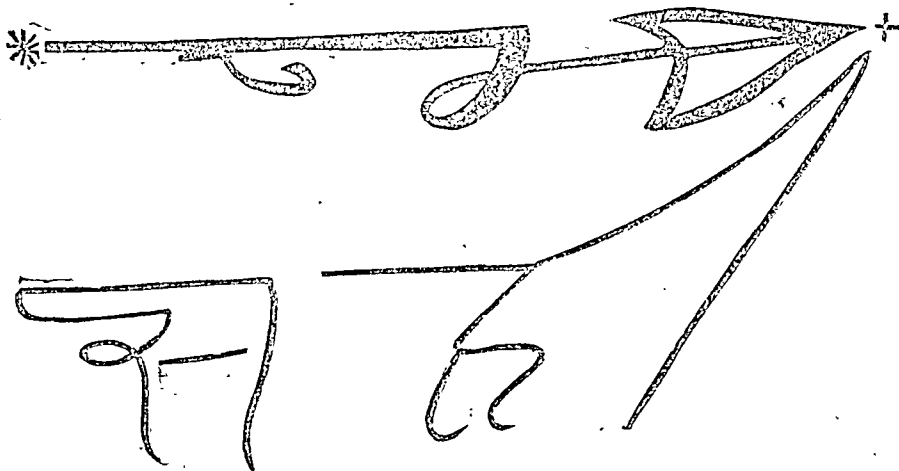
महाराज शिवधनसिंहके संबंधमें कर्नल टाडने पीछेसे कहा है कि यूरोपके डलकी समान वह अपनी सन्तानके शिरपर एक द्रव्य रखकर बंदूककी गोलीसे उड़ादेतेथे लेकिन संतानके शिरमें कोई कष्टका अनुभव नहीं होताथा । परवाले उड़तेहुए पक्षीको वह गोलीसे मार गिरातेथे और सामनेसे आतीहुई बंदूककी गोलीके छूरीसे दो टुकड़े करदेतेथे । जब इन बातोंमें कोई अविश्वास करता तो वह सत्य दिखानेके लिये किसी दिनको नियत करदेते और उस दिन उससे पहले यही कहते कि सामनेसे तुम बंदूकमें गोली भरकर मेरे ऊपर छोड़दो और आतीहुई गोलीको छूरीसे दो टुकड़े करडालते ऐसे ही वह अनेक विचित्र चरित्र दिखाया करतेथे । एक दिन उन्होंने एक मिट्टीकी हाँडीमें जल भरकर छूरी रखदी और बंदूककी गोली दूसरेसे भरवाकर अपने हाथमें ले बीस कदम हाँडीसे दूर खड़े होकर कहा कि मैं इस गोलीसे हाँडीमें स्थित छूरीके दो टुकड़े करताहूँ यह कहकर गोली छोड़ी मैंने स्वयं जाकर देखा तो हाँडीके बीच छूरीके दो टुकड़े पड़ेहैं । सबसे बढ़कर एक उसका चमत्कार बड़ा ही विलक्षण यह था कि वह एक लकड़ीके ऊपर एक नींबूको रखवाते और दूसरे मनुष्यसे गोली बंदूकमें भरवाकर अपने हाथमें लेकर दूर खड़े हो सबके सामने उस नींबूपर गोली मारते, गोलीके लगनेसे नींबू पृथ्वीपर गिरपड़ता परन्तु नींबूमें गोलीके लगनेका कोई चिह्न नहीं दीखपड़ता और न वारूदके धुँएसे ही नींबूका रंग बदलता, नींबू ज्योंका त्यों रहता और गोली अदृश्य होजाती, चतुरंगक्रीडामें भी वह बड़े दक्ष थे । उदयपुरका एक अन्धा इस क्रीडामें उनका प्रधान प्रतिद्वन्दी था । महात्मा टाड लिखगयेहैं कि विलायतकी सबसे बड़ी सभ्य और सुनीतिपूर्ण राजसभाके मध्यमें भी महाराज एक ही यथेष्ट पारिषद होसकतेहैं ।

प्रत्येक सामन्तके यहां कंठसे और यंत्रसे संगीत जाननेवाली संप्रदायके मनुष्य नियुक्त रहतेहैं किन्तु कर्नल टाडने लिखाहै कि “कुछ वर्षोंके पहले

श्रीरामो जयति ।

श्रीगणेशः प्रसीदतु ।

श्रीएकलिङ्गः प्रसीदतु ।



महाराजाधिराज महाराणा संग्रामसिंह आदेश करते हैं, ।—मेरे भानजे कुमार मधुसिंहजीको ग्रास प्रदान किया गया,—

रामपुरा प्रदेशका पट्टा ।

अतएव एक सहस्र अश्वारोही और दो सहस्र पदाति सहित तुम वार्षिक छः मासतक राज्य कार्यमें नियुक्त रहोगे, और किसी समय विदेश जानेकी आवश्यकता होने पर, तीन सहस्र अश्वारोही और तीन सहस्र पैदल सहित तुमको युद्ध क्षेत्रमें उपस्थित होना होगा ।

उक्त प्रदेश (रामपुरे) में जबतक महिमवर राणाका प्रभुत्व विस्तृत रहेगा, तबतक तुमको इस अधिकारके जानेका कुछ भय नहीं है ।

आदेशक्रमसे

संवत् १७८५ (सन् १७२९ ईसवी)

पांचोली रायचन्द

७ मी चैत्र, सुदि मंगलवार ।

और

महता मलदास

(राणाके निज हाथसे लिखित)

मदीय भागिनेय मधुसिंहसमीपेषु—

* मेवाडके वंशानुक्रमिक सामरिक मंत्री सलम्यूरके सामन्तके स्वाक्षर चिह्नस्वरूप भाला ।

† राणाके सांकेतिक निज अक्षर ।

नाम “मेसेक” था । दौमुखवाली वंशी भी राजस्थानमें वजाई जातीथी । अनेक भौतिके बाजोंको पढ़कर इनको निरस विचार महात्मा टाड साहबने इसीसे इनका विशेष वर्णन नहीं कियाहै ।

राजपूतोंके बंधु इस स्थानपर राजपूत राजाओंकी विद्याशिक्षाके विषयमें उल्लेख करके कहगयेहैं, दानपत्र वा “रेकउयाली” का कारण स्वीकारपत्रके पढ़नेमें किसी प्रकार भी चतुर नहीं है, राजाओंमें ऐसा कोई भी नहीं है और इंग्लैण्डके महान कुलीन वंशधरगण जिस प्रकारसे पैत्रिक ज्ञानके अधिकारी कहा कर गवित थे और फिर वह अपनी प्रधानता स्वाधीनताके सानन्दमें पत्रपर अपने नामके हस्ताक्षर तक भी नहीं करसकतेथे राजपूत राजा वा सामन्तोंमें उस प्रकारके मूर्ख और गवित आजतक कहीं दिखाई नहीं पड़े । लेखनीके चलानेमें उदयपुरके महाराणामें असीम शक्ति थी, उनके लिखेहुए पत्रोंकी अत्यन्त प्रशंसा होतीथी । परन्तु दूसरे इंग्लैंडेश्वरके प्रति जैसी उक्तिका प्रयोग कियाथा राणाके सम्बन्धमें भी हम उसी प्रकार कहसकते हैं,—“उन्होंने कभी मूर्खता मूलक पत्र नहीं लिखा, वरन् वह विद्वत्ताका प्रकाश करनेवाला पत्र लिखतेथे ।” राजस्थानके राजा और सामन्तोंने आत्मीयताकी सूचनाकरनेवाले जो पत्र लिखे थे । उनसे उनके मनकी वृत्ति अत्यन्त ऊँची पाईजातीहै । उन समस्त पत्रोंमें प्राचीनग्रन्थोंसे उपमा उद्धृत कीगई, और अनेक प्रकारके चरित्रोंका ज्ञान भी उनके सम्बन्धमें दृष्टि आया । प्रत्येक राजपूत राजा और प्रत्येक सामन्त ही इन सम्पूर्ण पत्रोंकी रक्षा बड़े यत्नसे करते थे, इससे भलीभाँतिसे जानाजासकताहै कि वह शिक्षाके सम्बन्धमें मनुष्यजातिकी अन्यान्य सम्प्रदायोंकी बराबरी करनेमें समर्थ नहीं थे, और शिक्षाकी चर्चामें भी वह विशेष चतुर थे । यूरोपखंडके राजा इलियट और होमरकी कविता पत्रोंमें उद्धृत कर तो सकेथे परन्तु राणाने जिस भाँतिसे व्यास और वाल्मिकिजीके श्लोकोंको उद्धृत कियाथा वह अत्यन्त आश्चर्यदायक है । और राणा उनके प्रधानधर्मविधानके कर्ता मनुके वचनोंका जिस प्रकारसे चतुरताके साथ प्रयोग करनेमें सामर्थ्यवान थे उस प्रकारसे विलायतके पंडितगण भी मोजिसकी विधानावलीको कदापि प्रयोग नहीं करसकेथे । जिस समय राजपूत उनके पूर्व पुरुषोंके ज्ञान और शिक्षाका उल्लेख करके गौरव प्रकाश करते थे, उस समय उनका वह उल्लेख और गौरव केवल वचनमें ही नहीं होता था वरन् उनके हृदयके भीतरसे उठताथा । प्राचीन वैदिक रीतिके मतसे राजकुमार विद्याकी शिक्षा पातेथे और वह यूरोपके विश्वविद्यालयकी शिक्षाकी

आमाइतके रावत् फतेसिंहको जो भूमि दी थी,
उसका दानपत्र ।

राणावत् सामन्तसिंह और सौभाग्यसिंहने वृत्तिस्वरूप आमिली पाई थी । किंतु वह वहाँके रहनेवालोंके प्रति अत्यन्त अत्याचार और उत्पीडन करते थे, पटैल जोध और भाग्यको मारडाला, और ब्राह्मणोंके ऊपर ऐसा अत्याचार और उत्पीडन किया कि, कुशल और लालने जलती हुई आगमें जीवन विसर्जन किया । तब प्रजाने राणासे सहाय और आश्रय मांगा । पट्टावतगण बदल गयेहैं और इस समय ग्रामवासीगणोंने रेकोयाली स्वरूप फतेसिंहको एक सौ पचास बीघे भूमि दान करी । ×

नवीं संख्या ९

दोंगलानगरवासी जनोद्वारा भिन्दीरके महाराज
जोरावरसिंहको भूमिदान ।

श्रीमहाराज जोरावरसिंहके निकट हम पटैलगण, व्यापारीवृन्द, व्यवसायी मंडली, ब्राह्मण वर्ग और दोंगलाके सम्पूर्ण निवासी एकत्रित होकर दानपत्र लिखेदेते हैं ।

इससे पहिले दोंगलामें डाकुओंका भय अत्यन्त प्रबल था; महाराजने उनके हाथसे हमारी रक्षा करी, इस कारण हम निम्न लिखित भूम्यादि दान करते हैं ।
यथा;—

तेली हीराका अधिकृत एक कुआ ।

तेली दीपाका अधिकृत एक कुआ ।

तेली दीवाका एक कुआ ।

कुलः तीन कुएँ चौवालीस बीघे पीवुल (कूपसहितभूमि) और एक सौ इक्यानवे बीघे मालभूमि और एक ज्वारका खेत ।

रेकोयाली भूमि सम्बन्धी मर्यादा ।

१ म । प्रत्येक परिवारके विवाह समय एक पात्र अन्न ।

× भूमियां स्वत्वका कैसा आदरहै, वह इसके द्वारा प्रमाणित होताहै । फतेसिंह यद्यपि राणाके निकटसे सर्व देशके पट्टा ग्रहणमें अधिकारी थे, किन्तु उनका भूमियां स्वत्व नहींथा । उन्होंने वह स्वत्वही संग्रह करलिया । यद्यपि यथासमयपर राणाने अमली देश अपने अधिकारमें करलिया, किन्तु भूमियां स्वत्व सामन्तके अधिकारमें रहा ।

राजस्थानके राजपूत राजा, राजपूत सामन्त, राजपूत राजकर्मचारी और राज-पूत सामर्थ्यशाली मनुष्योंमें विलायती शिक्षाकी ज्योति धीरे २ प्रवेश कर रही है । इस समय अंगरेजी भाषामें बहुतोंको अधिकार हो गया है । प्रत्येक व्यवहारको न जाननेवाले अनेक राजा भारतके अन्य प्रान्तोंके राजाओंकी समान अंगरेजी पढ़नेके लिये देशी वा अंगरेजी शिक्षकोंके आधीनमें रहते हैं । और बड़े सामन्तोंके पुत्रोंकी विद्या शिक्षाके लिये स्थान २ पर अनेक कालेज बन गये हैं । राजपूतोंके महान परिवारके पुत्र जिससे भलीभाँतिसे अंगरेजी भाषा पढ़ सकें उस विषयमें अंगरेजोंकी अधिक दृष्टि है, इस बातको माननेके लिये हम सदा तैयार रहते हैं, परन्तु हम इतना तो कहे देते हैं कि राजवाड़ेमें मध्यश्रेणी अथवा नीची श्रेणीके मनुष्योंकी शिक्षाके लिये आज तक उपयुक्त प्रयोजनोंकी खोज नहीं की जाती है यद्यपि शिक्षित देशके राजा अपने २ राज्यमें लोकशिक्षाको प्रचलित करनेके लिये तैयार रहते हैं, तथापि हमें ऐसा विश्वास है कि गवर्नमेन्ट वा असीम सामर्थ्यवाले अंगरेजोंके रेसिडेन्ट गणके इस विषयमें राजपूतोंकी सहायताके बिना किये आशाके पूर्ण होनेकी संभावना अत्यन्त कठिन है । समयके गुणसे देशके भूपाल इस समय अंगरेजोंके रेसिडेन्टके क्रीडाकी पुतलीस्वरूप हैं । इस कारण महात्मा टाडकी समान कितने ही उदार हृदय रेसिडेन्ट वा पोलिटिकल एजन्टोंका भारतवर्षमें बिना प्रादुर्भावहुए राजवाड़ेमें सर्वसाधारणमें यथार्थ लोकशिक्षाकी आशा नहीं की जा सकती ।

राजपूतोंके बंधु महात्मा टाड साहब राजपूतजातिके नित्य व्यवहारके कई एक द्रव्योंको उल्लेख करके प्रसंगका उपसंहार कर गये हैं । उनका कथन है कि सहस्रों वर्षोंके बीतजानेपर भी राजपूतोंके नित्य व्यवहारके द्रव्य, शय्याकी रीति, सब प्रकारसे अचलभावसे स्थित रही है । यद्यपि राजपूतोंके महल रमणीय स्तंभोंसे शोभायमान थे—घरके भीतरकी दीवारोंपर विचित्रतासे चित्र खुद रहे थे, समस्त घर मुकुर मर्मर इत्यादिसे ढंकरहे थे, परन्तु इनमें किसी प्रकारका काष्ठासन वा कमनीय कौंच आज तक दिखाई नहीं दिया, केवल घरके भीतर कोमल गलीचा बिछा हुआ रहता था, और उसकी रक्षा सफेद वस्त्रसे की जाती थी; उस शय्याके ऊपर आयेहुए मनुष्य अपने २ पदके अनुसार बैठजाते थे । साधु टाड साहब इस बातको लिख गये हैं, कि उनके समयके सौ अधिक वर्ष पहले इंग्लैण्डेश्वरका जो पहला दूत दिल्लीके बादशाहके निकट आया, उस दूतके साथवाले पादरियोंके सम्बन्धमें जो वर्णन कर गये हैं वह इस प्रकारसे आजकलके

दोहनमो । *

होली और दशहरा पर्वोंके समयमें नारियल मिलेगा ।

बोझा ढोनेवाले प्रति सौ बैलोंपर वारह आने शुल्क लेसकोगे । ×

जिहाज पुरके भीतर जितने घोड़े विकेंगे, उनमें प्रतिघोडा २ आने मिलेंगे ।

जितने ऊंट विकेंगे, उनमें एक ऊंट पीछे एक आना पाओगे ।

तेलीकी धानीपर एक २ पला पाओगे ।

प्रत्येक लोह खानसे सिकीमुद्रा ।

प्रत्येक सुरा प्रस्तुतके कारखानेसे सिकीमुद्रा ।

प्रत्येक छाग बलिदानमें एक पैसा ।

जन्म और विवाहके समय पाँचपात्र अन्न । †

प्रत्येक नाजरा फलकी एक २ अंजुलि ।

भूमि सम्बन्धी अन्यान्य अधिकार और अनुग्रह ।

कूपादियुक्त भूमि (पिवुल) ५१ बीघे

कूपहीन भूमि (माल) ११० बीघे

पहाडी भूमि (मुग्र) ४० बीघे

तृणाच्छादित भूमि [बीडा) २५ बीघे

कुल २२६ बीघे

आषाढ संवत् १८५३ (सन् १७९७ ईसवी)

* निवासी किसानोंमें पर्याय क्रमसे हलके साथ दो मनुष्योंसे किसानका निर्धारित खेत कर्षणका नाम हनमो है ।

× जिस समय मेवाडके चारोंओर विप्लव, अशान्ति, अत्याचार, प्रबल हुआ, उस समय सामन्तोंने अनेक प्रकारका कष्ट दायक कर संग्रह करना आरंभ किया था । उसीसे वाणिज्य कार्य प्रायः बिलकुल बंद होगया, स्थानान्तरमें आनेजानेमें भी बहुतसे विघ्न पडगये । उस समय प्रत्येक विषयमें कर लिया जाताथा । दुर्गसंस्कार, पारजानेके कारण नौकाकी रक्षा, साधारण मार्गमें चौकीदारोंका नियत करना और रात्रिमें रक्षक नियोग आदि अनेक विषयोंके कर देनेको प्रजा विवश होतीथी ।

† राजपूत सामन्तोंके आधीनके सरदार वा प्रजाके लोगोंमेंसे किसीका विवाह होनेपर सामन्त लोग भोज्यद्रव्य अथवा उसके बदलेमें नगद रुपये पातेहैं । किन्तु फ्रांसमें इस विषयमें सामन्तगण नियमित धन ग्रहणके सिवाय और भी बहुत दुःखदायक कार्य करतेथे । वह अथवा उनके प्रतिनिधि कन्याके सन्मुख जाकर बैठतेथे ।

ग्रीष्मकालके सूक्ष्म वस्त्र और शीतकालके स्थूल चित्रित वस्त्रोंके भीतर रुई पूर्ण करके उसके द्वारा वेष बनाया जाता है; राजपूतोंकी स्त्रियोंका पहरावा केवल बाँधरा, चोली और डुपट्टेका प्रचलित था। डुपट्टेसे ही घूँघटका कार्य भी चलता है, वह अगणित प्रकारसे अलंकारोंको पहरती हैं पुरुष अनेक प्रकारके पैजामे अंगरखे और चादरोंका व्यवहार करते हैं। उनके सब वस्त्रोंमें प्रधान पगड़ी है। वर्णभेदकी पगड़ी अनेक भाँतिकी है और समय तथा अवस्थाके भेदसे राजपूत लोग उसको भिन्न प्रकारसे बाँधते हैं। यूरोपके राजा जिस प्रकार सामान पदकी सूचना करनेवाली कुलीनता पदके साथ फीता देते थे एक समयमें राजपूत लोग भी उसी प्रकारसे निवासियोंके द्वारा राजप्रसादस्वरूप “वालाबंध” नामक महान्ताममूलक बंदिनी भेषकी प्राप्तिमें महागौरवका अनुभव करते थे। ऋतुके बदलेनेके साथ ही साथ राजपूतगण पगड़ी और अंगरखेके वर्णको भी बदल लेते हैं, यद्यपि सफेद वर्णका प्रचार सर्वसाधारणमें है। परन्तु लाल, कुंकुमाभ और बैंगनका रंग सबसे श्रेष्ठ और आदरणीय गिना जाता है; नीची श्रेणीके मनुष्य एक ही प्रकारकी पादुकाका व्यवहार करते हैं इससे पैरके ऊपरका भाग नहीं ढकता। यहांके निवासी युद्धके समयमें और शिकारके समयमें बकरेके चमड़ेसे बने हुए बूट पहरते हैं; और चमड़ेके ही बने हुए अंगरखे पहरते हैं, वस्त्रकी अपेक्षा बकरेके चमड़ेका अंगरखा उनका अल्पकष्टदायक होता है, राजपूतोंकी कमरमें एक बड़ी लम्बी छूरी लटकती रहती है।

राजपूतजातिकी भांजनविद्या, चिकित्साविद्या, कुसंस्कारमंत्र, जादूके मंत्र, शारीरिक और मानसिक विपत्तियोंको दूर करनेके लिये अनुष्ठान इत्यादि विषयोंका वर्णन यथास्थानपर होगया है, इसी कारणसे महात्मा टाड साहबने यहांपर मेवाडके धर्मानुष्ठान पर्वोत्सव, और सामाजिक आचारोंका उपसंहार कर दिया है। इसी कारणसे हमलोग भी इस स्थानपर उनका अनुसरण करनेमें समर्थ हुए।

अंतमें हमें केवल इतना ही कहना है कि यद्यपि साधु टाड साहब अर्द्धशताब्दीके अधिक काल पहले राजपूतजातिकी धर्मनीति और समाजनीतिको उपरोक्त प्रकारसे चित्रित कर अंकित कर गये हैं परन्तु इस अर्द्धशताब्दीका समय बीतजानेपर भी वह धर्मनीति और समाजनीति इस प्रकारके अचल भावसे विराजमान है। विजातीय उच्च शिक्षाके बलसे उत्तर भारत और बंगालकी धर्मनीति और समाजनीति जिस प्रकार इस समय एकसाथ ही अस्तव्यस्त होगई है। विद्यालयमें ईश्वरके नामसे हित नीति और उपदेशसे शून्य

पारमोप्रथा * विलकुल उठा दी गई । जो मनुष्य नगरमें वास और वाणिज्य करेंगे, हारावतीमें साधारण रीतिसे जो शुल्क लिया जाता है, उन सबका आधा कर छोड़ा गया और मापुया × सबका पद विलकुल उठा दिया गया ।

बारहवीं संख्या १२.

अकोला नामक स्थानके लक्ष्मीनारायण विग्रहके मन्दिरमें खोदित लिपि । पूर्वकालमें केवल एक बाजारमें ताम्रकूट बेचा जाता था; राणा राजसिंहने वह ठेकेकी प्रथा विलकुल उठा देनेकी आज्ञा दी । संवत् १६४९ ।

राणा जगतसिंह अपने आधीनके राजकर्मचारियोंको आकोलाके शिल्पियोंके निकटसे बलात्कारसे खाट और रजाई लेनेमें निषेधकी आज्ञा देगये ।

तेरहवीं संख्या १३.

मेवाडके अन्तर्गत बडा आकोला नगरके निवासी और छोट वख रंगने-वालों (रंगरेजो) के प्रति राजानुग्रह प्रकाशक स्मरण स्तंभकी

खोदित लिपि ।

बडा आकोला नगरके निवासियोंके प्रति

महाराणा भीमसिंह आदेश करतेहैं,—

मण्डलगढके दुर्गकी सेनाके खर्च निर्वाहके निमित्त इस ग्रामके निवासियोंके निकटसे जो कर लिया जाता था, वह उठाया गया और किन उपायोंके द्वारा यह ग्राम फिर समृद्धिशाली होसकता है, निवासियोंके निकट उपस्थित करनेपर सब एक स्वरसे कहेंगे कि, “बहुत प्राचीन कालसे जिस रीति और दरसे निर्दिष्ट कर लेते आतेहैं, उसके सिवाय कर कभी न लिया जाय, एक ऐसा स्तंभ बनवाकर उसपर प्रतिज्ञा खुदा दी जाय कि, खेतोंमें जितना अन्न उत्पन्न होगा, उसके आधे भागसे अधिक कर कभी नहीं लिया जायगा, और जो लोग उक्त नियमसे कर देंगे, वह किसी प्रकारसे पीडित वा दण्डित नहीं किये जायेंगे ।”

राणा इसमें सम्मत हुए और उनहीकी आज्ञानुसार यह स्तंभ स्थापित किया गया । जो पुरुष इस आज्ञाका तिरस्कार करेगा, उसके ऊपर एकलिंगजीका

* राजप्रतिनिधि कोटेके कृषि विभागके सर्वाध्यक्ष थे । वह जैसा मूल्य निर्धारित करदेते, वणिज उची मूल्यपर द्रव्य बेचनेको विवश होतेथे । इसीका नाम पारमोहै ।

× परिमापक (नापने सम्बन्धका)

कर्नल टाड के मारवाड़ जानेका वृत्तान्त ।

छब्बीसवां अध्याय २६.

उदयपुरकी उपत्यका;—मारवाड़की ओर गमन;—तुषशिखरपर विश्राम;—यात्रारंभ;—दूरसे उदयपुरका दृश्य;—देवपुर;—जालिम-सिंह;—पुलानी;—रामसिंह मेहता;—माणिकचंद;—नरसिंहगढ़के भूतपूर्व राजा;—पुलानोंसे गमन;—इस स्थानका भूतत्त्वमूलक विवरण, नाथद्वारेका ऊंचा मार्ग;—नाथद्वारेमें आगमन;—मन्दि-राध्यक्षके संग साक्षात्;—असुरवासग्रामकी ओर जाना;—जलमें हाथीका गिरना;—असुरवास;—एक संन्यासी;—सुमाइचाकी ओर जाना;—शिरोनाला;—पङ्कपाल;—ठंढीवायु;—सुमाइचा;—राजधानी कैलवारामें जाना;—करीसरोवर महाराज दौलतसिंह;—कमलमीर दुर्गका विवरण और ध्वंसावशेष इतिहास;—मारवाड़में जाना;—गन्तव्यमार्गका सङ्कट;—अद्वा-रोही सम्प्रदाय उपत्यकामें विश्राम ।

भारतकी गौरवस्वरूप वीर राजपूतजातिके वीरक्षेत्र रजवाड़ेके विशाल इतिहास

कल्पवृक्षके प्रथमकाण्डकी नयी २ कोंपल और फूले फले फल फूलोंसे शोभित अन्तिम शाखा इतने दिन पीछे पाठकोंके दृष्टिपाथका पथिक होना चाहती है । इस बातको कौन स्वीकार नहीं करेगा कि हिन्दूबान्धव टाड साहबको भाग्य लक्ष्मीकी सुदृष्टिसे वञ्चित, अत्याचारी जीवित नरपिशाचस्वरूप विभिन्नजातिके द्वारा बहुत कालसे पीडित, निगृहीत, पग २ पर दलित और सर्वस्वान्त राजपूत जातिके तथा वीरस्थान सुखमय मेवाड़के उस शोचनीय भाग्यपरिवर्तनके निमित्त ही जगदीश्वरने भेजा था ? यद्यपि टाड साहब ईस्ट इंडिया कम्पनीके प्रतिनिधि बनकर रजवाड़ेमें गयेथे, और ईस्ट इंडिया कम्पनीने ही इनको भेजा था,

तथापि सूक्ष्मदृष्टिसे देखाजाय तो यही ज्ञातहोगा कि, दयामय जगदीश्वरने राजपूतजातिकी उस हृदयभेदी शोचनीय दशा पर्विवर्तन करनेके लिये उदारचेता टाडको ही ईस्ट इण्डिया कम्पनीद्वारा भिजवाया था । देवस्वभाव टाडने इस दायित्वभारको स्वीकार करके किस योग्यता-चतुरता, विज्ञता, न्यायपरता और और सुविचारोंके संग गहरे अवनतिसागरमें मग्नहुए शिशादीय लोगोंका अल्पकालमें ही उद्धार करलियाथा तथा अत्याचार, उत्पीडन, लूटमार, आत्म निग्रह, विद्रोहिता अशान्ति और जातिके द्वेषानल प्रज्वलित मेवाड़में कैसे शान्ति सन्तोष और सुखरूपी जल वर्षाकर मेवाड़की अनन्त चितानलकों बुझादिया था, पाठकमंडली उचित स्थानमें उसको पढ़कर अवश्य ही हमारी समान राजपूत गतप्राण टाडकी पवित्र आत्माको सत्यचित्तसे अनेक धन्यवाद देगी । राजनीति विशारद टाडने प्रायः दो वर्ष तक सुखमय उदयपुरकी उपत्यकामें विश्राम करके अपना कर्तव्य पालन किया, अनन्तर मारवाड़की यात्रा की थी । यात्रा कालमें वह अनेक स्थानोंकी आवश्यकीय बातोंका अपनी नोटबुकमें लिखते गये । वह नोट कियाहुआ भ्रमणवृत्तान्त इस प्रथमकाण्डके शेषांशमें दियागया है; इसकारण हम भी उस ही प्रणालीका अनुकरण करनेके लिये बाध्य हैं । साथी यात्रीरूपसे पाठकमंडली हमारा अनुगमन करनेसे, आगे कहनेयोग्य अंशके सत्य घटनापूर्ण बहुतसे चित्तविनोदक उपाख्यान, अनेक स्थानोंका अप्रकाशित विवरण, और कौतूहल तृप्तिकरनेवाला इतिहास आपके हृदयको अनुपम सुगन्धिसे अवश्य भरदेगा । यद्यपि इतिहासलेखक टाडके इस भ्रमण वृत्तान्तके दो एक स्थान किसी पाठकको कुछ नीरस मालूम होंगे, किन्तु पीछे वर्णन किये हुए वा आगे लिखेजानेवाले इतिहासके किसी विषयके संग उस नीरस अंशका सम्बन्ध रहनेसे उसका लिखना आवश्यक है । हमको दृढ विश्वास है कि पाठकगण इसको पढ़कर अवश्य तृप्त होंगे ।

महाशय टाडने सन् १८१९ ईसवीकी ११वीं अक्टूबरको लिखाहै कि “जिस समय हमने भारतवर्षमें अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य विभूषण विभूषित बहुतसे मनोहर दृश्योंसे पूर्ण उदयपुरकी उपत्यकामें चरण रक्खा था, उस-समयसे प्रायः दो वर्ष बीतीहुई उपाधिधारणमें अनन्त काल सागरके गर्भ में लीन होगयेहैं । हमारी निर्धारित सीमा चारों ओर तीन कोशके भीतर है; किन्तु अबतक हममेंसे कोई भी इस सीमाके बाहरी दृश्यको नहीं देखसका था । प्रत्येक शिखर और पहाड़ी मार्ग ऊंचे २ महल और वृक्षोंको हमने भलीभाँति

पहचान लिया है, प्रत्येक देवालय, धर्मशाला प्राचीन तत्त्व अनुसन्धान, और खोज समाप्त होगई है। समस्त ध्वंसावशिष्ट स्थानोंके इतिहासकी खोज, उन सबकी खुदीहुई लिपियोंका उद्धार, प्रत्येक शिखरका नाम कारण तथा सामन्त मंडली और राजसभाके प्रधान २ कर्मचारियोंके गुण और स्वभावका पता देनेवाला एक २ उपाधिदानका कार्य भी समाप्त होगया। नगरमें महल, सरोवरमें नाव, कुञ्जकाननमें मनोहर वाटिका, बड़े सरोवरके निकट रमणीय द्वीप हम लोगोंके निमित्त निर्धारित हैं। हमारे शिकारके लिये वनमें भृग, तालावमें मछलियें क्रीडा करती हैं; हमारे नयनोंकी तृप्ति और चित्तरंजनके निमित्त किसी बातका भी अभाव नहीं है—किंतु इस भूधरवेश्मनीके बाहर क्या है ? यह देखनेके निमित्त सब ही इस 'सुखमय' उपत्यकाको छोड़नेके लिये अभिलाषी हैं। अबतक दोवारीके विराट काय ! तोरणद्वारने एक बार भी बाहर जानेके लिये मार्ग नहीं दिया; और यद्यपि निर्दिष्ट कार्यमें अविश्रान्त तृप्त रहनेसे मैं एक स्थानमें बहुत समय तक रहनेसे उत्पन्न होनेवाली चित्तकी कान्तिको दूर करसका हूं, किन्तु मेरे अनुचरोंको वैसे कार्यमें समय काटनेका अवसर नहीं मिला, इस कारण मैं उनको इस "सुखपूर्ण वन्दीदशमें रहकर मानसिक थकावट दूर करनेका विशेष अनुरोध करनेपर भी कृतकार्य नहीं होसका—धीरे २ सब दृश्य चक्षुशूल होगये और मुझे विश्वास होगया कि यदि शीशोदीय लोगोंकी राजधानीमें पंख बनानेवाले कारीगर होते तो सरोवरमें गिरना निश्चित जानकर भी वह (अनुचरगण) उन पंखोंको लगाकर आकाशमार्गसे भागनेकी चेष्टा करते। उनकी समान रासेलालने भी कभी भागनेकी चेष्टा नहीं की थी ।"

अन्तमें प्रार्थनीय दिन आकर उपास्थित हुआ, यद्यपि मनोरम काम दृश्यावली पूर्ण—वन सरोवर, पर्वत और शिखरपथ, श्यामल तृण और फल फूल शोभित वृक्षोंसे रंगे हुए मेवाड़से मारवाड़की रेतली भूमिमें जाना होगा, तथापि उसको स्थानपरिवर्तन समझकर सबके मुखपर प्रसन्नता झलकने लगी। हमारे यात्री सम्प्रदायमें कप्तान बाघ, लेफ्टिनेन्ट केरि, डाक्टर उनकान और दो दल पैदल तथा स्किनरके ६० घुडसवार थे। उपत्यका छोड़नेसे सब ही प्रसन्न थे, क्योंकि उनमेंसे सभी वर्षाकालके ज्वरका स्वाद लेचुके थे। वर्षाऋतुमें उदयपुर सर्वसाधारण और विशेष करके विदेशी लोगोंके लिये बड़ा अस्वास्थ्यकारी बनजाता है; उस समय सब झरने और नदियोंका जल प्रबल होकर कुँएँ और

खाइयोंको भगदेनाहै । गलेहुए उद्भिज और विपाक्त खनिज पदार्थोंको दूषित करडालना है, और एक प्रकारका काला नेल सा पदार्थ उसके ऊपर तेरने लगना है । राजपूतजानि इस शिक्षाको बिलकुल नहीं जानती कि किन उपायसे यह दूषित जल शुद्ध होताहै, और मुझे लज्जितभावसे यह बात कहनी पडतीहै कि इस विषयमें मैं भी उनको कुछ शिक्षा नहीं देसका । किन्तु राजपूत लोग समग्र मारवाडमें प्रचलित एक बहुत सरल उपायसे क्षार और आलनद्वाग यह कार्य सिद्ध करलेतेहैं । क्षारद्वारा जलका लवणाक्त दोष दूर होने पर, वह गन्धनकार्यके विशेष उपयोगी होताहै, और ऊपर कहे द्रव्यके मिलानेसे ऊपर तेरनाहुआ दूषित पदार्थ जलकं नीचे बैठजाना है । कपडा धोनेवाले राजपूत लोग एक प्रकारका साबुन भी व्यवहार करतेहैं ।

बाग्ह अक्टूबरका सवरे पाँच बजे घोडोंपर चढ़नेके लिये सांकेतिक विगुल बजा हमने भी संकेतके अनुसार कार्य्य करनेमें देर न की; आगे बढ़कर देखा कि पीछे कपडे पहरेहुए सेनादेशी बूढ़े सेनापतिके सामने एकत्र खडीहै । इस्किनरकी घुडसवार सेना पीला अंगरखा लाल पगडी और पेटी पहरतीहै । इस बातको कौन नहीं जानता कि कम्पनीके सेनादलमेंसे इस्किनरके घुडसवार खूब शिक्षित और जितनी बातें चतुरसैनिकोंमें होनी चाहिये वह सबही उनमें पाईजाती थीं । महलकं नगाडेकी ध्वनिने निकलकर सूचितकिया कि सूर्यवंशके राजा शय्यासे उठेहैं; हम लोग उस नीख निस्तब्ध निद्रितराजधानीके बीचमें होते हुए सूर्य्य तोरण-द्वार पर पहुँचे, वहाँ जाकर भिन्दीरं, दैलवारा, अमाइत और वंशीके चार सामन्त अपनी सजीहुई सेना लिये राणाकी आज्ञासे हमको सीमान्ततक लेजानेके लिये खडे हैं । किन्तु उस सुन्दर शिक्षा और नीतिहीन सेनाके संग जानेसे अपने लिये भार और देशके लिये असुविधाजनक विचार कर उनके नेतालोगोंके संग हम पहाडी मार्ग तक गये, वहाँ जाकर हमने राणा और सामन्त लोगोंको अभि-नन्दन सूचित करनेके लिये अनुरोधपूर्वक लौटादिया । आठ बजते २ हम साढे छः कोशकी दूरी पर डेरमें पहुँचगये । जो स्थान डेरा गाडनेके लिये नियत कियागया था, (जहाँ पीछे मैंने रेजिडेन्सीका मकान बनवाया था) वह मैरता और तुषग्रामोंके बीचकी ऊँची भूमि है । इधर उधर वृक्ष लगेहुए है, और जो वन उपत्यकाकी भूमिके झालररूपसे शोभायमान है; उस ज्ञानसीमासे दो कोश परिमित स्थान वनशून्यरूपसे स्थित है, यहांसे चित्तौड़की ओरको नीची भूमि और जगह २ कर्षणक्षेत्र आज तक दिखाई देतेहैं । इसके डेढ कोश उत्तर-

में राणा और उनके सामन्त लोगोंका मृगोंसे मराहुआ शिकारस्थान—व्याघ्र शिखर है; दक्षिणमें—आध कोश उत्तरकी ओर बहुत मछलियोंसे भरीहुई वारीश नदी और पश्चिममें डेढकोशकी दूरीपर बहुत बड़ा उदयसागर है । कई विशेष कारणोंसे राजधानीके बाहर रेजिडेन्सी स्थापनकरना परमावश्यक समझा गया । यद्यपि स्वास्थ्यरक्षा तो सबका उद्देश है ही किन्तु राजमहलसे इतनी दूर रेजिडेन्सीके स्थापन करनेका केवल यही कारण नहीं था । प्रथम तो राजधानीको हमने जिस शोचनीय दशामें गिराहुआ देखा, उससे वहां कुछ कालतक अपना कर्तव्य चलानेकी आवश्यकता जानपड़ी, किन्तु राजपूत लोगोंकी स्वाधीनता रक्षा करनेके निमित्त उस कर्तव्यको छोड़ देना पडा । हम जब पहले उनके पास गये तो राजाको भारी शोचनीय दशामें पाया, राजाने हमसे सहायताके लिये अनुरोध किया, हमने भी सोचा कि सहायताके वहानेसे प्रत्येक विषयमें हस्तक्षेप कर सकेंगे तथा उन लोगोंको कोई शंका भी नहीं होगी; इसहीसे यह बात निश्चय होगई । राजमहलसे बृटिशगवर्नमेंटके प्रतिनिधिका डेरा दूर होनेसे उनकी वह शंका न्यून होगई और शासनयन्त्र भलीभाँति चलने लगा, उनको आत्मज्ञान बुद्धिवलके ऊपर निर्भर करना पडा । तुम शिखरके ऊपर हमारा बख्तालय, स्थापित हुआ, सैन्यदल परिचालित और सेंट जार्जकी जयपताका मन्दवायुमें उड़ाईगई । यहाँ बनैले ऊंटोंकी पीठपर लाद २ कर हमारी सामग्री लाईजाने लगी । उनके विकट चीत्कारसे ऐसा मालूम होताथा कि वह शोकके संग अपने भाग्यको धिक्कार देरहेहैं; केवल यह सौभाग्यका विषय था जो उनको यह अनुभवशक्ति नहीं थी कि, हमको सुखमय उपत्यकाकी हरी घासको छोडकर मारवाडके कठोर तृण खाने होंगे ।

पुलानो—१३ वीं अक्टोबर—“बहुत कालतक स्थानमें रहनेके पीछे अन्य यात्राकी तैयारी करते समय मनुष्यके धीरजकी जैसी भारी परीक्षा होतीहै, वैसी और किसी समय नहीं देखी जाती । तरुण अरुणोदयके संग २ ही हमने डेरेको छोडदिया । उस समय मारवाडी सैकडों बनैले ऊंटोंके चिल्लानेकी ऐसी विकट ध्वनी सुनि जाती थी कि दूसरा कोई शब्द ही सुनाई नहीं देता था; इधर हाथी हृदयमें आनन्दानुभव करके एक प्रकारका विचित्र शब्द बोलने लगे; उन हाथियोंमेंसे एक बच्चा झूंखलावद्ध और वोझ उठानेमें नियुक्त न होनेके कारण स्वाधीन भावसे इधर उधर दौडने लगा, कभी सिपाहियोंकी वस्तु

लेता कभी शीघ्रतासे एक वस्ता मैदा लेकर दूर भागजाता, उसकी इस क्रीडासे सब हँसने लगे; उस हँसीसे डेरा गूँज गया । यह हाथीका बच्चा आठ वर्षका है और देखनेमें भी वैसा ऊँचा नहीं है । यद्यपि यह चञ्चल बच्चा भोजन बनाते हुए लोगोंको बहुत दिक् करता था, तौ भी यह सबका प्रियपात्र और क्रीडा स्थल बनगया है । वर्षात्रस्तुको अधिक विलम्बसे पृथ्वीशासन करनेको आईहुई देखकर हमने विचारा कि हमको तो जलमयी भूमिसे जाना होगा, और भारवाही पशुओंका उसमेंसे चलना कठिन होजायगा । हमने अनेक भाँतिके वृक्ष और जलाशयपूर्ण स्थानोंमें होकर चलना आरम्भ किया । इस मार्गके किनारे बहुतसे बड़े २ गाँव बसेहुए हैं, किन्तु सबमें ही लूटमार और समरान्निके चिह्न दिखाई देतेहैं । बहुत कालतक एक स्थानमें स्थित रहनेसे इस प्राकृतिक दृश्यन भलीभाँति संतोष देदिया । हमारे वामभागमें उदयपुर नगरकी घेरास्वरूप ऊँची पर्वतोंकी शृंगमाला हमारे दृष्टिगोचर हुई; उस शिखरावलीके सबसे ऊँचे शिखरपर राताकोटका ध्वंशावशेष आजतक देदीप्यमान है, और वहाँसे चारों-ओरका सब दृश्य देखा जासकताहै । हमारे पूर्वमें आसीमप्रान्तर था, जिसकी सीमा दिखाई नहीं देती । हमलोग देवपुरमें होते हुए आगे बढ़गये, यह ग्राम एक समय बड़ा समृद्धिशाली, तथा मारवाड़के उत्तराधिकारी भानाइज*जालिम-सिंहके अधिकारमें था । उक्त जालिमसिंहका वृत्तान्त यहाँ लिखनेसे (राजपूतानेके संश्रान्तलोग विद्या सीखनेमें यत्न नहीं करतेथे) यह कलंक दूर होजायगा । हमारे परमपूज्य पाद गुरु × ने शस्त्रकी समान शास्त्रमें भी विलक्षण पांडित्य उक्त साधनसे शिक्षा और ज्ञान प्राप्त कियाथा । जालिमसिंहने राजा विजयसिंहके औरससे मेवाड राजनन्दिनीके गर्भमें जन्म लियाथा, किन्तु कुटुम्बमें विशेष कलह होनेसे वह पिताका घर छोड़कर मामाके घर रहने लगे, इस कारण राणाने उनको अलग सम्पत्ति देकर अपने पुत्रके समान सन्मानसे रहनेका सुविधा करदिया । राजपूत स्वभावसिद्ध व्यायाम और समरकौशल शिक्षाके ऊपर कुछ

* कनेल टाडने लिखाहै कि “राणाके जामाता वा उनकी किसी आत्मीय स्त्रीको जिस सामन्तने विवाह किया, वह आत्मीयता सूचक भानाइज नामसे विख्यात हुआ । ” किन्तु हमारी समझमें जामाताको भानाइज नहीं कहा जासकता, भागिनेय (वहनोई) ही “भानाइज” नामसे कहा जासकताहै । टाड साहबने भ्रमसे यह बात लिखदीहै । कहीं भानाइज भानजेको कहतेहैं ।

× टाड साहबने अपनी टीकामें लिखाहै कि “मेरे शिक्षादाता यति ज्ञानचन्द्र जैनमतावलम्बी थे और वह दशवर्षतक मेरे संग रहे । मैं उनके निकट विशेषरूपसे ऋणी हूँ; मेरे प्रत्येक गवेषणा और तत्त्वानुसंधान कार्यमें उन्होंने विशेष उत्साहके संग सहायता दीथी । ”

ध्यान न देकर संभ्रान्त हो जिस समयको आलस्यके मुखमें बलिदान करदेतेहैं उन्होंने उस कालको विद्याशिक्षामें काटा । उन्होंने न्यायतत्त्व, विज्ञान, ज्योतिर्विद्या और अपने देशकी इतिहास शिक्षामें पारदर्शिता लाभ करनेके संग २ जयदेवकी मधुमयी कवितावली और आधुनिक कवियोंकी कविताको विलक्षणरूपसे कंठस्थ करलिया । वह स्वयं कल्पनाके एक प्रियपुत्र और सुकवि थे, इस कारण मनोहर कविता रचकर काव्यशास्त्रकी विशेष उन्नति करते और प्रसिद्ध २ कविजन सदा उनके स्थानपर उपस्थित रहते थे । मेरे महामान्य शिक्षकने जालिमसिंहके पाण्डित्य और ज्ञानकी प्रशंसा नहीं की, यह उन गुरुदेवके ज्ञान और शिक्षाद्वारा मैंने ज्ञान प्राप्त कियाहै, (जालिमसिंहके संग गुरुदेवकी शिक्षा और ज्ञान तुलनाके समय गुरुदेव अपनी शिक्षाको सामान्य कहकर शान्त नहीं होते थे) कारण कि मारवाडके उक्त उत्तराधिकारीके निकटसे ही उन्होंने विद्याशिक्षा और ज्ञान प्राप्त किया था । जालिमसिंह मरुभूमि क्षेत्रके पैतृक सिंहासन अधिकार सूत्रमें ही मरेथे ।

हमलोग कीचड और संकटपूर्ण मार्गमें चार घंटे बराबर चलनेके पीछे पुलानोंके अग्रवर्ती शिखरपर पहुँचे । देवपुरकी समान यह भी ध्वंसप्राप्त दृश्य दिखाई देताहै । अब केवल नगरके एक प्रान्तमें ही अधिवासीलोग रहतेहैं; यह स्थान पहिले कैसा जनसमृद्धि सम्पन्न था ? इस बातको यहांके देवमंदिर और मकानोंके खंडहर भलीभाँति प्रगट कर रहेहैं, यह दोनों नगर पहिले राणाके अधिकारमें थे, अनन्तर निज भागिनेयकी परलोक प्राप्ति होनेपर उन्होंने यह सम्पत्ति कनाइयाकी सेवाके लिये निर्धारित कर दी । वस्त्रागारमें मैंने राजमंत्रीके दक्षिण हस्तस्वरूप रामसिंहमहता, मिन्दीके देवयान माणिकचंद, नरसिंहगढके पदच्युत राजा, (जो अब उदयपुरमें समय काटते हैं) उनको देखा । रामसिंह इस देशकी असामरिक व्यवसाई जातिका श्रेष्ठ आदर्शस्वरूप है और यद्यपि उन्होंने मेवाडकी सीमाके बाहर पैर नहीं रक्खा, किन्तु किसी देशमें उनकी समान मितभाषी और भद्रपुरुष नहींहै; उनका शरीर दीर्घ, अङ्ग प्रत्यङ्ग सुगाठित और मनोहर, वर्ण गोरा, बाल काले और घुँघुरारे तथा मुखमंडलपर गलमुच्छै विराज रहीहैं । रामसिंह इस बातको भलीभाँति जानते थे कि, प्रकृतिदेवी उनसे विशेष प्रसन्न है । तोषामोदके अतिरिक्त उन्होंने लोगोंके हृदयमें भी अधिकार कर लिया था; वह सदा सुन्दर वस्त्र पहनते रहे । रामसिंह जैनधर्मावलम्बी और ओसिजातके हैं । इस ओसिजातकी संख्या सब रजवाडेमें लगभग एक लाखके

होगी और यह सब ही अग्निकुल राजपूतवंशमें उत्पन्न हुए हैं, इन्होंने बहुत काल पहिले हिन्दूधर्म छोड़कर जैनधर्मावलम्बन और मारवाडके अन्तर्गत ओसिनामक स्थानमें रहना आरंभ किया था, तथा उस स्थानके नामानुसार ही ओसवाल नामसे विख्यात हुए । अग्निकुलके प्रमार और सोलङ्की राजपूत शाखाके लोग ही सबसे पहिले जैनधर्ममें दीक्षित हुए थे ।

मानिकचंद भी जैन धर्मावलम्बी थे, किन्तु वह समरजातीय थे । और उनका स्वभाव चरित्र रामसिंहके विलकुल विपरीत था. उनका शरीर जैसा दीर्घ था वैसाही कृश और देखनेमें काला था तथा उनकी जिह्वा और मस्तक सब समय हिलते रहतेथे । गत पचीस वर्षतक वह सब पङ्कजयन्त्रोंमें लिप्त रहे थे और कोटेके जालिमसिंहके सिवाय और कोई जीवित मनुष्य समान प्रबल प्रभुत्व विस्तार करनेमें समर्थ नहीं होसका । वह शक्तावत् सम्प्रदायके मुख्य यन्त्रस्वरूप और उक्त सम्प्रदायके नेता भिन्दीपतिके एक प्रधान मन्त्री और कर्मचारी थे, इस कारण वह चन्द्रावत सम्प्रदायके दुर्दान्त शत्रु थे तथा उन्होंने उक्त सम्प्रदायको पदरहित करनेके लिये अपनी विद्या और बुद्धिके लगानेमें कोई त्रुटि शेष नहीं छोड़ी । उन्होंने इस शत्रुता साधनके निमित्त प्रतिहिंसा चरितार्थ करनेके लिये सैन्धवी पठान और महाराष्ट्रियोंके संग मेल किया । इस शत्रुताके कारण ही वह एक समय पकडकर बन्दी बनाये गये, तथा जुरमानेका रुपया न देसकनेके कारण इनको शारीरिक कष्ट भोगना पडा । उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और सब विषयोंमें विशेष जानकारीने उनको निज सम्प्रदायका प्रियपात्र बना दिया था । इस समय उनकी ५० वर्षकी आयु थी, किन्तु अनुमानसे उनकी आयु और भी अधिक जान पडती थी । वह सदा प्रसन्नचित्त, रहस्यालापी और समयके नानाविषयोंमें तत्त्वदर्शी रूपसे बातचीत करतेथे । अन्तमें उन्होंने राणाका अनुग्रह भलीभाँति प्राप्तकर लिया था, और राणाने माणिकचंदके बड़े पुत्रको एक भारी विश्वस्त पदपर नियुक्त करादिया । वह पुत्र यदि जीवित रहता तो निश्चय ही प्रसिद्ध मनुष्य होजाता, क्योंकि वह पिताकी तीक्ष्णबुद्धि तथा समस्त गुणोंका अधिकारी, और रामसिंहकी समान स्वरूपवान था । किन्तु उसने अभिमानके वशीभूत होकर विषप्रयोगसे अकालमें अपना जीवन निर्वाण करदिया । प्रसिद्ध तो यह है कि, पिता माणिकचंदने अकारण किसी विषयमें बहुत फटकारा था, उसको न सहकर ही उसने आत्महत्या करली थी । यहांपर मैं माणिकचंदके परलोक प्राप्तिका विवरण

लिखना चाहता हूँ । हम इससे पहिले जिस स्थानको वस्त्रागार लिख चुके हैं, उस स्थानपर ही मेरा और उनका शेष साक्षात् हुआ था ।

माणिकचंदने मेवाड राज्यके समय शुल्क संग्रहका भार वार्षिक २५०००० रुपया देना स्वीकार किया । वह अपने आधीनस्थ सहकारी शुल्क संग्रहकारियोंके विश्वासघातकताके दोषसे वा स्वयं मन न लगानेके कारणसे उक्त व्यवस्थाके अनुसार सब रुपयेका छठा अंश देनेमें भी असमर्थ होगये । उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और चतुराई देखकर आशाकी गई थी कि, दूसरोंके हाथसे इस भारको उनके हाथमें सौंपनेसे राज्यके इस प्रयोजनीय विभागका कार्य अति उत्तमताके संग चलेगा । उन्होंने मेरे वस्त्रागारके पास अपना वस्त्रागार स्थापन करके मेरे संग मुलाकातकी प्रार्थना की । साक्षात्के समय मैंने उनको बहुत व्याकुल पाया, तथा उन्होंने प्रगट किया कि “मैं कई बार आपके दर्शन करनेकी इच्छासे बाहर निकला किन्तु सब ही समय विपरीत दशमें कुलक्षण सूचक पक्षियोंको उड़ता हुआ देखकर लौट २ गया । ” अन्तमें उन्होंने राणाके विश्वाससे गिरजानेकी बातको विचार भविष्यत्की ओर दृष्टि न करके मुलाकात करनेकी प्रतिज्ञा की थी । “ निज अधीनस्थ कर्मचारियोंके ऊपर यथोचित तीक्ष्ण दृष्टि न रखनेके कारण ही उन्होंने विश्वासघातकता की ” इस बातको स्वीकार करके उन्होंने प्रतिज्ञा की कि “मेरे ऊपर जितना रुपया चाहिये उतना सब देदूंगा । ” किन्तु वह षड्यंत्री नामसे विख्यात हो गये थे इस कारण उनकी इस प्रतिज्ञाके ऊपर सन्देह हुआ । माणिकचंद इस प्रतिज्ञाको पूरी न कर सकनेके कारण अर्थात् हमारे अनुमानके अनुसार सब धन अपनी सम्पत्तिमें लगाकर साहपुरेके राजाकी शरणमें चलेगये । इस शोचनीय दशमें उनके शत्रुओंने महाआनन्द प्रगट करके उनके हृदयमें अपमानका बाण मारा, इस कारण उन्होंने इस देशमें प्रचलित सहज उपाय विषपानसे इस शरीरको छोड़ दिया ।

ऊपर लिख चुके हैं कि तीसरे दर्शक नरसिंहगढ़के राजा यहां देश निकालेकी दशमें वास करते हैं । प्रमारजातिके छत्तीस शाखाके अन्तर्भुक्त उच्च जातिमें इनका जन्म हुआ । पन्द्रह पीढ़ीसे यह मध्यभारतमें वास करते हैं । इनके क्षुद्र-राज्यका नाम उमतवाडा और राजधानीका नाम नरसिंहगढ़ है । लुटेरे और उत्पीड़क अत्याचारी पिण्डारी और महाराष्ट्रियोंके अधिकृत स्थानके ठीक बीचमें यह प्रदेश स्थापित होनेसे उक्त पिण्डारी और महाराष्ट्रीलोगोंने इनके

अधीनस्थ प्रत्येक ग्राममें अधिकार करलिया तथा अन्तमें इनकी राजधानीमें हुलकरकी जयपताका फहरानेलगी, यह अपमानित होकर उनके आधीन रहनेको वाध्य हुए । उस समय महाराष्ट्रियोंके हुलकर और संधिया इन दो नेताओंकी अधीनता शृंखलामें सब राज्य ही करदायीरूपमें बँधगयेथे, और उमतवारा राज्य सबसे पहिले अस्सी हजार रुपये करदेना स्वीकार करके हुलकरके अधीन हो गयेथे, तथापि अन्यान्य अत्याचारी जाति और हुलकरकी सेना सदा ही उनके राज्यको लूटमारसे विध्वंस करती थी । अनेक शताब्दीके पीछे सन् १८२१ ईसवीमें जब यह प्रदेश शान्ति प्राप्त करनेमें समर्थ हुआ तो मेवाडकी समान उमतवाडा भी टूटे फूटे स्तंभोंसे आच्छादित होगया, और इसके उर्वर क्षेत्रोंमें कणकमय मिमोसा और उपकारी किओना तृण जमगये । शोक दुःख और दीनता भूलनेके निमित्त राजा उस समयमें अफीम और मत्ततासूचक पानीके सेवनसे विलकुल निकम्मे होगये थे, इस कारण वह ग्रहदशा सुधरनेपर भी शासनका कार्य अच्छी रीतिसे करनेमें असमर्थ गिनेजाने लगे । उनका पुत्र चैनीसिंह पिताकी समान उक्त कुरोगाक्रान्त नहीं था, वरन् शासनभारमें सहायता करनेमें सब प्रकारसे योग्य था, इस कारण बृटिश एजेंटकी व्यवस्थानुसार राजाके वृत्तिग्रहणमें राज्यभार छोड़नेपर उक्त चैनीसिंह ही अपने नामसे राज्य शासन करने लगा ।

उपरोक्त दोनों सम्भ्रान्त अधिनायकोंके संग कुछ काल तक कथोपकथन करनेके पीछे नियमानुसार पान और अतरदान किया, अनन्तर दोनों विदा लेकर अपने स्थानको चलेगये ।

नाथद्वारा,—१४ वीं अक्टूबर—अरुणोदयके संग २ ही यात्राका आरंभ होगया और कुछ दूर ही आगे जाकर देखा कि, आगेका मार्ग दलदलमय है, इस कारण भारवाही ऊंटोंके लेजानेमें बड़ी कठिनता हुई । इस प्रदेशके चारों ओरकी भूमि ऊंची नीची और पथरीली है । बड़ी कठिनतासे प्रायः चार सौ फिट ऊँचे नाथद्वारेके शिखरको अतिक्रम किया । यह स्थान चतुःपार्श्ववर्ती शिखरमालाकी समान लाल पथरोंका है । यह नाथद्वारेसे डेढ़-कोश पूर्वकी ओर स्थापित और समतल क्षेत्रकी समान है; इस स्थानके दो क्षुद्र सरोवरोंसे मार्गके दोनों ओर दो नहरें नगरकी ओर बहतीहुई पुजारियोंका जल कष्ट दूर करतीहैं । नहरोंके दोनों ओर वृक्षोंकी श्रेणियाँ चलीगई हैं, वह अपूर्व शोभासम्पादनके संग २ पथिकोंकी थकावट दूर करनेमें यथेष्ट सहायता देनेके

निमित्त नियुक्त हैं । हम लोगोंका वस्त्रागार नाथद्वारे नगरके नीचे बहनेवाली बुनाश नदीके दूसरी पार स्थापित हुआ, इस कारण जब हम नगरके बीचमें होते हुए चले तो सब नगरनिवासियोंने राजमार्गमें एकत्र होकर महाआनन्द प्रगट किया, जिस अंग्रेजी शासनद्वारा उन्होंने विजातीय अत्याचारियोंके हाथसे उद्धार पायाहै, तथा जिस शासनसे कन्हैयाजीके पवित्र मंदिरकी रक्षामें पूर्ण सहायता की है वह सब ही एक स्वरसे उस अंग्रेजी शासनकी प्रशंसा करने लगे, और आग्रह सहित अन्नकूट पर्वके पुनः प्रतिष्ठा दिनकी बाट जोहने लगे ।

१५ वीं अक्टूबर अब आगे मार्ग जलमय, अत्यन्त दुर्गम है, और भारवाही पशु अवाध्य प्रकृति होनेके कारण मेरतानामक मरुस्थानमें हमारा तथा बौझा ठोने-वालोंका बिछोह होगया, अतः फिर मिलनेके लिये इस स्थानपर ठहरगये । श्रीमन्दिरके प्रधान धर्मयाजकने सुराटवासी एक धनी महाजनके संग आकर हमारा अभिनन्दन किया । एक सुनहरी अँगरखा और एक सुवर्णमंडित नीले रंगका ड्रपट्टा धर्मयाजकने मूर्तिका उपहारस्वरूप लाकर मुझको दिया । इसके अतिरिक्त एक बड़े पात्रमें पूर्वदेशके अनेक प्रकारके पके और स्वादिष्ट फल मूल देकर मुझे सन्मानित किया । अपराह्नमें भोगका दूध और अनेक प्रकारके मिष्ठान्न भोजनके लिये भेजेगयेथे. किन्तु दुःखका विषय है कि, सामान्य रीतिसे भोग राग बनानेके दिनमें अब विशेषउपाधि धारण कर ली है, कारण कि अब दुग्ध आदिमें गुलाबका जल और इतर मिलादिया गया ।

लोदीनामक जिस स्थानका मंदिर बहुत प्रसिद्ध है, वहांके देवमंदिरके अधीन जैसे चालीस हजार दूध देनेवाली गौ हैं, नाथद्वारेकी गौसंख्या उससे दशांशका एक अंश परिमित होनेपर भी भारतवर्षमें यहांकी समान दूध देनेवाली गायें और कहीं नहीं हैं । इन चार हजार गौओंके दूधसे खीर, रबड़ी, मक्खन आदि बनाकर भोग लगानेके पीछे सर्व साधारणको प्रसादरूपसे बाँट दीजाती हैं । सुराटके उक्त वृद्ध वणिकने मूर्तिकी आश्चर्य्य शक्ति और दैवशक्तिके विषयमें मुझसे अनेक बातें कहीं । यमुनातटसे श्रीकृष्ण जिस रथमें नाथद्वारे आये थे, यह बनिया उसीके सामने प्रणत होकर पूजा करताहै । भक्त और धार्मिकके अतिरिक्त साधारणको यह रथ पूजाके लिये नहीं दियाजाता । नारायणने श्रीकृष्ण अवतार लेकर जिस आयुमें जैसा शृंगार कियाथा, मूर्तिको भी दिनमें क्रमसे वैसे ही सजाया जाताहै । बालवेषसे कंसवधकारी धनुर्बाणधारी राजवेश तक दिखाया जाताहै । मैंने मंदिरके प्रधान पुजारीके हाथमें एक

इस विषयका आदेश पत्र दिया कि, भविष्यतमें ब्रिटिशगवर्नमेंटके कर्मचारियोंमें किसीको भी इस स्थानके मयूर और पीपलके वृक्ष नष्ट नहीं करनेहोंगे और इस पवित्र धर्मस्थानके बीचमें किसी प्रकारकी जीवहत्या नहीं होगी । उनकी अप्रसन्नताके भयसे मैंने नदीपार अपने वस्त्रागारमें जाकर मुर्गोंको भोजनके निमित्त बध किया, और उनके सब पंखोंको मट्टीके भीतर छिपादिया ।

असुरवास-१६ वीं अक्टूबर-जब चित्त किसी एक कार्यके करनेमें व्यग्र हो, उस समय उसका कार्यसाधनके बदले निश्चेष्ट भावसे बेकार बैठना जैसा कष्टदायक है वैसा और कभी नहीं । हमारे सेवकोंका अबतक हमसे मेल नहीं हुआ था, इस कारण मैंने असुरवासको अपना वस्त्रागार भेजकर अपराह्नमें वहांकी यात्रा की । यद्यपि असुरवास यहाँसे चार कोशकी दूरीपर था, किन्तु मार्गमें सन्ध्या होगई । मार्गमें हमने फते (जयी) नामक हाथीको पानीमें गिरकर महा क्रोधसे उद्धारकी चेष्टा करतेहुए देखा । केवल हाथीवानके दोपसे ही ऐसी दुर्घटना घटतीहै, क्योंकि हाथी यहां तक बुद्धिमान होताहै कि चलते समय पैरसे मार्गकी परीक्षा करता जाताहै, यदि एक पग रखनेके लिये भी स्थान मिले तो विपत्तिमें नहीं गिरता, वरन् संकेतशब्दसे हाँकनेवालेको निरापद सम्वाद सूचित करदेताहै । फतेने भी वैसा ही संकेत किया था, किन्तु हाथीवानने उसके संकेतपर कान नहीं दिया उसका संध्याका भोजन १५ सेरकी रोटी न देनेसे हाथीने अपनेको महा अपमानित समझा । फतेकी उस अवस्थासे उद्धार करनेके निमित्त बड़े २ लकड़ उस स्थानमें फेंकेगये; अनन्तर वह धीरे २ महा बलसे पैर उठाकर आगे बढ़ा । फतेको ऐसी सहायता करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं थी, केवल हाथीवानके अपने दोपसे यह घटना घटनेके कारण उसने इच्छानुसार अपने उद्धारकी चेष्टा नहीं कीथी । फतेने उद्धार पातेही पीठ हिलाई, इससे इसके ऊपरकी सब चीजें चारों ओर गिरगई ।

हम लोग बुनाश नदीको उतरकर आगे बढ़े । नदीका जल जैसा गंभीर है, वसा ही काँचकी समान स्वच्छ है । किनारेकी भूमि नीची और अनेक प्रकारकी घाससे भरी हुई है । यह जैसा प्रिय दृश्य युक्त और निर्जन प्रदेशहै, इस स्थानके विषयमें एक प्रवाद भी वैसा ही विचित्र है । वह यह है कि, "पूर्वकालमें जिस समय भ्लेच्छ (यवन) लोग इस देशमें नहीं आयेथे उस समय बुनाश नदीकी अधिष्ठात्री देवी जलमेंसे हाथ बाहर निकालतीं थीं, तब वहांके निवासी उनके हाथ पर नारियल रखदेतेथे, किन्तु एक दिन देवीके वैसे ही हाथ निकाल-

नेपर एक म्लेच्छने नारियलके वदले मट्टीका ढेला देदिया, तबसे देवी हाथ नहीं निकालतीहैं ।” ठीक आधी रातको हम लोग यथेष्ट स्थान पर पहुँचे ।

बोझा उठानेवाले ऊंट और अनुचर लोगोंके मिलनेकी आशासे १७ वीं तारीखको हमें यहीं विश्राम करना पडा । असुरवास एक समृद्धिशाली ग्राम है, किन्तु अब यहांके निवासियोंकी संख्या बहुत न्यूनहै । चारण कविके एक पुराने संगीतसे मुग्ध होकर राणा भीमसिंहने भविष्यकी चिन्ता छोड अब यह गाँव उक्त कविको देदियाहै । हमारे वस्त्रागारके निकट ही ऊंचे शिखरके ऊपर एक संन्यासीका आश्रम था, संन्यासी मुझसे साक्षात् करने आये, और मैंने भी उनके आश्रममें जाकर प्रतिसाक्षात् किया । साधारण संन्यासियोंकी समान यह भी एक बुद्धिमान् और देशविदेशकी बहुत सी बातें जानतेहैं । यह भगुवा वस्त्र पहनतेहैं और पगडीके ऊपर एक कमलगट्टेकी माला लगीहुईहै, तथा कमलगट्टेकी माला हाथमें लिये सदा इष्टदेवका नाम जपतेरहतेहैं । उन्होंने अंग्रेजी शासनमें साधारण प्रजा निर्विघ्न शान्तिके संग २ परमसुखसे वास करती है, इस बातका उल्लेख करके यह भी प्रगट किया कि अंग्रेजशक्ति मनुष्यशक्तिकी अपेक्षा प्रबल है और वास्तवमें एक समय राजा और सामन्तलोगोंने इन संन्यासीकी समान अंग्रेजोंको दैवशक्तिसम्पन्न कहनेका सिद्धान्त करलिया था ।

१८ वीं अक्टूबर-नवीन सूर्योदयके संग २ ही छः कोशकी दूरीपर सुमाइचा नामक स्थानकी ओर यात्रा कर दी । जिस मार्गमें हम चलरहेथे वह वृक्षमार्गकी समान बहुत सङ्कीर्ण, तथा नाथद्वारेसे टेढ़ा, ऊंचा नीचा और उच्चभूमिका सीमा-प्रान्त मात्र है; चारों ओर खैर, कीकड़ और वबूलके वृक्ष लगरहेहैं । हम बीच मार्गमें स्थित गङ्गुड़ानामक ग्राम होकर शिरनालानामक ग्राम होकर शिरनाला नामक उपत्यकामें पहुँचे । विस्तृत विराट्काय शिखरके जिस मूलसे नदी कल-कल शब्द करतीहुई वही है, गोडाग्राम उस स्थानपर ही बसाहुआ है । नदीकी कुण्डलाकार टेढ़ी गति देखकर हमने सहजमें ही अनुमान करलिया कि, इस विशाल उपत्यकाका केवल एक यही मार्ग है । उपत्यका सर्वत्र असमभावसे फैलीहुई है, किन्तु किसी स्थानका परिमाण आध कोशसे कम नहीं है । उपत्यकाके निकटसे ही शिखरश्रेणी ऊपरको उठीहैं; किसी शिखरके ऊपर आमके वृक्ष लगेहुए हैं और कोई २ शिखर अभ्रभेदी रूपसे खड़ा हुआहै । इस रमणीय दृश्यपूर्ण स्थानके ऊपर प्रकृतिकी भी विशेष शुभ दृष्टि देखीजातीहै । गूलर, सीताफल तथा वादामके वृक्ष अधिकाईसे उत्पन्न होतेहैं; नदीके तटकी भूमि लताओंसे घिरीहुई तथा आम, तेन्दू, पीपल, बट आदि बड़े २ वृक्षोंसे चारोंओर

समाच्छन्न है। मनुष्यकी बुद्धि और कारीगरी भी यहांकी प्राकृतिक शोभाके बढानेमें सहायता देरहीहै। अधिवासियोंने नदीके दोनों ओरके पर्वतके ऊपर २ आल बाँधकर साधारण उपायसे वहां जल पहुँचायाहै, तथा उस जलसे पर्वतके ऊपर जहाँ मटीली भूमि है वहीं ईख, धान्य और रुई आदिकी खेतीका कार्य कियाजाताहै। इस विचित्र प्रदेशकी उत्पन्नहुई ईख अति उत्तम होतीहै, और इसकी चाप सबसे अधिक आमदनी की है। किन्तु अब तीन वर्षसे एक प्रकारका कीड़ा इस उपत्यकामें घुसआयाहै, इससे ईखको बहुत हानि पहुँचतीहै इस पञ्चपाल मरुक्षेत्रसे आकाशतक प्रकृति घोर अन्धकारमें धिरकर उपस्थित हुईहै। वह पञ्चपाल दो श्रेणियोंमें विभक्त है। एक श्रेणीका नाम कारका और दूसरी श्रेणी तिरिनामसे विख्यात है। पहली श्रेणी ही सबसे अधिक शस्य नष्ट करतीहै। यह पञ्चपाल यहांके कृषिकार्यमें विशेष हानि पहुँचाताहै।

सुमाइचा ग्राम तीन पल्लियोंमें विभक्त है, तथा प्रत्येक पल्लीमें एक सौ परिवारका वास है। यह ग्राम प्रसिद्ध "राणाराज" नामक पर्वतकी तलैटीमें स्थापित है। जिस समय दुर्दान्त मुगल राणाको पराजित करके पीछे दौड़ेथे, उस समय राणा अपनी रक्षा करनेके लिये इस पहाड़ी मार्गसे होते हुए ऊँचे वनसे घिरे हुए स्थानमें भागगये थे, इसही कारणसे यह स्थान उक्त नामसे विख्यात है, इस ग्राममें विख्यात राणा कुम्भके उत्तराधिकारी कुम्भावत लोग रहतेहैं। कुम्भावत लोग अपने अधिनायकोंसहित मुझसे साक्षात् करनेके लिये आये तथा यहांकी बनीहुई प्रसिद्ध कुकडी (एक प्रकारका पहाड़ी शस्त्र है यह तीन फिट लम्बी होतीहै,) धी और बकरीका बच्चा मुझे भेंटमें दिया। मैं उन राजपूत और भूमियां लोगोंको लेनेके लिये उठा तथा उनकी सज धज सामान्यताकी सी होनेपर भी उनकी उत्पत्ति ऊँचे कुलमें जानकर सम्बर्द्धना की। वास्तवमें उनकी शारीरिक शोभा बढानेके लिये अच्छी पोशाककी कुछ भी आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि उनकी आकृति ऐसी चित्ताकर्षक थी कि, मेरे अनुचर लोग उनको देखकर बारम्बार "यह कैसे सुन्दरहै?" यही बात कहने लगे। इनका ऊँचा और स्थूल शरीर, वीरमूर्ति, और लम्बी मूछोंकी सबने प्रशंसा की। नेता लोग शिर पर केवल लम्बी पगडी और डपट्टा धारण कररहेथे, अन्यान्य सब लोग श्रमजीवियोंकी समान पायजामा और साधारण पगडी पहनरहेथे। पूर्वकालमें यह लोग कमलमीरके दुर्गरक्षाकार्यमें नियुक्त होनेके निमित्त एक सौ बन्दूकधारी सिपाही देतेथे, किन्तु अब महाराष्ट्रियोंने इनका तख्ता तमाम कर

दिया है । यही लोग असली आधीन कर देनेवाली प्रजा है, एक ओर राणाका स्थानीय श्रमसाध्य कार्य करते हैं और दूसरी ओर नियमित वार्षिक कर देते हैं । पूर्वकालमें इनके पूर्वपुरुष जैसी वीरता दिखला गये हैं, मेरे उन सब बातोंका उल्लेख और प्रशंसा करनेपर वह मुझसे बहुत प्रसन्न हुए, कोई राजपूत भी अपने पूर्व पुरुषोंकी वीरताको कभी नहीं भूल सकता । डुम्पुर वृक्षके नीचेकी इस समितिने वास्तवमें ही अधिक शोभा पाई थी । हमारे बोझा उठानेवाले ऊंट इस सुमा-इचामें आकर हमसे मिल गये ।

१९ अक्टूबर राणा लोग चित्तौड़ और बुनाश नदीके समतल प्रदेशसे विताडित होकर तुङ्ग शृंगमाला वेष्टित पहाड़ी स्थानमें रहनेको बाध्य हुए, तथा इस सम्बन्धसे मेवाडकी बहुत सी प्रजाने आकर निज उपत्यकाओंमें वास किया था, हमने वहाँके प्रधान नगर कैलवाडाकी ओर यात्रा की । उक्त प्रदेशमें जितने पर्वत और नदियें हैं उन सबके संग ही उपरोक्त समयकी किसी न किसी ऐतिहासिक घटनाका सम्बन्ध अवश्य लगा हुआ है । पूर्व वर्णित उपत्यकाकी समान यह स्थान प्राकृतिक रमणीय सौन्दर्यसे शोभायमान है । यही विदीर्ण पर्वतमें होकर जो मार्ग गया है उसके वामभागमें “ करी सरोवर ” नामक एक छोटी नदी हमारे दृष्टिगोचर हुई । यद्यपि पैदल चलनेवाले पथिक यहांसे एक सीधे मार्गमें होकर कैलवारा नगरमें जा सकते हैं, किंतु वह स्थान ऐसे घने जंगल और विपत्तियोंसे भरा हुआ है कि, अपरिचित मनुष्यको वहां जानेमें सहसा साहस करना असंभव है । इसका नाम “ करी सरोवर ” क्यों पडा ? इस बातका हमें कुछ भी पता नहीं चला, कदाचित् प्राचीन कालके किसी समरोपलक्षमें ही यह नाम रक्खा गया होगा । हम मूर्खनामक ग्राममें होते हुए आगे बढ़े । यह ग्राम एक राठौर सामन्तके अधीन है । उक्त ग्रामसे लगे हुए एक क्षुद्र सरोवरके तटपर एक अत्यन्त रमणीक नीचे मंदिरने हमारी दृष्टिको आकर्षण किया । एक मनुष्यसे प्रश्न करनेपर ज्ञात हुआ कि यह सती मंदिर है । किन्तु इस सामान्य उत्तरसे प्रसन्न न होकर ग्रामके अध्यक्षको साक्षात्के लिये बुलाया । उसके आनेपर प्रगट हुआ कि उक्त मंदिर उस ग्रामाध्यक्षके पूर्व पुरुषोंने बनवाया था । जब औरंगजेबने इस प्रदेशमें समराग्नि प्रज्वलित कर दी, तब इस ग्रामके स्वामीने युद्धमें लडकर अपने प्राण देदिये थे; उसकी अर्द्धांगिनीने पतिभक्ति प्रगट करनेके लिये अपने स्वामीका स्मरण चिह्न छातीपर रखकर इस स्थानमें अपने शरीरको चितामें भस्म कर दिया था ।

मंदिरमें उस वीरपुरुषकी अश्वारोही स्वरूपसे निर्मित प्रतिमा स्थापित है, इस कारण सहजमें ही जाना जासकताहै कि किसी साधारण ग्रामीण मनुष्यके स्मरणार्थ यह मंदिर नहीं बनाहै ।

“ करवीर सरोवर ” और खिरली ग्रामके निकट, दो मार्ग दो ओरको गयेहैं । वीर गुलामार्गमें होकर नाथद्वारे तक वरावर जाया जासकता है; दूसरा मार्ग चिराई और विख्यात चतुर्भुज देवके तीर्थस्थानकी ओर गयाहै; यात्रासमय हमारे चलनेके मार्गमें सहसा शिखरश्रेणी एकत्र होगई, इस कारण हम ओलद्वारसे होतेहुए कैलवाराकी ओर चलने लगे, और कैलवारा नगरसे डेढकोश उत्तरकी ओर एक समतलक्षेत्र आमके वनमें वस्त्रागार स्थापन किया । यहांकी उपत्यका क्रमानुसार विस्तृत हुईहै, तथा इस स्थानकी स्वाभाविक शोभा जैसी बनैली और असरल है, वैसी ही सुंदर दृढतापूर्ण है । वायु नापनेवाले यंत्रकी सहायतासे हमको ज्ञात हुआ कि यह स्थान उदयपुरसे हजार फिट और समुद्रसे तीन हजार फिट ऊंचा है; इसके ऊपर चारों ओर मोटी २ बहुतसी शिखरश्रेणियां खड़ीहैं । इस स्थानसे अनगिन्त झरने झर २ करते हुए पश्चिममें मारवाडको सींचते हैं और पूर्वमें मेवाडके सरोवर भरनेके लिये नाचते २ चलेगयेहैं । बाँध २ कर यहाँके “ कङ्करोली ” नामक छोटे सरोवरके निर्माणसे पहिले यह समस्त झरने मेवाडकी ओरकोही बहते थे, मरुक्षेत्रगामी झरनोंकी संख्या बहुत न्यून देखी जातीहै ।

राजाके निकटआत्मीय और कमलमीरके शासनकर्त्ता महाराज दौलतसिंहने बहुतसी लालपताका, तुरही और ध्वजदंडधारी अनुचरगण, और कविके संग मुझसे मुलाकात करने तथा किलेके भीतर जानेंके निमित्त कईकोश आगे बढ़कर अगौनीकी शिष्टाचारकी रीतिके अनुसार हम दोनोंने ही घोड़ेसे उतरकर एक दूसरेका आलिङ्गन किया, फिर घोड़ोंपर चढ़कर संग २ चलते हुए वहाँकी सर्व साधारणकी परिवर्तित दशाके विषयकी बातोंमें तत्पर होगये । दौलतसिंह महाराणा भीमसिंहके बहुत निकटके रिश्तेदार और महाराजकी उपाधिसे भूषित होनेके कारण समान श्रेणीमें गिने जाते थे । राणाके कोई पुत्र नहीं था, इसी कारण महाराज शिवधनसिंहके पीछे इन्होंने मेवाडका सिंहासन ग्रहण किया । भ्रष्टाचार और निन्दनीय आचरण मेवाडके संभ्रान्त लोगोंके बीचमें जिन अल्प संख्यक कई लोगोंके ऊपर प्रबल प्रभुत्व विस्तारमें स्वभाव परिवर्तित और नैतिक बल विलुप्त करनेमें समर्थ नहीं हुआ, उनमेंसे एक यह भी थे । यह जैसे

सरल चित्त और सब कार्योंमें अग्रसर रहते थे, वैसे ही महान् नम्र, गर्वहीन और अल्पभाषी थे । मेवाड प्रवेशके प्रथमरूप इस पाश्चात्य सीमान्तमें वह जिस पद पर नियुक्त थे, उनके गौरव और स्वभावने उनको इस पदके सम्पूर्ण उपयोगी बना दिया । सन् १८१८ ईसवीके फरवरी मासमें मैंने कमल मीर दुर्गमें स्थित सेनाकी शेष वेतन चुकाकर दुर्ग अधिकार कर लिया था । जिस श्रेणीकी अर्थ लिप्सु सेना सरलतासे ही अपनी पगड़ी बदलनेकी समान स्वामीके परिवर्तन करनेमें अभ्यस्त हैं, प्राच्यजगत्के सेनापतियोंके पक्षमें उस श्रेणीकी सेनाको हस्तगत करनेका मुद्रा ही एक प्रधान, निश्चित और सरल उपाय है । चौबीस घंटेके बीचमें हमने दुर्गमें अधिकार पालिया, किन्तु जितना रुपया देना निश्चित हुआ हमारे पास उसके तीन अंशका एकांशाधिक नगद रुपया न होनेसे उन्होंने मारवाडके पालिनामक वाणिज्य नगरकी वराती चिंटी लेनेमें कुछ भी इधर उधर नहीं किया । भारतकी नितान्त निधान भङ्गकारी जाति तक भी वृद्धि जातिका ऐसाही विश्वास करती है । दूसरे दिन प्रातःकाल हमने देखा कि, उस दुर्गकी सेना पश्चिमी पहाड़ी मार्गसे जा रही है; उस समय टूटेफूटे प्राचीन देवमन्दिरमें बैठेहुए हम भोजन कर रहे थे । मेरे अनुगामी सेनादल और अनुचरोंने एक सप्ताह तक दुर्गका अधिकार अपने हाथमें रक्खा, पीछे राणाकी भेजीहुई सेनाके आनेपर दुर्गका भार उसके हाथमें सौंप दिया गया । इस विभिन्न दृश्यापूर्ण स्थानके असंख्य स्मरण स्तंभोंमें खुदेहुए लेखोंकी वर्णवलीका उद्धार और उन सबकी नकल करनेमें उक्त आठ दिन बीत गये । यद्यपि इस सुप्रसिद्ध स्थानका वास्तव्य चित्रपटपर अंकित हो गया था, किन्तु इसके भीतरी दृश्यके वर्णन करनेकी चेष्टा करना मानों वृथा साहस करना है । दुर्गके चारों ओर अभेद्य विशाल प्राकार है, अनगिन्त बहुत ऊंचे गोलाकार दुर्गालय और वाणचलानेके लिये छेदवाली परकोटाश्रेणी इटस्कानकी समान दिखाई देती है । पत्थरोंके ऊपर क्रमसे वाण, वन्दूक और गोला चला-नेके निमित्त छेदयुक्त परकोटा ऊपर उठ गया है और सबसे अन्तिम चोटीमें “ वादलमहल ” नामक राणालोगोंका वर्णनिवास बना हुआ है । उस वादल-महलसे बालुकामय मरुप्रान्तर और चारों ओर विराजित अनेक शिखरश्रेणियों दृष्टिगोचर होती हैं । कमलमीर दुर्गपर चढ़नेके प्रथम संकीर्ण मार्गमें कैलवारासे सिकि कोशकी दूरीपर “ अराइतपोल ” नामक पहली तोरण दिखाई देती है । उसके आगेही “ हुल्लापोल ” और “ हनुमानपोल ” नामक और दो तोरण

बनेहुए हैं। यह तीन तोरण ही दुर्गके ऊपरतक “जयतोरण” “निधनतोरण” तथा “रामतोरण” नामक शत्रुओंको दुर्गम तोरण बनी हुई है। भीतरकी सबसे अन्तिम तोरणका नाम “चौगानपोल” है। कमलमीरका शेष शिखर समुद्रतलसे ३३५३ फिट ऊंचा है। यहाँसे मैंने मरुक्षेत्रक बहुदूरवर्ती स्थानोंका प्रान्त निश्चय कर लिया। यहाँ ऐसे कितने ही दृश्य विद्यमान हैं; जिनका चित्र अंकित करनेमें लगभग एकमासका समय लगनेकी सम्भावना है किन्तु हमने केवल उक्त दुर्ग और एक बहुत पुराने जैनमन्दिरका चित्राङ्क न समाप्त करनेका समय पायाथा। इस मंदिरकी गठन प्रणाली सब प्रकारसे बहुत प्राचीन कालकी समान है। मंदिरके बीचमें केवल खिलानयुक्त ऊंची चोटीका विग्रह कक्ष (कमरा) है और उसके चारों ओर स्तंभावली शोभित गोल वरामदाहै। यह निश्चय ही जैनमन्दिर है, कारण कि जैनधर्मके संग हिन्दूधर्मका जैसा प्रभेदहै, हिन्दूमंदिरके संग इस मंदिरकी विभिन्नता भी वैसेही विद्यमान है। भारतवर्षके बहुतसे देवार्चक और शैवलोगोंकी अधिकाईसे कारीगरी कीहुई मंदिरावलीके संग इस जैनमंदिरकी तुलना करनेसे, अधिक विभिन्नता और इस मंदिरका सरल गठन और अनाडम्बरता दृष्टिगोचर होतीहैं। मंदिरके बहुत प्राचीन होनेका प्रमाण उसकी कारीगरीकी न्यूनतासे ही प्रगट होताहै, और इस ही सूत्रसे हम स्थिर करसकते हैं कि जिस समय चन्द्रगुप्तके वंशधर राजा सम्प्रीति इस प्रदेशके सर्वश्रेष्ठ राजा थे (ख्रिस्टजन्मके दो सौ वर्ष पहिले) उस समय यह बनाया गयाहै। किम्बदन्तीसे ज्ञात होताहै कि रजवाड़े और सौराष्ट्रमें जितने प्राचीन मंदिर आजतक विद्यमान हैं, वही उन सबके निर्माता हैं। मन्दिरके स्तंभोंका आकार और परिमाण दूसरे मन्दिरोंकी स्तंभश्रेणीके समान नहीं है, वरन् विलकुल अलग है; हिन्दु देव मंदिरोंके स्तंभ जिस प्रकारसे गठित और स्थूल होतेहैं; यह वैसे न होकर पतले तथा नीचेसे ऊपरका भाग सूक्ष्म होगयाहै।

राजा सम्प्रीति चन्द्रगुप्तके वंशमें चार पुरुषोंके पीछे उत्पन्न हुए यह जैनधर्मावलम्बी और वक्तिथानके ग्रीक अधीश्वर सिल्यूकसके प्रियमित्र थे। सिल्यूकसके भोगस्थितिमूके लिखेहुए विवरणसे प्रगट होताहै कि, दोनोंमें अकृत्रिम मित्रता थी और जैनधर्मावलम्बी राजपूत राजाकी एक कन्याके संग सिल्यूकसका परिणय कार्य पूर्ण हुआ था। हस्तीयूथ और अन्यान्य उपहार द्रव्य पाकर सिल्यूकसने चन्द्रगुप्तके आधीन रहनेके लिये एक दल ग्रीक सेनाको भेजा

था । * पाठकोंके सामने जो जैनमन्दिर उपस्थित है वह ग्रीक शिल्पकारोंके द्वारा बनाया गया है । अथवा राजपूत शिल्पकारोंने ग्रीकशिल्पकारोंके आदर्शपर इसको बनाया है, इसको सत्य वा संभव कहकर अनुमान करनेसे कौतूहल उपस्थित होता है । यही हमारे सिथरका × मेवाडवाला मंदिर है । जैनियोंके इस मंदिरमें हिन्दुओं द्वारा “जीवपितृ” का कृष्ण पाषाण निर्मित खण्ड अन्यायसे ही स्थापित कर दिया गया है । * यह मंदिर पर्वतके ऊपर बना हुआ है और वह पर्वतपृष्ठ ही इसका भित्तिस्वरूप होनेसे यह कालके कराल दांतोंसे चूर २ न होकर अवतक खड़ा है । इसके पास ही जैनियोंका एक और पवित्र देवालय दिखाई देता है, किन्तु विलकुल दूसरी रीतिसे बनाया गया है । यह तिमंजला बना हुआ है, प्रत्येक मंजिल छोटे २ असंख्य स्थूल स्तंभोंसे शोभायमान है, वह सब स्तंभ खोदे हुए प्राकारके ऊपर स्थापित है, और स्तंभोंके ऊपर इस प्रकारकी छत है कि सूर्यकी किरणों उसके भीतर जाकर अंधकार दूर करनेमें समर्थ हैं ।

जहाँतक दृष्टि जाती है दुर्गके ऊपर वा नीचे जितने देवालय वा मंदिर विद्यमान हैं उन सबका एक २ करके विवरण करते समय विभिन्नता नहीं ज्ञात होगी ।

* महात्मा टाडकी इस उक्तिको हम भूल समझते हैं; अन्यान्य इतिहासोंमें देखा जाता है कि मगधके स्वामी चन्द्रगुप्तके संग सिल्यूकसकी विशेष मित्रता होगई थी, और चन्द्रगुप्तने उनको एक कन्यादान कर दी । यहाँ कर्नल टाड लिखते हैं कि राजा सम्प्रीति चन्द्रगुप्तके प्रपौत्र थे । यही बात यदि सत्य हो तो हम यह कैसे कह सकते हैं कि सिल्यूकस उस समय जीवित थे ? और यदि उनका जीवित होना भी मान लिया जाय तो सिल्यूकसकी आयु उस समय सौ वर्षके लगभग कहनी होगी ? उस समय इस अत्यन्त वृद्धके हाथमें सम्प्रीतिका कन्या सौपना कैसे संभव हो सकता है ? और यदि इस बातको स्वीकार कर लिया जाय तो चन्द्रगुप्तके जीवित होनेका क्या प्रमाण है ? तथा सम्प्रीतिकी कन्याके संग विवाह होनेपर सम्प्रीतिके आधीनमें रक्षाके निमित्त ग्रीक सेना न भेजकर चन्द्रगुप्तके निकट ही क्यों भेजी ? ज्ञात होता है कि टाड साहब भ्रमसे ही सिल्यूकसके संग सम्प्रीतिकी मित्रताकी बात लिख गये हैं । ग्रीकदूत मोगा स्थिनिसने सम्प्रीतिका कुछ भी उल्लेख नहीं किया ।

× ग्रीकदेवता ।

* कर्नल टाडने केवल बहुत पुराने साधारण हिंदू मंदिरोंकी विचित्र कारीगरी इस मंदिरमें न पाकर अनुमान किया है कि यह जैनमंदिर है । किन्तु “जीवपितृ” का चिह्न देखकर हम टाड साहबके अनुमानको निभ्रान्त नहीं समझ सकते । जैनमंदिरमें हिंदुओंके देवताकी प्रतिष्ठा होना किसी प्रकारसे संभव नहीं हो सकता ।

जैनमंदिरसे नीचे पहाड़ी मार्गकी ओर दृष्टि करनेसे; केवल ध्वंसावशेष ही दिखाई देता है । मैं केवल दो प्रधान देवाल्योंका विवरण लिखता हूँ । पहिला “मासा (माता) देवी” का अर्थात् देवगढकी जननीका मंदिर है । यह पहाड़ी मार्गकी ओर जानेवाले शिखरकी चोटीपर बना हुआ है । चारों ओर स्थापित प्रधान और अप्रधान असंख्य देवमूर्तियोंके बीचमें मातादेवीकी प्रतिमा विराजमान है । सब प्रतिमा सफेद मर्मर पत्थरकी बनी हुई हैं, और प्रत्येककी उँचाई प्रायः तीन फिट है । यद्यपि शिल्पविद्याकी अवनतिके समय गत सात शताब्दीके बीचमें श्रेष्ठ भास्कर कार्य दो एक ही देखनेमें आये हैं, किन्तु यह देवमूर्तियें बड़े चमत्कार रूपसे बनाई गई हैं । मंदिरकी गढनप्रणाली सादी और बहुत प्राचीन है केवल एक बड़े कमरेके भीतर देवमूर्तियें वेदी वा आसनके बदले भूमिमें ही चारों ओर सजी हुई हैं ।

इन देवाल्योंके सामनेवाले बड़े आँगनके चारों ओर जो दृढ प्राकार खड़ा है, वहीं इस मंदिरका विशेष दर्शनीय अंश है । यह प्राकार काले मर्मर पत्थरका बना हुआ है, और इसके पापाणखण्डोंमें देव देवीका विवरण खुदा हुआ है । यह इस कारण और भी दर्शनीय है कि, जितने राजालोगोंने आत्मगौरवके निमित्त यह पापाण लगवाये हैं; उन सबका विशेष विवरण भी इनमें खुदा हुआ है । किन्तु प्राचीन तत्त्वसंग्रह करनेवालोंके लिये ऐसा शोचनीय दृश्य है । उन सैंकड़ों पापाण खण्डोंमेंसे एकभी पूरा नहीं है समस्त खंड विखण्ड अंश चारों ओर विच्छिन्न और ऐसे भावसे स्थापित है कि धनके लालची रुहेले अफगान इस भाईलके वंशवालोंने * उनके ऊपर मांस पात्र रखकर मांस भोजन किया ।

मातादेवीका मंदिर छोड़नेके पीछे उपत्यकाके दूसरी ओर पहाड़ी मार्गके कंठस्थित एक सामान्य स्मारकमंदिरने मेरी दृष्टिको आकर्षण किया । यह

* “इन्होंने प्रगट किया कि इजिप्ट (मिसर) के फारावलोंमेंसे एक मनुष्योंने इनको ताडन किया इन्होंने पूर्वकी ओर भ्रमण करते २ अंतमें सिंधुनदीके सुलेमान-ए-खो अर्थात् सलमन शिखरपर जाकर विश्राम किया । इनमेंसे फिर किसीने प्रगट किया कि, वह जिस जातिसे उत्पन्न हुए हैं । वह जाति नष्ट होगई है वह लोग वीर जाति और पूर्व पुरुषोंकी समान एक स्थानमें न रहकर सर्वत्र सैनिकोंका कार्य करते हैं । यह देखनेमें वीरपुरुषोंकी समान हैं तथा स्किनरकी समान सेनापतिके आधीनमें खादकको नियुक्त होनेपर अतिश्रेष्ठ सैनिक बन सकते हैं । किन्तु यह लोग शूकर खादकको अत्यन्त घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं । ”

मंदिर जहां बना हुआ है, वह स्थान बड़ा रमणीक है, और वहांसे भाखाड जानेका मार्ग दृष्टिगोचर होता है। मन्दिरकी चोट मध्यमें है चारों ओर केवल स्तंभ हैं, इस कारण मंदिरके भीतरकी ऊंची छोटी स्मारक वेदी सहजमें ही देखी जासकती है। यह टिभोलीके मंदिरका नमूना है। मैं इस मंदिरके ऊपर, शिखर और ध्वंशावशिष्ट स्थानोंपर चढ़गया। मेवाडके सुप्रसिद्ध महावीर पृथ्वीराज और उनकी वीर सहधर्मिणी तारावाईकी भस्म इसके बीचमें स्मरणार्थ स्थापित है। उनकी जीवनी और वीरताका प्रशंसनीय विवरण मेवाडके उपन्यासमें आजतक जीवितभावसे अंकित है।

सुन्दरी ताराविदनरके अधिनायक राओ सुरतानकी प्यारी लडकी थी। राओ सुरतान सोलंकी जातीय और अनहलवाडाके सुप्रसिद्ध बलहरराजवंशमें उत्पन्न हुए हैं। सुरतानके पूर्व पुरुषलोग सन् १३ शताब्दीमें अनहलवाडासे विताडित होकर मध्यभारतमें आये और टंकखोदा तथा बुनाश नदीके समस्त प्रदेशको अधिकारमें करलिया। तक्षजातिने स्मरणातीत कालसे पहिले उक्त टंकखोदा राज्यमें वास वा उसको स्थापित किया। उन तक्षोंके नामानुसार उक्त स्थान तक्षशील नगर वा साधारणमें तक्षपुर अथवा खोदा नामसे विख्यात हुआ* अफगानवीर लिल्लाखुदाने इसपर अधिकार करके सुरतानको वहाँसे निकाल दिया, इस कारण सुरतान मेवाडके सीमान्तवर्ती आरावली भूधरकी तलैटीमें स्थापित वर्तमान विदतौरमें आश्रय लेनेको बाध्य हुआ। सुन्दरी तारावाईने अपने पिताके इस भाग्य पतन और पूर्व गौरव गरिमाको लुप्त देखकर बख्साभूषणोंसे घृण की तथा युद्धमें घोड़ा चलाने और नक्षत्रगतिसे दौडते हुए घोड़ेकी पीठसे बाण छोडनेकी शिक्षामें आग्रहसहित नियुक्त हुई। जिस समय दुर्दान्त अफगानियोंके बलसे थोडा उद्धार करनेके निमित्त सुरतानकी सेना वीरवेशसे आगे बढी। वीरकुमारी तारावाई भी इस समय वीरसाजसे सज, धनुर्वाण हाथमें ले काठियावाडी घोडेपर चढकर बडे साहसके संग उस सेनामें जा मिली।

* उक्त स्थानके ध्वंशावशिष्ट मंदिरोंमें तक्षक जातिके निर्माण चिह्न अधिक देखे जाते हैं, इस स्थानके चारों ओर मनोरम दृश्य हैं; उनमेंसे बुनाशनदीके तीरवर्ती राजमहल तथा गोकर्ण आदि स्थान सबसे अधिक रमणीक हैं। हारवर्टने लिखा है कि सबसे अधिक चित्तौरग्रीफ वीर अत्येक जेंडरके परममित्र तक्षशीलोंका निवासस्थान था। तक्षलोग पुरुवंशसे उत्पन्न हुए हैं; इस कारण पौरस किसी व्यक्ति विशेषका नाम नहीं है, केवल वंशपरिचायक मात्र है। तक्षशील नगर देखनेमें बहुत बडा था।

दुर्भाग्यताके कारण उक्त सेना उस समय जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त करनेमें असमर्थ होगई ।

राणा जयमलके तीसरे पुत्र जयमलने ताराके साथ विवाहका प्रस्ताव किया तब विद्वानोंके सूर्य (तारा) ने उत्तर दिया कि पहले थोडाका उच्चार करो पीछे में तुम्हारी हूंगी । जयमलने इस बातको स्वीकार करलिया, परन्तु इसके पहले कि वह अपना अभीष्ट सिद्ध करै ठिठाईके साथ ताराके पास जानेकी अभिलाषाके उद्योगमें होनेके कारण ताराके क्रोधी पिता राव मुरतानके हाथमें मारा गया, मृत जयमलका भाई पृथ्वीराज जो उस समय मारवाडमें देशनिकालेमें था, और जिसने गोद्वारको छुडाकर उसी समय अपने पौरुषको विख्यात किया था, और इसीसे अपने पिताकी दयाका पात्र होछुका था, विद्वानोंकी दुःखमई अवस्थाने उसको इस बातपर आरुढ़ करदिया कि वह उस जयमलसे न होनेवाले प्रणको पूरा करै पृथ्वीराजका यश और भाटोंद्वारा उसकी की हुई प्रशंसा दूर दूर तक फैली हुई थी, ताराको उसका विख्यात नाम ही मोहित कर रहा था, और जब पृथिवीराजकी बड़ाई करनेवाले पुरुषने उससे यह कहा कि जिसभांति वह अपनी घुडसवार सेनाकी तयारी करताहै तथा उसकी रणकौशलता अनुकरणीय है, तब चौहानवंशी तारावाईने अपने पिताकी आज्ञासे पृथिवीराजके संग उसी नियम पर विवाह करना स्वीकार करलिया कि वह उसका थोडा छुडा देगा नहीं तो वह सच्चा राजपूत नहीं है, अलीके पुत्रोंके धर्महेतु मरणके पारितोषकका समय उस कठिन कार्यके निमित्त निश्चय किया गया, पृथिवीराजने ५०० मनोनोत घुडसवारोंका एक दल एकत्रित करलिया, उसकी प्रियतमा सुन्दरी ताराने भी उसके यश और दुःखमें भागप्राप्त करनेके निमित्त उससे अनुरोध किया तब पृथ्वीराजने उसको साथ लिया, पृथ्वीराज उस समय थोडामें पहुँचा, जब कि ताजिया अर्थात् दोनों धर्मके हेतु मरनेवाले (हसनहुसेन) भ्राताओंका जनाजा आंगनमें रक्खा था, राजकुमारी तारावाई और पृथ्वीराजका सत्यस्नेही सदासंगी मित्र सेंगरा-विपति यह तीनों घुडसवार दलको छोडकर उस समारोहमें उस समय मिल गये, जब वह महलको गोखके नीचे होकर आरहा था, और जिस गोखमें अफ़गान सरदार नीचे आनेके लिये पोशाक पहन रहाथा, और जब उसने पूछा कि यह तीन अपरिचित घुडसवार कौनहैं, जो इस समारोहमें आकर मिलगयेहैं वह यह कह ही रहा था कि पृथ्वीराजके बरछे और उसकी सद्धर्मिणीके तीरने

उस अफगान सरदारको धराशायी करदिया, जबतक वह समारोह अपने आत-
कसे-सचेत हो तबतक यह तीनों नगरके फाटकपर पहुँचगये. जहाँ एक हाथीके
द्वारा इनका साग्री मारागया तारावाईने अपने खांडेसे इसकी सूंड काटडाली,
और हाथीके भागते ही वे लोग अपनी सेनामें जो पास ही थी जा मिले. अफगा-
नोंपर चढाई कर दी गई, और वह उस वेगके सामने न ठहर सके, जो नहीं भागे
उनको वहीं चकनाचूर करदिया गया और इस भांति पृथ्वीराजने अपनी
प्राणप्यारीके पिताके उत्तराधिकारको ग्रहण किया, अफगानके एक भाईने उसके
फेरलेनेके लिये युद्धमें अपने प्राण देदिये, अजमेरके नवाब मूलूखाने शिशोदीय
राजकुमारके सन्मुख स्वयं युद्ध करनेका विचार किया, पृथ्वीराजने इस अभि-
प्रायको जानकर स्वयं अजमेरपर चढाई की, अरुणोदयके समय वह शत्रुके
शिविरमें पहुँचगये और भीषण मारकाटके उपरान्त वितलीगढके नगरको दूसरे
भगेडों सहित जय करलिया. चारण कहताहै इस कार्यसे रजवाडेमें पृथ्वीराजका
यश छागया, एक सहस्र राजपूत श्रद्धा और भक्तिसे पृथ्वीराजके नक्कारेके
चारों ओर एकत्रित होगये, उनकी तलवार आकाशमें चमचमाती थी और
पृथ्वीको भयभीत करतीथी यह सब निर्वलके सहायक थे । मुसलमान लेखकों
द्वारा लिखित और प्रमाणित बात उसके यशमें × एक और ही है चाहै वह उस
आकास्मिक घटनासे अनभिज्ञ हैं । एक समय पृथ्वीराजने राणाको मालवेके
वादशाहके दूतके साथ नम्रतापूर्वक संभाषण करते देखा, पृथ्वीराजको यह
नम्रता असह्य हुई और-उत्तर दिया, राणाने व्याजस्तुतिसे कहा वास्तवमें तुम
बड़े प्रबल वादशाहोंके बांधनेवाले हो परन्तु मुझे अपने राज्यकी रक्षा करनीहै,
पृथ्वीराज सन्नोध वहाँसे चलागया, और सेनाको एकत्रित करके नीमच गया,
वहाँ उसने पाँच सहस्र घुडसवार इकट्ठे किये, देपालपुरमें पहुँचकर उसे लूटलिया
और वहाँके सरदारको मारडाला, इस उपद्रवके सभाचार पाकर वादशाह सेना
इकट्ठी कर मंडूसे चला, राजपूतकुमारने गुप्त होकर भागनेके बदले आगेवढकर
धावा किया, जिस समय शत्रु अपने ठहरनेका प्रबन्ध कररहेथे शिविरपर छापा
मारा, वादशाही मण्डपको पहचानकर कि जहाँ खोजे और स्त्रीही थीं वादशा-
हको बाँधलिया, और पृथ्वीराजके पीछे एक शीघ्रगामी सांडनीपर बैठादिया
गया, पीछाकरनेवालोंसे कहदिया कि यदि शान्त न रहोगे तो वादशाहके

× अपने मूलग्रंथमें टाड साहबने सहधर्मिणीका विशेषण एमेजो नियन लिखाहै जिसका तान्र्य
एमेजने नदीके किनारेके देशकी पत्नी है, उस देशकी स्त्री युद्धमें अपने पतियोंका साथ देती थी ।

प्राण जाते रहेंगे, और नहीं तो बादशाहको कोई दुःख देनेकी इच्छा नहीं है. केवल अपने पिताके चरणोंमें डालकर उसको स्वतंत्र करदिया जायगा, वहांसे बादशाहको सीधा चित्तौड़ लाया गया. और राणाके सन्मुख खड़ा करके पृथ्वीराजने कहा कि अपने दीन अहदीको बुलाओ और उससे पूछो कि यह कौन है, मालवेका बादशाह एक मास तक चित्तौड़में बन्दी रहा, और अपनी स्वतंत्रताके निमित्त अनेक घड़े देकर सम्मानसहित स्वतंत्र करदिया गया. पृथ्वीराज अपने निवासस्थान कमलमेरको चला गया, और इसी प्रकारके ऐश्वर्यशाली कर्म १३ वर्षकी अवस्थासे तेईस वर्षकी अवस्था तक करतारहा, यह कर्म इस देशके लिये आश्चर्यजनक घटनायें थीं, और भाटोंके वह परमप्रिय विषय थे।

जिसने इस भांतिसे ऐश्वर्य प्राप्त किया उससे कब आशा की जासकती है कि उसके भागमें अधिक दिन जीवित रहना हो इसका जीवन किसी तीर या खड्गसे शेष नहीं हुआ परन्तु विष द्वारा तब हुआ जब वह अपने भाई सांगाके भृत्यको बंधन कर रहा था, इस भृत्यके छिपे रहनेका स्थान उसके विवाहके कारण ज्ञात होगया था कि श्रीनगरके नायककी कन्यासे उसका विवाह होता है उस नायकने भयसे उसकी रक्षा की थी।

उसी समय उसको उसकी बहनका पत्र मिला जो बड़े शोकके साथ लिखा गया था, कि उसका पति सिरोहीकुमार उसके साथ अत्याचार करता है उस आपत्तिसे बचनेके लिये वह पिताके यहां आना चाहती है जबसे वह अफीमका सेवन करने लगा है तबसे अपनी खाटके नीचे उसे पृथ्वीमें सुलाता है पृथ्वीराज तुरंत चलपड़ा और आधी रातको सिरोहीमें पहुँचा और महलमें घुसकर बंदूककी नली अपने बहनोईके कंठमें रखकर उसकी निद्रा भंग करदी, उसकी स्त्रीने उसके अत्याचारोंपर ध्यान न देकर मनुष्यतासे दयार्द्र हो भाई पृथ्वीराजसे उसके प्राणदानकी भिक्षा मांगी पृथ्वीराजने उसको क्षमा किया, और यह कहा यदि वह दासभावसे अपनी स्त्रीके जूते शिरपर रखकर स्त्रीके समीप खड़ा हो और उसके चरणोंको स्पर्श करे तो क्षमा करूंगा, यह अपमानकी पराकाष्ठा थी उसने पृथ्वी राजकी आज्ञाका पालन किया और उसका अपराध क्षमा करदिया गया. पृथ्वीराजने उसे अंकभर लिया, और पांच दिन उसके यहां अतिथिरूपसे निवास किया, इस पाभूरावको एक प्रकारके बहुत उत्तम लड्डू बनाने आते थे, अपने सालेको विदाके समय उसने उसमेंसे थोड़ेसे लड्डू दिये, कमलमीरके पास आकर पृथ्वीराजने उन लड्डूओंमेंसे एक दो खाये परन्तु जब मामादेवीके मंदिरके समीप आया तब

उससे आगे न बढ़ागया, यहांसे उसने अपनी प्राणप्यारी ताराके पास संदेशा भेजा कि वह आकर उससे अन्तिम भेंट करले, परन्तु वह विष इतना तीव्र था कि ताराके गद्दीसे नीचे आनेके पूर्व ही उसको मृत्युने दाबलिया, ताराने तुरन्त आकर विचार करलिया, चिता चिनीगई और वह वीर पृथ्वीराजके मृतक शरीरको गोदमें लेकर सूर्य लोककी इच्छा करके उसमें बैठगई, इस भाँति शीशो-दिया राजकुमार और विदनौरके सूर्यका अस्त हुआ, ऐसे उदाहरणोंसे ही हम इन मनुष्योंके रहनसहन पर सम्मति प्रगट करसकतेहैं, यदि सिरोहीका नायक अपना विषमय मिथान्न पृथ्वीराजको न देता तो पृथ्वीराज अपने वीर और उत्तराधिकारी भ्राता सांगासे कहीं बढ़कर यशके साथ बाबरका सामना करता, इस बातका विचार कर्तव्य है कि वह अपने रणकौशलसे और विजयकी लालसासे जो उसके यशको बढ़ातीथी अधिक सफलता प्राप्त करता ।

२० अक्टूबर हम दुपहरतक रुकेरहे जिससे कि नौकर चाकर भोजन बनाले और मारवाड अर्थात् मृत्युलोकमें जानेको उद्यत होलें, वह घाटी जिसमें होकर हमको उस देशमें जाना होगा बहुत भयानक बताई गई थी, फिर इस ध्यानसे कि हाथी और घोड़े अंकुश तथा चाबुकके प्रयोगसे उस स्थानमें होकर चले जाया करतेहैं, हमने वहां होकर जानेका निश्चय किया दुपहरको डेरे उखाड दिये और जब असवाव बांधा जा रहा था, हम तीन वजेतक रुकेरहे, लैनडोरी अगाडीका डेरा और मार्गशोधक मंडली भेजदीगई, हम अपने चित्तमें ध्यान कररहेथे कि रात्रि वहां वीतैगी जहां मेवाड और मारवाडकी प्राकृतिक सीमा है, और जिस स्थानके लिये हम सुनचुकेथे कि बहुत चौड़ा है, उस घाटीकी चर्चाने यदि हमारी विपत्तियोंको न बढ़ादिया होता, यदि जहां तहां फैलेहुए गड्डोंको आगे बढ़ानेमें पूरा घंटा न लगगया होता, तो हम शीघ्र पहुँचते, परन्तु एक मील तक हमको इतना चौड़ा मार्ग भी नहीं मिला जिसमें होकर लदाहुआ हाथी सुखपूर्वक चलाजाय, यह मार्ग क्षितिजसे ५५ अंशपर था, और उसके दोनों ओरको ऊंची नीची घाटियोंमें होकर जलके स्रोते कलकल शब्द करते वह रहेथे, जब हम इस पहले मार्गके नीचे तक पहुँचगये, तब विदित हुआ कि मेरे मित्र वूंदीनरेशका दियाहुआ चैतन्यमनिका (घोडा) पैर फिसलनेसे लुढ़ककर नीचे जापडाहै, उसकी काठीका तंग टूटगया था, उससे कुछ आगे बबचीं दिखाई पडा, वह दुःखी बिखरी हुई बबचींखानेकी चीजोंको बटोररहा था, और उसका ऊंट झोलेको फिरसे लादनेमें दुःखी करताथा, अगले मीलमें जाकर

जब हम कमलमीरके दुर्गके नीचे पहुँचे तब बहुत सीधा होगया यह बुर्ज चटानके ऊपर पच्चीकारीके कामका ५०० फुट ऊँचा खड़ा था, यह दृश्य बड़ा ऐश्वर्य-शाली और रमणीय था, नाना प्रकारके ऊँचे नीचे शिखरगल पर्वत चारों ओर विराज रहे थे, अस्ताचलको जाती हुई सूर्यकी किरणें प्रतिबिम्बित होकर कुछ समयके लिये हमारे अंधेरे मार्गमें चमकने लगीं। और गुलाबी मार्गपर गुलाबी रंगकी दीखने लगीं। वनके फूले फले वृक्षोंको देखकर जो पहाड़ीपर फैले हुए थे, और उस अलवेली धाराके किनारे किनारे पर थे जिसको हमने अपने मार्गमें कई बार पार किया था, इन सब विपत्तियोंके विद्यमान रहते भी जो उस विशाल और अपरिचित दृश्यके कारण अथवा असह्य ठंडी हवाके कारण उपस्थित हुई थी मेरा आनंद बढ़ता ही गया, मैं एक सप्ताह पूर्व सहस्रों विपत्तियों भोग चुका था और अब पैदल उस ऊँचे नीचे मार्गमें होकर जा रहा था, उस जगहके गोल पत्थरोंपर होकर कुदना पड़ता था जो नदीमें लुडक आये थे।

एक ऐसे स्थानपर जहाँ जलने रुककर एक सरोवर बना दिया था, छोटे कैदीको विश्वास था कि वह अपने घोड़ेको पार कुदा लेजायगा जैसे ही वह बाईं ओर मुड़ा और जिस समयमें एक ऊँचे स्थानको कूद रहा था, अकस्मात् एक भयानक दृश्य हुआ कि घोड़ा अपने सवार सहित जलमें मग्न होगया; यह कष्ट बहुत ही अल्पसमय तक रहा कि वह एक गोता खाकर बाहर निकल आया, यह उसके जन्ममें बहुत ही सुअवसर हुआ, हत्थीदुरीमें [यह उचित नाम उस स्थानका है चट्टानोंने जहाँके मार्गको परकोटेकी भांति रोक रक्खा है] हमारा विचार हुआ कि रातभर रहें, परन्तु वहाँ कोई इतना चौड़ा भी स्थान नहीं था कि जिसमें एक डेरा भी खड़ा कर दिया जाता, पिछले दलको आज्ञा दी गई कि वह अपने गट्टे वहाँ इकट्ठे करें और प्रातःकाल तक जब अगाड़ी प्रस्थानका समय हो सके रहें। रात्रिका अंधकार बड़ी शीघ्रतासे बढ़ता चला आ रहा था, और हम उस घने अंधकारमें नदीके किनारे २ आगेको बढ़ रहे थे, नदीके जलका कलकल शब्द हमारा पथदर्शक था, प्रत्येक विवरसे जल निकलकर जो बड़े उद्वेगसे नदीमें मिलता था, उसके कारण हम बड़ी दुविधामें पड़ जाते थे, उस उतारके अन्तमें मार्ग कुछ चौड़ा होगया, और गहरी नदी मारवा-डके मैदानसे मिलनेके लिये बड़े-शब्दसे बहने लगी, मेघरहित आकाशमंडल हमारे चारों ओरकी पर्वतश्रेणियोंके ऊपर गुग्मजके समान था, उस समय

किसी एक स्थानसे देखनेमें तारागण बड़े चमत्कृत जानपडतेथे, हम मौनरूपसे आगेको बढे जारहेथे और इसी विचारमें मग्नथे कि हमारे इस दलपर बनैले बाध और लुटेरे पर्वतियोंका क्या अत्याचार होगा, कि अकस्मात् एक झाडमेंसे कुछ प्रकाश दृष्टि पडा और वहां वटवृक्षके नीचे अग्निके चारों ओर उतरे हुए घुडसवारोंका एक दल जानपडा ।

हम वहां ठहरगये और युद्धका मन्तव्य करने लगे हमारे पथदर्शकोंने हमको सुभीतेका स्थान बता दिया, और मैदानमें पहुँचनेसे पहले हमकों ओससे वचनेका समय मिला, वहां जलकी भी बहुतायत थी, उस समय सचेत रहना अच्छा था, परन्तु हम ठहरगये कारण कि अंधकारके कारण पांचमीलके अगम्य वन, जिसमें किंचित् भी दायें बायें होनेसे हिंसक बाघोंके मुखमें पहुँच जाते अथवा वैसीही मैर जातिके दलमें जा फँसते, अब हमने एक बार फिर उपरोक्त समूहकी ओर देखा, चाहैं प्रातःकाल होनेकी लालसा शीत और भूखके कारण विलकुल मंद हो चुकी थी, परन्तु यह बात असंभव थी कि विना किसी उत्कंठाके हम अपने सामनेके दृश्यका विचार करते । पचीस या तीस लम्बे शस्त्रधारी मनुष्य अपने रात्रिके अलावके चारों ओर बैठे थे और परस्पर धीरे २ बात चीत कर रहे थे, और परस्पर एक दूसरेको हुक्केकी नगाली देते थे, उनके काले धूँधरवाले बाल और पचरंगी पगडी कहेदेती थी कि यह मरुदेशके रहनेवाले हैं । कभी काले पर्वतियोंने किसी सत्पुरुषको मारडाला होगा, उसके स्मरणकी चबूतरी इस दलके नायककी बैठनेका स्थान था. नायककी पगडीमें उसकी श्रेष्ठताकी जतानेवाली एक सोनेकी शृंखला बँध रहीथी, और वह मृगचर्मकी बंडी पहरेहुए था, मैंने उसको और उसके दलको नियमित प्रणाम अर्थात् [राम राम] किया, और उनके सरदार गनो हापतिकी कुशल क्षेम पूछी; जिसके अनुग्रहसे उन लोगोंने ध्यान पूर्वक बात चीत की, पचास वर्ष पहले जबसे गोद्वारके जिलेको मेवाड खोजा था यह स्थान मेवाड और मारवाड राज्योंकी सीमा थी, इस स्थानपर अनेक क्लेशभरी घटना हो चुकी थीं, उसके समीप पहुँचनेसे ज्ञात हुआ कि यहां अनेक मृतपुरुषोंके स्मारक बने हुए हैं, प्रत्येक स्मारकपर अपने युद्धके घोडेपर चढे बल्लम साधे हुए उस सवारकी मूर्ति खडी है और यह मूर्ति इस बातका स्मरण दिलाती थी कि अमुकपुरुष इस प्रकारसे इस घाटीकी रक्षा करताहुआ

अथवा भैरजातिसे पशुओंको लुडाता मारागयाहै प्रत्येक समाधिपर एक वर्गाकार पत्थरमें मितिआदि लिखी हुई थी, कि वह वीर कब सूर्यलोकको गया अर्धरात्रिसे अधिक होचुकीथी और अब कोई आश्रम नहीं थी कि हमको अपनी भुधा शांत करनेको कुछ मिल सकैगा, डाक्टर डंकन और केप्टिन वौने हाथीपरसे झूल उतार ली, और उसमें लिपट गये, और सरदारकी समान उसके पासही वीर मनुष्योंके किसी स्मारक पर बैठ गये, मैं तुरन्त ही उनको चीते मेरे भूँख और थकावट आदिके ध्यानकी सुखमई विस्मृतिमें छोड़ उस दलमें मिलकर उस कहानीको सुनने लगा जिसे वे कहकर अपनी आधी रातके समयको व्यतीत कर रहे थे, उसको मैं दूसरी बार कह भी सक्ता हूं, परन्तु उस दृश्यका चित्र खींचना चतुर चितरेकी लेखनीका काम है यह सल्वेटर रोजाके करनेका काम था, केप्टिन बोका चित्र भी यदि उसको चित्रकारीका अवसर मिलता तो मुझको भलीभाँति प्रसन्न करदेता मेरे अनेक मित्रोंने इसी स्थानपर पहाडियोंसे युद्ध किया था, और इन छत्रियोंमें उनके कुटुम्बियोंकी भस्म दब रही थी, उन घटनाओंका लौटना इस शांतिके समयमें असंभव था, कारण कि भील और भैर शब्द अब लुटेरे वाचक नहीं रहे थे, इस्से अच्छा अवसर पर्वतियोंके प्रसंगका और नहीं होगा, मैं पाठक महोदयोंको लौटाकर फिर कमलमीरके खड्डोंमें ले चलता हूं कि वहां जाकर राजस्थानकी वन्य जातियोंका इतिहास सुनै।

सत्ताईसवां अध्याय २७.

माहीर वा मीराजाति;—उनका इतिहास और आचार व्यवहार;—गोकुलगढके डांकू;—गाडोराके सामन्त अजीतसिंह;—मारवाडका समतल क्षेत्र;—रूपनगरके सामन्त;—द्वैसुरीसम्बन्धीय इतिहास;—मेवाडके शीशोदियोंके साथ मारवाडके राठोरोंकी तुलना;—राजपूतोंके प्रमादमूलक इतिहासगाडोरा;—राणाके दूत कृष्णदास;—मेवाड और मारवाडमें स्थानीय विभिन्नता;—प्राचीन विवादका कारण;—आओनला और वावुल;—नादोल;—चौहानजातिकी श्रेष्ठता;—वातिन्दाके गोगा;—आजमीरके लाक्षा;—उनका नादोलास्थ प्राचीन दुर्ग;—जैनियोंके वहांके स्मरणचिह्न;—हिन्दुओंके प्राचीन तोरण;—खोदितलिपि;—नादोलाका प्राचीन इतिहास इन्दुरि;—वाणिज्य प्रधान नगर पाली;—वाणिज्यद्रव्यावली;—कवि और कारिकाकारगण;—“पुण्यगिरि”—कङ्कनी;—वाणिज्यद्रव्य लेजानेवाले दो सम्प्रदायोंमें विवाद;—भाटोंका निष्ठुरतामूलक आत्मनाश;—झालामन्दजोधपुरमें यात्रा;—पोकर्ण और निमाज इन दो सामन्तोंद्वारा सम्बर्द्धना;—दोनों सामन्तोंका जीवनचरित;—निमाजके सुरतानका स्वार्थत्याग;—राजधानीमें वस्त्रालय स्थापन;—जोधपुरराजसभामें सम्बर्द्धनाकी व्यवस्था ।

माहीर वा मीराजाति पहाडकी रहनेवाली है और यह लोग जिस प्रदेशमें रहतेहैं साधारण लोगोंमें उसका नाम माहीरवाडां है । माहीरशब्द केवल स्थाना-

न्तरका परिचय देता है; पुराने माहीर लोग भारतवर्षके प्रसिद्ध आरंभके अधि-
वासी मीना वा माहीना जातिसे उत्पन्न हैं; यह माहीरोत वा माहीरावत नामसे
पुकारे जाते हैं। कमलमीरसे आजमीरतकके स्थानोंमें आरावलीकी जो शिखर
श्रेणी विराजमान है, उसको ही माहिरवाडा कहते हैं, इसका परिमाण लम्बाईमें
पैंतालीस कोश और चौड़ाईमें जगह २ तीनसौ दश कोश तक है। इस अनोरम
दुर्गप्राकारस्वरूप शिखरश्रेणीका विवरण राजपूतानेके प्राकृतिक भूवृत्तमें विस्तार-
से लिख दिया है। यह समुद्रतटसे तीन सहस्रसे लेकर चार सहस्र फीट तक ऊंची
उठी हुई है और अनेक प्रकारके प्राकृतिक पदार्थोंसे परिपूर्ण है। आरावलीके
इस अंशमें वैज्ञानिक पर्यटक और तत्त्वानुसंधानकारी लोगोंके लिये अवश्य
जाननेके योग्य इतने पदार्थ विद्यमान हैं कि सम्पूर्ण संसारके दूसरे किसी प्रान्त-
में उतने नहीं हैं। इतिहास जाननेवालोंके लिये प्राचीन रहनेके मन्दिर दुर्गादि-
का लुप्त विवरणसंग्रह, आविष्कार, गवेषणा और उसके साथ प्राकृतिक विज्ञानके
प्रत्येक विभागका विशेषतः उद्भिज्जतत्त्व और प्राणितत्त्व सम्बन्धी जाननेयोग्य
बहुतसे विषय इस प्रान्तमें विराजमान हैं।

माहीरजातिका सविस्तार विवरण, उनका आचार व्यवहार अप्रयोजनीय नहीं
है किन्तु यहांपर उसको अनावश्यक समझकर ही हम केवल कई मोटी २ बातों-
को लिखकर उस अभावको दूर करेंगे।

माहीर लोग मीनाजातिके अत्यन्त प्रधान विभाग चिता नामक शाखासे उत्पन्न
हैं। हम स्थानान्तरमें इस जातिके वृत्तांतको विस्तारसे लिखेंगे। मीनालोगोंकी
जेता जाति राजपूतोंकी समान अनेक शाखाओंमें विभक्त है। यह अनेक शाखा-
ओंमें विभक्त पहाड़ी जाति अपनेको जेता राजपुरुषोंके साथ समक्षेत्रसे उत्पन्न
हुआ कहकर बड़े गौरवके साथ परिचय देती है; किन्तु इस बातसे उनके वंशका
कलंक ही प्रगट होता है। चितामीना लोग दिल्लीके अन्तिम चौहान सम्राट्के
पौत्रको अपना आदि पुरुष कहते हैं। चौहानराजके भतीजे लाक्षाके अनल और
अनूप नामक दो पुत्र थे। जयशाल मीरकी कई राजकुमारियोंके साथ उक्त वंशवालों
का विवाहप्रस्ताव करके जयशालमीरराजने नारियल भेजा; किन्तु कन्याओंके
मातामह वंशके तत्त्वानुसंधानसे ज्ञात होता है कि वह मीनाजातिकी एक वेश्याके
गर्भसे उत्पन्न हुई थी; अतः वह शीघ्र ही अजमेरसे निकाली जाकर अपने माता-
मह वंशके लोगोंमें आश्रय लेनेको बाध्य हुई थी।

एक मीनासामन्तकी कन्याके साथ अनलका विवाह हुआ और उस स्त्रीके गर्भसे चित्ताका जन्म हुआ चित्ताके वंशवाले माहीरवाराका सर्वोपरि एकाधिपत्य करते आये हैं । चित्ताके जो उत्तराधिकारी लोग अजमेरकी उत्तर सीमामें रहते हैं, पन्द्रह पुरुष हुए * जिस समय इस जातिके सोलहवें पुरुषने अजमेरके हाकिमद्वारा मुसलमानधर्ममें दीक्षित होकर दाऊदखां नाम धारण किया, उस समय यह लोग मुसलमानजातिमें मिलगये । दाऊदखां आथुननामक गाँवमें रहताथा इस कारण उस सम्बन्धसे महारोतोंका अधिपति “आथुनकाखां” इस नामसे विख्यात है । आथुनके ग्रामोंमेंसे चाङ्ग, झक और राजसिनगर सबमें प्रधान हैं । अनूपने भी एक मीनाकुमारीके साथ विवाह किया, इस सम्बन्धसे उसके बुडारनामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ । बुडारके वंशवाले अपनी प्राचीन रीति नीति और धर्मकी वरावर रक्षा करते चले आते हैं । बुडार, बाहिरवाडा, मन्दिला आदि नगर उनके प्रधान निवासस्थान हैं । यद्यपि इन मीनालोगोंके वंशमें राजपूतोंका रक्त मिलनेसे उत्कर्षता आ गई है, तथापि वे दुश्चरित्रता, अत्याचार, उपद्रव आदिके लिये बहुत दिनसे प्रसिद्ध हैं । विख्यात चंदकाविने लिखा है कि, अजमेरके सुप्रसिद्ध राजा विशालदेवने इस मीनाजातिको ऐसा दमन किया कि वे लोग अजमेरकी सड़कोंपर जल ढोनेका कार्य करनेको बाध्य हुए । इससे प्रगट है कि इस जातिका बहुत कालसे दुर्दान्त स्वभाव था । अन्यान्य पहाड़ी जातियोंकी सभान उन लोगोंने जब अधीश्वरशक्तिका हास देखा, तबसे ही अत्याचार करना आरंभ कर दिया । अजमेरके चौहानोंके साथ मन्दरके पुरीहरलोगोंके युद्धमें जब पृथ्वीराज प्रथम रणक्षेत्रमें गयेथे, तब उनके विरुद्ध गिरिपथरक्षाके निमित्त चार सहस्र धनुर्धारी माहीर नाहर रावोंके अधीनमें नियुक्त हुए थे । कविवर चन्दने अपने काव्यमें उनकी वीरताके सम्बन्धमें निम्नलिखित प्रकारसे वर्णन किया है:— × “जहां अगणित शिखरश्रेणी आपसमें मिली हैं, माहीर और मीनागण उस स्थानमें एकत्र हुए । मन्दरराजने आज्ञा दी कि गिरिपथ रक्षाकरना ही होगा,—चार सहस्र वीरोंने इस आज्ञाको सुनकर कालान्तक कालदूतके समान

* महाशय टाडके समयकी गणनासे १५ पुरुष समझने चाहिये ।

× कर्नल टाडने यहांपर टीकेके बीचमें वर्णन किया है कि आरावलीके किस प्रान्तसे मन्दर आक्रमण करनेका उद्योग हुआ, मैं उस स्थानके आविष्कार करनेमें असमर्थ हूं हम इस समय जिस पहाड़ी मार्गपर उपस्थित हैं कदाचित् यही मार्ग होगा, क्योंकि यह प्रगट है कि अजमेरकी सीमान्तसे आक्रमणका उद्योग नहीं किया गया ।

उसका पालन किया । शुभलक्षणाँके विना मीनाजाति कभी आगे चरण नहीं धरती,—उनका वाण छोडना अव्यर्थ है,—शरीर इन्द्रवज्रके समान है और वह लोग प्राणपणसे प्रतिज्ञाका पालन करते हैं—वह मन्दौरके सम्मान और भूरक्षक स्वरूप हैं, आजकल उनके दुर्गकी चोटीपर स्वाधीनताकी जयपताका उड रही है—समतल स्थानोंसे बहुतसा द्रव्य लूटकर वह अपने स्थानोंमें लाते हैं । गिरिपथके अन्धेरे स्थानमें उस जातिके चार सहस्र वीर अर्द्धचन्द्राकार धनुर्वाण सहित अति-छिपे स्थानमें विवधर सर्पके समान चुपचाप शत्रुओंके आनेकी प्रतीक्षामें बैठ गये ।”

“ चौहानके पास समाचार आया कि अत्यन्त साहसी मीनालोग धनुष वाण हाथमें लिये पहाडी मार्गपर खडे हैं । वलात्कारसे उस स्थानको भेदकर जानेका किसे साहस होगा ? भूखासिंह अपने लक्ष्य पशुको देखनेके समय जैसे महा क्रोधके साथ तर्जन गर्जन करता है, उसको भी वैसा ही भयानक क्रोध आगया । उसने साहसी काणाको बुलाकर उन हतभाग्य मीनालोगोंको उचित दण्ड देनेके लिये और पहाडी मार्ग साफ करनेकी आज्ञा दी । पर्वतके समान अटल काणा प्रस्तक नवाकर विदा हुआ और अभीष्टकार्य साधनेके लिये अग्रसर हुआ । यद्यपि ससैन्य काणाने आगे बढ़नेमें देर नहीं की थी, तथापि इस अवसरमें मीनालोग सुमेरुकी समान अचलभावसे स्थित होगये । देवराज इन्द्रके वज्रकी समान उनके वाणोंने साक्षात् मृत्युके समान निकलकर सूर्यके प्रकाशको ढक लिया । प्रवल वायुके लगनेसे वृक्षसमूह भयानक शब्दसे जैसे उखडते हैं, उसी प्रकार उनके वाणोंसे विधकर घुडसवार लोग एकरकरके गिरने लगे और उसके साथ ही कवच और अस्त्रादिकोंकी विचित्र ध्वनि रणक्षेत्रमें सुनाई देने लगी । काणोंने घोडेसे उतरकर शत्रुओंके साथ खड्गयुद्ध आरम्भ करदिया । जलते हुए अग्निकुण्डसे बचनेकी इच्छासे पक्षीगण जिस प्रकार पंख फैलाकर आकाशमें उडनेकी चेष्टा करते हैं, वैसे ही उस प्रधूमित रणक्षेत्रसे पक्ष पुच्छ वाण आकाशमें उठने लगे । जैसे मीनालोग जालके छिद्रोंमें होकर भागजाते हैं, वैसेही सैनिकोंके हृदय विदीर्ण करके वाण वर्षा पीठद्वारा निकलने लगी । पिशाचगण रक्तकी नदीमें बडे आनन्दसे नाचने लगे ।”

पहाडी वीर नेताने काणाके साथ युद्धमें प्रवृत्त होकर एक अज्ञातसे ही उसको विचलित कर दिया, किन्तु कुछ क्षणमें ही काणाने शीघ्रतासे एक चोटमें ही उस वीरनेताको भूतलशायी करदिया; सुमेरुके काँपनेसे जैसा शब्द होता है

उसके गिरनेपर भी वैसे ही शब्द सुनाई दिया । उसही मुहूर्तमें क्रुद्ध हुए व्याघ्रकी समान नाहरआजा दिखाई दिया; उस वीरने अपने मृत अधिनायक और भ्राता×की प्रतिहिंसा चरितार्थके लिये बड़े भीषण स्वरसे मीनालोगोंको उत्तेजित किया और उनके हृदयमें दूने उत्साहको भरदिया । इधर पहाडी सेनापतिके गिरनेपर चौहानपतिने अपनी सेनाको भीषण जयध्वनि करनेकी आज्ञा दी । आज्ञा पाते ही उन्होंने आकाशभेदी शब्दसे जयध्वनि की, यद्यपि उसको सुनकर मीनालोग क्षणमात्रके लिये स्तंभित होगये, परंतु कुछ ही देर पीछे उनका साहस चमक उठा । चौहान सेनापति स्वयं रणक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ । सोमेशनंदन की पताकाएँ वर्षाकालीन आपाढकी प्रथम जलधाराकी सपत २ शब्दसे उड़ने लगी और उसकी सेनाके अजमेर और मन्दोरके बीचकी सीमा अतिक्रम करते ही चारों ओरसे जयजयकी ध्वनी सुनाई देने लगी । हाथियोंकी चिंघाड़ और घोडोंके हींसनेसे चारों ओर भय छागया । उसी समय गिरनार और सैधवी सेना वसंतकालीन फूलोंके नाना प्रकारके रंगोंकी समान पताकाएँ हाथमें लिये मंदोरके पक्षमें आकर मिलगई । दोनों सेनाके लोग कवचधारी थे; केवल नेत्र और नखोंके अग्रभाग ही खुले हुए थे । प्रत्येक वीर खड्ग निकालते समय निज २ कुलदेवताके नामोच्चारणसे रणक्षेत्रको प्रकम्पित करने लगा ।

पृथ्वीराजकी कान्ति इन्द्रके समान और पुरीहरपतिकी प्रभा प्रभातकालके तारोंकी समान होगई; दोनोंके शरीर अमेघ कवचोंसे ढके हुए थे । चौहानपतिने बड़े वेगसे अपने खड्गको घोंडेपर रक्खा, घोडा तत्काल ही पृथ्वीपर गिरगया, नाहर भी तत्काल सावधान होगया और दोनों परस्पर खड्गयुद्ध करने लगे, दोनों ओरके सैनिकोंने दुर्गाकारसे दोनोंको घेर लिया । प्रभारपतिके पताकाधारी वीर दौडते हुए काले बादलोंकी समान आगे बड़े और चमकते हुए खड्ग म्यानसे बाहर निकाल लिये । मन्दरेश्वरका भ्राता मोहन उनके साथ लड़नेके लिये आगे बढ़ा, एक दूसरेको देखनेके पीछे खड्गयुद्ध आरंभ हुआ, प्रभारपतिका शिरस्त्राण खड्गकी चोटसे दोटुकडे होगया । कुछ देरमें ही चाओन्द दाहिमा क्रोधमें भरकर आगे बढ़ा और बड़ा भारी बल्लभ उठाकर पुरीहरके मारा । एक चोटमें ही उसका प्राणपक्षी शरीररूपी पींजरेसे उड़गया और जीवनशून्य शरीर कटे हुए वृक्षकी समान पृथ्वीपर गिरगया ।

× मीनालोगोंके अधिनायकको सम्मानार्थ भ्राता कहकर पुकारते हैं ।

“चंदकविने अपनी कविताको अत्युक्तियोंसे रँगाहै” यह बात मानलेनेपर भी यह अवश्य मानना होगा कि वर्तमान उन्नीसवीं शताब्दीमें माहीरलोग जैसे असीम साहसी और दुर्दान्त लुटेरे कहे जातेहैं, बारहवीं शताब्दीमें वह ठीक वैसे ही थे । मुगलोंके शासनमें वह एक २ बेर शेरनवाकर फिर शिर उठाते चलेगये यहांतक कि जब महाराष्ट्र जाति इस प्रदेशमें आई तबसे माहीर लोगोंने फिर सम्पूर्ण शक्तिका सञ्चय करके अपने शासक राजपूतोंके संग अत्याचार उपद्रव करना आरंभ किया । किन्तु सन् १८२१ ईस्वीमें जब उनका भीषण आत्याचार उपद्रव निवारण करना अत्यन्त प्रयोजनीय होगया, तब उनके दमन करनेके निमित्त सेनाके तीन दल भेजे गये, उनसे परास्त होकर सबने अधीनता स्वीकार की, किन्तु उससे बुडार और चित्ताके वंशवाले अनेक लोग व्यक्तिगत-सम्पत्तिगत क्षतिग्रस्त हुए थे । कई शताब्दीतक इनमेंसे बहुतसे पहाडी माहीरलोग देशवासियोंको महाभयके कारण हो रहेथे । हमने सहजमें ही उनको दमन और वशमें कर लिया, यह देखकर हमारे मित्रोंने बडा आश्चर्य्य माना । माहीरलोग अपनी रक्षाके लिये जिस भावसे खडे होतेहैं, वह बिलकुल साधारण है; राजपूतलोग जाँ इतने समयतक उन क्षीणबल पहाड़ियोंके अत्याचार उपद्रवको सहते रहे यह उनके लिये लज्जाकी बात है । माहीर, महाराष्ट्र, पिण्डारी और पठानलोग किस कारणसे बलवान और प्रताप और प्रभुत्वके प्रकाश करनेमें समर्थ हो उठे थे, यह बात गूढ़तत्त्वानुसंधानसे सहजमें ही जान लीगई अर्थात् राजवाडाके राजपूतोंमें आत्मविग्रह और राजनैतिक विप्लव ही इसका मूल कारण है । उक्त चारों जातियोंने सामान्य लूट मार करनेवालोंके रूपमें राजपूतोंके आत्मविग्रहकी सहायतामें मस्तक उठाया । जब मेवाडके सामन्तगण पहाडी माहीरोंके दमन करनेके लिये एकत्रित होते, तब मारवाडके सामन्तलोग उनको आश्रय और सहायता देते; मारवाडियोंके किले सब समय शरणागतोंके आश्रय देनेमें प्रस्तुत रहते थे, इस लिये वह मारवाडके रावत वा अधिनायक लोग सब सम्प्रदायोंसे धन लेने और सबको आश्रय देनेमें कुण्ठित नहीं होते थे । किन्तु जिस समय अँग्रेजी सेना उन माहीरलोगोंके दमन करनेके लिये आगे बढ़ी थी, तब उनको पहलेकी समान कहीं भी सहायता नहीं मिली । प्रत्येक आश्रय स्थानका द्वार उनके विरुद्धमें बंद होजानेपर उन्होंने चारों ओर शत्रुओंको देखा—इन्द्रजालकी समान सहसा दशाका परिवर्तन देखकर वह स्तंभित होगये और जिस समय माहीरलोगोंका नायक और

उसके अनुचर कल्पित आश्रयस्थानमें पकड़े गये तथा मध्यरजनीके आक्रमणसे उनका दलबल छिन्नभिन्न होगया, उस समय उन्होंने जिधर दृष्टि डाली उधर ही प्रत्येक पहाड़ी मार्गपर लालबस्त्र धारिणी सेनाको देखा; तब उनका साहस जाता रहा और क्षमा मांगनेको बाध्य हुए ।

इस समय एक अंग्रेज सेनापतिके अधीनमें इस पहाड़ी माहीर जातिका एक सेनादल तैयार हुआ है और समयपर यही एक उपकारी सेना गिनी जायगी इसमें कुछ भी संदेह नहीं है । * यद्यपि यह लोग उपद्रवकारी और अत्याचारी हैं, किन्तु शिरोमालामें जो बांधका वर्णन किया है, यह लोग उसी प्रकारका बाँध बंधन वा खेतीका काम करेंगे । माहीरवारामें एक ऐसा जिला स्थापित हुआ है कि किसी समय उसके द्वारा राणाको लक्षमुद्रा वार्षिक आय होसकेगी ।

इन लोगोंके कितने ही आचार व्यवहार इनसे नीचेकी भूमिमें रहनेवाले प्रतिवादियोंकी अपेक्षा ऐसे विचित्र और विभिन्न हैं कि उनमेंसे कई एक वर्णन हम यहां कर सकते हैं । मीनालोगोंका चरित्र और इतिहास आगे विस्तारके साथ लिखा जायगा, इस लिये उसी जगह उनके चरित्रके प्रधान अंश—शुभाशुभ लक्षण संबंधमें कुसंस्कारादि वर्णन करनेकी इच्छा है; इस समय केवल स्त्रियोंके साथ उनके आचरणकी दो एक बातें लिखते हैं । माहीरलोगोंके पूर्वपुरुषोंने जो विधान बांधा था, यह लोग आजतक उस ही विधिका पालन करते हैं । यह लोग विधवा स्त्रीके संग विवाह करनेमें कुछ भी संकोच नहीं करते । इसका नाम “ नाथ ” विवाह है, और माहीरलोगोंके सभ्य प्रभु राजपूत विवाहके समय कागलि नामक दण्डस्वरूप पाँच रुपये लेते हैं । ऐसे विवाहके समय वरके शिरपर प्रचलित खजूरके मुकुटके बदले पगड़ीके ऊपर पीपलकी पवित्र शाखा लगाते हैं । साधारण हिन्दूविवाहकी अनेक रीति नीति ही पालन करते हैं । “ सातफेरे ” अर्थात् सात अन्नसे भरेहुए कलश तलाऊपर रखकर सात-वेर प्रदक्षिण,—“ गठजोडा ” अर्थात् वरकन्याके वस्त्रमें ग्रन्थिवन्धन और वरकन्याका पाणिग्रहण आदि प्रथा माहीरलोगोंमें प्रचलित है । यहांतक कि उत्तर प्रान्तके जो माहीर मुसलमान होगयेहैं वे भी इस विवाहके समय अपने पूर्वपुरुषोंकी अवलम्बित प्रथाका ही अनुसरण करते हैं और ब्राह्मण पुरोहित परिणय कार्य करते हैं । माहीर जातिके आचार व्यवहारके तत्त्वानुसंधान कालमें

* कर्नल टाड साहबने जिस सेनाके तैयार होनेकी बात ऊपर लिखी है, यह आजतक भारतेश्वरीकी सेनामें है और यह सेना “माहीरवारा सैन्य” नामसे गिनी जाती है ।

सुझको ज्ञात हुआ कि केवल यह लोग ही विधवा विवाह करते हैं ऐसा नहीं किन्तु अति प्राचीन कालसे ब्राह्मण और राजपूत जाति भी विधवा विवाहमें कोई दोष नहीं मानती * गिहौटगणके मेवाडमें राज्यविस्तार करनेके बहुतकाल पहिले जो याजक नागद ब्राह्मणलोग इस नगरमें आकर बसेथे उनमें इस प्रथाका प्रचलन रहै। जिन राजपूतोंमें इस विधवा विवाहकी प्रथा प्रचलित है वह सब इस स्थानके अतिप्राचीन निवासियोंके वंशधर हैं और इस समय राजपूतानेमें भूमिया नामसे कहे जाते हैं। पुराने काव्य-ग्रन्थोंमें जो चिनानो, खारवार, उताइन, दया आदि जातिका नामोल्लेख और इतिहास लिखा है, यह लोग उनके ही वंशमें उत्पन्न हैं, आरावली शिखरके स्थान २ में इस जातिके किसी २ मनुष्यको अब भी निवास करते देखा जाता है। किन्तु यह विधवा विवाह इस प्रदेशमें इतना अप्रकाशित बोध होता है कि नारीजाति सम्बन्धनीय वर्तमान विधिव्यवस्था और भी आधुनिक ब्राह्मण मण्डलीके द्वारा राजपूत समाजमें प्रचलित हुई है। माहीर लोगोंमें विवाहबन्धन जैसे सहज उपायोंसे सम्पादित होता है, वैसेही सहज उपायोंसे उस बंधनका विच्छेद भी होजाता है। यदि स्त्रीपुरुषोंमें परस्पर एक दूसरेका मन फटजाय, अथवा और किसी विशेष कारणसे परस्परका चिर विच्छेद आवश्यक हो तो स्वामी अपने दुपट्टेका कुछ हिस्सा फाड़कर स्त्रीके हाथमें देकर अपना स्वामी स्त्री सम्बन्ध छुडालेगा। त्यागीहुई स्त्री वह वस्त्रका टुकड़ा हाथमें ले शिरपर जलसे भरे दो कलश तलेऊपर रखकर जिस मार्गसे इच्छा होगी उसीसे चली जायगी, और जो पुरुष पहिले उस त्यागीहुई स्त्रीके शिरसे जलकलश उतारना स्वीकार करेगा स्त्री उसकोही अपना भावीपति समझेगी। यह स्त्री त्याग प्रथा केवल मीनालोगोंमें ही प्रचलित नहीं है किन्तु जाट गूजर, अहीर, माली और अन्यान्य वनैली शूद्र जातियोंमें भी भलीभाँति प्रचलित है। “जिहर लेआउर निकेला” अर्थात् “कलश लेकर चलीजाओ” यह बात माहीरवाराके पहाडियोंमें साधारण रीतिसे व्यवहार की जाती है।

इन लोगोंका देवाराधन, शपथग्रहण और अभिसम्पात् प्रदान बडा विचित्र है। सुसलमान धर्मवलम्बनमें “अल्ला” के नामसे वा प्रथम विधर्मी पूर्वपुरुष

* यहाँपर कर्नल टाडसाहबने अनुसंधानमें धोखा खाया है क्योंकि द्विजातियोंमें विधवा विवाहका कभी भी प्रचार न था केवल शूद्रोंमें था सो अग्र भी है। इस बातकी साक्षी इतिहास पुराण सब देरहे हैं, और न धर्मशास्त्रमें विधवा विवाहकी आज्ञा है।

“दूधदाऊदखाँ” के नामसे अथवा और भी प्राचीन पूर्वपुरुष “चित्तावडाकी आन” कहकर शपथ ग्रहण करतेहैं। दक्षिण प्रान्त निवासी माहीरगण भी शेषोक्त प्रकारसे शपथ ग्रहण करतेहैं। वह लोग सूर्यके नामसे “सूर्यकालोगान” कहकर शपथलेते हैं। अथवा अपने योगी याजकनाथके नामसे “नाथका आन” कहकर शपथ लेतेहैं। मुसलमान माहीरलोग इस समय शूकर नहीं खाते; किन्तु दक्षिण प्रान्त निवासी माहीरलोग सबकुछ खातेहैं, केवल अपने प्रतिवासी लोगोंके आदर्श और अपने प्राचीन योगी याजकनाथकी प्रीतिके निमित्त गो भक्षण नहीं करते। तीतर और मालेली नामके दो पक्षियोंको वह लोग शुभलक्षणवाले समझते हैं। माहीरलोग जिस समय लूटनेके अभिप्रायसे बाहर निकले उस समय यदि वाई-ओर तीतरपक्षी बोले तो उस दिन अपनी कार्य सिद्धि निश्चय ही समझते हैं। माहीरजातिका निवास सौराष्ट्रसे लेकर उत्तरमें चम्बल तक विस्तृत है। माहीर-वाडा इस समय मेवाडके राणाके अधिकारमें है। जितने माहीर सम्प्रदाय अत्यन्त दुर्दान्त हैं उनके दमन करनेके लिये राणाने उनके गाँव २ में छोटे दुर्ग बनवा दियेहैं। सब प्रदेशोंसे ही इस समय कर लियाजाता है। प्रत्येक विभागके माहीर-पाति राणाके निकट लायेजातेहैं, वह जब शपथ खाकर राणाकी अधीनता स्वीकार करते हैं तब अपने २ पदोचित स्वर्ण केयूर औ दुपट्टे राणासे पारितोषिक पाते हैं। माहीरवाराके पहाडियोंको दमन करके जिस दिन उदयपुर राजमहलके आँगनमें उन लोगोंके अख शख इकट्ठे हुए उस दिन मेवाडके इतिहासका युगा-न्तर आरंभ कहना चाहिये। किन्तु यह घटना हमारे कमलमीर उपत्यकामें वास करनेसे पहिले ही घटी है।

छब्बीसवीं अक्टूबर-दिनका प्रकाश होतेही सबलोग प्रसन्न हुए। कप्तान वाघ और डाक्टर उनकानने हाथीकी “झूल” कपडे छोडे और मैं भी पालकीके भीतरसे बाहर निकला। रातकी ओससे शरीररक्षाके लिये वह पालकी विशेष उपकारी हुई। भूख प्यासके लगनेसे प्रकृतिके रमणीय दृश्य देखनेकी इच्छा कम होगई। जो कुछ भी हो यदि मैं अपनी इच्छानुसार कार्य करनेके लिये आगे बढ़ता तो अपने मित्रवर्ग और अनुचरोंको दक्षिणके भयानक पहाडी मार्गसे चलकर डाँकुओंको खोजनेके लिये अपना अनुसरण करनेको कहता।

यह छोटा सामन्त बडवटिया नामसे सर्व साधारणमें विख्यात है यह व्यक्ति चौहानोंकी दूसरी शाखा शनि गुरुजातीय है। इस जातिमें कई शताब्दी-

तक झालोरमें राज्य किया । उक्त सामन्त पहिले मारवाडके अधीन था, किन्तु अत्यंत औद्धत्यके कारण मारवाडेश्वरने उनको निकाल दिया, तब उन्होंने आरावली शिखरके दुर्गम स्थान अतिप्राचीन गोकुलगढ़के ध्वंसावशिष्ट दुर्गमें आश्रय लिया, और चारों ओरके निवासियोंको भय देने लगे । दुर्गम भयानक मार्गोंको वह लोग भलीभाँति जानते थे इस कारण कोई भी उनको नहीं पकड सका । वह अत्याचार उपद्रव करके जितनी धन सम्पत्ति लूटकर लाते, देवगढ़का सामन्त भी उसमें अंशभागी था; क्योंकि वह लोग देवगढ़के अधीनस्थ प्रदेशोंमें ही लूटमार करते थे; इस कारण उनको किसी दूसरेके द्वारा बंदी होनेका कुछ भय न था । पकडने वा इनके आश्रय स्थानसे इनको दूर भगानेके सब उपाय व्यर्थ हो जाते थे । इन शनिगुरु जातीय डाँकुओंका शेष अत्याचार बहुत कठोर है । एक समय कोई मनुष्य विवाहके पीछे नई विवाहिता स्त्रीको लेकर गदवाराके मार्गसे जा रहा था, उस समय यह लोग उन दोनोंको पकडकर गोकुलगढ़में लेआये । वर और कन्या दंडस्वरूप धन देनेमें असमर्थ होनेके कारण बहुत दिनोंतक कैदमें रहे । इनको पकडनेके लिये मनुष्योंका एक दल छिपाहुआ रहता था, परन्तु यह लोग समाचार पातेही वहांसे भाग जाते थे, पीछे शून्य-स्थान देखकर वह लोग लौट आते थे । इस स्थानमें ऐसी दस्युता बहुत स्थानोंमें देखी गई है । पकडनेके पीछे निकाल देना ही शेष दण्ड निश्चय हुआ निर्वासन दण्डाज्ञा प्राप्त अपराधी पकडा जाकर अधिपतिके सामने लाया जाता है, फिर काले वस्त्र पहनाकर कालीजीनसे कसे हुए घोडेपर चढ़ते हैं और ढाल तलवारको अपमान जनक काले रंगमें रँगकर राज्यसे बाहर निकाल देते हैं । यह प्रथा बहुत पुरानी है ।

हम लोग अपने मेवाडी बंधुओंसे इसी प्रकारकी बातें करते हुए अपने गंतव्य बनैले मार्गके ढाईकोश समाप्त कर गये, उस समय गाडोराके अधिनायकने अनुचरों सहित अपने भूतपूर्व प्राचीन स्वामी राणाको सम्मान दिखाकर मेरा सम्मान किया । परिणाममें आत्मविपद और अपने स्वामीके क्रुद्ध होनेकी शंका होनेपर भी उसने राजपूत जातिकी स्वभाव सुलभ राजभक्तिके वंशीभूत होकर जिस भावसे मेरा अभिनंदन किया उससे मैं बहुत प्रसन्न हुआ और उसको मैं बहुत बड़ा सन्मान समझता हूं । घोडेसे उतरकर परस्पर आलिंगन किया, फिर इस प्रदेशके अतीत इतिहास मारवाडेश्वर और राणाके विषयमें विचार करते हुए

बख्तालखको धोडा फेर दिया । उसने आग्रह पूर्वक राणासे कुशल पूछी सामंत अजितसिंह एक श्रेष्ठ मनुष्य हैं; आयु ३० वर्ष, लम्बाशरीर, सुन्दर और साहसी राठोर घुडसवारकी तरह वह घोड़ेपर बैठते हैं । गंदवार प्रदेशमें वाणिज्य प्रधान पाली और सेना निवास द्वैसुरीको छोडकर गाडोरा सर्व प्रधान नगर है । इस धनधान्य संपन्न प्रदेशसे राणा पहिले चार सहस्र राठोरसेना युद्धके समय प्राप्त करते थे । यह सेना वेतनके बदलेमें विना करदिये भूमिको भोगते थे । मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें यह गाडोरा पति भी एक थे । यद्यपि कालक्रमसे यह प्रदेश मारवाडमें मिलाया गया और उदयपुरके राणाके बदले मारवाडेश्वर स्वामी हुए हैं, किन्तु मेवाडपतिके ऊपर गाडोराके अधिनायककी प्राचीन राजभक्ति और प्रेम इतना प्रबल है कि वर्तमान ठाकुर अभिषेक समयमें अपने वर्तमान असली स्वामी मारवाडराज्यके बदले प्राचीन स्वामी राणासे अभिषेक असिवन्धन करालेते हैं । इस प्रगट राजभक्तिको देखकर मारवाडेश्वर बहुत क्रुद्ध हुआ और बदला लेनेके अभिप्रायसे गाडोराका प्राकार गिरा दिया । उसका यह कार्य निःसंदेह कलङ्कचिह्न है । अब भी जब कभी राणाका दूत आकर गाडोरापतिको कमलमीरमें जानेका स्मरण दिलाता है वह तत्काल सम्मानसहित राणाकी आज्ञाका पालन करता है । शत्रुओंके कराल गालसे इस प्रदेशकी रक्षा करना गाडोरा वंशका बड़ा भारी कार्य है और प्रायः वर्तमान सर्दारके पूर्व पुरुषोंने गाडोरा रक्षाके लिये दुर्हान्त मुगलसेनाके विरुद्ध भयंकर संग्राम किया था, यहांतक कि किसी २ ने बड़ी भारी वीरता दिखाकर अपने प्राणतक देदिये । गाडोरा प्रदेश यद्यपि इस समय मेवाडसे अलग है, तथापि राजपूत जातिके चिरप्रचलित सम्मान दिखानेका इतना अभ्यास है कि, अब भी गाडोराका सामन्त अथवा उनका कोई निकटका कुटुम्बी सभामें आवे तो पुरानी रीतिके अनुसार एक अनुचर चांदीका आसा हाथमें लेकर युद्धमें आगे आता है, पुराना सामरिक आह्वान—“कमलमीरका स्मरण करेंगे” कहकर सम्मान दिखाता है । प्रत्येक छेत्सव और पर्वमें राणा अवतक पुरानी रीतिके अनुसार गाडोरापतिको उपहार देता है । गाडोराका स्वामी राणाकी समान समरक्तवार्हिके नामसे गौरव पाता है और सर्व साधारणमें “मेवाडका भतीजा” इस नामसे सम्मानके साथ पुकारा जाता है । अपने घर चलनेके लिये ठाकुरने बड़ी नम्रताके साथ मेरा निमंत्रण किया; मैं जानता था कि वह यदि अनुरोधपूर्वक जाऊंगा तो स्वामी क्रुद्ध होकर उसको महा विपत्तिमें डालेगा, अतः “मार्गकी थकावट और सवेरे प्रभात ही

कालियुगका आरम्भ होता है, मैं उनकी समकालीनताको थोड़े विषयमें शीघ्रही वर्णन करूँगा, जिसको भिन्न २ ग्रन्थकर्ताओंने स्वीकार किया है ।

इस प्राचीन निर्णय करनेमें हमारा यही ध्यान है जहांतक वने यह निर्णय सत्य २ हो हम समकालीनता रामायण और पुराणोंद्वारा स्थिर करते हैं ।

प्रथम समय तो सूर्यवंशके विख्यात त्रिशंकुके पुत्र राजा हरिश्चन्द्रके साथ आरम्भ होता है कि जिनका नाम सत्यवचनके लिये विशेष प्रसिद्ध है, यह उसवंशका चौबीसवाँ राजा है [देखो स्कन्दपुराणका सहास्र खण्ड] और नर्मदा नदीके तटपर स्थित माहिष्मतीके हयहयवंशमें उत्पन्न हुए विख्यात नरपति सहस्रार्जुनको बध करनेवाले परशुरामका समसामयिक माना गया है, रामायणमें इसका प्रमाण भी है जिसमें इक्कीसवार क्षत्रियोंके नष्ट किये जाने और ब्राह्मणोंको परशुरामके अधिष्ठातृत्वमें राज्य अधिकारका वर्णन किया गया है, इसके साथ उस समयका भी पता लगता है कि जब क्षत्रियोंने राजसिंहासन खोदिया, जिसके विषयमें ब्राह्मण उपहास करते हुए कहते हैं कि उन्होंने अपने वंशकी पवित्रता गँवा दी, और इस पिछली बातका खंडन स्वयं उन्हींके ग्रन्थोंमें स्पष्टरूपसे पाया जाता है जैसा कि आगेकी समकालीनता पर लिखा है ।

यही समय सूर्यवंशकी सूचीके बत्तीसवें राजा सगरसे सम्बन्ध रखता है जो चंद्रवंशी सहस्रार्जुनके छठे वंशधर तालजंघके समसामयिक था जिस समय

१ भविष्यपुराणमें सहस्रार्जुनको चक्रवर्ती निर्देश किया है, इसके निमित्त यह कहा गया है कि इसने तक्षक तुरुष्क अथवा नागवंशके कर्कोटकको विजय किया, माहिष्मतीकी प्रजाको अपने साथ लेकर वहाँके राज्यसे च्युत होनेपर इसने भारतके उत्तरमें हेमनगर बसाया, नर्मदाकिनारेके देशोंमें इस राजाके विषयमें कितनी एक कहावतें प्रसिद्ध हैं, उसको सहस्र भुजावाला कहा जाता है और अलंकाररूपसे इसके बहुत सन्तान बताई जाती हैं, तक्षक वा नागकुलके विषयमें हम आगे चलकर विचार करेंगे, पुराने समयकी ऐसी रीति थी कि अनेक जातियें जन्तुग्रह वा जड़ पदार्थोंके नामसे पुकारी जाती थीं, हमारी धर्मपुस्तक बाइबिलमें भी इटीप्रकार मिश्र लाम मकदनियाँके नरपतियोंको मक्खी और मेढा कहकर निर्देश किया है, और भारतमें नाग तुरंग और वानर नामसे संकेत किया है ।

यह नागवंश एशियाके ऊँचे देशोंमें प्राचीनकालसे भी बहुत फैला हुआ था, और बड़ा विख्यात था, जिसका वर्णन कुछ आगे करेंगे, रामायणके लेखसे जाना जाता है कि एक तक्षक नागने अश्वमेधयज्ञके घोड़ेको अनन्तका रूप धारण करके चुराया था ।

(तुरुष्क वंश तक्षकवंशसे भिन्न है देखो राजतरंगिणी)

(अनुवादक)

समझमें आजायगी कि पैतृक भूस्वत्व अधिकार करनेके लिये राजपूत जातिको कोई काम असाध्य नहीं है ।

राणा रायमलके पुत्रोंमें परस्पर कलह और दिह्ली मालवाधीश्वरको इन दोनोंके संग राणाके सदा संग्रामद्वारा वलपरीक्षा देखनेसे गदवार प्रदेशमें उनका स्वामित्व बड़ी अनिश्चित दशमें होगया । मीना और माहीरलोग इस प्रदेशकी समतल भूमिमें रहते थे । इस प्रान्तकी पुरानी राजधानी नादोलके भूतपूर्व स्वाधीन चौहान राजगणके वंशधर षण्डद्वारा विशेष सहायता प्राप्त होती थी । उक्त षण्डसैनाने द्वैसुरी अधिकार करलिया । उनको दूर करनेके लिये वीरवर पृथ्वीराजने शुद्धगढ़के सोलङ्की जातीय सामन्तकी सहायता ली । उक्त सामन्तके पुत्रके संग षण्डकी एक कन्याका विवाह हुआथा । गुप्त षडयंत्रजाल विस्तारसे निश्चय हुआ कि षण्डके भगानेमें सहायता करनेपर उक्त सामन्तको उसकी स्त्री सहित द्वैसुरी और उससे मिलीहुई सब भूमिका अधिकार दिया जायगा, किन्तु निर्धार कर देना होगा । सामन्त पुत्रने इस बातको सहजमें ही मान लिया, और कार्योंद्वारकी सहायताके लिये स्त्री सहित द्वैसुरीमें रहनेके बहाने वहां चला गया । किन्तु बहुत कालतक कोई अवसर नहीं मिला; अन्तमें षण्डके एक पुत्रके साथ बालेचोके सामन्त सागरकी एक कन्याका विवाह निश्चय हुआ, शुद्धगढ़के सामन्तपुत्रने छिपे २ यह संवाद लिखकर अपने पिताके पास भेजदिया उसने अपने पिताको यह लिखकर सतक करदिया कि षण्ड अपने पुत्रसहित बालेचोमें जायगा, मैं द्वैसुरीके दुर्गकी ऊंचे शिखरपर अग्नि जलादूंगा, आप उस संकेतके अनुसार सेनासहित आकर द्वैसुरी अधिकार करलेना । पुत्रका पत्र पढ़कर शुद्धगढ़पति उस संकेतकी प्रतीक्षा करने लगे । किन्तु अधिक समयतक उनको ठहरना नहीं पडा । एक दिन उन्होंने किलेकी चोटीपर धुआं उठता देखा तत्काल सेनासहित आरावलीसे उतरकर कार्य सिद्ध करनेके लिये आगे बढ़े । इधर उस धुएँको देखकर षण्डकी स्त्रीने अपने जामाताको कहला भेजा कि मेरा पुत्र शीघ्रही नई बहूके साथ आवेगा, इस लिये शव दाहकी समान अशुभ लक्षण स्वरूप यह अग्निकुण्ड क्यों प्रज्वलित किया है ? । इतनेमें शीघ्रही तलवारकी झनकार षण्डकी स्त्रीके कानमें सुनाई दी; उसने सुना कि सोलङ्कीलोग नगरमें घुसकर चारोंओर आगलगा रहेहैं । किन्तु शुद्धगढ़पति और महावीर पृथ्वीराजके जयलक्ष्मीका आलिंगन करनेसे पहिले ही षण्ड अपने पुत्र और पुत्रवधू सहित आपहुँचा । भयंकर युद्धाग्नि प्रज्वलित हो उठी । शुद्ध.

गढपतिने वेगसे शत्रुके सन्मुख खडे होकर अभिमानके साथ कहा कि “ षण्ड कहां है ? मेरा नाम सिंहहै; मैं आज षण्डको खाकर फेंकूंगा । ” क्रमसे युद्धाग्निने प्रचण्डमूर्ति धारण करी । अन्तमें षण्ड मारा गया । दूसरे दिन पृथ्वीराजने द्वै-सुरी दुर्गपर अपनी जयपताका फहरा दी । विजयी पृथ्वीराजने वहीं भूवृत्तिदान पत्रमें लिखदिया कि राठौर लोगोंके हाथमें यह गदवारप्रदेश सौंपा गया, कोई शीशोदीयवंशवाला किसी समय भी इसको फिर अपने अधिकारमें न लावे । यद्यपि सत्रह पुरुष पहिले यह घटना घटी थी, किन्तु आजतक शुद्धगढपतिके वंशवालोंके संग षण्डके वंशवालोंकी वैसी ही शत्रुता बनी हुई है ।

गाडोराके सामन्त फिर दुवारा मुझसे मिलनेको आये । उनके अनुचरोंके आनेसे उर्वर मेवाडके राठौर लोगोंकी शारीरिक तुलना करनेका अच्छा अवसर मिला । उदयपुर उपत्यका और उसका दक्षिण सीमाप्रान्तस्थ पहाडी प्रदेश जहांका जल वायु बहुत ही अस्वास्थ्यकर है यदि केवल उसी जगहके शीशोदियोंके साथ मिलान करें तो चौहान लोगोंको हम श्रेष्ठ कहेंगे । इस स्थानके राजपूत केवल शारीरिक गठन और बलहीन ही नहीं हैं, किन्तु जिस गौर वर्णसे नीची श्रेणीके हिन्दुओंसे उनको अलग जाना जाता उस गौरे रंगका भी अभाव है । किन्तु उक्त अस्वास्थ्यकर प्रदेशके रहनेवालोंका जल वायुके दोषसे गठन बलसम्बन्धी हीनताका निवृत्त करनेवाला एक बड़ा कारण है; अर्थात् राजवाडोंके प्रत्येक प्रान्तवासियोंके साथ वैवाहिक सम्बन्धके कारण शुद्ध रक्तके संयोगसे बलवान, दीर्घकाय और गौरे रंगकी सन्तान उत्पन्न होती है । यदि केवल पहाडी शालम्बूके चन्दावत और गोगुन्दाके झाला लोगोंमें यह वैवाहिक सम्बन्ध बन्धन सीमाबद्ध होता तो निश्चय ही इस विषयमें अवनति बढ जाती, किन्तु उसके बदले गदवारके राठौर, हारावतीके चौहान और मारवाडकी भट्टजातिके साथ परस्पर कन्या लेनेदेनेकी कथा प्रचलित है । यद्यपि गोगुन्दाके सामन्तका गठन मूर्ति और रंग मेवाडके सर्व प्रधान सोलह सामंतोंकी बराबर नहीं हैं, तथापि उनका राठौरस्त्रीके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न हुआ है, वह ठीक झाला जातिकी समान है । साक्षात्के समय सामन्त और उनके अनुचर लोग सुन्दर वस्त्राभूषण धारण करके मुलाकात करते हैं । पगडी बांधनेसे उनके मुखकी शोभा बहुत ही सुंदर दिखाई देती है ।

पिछले समयकी बहुतसी बात चीत होनेके पीछे गाडोराके सामंत नम्र वचनोंसे बिदा लेकर चले गये । इतिहास संबंधमें मैंने इनको

भी प्रत्येक संभ्रान्त राजपूतकी समान चतुर पाया । इस प्रकारकी मीठी बात चीतके पीछे जो लोग उनके मनका जाननेमें समर्थ हैं, वह अवश्य इन सामंत लोगोंके शिक्षा और ऊंचे ज्ञानकी प्रशंसा करेंगे । मैं केवल इन गाडोराके अधिनायककी ही नहीं किंतु सामंतमात्रकी ही बात कहता हूं । क्रमसे संघटित घटनाओंके प्रधान प्रधान विवरणको यदि इतिहास कहा जाय तो सम्पूर्ण राजपूत उस इतिहासको जानते हैं । क्योंकि वह लोग अपने पूर्व पुरुषोंका वीरत्व विलासादि भलीभाँति वर्णन करते हैं, और अपने बहुत पुराने अधीश्वरोंके शासनकालकी घटनायें (जिनका कि उनके समाजके साथ संबंध है) अच्छी तरह जानते हैं । उन्होंने इतिहासकी पुस्तक वा इतिहास जाननेवालोंसे यह ज्ञान पाया है, इसका अनुसन्धान करना अनावश्यक है । यह इतिहासज्ञान केवल उनकी मूर्खता और अज्ञानताको ही दूर नहीं करता है किन्तु जो लोग जातीयचरित्र समालोचक हैं, उनका बराबरीका परिचय भी देता है ।

२८ वीं अक्टूबर—बहुत सवेरे ही यात्राका आरंभ करदिया । ठाकुरके राज्यमें होकर जाते समय उन्होंने सहायताके लिये अपने एक विश्वासी मनुष्यको मेरे पास भेजा । आरावली शिखरमालाके पार होजानेके कारण हम लोगोंको चारोंका दृश्य दिखाई दिया । गदवारेके उर्वर समतल क्षेत्रने किसी ओरसे भी हमारी दृष्टिके मार्गको नहीं रोका । हम गाडोराके पाससे होकर चलने लगे । दुर्ग और महलोंसे ही ऊंची चोटियां और द्वारशून्य तोरण गाडोराकी अत्यन्त अपमान जनक हीन अवस्थाको जतारहे थे । गाडोराके सामन्तलोगोंने पीछे पुराने स्वामी भेवाडके रानाकी अधीनता स्वीकार करके इस प्रदेशको भेवाडमें मिलादियाथा, इस कारण बीस वर्ष पहिले मारवाडके अधीश राणा भीमसिंहने इस प्रकारसे गाडोराके नगर प्राकार और दुर्गादि तुडवादिये । वास्तवमें यह प्रदेश इस समय जिस प्रकार मारवाडराजमुकुटकी एक उज्ज्वल मणि है, उसी प्रकारसे निश्चय ही यह राणाके मुकुटका चमकता हुआ रत्न था । जब हम इस प्रदेशके नद् नदी जलाशयपूर्ण, नाना प्रकारके सुन्दर दृश्योंसे घिराहुआ, चारों ओर सुन्दर नगरोंसे शोभित, समृद्धिशाली और रमणीय समतल क्षेत्रमें होकर चलरहे थे उस समय राणाका दूत हमारे पास आया, हम लोग उसके साथ बातचीत करने लगे । ऊपर लिखचुके हैं कि देशहितसाधक कई सरल और ज्ञानियोंमें कृष्णदास भी एक प्रधान मनुष्य हैं । वह प्राचीन शिक्षाके

कहा ? यहां इस बातका लिखना आवश्यक है । प्रधान मूलघटना इतिहासमें कई जगह लिखी हुई है, इस कारण कविकी लेखनीसे निकली हुई उक्त उद्धृत कविता किस कारणसे सीमानिर्धारण सबसे बड़ा प्रमाण माना गया है ? पाञ्चोली द्वारा लिखित उस विवरणको मैं बहुत संक्षेपसे लिखनेका अभिलाषी हूं । यह कविता बहुत काल पहिलेसे एक वंशधरसे दूसरे वंशधर तक क्रमसे अतीत इतिहासका प्रमाणस्वरूप प्रचलित होती आई है । चौदहवीं शताब्दीके शेष भागमें चन्दावत सम्प्रदायके आदि पुरुषने चण्डमन्दरके अधीश्वर रणमलकी की हुई विश्वासघातकताके दण्डमें उसका जीवन नाशकरके उक्त राजधानी और राठोर लोगोंका सम्पूर्ण प्रदेश (उस समयमें राज्य बहुत छोटा था) कई वर्ष तक अपने अधिकारमें रक्खा । मन्दोरेश्वरके उत्तराधिकारी आरावलीकी दुर्गम गुफाओंमें छद्मवेपमें छिपे हुए रहते हैं; उस समय उसने भूलसे भी अपने मनमें नहीं विचारा था कि मेरा नाम एक वंशका आदिपुरुष मानकर लिखा जायगा, वह अपने वंशका दूसरा राज्यस्थापक माना जाकर सब जगह सम्मानित होगा और मन्दौर उस नवीन राज्य जोधपुरमें मिलाया जायगा । मन्दौर प्रदेश मेवाडके अन्तर्गत होनेके समयको जब बहुत वर्ष बीत गये, तो दोनों पक्षने विवादके मूल कारणको विस्मृतिके जलमें छोड़ दिया । मेवाडका अप्राप्त व्यवहार राणा राजपूतजातिकी निर्धारण की हुई आयुमें आया; इधर निकाला हुआ योध कई घुडसवारोंके संग मारवाडके कई स्वाधीन मनुष्योंके अनुग्रहसे जीवन धारण करने लगा । एक दिन योधके एक चारण वा कविका साक्षात् हुआ; कविवरने भविष्यत् वक्ता रूपसे परिचित होनेकी आशा न करके उससे कहा कि चित्तौडकी राजमाताके अनुरोधसे राणाने तुमको मन्दौर लौटा देनेकी इच्छा करी है । योधके इस मन्दौरके अधिकार विषयमें दो प्रकारकी कथा प्रचलित है । मेवाडके इतिहासमें लिखा है कि राणाने दयाके वशीभूत होकर योधको राज्य छोटा दिया; किन्तु मारवाडके इतिहासमें लिखा है कि राजा योधने युद्धमें जय प्राप्त करके हत पैतृक राज्यको फिर प्राप्त किया । वास्तवमें योधकी भागिनीने अपने भ्राताकी इस दुबारा राज्यप्राप्तिकी जय सूचना करनेके लिये एकान्तमें कौशल किया अथवा मनुष्य श्रेष्ठ योधने शुभअवसर पाकर मन्दौरमें प्रवेश करके जयपताका उड़ाई और अपने पिताका कलङ्क छुड़ाया; इन दोनोंमें कौन सी बात ठीक है इसका निश्चय करना बहुत कठिन है । यदि इस प्रश्नकी मीमांसा बहुत आवश्यक हो तो हम कह सकते हैं कि दोनों बातें ही सत्य हैं ।

राणाने मंदौरके शासनकर्ता चण्डको वहांसे चले आनेकी आज्ञा दी, किन्तु असली उद्देश छिपाहुआ रक्खा। दूसरे पक्षमें राजा योधने राणाके पाससे मंदौर लौटांदेनेका पत्र पानेपर अवकाशपति ही अपना पूर्व कलंक छुड़ा लिया। निर्वासित योध मारवाडके हरवा संकल, प्रभुजी आदि डाकुओंके नेतालोंगोंको कविवरका दियाहुआ समाचार सुनानेके लिये गया, वहां उसने सुनाके राणाकी आज्ञा पालनेके लिये चण्ड मंदौरको छोडकर चित्तौडकी ओर जा रहा है। मंदौरके पूर्व वर्णित कविने उस राजनीतिसे ही योध और उसके सहचरोंसे कहा कि “भगवान् आप लोगोंसे प्रसन्न हुए हैं। नक्षत्रोंके पूर्व सागरमें डूबनेसे पहिले ही आपकी विजय पताका मंदौरके दुर्गके शिखरपर फहरावेगी”। कविका यह नक्षत्रोदय कल्पनामात्र है। क्योंकि संकलनी नदी जिस स्थानमें बहतीहै वहां होकर जानेसे उन नक्षत्रोंका उदयास्त दिखाई देताहै।

चण्ड जब राणाकी आज्ञानुसार अपने ज्येष्ठ पुत्र सहित मन्दौरसे दो कोशकी दूरीपर पहुँचा तो सहसा उसने मन्दौरके ऊपर उजाला देखा; चण्ड चित्तौडकी ओर फिर चलनेलगा, उसका बड़ा पुत्र भञ्ज मन्दौरमें लौटआया। किन्तु उसके लौटनेसे पहिले ही चण्डके दूसरे दो पुत्र मन्दौरकी रक्षाकरनेके कारण योधके हाथसे मारेगये। विजयी योधने अपनी जयघोषणा करके मन्दौरदुर्गकी चोटीपर विजयपताका गाड दी। भञ्ज अपने दो भ्राताओंकी मृत्यु और सेनाके पराजयका समाचार सुनकर वहांसे भागा, किन्तु योधके सैनिकोंने उसको सीमान्तमें पकडकर मारडाला। चण्ड जिस समय आरावलीके दुर्गममार्गमें चलरहाथा तब उसके कानमें यह शोकसमाचार पहुँचा, वह तत्काल ही मन्दौरको लौटगया। विजयी योधने उसके साथ साक्षात् होतेही राणाका दिया हुआ मन्दौर प्रत्यर्पणा दिखादिया और कहा कि आप मन्दौरकी सीमा निर्धारण कीजिये। चण्डने विचारा कि प्रकृतिने अपने हाथसे जो सीमा निर्धारण करदीहै, उसको छोडकर अन्य सीमा चिह्न स्थापन करना असंभव है, उसीके अनुसार उसने निर्धारण करके कहा कि जहाँतक पीले फूलवाले आँवले दिखाई देतेहैं, उस स्थानतक राणाकी राज्यसीमा निर्दिष्ट रही। उस मीमांसाका अनुसार कविने तत्काल कविता बनाई कि—

“ आँवला आँवला मेवाड ।

बबूल बबूल मारवाड” ॥

परमोत्साही और राजभक्त चण्डने अपने प्रभु राणाकी आज्ञासे दुःसह पुत्र शोकको विस्मृत करके बदला लेनेकी इच्छा छोडदी, मन्दौरके अधीन सम्पूर्ण

गदवार प्रदेश मेवाडके राज्यान्तर्गत होजानेसे उसका बदला अन्य प्रकारसे पूरा होगया । चण्डपुत्र मञ्जु सीमान्तके आँवलापूर्ण प्रदेशमें मारागया था, इस कारण पुत्रके प्राणनाशके पीछे वह प्रदेश राणाके अधिकारमें आजानेसे वह जैसा प्रसन्न हुआ, मेवाडवासी लोग भी वैसेही इस आँवलेको अपने गौरवका बढानेवाला समझनेलगे । मन्दौरसे जितने खुदेहुए पत्थर मिलेहैं, वह सब ही इस प्रचलित जनभूति वाक्यके समर्थक हैं ।

यद्यपि इस समय खेतोंसे सब अन्न संचित करलियाथा, और अधिवासियोंकी सामान्य वचीहुई धनसम्पत्तिमें लूटने और अत्याचार करनेके चिह्न भी हमने देखे, और अमीरखाँके नरपिशाचस्वरूप अनुचरोंने अधिवासियोंके जो अकथनीय अत्याचार कियेथे उनमेंसे बहुत सी बातें सुनीथी, तथापि मेवाडके साथ तुलना करनेपर मैं इस प्रदेशको ही उत्तम समझताहूँ । आरावली शिखरसे जो अगणित नदियें निकलकर लूनी अर्थात् लवणाक्त नदीमें मिलीहैं, यात्राके समय उनमेंसे कई नदियोंको हमने पार कियाथा । ग्राम बडे और अधिक प्रजासे भरेहुए हैं; किन्तु मेवाडके किसान लोग दरिद्रदशमें होनेपर भी जैसे प्रसन्न दिखाई देतेहैं, इस स्थानके किसान वैसे नहीं हैं; मानो निर्जीव और अन्तःसार शून्य हैं । मेवाडमें जैसी शोचनीय दश-प्रतिक्रियाके समय अतिक्रम करतीहै, मारवाडमें अब उस प्रतिक्रियाका समय उपास्थित है । मारवाडेश्वरके हृदयमें इस समय अतिआग जलरही है, इधर चतुर प्रधान मंत्री राजाको अपने हस्तगत करके अपनी स्वार्थसिद्धिके साथ २ मारवाडको अवनतिके समुद्रमें डवाना चाहताहै, अतः साधारण प्रजा जन्मभूमिकी उस शोकदायक अवस्थाके कारणसे ही दुःखी और निरानन्द है ।

शीतल और आच्छादित स्थानमें केम्प स्थापित होनेपर हृदयमें स्वयं ही संतोष उदय होताहै; नादोलनामक स्थानमें हमने उस आनन्दको भोगा । यहां भी हमने लिखनेयोग्य इतनी सामग्री देखी कि मौन होकर बैठना असंभव होगया । पाठकोंको यह हमारे थोडे लेखसे ही प्रसन्न होना चाहिये । नान्दोल प्रदेश मन्दरावलीके कारण यद्यपि अब भी प्रधान गिनाजाताहै, किन्तु यह इस प्रदेशकी राजधानी था ऐसा चिह्न कुछ नहीं दिखाई देता । पश्चिम प्रान्तमें ढाई कोशकी दूरीपर नादोलय नगरके सहित यह नादोल बहुत प्राचीन कालमें अजमेरके चौहानोंकी एक शाखासे उत्पन्नहुए राजपूतोंकी वासभूमि था । इस नादोलसे ही शिरोहीके देवर और झालोरके शनि गुरु लोगोंकी

उत्पत्ति है। राठौर जातिके विशेष विद्रवाधा और उत्पीडन अत्याचार करने पर भी ऊपरोक्त शाखा आजतक अपने अधिकृत स्थानोंकी रक्षा करती चली आ रही है; किन्तु जिन शनिगुरुजातीय राजपूतोंने दूसरे अलाउद्दीनके विरुद्ध बड़ा भारी युद्ध करके अपना नाम अक्षय किया था, स्वाधीन राज्योंके नामोंकी सूचीमें उनके राज्यका नाम बिलकुल लुप्त है और यह तीन सौ साठ नगर पूर्ण प्रदेश इस समय जोधपुरराज्यके अन्तर्गत है।

सम्पूर्ण राजवाड़ेमें ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां प्रतिष्ठित वंशवाले चौहानोंकी वीरताका गौरवचिह्न नेत्रोंके सामने न आवे। यद्यपि प्रत्येक जातिके इतिहासमें गौरवगरिमा वीरत्व विलास वर्णन किया गया है तथापि शीशोदिया लोगोंका वीरत्व विक्रम, प्रताप प्रभुत्व कैसा महान और उज्ज्वल है, इतिहासपाठक लोग उसको झलीभाँति जानते हैं, और जिस जातिके साथ मैंने बहुत कालतक वास किया है, जिनके इतिहासको मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ, विवेक बुद्धिकी आज्ञानुसार मैं यह अवश्य ही कहनेको बाध्य हूँ कि चौहान लोग भारतवर्षके सब राजकुलोंमें श्रेष्ठ हैं। यहांतक कि सब जातिके कवियोंने चौहान नामको विचित्र मंत्रविजडित, अनुपमेय वीरत्वप्रकाशक माना है। वह लोग हृदयका द्वार खोलकर अपनी लेखनीसे इस चौहानजातिकी अनन्त प्रशंसा लिखकर भी शांत नहीं हुए हैं।

यद्यपि वीरश्रेणीमें चौहान लोग सबसे श्रेष्ठ आसन लेनेमें सब प्रकारसे समर्थ हुए थे, किन्तु प्रत्येक राजपूतके आदर्शस्वरूप अनन्त गौरवगरिमान्वित पृथ्वीराजके पतनसमयसे चौहान नामधारी प्रत्येक राजपूतका भाग्य बदल गया है वीरत्व विक्रम, गौरव, गरिमा, प्रताप प्रभुत्व इस समय उनको स्वप्नकी समान मालूम होता है। राजवाड़ेके बड़े २ वीर चौहानोंके जितने नाम कवि लोग जानते हैं, उनमें भटण्डानामक स्थानके पुरुषसिंह गोगा एक शीर्षस्थानीय मनुष्य है। जिस समय गजनीका वादशाह महमूद आर्यक्षेत्र भारतवर्षको लूटनेके लिये आया उस समय यह महावीर चौवालीस पुत्रोंके साथ मातृभूमिकी स्वाधीनता और पितृधर्म रक्षाके लिये सतलजके किनारे पर युद्ध करने गया, और उस महमूदके विरुद्ध भयानक युद्धाग्नि जलाकर बड़ा भारी युद्ध किया। यहां तक कि अन्तमें उस ही सम्राट्तिमें अपने सब पुत्रोंसहित जीवनाहुति दे दी। विजयी महमूद मरुभूमिमें होकर चौहानजातिकी प्रधान वासभूमि अजमेर पर अधिकार करनेके लिये गया, वहाँ चौहानलोगोंने उचित शिक्षा देकर युद्धमें परास्त और घायल

किया, इस कारण वह लूटनेकी आशा छोड़ शिरपर कलङ्क लेकर भागा । फिर महमूद नौदोल होकर नाहरवाला और सोमनाथको गया । नादोलेश्वरने बड़ी वीरतासे महमूदके साथ युद्ध किया । मैने सौभाग्यसे इस नादोलेश्वर सुविख्यात लाक्षाके नामकी एक खुदीहुई लिपि पाई । उसमें लिखाहै कि लाक्षाही अजमेरसे आईहुई इस चौहान शाखाका आदि पुरुष है । सम्वत् १०३९ (सन् ९८३ ई०) में यह नादोल अजमेरको कर देता था । लाक्षाने जो दुर्ग बनायाहै वह नगर पश्चिमी शिखरके ढालू स्थानपर बना है । उसमें बहुत प्राचीन कालकी रुचिका परिचायक ऊँची चोटीवाला चौकोण दुर्ग बना है । पर्वत जिन विचित्र पत्थरोंसे आच्छादित है, दुर्ग भी उन्हीं पत्थरोंसे बना हुआ है । एक दूसरी खोदित लिपि मेरे हाथ लगी है, वह सम्वत् १०२६ (सन् ९६८ ई०) की है, उसमें लिखाहै कि लाक्षा मेवाडेश्वर राणा भीमसिंहके पूर्वपुरुष आइतपुरके शक्तिकुमारके समयमें थे । वह नगर भी महमूदके पिताने नष्ट किया ऐसा अनुमान है । चौहान कविने अपनी लेखनी द्वारा राओ लाक्षाके वीरत्व विक्रमकी बहुत प्रशंसा करते हुए इस स्थानपर लिखा है कि “ वह अनहलवाडाके शेष प्रवेश द्वारसे शुल्कसंग्रह कर लेते थे, और चित्तौरके अधीश्वर उनको कर देते थे । महल मन्दिर और दुर्गादिके जितने ध्वंशावशिष्ट दिखाई देते हैं तुलिकाके सिवाय उन सबका वर्णन करना असम्भव है । इस स्थानके प्रत्येक पदार्थसे मालूम होता है कि एक समय जैनधर्मका इस स्थानपर बड़ा प्रभुत्व रहाथा । जैनियोंके धर्मकी समान शिल्पकार्य्य भी शैवोंसे विलकुल अन्य प्रकारके थे ।” जिनके चिह्न अब तक पाये जाते हैं । जैनियोंके चौबीस देवताओंमेंसे अन्तिम देव महावीरका मन्दिर अतिरमणीय शिल्पकार्य्यका आदर्श स्वरूप है । इस मन्दिरके गुम्बजकी आकृति प्राच्यजगत्के अतिप्राचीनकालके गठनकी समान है कदाचित् रुमियोंके मन्दिरनिर्माणके बहुत पहिले ऐसी गठन प्रणालीका आरंभ हुआ होगा । महावीरके मन्दिरके सामनेकी तोरण बड़ी विचित्र कारीगरीसे खोदी गई है, और वहां कई पाषाण प्रतिमाओंका भास्कर कार्य्य भी परम रमणीय है । यह सब प्रतिमायें डेढ़ सौ वर्ष पहिले नदीसे निकालकर यहां स्थापित कीगई हैं । जिस समय महमूद भारतवर्षपर अधिकार करनेके लिये आयाथा, उस समय उसके भयसे यह प्रतिमा नदीमें

१ फारिस्ता वा उनके अनुलिपिकार. लोगोंने भूलमें पंडकर नादोलके स्थानमें बाजोल लिखदियाहै ।

डालदीं थीं यह असम्भव नहीं है। नादोलका सबसे विचित्र दृश्य “चनेकी बा ओली” नामक बड़ा जलाशय है। अधिवासी एक २ मुट्ठी चनेके दानोंकी विक्रीके धनसे यह जलाशय (चौबच्चा) बनाया गयाथा। यह बहुत गहरा है और नीचे उतरनेके लिये इसमें लाल पत्थरकी सीढियां बनीहुई हैं, इसके चारों ओर लाल पत्थर लगेहैं। यह किसी वस्तुसे चिपकाये न जाकर वैसे ही तले ऊपर रखदिये हैं।

यहां पर मैंने बहुत पुराने इतिवृत्तका तत्त्वानुसंधान पाया। मेरे नियुक्त किये हुए संस्कृतज्ञ लेखकोंने खोदित पत्रावलीकी नकल उतारी। इसके सिवाय मैंने दो टुकड़े पुराने ताम्रानुशासन पत्र पाये। इनमेंसे एक अनल देवके स्मरणार्थ सम्बत् १२१८ में लिखागयाथा। * मैंने इस प्रकारके पुराने कई अमूल्य हस्तलिखित ग्रन्थ भी संग्रह किये उन सबमें छत्तीस राजवंशका विवरण है, भारतवर्षकी अति-प्राचीन पृथ्वीका वृत्तान्त, और पुराने नगरोंका वर्णन है। उद्भिज्ज और प्राणि-

* नादोलमें प्राप्त चौहान नरपतिसम्बन्धी ताम्रानुशासनपत्रकी नकल;।

“सर्वशक्तिमान् जैनके ज्ञानकोपने मनुष्यजातिकी विषयवासना और ग्रन्थिमोचन कर दी। अहङ्कार, आत्मश्लाघा, भोगेच्छा, क्रोध और लोभ, स्वर्ग, मर्त्य और पातालको विभिन्न करदेतेहैं। महावीर (क) आपको सुखसे रखें।

अति प्राचीन कालमें महान् चौहानजाति समुद्रके तटतक राज्य करती और नादोलद्वारा शासित होती थी। उनका लोहियानामक एक कुमार था और उसका पुत्र बलराज हुआ; उसका पुत्र विग्रहपाल; विग्रहपालका महीन्द्रदेव; महीन्द्रपालके श्रीअनल पुत्र हुए, यह उस समयमें प्रधान अधिपति थे, और उनका सौभाग्य सर्वत्र विदित है। उनके पुत्र श्रीबालप्रसाद हुए, किन्तु श्रीबालप्रसादके पुत्र न होनेके कारण उनके छोटे भाई जैत्रराजने सिंहासन पाया। उनके पृथ्वीपालनामक महाबली गुणवान् पुत्र उत्पन्न हुआ; किन्तु उनके भी पुत्र न होनेके कारण उनके छोटे भाई जालने राज्य पाया। जालके पीछे उनके छोटे भाई सौभाग्यशाली मानराजा उस सिंहासन पर बैठे थे। उनके ही नन्दन आलनदेव हैं। (ख) कुछ काल राज्य करनेके पीछे उन्होंने इस संसारको असार और मांस रक्त धूलि आदि अपवित्र पदार्थोंसे बने इस शरीरको केवल दुःखके भोगका कारण समझा। अनेक धर्मशास्त्रोंका पाठ करके उन्होंने निश्चय किया कि यौवन पटव्रीजनेके चमकनेकी समान क्षणिक है; क्षणकाल चमककर लुप्त होजाताहै; धन सम्पत्ति कमलके पत्तेपर गिरीहुई ओसकी बूँदकी समान है; थोड़ी देर मोतीकी समान शोभा पाकर अदृश्य होजातीहै। ऐसा निश्चय करके—

(क) जैनियोंके चौबीस धर्मप्रचारकोंमेंसे सबसे अन्तिम प्रचारक महावीर हुए। शैव चौहान राजने इनहीके नामपर मन्दिर उत्सर्ग और वृत्ति निर्धारण की है।

(ख) अनल देवलक्षणसे बारह पुरुष पीछेके हैं। यह सन् ८९८ ईसवीमें उत्पन्न हुए थे।

योंके नामोंकी सूची और विक्रम तथा महावीरका प्रादुर्भाव समयके जैनधर्मावलम्बी नरपतियोंमें सबसे श्रेष्ठ श्रीनीक और सम्प्रीतिके वंशधर लोगोंका इतिहासमूलक भी एक ग्रन्थ पायाहै । यहमूद, तुलवन, हत्याकारी नामसे परिचित अल्ला और भारतविजेता नादिरशाहकी नामाङ्कित मुद्रा मैंने इस स्थानमें संग्रह कीं । किन्तु मेरे दूत लोग नादोलासे चौहानोंकी नामाङ्कित जो एक विचित्र सांकेतिक छोटी मुद्रा लायेथे, उन सबके साथ तुलना करनेसे यह सामान्य मूल्यकी जँचतीहै । * एक मुद्रामें एक तरफ एक घुडसवारकी मूर्ति और कई सांकेतिक चिह्न अङ्कित हैं । कईमें बैलकी मूर्ति खुदीहै; जैसे फ्रांसके एक समयकी मुद्राके एक तरफ चौदह लुईसकी मूर्ति और दूसरी ओर साधारण तंत्र सभाका निदर्शन रहता था, इस प्रकार कई मुद्राके एक तरफ आदि

—उन्होंने अपने अनुचरोंद्वारा सामन्तलोगोंके पास यह आज्ञा भेजी कि “आप लोग परस्पर एक-दूसरेको सुख वितरण करतेहुए धर्मके मार्गपर चलें ।”

सम्बत् १२१८ श्रावणमासकी शुक्ल चतुर्दशी तिथिमें २९ वीं तारीखको होमकार्य समाप्त हुआ और विपत् निवारणके उद्देशसे जलदानपूर्वक सर्वज्ञ तथा चराचर जगतके प्रभु सदाशिवकी मूर्तिको पञ्चामृतसे स्नान कराया, और अपने शानगुरु, शिक्षादाता और ब्राह्मणोंको उनकी इच्छानुसार सुवर्ण, अन्न और वस्त्र दिये । उँगलियोंमें कुशकी पवित्री धारणकर तिल, चावल और जल लेकर महावीरके मन्दिरमें व्यवहारके निमित्त कुंकुम, चन्दन और धी नगरके बाजारसे खरीदनेके लिये पाँच मुद्रा मासिकका संकल्प छोड़ा, और यह भी कहा कि यह धन सुन्दर गाछा (ग) लोगोंकी वंशपरम्पराको बराबर मिलतारहेगा । यही वह वृत्तिनिर्द्धारणपत्र है । जब तक सुन्दर गाछालोगोंके वंशका कोई और हमारे वंशका कोई जीवित रहेगा, तबतक मैंने यह वृत्ति निर्द्धारण करदीहै ।

इसका जो कोई स्वामी होगा मैं उसका हाथ पकडकर कहताहूँ कि यह वृत्ति वंशपरम्परा तक चलीजावे । जो इस वृत्तिको दान करेगा वह साठ सहस्र वर्ष तक स्वर्गमें वसेगा, जो इस वृत्तिको तोड़ेगा वह साठ सहस्र वर्ष नरकमें रहेगा ।

प्राग्वंशीय (घ) धरणीधरके पुत्र करमचन्द मेरे मंत्री, और शास्त्री मनोरथराम, इनके विशाल और श्रीधर दो पुत्र, इतने लोगोंने इस अनुशासनलिपिको खोदित करके मेरा नाम उज्ज्वल करादियाहै । श्रीआलनने अपने हाथसे यह पत्र प्रदानकिया । सम्बत् १२१८ ।

* रायल एशियाटिक सोसाइटीके मासिकपत्रमें कर्नल टाड साहब भारतमें प्राप्त प्राचीन मुद्रावलीके विषयमें जो प्रस्ताव प्रकाश करगयेहैं, पाठकगण उसके पढ़नेसे इस विषयमें विशेष विवरण प्राप्त करसकेंगे ।

(ग) जैनियोंकी ८४ शाखाओंमेंसे यह एक शाखाहै ।

(घ) जैनधर्मावलम्बी ओसवाल लोगोंकी एक शाखाहै ।

पाँचवाँ अध्याय ५.

भगवान् रामचन्द्र और श्रीकृष्णचन्द्रजीके पश्चात्
की वंशावली ।

महाराज इक्ष्वाकुसे लेकर श्रीरामचन्द्रजीतक और बुध [चन्द्रवंशका *
आदि पुरुष जो शाकद्वीप अथवा सीथियासे भारतवर्षमें आयाथा] से आरम्भ-
कर श्रीकृष्णजी तथा युद्धिष्ठिरपर्यन्त बारहसौ वर्षके समयकी आलोचना करके
अब वंशसूचीके दूसरेभाग और दूसरे वंशवृक्षकी समालोचना करनेमें प्रवृत्त होते हैं।
मेवाड जयपुर मारवाड और बीकानेरके नरेश अपनेको महाराज रामच-
न्द्रका वंशधर कहकर सूर्यवंशी बताते हैं, और उनकी शाखाएँ भी अपनेको सूर्य-
वंशी कहती हैं, इसी प्रकार जैसलमेर और कच्छके राजपुरुष [भाटी^१ और
जाडेजा जो सतलज नदीसे समुद्रपर्यन्त भारतवर्षके मरुस्थलमें सब जगह फैले-
हुए हैं, अपनी उत्पत्ति चन्द्रवंशमें बुध और श्रीकृष्णजीसे बताते हैं ।

श्रीरामचन्द्रजी श्रीकृष्णजीसे बहुत पहले नहीं हुए, कारण कि, उनके इति-
हासलेखक वाल्मीकि और व्यासजी समकालीन थे जिन्होंने अपनी आँखों देखी
घटनाएं लिखी हैं ।

सूर्यवंश, इन्दुवंश, और जरासंधकी वंशावलियें भागवत अग्निपुराण, और
पाण्डुवंशमें राजतरंगिणी तथा राजावलीसे उद्धृत की गई हैं । सूर्यवंशी राजपूत

* संस्कृतमें चन्द्रका नाम इन्दु और सोम है, इससे इनको सोमवंशी भी कहते हैं, संभव है
कि, इन्दुशब्दसे ही हिन्दूशब्दकी उत्पत्ति हुई हो ।

१ एकान्तमें स्थित घाट जिसकी राजधानी अमरकोट भाटियोंको जाडेजोंसे पृथक् करता है,
घाटको अब सिन्धदेशमें मिलालिया है, वहाँका राजा परमार सोढा जातिका है, जो पहले समस्त
सिन्धुदेशके स्वामी थे ।

२ व्यास और वाल्मीकि समकालीन नहीं यह व्यास २८ वें हैं वाल्मीकिके समयमें यह
व्यास नहीं थे; और ऋषि दीर्घायुवाले होते हैं, इनका समकालीन होनेसे राजाओंका समकाल
नहीं हो सकता (अनुवादक)

३ यह तीन वंशावली दी ही चौथे और पाँचवें वंशकी भी वंशावली भी हम देते परन्तु वे
पूर्णरूपमें नहीं हैं उनमें पहले तो रामचन्द्रके दूसरे पुत्र कुशका वंश जिसमें नरवर तथा आमे-
रके राजा संयुक्त हैं, दूसरे वंशमें श्रीकृष्णजीके वंशधर जिनके कुलमें जैसलमेरके राजा हैं [राम-
चन्द्रके बड़े पुत्रका नाम लव नहीं किन्तु कुश है] (अनुवादक)

वडे २ पवित्र बडआदि वृक्षोंके वदले छोटे २ वृक्ष लगेहुए हैं । इस दृश्यको देख कर मुझे एक कविकी उक्ति याद आगई; राणाके दूत कृष्णदासको वह कविता कई बार पढकर सुनाई । उसने उस कविताके लक्ष्यकरतेहुए कहा कि, प्रकृतिने स्वयं ही हम लोगोंकी राज्यसीमा निर्धारित कर दी है । कविता यह है:-

“ आखार्रा झोपडा,
फोगाँरी बाड,
बाजरारी रोटी,
मोठार्री दाल ”

देखीहो राजा तेरी मौरवाड । ”*

सब ग्राम विचित्रप्रणालीसे बनेहुए हैं; प्रत्येक मोहल्लेके चारोंओर काँटोंकी बाढहै, और बीच २ में वह काँटोंकी बाढ भूसीसे ढकीहुई होनेके कारण देखनेमें दुर्गके परकोटेके समान है. जिस समय खेत अन्नसे भरजातेहैं अथवा वर्षाकालमें गो आदिके लिये आहार नहीं मिलता उस समय यह भूसी ही उनके खानेके काममें आतीहै । इस भूसीको तेरह वा बीस हाथ ऊंची रखकर मट्टी और गोबरसे लहेसदेतेहैं, बीच २ में पक्षियोंसे बचानेके लिये काँटे लगा देतेहैं । इस तरह बीच २ में गोबर लीपदेनेसे दश वर्ष तक रहतीहै, और देशमें जब गौआदिका आहार बिलकुल दुष्प्राप्य होजाताहै, तब इसीसे ही सब पशु प्राणधारण करतेहैं । मरुक्षेत्रमें क्रमसे एक ही प्रकारका दृश्य देखनेके कारण चित्त अप्रसन्न होजाताहै, किन्तु लूनीनदीके पार होते ही विचित्र परकोटेके देखनेसे चित्त अवश्य ही प्रसन्न होजाताहै ।

३० वीं अक्टूबर-साढे दश कोश मार्गचलनेके पीछे हम लोग राजवाडेके वाणिज्य प्रधान नगर पालीमें पहुँचे। इस प्रदेशके दिखाई देते हुए निदर्शनके साथ साथ अत्याचार उत्पीड़नके चित्र भी इस नगरमें दिखाई दिये । जिस समय इस राज्यमें परस्पर भयंकर युद्ध हुआ, उस समय दोनों पक्षोंने पालीको अधिकारमें लाना आवश्यक समझा । अधिवासियोंने नगरके भीतर युद्धके कोलाहल सुननेकी अनिच्छासे एक बडा परकोटा बना लिया। उक्त उद्देशके वशीभूत होकर पासके वाणिज्यप्रधान देश भीलवाडेको भी इसी परकोटेसे वेष्टित करनेका प्रस्ताव करनेपर आपत्ति उठाई गई थी। पालीके उस पुराने परकोटेका कुछ हिस्सा अबतक

* इस कविताका अर्थ आकोंका झोपडा (घर) फोगाँ (टीनोंमें हानेवालाझाड) की बाड, बाजरेकी रोटी और मोठकीदाल मारवाडका परिचायक है ।

कुशसे नहीं जैसा कि सर विलियम जौन्सने जिस ग्रन्थसे वंशावली तैयार की है उस ग्रन्थमें और कई एक पुराणोंमें पाई जाती है ।

जिस ग्रन्थके सहारे सर विलियम जौन्सने अपनी वंशावली तयार की है परन्तु नामोंका हेर फेर करके उसको बिगाड़ दिया है और उसके लिये जो प्रमाण दिये हैं, वे भी अधूरे हैं, तथा वह हिन्दुओंके सिद्धान्तके विरुद्ध हैं, जिनको युधिष्ठिरका समसामयिक माना है उन बृहद्बल और बृहत्शूरके नामोंको देखकर उन्होंने अपनी वंशसूचीमें तक्षक तथा बाहुमानके मध्यके दश राजाओंके नाम उलट पुलट करदिये हैं ।

* बाहुमान [लम्बी भुजावाला] राजा श्रीरामचन्द्रजीसे चौतीसवीं पीढ़ीमें है, और उसके राज्यशासनका समय रामचन्द्रजीसे छःसौ वर्ष पीछे वा सुमित्रसे उतनाही प्रथम होना चाहिये, कारण कि यह रामचन्द्र और सुमित्र वा उसके समकालीन विक्रमके बीचमें है ।

भागवत पुराणके देखनेसे सुमित्रके साथ सूर्यवंशकी समाप्ति होती है, और मेवाडके वर्तमान वंशका जिस जयसिंहके साथ सम्बन्ध बताया गया है, उसका मिलान कई वंशसूचियोंसे किया, और विशेषकर जैनियोंकी वंशसूचीसे मिलान किया गया है जैसा कि मेवाडके इतिहासमें लिखा गया है ।

१ एनेलीसिस पुस्तकमें ब्रायण्टने लिखा है कि कुशाइट हामके वंशधर सलाम करनेके समयमें उसके आदरके निमित्त उसका नाम उच्चारण करते थे, इस विषयमें हिन्दूजातिमें राम राम और दूसरा पुरुष उत्तरमें सीताराम कहता है (यह बात तो नहीं है रामरामके बदलेमें रामरामही कहा जाता है (अनुवादक)

२ मेरी वंशावलीमें यह नाम पच्चीसवाँ और बेंटलेकी वंशावलीमें रामचन्द्रसे पच्चीसवीं पीढ़ीमें है ।

३ यह नाम मेरी सूचीमें ३४ वां और बेंटलेकी नामावलीमेंसे तीसवाँ है, परन्तु बीचके नाम रामचन्द्रजीके पीछे तथा बाहुमान (जिसको बेंटलेने वानुमत लिखा है) का नाम तक्षकके पीछे लिखा है ।

* लोगोंने समय मिलता हुआ देखकर मिथरस-सूर्यको पूजनेवाले दाराके पिता और अर्तजर्क सीजके पुत्रको सूर्यवंशमें संयुक्त करलिया हो, राजा जयसिंहने इस वंशावलीके पिछले एक पुरुषको नौशेरवाँ लिखा है, जिससे इस मिलानकी और भी पुष्टि होती है, अवश्य ही एक बड़ी भारी सेना लेकर बाहुमानने मिथिला और मगधके सूर्यवंशी नरेशोंपर आक्रमण किया था, उस समयमें ठीक प्रथम दारा और उसके पिताका होना पायाजाता है, हेरोडाटस कहता है कि, दाराके राज्यका सबसे अधिक ऐश्वर्य सम्पन्न सूबा हिन्दूजातिका देश था । डीहर्वेल्लेटकी बाइबिल और अंटल वहमनका निबन्ध देखो ।

गन्धक, पारा, मसाला, चन्दनकी लकड़ी, कपूर, चाय, औषधी बनाने योग्य मोम * और हरे रंगका काच आता है । भावलपुरसे सजीमिटी, आल और मजीठ नामक रंग, वन्दूक, पक्के फल, हींग, मुलतानी छीट, और संदूक तथा पलंगआदिके लिये लकड़ी आती है । कोटा और मालवेसे अफीम और छीट आती है । भोजसे तलवार और घोड़े भेजेजाते हैं ।

इस स्थानसे लवण और पशम भेजा जाता है । पालीनगरका जो एक प्रकारका कागज और सूतका मोटा कपड़ा प्रसिद्ध है, सौदागर लोग इन वस्तुओंको भी बहुतायतसे दूसरे नगरोंको लेजाते हैं । भारतवर्षके सब स्थानोंके निवासी यहांकी लोई ओढते हैं और उसका मूल्य ८) जोड़ेसे ६०) साठ रुपये तक है । ओढनी और पगडी भी उसी सामग्रीसे तैयार होती हैं, किन्तु वह दूसरे देशोंमें विक्रयार्थ नहीं भेजीजाती । खाना होनेवाली वस्तुओंमेंसे लवण ही सबसे प्रधान है, इस लवणवाणिज्यसे जो शुल्क एकत्रित होता है वह देशके भूराजस्वके आधे अंशकी वरावर है । लवणके चौबच्चोंमें पञ्चभद्रा, फिलोदी और दिदोवाना प्रधान हैं । पञ्चभद्राका परिमाण कई कोस तक है ।

पालीमें प्रतिवर्ष वाणिज्यशुल्कके ७९०००) रुपये आते हैं । भारवाडसे दरिद्र राज्यके लिये यह अवश्य ही अधिक धन माना जायगा ।

चारण और भाट अर्थात् कवि और वंशका उच्चारण करनेवाले लोग ही इस प्रदेशमें वाणिज्य द्रव्य एक देशसे दूसरे देशमें भेजनेके समय रक्षक होकर जाते हैं । कवि और भाट लोग पूजनीय और मान्य गिनेजाते हैं; कट्टर लुटेरे सामान्त यहां तक कि जंगली कोल, भील और मरुक्षेत्रके सराई लोग तक इनके अभिशापसे बहुत डरते हैं; इस कारण कवि और भाट लोग बड़े २ भयंकर और संकटयुक्त मार्गसे निर्भयचित्तसे वाणिज्यद्रव्य सहजमें ही लेजाते हैं; कोई भी भयसे उनको नहीं छूटता । जितने पथिक समुद्रोप-कूलवर्ती प्रदेशोंमें जाना चाहते हैं, वह सब उन वाणिज्यद्रव्यके संरक्षक भाट

* इस स्थलपर कर्नेल टाड साहबने टीकामें लिखा है कि “जिस समयमें संधियाकी राजधानीमें गया, उस समय साधारण लोगोंने मेरे पास सब प्रकारके रोगोंकी औषधि होनेका निश्चय किया था । एक सामन्तकी स्त्रीको कुछ मोमकी आवश्यकता हुई, उसने मेरे पास एक अनुचरको भेजदिया । यद्यपि मेरे पास मोम नहीं था, परन्तु अनुचरको किसी प्रकारसे भी इस बातका विश्वास न हुआ, जब उसने रीते हाथ लौटजानेकी अनिच्छा दिखाई तो मजबूर होकर मैंने हिन्दुस्तानी खड्का एक टुकड़ा देदिया, वह मनुष्य उसीको मोम समझकर लेगया ।”

और कवियोंके साथ मिलकर, झालर, वीनमहल, साँचोर और राधानपुर होकर सुराट और मस्कतमान द्वीपमें निःशंकचित्तसे पहुँच जाते हैं ।

पालीनगरके पाँच कोश पूर्वमें “पुण्यगिरि” नामक एक पर्वत है । शिखरके ऊपर एक मन्दिर बना हुआ है । सुनते हैं कि, सौराष्ट्रके अन्तर्गत पालितानाके एक बौद्ध ऐन्द्रजालिकने इस मन्दिरको बनाया है । जिस प्रदेशमें इन अति प्राचीन अगणित शाखाओंमें विभक्त बौद्धलोगोंका वास है उस प्रदेशमें ही उनको इन्द्र-विद्याजाननेवाले कहते हैं । यहाँ पर हमारे पुराने मित्र गफके साथ हमारी मुलाकात हुई । उनको इस दक्षिण पश्चिम प्रदेशकी सरई, कोशा आदि पहाड़ी जंगली और असभ्य जातियोंमें घोंडे इकट्ठे करनेके अभिप्रायसे घूमते हुए देखा ।

२९ वीं अक्टूबर पाली ।

३० वीं अक्टूबर खैररा ।

३१ वीं अक्टूबर रोहित ।

१ ली नवम्बर।—लूनीके उत्तर तटपर सङ्गली स्थापित है । पालीसे लूनीतक १५ कोश स्थानमें टूटी फूटी वस्ती हैं; विशेष दर्शनीय दृश्य कोई भी नहीं देखा । खैररानामक स्थानमें हमने कैम्प डाला । यहाँ पर लवणके दो तालाव हैं । इनमें बहुतायतसे लवण उत्पन्न होता है इस सम्बन्धसे ही इस नदी और नगरका नाम खैररा (खारीर) हुआ है । खैररा और रोहित यह दो प्रदेश दो सामन्तोंके अधीन हैं । दोनों सामन्त इस सभ्य आपसकी लड़ाईमें मत्वाले हैं । रोहितके सामन्तकी अवस्था बहुत ही शोचनीय होगई है ।

यहाँपर मैं दो वणिकोंके विवादका विषय लिखना चाहता हूँ । पाइमा नायक इस प्रदेशका एक प्रसिद्ध व्यापारी है अर्थात् अधिक लवण उसीके द्वारा आता जाता है । अन्य एक वाणिज्य द्रव्यवाही वणिकके साथ उसका झगडा है इस झगडेमें उसके शिरमें चोट लगी, वह इस घावके दिखानेके लिये अपने कुटुम्ब-वालोंके पास गया । वादी प्रतिवादी दोनों ही भाट जातिके हैं; पाइमा भूमानिया भाट लोगोंका नेता है । × उसके पास चार सहस्र पशु बोझा ढोनेके लिये रहते हैं । जब वाणिज्य बन्द रहता है, उस समय साधारण दुर्गम मार्गोंमें जाकर आश्रय लेता है । इस श्रेणीके लोगोंको “ उभय पन्थी ” कहते हैं । श्यामाने अवसर पाकर प्राचीन शत्रुताका बदला लेनेके लिये पाइमाके सौदागरी वस्तुओंसे

× भूमानिया नामक स्थानमें निवास करनेके कारण इन लोगोंका नाम भूमानिया हुआ है ।

वचे हुए बहुतसे छकडे अपने अधिकारमें करलिये और शत्रुके शिरपर लकड़ी मारकर घाव कर दिया। उन दोनोंका झगडा निवटाना असम्भव होगया। यहांपर यह रीति है कि जो सबसे अधिक कर देता है मुकदमेमें उसीकी जीत होती है, इस कारण पाइमा सरसरी विचारमें विजयी हुआ और प्रति वादी श्यामाको दूर कर दिया गया।

हम ऊपर लिख चुके हैं कि राजपूतजातिमें भाट लोग अपने पवित्र चरित्रके कारण ही सौदागरी मालके संरक्षक होकर जाते हैं, किन्तु अत्याचारकरने और कर दान न करनेसे वह संरक्षक पदके अनधिकारी समझे जाते हैं। उक्त पाइमाके पूर्व पुरुषोंके साथ राणा अमरसिंहका एक विशेष स्मरणीय झगडा हुआ था। भाटलोगोंने बडे अन्यायके साथ अपने वाणिज्य शुल्कके कम कर देनेकी राणाके निकट प्रार्थना की, राणा अमरसिंहने उस प्रार्थनाको अस्वीकार कर दिया। संपूर्ण भाटलोग अपना काम सिद्ध करनेके लिये ब्रह्महत्याका भय दिखाया करते हैं, राणा अमरसिंहको भी उसी आत्मघातका भय दिखाने लगे। साहसी अमरसिंहने उनकी किसी बातपर भी ध्यान नहीं दिया। तब भाटलोगोंने अपने प्रचलित उपायका अवलम्बन किया अर्थात् प्रायः (८०) अस्सी स्त्री पुरुषोंने राणाके महलके सन्मुख आकर छूरीसे आत्मघात कर डाला; राणा महापातकके भागी हुए। भाटलोगोंका सपरिवार यह आत्मघात राणाके लिये जातिसे बाहर कर देनेका कारण हुआ, क्योंकि भविष्यद्वक्ता भाटलोगोंके प्राणनाशका कारण बननेपर राजपूतलोग इस लोक और परलोक दोनोंमें नरक भोगते हैं। जो एक बार स्वामी इस भाटजातिकी प्रार्थना पूरी करदें तो यह लोग अन्यायसे वारम्बार प्रार्थना पूरी करानेपर भी शान्त नहीं होते। अमरसिंहने शेष जीवित वचेहुए भाटोंको अपने राज्यसे निकाल दिया और भूमानिया प्रदेश अपने अधिकारमें कर लिया।

राणा अमरसिंहने इन भूमानिया भाटोंको अपने राज्यसे निकालकर मेवाड-राज्यमें घुसनेका निषेध करदिया, इस आज्ञाका अवतक पालन होता था। अन्तमें जिस समय राणा भीमसिंहके घोषणापत्रद्वारा मेवाडकी भागी और निकालीहुई प्रजाको फिर वास करनेकी आज्ञा मिली, उस समय उक्त पाइमालोग भी ^{या}ने कुटुम्बसहित मेवाडमें फिर आ बसे। जिस कारणसे पाइमाके पूर्व पुरुष ^{जि}मेवाडसे निकाले गयेथे, उस कारण सम्बन्धी प्रवादका सर्व साधारणमें प्रचार है—यद्यपि यह बात पाइमाके हृदयपर भी विशेषरूपसे अङ्कित है, तथापि

वह अपनी निष्ठुर चाल छोड़नेके बदले सदा स्वार्थ साधनमें तत्पर रहता है; और अन्यायभरी प्रार्थनायें पूरी करानेके लिये अपने प्राण बलिदानार्थ कमरमें एक बड़ी छूरी लटकाये रहता है। पाइमाने अपना वाणिज्य बिलकुल उठा देनेके लिये राणाको भी अनेक स्थानोंमें घेरा, परन्तु प्रार्थना पूरी न हुई। अन्तमें छूरी हाथमें लेकर राणाभीमसिंहके सामने आत्मघात करनेको उद्यत हुआ। राणा भीमसिंह अमरसिंहकी समान कठोर न थे, राणाने डरकर इस विषयमें मुझको मध्यस्थ बनाया। राणाके सम्बाद दाताके साथ मैंने अपने एक सम्बाद दाताको भी पाइमाके बुलानेके लिये भेज दिया। उसकी स्थूलकाय, सुन्दर और साहसी मूर्ति शीघ्रही मेरे दृष्टिगोचर हुई। हमलोग तत्काल इस प्रश्नकी मीमांसा करने लगे। मैंने कहा कि, “जो कोई मेवाडके राजपथसे सौदागरी माल लेजायगा उसको अवश्य ही कर देना होगा। और यदि आपलोग इस जवन्म उपाय (आत्महत्याका भय दिखाने) को उद्यत होंगे, तो निश्चय ही कुछ फल प्राप्त न होगा। सर्वसाधारणसे जो कुछ कर लिया जाता है, यदि आपलोग उसीके अनुसार स्वीकार पत्र लिखकर हस्ताक्षर करेंगे तो तुम्हारे चालीस सहस्र बोझा उठाने-वाले बैलोंमें पाँच सौ का करक्षमा करके भामुनियामें रहनेकी आज्ञा दी जायगी, यदि यह बात अस्वीकार हो तो यह छूरियाँ रक्खी हैं (देविलके ऊपर बहुत सी छूरियाँ रक्खी थीं) जितनी शीघ्र इच्छा हो आत्म घात कर डालो।” मैंने और भी कहा कि “राणा अमरसिंह जो देश निकालेका दण्ड नियत करगये हैं, उसके अतिरिक्त मैं तुम्हारे सौदागरी मालसे भरेहुए सब छकड़ोंके छीन लेनेका भी राणासे अनुरोध करूंगा।” पाइमा बुद्धिमान था उसने शीघ्रही मेरे प्रस्तावको मान लिया। राणाने उसको भामुनियाप्रदेश और ५०० बैलोंका कर दान क्षमा कर दिया। राणा भीमसिंहने उस दिन पाइमाको भूमानिया प्रदेशका अधिकारी मानकर उसको सुवर्णके बाजूबन्द और वस्त्र दिये।

२ री नवम्बर—पाँच कोशकी दूरीपर झालामंदमें पहुंचे। यद्यपि जोधपुर राजधानी यहांसे बहुत निकट है, तथापि किस ढंगसे हम सभामें ग्रहण किये जायेंगे, उसकी मीमांसाके लिये यहां विश्रामकरना उचित समझा। पश्चिमी जगत्में इस प्रकारकी दूत परिग्रहणादि प्रणाली निर्धारण एक विषम समस्या है, राजालोग पूर्व पुरुषोंकी अवलम्बित प्रणालीके अनुसार ही दूतोंको ग्रहण करते हैं। मरुक्षेत्रकी राजसभायमें अंग्रेजदूतको कैसे भावसे ग्रहण किया जायगा, यह प्रश्न हमलोगोंको विषमस्थ रूप मालूम होने लगा। राजाके भेजे हुए राजदू-

तकी किस प्रणालीसे अभ्यर्थना करनी उचित है, इस बातको वे लोग भलीभाँति स्थिर कर सकते हैं, और राजप्रतिनिधिके पाससे आये हुये दूतकी किस प्रकारसे अभ्यर्थना करनी चाहिये, यह भी जानते हैं । किन्तु वर्त्तमान प्रश्न विलकुल विभिन्न है; सम्पूर्ण भारतवर्षके शासनकर्त्ता अंग्रेज केवल वणिज संप्रदायके कर्मचारी रूपसे गिने जाते हैं, और उनके हाथमें चाहे कितना ही शक्ति और प्रभुत्व सोंपा जाय, किन्तु वे कभी राजाके वा उसके निम्नपदस्थ व्यक्तिके सम्पर्क नहीं हो सकते । इस कारण राजनैतिक दूतोंको इस प्रकारकी अभ्यर्थनामें बहुत सी कठिनाइयें उपस्थित होती हैं । शेष शतलजसे समुद्रतक हम लोगोंका शासन विस्तृत हो जानेसे ईष्टइण्डिया कम्पनीके दूतोंकी अभ्यर्थना सम्बन्धी गडबड दूर होगई है । एक दूसरे कारणसे भी इस अभ्यर्थना सम्बन्धी गडबडके मिटानेमें सहायता मिली है । सेंधिया और हुल्करके दुर्दान्त अत्याचारी सेनानायकोंने उक्त राज्योंके आक्रमणकालमें राजालोगोंके पदमर्यादा और सन्मानको छोटा कर दिया था । अमीरखाँ, जैनवपटिष्ठी और वापूसेंधियाकी समान जितने लोग इससे पहिले ऊँचे आसन पाकर अपनेको महा सन्मानित समझते थे, वही इस समय अन्य राजालोगोंकी समान सन्मान पानेकी इच्छा करते हैं । और कान्यकुब्ज सम्राट्के उत्तराधिकारी वा रामचन्द्रके वंशधरको किसने किस प्रकारसे क्षातिग्रस्त, परास्त और निगृहीत किया है, उसका उल्लेख करके आत्मश्लाघा करनेमें तत्पर हैं । बाहरी सन्मान और आडम्बरसे ही संसार प्रवञ्चित होता आया है । इस कारण महाराष्ट्र डाकूदलके नेताको जैसा सन्मान दिखाया गया, उससे हीन सन्मानके साथ अभ्यर्थनामें सम्मति ज्ञापन असंभव होगया । अमीरखाँकी अभ्यर्थनाके लिये राजाने अपने प्रतिनिधिको कितनी दूर आगे जाकर अभ्यर्थना करनेकी आज्ञा दी थी ? वह भेजा हुआ प्रतिनिधि किस श्रेणीका सामन्त था ? और सूर्यवंशावसंत राजाने कितनी दूरतक आगे जाकर सामयिक प्रभुको स्वयं ग्रहण किया था ? मैंने यह सब प्रश्न अपने पास बहुत कालसे रहनेवाले वकीलसे किये, उक्त वकील इन सब प्रश्नोंकी प्रीमांसाके लिये राजदरबारमें भेजा गया, इस अवसरमें मैंने राजधानीसे ढाई कोशकी दूरीपर झालामाँदमें कैम्पडाला । यद्यपि मैं स्वयं इस प्रकारके बाहरी सन्मानसे बहुत ही घृणा करता हूँ, तथापि ईष्टइण्डिया कम्पनीके प्रतिनिधि पदपर स्थित होनेके कारण उक्त कम्पनीके उपयुक्त सन्मान प्राप्तिके लिये यथोचित उपायावलम्बन करनेमें बाध्य हुआ, इस विषयमें अपनी इच्छानुसार किसी कामके करनेकी

मेरी शक्ति नहीं है। वर्तमान मीमांसा ही भविष्यत्के निर्धारित होकर रहेगी, यही विचारकर मैं राजाके निकट इसको सूचित करनेके लिये वाध्य हुआ कि “मैं जिनका प्रतिनिधि हूँ तुम उनके और अपने दोनोंके सम्मानपर समान दृष्टि रखना।” और यह भी स्पष्ट प्रगट कर दिया कि “जिस प्रकार अमीरखाँकी अभ्यर्थनाके लिये आपने दुर्गके नीचे आकर अपेक्षा की थी, उसी प्रकार अंग्रेज प्रतिनिधिकी ग्रहण करनेकी व्यवस्था करना।” इस प्रश्नकी मीमांसा होकर यही निश्चय हुआ कि राजा दुर्गके मध्यद्वारासे नवीन गाडीद्वारा उपस्थित होकर अभ्यर्थना करेंगे।* अभ्यर्थना सम्बन्धी मीमांसा समाप्त होनेपर हमलोगोंने झालामन्दसे राजधानीकी ओर अपराह्णमें यात्रा किया। मार्गमें जोधपुरके उस समयके सर्व प्रधान शक्तिशाली राजाके उपदेष्टा पोकर्ण और निमाजके दों सामन्त आगे बढ़कर मेरी मुलाकातको आये। हमने घोड़ेसे उतरकर परस्पर आलिङ्गन किया। प्रचलित नियमानुसार कुशल प्रश्नादि पूछनेके पीछे फिर घोड़ेपर सवार होकर साथ २ चलने लगे। नगरमें प्रवेश करते ही हमने राजासाहबको उनका अभिनन्दन करनेके लिये कहलाभेजा कि “प्रणामादिके पीछे वे राजभवनमें चलेजावें।”

पोकर्णके सामन्तका नाम सालिमसिंह है, यह मारवाडकी सामन्तश्रेणीमें सबसे अधिक धनी हैं। इनका दुर्ग और अधिकृत प्रदेश मरुक्षेत्रके बीचमें है। यह प्रदेश जयसलमेरके राज्यसे अलग कर लिया है। दुर्ग बहुत मजबूत है। इन पोकर्णसामन्तके द्वारा मारवाडके राजसिंहासनकी जड वारम्बार प्रकम्पित हुई थी। इस सामन्तवंशके चार पुरुषोंके प्रबल प्रतापने क्रमसे मारवाडके बड़े २ साहसी राजालोगोंको भी महा भयजालमें जकड़ दिया था। वर्तमान सामन्तके प्रपितामह देवसिंह कम्पावत नामक अपने संप्रदायके पाँचसौ योद्धाओंके साथ राजमहलके बड़े भारी कमरेमें रातको शयन किया करते थे। वह उद्धत सामन्त अभिमानके साथ अपने स्वामीसे कहते कि “मारवाडका सिंहासन मेरी इस तलवारमें है।” देवसिंहके पुत्र सुवलसिंहने भी पिताके मार्गमें चरण रक्खा और अन्तमें मारवाडराज विजयसिंहको सिंहासनच्युत कर दिया। एक कमानके गोला अवीश्वरने विजयसिंहका उस महाभयके कारणरूप शत्रुके हाथसे उद्धार किया। सुवलसिंहके

* सन् १८१८ ईसवीके दिसम्बर मासमें जनरल एक्टर लेनिके द्वारा अजमेरके सुपेरन्टेण्डेंट मिस्टर विल्डर जोधपुर राजसभामें भेजे गयेथे, तब राजाने इनको बड़े आदरके साथ ग्रहण किया था।

पुत्र और उत्तराधिकारी सवाईसिंह भी राजा भीमसिंहके ऊपर पिताका समान व्यवहार करनेसे शान्त न हुए और सन् १८०६ ईसवीमें उन्होंने युद्धाग्नि प्रज्वलित करके धौकुलसिंहको मारवाड़के सिंहासनपर अभिषिक्त करनेका यत्न किया था। नागोरनामक स्थानमें अमीरखाने कम्पावत लोगोंके नेता सवाईसिंह और उनके अनुचरोंको विश्वासघात करके मारडाला, राजा मानसिंहने कुग्रहके हाथसे अपने वंशका उद्धार किया और सवाईसिंहके पुत्र वर्त्तमान सामन्तको अपने राज्यके प्रधान कर्मचारी पदपर अभिषिक्त करके बड़ा सन्मान किया, यहां तक कि प्रसन्न करके अपनी मुट्ठीमें कर लिया। चतुर सामन्तने समय पाकर अपना सहजमें ही उद्धार कर लिया, यदि सामन्त ऐसा न करते तो उनका जीवन और पोकर्ण प्रदेश दोनों नष्ट होजाते। मेरे साथ मुलाकातको आये हुए पोकर्ण अधिनायक वंशका यही सांक्षिप्त इतिहास है। इनकी आयु लगभग पैंतीस वर्षकी है मूर्ति यद्यपि मनोहर नहीं है, तथापि वीरोचित और गंभीर है। शरीर लम्बा और बलवान है, गठनप्रणाली सुन्दर है किन्तु मारवाड़के अन्य सामन्तोंकी समान उजला रंग नहीं है।

पोकर्ण सामन्तके साथी और राजसभामें सहयोगी निमाजके सामन्त सुरतानसिंहकी आकृति, वनावट आदि सालिम विलकुल विपरीत था, सुरतानसिंह उदावत सम्प्रदायके नेता थे, यह आरावलीके सीमान्तस्थ स्थानके निवासी चार सहस्र वीरोंके एकत्रित करनेकी शक्ति रखतेथे। इनके अधिकृत प्रदेशोंमें निमाज, रायपुर और चन्दावत सबसे प्रधान थे; सुरतानसिंह राजपूत जातिके श्रेष्ठ आदर्शस्वरूप थे; इनका शरीर लम्बा और सुडौल था। रंग गोरा, मूर्ति वीरोचित और नम्रभावसूचक थी, यह बड़े बुद्धिमान और शिक्षित मनुष्य थे।

जिस विपदचक्रसे सुरतानके सहकारी सलीमने उद्धार पायाथा, वह किस लिये इस विपत्तिमें फसाये गये थे, उसका प्रत्येक कारण इस स्थानमें लिखना असंभव है। सालिमसिंहके साथ मित्रताही उनके इस दुर्भाग्यका मूल है, पुरवत्सारके उस घोरतर कलङ्कजनक युद्धमें पराजयके समय जब मारवाड़ेश्वरने अपने पेटमें छूरी शोंकना चाहा था, उस समय इन सामन्त सुरतानने ही उनको आत्मघात करनेसे रोका था; और जिस समय अनेक राज्योंकी सनाने

एकत्रित होकर मारवाडको घेरा था, उस समय भी राजपक्षके चार सामन्तोंमेंसे यह सुरतान भी एक थे । सन् १८०६ ईसवीमें जब उक्त दुर्दान्त सम्मिलित सेना मारवाडको विध्वंस करके असंख्य धन लूटकर ले गई, तब उपरोक्त जिन चार-सामन्तोंने उनके पीछे दौड़कर लूटेहुए धनको छीना और असंख्य शत्रुओंको मारकर रजवाड़ेमें रुदनकी आग जलादी थी, यह वीरवर सुरतान भी उन चार सामन्तोंमेंसे एक वीर थे । * सुरतानके मरनेपर सम्पूर्ण राजस्थानने शोक मनाया और मुझे स्वयं शोक हुआथा । अपने वीरोचित चरित्रोंके कारण ही वे सर्वसाधारणके प्रशंसापात्र हुए थे । मेरी जोधपुरयात्राके आठ मास पीछे उस महावीर राजपूतके मृत्युसमाचारका सूचक जो पत्र मेरे पास आयाथा, उसका अनुवाद नीचे दियाजाताहै, उसको पढ़कर पाठकगण इस बातको भलीभाँति समझजायेंगे कि सुरतान कैसा असमसाहसी वीर पुरुष था ।

जोधपुर २ आषाढ ।

(२८ वीं जून सन् १८२० ई.)

“ज्येष्ठमासके अन्तिम दिन (२६ वीं जून) सूर्योदयके एक घड़ी पहिले राजा आलिगोल×और सम्पूर्ण सामन्तसेना अर्थात् अस्सी हजार सेनाको सुरतान सिंहके ऊपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दीगई । वह सेना नगरके मध्यस्थ और उनके निवासस्थानको घेरकर तीन घड़ी तक बन्दूकोंकी गोली चलातीरही । इसके पीछे सुरतान निजभ्राता सूरसिंह, आत्मीयवर्ग और सम्प्रदायसहित महावीरताके साथ तलवार लेकर निकले और शत्रुओंपर आक्रमण करके दूर भगादिया । किन्तु अपने अधीश्वरके विरुद्ध कौन जीत सकताहै ? राजाके पक्षमें बहुतसी सेना थी, इस कारण दोनों भ्राता ही बड़ी भारी वीरता दिखानेके पीछे युद्धमें मारेगये । नागोजी और बड़े साहसी चालीस वीर दोनों भ्राताओंके साथ-में मारेगये और चालीस वीर घायल हुए । जो अस्सी वीर जीवित बचे थे, वह अख शस्त्र लेकर निमाजके सामनेमे भागगये । * राजाकी सेनामें चालीस मनुष्य मरे और सौ १०० घायल हुए, तथा बीस नगरनिवासियोंको इस युद्धमें हानि पहुंची ।

* पाठक लोगोंको कदाचित् स्मरण होगा कि राणा भीमसिंहकी लड़कीके लिये ही जयपुरराजके साथ, मारवाडेश्वरका यह भयङ्कर युद्ध हुआथा ।

× धनके लोभी सहोलेकी सेना इस नामसे ही पुकारी जातीहै ।

* इन्होंने निमाजप्रदेश कई मासतक बड़ी वीरताके साथ रक्षा कियाथा ।

“ पोकर्णके सामन्त इस समाचारके पाते ही घोड़ेपर चढ़कर नगर छोड़नेको उद्यत हुए; किन्तु महाराज, कोचामुनके शिवनाथसिंहने भद्रार्जुनके सामन्त और दूसरे सामन्तोंको उनके पास भेजकर आश्वासित किया और रहनेकी आज्ञा कहलां भेजी किन्तु वह इस स्थानके छोड़नेके लिये बड़े उत्सुक हुए। मेरा भतीजा और पच्चीस अनुचर भी इस युद्धमें मारे गये। सब संसार उनकी प्रशंसा करता है और हिन्दू तुरक दोनों जातियें ही यह कहते हैं कि वह वीर गतिको पहुंच गये। शिवनाथसिंह, बखतावरसिंह, रूपसिंह, और अनारसिंहने उनकी दाहक्रिया समाप्त करी है। ” ×

अपनी सन्मानरक्षाके लिये राजपूत जाति इस प्रकारसे ही जीवन बलिदान कर देती है ! जबतक सुरतानके शरीरमें प्राण रहे तबतक उनके किसी अनुचरने आत्मसमर्पण नहीं किया, और जो लोग भागेथे उन्होंने केवल उदावत सम्प्रदायके बालक प्रभु—सुरतानके पुत्रकी रक्षाके लिये ही जीवन धारण किया है !

× यह शेषोक्त मनुष्य ही पत्रलेखक है, यह जैसा साहसी है वैसाही गुणी है। अपने अधीश्वर मारवाडराजकी रक्षाके लिये अपनी संपूर्ण संपत्ति (यहाँतक कि अपनी हड्डीके अलंकारतक बेच डाले, और अन्तमें अपने प्राणरक्षाके लिये छिपकर विदेशमें चला गया। ' कर्नेल टाड' लिखते हैं कि अंग्रेजी गवर्नमेंटके इन सब राज्योंपर उदासीनता प्रकाश करनेसे ही यह सब अनिष्ट हुए थे।

और दश पीढ़ीतक जिनका वंश चलकर अन्तमें अनौरस राजा महानन्दके साथ घृण्य हुआ, इस वैकत नामक अन्तिम राजाने शुद्धवंशी राजाओंसे ऐसा कुछ किया कि उनका सर्वथा विनाश कर दिया, पुराणोंमें ऐसा आया है कि शेषनागके समयसे ही राजा शूद्र होगये, इन दश राजाओंके राजत्वका समय ३६० वर्ष माना गया है ।

इसी तक्षकवंशके चन्द्रगुप्त मौरिवंशसे चौथी वंशावलीका आरम्भ होता है, इस वंशमें दश राजा हुए और १३७ वर्ष पर्यन्त इनका राज्य रहा ।

पांचवंशके आठ राजाओंने शृंगी देशसे आकर १०२ वर्षतक राज्य शासन किया, और कण्व देशके एक राजाने आकर अन्तिम राजाको मार डाला, और उसका राज हरण कर लिया, इनमें चार तो शुद्धवंशके थे, और पीछे शूद्राणीसे उत्पन्न कृष्ण नामक राजा हुआ, यह कण्वदेशी वंश २३ पीढ़ीतक चलता रहा और इसके पिछले राजाका नाम सुलोमधी था ।

इस प्रकार महाभारतसे पीछेकी छः वंशावली दी गई हैं जिनमें जरासंधके उत्तराधिकारी सहदेवसे आरम्भ कर वयासी राजाओंकी अविच्छिन्न शृंखला सुलोमधीतक बराबर चली गई है ।

कितनी एक छोटी वंशावलियोंके निमित्त भी उचित समय दिया गया है तिसपर प्रथम और अन्तिम वंशावलीके लिये ऐसा नहीं हुआ है, इस कारण पहली जाँचकी रीति काममें लानी चाहिये, जिसे उनका समय विक्रमके संवत् ६०४ तक १७०४ वर्ष होंगे, इस रीतिसे राजा वसुदेव विक्रमका समकालीन होगा, जो राजा सहदेवसे छठी वंशावलीमें पचपनवां है, और कत्तरदेशसे आकर राज्य जीतनेवाला

१ शिशुनाग वा मौरिवंशियोंको तक्षकवंशी मानना टाड् साहवका भ्रम मूलक है, बौद्ध जैन लेखकोंने इनको सूर्यवंशी लिखा है । (अनुवादक)

२ यहां भी शृंगी नाम भ्रमसे लिखा गया है वास्तवमें शुंग शब्द है पुराणोंमें शृंगी देशसे आना नहीं लिखा । (अनुवादक)

३ पुराणोंमें यह बात पाई जाती है कि शुंगवंशके पिछले राजा देवभूतिको उसके कण्ववंशी मंत्रीने मारा, भूमित्र उसका पुत्र था । (अनुवादक)

४ कृष्ण राजा शूद्राणीसे उत्पन्न नहीं किन्तु यह आन्ध्रवंश पुराणोंमें शूद्रही लिखा है, इसका प्रथम राजा सिमुक लिखा है, पुराणोंमें कण्वदेशसे आना नहीं लिखा (अनुवादक)

५ नकशेमें सात वंशावली दी हैं और वंशनाममें भी अन्तर है (अनुवादक)

कुछ उठी हुई शिखर मालाके बीचमें समतलस्थानमें बना हुआ है, इस कारण निकटके सब स्थानोंसे ऊंचा और स्वतन्त्र भावसे स्थित है । जिस स्थानपर दुर्ग बनाहै वह तीन सौ फुटसे अधिक ऊंचा नहीं है, इस कारण इसको पर्वत दुर्ग नहीं कहसकते; किन्तु मरुक्षेत्रमेंइतना ऊंचा दुर्ग अवश्य ही विचित्र दृश्य है । इसकी लंबाई साढ़े बारह कोशतक है; और जहांतक मैंने दृष्टि डालकर देखाहै उससे अनुमान होताहै कि इसकी चौड़ाई एक कोशसे अधिक नहीं है । राजधानी दक्षिणकी ओर सबसे ऊंचे स्थान पर है । उत्तर प्रान्तके जिस सबसे ऊंचे स्थानपर राजमहल बनाहुआ है उसकी उंचाई ३०० फुट है । स्थान सब तरफ ढालूहै । विशेष करके १८०६ ईसवीमें जिस समय संमिलित सेनादलने जिस स्थानपर गोले वरसाये थे, तबसे वह स्थान टेढ़ा होकर केवल एक सौ बीस फुट ऊंचा रहगयाहै । अभेद्य महल श्रेणी और बीच २ में गोल और चौकोने असंख्य बुरजोंसे शिखरके चार कोशका व्यास दृढताके साथ संरक्षित है । नीचेसे ऊपरकी ओर जो टेढ़ा मार्ग गयाहै, वह सात प्राकार और बहुतसे तोरणोंसे घिरा हुआ है । प्रत्येक परकोटेके द्वारपर अलग ३ सैनिक पहरे वाले रक्षा करते रहतेहैं । इन सब परकोटोंमें दो सरोवर हैं । पूर्वकी ओरके जलाशयका नाम “ रानी सरोवर ” और दूसरा “ गुलाब सागर ” के नामसे विख्यातहै । गुलाबसागर दक्षिणकी ओर है और दुर्गके सैनिक लोग अपने २ व्यवहारके लिये उससे जल लातेहैं । इन सब परकोटोंके बीचमें एक कुण्ड भी है; यह पर्वतको खोदकर बनायागयाहै और नब्बे फुट गहरा है । उपरोक्त दोनों सरोवरोंसे जल लाकर यह कुण्ड भरा गयाहै; यद्यपि भीतरी भागके स्थान २ में बहुतसे कूप हैं; किन्तु उनका जल शुद्ध नहीं है । अनगिन्त महल और छोटे बड़े मकानोंसे इसका भीतरी भाग परम रमणीय है प्रत्येक राजाने अपनी २ महलनिर्माणकी रुचिके स्मरणचिह्नरूपसे ही मानो एक २ महल बनवादियाहै, इस कारण महलोंकी आकृति क्रमसे बढ़ती चली गई है । दुर्गके पश्चिमप्रान्तवर्ती राजधानी तीन कोशतक अभेद्य परकोटेसे वेष्टित है; और परकोटेमें एकसे एक बुरज लगेहैं, तथा परकोटेके ऊपर पाइकलानामक बहुत सी तोपें रक्खी हैं । राजधानीमें प्रवेश करनेके सात सिंहद्वार हैं; जिस द्वारसे होकर बाहरके जिस स्थानको जाते हैं वह द्वार उसी नामसे विख्यात है । राजमार्ग बहुत सुन्दर रीतिसे बनेहैं और मार्गके दोनों ओर पत्थरोंकी मनोहर सीढियें विराजमानहैं । सुनतेहैं कि कई वर्ष पहिले यह नगर २०००० परिवारकी अर्थात् सम्भवतः ८०००० प्रजाकी वस्ती था । वर्तमानकालमें उप-

रोक्त संख्या बहुत अधिक मालूम होती है। नगरनिवासियोंके लिये गुलाबसागर प्रधान विश्रामस्थान है; सब लोग उसके तट और निकटके वनोंमें वायुसेवन करके आनन्द भोगते हैं। बड़े आश्चर्यका विषय है कि, उस वनमें एक ऐसा चमत्कारिक फल उत्पन्न होता है जो काबुलके अनारसे भी बहुत बातोंमें श्रेष्ठ है। काबुलके अनारको अन्यायसे बेदाना कहते हैं, क्योंकि उसमें दाने होते हैं, किन्तु यहांके इन फलोंका बीज इतना छोटा होता है जो कि न होनेकी ही समान है। “कागलिका वाग” अर्थात् “दाडिमीके वन” में उत्पन्न हुए यह मनोहर और स्वादिष्ट फल उपहारस्वरूप भारतके अनेक स्थानोंमें भेजे जाते हैं। इन फलोंका पन्नराग मणिके समान रमणीय रस देखकर कविलोग अमृतके साथ इसकी तुलना करते हैं।

चौथी तारीखको महाराजा साहबने दूसरे सिंहद्वारतक आगे बढ़कर मुझको यथारीतिसे सन्मानके साथ ग्रहण किया, और प्रणामपूर्वक कुशल प्रश्नके पीछे प्रचलित रीतिके अनुसार राजमहलकी ओर चले गये। महलमें जाकर जितने समयमें महाराज मेड़ी अभ्यर्थनाका सामान ठीक करसकें उतने समय तक मैं ठहर गया, और फिर धीरे २ श्रेणीवद्धभावसे खड़े हुए राजवंशीय और राजाके आत्मीय लोगोंके बीचमें होकर आगे बढ़ा; जाते समय मेरे नेत्रोंके सामने जितने चमक दमक और ऐश्वर्याडम्बरयुक्त दृश्य आये, मुझको पहिले उतने दृश्योंके देखनेकी आशा नहीं थी। यह सब मेवाडपति राणाके सरल और अनैश्वर्य प्रकाशक अभ्यर्थनानुष्ठानके विलकुल विपरीत थे। राठौरलोगोंने बहुत काल तक “जगतके अधिराजके दक्षिण हस्त स्वरूप” रहकर राज्य किया था, इस कारण यहांका प्रत्येक अनुष्ठान दिल्लीके शहंशाहका अनुकरण मालूम हुआ। सुवर्ण और चांदीके आसे आदि राजचिह्नधारी लोगोंने “राजराजेश्वर!” शब्दके उच्चारणसे मेरे कानोंको बहरेकी समान कर दिया। अन्तमें हम लोंग मौन और निस्तब्धभावसे खड़े हुए वीरोंसे भरे अनेक कमरोंको अतिक्रम करके राजसभामें पहुँचे।

मारवाडके अधीश्वर सिंहासनसे उठ खड़े हुए और कई पग आगे बढ़कर सन्मानके साथ मुझे ग्रहण किया। यह अभ्यर्थनागार बहुत बड़ा और एक सहस्र स्तंभोंसे शोभित होनेके कारण “सहस्र स्तंभकक्ष” नामसे पुकारा जाता है। स्तंभोंकी सुन्दरताकी अपेक्षा दृढ़ता अधिक है। यह प्रत्येक स्तंभ बारह २ फुटके अन्तरपर श्रेणीवद्धभावसे खड़े हैं, इस कारण देखनेमें वे सिलसिले हैं। इसकी

छत बहुत ऊँची नहीं है । सभागृहके बीचमें एक वेदीके ऊपर राजसिंहासन स्थापित है उसके ऊपर चांदीके बने स्तंभोंके सहारे एक सोनेके बेलबूटोंवाला चंदोवा लगा है । राणाके दक्षिण ओर पोकर्ण और निमाजके दोनों सामन्त बैठे । इन दोनों सामन्तोंने यद्यपि महाराजसे उंचा सन्मान पाया था, किन्तु यदि वह किसी प्रकारसे जानपाते कि, उनके विपत्तिमें डालनेके लिये ही महाराजने प्रगटमें इतना अधिक सन्मान दिखाया है तो कभी वह प्रसन्न चित्त होकर नहीं बैठते । दूसरे कई सामन्त और अन्यान्य कर्मचारी चारों ओर पड़े थे । उनके नाम लिखनेकी आवश्यकता नहीं है । वकील विष्णुगुप्त^१ उनके सन्मुख मेरे पास आसन ग्रहण किया । साधारण बातचीत^२ के लिये वकील ने अन्यान्य अनेक विषयोंमें कथोपकथन आरंभ हुआ । मारवाड़े के बोलनेमें विलक्षण शक्ति दिखाई । दिल्लीके बादशाहकी सभा^३ रहते थे उनमेंसे इनकी समान कोई भी शुद्ध हिन्दीभाषा नहीं^४ महाराजका शरीर न बहुत लम्बा न बहुत छोटा अधिक गम्भीर^५ स्वाभाविक अनमनी प्रकृतिवाला है । यद्यपि इनकी मूर्ति विलकुल राजोचित और वीरोंकी समान है, किन्तु स्वाभाविक महत्त्व^६ के द्वारा मेवाड़के राणाने जिस प्रकार सहजमें ही मुझसे सम्मानाधिकार किया था, इनकी मूर्तिमें उन सबका विलकुल अभाव है । राजा मानसिंहका अङ्ग प्रत्यङ्ग बहुत मनोहर है; इनके दोनों नेत्र ज्ञानसूचक हैं और यद्यपि इनकी आकृतिके बाहर वदान्यताकी आभा प्रगटहै किन्तु बीच २ में क्षणस्थायी ऐसे कितने ही लक्षण दिखाई देते हैं, जिनके द्वारा मानसिक भाव स्वतः ही प्रकाशित हो पड़ता है कि यह मानो सरलताके निदर्शनस्वरूप हैं । यह प्रतारित होकर जो बहुत कालतक वन्दी अवस्थामें रहे थे और जिसके कारणसे उन्मत्तप्राय होगये थे कदाचित् इनकी प्रकृति उस सम्बन्धसे ही इस आवृत्तिमें बदल गई होगी ।

महाराज मानसिंहने सब देश औरसब कालमें अपने मानकी रक्षा की थी । किन्तु घोरतर क्लेशमें गिरकर वह कुन्मकठोर होगये और मानसिक कल्पनाको किस प्रकार छिपाकर रखना चाहियेकेस विषयमें विशेष शिक्षित होगयेथे । यद्यपि यह बाघकी समान कठोरता नहीं दिखाते थे, किन्तु उस पशुकी भयंकर वृत्ति-धूर्तताको इन्होंने अर्जन करलिया था । बहुत थोड़े समयमें ही महाराज वन्दी दशासे छूटगये थे, किन्तु अब भी इनकी मूर्तिमें नम्रता, आत्मतुष्टि और सुख ऐश्वर्यका तिरस्कार प्रदर्शकभाव होनेपर भी अपने अधीनस्थ अगाणित

मनुष्योंको (जो इनके अनुग्रहसे सन्मानसुख भोग रहेहैं उनको) यह एकदम विध्वंस करडालनेके लिये भीतर २ जाल फैला रहेथे । इस कारण समयपर इनकी यथार्थ प्रकृति प्रगट होजातीहै । उन नष्ट किये हुआंमेंसे सुरताननामक एक मनुष्यका वर्णन ऊपर करचुकेहैं ।

केवल प्राच्य जगत् ही नहीं-अन्यान्य देशोंकी समान राठौर लोग भी अपनेको देववंशसंभूत कहते हैं । हमको निश्चितरूपसे ज्ञात हुआ है कि पाँचवीं शताब्दीमें कन्नौजमें एक जाति अधीश्वर थी और वह ईसवी सन्के आरंभसे पहिले राज्य करती थी । राठौर लोगोंके ऊंची जातिमें होनेके विषयमें भाट वा कवियोंकी कविताकी आवश्यकता नहीं है; कारण कि वीरत्व विक्रम, प्रताप प्रभुत्व प्रकाशक कार्यावलीने इतिहासके पन्नोंमें राठौरलोगोंका नाम जिस भावसे अङ्कित करदियाहै वह कभी लुप्त नहीं होगा । रजवाडेकी इन राठौर, चौहान आदि समस्त राजपूतजातियोंने यशरूपी मन्दिरके किस स्थानमें किसने कैसा आसन पाया था, उसका निर्वाचन असंभव है, किन्तु सत्यके अनुरोधसे मैं अवश्य ही राठौर लोगोंको चौहानोंके साथ समान यशवाले शिखरपर आसन देनेको वाध्य होताहूँ । मारवाडके आदि राठौरराज शिवजीके वंशसंभूत चण्ड और योध तथा उनके उत्तराधिकारी राजा मानसिंहका वीरत्व विलास अवश्य ही चिर स्मरणीय है ।

अन्तमें महाराजके पवित्र हाथसे इत्र और पान लेकर सन्मानके साथ प्रणाम किया, और फिर प्रचलित रीतिके अनुसार राजाके सामने ही शिरपर टोपी रखी । सम्पूर्ण देशी राजसभाओंमें शिरपर पगडी धारण और नंगेपैर बैठनेकी रीति प्रचलित है । साधारण लोगोंके बैठनेके लिये सफेद चादरसे ढका एक बहुत बड़ा गलीचा बिछा था, किन्तु उसके ऊपर जूता पहनकर बैठना अवश्य ही अशिष्टाचार सूचक है । राजद्वारपर जूता उतारकर आना होताहै, किन्तु भोजा पहेरे हुए उस कमनीय शय्याके ऊपर बैठना कभी अपमानसूचक नहीं हो सकता । महाराजने सुझको सजी हुई सवारी, घोडा, माला, सुनहरे और रुपहले कामके वस्त्र उपहारमें दिये । मेरे साथमें जितने भद्रलोग थे महाराजने उनको भी पद मर्यादाके अनुसार उपहार दिये ।

राज्यशासनसम्बन्धी सुव्यवस्थाके निमित्त छठी तारीखको मैंने दुवारा महाराजसे मुलाकात की । कई घंटेतक हम दोनों बराबर बातचीत करते रहे, उस समय वहांपर महाराजके विशेष विश्वासी एक कर्मचारीके सिवाय

और कोई नहीं था । बातचीत करनेसे मुझको यह भलीभाँति ज्ञात होगया कि महाराज एक बहुत बुद्धिमान पुरुष हैं, और केवल स्वदेशका ही नहीं किंतु सम्पूर्ण भारत वर्षके इतिहासके साधारण विषयोंको भलीभाँति जानतेहैं । यह प्रशंसनीय रूपसे शिक्षित हैं, और मुलाकातके समय इन्होंने मुझको वर्तमान और भविष्यकालके अनेक विषयोंसे जानकारी करदिया । महाराजने अपने वंशके इतिहासकी पुस्तकका जो अनुवाद मुझे दिया था वह इस समय रायल एशियाटिकसोसाइटीके पुस्तकालयमें रक्खा है । उन्होंने अपने जीवनमें इतिहासकी घटनावली विशेष आग्रहके साथ कही, और उनके गुरु (केवल दीक्षागुरु ही नहीं किन्तु मंत्री और मित्र भी थे) जिस समय मारेगयेथे उस समय उन्होंने अपना राज्यभार पुत्रको देकर आत्मरक्षाके लिये जो २ उपाय किये थे, वह सब एक २ करके मुझसे कहे । यह सब घटनाएँ विचित्र रहस्यजालमें जकडी हुई हैं, और केवल महाराज ही उस रहस्यजालको भेदन करनेमें समर्थ हैं । किन्तु जिस उद्देशसाधनके लिये इस लिये साहसी वीर सुरतानका जीवन नष्ट कियागया मैं वह उद्देश आविष्कार करनेके लिये उस गुप्त रहस्यका वह परिमित अंश भेदन करके एक प्रधान याजकका पाठकोंको अवश्य ही परिचय दूंगा ।

अभयसिंहने अपने पिता राजा अजीतसिंहका जीवन नष्ट कियाथा, उस महापापसे ही मारवाडके और उनके परवर्ती तीन चार पुरुषोंका सर्वनाश हुआ । पापीको उपयुक्त दण्ड देनेके लिये ही मानो जगदीश्वरने मारवाडकी वह शोचनीय दशा उपस्थित करदी थी । जिन परमोत्साही महावीर राजा अजीत सिंहने बड़ी वीरताके साथ बादशाह औरंगजेबके कराल गालसे अपना पैतृक राज्य उद्धार करलिया था, उनके ही ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंहने राजमुकुट धारणके लिये पिताके स्वर्गारोहणसमयकी वाट न देखी, और नरपिशाचकी समान अधीर होकर अपने अपवित्र हाथसे जन्मदाता पिताका दीप निर्वाण करदिया । सुनाजाता है कि दिल्लीके बादशाहने अभयसिंहको गुजरातके राजप्रतिनिधिपर नियुक्त करनेकी आशा देकर उनको इस महापातकरूप गहरी कींचमें डबाया था । अभयसिंहके छोटे भाई भक्तसिंहने राजाकी उपाधिधारणके साथ नागर प्रदेश पाया । अभयसिंहने उक्त प्रदेश अपने भ्राताके हाथमें सौंपदिया; किन्तु समय पलटनेपर उनके ही उत्तराधिकारियोंने भयानक युद्धाग्नि प्रज्वलित करके सहस्रों नररक्तसे बालुकापूर्ण मरुक्षेत्रको सींचा था । रजवाडेकी सामन्त शासनप्रणालीका यही विषमय फल है । इस शासनप्रणालीके द्वारा जैसा

आरक्सीज नदीके किनारे निवास करते थे, ईलामें जुपिटर [बृहस्पति] से एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम सीथिस था, इसके पलस [पालास] नापस वा [नापान] दो पुत्र हुए ।

हम पूछते हैं क्या यह तातारियोंकी वंशावलीका नागवंश है जो अपने महान् कार्योंके निमित्त प्रसिद्ध था, जिन्होंने देशोंके विभाग किये, उन्हींके नामसे उनका नाम पालियन वा पाली विख्यात हुए, उनकी सेना नीलनदी-तक मिसरमें पहुँची, बहुत सी जातियोंको अपने आधीन किया और अपने सीथियन राजकी पूर्वमें महासागर कास्पियन सागर और मोई टिसकीलतक बढ़ाया, इस जातिके अनेक राजा हुए जिनके वंशमें सैकैन्स [सैंकी] मैसे-जेटी [जटवाजिट] एरी अस्पियन एरियाके अश्व नामक पुरुष और दूसरी अनेक जातियां हैं जिन्होंने असीरिया और मीडिया जीतकर राज्यको तहस नहस करदिया, और वहाँके निवासियोंको अरक्सस नदीके किनारेपर लेजाकर बसाया ।

हमारे छत्तीस वंशोंमें सकी जट अश्व और तक्षक ऐसे नाम पाये हैं और यही नाम यूरोपके प्रारंभिक सभ्यताके समयकी दूसरी जातियोंमें भी पायेजाते हैं, इससे उनके मूल निवास्थानके खोजनेमें और भी बहुतसे प्रमाण खोजनेकी आवश्यकता है ।

देवोंका कथन है कि जो समस्त जातियां कास्पियनशीलके पूर्वमें रहती हैं उन सबका सीथिक कहतेहैं, उसमें उसी समुद्रके निकट डाही (दाही) जाति

१ चन्द्रवंशकी माता इला पृथ्वी है इसको मनुष्यरूप माना है सैक्सन इसको अर्था, यूनानी इरा, और इब्रानी अदे कहते हैं ।

२ क्या यह पालियन मिसरके गडारिये नहीं होसके, पाली अक्षर इस समय तक चलते हैं, और वे बौद्धोंके शिलालेखके टुकड़ोंकी समान अव भी पायेजातेहैं वे मेरे पास हैं और बहुतसे अक्षर कापटिक वर्णमालासे मिलते हैं ।

३ चंद्रवंशकी तीन महान् अश्वजातिफी शाखा मीड कहलाती हैं, यथा पुरमीड अजमीड और देवमीड, वाजस्वके पुत्र अश्वजातिके लोगोंने असीरिया और मीडिया पर आक्रमण किया, जब उन्होंने अपने पैतृक स्थान पांचालिक देशसे चलकर सिन्धुनदीके पश्चिमदेशमें आगमन किया वहाँपर उनकी संख्या बहुत बढ़गई थी यह स्पष्ट है ।

४ दाहिया जाति राजपूतोंके ३६ वंशोंमेंसे एक थी जो अब लुप्त होगई ।

की थी उसके फलीभूत होनेके लिये विषप्रयोग आवश्यक समझा, इस कारण उस उपासना और हलाहलने राजा मानसिंहके मृत्युका निवारण करके मारवाडके राज्यसिंहासन पर बैठादिया। देवनाथने मानसिंहका जो उपकार कियाथा, उसके लिये बड़ा भारी सन्मान और अगणित वृत्ति निर्द्धारण करके भी राजा मानसिंह अपनेको उन धर्मयाजकका ऋणी समझतेहैं उक्त याजकने जब मंत्रसे पवित्र करके राजवेश उतारा और स्वयं अपने प्रभु राजा मानसिंहके साथ राजकार्य करनेकी सम्मति दी तो राजसिंहासन भी पवित्र माना गया। देवनाथने जिस समय आशीर्वाद देकर मानसिंहके गलेमें जयमाला डाली उस समय राजा हाथ जोड़कर उनके सामने खड़े थे। धर्मयाजकके लिये राज्यके प्रत्येक प्रदेशमें इतनी अधिक भूवृत्ति निर्द्धारित करदी गई है कि वह जिस देवालयके प्रधान याचक हैं उस देवताकी सम्पत्ति मारवाडके श्रेष्ठतम सामन्तोंकी अपेक्षा बहुत अधिक है, और सम्पूर्णमारवाडका जितना कर एकत्रित होता है उनकी आय उसका दशांश है। कई वर्षतक देवनाथने अपने अधीश्वर मानसिंहको अपनी मुट्ठीमें रक्खा और उतने समयमें उन्होंने राज्यके कोषागारसे असंख्य धन लेकर ८४ चौरासी मन्दिर और उनके साथ धर्मशाला बनवा दी। उन धर्मशालाओंमें इनके शिष्यलोग सुखपूर्वक स्वच्छन्दतासे निवास करते हैं और वहाँके कारीगरोंसे धन लेकर अपना पालन करते हैं। इङ्ग्लैण्डके विलसिके समान मरुदेशके यह देवनाथ प्रतिक्षण अपनी शक्तिको इस प्रकारसे काममें लाते हैं कि हतबुद्धि मानसिंहके सिवाय और सबलोग उनसे होगये हैं और भीतर २ शत्रुता रखते हैं। इनकी और राजमंत्रीकी उपरी मित्रता है दोनों ही राजाको हस्तगत करके मारवाड शासनमें स्थित हुए हैं। उक्त प्रकारके स्वभाव चरित्रवाले याजकगण अपनी निर्द्धारिक कर्तव्य सीमासे बाहर कार्य करें तो सहजमें ही धर्मके नाममें कलङ्क लगजाता है। मारवाडकी उद्धृत प्रकृति सामन्त मण्डली इन गर्वित याजकोंके द्वारा जिस प्रकार अपमानित, लुप्तप्रताप और हतगौरव हुई थी उससे उन्होंने नरहत्याको अति सामान्य अपराध समझा। विख्यात इतिहास वेत्ता गिवनसाहब सामोसाटाके पालके विषयमें जो वचन लिख गये हैं मारवाडके देवनाथके विषयमें भी ठीक वही बात प्रयोग की जासकती है; “उनकी धर्मयाजक पद सम्बन्धी शक्ति केवल अर्थ संग्रह और लूटमारमें ही लगाई जाती है, यह धर्म विश्वासियोंमेंसे जो बड़े बड़े धनीलोग हैं उनके निकटसे सदा बलपूर्वक धनका संग्रह कर लेते हैं और साधारण राजकरका बहुत सा धन अपने कामोंमें

शेषनागसे आना हिसाब लगानेसे जिसका समय ईसासे छःसौ वर्ष पहलेका निश्चित होताहै, पुराणोंमें प्रथम यह सूचित किया है कि इसी समयके ओरे धोरे इन जातियोंने चढाई करके एशिया माइनरको जीतलिया था और पीछे स्कैंडिनेवियाको तथा बाक्ट्रियाके यूनानी राज्यको असी और टाचरी जातिने उलट पुलट करदिया, उसके पीछे असी* काही और किम्बरीजातियों तथा रोमनलोगोंने बालटिक समुद्रके किनारेपरसे चढाई की ।

यदि हम पहले जर्मनलोगोंको सीथियन वा गाथ जेटी वा जिट होना सिद्ध करसकें तो शासनरीति, और आचार विचार आदिके विषयमें खोजनेयोग्य विषयोंका हमको एक बड़ा स्थान प्राप्त होसकेगा, यूरोपकी सम्पूर्ण पुरानी बातोंका रूपकही नया होजायगा, और जर्मनवालोंके समूहोंसे उनका पता लगानेके स्थानपर जिस प्रकार किमाण्डेस्कू और बडे २ लिखनेवालोंने इस समयतक कियाहै उनकी खोज सीथियन आदि जातिके आचार विचारकी विस्तारपूर्वक घटनाओंसे जो हेरोडाटसने लिखी हैं लगायाजासकताहै, सीथियनजातिने सन् ई० से ५०० वर्ष पहले स्कैंडिनीवियाको अपने अधिकारमें करलिया था इन सीथियनलोगोंमें मक्यूररी (बुध) वोडन वा ओडनकी पूजा होती थी, तथा अपनेको बुधका वंशधर मानते थे यदि गाथलोगोंकी देवकथाओंका मिलान करें तो वे यूनानियोंकी विदित होती है जिनके देवता केलस और टेरा बुध और इलके सन्तान विदित होते हैं, जितनी यूनान और रोमकी मिथ्या विश्वासकी बातें हैं जैसे वनदेवी वनदेवता और प्ररियें इन्हीं सब बातोंका स्कैंडिनेवियावाले भी विश्वास करते हैं, गाथलोगोंका बलिके हृदयसे शकुन लेना; और भविष्य कहनेवाले स्त्री पुरुषोंपर पूरा विश्वास था, और यह लोग वीनसके स्थानपर फ्रेयाको और पारसीके स्थानपर वल्काइरीको मानतेथे x

इन देवकथाओंकी समानताका पता लगानेसे प्रथम हमारी यह इच्छा है कि यूरोपकी प्राचीन जातियोंके और साथियन राजपूतोंके एकही मूलके निकासको सिद्ध करनेके लिये हम कुछ और सम्मतियोंको खोज कर लिखें ।

जिसने अब्बुलगाजीकी पुस्तकका अनुवाद किया है, । वह अपनी भूमिकामें लिखता है कि हमारा तातारियोंको घृणाकी दृष्टिसे देखना न्यून होजायगा,

* यह असी शब्द जेटीयूट वा जटलोगोंके निमित्त उस समय उच्चारण कियाजाता था जब कि उन्होंने स्कैंडिनेवियापर चढाई की थी, और यूटलैण्ड वा जटलैण्ड नामक नगर उन्होंने बसाये ।

x गाथलोगोंके विषयमें पिकर्टनका लेख जिल्द ७२ पृ० ९४ देखो ।

नवीन जीवनकी वेल अकालमें सूख गई, यह सब बातें पीछे लिखआये हैं। मुझको झालामन्दसे राजधानीमें लानेवाले वीरवर सुरतानपर जो आक्रमण किया गयाथा, इतने वर्ष पहिले बोया हुआ यह बीज ही उसका मूल कारण है। केवल सुरतानका ही जीवन नष्ट किया हो ऐसा नहीं; किंतु मरुक्षेत्रके अधीश्वर मानसिंह क्रमसे प्रथम श्रेणीके शक्तिशाली सामन्तोंमेंसे किसीको निर्वासित और किसीको निधन कर रहेहैं। यद्यपि इन सब षड्यंत्र जालभेदका वर्णन अत्यन्त नीरस मालूम होना संभव है तथापि उनमेंसे कई बातोंका लिखना आवश्यक है, कारण कि उसको पढकर पाठक लोग राजा मानसिंहके (जो इस समय बृटिश गवर्नमेंटके मित्र हैं) हिंस्रस्वभावका पूर्ण परिचय पासकेंगे।

संवत् १८६० (सन् १८०४ ईस्वी) में माघमासकी पाँच तारीखको मानसिंह जालोरसे जोधपुरमें आकर अभिषिक्त हुए। मानसिंहसे पहिलेके राजा भीमसिंह अपनी एक गर्भवती स्त्रीको छोड गयेथे। विधवा रानीने पतिके परलोक सिधारनेपर अपने गर्भकी बात छिपाकर रक्खी, और यथा समय एक पुत्र उत्पन्न किया रानीने उस बालकको एक छवडीमें रखकर पोकर्णके सामन्त सवाईसिंहके पास भेजदिया। उक्त सामन्तने दो वर्ष तक उस बालकको छिपाकर रक्खा, अन्तमें मारवाडकी सामन्त समितिमें इस बातको प्रकट किया और सबकी सम्मतिसे राजा मानसिंहसे यह सब रहस्य वर्णन करके कहा कि “मारवाडका असली उत्तराधिकारी यह बालक धौकुलसिंह है, अतः नागर और उसके अधीनस्थ प्रदेशको इसे दे दीजियो। ” राजा मानसिंहने कहा कि यदि बालककी माताने इसको सत्य सत्यही भीमसिंहका औरस पुत्र बतायाहै, तो मैं इस अनुरोधका अवश्य ही पालन करूंगा। रानीने अपने प्राणनाशके भयसे अथवा पोकर्णके सामन्तके षड्यंत्रजाल विस्तारसे उस बालकको अपना पुत्र नहीं माना। सामन्त मण्डली इस बातको असत्य समझकर भी कई वर्षतक चुपरही। प्रकृतिकी शान्तमूर्ति जिस प्रकार प्रबल वायुके आनेका पूर्व लक्षण प्रकट करतीहै, सामन्तलोगोंकी इस निरवलताने भी उसी प्रकार मारवाडमें राजनैतिक आंधीकी सूचना दी थी; शीघ्रही उस प्रचण्ड वायुसे मारवाडके राजनैतिक महलकी जडतक काँपगई स्थान २ में लुटेरे और विजातीय शत्रु घुसगये, राजाको सिंहासनसे उतारदिया और उन प्रधान षड्यंत्र कारिने भूलसे भी अपने मनमें जिस बातकी कल्पना नहीं की थी वह सामने आगई अर्थात् सेनासहित नष्ट होगया। उस विश्वासघातकताके कारण सामन्त

शासन प्रणालीके ऊपरसे बहुत दिनोंके लिये राजालोगोंका विश्वास उठगया। पोकर्णके सामन्त सवाईसिंह धौकुलसिंहको मारवाडके सिंहासनपर न बिठासके। अन्तमें उन्होंने धौकुलसिंहको जयपुर वंशके खेतडी नामक प्रदेशके शिखावत सम्प्रदायके स्वाधीन सामन्तके निकट बेखटक रहनेके लिये भेजदिया। कुछ काल पीछे मारवाडके राणाकी पुत्री कृष्णाकुमारीके निमित्त मारवाड और जयपुरराजमें भयानक युद्ध उपस्थित हुआ; यह उपयुक्त अवसर समझकर सवाईसिंहको उस समय वहांसे कार्य्य रंग भूमिमें लेआये। कृष्णाकुमारीके निमित्त मानसिंहके साथ जयपुरपतिका जो भयंकर युद्ध हुआ था उसका फल ऊपर लिखचुके हैं। यह सहजमें ही अनुमान किया जासकता है कि सवाईसिंहके षड्यंत्रसे ही उत्तरभारतके संपूर्ण राजा लोग इस युद्धमें संमिलित हुए थे। राजा मानसिंह जिस समय परम रूपवती कृष्णाकुमारीके पाणिग्रहणकी आशासे समराग्नि प्रज्वलित करनेको उद्यत हुए थे उस समय मारवाडकी प्रजा उनसे विरक्त होगई, यह देखकर चतुर सवाईसिंहने राजा भीमसिंहके औरसपुत्र धौकुलसिंहको मारवाडका असली राजा बताकर घोषणा कर दी, तब सब राजालोग सवाईसिंहके पक्षमें होगये। इसके पीछे कैसे २ उपाय किये, क्या २ लोमहर्षण काण्ड घटा, किस प्रकार कृष्णाका जीवनदीप अकालमें बुझाया गया, उसको पीछे लिखआयेंहैं, इस घटना सूत्रमें ही पोकर्णके सामन्त सवाईसिंह मारे गये, और उनके कुछ ही दिन पीछे धर्मयाजक देवनाथ अमीरखांके अनुचरों द्वारा शोचनीय रूपसे नष्ट हुए।

अपनी प्रबल मानसिकशक्तिके बल और कई मित्रोंकी सहायतासे अपने सब शत्रुओंका नाश करके राजा मानसिंह विक्षिप्तासे होगये। प्रत्येक स्त्री पुरुषपर उनको संदेह होनेलगा, केवल रानीके हाथके बने हुए भोजनके सिवाय और सब भोजन करना बन्द करदिया; उनका विराग क्रमसे बढ़तागया, अन्तमें राजकार्य्य और सबका संग छोड़कर एकांतमें रहने लगे। उनकी असली वा नकली उन्मत्तताके दूर करनेके लिये जितने उपाय किये गये वह सब निष्फल हुए, वह दिन रात केवल देवनाथकी मृत्युपर शोक प्रकाशकरने और देवताओंकी स्तुति करनेमें लगे रहतेथे। जिस समय राजा मानसिंहके चित्तकी ऐसी दशा हुई उस समय उनसे पुत्रके ऊपर राज्य शासनका भार समर्पण करनेका अनुरोध किया गया, तब उन्होंने अपने हाथ अपने पुत्रके मस्तकपर राज तिलक लगाया। नवीन राजा छत्रसिंह उस समय व्यवहारशून्य थे, यह जैसे विवेक बुद्धि हीन थे वैसे ही लम्पट थे। राज्यप्राप्तिके पीछे अक्षयचन्द्र वनियेंको उन्होंने मंत्री बनाया।

सन् १८०९ ईसवीसे १८१७ ईसवीतक मारवाडकी दशा बहुत बुरी रही । उस ही समय घटनाचक्रसे राजस्थानका भाग्य अंग्रेजोंके हाथमें आया । छत्रसिंहने ब्रिटिश गवर्नमेंटके साथ संधि स्थापन करनेके लिये एक दूतको भेजा, किन्तु संधिस्थापनसे पूर्व ही छत्रसिंह स्वर्गको सिधार गये । उनकी इस अकालमृत्युके विषयमें अनेक लोग अनेक बातें कहते हैं । कोई २ कहतेहैं कि अतिशय लम्पटताके कारण शरीरकी दुर्बलताने उनके जीवन दीपको अकालमें निर्वाण करदिया, दूसरे लोग कहतेहैं कि उन्होंने एक राजपूत-युवतीका सतीत्व नष्टकरनेकी चेष्टा की थी इस कारण युवतीके पिताने अपनी तलवारसे उनके प्राण लेलिये । छत्रसिंहकी मृत्यु और राजनैतिक दशा परिवर्तित देखकर मारवाडकी सामान्तमंडली एकान्तवासी मानसिंहके ऊपर दृष्टि डालनेके लिये बाध्य होगई । मैंने जो कुछ बातें लोगोंसे सुनी उनमें यदि आधी बातें भी सत्य हो तो मैं यह कहसकताहूं कि देवनाथके हत्याकाण्डसे छत्रसिंहकी मृत्युतक जितने समय तक महाराज इस दशामें रहे वह समय उनके पापोंका प्रायश्चित्तस्वरूप था । जिस समय सम्वाददाताने छत्रसिंहकी मृत्युका समाचार सुनकर उनको राज्यशान्ति रक्षाके लिये प्रस्तुत होनेको कहा, उस समय वह दोनों बातोंका भाव कुछ भी नहीं समझसके । दीर्घकाल तक उन्मत्तता प्रगट करनेके कारण वह वास्तवमें विक्षिप्तकी समान होगये थे । क्षौर न करानेके कारण उनकी डाढी मूछें और जटाजालने उनकी आकृतिको पागलोंकी समान बनादिया था । किन्तु इस विरक्तिके समयमें उन्होंने अपने जीवनकी रक्षामें विशेष यत्न किया था । जो कई सामन्त छत्रसिंहकी राज्यशासन सहायता करतेथे उन्हींके अनुचर राजा मानसिंहकी सेवा करतेथे, सुनतेहैं कि इन सेवकोंने राजा मानसिंहकी हत्या करनेको कई बार विष दियाथा । उनका यह बुरा उद्देश सिद्ध न होनेके कारण लोग सत्य सत्य ही उनको विक्षिप्त समझनेलगे, और इस बातको भी भलीभांति समझगये कि इनका जीवन दैवमन्त्रसे रक्षित है । यथार्थमें बात यह थी कि राजा मानसिंहका एक अति विश्वासी सेवक था, उसने इस घोर विपत्तिमें भी राजाका सङ्ग नहीं छोड़ा था, वह अपना लाया हुआ भोजन ही राजाको खिलाता था ।

राजा मानसिंहने धीरे-धीरे अपनी उन्मत्तताको छोड़दिया । अंग्रेजोंके साथ संधि होते ही उन्होंने इस बातको भलीभांति समझ लिया कि राज्यकी शान्ति रक्षा करनेके लिये सेना लेकर युद्धमें जाना ही उचित है । उन्होंने अपनी इस इच्छाको स्वयं ही प्रगट कर दिया । राजा मानसिंहने ब्रिटिशगवर्नमेंटकी सहायतासे सम्पूर्ण शत्रुओंको दमन करदिया ।

वह अपने प्राचीन इतिहासको नहीं जानते, तो भी यह अपने पुराने नियमके अनुसार लाहौरके जिटअधिपतिके अधिकारमें रंगरूट सवारोंकी समान बीकानेर और भारतवर्षके मरुस्थल और दूसरे प्रदेशोंमें भी चरवाहों [राजचरवाहों] की समान रहतेहैं, थोड़े समयसे ही इन्होंने चरवाहोंका कार्य छोड़कर किसानी करनी आरम्भ करदीहै, ट्रान्स और आक्सियानाकी जो निरन्तर भ्रमण करनेवाली जाती थीं उनके वंशधर अब भारतके जंगलोंमें सबसे उत्तम खेतीका कार्य करनेवाले हैं ।

विचारसे यह बात जानीजातीहै कि इन हिन्दूसीथिक जातियों अर्थात् जेटी तक्षक, असीकट्टी राजपाली, हूनकैमेरीकी चढाइयोंके कारणसे ही चन्द्रवंश वा इन्दुवंशके स्थापन करनेवाले बुधकी पूजा आरंभ हुई है ।

हेरोडाट्सने जेटीलोगोंको आस्तिक * बतायाहै, और कहाहै कि वे आत्माके अमर होनेका सिद्धान्त रखते थे, यही बौद्धलोगोंका सिद्धान्तहै ।

परन्तु हम पहले असी वा अश्वजातिके विषयमें कुछ आलोचना करके पीछे असी जेटी वा स्कैण्डेनेवियाके जट जिनके द्वारा किम्बरीक चिरसोनीजका नामकरण हुआहै और सीथिया तथा भारतवर्षकी जेटीजातिके धर्मविषयकी समानताका उल्लेख करेंगे ।

अश्वका इन्दुवंश [देवमीढ और वाजश्वके वंशधर] सिन्धुनदीके दोनों तटोंपर बसगया, और सम्भव है कि इस अश्वनामसे ही 'एशिया' खण्डका नाम पड़गयाहो ।

हेरोडाट्स लिखताहै कि यूनानवालोंने प्रोमिथियसकी स्त्रीके नामपर एशिया नाम रखवा है, और कोई ऐसा कहते हैं कि यह मनेसके एक पोतेके नामसे हुआ था, जिससे आदिपुरुष मनुके वंशधर अश्व जातिका ही ज्ञान होता है ।

आशाशकम्भरी × माता आशाकी देवी है, जो जातियोंकी रक्षा करनेवाली माता है ।

* यह सूर्यको अपना सबसे बृहत् देवता मानते थे, इतनेपर जौमौलकूसिज इनके भयका देवताथा, जो हिन्दुओंके प्लुटोयसके समान है, इसीप्रकार 'यमलक्ष्' सीथिक जातिके फ्रैसलोगोंका मुख्य देवताथा पिंकर्टनकी हिस्ट्री आफ दी गाय जिल्द २ पृष्ठ २१५

× शाकम्भरी शाकम्-शाखाका बहुवचन और अम्बर रक्षा करना (टाड् साहबकी यह व्युत्पत्ति ठीक नहीं शाकम् शब्द बहुवचन नहीं एक वचन है और शाकादिपत्रोंका वाचक है, अम्बरका अर्थ भी रक्षा करना नहीं वस्त्रका है, शाकम्भरीका अर्थ शाकादिकेद्वारा भक्तोंको पोषण करनेवाली शाकम्भर यह दो शब्दहैं ।

द्वारा सामन्त मण्डलीका जीवन हनन कार्य पूरा करलिया । उसके उस हत्या-काण्डनाटकका प्रथम अभिनयस्वरूप सुरतानका स्वर्गवास सबसे पहिले समाप्त हुआ; इसके पीछे बहुतसे सामन्त इसी प्रकारसे मारेगये, यहां तक कि राजा मानसिंहका प्रथम उद्देश सिद्ध होनेमें कुछ भी शेष नहीं रहा । अन्तमें प्रति-हिंसाके फल देनेका समय उपस्थित हुआ; मंत्रीवर अक्षयचंद और उसके साथी लोग राज्यके पदोंसे अलग करके वन्दीभावसे कारागारमें भेजेगये । राजा मानसिंहने अक्षयचंदको जीवनदानकी आशा देकर ठगलिया; उसने अपनी चालीस लाख रुपयेकी सम्पत्तिकी एक सूची राजाके हाथमें सौंप दी । राजाने उस सब सम्पत्तिको अपने हस्तगत करके अन्तमें अक्षयचंदको मार-डाला । दुर्गाध्यक्ष नागजी और मल्लजी धोन्धलनामक दो मनुष्य राजाके मृतपुत्रके परम प्रेमपात्र और उपदेशक थे; जब राजाने निकाले हुए अपराधियोंको क्षमा कर देनेका ढंढोरा पिटवाया तो उपरोक्त दोनों व्यक्ति राज्यमें फिर लौट आये और अपनेको अविद्रोही समझकर निवास करनेलगे । छत्रसिंहके शासनसमयमें इन्होंने जितना धन राजकोषसे संग्रह कर लिया था, उस सब धनको राजाने अपने हस्तगत करके उन दोनोंको विष देदिया और उन दोनोंके शवको परि-खाकी धारमें डालदिया । उपरोक्त हत्याओंके करडालनेपर भी राजा मानसिंहकी पैशाचिक कामना निवृत्त न होकर क्रमसे प्रबल होने लगी । इनके नवीन मंत्री फतेहराज, अक्षयचन्द और सम्पूर्ण चम्पावत सम्प्रदायके प्रबल शत्रु थे; कारण कि उसकी धारणा यह थी कि, “यही सब मेरे भ्राता इन्दुराजको याजक देवनाथके जीवन हनन कालमें मारनेके कारणस्वरूप थे ।” इस कारण उसने इस लोमहर्षण अभिनयकालमें पूर्ण उद्योगके साथ राजा मानसिंहकी सहायता की थी । राजा मानसिंहकी इसी प्रकार प्रतिदिन अगणित मनुष्योंमेंसे किसीके प्राणनाश, किसीको वन्दी और किसीकी समस्त सम्पत्ति छीननेकी आज्ञा देतेथे । सुनते हैं कि राजा मानसिंहने इस प्रकार एक करोड़ रुपया अपने राजकोशमें बढ़ाया ।

इस राजसभामें मेरे जानेके छः मास और ब्रिटिश गवर्नमेंटके साथ मित्रता स्थापनके अठारह मास पीछे उक्त शोचनीय हत्याकाण्डादि कियेगये थे । राजपूतानेके देशी राजा लोगोंके साथ अपना औदास्य भाव सूचक राजनीतिका-विषय ऊपर लिखचुके हैं । रक्तपिपासु दुर्दान्त अत्याचारी राजा महताजातीय प्रत्येक वणिकका वाणिज्यद्रव्य अपना करलेंगे और प्रतिष्ठित निर्दोषी सामन्त-

लोगोंको अपनी इच्छानुसार देशसे बाहर निकाल देंगे, तथा “ उनके आभ्यन्तरिक शासनमें मैं हस्तक्षेप नहीं करूंगा ” इस प्रतिज्ञाने ही मेरे हाथ पैर बांध रखे थे । राजा मानसिंहने जितने आत्मीय और सामन्तोंके प्राणसंहार किये थे मारवाड़के इतिहासमें किसी राजाके शासनमें भी इतने लोमहर्षण काण्ड नहीं घटे थे ।

जो इतिहास भविष्यत्में जाननेके योग्य है, पाठक मण्डली उसको वर्तमान स्थानपर पढ़नेसे अवश्य ही राजा मानसिंहके दोषोंको भूलकर उनको गंभीर, नम्र और पूर्णशिक्षित राजा समझेगी । मैं समझता हूँ कि मानसिंहने विचार पूर्वक ही यह संहारमूर्ति धारण की थी । जो कुछ भी हो इन सब बातोंके लिखनेके लिये अधिक समयकी आवश्यकता है । राजा मानसिंह पूर्ण शिक्षित थे, वह फारसी भाषा और अपनी जातीय भाषामें भलीभांति बातचीत करते थे । उन्होंने अपनी कवितामें लिखे हुए अपने वंशके छः इतिहास मुझको उपहारमें दिये उनमेंसे जिन दोमें सात हजार कविता थीं उनका मैंने अनुवाद लिख लिया । प्रत्युपहारस्वरूपमें मैंने भारतवर्षमें मुसलमानोंके शासनका बड़ा इतिहास और “खोलासात उल तवारीख” अर्थात् भारतवर्षका संक्षिप्त इतिहास भेज दिया मुलाकातके समय महाराजको मैंने जैसा पंडित और सज्जन समझा था, परिणाममें ठीक उसके विपरीत हुआ । महाराजके साथ बातचीतके समय राज्यकी शासनप्रणाली और राजपूतोंके कर्तव्यता संबंधी उपदेश उनसे सुनकर मुझे परमानन्द हुआ । महाराज मुझको केवल एक अनुचरके साथ महलके अनेक कमरोंमें ले गये और वहांसे बड़े लंबे चौड़े मरुक्षेत्रकी ओर मेरी दृष्टिको फेरा पासके छोटे २ शिखर दृष्टिको दूरतक जानेमें रोकते थे । इतने बड़े मैदानमें केवल दो एक नीमके वृक्षोंके सिवाय और कोई वृक्ष दिखाई नहीं दिया । कई घंटे तक बातचीत होनेके पीछे मैं डेरेपर लोट आया, वहां आकर देखा कि मेरे दोनों मित्र कप्तान बाघ और मेजर गफ कई रोहिल्ला कुत्तोंकी सहायतासे एक मृगका शिकार कर लाये हैं ।

८ वीं नवंबर—मरुक्षेत्रकी “पंचरंगी” राजपताका यवनशासनके निकट झुकनेसे पहिले इस प्रदेशकी प्राचीन राजधानी मन्दौर थी उसके ध्वंस स्तूपोंमें घूमकर इतिवृत्त जाननेकी इच्छासे उस दिन प्रातःकाल ही मैंने यात्रा की राजाके भेजे हुए अनुचरोंके साथ आगे बढ़ा; अभीष्ट स्थानपर पहुंचनेमें एक घंटेसे कुछ अधिक समय लगा, यद्यपि यह स्थान ढाई कोशसे अधिक दूर नहीं था,

किन्तु हम लोग बहुत धीरे २ चले थे । राजधानीसे नगरकी ओर जो मार्ग गया है, उस मार्गसे जानेके लिये मैंने सुजात तोरणमें होकर राजधानीको छोड़ा । कुछ ही दूर चलनेपर “महामन्दिर” को देखा । राजा मानसिंहने ध्वंशप्राय जालौरसे उद्धार पाकर अपने व्ययसे इस विशाल मंदिरको बनवाया था । डेढ़ कोश मार्ग आगे २: को पूर्वको नीचा होता चला गया है । मैं उस मार्गसे होता हुआ पश्चिमकी ओर जानेवाले मार्गमें चलकर चारों ओर शिखर मालासे घिरे हुए मारवाडके राजवंशके प्राचीन कीर्ति पूर्ण स्थानमें पहुँचा । यह मार्ग बहुत छोटा है; शिखर बहुत ऊँचे तक सीधे चले गये हैं और पर्वतमें सैकड़ों गुफा संन्यासियोंका निवास स्थान बनी हुई हैं; पूरीहर लोगोंकी प्राचीन राजधानी इस मन्दिरमें शत्रुओंका प्रवेश रोकनेके लिये चारों ओर दुर्ग प्राकार बना था, उसका ध्वंसावशेष अब भी दिखाई देता है । इस स्थानसे निर्मल और स्वादिष्ट जलवाली नदी नाचती हुई चली है और एक सुन्दर खिलानमें होकर जलधार चली गई है । कुछ दूर चलनेके पीछे मार्ग क्रमसे चौड़ा आने लगा; और दो सौ घरोंसे युक्त ग्रामके अतिक्रम करनेपर एक ऊँचे स्थान पर बने हुए मंदिरोंन हमारे दृष्टिको आकर्षित किया । यह सब राठौर राजालों-गोंके समाधि मंदिर हैं; मरुक्षेत्रके चिरस्मरणीय अधीश्वरोंके शव जिस स्थानपर रानियोंके साथ भस्मी भूत किये थे उस २ स्थानपर उनके स्मरणार्थ यह मंदिरावली बनाई गई है । दक्षिणसे उत्तरकी ओर तक जितने प्रधान मंदिर हैं यह क्षुद्र नदी उनके दक्षिणमें होकर मन्द चालसे चलती है । पूर्वोक्त मंदिर श्रेणीके आरम्भमें सुविख्यात राव मालदेवका स्मारक मंदिर है, उसमें उनकी विक्रम प्रताप गौरवोचित मूर्ति स्थापित है । साहसी शेरशाह जिसने बड़ी वीरताके साथ मुगलसिंहासनपर आक्रमण किया था, इन मालदेवने बड़े विक्रमके साथ उन शेरशाहके विरुद्ध तलवार चलाई थी । सबसे अन्तमें महाराज अजितसिंहका स्मारक मंदिर है, और बीचमें सूरसिंह उदयसिंह, गजसिंह और यशोवन्त सिंह आदिके स्मारकमंदिर दिखाई देते हैं ।

जातीय इतिहासकी मूल आख्यायिकास्वरूप इस स्मारक मंदिरावलीने मारवाडके गौरवगारिमाका समय निर्धारण करदिया है । मालदेवके समयते राठौर कीर्तिभूधर शृङ्ग आकाशभेद करके अजितसिंहके पुत्रोंकी शासनलीला तक नीचे झुके रहे । वीरवर मालदेवका स्मारक मंदिर जो बहुत सीधे और सामान्य भावसे बना हुआ है और जिसने चण्ड और योद्धाके स्मारक मंदिरोंको अपनी छायामें ढकलिया है

उस मंदिरके साथ राजा अजितके स्मरणार्थ बने हुए परम रमणीय महलकी तुलना करनेपर हम स्वयं ही समझ सकते हैं कि, इस मरुक्षेत्रमें बाहरी सौन्दर्य और विलासिता क्रमशः बढ़ती गई है। जो मालदेव अमित तेजके साथ अफगान सम्राट्के विरुद्ध युद्ध करनेको खड़े हुए थे, (अफगानसम्राट्की चिरस्मरणीय उक्ति “मैंने एक मुठी गेहूँके लिये भारतसिंहासन खोदिया था।” यह प्रगट कर रही है कि उस समय सम्राट्ने जिन राठौर लोगोंको आक्रमण किया था वह महा दीनदशायुक्त और महावीर थे।) उनके समयसे लेकर अजितसिंहके शासन समय तक इन स्मारक मंदिरोंकी अकृति परिवर्द्धित और बाहरी सुंदरतायुक्त की गई, राजागजके स्मारक मंदिरके साथ उनके उत्तराधिकारिके मंदिरकी तुलना करने पर गजका मन्दिर सरल और साधारण मालूम होता है। यह सम्पूर्ण मन्दिर लाल रंगके छोटे २ पत्थरोंसे बने हैं; यह पत्थर इतने कोमल हैं कि इनपर बेल घूटा खोदनेमें कारीगरोंको कुछ भी श्रम नहीं होता। इन मन्दिरोंकी गठन प्रणाली शिव और बुद्ध दोनोंके मन्दिरकी समान है; किन्तु अधिक भाग और विशेष करके स्तम्भश्रेणी जैनियोंके अनुकरणमें कमलमीरके स्तम्भोंकी समान बनी है। विशेष करके मैं राजा यशवन्तसिंह और अजितसिंहके स्मारक मंदिरोंके विषयमें कहता हूँ; राजाके प्रधान द्वारा इन दोनों मन्दिरोंका नकशा तैयार कराके मैं यूरुपमें लाया हूँ; किन्तु खुदाईके काममें बहुत धन खर्च होता है। साफ और ऊँचे पाषाण स्तूपोंके ऊपर यह मन्दिर स्थापित है। यशवन्तसिंहका मन्दिर कुछ अधिक दृढ़ है, किन्तु आकृति और परिमाणमें ठीक अजितसिंहके स्मारक मन्दिरकी समान है।

मन्दिरके सन्मुख आंगनमें होकर रमणीय स्तंभोंसे शोभित संपूर्ण चांदनीके प्रवेशद्वारोंसे होते हुए भीतरके प्रधान मन्दिरमें पहुंचना होता है; शिवालयकी समान यह चारतल ऊँचा और शिखर तथा कलशयुक्त है। गठन और खोदित भास्करकार्य प्रशंसाके योग्य है, मन्दिरके मूलमें और ऊर्ध्वभागके अनेक स्थानोंमें जिस प्रकार अगणित स्तंभ शोभायमान हैं देखनेमें भी उसी प्रकार अत्यन्त मनोहर हैं। यह स्मारक मन्दिर इजिप्टके प्राचीन मन्दिरकी समान हैं। इन स्मारकमन्दिरोंके साथ २ स्मरणीय राजकुलके ऊपर दृष्टि डालनेपर सहजमें ही यह ज्ञात होसकता है कि, इस मारवाडराजवंशमें जिस प्रकार उपरोक्त महा २ वीरोंने जन्म लिया था, उस प्रकार किसी देशके किसी इतिहासमें भी नहीं दिखाई देता। उन राजालोगोंकी नामावलीके साथ हम मेवाड सुप्रतिष्ठित

वंशवाले राणागण और तैमूरवंशके सुप्रसिद्ध उत्तराधिकारियोंकी नामावली संयुक्त करके बड़े अभिमानके साथ यूरूपके राजालोगोंसे पूछतेहैं कि यूरूपमें किसी समय एक कालमें क्या ऐसे महावीर सुशासनकर्त्ता और विद्वानोंने जन्म लियाथा ?

मेवाड	मारवाड	दिल्ली
राणासांगा	रावमालदेव	बाबर और शेरशाह
○	राव सूरसिंह	हुमायूँ
राणा प्रतापसिंह	राजा उदयसिंह	अकबर
राणा अमरसिंह (१ मृ)	राजा गजसिंह	{ जहांगीर और शाहजहां
राणाकर्णसिंह		
राणा राजसिंह	राजा जशवंतसिंह	औरंगजेब ।
राणा जयसिंह	राजा अजितसिंह	{ फर्रुखसियादके परवर्ती दिल्लीके सिंहासनप्राप्ती गण
राणा अमरसिंह(२य)		

मालदेव और अकबरके मित्र और मारवाडके प्रथमराजोपाधि धारी (इससे पहिले रावोंकी उपाधि थी) उदयसिंहसे आरंभ करके औरंगजेबके प्रबल शत्रु जशवंतसिंह और अजितसिंह (जिन्होंने निज बाहुबलसे मुगलोंके भयङ्कर अत्याचारसे अपने राज्यका उद्धार किया) आदि यह सब ही राजा बड़े वीर और स्वदेशहितैषी थे ।

मैंने अपने साथी प्रदर्शकसे पूछा कि “अजितसिंहके बच्चोंकी समान साहसी सन्तानगण—जिन्होंने उनके स्मरणार्थ यह मन्दिर बनवायाहै और जो अपने राज्यका परिमाण बढ़ागयेहैं उनका स्मारक मन्दिर कहां है ?” उसने छोटे २ दो कमरोंकी ओर संकेत करके कहा कि “इस स्थानमें उनका प्रेतकृत्य समाप्त हुआ था । बड़े ऊंचे मनोरम मन्दिरोंसे सहसा एक साथ ही इतनी बड़ी अवनतिका क्या कारण है, यह दोनों कमरे बड़ी तीव्र और प्रबलभाषामें उसको—और मारवाडके राजसमूहकी घटनापूर्ण जीवननाट्यके चरम नैतिक फलको प्रगट कर रहेहैं । अभयसिंहने अपने जन्मदाता पिताके प्राण संहार किये थे, यद्यपि इनका शासनकाल सन्मानके साथ समाप्त हुआ, तथा इन्होंने अपने राज्यका परिमाण दूना करलिया था, तथापि उनके पुत्रके साथ उनके भ्राता भक्त सिंहके बड़े भारी अपराधी होनेके कारण ही मारवाडको असीम निग्रह भोगना पडा । उनकी विशेष इच्छा होनेपर भी अपनी श्वभस्म रक्षाके लिये कुछ शक्ति

नहीं थी । जिस श्रेणीमें उक्त पितृहन्ता और उनके साहसी भ्राताका मन्दिर स्थापित है, उस ही श्रेणीमें अपने जीवनके शेष अंश तक अविश्रान्त वीरता दिखाने-वाले महावीर विजयसिंहका था । मैंने आश्चर्यमें भरकर प्रदर्शकसे कहा कि “महावीर और परमश्रेष्ठ स्वामीकी शवभस्मको जो देश नोहर मन्दिरमें रखना नहीं जानता उस देशको धिक्कार है ।” विजयसिंहके तीन पुत्रोंके (उनमेंसे बड़े जालिमसिंहकी बात ऊपर लिख चुके हैं) स्मारक मन्दिर उनके पिताके मन्दिरके पास बने थे, उनसे कुछ ही दूरीपर राजा भीमसिंह और उनके अग्रज (वर्तमान अधीश्वर राजा मानसिंहके पिता) गुमाकका (यह अग्रात व्यवहारावस्थामें परलोक सिधार-गये थे) मन्दिर था । इस श्रेणीके सबसे अन्तमें छत्रसिंहका स्मारकमन्दिर विराजमान है । मैंने अनादरके साथ उसको देखकर साथी प्रदर्शकसे पूछा कि “छत्रसिंहसे श्रेष्ठ बहुतसे राजालोगोंके स्मारक मन्दिर न बनवाकर किस मूर्खने इनका ऐसा स्मारक मन्दिर बनवाया है ? ” उसने कहा कि “ माताका प्रेम ही इस मन्दिरके बननेका मूल कारण है ।

प्रत्येक मासकी अमावास्या और संक्रांति तिथि पितरोंका पवित्र दिन है; मारवाडमें ऐसी रीति है कि इन दोनों दिन राजा स्मारक मन्दिरोंके निकट जाकर जलदान करते हैं । मैं जिन बातोंके जाननेकी इच्छासे इस स्थानपर आया था साथमें मूर्ख प्रदर्शक होनेके कारण उनमेंसे बहुत सी बातोंको नहीं जान सका । यदि मैंने राठौरजातिका इतिहास पहिले अच्छी तरह न पढ़ा होता तो इस समाधि क्षेत्रमें आकर कुछ जाननेमें समर्थ न होता । किन्तु उस प्रदर्शकने एक असली घटना प्रकाशित कर दी । राजा अजितसिंहके शवके साथ चौंसठ रानियें जलती हुई चितामें शरीर जलाकर सूर्यलोकको चली गई; किन्तु बूंदीके राजा बुधसिंह जिस समय जल मग्न हुए थे उस समय उनकी ८४ रानियें अपने अपने जीवित शरीरको भस्मीभूत करके सतीनामको चरितार्थ किया था ! हाडाजातीय उक्त संभ्रांत वंशके सम्पूर्ण स्मारक मन्दिर राठौर लोगोंकी अपेक्षा अधिकतासे असली उद्देश ज्ञापक हैं, क्योंकि उनमेंसे प्रत्येक सतीकी पाषाणकी बनी हुई मूर्ति समाधि मन्दिरोंमें छोटी २ वेदीके ऊपर स्थापित है । बुधसिंह अजितसिंहके समसामयिक और औरंगजेबके अत्यन्त साहसी सेना नायक थे । उनके समयसे प्रायः एक सौ बीस वर्षकालके गर्भमें विलीन होगये हैं, इस समय पाठकगण उलटफेरका चूड़ांत निदर्शन देखिये!—जिस समय वह बुधसिंहके वंशधर मेरे प्रियमित्र राजा विष्णुसिंहने सन् १८२१ ईसवीमें प्राण छोड़े, उस समय उन्होंने आज्ञा दी कि “ हमारी कोई

स्त्री भी पतिभक्ति और प्रेमका परिचय देनेके लिये चितामें न जले। वह मुझको अपने बालक पुत्रके अभिभावक पद पर वरण करगये,—कुछ दिन पीछे मैं बून्दीमें चलागया और उनकी इस आज्ञाका भलीभाँति पालन करदिया ।

दुर्गके नीचेवाले स्मारक चिह्नोंके विषयमें भी लिखतेहैं। पर्वतके ऊपर और मन्दिर दुर्गप्राकारके बाहरी स्थानमें राव रणमल्ल, राव गङ्गा और पुरीहर लोगोंके हाथमेंसे जिन्होंने अंदौर छीनलिया था उन चंडका मंदिर विराजमान है। इन राजवंशीय तीनों महावीरोंका उक्त मन्दिरके दो सौ हाथकी दूरीपर एक स्वतंत्र स्थान है स्वाभाविक रोगसे जिन रानियोंने प्राणत्याग कियेथे उनके लिये निर्धारित है। प्रियं पाठक ! अब राठौर लोगोंके इस समाधिक्षेत्रसे बीभत्सदृश्यमें परिणत पुरीहर लोगोंकी राजधानीके देखनेके लिये आगे बढ़िये ।

जिन्होंने प्राचीन टास्कोनका कांटोना, वलटेरा अथवा अन्यान्य नगर देखेहैं, वह लोग मन्दौरके प्राकारकी असली आकृति सहजमें ही कल्पना करसकेंगे, क्योंकि यह नगरप्राकार ठीक वैसा ही विराटकाय है। यह बड़ी विचित्र बात है कि, यूरोपकी समान भारतवर्षकी प्राचीन जातियों (यूरोपके गालाटी और केल्टो जातिकी समान पालिनाम तुल्यार्थबोधक है) में यंत्र-विज्ञानशिक्षाके अभावसे एक ही प्रकारकी प्रणालीसे यह सब विराटकाय प्राकार एक दूसरेके ऊपर स्तूपाकारसे निर्माण कियेगये हैं; उनके उत्तराधिकारी लोग इन ऊंचे प्राकारोंको देखकर विचार सकतेहैं कि पूर्वकालमें इस प्रदेशमें बड़े २ शरीरवाले राक्षस रहते थे। सम्पूर्ण राजपूताना और सौराष्ट्रसहित भारतके इस पाश्चात्य प्रदेशके राजालोग जिस भावसे अपने नामको अक्षयकरनेके लिये अगणित कीर्तिस्तंभ और स्मारक मन्दिरादि निर्माण तथा जिस भावसे अपनी धर्मप्रणाली और पवित्र चरित्र चिह्न अङ्कित करगये हैं, वह सब उनके प्रतापप्रभुत्व और बड़ी भारी शक्तिका परिचय देनेवाले हैं। प्राचीन भारतके छत्तीस राजवंशोंमें “राजपालि” भी एक प्रधान गिनाजाता है। सौराष्ट्रमें सतरञ्ज शिखर नामका जो बौद्धोंका पवित्र तीर्थस्थान है, उस शिखरकी तलैटीमें “पालिथाना” अर्थात् पालियोंकी जो वासभूमि है और गदवारका पालिनगर उस पालिजातिकी प्राचीन राजनैतिक शक्ति और धर्मप्राबल्यकी विशेष साक्षी देरहेहैं। सम्पूर्णराजपूतानेमें ऐसा एक भी प्राचीन नगर नहीं देखा जहां यथाकार स्तंभावली, शिखरमालासे मैंने खोदित स्मारकचिह्न-अनुलिपि और

प्राचीन समयके स्वर्ण रौप्य और ताम्रमुद्रा का पदक न पायेहों । पुरीहर जाति अग्निकुलकी चार शाखाओंमेंकी एक शाखासे उत्पन्न है, तथा यह लोग चन्द्र और सूर्यवंशके राज्यविस्तारसे पहिले ही भारतवर्षमें प्रविष्ट हुए थे । * पुरीहर लोगोंके इतिहास वर्णन करनेके समय में यह बात लिखना भूलगया हूँ कि, पुरीहरलोग कहते हैं कि “हम लोग कश्मीरसे भारतवर्षमें आये थे । जिस समय बौद्धोंके साथ शैवोंका धर्मयुद्ध हो रहा था, उस समय यह लोग भारतवर्षमें आये थे और अनेक बौद्ध धर्मावलम्बी उस धर्मके उत्साहदाता हुए थे, यह बातें भी उन्हींके इतिहाससे प्रगट हैं । इस धर्म संप्रदायकी अधिक संख्या देखकर मालूम होता है कि इन पाश्चात्य प्रान्तका वाणिज्य जातिके चार अंशके एक अंश परिमित लोग भारतविजयी लोगोंके उत्तराधिकारी हैं और उन बौद्धोंकी अनगिनत उपशाखाओंके साथ साढ़े दश शाखाओंमें सात शाखा अब भी जैन धर्मावलम्बी हैं, इस कारण यह अनुमान होता है कि उक्त धर्म बहुतवर्षोंतक भारतमें प्रवल रहा होगा ।

पाठकगण ! आइये अब हम लोग पत्थरकी सीढियोंपर चढ़कर इस विराटकाय ध्वंसराशिके ऊपर गमन करें । पुसकुण्डके पास नागदानामकी जो छोटी नदी है, पहिले उसका वर्णन करते हैं । जानेके मार्गकी आधी दूरीपर एक बड़ी बावड़ी अर्थात् चौबच्चा दिखाई देता है । यह बड़ा जलाशय पर्वतको खोदकर बनाया गया है । इसके भीतरी भागमें एक बड़ी सीढ़ी बनी है । खेदकी बात है कि निकटके दो बड़े प्राचीन गूलर और उदुम्बर वृक्षकी जड़ें इसका भीतरी भाग आक्रमण करके अकालमें गिरनेका डर दिखा रही हैं । पुरीहरलोगोंके अन्तिम महाराज नाहरराव इसके निर्माणकर्त्ता प्रसिद्ध हैं । ऊंचे विराट प्राकारके ऊपर दृष्टि पडते ही मेरे मनमें विचित्र भावका उदय हुआ । जिस समय यह प्राकार बनाया गया, तबसे कई सौ वर्ष बीतगये और भी कई सौ वर्ष बीत जायेंगे, किन्तु यह दुर्ग उस समय भी ठीक इसी प्रकारसे खड़ा रहेगा । उक्त प्राकार शिखरकी ओरको क्रमसे सीधा चला गया है, और तोप बननेके बहुत वर्ष पहिले इसके निर्माण होनेके कारण पुरीहर और पालीके स्वामीने यह महल बहुत ठीक स्थान पर अर्थात् दुर्गके बीचोंबीचमें निर्माण कराया है । इसके सब बुर्ज दृढ और

* हम कर्नेल टाड साहबकी इस बातका किसी प्रकारसे भी समर्थन नहीं कर सकते । क्योंकि टाड महोदय इनके जिस समय भारतमें प्रगट होनेकी बात लिखते हैं, उसके सैंकड़ोंवर्ष पहिले भी चन्द्र और सूर्यवंशके राजा भारतमें राज्य करते थे ।

चौकोन हैं । जब मैं इस स्थानपर पहुंचा तो मुझको थकावट और ज्वर आगया था इस कारण इस प्राकारकी भूमिका परिमाण नहीं जानसका, किन्तु ऊपरके भागमें पुरीहरलोगोंके प्राचीन महलके ऊपर चढ़कर चारोंओर ध्वंस स्तूपोंपर दृष्टि डालनेसे मेरा वह क्षोभ जातारहा । यद्यपि ध्वंस चिह्न बहुत साधारण हैं, तथापि अवतक दिखाई देतेहैं । जिन उपकरणोंसे यह सब बनेथे उन्हीं उपकरणोंसे नवीन जोधपुर राजधानी और उपरोक्त सम्पूर्ण स्मारक मन्दिर बनाये गयेहैं । राजमहलसे मिले हुए कितने देवमन्दिर और महलके कितने ही कमरे अब भी स्पष्टरूपसे दिखाई देतेहैं । इन सब कमरोंके बाहरकी खुदाईका काम देखकर अनुमान होताहै कि यह तक्षक अथवा बौद्धोंके हाथके बने हैं । महलकी दीवारोंपर धर्मसम्बन्धी बहुतसे साङ्केतिक चिह्न अंकित हैं । यह सब बौद्ध और जैनियोंके निदर्शन चिह्नकी समान हैं, किन्तु शैवोंके त्रिकोण चिह्न भी कई स्थानोंमें खुदे हैं । पुरीहरलोगोंके सर्व प्रधान चिह्नोंमें दुर्गके दक्षिण पूर्वमें बना हुआ सिंहद्वार (सदरदरवाजा) और जयतोरण परम रमणीक है । यह देखनेमें बहुत बड़ा है; मन्दौरके प्राचीन राजालोगोंमेंसे किसी एक राजाने अपनी विजय घटना चित्र स्मरणीय करनेके लिये ही इसको बनवाया है । अवकाशभावके कारण मैं इस जयतोरणका नकशा नहीं लेसका ।

उत्तर प्रान्तके कुछ ही दूर थानापीरका थान है । थानशब्द स्थानका बोधक है । अजमेरमें जिन ख्वाजाकुतुबकी प्रसिद्ध मसजिद है, उक्त थानापीर उन्ही कुतुबके शिष्य थे । इस प्रदेशमें बहुतकालसे जितने धनके लोभी सैधवी और अफगान लूटमार और डकैती करते चले आरहेहैं, यह सब अपवित्र काफरलोग प्रायः इन ही पीरकी मसजिदमें एकत्रित होतेहैं । उक्त उत्तरकी ओर ही परकोटेके बाहर पुराने राठौर राजगणों और उपरोक्त वर्णित सती स्त्रियोंके मन्दिर बनेहैं । किन्तु पुरीहर राजकुलके शव किस स्थानमें जलाये जाते थे और किस स्थानमें उनके समाधिमन्दिर बनाये गये थे जनश्रुति वा इतिहाससे इस बातका कुछ भी पता नहीं चलता । पूर्व और उत्तर पूर्व प्रान्तमें प्रकृतिने अपने हाथसे प्राचीन दुर्गका अभेद्य परकोटा बना दिया है । वह स्थान नगर निवासियोंके थकावट दूर करनेके लिये सर्वांशमें उपयुक्त है ।

हम लोग जिस मार्गसे ऊपर चढ़े थे, उस ही मार्गसे होकर पुसकुण्डकी ओर आगे बढ़े । स्थान २ में जिस प्रकार अनेक तरहके मनोहर दृश्य दृष्टिगोचर हुए उसी प्रकार पुराने महल भी दिखाई दिये । उक्त मार्गकी तलैटीमें निर्मल जलका

जलाशय और दो सिंहद्वार हैं; एक द्वारमें होकर मनोहर वन और राठौर लोगोंके द्वारा बने हुए उसके बीचवाले ग्रासाद पुञ्जमें पहुँचते हैं। और दूसरे मार्गसे होकर वहाँ पहुँचते हैं जहाँ मारवाडके प्रसिद्ध वीरवृन्द-राठौर लोगोंकी प्रतिमायें स्थापित हैं। इन समस्त रमणीय प्राचीन स्मरणाचिन्होंको देखकर मनमें जिस एक प्रकारके अनिर्वचनीय विचित्र भावका आविर्भाव होता है, मैं यहाँपर उस भावसे युक्त होकर कुछ देरके लिये उसही ध्यानमें मग्न होगया था। एक गुफाके भीतर मंदौरके सुप्रसिद्ध अधीश्वर (नाहरराव जिन्होंने आरावलीके दुर्गम पथपर चौहानोंके साथ घोर युद्ध करके बड़ी वीरतासे अपने प्राण छोड़े थे) के स्मरणार्थ एक वेदी बनी है; चन्द्रकविने अपनी कवितामें राजपूत वीरश्रेष्ठ नाहररावकी बड़ी भारी प्रशंसा लिखी है। एक क्षौरकार इस समाधि मन्दिरके सेवाकार्यमें नियुक्त है। यह काम नाईको क्यों सौंपा गया? इसका कारण मैं नहीं जान सका किन्तु यह नाई लोग जब राजपूत लोगोंके गृहस्थीके अनेक कामोंमें नियुक्त हैं, तब अवश्य ही किसी विशेष कारणसे इस पदपर क्षौरकारको नियुक्त किया होगा। इस बातके असली कारणको यहाँ कोई भी नहीं जानता। इस स्थान पर एक मंदिरमें नौ मूर्तियाँ हैं। सुनते हैं कि रावणने अपने द्वीपसे आकर इन मंदरेश्वरकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था, उस सम्बंधमें ही यह मूर्तियाँ खोदी गई हैं। नागदा नामकी जो एक नदी यहाँ बहती है उसके विषयसे भी एक जनश्रुति सुनी; किन्तु वह बात बहुत लम्बी चौड़ी होनेके कारण नहीं लिखी झरनेके निकट ही महावीर पृथ्वीराज और उनकी सुप्रसिद्धा सहधर्मिणी ताराबाईका समाधिमन्दिर है। उक्त मार्गकी तलैटीसे कुछ दूर एक तोरणमें होते हुए चारों ओरसे प्राकारवेष्टित एक बड़े भारी मैदानमें पहुँचते हैं। उस भूखंडके शेषप्रान्तमें पर्वतके ऊपर एक बड़ा कमरा दिखाई दिया। जैनियोंके मन्दिरमें जिस प्रकार छोटे २ स्तंभ दिखाई देते हैं, उसी प्रकार त्रिश्रेणिबद्ध स्तम्भावलीके अवलम्बनसे उक्त कमरेकी छत स्थित है। इस कमरेके भीतर मारवाडके बड़े २ तेजस्वी वीरोंकी प्रतिमायें विराजमान हैं। सब मूर्तियाँ वस्त्रालंकार और अस्त्रशस्त्रोंसे युक्त हुई अश्वारूढ हैं। पर्वतकी चट्टानोंको काटकर यह मूर्तियाँ बनाई गई हैं। किन्तु यह सब मूर्तियाँ स्वतंत्र भावसे स्थापित हैं, मनुष्यके स्वाभाविक शरीरकी अपेक्षा बड़ी हैं और पर्वतके साथ इनका कुछ संबन्ध नहीं है। इनके अङ्ग प्रत्यङ्ग ठीक परिमाणमें न होनेपर भी इनकी आकृतिसे वीरता, तेज, साहस और शोभा टपकती है; प्रत्येक वीरके साथ उनके प्रिय सेवककी मूर्ति होनेसे

देखनेमें परम सुन्दर है । प्रत्येक सामन्तके हाथमें वरछा, तलवार, ढाल, पीठपर धनुष बाण और कमरमें लम्बी छूरी बँधी है । सबका रंग देखनेमें सुन्दर है; किन्तु मैं यह नहीं कहसकता कि इन वीरोंका शरीर असली ऐसा ही था अथवा कारीगरोंने अपनी इच्छानुसार बना दिया है । इस कमरेमें प्रविष्ट होनेसे पहिले एक बड़ी गणेशजीकी मूर्तिके दर्शन होतेहैं । गणेशजीकी मूर्तिके निकट रणदेवके भीरुनामक दो पुत्रोंकी मूर्तियाँ विराजमान हैं । उनके अनन्तर चण्डमुण्डा और कङ्काली देवीकी मूर्तियाँ स्थापित हैं । कालीकी मूर्ति कृष्णकाय भयङ्कर महिपासुरकी छातीसे ऊपर एक चरण और सिंहकी पीठपर दूसरा चरण रखकर खड़ी है; सिंह उक्त राक्षसकी छातीको भयानक रूपसे काट रहा है । देवीके हाथोंमें अस्त्र शस्त्र शोभायमान हैं । कालीकी मूर्ति और रणधर्ममें दीक्षित संग्रामभूमिमें मरे हुए वीरोंकी मूर्तियोंमें राठौर लोगोंके सर्व प्रधान धर्मयाजक नाथजीकी प्रतिमूर्ति स्थापित है । नाथजीके एक हाथमें माला और दूसरे हाथमें धर्मदण्ड हैं । मल्लीनाथ सफेद घोड़ेके ऊपर चढ़े हुए हैं, उनके हाथमें स्थित वरछेके शिरपर एक झंडी है और तरकस घाँडेके नितम्बोंपर लटकता है; उनकी भार्या पद्मावती भोजनपूर्णपात्र हाथमें लिये मल्लीनाथके समक्षेत्रसे लौटनेकी अभ्यर्थना कर रही हैं । मल्लीनाथके युद्धमें मारेजानेपर पद्मावती अपने शरीरको उनके शवके साथ भस्मी भूतकरके सूर्यलोकको चली गई ।

इसके अनन्तर कृष्णकाली नामक भयङ्कर घोड़ेपर सवार प्रभुजीकी प्रतिमा है । कवि और प्रदर्शक लोग प्रतिवर्ष मारवाडके अनेक ग्रान्तोंमें घूमकर इन प्रभुजीकी कीर्ति गान और महावीरत्व सूचक चित्रावली ग्रामीण लोगोंको दिखाकर बहुत सा धन संग्रह करतेहैं ।

इसके पीछे सुप्रसिद्ध वीर रामदेव राठौरकी मूर्ति दिखाई दी । इनके सन्मानके लिये इस प्रदेशके प्रत्येक राजपूतग्राममें एक २ वेदी बनाई गई है ।

हरसङ्कल नामक जिन वीरवरने निर्वासित राजा योधकी विशेष सहायता की थी तथा चित्तौरके राणाका मन्दौरपर अधिकार करलेनेपर उसके पुनरुद्धारके लिये बड़ीभारी चेष्टा की थी उनकी प्रतिमूर्तिको इसी स्थानपर देखा ।

सुलतान महमूदके भारतक्रमणके लिये सेनासहित आनेपर गोगानामक जिन चौहान वीरने जन्मभूमि-स्वाधीनता और पितृधर्म रक्षाके निमित्त अपने सैतालीस पुत्रोंसहित शतद्रु नदीके तटपर प्राण विसर्जन किये थे, इसके अनन्तर उनकी प्रतिमाको देखा । सबसे पीछे गिहोड जातिके मधु मङ्गल नामक

जगत्प्रसिद्ध अधिनायककी प्रतिमाको देखा । इन संपूर्ण वीरोंकी वीरत्व कहानी यहांपर लिखनेसे पाठकोंको नीरस लगेगी, इस कारण उधरसे मौन होते हैं ।

ऊपर वर्णन किए हुए कमरेके निकट ही उसी प्रकारके बनावटका उससे भी बड़ा एक दूसरा कमरा विराजमान है । यह “तैतीस कोटि देवताओंका स्थान” इस नामसे प्रसिद्ध है । इसकी सब मूर्तियाँ आकारमें बड़ी और पत्थरकी बनी हैं । सबसे प्रथम सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माकी मूर्ति है; दूसरी सातघोड़ोंपर सवार सूर्यकी प्रतिमा है; इसके अनन्तर हनुमानजीकी मूर्ति है, उन्हीके निकट प्रियतमा सीताजीके साथ रामचन्द्रजीकी मूर्ति विराजमान है । इसके अनन्तर गोपाङ्गनाओंसे परिवेष्टित श्रीकृष्णजीकी मूर्ति है। फिर विराट्काय महादेव और उनके वाहन सांडकी मूर्ति स्थापित है । इनके अतिरिक्त लक्ष्मी और सरस्वतीजीकी मूर्तियाँ भी स्थापित हैं ।

इसके अनन्तर मैं राजा अजितसिंहके बनाये हुए वाग और महलमें गया । महल इतना मनोहर बना है कि लेखनी द्वारा उसके रूपका वर्णन करना असंभव है । महलके कमरोंके स्तंभ जिस प्रकार अगणित अद्भुत स्तंभोंसे शोभायमान हैं दीवारोंमें बेलबूटेका काम भी उसी प्रकार चित्ताकर्षक और प्रशंसनीय है । अन्तःपुरमें रहनेवाली स्त्रियोंको कोईभी न देखसके इस कारण वारीक बुनावटके परदे लटक रहे हैं । वाग बहुत बड़ा नहीं है और प्राकृतिक दृढ परकोटेसे घिरा हुआ है, इस कारण ग्रीष्मकालमें भी शीतल रहता है । कृत्रिम झरने जलाशय और जलके नाले प्रत्येक स्थानमें विद्यमान हैं । वृक्ष और फल फूलोंकी ओर भी दृष्टि डाली । बड़े वृक्षोंके अतिरिक्त फलवाले वृक्ष अधिक हैं । स्वर्ण चम्पक (जिसकी तीव्र सुगंधि असह्य है और सेजपर रखनेसे शिरमें पीडा होने लगती है) रमणीक फल फूल शोभित दाडिभी सीताफल; (जिसको हम लोग लड्डूकी समान समझते हैं) रमणीय केला, (जिसके बड़े २ पत्तोंके हिलनेसे शरीर शीतल होजाता है वह कदली वृक्ष), भोगरा, चमेली और फल फूलरानी “वारह मासा” (जो वारहों महीने खिला रहता है जिनके होनेसे यह सम्पूर्ण वाग शोभायमान है) । यह स्थान अत्यन्त चित्ताकर्षक है यहां आनेसे मुझको बड़ा आनन्द हुआ । पाठकगण ! एक बेर कल्पनाक्षेत्रमें घूमकर स्मरण कीजिये—एक अंग्रेज मन्दिरके ध्वंसस्तूपोंमें बैठा हुआ खोज और अनुलिपिके कार्यमें तत्पर है; सन्मुख आमके बड़े २ वृक्ष शोभायमान हैं; कुछ दूरीपर एक विशाल तिन्दूका

वृक्ष है। “पुरीहर लोगोंके अन्तिम अधीश्वर नाहररावके सन्मुख अपनी इन्द्रजाल विद्याशक्ति दिखानेके लिये एक ऐन्द्रजालिकने इस वृक्षको आरोपण किया था।” जनश्रुति यह है कि उक्त वृक्षकी शाखासे गिरनेके कारणसे ही उस ऐन्द्रजालिका जीवनरूपी दीपक बुझगयाथा। * इस वृक्षकी बड़ी २ डालियोंपर बन्दर निर्भय होकर कूदते और विचरण करते हैं। वृक्षकी जड़में दो राठौर राजपूत शयन किये हुए हैं और बड़े २ दो घोड़े भी तंद्रामें हैं। यह उस शान्त निर्जन प्रदेशका कमनीय दृश्य है।

पर्वतकी चोटीपर नीचे जानेवाली उपत्यकाके सामने बहुत सी गुफायें हैं, जिनमें संन्यासीलोग निवास करते हैं। हमको इस बातका बड़ा ही आश्चर्य है। कि प्रचल गम्भीके दिनोंमें यह लोग ऐसे संकीर्ण और पवनरहित स्थानमें किस प्रकारसे रहते होंगे? संध्या होजानेके कारण मेरे कैम्पमें लौटनेका समय आगया, इस कारण फिर एक बेर मारवाडके बीरोंकी प्रतिमाओंके दर्शन कर और “कृष्णकाली” घोड़ेके चरणतलपर अपना नाम लिखकर प्राचीन मन्दरसे लौट आया।

१३ वीं नवम्बर—आज राजा मानसिंहने अपने महलमें भोजन करनेके लिये मुझे निमंत्रण दिया था, इस कारण मैं नई पोशाक पहनकर राजपूतका आतिथ्य ग्रहण करनेके लिये गया। राजाने मुझसे एक अनुरोध किया, जो मुझको कुछ एक विचित्र मालूम हुआ,—उन्होंने यह विचारकर कि “देशी भोजन साहबको अच्छा नहीं लगेगा और न इससे उनकी तृप्ति होगी” मुझसे मेरे खानसामाको पहिलेसे मांगलिया। संधियाके कैम्पमें मैं प्रायः ऐसा ही किया करता था, वहां महाराष्ट्रीय भोजनके साथ २ अपने देशका भोजन भी खाता था। मैंने मारवाडेश्वरको कहलाभेजा कि “जोधपुरके भोजनकी सामग्रीसे मेरी उदर पूर्ति और तृप्ति अवश्य होजायगी।” मैंने अपनी टेबिल और मारवाडाधीश्वरके दीर्घजीवनलाभ और स्वस्थयोदेशसे पान करनेके लिये “क्लारेट” नामक सुरा महलमें भेज दी। मेरे वहां पहुँचने पर महाराजने मुझको बड़े आदरके साथ ग्रहण किया और भोजनगृहमें जानेका अनुरोध करके महलमें चले गये। सुवर्ण और चांदीके आसे लिये बहुतसे अनुचर मेरे पीछे २ चले।

* प्राच्यभाषा तत्त्वविद् मेजरप्राइस साहबने जहांगीरके हाथकी लिखीहुई जहांगीर जीवनीका जो अनुवाद कियाहै, उसके पढ़नेवाले पाठक जानते होंगे कि, यह ऐन्द्रजालिकलोग अपनी इन्द्रजाल विद्याके बलसे केवल वृक्ष ही नहीं बरन फलतक क्षणमात्रमें उत्पन्न करके आश्चर्यमें डाल देतेथे।

भोजनगृहमें प्रविष्ट होकर मैंने देखा कि, पुलाव. मांस और मिष्ठान्न आदि विविध प्रकारके भोजन यथोचित स्थानपर रखे हैं । हिंदू और मुसलमान दोनोंके खाने योग्य भोजन तैयार कराके चांदीके पात्रोंमें रखे गये थे । सब भोजन स्वादिष्ट और उत्तम बने थे । भोजनगृह शिखरके उत्तर प्रान्तमें नवीन बनाया है और नाम उसका मानमहल है । सभागृहकी समान यह भी अगणित स्तंभोंसे शोभित है । सुनते हैं कि शरत्कालमें प्रकृति परिच्छिन्न होनेपर चालीस कोशकी दूरीपर कमलमीरके दुर्गकीके चोटी इस स्थानसे दिखाई देती है ।

१६ वीं नवम्बर-आजका दिन महाराजका मेरे साथ मुलाकात करनेके लिये निश्चित था । अपना बड़ा भारी ऐश्वर्य दिखानेके लिये महाराजा मानसिंहने अपना कैंप मेरे कैंपके पास स्थापित कराया । डेरा बहुत बड़ा और लाल रंगका था । यह देखनेमें एक महलके बराबर है और कपड़ेके परकोटेसे घिरा हुआ है । बीचकी वेदीके ऊपर राजसिंहासन रक्खा गया और उसके ऊपर छत्र लगाया गया । तीसरे पहरके समय महल और दुर्गमें बड़ा भारी कोलाहल मचगया । चारों ओर नगाडे और तुरत ही ढँढोरा पिटवा दिया कि “मारवाडके महाराज आज फिरंगीके वकीलके साथ मुलाकात करने जायेंगे” । झंडी और राज चिह्नोंको दूरसे देखते ही मैं अनुचरों सहित घोड़ेपर सवार होकर नगरके मार्गसे आगे बढ़ा और मार्गमें महाराजके साथ मुलाकात और कुशल प्रश्नादि करके डेरेपर लौट आया । महाराजके आनेपर मैंने बड़े आदरसे उनको लिया मेरी सेनाके लोगोंने अपने अस्त्र नीचे करके महाराजको आदर दिखाया । महाराज इससे बहुत ही प्रसन्न हुए । महाराज मानसिंहके एक घंटे तक बैठनेके पीछे हीरे और रत्नोंके अलंकार सुनहरी कामके वस्त्र, शाल और अनेक प्रकारकी रमणीक वस्तुओंसे सजाकर उन्नीस ढालें (उदयपुरके राणाको इक्कीस दीगईथी) उपहारस्वरूपमें महाराजको दीं । मैंने इंग्लेण्डके बने हुए कितने ही अस्त्र, एक अण्डवीक्षणयंत्र (खुर्दवीन) और राजपूतोंकी विशेष इच्छित कितनी ही छोटी २ चीजें भी उपहारमें दीं । इसके अनन्तर अतर और पान देकर मुलाकात समाप्त की । मैंने जो सजाहुआ हाथी और घोडा महाराजके लिये दियाथा, वह उनके सामने लायागया । डेरेके द्वारपर आकर मैंने महाराजको सलाम किया, उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया । यह हाथ मिलाना राजपूतजातिकी प्राचीन प्रथा है ।

२७ वीं नवम्बर—को मैं महाराजके पास विदा मांगनेके लिये गया । इस अन्तिम मुलाकातमें विशेष प्रयोजनीय विषयोंपर बहुत देर तक बातचीत हुई । महाराज अपने उद्यम और प्रतिभाकी शक्तिसे सम्पूर्ण विपत्तियोंका निवारण, अत्याचारियोंको—उनके मृत पुत्रके कुपरामर्शदातागणोंको—मंत्रीवर और प्रधान धर्मयाजक देवनाथके हत्याकारी लोगोंको और महाराजके बहुत काल बन्दी दशाके कारणस्वरूप लोगोंको उपयुक्त दण्ड देकर शीघ्र ही निश्चिन्त होसकेंगे मैं उनको इस प्रकारका धीरज देआया ।

“नियमित विदायी उपहारकी सामग्रीके साथ महाराजके व्यक्तिगत अनुग्रहका चिह्नस्वरूप उनके एक सुप्रसिद्ध पूर्वपुरुषकी एक तलवार, एक छूरी और एक ढाल मुझको मिली । तलवार इतनी भारी है कि उसको देखकर सर्वसाधारण भी यह समझसकतेहैं कि जिस हाथमें यह तलवार शोभा पाती थी वह बड़ा बलिष्ठ था । सादर संभाषणके पीछे परस्परमें पत्रआदि भेजनेके लिये अनुरोध हुआ (यह पत्रादि भेजना आरंभ तो हुआ था किन्तु शीघ्र ही बंद होगया)इसके अनन्तर महाराज भानसिंहसे विदा ली ।”

(कर्नेल टाड साहबके मारवाडमें जानेका विवरण समाप्त हुआ)

कनेल टाडके मारवाडसे लौटनेका वृत्तान्त ।

उनतीसवां अध्याय २९.

नादोला;-विशालपुर;-एक प्राचीननगरका ध्वंसावशेष;-पाँच कुल्लावा विचकुल्ला;-खोदितपत्थर;-पीपल;-मेवाडकी प्राचीन इतिहासमूलक खोदित लिपि;-साम्पूसागरोत्पत्तिके प्रवाद-वाक्य;-लक्खाफुलानि;-माद्रीयभूरुण्डा;-वदनसिंह;-उनकावीरत्व;-प्रतापके स्मरणार्थदेवी;-इन्दावर;-जाट कृषकजाति;-मैरता;-औरङ्गजेबके द्वारा निर्मित मसजिद;-धौकुलसिंह;-राठौर वीरश्रेष्ठ जयमल;-उनका वीरत्वस्वीकार;-मैरतानगरका वर्णन;-समाधिमन्दिर;-राजाअजित;-दो पुत्रोंद्वारा उनके प्राण-हनन;-उसी सूत्रसे मारवाडमें विद्रोहानलविस्तार;-अजितका परिवार;-राठौरोंमेंदत्तक पुत्र ग्रहणसम्बन्धी विचित्रव्यवस्था;-रामसिंह;-सामन्तमण्डलीकी और उनका अशिष्टाचार;-आत्मनिग्रह;-रामसिंहके साथ वस्तुसिंहका युद्ध;-रामसिंहका पराजय और मैरतीय राजपूतशाखाका ध्वंस;-मैरताके अधीन मिथिरिके सामन्त;-समरक्षेत्रवर्णन;-रामसिंहका अपने राज्यमें महाराष्ट्रोंको बुलाना;-वस्तुसिंहका मारवाड राजसिंहासन अधिकार;-जयपुराधीशका आत्मघात;-उनके पुत्र विजयसिंहका अभिषेक;-जयआप्पा सेंधिया और रामसिंहका मारवाडआक्रमण;-विजयसिंहका व्याघातदान और पराजय;-उनका नगरमें भागना और शत्रुओंका उक्त प्रदेशावरोध;-शत्रुओंके डेरमें होकर उनका पलायन;-बीकानेर और जयपुरराजसे उनकी सहायता प्रार्थना;-जयपुराधीश्वरकी विश्वासघातकता;-रियाके सामन्तद्वारा पराजय; सेंधियाका प्राणवध ।

२९ नवम्बरको कनेल टाडसाहब अनुचरोंके साथ राजधानी जोधपुरको छोड़कर तीन कोशकी दूरीपर नन्दोलाकी ओर आगे बढ़े । वह लिखतेहैं कि,

“राजधानीसे एक कोश तक रेतीला मार्ग है; और उससे आगेके मार्गमें लाल पत्थरका रेत है, इस लिये एक कोशसे आगे चलकर पथिकोंको चलनेमें कुछ सुबीता होजाता है। आधा मार्ग समाप्त करनेपर हमने एक छोटा सा सरोवर देखा। उसको मारवाडसिंहासनके लोभी धौकुलसिंहकी माता शिखावती ने बनवाया था, इस कारण इसका नाम “शिखावत तालाब ” विख्यात है। शिखावतीने इस भरोवरके तटपर एक धर्मशाला और एक हनुमानजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित करा दी है, तथा अपनी पवित्र कीर्तिका चिह्नस्वरूप एक स्तंभ बनवा दिया है। इस प्रदेशमें कहीं भी बेल बूटा दिखाई नहीं देता। शाला मन्दसे जोधपुर जाते समय हमने योगिनी नामकी जिस नदीको पार किया था जो मन्दौरके निकट नागदाके साथ मिलकर लूनी नदीमें गिरी है, हमने इस ग्रामप्रान्तमें फिर उस ही नदीको पार किया। नदीके पास जो कूये बने हुए हैं ग्रामवासी लोग उनहीका जल व्यवहार करते हैं। इन दोनों कुओंमें यथेष्ट जल है परन्तु जल साफ नहीं है। नँदोला ग्राम एक सौ पच्चीस घरोंकी वस्ती है। यह प्रदेश आहरेके सामन्तके अधीन है। यहां शुष्क प्राय एक पुष्करिणी है। उसके तटपर समाधिके मन्दिर बने हुए हैं। मैंने वहां जाकर एक एक करके सबको देखा, परन्तु उनके ऊपर जिन लोगोंके नाम खुदे हुए हैं वह सब अप्रसिद्ध हैं।

आगेका ग्राम वीसलपुर यहांसे छः कोशकी दूरीपर है; मार्ग गहरी बालूसे ढका हुआ है। वीसलपुर ऊंची भूमिके ऊपर बसा हुआ है रहनेके घर सब एकसे बने हैं; घरोंकी दीवारें मट्टी और भूसीसे लिहसी हुई होनेके कारण देखनेमें बड़ी विचित्र हैं। जैसे इन्दुराग्राम भूसी और कांटोंके बने हुए परकोटेसे ढका हुआ है, वैसे ही यह ग्राम भी भूसी और कंटकसंलित परकोटेसे वेष्टित है। इस प्रदेशमें यह दृश्य शिल्पकार्यका परिचय देनेसे देखनेमें सुन्दर मालूम होता है। बहुत प्राचीन कालमें यहां एक नगर था, किन्तु भूकम्पसे वह विलकुल नष्ट होगया। तोरणके कई अंश और परकोटेका एक भाग अब भी उस नगरका पूर्ण परिचय दे रहा है। यहां पर हमको कोई प्राचीन खोदित लिपि नहीं मिली। यहांके अधिवासी लोग एक बड़े सरोवरसे नित्य व्यवहारके योग्य जलको लेजाते हैं।

२१ वीं नवम्बर ।—पाँचकुल्ला वा विचकुल्ला पाँच कोशकी दूरीपर है; जो जुरी नदीके पार उतरकर उसके तटपर डेरा डाला। क्रमसे मट्टीकी उत्कर्षता

देखी; यहांकी मट्टी लाल वालूकी समान है । नदीतटके खेतोंमें बहुत श्रेष्ठ गेहूं और जौ पैदा होते हैं । यहांपर दो एक बबूल और नीमके वृक्ष भी दिखाई दिये । यद्यपि यह ग्राम अब केवल सौ घरोंकी वस्ती है किन्तु एक समय यह महा समृद्धिशाली था । मैंने यहांपर एक खोदित पत्थरके टुकड़े पर केवल “सोनंगके पुत्र १२२४ संवत्” खुदा हुआ पाया । दुर्दान्त पठान डाँकुओंने सम्पूर्ण प्राचीन कीर्तिको विलकुल नष्ट करदिया है । यह ग्राम एक भट्टी सामन्तका वृत्तिस्वरूप है । अधिवासी लोग नदीके निकट खुदे हुए कुओंसे अपने व्यवहार योग्य जल लेजाते हैं ।

२२ वीं नवम्बर ।—पीपलनगर चार कोशकी दूरीपर है । यहांकी भूमि काली और वालुकापूर्ण है, सर्वसाधारण उसको धामुनी कहते हैं । पीपलनगर डेढ सौ घरोंकी वस्ती है । यहांके निवासियोंमें तीन हिस्सेमेंसे एक हिस्सा मनुष्य जैनी हैं, और इस प्रदेशके प्रधान व्यापारी ओसवालजातिके हैं । दो सौ माहेश्वरी वनिये शैवधर्मावलम्बी भी रहते हैं । यहां व्यापारका काम बहुत भारी होता है । यहांके छोटके वस्त्र बहुत प्रसिद्ध हैं; तीन सौ व्यापारी केवल इसी कामको करते हैं । निमाजके जिन सामन्तकी मृत्युका विवरण ऊपर लिख चुके हैं यह नगर उन्हींके अधीन है । इन निमाजसामन्तके एक सुप्रतिष्ठित पूर्व पुरुषके नामसे पीपलनगरमें जो एक स्मारक मन्दिर बनवाया गया था, दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंने उसका आधा भाग नष्ट करदिया । मारवाडके इतिहाससे प्रगट है कि, ईसवी सन्के आरंभसे बहुत वर्ष पहिले अन्तके पमार वंशीय अधीश्वर गन्धर्वसेनने इस पीपल नगरको स्थापन किया था । यहां लक्ष्मीदेवीके मन्दिरमें मैंने एक खोदित पापाणखण्ड देखा । उसमें गिह्लौट वंशीय रावल उपाधिभारी राजपूत विजयसिंह और दड़लझीका नाम खुदा है । यह खोदितलिपि मेवाड इतिहासके एक बहुत प्राचीन विषयका विलकुल समर्थ न करती है । गिह्लौट लोग चौबीस शाखाओंमें विभक्त हैं, उनमेंसे एक शाखाका नाम “पिपलिया” है । तक्षकवंशीय पमार लोगोंके निकटसे इस पीपलनगरके अधिकारसम्बन्धसे ही इस पिपलिया उपाधिकी उत्पत्ति हुई, इस खोदित लिपिसे निःसंदेह वही बात प्रगट होती है ।

इस स्थानमें साठसे लेकर अस्सी फुट तक गहरे बहुतसे कुएँ हैं । यहांके सांपू (सर्प) सरोवरमें भी बहुत उत्तम जल है । उक्त सरोवरके साथ पीपल नगरकी प्रतिष्ठाका एक प्राचीन प्रवाद सुना जाता है कि, पालीजातीय पीपानामका एक

ब्राह्मण उक्त सरोवरके तटपर रहनेवाले एक तक्षकजातीय सर्पको प्रतिदिन दूध पिलाया करता था, और सर्प उसकी सेवासे प्रसन्न होकर प्रतिदिन दो सुवर्णमुद्रा दिया करताथा । किसी कारणसे नगरमें जानेको बाध्य होनेके कारण पीपा अपने पुत्रको सब बातें समझाकर उस कामको सौंपगया । ब्राह्मणकुमारने विचारा कि यदि इस सर्पको मारडालूं तो सब धन एक साथ ही मिलजायगा । यह विचार, दूध और लकड़ी दोनों हाथमें लेकर उस सरोवरके तटपर पहुँचा । सर्प प्रतिदिन जिस समय दूध पीता था, ठीक उसी समय बाहर निकलकर दूध पीनेलगा, धनके लोभी ब्राह्मणकुमारने तत्काल उसके शिरपर लकड़ी मारी । उसके लगनेसे सर्पके प्राण नहीं निकले, किन्तु सामान्य चोट लगी, सर्प तत्काल विलमें घुसगया । ब्राह्मण उदास होकर अपने घर आया और मातासे सब वृत्तान्त निवेदन किया; ब्राह्मणी डरी और सोचने लगी कि सर्प अवश्य ही बदला लेगा । उसने स्थिर किया कि “कल प्रभातमें पुत्रको पतिके पास भेज दूँगी।” यह विचारकर पुत्रके साथ भेजनेके लिये एक बैल और सेवक वहीं रक्खा । रात्रिमें ब्राह्मणीको नींद नहीं आई, प्रभात ही उठकर वह अपने पुत्रको जगानेके लिये उस शयनागारमें गई, वहां उसने देखा कि पुत्रके वदलेमें वहीं बड़ा भारी सर्प शयन कर रहा है । इसी अवसरमें पीपा ब्राह्मण भी नगरसे लौट आया, अपने पुत्रको सर्पसे भक्षित हुआ सुनकर शोकसागरमें डूबगया, फिर बड़े कष्टसे प्रतिहिंसावृत्तिको शान्त करके दुग्धद्वारा उस सर्पको प्रसन्न करने लगा । सर्प ब्राह्मणकी इस सेवासे फिर प्रसन्न होगया और अपने बहुत कालसे रक्षा किये हुए बड़े भारी धनको ब्राह्मणको दिखाकर बोला कि “इस घटनाके बहुत काल तक स्मरण रहनेके लिये यहां कोई चिह्न अवश्य कर देना, यह सब धन अब तुम्हारा है । ” इस संबन्धसे ही पाली जातीय पीपाने यह पीपल नगर और धन दाता सर्पके नामसे “साँपूसरोवर” बनवाया था । यह रूपक प्रवाद बौद्ध वा जैनधर्मावलम्बी तक्षकजातिके साथ ब्राह्मणोंके विवादकी सूचना देता है ।

इस नगरमें लक्षफुलानीके नामसे एक कुण्ड है । अति प्राचीन कालमें मारवाड-के बहुत दूरवर्ती प्रांतके फुलैरानामक स्थानमें लक्षफुलानीका राज्य था, और सुनते हैं कि एक समय उनकी जयपताका समुद्रके किनारे तक उड़ी थी । लूनी

नदीके तटसे सिन्धुतक में जिस २ स्थानमें गया, उसी २ स्थानमें लक्षफुलानीकी प्रशंसा सुननेमें आई ।*

२३ वीं नवम्बर ।—माद्रीयनामक स्थान यहांसे पाँच कोशकी दूरीपर है । जानेका मार्ग उत्तम है, किन्तु सूनसान है । ग्राम मध्यमकक्षाका है । इस गाँवमें उत्तम जलवाला एक सरोवर है ।

२४ वीं नवम्बर ।—भूरुण्डानामक ग्राम आठ कोशकी दूरीपर है । हम ज्यों २ आगे चलते जाते थे प्रकृतिकी दशा भी त्यों २ बदलती जाती थी । मार्ग तरङ्गाकारमें बांधकी समान चलागयाहै और पथरीला तथा रेतीला है । मार्गके निकट उस देशके छोटे २ वृक्ष लगेहैं । मार्ग इस स्थानपर ऐसा ऊँचा होगयाहै कि इसको “ गाशुरिपाश नामसे पुकारतेहैं, तथा राजाकी कितनी ही सेना शत्रुओंके आक्रमण निवारण और वाणिज्य शुल्क संग्रहके लिये उस स्थानमें नियुक्त है । मैरताजातीय प्रबल बलशाली कुचामुनके सामान्त गोपालसिंह इस भूरुण्डाके अधीश्वर हैं । यह गाँव डेढ़ सौ वरकी बस्ती है और किसान लोग नगर और ग्रामोंकी समान जाटजातिके हैं ।

मैंने भूरुण्डामें सामान्याकारके स्मारक मन्दिर देखे । उनमें एकके ऊपर वदनसिंहका नाम खुदाहै । वदनसिंह कुचामुनके अधीन सरदार थे । मैरताके महासंग्राममें वह स्वदेशके लिये फरासीसी सेनापति डिवाइनके संग बड़ी वीरताके साथ लड़कर स्वर्ग सिधारे । जो लोग राजपूतजातिके स्वाभाविक पैत्रिक गुण—राजभक्ति और स्वदेशहितैषिताकी प्रशंसा करतेहैं, उनके निकट वदनसिंहका नाम बहुत दिनतक ऊँची प्रशंसाका संग्रह करेगा । मारवाडेश्वर राजा विजयसिंहने वदनसिंहसे भूरुण्डा प्रदेश किसी विशप कारणसे छीनलिया; विवश होकर ठाकुर वदनसिंहने जयपुर राज्यमें जाकर वहाँके अधीश्वरकी शरण ली । जयपुराधीशने राजपूतप्रथाके अनुसार उनको आश्रय देकर अपने अधीनमें नियतकिया । जिस समय ठाकुर वदनसिंह जयपुरमें प्रबल शक्ति सम्पन्न होगये, उसी समय महाराष्ट्रियोंने मारवाडके आक्रमणसम्बन्धसे उनका

* जनश्रुतिसे जो कविता पाई जाती है, उनके द्वारा प्राचीन इतिहास और भूवृत्तके अनेक वृत्तान्त संग्रहीत होसकते हैं । लक्षके विषयमें प्रवाद है कि,

“कुशपगढ सूरज पुरा, बासुकगढ और तक्ष ।

अन्धानिगढ जगर पुर, जो फुलगढई लक्ष ॥”

उक्त कवितासे प्रगट है कि तक्षक जातीय लक्षके अधिकारमें उपरोक्त कवितामें लिखे हुए प्राचीन छः नगर थे ।

“वापोता” विध्वस्त करना चाहा । जब इस बातको वदनसिंहने सुना तो अपने पूर्वस्वामी विजयसिंहके विरुद्ध उनके हृदयमें जो शत्रुता थी, स्वदेशहित-पिताके निकट उस शत्रुताको वलिदान करदिया और एक सौ पचास घुड़-सवार सेनाके साथ अपने स्वामी और जन्मभूमिकी सहायताके लिये तत्काल चलेगये । दुर्भाग्यके कारण स्वजातियोंके साथ मिलनेसे पहिले ही महाराष्ट्रियोंने उनको मार्गमें ही रोकलिया । वदनसिंह और उनके महाबली साथी लोग बड़े साहसके साथ शत्रुओंका चक्रव्यूह भेदकर आगे बढ़े-यद्यपि नंगी तलवार लिये कई राजपूत वीर शत्रुकी सेनामें घुसगये किन्तु इनके सिवाय शेषसैनिक पशुओंकी समान मारेगये । वदनसिंह अपने प्राचीन पितृभूमिमें जीवित दशामें ही पहुंचगये । वदनसिंहकी इस राजभक्ति और असीम वीरताके पुरस्कारमें विजयसिंहने यह भूरुण्डा प्रदेश उनके वंशवालोंको भोगनेके लिये देदिया । इस प्रदेशकी वार्षिक आय सात सहस्र मुद्रा हैं । शत्रुओंके कराल गालसे इस प्रदेशकी रक्षाका भार भी सामंतहीको सौंप दिया है ।

उक्त स्मारकमन्दिरोंमें प्रतापके नामका एक मन्दिर देखा । इस प्रदेशकी रक्षाके लिये औरङ्गजेवकी सेनाके विद्धरु बड़ी वीरताके साथ उन्होंने युद्ध किया था, परन्तु अन्तमें कृतकार्य न होकर स्वर्गसिधारे ।

२५ वीं नवंबर।—पाँच कोशकी दूरीपर इंदुवर ग्रामहै यह दो सौ घरोंकी बस्ती है; यहांके सब किसान जाटजातिके हैं इन भूस्वामी जाटोंके विषयमें मैंने अबतक कुछ नहीं लिखा । जाटलोग बलिष्ठ, स्वाधीन और परिश्रमीहैं यह हल चलानेमें अनुरक्त असंग्राम प्रिय हैं, यदि सामन्त वा अधीश्वर उनके ऊपर अन्यायसे कर स्थापित न करे तो उनको समाचार तक न मिले । इनका शरीर स्थूल अंग प्रत्यंग बलिष्ठ और कृष्णवर्ण है । पिछले अध्यायमें हमने एक किसानका चित्र भी दियाहै । यह इंदुवर ग्राम सिंधुप्रदेशके भूतपूर्व अधीश्वरको प्रदान कियागयाहै, वह मार-वाडाधीश्वरके उदारतासे दिये हुए इस ग्रामसे ही अपना निर्वाह करतेथे, उक्त सेंधवी कनीरा जातिके थे और अपनेको पारसियोंका वंशधर बतातेथे । विलो-चिस्तानके नुमरी (गृखाल) संप्रदायकी तालुपुरी शाखाके साथ मिलनेसे उक्त सेंधवीके कुटुंबकी संख्या बहुत बढ़ गईहै । नुमरी लोग इस समय अपनेको अफ-गान बतातेहैं । किन्तु वास्तवमें वह मध्य एशियाकी असंख्य जातियोंमेंसे एक शाखा विशेष हैं ।

२६ वीं नवम्बर।—मैरता नामक ग्राम इस स्थानसे चार कोशकी दूरीपर है । हम चौड़े मैदानमें होते हुए वहां पहुँचे । हमने साढे बारह कोशकी दूरीपर